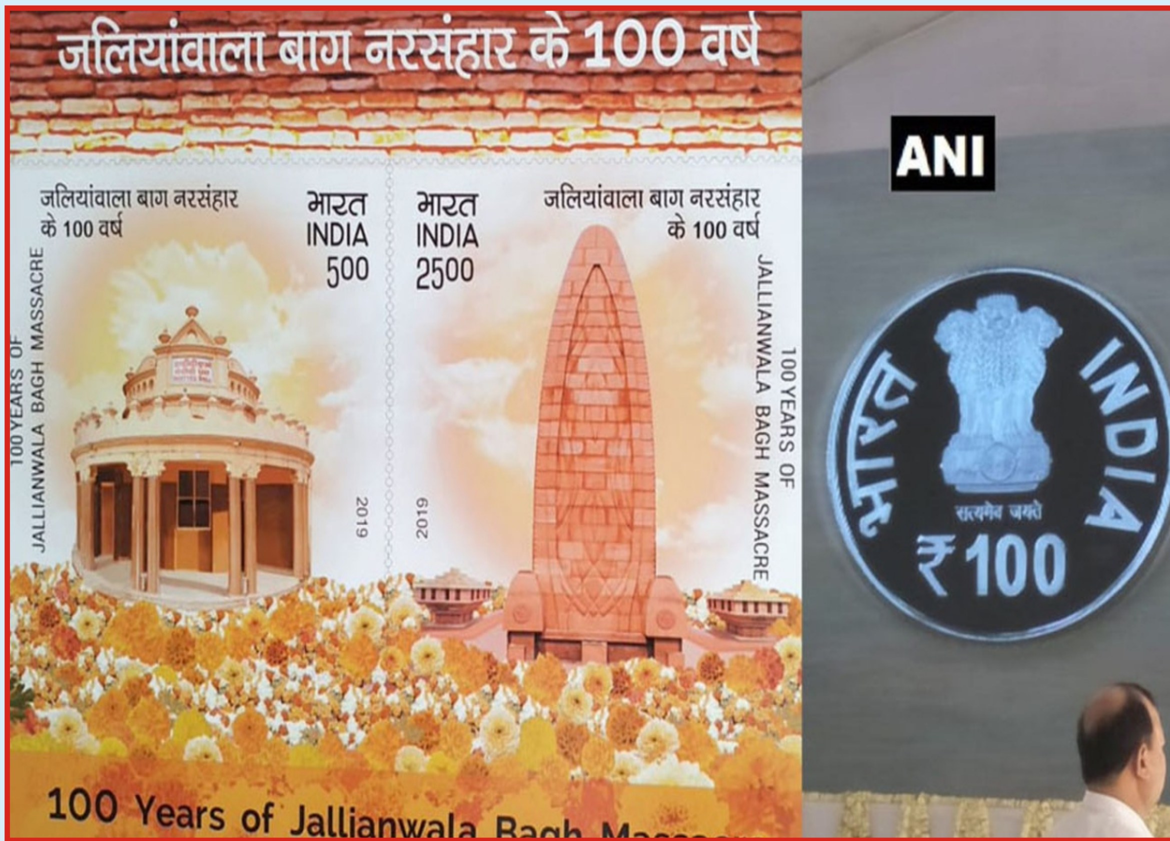
ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

अप्रैल, 2019



जलियांवाला बाग नरसंहार के शहीदों को नमन



जलियांवाला बाग नरसंहार के 100 वर्ष पर जारी डाक टिकट एवं सिक्का



ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 अप्रैल 2019 अंक : 1

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

कुछ लोग सफल होते हैं क्योंकि उनकी किस्मत अच्छी होती है, कुछ सफल होते हैं क्योंकि उनकी लगन अच्छी होती है।

- अज्ञात

इस अंक में

अपनी बात

बदलाव प्रकृति का अटल नियम है। हर वक्त हो रहे इस परिवर्तन के साथ हर चीज बदलती चली जाती है। इस बदलाव में ऋतु परिवर्तन भी है। भारत वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर छह ऋतुओं का देश है। ऋतु परिवर्तन के ये रंग समूचे भारतवर्ष में देखने को मिलते हैं। भारतीय परंपरा में तो परिवर्तन का विशेष महत्व रहा है। यहां के तीज-त्योहार, मेले-उत्सव, हमारी संस्कृति में बदलाव को बयां करते हैं। नवरात्र भी भारतीय परंपरा में एक ऐसा ही त्योहार है जो ऋतुओं के संधिकाल में मनाया जाता है। चैत्र नवरात्रों में ठंड पूरी तरह जा चुकी होती है और गर्मियों का भी आगाज हो जाता है। बसंत ऋतु अपने यौवन पर होती है। भारत की सनातन परंपरा में नव संवत्सर यानि नववर्ष का आगाज भी इन्हीं नवरात्रों से होता है। इस दौरान पेड़-पौधे जहां नई कोंपलों के साथ प्रकृति के नए रूप का स्वागत करते हैं, वहीं नवरात्रों के इस पर्व में बालिका-सम्मान का गहरा संदेश छिपा होता है क्योंकि इस दौरान कन्या पूजन की परंपरा का निर्वहन किया जाता है। आध्यात्मिक व स्वास्थ्य-सुख की कामनाओं के साथ नवरात्रों के इन दिनों में उपवास की परंपरा भी भारतीय संस्कृति में सदियों से रही है। बदलाव की इस बेला में खानपान के संयम का जहां आध्यात्मिक महत्व है, वहीं सेहत से भी इसका गहरा नाता है। सूरज की तपिश से ग्रीष्म ऋतु के आगाज के साथ अब हम अप्रैल माह में प्रवेश कर गए हैं। इस माह की धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक उपयोगिता सर्वविदित ही है। इस माह में न सिर्फ नव संवत्सर की शुरुआत होती है बल्कि अप्रैल का यह महीना हिमाचल प्रदेश के लिए भी खास मायने रखता है। इसी माह में देश की आजादी के बाद 15 अप्रैल 1948 को पहाड़ी रियासतों को मिलाकर इस पर्वतीय प्रदेश का गठन किया गया था और यह देश का 18वां राज्य बना था। यहां के लोगों की सादगी और प्राकृतिक सौंदर्य कुछ ऐसी खूबियां हैं जो इस प्रदेश को देश के दूसरे राज्यों से आगे रखते हैं। हिमाचल दिवस के पावन अवसर पर आज से 64 वर्ष पूर्व 1955 में हिमप्रस्थ पत्रिका का पदार्पण हुआ था। हिमप्रस्थ अपनी छह दशकों की यात्रा में प्रदेश की संस्कृति, साहित्य, लोक जीवन, परंपराओं व इसिहास से पाठकों को रूबरू करवाने का कार्य कर रहा है। मौसम परिवर्तन का द्योतक वैशाखी का पावन पर्व भी इस माह मनाया जाता है। अप्रैल माह में जलियांवाला बाग हत्याकांड के 100 वर्ष पूरे होने पर इस जघन्य नरसंहार के शहीदों को पूरे राष्ट्र ने श्रद्धांजलि अर्पित की। वैशाखी के अवसर पर वर्ष 1919 में अमृतसर के जलियांवाला बाग में शांतिपूर्वक सभा कर रहे निहत्थे आजादी के दीवानों पर तत्कालीन अंग्रेजी हुकूमत ने गोलियां चलाई थीं। इस जघन्य हत्याकांड की शताब्दी पर आयोजित समारोह में प्रदेश सरकार की ओर से शहीदों की याद में भव्य स्मारक बनाने का सुझाव निश्चित तौर पर सराहनीय है। जलियांवाला बाग के शहीदों की स्मृति में विशेष लेख सहित अन्य स्थायी स्तंभों के साथ हम हिमप्रस्थ का यह अंक लेकर आए हैं।

संपादक

जलियांवाला बाग नरसंहार के 100 वर्ष

जब देश भक्तों के खून से लाल हुई धरती



◆ विनोद भारद्वाज

अठारह सौ सत्तावन में देश में अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने के लिए पहली ज्वाला भड़की थी। गुलामी की जंजीरों को तोड़ने के लिए भारतीय जनमानस का संघर्ष 1947 को देश को मिली आजादी के साथ ही थमा। इसी संघर्ष की सबसे बड़ी उपलब्धि हमारी आजादी थी।

प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के उपरांत देश भर में अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ आंदोलन 20वीं शताब्दी के आरम्भ में शुरू हो गए थे। इससे पूर्व 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जनता में राजनैतिक चेतना तेजी से विकसित हुई थी। इसमें प्रेस खासकर भाषाई अखबारों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। इस दौर में राष्ट्रवादी नेता समसामायिक अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं से भी प्रभावित हुए थे। इन घटनाओं को भारतीय परिप्रेक्ष्य से जोड़कर राष्ट्रीय आंदोलन को एक नई दिशा मिली थी। इस दौरान चीन, तुर्की, मिस्र, रूस तथा आयरलैण्ड में भी स्वतन्त्रता की खातिर शक्तिशाली सत्ता के समान वहां की जनता ने संघर्ष को बुलंद किया था। इन घटनाओं ने भारतीयों को सोचने पर बाध्य कर दिया था। लोक मान्य तिलक, विपन चन्द्र पाल, अरविन्द घोष, लाला लाजपतराय जैसे नेताओं ने देश में एक नई उमंग का संचार किया था।

अंग्रेजो ने भारत में दमनकारी नीतियों तथा आपसी फूट डालने की विचारधारा को अपनाया हुआ था। 1905 में बंगाल विभाजन का निर्णय एक जीता जागता उदाहरण है। इसका देश भर में जमकर विरोध हुआ। इस आंदोलन से देश में राजनैतिक चेतना आई और स्वराज्य की ओर कदम बढ़े। इसी दौरान क्रांतिकारियों ने भी देश की आजादी में अहम् भूमिका निभाई। क्रांतिकारियों पर अंकुश लगाने के लिए वर्ष 1909 में अंग्रेजों ने मारले मिण्टो सुधार लागू किए। इसका मूल मकसद राष्ट्रवादी खेमे

में फूट डालना और मुस्लिम साम्प्रदायिकता को भड़काकर भारतीयों के मध्य दिन-ब-दिन बढ़ती एकता को आघात पहुंचाना था। अंग्रेजों ने भारतीय जनमानस को संतुष्ट करने के लिए 1911 में बंगाल का विभाजन रद्द कर दिया।

अगस्त 1914 में प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ हुआ। ब्रिटिश महाशक्ति भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में कूद पड़ी। भारत को भी इसमें शामिल किया गया। भारतीयों को उत्तरदायी शासन प्रणाली बारे अंग्रेजों द्वारा गुमराह किया गया। 1915 में दक्षिण अफ्रीका में असहयोग आंदोलन के प्रणेता महात्मा गांधी भारत लौट आए। वे अपने साथ सत्य, अहिंसा का हथियार लेकर आए थे। दो वर्षों तक उन्होंने देश की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को जानने के लिए देश भर का भ्रमण किया।

गांधी के नेतृत्व में चम्पारन, अहमदाबाद, खेड़ा आंदोलन हुए। भारत में सत्याग्रह का प्रथम प्रयोग 1918 में गोरे नील बागान मालिकों से चम्पारन के किसानों की रक्षा के लिए था। तदोपरांत अहमदाबाद में मिल मालिकों द्वारा मजदूरों को शोषित करने बारे राष्ट्रपिता ने आवाज उठाई। खेड़ा में भी किसानों की मर्जी के खिलाफ लगान वसूलने के विरुद्ध आंदोलन हुआ। इन आंदोलनों की सफलता से देश व्यापी आंदोलनों की रणनीति निर्धारित करने में सहायता मिली।

रौलट सत्याग्रह और जलियांवाला बाग का शर्मनाक, क्रूर हत्याकांड

जलियांवाला बाग हत्याकांड भारत के इतिहास से जुड़ी हुई एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना है जो 13 अप्रैल, 1919 को घटी। इस घटना की दुनिया भर में भर्त्सना हुई। यह देश की आजादी के लिए चल रहे आंदोलनों को दबाने के लिए अंग्रेजों की एक सोची समझी चाल थी। लेकिन इस जघन्य हत्याकांड के उपरांत भी भारतीयों के आजादी के प्रति हौसले कम नहीं हुए।

इस अधिनियम के विरूद्ध 6 अप्रैल, 1919 को देश भर में हड़ताल, उपवास, प्रार्थना, जुलूस तथा सभाएं आयोजित हुईं। जगह-जगह सत्याग्रह मंडल कायम हुए। गैर कानूनी साहित्य प्रकाशित किया गया। इस कानून के तहत देश भर में आंदोलन आरम्भ हुए। पंजाब में 10 अप्रैल, 1919 को प्रसिद्ध नेता सत्यपाल तथा किचलू की गिरफ्तारी हुई।

12 अप्रैल को अंग्रेज सरकार ने अमृतसर के दो बड़े नेताओं चौधरी बुगामल और महाशा रतन चंद को भी गिरफ्तार कर लिया। सैन्य अधिकारियों के दमन से क्रोधित जनता ने नेशनल बैंक के भवन को आग लगा दी और यूरोपियन मैनेजर को मार डाला। प्रदर्शनों के दौरान टाऊन हॉल, पोस्ट आफिस पर हमला हुआ। टेलीग्राफ तार काट दिए गए। अमृतसर में तैनात अंग्रेज सहम गए। तत्कालीन प्रशासन ने उसी दिन सेना बुला ली और अमृतसर नगर का प्रशासन जनरल डॉयर के हाथ सौंप दिया। तीन दिन उपरांत 13 अप्रैल, 1919 को वैशाखी के दिन अमृतसर के जलियांवाला बाग में ऐसी घटना घटी जिसने भारतीय जनमानस को झकझोर कर रख दिया। अमृतसर के गांवों, कस्बों से आम जन वैशाखी मेले में भाग लेने आए थे।

13 अप्रैल, 1919 को जलियांवाला बाग में 20,000 के करीब लोग एकत्रित हुए थे। कुछ लोग अपने नेताओं की गिरफ्तारी के मुद्दे पर शांतिपूर्वक रूप से सभा करने तथा वैशाखी पर परिवार के साथ घूमने आए थे। निहत्थी जनता जिनमें बच्चे, बूढ़े, महिलाएं तथा युवा शामिल थे, पर जनरल डायर ने गोलियां बरसाने के आदेश दिए। सिपाहियों ने 10 मिनट तक गोलियां चलाईं। गोलाबारी के मध्य लोग जान बचाने के लिए भागे। मैदान से बाहर जाने का एक मात्र रास्ता था जिसे सैनिकों

उधम सिंह ने लिया बदला

उधम सिंह ने जलियांवाला बाग घटना को अपनी आंखों से देखा था। नरसंहार के उपरांत उन्होंने मातृभूमि की कसम खाई थी कि वे इस घटना का जनरल डायर से बदला लेंगे। बीस साल उपरांत 13 मार्च 1940 को उन्होंने लंदन के कैक्सटन हॉल में पंजाब के तत्कालीन गवर्नर रहे भारकत ओ डायर की गोली मार कर हत्या कर दी। इस देशभक्त ने निर्दोष व्यक्तियों की डायर द्वारा की हत्या का बदला लिया। 31 जुलाई, 1940 को उत्तरी लंदन की पेंटनविले जेल में उधम सिंह को फांसी की सजा दी गई।

जलियांवाला बाग हत्याकांड की जांच

***जलियांवाला** बाग को लेकर साल 1919 में एक कमेटी का गठन किया गया था और इस कमेटी का अध्यक्ष लॉर्ड विलियम हंटर को बनाया गया था। 19 नवम्बर, 1919 में इस कमेटी ने डायर को अपने सामने पेश होने को कहा और उसने इस हत्याकांड को लेकर सवाल किए। इस कमेटी के सामने अपना पक्ष रखते हुए डायर ने जो बयान दिया था उसके मुताबिक डॉयर को सुबह 12.40 पर जलियांवाला बाग में होने वाली एक बैठक के बारे में पता चला था। लेकिन उस समय उन्होंने इस बैठक को रोकने के लिए कोई भी कदम नहीं उठाया। डायर के मुताबिक 4 बजे के आसपास वो अपने सिपाहियों के साथ बाग जाने के लिए रवाना हुए और उनके दिमाग में ये बात साफ थी कि अगर वहां पर किसी तरह की बैठक हो रही होगी तो वो वहां पर फायरिंग शुरू कर देंगे। 8 मार्च, 1920 को इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट को सार्वजनिक किया और हंटर कमेटी की रिपोर्ट में डायर के कदम को एकदम गलत बताया गया और उसे 23 मार्च, 1920 को दोषी पाते हुए सेवानिवृत्त कर दिया गया।*

द्वार बंद कर रखा था। बाग चारों ओर से 10 फुट की दीवार से बंद था। ऐसे में अनेक लोग अपनी जान बचाने के लिए वहां स्थित कुंए में कूद पड़े। कुछ ही मिनटों में जलियांवाला की मिट्टी निर्दोष भारतीयों के खून से लाल हो गई। इस नरसंहार में अंग्रेजों द्वारा 370 से अधिक लोगों के मरने की पुष्टि की गई जबकि उस वक्त के गैर सरकारी आंकड़ों के अनुसार लगभग एक हजार लोगों की मृत्यु हुई और 1500 के करीब लोग घायल हुए।

2019 में इस घटना को 100 वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। यह दिन उन देश भक्तों की शहादत को याद करवाता है जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दी।

खून से रंग गया जलियांवाला बाग

वह बैसाखी का दिन था। खेतों में फसलें पक चुकी थीं। किसान फसल काटने को तैयार था। यह उत्सव का दिन था। इस दिन की उपयोगिता पंजाब में खालसा पंत की शुरुआत से भी है। यह आपसी सौहार्द तथा उमंग का दिन था। अंग्रेजों ने रौलेट एक्ट पारित किया था। इसके तहत किसी व्यक्ति पर संदेह होने पर उसे गिरफ्तार किया जा सकता था या गुप्त मुकद्दमा चला कर दंडित किया जा सकता था। भारतीयों के विरोध के बावजूद इस कानून को 21 मार्च, 1919 को लागू किया गया। इस एक्ट के विरुद्ध गांधी जी ने संपूर्ण देश में 30 मार्च को सभाएं करने और जुलूस निकालने का आह्वान किया। बाद में तिथि बदल कर 6 जून की गई। इस दिन देशभर में हड़ताल हुई। गांधी जी को बंबई (अब मुंबई) से पंजाब जाते समय गिरफ्तार कर अहमदाबाद भेजा गया।

13 अप्रैल को रौलेट एक्ट के विरोध में असंख्य लोग अमृतसर के जलियांवाला बाग में एक सभा के लिए एकत्रित थे। वे न वकील न दलील और न अपील वाले काले कानून के विरोध में एकत्रित हुए थे।

ठीक चार बजे सभा शुरू हुई। जब जनरल डायर सैनिकों के साथ बाग में दाखिल हुआ तो दुर्गादास भाषण दे रहे थे। ठीक पांच बज कर दस मिनट पर डायर के हुकम से गोलियां बरसने लगीं। जान बचाने के लिए जनसमूह भागने लगा। बाग में एक ही आने-जाने का रास्ता था, जिसे डायर ने रोक रखा था। कुछ दीवारों पर चढ़े। बाग में स्थित कुएं में लोग बचने के लिए कूदे लेकिन वे भी लाशों के ढेर में बदल गए।

इस नरसंहार को बीसवीं सदी के सातवें दशक में महान कलाकार जसवंत सिंह द्वारा बनाई गई नरसंहार की इस मार्मिक तस्वीर को देखकर इस घटना की याद तरोताजा होती है और हर देखने वाले की आंख से आंसू उन गुमनाम शहीदों के लिए टपक पड़ते हैं जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में देश की आजादी के लिए अपने प्राण न्योछावर किए।

गुरुदेव ने त्यागी 'नाईटहुड' की उपाधि

जलियांवाला बाग के नरसंहार ने प्रत्येक भारतीय को झकझोर दिया था। नोबेल पुरस्कार विजेता व महान दार्शनिक एवं लेखक रवींद्र नाथ टैगोर भी इस घटना से बेहद आहत हुए। इस घटना के विरोध में उन्होंने अंग्रेज हुकूमत द्वारा दिए गए सम्मान और 'नाईटहुड' की उपाधि लौटा दी जिससे उन्होंने अपने नाम के साथ जुड़ा 'सर' त्याग दिया।

अमृतसर में जलियांवाला बाग आज एक शहीद स्मारक स्थल बन गया है। हर रोज यहां हजारों की संख्या में देशी व विदेशी पर्यटक आते हैं। इस स्थल पर अभी भी वर्ष 1919 की घटना से जुड़ी अनेक निशानियां मौजूद हैं।

इस स्थल पर बनी दीवार पर आज भी उन गोलियों के निशान हैं जिनको डायर के आदेशानुसार सैनिकों ने चलाया था। बाग में स्थित कुआं मौजूद है जिसमें कूद कर अनेक लोगों ने अपनी जान दे दी थी।

अंग्रेजों के इन जुल्मों का विरोध करते हुए रवीन्द्रनाथ टैगौर ने अपनी 'सर' की उपाधि वापिस कर दी थी। सर शंकरन नायर ने वायसराय की कार्यकारिणी से इस्तीफा दे दिया। उदारपंथी

डॉ. सैफुद्दीन व डॉ. सत्यपाल

जलियांवाला बाग में हुए गोलीकांड के उपरांत स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला और भड़की। इस घटना में पंजाब से पूर्व स्वतंत्रता सेनानी डॉ. सैफुद्दीन किचलू तथा डॉ. सत्यपाल को अंग्रेजों ने गिरफ्तार कर लिया था। इससे अमृतसर की जनता में भारी रोष व्याप्त हुआ था।

डॉ. सैफुद्दीन किचलू प्रसिद्ध नेता तथा वकील थे। वे पंजाब में रौलेट एक्ट के विरुद्ध आरंभ हुए आंदोलन के अग्रणी नेता थे। अंग्रेजों के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए डॉ. किचलू तथा डॉ. सत्यपाल, चौधरी बुग्गा मल व रतन चंद को अंग्रेज सरकार ने गिरफ्तार किया और उन्हें तत्कालीन पंजाब प्रांत के धर्मशाला (वर्तमान हिमाचल) में नज़रबंद किया गया। जलियांवाला घटना के उपरांत इन दोनों पर मुकद्दमा चला कर देश निकाला दिए जाने की सजा दी गई। चौधरी बुग्गामल तथा रतन चंद को मौत की सजा सुनाई गई। बाद में दोनों की सजाएं उम्रकैद में बदलीं और जेलों में अंग्रेजों द्वारा यातनाएं दी गई।

शहीदों की याद में भव्य स्मारक निर्माण का सुझाव

अमृतसर के जलियांवाला बाग नरसंहार के 100 वर्ष पूर्ण होने पर 13 अप्रैल, 2019 को कृतज्ञ देशवासियों ने इस घटना में शहीद हुए असंख्य देशभक्तों को श्रद्धासुमन अर्पित किए।

जलियांवाला बाग के शहीदों को श्रद्धांजलि प्रदान करने के लिए मुख्य कार्यक्रम अमृतसर में हुआ। यहां देश के उपराष्ट्रपति श्री एम. वेंकैया नायडू ने बाग में स्थित प्रतीकात्मक ज्वाला के समक्ष पुष्पांजलि अर्पित कर शहीदों को श्रद्धासुमन अर्पित किए। उन्होंने इस मौके पर एक सौ रुपये का सिक्का और डाक टिकट भी जारी किया।

इस घटना के शहीदों को श्रद्धांजलि देने के लिए 'द ट्रिब्यून ट्रस्ट' ने चण्डीगढ़ में एक कार्यक्रम का आयोजन किया। इस कार्यक्रम में पंजाब व हरियाणा के मुख्यमंत्री तथा हिमाचल की ओर से शिक्षा मंत्री श्री सुरेश भारद्वाज ने भाग लिया। जलियांवाला बाग में हजारों लोग मारे गये थे। उस वक्त द ट्रिब्यून के सम्पादक कालीनाथ रे थे। 27 वर्ष तक ट्रिब्यून के सम्पादक रहे रे ने कभी अपनी लेखनी से कोई समझौता नहीं किया। वे ब्रिटिश सरकार के कोप का भाजन भी बने।

कृतज्ञ देशवासियों ने दी शहीदों को भावभीनी श्रद्धांजलि

- **100 रुपये का सिक्का व डाक टिकट जारी**
- **हिमाचल देश की सेवा में सदैव सर्वोपरि**
- **स्वतन्त्रता संग्राम में ट्रिब्यून की निडर एवं निष्पक्ष पत्रकारिता की सराहना**

रोलेट एक्ट आने से पूर्व ही उन्होंने मार्च माह में अपने सम्पादकीय में इसके खतरनाक इरादों को भांप लिया था और उन्होंने अपनी लेखनी से इसका डटकर विरोध किया। रे पर देश द्रोह का मामला चलाकर उन्हें 27 अगस्त, 1919 को दो साल की सजा सुनाई गई। ट्रिब्यून ने बड़ी ही निडरता से लिखा और आजादी की लड़ाई में एक निर्भीक पत्रकारिता के उच्च्य मानदण्डों को स्थापित किया।

शिक्षा मंत्री श्री सुरेश भारद्वाज ने इस अवसर पर जलियांवाला बाग नरसंहार में मारे गये असंख्य देशभक्तों को श्रद्धांजलि प्रकट करते हुए पंजाब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरेन्द्र सिंह से शहीदों की स्मृति में एक भव्य स्मारक निर्माण का आग्रह किया। इसमें हिमाचल प्रदेश सरकार सहयोग करेगी। उन्होंने कहा कि जनता के दिलो दिमाग में इस वीभत्स कांड की याद बरसों तक रहेगी। इस कांड को हम आजादी की लड़ाई में एक बड़ा पड़ाव मान सकते हैं। क्योंकि इसके बाद से तय हो गया था कि अब अंग्रेजों को जाना होगा। उन्होंने स्वतन्त्ता आंदोलन में ट्रिब्यून समाचार पत्र के योगदान की भी सराहना की। उन्होंने कहा कि रोलेट एक्ट एक काला कानून था जो राजनेताओं और प्रेस दोनों को दबाने के लिए लाया गया था। उन्होंने कहा कि हिमाचल प्रदेश देश की सेवा में सदैव सर्वोपरि रहा है तथा प्रदेश के लाखों सैनिक देश की सरहदों की रक्षा में तैनात हैं।

इस अवसर पर ट्रिब्यून ट्रस्ट की ओर से जलियांवाला बाग नरसहार पर लेखों तथा पुरालेख से उद्धृत सामग्री पर आधारित पुस्तक 'मार्टियरडॉम टू फ्रीडम' का विमोचन भी किया गया।

इस अवसर पर पजांब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरेन्द्र सिंह, हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर, ट्रिब्यून ट्रस्ट के अध्यक्ष एवं जम्मू-कश्मीर के पूर्व राज्यपाल श्री एन.एन. वोहरा व द ट्रिब्यून के सम्पादक राजेश रामचन्द्रन ने भी अपने विचार व्यक्त करते हुए जलियांवाला बाग नरसंहार पर प्रकाश डाला।

वकील शिव स्वामी अय्यर ने नाइक की उपाधि लौटा दी।

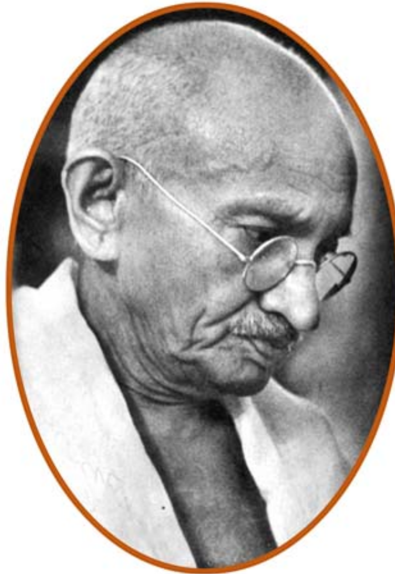
यह दिन उन भारतीयों के बलिदानों की याद दिलाता है जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दी। जलियांवाला बाग के मध्य में स्थित प्रतीकात्मक ज्वाला इस बात को साबित करती है कि निर्दोष भारतीयों के बलिदान से जली इस ज्वाला ने 15 अगस्त, 1947 को देश को आजादी दिलवाकर ही दम लिया।

जलियांवाला हत्याकांड का बदला इंग्लैंड में महान देशभक्त उधम सिंह ने 13 मार्च, 1940 को केक्सटन हाल में जनरल डायर को गोली मार कर लिया। उधम सिंह ने जलियांवाला बाग में शहीद हुए भारतीयों की मौत का बदला लिया था।

हर वर्ष वैशाखी का पर्व आएगा। ये पर्व हमें सदैव उन भारतीयों के बलिदान की याद करवाता रहेगा जिन्होंने अपने सीने पर गोलियां खाकर देश की आजादी का मार्ग प्रशस्त किया। जलियांवाला बाग के अमर शहीदों को एक बार पुनः नमन।

000

जलियांवाला स्मारक स्थापना में गांधी का योगदान



भारत के स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में पंजाब प्रांत के अमृतसर में 13 अप्रैल, 1919 को बैसाखी वाले दिन अंग्रेजों द्वारा निहत्थे भारतीयों पर जलियांवाला बाग में किया गया जघन्य गोली कांड एक ऐसा पन्ना है, जिसका स्मरण कर हर भारतीय के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। बैसाखी का दिन जो संपूर्ण उत्तर भारत में एक प्रमुख त्योहार है। इस दिन किसान रबी की फसल कटाई के उपरांत नए साल की खुशियां मनाते हैं। सिखों में यह 13 अप्रैल, 1699 में दसवें एवं अंतिम गुरु गोविंद सिंह के खालसा पंथ की स्थापना के लिए खुशियों भरा दिन है। अमृतसर में उस दिन बैसाखी का मेला जो सदियों से लगता आ रहा है, उसे देखने हजारों की संख्या में बूढ़े, बच्चे, जवान, महिलाएं आई थीं। अंग्रेजों द्वारा रोलेट एक्ट के लागू करने के विरुद्ध इस बाग में सभा हो रही थी जिसमें जनरल डायर नामक अंग्रेज अफसर ने अकारण उस सभा में उपस्थित भीड़ पर गोलियां चलवा दीं, जिसमें एक हजार से अधिक निर्दोष व्यक्तियों की जान चली गई और दो हजार से करीब व्यक्ति घायल हुए। उनका सिर्फ एक ही कसूर था कि वे शांतिपूर्ण प्रदर्शन कर रहे थे। जलियांवाला बाग की मिट्‌टी खून से लाल हो गई। यहां आने का एक संकरा रास्ता था और चारों ओर मकान थे। कुछ लोग जान बचाने के लिए मैदान में स्थित कुएं में कूद गए। देखते ही देखते कुआं भी लाशों से भर गया। आधिकारिक तौर पर मरने वालों की संख्या 349 बताई गई जबकि पंडित मोहन लाल मालवीय के अनुसार 1300, स्वामी श्रद्धानंद के अनुसार 1400 से अधिक जबकि अमृतसर के तत्कालीन सिविल सर्जन डॉक्टर स्मिथ के अनुसार 1800 से अधिक थी।

इस हत्याकांड की विश्वव्यापी निंदा हुई जिसके दबाव में भारत के लिए सेक्रेटरी ऑफ स्टेट एडविन मांटेगू ने 1919 के अंत में इसकी जांच के लिए हंटर कमीशन नियुक्त किया। हंटर कमीशन ने अंग्रेजों के पक्ष में ही रिपोर्ट दी। 1920 में ब्रिगेडियर जनरल रेजीनॉल्ड डायर को पदावनत कर कर्नल बनाया गया और ब्रिटेन भेज दिया गया। अंग्रेजों की इस दमनकारी नीति से स्वतंत्रता सेनानियों तथा क्रांतिकारियों में देश की आजादी के लिए एक नई चेतना का संचार हुआ।

महान लेखक, कवि, दार्शनिक रवींद्रनाथ टैगोर ने इस घटना से आहत होकर सर की उपाधि लौटा दी तथा गांधी जी को अंग्रेजों द्वारा 1915 में दक्षिण अफ्रीका में जूलू युद्ध के दौरान उन द्वारा प्रदत्त सेवाओं के लिए उनहें केसर-ए-हिंद गोल्ड मेडल से नवाजा गया। जिसे उन्होंने अगस्त 1920 में लौटा दिया। वे भारतीय एंबुलेंस कार्य से रॉयल सार्जेंट मेजर के रूप में कार्यरत थे।

ये दिन उन सभी निर्दोष शहीदों के प्रति कृतज्ञता भरा है जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपने प्राण न्योछावर किए। उस वक्त दि ट्रिब्यून जो लाहौर से प्रकाशित होती थी, के महान संपादक काली नाथ रे ने अपनी लेखनी से ब्रिटिश हुकूमत को हिला दिया था। इसका उल्लेख ट्रिब्यून के इतिहास पर प्रकाश आनंद द्वारा लिखित पुस्तक में मिलता है।

कालीनाथ ने 11 मार्च, 1919 को रौलेट एक्ट के विरुद्ध लिखा। वहीं 17 अप्रैल को जलियांवाला गोली कांड के विरुद्ध ट्रिब्यून में संपादकीय 'Blazing Indiscrehen लिखा जिसमें ओ. डायर के जघन्य अपराध को उजागर किया गया था। उन्हें अंग्रेजों द्वारा कारावास में डाल दिया गया। गांधी जी ने रै को जेल से छुड़वाने के लिए देशभर में आंदोलन चलाने को कहा।

गांधी जी ने दि ट्रिब्यून एंड रौलेट एक्टस, जलियांवाला कांड तथा बाबू काली नाथ रै पर यंग इंडिया में लेख भी लिखा। गांधी जी ने रै के प्रयासों की प्रशंसा की, वहीं युवाओं के प्रेरणा भगत सिंह ने बाबू काली नाथ को अंग्रेजों के अत्याचार बारे लिखने को कहा।

जलियांवाला गोली कांड में अंग्रेजों ने 10 मिनट में 1600 राउंड गोलियां चलाई थीं। इस दस मिनट ने देश को हिला कर रख दिया था। अंग्रेज अपनी दमनकारी नीतियों से भारत पर राज करना चाहते थे। लेकिन जलियांवाला कांड ने भारतीयों में मातृभूमि को मुक्त करवाने का एक नया जोश भरा। गांधी जी ने अहिंसा के दम पर आंदोलन को आगे बढ़ाया।

जलियांवाला कांड के उपरांत पंजाब सहित संपूर्ण देश में अंग्रेजों के खिलाफ गुस्सा था। लेकिन अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों के समक्ष भारतीय सहमे हुए थे। पंजाब के अवाम ने इस स्थल पर शहीदों की याद में स्मारक बनाने की आवाज उठाई। उस वक्त के नेताओं ने लोगों से यहां स्मारक बनाने की अपील की लेकिन कोई भी अंग्रेजों के भय से अंशदान नहीं दे रहा था। इसका उल्लेख महात्मा गांधी के पौत्र राजमोहन गांधी ने अपनी पुस्तक महात्मा गांधी की आत्मकथा 'मोहनदास' व इतिहास के अनेक पुस्तकों जिसमें पंजाब : ए हिस्ट्री ऑफ ओरंगेजब टू माउंटबेटन' में हुआ है। इस स्मारक के लिए महात्मा गांधी के प्रस्ताव ने परिदृश्य ही बदल दिया। गांधी जी ने 24 अक्तूबर, 1919 से दो माह तक पंजाब का दौरा किया और इस हत्याकांड के तथ्यों को एकत्रित किया।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने अपनी पुस्तक Discovery of India में लिखा है कि महात्मा गांधी में सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि उन्होंने आम भारतीय नागरिकों के मन से भय को भगाया। जब अक्तूबर 1919 में पंजाब में गांधी जी के प्रवेश करने के निर्णय को अंग्रेजों ने हटा दिया तो वे लाहौर गए और पंजाब प्रांत के हालात पर गहन विचार विमर्श किया। गांधी जी ने अंग्रेजों द्वारा गठित 'हंटर कमेटी' के गठन पर सवाल उठाया तथा अपनी अलग से जांच कमेटी गठित करने का निर्णय लिया जिसमें गांधी जी भी सदस्य बने।

लाहौर पहुंचने पर गांधीजी का स्वागत अपार जनसमूह ने किया। अमृतसर में स्वर्ण मंदिर में गांधी जी को सम्मानित किया गया तथा उन्हें सभी समुदायों के लोग मस्जिद में भी ले गए। महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा सत्य के प्रयोग में लिखा,

एक अमेरिकन वास्तुकार ने बनाया जलियांवाला बाग स्मारक का प्रारूप

बैंजामिन पोलक, जो अमेरिका के वास्तुकार थे, ने जलियांवाला स्मारक की रूपरेखा बनाई थी। उन्होंने वर्ष 1952 से 1964 तक एशिया उप महाद्वीप में अपनी पत्नी एमली डेस्पेन के साथ रह कर अनेक स्मारकों तथा भवनों की रूपरेखा तैयार की थी।

पोलक की भेंट तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू जो जलियांवाला बाग राष्ट्रीय स्मारक न्यास के अध्यक्ष से तत्कालीन केंद्रीय मंत्री राजकुमारी अमृत कौर ने करवाई थी। इसका उल्लेख उनकी आत्मकथा Building for South Asia: An Architectural Autobiography' में उन्होंने स्वयं किया है। 'वास्तुशिल्प की रूपरेखा पर नीतिगत फैसला होता है तथा उनके पहले प्रारूप को प्रधान मंत्री की सहमति से मिली और कार्य आगे बढ़ता गया। यह योजना भारतीयों की भावनाओं तथा आकांक्षाओं से गहराई से जुड़ी हुई थी जो कि पहला राष्ट्रीय स्मारक था। यह आवश्यक था कि यह स्मारक एक भारतीयता की पहचान वाला निर्मित हो।"



इस स्मारक के प्रारूप को अंतिम रूप देने से पूर्व पोलक ने गुजरात राज्य के गिरनार तथा पालिरना में स्थित जैन बहुल मंदिरों का दौरा किया। उन्हें इन मंदिरों के भव्य शिखरों से जलियांवाला बाग के मध्य में स्थित आजादी की ज्वाला निर्माण का विचार आया। इस प्रतीकात्मक ज्वाला निर्माण के लिए राजस्थान के धौलपुर से लाल पत्थर तथा लाल ग्रेनाइट पत्थर मैसूर से मंगवाया गया। इस स्मारक को 13 अप्रैल 1961 को राष्ट्र को समर्पित तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद द्वारा किया गया। 45 फुट ऊंची ज्वाला के आधार पर लाल ग्रेनाइट में चार अशोक चक्र बनाए गए हैं। महात्मा गांधी ने 11 फरवरी 1920 को पंजाब की चिट्ठी शीर्षक से नवजीवन में लिखा, "जलियांवाला बाग अब राष्ट्र की सम्पत्ति हो गया है। पंडित मालवीय जी ने कांग्रेस अधिवेशन में इस आशय की बात कही थी। इस भूमि के भागीदारों से बातचीत पंडित मदन मोहन मालवीय तथा स्वामी श्रद्धानंद ने की। इसकी कीमत पांच लाख से ऊपर आंकी गई है। ... जलियांवाला बाग हिंदुस्तान में जन्मे और हिंदुस्तान में रहने वाले सब लोगों के लिए पवित्र स्थान है। महात्मा गांधी ने बाग की खरीद के लिए भारतीयों से पांच लाख रुपये चंदा एकत्रित करने की अपील की जो 16 फरवरी 1920 को बांबे क्रॉनिकल अखबार में प्रकाशित हुई। इस अपील पर मदन मोहन मालवीय, मोती लाल नेहरू, श्रद्धानंद, हरमिशन लाल, किचलू तथा गिरधारी लाल के भी नाम प्रकाशित हुए।

"लाहौर पहुंचने पर जो दृश्य मैंने देखा, वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। स्टेशन पर लोगों का समुदाय इस कदर इकट्ठा हुआ था, मानो बरसों के बिछोह के बाद कोई प्रियजन आ रहा हो और सगे संबंधी उससे मिलने आए हों। लोग हर्षोन्मत्त हो गए थे।"

पंजाब के दौरे के दौरान गांधी जी ने लोगों से जलियांवाला स्मारक के लिए अंशदान करने की अपील करते हुए कहा कि इसमें किसी को भी आहत व उससे दुर्भावना न रखी जाए। ये अंशदान लोगों की गमी का प्रतीक है तथा यह उन निर्दोष शहीदों के प्रति उनकी याद को दर्शाता है। आरंभ में इस स्मारक के लिए धनराशि का एकत्रीकरण कुछ धीमी गति से चला लेकिन जब गांधी जी ने यह घोषणा की कि अगर आवश्यक हुआ तो वे इस स्मारक के लिए अहमदाबाद के अपने आश्रम को बेच देंगे।

श्री राजमोहन गांधी के शब्दों में, "गांधी जी की इस घोषणा का संकलन गांधी जी के निजी सचिव श्री प्यारेलाल तथा निजी चिकित्सक सुशीला नायर ने अपनी पुस्तक 'In Gandhi Mirror' में किया है।

प्यारे लाल ने गांधी जी के साथ पंजाब का दौरा किया था। उसी वर्ष प्यारे लाल ने गांधी जी के विचारों, कार्यों, देश सेवा से प्रभावित होकर उनके साथ रहने का निर्णय लिया था।

गौरतलब है कि अमृतसर के जिस स्थल पर जलियांवाला गोलीकांड हुआ था व उस समय एक निर्जन स्थल तथा इसके चारों ओर बनी इमारतों का पिछवाड़ा था जहां प्रवेश के लिए एक संकरी गली थी जिस मार्ग से डायर के सैनिक प्रवेश हुए थे। मैदान के एक छोर पर कुआं था। इसके अलावा मैदान में मिट्टी के ढेर थे।

दी ट्रिब्यून में प्रकाशित लेख से ज्ञात होता है कि अंग्रेज इस स्थल पर कपड़े की मार्किट बनाना चाहते थे तथा अंग्रेजों ने व्यापारियों को सस्ती दरों पर इस जमीन को खरीदने का भी प्रलोभन दिया।

इस स्थल पर स्मारक बनाने व धनराशि एकत्रित करने का श्रेय अमृतसर के डॉ. एस.सी. मुखर्जी को जाता है। वर्ष 1920 में मदन मोहन मालवीय को जलियांवाला बाग स्मारक न्यास का अध्यक्ष तथा डॉ. मुखर्जी को सचिव बनाया गया।

वर्तमान में इस स्मारक का संचालन जलियांवाला राष्ट्रीय स्मारक न्यास कर रहा है जिसे जलियांवाला बाग राष्ट्रीय मेमोरियल अधिनियम-1951 के तहत गठित किया गया है।

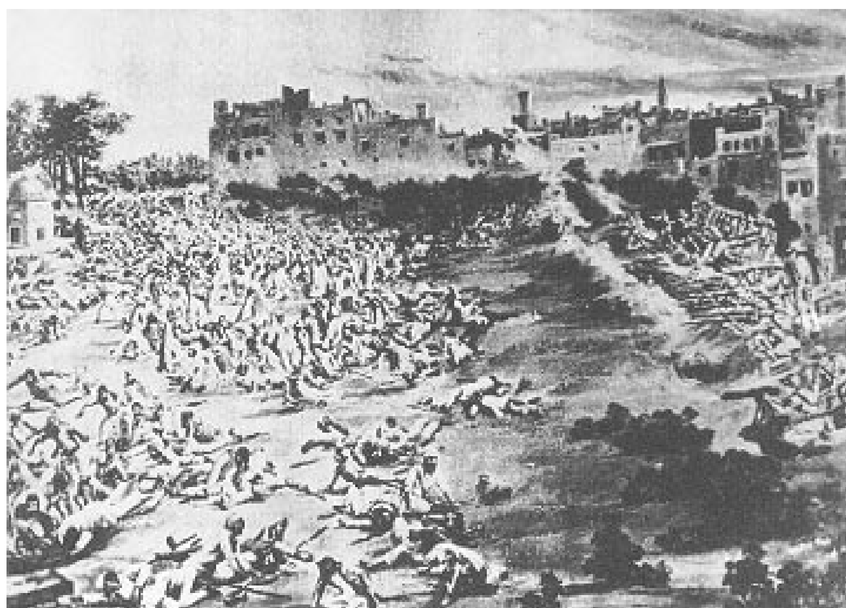
आज यह स्थल एक प्रमुख स्थल की सूची में आया है जहां प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में देशी-विदेशी आकर शहीदों को अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं। स्थल के मध्य बनी ज्वाला स्वरूप प्रतीक में उन निर्दोष व्यक्तियों को सम्मान व्यक्त किया है जिनकी बदौलत आज हम स्वतंत्रता की हवा में विचरण कर रहे हैं।

सौ वर्ष पूर्व दीवारों में गोलियों के निशानों को भी सहेज कर रखा गया है। इस स्थल पर वह कुआं भी है, जहां सैकड़ों लोगों ने कूद कर जान बचाने की कोशिश की गई थी। संग्रहालय में संपूर्ण घटनाक्रम को दर्शाया गया है।

13 अप्रैल, 2019 को राष्ट्र जलियांवाला गोलीकांड की जयंती मनाई गई। कृतज्ञ राष्ट्र उन शहीदों को नमन करता है उनकी शहादत पर हर भारतीय को नाज है।

संदर्भ :

The Sunday Tribune, Chandigarh, 5 August 2018



आलेख

पहाड़ी रियासतों ने देश को दिया एकजुटता का संदेश

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

भारतवर्ष में ब्रिटिश राज के दौरान हिमाचल की जनता दोहरी और तिहरी दासता में जकड़ी रही। पंजाब हिल स्टेट्स तथा शिमला हिल स्टेट्स में अंग्रेजों ने देशी रियासतों को अपने अधीन कर स्वायत्त छोड़ दिया। अतः राजाओं के राज कायम रहे, किन्तु ब्रिटिश राज के अधीन। बहुत सी छोटी-छोटी ठकुराइयां बड़ी ठकुराइयों या रियासतों के माध्यम से सरकार को कर देती थीं। ब्रिटिश सरकार ने स्वायत्तता के बदले वार्षिक कर, आवश्यकता पर सैनिक सहायता तथा बेगार ली। अलबत्ता बेगार की शर्त बाद में कर बढ़ा कर समाप्त कर दी। राजाओं के प्रशासन में अंकुश लगाने के लिए वजीर या मैनेजर तैनात किए गए और सलाहकार या प्रशासन काउंसिल बनाई। ब्रिटिश सरकार द्वारा सड़कें बनाने, स्कूल, औषधालय, डाकघर, बैंक खोलने, प्रशासन आधुनिक ढंग से चलाने के तौर तरीके भी अपनाए गए किन्तु समय-समय पर कर बढ़ाने, अव्यवस्था के बहाने या वारिस न होने के बहाने राज्य छीनने आदि की नीतियों से परेशानियां भी बढ़ीं। रियासतों में स्वतंत्रता संग्राम की अलख से पहाड़ी जनमानस एक हुआ तथा इसी की परिणति थी कि 15 अप्रैल, 1948 को 30 छोटी-बड़ी रियासतों से हिमाचल का उदय हुआ। रियासतों के विरुद्ध लोगों का संघर्ष स्वतंत्रता संग्राम के साथ जारी रहा। यहां के भोले-भाले लोगों ने विविध संस्कृति, परंपराओं तथा अलग बोली के बावजूद एकजुटता का संदेश दिया।

सुकेत

सुकेत में राजा उग्रसेन (1862) के समय वजीर नरोत्तम के विरुद्ध विद्रोह हुआ जिसमें टिक्का रूद्रसेन भी वजीर के खिलाफ था। नरोत्तम वजीर को हटा कर ढुंगल को वजीर लगाया गया। ढुंगल ने 'डांड' लगाया जो ब्राह्मण तथा राजपूत परिवारों से नहीं लिया जाता था। ढुंगल की तानाशाही नीति से प्रजा परेशान हो गई। ढुंगल वजीर ने एक बार गढ़ चवासी में दरबार लगाया। प्रजा ने विद्रोह कर दिया और भारी संख्या में लोगों ने वजीर को गढ़ चवासी में घेर लिया और बारह दिनों तक घेरे रखा। अंततः राजा उग्रसेन ने वजीर को छुड़ाया। उसे बीस हजार रुपए जुर्माना तथा नौ महीने की सजा सुनाई। उसके भाई लौंगू को वजीर बनाया गया। सन् 1878 में राजा रूद्रसेन और ढुंगल वजीर ने चार रुपए प्रति 'खार अन्न' लगान लगाया जो बाद में बढ़ा कर आठ रुपए प्रति खार 'अन्न कर' दिया गया। खार अन्न लगभग सोलह मन के बराबर था। ढुंगल वजीर को राजा उग्रसेन के समय तानाशाही के कारण हटा दिया था। इसने लकड़ी, घास, पशुधन पर भी कर लगा दिया। प्रजा ने राजा रूद्रसेन से प्रार्थना की किन्तु कोई असर नहीं हुआ अतः मियां शिव सिंह के नेतृत्व में प्रजा ने विद्रोह कर दिया। मियां शिव सिंह तथा विद्रोहियों को राजा ने रियासत से निकाल दिया। उधर करसोग के किसानों ने भी विद्रोह कर दिया। रियासत के दूसरे भागों में भी विद्रोह हुआ। अंततः जालंधर का कमिश्नर सुकेत आया और उसने ढुंगल वजीर को हटा कर रामदित्तामल को वजीर बनाया। विद्रोहियों को कड़ी सजा दी गई। किन्तु विद्रोह कम नहीं हुआ। राजा रूद्रसेन को लाहौर जाना पड़ा और प्रशासन ब्रिटिश सरकार ने संभाला। जांच के बाद मियां शिव सिंह को कांगड़ा से वापिस बुलाकर मैनेजर और राजा के चाचा जगत सिंह को मैनेजर बनाया।

अक्तूबर 1824 में सुकेत में पुनः विद्रोह हुआ। राजा लक्ष्मण सेन के समय में राज्य में भ्रष्टाचार तथा अव्यवस्था के कारण एक युवक रत्न सिंह ने विद्रोह किया। रत्न सिंह के साथ टीटा, लुहारू, थूल्लू, सिधु आदि भी शामिल हुए। 14 नवंबर 1924 को चंद्रपुर की सभा में केवल चौदह व्यक्ति थे किन्तु जब ये लोग नारे लगाते हुए राजधानी चंदरोखड़ी की ओर चले तो कई लोग साथ चलते गए और लगभग दो सौ युवक हो गए। इन लोगों ने कचहरी, थाने और खजाने का घेराव किया, थानेदार हीरा सिंह और सुपरिटेंडेंट हरद्वारी लाल की पिटाई की गई। इस विद्रोह के कारण भ्रष्ट अधिकारी मंडी भागे और राजा ने अपने महल की सुरक्षा के कड़े प्रबंध किए। दूसरे दिन पुनः जनता एकत्रित हुई और रियासत के वजीर, गोवर्धन कायथ और फिथू मुंशी की पिटाई हुई। अतः यह आंदोलन फैलता गया और पांगणा, बल्ह, जैदेवा, करसोग, डेहर के हजारों लोग राजधानी की ओर बढ़े। राजा ने ब्रिटिश सरकार से सेना मंगवा ली। अतः 10 दिसंबर 1924 को डी.एस. मुकंजी सेना लेकर आया। इस मुठभेड़ में कपूरू नाम के व्यक्ति ने मुकंजी को कमर पर लात मारी। मुकंजी ने अपनी सेना पीछे हटा ली और धर्मशाला से अतिरिक्त सेना मंगवाई। तीसरे दिन कर्नल मिंचिन गोरखा और गोरों की सेना लेकर आया। कर्नल मिंचिन की सेना ने राईफल और गोला बारूद के साथ पोजिशन ले ली। भारी सेना को देखकर खून

खराबे को टालने के लिए रत्न सिंह ने आत्मसमर्पण का निर्णय लिया। सेना ने रत्न सिंह तथा उसके साथी नेताओं लुहारू, सिधु राम, कृष्ण, अर्जुन, कपूरू, टीटा, थूल्लू को गिरफ्तार कर लिया। 6 अप्रैल 1925 को चार आंदोलनकारियों को 6 वर्ष, छह को 5 वर्ष तथा अट्ठारह को 4 वर्ष, ग्यारह को 3 वर्ष, दो को 2 वर्ष की कड़ी सजा सुनाई गई। इन्हें बिलासपुर से नालागढ़ ले जाकर जालंधर, लायलपुर, मुल्तान की जेलों में रखा गया।

मंडी

राजा भवानी सेन के समय (1909) मंडी में भ्रष्ट अधिकारियों के कारण जनता रुष्ट हो गई। वजीर जीवानंद पाधा ने किसानों का शोषण किया और अनाज के व्यापार पर नियंत्रण कर लिया। उसने अपने भाई को रियासत में सेना का मुख्य कमांडर बना दिया, कई सिफारिशी अधिकारी नियुक्त किए। इस भ्रष्टाचार के खिलाफ सरकाघाट के शोभा राम ने राजा से शिकायतें कीं किन्तु भवानी सेन ने सुनवाई नहीं की। शोभा राम ने पहली बार बीस आदमी, दूसरी बार पचास तथा तीसरी बार चार सौ व्यक्ति भेजे किन्तु सुनवाई के बदले किसानों को जेल में डाल दिया गया। अंत में शोभा राम दो हजार व्यक्तियों को लेकर मंडी पहुंचा और तहसीलदार हरदेव तथा कोर्ट कचहरी व थाने पर कब्जा कर लिया। मंडी में शोभा राम का राज चलने लगा। राजा ने ब्रिटिश सरकार से सहायता मांगी। ब्रिटिश सरकार ने 32 पायनियर्ज रेजीमेंट की कंपनियां भेजीं। जालंधर के कमिश्नर ने आठ दिन तक पड्डल में दरबार लगाया। शोभा राम ने शिकायतें रखीं। अंततः जीवानंद पाधा को हटा कर मियां इंद्र सिंह को वजीर तैनात किया। टिक्का राजेंद्र सेन को सलाहकार नियुक्त किया। जालंधर के कमिश्नर के जाने के बाद रियासती सरकार ने शोभा राम तथा अन्य लोगों को जेल में डाल दिया।

इसी वर्ष दिसंबर में बल्ह के डोडावन के किसानों ने विद्रोह किया। सरकार ने भूमि तथा वन संबंधी गलत कानून बनाए जिसके विरोध में विद्रोह हुआ जिसका नेतृत्व बडसू गांव के सिद्धु खराड़ा ने किया। सरकार द्वारा यह आंदोलन दबा दिया गया।

बुशहर में दूम्ह

पहाड़ी रियासतों में राजाओं के खिलाफ पहले से ही विद्रोह होते रहते थे। इन्हें दूम्ह कहा जाता। सन् 1859 में बुशहर में विद्रोह हुआ। राजा शमशेर सिंह ने सरकार के निर्देशानुसार भू-बंदोबस्त करवाया और लगान नकद लिए जाने के आदेश दिए। पहले लगान, जो उपज का पांचवा भाग था, घी-तेल, दूध, भेड़, ऊन आदि के रूप में लिया जाता था।

इस आंदोलन का मुख्य केंद्र रोहडू बना। दूम्ह की रीत के अनुसार लोग अपने गांव छोड़ कर परिवार और पशुओं सहित जंगल में जाकर रहने लगे। गांव के गांव खाली हो गए। लोगों ने कर देना तथा राजाज्ञा मानना बंद कर दी। फसलें नष्ट होने, लगान बंद होने से राज्य में हड़बड़ी फैल गई। अतः शिमला स्टेट्स के सुपरिटेंडेंट जी.सी. बार्नस ने बुशहर जा कर विचार-विमर्श किया। सुपरिटेंडेंट ने प्रजा की तीनों मांगे मान लीं। ये मांगें लगान व्यवस्था को समाप्त करना, लगान को परंपरा के अनुसार वस्तुओं के रूप



में लेना तथा खानदानी वजीर तैनात करना थीं।

बुशहर की भांति सन् 1877 में नालागढ़ में भी विद्रोह हुआ। राजा इशरी सिंह के वजीर गुलाम कादिर खान ने भूमि लगान बढ़ा दिया और नए कर लगाए। प्रजा ने राजा से विनती की किन्तु कोई असर न हुआ। अतः प्रजा ने लगान देना बंद कर दिया। जुलूस निकालने आरंभ किए, अधिकारियों का घेराव किया जाने लगा। अतः शिमला के सुपरिटेंडेंट पुलिस के साथ नालागढ़ पहुंचे। आंदोलनकारियों को हिरासत में लिया गया। किन्तु वजीर गुलाम कादिर खान को रियासत से निकाल दिया गया और लगान में भी कमी की गई। आंदोलनकारियों को भी रिहा कर दिया गया।

सन् 1895 में चंबा में किसानों ने आंदोलन किया। चंबा के राजा शाम सिंह तथा वजीर गोबिंद राम ने लगान में बढ़ोतरी कर दी और बेगार भी अधिक ली जाने लगी। परिवार के एक व्यक्ति को वर्ष में छः महीने राजा को बेगार देनी पड़ती थी। इन्हें मजदूरी तो क्या खाना भी नहीं दिया जाता। बेगार प्रथा से ब्राह्मण तथा कुलीन राजपूत ही मुक्त थे। जब राजा ने प्रजा की बात नहीं सुनी तो असहयोग आंदोलन आरंभ हुआ। भटियात वजीरी का बलाणा गांव इस आंदोलन का केंद्र बना। लगान लेने वाले अधिकारियों को गांव में घुसने नहीं दिया गया। बेगार देनी बंद कर दी। ब्रिटिश सरकार ने इस आंदोलन की जांच के लिए एक आयोग बनाया। आयोग ने मांगें मनवाने का आश्वासन दिया तो आंदोलनकारी ढीले पड़ गए। इस बीच बलाणा गांव के लारजू, बस्सी के किरलू और बिलू को पकड़ कर जेल में डाल दिया। पुलिस ने गांव वालों को डराया धमकाया और आंदोलन दबा दिया गया।

बिलासपुर

राजा अमर चंद के समय सन् 1883 में एक आंदोलन हुआ जिसे 'झुग्गा' सत्याग्रह के नाम से जाना जाता है। राजा तथा वजीर व कर्मचारियों के भ्रष्ट होने से प्रशासन में अव्यवस्था फैली हुई थी। अतः ब्राह्मणों तथा पुरोहितों ने प्रजा के साथ मिलकर आंदोलन किया। कोट, लुलहाण, गेहड़वीं तथा पंडतेहड़ा आदि गांवों के ब्राह्मण गेहड़वी में एकत्रित हुए और झुग्गे अर्थात् घासफूस की झोपड़ियों में रहने लगे। अपने-अपने झुग्गों के ऊपर उन्होंने कुल देवताओं के झंडे लगाए। ब्राह्मण लोग वहां भूखे प्यासे बैठे रहे। राजा ने इनकी दुख तकलीफ जानने के बजाय तहसीलदार निरंजन सिंह को पुलिस के साथ इन्हें गिरफ्तार करने भेज दिया। पुलिस को आता जान कर इन्होंने अपने-अपने झुग्गों में आग लगा दी और उसमें जल कर राख हो गए। इस हृदयविदारक दृश्य से प्रजा भड़क उठी और पुलिस तथा प्रजा में मुठभेड़ हुई जिसमें कई लोग मारे गए। गुलाबा राम नड्डा ने तहसीलदार निरंजन सिंह को गोली मारी। घायल निरंजन सिंह को लोगों ने उठाकर जलते हुए झुग्गों में फेंक दिया। अतः पुलिस भाग गई। राजा ने ब्रिटिश सरकार से सहायता मांगी। अतः अधिक पुलिस गेहड़वीं भेजी गई और विद्रोह दबा दिया। ब्राह्मणों के 140 परिवार कांगड़ा चले गए। गुलाबा राम नड्डा को बंदी बनाकर सरीऊन किले में रखा गया। सन् 1884 में कांगड़ा गए ब्राह्मण परिवारों को वापिस बुलाया गया और मृतकों की विधवाओं को पेंशन लगाई गई। भूमि के लगान को नकद कर के बेगार भी बंद की गई।

फरवरी 1930 में भू-बंदोबस्त, कर लगाने के विरोध में विद्रोह किया गया। भू-बंदोबस्त का खर्चा प्रजा पर पड़ने के कारण बहादुरपुर के लोगों ने विद्रोह कर दिया और बंदोबस्त के कर्मचारियों को दूध, घी, रोटी देनी बंद कर दी। उनके ठहरने तथा लकड़ी पानी की निशुल्क व्यवस्था से भी इंकार कर दिया। उनके बस्ते फूंक दिए, लट्ठे और कागजात जला दिए। दूसरे स्थानों में भी ऐसा ही किया गया। सभी आंदोलनकारियों ने 'लूणलोटा' कर लोटे में पानी और नमक मिलाकर चखी जिससे वे आंदोलन के सहभागी बने। हर जलसे में लूण लोटा किया जाता और पानी चखा जाता। कई दिनों तक बंदोबस्त नहीं हो पाया। इस आंदोलन में गोपाल दत्त (कनौण सदर), काहना राम (बहादुरपुर), गणेशा नंबरदार (साईं कनैता), रविदत्त (झंडूता), कालिदास (सदर), राम दित्ता (कंदरौर) आदि ने भाग लिया।

सरकार ने कुछ रियायतें दी किन्तु आंदोलनकारी नहीं माने। इन्हें बिलासपुर बुलाया गया। राजा विजय चंद ने इस बीच लाहौर से बलोच पुलिस रेजीमेंट बुला ली और निहत्थे आंदोलनकारियों पर लाठियां बरसाई और उन्हें गिरफ्तार किया गया। पुलिस ने गांवों में जाकर भी लूटपाट की। पैंतालीस लोगों पर देशद्रोह का मुकदमा चला। पुलिस के डंडा चार्ज से इस आंदोलन का नाम 'डांडरा आंदोलन' पड़ा। आंदोलनकारियों को कैद व जुर्माना किया गया। सजा पाने वालों में काहना राम (खारसी), सीहणू राम (खलोटा), गणेशा नंबरदार (साईं कनैता), घूंघर (कनौण), सुदामा (माहमणु), कैला (सुई), गोवर्धन (कंदरौर), गोकुल (कल्लरी), तिखू (रानी कोटला), सुंदर (पंजगाई) तथा भंगु, गोकुल, अर्जुन, सुंदर, धौलू, सुदामा, गोसाऊं, नानक, निरंजन आदि थे। प्रमुख आंदोलनकारियों को ब्रिटिश सरकार के हवाले किया गया और इन्हें फरीदकोट जिले में कैद रखा गया। जमीन जायदादें जब्त की गईं।

हिमाचल में स्वाधीनता आंदोलन की शुरुआत

सन् 1905 में ऊना के बाबा लछमन दास अपनी पत्नी दुर्गा बाई सहित स्वाधीनता संग्राम में कूदे। उन्होंने सरदार भगत सिंह के चाचा अजीत सिंह से प्रेरणा लेकर पुलिस की नौकरी छोड़ दी। लाहौर में लाला लाजपतराय और महात्मा हंसराज से भेंट करने के बाद बाबा लछमन दास देश सेवा में लग गए। सन् 1906 में लाला लाजपतराय मंडी आए। मंडी में आर्य समाज के प्रचार के पीछे संगठन भी स्थापित हुआ और गुप्त मंत्रणाएं होने लगीं। सन् 1907 में नरम दल तथा गरम दल बन गए थे। अतः बाबा लछमण दास सरकार विरोधी गतिविधियों में सक्रियता से लगे रहे। इन्हें 1908

में सरकार ने पकड़ कर दो वर्ष तक लाहौर जेल में बंदी बनाए रखा। सन् 1910 में वे रिहा हो कर ऊना लौटे। आर्य समाज के सदस्य के रूप में उन्होंने समाज सुधार का कार्य जारी रखा। पत्नी दुर्गा बाई ने 'आर्य महिला मंडल' बनाया।

मंडी में रानी खैरागढ़ी ललिता कुमारी ने स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया। सन् 1912 में मंडी के राजा भवानी सेन की मृत्यु के बाद ललिता कुमारी ने लाला लाजपतराय के संगठन को सहायता दी।

मंडी में एक ओर स्वाधीनता सेनानी हरदेव राम ने अध्यापक की नौकरी छोड़ कर अमेरिका तथा जापान भ्रमण किया। जापान में हरदेव की भेंट गद्दर पार्टी के नेता मथुरा सिंह से हुई और उन्होंने गद्दर पार्टी अपना ली। वे सन् 1914 में क्रांतिकारी बन भारत लौटे। मंडी में भी क्रांतिकारी गतिविधियां तेज हुईं। यहां 'गद्दर की गूंज', 'गद्दर संदेश', 'ऐलान-ए-जंग- जैसी पत्र-पत्रिकाएं मिलने लगीं। मंडी में बम, राईफल आदि शास्त्रास्त्र भी इकट्ठे किए जाने लगे। इस संगठन में मियां जवाहर सिंह, सिधु खराड़ा, शारदा राम, बद्रीनाथ, दलीप सिंह, लौंगू राम आदि थे। रानी ललिता कुमारी उन्हें आर्थिक सहायता देती थी। क्रांतिकारियों ने सुपरिंटेंडेंट, वजीर तथा अन्य अधिकारियों को मारने की योजना बनाई। क्रांतिकारियों ने खजाने को लूटा। इस योजना में दलीप सिंह तथा पंजाब के निधान सिंह पकड़े गए और भेद खुल गया अतः मियां जवाहर सिंह, बद्रीनाथ, शारदा राम, ज्वाला सिंह, लौंगू राम पकड़े गए। रानी ललिता कुमारी को देश निकाला दिया गया। सिधु खराड़ा भाग निकला।

गद्दर पार्टी के हरदेव राम के मुंबई से मंडी आने पर गद्दर पार्टी की गतिविधियां तेज हुईं। हरदेव राम को मंडी में भाई हिरदा राम का सहयोग मिला। हरदेव राम ने मंडी, सुकेत, कांगड़ा तथा शिमला में गद्दर पार्टी का प्रचार किया। 8 मार्च 1915 को हरदेव राम के घर छापा मारा गया। वे पुलिस से बच निकले। क्रांतिकारी नेता रासबिहारी बोस भी इन दिनों कांगड़ा, कुल्लू और लाहौल स्पीति में छिपे रहे। हरदेव राम शिमला के पहाड़ों से बद्रीनाथ तथा गंगोत्री तक जा पहुंचा। वहां स्वामी भूपानंद महाराज से दीक्षा ली और स्वामी कृष्णानंद के रूप में स्वाधीनता आंदोलन में भाग लिया।

भाई हिरदा राम मंडी में गद्दर पार्टी के एक सक्रिय कार्यकर्ता थे जो दिसंबर 1914 में अमृतसर गए। वहां उन्होंने रासबिहारी बोस, मथुरा सिंह, करतार सिंह सराबा, भाई परमानंद से भेंट की और बम बनाने का प्रशिक्षण लिया। हिरदा राम के बनाए बमों का प्रयोग लाहौर तक किया गया। फरवरी 1915 में मूला सिंह नाम के क्रांतिकारी के पकड़े जाने पर अन्य क्रांतिकारी भी पकड़े गए। भाई हिरदा राम तथा पिंगले के पास भी बम बरामद हुए। 26 अप्रैल 1915 को लाहौल सेंट्रल जेल में मुकदमे की सुनवाई के बाद डॉ. मथुरा सिंह, करतार सिंह, भाई हिरदा राम और पिंगले को फांसी की सजा हुई। हिरदा राम की पत्नी सरला देवी की अपील पर फांसी की सजा को आजीवन कारावास में बदला गया और इन्हें काले पानी की सजा पर अंडेमान भेज दिया।

सिद्धु खराड़ा जो कांगड़ा की ओर भागा था, दो वर्ष बाद पकड़ा गया। उसे पकड़ कर मंडी लाया गया और 30 अप्रैल 1917 को मुकदमा चलाया गया। 4 मई 1917 को बम बनाने, खजाना लूटने तथा वजीर और अंग्रेज रेजीडेंट को मारने के षड्यंत्र में सिद्धु खराड़ा तथा उसके पुत्र परिसहाय को दोषी ठहराया। परिसहाय को आजीवन कारावास तथा संपत्ति जब्त करने और सिद्धु खराड़ा को काले पानी की सजा दी गई।

अक्तूबर 1915 में प्रथम विश्व युद्ध के समय हिमाचल प्रदेश की रियासतों की ओर से हजारों सैनिकों ने ब्रिटिश सेना की ओर से मैसोपोटामिया में युद्ध में भाग लिया। कांगड़ा के राजा जयचंद, नूरपुर के मियां जगत सिंह और सिरमौर के विक्रम सिंह ने बहादुरी का परिचय दिया।

इसी बीच ऊना में ऋषिकेश लट्ठ भूमिगत हुए और ईरान में गद्दर पार्टी में शामिल हुए। 1916 के ही लगभग डाडासीबा (कांगड़ा) के बाबा कांशी राम लाहौर में लाला हरदयाल और अजीत सिंह से प्रभावित हो स्वाधीनता आंदोलन में शामिल हुए। सन् 1919 में इन्हें दो वर्ष की कैद की सजा हुई। पालमपुर के लाला बाशीराम ने अध्यापक की नौकरी छोड़ कर स्वाधीनता संग्राम की राह ली। सन् 1918 में नादौन के यशपाल क्रांतिकारी आंदोलन में कूदे। उधर ऊना के बाबा लछमन दास तथा पत्नी दुर्गा बाई ने कांग्रेस में आकर खादी पहनना शुरू किया। दुर्गाबाई ने 'महिला खादी संगठन' बनाया। नाहन के क्रांतिकारी चौधरी शेरजंग ने कांग्रेस की सदस्यता ली। पालमपुर के लाला बाशी राम भी कांग्रेस में शामिल हुए।

सन् 1920 तक प्रदेश में आजादी की चेतना पूरी तरह जागृत हो गई। मंडी में स्वामी कृणानंद, रानी खेरागढ़ी (जो लखनऊ चली गई थी), सिरमौर में शेरजंग, राजेंद्र दत्त, कांगड़ा में पंचम चंद कटोच, सर्वमित्र, लाला बाशी राम, कृपाल सिंह, थोहलो राम, सिद्धु राम आदि कांग्रेस आंदोलन में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेने लगे।

स्वाधीनता आंदोलन और शिमला

सन् 1883-85 के बीच ए.ओ. ह्यूम द्वारा शिमला रॉथनी कैसल में कांग्रेस की स्थापना के विचार और प्रथम अक्तूबर 1906 को वायसराय द्वारा कांग्रेस के समकक्ष मुस्लिम लीग की स्थापना की सलाह से यहां दो राष्ट्रीय संस्थाओं के बीज प्रस्फुटित हुए।

23 जुलाई 1888 को लार्ड डफरिन तथा लेडी डफरिन के ऑबजरवेट्री हिल पर वायसरीगल लॉज में प्रवेश के बाद शिमला राजनैतिक गतिविधियों का गढ़ बना। वायसरीगल लॉज के ब्रिटिश राज की शक्ति का केंद्र बनने से यहां स्वाधीनता के शीर्षस्थ

नेताओं का आगमन हुआ जिससे प्रदेश के स्वाधीनता सेनानियों को भी प्रेरणा मिली।

शिमला में प्रमुख नेताओं का आगमन

गांधी जी 23 मई 1921 को पहली बार शिमला पधारे। गांधी जी का शिमला के लोगों ने बड़ी गर्मजोशी से स्वागत किया। ईदगाह में एक बड़ा जलसा किया गया। इस जलसे में मौलाना मुहम्मद अली, शौकत अली ने भाषण दिए। विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गई। गांधी जी के साथ लाला लाजपतराय, मदन मोहन मालवीय, लाला दुनी चंद अम्बालवी भी थे। गांधी जी के आगमन से स्थानीय नेताओं में एक नया जोश भरा। शिमला में कौमी गीत गाए जाने लगे, प्रभात फेरियां होने लगीं। असहयोग आंदोलन में तेजी आई।

शिमला के सालिगराम गुप्ता ने 'तिलक स्वराज्य फंड' के लिए चंदा इकट्ठा करना आरंभ किया, जतोग के ज्योतिप्रसाद टूटू सरकारी नौकरी छोड़ आंदोलन में शामिल हुए। कुनिहार के बाबू कांशी राम और कोटगढ़ के सत्यानंद स्टोक्स ने बेगार प्रथा के खिलाफ आंदोलन छेड़ा। शिमला के गंज मैदान में एक प्रतिबंधित पुस्तक 'जख्मी पंजाब' पर ड्रामा खेला गया।

इंग्लैंड के युवराज का दिसंबर 1921 में शिमला आगमन का काले झंडे दिखा कर विरोध किया गया। शहर में हड़ताल हुई। इसी वर्ष मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना शिमला आए। जिन्हा जी के साथ उनकी पत्नी रूति जिन्ना भी थी। वायसराय लॉर्ड रीडिंग के रात के भोजन पर रूति जिन्ना ने वायसराय से हाथ न मिला कर हाथ जोड़ कर नमस्कार किया।

जून 1927 में कुछ राष्ट्रीय नेता पुनः शिमला पधारे जिनमें लाला लाजपतराय, महात्मा हंसराज, मदन मोहन मालवीय, लाला दुनी चंद अम्बालवी आदि थे। ईदगाह में एक जलसा किया गया जिसमें लाला लाजपत राय ने भाषण दिया। लाला जी ने आर्य समाज के वार्षिक उत्सव में भी भाग लिया।

लाला लाजपत राय के प्रभाव से सूरतराम प्रकाश (ठियोग), देवी दास मुसाफिर (मधान), महाशय तीर्थ राम, ओयल, ऊना, पं. पदम देव (बुशहर) भी कांग्रेस समर्थक बन कर स्वाधीनता संग्राम में शामिल हुए।

मार्च 1931 में गांधी जी का दोबारा शिमला आना हुआ। इस बार वे 'गांधी इरविन समझौता' के लिए शिमला पधारे। वे राय बहादुर मोहन लाल एडवोकेट के बंगले में ठहरे। इनके साथ पं. जवाहर लाल नेहरू, खान अब्दुल गफ्फार खान, अब्दुल कलाम आजाद, मदन मोहन मालवीय, डॉ. अंसारी भी थे। दूसरे दिन गां धी जी का रिज मैदान में भाषण हुआ। इस अवसर पर गांधी टोपी तथा खादी पहने कई स्वयंसेवक शिमला में खड़े किए गए। शिमला कांग्रेस के लाला गेंडामल, द्वारिका प्रसाद, मैलवी गुलाम मुहम्मद, कन्हैया लाल बुटेल, सालिगराम गुप्ता, मेला राम सूद, सुंदरदास लखनपाल, मौलवी अब्दुल गनी आदि ने पूरी व्यवस्था की। भागमल सौहटा, सूरतराम प्रकाश, देवी दास मुसाफिर, हरिराम शर्मा, राजेंद्र दत्त शर्मा ने इन राष्ट्रीय नेताओं से मुलाकात की।

गांधी इरविन समझौता 5 मार्च 1931 को हुआ। समझौते के अनुसार सविनय अवज्ञा आंदोलन में बंदी बनाए हजारों लोग रिहा किए गए। रिहा किए गए सत्याग्रहियों के स्वागत हेतु 'स्वराज्य सभा शिमला' बनाई गई। इसकी व्यवस्था भागीरथ लाल अजिज, सालिगराम गुप्ता, नंद लाल आढ़ती, सुंदरदास लखनपाल, कन्हैया लाल बुटेल आदि ने की। सत्याग्रहियों की रिहाई जलसे जलूसों में बदली।

पंजाब के नेता सरदार सरदूल सिंह ने जून 1933 में गंज बाजार में भाषण दिया। शिमला के डिप्टी कमिश्नर ने उन्हें मंच पर आकर भाषण बंद करने के लिए कहा। इस हाथापाई के बीच जनता ने नारे लगाए और फसाद हो गया। सरकार द्वारा लाठी चार्ज किया गया। कई नेता गिरफ्तार कर लिए गए।

जून 1943 में शिमला हिल्ज की कांग्रेस का नेतृत्व राजकुमारी अमृतकौर ने संभाला क्योंकि स्थानीय नेता जेलों में बंद थे। इसी समय वायसराय लार्ड लिनलिथगो को मारने की योजना बनाई गई। पं. पदम देव, हीरा सिंह पाल, ज्ञान चंद टूटू आदि के बंदी होने पर शिव राम ठाकुर, सत्यदेव बुशहरी, महावीर सिंह, बाबू शिव दत्त ने वायसराय को मारने की योजना में भाग लिया। 23 जून 1943 को वायसराय का पब्बर नदी में ट्राउट मछली के शिकार का कार्यक्रम बना। इन लोगों ने हाटू के जंगल में वायसराय को मारने की योजना बनाई। सत्यदेव बुशहरी तथा कोटगढ़ के फौजी जवान शिव राम ठाकुर को यह कार्य सौंपा गया। ये लोग हाटू के जंगल में छिपे रहे। जब वायसराय का काफिला घोड़ों पर गुजरा तो घनी धुंध छाई थी जिससे कुछ नजर नहीं आया। अतः योजना विफल हो गई।

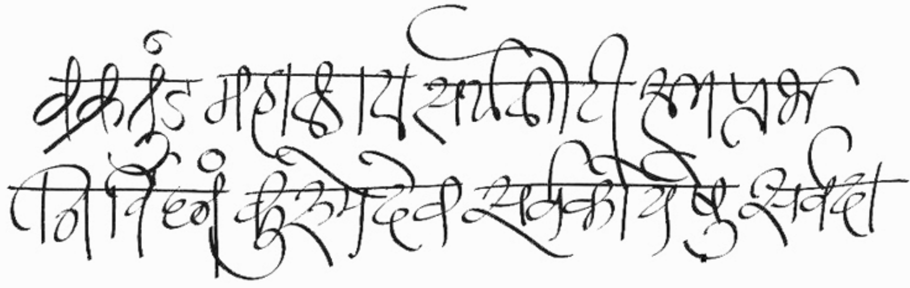
23 जून 1945 को वायसराय लार्ड वेवल ने सर्वदलीय सम्मेलन शिमला में बुलाया। यह सम्मेलन हिन्दु मुस्लिम समस्या के लिए था। इस सम्मेलन में सभी दलों के नेता शिमला पधारे। महात्मा गांधी, पं. जवाहर लाल, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, बल्लभ भाई पटेल, अब्दुल कलाम आजाद, सी. राज गोपालचार्य, खान अब्दुल गफ्फार खां, आचार्य कृपलानी, गोबिंद बल्लभ पंत, पट्टाभि सीता रामैय्या, शंकर राव देव, सुचेता कृपलानी, सरोजिनी नायडू, आसफ अली, अरूणा आसफ अली, मीराबेन आदि कांग्रेस नेताओं के अतिरिक्त मुस्लिम लीग के मुहम्मद अली जिन्ना, लियाकत अली खां, शाहनवाज खां तथा अकाली दल के मास्टर तारा सिंह भी पधारे।

(शेष पृष्ठ 50 पर)

संस्कृत भाषा का मान/सम्मान

भौतिकता और आध्यात्मिकता को गाते दो ध्रुवांतों का सापेक्षी भाव

◆ डॉ. ओम्प्रकाश सारस्वत



अपने विश्व में प्रसृत आधिकारिक ध्वनियों⁄ ध्वनि समूहों पर विमर्श कर, उनका एक सार्थक शब्द व्यवस्था के अंतर्गत अर्थबोध कराने वाली सुसंस्कृत, संस्कारवान् भाषा का नाम है संस्कृत। संस्कृत, जो ध्वनियों से लेकर, अर्थों और अर्थसंहिति को अनेक आकाशों में विस्तारित करने वाली वह समर्थ भाषिकी है, जो अनेकानेक तपःपूत अथच साधनासिद्ध आत्माओं के हृदयों⁄कंठों से निःसृत स्वरावलियों के विविध अर्थप्रसूनों को विकसित करती है। संस्कृत ने गहरे-से-गहरे और विस्तृत-से-विस्तृत आशयों⁄अर्थों के दिक् की पहचान की है। संसारभर में यही एक ऐसी भाषा है, जिसने भौतिकता और आध्यात्मिकता को गाते हुए दो ध्रुवांतों में स्पर्धा भी दर्शाई और परस्परापेक्षी अस्तित्व भी स्थापित किया। यह सूक्ष्म में वृहत्तम और अणु में परम-अणु को व्याख्यायित करने वाली ऐसी भाषा है जो शब्दों में विद्यमान् विशाल अर्थसत्ता को उद्घाटित भी करती है और उसी अर्थसत्ता से एक विशाल संस्कृति का आकार भी रचती है।

हिमाचल प्रदेश की सरकार ने, ऐसी इस भाषा को, द्वितीय सरकारी भाषा के रूप में, मान्यता देकर, एक महान् भाषारिक्थ की रक्षा की है। सरकार का यह कार्य अभिशंसनीय है और संस्कृत प्रेमी संततियों के लिए पौनःपुण्येन कीर्त्तनीय।

आइए, संसार की अनेक आर्यभाषियों की जननी इस भाषा का संक्षेप में परिचय पाएं...। किसी समय में, आंतरिक समानताओं के कारण, व्यवहार, समुच्यार और अर्थ प्रकार में, कुछ प्राकृतें, समीप होने पर भाषा वैज्ञानिकों के श्रम एवं दूरदर्शिता से, एक वृहद् भाषा के रूप में, समेकित हुई। भाषाशास्त्रियों ने अनेक ध्वनियों को, उपयोगिता, व्यापकता और स्पष्टता के आधार पर एक अक्षर-माला अर्थपर, ध्वनि समूह में संचित किया और उसके आधार पर, उन सबको एक संस्कार देकर, एक प्रतिनिधि भाषा रच डाली। फिर भाषण, लेखन-व्यवहार में यह भाषा ही और और संस्कारित⁄परिष्कृत होकर संस्कृत भाषा कहलाई। संस्कृत शब्द से संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य, इन दो भिन्न-भिन्न-अर्थों का बोध होता है।

भाषा के रूप में संस्कृत के दो रूप हैं - वैदिक अथवा छान्दस् संस्कृत और लौकिक संस्कृत।

वेद चार हैं जिन्हें संहिता ग्रंथ अथवा संहिताएं भी कहा जाता है। इनके नाम हैं - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।

महावैय्याकरण महर्षि पाणिनीय ने, अपने ग्रंथ 'अष्टाध्यायी' में भाषा के दोनों - वैदिक और लौकिक रूपों का भेद स्पष्ट किया है। वेदों के अतिरिक्त शेष संस्कृत साहित्य की भाषा, अलौकिक है। पाणिनीय सूत्रों से अतिरिक्त सारे भाषिक या लिखित शब्द पाणिनीयेतर प्रयोग कहलाते हैं। अष्टाध्यायी ने अधिसंख्य प्राकृत प्रयोगों को संस्कृत प्रयोगों में परिनिष्ठित करके उन्हें, एक श्रेष्ठ भाषा का रूप दिया है। परिनिष्ठित होने से ही संस्कृत भाषा, एक देवभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

रचना की दृष्टि से संस्कृत एक जटिल भाषा है जिसमें आठ



विभक्तियां, छह कारक, दस धातुगण- जो परस्मैपद और आत्मेनपद में विभाजित हैं। ऐसे ही तीन वचन, आदि रूपों में वाक्यों का व्यवहार होता है। जर्मन को छोड़ कर संसार भर की आर्यभाषाओं में कहीं पर भी तीन वचन, नहीं हैं।

संपूर्ण संस्कृत साहित्य, दो भागों में विभक्त है - वैदिक और लौकिक। वैदिक के अंतर्गत चार वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक और उपनिषद सम्मिलित हैं। ऋग्वेद दस मंडलों में विभाजित है और इसमें कुल 1028 सूक्त हैं। सूक्तों की सामग्री ऋचाओं में आबद्ध है। ये ऋचाएं अनुष्टुप, त्र्युष्टुप, जगती एवं गायत्री आदि छंदों में अनुबद्ध हैं। ऋग्वेद की अधिसंख्य ऋचाएं, देवताओं की उपासना, स्तुति एवं प्रार्थनाओं के रूप हैं।

रचना की दृष्टि से संस्कृत एक जटिल भाषा है जिसमें आठ विभक्तियां, छह कारक, दस धातुगण– जो परस्मैपद और आत्मेनपद में विभाजित हैं। ऐसे ही तीन वचन, आदि रूपों में वाक्यों का व्यवहार होता है। जर्मन को छोड़ कर संसार भर की आर्यभाषाओं में कहीं पर भी तीन वचन, नहीं हैं।

यजुर्वेद की दो शाखाएं हैं जिनमें शुक्ल यजुर्वेद और कृष्ण यजुर्वेद है। शुक्ल यजुर्वेद के 40 अध्याय हैं। कृष्ण यजुर्वेद की चार शाखाएं हैं। यजुर्वेद में, ऋक् के अधिसंख्य मंत्र हैं। यजुर्वेद के मंत्रों का विनियोग, यज्ञ के लिए है।

सामवेद में कुल 75 मंत्र अपने हैं, शेष सब ऋग्वेद के मंत्र हैं। ये मंत्र वैदिक गान पद्धति से, यज्ञ के समय गाए जाते हैं।

अथर्ववेद की, शौनक और पैप्पलाद दो शाखाएं हैं। इसकी शौनक शाखा का ही अधिक प्रचार है। इसमें 21 कांड और दस सूक्त हैं। यजुर्वेद और अथर्ववेद, का कुछ भाग गद्य में भी है। अथर्ववेद की विषयवस्तु, जादू-टोना, वशीकरण आदि है। किंतु इसी वेद में, देशप्रेम, राष्ट्रभक्ति तथा जन्मभूमि के प्रति प्रेम, आदर और रक्षा की भावना की ऋचाएं भी हैं।

ब्राह्मणग्रंथों में कर्मकांड की शंकाओं/प्रश्नों पर विचार एवं समाधान संकलित हैं। इन्हीं ग्रंथों से यह पता चलता है कि किस यज्ञ में कौन-से मंत्र का विनियोग होना है। प्रत्येक वेद के अलग-अलग ब्राह्मण हैं। जैसे ऋग्वेद के दो, ऐतरेय और कौशीतकी। यजुर्वेद का एक ही शतपथ ब्राह्मण है।

इसी तरह, सभी वेदों के आरण्यक भी हैं। इनमें वेदों से आए विषयों की विस्तारणा है। वेदों, ब्राह्मणों और आरण्यकों के तीन-तीन मार्गों में मुख्यतः कर्मकांड का ही विषय है। अतः विद्वान लोग इनको क्रमशः मंत्रपरक, विधिपरक और अर्थवादपरक मानते हैं। आर्य समाज के अनुयायी, वेदों को अपौरुषेय और ब्राह्मण ग्रंथों, आरण्यकों और उपनिषद् साहित्य को पौरुषेय साहित्य कहते हैं।

यद्यपि उपनिषद् साहित्य, आरण्यक साहित्य से संबद्ध है, फिर भी इन दोनों का विषय, भिन्न है। उपनिषद् साहित्य में कर्मकांड का विवेचन नहीं है। इनमें, ईश्वर, प्रकृति, आत्मा, परमेश्वर और प्रकृति पर विमर्श है। मनीषियों का मानना है कि कर्मकांड के सम्यक् ज्ञान से स्वर्ग की प्राप्ति होती है किंतु ईश्वर जीवन और प्रकृति का ठीक-ठीक स्वरूप और संबंध जान लेने से मुक्ति मिलती है। इसी मुक्ति को आनंद कहा गया है। उपनिषदों

के ज्ञान को 'ब्रह्मविद्या' के नाम से जाना जाता है। उपनिषद एक सौ आठ हैं जो ईश, कठ, केन आदि हैं। इन सभी उपनिषदों पर विभिन्न भाष्य है। उपनिषदों का विषय अध्यात्म है। उपनिषदों जैसे गूढ़ विमर्श और भाष्य दुनिया के किन्ही ग्रंथों में उपलब्ध नहीं। उपनिषदों पर शंकराचार्य का भाष्य उत्कृष्ट है।

हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली में, वेदों के साथ वेदांगों का भी अध्ययन आवश्यक था। वेदांग छह हैं - शिक्षा, व्याकरण, छंछ, निरुक्त, ज्योतिष और कल्प।

शिक्षा में, वेद में आई हुई ध्वनियों का विवेचन है। व्याकरण में पदों का विश्लेषण और सम्यक् ज्ञान, छंद में, वैदिक मंत्रों का पद विभाग, निरुक्त में वैदिक शब्दार्थों की व्याख्या, ज्योतिष में काल-संबंधी मीमांसा और कल्प में कर्मकांड का विवरण है। इन वेदांगों का बीज हमें ब्राह्मण ग्रंथों में ही उपलब्ध हो जाता है। शिक्षा और व्याकरण का ज्ञान प्रातिशाख्यों से मिलता है। व्याकरण की सर्वोत्कृष्ट कृति आचार्य पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' है जिसका जिक्र हम पीछे कर आए हैं। आचार्य पाणिनि ने, अपने ग्रंथ में समकालीन और कई पूर्ववर्ती व्याकरण के पुरोधा विशेषज्ञों का नाम गिनाया है। हमारे यहां, ईसा से चार शताब्दी पूर्व, व्याकरण पढ़ने-पढ़ाने की परंपरा है।

निदान सूत्रों में, वैदिक छंदों के नाम और लक्षण दिए हैं। ऐसे ही लौकिक छंदों के लिए आचार्य पिंगल का 'छंदःसूत्र' उल्लेख्य ग्रंथ है। ईसा पूर्व, 800 के आस-पास यास्क मुनि का ग्रंथ 'निरुक्त' है जिसमें, वैदिक शब्दार्थों की विवेचना है। यास्क ने अपने से पूर्वकालीन कई आचार्यो का स्मरण किया है। जो वैदिक संहिताओं के गूढ़ार्थ-ज्ञान में दक्ष थे किंतु दुर्भाग्य कि, आज उनके ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं। यास्क मुनि ने, वैदिक शब्दकोष 'निघंटु' में प्राप्त शब्दों की मीमांसा की है और वैदिक ज्ञान को दुनिया के समक्ष रखा है। समय की ठीक परीक्षा और स्थिति को जानने के लिए, आचार्यो ने ज्योतिष, ग्रह-नक्षत्रों की स्थितियों का आकलन किया और विश्व को उनकी सही गतियों-अवस्थाओं से परिचित कराया। आज संसार भारतीय ज्योतिष के द्वारा निर्धारित सूत्रों के बल पर, पृथ्वी और आकाशीय पिंडों का अध्ययन करने में सक्षम हो रहा है। कल्प सूत्रों का व्याख्यानात्मक वर्णन ब्राह्मण ग्रंथों में है।

ये कल्प चार भागों में विभक्त हैं - श्रौत, गृह्य, धर्म और शुल्व। श्रौत सूत्रों में, वैदिक यज्ञ विधान है, गृह्य में जात कर्म आदि संस्कारों की विधि, धर्मसूत्रों में नीति धर्म, रीति-रिवाज और वर्णाश्रमों के कर्तव्य तथा शुल्व ग्रंथों में, यज्ञवेदी के निर्माण की विधियां वर्णित हैं।

संपूर्ण संस्कृत साहित्य, दो भागों में विभक्त है - वैदिक और लौकिक। वैदिक के अंतर्गत चार वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक और उपनिषद सम्मिलित हैं। ऋग्वेद दस मंडलों में विभाजित है और इसमें कुल 1028 सूक्त हैं। सूक्तों की सामग्री ऋचाओं में आबद्ध है। ये ऋचाएं अनुष्टुप, त्र्युष्टुप, जगती एवं गायत्री आदि छंदों में अनुबद्ध हैं। ऋग्वेद की अधिसंख्य ऋचाएं, देवताओं की उपासना, स्तुति एवं प्रार्थनाओं के रूप हैं।

हमारा संस्कृत साहित्य चाहे वह वैदिक हो अथवा लौकिक, विश्वभर के लिए ज्ञानालोक के उदाहरण हैं। इन ग्रंथों का निर्माण तब हो चुका था जब पश्चिम अभी, अपनी आंख खोल रहा था। मैं इस, जानकारी के पश्चात् लौकिक साहित्य के रामायण, महाभारत, गीतादि ग्रंथों तथा भरत के नाट्य शास्त्र, कालिदास के शाकुंतलम्, रघुवंशम्, मारहि के किरातार्जुनीयम्, माघ के शिशुपालवधम्, दूत काव्यों तथा शतकों की लंबी परंपरा, कथा साहित्य, पंचतंत्रम्, बाणभट्ट की कादंबरी एवं हर्ष चरितम्, सारे काव्यशास्त्र, दर्शनों एवं धर्मशास्त्रों की चर्चा में न पड़कर, विषय को अनावश्यक रूप से बढ़ा कर, विदित का पिष्टपेषण नहीं करना चाहता। हमारे देश की प्राचीन सिद्ध विश्लेषण संस्कृत की कोई समकक्षता नहीं है। इसने, भौतिक तत्त्वों/भौतिकता से लेकर, आध्यात्मिकता के गहन-से-गहन और ब्रह्मांड के सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और महत्तम तत्त्वों तक की बारीक पड़ताल की है, जो संपूर्ण मानवता के लिए, उपयोगी है और विश्वमैत्री तथा विश्वबंधुत्व का अचूक उपाय।

वर्तमान हिमाचल सरकार ने, ऐसी सर्वोत्कृष्ट भाषा को एक सरकारी दर्जा, अथवा मान देकर, खुद को भी गौरवान्वित कर, ज्ञान की एक विशाल और प्राचीनतम परंपरा को अधिमान देते हुए, संस्कृतज्ञों और संस्कृत के हिमायतियों का भी हौसला बढ़ाया है। किसी भी उत्कृष्ट/ श्रेष्ठ भाषा की प्रतिष्ठा, चिंतन के अधिष्ठान की सत्ता को समाहित कर, एक दिव्य-ज्ञान के आलोक को सत्कृत किया है।

हिमाचल में भी संस्कृत की एक समृद्ध परंपरा है। यहां संस्कृत के कितने ही महाविद्यालय-विद्यालय हैं जो कुछ प्राइवेट संस्थाओं द्वारा संचालित हैं। जहां कितने ही छात्र इस देववाणी का अध्ययन करके अपनी आजीविका अर्जित कर रहे हैं और इस भाषा का रक्षण भी कर रहे हैं। यहां भी संस्कृत अकादमी है। यहां पर भी संस्कृत के कवि/महाकवि, नाटककार तथा अनेक प्राचीन ग्रंथों के मर्मस्पर्शी विद्वान हैं। वे सब संस्कृतज्ञ और सरकार, इस पुनीत भाषा की संवृद्धि और विकास के द्वितीय भाषा के रूप में सरकारीकरण करने के लिए बधाई और साधुवाद के पात्र हैं।

जी-6, नॉल्सवुड कॉलोनी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 002, मो. 0 94180 54054

आलेख

सांस्कृतिक एकता के मेरूदंड : युगपुरुष श्रीराम

◆ अमरदेव आंगिरस



किसी भी राष्ट्र की पहचान उसका भौगोलिक विस्तार ही नहीं होता, वरन् उस राष्ट्र के जातीय प्रतीक एवं राष्ट्रनायक होते हैं। भारतीय संस्कृति के महानायक श्रीराम, श्रीकृष्ण, महात्मा बुद्ध, महावीर जैन अपने-अपने समय के युगपुरुष रहे हैं और आर्य सभ्यता के महानायक रहे हैं। इन महापुरुषों के आदर्श, धर्म एवं विचारधारा भारतवर्ष ही नहीं, विदेशों में आज भी सदियों से उनकी परंपराओं में जीवंत है। संस्कृति के इन नायकों में श्री रामचंद्र और वासुदेव कृष्ण दो ऐसे युगपुरुष हैं जिनके नाम से दो युग त्रेता और द्वापर स्मरण किए जाते हैं। वस्तुतः किसी युगपुरुष को तुलना में कमतर नहीं आंका जा सकता। युग की परिस्थितियों के अनुरूप ही महापुरुषों का समाज के लिए अमूल्य अवदान रहता है।

श्रीराम का नाम लेते ही जैसे भारतीय महाद्वीप का कण-कण जाज्वल्यमान ज्ञान रूपी प्रकाश की अनुभूति करवाता है। यह प्रकाश भारतवर्ष ही नहीं, सागरों के पार भी सदियों से स्वस्थ सामाजिक जीवन की राह दिखा रहा है। श्रीराम को 5000 वर्ष पूर्व 'आयु पुत्र' के नाम से अभिहित किया गया है। अतः कह सकते हैं कि आर्यावर्त से रामराज्य का संदेश विश्व में प्रत्येक स्थान पर पहुंचा जहां आर्य लोग बसे हैं। इस ज्ञान रूपी प्रकाश के आधार स्तंभ हैं श्री रामचंद्र। आर्यभूमि के आर्यपुत्र रामचंद्र का जीवन चरित्र ही भारतीय दर्शन और जीवन पद्धति का प्रतिरूप है।

राम दशरथ पुत्र वाल्मीकि के महानायक ही नहीं, भारतीयों के रोम-रोम में बसे ईश्वरीय तत्त्व हैं। त्रेता युग में जब किसी पराक्रमी पुरुष की खोज में महर्षि वाल्मीकि ने त्रेता युग के अनाचार और अत्याचारों के विनाश के लिए तमसा नदी के तट पर राजनीतिज्ञ नारद जी से पूछा, 'मुने, इस समय संसार में कोई गुणवान, पराक्रमी, धर्मनिष्ठ और राजा त्यागी आदर्श पुरुष है जो इस युग की आसुरी-शक्तियों को समाप्त कर सनातन वैदिक संस्कृति का पुनरुद्धार कर सके?"

नारद जी ने उत्तर दिया, "महर्षि, हां एक राजकुमार ने आर्यभूमि पर जन्म लिया है और एक दिव्य आभा से युक्त युवक है। वह एक सूर्यवंशी महापराक्रमी कुल जिसमें संस्कृति के रक्षक हरिश्चंद्र, दिलीप, अज और रघु जैसे प्रतापी राजा हुए हैं। इस युवक का नाम है - राम जो अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र हैं। वे धीरोदात, धीर प्रशांत, नीतिज्ञ और बलिष्ठ अजानबाहु राजकुमार हैं। बाल्यकाल से ही अलौकिक लीलाएं कर रहे हैं।"

वाल्मीकि आश्वस्त हुए। बाल्यकाल से लेकर सरयु तट तक की राम की अलौकिक लीलाओं और पराक्रम को सूक्ष्मता से अवलोकन कर मूल्यांकन करने का निश्चय किया। वे स्वयं घटनाओं के साक्षी और सहायक बने। इस आदिकवि की संवेदना तब फूट पड़ी जब क्रौंच पक्षी के जोड़े के विरह में कवि ने राम के सीता से विरह की साम्यता अनुभव की। कवि की संवेदना को आधार मिला राम की कथा की रचना में। प्रथम कवि की प्रथम रचना विश्व के सामने 'रामायण' के नाम से सामने आई।

राम के युग में रावण ही अनाचार और मर्यादाहीनता का प्रतिरूप नहीं था, वरन् आसुरी शक्तियों ने वैदिक धर्म एवं श्रेष्ठ आर्य जीवन को ही अस्त-व्यस्त कर दिया था। असुर जंगलों में ही नहीं नगरों में भी ऋषि यज्ञों का विध्वंस कर रहे थे। मुनियों एवं तपस्वियों के आध्यात्मिक कार्यों में बाधाएं उत्पन्न की जा रही थीं। रावण ने अपने विद्याबल से प्राकृतिक शक्तियों को वशीभूत कर लिया था। वह वायुदेव एवं अग्निदेव पर नियंत्रण कर उनसे मनमाना कार्य करवा लेता था। अपने सौतेले भाई कुबेर को भी निष्कासित कर दिया था। ग्रह भी उसके दास थे।

राम के उच्च-चरित्र का पता तब चलता है जब उनके राजतिलक का अभिषेक होना होता है। राम के पिता दशरथ की परमसुंदर रानी जब इस समय दशरथ को अपने वरदान का स्मरण

करवाती है। असुरों से युद्ध में उनकी रानी कैकेयी ने रथ चालन से दशरथ की प्राणरक्षा की थी तभी दशरथ ने कैकेयी को उस समय की परिपाटी के अनुसार तीन वर देने का वचन दिया था। रानी राज्याभिषेक के समय अपनी दासी मंथरा के बहकावे में आकर राजा से राम को चौदह वर्ष का वनवास और भरत को राजा बनाने का वादा स्मरण करवाकर वर मांगती है। वचन का पालन रघुकुल की परंपरा थी। अतः दशरथ को वचन पूरा करना पड़ता है। राम इस आज्ञा का दृढ़तापूर्वक पालन करते हैं। इनकार करने पर भी पत्नी सीता राम लक्ष्मण सहित वन गमन करती है। वनवास में पंचवटी में रावण द्वारा सीताहरण की घटना युगांतरकारी सिद्ध होती है। राम के पराक्रम, राजनीति एवं मर्यादा के जीवन मूल्य स्पष्टतः परिलक्षित होते हैं। राम अद्वितीय महापुरुष थे। किशोरावस्था में ही उन्होंने धार्मिक अनुष्ठानों में रत विश्वामित्र मुनि के यज्ञ की रक्षा के लिए ताड़का और सुबाहु राक्षस का वध किया था।

राजा जनक की स्वयंवर-सभा में उन्होंने विशाल शिव धनुष अनायास ही तोड़ डाला था, जिसे रावण सहित बड़े-बड़े शूरवीर भी नहीं तोड़ सके थे। दाड़क वन में शूर्पणखा के भड़काए खर-दूषण त्रिशिदा आदि को युद्ध में मार डाला था। सुग्रीव को बाली के त्रास से बचाय लिया। लंका में तो युद्ध में उनके पराक्रम की पराकाष्ठा रावण-कुंभकर्ण से युद्ध में दिखाई है। रावण जिसे शिव का वरदान प्राप्त था, जो पराक्रमी होने के साथ युद्ध में नाभि से ऊपर अखंड कवच आदि ग्रहण करता था, उसे भी मृत्युलोक पहुंचाकर विजय प्राप्त की और सीता सहित अयोध्या लौटे। एक दूरदर्शी योद्धा की तरह उन्होंने कूटनीति से वनवासी जनजाति वानर, रीछ, गिद्ध, भील आदि मानव जाति के शासकों और योद्धाओं की सहायता से लंका पर विजय प्राप्त की। हनुमान, सुग्रीव, जामवंत, जटायु आदि वीरों ने राम का ही साथ दिया। हनुमान जैसा योद्धा और भक्त तो आज भी शिव अवतार के रूप में पूजित है।

श्रीराम की लोकप्रियता तो उनके 'रामराज्य' की व्यवस्था में है। सब लोग अपने-अपने वर्णाश्रम के अनुकूल वेद मार्ग पर चलते हैं। कहीं भी भय, शोक, रोग और दैहिक, दैविक, भौतिक ताप नहीं है - तुलसी ने इसका विशद् वर्णन किया है -

'वरणाश्रम निज निज धरम, निरत वेद पथ लोग
चलहिं सदा सुख पावहिं सुख, नहिं भय शोक न रोग।'

वर्णाश्रम जन्म से नहीं, व्यक्ति की क्षमता से है। जाति-पाति का कोई भेद नहीं। शबरी, राजा निषाद एवं अन्य वन जातियां कोई अस्पृश्य नहीं। लोग जनतंत्र में सुखी हैं। राम जन परिषद के माध्यम से राज करते हैं -

'दैहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज नहिं काहुहि व्यापा
सब नर करहिं परस्पर प्रीती, चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीति।'

राम की मातृ-पितृभक्ति, भ्रातृ प्रेम, एक पत्नीव्रता, प्रजा वत्सलता, शरणागत रक्षा, दयालुता और क्षमा सभी प्रशंसनीय हैं, तभी वे इन चारित्रिक गुणों के कारण पूरे आर्यावर्त में पूज्य बने हैं।

राम कथा पौराणिक काल ई. पूर्व पांचवीं शताब्दी से 9-10वीं शती रचित पुराणों अग्निपुराण, आदिपुराण, कल्कि, कालिका, कूर्म, गरुड़, नरसिंह, पद्म, वृहन्नारदीय, ब्रह्मपुराण, ब्रहमवैवर्त पुराण, ब्रह्मांड, भविष्यपुराण, वायु, वाराह, विष्णु, स्कंद आदि सभी में संक्षिप्त अथवा विस्तृत रूप में वर्णित मिलती है। इनके समकालीन एवं बौद्ध-जैन कालीन साहित्य में रामकथा का विशेष स्थान रहा है। वाल्मीकि रामायण से प्रारंभ होकर अध्यात्म रामायण, अद्भुत, रामायण की परपंरा में तुलसीदास तक अनेक रामकाव्य उपलब्ध होते हैं। संस्कृति साहित्य के पश्चात बौद्ध जैन प्रभावों से पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा प्रादेशिक भाषाओं में असंख्य राम काव्य रचित हुए हैं।

दक्षिण भारत की चारों भाषाओं में रामायण के अपने-अपने प्रारूप हैं। तेलुगु में रामकथा से संबंधित लगभग तीन सौ रचनाएं हैं। 'रंगनाथ रामायण' तथा 'मौल्लरामायण' विशेष महत्त्व की हैं। मलयालम रामयण एक आधुनिक रचना है जो वाल्मीकि रामायण का छायानुवाद है। यह 16वीं शती में रामानुजम ए. पुतच्चन नामक कवि की रचना है। कन्नड़ की सबसे प्राचीन पंपरामायण' किसी जैन कवि की रचना है। 880 ई. में तमिल कवि कंबन की 'केब रामायण' दक्षिण में विशेष महत्त्व रखती है। तीसरी शताब्दी ई. पूर्व 'बौद्ध त्रिपिटिक' पालिभाषा में लिखे गए थे। बौद्ध मतावलंबी राम को बुद्ध का अवतार मानते हैं। रामकथा संबंधी तीन जातक हैं - दशरथ जातक, अनामक जातक और दशरथ कथानक। असमिया में 'सप्तकांड रामायण' के साथ अनेक रचनाएं उपलब्ध होती हैं।

विदेशों में राम कथा दो हजार वर्ष पूर्व ही नहीं, उससे भी पहले भारत के व्यापारियों, राज परिवार के लोगों तथा विदेशी यात्रियों के द्वारा पहुंची। किंतु विदेशों में रामकथा के विभिन्न रूप तथा लोक कथाएं अस्तित्व में आए जो मूल कथा से भिन्न है, इसीलिए विद्वानों ने रामकथा को मिथक या लोकगाथा मानने की भूल की। फिजी, मारिशस, गुयाना, ट्रिनिडाड, सूरीनाम आदि देशों में प्रवासी भारतीयों द्वारा रामकथा का लगभग मूलरूप सुरक्षित है। इन देशों में रामकथा पर उनकी अपनी जीवन प्रणाली, चिंतन और मान्यताओं का प्रभाव है। थाईलैंड जो बौद्ध देश है, साथ में रामभक्त भी है। एक उदाहरण मिलता है एक भारतीय ने जब एक बच्चे से सवाल किया कि जब सीता बहुत समय तक रावण की लंका में रही तब उसने उसे अपनी पत्नी क्यों नहीं बनाया?' तो बच्चे ने उत्तर दिया कि 'पतिव्रता सीता के शरीर से एक ऐसी अग्नि निकलती थी, जिससे अगर उसे कोई छूता तो भस्म हो जाता।' थाई रामायण का नाम है 'रामकियेन' अर्थात रामकीर्ति, जो

वाल्मीकि रामायण से ली गई है। यहां अयोध्या नाम की नगरी है और 'लोपबुरी' यानी 'लवपुरी' भी। कंबोडिया के अंगकौर मंदिरों की दीवारों पर रामायण के दृश्य उत्कीर्ण हैं। मलेशिया और इंडोनेशिया जैसे देशों में जो इस्लामी देश हैं, वहां रामलीला आज तक प्रचलित है और मंदिर भी वर्तमान है। रामकथा का प्रचार बाली और जावा द्वीपों में विशेष रूप से है। इनके अतिरिक्त तिब्बत, चीन, फिजी, बर्मा, जापान, रूस आदि एशिया तथा कई अन्य यूरोपीय देशों में रामकथा के ऐतिहासिक अवशेष मिलते हैं। श्रीलंका में राम कथा का कोई विशद् ग्रंथ नहीं मिलता। वैसे कुमारदास का सिंहली भाषा में लिखा 'जानकीहरण' प्रमुख है। यहां राम की अपेक्षा हनुमान और सीता से संबंधित कहानियां प्रचलित हैं। इसका कारण राम यहां कम रहे थे। कुछ विद्वान रामायण की लंका को यहां नहीं स्वीकारते, बल्कि वे द्वीप श्रीलंका के दक्षिण में अथवा इंडोनेशिया के किसी द्वीप को स्वीकारते हैं। तिब्बत और मंगोलिया में रामायण बौद्ध और जैन रामकथाओं द्वारा पहुंची थी। एशिया के देशों में रामायण को एशिया का महाकाव्य कहा है। इन देशों में मूल रामकथा से भिन्न संस्करण अथवा प्रारूप हजारों वर्षो के कालखंड में विकसित हो गए हैं। यह इसी प्रकार जैसे लोककथाओं के प्रारूप भिन्न भिन्न क्षेत्रों में अलग दिखाई देते हैं। तिब्बती रामकथा में इसका उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है।

"रावण ने तपस्या कर कुछ शाप और वर प्राप्त किए। दशरथ की दो पत्नियां विष्णु छोटी रानी के गर्भ से उत्पन्न हुए, नाम रखा गया रामन। तीन दिन के बाद बड़ी रानी के गर्भ से पुत्र ने जन्म लिया, नाम रखा गया लक्ष्मण। दशग्रीव की रानी ने कन्या को जन्म दिया, उसके जन्म पत्र में लिखा था, यह पिता का नाश करेगी। इसे तांबे के पिटारे में बंद कर समुद्र में फेंक दिया गया। कृषकों ने उसे पाला नाम रखा लीलावती। कहीं सीता भी मिलता है। दशरथ असमंजस में थे कि किसे राज्य दिया जाए। बड़ी रानी का बेटा लक्ष्मण छोटी रानी के बेटे से छोटा था। राम ने स्वेच्छा से राज्य छोटे भाई को दे दिया। वे वन में जाकर तपस्या करने लगे। कृषकों के अनुरोध पर उन्होंने लीलावती (सीता) से विवाह किया और वे राज्य करने लगे।"

"रावण सीता के नीचे की धरती को खोद कर अपहरण कर ले गया। उसने बाधा प्रस्तुत करने वाले जटायु को रक्त-सने पत्थर खिलाकर मार डाला। सीता की खोज के समय सुग्रीव से दोस्ती हुई। बाली से युद्ध करते समय राम पहचान के लिए सुग्रीव की पूंछ में दर्पण बांध दिया था। हनुमान आदि वानर गुफा में एक दूसरे की पूंछ पकड़ कर गए थे। रावण का मर्मस्थल अंगूठा बताया गया है। सीता के एक ही पुत्र हुआ था लव। राम किसी सामंत से युद्ध करने गए थे। बहुत समय बीत जाने पर भी जब वे नहीं लौटे तो सीता लव को ऋषियों के पास छोड़ कर उन्हें खोजने निकलीं। लव चुपके से उनके पीछे लग गया। ऋषियों ने उसे खोया जानकर कुश से एक और पुत्र की सृष्टि कर दी। सीता ने उसे स्वीकार किया। धोबी के कहने पर राम ने सीता को निर्वासित किया। हनुमान ने लव कुश की सहायता से लंका से वापिस बुलाया। सीता त्याग लव कुश के जन्म के पश्चात दिखाया गया है।"

अन्य देशों में ही नहीं भारतीय भाषाओं एवं संप्रदायों में भी वाल्मीकि रामायण की मूलकथा से इतर कथानक विकसित हो गए हैं। यह इसी प्रकार है जैसे वेदों के बाद हजारों सालों में महाभारत, पुराणों, स्मृतियों एवं काव्य ग्रंथों में प्रक्षिप्तांश जुड़ गए हैं। कह सकते हैं कि प्राचीन ग्रंथ प्रक्षिप्तांशों से भरे पड़े हैं। हजारों वर्षो की गुलामी से इनके मूल रूप को सुरक्षित नहीं रखा जा सका है। यही कारण है कि नास्तिकवाद के समर्थ तथा विदेशी मूल के भारतीय रामायण की ऐतिहासिकता को नकारने का प्रयास करते हैं। ये प्रयास इसी तरह हैं जैसे सूर्य की रोशनी को बादलों में देखना।

राम दशरथ पुत्र वाल्मीकि के महानायक ही नहीं, भारतीयों के रोम-रोम में बसे हैं और आराध्य देवता बने हैं। जन साधारण की जीवन शैली में उठते-बैठते, सोते-जागते, सुख में दुख में यहां तक की मरण पर भी 'राम नाम' एवं अनहोनी-अनर्थ पर भी एकाएक मुख से 'हे राम' ही उच्चरित होता है। राम साकार विष्णु के अवतार मर्यादा पुरुष हैं और घट-घट वासी हैं। साकार के विरुद्ध आंदोलन करने वाले संत भी अपने ईष्ट को 'राम' की तुलना में पुकारते हैं।

"एक राम दशरथ का बेटा, एक राम घट-घट में लेटा दोनों साकार-निराकार एक हो गए हैं। राम से भारत की अस्मिता है। मानव के रूप में राम एक आदर्श शासक के रूप में सामने आते हैं। अपने वनवास काल में विभिन्न गणराज्यों में आदर्श शासकों को सिंहासन पर बिठाते हैं। लंका का राज्य जीतकर वे विभीषण को राजपाट सौंपते हैं। शक्तिशाली होते हुए भी अन्य राज्य का अतिक्रमण नहीं करते। वे एक ऐसा राज्य चाहते हैं जो -

'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी, सो नर अवसि नरक अधिकारी।'

एक आदर्श पुत्र, आदर्श पति, आदर्श राजा, आदर्श मित्र के रूप में जनता की आंख के तारे बन गए। यही कारण था कि लंका विजय कर जब वे दक्षिण से अयोध्या की ओर चले तो संपूर्ण आर्यवर्त के क्षेत्र में उस कार्तिक मास की अमावस्या को लोगों ने स्वागत में घी के दीए जलाए थे। समस्त भारतीय संस्कृति में राम मेरूदंड की तरह राष्ट्रीय एकता का आधार बने हुए हैं। बिना राम के भारत की गौरवगाथा अधूरी है। कह सकते हैं कि 5000 वर्ष पूर्व 'त्रेता युग' के आधार-स्तंभ श्रीराम ही हैं।

अंगिरा भवन, समीप फलोद्यान, दाड़लाघाट, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-171 102, मो. 0 94181 65573

आलेख

रियासत काल की पहचान : प्राचीन दुर्ग

◆ डॉ. आर. के. शुक्ला

स्वतन्त्रता से पूर्व हिमाचल प्रदेश का भू-भाग अनेक छोटी-बड़ी रियासतों में बंटा हुआ था। इनके शासक आपस में लड़ते रहते थे, और उनके राज्यों की सीमाएं बदलती रहती थीं। राजा लोग बहुत शक्तिशाली होते थे, और कोई भी व्यक्ति राजा की आज्ञा की अवहेलना नहीं कर सकता था। इसका मतलब यह नहीं कि वे तानाशाह थे और मनमानी करते थे। राजा को प्रजा की इच्छानुसार कार्य करना पड़ता था। वह शासक बनते समय यह प्रतिज्ञा करता था कि यदि 'मैं तुम (प्रजा) पर अत्याचार करूं, तो हे ईश्वर, मैं जन्म से मृत्यु तक किए गए अपने अच्छे कर्मों से, अपने जीवन से तथा अपनी सन्तान से रहित हो जाऊं।' अधिकांश राजा लोग कौटिल्य के सिद्धांत, ''प्रजा की भलाई ही राजा की भलाई है, प्रजा के सुख में ही राजा का सुख है,'' में विश्वास करते थे। न्याय व्यवस्था कठोर थी। छोटे अपराधों के लिए जुर्माना तथा बड़े अपराधों के लिए देश निकाला और मृत्यु दण्ड की सजा दी जाती थी। राज्य की आय का मुख्य साधन भूमिकर था, जो सामान्यतः कृषि उपज का छठा भाग होता था। राजा का पद पैतृक था। उसे अपनी मृत्यु से पूर्व अपना उत्तराधिकारी मनोनीत करने का अधिकार था। वह अपनी सुविधानुसार मन्त्रियों, गुप्तचरों, पुरोहितों आदि की नियुक्ति करता था। यह मन्त्रिपरिषद प्रशासनिक कार्यों में राजा को परामर्श देती थी। राजा का मुख्य कर्त्तव्य शत्रुओं से प्रजा की रक्षा करना, शासन और न्याय का प्रबन्ध करना था।

राज्य की सुरक्षा के लिए प्रत्येक राजा के पास अपना सेना दल होता था जिसमें जवान, घोड़े, हाथी, ऊँट आदि शामिल होते थे। सेना का प्रधान व्यक्ति सेनापति होता था और सेना को किलों अथवा दुर्गों में रखा जाता था। बड़े राज्यों में एक से अधिक दुर्ग होते थे। किले में रहने वाली सेना के प्रधान व्यक्ति को किलेदार अथवा दुर्गरक्षक कहा जाता था। प्राचीन दुर्गों में कांगड़ा, नूरपुर, हरिपुर, कोटला, पठियार, मानकोट, ज्वाली, मस्तगढ़, सिब्बा, सुजानपुर-टिहरा, घर बासड़ा (सोलह सिंघी), कोट-कहलूर, बछरेटू, त्यून, सरियून, रत्नपुर, बहादुरपुर, फतहपुर, भवानीकोट, रामगढ़, मलौण, रतेश, कमलाह, पटड़ी, अनन्तपुर, हामटा, गणेशगढ़ इत्यादि प्रमुख थे। इन दुर्गों में प्रायः एक शिव-शक्ति का मन्दिर, पानी का तालाब अथवा कुआं, आवासीय कमरे, खाद्य सामग्री आदि होते थे। इनका निर्माण किसी ऊँची पहाड़ी पर किया जाता था, जहां से राज्य के बड़े भाग पर नज़र रखी जा सकती थी।

बिलासपुर के चन्देल वंशीय राजाओं ने अपने राज्य की सुरक्षा एवं शासन प्रबन्ध के लिए समय-समय पर अनेक दुर्गों का निर्माण करवाया। उन्होंने रियासत को प्रशासनिक रूप से दो तहसीलों और बारह परगनों में बांटा था। सतलुज नदी प्राकृतिक रूप से बिलासपुर को दो भागों में बांटती है। इसके बाएं भाग को सदर बिलासपुर तहसील और दाएं भाग को त्यून (घुमारवीं) तहसील में रखा गया। कोट-कहलूर, फतहपुर, रत्नपुर, बहादुरपुर, सदर बिलासपुर, त्यून, सरियून, अजमेरपुर, सुन्हाणी, गेहड़वीं, वसेह और बछरेटू इसके बारह परगने बनाए गए। इनमें से प्रथम पाँच, बिलासपुर तहसील में तथा अन्य सात घुमारवीं तहसील में थे। बिलासपुर राज्य की सात धारें हैं - नैना देवी, रत्नपुर, बहादुरपुर, बन्दला, त्यून-सरियून, छंज्यार व कोटधार। इनमें से प्रथम चार बिलासपुर तहसील में तथा अन्य तीन घुमारवीं तहसील में थीं।

चन्देल वंश की 70वीं पीढ़ी में हरिहरचन्द चन्देरी (मध्य प्रदेश) के राजा हुए। शशिवंश विनोद के अनुसार उनके बड़े पुत्र बीरचन्द ने सन् 697 ई. में आनन्दपुर साहिब के समीप 'जन्दबड़ी' को अपनी राजधानी बनाया। यहां की नैना व कहलू गुज्जर नामक जनश्रुतियों के अनुसार राजा बीरचन्द (697-730 ई.) ने माँ श्रीनैनादेवी का मन्दिर बनवाया और यह पहाड़ी नैनादेवी धार के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस स्थान के महत्त्व को देखते हुए राजा बीरचन्द ने यहां एक किले का निर्माण करवाया जो बाद में कोट-कहलूर कहलाया। यह दुर्ग माँ श्रीनैनादेवी के मन्दिर की पश्चिमी ढलान पर स्थित है और जिला मुख्यालय बिलासपुर से लगभग 80 किलोमीटर दूर है। यह दो मंजिला वर्गाकार किला था। इसकी भुजा की लम्बाई करीब 30 मीटर थी और दीवारें 2 मीटर चौड़ी थीं। डा. हचिसन व वोगल लिखते हैं कि चौदहवीं सदी में अभयसार चन्द कहलूर राज्य का शासक था। उस समय दिल्ली से बादशाह का तातार खां नामक एक सरदार अपने साथ कुछ सेना लेकर लाहौर जाते समय आनन्दपुर में ठहरा हुआ था। राजा को सूचना मिली कि उसकी सेना के साथ कुछ कसाई लोग गायें ले जा रहे हैं। राजा अभयसार चन्द ने सेना भेजकर कसाइयों से गायों को छुड़ा लिया। इस पर तातार खां ने राजा की सेना का पीछा करके कोट-कहलूर दुर्ग को घेर लिया। जब किले के मुख्य द्वार को तोड़ने में वह असमर्थ रहा तो उसने एक हाथी को लाकर द्वार तोड़ने में लगाया। राजा ने तलवार के प्रहार से हाथी की सूंड को काट दिया और इसी बीच तातार खां भी मारा गया। इस घटना से राजा अभयसार चन्द के एक वीर योद्धा होने और कोट-कहलूर दुर्ग

के प्राचीन एवं मजबूत होने का पता चलता है। बाद में तातार खां के पुत्र ने धोखे से राजा और उसके छोटे बेटे को शिविर में बुलाकर दोनों की हत्या कर दी थी। कहलूर राज्य के 11वें राजा काहनचन्द (1057-1099 ई.) ने ई. सन् 1085 ई. में त्यून दुर्ग का निर्माण करवाया। यह दुर्ग घुमारवीं से कुठेड़ा की ओर करीब 10 किलोमीटर की दूरी पर और समुद्र तल से 1237 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। इसका 5x3 मीटर मुख्य द्वार पश्चिम की ओर था। मुख्य द्वार के सामने करीब 100 मीटर भुजा का वर्गाकार भाग था जिसकी दीवारों की ऊँचाई 5 मीटर थी। यहां 20x10x4 मीटर का पक्का तालाब, 15 मीटर व्यास का एक अण्डाकार तालाब, देवी का मन्दिर और जन-स्वास्थ्य विभाग के दो पानी के टैंक हैं। वर्गाकार भाग की पूर्वोत्तर दिशा में 80x20x10 मीटर लम्बा, चौड़ा और ऊँचा किला था जिसमें लगभग 10 कमरे तथा तीन अन्न भण्डार कक्ष अथवा कारागृह थे। वर्गाकार भाग की दक्षिण-पूर्वी दिशा के प्रथम भाग 20x10x5 मीटर में 5 कमरे तथा द्वितीय भाग 100x20x10 मीटर में एक किला था जिसमें करीब 15 कमरे और 5x5x4 मीटर तालाब था। दुर्ग की दीवारें छैनी-हथौड़ी से साधे गए बड़े पत्थरों से बनी थीं और एक मीटर चौड़ी थीं। दुर्ग की दीवारों में दर्जनों झरोखे रखे हुए थे। इस किले से सीर घाटी का बहुत सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। इस दुर्ग के पूर्वोत्तरी भाग में 1381 मीटर की ऊँचाई पर सरियून दुर्ग है। इसका निर्माण रियासत के 16वें राजा पृथ्वीचन्द (1162-1197 ई.) ने मुहम्मद गौरी के आक्रमण की आशंका को ध्यान में रखते हुए करवाया था। इस आयताकार दुर्ग में करीब 15 कमरे थे। राजा रत्न चन्द (1355-1406 ई.) बिलासपुर का एक शक्तिशाली शासक हुआ। उसने अपने नाम पर 'रत्नपुर' गांव बसाया तथा रत्नपुर, बछरेटू और बसेह के दुर्गों का निर्माण करवाया। रत्नपुर दुर्ग समुद्र तल से 1229 मीटर ऊँचाई पर स्थित है और यह पहाड़ी रत्नपुर धार से प्रसिद्ध है। इस किले के समीप दो अंग्रेज अधिकारियों की कब्रें हैं जो सन् 1815 ई. के अंग्रेज- गोरखा युद्ध में मारे गए थे। इस दुर्ग के दक्षिण में मलौण किला (सोलन) है। बछरेटू और बसेह के दुर्ग कोटधार के पश्चिमी और मध्य भाग में हैं। शाहतलाई से 5 किलोमीटर दूर बछरेटू दुर्ग है जो 80x40x15 मीटर लम्बा, चौड़ा और ऊँचा था। इसमें विभिन्न आकार के करीब 15 कमरे थे। किले के भीतर एक पानी का टैंक, देवी का मन्दिर और पीपल का वृक्ष उगा है। किले के समीप एक प्राचीन शिव मन्दिर और नौण है जहां पंजाब, हरियाणा आदि दूसरे राज्यों से भी श्रद्धालु आस्था की डुबकी लगाने आते हैं। श्रद्धालु लोग इस नौण को गंगा की धारा मानते हैं। शाहतलाई से 7 किलोमीटर दूर घराण नामक स्थान पर बसेह के दुर्ग हैं। इनका मुख्य द्वार 5x3 मीटर लम्बा और ऊँचा पश्चिम दिशा की ओर था। द्वार से 100 मीटर उत्तर-पश्चिम दिशा में 60x30x15 मीटर एक किला था जिसमें 10 कमरे रहे होंगे। इसकी दीवारों पर पीपल और वरगद के वृक्ष बड़े होकर इन्हें गिरा रहे हैं। मुख्य द्वार से 100 मीटर दक्षिण-पूर्व में 30x10x10 मीटर का एक भाग था जिसमें तीन कमरे और दो अन्न भण्डार कक्ष प्रतीत होते हैं। इस भाग से 150 मीटर दक्षिण-पश्चिम दिशा में 40x20x15 मीटर का एक अन्य किला था जिसका द्वार भूमि से डेढ़ मीटर ऊँचाई पर 1x5x1 मीटर का था। इस किले में आठ कमरे और एक अन्न भण्डार कक्ष रहे होंगे। मध्य भाग से इस किले तक करीब 45 मीटर चौड़ा आयताकार भाग था जिसमें 15x8x3 मीटर का एक पक्का तालाब और सेमल का एक वृक्ष उगा है। मुख्य द्वार से दोनों किलों के लिए रास्ता बना था जिसकी पश्चिमी दीवार तीन मीटर ऊँची थी और दुर्ग की दीवारों पर दर्जनों झरोखे थे। इस दुर्ग के पूर्वोत्तर में सरहाली घाटी तथा दक्षिण-पश्चिम में गोबिन्दसागर विस्तृत होने के कारण यह एक रमणीक स्थान है। बिलासपुर के 30वें राजा विक्रमचन्द (1555-1593 ई.) ने अपनी बाघल वाली रानी को प्रसन्न करने के लिए बहादुरपुर किले का निर्माण करवाया। यह दुर्ग नम्होल से लगभग 10 किलोमीटर ऊपर तथा समुद्र तल से 1875 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। राजा विजय चन्द (1889-1927 ई.) ने इसे अपनी ग्रीष्मकालीन राजधानी बनाया। उसने सन् 1922 ई. में मोहन को फांसी की सजा का आदेश इसी दुर्ग से दिया था। यह दुर्ग बिलासपुर जिला का सबसे ऊँचा दुर्ग है।

राजा फतहचन्द (1436-1459 ई.) ने अपने नाम से स्वारघाट के समीप 'फतहपुर' गांव बसाया और वहां एक किले का निर्माण करवाया जिसे फतहपुर दुर्ग कहते हैं। फतहपुर में चीड़ के पेड़ बहुतायत में पाए जाते हैं। राजा अजमेरचन्द (1692-1741 ई.) ने हिण्डूर की सीमा पर अपने नाम से अजमेरगढ़ किले का निर्माण करवाया। राजा देवी चन्द (1741-1778 ई.) ने फतहपुर में भवानीकोट दुर्ग तथा रामगढ़ किले का निर्माण करवाया। डा. हचिसन लिखते हैं कि राजा देवीचन्द ने हिण्डूर के राजा विजयसिंह की विनती पर रामगढ़ का दुर्ग हिण्डूर को दे दिया।

राजतन्त्र में राजा लोग अपने राज्य का शासन प्रबन्ध सुचारू रूप से चलाने के लिए ऊँचे पहाड़ी क्षेत्रों पर दुर्गों का निर्माण करवाते थे, ताकि किसी बाहरी आक्रमण का समयानुसार मुंह तोड़ जवाब दिया जा सके। इन दुर्गों को किले अथवा गढ़ भी कहते थे और इन्हें राजधानी का दर्जा प्राप्त था। राज्य को परगनों और तहसीलों में बांटा गया था। बिलासपुर का बारह परगनों में विभाजन सौ से अधिक वर्ष पुराना है। बारह परगनों में से आठ कोट-कहलूर, फतहपुर, रत्नपुर, बहादुरपुर, त्यून, सरियून, बसेह और बछरेटू परगनों में दुर्ग बनाए गए थे। अधिकांश सदियों पुराने ये दुर्ग अब भग्नावशेष में मिलते हैं। इस बहुमूल्य प्राचीन संस्कृति को संजोए रखने की नितांत आवश्यकता है।

प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय घुमारवीं,
जिला बिलासपुर (हि.प्र.)

आलेख

'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'
स्वामी दयानंद सरस्वती की मान्यताओं की प्रासंगिकता

◆ डॉ. कुंवर दिनेश सिंह



परतन्त्र भारत में हिन्दू धर्म एवं वैदिक संस्कृति के पुनरुत्थान के प्रणेता और राष्ट्रवादी चेतना के प्रचेता स्वामी दयानन्द सरस्वती आधुनिक भारत के निर्माताओं में अग्रगण्य हैं। निस्सन्देह उन्होंने धर्म और समाज के सिद्धान्तों को पुनराख्यायित कर भारत के जन-मानस पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ा है, किन्तु स्वामी दयानन्द मात्र एक धर्मगुरु नहीं थे, हिन्दुत्व एवं वैदिक धर्म के प्रचारक-सुधारक मात्र नहीं थे, अपितु उन्होंने तर्क एवं विज्ञान के आधार पर विभिन्न धर्मास्थाओं का विश्लेषण किया और ईश्वर एवं ईशत्व के विषय में वैचारिक क्रान्ति लाकर भारतीयों की धार्मिक भावनाओं में परिणति लाए। उनके सिद्धान्त आज के समय में भी समान रूप से प्रासंगिक हैं, मानवता के कल्याणार्थ प्रभावी हैं।

स्वामी दयानन्द ने 7 अप्रैल 1875 को मुम्बई में 'आर्य समाज' की स्थापना की, जिसके माध्यम से उन्होंने यह सन्देश दिया कि हमारे कर्मों का, क्रिया-कलापों का एकमात्र उद्देश्य होना चाहिए ⁄मानवता व मानवीय मूल्यों का समर्थन, संरक्षण, संवर्द्धन ⁄ न कि रूढ़िवादी परम्पराओं, रीतियों, रिवाजों, प्रतीकों, प्रतिमानों, प्रतिमाओं का अन्धानुसरण करना। स्वामी दयानन्द का प्रमुख सन्देश यही था कि हिन्दू अपने धर्म के मूल को पहचानें व अपनाएँ, जो कि वेदों में परिगदित है। उनकी मान्यता थी इस प्रकार जागृति से देश के तात्कालिक दौर में व्याप्त धर्म, समाज, राजनीति और आर्थिक परिस्थितियों में हिन्दू समुदाय वांछित सुधार कर पाएगा। वेदों की सत्ता को स्वीकारते हुए उन्होंने हठधर्मिता का विरोध किया और न केवल हिन्दू धर्म अपितु अन्य धर्मों में भी प्रचलित रूढ़ियों और अंधविश्वासों का खण्डन किया। उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों से जहाँ हिन्दू राष्ट्रवादी विचारधारा का व्यापक प्रसार हुआ, वहीं दूसरी ओर अन्य धर्मों के साथ टकराव भी हुआ। परिणामतस्वरूप हिन्दू धर्म तथा हिन्दू-इतर पंथों ⁄ आस्थाओं में परस्पर सम्बन्धों पर कुछ नकारात्मक प्रभाव भी पड़ा। किन्तु स्वामी दयानन्द ने हिन्दू संस्कृति की श्रेष्ठता के विषय में निर्भीकता एवं उग्र-रूपेण अपना मत रखा। उनकी इस उग्रता के पीछे एक विशिष्ट कारण अथवा लक्ष्य था : यूरोपियों द्वारा भारतीय संस्कृति के तिरस्कार एवं अनाधिमान का सम्यक् प्रत्युत्तर देना, विश्व में प्राचीनतम वैदिक संस्कृति की प्रतिरक्षा करना एवं आधुनिक भारत को उसके महत्त्व ⁄ महत्ता को समझने तथा उसे सम्मान सहित अपनाने के लिए जाग्रत करना। विस्मृत वैदिक संस्कृति के पुनर्जागरण से उन्होंने भारत के सुषुप्त आत्मसम्मान को जगाने का कार्य किया। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने 'आर्य' शब्द को पूर्ण अधिमान देते हुए आर्य संस्कृति को तर्कसहित सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्कृष्ट बताया।

'आर्य' शब्द का अभिधात्मक अर्थ है : अत्युत्कृष्ट, श्रेष्ठ, योग्य, सम्माननीय, सर्वोच्च, उत्तम, सच्चरित्र, कुलीन। इस प्रकार भारत के प्राचीन अभिधान 'आर्यावर्त्त' का अर्थ हुआ ⁄ आर्य अर्थात् श्रेष्ठ और उत्तम लोगों का आवास। जैसा कि मनुस्मृति में

वर्णित है :

आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्राच्च पश्चिमात्, तयोरेवान्तरं गिर्योः (हिमविन्ध्ययोः) आर्यावर्त्त्त विदुर्बुधाः

(मनुस्मृति, 2/22)

अर्थात् वह भूमि जो पूर्वी समुद्र से पश्चिमी समुद्र तक फैली हुई है तथा जिसके उत्तर में हिमालय एवं दक्षिण में विन्ध्य पर्वत है, आर्यावर्त् समझा जाए। इसी आधार पर स्वामी दयानन्द ने 'आर्य समाज' की स्थापना की, जिसके अन्तर्गत वेदों के श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों को अपनाने वाले लोगों को 'आर्य' के सम्बोधन से जोड़ा गया। आर्य समाज ने हर उस प्रथा / प्रचलन का खण्डन किया जो वेद-सम्मत नहीं थे - यथा मूर्तिपूजा, पशुबलि, पितृ-पूजन, तीर्थाटन, पुरोहित-वृत्ति, मन्दिरों में दान / चढ़ावा, जाति-व्यवस्था, अस्पृश्यता, बाल-विवाह और महिलाओं से भेदभाव इत्यादि, जिनमें वेदों की संस्वीकृति नहीं थी। स्पष्टता आर्य समाज ने प्रतीकवाद और रूढ़िवाद को नकारा और उन सभी मान्यताओं का खण्डन किया जो अतार्किक और अव्यावहारिक थीं। स्वामी दयानन्द का मानना था कि वेद तर्क-संगत हैं, और वैदिक सिद्धान्त सार्वभौमिक हैं, और वास्तव में सर्वहितकारी हैं, लोकोपकारी हैं। सभी धर्मों के तुलनात्मक मूल्यांकन के उपरान्त उन्होंने यह निष्कर्ष दिया कि हिन्दू-धर्म सर्वथा तर्क-संगत है, और वेद न केवल दार्शनिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान तथा शाश्वत सत्य के स्रोत हैं, अपितु विज्ञान के आगार भी हैं। इस कारण भारत के प्राचीन इतिहास के साथ-साथ विज्ञान एवं चिकित्सा पद्धति में भी लोगों की रुचि बढ़ी।

स्वामी दयानन्द के अनुसार हिन्दू धर्म में भ्रष्टाचार व कुरीतियों का एकमात्र कारण था - वेदों के आधारभूत सिद्धान्तों की उपेक्षा और उनसे अपसरण करना। अपने विचारों से उन्होंने समाज को अवगत कराया कि किस प्रकार ब्राह्मणों / पुजारियों / पुरोहितों ने अहंकारवश हिन्दुओं को पथभ्रष्ट किया और सत्य से दूर किया। इस कारण उन्होंने हिन्दुओं को अन्धविश्वास तथा आडम्बर को त्यागकर वेदों में वर्णित जीवनोपयोगी मूल्यों को अपनाने के लिए प्रेरित किया। वेदों पर आधारित आर्य समाज के दस सार्वभौमिक सिद्धान्तों के माध्यम से उन्होंने समग्र विश्व को 'आर्य' अर्थात् श्रेष्ठ मानवीय गुणों से युक्त बनाने का लक्ष्य रखा, अतएव आर्य समाज का ध्येय-वाक्य बनाया : 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम'। ऋग्वेद की इस सूक्ति का अर्थ है / सम्पूर्ण विश्व को आर्य बनाते चलो! वैश्विक चिन्तन एवं मूल्यचेतना-युक्त आर्य समाज के दस नियम इस प्रकार हैं :

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है।

2. ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी चाहिए।

3. वेद सब सत्यविद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

7. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

ये सभी दस नियम जीवनोपयोगी हैं, और सार्वभौमिक होने के साथ-साथ स्थविर महत्त्व वाले हैं। इन आधारभूत जीवन-मूल्यों की प्रासंगिकता जितनी भूतकाल में थी, उतनी ही वर्तमान में भी है, और भविष्य में भी रहेगी, क्योंकि इनका मूलाधार हैं वेद - जो शाश्वत सत्य के अक्षय व अनाश्य कोश हैं।

सन् 1874 में 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थ की रचना करके स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सनातन सत्य के रक्षण के प्रति अपने संकल्प एवं प्रतिबद्धता को उद्‌भासित किया और साथ ही आगामी पीढ़ी के लिए वेदोक्त रहस्यों का सरलार्थ किया तथा वेदेतर तर्कों / विश्वासों का खण्डन किया, और वेद-सम्मत जीवन-शैली को अपनाने का आग्रह किया। 'सत्यार्थ प्रकाश' की भूमिका में ही उन्होंने इस ग्रन्थ को तैयार करने के उद्देश्य को स्पष्ट किया है : 'मेरे इस ग्रन्थ बनाने का प्रयोजन सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना. . .।' अपने गुरु विरजानन्द से स्वामी दयानन्द ने जो ज्ञान प्राप्त किया था, उसका एक महत्त्वपूर्ण पक्ष था / आर्ष तथा अनार्ष ग्रन्थों में भेद करना। दीक्षा से पूर्व उन्होंने जो कुछ पढ़ा था, वह अनार्ष ग्रन्थों का अध्ययन था। गुरु के आदेश से उन्होंने आर्ष ग्रन्थों का अनुशीलन किया, जिससे उनके जीवन और आचार-विचार-व्यवहार में क्रान्ति आई, जिसे उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' में व्यक्त किया है। इस ग्रन्थ में 377 ग्रन्थों का उल्लेख हुआ है और 1542 वेद-मन्त्रों अथवा सूक्तियों के उद्धरण मिलते हैं। चारों वेद, सभी उपनिषद्, षड्‌दर्शन, स्मृति, पुराण, सूत्र-ग्रन्थ, मनुस्मृति, भगवद्‌गीता, जैन-बौद्ध ग्रन्थ, बाइबल और कुर'आन सन्दर्भ-सहित उद्धृत किए गए हैं। यह ग्रन्थ चयनित क्रान्तिकारी विचारों का महत्त्वपूर्ण संकलन है / ऐसे विचारों का

जिनके विषय में तात्कालिक दौर में कोई सोच भी नहीं सकता है।

'सत्यार्थ प्रकाश' के प्रथम उल्लास में ईश्वर के स्वरूप का वर्णन किया गया है : 'ओ३म' को ईश्वर का मुख्य नाम बताया है, और शेष सभी नामों को गौण कहा है : "ओमित्येतदक्षरमिदँ सर्वं तस्योपव्याख्यानम" (माण्डूक्य उपनिषद्) / अर्थात् सब वेदादि शास्त्रों में परमेश्वर का प्रधान और निज नाम 'ओ३म' को कहा है, अन्य सब गौणिक नाम हैं। 'ओ३म' को ही उपास्य माना है : 'ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत्' (छान्दोग्य उपनिषद्) / अर्थात् 'ओ३म' जिसका नाम है और जो कभी नष्ट नहीं होता, उसी की उपासना करनी योग्य है, अन्य की नहीं।

ईश्वर की व्याख्या करते हुए स्वामी दयानन्द लिखते हैं : 'ईश ऐश्वर्ये' इस धातु से 'ईश्वर' शब्द सिद्ध होता है। दृश्य ईष्टे सर्वैश्वर्यवान् वर्त्तते स ईश्वरः' / जिसका सत्य विचार, शील, ज्ञान और अनन्त ऐश्वर्य है, इससे उस परमात्मा का नाम 'ईश्वर' है। और 'परमात्मा' को इस प्रकार परिभाषित करते हैं : 'परश्चासावात्मा च य आत्मभ्यो जीवेभ्यः सूक्ष्मेभ्यः परोतिसूक्ष्मः स परमात्मा' / अर्थात् जो सब जीव आदि से उत्कृष्ट और जीव, प्रकृति तथा आकाश से भी अतिसूक्ष्म और सब जीवों का अन्तर्यामी आत्मा है, इससे ईश्वर का नाम 'परमात्मा' है। 'परमेश्वर' की व्याख्या वे इस प्रकार करते हैं : "य ईश्वरेषु समर्थेषु परमः श्रेष्ठः स परमेश्वरः" / अर्थात् जो ईश्वरों में परम श्रेष्ठ, समर्थों में परम समर्थ है, जिसके तुल्य कोई न हो, उसका नाम 'परमेश्वर' है। इस प्रकार ईश्वर के विविध नाम परिभाषित किए गए हैं, परन्तु स्वामी दयानन्द इस विषय में अपना मत स्पष्ट करते हैं : 'परमात्मा के असँख्य नाम हैं। क्योंकि जैसे परमेश्वर के अनन्त गुण, कर्म, स्वभाव हैं, वैसे उसके अनन्त नाम हैं। उनमें से प्रत्येक गुण, कर्म और स्वभाव का एक-एक नाम है।'

शिक्षा के विषय में भी 'सत्यार्थ प्रकाश' में महत्त्वपूर्ण सुझाव मिलते हैं। जिसमें गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की बात कही गई है। मैकॉले की शिक्षा-पद्धति से हो रहे जीवन-मूल्यों के क्षरण का निराकरण गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में निहित है। परन्तु वैदिक आदर्शों के साथ-साथ पश्चिम के आधुनिक सार्थक, तार्किक एवं वैज्ञानिक विचारों के समन्वय पर आधारित, स्वामी दयानन्द के अनुयायी लाला हंसराज द्वारा स्थापित, 'एंग्लो-वैदिक' शिक्षा- पद्धति के आधार पर देश भर में दयानन्द एंग्लो-वैदिक शिक्षा संस्थान उद्देश्यपूर्ति में सफल हुए हैं।

सत्य होने की वजह से ब्रह्म, सर्वत्र होने से विष्णु, कल्याणकारी होने से शिव, सृष्टि के रचयिता होने से प्रजापति, दुष्टों को रुलाने से रुद्र, इत्यादि उसी परमात्मा के नाम हैं। चूँकि देव का अर्थ होता है देने वाला, दान या कृपा करने वाला, अतः ऋषि-मुनि या कोई नदी, ग्रह, नक्षत्र आदि जो कल्याण करने वाले हैं, वे देव हैं किन्तु उपासना ईश्वर की ही करनी चाहिए जो इन सबका कर्ता है। इसी से एकमात्र ईश्वर का ही नाम 'महादेव' है। वेदमन्त्रों को भी देव कहा गया है क्योंकि उनको आत्मसात् करने से कल्याण होता है। मूर्तिपूजा वेदों और उपनिषदों में कहीं नहीं है। मूर्तिपूजन से लोग मूर्तिआश्रित हो जाते हैं और पुरुषार्थ के लिए प्रेरित नहीं रहते। और सत्य यही है कि केवल पुरुषार्थ से ही जीवों का कल्याण हो सकता है। सप्तम समुल्लास में उन्होंने ईश्वर को निराकार बताया है। उनके अनुसार यदि ईश्वर साकार होता तो व्यापक न हो सकता। जब व्यापक न होता, तो सर्वज्ञादि गुण भी न हो सकते। क्योंकि परिमित वस्तु में गुण-कर्म-स्वभाव भी परिमित रहते हैं तथा शीतोष्ण, क्षुधा, तृषा और रोग, दोष, छेदन-भेदन आदि से रहित नहीं हो सकता। इससे यह निश्चित है कि ईश्वर निराकार है। और जो साकार होता, तो उसके आकार बनाने वाला दूसरा होना चाहिए। क्योंकि जो संयोग से उत्पन्न होता है, उसको संयुक्त करने वाला निराकार चेतन अवश्य चाहिए। जो कोई कहे कि ईश्वर ने अपना शरीर बना लिया, तो वही सिद्ध हुआ कि शरीर के बनने के पूर्व निराकार था। इसलिए वह परमात्मा न शरीर धारण करता, निराकार होकर सब जगत् को सूक्ष्म आकार से स्थूलाकार बनाता है।'

यजुर्वेद के उद्धरण 'अज एकपात्॥

सपर्य्यगाच्छुक्रमकायम' से स्वामी दयानन्द ने स्पष्ट किया है कि अनादि-अनन्त परमेश्वर न जन्म लेता है और न कभी शरीर धारण करता है, और इस तर्क से ईश्वर के अवतार की संभावना को नकारा है। इस प्रकार अवतारवाद के खण्डन से उनकी आलोचना भी हुई है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने अपने अवतरण का उद्घोष किया है : 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥' / अर्थात् जब-जब धर्म का लोप होता है, तब-तब अधर्म के नाश के लिए मैं शरीर धारण करता हूँ - इस श्लोक के सन्दर्भ में स्वामी दयानन्द कहते हैं : 'यह बात वेदविरुद्ध होने से प्रमाण नहीं।' वे मानते थे ईश्वर कोई अवतार, पैगम्बर या मसीहा नहीं भेजता, अपने कर्मों के कारण ही कोई आदरणीय बनता है। राम और कृष्ण आदरणीय महापुरुष थे, लेकिन ईश्वरावतार नहीं। परमात्मा सर्व-आनन्दमय / सच्चिदानन्द है। वैष्णव, शैव, शाक्त, कापालिक इत्यादि मत-पंथ वेदार्थ को न समझ पाने के कारण बने हैं। ईश्वर का कोई रूप या अवतार नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वेदों में इनका कहीं विवरण नहीं मिलता। पूर्णतः वेदों व उपनिषदों पर आधारित होने के कारण ही 'सत्यार्थ प्रकाश' पुराणों और अन्य मत-पंथों का खण्डन करता है।

एक अन्य प्रश्न / 'ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता

है, या नहीं?' - इस विषय में स्वामी दयानन्द कहते हैं, 'नहीं। क्योंकि जो पाप क्षमा करें, तो उसका न्याय नष्ट और सब मनुष्य महापापी हो जाएं। क्योंकि उनको पाप करने में उत्साह और निर्भयता हो। . . . सब कर्मों का यथावत् फल देना ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं।' ईश्वर एक न्यायकारी शक्ति है, पापों-अपराधों को क्षमा करना उसके अनुकूल नहीं। इस विचार से उन्होंने कर्म-योग अथवा कर्म के सिद्धान्त को प्राथमिकता के साथ स्वीकारा है और मनुष्य को स्वकीय कर्म के अधीन माना है। उन्होंने जीव (आत्मा / पुरुष), प्रकृति और परमात्मा - तीनों को एक-दूसरे से पृथक् माना। परमात्मा जीवों पर नियन्त्रण नहीं करता - व्यक्ति अपने कार्य के लिए स्वतन्त्र है। परिणाम / फल तो अपने कार्य / कर्म के अनुसार ही प्राप्त होगा - परमात्मा की इच्छा के अनुसार नहीं। उनका जीव-प्रकृति-परमात्मा का त्रैतवादी सिद्धान्त भी द्वैतवादी और अद्वैतवादी मतों के प्रतीप अथवा समानान्तर बन गया था।

इसी प्रकार 'सत्यार्थ प्रकाश' के अष्टम समुल्लास में सृष्टि-उत्पत्ति पर आख्यान है। नवम समुल्लास में मुक्ति / मोक्ष संबंधी विचार है, एकादश में आर्यावर्त्तीय मत-पंथों की समालोचना है तो द्वादश में बौद्ध, जैन व नास्तिक मतों की समीक्षा है, त्रयोदशी में बाइबल का विश्लेषण है तथा चतुर्दश समुल्लास में कुर'आन की पड़ताल है। धर्म, ईश्वर, आत्मा-परमात्मा-परमेश्वर, सृष्टि-उत्पत्ति, मोक्षादि विषयों के अतिरिक्त समाज व राष्ट्र विषयक विचार भी इस ग्रन्थ में द्रष्टव्य हैं। द्वितीय समुल्लास में सन्तानों के पालन-पोषण सम्बन्धी उपदेश है, तृतीय में शिक्षा के वास्तविक स्वरूप की चर्चा है, चतुर्थ में विवाह सम्बन्धी निर्देश हैं और कर्म से वर्ण-व्यवस्था का अभिमत है। पंचम में वानप्रस्थ व संन्यास विषयक विचार हैं तथा दशम समुल्लास में आचार-व्यवहार तथा खान-पान सम्बन्धी निर्देश हैं। षष्ठ समुल्लास में राष्ट्रवादी दृष्टिकोण सहित राष्ट्रीय एकता तथा सुरक्षा हेतु वैदिक राज्य की परिकल्पना महत्त्वपूर्ण है।

'सत्यार्थ प्रकाश' में 'स्वराज्य' एवं 'स्वदेशी' शब्दों की महत्ता का भी उल्लेख हुआ है, जिन्हें बाद में लोकमान्य तिलक और दादाभाई नारौजी ने भी प्रयोग किया। स्वामी दयानन्द की उक्ति / 'कोई कितना भी कहे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है' - बर्तानिया के पूर्व प्रधानमन्त्री सर हेनरी कैम्प्बेल-बैनमैन की प्रसिद्ध उक्ति "Good government is no substitute for self government" को प्रतिध्वनित करती है / और अंग्रेजों के शासन काल में ऐसी बात कहना स्वयं में साहसपूर्ण कार्य था।

शिक्षा के विषय में भी 'सत्यार्थ प्रकाश' में महत्त्वपूर्ण सुझाव मिलते हैं जिनमें गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की बात कही गई है। मैकॉले की शिक्षा-पद्धति से हो रहे जीवन-मूल्यों के क्षरण का निराकरण गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में निहित है। परन्तु वैदिक आदर्शों के साथ-साथ पश्चिम के आधुनिक सार्थक, तार्किक एवं वैज्ञानिक विचारों के समन्वय पर आधारित, स्वामी दयानन्द के अनुयायी लाला हंसराज द्वारा स्थापित, 'एंग्लो-वैदिक' शिक्षा-पद्धति के आधार पर देश भर में दयानन्द एंग्लो-वैदिक शिक्षा संस्थान उद्देश्यपूर्ति में सफल हुए हैं।

उन्नीसवीं सदी में अंग्रेजी सभ्यता का प्रबल प्रचार था, जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू अपनी ही संस्कृति को हेय मानने लगे थे और पश्चिम का अन्धानुकरण करने में गर्व समझने लगे थे। भारतीयों को भारतीयता से भ्रष्ट करने की मैकॉले की योजना के अनुसार हिन्दुओं को पतित करने के लिए अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली पर बल दिया जा रहा था। विदेशी सरकार तथा ईसाई समाज अपने मिशनरियों और एजेंट पादरियों के माध्यम से ईसाइयत का झण्डा देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फहराने के लिए और हिन्दू-विरोधी साहित्य बाँटने के लिए करोड़ों रुपए व्यय कर रहे थे। हिन्दू अपना धार्मिक, साँस्कृतिक एवं राष्ट्रीय गौरव खो चुके थे। प्रतिदिन हिन्दू समुदाय के लोग मुसलमान और ईसाई बन रहे थे। स्वामी दयानन्द ने 'आर्य समाज' और 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वारा इन घातक राष्ट्रविरोधी व धर्मविरोधी प्रवृत्तियों को रोका। इसके साथ ही उन्होंने आर्य सभ्यता और संस्कृति से प्रखर प्रेम तथा वेदादि आर्य सत्साहित्य तथा भारत की परम्पराओं के प्रति श्रद्धा और सम्मान पर बल दिया। स्वराज्य, स्वधर्म, स्वसमाज, स्वभाषा व स्वराष्ट्र के प्रति भक्तिभाव जाग्रत करने तथा तर्क-प्रधान बातें करने के कारण उत्तर भारत के पढ़े-लिखे हिन्दू धीरे-धीरे इस ओर खिंचने लगे थे, जिससे आर्य समाज सामाजिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में लोकप्रिय हुआ।

इससे एक ओर जहाँ हिन्दू समाज में कई सुधार सम्भव हुए, वहीं कई बदलाव इस्लाम और ईसाई धर्म में भी हुए। 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रभाव विश्वव्यापी हुआ। बाइबिल , कुर'आन, पुराण, बौद्ध-जैन ग्रंथों की व्याख्याएं भी बदल गईं। हिन्दुओं के धर्मान्तरण पर रोक लगी और मुस्लिमों, ईसाई आदि विधर्मियों की शुद्धि (घर वापसी) हुई। 'सत्यार्थ प्रकाश' ने वैदिक वाङ्मय का महत्त्व बढ़ाया और पुराणों, साखियों, भागवत और हदीसों की मान्यता घटा दी। मूर्तिपूजा का स्वरूप बदल गया, पहले लोग मूर्ति को ही ईश्वर मान चुके थे, अब मूर्तिपूजक मूर्तिपूजा की विभिन्न मनोहारी व्याख्याएं करने का प्रयास करने लगे, जिनमें कोई प्रबल तर्क नहीं मिलता। 'सत्यार्थ प्रकाश' ने स्त्री-जाति को वांछित सम्मान दिलाया। 'सत्यार्थ प्रकाश' से हिंदी भाषा का महत्व बढ़ा। अकेले 'सत्यार्थ प्रकाश' ने कई क्रन्तिकारी और समाज सुधारक पैदा कर दिए। 'सत्यार्थ प्रकाश' और स्वामी दयानन्द का जीवन-चरित ने स्वाधीनता संग्राम के क्रांतिकारियों को अत्यधिक प्रभावित किया। शहीद भगत सिंह, लाला लाजपतराय, मदन लाल ढींगरा इत्यादि

स्वतन्त्रता-सेनानियों ने स्वामी दयानन्द के आदर्शों को अपनाया और बहुत-से अन्यों को भी प्रेरित किया। एक अंग्रेज विद्वान शेरोल ने यहाँ तक कहा कि 'सत्यार्थ प्रकाश' ब्रिटिश सरकार कि जड़ें उखाड़ने वाला ग्रंथ है। वस्तुतः 'सत्यार्थ प्रकाश' उस समय की कालजयी कृति है, जिसमें अंग्रेजों का विरोध भी मिलता है, जिससे वास्तव में उस समय में अंग्रेज सरकार को काफी नुकसान हुआ।

'सत्यार्थ प्रकाश' में उपदिष्ट बहुत-सी बातें आज के युग में भी प्रासंगिक हैं, इसमें कतई सन्देह नहीं है। समसामयिक समस्याओं का समुचित समाधान इस ग्रन्थ में खोजा जा सकता है : व्यक्ति, समाज, राष्ट्र, विश्व एवं मानवता सम्बन्धी कोई भी समस्या हो, इस ग्रन्थ से हल की जा सकती है। शिक्षा की समस्या, राष्ट्रभाषा की समस्या, राजनीति ⁄राजधर्म की समस्या, लोकतन्त्र ⁄ चुनाव की समस्या, सामाजिक व्यवस्था की समस्या, जातिवाद की समस्या, स्त्रियों से भेदभाव की समस्या, पर्यावरण प्रदूषण व असंतुलन की समस्या, गोरक्षा की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या, मानवीय मूल्यों के पतन की समस्या ⁄सभी का कोई न कोई निदान इस ग्रन्थ में उपलब्ध है, क्योंकि यह वेदों के सत्यार्थ पर आधृत है।

स्वामी दयानन्द और उनकी मान्यताओं को विश्व स्तर पर समर्थन और अनुमोदन मिला। चर्चित फ्रांसीसी दार्शनिक ⁄ विचारक रोमां रोलां लिखते हैं : 'सिंह की प्रवृत्ति वाला यह सत्पुरुष उन व्यक्तियों में से एक है, जिन्हें भारत की चर्चा करते हुए यूरोप भुला पाने में सक्षम तो होगा, किन्तु विवश रहेगा इसे स्मरण करने के लिए ⁄ क्योंकि यह एक दुर्लभ योग है : एक क्रियाशील विचारक ⁄ नेतृत्व की विलक्षण प्रतिभा से युक्त।' थियोसॉफिकल सोसायटी की सह-संस्थापक मदाम ब्लावत्स्की ने कहा : 'यह बात पूर्णतया सच है कि शंकराचार्य के समय के उपरान्त दयानन्द जैसा कोई संस्कृत का विद्वान, गहन अध्यात्मी, अद्भुत् वक्ता और बुराई का निर्भीक विरोधी भारत में कदापि देखने को नहीं मिला।'

थियोसॉफिकल सोसायटी के साथ मतभेद हो जाने पर आर्य समाज पृथक् हो गया था ⁄ तदपि सोसायटी के तत्कालीन अध्यक्ष कर्नल एस. एस. ओल्कॉट ने स्वामी दयानन्द के देहावसान पर ये शब्द कहे : 'भारत से एक सिद्धात्मा चली गई है। पंडित दयानन्द सरस्वती व्रजन कर गए हैं; एक अदम्य, ऊर्जस्वी सुधारक, जिसकी ओजपूर्ण वाणी और जोशपूर्ण वक्तृता ने गत कुछ वर्षों में भारत के लोगों को प्रमाद एवं तन्द्रा से जगाकर सक्रिय राष्ट्रभक्ति की ओर प्रेरित किया, अब नहीं रहा। . . . हमारे सभी मतभेद शरीर के साथ जल चुके हैं . . . अब हम हमारे पूर्व सहयोगी और उपदेशक और तदनन्तर हमारे विरोधी के केवल महान् गुणों को स्मरण करते हैं. . . निश्चित रूप से पूरे विश्व में दयानन्द से बेहतर और महत्तर हिन्दी और संस्कृत का वक्ता नहीं है . . . '

डॉ. आर. एल. टर्नर लिखते हैं : "वैदिक वाङ्मय की सटीक व्याख्या के लिए कोई भी स्वामी दयानन्द की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने न केवल भारत को राष्ट्रीय एकता के प्रति जाग्रत किया अपितु विश्व की संस्कृति के लिए भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।" और भारत में सुभाष चन्द्र बोस ने कहा : 'निस्सन्देह स्वामी दयानन्द उन सर्वाधिक सशक्त व्यक्तित्वों में से एक हैं, जिन्होंने आधुनिक भारत को आकार दिया है और इसके नैतिक पुनरुत्थान एवं धार्मिक पुनर्जागरण का श्रेय उनको जाता है।'

निष्कर्षतः स्वामी दयानन्द की सभी मान्यताएं ⁄ जिन्हें उन्होंने अपने आचार-व्यवहार में अपनाया और अपनी दैनिक जीवन-शैली में सम्मिलित किया और जिया ⁄ पूर्णतः वेदप्रणीत आदर्शों पर संस्थापित हैं। और इस बात में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता कि वैदिक आदर्श एवं मानवीय-मूल्य सार्वभौमिक हैं, सार्वत्रिक हैं, सार्वजनीन हैं। जिस युग में वेदों का सृजन हुआ, पृथ्वी पर मानव-धर्म के अतिरिक्त कोई अन्य पंथ, सम्प्रदाय अथवा मत नहीं था। अतएव वैदिक आदर्श केवल मानवता के लिए समर्पित है। चाहे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' ⁄ अर्थात् समग्र विश्व एक कुटुम्ब है ⁄ ऐसी उदात्त भावना हो 'माता भूमिः पुत्रोहम् पृथिव्याः' ⁄ अर्थात् भूमि माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ - ऐसा भूमि के प्रति दायित्व एवं समर्पणभाव हो; 'सं गच्छध्वं सं वदध्वं' ⁄ अर्थात् साथ चलें मिलकर बोलें का सहितता-भाव हो मा विद्विषावहै ⁄ अर्थात् हम परस्पर द्वेष न करें ⁄ यह परस्पर प्रेमभाव हो; मा त्वद् राष्ट्रमधिभ्रशत् ⁄ अर्थात् राष्ट्र तुम से या तुम्हारे कारण पतित न होने पाए ⁄ इस प्रकार राष्ट्र के प्रति हमारी कर्त्तव्यपरायणता का सन्देश हो 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' : अर्थात् जहाँ नारियों का पूजन-सत्कार होता है, वहाँ देवों की उपस्थिति और कृपा रहती है ⁄ ऐसा नारी के प्रति सम्मान का सत्भाव होय 'तरवोस्पि हि जीवंति' अर्थात् वृक्ष भी जीते हैं ⁄ ऐसी पर्यावरण चेतना हो; 'यत् ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे' ⁄ अर्थात् जो ब्रह्माण्ड में है, वही हमारे शरीर में है ⁄ ऐसा वैज्ञानिक अनुसन्धान हो; 'असतो मा सद्गमय ⁄ तमसो मा ज्योतिर्गमय ⁄ मृत्योर्मा अमृतम् गमय' ⁄ अर्थात् असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमरत्व की ओर बढ़ने की सत्कामना हो ⁄वेदों में उत्तमोत्तम जीवन-मूल्य एवं ज्ञान-तत्त्व हैं, जिनसे शाश्वत सुख व आनन्द का मार्ग प्रशस्त होता है। स्वस्थ पर्यावरण, स्वस्थ मानवता, स्वस्थ व्यक्ति, स्वस्थ जीवन के लिए कल्याणकारी सूत्रों की अक्षय निधि हैं वेद। और इनमें निर्दिष्ट ज्ञान जितना प्राचीन है, उतना ही नवीन है, उतना ही अर्वाचीन है, उतना ही आधुनिक है, उतना ही समीचीन है ⁄ यह सत्य के निकष पर परीक्षित है।

गुजरात के भूतपूर्व मोरवी राज्य के टकारा ग्राम में सन् 1824 के फाल्गुण कृष्ण पक्ष की दशमी को जनमे स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने विचारों से परतन्त्र भारत में एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक एवं राजनीतिक क्रान्ति का सूत्रपात किया था। अपने

गुरु मथुरा के स्वामी विरजानन्द से शिक्षा प्राप्त करके इन्होंने वेदों का गहन अध्ययन किया और धर्म-सुधार के उद्देश्य से 'पाखण्ड-खण्डिनी पताका' फहराई। स्वामी दयानन्द एकेश्वरवाद में विश्वास रखते थे और उन्होंने इसे स्वीकर करने का आग्रह किया ताकि समाज से अन्धविश्वास, ढोंग और भ्रम मिट सके। उन्होंने हिन्दी को अपनाया और हिन्दी में लिखा, जिससे भाषाई राष्ट्रवाद को बहुत बल मिला। संस्कृत के विद्वान् होते हुए भी उन्होंने 'सत्यार्थ-प्रकाश' की रचना हिन्दी में की। यही नहीं, 'भारत, भारतीयों का है' - अंग्रेजों के शासन काल में ऐसा कहने का साहस भी सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द ने ही किया था। अंग्रेज सरकार उनसे इतना आकृष्ट थी कि उन्होंने उन्हें समाप्त करने के लिए कई षड्यन्त्र कराए। सन् 1883 को दीपवली के दिन सन्ध्या के समय स्वामी दयानन्द इस संसार से व्रजन कर गए। किन्तु उनके आदर्श आज भी जीवित हैं, उनकी मान्यताएँ आज भी प्रासंगिक हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। उनके विचारों को मानवतावदी दृष्टि से देखने की आवश्यकता है, क्योंकि उन्होंने जो कहा, उसमें मानव-कल्याण की उदात्त भावना ही प्रमुख थी।

उपसंहार में, 'सत्यार्थ प्रकाश' के आदि और अन्त में स्वामी दयानन्द द्वारा प्रयुक्त वेदमन्त्र मैं यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ :

ओ३म् शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा। शन्नौइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्माअमवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

अर्थात् 'मित्र' देवता हमारे लिए कल्याणकारी हों, 'वरुण' देवता कल्याणकारी हों। 'अर्यमा' देवता हमारा कल्याण करें। हमारे लिए 'इन्द्र' एवं 'बृहस्पति' देवता कल्याणप्रद हों। 'उरुक्रम' (जिनके डग विशाल हैं) विष्णु देवता हमारे प्रति कल्याणप्रद हों। ब्रह्म को नमन है। वायुदेव तुम्हें नमस्कार है। तुम ही प्रत्यक्ष ब्रह्म हो। अतः तुम्हें ही प्रत्यक्ष तौर पर ब्रह्म कहूंगा। ऋत बोलूंगा। सत्य बोलूंगा। वह ब्रह्म मेरी रक्षा करें। वह वक्ता आचार्य की रक्षा करें। रक्षा करें मेरी। रक्षा करें वक्ता आचार्य की। त्रिविध (आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक) तापों की शांति हो!

इस मन्त्र में सर्वजन-कल्याण की सत्कामना की गई है। वेदों में इसी प्रकार के मानवतावादी, सार्वभौमिक एवं लोकोपयोगी मूल्य निहित हैं, जिनके विश्वव्यापी प्रसार की आवश्यकता को समझते हुए, स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का आन्दोलन चलाया।

#3, सिसिल क्वार्टर्ज, चौड़ा मैदान, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो : 0 94186 26090

कविता

क्षणभंगुर

सूर्य प्रकाश मिश्र

मैं भीष्म नहीं क्षण भंगुर हूं

मेरी प्रत्यंचा के स्वर में
कोई भीषण टंकार नहीं
पर अन्यायी का साथ मुझे
मरते दम तक स्वीकार नहीं।

निर्लिप्त काल के माथे पर
सच्चाई का नवअंकुर हूं



मैं सीमित नहीं प्रतिज्ञा में
मेरा पथ बहुआयामी है
मन नायक है अधिनायक है
पर सच का ही अनुगामी है

माना क्षमता कम है मेरी
पर गाता विद्रोही सुर हूं

कैसे मानेगा राजधर्म
जो राष्ट्रधर्म अनुयायी है
जनसेवा का आग्रह करता
सारा मानस व्यवसायी है।

ऐसे प्रतिकूल समय में ही
युग परिवर्तन में आतुर हूं।

बी 23/42 ए.के., बसंत कटरा गांधी चौक,
खोजवां (दुर्गाकुंड), वाराणसी, उत्तर प्रदेश-221 001,
मो. 0 98398 88743

निबंध

वक्त की मार से कराहती कलम

◆ भगवान वैद्य 'प्रखर'

"क्यों, सो गये क्या?"

"नहीं, नींद नहीं आयी। यूं ही लेट गया था। आंखें दुखने लगी थीं। लैप-टॉप पर देर तक काम करता रहा, इस कारण। पर तुम कौन हो...? मैंने पहचाना नहीं तुम्हें।"

"क्या सचमुच नहीं पहचाना? मुझे थामें घंटों लिखते बैठते थे आप। उंगलियां दुखने लगतीं पर आंखों ने शिकायत नहीं की कभी, मेरे राज में ...। मराठी के एक उपन्यास का जल्द से जल्द अनुवाद करके देना था, तब कितने समय तक मेरी सहायता से लिखते रहते थे आप! कभी-कभी तो दिन-दिन भर ..! पर क्या कभी आपकी आंखों ने शिकायत की थी?"

"तो 'कलम' हो तुम! क्या शिकायत करने आयी हो?"

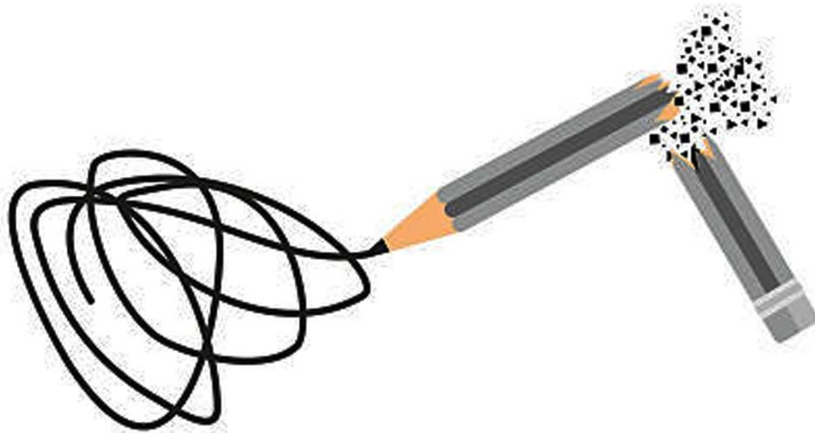
"हां, चाहो तो शिकायत समझो या पीड़ा। वो भी मुझ अकेली की नहीं। मेरे साथ आपके राइटिंग-टेबिल के पीछे वाली कांच की शो-केस में जितनी कलम संजोकर रखी गयीं हैं, उन सबकी पीड़ा!"

"क्या कहना चाहती हो?"

"बस, यही कि हमारा भविष्य क्या है? कब तक पड़ी रहेंगीं हम इस तरह? आपने तो आजकल हमारा उपयोग करना ही छोड़ दिया है। उपयोग क्या, हमें छूना तक बंद कर दिया है। कभी-कभार 'चेक' लिखने के लिए ही सही, हमें छू लिया करते थे आप। पर, एटीएम ने वह भी बंद कर दिया।... आप खुद याद करो कि पिछली बार कब छुआ था आपने हम में से किसी को?"

"मैं तुम लोगों का अपराधी जरूर हूं। पर, सच बात यह है कि आजकल कलम की जरूरत ही नहीं रही। जब से लैप-टॉप हाथ लगा है, सारा काम उसने संभाल लिया। पत्र-लेखन बंद हो गया। ई-मेल के कारण लिफाफे पर पता लिखने की भी जरूरत न रही। एकाध बार कहीं हस्ताक्षर के लिए जरूरत पड़ ही गयी तो आस-पास कहीं से सुलभ हो जाती है।"

"वही तो कह रही हूं मैं। आपके पुरस्कृत कहानी-संग्रह 'चकरघिन्नी' की सारी बाईस कहानियां मैंने लिखी हैं। कितना मजा आता था जब आप कोई नयी रचना कलम से लिखते थे। कोई मां अपने शिशु का सर्व प्रथम मुख दर्शन करके जितना सुख महसूस करती है उतना ही सुख मिलता था हमें आपकी नई रचना को निसृत करते हुए। कितनी ही दीपावली पर सैंकड़ों ग्रीटिंग-कार्ड्स मेरी सहायता से लिखे हैं, आपने। आपके दिल की बात हमारे मुख से निकलती थी। किसी प्रसंग-विशेष पर एकेक मित्र, संबंधी को याद करके चिट्ठियां लिखते थे आप। आपके परिवार का आत्मीय हिस्सा थी मैं। पर आज...! ई-मेल और एस.एम.एस. के



कारण हमारा उपयोग ही बंद हो गया।"

"सचमुच तुम्हारा..तुम सबका अपराधी हूं मैं। पर...समझ नहीं पा रहा हूं कि मुझे क्या करना चाहिए!"

"आपके शो-केस में पचास से अधिक कलम हैं। एक से बढ़कर एक। हरेक का अपना इतिहास है। ...आपकी एक प्रेमिका थी गरिमा। आपने उसका नाम बदलकर 'गजब' रख दिया था। आपकी कहानियों की दीवानी थी। वह लगातार पांच जन्म -दिन पर आपको कलम भेंट करती रही थी। सब नायाब! एक से बढ़कर एक। उसकी बहन एअर-होस्टेस थी। उससे मंगवाती रहती थी। पता नहीं किस -किस देश से लाती रही थी ! अच्छा हुआ, ब्याह करके कैनडा चली गई। अन्यथा उसकी कलमों का ढेर लग जाता, आपके घर में ! ...वे पांचों कलम आज भी 'गजब' और आपके प्यार के प्रतीक के रूप में हमारे बीच मौजूद हैं। एक पुरस्कार में आपको चांदी की कलम का 'सैट' मिला था। सूट पहनकर कहीं जाना हुआ तो बस उन्हीं का नंबर लगता था। अब उनकी रीफिल सूख गयी हैं और वे ठूंठ की तरह पड़ी हैं हमारे साथ, आपके 'कलमगाह' में। आपकी विशेष स्नेह-पात्र कलमों में से एक वह है जिसके पिछले सिरे पर घड़ी है। जब तक 'सेल' में जान थी तब तक आपकी पट्टरानी बनी रही। नया शर्ट खरीदने पर उस पर मैचिंग की कलम खरीदना आपका शगल था। कितनी इकट्ठी हो गयी थीं! गोल्डन-पाइंट नीब वाली, सिल्वर-नीब वाली, दो रीफिल वाली, चार रीफिल वाली, भांति-भांति की, एक से बढ़कर एक.. .! आंटी जी एक दिन तीन दर्जन कलम राजा पेन हाऊस वाले के पास ले गयीं और उन सबमें नयी रीफिल डलवाकर सरस्वती विद्यालय में दे आयीं, छात्रों के बीच वितरण के लिए। लेकिन हम तो आपकी खास हैं न ! हमारा क्या हश्र होगा?"

"मैं आप सब का अपराधी अवश्य हूं। पर समय की जरूरत के साथ बदलना जरूरी था। लैप-टॉप पर काम करने में कई प्रकार की सुविधा है। बिना काट-पीट किए सुधार किया जा सकता है। कम समय में अधिक काम हो जाता है। सबसे बड़ी बात यह है कि बढ़ती आयु के कारण अक्षरों का स्वरूप बनाये रखना दुष्कर होता जा रहा था। उंगलियों की शक्ति जो क्षीण होती जा रही है।"

"मुझे लैप-टॉप से शिकायत नहीं है। मेरा इतना ही कहना है कि हमारा भविष्य क्या है? हमारी स्याही सूख चुकी है। नीब में जंग लग चुका है। जिनके स्याही के ट्यूब रबड़ के थे, वे सड़ चुके हैं। रीफिलें सूख चुकी हैं। यानी आज आप हमें इस्तमाल भी करना चाहो तो एक अक्षर लिखने लायक नहीं हैं हम। अर्थात न हम जीवित हैं, न मृत। सबके अलग-अलग अवयव हैं। इस कारण 'ब्रेन -डेड' मनुष्यों की तरह अंग- दान भी नहीं किया जा सकता। उस पर, आपका हमारे प्रति मोह इतना है कि घर का कितना सामान इधर से उधर हो गया, बेच दिया गया, बांट दिया गया, जगह बदल दी गयी पर हम ज्यों की त्यों और जहां की तहां बनी हुई हैं। कब तक रखेंगे आप हमें इस प्रकार सहेजकर ?"

"मैंने आज तक कभी सोचा नहीं था कि मुझे आप लोगों के इस सवाल का भी कभी जवाब देना पड़ेगा। अब सोचूंगा...।"

"एक मर्तबा बैंक में एक महिला ग्राहक ने आप से कलम मांगी थी। आपने दे दी। और वापिस लेना भूल गये। जब याद आया तब आप घर से फिर बैंक गये थे। तब तक वह महिला बैंक छोड़ चुकी थी। कितनी जद्दोजहद की थी आपने उस दिन अपनी कलम प्राप्त करने के लिए ? बैंक से उस महिला का फोन नंबर प्राप्त करके उसे फोन किया। वह 'गीतांजली' पकड़ने के लिए बड़नेरा जा चुकी थी। आप भाग-दौड़ करके बड़नेरा गये और उससे अपनी कलम प्राप्त की। क्या आपके पास दूसरी कलम नहीं थी? ...वह कलम आपको आपके एक शायर मित्र ने, जो मुशायरे में अमरावती आये थे, स्मृति-स्वरूप भेंट की थी। मित्र न रहे पर, उनकी कलम सहेजकर रखी हैं आपने। एक दिन उसकी भी सिसकियां सुनीं। उसी ने बतलाया यह किस्सा, मुझे। अपने अच्छे दिन याद कर- करके बड़ी देर तक बतियाती रही थी वो। ...हम लोग आपस में यूं ही बतियाती रहती हैं। अपने अच्छे दिनों को याद करती हैं। हंसती हैं, मुस्कराती हैं। हरेक की अलग-अलग दास्तान है। आपस में एक -दूसरे को सुनाती रहती हैं।"

"अब मुझे पता चला कि रात-बेरात घर में जो बतियाने की आवाजें आती रहती हैं वे किसकी हैं!"

"आवाजें भीं और सिसकियां भीं। ...अच्छा, इतना ही बतला दीजिये। आप हों तब तक तो आप हमें त्यागोंगे नहीं। पर आपके बाद क्या होगा हमारा?"

"यह प्रश्न आप लोगों पर ही नहीं अपितु बहुत-सी चीजों पर लागू होता है कि मेरे बाद उनका क्या होगा? और जब सोचने लगता हूं तो नींद नहीं आती। कलम का अस्तित्व तो सैंकड़ों सालों से रहा है। और राजा महाराजाओं से लेकर बड़े-बड़े लेखक और शायर इसके गुण ग्राहक एवं संग्राहक रहे हैं। तुम्हीं बतलाओ, 'संग्राहक' के जाने के बाद उनका क्या होता है?"

"क्या बतलाऊं? राजा- महाराजा उन्हें जो स्त्री पसंद आ जाए उसे लाकर उसके साथ ब्याह रचाते थे। कुछ दिन अपनी पट्टरानी बना कर रखते थे। फिर दूसरी आयी कि पहली वाली को दूसरे महल या 'हरम' में शिफ्ट कर दिया करते थे। 'हरम' की स्त्रियां राजा की बाट जोहती रहती थीं कि कभी वे उस तरफ आयेंगे। बाट जोहते-जोहते जीवन बीत जाता था। राजा न उन्हें किसी को दे सकता था न उनका उपभोग लेता था। एक दिन राजा का निधन हो जाता था। तब 'हरम' की उन स्त्रियों का क्या होता था, बताओ?"

प्रश्न सुनकर मेरी नींद उड़ गयी है।

30 गुरुछाया कालोनी, साईंनगर,
अमरावती-444607, मो. 0 94228 56767

कहानी

वसुधैव कुटुंबकम

◆ साधु राम 'दर्शक'

यह कहानी मुझे बेटे ने सुनाई थी...

बेटा बैंक अधिकारी है। तब वह मद्रास (चैन्नेई) में कार्यरत था और मैं उसे मिलने वहां गया था। उसका मकान समुद्र से थोड़ी ही दूरी पर था। जब भी समय मिलता मैं समुद्र के किनारे जा बैठता और घंटों समुद्र में उठती-गिरती, तट से टकराती, लहरों को निहारता रहता।

बेटे के मकान के सामने, सड़क की दूसरी ओर, एक काफ़ी बड़ी कोठी थी। कुछ दिन बाद मेरा ध्यान उस ओर आकर्षित होने लगा। कारण था वहां रह रहे दस-बारह साल की उम्र से लेकर पंद्रह-सोलह साल तक की उम्र के पंद्रह-सोलह बच्चे। एक ही स्थान पर इतने बच्चे देख कर मेरा दिमाग अजीब उधेड़-बुन में फंस गया। ...यहां क्या है? अगर यह घर है और यहां एक परिवार रहता है, जैसा कि दिखाई दे रहा है (बच्चों के अलावा एक अधेड़ दम्पति और दो नौकरानियां दिखाई देती थीं वहां), तो इतने बच्चे कैसे हैं यहां!... एक परिवार में सोलह बच्चे!... यह स्कूल भी नहीं हो सकता और न अनाथालय हो सकता है, क्योंकि वैसा वातावरण ही दिखाई नहीं देता यहां।...फिर...?

दिनभर मेरे दिमाग को ये विचार मथते रहे। अतः शाम को जब बेटा दफ्तर से लौटा और हम चाय पीने बैठे, तो मैंने पूछ ही लिया, "यह तुम्हारे सामने वाली कोठी में क्या है?" "...घर है और क्या है! एक परिवार रहता है वहां।" बेटे ने सहज भाव से उत्तर दिया। ..."एक परिवार और सोलह बच्चे।" मैंने आश्चर्य प्रकट किया। ...बेटे ने एकदम कोई जवाब नहीं दिया। एकाएक उसके चेहरे पर अजीब भाव छा गए - ऐसे भाव कि चेहरा एक साथ अत्यंत दुखी और अत्यंत गर्वीला दिखने लगा। कुछ क्षणों तक वह खामोश बैठा रहा, फिर बोला, "यह एक विशेष तरह का परिवार है। इसकी कहानी अत्यंत दुखभरी और साथ ही अत्यंत प्रेरणादायक भी है। ...इस विषय में मुझे जो मालूम है, बताता हूं...।"

फिर चाय पीते हुए बेटे ने निम्न कहानी सुनाई ...

26 दिसंबर, 2004। उस दिन परमेश्वरम (पति) का जन्मदिन था। परिवार ने पिछली शाम को ही तय कर लिया था कि कल का सारा दिन समुद्र तट पर बिताना है। इस पर अमल करते हुए सुबह नहा-धोकर बाप और तीनों बच्चे (दो बेटियां और एक बेटा) सागर तट के लिए रवाना हो गए। मां ने खाना बना कर, लेकर, बाद में आना था। सागर तट पर पहुंच कर उन्होंने एक अच्छी-सी जगह देखकर अड्डा जमा लिया और खेलने लगे।

यद्यपि सर्दियों का मौसम था, पर चैन्नई में ज्यादा सर्दी पड़ती नहीं है। मौसम बहुत सुहाना था। सागर तट का मैदान मर्दों, औरतों, बच्चों और तरह-तरह के वाहनों से भरा था। सभी अपनी-अपनी पसंद के मनोरंजन में व्यस्त थे। सागर तट खूब गुलजार हो रहा था।

नौ बजे के आस-पास का समय होगा। अचानक बेटे ने खेल रो कर कान समुद्र की ओर लगा दिए। ..."क्या बात है? क्या सुन रहे हो?" परमेश्वरम ने पूछा और खुद भी सुनने की कोशिश करने लगा। ..."कुछ ऐसी आवाज आ रही है जैसे दूर कहीं कई हवाई जहाज उड़ रहे हों।" पल भर सुनने के बाद वह बोला। ...लेकिन तब तक घबराया हुआ बेटा उसके पास पहुंच चुका था और उंगली से समुद्र की ओर संकेत करते हुए घबराई आवाज में कुछ कह रहा था। समुद्र की ओर देखकर परमेश्वरम भी बहुत डर और घबरा गया। ...पानी की कोई चालीस-पैंतालीस फुट ऊंची दीवार शोर करती हुई तट की ओर तेज़ी से बढ़ी चली आ रही थी। उसने अपने दोनों हाथों में पकड़े, तीसरे बच्चे से दूसरे बच्चे का हाथ पकड़वाया, फिर सभी को कड़ी हिदायत दी कि एक दूसरे का हाथ किसी भी हालत में नहीं छोड़ना है, फिर सब तेजी से समुद्र तट से दूर भागने लगे। अब तक इस अचानक आने वाली आफत के बारे में तकरीबन सभी जान चुके थे और तट पर खूब शोर मच गया था और सभी तट से दूर भागने लगे थे...।

लेकिन उस अति भयानक आफत से बच पाना संभव था क्या? कुछ ही दूर जा पाए थे लोग कि पानी की चालीस-पैंतालीस फुट ऊंची दीवार उनसे आ टकराई थी। परमेश्वरम और उसके बच्चों के साथ भी यही हुआ था। परमेश्वरम को केवल इतना याद है कि पानी की दीवार के टकराने से वे सब गिर गए थे और दूर तक पानी में बह गए थे। इस बीच बच्चों के हाथ उसके हाथों से छूट गए थे। फिर कुछ देर तक वह पानी में गोते खाता रहा था, फिर उसकी आंखों के आगे घुप अंधेरा छा गया था।

पता नहीं कितनी देर बाद उसकी बेहोशी टूटी थी। काफी ऊंची जगह पड़ा था वह। पानी की लहर ने उसे वहां फेंक दिया था शायद।

इसलिए बच गया था वह। रोती हुई उसकी पत्नी पास खड़ी

उसे हिला-डुला रही थी और बच्चों के बारे में पूछ रही थी। शायद उसके प्रयत्नों से ही वह होश में आया था। ...अति भयानक नजारा था। प्रलय के बाद जैसा नजारा। समुद्र अब शांत था। चारों ओर पानी और कीचड़ भरा था। बीच में यहां-तहां पड़ी थीं आदमियों और जानवरों की लाशें, उलटे पड़े वाहन और किश्तियां, बहे और गिरे हुए मकान और वृक्ष। इन सबके बीच घूम रहे थे सहायता करने वाले तथा अपने खोए अजीजों को ढूंढते लोग।

कुछ देर बाद परमेश्वरम जब थोड़ा ठीक हो गया, तो वे दोनों (पति-पत्नी) भी अपने बच्चों को ढूंढने लग पड़े। दिन भर ही नहीं, रात को भी जब तक संभव हो सका तब तक, वे बच्चों की खोज में एक जगह से दूसरी जगह भटके रहे। जहां भी उन्हें सुनामी प्रभावित लोगों के होने की खबर मिलती, वे तुरंत वहां जा पहुंचते। उन्होंने शहर के सभी अस्पताल, प्राइवेट नर्सिंग-होम, सहायता कैंप तथा ऐसी सभी जगहें जहां सुनामी से प्रभावित लोगों के रखे होने की संभावना थी, छान मारे। लेकिन उन्हें न तो बच्चे मिले और न उनकी लाशें ही। काफी रात बीत गई। सड़कें-गलियां सुनसान हो गईं। अब कुछ करना संभव नहीं था। पर वे फिर भी घर नहीं गए। घर में अब था ही क्या! वहीं एक बस स्टैंड के शैड के नीचे बैठ कर कभी ऊंघ कर और कभी जाग कर, रात बिता दी उन्होंने और जरा उजाला होते ही फिर ढूंढने में लग गए।

दिन भर वे जगह-जगह ढूंढते रहे। शाम घिर आई, पर उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। निराश, बे-इंतहा बेदिल तथा थकान और भूख से अधमरे से सागर तट से थोड़ी दूर एक पार्क में बैठे थे। तभी सामने उन्हें एक छोटा-सा मजमा दिखाई दिया। ऐसी जगह वे तुरंत पहुंचते थे। शायद बच्चों का कोई सुराग मिल जाए। ... वहां दो बच्चे थे। सात-आठ साल की लड़की और नौ-दस साल का लड़का। कल सुनामी में वे अपने परिवार से अलग हो गए थे। वे अपने मां-बाप को ढूंढ रहे थे। बहुत रो रहे थे वे - विशेष तौर पर लड़की और लड़का उसे चुप कराने की कोशिश कर रहा था। चार-पांच लोग सहानुभूति जताने जैसे चेहरे बनाए आस-पास खड़े थे। उन्हें देख कर परमेश्वरम की पत्नी को ऐसे लगा मानो वह अपने दोनों छोटे बच्चों को देख रही है। उतने ही कद, तकरीबन उन जैसी शक्ल-सूरत और रोते हुए भी उन जैसे ही लग रहे थे। और आश्चर्य! थोड़ा-सा प्यार जताने पर उन्होंने रोना बंद कर दिया और थोड़ी देर में ही उनसे ऐसे हिल-मिल गए और उनसे ऐसे चिपटने लगे, मानो उनके ही बच्चे हों। ...और फिर शाम को परमेश्वरम और उसकी घरवाली ने जब घर जाने का फैसला किया, तो वे दोनों बच्चे उनके साथ थे। ...फिर तो कई दिनों तक उनका यह रोज का कार्यक्रम बन गया। सुबह बच्चों को खिला कर और खुद खा कर बच्चों को ढूंढने निकल जाते और शाम को लौटते। सप्ताहभर ऐसा करने का नतीजा यह निकला कि यद्यपि उनका अपना कोई बच्चा नहीं मिला, पर सुनामी के कारण परिवार से बिछुड़े हुए सोलह बच्चे हो गए उनके पास।

"सो जनाब, यह है कहानी उस विशेष परिवार की... ।" कहानी सुना चुकने के बाद, कुछ देर तक चुप्पी साधने के बाद, बेटा बोला, "उस महा प्रलयकारी त्रासदी को घटे चार साल हो चुके हैं। तब से वे उस सोलह बच्चों को न केवल पाल-पढ़ा रहे हैं, बल्कि उनको समाज के लिए उपयोगी बनाने और उनकी शादियां करने की बात भी प्रायः उनमें होती रहती है। ...यह तो नहीं कहा जा सकता कि वे खुश हैं, क्योंकि जिन मां-बाप के बच्चे कालग्रस्त हो जाते हैं, खुशी तो उनसे हमेशा के लिए छिन जाती है। लेकिन जिंदगी से संतुष्ट जरूरत लगते हैं वे। एक तो इसलिए, क्योंकि अब तीन की बजाय सोलह जिंदगियों को बनाने-संवारने का अवसर मिल रहा है उन्हें। दूसरे इसलिए, क्योंकि वे एक नए तरह का परिवार बनाने में सहायक हो रहे हैं - एक ऐसा परिवार जो 'वसुधैव कुटुंबकम' प्राचीन ग्रंथों में वर्णित सिद्धांत पर आधारित है।"

बेटा चुप हो गया और सम्मानपूर्ण नजरों से सामने देखने लगा।

169 संदेश विहार, दिल्ली-110 034, मो. 0 95401 67492



कहानी

इज्जत के लिए

◆ खुशवीर मोठसरा

जनवरी महीने की वो सबसे बड़ी ठण्डी व स्याह रात थी। कोहरा अपने चरम पर था जिससे थोड़ी दूर की वस्तु भी दिखाई नहीं देती थी। लोग अपने घरों में रजाइयों में दुबके पड़े थे। गलियों में जलता एकाध बल्ब गहन अंधकार से संघर्ष करता नजर आता था। एक तो ठण्ड ऊपर से कोहरे का कोहराम लोगों को घर में दुबके रहने को बाध्य कर रहा था। बैठकें व चौपाल सुनसान हो गए थे। लोगों का मानना है कि उन्होंने इतनी भयानक ठण्ड कभी पहले महसूस नहीं की है। इसी ठण्ड कोहरे के बावजूद चौधरी अजीत सिंह की बैठक में बल्ब जल रहा था, जो द्योतक था कि वहां पर कुछ आदमी बैठे होंगे व कुछ बातचीत कर रहे होंगे।

ऐसा सोचना था भी वाजिब, आज बैठक में अजीत सिंह के मझले भाई प्रेम सिंह व छोटा भाई जोरावर सिंह गुमसुम बैठे किसी अनहोनी का इन्तजार कर रहे थे। भीतर महिलाएं भी जाग रही थी। रात के करीब दस बजे होंगे तभी घने कोहरे व अन्धेरे को चीरती हुई एक जीप आकर चौधरी अजीत सिंह की बैठक के पास गली में रुकी। छोटे भाई जोरावर सिंह ने किवाड़ खोलकर देखा तो सामने थानेदार साहब अपने साथी एक महिला कांस्टेबल व दो जवानों के साथ खड़े थे। थानेदार साहब ने पूछा-''अजीत सिंह का यही मकान है?'' जोरावर सिंह ने हां कहा तो वे सभी बैठक में आ गए। थानेदार साहब ने कहा-''अजीत सिंह हम आपको आपकी बेटी सुपुर्द करने आए है। जिनकी गुमशुदी की रिपोर्ट इसी सप्ताह लिखाई थी। हमने इसे इसके पुरुष मित्र के साथ अलवर से गिरफ्तार किया है,'' उन्होंने लड़की को आगे करते हुए कहा।

अजीत सिंह व उसके दोनों भाइयों ने थानेदार साहब का शुक्रिया अदा किया। पुलिस ने लड़की की सुपुर्दगी रिपोर्ट पर अजीत सिंह के साइन करवाये और वापिस आ गई। अजीत सिंह की एकमात्र लड़की निधि को उसकी मां व चाचियां घर के अंदर ले गई। बैठक में तीनों भाइयों के बीच कुछ देर खामोशी पसर गई अन्दर जाने पर मां ने निधि को खाने के लिए कहा तो निधि ने अनमने से थोड़ा खाना खाया। मां और चाचियों के संरक्षण में निधि को सुलाया गया। इधर निधि को उसकी मां व चाचियों को नींद नहीं आ रही थी तो उधर बैठक में निधि के पिताजी व चाचाओं की आपस में चर्चा चल रही थी।

''मैं कहता था न कि लड़की को पढ़ने के लिए शहर मत भेजो वहां इसे शहर की हवा लग जायेगी और वही हुआ शहर में पढ़ते-पढ़ते यह उस विजातीय लड़के के साथ भाग गई और कालिख हमारे चेहरे पर पुत गई।'' मंझले भैया प्रेम सिंह ने नाराजगी से गर्दन हिलाते हुए कहा। ''अब कब, किसके साथ क्या होगा ये सोचकर बच्चों को घर में बिठाया तो नहीं रखा जा सकता, आज जमाने के साथ चलना है तो बाहर निकल कर पढ़ना भी होगा ताकि जमाने के साथ चलने के वे काबिल हो सके। अगर हम ऐसा नहीं करेंगे तो हमारे बच्चे पिछड़ जायेंगे''-निधि के पिता अजीत सिंह ने कहा। ''फिर ठीक है अपने बच्चों को एडवांस बनाओ हम सबके चेहरों को कालिख पोत कर'', जोरावर ने कहा। उसने आगे कहा-''अब अपनी बिरादरी में शादी करके दिखाना, इस लड़की की शादी तो बिरादरी में होने से रही, परिवार के दूसरे बच्चों की शादी भी अब नहीं होने वाली, ''प्रेम सिंह ने हवा में अपने हाथ को लहराते हुए कहा।

''हमारे परिवार की गांव-गुहांड में कितनी इज्जत थी कोई लांछन आज तक हमारे दामन पर नहीं था तुम्हारे लाड़-प्यार के कारण ही निधि ने इस दामन को दागदार कर दिया'' जोरा ने जोर देकर कहा। अब निधि के पिता अजीत सिंह के पास भाइयों द्वारा उठाये गए प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं था। अजीत सिंह को आज निधि पर बहुत गुस्सा आ रहा था। मन ही मन अजीत सोच रहा था- ''कि निधि ने इतना बड़ा कदम उठाने से पहले मुझसे बात की होती तो शायद आज ये बदनामी का सबब न होता। वो उसी लड़के से निधि की शादी कर देता जिसको वो चाहती थी। जाति-पाति की बातें कुछ दिनों तक होती फिर सब बातें आई-गई हो जाती। लेकिन निधि ने उस पर विश्वास न कर अविश्वास करते हुए यह कदम उठाया, अब वो इसका अपने भाइयों, अपने गांव व रिश्तेदारों को क्या जवाब दें?

अजीत सिंह ने बहुत प्रयत्नों के बाद निधि को पाया है, कई दिनों के इलाज के बाद निधि अपनी मां के पेट में आई थी। निधि के जन्म पर जहां परिवार ने मातम छा गया था वहीं अजीत सिंह व उसकी पत्नी खुश थे कि आखिर भगवान ने उनकी झोली में एक फूल तो डाला। अजीत सिंह व उसकी पत्नी ने निधि की परवरिश

लड़के के समान ही की। इसलिए पूरे परिवार के विरोध के बावजूद उसे बारहवीं पास करने के बाद शहर के कॉलेज में दाखिला दिलाया था। परन्तु अनहोनी को कौन रोक सका है।

उधर मां व चाचियों के संरक्षण में अपनी चारपाई पर लेटी निधि को भी अपने किए पर बहुत पछतावा हो रहा है। उसे रह रहकर विशाल के साथ गुजारे एक एक पल याद आ रहे हैं। वहीं उसे यह डर भी सता रहा है कि थाने में पुलिस वाले उसके साथ कैसा सलूक कर रहे होंगे। भविष्य के भय ने निधि की नींद को कोसों दूर कर दिया था। निधि अपने अतीत में विचर रही थी। कॉलेज में उसका पहला दिन था। सभी लड़के-लड़कियां क्लास में उपस्थित हुए थे। टीचर्स कक्षा में आते और सभी विद्यार्थियों से परिचय प्राप्त करते रहे। विद्यार्थी आपस में भी अपना परिचय शेयर कर रहे थे। इसी दिन विशाल से उसका परिचय हुआ बस फिर तो दिल ने विशाल को अपना मान लिया तथा विशाल को भी लगा कि उसे भी उसकी मंजिल मिल गई है। प्रतिदिन क्लास में आपस में छोटी-छोटी बातें होती रहती थी उनकी। धीरे-धीरे क्लास से बाहर भी अब वो बाते करने लगे थे। कैन्टीन में साथ-साथ चाय पीते। शाम को क्लास के बाद वो पार्क में, शापिंग कॉम्पलैक्स में बैठकर बतियाते रहते। बातों बातों में बात इतनी बढ़ गई कि अब एक दूसरे के बिना जीना अच्छा नहीं लगता। दोनों ने पढ़ाई उपरांत एक होने का फैसला किया।

''निधि तुम अपने परिवार वालों से इस बारे में बात तो कर लो'' विशाल ने निधि से कहा। ''विशाल इसका कोई फायदा नहीं है क्योंकि हमारा परिवार जात-पात में विश्वास रखने वाला परिवार है वो कभी नहीं चाहेंगे कि उनकी बेटी किसी विजातीय लड़के से शादी करें, ''निधि ने विशाल को समझाते हुए कहा। ''अगर तुम बात नहीं कर सकती तो मैं तुम्हारे पापा जी से इस बारे में बात करूं, यदि तुम कहो तो'' विशाल ने कहा। ''देखो विशाल पापा मुझे बेहद प्यार करते हैं, अगर हम कोशिश करें तो वो तो शायद मान जाये लेकिन मेरे दोनों चाचा किसी भी तरह सहमत नहीं होंगे उन्हें समझाना ऊंट को रेलगाड़ी में चढ़ाने जैसा है। फिर यदि तुम मेरे घर जाओ और वो तुम्हारे साथ मारपीट कर दें तो यह मुझसे सहन नहीं होगा। निधि एक सांस में सब कह गई थी। ''फिर तुम्हारे अनुसार तो हम शादी कर ही नहीं पायेंगे''। विशाल उदास होकर बोला निधि ने कहां ''-ऐसा नहीं है शादी तो हम किसी मन्दिर में या कोर्ट में कर सकते हैं।'' लेकिन ये हमारा आखिरी विकल्प होगा, पहला नहीं'' क्या तुमने अपने घर में अपनी शादी के बारे में बात की है विशाल, निधि ने गंभीर होते पूछा। ''निधि मेरे माता-पिता मेरी पसन्द की शादी को मंजूर करने को तैयार है लड़की चाहे किसी भी धर्म-जाति की हो। उनका कहना है कि मैं खुश रहूं तथा अपने हिसाब से जिन्दगी गुजर-बसर करूं''। विशाल ने कहा। निधि की कभी हिम्मत ही नहीं हुई कि वो अपनी शादी अपनी पसन्द व अपने अफेयर के बारे में कभी खुलकर अपनी मां या पिताजी से बात कर सके।

इसी नादानी में निधि ने वो कदम उठाया जो उसे नहीं उठाना चाहिए था। वो एक रात घर से भाग गई विशाल के साथ। अगर उन्होंने भाग कर शादी करनी भी तो वहीं शहर में पढ़ाई के आखिरी दिनों में ही कर लेते। घर में बाद में हो हल्ला मच कर शांत हो जाता। लेकिन कहते हैं विपरीत काले, विपरीत बुद्धि। पढ़ाई पूरी करके घर आए फिर जब यहां शादी की सुगबुगाहट शुरू हुई तो घर से भाग खड़े हुए। अब तक निधि के घरवालों को भी इधर उधर से निधि और विशाल के बारे में काफी कुछ पता चल चुका था। निधि के घर से भागने की खबर का अहसास होते ही उसके परिवार वालों ने विशाल को नामजद करते हुए पुलिस में रिपोर्ट लिखवाई। पुलिस ने इस केस में तत्परता दिखाते हुए निधि व विशाल को छापामार कर अलवर के होटल से गिरफ्तार कर लिया। दोनों को यहां पर लाया गया जहां पुलिस ने लड़की को उसके परिवार के सुपुर्द कर दिया वहीं विशाल के खिलाफ मुकद्दमा दर्ज कर कोर्ट में पेश करने की कार्यवाही शुरू कर दी। इधर निधि की विचारों की ऊहापोह में कब आंख लग गई उसे स्वयं इसका पता नहीं चला।

उधर इस कांड पर बैठक में तीनों भाइयों की चर्चा जारी थी। प्रेम सिंह कह रहा था- ''इस लड़की ने तो हमारी सारी इज्जत ही नीलामी कर दी, बड़े बुजुर्गों की गांव-गुहांड में कितनी इज्जत थी। कोई भी पंचायत हो हमारे परिवार की राय के बिना कभी कोई काम नहीं हुआ। थाने से लेकर कोर्ट-कचहरी तक हमारी इज्जत की चर्चा होती थी और आज इस लड़की ने हमारी इज्जत को चुटकी में मसल दिया। अब इस लड़की को जिन्दा रहने का कोई हक नहीं है।'' जोरावर ने भी प्रेम सिंह की बात का समर्थन किया और कहा- ''हम नहीं चाहते की निधि के बाद उसके छोटे भाई-बहनों की शादी में कोई रुकावट आए या वो कभी भी निधि की तरह कोई ऐसा कदम उठाये। इसलिए हम चहते है आने वाले बच्चों के लिए ये सजा एक उदाहरण बने और वो ऐसा घिनौना कृत्य करने से पहले दस बार सोचे इसलिए निधि का मरना जरूरी

अजीत सिंह के लिए यह बड़ी ही मनहूस घड़ी है। अजीत ने कितनी कोशिशें के बाद निधि को पाया था ये वह स्वयं जानता है। वो चाहता है कि निधि जिन्दा रहे उसकी आंखों के आगे रहे। वह निधि की खुशी में ही खुश रहना चाहता है। वो चाहता है कि निधि की पसन्द को अपनी पसन्द बनाया जाए। निधि ने इतना बड़ा कदम उठाने से पहले एक बार तो कम से कम उससे बात करनी चाहिए थी ताकि इस समय वो अपने छोटे भाइयों के सवालों का जवाब दे पाता।

है।''

अजीत सिंह के लिए यह बड़ी ही मनहूस घड़ी है। अजीत ने कितनी कोशिशें के बाद निधि को पाया था ये वह स्वयं जानता है। वो चाहता है कि निधि जिन्दा रहे उसकी आंखों के आगे रहे। वह निधि की खुशी में ही खुश रहना चाहता है। वो चाहता है कि निधि की पसन्द को अपनी पसन्द बनाया जाए। निधि ने इतना बड़ा कदम उठाने से पहले एक बार तो कम से कम उससे बात करनी चाहिए थी ताकि इस समय वो अपने छोटे भाइयों के सवालों का जवाब दे पाता। लेकिन ऐसा कुछ भी तो नहीं हो सका। अजीत किंकर्तव्यविमूढ़ सा बैठा रहा।

''अब जो करना है जल्दी करो, रात के दो बज चुके हैं। रात के साथ ही हम इस किस्से का अंत कर देना चाहता है'' प्रेम सिंह ने अजीत की खामोशी तोड़ते हुए कहा। जोरावर ने कहा'' भाई साहब ये सोने का नहीं करने का समय है। अगर आज हम कुछ नहीं कर पाये तो ये कलंक आने वाली पीढ़ियों तक सालता रहेगा। अभी उठो चलो जल्दी करो,'' जोरावर ने अजीत को उठाते हुए कहा। अजीत अनमने मन से उठा उसके पांव मन मन भारी हो रहे थे। तीनों भाई घर में अंदर पहुंचे जहां निधि अपनी मां व चाचियों के साथ सो रही थी। दरवाजा लुढ़का हुआ था। जोरावर ने दरवाजा धीरे से धकेला अन्दर घुसते ही प्रेम सिंह ने निधि का गला दबाया तो उसकी मां की नींद खुल गई वो चिल्लाने को हुई तो जोरावर ने उसका मुंह बंद कर दिया। निधि की चाचियों ने उसे दबा लिया और प्रेम सिंह ने तब तक निधि का गला दबाये रखा जब तक उसके प्राण नहीं निकल गये।

इसके बाद तीनों ने निधि की मां व चाचियों को आगाह किया कि वो इस संबंध में अपना मुंह बंद रखे और औरतों को यही बताये कि उसकी मौत हार्ट फेल होने से चारपाई पे सोते हुए हुई है। इस ताकीद के बाद तीनों भाई बैठक में पहुंच और निधि के अंतिम संस्कार की योजना बनाने लगे। भोर में ही निधि के अंतिम संस्कार की तैयारी पूरी कर ली गई थी। अब इन्तजार था केवल सूर्योदय का। ज्यों ही भास्कर भगवान की किरणें धरा पर अवतरित हुई निधि की चिता को अग्नि दे दी गई। गांव के लोगों को पता चलता इससे पहले ही निधि की चिता जल चुकी थी। अजीत सिंह स्वयं को निधि का गुनहगार मान रहे थे। उसने अपनी बेटी के लिए क्या-क्या सपने देखे थे लेकिन ऐसा होगा ये कभी नहीं सोचा था। समाज की झूठी शान और परिवार की इज्जत के नाम पर एक जान को कुर्बान कर दिया गया। लोगों को पता चला तो वो मातमपूर्सी के लिए अजीत सिंह की बैठक में जमा होने शुरू हो गए थे। प्रेम सिंह व जोरावर सिंह ने अपने गुनाहों, परिवार की झूठी इज्जत तथा निधि की मातमपूर्सी के लिए बैठक में दरी बिछा दी थी।

गांव व डाकघर रावलधी तहसील चरखीदादरी
जिला भिवानी, हरियाणा- 127306, मो. 0 94665 59140

कविता

हाशिए

कृष्णाकांत वर्मा 'विवेक'

ध्यानस्थ अचल, अविचल
बुद्ध होते हैं
हाशिए
ब्लैक होल नहीं होते
शेष के लिए
शेष होते हैं
हाशिए
आस्था होते हैं
विश्वास होते हैं
नाभिकीय विस्फोट पर
शून्य से खदेड़ों
निर्वासितों की
अंतिम शरणस्थली
होते हैं हाशिए
हाशिए
शून्य नहीं होते
शून्य का
सृजन बीज होते हैं
हाशिए
गर्भ नहीं होते
हाशिए
प्रसव वेदना होते हैं
हाशिए
पितृत्व का अहं नहीं
मातृत्व का विस्तार
होते हैं
हाशिए
नाभि नहीं
नाभिनाल (जेर) होते हैं
हाशिए
विरुद्ध नहीं
निरुद्ध होते हैं।







मानस, हाउस नं. 42 बी, वार्ड नं.-15, नियर तहसील ऑफिस, सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 212, मो. 0 94142 20208

कहानी

अवरोध

◆ हरिकृष्ण मुरारी

शिवराम को सुबह-सबेरे उठने की आदत बचपन से ही रही है। आज रविवार है और आज भी शिवराम प्रातः साढ़े तीन बजे ही उठ गया। नित्यकर्म से निवृत्त होने के बाद अपने लिए चाय बनाई और उसे पीकर बिस्तर से उठा और बाहर आंगन में टहलने लगा। लगभग आधा घण्टा टहलने के पश्चात स्नानाघर में जाकर स्नान किया। तब तक सुबह झुसमुसी हो चुकी थी। विभिन्न प्रकार के पक्षी वृक्षों पर बैठे अपना-अपना राग अलाप रहे थे। मानों सुबह का भ्यागड़ा राग सुना रहे हों। अब शिवराम ने बरामदे में बिछौना बिछाया और प्राणायाम करने के लिए वहीं बैठ गया और लगभग पौने घण्टे तक प्राणायाम करता रहा। तब तक सूर्य नारायण पूर्व दिशा में उदय हो चुके थे तथा उनकी किरणें बरामदे में बैठे शिवराम को छू रही थीं। आसमान बिलकुल साफ था और धूप धीरे-धीरे चारों ओर फैल रही थी। सर्दी का मौसम सायर की सक्रान्ति से आरम्भ हो चुका था। सुबह और शाम के समय ठण्ड बढ़ गई थी। शिवराम ने बरामदे में रखी कुर्सी उठाई और बाहर आंगन में रख दी जहां सूर्य की किरणें ठण्ड को भगा रही थीं, वहीं वह कुर्सी पर बैठकर धूप सेंकने लगा।

थोड़ी देर वहां बैठ कर धूप का आनन्द लेता रहा तभी अचानक छाती में एक झटका-सा लगा जिसके कारण उसे छाती में अजीब-सा कष्ट अनुभव होने लगा। अब तो शिवराम को खड़ा होने में भी बहुत कष्ट हो रहा था। जैसे-तैसे वह कुर्सी से उठा और चलने लगा तो उसे ऐसा लगा कि उसकी छाती में कहीं कुछ अटक गया है, जिसके कारण ऐसा हो रहा है।

वह धीरे-धीरे अपनी चारपाई की ओर बढ़ गया और बिस्तर पर लेटकर आराम करने लगा परन्तु क्षण-प्रति-क्षण उसकी बेचौनी बढ़ती ही गई। शिवराम को ऐसा पहली बार बस में सफर करते समय भी हुआ था, लेकिन कुछ समय बाद शिवराम ठीक हो गया था। आज दो घण्टे हो चुके थे परन्तु तकलीफ बढ़ती ही जा रही थी।

'' इस प्रकार तो कुछ भी हो सकता है। ऐसे काम नहीं चलेगा। पहले अपना रक्तचाप तो चैक करवा लूं।'' यह सोचकर शिवराम उठा और धीरे-धीरे चलता हुआ बाजार के एक मैडिकल स्टोर में जा पहुंचा और स्टोर मालिक बृजभूषण से कहा, ''भूषण जी ! मेरा रक्तचाप तो चैक कर दीजिए, तबीयत कुछ ठीक नहीं हैं।''

बृजभूषण ने रक्तचाप चौक करने का यन्त्र निकाला तथा शिवराम की भुजा पर लगाकर जब नाड़ी को टटोलने लगा तो उसे नाड़ी मिली ही नहीं। यह जानकर भूषण का मुँह उतर सा गया। शिवराम ने उससे पूछा - '' भूषण जी ! क्या बात है, आप घबरा क्यों रहे हैं ?''

'' नहीं...............कुछ नहीं आप डाक्टर घनश्याम के पास चले जाओ। मेरा यह यन्त्र ठीक से काम नहीं कर रहा है।''

पास ही डाक्टर घनश्याम की दुकान थी, जहां वह अपना क्लीनिक चलाता है। शिवराम दवाइयों की दुकान से उठकर डाक्टर घनश्याम के पास चला गया। रविवार के दिन क्लीनिक बन्द रहता है परन्तु दुकान के ऊपर कमरे में डाक्टर घनश्याम अपने परिवार सहित ही निवास करता है। दुकान तो बन्द थी परन्तु शिवराम ने बाहर से ही आवाज देकर घनश्याम को बुला लिया। ऊपर से डाक्टर सीढ़ियां उतरकर नीचे आ गया और दुकान का शटर खोलकर शिवराम का अन्दर बुला लिया तथा स्वयं अपनी कुर्सी पर जा बैठा। शिवराम भी दुकान के अन्दर चला गया और डाक्टर की कुर्सी के पास रखे स्टूल पर जा बैठा तथा अपनी तकलीफ के बारे में बताया। घनश्याम ने बाजू पकड़ कर नाड़ी जांची। फिर दूसरे बाजू की नाड़ी भी जांची तथा यंत्र लगाकर दिल की धड़कन भी चैक की तथा फिर रक्तचाप चैक करने के बाद शिवराम के मुँह की ओर देखकर पूछा, '' अरे शिवराम ! तुम यहां तक आए कैसे ?''

''आया तो चलकर ही।" शिवराम ने बताया साथ ही डाक्टर से पूछा, '' क्यों....कोई विशेष बात है?''

''हां कुछ ऐसा ही है। आपके दोनों बाजुओं की नाड़ियां गायब हैं तथा दिल की धड़कन भी काफी तेज है परन्तु रक्तचाप बिलकुल सही है। ऐसा करो अपने बेटे को बुलाओ और अति शीघ्र शहर के बड़े अस्पताल में चले जाओ।'' डॉक्टर ने शिवराम को बताया और शिवराम ने वहीं से डॉक्टर के फोन से नरेश को फोन किया और बुला लिया। थोड़ी देर के बाद नरेश वहां आ गया तब डाक्टर घनश्याम ने उसे सारी बात समझाकर कहा, '' नरेश ! इन्हें

अभी शहर के बड़े अस्पताल में ले जाओ और वहां दिखाकर इनका इलाज करवाओ।''

उसी समय नरेश ने फोन करके टैक्सी बुला ली और शिवराम को उसमें बिठा कर शहर के सबसे बड़े अस्पताल में पहुंचा दिया। टैक्सी वाले ने उन्हें संकटकालीन ओ.पी.डी. के बाहर उतार कर गाड़ी को अस्पताल के बाहर सड़क के किनारे सुरक्षित स्थान पर पार्क कर दिया और वापिस नरेश के पास पहुंच गया। अब चालक तथा नरेश ने मिलकर शिवराम को वहां संकटकालीन ओ.पी.डी में पहुंचा दिया। वहां बैठे डॉक्टर ने शिवराम को अपने पास स्टूल पर बिठा लिया और परीक्षण करने लगा। पहले उसने यन्त्र लगाकर रक्तचाप देखा .....रक्तचाप सही था परन्तु दिल की धड़कन काफी तेज चल रही थी। फिर उसने दोनों भुजाओं की नाड़ियों का परीक्षण किया। काफी देर तक भुजाओं में नाड़ियों को टटोलने के उपरान्त भी नाड़ियां गायब मिलीं। तब उसने फटाफट ई.सी.जी टैस्ट भी कर डाला। वह भी बिलकुल सही निकला। यह देखकर डाक्टर हैरान हो गया। तब नरेश ने पूछा, ''डॉक्टर साहिब! क्या बात है। आप हैरान क्यों हो रहे हैं ?''

'' हैरानी वाली ही तो बात है क्योंकि इनकी दोनों भुजाओं की नाड़ियां गायब हैं, परन्तु इनका रक्तचाप और ई.सी.जी बिलकुल सही है।''

डॉक्टर ने ज्योंहि ऐसा बताया, शिवराम धीरे से बोला, ''नहीं डॉक्टर साहिब ! इस समय मेरी नाड़ियां तो हैं मगर भुजाओं में नहीं बल्कि यहां गले में दोनों ओर हैं।''

शिवराम ने अपने दाहिने हाथ के अंगूठे और तर्जनी अंगुली से अपने गले के दायें-बायें भाग को पकड़ कर कहा, ''नाड़ियां यहां हैं।'' तब डाक्टर ने शिवराम के गले को दोनों ओर से टटोला तो वहां सचमुच नाड़ियां जोर-जोर से धड़क रहीं थी। ऐसा देखकर उस डॉक्टर ने शिवराम को हार्ट विशेषज्ञ के पास भेज दिया।

नरेश व्हील चेयर ले आया और शिवराम को उस पर बिठा कर चालक के साथ हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर की ओ.पी.डी में जा पहुंचे। वहां बैठा डॉक्टर कुछ लिख रहा था। नरेश ने संकटकालीन ओ.पी.डी. के डॉक्टर द्वारा बनाई गई पर्ची वहां डॉक्टर के मेज पर रख दी। उस पर्ची के अनुसार उस हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर ने स्वयं भी शिवराम को चैक किया तथा दाखिल करके आई.सी.यू बार्ड में भेज दिया। नरेश ने भी अपने पिता को चालक के साथ व्हील चेयर सहित आई.सी.यू बार्ड में पहुंचा दिया तथा पर्ची पर लिखे बिस्तर पर लिटा दिया। साथ आए चालक के पास व्हील चेयर देकर लौटाने भेज दिया। जहां से उसे लिया था, वहीं जाकर चालक ने व्हील चेयर जमा करवा दी और स्वयं पुनः लौटकर शिवराम के पास आ गया। वहां हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर अपने सहायक डॉक्टर और एक नर्स को कुछ समझा रहा था। हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर के सहायक डॉक्टर और नर्स उसके आदेशानुसार शिवराम की चिकित्सा में व्यस्त हो गए तथा वह हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर फाईल में कुछ लिखकर उसे स्टूल पर रखकर चला गया। उसके जाने के उपरान्त सहायक डॉक्टर और नर्स ने मिलकर शिवराम के शरीर को एक कम्प्यूटर के साथ जोड़ने के बाद दो टीके लगाए और साथ ही एक ग्लूकोस की बोतल को भी शिवराम की एक भुजा के साथ जोड़ कर चालू कर दिया तथा वहीं थोड़ी देर रुक कर उन यन्त्रों के कार्य का निरीक्षण करते हुए देखने के बाद स्टूल से फाईल उठाकर उसमें कुछ लिखकर चले गए।

इसके उपरान्त थोड़ी-थोड़ी देर बाद कभी हार्ट विशेषज्ञ का सहायक डॉक्टर तो कभी नर्स शिवराम के पास आते और हाल-चाल पूछने के बाद फाईल में कुछ लिख कर चले जाते। काफी देर बाद शिवराम को ऐसा लगा कि उसकी छाती में किसी जगह कुछ फंसा था, जो एक झटके के साथ निकल गया है। इससे उसकी छाती में हो रही व्याकुलता समाप्त हो गई है और उसे आराम मिल गया है। तभी हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर स्वयं वहां आया। उसने फाईल उठाई तथा उसमें कुछ लिखा। फाईल को स्टूल पर रखा और शिवराम को पूछा, '' अब कैसा लग रहा है ?''

अब बिलकुल ठीक हूं। कोई तकलीफ नहीं है।'' शिवराम ने बताया और डॉक्टर ने फिर कहा, ''ठीक है, कल सुबह सारी रिपोर्ट लेकर आपको भेज देंगे।" इतना कहकर वह चला गया। कब शाम हुई और कब सुबह हो गई पता ही नहीं चला।

दूसरे दिन सुबह शिवराम को अस्पताल से छुट्टी मिल गई। छुट्टी मिलने से पूर्व हार्ट विशेषज्ञ डॉक्टर ने पर्ची में कुछ लिखकर देते हुए कहा, '' यह लो पर्ची, इसमें एक टैस्ट लिखा है। यह दिल्ली के अमुक स्थान में स्थित अमुक अस्पताल में ही होगा। वहां जाकर इसे करवा लेना तथा फिर हमें बताना। लगता है आपके दिल में कोई बड़ी समस्या उत्पन्न हो रही है। इस टैस्ट से ही पता लगेगा कि आपके दिल में बीमारी है या नहीं। तब तक आपकी पर्ची में दवाई लिख दी है इसे बाहर से लेकर सुबह-शाम खाते रहना।"

इतना बताने के बाद डॉक्टर ने पर्ची शिवराम को दे दी। उसने पर्ची लेते हुए पूछा, '' डॉक्टर साहब ! इस टैस्ट पर खर्च कितना आएगा ?''

'' यही कोई बीस हजार।'' संक्षिप्त-सा उत्तर देकर डॉक्टर अपने काम में व्यस्त हो गया। नरेश और शिवराम अस्पताल से निकलकर टैक्सी के पास पहुंच गए। चालक उनसे पहले ही चला आया था। दोनों टैक्सी में बैठ गए और चालक ने उन्हें उनके गांव में आकर छोड़ दिया।

दो महीने बाद एक दिन शिवराम अपनी बेटी शकुन्तला के पास चण्डीगढ़ जा पहुंचा। अपने साथ उस पर्ची को भी ले गया था, जिसमें डॉक्टर ने टैस्ट लिखा था। शाम पाँच बजे शिवराम का दामाद भी अपनी ड्यूटी से निवृत्त होकर लगभग छः बजे अपने क्वाटर पहुंच गया। रात आठ बजे सबने मिलकर खाना खाया और

अपने-अपने बिस्तर पर बैठ कर आपस में बातें करने लगे। तभी शिवराम ने पर्ची निकालकर अपनी बेटी शकुन्तला को पकड़ाते हुए पूछा, ''शकुन्तला बेटा ! देखो जरा........ यह टैस्ट यहां हो जाएगा ?''

'' हां पापा जी ! यहां सभी टैस्ट होते हैं'' शकुन्तला ने अपने पापा को बताया तो शिवराम ने फिर पूछा, ''भला..... इस टैस्ट पर कितना खर्च आएगा ?''

'' पता करके कल बताऊंगी। वैसे यह टैस्ट पांच सौ रुपयों से एक हजार के बीच हो ही जाएगा। अभी रात काफी हो चुकी है। पापा ! आप सो जाइये। हम भी सो रहे हैं।'' फिर सभी सो गए।

अगले दिन बच्चों को स्कूल भेजने के बाद अपने पापा की पर्ची को लेकर शकुन्तला सैक्टर 16 के सिविल अस्पताल में जा पहुंची और अपनी एक सहेली नर्स कमला से इस टैस्ट के बारे में पता किया कि यह किस प्रयोगशाला में करवाया जाए।

'' यह जो सामने रामधन की प्रयोगशाला है, इसके टैस्ट बिल्कुल सही निकलते हैं। यहीं से करवा लेना। यह पैसे भी जायज ही लेते हैं। पूरी इमानदारी से यह प्रयोगशाला चल रही है। कभी कोई शिकायत नहीं मिली है।'' कमला ने बताया और शकुन्तला बोली, ''तुम जरा मेरे साथ चलो। पैसे कितने लगेंगे पता कर लेती हैं। ''

'' ठीक है चलो !'' कमला चलने के लिए राजी हो गई और दोनों सहेलियां रामधन प्रयोगशाला की ओर चल पड़ीं। वहां पहुंच कर कमला ने शकुन्तला से पर्ची ली और काऊंटर पर दिखाकर पूछा, '' इस टैस्ट के कितने पैसे लगेंगे ?''

काऊंटर पर बैठे कर्मचारी ने कमला के हाथ से पर्ची लेकर पढ़ी और बताया, '' इस टैस्ट के सात सौ रुपये लगते हैं।''

शकुन्तला ने कमला से पर्ची लेकर विदा ली तथा फिर ऑटो रोका और उसमें बैठकर घर चली आई। वहां पहुंचकर शिवराम को बताया, '' पापा ! कल सुबह भूखे पेट यह टैस्ट हो जाएगा और सात सौ रुपये लगेंगे।''

'' वाह बेटा ! सात सौ रुपये.......... तब तो ठीक है। कल मेरा यह टैस्ट करवा देना। इससे यह पता लग जाएगा कि मुझे सच में क्या बीमारी है। फिर उस हिसाब से अपना इलाज करवा लूंगा।'' शिवराम ने खुश होकर कहा और चुप हो गया। थोड़ी देर कुछ सोचने के बाद फिर कहने लगा, '' बेटा ! एक ही जगह के टैस्ट पर विश्वास नहीं करना चाहिए। एक-दो जगह और भी करवा देना। तभी तसल्ली होगी।''

''नहीं पापा जी ! ऐसी बात नहीं है। इस प्रयोगशाला का टैस्ट बिलकुल सही आता है परन्तु फिर भी यदि आप को लगता है कि दो टैस्ट दो प्रयोगशालाओं में और होने चाहिए तो वह भी करवा लेंगे। दूसरा टैस्ट परसों होगा और तीसरा उससे अगले दिन तीसरी प्रयोगशाला में करवा दूंगी।" इतना कहकर वह घर के कार्यों में व्यस्त हो गई और शिवराम बाहर घूमने चला गया।

अगले दिन सुबह नौ बजे भूखे पेट बाप-बेटी आटो में बैठ कर रामधन प्रयोगशाला जा पहुंचे और वहां रखे बैंचों पर जा कर बैठ गए। शकुन्तला ने टैस्ट वाली पर्ची अपने पर्स से निकाली और वहां बैठे प्रयोगशाला के इंचार्ज को दिखाई। उसने वहां काम करने वाली एक लड़की को कहा, ''कुसम! इनके खून का नमूना ले लो।" कुसम ने शिवराम की भुजा से आधी सरिंज खून लिया और टैस्ट ट्यूब में भरकर एक स्लिप पर नम्बर डाला तथा शिवराम का नाम लिखकर उसे टैस्ट ट्यूब पर चिपका दिया और पर्ची पर भी नम्बर लिखकर शकुन्तला को देते हुए कहा, ''दोपहर बाद इसकी रिपोर्ट ले जाना तथा इसका शुल्क सात सौ रुपये काऊंटर पर जमा करवा दो।

शकुन्तला ने पर्ची ली और काऊंटर पर जाकर शुल्क जमा करवाया तथा रसीद लेकर अपने पिता के साथ प्रयोगशाला से बाहर सड़क पर ऑटो लिया फिर उसमें दोनों बाप-बेटी बैठ कर घर आ गए। घर में आकर दोनों ने नाश्ता किया। शकुन्तला घर के काम में व्यस्त हो गई और शिवराम बिस्तर पर लेट कर आराम करने लगा।

दोपहर तक घर के सभी जरूरी कार्य समाप्त करके शकुन्तला आपने पापा की टैस्ट रिपोर्ट लाने चली गई। शिवराम घर पर ही आराम करता रहा। लगभग दो घण्टों के बाद जब शकुन्तला रिपोर्ट लेकर घर पहुंची तो शिवराम बिस्तर पर बैठे-बैठे अखबार पढ़ रहा था। शकुन्तला ने रिपोर्ट वाला कागज शिवराम को देकर बताया, '' पापा जी! रिपोर्ट बिलकुल सही आई है अतः कोई बीमारी नहीं है। ऐसे ही डॉक्टरों ने आपको डरा दिया था।''

''यही नहीं डॉक्टर ने कहा था कि इस रिपोर्ट का शुल्क बीस हजार रुपये लगता है। चलो ठीक हुआ सात सौ में ही काम हो गया। कल दूसरी जगह और परसों तीसरी प्रयोगशाला में टैस्ट करवा ही लेंगे। तभी तसल्ली होगी।" कहकर शिवराम चुप हो

दोपहर तक घर के सभी जरूरी कार्य समाप्त करके शकुन्तला आपने पापा की टैस्ट रिपोर्ट लाने चली गई। शिवराम घर पर ही आराम करता रहा। लगभग दो घण्टों के बाद जब शकुन्तला रिपोर्ट लेकर घर पहुंची तो शिवराम बिस्तर पर बैठे-बैठे अखबार पढ़ रहा था। शकुन्तला ने रिपोर्ट वाला कागज शिवराम को देकर बताया, '' पापा जी! रिपोर्ट बिल्कुल सही आई है अतः कोई बीमारी नहीं है। ऐसे ही डॉक्टरों ने आपको डरा दिया था।'' ''यही नहीं डॉक्टर ने कहा था कि इस रिपोर्ट का शुल्क बीस हजार रुपये लगता है। चलो ठीक हुआ सात सौ में ही काम हो गया। कल दूसरी जगह और परसों तीसरी प्रयोगशाला में टैस्ट करवा ही लेंगे। तभी तसल्ली होगी।' कहकर शिवराम चुप हो गया।

गया।

'' ठीक है पापा जी! जैसी आपकी इच्छा।'' इतना कहकर शकुन्तला रात का खाना बनाने में व्यस्त हो गई।

अगले दो दिनों में शकुन्तला ने अपने पापा के दो अलग-अलग जगह की प्रयोगशालाओं में टैस्ट करवा दिए। दोनों जगह की रिपोर्टे बिलकुल सही निकली जिससे शिवराम को तसल्ली हो गई। चार-पांच दिन शकुन्तला के पास रहने के बाद एक दिन सुबह नौ बजे चण्डीगढ़ बस अड्डे से बस पकड़ कर लगभग दस घण्टों के सफर के बाद अपने गांव पहुंच गया और फिर अपने कार्यों में व्यस्त रहने लगा।

दो माह बाद एक दिन सुबह सात बजे के लगभग शिवराम को फिर वही अटैक हो गया। लगभग चार घण्टे तक वैसी ही बेचौनी रही। जब-जब यह अटैक होता है तो शिवराम की धर्मपत्नी संध्या पानी में प्याज का रस तथा सेंधा नमक, कभी दूसरा नमक भी डाल कर गर्म करती और जब वह पानी पीने योग्य हो जाता तो शिवराम को पिला देती जिससे थोड़ी देर बाद शिवराम की छाती से ढक्कन-सा खुलता और वह ठीक हो जाता। आज भी उसने वैसा ही किया, तब जाकर शिवराम ठीक हुआ। इस अटैक के बाद उसे काफी कमजोरी अनुभव होती है।

इसी प्रकार लगभग तीन वर्ष बीत गए। एक दिन शिवराम बाबा रामदेव द्वारा चलाए गए एक औषधालय में जा पहुंचा। वहां हर प्रकार के रोगियों का परीक्षण किया जाता है जिसे पतंजलि से वैद्य का प्रशिक्षण लिए हुए कहीं पुरुष तो कहीं महिला वैद्य मिल जाते हैं। वही रोगी का नाड़ी परीक्षण करके, उसके अनुसार प्राणायाम बताते हैं तथा आयुर्वेदिक दवाइयां भी देते हैं। जिस औषधालय में शिवराम गया वहां एक युवा लड़की वैद्य मिली। शिवराम ने उसे अपने रोग के बारे में विस्तार से बताया। बीमारी का सारा इतिहास सुनने के बाद उस लड़की वैद्य ने शिवराम की दोनों भुजाओं की नाड़ियों का परीक्षण करके बताया, "आपको यह वायुरोग के कारण ऐसा होता है। जब आप किसी वायली चीजों का सेवन कर लते हैं तो आपकी छाती में कहीं किसी नस्स में अवरोध पैदा हो जाता है, जिससे आपको ऐसा होता है। आपके शरीर में जब-जब वायु तत्व की अधिवक्ता हो जाती है, तब-तब-यह अवरोध उत्पन्न होता है। आप इसके लिए नींबू के रस को पानी में घोलकर थोड़ा नमक और चीनी मिलकर पिया करें। इससे आपको इस रोग से काफी छुटकारा मिल सकता है। प्याज का रस भी नमक मिलाकर पानी में डाल कर हल्का गर्म करके पी लिया करें। इससे भी आराम मिलेगा। अब एक प्राणायाम बताती हूं। इसके लिए रोज प्रातः भूखे पेट पद्मासन में बैठ कर धीरे-धीरे नाक से सांस पूरे फेफड़ों में भर लेना और फिर जिस गति से उसे भरा है, उसी गति के साथ नाक से ही बाहर निकाल देना। ऐसा लगभग साठ बार करना। इससे भी आपको फायदा होगा।'' इस प्रकार महिला वैद्य से परामर्श लेकर शिवराम घर आ गया।

पहले एक महीने में चार-पांच अटैक हो जाते थे परन्तु अब बैद्य द्वारा बताए गए उपायों को अपनाने के बाद दो-तीन महीनों में शिवराम को एकाध बार ही यह अटैक पड़ता, जो थोड़े समय बाद ही ठीक भी हो जाता।

दो साल बाद एक दिन शिवराम को अचानक किसी आवश्यक कार्य हेतु सोलन जाना पड़ा। सुबह बस पकड़कर शाम को सोलन पहुंच गया। पहले अपना आवश्यक कार्य निपटाया और फिर सोचा, ''क्यों न आज की रात राकेश कुमार शर्मा के यहां गुजार लूं।'' राकेश कुमार उसका पुराना घनिष्ठ मित्र है और वह उसके घर की ओर चल पड़ा। अन्धेरा बढ़ रहा था और सोलन शहर विभिन्न प्रकार की रोशनियों से जगमगाना शुरू हो गया था। राकेश कुमार के घर पहुंचते-पहुंचते पूरा शहर जगमगा उठा और शिवराम ने उसके घर पहुँचकर दरवाजे के किनारे लगा घण्टी का बटन दबा दिया तथा अन्दर घण्टी बज उठी। कुछ ही क्षणों के बाद राकेश कुमार ने दरवाजा खोला तो वहां शिवराम को खड़ा देखकर खुशी से उछल पड़ा। दोनों मित्र खूब गले मिले और फिर राकेश उसे बैठक वाले कमरे में ले गया। वहां दोनों सोफे पर बैठ गए। राकेश ने अपनी पत्नी बिमला को आवाज लगाई, '' बिमला! देखो तो कौन आया है ?''

बिमला रसोई में रात का खाना बना रही थी। आवाज सुनकर रसोई से निकल कर झट कमरे में पहुँच गई। वहां राकेश के साथ बैठे शिवराम को देखा और मुस्कुरा कर बोली, '' भाई शिवराम जी!''और सोफे के पास रखे स्टूल पर बैठ कर शिवराम के घर का सारा समाचार लेने के बाद उठ खड़ी हुई, ''अच्छा भाई जी! आप दोनों बातें करो, मैं खाना तैयार करती हूँ और अभी दो कप चाय के दे जाती हूँ।'' कहकर अन्दर रसोई की तरफ चली गई। दोनों बातें करते रहे। इतने में बिमला ट्रे में चाय लेकर आ गई। चाय के कपों को मेज पर रखा और लौटकर चली गई। कुछ ही देर में खाना भी तैयार हो गया। सबने मिलकर खाना खाया। बिमला साफ-सफाई करने लगी और दोनों मित्र उठकर बैठक में चले आए। वहां बैठकर फिर बातों में व्यस्त हो गए। काफी देर तक दोनों में दुःख-सुख की बातें होती रहीं। रात के दस बज गए और बिमला भी रसोई में साफ-सफाई समाप्त करके बैठक में आ गई।

''अभी तक सोए नहीं ?'' बिमला ने बैठक में पहुँचते ही पूछा फिर राकेश से बोली, ''सुनो जी! भाई जी सफर से थके हुए हैं अतः अब सो जाना चाहिए। आप भाई जी को उस कमरे में ले जाकर सुला दीजिए।'' बिमला ने कमरे की ओर संकेत करके कहा और राकेश शिवराम को साथ लेकर दूसरे कमरे में चला गया। वहां लगे बिस्तर पर शिवराम लेट गया और राकेश वापिस बैठक में लौट आया।

सुबह पाँच बजे शिवराम उठ गया तथा मन में सोचने लगा, ''नित्यकर्म से निवृत्त होकर प्राणायाम कर लेता हूं, फिर स्नान करूंगा।'' नित्यकर्म से निवृत्त होकर लगभग आधा घण्टा प्राणायाम करके थोड़ा विश्राम करने के उपरान्त स्नान करने जाने ही वाला था तभी बिमला चाय लेकर आई और मेज पर चाय का कप रखा। "भाई जी ! चाय पी लीजिए।'' कह कर वापिस चली गई।

शिवराम ने चाय पीने के बाद कप मेज पर रखा। ''अब थोड़ी देर बाद ही नहाता हूं। कहते हैं ......चाय पीने के तुरन्त बाद नहाना नहीं चाहिए। शरीर में कई प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं।" सोच कर मेज पर पड़ी अखबार उठाई और उसे खोलकर पढ़ने बैठ गया। लगभग आधे घण्टे तक वह अखबार पढ़ता रहा। इसके बाद बाथरूम में नहाने चला गया। बाल्टी में पानी भरा और कपड़े उतार कर नहाने लगा। पहले सिर पर दो-तीन मग पानी डाला और साबुन लगाकर सिर को अच्छी तरह धोने के बाद खड़े होकर मग में पानी भर-भर कर अपने ऊपर उडेलने लगा। तीन-चार मग उड़ेलने के बाद शिवराम को लगा कि उसकी छाती में कुछ अटक गया है। जिसके कारण उसे छाती में तकलीफ बढ़ने लगी। तब वह जल्दी-जल्दी नहाया और तौलिए से शरीर को पौंछ कर बड़ी कठिनाई से कपड़े पहने तथा बिस्तर में आकर लेट गया। तभी राकेश कमरे में आया और शिवराम को बिस्तर पर लेटा हुआ देखकर पूछने लगा, ''शिवराम! क्या बात है, अभी तक उठे नहीं क्या ?''

'' राकेश! मुझे एक अजीब-सी बीमारी है। एकदम छाती में कुछ होता है। बस.......फिर मेरा चलना-फिरना कठिन हो जाता है। तब मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरी छाती में कुछ फंस गया है। इससे मुझे बहुत कष्ट होता है और व्याकुलता बढ़ जाती है।'' शिवराम ने बताया और राकेश ने फिर पूछा, '' दवाई खाते हो तो खा लो।''

''दवाई लाना भूल गया। आती बार दवाई की याद दिमाग से ही निकल गई। दो दिनों से दवाई नहीं खाई है। शायद इसलिए ऐसा हुआ है।'' शिवराम ने लेटे-लेटे ही बताया और राकेश ने फिर पूछा, "क्या नाम है दवाई का, मुझे बताओ, मैं ले आता हूं।''

''दवाई का नाम तो याद नहीं है। परन्तु मेरे बैग की बाहर वाली छोटी जेब में अस्पताल की एक पर्ची पड़ी है, जिसमें दवाई लिखी है। उसे ले जाओ।'' शिवराम ने बताया और राकेश ने बैग की जेब से पर्ची निकाली तथा उसे लेकर दवाई लाने चला गया और थोड़ी देर बाद दवाई का एक पत्ता ले आया तथा शिवराम को देकर कहा :- ''मैं पानी लेकर आता हूं।''

कहकर वह पानी लाने चला गया और शिवराम ने दवाई के पत्ते से एक गोली निकाल ली। इतने में राकेश पानी लेकर आ गया और गिलास शिवराम को देते हुए कहा :- '' लो! अब एक गोली खा लो।'' शिवराम ने गोली मुंह में रखी और पानी के घूंट के साथ निगल ली।

''अब आप आराम करो। मैं थोड़ी देर बाद आता हूं।'' कहकर राकेश चला गया और शिवराम बिस्तर पर लेट गया। उसे लेटे हुए काफी देर हो गई परन्तु कोई फर्क नहीं पड़ा। तब उसने एक गोली और खा ली परन्तु कष्ट और बढ़ने लगा। उसे ऐसा लगने लगा कि अब उसका अन्तिम समय आ गया है। इतने में राकेश भी कमरे में हाल-चाल पूछने के लिए आ गया।

''अब कैसा लग रहा है ?'' उसने आते ही शिवराम से पूछा तो शिवराम ने कहा, ''भाई जी! मुझे किसी चिकित्सालय में ले चलो। पता नहीं क्यों आज न जाने यह कष्ट कैसे बढ़ता ही जा रहा है।''

राकेश ने उसी समय एक ऑटो रिक्शा वाले को फोन करके बुला लिया और शिवराम को उसमें बिठाकर स्वयं भी साथ बैठ कर जिला चिकित्सालय में ले गया। वहां आटो से उतार कर शिवराम को सीधा एमरजैंसी में पहुंचा दिया। वहां शिवराम को दाखिल कर लिया और एक बिस्तर मिल गया, जिस पर राकेश ने पकड़ कर उसे लिटा दिया। वहां एक अधेड़ महिला डॉक्टर अपनी चार प्रशिक्षु डॉक्टर लड़कियों के साथ आकर शिवराम का परीक्षण करने लगी। उसने सर्वप्रथम शिवराम का ई.सी.जी किया। ई.सी.जी बिलकुल सही निकला। अब वह उसका रक्तचाप चौक करने लगी तब उसने शिवराम के दोनों हाथों की नाड़ियां देखीं। काफी कोशिश के बाद जब नाड़ियां गायब मिलीं तो उसने अपना मोवाइल मुख्य चिकित्सा अधिकारी को लगाकर शिवराम की पूरी स्थिति की जानकारी देकर पूछा, सर जी! ऐसी स्थिति है। कृपया मुझे बताएं कि अब क्या करना होगा ?''

मुख्य चिकित्सा अधिकारी उसे मोबाइल पर ही निर्देश देता रहा और वह महिला डॉक्टर अपनी प्रशिक्षु डॉक्टर लड़कियों के साथ शिवराम की चिकित्सा में व्यस्त हो गई। पहले दो इन्जेक्शन लगाए और पर्ची पर कुछ लिखकर राकेश को देते हुए कहा कि वह इसे बाहर वाले स्टोर से ले आए। राकेश इन्जेक्शन लाने चला गया और महिला डॉक्टर ने एक गोली शिवराम को खिला दी। इतने में राकेश भी इन्जेक्शन लेकर आ गया। प्रशिक्षु डॉक्टर लड़कियों ने शिवराम की भुजा में एक अलग नीडल लगा दी और अलग सरिंज में शीशी से इन्जेक्शन भरा तथा उस नीडल से जोड़कर दवाई को धीरे-धीरे उसके शरीर में उतार दिया। दवाई को उसे उतारने में काफी देर लगी। इससे शिवराम को सीने में एक झटका-सा लगा, जैसे कुछ फंसा था। वही झटके के साथ निकल गया है। इससे उसकी बेचैनी दूर हो गई तथा उसे चैन मिल गया।

जब-जब शिवराम पर इस बीमारी का आक्रमण होता है तब-तब उसके बाद हर पाँच मिनट बाद जोर का पेशाब आता है, और इसी प्रकार बार-बार होता है। इस समय भी वह पेशाब के

तनाव से जूझ रहा था। पहाड़ के लोग बड़े सीधे-सादे, ईमानदार और शर्मिले होते हैं। शिवराम भी तो वैसा ही था। वह इन प्रशिक्षु लड़कियों के सामने कहने से हिचक रहा था, क्योंकि उस समय उसे बाथरूम शब्द याद ही नहीं आ रहा था। अन्ततः उसने बड़ी डॉक्टर से कहा, '' मैडम जी! मैंने लघुशंका जाना है।'' तब उसकी सहायक प्रशिक्षु लड़कियां हैरान होकर पूछने लगी, '' मैडम जी ! यह क्या कह रहे हैं ?'' तब बड़ी डॉक्टर थोड़ी मुस्कराई फिर करने लगी कि यह महाशय जी शुद्ध हिन्दी में कह रहे हैं कि मैंने बाथरूम जाना है।" बड़ी डॉक्टर की इस बात से वह प्रशिक्षु लड़कियां अपने आप में झिझक-सी अनुभव करने लगीं कि उन्होंने पढ़ाई तो काफी की है परन्तु अभी तक वह अपनी राष्ट्रीय मातृभाषा तथा क्षेत्रीय मातृभाषा से कोसों दूर हैं। इस बात से उनके चेहरों पर हीनता की भावना छलकने लगी और सिर शर्म से झुक गए क्योंकि अपने क्षेत्र से दूर पढ़ाई करते-करते वह अपनी मातृभाषा से ही नही अपितु सभ्यता, संस्कृति, संस्कारों और रीति-रिवाजों से भी बिलकुल अंजान हो चुकी हैं।

बड़ी डॉक्टर ने एक लड़की को चपड़ासी बुलाने भेज दिया। थोड़ी देर बाद वह चपड़ासी को बुलाकर ले आई और वह शिवराम को बाथरूम ले गया। जब शिवराम लघुशंका विसर्जन करके लौटा तो बड़ी डॉक्टर ने पूछा, ''अब आपको कैसा लग रहा है ?''

'' अब मैं बिलकुल ठीक हूँ।'' शिवराम ने बताया और बड़ी डॉक्टर ने फिर कहा, ''आपको मुख्य चिकित्सा अधिकारी जी बुला रहे हैं। ऊपर उनके कमरे में उनसे मिल लो, फिर आप जा सकते हैं।'' राकेश उसे लेकर अस्पताल की तीसरी मंजिल पर मुख्य चिकित्सा अधिकारी के कमरे तक ले गया और शिवराम उसके कमरे में अन्दर चला गया। वहां मुख्य चिकित्सा अधिकारी अपने कमरे में अकेला बैठा कुछ लिख रहा था। उसने शिवराम को कमरे में आया देखकर अपने पास रखे स्टूल पर बिठा कर पहले उसकी इस बीमारी के इतिहास की पूरी जानकारी प्राप्त की और फिर शिवराम के कंधे पर हाथ रखकर मुस्कुराते हुए कहा, ''अरे...... .! घबराने की कोई बात नहीं है। आपको यह शिकायत वायु के अधिक दवाब के कारण होती है।'' फिर पर्ची पर अंग्रेजी में Nupanta लिख कर बताने लगा, '' यह दवाई लिख दी है। यह प्रत्येक मेडिकल स्टोर से हर जगह मिल जाती है। इसकी एक गोली रोज सुबह खाना खाने से पहले खा लेना और एक गोली शाम को भी इसी प्रकार खा लिया करें। सब ठीक रहेगा। हां.........यदि एक-दो दिन यह गोली नहीं खाई तो यह वायु का अटैक पुनः पड़ सकता है। वैसे भी इस दवाई के कोई भी साईड इफैक्ट नहीं हैं।''

'' मुझे तो हमारे छोटे शहर में अस्पताल के डॉक्टर ने बताया था कि आपकी यह बीमारी दिल से जुड़ी हुई लगती है। टैस्ट लिख दिया है, इसे दिल्ली में जाकर, अमुक अस्पताल में करवाने को भी कहा है। जब मैनें इस टैस्ट के खर्च के बारे में पूछा तो डॉक्टर कहने लगा कि इसका लगभग बीस हजार रुपये खर्च आएगा। यही टैस्ट मैंने चण्डीगढ़ में एक नहीं, बल्कि तीन प्रयोगशालाओं में करवाया। सब जगह के टैस्ट नार्मल आए। कोई भी दिल से संबंधित बीमारी नहीं निकली।''

सारी बात मुख्य चिकित्सा अधिकारी को बताकर शिवराम चुप हो गया। तब मुख्य चिकित्सा अधिकारी कहने लगा, ''भाई साहब ! क्या बताएं..........इन लालची डॉक्टरों के कारण ही तो हमारा यह परोपकारी पेशा बदनाम हो रहा है। इसी कारण बड़े-बड़े अस्पतालों में अंगों का व्यापार होता है जिसे आपने भी कई बार टी.वी पर खबरों में देखा व सुना होगा तथा समाचार पत्रों में भी कई बार पढ़ा होगा। आज पैसे की भूख इतनी बढ़ चुकी है, जिसका अनुमान लगाना भी कठिन है।'' डॉक्टर ने इसके बाद दो-तीन तगड़ी गालियां फैंक कर अपना आक्रोश निकाला और दो-चार लम्बे-लम्बे सांस लेने के बाद पुनः शिवराम से कहने लगा, '' मैंने पहले भी बताया है कि आपका दिल बिलकुल ठीक है। यह जो बीमारी आपको तंग कर रही है, वह किसी कमजोर नस्स में वायु अवरोध के कारण उत्पन्न हुई है। आप वायली खान-पान का त्याग करके नूपेन्टा की गोलियों का नियमित सेबन करते रहें। आपको कुछ नहीं होगा। अब आप जा सकते है।''

इतना कहकर वह चुप हो गया और राकेश शिवराम को लेकर घर आ गया। उस दिन उसने शिवराम को नहीं भेजा। अगले दिन सुबह ही शिवराम ने राकेश से विदा ली और बस में बैठकर शाम के लगभग साढ़े छः बजे अपने गांव पहुंच गया।

अब वह मुख्य चिकित्सा अधिकारी द्वारा बताए गए नियमानुसार नूपेन्टा की गोलियां लेने लगा। जब कभी दो-तीन दिन तक गोली खाना भूल जाता तब यही वायु अवरोध उसे तंग करता। आज दिन तक शिवराम को इस वायु अवरोध के कम-से-कम सौ से भी ऊपर अटैक हो चुके होंगे। यदि यह बीमारी दिल से संबंधित होती, तो क्या शिवराम जीवित रहता ? अधिक- से-अधिक तीसरे अटैक में ही भगवान को प्रिय हो चुका होता। हां. ...यह अटैक ऋतु परिवर्तन के समय दो-चार बार अवश्य ही पड़ता है। जैसे सर्दियों के अन्त में, गर्मियों की शुरुआत में और बरसात के अन्त में तथा सर्दियों के प्रारम्भ में। अब शिवराम इससे घबराता नहीं है। कहता है, '' आज के नौसिखिए डॉक्टर कई लोगों को तो डराकर ही मार देते हैं। कहते हैं : पहले वैद्यों/डॉक्टरों की बातचीत के प्रभाव से ही मरीज ठीक हो जाया करते थे। आज से पचास वर्ष पूर्व ऐसा ही होता था, परन्तु आज कुछ और ही है जिसे बहुत से लोग भली-भान्ति जानते हैं।

चिन्तन कुटीर गांव व डाकघर रैत,
तह. शाहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176208
मो : 0 98165 16978

डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल के नवगीत

सरिता बहती है

धोकर सारे
पाप हमारे
सरिता बहती है

निर्मल जल है
या दर्पण है
बच्चों जैसा
निश्छल मन है
कल-कल करती
आगे बढ़ती
विपदा सहती है।

कहे संस्कृति
सदा हमारी
सरिता लिखती
कथा हमारी
देश-धर्म की
सत्य-मर्म की
बांहें गहती है।

कहां किसी से
कब कुछ मांगे
हीरे-मोती
सुख के टांगे
बढ़ते जाओ
साथ निभाओ
यह ही कहती है।

सागर से जा
मिल बतियाए
उम्मीदों के
गीत सुनाए
अपनी धुन में
स्वर रुनझुन में
हरदम रहती है।

तितलियों-से

हो गए रंगीन बच्चे
तितलियों-से।

दूर करते
उलझनों को
पास आकर
देखते हैं
हर घड़ी ही
मुस्कराकर
मोहते हैं मन सभी का
मुरलियों-से।

दंभ से, छल से
कपट से
दूर रहते
जो कहें
अपनी ज़ुबां से
किया करते
प्रेम-जल हैं भरे नित
बदलियों-से।

हार करके
बैठ जाना
है असंभव
मुश्किलों के
पर कुतरते
करें कलरव
घूमते दिन भर हमेशा
तकलियों-से।

मित्रता
सबसे निभानी
जानते हैं
धर्म
दूजों की मदद को
मानते हैं
दुश्मनों पर टूट पड़ते
बिजलियों-से।

ज़िंदगी

भिन्न के सवालों-सी
मिली जिंदगी।

भीतर है अंधियारा
बाहर भी तम
रोजाना रहती है
आंखें ये नम
बेतुके बवालों-सी
मिली ज़िंदगी।

बोझीले पग दोनों
हाथ हथकड़ी
बुझी-बुझी सपनों की
रहे फुलझड़ी
दोगले दलालों-सी
मिली ज़िंदगी।

विकृत मुस्कानों का
झुलसा मुखड़ा
साये से कहें अपना
रो-रो दुखड़ा
छिन गए निवालों-सी
मिली ज़िंदगी।

कौन दिशा जाना था
किधर को चले
पूछो मत किस-किससे
गए हैं छले
धुंधले उजालों-सी
मिली ज़िंदगी।

785/8, अशोक विहार, गुरुग्राम, हरियाणा-122 006, मो. 0 92104 56666

कविताएं



परम देव शर्मा

हृदय की पीड़ा

जेठ दुपहरी प्यासी धरती
ज्यों पानी को तरसे
बादल के आगोश में
सराबोर होने को तड़पे
दूर कहीं कोई बदली छाए
मिलने को मन मयूरा अकुलाएं
पपीहा सोचे तृप्त हो जाऊं
चंद बूंदे जो बरस जाएं
तीव्र हो उठी मन की ज्वाला
बरसो बदर अगन बुझ जाए
चार बूंदें अमृत समान
फिर भी मन
व्याकुल हुआ जाए
काश ये बदरा
थोड़ा और बरस जाए
नीर बहा प्यास बुझाए
तपती धरती जलती काया
थकती पलकें बोझिल सांसें
अंतर्मन की चीख
जो खामोश हो गई
हृदय की पीड़ा
जो गहराई में खो गई
इंतजार की घड़ी
जो पथराई आंखों में
समा गई
फिर वही आस लिए
मेघा आएंगे
एक दिन
मेघा बरसेंगे
एक दिन!



फरिश्ता

शब्द हमारे
आवाज तुम्हारी थी
आंसू हमारे
पलकें तुम्हारी थीं।
दर्द हमारे
सीने में दफन तुमने किए
कदम लड़खड़ाए जब
सहारा तुमने दिया
तन्हाई में भी कभी
तन्हा हमें न रहने दिया
दूर रह कर भी
साया बनके साथ दिया
आने वाली मुसीबत को
दीवार बनके रोक दिया
राहों में फूल बिछाकर
कांटों को खुद चुनते गए
अनकहे बोलों के भी
भाव कैसे समझते गए
मैं जीत जाऊं
अपनी हार का जश्न मनाते गए
जिंदगी हमारी थी
सपने तुम सजाते गए
हमारी एक-एक खुशी को
दिल से तुम मनाते गए
ये कैसा मिलन है
फरिश्ता बन मुझमें समाए हुए हो !!!

प्रवक्ता वाणिज्य, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, फागली, शिमला-171 004, मो. 0 94180 60071

कविता

नीर भरी बदली

सुमनलता शर्मा



जीवन की जलती गरमी में,
बेटी नीर-भरी बदली होती है।
जीवन के उपवासी लम्हों में,
बेटी कदली फल होती है॥

जब सन्नाटा छाये जीवन में,
तो बेटी बन जाती संगीत।
मायूसी जब पैर पसारे,
तो बेटी है एक सुन्दर गीत॥

घायल हो मां का अन्तर्मन,
तो बेटी मरहम होती है।
छोटी सी सुकुमार-कली वो,
उस पल तो मरीयम होती है॥

जीवन के इस महायज्ञ में,
बेटी यज्ञ-वेदी होती है।
पड़ी यदि कभी जरूरत तो,
पावन यज्ञ-समिधा बनती है॥

जग-जीवन के मंदिर की ,
बेटी मूरत है साकार।
वह तो आँगन की तुलसी है,
कर लो आदर व सत्कार॥

थक कर चूर हो जाये माँ तो,
बेटी 'लोरी' बन जाती है।
थके हुये पापा की खातिर,
नन्ही कली माँ बन जाती है॥

जीवन-मन्दिर के दीपक की,
बेटी अखण्ड ज्याति होती है।
जीवन की इस महाआरती में,
घण्टी की मधुर ध्वनी भरती है॥

मां-बाबा की गहन व्यथा पर,
छुप छुप कर बेटी रोती है।
छुपा कर अपनी पीड़ा पलकों में,
मधु मुस्कान बिखरा देती है॥
माँ के व्यथित पलों में वो,
सच्ची सहचर होती है।
मां की हर पीड़ा पर बेटी,
दर्द निवारक होती है॥

घर मे जब कोइ उत्सव हो,
बेटी, पूजा की थाली होती है।
रक्षा बन्धन आने पर वह,
हाथों की मौली होती है॥

जीवन-मन्दिर के गुम्बद की,
वह सुयश पताका होती है।
प्रभु के शुचि-अमृत कलश की,
वो अनमोल बूंद होती है॥

आभूषण की बात चले तो,
बेटी रत्न-जटित हीरों का हार।
मणिमय-मुक्ता की भव्य लड़ी व ,
मन-जौहरी का अनुपम शृंगार॥

जीवन-सागर में जब कमल खिले,
तो बेटी ओस बिंदु बन जाती है।
हल्के से यूँ ढुलक पत्र पर,
कोमलता का मीठा अहसास कराती है॥

यदि जीवन रण में संग्राम छिड़ा तो,
तो बेटी रणचण्डी बन जाती है।
जीवन सागर के मंथन में,
विजय-घोष बन जाती है॥

प्रभात का मीठा अहसास है बेटी,
बेटी सूर्य की प्रथम किरण है।
प्रभु की अनुपम कृति है बेटी ,
बेटी ईश्वर का दिव्य अलंकरण है॥

मां के फटे आँचल का रफू है बेटी,
मां की ओढ़नी पर लगी बूंटी है बेटी।
पिता का अंगरखा सम्हालने के लिये,
दीवार पर लगी खूंटी है बेटी॥

जीवन-पतंग की डोर है बेटी ,
बौद्धिकता की शाला में सुमति है बेटी।
जीवन-साधना में सुघड़ यति है बेटी,
जीवन यदि आराधना तो भक्ति है बेटी॥

जीवन यदि लक्ष्य है,
बेटी अनुसंधान बन जाती है॥
जीवन-मानस में यदि कोई उलझन,
बेटी मनोविज्ञान बन जाती है॥

जीवन-सागर के मंथन मु बेटी,
मधुमय अमृत-पान होती है।
जीवन यदि व्यवस्था है तो,
बेटी अनुशासन होती है॥

यदि जीवन उपवन मे अमराइयां छाए तो,
बेटी कोयल की कूक होती है।
जीवन यदि एक याद बन जाये तो,
बेटी दिल की हूक होती है॥

असमंजस में हो यदि जीवन,
तो बेटी की राय दो-टूक होती है।
जीवन-समस्या के समाधान में,
बेटी सदा अचूक होती है॥

48ए लालजी नगर सोसायटी, बी/एच. विशाल नगर,
पो. अढाजन, सूरत, गुजरात-395009,
सम्पर्क : 0 90544 05901

कविता

मानवता के बीज

मुकेश कुमार

सुबह सुबह
भारी कोहरे और ठंड में
जब दुबके होते हैं हम बिस्तर में -
तब एक आदमी
गमछा बाँधे
जा रहा होता है खेतों की ओर
सुख दुःख के बीज गोड़ने।

वह उसकी सौंदर्य-चेतना है
जिसे वह मुकम्मल बनाता है,
अपने कुदाल से,
अपने जोते हुए हल से,
अपनी रोजी-रोटी के लिए ।
ये उसके सपने हैं
जिसे वह जागते हुए पूरा करता है,
उस जागने में एक जिंदादिली है
क्योंकि वह मिट्टी में पला
और मिट्टी में बढ़ा है।

उसमें तालमेल है
खुद के प्रति,
खेतों के प्रति,
अपने संस्कार के प्रति,
क्योंकि वह मिट्टी की गंध कभी नहीं भूलता,
उसी में उसकी समर्पण भावना निहित है
हर दर्द को लेकर,
उसकी व्यथा केवल
खेतों में फसल उगाही करने की है,
भूख मिटाने की है।
तभी तो
वह सवेरे सवेरे जाता है -
खेतों में नजर दौड़ाने के लिए ।

व्यवस्था के साथ वह मिट्टी की तरह है
व्यवस्था में ना होकर
फिर भी वो खामोश है,
राजनीति की गहरी खोहों में
नियम के बीहड़ में,

सहसा चौंक जाते उसके सपने
पाकर खुद को
सुबह सुबह
कोहरे और ठंड में खेतों की ओर जाते हुये,

प्रश्न खेतों में है
या चिकनी उन मिट्टी के ढेलों में ,
जिसे छूने से ही
अस्तित्व हीन हो जाता है वह,
या उस मिट्टी में है
जिसमें उपजाऊ होने का विस्तार नहीं ?
पर बार बार की कोशिशें
करती है साकार सपने -
कि,
हम फिर देखेंगे सपने
फिर तोड़ेगे बंजर भूमि पर
सहृदयता के ढेले,
हम फिर गोड़ते रहेंगे
उसी कुदाल से -
जब तक अंकुरित नहीं कर सकेंगी धरा
गहरी मानवता के बीज।

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल,
शिमला-171 005, मो. : 0 85807 15221



क्षणिकाएं

के. एल. दीवान

मैं, मेरे भीतर

मैं/धरती पर रहता
मेरे भीतर
एक शैतान रहता
मैं
हर पल सोता रहता
वह/हर पल जगता रहता
मैं -
जब-जब जगता
वह/बगुला भगत सी
आंखें मूंद लेता
काश/
कुछ ऐसा हो पाता
मैं/अपने जीते जी
उसे
मार पाता!

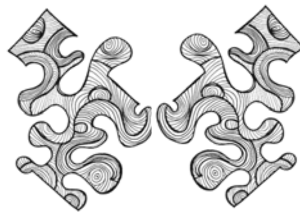
चमगादड़ सा जीवन

हम
इधर भी
हम
उधर भी
हम/ न इधर
न उधर
पक्षियों के झुंड में
पक्षी बन जाते
जून/आदमी की
पर जीवन
चमगादड़ का जीते हैं।



राज

इधर-उधर/बिखरे
यह छिलके
मूंगफली के
मिटते-मिटते
बहुत काम कर गए
जिंदगी के कई राज गहरे
बेनकाब कर गए।



डूबे भ्रम में

साईकिल और स्कूटर
डाले हाथ में हाथ
गाते एक साथ
डूबे भ्रम में
दोस्ती का राग
दोस्ती!
या पागलपन
फूलना सांस-सांस
साईकिल का
दौड़ना तेज़-तेज़
अपनी गति सीमा से
दोस्ती!
या हमदर्दी
मुस्काना
उसांस-उसांस
स्कूटर का चलना
धीमे-धीमे
अपनी गति सीमा से।

दोस्तियां

मेरे आस-पास
है कुछ विश्वास सा
कैसे मानूं
कैसे जानूं
दोस्तियां
सिमट-सिमट
सीमित हो चुकीं
चाय के
दो प्यालों में।

जिंदगियां

हम जी रहे
कुछ जीवन सा
कैसे मानूं
कैसे जानूं
जिंदगियां -
सुलग-सुलग
बन चुकी
राख
ऐश ट्रे की।

पहचान

न जाने क्यों
हम खुद को
पहचान नहीं पाते
और /चट्टान सा
बना नहीं पाते
यूं ही/जीते रहते
सदियों तक
एक फुसफुसा जीवन
राह ताकते
एक लौह पुरुष की।

ए-57 अरिहंत विहार
विष्णु गार्डन, कनखल,
हरिद्वार, उत्तर प्रदेश,
मो. 0 97562 58731

लघुकथाएं

कुणाल शर्मा

उसका जिक्र क्यों नहीं करते

पार्क में एक बैंच पर चार आदमी बैठे बतिया रहे थे।

पहला : सुना है...करियाने वाले रामकिशोर की लड़की मंगल ठेकेदार के लड़के के साथ भाग गई।

दूसरा : ठीक सुना है, बेशर्म ने सारे मोहल्ले में बाप की थू-थू करा दी।

तीसरा : बस पूछो मत...उसके तो चाल-चलन और पहनावे से ही दिखता था कि एक ना एक दिन जरूर गुल खिलाएगी।

चौथा खामोश रहा।

पहला : लड़कियों के तो पंख लग गए हैं आजकल।

दूसरा : भई, लड़की जात...फिर भी कोई शर्म-हया नहीं।

तीसरा : खबर तो यह भी है कि शादी भी रचा ली है।

चौथा फिर खामोश रहा।

पहला : शादी भी रचाई तो गैर-बिरादरी लड़के के साथ!

दूसरा : कम से कम जात-बिरादरी का तो ख्याल कर लेती!

तीसरा : भई , मैं तो कहूँ लड़कियों को इतनी आजादी देना भी ठीक नहीं ।

चौथा अभी भी खामोश था।

पहला : अरे भाई , तू क्यों खामोश बैठा है? कुछ तो बोल।

चौथा : अकेली भागी है क्या लड़की?

दूसरा : अरे , कैसी बात करते हो! अकेली क्यों...लड़के के साथ भागी है...

चौथा : तो भाई लड़के के बारे में भी कुछ बोलो, उसका जिक्र क्यों नहीं करते...?

अब शेष तीनों खामोश थे ।



काले अंगूर

"ऐसे बिस्तर पर कब तक पड़े रहोगे , जाकर डॉक्टर को क्यों नहीं दिखा आते?" वह चूल्हे पर पतीली चढ़ाते हुए बोली।

"पल्ले पैसा नहीं है, फेरी लगाये भी चार दिन हो गए। कुछ पैसा कमाऊँ तो डॉक्टर के पास जाऊँ।" वह थोड़ा खीझते हुए बोला।

साड़ी के पल्लू में लगी गाँठ खोलकर वह कुछ नोट उसकी ओर बढ़ाती हुई बोली, "शरीर नहीं चलेगा तो गुजर-बसर भी दूभर हो जाएगा। अब जाकर दिखा आओ।"

उसने चारपाई से उठकर साइकिल बाहर निकाला ही था कि उसका बेटा भी साथ जाने की जिद्द करने लगा। उसने बेटे को साइकिल पर आगे बिठाया और डॉक्टर को दिखाने निकल पड़ा।

क्लीनिक पर डेढ़ सौ रुपये फीस भर, वह हाथ में पर्ची थामे डॉक्टर के केबिन में दाखिल हुआ। डॉक्टर ने उसे चेक किया और बोला, "भइया, ये दवाइयां ले लेना। और हाँ, तुम्हारा ब्लड प्रेशर बहुत कम है, पहले जाकर एक गिलास जूस पियो वरना बिस्तर से उठना मुश्किल हो जाएगा।"

वह क्लीनिक से बाहर निकल आया। कमजोरी के कारण वह खड़ा भी नहीं हो पा रहा था। उसने साइकिल उठाई और जूस की दुकान की और बढ़ गया। जूस की दुकान तक पहुंचते-पहुंचते उसकी सांस फूल गई थी। उसने दुकान के सामने साइकिल रोक दी। दुकान में पड़े काले अंगूरों को देखकर उसका बेटा बोला, " पापा,पापा काले अंगूर खाने हैं!"

उसने जेब में हाथ डाला तो दस-दस के तीन सिकुड़े हुए नोट हाथ लगे। "बेटे, आज पैसे नहीं है, फिर ले लेंगे।" बच्चे के सिर पर हाथ फेरते हुए वह बोला।

"ठीक है पापा!" बच्चा दबी आवाज में बोला और चुपचाप उसका हाथ पकड़कर खड़ा हो गया। उसने एक नजर 'चर्र-चर्र' करती जूस की मशीन पर डाली और फिर बच्चे की ओर देखा। वह अभी भी काले अंगूरों को देख रहा था। जेब से पैसे निकालकर वह दुकानदार की ओर बढ़ाते हुए बोला, "भइया, एक पाव काले अंगूर देना।"

उसने बच्चे के हाथ में अंगूर का लिफाफा थमाया और साइकिल को पैदल ही खींचते हुए घर को चल दिया।

137, पटेल नगर (जण्डली)
अम्बाला शहर, हरियाणा-134003
फोन : 0 97280 77749

व्यंग्य

मुझे फेसबुक से बचाओ

◆ **अशोक गौतम**

ये फेसबुक भी बड़े कमाल की बूटी है भाई साहब! आम आदमी तक को चैन से जीने तो देती ही नहीं, पर आराम से मरने भी नहीं देती। अब देखिए न! बीस दिनों से घर का बिस्तर छोड़ ठीक होने के चक्कर में अस्पताल की चारपाई पर पड़ा हूं। जितने को ठीक होने लगता हूं, पता नहीं डॉक्टर कौन सी दवाई दे देते हैं कि फिर वहीं जा पहुंचता हूं जहां बीस दिन पहले था।

अस्पताल में आकर कुछ ठीक हुआ हो न पर एक बात जरूर हुई है कि बीवी मेरे सारे काम छोड़ मेरी सेहत का हर घंटे सचित्र बुलेटिन फेसबुक पर डालना नहीं भूलती ताकि हमारे दोस्तों रिश्तेदारों को मेरी बीमारी के घर बैठे लेटेस्ट अपडेट्स मिलते रहें। इस चक्कर में वह भले ही मुझे समय पर दवाई देना भूल जाए तो भूल जाए। अभी-अभी डॉक्टर पता नहीं ठीक होने का या स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहने का इंजेक्शन दे कर गया है। हाय! किस बेदर्दी से उसने इंजेक्शन लगाया कि मानो वह इंजेक्शन नहीं बाजू में कील ठोंक रहा हो।

इंजेक्शन के दर्द से न हंसा जा रहा है न रोया। मैं हंसी और पीड़ा के बीच जरा आराम करना चाहता हूं। पर बीवी चाहती है कि हर घंटे के तय मेरे स्वास्थ्य के अपडेट्स फेसबुकी दोस्तों रिश्तेदारों को पूर्ववत निर्अवरोध मिलते रहें। वे मेरा हालचाल पूछने अस्पताल में आएं या न! वैसे भी जब से फेसबुक ईजाद हुई है, लोग लाइव मिलने से बेहतर फेसबुक पर ही मिलना ज्यादा बेहतर समझते हैं। अच्छा भी है, मिलने में हींग लगे न फिटकरी, रंग तो वैसे भी नहीं चढ़ता।

तो मित्रो! कराहट के बीच फेसबुक पर मेरी बीमारी के ताजा अपेडट्स का समय हो चुका है। मेरा पूरा बदन बिस्तर पर पड़े हुए कांप रहा है। बीमारी से या फेसबुक पर अपलोड करने के लिए खींचे जाने वाले फोटो को लेकर, मुझे मालूम नहीं। आंखें खुल नहीं रहीं। जुबान तो खैर विवाह करने के बाद से ही बंद हो गई थी। बड़े सौभाग्यशाली होते हैं वे जो विवाह के बाद कम से कम अपनी जुबान को बचाए रखते हैं।

तो मित्रो! कराहट के बीच फेसबुक पर मेरी बीमारी के ताजा अपेडट्स का समय हो चुका है। मेरा पूरा बदन बिस्तर पर पड़े हुए कांप रहा है। बीमारी से या फेसबुक पर अपलोड करने के लिए खींचे जाने वाले फोटो को लेकर, मुझे मालूम नहीं। आंखें खुल नहीं रहीं। जुबान तो खैर विवाह करने के बाद से ही बंद हो गई थीं। बड़े सौभाग्यशाली होते हैं वे जो विवाह के बाद कम से कम अपनी जुबान को बचाए रखते हैं।

बीवी हाथ में मेरा फोटो खींचने को मोबाइल ले चुकी है। इस वक्त वह राजकपूर स्टूडियो के किसी फोटोग्राफर से कम नहीं लग रही। लगता है, अब वह मेरा एक बार फिर लाइव करने लायक फोटो लेकर ही दम लेगी। वैसे मुझे नहीं याद कि अब तक कोई ऐसा लम्हा गया हो, जिसमें उसने मेरा दम न लिया हो।

'ये कैसे लेटे हो? मरे हुए की तरह! यों लेटो न! घर की चारपाई पर तो आजतक ठीक एंगिल से लेटना नहीं आया, पर सरकारी चारपाई पर भी ठीक ढंग से नहीं लेट रहे हो? इस ढंग से ली तुम्हारी फोटो जो फेसबुक पर चली गई न तो वे सारे फ्रेंड हमें ही अनफ्रेंड कर देंगे जिन्हें तुम अनफ्रेंड करने को बिदकते रहते हो,' इसे मेरे दर्द की फिक्र नहीं, फेसबुक के फ्रेंडों का अनफ्रेंड होने का खतरा अधिक है। हो भी क्यों न? असल जिंदगी में तो सच पूछो तो हम अपने भी दोस्त नहीं।

मैं जैसे कैसे अपने चेहरे पर मौत की हवाइयों के बीच जीने की ललक लाने की बेहद कोशिश में हूं कि और तो दोस्तों तक मेरा कुछ भी सही आज तक नहीं गया, कम से कम बीमारी की एक फोटो तो सही चली जाए तो वे उसे देख कर वाह! वाह! कर उठें कि वाह! क्या कमाल का बंदा है! चारपाई पर मरते हुए चेहरे पर ऐसी लालिमा!

'अब ठीक है?' मैंने अपनी तरफ से हजार पीड़ाओं के बाद भी अपने चेहरे पर हंसी लाने की पूरी कोशिश की कि मानो कामदेव का बाण अभी मेरे दिल में लगा हो।

'नहीं, ऐसे नहीं। लगता ही नहीं कि तुम बीमार होने के बाद भी प्रसन्न हो।'

'बीमार होने के बाद भी आज तक प्रसन्न कौन रहा? आजकल तो लोग प्रसन्न होने के बाद भी प्रसन्न नहीं दिखते। और तुम हो कि... बीमार की हंसती हुई फोटो फेसबुक पर डाल आखिर

कविताएं

रोशन लाल पराशर

रिश्ते

ईर्ष्या नफरत मिटे जहान से
हंसी खुशी फैले चहुं ओर
व्यर्थ बातों को देकर तूल
हो जाते रिश्ते कमजोर।

दिलों में कटुता न आए
हो जाए आनंदमयी हर भोर
झलक प्यार की पाने को
टुक-टुक देखे चांद चकोर।

नाजुक बड़े हैं कोमल से
ज्यादा कसें न इनकी डोर
जंग लगे, तो दिल दरवाजे
चीं-चीं का करते हैं शोर।

कभी भारी, नीरस भी लगते
क्यूं स्वार्थ ने फैलाया जोर
चाहे कोसों साथ चले हैं
मिलते कहां नदी के छोर।

काली घटा, सावन की रिमझिम
पंख फैलाकर नाचे मोर
हर सको, तो पीड़ा हरना
'दिल' मत करना कभी कठोर।

उमंग

नई उमंग के साथ जीओ
ऊर्जा यूं मत व्यर्थ गंवाओ
मजबूत इरादे, जोश उमंग से
अलग ही नित पहचान बनाओ।

नन्ही सी मकड़ी से सीखो
उस जैसी ही लगन लगाओ
हार न मानो जीवन में
चाहे गिरो, लेकिन उठ जाओ।

शिखर नमन भी करते हैं
मुश्किलें रौंद कर चढ़ जाओ
पिड़ के पीछे मत रहना,
दोगुने जोश से बढ़ जाओ।

परिंदे भी दे संदेश यही
संकल्प शक्ति से उड़ते जाओ
टहनी ही मत पकड़े रहना
गगन से विजय पताका फहराओ।

पूजा निवास, तृतीय मंजिल, लोअर फागली,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 004,
मो. 0 98160 54093

तुम साबित क्या करना चाहती हो? यहां लोगों को आज किसी की सच्ची को हंसती हुई सूरत भी पसंद नहीं तो ऐसे में... मैं तो कहता हूं कि जो बीमारी में दोस्तों की संवेदनाएं अर्जित करना चाहती हो तो मेरी तरह मरियल सी फोटो ही फेसबुक पर डालो। हो सकता है कुछ दोस्तों का दिल पसीज जाए,' मैंने उसे व्यावहारिक दुनिया के सचों से अवगत करवाना चाहा पर वह नहीं मानी तो नहीं मानी। ये फेसबुकी दुनिया भी कितनी निहायत शरीफ फेकबुकी दुनिया है कंबख्त!

' देखो! अपने को कतई दार्शनिक मत बनो! मैं जानती हूं कि तुममें कितनी अक्ल है,' बीवी ने मुझे वास्तविकता से परे करते कहा, ' जैसा मैं कहती हूं बस, वैसे करो! लोगों को आज किसी की बीमारी सीमारी से कोई सरोकार नहीं। उनके पास अपनी ही बीमारियों का रोना पहले ही क्या कम है जो अब दोस्तों के भी बीमार चेहरे देखें,' मुझे पता था कि अब ये सुंदर से फोटो को लेकर चारपाई पर पड़े का भी दम निकाल कर रहेगी। सो अपने को पूरी तरह से बीवी की फेसबुक के लिए उसके हवाले कर दिया। जब मैंने उसके आगे लंगर डाल दिए तो वह मुस्कुराते हुए फेसबुक पर डालने वाली फोटो को तैयार करती मेरे दर्द की परवाह किए बिना चारपाई सजाने लगी, उससे अधिक खुद सजने लगी। मुझे बीमारी की हाल में बीमार होने के बाद भी चेहरे पर कैसे दर्द भरे मुस्कुराते इंप्रेशन लाने चाहिएं, खुद करके बताने लगी।

.... आखिर पूरे तीस मिनट की कड़ी रिहर्सल के बाद वह जैसा मेरा चेहरा फेसबुक के लिए चाहती थी, वैसा मैं बनाने में समर्थ हो गया तो मत पूछो उसने कितने चैन की सांस लेते कहा, 'हां! बस ऐसे ही। अब जरा भी मत हिलना नहीं तो मेरी आधे घंटे की मेहनत पर पानी फिर जाएगा,' और मैं ही जानता हूं कि तब मैं चारपाई पर पड़ा अपनी बीसियों पीड़ाओं की सांसें रोके कैसे पड़ा रहा था। आखिर फेसबुक के लिए सैल्फी सैशन पूरा हुआ। सैल्फी में उसका चेहरा तौबा मुस्कुराता देखा तो मैं पल भर को अपना रोता चेहरा भूल गया। मत पूछो उसने अबके भी कितनी लगन से मुझ मरते की अपने साथ सैल्फी खींची और फेसबुक पर अपलोड करने के बाद हिदायत देती बोली, 'अब पूरा एक घंटे तक जैसे मन करे, बिस्तर पर पड़े रहो। मर जाऊं जो तुम्हें करवट बदलने को भी कहूं! अबके तो तुमने फेसबुक पर फोटो के लिए अपनी तो अपनी, मेरी भी जान निकाल कर रख दी जानू! प्लीज! जब तक अस्पताल में हो, आगे से ऐसा मत करना। मुझे बहुत डर लगता है। तुम्हारी कसम डियर! मैं इस हालत में तो तुम्हें कतई तकलीफ न देती जो मुई ये फेसबुक न होती। मुझे माफ करना बेबी,' कह वह मेरे पास से उठी और और सामने के स्टूल पर बैठ लाइक्स गिनने में निमग्न हो गई।

भगवान करे जब तक मैं ठीक नहीं हो जाता हर घंटा साठ मिनट के बदले तीन सौ मिनट का हो जाए ताकि मैं कुछ देर अस्पताल में ही सही, चैन की सांस तो ले सकूं।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड, नजदीक मेन वाटर टैंक,
सोलन, हिमाचल प्रदेश-173212, मो. 0 94180 70089

पहाड़ी रियासतों ने देश को दिया एकजुटता का संदेश

(पृष्ठ 14 से आगे)

गांधी जी राजकुमारी अमृत कौर के समरहिल स्थित मंसूर विला में भजन गाया करते थे। ये नेता पंद्रह दिन यहां रहे। सभी स्थानीय नेताओं ने इनसे भेंट की। इस दौरान जुलाई में पं. नेहरू स्थानीय नेता ज्ञान चंद टूटू के घर भी गए। टूटू में उन्हें चंदे के रूप में पांच सौ रुपए भेंट किए।

असहयोग आंदोलन के समय हिमाचल

महात्मा गांधी द्वारा 1921 में चलाए गए असहयोग आंदोलन का असर प्रदेश के विभिन्न भागों में भी हुआ। कांगड़ा में पंचम चंद कटोच के नेतृत्व में सर्वमित्र (नादौन), लाला बाशी राम (पालमपुर), कृपाल सिंह (भवारना), सिद्धु राम (टिहरा), महाशय थोलो राम (सुजानपुर) ने गांधी टोपी पहन और झंडे लेकर गांव-गांव प्रसार किया और विदेशी कपड़ों तथा वस्तुओं की होली जलाई गई। सुखलाल तथा हरनाम दास डोगरा (कांगड़ा), संतराम डोगरा (धर्मशाला) ने भी इन कार्यों में हिस्सा लिया। लाला जयलाल नागल (पालमपुर) ने अवेरी में विदेशी वस्त्रों की होली जला कर एक बड़ी जनसभा की। बाबा कांशी राम ने लाहौल जेल में रह कर देश भक्ति की कविताएं लिखीं। मई 1921 में शिमला में मौलवी गुलाम मुहम्मद को कांग्रेस प्रधान चुना गया। महात्मा गांधी के शिमला आगमन हेतु स्वागत समिति बनाई गई।

स्वामी कृष्णानंद ने मंडी में आंदोलन सक्रिय रखा। रानी खैरागढ़ी लखनऊ में कांग्रेस में सम्मिलित हुई। ऊना में बाबा लछमन दास आर्य तथा उनकी पत्नी दुर्गा बाई आए, सिरमौर में शेरजंग तथा पं. राजेंद्र दत्त खादी के वस्त्र धारण कर विदेशी वस्त्रों की होली जलाते रहे।

लाला लाजपत राय को 21 अप्रैल 1922 को लाहौर से धर्मशाला जेल में स्थानांतरित किया गया। इस जेल में कांगड़ा के पंचम चंद, सर्वमित्र, बाशी राम तथा रघुवीर सिंह भी थे। सन् 1922 में ही सिरमौर में चौधरी शेरजंग तथा पं. राजेंद्र दत्त ने कार्य जारी रखा। राजेंद्र दत्त ने 'सियासी प्रोग्राम सेवा समिति' बनाई। दिसंबर 1922 में वे पंजाब कांग्रेस की ओर वार्षिक अधिवेशन में भाग लेने भी गए। जुब्बल के भागमल सौहटा ने भी इस अधिवेशन में भाग लिया।

9 जनवरी 1923 को लाला लाजपत राय को धर्मशाला जेल से लाहौल ले जाया गया। इसी वर्ष 24 मार्च को पंचम चंद कटोच, लाला बाशी राम, सर्वमित्र आदि भी रिहा हो गए। कैथू जेल में कैद प्यारे लाल, रामानंद, अब्दुल सतार, सत्यानंद स्टोक्स छोड़े गए। इस बीच गांधी जी के जेल में होने से कांग्रेस में मतभेद हुए और 'स्वराज दल' की स्थापना हुई जिसमें लाजपत राय भी रिहा होने पर शामिल हुए। 5 जनवरी 1924 को गांधी जी रिहा हुए अतः कांग्रेस के संघर्ष ने पुनः बल पकड़ा।

इसके बाद ठाकुर हजारा सिंह (नादौन), महाशय तीर्थ राम ओयल (ऊना), बाबा कांशी राम (डाडा सीबा) तथा शिमला हिल्ज में नेताओं ने संघर्ष जारी रखा। अक्तूबर-नवंबर 1927 में सुजानपुर के ताल में कांगड़ा कांग्रेस कमेटी ने एक कांफ्रेंस की जिसमें लाहौर से मेला राम तथा मास्टर कुंदन लाल ने भाग लिया। सरोजनी नायडू, सरला देवी, दुर्गा चंद वकील भी इसमें आए। ठाकुर हजारा सिंह, लाला बाशी राम, चतर सिंह, सर्वमित्र, सिटु राम आदि ने इसमें भाग लिया। सरोजनी नायडू ने बाबा कांशी राम को देश प्रेम के गीतों तथा कविताओं के कारण 'बुलबुल-ए-पहाड़' कहा।

असहयोग आंदोलन के बाद सन् 1928 में साईमन कमिशन के भारत आगमन का भी विरोध किया गया और कांगड़ा तथा शिमला में जलसे जलूस निकले। गगरेट के लक्ष्मण दास ने माऊंट गुमरी में एक जलूस का नेतृत्व किया जिसमें उन्हें डंडों से पीट कर बेहोश कर दिया गया और छः मास की कैद व 1000 रुपए जुर्माना हुआ।

28 दिसंबर 1928 को कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में कांगड़ा के बाबा कांशी राम ने भाग लिया। मार्च 1929 को रोहतक पंजाब कांग्रेस कमेटी वार्षिक कांफ्रेंस में पालमपुर के लाला बाशी राम तथा नाहन के चौधरी शेरजंग ने भाग लिया। इसी समय नाहन के शिवानंद रमौल भी सहायक दरोगा की नौकरी छोड़ स्वाधीनता आंदोलन में कूदे।

सन् 1929 में ही क्रांतिकारी यशपाल रोहतक में साथियों सहित बम बना रहे थे। 8 अप्रैल 1929 को भगत सिंह तथा राजगुरू, सुखदेव, बटुकेश्वर दत्त ने असेंबली हॉल में बम धमाका किया और पकड़े गए। यशपाल भी फरार होकर कांगड़ा किले में आ छिपे। 7 सितंबर 1929 को भगत सिंह के साथी जितेंद्र नाथ दास भूख हड़ताल से शहीद हो गए। यशपाल छिपते-छुपाते पुनः लाहौर पहुंचे। इनके साथ हमीरपुर के मंगतराम भी थे। यशपाल, मंगत राम तथा अन्य साथियों ने लार्ड इरविन की गाड़ी को उड़ाने की योजना बनाई। मंगत राम ने अपना नाम बदल कर इंद्रपाल रख लिया था। वह साधु वेश में दिल्ली के बदरपुर चौकी के पास

बैठा रहता। रात को साधु की कुटिया के पास बम तथा अन्य सामग्री छिपाई जाती। यह योजना 27 अक्तूबर 1929 को स्थगित करनी पड़ी क्योंकि नवंबर में वायसराय ने विशेष घोषणा करनी थी। घोषणा में कुछ विशेष नहीं हुआ अतः पुनः योजना बनाई गई। 23 दिसंबर 1929 को मथुरा-दिल्ली ट्रेन में पुराने किले के पास यशपाल, इंद्रपाल, भगवती चरण और लेखराम ने बम धमाका किया। इस ट्रेन में वायसराय लार्ड इरविन था किन्तु वह बच गया। केवल एक व्यक्ति जख्मी हुआ। इसके बाद ये चारों फरार हो गए।

27 दिसंबर 1929 को लाहौर के वार्षिक कांग्रेस अधिवेशन में सिरमौर के राजेंद्र दत्त, मंडी के स्वामी कृष्णानंद, ठियोग के जयलाल नागम, पालमपुर के लाल बाशी राम और रामचंद तथा ऊना व कुल्लू के प्रतिनिधि भी भाग लेने पहुंचे।

सविनय अवज्ञा आंदोलन

महात्मा गांधी ने जब 27 फरवरी 1930 को सविनय अवज्ञा आंदोलन आरंभ किया तो इस ओर भी इस आंदोलन का असर हुआ। 6 अप्रैल 1930 को बटलर स्कूल, सनातन धर्म तथा सरकारी स्कूल के विद्यार्थियों ने हड़ताल की। जाखू मेले के अवसर पर जलसा किया गया। 24 अप्रैल 1930 को गंज मैदान में जलसा हुआ। आंदोलनकारियों के प्रशिक्षण के लिए तीन आश्रम खोले गए।

इन्हीं दिनों सिरमौर के क्रांतिकारी चौधरी शेरजंग को अहमदाबाद डकैती केस में दस वर्ष की कैद दे कर मुल्तान भेजा गया। शिमला में पिकेटिंग हुई। आंदोलन तथा अन्य गतिविधियों के कारण नेताओं को सजाएं हुईं। शिमला में लाला गेंडामल, डॉ. नंदलाल वर्मा, लक्ष्मी देवी, रूपलाल मेहता, सुंदरदास, श्याम लाल, द्वारिका प्रसाद, दीनानाथ आंधी आदि पकड़े गए। कनौरा राम (ठियोग) कूड़ा राम (ज्वालामुखी), गोबिंद राम (रोहड़ू), गोपी चंद पालसरा (बुशहर), जयंती प्रसाद (कसौली), दीनानाथ डोगरा (रामपुर) आदि लोग भी शिमला में गिरफ्तार किए गए। कांगड़ा में बाबा कांशी राम की गायक मंडली ने गीतों से आंदोलन आरंभ किया। धर्मशाला में मित्रसेन, सेनावीर, मास्टर चिटकू की मंडली ने गीतों से प्रचार किया। लाला बाशी राम, ठाकुर हजारा सिंह, कृष्ण चंद्र पुरी, सिधु, लाला निगाहिया मल आदि ने सत्याग्रही चारों ओर भेजे। इस ओर जलसे जलूसों का जोर हो गया। नादौन, धमेटा, पालमपुर, देहरा गोपीपुर, परागपुर, कांगड़ा, कुल्लू, ऊना में खादी केंद्र स्थापित हुए। सुजानपुर में चौधरी सिधु राम, रामसरन, सर्वमित्र आदि तथा हमीरपुर में पं. मिल्खी राम, बिशन दास, भगत राम, गोपाल दास, मुंशी राम आदि भी इस आंदोलन में कूदे। लाला बाशी राम (पालमपुर), कृष्ण चंद्र पुरी (धर्मशाला), जीवन लाल (हरिपुर), प्रताप सिंह गुलेरिया (नगरोटा बगवां), तारा चंद (पालमपुर), मिल्खी राम (देहरा गोपीपुर) ने आंदोलन को सक्रिय किया। सात सौ सत्याग्रही पकड़े गए।

इंद्रपाल तथा साथियों ने इसी दौरान लाहौर में भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त को छुड़ाने के प्रयास किए। चंद्रशेखर आजाद के मार्गदर्शन में ये शस्त्रास्त्र इकट्ठे करते रहे। 28 मई 1930 को बम बनाते हुए भगवतीचरण के हाथ में बम फट गया। अतः इंद्रपाल और साथियों को भागना पड़ा। जून 1930 में इंद्रपाल ने 'आतिशी चक्र योजना' बनाई जिसके तहत लायलपुर, शेखपुरा, गुजरोंवाला, रावलपिंडी, लाहौर आदि में बम चलाए गए।

कुल्लू तथा ऊना में भी गतिविधियां जारी रहीं। बाबा लछमन दास और उनके पुत्र सत्यप्रकाश बागी को गिरफ्तार किया गया। ढालपुर मैदान कुल्लू में 25 अप्रैल 1930 को एक जलूस निकाला गया। जलसे में लाला शिवदयाल, महाशय आत्मा राम, पं. गोबिंद राम ने भाषण दिए।

शिमला की देशी रियासतों में इस आंदोलन का असर नहीं के बराबर हुआ। मंडी तथा नाहन शहरों में आंदोलन हुए।

भारत सरकार अधिनियम 1935, 2 अगस्त 1935 को पारित हुआ जिसे अस्वीकृत किया अतः यह लागू नहीं हो पाया।

प्रथम अक्तूबर 1935 को तीर्थराम ओयल ने अपने गांव में 'गांधी सेवा आश्रम ओयल' की नींव रखी। इसी समय यशपाल, इंद्रपाल, चौधरी शेरजंग, नरेंद्र पाल (मंडी), फकीरचंद थापा (कुल्लू), आदि नेता जेल में थे। सन् 1936 के लगभग चंबा में 'चंबा सेवक संघ' संस्था बनी। बाबा लछमन दास (ऊना) हरिजन कल्याण कार्यों में लगे जबकि उनके पुत्र कांग्रेस के स्थानीय सचिव बने। मंडी में प्रजामंडल का गठन हुआ। स्वामी संपूर्णानंद इसके अध्यक्ष बने। कुल्लू के नाथू राम शेरेदिल, मंडी के खेमचंद, शिमला के कस्तूरी लाल, दीनानाथ आंधी, सुकेत के पद्मनाथ जेल गए।

सन् 1937 में प्रांतीय विधानमंडलों के चुनाव हुए। कांगड़ा में पंजाब प्रांत के तीन विधानसभा क्षेत्र बने। हमीरपुर से ठाकुर हजारा सिंह, पालमपुर-कांगड़ा से पंचम चंद कटोच कांग्रेस प्रत्याशी बने। देहरा से पं. भगत राम आजाद प्रत्याशी बने। मतदान के लिए पांच रुपए या इससे अधिक लगान देने वाला ही मतदाता था। इस चुनाव में कांग्रेस प्रत्याशी ठाकुर हजारा सिंह और पंचम चंद हार गए। आजाद प्रत्याशी पं. भगत राम देहरा से जीत गए। पं. भगत राम ने मार्च 1937 में गढ़दीवाला (होशियारपुर) में हुई कांग्रेस कांफ्रेंस में कांग्रेस में शामिल होने की घोशणा की। इसी कांफ्रेंस में पं. जवाहर लाल नेहरू ने बाबा कांशी राम को 'पहाड़ी गांधी' कह कर पुकारा।

इन्हीं दिनों पंजाब कांग्रेस के प्रधान डॉ. सैफूद्दीन किचलू ने कांगड़ा आकर कार्यकर्त्ताओं को प्रेरित किया। पंजाब से चंबा राम, सावित्रि देवी, बेगम फातिमा, सैय्यद दिलावर भी यहां आएं और प्रचार किया। सिरमौर में जगत सिंह नेगी, सोलन में गंगा राम, कुल्लू में सुखनंद ने भी स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया।

इस अवधि में कांगड़ा, ऊना, कुल्लू, लाहौल स्पीति, शिमला

में संगठन मजबूत हुए।

भारत छोड़ो आंदोलन से सन् 47 तक

महात्मा गांधी ने 14 जुलाई 1942 को वर्धा की कांग्रेस कार्यकारिणी में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पारित किया और मुंबई की बैठक में 7-8 अगस्त 1942 को इसे गांधी जी के नेतश्त्व में चलाने का निर्णय लिया। इसके फलस्वरूप 9 अगस्त को यह आंदोलन आरंभ हुआ।

हिमाचल प्रदेश में भी सभी स्थानों पर जनसभाएं की गईं। शिमला में भागमल सौहटा, पं. हरिराम, चौधरी दीवान चंद, सालिगराम शर्मा, नंदलाल वर्मा, संतराम आदि को गिरफ्तार कर पंजाब की जेलों में भेजा गया।

गांधी जी के जेल में बंदी होने के कारण मुंबई से प्रकाशित 'हरिजन' का संपादन राजकुमारी अमृत कौर निवास स्थान समरहिल से किया। वे समरहिल में मंसूर विला में रहती थीं।

सशक्त क्रांति के उद्देश्य से पं. पद्‌मदेव, गौरी शंकर, मंशा राम चौहान, शिवदत्त, हीरा सिंह पाल, तुलसी आदि ने गोला बारूद एकत्रित किया। पं. पद्‌मदेव को कैथू जेल में बंद किया गया। दूसरे लोगों ने रेल की पटड़ियां उखाड़ने, टेलीफोन की तारें काटने आदि के काम किए।

भारत छोड़ो आंदोलन में ऊना में लछमन दास आर्य के बेटों सत्यमित्र और सत्यभूषण, महाशय तीर्थराम ने भाग लिया। महाशय तीर्थ राम, हंस राज, लछमण दास चौधरी को कारावास की सजाएं हुई। उधर कर्म चंद (कुल्लू), नाथू राम, अमर चंद (कुल्लू), जयलाल नागल (पालमपुर), लाला बाशी राम (पालमपुर), सरला शर्मा (हमीरपुर), स्वामी कृष्णा नंद (मंडी), सौदागर मल, गुलाम रसूल (चंबा), बख्शी राम, बंशी धर, काली दास, लाला निगाहिया मल (हमीरपुर), कांशी राम (कांगड़ा), चौधरी तुलसी राम (देहरा), रोशन लाल सूद (धर्मशाला), कन्हैया लाल बुटेल, तारा चंद, सालिगराम, हरी चंद (पालमपुर) को गिरफ्तार कर पंजाब की जेलों में डाला गया। कांगड़ा में कांग्रेस कमेटी ने कई सम्मेलन किए। गिरफ्तारी के बावजूद आंदोलन जारी रहे। जनवरी 1943 में हमीरपुर कांग्रेस कार्यालय पर छापा मार कार्यकर्त्ता गिरफ्तार किए। 13 जनवरी 1943 को भरेड़ी में कांगड़ा जिला कांग्रेस कमेटी की बैठक हुई। बैठक से वापसी पर सरला शर्मा को बैजनाथ में भड़कीला भाषण देने के आरोप में पकड़ लिया और धर्मशाला के बाद लाहौर जेल भेजा गया। बिलासपुर में प्रजामंडल के नेताओं संतराम संत, दौलत राम सांख्यान, नरोत्तम दत्त शास्त्री, संतराम कांगा, भगत राम, सदा राम, प्रेम लाल आदि ने जनता में जागृति पैदा की।

13 अक्तूबर 1943 को पहाड़ी गांधी बाबा कांशी राम का देहांत हो गया। बाबा जी की भतीजी उषा शारदा और दामाद शिव कुमार शारदा ने संघर्ष में भाग लिया।

मई 1944 में गांधी जी रिहा हुए किन्तु उन्होंने कोई आगामी आदेश नहीं दिया। अतः भारत छोड़ो आंदोलन धीमा पड़ गया। हिमाचल प्रदेश के बंदी नेता भी रिहा किए गए।

इस काल में प्रजामंडल आंदोलनों का प्रदेश में जोर रहा। सिरमौर, मंडी, सुकेत में प्रजामंडलों के कार्य जारी रहे। बिलासपुर में राजा आनंद चंद ने दमनकारी नीति से नेताओं को परेशान किया।

दिसंबर 1945 में कांगड़ा में विधानसभा चुनाव हुए। कांगड़ा के नेताओं ने लाला हेमराज के घर बैठक कर हमीरपुर से दलीप सिंह, देहरा-नूरपुर से पं. भगत राम, धर्मशाला से पंचम चंद कटोच तथा कुल्लू से ठाकुर बेली राम को प्रत्याशी बनाया। इस चुनाव में कांग्रेस के चारों प्रत्याशी विजयी हुए। मंडी के स्वामी कृष्णा नंद कराची में चुनाव जीते। 1946 में मंडी तथा सिरमौर में विधान परिषदों की स्थापना हुई। मंडी में गौरी प्रसाद, कृष्णा चंद आदि परिषद के सदस्य बने। सिरमौर के नेताओं ने परिषद में आने से इंकार किया।

सन् 1947 के आरंभ में जहां शिमला हिल स्टेट्स में प्रजा मंडल, हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल की गतिविधियां

सन् 1947 के आरंभ में जहां शिमला हिल स्टेट्स में प्रजा मंडल, हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल की गतिविधियां जारी रहीं वहां शिमला, कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल स्पीति, ऊना, डलहौजी में भारत छोड़ो आंदोलन की सरगर्मियां तेज हुई। जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ने की घोषणा की तो इस ओर लोग आजादी का सपना देखने लगे। 15 अगस्त 1947 को जब भारत आजाद हुआ तो स्वतंत्रता दिवस कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल स्पीति, ऊना, हमीरपुर, डलहौजी और शिमला में धूमधाम से मनाया गया। कांगड़ा में लाला हेमराज वकील, पं. भगत राम, जयलाल नागल, लाला बाशी राम, चौधरी तुलसी राम, कृष्णा चंद पुरी, चौधरी हरी राम, अमरनाथ शर्मा, बख्शी प्रताप सिंह ने स्थान-स्थान पर स्वाधीनता दिवस मनाया। पाकिस्तान से आए शरणार्थियों को भी यहां बसाने का कार्य किया गया। उन्हें सहायता दी गई।

जारी रहीं वहां शिमला, कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल स्पीति, ऊना, डलहौजी में भारत छोड़ो आंदोलन की सरगर्मियां तेज हुई। जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ने की घोषणा की तो इस ओर लोग आजादी का सपना देखने लगे।

15 अगस्त 1947 को जब भारत आजाद हुआ तो स्वतंत्रता दिवस कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल स्पीति, ऊना, हमीरपुर, डलहौजी और शिमला में धूमधाम से मनाया गया। कांगड़ा में लाला हेमराज वकील, पं. भगत राम, जयलाल नागल, लाला बाशी राम, चौधरी तुलसी राम, कृष्णाा चंद पुरी, चौधरी हरी राम, अमरनाथ शर्मा, बख्शी प्रताप सिंह ने स्थान-स्थान पर स्वाधीनता दिवस मनाया। पाकिस्तान से आए शरणार्थियों को भी यहां बसाने का कार्य किया गया। उन्हें सहायता दी गई।

पालमपुर में लाला जयलाल नागल ने भारी जनसभा की। प्रताप सिंह गुलेरिया ने नगरोटा सूरियां में झंडा लहराया। परागपुर में अमरचंद सूद ने जलूस निकाला। ऊना में बाबा लछमन दास ने दीपमाला की। ढालपुर मैदान कुल्लू में स्वाधीनता दिवस मनाया गया। 15 अगस्त को भारत के स्वतंत्र होने पर कांगड़ा, ऊना, हमीरपुर, कुल्लू, लाहौल स्पीति, डलहौजी तथा शिमला शहर स्वतंत्र हुए और पंजाब प्रांत में सम्मिलित किए गए। शिमला शहर में भी जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान चौधरी दीवान चंद, महामंत्री सालिगराम शर्मा, हरी राम शर्मा, श्याम लाल खन्ना, डॉ. नंद लाल वर्मा, लाला गेंडा मल, दीनानाथ आंधी, सालिगराम गुप्ता, विशेशसर दयाल, मेला राम सूद, आत्मा राम आदि ने तिरंगा लहराया, मिठाइयां बांटी। इस दिन भारत के अंतिम वायसराय लार्ड माउंटबैटन तथा उनकी पत्नी व पुत्री भी माल रोड पर घूम रहे थे। शिमला शहर में तो खुशियां मनाई गईं किन्तु हिमाचल की पहाड़ी रियासतें अभी स्वतंत्र नहीं हुई।

विभिन्न प्रजामंडलों की स्थापना तथा गतिविधियां

सिरमौर रियासत में वर्ष 1942-43 में प्रजामंडल आंदोलन में पं. राजेंद्र दत्त, देवेंद्र सिंह, धर्मनारायण, शिवानंद रमौल, नगेंद्र सिंह, इंद्र नारायण, हरिचंद, हितेंद्र सिंह आदि ने भाग लिया। पं. शिवानंद रमौल ने प्रजामंडल कार्यालय अंबाला में खोला। सितंबर 1947 में बोगधार मेले में एक जलसा किया गया किन्तु रियासती सरकार द्वारा धारा 144 लगाने के कारण शिमला से डॉ. परमार आदि नेता नहीं पहुंच सके। अतः पं. शिवानंद रमौल, डॉ. देवेंद्र सिंह, लाला रामनाथ, ठाकुर बूटी नाथ, लाला रामनाथ, हृदय राम पांथ को गिरफ्तार किया गया। इसके बाद पं. राजेंद्र दत्त, जगमोहन रमौल, सुमेर चंद अग्रवाल को भी गिरफ्तार किया गया।

धामी प्रजामंडल का कार्य पं. सीताराम ने चलाए रखा। कोटी में ठाकुर गौरी दत्त, डॉ. निरम सिंह, दुर्गा सिंह राठौर प्रजामंडल के कार्यकर्ता थे। थरोच में कंवर मूरत सिंह ने प्रजामंडल की नींव रखी।

चंबा में दौलत राम गुप्ता, विद्यासागर, विद्याधर, गुलाम रसूल, ध्यान सिंह पुरी, जसवंत राय, जयदेव बडोगा, बलवंत सिंह, चतुर सिंह, मुंशी गुलाब नवी, पृथी सिंह, सागर चंद नैय्यर आदि प्रजामंडल का कार्य देखते रहे और 1946 के लगभग सौदागर मल, गुलाम रसूल, लाल चंद गिरफ्तार किए गए। ये लोग रियासत में जलसे जलसू निकालते रहे।

बिलासपुर में मार्च 1946 को दौलत राम सांख्यायन, धर्मवीर सिंह, संत राम संत को गिरफ्तार किया गया। कुछ आंदोलनकारियों ने 'प्रजामंडल बिलासपुर' की स्थापना शिमला में की जिसमें सदा राम चंदेल को प्रधान, नरोत्तम दत्त शास्त्री को उपप्रधान, श्याम नंद को महामंत्री, देवी राम उपाध्याय को कोषाध्यक्ष, रणवीर सिंह चंदेल को मंत्री बनाया गया। इसकी शाखाएं लाहौर, अमृतसर, दिल्ली तथा गुरदासपुर भी खोली। संतराम संत, नरोत्तम दत्त शास्त्री, दौलत राम सांख्यायन आदि जलावतन किए गए अतः वे शिमला, सलोगड़ा आदि में कार्यरत रहे।

जून 1946 में मेहर सिंह की अध्यक्षता में बलसन में प्रजामंडल स्थापित हुआ। यहां एक जलसा किया गया जिसमें पंजाब के तत्कालीन विधायक ठाकुर रत्न सिंह, पं. पद्म देव तथा चौधरी दीवान चंद ने भाग लिया।

इसी प्रकार महलोग, कुठाड़ आदि में भी 1946 के लगभग ही प्रजामंडल स्थापित हुए।

पझौता किसान आंदोलन

सिरमौर के गिरिपार के कुछ जागरूक किसानों ने 5 अक्तूबर 1942 को जदोल टपरोली में एक सभा करके किसान सभा की नींव रखी जो बाद में 'पझौता किसान सभा' के नाम से प्रसिद्ध हुई। सभापति कोटला बागीगांव के लक्ष्मी सिंह को चुना गया। गुलाब सिंह (टपरोली), चूंचूं मियां (जदोल), मेहर सिंह (वेण कुफ्फर), अत्तर सिंह (टपरोली), वैद्य सूरत सिंह (कटोगड़ा), मदन सिंह (धामला), जालम सिंह (बघोट), मही राम (लेऊ), कली राम (नेरी) इस सभा की कार्यकारिणी के सदस्य बने। वैद्य सूरत सिंह को सचिव बनाया गया। सभा के सभी सदस्यों ने 'लूण लोटा' कर अर्थात् लोटे में पानी नमक मिला कर शपथ ली। सभा के कार्यक्रम और उद्देश्य निश्चित कर रियासती सरकार के सामने मांगे रखी गईं।

रियासती सरकार द्वारा इन लोगों को 'रिंग लीडरर्ज' कहा गया और 29 बैशाख 1943 ई. को मेजर एच.एस. बाम के नेतृत्व में पुलिस तथा सेना राजगढ़ पहुंची। जब ये नेता पकड़े नहीं जा सके तो इन्हें इश्तिहारी मुजरिम घोषित कर पांच सौ रुपए ईनाम रखा गया। अंततः मेजर बाम ने पझौता क्षेत्र को घेर कर मार्शल लॉ लगाया और 13 मई 1943 को इन्हें आत्मसमर्पण के लिए चौबीस घंटे दिए गए। अगले दिन गांव-गांव में छापे मारने शुरू

हुए। धन संपत्ति लूटी गई। अन्न भंडार जलाए गए। वैद्य सूरत सिंह का घर डायनामाईट से उड़ा दिया। 11 जून को कोटी मावगा में कली राम का घर जला दिया गया। लोगों ने मुकाबला किया किन्तु मेजर बाम ने निहत्थी भीड़ पर छब्बीस रौंद फायर किए। इस गोलाबारी में कटोगड़ा के कामना राम की मौके पर ही मृत्यु हो गई। कुफ्फर के तुलसी राम, डरेणा के जाती राम, पालू के हेत राम, ठाणाधार के चेत राम, नेरी के कमाल चंद, थाणा के चेत सिंह घायल हो गए। यहां से भीड़ के तितर-बितर करने के बाद धामकला गांव लूटमार कर रिंग लीडरर्ज को पकड़ लिया।

इस लूटमार तथा गोलाबारी के बीच 69 आंदोलनकारी पकड़े गए। इन्हें पकड़ कर नाहन लाया गया। इनकी जमीन जायदाद जब्त कर राज्य सुरक्षा कानून के अंतर्गत मुकदमे चलाए गए। ग्यारह महीने मुकदमा चलने के बाद जुलाई 1944 में स्पेशल ट्रिब्यूनल ने अपना फैसला सुनाया।

इस फैसले में 52 आंदोलनकारियों को आजीवन कारावास, दो को दो वर्ष की कड़ी सजा दी गई, 14 व्यक्ति बरी हुए। पझौता किसान सभा के प्रधान मदन सिंह, सचिव वैद्य सूरत सिंह, संचालक चूं चूं मियां तथा कार्यकारिणी के 39 सदस्य आजीवन कारावास या कालेपानी की सजा में शामिल थे। लाहौर से आमंत्रित मुकुंद लाल पुरी न्यायाधीश द्वारा आजीवन कारावास को घटा कर दस वर्ष, सात वर्ष तथा पांच वर्ष किया गया। अठारह व्यक्तियों को एक वर्ष की कैद के बाद छोड़ दिया गया। इस समय तक कली राम, विशना तथा सही राम जेल में ही शहीद हो गए थे।

पंद्रह अगस्त 1947 के बाद

15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ। कांगड़ा, हमीरपुर, ऊना, कुल्लू, लाहौल स्पीति, डलहौजी तथा शिमला (शहर) स्वतंत्र हुए। ये क्षेत्र उस समय पंजाब में थे। किन्तु हिमाचल या जिसे पुराना हिमाचल कहते थे, स्वतंत्र नहीं हुआ। सभी शिमला हिल स्टेट्स, मंडी, चंबा, सिरमौर, बिलासपुर, सुकेत अभी भी रियासती शासन के अधीन रहे। यहां की जनता को अभी और संघर्ष करना था। यहां के शासक ब्रिटिश राज से मुक्त हो गए, जनता अभी गुलाम थी।

हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल

'अखिल भारतीय देशी लोक राज्य परिषद्' का अधिवेशन दिसंबर 1945 में उदयपुर में हुआ। मंडी से स्वामी पूर्णानंद व कृष्णचंद, सुकेत से नरसिंह दत्त और संत राम गुप्ता, बिलासपुर से नरोत्तम दत्त शास्त्री, दौलत राम सांख्यान, देवी राम उपाध्याय, सिरमौर से शिवानंद रमौल, बुशहर से पं. पद्मदेव, जुब्बल से भागमल सौहटा, चंबा से दौलत राम गुप्ता, टिहरी से श्यामानंद नेगी और पटियाला से वृषभान ने इस अधिवेशन में भाग लिया। इस अधिवेशन में अध्यक्ष पं. नेहरू तथा उपाध्यक्ष शेख अब्दुला ने 'हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल' की स्थापना की स्वीकृति दी गई। इस कौंसिल का अध्यक्ष स्वामी पूर्णानंद को और महामंत्री पं. पद्मदेव को बनाया गया।

हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल का अधिवेशन 8 से 10 मार्च 1946 को मंडी में हुआ। इस अधिवेशन में अठतालीस प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन की अध्यक्षता आजाद हिंद फौज के सेनानी कर्नल जी.एस. ढिल्लों ने की। प्रधान स्वामी पूर्णानंद, महामंत्री पं. पद्म देव, सहसचिव शिवानंद रमौल के पहाड़ी रियासतों के प्रतिनिधि इस अधिवेशन में आए। मंडी प्रजामंडल के प्रधान गौरी प्रसाद, कश्मीर सिंह तथा लीलावती (टंडन) ने सफल आयोजन किया।

अधिवेशन में सरयूदेव सुमन की मृत्यु पर शोक प्रकट करने साथ बेगार प्रथा बंद करने, अधिक कर हटाने की मांगे रखी गईं। पझौता आंदोलनकारियों को रिहा करने, हिंदी को राजभाषा घोषित करने, वैधानिक समितियां बनाने, नशाबंदी कानून बनाने आदि के प्रस्ताव पास किए।

13 जून 1946 को हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल के नेताओं ने बिलासपुर रियासत के खिलाफ सत्याग्रह कर के अर्की मेले पर एक बड़ा जलूस बिलासपुर की ओर रुख्सत किया जिसमें स्वामी पूर्णानंद, पद्मदेव, नरसिंह दत्त, संतराम गुप्ता आदि थे। रास्ते में दौलत राम सांख्यान, संत राम संत, धर्मवीर सिंह, नरोत्तम दत्त शास्त्री, ठाकुर दत्त शास्त्री भी मिल गए। सिपाहियों ने इस जलसू को राज्य की सीमा पर रोक लिया और रियासत में घुसने नहीं दिया। अतः सत्याग्रह सफल नहीं हुआ।

हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल का सम्मेलन अगस्त 1946 को नाहन में किया गया जिसमें डॉ. पट्टाभि सीतारम्भैया, जयनारायण व्यास, कर्नल शाहनवाज, दुनीचंद अम्बालवी, शन्नो देवी, अभिंत राम, जनरल अजीज अहमद, पार्वती सूद आदि चालीस से अधिक प्रतिनिधि आए। सिरमौर के शिवानंद रमौल, राजेंद्र दत्त, डॉ. देवेंद्र सिंह, हितेंद्र सिंह, धर्मनारायण, हरीचंद पाधा ने भाग लिया।

इस बीच 1939-40 में प्रजामंडल के पक्ष में निर्णय देने के लिए निर्वासित (सिरमौर से) डॉ. यशवंत सिंह परमार जो मीरपुर-लाहौर में रह रहे थे, शिमला बुलाए गए। भज्जी के लीला दास वर्मा तथा बिलासपुर के कांशी राम आदि नेता लाहौर गए और डॉ. परमार को शिमला लाए क्योंकि यहां एक शिक्षित नेता की आवश्यकता थी। डॉ. परमार सिरमौर में सेशन जज थे। बिलासपुर के दयाराम उपाध्याय ने डॉ. परमार के आवास का प्रबंध कृष्णा विला लॉज संजौली में किया। डॉ. परमार ने शिमला में वकालत आरंभ की और आंदोलन में भी शामिल हुए। ये फरवरी 1947 के लगभग शिमला आए। 16 अप्रैल 1947 को दौलत राम सांख्यान, नरोत्तम दत्त शास्त्री, लीला दास वर्मा, शिवानंद रमौल के साथ कांग्रेस अधिवेशन ग्वालियर गए।

जून 1947 में हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल में मतभेद होने के कारण पंजाब की पहाड़ी रियासतों तथा शिमला हिल स्टेट्स के संगठन अलग-अलग हुए। अब संगठन का नाम 'हिमालयन हिल स्टेट्स सब रीजनल कौंसिल' रखा गया। इस नए संगठन का प्रधान डॉ. परमार को चुना गया। तेज सिंह निधड़क (मंडी), लीला दास वर्मा (भज्जी), सदाराम चंदेल (बिलासपुर), उपप्रधान बने। पं. पद्मदेव महामंत्री, दौलत राम गुप्ता प्रचार मंत्री, सूरत राम प्रकाश कोशाध्यक्ष और सेनू राम कार्यालय मंत्री बने। पं. शिवानंद रमौल, साधु राम, नरसिंह दत्त, हीरा सिंह पाल, गौरी नंद, देवी राम, चमन लाल, चिरंजी लाल कार्यकारिणी के सदस्य बनाए गए।

21 दिसंबर 1947 को 'हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल' की कांफ्रेंस शांगरी की राजधानी बड़ागांव में हुई। इसकी अध्यक्षता सत्यदेव बुशहरी ने की। भागमल सौहटा, हीरा सिंह पाल, भास्करानंद, स्वामी पूर्णानंद, बाबू शिवदत्त, पं. सीताराम, हरिदास, सूरतराम प्रकाश, देवी राम केवला, सदाराम, संतराम आदि ने भी इसमें भाग लिया। अधिवेशन में प्रस्ताव पास कर सभी रियासतों को मिला कर 'पहाड़ी प्रांत' बनाए जाने की मांग की गई। इस कौंसिल के प्रधान सत्यदेव बुशहरी थे।

'हिमालयन हिल स्टेट्स सब रीजनल कौंसिल' के माध्यम से डॉ. यशवंत सिंह परमार ने प्रधान के नाते पहाड़ी रियासतों को भारत संघ में मिलाने के प्रयास किए।

इस प्रकार 'हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल तथा सब रीजनल' दोनों कौंसिल द्वारा अपने-अपने ढंग से प्रयास किए जाते रहे।

इसके साथ रियासती प्रजामंडल आंदोलन भी चला। इन सभी संस्थाओं में एक प्रयोजन होने के कारण नेता एक ही थे। केवल सौहटा तथा बुशहरी और पद्म देव तथा परमार धड़े अलग होते गए। इन मतभेदों के चलते सत्यदेव बुशहरी ने जून 1949 में कांग्रेस से त्याग पत्र दे दिया। सन् 1949 में ही सत्यदेव बुशहरी की इलेक्षन पेटीशन पर विधान परिशद के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने उस निर्वाचन मंडल को गैर कानूनी घोषित किया जिसने डॉ. यशवंत सिंह परमार को हिमाचल प्रदेश की ओर से विधान परिषद के लिए निर्वाचित किया था। यह अपील डेढ़ वर्ष पहले की गई थी।

सुकेत सत्याग्रह

डॉ. पट्टाभि सीतारामैय्या से भेंट के बाद पदम-परमार धड़े ने सुकेत सत्याग्रह की योजना बनाई और 12 फरवरी 1948 को डॉ. परमार ने तत्तापानी की एक सराय में बैठक की। हिमालयल हिल स्टेट्स सब रीजनल कौंसिल की ओर से राजा लक्ष्मण सेन को अपनी रियासत संघ में विलय करने हेतु एक नोटिस भेजा गया। बैठक में मंडी, सुकेत, सिरमौर, बिलासपुर, भज्जी तथा कोटी रियासतों के कार्यकर्त्ता शामिल हुए। राजा लक्ष्मण सेन का उत्तर न आने पर 16 फरवरी को सत्याग्रह आरंभ हो गया। डॉ. परमार ने शिमला में रहकर इस सत्याग्रह का संचालन किया।

16 फरवरी को तत्तापानी, करसोग, फिरनू, बहना, चाबा, जयदेवी तथा पांगणा में सत्याग्रही एकत्ति हुए और 17 फरवरी को तत्तापाणी पुलिस चौकी पर कब्जा कर लिया। पं. पदमदेव ने फिरनू चौकी पर अधिकारी किया। 18 फरवरी को तत्तापानी तथा फिरनू से सत्याग्रही करसोग पहुंचे जहां पहले से सत्याग्रहियों का जत्था मौजूद था। करसोग में तहसीलदार को बंदी बनाया गया और तिरंगा लहराया गया। 19 फरवरी को सभी लोग पांगणा आ पहुंचे। यहां चार हजार के लगभग सत्याग्रही हो गए थे। 22 फरवरी को ये सभी सुंदरनगर की ओर चले। जयदेवी में इनके साथ सुकेत प्रजामंडल के प्रधान वीर रत्न सिंह तथा अन्य हजार सहयोगी मिले। मंडी से स्वामी पूर्णानंद, तेज सिंह, गौरी प्रसाद आदि भी आ गए और इनकी संख्या पांच हजार से ऊपर हो गई। इस बीच डॉ. परमार का सत्याग्रह रोकने का संदेश भी आया जो गृह मंत्रलय के निर्देश थे किन्तु सत्याग्रही चलते रहे। 25 फरवरी को लगभग दस हजार सत्याग्रही सुंदरनगर पहुंचे और राजधानी पर अधिकार कर लिया। दूसरे दिन डिप्टी कमिश्नर कांगड़ा कन्हैया लाल, जालंधर के चीफ कमिश्नर लेफ्टिनेंट जनरल नगेश दत्त फौज के साथ सुंदरनगर आ पहुंचे और भारतीय फौज ने रियासत पर अधिकार कर लिया। इसके बाद सत्याग्रहियों ने पुराना बाजार में एक जनसभा की।

सुंदरनगर को भारत सरकार की फौज द्वारा संभाले जाने के बाद हिमालय हिल स्टेट्स रीजनल कौंसिल की ओर से अंतरिम सरकार बनाई गई जिसका अध्यक्ष सिरमौर के शिवानंद रमौल को बनाया गया। सलाहकार समिति में सुकेत प्रजामंडल के प्रधान रत्न सिंह, राधाकृष्ण, मुकुंद लाल तथा कांशी राम लिए गए। यह अंतरिम सरकार 26 फरवरी से 15 अप्रैल 1948 तक चली रही।

इस सत्याग्रह में पं. पदमदेव (शिमला), पं. शिवानंद रमौल, रसिक मोहन, देवी राम, मोहन सिंह, गंगा राम, भाग चंद आदि (सिरमौर), सदाराम चंदेल, नरोत्तम दत्त शास्त्री, संत राम संत, दौलत राम सांख्यान, दुर्गा दत्त (बिलासपुर), लीला दास वर्मा (भज्जी), दुर्गा सिंह राठौर (कोटी), स्वामी पूर्णानंद, तेज सिंह, गौरी प्रसाद, कृष्ण चंद, साधु राम (मंडी), रत्न सिंह, नर सिंह दत्त, सोमकृष्ण, राधा कृष्ण, जयलाल आदि (सुंदरनगर) तथा अन्य कई नेताओं ने सक्रिय भाग लिया।

सुंदरनगर के इस सत्याग्रह को 'द ट्रिब्यून' में 'सेवन डेज दैट शुक द वर्ल्ड' शीर्षक से प्रकाशित किया और संपादकीय छापा गया।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास, लोअर पंथा घाटी,
शिमला-171 009, मो. 0 94180 85595

आखिरी पन्ना

आ अब लौट चलें

आज जीवन पहिए पर घूमता है। इसने दूरियों को पाटा है। जहां घंटों लगते थे, अब मिनटों में पहुंचा जा सकता है। सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था इसका एक अहम जरिया बना है। इसमें आने-जाने के फायदे इतने हैं कि इनका उल्लेख चंद शब्दों में नहीं किया जा सकता। सफर में रोज के साथी, साथियों-अनजानों के साथ विभिन्न सामाजिक-आर्थिक, राजनैतिक मुद्दों पर गुफ्तगू सहित सामाजिक जान पहचान में बढ़ोतरी किसी से छुपी नहीं है। यूं कहें यह सफर मध्यवर्गीय परिवारों के जीवन का एक हिस्सा बन गया है। इस यात्रा का लुत्फ कुछ और ही है। हां, अब कुछ अपनी शान या यूं कहें सुविधा के लिए बस छोड़ अपनी कार में भी सवार हो गए हैं। इन सबके बावजूद बस में चढ़ने-उतरने वालों में कमी नजर नहीं आई है। बसों में भीड़ यथावत नजर आती है।

यह सच है कि जीवन एक यात्रा है। इस यात्रा में गाहे बगाहे अनेक किस्से, वृतांत सुनने-सुनाने को मिल जाते हैं, जिन्हें साझा करने की उत्सुकता सदैव मन-मस्तिष्क में रहती है। यात्रा के दौरान बातें करने व सुनने का मजा ही कुछ और होता है। गाड़ी के शोर व गानों की आवाज में भी कान सदैव सुनने को आतुर रहते हैं। मोबाइल के इस युग में तो अब बेइंतहा सुनने को मिल जाता है। किसी न किसी की घंटी बजती रहती है।

दिन, माह तो याद नहीं बल्कि वाकया इस वर्ष का ही है। एक यात्रा के दिन बगल की सीट पर बैठे एक सज्जन की मोबाईल की घंटी बजी। मेरे तथा अन्य साथियों के कान उस घंटी की आवाज की ओर स्वतः ही घूमे। बचपन में हम भी अपनी सीट के हैंडल को घुमाकर यह माना करते थे कि बस तो हमारे घूमाने से ही घूम रही है। इससे हमें ऐसा अहसास मिलता, जो कि हजारों रुपये व्यय कर भी नहीं मिल सकता।

हैलो, नमस्कार के आदान-प्रदान उपरांत संवाद का सिलसिला शुरू हुआ। हम तो बस एक ओर का सुन सकते थे लेकिन जो प्रश्न पूछे जा रहे थे, उनका उत्तर सुन कर बस का शोर जैसे कुंद पड़ गया था। यह सारा वृतांत मानो एक सामाजिक-आर्थिक संदेश दे रहा था।

'भाई बच्चों को तो मैंने शहर से गांव के स्कूल में डाल दिया। शहर में तो बस लगता है मैंने उनमें दो-तीन साल बर्बाद ही किए। अब गांव में जाकर वे अपनी माटी, मां बोली, संस्कृति से तो जुड़ेंगे। खेत-खलिहान से लगाव होगा। यहां तो बस एक-दो कमरों में कैद होकर रह गए थे। गांव का खुला वातावरण, जल, जंगल, पशु-पक्षी सब अपने हैं। पढ़ाई तो वहां रहकर भी कर लेंगे। सरकार ने स्कूल खोला जो है। हम भी तो गांव से पढ़कर शहर आए। जिसे पढ़ना है, वह कहीं भी पढ़ सकता है। स्कूल की बिल्डिंग, गले में टाई, ड्रैस पहनने से कुछ नहीं होता। बस कुछ बनने व कर गुजरने की तमन्ना होनी चाहिए।

भाई सुन अगर मैं उन्हें शहर में ज्यादा वक्त रखता तो वे कभी भी गांव लौट न पाते। अभी इस उम्र में तो उन्हें ले जाना मुमकिन है। मैं तो अब गांव की ओर लौट गया हूं। कोई बुरा माने या अच्छा। मैंने शहर को देख लिया है। शहर में न अपना है न कोई पराया। बस सब एक मशीन के पुरजे हैं। गांव में जूता फटा है तो कोई नहीं पूछता, शहर में तो फटे जूते पर ही ध्यान जाता है। शहर में तो हमारा नाता पड़ोस में बिटू की दुकान तक सीमित रह गया था। या फिर अखबार वाले और दूधवाले से सुबह-सुबह बतियाने तक सिमट आया है। और अपने-अपने काम करने वाली जगहों पर औपचारिकता के सूत्र हाथ आते हैं। बाकी से इतिश्री। अपने में सिमटते शहर के कमरों में फिर घर आकर बंद। गांव के खेत बीजने पर कुछ न कुछ हो ही जाता है।

इसी वार्तालाप को सुनते-सुनते मेरे स्टेशन आने की इतलाह बस कंडैक्टर ने सीटी बजा कर दी। मैं अनेक प्रश्नों तथा विचारों को साथ लेकर बस से उतर गया। उसकी आवाज के तंतु काफी देर तक मेरा पीछा करते रहे, जब तक मैं अपने दूसरे कामों में व्यस्त न हो गया।

एक अनजान साथी का संवाद अनेक ऐसे प्रश्नों का उत्तर दे गया जो मैं वर्षों से ढूंढ रहा था। गांव व शहर के बीच झूलते समाज की कहानी क्या 'अब गांव लौट चलें' पर जाकर खत्म हो सकती है। इस पर विचार-मंथन की गुंजाइश है। मिल कर सोचते हैं और इस कहानी को पूरा करने में अपना यथायोग्य देकर इस हवन में अपनी सामर्थ्य की आहुतियां डालते हैं।

(लेखक पत्रिका के वरिष्ठ संपादक हैं)



उपराष्ट्रपति श्री वेंकैया नायडु अमृतसर जलियांवाला बाग में आयोजित समारोह में डाक टिकट जारी करते हुए।



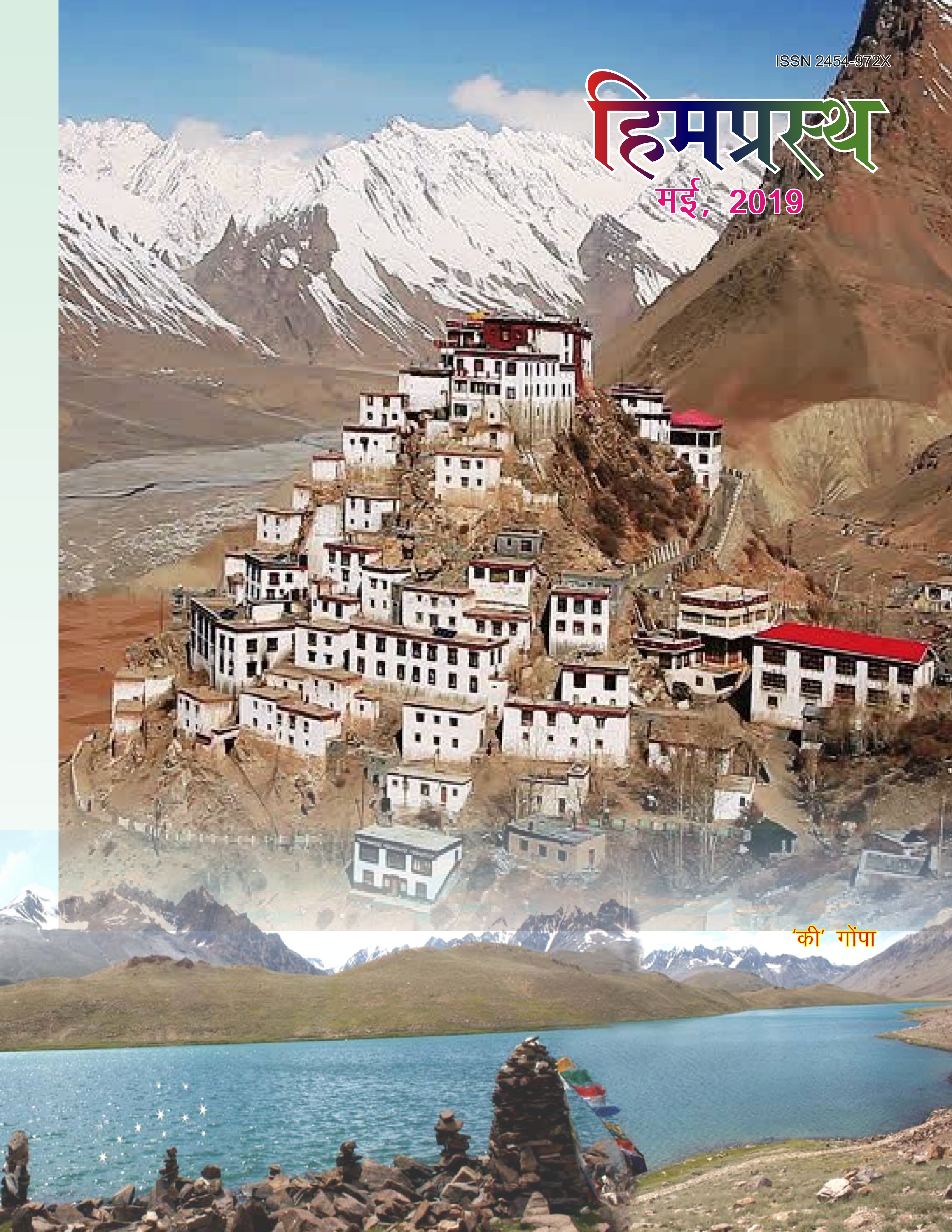
जलियांवाला बाग नरसंहार शताब्दी पर जारी 100 रुपये का सिक्का

पंजीकरण संख्या : 845/1957 अप्रैल, 2019 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2018–20



जलियांवाला बाग की मर्मांतक स्मृतियां।

हरबंस सिंह ब्रसकोन, निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा संजीव पठानिया, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।



ISSN 2454-972X
हिमप्रस्थ
मई, 2019
'की' गोंपा



'की गोंपा' द्वार



ताबो बौद्ध मठ में प्रतिमा एवं थंका चित्र

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 मई 2019 अंक : 2

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

स्वयं की क्षमता से काम करना बुद्धिमानी है। काम के लिए दूसरों पर निर्भर रहने वाले लोग कभी बुद्धिमान नहीं हो सकते।

– **महात्मा बुद्ध**

इस अंक में

लेख

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

आखिरी पन्ना

अपनी बात

हिमाचल प्रदेश, हिमालय का एक छोटा-सा भू-भाग है। शांतिप्रिय प्रदेश के नाम से जाना जाता है। अपनी अनूठी देव संस्कृति के लिए सुविख्यात यह प्रदेश आगंतुकों के समक्ष प्राकृतिक सौंदर्य, धार्मिक सद्भाव और शांति व आध्यात्मिकता की ऐसी तस्वीर प्रस्तुत करता है जो सदा के लिए उनके मन में बस जाती है। यही वो खास वजह है जो उन्हें बार-बार यहां आने का न्योता देती है। यकीनन उनकी यह तलाश यहां आकर पूरी भी होती है। प्रदेश में हर वर्ष बड़ी संख्या में सैलानियों के साथ-साथ विभिन्न धर्मों के लोग अपनी आध्यात्मिक पिपासा को शांत करने के लिए पहुंचते हैं। हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई बौद्ध व जैन धर्मावलंबियों के आस्था स्थलों पर साल भर श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। हिमालयी क्षेत्र में प्राचीनकाल से ही बौद्ध धर्म का गहरा प्रभाव रहा है जिसकी जीवंतता यहां की जनजातीय संस्कृति में विशेष रूप से देखी-समझी व महसूस की जा सकती है। यहां की समृद्ध संस्कृति में बौद्ध मठों की अलग पहचान है। धार्मिक महत्व है। जनजातीय क्षेत्रों से लेकर अंदरूनी भागों तक महात्मा बुद्ध का अहिंसा, करुणा और प्रेम का संदेश सुनाई देता है। जैसे बर्फ से ढके पहाड़ सूर्य की ऊष्मा मिलते ही पिघलना शुरू कर देते हैं और पानी नीचे उतरना शुरू कर देता है, ठीक वैसे ही महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं का संदेश संगीत की मधुर धुनों के साथ लोगों तक पहुंचता है। बौद्ध धर्म के इन स्थलों का प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यून सांग द्वारा उल्लेख इसकी पुष्टि करता है। आश्चर्य होता है, उस समय इन दुर्गम स्थलों पर इन धार्मिक मठों की स्थापना कैसे संभव हुई होगी? जरूर इनके निर्माण में दैवी शक्ति का हाथ रहा होगा। हिमाचल की लोक संस्कृति में धार्मिक सद्भाव की खूबी का परिणाम है कि आज यह पहाड़ी प्रदेश धार्मिक पर्यटन गंतव्य भी बन गया है। वसंत ऋतु के बाद पहाड़ों पर मौसम बेहद सुहावना होता है। वैसे प्रकृति हिमाचल पर विशेष तौर पर मेहरबान है। उसने स्वयं को यहां विभिन्न रंगों में प्रकट किया है। शायद इसीलिए हर कोई इसे देखने यहां खींचा चला आता है। आध्यात्मिक गुरु दलाई लामा अध्यात्म नगरी धर्मशाला से बुद्ध के संदेश को दुनिया के कोने-कोने तक पहुंचाने में मशगूल हैं। सोभा सिंह अंद्रेटा में बसकर कैनवास पर अपनी कलम चलाते हुए यहां के अलौकिक दृश्यों, धर्मगुरुओं, महापुरुषों के चित्र बनाकर अपनी कला का दुनिया में सौंदर्य बिखेरते चले गए। रौरिक, कुल्लू-मनाली की दिलकश वादियों, पहाड़ों पर ऐसे मंत्रमुग्ध हो गए कि यहीं अपनी कला स्थली बना कर बस गए। पूर्व प्रधान मंत्री स्व. अटल बिहारी वाजपेयी प्रीणी को अपना दूसरा घर मानते रहे। फिल्मी हस्तियां सुंदर 'लोकेशन्ज' की तलाश में यहां दौड़ी चली आती हैं। सैलानी रोमांच के लिए नदियों में उतर कर अठखेलियां करते हैं, बर्फ पर फिसलने के खेल का आनंद उठाते हैं। तो कुछ बर्फ से ढके रोहतांग दर्रे के पार जाने को लालायित रहते हैं। प्रस्तुत अंक में हिमालय क्षेत्र में बौद्ध परंपरा के जीवंत चित्रण पर विशेष सामग्री जुटाई गई है। इसके अलावा ऋतुओं में भीष्म ग्रीष्म ऋतु में प्रचंड सूरज की गर्मी से पैदा हुई तपन को विशेष लेख के माध्यम से महसूस किया जा सकता है। साहित्य की विभिन्न विधाओं में ऋतु वर्णन में वसंत को तरजीह मिलती रही है। लेकिन आदिकवि कालिदास ने अपनी पहली रचना 'ऋतुसंहार' का श्रीगणेश ग्रीष्म ऋतु से ही किया। इस अंक में पहाड़ी साहित्य की महान विभूति डॉ. बंशी राम शर्मा व आचार्य विष्णुकांत शास्त्री के साहित्य चिंतन पर विशेष लेख प्रकाशित किए गए हैं। और भी बहुत कुछ नियमित सामग्री के साथ इस अंक में आपके साहित्यिक आस्वादन को अवश्य बढ़ाएगा।

– संपादक

आलेख

हिमालय क्षेत्र में जीवंत बौद्ध धर्म का संदेश

◆ विनोद भारद्वाज

वास्तव में बुद्ध कोई नाम नहीं है। बुद्ध का अर्थ है 'वह महान पुरुष जिसे बोध ज्ञान की दिव्य ज्योति प्राप्त हो गई हो।' जिस पुरुष ने इस विषय में काफी चिंतन एवं गहन मनन किया हो, उस पर विस्तारपूर्वक सोचा-विचारा हो। जो कि ज्ञान की चरम सीमा तक पहुंच गया हो कि इस क्षणभंगुर मानव जीवन में सच्चा सुख तथा शांति कैसे और किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है तथा उसकी प्राप्ति के लिए मनुष्य को क्या-क्या करना चाहिए।

ज्ञान की प्राप्ति के लिए लगभग अढ़ाई हजार वर्ष पूर्व कपिलवस्तु लुंबिनी के महाराजाधिराज सुद्धोधन के पुत्र सिद्धार्थ बुद्धत्व की खोज में राजसी वैभव छोड़ कर चल पड़े। एक राजकुमार होते हुए भी उन्होंने राजकीय सुख भोगों को त्याग दिया और उनके मन में सच्चे आनंद की प्राप्ति की अलख जग उठी।

बुद्ध पूर्णिमा को बौद्ध जगत में त्रिविध जयंती के नाम से जाना जाता है, क्योंकि वैशाख पूर्णिमा के दिन ही राजकुमार सिद्धार्थ का जन्म लुंबिनी में, बुद्धत्व की प्राप्ति उरुवेल वन (बोधगया का पुराना वन) और उनका महापरिनिर्वाण कुशीनगर में हुआ था। वैशाख पूर्णिमा बौद्ध मतानुयायियों के लिए पवित्रतम दिनों में से एक है।

भारत अनेक धर्मों की जन्मस्थली है। यहां के महापुरुषों, साधु-संतों, दिव्य प्रतिभाओं ने दुनिया को दया, अहिंसा, क्षमा भाव, विश्व-बंधुत्व का संदेश दिया। उन्हीं महान पुरुषों में से एक साधक, प्रखर बुद्धि वाले तेजस्वी महा पराक्रमी, करुणा व दया की महान मूर्तियों में से भगवान बुद्ध एक सर्वश्रेष्ठ ज्योतिपुंज हैं। मानव सभ्यता को सुखी-समृद्ध बनाने के लिए उनका इस धरा पर अवतार हुआ।

बुद्ध ने अपने तपस्वी जीवन में अनेक तीर्थस्थलों का भ्रमण किया। बियावान घने जंगलों की खाक छानी। आखिरकार घोर साधना के उपरांत उन्हें सच्चे मार्ग की प्राप्ति हुई जिसकी खोज में वे व्याकुल थे। बुद्धत्व प्राप्ति के उपरांत उन्होंने अपना शेष जीवन इस संसार में मानव की व्यथा हरण में समर्पित किया। वे जीवन के अंतिम क्षण तक मानव कल्याण की सेवाओं का उपदेश देते रहे।

सभी जीवों के प्रति इस महापुरुष के हृदय में उदारता, अपार, स्नेह, करुणा एवं श्रद्धा थी। उनका संपूर्ण ज्ञान एक बेहतर समाज के प्रति समर्पित रहा। वे सदैव सार्वभौम संसार के दुख की चिंता करते थे। इन्हीं आदर्शों से वे सबसे दयालु और ज्ञानवान धर्म उपदेशकों में से एक माने गए हैं।

तिब्बती बौद्ध धर्मगुरु दलाई लामा के शब्दों में, "महात्मा बुद्ध को तभी सच्चा ज्ञान मिल पाया, जब उनमें दया, क्षमा, करुणा, अहिंसा, मानवता के प्रति प्रेम जैसे भाव चरम पर थे।" इस मिथ्यावादी स्वार्थी संसार में आज सभी स्वयं के कल्याण के बारे में सोचते हैं। बिरले ही जन होंगे जो किसी के सुख-दुख के विषय में उसके समाधान की बातें सोचते होंगे। इस संसार को सुखमय बनाने के लिए महात्मा बुद्ध के संदेश आज भी प्रासंगिक हैं। सदैव सत्य बोलो। सत्य पर अपना संपूर्ण जीवन अर्पित करो। सबकी भलाई करो। सभी का आदर सत्कार करो। अहिंसा के बल पर हमेशा सच्चा भरोसा रखो। महात्मा बुद्ध का समाज को सच्चा संदेश है, 'अप्प दीपो भव'। अपने दीपक स्वयं बनें। इसका मूल सार है कि हर व्यक्ति बुद्धत्व के आदर्शों को अपनाएगा तो समाज शांतिमय तथा खुशहाल होगा।

हिमालय क्षेत्र में बौद्ध धर्म का उल्लेख चीनी यात्री ह्यून सांग ने अपनी यात्रा में (635 ई.) में उसने जालंधर के उपरांत कुल्लू का उल्लेख किया है। ह्यून सांग ने कियू-लो-तो (कुल्लू) को जालंधर से 700वीं अर्थात् 117 मील उत्तर पूर्व की ओर बताया है। घाटी के बीचोबीच एक बौद्ध स्तूर था और बीस के करीब बौद्ध विहार थे। वे लिखते हैं कि देश के मध्य में अशोक द्वारा निर्मित एक स्तूप है। तथागत अपने शिष्यों सहित धर्म प्रचार तथा लोगों को बचाने के लिए पुराने समय में आए थे। यह स्तूप उनकी उपस्थिति का स्मारक है।'

हिमाचल के जनजातीय क्षेत्र बौद्ध धर्म के प्रमुख केंद्र माने जाते हैं।

लाहौल स्पीति, किन्नौर, मंडी, शिमला, कांगड़ा, धर्मशाला (मैकलोडगंज) में बौद्ध मंदिर तथा गोम्पा स्थित है। इनमें दुर्लभ प्राचीन ग्रंथ तथा दुर्लभ वस्तुएं बौद्ध धर्म की अमूल्य धरोहरें आज भी विद्यमान हैं।

मंडी जिले का रिवालसर क्षेत्र बौद्ध अनुयायियों का पवित्र



स्थल माना गया है। यह मंडी से 27 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। ऐसी मान्यता है कि पदमसंभव यहां से तिब्बत के लिए बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए रवाना हुए थे। रिवालसर एक रमणीय स्थल है। बीच में झील, तीन ओर तीनों धर्मों के प्रतीक मंदिर, गुरुद्वारा तथा बौद्ध मठ हैं। यहां स्थित मठ के बाहर पद्मसंभव की विशाल मूर्ति है। ऐसी मान्यता है कि सैर गांव में पद्मसंभव ने तपस्या की थी। इसका उल्लेख बौद्ध साहित्य में मिलता है। झील के साथ स्थित गोम्पा में पद्मसंभव की मूर्ति है। बड़े-बड़े घी से भरे पात्रों में ज्योति जलती रहती है।

शांतिप्रिय हिमाचल प्रदेश की वादियों में आज भी महात्मा बुद्ध की शिक्षाएं गुंजायमान हैं। प्रदेश के हर जिले में बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं। जनजातीय क्षेत्र लाहौल स्पीति, किन्नौर में बौद्ध धर्म के अनेक स्थल हैं। राज्य की कुल आबादी की 1.16 प्रतिशत जनसंख्या बौद्ध धर्म को मानने वालों की है। वर्ष 2011 की जनगणना आंकड़ों के अनुसार लाहौल स्पीति में कुल संख्या का 62.01 प्रतिशत, किन्नौर में 21.5 प्रतिशत, कांगड़ा में 0.96 प्रतिशत, मंडी में 0.26 प्रतिशत, शिमला में 0.4 प्रतिशत, सोलन में 0.1 प्रतिशत, सिरमौर में 0.5 प्रतिशत, ऊना में 0.01 प्रतिशत, चंबा में 0.34 प्रतिशत, हमीरपुर में 0.02 प्रतिशत, कुल्लू में 3.51 प्रतिशत तथा बिलासपुर में 0.03 प्रतिशत लोग बौद्ध धर्म को मानने वाले हैं।

लाहौल स्पीति में अनेक प्राचीन गोम्पा हैं। इनमें प्रमुख हैं :

गुरु घंटाल गोम्पा

यह बौद्ध मंदिर (गोम्पा) चंद्रा और भागा नदियों के संगम पर बसे तुपचिलिंग गांव के ऊपर स्थित है। इसकी स्थापना गुरु पदम संभव ने की थी। इस बौद्ध मंदिर का नाम गुरु घंटाल इसलिए पड़ा क्योंकि बौद्ध धर्म के 84 सिद्धों में से एक गुरु घंटाला ने इस स्थान पर तपस्या की थी। इस बौद्ध मंदिर की विशिष्टता काष्ठशिल्प की मूर्तियां हैं। क्योंकि लाहौल के अन्य बौद्ध मंदिरों में बहुधा मिट्टी की मूर्तियां देखने को मिलती हैं। श्वेत संगमरमर से निर्मित गुरु घंटाल की प्रतिमा की स्थापना पदमसंभव ने की थी। गोम्पा में भित्ति चित्र देखते ही बनते हैं।

कारदंग गोम्पा

यह गोम्पा भागा नदी के किनारे कारदंग गांव से लगभग एक किलोमीटर ऊपर स्थित है। इस गोम्पा की स्थापना लगभग 900 वर्ष पूर्व हुई थी। इस गोम्पा के जीर्णोद्धार का कार्य सन 1912 में कारदंग में प्रसिद्ध लामा नौरबू ने करवाया था। बौद्ध ग्रंथों के केंग्यूर और तेंग्यूर की संपूर्ण पोथियां यहां विद्यमान हैं।

शाशुर गोम्पा

इस बौद्ध मंदिर की स्थापना 17वीं शताब्दी में लामा देवा ज्ञात्सो ने की थी। यह लामा भूटान के राजा नाबंग नामाज्ञाल का दूत था जिसका उद्देश्य नावंग नामज्ञाल द्वारा स्थापित बौद्ध धर्म के दूग्यां समुदाय की शिक्षाओं को जनसाधारण तक पहुंचाना था। द्रुग का भोटी भाषा में अर्थ भूटान होता है। यह गोम्पा दुग्या काम्युदणा समुदाय से संबद्ध है। यह गोम्पा परंपरागत गोम्पा निर्माण शैली 'गेन्दुग' में निर्मित है। इस बौद्ध मंदिर में लाहौल घाटी के थंका शैली में बने बड़े चित्र देखे जा सकते हैं।

तायूल गोम्पा

लाहौल स्पीति में तायूल बौद्ध मंदिर की स्थापना 17वीं सदी में तिब्बत क्षेत्र के लामा सरज़म रिन चेन ने की। यह गोम्पा दुग्या समुदाय से संबद्ध है। भोटी भाषा में तायल का अर्थ है 'सुंदर पसंदीदा जगह'। 18वीं सदी में इसका जीर्णोद्धार लद्दाख में तांगना बौद्ध मंदिर के लामा टुलकू, टशी, ताम्फिल ने किया। यहां गुरु पद्मसंभव की पांच मीटर ऊंची प्रतिमा है। कंग्यूर ग्रंथों के सौ खंड यहां पर उपलब्ध हैं।

'की' गोम्पा

'की' गोम्पा काजा से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह घाटी की प्राचीनतम तथा सबसे बड़ा गोम्पा है। यहां महात्मा बुद्ध के दुर्लभ चित्र हैं। यहां लामाओं को धार्मिक शिक्षाएं दी जाती हैं। यहां भित्ति चित्र देखते ही बनते हैं।

थांग यंग गोम्पा

यह गोम्पा काजा से 13 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

कुंगरी गोम्पा

यह गोम्पा पिन घाटी में स्थित है। यह पिन घाटी के बौद्ध धर्म के अनुयायी का प्रमुख मंदिर माना जाता है।



ताबो गोम्पा

ताबो गोम्पा को हिमालय की अजंता के नाम से जाना जाता है। यह काजा से 50 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। ताबो बौद्ध विहार का निर्माण कार्य येशेओ (ये-शस-योद) के शासन काल में 10वीं शताब्दी के आरंभ व 11वीं सदी में संपन्न हुआ। इसका निर्माण 996 में हुआ। वर्ष 1996 में इस मठ ने स्थापना के हजार वर्ष पूर्ण किए थे। यह धर्मस्थली जीवंत अवस्था में खड़ी है। बौद्ध भिक्षुओं ने अपनी अटूट आस्था के बल पर इसे सदियों से जीवित रखा है। प्रचुर वैभव लिए यह एक समृद्ध विरासत है।

रामपुर का बौद्ध मंदिर

शिमला से 120 किलोमीटर की दूरी पर स्थित रामपुर को किन्नौर जिले का प्रवेश द्वार भी कहा जाता है। यहां शहर के मध्य में स्थित प्राचीन बौद्ध को प्राचीन बौद्ध ग्रंथों के लिए जाना जाता है। लगभग 15 वर्ष पूर्व ही इस मंदिर का जीर्णोद्धार किया गया है। यह तिब्बत के 'लाई' बौद्ध धर्म के संरक्षण में है।

हिमाचल की वादियों में स्थित बौद्ध मंदिर, मठ, गोम्पा बौद्ध धर्म की विलक्षणता को संजोए हुए हैं। गेरुआ वस्त्र धारण किए लामा, शिखरों पर स्थित बौद्ध मठ, आकर्षक मूर्तियां, थंका चित्र, पांडुलिपियों का अंबार, पत्थरों, चट्टानों पर खुदे बौद्ध धर्म के 'ऊँ मणि पद्मे हूं' मंत्र, हवा में लहराती धर्म पताकाएं आज भी शांति, अहिंसा का संदेश दे रही हैं।

बीसवीं शताब्दी में हिमाचल के धर्मशाला के समीप मैकलोडगंज में तिब्बती धर्मगुरु दलाई लामा के निवास स्थान ने इसे विश्वभर में एक लोकप्रिय स्थल बना दिया है। यहां प्रतिदिन बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार हो रहा है। बौद्ध धर्म में इन स्थलों पर शांति प्राप्त करने के लिए प्रति वर्ष लाखों की संख्या में देशी-विदेशी पर्यटक आते हैं।

पहाड़ की वादियों में बौद्ध धर्म

हिमाचल के जनजातीय क्षेत्र जीवंत बौद्ध धर्म एवं संस्कृति के स्थल हैं। यहां स्थित बौद्ध मठ आज भी अतीत की धार्मिक स्थिति पर प्रकाश डालते हैं।

पुरातात्त्विक स्रोतों से इस दिशा में अधिक प्रमाणिक तथ्य मिलते हैं। सांची के दूसरे स्तूप में मिले एक लघु अभिलेख से ज्ञात होता है कि हिमाचल प्रदेश में मंझनितम ने बौद्ध धर्म का प्रचार किया। जिसे संभवतः अशोक के धर्म सलाहकार मोग्लिपुंततिस्स ने इस कार्य के लिए भेजा था। तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में ही बौद्ध धर्म प्रदेश में फैल चुका था और यहां के जीवन एवं संस्कृति में समाहित होने लगा।

मौर्य काल में इसके विस्तार के प्रमाण मिलते हैं। इस दौरान अशोक ने बौद्ध भिक्षुकों तथा भिक्षुणियों को धर्म प्रचार के लिए भेजा व अनेक स्थानों पर स्तूपों का निर्माण करवाया। किन्नौर से लगे क्षेत्र में स्थित कालसी में बौद्ध धर्म से संबंधित अभिलेख मिलता है। मैदानी इलाकों में अंबाला के समीप टोपरा स्थान पर भी अभिलेख मिला है।

हिमाचल के पश्चिम-दक्षिण में स्थित जलंधर में अशोक ने अनेक स्तूपों का निर्माण करवाया। ज्ञातव्य रहे कि यह स्थान हिमाचल के कांगड़ा व चंबा जिलों और आसपास के प्राचीन जनपदों की राजधानी थी। यहां त्रिगर्त राज्य स्थित था। ऐसी धारणा है कि दूसरी-तीसरी शताब्दी ई. पू. में उत्तर भारतीय मैहणों काल्सी जलंधर के मार्गों द्वारा धर्म इस पर्वतीय प्रदेश में फैला।

तदोपरांत कुल्लू बौद्ध धर्म के प्रधान केंद्र के रूप में विकसित हुआ। ह्वेन सांग ने इस बारे अपनी यात्रा वृतांत में लिखा, 'यह स्थान रोहतांग दर्रापार कर लद्दाख, तिब्बत, चीन तथा मध्य एशिया जाने का प्रमुख व्यापारिक मार्ग था। इसी कड़ी में ये लाहौल की वादियों में पहुंचा।

मौर्य काल में बौद्ध धर्म कांगड़ा जनपद में भी फैला। कांगड़ा जिले में विशाल स्तूप में अवशेष चैतड़ू नामक स्थान पर मिलते हैं, जो कांगड़ा से 5 मील की दूरी पर स्थित है। पुरातात्त्विक स्रोतों से

ज्ञात होता है कि कुषाणों के काल में कांगड़ा जिले में बौद्ध धर्म की अत्यधिक प्रगति हुई। इसी जिले में स्थित कुनिहारा नामक स्थान से लगभग छः मील दूर स्थित पथियार के समीप ही जानरू नदी के तट पर कुछ बौद्ध विहार बनाए गए थे। यहां से ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपि में दो अभिलेख मिलते हैं। जिसमें बौद्ध विहार बनाने का उल्लेख मिलता है। कुषाणों के काल में इसी प्रकार कुल्लू क्षेत्र में महायान बौद्ध धर्म का विकास हुआ।

पुरातात्त्विक और साहित्यिक स्रोतों से यह ज्ञात होता है कि चौथी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर लगभग नवीं या दसवीं शताब्दी तक कांगड़ा, चंबा, शिमला, मंडी, कुल्लू तथा सिरमौर आदि क्षेत्रों में शैव, वैष्णव, शाक्त तथा सौर संप्रदाय फैला। बैजनाथ कांगड़ा का शिव मंदिर, निरथ का सूर्य मंदिर, चंबा के मंदिर इसी काल की देन हैं। लेकिन बौद्ध धर्म इन सभी क्षेत्रों में समान रूप से विकसित होता रहा। इसका प्रमाण ह्यून सांग ने सातवीं शताब्दी में अपने यात्रा वृतांत में दिया है।



कुषाणों के काल में कांगड़ा महायानी बौद्ध भिक्षुओं का एक केंद्र बना। गुप्तकाल में और उसके बाद कुछ समय तक यह इसी रूप में विकसित होता रहा, जैसा कि एक अभिलेख से प्रमाणित है, जो नगरकोट से आठ मील की दूरी पर चेरी नामक स्थान से प्राप्त हुआ था। यह लेख छठी या सातवीं शताब्दी का है।

ह्वेन सांग ने शतद्रु और सुहन राज्यों के बौद्ध धर्म का विवरण भी किया है। ये राज्य संभवतः हिमाचल के किन्नौर और सिरमौर जिले की सीमा पर स्थित थे। वे लिखते हैं कि शतद्रु के प्रमुख नगर में बौद्ध विहार खाली पड़े हैं और वहां केवल कुछ ही बौद्ध भिक्षु धर्म साधना में लगे थे।

सुहन राज्य की भी यही दशा थी। यह सिरमौर की सीमा पर जौसर में काल्सी के समीप स्थित पौंटा भी बौद्ध धर्म का एक प्रधान केंद्र था। राजधानी सुघ्न के दक्षिण-पश्चिम में यमुना नदी के पश्चिम में अशोक द्वारा निर्मित स्तूप सातवीं शताब्दी में विद्यमान था।

हूणों के आक्रमण के समय बौद्ध धर्म के विरुद्ध आवाज उठी थी। बौद्ध केंद्रों तथा मठों को नष्ट किया गया और अनेक बौद्धों को मौत के घाट उतारा गया। अतएव ऐसे वातवरण में मैदानी भागों से बौद्ध अनुयायियों ने बौद्ध केंद्रों को छोड़कर अन्यत्र पहाड़ियों में शरण ली, ऐसा माना जाता है।

हिमाचल में बौद्ध धर्म एवं संस्कृति की स्थिति संभवतः आठवीं सदी ईसा पूर्व में ज्यों की त्यों बनी रही। इसी काल में लाहौल बौद्ध धर्म का एक प्रमुख केंद्र था। यहां बौद्ध धर्म के प्रचार का श्रेय पद्मसंभव को जाता है।

हिमाचल के जनजातीय क्षेत्र के साथ लगता स्थान लद्दाख बौद्ध धर्म का प्रमुख केंद्र बनाया। 12वीं सदी में लद्दाख में बौद्ध धर्म एवं संस्कृति अपनी चरम सीमा पर थी।

आज भी हिमाचल के किन्नौर, लाहौल क्षेत्र बौद्ध धर्म से जीवंत दर्शन करवाते हैं। यहां के बौद्ध स्थल अपने को भी अपने भारत के गौरवमय इतिहास को जिंदा रखे है।

(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक हैं)
(संदर्भ : हिमप्रस्थ के शोध लेखों से संकलित)

आलेख

रिन-चेन-जंगपो (महानुवादक) और बौद्ध मठ

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

रिन-चेन-जंगपो (रत्नभद्र) की जीवनी में उल्लेख है कि उन्होंने खुनु (किन्नौर) में होपुलङ्का तक बौद्ध विहारों का निर्माण किया। होपुलङ्का किन्नौर का कल्पा (चीनी) का क्षेत्र है। अतः रत्नभद्र द्वारा निर्मित इस ओर अंतिम विहार कल्पा (चीनी) में माना जा सकता है। किन्नौर में रत्नभद्र द्वारा निर्मित मठों की संख्या चौदह गिनाई जाती है :

चिने (कल्पा), पङे (पंगी), रिदङ् (रिब्बा), ठङे (ठंगी), चारङ्, असरङ्, कानम, सुन्नम, रोपा, पूह, नाको, चांगो, शलखर तथा चुलिङ् के ये गोम्पा रत्नभद्र के नाम हैं जहां लोच़ा ल्हाखङ् अर्थात् अनुवादक (रत्नभद्र) का मंदिर है।

चीनी (कल्पा) गांव में लोच़ा ल्हा-खङ् था जो आग लगने से नष्ट हो गया। अब इस स्थान पर नया ल्हा-खङ् बनाया गया है। पङे (पंगी) गाँव का मठ नष्ट हो चुका है। रिदङ् (रिब्बा) में मठ जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। इसके द्वार तथा छत पर अच्छी काष्ठ कला हुई है। भीतर प्राचीन मूर्तियां हैं। इस मंदिर के बारे में एक गीत प्रचलित है जो विशेष पर्व पर रात को गाया जाता है। गीत में मठ का निर्माता रिन-चेन-जंगपो बताया गया है। इस मठ के साथ अब एक नए मठ का निर्माण कर दिया गया है।

चारङ् मठ का नाम 'रङ्-रिग-स्रुङ्मा' है। यह एक पवित्र स्थान माना जाता है जहां हिंदू और बौद्ध समान रूप में अनुयायी हैं। जन्माष्टमी के दिन यहां उत्सव होता है। यह मठ अभी अच्छी स्थिति में है। प्रवेश द्वार के साथ ही अब नया मठ भी बन गया है।

मठ के द्वार पर उत्कृष्ट काष्ठ कला चित्रित हुई है। मठ के भीतर ताबो की भांति दीवार में लकड़ी गाड़कर हवा में मूर्तियां लगाई गई हैं। ये कुल दस मूर्तियां हैं। हयग्रीव तथा बज्रपाणि की मूर्तियां रौद्र रूप में है। मुख्य मूर्ति संगमरमर की है और अत्यंत आकर्षक है। इस मूर्ति के नीचे एक छोटी मूर्ति है जो घोड़े पर सवार है। इसे दोर्जे-छेनको या स्रुङ्मा (रक्षिका) माना जाता है। मठ कंग्युर पोथियों का विस्तृत भंडार है। इस मठ का लिखित इतिहास भी था जो अब उपलब्ध नहीं है।

असरङ् मठ रिब्बा के मठ से बड़ा है। यहां मिट्टी की बनी पुरातन मूर्तियां हैं। कपड़े पर लिखी विवरणिका भी जिसमें राजा सेर सिंह, वजीर ज्वाला दास तथा खर-पोन लेगस-पग ज्ञल-छल के नाम लिखे हुए हैं। यह विवरणिका पुरानी नहीं है। यहां एक बहुत बड़ा पत्थर भी है जिसके नीचे तीन स्तूप तथा गुप्त खजाना बताया जाता है। कानम मठ भी रत्नभद्र द्वारा निर्मित माना जाता है। राहुल ने इसे कश्मीरी प्रभाव से बना मठ माना है। इस मठ का पुनर्निर्माण होता रहा है। अंतिम बार पुनर्निर्माण 1948 में टोगो गेशे लामा द्वारा हुआ। सुन्नम गोम्पा भी नष्ट हो चुका है। इस समय जो गोम्पा है वह नया है। रोपा में प्राचीन गोम्पा विद्यमान है यद्यपि इसकी छत जीर्ण-शीर्ण हो चुकी है। पुरानी मूर्तियां भी इसमें स्थापित हैं। पूह का गोम्पा भी पुनर्निर्मित होता रहा है। इसमें पुरानी मूर्तियां विद्यमान हैं। पूह के रास्ते रत्नभद्र कई बार गुजरे हैं।



चुलिङ् गोम्पा जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है, अतः प्राचीन है। चांगो में मठ का पुनर्निर्माण हुआ है। नाको मठ में तीन कक्ष बहुत महत्त्वपूर्ण हैं जो ताबो की तरह हैं। इनकी दीवारों में बहुत से मंडल है तथा भित्तिचित्र भी विद्यमान है। दुर्लभ पांडुलिपियाँ भी यहाँ हैं।

शलखर गोम्पा लगभग बीस वर्ष पूर्व आए भूकंप में गिर गया। अब यहाँ नया मठ बना है।

रिन-चेन-जंगपो के नाम से कई स्तूप भी गिनाए जाते हैं। रोशन लाल नेगी के अनुसार जंगी में एक गुप्त खजाना है जिसे रिन-चेन-जंगपो के नाम से जोड़ा जाता

है। गांव से एक किलोमीटर नीचे उतरकर 'छिती-फुग' अर्थात् विरोजे की गुफा आती है। यहां पर कुछ मूर्तियां तथा स्तूप मिले हैं। राहुल ने भी इन स्तूपों का उल्लेख किया है।

इस प्रकार रत्नभद्र से जुड़े कई रहस्यमय स्थान हैं जिस तरह प्रदेश के दूसरे भागों में भीम या अन्य पांडवों से जुड़े बताए जाते हैं।

जनगणना पुस्तिका के अनुसार किन्नौर में 32 मठ गिनाए हैं। रामपुर (शिमला) में एक तथा शिमला शहर में अब दो मठ हैं। एक मठ संजौली में और दूसरा मठ पंथाघाटी में है।

क्या कहते हैं इतिहासकार

इन मठों के निर्माण में गुगे तथा लद्दाख के शासकों का सीधा योगदान होते हुए भी, निर्माता रिन-चेन-जंग-पो को माना जाता है। यह एक आश्चर्यजनक बात है। प्रायः मठ-मंदिर के निर्माण से शासक अपना नाम जोड़ते हैं। यहां ऐसा नहीं है।

रिन-चेन-जंग-पो (950-1055) को एक धर्मप्रचारक, महानुवादक ही नहीं एक कला-प्रेमी और मंदिर निर्माता भी माना जाता है। कहा जाता है उसने एक सौ आठ के लगभग बौद्ध विहार बनाए। गुग्गे और लद्दाख के शासकों से इन्हें प्रश्रय मिला। रिन-चेन-जंग-पो कश्मीर से बत्तीस कश्मीरी बौद्ध कलाकार साथ लाए और मठों का निर्माण करवाया। कानम, चिनी, नाको, गैमूर जैसे मठों के साथ ताबो एक महत्त्वपूर्ण मठ है जिसका निर्माण 996 ई. में हुआ।



ताबो मठ में उपलब्ध लेख में इसकी स्थापना का उल्लेख है। टूची के 'द टेंपल्ज़ ऑफ वेस्ट्रन तिब्बत एंड देयर आर्टिस्टिक सिम्बॉलिज्म' में इस लेख का मूल व रूपांतर दिया गया है जिसके अनुसार मंदिर का निर्माण दादा बोद्धिसत्व (ये-शेस-ओ) द्वारा हुआ। छियालीस वर्ष बाद पोते ल्हा-सुम-पा द्वारा मंदिर पुनः बनवाया गया। ये-शेस-ओ का कार्यकाल 967-1040 माना जाता है।

ए.एच. फ्रैंके ने 'एंटिक्विटीज़ ऑफ इंडियन तिब्बत' में लेख की तिथि 1050 निश्चित करते हुए इसमें से पूर्व निर्माण के 46 वर्ष घटाकर 1004 निर्माण काल माना है।

जीर्णोद्धार या पुनर्निर्माण के समय रिन-चेन-जंग-पो की भेंट भारतीय विद्वान् दीपंकर श्रीज्ञान (अतिशा) में हुई। अतिशा का गुगे में लगभग तीन वर्ष का प्रवास रहा (1024-1045)। इसमें से 46 वर्ष घटाने पर 996-999 की अवधि आती है। तिब्बती कैलेंडर के अनुसार 'फायर-ऐप वर्ष' में ताबो का निर्माण हुआ जो 996 ई. है।

ताबो छोस खोर

शिमला में 365 किलोमीटर दूर ताबो छोस खोर स्पीति का एक महत्त्वपूर्ण मठ है। स्पीति के विहारों की यह विशेषता है कि वे ऊँचे पर्वतों पर किलानुमा ढंग से बने हैं। की तथा ढंक्खर मठ ऐसे ही हैं। वे दूर से देखने पर मठ कम और किले अधिक लगते हैं। की और ढंक्खर का वास्तु शिल्प एक-सा है। दोनों जैसे ऊंचे पहाड़ खोदकर बनाए गए हों, या इन्हें बनाकर पडाड़ की शक्ल दी गई हो।

ताबो एक ऐसा मठ है जो पहाड़ की गोद में 3050 मीटर ऊंचे मैदान में स्थित है। स्पीति नदी के बाईं ओर बिलकुल खुले में इसकी अवस्थिति तत्कालीन शासकों के संरक्षण का प्रतीक है।

ताबो पहुँचने के लिए शिमला से चलने वाले यात्री को किन्नौर के मुख्यालय रिकांगपिओ में या उससे आगे पूह में ठहरना पड़ेगा। शिमला से पियो 206 किलोमीटर है और पूह 274 किलोमीटर। पियो वन-वनस्पति से भरा है, पूह से प्रकृति में एकदम बदलाव आ जाता है और वनस्पति रहित बर्फ का रेगिस्तान आरंभ हो जाता है। पूह से आगे सतलुज और स्पीति नदी के संगम से आगे स्पीति नदी के ऊपर और बहुत ऊपर होती हुई सड़क एक दूसरे संसार में ले जाती है। जहां बस पर्वत ही पर्वत नज़र आते हैं। उस ओर 3274 मीटर ऊंचे यंगथङ् से दूसरी ओर उतराई आरंभ होती है। नीचे आने पर घाटी खुलती है और ताबो एक मैदान में प्रकट होता है।

यह रास्ता मई से नवंबर तक खुला रहता है। आगे-पीछे मौसम पर निर्भर करता है। दूसरा रास्ता मनाली से होकर है जो दो दर्रों पर निर्भर है। पहला दर्रा रोहतांग है मनाली से 51 किलोमीटर 3976 मीटर, दूसरा कुंजम 4545 मीटर ऊंचा। मनाली से 248 किलोमीटर का यह रास्ता जुलाई से अक्तूबर तक ही खुलता है।

अद्‌भुत कला संग्रहालय

ताबो पहुंचने पर मिट्‌टी के कुछ घर नज़र आते हैं जो बाहर से अति साधारण प्रतीत होते हैं।

रेस्ट हाऊस के ठीक सामने वर्तमान ताबो का नया मुख्य द्वार है। वर्तमान ताबो इसलिए कि इस द्वार के भीतर का मठ नया बना है। अब इसी भवन में पूजा-अर्चना होती है। भीतर आकर्षक व सुंदर थंका चित्र हैं। अन्य प्रतिमाओं के अतिरिक्त ताबो के पूर्व

लामा की प्रतिमा भी है। ऊपरी मंज़िल में लामा जी के आवास के साथ एक बैठक बनी है। यहाँ दलाईलामा के ठहरने के लिए भी एक अलग कमरा बना रखा है। यह भवन 1981-83 के मध्य बना और 1983 में ही यहाँ कालचक्र समारोह हुआ जिसमें दलाईलामा पधारे थे।

इस मठ के दाईं ओर एक सुंदर छोरतेन और एक बड़ी सराए है। दोमंज़िली इस सराय में यात्रियों के ठहरने की व्यवस्था है।

नए मठ के पीछे पुराने मठ का मुख्य द्वार है। द्वार के भीतर लामा और लामा छात्रों के लिए पेंटिंग का एक स्कूल चलता है। इस स्कूल की उत्तर दिशा में प्राचीन मठ आता है।

प्राचीन मठ

प्राचीन मठ 84.70-74.30 मीटर के परिक्षेत्र में फैला हुआ है। जिसके चारों ओर दो मीटर ऊँची दीवार है। इसके भीतर नौ मंदिर माने जाते हैं। इनमें से एक दीवार के बाहर है। इसमें ज़ेलामा और गो-खङ् दक्षिणाभिमुखी हैं, शेष सब पूर्वाभिमुखी। नौ मंदिरों में से पाँच प्राचीन माने जाते हैं।

बौद्ध दर्शन बहुत गहरा होता गया है। 'सर्व तथागत-तत्त्व' संग्रह में योग की 'समय' शाखा है। 'समय' तीन मुख्य तांत्रिक शाखाओं से एक है। तंत्र में अभी समय, वज्र समय, धर्म समय, कर्म समय हैं। इसी प्रकार पाँच तथागतों में विरोचन, अक्षोभ्य, रत्नसंभव, अमिताभ तथा अमोसिद्धि हैं। इन सबके अपने-अपने मंडल हैं। इस तरह 24 मंडल हैं। जिनमें मूर्तियों की स्थिति अपने-अपने ढंग से रहती है।

द्वार मंडप के भीतर मुख्य मंदिर में जिसे शुग-ल्हा-खङ् कहते हैं, ऐसे ही मंडल में व्यवस्थित मूर्तियाँ हैं। बीच में महाविरोचन की चार ऐसी मूर्तियां एक दूसरे की ओर पीठ किए हुए हैं। मुख्य मूर्ति पूर्वाभिमुख है। महाविरोचन की सभा में यहां रखी कुछ महत्त्वपूर्ण पोथियों के अतिरिक्त बत्तीस अन्य आदमकद गच मूर्तियां हैं। कमलदल पर आसीन और प्रभामंडल से युक्त मूर्तियां दीवार में लकड़ी गाड़ हवा में रखकर उभारी गई है।



मूर्तियों के अतिरिक्त दीवारों पर भित्ति चित्र ध्यान आकर्षित करते हैं। जातक कथाएं, महात्मा बुद्ध की की कथा एक हजार बुद्ध जैसे चित्र अपने में अनोखे हैं।

गो खङ् महाकाल वज्र भैरव मंदिर है। जेलमा में सुंदर भित्ति चित्र हैं। ल्हाखङ् चेम्पो में बोधिसत्व मैत्रेय विराजमान हैं। सेर खङ् को स्वर्ण मंदिर कहा जा सकता है। यहां भी आकर्षक भित्ति चित्र हैं। क्यिलखोर-खङ् में रहस्यमय मंडल हैं। इसमें जीव-जन्तुओं के चित्रों के अतिरिक्त गंधर्व किन्नर के चित्र हैं। कार एब्यून ल्हा-खङ्   वेत मंदिर है जिसे देवी का मंदिर भी कहा जाता है। ब्रोम-तोन ल्हा खङ् में शाक्य मुनि की प्रतिमा है।

ताबो में सड़क से ऊपर पुरातन गुफाएं हैं जिसमें कभी लामा लोग रहा करते थे। इनमें से अधिकांश गुफाएं अब क्षतिग्रस्त हो गई हैं। इनमें एक अभी सलामत है। इस गुफा में, जिसे फो-गोन्पा भी कहा जाता है, अभी भी भिति चित्र देखे जा सकते हैं।

ताबो के मुख्य मंदिर शुग-ल्हा-खङ् में बौद्ध ग्रंथों का विपुल भंडार है। इस निधि का उल्लेख टूची तथा फ्रेंके दोनों ने किया है। फ्रेंके ने यहाँ पाँच फुट ऊँचा पोथियों का ढेर देखा था। एक-एक ढेर में सैंकड़ों खुले पृष्ठ संभवतः प्रज्ञापारमिता के तिब्बती अनुवाद के थे।

एक बौद्ध मठ को समझने के लिए ताबो मठ के अतिरिक्त दूसरा सुंदर उदाहरण नहीं हो सकता। अतः ताबो मठ का विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

ताबो छोस खोर : संरचनात्मक विवरण

प्राचीन ताबो 84.70-74.30 मीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है। चारों ओर दो मीटर ऊँची दीवार बनी है। इस परिक्षेत्र के भीतर नौ मंदिर हैं जिनमें से पाँच मंदिर मूल संरचना के पुराने मंदिर माने जाते हैं। ये पाँच-शुग-ल्हा-खङ् (gTsug-Lha-khang), सेर-खंङ् (gser-Khang), क्यिलखोर-खङ (dkyil-Khor-khang), द्रोम-तोन-ल्हा-खङ् (Drom-ston-Lha-Khang), व्यामस-पा चैंप ल्हा-खङ् (Byams-pa chemp Lha-Khang), हैं। शेष चार बाद में जोड़े गए।

प्रवेश द्वार के भीतर कुछ खंडित प्रतिमाएं दोनों ओर नज़र आती हैं। दीवारों में भित्ति चित्रों के अवशेष हैं। टूची ने 'द टैंपल्ज़ ऑफ वैस्ट्रन तिब्बत एंड देअर आर्टिस्टिक सिंबॉलिज़्म' में इन प्रतिमाओं में लेख होने का उल्लेख किया है। टूची ने मंदिर के बहुत क्षतिग्रस्त होने की बात भी की है और कहा है कि यदि ब्रिटिश अधिकारी स्पीति के नोनो पर दबाव न डालें तो यह शीघ्र ही खंडहर हो जाए। मठ दो लामाओं के वश में

है जो मंत्र का अर्थ समझने के लिए रुके बिना यंत्रवत् पाठ करते हैं। ताबो की उत्तर दिशा में चट्टानों में बनी कोठरियाँ, जो सर्दियों में भिक्षुओं के रहने के काम आती हैं, छोड़ दी गई हैं और अब टूटने-गिरने लगी हैं।

प्रवेश द्वार जिसे गो-था कहते हैं, 6 मीटर लंबा और 2.5 मीटर चौड़ा है।

कानम मठ

अगले दिन ताबो न जा पाने पर हम कानम आ गए। स्पिलो में एक सौ अस्सी रुपए किलो कागज़ी बादाम लेने पर जब कानम जाने की बात हुई तो वहीं कानम मठ के एक लामा मिल गए। यह लामा आम लोगों की वेशभूषा में थे और चिलगोज़े की बोरी बेचने स्पिलो आए थे। उन्होंने बताया असली लामा मठ में है, मुझे चिलगोज़े बेचने भेजा है। दुकानदार यहाँ सौ रुपए किलो ले रहे हैं जब कि कल भाव एक सौ तीस रुपए था। इसलिए वापस ले जा रहा हूँ। लामा जी को जीप में बिठा लिया बोरी समेत।

स्पिलो से कानम बिलकुल सामने दिखता है। इस बड़े गाँव के लिए पैदल चढ़ाई का रास्ता भी नज़र आता है। सड़क पिछली ओर है, स्पिलो से कुछ आगे जाकर। पांच-सात किलोमीटर का यह रास्ता बहुत लंबा लगा। बीच-बीच में सड़क बहुत खराब थी। लबरंग के नीचे हमीरपुर का एक ट्रक मालिक सेब लदवा रहा था। उसने बताया आगे मोड़ पर बहुत बड़ा गढ़ा है इसलिए जीप न ले जाएं। ट्रक के पास गाड़ी खड़ी कर हम आगे नाला पार कर पैदल गांव तक गए। लामा जी बोरी उठा हमारा इंतजार किए बिना आगे निकल गए। नाले से एक कुहल के साथ-साथ चलते हुए हम एक दुकान में जा पहुंचे। दुकान के बाहर एक वृद्ध लामा अधलेटे धूप सेंक रहे थे। यहां एक बड़े खेत के बाद वह गोल छत वाला बौद्ध मंदिर था जहां दुर्लभ तांग्युर तथा कांग्युर ग्रंथ रखे हैं। दूसरे खेत के बाद गांव शुरू होने से पहले मंदिर था जो डाबला देवता का बताया गया।

वृद्ध लामा जिनका नाम पद्मजीत था, अपने को गांव के सभी मठों का लामा बता रहे थे। जब उनसे पूछा की अलेक्जेंदर चोमा कहाँ रहते थे तो उन्होंने बताया कि ऊपर के मठ में जिसका नाम खाचे-ले खंङ है। वहाँ एक लामा भी है जो अंग्रेजी बोलता है। आपसे अंग्रेजी में बात करेगा। उससे बात करो सब पता चलेगा। वृद्ध लामा ने अपने को कांग्युर-तांग्युर वाले मठ का मुख्य लामा बताया।



खाचे़-ले-खंङ गांव में सबसे ऊपर है। डाबला देवता के मंदिर के ऊपर दुकान में चिलगोज़े वाले लामा जी बैठे मिले। उनके साथ गांव के बीच से चढ़ते हुए मुख्य मठ तक पहुंचे।

एक छोटे दरवाज़े के भीतर घुसने पर आसपास छोटी कोठरियां नजर आईं जिनमें से कुछ में ताले लगे हुए थे। कोठरियाँ लामाओं के लिए थीं। नीचे की ओर की कोठरियों की पंक्ति टेढ़ी हो गई थी और बाहरी दीवार का पेट फूल गया था।

मुख्य मंदिर के दरवाज़े पर एक प्लेट लगी थी, जिसमें अंग्रेजी में लिखा था 'डेडीकेटिड टु द मेमोरी ऑफ अलेक्जेंदर चोमा दे कोरोश : 1827-1830'। अलक्जेंदर चोमा दे कोरोश (1784-1842) पहला यूरोपियन था जो सन् 1823 में लेह-लद्दाख होता हुआ यहाँ पहुंचा। चौदह भाषाओं के ज्ञाता कोरोश को यहाँ मूरक्राफ्ट ने तिब्बती सीखने के लिए भेजा।

अलेक्जेंदर चोमा हंगेरियन था। 26 जून, 1823 को लद्दाख के जाँगला में एक वर्ष रहने के बाद वह जून 1827 में कानम आया और नवंबर 1830 तक यहाँ रहा। यहाँ रहकर उसने तिब्बती-अंग्रेज़ी कोश पूरा किया। यह कोश 1834 में कलकत्ता से छपा।

हंगरी के कोरोश गांव में जन्में कोरोश ने नवंबर 1819 में यात्राओं के लिए स्वदेश छोड़ दिया। बगदाद, तेहरान, काबुल, लद्दाख, आदि स्थानों की यात्रा के बाद चोमा की भेंट 1922 में मूरक्राफ्ट से हुई। हंगेरियनों के प्राचीन देश की खोज में निकले चोमा की भेंट जाँगला (लद्दाख) मे लामा सङ-फुंछोग के साथ हुई। जहाँ तिब्बती भाषा सीखी। 1827 में कानम आकर लामा सङ-ग्यस-फुंछोग के साथ रहकर शब्दकोश, व्याकरण तथा बौद्ध वाङ्मय के ग्रंथ पूरे किए। लामा सङ-ग्यस-फुंछोग जून 1830 में जाँगला लौट गए। अप्रैल 1842 में दार्जिलिंग में मलेरिया होने से चोमा की मृत्यु हो गई। चोमा की जीवनी कृष्णनाथ द्वारा लिखी गई जो हिमाचल अकादमी द्वारा प्रकाशित सोमसी के जून-सितंबर, 1995 अंक में छपी है।

चोमा किस कोठरी में रहते थे, यह जानने की इच्छा थी। चिलगोज़े वाले लामा जी इस स्थान को सही-सही नहीं जानते थे। मठ के बाहर तथा भीतर आकर्षक भित्ति चित्र बने हुए थे। बीच में बुद्ध की आकर्षक प्रतिमा। मठ में गे-लुग-पा संप्रदाय के लामा रहते हैं।

मठ के ऊपर की

ओर सीढ़ियां चढ़ने पर लामा जी का स्थान है। यहाँ वृद्धलामा गुरु हीराचंद और युवा मुख्य लामा लोपजेंग गेडुन से भेंट हुई। युवा मुख्य लामा इसी गांव का रहने वाला है। दो वर्ष पहले यह मैसूर से पढ़कर आया है। उसने बताया लामा और जोमो (भिक्षुणी) के लिए यहां अलग-अलग भवन हैं जिसमें पंद्रह-सोलह जोमो और नौ-दस लामा लोग रहते हैं।



गुरु लामा ने हमें नमकीन चाय पिलाई और बताया कि चोमा इसी कोठरी में रहते थे जहां वह अब खुद रहते हैं। यह कोठरी बहुत छोटी है और दरवाजा बहुत ही छोटा। कृष्णनाथ ने चोमा की जीवनी की भूमिका में लिखा है कि चोमा मुख्य गोम्पा के थोड़ा ऊपर पत्थर, मिट्टी, लकड़ी का एक छोटा-सा घर, छोटा-सा बरामदा बनाकर उस कोठरी में रहते थे। उसमें सिर झुकाकर प्रवेश किया जा सकता है। संभवतः यही वह कोठरी थी। इस समय यह कोठरी और गोम्पा एक ही भवन, एक ही परिसर लगते हैं।

खाचे़-ले-खंङ का दूसरा नाम लुंडुप गंफेल गोम्पा है। खाचे़ का स्थानीय भाषा में अर्थ मुस्लिम लिया जाता है। राहुल जी के अनुसार 'खाचे' का अर्थ मुस्लिम ही नहीं कश्मीरी भी है। उन्होंने 'खाचे रेक्खङ' को मुसलमानों की कब्र नहीं माना। जो कब्रें लिप्पा में मुसलमानों की मानी जाती थीं, उनका राहुल जी ने अलग तरह से विश्लेषण किया है। राहुल जी के अनुसार इस मठ का निर्माण रिन-चेन-जंग-पो (रत्नभद्र) ने कश्मीर आते-जाते समय कश्मीर शैली में किया।

की मठ

धन्य हैं ये लामा लोग जो दुर्गम और विकट परिस्थितियों में पर्वत कंदराओं में रहते हुए अपनी परंपरा की रक्षा करते हैं। उसे आज तक जीवित रखे हुए हैं। किन विपरीत हवाओं में ये अपने बहुमूल्य ग्रंथ उठाकर लाए होंगे। उन्हें किस तरह सुरक्षित रखा होगा, यह सराहनीय है। की मठ भी इन्हीं परिस्थितियों से रक्षा हेतु एक किले-सा खड़ा है। नीचे से एक किले जैसा प्रतीत होता है जिसमें चारों ओर पहाड़ से जैसे छोटे-छोटे दरवाज़े निकाले गए हों। रोशनी के लिए छोटी खिड़कियाँ खोदी गई हों।

वापसी पर हम वहाँ गए। लामाओं ने हमारे लिए प्रेम से चाय बनाई और बिठाकर चाय-बिस्कुट खिलाए। यहाँ विपुल मात्रा में धार्मिक पोथियाँ रखी हैं। दीवारों पर भित्ति चित्र भी हैं किंतु ताबो से कम। मठ में कई प्रकोष्ठ हैं। मठ के मुख्य लामा दिल्ली में रहते हैं। दिल्ली में यह कहाँ रहते हैं, ये वहाँ रह रहे लामाओं को नहीं मालूम। मुख्य लामा लोचेन, टुल्कू से ताबो सहस्राब्दी के समय बाद में भेंट हुई। की मठ का निर्माण आठवीं शताब्दी में हुआ बताया जाता है। रंग-रीक में बने मठ को लद्दाख के आक्रमणकारियों द्वारा तबाह किए जाने के बाद इस मठ का निर्माण हुआ। यह इस क्षेत्र का सबसे बड़ा मठ है। मठों पर होने वाले हमलों से बचने के लिए इस मठ को किलेबंदी का रूप दिया गया तथापि बार-बार बौद्ध लामाओं को हमलावरों से भागना पड़ा। की मठ में कांग्युर के एक सौ आठ संस्करण सुरक्षित हैं। इसके अलावा सैकड़ों अन्य पोथियाँ रखी हुई हैं। यहाँ की थंका पेंटिंग्ज़ भी अद्वितीय हैं। इनमें से अधिकांश भिक्षुओं द्वारा ल्हासा से लाई गई हैं।

ढंखर मठ

ऐसा ही विचित्र और किलेबंदी का दूसरा उदाहरण है ढंखर मठ। ढंखर, ताबो और काज़ा के बीच ऊँची जगह पर है। मुख्य सड़क से ऊपर तक जीप जाती है। उतनी ऊँचाई पर प्राकृतिक ढंग से बनाया हुआ यह मठ वहाँ की वास्तुकला का अद्वितीय उदाहरण कहा जा सकता है। मठ के भीतर खिड़की से देखा तो एकदम तीखी उतराई। उतराई क्या नब्बे का कोण बनाती लंबी दीवार-सी जहाँ से कोई कूदे तो एकदम पंद्रह किलोमीटर नीचे सड़क में गिरे।

ढंखर मठ हमने रात को देखा, लालटेन की लौ में। ताबो में ही ढंखर के लामा मिले थे और वहाँ ज़रूर आने के लिए कह गए थे। मठ की हालत खराब है। जगह-जगह से गिर रहा है। फिर भी मुख्य मंदिर में वहाँ अनेकों दुर्लभ मूर्तियाँ रखी हैं, रात को लामा रहते हैं। ढंखर में उतने लामा नहीं हैं। वहाँ उपस्थित प्रभारी लामा ने बताया आजकल लामा लोग गए हुए हैं, कुछ दिनों में वापस आएंगे। ढंखर के युवा लामा ने बताया कि लामा बनने में सालों लग जाते हैं। कइयों की पूरी उम्र लग जाती है। इसी तरह लामाओं में 'रिम्पोचे' बनने के लिए पूरा जीवन चाहिए।

ढंखर स्पीति का मुख्यालय रहा है। बहुत सुरक्षित स्थान पर होने के कारण ढंखर मठ का निर्माण एक किले के रूप में किया गया है। 3890 मीटर की ऊँचाई पर निर्मित यह राजधानी, जो मठ भी है, एक लामा द्वारा बनाई गई जिसका जन्म 1121 में हुआ। लामाओं का विश्वास है कि यह मठ ताबो से पुराना है।

इस मठ को भी लद्दाख के आक्रमणकारियों तथा 1834 के डोगरा आक्रमण के समय कई बार लूटा गया।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी,
शिमला-171009, मो. 0 94180 85595

आलेख

पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में समकालीन हिंदी कविता-लेखन

◆ डॉ. सत्यनारायण स्नेही

हिमालय जिसे भारत का ताज कहा जाता है, बर्फ़ की सफ़ेद स्वच्छ चादर ओढे, मौन, शान्त, ऋषि-मुनियों, सिद्ध-योगियों की साधना स्थली है। युग-युगों से इन सुरम्य दुर्गम घाटियों के निर्जन-शान्त स्थलों पर तप-साधना के लिये साधक आते रहे हैं। सृष्टि के आरम्भ में मनु द्वारा मानव सभ्यता का आरम्भ यहीं से हुआ है। वेद व्यास ने महाभारत की रचना यहीं की है। महाकवि कालिदास का भी इन पहाड़ी क्षेत्रों से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। पांडवों के वनवास का अधिकांश समय यहीं बीता और महर्षि व्यास, जमदग्नि, परशुराम, वसिष्ठ आदि असंख्य ऋषि-मुनियों की पावन धरती, शिव और शक्ति का सुन्दर लोक यहीं है। संसार की प्राचीनतम समृद्ध भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता यहीं से विकसित हुई है।

पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में लेखन का प्रारम्भ हिन्दी साहित्य के आदिकाल में ग्यारहवीं शताब्दी में नाथ संप्रदाय के प्रसिद्ध कवि चरपटनाथ से माना जाता है। जिन्हें हिमालय क्षेत्र से सम्बन्धित प्रथम कवि माना जाता है। इसके उपरान्त इस क्षेत्र में बीसवीं सदी तक अनेक ब्रजभाषी कवियों का उल्लेख मिलता है। वे या तो ब्रजभाषा में राजदरबारों में प्रशस्तिपरक रचनायें लिखते रहे या नीति और भक्तिपरक रचनाएं लिखते रहे हैं, जिनका उल्लेख 19वीं शताब्दी तक मिलता है।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में जिस तरह भाषा एवं साहित्य के परिष्कार एवं परिमार्जन के साथ, भारतेन्दु, द्विवेदी-युग से होते हुए छायावाद, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद से आगे नई कविता का विकास हुआ है, इस तरह लगभग एक सौ वर्षों की अवधि में इस क्षेत्र में कविता-लेखन का कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता है। स्वतन्त्रता के पश्चात ही यहां कविता लेखन की औपचारिक शुरुआत होती है। जिसमें कुछ कवियों की छिट-पुट कविताएं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थी और कविता-संग्रह सन 1971 के आसपास प्रकाशित होने शुरू हुए। हिमालय क्षेत्र की प्रारंभिक कविताएं समकालीन कविता की मुख्यधारा से अलग छायावाद, मानवतावाद, राष्ट्रीयता तथा स्वच्छन्द प्रेम की भावना से परिपूर्ण रही है। इसी काल में इस पहाड़ी क्षेत्र के अनेक कवि अकविता की तर्ज़ पर या वैयक्तिक कल्पनालोक में खोकर रोमैंटिक कवितायें लिखते रहे हैं जिसमें समाजनिर्पेक्षता, वर्तमान विरोध, अतीत का आलाप, अश्लीलता, कुंठा और जटिल भाषा का प्रयोग किया गया है। रोमैंटिक कविताओं में लोकविमुखता, काल्पनिकता, रोमांस तथा शृंगार के संयोग-वियोग दोनों पक्षों का वर्णन मिलता है। इस क्षेत्र में 21वीं सदी के अंत तक इन धाराओं के कविता-संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

हिन्दी कविता लेखन की मुख्यधारा में सन् 1961 से पूर्व लोक- जीवन की समग्र जटिलताओं, संघर्षों तथा समस्याओं को जीवन्त अभिव्यक्ति प्रदान करने का आग्रह स्पष्ट होने लगा था और युगानुरूप कल्याणकारी परिवर्तनशील प्रेरक ऊर्जा शक्ति का विकास भी हुआ। कालान्तर में अनेक कवियों ने लोक जीवन से जुड़कर लोकोन्मुखी समाज सापेक्ष कविताएं लिखीं, जिससे समकालीन सन्दर्भ में कविता की अलग पहचान स्थापित हुई। समकालीन कविता में सामाजिक व्यवस्था से कटे आदमी की आंतरिक पीड़ा, विवशता, अबोधता, सहिष्णुता, खीज आदि समस्त पूर्णता में सन्निहित है। इसमें आम आदमी का संसार है। यह कविता समकालीन जीवन की टेढ़ी-मेढ़ी वक्र सारणियों से गुजरते एवं अन्तर्अवरोधों-अन्तर्द्वंद्वों से जूझते व्यक्ति के जीवन का कलात्मक दस्तावेज़ है। इसमें समकालीन विसंगतियों, विद्रूपताओं, अव्यवस्थाओं को सही अभिव्यक्ति दी है।

समकालीन हिन्दी कविता की समग्र प्रवृत्तियों का निर्वहन पश्चिमी हिमालय के कतिपय कवियों ने किया है। जिससे हिन्दी कविता समृद्ध-सम्पन्न हुई है। हिमालय क्षेत्र की इस कविता में पहाड़ी लोक-जीवन की अभिव्यक्ति हुई है, जिसमें पहाड़ के लोगों का जीवन-संघर्ष, संस्कृति, सभ्यता, विकट परिस्थितियां, भौगोलिक एवं प्राकृतिक आपदाएं,लोगों की अनभिज्ञता, सादगी एवं गंवारूपन के संदर्भ को गहरी संवेदना एवं विभिन्न अर्थ-छवियों

के साथ चित्रित किया है।

समकालीन हिन्दी कविता में हिमालय में जन्में पहले कवि का नाम है लीलाधर जगूडी। साठोत्तरी कविता का बदलता परिदृश्य सामाजिक यथार्थ, समय की असंगतियां एवं विद्रूपताएं, राजनीतिक भ्रष्टाचार तथा व्यवस्था विरोध और आम आदमी का जीवन संघर्ष इनकी कविताओं में अभिव्यक्त हुआ है। समकालीन कविता की मुख्यधारा के विकास में धूमिल और केदारनाथ सिंह के बाद जगूड़ी का ही नाम आता है। जगूड़ी की सुदीर्घ कविता यात्रा में आज तक 12 कविता संग्रह प्रकाशित हुए हैं : शंखमुखी शिखरों पर,नाटक ज़ारी है, इस यात्रा मैं, रात अब भी मौजूद है, बची हुई पृथ्वी, घबराये हुए शब्द, भय भी शक्ति देता है,अनुभव के आकाश में चांद, महाकाव्य के बिना, ईश्वर की अध्यक्षता में,खबर का मुंह विज्ञापन से ढका है, जितने लोग उतने प्रेम। लीलाधर जगूड़ी की कविता गांव से शहर तक जीवन-यापन कर रहे आदमी और उसके संघर्ष का हलफ़नामा है। इन 51 वर्षों में हमारे देश में हुए परिवर्तन, विकास और तद्नुरूप सामाजिक,राजनीतिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक बदलाव को अनुभव एवं गहरी संवेदना द्वारा कविता में उकेरा है :

मेरी आत्मा लोहार है
जिंदगी से रोज़ लोहा लेती है
मेरी आत्मा धोबी है
मन का मैल आंसुओं से धोती है
मेरी आत्मा कुम्हार है
सपनों की मिट्टी से आकार बनाती है
मेरी आत्मा बढ़ई है
रोज़ कोई ना कोई विचार खराद देती है
किसी भी आत्मा की कोई जाति नहीं होती
यहां किसी भी एक राम से काम नहीं चलने वाला
मैं आत्माराम भी हूं सिर्फ़ मोचीराम ही नहीं
रोटीराम भी हूं सिर्फ़ रामरोटी ही नहीं।[1]

भारतीय कविता की जड़ों से जगूड़ी का गहरा परिचय है। यही कारण है कि वे अतीत की अभिव्यक्ति संपदा और भविष्य के तकनीकी गूंगेपन को एक साथ रख पाते हैं। आधुनिक विकासवादी और परिवर्तित होते मनुष्य समाज को उनकी कविताओं में अलग ढंग से देखा जा सकता है। जगूड़ी की कविता का मूल स्वर है :

मेरी कविता हर उस इन्सान का बयान है
जो बंदूकों के गोदाम में अनाज की ख्वायिश रखता है
मेरी कविता हर उस आंसू की दरख्वासत है
जिसमें आंसू है।[2]

समकालीन हिन्दी कविता में पश्चिमी हिमालय से संबंधित अगले कवि हैं मंगलेश डबराल। विभिन्न साहित्यिक विधाओं में रचनारत मंगलेश डबराल के हिन्दी कविता में सात कविता संग्रह है-ं पहाड़ पर लालटेन, घर का रास्ता, हम जो देखते हैं, आवाज़ भी एक जगह है, मुझे दिखा एक मनुष्य, नये युग के शत्रु, कवि ने कहा। मंगलेश डबराल की कवितायें जहां एक ओर समकालीन जीवन के अंधेरों में घूमती हुई अपने सघन और तीव्र संवेदन से जीवित कर्मरत मनुष्यों तथा दृष्यों और ध्वनि बिम्बों की रचना करती है। लोक जीवन में व्याप्त समग्र अनुभूतियों और संवेदनाओं को कवि ने बड़ी बारीकी से रेखांकित किया है, अंश अवलोकनीय है :

सबसे ज्यादा खामोश चीज है बर्फ़
उसके साथ लिपटी होती है उसकी खामोशी
वह तमाम आवाजों पर एक साथ गिरती है
एक पूरी दुनिया
और उसके कोहराम को ढांपती हुई।[3]

हिमालय क्षेत्र में समकालीन हिन्दी कविता लेखन में प्रमुख हस्ताक्षर है कवि कुमार कृष्ण। जिन्होंने कविता में ग्रामीण जीवन की जीवन्त अभिव्यक्ति द्वारा समकालीन हिन्दी कविता को नया मुहावरा दिया है। इनके आठ कविता संग्रह डरी हुई ज़मीन, पहाड़ पर बदलता मौसम, काठ पर चढ़ा लोहा, खुरों की तकलीफ़, घमर, गांव का बीजगणित, पहाड़ पर नदियों के घर, इस भयानक समय में, प्रकाशित हैं। जिसमें कवि ने लोक जीवन के तमाम पहलुओं को कविताओं में पिरोया है। कवि कुमार कृष्ण का कविता-संसार लोक जीवन, लोक वेदना, लोक चेतना और लोक मंगल पर आधारित है। डा. बच्चन सिंह के शब्दों में- 'कुमार कृष्ण की कविताओं में पहाड़ी गांव की तकलीफ़ है, जो हर गांव की तकलीफ़ बन जाती है, उनमें पहाड़ों का रंग है, जंगलों का दर्द है, इससे कविता का ताज़ापन और बहुआयामी धरातल जीवन्त हो उठता है।[4] समकालीन कविता में इनकी कविताएं ठेठ हिन्दोस्तानी खांटी संस्कारों को पुनर्जीवित करती हैं, जिनमें हिन्दोस्तानी चिन्ता, चेतना एवं चिन्तन विद्यमान है। इन कविताओं में लोकचेतना तथा ग्रामीण संवेदना का पारदर्शी समन्वय देखने को मिलता है। इन कविताओं में भारतीय गांव शहर, भारतीय घर तथा परिवार, भारतीय आस्थाएं, विश्वास, भारतीय संस्कार, हिन्दोस्तानी अशिक्षित स्मृतियां तथा ठेठ मानवीय रिश्तों की आग विद्यमान है।[5] पहाड़ की तकलीफ़ को बयान करता कवितांश अवलोकनीय है -

मेरी कविता में
जितनी बार आये हैं पहाड़
उतनी ही बार आये हैं मवेशी
पहाड़ों का चुपचाप कविता में चले आना
जमीन का पोर-पोर रिसना है
मैं अपनी कविताओं में

पहाड़ों को निचोड़ लेना चाहता हूं।[6]

कवि कुमार कृष्ण की छेरिंग दोरजे, बैल, रोटी की खुशबू, लेवा, घमर, चूल्हा, डरी हुई ज़मीन, पानी के पत्थर, हेंगा, गांव किधर है, पतल भर जमीन, जड़ें और ज़मीन खोदने का वक्त, खुरों की तकलीफ़, कोदे की रोटी, ज़मीन, खाना चित्ती का घर, मवेशियों के त्योहार पर, धूप : पेड़ और रोटी की खुशबू, आंगन का पेड़, गांव और कविता, मेरा गांव, पहाड़ पर रहने वाला कवि, सत्तू और सिलजर, सपनों में गांव, मुझे अच्छे लगते हैं पहाड़ इत्यादि सैंकड़ों ऐसी कवितायें हैं जो ग्रामीण जीवन और ग्रामीण संवेदना को बयान करती हैं। समकालीन हिन्दी कविता को नया मुहावरा देते हुए कवि का मूल स्वर है :

मैं लिखना चाहता हूं
खेतों का ताप
मिट्टी की बौखलाहट
बीज की बेचैनी
ज़मीन का उन्माद
सभी कुछ एक साथ
फ़ोडना चाहता हूं पहाड़
कविता के शब्दों से।[7]

इसी कड़ी में कवि सतीश धर ने तीन कविता संग्रह- कल की बात, सलमा खातून नदी बन गई और प्रथम पंक्ति के लोग द्वारा समकालीन कविता में अपनी पहचान बनाई है। सतीश धर की कविताएं पाठकों को उनके आसपास के जीवन की सामान्य और विशेष तरह की स्थितियों एवं गतिविधियों से परिचित करवाती हैं। लोक जीवन की वास्तविकता को व्यक्त करते हुए कवि कहता है-

पश्चिमी हिमालय क्षेत्र, जिसमें वर्तमान हिमाचल और उत्तरांचल का इलाका आता है, में समकालीन हिन्दी कविता-लेखन की समृद्ध एवं उत्कृष्ट परंपरा है। यहां लीलाधर जगूड़ी, मंगलेश डबराल, कुमार कृष्ण जैसे कवि हैं, जिन्होंने समकालीन हिंदी कविता को राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावित किया है और कविता के नये प्रतिमान स्थापित किये हैं। वैसे तो पहाड़ के तमाम कवियों ने पहाड़ के जीवन-संघर्ष को किसी न किसी रूप में व्यक्त किया है, फ़िर भी लीलाधर जगूड़ी और कुमार कृष्ण की कविताओं में ग्रामीण जीवन की सजीवता से समकालीन हिन्दी कविता में ग्रामीण संवेदना की जीवंत अभिव्यक्ति हुई है।

मेरे गांव में
मौसम का अर्थ
बोझिल छटा से नहीं
बाबूराम नम्बरदार के
फ़सल उगाहने के लिये
भेजे गए लठैतों के
आगमन से लिया जाता है।[8]

कवि सतीश धर ने रज़ाई, नमक, थाली, कुर्सी, मुर्गा, चौकीदार, खानाबदोश, मुफ़लिसी, कमीज़, शब्द रुक गए थे जहां, प्रथम पंक्ति के लोग, बजंतरी, मां नदी और गांव, कल की बात, मौसम, पहचान, कागज़ का शेर, संबंध, सवालों भरे लोग, तीसरे आदमी के खिलाफ़ जैसी कविता द्वारा लोक जीवन में व्याप्त असंगतियों और विकृतियों पर व्यंग्य करते हुए कलात्मक ढंग से अभिव्यक्ति दी है। जमीनी सच्चाई को बयान करता 'थाली' शीर्षक कविता का अंश अवलोकनीय है -

थाली/ आदमी और रोटी के
बीच का अंतर है
थाली/ जीवन भर का डर है
जिनके लिये धरती बिछौना है
थाली
उन भूखे बच्चों का खिलौना है [9]

समकालीन कविता की इस धारा में अगला नाम है आनन्द। सन 1987 में 'आग की गंध' कविता संग्रह के प्रकाशन से कवि ने समकालीन कविता में अपनी उपस्थिति दर्ज़ की है। जिसमें गौरेया नहीं जानती, जंगल बन गया शहर, घेराव, थम गया ज्वर, गाय की मृत्यु, इन दिनों मौसम, करमू और कविता जैसी कविताएं हैं। कवि ने जहां एक ओर 'करमू' कविता द्वारा आम आदमी की दुखपूर्ण शोषित और दयनीय दशा को चित्रित किया है, वहीं दूसरी ओर समर्थ वर्ग द्वारा अपनाए जाने वाले शोषण के विभिन्न तरीकों का खुलासा किया है। कवि आनन्द कविता का एक अंश द्रष्टव्य है-

उस शहर के बड़े आकाश पर
जब कभी मंडराने लगती है
वह भूखे गिद्धों का काला बादल
मैं समझ जाता हूं
आज फ़िर कोई गाय
अकेली घिर गयी है
किसी बीहड़ में [10]

कवि यादवेन्द्र शर्मा ने तीन कविता संग्रह किले में कैद होकर, सबसे सुंदर लड़कियां और दुनिया खूबसूरत के माध्यम से समकालीन हिन्दी कविता की लोकोन्मुखी चेतना का विकास किया है। कवि यादवेन्द्र की कविता में ग्रामीण संवेदना के साथ

राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक तन्त्र एवं भ्रष्टाचार का विस्तृत फ़लक पर उल्लेख किया गया है। भ्रष्ट राजनीतिज्ञों को चित्रित करते हुए 'टोपियां'शीर्षक कविता अवलोकनीय है :

पहली राज करती थी टोपियां
बदनाम हो गई
उन्हें सिर से उतार कर फ़ेंक दिया गया
अब राज करते हैं
कुछ नंगे सिर
जिस दिन ये सिर बदनाम हो जाएंगे
क्या सचमुच फ़ेंक दिये जाएंगे [11]

प्रफुल्ल कुमार परवेज़ इस पहाड़ी क्षेत्र से जुड़े अगले समकालीन कवि हैं। इन्होंने 'संसार की धूप' कविता-संग्रह के प्रकाशन द्वारा अपने समय, समाज और आम आदमी की आवाज़ को व्यक्त किया है। इनकी कविताएं अपने भौगोलिक, सांस्कृतिक परिवेश को लेकर आश्वस्त और सहज है, जो हमारे समाज और मध्यवर्गीय मानस की वास्तविक दशा की पड़ताल है। इनकी गरीबदास, पत्ते, चढ़ाई, फ़िलहाल, मिस्त्री, ड्राइवर, पित्ता, नदी इत्यादि कविताएं विवेचनीय है। कविता में विद्यमान लोक वेदना पाठकीय मर्म को भेद देती है :

जिसके जीने या मरने से
कहीं कोई फ़र्क नहीं पड़ता
वह इलाज के लिए
सिविल अस्पताल में
कतारबद्ध है -
लोकतांत्रिक छूट के तहत
लोग पगडंडियों पर/ भटके हुए हैं [12]

हिमालयी क्षेत्र में समकालीन कविता लेखन में उल्लेखनीय नाम है वरयाम सिंह। इन्होंने 'हिमाचल समाचार तथा अन्य कविताएं' तथा 'दयालु की दुनिया' कविता संकलनों के द्वारा अपनी पहचान बनाई है। कवि ने अपने समकालीन जीवन में सामाजिक, राजनीतिक स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार और आम आदमी के विरुद्ध रचे गये षड्यंत्रों का खुलासा किया है, साथ ही पहाड़ी लोक-जीवन में व्याप्त परंपराएं, आस्थाएं, रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों को जीवंत अभिव्यक्ति दी है। कवितांश की ये बानगी एक उदाहरणीय है -

पूरा गांव भर आया है कमरे में
बकरा कटा भी नहीं
उसके पकने की खुशबू अभी से आने लगी है
बकरे के अभी ना कटे होने की सच्चाई को झुठलाती
उसके पकने की खुशबू
देवता को मनाने लगी है [13]

इस प्रकार पश्चिमी हिमालय में जीवन बसर करने वाले अनेक कवि हैं, जिन्होंने समकालीन हिन्दी कविता को समृद्ध-सम्पन्न किया है। इस क्षेत्र में शरत 'मुक्त अधरों के कारावास', 'नाकाबन्दी की बगावत,' देवेन्द्र धर 'ज़मीन तलाशते शब्द', तेज राम शर्मा 'कंप्यूटर पर बैठी लड़की', मोहन साहिल 'एक दिन टूटेगा पहाड़', अजेय 'इन सपनों कौन गायेगा', आत्माराम रंजन 'पगडंडियां गवाह हैं', ओम भारद्वाज 'बर्फ़ हुआ आदमी', नवनीत शर्मा 'ढूंढना मुझे,' पवन चौहान 'किनारे पर चट्टान' इत्यादि नाम समकालीन हिन्दी कविता में उल्लेखनीय हैं। यद्यपि इधर सैंकड़ों कवि इस क्षेत्र में कविता-प्रणयन कर रहे हैं, लेकिन हिंदी कविता की समकालीनता का निर्वहन सभी कवि नहीं कर पा रहे हैं।

अतः पश्चिमी हिमालय क्षेत्र, जिसमें वर्तमान हिमाचल और उत्तरांचल का इलाका आता है, में समकालीन हिन्दी कविता-लेखन की समृद्ध एवं उत्कृष्ट परंपरा है। यहां लीलाधर जगूड़ी, मंगलेश डबराल, कुमार कृष्ण जैसे कवि हैं, जिन्होंने समकालीन हिंदी कविता को राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावित किया है और कविता के नये प्रतिमान स्थापित किये हैं। वैसे तो पहाड़ के तमाम कवियों ने पहाड़ के जीवन-संघर्ष को किसी न किसी रूप में व्यक्त किया है, फ़िर भी लीलाधर जगूड़ी और कुमार कृष्ण की कविताओं में ग्रामीण जीवन की सजीवता से समकालीन हिन्दी कविता में ग्रामीण संवेदना की जीवंत अभिव्यक्ति हुई है।

डा. सत्यनारायण स्नेही, विभागाध्यक्ष हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय ठियोग,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश

संदर्भ :

1. लीलाधर जगूडी, जितने लोग उतने प्रेम, पृ. 38
2. लीलाधर जगूड़ी, घबराये हुए शब्द, पृ. 36
3. मंगलेश डबराल, पहाड़ पर लालटेन, पृ. 14
4. शरत(सं.) कुमार कृष्ण की कविता में ग्रामीण बोध, पृ. 6
5. कुमार कृष्ण, घमर, फ़्लैप से उद्धृत
6. कुमार कृष्ण, खुरों की तकलीफ़, पृ. 23
7. कुमार कृष्ण,गांव का बीज गणित, पृ. 69
8. सतीश धर, कल की बात, पृ. 24
9. सतीश धर, सलमा खातून नदी बन गई, पृ. 3
10. आनंद, आग की गंध, पृ. 29
11. यादवेंद्र शर्मा, किले में कैद होकर, पृ. 1
12. प्रफुल्ल कुमार परवेज़, संसार की धूप, पृ. 28-29
13. वरयाम सिंह, हिमाचल समाचार तथा अन्य कविताएं, पृ. 41

आलेख

चैहणी कोठी और बंजार क्षेत्र का पुरातत्व

◆ देवेंद्र गौड़

चैहणी कोठी नौ मंजिला 300 वर्ष पुराना ठेठ सराजी काठकुणी शैली में बना किला है। 1905 के कांगड़ा क्षेत्र में आए भीषण भूकंप के दौरान इस किले की ऊपरी दो मंजिलें क्षतिग्रस्त हो गयी थी, जिन्हें बाद में गिरा दिया गया था। वर्तमान में यह किला सात मंजिल का है। चौहणी कोठी जिला कुल्लू के उपमंडल बंजार के मुख्यालय से आठ किलोमीटर की दूरी पर समुद्र तल से 7000 फुट की ऊंचाई पर चौहणी नामक ग्राम में स्थित है। यह किला ढाढी नामक ठाकुर के वंशजों द्वारा निर्मित किया गया है। पहाड़ी वास्तु स्थापत्य और पुरातत्व की दृष्टि से यह किला कुल्लू जिला में ही नहीं बल्कि प्रदेश भर में एक विशिष्ट स्मारक है। यद्यपि हिमाचल में राजाओं द्वारा निर्मित अनेक भव्य मन्दिर, राजप्रासाद और कई तरह के भवन हैं। परन्तु एक छोटे से सामन्त द्वारा इतने छोटे स्थान पर इतनी ऊंचाई पर बनाया गया किला अपनी अलग पहचान रखता है। उपरोक्त ठाकुर के अत्याचार और पापाचार से त्रस्त स्थानीय निवासियों को बंजार क्षेत्र के अधिष्ठाता देव श्रृंगा ऋषि ने अपने तपोबल से उसे परिवार सहित समूल नाश कर दिया। तब से यह सारा किला और ठाकुर की सारी सम्पत्ति देवता के संरक्षण में है। बंजार की स्थानीय बोली में देवताओं के निवास स्थान को कोठी कहते हैं। संरक्षण में आने के बाद देवता श्रृंगा ऋषि द्वारा अपनी कुछ विशेष अजित कलाओं (शक्तियों) को इस किले में स्थापित किये जाने के फलस्वरूप, तब से इस किले का नाम चौहणी कोठी पड़ा। एक उच्च कोटी के वास्तुशिल्प की दृष्टि से इस किले की विशेषता इसलिए है, जब 1905 के भूकंप के द्वारा 3 बाई और 2 बाई मंजिला काठकुणी शैली से निर्मित मकान बुरी तरह से ध्वस्त हो गया था, उस समय इस किले की केवल ऊपर की दो मंजिलें आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त हो गयी थी। उन क्षतिग्रस्त दो मंजिलों को गिराकर और सातवीं मंजिल में पुनः पूर्ववत छत लगा दिया गया। किले का वास्तर अर्थात लम्बाई चौड़ाई 11बाई11 हाथ है। किले की निचली 4 मंजिलें घड़े हुए स्थानीय हल्के भूरे रंग के पत्थरों से निर्मित है। जिन में दयार की लकड़ी के शहतीर केवल मंजिल पूरी होने पर ही लगाया गया है। इससे ऊपर की 3 मंजिलें स्थानीय सफेद पत्थर की काठकुणी शैली में निर्मित है। ऊपरी मंजिल में पहाड़ी घरों की तरह चारों ओर को 3 फुट चौड़ी बालकोनी है जिस पर लकड़ी की रेलिंग लगी है। जिसे स्थानीय बोली में फिर्की वाली बालकोनी कहते हैं। छत पर पत्थर के सलेटों (चकों) का प्रयोग किया गया है। किले की निचली 3 मंजिलों तक ऊपर चढ़ने के लिए बाहर से ही लकड़ी की 20 फुट के करीब सीढ़ी लगाई गई है। जिसे समय-समय पर क्षतिग्रस्त होने पर पुनः निर्मित करना पड़ता है। तीसरी से चौथी मंजिल के लिए बाहर से ही अलग सीढ़ी लगाई गई है। चौथी से सातवीं मंजिल तक पहुंचने के लिए सीढ़ियां अन्दर से लगाई गई है। चौथी मंजिल से पहली मन्जिल तक नीचे की तरफ अन्दर से सीढ़ियां लगाई गई है। इन निचली मंजिलों का उपयोग आपातकाल में अनाज और शस्त्रों को रखने के लिये किया जाता था। जबकि ऊपर की मंजिलों में चारों ओर छोटे-छोटे झरोखे रखे हैं। जिन से बन्दूकों की नलियों को बाहर निकाल कर अन्दर से शत्रुओं एवम् आक्रमणकारियों पर गालियां चलाई जा सके। सबसे ऊपर की मंजिल आपातकाल में अपने रहने हेतु प्रयोग की जाती है। आपातकाल में बाहर की लम्बी सीढ़ी गिराकर अथवा तोड़कर किले के अन्दर परिवार सुरक्षित रखा जाता था। वर्तमान में उक्त कोठी की ऊपरी मंजिल में देवता द्वारा जोगनियां (योगनिया ऊंचे पर्वतों पर निवास करने वाली कुंवारी देवियां/कालियां) स्थापित की गई हैं। वहां पर अनेक मोहरें विशेष पत्थर की पिण्डी नुमा मूर्तियां है। इन जोगनियों की विशेष पर्वों पर पूजा की जाती है।

इसके अतिरिक्त इस किले से लगभग दो किलोमीटर एक सुरंग दक्षिण पूर्व दिशा में 'भचक' नामक स्थान में निकलती है। इस स्थान पर पानी का प्राकृतिक स्रोत है। आपातकाल में पानी की आपूर्ति के लिए, दुश्मन से बच कर भागने के लिए, इन दोनों कार्यों के लिए उक्त सुरंग का उपयोग किया जाता था।

जिला कुल्लू के बंजार विधान सभा क्षेत्र में घर और मन्दिर निर्माण की शैली एवं प्रक्रिया

वर्तमान जिला कुल्लू पूर्व में उझी, लग्महरजा, रुपी और सिराज इन चार क्षेत्रों में विभक्त था। बाद में सिराज क्षेत्र विस्तृत और कुल्लू से दूरस्थ होने के कारण दो क्षेत्रों में विभक्त किया गया।



बाह्य सिराज और भीतरी सिराज। वर्तमान में बाह्य सिराज जिला कुल्लू को आन्नी विधान सभा क्षेत्र कहते हैं, जबकि भीतरी सिराज को बंजार विधान सभा क्षेत्र कहते हैं। जिस प्रकार हर क्षेत्र की बोली, भाषा, प्रथा, परम्परा होती है उसी प्रकार प्रत्येक क्षेत्र की अपनी शिल्प कला एवम् वास्तु कला होती है। गृह एवम् मन्दिर निर्माण की जिस प्रक्रिया का यहां वर्णन किया जा रहा है ये बंजार क्षेत्र के अतिरिक्त कुल्लू के आनी विधान सभा क्षेत्र और जिला मण्डी के सिराज विधान सभा क्षेत्र में भी प्रचलित है। यद्यपि बोली भाषा में 10 किलोमीटर पर थोड़ा बहुत परिवर्तन हो जाता है। जहां तक गृह और मन्दिर निर्माण की प्रक्रिया का सम्बन्ध है यह प्रक्रिया न केवल हिमाचल में बल्कि समूचे उत्तर भारत में कुल मिलाकर एक समान है। क्योंकि हम सभी शास्त्रों और पुराणों में वर्णित विधि विधान के अनुसार ही हर शुभ कार्य करते हैं। फिर भी देश काल और भौगोलिक कारणों से इसमें थोड़ा बहुत अन्तर आता ही रहता है।

जब क्षेत्र की भवन निर्माण सामग्री और शैली की बात की जाये तो क्षेत्र में बनने वाले मकानों में पत्थर, लकड़ी और मिट्टी का प्रयोग होता है। और चिन्नाई देशज अर्थात काठकुणी में की जाती है। मकान पारम्पारिक पहाड़ी देशज और ठेठ सराजी शैली में निर्मित किये जाते हैं। निर्माण में 60-70 प्रतिशत लकड़ी और 30-40 प्रतिशत सलेट सहित पत्थर का प्रयोग किया जाता था। परन्तु वर्तमान में लकड़ी की कमी के कारण इस का प्रयोग 10-20 प्रतिशत रह गया है, और पत्थर, मिट्टी और सलेट का स्थान ईंट, सीमेंट और टीन की चदरों ने ले लिया है।

घर और मन्दिर निर्माण में अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है :-

भूमि पूजन

चयनित स्थान में जब पहली बार मकान अथवा मन्दिर की बुनियाद यानी नींव खोदने के लिए प्रथम बार कुदाली या फावड़ा चला कर भूमि को समतल किया जाता है, उस समय शास्त्रानुसार शुभ मुर्हत देख कर भूमि की संक्षिप्त पूजा की जाती है।

शिलान्यास

बुनियाद की खुदाई हो जाने के बाद जब नींव का प्रथम पत्थर लगाया जाता है उसे शिलान्यास कहते हैं। और स्थानीय बोली में (पाथरु लाउना) भी कहा जाता है। शुभ मुहूर्त देख कर घर के स्वामी से पूजा करवाकर नींव के दाहिने ओर पत्थर/शिला भूमि में स्थापित की जाती है। जिसे स्थानीय बोली में (धुरा पाथरु) भी कहा जाता है। शिलान्यास वाले पत्थर में छेद करके उसमें अथवा उस पत्थर के नीचे सिक्का, ग्रन्थ, कलश, सुपारी और चान्दी के सर्प युगल को रखा जाता है।

द्वार शाखा स्थापन

अगली प्रक्रिया में पहले दरवाजे की चार लकड़ियों के ढांचे को खड़े करने की प्रक्रिया को द्वार शाखा स्थापन या शायन खड़ी करना कहते हैं। शुभ मुहूर्त देख कर विधिवत पूजा करवाकर ये प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है।

छत निर्माण

घर निर्माण की चतुर्थ प्रक्रिया में छत डालने की प्रक्रिया होती है। इसका शुभारम्भ छत के प्रथम सलेट लगाने से होता है। ये सलेट पत्थर की खानों से निकाले गये पत्थर के चक्के होते हैं। ये चक्के विभिन्न मापों में होते हैं। उक्त प्रथम सलेट लगाने के लिये मकान के दक्षिण कोण का चयन किया जाता है।

गृह प्रवेश

गृह निर्माण की अन्तिम प्रक्रिया में घर प्रवेश आता है। जिसे स्थानीय बोली में घरांगणी/घरासनी भी कहते हैं। जब मकान पुरी तरह तैयार होकर रहने योग्य हो जाता है। तब शुभ मुहूर्त देख कर गृह प्रवेश एवम् गृह प्रतिष्ठा का दिन निश्चित किया जाता है। गृह प्रवेश के मुहूर्त एवम् दिन के अतिरिक्त उपरोक्त वर्णित सभी प्रक्रियाओं के मुहूर्त और दिन शास्त्र/पंचांग को देखने के बाद अपने-अपने कुल देवता अथवा इष्ट देवता से आज्ञा लेकर निश्चित किये जाते है। स्थानीय परम्परा अनुसार गृह प्रवेश के दिन कुल देवता और इष्ट देवता को भी निमंत्रित किया जाता है। इस दिवस को शुभ मुहूर्त की बेला में गृह स्वामिनी अन्न का पात्र लेकर

अन्य चार व्यक्तियों के साथ जिनके हाथों में जल पात्र, धार्मिक ग्रन्थ, गीता, जलाई हुई मशाल, गाय/गाय के गोबर के साथ घर में प्रवेश करते हैं। इनके साथ देवता भी घर में प्रवेश करता है। घर के भीतर जा कर पुरोहित द्वारा पूजा तथा हवन किया जाता है।

मकान के माप और वास्तु जिसे स्थानीय बोली में वास्तर कहा जाता है का चयन व्यक्ति की वित्तीय स्थिति के अनुसार किया जाता है। माप के लिये फुट अथवा मीटर के स्थान पर हाथ का प्रयोग किया जाता है। हाथ की लम्बाई डेढ़ होती है क्योंकि ये वास्तर 9 बाई 9 से 99 बाई 99 तक होता है।

जहां तक मंजिलों का सम्बन्ध है पुराने समय में बनने वाले संभ्रात लोगों के घर साढ़े तीन मंजिल और आम लोगों के घर ढाई मंजिल के होते थे। साढ़े तीन मंजिल में नीचे वाली मंजिल में गोशाला/ भेड़, बकरी शाला जिसे खुड़ कहा जाता है। दूसरी मंजिल में भंडार जिस का प्रयोग अनाज, कपड़े, बर्तन के साथ भेड़, बकरियों के छोटे बच्चों को रखने हेतु किया जाता है, जिसे फौहड़ कहते थे। तीसरी मंजिल का प्रयोग रिहायश अर्थात रहने हेतु किया जाता है, जिसे वाहुड़ कहा जाता है। चौथी मंजिल आधी हाती है जिसके ऊपर सलेट की छत होती है। रसोई घर के रूप में प्रयोग की जाती है। जिसे स्थानीय बोली में टाहला कहते हैं। आज साढ़े तीन मंजिल की जगह ढाई मंजिल के मकानों का प्रचलन है। जिसे स्थानीय बोली में वांग्ला कहा जाता है। क्योंकि आजकल निचली अर्थात पहली और दूसरी मंजिलों का प्रयोग रहने के लिये किया जाता है। जबकि तीसरी मंजिल आधी होती है का उपयोग रसोई की जगह स्टोर या भंडार के रूप में प्रयोग किया जाता है।

रसोई घर के प्रयोग के लिये पहली और दूसरी मंजिल के पीछे वाले कमरों में किया जाता है। जिन्हें पेन्टरी कहा जाता है। पशुओं के लिये अलग से वस्ती से थोड़ी दूरी पर बनाये गए विशेष मकान जिन्हें खौहल कहा जाता है, में रखा जाता है। बंजार क्षेत्र में घास रखने और फसल निकालने के लिए पहले से ही बस्ती से बाहर डेढ़ मंजिल खुला मकाननुमा घर का निर्माण किया जाता है। जिसे उपरोक्त खौहल अथवा पछाड़ा कहा जाता है। पिछले कुछ समय से ही इस खौहल में पशुओं को रखने का प्रचलन शुरु हुआ है।

मन्दिर निर्माण : बंजार क्षेत्र में पारम्परिक मन्दिर दो प्रकार के होते हैं।

1. वह मन्दिर जहां से देवता का प्रार्दुभाव हुआ हो अर्थात जहां से उक्त देवता की उत्पत्ति हुई हो, जिसे देवता का मूल स्थान भी कहा जाता है। यह स्थान प्रायः पर्वत या जंगल में और बस्ती के बाहर एकान्त में होता है। इस स्थान पर बने या बनाये गये मन्दिर को स्थानीय बोली में 'देहुरा' कहते है।

दूसरा मन्दिर जहां देवता का रथ (स्थानीय परम्परागत मूर्ति) अथवा पालकी रखी जाती है उस मन्दिर को स्थानीय बोली में 'कोठी' कहा जाता है। इन दोनों प्रकार के मन्दिरों की बनावट वास्तुशिल्प एवं स्थापत्य कला अलग-अलग होती है। जबकि निर्माण करते समय अपनाई जाने वाली प्रक्रियाएं लगभग समान होती है।

देहुरा अथवा देवता के मूल स्थान पर निर्मित मन्दिर की निर्माण प्रक्रिया

भूमि पूजन : गृह निर्माण की तरह ही शुभ मुहूर्त देख कर देवता से आज्ञा लेकर भुमि पुजन किया जाता है।

शिलान्यास : अगली प्रक्रिया में भी देवता की आज्ञा लेकर शिलान्यास किया जाता है।

नास स्थापन एवं चक्रनासी किलणां : उक्त निर्माण की अगली प्रक्रिया में नास स्थापन आता है। बंजार एवं कुल्लू की स्थापित्य शैली के अनुसार मन्दिर दो प्रकार से निर्मित किये जाते हैं। एक त्रिभुज शैली छत अर्थात तम्बू आकार दूसरा पैगोड़ा शैली वाला छत। दोनों प्रकार वाले मन्दिरों में नास स्थापित किये जाते हैं। पत्थर की नींव के ऊपर रखे गये लकड़ी के बड़े-बड़े शहतीरों को 'नास' कहते हैं। इन शहतीरों को मन्दिर के वास्तु (लम्बाई-चौड़ाई) अनुसार जमीन से 6-8 इंच ऊपर पत्थर की नींव पर स्थापित किया जाता है। इन शहतीरों को बड़ी-बड़ी कीलों या लकड़ी के सिरों को आधा-आधा काट कर (Carb) करके आपस में जोड़ दिया जाता है। जिसे स्थानीय बोली में चक्रनासी किलणां कहते हैं। इन नासों की संख्या 4 से 8 तक होती है। 2 लम्बाई में 2 चौड़ाई में मन्दिर के लघु और विशाल आकार के अनुसार होती है। इन नासों का आकार काफी बड़ा होता है। प्रायः डेढ़ बाई डेढ़ फुट से 3X3 फुट तक इनकी मोटाई होती है। जबकि लम्बाई वास्तुनुसार प्रायः 5 हाथ से 11 हाथ तक होती है। यह शहतीर प्रायः दियार/रई/तोश में से किसी वृक्ष की लकड़ी की होती है। आज कल बनने वाले मन्दिरों में उक्त नासों की मोटाई डेढ़ बाई डेढ़ फुट तक ही सीमित रह गये हैं। जबकि पुराने मन्दिरों में स्थापित नास इन से दुगने आकार की मोटाई के होते थे। लकड़ी के यह शहतीर ही वास्तव में उक्त देहुरे की नींव होते हैं। इन नासों पर लकड़ी के स्तंभ (थाम्बे) खड़े करके मन्दिर की छत का निर्माण किया जाता है।

दक्षिण स्तंभ स्थापन : मन्दिर का धरातल एवं नींव तैयार हो जाने के बाद उन नासों (शहतीरों) के ऊपर लकड़ी के 4-6 विशाल स्तंभ जिन्हें 'थाम्बे' या 'थाम्भलू' कहा जाता है, को खड़ा किया जाता है। इनकी लम्बाई 6-8 फुट तक होती है। पूर्व में यह स्तंभ नक्काशी रहित होते थे परन्तु अब इनमें नक्काशी भी की जाती है। इन स्तंभों में सबसे पहले दक्षिण दिशा का स्तंभ खड़ा करके स्थापित किया जाता है जिसकी विधिवत पूजा की जाती है। इन स्तंभों के ऊपर लकड़ी के छोटे शहतीरों का जोड़ डालकर छत डालने की प्रक्रिया आरम्भ की जाती है।

छत : पुनः मुहूर्त देख कर तथा देवता से आज्ञा लेकर छत

डालने के लिए पूजा की जाती है। छत प्रायः सलेट का फिर लकड़ी के मोटे फट्टों का लगाया जाता है। पूजा के समय प्रथम सलेट या फिर प्रथम फट्टा जोकि दक्षिण दिशा मे छत के छोर पर लगाया जाता है, के साथ सम्पन्न की जाती है।

गर्भ गृह निर्माण : प्रत्येक मन्दिर में देहुरे के अन्दर छोटे से मन्दिर के आकार का ही एक छोटा मन्दिर बनाया जाता है, जिसे स्थानीय बोली में 'पघुरी' कहते हैं। इस मन्दिर में देवता की शैल पिंडी/लिंग, पत्थर/संगमरमर की मूर्ति स्थापित रहती है।

नाला एवं कौंशा स्थापन : मन्दिरों की छतों के बनावट अनुसार दो प्रकार के होते हैं। पैगोड़ा शैली अथवा तम्बू शैली। बंजार में अधिकतर मन्दिरों की छत तम्बूनुमा होती है। तम्बूनुमा छत में जहां से दोनों ओर को ढलान शुरू होती है वहां पर एक लम्बी शहतीर एक छोर से दूसरे छोर तक स्थापित की जाती है, जिसे नाला या कौंशा कहते हैं। लकड़ी की इस शहतीर को अन्दर से खोद कर (Carb) छत की रीढ़ पर उल्टा करके फिट (Fix) कर दिया जाता है ताकि खुदे हुए स्थान के अन्दर छत के दोनों तरफ के सलेट या फट्टे उस के नीचे दब जाये। नाले के ऊपर का भाग शहतीर की तरह सपाट रखा जाता है जिस पर कलश और त्रिशूल या ध्वजा इत्यादि स्थापित की जाती है। इसके अतिरिक्त उक्त नाले के ऊपर मन्दिर की प्रतिष्ठा के समय तथा देवता के अन्य कार्यों के अवसर पर, बैठ कर अथवा खड़े होकर कार्यावाहियां सम्पन्न की जाती है।

मन्दिर प्रतिष्ठा : पुनः शुभ मुहूर्त देख कर तथा देवता की अनुमति से मन्दिर की प्रतिष्ठा की जाती है। इन सभी प्रक्रियाओं को देवता के प्रतिनिधि के रूप में देवता का कारदार/गूर तथा दूसरी ओर से देवता का पुरोहित सारे अनुष्ठान को सम्पन्न कराता है।

मन्दिर की प्रतिष्ठा की दूसरी प्रक्रिया में मन्दिर के चारों ओर रक्षा सूत्र बांधना है। यह रक्षा सूत्र स्थानीय जंगली घास जिसे मुंज या मुंजी कहते हैं, को काट कर (वट कर) बनाया जाता है। इस घास के सूत्र (डोर) की मोटाई 1/2 से 1 इंच तक होती है। इसे मन्दिर के एक कोणे से शुरू करके उसी कोणे तक चारों ओर से लगा कर पुनः उसी स्थान पर वापिस बांध दिया जाता है। इसे सूत्र वान्हणा या सूत्र फेरना कहा जाता है। इसके साथ मन्दिर निर्माण की प्रक्रिया समाप्त होती है। उपरोक्त प्रत्येक आठ चरणों की पूजा के समय नारियल की बलि दी जाती है। यद्यपि बंजार क्षेत्र में छोटे बड़े 200 से अधिक मन्दिर (देहुरे) होंगे परन्तु इनमें मुख्य संकीर्ण, जिभी, सरयोलसर, लगीशर वला् वाहु पेड़चा, पलाहच, वालौ, गुशैणी इत्यादि के मन्दिर मुख्य हैं।

पूज (पूजअ) : पूज शब्द पूजा का ही अपभ्रंश एवं पर्याय है। यहां पूज से अभिप्राय बंजार क्षेत्र में कुल देवता के मूल मन्दिर और नवीन देव रथ के निर्माण अवसर पर आयोजित की जाने वाली सामूहिक पूजा से है। पूज बंजार क्षेत्र का विशिष्ट एवं अनूठी परम्परा है, जो विश्व का अनोखा एवं सबसे भिन्न आयोजन है। जब कुल देवता का मूल मन्दिर अर्थात देवता के उद्‌भव स्थान पर बनाये जाने वाले मन्दिर का नव निर्माण पुनर्निर्माण एवं जीर्णोद्वार किया जाता है और दूसरे जब कुल देवता के रथ अर्थात पालकी का नव-निर्माण किया जाता है। इन दोनों अवसरों पर जब निर्माण पूर्ण हो जाता है, उस समय पूज का आयोजन किया जाता है। पूज एक देव सम्मान में आयोजित एक पारम्परिक कार्यक्रम है। जिसे अग्रलिखित रूप में मना कर कार्यन्वित किया जाता है :-

कुल देवता के हरियान अर्थात उस देवता को मानने वाले उस पंचायत या फाटी या गांव के लोग देव मन्दिर के निर्माण और देव रथ के निर्माण के अवसर पर अपने-अपने घरों की छत के ऊपर लगभग एक समय में देव सम्मान में शाक्तिक विधि से पूजा-अर्चना करते हैं। समय का निर्धारण पहले ही लग्न मुहूर्त के अनुसार ज्ञात होता है परन्तु अन्तिम क्षण का निर्णय देवता ही अपने गुर के माध्यम से 'अमृता घड़ी अमृता बेला' कह कर करता है। उस समय पूजा के स्थल पर बन्दूक द्वारा हवाई फायर की जाती है ताकि आस-पास के गांव वालों को पता चल सके। जिन घरों में बन्दूक होती है वह गांव वाले भी तुरन्त हवा में गोली चला देते हैं ताकि दूरस्थ अगले गांवों के लोगों को भी पता चल सके। शाक्तिक पूजा के अवसर पर सभी गृहस्थों द्वारा शादी ब्याह की भान्ति अपने रिश्तेदारों और मित्रों को निमन्त्रित करके रखा होता है ताकि शानदार/स्वादिष्ट भोज दिया जा सके जो लोग शाकाहारी होते हैं, उनके लिए शाकाहारी भोजन की व्यवस्था की जाती है। भोजन के अवसर पर गीत-संगीत एवं नृत्य का आयोजन किया जाता है। परन्तु कई स्थानों पर शराब भी परोसी जाती है।

पूजा के अन्तिम क्षण जिस समय बन्दूक द्वारा हवा में गोली चलाई जाती है वही पूज की बेला कहलाई जाती है। मन्दिर निर्माण के अवसर पर जब मन्दिर पूरी तरह तैयार होकर मन्दिर के ऊपर नाला अथवा कौंशा के ऊपर बलि चढ़ाई जाती है तथा नवीन रथ के निर्माण के समय जब देवता का मुख्य मोहरा जिसे स्थानीय बोली में 'मलीमुख' कहा जाता है को रथ में प्राण प्रतिष्ठा उपरान्त स्थापित किया जाता है वही पूज की बेला होती है। देव रथ बनाने की प्रक्रिया देव मन्दिर में अथवा गांव के किसी स्थान विशेष में सम्पन्न की जाती है जबकि पूज का मुहूर्त प्रायः रात के समय का ही रहता है, प्रायः इसे भाद्र या पौष महीने में आयोजित किया जाता है।

दूसरा मन्दिर या देव कोठी का निर्माण : जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है कि देवता के दूसरे मन्दिर को जिसमें देवता का रथ/पालकी (परम्परारिक मूर्ति) विराजमान रहती है, को स्थानीय बोली में कोठी कहते हैं। जिला कुल्लू के अन्य क्षेत्रों यथा कुल्लू- ऊझी-रूपी और आऊटर सिराज (आनी-निरमण्ड) में

देवताओं के रथ/पालकी बारह-महीने मूर्ति आकार अर्थात रथ साज-शृंगार के साथ नहीं रहते हैं। रथ को खोल दिया जाता है, उससे मुख-मोहरें वस्त्र शृंगार तथा लकड़ी की पालकी को अलग-अलग करके देवता के भण्डार में बन्द करके रख दिया जाता है। जबकि बंजार क्षेत्र में देव रथ/पालकी को बारह महीने यथावत रखा जाता है और प्रतिदिन प्रातः सांय पूजा अर्चना की जाती है। अतः जहां यह देव रथ/देव पालकी रखी जाती है, उस भवन को कोठी कहा जाता है। मूल मन्दिर के निर्माण की तरह इस मन्दिर के निर्माण प्रक्रिया भी विभिन्न चरणों में होती है। मूल-मन्दिर छोटा तथा लकड़ी के स्तंभों पर एक ढांचे के रूप में होता है जबकि कोठी एक भव्य भवन की भान्ति होती है। निर्माण प्रक्रिया के चरण अग्रलिखित हैं :

भूमि पूजन

शिलान्यास : उपरोक्त दोनों चरण मूल मन्दिर/देहुरे निर्माण की भान्ति ही सम्पन्न किये जाते है।

मुख्यद्वार शाखा स्थापन : देहुरे में मुख्यद्वार शाखा के स्थान पर दक्षिण स्तंभ होता है जबकि गृह निर्माण में मुख्यद्वार शाखा का स्थापन किया जाता है। कोठी की द्वार शाखा विशाल एवं भव्य होती है। इस मुख्य द्वार शाखा को स्थानीय बोली में 'परौऊल' कहते हैं। इस मुख्यद्वार/ परौऊल की लम्बाई-चौड़ाई सामान्य दरवाजों से बड़ी तो होती ही है परन्तु इस दरवाजे में जो दो ऊंचाई वाले और चौड़ाई वाला शहतीर होता है। उन की संख्या एक के स्थान पर तीन या पांच होती है। प्रायः दरवाजे में ड्योढ़ी के अतिरिक्त दो शहतीर ऊंचाई में और एक चौड़ाई वाला लकड़ी का शहतीर होता है। 'परौऊल' में 3 के स्थान पर 9 या 15 शहतीर, एक के बाहर दूसरा दीवार के मध्य में लगाकर इसे विशाल बनाया जाता है। इन सभी लकड़ियों पर सुन्दर नक्काशी की जाती है। भव्यता के साथ यह दरवाजा विशाल और मजबूत भी होता है ताकि मन्दिर में कोई संदिग्ध अथवा चोर इत्यादि असमय प्रवेश न कर सके।

छत लगाना (छापर छई) : यह प्रक्रिया देहुरे की तरह कार्यान्वित की जाती है। दक्षिण दिशा में पहला सलेट स्थापित करके सारे छत में सलेट अथवा लकड़ी के फट्टे लगाकर सम्पूर्ण की जाती है। इन सलेटों की लम्बाई चौड़ाई और मोटाई आम घरों में लगाये जाने वाले सलेटों से बड़ी होती है। कोठी की छत देहुरे के छत से अलग प्रकार की होती है, ऊपर से यह भवन देहुरे से विशाल और भव्य भी होता है। छत दो प्रकार की होती है। एक नाले एवं कौंशे वाली (लकड़ी की विशाल शहतीर जो छत के एक कोने से दूसरे कोने तक जाती है) दूसरे पैगोड़ शैली की छत। पैगोड़ा शैली की छत पर कलश अवश्य लगता है जबकि नाले वाली छत पर कई बार कलश नहीं भी लगाया जाता है। कई बार एक अधिक संख्या में भी छत पर कलश लगाये जाते हैं।

रथ हेतु गर्भ गृह का निर्माण : देहुरे में जिस प्रकार गर्भ गृह का निर्माण किया जाता है, जहां देवता की शैल पिंडी अथवा शैल मूर्ति रहती है वही कोठी में जिस कमरे में देवता का रथ विराजमान रहता है वह कमरा कोठी का/रथ का गर्भ गृह कहलाता है। यह कमरा अन्य कमरों की अपेक्षा छोटा परन्तु लकड़ी अथवा धातु इत्यादि की नक्काशी द्वारा भव्य बनाया जाता है। जहां रथ विराजमान रहता है उस कमरे के छत पर भी बहुत सुन्दर नक्काशी की हुई होती है। उसी स्थान के उपर छत में कोठी का मुख्य कलश स्थापित किया हुआ होता है।

कोठी की प्रतिष्ठा : प्रतिष्ठा की प्रक्रिया देहुरे की तरह ही अपनाई जाती है जो रक्षा सूत्र के साथ समाप्त होती है। उक्त कोठी प्रायः साढ़े तीन मंजिल होती है और तीसरी मंजिल के चारों ओर लकड़ी की बालकोनी होती है। दरवाजों से लेकर दीवारों तक में लकड़ी की सुन्दर नक्काशी की हुई होती है। यह काठकुणी चीणाई में देशज शैली में निर्मित भव्य भवन होता है। इन दोनों प्रकार के मन्दिरों में लकड़ी का बहुत मात्रा में प्रयोग होता है।

देहुरों की ही भान्ति बंजार क्षेत्र में 200 से अधिक देव कोठियां हैं परन्तु उनमें वागी कोठी, बान्दल कोठी, चौंऊट कोठी, कलवारी कोठी, शिल्ह, ढीओं, वला् की देव कोठियां प्रसिद्ध हैं।

गायत्री कुटीर परगानू,
पत्रालय एवम् तहसील भून्तर, जिला कुल्लू,
हि.प्र.-175123, मो. 0 94181 63568

जिला कुल्लू के अन्य क्षेत्रों यथा कुल्लू- ऊझी-रूपी और आऊटर सिराज (आनी-निरमण्ड) में देवताओं के रथ/पालकी बारह-महीने मूर्ति आकार अर्थात रथ साज-शृंगार के साथ नहीं रहते हैं। रथ को खोल दिया जाता है, उससे मुख-मोहरें वस्त्र शृंगार तथा लकड़ी की पालकी को अलग- अलग करके देवता के भण्डार में बन्द करके रख दिया जाता है। जबकि बंजार क्षेत्र में देव रथ/पालकी को बारह महीने यथावत रखा जाता है और प्रतिदिन प्रातः सांय पूजा अर्चना की जाती है। अतः जहां यह देव रथ/देव पालकी रखी जाती है, उस भवन को कोठी कहा जाता है। मूल मन्दिर के निर्माण की तरह इस मन्दिर के निर्माण प्रक्रिया भी विभिन्न चरणों में होती है। मूल-मन्दिर छोटा तथा लकड़ी के स्तंभों पर एक ढांचे के रूप में होता है जबकि कोठी एक भव्य भवन की भान्ति होती है।

आलेख

डॉ. बंशी राम शर्मा
पहाड़ी लोक साहित्य की महान विभूति

◆ रविंद्र कुमार शर्मा



हमारे देश में एक भाषा का सफर बहुत लंबा है जो पुरानी कई भाषाओं से गुजरती हई यहां तक पहुंची है जिसका नाम पहाड़ी भाषा है। भाषा ही हमारे एक दूसरे के विचार सांझा करने का एक माध्यम है। समय-समय पर बहुत आक्रमणकारी यहां आए जिनके हाव भाव, रूप और भाषा भी हमारी भाषा में सम्माहित हो गई। कई लेखकों व साहित्यकारों ने इसका वर्णन भी किया है। पहाड़, पहाड़ी भाषा और पहाड़ी संस्कृति पर बहुत से प्रदेश व देश के बाहर के साहित्यकारों ने काम किया लेकिन यहाँ सबसे पहले हम उस महान विभूति का वर्णन करेंगे जो हिमाचल प्रदेश के जिला बिलासपुर से संबंध रखते हैं तथा जिन्होंने पहाड़ी भाषा में बहुत काम किया है।

भाषा संस्कृति के साथ गहरे रूप से जुड़े हिमाचली लेखकों व साहित्यकारों की आकाशगंगा में चमकते बहुत सारे तारों में से शुक्रतारे की तरह दूर से चमकने वाले तारे का नाम है डॉ. बंसी राम शर्मा। डॉ. बंसी राम शर्मा का जन्म घुमारवीं तहसील के गांव कुठेड़ा (मरहाणा) में एक गरीब किसान परिवार में पिता तुलसी राम शर्मा व माता यशोधा देवी के घर 11 मई 1935 के शुभ दिन हुआ। खेती बाड़ी, पूजा पाठ, संस्कार, संस्कृति व सबसे प्रेम प्यार से रहने की सीख घर से मिली। उस समय स्कूल बहुत दूर-दूर होते थे लेकिन कोई भी कठिनाई उनकी पढ़ने की ललक को रोक नहीं सकी। उन्होंने आठवीं हमीरपुर जिला के भरेड़ी स्कूल से की जो घर से लगभग 25 किलोमीटर दूर था तथा वहां के लिए घर से पैदल ही आना जाना होता था। दसवीं बिलासपुर से की तथा उसके पश्चात बी. ए. प्राइवेट तथा जे. बी. टी. व बी. एड. सोलन से की। वर्ष 1956 से 1958 तक मिडिल स्कूल छंदोह में अध्यापक के तौर पर कार्य करते करते एम. ए. हिन्दी प्राइवेट रूप से की। इसी दौरान हटवाड़ स्कूल में भी पढ़ाने का मौका मिला। बाद में उनका स्थानांतरण भराड़ी स्कूल में हो गया। स्कूल में पढ़ाने के साथ-साथ ही अपनी पढ़ाई भी जारी रखी। इसी दौरान पंजाब यूनिवर्सिटी में पी. एच. डी. के लिए पंजीकरण भी करवा लिया तथा जयपुर के डॉ. सत्येंद्र उनके गाइड बने। डॉ. सत्येन्द्र ने उन्हें किन्नर लोक साहित्य पर शोध करने का सुझाव दिया क्योंकि इस पर राहुल सांकृत्यायन के एक यात्रा विवरण के अलावा कम ही काम हुआ था।

किन्नर लोक साहित्य पर शोध करने का निर्णय तो ले लिया लेकिन सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि वह स्वयं भराड़ी स्कूल में कार्यरत थे तथा अध्ययन किन्नौर पर करना था। उन्होंने काफी सोच विचार व घरवालों से भी विचार विमर्श करके निदेशक शिक्षा को अपना स्थानांतरण किन्नौर करने के लिए आवेदन कर दिया। ऐसा करने पर दोस्तों ने भी पागल तक कहा लेकिन उनके दृढ़ निश्चय के आगे सब बेकार था। उनके मन की मुराद पूरी हो गई तथा उनका स्थानांतरण किन्नौर हो गया। 1965 से 1968 तक चगांव स्कूल में रहे। कुछ समय के पश्चात अपनी पत्नी श्रीमति पुष्पलता का भी स्थानांतरण चगांव स्कूल में ही करवा लिया। इस दौरान छुटियों में पूरे किन्नौर के गांव-गांव में जाकर मेले, त्योहार, भाषा व संस्कृति पर काम किया और 1970 में किन्नर लोक साहित्य पर पंजाब विश्वविद्यालय से पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त कर ली।

भराड़ी में तैनाती के दौरान ही उन्हें एक पदोन्नति और मिल गई। उन्हें खंड प्राथमिक शिक्षा अधिकारी बना कर घुमारवीं भेज दिया गया। यहीं से 1972 में अनुसंधान अधिकारी के पद पर हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी में प्रतिनियुक्ति पर शिमला आ गए। वर्ष 1980 में इन्हें हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग के माध्यम से भाषा विभाग में सहायक निदेशक के पद पर नियुक्ति मिली जहां से वह उपनिदेशक के पद पर पदोन्नत हुये। 19 मई 1986 को भाषा कला एवं संस्कृति अकादमी के सचिव बने तथा 30 अप्रैल 1992 को इसी पद से सेवानिवृत्त हुये। अनुसंधान अधिकारी से लेकर सचिव तक के इस 20 साल के सफर में उन्होंने लोक भलाई, लोक साहित्य एवं लोक संस्कृति के लिए बहुत काम किया। इस सुनहरे दौर में उन्होंने प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री डॉ.

यशवंत सिंह परमार, भाषा एवं संस्कृति मंत्री श्री लाल चंद प्रार्थी व अपने से पहले के सचिव श्री हरी चंद पराशर व श्री मौलू राम ठाकुर की सोच को आमली जामा पहनाने का काम किया। उस समय के मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह, मंत्री श्री चंद्र कुमार, प्रोफेसर नारायण चंद पराशर, महाराज कृष्ण काव, गिरिजा शर्मा, सरोज संख्यान, डॉ. श्याम लाल डोगरा व पूरे प्रदेश के लेखकों एवं साहित्यकारों की मदद से बतौर प्रधान संपादक प्रदेश को 650 पन्नों का पहाड़ी-हिन्दी शब्दकोश दिया।

उस जमाने में मोबाइल फोन व संवाद के अन्य साधन नहीं थे। अतः पोस्ट कार्ड पर ही ज़्यादातर पत्र व्यवहार होता था। उन्होंने अकादमी का सचिव रहते हुये लोकसंस्कृति व लोकसाहित्य को बढ़ावा दिया तथा पूरे प्रदेश के न केवल पुराने बल्कि नए लेखकों, साहित्यकारों को आगे आने का मौका दिया। उनके समय में हिमाचली व अन्य प्रदेशों के लेखकों के अलावा विदेशी लेखक भी उनकी सेवाओं का लाभ उठाते थे तथा पोस्ट कार्ड के माध्यम से पत्राचार करते रहते थे। संस्कृत व पहाड़ी के विद्वान नागपुर के लोकनाथ शास्त्री प्रतिदिन नई रचना लिखते थे तथा पोस्ट कार्ड पर लिख कर शिमला भेजा करते थे। यह उनकी लेखनी, अध्ययन व समझ का ही कमाल था कि डोगरी भाषा व अन्य तीस भाषाएँ जानने वाले महान विद्वान पद्मभूषण डा सिद्धेश्वर वर्मा ने जब उनकी लिखी पुस्तक 'किन्नर लोक साहित्य' को पढ़ना शुरू किया तब वह प्रतिदिन एक पेज पढ़ने के बाद पोस्ट कार्ड पर अपनी प्रतिक्रिया शिमला भेजते रहे। इस तरह से उन्होंने लगभग आठ सौ पोस्ट कार्ड शिमला भेजे।

उन्होंने किन्नर लोक साहित्य, हिमालय की पौराणिक जन जातियां, हिमाचल लोक संस्कृति के स्रोत, देश एक कलाएं अनेक, हिमाचल प्रदेश, डिवाइन हेड्स डिविनिटी कल्ट्स, इंडिया रिपब्लिक इशू एंड प्रोस्पेक्ट, हिमाचल प्रदेश का स्वतन्त्रता इतिहास, हमारे स्वतन्त्रता सेनानी भाग-1, मिथ्स एंड लिजेंड्स, लेंगुएज प्लानिंग इन हिमाचल प्रदेश, तथा लाइफ एंड डेथ आदि पुस्तकें लिखीं। उनकी पकड़ हर विषय पर थी। डेमोक्रेसी वायस ऑफ पीपल, संसदीय प्रणाली, सामाजिक न्याय, गरीबी, भारतीय अर्थव्यवस्था, स्वदेशी, राजनीति में भ्रष्टाचार और गुनाह, मार्क्सवाद, हिन्दुत्व, यूनीफार्म सिविल कोड, सेकुलरिज्म,केंद्र व राज्य के संबंध, स्टेबिलिटी व न्यायिक गतिविधि, अटल बिहारी वाजपेयी प्रोफ़ाइल आदि विभिन्न विषयों पर उन्होंने लिखा। उनका काम देख कर पता चलता है कि उनकी हर विषय पर कितनी मजबूत पकड़ थी। वाल्यूम आफ हिमाचल प्रदेश, पहाड़ी भाषा और साहित्य सेमिनार प्रोसीडिंग्ज, माघ माला, हरिचरित एवं लोकगाथाएं, भाषा विज्ञान, कला और संस्कृति पर 14 पुस्तकों का सम्पादन भी किया। उन्होंने पहाड़ी हिन्दी शब्दकोश, डिक्शनरी आफ पहाड़ी हिन्दी, स्टेट पहाड़ी भाषा तथा साहित्य में पहाड़ी भाषा में लिखे गए बहुत से पहलुओं को छूआ। हिमाचल की पौराणिक जन जातियां किताब में उन्होंने हिमाचल प्रदेश की कुल 116 जातियां व जन जातियां व उनसे जुड़े हर पहलू पर काम किया। गढ़वाल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर दिनेश पराशर सकलानी के साथ मिल कर उन्होंने कम्यूनिटी आफ द हिमालयाज़ नामक एक पुस्तक लिखी। हिमाचल लोक संस्कृति के मूल स्रोत आदि किताबें भी लिखी। उन्होंने पहाड़ी भाषा तथा साहित्य भी डॉ. जगदीश शर्मा के साथ मिल कर लिखी। संस्कृति, लोक साहित्य और पहाड़ी भाषा पर उनकी रचनाएं व लेख लगभग एक सौ से जायदा पत्र पत्रिकाओं में छपे। उन्होंने हिमाचल,पंजाब व जम्मू कश्मीर विश्वविद्यालय के 20 एम फिल व 5 पी. एच. डी. शोध प्रबंधों का मूल्यांकन भी किया। आकाशवाणी शिमला, दूरदर्शन शिमला व दिल्ली से उनकी कई वार्ताएं समय समय पर प्रसारित होती रहीं। अकादमी में उन्होंने बहुत सारी योजनाएँ शुरू की तथा शोधकार्य व योगदान दिया। वह सोमसी व हिमभारती के संपादक भी रहे। उनके समय में भाषा काला एवं संस्कृति अकादमी ने पहाड़ी कला व संस्कृति के संरक्षण में अहम भूमिका अदा की। कई नए लेखक व कलाकार अपनी कला को बचाने के लिए आगे आए।

अकादमी से सेवानिवृत्त होने के बाद वर्ष 1995 में इंडियन इंस्टीट्यूट आफ एडवांस स्टडीज़ शिमला के फैलो भी रहे। जन जातीय संस्कृति व साहित्य का बहुत गहराई से अध्ययन किया। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय भोपाल से जुड़कर हिमाचल के खानपान, लोक संस्कृति, धार्मिक व्यवस्था, लोकसाहित्य, मूर्तिकला, काष्ठकला व भवन निर्माण आदि के प्रदेश के कोने-कोने में दुर्लभ पड़े पुरावशेषों, कलाकृतियों व पाण्डुलिपियों आदि का व्यापक रूप से संग्रहण किया ताकि इन एतिहासिक सूत्रों का अगली पीढ़ी के लिए संरक्षण हो सके। केन्द्रीय भाषा संस्थान मैसूर के निदेशक के साथ मिल कर हिमाचल कला के प्रतिरूप को वहां भी स्थापित किया। डॉ. बंसी राम शर्मा अंग्रेजी, हिन्दी व उर्दू भाषा के बहुत जानकार थे पर हिमाचल, हिमाचली साहित्य व लोक संस्कृति के हमेशा सपने बुनते रहते थे। असल में उनका पहला और आखिरी प्यार लोक संस्कृति ही थी और इसमें ही उनकी आत्मा बसती थी। लोक साहित्य का यह साधक 20 अप्रैल 2006 को अपने नश्वर शरीर को छोड़ कर लंबी यात्रा पर निकल गया जहां से कोई वापिस नहीं आता है। आज भी लोग उनके काम का लोहा मानते हैं।

पूर्व निदेशक (यूको आर्सेटी बिलासपुर)
नजदीक डी ए वी पब्लिक स्कूल, गाँव व डाकघर घुमारवीं
जिला बिलासपुर, हि. प्र.-174021
मो. 0 94180 93882, 0 70188 53800

शोध लेख

संविधान व महिला सशक्तीकरण

◆ डॉ. बलदेव सिंह नेगी

देश में विकास की गति को समावेशी बनाने व देश के योजना निर्माण तथा लागू करने के लिए भले ही 73वें व 74वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से आधी आबादी यानि कि महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है लेकिन इसे गुणात्मक भागीदारी में तबदील करना समय की मांग है जिसे सही मायने में सशक्तीकरण कहा जा सकता है। यह वास्तविकता है कि देश की आबादी के बड़े हिस्से को दर किनार कर भारत क्या कोई भी देश उन्नति नहीं कर सकता लेकिन यह भी सत्य है कि सिर्फ संवैधानिक प्रावधानों के बल पर ही महिलाओं की भागीदारी को सशक्तीकरण में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

संसद में महिलाओं की भागीदारी-राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति

अंतर-संसदीय संघ द्वारा संकलित 2016 के आंकड़ों के अनुसार रवांडा की संसद के निचले सदन में 63.8 प्रतिशत महिलाओं के साथ दुनिया में पहले स्थान पर और वोलीविया 53.1 प्रतिशत अपनी संसद के निचले सदन में महिलाओं के साथ दूसरे स्थान पर हैं। अगर संसद के उच्च सदन की बात करें तो बेल्जियम 60 में से 30 महिलाओं के साथ पहले और जिम्बावे के उच्च सदन में 47.5 प्रतिशत महिलाओं के साथ दूसरे स्थान पर है। इन्हीं आकड़ों के अनुसार भारत संसद के दोनों सदनों में महिलाओं की भागीदारी में 141 स्थान पर हैं जहां संसद के दोनों सदनों में महिलाओं की भागीदारी सिर्फ 12 प्रतिशत है।

हिमाचल प्रदेश देश का पहाड़ी राज्य और कई मामलों में अखिल भारतीय स्तर पर खासकर पड़ोसी प्रदेशों के मुकाबले विकसित प्रदेशों में शुमार और साक्षरता में केरल के बाद दूसरे स्थान पर है। प्रदेश में 73वां संवैधानिक संशोधन 1994-95 में लागू हुआ और 2019 में इसके 25 वर्षों के पूर्ण होने पर रजत जयंती मनाई जा रही है। इस संवैधानिक संशोधन से पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के प्रयास देश के अन्य राज्यों की तरह हुए हैं जिसमें मात्रात्मक सुधार तो दिखाई देते हैं। लेकिन इसमें गुणात्मक सुधार में कोई खास परिवर्तन देखने को नहीं मिल रहा है। देश की विभिन्न विधान सभाओं और संसद में महिलाओं की पहुंच न के बराबर बढ़ी है। क्योंकि पंचायती राज संस्थाओं में अगर संवैधानिक प्रावधानों के सहयोग से अगर महिलाओं की पचास प्रतिशत भागीदारी सुनिश्चित की गई है तो 25 वर्षों के अन्तराल के बाद इसका गुणात्मक परिवर्तन संसद के साथ-साथ तमाम विधान सभाओं में दिखना चाहिए था।

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय और एच.जी.वी.एस. द्वारा सर्वेक्षण

वर्ष 2018 के शुरुआत में हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के अंतर्विषयक विभाग और हिमाचल ज्ञान विज्ञान समिति (एच.जी.वी.एस.) ने हिमाचल प्रदेश पंचायती राज संस्थाओं में चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों पर एक सर्वेक्षण किया जिसमें कबायली जिलों के इलावा प्रदेश के हर जिला से 45 और दस जिलों की करीब 450 महिला प्रतिनिधियों को शामिल किया गया। इन महिला प्रतिनिधियों में 90 प्रतिशत प्रधान और अन्य 10 प्रतिशत में वार्ड सदस्य, अध्यक्ष पंचायत समिति व सदस्य, जिला परिषद् अध्यक्ष व सदस्य शामिल थीं। जो 73वें संविधान संशोधन के बाद पंचायतों में प्रतिनिधित्व कर रही हैं। इसमें यह जानने की कोशिश की गई कि उन्हें अपनी पंचायतों में काम करने में क्या-क्या समाजिक और प्रशासनिक परेशानियां पेश आती हैं और कितनी सफलता से काम कर पा रही हैं। इस सर्वेक्षण के शुरुआती परिणामों के आधार पर पता चलता है कि प्रदेश की महिला प्रतिनिधियों में अपने इलाके का नेतृत्व करने की अपार क्षमताएं हैं जिसके आधार पर वे अपने इलाके की उन्नति कर प्रदेश व देश को विकसित राष्ट्र बनाने में अपनी भागीदारी निभा सकती हैं। लेकिन कुछ सामाजिक और प्रशासनिक चुनौतियां है जो उन्हें पुरुष प्रतिनिधियों की भान्ति कार्य करने में दिक्कतें पैदा करती हैं :-

सामाजिक मानसिकता : महिलाएं भले ही पंचायतों में प्रधान या अन्य सदस्य चुनकर आ चुकी हैं लेकिन खुले रूप से विकास कार्यों के लिए घर से बहार निकलने के लिए छूट नहीं है। परिवार से लेकर समाज तक में अप्रत्यक्ष रूप से आजादी नहीं है।

सामाजिक रूढ़ियां : संवैधानिक प्रावधानों के चलते दतिल महिलाओं को पंचायतों में प्रतिनिधित्व दिया गया है लेकिन सामाजिक तौर पर दलित महिला प्रतिनिधि को सामाज कभी नेतृत्व स्वीकार नहीं है। दलित महिला प्रतिनिधि एक दलित होने के नाते और दूसरे महिला के कारण दोहरे भेदभाव की शिकार है। पंचायत के अंदर लोग बात को नहीं सुनते और स्थानीय दफ्तरों में कर्मचारी बात को गम्भीरता से नहीं लेते।

पारिवारिक जिम्मेवारियों का बोझ : सामजिक सोच महिलाओं को अभी भी चूल्हे चौके से इतर नहीं देख पा रही है।

आज भले ही महिलाएं पंचायतों में चुनकर आई हैं लेकिन घर परिवार के अन्दर उसका स्थान अभी भी एक गृहणी का ही है जो पूरे घर की साफ-सफाई से लेकर परिवार के लिए भोजन बनाने तक की जिम्मेवारियों का बोझ घर के अन्दर अन्य सदस्यों के होते हुए ढोने को मजबूर है। एक महिला प्रतिनिधि जब पंचायत के काम के लिए घर से निकलती है तो घर का पूरा प्रबंध करके जाना पड़ता है जैसे : परिवार में बच्चों व बुजुर्गों को खाना पकाने की व्यवस्था, पशुओं को चारे व पानी की व्यवस्था इत्यादि।

पारिवारिक दबाव : एक महिला प्रतिनिधि भले ही पढ़ी लिखी हो लेकिन जब पंचायतों या लोगों के काम करने होते हैं तो पारिवारिक दबाव बाहर के कामों में देखने को मिलता है। भले ही कोई सदस्य मुंह से कुछ न बोले पर अप्रत्यक्ष रूप झलक जाता है कि घर की जो महिला प्रतिनिधि को फलां काम करने पर परिवार के लोगों की नाराजगी है।

राजनैतिक समस्याएं : राजनैतिक समस्याएं भी कम नहीं है। हमारी सामाजिक रूढ़ियों का ही नतीजा है। मसलन जब संवैधानिक प्रावधानों की वजह से कोई सीट महिला के लिए आरक्षित हो चाहे वे प्रधान की हो, पंचायत समिति और जिला परिषद के अध्यक्ष पद की तो महिलाएं हर पार्टी और संगठन को नेतृत्वकारी, प्रगतिशील, काबिल दिखती हैं लेकिन जब बात अपने पार्टी संगठन/पार्टी में प्रतिनिधित्व देने की हो तो महिलाओं की सीमा चूल्हे चौके तक सीमित हो जाती है। यह पुरुषवादी सोच हर पार्टियों में मिल जाती है। हर पार्टियां महिलाओं को संगठित करने के लिए अलग से महिला प्रकोष्ठ का गठन कर छोड़ देते हैं अपने हाल पर। नतीजा यह है कि प्रदेश में 73वें संविधान संशोधन के 25 वर्षों के बाद भी प्रदेश की 68 सदस्यों की विधानसभा में तीन, चार और कई बार पांच महिला सदस्यों की भागीदारी ही सम्भव हो पाई है।

प्रशासनिक समस्याएं : महिलाएं जब चुनकर आती हैं तो उन्हें अनेक प्रशासनिक समस्याएं भी झेलनी पड़ती हैं जो पंचायत घर से शुरू होकर राज्य सचिवालय तक की होती हैं।

- करीब 28-29 विभागीय कार्यो ंको पंचायत के अन्दर संचालित करना होता है तो इन कार्यों को समझने की समस्या।
- सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों की कमी और जो होते उनकी गैर मौजूदगी के कारण महिलाएं पुरुषों के मुकाबले ज्यादा जूझती हैं क्योंकि पुरुष अपना काम जान पहचान के आधार पर किसी दूसरे कर्मचारी या अधिकारी से भी जानकारी होने के कारण अपनी फाइल आगे सरका लेते लेकिन महिलाएं दफतरों के चक्कर काटती रहतीं है।
- सचिवों की एक से अधिक, तीन-तीन पंचायतो ंमें जम्मेवारी होनाः बिना काबिल पंचायत सचिव के 28-29 विभागों के कार्यो ं को पंचायत स्तर पर लागू कराना एक महिला प्रतिनिधि के लिए बहुत मुश्किल होता है। सर्वे में अधिकांश प्रतिनिधियों का मानना था कि पंचायत सचिव के न होने की वजह से विकास कार्य कराने में दिक्कतें आ रहीं हैं। कोई भी स्कीम की सही और पूर्ण जानकारी जनता तक पंहुच नहीं पाती और उस योजना का फायदा लोग नहीं ले पा रहे हैं और पंचायत का प्रदर्शन धूमिल हो जाता है।
- तकनीकी सहायकों तथा रोजगार सेवकों की दो-दो, तीन तीन पंचायतों में होनाः अधिकाश कार्य जिसमें पैमाइश, कार्य के मूल्य का आकलन की बात होती है तो तकनीकी सहायकों की मौजूदगी न हो पाने के कारण लोगों का रोष झेलना पड़ता है। तकनीकी सहायक के पास कई बार तो पांच-पांच पंचायतों का जिम्मा रहता जिससे कार्य किसी भी पंचायत का पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है। इससे ज्यादातर कार्य जो महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना के तहत कराये सकते है बुरी तरह से बाधित हो रहे हैं।
- नए-नए कानूनों व प्रावधानों की जानकारी का आभावः तमाम तरह के कानून संसद और राज्य विधानसभाएं बनाते हैं जिसको लागू करने की जिम्मेवारी पंचायतों पर होती हैं लेकिन उसकी जानकारी ठीक से निचले स्तर पर मिलती नही है क्योंकि सरकारी कर्मचारी भी अपनी औपचारिकता पूरी करते हैं और आधी अधूरी जानकारी जो मिल भी जाए

सर्वेक्षण से यह बात तो समझने के लिए काफी है कि हमारे ग्रामीण विकास के जो केन्द्र हैं वे हमारी पंचायतें हैं जहां 73वें और 74वें संशोधनों के बाद पंचायतों और नगर निकायों को 11वीं और 12वीं अनुसूची में शामिल 47 विषयों की बहुत बड़ी जिम्मेवारी उनके ऊपर है। पंचायत के प्रतिनिधि सही मायने में विकास के एजेंट हैं। जहां तक महिला प्रतिनिधियों की बात है तो इनकी महत्ता उस एजेंट शब्द से भी ज्यादा है क्योंकि इनके ऊपर सिर्फ विकास कार्यों की जिम्मेवारी ही नहीं है। इन विकास कार्यों को करते समय सामाजिक रूढ़ियों, दकियानूसी सामाजिक मान्यताएं, नशाखोरी व अन्य कई किस्म की सामाजिक बीमारियों से भी दो चार होना पड़ता है और सरकार के विभिन्न मंत्रालयों व विभागों को निःसंदेह महिलाओं के नेतृत्व कौशल और क्षमतावर्धन की और विशेष ध्यान दे कर लोकतंत्र को सही मायने से मजबूत करना चाहिए।

कुण्डलिया छन्द

मनजीत कौर 'मीत'

पानी से चलता सदा, जीवन का व्यवहार
पानी को संचित करो, कहता समय पुकार
कहता समय पुकार, स्तर भूजल का गिरता
सूखे ताल तलाब, फूल भी कैसे खिलता ?
हो जा ज़रा सचेत, छोड़ अपनी नादानी
है जीवन आधार, समस्या बनी है पानी ।

शाखों से है टूटकर, पड़े हुये जो पात
मन में हैं बेज़ार वो, बदले जो हालात
बदले जो हालात कभी थे शान न्यारी
उपवन की सौगात, हमीं पर सब बलिहारी
जीवन है इक चक्र, न बीते ये बस आँखों
दे शीतल तू छाँव, लगा है जब तक शाखों ।

उड़ता पंछी गगन में, नाप रहा आकाश
छोटा सा इक ख़्वाब है, पर मन में विश्वास
पर मन में विश्वास, कि दृढ़ संकल्प धरे वो
फैला अपने पंख, तभी आगाज़ करे वो
चादर आलस तान, पता मंज़िल नहीं मिलता
देता तुझको सीख, हवा में पंछी उड़ता ।

फूले हैं उपवन सभी, शाखें हैं गुलज़ार
नव किसलय नव पात से, भू करती श्रृंगार
भू करती श्रृंगार, गीत भंवरे हैं छेड़े
फूलों के अब पास, लगायें नित ही गेड़े
आया है ऋतुराज, पड़े हैं प्रेम के झूले
डाल डाल औ' पात, पात नव रस हैं फूले ।

क़ुदरत रंगो से भरी, कोई अंत न पार
जल थल नभ पैदा किये, लाखों जीव शुमार
लाखों जीव शुमार, कहीं मैदान बनाये
पर्वत रेगिस्तान, कहीं सागर लहराये
देंगे तुझे सुकून, अगर तू बैठे फ़ुरसत
होता हूं हैरान, देख मैं तेरी क़ुदरत।

दर्पण करता ही रहा, मुझ पर ये उपकार
मुझे दिखाता ही रहा, मेरा ही आकार
मेरा ही आकार, कि सत्य सदा ये बोले
रखे न कोई भेद, राज़ ये दिल के खोले
है यह सच्चा मीत, करूं पुष्पों को अर्पण
होते भगवन काश, हमारे दिल भी दर्पण।

मकान नं. 60, सैक्टर 5, गुड़गांव, हरियाणा-122 001
मो. 0 98734 43678

तो कोई काम उस से होता नहीं है।

- ग्राम सभा में लोगों द्वारा भाग न लेना : ऐसा नहीं है कि लोगों की रुचि ग्राम सभा में नहीं रहती है लोग जो ग्राम सभा नहीं आते उसका बड़ा कारण यह भी रहता है सरकारी कर्मचारियों की गैर मौजूदगी, ऊपरलिखित समस्याओं के चलते लोगों के कार्यों को समय पर न करा पाना।

उपयुक्त कार्यों को करने के अलग-अलग प्रशिक्षण का न होनाः महिला प्रतिनिधियों के लिए ही नहीं प्रशिक्षण बड़े से बड़े पढ़े लिखे अधिकारियों की क्षमता विकास के लिए जरूरी होता है। अनेकों प्रकार के प्रशिक्षण और एक्सपोजर दौरों का आयोजन बड़े-बड़े अधिकारियों के लिए उनकी क्षमता वर्धन के लिए होता है लेकिन जिन महिला प्रतिनिधियों के कंधों पर 28-29 विभागीय कार्यों को लागू करने का जिम्मा होता है, को कोई खास प्रशिक्षण नहीं दिया जाता। जो छुटपुट प्रशिक्षण मिलता है तो मात्र औपचारिकता भर के पसोपेश में बंध जाता है।

निष्कर्ष : सर्वेक्षण से यह बात तो समझने के लिए काफी है कि हमारे ग्रामीण विकास के जो केन्द्र हैं वे हमारी पंचायतें हैं जहां 73वें और 74वें संशोधनों के बाद पंचायतों और नगर निकायों को 11वीं और 12वीं अनुसूची में शामिल 47 विषयों की बहुत बड़ी जिम्मेवारी उनके ऊपर है। पंचायत के प्रतिनिधि सही मायने में विकास के एजेंट हैं। जहां तक महिला प्रतिनिधियों के बात है तो इनकी महत्ता उस एजेंट शब्द से भी ज्यादा है क्योंकि इनके ऊपर सिर्फ विकास कार्यों की जिम्मेवारी ही नहीं है, इन विकास कार्यों को करते समय सामाजिक रूढ़ियों, दकियानूसी सामाजिक मान्यताएं, नशाखोरी व अन्य कई किस्म की सामाजिक बीमारियों से भी दो चार होना पड़ता है और सरकार के विभिन्न मंत्रालयों व विभागों को निःसंदेह महिलाओं के नेतृत्व कौशल और क्षमता वर्धन की और विशेष ध्यान देकर लोकतंत्र को सही मायने से मजबूत करना चाहिए।

परियोजना अधिकारी एवं फैकल्टी,
एम.बी.ए. ग्रामीण विकास,
अन्तर्विषयक अध्ययन विभाग-एकीकृत हिमालय अध्ययन संस्थान,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला-171005

आलेख

आचार्य विष्णु कांत शास्त्री के साहित्य में सामाजिक चिंतन

◆ डॉ. सुनीता देवी



समाज के समक्ष आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री का व्यक्तित्व सरल, सौम्य, सौरम्य रहा है। इसी व्यक्तित्व को लिए उन्होंने समाज को आकृष्ट किया। 'कल्याणमल लोढ़ा' ने शास्त्री के समाज चिन्तन के विषय में उनके व्यक्तित्व को इस तरह व्याख्यायित किया है, "मेरी यह मान्यता है कि अयस्काँत मषि की भान्ति वही व्यक्ति समाज को आकृष्ट करता है जिसमें सरलता, सौहार्द्र और सौरम्य के साथ-साथ नियमबद्धता, मितभाषिता और संस्कृति के महान् मूल्यों की अवधारणा हो।"[1] शास्त्री जी ने समाज के समक्ष ज्ञान और बुद्धि के द्वारा अपने कर्मों का ताना-बाना बुना है। उनकी धारणा है कि मनुष्य वही है जो परोपकारी तथा मनुष्य की रक्षा करता है, साम्य के भाव को जनमानस के सामने रखता है। अपनी चिन्तन पद्धति में मानवतावादी आदर्श, भारतीय भक्ति, संस्कृति व साहित्य की अवधारणा को उन्होंने व्याख्यायित किया है। शास्त्री जी के शब्दों में, "मैं व्यक्ति को बांटकर नहीं देखता हूँ। मैं समग्रता से देखता हूँ, जैसे इन्द्रधनुष के अलग-अलग रंगों को देखने की अपेक्षा उसकी समग्रता से जो सौन्दर्य की सृष्टि होती है, उससे मैं अभिभूत होता हूँ।"[2] आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री शिलाधर्मी नहीं आकाशधर्मी है। आज वे समाज के समक्ष गुरु, मित्रों के पारिवारिक रिश्तों के बीच जीने वाले व्यक्ति हैं। वे मानते हैं कि सामाजिक श्रद्धा का आधार 'आचरण' है। 'वेश' या 'पद' नहीं। इस श्रद्धा को पाने का पथ भी तुलसी का सुझाया पथ है-

"तुलसी जो कीरति चहहिं, पर की कीरति खोइ।
तिनके मुँह मसि लाकि हैं मिटिहिं न मरिहैं धोई।"[3]

शास्त्री जी का मत है कि 'कीरति' पाने के लिए दूसरे की 'कीरति' खोना जरूरी नहीं है इस निष्कपट सहजता का ही एक पक्ष निन्दा विमुखता है। शास्त्री जी को 'बतरस' में आनन्द आता है, निन्दा रस में नहीं। वे समाज को 'उलाहना' जरूर देते हैं, मगर क्या मजाल कि निन्दा का एक शब्द भी उनकी जुबान से सुन लें।

"सिर्फ बातों से भला कब बन सकी है बात?
शक्ति आवश्यक, यहाँ तो शक्ति का संघात।
सत्य तो यह, संगठन ही शक्ति का उत्स
जो खड़ा हो प्रेम, निष्ठा ध्येय पर अवदात।"[4]

कवि का तात्पर्य है कि जब समाज में संगठित शक्ति नहीं होगी, तब तक जनमानस शक्ति संग्रहीत नहीं कर सकता इसके लिए आवश्यक है, समाज का संगठन। शास्त्री जी समाज व देश के समक्ष 'संघे शक्ति कलौयुगे' की भावना को रखते हैं। इनका सामाजिक चिन्तन भावात्मक एकता को प्रमुख रूप से उकेरता है। इनका मानना है कि सामाजिक संगठन ही मनुष्य का उद्धार कर सकता है। समाज का शुद्ध सात्विक रूप ही मनुष्य में शक्ति का संचार कर सकता है कवि जी कहते हैं -

"संगठन, जो कर सकेगा जाति का उद्धार
संगठन, जो शुद्ध सात्विक शक्ति का आगार
जो संजोये प्राण में शाश्वत सरस हिन्दुत्व
चिर पुरातन धर्म का होगा नया शृंगार।"[5]

शास्त्री जी कहते हैं कि आधुनिकता की अंधी दौड़ में आज सब पीछे छूट गया है। हमारे संस्कार, परम्पराएं, रहन-सहन, हमारा धर्म, हमारी भाषा। सभ्यताओं के उदय से पनपे पारस्परिक सौहार्द पर बाजार हावी हो रहा है। आधुनिकता के नाम पर ऐसे विचारों और कारनामों को भुनाया जा रहा है जो स्वार्थ केन्द्रित हैं। नैतिकता, शालीनता और विनम्रता की कब्रें खोदने वाला मनुष्य धीरे-धीरे इन कब्रों में धंसता जा रहा है। आज सामाजिक मूल्यों

पर कम और सामाजिक यथार्थ पर अधिक बहस होती है। किन्तु हमारा उद्देश्य उस यथार्थ को प्रस्तुत करते हुए लुप्तप्राय हो चुके सामाजिक मूल्यों की पुनर्स्थापना करना है। अपनी काव्य पंक्तियों में वे कहते हैं -

"तुम विकास के पथ पर बढ़ते रहो निरन्तर
तेजस्वी आनन हो श्रद्धा भीगा अन्तर
सपनों का संसार तुम्हारा सच बन जाए
नई ज्योति ले चाँद उतर आँगन में आए।"[6]

यदि आज के समय की बात की जाए तो स्वार्थपरकता ने जिस प्रकार से व्यक्ति को समाज से कटकर एक सचेत घेरे के भीतर व्यक्तित्वोन्मुख कर दिया है, ऐसी कालसारणी में शास्त्री जी की कविता और भी उपयोगी सिद्ध हुई हैं आज हर व्यक्ति अपनी 'मैं' की सर्वस्थापना चाहता है तथा उसकी मानसिकता ने प्रेम के अर्थ को अनर्थ कर दिया और मूल्यों को छलनी कर दिया, व्यक्ति जितनी द्रुतगति से सामाजिक और नैतिक मूल्यों को भुला रहा है, उतनी ही तेजी से इन मूल्यों को चिन्तन बनाए रखने की कोशिश में जुटे व्यक्तित्व भी अब आधुनिक भाव बोध के बीच अनुपयुक्त से लगने लगे हैं। तभी शास्त्री जी कहते हैं -

"तुमने अपनों को अपना पन सिखलाया
तुमने अपनों को अपना पथ दिखलाया
तुमने अपनों को रोका 'पर' होने से
असल मणि तजकर नकीली मणि ढोने से
भारत के हे कवि, गुरु नेता लासानी
गूँजेगी ही यह तेरी विमल कहानी।"[7]

सामाजिक अनुसंधान में शास्त्री जी दर्शाते हैं कि इस विशाल मानव सागर के बीच अपनी पहचान को बनाये रखने की इच्छा पर भले ही प्राचीन मूल्यों और संस्कारों की पैरवी का आरोप आज की पीढ़ी को द्रष्टव्य होता हो, किन्तु उपभोक्तावाद, पश्चिमी अंधानुकरण और व्यावसायीकरण की कृत्रिम सुगन्धों से यह कहीं बेहतर है, क्योंकि इनकी कविताएं चन्दन वन के तरुओं से छूकर आती हैं, जो सारे परिवेश को पवित्र और पावन कर देती हैं।

शास्त्री जी एक अध्यापक, समीक्षक, कवि विचारक अध्यात्म व्याख्याता, एक सर्वप्रिय प्रशासक, गोस्वामी जी की विनयभावना को आदर्श मानकर जीवन जीने के विश्वासी, दृढ़ निश्चयी, अपनी मान्यताओं के प्रति पूर्ण रूपेण समर्पित, सब कुछ होते हुए भी एक कर्मठ संन्यासी के रूप में समाज के सम्मुख आए हैं। उन्होंने एक रामभक्त की भान्ति समाज को कर्म के प्रति निरन्तर जागरूक रहने की प्रेरणा दी। सामाजिक कुरीतियों के समक्ष रघुवीर के प्रति अडिग आस्था को रखा और प्रवचनों द्वारा कहा कि इसी आस्था से जीवन का अहं समाप्त होता है। स्नेह कर्तव्य निष्ठा, आस्था त्याग, उदारता जैसे भाव शास्त्री जी द्वारा समाज के लिए रखे गए हैं -

"यह गजब देखो कि सूरज दीप का मुँहजाल
भ्रमर निर्वासित कामलवन मेंढकों का राज,
देवता तो अंध कारागार में है बंद
पूज रहा शैतान लेकिन पहन उसका ताज।"[8]

शास्त्री जी का मानना है कि जो व्यक्ति लोकजीवन में आकर स्वयं अपने मानस चक्षु से उसका अवलोकन करता है, वही व्यक्ति समाज को पूरी तरह जानता, समझता है। अपने समाजचिन्तन में उन्होंने उदारता व विनम्रता को समाज के समक्ष रखा है। मानव मात्र के समग्र कल्याण की असीम भावना से अद्भुत उनकी धार्मिक सरिता एक ऐसी दिव्य अनन्त चेतना की प्रतिमूर्ति है जो सबके लिए सर्वदा सर्वत्र प्रेरक और मंगल कर्ता है। वे मनसा, वाचा, कर्मणा, सच्चे अर्थों में भारतीय संस्कृति के उपासक हैं, पक्षधर हैं। यह विश्व विकासशील है उसके विकास में सहयोग देना सबका कर्तव्य है। मनुष्य की सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ रचना है। हि मनुष्यात् श्रेष्ठतरं हिकिंच। अन्य प्राणियों से इसकी श्रेष्ठता इसके विवेकपूर्ण चिन्तन और कर्म के कारण ही प्रमाणित होती है। इसके विवेकपूर्ण कर्तव्य को ही सृष्टि की चिरंतनता को बनाए रखने का उत्तरदायित्व हैं समय-समय पर उसमें विकृतियां आती हैं और उनका परमार्जन भी होता रहता है। आज की समाज व्यवस्था पर चिंता होनी स्वाभाविक है, किन्तु यह इसी प्रकार चलता रहेगा मानना भूल होगी। इसमें सुधार अवश्य होगा यह विश्वास लेकर चलना उचित है। उसके लिए सभी को यथाशक्ति, यथा संभव प्रयत्न करते रहना चाहिए यह आज की आवश्यकता है। तभी तो गोबिन्द मिश्र ने कहा है, "विष्णुकान्त शास्त्री के सान्निध्य में होना भारतीय संस्कृत के सान्निध्य में होना है। उनकी चिरसारणी में भारतीयता व प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था व्यक्त हुई है।

"हिन्दू संस्कृति की दीप शिक्षा बुझती थी,
चिर संचित हिन्दू मर्यादा लुटती थी।"[9]

वे मानते हैं कि भारतीयों को अपनी परंपरा और संस्कृति का ज्ञान अवश्य होना चाहिए साथ ही इन्हें यह भी पता होना चाहिए कि आध्यात्मिकता के क्षेत्र में भारत का क्या अवदान रहा है इसी का आधार स्तम्भ है इनके द्वारा प्रणीत ग्रंथ 'ज्ञान और कर्म' शास्त्री जी ने स्पष्ट किया है, "हिन्दू जीवन दर्शन तथा भारतीय जीवन दर्शन का आधारभूत सिद्धान्त कर्म-सिद्धान्त है। इसके कर्म सिद्धान्त को स्वीकार करके ही भारतीय संस्कृति का विकास हुआ है।"[10]

आचार्य शास्त्री जी कहते हैं कि हमें इस बात को समझना चाहिए कि आखिर वे कौन से गुण हैं जिन गुणों ने हमारे देश को जगद्गुरु बनाया था और उन गुणों को आज हम किस प्रकार में स्वीकार कर सकते हैं हमें विचार करना चाहिए कि हम अपने देश की परंपरा से जुड़े रहकर कैसे आधुनिक हो सकते हैं। कैसे हम

वास्तव में अपनी उस उक्ति को चरितार्थ कर सकते हैं, विश्वविद्यालय का मतलब होता है- 'यत्र विश्व भवत्येक नीड़म।' जहाँ सारा संसार एक घोंसला बन जाए। सारे संसार के विद्वान जहां आ सकें। दृष्टि क्षेत्रीय न हो, जिसकी दृष्टि के सामने सारा विश्व है।"[11] शास्त्री जी मानते हैं कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य नौकरी की योग्यता उत्पन्न करना न होकर मनुष्य का सर्वांगीण विकास करना है। उसकी आत्मिक, नैतिक, मानसिक एवं भौतिक उन्नति का द्वारा खोलना है, शिक्षा के स्वरूप को व्यक्त करते हुए उन्होंने डॉ. मुखर्जी के विचारों को उद्धृत किया है, हमारा आदर्श है निम्नतम भाव से उच्चतम भाव तक की शिक्षा के लिए व्यापक सुविधाएं प्रदान करना, अपनी व्यवस्था को इस प्रकार ढालना कि हमारे शिक्षा सम्बन्धी उद्देश्य पूर्ण हो सकें और अपने नवयुवकों के अविकसित श्रेष्ठ गुणों को पूर्णरूपेण विकसित कर बौद्धिक, शारीरिक एवं नैतिक दृष्टियों से इस तरह प्रशिक्षित करना कि वे राष्ट्रोत्थान के कार्य में प्रत्येक क्षेत्र में गांवो में, कस्बों में, शहरों में निष्ठापूर्वक अपनी सेवाएं समर्पित कर सकें।"[12]

शास्त्री जी मानते हैं कि सबसे बड़ा शिक्षक धुरी प्रतिष्ठा का अधिकारी होता है जो स्वयं ज्ञानी भी हो, और ज्ञान के संक्रमण की कला में भी कुशल हो वही विद्वान धुरि प्रतिष्ठा का अधिकारी होता है। शास्त्री जी आकाशधर्मी गुरु को श्रेष्ठ मानते हैं उनका मानना है कि आकाशधर्मी गुरु शिष्य को वायु, प्रकाश तथा अवकाश देता है ताकि आगे बढ़ने की जितनी क्षमता है, वह उतनी विकसित भूमिका को अर्जित कर सके। आकाशधर्मी गुरु शिष्य की क्षमता को पहचानता है। यही नहीं अपनी विलक्षण प्रतिभा द्वारा शास्त्री जी ने शिष्य के लक्षण को व्याख्यायित किया है। उन्होंने लिखा है कि, "शिष्य का आधारभूत लक्षण है, ज्ञान को प्राप्त करने के लिए अग्रणी होना।"[13] विद्यार्थी अध्यापक से प्रश्न करने का अधिकारी है लेकिन उसमें विनम्रता का भाव होना चाहिए जब तक विद्यार्थी का सिर श्रद्धा से झुकता नहीं है गुरु के सामने तब तक वह विद्या अर्जित नहीं कर सकता। इस प्रकार सामाजिक जीवन में शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति समाजीकृत होकर अपने व्यक्तित्त्व का विकास करता है। सामाजिक संगठन की निरन्तरता के लिए सामाजिक सच्चाई आवश्यक है जो शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। शास्त्री जी कहते हैं कि यदि हम अपने राष्ट्र को महान बनाना चाहते हैं तो अपनी गौरवमयी परम्परा से प्रेरणा लेकर हमें सरकार के समृद्ध पाठ्यक्रम व परिवेश की संयोजना करनी होगी।

शास्त्री जी ने सामाजिक संगठन में अर्थ प्रणाली का गहरा महत्त्व बताया है। इन्होंने अर्थ को इस तरह से परिभाषित किया है- 'अर्थ्यते इति अर्थः अर्थात् जिसको चाहा जाता है। अर्थ का मतलब साधारणतः समझा जाता है धन, दौलत किन्तु वास्तव में समस्त स्थूल भौतिक उपलब्धियों को 'अर्थ' पुरुषार्थ के अन्तर्गत ग्रहण करना चाहिए।"[14] शास्त्री जी कहते हैं कि मानव जीवन पर समग्र रूप से विचार कर निर्धारित किया गया है। मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों को चाहता है समाज के समक्ष इस बात को ध्यान देने की प्रेरणा देते हुए उन्होंने कहा है कि अर्थ हमारे बाहर रहता है। कोई भी अर्थ को अपने भीतर नहीं ला सकता। हमारा सब रुपया, पैसा, घर, ज़मीन, कल-कारखाने आदि हमसे बाहर हैं, सच्चाई यह है कि जिन वस्तुओं को हम अपना मानते हैं, ये वस्तुएं हमें पहचानती तक नहीं है यह याद रखना चाहिए कि अर्थ साधन मात्र है, वह साध्य नहीं हो सकता। यह भी सही है कि अर्थ जीवन यात्रा के लिए अत्यन्त प्रयोजनीय है। अतः उसके महत्व को स्वीकार कर उसे पुरुषार्थ के रूप में स्वीकृत किया गया है। इनका मानना है कि जैसे-जैसे विश्व अर्थ व्यवस्था के एकाधिकार व नियन्त्रण के दबावों के फलस्वरूप सरकारें व सत्ता अपने जनकल्याणकारी दायित्वों से पीछा छुड़ा रही हैं, वैसे-वैसे जनता में आर्थिक विषमता से उत्पन्न विसंगतियाँ बढ़ती जा रही हैं। सारी व्यवस्था पर अमीरों का कब्जा हो जाएगा तथा गरीब और अधिक गरीब होता जाएगा। उदारीकरण और निजीकरण से न केवल देश का औद्योगिक ढाँचा बदल जाएगा, वरन अमीर-गरीब की फाँक हर स्तर पर और चौड़ी विकास केवल होती जाएगी निवेश के नाम पर सार्वजनिक उपक्रमों की बिक्री सिद्धान्त यह तय कर देगी कि प्रगति निजी क्षेत्रों के बूते की बात है। उनके अकूत शोषण और बेरोजगारी को अनदेखा करके जो समाज बनेगा, उसमें हिंसा, घृणा व अपराधों में बढ़ोतरी होगी।

उपर्युक्त कुत्सित प्रभावों से समाज को अछूता रखने के लिए

शास्त्री जी ने सामाजिक संगठन में अर्थ प्रणाली का गहरा महत्त्व बताया है इन्होंने अर्थ को इस तरह से परिभाषित किया है- 'अर्थ्यते इति अर्थः अर्थात् जिसको चाहा जाता है। अर्थ का मतलब साधारणतः समझा जाता है धन, दौलत किन्तु वास्तव में समस्त स्थूल भौतिक उपलब्धियों को 'अर्थ' पुरुषार्थ के अन्तर्गत ग्रहण करना चाहिए।' शास्त्री जी कहते हैं कि मानव जीवन पर समग्र स्प से विचार कर निर्धारित किया गया है। मनुष्य धार्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों को चाहता है समाज के समक्ष इस बात को ध्यान देने की प्रेरणा देते हुए उन्होंने कहा है कि अर्थ हमारे बाहर रहता है। कोई भी अर्थ को अपने भीतर नहीं ला सकता। हमारा सब रुपया, पैसा, घर, ज़मीन, कल-कारखाने आदि हमसे बाहर हैं, सच्चाई यह है कि जिन वस्तुओं को हम अपना मानते हैं, ये वस्तुएं हमें पहचानती तक नहीं है यह याद रखना चाहिए कि अर्थ साधन मात्र है, वह साध्य नहीं हो सकता।

कविता

कुछ लोग

शबनम शर्मा

हमारी ज़िन्दगी में आते-जाते
कुछ लोग,
वक्त-वक्त पर सबक अलग-अलग
सिखाते कुछ लोग,
वक्त के परिंदे संग, उड़-उड़
जाते कुछ लोग,
नहीं डोर, न पतंग लुटाते
न जाने कहाँ गिर जाते
कुछ लोग
अपना बन आत्मा झुलसाते
कुछ लोग,
पराये होकर भी ठंडक
पहुंचाते कुछ लोग,
संग वक्त के करवटें बदलते
कुछ लोग,
देख तड़पता मरहम लगाते
कुछ लोग,
तड़प जिनकी, आँखों से
ओझल न हो
वहीं छोड़ मझधार में
चले जाते कुछ लोग,
हर पल, हर दिन कुछ नया
बताते कुछ लोग,
'बदल गये हैं आप बहुत'
ये भी बताते कुछ लोग,
कई नसीहतें, कई हिदायतें
दे जाते हैं कुछ लोग,
अब जब बचा ही कुछ न
तो क्या बदल पायेंगे कुछ लोग।
सूख गये आँसू, लुप्त हो गई भावनायें,
अब हमसे क्या ले जायेंगे
कुछ लोग।

अनमोल कुंज, पुलिस चौकी के पीछे, मेन बाजार, माजरा, तह. पांवटा साहिब, जिला सिरमौर, हि.प्र.।

शास्त्री जी लिखते हैं कि, "याद रखिए अर्थ के लिए अर्थ आवश्यक नहीं है। अर्थ साध्य रूप में अनर्थ की सृष्टि करता है। जिसने अर्थ को साध्य माना उसका माथा खराब हुआ, वह सब प्रकार की बेईमानी करेगा, सब प्रकार की गलतियां करेगा तथा अन्याय अत्याचार करेगा।"[15] इसलिए अर्थ केवल साधन रूप में महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार से मानव जीवन में धर्म का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। धर्म समाज व संस्कृति का अभिन्न अंग है। धर्म का सम्बन्ध व्यक्ति के नैतिक तथा अध्यात्मिक पहलू से है जो व्यक्तित्व के लिए एक महान तत्व है। धर्म एक विशेष विश्वास है और यह शक्ति मानव शक्ति से आवश्यक रूप में श्रेष्ठ होती है। अलौकिक शक्ति से सम्बन्धित समस्त विश्वासों, भावनाओं और क्रियाओं के सम्मिलित रूप को ही धर्म कहते हैं।

धर्म का महत्व सामाजिक नियन्त्रण के एक शक्तिशाली साधन के रूप में भी अत्यधिक है। मानव व्यवहारों को नियन्त्रित करने को यह शक्ति धर्म को किसी बाहरी स्त्रोत से प्राप्त नहीं होती। वह तो स्वयं ईश्वर की इच्छा के रुप में अभिव्यक्त होती है। धर्म अनेक अच्छे आदर्शों, मूल्यों तथा जीवन के लक्ष्यों से सम्बन्धित होता है। धर्म व्यक्ति के लिए प्रेरणा बनता है। इसी के अन्तर्गत व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व को संगठित व सन्तुलित रूप में विकसित करने का अवसर मिलता है। आज के परिप्रेक्ष्य में

धर्म की विभिन्न अवधारणाओं के चलते शास्त्री जी कहते हैं कि, "परमात्मा एक है जिसे विद्वान विभिन्न नामों से पुकारते हैं। धर्म के साथ जिस सच्चिदानन्द स्वरूप का नाम जुड़ा है, वह सब विभेदों के बावजूद मूलतः एक है।"[16] महाभारत का उदाहरण देते हुए धर्म की भूमिका को शास्त्री जी ने इस तरह वर्णित किया है कि समस्त प्राणियों के प्रति मन, वाणी और कर्म से द्रोह का भाव न रखना, सबके प्रति अनुगृह सबके प्रति उदारता का भाव रखना धर्म है इसी से समाज व्यष्टि छोड़ समष्टि भाव की ओर अग्रसर होता है।

रिसर्च फैलो, हिन्दी विभाग, हि.प्र. विश्वविद्यालय
शिमला-171 005

संदर्भ सूची

1 प्रकाश त्रिपाठी (स.), विष्णुकान्त शास्त्री : सृजन के आयाम, पृ. 124
2 वही, पृ. 151
3 इन्द्र सिंह ठाकुर, आचार्य विष्णुकांत शास्त्री के साहित्य में संवेदना एवं शिल्प का स्वरूप, पृ. 199
4 प्रेमशंकर त्रिपाठी (स.), जीवन पथ पर चलते-चलते, पृ. 25
5 वही, पृ. 26
6 इन्द्र सिंह ठाकुर, आचार्य विष्णुकांत शास्त्री के साहित्य में संवेदना एवं शिल्प का स्वरूप, पृ. 201
7 प्रेमशंकर त्रिपाठी (स.), जीवन पथ पर चलते-चलते, पृ. 43
8 प्रकाश त्रिपाठी (स.), विष्णुकांत शास्त्री : सृजन के आयाम, पृ. 196
9 वही, पृ. 326
10 वही, पृ. 351
11 जुगल किशोर जैथलिया (स.), विष्णुकांत शास्त्री, चुनी हुई रचनाएं, पृ. 354
12 इन्द्र सिंह ठाकुर, आचार्य विष्णुकांत शास्त्री के साहित्य में संवेदना एवं शिल्प का स्वरुप, पृ. 128
13 वही, पृ. 129
14 जुगल किशोर जैथलिया (स.), विष्णुकांत शास्त्री, चुनी हुई रचनाएं, पृ. 188
15 विष्णुकांत शास्त्री, ज्ञान और कर्म, पृ. 54
16 प्रकाश त्रिपाठी (स.), विष्णुकांत शास्त्री : सृजन के आयाम, पृ. 195

आलेख

ऋतुओं में भीष्म ग्रीष्म

◆ डॉ. दादूराम शर्मा

चंड-किरण मार्तण्ड लो बरसाता अंगार। भूमि भाड़-सी जल रही, भुनता सब संसार।।

कर्फ्यू लगा अब दोपहर का, सूनी हैं सब राह, झुलस धूप से जीव-गण, छिपे ढूँढकर छाँह।।

अनचाहे मेहमान-सा, घर में डेरा डाल, दुष्ट जमाई-सा करे, ग्रीष्म हमें बेहाल।।

- (स्वरचित 'दोहावली' से)

सूर्य अपनी प्रचण्ड किरणों से अंगारे बरसाने लगा, धरती को तपाने लगा, वनस्पतियों को झुलसाने लगा, सरिताओं-सरोवरों को तेजी से सुखाने लगा, धूल-भरी लू का असह्य स्पर्श प्राणियों को बेचैन करने लगा, धूप से भुने, पसीने से सने और प्यास से व्याकुल प्राणी घनी छाया और शीतल जल की तलाश में इधर-उधर भटकने लगे क्योंकि भीष्म ग्रीष्म आ गया। अनचाहे मेहमान की तरह इसने हमारे घर में जबरन डेरा डाल दिया है। उद्दण्ड जमाई-सा यह आ धमका है, हमारा सुख-चैन छीन लिया है और हमारा उठना-बैठना-सोना सभी हराम कर डाला है।

ग्रीष्म का प्रभात सुखद होता है, सन्ध्या सुहानी लगती है, चांदनी के धवल परिधान में लिपटी स्मितमुखी रजनी परिचारिका-सी आकर हमारे दग्ध अंगों में शीतल प्रलेप करने लगती है किन्तु कठोर अनुशासन-प्रिय सिविल सर्जन के समान निष्ठुर विधाता के कोप की आशंका से सहमी-सी, सिमटी-सी चुपचाप खिसक जाती है। दुनिया में जो चीज हमें अच्छी लगती है, वह या तो दुर्लभ या दुष्प्राप्य होती है अथवा थोड़े समय के लिए ही मिल पाती है और जो अनचाही है, दुखद है, वह सुलभ है, सुप्राप्य है और दीर्घ कालिक भी होती है। शिशिर में शरीर गरमाने को धूप चाहिए-तेज धूप, लगातार धूप किन्तु मिल कहां पाती है ? मिलती भी है तो उसमें, जैसी हम चाहते हैं, वैसी उष्णता कहाँ होती है ? हमारा चहेता दिन भी जल्दी ही विदा ले लेता है और अनचाही रात आ धमकती है। ग्रीष्म में दिनभर झुलसे तन-मन को रात में शीतल चाँदनी की चाह होती है किन्तु वह हर रात लगातार कहाँ मिलती है ? रात भी रोजगार की संभावना-सी सिमट जाती है। दिन में बार-बार नहाने को जी चाहता है, किंतु पीने के पानी के भी लाले पड़ जाते हैं।

प्रकृति का कोमल रूप ही कवियों को प्रिय रहा है, इसलिए उसके उग्ररूप-त्रासदायक ग्रीष्म के चित्रण में उनका मन कम ही रम पाया है। कवि-परम्परा ऋतु वर्णन में बसंत को इसीलिए प्रथम स्थान देती है किन्तु युवा कवि कालिदास अपनी प्रथम रचना 'ऋतुसंहार' का श्रीगणेश 'निदाघ' (ग्रीष्म) ही से करते हैं, जिसमें सूर्य प्रचंड हो जाता है, चन्द्रमा चहेता बन जाता है, सतत सेवन (लगातार नहाने-पीने आदि के उपयोग में लाये जाने) से जलाशयों का जल घट जाता है-

"प्रचण्डसूर्यः स्पृहणीय चन्द्रमाः सदावगाहक्षतवारिसंचयः।

दिनान्तरम्योऽभ्युपशांतमन्मथो निदाघ-कालोऽयमुपागतःप्रिये।। - (ऋतुसंहार 1/1)

प्रचण्ड सूर्य के ताप से धरती तप जाती है और असहनीय गर्म हवा से धूल का बबंडर उठने लगता है- "असह्यवातोद्धत-रेणुमण्डला प्रचण्डसूर्यातप-तापिता मही। - (वही 1/2)

शरीर के जोड़-जोड़ से पसीना निकलने के कारण परेशान हुई उन्नतस्तना युवतियां मोटे कपड़े फेंककर महीन रेशमी परिधान पहन लेती हैं-

"समुद्गतस्वेदंचितांगसन्धयो विमुच्च वासांसि गुरूणि साम्प्रतम्।

स्तनेषु तन्वंशुकमुन्नतस्तना निवेशयन्ति प्रमदाः सयौवनाः।।" - (वही 1/7)

चिलचिलाती धूप से परेशान और अत्यधिक प्यास से सूखे तालू वाले मृग मृगतृष्णा के शिकार हो जाते हैं-

"मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशं तृषा महत्या परिशुष्कतालवः।

वनान्तरे तोयमिति प्रधाविता निरीक्ष्य भिन्नांजनसन्निभं नभः।।" - (वही 1/11)

महाकवि ने निम्न श्लोक में दावाग्नि का बड़ा ही भयावह /वन्यात्मक दृश्य अंकित किया है-

"ज्वलति पवनवृद्धः पर्वतानां दरीषु स्फुटति पटुनिनादैः शुष्कवंशस्थलीनाम्।

प्रसरति तृणमध्ये लब्धवृद्धिः क्षणेन, ग्लपयति मृगवर्गं प्रांतलग्नो दवाग्निः।।" -(वही /12)

तेज हवा से उद्दीप्त होकर दावाग्नि भयानक विस्फोट (चट्-चट् या कड़-कड़ की ध्वनि) के साथ सूखे बाँस के जंगलों को

जलाने लगती है और क्षणभर में घास में फैलकर वन्य जीवों को भून डालती है।

प्रचण्ड ग्रीष्म के असह्य दाह ने वनप्रदेश में प्राणियों में अहिंसा, निर्वैरता, मुक्तातंकता, परस्पर संरक्षणशीलता और जन्मजात विरोध को मिटाकर मैत्रीभाव का संचार कर दिया है। कहीं तेज धूप से झुलसा सर्प मोर के पंखों की छाया में दुबक गया है तो आग के समान सूर्य-किरणों से संतप्त मोर भी उसे नहीं मारता-

"रवेर्मयूखैरभितापितो भृशं विदह्यमानः पथि तप्त-पांशुभिः।

आवाङ् मुखो जिह्मगतिः श्वसन् मुहुः फणी मयूरस्य तले निषीदति।। - (वही 1/13)

हुताग्निकल्पैः सवितुर्गभस्तिभिः कलापिनः क्लान्तशरीरचेतसः।

न भोगिनं ध्नन्ति समीपवर्तिनं कलापचक्रेषु निवेशिताननम्।।'' - (वही 1/16)

सूर्य की तीक्ष्ण किरणों से क्लान्त मेंढक तालाब के स्वल्पशेष उष्ण-पंकिल जल से बाहर उछलकर प्यासे सर्प के फन के छाते की छाया में विश्राम करने लगता है तो अपनी विषाग्नि और सूर्यातप से तप्त प्यासा सर्प भी मेंढक को नहीं मारता-

"विवस्वता तीक्ष्णतरांशुमालिना सपंकतोयात् सरसोऽभितापितः।

उल्प्लुत्य भेकस्तृषितस्य भोगिनः फणातपत्रस्य तले निषीदति।।

रविप्रभोद्भिन्नशिरोमणिप्रभो विलोलजिह्वाद्वयलीढमारूतः।

विषाग्नि-सूर्यातपतापितः फणी न हन्ति मंडूककुलं तृषाकुलः।।'' - (वही 1/18-19)

गर्मी और प्यास से बेचैन बार-बार हाँफता हुआ सिंह समीपस्थ हाथियों को भी मारने की इच्छा नहीं करता तो पिपासाकुल हाथी भी सिंह से नहीं डरा करते-

"तृषा महत्या हतविक्रमोद्यमः श्वसन्मुहुर्दूरविदारिताननः।

न हन्त्यदूरेऽपि गजान् मृगेश्वरो विलोलजिह्वश्चलिताग्रकेसरः।।''

ग्रीष्माकुल हाथी, गवय (नील गाय, हरिण) और सिंह परस्पर वैरभाव को भूलकर मित्रों के समान मिलकर नदी के शीतल जल में प्रवेश करते रहते हैं-

"गज-गवय-मृगेन्द्र-वह्निसंतप्तदेहाः सुहृद इव समेताः द्वंद्वभावं विहाय।

हुतवहपरिखेदादाशु निर्गत्य कक्षाद् विपुलपुलिनदेशान्निम्नगां संविशन्ति।।'' - (वही 1/26)

कविवर बिहारी ने जीव-जगत् को हिंसारहित मैत्रीमय तपोवन बना देने वाले निदाघ की प्रशस्ति को दोहे के इस सीमित कलेवर में कितनी कुशलता के साथ समेट लिया है-

कहलाने एकत वसत अहि मयूर मृग बाघ ।

"जगत तपोवन सौं कियो दीरघ दाघ निदाघ।'' - (बिहारी सतसई)

महाकवि भवभूति ने भी वनों में जलाभाव के कारण प्यासे गिरगिटों द्वारा कंदराओं में पसरे अजगरों के पसीने से अपनी प्यास बुझाये जाने का उल्लेख किया है-

"सीमानः प्रदरोदरेषु विरलस्वल्पाम्भसो यास्वयं

तृष्यद्भिः प्रतिसूर्यकैरजगरस्वेदद्रवः पीयते। - (उत्तर रामचरित)

ऋतुओं के अन्यतम चतुर चितेरे कविवर सेनापति ने ग्रीष्म का कैसा भीष्म- जीवंत रूप अंकित किया है-

"'वृष को तरनि तेज सहसौ किरनि करि,

ज्वालन के जाल बिकराल बरसत है

तचति धरनि जगजरति झरनि, सीरी छाँह

को पकरि पंथी-पंछी विरमत है।।

सेनापति नैक दुपहरी के ढरत होत,

घमका विषम ज्यों न पात खरकत है।

मेरे जान पौनौ सीरी ठौर को पकरि कोनौ,

घरी एक बैठि कहूँ घामै वितवत है।।''

सचमुच, दोपहर के ढलते ही धूप और भी असह्य हो उठती है, गर्मी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है और हवा सहसा थम जाती है मानो वह किसी ठंडी जगह में छिपकर धूप के ढलने की राह देख रही हो।

सूर्य के आकाश में चढ़ते ही लुवें (गर्म हवाएँ) चलने लगती हैं, जो बड़ी तेजी से नदी-नालों और कुओं को सुखाये डालती हैं, उनके स्पर्श से वन-उपवन सभी मुरझा जाते हैं। ग्रीष्म जैसे धरती को तपे (तप्त, गरम) तबे पर डालकर भून रहा है और ठंडक (शीतलता) बेचारी भयभीत होकर अपनी जान बचाने के लिए तहखानों में जा छिपी है। धरती से तो ठंडक जैसे लुप्त ही हो गयी है। लगता है, विधाता ने शीत ऋतु में शीतलता की खेती करने के लिए उसके बीज भू-गर्भ में सुरक्षित रख छोड़े हैं -

"सेनापति' ऊँचे दिनकर के चलति लुवैं, नदी-नद कुवैं कोपि डारत सुखाइ कै।

चलत पवन मुरझात उपवन-वन, लाग्यो है तबन डार्यो भूतलौ तचाइ कै।।

भीषम तपत ऋतु ग्रीषम सकुचि तातें, सीरक छिपी है तहखानन में जाइ कै।

मानो सीतकाल सीतलता के जमाइवे कौ, राखे हैं विरंचि बीज धरा में छिपाइ कै।।''

उक्त कवित्तों में क्रमशः 'पवन' और 'सीरक' का मानवीकरण काव्योत्कर्ष में चार चाँद लगा रहा है।

ग्वाल कवि ने भी ग्रीष्म का ऐसा त्रासद उग्र रूप अंकित

किया है, जिसमें भींगे खस के पंखे झलने पर भी तन का पसीना सूख नहीं पाता, गरम हवा का स्पर्श शरीर को दुःसह दावाग्नि-सा दाहक लगता है, घड़े और कुएँ के ठंडे पानी से बार-बार मुँह धोने को जी चाहता है और बार-बार पानी पीने पर भी कमबख्त प्यास है कि बुझने का नाम ही नहीं लेती-

"ग्रीष्म की गजब धुकी है धूप धाम-धम,
गरमी झुकी है जाम-जाम अति तापिनी।
भीजे खस-बीजन झले हू न सुखात स्वेद
गात न सुहात बात दावा-सी डरापिनी।।
ग्वाल कवि कहें कोरे कुम्भन तैं कूपन तैं
लैके जलधार बार-बार मुख थापिनी।
जब पियो, तब पियो, अब पियो फेर अब
पीबत हू पीबत मिटै न प्यास पापिनी।।''

कविवर जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' ने भी अग-जग को झुलसा देने वाली प्रचण्ड लू का विभिन्न उपमानों द्वारा 'संदेह अलंकार' के माध्यम से विकराल जाल बुना है- कभी वह उन्हें दावाग्नि की लपट जैसी लगती है तो कभी समुद्र में लगी आग (वाडवाग्नि) के समान ऊँची-ऊँची लहरों के साथ झपटती जान पड़ती है, कभी दारूण दाह से दहकता पावक का पहाड़ आग उगलता दिखायी देता है, तो कभी वह क्रुद्ध रूद्र के तीसरे नेत्र की संहारक ज्वाला जान पड़ती है, कभी रूद्र के गले में लिपटे भयंकर सर्पों की फूत्कार जैसी लगती है तो कभी बसंत के वियोग में व्यथित धरती की दीर्घ निःश्वास-सी जान पड़ती है-

"कैंधों अति दुसह दवागि की दबेट कैंधों
वाडव की विषम झपेट झर झार है।
कहैं 'रत्नाकर' दहकि दाह दारून सौं
उगलति आगि कैंधौं पावक पहार है।।
रूद्र दृग तीसरे की कैंधों विकराल ज्वाल,
फेंकत फुनिंग कै फनिंद फुफकार है।
कैंधों ऋतुराज काज अवनि उसास लेति,
कैंधों यह ग्रीषम की मौसम लुआर है।।''

महाकवि बिहारी ने 'अपहुति' के माध्यम से इसी बात को 'सतसई' में इस तरह कहा है-

"नाहिन ये पावक प्रबल, लुवें चलैं चहुँ पास। मानहु विरह वसंत के ग्रीषम लेत उसास।।''

वस्तुतः प्रियतम का बिरह प्रेमिका या प्रिया के अंतर्तम को जितनी गहराई से मथता है और तीव्रता से व्यथित करता है, उतना एक पुरुष का दूसरे पुरुष को नहीं। संयोग काल में प्रियतम वसंत ने बड़े मनोयोग के साथ अपने हाथों से प्रियतमा अवनी का शृंगार किया था। वह प्रवास पर चला गया। नायिका अवनी वियोगिनी हो गयी और खलनायक ग्रीष्म ने आकर उसके पुष्पावतंस नोंच डाले। एक तो बेचारी प्रियवियुक्ता दूसरे प्रतिनायक का असह्य अत्याचार।

ऐसी परिस्थिति में निराश्रिता अबला व्यथित होकर दीर्घ निःश्वास तो लेगी ही। बिहारी की 'मानहु बिरह वसंत के ग्रीषम लेत उसास'' उक्ति को "कैंधों ऋतुराज काज अवनि उसास लेति' में परिणत करके 'रत्नाकर' ने निश्चय ही अधिक युक्तियुक्त, भावप्रवण और औचित्यपूर्ण बना दिया है। जेठ की धूप इतनी तेज और असह्य होती है कि छाया भी उसे झेलने की हिम्मत नहीं कर पाती और बेचारी स्वयं छाया पाने के लिए अत्यधिक घने जंगलों में घुसकर बैठ जाती है अथवा सदनों (भवनों, अट्टालिकाओं) के भीतर प्रवेश कर जाती है-

"बैठि रही अति सघन बन, पैठि सदन तन माँह। निरखि दुपहरी जेठ की, छाँहौ चाहति छाँह।।''

महाकवि 'जायसी' ने 'पद्मावत' महाकाव्य में ग्रीष्म का बड़ा ही यथातथ्य चित्रण किया है-

"भा बैसाख तपनि अति लागी। चोआ चीर चंदन भा आगी।।''

सचमुच बैशाख में सूर्य उत्तरायण होकर आग बरसाने लगता है, शीतल वस्तुएं भी दाहक लगने लगती हैं, तालाब सूखने लगते हैं, उनका पानी डबरों में बंट जाता है और सूखते हुए कीचड़ में दरारें पड़ जाती हैं, मानों प्रियतम जल के वियोग में उसका हृदय खंड-खंड होकर विदीर्ण हो गया हो-

"सुरज जरत हिवंचल ताका। विरह बजागि सौंह रथ हाँका।।

सरवर हिया घटत नित जाई। टूक टूक होइ के विहराई।।

और जेठ में तो यह स्थिति हो जाती है कि-

"जेठ जरै जग चलै लुआरा।
उठहि बबंडर परहि अंगारा।।''

किन्तु आज साधन-सम्पन्न फुरसतिया लोगों को ग्रीष्म का ताप कहाँ-

वातानुकूलित कक्ष में या कूलर के पास। जो जन होते वे सुखी, उन्हें न आतप त्रास।।''

- (स्वरचित 'दोहावली' से)

प्राचीन काल में सम्पन्न व्यक्ति गर्मी से बचने के लिए अपनी अट्टालिकाओं के नीचे तहखाने या तलघरे (भूगृह, भूमिगृह) बनवाते थे, समुद्रगह (पानी से घिरा हुआ भवन) बनवाते थे। संस्कृत के महान् नाटककार भास के सुप्रसिद्ध नाटक 'स्वप्नवासदत्तम्' में शिरो वेदना से पीड़िता पद्मावती की शय्या समुद्रगृह में ही बिछायी गई थी। किसी कारणवश वह वहां नहीं पहुंच पायी थी और उसका हाल-चाल जानने के लिए वहां पहुंचा राजा उदयन स्वयं उस खाली शय्या पर सो गया था। वासवदत्ता भी पद्मावती को देखने वहां आयी थी। स्वप्न देखते हुए राजा का चिरवियुक्ता वासवदत्ता से प्रत्यक्ष सम्मिलन होने के कारण इस नाटक का नाम

'स्वप्नवासदत्तम्' रखा गया है। कालिदास के समय के रईस अपने भवनों की सुवासित छतों पर प्रियतमाओं की मुखोच्छ्वासयुक्त (जूठी) मदिरा पीकर और वीणा की मधुर तान में छेड़े गये मधुर गीतों का आनंद लेते हुए रातें बिताया करते थे-

"सुवासितं हर्म्यतलं मनोहरं
प्रियामुखोच्छ्वास-विकम्पितं मधु।
सुतंत्रिगीतं मदनस्य दीपनं शुचौ निशीथेऽनुभवन्ति कामिनः।।" - (ऋतु 1/3)

वे चाँदनी रातों, फव्वारों से शीतल सुखदायक विचित्र भवनों (विचित्र जलयंत्र मंदिर) चंद्रकांत मणियों और सरस (गीले) चंदन के प्रलेप का सेवन करते थे-

"निशाः शशांकक्षतनीलराजयः क्वचिद् विचित्र जलयंत्रमंदिरम्।
मणिप्रकाराः सरसंच चन्दनं शुचौ प्रिये यान्ति जनस्य सेव्यताम्।।" - (वही 1/2)

कामिनियां रेशमी वस्त्रों से आवृत और मेखलाओं से अलंकृत जघन स्थलों से, पुष्पावतंसों और आभूषणों से विभूषित चंदन-चर्चित पुष्ट उरोजों से तथा सद्यः स्नान से सुवासित केशराशि से कामियों के ग्रीष्म-ताप का शमन किया करती थीं-

"नितम्बबिम्बैः सदुकूलमेखलैः स्तनैः
सहाराभरणैः सचन्दनैः।
शिरोरूहैः स्नानकषायवासितैः स्त्रियो निदाघं शमयन्ति कामिनाम्।।" - (वही 1/4)

वे कभी लाक्षारंजित चरणों और कलहंस के समान मधुर ध्वनि करने वाले रूनझुनाते नूपुरों से, कभी चंदन चर्चित धवल हार मंडित स्तनों और स्वर्ण मेखलाओं से मंडित जघन-स्थलों से, तो कभी वीणा की मधुर तान में मादक गान गाकर कामियों को अनुरागाकुल कर दिया करती थीं-

"नितांतलाक्षारसरागरंजितैर्नितम्बिनीनांच चरणैः सनूपुरैः।
पदे-पदे हंसरूतानुकारिभिर्जनस्य चित्तं क्रियते समन्मथम्।।
पयोधराश्चंदनपंकचर्चितास्तुषारगौरार्पितहार-शेखराः।
नितम्बदेशाश्च सहेममेखलाः प्रकुर्वते कस्य मनो न सोत्सुकम्।।
सचंदनाम्बु व्यजनोद्भवानिलैः सहारयष्टि स्तनमंडलार्पणैः।
सबल्लकी काकलिगीतनिः स्वनैः विबोध्यते सुप्त इवाद्यमन्मथः।।" - (वही 1/5, 6, 8)

प्राचीन काल में ऋषि-मुनि और निर्धन लोग पर्णशाला, पर्णकुटीर या तृणोटज (घास-फूस की झोपड़ी) बनाकर रहा करते थे। पत्तों और घास-फूस ताप के कुचालक होते हैं, इसलिए ये शीत और ग्रीष्म दोनों ही ऋतुओं में सुखद हुआ करती थीं। अंग्रेजों के जमाने में हुजूरों के डाक बंगलों की ढालू छतें भी फूस की ही हुआ करती थीं। उनके दरवाजों और खिड़कियों में आज की तरह खस की टट्टियाँ लगी होती थीं जिन्हें पानी से तर रखा जाता था। कक्ष में बड़े-बड़े आयताकार खस के पंखे लगे रहते थे। लगातार झलने के लिए सेवक जुटे रहते थे। कोर्ट-कचहरियों में भी यही व्यवस्था थी। कुम्हार के द्वारा गढ़े गये मिट्टी के लाल रंग के पसीजने वाले या रिसने वाले नये घड़े आदिम युग से ही ग्रीष्म ऋतु में अमीरों और गरीबों- सभी के प्यास से सूखते कंठों को तर करते आ रहे हैं। आज रेफ्रिजरेटर के आविष्कार ने भले ही महलों से घड़े को निष्कासित कर दिया हो, किन्तु मध्यम वर्ग के लोगों और गरीबों के घरों और झोपड़ों का तो आज भी घड़ा ही प्राणाधार है।

निदाघ सर्वथा निष्करूण और निर्मम ही नहीं होता। जब दुनिया के सभी स्थावर और जंगम प्राणी इसके असह्य दाह से झुलसकर मरणासन्न से हो जाते हैं तब यह उनकी जिजीविषा को जगाने के लिए अपने आकर्षक-अभिराम उपहार प्रस्तुत कर देता है। सघन-नील मसृण पत्रराजि से लदा बरगद सभी के लिए अपनी शीतल-सुखद छाया और पक्षियों के लिए गूदेदार फलों के गुच्छे लेकर उपस्थित हो जाता है, पीपल सरस मीठे फलों के स्तवक प्रस्तुत करके अपने सतत् वायु-लुलित पत्तों से पंखा झलने लगता है, नख से शिख तक कड़वा नीम शीतल पत्तों के दोनों में पीली-मीठी निबौलियाँ लेकर खड़ा हो जाता है इस निवेदन के साथ कि संसार के जीव मुझे केवल कड़वा ही न समझें, मेरे अंतर की मधुरता को भी परखें और मेरे पत्तों की ग्रीष्म-ताप-शमक आरोग्यवर्धक वायु का सेवन भी जरा करके तो देखें। परन्तु हाय, प्रकृति-विद्वेषी मनुष्य के क्रूर हाथों से ये पेड़ अब बचे ही कितने हैं ?

यह प्रचण्ड ग्रीष्म चंडिका गौरी की तरह सुन्दर है-

"गुलमोहर की अरूणिमा, धवल मल्लिका-हास,
चम्पा की तनु-कांति ले, रम्य शिरीष-विलास।
रम्य शिरीष-विलास, मोंगरे के ले गजरे,
वट-पत्रों की नील-मसृण साड़ी में सँवरे।
चन्द्रकांति से दीप्त ग्रीष्म दुर्गा-सी सुन्दर,
अरूण-पीत-वर्णाभ यथा पुष्पित गुलमोहर।।" - (स्वरचित)

सचमुच मीठी जामुन और रसीले आम का उपहार प्रस्तुत करने वाला यह ग्रीष्म कम अभिनंदनीय नहीं-

"जामुन पक काली हुईं, पीले मधुर रसाल
स्वागत में सबके लिए, फल-भारानत डाल।।"

हम आशान्वित हैं कि ग्रीष्म का प्रचण्ड सूर्य धरती का जो जल बड़ी निर्ममता से सोख रहा है, उसे वह वर्षा ऋतु में कई गुना करके हमें लौटा देगा-

"लक्ष करों से रवि हरे, बना भूमि-जल वाष्प।
वर्षा में लौटायेगा, कोटि करों से आप।।"

महाराज बाग, भैरवगंज, सिवनी, जिला सिवनी, मध्य प्रदेश-480 661, मो. 0 88789 80467

आलेख

इंटरनेट एवं संस्कारों का क्षरण

◆ डॉ. सुधाकर आशावादी

आज इंटरनेट का युग है। पलक झपकते ही जनमानस विश्व के ज्ञान भंडार से जानकारियां जुटा रहा है। निस्संदेह ही संचार माध्यम संस्कृति के विस्तार का सशक्त माध्यम रहे हैं। जीवन के विभिन्न पहलुओं से जनमानस को अवगत कराने का कार्य संचार माध्यम बखूबी करते कर रहे हैं। भूमण्डल पर मानव विकास की प्रक्रिया से लेकर जीवनचर्या तक की अनेक जानकारियां संचार माध्यमों के माध्यम से प्राप्त होती रही हैं। यही नहीं यायावरी वृत्ति के लोग देश विदेश में भ्रमण करके मानव कल्याण के अनेक मार्ग खोजते रहे हैं तथा उस विचारधारा एवं आचरण को अपनाने हेतु उद्यत रहे हैं, जिनसे जीवन शैली में सकारात्मक सुधार आए। विभिन्न जीवन शैलियों एवं संस्कृतियों के तुलनात्मक अध्ययन से ही समाज का उत्थान होता आया है। भारतीय परिवेश में लोक कलाएं एवं लोक संस्कृति जीवन को प्रेम, सदाचार, सहयोग, त्याग, समर्पण, नैतिकता एवं ईमानदारी जैसे जीवन मूल्यों का प्रचार प्रसार करती रही हैं। यही कारण है कि भारतीय दर्शन सदैव सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया जैसे सर्वमंगलकारी आदर्श का अनुकरण करता रहा है तथा वसुधैव कुटुम्बकम जैसी अवधारणा में स्वयं को समाहित करता रहा है। भारतीय दर्शन की विशिष्टता भी यही है कि उसने सदैव सत्य और अहिंसा का पालन करते हुए मानवमात्र के प्रति अपना व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया है तथा एक दूसरे के सुख दुःख में भागीदारी निभाई है। घर, परिवार एवं समाज से मिले संस्कारों के आधार पर सामाजिक समरसता को अंतःकरण से भारतीय जनमानस ने स्वीकार किया है। भारतीय ग्रन्थ रामचरित मानस एवं श्रीमदभागवत गीता के माध्यम से समाज को जीवनचर्या में चुनौती बनने वाली समस्याओं से निपटने के सूत्र प्रदान किये गए हैं। रामचरितमानस में जहाँ समूचे समाज के लिए आदर्श मूल्यों को व्यक्त किया गया है वहीं श्रीमदभागवत गीता ने कर्म योग को महत्ता देते हुए जीवन के परमसत्य को उद्घाटित किया है।

वर्तमान में आधुनिक संचार माध्यमों से जो नया समाज बनता जा रहा है उससे समाज में उन विलुप्त होते संस्कारों के संरक्षण की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी हैं, जिनके आधार पर कभी सामाजिक जीवन मूल्यों का आंकलन किया जाता था। कहना गलत न होगा कि जब से आधुनिक संचार माध्यमों का विस्तार हुआ है और घर घर में मोबाइल संस्कृति पनपी है, परिवार के प्रत्येक सदस्य की जेब में जब से पृथक-पृथक मोबाइल ने अपनी उपस्थिति बनाई है, तब से अनेक विकृतियाँ जनमानस की जीवन शैली में भी घुसपैठ करने लगी हैं। परिवार में जिन रिश्तों में मिठास हुआ करती थी, वे रिश्ते भी भोगवाद और भौतिकता की हदों में सिमटकर रह गए हैं। जो परम्पराएं कभी आत्मीय सुख एवं उल्लास का माध्यम बना करती थी, वही आज ढोंग और पाखंड की पर्याय बनकर मजाक की विषयवस्तु बन चुकी हैं। आत्मीय रिश्ते जिस सम्मान से मर्यादित आचरण के साक्षी हुआ करते थे, वही संदेह की परिधि में आ गए हैं। जिस ज्ञान को एक ख़ास आयुवर्ग एवं परिस्थिति में प्राप्त किया जाता था, वह समय से पहले ही आमजन की परिधि में आ चुका है। भारतीय दर्शन जिस आश्रम व्यवस्था के आधार पर समाज का संचालन कर रहा था, वही व्यवस्था आधुनिक संचार माध्यमों के विस्तार के कारण धराशायी होने लगी है।

यदि आश्रम व्यवस्था की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आंकलन किया जाय तो वस्तुस्थिति स्पष्ट हो सकती है, कि आज के युग में ब्रहमचर्य का अनुपालन करने वाले बालक, किशोर एवं युवाओं की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। बालक अपनी आयु से अधिक बड़े होने लगे हैं। संचार माध्यमों ने उनके सम्मुख देह के भोग्य स्वरूप को इस प्रकार परोसा है कि उनके सात्विक और निश्चल विचारों पर ग्रहण लग गया है। ऐसा नहीं है कि संचार माध्यम विकृति ही परोसते हों, किन्तु चिन्तन समाज के उस क्रियाकलाप का किया जाता है, जिसका चलन अधिक हो। भोगवादी संस्कृति के अधिक पल्लवित होने में आधुनिक संचार माध्यमों की बड़ी भूमिका है। भारतवासी जिन मूल्यों पर गर्व करते हैं तथा जिनके आधार पर विश्व में भारत की विशिष्ट पहिचान है, आज हम उन्हीं जीवन मूल्यों और संस्कारों से विरत होते जा रहे हैं।

आवश्यकता यही है कि पुनः उन जीवन मूल्यों को स्तःपित किया जाय जो व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़ने के वाहक रहे हैं। क्षण भंगुर जीवन को जब तक जीया जाए ऐसे आदर्श मूल्यों के आधार पर जीया जाय , जो व्यक्ति के कार्यो से उसे अभिप्रेरक बनाने में सक्षम हों। संस्कार ही वह जीवन की थाती हैं, जिनके आधार पर व्यक्ति सकारात्मक ऊर्जा से सन्नद्ध होकर जीवन में परम सुख की प्राप्ति कर सकता है।

एसोसियेट प्रोफ़ेसर (शिक्षा संकाय)
ने.मे, शि.न.दास स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बदायूँ
स्थायी निवास: शास्त्री भवन, ब्रहमपुरी, मेरठ

कहानी

मां के नाम की चिट्ठी

◆ श्याम नारायण श्रीवास्तव

प्रत्येक शनिवार की दोपहर में वह पत्र पेटिका का ताला खोलता है। उसमें से पत्रों को बाहर निकालता है। एक-एक करके सबको पढ़ता है। सर्व प्रथम एक रजिस्टर में पत्र लिखने वालों का नाम अंकित करता है। फिर उसके नीचे संक्षिप्त में उनकी समस्याओं को। जिसमें यह लिखा होता है कि याचक देवी माँ से क्या कहना चाहता है। फिर वह सारे पत्रों को इस प्रकार फाड़ता है जैसे कोई रद्दी कागज के टुकड़े को फाड़ता है। फाड़कर एक कोने में फेंक देता है या फिर डस्टबिन में डाल देता है। जिसे सुबह कचरे वाला उठा कर ले जायेगा।

पंडित अविराम शास्त्री याचक द्वारा लिखे गये उन पत्रों को फाड़ता तो है रद्दी कागज की तरह, लेकिन उन्हें यों ही नहीं फेंकता। शाम को जब थोड़ा अँधेरा होने लगता है तो मन्दिर के पास वाले पीपल के पेड़ के पास जाता है। जो उस बड़े तालाब के एक किनारे पर है। तालाब के दो तरफ पक्के घाट बने हैं। भक्त लोग वहाँ जाकर हाथ-पैर धोते हैं और मन्दिर में देवी दर्शन को निकल जाते हैं। दिन में कितने लोग तो उन घाटों पर स्नान करते भी दिख जाते हैं। पीपल के पेड़ के आस-पास कोई घाट नहीं है। लोग कहते हैं इधर तालाब बहुत गहरा है। यहाँ कोई गहरा कुण्ड है। इस डर से भी कोई उधर नहीं जाता। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि इसी कुंड से देवी माँ की वह मूर्ति निकली थी जो मन्दिर में स्थापित है।

अविराम शास्त्री उसी कुण्ड के पास जाता है। फाड़े हुए सारे पत्रों को इस प्रकार फेंकता है जैसे कोई कूड़ा करकट फेंकता है। बड़बड़ाता भी है। पता नहीं कैसे कैसे लोग हैं। भला देवी जी को पत्र लिखने से किसी समस्या का निराकरण होता है। अरे कर्म करो कर्म - काहिलो। जाओ तुम्हारी समस्या गई कुंड में। अब देवी जी ही बेड़ा पार लगाएंगी और हंसता हुआ वापस आ जाता है। उसे पत्रों को पढ़ने व फाड़कर फेंकने में बड़ा मजा आता है। लेकिन रजिस्टर में लिखना बहुत अजीब सा लगता है। किन्तु क्या करे, बाबा ने जो कहा है तो पत्रों को रजिस्टर में चढ़ाना ही पड़ेगा। लिहाजा वह कुछ पत्रों को नाम और समस्या के साथ रजिस्टर में चढ़ा भी देता है। और अधिकतर फाड़कर फेंक देता है। हालाँकि बाबा को तो यही पता है कि अविराम पत्र पेटिका में आये सारे पत्र रजिस्टर में अंकित करता है।

इस मंदिर के देवी माँ के प्रति लोगों में अटूट विश्वास है। सबसे बड़ी बात तो ये है कि लोगों में यह भी एक धारणा दूर-दूर तक प्रचलित है कि इस मन्दिर में देवी माँ के नाम चिट्ठी लिख देने

इस मंदिर के देवी माँ के प्रति लोगों में अटूट विश्वास है। सबसे बड़ी बात तो ये है कि लोगों में यह भी एक धारणा दूर-दूर तक प्रचलित है कि इस मन्दिर में देवी माँ के नाम चिट्ठी लिख देने से समस्या का निराकरण हो जाता है। लेकिन अविराम शास्त्री में ये विश्वास अभी तक जागृत न हुआ था। वह सारे पत्रों को रजिस्टर में अंकित नहीं करता। कुछ पत्रों को तो यों ही पढ़कर फाड़ देता है। जैसे कोई विद्यार्थी परीक्षा में पास होने के लिए देवी जी से याचना करता है या फिर प्रेमी-प्रेमिका के पत्रों को भी वह बड़े चाव से पढ़ता है। फिर उन्हें रजिस्टर पर बिना अंकित किये ही फाड़ कर फेंक देता है। फाड़ते समय कुछ न कुछ बोलता रहता है, 'बस अब देवी जी को और कोई काम नहीं बचा है। तुम्हारी जगह परीक्षा में बैठ जाएंगी और तुम उत्तीर्ण हो जाओगे। तुमको तो पढ़ने-लिखने की कोई आवश्यकता है नहीं। इनको देखो अपने प्रेमिका से शादी करनी है। अरे तो करो न भाई। उसमें देवी जी को क्या करना है। क्या चाहते हो देवी जी दोनों घर वालों के बीच बैठ कर पंचायत करें। छोटी-छोटी समस्या भी देवी जी के सिर पर डालकर ये लोग ऐसे चले जाते हैं जैसे देवी जी हमेशा इन्हीं के लिए फुरसत से बैठी रहती हैं। तुम्हारे घर में भी तो एक माँ है। कभी उससे भी बात करो। पिताजी से बात करो। जिसने तुमको पाल- पोषकर इतना बड़ा बनाया है। ऐसे याचकों के प्रार्थना पत्र वह रजिस्टर में कभी नोट नहीं करता।

से समस्या का निराकरण हो जाता है। लेकिन अविराम शास्त्री में ये विश्वास अभी तक जागृत न हुआ था। वह सारे पत्रों को रजिस्टर में अंकित नहीं करता। कुछ पत्रों को तो यों ही पढ़कर फाड़ देता है। जैसे कोई विद्यार्थी परीक्षा में पास होने के लिए देवी जी से याचना करता है या फिर प्रेमी-प्रेमिका के पत्रों को भी वह बड़े चाव से पढ़ता है। फिर उन्हें रजिस्टर पर बिना अंकित किये ही फाड़ कर फेंक देता है। फाड़ते समय कुछ न कुछ बोलता रहता है, "बस अब देवी जी को और कोई काम नहीं बचा है। तुम्हारी जगह परीक्षा में बैठ जाएँगी और तुम उत्तीर्ण हो जाओगे। तुमको तो पढ़ने-लिखने की कोई आवश्यकता है नहीं। इनको देखो अपने प्रेमिका से शादी करनी है। अरे तो करो न भाई। उसमें देवी जी को क्या करना है। क्या चाहते हो देवी जी दोनों घर वालों के बीच बैठ कर पंचायत करें। छोटी-छोटी समस्या भी देवी जी के सिर पर डालकर ये लोग ऐसे चले जाते हैं जैसे देवी जी हमेशा इन्हीं के लिए फुरसत से बैठी रहती हैं। तुम्हारे घर में भी तो एक माँ है। कभी उससे भी बात करो। पिताजी से बात करो। जिसने तुमको पाल-पोषकर इतना बड़ा बनाया है। ऐसे याचकों के प्रार्थना पत्र वह रजिस्टर में कभी नोट नहीं करता।

उसने अन्य मन्दिरों में भी लाल कपड़े में नारियल बांधकर लटकाते देखा है। कहीं-कहीं तो धागा बांधते भी देखा है। लोगों का मानना है इससे मन्नत पूरी हो जाती है। लेकिन वह इन सब को हमेशा आडंबर ही मानता रहा। कभी-कभी उसे लगता है जितनी समस्या रजिस्टर में नोट हो जाएगी। उन सबको देवी जी को देखना ही पड़ेगा। देवी जी को और भी तो बहुत कार्य रहता होगा। लिहाजा जैसे मंत्री या नेता के पर्सनल असिस्टेंट आधी समस्यायों को मंत्री तक पहुँचने ही नहीं देते। वैसे ही अविराम शास्त्री चयन करता है कि कौन से पत्र रजिस्टर में चढ़ाने हैं या फिर कौन से नहीं। विश्वास तो उसे उन पत्रों पर भी नहीं होता, जिसे उसने रजिस्टर पर चढ़ाया है कि देवी जी कुछ करेंगी। लेकिन बाबा का आदेश है कि पत्रों को रजिस्टर में चढ़ा कर कुण्ड की ओर प्रवाहित कर दो। तो पालन करना ही है। बाबा यानी बड़े पुजारी जी। पुजारी जी को देवी माँ पर अटूट विश्वास है। उनके सपने में प्रायः देवी जी आती हैं। सरल हृदय के पुजारी जी किसी को भी निराश नहीं करते। वे जितनी देर तक मन्दिर में रहते हैं। भक्तों से कहते रहते हैं , "निराश मत होना माता जी सबका भला करेंगी। बहुत कष्ट है तो देवी माँ को लिख कर दे दो, समय आने पर माता सब कार्य पूर्ण करती हैं।"

किन्तु अविराम शास्त्री जब से यहाँ आया है। उसके भीतर अभी तक पूर्ण विश्वास नहीं जगा। उसका जीवन एक बहरूपिया सा हो गया है। वह सुबह चार बजे उठकर दैनिक क्रिया से निवृत हो, नहा धोकर मन्दिर पहुँच जाता है और अपने कार्यो में जुट जाता है। जैसे कल के चढ़े हुए पुष्पों को हटाना। चढ़ावे में आये फल मिष्ठान को एक किनारे रखना। माँ की मूर्ति के आसपास सफाई करना। पानी का पाइप लेकर मन्दिर प्रांगण की सफाई करना। यहाँ तक कि माँ का श्रृंगार आदि सूर्योदय तक पूर्ण कर देना। फिर तालाब के एक ओर बने बड़े हाल में जाकर कुछ कसरत योगासन आदि करना। तब तक बाहर सफाई वाला भी आकर झाड़ू लगा जाता है। इस बीच पूर्व की ओर से सुबह-सुबह जब सूर्य की किरणें मन्दिर का निरीक्षण करने पहुँचती हैं तो उन्हें पूरा का पूरा मन्दिर प्रांगण चमकता हुआ दिखाई पड़ता है। फिर तो वे भास्कर की सुनहरी रश्मियाँ भी माँ के चरणों को स्पर्श कर अपनी दिनचर्या में लग जाती हैं। इधर साढ़े छह बजते-बजते अविराम के बाबा जी नहा धोकर मन्दिर में प्रवेश करते हैं। तब तक भक्तों का आगमन भी प्रारम्भ हो जाता है। फिर शुरू होती है सुबह सात बजे की आरती और मन्दिर से अविराम शास्त्री का कार्य समाप्त।

घर आकर वह फल आदि के साथ जलपान ग्रहण करता है। फिर एक घंटे विश्राम। नौ बजे पैंट-शर्ट पहन कर कालेज जाना। दो बजे तक वापस आकर भोजन। तीन बजे भगवा रंग की धोती-कुर्ता , कन्धे पर गमछा। जिस दिन सफ़ेद धोती पहनता है उस दिन पीले कुर्ते के साथ सफ़ेद गमछा। माथे पर लम्बा सा तिलक। एक बड़े मन्दिर के पुजारी की वेशभूषा में तैयार होता है। यों भी गजब का आकर्षक चेहरा लगता है उसका। शरीर का गठन भी बहुत अच्छा है। प्रथम दृष्टया तो कोई भी सम्मोहित हो जाए। सज धज कर मन्दिर पहुंचना और बड़े पुजारी जी को अवकाश देना। जो अब सात बजे सायं काल की आरती के ठीक पहले वापस आयेंगे। तब-तक माँ के भक्तों को प्रसाद देना, चढ़ावा लेना पं. अविराम शास्त्री की जिम्मेदारी होती है।

आरती से पहले शाम साढ़े छह बजे बड़े पुजारी जी के वापस आते ही वह तेजी से भागता है। घर पहुंचकर जल्दी-जल्दी ऐसे कपड़े उतारता है जैसे नाट्य मंच के पीछे नेपथ्य में कलाकार अपने वस्त्रों को परिवर्तित करते हैं और किरदार के अनुसार दूसरा वस्त्र धारण करते हैं। वैसे ही वह धोती-कुर्ता उतार कर एक किनारे रखता है। बाहर जाकर हाथ-मुंह धुलता है। जींस - टी शर्ट पहनता है और मोटर साइकिल से पहुच जाता है कम्प्यूटर की कोचिंग में। नौ बजे तक लौटना। रात्रि भोजन, कुछ देर पाठ्यक्रम की पुस्तकें पढ़ना। कालेज में पढाये गये विषयों का अध्ययन करना और ग्यारह बजे तक सो जाना। क्योंकि उसे फिर सुबह चार बजे उठकर अपनी दिनचर्या में लगना होता है।

विगत दो वर्षो से यही दिनचर्या है उसकी। दरअसल अविराम शास्त्री एक छोटे से शहर जौनपुर का निवासी है। उसके पिता डॉ. रमा शंकर शास्त्री एक डिग्री कालेज में संस्कृत के प्रोफेसर हैं। अविराम का एक भाई और है , साथ में दो बहनें भी। वे सभी जौनपुर में ही माता-पिता के साथ रहते हैं। बारहवीं पास करने के बाद अविराम ने मेडिकल क्षेत्र में जाने के लिए परीक्षा दी।

किन्तु असफल होने पर उसे बाबा ने अपने पास बुला लिया। यह एक बड़ा शहर है। यहीं से वह आगे की पढाई व मेडिकल लाइन की तैयारी भी कर रहा है। लेकिन बाबा के साथ है और वे मन्दिर के पुजारी हैं तो उसे बाबा का सहयोग तो करना ही पड़ेगा। बाबा भी उसे मन्दिर में न लगाते। लेकिन अविराम को मन्दिर का कार्य देना उनकी मज़बूरी थी।

घटना बहुत पुरानी है। अविराम के बाबा गाँव से जगन्नाथ पुरी दर्शन को गये थे। वापस आते समय इस शहर में अपने गाँव के एक परिचित से मिलने के लिए रुक गये। शाम को इसी मन्दिर में भगवती जागरण था। अविराम के बाबा भी पहुँच गये। वे बहुत अच्छा कीर्तन गाते थे। लिहाजा उस जागरण में उन्होंने भी देवी जागरण के गीत गाये। इस बहाने मन्दिर के पुजारी से उनकी जान पहचान बढ़ गई। धीरे-धीरे पता चला वहां के पुजारी तो फ़ैज़ाबाद में उनकी बुआ के गाँव के हैं। बस अब अविराम के बाबा ने यहाँ रहने का मन बना लिया। गाँव में भी वे पूजा-पाठ ही करते थे। अब वे इस मन्दिर में पुजारी जी के साथ रहने लगे। पुजारी जी को भी आराम हो गया कि कोई अपना परिचित साथ रहने लगा।

दो तीन महीने में वे जब पुरी से घर नहीं पहुंचे तो लोगों को चिंता हुई। उस समय मोबाइल फोन का जमाना तो था नहीं। फिर कई महीनों बाद एक चिट्ठी से घर तक खबर पहुंची कि अब वे घर नहीं जायेंगे और यहीं मन्दिर में रहेंगे। मन्दिर में रहते हुए वे घर में मनी आर्डर भी भेजने लगे। समय तेजी से भागने लगा। लड़का संस्कृत से परास्नातक व पीएचडी करके एक कालेज में पढ़ाने लगा। साल में एकाध बार वे अपने गाँव भी जाते थे। लड़का नौकरी करने लगा तो उसकी शादी कर दी। फिर इसी बीच पंडित जी ने अपनी धर्मपत्नी को भी साथ बुला लिया। इधर फ़ैज़ाबाद वाले पुजारी भी नहीं रहे तो ये ही यहाँ के मुख्य पुजारी हो गये। अब तो यहाँ रहते तीस साल से अधिक हो गया।

इनके सहायक में दो तीन पंडित भी आये लेकिन वे अधिक दिन नहीं टिके। पंडित जी को अपने विरासत की चिंता भी होने लगी थी। इधर जब से मोबाइल फोन का जमाना आया तो आये दिन पंडित जी की घर पर बातें होने लगीं। इन्हीं बातों में उन्होंने अपने बेटे से अविराम को यहाँ रहने की बात कह दी और अविराम यहाँ आ गया। जल्द ही बाबा ने उसे मन्दिर के नियम व दिनचर्या को समझा दिया। जिसे अविराम बखूबी निभाता। दो वर्ष हो गये अब उसे मन्दिर के कार्यों में मजा भी आने लगा। मन्दिर में आने वाली कीर्तन मंडली के साथ वह हारमोनियम और ढोलक भी बजाना सीख गया था। गले में तो जैसे आवाज का जादू भरा हो। नवरात्रि में गजब का कीर्तन गाता है। एक डायरी में उसने जाने कितने भक्ति गीत लिख रखे हैं।

परन्तु विज्ञान का छात्र अविराम अवसर मिलने पर तमाम रूढ़ियों व अन्धविश्वास के विपक्ष में प्रायः खड़ा दिखाई देता है। बलि प्रथा का तो प्रबल विरोधी है। ऐसे ही बहुत सी प्राचीन मान्यताओं, लोककथाओं को भी वह नहीं मानता। यही कारण है पत्र को पढ़कर रजिस्टर में चढ़ाना उसे बिलकुल पसंद न था। न ही उसका सपना ही मन्दिर का स्थायी पुजारी बनने का है। उसे तो डाक्टर बनना है। लेकिन बाबा के साथ रहने का तात्पर्य है मन्दिर के साथ जुड़ना। मन्दिर से जुड़े सारे कार्यों के साथ वह प्रत्येक शनिवार को पत्र पेटिका खोलता है और पत्रों को पढता है। जो समझ में आया उसे रजिस्टर में चढ़ा भी देता है और फिर पत्रों को फाड़ कर तालाब में फेंक देता है। शनिवार को उसे कम्प्यूटर की क्लास में नहीं जाना होता है। इसलिए शाम को उसके पास पर्याप्त समय रहता है।

उस रात उसे बहुत देर तक नींद नहीं आई। इसी ऊहापोह में जागता रहा कि क्या सचमुच देवी माँ रजिस्टर में लिखे पत्रों को पढ़ती हैं ? लेकिन ऐसे कैसे हो सकता है ? नहीं-नहीं ये सब महज संयोग ही है। जाने कितने लोग ऐसे भी तो माँ के लिए चढ़ावा लेकर आते हैं, जिनका पत्र रजिस्टर में नहीं चढ़ा होता। लेकिन पत्र का हवाला देते हुए प्रसाद चढ़ाते हैं। उसे नींद नहीं आ रही थी। फिर अचानक उठ कर बैठ गया। देवी माँ के नाम लिखी चिठी को कुर्ते की जेब से निकाला। सावधानी पूर्वक धीरे-धीरे पढ़ा। वह बहुत सतर्कता से निरीक्षण कर रहा था। माँ के नाम लिखी चिट्ठी में कहीं कोई त्रुटि तो नहीं है। दो बार पूरा पत्र पढ़ा और फिर अचानक फाड़ दिया। जैसे वह अनावश्यक समझे जाने वाले चिट्ठियों को फाड़ता है। साथ में बोलता है, डाक्टर तो मैं बन कर दिखा दूंगा।

पिछले सप्ताह सोमवार को एक आदमी अपनी पत्नी के साथ आया और पं अविराम शास्त्री से बोला, "महराज ये पांच किलो लड्डू माँ के दरबार में चढ़ाकर सबको बाँट दीजिये। बड़ी कृपा है देवी माँ की। मेरी चिट्ठी को माँ ने पढ़ लिया। मैं कई साल से परेशान था तीन ही महीने में मेरे बेटे की नौकरी भी लग गई और बिटिया की शादी भी तय हो गई। उसकी ख़ुशी देखकर अविराम ने जजमान से नाम पूछा और प्रसाद चढ़ा दिया। उन लोगों के जाने बाद उसने धीरे से रजिस्टर खोला। सचमुच उस आदमी का नाम तीन महीने पहले रजिस्टर में चढ़ा था। इस तरह का जब कोई भक्त देवी माँ के दर्शन को आता और कहता कि माँ ने मेरी चिट्ठी पढ़ ली। तो उस दिन अविराम तय करता कि अब वह भी एक चिट्ठी लिखेगा, अपने डाक्टर बनने के लिए। लेकिन फिर ऐसे ही विचार मन में ही रह जाता।

धीरे-धीरे काफी समय हो गया। पं. अविराम शास्त्री ने अपने

विषय में देवी जी को कभी कोई चिट्ठी नहीं लिखी थी। किन्तु आज रात अविराम ने देवी जी को पत्र लिखा। हे देवी माँ आपके कमलवत चरणों में बारम्बार वंदन है। माँ मेरी चिठ्ठी को भी एक बार अवश्य पढ़ना। मैं एक डाक्टर बनकर लोगों की सेवा करना चाहता हूँ। पत्र में और भी अनुनय विनय करते हुए उसने एक लम्बा सा पत्र लिखकर कुर्ते की जेब में डाल दिया। यह तय कर कि कल सुबह जब मन्दिर जाएगा तो इस पत्र को पहले पेटिका में डाल देगा। शनिवार को जब पत्र पेटिका खोलेगा तो रजिस्टर में नोट करके सबके साथ इसे भी कुण्ड में प्रवाहित कर देगा। सुबह वह पत्र ले जाना भूल गया। तीन बजे गया तो पत्र लेकर गया। उस दिन अमावस्या के कारण भक्तों की काफी भीड़ थी। बाबा के हटते ही वह भक्तों को प्रसाद देने, माथे पर तिलक लगाने और चढ़ावा लेने में व्यस्त हो गया।

पांच बजे के लगभग जब भीड़ कम हुई तो मन्दिर के निकट किसी आदमी के सुबकने की आवाज उसके कानों में पड़ी। वह मन्दिर से बाहर आया तो सचमुच एक आदमी मन्दिर की दीवार के सहारे बैठा सुबक रहा था। चेहरे को दोनों हाथों से छिपा कर बैठा था। अविराम उसके सामने धीरे से बैठ गया। कंधे पर हाथ रखते हुए पूछा , "क्या हो गया भाई?" आवाज सुनकर वह आदमी तेजी से रोने लगा। कुछ पल अविराम उसे आश्चर्य चकित सा देखता रहा। सोचा थोड़ा रो लेगा तो मन हल्का हो जायगा। लेकिन अविराम बहुत देर तक प्रतीक्षा न कर सका।

अविराम ने फिर पूछा, "क्या हो गया भाई ? रो क्यों रहे हो?"

उसने कहा, "लगता है माई ने हमारी चिट्ठी नहीं पढ़ी।"

"पढ़ेंगी .... अवश्य पढ़ेंगी। माँ के घर देर है मगर अंधेर नहीं है। देखना तुम्हारी भी चिट्ठी माँ पढ़ेंगी।"

"अब कब पढ़ेंगी ? अब तो मैं अनाथ हो गया।"

"अरे ! इतना निराश मत हो भाई, माँ के रहते कोई अनाथ नहीं हो सकता।"

"सात दिन पहले मेरे पिता जी का स्वर्गवास हो गया। हर अमावस्या को देवी माँ से बोलता था। नहीं सुना देवी जी ने। दो बार चिट्ठी भी लिखी थी।"

"आपका क्या नाम है ? क्या हुआ था पिता जी को ?" अविराम ने जानना चाहा।

"मेरा नाम धनाराम राठिया है। मेरे पिता जी दारु बहुत पीते थे। किडनी ख़राब हो गयी थी उनकी। बहुत दवा किया। कुछ लाभ नहीं हुआ। माँ को चिट्ठी भी लिखी। लगता है माई ने मेरी चिट्ठी नहीं पढ़ी। पंडित जी मैं तो अनाथ हो गया।" वह फिर रोने लगा।

देखो धना राम यही तो जीवन है। किसी को मृत्यु के बारे में कुछ ज्ञात नहीं है। इस नश्वर संसार में किसी न किसी दिन सबकी मृत्यु होनी है। इसका तो नाम ही मृत्युलोक है। वह मन्दिर के अन्य पुजारियों की तरह उपदेश देने लगा। फिर कहा, "चलो उठो। हाथ मुंह धुलकर माँ का प्रसाद लो। तुम्हारा और पिता जी का साथ इतने ही दिन का था।" बहुत समझा बुझाकर पं. अविराम शास्त्री ने उसे चुप कराया। प्रसाद खिलाया और घर भेज दिया।

धनाराम के जाते ही पं. अविराम ने आलमारी से पहले वह रजिस्टर निकाला। एक तरफ से कई महीनों का विवरण चेक कर लिया। धनाराम का नाम तो कहीं था ही नहीं। फिर कैसे धनाराम कह रहा था। माँ को चिट्ठी लिखी थी। अब वह सोचने लगा कहीं उसने यों ही तो फाड़ कर नहीं फेंक दी उसकी चिट्ठी। अविराम को नाम तो नहीं याद आ रहा है। लेकिन यह याद आ रहा था कि कुछ माह पूर्व एक शराबी के विषय में माँ के नाम चिट्ठी तो आई थी। जिसे उसने यह कह कर फाड़ दिया था कि बाप दारू पीता है तो इसमें देवी माँ क्या करें, अपने बाप को समझाओ।

धनाराम को गये बहुत देर हो चुकी थी। शाम होते ही अविराम के बाबा भी आ गये थे। आरती का समय हो गया था। लेकिन आज अविराम का मन नहीं लग रहा था। वह घर आ गया किन्तु कम्प्यूटर कोचिंग में नहीं गया। पता नहीं क्यों आज वह जैसे एक अपराधबोध के तले दबा जा रहा था। उसे लगा यदि उसने धनाराम की चिट्ठी रजिस्टर में चढ़ाई होती तो दिखा देता। देखो तुम्हारी भी चिट्ठी माँ के समक्ष प्रस्तुत की गई थी। फिर सोचता है चिट्ठी दर्ज हो जाने पर हो सकता है माँ सुन ही लेती। जैसे बहुत लोग आकर बोलते हैं माँ ने मेरी चिट्ठी पढ़ ली।

उस रात उसे बहुत देर तक नींद नहीं आई। इसी ऊहापोह में जागता रहा कि क्या सचमुच देवी माँ रजिस्टर में लिखे पत्रों को पढ़ती हैं ? लेकिन ऐसे कैसे हो सकता है ? नहीं-नहीं ये सब महज संयोग ही है। जाने कितने लोग ऐसे भी तो माँ के लिए चढ़ावा लेकर आते हैं, जिनका पत्र रजिस्टर में नहीं चढ़ा होता। लेकिन पत्र का हवाला देते हुए प्रसाद चढ़ाते हैं। उसे नींद नहीं आ रही थी। फिर अचानक उठ कर बैठ गया। देवी माँ के नाम लिखी चिट्ठी को कुर्ते की जेब से निकाला। सावधानी पूर्वक धीरे-धीरे पढ़ा। वह बहुत सतर्कता से निरीक्षण कर रहा था। माँ के नाम लिखी चिट्ठी में कहीं कोई त्रुटि तो नहीं है। दो बार पूरा पत्र पढ़ा और फिर अचानक फाड़ दिया। जैसे वह अनावश्यक समझे जाने वाले चिट्ठियों को फाड़ता है। साथ में बोलता है, डाक्टर तो मैं बन कर दिखा दूंगा।

जिंदल स्टील एंड पावर लि, रायगढ़, छत्तीसगढ़- 496001
मो. 0 79996 52646

कहानी

अंतत:

◆ आशा शैली

''खट्-खट्-खट्...'' आवाज सीढ़ियों से आ रही थी, ''लगता है डॉक्टर रेवा आ गई।'' लेडी पीओन बैंच पर से उठ खड़ी हुई। ''पीछे हटो! डॉक्टर साहब को भीड़ पसन्द नहीं, ऑपरेशन को जाते हुए उनका मूड बिगड़ गया तो समझ लो...।''

सब लोग पीछे हट गए। अब तक आवाज़ निकट आ चुकी थी। मरीज़ों के रिश्तेदार जब तक डॉक्टर की तरफ़ लपकते वह ऑपरेशन थियेटर में प्रवेश कर चुकी थी, बिना इधर-उधर देखे। थोड़ी ही देर में बाहर दरवाजे पर लगा लाल बल्ब जल गया था, यानि ऑप्रेशन शुरू।

जय, रोगिणी का पति दम साधे थियेटर के बाहर जलते लाल बल्ब को घूर रहा था, उसकी मां बैंच पर बैठी थी।

''जय! तुझे नहीं लगा कि डॉक्टर कुछ जानी-पहचानी सी थी।'' मां ने कहा, ''पता नहीं!'' जय बदस्तूर बल्ब को देख रहा था, ''बीच में कुछ लोग आ गए थे, मैं उसे देख नहीं पाया।'' वह माँ की तरफ़ देखने लगा।

''डॉक्टर जो भी हो! अभी तो यही चिन्ता है, किसी तरह माँ-बच्चा दोनों बच जाएं!'' मां भी कुछ सोचती हुई बोल रही थी। फिर दोनों के बीच चुप्पी पसर गई। इस अस्पताल में चार ऑपरेशन थियेटर थे। इस समय तीन में ऑपरेशन चल रहे थे, जिनमें से दो थियेटरों में सिजीरियन के ऑपरेशन हो रहे थे और एक में पथरी का। इसलिए बरामदे में तीनों मरीज़ों के रिश्तेदार इकट्ठे होकर अपने-अपने दुःख-सुख सांझे कर रहे थे। किस का मरीज़ कब से बिस्तर पर है और कितना ख़र्चा हो गया है आदि-आदि का ब्यौरेवार हिसाब बन रहा था। सभी को एक दूसरे परिवार से सहानुभूति थी। बीच-बीच में वे अपने मरीज़ों वाले ऑपरेशन थियेटर को भी देख लेते। पथरी वाला मरीज़ 55 वर्ष का था। उसकी पत्नी गांव की थोड़ी सी पढ़ी हुई किन्तु सभ्य स्त्री थी, जो बड़े धैर्य से अपने बेटे को बाप के कहने में चलने की जरूरत समझा रही थी। सिजीरियन वाली दोनों स्त्रियों का पहला प्रसव था। थियेटर का दरवाजा बंद हुए काफ़ी देर हो चुकी थी। धीरे-धीरे जय की माँ भी उन लोगों की तरफ़ उन्मुख होने लगी थी। जय का ध्यान जब उधर गया तो वह चौंक गया, माँ को बुला कर वह बरामदे के किनारे खुली हुई खिड़की के पास ले गया।

इस तरफ़ से पीठ करके वह माँ के साथ बातें करने लगा। वह नहीं चाहता था कि उसकी माँ अधिक बात करे, पता नहीं उसके मुँह से क्या बात निकल जाए जो उसके लिए कोई बड़ी मुसीबत खड़ी कर दे। अभी उन दोनों को वहाँ खड़े मुश्किल से दस-पंद्रह मिनट ही गुज़रे होंगे, कि उन्हें अपनी पीठ पीछे खट्-खट् की आवाज़ सुनाई दी। जय पलटा तो उसे सीढ़ियों से उतरती डॉक्टर का सफ़ेद कोट मात्र ही दिखाई दिया, दोनों भागते हुए थियेटर के पास तक आये। तब तक दो वार्ड ब्याय उसकी पत्नी का स्ट्रेचर लेकर बाहर आ रहे थे। कपड़े में लिपटा नवजात बालक नर्स की गोद में था, ''बेटा है'' कहकर नर्स आगे बढ़ गई। जय पत्नी की तरफ़ लपका तो 'हटो-हटो' कहते वार्ड ब्याय तुरन्त ऑपरेशन थियेटर के साथ लगे इमरजेंसी वार्ड की ओर बढ़ गए। अभी वे दोनों माँ-बेटे हक्का-बक्का खड़े ही थे, कि वही डॉक्टरों थियेटर से बाहर आई, जिसने कागजों पर जय से हस्ताक्षर करवाए थे, ''रजनी! रजनी के साथ कौन है?''

दोनों माँ-बेटा एक साथ डॉक्टर की तरफ़ को लपके, ''देखो, रजनी की हालत ठीक नहीं है। हाँ बच्चा ठीक है।'' डॉक्टर थोड़ा रुक कर अपनी बात का प्रभाव देख रही थी, ''बच्चे को, माँ जी! आप घर ले जा सकती है, मैं लिख देती हूँ।'' कहते हुए वह एक तरफ़ चलने लगी, आप मिस्टर...।''

''जय..., जी मेरा नाम जय प्रकाश है।''

''हाँ! तो जय प्रकाश जी! आप मेरे साथ आइए! मैं कुछ दवाइयाँ लिख कर दे रही हूँ। इन्हें भी ले आइए और बच्चा भी लेकर माँ जी को दे दीजिए।''

जय प्रकाश चुप-चाप लेडी डॉक्टर के पीछे चलने लगा। थोड़ी ही देर बाद वह गोद में बच्चा और हाथ में दवाइयों की चिट लिए माँ के पास आ गया। फिर दोनों ही बाहर निकल गये। ''मां... तुम बच्चा लेकर घर चली जाओ, यहां मैं देख लूंगा।'' जय ने मां को बस में बैठा दिया और खुद मेडिकल स्टोर की तरफ़ बढ़ गया।

दवाइयां लेकर वह वापस लौटा। उसने उसी डॉक्टर के कमरे का पर्दा उठाया जिसने दवाइयाँ लिखी थीं। डॉक्टर कमरे में नहीं थीं, वहां एक महिला कर्मचारी कुछ सामान इधर-उधर रख रही थी,

''डॉक्टर साहब...?'' जय की बात पूरी होती इससे पहले ही

वह लड़की बोल उठी, ''राउण्ड पर हैं।'' जय अभी सोच ही रहा था कि अन्दर के कमरे से आवाज आई ''सोमा कौन है?''

''जी डॉक्टर साहब! वह! जिनकी औरत का ऑपरेशन से बेटा हुआ है।'' सोमा दौड़ कर अन्दर जा चुकी थी, ''भेज दो!'' लेकिन सोमा को बाहर आना नहीं पड़ा, जय उसके पीछे ही खड़ा था, भीतर आ गया, ''बैठो...डॉक्टर ने बिना पीठ मोड़े ही कहा, वह स्क्रीन पर एक एक्स-रे फिल्म को बड़े ध्यान से देख रही थी। जय चुप-चाप कुर्सी पर बैठ गया।''

''तुम...?'' डॉक्टर ने जैसे ही कुर्सी घुमाई, जय, जो आतुरता से डॉक्टर के घूमने का इन्तज़ार ही कर रहा था, ऐसे चौंका जैसे हज़ारों बिच्छुओं ने काट खाया हो। डॉक्टर रेवा, जो अब तक जय को देख ही नहीं पाई थी, उसके 'तुम' कहने पर कुर्सी से एकदम उठकर खड़ी हो गई और आँखें फाड़े उसे देख रही थी, अवाक! अनायास ही सामने खड़े आदमी को सत्य माने या झूठ? लेकिन अगले ही क्षण उसने स्वयं को संयत कर लिया और कुर्सी पर बैठ कर नज़र सामने रखे काग़ज़ों पर जमा दी।

''क्यों आये हो?''

''वह.......रजनी...?'' जय अभी तक संभल नहीं पाया था,

''हाँ...! तो वह तुम्हारी पत्नी है।'' रेवा ने काग़ज़ों पर हस्ताक्षर करने शुरू कर दिए थे। सोमा एक तरफ़ खड़ी कभी अपने काम में मगन डॉ. रेवा को और कभी हैरान-परेशान खड़े व्यक्ति को देख रही थी। इतना तो वह भी समझ ही चुकी थी कि उन दोनों का आपस में कुछ सम्बन्ध है, लेकिन क्या? यह बात उसकी छोटी सी बुद्धि से बाहर थी।

''दवाइयां दिखाओ।'' रेवा ने रुखाई से हाथ बढ़ाया तो जय ने वे दवाइयां, जो वह बाजार से लाया था दिखा दीं। सारी दवाइयों को पर्ची से मिलाते हुए डॉ. रेवा ने कॉलबैल का स्विच दबा दिया था। नर्स के आने पर उसे कैसे, क्या करना है समझा कर दवाइयां नर्स को दे दीं। जय अभी तक खड़ा था, ''रेवा...''

उसके गले से आवाज़ नहीं निकल रही थी, ''तुम अभी तक खड़े हो? जाओ! अपनी पत्नी के लिए प्रार्थना करो अगर उसे चौबीस घंटे के अन्दर होश आ जाए तो वह बच सकती है, अन्यथा.......'' फिर वह पैन बन्द करके कोट की जेब में डालती हुई कुर्सी से उठ खड़ी हुई, ''सोमा! आफ़िस बन्द कर दो।'' इन दिनों वह शिमला के सनोडन अस्पताल में सर्जन थी। जय उसे जाते हुए देखता रहा।

रजनी की हालत अच्छी नहीं थी। दूसरे दिन रेवा ने अपनी ड्यूटी दूसरे वार्ड में लगवा ली, वह बेमतलब जय से टकराना नहीं चाहती थी। इस समय जय का भी पूरा ध्यान रजनी की बीमारी पर था, वह इस समय सब कुछ भूलकर पत्नी की देख-भाल कर रहा था। लेकिन पूरी मेहनत और देखभाल के बाद भी रजनी को डॉक्टर बचा नहीं सके। इसके बाद दो महीने तक जय दिखाई नहीं दिया। रेवा भी उसे लगभग भूल गई थी।

00000

डॉक्टर अश्विनी कपूर के घर की सीढ़ियां उतरते हुए सनोडन मेडिकल कॉलेज के सी.एम.ओ. ही बोले थे, ''रेवा! तुमने तो कमाल ही कर दिया, भई वाह! हम तो सोच ही नहीं सकते थे कि चीर-फाड़ करने वाली डॉक्टर इतना अच्छा नाच और गा सकती है, कमाल है भई वाह।'' सी.एम.ओ. की आंखों में अपने लिए इतनी प्रशंसा देखकर रेवा सकुचा रही थी, ''ठीक है फिर मिलते हैं,'' कहकर सी.एम.ओ. अपने फ्लैट की ओर मुड़ गए तो एक सहयोगी डॉक्टर बोली, ''चलो इसी खुशी में आज तुम्हारे ही क्वार्टर में चलकर बढ़िया सी चाय पीते हैं।''

''चलो न!'' रेवा ने अपने फ़्लैट की सीढ़ियां चढ़ते हुए उन्हें निमन्त्रण दिया। सारी सहयोगी डॉक्टर रेवा के सिटिंग रूम में सोफ़ों पर आ कर आराम से पसर गईं!

''द्रौपदी!'' रेवा ने नौकरानी को आवाज़ लगाई, ''बढ़िया सी चाय पिलाओ।''

''रेवा! यह सब कहां सीखा भई!'' एक डॉक्टर बोल उठी।

''बस यूँ ही! बचपन में शौक रहा! कुछ माँ सिखा दिया करती थी और कुछ घर में पैर चलाती रहती थी।'' रेवा बराबर सकुचा रही थी।

हुआ यूं कि डॉ. अश्विनी कपूर की ट्रान्सफ़र शिमला से ऊना के लिए हो गई थी, उसी की विदाई पार्टी थी कल, सब लोग हो हुल्लड़ कर रहे थे कि रेवा बोल उठी, ''अरे! कोई ढंग से नाचो भई, यह क्या बेकार मटक-भटक रहे हो।''

''तुम्हीं नाच लो न, दूसरों को क्या कह रही हो?'' डॉ. नीलम मेहरोत्रा तुनक गई। रेवा घबरा गई, उसने तो यूँ ही कह दिया था किन्तु अब तो सारा स्टाफ़ ही रेवा के पीछे पड़ गया, ''देखो भई रेवा! नाचना तो तुम्हें अब पड़ेगा ही, या तो यह बात न कहतीं।'' डॉ. कुमार खिचड़ी मूंछों पर ताव देने लगे।

''म...म... मुझे कहां आता है नाचना?'' रेवा सिटपिटा गई,

''अगर तुम्हें नहीं आता तो ऐसा नहीं कहती।'' और कुछ डॉक्टरों ने उसे पकड़ कर खड़ा कर दिया, फिर तो झटपट टेप रिकार्डर पर चलती धुनों वाले गाने एक के बाद एक लगाए जाने लगे और रेवा नाचती रही, फिर सब के आग्रह पर उसने काँगड़ी लोकगीत भी सुनाया, ''बड़िए सवेला री, गइरी तू बहुए अड़िए! दिन चढ़ने जो आया..दिलो जान अड़िए.....''

(अरे, सुबह सवेरे (मुँह अंधेरे) की गई बहू अब आ रही हो, अब तो दिन चढ़ने को आ गया है), इस गीत पर रेवा को खूब दाद मिली थी। इस समय सारी बातचीत उसी संदर्भ में हो रही थी। वह लोग डा. अश्विनी कपूर को विदा करके लौट रहे थे। रेवा का फ़्लैट पहले पड़ता था इसलिए सब वहीं जमे हुए थे, चाय पीकर सभी लोग उठ खड़े हुए, अभी वे रेवा से विदा माँगते कि दरवाजे की

कॉलबेल बजी। द्रौपदी जूठे बर्तन वहीं छोड़ दरवाजा खोलने चली गई।

''डॉ. रेवा से मिलना है।'' आगन्तुक ने कहा,

''आप कौन हैं?''

''मैं खुद ही उन्हें बता दूँगा, तुम हटो।''

''नहीं वे गुस्सा करेंगी, भीतर और लोग भी हैं।'' द्रोपदी रास्ता छोड़ने को तैयार नहीं थी, तभी भीतर से आवाज़ आई,

''कौन है द्रौपदी...?'' अब तक आगन्तुक उसे एक ओर हटा चुका था, ''रेवा, देखो! तुम्हारी नौकरानी मुझे भीतर आने ही नहीं दे रही,'' कहता हुआ जय कमरे में आ चुका था।

''अच्छा रेवा, हम लोग चलते हैं'' वे सब तो पहले से ही खड़ी थीं बाहर निकल गई।

''तुम! तुम यहाँ क्यों आए हो?'' रेवा का मूड़ बिगड़ चुका था।

''लो! यह भी कोई बात हुई, पति अपनी पत्नी के घर नहीं आयेगा तो कहाँ जाएगा?'' जय बेशरमी से सोफ़े पर बैठता हुआ बोला ''चाय के लिए तो कह दो।''

द्रौपदी जो हक्की-बक्की उन दोनों की बातें सुन रही थी, किचन में जाने लगी

तो रेवा ने उसे डाँट दिया, ''ये बर्तन उठाओ और अपना काम करो! जाओ।'' बर्तन उठाते हुए द्रौपदी सोच रही थी कि डॉक्टर साहब को यहाँ आए तीन साल हो गए, आज तक तो किसी को भी पता नहीं कि इनकी शादी हो चुकी है। अब यह पति अचानक कहाँ से आकर टपक गया? अब तक कहाँ था? घर में तो इस आदमी का फ़ोटो भी नहीं है। बस डॉक्टर साहब के माता-पिता का और खुद डॉक्टर साहब का ही फ़ोटो था, फिर डॉ. रेवा ने कभी बिन्दी भी नहीं लगाई फिर...?

''आउट...आउट...'' बाहर पता नहीं क्या हुआ कि डॉक्टर रेवा जोर से चिल्लाई तो द्रौपदी भागती हुई बाहर आई, देखा वह आदमी जो खुद को डॉ. रेवा का पति कह रहा था चुपचाप बाहर जा रहा था। रेवा सिर पकड़ कर सोफ़े पर बैठ गई।

द्रौपदी ने दरवाजा बन्द करके चिटकनी लगा दी। अब वह सोच रही थी कि उसे क्या करना चाहिए। यह आदमी कौन है, पूछने की तो उसकी हिम्मत नहीं थी।

0000

दो महीने इसी तरह गुज़र गए, अब जय अक्सर ही आने-जाने लगा था। जय के इस तरह आने-जाने के कारण अब तक अस्पताल में सब को पता चल चुका था, उनके रिश्ते के बारे में। जय प्रकाश अस्थाना भारतीय स्टेट बैंक का एक साधारण सा, क्लास टू कर्मचारी। कुल छः महीने पहले चौपाल से ट्रान्सफर हो कर शिमला आया था। रजनी के साथ उसका सब कुछ ठीक चल रहा था कि अपने प्रथम प्रसव के समय ही बेचारी चल बसी। लेकिन जाते-जाते वह उसे रेवा से पुनः भेंट का अवसर तो दे ही गई।

रेवा उसे चाहे कितना भी दुत्कारती पर वह तीसरे-चौथे दिन एकाध चक्कर लगा ही जाता। एक दिन तो उसने हद ही कर दी थी, उस दिन वह अपनी माँ को भी साथ ले आया था। जय की माँ ने भी रेवा से जय को क्षमा कर देने के लिए बहुत अनुनय-विनय से काम लिया। रेवा ने सास को तो कुछ नहीं कहा किन्तु द्रौपदी को दरवाजा बन्द करने का आदेश देते हुए कहा, ''मैं बाहर जा रही हूँ, तुम दरवाजा बन्द कर लो ताकि कोई आवारा जानवर भीतर न घुस आए।'' और वह उन दोनों को वहीं छोड़कर बाहर निकल गई। यह उनके लिए भयंकर अपमान से कम नहीं था, लेकिन जय पर शायद इसका कोई प्रभाव ही नहीं पड़ा था। दूसरे ही दिन वह रेवा के दफ़्तर आ धमका था। जय के भीतर कदम रखते ही रेवा कुर्सी से उठ खड़ी हुई और सोमा को बिना कुछ कहे बाहर निकल गई।

रेवा जय और उसकी माँ के बारे में ही सोच रही थी और अपने कल के व्यवहार और उन दोनों की प्रतिक्रिया के बारे में सोच रही थी। वह सोच रही थी कि कैसे ढीठ लोग हैं दोनों माँ-बेटा। उसे अच्छी तरह याद था कि उसके और जय के अलग होने में जय की माँ का भी योगदान कम नहीं था, इसलिए वह भी किसी सम्मान की अधिकारिणी तो हरगिज़ नहीं ही हो सकती, इसलिए रेवा ने जो भी किया वह ठीक ही किया चाहे वह उसकी सास ही क्यों न थी। रहा जय, तो वह तो आज भी किसी प्रकार के सम्मान का अधिकारी नहीं और कल भी नहीं।

0000

आज फिर जय रेवा के फ़्लैट पर आ गया था। वह पूरे जोर-शोर से स्वयं को रेवा का पति सिद्ध कर रहा था। रेवा ने उसे जैसे-तैसे दफ़ा तो कर दिया लेकिन समस्या को गम्भीर जान उससे छुटकारे की तरकीब पर विचार करने लगी। उसने धीरे से पैर उठाकर सोफे पर फैला लिए और वहीं लेट गई। उसे पिता जी की याद आ गई ऐसे समय में उसे वह कितनी अच्छी और सही राय देते थे। इसके अतिरिक्त एक व्यक्तित्व और भी था जिसका दरवाजा वह इस समय खटखटा सकती थी और वह थे डॉ. सूर्य प्रकाश। किन्तु इस समय तो न उसके पिता जी ही थे और न डॉ सूर्यप्रकाश। अब तो उसे अपना प्रकाश स्वयं ही बनना था। स्मृतियों की अंधी गुफा रेवा के लिए रास्ता बनाती गई और रेवा उसमें धंसती चली गई।

0000

रेवा के पिता जी का आग्रह था कि वह कुछ ही वर्षों में रिटायर होने वाले हैं, जो पैसा उन्हें सेवानिवृत्ति पर मिलेगा उसमें रेवा का विवाह हो जाएगा, इसलिए रेवा को उनकी बात मान लेनी चाहिए, परन्तु रेवा को तो डॉक्टर बनने की धुन सवार थी। उसकी माँ भी उसका साथ दे रही थी, माँ का कहना था कि 'इतनी पढ़ाई

के बाद वह बेटी की उम्मीदों पर पानी न फेरें', किन्तु पिता जी की चिन्ता अपनी जगह पर स्थिर थी और रेवा अपनी पढ़ाई के आगे किसी बात को भी प्राथमिकता नहीं दे रही थी। दोनों अड़े हुए थे और रेवा की पढ़ाई बदस्तूर जारी थी।

डॉ. सूर्य प्रकाश, रेवा के पिता के घनिष्ट मित्रों में से थे। वह भी रेवा की पढ़ाई पूरी करने के पक्ष में थे। इस प्रकार रेवा के पक्ष में दो और विपक्ष में एक वोट होने से उसकी पढ़ाई चलती रही।

घर में तना-तनी बढ़ती रही और रेवा अपनी पढ़ाई पूरी करके आखिरकार डॉक्टर बन ही गई और उसे अपरेंटिसशिप भी मिल गई। भाग्य कहिए कि फिर उसी अस्पताल में उसे अस्थायी नौकरी भी मिल गई। समय बीतने लगा और पिताजी की रिटायरमेंट का समय निकट आता गया। पिताजी ने हार नहीं मानी थी और वे रेवा के लिए किसी अच्छे वर की तलाश में लगे रहे। इसी बीच उनके बैंक में जय प्रकाश नाम का एक अविवाहित लड़का कुल्लू से स्थानांतरित होकर आया तो बात-चीत में रेवा के पिता ने उससे रेवा के रिश्ते की बात चलाई। उसके घर वाले और जय तुरन्त ही उनका प्रस्ताव मान गए।

अब पिताजी ने रेवा पर दबाव बनाना शुरू कर दिया। इस बीच जय प्रकाश ने भी उनके घर आना-जाना शुरू कर दिया ताकि वह रेवा को प्रभावित कर सके। आखिर उनकी इच्छा के आगे माँ-बेटी दोनों को झुकना पड़ा। रेवा का भाई तो पढ़ाई के लिए विदेश क्या गया कि फिर लौटा ही नहीं, इसलिए भी रेवा के पिता को रेवा की ज़्यादा चिंता थी। वह सोचते थे कि उनकी बेटी अपने घर चली जाए तो उनके कर्तव्य की इतिश्री हो जाए। विदेश गए बेटे पर तो उन्हें कुछ भी उम्मीद नहीं थी और वह रेवा की शादी में आया भी नहीं था, हालांकि उन्होंने उसे पत्र भी लिख दिया था और फोन भी कर दिया था।

0000

विवाह के कुछ समय बाद रेवा ने जय प्रकाश से नौकरी जारी रखने की बात की। उसकी छुट्टियाँ समाप्त हो रही थीं। रेवा की बात सुनकर जय प्रकाश ने डपटते हुए कहा, ''चुपचाप घर में बैठो और घर का काम देखो।'' और इतना कहकर उसने बात ख़त्म कर दी, जब रेवा ने उसे अपने पिता को दिए वचन की याद दिलाई तो वह उबलने लगा। इतना ही नहीं, जय की माँ ने भी रेवा की नौकरी का जमकर विरोध किया, फिर इसी बात को लेकर उनकी आपस में आए दिन ही तकरार होने लगी।

रेवा रोज हॉस्पिटल जाने को कहती और घर में कलह हो जाती। बात बढ़ी तो जयप्रकाश बिना कुछ कहे एक दिन रेवा को उसके पिता के घर छोड़ गया।

उन लोगों का सोचना था कि रेवा की अकड़ टूट जाएगी और वह लौट-फिर कर ससुराल आएगी ही, परन्तु न तो उन लोगों ने उसे बुलाया और न रेवा अपने-आप ही ससुराल गई।

ब्याही हुई बेटी पिता के घर में बैठी थी तो पिताजी को चैन कैसे पड़ता? वह अक्सर ही सोचते कि, विवाह की बात चलने पर जय प्रकाश ने ही तो कहा था कि उसे रेवा की नौकरी से कोई परेशानी नहीं है, इसीलिए रेवा ने हाँ कह दिया था फिर अब वह इस पर विवाद क्यों खड़ा कर रहा था। इसी बात को याद दिलाने एक दिन पिता जी जय प्रकाश से मिलने बैंक जा पहुँचे। रेवा की बात छेड़ते ही जयप्रकाश तुनक कर बोला ''उसे तो आप डॉक्टर बनाए रखिए। मेरे घर में डॉक्टर की नहीं बीवी की जरूरत है।'' इतना कहने के साथ ही वह उठकर बैंक से बाहर निकल गया।

हताश निराश लौटे पिताजी ने दूसरे ही दिन रेवा को हॉस्पिटल जाने की इजाज़त दे दी। वह समझ गए थे कि बात बनने वाली नहीं है और रेवा नौकरी पर वापस शिमला चली गई। शिमला आकर उसे पता चला कि उसे अब सर्जन की ट्रेनिंग के लिए जाने का अवसर मिलने वाला है। वह सब कुछ भुलाकर अपनी दिनचर्या में व्यस्त हो गई, लेकिन माँ को ऐसा धक्का लगा कि उसने बिस्तर पकड़ लिया।

0000

माँ अधिक दिन इस सदमें को नहीं झेल सकीं। पिता जी अकेले रह गए, अब तक तो उसकी पोस्टिंग भी कमला नेहरू अस्पताल में हो गई थी। इसके साथ ही उसने सर्जन की पढ़ाई शुरू कर दी थी।

घर में अकेले रह गए थे, वह पिताजी को लेकर अक्सर ही परेशान रहती। रेवा चाहती थी कि पिताजी उसके पास आ जाएं लेकिन वह अपना घर छोड़ने को तैयार नहीं थे, हाँ कभी-कभार वे कुछ दिनों के लिए शिमला आ जाते और बेटी के साथ कुछ समय अवश्य गुजारते। फिर अपने घर वापस लौट जाते। वह जब उनके लिए बहुत परेशान होती तो पिताजी ही उसका हौसला बढ़ाते, पर सच तो यह था कि उन्हें कहीं न कहीं अपराध बोध अवश्य था, रेवा के बार-बार उनको शिमला आ जाने के लिए आग्रह करने पर वे कहते,

''मैं ठीक हूँ रेवा! गोरखा मेरी देख-भाल कर लेता है, तुम मेरी चिन्ता छोड़ कर अपनी पढ़ाई पर ध्यान दो।''

रेवा को शिमला में रामपुर की ख़बरें पिता से मिलतीं। वह शिमला की सर्दी में छुट्टी लेकर घर चली जाती और पिताजी के साथ समय व्यतीत करती। डॉ. सूर्य प्रकाश भी अब तक सेवानिवृत्त हो चुके थे। दरअसल रेवा को डॉक्टर बनाने का सुझाव उन्होंने ही अपने मित्र को दिया था। इसलिए वह हर बार रेवा की सुरक्षा के लिए तत्पर रहते। इस बार सर्दी की छुट्टियों में वह घर आई तो पिता जी को बेहद परेशान देखकर पूछ लिया, ''आप को क्या हुआ है? आप तो कहते थे गोरखा आपकी देख-भाल कर लेता है।'' वह पिता जी की आराम कुर्सी के पास धरती पर ही बैठ गई।

''मैं तो ठीक हूँ रेवा, पर डॉ. प्रकाश ठीक नहीं है। इसके अलावा एक बात और भी है। जय एक गरीब लड़की को पत्नी बना कर घर ले आया है, पर उसने उससे शादी नहीं की है। लोगों से कह रहा है कि उसकी नौकरानी है पर असलियत सब जानते हैं।''

''तो लाने दीजिए न!''

''तुम कहो तो मैं केस दर्ज कर दूँ, तुम हस्ताक्षर कर दो।''

''जाने दीजिए पिता जी! जब मेरा उससे कुछ लेना-देना ही नहीं है, तो वह कुछ भी करता फिरे। बस मैं तो एक बार सर्जन बन जाऊँ, मुझे और कुछ नहीं चाहिए।''

''बेटा, तेरे और तेरी माँ के विरोध के बावजूद मैंने हठ की और तेरी जिन्दगी बरबाद हो गई।''

''नहीं पिताजी, ईश्वर जो चाहते हैं वैसा ही होता है, यह आप ही तो कहा करते हैं न? फिर आप ने कहां कुछ गलत किया? बस ईश्वर को यही मंजूर था इसलिए यह सब हो गया। आप मन में इस तरह के विचार कभी भी न लाइएगा।''

पिताजी ठण्डी साँस लेकर रह गए और रेवा फिर से शिमला चली गई। पिता जी का साथ भी कब तक रहता? पहले इकलौता बेटा परदेस जा बसा, फिर रेवा का विवाह टूट गया और उसकी माँ का वियोग, सब मिल कर उनके लिए घातक बन गए। ऐसे में कुछ वर्ष तो डॉ. सूर्य प्रकाश ने उसे पिता की कमी महसूस नहीं होने दी और हर तरह उसका मार्गदर्शन करते रहे, परन्तु पुराने पात तो झड़ने ही थे।

0000

खट-खट-खट...खिड़की के पट बजे तो रेवा चौंकी, द्रौपदी को आवाज़ देकर उसे खिड़की बन्द करने को कहा। बाहर जोर की आँधी चल रही थी। खुली खिड़की से होकर बाहर से हवा के साथ बाग के पत्ते और धूल-धक्कड़ भी कमरे में आ गया था। ऐसी ही आँधी बनकर जय उसके जीवन में आज फिर आ धमका और अपने साथ ले आया था, ऐसे ही अतीत का वह धूल-धक्कड़ जिसे डॉ. सूर्यप्रकाश के स्नेह ने उजालों की वर्षा से धो-पोंछ कर साफ़ कर दिया था। वह फिर लौट चली अतीत में।

0000

अब उसने अपना रामपुर बुशहर का घर किराये पर दे दिया था। इस घर का एक छोटा हिस्सा तो पहले से ही किराये पर था किन्तु अब रेवा ने वह छोटा भाग अपने लिए रखकर बड़ा हिस्सा किराये पर उठा दिया, तीन-चार छुट्टियाँ पड़ने पर ही वह रामपुर जाती और मकान का किराया लेकर लौट आती। किरायेदार भी सज्जन थे, वह जब भी आती उसे किराया मिल जाता था।

खट-खट-खट...खिड़की के पट बजे तो रेवा चौंकी, द्रौपदी को आवाज़ देकर उसे खिड़की बन्द करने को कहा। बाहर जोर की आंधी चल रही थी। खुली खिड़की से होकर बाहर से हवा के साथ बाग के पत्ते और धूल-धगड़ भी कमरे में आ गया था। ऐसी ही आंधी बनकर जय उसके जीवन में आज फिर आ धमका और अपने साथ ले आया था, ऐसे ही अतीत का वह धूल-धगड़ जिसे डॉ. सूर्यप्रकाश के स्नेह ने उजालों की वर्षा से धो-पोंछ कर साफ़ कर दिया था। वह फिर लौट चली अतीत में।

इस बार भी वह छुट्टी में घर आई थी। आते ही उसने अपनी बचपन की सहेली सुषमा को फ़ोन किया जो शहर ही में ब्याही गई थी। सुषमा ने रात के खाने के लिए उसे अपने ही घर में बुला लिया।

कल का पूरा दिन रेवा के पास था। उसे परसों शिमला लौटना था। दोनों ने उस दिन सराहन घूमकर आने का कार्यक्रम बनाया और प्रातः ही सुषमा घर से भोजन बनाकर साथ ले आई थी।

सराहन पहुँचकर भीमाकाली के मन्दिर की तीनों सीढ़ियां लाँघकर उन्होंने अपना सामान वहाँ रख दिया जहाँ सभी दर्शनार्थियों का सामान रखा हुआ था, हाथ-पैर धोए और मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ने लगीं। आठ-दस सीढ़ियाँ चढ़कर खुले आँगन में दो समानान्तर खड़े मन्दिरों में से वे दोनों पहले पुराने मन्दिर के पास गईं।

इस का दरवाज़ा जो मुश्किल से तीन फुट होगा, चाँदी के पतरे से मढ़ा हुआ और सुन्दर बेल-बूटों एवं देवी-देवताओं की प्रतिमाओं से सुशोभित था। यह द्वार सदा ही लोहे की मोटी साँकल से बन्द रहता है। रेवा ने सुन रखा था कि जब यहाँ के राजा को भैंसे की बलि देनी होती है, तभी यह द्वार खोला जाता है, वरना बंद ही रहता है। बड़े-बड़े पत्थरों और शहतीरों से निर्मित इस मन्दिर में चारों तरफ़ छः-छः इंच के चौकोर गवाक्षों के अतिरिक्त अन्य कोई भी खिड़की द्वार नहीं। मात्र तीन फ़िट का एक दरवाजा। 150 फ़िट ऊँचे इस पुराने मन्दिर की चौकोर इमारत में चारों ओर लगी एक-एक फ़िट चौड़ी शहतीरें उसकी उम्र बता रही थीं।

इस मन्दिर की परिक्रमा करके वे दोनों मुख्य और नवीन मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ने लगीं, तो रेवा बोली, ''सुषमा! क्या तूने कभी सोचा है कि इस मन्दिर की बारीक नक्काशी के काम में कितनी मेहनत पड़ी होगी?''

''क्या खाली मन्दिर? अरे साथ में कमला विश्रामगृह, राजा वीरभद्र सिंह का महल, बिजलीघर का कार्यालय! सभी की सजावट, उन पर की गई कीमती नक्काशी से ही तो है।''

''क्यों न हो! यह सम्पत्ति राजा साहब की व्यक्तिगत सम्पत्ति ही तो थी। आज भले ही यह टैम्पल कमेटी को दे दी गई है।''

अब तक वे दोनों भीमाकाली मन्दिर के दूसरे तल तक आ पहुँची थीं। यहाँ भी पाँच फ़िट का चाँदी के पतरे से मढ़ा दरवाजा सदा की भाँति आज भी मोटे से ताले के साथ बंद पड़ा हुआ था।

तभी तंग सीढ़ियों की छत से रेवा का सिर टकराया, तो सुषमा झट से बोल उठी ''पता नहीं कितनी बार आ चुकी है मन्दिर, फिर भी तेरा सिर टकरा ही जाता है।''

''झुक कर न चलने का यही नतीजा होता है न?'' रेवा हँस दी।

बात करते-करते वे लोग मन्दिर में पहुँच चुकी थीं, ''यहाँ तो झुके बिना अन्दर जा ही नहीं सकते, दरवाजा इतना छोटा है।'' रेवा फिर हँस दी। मन्दिर के कक्ष में लाल रंग का मोटा कालीन बिछा हुआ था। भीतर पाँच फ़िट की कक्षा घेर कर पीतल के मोटे डण्डे ऊपर छत तक लगाकर मूर्ति के चारों ओर जंगला बनाया गया था। इसके भीतर महिषमर्दिनी की तीन फ़िट ऊँची प्रतिमा शेर पर सवार थी, जिस पर सोने का पतरा मढ़ा हुआ था। यहाँ चाँदी के बड़े-बड़े बर्तन (कमण्डल, अरघा आदि) के साथ ठोस चाँदी का दो फ़िट लम्बा और एक फ़िट चौड़ा सिंहासन भी रखा हुआ था, अन्य बीसियों चाँदी और अष्टधातु की मूर्तियां आदि भी चारों ओर रखी हुई थीं, मन्दिर के इस भाग में भी ताला पड़ा हुआ था। पीतल के जंगले के बाहर पुजारी एक ओर कालीन पर बैठा सब को चरनामृत और प्रसाद बाँट रहा था। इन दोनों ने भी दान पात्र में कुछ सिक्के डाले। अपने सिर पर हाथ रख कर पुजारी से तिलक लगवाया और प्रसाद लेकर बाहर निकल आईं। परिक्रमा के बरामदे में खड़े होकर कुछ देर बर्फ़ से ढकी पहाड़ियों के सौंदर्य को आँखों से पीती रहीं, फिर वहाँ से भी बाहर निकल आईं। सीढ़ियाँ उतर कर अब वे लंकड़े के मन्दिर की ओर बढ़ रही थीं तभी सुषमा ने उसे कोहनी से टोहका तो रेवा चौंकी। सामने से जय मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ रहा था, उसके साथ उसकी माँ और छोटी

भाभी थीं, लेकिन उनका ध्यान उन दोनों की ओर नहीं था फिर भी वे दोनों झट से दीवार की ओट में हो गईं।

''रेवा! तुझे पता है इस की सगाई ऊना से हो रही है। आजकल यह वहीं पर पोस्टेड है। सुना है वहाँ स्वयं को अविवाहित बताकर इसने किसी लड़की को पटा लिया है।'' सुषमा कह रही थी,

''क्यों? वह कुल्लू वाली कहाँ गई।''

''वह...? अरे गाँव की औरतें कहीं सुनती हैं ऐसा रौब? वह तो छः ही महीनों में भाग गई छोड़कर!''

''छोड़ न सुषमा...हमें क्या लेना है जय से और उसकी शादियों से?'' रेवा का मूड़ उखड़ गया लगता था।

''पर तू उस पर कुछ एक्शन क्यों नहीं लेती? बिना तुझे तलाक दिए कभी एक को ला रहा है कभी दूसरी को।''

''वह चाहे तो दस ले आये। मेरे मन में तो वह कभी बैठा ही नहीं, बेचारे पिता जी, अपनी भूल पर ही घुल-घुल कर मर गए। मुझे तो बस अपने पिताजी के लिए दुख है।'' रेवा ने एक ठण्डी साँस ली।

0000

''डॉ. साहब चाय ले आऊँ?'' द्रौपदी ने उसे फिर से वर्तमान में ला दिया था।

''हाँ...हाँ! द्रौपदी, तुम ठीक समय पर पूछने आई हो, जाओ दो कप चाय लाना!'' जय ने दरवाजे पर से ही कहा।

''द्रौपदी! मैंने तुम्हें कहा क्या चाय के लिए? जाओ! अपना काम करो!''

''चलो! चाय नहीं पिलाना चाहतीं तो न सही! तुम्हारी मर्जी।'' जय ने दोनों हाथ झटके, ''पर अब यह मत कहना कि बैठो भी नहीं।'' कहता हुआ जय रेवा के पास ही सोफे पर बैठने लगा तो रेवा एकदम वहाँ से उठकर कुर्सी पर जा बैठी।

विवश होकर जय को दूसरी कुर्सी पर बैठना पड़ा। रेवा जान चुकी थी कि यदि वह भीतर शयन कक्ष में गई तो जय वहाँ भी आ धमकेगा, जो वह कभी सहन नहीं कर सकेगी।

''पता नहीं कैसे-कैसे ढीठ लोग इस दुनिया में भरे पड़े हैं कि न अपनी इज्ज़त का विचार न बेइज्ज़ती का। फिर उन्हें किसी और की इज्जत का क्या खयाल होगा?'' रेवा रुआँसी हो रही थी।

''क्यों भई डॉक्टर रेवा! अपनी पत्नी के घर आने में क्या बेइज्ज़ती होती है?''

''मिस्टर जय प्रकाश अस्थाना...'' रेवा ने एक-एक शब्द को चबाते हुए कहा, ''यह बात तो तुम्हें उस समय सोचनी चाहिए थी जब तुम मुझे बाप के दरवाजे पर छोड़ आये थे, या जब तुम कुल्लू से नई पत्नी लाए थे, या फिर जब रजनी से विवाह किया था। इतनी सारी वारदातों के बाद भी अब तुम ब्याहता पत्नी को चारा डालने की कोशिश कर रहे हो?'' रेवा का चेहरा क्रोध से लाल हो रहा था।

''नहीं रेवा, तुम गलत सोच रही हो। मैं किसी को चारा नहीं डाल रहा। बस अपनी रूठी पत्नी को मना रहा हूँ!''

''वह भी तब, जब एक छोड़कर भाग गई और दूसरी भगवान को प्यारी हो गई।''

''तुम चाहती तो रजनी को बचा सकती थीं, पर तुमने जान-बूझकर अपनी ड्यूटी बदलवा ली, ताकि तुम अपनी सौत को बचाने की जिम्मेदारी से बच सको।''

''यदि रजनी बच जाती फिर तुम मेरा पीछा नहीं करते, क्यों?"

''हाँ! मेरा घर नहीं उजड़ता तो मैं तुम्हारे पास क्यों आता? और अब तुम्हें उसका भुगतान तो करना ही होगा न। फिर भी मैं तुम्हारा गुस्सा दूर कर के तुम्हें मनाकर अपने घर ले जाऊँगा। ठीक रहेगा न?''

''नहीं मिस्टर जय प्रकाश! मैं तुम्हारी शक्ल न पहले देखना चाहती थी और न अब देखना चाहती हूँ बल्कि सच तो यह है कि तुम्हारी शक्ल मैं कभी भी नहीं देखना चाहती। जिस आदमी के

कारण मेरे पिताजी को सारी उम्र घुट-घुट कर जीना पड़ा और वे मेरे सामने खुद को अपराधी मानते रहे, उस व्यक्ति को मैं कैसे माफ कर सकती हूँ? और एक तुम ऐसे ढीठ हो कि तुम पर इन सब बातों का कोई असर ही नहीं पड़ता। लेकिन अब मैं कह रही हूँ कि तुम यहाँ से दफ़ा हो जाओ और फिर कभी इधर मत आना, वरना. ....।''

''वरना क्या? बताओ! वरना पुलिस में रिपोर्ट करोगी?'' जय बड़ी बेशरमी से हँसा, ''अरे भई हमें भी तो पता चले कि ऐसा कौन सा कानून है जो पति को पत्नी के घर आने से रोकेगा?'' थोड़ा रुक कर बोला, ''खैर अभी तो मैं जा रहा हूँ! कुछ दिनों के लिए शहर से बाहर भी जा रहा हूँ। मगर मेरे लौटने तक फैसला कर लेना कि मैं यहाँ रहने आऊँ या तुम मेरे पास आ रही हो।''

''तुम यहाँ से दफ़ा हो जाओ और कान खोल कर सुन लो कि न तुम यहाँ आ सकते हो न मैं वहाँ आ रही हूँ। तुम जो सोच रहे हो, वैसा कुछ नहीं होने वाला।''

जय बेशरमी से हँसता हुआ दरवाजे से बाहर निकल गया। द्रौपदी पिछले दरवाजे में खड़ी अपनी मालकिन की बेबसी देख रही थी। वह सोच रही थी कि बेचारी डॉ. रेवा कुछ भी तो नहीं कर सकती। डरती हैं, शोर होने से लोगों में बदनामी होने से डरती हैं और भी न जाने किस बात से डरती हैं। अगर मेरा आदमी होता तो मैंने अब तक लकड़ी काटने वाले दराट से इसके काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दिए होते।

यह इज्ज़त भी बहुत बुरी चीज़ है। कोई अपने मन की बात भी किसी से नहीं कह सकता। इससे तो हम गरीब ही अच्छे हैं। कम से कम जो मन में आया कह दिया और छुट्टी, पर यह आदमी? राम राम यह कितना बेशरम है। डॉ. रेवा रोज ही इसकी बेज्जती करती हैं पर इस पर कुछ भी असर नहीं होता। ब्याहता बीवी के होते हुए दो-दो औरतें ब्याह लाया और अब भी रेवा जैसी बड़ी डॉक्टर से रिश्ता निभाने की उम्मीद रखता है।

''द्रौपदी।'' अचानक रेवा की पुकार पर चौंक उठी वह। ''खाना लगाओ। सुबह दो आप्रेशन हैं और यह कम्बख़्त जब-तब आकर मूड ख़राब कर जाता है।'' रेवा बड़बड़ाते हुए डाइनिंग टेबल पर आ बैठी। अब तक जय प्रकाश जा चुका था।

रेवा सोच रही थी कि उसने तो पिता जी को दहेज का सामान वापस माँगने से भी मना कर दिया था, ''अगर उसका पेट भर जाता है तो खा लेने दीजिए।'' कहकर पल्ला झाड़ लिया था। लेकिन यह तो जोंक की तरह चिपक गया है, किससे कहे रेवा? क्या करे? अब तो डॉ. सूर्यप्रकाश भी नहीं रहे, जिनका उसे सहारा था।

ले-देकर एक सुषमा ही तो थी जिससे वह अपने मन की कह सकती, इसलिए रेवा ने सुषमा को फ़ोन करके अपना मन हल्का किया। इधर सभी डॉक्टरों को और सभी स्टाफ को भी रेवा से हमदर्दी थी, क्योंकि रजनी का आपरेशन तो इसी अस्पताल में हुआ था न? यह तो तय था कि रेवा जय से कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहती थी लेकिन जय उचित-अनुचित किसी भी हथियार को प्रयोग करने से बाज़ नहीं आ रहा था। हद यह कि एक दिन वह बच्चे को भी रेवा के क्वार्टर में छोड़ गया कि शायद बच्चे को देखकर उसके दिल में ममता जाग जाए पर उसने तुरन्त ही द्रौपदी के हाथों बच्चा उसके घर वापस भिजवा दिया।

0000

जय कई दिनों बाद शिमला वापस आया था। आते ही नहा-धोकर तैयार होने लगा। ड्रेसिंग टेबल के सामने खड़ा हुआ तो उसे याद आया कि यह टेबल भी रेवा ही का तो था। वह बालों में कंघी घुमाते हुए सीटी बजाने लगा। अभी वह जूते पहनने ही जा रहा था कि कॉलबैल बज उठी। बाहर आकर देखा, माँ जिस आदमी को साथ लेकर आ रही थी वह एक वकील के अलावा कुछ नहीं था। अभी जय कुछ पूछता कि आगंतुक बोल उठा,

''मिस्टर जय प्रकाश आप ही हैं?''

''जी हाँ, कहिए।''

''यह लीजिए! यहाँ साइन कर दीजिए।'' उसने कुछ काग़ज़ जय की ओर बढ़ाए तो जय

अचकचाकर बोला,

''यह क्या है?''

''पढ़ लीजिए, डाइवोर्स पेपर हैं...।''

''......................................''

''डॉ. रेवा ने आपके खिलाफ़ तलाक का केस फ़ाइल किया है।''

''अगर मैं उसे तलाक न देना चाहूँ तो?'' वह ढिठाई दिखाने लगा।

''उन्होंने आपके विरुद्ध चरित्रहीनता का आरोप लगाया है।''

''कैसे?''

''उन्होंने आप पर बिना उन्हें तलाक दिए ही दूसरे विवाह का आरोप लगाया है।

प्रमाण के तौर पर उन्होंने अपने हॉस्पिटल में श्रीमती रजनी के पति के रूप में रजनी के केस को साक्षी पेश किया है और इसी आधार पर कोर्ट ने जो आदेश पारित किया है उसके अनुसार आप वहाँ अब नहीं जा सकते। कोर्ट के आदेश का उल्लंघन करने पर आपके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है।"

''यह कैसे हो सकता है?'' उसकी आवाज़ दहाड़ने के बजाय मिमियाने वाली सी लग रही थी और वह बरामदे में पड़ी कुर्सी पर धम्म से बैठ गया।

संपादक, शैलसूत्र, कार रोड, डा. लालकुआं, जिला नैनीताल, उत्तराखंड-262402, मो. 0 94567 17150

कहानी

आत्म जागरण

◆ हेमंत भार्गव

तीस साल होने को आए मैं अमेरिका छोड़कर भारत आ गया था पर मेरा परिवार आज भी वहीं रह रहा है। मेरी पत्नी के देहावसान के बाद मैं बिलकुल अकेला हो गया हूं। मेरा एक बेटा है और उसके भी एक बेटा हो चुका है। इस तरह मेरा परिवार पूरा हो गया है। देश में जिस तरह की शांति हिमाचल की वादियों में है और कहीं है ही नहीं, वैसे भी अपना घर किसको बुरा लगता है? और फिर शिमला की वादियों में जिस तरह की शांति है मुझे वो कहीं भी नहीं लगी। अमेरिका में हम शिकागो में रहते थे बिज़नेस भी जमा जमाया था पर मेरा मन वहां लगा ही नहीं अपनी मिट्टी की खुशबू मुझे खींच कर वापिस अपने देश ले आई। मुझसे मिलने मेरे दोस्त अक्सर शिमला आते हैं राबर्ट जो अमेरिका में रहते मेरा मित्र बना वो अपने परिवार के साथ छुट्टियां मनाने जब भी शिमला आता था मेरे घर ही रुकता था। पर उसका दिल यहां की वादियों में एसा रमा की दो साल हो गए परिवार के साथ यहीं सैटल हो गया। उसको हमारे देश की संस्कृति बहुत पसंद है मेरी पत्नी का हर साल मैं श्राद्ध करता हूं तो वो बड़े ध्यान से देखता है। एक दिन उसने मुझसे पूछ ही लिया मिस्टर सत्यजीत डू यू बीलीव दिस श्राद्ध रीच टू योयर वाइफ ? मैनें कहा येस आई बिलीव। वो हिन्दी समझ लेता था लेकिन बोल नहीं पाता था। मैंने कहा माई फ्रेंड हमारी साईंस आप लोगों से कई हज़ार साल आगे है लेकिन अगर तुम ये नहीं समझ सकते तो ये समझ लो कि मैं ये इसलिए करता हूं कि मेरे दिमाग में तुम्हारी भाभी की याद बनी रहे और मुझे ये श्राद्ध कर रहा होता हूं तो मुझे लगता है कि वो उसे मिल रहीं होंगी फिर चाहे उसे मिले या न मिले.... और हमारा प्यार भी बना रहे। ये सुनकर वो खुश तो हुआ और कुछ चौंका भी उसने कहा वो सब मैं आपसे हिन्दी में कहूंगा। राबर्ट - हमारे तो एक पत्नियां बनाते ही नहीं और अगर बना भी लें और वो मर जाए तो कुछ दिन उसके गम में गुज़ार के मरी हुई का गम भुलाने के लिए दूसरी ले आते हैं और मैं ये भी नहीं मानता कि मरे हुए आदमी को ये श्राद्ध करने से ये सब चीज़ें उनको लग जातीं होंगी मैंने कहा तुम्हारे मानने से क्या होता है पर ये सच है, हमारे यहां का विज्ञान तो इतनी आगे है कि वो मरे हुए लोगों से भी सम्पर्क स्थापित करवा सकता है।

राबर्ट - एसा नहीं हो सकता देटस इंपोसिबल और फिर अमेरिका नॉलेज और टेक्नोलोजी में इंडिया से कहीं आगे है अगर ऐसा होता तो हमने पहले ही कर लिया होता और तुम सोचो जिस अमेरिका के बारे में ये कयास लगाए जाते हैं कि उसने अपनी टेक्नोलॉजी को एलियन्स से चुराया है उसके लिए आत्मा का विषय कोई बड़ी बात नहीं है।

मैंने कहा भाई भारत टेक्नोलॉजी के बारे में सबसे आगे था इसलिए ही भारत को विश्व गुरु कहा जाता है। और अगर तुम इस पर विश्वास नहीं करते हो तो मेरे पास देने के लिए सबूत है अगर तुम चाहो तो।

राबर्ट- चलो ऐसा है तो मैं देखना चाहूंगा मुझे मेरे पिता की आत्मा से कॉन्टेक्ट करना है।

फिर बात पक्की रही हम परसों सुबह की बस से वहां चलेंगे जहां आत्मा जागरण किया जाता है।

राबर्ट- ठीक है।

हम सुबह की बस में बैठे और चल दिए जहां आत्मा जागरण होता था हम लगभग ग्यारह बजे वहां पहुंच गए, बहुत भीड़ इकट्ठी थी शायद सभी अपने पूर्वजों से सम्पर्क स्थापित करने आए थे। वहां लोगों से हमारी बातें चल पड़ीं कुछ ने बताया कि उनको पितृ दोष है वो उसको समाप्त करवाने यहां आए हैं।

राबर्ट ने पूछा ये पितृ दोष क्या है ? मैंने कहा जब आत्माओं को कोई कष्ट हो तब वो आत्माएं अपने घर वालों को उनकी मुक्ति के लिए तंग करती हैं। राबर्ट ने कहा क्या तुम्हारी पत्नी ने तुमसे मरने के बाद कोई सम्पर्क स्थापित किया है। मैंने कहा नहीं तो उसने कहा कि वो तुम्हारी पत्नी थी तुम उसके सबसे करीब थे तुम न सही तुम्हारे बच्चों के सपने में आकर उनको या तुम्हें अपने बारे में बता सकती थी। ये सब अंधविश्वास है।

अब मुझे राबर्ट पर गुस्सा आ रहा था। मैंने देखा एक आदमी हमारी बातें बड़े गौर से सुन रहा था पर मैंने राबर्ट से कहा कि वो दूसरी दुनिया के लोग हैं उनको कोई माध्यम चाहिए होता है हमसे बात करने के लिए अच्छा तुम मुझे एक बात बताओ कि अगर तुम्हें किसी से सम्पर्क स्थापित करना हो तो तुम सबसे सरल किस

माध्यम का प्रयोग करोगे ?

राबर्ट- टेलिफोन

मैनें कहा बस इसी तरह ये भी ऐसा ही है। अब वो चुप हो गया अब हमारी बारी आ चुकी थी, हम आगे बढ़े मैंने देखा आत्मा जगाने वाला व्यक्ति एक क्रूर आदमी लग रहा था शायद बुरी आत्माओं के आने से उसके चेहरे का रंग काला पड़ गया हो मैं सोच ही रहा था कि उसने कहा किसकी आत्मा जगाना चाहते हो? मैंने कहा अपनी पत्नी की, उसने पत्नी का नाम पूछा मैंने कहा शोभा।

उसने एक लाल रंग का कपड़ा अपने मुंह पर लिया और कुछ मंत्र पढ़ने लगा उसके कुछ शब्द मुझे सुनाई देने लगे "काला भैरव नीला भैरव शमशान काली" कुछ देर बाद वो भयंकर आवाज़ें करने लगा लाल कपड़ा हिल रहा था।

मैं डर गया उसने पूछा क्यूं जगाया मुझे ?

मैंने डरते हुए कहा कि मैं तो बस पूछना चाहता था कि तुम ठीक तो हो जो तुमको हमने पिण्ड, श्राद्ध दिए हैं क्या तुम्हें वो मिले भी हैं।

उधर से आवाज़ आई नहीं मुझे कुछ नहीं मिला मैं स्वर्ग में हूं।

मैंने कहा मैंने तो सबकुछ किया तुम्हें कुछ नहीं मिला तो फिर कहां गया।

उसने कहा वो सब मैं नहीं जानती पर मैं यहां दुःखी हूं।

मैं आश्चर्यचकित होकर पूछने लगा कि स्वर्ग में तो सुना है सब सुख हैं तुम वहां दुखी हो पर क्यूं ? वे बोली मैं नरक जाना चाहती हूं। अब तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, मैंने पूछ लिया तुम नरक क्यूं जाना चाहती हो वहां तो पापियों को सज़ा दी जाती है गर्म कड़ाहे में तला जाता है और न जाने क्या-क्या तुम पागल हो स्वर्ग में तो सब सुख हैं आवेश में मैं कुछ ज्यादा ही कह गया।

उसने कहा तुम कुछ नहीं जानते दुनिया तरक्की कर चुकी है और नरक तो कुछ ज्यादा ही मैंने पूछा वो कैसे ?

उसने कहना शुरू किया जो ईमानदार लोग मरते हैं वो स्वर्ग आ जाते हैं उनमें ज्यादातर भक्त होते हैं वो भक्ति के सिवाय कुछ जानते नहीं। तुम्हें नहीं पता कि मैं कितनी भगवान की पूजा किया करती थी ? उसके कारण ही मुझे स्वर्ग प्राप्त हुआ है।

मैंने पूछा कि फिर क्या हुआ तुम्हें तो खुशी होनी चाहिए कि तुम्हें स्वर्ग में भक्ति करने को मिल रही है। दुख तो मुझे होना चाहिए जिसने तुम्हारे लिए श्राद्ध किए पिण्ड दिए यहां तक की गया में भी जाकर पिण्ड दे आया इतना खर्चा हुआ और वो तुम्हें मिला भी नहीं जो दिया। पण्डितों ने तो कहा था कि वो सब जो मैं तुम्हें दे रहा हूं वो तुम्हें मिल रहा है। मन में सोचा कि वहां जाने वाली सप्लाई का रूट शायद खराब हो गया हो या स्वर्ग जाने वाले रोड पर मलबा गिर गया हो और वहां सप्लाई पहुंचाने वाला ट्रक रास्ते में कहीं फंसा हो।

फिर पूछ ही लिया क्या दुख है तुम्हें ?

उसने कहना शुरू किया

यहां पर जो लोग हैं सच्चे और ईमानदार किस्म के हैं उन्हें कुछ ठीक करना नहीं आता कभी पानी की सप्लाई रुक जाती है कभी बिजली खराब हो जाती है और यहां आने वाला रोड अभी भी सिंगल है जहां पर स्वर्ग आने वाले लोगों की गाड़ियों का जाम लगा रहता है, अभी ब्रह्मलोक में रोड को नेशनल हाईवे बनाने की बात कई सालों से चल रही है पर इन्जीनियर न मिल पाने के कारण अभी काम लटका हुआ है और बजट की भी काफी किल्लत है। इन्द्र देव भी काफी परेशान हैं वो अभी तक अप्सराओं के नृत्य ही देख रहें हैं। अभी तक यहां टीवी भी नहीं लगा है, मेरा टीवी देखने का बहुत मन होता है। जबकि नरक काफी तरक्की कर चुका है।

मैंने पूछा वो कैसे ?

उसने कहा

सुना है वहां जो लोग जाते हैं वो पापी होते है पर इसके साथ ही काफी शातिर और इंटेलिजेंट भी होते हैं उन लोगों के भ्रष्टाचार के गुण की वजह से वहां का अप्रोचिंग सिस्टम काफी आगे है और नरक तरक्की के मामले में पृथ्वी लोक से हज़ारों साल आगे पहुंच चुका है ।

मैंने पूछा कि भ्रष्टाचार को यहां अपराध के रूप में देखा जाता है ? वो वहां पर गुण कैसे बन गया ? और लोग तो पृथ्वी लोक से ही मरते हैं तो उन्होंने नरक में ऐसा क्या किया कि वो नरक को पृथ्वी लोक से हज़ारों साल आगे ले गए ?

उसने फिर कहना शुरू किया

जो इंजीनियर, वकील आदि मरते हैं ज्यादातर बुढ़ापा आने पर मरते हैं क्योंकि गरीब और सीधे सादे लोग तो जल्दी भी मर जाते हैं वो ईमानदारी बरतते हैं। उनके पास इलाज को कई बार पैसे भी नहीं होते परन्तु दूसरी और लोग भ्रष्टाचार की वजह ये न तो उनको कोई बीमारी होती और न वे लोग मरते मंहगी से मंहगी दवाई खाकर बच जाते हैं। वहां नरक में एसी मशीनें हैं कि वो लोगों के अच्छे आइडिया दिमाग में आते ही यमराज को बता देते हैं और यमराज उन अच्छे आइडिया वाले लोगों को यमदूत भेज कर उठवा लेते हैं और उनके बेहतरीन विचारों को नरक की तरक्की में काम में लाते हैं। वहां पापी लोगों की सहायता से यमराज ने नरक को काफी एडवांस बना लिया है। वहां सज़ा के पुराने तरीकों को खत्म किया जा चुका है पूरा नरक अब डिज़िटलाइज़ हो चुका है और सारे उपकरण नए श्रेणी के हैं। जैसे गर्म तेल के कड़ाहे में पापी लोगों को सज़ा दी जाती थी उसके लिए बेचारे यमदूतों का सारा दिन लकड़ियां इकट्ठा करने में बीतता था परन्तु अब एक बटन दबाओ और इलेक्ट्रॉनिक कड़ाही में पापी दो

मिनट में तल के तैयार। सड़कें भी ऐट वे हो चुकी हैं। सब बहुत आगे है पृथ्वी से।

मन नहीं मन में मेरी इच्छा भी अब नरक जाने को करने लगीं

मैंने कहा तो तुम मुझसे क्या चाहती हो ?

उसने कहा

आप मेरे पति हैं आपके पास अपना दुख सुना रही हूं और चाहती हूं कि आप ऐसे कर्म न करें कि आपको स्वर्ग आना पड़े। अच्छा अब मैं चलती हूं मेरा पानी भरने का समय हो गया है अगर नहीं जाऊंगी तो तीसरे दिन पानी आता है और कई बार तो महीने में तीन बार आता है। जब पानी की सप्लाई ठप हो जाती है तो स्पेशल रिक्वेस्ट पर फिटर नरक से बुलाकर ठीक करना पड़ता है और वो मंहगा भी पड़ता है।

इतना कहकर वो चली गई।

अब मन में तरह-तरह के विचार आने लगे पर काबू करते हुए रॉबर्ट से कहा कि नाऊ योअर टर्न ।

रॉबर्ट आगे बढ़ा उसे देखकर आत्मा जगाने वाले के होश उड़ गए उसने मेरी तरफ मेरी तरफ मुड़ के कहा कि इनको भी आत्मा जगानी है।

मैंने कहा हां पर जल्दी कीजिए हमें जाना भी है ।

उसने कहा इनके ज्यादा पैसे लगेंगे।

मैंने पूछा क्यों

तो उसने कहा इनके किस रिश्तेदार की आत्मा जगानी है ?

मैंने कहा इनके पिताजी की।

उसने कहा वो कहां रहते थे कहां के नागरिक थे ?

मैंने कहा अमेरिका में वहीं के नागरिक थे।

वो बोला मैं इनको देखकर ही समझ गया था के ये अमेरिका के हैं।

मैंने कहा कि वो ठीक है पर आप जल्दी कीजिए हमें जाना है।

उसने कहा, मैंने कहा न कि इनके पैसे ज्यादा लगेंगे।

मैंने पूछा पर क्यों।

उसने कहा कि आप नहीं जानते क्या ये इंटरनेशनल मामला है इनके पिताजी अमेरिका में रहते थे वहीं मरे।

मैंने कहा तो फिर क्या हुआ जो अमेरिका में मरे

उसने प्रश्न किया कि आप कहां बैठे हैं ?

मैंने कहा यहां पर आपके सामने

उसने कहा वो तो ठीक है पर ये देश कौन सा है ?

मैंने कहा इंडिया

उसने कहा कि अगर आपको अमेरिका जाना हो तो पासपोर्ट वीज़ा बनवाना पड़ेगा न आप किस काम से वहां जा रहे हैं कितने समय रहेंगे इसके बारे में वहां की सरकार को जानकारी देनी पड़ती है कि नहीं ?

मैंने हां में जवाब दिया

उसने फिर कहना शुरू किया

यहां भी वैसा ही है इनके पिताजी की आत्मा अभी हैवन या हैल में होगी वहां की एम्बेसी से बात करनी पड़ेगी वहां अप्लीकेशन देनी पड़ेगी फिर कहीं जाके उनका वीज़ा बनेगा तब उनकी आत्मा को हम यहां जगा सकेंगें।

रॉबर्ट चुप रहा पर मैंने सोचा जितने पैसे लगेंगे, मैं दे दूंगा इसको हम पर विश्वास हो जाएगा कि भारतीय कितने आगे हैं।

मैंने अपने भारतीय स्टाइल से कहा कुछ ले दे के नहीं हो सकता

उसने गंभीर मुद्रा में कहा हो तो सकता है। पर आप जानते हैं फौरन का केस है इसमें मुझे उनकी एंबेसी को एक ट्रांसलेटर भी भेजने को कहना पड़ेगा वहां पर भी पैसे लगेंगे और उनको यहां बुलाने के लिए प्लेन की टिकटें भी चाहिए होंगी और गाड़ी का खर्चा अलग से।

मैंने कहा आप चिंता मत किजिए वो सब हो जाएगा पर कितना लगेगा ?

उसने सहमते हुए कहा बीस हज़ार

मैंने कहा बस इतने में हो जाएगा न ? पर कितने दिन लगेंगे, उसने कहा कि आप पैसे दें मैं अभी इंटरनेशनल अफेयरस डेड असोसियेशन के हेड को बोल के उनका पता लगवाता हूं और वेस्ट्रन डेड यूनियन से पैसा उनके अकाऊंट में ट्रांसफर करके दो मिनट में उनकी आत्मा ट्रांसलेटर के साथ यहां।

मैंने कहा कि इतनी जल्दी ?

वो बोला भाई नैनो टैक्नोलॉजी का नाम नहीं सुना क्या?

मैंने कहा सुना तो है पर ज्यादा नहीं.......

मैं हां कहने को ही था कि रॉबर्ट उठा उसने मुझे उठने को कहा हाथ खींचा मैं उसे रोकता रहा पर वो बाहर ले आया और कहने लगा कि वो आदमी तुम्हारा बेवकूफ बना रहा है और तुम बन रहे हो मुझे कोई आत्मा नहीं जगवानी पर मैं तुम्हें देखने ही आया था और तुम्हारी टेक्नॉलाजी को भी जो वाकई बहुत आगे है।

हम आ गए रास्ते में मैंने उससे कोई बात नहीं। की मेरा भरोसा तो अब भी कायम है पर मुझे उस घटना के बाद नरक में जाने की दिलचस्पी बढ़ी है पर उसका लिटरेचर पढ़ता हूं तो डर लगता है। सोचता हूं कि मैं कभी-कभी पत्नी से झगड़ता भी था कहीं इस वजह से तो वो मुझे नरक भेजना चाह रही है या फिर सच में नरक वैसा ही है जैसा उसकी आत्मा ने कहा था...।

गांव सानन, डाकघर डुमैहर, तहसील अर्की
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173221
मो. 0 94592 41266

कहानी

विजय की हार

◆ गोपाल गर्ग

इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना की शुरुआत पंजाब के किसी छोटे से गांव से होती है। 12 साल का सुंदर, स्वस्थ एवं गौरवर्ण विजय वहीं से भाग, दिल्ली होता हुआ चंडीगढ़ पहुंचा था। उसका गांव से भागना कायरता या मस्ती कतई नहीं थी बल्कि अनाथ होने के बावजूद उसकी मामा-मामी का क्रोध और सौतेला व्यव्हार ने उसे मजबूर किया था।

विजय के जीवन में वह शनिवार की शाम और अगली दोपहर एक बड़ा मोड़ लायी थी। जिस पर रोने के लिए उसके पास बच्चे का संवेदनशील मन जरूर था परन्तु भावी संकटों को देख पाने की क्षमता शायद हो भी नहीं सकती थी। दरअसल उस रोज उसके मामा-मामी करतार और बिज्जो ने अपने दो बच्चों के साथ उसे बाज़ार घूमने भेजा था। विजय इतना खुश हुआ मनो अब उस के साथ कुत्ते-सा व्यव्हार न किया जायेगा। बाज़ार में घूमते हुए वह अपने ममेरे भाई-बहन का पिछलग्गू नौकर से अधिक न लग रहा था। देखनेवालों को फर्क मालूम पड़ता था। जिस से तीनों अनभिज्ञ थे। काफी घूमने के बाद वापसी पर उनकी बातचीत थी तो बचकानी और भोलेपन से भरी परंतु करतार और बिज्जू कब संजय और रूबी पर हावी हो जाते कहना मुश्किल था।

घर के आँगन का दृश्य देख तीनों भौचक रह गए। उनके वृद्ध नाना खाट पर बैठे जोर-जोर से हांफ रहे थे और खांस भी रहे थे। विजय जब भी कहीं बहार से आता तो नाना से जा लिपटता था, लेकिन वह दृश्य देख वह बुरी तरह डर गया। उसके बाल-मन ने आँका था की नाना मर जाने वाले हैं - “हाँ , तभी मामा-मामी कुछ ठीक-से हो गए हैं”। करतार गंभीर मुद्रा में पिता के पैरों में सरसों के तेल से मालिश कर रहा था। बिज्जो खांसी के थुकी बलगम पर बेमन और कुढ़ती हुई राख डाल रही थी। मामा ने बताया कि वह बोल नहीं पा रहे थे और साथ ही पेशाब का बन्द पड़ा था। बाकि सभी गंभीर जरूर हो गए थे मगर विजय कि हालत तो रोने को हो आई थी। उसने भी नाना कि टांगो कि मालिश करनी शुरू कर दी। उसे मालूम न था कि नाना क्या-क्या कहना चाह रहे थे और मन ही मन उसे लाखों आशीर्वाद दे रहे थे। नाना कि हालत और मामा के व्यव्हार से साफ़ लग रहा था कि वो बचने वाले नहीं थे। नाना के मन में अपने मरने के बाद के दुखों का सोच, बोझ था।

गर्मियों के दिन होने के कारण उस रात विजय नाना कि चिंता में ठीक से सो भी न पाया, बार-बार जागकर कोठे से दौड़कर नाना को देख आता। जबकि संजय और रूबी को नाना कि अवस्था से जैसे कुछ लेना-लेना ही न हो, लंबी तानकर सोये पड़े थे।

अगली सुबह नाना थोड़ा बहुत चलने लगे थे। फिर भी पड़ोस के देशपांडे जी का बेटा उन्हें पीठ पर उठा कर गाड़ी तक छोड़ आया क्योंकि उन्हें अस्पताल ले जाया जा रहा था। नाना ने गीली आँखों से विजय के सिर पर हाथ रख, बलों को सहलाया और शायद अंतिम आशीर्वाद दिया। करतार और बिज्जो का पत्थर मन जाने क्यों रोने लगा था।

गाड़ी चली गयी। बिज्जो को विजय से जाने क्यों चिढ़-सी आने लगी। जल्दी ही विजय को दो-तीन घंटों के लिए खेतों पर काम पर जाने को कहा। उसके जाने के बाद पूरे परिवार में रसोई में बैठ, जाने क्या गुप्त बातचीत होने लगी।

थोड़ी ही देर में विजय वापिस आ गया। मामी बरसी - “खेत ही खाना भिजवा देती, घर क्यों चला आया ?” विजय सहमकर - “मामी तो, बस खाकर, भागकर चला जाऊंगा”।

करतार खाने के बाद मक्की की रोटी के कुछ टुकड़ों को रसोई कि छत पर उछालते हुए, बीच में बोल पड़ा, “रहने दो, यही खा लेने दो।” इतने में संजय और रूबी भी खा चुकने के बाद धुले-गीले हाथों से पानी के छींटे विजय पर उछालने लगे। विजय ने एक नज़र मामा-मामी पर डाली और एक साथ रूबी कि चुटिया खींची और संजय को एक जोरदार लात घुमा डाली। बिज्जो जिसे सिर्फ विजय कि वजह से दोबारा आटा गूंधना पड़ रहा था, अपने आप पर काबू रखने में नाकाम रही और उठकर चिमटे से विजय कि खूब पिटाई कर डाली। विजय दीवार से सटकर ऊखड़ु बैठ कर न

जाने कब तक रोता रहा, माँ-माँ या नानु-नानु कर रोया। विजय का बाल-मन जैसे भांप गया था कि नाना के जाते ही ऐसी पिटाई, वो भी ऐन खाने के वक्त, असल में उसका तिरस्कार था। ऊखड्डु बैठा मन ही मन अपने को कहने लगा - "मैं यहाँ नहीं रहूँगा, इनका खाना भी नहीं खाऊंगा और हाँ, संजू और रूबी कि बच्ची से कभी भी बात नहीं करूँगा।"

विजय को छोड़ सभी अपने काम में ऐसे मसरूफ हो गए जैसे कुछ हुआ ही नहीं था। इसी बीच कब करतार के लिए चाय बनी, जिसे वो आम के पेड़ के नीचे खत पर बैठ पी रहा था, विजय को याद कर पाना कठिन हो रहा था। काफी रोने के बाद विजय उठकर पशुघर गया और सभी डंगरों को चूमकर प्यार करने लगा। वही रोने का क्रम फिर शुरू हो गया। बैल की जोड़ी के नजदीक जाकर- "चंदू-नंदू अब कौन तुमको घास और पानी देगा, मैं तो जा रहा हूँ ?" विजय को महसूस हुआ कि मानों वो सभी जानवर उसके दुःख में शामिल हो गए हों।

विजय क्रोध से भरा, पशुघर के पिछवाड़े से होता, बस स्टेंड कि तरफ चल पड़ा रस्ते में बेरी से कुछ बेर तोड़कर भी खाए परन्तु उनसे भूख कहां बुझने वाली थी। इतने में पीछे से एक ट्रक आता दिखाई दिया। विजय का मन हुआ कि ट्रक रुकवाकर इसके साथ ही शहर निकल ले परतु हिम्मत न हुई। ट्रक खुद ही उसके पास आकार रुक गया। ड्राइवर 26-27 कर साल का मनचला जवान लग रहा था। सिटेरियो पर पंजाबी गाना- "दुनिया डसेगी नागन जैहरी" चल रहा था। ड्राइवर ताक्की खोल, कुछ लपककर- "पुत्तर इतनी धुप में कां जा रहा है? आ बै जा ताइनू आगे तक छड़ देया।" विजय के मन में ड्राइवर और ट्रकों के प्रति व्याप्त डर जाने कहाँ गया और वह बैठ गया।

ढाबे में पहुँचकर "पुतर तेरा नाम क्या है ? और इतनी तपती दोपहरी में तू जा कहा रहा है ?" विजय को कोई स्पष्ट उत्तर न सुझा और सवाल का सवाल ही जवाब बनाकर झट से पूछ डाला

"आप मेरे को अपने साथ शहर ले जाओगे ?" ड्राइवर कुर्ला करता और हाथ धोता जैसे सब समझ गया था, बोला, "अच्छा घर से भाग रहा है जवान ?" विजय हकलाकर- "वो... वो...वो"। ड्राईवर और पूछने लगा- "माँ-बाप जिंदा है की नहीं?" विजय हैरान था की सबकुछ कैसे जान गया था। विजय क्या जानता था की ऐसी घटना कोई पहली बार ही घाटित नहीं हो रही थी।

इतने में दो प्लेट खाना टेबल पर लग चुका था। "चल पुतरा फ़्यूल भर ले" विजय समझ न पाया था, और हलका सा मुस्कुरा दिया। "ओ बेवकूफा रोटी खा ले आके।" सचमुच उस समय विजय को खाना ही चाहिए था। खाने के बाद विजय प्लेट में बची झूठन पर उंलगी से कुछ तस्वीर-सी बनाने लगा ड्राइवर पैसे कटवाकर ट्रक में बैठकर बोला- "चल शेरा बे जा आ के।"

विजय का मन अब घर वापिस जाने को चाहने लगा था। मगर शाम को वह दिल्ली पहुँचें, जहाँ गेराज में टायर बदलवाकर वे ढाबे में पहुंचे। रात के 10:30 हो रहे थे, ड्राइवर ने जाने कब दारू की बोतल खरीदी थी। "विजे तू खाना खाकर सो जा मैं थोड़ी दवाई चढ़ा लूं।" विजय को उसके दारू पीने से कुछ डर सा लगा, खैर ! खाना खाकर वह खाट पर चादर बिछा लेट गया।

शनिवार बाज़ार की घटना से लेकर अब तक की तस्वीरें उसकी नज़रों में सामने घूमने लगी नाना की भी बहुत याद सताने लगी थी। इन विचारों मे सुबह 8 कब बज गए विजय को मालूम न पड़ा। दोनों ट्रक मे सवार हो शाम 3 बजे चंडीगढ़ पहुंच गए।

ड्राइवर की मोटी अकल को जाने अब क्या विचार कचोटने लगा, इससे विजय बेखबर था। "कहीं तेरे घरवालों ने पुलिस में तो रिपोर्ट नहीं लिखवा दी होगी ?" पुलिस के नाम से विजय की सुस्ती दूर हुए "पुलिस ! वो क्यों ?"

"तू घर से नहीं भागा है क्या?" विजय ने कोई उत्तर न दिया। ड्राइवर कमीज़ में हाथ घुसा, बगल मे खारिश करते मन ही मन सोचने लगा, "चलो अब जो भी हो, लालाजी को बोल इसे काम पर लगवा दूँगा। वह वही लाला था जिससे उसे गाँव को चोकर और बीज़ ले जाना था।

लाला की दुकान से सारा सामान लदवा उसने बड़े नम्र लहजे में कहा- "लालाजी एक लड़का है, अगर उसे कुछ काम दिलवा दें तो वो गरीब रोटी कमा लेगा। लाला कुछ सोचकर- "यही जो तुम्हारे ट्रक मे बैठा है?" "हाँ हाँ लालाजी यही छोकरा है"। लाला सौदे के जैसा आंकलन करते हुये- "पर तुम इसकी ज़िम्मेवारी लेते हो ना?" ड्राइवर कुछ हिचकिचाकर- "लाला हर हफ्ते तुमसे चोकर ले जाता हूँ, मुझपर विश्वास करो"। इस तरह ड्राइवर वापिस गाँव चला गया। विजय घुरकर लाला को देखता रहा।

शाम को 7 बजे लाला विजय को लेकर मिस्टर अगरवाल के घर दरवाजे को खटखटाने से पहले विजय से, "देखो घर पर सभी को नमस्ते करना।" विजय ने हामी भरी। घर पर चाय की चुसकियों के बीच विजय को रखना पक्का हुआ। जिस कमरे में बातचीत चल रही थी, दो बच्चे लगभग विजय की ही उम्र के, बार बार झाँकते रहे। असल में वे मिस्टर-मिसेस अगरवाल के गिन्नी और कोमल थे। रात सोने से पहले विजय को गिन्नी का कुर्ता-पाजामा दिया गया। सुबह उसे ढेर सारा काम शुरू

सुबह विजय से सभी ने गाँव और उसके परिवार के बारे मे बहुत सी बातें की। गिन्नी और कोमल के स्कूल चले जाने के बाद उसने मिसेस अगरवाल के साथ काम मे खूब हाथ बटाया। दो बजे गिन्नी और कोमल भी स्कूल से वापिस आ गए और तीनों मकान से सटे मैदान मे चले गए। बीच-बीच में मिसेस अगरवाल विजय को 5-10 मिनटों के लिए काम के लिए बुला लेती थी।

करना था।

सुबह विजय से सभी ने गांव और उसके परिवार के बारे में बहुत सी बातें कीं। गिन्नी और कोमल के स्कूल चले जाने के बाद उसने मिसेस अगरवाल के साथ काम मे खूब हाथ बटाया। दो बजे गिन्नी और कोमल भी स्कूल से वापिस आ गए और तीनों मकान से सटे मैदान में चले गए। बीच-बीच में मिसेस अगरवाल विजय को 5-10 मिनटों के लिए काम के लिए बुला लेती थी।

शाम को विजय ने गिन्नी के कहने पर उसके गाँव की तस्वीर बनायी और कोमल जिसे वो अपनी छोटी बहन ही समझने लगा था, की किताबों में जिल्द चढ़ाई। उनको पढ़ता देख उसका दिल भी स्कूल जाने को करता मगर...। गिन्नी को उस ड्राइंग के लिए पहला पुरस्कार मिला, जबकि उसका असली हकदार तो विजय था। माँ-बाप और अध्यापकों का सारा प्यार और प्रोत्साहन गिन्नी के हिस्से गया।

धीरे-धीरे तीन महीने बीत गये। वहीं पड़ोस में मिसेस खन्ना के एक जवान नौकर ने उनकी 13 साल की बेटी के साथ बलात्कार किया और पकड़ा गया। इस दुर्घटना का बुरा असर विजय की जिंदगी पर भी पड़ा। मिस्टर अगरवाल विजय के सुंदर चेहरे तथा उभरे मसल शरीर के बारे मे सोचने लगे जो 5-6 वर्षो बाद और भी अधिक आकर्षक होने वाला था। एकाएक विजय के प्रति उनके मन में असुरक्षा एवम् डर की भावना पनपने लगी। उन्हें अपनी बेटी कोमल का रह-रह कर ख़याल आने लगा। ऐसी घटना उनकी बेटी के साथ भी घाटित हो सकती थी। इसी तर्ज पर उनके विचारों मे खलबली मच गयी। अपनी पत्नी के साथ विचार-विमर्श के बाद उन्होंने बेकसूर विजय को घर छोड़ चले जाने को कह ही डाला, जबकि खुद उनका मन भी नहीं चाह रहा था।

5-6 साल बाद के विजय की सही कल्पना असल में परिस्थितियों और खुद मिस्टर अगरवाल की देन थी। अब 19-20 साल का विजय एक छोटी सी झोंपड़ी नुमा कोठड़ी में रोज शाम पीकर औंधे मुह पड़ा रहता था। उस गंदगी में दो-चार आवारा कुत्ते भी पड़े रहते थे। उसका शरीर अब दुबला-पतला एवम् चेहरा हल्की दाढ़ी और मुहासों से भरा था।

उसकी इस अवस्था के पीछे मुख्य कारण मां-बाप के प्यार का अभाव तथा अपने परिवार तक सीमित भावना है। जिस युवक को गाँव के स्वस्थ वातावरण में खेती-बाड़ी करनी चाहिए थी, उसके लिए चंडीगढ़ सेंट्रल जेल में आए दिन बंद होना आम बात हो गयी है।

वी.जी. निवास (विद्या गर्ग निवास), ग्राम हटकोट,
पो.ओ. कुनिहार जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश,
मो. 0 94181 69764, 0 82195 83223

कविता

पहाड़ की पीड़ा

रविंद्र शक्ति सिंह

पहाड़ों के हृदय चिंघाड़ रहे हैं,
मत सीना करो छलनी, बार-बार चीत्कार रहे हैं।
हम सदियों की विरासत, हम पीढ़ियों का सरमाया।
हमसे ही प्रकृति-हमसे ही पौरुष, हममें ही जीवन समाया।।
है वक्त संभल जाओ अभी, क्यों खुद का पर्यावरण बिगाड़ रहे हैं
पहाड़ों के हृदय चिंघाड़ रहे हैं
सिर पर अपने बर्फ की कड़क ठंड का मुकुट धरते हैं।
सीने पर हमारे खड़े जंगल और असंख्य जीव-जंतु चरते हैं।।
क्यों खोदकर पहाड़, इन सबका आशियाना उजाड़ रहे हैं
पहाडों के हृदय चिंघाड़ रहे हैं
चोटयों से बहते झरने, घाटियों में कलकल करती नदियों से।
हमारी वादियां मानव सभ्यता को जीवन देती रही सदियों से।।
अब जन विकास के नाम पर, क्यों प्रकृति से खिलवाड़ रहे हैं
पहाड़ों के हृदय चिंघाड़ रहे हैं
कट जाएंगे पेड़ और जब पहाड़ हो जाएंगे खोखले।
वन्यचरों के उजड़ेंगे घरौंदे, बिखर जाएंगे पक्षियों के घोंसले।।
इस विपदा में जाने के लिए क्यों प्रकृति का संतुलन बिगाड़ रहे हैं
पहाड़ों के हृदय चिंघाड़ रहे हैं
कुदरत का कहर आपदा बनकर, बार-बार चेताता है।
कभी जलजला तो कभी जल प्रलय, सब लील जाता है।
बर्फ बन जाती मौत की चादर, कभी जमीन धंसकर कब्र हो जाती है
खनन व दोहन का यही रहा आलम, तो इक दिन वो भी आएगा।
ठूंठ हो जाएंगे हरे-भरे पहाड़, नदी-नालों में जल भी सूख जाएगा।।
ऐसी सभ्यता के लिए क्यों मानव शिखर को धरातल में गाड़ रहे हैं
पहाड़ों के हृदय चिंघाड़ रहे हैं
मत सीना करो छलनी, बार-बार चीत्कार रहे हैं।

ठाकुर निवास, नडोह, जौणाजी रोड, सोलन,
हिमाचल प्रदेश-173 212

लघुकथाएं

अर्चना सिंह

धरती और गगन

आज नीला गगन कुछ ज़्यादा ही चमक रहा था, और खुश भी बहुत हो रहा था, हो भी क्यों ना आज अभी-अभी फिर धरती से उसकी बात हुई। धरती ने उसे बड़े ही स्नेह से देखा था। गगन और धरती दोनों की अपनी अलग दुनिया। फिर भी दोनों एक दूसरे के प्रेम में डूबे हुए। दोनों एक दूसरे पर अपने प्राणों का बलिदान करने को तैयार।

धरती को अपनी हरियाली प्यारी, अपने पहाड़, पेड़, नदियाँ फूल-पौधे, पशु-पक्षी बहुत प्यारे और सबसे प्यारे उस पर निवास करने वाले प्राणी, तो गगन को अपने तारें, चांद, सूरज, गृह, नक्षत्र भी बहुत प्रिय। दोनों को इस तरह प्रेम करते हुए सदियां बीत गई

और एक दिन गगन ने धरती से कहा, हमें एक दूसरे को इस तरह प्रेम करते हुए, और एक दूसरे को देखते हुए सदियां बीत गई, क्यों ना अब हम एक साथ रहे। धरती ने कहा, हां में भी ऐसा ही सोच रही हूं। साथ- साथ रहने का आनंद ही कुछ और होगा, पर इसके लिए तुम्हें नीचे आना होगा। हां- हां क्यों नहीं, बस मैं तो तुम्हारी इज़ाजत चाहता था। मैं अभी नीचे आता हूं, और गगन नीचे आने लगा। मगर ये क्या ज्यों-ज्यों गगन नीचे आया, गगन के सूरज की गर्मी से धरती तपने लगी। गगन और नीचे आया, गर्मी और बढ़ने लगी लोग बेहाल हो गए। धरती ने गगन से कहा, बस करो मेरे ऊपर निवास करने वाले प्राणी तुम्हारे सूरज का ताप सहन नहीं कर पा रहे हैं, तुम्हें लौटना होगा। जाओ लौट जाओ, मैं अपने प्रेम के लिए इतने जीव- जंतुओं, प्राणियों, को तबाह नहीं कर सकती। वरना मैं पलट जाऊंगी, और फिर तुम मेरा मुँह कभी नहीं देख पाओगे

सूरज ने क्षमा मांगी, मेरा ऐसा इरादा नहीं था, मुझे नहीं पता था कि तुम्हारे ऊपर निवास करने वाले मेरे सूरज का ताप सहन नहीं कर पाएंगे। मैं लौट जाता हूं। पर तुम्हें वचन देना होगा कि तुम कभी भी ऐसा नहीं करोगी।

और फिर दोनों ने एक दूसरे को वचन दिया कि हम दोनों कभी भी एक दूसरे की ओर पीठ नहीं करेंगे, और इसी तरह एक दूसरे को ऐसे ही देखते रहेंगे।

और इस तरह से ना जाने कितनी सदियां बीत गई, गगन और धरती ऐसे ही एक दूसरे को देखते चले आ रहे हैं। ऐसा लगता है कि गगन ऊपर से धरती को देख रहा है, और धरती नीचे से ऊपर की ओर देख रही है।

शक

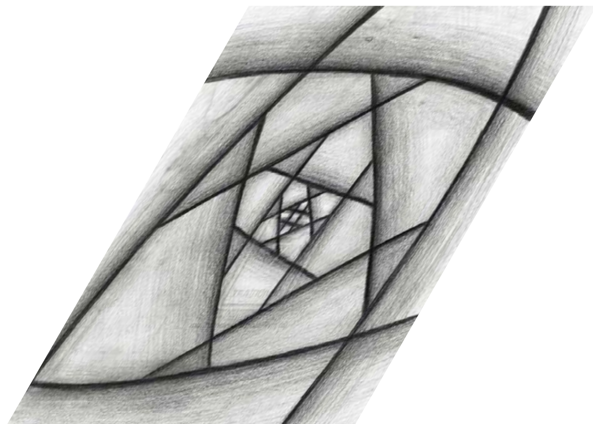
वह एक आधुनिक विचारों की लड़की थी। आधुनिक वेषभूषा, आधुनिक विचार, और आधुनिक खान-पान। वह कभी मंदिर नहीं जाती थी, कभी घर में भी दीपक जला कर उसने आरती नहीं गाई। लेकिन ईश्वर पर उसकी श्रद्धा थी, और भरोसा भी। इसलिए जब उसे को मंदिर, मस्ज़िद दिखाई, गुरुद्वारा, या कोई चर्च दिखाई देता तो वह श्रद्धा से सिर झुका लेती थी। उसके विचार से आधुनिक होने का अर्थ यह बिलकुल नहीं था कि ईश्वर के अस्तित्व को ही नकार दिया जाए। उसका विवाह एक अमीर पार में हुआ, जहां नियम से पूजा-पाठ किया जाता, दीपक जलाया जाता। किंतु वह तो यह सब करती नहीं थी इसलिए घर के सब सदस्यों के लिए वह नास्तिक थी।

एक दिन वह अपने जेठ-जेठानी के साथ कार से कहीं जा रही थी, तभी चौराहे पर लगी शंकर जी की मूर्ति को देख कर उसने सिर झुका कर प्रणाम किया। ऐसा करते हुए उसकी जेठानी ने देखा और कार के अंदर लगे शीशे से जेठ जी ने भी। दोनों ने सोचा शायद उसका कोई मिलने वाला होगा, जिसे देख कर उसने विश किया होगा। घर आ कर जेठानी ने पूछा, तुम्हें वहां कौन दिखा था जिसे तुमने विश किया था। कोई तो नहीं उसने उत्तर दिया। मगर इस उत्तर से जेठ और जेठानी जी संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने जितनी बार पूछा वह यही कहती कोई नहीं। जेठ-जेठानी के मन में शक बैठ गया और वह उसमें घिर गई आखिर में एक दिन उसने बताया भी कि उसने किसी को विश नहीं किया था बल्कि चैराहे पर लगी शंकर जी की मूर्ति के आगे सिर झुकाया था। मगर उसकी आधुनिकता को देख कर दोनों को विश्वास नहीं हुआ कि वह जो कुछ कह रही है सच कह रही है। शक का घेरा बढ़ता गया जिससे जेठ-जेठानी कभी बाहर नहीं निकल पाए और ना ही वह इस घेरे को तोड़ पाई।

म. न. 31 वार्ड न. -1, हीरा नगर, हमीरपुर,
हिमाचल प्रदेश, मो. 0 97363 79227

कविता

अतीत की रुनझुन



जगदीश कश्यप

अपनी ही गलियों में
आ गए थे वो
बीते पल सुझाने
और मन बहलाने।
हमने भी गोया
कुछ कमी न रखी
आज़ादी दिखलाने
व रंग जमाने की।

कहा एक दिन
जरा तुनक कर
री! दादी बन बैठी
अब तो खयाल कर।
सुनाने लगी -
तुम्हें अब भी
मैंने रखा है
उसे संभालकर।
दो ही दीखते हैं, सामने
जमाने के लोगों को
मैंने तीसरे की हिफ़ाजत
अभी तक संजोयी है।
भलेहि रे! मीत मेरे!
पोपली हो गई हूं;
पर मेरी उसांसें
अभी धरोहर हैं तुम्हारी।
झुर्रियां निचोड़ रहीं
रस जीवन का
भरोसा पटता नहीं
पल भर का

वह बांसुरी की तान
जो है मेरी जान
पुनः बस एक बार
सुनाओ न, सुनाओ न।

इन सूनी कलाइयों में
सूखे तृषित होठों में
और सफेद बालों में
उंगली ज़रा घुमाओ न।
रे मेती! मान जाओ
फिर वही तान सुनाओ
बिजुरी चमके, पपीहा बोले
कोयल! मीठा-मीठा गाओ
न।

कहां छुपा रखी है
वह वेणू, जिसमें
बंध मैंने ही बांधे थे
काले रेशमी बालों के
उन्हें मैं भी देखूं
सफेद नहीं हुए होंगे
त्यों दिल काले ही रहते
उम्र पक जाने पर भी।
हमने अपनी सफेदी से
उन्हें सींचे रखा है
जमाने से बचाकर
सीने में भींचे रखा है
अभी वही पावस की रानी
घेर लेगी गर्जते पयोधरों को

और यों बरस पड़ेगी
इन आंखों-सी अनवरत हो।

योंहि बरसने से ठंडक
परिवेश को हो जाती है
त्यों ये होंठ भीगकर
ढांढस ज़रा बंधाते हैं।
सिमटते सिहरते वदन
विस्फारित ये आंखें
कुछ पल सुसता लें
बुझी-बुझी ये आंखें।

भूमिका के इस गमछे से
लुकाई वह वेणू संगिनी
कुक्षि की कसक ढीलने से
धरा पर आन गिरी
स्वर स्वतः निःसृत हुए
उसने भी स्वर मिलाया
मन मयूर नृत्य कर गया

ये समां भी बंधा रह गया।

आ आ आ आओ न
वह गीत - वही तान सुनाओ न
बिजुरी चमके, पपीहा बोले
कोयल! मीठा-मीठा गाओ न
सतपथ की मैं विरहनी
ढलती में आई जवानी
मेरी उजड़ी सांसें
बसाओ न, बसाओ न।

रिमझिम बरसी आंखें मोरी
वसंत में बरसात आई रे
पिया मन भाये मोरा
वाणी वही गीत गाये रे
लगाओ ठुमके-छुड़ाओ गमको
वही गीत तुम गाओ न
बिजुरी चमके, पपीहा बोले
कोयल मीठा-मीठा गाओ न।

सेवानिवृत्त अध्यापक, ग्राम कलहोग, पत्रालय चनोग
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 011, **मो.** 0 94181 34397

माह के कवि

हंसराज भारती

बारिश

बारिश होगी तो लौटेगी
फसलों की खोई हुई जवानी
घाटियों की गुम हुई हरियाली
नदियों की भूली हुई चाल
गांव बस्ती की चहल-पहल
बारिश से जब सींचेंगे खेत
तो किसानों की बुझी आंखों में
आएगी नई चमक
ऊंची हांक में करेंगे बात
भगवान का धन्यवाद करते हुए
भूल जाएंगे हाथों के छाले
भरपूर नई फसल की उम्मीद से
कितने खुश होंगे
बारिश यूं ही बरसते रहना
हमारे खेतों की लिहाज करते हुए
तुम्हारे बरसने से
हमारे हाथ सिर, माथे पर नहीं
विजयी मुद्रा में लहराएंगे, सिर से ऊपर
खुली, भीगी हवा में
इनकी लकीरों की चमक
और निखरेगी
चाल का टेढ़ापन
हो जाएगा गायब
बारिश तुम खूब बरसना
तब राजधानी में सूखे और
बेचारगी की खबर नहीं
हमारी खुशहाली और मेहनत का
जयघोष गूंजेगा
वे भी जानें की बारिश
किसान की जिंदगी में
कितनी तकदीरों का लेखा जोखा
होता है।



हमें भी बताना

वो कच्ची हंडी में
उबलता साग
पुरानी खिंद का निग्घ
मधाणी के गीत
वो कोरथे घड़े का पानी
वो घराट का आटा
मेले के हिंडोले
जलेबियों की मिठास
कहीं तुम्हें मिले तो हमें भी बताना

वो गुल्ली डंडे की पारियां
वो कंचों की जीती-हारी बाजियां
वो डुग्घे नालू, खड़ी कुआलियां
कानों में अंगुली डाले
ऊंची लेर में गंगी गाना
मेले, ब्याहों में सज-धज कर जाना
थोड़े में ही बहुत का सुख पाना
वो सब तुम्हें मिले तो हमें भी बताना

वो पुरानी ओबरी का ताला कुंजी
दादी नानी की पहेलियां
मां, ताइयों, चाचियों के लोकगीत
बहनों के मीठे उलाहने
फौजी भाइयों की शेखियां बघारना
भाभियों के गज भर के घूंघट
पनघट के किस्से कहानियां
कहीं तुम्हें अब सुनने को मिलें
तो हमें भी बताना

वो काम-धाम में हाथ बटाना
अपने सुख-दुख सब साझे करने
भाईचारा, मेल मिलाप बनाए रखना
त्योहारों, मेलों को मिलकर मनाना
वो पहाड़ की भूली हुई जिंदगी
कहीं तुम्हें मिले तो हमें भी बताना।

बुझी आग

बुझी आग
चाहे सीने के अंदर की हो
या कोयलों, उपलों या चूल्हे की
उसकी क्या बिसात
क्या सेंक, क्या वजूद
क्या सवाल, क्या कसक
आग का सुलगते रहना जरूरी है।
हर हालत में, हर दौर में
सीने के अंदर भी
और बाहर भी
सुलगती रहेगी तभी
नई आग जलेगी
पुराना गला-सड़ा राख होगा
नया आकार लेगा
नई सुबह जैसा
हमारे सपनों जैसा सतरंगा
जो हमारे माफिक होगा
बेहतरीन दुनिया के अक्स सा।



जंगल शांत है

जंगल शांत है
भेड़ें आजाद हैं
भेड़िए लोकतांत्रिक हो गए हैं
भेड़ें जहां चाहें, जब चाहें, जो चाहें
चर सकती हैं
आने-जाने की आजादी है
जी भर कर जुगाली कर सकती हैं
और तो और
अपनी बात भी कह सकती हैं
पर जरा सोच समझ कर, नाप तोल कर
राज चाहे किसी का हो
कैसा भी हो
भेड़ों को ही हांका जाता है
लाठी भी उनकी ओर ही उठती है
अपने फैसले को सिरे चढ़ाने के लिए
इनके लहू से ही होता है राज तिलक
भले ही लोकतंत्र हो!
जंगल को तो बचाना ही पड़ता है।

मेरे लिए

मैं थोड़ा सिरफिरा हूं
कुछ अलग सोच लिए
घूमता हूं
ऊंची आवाज में हांक लगाता हूं
जो पहुंचे धरती के
इस कोने से उस कोने तक
मसलन इनसान को इनसान ही
मानता हूं
उसे चश्मों या सांचों से नहीं
सिर्फ दिल की निगाहों से
देखता हूं इसलिए
मेरा एक ही मजहब है मुहब्बत
एक ही ईमान है मुहब्बत
एक ही पैगाम है मुहब्बत
एक ही पहचान है मुहब्बत
मेरी एक ही सल्तनत है मुहब्बत
मेरे लिए कतई बेमानी हैं
ये सरहदें, ये वर्जनाएं, ये घेरेबंदियां
मुझे हर इनसान में एक ही
नूर नजर आता है।

बसंतपुर, सरकाघाट, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 042, मो. 0 98163 17554



पुश्किन की कुछ लोकप्रिय कविताएं

अलेक्जांद्र सेर्गेइविच पुश्किन रूसी जनता के सबसे प्यारे कवि हैं। उन्होंने 14 साल की उम्र में कविता लिखने की शुरुआत की और 37वें साल में मृत्यु से पहले लगभग 700 कविताएं लिखीं। कहानी और उपन्यास भी लिखे। बाल साहित्य भी। उन्हें रूसी साहित्य का जनक कहा जाता है क्योंकि रूसी रोमांटिक और यथार्थवादी कविता का आरंभ उन्होंने ही किया। राजशाही का विरोध करने के लिए और क्रांतिकारी कविता लिखने के लिए उन्हें कई सालों तक निर्वासन झेलना पड़ा। फिर भी उनके क्रांतिकारी दोस्तों ने उन्हें गलत समझा। राजनीतिक षड्यंत्रों से घिरे इस कवि की मृत्यु एक द्वंद्व में हुई। **बंजर धरती में** ग्रीक क्रांति के परिप्रेक्ष्य में लिखी गयी थी। इस क्रांति का आरंभ स्वतंत्रता की इच्छा से हुआ था और अंत अमानुषिक बर्बरता में। यह जनता से मोह भंग की कविता है। कवि को लगता है कि जनता भेड़ बन कर ही खुश है, उसे मुक्ति की अनिश्चितता नहीं चाहिए। **अगर जीवन तुमसे छल करे** और **रात** नामक कविताएं येवफ्रेसिया वुल्फ के लिए लिखी गई प्रेम कविताएं हैं। **एकांत** कविता कवि की प्रारम्भिक कविताओं में से एक है। **दोस्ती** कविता में कवि दोस्ती के चरित्र की पड़ताल करता है। वह समझ नहीं पाता कि बुरे वक्त में दोस्ती अपना अर्थ क्यों खो बैठती है। **पंक्तियां** मृत्यु बोध की कविता है जो सभी रोमांटिक कवियों का प्रिय विषय रहा है। कवि के लिए मृत्यु अपरिहार्य है और भविष्य सकारात्मक। इन कविताओं का **हिंदी** अनुवाद किया है **डॉ. विद्यानिधि** ने।

एकांत

धन्य है वह
जो महत्त्वाकांक्षी मूर्खों की
पैनी नजर से बचकर
बैठकर अकेले
किसी छाया में
बांट पाता है दिवस के
श्रम और विश्राम
स्मृति और स्वप्न।
सच्चा मित्र पाने का
सुखद सौभाग्य
भला किसे मिलता है!
सृष्टिकर्ता की कृपा के बिना
सुलाने वाले बुद्धुओं
और जगाने वाले निर्लज्जों से
भला कौन छिप सकता है! (1819)



दोस्ती क्या है?

पिछली रात का बाकी उन्माद
आपसी नाराजगी पर उन्मुक्त संवाद
अहं और अकर्मण्यता का आदान प्रदान
या पक्षपात करने का दूसरा नाम? (1824)

बंजर धरती में

बंजर धरती में
आजादी बोई थी।
उठ कर
भोर के तारे से भी पहले
निर्मल निश्छल हाथों से
बरसों से बंदी क्यारियों में
बोया था
जीवनदायक बीज ।
खोया था सिर्फ समय
विचारों और श्रम को
व्यर्थ ही गंवाया था।

चरो खूब चरो घास
चलो चैन की भेड़ चाल
तुम्हे कहां सुनती है
अंतरात्मा की पुकार!
ढोर डंगरों को आजादी की क्या दरकार?
कतर ले कोई
या मूंड ले बाल
तुम्हारी जरूरत है

पीढ़ी-दर-पीढ़ी
गले की घंटियां
और डंडे की मार। (1823)

अगर जीवन तुमसे छल करे

झुंझलाना नहीं
मत होना उदास
याद रखना
दुख के स्वीकार में ही
आने वाले सुख का
विश्वास जुड़ा होता है
बुझा हो जो वर्तमान
तो दिल भविष्य में जगमगाता है
पल दुख भरा
पल में बीत जाता है
और बीतने के बाद
मिठास से भर कर
अपना हो जाता है। (1825)

रात

मेरी धीमी मीठी पुकार
अंधेरी रात का आवरण पिघला कर
तुम तक पहुंचती है
बिस्तर के किनारे
मुस्तैद खड़ी मोमबत्ती
अनवरत जलती है।
भावना के ज्वार में
उमड़ घुमड़ कर
कविता थिरकती है
प्रेम की उन्मुक्त धार
तुमसे भरकर बहती है
अंधेरे में तुम्हारी काली आंखें
अनमोल रत्नों-सी
तुम्हारी मुसकान सपनों-सी चमकती है



गतिशीलता

कहीं नहीं है
कोई गति
कोई क्रियाशीलता
बोला एक दार्शनिक
दाढ़ीदार
दूसरा चुप रहा
उठकर
सामने इधर उधर चलने लगा
गतिशीलता दिखाने का
इससे बेहतर संजीदा तर्क
और क्या होता?
लोगों ने उसे खूब सराहा।
किन्तु सज्जनो!
इससे कहीं बेहतर
एक दिलचस्प किस्सा
मुझे याद आता है
हर रोज़ सूरज
हमारे सामने से
आता जाता है
इसके बावजूद
सही था गैलिलियो
ज़िद्दी सिरफिरा
उलट-दिमाग़।

तुम कुछ कहती हो
मैं तुम्हें सुनता हूं
मैं बस तुम्हारा हूं
तुम्हें चाहता हूं। (1823)

पंक्तियां

कभी शोर भरी गलियों में
कभी चर्च के भीड़ भरे अहाते में
घूमते भटकते
कभी नई पीढ़ी के साथ
बैठते बतियाते
घेरते हैं मुझे कोई सवाल
गुजर रहे कैसे साल दर साल
कुछ चले गए, कुछ का वक्त करीब है
सबका नसीब है अवश्यंभावी काल
देखता हूँ पेड़ बलूत का
अकेला फल फूल रहा जंगल का सरदार
सलामत रहा है बाप दादा के जमाने से
कर जाएगा यह मेरी उम्र को भी पार
कभी किसी बच्चे को दुलराते वक्त
यही सोचता हूं कि अब जाना होगा
तुम्हारे खिलने के लिए मुझे मुरझाना होगा।
गुजरते हर दिन से पूछता हूं यही सवाल
कौन सा होगा मेरा आखिरी साल?
जब मौत आएगी तो मुझे कहां पाएगी?
घर में समर में, सड़क या समुद्र में
या समीप की कोई घाटी
अंतिम जहां बन जाएगी?
क्या फर्क पड़ता है भला इस बात से
बेजा तन यह कहां जा कर सड़ता है
फिर भी बची है मन में यह आस
प्रकृति के आंगन में हो अंतिम प्रवास
नव जीवन खेले कब्र के पास
निष्पक्ष न्यायपूर्ण नैसर्गिक भाव।
(1828)

Flat no 5, Goel Apartments
Below Local Bus Stand
Sanjauli, Shimla-171006

कविता

माँ की हुंकार



सुशीलकुमार फुल्ल

समय की परतों और काल की धुंध में
मैं अपनी मां की पुरानी छवि को
छानने पहचानने का प्रयत्न करता हूं
मैं जानता हूं कि मां भी कभी बेटी थी
उस समय और आज के वक्त में कितना अन्तर है
मेरी मां कभी स्कूल ही नहीं
कभी उसे वहां भेजा ही नहीं गया
कभी ऐसा सोचा ही नहीं जाता था
इतना जरुर था कि पंडित जी ने घर आ कर
उसे गीता के कुछ श्लोक रटवा दिए
और उन्हीं चन्द श्लोकों के बल पर मां
अपना पूजा पाठ, ठाकुर स्नानकर करवा लेती
और धूप बत्ती कर अपने मन को बहला लेती
पता ही नहीं चला कब बेटी से मां बन गई
और कितनी कुशलता से नये रूप में ढल गई
मां से हुई बेटियां और बेटे भी
पिता देखते, मां हर समय कोशिश करती
बेटे बेटियों को एक सा स्नेह बांटती
एक सा खाना परोसती और दूध भी
लगभग लगभग बेटे-बेटियों में बराबर-बराबर बांटती
फिर भी कभी दादी की नजर पड़ जाती
तो मां हड़बड़ा जाती पता नहीं परम्परा क्या सोचे
उसे लगता परम्परा का चाबुक चलेगा
और उस के स्नेह को छाले गा बिना वजह
भले ही दादी कभी कुछ ने बोलती
फिर भी मां को लगता वह आंखों ही आखों में
बेटों के लिए अधिक और बेटियों के लिए
कम की बात स्वीकार करती जान पड़ती
बड़ी दो बेटियां ही थीं, वे भी कभी स्कूल नहीं गईं
भले ही पिता स्वयं अध्यापक थे
कहते हैं लाहौर कालेज से पढ़े थे
लेकिन बेटे के बाद चौथे नम्बर की बेटी
हठ करती स्कूल जाने का बार-बार
भरूया बस्ता लेकर स्कूल जाते हैं,
ते मैं क्यों नहीं वह चिल्लाती रही लगातार
वह स्कूल भेज दी गई लेकिन
किसी ने उस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया
वह हठ कर के दस पास हो गई
भाई तो कॉलेज गया लेकिन
वह नहीं गई, भेजी ही नहीं गई
हां उस की छोटी बहनें स्कूल भी गईं और कालेज भी
और मां को लगा बेटियों का अधिकार मिल गया
देर आए दुरुस्त आए मिल तो गया अधिकार
मां थी बड़े परिवार में, जहां देवरानियां जेठानिया
सब सुबह ही उठ जातल और कोई चक्की में आटा पीसती
कोई ओखल मोहर चलाती और कोई
आंगन के कुंए से पानी निकालती अैर उन्हें
हाजरी बनाते बनाते दस बज जाते
फिर दोपहर सांझ की रोटी की तैयारी
मां खुश थी बेटे बेटियां पढ़ रहे थे

कविता

एक बड़ा सवाल

रमेश कुमार सोनी

सवाल बेताल हैं
लदे होते हैं सदा पीठ पर
बोझ की तरह
जिंदगी में यात्रा के दौरान
दिलो-दिमाग पर हावी
इन सधवा सवालों को
कंडक्टर कह भी नहीं पाता कि -
और जगह नहीं है - उतर जाओ।
सुदूर ग्रामों से ब्रांडेड दुनिया तक
सवालों की दुनिया में होते हैं -
रिश्ते-नाते, घर, रोटी, कपड़ा
और गले पड़ने वाले फालतू सवाल भी
सोचता हूं कि यदि
सवाल ठहर गए तो
आदमी के जिंदगी की यात्रा क्यों होगी?
लोग इसके बिना क्या करेंगे?
सवालों का होना या ना होना भी
एक बड़ा सवाल है।
पता नहीं क्या देखने-सुनने
यात्रा करते हैं सवाल
रोज नए सवाल
रोज नई मंज़िल
सवाल आदमी तो नहीं लेकिन
आदमी सवालों का पुतला
जरूर बन चुका है।

राज्यपाल पुरस्कृत शिक्षक व साहित्यकार
जे.पी. रोड, बसना, छत्तीसगढ़-493 554

गांव से बाहर निकल रहे थे
फिर एक बेटी ने कहा - मैं पुलिस में जाना चाहती हूं
पिता बोले- पागल हो गई हो
पढ़ने क्या दिया सिर पर बिठा चढ़ा लिया
सब से बड़ी बहन ने समझाया
अरी, ओ सोन चिड़िया, तू समय से पहले आ गई
समय बदल रहा है लेकिन इतनी भी तेजी से नहीं
कि तुम पुलिस बन जाना चाहो और वब को धमकाओ
और कोई भी तुम्हारी बात मान ले गा
जंजीरें टूटते टूटते समय लगता है
पुरुष की मानसिकता सदियों पुरानी
बर्बर क्रूरता की निशानी और यही
और आज भी औरत की सब से बड़ी परेशानी
मां ने कहा- बेटी पुलिस में जाओ, अच्छी बात है
लेकिन यह तो बताओ नारी मुक्ति, नारी शक्ति की बात करने वाले
आरक्षण की आड़ में, आन्दोलन की खाल में
मां बेटियों को क्यों उठा ले जाते हैं
बलात्कारी मनुष्य क्यों हल्काए कुत्तों से घूमते हैं
और सरकार में बैठे पुलसिए, राजनीति में छाए नेता
क्यों घटनाओं को नकार देते हैं और
गवाहों को क्यों खुद ही पछाड़ देते हैं ?
मां ने फिर कुछ सोचते हुए कहा-बेटी,
यह औरत के लिए खतरनाक समय है
संक्रमण काल है और बेटियों के संरक्षण की आड़ में
कुछ भी हो सकता है, कुछ भी हो जाता है
दरिंदगी तो मात्र एक हथियार है, समझी ?
छोटी चिड़िया ने कहा-मां, डरने का समय चला गया
यह तो अपने अधिकारों के लिए मरने,कुछ करने का समय
है
और अधिक इन्तजार अब नहीं होता और फिर
बिना कुछ किए कभी कोई उपकार नहीं होता।
मुझे लगता है कि छोटी का आक्रोश वास्तव में
मां का ही दमित रोष अब
ज्वालामुखी के रूप में फूटने वाला है
और क्रूर एवं बर्बर मनुष्य की मानसिकता पर टूटने वाला है
एक पीढ़ी का दर्द
दूसरी पीढ़ी में जा कर चिंगारी बनता है
और तीसरी पीढ़ी में आत्मघाती विस्फोट ।
मां, बेटी, मां
परिवार को निरन्तर सेतीं ,
समय की अजस्र धारा हैं
पल पल और कल, हां कल
निश्चित रूप से हमारा है ।

पुष्पांजलि, राजपुर-पालमपुर, हिमाचल प्रदेश-176067

कविता

तुम बिन मैं (तद्नंतर)

रमेश चंद्र शर्मा



प्रिय तुम -
सपना ही थीं, स्वप्न हो गईं!
अंधेरे में अब जब भी
नज़र आती हो तुम, ख्वाब सा
सजाती हो! रोशन हो जाता है घर!
शमां सी जलती हो, मन की महफिल में
आंख खुलने पर, पूछता है दिल
बताओ कहां है तम? सुबह तो सुबह है।
इस बौराए मन पर छा जाता है गम।
सचमुच तुम हकीकत नहीं थीं।
तुम्हारे चले जाने से पूर्व -
मेरे भुजपाश में, अप्सरा सी तुम -
निरंतर किसी स्वप्न की
हसनी ताबीर ही तो थीं!
हमेशा हमेशा असमंजस में रहा,
तुम्हारा मानवीकरण न हो सका!
तुम मेरी धरा थीं, फिर आकाश बन गईं।
मुझे घेरती रहीं कल्पनाएं, संभावनाएं
फिर टूटा मेरा भ्रम, हालांकि -
तुमने मुझे जन्म जन्म का साथी कहा था,
वह मिथ्या दिलासा ही था!
तुम उर्वशी, भ्रांति, मादकता थीं
लौट कर जाती बनीं
चांद थीं, चांदनी थीं।
तुमने जाना ही था
तुम्हारे जुदाई ने मुझे सताना ही था।
पूनम सदा सदा नहीं रहती!
मेरे लिए तुम प्रेयसी थीं, मित्र थीं
मार्ग दर्शक दार्शनिक थीं
मुझे दोस्तों, बंधुओं, साथियों ने कहा
यह जन्म मरण का सिलसिला
दुनिया को शाप में मिला
तब से अब तक निपट अकेला हूं
कैसे मिलूं, कहां मिलूं, भटक रहा हूं
हर कहीं!
तुम्हीं कहो क्या करूं, क्या विरह सहूं।
वापस लौटतीं उदास सड़कें -
वही मिलन विहार की राहें -
देख रहा हूं!

पुराने दिनों के चमेली के फूल याद बने
खिलने लगे, खुशबू दे गए
धीरे-धीरे वसंत आया जीवन में -
चला गया, रमता जोगी था।
गर्मी बरसात पतझड़ ने भी
तोड़ दिया दम, सर्दी ढा रही सितम!
मैं मौसम के परिवर्तनों से कभी
भयभीत नहीं हुआ!
हां, मुझे ज्यादा उदास आसमान लगा
उससे जब भी मैंने तुम्हारा पता पूछा
नीला आकाश व्याकुल लगा!
मेरे दुःख ने मुझे कमरे में बंद किया,
देखी थी मैंने प्यार की निर्मम हत्या
सच पूछो तो मैं कुछ करने लायक न था।
क्या कहूं, कैसे कहूं,
क्या से क्या हो गया।

टकसाल हाउस, छोटा शिमला, शिमला-171 002,
मो. 0177 262 1199

कविताएं

श्याम सिंह घुना



धूप के पांव

नीचे घाटी में
जहां से लौटा था कल
सूरज क्षितिज के पीछे
हिमपिंडों को सहलाता हुआ
कांपता थर थर तुषारवहां
सूर्यचापों की सुन कर आहट
सुबह नदी के गर्भ में आज
बहुत गहरे कहीं यकायक
ठिठुरा देने वाली लहरों के मध्य
उग आया हो मानो कोई स्वप्न
ख्वाब के पृष्ठों पर धूप के पांव
छापने लगे आशाओं के दृश्य
कि बर्फ के इस घर में
कुछ उम्मीदें जो जगी थीं
निकली थीं सफर पर
संभवतः लौट आए आज।

दरिया में लहरें

कभी ऐसा भी होता है
कि दरिया में लहरें नहीं उठतीं
यहां तक कि
ज़रा सा सर सर भी नहीं
इस खामोशी को
सरसरी तौर पर न लिया जाए
तूफान से पहले का सन्नाटा हो सकता है यह
जब अंतस में प्रवाह
वेगमय हो रहा हो
शनैः शनैः यह प्रवाह
सतह पर पहुंचेगा
हलचल मचाएगा
लहरें उठेंगी
तटों को लीलती हुई
सरपट भागने लगेंगी
ध्यान से गौर करने पर ज्ञात होगा
पहले के दरिया का
कहीं नामोनिशां नहीं।

यही होता है

लो, रुक गई बस मुस्कुराते हुए
शिवालय के स्टॉप पर उतार दिया गया उसे
मंदिर की घंटी हुई
पूछ रही एक श्रद्धालु से
अंधेरा-अंधेरा चिल्लाने वालों का
क्या यही होता है अंत
टांगें चलने से दे रहीं जवाब उसकी
कांप रहीं थर-थर तनावग्रस्त मांसपेशियां
देशभक्त कह-कह हंस रहे मनचले
नोटों की थब्बियां दिखा-दिखा
अनेकानेक फब्तियां कस रहे बिंदास
लड़के
पूछरहीं हवा में फैली अभिव्याप्त
अनसुनी अदृश्य आवाजें
क्या यही होता
समाज को चाहने वालों का अंत

शिवालय के द्वार पर आ कर
सहसा ही थम गए उसके पांव
बस की भीड़ की ओर मुंह करके
चित्कार कर उठता उसका अंतरमन्
अरे ओ आत्ममुग्ध रहने वालो
ज़रा बताओ तो
मैं न कहता अंधेरा-अंधेरा
क्यों करते तुम उजाला
बताओ क्यों करते तुम उजाला
कुछ टूट सा गया उसके भीतर
उसकी समूची दिव्य दृष्टि को
अथाह व अपार अंधकार में धकेलते हुए
आखिरी सवाल को
शिव-प्रतिमा की ओर उछालते हुए
पूछ उठता वह अपने भगवान् से
क्या यही होता
आंखों में बस गए सपनों का अंत
क्या यही होता है?

गांव लिंगाह, डा. झिकनीपुल, तहसील
चौपाल, जिला शिमला, हिमाचल
प्रदेश-171 211, मो. 0 94187 98467

समीक्षा

संवेदना करुणा और प्रेम के दीए जलते हैं उम्मीद की लौ से

◆ अश्वनी कुमार

सृजन का प्रस्फुटन जब होता है तो आशाओं-आकांक्षाओं के हजारों-हजार दीप जल उठते हैं। सृजन के इस प्रस्फुटन से समय करवट बदलता है। और बदलता है समाज का नजरिया। उसमें बसने वालों की सोच-समझ का दायरा। और होता है बंधुत्व-भाव का जागरण। ऐसी 'उम्मीद की लौ' लेकर साहित्य जगत की कविता विधा में युवा कवि पोरस ठाकुर ने कविता संग्रह के माध्यम से पदार्पण किया है। इस संग्रह में कवि ने कविता रूपी अड़तालीस दीए जलाए हैं जो न केवल युवा कवि को ही मार्ग दिखा रहे हैं, बल्कि मानव मात्र के भी हमसफर बन कर जिंदगी के सफर को संजीदा, निर्भीक बनाने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

कविता रूपी एक दीया 'बेजुबां' रहकर भी खामोशी से जलते रहने की दर्दीली दास्तां कुछ यूं कहता है : 'भीड़ में स्वयं को व्यक्त नहीं करता हूं/ भाव के परिणाम से डरता हूं/ किसी विषय पर टिप्पणी नहीं करता हूं/ विषय विचारक को ठेस पहुंचाने से डरता हूं। अपनी बात रखने की काबिलियत इस युवा कवि में मौजूद है। और दयामय दृष्टि भी 'साहब मुझे भी ठंड लगती है' में उजागर होती है। साल के अंतिम महीने दिसंबर की सर्द हवाओं वाली रात शिमला में कैसी होती है, सोचने मात्र से कंपकंपी छूटती है। पर, कवि मन अपनी खूबियों के दम पर परोपकार की भावना दिखाकर जलता हुआ दीपक बनकर इस सर्द रात में गर्माहट ला देता है। 'कूड़े के ढेर में खोया बचपन' का दीया भी इसी भावना से प्रकाशमान है। इन दोनों कविताओं में कवि मन की करुणा झलकती है जो आदमी की आदमियत को बढ़ाती ही है, कमतर नहीं करती। और जो लोग अपने तक सीमित हैं। बस अपना भला सबका भला को ही मानवता का ध्येय समझते हैं, उस पर 'अपने को क्या' कविता दीपांश के जरिए व्यंग्य की आंच पहुंचाने की कोशिश भी करता है : समझना-समझाना छोड़ा/ बोलना-बुलवाना छोड़ा/ सुधरना-सुधारना छोड़ा/ सोचना भी छोड़ा/ दूसरों से अपने को क्या/ अपन से दूसरों को क्या/ क्योंकि, अपनी भी कट रही है/ और उनकी भी चल रही है। इसी कविता में यह युवा कवि समाज को युद्ध का मैदान समझ रहा है। जहां व्याप्त अनेक सामाजिक बुराइयों से इनसान युद्धरत है। युवा कवि मन ही मन सोचता है आदमी की ऊर्जा का प्रयोग सकारात्मक कार्य में लग सकता है, कहां फालतू की इन बुराइयों में जूझ कर व्यर्थ गंवाना पड़ता है। ये तो एक सभ्य समाज से खुद-ब-खुद दरकिनार हो जानी चाहिएं। अर्थात् इस युद्ध में अभिमन्यु को स्वयं ही अपने भीतर के शत्रुओं से लड़कर विजयी होना है।

'मासूम के प्रश्न' का दीया फड़फड़ाता है, तो हमारे समाज की एक और कुरीति जाति-पाति, धर्म के नाम बंटे समाज की सोच पर खिन्न होता है। इनसान द्वारा घड़ी गई मानव धर्म की परिभाषा से हताश है। इनसान की तंगदिल मानसिकता ने ही इनसानों को बांटने के लिए फाटक बनाए हैं। उन्हें हम ही तोड़ सकते हैं। आतंकवाद का घिनौना खेल आज पूरे विश्व में चिंता का सबब है। विश्व शांति में खलल डालता है। युवा कवि की कलम सीमा पार हुए एक स्कूल में बम धमाके में मारे गए बच्चों के लिए भी उठ गई। (इनसानियत भूला इनसान' (पृ. 30)। इन नन्ही जानों को किस बात की सजा!? कौन सा इतना बड़ा गुनाह था उनका?! इस प्रकार यह कवि अपने लिए नहीं, और न ही अपने धर्म के लिए, वह पूरी मानवता की भलाई के लिए लड़ना चाहता है। इस समष्टि की भलाई के लिए भी। 'आज परिंदे की कैद' कविता रूपी दीया चुपचाप पशु-पक्षियों के लिए भी जलता है। दिल पसीजता है उसका। यहां यह बतलाने/ जतलाने की कोशिश है कि इनसान अपने स्वार्थ के लिए इन बेजुबान पशु-पक्षियों के प्रति कितनी क्रूरता से पेश आता है। जो हर वक्त हमारे सहाई ही हैं, दुश्मन नहीं। इस सृष्टि में सहचरी है। कहीं बाहर से नहीं आए हैं।

यही नहीं, युवा कवि अपने आसपास के क्षरण के प्रति गहरी पीड़ा से छटपटाहट में भी है। वह चाहता है किसी भी तरह बस इन व्याप्त बुराइयों, दुर्दिनों का अंत हो। एक नया समाज, नया संसार जन्म ले, जहां सबकी भलाई हो। सबके कष्ट मिटें। सुख-शांति के साम्राज्य के लिए समाज और विश्व में समृद्धि की राहें यहीं से खुलेंगी। खुशहाली का सबब बनेगा। यह संसार मात्र कोरी कल्पना न होकर साकार रूप ले, व्यवस्थित हो सबके हितों का मार्ग प्रशस्त करे। कवि जब समाज से रूबरू होता है। हालात देखता है। विसंगतियों से वाबस्ता होता है, तब उसका मन खिन्न हो उठता है। द्रवित होता है। और बसाना चाहता है 'एक कल्पित गांव' जो एक दुनिया का प्रतीक बन गया है जहां सब कुछ सामान्य है। सृष्टि के सृजन से अपनत्व है। प्यार है। इनसानियत की प्रकाशमय राहें जिन पर मनुष्य चलकर परिस्थितियों से निपटना जानता हो। 'इस सफर का अंत नहीं' (पृ. 42) में कवि आह्वान करता है कि किस्मत को कोसने से बेहतर है खुद अपनी किस्मत का निर्माता बन जाना और मार्ग में आई रुकावटों से मुकाबला कर आगे बढ़ते जाना। इसी कविता में कवि मुखौटों को त्याग कर अपनी असली पहचान से दुनिया में अग्रसर होना चाहता है। 'गुजारिश' का विनम्र दीप निवेदन करता है हमेशा साथ अपने मुस्कुराहट रखना। मुस्कान तुम्हारे लिए नए दरवाजे खोलेगी। 'सीख' का दीया जब रोशन होकर प्रकाश का सबब बन जाता है

तो अपने कई रंग बिखेर कर समाज, दुनिया को सप्तरंगी बना देना चाहता है। कलम में बड़ी ताकत होती है। जब यह सच लिखती है तो बड़ों-बड़ों के पांव तले जमीन खिसकती नजर आती है। जब यही कलम जोश और हिम्मत के साथ लिखती है, तो इनसानियत के विरोधियों को कड़ा संदेश भी देती है : लो चल पड़ा मैं लिखने की राह पर/ आंतकियों के गोले-बारूद के विरुद्ध/ अपने शब्दों के तीर भेजूंगा/ इनसानों को इनसानियत दिखाने के लिए/ ओशो के अल्फाजों जैसे वीर भेजूंगा।' (लो चल पड़ा, पृ. 59)। जिन्होंने यह संसार दिखाया। बच्चों के लिए कई मुसीबतें झेलीं, उनके नाम का दीया इस संग्रह में रोशन न हो तो बात हजम नहीं होती। यह काम भी कवि ने बखूबी कर दिखाया। शिक्षकों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए भी उनके सहयोग, मार्गदर्शन के लिए यह कवि दीपक जलाना न भूला। अपने दोस्तों-सहपाठियों को कवि भूल जाता, कतई नहीं हो सकता। कहना न होगा कि यह कवि पशु-पक्षियों, पेड़- पौधों-वनस्पति, तक की परवाह करता है। उनके होने का उसे अहसास है। इसलिए उनके नाम भी अनेक दीए जलाते हुए उन्हें अपने आस- पास, अंग-संग महसूस करता है। चांदनी रात हो। प्रेयसी न साथ हो। मिलन की भी न आस हो, ऐसे में 'प्रेमी का अफसाना' में प्रेमिका को याद कर प्रेमी रूपी दीया तिल-तिल जलता है। शम्मा की मानिंद पिघलता है और उसे याद कर-कर आहें भी भरता है : 'आज भी पुकारता हूं तुझको अपनी नींदों में/ कहता हूं तू लौट आ मेरी जिंदगी में/ भर दे रंग फिर मेरी दुनिया में/ बन जा फिर एक लौ उम्मीद की मुझमें।' जहां जा-जाकर ज्ञानार्जन किया, भविष्य के लिए आजीविका की बुनियाद खड़ी की, उस विद्या के मंदिर को कैस कोई भूला सकता है। कवि 'जाखूवाला स्कूल' के दीए की रोशनी में अतीत की गहराइयों में पहुंचता है। और उन दिनों के सुनहरे दिनों में स्कूल, दोस्तों, शरारतों, अध्यापकों को याद करता है। तात्पर्य यह कि जिंदगी में बहुत कुछ भूला जा सकता है। लेकिन याद रहते हैं/आते हैं स्कूल के दिन। 'दोस्तों के साथ बिताए दिन' में पोरस ठाकुर बचपन को याद कर बतलाना चाहते हैं कि मानव जीवन में बचपन लौट कर नहीं आएगा। बीतते वक्त के साथ जिंदगी की किसी अंधेरी गली में समा जाता है।

'करम' का दीया कर्म की प्रधानता का द्योतक है। वहीं 'युवाओं पर टालना' का दीपक समय की महत्ता को प्रतिपादित कर वर्तमान को तरजीह देता है। भूत और भविष्य की बात न कर, चल रहे समय की कीमत बतलाता है। रातों की नींद गंवा, दिन का चैन लुटा कर कोई अमीर नहीं हुआ। 'अमीरी' का दीया यही संदेश दे रहा कि दिल की अमीरी धन-दौलत से बढ़ कर है जहां मानव हृदयों में परस्पर संबंधों की मजबूती के लिए इनसानियत, प्यार, भाईचारे, भलाई, शांति, विश्वसनीयता और मदद को बढ़ते हाथों की करंसी खर्च करनी पड़ती है। जितना खर्च करोगे, उतनी ही बढ़ती जाती है। यही लेन- देन की व्यवस्था विश्व के हृदय जगत की अर्थव्यवस्था का आधार है जिस पर चलकर मुकम्मल जहान की महत्त्वाकांक्षा की बात पूरी होती है। विश्व शांति की अवधारणा फलीभूत होती है। और पूर्ण होता है मानव की पूर्ण स्वतंत्रता से जीओ और जीने दो का सिद्धांत। जिसके पास यह दौलत है, वही दिल का बादशाह बनकर ईश्वर की सृष्टि में सबके दिलों में राज/निवास करता है। सबकी दृष्टि में मान-सम्मान पाता है। ऐश्वर्यवान हो जाता है। आज के युवा के हाथों में मोबाइल है, लेकिन इस युवा कवि ने शब्दों से दोस्ती की है। उनसे खेलना सीख रहा है। अपना सुख-दुख साझा करता है। मानवता के लिए कुछ-न-कुछ कर गुजरने के लिए सोचता है। इसी में अपनी ऊर्जा को खपाना चाहता है। इसी ध्येय को साथ लेकर आगे बढ़ रहा है। इस युवा कवि का सृष्टिकर्ता के प्रति 'उम्मीद की लौ' के सभी दीपकों का समर्पण भारतीय संस्कारों के श्रेष्ठतम शुद्ध भाव को रेखांकित करता है। जहां किसी भी शुभ कार्य या निर्माण या नई खरीदी गई वस्तु को भगवान को 'सब कुछ तेरा, हमारा न कुछ भी, तेरा तुझको अर्पण' या उसके नाम पर पूजन इत्यादि करवाकर किया जाता है।

निरंतरता के साथ-साथ अनुभव के सम्मिश्रण से लेखन में गांभीर्य, परिपक्वता और निखार आएगा। इसे अपने सृजन में ढाल कर यह युवा कवि पोरस ठाकुर और भी कुछ नए विषयों के साथ इस विधा को सराबोर करेगा। उनके प्रयासों को सराहा जाएगा। न केवल पाठक जगत में इस संग्रह का भरपूर स्वागत होगा, बल्कि युवा वर्ग, जो इस क्षेत्र में अपनी रुचि रखता है या सृजन से जुड़ना चाहता है; के लिए प्रेरणा का काम करेगा, ऐसी आशा की जा सकती है। और इस युवा कवि के लिए इतना भर कहना है : तबीयत से पत्थर/ उछाल ही दिया जब/ फिक्र मत करना कि/ये जमीं पर आ गिरे/ बिखर जाए टूट कर /या / चूमे आसमां/ उसकी अनंतता में हो जाए विलीन/ कर्म- शब्द पथ पर बढ़ते चले जाना/ मौजूद है / तुम्हारे पास/ उम्मीद की लौ/ रोशन रखेगी जो/ सद्भावनाओं सद्प्रयासों के जहान।

कविता संग्रह :
उम्मीद की लौ
लेखक : **पोरस ठाकुर**
प्रकाशक : **देव प्रकाशन**, बी-202, गली मंदिर, समीप पीतम धर्मशाला, उत्तरी घोंडा, दिल्ली-110053,

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 0 94180 85095

आखिरी पन्ना

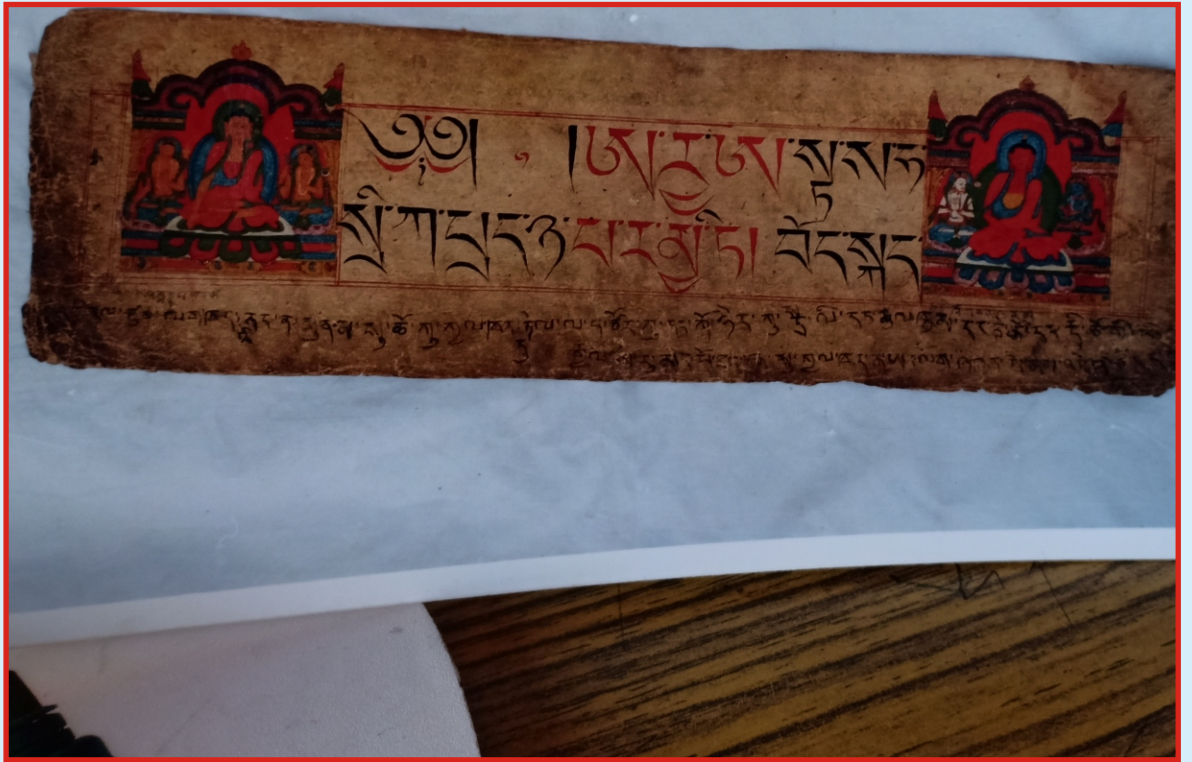
बाहर निहारने का वक्त नहीं

यात्रा में अगर साथी अच्छे मिल जाएं तो यात्रा का आनंद ही कुछ और होता है। यात्रा खट्टी-मीठी यादें छोड़कर जाती है। नए संपर्क, रिश्ते बनते हैं। जान-पहचान बढ़ती है। नए विचार सुनने, सुनाने को मिलते हैं। कुछ रोज पूर्व शिमला से चंडीगढ़ जाने का मौका मिला। बस का सफर था। सब में मात्र चार-पांच यात्री ही थे। ऐसा सोचा, अब बस में यात्रा करने वाले मेरी तरह कम ही हैं। सभी अपनी गाड़ी से परिवार संग जाना पसंद करते हैं। गरीब तबका ही अब सरकारी स्कूलों में पढ़ने व सरकारी बसों में सफर करने वाला रह गया है। अभी यात्रा को तीन-चार किलोमीटर ही हुए थे, तो एक स्थान पर सवारियों की भीड़ नज़र आई तो कंडक्टर, ड्राइवर की बांछें खिल गईं। बस रुकी। एक साथ 20-30 सवारियां जिनमें सभी बच्चे तथा एक उनका मार्गदर्शक अध्यापक था, बस में चढ़े। खाली बस भर गई। कुछ फर्लांग तक सभी अपने बैग टिकाने तथा साथियों के साथ बैठने की जद्दोजहद में रहे। कुछ दूर चल कर बस का वातावरण शांत हो गया। तब मास्टरजी ने सभी की गिनती की और प्रथम सीट पर मूंछों में ताव देकर सट गए। घर में, स्कूल में या बस में बच्चे और शांति। जिज्ञासा तो होनी ही थी। एक-एक कर सभी ने अपने-अपने कानों में मोबाइल की तारें लगा दीं और आंखें, मोबाइल फोन पर गड़ा दीं। कुछ ने तो एक मोबाइल से एक तार उनके कान में व एक साथी के कान में लगा रखे थे।

मुझे मेरा बचपन याद आ गया। हमारे वक्त में तो बस में खिड़की वाली सीट लेने की होड़ मच जाती थी। लड़ाई तक की नौबत आ जाती थी। कुछ तो उलटी के नाम पर खिड़की की सीट प्राप्त करते थे। लेकिन यहां तो कोई संघर्ष देखने को न मिला। मास्टरजी भी अपने कानों में तारे लगाए बैठे थे। जैसा राजा वैसी प्रजा का संदेश मिल रहा था। बस अपने गंतव्य की ओर तेजी से दौड़ रही थी। हर मोड़ पर एक नया दृश्य नजर आ रहा था। हरियाली के भी हजारों रंग थे। पहाड़ों की ढलानों पर बसे गांवों, खेतों, खलियानों और नजारों को निहारने वाला कोई न था। प्रकृति से प्रेम उनके जहन में न था। सभी अपने स्मार्ट फोन पर ऐसे जुटे थे मानो उनकी दुनिया ही वो हो। लेकिन दुनिया का नजारा तो चलती बस के शीशे से बाहर का था, जिसे निहारने का उन्हें कतई शौक न था। यह नई पीढ़ी की नई प्रौद्योगिकी के अंधानुकरण का परिणाम था। कान, आंख, हाथ की उंगलियां सभी स्मार्ट फोन पर, दिमाग के तंतु भी इसी प्रक्रिया में लगे थे। 90 किलोमीटर का सफर पहाड़ से उतर कर मैदानों तक जा पहुंचा। मास्टर जी ने अपने कानों से तारे निकाल जोर से आवाज दी, बच्चो चंडीगढ़ आ गया। उतरो। मैं भी अपना बैग ले बस से यह सोचते-सोचते उतरा कि यह पीढ़ी पता नहीं कहां उतरेगी। समाज, संवेदना, प्रकृति से दूर इस पीढ़ी का साथी तो अब स्मार्ट फोन नजर आता है। यह नए युग का नया नशा प्रतीत होता है। स्मार्ट युग की स्मार्ट पीढ़ी को क्या कभी कोई मार्गदर्शक मिलेगा, यह सोचने, विचारने का विषय है। सबके पास दुनिया देखने का वक्त तो था लेकिन वक्त अपने आप ही स्मार्ट फोन के मायाजाल में बीत गया।



(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक हैं)



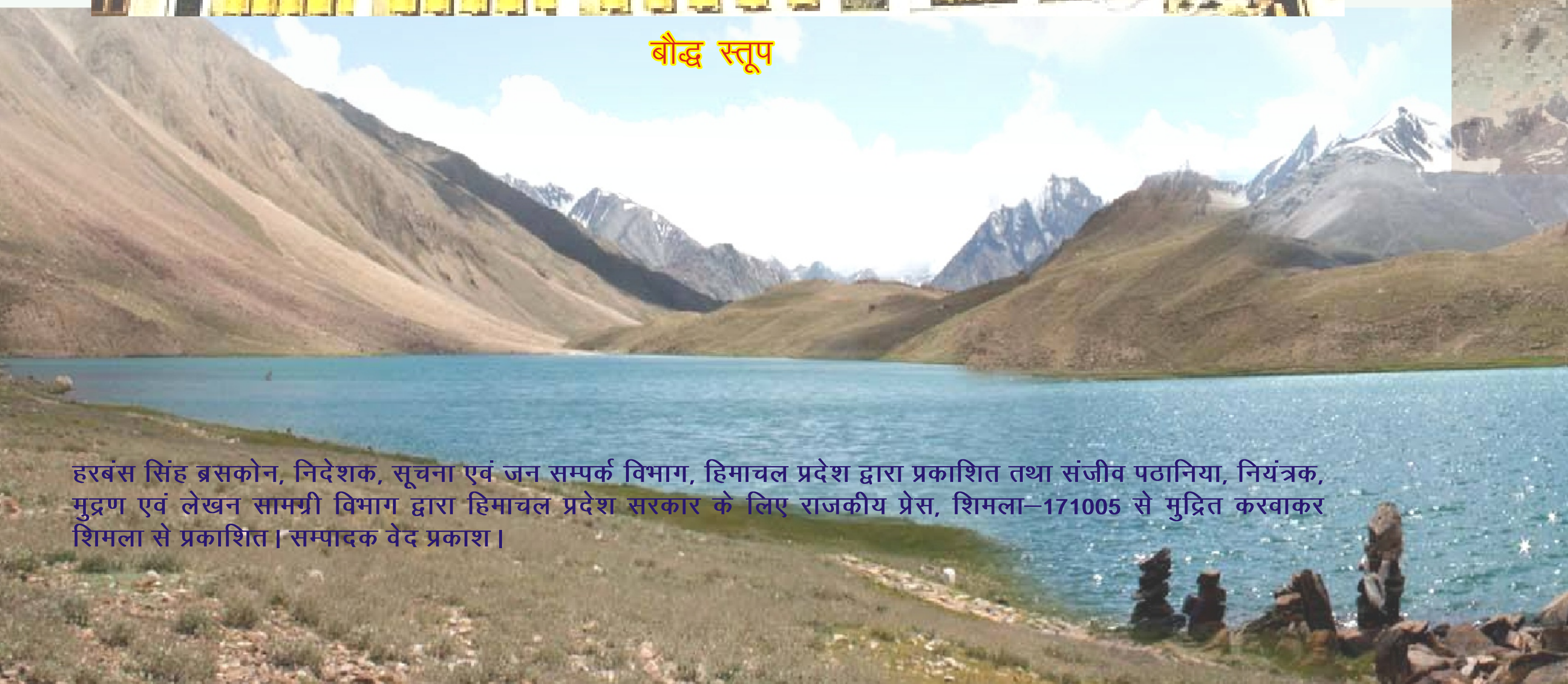
बौद्ध ग्रंथ में चित्रकला



धर्मचक्र

पंजीकरण संख्या : 845/1957 मई, 2019 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2018–20

बौद्ध स्तूप



हरबंस सिंह ब्रसकोन, निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा संजीव पठानिया, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

जून, 2019





हिमाचल प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री जय राम ठाकुर नई दिल्ली में प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी से भेंट करते हुए।

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 जून 2019 अंक : 3

प्रधान सम्पादक
हरबंस सिंह ब्रसकोन

वरिष्ठ सम्पादक
विनोद भारद्वाज

सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

मूर्खता और बुद्धिमत्ता में सिर्फ एक फर्क होता है कि बुद्धिमत्ता की एक सीमा होती है।

- अल्बर्ट आइंस्टीन

इस अंक में

लेख

निबन्ध

शोध लेख

कहानी

बाल कहानी

व्यंग्य

कविता/ग़ज़ल/दोहे

समीक्षा

आखिरी पन्ना

अपनी बात

भारतीय संस्कृति को समूचे विश्व की सर्वश्रेष्ठ और समृद्ध संस्कृतियों में शुमार किया जाता है, जिसकी बुनियाद शालीनता, तहज़ीब, धार्मिक सद्‌भाव और जीवन के उच्च मूल्यों पर टिकी है। वर्तमान दौर में लोगों की जीवन शैली में तेजी से आ रहे विश्वव्यापी बदलावों के बावजूद, हम भारतीय, अपनी समृद्ध परंपराओं और नैतिक मूल्यों पर आज भी अडिग हैं। हमारी संस्कृति, मूलतः सनातन धर्म की वसुधैव कुटुम्बकम् विचारधारा पर आधारित है जो भारतीय धर्मशास्त्रों के उपनिषदों सहित कई धार्मिक ग्रंथों में लिपिबद्ध है। वसुधैव कुटुंबकम् का शाब्दिक अर्थ है धरती ही परिवार है। यह विचार जहां एक ओर पूरी वसुधा अर्थात पृथ्वी को एक परिवार के रूप में देखने की परिकल्पना को मूर्त रूप देता है वहीं यह भावनात्मक रूप से भी मनुष्य को अपने विचारों और कर्मों के प्रभाव को विस्तृत करने की बात कहता है। भारतीय संस्कृति ने समय के हर कालखंड में इस विचारधारा को किसी न किसी रूप में अंगीकार करते हुए पूरी दुनिया को विश्व गुरु के रूप में जीवन की नई राह दिखाई है। भारतीय इतिहास में मध्यकालीन दौर एक ऐसा समय था जब मुस्लिम आक्रांताओं ने यहां आकर न केवल धन-दौलत को लूटा, बल्कि हमारी सांस्कृतिक विरासत को भी तहस-नहस कर समाज को खोखला करने का कुप्रयास किया। इस दौरान कुछ मुस्लिम शासकों ने भले ही अपने-आप को यहां के परिवेश में ढालकर लंबे समय तक शासन किया हो, लेकिन इस अवधि में यहां के जन मानस का सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन बुरी तरह से प्रभावित हुआ। समाज मुख्य रूप से दो धर्मों में बंट गया था जिनमें कट्टरवाद को प्रश्रय मिलने से आम आदमी विशेषकर समाज के कमजोर वर्गों को शोषण का शिकार होना पड़ा। समाज में महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय हो चुकी थी। शायद समाज में इस उथल-पुथल का ही नतीजा था कि हिंदी साहित्य में एक ऐसे दौर का प्रादुर्भाव हुआ जो भक्तिकाल के नाम से विख्यात हुआ। यह वह काल था जो वैचारिक समृद्धता और कला वैभव के लिये विख्यात रहा है जिसे हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठ युग कहा जाता है। भक्तिकाल की अवधि में कबीर, रैदास, नानक, दादू दयाल, सुंदर दास, मलूक दास, कुतबन, मंझन, जायसी, उसमान, सूरदास, परमानंद दास, कुंभनदास, नंद दास, हरिदास, रसखान, ध्रुवदास, मीराबाई, तुलसीदास, अग्रदास और नाभादास जैसे महान कवियों तथा संत-सुफियों ने अपनी भक्तिपूर्ण रचनाओं से हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि करने के साथ-साथ भारतीय संस्कृति में धार्मिक सद्‌भाव और सामाजिक समरसता लाने का अनुकरणीय प्रयास किया। भक्तिकाल के इन पुरोधाओं में संत कबीरदास को सर्वाधिक लोकप्रिय माना जाता है जो इस युग के श्रेष्ठ संत रामानंद के शिष्य थे। उन्होंने तत्कालीन समय में व्याप्त जात-पात के भेद-भाव को दूर कर समाज में मानवतावाद की स्थापना का प्रयास किया। कबीरदास ने उन्हीं के मार्ग का अनुसरण कर अपनी काव्य रचना में निर्गुण मत का प्रचार-प्रसार किया। संत कबीरदास एक निर्भीक समाज सुधारक थे। उनके विचार समाज के लिए आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। वह अपने समय के एक ऐसे महान संत थे जिन्होंने धर्म के ऊपर मानवता को स्थापित किया है। सामाजिक भेदभाव से ऊपर उठकर हमेशा मिलजुल कर सौहार्द के साथ रहने की सीख दी है। जन मानस में सामाजिक विषमता को दूर कर भेदभाव रहित समाज की स्थापना ही उनका मुख्य ध्येय था। समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों व ऊंच-नीच को समाप्त करने के लिए उन्होंने हिन्दु व मुस्लिम धर्मों की रूढ़ीवादी सोच और आडंबरों पर खुलकर कटाक्ष किए। 'वही महादेव वही मुहम्मद ब्रहमा आदम कहिए। कोई हिन्दू कोई तुर्क कहांव एक जमीं पर रहिए।' यानि वह मानते थे कि संसार के सभी धर्म अलग-अलग होते हुए भी एक उसी सर्वशक्तिमान परमपिता परमेश्वर की ओर चलने की सीख देते हैं। सामाजिक समरसता को बनाए रखने के लिए संत कबीर की शिक्षाएं व संदेश सैंकड़ों वर्ष बाद आज के परिप्रेक्ष्य में भी प्रासंगिक नजर आते हैं। वे ताउम्र जात-पांत, ऊंच-नीच जैसी सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ लड़ते रहे और मनुष्य को सदैव मानवता का पाठ पढ़ाया। वर्तमान दौर में ऐसे समाज सुधारकों की भूमिका और भी अहम हो जाती है, जो समाज का मार्गदर्शन उसे रास्ते सही पर चलने के लिए प्रेरित कर सके। प्रस्तुत अंक में पाठकों के लिए कबीरदास की जयंती पर विशेष सामग्री जुटाई गई है। इसके अलावा बांग्ला से हिन्दी में अनुवादित संस्मरण लेख 'काजा में वह मोहतरमा' के माध्यम से हिमाचल के शीत मरुस्थल का सुंदर चित्रण प्रस्तुत किया गया है। महादेवी वर्मा की साहित्यिक साधना पर विशेष लेख तथा हिन्दी कहानी की यात्रा पर विशेष सामग्री उपलब्ध करवाई गई है। आशा है हमारा यह प्रयास सुधि पाठकों के लिए उपयोगी साबित होगा।

- संपादक

आलेख

महादेवी वर्मा की साहित्य साधना

◆ अरुण कुमार शर्मा



आधुनिक हिन्दी साहित्य में छायावाद अपनी काव्यात्मकता एवं दार्शनिकता के लिए उल्लेखनीय है। महादेवी वर्मा (1907-1987) इसी छायावाद की महत्त्वपूर्ण कवयित्री है। महादेवी वर्मा की गीतात्मक चेतना अपनी कलात्मकता एवं संवेदना के साथ मुखरित होती है। महादेवी की कविता ही नहीं गद्य साहित्य भी अपना विशेष स्थान रखता है। महादेवी का गद्य स्नेह, ममत्व एवं संवेदनशील कवित्व के साथ सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करता है। महादेवी वर्मा को आधुनिक युग की मीरा भी कहा जाता है। इनका जन्म फरूखाबाद में सन् 1907 को हुआ। इनके पिता गोविन्द प्रसाद एम.ए.एल.एल. बी. के मुख्याध्यापक थे। इनकी माता हेमरानी देवी एक शिक्षित महिला थी। महादेवी के दादा का विश्वास था कि इस लड़की का जन्म कुलदेवी दुर्गा की कृपा से हुआ इसलिए इनका नाम महादेवी रखा गया। 9 वर्ष की छोटी आयु में ही इनका विवाह हो गया। बचपन में महादेवी वर्मा को हिन्दी का वातावरण बिलकुल न मिला। इनकी माता बाल्यकाल में हिन्दी, संस्कृत में रामचरित मानस और गीता आदि पढ़ लेती थी बस इसी से महादेवी को घर में हिन्दी का थोड़ा वातावरण मिला। इनके दादा अरबी-फारसी के विद्वान होने के कारण हाफिज रूमी आदि सूफी कवियों को पढ़ाया करते थे। इनके पिता भी मिल्टन, शेक्सपियर आदि को ही पढ़ते थे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा इन्दौर में हुई। बाल्यकाल से ही इनका झुकाव काव्य की ओर था। महादेवी जी के विचार उनकी माता जी के जीवन से बहुत प्रभावित हुए।

महादेवी जी के व्यक्तित्व में करूणा ठूंस-ठूंस कर भरी हुई थी। बचपन में जो पिता जी थोड़ा बहुत जेब खर्चा देते थे वह खर्चा भी वह निर्धन बच्चों की शिक्षा पर खर्च करती थी। महादेवी वर्मा बाहर से जितनी सौम्य एवं मिलनसार थी अन्दर से उतनी ही शान्त और एकान्त प्रिय। इनकी काव्य कृतियों में नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध गीत, दीप शिखा, प्रमुख हैं। नीहार में इनका काव्य रूप शिशु बच्चे के समान है। महादेवी जी पुष्प के माध्यम से संघर्षमय जीवन जीने का सन्देश देती है। ' ऐसा तेरा लोक' नामक कविता में कवयित्री कहती है कि वे फूल कभी नहीं खिल सकते जो थोड़ी सी धूप या सर्दी सहन नहीं कर सकते। वे शीघ्र ही मुरझा जाते हैं। जो फूल कांटों पर संघर्षमय जीवन जीते हैं वे ही विकसित हो सकते है। जो व्यक्ति कठिनाइयों के तीव्र आक्रमणों को नहीं सह सकता वह जीवन में उन्नति नहीं कर सकता।

महादेवी जी विरह की दीवानी है। इनके प्रेम की यह विशेषता है कि ये जलते रहने पर ही सुख प्राप्त करती है। 'रश्मि' 35 रचनाओं का काव्य संग्रह है जो 'नीरजा' से प्रौढ़ है। इसमें महादेवी वर्मा की दार्शनिक व आध्यात्मिक भावनायें स्पष्ट झलकती है। 'नीरजा' की कवितायें रहस्यवाद से परिपूर्ण है। आत्मनिष्ठा, लाक्षणिकता और गीतात्मकता इसकी विशेषताएं है। 'सान्ध्य गीत' 45 गीतों का संग्रह है। जिसमें परस्पर विरोधी भावनाओं, सुख दुःख, राग विराग का समन्वय है। 'फिर विकल है प्राण मेरे' कविता में कवयित्री की असीम प्रभु को देखने की उत्कट इच्छा स्पष्ट प्रतीत होती है। महादेवी जी कहती है, आज

मेरा, मन व्याकुल है। यह क्षितिज के पार जाने को इच्छुक है, मेरे प्राण व्याकुल है। यह क्षितिज के पार जाने को इच्छुक है, मेरे प्राण व्याकुल हो रहे है। इस क्षितिज को तोड़ दो जहां पृथ्वी और आकाश मिलते हैं। उस पार क्या है।

जिस कविता से महादेवी जी विशेष रूप से चर्चा में आई वह कविता थी।

बिखरेगी न पंखुड़ियां, म्लान भी न होंगे कभी।
मेरे ये सपने नहीं है, फूल माला के।
चुनेगा न शूल, न ही ओस बन्द फटेगा।
इनके दलों पर समान किसी छाल के।
देवता का मस्तक सम्भाल नहीं पायेगा।
गुथेंगे न कुन्तल में किसी निशा बाला के।
आंसू से खींची हैं सपनों की रेखायें।
मैंने फिर रंग भरे प्राणों की ज्वाला के।

महादेवी की इस रचना ने उन्हें आकाश की ऊंचाइयों तक प्रसिद्ध कर दिया। महादेवी वर्मा वेदना की कवयित्री थी। वेदना और अनुभूति का परिष्कृत रूप महादेवी वर्मा के काव्य में दिखाई देता है।

'मत व्यधित हो फूल किसको
सुख दिया संसार ने
स्वार्थमय सबको बनाया है
यहां करतार ने।

इस कविता के माध्यम से महादेवी वर्मा पुष्प में भी परम चेतना का आभास व्यक्त करती है। पुष्प की व्यथा आम जन मानस की व्यथा है।

महोदवी वर्मा का गद्य लेखन काव्यात्मक व्यक्तित्व की आभा से निखरा है। 'पथ के साधी' में महादेवी वर्मा के गद्य का विकास भाषा के लालिथ के साथ दिखाई देता है। भारतीय महिला को केन्द्र में स्थापित कर महादेवी वर्मा ने अपने अनुभवों का सहारा लेकर उसको जागृत करने का प्रयास किया। महादेवी भारतीय नारी की सदियों से चली आ रही पुरातन परम्पराओं को तोड़कर आगे जाने को प्रेरित करती रही। इनका मानना था कि 'नारियां पुरुषों से प्रतिद्वन्दी के रूप में नहीं बल्कि सहयोगी के रूप में प्रतिस्पर्द्धा करके आगे आये।

इसी प्रकार -

प्रिय जिसने दुःख पाला हो,
वर दो यह मेरा आंसू
उसके उर की माला हो।

'दीपशिखा' काव्य संग्रह 51 गीतों का संग्रह है। ये गीत भावात्मकता और चित्रात्मकता के कारण विशेष महत्त्व रखते हैं। 'यह मन्दिर का दीप' एक प्रसिद्ध कविता है। जिसमें महादेवी वर्मा हृदय को एक पवित्र मन्दिर मानकर उसमें चेतन मूर्ति आत्मा को बिठा कर अपनी बुद्धि के दीपक को जलाकर उस असीम प्रभु की अर्चना युग-युग तक करते रहना चाहती है। वह मिलन नहीं चाहती अपितु साधना में ही आनंद प्राप्त करती है। उसे दीपक के समान जलना प्रिय है, मिलन से वियोग प्रिय है।

महादेवी वर्मा के संस्मरण व रेखाचित्र सशक्त विषय वस्तु एवं विचार प्रवाह लेकर सामने आते हैं। संस्मरण या रेखा चित्र कहानी और आत्मकथा के बीच की विधा है जिसे विशेष ईमानदारी के साथ लिखने की अपेक्षा रहती है। आत्मकथा लिखना दुःसाहस एवं जोखिम भरा काम है। गद्य को कविता का निकर्ष भी माना गया है। महादेवी वर्मा ने एक महत्त्वपूर्ण काव्यकार होने के साथ इतने गम्भीर रेखा चित्र व संस्मरण लिखे कि यह आश्चर्यजनक लगता है।

'अतीत के चलचित्र' स्वतंत्रता पूर्व की समाज और समय की छवि का स्पष्टतः चित्र प्रस्तुत करता है। इसमें महादेवी वर्मा ने स्त्री के विभिन्न रूपों और उसके कष्टों का संवेदना के साथ रेखांकन किया है। महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों में अत्यन्त निम्न वर्ग के दीन हीन, गरीबी की रेखा से नीचे जीने वाले पात्र है। रामा नौकर, मातृ विहीना बालिका 'बिन्दा' 'परित्यक्त सबिया, बाल विधवा माता, पितृहीन धीसा 'नेत्रहीन अलोपी' चीनी फेरी वाला, ठकुरी बाबा, आदि पात्र त्याग एवं बलिदान के प्रतीक है। रामा दहलीज पर किवाड़ से सिर टिकाकर निष्चेष्ट प्राणी के रूप में सामने आता है। धीसा के पास आधी आस्तीन का पुराना कुरता और अंगोछा कपड़ा मात्र है। इन तमाम अभावों एवं और अपेक्षाओं के बीच इन पात्रों में कोई न कोई ऐसी विलक्षण बात है जो इन्हें आम लोगों से एकदम पृथक करती है। पात्रों के त्याग और बलिदान के चित्र बहुत ही मार्मिक बन पड़े है। 'रामा' चेचक और प्लेग जैसी भयानक बीमारियों से अपनी परवाह न करके बच्चों को बचाता है।

महादेवी वर्मा का गद्य लेखन काव्यात्मक व्यक्तित्व की आभा से निखरा है। 'पथ के साधी' में महादेवी वर्मा के गद्य का विकास भाषा के लालित्य के साथ दिखाई देता है। भारतीय महिला को केन्द्र में स्थापित कर महादेवी वर्मा ने अपने अनुभवों का सहारा लेकर उसको जागृत करने का प्रयास किया। महादेवी भारतीय नारी की सदियों से चली आ रही पुरातन परम्पराओं को तोड़कर आगे जाने को प्रेरित करती रही। इनका मानना था कि 'नारियां पुरुषों से प्रतिद्वन्दी के रूप में नहीं बल्कि सहयोगी के रूप में प्रतिस्पर्द्धा करके आगे आये।

महादेवी वर्मा जब स्त्री स्वतंत्रता की बात करती है तो सवाल उठता है कैसी स्वतंत्रता। स्त्री की स्वतंत्रता की चाह परिवार को तोड़ने की चाह नहीं हो सकती उसे जोड़ने की होनी चाहिए। जोड़ने के इस कार्य में पुरुष की भागीदारी उतनी ही है जितनी स्त्री की। विवाह संस्था को बनाये रखने में स्त्री पुरुष दोनों का समान दायित्व है। स्त्री के अनुभव की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति जितनी स्त्री लेखन में मिलती है उतनी पुरुष लेखन में नहीं। 'शृंखला की कडियों में

लेखिका ने नारी की मूक पीड़ा को अभिव्यक्ति देकर अपने गद्य को चरम सीमा तक सजाया। नारी की स्थिति को लेकर उनके मन में तीव्र आक्रोश रहा है।

'शृंखला की कड़ियों' में वे एक स्थान पर लिखती हैं- शताब्दियों की शताब्दियां आती जाती रही परन्तु स्त्री की स्थिति में की एकरसता में कोई परिवर्तन न हो सका। किसी भी स्मृतिकार ने उसके जीवन की विषमता पर ध्यान देने का अवकाश न पाया, किसी भी शास्त्रकार ने पुरुष से भिन्न करके उसकी समस्या को न देखा। महादेवी का गद्य करूणा से ओत प्रोत है जिसमें स्नेह है तो समाज की व्यवस्था को तार-तार करने वालों के विरुद्ध आक्रोश का भाव भी है।

महादेवी उच्च कोटि की कवयित्री, निबन्धकार होने के साथ-साथ उत्तम चित्रकार भी थी। महादेवी की रचनाओं तक पहुंचने के लिये यह देखना भी आवश्यक है कि उसमें अन्य ललित कलाओं विशेषकर चित्रकला की क्या भूमिका रही। एक काव्य कृति में जितनी अधिक अन्ध कलाओं का समावेश रहता है उतनी ही वह श्रेष्ठ मानी जाती है। महादेवी का काव्य इस दृष्टि से समृद्ध काव्य है। 'कला और हमारा चित्रमय साहित्य 'नाम के निबन्ध में महादेवी वर्मा लिखती है 'चित्र कला, मूर्तिकला के काठिन्य से रहित और रंगों से सजीव होने के कारण अधिक आदृत हो सकी। यह बोधगम्य इतनी ज्यादा है कि शैशव में कठिन से कठिन ज्ञान इसके द्वारा सहज हो सकता है। यह जीवन के इतनी निकट है कि बालक पहले पहले सारे प्रत्यक्ष ज्ञान को टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं में बांधने का प्रत्यक्ष किये बिना नही रहता। 1932 में महादेवी जब प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रिंसीपल बनी तो उन्होंने चित्रकला को बहुत महत्व दिया। महादेवी वर्मा की चित्रकला छायावादी चित्रकला है। जिस प्रकार उनकी कविताओं में भाव तत्व प्रधान रहता है, उसी प्रकार उनकी चित्रकला की भावना प्रधान है। 1936 में उन्होंने 'मीरा' नामक चित्र बनाया जिससे विशेष ख्याति अर्जित की। उनके आरंभिक चित्र 'वर्षा' और 'सांध्य गीत' भी विशेष प्रसिद्ध हुए। संक्षेप में महादेवी की कविताएं आंसुओं व विरह से भरी, वियोगाग्नि में जलते हुए करूणा से भरी है। उनके साहित्य में प्रेम की साधना, प्रेम का लौकिक पक्ष, विरह, प्रकृति चित्रण, रहस्यवाद और संगीतात्मकता प्रचुरता से उपलब्ध है। उनके विचार उनकी भोगी जीवन तपस्या का प्रसाद है न कि पुस्तकों से लिये गये परिणाम का फल है। गद्य के प्रस्तुतीकरण में उनकी चित्रात्मकता प्रदर्शिता होती है। महादेवी का कवि हृदय गद्य में भी मुखरता से प्रतिभासित होता है। डॉ. नगेन्द्र एक स्थान पर कहते हैं- 'सारत' महादेवी के निबंध काव्य के शाश्वत सिद्धान्तों के अमर व्याख्यान है। महादेवी जी की रचनाओं में स्त्री जीवन पर नारी लेखिका की सहानुभूति मात्र नहीं बल्कि गम्भीर समाज शास्त्रीय विश्लेषण भी है। उन्होंने मानवीय संवेदनाओं की भावभूमि का विस्तार किया। उपेक्षित चरित्रों को नये उपमानों का सौंदर्य ओढ़ाकर नया प्रतिमान प्रस्तुत किया। यह सौंदर्य शारीरिक न होकर भावात्मक संवेदनात्मक है।

सन् 1956 में महादेवी वर्मा को पद्म भूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया । 1960 में उन्हें प्रयाग विद्यापीठ की कुलपति बनाया गया। महादेवी वर्मा को हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'भारतेन्दु पुरस्कार' भी दिया गया। सन् 1982 में ब्रिटेन की प्रधानमंत्री मारग्रेट थेचर ने एक भव्य समारोह में उन्हें भारतीय ज्ञान पीठ पुरस्कार प्रदान किया गया। 1983 में महादेवी वर्मा को उतर प्रदेश का 'भारत भारती' पुरस्कार भी प्रदान किया गया। जय शंकर प्रसाद, सुमित्रा नन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला व महादेवी वर्मा छायावाद के प्रमुख चार स्तम्भ माने जाते है। महादेवी वर्मा ने न केवल नारी विद्रोह का समर्थन किया बल्कि स्वयं भी बाल विवाह के बंधन को उस जमाने में तोड़ा था जब किसी भी लड़की का ऐसा निर्णय लेना अद्भुत साहस का कार्य था। 1987 में साहित्य की महादेवी पंचतत्व में विलीन हो गई।

गांव अप्पर घनेड़ी, डा. शोघी, तहसील व जिला शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 219

महादेवी वर्मा जब स्त्री स्वतन्त्रता की बात करती है तो सवाल उठता है कैसी स्वतन्त्रता। स्त्री की स्वतन्त्रता की चाह परिवार को तोड़ने की चाह नहीं हो सकती उसे जोड़ने की होनी चाहिए। जोड़ने के इस कार्य में पुरुष की भागीदारी उतनी ही है जितनी स्त्री की। विवाह संस्था को बनाये रखने में स्त्री पुरुष दोनों का समान दायित्व है। स्त्री के अनुभव की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति जितनी स्त्री लेखन में मिलती है उतनी पुरुष लेखन में नहीं।

कबीर जयंती

हीरा जनम अनमोल था, कौड़ी बदले जाये

◆ प्रदीप कुमार सिंह



आज समाज, देश और विश्व के देशों में बढ़ती हुई भुखमरी, अशिक्षा, बेरोजगारी, स्वार्थलोलुपता, अनेकता आदि समस्याओं से सारी मानवजाति चिंतित है। वास्तव में ये ऐसी मूलभूत समस्यायें हैं जिनसे निकल कर ही हत्या, लूट, मार-काट, आतंकवाद, धार्मिक विद्वेष, युद्धों की विभीषिका आदि समस्याओं ने जन्म लिया है। इस प्रकार आज इन समस्याओं ने पूरे विश्व की मानवजाति को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। ऐसी भयावह परिस्थिति में समाज को सही राह दिखाने के लिए आज कबीर दास जी जैसे युग प्रवर्तक की आवश्यकता है। कबीरदास जी ने समाज में व्याप्त भेदभाव को समाप्त करने पर बल देते हुए कहा था कि ''वही महादेव वही मुहम्मद ब्रह्मा आदम कहिए। कोई हिंदू कोई तुर्क कहांव एक जमीं पर रहिए।'' कबीरदास जी एक महान समाज सुधारक थे। उन्होंने अपने युग में व्याप्त सामाजिक अंधविश्वासों, कुरीतियों और रूढ़िवादिता का विरोध किया। उनका उद्देश्य विषमताग्रस्त समाज में जागृति पैदा कर लोगों को भक्ति का नया मार्ग दिखाना था, जिसमें वे काफी हद तक सफल भी हुए। कबीर दास जी ने कहा था कि ''बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय। जो हितय ढूंढो आपनो, मुझसा बुरा न कोय।।''

कबीर दास जी कहते हैं कि मनुष्य जीवन तो अनमोल है इसलिए हमें अपने मानव जीवन को भोग-विलास में व्यतीत नहीं करना चाहिए बल्कि हमें अपने अच्छे कर्मों के द्वारा अपने जीवन को उद्देश्यमय बनाना चाहिए। कबीर दास जी कहते हैं कि ''रात गंवाई सोय कर, दिवस गवायों खाय। हीरा जनम अनमोल था, कौड़ी बदले जाये।। अर्थात् मानव जीवन तो अनमोल होता है किन्तु मनुष्य ने सारी रात तो सोने में गंवा दी और सारा दिन खाने-पीने में बिता दिया। इस प्रकार अज्ञानता में मनुष्य अपने अनमोल जीवन को भोग-विलास में गंवा कर कौड़ी के भाव खत्म कर लेता है। कबीर दास जी कहते हैं कि ''पानी मेरा बुदबुदा, इस मानुष की जात। देखत ही छिप जायेंगे, ज्यौं तारा परभात।।'' अर्थात् मनुष्य का जीवन पानी के बुलबुले के समान है, जो थोड़ी सी हवा लगते ही फूट जाता है। जैसे सुबह होते ही रात में निकलने वाले तारे छिप जाते हैं, वैसे ही मृत्यु के आगमन पर परमात्मा द्वारा दिया गया यह जीवन समाप्त हो जाता है। इसलिए हमें अपने मानव जीवन के उद्देश्य को जानकर उनको पूरा करने का हरसंभव प्रयत्न करना चाहिए।

आज भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' का मूल मंत्र संसार से लुप्त होता जा रहा है। कहीं हिंदू, कहीं मुसलमान, कहीं ईसाई, कहीं पारसी और न जाने कितनी कौमों के लबादे ओढ़े आदमी की शक्ल के लाखों, करोड़ों लोगों की भीड़ दिखाई दे रही है। गौर से देखने पर ऐसा लगता है कि जैसे इस भीड़ में आदमी तो नजर आ रहे हैं पर आदमियत कहीं खो गई है। शक्ल सूरत तो इंसान जैसी है, मगर कारनामे शैतान जैसे होते जा रहे हैं, जबकि मानव शरीर तो नश्वर है इसे एक न एक दिन मिट्टी में मिल ही जाना है। इसलिए हमें अपने शरीर पर कभी अभिमान नहीं करना चाहिए। कबीर दास जी कहते हैं कि ''माटी कहै कुम्हार को, क्या तू रौंदे मोहि। एक दिन ऐसा होयगा, मैं रौदूँगी तोहि।'' अर्थात् मिट्टी कुम्हार से कहती है कि समय परिवर्तनशील है और एक दिन ऐसा भी आयेगा जब तेरी मृत्यु के पश्चात् मैं तुझे रौंदूगी। इसलिए हमें परमपिता परमात्मा द्वारा दिये गये शरीर पर अभिमान न करते हुए इस जगत् में रहते हुए मानव हित का अधिक से अधिक काम करना चाहिए।

कबीर तो सच्चे अर्थों में मानवतावादी थे। उन्होंने हिंदू और मुसलमानों के बीच मानवता का सेतु बांधा। जो आजीवन समाज और लोगों के बीच व्याप्त आडंबरों पर कुठाराघात करते रहे। कबीरदास ने हिन्दू-मुसलमान का भेद मिटाकर हिन्दू भक्तों तथा

मुसलमान फकीरों का सत्संग किया और दोनों की अच्छी बातों को हृदयांगम कर लिया। कबीरदास जी एक ही ईश्वर को मानते थे और कर्मकाण्ड के घोर विरोधी थे। वे भेदभाव रहित समाज की स्थापना करना चाहते थे। उन्होंने ब्रह्म के निराकार रूप में विश्वास प्रकट किया। वे हर स्तर पर सामाजिक विसंगतियों के विरुद्ध लड़ते रहे और सभी धर्मो के खिलाफ बोलते भी रहे। जैसे उन्होंने मूर्ति पूजा को लक्ष्य करते हुए कहा कि ''पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजौं पहार। या ते तो चाकी भली, जासे पीसी खाय संसार।।'' इसी प्रकार उन्होंने मुसलमानों से कहा- ''कंकड़ पत्थर जोरि के, मस्जिद लयी बनाय, ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।''

एकेश्वरवाद के समर्थक कबीरदास जी का मानना था कि ईश्वर एक है। उन्होंने व्यंग्यात्मक दोहों और सीधे-सादे शब्दों में अपने विचार को व्यक्त किया। फलतः बड़ी संख्या में सभी धर्म एवं जाति के लोग उनके अनुयायी हुए। संत कबीर का कहना था कि सभी धर्मों का लक्ष्य एक ही है। सिर्फ उनके कर्मकांड अलग-अलग होते हैं। उनका कहना था कि ''माला फेरत जुग गया, मिटा न मनका फेर। कर का मनका डारि के, मन का मनका फेर।'' अर्थात् मनुष्य ईश्वर को पाने की चाह में माला के मोती को फिरता रहता है परन्तु इससे उसके मन का दोष दूर नहीं होता है। कबीर जी कहते हैं कि हमें हाथ की माला को छोड़ देना चाहिए क्योंकि इससे हमें कोई लाभ नहीं होने वाला है। हमें तो केवल अपने मन को एकाग्र करके भीतर की बुराइयों को दूर करना चाहिए। कबीर दास जी का कहना है कि ''मन मक्का दिल द्वारिका, काया काशी जान। दस द्वारे का देहरा, तामें जोति पिछान।'' अर्थात् यह पवित्र मन ही मक्का, हृदय द्वारिका और सम्पूर्ण शरीर ही काशी है।

मानव आलस्य के कारण आज का काम कल पर टालने का प्रयास करता है। कबीर दास जी कहते हैं कि हमें आज का काम कल पर न टाल कर उसे तुरन्त पूरा कर लेना चाहिए। कबीर जी काम को टालते रहने की आदत के बहुत विरोधी थे। वे इस तथ्य को जानते थे कि मनुष्य का जीवन छोटा होता है जबकि उसे ढेर सारे कामों को इसी जीवन में रहते हुए करना है। आज से छः सौ वर्ष पूर्व भी समय के सदुपयोग के महत्त्व को समझते हुए कबीर दास जी ने कहा कि ''काल करे जो आज कर, आज करे सो अब। पल में परलय होयगी, बहुरी करोगे कब।'' इस दोहे में कबीर जी ने समय के महत्त्व को थोड़े शब्दों में ही समझा दिया है। उनका कहना था कि मनुष्य जीवन की उपयोग की बात तो करते हैं किन्तु उन क्षणों एवं समय पर, जो कि जीवन की इकाई है, कोई ध्यान नहीं देते हैं। इस प्रकार समय को गवांकर वास्तव में हम अपने अनमोल जीवन को गंवाने का काम करते हैं। आज मानव जीवन में पाये जाने वाले तनाव का भी सबसे बड़ा कारण 'समय का दुरुपयोग' ही है। जब हम किसी काम को तुरन्त न करके आगे के लिए टाल देते हैं तो यही काम हमें बहुधा आपात स्थिति में ला देता है, जिससे मनुष्य में तनाव की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

कबीरदास जी जिस युग में आये वह युग भारतीय इतिहास में आधुनिकता के उदय का समय था। वह कर्म प्रधान समाज के पैरोकार थे और उसकी झलक उनकी रचनाओं में साफ झलकती है। लोककल्याण हेतु ही मानो उनका समस्त जीवन था। कबीर दास जी एक सच्चे विश्व-प्रेमी थे। कबीर को जागरण युग का अग्रदूत कहा जाता है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि साधना के क्षेत्र में वे युग-युग के गुरु थे, उन्होंने संत काव्य का पथ प्रदर्शन कर क्षेत्र में नव-निर्माण किया था। कबीरदास जी अपने जीवन में प्राप्त की गयी स्वयं की अनुभूतियों को ही काव्यरूप में ढाल देते थे। उनका स्वयं का कहना था ''मैं कहता आंखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी।'' इस प्रकार उनके काव्य का आधार स्वानुभूति या यर्थाथ ही है। इसलिए अब वह समय आ गया है जबकि हम वर्तमान समाज में व्याप्त धर्म, जाति, रंग एवं देश के आधार पर बढ़ते हुए भेदभाव जैसी बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकें और संसार की समस्त मानवजाति में इंसानियत एवं मानवता की स्थापना के लिए कार्य करें।

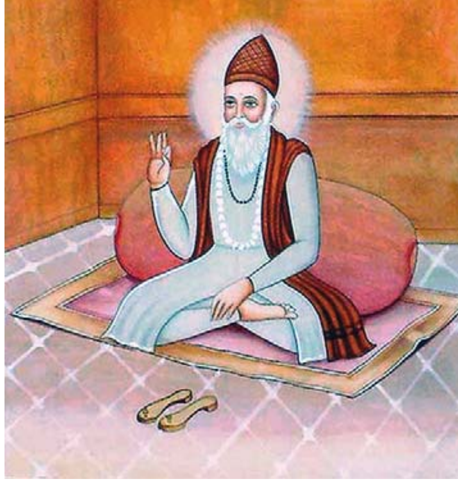
पता- बी-901, आशीर्वाद, उद्यान-2, एल्डिको, रायबरेली रोड, लखनऊ, उ. प्र.-226025, मो. 0 98394 23719

कबीरदास जी जिस युग में आये वह युग भारतीय इतिहास में आधुनिकता के उदय का समय था। वह कर्म प्रधान समाज के पैरोकार थे और उसकी झलक उनकी रचनाओं में साफ झलकती है। लोककल्याण हेतु ही मानो उनका समस्त जीवन था। कबीर दास जी एक सच्चे विश्व-प्रेमी थे। कबीर को जागरण युग का अग्रदूत कहा जाता है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि साधना के क्षेत्र में वे युग-युग के गुरु थे, उन्होंने संत काव्य का पथ प्रदर्शन कर क्षेत्र में नव-निर्माण किया था।

आलेख

ढाई आखर प्रेम का

◆ राजेंद्र परदेसी



प्रेम को लेकर बहुत कुछ लिखा गया है। संपूर्ण विश्व साहित्य में प्रेम तत्त्व की प्रधानता नजर आती है। हिंदी साहित्य में भी आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक प्रेम विद्यमान है। सच तो यह है कि प्रेम शाश्वत है। हां, उसकी अभिव्यक्ति के माध्यम जरूर बदलते रहते हैं। भक्ति काल में इस प्रेम का माध्यम ईश्वर है, किंतु प्रेम की अभिव्यंजना उसकी उदात्तता, प्रेम के स्वरूप को और अर्थवान बनाती है। सूरदास ने तो प्रेम को कुछ यूं परिभाषित किया है -

प्रेम प्रेम तो होय प्रेम ते पारहि जइए,
प्रेम बंधयो संसार प्रेम परमारथ पइए।

सूर की तरह कबीर भी प्रेम को ही महत्त्व देते हैं। उनका सारा का सारा रहस्यवाद प्रेम से आप्लावित है। भले ही यह प्रेम ईश्वर को समर्पित है, उसका केंद्र कोई एक मनुष्य नहीं है, किंतु कबीर की प्रेम विषयक अवधारणा, उसकी परिभाषा इतनी सटीक है कि आज भी जब प्रेम पर बात की जाती है तो कबीर के बिना यह बात अधूरी-अधूरी सी लगती है। कबीर रहस्यवाद के माध्यम से प्रेम को उसकी समग्रता में प्रस्तुत करते हैं, वे प्रेम को ज्ञान से ऊंचा स्थान देते हैं।

पोथि पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।

प्रेम का स्वाद गूंगे के गुड़ समान है, जिसे कहा और समझा नहीं जा सकता सिर्फ अनुभव किया जाता है -

अकथ कहानी प्रेम की, कछू कही न जाय
गूंगू केरी सर्करा, खाये अऊ मुसकाय।

प्रेम को साधना बहुत आसान नहीं है। घुड़सवार की तरह प्रेमी को भी हर वक्त चैतन्य रहना होता है -

कबीर घोड़ा प्रेम का, चेतन चढ़भव सार,
म्यान खड्ग गहिकाल, सिर भली मचाई रार।

कबीर प्रेम पंथ की कठिनाई को भी नहीं भूलते। चे चेताते हैं कि प्रेम कोई आसान काम नहीं है जिसे हर कोई कर सके। प्रेम में प्राणों का मोह छोड़ने वाला ही सफल हो सकता है -

कबीर यह घर प्रेम का, खाला का घर नाहि
सीस उतारे हाथ करि, सो पैठे घर माहि।

गालिब भी तो कहते हैं कि 'यह इश्क नहीं आसां गालिब बस इतना समझ लीजिए, इक आग का दरिया है और डूब के जाना है।' कबीर भी इसी बात को बार-बार कहते हैं मानो वे उन्हें बरजना चाह रहे हों, जो प्रेम को बहुत हल्के रूप में लेते हैं, क्योंकि प्रेम का मार्ग अगम है, अगाध है, इस राह पर तो प्राणों का मोह छोड़ना ही पड़ता है। तब कहीं जाकर किसी-किसी को प्रेमी रूपी फल मिलता है -

कबीर निज घर प्रेम, मागर अगम अगाध
सीस उतारि पग तल धरै, तब निकटि प्रेम का स्वाद।

प्रेम हर किसी के बस की बात नहीं है। यह हर किसी को सुलभ भी नहीं है, क्योंकि यह न तो खेत में उत्पन्न होता है और न ही बाजार में बिकता है कि जो चाहे वही खरीद ले। यह तो प्राणों का सौदा है, जो प्राण न्योछावर करने को तत्पर हो वही प्रेम को पा सकता है, प्रेम अमीर-गरीब, राजा और रंक में कोई भेद नहीं करता-

प्रेम न खेतौं निपजे, प्रेम न हाटि बिकाय
राजा परजा जिस रूचै, सिर दे सोई ले जाय।

प्रेम का महत्त्व उसे निभाने में ही है। प्रेम करना जितना कठिन है उसका निर्वहण और भी कठिन है। प्रेम में एकनिष्ठता अनिवार्य शर्त है। कबीर भी प्रेम की एकनिष्ठता पर बल देते हैं। प्रेम में दो के अतिरिक्त किसी और की गुंजाइश ही नहीं है -

नैना अंतर आव तू पलक झांपि तोहे लेंव
न मैं देखूं और कूं, न तुझ देखण देंव।

प्रेमी हृदय को अपने प्रेम से बिछुड़ने का भय इस कदर रहता है कि वह अपने प्रिय को सबसे छिपाये रखना चाहता है। न ही उसे कोई देखेगा और न ही उसके छीने जाने की संभावना बनेगी। इसीलिए कबीर प्रिय को आंखों के भीतर ही छिपा कर रखना चाहते हैं। प्रेम की एकनिष्ठता की अनिवार्यता पर कबीर के जितना सटीक और स्पष्ट शायद ही किसी ने लिखा हो। वे उसी से प्रेम करना उचित मानते हैं जो निर्वाह कर सकें, किसी और से प्रेम करना तो दोष है ही दूसरे किसी को देखने से भी दोष लगता है -

कबीर तासू प्रीत करि, जो निरबाहे ओड़ि
बनिता विविध न राचिए, देषत लागै षोंड़ि।

कबीर का मानना है कि प्रेम केवल एक से ही संभव है। जिस प्रकार एक ही मुख से दो तुरही एक साथ नहीं बजाई जा सकती है, उसी तरह एक साथ दो लोगों से प्रेम भी नहीं किया जा सकता है- अगर किया जाता है तो उसकी परणति क्या होती है, द्रष्टव्य है -

कबीर जे मन लागै एक सू, तो निरबहया जाइ
तूरा दुइ मुख बाजणा, न्याह तमाचे खाइ।

प्रेम में एक के अतिरिक्त किसी और के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती। उसका कोई विकल्प ही नहीं होता।

कबीर रेख सिन्दूर की, काजल दिया न जाइ
नैन रमइया रमि रहा, दूजा कहां समाई।

जिस तरह सुहाग में सिन्दूर की जगह काजल नहीं लगाया जा सकता, उसी तरह प्रिय का स्थान किसी और को नहीं दिया जा सकता।

कबीर यह देख रहे थे कि कलियुग में प्रेम की पवित्रता, प्रेम की एकनिष्ठता घटती जा रही है किन्तु उसके दुष्परिणाम भी उनके सामने थे। जो प्रेम विश्वासघात करते हैं, वे कभी सुख की नींद नहीं सो पाते। उसके विपरित जो केवल एक से प्रेम करते हैं वे सुख और निश्चिन्तता का जीवन जीते हैं -

कबीर कलियुग आइ करि, किये बहुत से मीत
जिन दिल बंधी एक सो, ते सुख सोवे नचित।।

कबीर का यह प्रेम परमात्मा के प्रति है। प्रेम चाहे मनुष्य के प्रति हो या पर ब्रह्म के प्रति, उसकी प्रगाढ़ता उसके स्वरूप में कोई अन्तर नहीं होता। प्रेम की तुलना भी तो ब्रह्म से की जाती है। कबीर ने प्रेम में सात्विकता को प्रधानता दी है। प्रेम मन की सहज अभिव्यक्ति है। प्रेम की पवित्रता और सहजता ही उसे ईश्वर तुल्य बनाती है, जो एक बार प्रेम का प्याला पी लेता है उसका खुमार कभी नहीं उतरता -

हरि रस पीया जाणिए, जे कबहूं न जाये खुमार,
मैमन्ता घूमत रहै, नाहि तन की सार।

निःस्वार्थ, निश्छल प्रेम में ही यह खुमारी होती है। यह प्रेम अलौकिक होता है, इसमें असम्भव भी संभव हो जाता है -

गगन की गुफा तहां गैब का चांदणा,
उदय और अस्त का नाम नाहीं ।
दिवस और रैन तहां नेक नहि पाइए,
प्रेम औ परकास के सिन्ध माही।

विरह और मिलन तो प्रेम के संगी हैं। मिलन विरह के अनेक रंग कबीर में मिलते हैं। कबीर के प्रेम में वासना की गन्ध नहीं है वरन उदात्त प्रेम की गूंज है। उनका प्रेम परब्रह्म से है किन्तु उसकी अभिव्यक्ति का धरातल लौकिक है। कबीर ने दाम्पत्य प्रेम को आधार बनाया। है। पर ब्रह्म को उन्होंने पति माना है और स्वयः को उनकी पत्नी। कबीर ने दाम्पत्य प्रेम के माध्यम से विरह और मिलन के अनेक चित्र उकेरे हैं। कबीर मंगलचार की बात करते हैं - दुलहिन गावहु मंगलचार मोरे घर आयो हो राजा

राम भरतार,
तन रहि करि मैं मन रति करि हूं, पंचतत्व बराती
रामदेव मोहि व्याहन आओ।

कबीर ने प्रेम मिलन में विवाह के पश्चात मिलन में मन और हृदय की स्थिति का कितना सटीक वर्णन किया है -

थरहर कपै बाला जीउ, न जानउ किया रिसी पीव ।
रैन गई मति दिन भी जात, भंवर भये बग बैठे आय ।।

इस तरह का वर्णन जायसी भी करते हैं -

अनचिन्ह पिऊ कापै मन मांहा
का मैं कहब-गहब जो बांहा।

किन्तु इन दोनों चित्रों में बहुत फर्क है जो ध्वनियात्मक संकेत कबीर में है वह जायसी में नहीं है। विवाह के बाद मिलन की घड़ी में प्रिया की खुशी छलक रही है -

'अंक भरे भर भेटिया मन में नाहीं धीर ।'

वह अपने भाग्य को सराहती है। प्रिय के आते ही उसका घर प्रकाशवान हो उठा है। वह अपने प्रियतम से मधुर मिलन में लीन है। यह वह अनिवर्चनीय आनन्द है, जिसे अनुभव ही किया जा सकता है। कबीर के प्रेम मिलन में भारतीय दाम्पत्य की स्पष्ट छाप है। प्रिया अपने प्रियतम को एक बार पा लेने के बाद वह उसे जाने नहीं देना चाहती -

अब तोहि जान न देहूं राम पियारे,
ज्यूं भावे त्यूं होउ हमारे ।

वह उन्हें अपने प्रेम में उलझाकर रोक लेना चाहती है। वह पैरों में गिरकर विनती और जबरदस्ती करने को भी तैयार है -

चरननि लागि करौं बरियाई,
प्रेम प्रीत चरित उरझाई ।।

भारतीय दाम्पत्य में पत्नी छोटी होती है। कबीर कहते है -

हरि मोरा पीव मैं राम की बहुरि,
राम बड़े मैं छुटक लहुरिया।

प्रेम में विरह की अनिवार्यता भी सर्वविदित है। बिना विरह के मिलन की सुखद अनुभूति भी अधूरी रहती है। कबीर ने बिरहणी हृदय की मार्मिक पीड़ा को जैसे आत्मसात कर लिया है, इसलिए उनकी अभिव्यक्ति गहरी और विश्वसनीय है। विरह की राह बहुत कठिन है, उस कठिनाई को विरहणी पार करने में असमर्थ है। वह न तो प्रिय तक पहुंच सकती और न उसे अपने पास बुला सकती है। बस अब तो विरह में तड़पना ही शेष है -

आइ सकौं न तुझ पै, सकूं न तुझ बुलाई
जियरा यौं ही लेहुगे,विरह तपाइ तपाइ।

विरह की अग्नि बहुत कष्ट देती है। उसी तरह जिस तरह गीली लकड़ी पूरी तरह जलती भी नहीं और बुझती भी नहीं, विरहणी चाहती है कि वह सुखी लकड़ी की तरह पूरी तरह जल जाए ताकि इस पीड़ा से मुक्ति मिल सके -

विरह की ओदी लाकरी, सपचै और धुंध लाय
दुखते तबहि बांचि हौ, जब सकल जरि जाय।

अब तो यह पीड़ा चरम पर पहुंच गई है प्रिय की राह तकते-तकते कब दिन रात में बदल जाता है, कब रात ढल जाती है, पता ही नहीं चलता -

कबीर देखत दिन गया, निस भी देखत जाइ
बिरहनि पीव पावे नहीं, जियरा तलपै माइ।

उसे अपने ऊपर कोफ्त होती है कि वह इस विरह को सहने के लिए जीवित ही क्यों है, वह प्रिय के लिए जलकर मरकर क्यों नहीं गई। प्रेम को लज्जित करने के लिए जीवित ही क्यों है -

कबीर विरहनि थी क्यूं रही, जली न पीव के नालि
रहु रहु मुगध गहे लड़ी, प्रेम न लाजै मार।

अब तो प्रिय की राह तकते-तकते न जाने कितने दिन बीत गए हैं। मन में बस एक ही आस है कि प्रिय से मिलन हो -

बहुत दिनन की जोहती, राम तुम्हारी बाट
जिव तरसै तुझ मिलन कूं, मन नाही विसराम।

अब तो दरसन के बिना आराम नहीं मिलेगा, इसलिए उसके मन की एक ही आस है, प्रिय के दर्शन की -

बिरह अगिन तन दिया जराई
बिन दरसन क्यूं हो होय सिराई

प्रिय की राह देखते-देखते अब तो आंखों में झांई पड़ गई है और जीभ में छाले -

अंखड़या झांई पड़ि पंथ निहारि-निहारी
जी भड़या छाला पड़या, राम पुकारि-पुकारि।

वह प्रार्थना करती है कि हे प्रिय मैंने तुम्हारे दर्शन के लिए आरती सजा रखी है। मुझे शीघ्र दर्शन दीजिए। अब तो बात रमण तक आ पहुंची है। सो जीते जी मेरी कामना पूर्ण कीजिए मरने के बाद अगर दर्शन दोगे तो वह व्यर्थ हो जाएगा -

विरहनि साजि आरति, दरसन दीजे राम
मुये दरसन देहुगे, आवत कवने काम।

अब तो व्याकुलता इतनी बढ़ गई है कि वह आते-जाते पथिकों से भी पूछने लगी है। कि उसके प्रिय कब आकर मिलेंगे -

विरहनि उभी पंथ सिरि, पंथी बूझे धाइ।
एक सबद कह पीव का, कबरे मिलेंगे आई।

अब वह अपने आप को विरह में समाप्त कर देना चाहती है। या तो प्रिय दर्शन दया फिर मौत दे दें क्योंकि हर समय की यह तकलीफ उससे सही नहीं जाती -

या विरहनि को मीच दे, या आपा दिख राय
आठ पहर का दांझणा, मोसो सहा न जाय ।

विरह की आग में अपने को जलाकर राख कर देना चाहती है। और वह माननी अब नहीं चाहती कि प्रिय उस पर दया करके उसे बचा लें। वह जलकर राख हो जाना चाहती है ताकि दुनिया उसके प्रेम की पराकाष्ठा को देख सके -

यह तन जालौं मसि कहूं, ज्यूं धुआं जाइ सरग्नि,
मति वै राम दया करैं, बरसि बुझाने अग्नि।

जायसी की नायिका भी अपना शरीर जलाकर राख कर देना चाहती है मगर वह उस राख को प्रिय के मार्ग में ही बिछाना चाहती है। कबीर की विरहनी का मान मरने के बाद के प्रेम का कायल नहीं है, वह तो जीते जी प्रेम चाहती है। कबीर विरह को कोसते नहीं वे उसे सिरोधार्य करते हैं। विरह ही प्रेम का सार है। विरह की आग में तपकर ही प्रेम कंचन बनता है। जिस हृदय ने विरह की आंच जानी ही नहीं, वह श्मशान के समान है -

कबीर बिरहा बुरहा जिनि कहौं, विरहा है सुलितान
जिस घट बिरह न संचरै, सो घट सदा मसाण।

कबीर का सौन्दर्य चेतना भी बहुत गहन है। निर्गुण निराकार के उपासक होने के कारण उनके काव्य में सौन्दर्य प्रच्छन्न रूप में आया है मगर वे उस काल में प्रचलित नारी सौन्दर्य के उपकरणों, शृंगार और गहनों का भी वर्णन करते हैं उन्होंने कंगन, मेखुली, माला के साथ-साथ काजल सिन्दूर दर्पण का भी उपयोग अपने काव्य में किया है।

कबीर के पहले यह सौन्दर्य बोध कालिदास में मिलता है और कबीर के बाद जयशंकर प्रसाद में। प्रसाद ने सौन्दर्य को चेतना का उज्जवल वरदान कहा है -

उज्जवल वरदान चेतना का, सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं,
जिसमें अनंत अभिलाषा के, सपने जगते रहते हैं।

कबीर ने अपने प्रेम विरह के पदों में इन्हीं अभिलाषाओं को गूंथा है। यही सौन्दर्य चेतना उनके रहस्यवाद को और भाव प्रवण बनाती है। प्रेम माधुर्य, विरह-मिलन दाम्पत्य के धरातल पर उतर कर कबीर को एक अलग मुकाम दिलाते हैं।

44, शिव विहार, फरीदी नगर, लखनऊ-226 015

चिंतन

आचार्य महाश्रमण मिट्टी से मानुष गढ़ता संत

◆ ललित गर्ग

अहिंसा की एक बड़ी प्रयोग भूमि भारत में आज साम्प्रदायिकताएं अनैतिकता, हिंसा के घने अंधकार में एक संत-चेतना चरैवेति-चरैवेति के आदर्श को चरितार्थ करते हुए पांव-पांव चलकर रोशनी बांट रही है। जब-जब धर्म की शिथिलता और अधर्म की प्रबलता होती है, तब-तब भगवान महावीर हो या गौतम बुद्ध, स्वामी विवेकानंद हो या महात्मा गांधी, गुरुदेव तुलसी हो या आचार्य महाप्रज्ञ-ऐसे अनेक महापुरुषों ने अपने क्रांत चिंतन के द्वारा समाज का समुचित पथदर्शन किया है। अब इस जटिल दौर में सबकी निगाहें उन प्रयत्नों की ओर लगी हुई हैं, जिनसे इंसानी जिस्मों पर सवार हिंसा, अनैतिकताएं नफरत द्वेष का ज्वर उतारा जा सके। ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य श्री महाश्रमण और उनकी अहिंसा यात्रा इन घने अंधेरों में इनसान से इंसान को जोड़ने का उपक्रम बनकर प्रस्तुत हो रही है, उनका सम्पूर्ण उपक्रम प्रेम, भाईचारा, नैतिकता, सांप्रदायिक सौहार्द एवं अहिंसक समाज का आधार प्रस्तुत करने को तत्पर है। वे मिट्टी से मानुष गढ़ने वाली महान् संत-चेतना हैं। वे व्यक्ति-प्रबन्धन कैसे करते हैं, मनुष्य को कैसे पहचानते हैं और अपने वृहत्तर आन्दोलनों के लिये कैसे उनके योगदान को प्राप्त करते हैं, नये मूल्य मानक कैसे गढ़ते हैं, हर दिन लम्बी-लम्बी पदयात्राएं करते हुए भी शांति एवं अहिंसा स्थापना के उपक्रमों को कैसे आकार देते हैं, वह अपने आप में विस्मय एवं अनुकरण का विषय है।

आज देश में गहरे हुए घावों को सहलाने के लिए, निस्तेज हुई मानवता को पुनर्जीवित करने एवं इंसानियत की बयार को प्रवहमान करने के लिए ऐसे महापुरुष/अवतार की अपेक्षा है जो मनुष्य जीवन के बेमानी होते अर्थों में नए जीवन का संचार कर सकें। आचार्य श्री महाश्रमण ऐसे ही एक महापुरुष हैं, जिनके प्रयत्नों से सांप्रदायिकता की आग को शांत किया जा सकता है।

आचार्य श्री महाश्रमण अहिंसा यात्रा के विशेष उपक्रम को लेकर सुदूर प्रान्तों सहित पड़ोसी राष्ट्र भूटान-नेपाल की पदयात्रा करते हुए इन दिनों कर्नाटक प्रांत में यात्रायित हैं। उनकी यह पदयात्रा जब राष्ट्रीय ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय होकर सम्पूर्ण मानवता को अहिंसा से अभिप्रेरित करने वाली है तब देश ही नहीं, दुनिया की नजरें घटित होने वाली इस अभिनव क्रांति की ओर टकटकी लगाये हैं। यह पहला अवसर बना है जब किसी जैन आचार्य ने पदयात्रा करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों का स्पर्श किया हैं। आचार्य महाश्रमण स्वकल्याण और परकल्याण के संकल्प के साथ 30,000 से अधिक किलोमीटर की पदयात्रा से जनमानस को उत्प्रेरित कर मानवता के समुत्थान का पथ प्रशस्त कर रहे हैं। अहिंसा यात्रा हृदय परिवर्तन के द्वारा अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर, हिंसा से अहिंसा की ओर प्रस्थान का अभियान है। यह यात्रा कुरूढ़ियों में जकड़ी ग्रामीण जनता और तनावग्रस्त शहरी लोगों के लिए भी वरदान है। जाति, सम्प्रदाय, वर्ग और राष्ट्र की सीमाओं से परे यह यात्रा बच्चों, युवाओं और वृद्धों के जीवन में सद्गुणों की सुवास भरने के लिये तत्पर है। आचार्य श्री महाश्रमण ने इस अहिंसा यात्रा के तीन उद्देश्य निर्धारित हैं-सद्भावना का संप्रसार, नैतिकता का प्रचार-प्रसार एवं नशामुक्ति का अभियान। इंसानियत की ज्योति को प्रज्ज्वलित करने वाली इस अहिंसा यात्रा के दौरान हजारों ढाणियों, गांवों, कस्बों, नगरों और महानगरों के लाखों-लाखों लोग न केवल आपके दर्शन और पावन पथदर्शन से लाभान्वित हुए, अपितु आपसे विविध संकल्पों को स्वीकार कर वे अमन-चैन की राह पर प्रस्थित भी हुए हैं।

अपने स्वास्थ्य की चिन्ता न करते हुए आचार्य श्री महाश्रमण ने अपने अहिंसा यात्रा के संकल्प को दृढ़ता से दोहराया है। उनके दृढ़ संकल्प, मानवीय उत्थान के लिए अहिंसक प्रयत्न एवं निडरता को नमन! महात्मा गांधी ने लिखा है- मेरी अहिंसा का सिद्धांत एक अत्यधिक सक्रिय शक्ति है, इसमें कायरता तो दूर, दुर्बलता तक के लिए स्थान नहीं है। गांधीजी ने अहिंसा को एक महाशक्ति के रूप में देखा और उसके बल पर उन्होंने भारत को आजादी भी दिलवाई। आचार्य श्री महाश्रमण भी अहिंसा यात्रा के माध्यम से देश और दुनिया में शांति, सद्भावना, नैतिकता एवं अमन-चैन को लौटाना चाहते हैं। निश्चित ही यह शुभ संकल्प है और आचार्य महाश्रमण जैसे महापुरुष ही ऐसे संकल्प लेने की सामर्थ्य रखते हैं। जिन प्रान्तों एवं देशों में अहिंसा यात्रा का विचरण हुआ वहां की जनता को आचार्य श्री महाश्रमण का आध्यात्मिक संबल एवं

मानवीयता का सिंचन मिलाए अहिंसा का वातावरण बनाए इंसान को इंसान बनाने की सकारात्मक फिजाएं निर्मित हुई हैं। हिंसा, नफरत एवं द्वेष से आक्रांत जन-जन में एक नया विश्वास जगा कि आचार्य महाश्रमण के प्रयत्नों से उनकी धरती पुनः अहिंसा, नैतिकता, सांप्रदायिक सौहार्द एवं इंसानियत की लहलहाती हरीतिमा के रूप में अपनी आभा को प्राप्त करने की ओर अग्रसर हुई हैं।

आचार्य महाश्रमण आध्यात्मिक जगत के विश्रुत धर्मनेता हैं। उनके प्रवचनों में धर्म और अध्यात्म की चर्चा होना बहुत स्वाभाविक है। पर उन्होंने जिस पैनेपन के साथ धर्म को वर्तमान युग के समक्ष रखा है, वह सचमुच मननीय है। जीवन की अनेक समस्याओं को उन्होंने धर्म के साथ जोड़कर उसे समाहित करने का प्रयत्न किया है। संस्कृति के संदर्भ में संकीर्णता की मनोवृत्ति उन्हें कभी मान्य नहीं रही है। वे हिन्दू संस्कृति को बहुत व्यापक परिवेश में देखते हैं। हिन्दू शब्द की जो नवीन व्याख्या उन्होंने दी है, वह देश की एकता और अखंडता को बनाए रखने में पर्याप्त है। वे नारी जाति के उन्नायक हैं। वे मानते हैं कि महिला वह धुरी है, जिसके आधार पर परिवार की गाड़ी सम्यक् प्रकार से चल सकती है। उनकी प्रेरणा से युगों से आत्मविस्मृत नारी को अपनी अस्मिता और कर्तृत्वशक्ति का तो अहसास हुआ ही है, साथ ही उसकी चेतना में क्रांति का ऐसा ज्वालामुखी फूटा है, जिससे अंधविश्वास, रूढ़संस्कार, मानसिक कुंठा और अशिक्षा जैसी बुराइयों के अस्तित्व पर प्रहार हुआ है।

शांति, प्रेम एवं सद्‌भावना के लिए मानवता तरस रही है। यह प्यास कौन बुझाएगा अभयी आचार्य श्री महाश्रमणजी! आप अहिंसा के प्रति वचनबद्ध हैं। इसलिए प्रेम का जल देनेए नैतिकता की स्थापना करने एवं स्वस्थ जीवनशैली को जन-जीवनशैली बनाने के लिये आपको नया पृष्ठ लिखना ही होगा, यही वर्तमान की जरूरत है। आचार्य श्री महाश्रमण जैसे महान आध्यात्मिक संतपुरुष का उस धरती को स्पर्श मिलना निश्चित ही शुभ और श्रेयस्कर है। आज देश और दुनिया को अहिंसा की जरूरत है, शांति की जरूरत हैए नैतिकता की जरूरत है, अमन-चैन की जरूरत है, सांप्रदायिक सौहार्द की जरूरत है-ये स्थितियां किसी राजनीतिक नेतृत्व से संभव नहीं हैं। इसके लिए आचार्य श्री महाश्रमण जैसे संतपुरुषों का नेतृत्व ही कारगर हो सकता है। आचार्य श्री महाश्रमण ही ऐसी आवाज उठा सकते हैं कि यह मौका तोड़ने का नहीं जोड़ने का है, टूटने का नहीं जुड़ने का है और इसका मतलब अपने अहं के अंधेरों से उभरने का है।

मेरा अभिमत है कि आचार्य श्री महाश्रमण के आह्वान पर भ्रष्टाचार एवं आपराधिक राजनीति से आकंठ पस्त एवं सांप्रदायिकता की विनाशलीला से थके-हारे, डरे-सहमे लोग अहिंसा और नैतिकता की शरण स्वीकार करेंगे, सांप्रदायिक सौहार्द एवं सद्‌भावना की घोषणा करेंगे। हिंसा से हिंसा, नफरत से नफरत एवं घृणा से घृणा बढ़ती है। इस दृष्टि से आचार्य महाश्रमण एक उजाला है, जिससे पुनः अमन एवं शांति कायम हो सकती है। इतिहास साक्षी है कि समाज की धरती पर जितने घृणा के बीज बोए गए, उतने प्रेम के बीज नहीं बोए गए। आचार्य श्री महाश्रमण इस ऐतिहासिक यथार्थ को बदलने की दिशा में प्रयत्न है। मेरा विश्वास है कि आचार्य श्री महाश्रमणजी की अहिंसा में इतनी शक्ति है कि सांप्रदायिक हिंसा में जकड़े हिंसक लोग भी उनकी अहिंसक आभा के पास पहुंच जाएं तो उनका हृदय परिवर्तन निश्चित रूप से हो जाएगा, पर इस शक्ति का प्रयोग करने हेतु बलिदान की भावना एवं अभय की साधना जरूरी है। अहिंसा में सांप्रदायिकता नहीं ईर्ष्या नहीं, द्वेष नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक व्यापकता है, जो संकुचितता और संकीर्णता को दूर कर एक विशाल सार्वजनिन भावना को लिए हुए है।

अहिंसा और नैतिकता की शक्ति असीमित है, पर अब तक उस शक्ति के लिए सही प्रयोक्ता नहीं मिले। आज जब आचार्य श्री महाश्रमणजी जैसे प्रयोक्ता हैं तो हमें भयभीत होने की जरूरत नहीं है। यों तो अहिंसा और नैतिकता सभी महापुरुषों के जीवन का आभूषण है, किंतु आचार्य महाश्रमण जैसे कालजयी व्यक्तित्व न केवल अहिंसक जीवन जीते हैं वरन समाज को भी उसका सक्रिय एवं प्रयोगात्मक प्रशिक्षण देते हैं।

ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज,
दिल्ली-92, मो. 0 98110 51133

अहिंसा और नैतिकता की शक्ति असीमित है, पर अब तक उस शक्ति के लिए सही प्रयोक्ता नहीं मिले। आज जब आचार्य श्री महाश्रमणजी जैसे प्रयोक्ता हैं तो हमें भयभीत होने की जरूरत नहीं है। यों तो अहिंसा और नैतिकता सभी महापुरुषों के जीवन का आभूषण है, किंतु आचार्य महाश्रमण जैसे कालजयी व्यक्तित्व न केवल अहिंसक जीवन जीते हैं वरन समाज को भी उसका सक्रिय एवं प्रयोगात्मक प्रशिक्षण देते हैं।

आलेख

समय की चुनौतियां और हिंदी कहानी की यात्रा

◆ दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'

हिन्दी कहानी के समक्ष समय की चुनौतियों के दरवाजे न कभी बंद थे, न भविष्य में बन्द होंगे। आज से करीब सवा सौ साल पहले जब आधुनिक हिन्दी कहानी आकार ग्रहण करने की प्रक्रिया में थी, तब कहानी के सामने पारस्परिक लोककथा वाले शिल्प और धीरोदात्तनायक वाली संकल्पना से मुक्त होकर जनसामान्य से जुड़ने की चुनौती थी। यह एक जटिल समय था। समाज में सामंती सोच और धार्मिक जकड़बन्दी की जड़ें बड़ी गहरी थीं। जिन्दगी में रूढ़ियां का दखल नियामक ताकत के रूप में था। एक तरफ यह साम्राज्यवादी शक्तियों का उत्कर्ष काल था, तो दूसरी तरफ नवजागरण की की धूप भी पूरी चमक के साथ फैली थी। कम्पनी बहादुरों की कृपा से देशी कुटीर उद्योग ध्वस्त हो चुके थे। स्वावलम्बी गांव गुजर-बसर के नए विकल्पों की तलाश में थे। नए व्यापारिक केन्द्रों का उदय हो रहा था। रोजगार की तलाश में लोग इन 'परदेशों' का रुख करने लगे थे। नए-नए सम्पर्कों से लोगों की सोच में नई चेतना का प्रस्फुटन होने लगा था। फिजा में राष्ट्रवाद के सुर भी सध रहे थे। तत्कालीन कहानी ने अपने समय की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक हलचलों को कब, कौन, कहां जैसे सपाट प्रश्नों के दायरे से आगे बढ़ कर क्या, कैसे और और क्यों के स्तर पर विश्लेषित करने की चुनौती को स्वीकार किया था।

इस क्रम में हिन्दी की पहली मौलिक कहानी माधव राव सप्रे ने लिखी या राजेन्द्र बाला घोष ने-इसके विवेचन का न कोई अर्थ है और न सन्दर्भ ! वैसे इस सिलसिले में हिन्दी साहित्य के दो महान दिग्गज पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की कहानियां भी 'जेष्ठा' पद की दावेदार हैं। तत्कालीन हिन्दी पत्रिकाओं-छत्तीसगढ़ मित्र, सुदर्शन, वैश्योपकारक, भारत भगिनी एवं सरस्वती के अंकों में केशव प्रसाद सिंह, भगवान दास, लक्ष्मीधर वाजपेयी, गिरिजादत्त वाजपेयी, कार्तिक प्रसाद खत्री, किशोरी लाल गोस्वामी, उदय नारायण वाजपेयी, सत्यदेव परिव्राजक की कहानियां मिलती हैं, जिसमें उन्नीसवीं सदी के आखिरी और बीसवीं सदी के शुरुआती वर्षो के जनजीवन की झलक मिलने लगती है। अशिक्षा, कुरीति, अंधविश्वास, छुआछूत, स्त्री शिक्षा, विधवा जीवन, पाखंड, धर्म के स्तर पर लूट-खसोट, गुलामी, बालविवाह, पर्दा प्रथा जैसे विषय कहानी के केन्द्र में आने लगे थे। सत्यदेव परिव्राजक सन्यासी होते हुए भी विदेश में रहकर भारतीय समाज की कमजोरियों पर कथा लेखन कर रहे थे।

इस क्रम में विद्यानाथ शर्मा, विश्वभर नाथ जिज्जा, वृंदावन लाल वर्मा, विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक, राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह, जयशंकर प्रसाद, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के रचनात्मक अवदान से हिन्दी कहानी समर्थवान बनने लगी थी। आगे चलकर प्रेमचन्द, सुदर्शन, आचार्य चतुरसेन, शिवपूजन सहाय, राधाकृष्ण, भगवती चरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, जैनेन्द्र कुमार तक आते-आते कहानी जनजीवन से ही नहीं, बल्कि जन मन से भी जुड़ गई थी। यह वह दौर था, जब हिन्दी कहानी साहित्य की केन्द्रीय विधा बन गई थी। भीष्म साहनी, यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क, भैरव प्रसाद गुप्त, मोहन राकेश, केशव प्रसाद मिश्र, निर्मल वर्मा, श्रीलाल शुक्ल शिव प्रसाद सिंह, कमलेश्वर के कथालेखन से कहानी का जनाधार अत्यंत सघन होने लगा था। सरस्वती, इंदु, सुधा, चांद, माधुरी, विशाल भारत, चांद, जागरण, हंस जैसी पत्रिकाओं ने एक ऐसा पाठक वर्ग तैयार कर दिया था, जिसको निरंतर अच्छी कहानियों की तलाश रहती थी। यहां तक कि सातवें-आठवें दशक तक नई कहानियां धर्मयुग, सारिका, साप्ताहिक, हिन्दुस्तान, कहानी, नीहारिका में कोई अच्छी कहानी छपती तो शहरों और कस्बों से आगे गांव-गिरांव में फैले ढेरों पाठक लेखक को प्रतिक्रिया में पत्र भेजते थे। यह एक तरह का पाठकीय प्रश्रय होता था। जो लेखक को ऊर्जा से ऊभ-चूभ कर देता था। परिणामतः वह पाठकीय रुचि को ध्यान में रख कर अच्छा लिखने का प्रयास करता था। अच्छे लेखन से यहां तात्पर्य उस कहानी से है, जिसमें घटित कार्य व्यापार हमारे जीवन अनुभव का हिस्सा हो और जो हमारी तकलीफों में शरीक होकर हमें सांत्वना दे, साथ ही उसका अंत एक सशक्त व्यावहारिक संभावना में हो।

इन्हीं गौरवपूर्ण दिनों में कुछ सम्पादकों के अंदर कथा-जगत का मसीहा बनने की ललक जाग उठी। उन्होंने कहानी में 'समांतर', 'सचेतन', 'अकहानी' जैसे आंदोलन का सूत्रपात किया। इन महानुभावों को मुगालता था कि वे कथा जगत के ब्रह्मा हैं, जिसे चाहें आसमान पर बैठा दें, जिसे चाहें खाक में मिला दें। यह वह बिंदु था, जहां से कहानी का जनाधार क्षीण होने लगा। पूरे सात-आठ दशकों के बीच कहानी ने जो एक जमा- जमाया पाठक वर्ग तैयार किया था। इन आंदोलनों की कृपा से वह दो दशक बीतते-बीतते छिन्न-भिन्न हो गया। अपनी अहमता और

महत्त्वाकांक्षा से ग्रस्त इन स्वयंभू मसीहाओं ने पाठक को हाशिए पर डालने में कोई कसर नहीं छोड़ी, लिहाजा पाठक भी कहानी को तवज्जो देना बन्द कर दिया और कहानी छापने वाली एक-एक पत्रिकाएं इतिहास बनने लगी।

एक वक्त ऐसा भी आया, जब यह कहा जाने लगा कि आज की तारीख में शायद ही सम्पूर्ण जगत में चार-छः हजार ऐसे स्वतंत्र कहानी के पाठक मिल जाये, जो स्वयं कथाकार न हों। आज हिन्दी के अधिसंख्य पाठक स्वयं कहानीकार, कवि, लेखक या आलोचक हैं। यह कथन सत्य तो नही था, मगर दावे हो रहे थे तो इसलिए कि कहानी एक अवांछित गिरे मुकाम तक पहुंच चुकी थी। कहानी को यहां तक लाने में उन महान कथाकार सम्पादकों का हाथ है, जो अपने ढंग से लिखवाने और चाटुकारों की जमात बटोरने में भले ही महत्तम सफलता हासिल किये हों। मगर कहानी विधा ही नहीं, बल्कि हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता की लुटिया डुबाने के सन्दर्भ में भी इतिहास उन्हें कभी माफ नहीं करेगा।

किसी भी क्षेत्र में जब अनर्गल होने लगता है तो कई दोयम दर्जे की प्रवृत्तियों के पनपने का रास्ता साफ हो जाता है। दलित विमर्श और स्त्री विमर्श की प्रासंगिकता से इनकार नहीं किया जा सकता, किन्तु यह स्थापना कि दलित के विषय में दलित ही पूरी निष्ठा, प्रामाणिकता औ ईमानदारी से लिख सकता है। स्त्री की पीड़ा को कोई पुरुष रचनाकार कैसे व्यक्त कर सकता है? जिसे उसने सहा नहीं, भोगा नहीं-उसे वह कैसे महसूस कर सकता है? यह अर्ध सत्य हो सकता है, बाकी वास्तविकता अलग है। जो भोगने वाला है, कोई जरूरी नहीं कि पूरी प्रामाणिकता और गहराई से उसे व्यक्त ही कर दे। विमर्शवादियों के तर्क को मानने का मतलब है, लेखक की संवेदनशीलता और परकाया प्रवेश की मान्यता से मुंह मोड़ना! मेरी समझ से विमर्शवाद के नकारात्मक आगहों का गुण-दोष के आधार पर समर्थन और विरोध न करना भी कहानी के लिए ठीक नहीं है।

कहानी की दुर्दशा को लेकर इलेक्ट्रानिक मीडिया को दोष दिया जाता है। जबकि जमीनी हकीकत यह है कि जब भी रांगेय राघव, भीष्म साहनी, फणीश्वर नाथ रेणु या प्रेमचन्द की किसी रचना पर धारावाहिक का प्रसारण हुआ है, उस किताब की बिक्री बढ़ जाती है। देखने की बात यह भी है। जब से टीवी पर धारावाहिकों का सिलसिला शुरू हुआ है, पुस्तक मेलों की हलचल कुछ अधिक ही बढ़ गई है। इसके बीच कोई अंतर्सम्बन्ध हो सकता है क्या? यह जो सोशल मीडिया है- व्हाट्सएप, फेसबुक आदि, इन पर भी अनगढ़ हाथों से सम्पन्न मार्मिक कहानियां आ रही हैं। इन पोस्टों पर जो कमेंट्स आते हैं, लोगों की च्वाइस ही नहीं, बल्कि यह भी स्पष्ट करते हैं कि लोकमानस आज भी सर्वाधिक प्रभावित कहानी से ही होता है। 'बहुवचन' के कथांक 'कहानी का दूसरा समय' के सम्पादकीय में अशोक मिश्र का कहानी को लेकर अभिमत है- 'हिन्दी कहानी पर बात करते हुए आज हम दावें के साथ कह सकतें हैं कि साठोत्तरी पीढ़ी से लेकर बाद की कई पीढ़ियां एक साथ सृजनरत हैं, जिसमें एकदम युवतर चेहरे भी हैं। यह कहानी का विद्यागत आकर्षण ही है कि वह सभी को अपनी ओर खींच ही लेती है।'

एक लाख टके का सवाल है कि कहानी की समस्त संभावनाओं का आकलन करके हम कहानी के जनाधार के पुनर्संगठन के प्रबंधन से जुड़ी रणनीति क्यों नहीं बना रहें? कहानी से उसका जनाधार छिटका है, तो उसे वापस लाने की दिशा में प्रयास करने से पूर्व हमें पिछली गलतियों कोई ईमानदारी से समझना होगा। शैलेश मटियानी, निर्मल वर्मा, फणीश्वर नाथ रेणु, भगवती चरण वर्मा, रांगेय राघव, अमृत लाल नागर, भीष्म साहनी, विष्णु प्रभाकर जैसे लेखकों के रचनात्मक अवदान- आंचलिकता, मखमली और चित्रात्मक भाषा, ध्वन्यात्मकता, जीवन की वैविध्यपूर्ण छवियों को नकार कर, पार्टी लाइन के निर्देश पर दूसरे और तीसरे दर्जे के प्रतिबद्ध लेखन को स्थापित करने का जो प्रयास किया गया, क्या पाठक के लिए इस थोपे हुए साहित्य की कोई प्रासंगिकता हो सकती है?

सीधे-सीधे कहानी एक उपभोक्ता वस्तु है- विद्वान बंधु इस सत्य का सामना क्यों नहीं करना चाहते? कहानी पाठक की मानसिक भूख शांत करने की एक भोज्य वस्तु है। इसे उपभोक्ता के लिए मैत्रीपूर्ण होना चाहिए। यह तभी संभव है, जब संघर्ष और जीवन अनुभवों से लेखक की दृष्टि साफ हो। यह दृष्टि सिर्फ किताबी ज्ञान या पार्टी निर्देशन से नहीं मिलती। कहानी पढ़ते हुए पाठक आश्वस्त हो जाए कि कहानी में जो हो रहा है, उसमें मैं स्थूल या सूक्ष्म किसी भी रूप में हूं- तो कहानी को वह अपना लेगा, अन्यथा नहीं।

पिछले दिनों वागर्थ, बहुवचन, नया ज्ञानोदय, साहित्य-भारती और सोच विचार के महत्त्वपूर्ण कहानी विशेषांक आए थे। इसमें कथाकारों की एक नई पीढ़ी सामने आई है। साहित्य जगत में विशेषांकों का जैसा स्वागत हुआ, वह भी अभूतपूर्व था। आज भी हंस, कथादेश, तद्भव, कथाक्रम, परिकथा, लमही, पाखी, कथा, कथा समवेत, युगतेवर जैसी गंभीर पत्रिकाओं में छपने वाली कहानियां अपना एक मुकाम रखती हैं। यह पत्रिकाएं आपने-अपने ढंग से कहानी को गतिशील बनाने में सन्नद्ध हैं। 'कथा समवेत' द्वारा आयोजित 'मां धनपती देवी स्मृति कथा साहित्य सम्मान' हेतु आने वाली प्रति वर्ष सौ से अधिक कहानियां इस विद्या के भविष्य के प्रति आश्वस्त करती हैं।

वैसे आज की स्थिति पहले के हिसाब से काफी जटिल हो चुकी है। दो दशक से ऊपर हुआ, 'डंकल प्रस्ताव' पर हस्ताक्षर हुए, तब मुक्त बाजार व्यवस्था के लिए देश के दरवाजे खुल गए थे। इससे निर्बाध विदेशी पूंजी का आगमन आरंभ हुआ, इसी के साथ

बरसात पर ताज़ा दोहे

अनन्त आलोक

लो बादल ने खोल दी, फिर गठरी की गीठ।
कीचड़ कीचड़ हो गई, है गठरी की पीठ।

बिजली देती धमकियाँ, रही हवाएं छेड़।
बादल के आंसू गिरे, लपक रहे हैं पेड़।

बादल आये देखने, पर्वत जंगल बाग।
दादुर, झींगुर गा रहे, मिलकर स्वागत राग।

भीगे भीगे दिन हुए, गीली गीली रात।
दीप जला कर चल पड़ी, जुगनू की बारात।

बादल से बन प्रेम रस, बरस रही है प्रीत।
रिमझिम बूँदें लिख रहीं, जीवन का संगीत।

नदियाँ नाले भर गए, भरे समंदर ताल।
शुष्क धरा की पीठ पर, उग आये हैं बाल।

सावन आया बाग़ में, आई मस्त बहार।
अमलतास ने टांग दी, स्वर्णिम वन्दनवार।

धरती को सावन किया, कर सावन को रंग।
बाग़ बगीचे छाप कर, छापे कीट पतंग।

वृक्षों ने धारण किये, हरे हरे से वस्त्र।
फूलों ने कर धर लिए, कंटक रूपी शस्त्र।

बांच रही है गाय माँ, बिखरे हैं सर्वत्र।
आया सावन डाकिया, लेकर ढेरों पत्र।

नदियाँ नाले भी गढ़े, बिछा गलीचा सब्ज।
सावन ही पहचानता, है कुदरत की नब्ज।

खड़े सिपाही खेत में, हाथों में बन्दूक।
भरी गोलियां भूख की, जिनकी मार अचूक।

होरी सोया खेत में, खड़े किये हैं कान।
मकई की मेड़ पर, जाग रहा है श्वान।

बादल बिजली मिल करे, धरा गगन में शोर।
झूम झूम कर झूमता, धरा गगन में मोर।

अम्मा का सिर भीगता, भीग रही है गाय।
दोनों का घर एक सा, कौन सुनेगा हाय।

साहित्यालोक, बायरी ददाहू जिला सिरमौर
हिमाचल प्रदेश-173022 मो. 0 94187 40772

पाश्चात्य विचार, जीवन पद्धति, दर्शन, मूल्य, तौर-तरीकों का प्रवाह भी हमारे जीवन की स्वाभाविक गत्यात्मकता में हस्तक्षेप करने लगा था। 'बहुवचन' के सम्पादक अशोक मिश्र ने 'दूसरे समय में कहनी' में इसे स्पष्ट करते हुए कहा है- 'आज वैश्वीकरण के दौर में सब कुछ विखंडन का शिकार हो चुका है। भू-मंडलीकरण और बुद्धूबक्से ने समाज को इतना बदला कि सामूहिकता की भावना ही समाप्त हो गई और हम आज अपने घर परिवार की खोल में सिमट कर रह गए हैं।, यह जरूर एक सकारात्मक संकेत है कि हमारे कथाकार इस हस्तक्षेप और इससे उत्पन्न स्थिति को पहचानने में सफल हो रहे हैं। 'बहुवचन' के कथांक में ही 'बल्लूचाचा उवाच' (अरविन्द कुमार सिंह), 'उसके पर जाने और ये आसमां जाने' (आशुतोष', 'जंजीर' (ज्योति कुमारी), 'बहुत देर हो गयी' (नीरजा पाण्डेय) में बदलते समय की स्पष्ट आहट है। मैं अति चर्चित कथाकार स्वयं प्रकाश, संजीव, शिवमूर्ति, पंकज विष्ट, बलराम, महेश दर्पण के बाद के कथाकार अखिलेश, हरिभटनागर, कमलेश भट्ट 'कमल', डॉ. शोभनाथ शुक्ल से भी नए कहानी लेखकों की कहानियां- 'अपनी-अपनी श्रद्धा' (लमही) ओम प्रकाश तिवारी, 'एक और उर्वशी' (नया ज्ञानोदय) आशा श्रीवास्तव, 'विकास एक शहर का' (नया ज्ञानोदय) विकास दूबे, 'डर' (हंस) सपना सिंह, 'उसकी आजादी' (पाखी) पद्मा शर्मा, 'अब बेवफा' (पाखी) मंजुलिका पाण्डेय की रचनाएं देख रहा हूं, इन कथाकारों में समकालीन जीवन के संश्लिष्ट यथार्थ, विषमताओं, दुख-दर्द और जीवन संघर्ष को देखने की दृष्टि, पारिस्थितिक गत्यात्मकता की समझ, और भविष्य की दिशा के पहचान की क्षमता है।

'साहित्य भारती', जनवरी-मार्च-16 (कहानी विशेषांक) में 'टेपरा' (नीरजा माधव), 'ब्लैंक काल' (अमिता दूबे), 'रिश्तों का इन्द्र धनुष' और परावर्तन' (सुषमा मुनीन्द्र) की कहानियां, या 'मां धनपती देवी स्मृति कथा साहित्य सम्मान' में समा त कहानियां 'एक कप कॉफी' (रूवी मोहंती), 'कंबल' (विजय चितौरी), 'मोरी साड़ी अनारी न माने राजा' (सोनी पाण्डेय) में एक अलग किस्म का रिद्म है। इनके शिल्प विधान में विषयानुकूल ताजगी है। कथ्य के अनुरूप भाषा अपनायी गई है। जीवन के छोटे-छोटे बिम्बों के जरिये यथार्थ की परतों को उतारा गया है। अपनी नयी कहन से यह कहानियां मन में देर तक टंकी रह जाती है। कहानी ने समय के साथ अपना शिल्प, बुनावट और अंदाज बदल डाला है। यह समय के सरोकारों के साथ कदमताल करते हुए निरंतर आगे बढ़ रही है।

पो.आ. जासापारा, गोसाईगंज, सुलतानपुर,
उत्तर प्रदेश-228119, मो.- 0 73791 00261

संस्मरण

काजा में वह मोहतरमा

◆ वनभूषण नायक मूल बांग्ला से अनुवाद : रतनचंद 'रत्नेश'

काजा शहर में उस बार पर्यटक कुछ खास नहीं थे। अगस्त के प्रथम सप्ताह में ठंड खासी थी। लिहाजा मनाली से रोहतांग पास (3980 मीटर) तथा खूमजुमला (4551 मीटर) पार कर दो सौ किलोमीटर दूर काजा शहर में शायद ही बाहर के किसी व्यक्ति को देख पाया। जिस भीड़ को देखकर आश्चर्यचकित हुआ जा सकता है, उन विदेशियों का भी कहीं नामोनिशान नहीं था। कई बार मन बनाने के बावजूद मेरा इससे आगे कुंगरी गोम्पा तक जाना न हो पाया। इस बार वहीं जाने के बारे में सोचकर आया था। कहते हैं कि किसी समय यह गोम्पा बौद्ध तंत्रसाधना के केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध था। अभी भी कुंगरी (3520 मीटर) बहुत मशहूर है। पिन नदी के किनारे-किनारे बड़ी सड़क से गुलिंग से मात्र दो किलोमीटर ऊपर चढ़ते ही कुंगरी गोम्पा तक पहुंचा जा सकता है।

स्पीति उपत्यका का प्राणकेन्द्र काजा (3600 मीटर) से पैंतीस किलोमीटर दूर कुंगरी जाने के लिए पैदल या फिर किराये के वाहन के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। दो दिन की प्रतीक्षा के बाद एक सरकारी ट्रक से आतरगो जाकर वहां से पैदल ग्यारह किलोमीटर जाने के बाद हताश होना पड़ा। एक युवा लामा कुंगरी जाने वाली राह पर खड़ा था। उन्होंने बताया कि उस दिन गोम्पा के दर्शन नहीं हो सकते। क्यों या किस कारण, इस बारे में उसे भी कुछ नहीं पता था। उसे तो मात्र लोगों को सूचित करने के लिए कहा गया है। यह स्पष्टीकरण देने में उसने किसी प्रकार की दुविधा व्यक्त नहीं की। मुझे बेहद निराशा हुई। इतने दिनों बाद एक अवसर मिल पाया तो वह भी सिरे नहीं चढ़ा। अपनी क्षुब्धता को मैं किसी तरह प्रकट करने वाला ही था कि तभी एक किराये की गाड़ी ने मेरे पास आकर जोर से ब्रेक लगाया। क्षण भर में वहां एक अनहोनी-सी घटना घट गई।

उस गाड़ी से एक अत्यंत स्मार्ट महिला उतरीं। बॉबकट श्वेत-श्याम बालों में वह अत्यंत आकर्षक लग रही थी। अनुमानतः मेरी ही तरह उन्होंने भी हाल-फिलहाल पचास की उम्र को लांघा होगा। मैडम ने उस लामा को धक्का देकर हटाने की कोशिश की और खुद विपदा में पड़ गईं। रास्ते के ऊपर खड़े स्थानीय पांच-सात लोग मैडम के सम्मुख आ खड़े हुए। मैंने देखा कि ड्राइवर गाड़ी घुमाकर मैडम को गाड़ी में बिठाने के लिए तत्पर हो उठा है। टूटी-फूटी अंग्रेजी में उसने कहा कि आप यदि इसी समय गाड़ी में नहीं बैठेंगी तो आपके साथ-साथ मैं भी भारी मुसीबत में पड़ जाऊंगा। महिला ऊंचे स्वर में बोलते हुए गाड़ी में बैठ गईं। दरअसल स्पीति के इलाके में लामाओं के प्रति कोई असम्मान नहीं दिखाता। किसी प्रकार की आपत्ति हो भी तो लोग कोई एक सहज राह ढूंढ लेते हैं। विदेशी महिला थीं, संभवतः यहां के रीति-रिवाजों को अधिक वाकिफ़ न हों या फिर ऐसा भी हो सकता है कि किसी कारण वे मानसिक रूप से विक्षिप्त हों। अचानक ऐसा कांड उन्होंने कर डाला कि क्या कहूं ?

गाड़ी अचानक जिधर से आयी थी, उधर ही चली गई। मुझे भी अब उसी राह लौट जाना चाहिए। इसका मतलब था कि फिर से ग्यारह किलोमीटर की पैदल-यात्रा। आतरगो पहुंचकर वहां शायद काजा के लिए कोई वाहन मिल जाय। कुंगरी गोम्पा न देख

हम दोनों बिल्कुल चुप्पी साधे हुए थे। न उन्होंने और न मैंने ही परिचय बढ़ाने की कोशिश की। वाहन के अंदर का माहौल बेहद असहनीय हो उठा था। लगभग आधे घंटे तक तो हमने एक-दूसरे की ओर देखा तक नहीं। ऐसा लगा जैसे हम काफी रास्ता तय कर आए हैं। बहरहाल इच्छा हुई कि मैडम का नाम जानूं। सो, अत्यंत विनम्रता से मैंने उनका नाम जानना चाहा और इस तरह अपना परिचय देते हुए बात आगे बढ़ायी, 'लेट मी इंट्रोड्यूस माइसेल्फ। आइ एम बी. नायक फ्रॉम वेस्ट बेंगौल। मे आई नो योर नेम मैम?'



पाने का मलाल मन में लिए मैं पैदल चल पड़ा।

गुलिंग से आतरगो तक गाड़ियां खासकर सड़क-निर्माण के कार्य में ही चलती हैं जो पी.डब्ल्यू.डी. यानी कि लोक-निर्माण विभाग के अधीन होती हैं। उन दिनों इसे सड़क कहना भी सही नहीं होगा परंतु उस सड़क पर चलते-चलते दो अद्‌भुत दृश्यों का आनंद उठाया जा सकता था। एक, आतरगो तक पिन नदी की नीली जलधारा की छलछलाती ध्वनि जो सिम्फनी की तरह मन में मधुर तरंगें जगाए रखती है। उस ध्वनि को सुनते हुए उत्तर-पूर्व में प्रसिद्ध डानखर की गोम्पा के भग्नावशेष दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं। स्पीति की रूखी हरियालीविहिन प्रांतर का डानखार (3170 मीटर) अभी भी निस्संदेह ताजमहल की तरह अपनी मर्यादा कायम रखे हुए है। दूसरा मनोहारी दृश्य आतरगो पहुंचने पर दिखता है। वहां इतना जल बहाकर लाने पर भी स्पीति नदी में पिन का असहाय आत्मसमर्पण मन को बेस्वाद कर देता है परंतु उस समस्त दिगंत का महामिलन का अद्‌भुत दृश्य साकार हो उठता है। किसी प्रकार की विरक्ति यहां हो ही नहीं सकती। आइ से, जस्ट नो आर्गुमेंट - यू अंडरस्टैंड?

आतरगो जाने के लिए स्पीति नदी के ऊपर एक लोहे का पुल पार करना होता है। देखा कि एक सफेद एम्बैस्डर पुल के अंतिम सिरे पर खड़ी है। एक अवसर की संभावना बनी। दिन के तीन बज चुके थे। काजा अभी भी बाइस किलोमीटर की दूरी पर था। मजबूत शरीर के लिए बाइस के बाद फिर से बाइस किलोमीटर कुछ अधिक ही है। फिर भी लिफ्ट मांगने की प्रवृत्ति मुझमें नहीं है। पार होकर ताबो-काजा पथ पर लगभग किलोमीटर आगे जाने पर पीछे से गाड़ी की आवाज़ सुनाई दी। मुड़कर देखा तो एक सफेद एम्बैस्डर थी। तो क्या यह वही गाड़ी है, मैं सोच ही रहा था कि वह मेरे पास आकर रुक गई। विशुद्ध अंग्रेजी में उन्होंने मेरे बारे में जानना चाहा। उस समय भी वे गाड़ी के अंदर ही थे। शीशा सरकाने पर देखा कि वही विदेशी महिला थीं। उसकी भी गाड़ी सफेद ही थी, मुझे यह खयाल नहीं रहा था।

'इफ यू वांट, आई विल गिव यू अ लिफ्ट अपटु काजा।'

ऐसी दशा में अवसर मिलने पर जो होता है, वह मेरे साथ भी हुआ। बिना समय गंवाए मैं अपना बैग लेकर मैडम के बगल में बैठ गया। बैठने के बाद ऐसा लगा जैसे मैंने कोई गलत कदम उठा लिया हो। जो औरत किसी को धक्का मार सकती है, वह तो कभी भी मार-पीट पर उतर आएगी परंतु अब यह सोचने का कोई फायदा नहीं था।

हम दोनों बिल्कुल चुप्पी साधे हुए थे। न उन्होंने और न मैंने ही परिचय बढ़ाने की कोशिश की। वाहन के अंदर का माहौल बेहद असहनीय हो उठा था। लगभग आधे घंटे तक तो हमने एक-दूसरे की ओर देखा तक नहीं। ऐसा लगा जैसे हम काफी रास्ता तय कर आए हैं। बहरहाल इच्छा हुई कि मैडम का नाम जानूं। सो, अत्यंत विनम्रता से मैंने उनका नाम जानना चाहा और इस तरह अपना परिचय देते हुए बात आगे बढ़ायी, 'लेट मी इंट्रोड्यूस माइसेल्फ। आइ एम बी. नायक फ्रॉम वेस्ट बेंगौल। मे आई नो योर नेम मैम?'

अचानक मुझे ऐसा लगा मानो मोहतरमा का चेहरा पीला पड़ गया हो। संभवतः वह कुछ परेशान-सी दिखी, जबकि मैंने अपना नाम बताकर सिर्फ उनका नाम जानना चाहा था। मैडम ने ड्राइवर को गाड़ी रोकने का आदेश दिया। साथ-ही-साथ गाड़ी रुक गई।

'मिस्टर नायक, तुम बीच राह में टहल रहे थे। तुमने सहायता नहीं मांगी फिर भी मैंने आपके लिए गाड़ी रुकवायी। ऐसा लगा था जैसे कि आप बिना वजह मुसीबत में पड़ गए हैं। मैंने आपको काजा तक लिफ्ट देना चाहा और आपने स्वीकार भी किया। क्या इतना ही काफी नहीं है?'

मैं जड़वत्‌ होकर रह गया। यह तो निहायत ही असभ्य थीं।

क्या कहूं, कुछ समझ नहीं पा रहा था।

'आप मेरा नाम जानना चाहते हैं। आपकी हिम्मत तो देखो। चलो, अभी यहीं गाड़ी से उतर जाएं।'

बिना कुछ कहे जब मैं वाहन से उतर रहा था कि उस महिला ने मेरा बैग अपने पांव से धक्का देकर नीचे फेंक दिया। मैं कुछ समझ पाऊं कि तेज गति से गाड़ी काजा की ओर चली गई।

मैं हमेशा से पहले दर्जे का अहमक रहा हूं और अपने इस बुराई को वर्षों से जानता हूं। फिर भी मैं समझ नहीं पाया कि किस कारण से मुझे अपमानित होना पड़ा। बहरहाल, मानो कुछ हुआ ही नहीं, ऐसा समझकर मैं फिर से पैदल चल पड़ा। घंटा भर तेजी से चलने के बाद मुझे एक छोटी-सी ढाबेनुमा छावनी दिखी। मैं बहुत बुरी तरह थक चुका था। आगे बढ़कर देखा तो वह ढाबा नहीं, बल्कि एक छोटी-सी चाय की दुकान थी। चाय के संग वहां बिस्कुट भी नज़र आए। और भी क्या कुछ था। बहुत देर पहले बने सूखे-से आलू के परौंठे भी थे। बैग उतारकर मैं वहां बने बेंच पर बैठ गया।

तीन किलोमीटर आगे चलने पर ही काजा है परंतु सच तो यह था कि मेरे पांवों ने अब आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया था। छोटे गिलास में एक के बाद एक दो गिलास चाय पीकर मैं उस सूखे से परांठे को खाने जा ही रहा था कि देखा, वह मैडम उस दुकान में प्रवेश कर रही है। वहां भी उन्होंने एक आश्चर्यजनक घटना कर डाली। लगा, मुझे चिढ़ाने के लिए वह मेरी ओर देख कर हंस रही है। प्रत्युत्तर में मैं हंसा तो नहीं परंतु बेंच पर सरक कर एक ओर हो गया। वह मेरे पास आकर बैठ गई और अपने मुखड़े को मेरे करीब लाकर बार-बार कहने लगी -- 'मिस्टर नायक, आय एम वेरी वेरी सॉरी।'

इसी एक शब्द के सहारे विदेशी अच्छी-खासी नौटंकी कर लेते हैं और छोटा-बड़ा जुर्म करके भी इस शब्द का प्रयोग करने से नहीं चूकते। सचमुच विदेशियों के लिए यह एक मूल्यवान शब्द है। फिर भी जन्मजात बोध और अदम्य मानसिक विश्वास ही यह समझने में सहायता कर पाता है कि किसकी 'सॉरी' की अहमियत अधिक है। मेरे सरल विश्वासी मन को लगा कि मोहतरमा सचमुच शर्मिन्दा हैं। मैंने उन्हें आश्वस्त किया-- 'आप खामख्वाह मुझसे क्षमा मांग रही हैं। शायद आपको मेरी बात अच्छी नहीं लगी थी, सो आपने क्षुब्ध होकर मुझे अपनी गाड़ी से उतार दिया था। मैं अपनी गलती मानता हूं और मुझे आपसे क्षमा मांगनी चाहिए।'

मेरी बातों पर वह विश्वास नहीं कर पा रही थी। शायद सोच रही हो, क्रोधावेश में मैं उससे मजाक कर रहा हूं।

'तुम सच कह रहे हो?' उन्होंने पूछा।

मैं शायद हंस पड़ा था। कहा, 'मैं बिल्कुल सच कह रहा हूं।'

यह सुनकर उस देहाती व्यक्ति के सामने ही वह मेरा गाल चूमकर उठ खड़ी हुई। मुझे लज्जा महसूस हुई थी परंतु टी-स्टाल से निकलकर रास्ते पर आकर खड़ा होते ही सब पूर्ववत् स्वाभाविक हो गया। कई बार पहाड़ के अलावा मैदानी इलाके में भी मेरा सामना विदेशियों से हुआ है और व्यापक तौर पर। उससे मैं यह जान चुका हूं कि अपनी अनुभूति या मन की भावना को जबरन रोक पाना इन लोगों ने सीखा ही नहीं है। वे इस क़दर घुलमिल जाने के आदी होते हैं कि कई बार दुविधा होने लगती है। इन सभी परिस्थितियों से वही पार पाता है जो सभी दशाओं में सब कुछ स्वीकार करने की हैसियत रखता हो। इस संदर्भ में मेरी भी हस्ती कुछ कम नहीं थी। अतः जान गया कि अब कुछ घंटों के लिए मोहतरमा से मेरा सामना अब न होगा।

शाम होते-होते मैं काजा पहुंचा ही था कि मेरे होम-स्टे के मालिक वांगेल ने बताया कि कल सुबह आप कमरा छोड़ दें तो



बेहतर होगा। किसी एक बड़ी पार्टी को उनके सभी कमरे चाहिए। वे सुबह-सुबह ही आना चाहते हैं। कुछ सोचकर मैंने गर्दन हिला दी। मैं कमरा छोड़ दूंगा, यह जानकर वह खुशी-खुशी वहां से चला गया। कमरे के उत्तर दिशा में एक टुकड़ी खिड़की से एक चलताऊ-सा रेस्तरां दिखता है। तंगहाल लोग ही वहां नाश्ता करने आते हैं। मैं भी वहीं जाता हूं। अचानक नज़र पड़ी कि वह मैडम वहां इधर-उधर कुछ तलाश रही हैं। उनके हाथ में चाय का एक प्याला था। सोचा था कि स्पीति नदी के किनारे-किनारे पुराने काजा शहर तक हो आऊंगा परंतु इस समय मेरा निकलना वाज़िब नहीं था। उनकी आंखों के सामने पड़ते ही अन्य किसी समस्या के खड़े होने का अंदेशा होने लगा था।

कुछ क्षण तक वह चुप रही और फिर मेरे कहे पर आश्वस्त होते हुए कहा, 'ठीक है। फिर कभी भविष्य में कहीं मुलाकात होगी। तब मैं अपनी बात आपको कह पाऊंगी।' मुझे लगा कि उन्होंने अपने आवेग को दबाकर इन शब्दों को कहा हो। मैं भी चुप न रहा, 'अवश्य मुलाकात होगी मैडम। उसी वक्त हम अपनी बातें कहेंगे। मैं आपकी प्रतीक्षा में रहूंगा।'

वहां से उनके ओझल होने के बाद मैं पुराने काजा को देख आया। पौने आठ बजे के बाद काजा शहर के रास्ते में अस्सी प्रतिशत लोग नशे में झूमते मिल जाएंगे। उनसे बचकर किसी तरह होम-स्टे के पास पहुंचा तो सामने मैडम थीं। मुझे अत्यंत आश्चर्य हुआ। इतनी स्वच्छंद है कि इतनी रात गए भी ऐसे निम्नस्तरीय इलाके में वह किस उद्देश्य से घूम रही हैं?

मुझे सामने पाकर वह प्रसन्नता से चहक उठी। फिर कुछ क्षुब्ध भी हुई। कब से तुम्हें ढूंढ रही हूं परंतु कोई भी तुम्हारे बारे में कुछ भी बता नहीं पा रहा था। रहने के लिए तुम्हें और कोई जगह नहीं मिली क्या? वह यों बोल रही थी जैसे मुझे वर्षों से जानती हो। मुझे कहां ठहरना है, अब वह ही निर्धारित करेगी।

'मुझे ढूंढ रही थीं? अचानक... भला क्यों?'

झट से मुझे बांहों से पकड़कर उन्होंने रेस्तरां की एक बेंच पर बिठा दिया। माहौल सूनसान था। मुझसे चिपककर बैठ वह मुस्कुरायी।

परिचय न भी हो, पर मैंने तुम्हें पहचान लिया है मोहतरमा। मैंने मन ही मन कहा। कोई व्यक्ति इतनी शीघ्रता से अपनी खोल से बाहर निकल आएगा, मैंने कभी सोचा नहीं था। फिर भी मुझे क्यों ढूंढ रही हैं, मैंने दूर अंधकार में पहाड़ की दीवार पर आंखें टिकाए यह जानना चाहा।

'तुम मनाली कब लौटोगे?'

'कल सुबह ही। चार बजकर दस मिनट पर मेरी बस छूटेगी।'

मैडम अवाक होकर रह गई। 'क्या कह रहे हैं? मैंने तो सोचा था कि आपके साथ कुछ वक्त गुजारूं।'

मुझे भी आश्चर्य हुआ। यह क्या कह रही है? कुछ वक्त मेरे संग गुजारना चाहती है परंतु हकीकत यह थी कि उसने ऐसा सोचा ही नहीं था कि मैं इतनी जल्दी काजा छोड़ दूंगा।

'तो फिर आज रहने दो। कल सुबह ही बस-अड्डे पर आकर आपसे मुलाकात करूंगी।' फिर वह अचानक उठ खड़ी हुई और कुछ आगे बढ़कर गाड़ी में जा बैठीं।

कंपकंपाती ठंड और तेज हवा को चीरता हुआ अंधेरे में बस-स्टैंड पर पहुंचकर देखा तो मैडम मेरी प्रतीक्षा कर रही थीं। मेरे साथ वह भीड़ को धकियाते हुए बस पर चढ़ गईं जबकि उन्हें इसकी आवश्यकता नहीं थी। मेरी किसी बात पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। भीड़-भड़क्का और धूम्रपान की उत्कट धुएं से सांस अटकने के बावजूद मोहतरमा वहां खड़ी रहीं। बस चलने की पहली हॉर्न के बजते ही उन्होंने अपना मुंह मेरे कान के पास लाकर कहा, 'आज से सात दिन बाद क्या तुम मुझे शिमला में मिल सकोगे?

मनाली में कुछ दिन रुककर मुझे शिमला जाना ही था। मैंने अपना चेहरा उठाकर उनकी ओर देखा, क्या वह सचमुच मुझसे मिलना चाहती है? होता है, कभी-कभी अचानक ऐसा। आवेगवश सहसा किसी नारी के प्रति आकर्षण बढ़ जाता है। फिर कुछ करने को रह नहीं जाता। उत्तर देना पड़ा -- 'नहीं मैडम। यह संभव नहीं हो पाएगा। मुझे शीघ्र ही कोलकाता लौटना है।'

कुछ क्षण तक वह चुप रही और फिर मेरे कहे पर आश्वस्त होते हुए कहा, 'ठीक है। फिर कभी भविष्य में कहीं मुलाकात होगी। तब मैं अपनी बात आपको कह पाऊंगी।'

मुझे लगा कि उन्होंने अपने आवेग को दबाकर इन शब्दों को कहा हो। मैं भी चुप न रहा, 'अवश्य मुलाकात होगी मैडम। उसी वक्त हम अपनी बातें कहेंगे। मैं आपकी प्रतीक्षा में रहूंगा।'

वह अवाक होकर रह गई। मानो उसे विश्वास नहीं हो रहा हो।

'सच कह रहे हो, तुम प्रतीक्षा करोगे?'

'बिल्कुल सच।'

मेरे सीट से उठकर खड़े होते ही वह प्रबल आवेग से मेरे गले लग गई। वह दृश्य देखकर बस के देहाती लोग हतप्रभ होकर रह गए।अंतिम हॉर्न देकर बस रवाना हुई। उसी दौरान तत्परता दिखाते हुए मैडम नीचे उतर गई। क्षण भर में सब कुछ पीछे छूट गया।

(बांग्ला में यह संस्मरण 4 जून 2017 के 'आनंद बाजार' के वेबसाइट पर उपलब्ध है।)

कोठी नं.नं. 213-ओ, विक्टोरिया एन्क्लेव, भबात, जीरकपुर, पंजाब -140603 मो. 0 88723 96556

निबंध

नाराजगी क्यों और किससे

◆ अंकुश्री

काम पूरा हो जाये- इसके लिये हर कोई प्रयास करता है। कुछ लोगों का काम हल्के प्रयास से ही पूरा हो जाता है। किन्तु कुछ लोग जी-जान लगा कर प्रयास करते हैं, फिर भी उन्हें सफलता नहीं मिल पाती। कभी-कभी एक काम में नहीं, बल्कि कई कामों में लगातार असफलता मिलती जाती है। प्रयासों के बाद जब काम पूरा नहीं होता तो मन में खिन्नता आती है। खिन्नता की मात्रा कम या अधिक हो सकती है। बढ़ी हुई खिन्नता से प्रसन्नता समाप्त हो जाती है और स्वभाव में नाराजगी आ जाती है।

नाराजगी किसी को किसी से हो सकती है। ऐसा नहीं है कि नाराज होने वाला व्यक्ति उसी से नाराज होता है, जिसके कारण उसकी प्रगति बाधित हुई रहती है। नाराजगी जब स्वभाव में घुस जाती है तब वह लाभ-हानि की बात सोचे बिना किसी व्यक्ति पर नाराजगी ज़ाहिर करने लगता है। निश्चित रूप से इसका परिणाम उसके पक्ष में नहीं जा पाता। मगर नाराज व्यक्ति तो बस नाराज रहता है। किसी से भी वह नाराजगीपूर्ण बातें करता है। भले इसके लिये उसे बुरा परिणाम ही क्यों नहीं भुगतना पड़ जाये।

जब स्वभाव में नाराजगी आ जाती है तब दूसरा व्यक्ति स्वार्थी दिखने लगता है। उसे लगता है कि काम करने में उसकी कोई सहायता नहीं कर रहा है। बात सही भी हो सकती है। नाराजगी दूर कर जिससे काम हो, उससे शांत चित्त से बात करके काम पूरा कराया जा सकता है। लेकिन नाराज व्यक्ति द्वारा ऐसा करना संभव नहीं हो पाता।

बच्चा अपने अभिभावक से, कर्मचारी अपने नियंत्रक से, संबंधी अपने संबंधी से, शिष्य अपने गुरु से नाराज हो सकता है। यहां तक कि भक्त को भी अपने भगवान् से नाराजगी हो सकती है। नाराजगी मात्र छोटों की बड़ों से होती है - ऐसी बात नहीं है। बड़े भी छोटों पर नाराज होते हैं। बल्कि बड़ों की नाराजगी अधिक खतरनाक होती है। नाराज होने के बाद बड़ों की नाराजगी शीघ्र समाप्त नहीं होती। बड़ों की समस्याएं अधिक होती हैं, उनकी परेशानियां अधिक होती हैं। इसी कारण ऐसे थके हुए लोग जब नाराज होते हैं तो उनकी नारजगी शीघ्र समाप्त नहीं हो पाती। नाराजगी का सीधा संबंध परिस्थिति के साथ ही स्वभाव से भी है। सीधे स्वभाव के व्यक्ति की बात कोई नहीं सुनना चाहता है और उसके सीधेपन का नाजायज लाभ उठा कर उसकी बातों को नज़रअंदाज किया जाता है। ऐसा आदमी स्वभाव से सीधा और संकोची होने के कारण बोल नहीं बाता, लेकिन बुद्धि से कमजोर नहीं होने के कारण उसे अपनी उपेक्षा का भान हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में वह बहस में नहीं उलझ कर नाराज हो जाता है। नाराजगी मन की एक सहज प्रवृति है। परिपक्व व्यक्ति भी नाराज हो सकता है। सहन शक्ति जब सीमा लांघ जाती है तो नाराजगी हो जाती है। नाराज व्यक्ति यदि क्रोधी स्वभाव का है तो उसकी नाराजगी अधिक गहरी होती है। इससे उसे नुकसान भी अधिक भुगतना पड़ता है। प्राचीन काल की ऐसी अनेक घटनाएं शास्त्रों में भरी पड़ी हैं, जिनमें ऋषि-मुनियों की नाराजगी का वर्णन है। ऋषि-मुनि - अर्थात् संत पुरुष, फिर भी वे नाराज हो जाते थे। ऐसे में साधारण व्यक्ति का क्या हश्र?

नाराजगी के साथ 'स्व' का बोध जुड़ा हुआ है। अर्थात् स्वाभिमान पर ठेस लगना भी नाराजगी का कारण है। संबंधों का झूठा पक्ष उजागर हो जाने से भी नाराजगी हो जाती है। किसी से उम्मीद की जाती है और वह पूरी नहीं हो पाती तब भी नाराजगी हो जाती है।

कारण चाहे जो भी हो, किन्तु यह कटु सत्य है कि सबसे सबकी नाराजगी नहीं होती। नाराजगी की एक सीमा है। वह अधिकतर अपनों से होती है। इस बात को हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि किसी से जितनी अधिक नाराजगी है, उससे उतना अधिक अपनापन भी है। सुनने में बड़ा अजीब-सा लगता है। किन्तु नाराजगी का मूल तत्व अपनों में पायी जाने वाली कमी है। साधारण स्वभाव का कोई व्यक्ति जब अपने

नाराजगीपूर्ण बातें सुन का अधिकतर लोग बिदक जाते हैं। ऐसा करना अस्वाभाविक भी नहीं है। किन्तु कुछ लोग उसे दूसरी तरह से लेते हैं। नाराज व्यक्ति के प्रति उसके मन में क्रोध नहीं उत्पन्न होता, बल्कि उसके प्रति अपनापन झलकता है और इससे उसके मन में श्रद्धा बढ़ जाती है। मगर ऐसा सभी नहीं सोच पातें। बहुत ही परिपक्व बुद्धि वालों के लिये ऐसा समझना संभव है। अधिकतर मामलों में इसको समझ पाना कठिन होता है और इससे मामला और बिगड़ जाता है, बल्कि बिगड़ता चला जाता है।

निकटवर्ती में कोई कमी पाता है तो वह नाराज हो जाता है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जिस कमी के कारण कोई नाराज होता है, वह कमी उसमें नहीं पायी जाती। हो सकता है कि वैसी कमी उसमें और अधिक हो। किन्तु सामान्य स्वभाव का व्यक्ति, जिसे दुनियावी दाव-पेंच से मतलब नहीं रहता, अपनों पर शीघ्र नाराज हो जाता है। किसी का दोहरा रूप स्पष्ट होने पर भी नाराजगी बढ़ जाती है।

नाराज व्यक्ति जब नाराजगी प्रकट करता है तो सुनने वाले को बुरा लग सकता है। आपस में बात भी बंद हो जाती है। कुछ लोग जिससे नाराज होते हैं, उससे संबंध तोड़ लेते हैं। मगर सच्चाई यह होती है कि वह संबंध नहीं तोड़ता, बल्कि उससे बातचीत बंद कर देता है। ऐसी स्थिति में सम्मुख बातें भले नहीं हो पातीं, मगर आंतरिक बातचीत जारी रहती है। बल्कि पहले से कुछ अधिक ही बातें होने लगती हैं। मगर नाराजगी में बातचीत बंद रहने के कारण उसकी बातें जिसके लिये कही गयी होती हैं, वह नहीं सुन पाता। हालांकि नाराजगी के बाद दोनों पक्षों को आत्मविवेचन का अवसर मिल जाता है। इससे नाराजगी समाप्त हो कर संबंध सुधर सकता है। किन्तु ऐसा आवश्यक नहीं है। नाराजगी के कारण हो सकता है कि संबंध और बिगड़ जाये।

अगर नाराज व्यक्ति के आस-पास दूसरे लोग रहते हैं, जिनसे उसकी नाराजगी नहीं है या जिनसे अंतरंगता रहती है, उनसे वह अपनी बातें कहता है अथवा कहना चाहता है। किन्तु ऐसे अधिकतर मामलों में बीच के व्यक्ति का पाठ ठीक नहीं रह पाने से स्थिति और बिगड़ जा सकती है। बीच का व्यक्ति दोनों पक्षों से अपना संबंध ठीक बनाये रखना चाहता है। ऐसे में वह नाराज व्यक्ति की बातों को सही ढंग से रख पाने में यदि थोड़ा भी चूकता है तो मामला और भी गंभीर बन जाता है।

उपर्युक्त परिस्थितियों से स्पष्ट है कि नाराजगी एक स्वभाव-सी बन जाती है। ऐसी स्थिति में नाराजगी के बाद की जाने वाली बातों में अपनत्व की बातें भी नाराजगीपूर्ण निकलती अथवा लगती हैं। हर व्यक्ति की समझ या सोच अलग होती है। इसलिये सम्मुख बैठा व्यक्ति नाराज व्यक्ति की नाराजगीपूर्ण बातें सुन कर उसे अपने ढ़ंग से समझता है और उसका वर्णन करता है। ऐसे में मामला और बिगड़ जाता है।

नाराजगीपूर्ण बातें सुन कर अधिकतर लोग बिदक जाते हैं। ऐसा करना अस्वाभाविक भी नहीं है। किन्तु कुछ लोग उसे दूसरी तरह से लेते हैं। नाराज व्यक्ति के प्रति उसके मन में क्रोध नहीं उत्पन्न होता, बल्कि उसके प्रति अपनापन झलकता है और इससे उसके मन में श्रद्धा बढ़ जाती है। मगर ऐसा सभी नहीं सोच पाते। बहुत ही परिपक्व बुद्धि वालों के लिये ऐसा समझना संभव है। अधिकतर मामलों में इसको समझ पाना कठिन होता है और इससे मामला और बिगड़ जाता है, बल्कि बिगड़ता चला जाता है।

चाहे जो भी हो, नाराज होना अच्छी बात नहीं है। नाराज व्यक्ति की भावना को जिस पर नाराजगी व्यक्त की जाती है, उसके द्वारा समझ पाना आसान नहीं होता। अधिकतर मामलों में नाराज व्यक्ति की नाराजगी को समझना संभव नहीं हो पाने से मामला और पेचीदा हो जाता है। ऐसी स्थिति में नाराजगी सुफल नहीं दे पाती, बल्कि उलटे वह निष्फल होकर कुफल ही देती है।

क्रोधी स्वभाव के अधिकतर व्यक्ति अपनी नाराजगी को क्रोध के हद तक पार कर जाते हैं। ऐसे में उनका कष्ट और बढ़ जाता है। अर्थात् नाराजगी के बाद रिश्ते में सुधार जैसा लाभ होने के बजाय उन्हें हानि हो जाती है। क्रोधी स्वभाव या श्रेष्ठता का भान अथवा अपनापन के कारण कोई राह चलते व्यक्ति से नाराज नहीं होता है।

यह बात स्पष्ट है कि नाराजगी किसी से हो, किसी परिस्थिति में हो - इसका परिणाम अच्छा नहीं होता। समीक्षा करने पर एक बात सामने उभर कर आती है कि नाराज होने वाला व्यक्ति दूसरों पर आश्रित नहीं रह सकता। अर्थात् दूसरों से लाभ उठाने की उम्मीद रखने वाला उससे नाराज नहीं होता या नाराजगी नहीं दिखलाना चाहता। अधिकतर मामलों में नाराज होते हुए भी उसे प्रदर्शित नहीं करने का प्रयास किया जाता है। लेकिन ऐसा करना सबके लिये संभव नहीं हो पाता। नाराज होना भले अच्छी बात नहीं है, मगर नाराज होने वाले के पास इसके लिये पर्याप्त कारण होता है।

ऐसा देखा गया है कि भगवान पर आश्रित व्यक्ति समाज में रहते हुए भी समाज पर आश्रित नहीं रहता। इसका कारण यह भी हो सकता है कि वह समाज के आश्रय का परिणाम देख कर भगवान पर आश्रित हो चुका होता है। वह लाव-लपेट की बातें नहीं कर दो-टूक बातें करना अधिक पसंद करता है। समाज से टूट चुका ऐसा व्यक्ति सामाजिक रिश्तेदारी पर पड़ने वाले परिणाम की चिंता नहीं करता। भगवान पर आश्रित व्यक्ति द्वारा नाराजगी के कारण समाज से कटने का प्रयास भी होता है। वह अपने को सिमटा कर रखना चाहता है। ऐसे व्यक्ति को समाज की अनावश्यक चिंता नहीं रह जाती। लोगों को खुश करने के प्रयास के लिये भी वह चिंतित नहीं रहता। जिस व्यक्ति से वह नाराज होता है, उस पर तुरंत अपनी नाराजगी प्रकट कर देता है। नाराजगी क्यों और किससे की बात वह नहीं सोच पाता। यह सर्वमान्य तथ्य है कि जिससे नाराजगी हो, उससे नाराज होने के बजाय अपने मन की बात करनी चाहिये और यदि संभव हो तो अपनी नाराजगी बतानी चाहिये। इससे नाराजगी समाप्त होने की संभावना बढ़ जाती है और उससे उत्पन्न होने वाली परेशानियों से बचा जा सकता है।

प्रेस कॉलोनी, सिदरौल, नामकुम, रांची, झारखण्ड-834 010, मो. 0 88099 72549

शोध लेख

जनसंचार में मीडिया की भूमिका

◆ सवीना जहां

मानव की जिज्ञासा का ही परिणाम है आज का संसार। हर समय कुछ पाने, कुछ करने को तैयार रहने वाला मानव वर्तमान में ब्रहमांड को अपने कैमरे में कैद करके भी संतुष्ट नहीं है। यह हर वक्त कुछ न कुछ जानना एवं परखना चाहता है। संसार का कोई भी मानव समूह या समाज परस्पर बातचीत अथवा संवाद किए बिना जीवित नहीं रह सकता। वह हमेशा अपने भावों, विचारों और अनुभवों को दूसरों के साथ बांटने के लिए तत्पर रहता है। इस दुर्लभ कार्य में जनसंचार की विशेष भूमिका रहती है। जनसंचार मानव समाज का मुख्य आधार है। आज संचार अथवा मीडिया क्रान्ति का प्रभाव हर कहीं देखा जा सकता है समाज, शिक्षा, संस्कृति आदि कौन सा क्षेत्र है जो इनसे अछूता रह गया है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में मीडिया अथवा जनसंचार सामाजिक विकास और परिवर्तन का आधार बन गया है। इस प्रकार जनसंचार तथा मीडिया एक प्रक्रिया हैं जिसमें दो या दो से अधिक लोगों के बीच विचारों, सूचनाओं, तथ्यों, अनुभवों, और प्रभावों का इस प्रकार आदान-प्रदान होता है कि आपसी संदेशों के बीच सामंजस्य स्थापित हो और उनमें जागरुकता उत्पन्न हो। इसी भाव को रूपचन्द गौतम लिखते हैं कि, "जब संचार का विस्तार कर दिया जाता है, यानि आदमियों से परिवार, परिवार से गांव, गांव से शहर, शहर से राज्य, राज्य से देश और देश से विश्व तब संचार जनसंचार के दायरे में आ जाता है।"

प्राचीन समय में जनसंचार के साधन पशु-पक्षी, आदिवासियों के ढोल-नगाड़े और धुंआ आदि हुआ करते थे। आधुनिक काल में पशु-पक्षी और ढोल-नगाड़े आदि जनसंचार साधनों का रूप प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने लिया है। जनसंचार के विकास ने भौगोलिक एंव समय की सीमा को तोड़ दिया है। पलक झपकते ही सारी जानकारियां हमारे टी.वी., रेडियो, मोबाइल और कंप्यूटर पर आ जाती है; जनसंचार का प्रवाह अति व्यापक और असीमित है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में राजनीतिक शक्ति, अर्थ, शिक्षा, मनोरंजन आदि सभी का संप्रेषण जनसंचार माध्यमों पर आधारित है तथा इसमें मीडिया का बहुत गहरा रोल होता है। 'परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है' के कथन की सार्थकता जनसंचार में स्पष्ट नजर आती है। आदिमानव से लेकर वर्तमान अत्याधुनिक तकनीकी युग में मानव ने जनसंचारों के विभिन्न सोपानों को पार करके अपना तथा समाज का विकास किया है, जो निरंतर होता रहेगा।

गौरी शंकर रैणा लिखते हैं कि, "जनसंचार तकनीकी योजनाओं पर निर्भर रहता है, जिसके द्वारा संदेशों के तीव्र गति से दूर-दूर तक कई दिशाओं में छितराए दर्शकों एंव श्रोताओं तक भेजा जाता है तथा अलग -अलग माध्यम संदेशों को प्रस्तुत करने के तरीके में स्वभाव के अनुसार बदलाव लाते हैं।"

विकास के प्रत्येक चरण में मानव ने अपनी मनोवृत्ति और उसकी अभिव्यक्ति को समृद्ध किया है। मानव के कण्ठ ने उसकी ध्वनि अभिव्यक्ति क्षमता को सक्षम बनाया है। साथ ही विचार और उसे अभिव्यक्त करने में भी सफल हैं। संचार के परंपरागत माध्यमों की दृष्टि से पता चलता है कि जो वैदिक, वैदिकोत्तर, पौराणिक यानि आदिकाल से ही समय की गति से विकास करते हुए मनुष्य के साथ आ रहे हैं। इसके अलावा साधु-संतों के प्रवचन तथा चारण भाटों द्वारा यशोगान करना भी जनसंचार का एक माध्यम रहा है। इस प्रकार तीर्थ स्थल, मन्दिर, मठ, धार्मिक उत्सव, मेले

त्योहार आदि सभी संचार का कार्य करते थे। "परम्परागत जनसंचार माध्यम ग्राम्य संस्कृति की ऊपज है। लोक - कलाओं का उद्‌भव और विकास अनपढ़ अकृत्रिम ग्रामीण जनता के बीच हुआ है।" इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्राम्य संस्कृति से पैदा हुए यह परम्परागत जनसंचार माध्यम देशवासियों के धार्मिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक जीवन के नजदीक होते हैं तथा इनकी विषय वस्तु जनसामान्य की परंपरा, रीति-रिवाज़, उत्सव और समारोह से जुड़ी होती है। इसके विपरीत संचार माध्यमों का रूप युगान्तर बदलता रहा है। आधुनिक युग में मानव इन माध्यमों के जरिये न जाने कितनी बाधाएं दूर कर चुका है।

औद्योगिकीकरण और संस्कृति विस्तारवाद जैसी परिवर्तन की प्रक्रिया से वर्तमान आधुनिक समाज का निर्माण हो रहा है। 20वीं शताब्दी में परिवर्तन के कारण सामाजिक सरंचना और उसके कार्यो से लोगों की सोच, रहन-सहन के तौर-तरीकों और खान-पान में बदलाव आया है तो 21वीं शताब्दी सूचना प्रौद्योगिकी की जन्मदात्री बन कर उभरी है। आधुनिक समाज का अलभभाव

आधुनिक युग की विशेषता है। व्यक्ति का जीवन व्यापक होते भी सिमटता चला गया है। टी.वी., रेडियो, मोबाइल, कम्प्यूटर, इंटरनेट, पत्र-पत्रिकाओं आदि ने लोगों की सोचने की क्षमता में वृद्धि की है। इन माध्यमों ने मानव विकास में अपनी अहम भूमिका निभाई है, क्योंकि विकास और सूचना एक-दूसरे के पूरक हैं। बिना सूचना और संदेशों के आदान-प्रदान से विकास नहीं हो सकता, विकास करने का सफल साधन 'मीडिया' है। 'मीडिया' शब्द लेटिन भाषा के शब्द 'मीडियम' से निकला है, इसका अर्थ है माध्यम। जब प्रिन्ट, रेडियो एवं टेलीविज़न की सामूहिक रूप से बात की जाती है, तो यह मीडिया बन जाता है अर्थात् इसमें प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक दोनों मीडिया शामिल हैं।

मीडिया का मूल उद्देश्य सूचना देना, शिक्षित करना तथा मनोरंजन करना है। संपूर्ण मीडिया इन्हीं तीन उद्देश्यों के सार तत्वों को अपने भीतर समाहित किए हुए हैं। समाज का कोई भी पक्ष हो, राष्ट्र की कोई भी चिन्ता हो, वह मीडिया के द्वारा ही फलीभूत होती है। सामाजिक, धार्मिक, रूढ़ियों तथा आडम्बरों के खिलाफ मीडिया निरंतर संघर्ष करता है। यह जनता को शिक्षित करने से लेकर उस तक सच-झूठ की वास्तविकता को सामने लाने का सूत्रधार रहा है। लोकंतात्रिक देश भारत में मीडिया की भूमिका हमेशा से ही अहम रही है। वैसे भी मीडिया को 'लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ' माना जाता है। वर्तमान में समाचार-पत्रों एवं टी.वी. चैनलों पर धन लेकर खबरें प्रकाशित एवं प्रसारित करने का आरोप भी लगता रहता है। मीडिया का प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में बहुत महत्त्व हैं। वस्तुतः संचार यंत्रों या उपकरणों से व्यक्तियों के एक बहुत बड़े जनसमूह तक एक ही जानकारी एक ही समय में दी जाती है। इन संचार यंत्रों को ही जनमाध्यम कहते हैं। संक्षेप में यही 'मीडिया' है। मीडिया के क्षेत्र में प्रिंट मीडिया का स्वरूप आधुनिक युग के साथ ही लोगों के सामने आया। छापेखाने और प्रिंटिंग प्रेस के जन्म से ही प्रिंट मीडिया का विकासक्रम अधिक तीव्र गति से हुआ। उपग्रहों के आविष्कार से पहले प्रिंट मीडिया ही लोकमत का वाहक बना। सुधीर सोनी लिखते हैं कि "संप्रेषण का वह स्वरूप जो समाज में एक से दूसरे व्यक्ति के बीच आदान-प्रदान के रूप में सामने आया और मुद्रित स्वरूप में जिसने अपने पंख पसारे, वह प्रिंट मीडिया के रूप में उभरा।"

प्रिंट मीडिया में अभिव्यक्ति के वे सभी स्वरूप आते हैं, जिसे लिखकर प्रकट किया जाता हैं। विचारों को आदान-प्रदान करने की क्रिया मनुष्य में उसके जन्म से ही चली आई हैं परन्तु प्रिंट मीडिया ने इसका रूप परिवर्तित कर दिया है। संचार के पक्षों को इसने सरल एवं व्यापक प्रस्तुति दी है। किसी बात को मौखिक न कहकर लिखित रूप में देना यह प्रमाणिकता का सबसे अहम एवं पुख्ता सबूत हुआ। समाज में छापेखाने के साथ ही लेखन के विविध आयाम यांत्रिक क्षेत्र में होकर प्रस्तुत होने लगे और इन्हीं के माध्यम से प्रिंट मीडिया का जन्म हुआ।

प्रिन्ट मीडिया द्वारा समाज की सेवा एक ऐसा ही सशक्त माध्यम है। मास(डें) मीडिया की वास्तविक शुरुआत भारत में प्रिंट मीडिया से हुई। मनुष्य जीवन की संपूर्ण झांकी को समाचार-पत्र अपने हृदय में समेट लेता है। यह सत्य-असत्य, सृजन एवं विनाश, उत्थान-पतन आदि स्थितियों को अपने वास्तविक रूप में हम तक पहुंचाता है। जात-पात, भेदभाव, ऊंच-नीच, आदि सामाजिक बुराइयों के खिलाफ संघर्ष छेड़कर समाज को बुराइयों से मुक्त कराता हैं। गांधी जी ने कहा था, "पत्रकारिता का उद्देश्य जनसेवा है।" वे और लिखते हैं कि "जनता की इच्छाओं, दोषों को निर्भयापूर्वक प्रकट करना, इन सभी बातों पर ही प्रिंट मीडिया का महत्व स्थापित है।" भारतीय प्रिन्ट मीडिया स्वतंत्रता से पूर्व एक मिशन था। आजादी के पश्चात् यह पूर्णतः एक व्यवसाय बन गई है। 1990 के दशक में भारतीय प्रिन्ट मीडिया ने पत्रकारिता में कई क्रान्तिकारी परिवर्तनों के बीज बोए। जब भारत में इंटरनेट क्रान्ति आई तो समाचार पत्रों के रूप, पृष्ठ-सज्जा में भी कई आकर्षक परिवर्तन आए। इसके साथ-साथ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने भी जनसंचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

देश के अलग-अलग राज्यों में क्षेत्रीय भाषाओं में अखबारों के प्रकाशन का काल-क्रम में विस्तार होता गया, लेकिन अखबारों के मुकाबले क्षेत्रीय भाषाओं में टेलीविज़न-चैनलों की शुरुआत बहुत तेज़ी से हुई। इसका श्रेय देश में सैटेलाइट टी.वी. और डीटीएच प्रसारण व्यवस्था को भी दिया जा सकता है जिसके कारण टी.वी चैनल जनता के बीच सुलभ हुए। तमिलनाडु में

मीडिया का मूल उद्देश्य सूचना देना, शिक्षित करना तथा मनोरंजन करना है। संपूर्ण मीडिया इन्हीं तीन उद्देश्यों के सार तत्वों को अपने भीतर समाहित किए हुए हैं। समाज का कोई भी पक्ष हो, राष्ट्र की कोई भी चिन्ता हो, वह मीडिया के द्वारा ही फलीभूत होती है। सामाजिक, धार्मिक, रूढ़ियों तथा आडम्बरों के खिलाफ मीडिया निरन्तर संघर्ष करता है। यह जनता को शिक्षित करने से लेकर उस तक सच-झूठ की वास्तविकता को सामने लाने का सूत्रधार रहा है। लोकतांत्रिक देश भारत में मीडिया की भूमिका हमेशा से ही अहम रही हैं। वैसे भी मीडिया को 'लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ' माना जाता है।

नवीन हलदूणवी की ग़ज़लें

एक

घर में आटा-तेल नहीं है,
खान गुणों की जेल नहीं है।

गद्दारों से कैसे निपटें,
आपस में जब मेल नहीं है?

मंजिल दूर दिखाई देती,
दौड़ लगाती रेल नहीं है।

प्रेम-सुधा से ही घट भर लो,
फैल रही विष-बेल नहीं है।

जान गई है दुनिया सारी,
सुखमय जीवन खेल नहीं है।

लोक 'नवीन' मनाने कैसे,
अब तो इतर-फुलेल नहीं है?

दो

गंगा-यमुनी लहर कहां है,
ग़ज़लों में अब बहर कहां है ?

अपनेपन को ढूंढ रहा है,
ऐसा जग में शहर कहां है ?

सूख गई हैं सारी नदियां,
नव-रस वाली नहर कहां है ?

बदल रहे हैं तौर-तरीके,
सुबह हुई दोपहर कहां है ?

यार पता तो सबको चलता,
शुद्ध हवा में जहर कहां है ?

चोट 'नवीन' अहं को लगती ,
इससे बढ़कर कहर कहां है ?

तीन

साधन ज्ञान कमाई का,
रिश्ता दूध-मिलाई का।

गुण से गुण ही मिलता है,
समता और समाई का।

सीख सको तो सीखो जी,
सुंदर रूप लिखाई का।

घर-घर प्यार बढ़ायेगा,
गहना लोग-लुगाई का।

इससे देस - तरक्की है,
मौका खूब भलाई का।

देख 'नवीन' किताबों से,
घटता बोझ पढ़ाई का।

काव्य-कुंज, जसूर-176201,
जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश,
मो. 0 82194 84701

एआइएडीएमके (AIADMK) समर्थित जया टीवी और डीएमके (DMK) प्रमुख करूणानिधि के रिश्तेदारों द्वारा संचालित सन टी.वी. नेटवर्क इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल, पूर्वोत्तर, महाराष्ट्र, गुजरात और दक्षिण भारत के लगभग हर राज्य में कई क्षेत्रीय टी.वी. चैनलों का प्रसारण होता है जिस पर राज्य और क्षेत्र-विशेष से संबंधित सामग्री और खबरें पेश की जाती हैं। साथ ही प्रसार भारती द्वारा संचालित दूरदर्शन के क्षेत्रीय चैनलों पर हर राज्य के भाषा-भाषी जनसमूह को स्थानीय और क्षेत्रीय भाषाओं में खबरें और मनोरंजन सामग्री उपलब्ध कराते ही रहे हैं।

देश में इंटरनेट के प्रचार प्रसार और टेलीकॉम सेवाओं के विस्तार से न सिर्फ कम्प्यूटर टर्मिनलों पर बल्कि, हर हाथ में मौजूद स्मार्टफोन पर भी अपनी भाषा में लिखने-पढ़ने, कार्यक्रम सुनने और खबरों के वीडियो से लेकर सिनेमा और मनोरंजन के शो देखने में सुविधाएं सर्वसुलभ हैं। संचार के लिए मीडिया से देश का कोना कोना अछूता नहीं रहा और इसका फायदा उन पिछड़ी जनता को हुआ जिन क्षेत्रों मे न हिंदी और न अंग्रेजी सबकी भाषा हैं।

वर्तमान में एक अन्य मीडिया ने भी जनसंचार मे अपनी धाक जमाई है 'सोशल मीडिया'। यह मीडिया वर्तमान में ऑनलाइन उपलब्ध है। इंटरनेट की दुनिया विशाल है। इस पर सूचनाओं का अपार भंडार है। बहुत सी सोशल नेटवर्किंग साइटों से व्यक्ति लगातार जनसंचार के लिए चौबीस घण्टे जुड़ा रहता है। आज मीडिया जनसंचार में एक लाभकारी और प्रभावशाली प्रभाव डाल रही है। समयानुसार विश्व के सभी देश बौद्धिक सम्पदा, ज्ञान-विज्ञान और जनसंचार संबंधी अपने राष्ट्रीय ढांचे को नया व अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप देते जा रहे हैं।

अतः कहा जा सकता है कि भारत में प्राचीन समय से ही समाज व्यवस्था और संस्कृति के साथ-साथ जन संचार पर प्रकाश डाला गया है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान अत्याधुनिक युग तक जनसंचार में मीडिया का स्वरूप विश्वव्यापक रहा है जिसका उद्देश्य लोगों में संदेश, जानकारी और जनजागृति करना रहा है।

शोधकर्त्री, हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला -171005, मो. 0 82199 60863

संदर्भ सूची :

1. रूपचंद गौतम, संचार से जनसंचार (दिल्ली : श्री नटराज प्रकाशन, 2005), पृ. 117.
2. गौरी शंकर रैणा, संचार टेक्नालॉजी (दिल्लीः श्री नटराज प्रकाशन, 2005), पृ. 15.
3. अर्जुन तिवारी, संपूर्ण पत्रकारिता (वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2005), पृ. 239.
4. सुधीर सोनी, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, एक परिचय (जयपुर : यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, 2006), पृ. 03.
5. कुमार कौस्तुभ, विश्व मीडिया विमर्श (दिल्ली : कल्पना प्रकाशन, 2017), पृ. 42-43.
6. रवींद्र शुक्ला, सूचना प्रौद्योगिकी और समाचार पत्र (दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, 2005), पृ. 19.

कहानी

और पूरी हुई तलाश

◆ विष्णु भट्ट

पत्रकारिता में डिप्लोमा करने के बाद, व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करने के लिए, मैंने एक दैनिक पत्र के लिए सांस्कृतिक संवाददाता के रूप में कार्य करना शुरू कर दिया। पांच हजार रुपये मासिक वेतन के रूप में देना निश्चित हुआ। पत्र की ओर से नगर की विभिन्न साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों की रिपोर्टिंग के लिए मुझे भेजा जाने लगा। और यत्र-तत्र नगर सांस्कृतिक संवाददाता के रूप में मेरी पहचान हो गई। मुझे फोटोग्राफी करने का भी बेहद शौक था। इस कारण पहली तनख्वाह मिलने पर मैंने एक अच्छा कैमरा खरीद लिया। इसके पहले मेरे पास साधारण कैमरा था। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में 'मैंने भी तस्वीर खींची' स्तंभ में मेरे खींचे हुए फोटो छपने लगे। मेरे उत्साह और काम से और वृद्धि हो गई। मैं अपने मन की खुशी को व्यक्त करने के लिए गुनगुना उठता हूं।

मेरी मनचाही नौकरी लगने से मेरी मां को बहुत प्रसन्नता हुई। मेरे प्रति उसकी चिंता दूर हुई। कहते हैं एक इच्छा की पूर्ति हो जाने पर दूसरी इच्छा जागृत हो जाती है। उसी तरह मेरी नौकरी लगने की एक इच्छा पूरी हुई तो मेरी मां की दूसरी इच्छा जागृत हुई। वह इच्छा उसने मेरे सामने उचित समय पर जाहिर कर दी, "बेटा अब मुझे एक चांद सी बहू ला दे तो घर की झंझटों से मुक्ति पा लूं।"

"मां मुझे अभी बहुत आगे बढ़ना है। कोई और ऊंची नौकरी मिलेगी तभी मैं विवाह के संबंध में सोच सकता हूं। जरा सोचो तो सही महंगाई के इस जमाने में इतनी कम तनख्वाह में तीन प्राणियों का गुजारा भला कैसे होगा?"

"मैं कुछ नहीं जानती। मुझे तो बहू चाहिए। अगर तेरी कोई पसंद की लड़की हो तो मुझे बता। मैं उसके मां-बाप से मिलकर उसका हाथ मांग लूंगी। अगर ऐसा नहीं है तो फिर मैं जिस लड़की को बहू के रूप में पसंद करूंगी उसे तुझको स्वीकारना पड़ेगा।

मां की इस चेतावनी ने मेरे सामने गंभीर समस्या खड़ी कर दी। कोई लड़की अभी तक मैंने देखी ही नहीं जिसे मैं अपनी पत्नी के रूप में पसंद करता। बड़ी मिन्नत कर मां को बड़ी मुश्किल से कुछ दिन ठहरने के लिए राजी कर लिया ताकि इस बीच मुझे सोचने का समय मिल जाए।

दो-तीन माह गुजर गए। एक दिन मेरे बॉस ने मुझे एक लिफाफा पकड़ाते हुए कहा, "कल शाम को सात बजे रविंद्र भवन में होने वाले पुरस्कार वितरण समारोह का कवरेज करके लाना है, समारोह के फोटो भी ले लेना।"

दूसरे दिन, मैं रविंद्र भवन ठीक साढ़े छः बजे पहुंच गया। पत्रकारों के लिए सुनिश्चित स्थान का जायजा लिया और एक कुर्सी पर बैठ गया।

सभागार में नगर के कई प्रतिष्ठित व्यक्ति अगली पंक्ति में बैठे दिखाई दिए। आयोजकों ने, अतिथि के रूप में प्रमुख वयोवृद्ध, समाज सेवी और स्वतंत्रता सेनानी श्री उपाध्याय जी को मंच पर आने का अनुरोध किया। उन्होंने दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया ठीक सात बजे। बालिकाओं द्वारा सामूहिक सरस्वती वंदना प्रस्तुत की गई।

तब मंच पर उद्घोषणा के लिए उद्घोषक ने माईक संभाला। उन्होंने उद्घोषणा शुरू करते हुए कहा.....

"लेडीज एंड जेंटिलमेन। आज की संध्या का, यह कार्यक्रम अपने आपमें एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। इसकी विशेषता है एक प्रतिभावान संगीत कलाकार तथा समाज सेवी को सम्मान स्वरूप, पुरस्कृत राशि प्रदान करना। आप उस प्रतिभा का नाम अवश्य जानना चाहेंगे? वह प्रतिभा है -मिस ज्योति। मिस ज्योति स्थानीय अंधविद्यालय में संगीत की प्रशिक्षक हैं और संगीत की साधना में अनवरत जुड़ी हुई हैं। मिस ज्योति मंच पर आएं, उससे पहले, मैं अपना कर्तव्य समझता हूं कि उनके बारे में कुछ और प्रकाश डालूं। मिस ज्योति ने, अपनी संगीत की प्रतिभा का समाज के उस तबके के लिए सदुपयोग किया है, जिसे हेय दृष्टि से देखा जाता है। और वह तबका है- विकलांगों का। मसलन कोई मानसिक रूप से विकलांग है तो कोई शारीरिक रूप से अपंग। कोई आंखों के होते हुए भी ज्योतिविहीन है, तो कोई मूक-बधिर।

मिस ज्योति के गले में साक्षात् सरस्वती का निवास है। इन्होंने अपने आपको विकलांगों की सेवा में तन-मन से लगाकर, उनके लिए साधन जुटाने का अथक प्रयास किया है। यह सेवा पिछले पांच वर्षों से अनवरत निरंतर बहती नदी की धारा के स्वरूप चल रही है।

दोस्तो! मुझे यह कहते हुए बड़ा अफसोस है कि मिस ज्योति ईश्वर की इस सृष्टि को अपनी आंखों से देखने में असमर्थ हैं। मेरा मतलब आप समझ गए होंगे कि ईश्वर ने मधुर स्वर के साथ-साथ आंखों की रोशनी से वंचित रखा।"

एक बात और बता दूं कि, हम यह वर्ष भारत में नहीं पूरे विश्व में अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष के रूप में मना रहे हैं। जिसका मूल उद्देश्य है, विकलांगों के पुनर्वास तथा समाज में उन्हें सम्मानपूर्वक स्थान दिलाने के लिए योजनाबद्ध तरीके से कार्य करना। इसी बात को दृष्टि में रख कर मिस ज्योति को विकलांगों के हितार्थ प्रदान की गई सेवाओं के लिए सम्मानित करने के उद्देश्य से आज हम यहां उपस्थित हुए हैं। हमारी सरकार ने भी इन्हें इनकी सेवाओं के लिए पुरस्कृत किया है। मैं आपका और अधिक समय न लेते हुए मिस ज्योति से प्रार्थना करूंगा कि वे मंच पर आएं और सरकार की ओर से सम्मान स्वरूप एक तुच्छ भेंट पुरस्कार के रूप में स्वीकार करें।"

उद्घोषणा समाप्त होते ही मंच का परदा धीरे-धीरे खिसकने लगता है। कुछ ही क्षणों में मंच पर मिस ज्योति को लेकर दो स्वयं सेविकाएं आती हैं। मैं और मेरा साथी अन्य पत्रकार, फोटोग्राफर फोटो लेने के लिए मंच की ओर बढ़ते हैं। मुख्य अतिथि, मिस ज्योति को फूलों की माला पहनाते हैं। फिर पुरस्कार स्वरूप दस हजार का चैक तथा प्रशस्ति पत्र देते हैं। सारा सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठता है। मुख्य अतिथि और अध्यक्ष के भाषणों के बाद उद्घोषक कार्यक्रम के समापन की उद्घोषणा करता है। मैं तत्काल मिस ज्योति का इंटरव्यू लेने के लिए पहुंच जाता हूं -

"ज्योति जी। मैं प्रकाश, 'गूंज' दैनिक पत्र का संवाददाता हूं। मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी यदि आप जैसी प्रतिभा और समाज सेवी का इंटरव्यू हमारी पत्रिका में प्रकाशित हो। ताकि अधिक से अधिक जनमानस न केवल आपके विचारों और अनुभव से लाभान्वित हो बल्कि उनके लिए आप प्रेरणा स्तंभ भी बनें।"

"हां हां मुझे भला क्या आपत्ति हो सकती है।"

"आपने संगीत के माध्यम से ही विकलांगों की सेवा तथा उत्थान का व्रत लिया है। संगीत के प्रति आपकी रुचि क्या बचपन से ही थी?"

"यह एक लंबी कहानी है।"

"बचपन में जब बड़ी माता के कारण मेरी आंखों की रोशनी मुझसे छिन गई, घर के लोगों का प्रेम धीरे-धीरे कम होता गया। परिवार के होते हुए भी मैं अकेली अलग-थलग पड़ गई। ऐसे में टूटी-फूटी आवाज में कुछ गाकर समय गुजारने लगी। मैं अपने आपको काफी हीन समझने लगी थी। कभी-कभी सोचती, ऐसे जीने से तो मर जाना बेहतर है। मुझे उस परिस्थिति से उबारा मेरे दूर के चाचाजी ने, जो उस समय शहर से आए हुए थे। उनकी सलाह पर मुझे ब्लाइंड स्कूल में एडमिशन दिलाई गई। तभी मुझे संगीत के क्षेत्र में आगे बढ़ने का अवसर मिला। अब मैं एम.ए. म्यूजिक भी कर चुकी हूं।"

"वो कैसे।"

"नेत्रहीनों को शिक्षित करने की एक विशेष पद्धति है, जिसे, ब्रेल लिपि कहते हैं, इस विधि से पढ़ाने वाले अध्यापक भी साइटेड नहीं होते। यानी वे भी नेत्रहीन ही होते हैं।"

"क्या आप ब्रेल लिपि के इतिहास के बारे में भी कुछ प्रकाश



डालेंगी?"

"क्यों नहीं। यह तो नेत्रहीन समाज में उनके लिए एक वरदान सिद्ध हुई है। सबसे पहले सन् 1820 में फ्रांस के एक सैनिक अधिकारी चार्ल्स बार्बेयर ने 12 बिंदुओं की लिपि को आरंभ किया था। किंतु व्यावहारिक रूप से कठिन होने के कारण यह लिपि नहीं चली। बाद में सन् 1824 में फ्रांस के लुई ब्रेल द्वारा 6 बिंदुओं वाली लिपि का आविष्कार किया गया। इसके आधार पर उभरे हुए छिद्रों को छूकर ही पढ़ाया जाता है। यह अंतर्राष्ट्रीय लिपि के रूप में प्रसिद्ध हुई। इसके माध्यम से विश्व की सभी भाषाएं पढ़ी और लिखी जा सकती हैं।"

"मतलब यह कि ब्रेल लिपि से किसी भी विद्या में शिक्षित हुआ जा सकता है।"

"क्यों नहीं मैंने तो संगीत भी इसी लिपि के द्वारा सीखा। पहले पहले तो कठिनाई होती है। मुझ से स्वरों की सही पकड़ नहीं हो पा रही थी। लेकिन मैंने हिम्मत नहीं हारी और जैसा सिखाया वैसा गाने लगी।

"वाह ज्योति जी, करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान वाली' कहावत आपने चरितार्थ कर दी।"

"संगीत ही क्या, कोई भी विद्या ले लीजिए, बिना अभ्यास और मेहनत के पूर्णतया ज्ञान प्राप्त करना एक दुष्कर कार्य है। खासकर नेत्रहीनों के लिए। अगर ब्रेल पद्धति का आविष्कार न होता, तो आज नेत्रहीन व्यक्ति शिक्षित होकर डॉक्टर, वकील, शिक्षक, टेलीफोन ऑपरेटर, टाइपिस्ट, फैक्ट्री कामगार, संगीतज्ञ आदि नहीं होते। आपको आश्चर्य होगा यह जानकर कि, ब्रेल लिपि की बदौलत घड़ी छूकर के नेत्रहीन व्यक्ति सही समय बता सकता है। और यही पद्धति नेत्रहीनों को अपनी मंजिल तक पहुंचाने में वरदान सिद्ध हुई है। यदि वे कठिन परिश्रम और एकाग्रचित्त होकर अध्ययन करें, तभी सफलता कदम चूमती है।"

आपने संगीत में प्रवीणता प्राप्त करने के बाद विकलांगों की ही सेवा का व्रत क्यों लिया? क्या आपके परिवार वालों ने कोई आपत्ति नहीं की?"

"इस संबंध में प्रकाशजी मेरा काफी कटु अनुभव रहा है। जब मैं नेत्रहीन हो गई थी, तब घर में सभी ने दूध की मक्खी की तरह मुझे निकाल फेंक दिया। मैं ब्लाइंड स्कूल में थी तब भी साथियों की कठिनाइयों का आभास हुआ, जो केवल धनाभाव के कारण थी। मसलन रहने, खाने आदि की। क्योंकि साधन अपर्याप्त थे। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर मैंने विकलांगों के लिए धनोपार्जन हेतु समाज सेवी संस्थाओं के माध्यम से चैरेटी शो किए। तभी से मैं निरंतर अपनी मंजिल की ओर बढ़ती चली जा रही हूं।"

"क्या आप अकेले ही इस घोर समस्या का निराकरण कर सकेंगी।"

एक अकेला व्यक्ति भला इतनी बड़ी समस्या को कैसे हल कर सकता है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी क्षेत्र में हो, यदि अपना कर्तव्य समझ कर स्वेच्छा से इस क्षेत्र में सेवार्थ आए, तो, विकलांगों के प्रति पूर्वाग्रह तथा विकलांगों में फैली हीन भावना को दूर किया जा सकता है। वे सम्मानपूर्वक जीवन जीने की दिशा में और आगे प्रवृत्त हो सकते हैं। एक बात और कहना चाहूंगी कि यदि सभी ऐसे माता-पिता जिनके बच्चे नेत्रहीन हों, और वे उनके बच्चों को आगे चलकर आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं, तो उन्हें चाहिए कि वे अपने बच्चों को ब्लाइंड स्कूल में शिक्षा हेतु जरूर भेजें।"

"अच्छा ज्योति जी आगे क्या करने का विचार है? आपने समाज सेवा में तो अपना जीवन अर्पित कर दिया परंतु क्या आप विवाह कर अपनी गृहस्थी नहीं बसाएंगी? यह मेरा आपसे व्यक्तिगत, किंतु अंतिम प्रश्न है।"

"प्रकाश जी, इस संबंध में तो मुझे सोचने का समय ही नहीं मिला। और सोचिए नेत्रहीन से शादी करके कौन अपनी किस्मत फोड़ेगा? हमारा समाज अभी इतनी विशालता से सोचने में समर्थ नहीं हुआ है, कि किसी विकलांग को विवाह सूत्र में बांध सके। ये काम केवल प्रगतिशील विचारधारा वाले व्यक्ति ही करने के लिए आगे आएं तो, हम जैसे बेसहारों का सहारा बन सकते हैं। मेरी मंजिल तो फिलहाल मेरे इन विकालंग साथियों के पुनर्वास हेतु अपने आपको पूर्णतया समर्पित करना है।"

"आपका बहुत धन्यवाद ज्योति जी हमारे पत्र के लिए आपने अपना अमूल्य समय दिया। अच्छा मुझे आज्ञा दीजिए।"

"धन्यवाद तो मैं आपको देना चाहती हूं कि आपने विकलांगों के संबंध में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने का साहस तो किया। इसी बहाने समाज के हर व्यक्ति को विकलांगों के कल्याण के लिए कुछ करने की प्रेरणा मिल सके तो सभी विकलांग वर्ग आभारी रहेंगे।"

मिस ज्योति के इंटरव्यू को अगले दिन के अंक में निकाला गया। जिसके विषय में पाठकों की काफी अनुकूल प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुईं।

रात को खाने के समय मैंने मां का मन टटोलने हेतु मिस ज्योति के विषय में बातों ही बातों में अपने मन की बात भी कह दी कि मैंने ज्योति से विवाह करने का निश्चय किया है।

सुनकर मां ने चुप्पी साध ली। लग रहा था जैसे वह एक दृष्टिहीन को अपनी बहू बनाने की इच्छुक नहीं है। मेरे काफी जोर देने और समझाने पर मां ने हां भर दी।

सवेरा होते ही मैंने सबसे पहले मिस ज्योति के घर जाने का निश्चय किया। वहां पहुंचकर मैंने देखा तब वे संगीत की साधना में लीन थीं। मैं वहीं बैठ गया। किंतु, मिस ज्योति को अपनी अंतर्दृष्टि से मेरे आने का आभास हो गया था। वे अपनी साधना को बीच में रोक कर बोली -

"कहिए कैसे आना हुआ?"

"यह मैं प्रकाश हूं।"

"आइए-आइए, बड़े भाग्य मेरे कि आपने यहां आने का कष्ट किया?"

"मैं आपको कल के कार्यक्रम की रिपोर्टिंग सुनाने आया हूं जो आज के अंक में छपी है।"

मैं रिपोर्टिंग पढ़ता जा रहा था और मिस ज्योति के चेहरे पर चढ़ते-उतरते भावों को गौर से देखता भी जा रहा था। जैसे ही पढ़ते-पढ़ते मैं कुछ क्षणों के लिए रुकता, मिस ज्योति के कान मानो और आगे सुनने की उत्सुकता लिए हुए जान पड़ते थे। समाचार के रूप में पूरी स्टोरी पढ़ लेने के बाद मैं चुप हो गया। तब मिस ज्योति ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा, "बड़ी अच्छी, सुसंस्कृत और कसी हुई रिपोर्टिंग है।"

"इस काम्पलीमेंट के लिए धन्यवाद।" मैंने प्रत्युत्तर में कहा। कुछ क्षण की चुप्पी के बाद मैंने अपने मन की बात कहने के लिए होंठ खोले किंतु हिम्मत नहीं बन पड़ी। इस पशोपेश से मुझे मिस ज्योति ने ही उबारा और पूछा, "लगता है आप कुछ कहना चाहते हैं प्रकाश जी।? कह डालिए जो कुछ मन में हो। यहां किसका भय है आपको?"

"कुछ ऐसी ही बात है ज्योति जी, सचमुच मैं हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था, आपने ऐसा कहकर मुझे उबार लिया है। असल में मैं... अगर आप अपनी सहमति दे तो..."

"बोलिए न रुक क्यों गए?"

"ज्योति जी! मैं आपसे विवाह करना चाहता हूं। सच मानिए यह प्रस्ताव आपके ऊपर अहसान जताने या दया करने के उद्‌देश्य से नहीं कर रहा हूं, बल्कि सच्चे मन से आपके सामने यह प्रस्ताव रख रहा हूं। मैंने मां को तैयार कर लिया है। वह आपको सहर्ष अपनी बहू बनाने को तैयार है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि विवाह के पश्चात भी यदि आप समाज सेवा करना चाहेंगी तो मैं रोकूंगा नहीं।"

एक ही सांस में मैं इतना सब कुछ कह गया। मुझे स्वयं भी कल्पना नहीं थी इतनी बातें कह जाने की। मैंने ज्योति जी के चेहरे की ओर देखा जो खुशी से चमक उठा था। साथ ही आंखों से खुशी की बूंदें भी टप-टप गिरने लगी थीं। कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद वे बोलीं -

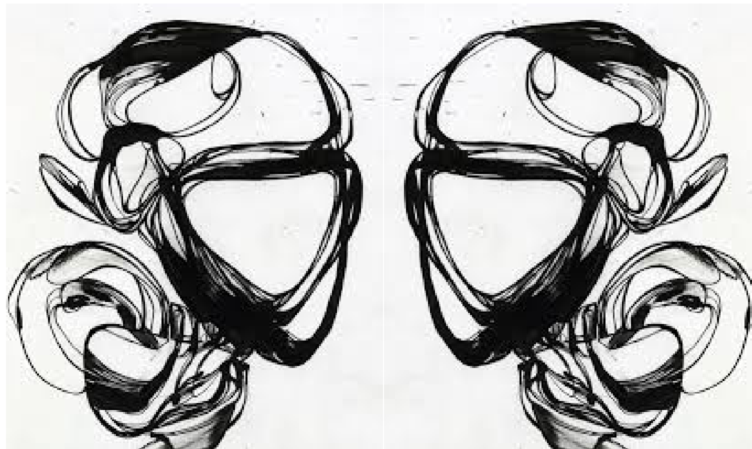
"प्रकाश जी! मैं आपके साथ विवाह के काबिल नहीं हूं। मैं आपको कोई सुख नहीं दे सकूंगी। उलटे आप पर बोझ बन जाऊंगी।"

"आप मुझ पर किसी तरह का बोझ नहीं होंगी, बल्कि जीवन यात्रा में एक हमसफर के रूप में मेरे साथ रहेंगी। आप ना मत कीजिए।"

"ओ प्रकाश जी! आप जीते, मैं हारी। सच कहूं प्रकाश जी। जब से मेरी आपसे पहली बार भेंट हुई थी, तभी से मेरे मन में पहली बार प्रेम का अंकुर फूटा था। लेकिन अपनी स्थिति देखकर मैंने अपने आपको संभाला। आज सचमुच मैं बड़ी खुश हूं। जीवन में पहली बार मुझे आप जैसा व्यक्ति मिला जिसे मैं, केवल मैं अपना कह सकूं। कैसे मैं आपका आभार व्यक्त करूं? कुछ समझ नहीं आता।"

और फिर मैं ज्योति को लेकर घर, आ गया और अपनी मां से मिलाया, एक शुभ मुहूर्त में हम दोनों विवाह सूत्र में बंध गए। अभी तक हमें अपनी जिस मंजिल की तलाश थी, वह आज मिल गई थी।"

म. नं. 1 म 9, गायत्री नगर, हिरन मगरी, सेक्टर-5, उदयपुर, राजस्थान-313 002, मो. 0 94614 03169



कहानी

बस...तलाक नहीं...

◆ मधु अरोड़ा

इंसान कब स्थितियों के वशीभूत होकर क्या-से-क्या कर बैठता है, उसे ही पता नहीं होता। यदि पता होता तो ऐसा होता ही क्यों? निशा और विनय के जीवन में भी यह सब घटा जबकि दोनों पढ़े लिखे थे और मुंबई शहर में रह रहे थे।

उन दोनों के जीवन में जो हुआ, उसकी जड़ यह लॉन ही था जहां छात्राओं की अल्हड़ चाल से ये शादीशुदा मर्द बौरा जाते थे और फिर उन लड़कियों से दोस्ती करके अपनी मर्दानगी दिखाते थे। इनकी पत्नियों को इनकी कारगुजारियों का पता भी नहीं होता होगा।

विनय का शुमार ऐसे ही मर्दों में किया जा सकता था। उसके खाने के दांत और तथा दिखाने के दांत और थे। यह बात अलग थी कि निन्नी के आगे उसकी एक न चली थी और उसे खुद को निन्नी के साथ सिर्फ़ दोस्ती तक ही सीमित रहना पड़ा था।

निन्नी से भी तो विनय की मुलाक़ात यूनिवर्सिटी के लॉन ही में तो हुई थी। अपने ऑफिस के लोगों के साथ उसे शाम को अक्सर वहां देखा जा सकता था। उसके देखने का कंटीला अंदाज़ किसी भी लड़की को आकर्षित करने के लिये काफी था।

कपड़े सादे ही होते थे। अधिकतर गंभीरता का बाना पहने रहता था। निन्नी से भी पहचान विनय के एक दोस्ती ने ही कराई थी जो निन्नी के साथ एम. ए. कर रहा था। वह अपना काफी समय लायब्रेरी में बिताती थी। वहीं रविवार को विनय भी आता था।

उस दिन भी रविवार था। वह लायब्रेरी की कैंटीन में खाना खा रही थी कि विनय वहां आ पहुंचा। बोला, 'आपका टिफिन देख कर मुझे भी भूख लग आई।' उसे विनय की यह अनौपचारिकता पसंद नहीं आई थी।

कोई बहुत पुरानी दोस्ती तो थी नहीं कि वह टिफिन तक शेअर करने की बात करे। फिर भी निन्नी ने एक पराठे में भिंडी की सब्ज़ी और आम के अचार का मसाला लगाकर रोल करके दे दिया।

उसने हंसकर कहा, 'यह अच्छा तरीका है। हाथ खराब नहीं होंगे। हम इस रोल परांठे को चोंगा-मोंगा पराठा कहते हैं।' 'हम इसे कहते हैं किफ़ायत। जब कोई भूखा अचानक आ जाये और सब्जी कम हो तो ऐसे ही खाने के लिये देते हैं।' दोनों ही हंस पड़े थे।

निन्नी ने जब-जब उससे परिवार के बारे में जानकारी चाही तो वह टाल जाता था। कहता था, 'क्या करेंगी जानकर? बस इतना जान लीजिये कि माता-पिता हैं। वे गांव में रहते हैं। बड़ा भाई है, वह खेती-बाड़ी संभालता है। पढ़ा-लिखा एक मैं ही हूं ...एक अदद पत्नी है और वह वकील है। उसका नाम निशा है। अपने पेशे में सफल है वह। दो बेटे हैं। पढ़ रहे हैं। सब अपने-अपने में व्यस्त। हैं। सुखी परिवार है हमारा और क्या जानना चाहती हैं?।

दरअसल वह अपने परिवार के बारे में बात करना ही नहीं चाहता था। लेकिन उसके हाव-भाव से निन्नी ने अंदाज़ लगा लिया था कि वह हरफ़नमौला किस्म का बंदा है। पारिवारिक पृष्ठ भूमि मिडिल क्लास की ही लगती थी।

सवाल यह उठता था कि इसे वकील पत्नी कैसे मिली? कभी मौका मिला तो ज़रूर पूछेगी। एक दिन वह मौका मिल ही गया। दिन वही रविवार। अब निन्नी और विनय की बातचीत औपचारिकता से आगे बढ़कर दोस्ताना हो चली थी।

'देखिये विनय, ज़बर्दस्ती नहीं कर रही पर मन हो तो बता दीजिये।' विनय ने आंखें उठाकर इस तरह देखा मानो कह रहा हो कि पूछिये। 'आपकी पत्नी वकील हैं और आप रात दस बजे तक यहां रहते हैं। वे आपको घर पर रहने के लिये नहीं कहतीं?'

'व्यक्तिगत सवाल है पर मैं सिर्फ़ इतना ही कहूंगा कि हम दोनों एक-दूसरे के काम में दख़ल नहीं देते। शादी के बाद मैंने उनसे कह दिया था कि यदि मैं रात को दो बजे तक घर न पहुंचूं तभी अस्पताल में फोन करना। मेरे दोस्तों के घर फोन मत करना।'

फिर दोनों के बीच एक लंबी चुप्पी। कुछ देर बाद वह बोला, 'मैं भी शायद किसी विषय में एम ए करने के लिये अर्जी दे दूं। फिर तो यहां नियमित रूप से आना जाना रहेगा। अजीब नज़रों से कोई घूरेगा भी नहीं कि मैं हर रविवार यहां क्यों आता हूं।'

निन्नी कुछ नहीं बोली पर बाद में पता चला कि विनय ने इकॉनॉमिक्स में एम ए करने के लिये यूनिवर्सिटी में फॉर्म भर दिया है। हम.... तो यह बात है। अब वह बिना किसी हिचक के लायब्रेरी में आ-जा सकता है।

यूनिवर्सिटी का वह लॉन। लॉन में हरी हरी दूब और उस पर चिड़ियों के झुंड। खुला खुला माहौल। अठखेलियां करते पेड़-पौधे। ऊपर खुला आसमान। विनय चहकता फिरता था। अब शाम को अक्सर लॉन में दिखाई देता था।

अब उसका असली रूप सामने आने लगा था। उसे हर दूसरे दिन किसी कमसिन लड़की के साथ देखा जा सकता था। गंभीरता का मुखौटा भी हटने लगा था। जब वह लड़की के साथ होता तो ठहाके खूब लगाता। पता नहीं किस कुंठा के तहत ये ठहाके थे।

एक दिन निन्नी और विनय फिर आमने-सामने थे। इस समय उसके साथ एक लड़की थी। अतः सिर्फ़ हैलो ही हो पाई और सामने से ऐसे गुज़र गया मानो पहचानता ही न हो। बाद में पता चला कि वह लड़की उसके दफ्तर की ही थी।

शाम को लॉन में रौनक कुछ ज्यादा ही बढ़ जाती थी। ऑफिस से छूटे लोग, जिन्हें घर जाने की कोई जल्दी नहीं थी, वे लोग जो इस शहर में अकेले थे और शाम यहां बिताना पसन्द करते थे। विनय उनमें से एक था।

एम ए की कक्षाएं शाम को लगती थीं, अतः जो छात्राएं नौकरी नहीं करती थीं, वे लायब्रेरी में दिनभर नोट्स बनातीं और शाम को चार बजे से साढ़े पांच बजे तक मटरगश्ती करतीं। छः बजे से कक्षाएं शुरू होती थीं।

निन्नी को अपने पिताजी पर अपनी पढ़ाई का अतिरिक्त बोझ डालना पसंद नहीं था। अतः उसने नौकरी जॉइन कर ली थी। बोलने- चालने में अच्छी होने के कारण उसे रिसेप्शनिस्टौ- कम- टेलीफोन ऑपरेटर की नौकरी मिल गई थी।

ऑफिस का समय सुबह नौ बजे से शाम पांच बजे तक था। यह समय उसे सूट करता था। ऑफिस से वह पांच बजे निकलती थी और साढ़े पांच तक यूनिवर्सिटी पहुंचती थी। वह अपने बलबूते पर अपना कैरियर बनाना चाहती थी।

शाम को एम ए की कक्षाएं अटेंड करती थी। वह देखती थी कि एम ए की कक्षा में बावन छात्रों में से सिर्फ़ तीस ही वहां आते थे। रास्ते में उसे अपने साथ की कुछ लड़कियां दिखाई देतीं, पर वे कक्षाओं में नहीं होती थीं। उसे चरकी देकर पता नहीं कहां चली जाती थीं।

जब एक दिन उसने विभा से पूछा तो उसने जो उत्तर दिया उससे निन्नी हैरान ही हो सकती थी। उसने कहा, 'यहां एम ए किसे करना है। अभी उसकी मित्रता एक ऐसे पुरुष से हुई है जो शादीशुदा है पर वह शाम लड़की के साथ गुजारना पसन्द करता है।

...उसके अनुसार घर जाकर वही घरेलू बातें और बच्चों की फ़रमाइशें।' 'देखो विभा, तुम आग से मत खेलो। क्यों उसका परिवार बर्बाद करने पर तुली हो? तुम क्यों वज़ह बनना चाहती हो?' 'मैं उसे बुलाने नहीं गई थी। वही दोस्ती करना चाहता था।'

निन्नी अपना सा मुंह लेकर रह गई थी। किसीके मामले में ज्यादा बोलना ठीक नहीं। उस दिन शनिवार था। ऑफिस का आधा दिन होने की वजह से लोग ढाई बजे ही आ जाते थे और धूप होने से लायब्रेरी के बाहर वाले हॉल की बेंचें घेर लेते थे।

ऐसी ही एक दोपहर को वहां विनय और उसके दोस्तों का जमावड़ा लगा था। निन्नी अपनी सहेलियों के साथ वहां से गुजर रही थी कि विनय ने कहा, 'निन्नी, आज तुम्हारे एक प्रोफेसर नहीं आये हैं। हम लोगों के बीच भी कभी बैठा करो।'

निन्नी कुछ सोचकर वहां चली गई थी। विनय ने निन्नी का अपने दोस्तों से परिचय कराया। विनय तीखी मूंगफलियां लाया था। सब ने मूंफलियों को लॉन में पेपर पर रख लिया था और सभी बारी-बारी से उन पर हाथ साफ कर रहे थे।

बातचीत के दौरान विनय ने कहा, 'मैं तो सर्वधर्म और समभाव का समर्थक हूं।' इस बात पर एक ठहाका और साथ में एक आवाज़, 'सही है विनय। इससे तुम्हें हर धर्म की लड़कियां पटाने में आसानी रहेगी।'

वह वहां से चुपचाप उठ गई थी। विनय को शायद पता चल गया कि निन्नी को यह मज़ाक पसन्दा नहीं आया। उसने निन्नी को रोका भी नहीं। पर उसे यह आभास ज़रूर हो गया कि अब शायद उससे बात करने से बचेगी।

अब विनय को निन्नी की भी शर्म नहीं रही थी। पत्नी की उसके जीवन में क्या जगह थी, वह बता चुका था, पर उसने निन्नी से अकेले में कभी ऐसी कोई ऐसी बात नहीं कही थी कि वह उससे दोस्ती तोड़ने का मन बना सके।

एक दिन वे दोनों फिर लॉन में थे। विनय ने बिना किसी भूमिका के कहा, 'मैं तुम्हारी बहुत इज्ज़त करता हूं। तुम अन्य लड़कियों से हटकर हो। तुमसे कभी बेईमानी नहीं कर पाऊंगा। इस बात को गांठ बांध लो। उस दिन की बात के लिये अपने दोस्तों की ओर से माफ़ी मांगता हूं।"

'यह तुम्हांरा जाती मामला है। मेरी और तुम्हारी दोस्ती में कोई फर्क़ नहीं आयेगा। अपनी ज़िन्दगी जीने का तुम्हारा अपना तरीका है। हम जब भी यहां आमने-सामने होंगे तो हैलो हो ही जाया करेगी।' यह कहकर वह वहां से चली गई थी।

निन्नी जिस कॉलोनी में रहती थी, वहीं विनय के ऑफिस की एक लड़की रामी भी रहती थी। वह काफी चुप रहती थी। कॉलोनी के लोगों से बहुत कम बोलती थी। निन्नी का यह अनुभव रहा है कि जो लोग चुप्पी होते हैं, वे बड़े घाघ होते हैं।

एक दिन रात के तीन बजे अचानक कॉलोनी में एक महिला

के चिल्लाने की आवाज़ आई, 'विनय, तुम सीधे नीचे आ जाओ और मेरे साथ घर चलो। मैं तुम्हारी विवाहिता हूं। अब यह सब शोभा नहीं देती।'

उधर वॉचमैन की आवाज़, 'मैडम, गाली मत दीजिये। शरीफों की कॉलोनी है। जब विनय साहब जागेंगे तो हम आपके आने की ख़बर कर देंगे। अभी आप जाइये।' 'इसका मतलब था कि विनय यहां रोज़ आते हैं।'

और वह महिला वहीं बैंच पर बैठ गई थी यह कहते हुए, 'आज तो उनको लेकर ही जाऊंगी। इस छिनाल को मेरे पति ही मिले फंसाने के लिये।' ऊंची आवाज़ सुनकर कई खिड़कियां और लाइटें जल गई थीं। सोये चेहरे झांकने लगे थे।

उस महिला ने कुछ सोचा और अपने सीने पर दो थप्पड़ मारा और चिल्ला कर बोली, 'मैं अभी तो जा रही हूं पर शाम तक सीधे-सीधे घर आ जाना' और वह साड़ी का पल्ली संभालते हुए तेज़ तेज़ कदमों से चली गई थी।

सुबह पता चला कि विनय रोज़ रात को दस बजे के बाद रामी के घर आता था। यह तो चिराग़ तले अंधेरावाली बात हुई। निन्नी और विनय अच्छो दोस्तक थे और निन्नी को भनक तक नहीं कि विनय की रातें यहां गुजरती हैं।

निन्नी के मन में अजीब सी घबराहट हो रही थी कि आज तो एक दिन ऐसा हुआ है यदि विनय का ऐसा ही रवैया रहा तो पता नहीं क्या हो। क्या एक बार निशा से मिलने की कोशिश की जाये? सच कहे तो निन्नी अंदर से हिल गई थी उस घटना से।

वह सुबह तैयार होकर ऑफिस के लिये निकली। जब अपने ऑफिस पहुंची तो सुबह के दस बज चुके थे। उसने विनय के दफ्तर फोन मिलाया। नसीब कि फोन विनय ने ही उठाया। 'हैलो निन्नी, कैसे याद किया? सब ख़ैरियत तो है?'

'हां, सब ठीक है। आज शाम को तुम लॉन की शोभा बढ़ा रहे हो?' 'बिलकुल आ रहा हूं। वह तो मेरा एक तरह से बसेरा है। मिलना है क्या?' 'हां, आज शाम की चाय साथ पीते हैं। तुम चार बजे आ जाना।' यह कहकर निन्नी ने फोन रख दिया।

निन्नी ने भी अपना आफिस जल्दी छोड़ दिया और चार बजे लॉन में आ गई। विनय वहां पहले से मौजूद था। 'बंदा हाज़िर है। ऐसी क्या बात हो गई?' ऐसी भी क्या। जल्दी है? चाय पर चल रहे हैं, वहीं फ़ुरसत से बात करेंगे।'

वहां से उन्होंने टैक्सी ली और कुलाबा की ओर चलने के लिये कहा। एक अच्छा रेस्तरां जो काफी मंहगा था। विनय थोड़ा विस्मित तो था। निन्नी ने कहा, 'मैं तुम्हें लेकर आई हूं। ख़ासा कमाती हूं। बिल मैं दूंगी। चलो आराम से बैठो।'

विनय ने हंसते हुए कहा, 'बात बिल की नहीं है। मैं भी ख़ासा कमाता हूं। लेकिन सोच रहा हूं कि ऐसी क्या बात है जो तुमने मुझे बुलाया और वह भी फोन करके। हम लॉन में भी बात कर सकते थे, जैसे हमेशा करते हैं।'

निन्नी ने नज़र उठाकर विनय को देखा कि कितना भोला बन रहा है इस समय? अभी इसकी ख़बर लेती हूं। बिना किसी भूमिका के बोली, 'कल रात तुम मेरी कॉलोनी में थे और मुझे ही पता नहीं।' 'तुम्हें कैसे पता कि मैं वहां पर था कल?' विनय ने हैरानग़ी से पूछा था।

'देखो, बनो मत। कल रात तीन बजे तुम्हारे नाम को लेकर एक महिला ने जो शोर-शराबा किया और रामी को भद्दी गालियां दे रही थी, उसके पीछे कुछ तो कारण होगा। ऐसे ही तो तीन बजे नहीं आई होगी। सच बोलना, यदि मुझे अपनी दोस्त मानते हो तो।'

पता नहीं, तुम्हारी आंखों और आवाज़ में क्या है जो मैं तुमसे झूठ नहीं बोल पाता। हां, रात को कुछ आवाज़ें मैंने भी सुनी थीं पर नींद में था, इसलिये उस महिला की आवाज़ नहीं सुन पाया। हां, कल मैं रामी के घर ठहर गया था। वह मेरी बहुत पुरानी दोस्त है।'

'क्या। मंगवाऊं? चलो, सैंडविच और कटलेट्स मंगवा लेते हैं। तुम जारी रहो विनय।' हां, तो मैं अक्सर आता हूं रामी के घर। वह चिकन बहुत अच्छा पकाती है। वह यहां अकेली है। मुझे बुला लेती है। कल रात ज़्यादा हो गई थी, सो उसने घर नहीं जाने दिया और मैं ठहर गया।'

'तुमको अपनी पत्नी को फोन करके नहीं बताना चाहिये था कि तुम यहां हो?' 'निन्नी, तुम भी अजीब बात करती हो। उसे पता नहीं होता तो वह यहां कैसे आती? रात रुकने की बात नहीं बताई तो मेरा इतना अपमान करेगी?'

'देखो विनय, बात इतनी सीधी नहीं है, जितनी समझ रहे हो, वह तुम्हारी ब्याहता है। अच्छा, तुम एक काम करो, मैं निशा से बात करूं तो तुमको कोई समस्या तो नहीं है?' तुम क्यों बात करना चाहती हो? तुम्हें लगता है कि वह तुमसे बात करेगी?'

'प्रयास करने में हर्ज़ क्या है? वह घर में कितने बजे मिलेगी, यह तो बता सकते हो।' 'रात को ग्यारह बजे के आसपास कर लेना।' बड़े बेमन होकर विनय ने कहा था और फिर दोनों सैंडविच कुतरने लगे थे। विनय के माथे पर शिकन साफ नज़र आ रही थीं।

दोनों ने चाय पी और फिर बिना ज्यादा बात किये रेस्तरां से बाहर आये। इस बार विनय ने टैक्सी बुलाई और कहा, 'मैं फिलहाल घर जाऊंगा। थोड़े आराम की ज़रूरत है।' निन्नी ने सिर्फ़ उसे नज़रभर देखा, कुछ बोले बिना टैक्सी में दोनों बैठ गए।

बात ही ऐसी थी कि विनय का चिंतित होना स्वाभाविक था। निशा निन्नी को नाम से जानती थी। एक बार निन्नी के फोन को निशा ने ही उठाया था और बाद में विनय से कहा था, 'तुम्हारी यह दोस्त आवाज़ से शरीफ और समझदार लगती है।'

आज तक विनय जिस बात से बच रहा था, वही बात होने जा रही थी। जब चर्चगेट स्टेशन आ गया तो निन्नी ने कहा,

'घबराओ मत। कोई गोली नहीं मार दूंगी। निशा का भी पक्ष सुनना ज़रूरी है। अभी तो तुम्हारी करनी सामने आई है।'

जब निन्नी अपने घर पहुंची तो अशान्त थी। विनय की इज्ज़त सड़क पर आ गई थी। उसने घर आकर निशा को फोन लगाया। निशा ने फोन उठाया, 'हैलो, निशाजी बोल रही हैं?' 'जी, आप कौन?' 'मैं निन्नी़ बोल रही हूं। कैसी हैं आप?'

'ठीक हूं। आपने कैसे फोन किया? विनय तो ठीक है?' निन्नी ने अपनी आवाज़ में मिठास घोलते हुए कहा, 'विनय ठीक हैं। मुझे आपसे कुछ बात करनी थी। यदि आप कुछ समय दे सकें तो बात कर लें हम दोनों।'

कुछ सेकेन्ड के बाद आवाज़ आई, 'अभी तो संभव नहीं है। शायद विनय आ गए। कल मैं आपको विनय के ऑफिस जाने के बाद फोन करूंगी। सुबह ग्यारह बजे चलेगा?

उधर से निन्नी की आवाज़ आई, 'ठीक है। मैं इंतज़ार करूंगी। ऐसा कीजिये आप दस बजे फोन कर लीजिये। मैं ज़रा जल्दी अपने ऑफिस चली जाऊंगी। इत्मिनान से बात हो पायेगी।' इसी के साथ दोनों ओर से फोन कट गया।

रात बीतते देर ही कितनी लगती है। सुबह निन्नी घर से निकल ही रही थी कि फोन घनघनाया। उठाने पर वहां से निशा की आवाज़ आई, 'आप ऐसा कीजिये, घर आ जाइये। फोन पर कैसे बात कर पायेंगे? यदि आप छुट्टी ले लें तो बेहतर।'

समय की नज़ाकत को देखते हुए निन्नी मना नहीं कर पाई और हामी भर दी। अब वह तैयार हो चुकी थी तो घर में बैठने का कोई तुक़ नहीं था। सोचा कि घर के पास के रेस्तरां में डोसा खाकर विनय के घर चली जायेगी। ऑटो से आधा घंटा लगेगा।

करीब ग्यारह बजे वह विनय के घर के दरवाज़े के सामने थी। उसने घंटी बजाई। कोयल की आवाज़ कूकी और कुछ पलों बाद निशा ने दरवाज़ा खोला था। निन्नी घर के अंदर गई। निशा 'एक्सक्यूज़ मी' कहकर अन्दर चली गई थी।

इतनी देर में निन्नी ने घर का जायज़ा लिया। घर करीने से सजा था। घर में वे सभी आवश्यक चीज़ें थीं जो एक उच्च मध्य वर्गीय घर में होनी चाहिये। इतनी देर में निशा एक ट्रे में दो गिलास शर्बत और कुछ सूखे मेवे ले आई।

शर्बत पीने के बाद निशा थोड़ी तटस्थ हुई और बोली, 'आप कुछ न पूछें। उस दिन मैं देर रात आपकी कॉलोनी में विनय को लेने आयी थी। उस समय तो नहीं आये पर जब सुबह आये तो आते ही बिना कुछ बात किये मुझे दो चांटे रसीद कर दिये।'

निन्नी ने निशा के हाथों को अपने हाथ में ले लिया। निशा फूट-फूटकर रो पड़ी। कुछ देर दोनों में से कोई कुछ नहीं बोला। सवाल निन्नी ने ही किया, 'शादी से पहले आपको विनय का स्वभाव पता नहीं था?'

'किसी के माथे पर थोड़े ही लिखा होता है। जब साथ रहते हैं तब पता चलता है।' निशा ने अपने आंसू पोंछते हुए कहा था। 'आप बतायेंगी कि किन हालातों में आप दोनों की शादी हुई।' अब निशा सतर्क हो गई थी। निजी सवाल था।

'विनय मेरे ही गांव का है। यह बहुत अच्छाज गाता था, अब तो सिर्फ़ चिल्लाता है। उस समय खुद को सर्वधर्म और समभाव का समर्थक बताता था। वह तो अब समझ में आ रहा है कि वह इस भावना का दिखावा क्यों करता था।

उसकी मनभावन अदा पर लड़कियां फिदा भी हो जाया करती थीं। गांव में तो विनय अंधों में काना राजा था। लड़कियां उसके साथ घूमने में अपना भाग्य सराहती थीं। उन्हें उसके साथ घूमने-फिरने में कोई झिझक नहीं होती थी।'

यह कहकर निशा ने एक लंबी सांस ली, मानो थक गई हो। निन्नी ने देखा कि निशा आगे की बात को कहने के लिये खुद को तैयार कर रही है। 'हां, तो मैं भी एक सामान्य लड़की ही तो थी। मुझे भी विनय मन ही मन अच्छा लगता था।

...शायद लड़कियां लड़कों की बनिस्बत शादी के सपने जल्दीह देखती हैं। वह भी तो एक सामान्य लड़की थी। विनय को लेकर उसने सपने देखने शुरू कर दिये थे। विनय को खुद का अक्स मेरी आंखों में दिखने लगा था। दोनों की आंखों में सपने तैरने लगे थे।

आख़िर यह दिन भी आना ही था। वह लड़की होकर कैसे शादी का प्रस्ताव रखती। यह पहल तो विनय को ही करना था और वह दिन भी आ गया, 'निशा, हम कब तक रेस्तरां में शामें बितायेंगे? विनय ने एक दिन उसके सामने प्रस्ताव रखा,

'निशा, तुम मेरे मन में बस चुकी हो। अब मैं अपने जीवन को स्थायित्व देना चाहता हूं। मुझे लगता है कि तुम भी यही चाहती होगी। जब-जब मैंने तुम्हें गले लगाया है, तुम्हारे दिल के तार बजते सुनाई दिये हैं।'

जुहू और वह भी समुद्र में उठती लहरें, रात के क़रीब आठ बजे थे, जब निशा और विनय साथ रहने के लिये एक दूसरे को तैयार कर रहे थे और अपने प्रेम का खुलकर इज़हार कर रहे थे और अंधेरा इसमें पूरी सहायता कर रहा था।

'हां, तुम्हें लेकर काफी गंभीर हूं।' निशा ने लरज़ती आवाज़ में कहा था। वह अपनी बात पूरी करती इसके पहले ही विनय ने उसे अपने आगोश में ले लिया और फिर उसके के शरीर पर उसकी उंगलियां फिसलने लगीं।

सारे पाप रात के अंधेरे में होते हैं। दोनों ने रात के अंधेरे में एक दूसरे को महसूसा उन अंगों पर भी विनय का हाथ गया जहां नहीं जाना चाहिये था। शादी के सपने दिखाये और जल्दी शादी कर लेने का वचन भी दिया।

जब दोनों शरीर मिलने को बेताब थे तो फिर कौन रोक सकता था। सो वही हुआ जो नहीं होना चाहिये था। वह खुद को

अपराधी समझने लगी कि यह सब कैसे हो गया। जो शादी के बाद होना चाहिये था, वह पहले कैसे हो गया।

विनय काफी देर तक उसे सहलाता रहा। शायद अंधेरे में यह मिलन अन्तिम था। धीरे-धीरे वह मिलने से भी कतराने लगा था। जब वह फोन करती तो या तो फोन बिजी मिलता या फिर बन्द। वह खुद के छले जाने पर बहुत दुखी थी।

इस बात को महीना होने को आया। उसे उल्टियां होने लगीं। समझने में देर नहीं लगी कि एक दिन का शारीरिक संपर्क अपना असर दिखा रहा है। उसने खुद को मानसिक रूप से तैयार किया और विनय के ऑफिस पहुंच गई थी।

निन्नी को अपने सामने देखकर विनय अचकचा गया। उसने ठंडे स्वर में कहा, 'आज हम लंच बाहर करते हैं, तुमसे कुछ ज़रूरी बात भी करनी है।' 'ज़रूरी' शब्द सुनकर विनय थोड़ा परेशान हुआ पर स्वयं पर नियंत्रण करते हुए बोला, 'हां, चलते हैं।'

वह चुपचाप बैठी रही और विनय स्वयं को व्यस्त दिखाने की असफल कोशिश करता रहा। अंततः एक तो बजना ही था और दोनों को लंच पर जाना ही था। दोनों नीचे उतरे और टैक्सी लेकर ऑफिस से दूर एक रेस्तरां में गये।

रेस्तरां में बैठकर काफी देर तक चुप्पी छाई रही। चुप्पी उसने ही तोड़ी, 'विनय, तुम फोन पर मिलते ही नहीं थे। इसलिये मुझे ऑफिस आना पड़ा। इस बेरुख़ी का कारण जान सकती हूं? क्या अपना वादा निभाना नहीं चाहते अब?'

'क्या मतलब? ऐसा क्या हो गया?' 'मैं गर्भवती हो चुकी हूं और हमें अब शादी कर लेनी चाहिये। पेट का आकार बढ़े, इसके पहले हम कोर्ट मैरिज कर लेते हैं।' विनय अपने ही जाल में फंस चुका था। उसे समझ में नहीं आ रहा था, फिर भी बोला,

'अचानक इतना बड़ा फैसला? सोचने के लिये थोड़ा वक्त तो दो।' 'नहीं, अब वक्त देने का समय नहीं, बल्कि निर्णय लेने का समय है। हम आज कोर्ट मैरिज कर रहे हैं। रजिस्ट्रार से बात कर ली है।'

विनय के सामने शादी के लिये ना करने का बहाना नहीं था। शादी के नाम से अचानक उसका मुंह कसैला हो गया और खाना बेस्वाद लगने लगा। उसने थूक निगलते हुए पूछा, 'क्या तुमने अपने माता-पिता को बताया है इस बारे में?'

मैं भी बेशर्मी पर उतर आई और अपनी आंखें उठाते हुए कहा, 'जब हमने संसर्ग किया था, तब माता-पिता से पूछा था? नहीं न। तुम ऑफिस से आज छुट्टी ले लो। अभी बाज़ार से फूल मालाएं लेना है और मिठाई भी लेना है।'

निशा की आवाज़ से मानो विनय विवश सा हो गया। उसने अपने दफ्तर से छुट्टी ले ली। उसने यह भांप लिया था कि आज निशा मानेगी नहीं। उसके तेवर देखकर विनय ने सोचा कि चलो शादी कर ही लेते हैं। बाद की बाद में देखी जायेगी।

रेस्तरां में खाना खाते-खाते ढाई बज गये। निशा ने बिल चुकाया और वहां से बाहर आकर फूल गली से दो मालाएं लीं और तिवारी की दूकान से एक-एक किलो काजू कतली के डिब्बे पैक करवाये।

फूलमाला खरीदते समय भी दोनों में इस बात पर बहस हुई की माला गेंदे के फूल की खरीदी जायें या गुलाब की। बात पैसे की नहीं थी। दोनों कमा रहे थे और अच्छा कमा रहे थे। बात यह थी कि जिन हालातों में यह शादी हो रही थी, वह कोई सुखकर नहीं थी।

चार बजे वे कोर्ट पहुंचे। रिसेप्शन पर उन्होंने अपने आने की सूचना दे दी। विनय और निशा-- दोनों के चेहरे पर खुशी की कोई रेखा नहीं थी। दोनों को पता था कि किस हालात में शादी हो रही है तो खुशी तो क्या ही होनी थी।

दोनों अपने अपने हाथ बांधे बैठे थे और आंखें रजिस्ट्रार के केबिन की ओर लगी थीं कि कब बुलावा भेजते हैं। रजिस्टार में एक हस्ताक्षर मात्र से उनके लिये ज़िन्दगी के मायने बदल जायेंगे और साथ ही उस ज़िम्मेदारी की पोटली भी जो निशा के पेट में पल रही है।

आख़िरकार चार बजकर चालीस मिनट पर चपरासी ने आकर कहा, 'अन्दर जाओ। साहेब ने बुलाया है।' दोनों उठे और एक दूसरे की ओर देखा फिर रजिस्ट्रार के केबिन की ओर चल दिये। केबिन खटखटाया और अंदर से आवाज़ आई, 'कम इन।'

जब वे केबिन में पहुंचे तो रजिस्ट्रार ने दोनों की ओर मुस्कराते हुए देखा और कुर्सियों पर बैठने के लिये कहा। दोनों यंत्रवत बैठ गये। रजिस्ट्रार ने अपनी अनुभवी आंखों से दोनों को देखते हुए कहा, 'घरवाले तैयार नहीं हैं कि आप दोनों की शादी हो या आप दोनों इस तरह की शादी करना चाहते हैं।' उत्तर विनय ने दिया, 'सर, ऐसी कोई बात नहीं है। हम आदर्श विवाह करना चाहते हैं, दिखावे से दूर, सादगीभरी शादी।'

विनय के इस उत्तर पर उसने उसे एक नज़र देखा और विनय ने अपनी बात के समर्थन के लिये पूछा, 'है न निशा?' वह उसके शातिरपन को देखकर हैरान थी पर ऊपरी तौर पर बोली, 'जी, ये सही कह रहे हैं।'

रजिस्ट्रार खुश हो गये और पूछा, 'कोई मित्र गवाह के तौर पर आये हैं?' उनकी चुप्पी ही उत्तर थी। उन्होंने कहा, 'कोई बात नहीं। आप दोनों एक दूसरे के गले में माला पहनाइये। दोनों द्वारा एक दूसरे को माला पहनानने के बाद रजिस्ट्रार ने बधाई दी।

उन्होंने उनको मिठाई का डिब्बा दिया और उनके केबिन से बाहर आ गये। विनय ने कहा, 'अभी तो हम अपने अपने घर जायेंगे। मुझे ऑफिस में शादी का प्रमाणपत्र देना होगा और उसके आधार पर कैंपस में घर के लिये आवेदन करना होगा।'

'ठीक है। एक महीने में तो यह सब हो जायेगा न?' कोशिश

होगी कि पन्द्रह दिनों में ही हो जाये। जहां इतने दिन अलग रहे तो कुछ दिन और सही। शादी सबसे अच्छी बहाना था घर मिलने के लिये और घर मिल भी गया।' इसके बाद मौन पसर गया।

निन्नी ने निशा को एक बार भी नहीं टोका था और निशा बड़े सहज भाव से अपने मन की गांठें खोलती गई। निन्नी ने उसे पूरी तरह से अपने विश्वास में ले लिया था। अचानक निशा ने कहा, 'पता है, यह रामी हमारे घर आई थी शादी की बधाई देने।'

'ओ के। तब इन मैडम ने क्या कहा था?' कुछ ख़ास नहीं, बस इतना ही कहा, 'मैं भी विनय के गांव से हूं। उम्र में छोटी हूं। तुम मेरी दीदी हुई। सच कहूं तो उसकी इस औपचारिकता पर आश्चर्य हुआ था। पहली मुलाक़ात में 'तुम' पर उतर आई थी वह।'

'निशाजी, बात समझ में आ रही है धीरे-धीरे। अब तो विनय ने एम ए में दाखिला ले लिया है। यूनिवर्सिटी में आते रहेंगे।' निन्नी ने कहा और निशा की ओर देखा। 'अच्छा, मुझे नहीं पता। ज़रूरत भी क्या है।' अचानक एक उदासी तिर आई थी वहां।

निशा से विदा ली और घर चलने के लिये तैयार हुई। रास्ते भर सोचती रही कि निशा कहां फंस गई। क्या पुरुष ऐसे होते हैं? कैसे विनय का दिल करता है यह सब करने के लिये, अपनी पत्नी को छलते समय उसका दिल नहीं कांपता होगा?

घर पहुंची और बिस्तर पर निढाल हो गई। शाम के पांच बजे थे। सोचा कि थोड़ा आराम करके वह रसोईघर की ओर जायेगी। वह कब सो गई, पता ही नहीं चला। जब नींद खुली तो रात के नौ बजे थे। कौन खाना बनाने का खटराग करे, दूध-ब्रेड से ही काम चला लेगी।

दूसरे दिन सुबह विभा का फोन आया, 'निन्नी, आज कॉलेज की टर्म फीस भरने की आख़री तारीख़ है। दोपहर के साढ़े तीन बजे तक भरना है। नोटिस लगाई है।' 'अच्छा हुआ, तूने बता दिया। आती हूं, किसी तरह। आज भी आधे दिन की छुट्टी ले लूंगी।'

निन्नी ने फिर ऑफिस में आधे दिन की छुट्टी मांगी थी। बॉस ने मुंह टेढ़ा किया तो बोली, 'मैडम, फीस भरना ज़रूरी है। सेमिस्टर खत्म हो रहा है।' बॉस ने कहा, 'ठीक है। अब इस महीने छुट्टी मत मांगना। कल भी छुट्टी ली थी।' ठीक है मैडम।

सोचा कि आज वह भी थोड़ा समय लायब्रेरी में बितायेगी। साढ़े बारह बजे ऑफिस छोड़ दिया। वह लायब्रेरी में गई। कैंटीन में बैठकर टिफिन खाया। वहां से वह उस केबिन में गई, जहां फीस भरना था।

वह खटखट करती हुई दूसरी मंजिल पर पहुंची। उसने खड़ाक से केबिन का दरवाज़ा खोला। अंदर का सीन देखा तो न अंदर जाते बन रहा था और न बाहर आते। कोई एक महिला अपने घने बालों को खोले बैठी थी और एक मर्दाना चेहरा उन बालों में खुद को छिपाये था।

निन्नी ने गला खंखार किसी के होने की सूचना दी। झटके से वह मर्दाना चेहरा ऊपर की ओर उठा। अचानक उसके मुंह से निकला, 'विनय, तुम इस समय यहां?' एक मिनट के लिये विनय का चेहरा फक् हुआ पर खुद को संभालते हुए बोला, 'ये रोशनी हैं। हम ऑफिस में साथ हैं। मैं इनके बालों में उलझा फूल निकाल रहा था। आओ, बैठो। कैसे अचानक आना हुआ?' 'जैसे तुम्हारा आना हुआ। आज फीस भरने की आख़िरी तारीख है। तुम जारी रहो। मैं बाद में आ जाऊंगी।' कहकर वह केबिन से बाहर निकल गई थी।

शायद वह शनिवार का ही दिन था। निशा का फोन आया, 'निन्नी, मैं तुम्हारे घर आ रही हूं।' वह कैसे मना करती? सिर्फ़ इतना ही कह पाई, 'आ जाइये।' क़रीब एक घंटे बाद ऑटो के रुकने की आवाज़ आई। दरवाज़ा खुला तो निशा सामने थी।

दोनों में कोई बात नहीं हुई और निशा अन्दर प्रवेश कर गई। निन्नी ने देखा कि निशा के दायें गाल पर पांच उंगलियों के निशान हैं। 'ये क्यों हुआ?' 'कुछ नहीं। विनय रामी के साथ रहना चाहते हैं। मेरे ऐतराज़ करने के फलस्वरूप यह चांटा है।

...मैंने रामी को फोन किया तो वह बोली, 'आप तो मेरी दीदी हैं। विनय और आपके बीच जो हो रहा है, मुझे कुछ नहीं कहना। किसके साथ रहना है, यह उनकी मर्ज़ी है। आप चाहें तो मैं आप लोगों के यहां शिफ्ट कर जाऊं। घर की बात घर में रहेगी।'

'तो अब आपने क्याा तय किया?' बच्चों का क्या सोचा?' निशा ने कहा, 'मुझे क्या सोचना है। मैं सिर्फ़ आपको यह बताने आई हूं कि मैं जल्दी ही यह शहर छोड़ दूंगी। रोटी मैं कहीं भी कमा सकती हूं। विनय जाने और रामी जाने। बच्चों को हॉस्टेल भेज दूंगी। फिर इन दोनों को जो रासलीला करना हो करें।'

'जब आपने इतनी दूर तक का सोच लिया है और समझौते की किरण नहीं दिखाई दे रही तो फिर तलाक़ के बारे में क्यों नहीं सोचती आप? क्यों घुटकर जीना चाहती हैं? ज़िन्दगी इतनी क़मतर तो नहीं आपकी।' निन्नी ने धीरे से कहा।

निशा के चेहरे पर एक दृढ़ता दिखी और वह बोली, विनय की सज़ा तलाक़ नहीं है। उसने भी यह प्रस्ताव रखा था, पर मैंने कह दिया, 'बस...तलाक़ यही नहीं दूंगी। तुम ऐसी ही ज़िन्दगी जीने के लिये अभिशप्त, हो।

... अच्छा निन्नी, शायद यह हमारी अन्तिम मुलाक़ात हो' और निशा वहां से चली गई। निन्नी कुछ भी तो नहीं कह पाई। चुपचाप निशा को जाते देखती रही।

संपर्कः. बी...901, लेक ल्यूसर्न, लेक होम्स, पवई.....मुंबई....400076, मो. 0 98339 59216

कहानी

रियल हीरो

◆ ज़हीर कुरेशी

दतिया-झांसी मार्ग पर, ग्वालियर से सिर्फ 40 किलो मीटर दूर डबरा कस्बा बसा हुआ है। विगत में, मोटे दाने की शकर के लिए मशहूर शुगर मिल के कारण भी डबरा की अपनी ख्याति रही है। उस समय, पहली बार ग्वालियर-डबरा क्षेत्र में किसान गन्ना उत्पादन की ओर आकर्षित हुए थे। बलजीत भी उन गन्ना किसानों में से एक था- जो आज भी डबरा के दूसरे छोर पर निवास करता है। बलजीत के चक के बाद एक प्रकार से डबरा कस्बे की सीमा समाप्त हो जाती है। अपनी पत्नी और इकलौते बेटे के साथ बलजीत दो पक्के कमरे, किचिन, लेट्रिन, बाथरूम बनवा कर बरसों से अपने खेतों पर ही रहता है। बलजीत के पास तेज़ आवाज़ करने वाली एक पुरानी मोटर सायकिल है- जिसके माध्यम से उसका जीवंत संपर्क डबरा कस्बे से बना रहता है।

चक पर, लहलहाती फसल और अपने परिवार की सुरक्षा की दृष्टि से बलजीत ने एक दबंग कुत्ता पाल रखा है, नाम है उसका टॉनी। वैसे तो टॉनी एकदम स्वस्थ, चाक-चौबंद, फुर्तीला डॉगी था, लेकिन, दो महीने पहले मुख्य सड़क पार करते हुए वह किसी लर्निंग ड्रायवर की एक तेज़ रुफ्तार कार की चपेट में आ गया। दुर्घटना में डॉगी टॉनी स्वर्ग तो नहीं सिधारा, लेकिन, उसकी पिछली बायी टांग कार के अगले पहिए के नीचे आ गई, जिसे वेटेनरी सर्जन की सलाह पर ऑपरेशन करके टखने से काटना पड़ा। अब टॉनी साढ़े तीन टांगों वाला विकलांग कुत्ता है, लंगड़ा कर चलता है। उसकी पुरानी वाली स्फूर्ति न जाने कहां गुम हो गई है।

वह शायद गुरुवार का दिन था। अलस भोर.... जब हल्का-हल्का अंधेरा था, उजाला पूरी तरह फैला नहीं था, दूर से बलजीत ने देखा- टॉनी बहुत फुर्ती से अपने अगले पंजों द्वारा खेत के दक्षिणी भाग के एक स्थान की मिट्टी हटा रहा है। बलजीत ने टॉनी के इस प्रयास को अनदेखा कर दिया। दस मिनिट बाद, बलजीत भैंस का दूध दुहने के लिए बाड़े की ओर जा रहा था, उसने उचटती नज़रों से फिर देखा, टॉनी पंजों द्वारा मिट्टी को उधर-उधर करने के लिए अब भी प्रयासरत था। तभी बलजीत को किसी नवजात बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई दी। बाल्टी एक ओर पटक कर, बलजीत ने पत्नी सिमरजीत को आवाज़ लगाई और दौड़ कर टॉनी के पास पहुंचा। तब तक बलजीत और टॉनी के पास सिमरन भी आ गई। बलजीत और सिमरन ने मिट्टी हटाने में टॉनी की सहायता की।

जल्दी ही, पति-पत्नी दोनों लगभग एक हफ्ते पहले जन्में जीवित नवजात बच्चे तक पहुंच गए। सिमरन ने बच्चे को गोद में उठा कर उसके शरीर की धूल-मिट्टी साफ की। बच्चा शायद मां का दूध न मिलने के कारण लगातार रोए जा रहा था। सिमरन का बेटा मनजीत दौड़ कर किचिन से दूध और रुई का फाहा उठा लाया। सिमरन ने बच्चे को फाहे से दूध पिलाया तो बच्चा क्रमशः चुप होने लगा, चटाई पर लिटा दिया तो हाथ-पैर चला कर खेलने लगा। तब तक बलजीत ने 100 नम्बर डायल कर स्थानीय पुलिस को बुला लिया।

छोटे-से कस्बे में जीवित बच्चे को खेत की मिट्टी में दफन करने की खबर जंगल में आग की तरह चारों ओर फैल गई। डबरा कस्बे के लोग अपने-अपने दोपहिया वाहनों पर सवार हो कर बलजीत के खेत की ओर दौड़ पड़े। पुलिस ने सिविल डिस्पेन्सरी को फोन कर दिया तो तुरंत एक नर्स भी आ गई। नर्स ने सिमरन से बच्चे को ले लिया और उसे मां की शैली में खिलाने लगी। तब तक पंचनामा भी बन गया।

चालीस-पचास तमाशबीन लोगों में औरत-मर्द, लड़के-लड़कियां, बूढ़े-बच्चे सभी थे- जो कौतूहल से नवजात बच्चे को देख रहे थे। बलजीत पुलिस और नर्स के साथ-साथ तमाशबीनों को

छोटे-से कस्बे में जीवित बच्चे को खेत की मिट्टी में दफन करने की खबर जंगल में आग की तरह चारों ओर फैल गई। डबरा कस्बे के लोग अपने-अपने दोपहिया वाहनों पर सवार हो कर बलजीत के खेत की ओर दौड़ पड़े। पुलिस ने सिविल डिस्पेन्सरी को फोन कर दिया तो तुरंत एक नर्स भी आ गई। नर्स ने सिमरन से बच्चे को ले लिया और उसे माँ की शैली में खिलाने लगी। तब तक पंचनामा भी बन गया।

अपने डॉगी टॉनी की रोमांचक कहानी सुना रहा था कि अलस भोर कैसे पालतू कुत्ते ने खेत की भूमि खोद कर जीवित बच्चे का सुराग दिया। कहानी सुन कर कुछ उत्साही लोग विकलांग टॉनी की पीठ ठोकने लगे। उन तमाशबीन चालीस-पचास लोगों में 15-16 साल की केवल एक लड़की थी जो मौन थी और लगातार कुछ सोच रही थी। बलजीत ने गौर से देखा तो उसे लगा कि लड़की डबरा की नहीं है, कहीं बाहर से आई है।

बलजीत ने पुलिस एएसआई के कान में कुछ कहा। तभी एएसआई सुरेश से लड़की की ओर इशारा करते हुए नर्स भी कुछ बोली। सुरेश ने उस विचार मग्न लड़की को पिछली पंक्ति से आगे आने को कहा, लड़की बोली, साब, मैंने कुछ नहीं किया!

बलजीत ने कहा, तुमसे यह कौन पूछ रहा है कि तुमने कुछ किया या नहीं, एसआई साब जानना चाहते हैं कि तुम डबरा की हो या कहीं बाहर से आई हो?

लड़की से पूछे गए प्रश्न का उत्तर एक पचास साल की अधेड़ औरत ने दिया, जी, रिमझिम मेरी बहिन की लड़की है, फैमिली फंक्शन में फरीदाबाद से आई है।

सिमरन ने बातचीत के बीच में प्रवेश करते हुए कहा, 'तभी तो.... रिमझिम ऐसी नहीं लग रही थी कि डबरा की कुड़ी है!

एएसआई सुरेश ने रिमझिम की मौसी से कहा, इस लड़की को ले कर पुलिस स्टेशन चलो। नर्स को लग रहा है कि हाल ही में इस लड़की की डिलेवरी हुई है। चलो, जांच होगी।

डिलेवरी की अप्रत्याशित बात सुनते ही, बलजीत के खेत से रिमझिम और मौसी अचानक डबरा कस्बे की ओर भागने लगीं।

तीन युवा लड़कों और पुलिस के दो सिपाहियों ने दौड़ कर रिमझिम और उसकी मौसी को रोक लिया। शेष बचे तमाशबीनों सहित पुलिस, नर्स, बलजीत, रिमझिम, मौसी का पूरा जत्था पुलिस थाने पहुंचा। तब तक थाने में टी.आई साहब आ चुके थे। मोबाइल पर, एएसआई सुरेश ने टी.आई. राघवेन्द्र को पहले ही पूरे केस की जानकारी दे दी थी। सबसे पहले, राघवेन्द्र अकेले में रिमझिम और उसकी मौसी से मिला। मौसी से उसकी लंबी बात हुई। फिर चैम्बर में बलजीत, एएसआई और नर्स को बुलाया गया। टी.आई. ने केस को घुमाना शुरू किया और पूरा प्रकरण बलजीत और उसके परिवार पर लादना चाहा। बलजीत ने राघवेन्द्र को बताया, मुझे तो कुछ पता भी नहीं था। वो तो मेरे डॉगी टॉनी ने बच्चे की जान बचाई। अलस भोर वह अपने अगले दोनों पंजों से खेत की मिट्टी हटा रहा था, उसके सूंघने की ताकत से उसे आभास हो गया था कि जमीन में किसी जीवित प्राणी को दफ्नाया गया है। बच्चे के रोने की आवाज़ सुन कर, बाद में, उस जगह मैं और सिमरन पहुंचे और हमने चार हाथों से जल्दी-जल्दी मिट्टी हटा कर जिन्दा बच्चे को निकाला।.... लेकिन, आज पहली बार मुझे महसूस हो रहा है कि भलाई करना बेकार है! जिन लोगों को इस काम के लिए शासन से इनाम-इकराम मिलना चाहिए था, उनको फंसाया जा रहा है! कहते-कहते बलजीत का चेहरा तमतमा गया।'

तभी सिमरनजीत के फोन कॉल पर थाने में बलजीत को ढूंढता हुआ नगर पालिका, डबरा का नेता प्रतिपक्ष जसविंदर आ पहुंचा। थाने में नेता प्रतिपक्ष को देखते ही तुरंत राघवेन्द्र के स्वर बदल गए, बोला, इस प्रकरण में सबसे पहले रिमझिम की मेडीकल जांच करा लेते हैं। आवश्यकता हुई तो रिमझिम और बच्चे का डीएनए टेस्ट करवा लेंगे, दूध का दूध और पानी का पानी हो जाएगा!'



एक मिनिट के अंदर, टी.आई. द्वारा पलटी मारने से रिमझिम टूट गई, उसने स्वीकार कर लिया, बच्चा मेरा ही है। ....फरीदाबाद में दो साल से नितिन से मेरी दोस्ती चल रही थी। करीब आते-आते हम दोनों एक-दूसरे के इतने करीब आ गए कि मैं प्रिग्नेंट हो गई। प्रिग्नेंट होते ही, मैंने नितिन पर शादी का दबाव बनाया, जिसे उसने सिरे से खारिज कर दिया। मेरे नाबालिग होने को भी, नितिन ने शादी न करने का कारण बनाया। फिर उसके मां-बाप ने उसे किस रिश्तेदार के यहां ....कहां भेज दिया, मुझे आज भी नहीं मालूम। बाहर जाकर उसने अपनी सिम बदल ली, इसलिए फिर उससे बात नहीं हो सकी। ....छह महीने तो मैं फरीदाबाद में ही रही, बाद के तीन महीने मुझे डबरा मौसी के घर भेज दिया गया। मौसी के घर ही मेरी डिलेवरी हुई- बेटा हुआ। एक सप्ताह तक मैं और मौसी सोचते रहे- बच्चे का क्या किया जाए? परसों उसे ज़िन्दा दफन करने का प्लान बना। कल मैं और मौसी भोर पांच बजे जल्दी-जल्दी उसे बलजीत के खेत की मिट्टी में दबा आए। मुंशी ने एफ.आई.आर. में रिमझिम का पूरा बयान दर्ज किया।

इस जुर्म के लिए रिमझिम और उसकी मौसी दोनों को गिरफ्तार कर कोर्ट में प्रस्तुत किया गया। रिमझिम चूंकि नाबालिग थी, इसलिए उसे सुमति कन्या सुधार गृह, सूबे की पायगा, लश्कर, ग्वालियर भेज दिया गया। सुधार गृह में आग की तरह रिमझिम के अपराध की खबर फैल गई। चूंकि वहां आने वाली बीस प्रतिशत लड़कियां नाबालिग मां और उसके बाद किए गए किसी न किसी जुर्म से गुज़र कर सुधार गृह तक आईं थीं, इसलिए

अधिकतर लड़कियों ने रिमझिम का स्वागत किया।

संयोग से, दूसरे दिन सुमति कन्या सुधार गृह में मां आनंदमयी का प्रवचन था। रिमझिम को प्रवचन से पहले मां से मिलाया गया। रिमझिम ने संक्षेप में मां को अपनी करुण गाथा सुनाई। इसलिए अपने उस एक घंटे के प्रवचन का समाहार मां आनंदमयी ने कुछ इस प्रकार किया- 'बेटियो, हम सब उस परम-पिता परमात्मा की संतान हैं। उसके सम्मुख उसकी कोई भी संतान अपराधी नहीं होती। हां, अपने जीवन की परिस्थितियों के वशीभूत हम सब कोई न कोई गलती... कोई न कोई भूल अवश्य करते हैं, जिसकी सज़ा कभी न कभी हमें ज़रूर मिलती है। सबसे पहले तो हमें हमारी आत्मा धिक्कारती है, फिर समाज, बाद में कानून दण्ड देता है। ....समाज से डर कर ही तो उस बेटी ने अपने जिगर के टुकड़े को मिट्टी में दबा दिया था। बेटी तो नाबालिग है, लेकिन, उसकी मौसी तो जीवन के मर्म को समझती थी! इसीलिए सामने बैठी बेटी आज भी मुझे गंगा जल की तरह पवित्र लग रही है। सुन कर न जाने कब रिमझिम की आंखों से सारे तटबंध तोड़ कर आंसुओं की नदी बह निकली।



प्रवचन को आगे बढ़ाते हुए मां आनंदमयी ने कहा, मैं आज यहां बैठी सभी बेटियों को एक गूढ़ बात समझाना चाहती हूं कि स्त्री जब किसी बच्चे को जन्म देती है तो वह किसी खानदान के कुल-दीपक को नहीं जन्मती या किसी परिवार के नाम पर बट्टा नहीं लगाती। बल्कि इस विधि से प्रकृति उसका उपयोग कर रही होती है, जीवन को आगे बढ़ाने के लिए। ऐसे ही जैसे बीज टूट कर अंकुरित हो जाता है, पंछी पेड़ पर घरोंदा बना लेता है। जीवन के इस विराट खेल में मनुष्य, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, केवल माध्यम भर हैं, नियति के हाथ का खिलौना मात्र। मां का सम्मान करना पूरी प्रकृति का सम्मान करना है। मातृत्व एक विराट शक्ति है इस अस्तित्व की। आज हम सब इस बेटी के उस नवजात के अस्तित्व के प्रति क्यों न पूरी श्रद्धा के साथ नतमस्तक हो जायें?

मां आनंदमयी के प्रवचन का समापन होते ही, रिमझिम के मन में जो ग्लानि थी ....अनचाही मां बनने के प्रति जो अपराध-बोध था, वह एकदम खत्म हो गया। वह अपने नवजात बच्चे को अपना दूध पिलाने के लिए आतुर हो उठी, उसका मातृत्व जाग गया।

ज़मानत होने के बाद, तीसरे दिन सुमति कन्या सुधार गृह रिमझिम से मिलने उसकी मौसी आई तो रिमझिम ने नवजात के पिता के नाम के बिना अपनी कोख से जन्में बेटे को पालने का संकल्प ज़ाहिर किया। मौसी ने तरह-तरह के उदाहरण दे कर उसे लाख समझाया, लेकिन, रिमझिम अपने निर्णय पर अटल रही। तब तक फरीदाबाद से रिमझिम के पापा-मम्मी भी आ गए। रिमझिम की ज़िद के सामने, अंततः पूरे परिवार को हथियार डालने पड़े।

कानूनी प्रक्रिया पूरी करने के बाद, एक सप्ताह के अंदर रिमझिम को उसका बेटा मिल गया- जिसका उसने नाम रखा 'संकल्प'। संकल्प सहित फरीदाबाद लौटने से पहले, रिमझिम ने पापा-मम्मी और मौसी से उस फरिश्ते को थैंक यू कहने का आग्रह किया, जिसने बेटे संकल्प की सांसों को थमने से पहले उसे मिट्टी से बाहर निकाल लिया था।

संकल्प के साथ, रिमझिम का पूरा परिवार.... उस शाम.... बलजीत के घर उसके खेतों पर पहुंच गया। साहसपूर्वक बच्चे की परवरिश करने के रिमझिम के संकल्प को सुन कर सिमरन और बलजीत बहुत खुश हुए। दोनों ने उसे ढेर सारे आशीर्वाद दे डाले। बेटे संकल्प का जीवन बचाने के एवज़ रिमझिम ने बलजीत के गले में फूलमाला डालनी चाही तो बलजीत ने उसे रोक दिया। मनजीत को आवाज़ लगा कर उसने विकलांग डॉगी टॉनी को सबके सामने बुलवाया। बलजीत ने कहा, असली हीरो तो टॉनी है, सही मायने में संकल्प की जान तो टॉनी ने बचाई है। सबसे पहले उसी को आभास हुआ कि खेत की मिट्टी में कोई जिन्दा प्राणी दबा हुआ है। हम तो बच्चे की रोने की आवाज़ सुन कर टॉनी की तरफ भागे। इस पूरे एपीसोड का असली हीरो डॉगी टॉनी ही है। फूलमाला डाल कर अगर सम्मान करना ही है तो रिमझिम, टॉनी का करो!

भारी-भरकम माला के दो फोल्ड करने के बाद, थैंक यू, टॉनी जी', कहते हुए भाव-विह्वल रिमझिम ने गुलाब की वह फूलमाला घर के आठ लोगों की उपस्थिति में विकलांग टॉनी के गले में डाल दी। कमरे में मौजूद सभी लोगों ने जन्म-दिन का केक कटने की शैली में तालियां बजाईं। रिमझिम और मनजीत ने अपने-अपने मोबाइल कैमरों से माला पहने हुए टॉनी की स्टिल फोटो भी खींची।

आकस्मिक सम्मान के बाद, टॉनी एक मिनिट भी कमरे में नहीं रुका, साढ़े तीन टांगों पर चलता हुआ कुंए की ओर निकल गया, जहां पड़ोस के चक की युवा फीमेल डॉगी सूसन उसका इन्तेज़ार कर रही थी। पिछले छह महीनों से टॉनी सूसन का भी हीरो था।

108, त्रिलोचन टावर, संगम सिनेमा के सामने,
गुरुबक्श की तलैया, पो.ऑ. जीपीओ, भोपाल, (म.प्र.)-462001
मो. 0 94257 90565

कहानी

दुनिया की सबसे खूबसूरत खराब हो गई पेंटिंग

◆ सुशांत सुप्रिय

कूड़ा-कचरा बीनने वाले जिन पहले बच्चों ने उसे देखा उन्हें लगा कि वह कूड़े के ढेर पर ऐसे ही पड़ी कोई बड़ी-सी चीज़ है। हालांकि ध्यान से देखने पर उन्हें लगा कि उस चीज़ में कुछ तो ख़ास था। उस पर लगी गंदगी, और लिपटी पत्तियां और लताओं को हटाने के बाद जा कर उन्हें पता लगा कि दरअसल वह तो एक ख़राब हो गई बड़ी-सी पेंटिंग थी।

कूड़ा-कचरा बीनने वाले बच्चों ने उसे वहीं छोड़ दिया क्योंकि उन्हें लगा कि वह उनके किसी काम की नहीं थी। कुत्ते भी उसे सूंघ कर आगे बढ़ जा रहे थे। लेकिन वहां से गुज़र रहे इलाक़े के एक चित्रकार की निगाह इत्तिफ़ाक़ से उस पर जा पड़ी। उसने फ़ोन, एस. एम. एस. और व्हाट्स ऐप के माध्यम से अपने अन्य चित्रकारयार-दोस्तों के बीच यह ख़बर फैला दी। जल्दी ही आस-पास के सभी चित्रकार उस पेंटिंग को देखने वहां आ पहुंचे। जो चित्रकार उस पेंटिंग पर लगी-लिपटी गंदगी को साफ़ करके उसे इलाक़े के चित्रकार के घर ले गए उन्होंने पाया कि वह पेंटिंग अपनी ख़राब हालत में भी बेहद ख़ूबसूरत लग रही थी। जैसे कूड़े के ढेर पर पड़े रहने के बावजूद उसके निखार में ज़्यादा कमी नहीं आई हो। हालांकि वह बड़ी-सी पेंटिंग कहीं-कहीं से ख़राब ज़रूर हो गई थी, पर साफ़ नज़र आ रहा था कि वह अब भी एक बहुत ख़ूबसूरत पेंटिंग थी।

पेंटिंग को ज़्यादा साफ़ किए बिना ही उसके किनारे पर अंकित पेंटर का नाम देखा जा सकता था। हालांकि वह नाम क्या था, यह साफ़-साफ़ पढ़ पाना लगभग असंभव था, क्योंकि ठीक वहीं से पेंटिंग का ख़राब हो गया हिस्सा शुरू हो रहा था। इलाक़े के चित्रकार के ड्राइंग-रूम में जमा अन्य सभी चित्रकार तरह-तरह के क़यास लगा रहे थे कि आख़िर वह पेंटिंग किसने बनाई होगी और इतनी खूबसूरत पेंटिंग ख़राब हो कर कूड़े के ढेर पर कैसे पहुंच गई। यहां मौजूद सभी लोग पेशेवर चित्रकार थे जो स्वयं बहुत बढ़िया पेंटिंग बनाते थे। पर कूड़े के ढेर से मिली उस पेंटिंग जितनी ख़ूबसूरत पेंटिंग बनाने की वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे। वे सभी उस ख़राब हालत में भी मिली उस पेंटिंग की सुंदरता से मंत्रमुग्ध थे।

सारी शाम वे सभी चित्रकार उस इलाक़े के अपने चित्रकार साथी के ड्राइंग-रूम में बैठ कर उस सुंदर पेंटिंग को निहारते रहे, उस के बारे में चर्चा करते रहे। इलाक़े के चित्रकार के पास एक द्रव्य था जिससे उसने पेंटिंग पर लगी धूल-मिट्टी और गंदगी को थोड़ा और साफ़ कर देना चाहा। और तब उस पेंटिंग की ख़ूबसूरती और ज़्यादा उभर कर सामने आई। यह देखकर उस चित्रकार के सभी साथियों ने दांतों तले अपनी उंगलियां दबा लीं और कई चित्रकार एक स्वर में बोल उठे, "अरे, यह तो अपनी इस हालत में भी लेओनार्डो द विंची की मशहूर पेंटिंग 'मोनालिज़ा' से कहीं ज़्यादा सुंदर पेंटिंग लग रही है।" बल्कि कुछ अन्य चित्रकारों को वह अपनी इस अवस्था में भी वैन गॉग की प्रसिद्ध पेंटिंग 'सनफ़्लावर्स' से भी अधिक ख़ूबसूरत पेंटिंग लगी। इलाक़े के चित्रकार को भी यह पेंटिंग द विंची की एक और प्रसिद्ध पेंटिंग 'द लास्ट सपर' से कहीं अधिक बेहतर और चित्ताकर्षक पेंटिंग लगी। उस पेंटिंग का सौंदर्य देखकर उन सभी चित्रकारों के मुंह खुले-के-खुले रह गए।

थोड़ा और साफ़ करने पर उन सबको ऐसा लगा जैसे उस ख़राब हो गई पेंटिंग में से कोई आभा फूट रही थी। सभी चित्रकार उसके क्षतिग्रस्त फ्रेम की मरम्मत करने में जुट गए और देखते-ही-देखते उन्होंने उसके फ्रेम को फिर से ठीक कर डाला जिससे उस पेंटिंग में चार चांद लग गए।

चाय पीते हुए वे सभी चित्रकार गहन विचार-विमर्श करते रहे कि आख़िर इस इतनी बढ़िया पेंटिंग का क्या किया जाए। कुछ चित्रकारों ने सलाह दी कि इसे किसी विख्यात आर्ट-गैलरी को गिफ़्ट में दे दिया जाए ताकि यह पेंटिंग भी अन्य बढ़िया पेंटिंग्स के साथ उस आर्ट गैलरी की शोभा बढ़ाए। किंतु इलाक़े का चित्रकार इस पेंटिंग का स्वामित्व छोड़ने के पक्ष में नहीं था। अंत में यह राय बनी कि अगले हफ़्ते शहर की प्रसिद्ध आर्ट-गैलरी में लगने वाली प्रदर्शनी में अन्य पेंटिंग्स के साथ इस ख़ूबसूरत पेंटिंग को भी रखा जाए ताकि वहां आने वाले चित्रकला-प्रेमी इस अद्भुत पेंटिंग के सौंदर्य से अभिभूत हो सकें और इसे देखने का आनंद ले सकें।

चित्रकारों की सभा जब ख़त्म हुई और बाक़ी सभी चित्रकार

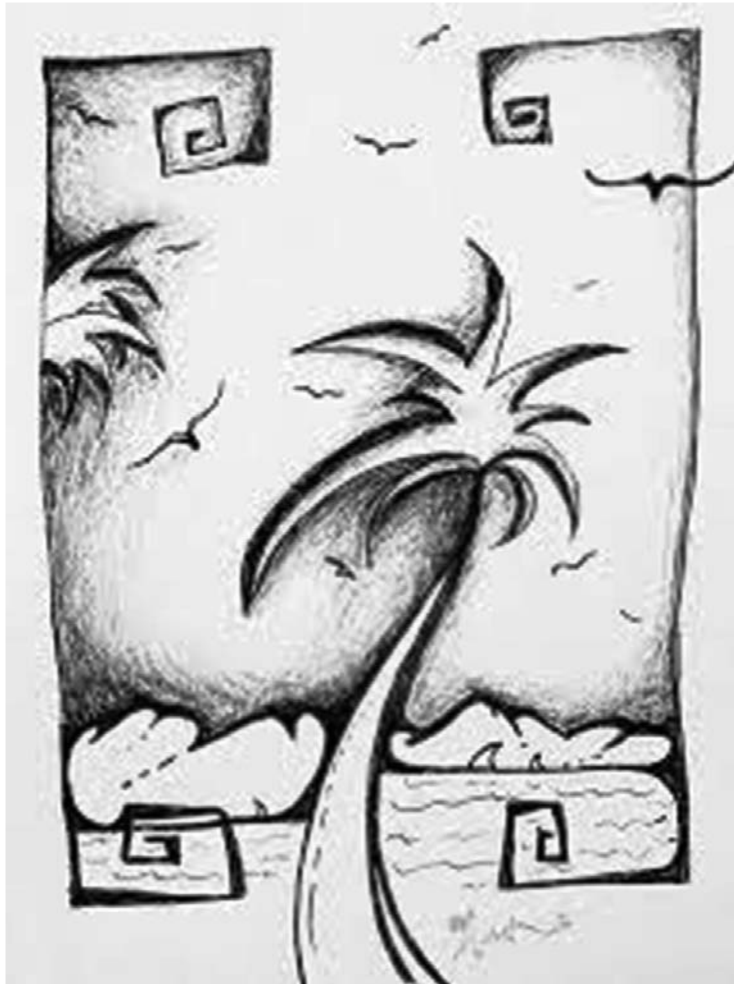
अपने-अपने घरों को लौट गए, तब भी इलाक़े का चित्रकार अपने घर के ड्राइंग-रूम में मौजूद उस बड़ी-सी विरल पेंटिंग को विभिन्न कोणों से निहार कर प्रफुल्लित होता रहा। रात में जब वह अपने शयन-कक्ष में सोने गया तो उसकी नींद में आने वाले सपने उसी ख़राब हो गयी बेहद ख़ूबसूरत पेंटिंग से भरे रहे। हालांकि यह भीषण ठंड का मौसम था किंतु उस पेंटिंग की वजह से उस चित्रकार के सपने में वसंत ऋतु छाई रही, रंग-बिरंगे ख़ुशबूदार फूल खिले रहे, मनमोहक तितलियां उड़ती रहीं, कोयलों की मधुर कूक सुनाई देती रही। उस चित्रकार के स्वप्न के आकाश में एक साथ कई इंद्रधनुष छाए रहे।

आख़िर वह दिन भी आ गया जिस दिन उस अद्‌भुत पेंटिंग को शहर की विख्यात आर्ट-गैलरी में प्रदर्शन हेतु रखा जाना था। एक बार फिर इलाक़े के चित्रकार के जान-पहचान के सभी चित्रकार उसके यहां इकट्ठा हुए। आज पहले दिन की अपेक्षा और ज़्यादा भीड़ थी क्योंकि अन्य चित्रकारों ने अपने जान-पहचान के और चित्रकारों को भी इस अवसर पर बुला लिया था, और उन और चित्रकारों ने अपनी जान-पहचान के और भी चित्रकारों को वहां पहुंचने का न्योता दे डाला था।

अंत में उस ख़राब हो गई ख़ूबसूरत पेंटिंग को एक जुलूस की शक्ल में शहर की विख्यात आर्ट-गैलरी में ले जाया गया, जहां उसे अन्य लगी हुई पेंटिंगस के साथ एक महत्त्वपूर्ण स्थान पर विधिवत लगा दिया गया। उस पेंटिंग के वहां लग जाने से उस प्रदर्शनी में जैसे रौनक़ आ गई। लोग उस पेंटिंग की ओर खिंचे चले आते थे।

चित्रकला-प्रदर्शनी देखने आने वालों के बीच वह ख़राब हो गई ख़ूबसूरत पेंटिंग चर्चा का विषय बनी रही। वहां मौजूद कई कला-प्रेमियों ने उस पेंटिंग के चित्रकार का नाम जानने का प्रयास किया और अपने इस प्रयास में विफल रहने पर दुखी हुए। कई रईस कला-प्रेमियों ने उस ख़राब हो गई ख़ूबसूरत पेंटिंग को ख़रीदने के लिए लाखों रुपये देने की बात कही, किंतु उसे लेकर आए इलाक़े के चित्रकार ने वह विरल पेंटिंग बेचने से इनकार कर दिया।

वह ख़राब हो गई ख़ूबसूरत पेंटिंग इतनी अद्‌भुत और जीवंत थी कि कि कुछ लोग उस बड़ी-सी पेंटिंग में बने दरवाज़े को असली दरवाज़ा समझ कर उसमें घुसने का प्रयास करते हुए पाए गए और हंसी का पात्र बन गए। एक मधुमक्खी, जो न जाने कहां से उड़ती हुई प्रदर्शनी-कक्ष में घुस आई थी, उस विरल पेंटिंग में बने फूल को असली फूल समझ कर उस पर जा बैठी और मूर्ख बन गई। एक बच्चा गिलास ले कर आया और उस पेंटिंग में बने नल में से बहते हुए जल को असली पानी समझ कर उसे अपने गिलास में भरने का विफल प्रयास करने लगा। हद तो तब हो गई जब एक बुज़ुर्ग कला-प्रेमी ने उस पेंटिंग की दीवार पर बने पर्दे को असली पर्दा समझ कर उसे थोड़ा-सा खिसका देने की कोशिश कर डाली और वहां मौजूद लोगों की हँसी का पात्र बन गया।



तीन दिन और तीन रातों तक वह पेंटिंग शहर और बाहर से आए कला-प्रेमी दर्शकों की चर्चा का केंद्र-बिंदु बनी रही। उसे देखने आए सभी लोगों ने ऐसी ख़राब हालत में भी उसे दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत पेंटिंग का दर्ज़ा दिया। 'विज़िटर्स बुक' में सभी कला- प्रेमियों ने उस ख़ूबसूरत पेंटिंग को सराहने वाले उद्‌गार व्यक्त किए। सब को बस एक ही कमी खल रही थी। काश, यह पता चल पाता कि ऐसी अद्‌भुत पेंटिंग को बनाने वाले चित्रकार का नाम क्या था। यदि वह चित्रकार उन कला-प्रेमियों के समक्ष उपस्थित होता तो वे

उसका महिमामंडन करते व उसे दुनिया के श्रेष्ठतम चित्रकार के ख़िताब से अलंकृत कर देते।

चित्र-प्रदर्शनी के ख़त्म होने वाली शाम को फिर से वही विकट समस्या उत्पन्न हो गई कि आख़िर अब इस पेंटिंग का किया क्या जाए। कुछ कला-प्रेमियों ने फिर से सलाह दी कि इसे देश की राजधानी के सबसे बढ़िया म्यूज़ियम को गिफ़्ट में दे दिया जाए ताकि यह पेंटिंग वहां आने वाले कला-प्रेमियों का मन मोहती रहे। किंतु पहले की तरह ही इसका मालिकाना हक़ रखने वाले इलाक़े के चित्रकार ने यह सलाह ठुकरा दी। चार घंटे तक चली एक हंगामेदार बैठक के अंत में सर्वसम्मति से यह राय बनी कि ऐसी अद्‌भुत पेंटिंग कोई इनसान बना ही नहीं सकता है। उस बैठक के अंत में एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसके अनुसार यह एक असाधारण पेंटिंग थी जिसके दैवीय होने के अधिक आसार थे। उसी बैठक में यह तय किया गया कि दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत ख़राब हो गई इस पेंटिंग को पवित्र गंगा नदी के जल में विसर्जित कर दिया जाए। तय किया गया कि वह महान् पेंटिंग प्रकृति का अंश थी और यही उचित होगा कि वह वापस उसी विराट् प्रकृति में मिल कर उसका अभिन्न अंग बन जाए।

अगले दिन सभी चित्रकार बंधु, कला-प्रेमी तथा जन-सामान्य एक जुलूस के रूप में विधिवत् उस विरल पेंटिंग को लेकर गंगा नदी के तट पर पहुंचे। लोगों की भीड़ 'दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत पेंटिंग, अमर रहे, अमर रहे' के नारे लगा रही थी। भीड़ का उत्साह देखते ही बनता था।

उस अद्‌भुत पेंटिंग के सम्मान में उस दिन सभी मंदिरों में विशेष पूजा की गई। गुरुद्वारों में विशेष अरदास की गई। कड़ाह प्रसाद बांटा गया। गिरजाघरों में भी विशेष प्रार्थना-सभाएँ आयोजित की गईं तथा मस्जिदों से मौलवियों ने उस पेंटिंग के लिए ख़ास तौर पर दुआ मांगी। इस तरह वह विरल पेंटिंग साम्प्रदायिक तनाव से भरे इस कठिन समय में एकता और साम्प्रदायिक सद्‌भाव का प्रतीक बन गई

अंत में वह पेंटिंग लेकर इलाक़े का वह चित्रकार अपने साथी चित्रकारों के साथ एक बड़ी-सी नाव में सवार हुआ। गंगा नदी के बीच में पहुंच कर उन्होंने उस अद्‌भुत पेंटिंग के साथ एक भारी पत्थर बांध दिया ताकि पानी में बहाए जाने पर वह पेंटिंग तैरती-उतराती हुई दोबारा किनारे पर न आ लगे बल्कि सीधा नदी के तल पर डूब जाए। और इस तरह दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत ख़राब हो गई पेंटिंग को गंगाजल के जल में विसर्जित कर दिया गया।

इस घटना को हुए बरसों बीत गए हैं किंतु आज भी कला-प्रेमियों की स्मृति में यह घटना बरसात की काली रात में बिजली के कौंधने जितनी स्पष्ट है। जैसा कि होता है, अब इसके इर्द-गिर्द लोक-कथाएं और किंवदंतियाँ बन गई हैं। हर साल गंगा नदी के तट पर उसी जगह पर साल के उसी दिन एक चित्रकला-मेला लगता है जहां दूर-दूर से नामी चित्रकार अपने चित्रों और पेंटिंगस की प्रदर्शनी लगाते हैं। यह जगह अब कला-प्रेमियों के लिए किसी तीर्थ-स्थल जैसी बन गई है। मेले में मौजूद कोई बच्चा जब किसी चित्र की तारीफ़ करता है तो कई जोड़ी हाथ उसे नदी के बीच में स्थित वह स्थल दिखाने लगते हैं जहां बरसों पहले दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत ख़राब हो गई पेंटिंग को नदी के जल में विसर्जित कर दिया गया था। गंगा नदी के बीच में मौजूद उस स्थल के पास से गुज़र रहे स्टीमर और नावों पर सवार लोगों को नाविक अक्सर इशारा करके बताते हैं, "वह देखिए। वहां। हां, वहां। वही है वह जगह जहाँ बरसों पहले क़ुदरत की नायाब चीज़ वापस क़ुदरत में जा मिली थी। जहां बरसों पहले दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत ख़राब हो गई पेंटिंग को नदी के जल में विसर्जित कर दिया गया था ... "

A-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम् ,
ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश-201014
मो : 0 85120 70086

तीन दिन और तीन रातों तक वह पेंटिंग शहर और बाहर से आए कला-प्रेमी दर्शकों की चर्चा का केंद्र-बिंदु बनी रही। उसे देखने आए सभी लोगों ने ऐसी ख़राब हालत में भी उसे दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत पेंटिंग का दर्जा दिया। 'विज़िटर्स बुक' में सभी कला- प्रेमियों ने उस ख़ूबसूरत पेंटिंग को सराहने वाले उद्‌गार व्यक्त किए। सब को बस एक ही कमी खल रही थी। काश, यह पता चल पाता कि ऐसी अद्‌भुत पेंटिंग को बनाने वाले चित्रकार का नाम क्या था। यदि वह चित्रकार उन कला-प्रेमियों के समक्ष उपस्थित होता तो वे उसका महिमामंडन करते व उसे दुनिया के श्रेष्ठतम चित्राकार के खिताब से अलंकृत कर देते।

बाल कहानी

प्रतिभा का सम्मान

◆ शिव मोहन यादव

मुस्कान 8 वर्ष की है। पढ़ने में हमेशा अव्वल रहती है। सभी विषयों में होशियार है। खेलकूद में भी सदैव प्रतिभाग करती है और विजेता भी रहती है। उसके सभी सर और मैडम उसे बहुत पसंद करते हैं। वह सभी की लाड़ली है। कुछ टीचर्स उस प्यार से 'मुच्छ-कान' भी कह देते हैं। वह शरमाते हुए मुस्करा देती है।

मुस्कान गरीब परिवार से है। उसके घर में मम्मी और पिताजी ही हैं। पिताजी मेहनत-मजदूरी से जो कमाकर लाते हैं, उसी से उनका घर चलता है। एक दिन उसके पिताजी बीमार हो गये। मुस्कान स्कूल नहीं जा पाई देखा, पिताजी को बहुत तेज बुखार है। मम्मी ने मुस्कान से कहा- ''बिटिया, इतने पैसे तो हैं नहीं कि डॉक्टर को दिखाया जा सके। ये थोड़े रुपये हैं, लो, और मेडिकल स्टोर से बुखार की दवाई ले आओ।''

''लेकिन मम्मी, हमारे टीचर्स कहते हैं कि डॉक्टर्स को दिखाये बिना दवा नहीं लेनी चाहिए।'' -मुस्कान ने मम्मी से कहा।

मम्मी बोलीं- ''अरे बिटिया, हमारे पास इतने रुपये भी तो होने चाहिए, कि डॉक्टर को फीस दे सकें। तुम जाओ और दवा लेती आओ, वे ठीक हो जाएंगे।''

मुस्कान ने रुपये लिए और मेडिकल स्टोर से दवा ले आई। दवा खाने के बाद भी उसके पिता की तबियत सही नहीं हुई। शाम तक उनकी हालत और खराब हो गई। उसकी मम्मी बोलीं ''बिटिया, अब तो इनकी तबियत और बिगड़ती जा रही है, अब बिना डॉक्टर के कैसे सही होंगे?''

''मम्मी, अब तो सरकार सभी अस्पतालों में मुफ्त दवाइयां देती है। क्या हम लोग वहां पिताजी का इलाज नहीं करा सकते?'' -मुस्कान ने पूछा।

''लेकिन बिटिया, अब शाम हो गई है, अस्पताल बंद हो गये होंगे।''

''हमारे सर बताते हैं कि इमरजेंसी में 24 घण्टे इलाज होता है।''

''लेकिन वहां ले कौन जायेगा? हमारे पास तो कोई गाड़ी भी नहीं है।''

''मम्मी, सरकारी एम्बुलेंस आती है न।''

''बिट्टी! कौन करेगा फोन? और एम्बुलेंस आयेगी भी कि नहीं। वहां इलाज हो भी पायेगा कि नहीं।''

''हां मम्मी, बात तो सही है, लेकिन फिर इलाज कैसे होगा?''

''कोई दूसरा उपाय सोचो।''

मुस्कान थोड़ी उदास हो जाती है। कुछ देर सोचती है और फिर वहां से चल देती है। कुछ ही देर में वह एक डॉक्टर के क्लीनिक पर पहुंच गई। वह जल्दी ही डॉक्टर के पास गई और बोली- ''डॉक्टर साहब, मेरे पिताजी बहुत बीमार हैं, उन्हें बुखार है। मेरे पास रुपये तो नहीं हैं, लेकिन मेरा ये गोल्ड मेडल है। ये मुझे क्लास तीन में टॉप करने पर मिला था। आप कहेंगे, तो अपना दूसरा मेडल भी दे दूंगी, जो मुझे खेलों में मिला था। बस आप मेरे पिताजी को ठीक कर दीजिए।''

मुस्कान की बात सुनकर डॉ. साहब सन्न रहे गये। वे समझ गये, ऐसी अनेक प्रतिभाएं गरीबी में उपजती हैं, हमें उनकी मदद करनी चाहिए। उन्होंने कहा-''बिटिया, यह मेडल तुम्हारी पूंजी है। तुम्हारी मजबूरी में इसे हम ले लें, ये बहुत अन्याय होगा। चलो हम तुम्हारे पिताजी को देखते हैं। तुम चिंता मत करो, तुम्हारे पिताजी भी ठीक होंगे और तुम्हारे मेडल्स पर भी तुम्हारा ही अधिकार रहेगा।''

इतना सुना तो मुस्कान मुस्करा दी और डॉक्टर साहब को साथ लेकर घर पहुंची। इलाज हुआ और अगले दिन उसके पिताजी भी ठीक हो गये।

(पूर्व उपसंपादक, दैनिक जागरण एवं बाल साहित्यकार)
सम्पर्क : ग्राम नेरा ख़पालपुर, पोस्ट - गौरीकरन,
ज़िला कानपुर देहात, उत्तर प्रदेश-209115,
मो. 0 96169 26050

व्यंग्य

विचार गोष्ठी : अभिशाप या वरदान

◆ पूरन सरमा

विचारक कहलवाने के लिए विचार गोष्ठी में जाना अनिवार्य होता है, इसलिए गया था मैं विचार गोष्ठी में। सोचा था हाल खचाखच भर गया होगा-बैठने की तो जगह नहीं मिलेगी, परन्तु यदि मैं सपरिवार भी जाता तो भी कोरम पूरा नहीं होता। परन्तु विचार गोष्ठियों के संभागी इस बात से बेखबर होते हैं और वे अनवरत साधना में रत रहते हैं। बहुत ही तनावग्रस्त गंभीर चेहरे। जैसे किसी हादसे से निकलकर आये हों अथवा किसी गी के शिकार हो गये हों। इतना सीरियस होने की जरूरत नहीं थी, परन्तु लोग जबरन गंभीरता को ओढ़ विषय की गूढ़ता को खोजने में व्यस्त थे। पास बैठे बुद्धिजीवी से मैंने धीरे से पूछा- 'क्यों साहब क्या तीये की बैठक हो रही है ?'

बुद्धिजीवी ने हिकारत से मुझे देखा और अपना मुंह फेर लिया। शायद यह सोचकर कि यह असाहित्यिक गंवार व्यक्ति कहां से आ गया। इस बीच मैंने कुल जनसंख्या की गणना शुरू की तो दरी वाले सहित सात थे। अध्यक्ष व मुख्य अतिथि तो लगभग सो चुके थे। सोने का इतना अद्‌भुत अभ्यास पहली बार देखा था। वक्ता बार-बार जोर से बोल कर उन्हें जगाने का असफल प्रयास कर रहा था लेकिन, वे दूसरे लोक में जा चुके थे। मैंने फिर पास बैठे साथ वाले बुद्धिजीवी से कहा- 'देखिये, मुख्य अतिथि जी शायद सो गये हैं, उन्हें चेतना में लाइये।'

इस बार वे सामान्य नजर आये, बोले- 'वे चिंतन कर रहे हैं। उन्हें, गोष्ठी को 'सम अप' करना है, इसलिए डूबकर सुन रहे हैं।'

'क्या मैं भी डूब जाऊं?' मैंने पूछा।

नाक फुलाकर बोले- 'क्यों नहीं, लेकिन चुल्लू भर पानी में।'

मैंने कहा- 'देखिये मैं जरा गोष्ठियों की परम्परा से थोड़ा अनभिज्ञ हूं। इसलिए मुझे रास्ता दिखाइये।'

क्रोधित होकर हाल का दरवाजा दिखाते हुये बोले-'वह रहा आपका रास्ता।'

सामने देखा तो वक्ता महाशय बाकी लोगों को अज्ञानी समझकर बहुत ही सामान्य बात का खुलासा कर रहे थे। वे इतने विभोर थे कि उनके आनंद का आकलन वे ही ज्यादा कर सकते हैं। हाथों को नचाना, आंखों को अजीब तरह से ऊपर नीचे करना एवं चेहरे को विभिन्न भावों से भरना, ये उनके अंदाज थे।

जिससे वे विचार गोष्ठी की गंभीरता को द्विगुणित कर रहे थे। गोष्ठी में सभी वक्ता थे और सभी श्रोता थे। हर बात पर जिज्ञासा और क्रास क्यूश्चन। बात का बतंगड़ और बेसिर-पैर की अनर्गल बातें। घर-परिवार की चिन्ता से परे वे साहित्य के व्यर्थ सवालों पर चिंतित थे।



तभी चायवाला आया। सबकी तंद्रा टूट गई। मुख्य अतिथि भी जाग पड़े। वक्ता की हालत बड़ी विचित्र थी। बार-बार चाय के प्यालों व प्लेट में रखे समोसे देखकर अपने व्याख्यान को समेटने के प्रयास में लगे थे। श्रोताओं ने खाना-पीना प्रारम्भ कर दिया था तथा वक्ता से लगभग अपना नाता तोड़ कर खाद्यों से सीधा सम्पर्क कर बैठे थे। वक्ता को मन ही मन बड़ा गुस्सा आ रहा था। उसे चाय वाले पर भी क्रोध था कि वह जब व्याख्यान देने खड़े हुये तब ही जलपान लेकर क्यों आया। उन्हें यह भी लगा कि संयोजक उन्हें बौद्धिकता में पीटने के लिए यह षड़यंत्र कर बैठा है। वे भी प्रतिशोध की अग्नि में भभक रहे थे। मैंने एक समोसा समाप्त कर दूसरा उठाया तो पास वाले बुद्धिजीवी जी बोले-'समोसा रख दीजिये, वह वक्ता का है।'

मैंने समोसा रख दिया और उनसे बोला-'क्यों साहब, अभी कितनी देर चलेगी यह विचार गोष्ठी।'

'करीब दो घण्टे और, क्यों आपको जल्दी क्या है ? घर जाकर क्या कर लेंगे ?'

'दरअसल सायंकाल कई 'शिडूल' रहते हैं, इसलिए इतना वक्त जाया नहीं किया जाना चाहिए कि लोग अगली विचार गोष्ठी में आने से कतराने लगे।' मैंने कहा।

'कोई नहीं कतराता। हम लोग आपके भरोसे गोष्ठियां नहीं करते। हम बाकायदा घरों में 'असमाजिक' घोषित हैं। घरवाले हमारे भरोसे नहीं रहते। 'जो घर फूंको आपनो तो चले हमारे साथ' वाली विचारधारा के धनी हैं। घरों की परवाह करते तो आज साहित्य का क्या होता ?' वे बोले !

'क्या मैं जा सकता हूं ?' मैंने पूछा।

'आप जलपान कर चुके हैं, इसलिए पूरे समय बाद ही जाने को मजबूर हैं। आगे से मत आना।'

'वह तो सवाल ही नहीं है, लेकिन अभी तो जाने दीजिये।'

'शांत रहिये।' वे बोले।

मैंने कहा- 'आप तो समझदार हैं, आपका नम्बर आये तो थोड़ा संक्षिप्त में ही अपने विचार प्रकट करना।'

बोले- 'इतना ही डरते हो तो विचार-गोष्ठियों में आते ही क्यों हो ?'

मैं बोला- 'दरअसल संयोजक से तीन सौ रुपये उधार लिये थे बिना ब्याज से। इसलिए उनकी कोई बात टालना नैतिकता से मुकरना मानता हूं। लेकिन मुझे लगता है कि अब मैं कैसे भी करके उनके तीन सौ रुपये चुका ही दूं, वरना पता नहीं अभी कितना और खून पिलाना पड़े। ईश्वर ने चाहा तो अगले माह तक चुकारा कर दूंगा।'

'तुम्हें संयोजक ने तीन सौ दिये हैं। मुझे तो वे तीन रुपये के लिए भी मना कर देते हैं। मैं भी यदि वे भेदभाव रखेंगे तो गोष्ठियों में आने से रहा।' वे बोले।

मैंने कहा- 'देखिये साहब, गोष्ठी में आने की मनाही नहीं है, परन्तु इस नयी सदी की ओर दौड़ते हुए युग में व्यक्ति इतना निकम्मा-निठल्ला नहीं रहा है कि चार घण्टे तक ऊल-जलूल उबाऊ भाषणों को सुनकर वक्त जाया कर दे। जीवन संघर्ष इतना जटिल हो गया है कि आदमी को दम भरने की फुरसत नहीं है और आपके ये बुद्धिजीवी लोग अभी भी पच्चीस वर्ष पहले का वातावरण बनाये हुये हैं। अब काम करने का जमाना है। बातों से न पेट भरता और न ही काम आता है।'

वे बोले-'आपने मेरी आंखें खोल दी हैं। मैं घर से सब्जी लेने निकला था और अब रात के आठ बज रहे हैं। गृहस्थी के मोर्चे पर हम इसीलिए तो मात खा गये। समाज के दूसरे वर्ग अपनी चालाक चेतना से धनाढ्य बन गये और हम समाज की चिंता में बिना मतलब दुख दुबले होते रहे। ऐसे चिन्तन और साहित्य का क्या किया जाये, जो घर-परिवार में आदमी की कोई पहचान ही न बनने दे।'

तभी संयोजक बोले- 'देखिये आज की विचार गोष्ठी को मैं यहीं समाप्त करता हूं तथा इसके दूसरे पहलुओं पर अगली बैठक में चर्चा जारी रहेगी।'

सातों लोग खड़े हो गये। मैंने संयोजक को एक ओर से जाकर कहा-'उस्ताद, बीस रुपये पड़े हों तो देवा न। बच्चे की दवा ले जानी है।'

संयोजक बोले-'कमाल करते हो शर्मा। तीन सौ का हिसाब आज तक नहीं और नयी राशि लेने चले आये।'

'यह बकाया राशि तो मैं अगले माह चुका दूंगा क्योंकि अब मैं आपकी विचार गोष्ठी में आने की स्थिति में नहीं हूं। इससे बढ़िया कुछ लिखूं-पढ़ूं तो पच्चीस-पच्चास का धंधा हो। इससे तो जीवन ही चौपट होता जा रहा है।'

वे बोले-'ऐसा है, ये लो बीस रुपये लेकिन, अगली विचार गोष्ठी में जरूर आना, 'साहित्य और समाज के अन्तर्सम्बन्ध' को लेकर रखी है।'

मैंने बीस का नोट लिया और हवा हो लिया। जितना गोष्ठियों से भागना चाहता हूं हालात यह बन जाते हैं कि उनसे नाता तोड़ने की स्थिति बन ही नहीं पाती। विचारों के आदान-प्रदान के लिए आप ही कभी जाकर तो देखिये विचार गोष्ठी में। यदि आपको अनिद्रा का रोग है तो फिर यह आपके लिए वरदान सिद्ध होंगी। विचार गोष्ठियों की फलती-फूलती इस परम्परा की मशाल आप ही हाथ में ले लीजिये, मैं भी आऊंगा। बहरहाल संयोजक महोदय अभी तक तीन सौ रुपये नहीं मांग सके हैं।

124/61-62, अग्रवाल फार्म, मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान-302 020, मो. 0 98280 24500

प्रोफेसर (डॉ.) दिनेश चमोला 'शैलेश' की कविताएं

कविता के बादल

कविता के बादल
जब-जब
बरसते हैं अपलक
निर्मम मनों की
शुष्क व ऊल-जलूल धरती पर

तब-तब
लहरा उठती है
सपनीले बहु-उद्देश्यीय बीजों की खेती
मनोभावों की शिथिल
मांसपेशीनुमा वीथियों में

खनकने लगते हैं
लोकगीतों की भावुक दरातियों से झरते
धरती के अभावों के रुनझुन......
विवश व संघर्षोन्मुख गड़ेरियों की
उभरी नशों वाले, खुरदरे हाथ-पांवों की
थिरक पर

फुहारें
फूट पड़तीं हैं
मन की शुष्क घाटियों की दिशा-दिशा में
कोकिल की बासंती कूक व
घसेरियों की मार्मिक व अश्रुपूरित
पहाड़ी लोक-धुनों के समानांतर

खिल उठते हैं
रक्त व देह रहित
सूखे पठारों की खुरदरी छाती पर
मनोरम प्रबंधों की मदमाती पुष्पघाटियां...
...
बिना खाद-पानी के
लहराने लगता है
संभावनाओं के गुडलक का
मनभावना घना जंगल........
रेतीले कछारों की
ऊबड़-खाबड़ मृगतृष्णाओं में
सदानीरा के स्नेहिल पाश में बंधी
मरु-प्रेयसी के सुदृढ़ मोहपाश की तरह

कविता के बादल
नहीं पनपाते, प्रमुदित होकर
केवल रुआंसे अनाज व फल-बीजों के
भौतिक संसार को
बल्कि उनके
स्नेहिल स्पर्श से
हृदय कि सदाबहार घाटियों में
खिल उठते हैं
कभी न मुरझाने वाले सगंध पादप-विटप

यही नहीं,
इनकी नवोन्मेषी प्रौद्योगिकी से
उड़ने लगते हैं
सकारात्मक व रोमानी दुनिया के
कई-कई लंबी दूरी के गगनभेदी विमान
उस अनंत लोक तक
जहां पीड़ा, संताप व पश्चाताप के लिए
नहीं होता है रंचमात्र भी स्थान

चिंतन की पवित्रता के
निरभ्र आकाश पर
विचरते हैं कविता के अमल-धवल मेघ -
आठ पहर, चौसठ घड़ी....
सृजन के नित नूतन बीजारोपण हेतु व्यग्र

यदि
बरसते रहें
सांसारिकता के वैश्विक क्षितिज पर भी
इसी तरह के सृजनधर्मी मेघ
तो न हो.....कहीं भी धरती पर
किसी भी प्रकार का खून-खराबा;
किसी को भी किसी भी प्रकार का
जान-माल का खतरा........

सर्वत्र हो
भाईचारा व विश्व-बंधुत्व के भाव
दूर हो रुग्णता व मानसिक संकीर्णता
फैले यत्र-तत्र-सर्वत्र
स्वस्थ चिंतन व आचरण का
साम्राज्य...

प्रकीर्णित करते रहें
भावना व संभावना के वक्षस्थल पर
यूं ही समृद्धि व शांति का जयघोष
ये चिंतन और कर्म की
उदात्तता के प्रतीक.......
कविता के बादल !!!

जमीन और जड़ें

सब कुछ ही
मानो छूटने लग जाता है
ज़मीन से छूटते ही
वह छूटना....चाहे देह से प्राण का हो
या फिर ज़मीन से हवाई जहाज का....
या हाथ से समय का छूट जाना हो

चाहे
संबंध हों या धरती की

जैव-विविधता का कोई अंतःसंबंध ही
सबके छूटने से
छूट जाता है स्मृति कोष से बहुत कुछ

ऐसे लगता है
गोया अपनी स्थायी जड़ों से
सदा-सदा के कट गया हो आदमी

जड़ें,
मिट्टी के भीतर-भीतर
निहारतीं व स्मरण करती रहतीं हैं
कटे हुए तने संग बिताये गए
अपने कुछ अंतरंग व सामीप्य के क्षण...
बीते दिनों की सुख-दुख भरी कथाएं

उत्कंठित व
भावुक भी होती हैं जड़ें
फिर जीवन में कभी भी
दुबारा न मिल सकने का अंदेशा लिए हुए

लेकिन
ज़मीन व जड़ों से
कटे हुए तने को
फिर से तलाशनी होती है
अपने अस्तित्व हित और एक नई ज़मीन
लेकिन तब तक सूख चुकी होतीं हैं
पुराने संबंधों की.....अनुभूतिनुमा
लहलहाती-मदमाती खेती

उर्वरा भूमि में
तने के कट जाने के बाद भी
खोज ही लेती हैं जड़ें
गुमनाम मृदा की घुटनभरी अंधेरी
पेचीदगियों से
उजास से खिलखिलाती धरती तक
आने का कोई न कोई सुगम-दुर्गम मार्ग

फूट पड़तीं हैं
स्वतः ही आशा की फुनगियां
कभी एक ओर...और कभी-कभी चारों
ओर से.....
गुमनाम व बेठूंठ तनों से
आकार लेने लगते हैं
पुराने ठूंठों के अनुवांशिक जीन

जड़ों से कटे
तनों को नहीं मिलती कोई राह......
अथवा प्राण-रक्षा का कोई कवच ही....

सारी संभावनाओं के
क्षितिज सिकुड़कर साथ छोड़ गए लगते
हैं
नहीं बचती, कोई जीवनदायिनी ....
सपनीली व तिलिस्म की आखिरी
उम्मीद तक

न अपनेपन की
और...न जीवन की ही......
वे दृष्ट होकर भी क्रमशः
खोने लगते हैं धीरे-धीरे
अपनी पहचान, मूल्य व अस्तित्त्व

दृष्ट होते हुए भी
हो जाते हैं
एक दिन अकृष्ट व निष्प्राण.......
दरकने व टूटने लगती है
अपनों व तिलिस्म के बीच की
बेबुनियाद दुनिया

लेकिन
जड़ सी लगने वाली जड़ें
तब भी नहीं होती हैं जड़
वे जड़ता में भी खोज लेतीं हैं
चेतनता व जीवन की नवोन्मेषी राहें...

विपरीतताओं में
फूट पड़ते हैं उनके संग
अनुकूलताओं के छरहरे चरागाह व
सतरंगे, लुभावने उद्यान तक
जो पहले से अधिक समुन्नत व
होते हैं रोमहर्षक व परिवर्द्धक भी

इसीलिए तो
जड़ों से कट जाना...
चाहे वे परंपराएं हों या जीवन-मूल्य
पड़ सकता है बहुत भारी से भी भारी
इसका खामियाजा नहीं चुका पातीं
कई-कई पीढ़ियां...जीकर अथवा मरकर

न हों जड़ें
तो नहीं कर सकती
जमीन भी कुछ
लेकिन जड़ों के लिए
जरूरी होती है ज़मीन भी
देह की भूमिका में होतीं हैं
जमीन, तने और जड़ें........
देह और आत्मा की तरह;
भक्त और भक्ति की तरह
चिरंतन और शाश्वत ।

डीन, आधुनिक ज्ञान विज्ञान संकाय एवं अध्यक्ष हिंदी एवं भाषा विज्ञान विभाग,
उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय, 157, गढ़ विहार, फेज -1,
मोहकमपुर, देहरादून -248005

कविता

सवालों की दुनिया

संजीव कुमार श्रीवास्तव

जीवन के हरेक मोड़ पर
उठते रहते हैं
ना जाने कितने ही सवाल
पर सारे सवाल एक से नहीं होते
कुछ होते हैं बेहद सतही किस्म के
इन बेशुमार हल्के सवालों को झेलते
और उनके चलताऊ जवाबों में झूलते-उलझते
बीत जाया करती है
हमारी उम्र अक्सर
और अनुत्तरित रह जाते हैं
इस चक्कर में
ढेर सारे प्रासंगिक सवाल

कुछ सवाल
बेहद गहराई लिए होते हैं
पर आसान नहीं होता
उनके जवाब ढूंढ निकालना
इनमें से जाने कितने सवाल
उठने से पहले ही
दफन कर दिए जाते हैं
जैसे कोख में मार दी जाती हैं
पैदा होने से पहले ही
लड़कियां अक्सर



कुछ सवालों को
उठने और लहलहाने के लिए
जरूरत पड़ती है
विमर्शों के खाद-पानी की
ओर फेरना पड़ता है
उनकी पीठ पर हाथ
लंबे समय तक
तंबाकू के तैयार होते पौधे की तरह

छुपाया जाता है कुछ सवालों को
लोक लाज के परदे में
जात बिरादरी के डर से
और जमाने की नजरों में
पाक-साफ़ बने रहने के लिए
लेकिन अंदर ही अंदर
इतने कसमसाते हैं ऐसे सवाल
कि तोड़ दिया करते हैं
अपनी सारी हदें
और लुट जाते हैं इस कदर
कि जवाबों तक पहुंचने का
न होश बाकी रहता है उनमें
और न ही बची रहती है
इतनी अक्ल
यह अहसास तक
भिगोता नहीं उन्हें
कि घूमते टहलते कहीं
एकदम-से अचानक
उनकी ओर आ निकले
और प्यार भरी निगाहों से
उन्हें छू लेने वाले जवाब
बार-बार दस्तक नहीं दिया करते
उन जैसे सवालों के दरवाजे पर
अपनी रोशनी में
खुद को समझने का मौका देते हुए

सरकते चलते हैं कुछ सवाल
इधर से उधर
दीवार पर
रेंगती छिपकलियों की तरह
और काफी फासले
तय कर बैठते हैं इस बीच
पर नहीं पहुंच पाते
उस मंजिल तक फिर भी
जहां खड़े होते हैं
उनका इंतजार कर रहे जवाब

कुछ सवाल
टकराते तो हैं
अपने जवाबों से
संयोग से ही सही
पर समझे नहीं जाते उस वक्त
जब समझ चढ़ती है
उम्र की सीढ़ियां

तब कहीं जाकर
याद आते हैं वे
पर संभव नहीं होता तब
बीते समय में लौट कर
फिर से उनसे मिल पाना

कुछ सवालों को
पूछने से बचा जाता है
वजह चाहे जो भी रही हो
और मन को
झूठी दिलासा देने के लिए
ढूंढ निकाले जाते हैं
उनके मनगढ़ंत उत्तर
ले जाते हैं जो
जवाबों से बिलकुल दूर
अविश्वास भ्रम और भय की
गहरी खाइयों की ओर

असुविधाजनक हुआ करते हैं
कुछेक सवाल
हरेक के वश का नहीं होता
इन से मुठभेड़ कर पाना
हाथ-पांव छिल जाया करते हैं
इस कोशिश में दिमागों के
और अक्ल की सारी इज्जत
लगानी पड़ जाती है दांव पर
कुछेक सवालों की निशानदेही
आसान नहीं होती

होने लगता है संदेह
कई-कई बार
इस बात को लेकर
कि वे सवाल ही हैं
या कि कुछ और
और इसी दुविधा में
फंसे होने के चलते
सामने खड़े जवाब भी
निकल जाते हैं तब तक उनसे
कहीं दूर.....
.....बहुत दूर।

जक्कनपुर, पटना, बिहार
मो. 0 75640 01869



ग़ज़ल

श्रवण कुमार सेठ

यूँ ही नहीं ये अन्धेरे बुलाये गए हैं
जलते हुए चराग़ सारे बुझाये गए हैं

आसमां भी शामिल है इस साजिश में
सितारे महफ़िलों में सजाये गए हैं

हवाओं का रुख बदला बदला-सा है
लगता है कुछ चेहरे छुपाये गए हैं।

अजीब-सी दीवानगी इस चाहत की
मुहब्बतों के आशियाने गिराये गए हैं

सुना है परिंदे जल उठते हैं छूकर
लगता है घर शोलों पर बनाये गए हैं

ये लोग बड़े मुनासिफ हैं साथ रक्खो
ज़िन्दगी के हाथों आजमाए गए हैं

इनको यकीं नहीं होता मुहब्बतों पर
वफ़ा के हाथों बहुत सताए गए हैं

जिन्हें आता है गुलों के जैसे महकना
वो साँसों से दिलों में बसाए गए हैं

ख़्वाबों से जिनका रिश्ता हसीन यारों
ना जाने क्यों नींद से जगाये गए हैं

चलो चलते हैं दूर कहीं ऐसे साये से
जिनके पहलू धूप से नहलाये गये हैं

MSA 201 टाइप 3, महानगर बहुखन्डी
सचिवालय कॉलोनी, लखनऊ, उ.प्र.- 226006
0 94544 11582

डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल के नवगीत

समय कठिन

हुईं मतलबी उजली रातें
अवसरवादी दिन।

द्वार-द्वार पर लिखा हुआ है
कुत्तों से बचना,
रखना सावधानियां वरना
होगी दुर्घटना,
हमसे अपनासाया ही अब
ले बदले गिन-गिन।

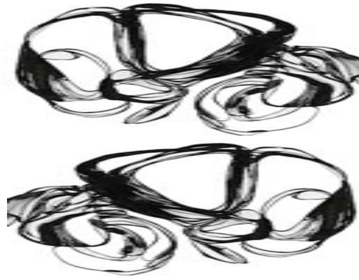
उजियारे को तिमिर लीलता
झूठ सत्य खाये,
मृदु-मुस्कान रसीले अधरों
पर कैसे आये,
मुरझाये फूलों-सी काया
मन भी बड़ा मलिन।

नागफनी-सी सुबहें आएं
नागिन-सी शामें,
घबराकर किसके दामन को
बोलो तो थामें,
आठों प्रहर लगे काया में
जैसे चुभती पिन।

कितना इस मन को समझाएं
मुश्किल जीना है,
आंसू का घट घूंट-घूटकर
निसदिन पीना है,
घड़ी-घड़ी है कदम-कदम पर
कितना समय कठिन।

रिश्ते होते हैं

फूलों से भी अधिक सुगंधित
रिश्ते होते हैं।
रिश्तों से उपवन में सुख के
बादल घने रहें



ऐसे करें प्रयास मधुरतम
रिश्ते बने रहें।

जीवनभर खुशियों की फसलें
रिश्ते बोते हैं।
रिश्तों से रातें चांदी-सी
सोना दिवस रहें
रिश्ते गंगाजल बन कोई
नूतन कथा कहें,
कटुताओं के घाव घने-से
रिश्ते धोते हैं।
रिश्तों से दूरी घटती है
मन में आस जगे
रिश्ते जुड़ जाने से भ्रम भी
अपने आप भागे
तोड़े कोई अगर पास आ
रिश्ते रोते हैं।

अच्छा हो मानव-मानव में
रिश्ते मधुर जुड़ें
हाथों से मनमानी वाले
तोते दूर उड़ें
सहनशीलता के बिस्तर पर
रिश्ते सोते हैं।

इच्छाएं

स्पीड-पोस्ट जैसी इच्छाएं
मन को छलती हैं
सुख साधारण पत्रों-सा नित
पेटी में डलता
वक्त-डाकिये की करनी से
हाथ रहे मलता
सांसों के घर में पीड़ाएं
यहां मचलती हैं।

दुख का धनादेश हस्ताक्षर
करवा ले जाए
फिक्स-डिपोजिट कड़वाहट का
हम तक है आए
आगे बढ़ने की आशाएं
उर में पलती हैं।

स्वप्न-पार्सल टूटा-फूटा
कहां करें शिकवा
खुशियों की रजिस्ट्री को तो
मार गया लकवा
नयनों से आंसू की बूंदें
खूब निकलती हैं।

बेगाने से भाव-ग्रंथ सब
नयन हुए बदरा
तन पर मानो लगा हुआ है
अब मन का पहरा
पीड़ाओं की डाक संभाले
नहीं संभलती है।

**785/8, अशोक विहार, गुरुग्राम,
हरियाणा-122006, मो. 0 92104 56666**

नवीन शर्मा की ग़ज़लें

मुकद्दर

बात जैसे चलाई आरी है,
क्यों मुहब्बत चढ़ी खुमारी है !

चांद छुपने लगा है अंबर पर,
सुब्ह आने की या तैयारी है !

हठ तुम्हारा ये जान ले लेगा,
यूँ लगे घोंप दी कटारी है !

मैं कहां रोज रोज कहता हूं,
क्यों हुआ सर तुम्हारा भारी है !

रास्ते प्यार के नहीं मुश्किल,
रात दिन आरती उतारी है !

ये शिकन और देखिये तेवर,
क्यों ये नफरत अजी संवारी है !

है मुकद्दर की बात भी सच्ची,
कौन लेकिन बता लिखारी है !

आठवां ये अजूबा दुनिया में,
हर तरफ खौफ मारामारी है !

फिक्रमंदी में खप गए कितने ,
दिन सुलगते हैं रात भारी है !

जन्म देती जलील क्यों कर हो,
ढो रही आदमी को नारी है!

काफिले रोज आते जाते हैं,
मेरे मतलब की इक सवारी है !

क्या नवीन आप भी जुआरी हो,
रात जो जागकर गुजारी है !



बादल

आवारा इठलाते बादल !
कितने रंग दिखाते बादल !

धरती माता के ये बेटे !
धरती पर मँडराते बादल !

रूप बदलते पल पल देखे
क्या से क्या हो जाते बादल!

औघड़दानी से दाता ये
रिमझिम जल बरसाते बादल!

दूर गगन पर उड़ते जाते
उमड़ घुमड़ कर आते बादल!

सागर से हिमशिखरों तक भी
अमृत जल बरसाते बादल !

सूखी प्यासी माँ वसुधा की
देखो प्यास बुझाते बादल !

रूप भयंकर जब धरते तो
बच्चे सब डर जाते बादल !

और अनावृष्टि जब होती
निष्ठुर हो कहलाते बादल!

सम्यक वृष्टि करते रहना
सुन लो लोग मनाते बादल !

गांव व डाकघर गुलेर
जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश

समीक्षा

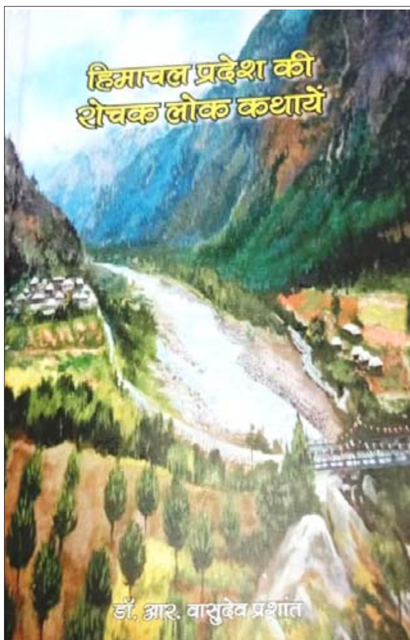
तथाताओं में विद्यमान रहस्य हिमाचल प्रदेश की रोचक लोककथाएं

◆ डॉ. ओम्प्रकाश सारस्वत

सभी जगह लोककथाएं, स्थानों, पात्रों एवं घटनाओं के मामूली अंतर से राजाओं, रानियों, राक्षसों, सेठों, नाइयों, धोबियों, पंडितों एवं तिलों, तिनकों, लड्डुओं से निर्मित एक-सी होती हैं जो किसी-न-किसी नैतिक शिक्षा एवं जातीय-पात्रों की बौद्धिक-चतुराई तथा तात्कालिक प्रत्युत्पन्नमतित्व से जुड़ी होती हैं। उनकी प्रस्तुति उनके स्वभाव एवं उनके संदर्भों में अंतर, कथा लेखक या चयनकर्ता के चुनाव के कारण पड़ता है। अब एक तिल और सात बहनों की कथा, स्थान-नामभेद के मामूली फर्क से, सब स्थानों पर एक-सी है।

डॉ. आर. वासुदेव 'प्रशांत' द्वारा संकलित, 'हिमाचल प्रदेश की रोचक लोककथाएं' अपने मूल चरित्र में कम किंतु प्रस्तुति और लेखन शैली में, हिमाचल में संकलित अनेक लोककथा-संग्रहों से इसलिए भिन्न और रोचक हैं कि लेखक ने इन कथाओं को अपनी शैली में लिखा है। लोककथाओं का उद्देश्य एक-समान ही होता है परंतु उनमें उनकी प्रस्तुति, एक अलग शैली तत्त्व के कारण, अपने व्यक्तित्व में, एक अलग ही वजूद की मालिक बन समक्ष आती हैं।

डॉ. प्रशांत ने ये कथाएं, किसी एक मुख से सुनी या किसी, पोथी से उठाई नहीं हैं अपितु , इन्हें हृदयंगम कर, इन्हें पुनःसृजित किया है। पुनः सृजन, पुनर्निर्माण होता है और पुनर्निर्माण ही नवनिर्माण है।



हिमाचल प्रदेश की रोचक लोक कथायें : डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत **प्रकाशक :** कुणाल प्रिंटिंग एंड पब्लिशिंग कं. धर्मशाला-176 215, **प्रथम संस्करण :** 2018, **मूल्य :** 200 रुपये,

डॉ. वासुदेव की ये कथाएं वास्तव में ही रोचक हैं। इनके संग्रह-संकलन और लेखनकर्ता ने इनकी विविधताओं का समुचित ध्यान रखा है। 'स्वर्ग में जिंदा आदमी' यदि आदमी की सामर्थ्य, बुद्धि चातुर्य एवं जीवित रहते उसके मति कौशल का बखूबी परिचय कराने वाली लोककथा है तो, 'तंत्राचार्य' वाली कथा, एक माध्यम में दक्ष होने पर उसकी सफलता की कहानी है। 'लंगोटी वाला वैद्य' यद्यपि विशेषज्ञता की वाहवाही करने वाली कहानी है तो साथ ही उसकी विनम्रता, शालीनता तथा परोपकारिता की मिसाल भी है। 'छुपे रुस्तम' वाला मुहावरा, इस कहानी के नायक पर पूर्णतया घटित होता है। 'हंस और उल्लू' लोककथा, योग्यता पुरस्कार और अयोग्यता के उपहास को सामने लाती है- तो 'महाकंजूस' अनजाने में ही बहुत सारे लाभ के हाथ लग जाने की बात को समक्ष रखती है।

लेखक ने कथाओं के चुनाव में खूब सावधानी बरती है। कहीं जातिगत गुणों का प्रस्तुतिकरण है तो कहीं, जातियों में सामंजस्य एवं समरसता का द्योतन है। कहीं राष्ट्रीय हित अथवा राष्ट्रीय समस्याओं (अन्नदान, महादान) को लोक के माध्यम से सामने लाया गया है तो कहीं 'राजा भरथरी', 'जाट और जुलाहा' और 'घर-जवाई' के माध्यम से भिन्न-मानवीय स्वभाव का चित्रण है।

डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत की ये कथाएं, रोचक ही नहीं अपितु विभिन्न संदर्भों में मानवीय समाज की कमजोरियों, उपलब्धियों, उसकी ज़रूरतों एवं प्राप्तियों के अनेक अवसरों को सम्मुख रखती हुई, अपनी सामर्थ्यों को ताल ठोकर कर, लोक की विलक्षणता/ विचक्षणता के महत्त्व को 'मुखे-मुखे नवा वाणी' के माध्यम से अपने हुनर को पेश करती हैं। ये कथाएं, वास्तव में, दृष्टांतों, उदाहरणों, ध्वनियों और संकेतों से, ज्ञान/व्यवहार के विश्वकोष की ऐसी अंतरवर्ती युक्तियां हैं जो, लोक के गहन-ज्ञान को साधारण कथाओं के माध्यम से उजागर करती हैं।

जी-6, नाल्सवुड कालोनी, छोटा शिमला,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, मो. 0 94180 54054

समीक्षा

जिंदगी-जिंदगी एक पठनीय लघुकथा संग्रह

◆ कृष्ण चंद्र महादेविया

जिन्दगी-जिन्दगी लघु कथा संग्रह सुप्रसिद्ध लेखक हरीश कुमार अमित द्वारा लिखा ताजा तरीन संग्रह है। इस संग्रह को आर्य स्मृति साहित्य सम्मान 2018 से भी अलंकृत किया जा चुका है। एक सौ अठाईस पृष्ठों के इस लघुकथा संग्रह में एक सौ पच्चीस लघुकथाएं संग्रहित हैं।

हूबहू वस्तुतः लघुकथा किसी घटना को दस-बीस या पच्चास पंक्तियों में लिख देना अथवा रिपोर्ट सा प्रस्तुत करना लघुकथा नहीं है मात्र सूचना देना लघुकथा का अभिष्ट भी नहीं है। यह वह साहित्यिक कला कर्म है जो आम जन की बेहतरी के लिए, विभिन्न मापदण्डों के अन्तर्गत भाषा के माध्यम से लेखनबद्ध किया जाता है। ऊट -पटांग कथ्य, अस्वभाविक पात्र, संवाद, काल भिन्नता, घटना की नकल, नीरस, दृश्य, स्थनों का वर्णन, दृष्टि हीनता, संवेदन हीनता, असम्प्रेषणीयता, व्यर्थ के प्रलाप लघुकथा नहीं होती।

वह कम से कम शब्दों का सुगुंफन जो किसी घटना से उत्प्रेरित हो, उपयुक्त शब्द और कसावट लिए, सटीक शीर्षक, साफ उद्देश्य, सुहृदयी कथानक, जीते-जागते पात्र-पात्रों के अनुकूल संवाद, सरल-सुबोध भाषा, नवीन शैल्पिक दृष्टि, दंशता अंत, जिसमें व्यंग्य, नवीनता, गहनता, संप्रेषणीयता विद्यमान है वह लघुकथा है।

संग्रह की लघु कथाओं में बस-ट्रेन यात्रा में नारी स्पर्श, उसे पास बिठाने, बतियाने की लालसा का विविध कथ्यों के साथ प्रस्तुतीकरण हुआ है। कार्यालयी सस्कृति में चाटूकारिता अफसरी रौब, भ्रष्टाचार, दुर्व्यवहार पर, अभाव ग्रस्त परिवार-जीवन में बच्चों से सम्बन्धित, स्वार्थपरता, पारिवारिक रिश्तों, प्रेम, अच्छा जीवन जीने के लिए, मानवीय मूल्यों के पक्ष में विविध विषयों पर रची लघुकथाएं विभिन्न आयामों के दर्शन कराती, मन के द्वार खोलती चिरानंद प्रदान करती हैं। लेखक हरीश कुमार अमित अपनी बात कहने में छोटे -छोटे कथ्यों के साथ विशालता, पाठकों के सम्मुख कलात्मकता के साथ प्रस्तुत करने में पूर्ण सफल हुए दिखते हैं।

जिन्दगी-जिन्दगी संग्रह की पहली लघुकथा है खुशियों का एहसास। शीर्षक, कथ्य, पात्र, कम शब्दों में गूंथी गई है। बेटी द्वारा एक टॉफी घर लाकर कर मम्मी-पापा को आधी-आधी खाने को कहने पर पापा की आंखें छल-छला आई। सारा तनाव भी न जाने कहां छू मंतर हो गया। आज की आपाधापी, तनाव, परेशानियों में निश्छल स्नेह भरी पठनीय लघुकथा है।

अपने-अपने संस्कार में बेटी राष्ट्रगान के सम्मान में सावधान की मुद्रा में खड़ी रहती है जबकि पिता मैच की उत्सुकता के वशीभूत अधलेटे बैठा रहा। अपने-अपने संस्कार हैं। सुन्दर शीर्षक, कथ्य, कसौटी, पाग और कथोपकन लघुकथा को सुपठनीय बनाते हैं। आदत लघुकथा में आदत ने संवेदना भी खत्म कर दी है तो परिर्वतन लघुकथा भ्रष्ट लोगों की मौज और कर्तव्यनिष्ठों को अभाव में तनाव में रहना दर्शाती है। लूट लघुकथा में अफसर की लूट को प्रभावी कथ्य से दर्शाया है। जन्मदिन लघुकथा विषयानुरूप शीर्षक के अन्तर्गत संवेदना जगाती लघुकथा है। बच्चे का जन्मदिन मनाने में तंग माली हालत की वजह से पति-पत्नी की बातचीत झगड़े में पड़ जाते हैं। बच्चा प्रातः ही मां-बाप से मिलती मुबारकवाद से पूर्व ही ऐलान कर देता है कि वह अलग तरह से जन्म दिन मनाएगा। यानी जो घर में था उसी से ही जन्मदिन का तरीका सुनकर मां-बाप की आंखे भर आती हैं। जबकि बेटा जन्मदिन को लेकर माता-पिता के झगड़े को सुन चुका था। उसकी आंखों में उमड़े आंसू मां -बाप नहीं देख पाए। लघुकथा के मापदण्ड़ों के अनुरूप सुन्दर लघुकथा है। परमीशन लघुकथा राजनीति पर करारा व्यंग्य मारती है तो कोहरा लघुकथा ईमानदार रहने का प्रतिपादन करती है। दोनों पठनीय लघुकथाएं हैं।

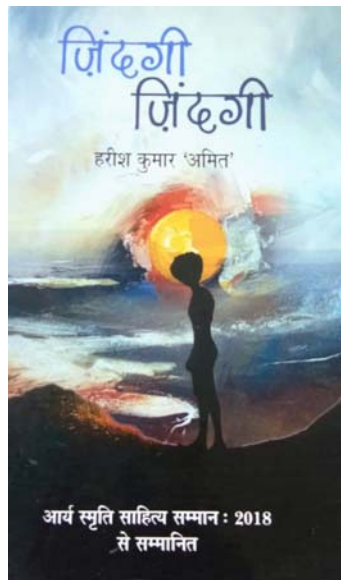
फर्क पर फर्क लघुकथा चापलूसी और भ्रष्टाचार पर तो मौजूदगी लघुकथा ने पिता की कमीज में उनका एहसास पाता बेटा पत्नी को कैसे बता पाता। रोचक और विश्वसनीय लघुकथाएं हैं। मजबूरियों की समझ लघुकथा में मां-बाप को पैसों की कमी को लेकर झगड़े में बच्चा अंक गणित की किताब न लेने की जगह मौन होमवर्क करना शुरू कर देता है। मजबूरियों की समझ हो आई है बेटे को। बाल मनोविज्ञान को दर्शाती यह लघुकथा बड़ों को समझ का पाठ पढ़ाती दिखती है। पंक्ति देखें- 'किताब खरीदने की उसकी इच्छा आंसुओं के रूप में उसकी आंखें बहने लगी। अपनी-अपनी खुशी, थैंकयू, अपना -अपना ईमान लघुकथाएं सरल-सहज कथानक प्रभावी, शीर्षक अच्छा, वाक्य सुगठित, पठनीय लघुकथाएं हैं।

संग्रह की पन्द्रहवी लघुकथा असलियत का कथानक बढ़िया,

कथोपकथन पात्रानुकूल शीर्षक सटीक है। छत के ऊपर वाले पर नीचे वाले का गुस्सा तब खत्म हो जाता है जब उसे पता चलता है कि ऊपर वाले का एक्सिडेंट होने के कारण पुनः चलने से ठक-ठक और चलने की असलियत का पता चलता है। मार्मिक रचना है।

यार की टॉफी लघुकथा पुरुषवादी मानसिकता को उद्‌घाटित करती है। शंकालु-ईर्ष्यालु पति प्रदीप का एक वाक्य झन्ना देता है। दो वर्ष के रोते बेटे चीनू को सहकर्मी द्वारा दिए टॉफी के डिब्बे से एक टॉफी देती है तो रोता बच्चा चुप हो जाता है। पति प्रदीप की पंक्ति देखें - 'देखा, यार की टॉफी का कमाल? शीर्षक, कथानक, भाषा और शैली, संप्रेषणीयता से भरपूर उत्कृष्ट लघुकथा है। रिश्तों का दर्द खुशी भाषा और मासूम सवाल, अपने-अपने पैमाने, परत दर परत, धन्यवाद ज्ञापन, लघुकथाएं अपने कथानक, बनावट, मारक अंत वाली पठनीय लघुकथाएं हैं। वास्तविकता संग्रह की सताइसवीं लघुकथा है और असका अंत बहुत मारक है। यह लघुकथा को चिरस्मरणीय बना देता है। जब लड़की बस में बैठे अधेड़ से पूछती है। "अकंल, आप सिर्फ मुझे ही क्यों अपनी सीट पर एड़जस्ट होने के लिए कहते हैं?" अधेड़ का जवाब था- " पिछले साल मेरी बेटी एक एक्सिडेंट में चल बसी थी। वह भी तुम्हारी तरह नौकरी करती थी। तुम्हें साथ बिठा कर मुझे लगता है जैसे मेरी बेटी साथ बैठी हो।" लघुकथा के ये संवाद पात्रों की मनः स्थिति, तात्कालिक सोच, वर्तमान स्थिति, संवारियां सभी का दिग्दर्शन करा देते हैं। युवती सन्न रह जाती है। सुन्दर-पठनीय लघुकथा है। डर, सैरी, रूतबे का असर, खुशी के रंग, विद्रोह, अपना- अपना बाद, एडजस्टमैंट ढाल, चोरी लघुकथाएं अपने पैने पन, कथ्य, भाषा, शिल्प और संप्रेषण में पठनीय बन पड़ी है। हृदय के पट खोलने वाली लघुकथा है। मजबूरियों के समंदर। सटीक शीर्षक, कथ्य लुभाता, चुटीले पात्रानुकूल संवाद, सरल भाषा, सुन्दर शिल्प, स्वभाविक, विश्वसनीयता से भरी लघुकथा है। बाल मनोविज्ञान की यह लघुकथा, बेचारगी आँखें भर देती है। तो स्नेहिल स्पर्श, कारूणिक -मधुर बोल रूला देते हैं। श्रेष्ठ लघुकथा है। टिकट, अफसोस, अपनी-अपनी शिक्षा, जिदंगी की महक, प्राथमिकता, मुर्गी, तनख्वाह, दृष्टिकोण, जिदंगी, भलमनसाहत, फरेब, अहमियत, महत्व, बोध अपने पराए पठनीय लघुकथाएं है।

सांत्वना लघुकथा का शीर्षक सरल और सटीक, कसा हुआ रोचक और विश्वसनीय कथानक शब्द, करुणा उपजाति सहज और सरल भाषा शैली में सुपठनीय रचना है। मार्मिक लघुकथा की अंतिम पंक्ति देखें- 'मुझे लगा जैसे पिता जी और मां मेरी आंखें पोंछ रही हों।" यूं भी मां बाप का बच्चों के प्रति स्नेह कभी कम नहीं होता। दुश्मन लघुकथा, कथ्य शिल्प और भाषा से कसी हुई, रोचक, जिज्ञासापूर्ण उचित शार्षक की श्रेष्ठ रचना है। आश्चर्य है कि जाति वाले ही उसके बैरी हो जाते हैं किन्तु जिसे जो बचाने का उपाय करता है। दूसरे धर्म का है। यह नहीं वह उसे घर तक छोड़ने का निमंत्रण भी देता है। स्थितियां, फर्क, बड़े साहब, महत्व, रेत का ताजमहल, एहसास बाबू, गुनाह, रोमांच, कारण जैसी लघुकथाएं अपने कथानक, कसावट, भाषा और शिल्प, सरलता सहजात से पाठक को आकर्षित करती है। जानवर बनाम आदमी लघुकथा महत्त्वपूर्ण रचना है। इसका शीर्षक अनुकूल, उचित शब्द, कसी हुई, रोचक और यर्थाथ उद्‌घाटित करता कथानक, स्वभाविक और सरल भाषा आत्मकथात्मक- वर्णनात्मक शैली, पात्रानुकूल संवाद, मार्मिक लघुकथा है। लघुकथा का एक संवाद देखिए- 'ना रे बाबू जी, यूं सड़क पर गिरि चीज ना खाएं, इसे ठाकर (उठाकर) एक किनारे रख दियो। कोई जानवर-जूनवर खा लेगा।" गिरी हुई मिठाई खाने के लिए महिला कुछ झूठ का सहारा लेती है। हृदय के स्पर्श करता यह कार्य व्यवहार बुरा नहीं लगता। लेखक द्वारा सही शब्दों का प्रयोग लघुकथा को श्रेष्ठ बना देता है। मार्मिक लघुकथा अपने उद्देश्य में पूर्ण सफल है।



बस का पत्थर और उसमें भीड़ वैसे तो खड़े-खड़े दम घुटा देती है किन्तु जब कोई हसीन सट कर खड़ी हो जाए तो दम क्या सारा शरीर ही खुल जाता है। तब लगता है भीड़ और बढ़े और बढ़े। यह लघुकथा भीड़ को पढ़ने से पता चलता है। सहारा, मौन सुख, वक्त-बेवक्त, खट्टी चाकलेट, छतरी, क्रिया-प्रतिक्रिया, मतलब परस्ती, सीट, लालच, रक्षक, मौसेरे भाई रोचकता भरी पठनीय लघुकथाएं है। धुंध लघुकथा, पिता की मृत्यु हुए व्यक्ति की मनः स्थिति और टैक्सी ड्राइवर के बीच है। संप्रेषणीयता, शीर्षक जिज्ञासापूर्ण, शब्दों का सार्थक प्रयोग, रोचक कथानक सरल और आकर्षक भाषा, आत्मकथात्मक वर्णनात्मक शैली, पात्रानुकूल संवाद, सलीके से उपस्थित देशकाल और वातावरण, उद्देश्य में सफल, लघुकथा धुंध का अंत भी मार करता है। सुन्दर और श्रेष्ठ रचना है।

अपने थम कर स्वार्थ अपना अपना शनि, नजर बनाम नजर, अपना-अपना दर्द, दोस्ती बनाम दोस्ती, अपने-अपने इनाम, जिदंगी-जिदंगी, मजबूरी, औकात, कायाकल्प, घर बनाम घर, तबदीली, हिसाब, उम्मीदें, परेशानी दर, परेशानीब, अजनबी, भूमिका बंधन के सच वसूली, ठोकर, मजबूरियां, आइने का सच,

सुविधा जैसी लघुकथाएं पाठक को बांधे रखने में पूर्ण सक्षम है। लेखक की कलम संवेदना जगाने में कामयाब हुई हैं। पाठक को सोचने को विवश सा कर देती है।

यथार्थ कार्यालय संस्कृति पर एक बहेतर सी लघुकथा है। शीर्षक विषय के अनुरूप, शब्दों का चयन, कसावट, पात्र और अनुकूल चरित्र, कथ्य, भाषा और शैली में सहजता-सरलता, लघुकथा का प्रारम्भ मध्य, अंत अत्यंत रुचिकर है। वैसे कार्यालय में सख्त अधिकारी होना चाहिए। विशेष कर महिला अधिकारी को सख्त व अनुशासन में होना। मन बल्लियों उछलना जैसे मुहावरों का प्रयोग लघुकथा की पठनीयता को बढ़ाता है।

महज सात पंक्तियों की लघुकथा इज्जत बेहतर रचना है। शीर्षक जिज्ञासा उत्पन्न करता संक्षिप्त शब्दों में विस्तृत फलक लिए है। कथोपकथन शैली अपनाते कथानक और पात्रों का चरित्र चित्रण भी सहज ही स्पष्ट हो जाता है। लघुकथा में कसावट, अपने उद्देश्यों में सफल लघुकथा है। प्रायः हर कर्म और ईमानदार कर्मचारी को सुनना ही पड़ता है कि वह हरिशचंद्र की औलाद है। मुंह बिचकाना, हरिशचंद्र की औलाद, खूब सेवा करना, मरे मन से करना आदि वाक्य लघुकथा को चार चांद लगाते हैं। संप्रेषणीय और पैने शीर्षक वाली लघुकथा तीर सुपठनीय रचना है। रिश्तों में आए बाजारवाद पर भी अपरोक्ष व्यंग्य है।

साधारण सी दिखती जिंदगी-जिंदगी उन लाखों परिवारों की लघुकथा है जो आर्थिक समस्या से लगातार दो चार होते रहते हैं। जूझते रहने को मजबूर हैं। किन्तु अपनी इस मजबूरी को लांघकर भी वे अपने बच्चों को शिक्षित करना चाहते हैं। बच्चे के लिए पुस्तक लेने को बार-बार टालता पिता महीने की आखिरी तारीख में बचे मात्र साठ रुपये, उसमें से भी मित्र को चाय के लिए पांच रुपये खर्चना पड़े थे। साठ रुपये कीमत की पुस्तक अंततः वह खरीद लेता है। किंतु बिना किराए के पैदल ही घर की ओर तेज कदमें ले चल पड़ा था। लघुकथा का शीर्षक का लाजवाब है ही, कथानक भी विश्वसनीय और रोचक है। जरूरत जितने शब्द और वाक्य। उपयुक्त वातावरण, सरल भाषा, वर्णनात्मक शैली, पात्रानुकूल कथोपकथन, उद्देश्य में कामयाब सुन्दर लघुकथा है।

ज़िदगी का सच, विवशताएं अपनी-अपनी औकात, अपने-अपने आंसू चेहरा दर चेहरा, अपने-अपने दुःख, अपने पन की महक, बर्थडे, हंसना-रोना, इनाम, ख़जाना, कमाई, मौन उत्तर, सबूत, सच की परतें, विडंबना लघुकथाएं कथ्य, भाषा, शिल्प, शीर्षक, कसावट, संप्रेषणीयता, संवेदना से युक्त पठनीय लघुकथाएं हैं। धुंधली खुशी लघुकथा निम्न आय परिवार की स्थिति को रेखांकित करती मार्मिक रचना है। नजर का चश्मा न बनाने के परिणाम स्वरूप पिता आत्मग्लानि भी सह जाता है। जब रुपये का जुगाड़ हो जाता है। तो भी वह बेटी की खुशी के लिए 'डॉटर्स डे' पर टेडी बियर खरीदने का मन बना लेता है अपने लिए चश्मा बनाना छोड़कर बेटी जब खुशी से उछल पड़ती है। अंतिम वाक्य देखें- मगर उसके चेहरे के भाव मुझे साफ-साफ कहां दिख पा रहे थे। लघुकथा के मापदंडों पर खरी लघुकथा बहुत सुंदर है। बरकत लघुकथा उन लेखकों पर करारी चोट करती है जो लिखते तो भ्रष्टाचार, सच और न्याय के लिए। किन्तु उनकी करनी कुछ और होती है। रिटायरमैंट के बाद भी शशिकांत सरकारी दफ्तर में आकर मुफ्त पैन मार लेता है। जिसमें उसे बरकत दिखती है। कथोपकथन शैली में साढ़े छः पंक्तियों की यह लघुकथा लेखकों को सोचने के लिए विवश तो करेगी ही। शीर्षक लघुकथानुकूल है। शब्दों और कसावट पर ध्यान दिया गया है।

संग्रह की एक सौ चौबीसवीं लघुकथा है सपनों का सच। कम्पनी बन्द होने पर क्लर्क की नौकरी भी छूटी। ताबड़तोड़ कोशिशों के बाद भी नौकरी न मिली। बेरोजगारी ऊपर से भूखा, घर में दो रोटी का आटा मात्र एक बच्चे को तो एक पिता व पत्नी दीपा को भूख दूर करने के लिए। पिता बताता है कि नौकरी मिल जाने पर वह क्या-क्या लाएगा- सबसे पहले आटे की थैली, गर्म-गर्म फूली फूली रेटियां बच्चे की मनपसंद आलू पनीर की सब्जी।'' बच्चे की आंखों नींद भरने लगी और पिता व मां की आंखों में नमी। सपनों का सच लघुकथा मार्मिक है और लघुकथा के सभी मापदंडों पर सही उतरती है। सुख लघुकथा संग्रह की अंतिम लघुकथा है जो कुछ देर खड़ा रहने में सुख पाता है।

लघुकथा संग्रह जिंदगी-जिंदगी की सभी लघुकथाओं में मर्मस्पर्शिता, संवेदनशीलता और संप्रेषणीयता, सरलता, रोचकता, विश्वसनीयता बरकरार है। ये पाठक को कहीं भी संग्रह से विमुख नहीं होने देते। मानवीय मूल्यों की पक्षधरता, कार्यालयी संस्कृति का ह्रास और उसमें सुधार, रिश्तों में घूसता बाजारवाद, संत्रास-विपन्नता में भी सकारात्मकता, यात्रा में पुरुषीय लौलुपता और उसमें स्नेह का मरहम, मानवीय कमजोरियां और उनमें सशक्तता भरना, कर्त्तव्यबोध, विवशताओं परेशानियों का शमन, समकालीन समाज की विभिन्न भंगिमाओं के दर्शन लघुकथाओं में सहज सुलभ है। संग्रह को पढ़ने के लिए आन्दोलित करते हैं। विषयों को उठाने में लेखक हरीश कुमार अमित पूर्ण सफल हुए है। यह लघुकथा संग्रह एक उत्तम पठनीय और संग्रहणीय कृति है। इस संग्रह के पृष्ठ 8 का पुनः अवलोकन करने की आवश्यकता जान पड़ती है। मुख पृष्ठ साज-सज्जा सुन्दर, मुद्रण साफ-सुथरा है।

जिंदगी-जिंदगी लघुकथा संग्रह का मूल्य सजिल्द मात्र 250 रुपये है। प्रकाशक हैं, किताब घर प्रकाशन 4588-56124 संग्रह रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 है। एक बार यह लघुकथा संग्रह अवश्य पढ़ा जाना चाहिए।

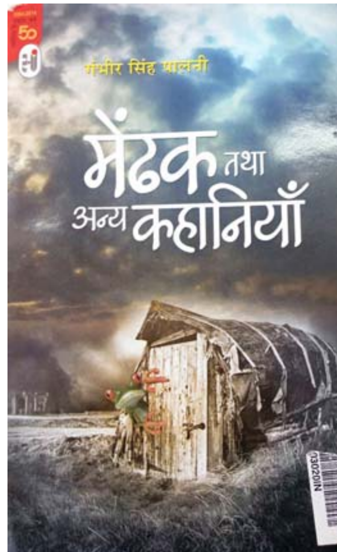
डाकघर महादेव, सुन्दरनगर, जिला मण्डी,
हि. प्र.-175018, मो. 8679156455

समीक्षा

जीवन का मर्म खंगालती कहानियां

◆ ओम भारद्वाज

'मेंढक तथा अन्य कहानियां' कहानी संग्रह कुछ ही दिनों पहले मेरे हाथ आया। लेखक गंभीर सिंह पालनी में प्रकाशन के मामले में उतावलापन नहीं दिखता। यह संग्रह उसका पहला ही कहानी संग्रह है। जबकि पालनी की पहली कहानी नवम्बर 1987 में मुंशी प्रेमचन्द के पुत्र श्रीपत राय के संपादन में निकलने वाली 'कहानी' पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी है। संग्रह की पहली कहानी 'मेंढक' है जो 'वर्तमान साहित्य' के अप्रैल 1991 अंक में प्रकाशित हुई है। लेखक का कहना है कि नौरेन डंगवाल और रवीन्द्र कालिया ने इस कहानी पर टिप्पणियां की हैं। मेंढक कहानी को पढ़ते हुए पहले मुझे लगा की बच्चों के खेल की कहानी है, क्योंकि हम भी बचपन में मेंढक से खेला करते थे। कहानी जैसे-जैसे पढ़ता गया गंभीर पालनी की गंभीरता सामने आने लगी। मैं भी मेंढक वाली छलांग लगाने लगा था। बचपन के वे पुराने दिन याद आने लगे थे जब हम स्कूल जाया करते थे। सिवाय छलांग लगने के दुनियादारी का कोई अता-पता न था। आज भी हर व्यक्ति उसी छलांग लगाने में लगा है। घर-बार छोड़कर शहर में आ कर अपने बच्चों को पढ़ाने का जो कीड़ा पाल रखा है वह अति विकराल है। हर व्यक्ति अपने बच्चों को डॉक्टर या इंजीनियर बनाना चाहता है। इस अंधी दौड़ में बच्चे न तो डॉक्टर बन पाते न इंजीनियर। बल्कि उल्टा माता-पिता की महत्त्वाकांक्षा के शिकार होकर नशे की प्रेतछाया में संलग्न हो जाते हैं।



कहानी के पात्र विद्यार्थी और अध्यापक ही हैं। पूरी कहानी का परिवेश स्कूल में इर्द-गिर्द ही बन गया है। विज्ञान के छात्र व अध्यापक कला पक्ष के छात्र व अध्यापक को दोयम दर्जे का मानते हैं। साईंस के अध्ययन में हर व्यक्ति बायलॉजी को ही उत्तम पढ़ाई का स्रोत मानते हैं। हर छात्र मेंढक की चीर फाड़ करता नजर आता है जैसे वह डॉक्टर बन ही गया हो। उनका भ्रम तब टूटता है जब बेनीमाधव वर्मा हिन्दी अध्यापक होकर भी बॉयोलोजी के प्रश्न बच्चों से पूछते हैं। बच्चे हैरान हो जाते हैं और प्रश्न दागते हैं- 'सर आपने इतने बरस तक बायोलॉजी पढ़ी तो फिर हिन्दी की टीचरी में क्यों आए। आपको तो डॉक्टरी लाइन में जाना चाहिए था। वर्मा मासाब ने बड़े संजीदा होकर जवाब दिया- 'कोई व्यक्ति खुद के चाहने भर से डॉक्टर थोड़े ही बन सकता है। बच्चे बायोलॉजी के अध्यापक से भी प्रश्न पूछते हैं। जहां उनका समाधान हो जाता है कि वह तो मेंढक सी उछल कूद मचा रहे थे। कहानीकार कहानी में भारतीय शिक्षा पद्धति के कपड़े उतारता है। उसका नंगापन दिखाता है दूसरी ओर अन्त में आरक्षण के दैत्य की ओर भी इशारा करता है। प्रभुलाल उर्फ मेंढक डॉक्टर बन जाता है और एक मेधावी छात्र चिन्तामणि इंटर कॉलेज में मेंढक सप्लाई करने का धंधा करता है। अन्त में कहानी का पात्र कहता है हम सब भी तो मेंढक ही थे जिन्हें कूदते- फांदते-भटकते हुए पता ही नही था कि जाना कहां है।

बस ड्राइवर तेजाब सिंह की कहानी मानवीय चेतना को झकझोरती है। स्कूल जाती एक छात्रा को जिसमें उसे उज्ज्वल भविष्य दिखता है। स्कूल पहुंचाने के लिए अपना बस रूट ही बदल देता है। गांव की सड़कों पर जहां मात्र एक आध बस ही चलती है। बस छूट जाने के बाद आने-जाने का कोई माध्यम शेष नहीं बचता और स्थिति से समझौता ही करना होता है। लोगों के विरोध के बावजूद वह छात्रा को स्कूल पहुंचाता है क्योंकि उसकी सालाना परीक्षा के न दे पाने से उसका पूरा साल व्यर्थ हो जाता। बदले में उसको नौकरी से हाथ धोना पड़ता है। नौकरी छूट जाने पर तेजाब सिंह का क्षोभ इस कदर है- 'जिन लोगों ने मुझे कई बार गांव पर बस रोक कर डीजल चुराकर बेचते हुए देखा, शराब पीकर गाड़ी चलाते देखा, गाली गलौज करते देखा, यह भी देखा कि मैं अपने साथी कंडक्टर द्वारा किराया व माल-फड़े में किए गए घोटाले की रकम में हिंसा लेता हूं, उन लोगों ने कभी भी मेरी कम्पलेण्ट नहीं की। मैं गलत करता रहा और ये सब देखते रहे तथा चुप रहे। क्यों, क्या केवल इसलिए कि ऐसा तो सभी करते हैं यह सोचकर, लेकिन आज जब मैंने मुल्क की एक प्रतिभा को भविष्य को, मुल्क के भविष्य को बचाया तो लोगों ने मेरी कम्पलेण्ट कर दी। आखिर क्यों। जिन लोगों के हाथ में कोई स्टीयरिंग होता है, क्या उन्हें पुरानी लकीरों पर ही चलते रहना चाहिए या कभी इस बारे में भी सोचना चाहिए कि सही लकीरें कैसी हो सकती हैं। 'रेबीज'

कहानी में लोगों की लापरवाही के कारण बेगुनाह की जान कैसे जाती है, इसे उद्घाटित किया गया है। हर व्यक्ति अपनी दिनचर्चा तक सीमित है। कोई मरे कोई जीए किसे फर्क पड़ता है। अपनी सुरक्षा बनी रहनी चाहिए। एक मां जिसने जन्म दिया नौ माह कोख में उठाया उसके तीनों बेटे अपनी मां का इलाज समय पर नहीं कर पाए और उसे मरने पर मजबूर होना पड़ा। 'नाक' कहानी ग्रामीण परिवेश में दादागिरी करने वाले व्यक्ति की कहानी है। शराब और जुए जैसी बुराइयों को पाले रखने के लिए भी वह गांव की नाक कटने का फतवा जारी करते हैं। बुराइयों का सरदार बनने में भी उसे मजा आता है। समस्याएं हर शहर की एक जैसी है। सुन्दर शहर का कुरूप चेहरा कथाकार नैनीताल एक खूबसूरत शहर है। कहानी में बखुबी दिखाते हैं। कहानी का पात्र बिसन नौकरी करने नैनीताल आता है। रहने के लिए उचित कमरा उपलब्ध न हो पाए उसकी गम्भीर समस्या बन जाती है। उसकी प्रेयसी मंजू नैनीताल आने को उतावली है। परन्तु वह उसे कैसे यहां बुलाए उसके पास रहने के लिए ठीक ढंग का कमरा तक नहीं है। बूढ़े भवन अपनी सांसे गिन रहे हैं। जो युवा है वह होटलों में तबदील होकर पर्यटकों का आशियाना बन बैठे हैं। ऐसे में दिहाड़ीदार और कम पावर पाने वाले लोगों को दिन काटने कठिन हो चले हैं। बिशन कमरा देखने निकलता है। कमरे की स्थिति देखकर वह सोचता है कि उसके गांव में इन कमरों से अच्छे पालतू जानवरों के कमरे हैं। कुछ मकान ऐसे हैं जिसके किरायेदार बरसात के दिनों में अपने परिचितों के घर में रहते हैं। मौसम ठीक हो जाने पर वापस इन जर्जर इमारतों की ओर लौटते हैं। रात को पेट खराब हो जाए शौच जाना दुर्लभ हो जाता है। कहानी का यह अंश इस दयनीय स्थिति को इस प्रकार रेखांकित करता है- 'उसने सोचा कि क्या इतने बरस तक कॉलेज में पढ़ाई करते हुए सुनहरे सपने देखने के बाद इस खूबसूरत कहे जाने वाले शहर में वह ऐसी ही रात देखने के लिए आया था तभी वह तुरंत कमरे में घुसा था। मोमजामें की एक थैली लेकर उसने स्वयं को एक कुत्ते की स्थिति में पाया था और कुछ देर बाद थैली पिछवाड़े की तरफ वाली खिड़की से बाहर फेंक दी थी। इसके बाद उसने अपने दफ्तर जाना था। जहां उसे दिल्ली से आ रहे पर्यटकों को शहर के सौन्दर्य से परिचित कराने की ड्यूटी निभानी थी। 'भगवान का नाम' एक छोटा सा प्रसंग है यानी लघुकथा। दो पीढ़ियों का संवाद। दांपत्य जीवन का खुलापन। एक किशोर के लिए रोचक बातचीत जिसने अभी इस दहलीज पर कदम ही नहीं धरा।

मुझे उदय प्रकाश की 'मोहनदास' कृति याद आई। कुछ उसी तरह का प्लाट 'बुनने वाली उंगलियों की कहानी में है। मेहनत किसी की और की परिणाम किसी और के नाम। गगन कौर के हाथों बने कार्डीगन जो उसने अपनी भाभी के लिए तैयार किया था। भाई की सफलता हेतु कुछ रुपयों की खातिर कम दामों में बेचकर उस कार्डीगन की कीमत से जो राशि हाथ में आई उससे भाई को इंटरव्यू के लिए चण्डीगढ़ भेजा और लौटते वक्त हस्तशिल्प प्रतियोगिता को देखने के लिए गगन कौर रुकती है। इस समारोह में उसके हाथों बुना गया वह कार्डीगन हरि सिंह दुकानदार की पुत्री सोमा के नाम से पुरस्कृत होता है। 'बुनने वाली अंगुलियां' तिलमिलाती रह जाती हैं जिसकी वह सही हकदार थी। 'शिक्षक दिवस' कहानी व्यक्ति के दोहरे व्यक्तित्व को उभारती है। समाज में उन चाटूकार लोगों की मानसिकता जो कभी भी अपनी नीयत से बदल जाते हैं। कुछ लोग न चाहते हुए भी उस घिनौनी हरकत के शिकार होते हैं वह अपनी संपत्ति बचाने की खातिर अदालत में झूठी गवाही देते हैं। इस कहानी के पात्र शाह की असलियत लोगों को वर्षों बाद पता चलती है। समाज के चेहरे पर तमाचा मारते हुए वह समाजसेवी बनकर हर साल स्कूल में मुख्यातिथि बन कर अच्छी-अच्छी बातों का व्याख्यान देते हैं।

'भाई' और लौटना कहानियां जीवन में सुविधाओं के अभाव को रेखांकित करती है। अरूण को भाई लाल्लू दाज्यू से मदद की उमीद रहती है परन्तु उसे निराश होकर लौटना होता है। वहीं दूसरी ओर 'लौटना' कहानी में एक ईमानदार क्लर्क जो एक-एक पैसे को सम्भालकर खर्च करने में अपनी सारी शक्ति लगा देता है। उसके दिमाग में मोची द्वारा पहनाई गई सैण्डिल को दबोचने का भ्रम पैदा होता है। अपने विवेक से उस भ्रम को तोड़ता हुआ वह भारी बोझ से मुक्ति पाकर यथाशक्ति में लौटता है।

निम्न स्तर पर भ्रष्टचार किस तरह होता है 'तिलिस्म' कहानी में कहानीकार ने डीपू की दुकान पर कंट्रोल रेट की चीनी का स्टाक खत्म हो जाने पर जरूरतमंद को उसकी सुविधा नहीं मिल पाने का उल्लेख किया है। एक युवक इस समस्या से जूझने पर दुकानदार को सैट करने की मंशा लिए दुकान पर जाता है। वहां पहुंचने पर लाला जी की नवविवाहित बहन को देख उसका क्रोध शान्त हो जाता है। झगड़ा होते-होते टल जाता है। गंभीर सिंह पालनी ने गांव शहर की छोटी-छोटी समस्याओं को लेकर कहानियां बुनी हैं। शहर नैनीताल हो या शिमला समस्याएं एक जैसी हैं। लेखक अपनी रचनाओं में समस्याओं का समाधान नहीं खोजता बल्कि पाठक को यह सोचने पर मजबूर करता है कि इन समस्याओं से कैसे निपटा जा सकता है। यही रचना की सार्थकता भी है।

भ्रोटा निवास, सांगटी, संजौली,
शिमला-171 006, मो. 0 94181 00252

कहानी संग्रह : मेंढ़क तथा अन्य कहानियां, **लेखक :** भूमिका पालनी, **प्रकाशक :** साहित्य भंडार, इलाहाबाद-211 003, **प्रथम संस्करण:** 2018, **मूल्य :** 50 रुपये

शिखर पर स्वच्छता

पहाड़ों में इस वक्त तीर्थाटन व पर्यटन सीजन जोरों पर है। देश में गर्मी से निजात पाने व नई जगहों पर सुकून पाने के लिए पर्यटकों, श्रद्धालुओं के कदम पहाड़ों की ओर बढ़े हैं। या यूं कहें पहाड़ों का आकर्षण, देवी-देवताओं के प्रति अगाध श्रद्धा, प्राकृतिक सुंदरता, शांतिमय वातावरण में भी चुंबकीय आकर्षण है।

इंटरनेट के इस युग में फेसबुक, इंस्ट्राग्राम ने पहाड़ के आकर्षण को और अधिक बढ़ा दिया है। इन स्थलों पर देशी-विदेशी पर्यटकों की भीड़ नजर आने लगी है। आज से दो दशक पूर्व पहाड़ के निर्जन स्थलों, देवालयों, उत्तुंग शिखरों पर मात्र स्थानीय निवासियों की उपस्थिति ही पारंपरिक परिधानों में देखने को मिलती है। इस भीड़ के पीछे सामाजिक रिश्तों में आते बदलाव भी हैं। अब छुट्टियों में कोई भी सगे-संबंधियों, नाना-नानी, दादा-दादी के पास जाना नहीं चाहता। हर घर में गाड़ी की उपलब्धता तथा आर्थिक संपन्नता ने भी इसे पंख लगाए हैं। युवाओं में तो यह सनक अधिक देखने को मिल रही है। प्रदेश के हर जिले में पहाड़ के शिखरों तक अनेक सुरम्य स्थल हैं। इनकी अपनी-अपनी कहानी, मान्यताएं एवं इतिहास है। शांत तथा सुंदर वादियों तक पर्यटकों की बढ़ती संख्या से लाभ व हानियां दोनों ही नजर आती हैं। एक ओर इससे प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में रोजगार के अवसर बढ़े हैं। वहीं, दूसरी ओर पहाड़ों की सुंदरता पर ग्रहण लग रहा है। दुनिया की सबसे ऊंची चोटी 'माउंट एवरेस्ट' हिमालय, जो स्वच्छ धवल काया के रूप में जानी जाती है, पर झुंड के रूप में पर्वतारोहियों की लंबी कतारों के चित्र देख मानव के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यह मानव की एवरेस्ट फतह की जिद प्रतीत होती है।



जून माह की संक्रांति को हर वर्ष मंडी जिले के देव कमरू नाग जलतीर्थ पर सनारली मेले का आयोजन होता है। लगभग दस हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित इस स्थल पर पहुंचने के लिए करसोग सुंदरनगर मार्ग पर चौकी, रोहांडा से लगभग आठ किलोमीटर घन्यारा-जाच्छ से सात किलोमीटर, जालपा मंदिर सरोआ से आठ किलोमीटर की पैदल यात्रा कर पहुंचा जा सकता है। इस वर्ष इसी मार्ग पर वाडू से लगभग 14 किलोमीटर का छोटे वाहनों के लिए मार्ग बन जाने से मंदिर से लगभग दो किलोमीटर की दूरी तक छोटी गाड़ियों, मोटर साइकिलों की भीड़ देखते ही बनती थी। यह मार्ग संकरा है। कच्चा है। लेकिन भीड़ तो पैदल न चल कर वाहन से ही दूरी मापना चाहती है। यह जोखिम भरा सफर है। प्रदेश के प्रमुख पर्यटक स्थलों पर तो वाहनों की लंबी कतारों से सभी वाकिफ हैं लेकिन इस संकरे मार्ग पर वाहनों की भीड़ भी कम न थी। पहाड़ मेहमानों के लिए तो बांहें फैलाए खड़े हैं लेकिन जंगलों के भीतर वाहनों की भीड़ से वे भी पस्त हुए हैं।

हर नकारात्मक स्थिति के पीछे एक सकारात्मक नजरिया भी देखने को मिलता है। इसे मैं पाठकों के साथ साझा करना चाहता हूं। देव कमरू नाग की झील लगभग दो किलोमीटर परिधि में फैली है। इस तक पहुंचने के लिए झील के इर्दगिर्द जंगल में मंदिर से दो-दो किलोमीटर तक पक्के पैदल पथ व द्वार बनाए गए हैं। इन पैदल पथ मार्गों पर मेला कमेटी द्वारा स्थान-स्थान पर कूड़ादान की व्यवस्था की है। इस देव स्थल पर भीड़ तो थी लेकिन पहाड़ों पर बोतलों, लिफाफों का ढेर नाम मात्र था। इसे देखकर आभास हुआ कि वर्ष 2017 में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की जयंती पर देश में आरंभ हुआ संपूर्ण स्वच्छता अभियान ने पहाड़ की ऊंचाई में स्वच्छता के प्रति गंभीरता को दर्शाता है। कभी जो संपूर्ण स्वच्छता का उपहास उड़ाते थे, को इस शिखर पर आकर स्वयं देखना चाहिए। शिखर पर स्वच्छता के इस पुनीत कार्य के लिए मेला प्रबंधकों को साधुवाद। बस इस उम्मीद के साथ कि भविष्य में प्रशासन इस संकरे मार्ग पर वाहनों की आवाजाही को भी नियंत्रित करेगा। नहीं तो वाहनों की एवरेस्ट जैसी तस्वीरें इस शीर्षक 'पैदल कोई जाना नहीं चाहता, रास्ते में घंटों जाम में फंसे यात्री' के साथ अवश्य प्रकाशित होंगी।

(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक हैं)



पर्यावरण दिवस पर मुख्यमंत्री श्री जय राम ठाकुर
शिमला में स्मारिका का विमोचन करते हुए।



मुख्य मंत्री श्री जय राम ठाकुर की उपस्थिति में हिमाचल सरकार व फ्रैंकफर्ट इनोवेशन जैंटरम के मध्य निवेश के लिए समझौता ज्ञापन हस्ताक्षरित।

पंजीकरण संख्या : 845 / 1957 जून, 2019 एच.पी. / 79 एस.एम.एल. 2018—20



कमरू नाग झील जिला मंडी

हरबंस सिंह ब्रसकोन, निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा नीरज कुमार, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला—171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

जुलाई, 2019





मुख्य मंत्री श्री जय राम ठाकुर चंबा में ऐतिहासिक मिंजर उत्सव में शोभा यात्रा की अगुवाई करते हुए



रावी की जलधारा में मिंजर विसर्जन की प्राचीन परंपरा का निर्वहन

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64   जुलाई 2019   अंक : 4

प्रधान सम्पादक
हरबंस सिंह ब्रसकोन

वरिष्ठ सम्पादक
विनोद भारद्वाज

सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : अश्वनी

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

मानव का अंतःकरण उसके आकार, संकेत, गति, चेहरे की बनावट, बोलचाल तथा नेत्र और मुख के भावों से विदित हो जाता है।

– पंचतंत्र

इस अंक में

लेख

कहानी

कविता/ग़ज़ल

लघुकथा

समीक्षा

आखिरी पन्ना

अपनी बात

भारतीय सभ्यता में संस्कृति के विकास विशेषकर लोक परम्पराओं को समृद्ध करने में हिमालयी क्षेत्र का बहुमूल्य योगदान रहा है। सृष्टि के आदिपुरुष मनु का मनवालय हो या ऋषिगण वशिष्ठ, व्यास, भृगु के आश्रम, इन सभी ऋषि-मुनियों का हिमाचल के वर्तमान भू-भाग की पावन धरा से गहरा सम्बंध रहा है। शायद यही कारण है कि इस पर्वतीय क्षेत्र के सामाजिक जीवन में प्रागैतिहासकालीन देव-संस्कृति की झलक आज भी स्पष्ट देखी जा सकती है। यहां के लोगों ने इस धरोहर को अक्षुण्ण बनाए रखने का एक ऐसा लोक विज्ञान तैयार किया जो समाज-शास्त्रियों के लिए आज भी शोध का विषय बना हुआ है। इसलिए यह अति आवश्यक हो जाता है कि हिमालयी क्षेत्र की इस अनूठी संस्कृति, सामाजिक तथा धार्मिक पहचान को हर कीमत पर बनाए रखा जाए। हिमालय की इसी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को संजोए हिमाचल प्रदेश प्राचीन काल से ही साधू-संतों की साधना-स्थली रहा है। प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण यह प्रदेश जहां वर्तमान में देश विदेश के सैलानियों के लिए पहली पसंद बनकर उभरा है वहीं यह आगंतुकों, प्रकृति प्रेमियों, शोधार्थियों, कलाकारों व साहित्यकारों के लिए भी जिज्ञासा का केन्द्र बना हुआ है। हिमाचल प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों की अपनी एक अलग सांस्कृतिक और पारम्परिक पहचान रही है, जो यहां प्रचलित पारंपरिक कलाओं के भिन्न-भिन्न रूपों में स्पष्ट तौर पर दिखाई देती है। देशभर में अपनी विविध संस्कृति के लिए प्रसिद्ध इस प्रदेश के लोगों का जन-जीवन आज भी देव परंपरा से जुड़ा है। प्रदेशभर में हर वर्ष हर्षोल्लास के साथ मनाए जाने वाले मेले एवं त्योहारों में यहां की अनूठी देव संस्कृति के साथ-साथ लोक गीत, चित्रकला, नृत्य एवं रंगमंच कला को जीवंत देखा जा सकता है। संस्कृति के विविध आयामों में व्याप्त मानवीय तत्त्व यहां के कला-रूपों में दिखाई पड़ते हैं। यह कलाएं किसी भी देश या समाज की लोक संस्कृति की संवाहक और रीति-रिवाज का दर्पण होती हैं। प्रदेश के हर क्षेत्र की कला एवं संस्कृति, जीवनशैली और पद्धति की अपनी एक अलग पहचान है, जिसका हर कीमत पर संरक्षण किया जाना चाहिए। हमारा यह सदैव प्रयास रहा है कि संस्कृति के इन्हीं विविध रूपों को आम पाठकों तक पहुंचाया जाए। हिमाचल के जन-जीवन में चंबा मिंजर मेले का विशेष स्थान है और जिले का अपना एक गौरवमय इतिहास रहा है। ऐतिहासिक चंबा शहर विगत एक हजार साल से भी अधिक समय से यहां की समृद्ध संस्कृति को विभिन्न रूपों में संजोए हुए है। बात चाहे हिन्दू मुस्लिम भाईचारे की हो या साझी सांस्कृतिक विरासत के प्रतीक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त मिंजर मेले या चंबा रूमाल की, इन सब रूपों में पहाड़ी संस्कृति की झलक स्पष्ट दिखलाई पड़ती है। आज के बदलते दौर में भी चंबा की चुख तथा चंबा चप्पल जैसे पारंपरिक उत्पादों के प्रति लोगों का आकर्षण बरकरार है। देश के स्वतंत्रता सेनानियों तथा अन्य अनेक महान विभूतियों की स्मृतियों का आइना डलहौजी सरीखे पर्यटक स्थल आज भी सैलानियों की पहली पसंद बने हुए है। प्रस्तुत अंक में चंबा जिले की इन खूबियों की जानकारी के साथ-साथ जनजातीय क्षेत्र पांगी घाटी में मनाए जाने वाले मेले व उत्सवों पर भी रुचिकर एवं उपयोगी सामग्री जुटाई गई है। हिमाचली लोक कला एवं संस्कृति को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाने वाले प्रख्यात साहित्यकार स्वर्गीय मौलू राम ठाकुर पर विशेष लेख समाहित किया गया है। नियमित सामग्री के समावेश के साथ यह अंक पाठकों समक्ष प्रस्तुत है। हमेशा की तरह पाठकों के बहुमूल्य सुझावों एवं प्रतिक्रियों की प्रतीक्षा रहेगी।

- संपादक

सांस्कृतिक आलेख

मिंजर

साझी सांस्कृतिक विरासत की प्रतीक

◆ मु. अमीन शेख चिश्ती



सावन की बरसती रिमझिम बून्दों के आगमन के साथ धरती के यौवन को स्पर्शित करने को व्याकुल घटाओं के बीच झांकती वरुण देव की सतरंगी किरणें जब 'कुंजड़ी मल्हार' की स्वर लहरियों के साथ कृषकों के लहलहराते-झूमते हरे-भरे खेत-खलिहानों पर नैसर्गिक सौंदर्य की चादर ओढ़ाती है तब हर वर्ष आगाज होता है सदियों पूर्व की अपनी परम्पराओं को जीवंत करने वाले चम्बा के ऐतिहासिक मिंजर मेले का।

श्रावण माह के दूसरे रविवार से शुरू होकर तीसरे रविवार को रावी नदी में मिंजर विसर्जन के साथ खत्म होने वाले मिंजर मेले का अपना प्राचीन वैभवशाली इतिहास रहा है।

दसवीं शताब्दी में त्रिगर्त (कांगड़ा) के राजा, दुग्गरों, कीरों और सामन्तों इत्यादि पर विजय प्राप्त कर के राजा साहिल वर्मन ने जब चम्बा के अपने राज्य की सीमा में प्रवेश किया तो प्रजा ने उन्हें मक्की व धान की बालियां (मंजरियां) भेंट करके उनका स्वागत सत्कार किया। राजा साहिल वर्मन ने भेंट में प्राप्त मंजरियों को अपने राजमहल में संग्रहित कर दिया और चम्बा की प्राचीन परम्परा का अनुसरण करते हुए इरावती नदी के उफान को शांत करने तथा अच्छी वर्षा व भरपूर पैदावार के लिए इरावती (आधुनिक रावी नदी) में मंजरियों को प्रवाहित करने की प्रचलित प्रथा के अनुसार उन्हें विसर्जित कर दिया। इस अवसर पर राजमहल से रावी नदी तक शोभायात्रा निकाली गई। राजा की शाही सवारी के साथ सैनिकों की टुकड़ियों, राज दरबारी और प्रजा भी शामिल हुई।

मिंजर शोभायात्रा को भव्यता प्रदान करने का पूर्ण श्रेय राजा पृथ्वी सिंह को जाता है। उन्होंने राजसी वैभव का प्रदर्शन करते हुए राजसी आफतावी (सूर्य) चिन्ह के अलंकार अथवा विशाल झण्डों,



दरबार में घुडदौड़ प्रतियोगिता जीतने के पश्चात् शाहजहां के सल्तनत कोष से धन धान्य, बुद्धि व अमन की प्रतीक शालिग्राम अथवा रघुवीर की प्रतिमा प्राप्त की। शाहजहां को इस प्रतिमा के साथ असीम लगाव था। उन्होंने इस प्रतिमा के साथ अपने राजदूत के रूप में मिर्जा शफी बेग को चम्बा भेजा। मिर्जा शफी बेग जरी-तिल्ले अथवा गोटे के माहिर कारीगर थे। उन्होंने अपनी कला निपुणता दिखाते हुए धान अथवा मक्की के अनुरूप जरी व सोने की तारों से सुन्दर मिंजर बनाकर राजा को भेंट की। यह कलाकृति देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उन्होंने यह भेंट में प्राप्त मिंजर रघुवीर भगवान और लक्ष्मीनारायण को चढ़ाई। यही परम्परा आज भी कायम है। मिर्जा शफी बेग के वंशज पीढ़ी-दर-पीढ़ी सुच्चे गोटे की मिंजर बनाते हैं और श्रावण माह के दूसरे रविवार को शोभायात्रा के साथ रघुवीर और लक्ष्मीनारायण के मंदिरों में इन मिंजरों को चढ़ाने के उपरांत मिंजर मेले की शुरुआत होती है।

आपसी सौहार्द, भाईचारे और धर्मनिरपेक्षता की सहेजी इस सांझी सांस्कृतिक विरासत की प्रतीक मिंजर को बहने भाइयों को बांधकर परम्पराओं को सशक्त बनाने का बोध करवाती है।

एक अन्य जन श्रुति के अनुसार इरावती नदी हरीराय मंदिर और चम्पावती मंदिर के बीचोबीच वर्तमान चौगान से बहती थी जिसके चलते आमजन मंदिर तक नहीं पहुंच पाते थे। एक साधु महात्मा प्रतिदिन रावी नदी को पार करके पूजा करने के लिए वहां जाते थे। राजा साहिल वर्मन ने साधु से आग्रह किया कि समस्त प्रजा मंदिर तक पूजा अर्चना के लिए पहुंच सके इसके लिए वह भगवान से प्रार्थना करें। तब महात्मा ने लगातार सात दिनों तक

पारम्परिक वेशभूषा से सुसज्जित प्रजा, सैन्य टुकड़ियों व स्थानीय वाद्ययंत्रों के साथ रावी नदी में मिंजर प्रवाहित करने की प्रथा का आगाज किया जो अब तक जारी है।

मक्की की बालियों की मिंजर से जरी-तिल्ले तक के मिंजर के सफर की कहानी अत्यंत गौरवशाली और आधुनिक परिवेश के लिए प्रेरणादायक है। राजा पृथ्वी सिंह ने मुगल सम्राट शाहजहां के

मेले का अंतर्राष्ट्रीय रूप

यह सुखद अनुभूति है कि मिंजर मेले को अब अन्तर्राष्ट्रीय मिंजर मेला का दर्जा हासिल हो चुका है। स्थानीय प्रशासन द्वारा आयोजित किए जाने वाले इस मेले को अब और अधिक भव्यता प्रदान करने के लिए विभिन्न खेल प्रतियोगिताओं, प्रदर्शनियों, कुश्तियों के अतिरिक्त अन्य विभिन्न गतिविधियों को लोगों के मनोरंजन के लिए आयोजित किया जाता है। स्थानीय कलाकारों के साथ राज्य के विभिन्न जिलों के कलाकार और अन्य राज्यों के कलाकारों सहित मुम्बेइया स्टार कलाकारों को भी मेले में कार्यक्रमों के लिए आमन्त्रित किया जाता है। विगत कुछ वर्षों से यह मेला एक व्यापारिक मेले के रूप में विकसित हो रहा है। देश के विभिन्न भागों के व्यापारियों के अलावा सरस मेला के तहत स्वयं सहायता समूहों के सदस्य अपने राज्यों के हस्तनिर्मित उत्पादों की बिक्री के लिए अंतर्राष्ट्रीय मिंजर मेला में शिरकत करते है। इस वर्ष मिंजर मेले का आयोजन 28 जुलाई से 4 अगस्त तक किया गया।





यज्ञ किया और धान अथवा मक्की के पौधे की बालियों (कुछ का मानना है कि सतरंगी डोर) की लम्बी रस्सी गुन्थी जिसने मिंजर का स्वरूप धारण कर लिया और नदी का बहाव भी मध्य स्थल से हटकर दूसरे किनारे की ओर मुड़ गया।

मिंजर मेले के साथ जुड़ी एक अन्य प्राचीन परम्परा का निर्वहन अब प्रतीकात्मक रूप से पूर्ण किया जाता है। आजादी से पूर्व राज्य की खुशहाली के लिए मिंजर विसर्जन के साथ एक भैंसे को भी नदी में बहाया जाता था। मान्यता थी की अगर भैंसा पानी के तेज बहाव से जुझता हुआ नदी के दूसरे किनारे पर जीवित पहुंच जाता था तो उसे राज्य के लिए शुभ माना जाता था। जबकि भैंसे का प्रवाहित तट पर वापिस आना दुर्भाग्य का संकेत माना जाता। वर्तमान में भैंसे के स्थान पर अब लाल कपड़े में नारियल को बांध कर रावी नदी में मिंजर के साथ बहाया जाता है।

विजय उत्सव, कृषि पर्व, प्राचीन परम्पराओं के अवलोकन, साम्प्रदायिक सौहार्द, आपसी भाईचारे के प्रतीक के विविध आयामों के विराट स्वरूप को समेटे मिंजर मेले में श्रावण ऋतु आते ही पुरातन समृद्ध संस्कृति के दृश्य हरी घास पर मानों ओस की बूंदों की माफिक एकाएक चमक उठते है। परम्परागत वाद्ययंत्रों के आनंदमय भाव-ताल-राग स्वतः ही संपूर्ण वातावरण में गूंज उठते हैं।

एक हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन नगर चम्बा के गौरवशाली वैभव के दर्शन चित्रकला, काष्ठकला, शिल्पकला और कशीदाकारी की महीन संरचनाओं में एकाएक उभर उठते है। जिला के पांगी, भरमौर, चुराह, चम्बा और भटियात की भोगौलिक भिन्नताओं के बावजूद यहां की संस्कृति की विविधता और व्यावहारिकता आज भी जनमानस को श्रावण माह के आते ही कुंजू चंचलो के मिलन स्थल चम्बा के चैगान में कॉहल रणसिंग्हे, शहनाई, बांसुरी और नगाड़े की धमक के साथ-साथ खंजरी रूवाने के ताल में गूंजते मुसाधो के बीच सांझ ढले उभरते कुंजड़ी मल्हार के विरह स्वर मिंजर मेले में शिरकत के लिए समूचे विश्व को मौन निमंत्रण देते हैं और समस्त वातावरण में एकाएक गूंज उठते है यह स्वर 'उडा मेरी कूंजडियों बरसा थियाडे हो। ओ मेरे रामा जिन्देया रे मेले हो-रे मना, याणी मेरी जान, उडा मेरी कुंजडियो'।

पूर्व जिला लोक सम्पर्क अधिकारी, बिलासपुर, जिला बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश, मो. 0 94186 07642





कशीदाकारी का अनुपम उपहार

◆ विनोद भारद्वाज

हिमाचल की धरा आदिकाल से कला और कलाकारों की आश्रय स्थली रही है। विभिन्न मामलों में जब भी मैदानों में कलाकारों, बुद्धि जीवियों पर अत्याचार बढ़े तो उन्होंने पहाड़ों की ओर पलायन किया। यहां न केवल कुछ कला प्रेमी, लोकप्रिय, दयावान राजाओं और प्रशासकों ने उन्हें शरण दी और उन्होंने अपनी रचना धार्मिक, कल्पना शक्ति से समाज को कला के रूप में अनेक कलाकृतियां उपहार स्वरूप भेंट की है। मुसलमान शासकों के शासक काल में उनकी कठोर नीतियों तथा क्रूरता से अनेक कलाकार पहाड़ों में आए। यहां के जनपदों के राजाओं ने उन्हें शरण दी। इसलिए चम्बा जनपद में एक कहावत आज भी प्रसिद्ध है कि 'उजड़ेया लाहौर तां बसेया भरमौर'।

ऐसे ही वातावरण में चम्बा में राजा उमेद सिंह जिनका शासन गत 1748 से 1764 के मध्य था, ने अपने राज्य में अनेक कलाकारों को आश्रय दिया। इन कलाकारों ने ऐसी कला की परम्परा स्थापित की जिसने दुनिया भर में चम्बा का नाम रोशन किया। ये कला कृतियां विश्व भर के अनेक संग्रहालयों में प्रदेश का नाम रोशन कर रही है।

यह कला चम्बा रूमाल जो कहने को तो एक साधारण रूमाल ही लगता है लेकिन इस पर कलाकारों ने इसे एक नई पहचान दी है। लंदन में स्थित विक्टोरिया-एंड-एलवर्ट म्यूजियम, महाभारत की घटनाओं को दर्शाता दस फुट लम्बा सचित्र रूमाल दीवार पर शोभायमान है।

चम्बा रूमाल, पहाड़ी संस्कृति की एक विशेष धरोहर बना है। यह ललित कला और शिल्पकला के सम्मिश्रण की अद्भुत धरा संजोए हुए है। यह प्रदेश की पहाड़ी चित्रकला तथा हस्त कलाओं की अनूठी विरासत है। 26 जनवरी, 2017 में गणतंत्र दिवस के मौके पर राजपथ पर चम्बा रूमाल की झांकी ने इसे नई पहचान दिलवाई।

मखमल के कपड़े, मोटे खद्दर का हाथ का काता और बुना हुआ कपड़ा कशीदाकारा के लिए उपयोग में लाया जाता है। कशीदाकारी के लिए कच्चा धगा अर्थात् बिना ऐंठा रेशम का धागा प्रयोग में लाया जाता है। रूमाल पर नरम, निपुण और प्रवीण हाथों से कोयले या पेंसिल से उकेटी लकीरों को सूई धागे से रूप दिया जाता है। मूलतः यह कार्य महिलाएं करती हैं। सदा दोहरी सिलाई की जाती है-एक बार आगे और एक बार उन्हीं छेदों से पीछे को। इस प्रकार दोनों ओर से कपड़ा विभिन्न रंगों के धागों

से ठक जाता है। कपड़े का अंश दिखाई नहीं देता। कच्चे धागों की दोहरी सिलाई के चित्र दोनों ओर एक जैसे लगते हैं। इसलिए ऐसा कशीदाकारी से सृजित चित्रों को 'दोरूखा' कहते है- दोहरे मुंह वाला, दोनों तरह एक समान।

चम्बा रूमाल में चित्रों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि रियासत काल में कलाकार, कशीदाकार नहीं थे बल्कि भारतीय संस्कृति, दर्शन, अध्यात्म के ज्ञाता और विद्वान थे।

एक बात और है कि इन कलाकारों ने भारतीय संस्कृति को घर-घर तक पहुंचाया। रामायण, महाभारत, भागवत, अनेक पुराणों की अनेक घटनाओं का सचित्र वर्णन किया। कृष्ण व गोपियों की रासलीलाएं, गोपियों से घिरा मुरलीधर, कृष्ण रूकमणी विवाह, राधा-कृष्ण का नृत्य, राम-सीता, विष्णु अवतार शिव पार्वती, गणेश पूजा, शक्ति के दस अवतारों से आम जन को रूबरू करवाया। ये उस वक्त की बात है जब न संचार के साधन थे और न ही कोई इन घटनाओं को दर्शाने वाला माध्यम था।

भूरि सिंह संग्रहालय चम्बा में 'अपरनायिका' चम्बा रूमाल 90x70 सेटीमीटर आकार में नाचिकाओं का चित्रण देखते ही बनता है। इसमें प्रेमी व प्रेमिका के आठ रूपों को उभारा गया है।

राज्य संग्रहालय शिमला में उपलब्ध 68x97 सेंटीमीटर रूमाल में कृष्ण रूकमणी विवाह के दृश्य को चार चित्रों में दर्शाया गया है।

हिमाचल के महान लेखक मौलू राम ठाकुर ने चम्बा रूमाल बारे लिखा है कि, 'रगों की रंगीनता, चित्रांकन की शिष्टता, विषय वस्तु की विशालता और कशीदाकारी की सुन्दरता के कारण विद्वानों में चम्बा रूमाल को 'सूइयों' द्वारा निष्पादित पहाड़ी चित्रकला का नाम दिया है। ये कला पहाड़ी लघुचित्रों और विभिन्न चित्रों के बहुत निकट है।

चम्बा रूमाल में धार्मिक और पौराणिक चित्रों के इलावा स्थानीय संस्कृति और लौकिक वस्तु विषय वस्तुओं को भी उकेरा जा रहा है।

चम्बा रूमाल को विवाह शादियों में उपहार स्वरूप देने का भी चलन है। साधन संपन्न लोग रूमाल का संग्रह करना अपनी शान समझते हैं। प्राचीन हस्तलेखों, धार्मिक पुस्तकों और जन्म जातियों को सुरक्षित रखने में चंबा रूमाल का प्रयोग होता है। वर्तमान में आए विशेषकर व्यक्तियों को राजकीय समारोह में चम्बा रूमाल भेंट करने का प्रचलन बढ़ाया।

राज्य का भाषा, कला एवं संस्कृति विभाग चंबा रूमाल की पहचान को बनाए रखने के लिए प्रयासरत है। प्रदेश में कार्यशाला एवं प्रशिक्षण शिविर लगा कर चंबा रूमाल कला को संरक्षित किया जा रहा है। मेलों में रूमाल की इस कला को जीवित रखने के लिए विशेष स्टाल लगाए जा रहे हैं। जहां इनसे नवोदित कलाकारों को प्रोत्साहन मिल रहा है वहीं कला प्रेमियों का भी रुझान भी इस पहाड़ी रूमाल का पुरातन कला की ओर बढ़ रहा है।

चंबा की कलाकार महेशी देवी को भारत के राष्ट्रपति डां. राधाकृषणन ने 1956 में गणतंत्र दिवस समारोह के अवसर पर 'मास्टर क्राफ्टमैन का राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान कर इस कला और कलाकार को अधिमान दिया था।

संदर्भ : हिमप्रस्थ : स्वर्ण जयंती विशेषांक, अप्रैल-मई, 2006, हिमाचल की लोक कलाएं और आस्थाएं, मौलू राम ठाकुर



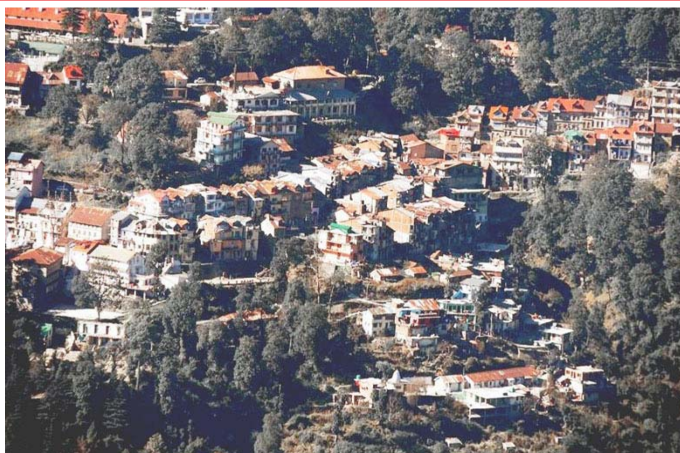
आलेख

महान विभूतियों की स्मृतियों का आइना : डलहौजी

◆ अशोक सरीन

हिमाचल प्रदेश में डलहौजी, खूबसूरत शहर एवं पर्यटकों की पसंदीदा सैरगाह है। वर्ष भर यहां देश-विदेश के पर्यटकों की चहल-पहल रहती है। यह शहर अनेक विभूतियों की यादों का आईना है। आजाद हिंद फौज का गठन कर गोरों को ललकारने वाले नेता जी सुभाष चंद्र बोस, 'गीतांजली' पर मिले नोबल पुरस्कार को ठुकराकर देशभक्ति का जज्बा जताने वाले गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर, आजादी की लड़ाई में सर्वस्व त्यागने वाले शहीद भगत सिंह के क्रांतिकारी चाचा अजीत सिंह और स्वतंत्र भारत की बागडोर संभालने वाले चाचा नेहरू के नाम से मशहूर देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नहेरू डलहौजी में बिखरे प्राकृतिक सौंदर्य के कायल रहे हैं। उन्होंने इसे देश का मिनी गुलमर्ग कहा था।

कहा जाता है कि गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर को जिस विख्यात काव्य संग्रह 'गीताजंली' पर नोबेल पुरस्कार मिला, उसके सुजन की शुरूआत इसी शहर में हुई थी। बाल्यकाल में ही टैगोर यहां के कुदरती नजारों की ओर आकर्षित हो गए। सन् 1873 में 12 वर्ष की आयु में वे अपने पिता के साथ यहां आए थे। वह बकरोता की पहाड़ियों पर स्थित 'स्नोडन' में ठहरे थे। यहीं उन्हें कविता लिखने की प्रेरणा मिली। टैगोर ने 'मेरा अतीत' कविता में लिखा है-- इस नैसर्गिक स्थान के प्रवास के दौरान उनकी आंखों को दो पल शांति नहीं मिली, क्योंकि यहां की सुन्दरता ने उनके हृदय में जगह बना ली थी। उनका कहना था यदि उनकी आंखों ने दो पल भी आराम किया तो वे रमणीक दृश्य ओझल हो जाएंगे जिनकी उन्हें तलाश है। गुरुदेव ने अपने यात्राओं, कविताओं व लेखन में डलहौजी की खूबसूरती का जिक्र किया है। टैगोर की तो उस उम्र में डलहौजी में बसने की इच्छा थी, लेकिन व्यस्त जीवन ने उन्हें यहां दोबारा आने का अवसर न दिया। रंगून में आजाद हिंद सेना कर ब्रिटिश हुकूमत को उखाड़ फैंकने का प्रण लेने वाले आजाद हिंद सेना के कर्मठ नेता सुभाष चंद्र बोस के खिलाफ कलकता की प्रेसीडेंसी जेल में विष देकर उन्हें मार देने का अंग्रेजों द्वारा सुनियोजित षडयन्त्र चलाया जा रहा था। जब ब्रिटिश सरकार को इस बात की सूचना मिली तब उन्हें कुछ समय के लिए पैरोल पर रिहा किया गया। सुभाष चंद्र बोस मई, 1937 में स्वास्थ्य लाभ के लिए डलहौजी आए थे। ब्रिटिश जेल में कैद होने के कारण उनका शरीर बहुत कमजोर हो गया था। उनके छोटे भाई ने ब्रिटिश उच्च न्यायालय में उन्हें पैरोल पर रिहा करने का निवेदन किया था। पैरोल पर रिहा होने के बाद स्वास्थ्य लाभ के लिए वह सात माह तक डलहौजी में रहे। यहां वे अपने मित्र के 'काईनांस' बंगले में ठहरे थे। वह प्रायः शहर से एक कि.मी. दूर स्थित चश्मे के पास आकर योग करते व अपने दल के कार्यकर्ताओं के साथ बैठकें किया करते थे। बाद में यह स्थान 'सुभाष बाबली' जिसका जल स्वास्थ्य के लिए लाभदायक था के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इसके पास ही नेता जी की याद में 'सुभाष चौक' बनाया गया है। डलहौजी का विशेष आकर्षण बीसवीं शताब्दी के पितामह अजीत सिंह की समाधि है। सन् 1905 में जब सारे पंजाब की पुलिस उनके पीछे लगी थी तब अजीत सिंह मुसलमान के वेश में यहां पहुंचे। यहीं से काबुल के रास्ते ईरान, इटली, ब्राजील में देश की सेवा करते रहे। 40 वर्ष तक देश से बाहर रहने के बाद 1946 में पंडित नेहरू ने उन्हें स्वदेश बुला लिया। 14 अगस्त, 1947 को अजीत सिंह डलहौजी में थे। उन्होंने रात 12 बजे रेडियो पर भारत के स्वतन्त्र होने की घोषणा सुनी और सुबह पांच बजे शरीर त्याग दिया। डलहौजी में सरदार अजीत सिंह की समाधि आज भी देश प्रेमियों को उस बहादुर सपूत की याद दिलाती है। सन् 1859 में चंबा नरेश और ब्रिटिश शासकों के बीच डलहौजी के लिए एक पट्टे पर हस्ताक्षर हुए थे। लार्ड



डलहौजी का सदर बाजार इलाका

डलहौजी यहां रहने वाले पहले व्यक्ति थे। उन्हीं के नाम पर इस स्थान का नाम डलहौजी पड़ा। समुद्रतल से 2039 मीटर की ऊंचाई पर स्थित डलहौजी 13 कि.मी. में फैला एक ऐसा हरयावल टापू है जहां कुछ दिन गुजारना स्वयं में अनोखा अनुभव है। पांच पहाड़ियों बेलम, काठगोल, पोटरेन, टिहरी तथा बकरोता से घिरा डलहौजी स्वच्छ शहर है। यहां हिंदी, पंजाबी, तिब्बती, अंग्रेजी भाषी लोग रहते हैं। यह शहर देवदार के घने वृक्षों से घिरा हिमाचल का प्रमुख पर्यटक स्थल है। यहां की ऊंची-नीची पहाड़ियों पर घूमते हुए पर्यटक रोमांचित हो उठते हैं। पहाड़ियों के बीच से कल-कल बहती चिनाब, ब्यास और रावी नदियां, दूर-दूर तक फैली बर्फीली-बर्फीली चोटियां डलहौजी की रमणीयता में चार चांद लगा देती है।

दर्शनीय स्थल : सतधारा-डलहौजी से डेढ़ कि. मी. दूर सतधारा नाम का चश्मा है। पहले यहां सात धाराएं बहती थी पर अब एक मोटी धारा ही रह गई है। यह जल कई रोगों का निवारण करता है। यहां पर्यटन विभाग का कैफेटेरिया है जहां पर्यटक चाय-नाश्ता करते हैं।

पंचपुला : यहां के बड़े डाकघर से दो कि.मी. दूर पंचपुला एक सुंदर सैरगाह है। पंचपुला का अर्थ है पांच पुल। इन छोटे-छोटे पांच पुलों के नीचे से कल-कल बहती जलधारा देखने योग्य है। यहां एक प्राकृतिक जलकुंड भी है, जिसके निर्मल जल में चमकते पत्थर मन को मोह लेते हैं। **कालाटोप :** पर्यटकों के लिए डलहौजी से आठ किलोमीटर दूर और समुद्रतल से 2440 मीटर की ऊंचाई पर स्थित कालाटोप सर्वोत्तम है। यहां भौंकने वाला हिरण व काले भालू देखने को मिलते है। कालाटोप तक पहुंचने के लिए सड़क मार्ग, रहने के लिए वन विभाग का विश्राम गृह है। **बकरोता की पहाड़ियां :** डलहौजी से पांच किलोमीटर दूर 2085 मीटर ऊंचाई पर बकरोता पहाड़ियों में हिमाच्छादित चांदी से चमकते पहाड़ देखने में बहुत खूबसूरत लगते हैं। प्रकृति प्रेमी इन्हें देखते रह जाते है। **डायनकुंड :** डलहौजी से दस किलोमीटर दूर 2750 मीटर ऊंचाई पर डायनकुंड स्थित है। यहां चिनाव, ब्यास व रावी नदियां पास-पास बहती हैं। तीनों नदियों का सांय की तरह बल खाकर बहना पर्यटकों को आश्चर्य चकित कर देता है। कुदरत का ऐसा हसीन नजारा शायद ही अन्यत्र देखने को मिले।

सिटी लाईट प्रिंटर्ज, पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 061

बेमिसाल हैं चंबा के उत्पाद

योग राज शर्मा

हिमाचल प्रदेश अपने प्राकृतिक सौंदर्य के लिए विश्वभर में मशहूर है। यही वजह है कि यहां दूरदराज से सैलानियों का हुजूम साल भर उमड़ा रहता है। प्रदेश का एक हजार से साल से अधिक पुराना चंबा एक ऐसा शहर है जहां कल-कल बहती रावी व साहल नदियां सबका मनमोह लेती हैं। प्राचीन संस्कृति, यहां के लोक गीतों, कहावतों में विशेष उल्लेख आता है। चंबा अपने पुरातन वैभव के लिए ही नहीं जाना जाता है बल्कि तैयार होने वाले स्थानीय उत्पाद अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने को स्थापित कर चुके हैं। यहां की हस्तकला का हर कोई कद्रदान है। आधुनिकता के रंग में रंग जाने के बाद भी यहां पारंपरिक उत्पाद जीवंत हैं और देशी व विदेशी पर्यटक इनकी ओर खासे आकर्षित हो रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय मिंजर मेले का अंदाज समय के साथ बदल जरूर रहा है लेकिन मेले में बिकने वाले चंबा के सुप्रसिद्ध उत्पादों के कद्रदान कम नहीं हुए हैं। मिंजर मेले में चंबा रूमाल, चप्पल, चुख व जरीस की बिक्री कई साल से हो रही है। इन उत्पादों को खरीदने के लिए न केवल स्थानीय लोग रुचि रखते हैं बल्कि विभिन्न जिलों, राज्यों तथा विदेशों के लोग भी खरीदारी करते हैं। स्थानीय लोग भी मानते हैं कि चंबा के इन मुख्य उत्पादों की तरफ लोग काफी आकर्षित होते हैं। यूं तो इन चारों उत्पादों की बिक्री मिंजर मेले के अलावा अन्य जगहों पर भी होती है लेकिन अलग-अलग जगह पर जाना पड़ता है। मिंजर मेला एक ऐसा मंच है, जहां चारों उत्पाद एक ही स्थान पर लोगों को आसानी से मिल जाते हैं।

चंबा चुख के दीवाने लोग

चंबा के चुख व जरीस लोगों की पहली पसंद बनी हुई है। चंबा चुख बनाने के लिए सूखी लाल मिर्च, गलगल का रस, जीरा, मीठी सौंफ, अजवाइन, नमक, अदरक, कद्दूकस की गई सूखी मूली का इस्तेमाल होता है। इस सामग्री को सरसों के तेल में पकाकर उसमें गलगल का रस मिलाया जाता है। रस के उबलने पर लाल मिर्च, मूली, अदरक, पिसी अजवाइन, पिसी हुई मीठी सौंफ, जीरा और नमक का मिश्रण डाला जाता है। ठंडा होने पर उसमें थोड़ा-सा गुड़ मिलाया जाता है।इसके साथ ही जरीस को तैयार करने के लिए कद्दूकस की हुई गरी, सौंफ बड़ी व छोटी इलायची के दाने व मिसरी लेकर सौंफ को हल्का भूना जाता है। उसके बाद शेष सामग्री इसमें मिला दी जाती है। इस प्रकार जरीस बनकर तैयार हो जाती है। जरीस खाने में बेहद स्वादिष्ट होती है।

चंबा रूमाल के साथ चंबा चप्पल भी मशहूर

चंबा रूमाल ने तो स्वयं को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया ही है। लेकिन इसके साथ-साथ चंबा चप्पल ने भी युवाओं के बीच खासी पहचान बनाई है। चंबा रूमाल की कीमज जहां सौ रुपये से एक लाख रुपये तक होती है और रूमाल की यह कीमत इसकी गुणवत्ता पर ही निर्भर करती है। जबकि चंबा चप्पल की कीमत 250 ये 1500 रुपये से बीच है। यह चप्पलें अब विभिन्न डिजायन में उपलब्ध हैं।

गिरिराज कार्यालय, शिमला

आलेख

पांगी घाटी
मेलों व त्योहारों में पुरातन संस्कृति की झलक

◆ रमेश जसरोटिया

घाटी में मनाए जाने वाले मेले व त्योहार कदाचित् पुस्तकों के सफेद पन्नों पर अंकित होकर रह जाएंगे, ऐसा आधुनिक परिवेश को अवलोकित करने के उपरान्त आभास होता है। पांगी घाटी में सारा साल त्योहरों व मेलों का सिलसिला चला रहता है, तथापि त्योहरों व मेलों का श्रीगणेश 'वार' से होता है तथा 'दखरेण' को को इनकी इतिश्री।

वार

वार (व्रत) त्योहार को घाटी के लोग दो रूपों में मानते हैं। इस व्रत का मुख्य उद्देश्य ज्वर की देवी मां शीतला को प्रसन्न करना होता है। दो रूपों में मनाने का आशय है घाटी के किलाड़ परगना के लोग सामुदायिक रूप में निश्चित स्थान पर एकत्रित होकर निर्धारित स्थल पर शीतला माता का पूजन करते हैं। किलाड़ परगना के लोग इस पर्व को पौष मास के प्रथम मंगलवार को मनाते हैं। इस दिन घर का मुखिया निराहार रहकर व्रत का संकल्प करता है। मनसा-वाचा-कर्मणा व्रत का अनुष्ठान किया जाता है। यह अनुष्ठान मुखिया अपने परिजनों को निरोग्यता के लिए करता है।

इस संकल्प के साथ घर का मुखिया प्रदोषकाल में स्नानोपरान्त माता शीतला के लिए मीठा भोग तैयार करता है। भोग तैयार करने के उपरान्त माता को भेंट स्वरूप बकरी अर्पित की जाती है। बकरी के सिर, पीठ और पूंछ पर फूल डाले जाते हैं तथा जल से अभिषेक किया जाता है। बकरी से घर के चारों कोनों की परिक्रमा करवाई जाती है। माता शीतला को मीठा भोग चढ़ाया जाता है। मुखिया अपने परिजनों के स्वास्थ्य लाभ की कामना करता है। पूजित बकरी को पुनः बाड़े में पहुंचाया जाता है। इस प्रकार रात्रिभोज के उपरान्त 'वार' सम्पन्न होता है।

किन्तु घाटी के दूसरे छोर यानी शौर से फिन्डरू क्रयूनी तथा सेचूघाटी में इस त्योहार को भिन्न रूप से मनाया जाता है। यहां के लोग निश्चित तिथि को एकत्रित होकर 'माओट' एक बैठक का आयोजन करते हैं। माओट में दो व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता है जो इस कार्य को निष्पन्न करते हैं। प्रजा द्वारा नामित व्यक्तियों को 'चाड़' कहते हैं। ये 'चाड़' बकरी को लेकर घर-घर जाते हैं। प्रत्येक घर में बकरी का पूजन किया जाता है तथा माता के निमित्त भोग दिया जाता है। भोग तथा बकरी को निर्धारित स्थल पर ले जाया जाता है, जहां माता शीतला का पूजन किया जाता है। देवता के पुजारी व कारदार माता से लोगों की नीरोग्यता की प्रार्थना करते हैं। बकरी की बलि दी जाती है तथा भोग बांटा जाता है। इस प्रकार यह त्योहार सम्पन्न होता है। इस त्योहार को यहां 'प्रोकड़ी' कहा जाता है। घाटी में वार तथा प्रोकड़ी में कोई विशेष अंतर नहीं है चूंकि दोनों त्योहारों का उद्देश्य एक है किन्तु विधान में पूर्णतः भिन्नता है। माता शीतला से नीरोग्यता की कामना करना सभी लोगों का मुख्य ध्येय होता है ताकि हिम के कारावास में जाने से पूर्व माता शीतला की स्तुति की जाए और मनुष्य के तन से रोग दूर रहें।

उटेण

उटेण या उतरेणे दोनों शब्द पंगवाली बोली में पर्यायवाची हैं। जहां समूचा राष्ट्र इस त्योहार को मकर संक्रान्ति के रूप में मनाता है वहीं पांगी घाटी के लोग इस पर्व को उटेण अथवा उतरेणे के रूप में मनाते हैं। जब घाटी हिम की सफेद चादर ओढ़े सुंदर श्वेत पंगवालन की भान्ति सुसज्जित होती है तो पंगवाल सदियों से चली आ रही अपनी परम्परा को निभाना नहीं भूलता। उसे परम्परागत ज्ञात है कि भगवान भास्कर सम्प्रति उत्तरायण की ओर प्रस्थान कर चुके हैं, अतः घरों को साफ-सुथरा करना है ताकि उत्तरायण को बड़े उत्साह व उमंग से मनाया जा सके। उतरेणे का त्योहार मनाने के लिए लोग एक दिन पूर्व अपने घरों में 'मण्डे' पकाते हैं। 'मण्डे' पांगवाल जनजाति का विशेष भोज्य पदार्थ है। उतरेणे की सुबह लोग ब्रह्ममुहूर्त में जागते हैं तथा अपने पितरों व देवताओं के लिए भांति-भांति के भोज्य-पदार्थ भोग के रूप में तैयार करते हैं। सर्वप्रथम घर में गणपति तथा नवग्रहों का पूजन किया जाता है। तदुपरान्त घर का मुखिया पितर पूजन करता है। पितरों को स्वच्छ जल व दूध चढ़ाया जाता है। अन्त में कन्या पूजन किया जाता है। दिन चढ़ने पर सभी लोग अपने कुल देवता के मंदिर में जाते है। वाद्य-यंत्रों के साथ लोग मंदिरों में पूजा-अर्जना करते है। उतरेणे का त्योहार यहीं संपन्न हो जाता है।

खौल और चजगी

संस्कृत भाषा के खेल धातु से घत्र् प्रत्ययान्त आदिवृद्धि होने

से 'खौल' शब्द की व्युत्पत्ति होती है। खौल का शाब्दिक अर्थ, धातु के अर्थ के समान, खेलता होता है। यह त्योहार उतरेणे के उपरांत माघ मास की पूर्णिमा को मनाया जाता है। इस त्योहार को मनाने के लिए लोग एक मास पूर्व जंगल से देवदार की सूखी लकड़ी एकत्रित करते हैं, जोकि आकार में लम्बी होती है। 'खौल' वाले दिन लोग घरों की साफ-सफाई करते हैं। शाम को घर का मुखिया स्नानोपरांत धूप-दीप जलाने के बाद देवदार की लकड़ी की लम्बी-लम्बी मशालें बनाता है। इस कार्य के लिए घर के अन्य सदस्य भी गृह प्रमुख की सहायता करते हैं। प्रदोषकाल में लोग देवस्थलों, चौराहों तथा पितरस्थलों पर जाकर हाथ में उठाई हुई मशालों को रखते हैं, वहां भोग चढ़ाते हैं तथा पूजा करते हैं।

चन्द्रोदय होने से पूर्व देवता के कारदार ढोल-नगाड़े बजाते हुए, मशालें कन्धे पर उठाकर देवालयों की ओर प्रस्थान करते हैं। मंदिरों में पहुंचने पर पुजारी तथा मंदिर के कारदार पारम्परिक विधि से पूजा करते हैं, चेले (गूर) कांपते हैं। तरह-तरह की भविष्यवाणी करते चेले ऐसे प्रतीत होते हैं मानो देवता स्वयं कह रहे हों कि इस त्योहार में क्या होना चाहिए था अथवा क्या कमी रह गई। लोक धारणा के अनुसार ये कांपते (हिंगरते) हुए चेले देवताओं की प्रसन्नता अथवा रोष को व्यक्त करने के माध्यम हैं। चेले द्वारा रह गई कमियों को इंगित करने पर उपस्थित जन उनके लिए क्षमा मांगते है।

तदुपरान्त घर से लाया गया प्रसाद बांटा जाता है। बजन्तरी ढोल बजाते हुए अपने-अपने घरों को वापिस चले जाते हैं। खौल का त्योहार शौर, पुर्थी, थान्दल, रेई आदि गांवों में दो दिनों तक मनाया जाता है। घाटी के शेष गांवों में यह एक ही दिन आयोजित होता है। उक्त गांव के लोग त्योहार के प्रथम दिन को 'मोटी' (बड़ी) खौल' तथा दूसरे दिन को 'मठड़ी (छोटी) खौल' के रूप में मनाते हैं। अगली प्रायः सूर्योदय होने पर गांव के पुरोहित द्वारा जनकल्याण हेतु यज्ञ किया जाता है। यज्ञ के लिए हवन सामग्री गांव के सभी लोगों द्वारा लाई जाती है, जिसे 'शाशो' कहते हैं। हवन के उपरान्त 'नागशान्ति' का स्थानीय विधान से पाठ किया जाता है। इस पाठ के बाद भेड़ की बलि दी जानी अनिवार्य है।। कुछ विद्वान इस परम्परा को वैदिक संस्कृति के विपरीत मानते हैं।

संध्याकालीन बेला में पुनः लकड़ी की मशालें बनाई जाती हैं। ये मशालें लागदारों (कारदारों) तथा खेलाऊं (खेलने वालों) द्वारा अलग-अलग बनाई जाती है। क्रीड़क अपनी मशालें हल्की बनाते हैं तथा कारदार देवस्तुति के लिए भारी मशालें तैयार करते हैं। 'खौल' रात को खेली जाती है, अतः चन्द्रोदय से पूर्व आरंभ करने की परंपरा है। चन्द्रोदय होने से पूर्व बजंतरी ढोल, बांसुरी आदि बजाकर ग्राम देवता के मंदिर में जाते हैं। निर्धारित स्थान पर मशालें जलाई जाती हैं, ढोल व बांसुरी आदि बजाकर ग्राम देवता के मंदिर में जाते हैं। निर्धारित स्थान पर मशालें जलाई जाती हैं, ढोल व बांसुरी के रागों से देवताओं का आह्वान किया जाता है। कारदार देवी-देवताओं का स्तुतिगान करते हैं तथा खेलाऊ (क्रीड़क) हाथ में मशालें लेकर खौल खेलते हैं। यह कार्यक्रम लगभग दो घंटे तक चलता है। अन्त में वाद्ययंत्रों के माध्यम से देव विसर्जन किया जाता है। इस विधान के संपन्न होने के उपरांत वहां उपस्थित सभी लोग आपस में गले मिलते हैं। तत्पश्चात् इस कामना के साथ विदा लेते हैं कि अगले वर्ष खुशी-खुशी खौल खेलने के लिए अधिक-से-अधिक युवक उपस्थित रहेंगे।

झाझीड़े या रेखी

यह त्योहार खौल के बाद ठीक छठे दिन मनाया जाता है किन्तु रेखी किलाड़ परगने का त्योहार है जिसे सिंहासनी माता के निमित्त मनाया जाता है। झाड़े-झीड़े त्योहार डाकिनी-शाकिनी, भूत-पिशाच को नियंत्रित करने का त्योहार है। इस दिन लोग घर की साफ-सफाई करने के बाद जंगल से कांटेदार झाड़ियां लाते हैं तथा सफेद पत्थर को पीसकर चूर्ण बनाया जाता है। सफेद पत्थर की बजरी भी बनाई जाती है।

शाम को भेड़-बकरियों तथा पशुधन की रक्षा के लिए लाल मिट्टी, सफेद पत्थर के चूर्ण को अर्घ बनाया जाता है। प्रदोषकाल से पहले दरवाजों, खिड़कियों तथा रोशनदानों पर कांटेदार झाड़ियां लगाई जाती हैं। तदुपरांत सफेद पत्थर के चूर्ण, जिसे स्थानीय बोली में छोक कहते हैं, से प्रत्येक दरवाजे-खिड़की-रोशनदान पर रेखाएं लगाई जाती हैं तथा बनाया हुआ अर्ध्य पशुओं के माथे और शरीर पर लगाया जाता है। लोक मान्यता के अनुसार यह इसलिए

जब घाटी हिम की सफेद चादर ओढ़े सुन्दर श्वेत पंगवालन की भान्ति सुसज्जित होती है तो पंगवाला सदियों से चली आ रही अपनी परम्परा को निभाना नहीं भूलता। उसे परम्परागत ज्ञात है कि भगवान भास्कर सम्प्रति उत्तरायण की ओर प्रस्थान कर चुके हैं, अतः घरों को साफ-सुथरा करना है ताकि उत्तरायण को बड़े उत्साह व उमंग से मनाया जा सके। उतरेणे का त्योहार मनाने के लिए लोग एक दिन पूर्व अपने घरों में 'मण्डे' पकाते हैं। 'मण्डे' पांगवाल जनजाति का विशेष भोज्य पदार्थ है। उतरेणे की सुबह लोग ब्रह्ममुहूर्त में जागते हैं तथा अपने पितरों व देवताओं के लिए भान्ति-भान्ति के भोज्य-पदार्थ भोग के रूप में तैयार करते हैं। सर्वप्रथम घर में गणपति तथा नवग्रहों का पूजन किया जाता है। तदुपरान्त घर का मुखिया पितर पूजन करता है। पितरों को स्वच्छ जल व दूध चढ़ाया जाता है। अन्त में कन्या पूजन किया जाता है।

लगाया जाता है ताकि डाकिनी, शाकिनी तथा भूत-प्रेत उनके पशुओं को किसी प्रकार की हानि न पहुंचा सकें। इस अवसर पर लोग कुल-देवता व ग्राम-देवता का घर पर पूजन भी करते है।

सामल

इस त्योहार को साच परगने में ही मनाने की परम्परा है। किंवन्दती के अनुसार साच गांव में सामल नामक कन्या थी जो देवत्य को प्राप्त हो चुकी थी। यहां के दैविक गणनाकार माता सामल की गणना कुल्लू की देवी मकड़सही से करते हैं। सामल माता की रथ-यात्रा कुल्लू जनपद के मकडसह से आरम्भ होती है जिसका अवसान साच गांव में होता है। पहले दिन मकड़सही माता सामल की यात्रा आरम्भ होती है। दूसरे दिन यह यात्रा शौर गांव से पीछे चोभू नामक स्थान पर गिनी जाती है। तीसरे दिन यह यात्रा चार प्रजाओं (शौर, पुर्थी, थान्दल, रेई गावों) में पहुंचती है जहां लोग अपने घरों में माता के स्वागत स्वरूप उनकी पूजा करते हैं।

सामल माता के लिए गेहूं और काले मटर को उबालकर उन्हें आपस में मिलाकर आहार तैयार किया जाता है। रात्रि को भ्रेस (अथवा भरेस) के आटे से माता की यात्रा उकेरी जाती है। माता को इस आहार का भोग लगाया जाता है। पूजनोपरांत ही घर के अन्य सदस्य भोजन ग्रहण करते हैं।

चौथे दिन माता की यात्रा की गणना साच गांव में की जाती है। यहां भी सामल मनाने का विधिविधान एक जैसा है। इस तरह सामल माता की यात्रा का अवसान साच में होता है।

कई लेखकों ने इस त्योहार के दौरान खिड़की से बाहर जलती लकड़ी फेंकने का वर्णन किया है जिसे स्थानीय लोग सर्वथा निराधार तथा कपोल-कल्पित मानते हैं।

जकारू अथवा जुकारू

जकारू का त्योहार समूची पांगी घाटी में एक जैसा मनाया जाता है। इस त्योहार को घाटी की शान और प्राण मानना अतिशयोक्ति नहीं होगा। इसी त्योहार पर घाटी की परम्परा कायम है। जुकारू को तीन चरणों में मनाया जाता है। कई दिन पहले से लोग इसकी तैयारियां शुरू कर देते हैं। घरों को सजाया जाता है। घर के अन्दर लिखावट के माध्यम से लोक शैली में अल्पनाएं रेखांकित की जाती हैं। पकवान विशेष 'मण्डे' पकाए जाते हैं तथा अन्य सामान्य पकवान भी बनाए जाते हैं। सिल्ह की शाम को घर के मुखिया द्वारा भरेस (भंगड़ी) और आटे के बकरे बनाए जाते हैं। बकरे बनाते समय कोई भी किसी से बातचीत नहीं करता है। पूजा की सामग्री को एक अलग कमरे में ही रखा जाता है।

रात्रिभोज के उपरांत गोबर की लिपाई जिसे चौका कहते हैं, की जाती है। गोमूत्र और गंगा जल छिड़का जाता है। गेहूं के आटे या जौ के सत्तुओं से मण्डप लिखा जाता है। इसे भी चौका कहा जाता है। मण्डप के ऊपर राजा बलि जिसे स्थानीय जन बलदानों कहते हैं, की आटे से बनी मूर्ति की स्थापना की जाती है। साथ ही आटे से बने बकरे, मेढ़े आदि मण्डप में तिनकों के सहारे रखे जाते हैं। मण्डप बनाने वाला राजा बलि की पूजा करता है, किन्तु घाटी के बहुत से घरों में यह परम्परा लुप्त होती जा रही है। सम्प्रति वही लोग इस परम्परा का निर्वाहन कर रहे हैं जिन्हें अपनी संस्कृति की जानकारी तथा उससे प्यार है। कुछ लोग घरों की भीतरी दीवारों में राजा बलदानों का चित्र चित्रित करके राजा बलि का पूजन करते हैं। एक दन्तकथा के अनुसार भगवान विष्णु के परमभक्त प्रह्लाद के प्रपौत्र राजा बलि ने अपने पराक्रम से तीनों लोकों को जीत लिया तो भगवान विष्णु को वामनावतार धारण करना पड़ा। राजा बलि ने वामनावतार भगवान विष्णु को तीनों लोकों को दान के रूप में दे दिया। बदले में भगवान विष्णु ने राजा बलि को इस भू-लोक में पूजे जाने का वरदान दिया परिणामतय आजतक घाटी के लोग राजा बलदानों को पूजते आ रहे हैं।

लोकमान्यता के अनुसार तीन दिन तक प्रत्येक घर का कोई भी सदस्य ऊंचे स्वर में बात नही कर सकता न ही लकड़ी काट सकता है। यह सब कुछ राजा बलदानों के सम्मान में किया जाता है।

दूसरा दिन पड़ीद का होता है। प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में उठ कर लोग स्नानादि से निवृत्त होकर राजा बलि के समक्ष नतमस्तक होते हैं। इसके पश्चात घर के छोटे सदस्य बड़ों की चरणवन्दना करते हैं तथा बड़े उन्हें आशीर्वाद देते हैं। राजा बलि के लिए पनघट से जल लाया जाता है। लोग जल देवता का पूजन करते हैं। घर का वातावरण बेहद सुखद होता है। घर का मुखिया इस दिन चूंर (बैल) की भी पूजा करता है क्योंकि चूंर उसके खेतों में जोताई करके अन्न की पैदावार में सहयोगी जो होता है।

अब सिलसिला शुरू होता है घर-घर जाकर शुभ-शगुण करने का। पंगवाल संस्कृति में बड़ों को अधिक अधिमान दिया जाता है। बड़े भाई के घर में जाकर छोटा भाई 'शुभ' कहता है और बड़ा भाई 'शगुण' कहकर अभिवादन स्वीकार करता है। दोनों गले मिलते हैं। छोटे हों या बड़े, बाल-बालाएं, वृद्ध-युवक एक दूसरे के गले मिलकर कहते है- 'तकड़ा थियां नः' अर्थात् कुशल मंगल हो। इस प्रकार सारा दिन यह कार्यक्रम चलता रहता है।

जुकारू का तीसरा दिन मांगल या पन्हेई के रूप में मनाया जाता है। पन्हेई किलाड़ परगने में मनाई जाती है जबकि साच परगने में इसे मांगल कहते हैं। पन्हेई और मांगल में कोई विशेष अन्तर नहीं है क्योंकि मात्र संज्ञात्मक शब्द की भिन्नता है। मनाने का उद्देश्य एवं विधि एक जैसी है, फर्क इतना है कि साच परगने में मांगल द्वितीया तिथि को मनाई जाती है जबकि किलाड़ में पन्हेई तृतीया तिथि के उपरान्त मनाने का विधान है।

मांगल के दिन लोग भूमिपूजन के लिए निर्धारित स्थान पर

इकट्ठे होते हैं। आज के दिन प्रत्येक घर से सत्तु, घी, शहद, मण्डे, आटे के बकरे तथा देसी जौ का सोमरस (शराब) लाया जाता है। अपने-अपने घरों से लाई गई भोजन सामग्री को आपस में बांटा जाता है। मदिरापान करने से पूर्व पृथ्वी पूजन किया जाता है। अगला कार्यक्रम नाचगान का होता है। पारम्परिक लोक धुनों पर थिरकती बालाएं, ढोल के थाप, नृत्य करते लोक दैवीय अनुभूति का एहसास कराते हैं। चारों को हिम का धवल प्रकाश एक मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता है। नाच-गान के उपरान्त धरती मां से प्रार्थना की जाती है।

चड़ी-चखरू गडियां पार, फूल-भेस गडियां वार।
ऋण-भिये भू गडियां पार, कणक-कुकड़ी गडियां वार।।

अर्थात् हमारी फसलों को नष्ट करने वाले जीव-जन्तु नदी के उस पार रहें तथा हम निर्भय होकर फसल उगाएं। हे धरती मां। हमें फसलों से भरपूर कर दो। समारोह की समाप्ति के उपरांत सभी लोग अपने-अपने घरों को वापिस आते हैं तो दरवाजे पर पहुंचने पर उन्हें दरवाजा बन्द मिलता है। दरवाजा खटखटाया जाता है। अन्दर से आवाज आती है, तुम कौन हो मैं मांगलू हूं। क्या लाए हो। धन और अन्न और क्या लाए हो, सुख-समृद्धि। दरवाजा खोल दिया जाता है।

अब राजा बलि को विदा करने का समय आ जाता है। राजा बलदानों की पूजा की जाती है। इसके उपरांत आटे की बनी राजा बलि की प्रतिमा को विसर्जित कर दिया जाता है। जुकारू यहीं समाप्त नहीं होता। यह सिलसिला निरन्तर बारह दिनों तक चला रहता है।

पन्हेई या मांगल द्वितीया तिथि से पंचमी तिथि तक मनाई जाती है। यदि किसी व्यक्ति के घर कोई सन्तान पैदा हुई हो तो विषम महीनों या वर्षों में इस दिन प्रीतिभोज का आयोजन करता है, जिसे 'शिख वधेई' का पर्याय माना जाता है। शिख वधेई मुण्डन संस्कार को कहते हैं। पन्हेई या मांगल के दिन सन्तानोत्पत्ति की खुशी में गांव के लोगों को प्रीतिभोज दिया जाता है।

पांगी घाटी में अब मेले का सिलसिला शुरू होता है। जहां घाटी एक छोर में इन मेलों को चियालु, चौआलु, पंजालु, छेयालु, उठालु, नवालु, दशालु, ग्यारहालु तथा बारहालु की संज्ञा दी जाती है, वहीं दूसरे छोर पर किलाड़ परगने में नागेयाण, राजेयाण, टजेयाण, स्वांग, भरेरथ आदि से इन मेलों को पुकारा जाता है।

चियालु

इस मेले का आयोजन जुकारू के बाद तीसरे दिन किया जाता है। यह मेला कुठल, मिन्धल आदि गांवों में मनाया जाता है। ग्राम देवता के नाम से इस मेले का आयोजन स्थानीय लोगों द्वारा ही पारम्परिक निर्धारित स्थल पर किया जाता है। मेले में ग्राम देवता के पुजारी, ठाठड़ी, स्वार, बटवाड़ आदि कारदार भाग लेते हैं। इस तरह पंजालु, छयालु को गांव साच, घिसल व चस्क में मनाया जाता है।

सतालु शौर, पुर्थी, चस्क गांवों में पारम्परिक ढंग से मनाया जाता है, अठालु शौर गांव के वामुवा नाग का मेला है। गांव शौर में सतालु से ग्यारहालु तक निरन्तर पांच दिन पांच देवी-देवताओं के मेले लगते हैं। नवालु, दशालु, ग्यारहालु जैसे मेले थान्दल, रेई, हिलौर, कुमार आदि गावों में अपने कुल देवता के निमित्त मनाए जाते हैं। बारहालु या 'मे' पुर्थी गांव का सुप्रसिद्ध मेला है। इस दिन शौर, रेई, थान्दल, पुर्थी, अजोग व छो गांवों के लोग एकत्रित होकर माता मलासनी के दरबार में मेले का आयोजन करते हैं। इस मेले का आयोजन मलासनी माता के पुजारी के मकान के भीतर के सबसे ऊपरी हिस्से जिसे छत कहते हैं, पर किया जाता है।

मेले में सर्वप्रथम पुर्थी गांव के लोग माता के मन्दिर में जा कर पूजा-अर्जना करते हैं तथा माता के वाहन 'कुकड़ी' को सजाया जाता है। इस कुकड़ी के विषय में एक दन्तकथा प्रसिद्ध है जिसका वर्णन आगे किया जाएगा। बजन्त्री ढोल, बांसुरी आदि बजाकर मेले का आगाज करते हैं और तदुपरान्त शौर गांव से लोग देव-कारदारों के साथ रथयात्रा शुरू करते हैं। लगभग दो घण्टे की पैदल यात्रा के उपरान्त आयोजन-स्थल पर पहुंचते हैं। पुर्थी गांव के लोग वाद्ययन्त्र बजाते हुए संकेत देते हैं-हम आप का हार्दिक स्वागत करते हैं। लोग गले-मिलते हैं। फूल बांटते हैं। अब रेई गांव की पैदल यात्रा पुर्थी पहुंचती है। उनका स्थानीय लोगों द्वारा सेवा-सत्कार किया जाता है। देवी के कारदार जिनमें बटवाड़, ठाठड़ी, स्वार, पंडित आदि प्रमुख होते हैं मंदिर में जाकर माता की 'कुकड़ी' का रथ लेकर आते हैं। अब शुरू होता है माता का स्तुतिगान। माता की कुकड़ी को ठाठड़ी अपने सिर पर रखकर नौ चक्र लगाकर नृत्य करवाता है।

यहां चेलों का अनुमान होता है कि यदि 'कुकड़ी' का स्वरूप भव्य है तो अन्न-धन की कमी नहीं होगी। यदि माता ने कुरूपता प्रकट की तो धन-जन-अन्न की हानि होगी। सारा दिन शैण नृत्य, पारम्परिक नृत्य, चेली नृत्य आदि किये जाते हैं। पारम्परिक वेशभूषा से सुसज्जित जनसमूह को देखकर लगता है मानो धवलवसन ओढे गन्धर्व कोई अलौकिक नृत्य कर रहे हों।

सांझ होते ही रथ को वापिस मंदिर में पहुंचाया जाता है। इस के उपरांत पंगवाल औरतें घुरेई नृत्य शुरू करती हैं। वातावरण बेहतद खुशनुमा होता है। घुरेई को देखकर हर कोई अनायास चाहता है ढोल की थाप पर थिरकना और ऐसा होता भी है। नृत्य के उपरांत समापन होता है वर्ष के इस जुकारू पर्व का।

घाटी के दूसरे छोर पर किलाड़, करयूनी व धरवास में उयाण मनाए जाते हैं। जहां साच चाड़ी में नवालु आदि मेले आयोजित किये जाते हैं वहीं किलाड़ चाड़ी में उयाण मनाए जाते हैं। जुकारू के बाद दसवें दिन उयाण मनाए जाने की परम्परा है।

उयाण

कुफा, कवास आदि छोटे-छोटे गांवों में भी उयाण मनाए जाते हैं, किन्तु किलाड़ पंचायत में सर्वप्रथम 'नागे उयाण' मनाई जाती है। प्रातः काल उठकर लोग मेले के लिए तैयार होते हैं। नाग देवता के समस्त कारदार मंदिर में पहुंचकर पूजा अर्जना करते हैं। मंदिर से देव-रथ चौकी नामक स्थान पर लाया जाता है और मेले का आयोजन किया जाता है। मेले का मुख्य आकर्षण शैण नृत्य होता है।

अगले दिन 'राजेयाण' होती है। इस मेले को चम्बा नरेश के प्रति श्रद्धा के उपलक्ष्य में मनाया जाता है। कुछ वर्ष पूर्व वन विभाग वन विभाग का अधिकारी राजा का प्रतिनिधित्व करता था किन्तु सम्प्रति यह परम्परा समाप्त हो चुकी है। तीसरे दिन 'टजेयाण' मनाई जाती है। 'टज' शब्द प्रजा के लिए प्रयुक्त किया जाता है। यह मेला प्रजा की मंगल कामना व समृद्धि का प्रतीक है। चौथे दिन 'भरारिथ' मेला होता है। लोगों का कथन है कि यह मेला माता भराड़ी को समर्पित है। इस दिन मेले का मुख्य आकर्षण स्वांग होता है।

नाग देवता के कारदार को स्वांग बनाया जाता है। लम्बी दाढ़ी, मुंह पर मुखौटा पहने, सिर पर लम्बी-लम्बी जटाएं, हाथ में कटार लिए, स्वांग को मेले में लाया जाता है। स्वांग के साथ उसकी वृद्ध माता, गद्दी-गद्दन के वेश में पुरूष जब मेले में पहुंचते हैं तो इन्हें देखने लोगों का हजूम उमड़ जाता है। सभी लोग स्वांग के गले मिलना चाहते हैं। परम्परा के अनुसार यदि कोई दुःखी व्यक्ति स्वांग के गले मिलता है तो उसके दुःख समाप्त हो जाते हैं। दिनभर नृत्य करने के बाद स्वांग को वापिस उसके घर पहुंचाया जाता है। यह एक नाटकीय प्रक्रम है। आज के दिन किलाड़ चाड़ी में जुकारू उत्सव के सम्पन्न होते हैं।

पारवाच्च

पारवाच्च पुर्थी की माता मलासनी के उपलक्ष्य में मनाया जाने वाला मेला है। यह मेला हर वर्ष आश्विन मास की नवमी तिथि को पुर्थी गांव में माता के मंदिर के सामने मनाया जाता है। इस मेले का सम्बन्ध मणिमहेश व तीसा में मसरे के साथ जोड़ा जाता है। लोग खेतीबाड़ी का लगभग 75 प्रतिशत कार्य पूर्ण कर चुके होते हैं। मेले से पूर्व घरों की लिपाई-पुताई की जाती है। इस मेले के दिन माता मलासनी के दरबार में दिन भर पूजा अर्जना की जाती है। घाटी के सुदूर गांवों से लोग पधारते हैं। माता को भेड़-बकरों की बलि दी जाती है। रात को 'कुण्ड' नामक स्थान पर आग जलाई जाती है। माता के पुजारी तथा कारदार पारम्परिक वेशभूषा में ऊंचे स्थान पर आरूढ़ होते हैं।

गांव शौर तथा रेई के लोग रथ यात्रा लेकर हाथ में ऐश की लम्बी टहनियां लिए अग्निकुण्ड के इर्द-गिर्द परिक्रमा करते हैं। टहनियों को सुपुर्दे-खाक किया जाता है। इसके उपरांत शुरू होता है लोक नृत्य ढोल नगाड़ों की थाप पर थिरकता पंगवाल अपने आपको सबसे सौभाग्यशाली मनाता है इस अवसर पर। काल और रात्रि की मिलन-वेला के करीब माता का कारदार (ठाठड़ी) कायल पेड़ की चोटी लाने के लिए जंगल की ओर प्रस्थान करता है। लोक विश्वास के अनुसार माता की अदृश्य शक्ति अपने भक्त के साथ होती है। रात के अन्धेरे में कायल के पेड़ पर चढ़कर चोटी काटना कोई सुगम कार्य नहीं है। फिर भी ठाठड़ी चोटी काटकर आयोजन स्थल पर पहुंचता है। चोटी को चारों ओर नचाया जाता है और अन्त में उसे अग्नि में फेंक दिया जाता है। लोग चोटी के पुष्प तोड़ना चाहते हैं। मान्यता है कि यदि कोई व्यक्ति इस चोटी के पुष्प तोड़कर पुजारी के पास ले जाता है तो उसकी मनोकामना पूर्ण हो जाती है।

इसी प्रकार पारवाच्च वाद्ययन्त्रों की धुन पर समाप्त हो जाती है। पूर्व में प्रजा इस मेले में खूब बढ़चढ़ कर भाग लेती थी। सभी प्रजाएं अपने-अपने ग्राम देवता के रथ इस मेले में लाती थीं किन्तु सम्प्रति मात्र करयास, कुफा, क्वासादि गांव के लोग रथ यात्रा लेकर आते हैं। कुछ वर्ष पहले तक हुडान की प्रजा भी इस मेले में भाग लेती रही किन्तु अब उन्होंने भी आना छोड़ दिया है।

किलाड़, करयास, कुफा, क्वास, करेल, पुन्टो गांव के लोग फुलाटूण नाम स्थान पर अपने-अपने वाद्ययन्त्रों के साथ एकत्रित होते हैं। करयास माता की शोभा यात्रा दर्शनीय होती है। हाथों में पेड़ों की टहनियां लिए जयकारों का घोष उपस्थित जनों की समस्त वेदनाओं को दूर कर देता है। यात्रा कुफा गांव से होकर फलाटूण नाम स्थान पर पहुंचती है।

सभी प्रजाओं के मिलन पर चेले आ ओझा कांपना शुरू करते हैं। मेले में कारदार पंक्तिबद्ध होकर चारों दिशाओं में फूल

नाग देवता के कारदार को स्वांग बनाया जाता है। लम्बी दाढ़ी, मुंह पर मुखौटा पहने, सिर पर लम्बी-लम्बी जटाएं, हाथ में कटार लिए, स्वांग को मेले में लाया जाता है। सवांग के साथ उसकी वृद्ध माता, गद्दी-गद्दन के वेश में पुरुष जब मेले में पहुंचते हैं तो इन्हें देखने लोगों का हजूम उमड़ जाता है। सभी लोग स्वांग के गले मिलना चाहते हैं। परम्परा के अनुसार यदि कोई दुःखी व्यक्ति स्वांग के गले मिलता है तो उसके दुःख समाप्त हो जाते हैं। दिनभर नृत्य करने के बाद स्वांग को वापिस उसके घर पहुंचाया जाता है। यह एक नाटकीय प्रक्रम है। आज के दिन किलाड़ चाड़ी में जुकारू उत्सव के सम्पन्न होते हैं।

फेंकते हैं। प्रत्येक चेले के पास फूलों की मंजरी होती है जिसे जल में विसर्जित किया जाता है। तदुपरान्त 'शेण' नृत्य आरम्भ होता है। चेले देवता के प्रतिनिधि होते हैं। कांपने पर देवता का संदेश लोगों तक पहुंचाते हैं। शेण नृत्य के बाद 'शल कुकड़ी' को नचाया जाता है। राक्षस के बच्चों को दिखाया जाता है कि अभी भी उनकी धरोहर लोगों के पास है।

सांझ होने तक वाद्ययन्त्रों की धुन पर नाच चलता रहता है। अन्त में रथयात्रा को देवस्थलों की ओर ले जाया जाता है। अगले दिन चौकी नामक स्थान पर दशे फुल्याट मनाई जाती है। 'ग्यारेह् फुल्याट' का आयोजन भी उक्त स्थान पर किया जाता है।

फुलयात्रा

घाटी के लोग जब कृषि कार्य में निवत्त हो जाते हैं तो यह जाना जा सकता है कि फुलयात्रा आने वाली है। शरदऋतु का आरम्भ हो रहा होता है। पंगवाला अपनी फसलों का भण्डारण अगले छः मास के लिए कर चुका होता है। फुलयात्रा या फुल्याट पांगी घाटी के मुख्यालय किलाड़ के कुफा गांव से ऊपर तथा क्वास गांव से नीचे फुल्याटूण नामक स्थान पर अक्सर अक्तूबर महीने की चौदह तारीख को मनाई जाती है।

इस मेले का आयोजन कब हुआ कहना या समय निर्धारण करना कठिन है किन्तु लोकमान्यता के अनुसार किलाड़ पंचायत के महालियत गांव में महाला मल्हा मल्हण नाम राणा राज करता था। वह बहुत पराक्रमी था। उस समय घाटी में राक्षसों का बोल-बाला था। राक्षस के बच्चे राणा की फसलें उजाड़ देते थे। एक दिन राणा ने राक्षस के बच्चों को उनके खिलौनों के साथ पकड़ लिया। अगले दिन जब राक्षस और राक्षसी अपने बच्चों को मुक्त करवाने आये तो राणा ने उन्हें तो मुक्त कर दिया किन्तु राक्षस दम्पती को कैद कर लिया। कैद राक्षस दम्पती को अपने कोठे के दो खंभों के साथ बांध दिया गया। उन्होंने जब-जब राणा से अपनी मुक्ति की प्रार्थना की तो राणा ने कहा-जिस दिन मेरे घर शुभ धुन बजेगी उस दिन मैं तुम्हें आज़ाद कर दूंगा और नौ गांवों की प्रजा को निमन्त्रित करूंगा तथा तुम्हारे बच्चों का खिलौना 'शल कुकड़ी' उस मेले में दिखाऊंगा। प्रभु इच्छा कहें अथवा राक्षस-दम्पती की प्रार्थना, राणा के घर शुभ घड़ी आ ही गई। प्रजा ने प्रसन्नतावश वाद्ययन्त्रों पर मंगल धुनें बजाईं। राणा महाल ने भी अपना वचन निभाया। राक्षस दम्पती को कैद मुक्त किया और क्षेत्र की नौ प्रजाओं को आमन्त्रित कर शल कुकड़ी उत्सव का आयोजन किया। इसी दिन सुराल, धरवास, करयास, हुडान, क्रयूनी, किलाड़ तथा साच आदि गांवों में नाग देवता के मंदिर में पूजा अर्जना की जाती है। पहले यहां भैंसे की बलि की प्रथा थी। सम्प्रति मेढ़े की बलि दिए जाने की प्रथा चलती रही। इसे अब न्यायालय के आदेशों के उपरांत बंद कर दिया गया है। इस प्रकार फुलयात्रा चार दिवसीय मेला है। चौथे दिन क्षेत्रवासी शिशिर व हेमन्त ऋतु के स्वागत की तैयारियां करना शुरू कर देते हैं।

साच परगने में मेलों का शुभारम्भ भाद्रपद के शुक्त पक्ष की सप्तमी को पारवाच्य मेले से होता है। इस मेले को माता मलासनी के उपलक्ष्य में मनाया जाता है जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है।

क्षेत्र में आयोजित होने वाले अन्य मेले

थरोट (थरोठ) मेला

थरोट मेला पुर्थी गांव से उत्तर की ओर स्थित थान्दल गांव की माता चामुण्डा से संबंधित है। मेले का आयोजन मंदिर परिसर में ही किया जाता है। 'पारवाच्य' मेले के अगले दिन पुर्थी गांव से माता मलासनी का रथ थान्दल पहुंचता है। माता मनेह्नागिनी का पुजारी, माता का रथ लेकर चामुण्डा माता के मंदिर-परिसर में गाजे-बाजे के साथ पहुंचता है। माता के कारदार व बजन्त्री मंदिर में माता की अराधना व स्तुतिगान आरम्भ करते हैं। लगभग दो घण्टे की स्तुतियों के उपरान्त माता के चेले कांपना शुरू करते हैं और देवी के संदेश को लोगों तक पहुंचाते हैं।

जनमानस हाथ जोड़ कर चेले से कहते हैं 'बोल दें माता... ....'अर्थात् हे मां। तुम्हारा आदेश शिरोधार्य है। हमें क्षमा कीजिए। दिनभर समूह नृत्य किया जाता है। सांझ होने पर देवी-देवाताओं के रथ अपने-अपने स्थानों की ओर वाद्य-यन्त्रों की धुनों पर प्रस्थान करते हैं।

साच जातर

पुर्थी मेले के अगले दिन भाद्रपद की शुक्लाष्टमी को साच गांव में एक दिवसीय मेले का आयोजन किया जाता है। इस मेले को जगेसर नाग तथा प्रोड़नाग के उपलक्ष्य में मनाया जाता है। देव कारदार जगेसर नाग व प्रोड़नाग की पूजा अर्जना करने के उपरान्त महूनाग की भी पूजा करते है। देव-कारदार तथा जन-साधारण फूल तथा वृक्षों की टहलियां तोड़कर महूनाग का रथ लेकर जगेसर नाग तथा प्रोड़नाग के मंदिर में पहुंचते हैं। महूनाग के रथ को लाते समय लोग नाचते हुए सीटियां बजाते हैं ताकि दुरात्माएं किसी प्रकार का विघ्न न पैदा कर पांए।

तत्पश्चात् तीनों नागों का मिलन होता है। लोगों द्वारा पारम्परिक नृत्य किया जाता है। शाम ढलने पर पूजा करने के बाद लोग अपने-अपने घरों को चले जाते हैं।

कुठलयाच्च (कुठल जातर)

साच गांव से पूर्व की ओर लगभग दो कि.मी. की दूरी पर स्थित कुठल एक सुन्दर गांव है। साच जातर के सम्पन्न होने पर मेलों की इस श्रृंखला में भाद्रपद की शुक्ल नवमी को कुठल जातर होती है। इस मास गांव के लोग फसल काटकर मेले की तैयारी में लग जाते हैं। स्थानीय कुलदेवता जरद्यू के उपलक्ष्य में मनाया जाने वाला यह मेला आपसी भाई-चारे का प्रतीक है। चूंकि लोग अब तक अपनी खेती-बाड़ी का अधिकतर काम निष्पन्न कर चुके

होते हैं अतः फुर्सत का काफी समय होता है। घरों को सजाया जाता है। प्रातः काल उठकर देवता के निमित्त भोग तैयार किया जाता है। मंदिर में पूजा करने के बाद पारम्परिक लोकनृत्य किया जाता है। यह सिलसिला दिन भर चला रहता है। संध्या होने पर पूजा अर्चना के बाद लोग नाचते-गाते, मंगल कामना करते अपने-अपने घरों को रवाना हो जाते हैं। घर पहुंचने पर धूप-दीप जलाये जाते हैं और देव-प्रार्थना की जाती है।

घिसलयाच्च

कुठल गांव से ऊपर कुछ ही दूरी पर घिसल गाांव स्थित है। भाद्रपद की शुक्ल दशमी को यहां घिसल जातर मनाने की परम्परा है। गांव के कुलदेवता नागदेवता के उपलक्ष्य में मनाया जाने वाला मेला नाग मंदिर परिसर में ही आयोजित किया जाता है। लोकाचारानुसार इस मेले में पूजा-अर्जना के उपरान्त चेले कांपते हैं, देव सन्देश सुनाते हैं। समूह नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। शाम होने से पहले मेला समाप्त कर दिया जाता है। क्योंकि रात को हिलौर गांव में हिलरयाच्च मेला आयोजित होना होता है।

हिलरयाच्च

घिसल गांव से लगभग चार कि.मी. पूर्व की ओर बसा हिलौर गांव माता मालदेई का थान (स्थान) माना जाता है। माता मालदेई का सुप्रसिद्ध मंदिर गांव के अंतिम छोर पर प्रतिष्ठापित है। इस मेले को भाद्रपद की शुक्ला एकादशी को मनाने की परम्परा है। ढोल-नगाड़े, रणसिंघों की धुनों पर मेले का आगाज होता है। पूजा-अर्जना के बाद मंदिर परिसर में आग जलाई जाती है। आग के चारों ओर रातभर नृत्य किया जाता है। चेले कांपते हैं। देव वाणियां होती हैं। समूह नृत्य किया जाता है। अर्ध रात्रि को मेला सम्पन्न हो जाता है।

उनजा

हिलौर गांव के लगभग पौना कि.मी. की दूरी पर स्थित होल गांव में शुक्ल द्वादशी को उनजा मेला लगता है। इस मेले को माता ज्वालाजी के निमित्त में मनाया जाता है। जनश्रुति के अनुसार होल गांव में एक किसान के घर में रोशनदान के पास दिन-रात दिव्य प्रकाश चमकने लगा। उस व्यक्ति ने सोचा यह अलौकिक प्रकाश तो पूजने योग्य है। वह दिन रात उसकी पूजा करने लगा। एक रात को उसे स्वप्न में माता ने अपना परिचय दिया-मैं तुम्हारे घर के पश्चिम कोने में शिला-रूप में प्रकट हुई हूं। मेरे स्थान की स्वच्छता बनाए रखना तथा विधिपूर्वक पूजा अर्चना करते रहना। उस व्यक्ति ने सोचा संभवतः यह उसका मति भ्रम है। प्रातः होने पर जब उसके घर के पश्चिम कोने में देखा तो सचमुच एक शिलाखण्ड दीवार के अन्दर से काफी बाहर तक निकल चुका था। उस व्यक्ति ने भोग (नैवेद्य) तैयार करने के बाद पूजा -अर्जना की। भक्त की उपासना से माता प्रसन्न हुई। घर में अन्न तथा पशुधन की कोई कमी नहीं रही। कहते हैं कि एक दिन रजस्वला स्त्री पूजा स्थल से होकर गुज़री। माता के क्रोध की सीमा नहीं रही। माता ज्वाला ने अपने भक्त से स्वप्न में कहा-तुमने मेरे कथनानुसार इस स्थान की पवित्रता बनाए रखने पर ध्यान नहीं दिया जिससे मेरा इस घर में अपमान हुआ है। अतः मै यहां नहीं रह सकती और मैं तुम्हें शाप देती हूं। तुम्हारा घर भीषण अग्नि काण्ड में भस्म हो जाएगा। माता के शाप का प्रभाव सप्ताह के भीतर ही दृष्टिगोचर हुआ। होल गांव का यह घर जलकर राख में परिवर्तित हो गया। उसके बाद लोगों ने माता के लिए 'उनजे' मेले का आयोजन किया। उनजा मेला गांव होल तथा हिलौर के लोगों द्वारा संयुक्त रूप से मनाया जाता है। दिन भर मंदिर में पूजा अर्चना की जाती है। लोकनृत्य किया जाता है सूर्यास्त से पूर्व मेला समाप्त हो जाता है।

पिन्नयाच्च (चस्क जातर)

यह मेला चस्क गांव में भाद्रपद की शुक्ल त्रयेदशी व चतुर्दशी को दो दिनों तक मनाया जाता है। मेले का आयोजन 'बेहियाला' नामक स्थान पर किया जाता है। स्थानीय बोली में इस मेले को मठड़ी (छोटी) मोटी (बड़ी) पिन्नयाच्च कहते हैं। यह मेला माता मृकुला को समर्पित है। फसल कटाई आदि कार्यों से निवृत्त होकर इस मेले को मनाए जाने की परम्परा है। घरों को एक सप्ताह पूर्व सामर्थ्यानुसार सजाया जाता है। मेले में चस्क भटोरी तथा मूर्च गांव के लोग पारम्परिक परिधनों से सुसज्जित होकर मठड़ी व मोटी पिन्नयाच्च में प्रतिभाग लेते हैं। सभी लोग प्रातः होने पर माता के लिए भोग तेयार करते हैं। घर में घी के दीपक जलाकर मेले को चले जाते हैं। मेले के दिनों दिनों में शेण नृत्य व लोकनृत्य किया जाता है। शाम के समय लोग 'सोपरी' गीतों से समूचे वातावरण को मन्त्रमुग्ध कर देते है। 'सोपरी' ऐसे गीत हैं जो व्यंग्य भाषा में अन्य दल से बहुत कुछ कह डालते हैं। दूसरा दल भी इसी शैली में उत्तर देता है। यह आदान प्रदान काफी देर तक चलता रहता है। इसी प्रकार पिन्नयाच्च मेला निष्पन्न होता है।

शूणयाच्च (चौहाटी जातर)

शूणयाच्च गांव शूण में भाद्रपद की शुक्ल चतुर्दशी पूर्णमा को मनाई जाती है। इस मेले को माता श्वालदेई तथा देवी चौहाटी के निमित्त मनाया जाता है। मेले को लेऊगांव के जाचूण नामक स्थान पर मनाया जाता है। मेले के दिन माता श्वालदेई तथा चौहाटी देवी की संयुक्त रूप से पूजा-अर्चना की जाती है। उदीण तथा सेचू गांव के लोग पारम्परिक वाद्ययंत्रों के साथ देव-रथ लेकर शूण गांव में पहुंचते हैं। शूण गांव की प्रजा भी अपने-अपने रथ लेकर जाचूण पहुंचते हैं।

देवी-देवताओं के कारदार वाद्ययंत्रों की धुनों पर अपने इष्ट देवों को पुष्प अर्पित करते हैं। इस मेले में भी शेणनृत्य तथा लोकनृत्य होता है। चेले कांपते हैं। देव संदेश सुनाते है। देव संदेश

को सुनकर लोग प्रफुल्लित होते हैं। सांझ होने पर देवी-देवताओं के रथ अपने-अपने देवस्थलों की ओर रवाना हो जाते हैं। इस प्रकार शूण जातर संपन्न होती है। इस जातर तथा माता श्वालदेई के विषय में एक दन्तकथा प्रचलित है।

माता श्वालदेई को हिलौर की माता मालदेई की बहन माना जाता है। माता श्वालदेई का मूल स्थान नागणू धार में एक गुफा के अंदर है तथा पूजा स्थल हेल्यार नामक स्थान पर है। यहां मंदिर खंडहर के रूप में परिवर्तित होकर आज भी विद्यमान है। ये खंडहर अपनी कहानी आप सुनाते हैं। कहते हैं कि पुराने समय जब माता के मंदिर का निर्माण हो रहा था तो एक रात माता ने पुजारी को स्वप्न में बताया कि मंदिर का निर्माण कार्य पूर्ण होने पर वहां नरबलि दी जाए। देवी के आदेश को जब पुजारी ने सुना तो वह हतप्रभ रह गया। उसने अपने स्वप्न की यह घटना स्थानीय लोगों को सुनायी। लोगों ने नरबलि देना उचित नहीं समझा तथा मंदिर निर्माण कार्य अधूरा ही छोड़ दिया। मंदिर की छत पड़नी शेष थी। मां की प्रतिमा को छतविहीन खुले में छोड़ दिया गया। दंतकथा के अनुसार इस पर माता ने अपनी दैवीय शक्ति का परिचय देते हुए वहां देवदार का एक विशाल वृक्ष उत्पन्न कर दिया। आज जहां ये खंडहर है वहां देवदार का वह विशाल पेड़ आज भी विद्यमान है। लोग इसे माता की छतरी कहते हैं। चूंकि शूण गांव में दूर-दूर तक कहीं भी देवदार के पेड़ नहीं हैं अतः इस वृक्ष को माता का प्रत्यक्ष चमत्कार माना जाता है। इस दंतकथा को स्थानीय लोग अपने पूर्वजों से सुनते आ रहे हैं। जिसे अपनी भावी पीढ़ी के लिए इन्होंने अपने मानस पटल पर संजोए रखा है।

शेरज्याट (शेरजाट) पुन्टो

किलाड़ गांव से पश्चिम की ओर पुन्टो गांव चन्द्रभागा के उस पार स्थित है। शेरजाट मेले का आयोजन भाद्रपद के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को किया जाता है। स्थानीय लोग कुलदेवता के मंदिर में एकत्रित होकर उनकी पूजा-अर्जना करते हैं। आस-पास के गावों के लोग आज के दिन नागदेवता को विशेष रूप से देसी घी अर्पित करते हैं। लोक विश्वास है कि नाग देवता को घी चढ़ाने से उनके घर में दूध-घी आदि की कमी नहीं रहेगी। पूजा-अर्जना तथा सम्बधिंत क्रियाएं दोपहर तक समाप्त हो जाती है क्योंकि लोगों को रात्रि के लिए माता मिन्धवासिनी के दरबार में जाकर मिनलयाच्च में भाग लेना होता है।

मिनलयाच्च

आदि शक्ति जगदम्बा मां भवानी कालिका के मूल स्थान मिन्धल भटवास गांव में भाद्रपद के कृष्ण पक्ष के प्रथम प्रविष्टे को मिनलयाच्च मेला लगता है। इस मेले का आयोजन मंदिर परिसर में रात को किया जाता है। इस मेले में न केवल मिन्धल गांव के लोग भाग लेते हैं अपितु समूची पांगी घाटी तथा घाटी से लगते जम्मू राज्य के पाडर क्षेत्र के लोग भी भाग लेने के लिए नंगे पांव आते हैं। मेले के दिन मंदिर में दिन भर माता की पूजा-अर्जना की जाती है। यह मेला पारवच्च मेले की तरह मनाया जाता है। शाम होने पर मेले में दो रथों का आगमन होता है जिसे हाकम का रथ तथा रगोली का रथ कहते हैं। माता का कारदार एक बहुत बड़ी मशाल मंदिर के मध्य कुण्ड में लाता है। जिसे 'दलपोटी' कहते हैं।

कुलाल तथा फिण्डपार के लोग आयोजित होने वाले जगराते, जिसे अगचण्डू कहते हैं, के लिए लकड़ी लाते हैं। जगणी तथा लकड़ी के प्रकाश में यह मेला मनाया जाता है। लोगों द्वारा शेण नृत्य तथा लोकनृत्य किया जाता है। देर रात को माता का कारदार (ठाठड़ी) पींठ (चील या कायल के पेड़ की चोटी) लाने के लिए जंगल में चला जाता है। मां की शक्ति से कारदार पींठ ले आता है। इस पींठ को कुण्ड में जली आग के चारों ओर नचाया जाता है और बाद में इसे अग्निकुण्ड में फैंक दिया जाता है।

लोग पींठ की चोटी तोड़ने की जदोजहद करते हैं क्योंकि इसे बहुत शुभ माना जाता है। मान्यता है कि जो व्यक्ति कायल की इस चोटी को तोड़ता है उसकी हरेक मनोकामना पूर्ण होती है। मेले में बारी-बारी से एक वर्ष पींठ तथा एक वर्ष गड्वा लाने की परम्परा है। गड्वा माता के मंदिर का पानी लाने का पात्र होता है जिसमें माता के लिए जल लाया जाता है तथा चारों दिशाओं में जलपात्र को परिक्रमित किया जाता है। पूजा-अर्चना के बाद मेला अगले वर्ष तक के लिए सम्पन्न हो जाता है।

शेरजाच्च

आदिशक्ति जगदम्बा माता मिंधलवासिनी के निमित्त मनाया जाने वाला यह मेला हर वर्ष अक्तूबर मास की 24 या 25 तारीख को आयोजित किया जाता है। शेरजाच्च का शाब्दिक अर्थ है- शरद ऋतु की जातर अर्थात् शरद ऋतु में मनाया जाने वाला मेला। सम्प्रति पंगवाल जन अपने कृषि संबंधी कार्यों को पूर्ण करके माता के दरबार में देसी घी का प्रसाद अर्पित करते हैं। मेले से एक दिन पूर्व मंदिर परिसर की विशेष साफ-सफाई की जाती है। मेले के दिन प्रातः काल से ही माता की स्तुतियां वाद्यवृंदों के साथ शुरू हो जाती है। दिन चढ़ते-चढ़ते श्रद्धालुओं की भीड़ उमड़ आती है।

मेले का मुख्य आकर्षण आकाश दीया होता है। आकाश दीया एक बहुत बड़ा दीपक होता है जिसमें घाटी के लोगों द्वारा अपने-अपने घरों से लाया हुआ घी भरा जाता है। लोग भक्तिभाव और श्रद्धापूर्वक घर से लाए हुए घी से आकाश दीप भरते हैं और प्रार्थना करते हैं कि हे माता! हमारा पशुधन सदैव स्वस्थ रहे ताकि अगले वर्ष हम आपके दरबार में पुनः घी लाकर इस आकाश दीये को भर सकें।

मेले की रात को लोग खूब लोकनृत्य करते हैं तथा चेले माता के संदेश को जन-जन तक पहुंचाते हैं। देर रात तक पूजन चलता रहता है तथा पारम्परिक नृत्य भी (शेष पृष्ठ 24 पर)

स्मृति शेष

मौलू राम ठाकुर : पहाड़ पर भोज

◆ सुदर्शन वशिष्ठ



बहुत बार ठाकुरजी ऊंचे पहाड़ पर भोज वृक्ष से लगते थे। भोज, पहाड़ का ऊंचाई पर अंतिम पेड़। इस ऊंचाई के बाद वन वनस्पति नहीं होती। भोज वृक्ष देवदार सा लंबा नहीं होता बल्कि मझोले कद का होता है। पहाड़ की ऊंचाई बढ़ने के साथ यह और छोटा होता जाता है। किंतु इसकी महत्ता महान् है। भोज वृक्ष की छाल ही है जो पहले कागज की जगह लिखने के काम आती थी। इस पर महान् आर्ष ग्रंथ लिखे गए। पुरानी पाण्डुलिपियां भोजपत्र पर लिखी मिलती हैं। आज भी भोज की छाल को पवित्र वस्तुओं की तरह घरों में रखा जाता है। ठाकुरजी का अस्तित्व पहाड़ पर भोजवृक्ष सा रहा है। वे कुल्लू की लग घाटी की ऊंचाइयों के भोज थे। संयोग से ठाकुरजी के साथ एक बार नग्गर किला जाना हुआ। रोरिक आर्ट गैलरी देखने के बाद हम नग्गर किले में आए जो अब पर्यटन विकास निगम का होटल है। किले के निचले भाग में एक संग्रहालय बनाया गया है जिसमें पुरानी मूर्तियां, काष्ठ कृतियां आदि संजोई गई हैं। हालांकि नीचे जाना आसान नहीं था तथापि ठाकुरजी जोश में आ गए और कांपती टांगों के बावजूद सबसे पहले नीचे उतर गए।

''.......मेरी ड्यूटी यहां लगी थी, जब मैं नया नया सर्विस में आया था। तब यह क्षेत्र पंजाब में था और डिप्टी कमिशनर कांगड़ा के ऑफिस में, जो धर्मशाला में स्थित था, दो तीन जून 1950 को टाईप शार्टहैंड का टेस्ट दिया जिस में पंजाब भर से कैंडिडेट आए थे। मेरा नाम नौ सफल कैंडिडेट्स में प्रथम स्थान पर आया। इस बारे मुझे डिप्टी कमिशनर के प.सं. 2191/बीसी दिनांक 7 जुलाई 1950 द्वारा मुझे सूचित किया गया। अतः मुझे 80-5-110/5-150 के वेतनमान में सहायक आयुक्त कुल्लू एवं प्रोजेक्ट एग्जीक्यूटिव ऑफिसर कुल्लू में स्टेनोग्राफर के तौर पर तैनाती मिली।........तब मुझे यहां भेजा गया कि वहां कुछ फायलें पड़ी हैं जिनकी सूचियां बनाओ और काम की फायलें यहां ले आओ, बेकार की राइट ऑफ डेस्ट्रोए कराओ।'' उन्होंने उत्साह से बताया।

...........पुराने समय में नग्गर किला ही प्रशासन का केन्द्र था। सेटलमेंट शुरू होने पर यह स्थान कुल्लू के केन्द्र में न होने से दूर पड़ने लगा। अतः जिला प्रशासन को कुल्लू लाया गया। पुराना रिकार्ड, फायलें नग्गर में ही थी। ठाकुरजी ने बताया यहां फायलों के ढेर के अलावा बहुत-सी पुस्तकें भी थीं। वे जैसी भी लिस्ट बनाते उस को उसी रूप में राइट ऑफ कर दिया जाता। इस रिकार्ड में 'हिस्ट्री ऑफ पंजाब हिल स्टेट्स' की एसिस्टेंट कमिशनर हारकोट द्वारा तैयार की मूल टंकित प्रति भी थी जिसे उस हिस्ट्री में शामिल किया गया था।

कहते कहते ठाकुर जी पुरानी यादों में खो गए।

''...... यहां, इस जगह फायलों के ढेर पड़े थे। स्टेट टाईम की, उसके बाद की। यहां कोई आना नहीं चाहता था। उस समय बहुत अकेली जगह थी........मैंने अपने को ऑफर किया।''

उन दिनों मैं ठाकुर जी की संस्था 'देवप्रस्थ साहित्य एवं कला संगम' के आयोजन में कुल्लू गया था जिसमें साहित्य अकादेमी के तत्कालीन उपसचिव ब्रजेन्द्र त्रिपाठी भी पधारे थे। संस्था की ओर से संस्कृति मन्त्रालय भारत सरकार से मिले अनुदान से प्रकाशित पुस्तक 'पश्चिमी हिमालय में नाग परंपरा' का विमोचन था।

दूरस्थ, दुर्गम और पिछड़े हुए क्षेत्र से एक स्टेनोग्राफर से अपने जीवन का कॅरियर आरम्भ करने वाले ठाकुर जी भाषा-संस्कृति विभाग में कई पदों पर रहते हुए उपनिदेशक बने। हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी के सहायक सचिव और फिर सचिव बनने पर उन्होंने इस संस्था को नये आयाम दिए। इससे पूर्व ये अकादमी के गठन से जुड़े रहे और इस संस्था के संविधान, नियम बनाने में महत्ती भूमिका निभाई।

विभाग में ठाकुर जी को हम आपस में 'विभागीय गूर' कहते थे। 'गूर' यानि जिसके भीतर देवता जीवन्त हो बोलता है। यह बात शायद उन्हें मालूम नहीं थी।

ठाकुर एक अधिकारी नहीं, महज एक व्यक्ति नहीं, बल्कि अपने में एक पूरी संस्था के रूप में विद्यमान रहे। भाषाविद्, भाषा विज्ञानी, कुशल अनुवादक, अध्येता, विद्या व्यसनी, चिंतक, मनीषी होने के साथ कुशल प्रशासक भी रहे है। उन्हें सदा अध्ययनरत

पाया। कर्मठ, कर्मशील, कर्त्तव्यनिष्ठ, परिश्रमी होने के साथ उनका सरल और सादगीभरा व्यक्तित्व आकर्षण का केंद्र बना रहा।

विभाग में हमारे काम में अनुवाद भी शामिल था जो 1978 में प्रदेश में हिन्दीकरण हो जाने से ज्यादा हो गया। सभी विभागों, बोर्डों के नियम कानून हमें अनुवाद के लिए भेज दिए जाते। विधान सभा लगने से पहले पूरे बजट के अनुवाद के लिए हमें सचिवालय बुलाया जाता तो कभी स्टाफ कम होने पर ठाकुरजी भी आते हालांकि वे सहायक निदेशक हो चुके थे। अनुवाद का कागज हाथ में पकड़ कर ये सीधे अनुवाद डिक्टेट करवा देते। जब विभाग में लीगल अनुवाद करने को आता तो बड़ी कठिनाई होती। पौने पौने पेज में एक पहरा लगातार चलता जिसे टुकड़ों में करके जोड़ा जाता फिर भी सेंस नहीं निकलती। ऐसे कठिन समय में ठाकुरजी के पास जाते तो उनका एक पेट वाक्य होता : 'आप छोड़ दीजिए! में देख लूंगा।' ''मैं को वे 'में' बोलते और हम निश्चिंत हो जाते।

नग्गर किला से परिमहल

भाषा-संस्कृति विभाग में नौकरी लगने से पहले एक बार मैं विभाग गया। लगभग 1976 की बात रही होगी। परिमहल में कार्यालय हुआ करता था। निचली मंजिल में एक नेम प्लेट देखी :'एम.आर.ठाकुर'। ऊपरी मंजिल में एक और प्लेट थी : 'हरिचंद पराशर'। ऐसे ही मन में विचार आया कि मेरे नाम की भी एक प्लेट यहां ऐसे ही लगे। हालांकि उस समय भाषा-संस्कृति विभाग में नौकरी लगेगी, ऐसी कोई न मंशा थी और न कोई मौका ही था। तब मैं तत्कालीन निदेशक एस.एन. वर्मा से मिला और उन्हें अपना पहला उपन्यास ''आतंक'' भेंट किया।

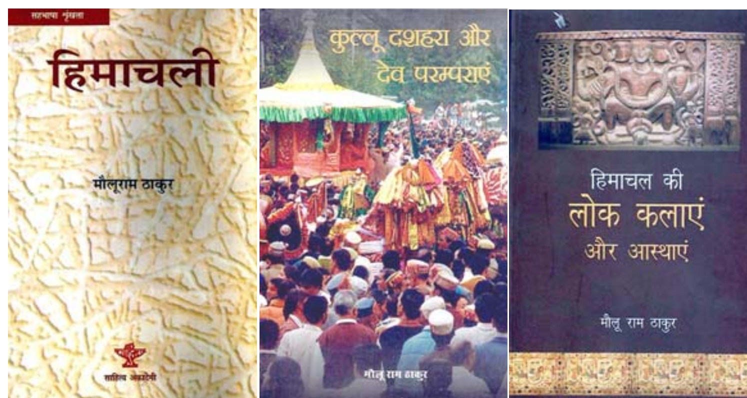
संयोग से नवम्बर 1977 में इसी विभाग में जिला भाषा अधिकारी के पद पर कार्यभार ग्रहण किया तो ठाकुरजी से पहली बार भेंट हुई। हमें परिमहल के मुख्य द्वार के साथ पहले कमरे में बैठने की जगह नियत की गई थी जिस में हम तीन नये भाषा के अधिकारी बैठते थे। तो ठाकुरजी का कमरा इसी मंजिल के अंत में था। उस समय अनुशासन बहुत कड़ा था। निदेशक एस. एन. वर्मा पौने दस बजे परिमहल के बाहर बुद्ध की प्रतिमा के पास खड़े हो जाते। हर कर्मचारी को आते हुए देखते। बोलते कुछ नहीं। दस बजे से पहले कमरे में पहुंच हाजरी लगाना आवश्यक था। फिर हाजरी रजिस्टर ठाकुर जी या पराशर जी के पास चले जाते और हाजरी वहां जा कर उनके सामने लगानी पड़ती। उस समय मात्र एक बस कुसुम्पटी तक जाती थी और एक ही शाम को आती थी। हमारे पास फायल वर्क न हो कर केवल रिसर्च वर्क ही था। काम की देखरेख के लिए एक रजिस्टर लगाया गया था जिसमें रोज किए गए काम का ब्योरा लिखना होता था। इस रजिस्टर को सप्ताह के अंत में ठाकुरजी चैक करते थे।

ठाकुरजी को हमेशा दस से दस मिनट पहले कमरे में पाया। पूरा दिन वे अपनी सीट से हिलते न थे। हां, डेढ़ से दो बजे तक बालक राम भारद्वाज, जो हिमभारती पत्रिका का लेखाजोखा देखते थे (बाद में रिटायरमेंट से पहले जिला भाषा अधिकारी बने) के साथ परिमहल से साथ बनी कच्ची सड़क पर घूमने जाते। बहुत बार मैं भी उनके साथ हो लेता। जब विभाग पहाड़ी का एक शब्दकोश तैयार करने लगा और शब्द अर्थ चयन के लिए संयुक्त बैठकें होने लगीं तो ठाकुरजी से निकटता बढ़ी। पहाड़ी के एक-एक शब्द और उसके अर्थ पर चर्चा चली रहती। हमें शब्दों से कोई लगाव न था। वे बार-बार कहते, जब आप इस काम में रम जाएंगे तो बड़ा मजा आने लगेगा। ये तो बड़ा रुचिकर काम है।

सहायक निदेशक हरिचंद पराशर दूसरी तबीयत के व्यक्ति थे। थोड़ा काम निपटाने के बाद वे या तो अकादमी के कर्मचारियों के बीच जा बैठते या हमारे कमरे में आ जाते। हमारे एक सहयोगी सुखदेव शर्मा, जो हमसे पहले डेपुटेशन पर शिक्षा विभाग से आए थे पराशरजी के करीबी थे। वे बैठते ही एक सिगरेट निकाल उन्हें थमा देते और वे कोई किस्सा आरम्भ करते। वैसे वे बहुत गुणी व्यक्ति थे, कार्यालय पद्धति के ज्ञाता। निदेशक से उनकी पटती न थी। निदेशक किसी को भी बिना काम दूसरे के कमरे में बैठने की इजाजत नहीं देते थे। अतः आहट होने पर वे सहम जाते कि देखो, वह आ तो नहीं रहा। किंतु ठाकुरजी को कभी भी किसी के कमरे में बैठे नहीं देखा।

कठिन डगर : मेधा प्रखर

पिता बुधराम ठाकुर व माता खेमी देवी के यहां शांघण नामक छोटे से गांव में जन्मे ठाकुर का नाम मूलूराम रखा गया। 'मूलू' कांगड़ा की ओर उन दिनों एक प्रचलित नाम रहा है किंतु उधर बड़े होने पर मूलराज लिखा जाता। यहां 'मोल लेने' से जोड़ने पर मूलूराम रखा क्योंकि पुरोहित ने, शायद ग्रह कड़े होने पर बताया था कि इन्हें किसी को दे दो और फिर मोल दे कर खरीद लो। उस समय इस पूरे



'लग' इलाके की चार कोठियों में कोई स्कूल या पाठशाला नहीं थी। कमिशनर साहिब की इजाजत से शांघण से तीन किलोमीटर दूर भुट्ठी में स्कूल खुला जिसमें बच्चों की संख्या पूरी करने के लिए बाईस तेईस वर्ष के विवाहित छात्र भी पढ़ने के लिए रखे गए। सन् 1944 में ठाकुरजी कुल्लू हाई स्कूल में दाखिल हुए।

हाई स्कूल कुल्लू में ही इन में साहित्य का संस्कार आया। इन्होंने स्वयं स्वीकार किया है : ''मैं अपनी साहित्यिक अभिरुचि के प्रोत्साहन का श्रेय अपने हाई स्कूल ढालपुर, कुल्लू तथा उसके स्टाफ को देता हूं। .... एक अध्यापक खुशदिल था जिसका पूरा नाम हम नहीं जानते थे, परन्तु उसका उपनाम ही अपने आप में शायर, ग़ज़लकार और ग़ज़लगो होने का सबूत था। जहां बैठते शायरी जमा लेते थे।.........भारत की स्वतन्त्रता से पूर्व कुछ अध यापक पहले ही अपना स्थानांतर करके इधर आ गए थे। उन में एक सरदार अर्जुनसिंह था, बड़े उच्च कोटि के कवि, लेखक और विद्वान साहित्यकार। उन्होंने 'सरवरी' नाम से एक चतुर्मासिक पत्रिका आरम्भ की।'' शैशव से मेधावी ठाकुरजी पहली से दसवीं तक प्रथम रहे। पंजाब यूनिवर्सिटी से मैट्रिक में अपने जिले में प्रथम(621/800) रहे। पंजाब यूनिवर्सिटी से ही प्रभाकर(प्राईवेट) और एम.ए. द्वितीय श्रेणी में किया। तिब्बती भाषा सर्टिफिकेट और डिप्लोमा कोर्स मे यूनिवर्सिटी में प्रथम रहे। चीनी भाषा सर्टिफिकेट में पंजाबी यूनिवर्सिटी में प्रथम रहे। इसी भाषा में डिप्लोमा कोर्स में प्रथम रह कर गोल्ड मैडल पाया। सन् 1950 में डिप्टी कमशिनर कांगड़ा के तहत कुल्लू में स्टेनोग्राफर नियुक्त हुए। एम.ए. करने बाद इन्हें पंजाब चयन आयोग द्वारा कनिष्ठ अनुसंधान सहायक नियुक्त कर दिया गया। इसके बाद ये नारनौल में जिला भाषा अधिकारी के पद पर रहे। हरियाणा में इन्हें डॉ. मधोक ने इतिहास लिखने का काम भी सौंपा था और वहां लगभग पन्द्रह पृष्ठ इतिहास के लिखे।

हिमाचल प्रदेश बनने के शुरुआती दिनों में शिक्षा विभाग के अंतर्गत 'राज्य भाषा संस्थान' बनाया गया जिसमें पंजाब और हरियाणा से स्टाफ स्थानांतरित हुआ। इस संस्थान को समाप्त कर 1972 में हिमाचल प्रदेश में 'भाषा एवं संस्कृति प्रकरण विभाग' की स्थापना पर ठाकुरजी सीनियर लेक्चरर, सहायक निदेशक के बाद उपनिदेशक सेवानिवृत्त हुए। इस बीच विभाग में ही पंजीकरण अधिकारी, संग्रहालयाध्यक्ष राज्य संग्रहालय शिमला का कार्यभार भी इनके पास रहा।

इनके रिटायर होने में कम समय रह गया था किंतु विभाग में उस समय उप निदेशक का पद ही नहीं था। आगामी पद पाने के लिए उस जमाने में होड़ या मारामारी नहीं होती था। ठाकुरजी तो वैसे ही संत स्वभाव के थे। तथापि तत्कालीन निदेशक एस. एन. जोशी के प्रयासों से एक पद सृजित हो पाया और इन्हें उपनिदेशक पदोन्नत किया गया।

अपने में एक संस्था

आम मुहावरा है कि वे स्वयं में एक संस्था हैं। ठाकुरजी असल में ही एक संस्था के रूप में स्थापित रहे हैं। कुल्लू में इन्होंने बहुत पहले 'देवप्रस्थ साहित्य एवं कला संगम' का गठन किया। उस समय में बाहर के किसी प्रकाशक से पुस्तक प्रकाशन करवा पाना एक दुरूह कार्य था। इन्होंने अपनी दो महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन इस संस्था के माध्यम से करवाया। ये दो पुस्तकें थीं। An Easy Way to Hindi and Hindi Grammer तथा 'लामण'। इसके बाद 'प्रार्थी के बिखरे फूल', 'कुल्लू के सर सरोवर', 'कुल्लू दशहरा और देव परंपराएं' और संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार के अनुदान से 'पश्चिमी हिमालय में नाग परंपरा' पुस्तकों का प्रकाशन किया। यह सभी पुस्तकें संस्कृति व परंपरा के संरक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

पहाड़ी के प्रोत्साहन के दौर में ये नये पुराने लेखकों के प्रेरणा स्रोत बने रहे। उस समय बड़ी संख्या में पहाड़ी के लेखक सामने आए। उनमें से कई अब भी लिख रहे हैं। आरम्भ में विभाग में अलग से संस्कृति और पुरातत्त्व का विंग नहीं था और न ही संग्रहालय में पर्याप्त स्टाफ था। अतः कला, निष्पादन कला, पुरातत्त्व, संग्रहालय सब का काम यही देखते रहे। इन सब शाखाओं का कार्यभार इनके पास रहा।

भुट्टी वीवरर्ज कॉपोरेटिव सोसाइटी प्रत्येक वर्ष सोसाइटी के संस्थापक वेदराम ठाकुर के जन्मदिवस पर साहित्य, संस्कृति, पत्रकारिता, सहाकारिता, इलेक्ट्रोनिक मीडिया आदि में कार्य कर रहे विशिष्ट व्यक्तियों को सम्मानित करती है। सोसाइटी के अध यक्ष सत्यप्रकाश ठाकुर हैं। इन में एक पुरस्कार ''ठाकुर मौलूराम पुरस्कार'' के नाम से स्थापित है।

पहाड़ी भाषा के प्रति इनके योगदान को देखते हुए 1996 में साहित्य अकादेमी दिल्ली द्वारा दिए जाने वाले ''प्रथम भाषा सम्मान'' में हिमाचली साहित्यकारों में इन्हें प्रथम भाषा सम्मान के लिए चयनित किया गया और इन्हें दिल्ली में 27 अगस्त 1997 को यह सम्मान दिया गया। सौभाग्यवश दूसरे भाषा सम्मान की चयन समिति में भी एम.आर. ठाकुर और सी.आर.बी. ललित के साथ साहित्य अकादेमी के सदस्य के नाते चयन समिति में रहा जिसमें सर्वश्री गौतम व्यथित और प्रत्यूष गुलेरी का चयन हुआ। श्री एम. आर. ठाकुर भाषा, भाषा विज्ञान, लोक साहित्य, लोक संस्कृति के अधिकारी विद्वान रहे हैं। पन्द्रह महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के अतिरिक्त इन्होंने सृजनात्मक साहित्य के अन्तर्गत इन्होंने पहाड़ी में कहानी, कविता व लेख भी लिखे। भाषा विज्ञान तथा लोकवार्ता पर इनके अनेक शोध तथा लेख विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे और विशेष चर्चित रहे।

'अभिनंदन कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी,
शिमला-171009, मो. 0 94180 84495

आलेख

सांस्कृतिक दृष्टि और एम. आर. ठाकुर

◆ डॉ. सीता राम ठाकुर

मनुस्मृति में लिखा है -

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः। स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन पृथिव्यां सर्वमानवाः।। इस देश में समय-समय पर जन्म प्राप्त विद्वानों से पृथ्वी पर रहने वाले सब मनुष्य अपने-अपने आचरण एवं कर्त्तव्य की शिक्षा ग्रहण करते आए हैं - ऐसा इस उपरोक्त श्लोक की धारणा है। इसी संदर्भ में देवस्वरूप मानव से कुल्लू की धरा भी खाली नहीं रहती आई है; पर समय के अन्तराल में ऐसे देवस्वरूप मानव को जन्म देने में यह अपनी भूमिका निभाती रही है जिसको आज हम देवता मानकर पूज रहे हैं, कइयों ने यहीं बैठ कर तपस्या भी की है, इन दोनों के कर्म से यहां की भूमि पवित्र हुई है, तभी इसको देव-भूमि होने का सम्मान मिला है। मानव भी देवरूप में पूजित है, व्यासर, दरपोइन, गोशाल और हिड़व गांव जैसे शब्द में उन्हीं पूजित देवताओं के प्रमाण आज भी दिख रहे हैं, जो भी समाज को देता है, या समाज जिस का ऋणी होता है, वह देवस्वरूप होता है। इसमें सन्देह नहीं। यजुर्वेद इसमें प्रमाण देते हैं -

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्ताग्रे।
तस्य त्वष्टा विदधद्रुपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे॥

-(यजु॰ 31/6)

वेद की यह ऋचा प्रमाणित करती है कि मानव भी अपने उत्तम कर्मों के कारण देवत्व को प्राप्त होता है। उसके इन श्रेयस्कर कर्मों के कारण वह भी आजान देव की तरह पूजा के योग्य बन जाता है। यह ईश्वरीय प्रक्रिया है, जो आज भी लोक व्यवहार में यथावत श्रुतिगम्य है - 'देवो भूत्वा देवं यजेत' मानव को देवीय कर्म देवभाव रखकर करने चाहिए तभी देवत्व की प्राप्ति या देव-सम्बन्धित आशीर्वाद प्राप्त हो सकता है। यही सत्यं, शिवं, सुन्दरं - आदर्शबोध ही भारतीय संस्कृति का आधार स्तम्भ है, जिस का निर्वहन एम. आर. ठाकुर प्रत्यक्षतः साहित्य के माध्यम से प्रमाणित करते आ रहे, इनका सारा लेखन मानवीय धर्म की दीवार पर समाज के सामने खड़ा है, यही इनका प्राणाधार है। इनके हर लेखन में इसका विवृत रूप एक-एक अक्षर, एक-एक वाक्य और साहित्य समाहार में स्पष्ट दिखता है जो इनके साहित्य विस्तार की आदर्श भूमिका है।

जब कोई पाठक इनके रचित साहित्य का अध्ययन करता है तो इनके समग्र साहित्य में आध्यात्मयज्ञ के रूप में पाठकों के सामने पूर्ण समाधि भाव के दर्शन होते हैं जिसमें ठाकुर जी महात्मा बुद्ध के दर्शाये समाधि परिष्कार- सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक आजीविका, सम्यक कान्ति, सम्यक पुरुषार्थ, सम्यक स्मृति जैसे रूपों को अपने लिखे साहित्य के घेरे में रखकर साहित्य की मर्यादा को सचेत करते हैं। यह स्पष्ट है कि बुद्ध भी भारतीय धरातल से पनपे हैं, चाहे वे पूर्व जन्मों में बोधिसत्त्व रूप में कहीं भी रहे हों, पर उन्होंने यहीं भारत में साधना करके भारतीय संस्कृति के कुछ अंशों को आज के संदर्भ में विश्व-पटल पर पहुंचाया है एसे पवित्र अनेकों कार्य इसी धरा पर हुए हैं जिनसे यह भारत भूमि पुण्य-भूमि बनी है। आज भी विश्व की आबादी बुद्ध के समाधि परिष्कारों को स्वीकारती है। जिन में भारतीय संस्कृति के कुछ सूक्ष्म रूपों का आलोक है। भारतीय संस्कृति की सम्पूर्णता चारों वेदों में मिलती है जिसको देखने के सर्वप्रथम सम्यक दृष्ट की अपेक्षा रहती है, जिसकी प्राप्ति के लिए व्याकारण, निरुक्त, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक ग्रन्थ, उपनिषद, पुराण आदि आर्ष साहित्य को समझना पड़ता है। लगता है - एम. आर. ठाकुर ने इसका गहनता से आलोडन किया है, इनकी एक-एक कृति हर पक्ष से उसी परम्परा का निर्वहण करती नज़र आती है। सभी में भारतीय संस्कृति की समृद्ध परम्परा को व्याख्यायित किया है, चाहे उनका साधन, लोक ही क्यों न रहा हो, सारे साधन उनको एकत्व की ओर ले जाते हैं। इन्होंने 'पहाड़ी' की मर्यादा को लेकर 'पहाड़ी भाषा-कुलुई के विशेष सन्दर्भ में (सं. 1975) पुस्तक लिखी है, वह भी भारतीय परम्परा को आगे बढ़ाने में अपना आदर्श प्रस्तुत करती है, जो भविष्य के अनुसन्धित्सुओं को भाषायी नई वैज्ञानिक खोज में प्रेरणा स्रोत रहेगी तथा मार्गदर्शक। इन्होंने इसमें पहाड़ी की जननी संस्कृत को माना है। जिसके लिए अनेकों प्रमाण दिये हैं जो द्रष्टव्य हैं - अमरत <अमृत, आरशू <आदर्शिका, आपणा <आत्मन आंज <अन्त्र, आगे <अग्रे, आगल <अर्गल, इष्ट <इष्ट उल्ह <ऊधस उवांस <अमावस्य, ऊन <ऊर्ण, उझे<उर्ध्व, उखल <उलूखल, एण्डा <एतादृक, ओठ <ओष्ठः, ओड़ी ढओड़िक, औतरा <अपुत्रक, ओधा <अर्ध, ऑग <अग्नि, इस प्रकार इन्होंने

हज़ारों कुलुवी के शब्दों को संस्कृत भाषा के चेहरे से देखने का प्रयास किया है जो इनकी 'संस्कृतिः संस्कृताक्षिता' की तटस्थ धारणा को अभिव्यक्त करता है। ऐसा लगता है कि एम.आर. ठाकुर संस्कृत के गौरव को अच्छी तरह समझते थे। इनकी यह पुस्तक इसका साक्ष्य देती है। संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति की प्राणाधार है। इसको समझे बिना संस्कृति के प्राणतत्त्वों को भी समझा नहीं जा सकता है। अपनी इस पुस्तक के पृष्ठ संख्या 67 पर वे लिखते हैं - ''जहां तक वैदिक एवं लौकिक संस्कृत भाषा का सम्बन्ध है, संस्कृत भारत ही क्या संसार की अनेक भाषाओं की जननी कही जाती है। संस्कृत का बाद की भाषाओं पर निरन्तर प्रभाव पड़ता रहा है। प्राकृतों का महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी कोई भी रूप रहा हो, उन पर संस्कृत की पूर्ण छाप रही है। यद्यपि संस्कृत के सरलीकरण की प्रवृत्ति सभी में विद्यमान रही है। संस्कृत के कड़े और कठोर नियम स्वतः सरल होते रहे हैं, परन्तु साथ ही संस्कृत के शब्द और ध्वनि भण्डार से सभी भाषाएं अनायास प्रभावित होती रही हैं। भारत और भारत के बाहर चीन, तिब्बत, हिंदचीन, जापान, जावा-समात्रा आदि देशों की भाषाओं में संस्कृत के भारी प्रभाव के कारण ही संभवतः इसे देववाणी कहा जाता है। वायु पुराण (1/123) में भी लिखा मिलता है - न सोऽस्ति प्रत्ययलोके यः शब्दानुगमादृऋ ते। अनविद्धमिव ज्ञानं सर्व शब्देन भासते।। संसार की सभी भाषाओं में यह एक पूर्ण भाषा है, इसमें जो शब्द हैं, वे अपने अर्थ को उसी में समेटते हैं। इसका शब्द-अर्थ के लिए रूढ़ नहीं है। यही इस भाषा की महानता है, जबकि बहुत सी भाषाओं के शब्द अपने अर्थ के लिए रूढ़ बनाये होते हैं, जो बौद्धिक स्तर को बोझिल बनाते हैं। भारतीय संस्कृति के ज्ञान के स्रोत वैदिक सूत्र हैं, जिनके माध्यम से आज पहेलियां भी आसानी से समझी जा सकती है, नहीं तो पहेली बनी रहेगी जैसे - पहले बीज या वृक्ष, पहले अंडा या मुर्गी, पहले कौन .... पहले कौन .... ऐसा संशय बना रहेगा। इस सब संशय की निवृत्ति चारों वेदों की समृद्ध परम्परा को शाखा-उपशाखा के माध्यम से समझ कर पूरा किया जा सकता है, जिसके लिए जड़ और चेतन को समझना होगा। ठाकुर जी ने इस भेद को भी लोक के माध्यम से स्पष्ट किया है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है। सृष्टि भी ईश्वरीय है। हम केवल ईश्वरीय साधनों से केवल ईंटें और मकान आदि ही बना सकते हैं। पंच भूतों की संरचना हम नहीं कर सकते। ठाकुर जी द्वारा लिखा साहित्य इसको समझाने में अहं भूमिका निभाता है। सृष्टि से लेकर चार अरब, बतीस करोड़ वर्षों तक वैदिक संस्कृति का प्रवाह निरन्तर गतिमान रहता है। फिर आठ अरब चौसठ करोड़ वर्षों के बाद पुनः सृष्टि का श्रीगणेश होता है। तभी अथर्व वेद में ''सनातनमेनमाहुरूताद्य स्यात पुनर्णवः'' (10-8-23) यह कहा है। अर्थात उसको सनातन कहते हैं। पर जो पैदा होता उसका विनाश निश्चित है - एम.आर. ठाकुर ''ठाण्डे पाणी रे डिभणू - लामण'' की भूमिका में उसी सनातन रूप को लामण के माध्यम से अभिव्यक्ति देने में सफल हुए। लोक भाषा में उसको जिन्दगी दी है -

'जीन्दा जीउए केरी झूरना, मौरिया फूलरी हारा। शुका नी पलासिदा हेरू, मुआं नी फिरदा घोरा।।

इसमें भारतीय संस्कृति की सोच को वास्तविक सीमा में बांध है। लोक के गौरव को भी सम्मान मिला है। पतंजलि को योग शास्त्र भी इस वास्तविकता/यथार्थता को अपने सूत्र में रेखांकित करते हैं - 'सोपक्रमं निरुपक्रमं च कर्म तत्संयमाद-परान्तज्ञानमरिष्टेभ्यो वा। (सू. 3/22) लोक ने भी इसी सनातन धारा को अपनी वाणी में समझाया है। अपने साहित्य में ठाकुर जी ने यथार्थ सांस्कृतिक रूपों को अपनी प्रतिभा के माध्यम से मांझा है जो लोक/समाज के लिए हृदयग्राह्य बना है। डॉ॰ वंशी राम लामण के सन्दर्भ को लेकर पुस्तक के कबर पृष्ठ पर लिखते हैं - 'हिमाचल की पर्वत शृंखलाओं को पार करके अनन्त आकाश में गूंजने वाली स्वर लहरियां प्रदेश की प्राचीन संस्कृति की मूल्यवान थाती है।'' 'संस्कृति मनुष्य के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का ढंग हमारी संस्कृति है। संस्कृति हवा में नहीं रहती, उसका मूर्तिमान रूप होता है। जीवन के नाना विध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है।'' साहित्य, कला, दर्शन, धर्म आदि में यही मूल्यवान सामग्री रहती है। एम.आर. ठाकुर इंगलिश के कलचर शब्द की व्याख्या यूं करते हैं - C वर्ण से custom, U वर्ण से utility, L वर्ण से Language, T वर्ण से Tradition, अगले U वर्ण से uses, R वर्ण से reality तथा E वर्ण से Education. इन सात तत्त्वों में संस्कृति है। ये सभी तत्त्व जीवन से जुड़े है। पर व्यास ने चार शब्दों में संस्कृति की महिमा व्यक्त की है - ''परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम'' एम. आर. ठाकुर का

डॉ. वी. के गोकाक ने तर्कसंगत सुन्दर परिभाषा दी है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में पूर्णता की खोज ही संस्कृति है जो व्यक्ति से ऊपर उठकर समाज को भी अपने घेरे में ले लेती हैं हिमाचल प्रदेश के समृद्ध सांस्कृतिक अतीत को जानने के लिए 'वैदिक आर्य और हिमाचल'' ठाकुर जी की अद्वितीय कृति है। इसी कृति के कारण ठाकुर जी ''डॉ. यशवन्त सिंह परमार राज्य सम्मान' से सम्मानित हुए हैं। तात्कालिक निदेशक ने इनके सम्मान की प्रशस्ति में लिखा है - '' ठाकुर जी ने हिमाचल की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का गहराई से अध्ययन किया है। - मौलू राम ठाकुर की कृति 'वैदिक आर्य और हिमाचल' अनेक नए क्षितिज खोलती है।'' वास्तविक रूप से इनकी यह कृति भारतीय सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से प्रारम्भिक काल बखूबी स्पष्ट करती है।

साहित्य भी इन्हीं पृष्ठों पर खड़ा भासित होता है। भूलते सन्दर्भों को ठाकुर जी ने अपने साहित्य में प्राणवान बनाया है तथा इनकी अप्रतिम प्रतिभा की भी जानकारी इसके माध्यम से मिलती है, जो समाज की धरोहर के रूप में सामने आये हैं। ईसा मसीह ने कहा था कि मैं इस बात पर विश्वास करता हूं कि लोगों को अपनी संस्कृति और विरासत से मिले धर्म का अनुसरण करना चाहिए। उदाहरण के लिए प्रेम और करुणा की नाव को पूर्ण मनोयोग से दूसरों की सेवा में लगाएं। हम अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से तब तक मुक्त नहीं हो सकते जब तक समाज के प्रति प्रतिबद्धता को पूरी नहीं करते हैं। एम.आर. ठाकुर ने 'हिमाचल की लोककलाएं और आस्थाएं' (सं 2008) तथा 'Myths, Rituals and Beliefs in Himachal Pradesh' (सं. 1997) के माध्यम से पूरे हिमाचल के समाज के सांस्कृतिक प्रतीकों एवं बिम्बों को लेकर यहां की चित्रकला, भित्ति चित्र, चम्बा रूमाल, थंक्का, टोपी, नमदा, मफलर, जुराब, पुले, देव परम्परा आदि संदर्भों को व्याख्यायित करते हुए पूरे हिमाचल के सांस्कृतिक पक्ष को समाज की सेवाभावना से उकेरित किया है। सांस्कृतिक शब्दों को भी मरने से बचाया है। इन पुस्तकों में इन्हें प्राणदान देने में सक्षम हुए, इनकी मृत्युशय्या से अपने साहित्य साधना का मंत्र फूंक कर नीरोग बनाया है। भविष्य की लम्बी आयु देकर अपने आशीर्वाद इन्हें दिया, ताकि ये शब्द भी अन्त भविष्य तक जिन्दा रह सके। जैसे 'छलेड़ा' जो वैदिक छल शब्द का संकेत देता है। उणादि कोष (41/9041) में ''छय ति छिनत्ति पराभिप्रायमिति, छलम' ऐसी व्युत्पत्ति मिलती है। भविष्य में जब भी व्युत्पत्ति वाला - सांस्कृतिक शब्दकोष तैयार होगा, इनकी ये पुस्तकें मार्गदर्शन का कार्य करेगी। रूढ़ी से शब्दों को निकाल कर इन्होंने सांस्कृतिक व्युत्पत्त्यात्मक इतिहास के लिए इन्हें सार्थक बनाया है। आने वाला हिमाचल का समाज इस सार्थक प्रयास को अपना आदर्श समझेगा - ऐसा मेरा अनुमान ज्ञान है। मूलतः दोनों पुस्तकें हिमाचल की संस्कृति का आईना है। लेखक का कहना है - ''शब्द सम्पदा समाज की मूल संस्कृति का विधान दर्शाती है। इन्होंने सोमसी पत्रिका के अक्तूबर-दिसम्बर, 2009 के अंक में ज़िला कुल्लू के जनमानस का स्परूप एक लोकोक्ति के माध्यम से यूं दर्शाया है -

'खाणीए झेचै, कमोणीए सरयाल,

नटैइए सिराजी, गीतांगी रूपीयाल। मज़ाज़ी महाराजू, घड़याही लगाल।। यह लोकोक्ति ज़िला में फेले समाज के मानस को समझने में सार्थक बनी है। इसलिए ये पुस्तकें भविष्य के मनोविदों के लिए मानस शास्त्र लिखने में सहायक होंगी। ऐसा लगता है कि ठाकुर जी की बौद्धिक शक्ति समाज की अन्तःप्रवृत्तियों को भी नीरक्षीर विवेक के साथ विश्लेषित करती है। उसको मूर्तिवत साकार रूप देने में अपनी प्रवीणता का परिचय देती है।

इतिहास के उतार-चढ़ाव में संस्कृति जीवित रहती है और पर उसकी मूलात्मा प्रभावित नहीं होती है। ऐतिहासिक घटनाओं का लोगों के जीवन पर अवश्यमेव प्रभाव पड़ता है। उन घटनाओं में जो ऐतिहासिक आदर्श और मूल्य स्थापित होते हैं, वे संस्कृति के अंग बनते जाते हैं। सामन्य तौर पर चर्चा करने पर ''संस्कृति'' शब्द की कोई सीमित परिभाषा नहीं हो सकती है। डॉ. वी. के गोकाक ने तर्कसंगत सुन्दर परिभाषा दी है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में पूर्णता की खोज ही संस्कृति है जो व्यक्ति से ऊपर उठकर समाज को भी अपने घेरे में ले लेती हैं। हिमाचल प्रदेश के समृद्ध सांस्कृतिक अतीत को जानने के लिए 'वैदिक आर्य और हिमाचल'' ठाकुर जी की अद्वितीय कृति है। इसी कृति के कारण ठाकुर जी ''डॉ॰ यशवन्त सिंह परमार राज्य सम्मान' से सम्मानित हुए हैं। तात्कालिक निदेशक ने इनके सम्मान की प्रशस्ति में लिखा है - ''ठाकुर जी ने हिमाचल की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का गहराई से अध्ययन किया है। - मौलू राम ठाकुर की कृति 'वैदिक आर्य और हिमाचल' अनेक नए क्षितिज खोलती है।'' वास्तविक रूप से इनकी यह कृति भारतीय सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से प्रारम्भिक काल बखूबी स्पष्ट करती है। वे लिखते हैं - ईसा पूर्व 1400 वर्ष सुलह नामा बेबलीलोन क्षेत्र के बोघस केऊई स्थान की खुदाई में इतर, अरूवन, मितर, नासत्य, सूरिआ, बोगस आदि देवताओं के नाम क्रमशः इन्द्र, वरूण, मित्र, नासत्य, सूर्य, भग आदि भारतीय देवता को बोधित करते हैं।'' (पृ. 37) इसमें आर्यों की असली भूमि का भी परिचय यूं देते हैं - ''आर्यों का सप्त-सिंधु प्रदेश मूलतः सिन्धु वितस्ता (झेलम), असिक्नी (चिनाव), परूष्णी (रावी), विपाशा (व्यास), शुतुद्रि (सतलुज) और सरस्वती- इन सात नदियों द्वारा सींचित या घिरा हुआ क्षेत्र था।''(पृ. 46) इनका यह कथन मध्य एशिया की भ्रान्त धारणा को निरस्त करता है। ऋग्वेद की यह ऋचा भी इनके कथन को सार्थकता प्रदान करती है कि जिसमें इन नदियों की स्तुति की गई -

इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या। असिक्न्‍ या मरुदवृधे वितस्तयाऽऽर्जीकीये श्रृणुह्या सुषोमया।। (10/75/5) इन नदियों से स्पष्ट हो रहा है कि ऋग्वेद के समय से हिमाचल का यह भू-भाग और भारत के अन्य प्रदेश भू-भाग इन नदियों के जल से आप्लावित होते रहे हैं तथा आज भी नदियों की विद्यमानता उसी सांस्कृतिक स्रोत से जोड़ने में अपना योगदान दे रही है। भारतीय संस्कृति नदियों के किनारे या पर्वत के शिखरों पर पली, बढ़ी है। यह सारा उल्लेख इस कृति के भूगर्भ में कोई भी झांक सकता है। 'पहाड़ी संस्कृति मंजूषा' नामक पुस्तक में वर्णित भूण्डा, काहिका, वैदिक सोमरस, सुरा और पहाड़ी सूर आदि वर्णन वैदिक पृष्ठ भूमि की यात्रा कराते हैं। जिस यात्रा को लेखक ने अपने यत्नों से बोधगम्य बनाया है। प्रमाणों के प्रयोगों ने इसमें संस्कृति का आत्मगौरव बढ़ाया है। पौराणिक प्रभावों को भी कृष्ण

लीला, ठोडा आदि प्रसंग दिखाते हैं। 'पहाड़ी समाज- निरन्तर प्रवाह में आगे बढ़ता गया, जिसको ठाकुर जी ने अपनी लेखनी का साथी बनाया है। सभी प्रसंग जीवंत बने हैं। ठाकुर जी इसकी भूमिका में स्वयं लिखते हैं - ''साहित्य संस्कृति का एक व्यक्त रूप है। हमारे वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, और गीता आदि साहित्यिक ग्रन्थ न केवल विश्व भर में प्राचीनतम कृतियों के लिए महान है, अपितु इन्होंने भारतीय समाज को आदिकाल से नैतिक और आध्यात्मिक अमरत्व प्रदान किया है।'' (पृ॰ VI) 'हिमाचल के पूजित देवी-देवता'' (सं. 19811) में भी इसी भारतीय संस्कृति की उदात्त भावनाओं को लेकर शिवविवाह, रघुनाथ, हिडिम्बा देवी, नैणा, जमलू और बाणासुर, हुरंग नारायण आदि लोक कथाएं मुखरित हुई हैं। इनके इस प्रयास में 'घोणा घुशिया कराहड़ी' - यह लोकोक्ति भी 'महान द्यौः ते वीर्यम अनुममे' (ऋग्वेद) का अनुसरण करती है। 'An Easy way to Hindi: and Hindi Grammar' जिसे भारत सरकार के शिक्षा एवं युवा सेवाएं मन्त्रालय द्वारा 1971 में अंग्रेजी माध्यम से हिन्दी शिक्षण हेतु सर्वोत्तम पुस्तक घोषित किया है, में भी इनकी सांस्कृतिक तटस्थ साधना का परिचय मिलता है - Contempt - अवमान, insult - अपमान, defamation - मानहानि, dishonour - अनादर, oppression - प्रदमन, disgrace - अपयश, illfame - अपकीर्ति, humiliation - तिरस्कार (पृ. 335) में ये शब्द इस पुस्तक में वर्णित हैं। यहां इनके द्वारा अंग्रेजी शब्दों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति, देववाणी के शब्दों के माध्यम से देना, इनके अन्तस्तल में पनपे भारतीय संस्कृति के भावों को प्रस्फुटित होने का मौका मिला है। ठाकुर जी उर्दू के भी ज्ञाता हैं, फिर भी शब्द रूप को अपना सच्चा स्वरूप दिखाने में उत्तीर्ण हुए हैं। ऐसा लगता है - इनका यह मन हज़ारों जन्मों में भारत की भूमि पर पला, बढ़ा है, संस्कार अर्जित किए हैं जो आत्मा उसी संस्कारित चित्त को लेकर इस जन्म में उन्हीं संस्कारों के साथ कुल्लू ज़िला के लगवैली के क्षेत्र में स्थित शांघन गांव में जन्मी है और जिसके कारण येन-केन प्रकारेण अपनी भारतीय संस्कृति की बात को अपने रचे साहित्य में सजाते हैं। ''सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा'' के पूजक के रूप में अपने को साहित्य के मानस में रूपायित करते हैं - ऐसा मेरा चिन्तन है। इनका सारा साहित्य भारतीय संस्कृति के आलोक से आलोकित है।

कुल्लू, हिमाचल प्रदेश

पांगी घाटी मेलों व त्योहारों में...

(पृष्ठ 17 से आगे) होता रहता है। मेले में अब लोग भोजन तथा अन्य वस्तुओं की बिक्री भी करने लगे हैं। इसी प्रकार शेरजाच्च का समापन होता है।

उनौणी

उनौणी मेला पांगी घाटी के करयूनी, करयास, लुज तथा सुराल गांवों में विभिन्न देवी-देवताओं के निमित्त मनाया जाता है। यह मेला निरन्तर तीन दिनों तक आयोजित किया जाता है। सर्वप्रथम उनौणी करयूनी गांव में चैत्र मास के प्रथम प्रविष्टे को माता मलासनी के नाम मनाया जाता है। तीन दिनों तक चलने वाले इस मेले का प्रथम दिन महूंनाग को समर्पित है। प्रथम की उनौणी को 'माओट' की संज्ञा दी गई है। लोकाचार के अनुसार मंदिरों में पूजा-अर्चना की जाती है, उसके बाद लोग मौच गांव में एकत्रित होकर देव-स्तुतियां करते हैं। दिन भर समूह नृत्य तथा पारम्परिक शेण नृत्य होता है। चेले देव सन्देश को लोगों तक पहुंचाते हैं। दूसरे दिन की उनौणी माता मलासनी को समर्पित है। इस दिन लोग सेरी नामक गांव में एकत्रित होकर जातर मनाते हैं तथा तीसरे दिन की उनौणी माता मिन्धल वासिनी को समर्पित है। मेला मनाने की परम्परा तीनों दिन व सभी स्थानों में एक ही जैसी है।

गांव करयास में उनौणी मेला भी तीन दिन का मनाने की प्रथा है। इस मेले को चैत्र मास के सात, आठ और नौ प्रविष्टे को गांव के विभिन्न स्थानों पर मनाया जाता है। किन्तु तीनों दिन मेले को माता वलीनवासिनी के उपलक्ष्य में मनाया जाता है। सात प्रविष्टे को माता वलीनवासिनी को समर्पित मेला प्रघवाल में बड़ी श्रद्धा व हर्षोल्लास से मनाया जाता है। इसी प्रकार आठ प्रविष्टे को हुगाल गांव में मेला लगता है तथा नौ प्रविष्टे को करयास गांव में माता का मेला लगता है।

मेले के दौरान सुन्दर परिधानों से सुसज्जित पंगवाल कन्याएं मेले की शोभा को चार चांद लगा देती हैं। सांयकाल को नवयुवतियों व महिलाओं द्वारा घुरेई नृत्य किया जाता है। नृत्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो स्वर्ग से अप्सराएं नृत्य करने के लिए धरा पर अवतरित हुई हों। ढोल की थाप पर थिरकते पग, एक दूसरे का हाथ थामे महिलाएं पंक्तिबद्ध होकर घुरेई नृत्य में अधिकतर माता का ही गुणगान करती हैं।

बर्फबारी के कारण बाह्य वातावरण बेहद ठण्डा होता है। इस वातावरण को नृत्यांगनाएं अपने नृत्य से आतप व सुखद बना देती हैं। इस तरह उनौणी मेला करयास गांव में सम्पन्न होता है यह मेला इसी प्रकार लुज गांव में माता शीतला के नाम पर मनाया जाता है। सुरला में शक्ति माता के उपलक्ष्य में इस मेले को मनाने की परम्परा है। पंगवाल जन अपनी इस प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर को अपने में संजोए हुए हैं जिसे अभी तक सांस्कृतिक प्रदूषण ज्यादा प्रभावित नहीं कर पाता है।

आलेख

भारतीय संस्कृति के संरक्षक : वृक्ष

◆ डॉ. रामसिंह यादव

प्रकृति के बिना मानव जीवन की कल्पना अधूरी है। जल, वायु और वृक्ष आदि हमारे जीवन के अभिन्न अंग हैं। इनके संरक्षण समृद्धि पर हर एक व्यक्ति को ध्यान देना चाहिए। जीवन की समृद्धि खुशहाली के लिये वृक्ष और हरियाली बहुत महत्त्वपूर्ण है। अगर हम अभी जागरूक नहीं हुए और इसी तरह जंगल कटते रहे तो यह विकास की दौड़ हमारे विनाश का प्रमुख कारण बनेगी। वायु, जल और वृक्ष जीवन की महती आवश्यकता है। पद्मपुराण के सृष्टि खंड में विभिन्न वृक्ष लगाने से विभिन्न लाभ अंकित किये हैं। हमारी भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि वृक्ष है। हमारी संस्कृति में वृक्षों की विभिन्न अवसरों पर विभिन्न रूपों में पूजा भी की जाती है क्योंकि वृक्ष देव रूप हैं व इनमें देवताओं का वास माना गया है। इसलिये भारतीय संस्कृति से ऐसे पर्व, व्रत व त्योहार विशिष्ट तिथियों को आते हैं जिनमे किसी भी पौधा या वृक्ष को पूजा जाता है। उदाहरण के तौर पर सौमवती अमावस्या यानी सोमवार के लिये यदि अमावस्या तिथि आती है तो लोग पीपल वृक्ष की पूजा करते हैं, उसकी 108 बार जल व अन्य सामग्री चढ़ाते हैं। भगवान श्रीकृष्ण अपनी विभूतियां की चर्चा करते हुए स्वयं कहते हैं कि अश्वस्थ सर्ववृक्षाणां यानी मैं सब वृक्षों में पीपल वृक्ष हूं। पीपल के वृक्ष में अनेक देवी-देवताओ का वास माना गया है। इसीलिये यह देव वृक्षों की श्रेणी में आता है।

वटवृक्ष (बरगद) भी पूज्यनीय है। वटवृक्ष के नीचे ही भगवान बुद्ध को बुद्धत्व की प्राप्ति हुई थी, इसीलिए इसे बोधिवृक्ष भी कहते हैं। वटवृक्ष के नीचे ही सावित्री ने सत्यवान को यमराज के पाश से मुक्त कराया था। इसीलिए वटसावित्री व्रत में इसी वटवृक्ष की पूजा, सुहागिन महिलाएं करती हैं और अपने पति के दीर्घायु, स्वास्थ्य की कामनाएं करती है। वटवृक्ष के नीचे ही प्रायः भगवान शिव समाधि लगाते हैं, इसलिए इस वृक्ष को भगवान शिव का प्रतीक पर्याय भी समझा जाता है। वटवृक्ष अपनी विशालता के कारण जगतभर में प्रसिद्ध है। पाराशर मुनि ने 'वट मूले तपोवासा' कह कर वटवृक्ष की महत्ता पत्रिता के विषय में बताया है। उनके अनुसार समूची सृष्टि में एकमात्र वटवृक्ष ही है जिसमें त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) का सम्मिलित वास है।

वटवृक्ष के अलावा भारतीय संस्कृति में तुलसी, नीम, बेल, आंवला, अशोक, आम, पलाश, शमी, केला आदि को भी बड़ी महत्ता प्राप्त है। ज्योतिष शास्त्र में 9 ग्रहों एवं 27 नक्षत्रों का उल्लेख है। प्रत्येक व्यक्ति पर इन नवग्रहों का प्रभाव उनकी जन्म तिथि के अनुसार रहता है, हमारे शरीर में जो सूक्ष्म चक, ग्रंथी व मुख्य ऊर्जा केन्द्र है इनके माध्यम से इन ग्रहों व नक्षत्रों की ऊर्जा हमारे शरीर में प्रवेश करती है।

जिस तरह नवग्रहों व नक्षत्रों के विशेष मंत्र, रत्न व रंग होते



हैं, उसी तरह इन ग्रहों व नक्षत्रों से संबंधित वृक्ष भी धरती पर मौजूद हैं, जैसे सूर्य बेल, चन्द्र-पलाश, मंगल-खैर या खदिर, बुध-अपामार्ग, गुरु-पीपल, शुक-गुलर, शनि-शमी व मदार, राहु-दुर्वा व चंदन, केतु-कुशा व अश्वगंधा से संबंधित वृक्ष हैं।

इसी तरह नक्षत्रों से संबंधित वृक्ष है - अश्विनी-कुचला, भरणी-आंवला, कृतिका गुलर, रोहिणी-जामुन, मृगशिरा--खदिर, आर्द्रा-शीशम, पुनर्वसु-बांस, पुष्य-पीपल, अश्लेषानाग केसर, मघा-बरगद, पूर्वा फाल्गुनी-पलाश, उत्तरा फाल्गुनी-पाठा, हस्त-रीठा, चित्रा-बिल्वपत्र, स्वाति अर्जुन, विशाखा कटाई, अनुराधा-मौलश्री, ज्येष्ठा-चीड़, मूल-साल, पूर्वाषाढ़ा-जलवेतस, उत्तराषाढ़ा-कटहल, श्रवण-मदार, घनिष्ठा-शमी, शतभिषा-कदम्ब, पूर्वा भ्रादपद-आम, उत्तरा भाद्रपद-नीम तथा रेवती महुआ। यह सभी औषधियों के गुणों से भरपूर है और इसमे अधिकांश को हम सभी जानते पहचानते हैं।

सभी तरह के वृक्षों में पीपल ही एकमात्र ऐसा वृक्ष है जिसमें कभी कोई कीड़े नहीं लगते। यही कारण है कि हिन्दू धर्म में पीपल का पेड़ काटा जाना वर्जित माना है। इसी तरह अशोक वृक्ष के बारे में कहा गया है कि जो शोक निवारे सो अशोक। इस वृक्ष का महत्त्व इसलिये भी है क्योंकि माता सीता ने अपने सबसे कष्टमय व दुखद पल (यानी रावण के यहां) स्वर्ग नगरी में अशोक वाटिका को ही अपना आश्रय स्थल बनाया था और अशोक वृक्ष के नीचे ही रहकर उन्होंने अपना संपूर्ण समय बिताया था। मान्यता है कि जिस घर में अशोक का वृक्ष लगा होता है वहां वास्तुदोष भी नहीं रहता है।

नीम वृक्ष बहुत ही उपयोगी है। इसकी पत्तियां कड़वी जरूर होती हैं लेकिन कई तरह से चिकित्साओं में बहुत उपयोगी होती है क्योंकि इसकी पत्तियां में रोगाणुओं को नष्ट करने की अद्भुत क्षमता होती है। इस वृक्ष को शीतला माता व मां दुर्गा का वृक्ष माना गया है। इसे नीमारीदेवी के नाम से भी पुकारा जाता है। प्रायः देवी के मंदिरों में इसका रोपण करना शुभ माना जाता है व इसका विधिवत पूजन भी होता है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में चेचक निकलने पर नीम के पेड़ का पूजन व इसकी पत्तियों का उपयोग चेचक के दाग हटाने में किया जाता है।

बिल्व वृक्ष से सभी परिचित हैं। बिल्व पत्र भगवान शिव को अत्यंत प्रिय है और उन्हें प्रसन्न करने के लिए बिल्व पत्र चढ़ाए जाते हैं। बिल्व पत्र की महिमा का बखान करने वाला 'बिल्वाष्टकम्' स्त्रोत भी है, जिसमें इसके आध्यात्मिक गुणों का वर्णन है। बिल्व वृक्ष में लगने वाला बेल का फल भी पेट संबंधी रोगों के निवारण में बहुत उपयोगी है। प्रसिद्ध है कि मां सती ने भगवान शंकर को प्रसन्न करने के उद्देश्य से वर्षो तक हरिद्वार स्थित बिल्वकेश्वर महादेव में बिल्वपत्रों के माध्यम से उनकी पूजा-अर्चना की थी।

आम का पेड़ सभी को अत्यंत प्रिय है। फलों का राजा आम को कहा जाता है। मांगलिक कार्यों में, कलश स्थापन में, वंदनवार बनाने में आम्रपत्तियों का उपयोग होता है। आम की लकड़ी का प्रयोग भी हवन आदि में होता है। जब आम के वृक्षों में बौर आ जाते है तो उनकी मनमोहक खुशबू से वातावरण महक उठता है ओर फिर कोयल भी कूकने से अपने आपको रोक नहीं पाती। आम के मीठे फल, कोयल की मधुर स्वर दोनों ही मिलकर वातावरण को खुशनुमा बना देते हैं। आम के फल बहुत उपयोगी होते हैं व विविध प्रकार से इनका प्रयोग भारतीय संस्कृति में किया जाता है।

केले के पत्तों व फल का भी बहुत धार्मिक महत्त्व है। इसके विशेष महत्व के कारण ही केले के पत्तों में पारम्परिक रूप से भोजन करने का विधान है। केले के पेड़ में भगवान विष्णु व देवगुरु बृहस्पति का वास माना जाता है। इसलिये प्रायः लोग गुरुवार के दिन केले के पेड़ का पूजन करते है। इसी तरह हरिप्रिया तुलसी के बिना पंचामृत पूर्ण नहीं होता। इसकी रोग निवारक व पर्यावरण शुद्धि की क्षमता से हम सभी भली भांति परिचित है। इसलिए भारतीय परिवेश में हर घर के आंगन में तुलसी का पौधा अनिवार्य रूप से मिलता है व सुबह-शाम इसका पूजन भी होती है।

आंवले का पेड़ भी अत्यंत पूजनीय माना गया है। वैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया अक्षय तृतीया व कार्तिक शुक्ल पक्ष की नवमी अक्षय नवमी के नाम से जानी जाती है और इस दिन आंवले के पेड़ की विशेष रूप से पूजा होती है। उसकी छांह में भोजन पकाकर ग्रहण किया जाता है और इस तरह फाल्गुन शुक्ल पक्ष की एकादशी को आमल की एकादशी के नाम से जाना जाता है और यह वृक्ष भगवान विष्णु का अत्यंत प्रिय माना गया है। आंवले के औषधीय गुणों से हम सभी परिचित हैं। इसके अतिरिक्त इस वृक्ष के पूजन के अनेकानेक अध्यात्मिक लाभ भी है।

इस तरह इन देव वृक्षों से हमारी संस्कृति बड़ी गहराई से जुड़ी हुई है और इनके सानिध्य व संपर्क में रहकर यह इतनी सुविकसित भी हुई है। प्राचीन काल से ही रोगों के उपचार के लिए मनुष्य इसी वृक्ष वनस्पतियों पर निर्भर रहा है।

आज भी विशेष तिथियों में इनके पूजन की प्रथा है। अतः हमें इन वृक्षों का सम्मान करना चाहिए व इनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए इनके पोषण व संरक्षण का दायित्व उठाना चाहिए।

14, उर्दूपुरा, उज्जैन, मध्य प्रदेश।
मो. 0 96693 00515

आलेख

जीवन को झंकृत करती निराला की कविता

◆ बी.एल. आच्छा



'रूखी री यह डाल वसन वासन्ती लेगी' निराला के जीवन की डाल तो रूखी ही रही, पर हिन्दी की डाल उनके जातीय काव्य के कारण वासन्ती है। कहीं न अटने वाली फाल्गुनी शोभा वाले, उस वसन्त के अग्रदूत की जीवन कथा कहां से शुरू करें, नरक-यात्रा से या काव्य यात्रा से ? कहीं से भी करें, फर्क नहीं पड़ता है। काव्य और जीवन के जिस अद्वैत पर निराला प्रतिष्ठित हैं, उसमें काव्य ही उनके जीवन का प्रतिबिम्ब बन गया है। जीवन की जर्जरताओं को सहते-सहते, असहायों की वेदना को पीते-पीते निराला की शैली आत्म चरितात्मक हो जाती है। घोर विषमाताओं से अप्रतिहत संघर्ष करता हुआ कवि टूट जाता है, पर कविता की सितार सज जाती है। प्रेमचन्द का 'मंगलसूत्र' में आत्मचरितात्मक हो जाना और निराला का 'मैं' शैली अपनाना अकारण नहीं था। करुण बेबसी के अन्तःसंगीत का यह वह धरातल है, जहाँ जीवन प्रक्रिया और रचना-प्रक्रिया में कोई अंतर नहीं रह जाता। 'वन-बेला' में कवि कहता हैं - ''अपनी कविता! तुम रहो एक मेरे उर में।'' निराला के बाह्य संघर्ष और आत्म संघर्ष, बाह्य संसार और मनोव्यापार के संकेत उनके काव्य में सर्वत्र संवेदित हैं।

निराला का काव्य विरुद्धों का सर्जनात्मक संश्लेष है। उनकी काव्य यात्राएं अनेकांतिक हैं, संवेदनाएं बहुरंगी हैं, स्वरों में अनाहत जिजीविषा की झंकृति है, अभिव्यक्ति के स्वच्छंद शिल्प हैं। निराला अनेक मोर्चों पर संघर्ष करते हैं और कविता उसी का स्वर-लिपि बन जाती है। 'जूही की कली' में शृंगार है तो उसकी भावसाध्य पावनता भी। 'तुम और मैं' में तो आत्मा-परमात्मा की अद्वैतमूलक दार्शनिक पीठिका है। 'तोड़ती पत्थर' में आर्थिक विषमताओं में झुलसते सर्वहारा वर्ग की तार-तार बेबसी है। 'राम की शक्ति पूजा में न्याय के लिए संघर्ष की अप्रतिहत आस्था है। 'तुलसीदास' में सांस्कृतिक सूर्य की दैदीप्यमान प्रतिष्ठा है। 'सरोज स्मृति' मर्मान्तक शोक-गीतिका के साथ-साथ कवि के नियति एवं जीवन से प्रदत्त विजड़ित-जीवन की अन्तर्कथा है। 'बादल राग' और 'कुकुरमुत्ता' में सर्जनात्मक व्यक्तित्व की नयी चुनौतियां हैं और व्यंग्यों के प्रहार भी। सृजन की आस्था से अविचलित एवं ज्योति के इस कवि में 'पुरुष शैली' की जो हुंकार थी, वही जिजीविषा के स्वर में गाती थी -

अभी न होगा मेरा अंत
अभी अभी तो आया है
मेरे जीवन में नव वसन्त।

पर इसी काव्य रागिनी का विषम स्वर कितना एकांकी और उजड़ा हुआ सा है -

मैं अकेला देखता हूं आ रही
मेरे दिवस की सांध्यवेला
पके आधे बाल मेरे/ हुए निष्प्रभ गाल मेरे
चाल मेरी मन्द होती जा रही/ हट रहा मेला।

विशालतर समाज को समेटने वाला यह जातीय काव्य का कितना एकाकी है, कितना बिखरा है, पर कविता कहीं नहीं बिखरती। 'राम की शक्तिपूजा' में राम कहते हैं - 'अन्याय जिधर है उधर शक्ति, कहते छल-छल।' परन्तु निराला का आंतर- वाक्य कभी हारता नहीं। कवि कह उठता है - 'वह एक और मन रहा राम का जो न थका। जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय।''

सृजन की यही आस्था उनके काव्य का जीखित स्वर हैं - समकाल में भी और हिन्दी के कालजयी काव्य के रूप में भी। उनका जीवन जहर जरूर बन गया है, परन्तु उनका शिवत्व अखंडित है। उनका व्यक्तित्व वसन्त के लिए शिशिर के थपेड़ों से मुठभेड़ करने वाला व्यक्तित्व है। वह अंधेरों से घिरा होने पर भी कविता को उजाला देता है। निराला की कविता ज्योति के निर्झर से देत के निर्झर की ओर, प्रकाश के अंधेरे की ओर प्रस्थित होती अनुभव यात्रा है, समूचे यथार्थ का मर्मान्तक स्वर किन्तु यह स्वर

इतने वैविध्य, ओज और उष्मा से भरा है, जो आज हिन्दी की शक्तिमयता का वैभव है।

निराला अपने विरोधों में भी यदि अखंडित है, तो उनकी कविता भी अपने गठन में उसी अखंडता का परिचय देती है। उनके काव्य का चाहे जो प्रसंग हो, सृजन का चाहे जो रूप हो, उनकी कविता के टुकड़े नहीं किये जा सकते। कविता का एक भाग दूसरे भाग के लिए समर्पित है। निराला की कविता के जिस भाग को अलग किया जाता है, सम्पूर्ण कविता उसके साथ खिंची चली आती है। 'वह तोड़ती पत्थर' को ही लीजिए। तीन चित्र हैं - एक इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़ती हुई मजदूरिन का। दूसरा, झुलसाती हुई धूप में छायाविहीन पेड़ के नीचे पत्थर पर गुरु हथौड़ा चलाती हुई (अट्टालिका के पत्थर पर प्रहार की व्यंजना) मजदूरिन का और तीसरा, अपने ही जीवन की विषमताओं में अपने हृदय को पत्थर बना कर प्रहार करती मजदूरिन का- 'मैं' तोड़ती पत्थर।' ये तीनों ही दृश्य अपने गठन में इस कदर जुड़े हुए हैं, कि किसी एक को ले तो दूसरे खिंचे चले आते हैं - सड़क का पत्थर, अट्टालिका का पत्थर और हृदय का पत्थर। किसी एक पत्थर को हटा दें तो मंजिल ही ढह जाती है। पंत की कविता बादल या परिवर्तन, प्रसाद की कामायनी या महादेवी के गीत 'बीन भी मैं हूं तुम्हारी रागिनी भी हूं' में से किसी एक 'छन्द-बन्द' को हटा दे तो कविता उतनी प्रभावित नहीं होती पर निराला की कविताओं में प्रबन्धात्मकता कुछ इस तरह है कि कविता के किसी हिस्से को हटाया नहीं जा सकता। इसका अर्थ यह नहीं है कि छायावादी कविता के अन्य स्तंभ कवियों के काव्य की तुलना में निराला का काव्य श्रेष्ठतर है, बल्कि यह निराला के काव्य की वैयक्तिक विशिष्टता है, कविता की सावयविक अखंडता।

सावयविक अखंडता (ऑर्गनिक यूनिटी) का यह काव्य सूत्र निराला की सभी कविताओं में प्रत्यक्ष है। 'जुही की कली' अपने संक्षिप्त कलेवर में प्रबन्धात्मक हो गयी है, उसकी एक भी पंक्ति को इधर-उधर करना मुश्किल है, उसमें कथाक्रम का सा आरोही ताना-बाना है। 'राम की शक्ति पूजा' जैसी लम्बी कविता में संघर्ष और सफलता का विराट चित्र है। राम और सीता के रोमानी प्रसंगों का अभिजात्य है, अन्यायों से डगमगाती आस्था का आकुल संगीत है, आत्म शक्ति को सोपान दर सोपान सिद्धि तक पहुंचाने का अकुंठ प्रयास है, भक्ति का चरम प्रतिमान है और अंत में विजय कांति का मुकुलित प्रकाश। इतने प्रसंग, इतने मोड़, इतने आरोह-अवरोह, आशा-निराशा पर वे सब गत्यात्मक प्रवाह में प्रबंधात्मक हो जाते हैं-

ऐसे क्षण अंधकार धन में विद्युत
जागी पृथ्वीतनया कुमारिका छवि अच्युत
देखते हुए निष्पकलक याद आया उपवन
विदेह का, प्रथम स्नेह का लतांतराल मिलन
नयनों का नयनों से संगोपन, प्रिय संभाषण।

युद्ध के बीज सीता की यह शृंगारमयी स्मृति। इसे यदि अलग कर दें तो स्मृति के संवेग से राम में पैदा हुई युद्ध की उत्तेजना ही आहत हो जाती है। यह स्मृति संचारी बहुत वेगवान है, पूरे कथाक्रम का जीवन्त तंतु है। अलबत्ता 'राम की शक्तिपूजा' तो अपने संक्षिप्त कलेवर में ही महाकाव्य मानी जाती है।

निराला ऐसे कवि हैं, जो काव्य की रचना प्रक्रिया में वस्तु और रूप के अद्वेत में कविता को प्रतिष्ठित करते हैं। उनके काव्य व्यक्तित्व में उनके जीवन का भूगोल और आत्मा का विस्तार एकतान है। उनकी कविताओं को उनकी संरचना से ही पहचाना जा सकता है। संरचना में ड्रास्टिक शिफ्ट या पुनरावर्तन या क्रियापरक शैली के कारण उनकी सौन्दर्याभिव्यक्ति अधिक सघन और गहरी होती चली गयी है -

श्यामतन, भर बंधा यौवन
नत नयन, प्रिय कर्मरत मन
गुरु हथौड़ा हाथ
करती बार-बार प्रहार-
सामने तरू मालिका अट्टालिका प्राकार।

इस छोटे से छन्द में तीन अलग-अलग संदर्भ हैं। पहला - मजदूरिन के छलकते यौवन के शील युक्त रूप का है, दूसरा संदर्भ - साँवले रंग की इस युवा नारी के हाथों में भारी भरकम हथौड़े का है और तीसरा, कविता की पेशबंदी के कारण तरूमालाओं से युक्त विशाल अट्टालिका के पत्थर पर मनोवृत्तिक प्रहार का। 'सामने तरूमालिका अट्टालिका प्राकार' को लाकर कवि ने हथौड़े के प्रहार को सड़क के पत्थर से हटाकर अट्टालिका के पत्थर पर केन्द्रित कर दिया है जो शोषित हाथों से पूंजी के प्राकारों पर अपेक्षित प्रहार है। यह पूरी कविता संदर्भों के अलग-अलग हासेने के बावजूद एक मूल बिम्ब से, संवेदना के दृश्यात्मक वितान से जुड़ी हुई है।

निराला की कविता में सावयविक अखंडता ऐसा विशिष्ट गुण है, जहां अलंकार परिधान मात्र नहीं रह जाते और रूप केवल कला नहीं रह जाता। संवेदना और अलंकरण काव्य-संघटना में अपने तंतुजाल को एकमेक कर देते हैं। निराला मुक्त छंद के प्रवर्तक हैं, पर उनकी कविता में अखंड लय है। पंक्तियों के छोटे-बड़े होने से यह लय टूटती संदर्भों की अनेकता या विपरीतता के बावजूद यह लय खंडित नहीं होती। निराला की कविता छंदों को तोड़ती है, पर उनका आंतरिक छंद कभी नहीं टूटता। निराला की कविता जहां झंकृत होती है, समूचा जीवन ही झंकृत होता है। जहां एक भाग अलग होता है, समूची कविता उसके साथ दौड़ पड़ती है। निराला की कविता का यह व्यक्तित्व उनकी महाप्राण आस्था से अविच्छिन्न है।

36, कलीमेंस रोड सरवना स्टोर्स के पीछे
पुरुषवाकम चैन्नई (टी.एन.)-600007, मो. 0 94250 83335

कहानी

अप्सरा

◆ नफे सिंह कादयान

यमुनानगर का ताजेवाला हैड पूरे उत्तर भारत में मशहूर है। यह पहाड़ों की तलछटी में यमुना नदी पर उत्तर प्रदेश और हरियाणा में जल बंटवारे के लिये बनाया गया है। इसके साथ ही उत्तर की तरफ शिवालिक की पहाड़ी शृंखला शुरू हो जाती है। मैं आजकल यहां एक जमींदार की जमीन पर ट्रैक्टर ड्राईवर के रूप में रह रहा हूं। यहां उसकी नदी तट के साथ लगती अस्सी एकड़ जमीन है जिस पर गन्ना, गेहूं, चना, मुंगफली, सरसों, बाजरा जैसी फसलें उगाई जाती हैं। चार-पांच एकड़ में अमरूद का बाग भी लगा हुआ है जिसमें बहुत मोटे-मीठे इलाहाबादी अमरूद लगते हैं। इन अमरूदों में बीज कम होते हैं और गुद्‌दा ज्यादा।

वैसे तो यह बहुत दर्शनीय और सुंदर जगह है मगर जून महीने में यहां आसमान से शोले बरसते हैं। यहां के पहाड़ आग के दरिया में नहा कर तरोताजा हो जुलाई की बारिश में बला के हरियाले तोते बन जाते हैं। यहां कोई है जो हर वर्ष पहाड़ों पर आग लगा देता है।

इन आग लगाने वालों के बारे में स्थानीय लोग बतलाते हैं कि ऐसा चरवाहे करते हैं जिससे यहां पहाड़ों पर वृक्षों से गिरे पत्ते टहनियां जल जाते हैं, और कुछ दिन बाद वर्षा होने पर नई घास उग आती है। कुछ का ये भी कहना है कि आग भांग पीने वाले भंगेड़ी लगाते हैं। यहां पहाड़ों पर भांग के बहुत पौधे उगते हैं जो पत्ते टहनियों की वजह से पनप नहीं पाते इसलिये वे यहां आग लगा देते हैं।



रात को जब भी मैं ये जलते हुए पहाड़ देखता हूं तो यहां से ऐसा दिखाई देता है जैसे वहां ऊपर पहाड़ के आंचल में नर्क की आग जल रही हो। एक ऐसी आग जिसमें लाइनों में सैकड़ों चिताएं एक साथ जल रही हों। आग के बवंडर हैं कि दूर से पेड़-पौधे, झाड़ियों को निगलते हुए से प्रतीत होते हैं। वहां आग देखकर मुझे और भी अधिक गर्मी का अहसास होने लगता है। गर्मियों में मुझे जब भी मौका मिलता पांच-सात दिन के लिये पहाड़ों पर शीतल पवन के झोकों का आनंद लेने चल देता हूं। मगर मैं इस बार यहां फंस गया। इस साल कहीं नहीं जा पाया इसलिये अब मन मयूर कल्पना में ही कई बार ठंडे पहाड़ों के दर्शन कर चुका है।

पहाड़ मुझे इतने पसंद हैं कि कश्मीर से लेकर आसाम तक अनेक स्थानों पर जा चुका हूं। कुल्लू, शिमला, मनाली जैसे पर्यटन स्थलों पर मौसम सुहाना रहता है पर यहां भीड़ बहुत रहती है। मुझे तो एकदम शांत, मानव आबादी रहित पहाड़ अच्छे लगते हैं। ऐसे पहाड़ जहां मैं हूं, एकांत विराना हो, पेड़-पौधे, ढेरों परिंदे हों, ऊंची-ऊंची चोटियां हों जिन पर मस्त समीर बह रही हो।

हिमाचल के हरिपुरधार जैसे स्थान शिमला से भी अधिक ठंडे हैं पर वहां दर्शनीय स्थल कम होने के कारण न के बराबर पर्यटक घूमने जाते हैं। ये मेरे लिये बहुत अच्छा है। रंग-बिरंगे पक्षियों से भरे मुझे वह स्थान इतने पसन्द आये कि अब हर वर्ष जून में वहीं जाने लगा। उत्तराखण्ड में एक बहुत ही सुनसान जगह चकराता है जो देहरादून से लगभग पचास, साठ किलोमीटर ऊपर दक्षिण पश्चिम की तरफ पड़ता है, वहां जाने का मेरा बड़ा मन रहा है मगर जा नहीं पाया। मैंने चकराता की हसीन वादियों के अपने एक मित्र से बहुत किस्से सुन रखे हैं।

पिछले वर्ष जब मैं हरिपुरधार गया था तो वहां मुझे अपने ही इलाके का एक व्यक्ति मिल गया। बातों-ही-बातों में मित्रता हो गई। वह भी मेरी तरह एकांत पहाड़ी स्थानों को पसंद करता था। रात को हम एक ही लॉज में ठहरे। शाम को इकट्‌ठे खाने-पीने का दौर चला तो मैं उसपर हरिपुरधार के पहाड़ों की ऊंचाई, गहरी घाटियों की तारीफ करने लगा।

'ये तो कुछ भी गहरी नहीं हैं यार, पिछले साल मैं चकराता गया था। वहां के पहाड़ देखेगा तो चकराते में सचमुच चकरा

जायेगा। गर्मियों में अगर वहां गया तो ठंडी हवाओं से बहुत सुकून मिलेगा।' वह उतराखंड के देहरादून क्षेत्र के पहाड़ों की तारीफ करते हुए बोला था।

'ऐसा है तो अगले वर्ष वहीं डेरा डाल लूंगा, मेरे कौन-सा यहां के पहाड़ रजिस्टर करवाए हुए हैं।' मैं उससे हंसकर बोला था। उसने चकराते की इतनी तारीफ कर दी थी कि मैं वहां इस साल गर्मी में जाना चाहता था पर जा नहीं पाया। बस कल्पना में ही वहां के पहाड़ों की रूपरेखा बनाता रहा। मेरी समस्या यह है कि जहां मेरे जाने की तीव्र इच्छा होती है, जो चीज मुझे हासिल नहीं होती वह स्वप्न पूरी कर देता है मगर सपने का मेरी इच्छा पूरी करने का तरीका कई बार बहुत खतरनाक होता है जो मुझे डराता भी है और हंसाता भी है।

यहां ताजेवाला में गर्मी के महीने में पहाड़ों पर जब आग लगती है तो और अधिक गर्मी लगने लगती है। आज सुबह से ही मैं भयंकर गर्मी की वजह से दो बार यमुना मैया में गोता लगा कर आ चुका हूं। दिल कर रहा है कि सबसे ऊंचे ऐसे पहाड़ पर पहुंच जाऊं जहां ठंडी समीर बह रही हो, जहां बर्फ-ही-बर्फ हो। मैंने रात को भोजन करने के बाद झोंपड़ी से बाहर खाट डाल ली। आजकल कुछ दिन के लिये गांव से मेरी पत्नी मेरे पास आई हुई है।

मेरे दोनों बच्चे क्योंकि गांव के स्कूल में पढ़ते हैं इसलिये वह उनके पास गांव में ही रहती है। वहां मेरी बेबे और भाई है। मैं उसे कभी-कभी अपने पास बुला लेता हूं तो वह चार-पांच दिन मेरे साथ रहकर वापिस गांव लौट जाती है।

पत्नी आज मेरे साथ ही है। वह झोपड़ी में बरतन साफ कर बाहर आकर मेरे साथ लेट गई। उसके हाव-भाव से मैंने देखा कि प्यार करने के लिये उसका आज कुछ रोमांटिक मूड है मगर मुझे गर्मी परेशान कर रही है। फिर भी मैं ऐसे मौके को हाथ से नहीं जाने देना चाहता। जब थोड़ा रोमांस का दौर चलने को हुआ तो उसके बालों में लगा पेनी नोक वाला क्लिप मेरे माथे पर चुभ गया। मेरा कुछ तो गर्मी के कारण मूड नहीं बन रहा था ऊपर से पिन चुभी तो मैंने उसे अपने से दूर धकेल दिया। वह बोली कुछ नहीं बस मुंह बनाते हुए मेरी तरफ पीठ करके लेट गई।

'नाराज हो गई क्या? यार गर्मी बहुत है, सुबह जब ठंडी हवा चलेगी तो हम जी भरकर रोमांस करेंगे।' मैं पीछे से आलिंगन कर उसकी गरदन पर चुंबन लेता बोला मगर तब तक उसके खर्राटे बजने शुरू हो गए। उसका सोना तो कमाल का है। मैं अच्छी नींद लेने के लिये ओशो की किताबें पढ़ता हूं और मेरी श्रीमती जी लेटते ही सो जाया करती है।

वहां पर सरकंडों की बनाई हुई दो-तीन झोपड़ियां थीं जिनमें हम सोया करते थे। क्योंकि हम वहां अकेले थे इसलिये आज गर्मी की वजह से बाहर ही लेट गए। कुछ देर तो गर्मी में नींद नहीं आई फिर ग्यारह बजे के करीब यमुना नदी की तरफ से हवा का ऐसा



ठण्डा पावन झोंका आया कि मेरी पलकें भारी होने लगीं और फिर. .....

बहुत मोटे टायरों की मोटर साईकिल है जिसे मैं चला रहा हूं। इसका रंग काला है और टंकी के दोनों तरफ फायर का टेटू लगा है। ये मेरी है या किसी और की ये मैं नहीं सोच रहा। इसका हैंडल कार के स्टेरिंग जैसा है। मोटर साईकिल तूफानी गति से चल रही है। उसके चलने से बहती हुई बहुत गर्म हवा मेरे शरीर से आकर टकरा रही है। मेरे कानों में गर्म हवा इस प्रकार से भंवर बनाती हुई चल रही है जैसे तेज चलते पानी में गोल भंवर बनते हैं। कानों में हवा से सीटी की आवाज सी आ रही है।

'बस अब थोड़ी देर की और परेशानी है। उन ऊंचे पहाड़ों के शिखरों पर पहुंचते ही ये हवा ठंडी हो कर मेरे मन को सुकून देने लगेगी।' मैं मन-ही-मन अपने आपको दिलासा देता हुआ गर्म हवा को झेलता चल रहा हूं। काफी देर चलने के बाद आगे एक कैंची मोड़ आ गया जिसको पार करते ही मुझे ऊंचे-ऊंचे पहाड़ दिखाई देने लगे। ये बहुत ही ऊंचे पहाड़ों की शृंखलाएं थीं जिसमें मुझे अनेक पहाड़ लम्बी कतार में दिखाई दे रहे हैं। इन पहाड़ों को देख कर मैं उल्लास से भर गया और मोटर साईकिल पर उछल-उछल कर बच्चों की तरह याहू, याहू, हुर्रे हुर्रे, चिल्लाने लगा।

मैं कई घंटे तक मोटर साईकिल चलता रहा। अब मुझे ऐसा आभास होने लगा जैसे ये पहाड़ मुझ से दूर भाग रहे हैं। वहां सड़क टेढ़ी-मेढ़ी थी जिससे कई बार पहाड़ मेरी नजरों से ओझल हो रहे थे। जब मुझे पहाड़ दिखाई नहीं देते थे तो मैं निराशा में घिर जाता था पर जब फिर से दिखाई देते खुश हो जाता। अबकी बार एक मोड़ पर पहुंच कर मुझे पहाड़ फिर दिखाई दिये तो मैंने सड़क छोड़ दी और पहाड़ की तरफ सीध बांध कर रेतीले मैदानों में चलने लगा।

मेरी मोटर साईकिल अब ऐसे सपाट मैदान में दौड़ रही थी जिसमें रेत-ही-रेत थी। वहां रेत मेरी मोटर साईकिल के पहियों से छिटक कर पीछे की तरफ उड़ने लगी। ऐसे जैसे टायर से निकल कर पानी की एक धारा उछलती जा रही हो। आगे मैदान में कहीं-

कहीं बेरों की झाड़ियां शुरू हो गई जिन पर हरे, लाल, पीले कच्चे-पके बैर लगे थे। थोड़ा आगे जाने पर मुझे अपने चारों तरफ झाड़ियों के घने झुरमुट से नजर आने लगे। यहां इतने बेर थे कि वे पक-पक कर जमीन पर ढेरों की शक्ल में पड़े हुए थे।

अब मैं पहाड़ों के बिलकुल नीचे आ गया था। आगे इतना घना झाड़-झंखार था कि कुछ समझ ही नहीं आ रहा था, कहां से निकल कर आगे पहाड़ तक जाऊं। थोड़ा आगे जाकर मोटर साईकिल रोक मैं उन बेरों के झुंडों में रास्ता देखने लगा। तभी मुझे वहां झाड़ियों के पीछे किसी स्त्री के पहाड़ी गीत गाने की आवाज सुनाई दी, साथ में वहां बकरियों के मिमयाने और उन के गले में बंधी घंटियों के टनटनाने की आवाजें भी सुनाई देने लगी।

मैं मोटर साईकिल खड़ी कर झाड़ियों के पीछे गया तो वहां दर्जनों बकरियां झाड़-झंखार के पत्ते, बेर खा रही थी। वहां उनके पास एक अधेड़ सी उम्र की पहाड़ी स्त्री बड़े से पत्थर पर बैठी हुई मधुर गीत गा रही थी। पहाड़ी भाषा का होने के चलते गीत मेरी समझ में नहीं आ रहा था पर उसकी लय गजब की थी। उस पहाड़न की आवाज कोयल की तरह सुरीली थी।

मुझे देख कर वह चुप हो गई और मेरी तरफ इस प्रकार से देखने लगी जैसे मैं कोई वांछित व्यक्ति हूं। ऐसा व्यक्ति जिसने उसके एकांत में खलल डाल दिया हो। 'यहां कोई बस्ती है ऊपर पहाड़ पर। ऐसी बस्ती जहां मुझे सकून मिल सके, जहां शीतल पवन चलती हो। मुझे वहां पहुंचना है।' मैंने उससे पूछा तो वह उल्टा मेरे से ही सवाल करती बोली- 'तुम यहां क्या रहे हो, कहां से आए हो? यहां क्या सड़क है जो तुम मोटर साईकिल पर आवारागर्दी कर रहे हो। आगे कैसे जाओगे आगे गहरी खाई है।'

ओह! खाई है आगे। मैं तो वैसे ही गर्मी से परेशान होने के चलते आप के पहाड़ों पर पांच-सात दिन सकून से काटने आ गया। तो अब क्या मुझे वापिस सड़क पर जाना पड़ेगा?, मैंने उस से पूछा।

'पीछे नहीं जाना पड़ेगा। ऐसा कर, वो पचास गज आगे जो बाई ओर पगडण्डी दिखाई दे रही है, वह आगे जाकर पक्की सड़क पर चढ़ेगी। वह सड़क ऊपर एक बस्ती में जाती है मगर वहां तक पहुंचने में तुझे अभी कई घंटे लगेंगे।' वह औरत बेरुखी से बोली तो मुझे लगा जैसे वो भी मेरी तरह गर्मी से परेशान है। मैंने पास की झाड़ी से दो-तीन लाल पके बेर तोड़ कर खाए ओर मोटर साईकिल चालू कर झाड़ों से बचता हुआ पहाड़न की बतलाई पगडण्डी पर चलने लगा।

बकरियों वाली स्त्री ने सही कहा था की उन झाड़ों से आगे गहरी खाई थी। जब मैं पगडंडी पर आगे बढ़ा तो मुझे वह खाई दिखाई देने लगी। पगडंडी उसके किनारे पर बनी थी। चार-पांच किलोमीटर आगे जा कर पक्की सड़क आई तो मैंने राहत की सांस ली। थोड़ा सा आगे चलने पर ही ऊंचे पहाड़ आ गए। यहां से आगे पहाड़ की चढ़ाई शुरू होने लगी थी।

मैं थोड़ा आगे बढ़ा तो वहां सड़क पर पुलिस नाका लगा था। दस बारह कारें, बसें, छोटे टैम्पू जैसे वाहन कतार में खड़े थे। आगे पुलिस ने बैरियर नीचे कर रोड बंद किया हुआ था।

'क्या बात है भाई जी... पुलिस ने रोड़ ब्लॉक क्यों कर दिया?, मैंने बाईक एक टैक्सी के पास रोक उसके पास खड़े व्यक्ति से पूछा।

'क्यों, पहली बार जा रहा है पुत्र इन ऊंचे पहाड़ों पर? आगे इतना दुर्गम संकरा रास्ता है जिस पर वाहन की साईड से तेरी ये बाईक भी क्रॉस नहीं होगी। पहले ऊपर गए वाहन वापिस आएंगे फिर नाका खुलेगा।, वह बोला।

'ऊपर?, कहकर मैं यों ही मजाक में आसमान की तरफ देखने लगा।

'औये काके ऊपर आकाश में नहीं, वहां पहाड़ पर। वह हंसकर बोला।

ओह! तब तक मैं यहीं चाय पानी पी लेता हूं।, वहां मुझे सड़क के बाईं तरफ एक खोखा रखा दिखाई दे रहा था, जिसमें एक पहाड़ी व्यक्ति सिर पर गोल कढ़ाईदार टोपी रखे चाय बना रहा था। मैंने बाईक साईड में लगाई और सड़क किनारे बने खोखे पर चाय पीने लगा। कुछ देर बाद उपर पहाड़ की तरफ से वाहनों का एक रैला सा आया तो पुलिस वालों ने बैरियर उपर उठा दिया। आने वाले वाहन नीचे मैदानी इलाकों की तरफ चले गए। नाका खुलते ही ऊपर पहाड़ पर जाने वाले वाहन भी चल दिए।

चाय पीने के बाद मोटर साईकिल चालू कर मैं भी वाहनों से काफी पीछे धीमी रफ्तार से पहाड़, घाटियां देखते हुए उंचाई की तरफ बढ़ने लगा। आहिस्ता-आहिस्ता चलती हुई मोटर साईकिल मेरी प्रकृति को देखने की भूख को शांत कर रही थी। रास्ते में कोई नई घाटी, पहाड़, पत्थर, पेड़, फल फूल देखते ही मैं रुक जाता। फिर उसको पांच सात मिनट निहारने के बाद आगे बढ़ता।

ऐसा लग रहा था जैसे मैं मोटर साईकिल बहुत सजग हो कर चला रहा हूं। पता नहीं मुझे क्यों लग रहा था कि ये मुझे मारते हुए देर नहीं लगाएगी। इस इलाके में अगर थोड़ा सा भी मेरा ध्यान बंटा तो वैलकम सैकड़ों फुट नीचे खाई में जाकर होगा। फिर मेरी टांग कहीं पड़ी होगी और बाजु कहीं। पर रब खैर करे, मेरे किसी दुश्मन के साथ भी ऐसा न हो।

ज्यों ही मैं संकरे मार्ग पर आया, गहरी घाटियां, ऊंचे पहाड़ देख कर दंग रह गया। कुछ आगे जाने पर मै मोटर साईकिल रोक नीचे खाई में झांकने लगा। वह खाई लगभग आठ-दस किलोमीटर गहरी थी। नीचे खड़े पेड़ मुझे छोटे-छोटे पौधों के समान दिखाई दे रहे थे। ऐसा लगता था जैसे नीचे हवा चल रही हो क्योंकि नीचे मुझे पेड़ जोर-जोर से हिलते हुए दिखाई दे रहे थे। ऐसे जैसे मुझे इशारे कर अपने पास बुला रहे हों। उस खाई के पार वाले पहाड़

की ऊंचाई देखी तो उसकी ऊपरी चोटी देखने के लिये मेरी गरदन नब्बे के कोण पर पीछे झुक गई। मैंने अपनी पूरी जिंदगी में इतने ऊंचे पहाड़ और गहरी अंधकारमय घाटियां नहीं देखी थी।

पहाड़ पर जाने वाला यह रास्ता इतना संकरा था की मुझे मोटर साईकिल बहुत ध्यान से चलानी पड़ रही थी। अभी चार-पांच किलोमीटर आगे ही ही गया था कि अचानक भेड़, बकरियां सड़क पर आ गई। ऐसा लगता था जैसे इस इलाके में भेड़ों और बकरियों की भरमार है। अगर मोटर साईकिल तेज होती और उसमें डिस्क ब्रेक न होते तो जरूर किसी बकरी से टकरा जाती। मैंने ब्रेक लगाए तो भेड़, बकरियां खाई में नीचे की तरफ दौड़ीं।

'ये गिरेंगी नीचे।, चिल्लाते हुए मैं मोटर साईकिल रोक उससे नीचे उतर कर खाई में झांकने लगा। ये देख कर मैं हैरान रह गया की भेड़े, बकरियां वहां तीखी ढलान पर नीचे उगी हुई झाडियों में चरने लगी थी। ढलानें ऐसी थीं कि लगभग नीचे की तरफ झुकी हुई थी मगर फिर भी वे नीचे नहीं गिर रही थीं। तभी मुझे अपने पीछे से किसी स्त्री के जोर से हंसने की आवाज सुनाई दी।

'ये खाई में यूं ही गिर जाती तो हमारे पास अब तक एक भी नहीं बचणी थी।, मैंने पीछे मुड़कर देखा तो बाईक के पीछे न जाने कहां से एक पहाड़ी स्त्री अचानक प्रकट हो गई।

'तेरी हैं ये क्या?, उसे हंसता देख मैं यों ही हंस पड़ा।

'और क्या गवांडीयों की मांग कर चरा रही हूं।, कुछ काम से आए हो इधर?, उसने सवाल किया।

'नहीं बस आप के पहाड़ों पर ठण्डी हवा खाने चला आया। मुझे रात बिताने के लिये एक कमरा किराये पर चाहिये। यहां से शहर कितनी दूर रह गया?, मैंने उस से पूछा। पता नहीं क्यों मुझे अब नींद आने लगी थी। शायद मैं चलते-चलते थक गया था। मैं वहां पत्थरों पर नहीं सो सकता था।

'अभी चालीस मील है। जल्दी जाओ, यहां पांच बजते ही अंधेरा होने लगता है और खुंखार जंगली जानवर भी हैं यहां पर।'

'ओह! जानवर भी हैं।' मेरे मुहं से निकला और मैं मोटर साईकिल स्टार्ट कर तेजी से चलने लगा। जैसे-जैसे मैं ऊपर चढ़ता गया खाइयां और भी गहरी होती गई। आखिरकार मैं शहर पहुंच ही गया। वहां पहुंचते-पहुंचते शाम हो गई। यह बस नाम का ही शहर था। यहां शहर जैसा कुछ था ही नहीं। यहां तो बस पहाड़ की ढलवां, समतल चोटी पर एक छोटी सी गली में आठ-दस दुकानें व आसपास चंद मकान ही थे। मुझे यह छोटा-सा शांत पहाड़ी गांव दिखाई दे रहा था।

'क्या यहां का मौसम ठंडा है?' मेरी सोचें मुझ पर हावी हो रही थी। 'हां ऐसा ही है।' यहां ठंड वाकई बहुत अधिक है। मेरी आंखें बोझिल होने लगीं। मैं सोना चाहता था।

'लगता है ये ठंडी हवाएं पहाड़ों से आ रही हैं जिनके बीच में एक नदी बह रही है। यमुना नदी.....कहां है नदी? नदी है या पहाड़? ये तो पहाड़ों की चोटियों पर ठंड होती है, इसलिये यहां ठंड है।' कुछ समझ नहीं आ रहा। दृश्य कुछ गड्डमड्ड से होने लगे। फिर एक झटका सा लगा और मैं बुलेट मोटर साईकिल लेकर बाजार नुमा एक मात्र गली से होता हुआ आगे बढ़ने लगा।

मेरी मोटर साईकिल का हैंडल कुछ ऊंचा सा था जिसे पकड़ने में मुझे कुछ असुविधा सी हो रही थी। मैं सोच रहा था कि कोई होटल, लॉज दिख जाए। आखिर रात काटने का जुगाड़ तो करना ही है। मैं चलता हुआ गली के आखिर में आ गया मगर कहीं कोई आश्रय स्थल नहीं दिखाई दिया। आगे दुकानों से थोड़ी दूर खाई के किनारे पर स्लेट पत्थरों से बनी झोपड़ी में एक महिला का ढाबा दिखाई दे रहा था। उस महिला ने एक चोगेनुमा दुपट्टा सिर पर ओढ़ा हुआ था। उसने उस दुपट्टे के निचले छोर को कमरबंद जैसा बनाया हुआ था।

वह बीस-पच्चीस साल की भरे हुए बदन की सुंदर युवती दिखाई दे रही थी। आमतौर पर अधिकतर पहाड़ी स्त्रियां दुबली-पतली होती हैं मगर ये अपवाद थी। लगता था जैसे ढाबे पर इस्तेमाल होने वाले दूध की सारी मलाई ये ही खा जाती हो। मैं कुछ देर खड़ा होकर उस महिला के शरीर का अन्य महिलाओं के शरीरों के साथ तुलनात्मक अध्ययन करने लगा। वहां ढाबे को देखते ही अब मुझे भूख लगने लगी थी।

'कब से मोटर साईकिल चला रहा हूं मैं, रास्ते में कुछ भी नहीं खाया, यानी मुझे कुछ खाना चाहिये।' ये सोचते ही तंदूर में भूने जा रहे गोश्त की खुश्बू ने मेरी भूख बढ़ा दी।

'कुछ पीने के लिये भी मिलेगा यहां। आस-पास अंग्रेजी का ठेका है क्या?, मैं अपनी सामान्य आवाज में उस महिला से बोला मगर मुझे ऐसा लगा जैसे मैं बहुत ऊंची आवाज में बोला हूं। मेरी आवाज सुन वह महिला मेरी तरफ ऐसे घूम गई जैसे वह मेरी आवाज की गुलाम हो। और फिर उसके सुंदर मुखड़े पर मुस्कान फैल गई।

'अंग्रेजी क्या यहां तो देशी का भी नहीं है साहेब। घर में माल्टे, जड़ी-बूटी से निकाली हुई कच्ची है। पीओगे तो सारी अंग्रेजी वालियों को भूल जाओगे।, ढाबे वाली शुद्ध व्यवसायिक मुस्कान बिखेर मजाक करते बोली।

'अच्छा ये बात है तो आज तुम्हारे माल्टे में भी देख लेते हैं कितना दम है, कितने की है?, मैं अपनी आवाज नियंत्रित करता हुआ हंस कर बोला और बाईक झोपड़ी के आगे खड़ी कर अंदर पड़े तख्त पर बैठ गया।

'अस्सी की है साहेब। पूरी पीओगे तो बेहोश हो जाओगे, इसलिये थोड़ी पीकर बाकी रख लेना।,

'ठीक है दे दो। सलाह देने की जरूरत नहीं, मैं रखूं या फेंक दूं । रोटी की अच्छी प्रकार सिकाई करना।,

'चावल भी हैं, दूं क्या?, वो बोली।

'दे दो, चावल मुझे पसंद हैं। वहां मेरे पास दो स्थानीय व्यक्ति भी बैठे पी रहे थे। वे आपस में पहाड़ी भाषा में बतिया कर सिर हिला रहे थे जो मेरे पल्ले नहीं पड़ रही थी। एक तेज हवा का झोंका आया तो मैं सर्दी से कांपने लगा। ऐसा लगा जैसे हवा में उड़ती हुई कुछ कोहरे से की बूंदे मेरे चेहरे से टकराई हों।

'ओह! मुझे मालूम नहीं था इस इलाके में इतनी ठण्ड पड़ती है, नहीं तो गर्म कपड़े जरूर लेकर आता।, सोचते हुए ठण्ड भगानें के लिये मैंने एक पटियाला पेग कच्ची शराब का पी लिया। ऐसा लगा जैसे मेरे हलक में आग की एक लकीर सी बन गई हो। मैने आंख बंद कर गले में झांका वहां वाकई आग जलती दिखाई दे रही थी। वह एक लाइन की तरह थी।

'ये क्या है अंकल जी। इसकी शराब से मेरे गले में आग लग गई है। मैं जल रहा हूं।' मैं वहां बैठे पहाड़ियों से बोला।

यह जलती है तभी तो नशा होता है। गले में गिरेगी तो गले की नमी से आग पकड़ लेगी और इसकी भांप बनकर दिमाग में चढ़ जायेगी जिससे बहुत मजा आएगा। बस ये आप की अंग्रेजी से थोड़ी तेज है, इसे थोड़ी पीना। पिछले साल तेरी उम्र का एक लड़का पी कर वहां पीछे बाथरूम करने लगा तो खाई में लुढ़क गया।, वह झोपड़ी के पीछे की तरफ इशारा करता हुआ मुझ से हिंदी में बोला।

'फिर क्या हुआ...बच तो गया न?, मैंने झोपड़ी के पीछे देखा तो वहां खड्ड में अंधकार के अलावा कुछ दिखाई नहीं दे रहा था।

'खड्ड में गिरकर भी कोई बचा है क्या? हमने दोड़ कर देखा तो धड़ सौ फुट ऊपर झाड़ी में लटका था और गरदन किसी उभरी हुई पैनी चट्टान से कटकर नीचे लुढ़क गई थी।,

'ओह! ये तो बहुत बुरा हुआ। मुझे सोना है, यहां रात गुजारने के लिये कोई होटल, लॉज बना है क्या?, मैं उनसे अपने मतलब की बात बोला और वहां जाकर खाई में झांकने लगा जहां वो लड़का गिरा बता रहे थे। यहीं कहीं गिरा होगा। कुछ चित्र से साफ हुए तो एक लाल कमीज पहने लड़के का धड़ बहुत दूर नीचे बिजली की चमक के समय दिखाई देने लगा। मैं वापिस आकर उनके पास बैठ गया।

कमरा तो यहां नहीं मिलेगा। यहां पर केवल एक ही धर्मशाला है वो भी आजकल सरकारी कर्मचारियों की भरी पड़ी है। इन दिनों उसमें पुलिस के सिपाहियों की भरमार है।' उनमें से एक पहाड़ी नशे में आंखें मिचमिचाते हुए मेरी तरफ ध्यान से देख कर बोला।

'इतनी पुलिस का यहां क्या काम? इन दस-बीस घरों में लोग तो यहां थोड़े से ही रहते होंगे?'

'यहां पर तेरी तरह घूमने आने वाले कई लोग लापता हो गए हैं जिनमे एक बड़े नेता का लड़का भी था। और तुझे पता है अगर मामला नेताओं का हो तो जांच करने सेना भी आ सकती है ये तो पुलिस है। बस उनकी तलाश चल रही है इसलिये पुलिस का जमावड़ा यहां है।' दूसरा पहाड़ी बोला।

अगर मैं नीचे जाता हूं तो मैदानों में जाते-जाते थक कर मेरा कचमुर निकल जायेगा। ऊपर से मुझे यहां गहरी खाइयों से भी डर लग रहा है। यहां रहने का कोई तो बंदोबस्त होगा।, एक पैग और लेकर मैंने बची हुई शराब की बोतल इस आस में उन दोनों को पकड़ा दी की शायद वो ठहरने का कुछ प्रबंध कर दें, मुझे वेसे भी वो शराब अच्छी नहीं लग रही थी। कुछ कसैला खट्टा सा मुंह का स्वाद हो गया था, ऐसे जैसे खमीरी आटे की गंध से होता है।

'खाइयां तो हैं ही बच्चे। देख कर चलोगे तो उन से बच ही जाओगे पर यहां बैराघु भी उतरता है और काला मघ्घड़ भी अंधकार में चीरफाड़ कर देता है।' पहला व्यक्ति बोतल मेरे हाथ से ले मुझे और भी अधिक डराता हुआ बोला।

'मघ्घड़, बैराघु...ये क्या बला है?, मैं आश्चर्य से बोला।

'आपकी भाषा में भालू, तेंदुआ यार।,

'भालू तेंदुए भी यहां रहते हैं?,

'बहुत हैं यहां के जंगलों में, बच के रहना, पिछले वर्ष ही यहां तीन लोगों को इन खूंखार जानवरों ने मार दिया।,

'ओए अमलियो...लगता है तुम्हारे सारे कांड पिछले ही वर्ष हुए हैं। कोई ठहरने का हल बताने की बजाये डराते ही जा रहे हैं।, मैं मन ही मन सोचते हुए उन दोनों की तरफ देखने लगा। मुझे भी शराब का अच्छा सरूर हो गया था। अब मुझे ठंड बिलकुल भी नहीं लग रही थी। मैंने ढाबे वाली की रोटी का बिल चुकता कर पांच सौ रुपये का नोट अतिरिक्त उसे दे दिया।

'ये रुपये किस लिये साहेब। वह हैरान होते हुए मुझे देखने लगी।

'ये किराया समझ कर रख ले। रात मुझे इस तख्त पर ही काटने दे, सुबह उठ कर मैं अपने घर चला जाऊंगा।'

'हाय, हाय! क्या कह रहे हो साहेब। मेरा तो ये ही एक ठोर है और आप मेरे साथ सोएंगे क्या? मै अकेली विधवा औरत। यहां तो लोग लांछन लगाते देर नहीं करते। सुबह ही पंचायत कर मेरे साथ आप को भी जलील कर देंगे। आप ऐसा करो यहां से तीन मील दूर आगे रास्ते पर ही दया राम का घर है। उन्होने किराये के लिए एक छोटा हॉल बनाया हुआ है जिसमें आठ दस बैड डाल रखे हैं। पहले वो मुसाफिरों को सौ रुपया प्रति बैड का किराया लेकर एक रात के लिए ठहराते थे, अब का मुझे मालूम नहीं।

उन बेचारों पर तो ऐसी गर्दिश बरपा हुई की कुलनाश हो गया। पिछले वर्ष एक बड़ी दुर्घटना हो गई जिसके बाद दया राम चल बसे। पत्नी बरसों पहले झुड़वा बच्चों को जन्म दे भगवान को प्यारी हो गई थी। अब तो बस उनकी एकमात्र बची हुई बेटी ही वहां रहती है। हो सकता है आपको वो बैड दे दे।, ढाबे वाली एक कच्चे छोटे रास्ते की तरफ हाथ से इशारा करती हुई बोली। उसने

मेरे पूछे बिना ही किसी दया राम की पूरी दुखभरी दास्तान सुना दी थी जबकि मुझे ऐसे किस्सों में कोई दिलचस्पी नहीं थी।

'ठीक है, आप का धन्यवाद। तीन मील तो मैं दस मिनट में पहुंच जाऊंगा। और अगर बैड नहीं मिला तो यहीं आपकी झोपड़ी के पास बैठ कर रात गुजार दूंगा।, मैंने अपनी मोटर साईकिल में किक लगाई और लाईट जला कर उसके बताए कच्चे रास्ते पर चल दिया।

'अच्छा हुआ मैं पिछले वर्ष यहां नहीं आया, नहीं तो कोई दुर्घटना हो जाती। जरूर यहां पर पिछले वर्ष साढ़सती का प्रकोप रहा होगा।'

रात के आठ बज चुके थे। बाईक का चौथा गियर पड़ते ही मुझे जबरदस्त ठण्ड लगने लगी। 'बड़ा पहाड़ दर्शक बनता है, स्वेटर शाल क्यों नहीं लेकर चला।, मुझे अपने पर ही गुस्सा आ रहा था। यहां रास्ता क्या बस तीन चार फुट चौड़ी पगडण्डी सी थी जिस पर मेरी मोटर साईकिल चांदनी रात का सीना चीरते हुए चल रही थी। यहां पर पहाड़ नंगे थे जिन पर कहीं-कहीं पेड़-पौधे काले सफेद सायों के रूप में नजर आ रहा थे। चट्टानों पर जिस तरफ चांद की चांदनी पड़ रही थी पहाड़ सफेद से हो गए थे और जिस तरफ परछाई थी उधर स्याह काले नजर आ रहे थे। ऐसा लगता था जैसे यहां स्वेत-श्याम कलाकृतियां सजा कर रखी गई हों। यहां चारों तरफ छोटे-बड़े पत्थर और चट्टानों का समराज्य था।

'ये हसीन वादियां, ये शमां, इस चांदनी रात में बहती समीर, पेड़ों की सरसराती टहनियों से छनकर आती हुई प्रकाश किरणे। श्याम... मुझे तुमसे प्यार हो गया है। मैं भी तुम्हारी आंखों में अपने लिये प्यार के सागर छलकते हुए देख रही हूं। तुम्हारा रोम-रोम मुझे पाने को तड़प रहा है, लगता है तुम्हें मुझ से कुछ चाहिये। ऐसा कुछ जिससे तुम्हारी आत्मा तृप्त हो सके। तुम्हारे सीने में एक तूफान की आमद बन रही है। इसे रोको मत, प्रचंड वेग से बाहर आने दो। यह लावा अगर रुक गया तो तुम्हारा शरीर जल कर खाक हो जायेगा।

दो मील चलने के बाद मैं बाईक धीमी कर रास्ते के बाईं तरफ देखते हुए चलने लगा। सोचा कहीं दया राम का घर पीछे ना छूट जाए। थोड़ा आगे गया तो अचानक एक लड़की खाई से निकल कर रास्ते के मध्य आकर खड़ी हो गई। वो कैसे कहां से आई मैं देख ही नहीं सका। वहां पगडंडी के किनारे खड़े बड़े से पत्थर के पीछे से एक साया सा निकला और वह मेरी मोटर साईकिल के आगे आकर खड़ी हो गई। ऐसे जैसे कोई भटकती हुई रूह हो। मगर वह कोई रूह नहीं बल्की एक अति सुंदर जीती जागती पहाड़ी लड़की थी।

'यहां औरतें खाईयों में बस्ती हैं क्या जो अचानक निकल कर बीच रास्ते पर खड़ी हो जाती हैं?, मैंने बड़बड़ाते हुए ब्रेक लगाए तो वह मेरी मेरी बाइक की सफेद रोशनी में नहा गई। वह सत्तरह-अठारह वर्ष की बहुत सुंदर पतली सी लड़की थी। वह बकरी का छोटा सा मैंमना गोद में उठाए उसके सिर पर हाथ फिराती हुई मेरी तरफ देख रही थी। उसकी आंखों में शरारत और होठों पर मुस्कान थी।

'रात के आठ बजे तक भी पहाड़ी लड़कियां बकरियां चराती हैं या मरने का इरादा कर के घर से निकली हो?, रात को रूकने का कोई ठिकाना न मिलने के चलते मेरा मूड खराब था, आंखें बोझिल हो रही थी। मैं तो बस कहीं भी सोना चाहता था। दिल कर रहा था कि यहीं किसी चट्टान में बनी गुफा के अंदर घुस कर सो जाऊं।

मेरे तलख लहजे में बात करने पर भी उसकी मुस्कान में कोई अंतर नहीं आया। 'बाबू साहेब, आज मेरी बकरी का यह मैमना खो गया था। बड़ी मुश्किल से मिला है। देखो-देखो कितना शरारती है।' मेरी बात अनसुनी कर वह मेरी तरफ अपनी शोख हंसी फेंकती हुई बोली। उसकी आवाज में बला की कशिश थी। उसमें इतनी मिठास थी की मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे कानों में रस गुल गया हो।

'मेरा नाम बाबू साहेब नहीं श्याम है।' मैं उसे अपना बचपन का नाम बताते हुए बोला। अब उस चुलबुली बाला को देख कर न जाने क्यों मुझे भी हंसी आ गई थी। मैं मोटर साईकिल का इंजिन बंद कर उसके नजदीक चला आया। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मैं खुद नहीं आया बल्कि उसने मुझे अपनी तरफ खींच लिया हो। मैने लाईट बंद कर दी थी मगर चांद की चांदनी में उसके बदन का पोर-पोर मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

'और मेरा नाम कामनी ठाकुर है श्याम, मुझे मेरे घर तक छोड़ दो। वह ऐसे बोली जैसे मुझे वर्षों से जानती हो। तभी एक कदम आगे बड़ा वह मेरे और अधिक नजदीक आ गई। इतनी नजदीक की मेरी सांसों से उसकी सांसे टकराने लगीं। उसकी अति सुंदर काया, मध्यम ठोस उभार वहां पहाड़ों की चोटियों को चुनौती देते प्रतीत हो रहे थे। उसकी कमर किसी बल खाती नदी की तरह वृहद कटी प्रदेश में प्रवेश कर रही थी। होठ थे कि ऐसे मधुशाला के प्यालों की तरह लग रहे थे जिनमें मय ही मय भरी थी। उसके गाल पर एक काला तिल था जो उसकी सुंदरता में चार चांद लगा रहा था। मुझे वह स्वर्ग से पृथ्वी लोक पर आई किसी अप्सरा की तरह दिखाई दे रही थी। वह इतनी सुंदर थी की उसके हुस्न को देख स्वर्ग की परियां मेनका, उर्वशी भी इशारा करने लगे।

मैं तो क्या उसका अप्सराओं जैसा रूप लावण्य ऋषि मुनियों तक का ईमान डिगाने के लिए काफी था। उसके बदन से मदहोश करने वाली सुगंध निकल कर मेरे रोम-रोम में समाती जा रही थी।

उसमें कुछ ऐसा था जो मुझे उसकी तरफ खींच रहा था। दिल था की बहुत बेकरार हो रहा था। वह मेरे काबू में नहीं था। मैं तो बस अब उसके गुलाब की पंखुड़ियों जैसे होठों का रस पीना चाहता था। मैं उसे अपने बाहुपाश में भरकर उसका अंग-अंग चूमना चाहता था। मेरा अब खुद पर ही नियंत्रण नहीं रहा था। मैं उसे सम्पूर्ण रूप से पाना चाहता था।

'कामनी... इस विराने में कहां भटक रही हो तुम मेरी हसीन परी, बाईक पर बैठो तुम्हें तुम्हारे घर पहुंचा देता हूं।, उसके कंधे पर हाथ रख बोलते हुए मेरी जबान लड़खड़ा गई। उसका गजब का हुस्न देख मेरे अंदर एक वासना का तूफान सा उठ खड़ा हुआ।

हुस्न और इश्क एक आग का दरिया है, इस अनजान इलाके में कहीं छित्तर परेड न हो जाए, मैं अपने आपको बहकने से रोकने के लिये जी जान से कोशिस करने लगा।

'ये हसीन वादियां, ये शमां, इस चांदनी रात में बहती समीर, पेड़ों की सरसराती टहनियों से छनकर आती हुई प्रकाश किरणे। श्याम... मुझे तुमसे प्यार हो गया है। मैं भी तुम्हारी आंखों में अपने लिये प्यार के सागर छलकते हुए देख रही हूं। तुम्हारा रोम-रोम मुझे पाने को तड़प रहा है, लगता है तुम्हें मुझ से कुछ चाहिये। ऐसा कुछ जिससे तुम्हारी आत्मा तृप्त हो सके। तुम्हारे सीने में एक तुफान की आमद बन रही है। इसे रोको मत, प्रचंड वेग से बाहर आने दो। यह लावा अगर रूक गया तो तुम्हारा शरीर जल कर खाक हो जायेगा। अब ध्यान से सुनों, इस बड़े पत्थर से पचास फुट नीचे एक गुफा है। चलो उसमें कुछ देर हम जी भरकर प्यार कर लें। ऐसा प्यार जो किसी ने अब तक न किया हो। तुम मेरे साथ जबरदस्ती बलात्कार करना, जब मैं चित्कार करूंगी तो दखना तुम्हे कितना मजा आएगा। जल्दी चलो मुझ से बर्दाश्त नहीं हो रहा, फिर हम घर चले जाएंगे।, कामनी ने मैमने को नीचे छोड़ा और मेरे गले में अपनी बाहों का हार पहना दिया।

मैं हैरान था, जो सोच रहा था वह मेरे मन की भाषा किस प्रकार समझ रही थी। अब उसके चेहरे पर असीम वेदना, दर्द के निशान उभर आए। वासना का जलजला दूर तलक कहीं नजर नहीं आ रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे मैं किसी अबोध बालिका के सामने खड़ा हूं। एक ऐसी नटखट अबोध बालिका जो गंगा जल की तरह पवित्र है। मस्त पवन के झोंकों की तरह शीतल है।

कामनी ने अपनी दोनों हथेलियों पर मेंहदी रचाई हुई थी। उसकी सागर से भी गहरी आंखों में इस समय बला की चमक थी मगर उसकी बात सुन मुझे एक झटका सा लगा। ऐसे जैसे अचानक मैं होश में आ गया हूं। अब मेरा सारा प्यार का बुखार एक झटके से उतर गया था। मैं एकाएक उस लड़की से कुछ डर सा गया।

'चीखें, बलात्कार... पागल है क्या? हट पीछे, मैं ऐसा लड़का नहीं हूं।' कहकर मैने उसकी बाहों को झटके से अपने शरीर से अलग कर दिया। 'आखिर ये है क्या बला? अभी पांच मिनट पहले खाई की तरफ से आई, दो बातें की और प्यार हो गया। जरूर ये कोई सस्ती कॉलगर्ल है। नीचे मैदानों के अमीरजादों के लोफर लड़के यहां नशा कर, नोट दे इस पर टूट पड़ते होंगे तो यह चिल्लाती होगी, लगता है इसने मुझे भी उन्हीं जैसा समझ लिया। और समझे भी क्यों न, मैं कौन सा ठीक ठाक था। शराब पीकर मोटर साईकिल चला रहा था तो इसका ऐसा समझना स्वभाविक ही था।

उसके हाथों की मेंहदी देख कर मुझे और भी यकीन हो गया। नीचे मैदानों में मेंहदी रचाये सड़कों के किनारे ऐसी कॉलगर्ल खड़ी हो मोटे ग्राहक का इंतजार करती रहती हैं, फिर किसी अकेले कार वाले को हाथ दे रेट तय कर कार में घुस जाती हैं। अब वह मुझे बिलकुल भी सुंदर नहीं लग रही थी। मुझे ऐसी लड़कियों से सख्त नफरत है क्योंकि कई लोग तो इनके शिकार हो एड्स जैसी भयानक बीमारी के शिकंजे में फंस असमय मौत का ग्रास बन जाते हैं।

मैं उसकी तरफ घृणा से देखते हुए बिना कुछ बोले अपनी बाईक की तरफ कदम बढ़ाने लगा तो उसने मेरा हाथ पकड़ लिया।

'नहीं...नहीं, मैं ऐसी नहीं हूं जैसा तुम सोच रहे हो।, वह चित्कार कर उठी, मैं तो बस ये देख रही थी कि तुम भी उन लफंगों के ही जैसे हो या अलग।'

मैं हैरान था, जो सोच रहा था वह मेरे मन की भाषा किस प्रकार समझ रही थी। अब उसके चेहरे पर असीम वेदना, दर्द के निशान उभर आए। वासना का जलजला दूर तलक कहीं नजर नहीं आ रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे मैं किसी अबोध बालिका के सामने खड़ा हूं। एक ऐसी नटखट अबोध बालिका जो गंगा जल की तरह पवित्र है। मस्त पवन के झोंकों की तरह शीतल है।

'कैसी नहीं हो तुम? मैंने तो कुछ कहा ही नहीं। चलो तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ देता हूं। मुझे भी दया राम जी के घर जाना है। कहीं उनकी बेटी सो न जाए। मुझे रात गुजारने के लिये एक बैड किराये पर चाहिये। नहीं तो तुम्हे घर छोड़ मुझे सचमुच तुम्हारी बताई गुफा में ही रात गुजानी पड़ेगी। उसका घर मालूम है तुझे? क्या नाम बताया था अपना....हां कामनी।' मैं उसका नाम याद करता हुआ बोला।

(क्रमशः)

गांव गगनपुर जिला अम्बाला,
डाकघर बराड़ा, हरियाणा-133201

कहानी

गुरु गोविंद

◆ ब्रह्म दत्त शर्मा

''आप स्वयं ही देख लीजिए! छः में से पांच विषयों में फेल! दो में जीरो!'' प्यारे लाल जी ने रिपोर्ट-कार्ड थमाते हुए कहा।

रामपाल को बेटे के इतने कम अंक देखकर जैसे सदमा लगा था। वह पढ़ाई में कमजोर था; शरारती और लपरवाह भी, परन्तु इस कद्र नालायकी की कतई उम्मीद न थी। उसने जलती निगाहों से बेटे को घूरा- ''तुम्हें इस जीरो के लिए ही स्कूल भेजते हैं?''

दिनेश अपराध-बोध से घिरा, नजरें झुकाए चुपचाप खड़ा रहा, किंतु पिता का क्रोध उत्तरोतर बढ़ने लगा ''...बोलता क्यों नहीं?''

शून्य अंक लेने के बाद दिनेश के पास शायद कोई जवाब था ही नहीं। उसे देर तक यूं ही गुमसुम खड़े देखकर रामपाल का धैर्य जवाब दे गया। बेटे को पीटने के लिए कुर्सी से उठ खड़ा हुआ, किंतु स्टाफ रूम में मौजूद दो और अध्यापकों को अपनी तरफ घूरते देख ठिठक गया। स्कूल की बजाय कहीं और होता तो आज दिनेश की खैर नहीं थी।

किसी तरह क्रोध के ज्वालामुखी को दबाकर वह प्यारे लाल से मुखातिब हुआ-''मास्टर जी, अब आप ही इसका इलाज कीजिए!''

''हमारे पास क्या इलाज है? इसका पढ़ने का ही मन नहीं! ..... ऊपर से आप के पास भी बेटे के लिए समय नहीं। शनिवार को 'पेरेंट्स मीट' में क्यों नहीं आए?'' प्यारे लाल ने थोड़ी तलखी दिखलाई।

''मास्टर जी, मैं तो सुबह से शाम फैक्ट्री में काम करता हूं। उस दिन सुपरवाइजर ने छुट्टी ही नहीं दी, इसलिए आज आना पड़ा। '' रामपाल ने सफाई दी। फिर वापस बेटे की नालायकी पर लौट आया- ''सर, इस लड़के का मैं क्या करूं?''

''आप इसे घर बिठाइए! पढ़ना इसके बस का है ही नहीं!'' प्यारे लाल सहजता से बोले।

''घर बिठाइए?'' रामपाल को हैरानी हुई, "मास्टर जी, आप क्या कह रहे हैं? आज के जमाने में पढ़े-लिखों को कोई-कोई नहीं पूछता, अनपढ़ों की तो बात ही क्या! बिना पढ़े इंसान पूंछ और सींग के बिना जानवर जैसा ही है। आप चाहे जितना मर्जी मारिए-पीटिए, लेकिन इसे किसी भी तरह से पास करवाइये।''

''पीटने से भी क्या होता है? कितनी बार क्रोध में मुझसे थप्पड़ भी लगे हैं, किंतु कभी जरा-सा भी असर दिखाई नहीं दिया।''

''सर, थप्पड़ों से भला इसका क्या बिगड़ने वाला?'' उसने एक बार फिर से दिनेश को गुस्से और नफरत से घूरा- ''खा-खाकर देखो कैसा साँड हो रहा है। आप डण्डा लेकर इसकी चमड़ी उधेड़ दीजिए। आपको कोई.....''

प्यारे लाल जी ने उसे बीच में ही टोका- '' देखिए हम स्कूल टीचर हैं, कोई पुलिस वाले नहीं। वैसे भी सरकार ने मार-पिटाई बिलकुल बंद कर रखी है। अब हमें भी पीटने की इजाजत नहीं है।''

बाप को सुनकर आश्चर्य हुआ- ''सर, मेरे और आपके बीच में सरकार कहां से आ गई? बिना पढ़े कल जब यह भूखा मरेगा, तो सरकार क्या इसे खाने को देगी? मैं आपको छूट दे रहा हूं।.. ... यह प्यार से बिलकुल भी नहीं मानेगा। लातों के भूत भला बातों से भी कहीं मानते हैं!''

प्यारे लाल को अपनी कक्षा के लिए देर हो रही थी। पीछा छुड़ाते हुए बोले- ''ठीक है, चलो एक बार फिर से कोशिश करके देख लेते हैं।''

''सर, सिर्फ कोशिशों से कुछ भी नहीं होगा। आप मेरी बात मानिए। दूसरे बच्चों के साथ आप जैसा मर्जी सुलूक करें, मगर इसकी मुरम्मत तो आपको करनी ही पड़ेगी। हमारी तरफ से खुली छूट है। आप चाहें तो मैं एफिडेविट लिखकर दे सकता हूं। ...... अगर थोड़े दिन आपने यह कर दिया, फिर देखना इसके नम्बर! इसमें दिमाग की कोई कमी नहीं, सिर्फ लापरवाह है। इसका बड़ा भाई भी एक बार ऐसे ही तंग करने लगा था, मैंने उसके मास्टर जी से कहकर यही इलाज करवाया था। आज वह इंजीनियरिंग कर रहा है।''

बेटे को पीटे जाने के पक्ष में रामपाल के पास बहुत-सी उलटी-सीधी दलीलें थीं। प्यारे लाल जी की इनमें कोई रुचि नहीं थी, क्योंकि ज्यादातर कमजोर विद्यार्थियों के माता-पिता यही

कहकर जाते थे। वे जल्दी में थे और पिंड छुड़ाने खातिर रामपाल की 'हां' में 'हां' मिला दी। तब कहीं जाकर ही उनकी जान बच सकी।

बाप को जैसे-तैसे निपटाकर प्यारे लाल जी तेजी से अपनी कक्षा की तरफ बढ़ चले। एक बच्चे की वजह से आधा पीरियड बर्बाद हो जाने पर उन्हें अफसोस हुआ। तभी उन्हें बरामदे से गुजरते देख साथी अध्यापक सुधीर ने पीछे से आवाज लगाई- ''प्यारे लाल जी, बच्चों की जरा कम मार-पिटाई किया करो!''

वे मुड़कर सुधीर जी के पास रुक गए- ''अरे, क्या पीटना? अभी-अभी एक महाशय नाराज होकर गए हैं कि मैं उनके बेटे को न पीटककर नालायक बना रहा हूँ।''

''उसे छोड़िए! कल आपने किसी नौवीं कक्षा के बच्चे को ज्यादा पीटा था क्या?" वे अचानक गंभीर हो गए- ''.....ऑफिस में कुछ लोग बैठे हैं, जो आपकी शिकायत लेकर आए हैं। काफी नाराज और गुस्से में लग रहे हैं।'' सुधीर के बाहर जाते ही उनकी कक्षा में बच्चे शोर करने लगे थे, जिन्हें डांटते हुए वे वापस कक्षा में घुस गए।

प्यारे लाल जी यह अप्रत्याशित खबर सुनकर घबरा गए। सुधीर के जाने के बाद भी वे कुछ पल वैसे ही जड़वत् और किंकर्त्तव्यविमूढ़-से खड़े रहे। फिर चुपचाप अपनी कक्षा की तरफ चल दिए।

स्कूल में भिन्न-भिन्न जातियों, संप्रदायों, धर्मों, वर्गों और इलाकों के सत्ताईस सौ विद्यार्थी पढ़ते थे। सभी के परिवारों का रहन-सहन, सोच-विचार और पृष्ठभूमियां अलग-अलग थी। किसी माता-पिता को बच्चे को डांटने तक से भी सख्त एतराज था, तो किसी को डंडों से पीटा जाना भी कम लगता था। कोई शारीरिक दंड को मध्ययुगीन मानसिकता और परपीड़न का आनंद लेने जैसा मानता था, तो कोई बच्चों को अनुशासित और शिक्षित बनाने में इसे परम आवश्यक समझता था। सबकी राय अलग-अलग थी।

स्कूल में भिन्न-भिन्न जातियों, संप्रदायों, धर्मों, वर्गों और इलाकों के सत्ताईस सौ विद्यार्थी पढ़ते थे। सभी के परिवारों का रहन-सहन, सोच-विचार और पृष्ठभूमियां अलग-अलग थी। किसी माता-पिता को बच्चे को डाँटने तक से भी सख्त एतराज था, तो किसी को डंडों से पीटा जाना भी कम लगता था। कोई शारीरिक दंड को मध्ययुगीन मानसिकता और परपीड़न का आनंद लेने जैसा मानता था, तो कोई बच्चों को अनुशासित और शिक्षित बनाने में इसे परम आवश्यक समझता था। सबकी राय अलग-अलग थी।

प्यारे लाल जी ने तेईस वर्ष पहले अध्यापन की शुरुआत की थी। अन्य अध्यापकों की भांति उन्हें पढ़ाई और अनुशासन के लिए विद्यार्थियों को पीटना न सिर्फ अनिवार्य लगता था, बल्कि मुर्गा बनाकर उनकी खूब धुलाई भी किया करते थे। किंतु कालांतर में बच्चों को शारीरिक दंड दिए जाने के खिलाफ आवाजें उठने लगी। स्कूलों में बच्चों की पिटाई की घटनाएं अखबार और टी. वी. की सुर्खियां बनने लगी। परिणामस्वरूप बच्चों को शारीरिक दंड दिए जाने पर राष्ट्रव्यापी बहस छिड़ गई। इसके पक्ष और और विशेष तौर पर विपक्ष में अनेक दलीलें दी जाने लगी। अन्ततः जनमत को देखते हुए सरकार द्वारा बच्चों को मारना-पीटना, यहां तक कि डांटना भी बैन कर दिया गया। ज्यादातर अध्यापक नए नियम-कानूनों के खिलाफ थे, लेकिन लागू होते ही वे उनसे डरने भी लगे थे। प्यारे लाल जी भी इसका अपवाद न थे, परन्तु वर्षों की पड़ी आदत एकदम से छूटती भी तो नहीं। बेशक वर्षा के अध्यापन के बाद धीरे-धीरे उन्हें खुद भी आभास होने लगा था कि मार-पिटाई से कोई खास फायदा नहीं होता। अन्ततः इस विषय पर भी उन्होंने ठीक वही 'मध्यम मार्ग' अपना लिया, जैसा वे अपने जीवन के ज्यादातर मामलों में अपनाते थे। उन्होंने डंडे का प्रयोग बिलकुल बंद कर दिया, किंतु दो-चार थप्पड़ों से उन्हें आज भी गुरेज नहीं था।

प्यारे लाल जी कक्षा में जाकर पढ़ाने लगे थे, किंतु तल्लीनता से नहीं पढ़ा पा रहे थे। बार-बार मन सुधीर की बात में अटक जाता, जिससे वे परेशान हो उठते। पढ़ाते-पढ़ाते अचानक चुप हो जाते और उसी बारे में सोचने लगते। फिर बाहर झांकने लगते जैसे किसी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हों। लाख चाहने पर भी वे एकाग्रचित नहीं हो पा रहे थे। कुछ देर के संघर्ष के बाद उन्होंने हार मान ली और पाठ को अधूरा छोड़कर बोले- ''आगे कल पढ़ाएंगे!''

तभी स्कूल का चपरासी यमराज की भांति प्रकट हुआ- ''आपको प्रिंसीपल ऑफिस में बुलाया गया है!'' चपरासी के चेहरे पर एक अजीब-सी रहस्यमयी मुस्कान थी। अक्सर यह तब होती थी, जब उसे मालूम हो कि संबंधित अध्यापक को ऑफिस में डाँट पड़ने वाली है। उससे पूछना बेकार था; क्योंकि जानने के बावजूद भी वह अनजान बन जाएगा। आखिर वफादार जो ठहरा था! किसी बलि दिए जाने वाले बकरे की भांति प्यारे लाल जी चुपचाप पीछे-पीछे चल पड़े। रास्ते में मिले दो अध्यापक भी उन्हें देखकर अजीब ढंग से मुस्करा रहे थे। अध्यापन कार्य से बुरी तरह ऊबे इन अध्यापकों को दूसरों को फंसते देखकर बड़ी राहत मिलती है।

प्यारे लाल जी को ऑफिस किसी न्यायालय में तब्दील हुआ प्रतीत हुआ, जहां उसे एक मुजरिम के तौर पर पेश किया गया हो। अदालत में प्रिंसीपल के अलावा वाइस प्रिंसीपल सुरेश शर्मा, तीन बाहरी लोग और साथ में वह लड़का कर्ण भी था, जिसको उसने कल कक्षा में पीटा था। सभी के चेहरों पर झलक रहा क्रोध,

नाराजगी और तनाव मानों उन्हें पहले ही अपराधी घोषित कर चुका था।

उनके बैठते ही प्रिंसीपल ने शुरुआत की- ''प्यारे लाल जी, इनका कहना है कि कल आपने इस बच्चे को बुरी तरह मारा! .. ....पूरा मामला क्या है? हमें साफ-साफ बताइये!"

सबके तेवरों से प्यारे लाल जी पहले ही सहमे हुए थे। जवाब देते हुए घबराहट और उत्तेजना में जैसे उनकी जुबान लड़खड़ाने लगी- ''सर, यह लड़का मुझे शुरू से ही कक्षा में तंग.......कल भी जब मैं तीसरे पीरियड में इनकी कक्षा में था ...... पीछे बैठा लगातार बातें कर रहा था। बीच-बीच में हँस भी......'' धीरे-धीरे उन्होंने अपनी उत्तेजना पर काबू पाया और स्थिर होकर बोले- ''सर, कुछ देर तक मैं इसे आंखों ही आंखों में घूरता रहा कि शायद स्वयं ही चुप हो जाएगा, लेकिन इसकी उद्दण्डता बढ़ती गई। आखिर मेरे बर्दाश्त से बाहर हो गया। मैंने इसे आगे बुलाया और पूछा हम कहां से पढ़ रहे हैं? .... सबसे पहले तो इसके पास किताब ही नहीं थी। दूसरा, कहां से पढ़ा रहा हूं तो छोड़िए, इसे इतना भी नहीं मालूम कि कौन-सा पाठ पढ़ रहे हैं। कबीरदास की जगह तुलसीदास बताने लगा। मैंने इसे दो थप्पड़ लगाए। मुझ पर आंखें तरेरने लगा, मैंने दो और जड़ दिए। बस इतनी-सी बात है!''

''आप झूठ बोल रहे हैं! आपने मुझे चार नहीं नौ-दस थप्पड़ मारे। आप चाहें तो अरूण से पूछ लीजिए!'' कर्ण अचानक आक्रामक होकर ढिठाई से बोला। प्रिंसीपल और सुरेश शर्मा भी उसके तेवरों से अचंभित थे।

प्यारे लाल जी लड़के के मुंह नहीं लगना चाहते थे, परंतु स्वयं का बचाव भी जरूरी था-'' अरुण तो तुम्हारा दोस्त है, जो एक नम्बर का झूठा और निकम्मा है। उसे छोड़कर पूरी क्लास में से किसी को भी बुला लीजिए।''

''छोड़िए मास्टर जी, किसी को भी बुलाने की जरूरत नहीं! बच्चे आप के डर के मारे सच्चाई थोड़ी ही बतला देंगे। लेकिन वास्तविकता यही है कि आपने इस बच्चे को बड़ी बेरहमी से पीटा है। दो-चार थप्पडों से कान का पर्दा तो नहीं फट जाता!'' बाप के साथ आए एक सूटिड-बुटिड व्यक्ति बोले।

''कान का पर्दा?'' प्यारे लाल जी का मुंह आश्चर्य से खुले का खुला रह गया।

''जी हां, कल आपने इसके कान का पर्दा फाड़ दिया। कान में तो पहले से ही दर्द रहता था, ऊपर से आपने इतना मारा कि अब सुनना ही बंद हो गया।''

प्यारे लाल जी अब और भी ज्यादा परेशान होकर बोले- ''अरे, मैंने कान पर तो मारा ही नहीं! आप लोग तो रस्सी का सांप बनाकर मुझे ख़ाहमख़ा फंसा रहे हैं।''

बहुत देर से चुपचाप बैठे खून के घूंट पी रहे बाप के क्रोध का ज्वालामुखी फट गया- ''तूने मार-मारकर लड़के को बहरा बना दिया और अब कहता है हम तुझे फंसा रहे हैं।'' फिर वे जैसे अपना आपा ही खो बैठे- ''तेरी स्साले हिम्मत कैसे हुई मेरे बेटे को हाथ लगाने की? खुद को बड़ा भारी बदमाश समझता है! ला मैं देखूं तेरी बदमाशी!'' अचानक वह स्प्रिंग की भांति उछलकर खड़ा हो गया और प्यारे लाल जी को सीधी चुनौती देने लगा। इससे पहले प्रिंसीपल, वाइस प्रिंसीपल और उसके अपने साथी उसे रोक पाते वह प्यारे लाल पर मां-बहिन की गालियों की बौछार कर चुका था। क्रोध व उत्तेजना से उसका पूरा शरीर सूखे पत्ते की भांति कांप रहा था। बड़ी मुश्किल से उसे काबू किया गया।

प्रिंसीपल ने डाँटा-''आप गालियां क्यों बक रहे हैं? हम आपकी बात सुन रहे हैं, फिर यह कौन-सा तरीका हुआ?'' उसके साथी भी शांत करने में लगे थे। काफी समझाने-बुझाने के बाद ही उसे चुप कराया जा सका, लेकिन बैठा-बैठा भी वह दांत पीस रहा था।

प्यारे लाल जी पर यह हमला अचानक और अप्रत्याशित था। वे हतप्रभ और भौचक्के थे। सहसा उन्हें समझ ही नहीं आया कि क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करें। भद्दी गालियां अभी भी कानों में गूंज रही थी। अपने तेईस वर्ष के अध्यापन काल में कभी इस कद्र अपमानित और लज्जित महसूस नहीं किया था। क्रोध व अपमान से उनका चेहरा सूर्ख लाल हो गया। मन किया कि बाप को इस बद्तमीजी के लिए सबक सिखा दें। खुद मर जाए या उसे जान से मार दे। किंतु वे सिर्फ सोचते ही रहे, बोल और कर कुछ भी न सके। उन्हें जैसे काठ मार गया था। काश धरती फट जाए और वे उसमें समा जाएं!

तभी दो प्रेस रिपोर्टर अंदर आ धमके। उन्हें बाप द्वारा यहां आने से पहले फोन किया गया था। दोनों चुपचाप एक काने में बैठे सारा नजारा देखने लगे।

प्रिंसीपल साहब पत्रकारों को देखते ही घबरा गये। वे अचानक नर्म पड़कर कर्ण के परिजनों से बोले- ''सर, मैं तो स्वयं पिटाई के खिलाफ हूं। हर स्टाफ मीटिंग में इस बारे में बार-बार दोहराता हूं। बकायदा हर टीचर से लिखित में भी ले रखा है। प्यारे लाल जी को भी इतने वर्ष पढ़ाते हुए हो गए, फिर भी जाने कैसे गलती कर बैठे। कई बार गुस्से में हो भी जाती है। अब आप ज्यादा बात मत बढ़ाइये और जो हुआ उसे भूल जाइये। बच्चे के कान का इलाज भी यही अध्यापक करवा देंगे! ...... प्यारे लाल जी, माफी मांगिए!''

''माफी से क्या हमारे बच्चे का कान ठीक हो जाएगा? डॉक्टर ने कहा है बच्चा उम्र-भर के लिए बहरा भी हो सकता है। अगर आपके बच्चे के साथ कोई ऐसा करे, तो क्या आप उसे माफ कर देंगे?'' सूटिड-बुटिड व्यक्ति ने कहा।

प्रिंसीपल नाराजगी दूर करने में लगे थे-'' सर, अब आप बात को ज्यादा लंबा मत खींचिए! जो गलती उनसे हो गई, अब उसमें

बताइये और क्या किया जा सकता है?'' फिर उन्होंने प्यारे लाल जी को अभी तक भी माफी न मांगने के लिए तिरछी नजर से घूरा- ''जल्दी माफी मांगिए!''

प्यारे लाल जी अभी तक अपने अपमान, बेचैनी, दुविधा और घबराहट से बाहर नहीं आए थे। कुछ देर तक उनके मुंह से आवाज ही नहीं निकली। अचानक उनका स्वाभिमान जाग उठा और मन ही मन जैसे ठान लिया हो कि वे अब और ज्यादा अपमान सहन नहीं करेंगे- ''सर, मैं किस बात की माफी मांगूं? बिना मेरा पक्ष जाने ही आप मुझे कसूरवार ठहरा रहे हैं। आपको मालूम होना चाहिए यह लड़का सरासर झूठ बोल रहा है। कान खराब होने का नाटक कर रहा है। आप मुझे वर्षों से जानते हैं, फिर भी अगर यकीन नहीं हो तो क्लास के किसी भी बच्चे को बुलाकर पूछ लें। .... मुझे ये गालियां दे रहे हैं, मारने को दौड़ रहे हैं। ऐसे व्यवहार कर रहे हैं, जैसे मैंने थप्पड़ की बजाय बच्चे को जान से ही मार दिया हो। और आप मुझे ही माफी मांगने व पैसे देने को कह रहे हैं! यह इंसाफ नहीं है! .... मैं माफी नहीं मांगूंगा।''

प्रिंसीपल को प्यारे लाल की इस अप्रत्याशित बहादुरी पर पहले आश्चर्य हुआ और फिर नाराजगी। आसानी से सुलझ रहे एक पेचीदे मामले को वे और उलझाने पर तुले थे। इससे पहले वे आगे कुछ कहते, कर्ण के साथ आए तीसरे शख्स चिढ़ गए- ''प्रिंसीपल साहब, रहने दीजिए! हमें इनकी माफी चाहिए भी नहीं। हम तो सीधे पुलिस में एफ. आई. आर. दर्ज कराएंगे। हमारे पास बच्चे का मेडिकल सर्टिफिकेट भी है। यहां तो सिर्फ सूचित करने आए थे; वर्ना बाद में आप ही कह देते पहले मेरे पास क्यों नहीं आए? ....इस मास्टर की तो हम सारी हेकड़ी निकालकर इसे गज की भांति सीधा कर देंगे।''

''आपने जो करना है, कर लें! जहां जाना है चले जाएं!'' कहकर प्यारे लाल जी गुस्से में तमतमाए उठकर बाहर चले आए।

उनके जाते ही कर्ण के परिजन भी पीछे-पीछे उठकर जाने को खड़े हुए, लेकिन तभी चपरासी चाय की केतली और कप लिए अंदर चला आया। प्रिंसीपल साहब ने सबको जबरदस्ती चाय के लिए रोक लिया था।

बाहर आकर प्यारे लाल जी अत्यंत परेशान, बेचैन और घबराए हुए थे। उन्हें सूझ नहीं रहा था अब वे क्या करें, कहां जाएं? उनमें हिम्मत, डर, क्रोध और साहस जैसी भावनाएं गड्ड-मड्ड हो रही थी। तभी अंदर बैठे सुरेश शर्मा जी भी उनके पीछे-पीछे बाहर चले आए। वे ऐसे 'खास' मामलों को निपटाने के विशेषज्ञ माने जाते थे।

सुरेश शर्मा जी उन्हें कैंटीन के एक कोने में ले जाकर समझाने लगे- ''प्यारे लाल जी, क्यों जिद कर रहे हो? माफी मांगकर मामले को रफा-दफा क्यों नहीं करते। वर्ना बेकार में बात पुलिस और अखबार तक चली जाएगी। स्कूल की भी बदनामी होगी!''

प्यारे लाल जी खफा होकर बोले-''स्कूल की बदनामी? ... .. और मेरे मान-अपमान की किसी को कोई फिक्र नहीं? आप बिना कोई तहकीकात किए मुझे ही कसूरवार ठहरा रहे हैं।''

''प्यारे लाल जी, मुझे मालूम है आपका कोई कसूर नहीं। लड़के के कान में भी कोई खराबी नहीं है। होगी भी तो कोई छोटी-मोटी। वह मेडिकल सर्टिफिकेट भी तुम्हें सबक सिखाने के लिए झूठा बनवाया गया होगा। सफाई देने की कोई जरूरत नहीं है!''

प्यारे लाल जी ने उन्हें आश्चर्य से घूरा और फिर उत्तेजित होकर बोले- ''कमाल है, सबकुछ जानने के बावजूद भी आप लोग मुझे ही माफी मांगने और पैसे देने के लिए कह रहे हैं?''

अगले दिन प्यारे लाल जी के पाँव कक्षा की तरफ चलने को जैसे उठ ही नहीं रहे थे। काश वे वहां जाने से किसी तरह बच पाते! किंतु दूसरा कोई उपाय भी तो न था। अंदर पहुंचते ही विद्यार्थी टकटकी लगाए उन्हें ऐसे घूर हुए थे, जैसे आज ही पहली बार देखा हो। ज्यादातर के चेहरे पर मुस्कराहट थी। मानों वे कल ऑफिस के अंदर का किस्सा मन ही मन दोहराकर उसका आनंद ले रहे हों। प्यारे लाल जी अपमान और शर्मिंदगी से जैसे जमीन में गड़ गए थे। फिर उनकी नजर पिछले बैंच पर बैठे कर्ण पर पड़ी।

उनकी उत्तेजना के विपरीत शर्मा जी शांत थे- ''प्यारे लाल जी, गुस्सा छोड़ो और दो मिनट के लिए ठंडे दिमाग से सोचो! जब आपकी पुलिस में एफ. आई. आर. दर्ज होगी, तो आप उस सर्टीफिकेट को झूठा कैसे साबित कर पाओगे? दूसरा, जब स्कूल मैनेजमैंट को पता चलेगा कि आपके माफी न मांगने से ही सारा मामला बिगड़ा है, तो सबसे पहले वही नाराज होंगे। हो सकता है आपके खिलाफ कार्यवाही भी करें। .....आप भूल रहे हैं कि बूढ़े सेठ जी वाले दिन अब नहीं रहे, जो ऐसे मामलों में अध्यापकों के बचाव में चट्टान की भांति डटकर खड़े हो जाते थे। वे होते तो प्रिंसीपल साहब से दो टूक कह देते- 'बच्चे का नाम काटकर घर भेज दो, बाकी मैं खुद संभाल लूंगा!' फिर उलटा यही लोग बच्चे का नाम जुड़वाने खातिर हमारे आगे हाथ-पैर जोड़ते। .... सेठ जी के लिए स्कूल एक मंदिर था, किंतु उनकी अगली पीढ़ी के लिए यह सिर्फ कमाई करने वाली एक दुकान है! हर अध्यापक एक नौकर और हर बच्चा एक ग्राहक। जितने ग्राहक बढ़ेंगे, उतनी ही ज्यादा कमाई होगी। हर साल कमाई बढ़ती ही जानी चाहिए। आपकी वजह से होने वाली बदनामी से अगर दस बच्चे भी स्कूल छोड़ गए, तो उन्हें लाखों का नुकसान होगा। जिस नौकर की वजह से उनके ग्राहक खराब हों, उसे हटाते हुए भी उन्हें कोई पश्चात्ताप नहीं होगा। क्या आप इतना बड़ा जोखिम उठाने

को तैयार हो?''

प्यारे लाल जी ने इतनी दूर तक तो सोचा ही नहीं था। वे तो बस तैश में उठकर बाहर चले आए थे। बेटी बी. एस. सी. फाइनल में थी और बेटे ने भी इसी वर्ष बी. टैक में दाखिला लिया था। नौकरी के बिना परिवार के गुजारे की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वास्तविकता सामने आते ही उनका जोश जैसे ठंडा पड़ने लगा। वे सोच में डूब गए। क्या उन्हें माफी मांगनी चाहिए?. ... दूसरी तरफ इतने बड़े अपमान के बाद उनका जमीर उन्हें झुकने की इजाजत नहीं दे रहा था।

कुछ देर तक वे यूं ही उलझन और तनाव से घिरे बैठे रहे और फिर शर्मा जी से बोले- ''कुल मिलाकर आपका मतलब ये है कि मुझे ही माफी मांगनी पड़ेगी। सिर्फ माफी ही क्यों, बल्कि झूठमूठ के इलाज के नाम पर पैसे भी देने पड़ेंगे! वाह क्या बढ़िया न्याय है!'' वे व्यंग्य में पहली बार मुस्कराये, किंतु जल्दी ही गंभीर होकर फिर से सोच में डूब गए। वे एक बड़ी कशमकश में थे। अन्ततः बोले- ''मान लीजिए आपके कहने से मैं माफी मांग भी लेता हूं, तो क्या कल कक्षा में बच्चे मेरा मजाक नहीं उड़ाएंगे? किस मुंह से साल भर उनका सामना करूंगा? मैं आगे से फिर कभी उन्हें डाँट भी न सकूंगा। .... ठीक है मुझे नौकरी की जरूरत है, लेकिन उसके लिए क्या मैं इतना गिर जाऊं?''

शर्मा जी भी हार मानने को तैयार नहीं थे। आखिर ऐसे मामलों के सुलझाने के उस्ताद वे यूं ही नहीं बने थे- ''प्यारे लाल जी, तुम्हें सिर्फ कक्षा के बच्चों के अपमान का डर दिखाई देता है। कल जब अखबार में छपने के बाद पूरी दुनिया में तुम्हारी बदनामी होगी, उसका क्या? न्यूज चैनल वालों को भी फोन कर रखा है। वे भी पहुंचने ही वाले होंगे। ऐसे मामलों को तो पत्रकार सूंघते फिरते हैं। शाम को देखना इस खबर को वे टी. वी. पर कैसे नमक-मिर्च लगाकर पेश करेंगे।'' शर्मा जी अचानक टी. वी. पत्रकार के अंदाज में खबर को सनसनीखेज बनाते हुए बोले- 'ध्यान से देखिए इस बेरहम अध्यापक को, जिसने एक मासूम बच्चे को इतनी बेरहमी से पीटा कि उसे उम्र-भर के लिए बहरा बना दिया!' फिर वापस सामान्य हो गए- ''प्यारे लाल जी, आप किस-किस को सफाई देते फिरोगे कि मेरा कोई कसूर नहीं है। मैंने बच्चे को ज्यादा नहीं मारा था। बहरा होने की खबर झूठ है। ....कौन मानेगा तुम्हारी बात? फिर शहर के लोग क्या तुमसे पूछने आएंगे कि सच क्या है? हर कोई जरा-सा भी शक किए बिना तुम्हें कसाई मानकर बैठ जाएगा। वर्षों से कमाई सारी इज्जत एक पल में ही मिट्टी में मिल जाएगी। कल सारी दुनिया में बदनामी हो, उससे तो बेहतर है पांच-सात लोगों के बीच ही बात रहे। नौकरी भी बची रहेगी। समझदारी इसी में है, आगे आपकी मर्जी!''

प्यारे लाल जी उन्हें बड़े गौर से सुन रहे थे। उन पर अपनी सलाह का सकारात्मक असर पड़ते देख शर्मा जी उत्साहित होकर समझाने लगे- ''अगर नहीं मानोगे तो पुलिस में एफ. आई. आर. दर्ज होगी। फिर भी तो लोगों की मिन्नतें करते घूमोगे- 'चलो मेरे साथ पुलिस स्टेशन!' वहां भी तुम्हारी कौन सुनेगा? अंततः सबके सामने माफी ही मांगनी पड़ेगी। इलाज के पैसे तो देने ही पड़ेंगे, साथ में पुलिस वालों को भी पूजना पड़ेगा। नहीं दोगे तो सीधा गिरफ्तार! सड़ते रहना जेल में और लड़ते रहना केस! सारे कानून बच्चों के पक्ष में हैं, अध्यापकों के पक्ष में एक भी नहीं! दूसरा भी कोई साथ नहीं देगा। सब के सब तमाशबीन हैं।''

इतनी सारी दलीलें और तर्क-वितर्क के बाद प्यारे लाल जी के पास शायद माफी के अलावा और कोई रास्ता ही न बचा था। अंततः सुरेश शर्मा जी के साथ उन्हें दोबारा ऑफिस में जाकर न सिर्फ माफी मांगनी पड़ी, बल्कि आठ हजार रुपये भी देने पड़े। छः हजार 'इलाज' के लिए और दो हजार पत्रकारों को खबर 'न' छापने के लिए।

अगले दिन प्यारे लाल जी के पांव कक्षा की तरफ चलने को जैसे उठ ही नहीं रहे थे। काश वे वहां जाने से किसी तरह बच पाते! किंतु दूसरा कोई उपाय भी तो न था। अंदर पहुंचते ही विद्यार्थी टकटकी लगाए उन्हें ऐसे घूर हुए थे, जैसे आज ही पहली बार देखा हो। ज्यादातर के चेहरे पर मुस्कराहट थी। मानों वे कल ऑफिस के अंदर का किस्सा मन ही मन दोहराकर उसका आनंद ले रहे हों। प्यारे लाल जी अपमान और शर्मिंदगी से जैसे जमीन में गड़ गए थे। फिर उनकी नजर पिछले बैंच पर बैठे कर्ण पर पड़ी। वह ढिठाई और निर्लज्जता से हंस-हंसकर आसपास वालों से बतियाता हुआ जैसे उन्हें चुनौती दे रहा था। बाकी कक्षा भी जैसे जानने को बेताब थी, क्या वे उसे फिर से कुछ कहने की हिम्मत जुटा पाएंगे? उन्हें ऐसा न करते देख दूसरों ने भी खुसुर-पुसुर शुरू कर दी। प्यारे लाल जी अंदर ही अंदर क्रोध, लज्जा और बेबसी में छटपटा रहे थे, लेकिन बाहर से बिलकुल शांत थे। उनकी चुप्पी से उत्साहित बाकी विद्यार्थियों ने भी खुसुर-पुसुर की बजाय जोर-जोर से बोलना शुरू कर दिया, जैसा वे अकसर कक्षा में अध्यापक के न रहने पर किया करते थे। कक्षा में अब अच्छा-खासा शोर हो रहा था, परन्तु प्यारे लाल जी ऐसे खामोश खड़े थे जैसे वे अंधे और बहरे एकसाथ हो गये हों।

कुछ देर तक वे विद्यार्थियों के शांत रहने का इंतजार करते रहे। फिर शोरगुल के बीच ही उन्होंने चुपचाप किताब हाथ में ली और पिछली बार के बाकी बचे कबीरदास के दोहों को आगे पढ़ाना शुरू किया-

''गुरु गोविंद दोउ खड़े, काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपणे, जिन गोविंद दियो मिलाय।।
अर्थात्......''

मकान न. 82, सेक्टर 18, हुड्डा, जगाधरी,
यमुनानगर- 135003, मो. 094169 55476

कहानी

हरिद्वार के हरि

◆ महेश शर्मा

हर हर गंगे मैंने ऊंचे सुर में आवाज लगाई और डुबकी लगा दी। गंगा का पानी बहुत ठंडा था लेकिन ये सोच थी कि जोर से हर हर गंगे बोलने से ठंड कम लगेगी। वैसे ऐसा कुछ नहीं होता पहली बार ही ठंड महसूस होती है फिर तो शरीर अभ्यस्त हो जाता है मैंने चारों ओर नजर डाली श्रीमती और बच्चे पास ही नहा रहे थे। हर तरफ श्रद्धालुओं की भीड़ थी जो गंगा स्नान कर अपने पापों का भार कम करना चाह रहे थे हर की पौड़ी से बहती गंगा सुदूर पूर्व के पहाड़ों के बीच से आती उसकी धार, काफी चौड़ाई लिये गंगा का पाट और असंख्य सुन्दर घाट सब मिलाकर बड़ा मनोरम दृश्य पैदा कर रहे थे मन बहुत आह्लादित हो रहा था। मुझे कतई ये विश्वास नहीं था कि गंगा स्नान से मेरे पाप धुल जायेंगे। मेरे खयाल से पाप का खाता और गंगा स्नान का खाता दोनों बिलकुल अलग-अलग एकाउंट है और इनमें आपस में कोई ट्रांसफर इन्ट्री पास नहीं हो सकती। मुझे हंसी आ गई मेरी कल्पना पर यहां भी बैंक नहीं भुला।

पारिवारिक संस्कार और कुछ मेरी छोटी बुद्धि से मैं यह मानता था कि पाप का खाता प्रायश्चित की गंगा स्नान से और परोपकार से ही निरंक हो सकता था इस गंगा स्नान से नहीं। हां मन बुद्धि और विचार जरूर निर्मल हो सकते हैं। इतनी पवित्र नदी इतना पवित्र धार्मिक स्थान एक बार यहां आकर स्नान करने से ही इतनी शांति और सुकून का एहसास हो रहा था। मुझे बहुत भाग्यशाली लगे हरिद्वार में रहने वाले जो रोजाना इस पुण्यसलिला गंगा में स्नान करते हैं इनका शरीर तो क्या मन आत्मा और हृदय भी कितना निर्मल होगा। धार्मिकता और दयालुता इनके स्वभाव में स्थायी रूप से बस गइ होगी।

मैं इन सात्विक विचारों में डूबा था कि पत्नी ने टोका क्या सोच रहे हो भगवान का नाम लो, अपने सारे पापों के लिये, गलतियों के लिये गंगा मैया से माफी मांग लो और फिर चलो भूख लग रही हे जोरों से।

मैं पत्नी को घूरते हुए बाहर निकला और कपड़े बदलने लगा। हमारी गाड़ी का ड्राइवर राकेश भी नहा चुका था। मैंने अपनी पुरानी खोली हुइ बनियान की निचली ओटी हुई सिलाई में छुपाकर रखे आठ हजार रुपये निकाल कर नई बनियान में उसी जगह रखने लगा। उन दिनों पैसे बाहर ले जाने की दूसरी कोई व्यवस्था विकसित नहीं थी। अतः सुरक्षा के लिये मेने अपनी दोनों बनियान की निचली ओटी हुई सिलाई वाली पट्टी में कट मार कर पांच सौ पांच सौ के सोलह नोट यानी आठ हजार रुपये छिपा रखे थे। खुले आम पुरानी बनियान से नई बनियान में रुपये रखते देख पत्नी ने टोका 'अरे सबके सामने पैसे मत रखो कोइ देख रहा होगा यहां बहुत चालाक लोग भी आते हैं।

मैं कुछ मूड में था मैंने मुस्कराते हुए बड़ी लापरवाही से बनियान हवा में हिलाते हुए बड़बोले अन्दाज में कहा देखो भाइयों मैंने इस बनियान में आठ हजार रूपये छुपा रखे हैं। यद्यपि आसपास आते जाते लोगो में से किसी का ध्यान हमारी ओर नहीं था फिर भी पत्नी नाराज होने लगी। बहुत होशियार मत बनो उसने जुमला फेंका।

खैर हम सब कपड़े पहन कर तैयार हुए। गर्मी बहुत थी। मैंने केवल शर्ट ही पहनी और रुपये वाली बनियान घड़ी कर हाथ में ही रख ली। हर की पौड़ी से ऊपर चढ़ते वक्त साधु-संत और मांगने वालों ने हमें घेर लिया। बाबा भोजन करा दो हम कल से भूखे हैं। श्रीमती की धार्मिक आस्था उफान पर थी मुझसे नजरें मिला कर बोली 11 ब्राह्मणों को भोजन कराना है।

मैंने धीरे से कहा यहां घूम रहे ये सब ब्राह्मण हों ये जरूरी नहीं। पत्नी ने घूरा जो भी हो गंगा मैया के किनारे तो सभी ब्राह्मण सभी पवित्र और धार्मिक हैं। खैर हमने सामने वाले भोजनालय पर तलाश किया तो पता चला प्रति व्यक्ति बीस रुपये में सब्जी-पूड़ी और एक मिठाई का पीस मिलेगा।

हमने भोजनालय वाले को ग्यारह व्यक्तियों के लिये दो सौ बीस रुपये का भुगतान किया। सभी ग्यारह व्यक्ति भोजन लेने को लाइन में लग गये थे। श्रीमती बहुत खुश थी गंगा किनारे ग्यारह ब्राह्मणों को भोजन कराने का पुण्य कमा लिया था।

मैं भी कुछ हद तक सहमत था कि तीर्थस्थान पर आये हैं तो कुछ दानपुण्य तो जरूरी है। हम उसी भोजनालय के पास एक लस्सी की दुकान पर बैठ कर शुद्ध दही की देसी लस्सी का आनन्द

लेने लगे। तभी भोजनालय के मालिक और लाइन में लगे ब्राह्मणों के बीच किसी बात पर चल रही बहस का शोर हमारे कानो में आया।

मैं उधर कान देने लगा। मुझे देख लस्सी वाला मुस्कराया बोला बाबुजी इनको छोड़ो आप तो जाओ मन्दिरों के दर्शन करो। हम भी उधर ध्यान ना देते हुए आगे चल दिये। तब तक छोटा बेटा बबलू भोजनालय पर होने वाली बहस की पूरी रिपोर्ट ले आया था। पापा मालूम है वहां क्या हो रहा था? हमने जो ग्यारह लोगों को 20-20 रुपये में खाना खिलाने का बोला था उनमें से किसी ने भी खाना नहीं खाया। सब भोजनालय वाले से नगद पैसे मांग रहे थे भोजनालय वाला उन्हें 12-12 रुपये दे रहा था और वे 15-15 मांग रहे थे वही बहस चल रही थी।

मैं चौंका। श्रीमती ठिठकी। मेरे मुंह का स्वाद कुछ बिगड़ने लगा। मैंने दोनों बच्चों को अपना ज्ञान पिलाना शुरू किया। यहां ऐसा खूब होता है बेटा ये सैकड़ों फुरसती बेकार लोग दुनियादारी छोड़ कर गंगा किनारे आ जाते हैं। मेहनत से जी चुराने वाले यहां भगवान के नाम पर धर्म के नाम पर हम जैसों की श्रद्धा का लाभ उठाते हुए खाते-पीते मस्त बेकार पड़े रहते हैं। यही तो धर्म का दुरुपयोग है।

मेरी बात पूरी होते-होते श्रीमती ने रोका, ज्यादा नास्तिक मत बनो। हमने हमारी श्रद्धा से जो करना था सो कर दिया वो हमारा पुण्य है अब वो जो भी करे उनकी गति वो जाने। मैंने श्रीमती की बात सुनी चुप हो गया लेकिन मेरे चेहरे पर एक ज्ञानीराम वाली मुस्कराहट बनी रही। लस्सी खतम कर हम वापस धर्मशाला की ओर चल पड़े बाजार से गुजरते हुए एक अच्छी सी होटल दिखी तो नाश्ता करने का विचार आ गया भूख तो सभी को लग रही थी अन्दर बैठ कर नाश्ता किया कचोरी समोसे आदि आइटम बड़े टेस्टी थे।

पारिवारिक संस्कार और कुछ मेरी छोटी बुद्धि से मैं यह मानता था कि पाप का खाता प्रायश्चित की गंगा स्नान से और परोपकार से ही निरंक हो सकता था इस गंगा स्नान से नहीं। हां मन बुद्धि और विचार जरूर निर्मल हो सकते हैं। इतनी पवित्र नदी इतना पवित्र धार्मिक स्थान एक बार यहां आकर स्नान करने से ही इतनी शान्ती और सुकुन का एहसास हो रहा था। मुझे बहुत भाग्यशाली लगे हरिद्वार में रहने वाले जो रोजाना इस पुण्यसलिला गंगा मे स्नान करते हैं इनका शरीर तो क्या मन आत्मा और हृदय भी कितना निर्मल होगा। धार्मिकता और दयालुता इनके स्वभाव में स्थायी रूप से बस गई होगी।

होटल का मालिक और नौकर बहुत सज्जनता से प्रेम से नाश्ता करवा रहे थे। अब हम धर्मशाला की ओर चल दिये थे। देखा, मैंने श्रीमती की ओर नजर घुमाई, कितने सज्जन लोग हैं धार्मिक स्थान का बहुत प्रभाव पड़ता है लोगों के आचार विचार और व्यवहार पर। एक पवित्रता आ जाती है।

श्रीमती ने मेरी ओर देखकर कटाक्ष किया, ठीक है रिटायरमेन्ट के बाद हम भी हरिद्वार आकर ही रहेंगे।

धर्मशाला आकर कमरा खोला श्रीमती गीले कपड़े सुखाने लगी। गर्मी बढ़ रही थी मैंने अपनी शर्ट खोल कर बनियान पहनने की सोची। तभी क्षणांश में दिमाग में बिजली कौंध गई। तूफान सा आता दिखा। बनियान ....? कहां है बनियान ...?

वही बनियान जिसकी ओटी हुई किनारी की सिलाई में 500-500 के 16 नोट मैंने गंगा किनारे छिपाकर रखे थे। अरे मेरी बनियान? मैंने श्रीमती की ओर देखा और लगभग चिखते हुए पूछा।

वो तो तुम्हारे हाथ में ही थी , कहां रखी थी ?

कहां रखी थी ? मेरे जेहन में एक मिनिट में पिछले एक घण्टे की सारी गतिविधि फिल्म जैसी चलने लगी। घाट पर गंगा स्नान फिर पुरानी बनियान से नोटो को निकाल कर नई बनियान में रखना फिर भोजनालय होते हुए लस्सी वाले के यहां बैठे फिर होटल में बैठ कर नाश्ता किया और धर्मशाला। अब वो नोट वाली बनियान कहां रखकर भूला?

हम बदहवास से थे वैसे ही जैसी कहावत है ना कि हाथ के तोते उड़ जाना। अब क्या होगा? पैसे नहीं मिले तो घर वापसी कैसे होगी? श्रीमती ने सारे गिले कपड़े फिर से चेक किये लेकिन बनियान का कहीं पता नहीं था।

हम भागे वापस गंगा किनारे भोजनालय वाले से पूछा उसने अनभिज्ञता बताई। फिर लस्सी वाले के पास गये जहां बैठे थे वहां आसपास देखा। लस्सी वाले से पूछा उसने बड़ी सहजता से सर हिलाकर इनकार किया। मैंने उसके चेहरे पर नजरें गड़ाई शायद उसका मन पढ़ सकूं, लेकिन कोई फायदा नहीं।

अन्त में हम होटल की ओर भागे बाजार के लोग हमारी बदहवासी देख रहे थे। रास्ते में बाजार मे बहुत भीड थी कोई रैली निकल रही थी। हाथों मे तख्तियां लिये लोग जोरो से नारे लगा रहे थे।

नारों को सुन कर अन्दाजा हुआ शायद वहां के व्यापारियों की रैली थी टेक्सेस कम करने बाबत मांगे हो रही थी। जैसे तैसे हम हम भीड़ को पार करके होटल तक पहुंचे। सीधे उस टेबल पर पहुंचे जहां हम ने नाश्ता किया था। उसके ऊपर नीचे आसपास देखा कुछ नहीं था हमने वहां खड़े नौकर से पूछा 'हमारी बनियान यहां रखी थी ? उस नौकर ने वहीं खड़े दूसरे नौकर की ओर देखा। हमारी सांसे मानो रुकी हुई थी नजरें उन दोनों नौकरों पर लगी थी दूसरे नौकर ने बड़ी सरलता से जवाब दिया हां आपकी बनियान यहीं भूल गये थे आप मैंने सेठ को दे दी थी वो काउन्टर

पर रखी है।

हमारी जान में जान आई रुकी सांसें पुनः चलने लगी। जीवन दान मिला हो जैसे। नजरें सेठ के काउन्टर पर गई सेठ खाना खाने घर गया था लेकिन उसके काउन्टर पर रखी बनियान नजर आ रही थी।

नौकर ने बनियान उठा कर मुझे दी मेरी आंखों में आंसू आना ही चाहते थे तभी मैंने बनियान टटोली उसके निचले हिस्से को संभाला लेकिन......मेरे आंसू फिर आने लगे सांसें फिर रुकने लगी। बनियान तो मेरी ही थी लेकिन उसकी निचली किनारी में रखे नोटों का कोई अस्तित्व नहीं था। मैंने एक बार फिर बनियान के निचले हिस्से को दबा दबा कर देखा शायद बनियान के कपड़े से चिपक गये हो लेकिन कोई फायदा नहीं था नोट कोई निकाल चुका था और कोई क्यों वही होटल वाले मालिक या नौकर।

मैंने पूरे रौद्र रूप में चिल्लाकर नौकर से पूछा इसमे रखे रुपये कहां है ?

रुपये ? कैसे रुपये ?

8000 रुपये इसमें रखे थे तुमने निकाले ?

बाबूजी हमको रुपये का नहीं मालूम बनियान टेबल पर पड़ी थी उठाकर सेठ को दे दी थी।

सेठ कहां है ? मैंने व्यग्रता से पूछा।

खाना खाने गये हैं दो बजे तक आयेंगे।

फोन लगाओ उनको मैंने अपना गुस्सा बताते हुए बोला। नौकर फोन लगाने की ट्राय कर रहा था लेकिन फोन लग नहीं पा रहा था। मुझे मालिक और नौकर दोनों की साजिश लग रही थी में बहुत चिन्तित था दूर परदेश में पूरे परिवार सहित हम जायें और जेब की सारी पूंजी लूट जाये। कोई परिचित नहीं तो क्या होगा यात्रा अधूरी छोड़ के वापस भी जायेंगे तो भी वापसी का भी तो खर्च लगेगा। क्या यहां किसी से मांगना पड़ेगा ? लेकिन मुझे कुछ भरोसा था कि ऐसे धार्मिक स्थान पर ऐसा धोखा नहीं होगा।

फोन लगाओ उनको मैंने अपना गुस्सा बताते हुए बोला। नौकर फोन लगाने की ट्राय कर रहा था लेकिन फोन लग नहीं पा रहा था। मुझे मालिक और नौकर दोनों की साजिश लग रही थी मैं बहुत चिन्तित था दूर परदेश में पूरे परिवार सहित हम जायें और जेब की सारी पूंजी लूट जाये। कोई परिचित नहीं तो क्या होगा यात्रा अधूरी छोड़ के वापस भी जायेंगे तो भी वापसी का भी तो खर्च लगेगा। क्या यहां किसी से मांगना पड़ेगा ? लेकिन मुझे कुछ भरोसा था कि ऐसे धार्मिक स्थान पर ऐसा धोखा नहीं होगा।

मैंने नौकरों को डराया, 'यदि मेरा पैसा सीधे से नहीं मिला तो में पुलिस थाने पर रिपोर्ट लिखा दूंगा। तीनों नौकर डर तो रहे थे पर पैसों के बारे में साफ मना कर रहे थे हमारे हल्लेगुल्ले से बहुत से लोग भी इकट्ठे हो गये थे।

सेठ का कहीं पता नहीं था। श्रीमती रुआंसी हो रही थी बोली तुम तो पुलिस थाने पर रिपोर्ट डाल दो तभी ये मानेगे। मुझे भी इसके अलावा कोई चारा नहीं दिख रहा था।

हर की पौड़ी पर स्थित पुलिस चौकी पर हम पहुंचे वहां चौकी इंचार्ज तो कहीं बाहर था। केवल एक हेडसाब और एक जवान ड्यूटी पर थे बाकी सभी जवान भी बाहर ड्यूटी पर ही थे हमने हेडसाब को सारी कहानी बताई।

हमारी बदहवासी और परेशान चेहरे देख वो प्रभावित भी हुआ। उसने तत्काल जवान को बोल जा तो रामसिंह पकड़ ला उन तीनों रामजनों को। उसका आशय तीनों नौकरों से था। पर उनके सेठ से भी पूछना पड़ेगा ना हेडसाब मैंने बड़े उत्साहित होते हुए अपनी बात कही मुझे लगा अभी सब दूध-का-दूध और पानी का पानी हो जायेगा असली धोखेबाज पकड़ा जायेगा।

अरे वो तो खुद चला आयेगा आप बैठो।

रामसिंह 10 मिनट में तीनों नौकरों को थाने पर ले आया। हेडसाब तीनों के आते ही शुरू हो गया उन्हें मां बहन की गालियां देते हुए पैसों का पूछा लेकिन तीनों पूरी मासूमियत से इनकार करते रहे।

सालों सीधी तरह बता दो नई तो तुमको भी और तुम्हारे सेठ को भी अन्दर कर दूंगा। इतने पड़ेंगे पिछवाड़े पे कि दो दिन तक हाथ नहीं हटा पाओगे वहां से।

तीनों नौकर हाथ जोड़कर खड़े थे बाहर कुछ ज्यादा ही शोरगुल होने लगा।

ये क्या चल रहा है हेडसाब यहां पर मैंने हेडसाब से नजदीकी जताते हुए अनावश्यक प्रश्न छोड़ा। अरे यहां के व्यापारियों की कोई रैली है। प्रशासन के खिलाफ आन्दोलन है यार बाबूजी आप को भी अपने पैसों का ध्यान रखना चाहिये ऐसे कोई बनियान में पैसे रखता है क्या? हेडसाब का रुख मेरे प्रति भी कुछ अरुचिकर लगने लगा।

अब मैं क्या सफाई देता कुछ बोलता तभी एक मोटा सा सेठ जैसा आदमी चौकी में घुसा। हम पर एक तिरछी नजर डालते हुए हेडसाब पर गुर्राया, 'क्या बात है हेडसाब ? क्या नाटक है ये? उसे देखते ही तीनों नौकर खड़े हो गये थे। मैं समझ गया कि ये होटल का मालिक है और मैंने ये भी देखा कि उसकी गर्जदार आवाज से हेडसाब भी सहम रहे थे।

अरे सेठ ये बाबूजी हैं इनका कहना है कि इनकी बनियान में 8000 रुपये रखे थे जो तुम्हारी दुकान में किसी ने निकाल लिये।

किसने निकाल लिये इन नौकरों ने ? ना जाने कहां गिरा आये और इन गरीबों पर जबरदस्ती झूठा इल्जाम लगाकर बदनाम कर रहे हैं। सेठ का बोलने का लहजा बड़ा बेहुदा था। देखो सेठ

हम तुम्हारे होटल में नाश्ता करने गये थे तब बनियान में पैसे थे और जब वापस बनियान हमें लौटाई तो उसमें से रुपये गायब थे मैं अपनी बात सेठ के सामने रखने लगा।

तुम चुप रहो जी जाने कहां से चले आते हैं 8000 रुपये रखेंगे वो भी बनियान में ?

सेठ ने लगभग झिड़कते हुए मेरी तरफ देखा। फिर हेडसाब की तरफ मुखातिब हुआ जाने दो इनको दुकान पे चलो रे सब ग्राहकी बिगाड़ दी। देखिये इनका कहना है कि इन्होंने वो बनियान उठाकर आपको दे दी थी मैंने अपनी बात फिर जोर देकर कहना शुरू किया तभी चार पांच नेता टाइप लोग अचानक चौकी में घुसे

क्या हुआ रामु सेठ? उनमें से एक ने घुसते ही पूछा।

अरे हरी भाई ये कोई है इसके पैसे कहीं खो गये हैं और इल्जाम अपने नौकरों पर लगा रहा है। और साला ये पुलिसीया नौकरों को थाने पर बुला लाया। हरी भाई तुम्हारे होते हुए हमारी इज्जत का पंचनामा हो रहा है क्या काम की तुम्हारी नेतागिरी ?

अरे रामु सेठ तुम देखो अभी सब मामला निपटा देता हूं। हरी भाई मेरी तरफ मुड़ा, हां क्या तकलीफ है जनाब ?

मैं भी खड़ा होकर ऊंचे सुर में अपनी कहानी फिर सुनाने लगा।

अच्छा तो तुम बनियान में इतने पैसे रखते हो पर ये बता यार तू इतने पैसे लाया कहां से ? नेता का लहजा मजाकिया था साथ के सभी हंस रहे थे। मैं समझ रहा था मेरी मजाक उड़ाई जा रही है। श्रीमती घबरा रही थी मेरे हाथ पर उसका दबाव बढ़ रहा था जो इस बात का इशारा था कि अब यहां से चलो।

लेकिन मैं बहुत विचलित हो रहा था। मेरे अपमान के दुख से ज्यादा में उनके व्यवहार से हैरान था। मेरी कुछ अच्छी धारणाएं टूट रही थीं। मैं मानता था कि ऐसे पवित्र और धार्मिक स्थान पर रहने वाले लोग बहुत संस्कारी परोपकारी और विनम्र होंगे। मैं नर्वस भी था लेकिन मैंने हिम्मत करके कुछ जोर से बोला देखिये आप लोग तमीज से बात कीजिये।

अच्छा तो तू हमें तमीज सिखायेगा ? हरी भाई को तमीज सिखायेगा। हरी भाई गुर्राया

साथ का एक व्यक्ति आगे बढ़ कर बोला जानता नहीं तू हरिद्वार के हरी भाई को ?

मैं पूरे आक्रोश में आ चुका था जान गया हूं हरिद्वार के हरी भाई को लेकिन आप लोग इस महान तीर्थ की महिमा क्यों कलंकित कर रहे हैं आप हरी भाई भले ही होंगे हरिद्वार के हरी भाई नहीं हो सकते।

क्या मतलब है तेरा ?

शर्म आनी चाहिये आप लोगों को आपके यहां लाखों लोग देश-विदेश से बडी श्रद्धा भक्ति के साथ आते हैं उनके दिलों में आप लोगों की एक अलग ही छवि रहती है वो आपको इस पवित्र धर्मस्थान के भाग्यशाली सज्जन व्यक्ति मानते है और आपका ये व्यवहार? थू है आप लोगों पर।

ए बाबू ज्यादा होशियारी नको समझा तीर्थस्थान में रहते हैं तो क्या करें साधु बन जायें सब। और सब हंस पड़े। मुझे उनको देख कर मन में जुगुप्सा पैदा हो रही थी।

तभी हरी भाई नाम के उस बदतमीज ने हेडसाब को सलटाना शुरू किया क्यों रे तूने कैसे इनकी बात मान के तीनों नौकरों को चौकी पर बुलवा लिया ?

हरी भाई अब कोई शिकायत करे तो सुनने तो पड़ेगी ना हेडसाब ने अपनी सफाई दी।

अच्छा ये बात है तो सुन हमारी भी शिकायत। हमारी होटल के गल्ले में से इसने 10000 रुपये चुरा लिये लिख हमारी रिपोर्ट। हरी भाई अभी भी बेशर्मी से मसखरी कर रहा था साथ के सब लोग रामु सेठ ओर तीनों नौकर भी हंस रहे थे।

हेडसाब खिसियाता हुआ उनका मुंह देख रहा था। मैं और श्रीमती असहाय से अपमानित महसूस कर रहे थे। मैंने फिर कुछ बोलना चाहा तभी बाहर से जबरदस्त शोर आने लगा हरी भाई जिन्दाबाद हरी भाई जिन्दाबाद। ये वही व्यापारियों की रैली थी और हरी भाई व्यापारी यूनियन के लीडर। वे भला रामु सेठ जैसों का पक्ष ना ले तो उनकी नेतागिरी का क्या हो। हां हरिद्वार की महिमा कलंकित हो इससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ना था।

रामु सेठ ने मेरी ओर रूआब से देखते हुए अपने तीनों नौकरों को उठाया और बाहर चल दिये। हरी भाई और उनके साथी भी विजयी अन्दाज में बाहर जा रहे थे बाहर आवाज गूंज रही थी, 'हमारा नेता हरी भाई हमारा नेता हरी भाई।'

224, सिल्वर हिल कॉलोनी, धार,
जिला धार, मध्य प्रदेश-454001, मो. 0 82369 40201

लेकिन मैं बहुत विचलित हो रहा था। मेरे अपमान के दुख से ज्यादा में उनके व्यवहार से हैरान था। मेरी कुछ अच्छी धारणाएं टूट रही थीं। मैं मानता था कि ऐसे पवित्र और धार्मिक स्थान पर रहने वाले लोग बहुत संस्कारी परोपकारी और विनम्र होंगे। मैं नर्वस भी था लेकिन मैंने हिम्मत करके कुछ जोर से बोला देखिये आप लोग तमीज से बात कीजिये।

कहानी

मुखाग्नि

◆ मीना चंदेल

सारा परिवार घर के आंगन में गिठ्ठा जलाकर बैठा था। जाड़े की रात में पूरा गांव सन्नाटे में डूबा हुआ था, पर रह-रह कर रेशमा की चींखे सन्नाटे को चीर रही थीं। दिल दहलाने वाली उन चीखों को सुन कर किसी का भी दिल पसीज जाता। हल्कू दाई को बुलाने गया था। चुन्नी और मुन्नी को इतनी समझ ही नहीं थी कि वो मां के इस दर्द को समझ भी पाती।

दोनों को बस दादी मां की बात से पता था कि मां उन्हें भैया देने वाली है, पर दादी थी जिसे रेशमा के दर्द से कोई लेना देना न था वो तो अपनी ही धुन में बड़बड़ा रही थी, पता नहीं इस बार भी बेटा होगा या फिर जन्मजली बेटी को ही जनेगी। इस बार अगर बेटा नहीं दिया तो मैं हल्कू की दूसरी शादी करवाउंगी, जो औरत अपने पति को बेटे का सुख न दे सके वो भी क्या औरत? हल्कू के हजार बार टोकने पर कि मां बच्चों के सामने ऐसी बातें मत किया करो, इनके कोमल मन पर क्या प्रभाव पड़ता होगा? पर दादी को कोई फर्क नहीं। हल्कू दाई को लेकर आया और दाई अपने काम में जुट गई।

हल्कू बेचैन था रेशमा की तकलीफ में वो बराबर का भोक्ता था। बस इस बार चाहे लड़का हो या लड़की अब मैं रेशमा के जीवन के साथ और खिलवाड़ नहीं कर सकता और आजकल क्या फर्क है बेटा और बेटी में। अगर भाग्य में सुख है तो बेटियों से भी मिल जाएगा। इस औरत की सारी खुशियां मेरे परिवार से शुरू और उसी पर खत्म है बेटा ना होना इसके वश में नहीं इसके लिए मैं जिम्मेदार हूं पर मां को ये बात कौन समझाये ? अब इसके बाद कोई बच्चा नहीं..। हल्कू सोच में डूबा ही था कि अंदर से बच्चे की किलकारियां सुनाई देने लगी। दाई मुंह लटकाए बाहर आकर बोली, 'बेटी हुई है'। सुनते ही हल्कू सन्न हो गया और दादी ने सर पकड़ लिया, जन दी नाशपिटी ने फिर बेटी मैं तो पहले ही कहती थी इस अभागी के नसीब में बेटा नहीं। इसकी मां के भी तीन बेटियां ही थी तो इसके कहां बेटा होना था, मेरी ही मति मारी गई थी जो इसे ब्याह कर अपने घर ले आई। इन सब जंजालों से बेखबर चुन्नी और मुन्नी खुशी से कूदने लगी, छोटी दीदी आ गई। छोटी दीदी आ गई।

हल्कू ने खुद को संभाला और मां से कहा, सब अपने भाग्य की बातें हैं आपकी ही जिद थी पोता चाहिए नहीं तो क्या जरूरत थी भगवान ने दो बेटियां तो दी हैं। जवाहरलाल के भी तो एक बेटी थी जिसने नाम रोशन कर दिया। इतनी मंहगाई में कैसे चलेगा परिवार का गुजरा जितनी मेरी आमदन है उसमे हमारा ही गुजारा मुश्किल था अब और जिम्मेदारी। रेशमा को थोड़ा दुःख तो था पर वो था तो उसके जिगर का टुकड़ा। रेशमा पूरी तरह अपनी बेटियों की परवरिश में जुट गई। चाहे सासू मां जुबान से कितना ही जहर उगलती पर रेशमा ने कभी उन्हें अपनी मां से कम न समझा न कभी आगे से कोई जवाब दिया हालांकि ये बात उसे खाती रहती कि वह अपने पति को घर का चिराग न दे पाई। वो हल्कू और मां को ये खुशी देना चाहती थी।

हल्कू अपनी बेटियों के साथ खुश था अब बेटे की चाहत नहीं थी क्योंकि वह जानता था अब रेशमा की सेहत भी इतनी अच्छी नहीं रहती और वह उसे अपनी इच्छाओं की बलि नहीं चढ़ाना चाहता था। एक दिन रेशमा ने हल्कू से कहा कि मैं एक बार और देखना चाहती हूं क्या पता मां की मन्नत पूरी ही हो जाए। हल्कू के मना करने पर भी वो न मानी और उसने हल्कू को मना ही लिया। देखते ही देखते वक्त गुजरता गया। मां की आस बंधती गई कोई मंदिर या बाबा का द्वार नहीं छोड़ा माथा टेकने से। अंततः वो दिन आ ही गया। रेशमा की प्रसव पीड़ा शुरू हो गई और उसने बेटे को जन्म दिया फिर क्या घर में दीवाली हो गई। दादी की खुशियों का तो ठिकाना ही नहीं रहा। बच्चियां दौड़-दौड़ कर सबको बताती मां ने भैया दिया है। हल्कू के आंखों की चमक देखते बनती थी। आंखों से मोती रूपी अश्रु उन दोनों का स्वागत करने लगे। बस जिन्दगी से अब बड़ी चाहत नहीं थी रेशमा और हल्कू की, बच्चों की परवरिश अच्छे से हो जाए और परिवार में सुख शांति बनी रहे। अपनी सामर्थ्य के अनुसार उन्होंने बेटे का नामकरण बड़ी धूम-धाम से किया और चिराग नाम रखा अपनी आंखों के नूर का।

रेशमा अब सम्पूर्णता का अहसास करती और दादी तो सारा दिन बच्चों के साथ बच्ची बन खेलती, कभी कहानियां सुनाती तो कभी पोते को लेकर कितने ही सपने बुनती। समय चक्र चलता रहा। हल्कू ने दिन-रात मेहनत करके बच्चों को पढ़ाया पर आमदन

इतनी भी न थी कि सभी बच्चों को उच्च शिक्षा दे पाता। बेटियों को बाहरवीं तक शिक्षा दिला कर रेशमा उन्हें घर का काम-काज सिखाने लगी और चिराग की पढ़ाई चलती रही। उसने भी माता-पिता की मेहनत के मान हमेशा रखा। वो हमेशा अपनी कक्षा में प्रथम आता।

स्कूली शिक्षा पूरी करने पर चिराग को उच्च शिक्षा के लिए चंडीगढ़ भेज दिया। दादी भी अपने जीवन के अस्सी वर्ष पूरे कर स्वर्ग सिधार गई। एक तरफ चिराग की पढ़ाई का खर्च बढ़ रहा था तो दूसरी तरफ हल्कू की मेहनत बढ़ रही थी, पर चिराग शहर की चकाचौंध में मस्त हो गया। संगत के असर में माता-पिता के संस्कार फीके पड़ गए। अनपढ़ रेशमा और कम पढ़े-लिखे हल्कू को क्या पता कि पढ़ाई में कहां कितना खर्च होता है क्या पता? जितना चिराग मांगता वो जैसे-तैसे कर्जा उठाकर, जमीन बेचकर उसे कभी पैसों की कमी न आने देते। बेटियों भी बड़ी हो चली थी, पराया धन थीं, शादी तो करनी ही थी पर सबकुछ इतना आसान नहीं था तीन-तीन बेटियों के हाथ पीले करते मां-बाप की कमर टूट जाती है। ये तो भगवान की कृपा थी कि तीनों बेटियों को बहुत अच्छे और नेक लडके मिल गए जिन्होंने दहेज की कोई मांग नहीं की। चिराग की भी बी.ए. भी पूरी हो गई पर इस बार वो प्रथम नहीं आया मुश्किल से तृतीय श्रेणी में पास हुआ।

हल्कू ने अपने मालिक से चिराग की नौकरी की बात की और चिराग को वहां जाने के लिए कहा पर चिराग ने वो नौकरी करने से इनकार कर दिया। चिराग वापिस चंडीगढ़ जाना चाहता था। मां-बाप ने बहुत समझाया, पर व्यर्थ। चिराग गांव में नहीं रहना चाहता था। इसके पीछे कारण वो लड़की थी जिससे वो प्यार करता था। मोना अपने मां-बाप की इकलौती संतान थी और वो ऐसे लड़के से शादी करना चाहती थी जो उसके माता-पिता और उनके व्यवसाय को देखे और उन्हीं के पास रहे। चिराग को अपना भविष्य संवारता दिखा और वो भी घर जवाई बनने को तैयार था। चिराग ने अपने माता-पिता के सामने जब ये बात रखी तो वो दोनों स्तब्ध रह गए। उन्हें कुछ समझ नहीं आ रहा था। वे उसे अपने प्यार की दुहाई देकर अपने पास रोकना चाहते थे पर उसके कान में जूं भी नहीं रेंग रही थी। जब हल्कू को लगा प्यार से बात नहीं बनेगी तो उसने गुस्से से चिराग को फटकारा कि अगर तुम्हें घर जवाई ही बनना है तो इस घर में फिर तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं। हल्कू अभी भी भ्रम में था कि चिराग ये सुनकर अपना फैसला बदल देगा पर ऐसा नहीं हुआ। उसने अपना बैग उठाया और चला गया।

वो दोनों उसे गली के आखिरी छोर तक आस भरी नजरों से देखते रहे पर उसने मुड़ कर भी नहीं देखा। रेशमा रोने लगी, हल्कू ने मन कठोर कर उसके आंसू पोंछें और कहा, "नहीं रेशमा अब और नहीं रोना है तुम्हें याद है इसे पाने के लिए कितनी मिन्नतें मांगीं आंसू बहाए, अपने सामर्थ्य से बाहर जाकर इसकी परवरिश की कि बुढ़ापे में हमारा सहारा बनेगा। आज भी हम आंसू ही बहाए तो क्या फायदा ? मैं हूं न तुम्हारे साथ, चलो खाना खाते हैं। बाहर से दोनों सम्भले लग रहे थे पर अंदर से दोनों टूट गए थे जिसे घर का चिराग समझा वही घर को आग लगा गया। दिखावे के लिए कोई चाहे कुछ भी बोले पर दोनों अंदर से टूट गए थे पर कहते हैं वक्त हर दर्द का मरहम है। अब उन्होंने मन बना लिया था कि उनके तीन ही बेटियां हैं और किस्मत अच्छी थी कि बेटियां अपने-अपने घर में खुशी से जीवन बिता रहीं थी। भाई की करनी से वो भी बहुत दुखी थी पर उन्होंने ठान लिया था कि वो तीनों मिलकर माता-पिता की देखभाल करेंगी।

वक्त का पहिया घूमता रहा और जीवन चलता रहा पर चिराग ने मुड़ कर नहीं देखा। अंदर-ही-अंदर हल्कू अपने बेटे के कारण घुन लगी लकड़ी की तरह खोखला होता जा रहा था। धीरे-धीरे उसकी तबीयत बिगडती गई , बुखार उतरने का नाम ही नहीं ले रहा था। गांव की डिस्पेंसरी से भी उन्हें चंडीगढ़ बड़े अस्पताल ले जाने के लिए कहा था। बड़ा जवाई और बेटी , नीलम के साथ रेशमा उसे चंडीगढ़ ले गए। अस्पताल में सभी टेस्ट होने लगे। एक दिन अचानक रेशमा ने पी.जी.आई में चिराग को देखा। अंधी ममता उसके पास दौड़कर गई और बोली "बेटा तेरे पिताजी बीमार हैं यही उनका इलाज चल रहा है ,चल बेटा उनसे मिल ले वो खुश हो जायेंगे... "।

चिराग ने मां की बात को अनसुना सा कर जवाब दिया 'मां अभी मैं जल्दी में हूं, मम्मी जी भी यहीं एडमिट है मैं उनकी दवाइयां लेने जा रहा हूं।' ये कहता हुआ वो दूर निकल गया। रेशमा ठगी सी उसे जाते हुए देखती रही और अब उसकी हर आस टूट गई थी और उसने इस सच्चाई को स्वीकार लिया कि उसका कोई बेटा नहीं। कुछ ही दिनों में हल्कू डिस्चार्ज हो गया। सभी बेटियां और जवाइयों ने उनकी देखभाल बड़े अच्छे से की। रेशमा ने किसी से चिराग के बारे में बात नहीं की क्योंकि वो बार-बार अब अपना और सबका मन नहीं दुखाना चाह रही थी। एक दिन सभी शाम को आंगन में आग जलाकर बैठे थे। सब हंसी-मजाक कर रहे थे कि अचानक हल्कू एक ऊंची हंसी हंसकर हमेशा के लिए मौन हो गया। घर में कोहराम मच गया हल्कू अब इस दुनिया को छोड़ कर चला गया था। रेशमा की तो दुनिया ही बिखर गई। वो तो जैसे बुत बन गई थी ना रोना ना किसी से बात करना मानो जिन्दा लाश सी बन गई थी। अंतिम संस्कार की तैयारी होने लगी। बड़े बुजुर्गों ने चिराग को बुलाने की सलाह दी। बेटे के होते कोई और अगर मुखाग्नि देगा तो हल्कू की आत्मा को मोक्ष न मिल पायेगा। चिराग को फोन करके बुलाया गया।

ऐसे समय पर चिराग को लोक लाज के लिए अपनी जिम्मेदारी निभाने आना ही पड़ा। जैसे ही चिराग ने अपने पिता

की अर्थी को कंधा देना चाहा, तभी रेशमा ने अपना मौन तोड़ा और कहा 'नहीं, ये इनसान मेरे पति को कंधा नहीं देगा और उनकी भी आखिरी इच्छा यही थी' जिसने जीते जी हमें मार दिया उसकी मुखाग्नि देने से मेरे पति को मोक्ष कैसे मिल सकता है ? और अगर यही रीत है तो ऐसा मोक्ष नहीं चाहिए। इसकी परछाई भी मेरे पति के पार्थिव शरीर पर नहीं पड़नी चाहिए। दूर कर दो इसे मेरी नजर से। बड़े बुजुर्ग रेशमा को समझाने लगे हमारी हिन्दू संस्कृति में बेटे के होते कोई और मुखाग्नि नहीं दे सकता। तुम्हें अपनी मान्यताओं का सम्मान करना होगा बाकि घर की बात घर में निपटा लेना। रेशमा ने किसी की एक न सुनी और कहा ये मान्यताएं तब कहां होती हैं जब बेटा अपने माता-पिता को बेसहारा करके अपने स्वार्थ के लिए दूर चला जाता है। इसने तो हमें जीते जी मार दिया कितनी ख्वाइशो और मुश्किल में इसकी परवरिश की और ये कलयुगी बेटा अपनी खुशियों के लिए हमारे जीवन में आग लगा गया। इसके लिए तो हम उसी दिन मर गए थे जब ये हमे रोता-बिलखता छोड़कर अपनी दुनियां बसाने चला गया था। इनको कंधा मेरे जवाई देंगे और मुखाग्नि मेरी बेटियां। सभी अपना सा मुंह लेकर रह गए।

चिराग को भी अपनी गलती पर पछतावा था पर लाख माफी मांगने पर भी रेशमा ने उसे माफ नहीं किया। हल्कू का पूरा क्रिया-कर्म उसके बेटियों और जवाइयों ने किया। आखिरी दिन रेशमा ने सभी की इकट्ठा किया और जो भी जमीन या घर के कागज थे बेटियों को दे दिए। उसने अपनी अंतिम इच्छा भी सबके सामने रखी कि मुझे भी मुखाग्नि मेरी बेटियां ही दें।

चिराग से मेरे सभी सम्बन्ध इसी जीवन में समाप्त हो जाएं, बस। बड़ी देर तक बातें करके सभी अपने-अपने कमरे में सोने चले गए। सुबह बड़ी देर तक रेशमा अपने कमरे से बाहर नहीं निकली सबने सोचा शायद आराम कर रहीं है। बड़े दिन से चैन की नींद न मिली थी, पर जब कुछ ज्यादा ही देर हो गई तो बड़ी बेटी ने मां का दरवाजा खटखटाया पर अंदर से कोई आवाज न आई। आनन-फानन में दरवाजा तोड़ा पर बहुत देर हो चुकी थी।

रेशमा अपने पति की तस्वीर पर माथा रखकर चिर निंद्रा में सो गई थी।

गांव-बेरी दरोला, डाकखाना-बेहना जट्टा
बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश-174 024

बाल कविताएं

कुसुम अग्रवाल

दादी-दादी

दादी दादी प्यारी दादी
चंदा पास बुलाओ ना।
चंदा वाली बुढ़िया का वह
चरखा हमें दिलाओ ना।

उस चरखे से सूत कातकर
कपड़ा खूब बनाएंगे।
बेच बेचकर उस कपड़े को
रुपया खूब कमाएंगे।

उन रुपयों से खेल खिलौने
मोटर गाड़ी लाएंगे।
रोज आइसक्रीम और चॉकलेट
खूब मजे से खाएंगे।

देखो बच्चो चंदा पर तो
ना बुढ़िया ना चरखा है।
मैंने ये सब पढ़ा ध्यान से
उसको जांचा-परखा है।

फिर चंदा जो नीचे आया
वापिस कैसे जाएगा।
इतना भारी भरकम है वो
गोदी कौन उठाएगा?

छोड़ो बच्चों रहने दो तुम
आसमान में ही-उसको।
रुपया खूब कमाने खातिर
जाओ तुम सब पढ़ने को।

पढ़-लिखकर फिर काम करो
तब रुपया खूब कमाना तुम।
हाँ, फिर भी ये मीठी चीजें
सोच-समझकर खाना तुम।

बच्चे और भोजन

क्या खाएं हम क्या ना खाएं।
बच्चे हैं कुछ समझ ना पाएं।

दादी हरदम दूध पिलाए।
दादा सूखे मेवे लाए।

मम्मा सब्जी हरी बनाए।
पापा से फल खूब मंगाए।

पर हमको ये सब ना भाए।
डर के मारे ही ये खाएं।

फास्ट-फूड हमको ललचाए।
ठेले वाली चाट बुलाए।

जब गर्मी का मौसम आए
कोल्ड ड्रिंक ठंडक पहुंचाए।

चॉकलेट तो खूब लुभाए
जी करता है खाते जाएं।

मगर बड़े तो पर जिद पर आए
घर में ये सब कभी ना लाएं

कोई तो इनको समझाए
कभी-कभी ये भी दिलवाएं।

ऐसे सब का मेल कराएं
भोजन को संतुलित बनाएं।

90- महावीर नगर, 100 फीट रोड
कांकरोली (राजसमंद),
राजस्थान-313324, मो. 94611 79465

कविता

सावन को आने दो

रमेश चंद्र शर्मा

सुनो! ठहरो, रुको, आंधी सुनामी!
बहुत कर चुकी हो विनाश
मौन जड़वत पहाड़; हो रहे हैं हताश!
चोट खाई वर्षा ऋतु छुप गई कहीं क्षितिज में
अपने अहंकार का उड़वा रहे हो उपहास -
उसे करके विनाश!
बरसात का अक्षुण्ण है प्रयास
बुझाती जनमानस की प्यास
खेतों, ताल तालाबों की है आस
मीलों कांपते वृक्ष, ग्राम नगर जनमानव वास
भयभीत सभी , तुम नहीं उनकी कोई खास!
घटाओं को दौड़ाती हवाएं, दीन दिशाहीन
हवा, दैवी शांत परिष्कृत सवा
पीड़ित हैं, तेरी भगदड़ में! घिरते रिश्ते
भागते देखा तो फिर पता न चला
उनका!
किंतु तुम्हारा विध्वंस नश्वर है
मौसम के विविध विधान को समझो
वर्षा को समय पर आने दो
दुःशासन न बनो, सावन, द्रौपदी नहीं -
चीर न हरो, हठी न बनो, हर तरफ
विकृत विचलित है, दृश्य कुदरत का
आपदाग्रस्त हैं सभी जिन्हें इंतजार है
वर्षा का, ना कि तुम्हारी दुर्घटना का
सभी को शांत वायुमंडल से प्यार है
विस्मय त्यागो, भागो, भागो भागो!
तुम्हीं नहीं, उधर, सागर जहां से
बरसात, करती है पंख फैलाकर -
परवाज़, बजाती मृदंग करती रिमझिम पर
नाज़, झमाझम के बजाती साज!
उसे भी झेलनी पड़ रही है बाधा -
अकारण, नासाज!
रोक रहा है उसे बदहवास बेहिसाब
वायु बवंडर, निर्दयी, कष्टकर!
प्यार के मौसम को, रोक रहा है
हर कहां, वही वायु बवंडर
सौहार्द, प्रेम, संयोग, मिलन
उसके दिए वियोग, दुःख, दर्द संकट के
अधीन नहीं, आपस में विलीन नहीं!
मानवता चक्रवात वायु के आगे दीन नहीं!
उससे घबराई भरमाई लहरों से
सहानुभूति है मुझे, हालांकि उनके
दिन नहीं, दिमाग नहीं!
यह कैसी विचित्र सी, दोस्ती है तुम्हारी
बवंडर वायु, आंधी सुनामी
जो तुम्हें, तुम दोनों को देती है बदनामी
मेरे निवेदन को अनसुना न करो
मैं जनमानस का अटूट अंग हूं
उनका हूं, उनके संग हूं!
सावन भादों आएंगे, यादें जगाएंगे
वह जो छोड़ गई मुझे, जिसे होना था
जन्म-जन्म तक साथ
सावन का संगीत है उसकी याद!
मुझे उसके खयालों में खो जाने दो!
सावन को आने दो ॥

रिटायर्ड आई.ए.एस.
टकसाल हाउस, छोटा शिमला, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 002, दूरभाष : 0177 262 1199



कविता

लाल कचरे के

डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत

महानगरों के बाहर
कूड़े-कचरे के लगे बड़े-बड़े अंबार जो
हमेशा भरे रहते हैं दुर्गंध से
और दुर्गंध भी ऐसी वीभत्स कि
आदमी के नथुनों की
चीर-फाड़ कर के रख दे
और पास से निकलना भी हो जाए मुश्किल

नगर के बाहर बनी
झोंपड़-पट्टियों के बाल
काले-कलूटे और रूखे-बिखरे बालों वाले
धूल में सने बदल लिए
और मैले-कुचैले वस्त्र पहने
सुबह की अमृतवेला में उठकर
आ धमकते हैं वहां पर कचरा बीनने
दो वक्त की रोटी की खातिर

कचरे के इन्हीं ढेरों में वे
उथल-पुथल मचाते, उछलते-कूदते
और फिर अपनी किसी खास उपलब्धि पर
खुशी जाहिर करते
किलकारियां मारते

वे सब स्वयं में ही मस्त
जिंदगी के प्रति उनमें उत्साह जबरदस्त
और दुर्गंध के प्रति बिलकुल उदासीन
बीनते रहते हैं दिनभर बिना थके-हारे
कांच की छोटी-बड़ी बोतलें
लोहे के टूटे-फूटे टुकड़े
प्लास्टिक के खाली डिब्बे
या फिर ऐसी ही
और बहुत-सी असंख्य वस्तुएं जो
उनके लिए सचमुच
बड़ी अनमोल निधियां हैं
इन्हीं सबको इकट्ठा करने में वे
काट देते हैं अपनी बेशकीमती बाल्यावस्था

नसीब में उनके नहीं है
कोई भी शिक्षा-घर या स्कूल
शिक्षा शायद उनके लिए है ही बेमानी
वे तो अपनी इसी दिनचर्या में
हमेशा रहते हैं व्यस्त
और कचरे के इन ढेरों में ही
तलाशते रहते हैं हमेशा
अपना संदिग्ध भविष्य

शायद उन्हें पता ही नहीं यह कि
इस कंप्यूटरी दुनिया में
क्या है उनकी नियति
शायद वे रहें ऐसे ही
लाल कचरे के।

जवाहर नगर, धार्मशाला, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 213, मो. 0 98171 87125

दो कविताएं

डॉ. फहीम अहमद

चींटी की रेल



चींटी ने पूछा मम्मी से
कैसी होती रेल।
मम्मी बोलीं लम्बी मोटी
सबको ढोती रेल।
चींटी बोली मम्मी देखो
रेल करे आराम।
मम्मी बोली चल हट बुद्धू
वह हैं अजगरराम।



भालू का नाच

भालू राजा ठुमक ठुमक कर
दिखलाते थे नाच।
हा हा ही ही हँसें पेड़ पर
बैठे बन्दर पाँच।
फिसला पैर गिरा तब भालू
टूटा उसका हाथ।
ले भालू को अस्पताल सब
बन्दर पहुंचे साथ

485/301, जेलर्स बिल्डिंग, बब्बू वाली गली, लकड़मंडी, डालीगंज,
लखनऊ, उ. प्र.-226020, मो. 0 88963 40824

कविता

सैनिक बनना

केवल शर्मा

सैनिक बनना
अच्छी कद काठी
ऊंची कूद - लंबी छलांग
और तेज दौड़ते कदम की निपुणता
के साथ
देश भक्ति का - देश सेवा का जज्बा
और कभी ना
थमने-थकने की कसम भी है ।

सैनिक होना
बर्फीली पहाड़ी की सर्द रातें
उफनती नदी का आपदा प्रबंधन
लू चलते रेगिस्तान में युद्धाभ्यास
पीठ पर लदा बस्ते का बोझ
जंगल की भूखी- प्यासी जिंदगी
और हर पल मंडराती मौत
ही नहीं
प्रेम-प्रसंग
यौवन की दहलीज
सपने-यादें-मस्ती
शौक भी-त्याग भी
और इसके बीच
रिश्तों का एकांतवास
होना भी है ।

देश-समाज-वतन
मातृभूमि के लिए
छलनी सीना
चिथड़े- चिथड़े शरीर
पकड़े जाने पर
दुश्मनों की अनगिनत यातनाएं
या फिर वीरगति को पाना
ही शहीद होना नहीं है
बल्कि
बच्चों का साया
भाई की ताकत
पिता का गौरव
बहन की राखी
मां की कोख
पत्नी का सिंदूर
और समाज के
हर रिश्ते का उजड़ना
सपनों का मरना भी
उसका शहीद होना है ।

घर - आंगन के
हर त्योहार - उत्सव का
फीका पड़ जाना
अधूरापन- खालीपन
पत्नी का यौवन में कचोटता अकेलापन
और नीरसता का भाव
उसका शहीद होना है ।

खूंटी पर टंगा कोट
अलमारी में रखी वर्दी
खेत- आंगन में
गिरा हुआ फौजी जूता
उसके होने की हर निशानी
रिश्तेदारों-संबंधियों
दोस्तों की उन पर पड़ी हर नजर
उनके चेहरे के भाव
दिल के घाव
और इंतजार के बावजूद भी
उसके कभी न लौटने के एहसास का
होना
उसका शहीद होना है ।

टाईप-IV, सेट नं. 20, जी.ए.डी. कॉलोनी, कुसुम्पटी, शिमला-171 009, मो. 0 94180 82345

कविता

श्मशान का हिसाब

रमेश कुमार सोनी

श्मशान आज
कॉलर ऊंची किए सज-धज कर
अगुवानी को गेट में खड़ा है
क्योंकि आज बारी है उसकी
जिसने उसे ब्रांड बनाया
जिसने सबसे पहले शुरू किया -
दो गज जमीन के लिए प्रीमियम लेना।
वैसे श्मशान पूरी रात
हिसाब पा जाता है कि -
कल किसकी बारी होगी
लेकिन शैतान, महाजन और
आतंकी-हत्यारे लोग उसकी पहुंच से
काफी दूर रहे हैं सदा से
श्मशान इन शब्दों-वाक्यों से वाकिफ है
कि -
मौत के आगे किसकी चली है
होनी को कौन टाल सकता था और
सबको यहां आना ही होगा
रोज किसके लिए रोएगा श्मशान
क्योंकि वह सुनता रहा है कि -
'हर मरने वाला व्यक्ति भला आदमी
होता है'
इसे निपटाने वाली भीड़
लौट जाती है अपनी दुनिया में
फिर किसी भले आदमी की तलाश में
रो पड़ता है श्मशान भी
जब आती है अर्थी किसी -
लावारिश मां की या फिर
किसी बलात्कृत मृत औरत की
उसकी दुनिया के हिसाब में
यह सब नहीं लिखा होता...॥

जे.पी. रोड, बसना, छत्तीसगढ़-493554

डॉ. राजीव गुप्ता की लघुकथाएं

भिखारी

गुप्ता जी, शर्मा जी के साथ 5 दिनों से जिला अस्पताल के चक्कर काट रहे थे। उनका एक लड़का विकलांग था। उसी का विकलांग सर्टीफिकेट उन्हें बनवाना था। अस्पताल में कुछ लोग शर्मा जी के परिचित थे। इसलिए गुप्ता जी उन्हें भी साथ ले आते थे, जिससे उनका काम जल्दी हो जाए। शर्मा जी की जान-पहचान होने के बाद भी उन्हें एक मामूली क्लर्क से लेकर चीफ मेडीकल ऑफीसर तक को सुविधा शुल्क देना पड़ा, तब कहीं जाकर आज उनका काम हो पाया। काम हो जाने पर उन्होंने राहत की साँस ली।

अस्पताल से बाहर निकलते ही आज फिर वही भिखारी उनके सामने हाथ फैला कर खड़ा हो गया जिसे वे हर रोज झिड़क देते थे। पर आज न जाने क्या सोचते हुए उन्होंने अपनी जेब से 5 रुपए निकाल कर उसकी हथेली पर रख दिए। यह देख कर शर्मा जी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा, 'गुप्ता जी, आप तो किसी भिखारी को कभी कुछ देते नहीं हैं। हमेशा यही कहते हैं कि किसी हट्टे-कट्टे आदमी को भीख देना, मेहनतकश आदमी का अपमान करना है। लेकिन आज....'

'हाँ, शर्मा जी, मेरा तो यही मानना था। पर इन पाँच दिनों में इस अस्पताल में मैंने देखा कि अच्छी-खासी नौकरी करते हुए भी लोग भीख माँग रहे हैं तो फिर इस बेचारे का ही हक क्यों मारा जाए।'

गुप्ता जी की बात सुन कर शर्मा जी निरुत्तर थे।

मुर्दे की मौत

एक बड़े अस्पताल के सामने एक एंब्यूलेंस आकर रुकी। चार लोग उसमें से एक बीमार व्यक्ति को स्टेचर पर लाद कर अस्पताल में घुसे।

'डॉक्टर साहब....जल्दी देखिए इन्हें।' चेंबर में घुसते हुए उनमें से एक व्यक्ति हड़बड़ाया सा बोला।

डॉ. खन्ना लपक कर उठे और रोगी की कलाई थाम ली। कलाई थामते ही वे समझ गए कि रोगी मर चुका है। लेकिन उन्होंने जाहिर नहीं होने दिया।

'बहुत सीरियस हैं। आप तो देख ही रहे हैं। पल्स बहुत ही धीमी हैं। आप कहें तो कोशिश....'

'हाँ.....हाँ..... जो कुछ करना है, जल्दी कीजिए, सर।' रोगी के तीमारदार रोआँसे से बोले।

'सुशील, जल्दी से इन्हें इमर्जेसी में पहुँचाओ। ऑक्सीजन लगा कर फटाफट ग्लूकोज की बोतल चढ़ाओ और उसमें ये सब दवाइयाँ डाल दो,' पर्चा लिखते हुए डॉ0 साहब ने अपने सिखेपड़े कपाउंडर से कहा।

रोगी के तीमारदारों से अच्छी-खासी रकम जमा करवा कर डॉ. खन्ना ने मरे हुए रोगी का इलाज शुरू कर दिया।

लगभग एक घंटे तक इलाज का नाटक करने के बाद डॉ. खन्ना ने बहुत ही अफसोस के साथ कहा, 'खेद है साहब, हम इन्हें बचा नहीं पाए। प्रयत्न तो पूरा किया पर आप लोगों ने ही इन्हें लाने में कुछ देर कर दी। सॉरी!'

तीमारदारों ने तुरंत रोना-पीटना शुरू कर दिया। डॉ. खन्ना अपने चेंबर में बैठे मुस्करा रहे थे, 'सालों को यदि पहले ही बता देते कि रोगी मर गया है तो इतना रुपया क्या, फीस देने में ही दम निकलता। सीधी अंगुली से घी निकलता है कहीं!'

5/11, बाग कूंचा
फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश-209625

लघुकथा

भूख और योग

सुरेश सौरभ

सुबह का वक्त था। कुछ लोग पार्क में हा हा हा हूं हूं करते हुए कलाबाजी कर रहे थे। जब उनकी कलाबाजी खत्म हुई और तब सब चल पड़ें तभी एक भिखारी उनसे टकरा गया और वह मुंह फाड़कर कातर स्वर में बोला- बाबू लोगो, बहुत भूखा हूं। बहुत देर से आप लोगों की कलाबाजी देख रहा था। सोच रहा था, जब कलाबाजी आप लोगों की खत्म हो, तब मैं आप लोगों से कुछ मांगूं।

तब सब बाबू लोग हंसते हुए बोले-अरे! भाई हम लोग अपना स्वास्थ्य सही करने के लिए यहां योगा करने आए थे, यहां पैसे की क्या जरूरत है इसलिए हम लोग पैसे नहीं लाए।

तब वह भिखारी आंखों में आंसू भरकर बोला-बाबू लोगों आप लोग बहुत पढ़े लिखे हैं। मैं गरीब अनपढ़ जाहिल हूं। मैं आप लोगों से ये पूछना चाहता हूं कि गरीब लोगों की भूख के लिए कोई योगा है।

अब सब खाए-अघाए योगा वाले जीव एक-दूसरे का मुंह ताक रहे थे।

निर्मल नगर लखीमपुर-खीरी, उत्तर प्रदेश-262701
मो. 0 73762 36066

लघुकथा

ये भी एक रास्ता

दीप्ति सारस्वत

अनिल बड़ी मुश्किल से सांस ले पा रहा है। आखिर आगे ढींगू मंदिर की खड़ी चढ़ाई है, पहुंचना भी बौद्ध गोंपा तक है। पिता जी ने किसी जमाने में यहां शिमला में सस्ते में ज़मीन ले ली थी फिर गांव छोड़ यहीं के होकर रह गए थे। अनिल अब नौकरी के सिलसिले में चंडीगढ़ ज़्यादा रहता है। चढ़ाई की आदत नहीं रही, बुरी तरह हांफ़ रहा है। एक तो पांच-पांच भारी थैले, ऊपर से ये चढ़ाई। हर पांच-दस सीढ़ियों के बाद रुक जाता है।

हाथों में थैले बदलता है। पीठ वाला सही करता है। नज़रों से बचा हुआ रास्ता मापता है। इतने में बगल से कोई गुज़रा। पसीने की बू का एक झोंका नाक में घुसा चला आया। देखता क्या है, एक खान भाई दो सिलेंडर पीठ पर बांधे सधी चाल से चढ़ाई चढ़ रहा है। बिना हांफे। अनिल को हौसला बंधा। समान उठा खान की चाल की नकल करता चल पड़ा। थोड़ा ही चला कि फोन बज उठा। "उफ्फ इस समय फोन..."

देखा, तो चंडीगढ़ से बीवी का था। नहीं उठाया तो आसमान टूट पड़ेगा और वो चाहेगा धरती फट जाए और वो इसमें समा जाए। जब जब काम के वक्त बीवी की कॉल आती, ऐसी बातें उसके मन में हमेशा आतीं, फिर एक बार आसमान को देख, धरती को ताक, कोई सूराख ना पा, आखिर वो फोन उठा ही लेता। इस बार भी किसी तरह हाथों में झोले एडजस्ट कर फोन उठा ही लिया।

जैसे-तैसे कान और गर्दन के बीच फोन चिपका करके दम समेटते हुए बोला, "अभी मैं बहुत-सा सामान उठाए हूं । आटा-दाल-चावल-चीनी, मां-पापा की दवाइयां भी हैं... ।" दूसरी तरफ से चिर-परिचित तेज तर्रार आवाज़ आना शुरू हुई और आती ही चली गई...काफी देर परेशान-सा दूसरी तरफ का कर्कश लहज़ा कानों से निगलता हुआ अनिल बेचारगी में बोल उठा, "तुम विश्वास क्यों नहीं करतीं, मेरी बात का... ओहो, नहीं कर रहा मां-बाप के नाम पर ऐय्याशी... आख़िर तुम मानती क्यों नहीं।"

अनिल जो बड़ी हिम्मत से टुकड़ों-टुकड़ों में पहाड़ चढ़ रहा था, अचानक टूट-सा गया और झोले किनारे रख सीढ़ीनुमा रास्ते पर बैठ ही गया। इतने में खान भाई की आवाज़ आई, "बाबू जी संभल कर, बंदर आपका सामान ले जाएगा।" खान, सिलेंडर लोगों के घर पहुंचा कर वापस आ रहा था।

अनिल को होश आया। एक मन हुआ खान को सामान घर ले जाने के लिए कहे। फिर हिम्मत जुटाई। पहाड़ी है वो। पहाड़ से कैसा हारना। पहाड़ उसका घर है और हिम्मत भी पहाड़ ही...ढींगू मां को याद कर वो बस एक बार और सब समेट चल ही पड़ा...

क्या यही जीवन कुछ और हो सकता था??????

अनिल सोच ही तो रहा था... उसी समय में उसी शहर में एक और जीवन चल रहा था...

लगभग वही कद काठी। नाम भी वही। जी हां अनिल। दृश्य मगर शिमला के मॉल रोड का है। प्रेमिका का हाथ पकड़े जनाब चले जा रहे हैं कि इतने में फोन बजता है। कॉल पर कौन है देखते ही अनिल का मुंह बन जाता है। वही अंदाज़ फोन का कान और गरदन के बीच फंसा, लगभग धमकाने वाले लहज़े में कॉल उठाते ही हावी हो जाता है, "बड़ी बदतमीज हो। इतनी बार बताने पर भी, कभी भी कॉल करके परेशान करती हो, कितनी बार कहा तुमको काम के वक्त कॉल मत किया करो। अब क्या बार-बार बताना पड़ेगा बिजनेस दौरे पर दिल्ली आया हूं। यहां मैं पैंतालीस डिग्री की धूप में झुलस कर काम करवा रहा हूं और तुमको जासूसी सूझ रही है। जब वापस आना होगा एक दिन पहले बता दूंगा।"

दूसरी तरफ से दबी-सहमी-सी आवाज़ आती है। "माफ करना। यहां पापा की तबीयत अचानक बिगड़ गई है मगर कोई बात नहीं। आप अपना खयाल रखना। मैं यहां घर-बाहर सब संभाल लूंगी। आप यहां की फिक्र बिलकुल ना करना।" चंडीगढ़ के उस मैदानी क्षेत्र में, अंदर-ही-अंदर वो स्त्री बहुत ऊंचा पहाड़ चढ़ने की हिम्मत जुटा रही थी।

जीवन किसी एक का
संघर्षरत रहे आजीवन
ऐसा ज़रूरी-सा होता है क्या
ज़िन्दगी जाना है बहुत दूर...
कुछ तो रहम खा
बेहतर मेरे जीवन को
पसंदीदा कोई राह दिखा।
निकाल बाहर कर इसे
किसी एक का होकर कब रहा,
ऐ ज़िन्दगी, सुन मेरी बात
ये संघर्ष भी तो बेईमान है बड़ा!

पीजीटी, हिंदी, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, रतनाड़ी, तहसील कोटखाई, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171225

समीक्षा

स्पंदन की धड़कन तुम्हारे लिए

◆ अश्वनी कुमार

आज किसी के पास समय नहीं। खाने-पीने को क्या, अपने आराम के लिए भी नहीं। चौबीस घंटों में सिमटा यह समय कहां खो गया। नामालूम। किसी को सोचने की भी फुर्सत नहीं। भागमभाग। भागदौड़ ने आदमी को मशीन बना दिया। बस चलते रहो। भागते रहो रात-दिन। आखिर कहीं तो सीमा होगी। ठहराव का कोई ठोर ठिकाना नहीं। जहां रुक कर इनसान सोच सके। अपने लिए। अपनों के लिए। तुम्हारे लिए। किसी और के लिए। व्यक्ति और समष्टि के लिए। दुख-तकलीफ में खुद को व्यक्त कर पाए। खुशी का इजहार कर पाए। लगता नहीं वक्त की रफ्तार कभी धीमी होगी। आदमी इस चलते जा रहे वाहन से उतर पाएगा। अपने होने के अहसास को महसूस कर पाएगा कि बहुत हुआ। अब अपने और अपने आसपास को भी महसूस कर लिया जाए। अनुभव में उतार लिया जाए। आदमी की व्यस्तता को लघुकथा ने समझा। बहुत कम शब्दों में बहुत कुछ कहे जाने का हुनर पाया है इसने। अपनी उपस्थिति से अवगत कराया। तुम्हारे पास समय का अभाव है, तो भी उसमें तुम मुझसे दूर न जा पाओगे। कुछ क्षणांश ही सही, मेरे लिए बचाए रखना। तुम्हारा लेशमात्र भी न घटेगा। कुछ ज्ञान ही मिलेगा।

इसी बात का खास ध्यान रखा लघुकथाकार कृष्णचंद्र महादेविया ने। काफी समय से वे लघुकथा लेखन में सक्रिय हैं। चर्चित भी। उन्होंने वक्त की नब्ज पर हाथ रखा। टटोला। महसूस किया। यह वक्त साहित्य में लघुकथा के लिए उपयुक्त है। इसलिए क्यों न पाठकों को लघुकथाओं के माध्यम से साहित्य का आस्वादन करवाया जाए। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए लघुकथाओं का संग्रह 'तुम्हारे लिए' लेकर आए हैं।

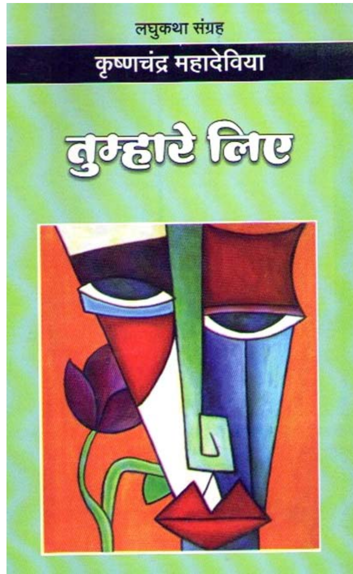
यकीनन, ये लघुकथाएं ही नहीं हैं, बल्कि समाज रूप में व्यक्ति के निजी स्वार्थों, दुश्वारियों, कमजोरियों, लालसाओं और वासनाओं को सामने लाने का प्रयास करती दिखती हैं। लघुकथाकार महादेविया ने उन विषयों पर सटीकता से गंभीरतापूर्वक लिखा है जिन पर कम लिखा गया है। लघुकथाओं को पढ़ते हुए महसूस हुआ कि कथाकार अपने आसपास से बड़ी शिद्दत से जुड़ा है। उससे सरोकार रखता है। विचार करता है। समाज को सोचने पर मजबूत करता है। मनुष्य, मनुष्य का कब तक शोषण करता रहेगा। पुरुष महिला का और महिला पुरुष का। अमीर के हाथों गरीब शोषित होता रहेगा। ऊंची जाति दबाती चली जाएगी निम्न जाति को। क्या इस सदी में भी यह जरूरी है, जब आज हर व्यक्ति के पास अपनी आजीविका का प्रश्न है। रात-दिन जूझना पड़ता है। फुर्सत के क्षण खोजने पड़ते हैं रत्ती भर सुकून पाने के लिए। फिर ये थोपे गए आपसी भेदभाव की दीवारें क्योंकर खड़ी हैं, आज भी चीन की दीवार सरीखी। ताज्जुब है जब सबके खून का रंग एक-सा लाल है। शरीर की संरचना भी एक सी। फिर भी समाज खोखले हो चुके रीति-रिवाजों, परंपराओं, संस्कारों से चिपका हुआ, इन सबका शव लेकर बंदरिया की तरह मोह को छोड़ नहीं पा रहा। संकीर्ण संकुचित सोच की यह जोंक मानवता का खून पी रही है। समाज रूपी देह से इसे छुड़ाना जरूरी हो गया है।

आइए, चलते हैं 'तुम्हारे लिए' के इस संग्रह के कुछ पन्ने पलटते हैं और मुआयना करते हैं कृष्णचंद्र महादेविया की लिखी इबारत का और उठाए गए सवालों और समस्याओं का समाधान ढूंढने के प्रयत्न करते हैं। 'कोरियर' लघुकथा समाज में व्याप्त ढोंग-पाखंड से बाहर आने का निमंत्रण देती है। बच्चे, मां से पापा के श्राद्ध पर ब्राह्मणों को भोजन न करवाने का आग्रह करते हैं। वे पापा के मरने के पूर्व कोरियर से मंगवाई गई पुस्तकों को पाकर खुश हैं। किताबों से प्रेम को तवज्जो देते हैं यह कह कर कि हमारे ज्ञान को यही बढ़ा सकती हैं। हमारे भविष्य का आधार बन सकती हैं। 'कटोरा' मांगने का द्योतक है। व्यक्ति के स्वाभिमान को तोड़ सकता है। चाहे यह किसी भी सूरत में हो। दिखाई न दे।

'कलाकार' लघुकथा इनसान को स्टेज और रियल लाइफ में अंतर न कर, दोनों ही स्थितियों में मिली अपनी-अपनी भूमिका से न्याय करने की पक्षधर है। तभी संतोष और खुशी से चेहरे खिल-खिल सकते हैं। और जब अध्यापक अपनी जिम्मेवारियों के निर्वहन में लापरवाह होंगे, तो न जाने 'कितने संजय' शिक्षा से वंचित रह जाएंगे। उनका भविष्य अंधकारमय होकर सड़कों और चौराहों पर भटकता मिलेगा। घरों में भी बड़े-बुजुर्ग बच्चों में अच्छे संस्कार का बीजारोपण नहीं करेंगे, तो फूल खिलने का मतलब ही नहीं रह जाता। 'कोमल मन' मुरझा जाते हैं। धर्म, उच्च-नीच, भेदभाव, काला-गोरा, जात-पात के पेड़ मानव ही उगाता है। प्रकृति के पास सिर्फ और सिर्फ सृजन है। और है उसका विस्तार। और उसमें छिपा है समन्वय स्थापित कर साथ-साथ रहना। चलना। जीना। इसलिए 'खिड़क का पेड़' सभी पक्षियों को बिना किसी भेदभाव के आश्रय देता है। बसेरा बसाने को जगह देकर, उन्हें अपने परिवारों का भरण-पोषण और देखभाल के लिए

सुरक्षित स्थान मुहैया करवाता है। इस लघुकथा का संदेश है : किसी-न-किसी का सहारा बन जाना और मदद को हाथ बढ़ाना।

धार की धूप कितनी देर ठहरी है, आखिर कुछ देर बाद चली जाएगी। 'पिछले पहर का दर्द' लघुकथा में उसकी झलक दिख जाती है। तीन बेटों के मां-बाप महीने के हिसाब से तीनों के पास बंटे हैं। उन्हें हर महीने तीनों के पास बारी-बारी जाना है। यहां तक तो ठीक, लेकिन महीने की इकतीसवीं तारीख उनके लिए खाली पेट रहने पर मजबूर करती है। यह तारीख ? उफ! यह दिन उनके जीवन के आखिरी पहर पर ठहरी जिंदगी में तकलीफ देता है। वास्तव में इस पहर का कष्ट चाहे शारीरिक हो, मानसिक या किसी और तरह का, बहुत पीड़ादायक होता है। बेटों में बंटे रहने को मजबूर ये मां-बाप उनके रहम पर जी रहे हैं। सिर और पीठ पर बोझ समझे जाने वाले तिरस्कृत माता-पिता नहीं चाहते कि आने वाले महीनों में आनी वाली यह तारीख घूम-फिर कर उनके जीवन में आती रहे। हमारी संस्कृति हमारे संस्कार, जिन पर हमारा समाज, देश गर्व करता है - 'बड़े- बुजुर्ग घर का ताज हैं। उनके चरणों में ही चारों धाम हैं', अवश्य गौर करना होगा। कहते हैं 'छोटी सोच और पांव की मोच' कभी आगे बढ़ने नहीं देती। यह कहावत कहीं हमारे समाज पर लागू तो नहीं होती? तनिक सोचना। तब तक इसी लघुकथा संग्रह के आगे पन्नों की यात्रा पर चलते हैं। यह यात्रा सुखद नहीं है। पन्ना-दर-पन्ना टेढ़े-मेढ़े रास्ते हैं। इनसान के दुख-तकलीफों के तीखे मोड़ हैं। बीच-बीच में प्रेम, संस्कारों के सीधे रास्ते आने पर राहत महसूस होती है। फिर उतराई-चढ़ाई अपने साथ शोषण, डर, धोखे, नफरत, दंभ लेकर आ जाती हैं। कृष्ण चंद्र महादेविया ऐसे चालक बन बैठे हैं जो इन भयावह स्थितियों-परिस्थितियों से रूबरू करवाते हुए स्वयं तो स्टेयरिंग को समय के साथ घुमाते हुए पकड़े हैं लेकिन कथा वाचक यात्रियों को बार-बार हिचकोले खाने पर मजबूर कर रहे हैं। कई बार सहज स्थितियों में व्यंग्योक्तियों के माध्यम से इस तरह गुनगुनाते हैं कि सवारियों को भी लोट-पोट होने पर मजबूर कर देते हैं।



'अपनी' लघुकथा में पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार की ग्लानि से भरा हुआ पति अपनी बेवफाई पर पछता रहा है। अपनी गलती मान लेता है। 'आत्मसम्मान' में घर में प्रचलित अजीब से रीति-रिवाजों के विरुद्ध बहू का विद्रोह दर्शाया गया है। सास, जेठानी-देवरानी के इरादों पर पानी फेर देने जैसा है। मेहमान के रूप में आए गैर-मर्द का घर में आना बहू को नागवार गुजरा। परंपरा के मुताबिक जो उन्होंने कर रखा है, उसी रीत को नई बहू भी निभाए। अजीबोगरीब, बेतुकी और गलत प्रथाओं का त्याग ही, आधी दुनिया और इस दुनिया के मालिक द्वारा सौंपे गए संतति सृजन का भार निर्वहन करती नारी के लिए सम्मान और वरदान साबित होगा। जहां अपनी जान का जोखिम है, फिर भी नारी मां का दायित्व खुशी-खुशी निभाने को तैयार रहती है। प्रमाणित भी हम कर पाएंगे कि उसे 'देवी' का रूप इसीलिए कहा जाता है। हमारा समाज कुछ स्थानों पर अभी भी ऐसी मान्यताओं को अपनाए है, जो अव्यावहारिक ही नहीं, तर्क की कसौटी पर खरा भी नहीं उतर सकतीं। कहीं से भी सभ्य होने का प्रमाण नहीं हो सकती हैं। इनको तिलांजलि देकर रत्ना को 'बेआवाज' होने से बचा सकते हैं। तो 'नीलम' को रखैल के कलंक से मुक्त कर सकते हैं। 'उसका निर्णय' खतरनाक इरादों की ओर संकेत है जब पुरुष अपने पद का रौब दिखा कर अपनी गरिमा से गिरता है, अपने अधीन मातहत महिला का शोषण करने की इंतहा तक पहुंचता है, तब उसका बड़ा भयंकर परिणाम सामने आता है, जो उसे जीवन भर पछतावे के आंसू रुलाएगा। बेइज्जत और जगहंसाई अलग से होगी। सीमाएं और मर्यादाएं ही आदमी को ऊंचा उठाती हैं। एक पहचान देती हैं। और सम्मान का अधिकारी भी बनाती हैं। चरित्र सच्चे पुरुषत्व की निशानी है। अपने पद की गरिमा के विपरीत जाने वालों की कुत्सित विचारधारा को सामने लाती है 'महिला दिवस' लघुकथा। ये कथा ऊंचे पद पर रहते हुए, महिलाओं का किसी भी तरह शोषण किए जाने की मानसिकता को दर्शाती है। उसकी मजबूरी, हालात से नाजायज मांग रखकर अपनी काम वासना की तृप्ति चाहती है।

प्यार, आपसी समझ, एक दूसरे की भावनाओं की कद्र, कुछ समझौते, वैवाहिक संबंधों की मजबूत नींव हैं। यही जब उखड़ने, उघड़ने लगते हैं, तो घर की नींव कमजोर और हिलने लगती है। तब घर, घर न होकर बिखरने/गिरने लगता है। ऐसे में पति-पत्नी के संबंध को 'घुन' लग जाना स्वाभाविक है। स्वतंत्रता की चाह में रमा ठाकुर अकेलेपन की पीड़ा सह रही है। वह अब स्वयं को खोखला महसूस कर रही है क्योंकि भीतर-ही-भीतर उसे घुन खाए जा रही है। तो दूसरी ओर 'देवांगना' स्वार्थ और स्वतंत्रता के लिए पति को धोखा दे रही है। काश! इन्हें 'परिंदे' का प्रेम दिखाई देता, तो छवि और राजसिंह के संबंध-विच्छेद तक पहुंच चुके वैवाहिक रिश्तों को आपसी छोटी-छोटी बातों और पूर्वाग्रहों को छोड़कर फिर एक हो जाने का सहर्ष निर्णय लेना, उन्हें अपने घर और रिश्तों को अटूट बनाए रखने में सहायक बन जाता है। राम और सपना

जैसा समर्पण, एक दूसरे को समझने की क्षमता, एक दूसरे की नाराजगियों, गलतियों का सम्मान/स्वीकार उन्हें एक दूसरे का पूरक बनाता है। एक दूसरे को समझने की समझ देता है। तो निस्वार्थ प्रेम की झलक मिलती है। वे दोनों बचाए रखते हैं, सौंप देना चाहते हैं स्पंदन की धड़कन 'तुम्हारे लिए'। यही धड़कन जब अपने आसपास मौजूद ईश्वर की सृष्टि के प्रति धड़कती है, तो सारी कायनात एक मालूम होती है। किसी के प्रति दुराग्रह, दुर्भावनाएं नहीं होतीं, बल्कि प्रेम, श्रद्धा और आस्था जन्म लेती है। दूसरों को समझने का नजरिया बदलता है। और होता है अहसास परमसत्ता से समीपता का। ये लघुकथा बाकी सब लघुकथाओं से अलग संदेश अपने भीतर छुपा कर चलती है। 'डस्टबिन' आज के परिप्रेक्ष्य में खरी उतरती है। स्वच्छता अभियान की पैरोकार है। स्वच्छ वातावरण स्वस्थ जीवन की अनिवार्यता का पहला व आवश्यक सोपान है। इस आवश्यकता को एक बच्चे के माध्यम से बड़े ही सरल और सहज ढंग से रेखांकित किया गया है। यही बच्चा अपनी समझ व जागरूकता के कारण मेले के उपरांत स्वच्छता दूत पुरस्कार पाने का हकदार बनता है। बड़ों को अपनी कथनी और करनी पर गौर करने का संदेश देती है ये लघुकथा। 'मनरेगा टैंक', 'प्रहार', 'देवता नाराज हो जाएंगे', 'दुकानदारी', 'जाति दंभ', 'चिंगारी' और 'अछूत' लघुकथाओं में प्रचलित मान्यताएं, कुप्रथाएं, रीति-रिवाज, परंपराएं सर्वत्र सर्वमान्य नहीं हो सकतीं। ऐसे जुड़ाव समाज को विघटित ही करते हैं। वैमनस्य को जन्म देते हैं। जिन क्षेत्रों में यह समस्याएं अभी भी सर उठाए हुए हैं, वे क्षेत्र भी समय के साथ इन सबसे मुक्ति पा लेंगे। चलते और बदलते हालात से सामंजस्य स्थापित कर 'सर्वजन एक समान' हैं, को स्वीकार कर अंगीकार कर पाएंगे। 'बस और नहीं' में ऐसी ही गलत परंपराओं के पार पाने के प्रति जागरूकता के साथ-साथ इन परंपराओं की वर्जनाओं को तोड़ना भी है। सद्भावना एवं समानता की 'चिंगारी' मिलकर इनपर गिराई जाएंगी, तब स्वयंमेव ये भस्मीभूत होती नजर भी आएंगी। मजबूत इरादों के साझे 'प्रहार' ये सह नहीं सकती हैं। इसलिए ये दीवारें टूटकर बिखर भी जाएंगी और बंद होगी धर्म के ठेकेदारों की स्वार्थ के लिए सजाई/खोली गई 'दुकानदारी' भी।

'पालक' लघुकथा बाप के बेटी के प्रति नजरिए को बदलने पर मजबूर करती है। 'प्लान' और 'पालक' में अपने मां-बाप के प्रति कर्तव्यनिष्ठा न होना धीरे-धीरे आज की गंभीर सामाजिक-पारिवारिक समस्या बनती जा रही है। निष्ठुरता व अकर्तव्य-परायणता हमें कहां ले जाएगी, मालूम नहीं, पर इतना जरूर है कि यह उम्र सब पर आनी है और इसके लिए तैयार भी रहना होगा।

फ्लर्टपन सुकांति की आदत में शुमार हो चुका है। उसे इस खेल में मजा आने लगा है। अपने झूठे प्रेमजाल में नित नया 'बकरा' फांसना उसे गौरवान्वित करता है। उसकी यह तलाश आठ बकरों तक पहुंच गई है। यह कोई प्रशंसनीय और स्वागत योग्य कदम नहीं। समाज इस तरह के कृत्यों को स्वीकार नहीं करता। वो इस बात को भूल गई कि यही बकरे 'लकड़बग्घे' बनकर उस पर टूट कर उसका भी शिकार कर सकते हैं। यह स्वयं मुसीबतों को निमंत्रण देने जैसा है। पुराने परिचितों की वर्षों बाद अचानक हुई 'मुलाकात' उन्हें अपने अतीत में झांकने पर मजबूत कर देती है। यहां मर्यादाओं का सीमोल्लंघन नहीं है। अपना सुख-दुख साझा होता है। विपरीत दिशाएं उन्हें मिली थीं। वर्षों बाद वे अचानक मिले। पर, दिलों में एक-दूसरे के प्रति आकर्षण की मौजूदगी उनके प्रेम की अमरता को दर्शाती है। समाज-परिवार की मर्यादाओं को निभाने को फिर अपनी-अपनी राहों पर निकल पड़ते हैं। प्रेम की शाश्वता दैहिक बंधनों से मुक्त है। जलप्रपात की धारा का निरंतर बहते जाना ही उसकी मौजूदगी का अहसास करवाना है।

'स्टेशनरी', 'वाउचर', 'तिलचट्टे', 'जवाई बाबू', 'चूहे' आदि लघुकथाएं सरकारी तंत्र की जड़ों में लगी हुई ऐसी दीपक है जो इसे खोखला करने पर तुली हुई है। ऐसे कर्मचारी और अधिकारी जो सरकारी पैसे का दुरुपयोग और अपने लिए उपयोग को अपना अधिकार समझते हैं, की करतूतों को सामने लाने का जरिया बन गई हैं। मोबाइलनुमा खिलौना हाथ में जब से आया है, नजदीकी रिश्तों को दूर और दूर के अनजानों को रिश्तों में बांधती 'दूरी' लघुकथा आज के मोबाइल होते संबंधों को दर्शाती है।

काश! 'करीमद्दीन' की तरह भटके युवा यह बात अच्छी तरह गांठ बांध लें कि जिस शाखा पर बैठा जाए, उसे काटा नहीं करते। तब शायद हर आदमी अपने देश, अपनी धरती अपने लोगों से हरगिज दगा नहीं कर सकता। दूसरी बात इस लघु कथा से उभर कर आई कि रिंगल रूपी जनता जब अपना रौद्र रूप अख्तियार कर लेती है, तब वह किसी को भी नहीं बख्शती। यह चेतावनी भर नहीं, विघटनकारी तत्त्वों के खिलाफ युद्ध का शंखनाद है।

कृष्णचंद्र महादेविया का यह लघुकथा संग्रह समय के साथ चलने की हामी भरता है। पुरानी गल-सड़ चुकी मान्यताओं को छोड़ना-त्यागना और नए को अपनाना ही समय के साथ खड़े होना है। आधुनिकता का द्योतक है। पाठक भी इन लघुकथाओं को पढ़ते हुए इस बात को अनुभव करेंगे।

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 0 94180 85095

लघुकथा संग्रह : तुम्हारे लिए **लेखक :** कृष्णचंद्र महादेविया, **प्रकाशक : पार्वती प्रकाशन, 73-ए, द्वारिकापुरी, ज्ञानसागर स्कूल गली, इंदौरा, मध्य प्रदेश-452 009, मूल्य : 200 रुपये**

आखिरी पन्ना

मां माटी मातृभाषा

◆ विनोद भारद्वाज

आधुनिकता की दौड़ में अधिकांश लोग गांव छोड़ कर शहरों की ओर आ गए हैं। गांव का खुलापन, नाते-रिश्ते, अपनापन अब शहरों की गलियों व दो से तीन कमरों के फ्लैटों में सिमट कर रह गया है। मानव का गांव व शहर के मध्य एक पेंडुलम सा रिश्ता रह गया है। दुख-सुख, देवदोष या पुश्तैनी जमीन के लोभ से ही आदमी का गांव जाना रह गया है। इसे घर के मुखिया तो निभा रहे हैं लेकिन शहरों के अस्पतालों में जन्मी पीढ़ी तो पुरखों की माटी से जुड़ना ही नहीं चाहती। बाजारी संस्कृति, पढ़ाई के चक्कर व सुविधाओं ने उन्हें शहर का बना कर रख दिया है। अब तो रिश्ते-नाते भी शहरी हो रहे हैं। इनसे मिलने-जुलने में महीनों कई बार तो साल भी लग जाते हैं। संपर्क का सूत्र मोबाइल ही हो गया है। स्मार्ट शहरों की स्मार्ट पीढ़ी के तो रिश्ते-नाते फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सऐप ही रह गए हैं। बुआ, मासी, मामा का स्थान फ्रेंडज़ ने ले लिया है।

गांव की बात कुछ और ही थी। आवाज देकर भी दुख-दर्द साझा किया जाता था। खेत, खलिहान, बाग-बगीचे साथ-साथ थे। आपस में मिलना, बतियाना ग्राम संस्कृति का हिस्सा था। शहर में अब तो किसी के घर जाने का बहाना ही ढूंढना पड़ता है। वहां बैठ कर गांव में बचपन की यादें, गांव की माटी, खेतों, खलियानों, खड्डों, पहाड़ में एक साथ बिताए दिनों की यादें तरोताजा हो जाती हैं। जब बड़े मिलते हैं तो दिल की बात मां बोली में होती है। अपनी भाषा में बात कर सुकून मिलता है। पहाड़ी हो, पंजाबी हो या अन्य किसी जनपद की भाषा को 20वीं सदी तक जन्में लोग ही बोलते समझते नजर आते हैं। बच्चे अगर सामने बैठे हों तो ऐसा महसूस करते हैं मानो कोई टेलीविजन का अलग चैनल ही लग गया हो। बच्चे बेझिझक पूछ लेते हैं आप दादा की भाषा में बात कर रहे हो न? उन्हें तो बस स्कूलों में एक ही पाठ पढ़ाया जाता है। घर हो या स्कूल, अंग्रेजी भाषा में ही बात करनी है।

'अंग्रेजी स्कूल में पढ़ना है तो अंग्रेजी बोलो' ये गुड मार्निंग। गुड इवनिंग की जमात है। अब बात उठती है कि मातृभाषा से प्रेम के प्रति आज की पीढ़ी विमुख होती जा रही है। मां, मातृभूमि से बढ़ कर कोई नहीं है। रूस, चीन, जापान जैसे देश अपनी भाषा से ही तरक्की की राह पर आगे बढ़ रहे हैं। अजीब लगता है पर सच है कि हिमाचल की धरा पर एक फर्लांग का रास्ता तय करने पर बोली/भाषा बदल जाती है। हाल ही में यूनेस्को द्वारा एक सर्वेक्षण में सामने आया है कि राज्य की तीन भाषाएं बघाटी (सोलन), हिंडूरी (नालागढ़), टांकरी (कांगड़ा) तथा पंगवाली (पांगी) लुप्त भाषाओं की श्रेणी में आ गई हैं। मन के विचारों, संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में मां बोली ही सर्वोपरि है। जब व्यक्ति अपनी भाषा में मनन करता है तो वे अपने विचारों को थोपी गई भाषा में कैसे व्यक्त कर सकता है। कविवर रवींद्रनाथ टैगोर ने दुनिया को गीतांजलि का उपहार अपनी मातृभाषा बंगला में प्रदान किया। महात्मा गांधी ने भी अपने मन की बात को गुजराती में लिखा। पूर्व प्रधान मंत्री एवं महान लेखक अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने विचारों को अपनी भाषा के माध्यम से दुनिया के समक्ष रखा।

इक्कीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में भारतीय समाज एक दोराहे पर खड़ा है। अपनी संस्कृति, परंपराओं व पहचान को जीवंत रखने के लिए हमें अपनी भाषा को घर की चार दीवारों से निकाल कर बाहर खुले में लाना होगा। बच्चों को अपनी भाषा, बोली की अहमियत बतानी होगी। मां, माटी, मातृभूमि व मातृभाषा के आदिकाल से चले आ रहे रिश्ते को बनाए रखने की जरूरत है। यह दायित्व आप पर भी है।

(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक हैं)

इक्कीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में भारतीय समाज एक दोराहे पर खड़ा है। अपनी संस्कृति, परंपराओं व पहचान को जीवंत रखने के लिए हमें अपनी भाषा को घर की चार दीवारों से निकाल कर बाहर खुले में लाना होगा। बच्चों को अपनी भाषा, बोली की अहमियत बतानी होगी। मां, माटी, मातृभूमि व मातृभाषा के आदिकाल से चले आ रहे रिश्ते को बनाए रखने की जरूरत है। यह दायित्व आप पर भी है।



चंबा की पहचान : मुख्य मंत्री श्री जय राम ठाकुर को उत्सव कमेटी के सदस्य चंबा रूमाल भेंट करते हुए



मिंजर स्मारिका का लोकार्पण

पंजीकरण संख्या : 845/1957 जुलाई, 2019 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2018–20



लक्ष्मी नारायण मंदिर : चंबा

हरबंस सिंह ब्रसकोन, निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा नीरज कुमार, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 अगस्त 2019 अंक : 5

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

जिसने एक यंत्र का आविष्कार किया है उसने मानव की शक्ति और उसके कल्याण में वृद्धि की है।

– हेनरी जार्ड वीचर

इस अंक में

लेख

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

आखिरी पन्ना

अपनी बात

स्वतंत्रता दिवस का राष्ट्रीय पर्व हम हर वर्ष बड़े हर्षोल्लास एवं उत्साह के साथ मनाते हैं। हर देशवासी के लिए यह एक ऐसा पावन अवसर है जो हमें देश के उन अमर शहीदों के सर्वोच्च बलिदानों की याद दिलता है, जिन्होंने देश को गुलामी की बेड़ियों से मुक्त करवाने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। देश के इन अमर शहीदों के बलिदान और त्याग का ही परिणाम है कि आज हम स्वतंत्र भारत की खुली फिजाओं में सांस ले रहे हैं। हिमाचल की देव भूमि को आज देशभर में वीर-भूमि के नाम से भी जाना जाता है। देश पर जब कोई संकट या आपदा आई है, हिमाचल के वीर सपूतों ने उसका डटकर मुकाबला किया है। भारत के 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से लेकर देश आजाद होने तक यहां जितने भी आंदोलन या क्रांतियां हुईं, उन सभी में इस पर्वतीय राज्य के लोगों ने बढ़-चढ़ कर भाग लेकर वीरता की नई मिसाल कायम की है। प्रदेश के बहादुर लोगों की इस वीरता का अपना एक समृद्ध इतिहास रहा है। जब पूरा देश आजादी के लिए संघर्षरत था तो प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम के साथ-साथ विभिन्न रियासतों के शासकों के खिलाफ अनेक आंदोलन भी चल रहे थे। एक तरफ रजवाड़ाशाही तो दूसरी तरफ अंग्रेजी हुकूमत की गुलामी, इन दोनों की दोहरी जंजीरों में जकडे हिमाचल के देशभक्त लोगों ने दोनों मोर्चों पर बहादूरी से लड़ते हुए देश को आजाद करवाने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान धामी गोलीकांड, पझौता आंदोलन, सुकेत सत्याग्रह तथा प्रजामंडल जैसे जन आंदोलनों ने प्रदेश की देशभक्त जनता में आजादी के जज्बे को मजबूत कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम की लहर में हिमाचल के प्रजामंडल आंदोलनों की धार और भी तेज हो गई। यह वही दौर था डॉ. यशवंत सिंह परमार ने हिमाचल प्रदेश के राजनीतिक पटल पर पदार्पण कर न केवल पहाड़ी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलनों का कुशल नेतृत्व किया बल्कि पहाड़ी क्षेत्रों के एकीकरण के आंदोलन को नई दिशा प्रदान की। अंततः 15 अप्रैल, 1948 को पहाड़ी क्षेत्र की 30 छोटी-बड़ी रियासतों के विलय से हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। प्रदेश के लोग हिमाचल निर्माता एवं प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार के सदैव ऋणी रहेंगे जिन्होंने हिमाचल में न केवल विकास की ठोस नींव रखी बल्कि इस पहाड़ी प्रदेश में भावी विकास का मार्ग भी प्रशस्त किया। प्रदेश ने विगत कुछ दशकों के दौरान विकास के सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति करते हुए पर्वतीय विकास का आदर्श स्थापित किया है। वर्तमान प्रदेश सरकार ने राज्य में सत्ता संभालने के बाद, विकास को नई दिशा प्रदान की है। प्रदेश सरकार ने 'सबका साथ-सबका विकास' तथा 'सुशासन से सेवा' को मूलमंत्र बनाकर कार्य करते हुए जन मंच, हिम प्रगति पोर्टल, ई-समाधान, मुख्यमंत्री निगरानी एवं गुणवत्ता जांच सेल जैसी नवीन पहलों से शासन में पारदर्शिता और सुशासन के नये दौर का शुभारंभ किया। इन नवीन प्रयासों से सरकार को आम लोगों तक पहुंचने में सफलता मिलने के साथ-साथ कार्य प्रणाली में भी कार्यकुशलता बढ़ी है और शासन में पारदर्शिता भी आई है। हम सब के लिए यह गौरव का विषय है कि राज्य में विकास की दिशा में किए जा रहे इन प्रयासों की आज राष्ट्रीय स्तर पर सराहना हो रही है। नीति आयोग द्वारा दिसम्बर, 2018 में जारी 'इंडिया इंडैक्स-बेस लाइन रिपोर्ट' में हिमाचल को, सतत् विकास लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में श्रेष्ठ प्रदर्शन के लिए देशभर में प्रथम स्थान दिया गया है। रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश ने गरीबी उन्मूलन, मनरेगा, शिक्षा, स्वास्थ्य, विद्युतीकरण, वित्तीय समावेशन तथा भ्रष्टाचार उन्मूलन जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में, अन्य राज्यों की तुलना में बेहतर कार्य किया है। इसके अलावा प्रदेश को पोषण अभियान में तीन राष्ट्रीय पुरस्कार तथा महिला एवं बाल विकास में 'स्कॉच ऑर्डर ऑफ मेरिट अवार्ड-2019' जैसे पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। प्रस्तुत अंक में नियमित सामग्री के साथ-साथ स्वतंत्रता दिवस पर विशेष सामग्री जुटाई गई है। आशा है सुधि पाठक अपनी प्रतिक्रिया से हमें अवश्य अवगत करवाएंगे।

संपादक

आलेख

सर्वस्पर्शी विकास एवं स्वावलंबन की राह पर
हिमाचल प्रदेश



73वें स्वतन्त्रता दिवस पर मुख्यमंत्री श्री जय राम ठाकुर का आलेख

हम सब भारतवासियों के लिए, 15 अगस्त एक गौरवमयी दिवस है। वर्ष 1947 में, इसी दिन स्वतंत्रता सेनानियों के लम्बे संघर्ष तथा सर्वोच्च बलिदानों के परिणामस्वरूप भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई थी। 73वें स्वतंत्रता दिवस के पावन अवसर पर मैं समस्त प्रदेशवासियों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं देता हूं।

स्वतंत्रता दिवस का यह राष्ट्रीय पर्व, उन सभी शूरवीरों और महान विभूतियों को स्मरण करने का दिन है, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। मैं उन सभी वीर सेनानियों को श्रद्धापूर्वक नमन करता हूं। देश की सीमाओं की रक्षा करते हुए शहीद हुए जवानों को भी मैं अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ। देशभक्तों की शौर्य गाथाएं हम में वीरता की भावना का संचार कर हमें देश सेवा के लिए निरन्तर प्रेरित करती हैं।

बहादुरी और बलिदान की भावना हिमाचलवासियों के रक्त में है। यह गर्व की बात है कि हिमाचल प्रदेश के लोगों ने स्वतंत्रता संग्राम में बढ़-चढ़ कर भाग लिया था। धामी गोलीकांड, प्रजामण्डल आन्दोलन, सुकेत सत्याग्रह तथा पझौता आन्दोलन जैसी घट्नाएं इसका सशक्त प्रमाण हैं। इन घटनाओं ने उस समय देश का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। स्वतंत्रता संग्राम और तदोपरान्त देश की सीमाओं की रक्षा व राष्ट्र निर्माण, हिमाचलवासियों का हर क्षेत्र में सक्रिय योगदान रहा है।

हमारा यह सुन्दर पहाड़ी प्रदेश, स्वतंत्रता प्राप्ति के आठ माह के उपरान्त, 15 अप्रैल, 1948 को 30 छोटी-बड़ी पहाड़ी रियासतों के विलय के साथ अस्तित्व में आया था। कठिन भौगोलिक परिस्थितियों, गरीबी और पिछड़ेपन की चुनौतियों का साहस और ईमानदारी के साथ मुकाबला करते हुए, आज हमारा प्रदेश, विकास का एक मॉडल राज्य बन गया है। स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में हिमाचल अग्रणी है।

प्रदेश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए समस्त प्रदेशवासी बधाई के पात्र हैं। हिमाचल निर्माता एवं प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार द्वारा प्रदेश के विकास की ठोस नींव रखने में दिए गए अविस्मरणीय योगदान के लिए मैं उनके प्रति कृतज्ञता निवेदित करता हूँ तथा उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ। मैं प्रदेश की विकास यात्रा में शामिल सभी लोगों के योगदान की भी सराहना करता हूँ।

27 दिसम्बर, 2017 को भाजपा सरकार के सत्ता संभालने के उपरान्त, प्रदेश में विकास की गति तेजी से बढ़ी है। प्रदेश का विकास अब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित सतत् विकास लक्ष्यों के अनुरूप हो रहा है ताकि प्रदेश में विकास को 'समग्र एवं समावेशी' बनाया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रदेश सरकार ने एक विज़न डॉक्युमेंट-'दृष्टिपत्र हिमाचल प्रदेश-2030' जारी किया है ताकि सभी विभाग इसके अनुसार अपने कार्य कर सकें।

यह प्रसन्नता की बात है कि नीति आयोग द्वारा दिसम्बर, 2018 में जारी 'इंडिया इंडैक्स-बेस लाइन रिपोर्ट' में हिमाचल

को, सतत् विकास लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में श्रेष्ठ प्रदर्शन के लिए देशभर में प्रथम स्थान दिया गया है। हमारे प्रदेश ने गरीबी उन्मूलन, मनरेगा, शिक्षा, स्वास्थ्य, विद्युतीकरण, वित्तीय समावेशन तथा भ्रष्टाचार उन्मूलन जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में, अन्य राज्यों की तुलना में बेहतर कार्य किया है।

यह हमारा सौभाग्य है कि राज्य तथा केन्द्र में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली सरकारें हैं, जिससे प्रदेश की विकास यात्रा दोहरे आवेग के साथ आगे बढ़ रही है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के कुशल नेतृत्व में देश में पुनः भारतीय जनता पार्टी की सरकार के गठन से इसे और बल मिला है।

पिछले डेढ़ वर्ष में, प्रदेश को भारत सरकार से भरपूर सहयोग मिला है व अनेक बड़ी परियोजनाएं स्वीकृत हुई हैं। पर्यटन विकास, कृषि व बागबानी, जल संग्रहण तथा वानिकी क्षेत्रों में लगभग 10,330 करोड़ रुपये की बाह्य वित्त पोषित परियोजनाएं स्वीकृत हुई हैं। इनमें से कई परियोजनाएं आरम्भ होने वाली हैं। प्रदेश को मिल रही इस उदार वित्तीय सहायता के लिए मैं प्रदेशवासियों की ओर से केन्द्र सरकार विशेषकर प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी का आभार व्यक्त करता हूँ।

27 दिसम्बर, 2017 को भाजपा सरकार के सत्ता संभालने के उपरान्त, प्रदेश में विकास की गति तेजी से बढ़ी है। प्रदेश का विकास अब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित सतत् विकास लक्ष्यों के अनुरूप हो रहा है ताकि प्रदेश में विकास को 'समग्र एवं समावेशी' बनाया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रदेश सरकार ने एक विज़न डॉक्युमेंट–'दृष्टिपत्र हिमाचल प्रदेश–2030' जारी किया है ताकि सभी विभाग इसके अनुसार अपने कार्य कर सकें।

'सबका साथ–सबका विकास' तथा 'सुशासन से सेवा' सरकार का मुख्य ध्येय है। जन मंच, हिम प्रगति पोर्टल, ई–समाधान, मुख्यमंत्री निगरानी एवं गुणवत्ता जांच सैल जैसे आरम्भ किए गए नवाचार कार्य, सुशासन की दिशा में बड़े कदम हैं। इन सभी कार्यों से जहां सरकार आम जनता तक पहुंचने में सफल हुई है, वहीं प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ी है व कार्य प्रणाली में पारदर्शिता आई है। अपनी कर्मठता और समर्पण से सरकार आम जनता का विश्वास जीतने में कामयाब हुई है।

प्रदेश को आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाने तथा सर्वस्पर्शी विकास को नवचेतना देने के लिए बुनियादी ढांचे के विस्तार और औद्योगीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रदेश में निवेश को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देने के लिए आगामी 7 व 8 नवम्बर को धर्मशाला में 'राइजिंग हिमाचल ग्लोबल इन्वेस्टर्ज़ मीट' का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें 85000 करोड़ रुपये के निवेश का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

'इन्वेस्टर्ज़ मीट' को सफल बनाने के लिए अभी हाल ही में जर्मनी, नीदरलैंड तथा यूएई में अंतरराष्ट्रीय रोड शो आयोजित किए गए, जिनमें निवेशकों को प्रदेश में निवेश की विद्यमान सम्भावनाओं के बारे अवगत करवाया गया। मेरे नेतृत्व में प्रदेश सरकार की टीम ने इन 'रोड शो' का आयोजन किया, जिसमें निवेशकों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया।

मुंबई, बैंगलूरू, हैदराबाद, दिल्ली, अहमदाबाद तथा चंडीगढ़ में भी ऐसे रोड शो आयोजित किए गए। दिल्ली में 50 देशों के राजदूतों के साथ भी एक महत्त्वपूर्ण बैठक आयोजित की गई। रतन टाटा, मुकेश अम्बानी, आनन्द महिन्द्रा तथा आदी गोदरेज जैसे 'टाइकून' के साथ भी 'वन–टू–वन' बैठकें आयोजित की गईं। इन सब प्रयासों के उत्साहजनक परिणाम सामने आए हैं व अग्रणी औद्योगिक घरानों ने इस प्रदेश में निवेश करने की इच्छा व्यक्त की है। प्रदेश सरकार ने इस छोटे से अन्तराल में, अब तक 297 'एमओयू' साइन किए हैं, जिनमें लगभग 35231 करोड़ रुपये का निवेश प्रस्तावित है।

आम जनता से सीधा संवाद स्थापित कर उनकी समस्याओं का मौके पर निवारण करने के उद्देश्य से आरम्भ किया गया 'जन मंच' अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। मंत्रियों के नेतृत्व में हर माह प्रदेश के दूर–दराज के क्षेत्रों में, जन मंच आयोजित किए जा रहे हैं।

3 जून, 2018 को आयोजित प्रथम जन मंच से लेकर अब तक आयोजित जन मंच में 37,500 शिकायतें एवं मांगपत्र लोगों से प्राप्त हुए, जिनमें से अधिकांश शिकायतों का निपटारा किया जा चुका है।

जनता की सुविधा के लिए शीघ्र ही मुख्यमंत्री हेल्पलाइन–'हिम सेवा' आरम्भ की जा रही है। इस हेल्पलाइन के आरम्भ हो जाने से, प्रदेशवासियों को अपने छोटे–छोटे कार्यों के लिए, सरकारी कार्यालयों के बार–बार चक्कर नहीं लगाने पड़ेंगे। इस सेवा को संचालित करने के लिए शिमला में 'कॉल सेंटर' स्थापित किया जा रहा है। इस हेल्पलाइन के माध्यम से सरकार को लोगों के सुझाव भी प्राप्त हो सकेंगे।

प्रदेश सरकार ने वरिष्ठ नागरिकों के सम्मान और महिलाओं की सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया है। वरिष्ठजनों की बिना आय सीमा के सामाजिक सुरक्षा पेंशन पाने की आयु सीमा को 80 वर्ष से घटाकर 70 वर्ष किया गया। आज लगभग 3.57 लाख वरिष्ठ नागरिक 1500 रुपये प्रतिमाह की दर से सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्राप्त कर रहे हैं। प्रदेश में लगभग 5.35 लाख पात्र

जरूरतमंद लोगों को सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्राप्त हो रही है।

महिलाओं की सुरक्षा के लिए 'गुड़िया हेल्पलाइन' तथा 'शक्ति बटन ऐप' जैसी सेवाएं आरम्भ की गई हैं। वन माफिया तथा ड्रग माफिया से सख्ती से निपटने के लिए 'होशियार सिंह हेल्पलाइन' भी आरम्भ की गई है।

युवाओं का स्वावलम्बन, महिलाओं का सशक्तीकरण, कमजोर वर्गों का उत्थान तथा किसानों-बागबानों की समृद्धि सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकताएं हैं। इस दिशा में पहले ही वर्ष 30 नई योजनाएं आरम्भ की गईं, जिनपर काम आरम्भ हो चुका है। इस वर्ष के बजट में 18 से अधिक नई योजनाएं शामिल की गई हैं। अनेक योजनाओं पर कार्य आरम्भ भी हो चुका है।

प्रदेश में गृहिणियों को चूल्हे के धुएं से निज़ात दिलाने तथा पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से आरम्भ की गई हिमाचल गृहिणी सुविधा योजना ग्रामीण महिलाओं के लिए वरदान सिद्ध हुई है। योजना में लक्ष्य से अधिक कार्य हुआ है तथा इस योजना के तहत अब तक एक लाख 9 हजार से अधिक गैस कुनैक्शन निःशुल्क बांटे जा चुके हैं। इस वर्ष लगभग 80 हजार कुनैक्शन बांटने का लक्ष्य रखा गया है। केन्द्र सरकार की उज्ज्वला योजना के तहत भी प्रदेश में 1.15 लाख कुनैक्शन वितरित किए जा चुके हैं।

इस वर्ष से राज्य सरकार ने हिमाचल गृहिणी सुविधा योजना और केन्द्र की उज्ज्वला योजना के लाभार्थियों को, एक अतिरिक्त गैस रिफिल देने का निर्णय भी लिया है। इसके अतिरिक्त, प्रदेश में उज्ज्वला योजना के नए लाभार्थियों को 1900 रुपये तक की आर्थिक सहायता प्रदान करने का निर्णय लिया गया है ताकि उन्हें भी गृहिणी सुविधा योजना के लाभार्थियों की तरह गैस कुनैक्शन निःशुल्क मिल सके।

प्रदेश में ग्रामीण स्तर तक चिकित्सा सेवाओं को सुदृढ़ बनाया जा रहा है। कोई भी गरीब व्यक्ति किसी गम्भीर बीमारी की स्थिति में, संसाधनों के अभाव के कारण बेहतर चिकित्सा सुविधा से वंचित न रहे, इसके लिए अलग से मुख्यमंत्री चिकित्सा सहायता कोष स्थापित किया गया है। इस कोष से अब तक 135 से अधिक जरूरतमंद मरीजों को 3.24 करोड़ से अधिक की सहायता राशि जारी की जा चुकी है।

प्रदेश सरकार ने गम्भीर बीमारी से पीड़ित ऐसे लोगों जिन्हें लगातार देखभाल की आवश्यकता रहती है, के लिए 'सहारा' नाम से एक योजना आरम्भ की है, जिसके तहत उन्हें 2000 रुपये प्रतिमाह की सहायता प्रदान की जाएगी।

प्रदेश में प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना- आयुष्मान भारत को बड़े प्रभावी ढ़ंग से लागू किया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत अब तक 7.59 लाख गोल्डन कार्ड बन चुके हैं। प्रदेश में आयुष्मान भारत में कवर न होने वाले अन्य परिवारों को इसी योजना की तर्ज पर चिकित्सा सुविधा प्रदान करने के लिए 'हिमकेयर' नाम से योजना चलाई गई है। इस योजना के तहत 5 लाख रुपये प्रतिवर्ष प्रति परिवार निःशुल्क इलाज की सुविधा उपलब्ध करवाई जा रही है। 'हिमकेयर' के तहत 6.41 लाख परिवार पंजीकृत हुए हैं, जिनकी सुविधा के लिए प्रदेश के 201 अस्पतालों को सूचीबद्ध किया गया है। इन अस्पतालों में 51 निजी अस्पताल भी शामिल हैं। अब तक इस योजना से 30 हजार से अधिक लोग लाभ उठा चुके हैं जिनपर 32 करोड़ रुपये से भी ज्यादा व्यय हुआ है।

प्रदेश में कृषि और बागबानी को बढ़ावा देने, सिंचाई और सड़क सुविधाओं के विस्तार तथा पर्यटन विकास पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। कृषकों की आय दोगुना करने के लिए अनेक सिंचाई योजनाएं आरम्भ की गई हैं। प्रधानमंत्री सिंचाई योजना 'हर खेत को पानी' उपलब्ध करवाने के अभियान में बड़ी भूमिका निभा रही है। प्रदेश में प्राकृतिक खेती को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना को भी प्रभावी ढ़ंग से लागू किया जा रहा है। इस योजना के तहत सभी किसानों को 6000 रुपये प्रतिवर्ष प्रोत्साहन राशि के रूप में प्रदान किए जा रहे हैं।

प्रदेश में पर्यटन विकास की सम्भावनाओं को देखते हुए इस दिशा में बड़े प्रयास आरम्भ किए गए हैं। नई राहें-नई मंजिलें नाम से नई योजना आरम्भ की गई है, जिसके तहत पर्यटन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण अछूते क्षेत्रों को विकसित किया जा रहा है। प्रथम चरण में शिमला की चांशल घाटी, मण्डी की जंजैहली वैली तथा कांगड़ा के बीड़ बिलिंग को विकसित किया जा रहा है।

आम जनता से सीधा संवाद स्थापित कर उनकी समस्याओं का मौके पर निवारण करने के उद्देश्य से आरम्भ किया गया 'जन मंच' अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। मंत्रियों के नेतृत्व में हर माह प्रदेश के दूर-दराज के क्षेत्रों में, जन मंच आयोजित किए जा रहे हैं। 3 जून, 2018 को आयोजित प्रथम जन मंच से लेकर अब तक आयोजित जन मंच में 37,500 शिकायतें एवं मांगपत्र लोगों से प्राप्त हुए, जिनमें से अधिकांश शिकायतों का निपटारा किया जा चुका है।

प्रदेश सरकार युवाओं के स्वावलम्बन तथा कौशल विकास पर विशेष ध्यान दे रही है। युवा अपना कारोबार आरम्भ कर सकें, इसके लिए 'मुख्यमंत्री स्वावलम्बन' योजना आरम्भ की गई है जिसके तहत अनेक प्रोत्साहन प्रदान किए जा रहे हैं। योजना में 200 युवाओं को लगभग 31 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत किए जा चुके हैं। इस वर्ष 2 हजार युवाओं को 400 करोड़ रुपये के ऋण वितरित करने का लक्ष्य रखा गया है। प्रदेश के युवाओं के कौशल विकास के लिए एशियन विकास बैंक की सहायता से 650 करोड़ रुपये की एक महत्त्वाकांक्षी पंचवर्षीय परियोजना आरम्भ की गई है। इस परियोजना के तहत 50 हजार से अधिक युवाओं का कौशल विकास किया जाएगा।

कर्मचारियों और श्रमिकों का प्रदेश के विकास में विशेष योगदान है। हमारी सरकार कर्मचारियों के हितों की रक्षा के प्रति वचनबद्ध है। श्रमिकों की दिहाड़ी को बढ़ाकर 250 रुपये किया गया है। असंगठित क्षेत्र के कामगारों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए प्रधानमंत्री श्रम योगी मानधन पेंशन योजना इस प्रदेश में भी आरम्भ की गई है। हिमाचल की ख्याति 'देवभूमि' के रूप में है। दुर्भाग्यवश, नशे ने भी इस प्रदेश में अपने पैर पसारे हैं जोकि सब प्रदेशवासियों के लिए बड़ी चिंता की बात है। नशा हमारे सामने एक बड़ी चुनौती है। हमें समाज को इस बुराई से मुक्त कराने के लिए एक व्यापक जन आन्दोलन छेड़ना होगा। नशे से निपटने के लिए हमने पड़ोसी राज्यों के साथ मिलकर सांझा रणनीति बनाई है।

स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर, मैं आह्वान करता हूँ कि सभी लोग विशेषकर युवा किसी भी प्रकार के मादक पदार्थों के सेवन से दूर रहें, अपनी ऊर्जा को राष्ट्र निर्माण में लगाएं तथा प्रण लें कि 'ना नशा करेंगे–और ना ही करने देंगे।'

यह प्रदेश वीरभूमि भी है। हमारे देश को जब–जब बाहरी ताकतों ने ललकारा है हमारे प्रदेश के जवानों ने अपनी जान की परवाह किए बगैर देश के गौरव और सीमाओं की रक्षा की है। कारगिल की लड़ाई का उदाहरण हम सबके सामने है। हमारे जवानों द्वारा इस लड़ाई में रची शौर्य गाथाएं आज भी हम सबको गौरवान्वित करती हैं।

स्वतंत्रता दिवस के इस महान पर्व पर, मैं प्रदेश के उन सभी वीर सपूतों को भी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ, जिन्होंने देश की सेवा करते हुए अपने प्राणों की आहूति दी है। राज्य सरकार सैनिकों, भूतपूर्व सैनिकों तथा स्वतंत्रता सेनानियों व उनके परिवारजनों के कल्याण के लिए प्रतिबद्ध है तथा इस दिशा में अनेक योजनाएं चलाई जा रही हैं।

इस वर्ष का स्वतंत्रता दिवस और भी महत्त्वपूर्ण हो गया है, क्योंकि देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के कुशल नेतृत्व में केन्द्र सरकार द्वारा अभी हाल ही में संविधान के अनुच्छेद 370 को समाप्त करने का जो ऐतिहासिक निर्णय लिया है, उस पर प्रत्येक भारतवासी को गर्व है।

इस महत्त्वपूर्ण निर्णय से अब कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक एक निशान और एक संविधान लागू हो गया है। देश के एकीकरण और सशक्तिकरण की दिशा में उठाए गए इस बड़े कदम से हमारे महान नेता डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी का 'एक देश, एक विधान, एक संविधान' का संकल्प भी पूरा हुआ है। देश के व्यापक हित में लिए गए इस साहसिक निर्णय के लिए प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी तथा उनकी समस्त टीम बधाई की पात्र है।

मैं सब प्रदेशवासियों को स्वतंत्रता दिवस की पुनः हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ और प्रदेश व प्रदेशवासियों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

जय हिन्द ! जय हिमाचल !

'सबका साथ–सबका विकास' तथा 'सुशासन से सेवा' सरकार का मुख्य ध्येय है। जन मंच, हिम प्रगति पोर्टल, ई–समाधान, मुख्यमंत्री निगरानी एवं गुणवत्ता जांच सेल जैसे आरम्भ किए गए नवाचार कार्य, सुशासन की दिशा में बड़े कदम हैं। इन सभी कार्यों से जहां सरकार आम जनता तक पहुंचने में सफल हुई है, वहीं प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ी है व कार्य प्रणाली में पारदर्शिता आई है। अपनी कर्मठ्ता और समर्पण से सरकार आम जनता का विश्वास जीतने में कामयाब हुई है। प्रदेश को आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाने तथा सर्वस्पर्शी विकास को नवचेतना देने के लिए बुनियादी ढांचे के विस्तार और औद्योगीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रदेश में निवेश को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देने के लिए आगामी 7 व 8 नवम्बर को धर्मशाला में 'राइजिंग हिमाचल ग्लोबल इन्वेस्टर्ज़ मीट' का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें 85000 करोड़ रुपये के निवेश का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

आलेख

स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि और गांधी की प्रासंगिकता

◆ डॉ. विद्यानिधि

भारतीय स्वाधीनता संग्राम के सफर के चार मुख्य पड़ाव हैं -- 1857 का विद्रोह, कांग्रेस की स्थापना, गांधी का आविर्भाव और क्रांतिकारी समाजवादी धारा। ये चारों बिंदु न केवल स्वाधीनता की लड़ाई के चरित्र, उसमें आने वाले बदलावों, उसके अंतर्विरोधों और 'स्वराज्य' के बदलते अर्थ को निर्धारित करते हैं, बल्कि ब्रिटिश शासन के स्वरूप और राजनीति को भी बदलते हैं। इतना ही नहीं, स्वाधीनता के बाद भारत किस राह पर चलता है, कैसी स्वाधीनता प्राप्त करता है, इसका पूर्व-निर्धारण भी यही पड़ाव करते हैं। अतः इनकी शक्ति-दुर्बलता और अंतर्विरोधों का विश्लेषण कर हम अपनी स्वाधीनता की उपलब्धियों और सीमाओं को बेहतर ढंग से जान सकते हैं।

पहला बिंदु है -- 1857 का विद्रोह। अंग्रेज़ इतिहासकार इसे सैन्य-विद्रोह, बगावत या गदर कुछ भी कहें, आम भारतीय ने इसे स्वाधीनता की पहली लड़ाई के रूप में ही देखा है। 1857 हमारे इतिहास का वह मील का पत्थर माना गया है, जब सैनिकों का विद्रोह एक जन-विद्रोह का रूप धारण कर स्वाधीनता का प्रथम उद्घोष बन गया था। लेकिन 1857 से कहीं पहले छोटे-बड़े कई स्तरों पर स्वाधीनता की लड़ाई शुरू हो चुकी थी, यह बात भी उतनी ही सच है।

दरअसल, आजादी की लड़ाई की शुरुआत वहीं हो जाती है, जहां गुलामी का पहला हस्तक्षेप होता है, क्योंकि जिस प्रकार मनुष्य स्वभाव से दूसरों को अपना गुलाम बनाना चाहता है, उसी तरह स्वभाव से वह खुद स्वतंत्र रहना चाहता है। इसलिए मुगल शासन के कमज़ोर होने के साथ-साथ 1757 में, जब से ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में अपनी जड़ें जमानी शुरू की, तभी से उसका विरोध होना शुरू हो गया। चाहे वे बंगाल, अवध, मराठवाड़ा, हैदराबाद, मैसूर जैसी रियासतों की कंपनी को चुनौती हो या छोटे-छोटे स्तरों पर स्थानीय लड़ाइयां, या फिर किसानों और सिपाहियों के छुटपुट विद्रोह, स्वाधीनता की अनुगूंज इन सबमें सुनाई देती है।

यहां तक कि 1857 के विद्रोह से पहले भी सिपाही कई बार (1766 में बंगाल में, 1806 में वैल्लोर में, 1824 में बैरकपुर में) बगावत कर चुके थे। इन विद्रोहों के कारण पहली नज़र में काफी सतही और हास्यास्पद लगते हैं, जैसे वैल्लोर में दाढ़ी बढ़ाने, तिलक लगाने, परंपरागत पगड़ी पहनने पर लगाए प्रतिबंधों के खिलाफ सिपाहियों ने विद्रोह किया था। बैरकपुर के विद्रोह के पीछे बर्मा की समुद्री यात्रा में अपना धर्म खो बैठने का डर था। 1844, 49, 50, 52 के सैन्य विद्रोहों के पीछे दूरदराज के देशों में काम कर रहे भारतीय सैनिकों को अतिरिक्त भत्ते चाहिए थे और 1857 का व्यापक विद्रोह का प्रारंभ भी सूअर और गाय की चर्बी मिले कारतूस को दांत से न खोलने की छोटी-सी बगावत से हुआ था। लेकिन इन तात्कालिक कारणों की तह में कंपनी शासन की सैन्य नीतियों के प्रति असंतोष तो था ही, सबसे बड़ी बात यह थी कि ये सिपाही भी उसी व्यापक समाज का हिस्सा थे, उसी समाज की इच्छाओं का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, जो असंतोष और नफरत के विभिन्न स्तरों से गुज़र रहा था।

कायदे से अब तक हिन्दुस्तानियों का विदेशी शासन की आदत पड़ जानी चाहिए थी। न जाने कितनी विदेशी ताकतें आईं, मारकाट और लूट-खसोट कर चली गईं। फिर मुगल आए, तो बस ही गए, फिर भला अंग्रेजों की विदेशी हुकूमत से क्या परेशानी हो सकती थी? वजह यह है कि भारतीयों ने ऐसे विदेशी शासन का कभी अनुभव नहीं किया था, जिसका एकमात्र मकसद सदियों तक भारत का शोषण-दोहन कर अपना घर भरना था। जहां तक मुगलों का सवाल था, आरंभिक आक्रमणों के बाद उन्होंने एक सुरक्षित, सुखद साम्राज्य ही दिया था। वे न केवल भारत में आकर रच-बस गए थे, बल्कि खप भी गए थे और भारतीय मिश्रित संस्कृति का अंग भी बन गए थे। पर अंग्रेज कुछ विचित्र ही निकले। वे व्यापार करने के इरादे से आए, धोखे से रियासतों पर कब्जे किए और पूरे देश को बंधक बना लिया। भारत उनके लिए एक उपनिवेश भर था। उसका सब कुछ, सारे प्राकृतिक संसाधन, सारे आर्थिक स्रोत, सारी पूंजी उन्होंने अपने अधीन कर ली। देखा जाए, तो इससे पहले भारत ने कभी अपनी आज़ादी नहीं खोई थी। पहली बार कंपनी शासन में उसकी हालत एक ऐसे गुलाम की हो गई थी, जिसकी न तो कोई अपनी इच्छा थी, न पूंजी, न अपनी शिक्षा बची थी, न संस्कृति बच पा रही थी। उसका सर्वस्व एक दूसरे देश की समृद्धि के लिए था।

गुलामी का यही अहसास धीरे-धीरे समाज के सभी तबकों में पैठता जा रहा था, जिसके प्रति असंतोष की सामूहिक अभिव्यक्ति 1857 के विद्रोह में हुई। 29 मार्च, 1857 को मेरठ में सिपाही मंगल पांडे की बगावत और शहादत से शुरू हुआ यह सैन्य-विद्रोह एक चिंगारी बनकर देश के एक बड़े हिस्से में फैल गया। बंगाल, अवध, रुहेलखंड, दोआब, बुंदेलखंड, मध्यभारत, बिहार आदि अनेक स्थानों पर सिपाहियों ने बगावत कर दी और बहादुरशाह ज़फर को बादशाह मानकर दिल्ली की तरफ चल दिए।

यह बात अलग है कि सिपाहियों से कहीं ज़्यादा तादाद किसान, दस्तकार और आम लोगों की थी और आज़ादी की यह लड़ाई सिर्फ अंग्रेज़ों से ही नहीं, देशी महाजनों के बही-खातों से भी लड़ी गई थी। इस तरह सैन्य-विद्रोह ने एक जनांदोलन का रूप धारण कर लिया था। उसकी शक्ति और व्यापकता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि इस विद्रोह को दबाने में अंग्रेज़ों को एक लंबा साल लग गया था। क्या नहीं था उनके पास? ब्रिटेन से मंगाई गई एक बड़ी सेना, आधुनिक अस्त्र-शस्त्र, बड़े तोपखाने, उस पर ग्वालियर, इंदौर, काश्मीर, पटियाला जैसी रियासतों का पूरा समर्थन। इसके बावजूद एक समय ऐसा भी आया था जब जनता को यह यकीन हुआ कि अंग्रेज़ों की हुकूमत पूरी तरह खत्म हो जाएगी।



1857 के विद्रोही अपनी लड़ाई में नाकामयाब रहे, तो इसके भी कारण थे। उनकी लड़ाई के तरीके और हथियार तो पुराने थे ही, सुनिश्चित युद्ध-कला और नीतिकुशल नेतृत्व का भी उनके पास अभाव था। उन्हें बगावत के रास्ते पर लाने वाली एक ही चीज थी -- अंग्रेज़ों के प्रति नफरत। अंग्रेज़ों को हराने और इलाके आज़ाद कराने के बाद क्या करना है, यह उन्हें मालूम न था। इसलिए आंदोलन में अव्यवस्था और अराजकता आती गई। विद्रोहियों में आपसी एकता का भी अभाव था। देश-प्रेम का अर्थ उनके लिए एक प्रदेश या रियासत विशेष के प्रति स्वामी भक्ति भर था। राष्ट्र की भावना से अभी उनका खास परिचय नहीं था। फिर उनके सामाजिक मूल्य भी आधुनिक नहीं थे। वे यह नहीं समझ पाए कि असली स्वाधीनता सामंतशाही में वापिस जाने में नहीं, आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के आलोक में नई आधुनिक राजनीतिक-आर्थिक व्यवस्था गढ़ने में है। तत्कालीन नवोदित मध्यवर्ग और नवशिक्षित बुद्धिजीवी भी उनसे जुड़ नहीं पाए क्योंकि उन्हें विद्रोहियों के तौर-तरीके दकियानूसी लगे। उनके लिए तो अंग्रेज़ देश का आधुनिकीकरण करने वाले थे, इसलिए इस वर्ग ने उस समय अंग्रेज़ों का ही साथ दिया। कहीं बाद में जाकर अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने जाना कि विदेशी शासन आधुनिकता की आड़ में उनका शोषण कर रहा है और तभी एक राजनीतिक शक्ति बनकर मध्यवर्ग ने राजनीति में सार्थक हस्तक्षेप किया, जिसकी अभिव्यक्ति 1885 में कांग्रेस की स्थापना और भारतीय राष्ट्रवाद के उदय में हुई।

1857 के जन-विद्रोह के बाद अंग्रेजों ने जनता की इच्छा की कद्र कर वापिस जाने की बजाय अपने पैर और मजबूती से जमाने और हर छोटे-बड़े विरोध को दबाने की ठान ली। शासन की बागडोर अब कंपनी के हाथ से निकल कर महारानी के हाथ में पहुंच गई और भारत ब्रिटिश साम्राज्य का एक घोषित उपनिवेश बन गया। जनता की स्वाधीन चेतना को दबाने के लिए एक तरफ प्रेस-एक्ट, आर्म्स-एक्ट, आफिशियल सीक्रेट्स एक्ट जैसे कड़े कानून बनाए गए, दूसरी तरफ देशी रियासतों को रियायतें दी गई, सेना का पुनर्गठन और सत्ता का केंद्रीकरण किया गया, नवजागरण के स्वरों को दबाने के लिए समाज-सुधार की नीति भी छोड़ दी गई और 'फूट डालो राज करो' की नीति अपना ली गई। एक रियासत को दूसरी रियासत के खिलाफ, एक जाति को दूसरी जाति के खिलाफ, एक धर्म को दूसरे धर्म के खिलाफ खड़ा करते हुए राष्ट्रवाद को दबाने की कोशिश की गई। इस तरह लोकतंत्र, आधुनिकता, सभ्यता और विकास के अपने सभी दिखावों के साथ ब्रिटिश सरकार ने भारतीय समाज में सर्वाधिक प्रतिगामी नीति अपनाई और प्रतिक्रियावादी वर्गों के साथ ताल-मेल किए। फिर भी, न तो अंग्रेज़ भारतीय नवजागरण को रोक पाए और न ही आम जन की स्वाधीन चेतना को मंद कर पाए।

1885 में राष्ट्रीय भारतीय कांग्रेस की स्थापना भारतीय स्वाधीनता संग्राम का दूसरा महत्त्वपूर्ण पड़ाव था। इस संगठन को बनाने के पीछे एलेन आक्टेवियन ह्यूम का यह सिद्धांत था कि देश

में बढ़ती असंतुष्टि और आज़ादी के ज्वार को बाहर निकालने के लिए एक 'सेफ्टी वाल्व' या निकासी की आवश्यकता है। लेकिन सेफ्टी वाल्व का यह सिद्धांत सच का एक अंश भर है। कहते हैं, ह्यूम के इरादे नेक थे और भारतीयों के प्रति उसके मन में सच्ची संवेदनाएं थी। वैसे भी, कांग्रेस को सेफ्टी वाल्व बनने की बजाय चिंगारी ही बनना था क्योंकि उसमें शामिल होने वाले सचेत, शिक्षित, निष्ठावान भारतीयों का मकसद देश का सामाजिक, राजनीतिक, बौद्धिक और आर्थिक विकास करना था। यही उसकी मूलभूत शक्ति भी थी। पहली बार विदेशी शासन का प्रतिरोध करने के उद्देश्य से एक व्यवस्थित मोर्चा बनाया गया था, जिसमें पत्रकार, वकील, व्यापारी, उद्योगपति, शिक्षक, जमींदार आदि विविध श्रेणियों के लोग थे और दादाभाई नौरोजी, तैयबजी, फिरोजशाह मेहता, सुरेंद्रनाथ बनर्जी, आनंदमोहन बोस, गोपालकृष्ण गोखले जैसे विभिन्न विचारधाराओं और मतवादों के नेता थे।

कांग्रेस के आरंभिक चरण में जिस राष्ट्रवाद का आरंभ हुआ वह संवैधानिक राष्ट्रवाद था। कांग्रेसियों की नज़र में अंग्रेज़ों के पास विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र था, सबसे अच्छा संविधान था, ज्ञान-विज्ञान और शिक्षा का अक्षय भंडार था, इसलिए आवश्यकता केवल इतनी थी कि अंग्रेज़ भारत के प्रशासन में भी लोकतांत्रिक बने, राजनीतिक और सामाजिक सुधार करें और राज-काज में भारतीयों को स्थान दें। कांग्रेस के सदस्यों का नज़रिया अभी उदार था, इसलिए तरीका भी थोड़ा सहमा-सकुचा और मकसद सीमित था। वे संवैधानिक तरीकों से जनमत तैयार कर अर्जियों, बैठकों, प्रस्तावों, भाषणों और मांगपत्रों द्वारा अपने उद्देश्य की पूर्ति करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने न्याय-व्यवस्था में सुधारों की मांग की, प्रशासन, व्यापार और उद्योग की नीति में बदलाव चाहा और 'प्रतिनिधित्व के बिना कर नहीं' का नारा दिया। हालांकि उन पर अंग्रेजी शासन को वरदान और अंग्रेज़ों को न्यायप्रिय मानने के आरोप लगाए जाते हैं, पर यह भी सच है कि उन्होंने अंग्रेज़ों के शोषक चरित्र की पहचान की और अपने नागरिक अधिकारों को समझा। उन्होंने संविधान के भीतर रहकर जनता में स्वाधीन चेतना और देश-प्रेम की भावना जगाने का प्रयास भी किया और अंग्रेजों की विचारधारा और शासन के तरीके को बदलने का भी।

अपने मकसद में आरंभिक कांग्रेसी कई स्तरों पर नाकामयाब रहे। अंग्रेज़ों से अपेक्षित सुधार करवाना तो दूर की बात थी, अपने नरम रुख के बावजूद उन्होंने उन्हें अपना दुश्मन बना लिया। आलोचकों ने उनके संवैधानिक तरीकों को भिक्षावृत्ति तक कहा। विकास का उनका माडल भी पूंजीवादी उन्नति तक सीमित था। इसके बावजूद उन्होंने भारतीय राजनीति में एक निर्धारक मोड़ उपस्थित किया। आम जनता में वे भले ही घुसपैठ न कर पाए हों, लेकिन पूरे मध्यवर्ग को उन्होंने लोकतंत्र और राष्ट्रवाद के स्तर पर जोड़ दिया। ब्रिटिश शक्ति के साम्राज्यवादी चरित्र की पहचान, राष्ट्रवाद, समान राजनीतिक-आर्थिक कार्यक्रम और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का नवजागरण -- उनकी वे महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां थीं, जिनकी पीठिका पर आगे चलकर शक्तिशाली राष्ट्रीय आंदोलन विकसित हुआ।

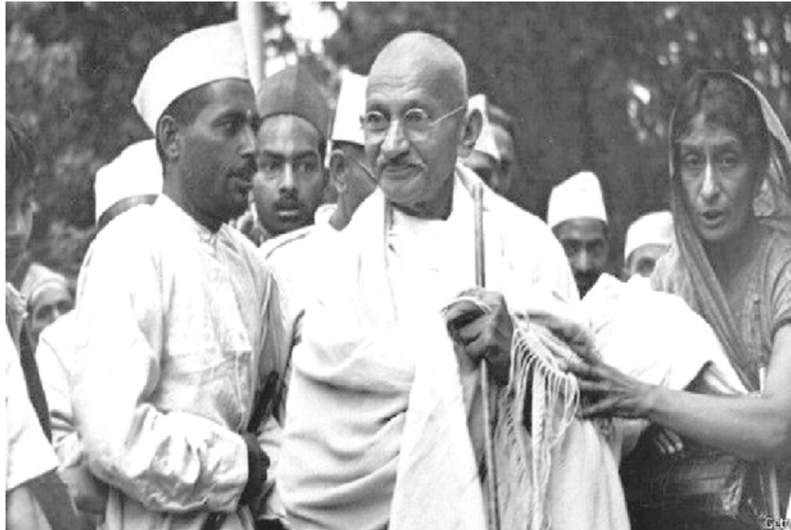
1905 में बंगाल का विभाजन हुआ, जिसने कांग्रेस के भीतर एक गरम दल और कांग्रेस के बाहर एक क्रांतिकारी आंदोलन को जन्म दिया। बंग-भंग आंदोलन शिक्षित, बुद्धिजीवी मध्यवर्ग के अलावा निम्न मध्यवर्ग, विद्यार्थियों और एक हद तक किसान-मजदूर वर्ग को संघर्ष के रास्ते पर ले आया। सुधार और संविधान का रास्ता अब न तो अभीष्ट रहा, न संभव। तिलक, लाला लाजपत राय, विपनचंद्र पाल जैसे उग्र नेताओं ने जनता को आत्मसम्मान और आत्मविश्वास का यह संदेश दिया कि आज़ादी खैरात में नहीं मिलती, छीननी पड़ती है और इसके लिए कुर्बानी देनी पड़ती है। अब 'स्वराज्य जन्मसिद्ध अधिकार' था और उसे हासिल करना ही था। आज़ादी देश के अच्छे, स्फूर्तिदायक स्वास्थ्य की पहली शर्त थी, इसलिए योजनाबद्ध ढंग से बंग-भंग का विरोध किया गया। बंगाल की सड़कों से निकल कर यह आंदोलन भारत भर में फैल गया। जगह-जगह जुलूस निकाले गए, हड़तालें हुई, सरकारी स्कूलों, कॉलेजों, अदालतों, दफ्तरों का बहिष्कार किया गया। विदेशी वस्तुओं की होली जलाई गई और स्वदेशी का प्रचार-प्रसार किया गया। स्वदेशी उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए कई स्वदेशी कपड़ा-मिलें, साबुन और माचिस के कारखाने, हथकरघा उद्योग, नेशनल बैंक और इंश्योरेंस कंपनियां खोली गई। सरकारी पदवियां लौटा दी गई। पत्रकारिता, साहित्य, कविता -- सभी जगह देश-प्रेम का ज्वार आ गया।

उग्रवाद की इस राष्ट्रीय धारा के भी अपने अंतर्विरोध थे। उग्रवादी नेता आंदोलन को एक प्रभावशाली नेतृत्व या सुदृढ़ संगठन नहीं दे पाए। जनता की भावनाओं को उन्होंने उकसाया ज़रूर, पर उनकी इस नई अर्जित शक्ति का क्या किया जाए, वे नहीं समझ पाए। राष्ट्रीयता की उनकी अवधारणा भले ही क्रांतिकारी रही हो, व्यवहार में वे संवैधानिक ही रहे। फिर, देश के सभी वर्गों को उन्होंने जोड़ना ज़रूर चाहा पर उनका आंदोलन शहरों तक ही सीमित रहा। नेताओं की गिरफ्तारी या संन्यास लेने के बाद स्वदेशी आंदोलन का ज्वार कम होता गया पर स्वाधीन चेतना और प्रखर होती गई।

गांधी का भारतीय राजनीति में प्रवेश एक युगांतरकारी घटना थी, क्योंकि उससे एक भिन्न किस्म का 'क्रांतिकारी' दर्शन विकसित हुआ। सत्य और अहिंसा को इससे पहले कभी संघर्ष का 'हथियार' नहीं बनाया गया था। दक्षिण अफ्रीका की नस्लवादी सरकार का गांधी इसी अहिंसा के अस्त्र से प्रतिरोध कर चुके थे।

हो सकता है अहिंसा के लिए 'क्रांति' और 'हथियार' शब्द का प्रयोग थोड़ा अजीब लगे, पर गांधी का यह कथन देखें तो इसका अर्थ समझ में आ जाता है -- ''मैंने अपने कड़वे अनुभवों से एक पाठ पढ़ा है कि अपने क्रोध को सुरक्षित रखना है, अपनी आग को संजोए रखना है और उसे ऐसी उर्जा, ऐसी शक्ति में बदल देना है जो दुनिया को हिला कर रख दे।'' इस तरह उनके लिए क्रांति का अर्थ था -- आत्म की ऊर्जा से आमूलचूल परिवर्तन या कायाकल्प उपस्थित करना। उनका मानना था कि परिवर्तन केवल भौतिक परिस्थितियों को बदलने से ही नहीं होता, आत्म को बदलना पड़ता है। गांधी के लिए अहिंसा सचमुच एक आध्यात्मिक क्रांति थी।

गांधी ने भारत में अपने राजनीतिक जीवन का आरंभ 1917 में किया था और इसी साल सोवियत संघ में समाजवादी क्रांति हुई थी। कार्ल मार्क्स के सिद्धांतों पर आधारित, सामाजिक-आर्थिक समानता का स्वप्न देखने वाली भौतिकतावादी क्रांति के समानांतर गांधी ने एक आत्मिक-आध्यात्मिक क्रांति का स्वप्न देखा। तरीके बिलकुल अलग थे, पर मंजिल वही थी। दोनों जगह शोषण पर आधारित व्यवस्था का विरोध था, दोनों में एक 'यूटोपियन' समाज बनाने की इच्छा थी। अंतर्विरोध भी दोनों में थे -- दृष्टिकोण के भी, व्यवहार के भी। गांधी ने सत्य और अहिंसा को संघर्ष के हथियार के रूप में इस्तेमाल किया और इस हथियार से शोषणकारी सत्ता का दिल बदलना चाहा।



उनका मानना था कि सही मंजिल को पाने के लिए सही रास्ते की तलाश जरूरी है क्योंकि गलत रास्ते से सही मंजिल नहीं मिलती। 'साध्य साधन को न्यायसंगत बना देता है' के मार्क्सवादी सिद्धांत के खिलाफ थे गांधी। उनका मानना था कि साधन और साध्य दो अलग चीजें नहीं है, एक दूसरे से जुड़ी हैं और एक दूसरे को निर्धारित करती हैं। आज़ादी की सही मंजिल पाने के लिए हिंसा के रास्ते पर चलने के वे विरुद्ध थे तो इसीलिए कि हिंसा अंतहीन है। हिंसा और अधिक हिंसा को जन्म देती है।

इसी आधार पर उन्होंने समाजवाद का विरोध किया था कि 'राजा का सिर काट देने पर राजा और किसान बराबर नहीं हो जाएंगे।' राजा के स्थान पर अगर एक किसान बैठ जाता है तो वह भी उसी राजा की तरह शोषक बन जाएगा, शायद उससे भी ज़्यादा निरंकुश। उनका मानना था कि अगर किसी से जबर्दस्ती संपत्ति छीन ली जाती है तो वह भारत के लिए अच्छा नहीं होगा और इससे हम समर्थ व्यक्तियों को खो देंगे। इसलिए बात शोषण की मनःस्थिति को बदलने की थी जिसमें व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से संपत्ति का त्याग करना अभीष्ट था। गांधी के लिए समाजवाद का अर्थ सर्वोदय के पथ पर चलना था जिसमें भौतिक इच्छाओं पर आध्यात्मिक नियंत्रण और हृदय-परिवर्तन निहित था। उनका मानना था कि 'सभ्य होने का अर्थ इच्छाओं को बढाना नहीं, बल्कि स्वेच्छा से इच्छाओं में कटौती करना सीखना है।'

हृदय-परिवर्तन के लिए मनोबल, साहस और आत्मिक शक्ति की दरकार थी जो गांधी में भरपूर थी। वह मानते थे कि गुलामी की सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक बेड़ियों को तोड़ने के साथ-साथ मानसिक गुलामी के बंधनों को तोड़ना भी उतना ही ज़रूरी है। उनके लिए अहिंसा का अर्थ था -- 'पूर्णतः शांत रहकर असत्य और अन्याय का विरोध' और सत्याग्रह का अर्थ था- 'किसी भी कीमत पर सत्य का आग्रह'।

अहिंसा का सिद्धांत बौद्ध और जैन धर्म की भारतीय परंपरा में भी था और ईसाई धर्म में भी। गांधी ने भारतीय और पाश्चात्य दोनों परंपराओं को ग्रहण करते हुए इस सत्य की प्रतिष्ठा की कि सभी इंसान अपना जीवन दुख और विनाश से दूर रह कर सुख और आनंद से बिताना चाहते हैं। ज़िंदगी सभी को प्यारी है। इसलिए उनके लिए अहिंसा का मतलब सिर्फ 'हिंसा न करना' अर्थात किसी को शारीरिक दुख न देना, किसी को कटु वचनों से आहत न करना ही नहीं था बल्कि इससे कहीं आगे जाकर 'किसी के बारे में बुरा न सोचना' भी था। इसमें बिना किसी विद्वेष या घृणा के स्वयं कष्ट सह लेने का भाव था जिससे कि विरोधी अपनी गलतियों के सच को जान सके। यह सत्य और प्रेम का 'नैतिक हथियार' था जिसमें नफरत को प्यार से, असत्य को सत्य से और हिंसा को अहिंसा से जीता जा सकता था। उन्होंने कहा भी -- ''यह आत्मा की लड़ाई है। देखना यह है कि वह कितना अन्याय कर सकता है और तुम कितना सहन कर सकते हो। देखना यह भी है कि उसकी इच्छाशक्ति ज़्यादा मज़बूत है या तुम्हारी।''

ज़ाहिर है, इस विचारधारा में कोई दुश्मन न था, अंग्रेज़ भी नहीं। पूरी सहानुभूति और धैर्य के साथ अंग्रेज़ों को उनकी गलती और अन्याय का अहसास दिला कर अपनी आज़ादी पानी थी। सत्याग्रह गांधी के लिए आत्मा की शक्ति थी, अहिंसा और प्रेम के सिद्धांत का व्यावहारिक विस्तार था। यानी गलत कार्य या नीति का विरोध तो करना था, गलत व्यक्ति का नहीं; गलत व्यक्ति से नफरत नहीं करनी थी, उसकी मानसिकता को बदलना था, उसका मानसिक कायाकल्प करना था। अपने दुश्मन से प्रेम कर, उसका दिल बदल कर, उसे अपना बना लेना, यह बहुत बड़ी बात है, जो गांधी जैसा महान व्यक्ति ही कर सकता है।

हृदय-परिवर्तन का यह सिद्धांत गांधी की सबसे बड़ी ताकत था, जो अहिंसा को कायर-कमज़ोर का बचाव नहीं, बल्कि निर्भय और शक्तिशाली का हथियार बनाता था। उन्होंने लिखा -- ''अहिंसा शक्तिशाली का हथियार है। कमज़ोर लोगों के लिए वह एक पाखंड या ढोंग भर है।'' स्वाधीनता का अर्थ ही गांधी के लिए भय से मुक्त होकर सत्य का आग्रह करना था, चाहे इसके लिए कितनी ही हिंसा का सामना क्यों न करना पड़े। सबसे बड़ी बात तो यह है कि गांधी के लिए अहिंसा लिखने-लिखाने या भाषण देने की वस्तु नहीं, रोज़ जीने और व्यवहार में लाने की बात थी। अहिंसा आस्था और कर्म का सवाल थी, इसीलिए युगांतरकारी थी।



गांधी को विरासत में जो कांग्रेस मिली, उसमें नरम और गरम-दोनों धाराएं समानांतर चल रही थीं और अंग्रेज़ी हुकूमत भी इनसे अलग-अलग ढंग से निपट रही थी। एक को चुप कराने के लिए वह सुधार प्रस्तुत कर रही थी तो दूसरे को दबाने के लिए काले कानून बना रही थी। 'फूट डालो राज करो' की नीति के तहत वह 1906 में ही मुस्लिम लीग बना चुकी थी और अब हर सुधार में मुस्लिम वर्ग को ज्यादा रियायतें देकर उसे हिन्दुओं से दूर कर रही थी। उधर, भारतीय समाज का हर तबका अब तक यह जान चुका था कि उसका हित अंग्रेज़ों के हित में नहीं इसलिए विदेशी शासन से मुक्ति भारत की खुशहाली की पहली शर्त है। इस स्वाधीन चेतना को एक स्थायी नेतृत्व और योजनाबद्ध कार्यक्रम की आवश्यकता थी।

गांधी ने इसी स्वाधीन चेतना को एक सम्यक नेतृत्व देकर एक खास दिशा में मोड़ दिया, जहां अधिक से अधिक जनता की भागीदारी हो सकती थी। उन्होंने समाज के सबसे निचले, सर्वाधिक पददलित वर्गों को स्वाधीनता की लड़ाई से जोड़ा और आज़ादी को घर-घर का नारा बना दिया। आम आदमी की भागीदारी, वह भी दूरदराज़ गांवों की, इससे पहले बहुत कम थी। गांधी ने खुद किसानों और मजदूरों के बीच रहकर उनके विद्रोह के संस्कारों को बुलंद किया। 1917 में चंपारन के नील की खेती करने वाले किसानों का विद्रोह और 1918 में अहमदाबाद के मिल-मजदूरों की हड़ताल -- गांधी के सत्याग्रह के दो सफल आरंभिक प्रयोग थे।

गांधी का ज़िंदगी जीने का ढंग बिलकुल आम था, इसलिए आम आदमी आसानी से उनसे तादात्म्य कर लेता था। गांधी गरीब भारत, राष्ट्रवादी भारत और विद्रोही भारत -- सबका प्रतीक बन गए थे। इसका कारण उनका जीवन-दर्शन था, जिसमें हिन्दु-मुस्लिम एकता की बात थी, अस्पृश्यता के खिलाफ संघर्ष था, नारी की समान भागीदारी का संकल्प था और भारत को स्वाधीन, स्वायत्त, आत्मनिर्भर बनाने का स्वप्न था। उन्होंने स्वराज्य को आम आदमी का 'सुराज' बना दिया था। उनकी सारी नीतियां इसी सुराज के लिए थी।

चाहे वह अपना कपड़ा खुद बुनना हो या नालियों और शौच की सफाई खुद करना, या नमक के लिए सत्याग्रह, पहली नज़र में 'तुच्छ' प्रतीत होने वाले इन सिद्धांतों के पीछे गांधी एक सोची-समझी नीति थी। चरखे की अवधारणा और खादी-प्रेम के पीछे देश-प्रेम के अलावा विदेशी का बहिष्कार और स्वदेशी का प्रयोग छिपा था। हाथ से कपड़ा बुनने की बात आत्मनिर्भर होने और श्रम को गरिमा प्रदान करने की बात तो थी ही, अंग्रेज़ों की आर्थिक नीतियों से लुप्त होते गए दस्तकार वर्ग को नई जीवनी शक्ति देने का प्रयास भी थी। नमक पर स्वाधिकार का सवाल भी आम आदमी के अस्तित्व से सीधे जुड़ा था और इस आधार पर सबको संगठित करता था कि यह कैसा देश है, जिसमें अपने ही देश में पैदा होने वाले नमक तक पर अपना अधिकार नहीं। यही वजह है कि 1930 में 'ब्रिटिश नमक-कानून' का उल्लंघन करने के लिए जब गांधी अपने गांव से 241 मील पैदल चलकर दांडी पहुंचे तो उनके साथ एक लाख लोगों ने सविनय अवज्ञा कर अपनी गिरफ्तारी दी थी। गांधी द्वारा चलाए गए सभी

कविताएं/ प्रत्यूष गुलेरी

केक्टस

केक्टस का पौधा
हमेशा ठूंठ
खुरदुरा कांटों का
सरताज नहीं होता
सिर्फ कांटे ही नहीं देता
फूल पत्तियां भी फूटती हैं उसमें
औरों को देता है नजारा
खुद तपते गलते मिटते
खुरदुरा, खूसट, गुस्सैल कोई
इन्सां ही क्यों न हो
बेकार रद्दी कभी नहीं होता
रद्दी से भी बनते हैं लिफाफे
और बहुत कुछ
कला का हुनर तो जगाई जरा
मन लगा कर खो जाओ
कभी तो देते लौटाते भी
खुशियों के फूल
केक्टस हों या
केक्टस से आदमी
वे भी प्यार के भूखे होते हैं
उनकी भाषा पढ़िए
पुचकारिए दो मीठे बोल बोलकर
प्यार दुख दर्द बांटिये
ताकि केक्टस हरे रहें
खिलते रहें जीवन में ।

वर्षा बरसे

वर्षा बरसे ठप ठप ठप ठप
पानी की है छप छप छप छप
घिरी घटाएँ अंबर पर हैं
सरगम पर ज्यों थप थप थप थप
धवलधार पर बादल गरजें
बजता बाजा डफ डफ डफ डफ
बदरा लगते भोले शंकर
करते हों ज्यों जग जप तप तप
बिजुरी ऐसी चमक रही है
चौतरफा है दक दक दक दक
उछल-कूद हैं बच्चे करते
रेल चलाएं छक छुक छक छक ।

कीर्ति कुसुम, सरस्वती नगर,
पोस्ट दाड़ी धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश -176057

आंदोलनों में जनता की व्यापक भागीदारी की वजह यही थी कि उनका जीवन-दर्शन बड़ा ही सहज और आत्मीय था, जिसे अपनाना आसान था।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि अहिंसा शांति और भाईचारे के रास्ते पर चलती है और जनांदोलन विभेद और विवाद के, लेकिन गांधी ने इन दोनों रास्तों को एक कर दिया। उन्होंने अहिंसा को एक शक्तिशाली राजनीतिक हथियार बना दिया और उसके माध्यम से एक आध्यात्मिक और मानवीय मंजिल तक पहुंचना आसान कर दिया।

क्या गांधी आज भी प्रासंगिक है? यह पूछना क्या बिलकुल वैसा ही नहीं है जैसे यह पूछना कि सच आज प्रासंगिक है? या शांति आज प्रासंगिक है? क्या मानवता में विश्वास प्रासंगिक है? या प्रेम आज प्रासंगिक है? एक आम आदमी अपने अंदर साहस और करुणा महसूस कर पाए, अन्याय और निरंकुशता का प्रतिरोध कर पाए; घृणा, विद्वेष और प्रतिशोध की भावना से ऊपर उठकर अपने विरोधी को प्यार से जीत पाए; अपने विध्वंसक स्वभाव से मुक्त होकर सदियों से अर्जित धर्म और जाति के संस्कारों से ऊपर उठ जाए -- इस असंभव काम को गांधी ने संभव कर दिखाया था।

आज जब हम गांधी की प्रासंगिकता पर बात करते हुए सत्य और अहिंसा के उनके प्रयोगों को असफल बताते हैं तो यह भूल जाते हैं कि हिंसा और घृणा से भरे इस संसार में शांति और प्रेम से परिपूर्ण सुखमय जीवन जीने के लिए अहिंसा के अलावा हमारे पास और कोई विकल्प ही नहीं है।

मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने भी लिखा था -- ''गांधी अपरिहार्य है। अगर मानवता का विकास करना है तो गांधी से बचा नहीं जा सकता। उनका जीवन, विचार और कर्म ऐसी मानवीय दृष्टि से प्रेरित था जो शांति और समरसता का संसार गढ़ता है। हम गांधी की अपने 'रिस्क' पर उपेक्षा कर सकते हैं।''

फ्लैट नं. 5, गोयल अपार्टमेंट, लोकल बस स्टैंड के नीचे,
संजौली, शिमला-171006

आलेख

समय सरगम : संचित जीवन का राग

◆ डॉ. हेमराज कौशिक



हिन्दी कथा साहित्य के परिदृश्य पर कृष्णा सोबती (जन्म 18 फरवरी, 1925, मृत्यु 25 जनवरी, 2019) का सृजन वस्तु और शिल्प की दृष्टि से विलक्षण और अद्वितीय है। उनकी प्रत्येक कृति पूर्व कृति का अतिक्रमण करती हुई अपनी विशिष्टता प्रतिपादित करती रही है। उनके कथा साहित्य का अनुशीलन करते हुए यह अनुभव होता है जैसे हम सीधे जिन्दगी से साक्षात्कार कर रहे हैं। वे जिन्दगी के अनुभूत सत्य को जिस मंजी हुई पारदर्शी, प्रांजल, गहन अनुभवों से अनुस्यूत भाषा के माध्यम से व्यंजित करती हैं वह अपने आप में विलक्षण हैं। एक कुशल शिल्पी की भाँति वे जिस तरह से अपने शिल्प को गढ़ती है, उनसे उनकी कथा की घटनाएं दृश्य श्रव्य के रूप में परिवर्तित होकर सामने आती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे घटनाएं सामने ही घटित हो रही हों। उनकी प्रारंभिक औपन्यिसिक कृति 'डार से बिछुड़ी' (1958) से लेकर 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान' (2017) व अन्तिम कृति 'चन्ना' (2019) तक की कथा यात्रा में इसे बखूबी देखा जा सकता है।

'समय सरगम' कृष्णा सोबती का (2000) में प्रकाशित उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास में प्रचलित अर्थ में सुगठित कथाविन्यास नहीं है जो कथातंतुओं को किन्हीं निश्चित निष्कर्षों की ओर ले जाता है। इस उपन्यास का शिल्प और चरित्रों की परिणति उनके पूर्व सृजित उपन्यासों से भिन्न है। यह उपन्यास वृद्धावस्था पर केन्द्रित उपन्यास है। इसमें जीवनपर्यन्त संघर्ष करते और मृत्यु की ओर बढ़ती उम्र के वृद्ध व्यक्तियों की कथा के माध्यम से जीवन की जटिलता, स्त्री-पुरुष संबंधों की रागात्मकता, पारिवारिक जीवन का यथार्थ, मनुष्य का अकेलापन, ईश्वर, काल, मृत्यु आदि का आख्यान है। इसके अतिरिक्त उपन्यास के उत्तरार्द्ध में कुछ प्रकरण कश्मीर समस्या, दुनिया की महाशक्तियों, विकसित राष्ट्रों की अंतरिक्ष में बस्तियाँ बसाने की योजना, वंचित दलित वर्ग की पीड़ा राजनीति और धर्म की संकीर्णता का मेल, परम्परागत आश्रम व्यवस्था वर्ण-व्यवस्था, आतंकवाद आदि आये हैं जो मुख्य कथा से पूरी तरह नहीं जुड़ पाते परन्तु इनका महत्त्व अवश्य है।

उपन्यास में आरण्या और ईशान केन्द्रीय चरित्र हैं। आरण्या स्वाभिमान और आत्मविश्वास से पूर्ण स्वतंत्र और स्वावलम्बी स्त्री है। उसका एकाकी जीवन है परन्तु वह उसे स्वाभिमान से जीती हैं। अपने बारे में उसका कथन है 'मेरे होने के अर्थ मुझी में बने रहे हैं। इसीलिए मैं ऐसी देखी जाती हूँ।' ईशान और वह एक ही स्थान से संबंध रखते हैं। दोनों का एकाकी जीवन है। पार्क में भ्रमण करते हुए औपचारिक भेंट और एकाध बार साथ-साथ चाय-पान से उनकी मैत्री प्रारंभ होती और समय के साथ निरंतर मिलने और परस्पर बातचीत से मैत्री में प्रगाढ़ता बढ़ती जाती है। दोनों की जन्मतिथि एक ही है कदाचित् यह भी उनकी समान धर्मिता का एक सूत्र है। आरण्या को अकेलापन पीड़ा नहीं देता है जबकि ईशान के लिए वह चुभने वाला है। दोनों पात्र अकेले और स्वयं अपनी इच्छा और कर्म के स्वामी हैं। उनके जीवन के संबंध में अपने निर्णय हैं। आरण्या के पूर्व जीवन के संबंध में कोई सूत्र विद्यमान नहीं है। ईशान के पूर्व जीवन के कुछ संकेत विद्यमान हैं। लक्ष्मी ईशान की पत्नी थी। उसका पति के प्रति समर्पण और प्रेम रहा होगा इसका कोई स्मृति संकेत उपन्यास में नहीं है। ईशान की स्मृतियों में वह कहीं जगह नहीं बना पाती। ईशान का लक्ष्मी से

विवाह पूर्व कोई परिचय नहीं था। यह ईशान के पिता की पसन्द के आधार पर हुआ था। एक काल खण्ड में व्याप्त इस दाम्पत्य संबंध में कितनी सरसता रही होगी, इस संबंध में ईशान की कोई स्मृति या कथन नहीं है। परन्तु कामिनी से अपने संबंध को वे स्मरण करते हैं और आरण्या से उस रहस्य को प्रकट करते हैं। कृष्णा सोवती इस प्रसंग की अवतारणा करती हुई लिखती है 'कामिनी और ईशान के बीच लम्बे बरस फैले थे। ईशान की पत्नी लक्ष्मी और कामिनी में गहरी दोस्त थीं। साथ-साथ पढ़ाती रही थीं। लक्ष्मी के जाने के बाद दोनों में कुछ उभरा था, जो सहज था। फिर न जाने दोनों ओर किस अविश्वास के बोझ तले कुछ अटपटा सा होकर रह गया। न क्या नियति। क्या व्यावहारिक भविष्य की उलझनें ! भाग्यवादी हूँ, फिर यह सब क्या सोच रहा हूँ। (समय सरगम पृ. 103) इस प्रसंग की अवतारणा से यह ज्ञात होता है कि ईशान और कामिनी के मध्य लक्ष्मी की देहावसान के अनंतर रागात्मय संबंध विकसित हुआ किन्तु व्यावहारिक भविष्य की उलझनों, और अवरोधों के कारण स्थायित्व ग्रहण नहीं कर सका। एक सुदीर्घ अंतराल के अनंतर भी अतीत की वह स्मृति उन्हें पीड़ा देती है और उस अभाव की अनुभूति भी होती है। जीवन की व्यावहारिक उलझनों और भाग्य की विडम्बना उन्हें उद्विग्न करती है। आरण्या ईशान के मन के विकार को अनुभव करती है। वह ईशान को नाना प्रकार की कामनाओं और जंजालों से मुक्त करने का प्रयत्न करती है। वह मानव जीवन की अर्थवत्ता का बोध कराती है और पारिवारिक मोह की रिक्तता को उद्घाटित करती है जिससे उनमें अपने जीवन के प्रति राग उत्पन्न होता है। आरण्या का चरित्र ठोस वास्तविकता पर आधारित है और उसकी संकल्प शक्ति सुदृढ़ है इसी कारण वह जीवन मृत्यु के द्वन्द्व से मुक्त है। आरण्या इस उपन्यास की धुरी है और ईशान इससे संपृक्त अन्य प्रमुख चरित्र है। कामिनी, समयंती, प्रभुदयाल आदि चरित्र पारिवारिक जीवन की स्थितियों के निरूपण में सहायक हैं।

'समय सरगम' में वैयाक्तिक एकांत और पारिवारिक सहजीवन से संपृक्त प्रश्नों को उठाया है। कृष्णा सोबती परिवार को समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई मानती है परन्तु वर्तमान समय में समय के परिवर्तन के साथ रक्त संबंधों तक में घोर स्वार्थों की विभीषिका देखी जा सकती है। दमयंती, कामिनी, प्रभुदयाल आदि चरित्रों को नियति परिवार संस्था में आई विसंगतियों और विकृतियों को अनावृत करती है। ऐसी स्थितियों में उपन्यास की वाचिका आरण्या ने पारिवारिक सहजीवन की अपेक्षा एकांत और अकेलेपन का वरण किया है।

दमयंती भरेपूरे संयुक्त परिवार की स्वामिनी है। वृद्धावस्था से पूर्व सफल व्यावहारिक जीवन जिया है। उसके पति भले आदरणीय, संजीदा, कद्रदान और पत्नी के प्रति अनुरक्त। पति की मृत्यु के अनंतर उसकी नियति ही परिवर्तित हो जाती है। विधवा जीवन उसे परिवार में अकेला कर देता है। अकेलेपन से मुक्ति तथा चित्त की शान्ति के लिए ऋषिकेश की साध्वी के आश्रय में आती जाती रही हैं। विधवा जीवन की रूढ़ियाँ उसे सामाजिक दृष्टि से अकेला कर देती हैं। जबकि उसका प्रारंभिक जीवन सरस आकर्षक और आनन्द से पूर्ण रहा है उसके यौवन काल को स्मरण करते हुए ईशान कहते हैं 'मेरी' पड़ोसी रही है, खूब मनमौजी कभी आकर्षक चुलबुली और चुस्त हुआ करती थी। आधुनिकता के सभी गुण उनमें मौजूद हैं। पहनने ओढ़ने का सलीका, मीठी गुफ्तगू और गृहस्थी का कायदा करीना अधिकतर औरतें उनसे ईर्ष्या ही करती रही हैं। (पृ.70) परन्तु पति के देहावसान के अनंतर उसके जीवन की दिशा परिवर्तित हो जाती है। तीन-तीन बेटों और बहुओं के होते हुए भी वह घर में अकेलापन, उपेक्षा और अपमान झेलने के लिए अभिशप्त हो जाती है। संयुक्त परिवार की स्वामिनी होकर भी उसका किसी प्रकार का स्वत्व नहीं है। घर-गृहस्थी का खर्च वह करती है। घर का अतिथि कक्ष जो उसने स्वयं सुसज्जित किया है उसी में उसके अतिथियों को बैठने की अनुमति नहीं है। घर में उसका सामान बिना उसको पूछे इधर-उधर किया जाता है। स्वामिनी होकर भी अपने कमरे में अकेली पड़ी रहती है। उसके बेटों की सारी कोशिश मां की संचित सम्पति पर केन्द्रित है। इसलिए वे फ्लैट के कागजों और लॉकर की चाबी को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। घर के नौकर को वे धमकाते हैं 'बताओ ममा लॉकर की चाबी कहाँ रखती है? वह आरण्या से कहती है 'मैं ड्राइंग रूम में अपने मेहमान नहीं बिठा सकती। मैं वहाँ नहीं बैठ सकती, मेरे मेहमान नहीं बैठ सकते जबकि वहाँ का सब फर्नीचर, साज सामान मेरा अपना बनाया हुआ है। और मैं किसी बेजान काठ की तरह देखती जाती हूँ। (पृ.74) वह ईशान और आरण्या के समक्ष अपने हृदय की वेदना, उपेक्षित और अपमानित स्थिति को व्यंजित करती है। आरण्या उसे उसके अधिकारों के प्रति सजग और उत्प्रेरित करती है। उसके वृद्ध मित्र ड्राइंग रूम में चाय पी रहे होते हैं उस समय उसका मंझला बेटा अपने दो मित्रों के साथ पहुंचता है और उन्हें हिंस्र आंखों से देखता है और दूसरे कमरे में जाने के लिए कहता है। इस दौरान उनमें परस्पर टकराहट होती है। वह क्रोधावेश में चाय की तश्तरी उलट देता है इस स्थिति में वृद्ध मित्रों की प्रेरणा से वह बेटे को फटकारते हुए कहती है 'यहाँ खड़े न रहो। इस घर से बाहर चले जाओ। खबरदार, जो यहाँ कदम रखा। समझे। तुम नहीं मैं हूँ इस घर की मालिक, मैं हूँ। (पृ.76) वह यहाँ प्रतिरोध अपने मित्रों के भरोसे करती है वह अपने बेटे की प्रकृति को बखूबी समझती है। इसलिए प्रतिरोध करने के बावजूद भयभीत हो जाती है और उन्हें वहीं रुकने के लिए कहती है। आरण्या जाते हुए उसे

कहती है 'संयम से काम लीजिए। बच्चों के पिता के बाद आपकी सुरक्षा का भार स्वयं आप पर है। एतराज करने का अधिकार भी आपका है। विश्वास रखें--- उसे माफी माँगनी होगी'। (पृ.77) आरण्या उसे उसके अधिकारों के प्रति सजग अवश्य करती है परन्तु वे उसकी कोई सहायता नहीं कर पाते। वस्तुतः उस वृद्धावस्था में क्या सचमुच कोई किसी की मदद करने के काबिल है। तीन जोड़े ठण्डे हाथ। कहीं किसी में गरमाहट बाकी है क्या। नए बच्चों का सामना करने की हिम्मत भी है? ममता माँ सिर्फ ममता ही है क्या? क्या उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व के सूत्र अब भी पिता, पति और पुत्र के हाथों में है?' (पृ.77) जीवन के उत्तरार्द्ध में वृद्धावस्था में कामिनी की स्थिति भी दमयंती की भाँति ही है। उसका विगत जीवन सफल और सक्रिय रहा है। वह एकाकी और अविवाहित है। वह अतीत में आत्मनिर्भर रही है और सभी सुविधाएं भी उसने स्वयं अर्जित की है। परन्तु वृद्धावस्था में अपने आपको असुरक्षित समझती है। उसका भाई और भाभी उसकी सम्पति पर अधिकार जमाना चाहते हैं। घर में वह नौकरानी पर आश्रित है। अपने बंगले तक में उसका जीवन सीमित है। अकेलेपन में भाई भाभी के स्वार्थयुक्त व्यवहार और दृष्टिकोण के कारण वह संदिग्ध दृष्टि की शिकार है। अवसाद, अकेलेपन और किंचित विक्षिप्तावस्था से घिरी कामिनी को उपचार के नाम पर डॉक्टर को कह कर लगातार नशे के इंजेक्शन दिए जाते हैं। उसके भाई भाभी ने नौकरानी खूकू को भी लालच दिया है ताकि उसकी प्रत्येक बात उन तक पहुँच सके।

दमयंती और कामिनी की संयुक्त परिवार में दारुण स्थिति की गाथा प्रस्तुत करने साथ विधुर प्रभुदयाल की कारुणिक स्थिति और दुखद अंत भी उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। प्रभुदयाल तीन बेटों के पिता हैं। घर में तीन बेटों और बहुओं के होते भी पारिवारिक सुख से वंचित, अपमानित और उपेक्षित है। प्रभुदयाल की पत्नी का देहावसान हो गया है। विधुर पिता की प्रत्येक गतिविधि पर बेटों की नजर है। वे इस बात से नाराज हैं कि पिता के मेरठ में किसी कलावती से संबंध है। इस संबंध को लेकर उनकी यह चिंता है कि कहीं वे उस स्त्री को अपनी धन सम्पति न दे दे। बड़े बेटे के ससुर रघुवीर के माध्यम से उन्हें सूचना मिलती है कि उन्होंने दूसरी स्त्री से संबंध स्थापित कर लिया है और उसके भतीजे को फैक्ट्री तथा नए घर के निर्माण की योजना है। प्रभुदयाल कृपण स्वभाव के हैं और बड़ा बेटा कारोबार में घाटे के कारण पैसे की माँग करता है। वह इन्कार करते हैं और बेटों के प्रति अविश्वास के कारण अलमारी की चाबी गले में लटका कर रखते हैं, परन्तु मंझला बेटा बड़े के कहने पर गले में लटकाई ताली का सूत काट देता है। वे कुछ दिनों के पश्चात् मेरठ में अपनी भाभी की भतीजी कलावती के यहाँ चले जाते हैं। देहरादून सहानपुर और मेरठ से लौटते हुए उनकी गला दबाकर हत्या कर दी जाती है। उनकी हत्या उनके बेटों ने की या कलावती के भाई भतीजों ने की यह स्वार्थपरता और अमानवीयता की पराकाष्ठा और दुखद है। पिता की मृत्यु के पश्चात् बेटे समाज में अपनी व्यापारिक प्रतिष्ठा को बनाने के लिए मृत्यु संस्कारों के रूप में श्राद्ध और दान पुण्य करते हैं। पिता की हत्या पर शोकाकुल होकर पिता के जीवन की उपलब्धियों के संबंध में प्रवचन सुनते हैं। प्रवचन में कहा जाता है एक कर्मयोगी की तरह लाला जी इस संसार में परिवार को साधन सम्पन्नता में स्थापित सुव्यवस्थित कर स्वर्ग सिधारे हैं। शांत मन से हम उन्हें श्रद्धांजलि दे और उनके पुण्य कार्यों को जीवित रखते हुए इस लोक में मनुष्य का धर्म निभाएं। (वृ.112)

आरण्या को संयुक्त परिवार का अनुभव नहीं है वह अकेली रहती है परन्तु अपने निकट-दूर के परिवेश में वह जिन स्थितियों का साक्षात्कार करती हैं उनके माध्यम से वह इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि वह आज का कटु यथार्थ है। वह ईशान से कहती है 'मुझे संयुक्त परिवार का अनुभव नहीं। दूर पास से जो इसकी आवाजें सुनी, वह सुखकर नहीं थीं। इतना जानती हूँ कि परिवार की सुव्यवस्थित अस्मिता और गरिमा का मूल्य भी उन्हें ही चुकाना होता है जिनका खाता दुबला हो। परिवार की साँझी श्री पैसे के व्यापार प्रबंधन में निहित है। उसकी आंतरिक शक्ति क्षीण हो चुकी है। घनी छाँह की जगह घिसी हुई पुरानी चिंदियां फटफटा रही हैं। जानती हूँ, ईशान, आपको यह बात ठीक नहीं लग रही, पर मैं अपनी कीमत पर इसकी पड़ताल कर रही हूँ और 'सत्य' के नाम रूप में संचारित छोटे बड़े झूठ और झूठों से बनाए गए स्वर्णिम सत्यों की ठोक पीट ही इस सात्विक संस्कार की प्रेरणा है। (पृ.64)

दमयंती, कामिनी और प्रभुदयाल के साथ जो घटित होता है इससे यह सिद्ध होता है कि परिवार की रागात्मक उष्मा समाप्त हो रही है जिसके परिणाम स्वरूप परिवार की संरचना विघटित हो रही है। 'कृष्णा सोबती ने कामिनी, दमयंती और प्रभुदयाल जैसे चरित्रों की वृद्धावस्था में दुखद नियति के माध्यम से यह स्थापित किया है कि परिवार जैसी समाज की सुदृढ़ इकाई जिसमें प्रेम, स्नेह, त्याग और परस्पर निस्वार्थ सहयोग के सूत्र सुदृढ़ रूप में विद्यमान थे, वर्तमान समय में संयुक्त परिवार के जीवन-मूल्य पूरी तरह ध्वस्त हो रहे हैं। संयुक्त परिवार में घोर स्वार्थों और व्यक्ति की स्वकेन्द्रित मनोवृत्ति के कारण अमानवीयता और क्रूरता बढ़ी है। वृद्धावस्था में व्यक्ति जर्जर अवस्था में पहुँचता है, उस समय अपनी ही संतति धन सम्पति के लालच में उनके प्रति क्रूरता की पराकाष्ठा तक पहुँचती है। लेखक ने ईशान और आरण्या की परस्पर बातचीत के माध्यम से संयुक्त परिवारों की उपयुक्तता पर विचार किया है। आरण्या अनुभव करती है कि पारिवारिक घनिष्ठता से जी हुई पुरानी भाव गठरी बेमानी हो चुकी है। ईशान परिवार संस्था के पक्ष में तर्क देते हैं कि पारिवारिक संबंधों की व्याख्या व्यक्तिगत संदर्भों में नहीं की जानी चाहिए। छोटे-छोटे दबावों के बावजूद बहुत कुछ

अच्छा मूल्यवान होता है। संयुक्त परिवार की गुणिता को हम फिर से खोज रहे हैं हमारा देशगत संस्कार इसी की जड़ों में पनपा है। भारतीय चिंतनधारा में आश्रय व्यवस्था का विधान है। इसमें वृद्धावस्था को वानप्रस्थ से सम्बद्ध माना जाता है। वृद्धावस्था की ओर अग्रसर होते व्यक्ति का परिवार के मुखिया होने का सम्मान धीरे-धीरे कम होने लगता है। घर का स्वामी होने के स्वत्वाधिकार, उसके मार्गदर्शन, परामर्श का महत्त्व कम होने लगता है। परिवार में उसकी केन्द्रीय भूमिका पार्श्व में धकेल दी जाती है। यह उपन्यास दमयंती, कामिनी, प्रभुदयाल आदि चरित्रों के माध्यम से वृद्धावस्था की इस उपेक्षापूर्ण स्थिति को सामने लाता है। उपन्यास में एक स्थान पर इस आश्रम व्यवस्था का निषेध प्रतीत होता है। अपने जन्मदिन के उत्सव के अवसर पर आरण्या तैयार होती हुई दर्पण में अपना चेहरा देखकर हंसती है और सोचती है 'दर्पण पर धूल नहीं, पर इसका मतलब यह भी नहीं कि तुम उतनी ही उजली हो जितनी पहले कभी थी इस मौसम को भला क्या कहा जाता है, 'वानप्रस्थ बुढ़ापा' इस मूल्यवान मौसम का सत्कार किसी और शब्द से करो।' (पृ.79) आरण्या और ईशान की जन्म तारिख एक ही है। वह जन्मदिन को प्रसन्नता से मनाना चाहती है जबकि ईशान जीवन के उत्तरार्द्ध के सभी दिनों को एक समान मानते हैं और आरण्या से कहते है 'हम किनारे पर हैं आरण्या, यह सब बचपना नहीं लगता?' आरण्या मैत्री भाव से उन्हें कहती है 'मैं अपने आप को उम्र में उतना बड़ा महसूस नहीं करती जितना आप मान रहे हैं। मेरे पास मेरा परिवार नहीं फैला हुआ कि मैं अपने में माँ, नानी, दादी की बूढ़ी छवि ही देखने लगूँ। ईशान, मुझे मेरा अपनापन निरंतरता का अहसास देता है। (पृ.80)

उपन्यास के उत्तरार्द्ध के रामखेलावन और आरण्या के मध्य बातचीत के माध्यम से भारतीय समाज में व्याप्त जातिविधान, लिंगभेद, स्वर्णजातियों का वर्चस्व, दलित जातियों के प्रति अमानवीयता और असमानता को अतीत संदर्भों से संपृक्त कर प्रस्तुत किया है। पुरातनी पीढ़ी में अभी भी अन्तश्चेतना में जाति विधान के संस्कार विद्यमान हैं। इसी कारण से दलित जाति से संबंध रखने वाला रामखेलावन को अपने बेटे का यह प्रश्न अनुचित प्रतीत होता है कि महाराज दशरथ के दरवार में राम के चौदह वर्ष के वनवास को लेकर आवाज क्यों नहीं उठाई गई। सीता की अग्नि परीक्षा को लेकर भी दसवीं में पढ़ने वाला रामखेलावन का प्रतिका संम्पन्न बेटा सवाल उठाता है। रामलेखावन स्वयं भी बी.एसी. तक शिक्षा अर्जित की है परन्तु जाति विधान की अन्तरचेतना के कारण वह धोबी के पैतृक व्यवसाय को अपनाए हुए है, परन्तु आगामी पीढ़ी में सामाजिक असमानता और स्त्री के प्रति पुरुष के अन्याय पूर्ण दृष्टिकोण और व्यवहार के प्रति आक्रोश और प्रतिकार की भावना विद्यमान है। रामखेलावन स्वयं भी इस अमानवीयता और अन्याय को भली भाँति समझता है। इसीलिए वह आरण्या के समक्ष जातिविधान की वस्तुस्थिति के यथार्थ को सामने लाते हुए भी उद्घाटित करता है कि जातिवादी वर्चस्व स्त्री के अस्तित्व और अस्मिता पर अत्याचार करता है परन्तु शासन-प्रशासन व्यवस्था के संरक्षक अन्याय को मूक भाव से देखते रहते हैं। रामखेलावन इस पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहता है ऊँची जाति-विरादरी ने भी कम घृणा नहीं फैला रखी। अपने को संस्कारी जातियाँ कह कर पुकारते हैं और दलितों-पिछड़ों को असंस्कारी, संस्कारविहीन, नीच, पिछड़ा। आरक्षण को लेकर कभी मनुवादी उबलते हैं और कभी दलित और कमजोर वर्ग। धंधे की राजनीति है जाने कब तक खेली जाएगी, यह सिलसिला कब तक चलता रहेगा। बाह्मण, बाह्मण के साथ, यादव यादव के साथ-साहिब, एक विधान के चलते आप कितनी बिरादरियाँ बना देगें अपने देश में। संसद क्यों कड़ाई से कानून लागू नहीं करती। ऊँची जात वाले नीची पिछड़ी जात की लड़कियों को घेर कर उनके साथ कुकर्म करते जाते हैं और मूँछों पर ताव दे छुट्टा घूमते रहते हैं। यह तो सरासर अन्याय है, साहिब! ----और पुलिस? अगर उसकी जात ऊँची है तो खड़े खड़े देखती रहेगी। वारदात को कानून के धन्धे से रफा दफा कर देगी। बेटियां कमजोरों की रोती रहेगी। छाती पीटती रहेगी।' (पृ.120)

रामखेलावन की मर्मांतक पीड़ा विचलित करने वाली है। सवर्णों द्वारा दलित वंचित वर्ग का उत्पीड़न और शोषण और उन पर निरंतर ढाये जाने वाले अत्याचार, अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को लक्ष्य करके कृष्णा सोबती आरण्या की व्यंग्यात्मक और प्रहारात्मक काव्य पंक्तियों के माध्यम से कहती है :

'घर है हमारा देश। / परदे हवा में फड़फड़ाते रहे।/ कमजोर, अनपढ़ जातियों पर अत्याचार होते रहे।/ बहू-बेटियों पर बलात्कार होते रहे। /राष्ट्र है धुले-पुंछे पुण्यवान वर्गों के लिए।/ यही कुछ कह रहे थे शायद रामखेलावन। (पृ.120)

अध्याय अठारह में कृष्णा सोबती ने महात्मा सदानंद महाराज संबंधी प्रसंग के माध्यम से भारतीय हिन्दू जीवन-परिपाटी जड़ संस्कारिता को प्रश्नाकित किया है। महात्मा सदानंद महाराज के बाह्य व्यक्तित्व को रेखांकित करते हुए कृष्णा सोबती कहती है जीप में खड़े हैं महात्मा सदानंद महाराज। केसरी कीमती चोला। नित नियम के बाद नियमपूर्वक चावल भर अफीम के सेवन से चुनचुनाती चमकती आँखें। गर्दन तक झूलती सिर की लटें। भव्य! इस मनभावन स्वामी के लिए भक्तों की भक्ति भावना प्रेम प्रवाह में पगी हुई है। महात्मा शिष्यों को समझा रहे हैं--धर्म श्रद्धा इस देश का गहनतम प्रवाह है। वह सिर्फ जीवन शक्ति का ही स्रोत नहीं है, राजनैतिक शक्ति का भी विस्तार है। धर्म ही दुःखों का उन्मूलन करेगा। खाली नगर पालिकाएँ, प्रशासन नागरिकों के लिए ऐसा क्या कर सकेगी कि उनमें संतोष उत्पन्न हो। भगवान भी सबको सब कुछ नहीं देते।' (पृ.140)

सदानंद महाराज अपने प्रवचन के माध्यम से हिन्दू वर्ण व्यवस्था की जातिवादी भेदभावपूर्ण व्यवस्था के सामाजिकार्थिक और राजनीतिक पक्षों के पक्षधर होकर सामने आते हैं। वर्तमान समय के तथाकथित साधु संन्यासी और धर्म गुरु आश्रम स्थापित कर समाज में विमेदकारी विष फैलाते हैं और धर्म के नाम पर अपने समाज को भ्रमित करते हैं। कृष्णा सोवती सदानंद के प्रवचन की प्रस्तुति के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है कि धर्म के ठेकेदारों की चातुर्वण्य की जातिवादी विमेदकारी व्यवस्था को फैलाने और समाज को खण्डित करने में कम भूमिका नहीं होती। धर्म के ये तथाकथित संरक्षक सत्ता में सवर्ण जाति का वर्चस्व बना रहे इसके लिए वे विभिन्न दृष्टांतों से अपने विचार को प्रामाणिक बनाने का प्रयत्न करते हैं। ब्राह्मण जाति की श्रेष्ठता को पुष्ट करते हुए उसकी निरंतरता के संबंध में उनके अनेक तर्क हैं। सदानंद महाराज के तर्कों से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि समाज में असमानता का दंश भोगने वाले वंचित वर्ग के शोषण का यह सिलसिला न जाने कब तक चलता रहेगा। सदानंद महाराज भक्तों को प्रवचन देते हुए कहते हैं 'इतना तो तय है कि शुद्ध संस्कार वाली उच्चवर्गीय माता के गर्भ से ही हम जन्म लेगें। हम अपनी पुरानी जन्म शृंखला, संस्कार-परम्परा और शास्त्र मर्यादा को क्यों छोड़ेंगे। लाख सिर पीटते रहें निरक्षर देशज। संस्कारी और संस्कार विहीन जातियों का भेद युगों से चला आ रहा है। ब्राह्मण रहे देवताओं के कारदार और निम्नवर्ग राक्षसों के। इसी से देवता सात्विक है और दस्यु यवन मलेच्छ है। (पृ.142)

सदानंद महाराज जैसे अनेक धर्माडम्बर फैलाने वाले साधु-सन्यासी है जो सांस्थानिक रूप में धर्माश्रय लेकर धर्म और राजनीति का खेल एक साथ खेलते हैं। उनके लिए धर्म एक धन्धा है, धर्नाजन का साधन है और राजनीति के दलदल में वे सवर्णों के पक्षधर होकर आते हैं। सत्ता सवर्णवाद के वर्चस्व की ओर संकेत करते हुए सदानंद महाराज कहते हैं 'हमारा मतदान इसी खेप से उठेगा, उसी पेटी में डाला जाएगा, जिसमें हमारे पूर्वज अपनी आस्था विश्वास के हित में उसकी सुरक्षा करते थे। सत्ताएँ और शक्तियाँ जो भी कहती है, करती रहे। हमसे, हमारी जाति से जाग्रत हमारी सांस्कृतिक धरोहर एक लम्बी कड़ी के रूप में हमारे अन्तसंबंधों में संरक्षित है। (पृ.142) सदानंद महाराज यह भली भाँति समझते हैं कि दलित और वंचित वर्ग में वह सामर्थ्य विद्यमान नहीं है कि सवर्ण वर्ग से किसी भी प्रकार का मुकाबला कर सके। इसीलिए सदानंद महाराज अपने प्रवचन में कहते हैं जो अनपढ़ अभी साक्षर तक नहीं वह हमारा मुकाबला कैसे करेगें। हममें सूत्रबद्धता है, वह इन जटिल अशिक्षितों में कहाँ। (पृ.142)

सदानंद महाराज का यह प्रवचन चुनाव प्रचार का हिस्सा है। उनके साथ जुड़ा हुआ जन समूह जलूस की शक्ल में सदानंद महाराज की जय घोष करते हैं। नारों के साथ अध्यात्म का एक नया उन्माद और लावण्य सड़क पर प्रवाहित होता है। परन्तु दलित वंचित वर्ग का एक समूह भी जलूस के रूप में प्रकट होता है और अपनी दैनंदिनी जीवन की मूलभुत समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। वे स्वतंत्र भारत में लोकतंत्रात्मक अधिकारों के प्रति सजग हैं इसलिए उन अधिकारों की प्राप्ति के लिए आवाज उठाते हैं। सदानंद महाराज आक्रोश में चीखकर उपनिषदों के हवाले से कहते हैं 'आत्मा को अजन्मा, नित्य शाश्वत और पुरातन कहा है। सत्ताओं और शक्तियों को अपना काम करने दीजिए। दलित वंचित वर्ग में अब सामाजिक एवं राजनीति चेतना का आविर्भाव हो गया है। वह अब अपने अधिकारों के प्रति संगठित भी है। इसलिए उनमें सवर्ण वर्चस्व के विरुद्ध प्रतिरोध का स्वर है। इसीलिए वे कहते हैं 'बंद करिए इस दर्शन को। यदि बुद्धि, तर्क, मनोभाव भारतीय जीवन शक्ति को उच्चतर स्तर तक पहुँचाना चाहते हैं तो न्याय, साहस और सहानुभूति के सिद्धान्तों को समझना होगा।

कृष्णा सोबती इस प्रसंग की अवतारणा के माध्यम से वंचित दलित वर्ग की सामाजिक राजनीतिक चेतना को सामने लाती है और उनके पक्ष में खड़ी दिखाई देती है। वे सदानंद महाराज और उनके भक्तों के धार्मिक आडम्बर और आध्यात्मिक आवरण की रिक्तता को अनावृत करती है। दलित वंचित वर्ग का यह वक्तव्य इसी दृष्टि से उल्लेखनीय है, 'हमारे लिए यह जगत मिथ्या नहीं है। नित्य है। यह न जन्मता है न मरता है। यह स्थूल-सूक्ष्म रूप में हमेशा विद्यमान है। फिर हमें बेहतर जीवन से दूर रहने की क्यों भरमा रहे हैं। हमारे अधिकारों की रक्षा करने को हमारा संविधान है। प्रजातंत्र में बहुमत की सहभागिता ही उसका आख्यान है। संसद हमारे लोकतांत्रिक मूल्यों की संरक्षक हैं। हम भले पिछड़े हैं, अनुसूचित है, पर संसद हमारी भी है। हम भी इसी देश के निवासी हैं। वंचित दलित वर्ग का यह वक्तव्य तार्किक रूप में उस शोषण के विरुद्ध न केवल आवाज है अपितु बहुजन समुदाय को अब तक मूलभूत अधिकारों से वंचित करने वाले अभिजात्य का अहंकार करने वाले वर्ग से अधिकारों को छिनने का उपक्रम है।

उपन्यास के अंत में 'यही धरती' शीर्षक से अध्याय है। इसमें आतंकवाद और विकसित देशों और अविकसित देशों के मध्य बढ़ती खाई से उत्पन्न चिंताओं और समस्याओं को तीन पृष्ठों में उभारा गया है। ऐमनेस्टी इंटरनेशनल की दक्षिण पूर्वी डेस्क से जुड़ी जर्मन पुत्री और भारतीय पुत्रवधू ऐंग्लिका कश्मीर से लौटती हुई दिल्ली में रुकती है और जम्मू कश्मीर में जन्मे ईशान से मिलने आती है। वह ईशान के साले सुरेन पाठक की पत्नी है। परिवार की संघन स्मृतियाँ और अन्तदृष्टियाँ उनसे जुड़ी हैं। इस अध्याय में जम्मू कश्मीर में आतंकवाद की समस्या की ओर संकेत है। आतंकवाद और मानवीय (पृ.144) अधिकारों को लेकर जम्मू-कश्मीर की गम्भीर स्थिति (शेष पृष्ठ 54 पर)

आलेख

व्यंग्य की अस्मिता और स्थापना

◆ चंद्रकांता शर्मा

व्यंग्य को एक स्वतंत्र मान्यता तथा विधा रूप में उसकी स्थापना को लेकर तो अब कोई दो राय नहीं रह गई है। हिन्दी के तमाम आलोचक इस विधा को लेकर जब-तब टिप्पणी करते रहे हैं तथा विधा रूप में मान्यता का दबा स्तर कहीं दब गया है और व्यंग्य विधा आज अपने समूचे सौष्ठव के साथ साहित्य में लोकप्रिय भी बनती जा रही है। व्यंग्य एक ऐसी दुधारी है, जिससे दोनों ओर से वार होता है और यह वार समाज सुधार के साथ-साथ एक जीवन दृष्टि की तलाश को भी पूरा करता है।

व्यंग्य का चिंतन गहराई ले रहा है तथा सामाजिक विदयताएं एक-एक करके इसमें निरूपित हो रही हैं। अब व्यंग्य भाषाई लालित्य प्रसंगानुसार समायोजित होने का कोई 'किलर' नहीं है अपितु वह समग्रता से रचनाकारों के लिए योजनाबद्ध ढ़ंग से काम करने की शालीन विधा है। व्यंग्य में जो नए-नए प्रयोग नौवें दशक से प्रारम्भ हुए हैं, वे अत्यन्त आशाजनक तथा उत्साही हैं।

आजादी के बाद के दशकों में व्यंग्य लेखकों की न्यूनता ही इसकी समृद्धि में बाधा का सबसे बड़ा कारण रही इसके पीछे भी दो ही कारण मुख्य रूप से रहे, एक तो इसकी मान्यता का अभाव तथा दूसरे व्यंग्य की पकड़ के प्रति दृष्टिहीनता। उस समय तक व्यंग्य कहानी में ही यत्र-तत्र प्रयोग रूप में काम लिया जाता था अथवा मात्र रचना लालित्य के लिए बतौर भाषा के इसका इस्तेमाल हो पाता था। परन्तु आठवें दशक के आते-आते संभावनाशील रचनाकार पूरी तैयारी के साथ इसमें उतरे तथा उन्होंने नौवें दशक तक तो इसे परिपूर्ण बना दिया।

सैकड़ों की संख्या में नए लेखक रचनाकार व्यंग्य कर्म को अपनाने लगे तथा साथ ही समाचार-पत्रों एवं पत्रिकाओं में इस विधा के कालम नियत किए जाने लगे। हालांकि यह अभियान बहुत ही सतही तथा सामयिक प्रसंगों तक सीमित रहा, परन्तु विधा के लिए बहुत लाभदायी भी रहा। इसके लेखकों ने जहां इसे स्वतंत्र रूप से अपनाया, वहीं वे इसमें गम्भीर प्रयोगों की तरफ भी सचेष्ट रहे। इससे अच्छी व्यंग्य रचनाएं पाठकों के सामने आईं।

चूंकि व्यंग्य में विसंगतियों पर प्रखरता से भार होती है, इसलिए जहां इसकी चुटकियों से इसे रोचकता मिली, वहीं पठनीयता ने इसे लोकप्रिय भी बनाया। पाठकों को भला कि यह विधा आनन्दानुभूति के साथ-साथ एक रास्ता भी बनाती है, इसलिए व्यंग्य की स्वतंत्र रचनाएं तथा कालम जनप्रिय बनते चले गए।

आलोचकों का यह तर्क स्वीकार्य नहीं कहा जा सकता कि सातवें दशक तक तो यह विधा सारवान तथा गम्भीरता ग्रहण कर सकी, परन्तु शनैः शनैः इसका अवमूल्यन होता चला गया तथा आज वह बहुत ही घटिया स्तर तक जा पहुंची है। युग परिवर्तन के साथ हमारे बदलते सांस्कृतिक मूल्यों ने नई विसंगतियों को जन्म दिया तथा पारम्परिक विषय व्यंग्यकारों की नजर से हटते चले गए।

आठवें दशक तक जो रचनाकार इस विधा की श्रीवृद्धि में लगे थे, उन्होंने भी नई दृष्टि से नए विषयों तथा विसंगतियों को देखा तथा अपनी रचनाओं में सूक्ष्मता से उभारा। क्षणिक आनन्द के इर्द-गिर्द घूमने वाली व्यंग्य रचनाओं की बात मत करिए, उन प्राणवान व्यंग्य रचनाओं के तल में जाइए, जहां रचनाकारों ने डूबकर असंगतियों को अपनी रचनाओं में जीवंत किया है।

इसके लेखक वर्ग प्रदेश की सीमाओं में बंधे नहीं रह सके तथा वे राष्ट्रीय स्तर पर अपनी 'व्यंग्यकार' के रूप में पहचान बनाने लगे। उसी का परिणाम हास्य-व्यंग्य के कवि सम्मेलन थे, जो जनता द्वारा बेहद पसन्द किए गए। यही नहीं गद्य रचनाएं भी मंच पर पढ़ी जाने लगीं तथा सराही गई। आज कोई गम्भीर निबन्ध, उपन्यास, नाटक अथवा कहानी मंच पर पढ़कर देखी जाए, उसे जनता एक ही पल में रिजेक्ट कर देगी।

इससे यह तो पता चला कि व्यंग्य की मांग जन मानस में है। अतः नवीन प्रयोगों के जरिए इसे प्रस्तुत किया जाना चाहिए। आज जिस राजनीति की हम हर अगले क्षण चर्चा करते हैं, वह भी तो सर्वाधिक व्यंग्य में ही अपनी छीछालेदर करा सकी है। कितनी साहित्य की दूसरी विधाएं हैं जो इतनी व्यापकता से राजनीति की बखिया उधेड़ सकी है ? इसलिए व्यंग्य की पहचान का एक रास्ता प्रशस्त हुआ।

नौवें दशक के व्यंग्यकारों के सामने नए सवाल तथा नई

चुनौतियां थी। मीडिया का लोकप्रिय होना तथा फिल्म दूरदर्शन तथा वी.सी.आर आदि के विस्तार से व्यंग्य पुस्तकाकार में कहीं मिटने न लगे, परन्तु ऐसा नहीं हुआ तथा रचनाकार पूरे दम-खम से डटे रहे तथा सैकड़ों किताबें इस मध्य व्यंग्य की आ सकीं। उसके मूल में जो कारण था, वह था नए विषयों तथा विसंगतियों की भरमार का, जो व्यंग्यकार की आंख अनदेखा नहीं कर पाई।

रहन-सहन, खान-पान, पहन-पहनावा, मध्यवर्गीय समाज का दिखावटीपन, ये इतने खुलकर बदले रूप में सामने आए कि व्यंग्यकारों ने जमकर अपनी कलम चलाई तथा व्यंग्य को समृद्ध किया। पुरानी पीढ़ी के व्यंग्यकार तो कई बार इस हताशा में आए कि विषय समाप्त हो रहे हैं तथा लिखा किस पर जाए ? इसका जवाब नई पीढ़ी ने नए प्रयोगों के जरिए दिया तथा व्यंग्य को जीवंत तथा ताजा बनाए रखा।

व्यंग्य की आलोचना का जो एक बिन्दु दिखाई देता है, वह यह है कि दैनिक समाचार-पत्रों में जो व्यंग्य के नाम पर कालम छपता है, वह भर्ती का मैटर होता है। जैसा भी एक व्यक्ति लिख देगा, वह छपेगा, इससे व्यंग्य की धार का पैनापन कमजोर हुआ तथा जनता में व्यंग्य की छवि सही रूप में नहीं बन पाई। जो लोग पत्रकार के रूप में अखबारों में नौकर थे, वे व्यंग्य लिखने लगे तथा आजीविका चलाने के लिए विधा को हानि देने लगे।

अनेक समाचार-पत्रों ने इस कठिनाई को भी तथा यह स्तम्भ एक व्यक्ति से न लिखवाकर सबके लिए खोला भी। इससे व्यंग्य में प्रयोग सामने आए तथा विविध विषयों का नाना प्रकार से रसास्वादन भी हुआ लिखने के प्रति नए लेखकों में चाव जगा तथा वे व्यंग्य के क्षेत्र में काम करने की सोचने लगे। परन्तु यह प्रयोग व्यापक रूप से ने होने से आज भी समाचार-पत्रों को रुग्ण भी बनाए हुए हैं।

'प्रतिदिन' (स्व. श्री शरद जोशी) को छोड़कर अन्य किसी दैनिक पत्र के कालम ने लोकप्रियता हांसिल नहीं की चूंकि स्व. श्री शरद जोशी मूलतः व्यंग्यकार ही थे, अतः वे सफल रहे, किन्तु किसी पत्रकार की व्यंग्यकार के रूप में काम करने की शक्ति की पहचान सफल नहीं हो पाई।

इसलिए हम जान सकते हैं कि व्यंग्य की अस्मिता तथा स्थापना का वृक्ष छायादार व घनेरा बन रहा है और वह दिन दूर नहीं है, जब यह और अधिक व्यापक संदर्भों तथा सरोकारों के साथ साहित्य से परिचय करेगा। सवाल व्यंग्यकारों की पकड़, उनकी दृष्टि तथा उसके प्रकाशन का है, यदि यह हुआ तो फिर उसे कोई खतरा नजर नहीं आता और यह निरन्तर फलता-फूलता रहेगा।

नौवें दशक के व्यंग्यकार इसके लिए जो अपना कार्य आगे बढ़ा रहे हैं, उसके सुपरिणाम इस शताब्दी के अन्त तक और साफ दिखाई देंगे। व्यंग्य का धरातल ज्यादा ठोस रूप में सामने आ रहा है और वह ज्यादा ही आधार पाएगा, इसमें भी शक नहीं है।

व्यंग्य का फलक और स्वरूप

सीधी बात कहने से भाषा में शक्ति नहीं आती, लेकिन जब भाषा के तेवर पैने व आक्रामक हों तो वे व्यंग्य बन जाते हैं। बस व्यंग्य की यही मौलिक पहचान मानी जा सकती है कि वह मानव को चुभता है तथा उसे भले-बुरे का भेद समझ में आने लगता है। संस्‍ ति के बदलाव से राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों में जो परिवर्तन आया, इससे व्यंग्य विधा के माध्यम से जो कव्य कहा जाता है, वह सीने में तीर की तरह चुभ जाता है।

इस तरह व्यंग्य सुधार का औजार बन जाता है। यदि सामाजिक सुधारों के लिए व्यंग्य इसी तरह का आधार तैयार करता है तो उसकी सफलता फिर संदिग्ध नहीं रहती। उपदेश आजकल माने नहीं जाते, इसलिए प्रतीक अथवा माध्यम बनाकर कही गई बात का असर ज्यादा और व्यापक होता है।

स्वतंत्र विधा के रूप में व्यंग्य आज पूर्णतः स्थापित है। लेखकों में व्यंग्य के प्रति लिखने की रूचि बढ़ी है तो पाठकों में भी निरंतर चाव बढ़ा है। व्यंग्य की पुस्तकें आ रही हैं। उसमें पैनापन बढ़ रहा है तथा दुगानुकूल विसंगतियां उसका विषय बनकर सोसाइटी को दिशाबोध कराने का भी काम कर रही है। एक समय जरूर था, जब लेखक व्यंग्य से रूबरू कम थे तथा यह विधा उपेक्षा तथा उदासीनता की शिकार थी। लेकिन आज हालत सर्वथा अलग हैं।

व्यंग्य, लेखन में धड़ल्ले से अपनाया जा रहा है तथा हर मीडिया का यह अंग बन रहा है। लोग व्यंग्य को तहेदिल से अपना रहे हैं क्योंकि उसमें रोचकता तथा मनोरंजन के साथ सामाजिक सरोकारों का सीधा तारतम्य भी बना रहता है। जहां तक हास्य और व्यंग्य का प्रश्न है, उसमें फर्क है और रहना भी चाहिए, तभी इस विधा के साथ न्याय भी होगा। फूहड़ता तथा तुकबन्दी के आसरे हास्य का पुट देने वाले चुटकुलेबाजों ने व्यंग्य की अस्मिता को जरूर चोट पहुंचाई है, क्योंकि वे हास्य को ही व्यंग्य मानकर चलते रहे, जिससे व्यंग्य की मूल चेतना गड़बड़ाती रही। लेकिन समयान्तर से व्यंग्य को गंभीरता से लिया जा रहा है तथा इसमें फूहड़ता लाने वाले अलग हो रहे हैं।

उन्हें साहित्यिक पहचान नहीं मिल रही है तथा वह एक अलग ही जमात भी बन गई है। राजनीतिक और सामाजिक व्यंग्य रचनाओं के लेखन से जहां रास्ते बने हैं, वहीं विरोधाभासों को भी स्पष्टता मिली है। यह जरूर है कि यदि व्यंग्य रचनाओं को शिष्ट हास्य मिल जाए तो वह संजीदगी के साथ-साथ रोचकता भी पा लेती है तथा जीवंतता में वृद्धि भी हो जाती है। लेकिन व्यंग्य में चुभन पहली शर्त है, वरना सतही और सपाट व्यंग्य रचनाएं कथ्य तक नहीं पहुंच पाती।

व्यंग्य में उद्देश्य निहित होता है तभी वह लोकप्रिय भी होगी। व्यंग्य का साहित्यिक स्वरूप बाद में ही आंका जाना चाहिए,

पहले उसके कथ्य का वजन तोलना होगा। भाषा, बिम्ब अथवा मिथकीय संरचाएं उसकी बुनावट को पुष्ट तो करेंगी, लेकिन उद्देश्य का होना परम आवश्यक है। साहित्य समाज का दर्पण भी इसी आधार पर माना गया है कि वह उसमें निहित उद्देश्यों व लक्ष्यों को लेकर चलता है।

सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक चेतना का कार्य सृजनशील विधाओं में मुख्य रूप से होता है। इसलिए सशक्त व्यंग्य रचना की पहचान समसामयिक सजगता तथा हालातों के सार्मथ्य पर निर्भर करती है। अपने परिवेश से कटकर वायावी साहित्य रचना का जीवित यथार्थ ही व्यंग्य की सार्थकता भी है। इसलिए व्यंग्य लेखक का सामाजिक सरोकारों से जुड़ा होना जरूरी होता है। इसलिए व्यंग्य की दार्शनिकता व्यापक दृष्टि से देखी जानी चाहिए। इसी से इसकी पहचान व पैठ बन सकेगी।

इसलिए केवल आक्रामकता के सहारे व्यंग्य का काम नहीं चल सकता। आक्रामकता जरूरी तो है, लेकिन वह उबाऊ अथवा एकरसता से बंधी नहीं होनी चाहिए। आज जो व्यंग्य लेखन हो रहा है वह नए कलेवर का है तथा उसमें मानसिक तोल का अर्थ बदले रूप में सामने आया है। इसलिए व्यंग्य स्वतः ही बदला और बढ़ा है। इसके बहुआयामी स्वरूप ने जहां आक्रामकता को अपनाया, वहीं वह करूणा, बेचारगी तथा मनुष्य के असहायपन का दर्शाव भी करा सका है।

इसलिए व्यंग्यकार की दृष्टि पर निर्भर करता है कि वह व्यंग्य के फलक को कितना विस्तार दे सकता है। इसी विस्तार को व्यंग्य में गम्भीरता से अपनाने के भी प्रयोग हो रहे हैं। श्रीलाल शुक्ल की रचनाएं इसकी अद्भुत उदाहरण हैं। अब यह नव प्रयोग आधुनिक व्यंग्य लेखकों तक ही सीमित नहीं रहा है अपितु दूसरी विधाओं के रचनाकारों द्वारा भी व्यंग्यपरकता के साथ अपने लेखन में उतारा जा रहा है। इसलिए व्यंग्य की अस्मिता अथवा पहचान का संकट अब नहीं रहा है। व्यंग्य को जो नुकसान हुआ है, वह हमारी गुटवादिता अथवा उसे क्षेत्र विशेष या व्यक्ति विशेष की आंख से देखा जाना।

व्यंग्य को देखने के लिए उदारवादी होना पड़ेगा तथा अपने समकालीनों में हमें और भी दूसरे लोग जोड़ने होंगे। इसलिए व्यंग्य की अर्थक्ता मात्र व्यंग्य तक भी हो सकती है उसमें हास्य के पुट की अनिवार्यता नहीं मानी जा सकती, क्योंकि विसंगतिजन्य हास्य पैदा करेगी, वह छुपा नहीं रहेगा। वह मन को गुदगुदाएगा तथा हास भी निर्मित करेगी।

124/61-62, अग्रवाल फार्म,
मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान-302 020, मो. 141-2782110

कविता

बांसुरी

संजय वर्मा 'दृष्टि'

बांसुरी वादन से
खिल जाते थे कमल
वृक्षों से आंसू बहने लगते
स्वर में स्वर मिलाकर
नाचने लगते थे मोर
गायें खड़े कर लेती थी कान
पक्षी हो जाते थे मुग्ध
ऐसी होती थी बांसुरी तान

नदियां कलकल स्वरों को
बांसुरी के स्वरों में
मिलाने को थी उत्सुक
साथ में बहाकर ले जाती थी
उपहार कमल के पुष्पों के

ताकि उनके चरणों में
रख सके कुछ पूजा के फूल
ऐसा लगने लगता कि
बांसुरी और नदी
मिलकर करती थी कभी पूजा

जब बजती थी बांसुरी
घन, श्याम पर बरसाने लगते
जल अमृत की फुहारें
अब समझ में आया
जादुई आकर्षण का राज
जो की आज भी जीवित
बांसुरी की मधुर तान में

माना हमने भी
बांसुरी बजाना
पर्यावरण की पूजा
करने के समान
जो की हर जीवों में
प्राण फूंकने की क्षमता रखती
और लगती /सुनाई देती
हमारी कर्ण प्रिय बांसुरी।

125 शहीद भगत सिंह मार्ग
मनावर जिला धार, मध्य प्रदेश-454446

आलेख

वैश्वीकरण की दुनिया में सांस्कृतिक परिदृश्य

◆ अमित डोगरा

सांस्कृतिक परिदृश्य मानव अनुभव की भौगोलिक इकाई है। मानव अभिनेता के लिए यह एक भौगोलिक अनुभव का मंच है, विद्वान पर्यवेक्षक के लिए यह मानव उत्पादक, प्रतीकात्मक और सामाजिक गतिविधियों के स्थानों की अवधारणा करने का एक तरीका है। सांस्कृतिक परिदृश्य नये अध्ययन सामने लाते हैं। सांस्कृतिक प्रवचनों में स्थान और वातावरण जहां अक्सर गायब हो रहे हैं। विशेष रूप से, सांस्कृतिक परिदृश्य उनके सांस्कृतिक संदर्भ में पर्यावरण पर वैश्वीकरण के प्रभावों को दिखाने का एक शक्तिशाली तरीका है।

सांस्कृतिक परिदृश्य विश्व है, क्योंकि मानव समूहों ने अपनी गतिविधियों के लिए और अपने लक्ष्यों के लिए इसे बदल दिया है। सांस्कृतिक परिदृश्य दुनिया के साथ व्यक्तिगत मानवीय संबंधों को चित्रित करता है। सांस्कृतिक परिदृश्य तीन पूरक पहलुओं का प्रबंधन करता है। प्रथम यह एक परिवर्तित प्राकृतिक प्रणाली है- मानव संस्कृतियों ने कैसे अनुकूलित किया है पर्यावरण, जैसा कि संस्कृतियों के लिए पर्यावरण के अनुकूल है। दूसरा यह भौतिक निर्माणों का एक सेट भी है, जो बुनियादी ढांचा मशीनरी है जो मानव जीवन का समर्थन करती है। और तीसरा यह एक सांस्कृतिक परिदृश्य की प्रतीक प्रणाली भी है, संदेश की एक श्रृंखला, जो कृत्रिम रूप से एन्कोडेड है, कलाकृतियों में नहीं है। निर्मित पर्यावरण में।

एक परिवर्तित प्राकृतिक प्रणाली के रूप में, सांस्कृतिक परिदृश्य उन तरीकों को प्रदर्शित करता है, जिसमें पर्यावरणीय प्रथाओं को सांस्कृतिक रूप से निर्धारित किया जाता है। सांस्कृतिक परिदृश्य के ऐसे पहलुओं को कार सेयर के विचारों से अलग कर दिया गया, क्योंकि उन्होंने नूतन दुनिया मे प्राकृतिक वातावरण में मानव अनुकूलन की सीमा को समझने की कोशिश की थी। सदियों से अप्राकृतिक परिदृश्यों को विभिन्न समूहों द्वारा अलग-अलग तरीकों से संशोधित किया जाता रहा है, जो संस्कृतियों के बारे में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है और परिदृश्य के बारे में भी है। विशेष निर्वाह या निष्कर्षण प्रणाली के भौतिक परिदृश्य पर अभिव्यक्ति एक सांस्कृतिक विरूपण साक्ष्य है, बस अभिव्यक्तियों के रूप में। अनुष्ठान, रिश्तेदारी, या आदान-प्रदान सांस्कृतिक कलाकृतियां हैं, उदाहरण के लिए, बेनी सांप्रदायिक किसान चावल की खेती प्रणाली व्यापक पैमाने पर पशुपालन से पैमाने, रूप और संरचना में काफी भिन्न होती है, या कैलिफोर्निया में औद्योगिक सब्जी उत्पादन से। यह मतभेद मूलभूत पहलुओं को फिर से परिभाषित करता है। ऐसी संस्कृतियाँ जिनमें प्रथाएं अंतर्निहित हैं, उच्चतर में अंतर-सद्भाव और स्थिरता के बारे में स्तर के मान, श्रम के मूल्य, गैर-मानव दुनिया के लिए दायित्वों और परिदृश्य सौंदर्यशास्त्र। और विभिन्न निष्कर्षण प्रथाओं में मौलिक रूप से अलग-अलग स्तर होते हैं और नटाल दुनिया पर प्रभाव के प्रकार होते हैं। सेनिट्रिअमेटल प्रभाव एक प्रत्यक्ष रूप से उल्लंघन अभ्यास है, परिदृश्य में।

निर्मित पर्यावरण को एक महत्त्वपूर्ण घटक के रूप में देखा जाता है, सांस्कृतिक भूमि का बलात्कार दुनिया की व्यावहारिक मशीनरी का वर्णन करता है जो संस्कृति का समर्थन करता है। यह दृष्टिकोण शहरी अध्ययन, परिदृश्य वास्तुकला और ऐतिहासिक भूगोल के बहुत से लोगों के साथ है। जेबी जैकसन और जेन जेकब्स दुनिया के इस दृष्टिकोण के अग्रणी थे, इस तरह से परिदृश्य की इंस्ट्रूमेंटैलिटी का वर्णन करते हुए कि निर्मित दुनिया एक लोगों को रहने की जगह प्रदान करती है, रहने योग्य स्थान बनाती है, या अपने निवासियों के जीवन में बाधाएं पेश करती है। इस तरह के अध्ययन का विषय अक्सर होता है अंत में आर्थिक गतिविधि, लेकिन सांस्कृतिक परिदृश्य दृष्टिकोण की ताकत मानव पैमाने पर जोर देने में निहित है, एक व्यक्ति के पैमाने हालांकि दुनिया। यह सांस्कृतिक परिदृश्य के आकृति अंतरिक्ष में लोगों के सामान्य व्यवहार को आकार देता है, और इस तरह पर्यवेक्षक प्रदान करता है। उस व्यवहार का एक खाका।

तीसरा परिप्रेक्ष्य, प्रतीक के रूप में परिदृश्य, सांस्कृतिक परिदृश्य में संस्कृति पर जोर देता है। इस दृष्टिकोण से स्पष्ट रूप से यह अर्थ है कि प्रतीक परिदृश्य के संबंध में सांस्कृतिक संदेशों की एक श्रृंखला के रूप में मानवीय स्थानिक गतिविधि में लिखा गया है। सांस्कृतिक परिदृश्य से स्पष्ट अर्थ निकाला जाता है कि यह मानव निर्माण की एक विस्तृत श्रृंखला पर अर्थ लगाता है - एक टाउन प्लान, एक घर का प्रकार, एक धर्मस्थल, एक व्यावसायिक जिला। एक पाठ की विशेषताओं को देखने के लिए परिदृश्य को देखा जाता है। व्यक्तिगत रूप से सार्थक वस्तुओं का एक सेट पैटर्न में व्यवस्थित होता है जो अर्थ की अधिक परतों को जोड़ता हैं। सांस्कृतिक परिदृश्य अर्थ की विविध श्रेणियों की

पेशकश करते हैं। कुछ संदेश स्पष्ट होते हैं - स्मारकों, शाब्दिक संकेत या अति पवित्र और औपचारिक रिक्त स्थान द्वारा। अन्य संदेश अधिक सूक्ष्म होते हैं- अति सूक्ष्म अंतर। एक स्थापत्य शैली, बाड़ की लकीर या एक पार्क के भीतर स्मारकों की व्यवस्था में वैचारिक पदानुक्रम। वास्तव में, सभी परिदृश्यों को प्रतीकात्मक माना जाना चाहिए। यहां तक कि सबसे उपयोगितावादी वस्तु- एक पार्किंग स्थल, शायद - यह स्वयं के कार्य का प्रतीक है और सांस्कृतिक कार्यों का समर्थन करता है। सांस्कृतिक परिदृश्य के लिए सांकेतिक दृष्टिकोण के साथ सांस्कृतिक अध्ययन के साथ मजबूत समानताएं हैं, और संस्कृतियों के अध्ययन के साथ इसका समर्थन किया जाता है। जैसे यि-फू टुआन, डेनिस कॉसग्रोव और अन्य मानववादी भूगोल के भीतर लेखन में।

दुनिया भर के अधिकांश सांस्कृतिक परिदृश्यों में वैश्वीकरण अभूतपूर्व परिमाण और परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। यह शब्द 'वैश्वीकरण' इन परिवर्तनों को अंतर्निहित करने वाली प्रमुख प्रक्रियाओं को सारांशित करता है। संक्षेप में, स्थिति यह है कि वैश्वीकरण दुनिया के कुछ हिस्सों के बीच की बाधाओं को दूर करता है, लेकिन उन बाधाओं को विविधता और मजबूती का समर्थन किया गया जो इसके मालिकों के लिए सांस्कृतिक परिदृश्य को परिभाषित करते हैं। वैश्वीकरण आर्थिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं का एक समूह है, जो दुनिया के दूर के हिस्सों के बीच सामग्री और विचारों की यातायात को बढ़ाता है। आर्थिक गतिविधियों के बारे में तेजी से केंद्रीकृत निर्णयों सहित कई सामाजिक प्रभावों के लिए लाभ खाते हैं, सत्ता में एक सहवर्ती कमी और भलाई है छोटे आर्थिक अभिनेताओं, और राजनीतिक और वाणिज्यिक विचारधाराओं की एक छोटी शृंखला के व्यापक प्रसार के कारण एक बढ़ता है- सांस्कृतिक आधिपत्य।।

वैश्वीकरण के आर्थिक पहलुओं को निर्धारित करना आसान है। पिछले कई शताब्दियों में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की दर में वृद्धि हुई है, मुख्य रूप से पश्चिम से पूंजीवाद और प्रोटो पूंजीवाद के प्रभाव में। हाल के दशकों में, नए बाजारों, नए संसाधन पूलों और प्लांट लेबर की नई आपूर्ति को प्राप्त करने के लिए कंपनियों ने लगातार प्रयास किए हैं और राज्यों से तैयार समर्थन को पूरा किया है, और व्यापार के अंतर्राष्ट्रीय अवरोधों को टैरिफ के उन्मूलन और बाह्य परिवहन सुविधा में सुधार के माध्यम से कम किया गया है। प्रभाव से परिचित हैं। पूंजी उड़ान, बंद संयंत्र, और अमीर देशों में बेरोजगारी और बढ़ते विदेशी ऋण, आर्थिक रूप से गिरना, और गरीब देशों में श्रम और पर्यावरण मानकों का क्षरण।

वैश्वीकरण के सांस्कृतिक घटक आर्थिक का पालन करते हैं। निगमों की शक्ति अक्सर अन्य सांस्कृतिक अभिनेताओं और यहां तक कि सरकारों के प्रभाव से अधिक होती है। सांस्कृतिक मनोरंजन पश्चिमी मनोरंजन, वाणिज्यिक संदेशों, आर्थिक विचारधारा और सामाजिक मूल्यों की घुसपैठ के साथ बढ़ता है, जो स्थानीय लोगों को प्रभावित करता है। इस संबंध में मैकडॉनल्ड्स और कोका कोला को अक्सर खलनायक के रूप में नामित किया जाता है, लेकिन वैश्वीकरण के सांस्कृतिक प्रभाव अधिक हैं और अधिक परिष्कृत।

वैश्वीकरण के आर्थिक परिणामों ने अरबों लोगों को गरीबी से बाहर निकाल दिया है। वैश्वीकरण के व्यापार तंत्र ने दवाओं और प्रौद्योगिकी को वितरित किया है जिसने लाखों लोगों की जान बचाई है और अरबों के लिए पीड़ित लोगों को राहत दी है। वैश्वीकरण द्वारा फैले राजनीतिक विचारों ने लाखों लोगों को उत्पीड़क सरकारों को चुनौती देने के लिए प्रोत्साहित किया है। विश्व के अधिकांश इतिहासों के माध्यम से राजनीतिक स्वायत्तता प्राप्त करने के लिए बड़ी आबादी को अनुमति दी गई है।

वैश्वीकरण और सांस्कृतिक परिदृश्य का सांस्कृतिक परिदृश्य अलग-अलग मनुष्यों पर वैश्वीकरण का एक केंद्रीय प्रभाव है। सांस्कृतिक परिदृश्य प्रत्येक वर्ष अधिक तेजी से घट रहा है, अधिक अलग-अलग तरीकों से, दुनिया के पहले से कहीं अधिक। हम विभिन्न नामों के लिए विभिन्न नामों का उपयोग करते हैं। सांस्कृतिक परिदृश्य के तीन पहलुओं से मेल खाते हुए परिवर्तन। प्रदूषण और भूमि क्षरण, मानव पर्यावरण में परिवर्तन का वर्णन करते हैं। फैला हुआ और शहरीकरण निर्मित दुनिया में बदलावों का वर्णन करने के तरीके हैं। और सांस्कृतिक विरासत में प्रतीकात्मक परिदृश्य के विकास का वर्णन किया गया है। सांस्कृतिक परिदृश्य में इस तरह के बदलावों की एक साझा उत्पत्ति है, जो उत्पादों, लोगों, विचारों और जीवों के आंदोलन में बाधाओं को दूर करने के लिए है।

परिदृश्य का चरित्र इसकी सीमाओं द्वारा परिभाषित किया गया है। पृथ्वी इतिहास के अनुसार, परिदृश्य जटिलता संभव हो गई है क्योंकि परिदृश्य घटक एक दूसरे से अलगाव में विकसित हुए हैं। विभिन्न और रचनात्मक रूप से अराजक मोजेक के रूप में मानव परिदृश्य की मौलिक प्रकृति के लिए स्थानिक बाधाएं खाते हैं। बाधाएं एक परिदृश्य के रोगों, सांस्कृतिक प्रभावों, आर्थिक नियंत्रण, धमकी देने वाले जीवों और अन्य परिदृश्यों से प्रदूषण को अलग करती हैं। आकार को आकार देने में एक महत्त्वपूर्ण रचनात्मक कारक रहा है। हमारे आस-पास की दुनिया। दुनिया के कुछ हिस्सों के बीच की बाधाओं को दूर करते हुए, विचारों और उत्पादों के प्रवाह को स्थायी रूप से सांस्कृतिक परिदृश्य को नीचा दिखाती है। अलगाव वह है जो विविधता का निर्माण करता है। स्वाभाविक रूप से, बाधाओं और अलगाव ने आवास और स्थलाकृतियों के अनंत परिदृश्य मोजेक का पोषण किया है जो कि प्राकृतिक दुनिया है। एक दूसरे से अलग होने पर विविध पारिस्थितिक तंत्र बनाने के लिए विकास होता है। यह

सचित्र रूप से सबसे प्रसिद्ध है। कई गैलापागोस द्वीपों पर डार्विन की फिन्च प्रजातियां, महासागर तक पहुंच कर एक दूसरे से अलग हो जाती हैं। भौतिक दुनिया के आर्थिक रूप से मूल्यवान संसाधन केवल अलग-अलग जलाशयों के रूप में मौजूद हो सकते हैं, कुछ स्थानों पर जहां प्राकृतिक बाधाओं ने समरूपीकरण के लिए सार्वभौमिक प्रवृत्ति का विरोध किया है कि भौतिकविद् एंट्रॉपी कहते हैं। लोग अलग-थलग पड़ जाते हैं, विभिन्न सांस्कृतिक परिदृश्य बनाते हैं, और वे पिघल जाते हैं जब वे शामिल हो गए हैं। पश्चिमी यूरोप की प्राचीन भाषाओं ने नवपाषाण और कांस्य युग के दौरान अलगाव में अंतर किया है जिसे जब यूरोप की बहुत सारी भाषाएं रोमन लोगों द्वारा भाषाई रूप से एकीकृत हो गईं, जिनकी सेना और सड़कें भूमि पर बाधाओं को समाहित कर ले गईं। जब रोमन प्राधिकरण गिर गया और अवरोध वापस आ गए, तो भाषा जटिलता भी लैटिन- आधारित रोमांस भाषाओं के अलग-अलग सेट में लौट आई। विविधता और स्थिरता सांस्कृतिक परिदृश्य के कार्यों के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। एक पर्यावरणीय घटना, सांस्कृतिक परिदृश्य सांस्कृतिक मूल्यों के एक विशेष सेट के लिए एक विशेष निवास स्थान के भीतर एक विशिष्ट सांस्कृतिक अनुकूलन का प्रतिनिधित्व करता हैय पर्यावरण अनुकूलन के लिए कोई अनुमान योग्य सार्वभौमिक समाधान नहीं है। विज्ञापन एक आर्थिक उपकरण है, सांस्कृतिक परिदृश्य मूल्य प्रदान करने का एक विशेष तरीका है, क्योंकि मूल्य एक संस्कृति के सदस्यों द्वारा माना जाता है। प्रतीक प्रणाली के रूप में, एक दिया गया सांस्कृतिक परिदृश्य एक समझदार दुनिया की दैनिक स्थिरता की आपूर्ति करता है, क्योंकि इसकी व्याख्या एक सांस्कृतिक समूह द्वारा की जाती है। सांस्कृतिक परिदृश्य वह पैमाना है जिस पर मनुष्य दुनिया का अनुभव करते हैं, लेकिन यह वह पैमाना भी है जिस पर मनुष्य वैश्वीकरण के माध्यम से अपनी दुनिया के पतन का अनुभव करते हैं। और समकालीन सांस्कृतिक परिदृश्य अपने हिस्सों के बीच बाधाओं के नुकसान से पूरी तरह से और स्थायी रूप से नीचा हो गया है। वैश्वीकरण के पर्यावरणीय प्रभावों का अच्छी तरह से वर्णन किया गया है, लेकिन उन्हें आमतौर पर अनदेखी, दूर के वातावरण में अति-संपन्नता में धनी उपभोक्ताओं की आर्थिक प्रभावशीलता के दुष्प्रभाव के रूप में देखा जाता है। इसके बजाय, पर्यावरण पर वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभावों का अधिकांश कारण वैश्वीकरण है। दुनिया के कुछ हिस्सों के बीच बातचीत, अपने आप में सबसे महत्त्वपूर्ण पर्यावरण एजेंटों में से एक है, जिसने दुनिया भर में विभाजनकारी एजेंटों के प्रवाह को रोकने के लिए प्राकृतिक दुनिया को बदल दिया है। बाधाओं के बिना पर्यावरण प्रणाली की विविधता को संकुचित करना शुरू हो जाता है। संभावित रूप से सभी बड़े पैमाने पर मानव प्रेरित पर्यावरणीय चुनौतियां परिदृश्य के कुछ हिस्सों के बीच बाधाओं के टूटने के कारण होती हैं। बाधाओं को हटाकर मानव द्वारा बनाई गई गंभीर क्षति का एक उदाहरण नए वातावरण में आक्रामक विदेशी जीवों का परिचय है, जहां वे पहले से मौजूद प्रजातियों को खाते हैं या उनसे बाहर निकलते हैं, जिनके पास उनके उपचार में कमी होती है। जैव जीव जीवमंडल में सबसे स्थायी एकल मानवविज्ञानी परिवर्तन हैं। जबकि ग्लोबल वार्मिंग एक हजार साल के लिए अस्त हो सकता है, और परमाणु अपशिष्ट 100,000 वर्षों के लिए खतरनाक हो सकता है, ऑस्ट्रेलिया में शुरू किए गए यूरोपीय खरगोशों को लाखों वर्षों से कुछ में रहना चाहिए- हमेशा के लिए, पारिस्थितिक दृष्टि से। एक्सोटिक्स का प्रभाव सबसे बड़ा है उन कम से कम पिछली बातचीत-जिनके साथ बाधाएं सबसे मजबूत थीं - इसलिए द्वीप की प्रजातियों को सबसे अधिक खतरा है, लगभग आधा एवियन विविधता के साथ पहले से ही चला गया है। कई 'उभरती हुई बीमारियां' जो दुनिया के महत्त्वपूर्ण हिस्सों के लिए गंभीर खतरा बन गई हैं, जैसे कि ईबोला वायरस, SARS] hiv, और वेस्ट नाइल वायरस, सदियों से छोटे इलाकों में स्थानिक थे जो उस स्थान से परे कोई प्रभाव नहीं रखते थे। भौगोलिक अवरोधकों की यात्रा द्वारा- चिड़ियाघरों, पालतू जानवरों की दुकानों और चौराहों में अवरोधों को उनके पशु जलाशयों से बाहर निकालने के लिए खेतों - को बीमारियों को व्यापक मानवीय समस्या बनने की अनुमति दी। प्रारंभिक आधुनिक टाइमज-प्लेग, हैजा, सिफलिस, चेचक, इन्फ्लूएंजा के महान महामारी संबंधी रोग-समान बाधा अवरोधों का प्रतिनिधित्व करते थे, स्थानिक रूप से विवश परिदृश्यों से रोगजनकों का पलायन।

पर्यावरण पर वैश्विक जियोकेमिकल प्रभावों के पूरे सूट, जिनमें से एंथ्रोपोजेनिक ग्लोबल वार्मिंग सबसे नाटकीय है, प्राकृतिक बाधाओं के उल्लंघन का प्रतिनिधित्व करते हैं, ग्लोबल वार्मिंग ज्यादातर जीवाश्म ईंधन की खपत का एक उत्पाद है, जो पृथक पूलों से भू-कार्बन भंडार का तेजी से निष्कर्षण है। उनके पास जुताई से जलाए जाने वाले वनस्पति और जलावन द्वारा जारी किए गए कार्बन कार्बन भंडार थे, और वेटलैंड्स को परेशान करके मीथेन पूल जारी किए गए थे, समस्या को जोड़ते हैं। पर्यावरण की समस्याओं की सूची में जो अनिवार्य रूप से अवरोधक हैं वे लंबी हैं। अप्राकृतिक वनस्पति को हटा दिया जाता है। पर्यावरण के उपयोग में बाधित वनस्पतियों को हटा दिया जाता है अन्य प्रवाह का विस्तार किया जाता है। बारिश की सतह से निकलने वाली कठोर सतह भूजल के प्राकृतिक जलाशय को नष्ट कर देती है, मिट्टी को नष्ट कर देती है, और घाटियों को भर देती है। लोगों को अपने स्वयं के अवरोधों में निवेश करना चाहिए-बाढ़ और बाढ़ प्राकृतिक सुरक्षा को बदलें और खोए हुए प्राकृतिक भंडारण की भरपाई करें। वैश्वीकरण से मानवता के लिए कुछ सबसे बड़े नुकसान सांस्कृतिक हैं, स्थानीय सांस्कृतिक इकाइयों के पारंपरिक

जीवनकाल के अवशोषण को अधिक प्रभावी क्षेत्रीय और वैश्विक संस्कृतियों में, खोए हुए ज्ञान की अभिव्यक्ति और विस्मृति के खोए हुए तरीकों की कीमत पर, और प्रकृति के लिए खोया अनुकूलन। , समाज के लिए, और अलौकिक के लिए। अमीर लोगों में सैकड़ों लोग भाषाई थे, जब कोलम्बस पहुंचे, और उनमें से कई गायब हो गए, इससे पहले कि वे यूरोपियन भी दिखाई देते थे। पिछले दो हजार वर्षों में दुनिया भर में बहुत से धार्मिक-सांस्कृतिक धर्म, इस्लाम और ईसाई धर्म के स्थानीय आध्यात्मिक विविधता को विस्थापित किया गया है। संशोधन और अन्य बड़े पैमाने पर अब विकासशील देशों में स्थानीय कथा, संगीत और प्रदर्शन परंपराओं को विस्थापित किया जा रहा है । मानवीय प्रभाव बातचीत के परिचित तरीकों का नुकसान, स्थानीय मूल्यों की हानि, व्यक्ति के पारंपरिक मूल्यांकन की हानि, सटीक दुनिया को उन लोगों को समझने के तरीकों का नुकसान है, साथ ही उन लोगों के प्रवचनों का विघटन जो समस्या को हल कर सकते हैं ।

वैश्वीकरण का एक अंत है, क्योंकि यह स्वाभाविक रूप से अस्थिर है। यह पिरामिड स्कीम की तरह है, उपभोग करने के लिए संसाधनों के निरंतर विस्तार पूल के झूठे मॉडल पर समर्पित है, मानव शक्ति की अंतहीन आपूर्ति, और अनंत नई आबादी शोषण करना। सहस्राब्दी- वैश्वीकरण को दूर करने वाली समेकन की लंबी प्रक्रियाओं ने मूल्य के कभी बड़े भंडार पर कब्जा किया है। एक बार जब मिट्टी का एक बैंक एक विशेष स्थानीय परिदृश्य और उत्पादन परंपरा में एकीकृत मिट्टी के बर्तनों के उद्योग का समर्थन कर सकता है, तो अब राष्ट्रीय उद्यानों के आकार की खुदाई की आवश्यकता है। वैश्विक बाजारों को खिलाएं। कभी एक गांव एक स्थानीय उद्योग को एक अलग स्थानीय उत्पाद बनाने के लिए श्रम की आपूर्ति करता था, अब एक कारखाने का परिसर शहर के लोगों के लायक है जो उत्पादों को आधी दुनिया के लिए डिजाइन किया गया है ताकि श्रमिकों को एक जीवन शैली के लिए विदेशी बनाया जा सके।

लेकिन किसी दिन बढ़ने के लिए कोई 'बड़ा' नहीं होगा। किसी दिन सबसे बड़ा भस्म हो जाएगा और सबसे नया क्षितिज पुराना होगा, जैसे किसी दिन मानव जीवन का समर्थन करने के लिए हवा और पानी की क्षमता कम हो सकती है, वैसे ही। तब वैश्वीकरण को समाप्त होने तक, बेहतर या बदतर होने तक समाप्त होना चाहिए। यह बहुत संभावना है कि वर्तमान रुझान जारी रहेगा, जैसा कि चल रहे सांस्कृतिक समरूपीकरण और पर्यावरणीय परिदृश्य में गिरावट होगी। मानव अपने आसपास के सिकुड़ते हुए शब्दों के लाभों को जारी रखेंगे, और इस तरह उनके वैश्वीकरण के संबंध को नजरअंदाज करते रहेंगे- विकसित समस्याओं को ।

वैश्वीकरण की ताकतें जो अब तक विचारों, रोगों, रासायनिक प्रदूषकों, हथियारों, फसलों, विदेशी प्रजातियों, संसाधनों, और ग्रीन हाउस गैसों के प्रवाह से दूर रही हैं, उनके प्रभावों को कम करने से दूर हैं। यह सदियों पहले भी पूरे बल पर होगी अब काम सांस्कृतिक परिदृश्य के साथ संतुलन बनाएगा और अधिक बदलावों को रोक देगा। अधिक अप्रत्यक्ष स्तर पर, विविधता का नुकसान जो कि भूमंडलीकरण ने पारिस्थितिक तंत्र, सांस्कृतिक इकाइयों और आर्थिक संरचनाओं को लाया है, भविष्य के जवाब देने के लिए उन प्रणालियों की क्षमता कम कर देगा। इस प्रकार वैश्वीकरण के प्रभाव लगातार बदतर होते जा रहे हैं। एक सीमा पार कर दी गई है और समस्याएं तेज हो गई हैं।

आशा बनी हुई है, कि एक ज्ञान उभर रहा है जो बढ़ती सार्वजनिक जागरूकता में मदद कर सकता है जो स्थानिक अलगाव और संरक्षण फायदेमंद हो सकता है। यह जागरूकता, विशेष रूप से, ज्ञात की विश्वसनीयता और विश्वसनीयता के लिए एक स्वाभाविक सकारात्मक प्रतिक्रिया है। जगह का उभरता हुआ शैक्षणिक महत्व अब साहित्य, समाजशास्त्र और इतिहास सहित कई विषयों में 'स्थानीय' को पुष्ट करता है। स्थानीय भोजन, स्थानीय विनिमय और स्थानीय स्वायत्तता को मूल मानवीय मूल्यों के रूप में नया रूप दिया गया है। उदाहरण के लिए, वेन्डेल बेरी और माइकल पोलन के लेखन, यूरोपीय के 'धीमे भोजन' आंदोलन के समानांतर खाद्य उत्पादन में एक क्षेत्रीय आधारित दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं। लेकिन शायद ही कभी स्थानीय कार्यवाई का समर्थन करने वाली अदृश्य रूप से पारलौकिक और मौन आवाजें, एक अंतिम लक्ष्य के रूप में वैश्विक, हास्यपूर्ण बयानबाजी दक्षता पर सुनने के लिए एक दुर्गम चुनौती है। सांस्कृतिक परिदृश्य के मूल्यांकन का विस्तार मानव जीवन की तुलना में मानव जीवन की अधिक बारीक समझ पर निर्भर है। व्यावसायिक जनसंचार माध्यम आम तौर पर समर्थन करते हैं। लेकिन परिदृश्य के पैमाने पर इस संघर्ष के परिणाम मानवता के भविष्य पर मौलिक प्रभाव डाल सकते हैं।

अभी के लिए, अधिकांश बाधाएं कम हो रही हैं, और यह दुनिया के परिदृश्य में प्राकृतिक, भौतिक और प्रतीकात्मक विविधता का उपभोग कर रहा है। वैश्विकरण की सांस्कृतिक और पर्यावरणीय लागत को पैदा करने वाले केंद्रीय संकट व्यापार के गंभीर आर्थिक 'अच्छे' के बीच संघर्ष में निहित है। सांस्कृतिक और पर्यावरणीय स्थिरता के सूक्ष्म मानव मूल्य की तुलना में बातचीत और आंदोलन, जो दुनिया के स्थानीय घटकों को अलग करने के लिए समर्थित है। मानव तेजी से आदान-प्रदान के तत्काल तात्कालिक लाभ के लिए विविध सांस्कृतिक परिदृश्य के स्थायी लाभ को अनसुना करना जारी रखते हैं।

पी.एच.डी (शोधार्थी),
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर, मो. 0 98782 66885

यात्रा संस्मरण

क्षेत्र विशेष के इतिहास और संस्कृति को समझने का माध्यम पर्यटन

◆ वीना गौतम

आदि युग से ही मनुष्य घूमना फिरना पसंद करता रहा है पहले लोग अपने भरण पोषण के लिए अर्थात पेट की भूख को शांत करने के लिए इधर से उधर घूमा करते थे परन्तु आज अपनी जिज्ञासाओं के कारण, अनुकूल स्वास्थ्य लाभ, मानसिक शान्ति और प्रकृति की गोद में सानिध्य पाने के उद्देश्य से भ्रमण करते हैं जिसे पर्यटन की संज्ञा दी जाती है

"सैर कर दुनिया की गालिब जिंदगानी फिर कहां
जिंदगानी भी गर रही तो नौजवानी फिर कहां"

बड़ा बावला होता है मानव मन! अपने व्यस्ततम् क्षणों में से समय निकालकर कभी चंचल पंछी की तरह हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर पहुंच, नीलगगन पर उड़ते बादलों की तरह खुद भी उड़ान भरना चाहता है, चाँद-तारों के रूप में हर पल चमकना-चहकना चाहता है। तो कभी अथवा सागर की गरजती-बलखाती, डूबती-उतराती लहरों में हिलोरे लेते हुए सागर की गहराइयों में समा जाना चाहता है। वहां उतर कर असंख्य जगमगाती मणि-माणिक्य रूपी खुशियों से अपने दामन को भर लेना चाहता है। नित नूतन सौंदर्य को देखने, जानने और उनसे परिचित होने की अपार लालसा से भरा होता है मानव मन! तभी तो उसका जिज्ञासु मन अनेकानेक पयर्टन स्थलों की तलाश करता हुआ विश्व के मानचित्र को खंगाल डालता है।

भोजन में नमक का और पान में चूने का जो महत्त्व होता है वही महत्त्व मानव जीवन में पयर्टन का होता है। पयर्टन मानव के बहुआयामी छवि को निखरता है। पयर्टन के दौरान मानव अनेक उन खूबसूरत स्थलों की यात्रा करता है जिनके विषय में उसने केवल किताबो की कहानियों, उपन्यासों या कविताओं में पढ़ा है। वह उन स्थानों को देखता है तो उनकी खूबियां और कमियां उसे समानान्तर रूप में दिखाई देती है। खूबियां या सौंदर्य जहाँ उसके मन को गहराई से बांधता और प्रभावित करता है वहीं कमियां उसे कुछ सोचने के लिए प्रेरित करती है इससे उसके विचार शक्ति को बढ़ावा मिलता है। इसी से प्रेरित होकर वह बड़ी सहजता से कलम संभाल लेता है और फिर वह स्वयं उन पर्यटन स्थलों का ऐसा मनोहारी चित्र उकेरता है कि पाठकों के नेत्रों के समक्ष वह स्थल और उसका सौंदर्य साकार हो उठता है। लिखते समय वह कल्पना की ताना- बाना भी बुनता चलता है और कल्पना के प्रयोग से प्रस्तुत चित्र को और अधिक प्रभावोत्पादक बना लेता है। इस तरह पर्यटन का पहला और उल्लेखनीय फायदा तो यह है कि व्यक्ति के विचार शक्ति और कल्पना शक्ति को नया आयाम मिलता है।

दूसरी बात पर्यटन से देश-विदेश कि जानकारी सहज ढंग से प्राप्त हो जाती है। पुस्तकीय ज्ञान उतना प्रभावी नहीं होता जितना कि प्रत्यक्ष ज्ञान। पर्यटक नये-नये स्थानों से जुड़ी ऐतिहासिक, धार्मिक, राजनैतिक खूबियों से परिचित होता है जिससे उसका ज्ञान समृद्ध होता है। साथ ही अलग-अलग क्षेत्रों के साहित्यिक गतिविधियों और संस्कृति के बारे में जानकारी प्राप्त होती है जिससे अनेक क्षेत्रों के रीति-रिवाज, पर्वोत्सव, परम्पराओं, खान-पान, रहन-सहन तथा सभ्यता-संस्कृति आदि से वह रूबरू होता है। तीसरी बात यात्रा के दौरान अपरिचितों से उनकी मुलाकात होती है, बात-चीत आगे बढ़ती है, घनिष्ठता बढ़ती है। आपसी दूरियां कम होती है, वैमनस्यता दूर होती है, भाईचारा और प्रेम संबंध प्रगाढ़ होता है, मन उदार और विशाल बनता है। इस तरह जान-पहचान और प्रेम संबंध प्रगाढ़ होता है, मन उदार और विशाल बनता है। इस तरह जान-पहचान और प्रेम संबंध प्रगाढ़ होता है और पूरा देश और विश्व अपना सा प्रतीत होता है। इस तरह राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होती है। इस तरह राष्ट्रीय एकता और निकटता बढ़ाने में पर्यटन का अहम योगदान है।

चौथी बात प्रकृति के सहज साहचर्य से उसकी आत्मा जुड़ती है जिससे प्रकृति के प्रति वह संवेदनशील बनता है और उसकी रक्षा के प्रति सचेत और सतर्क होता है।

विशेष बात यह है की विश्व के प्रमुख पयर्टन स्थलों के बारे में जब उसे जानकारी प्राप्त होती है तो किसी भी राज्य के भौगोलिक एंव सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में मानव संसाधन नियोजनों एवं भावी रोजगार की संभावनाओ का भी उसे पता चलता है। वर्तमान समय में पयर्टन एक उद्योग का रूप धारणा कर चुका है। कई प्रदेशों की अर्थव्यवस्था पर्यटन पर आधारित है जैसे- जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश आदि। यहां आने वाले पर्यटकों की संख्या सर्वाधिक होती है। साल भर यहां घूमने-फिरने के लिए लोग आते-जाते हैं जिससे ये पर्यटन स्थल फलते-फूलते है, इस तरह

लोगों को आजीविका का साधन मिलता है।

इन सबके अतिरिक्त विशेष बात यह है कि पर्यटन दैनंदिन जीवन की भारी- भरकम चिंताओं से दूर कर देता है। व्यक्ति जिस दशा में रहता है, उसी दशा में जीवन को आनंदमय ढ़ंग से जीता है। इस तरह पर्यटन से व्यक्ति का तन और मन दोनों प्रफुल्लित रहता है जिससे स्वास्थ्य बेहतर होता है। यदि कहा जाये की 'प्रकृति के निकट जाना' 'चिकित्सक से दूर रहने का' सबसे आसान, सरल और आनंद दायक इलाज है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

किंतु कुछ लोग इन पर्यटन स्थलों को दूषित कर देते है। जगह-जगह हमें कचरों का ढेर दिखाई देता है। पानी का बॉटल, प्लास्टिक थैले, डिस्पोजल डिब्बे-ग्लास आदि के अतिरिक्त खाद्य सामग्रियां आदि बेतरतीब ढंग से रास्तों में पड़ी मिलती हैं, जो वहाँ के वातावरण को खराब करता है। यही प्रदूषण जब हवा, पानी और मिट्टी में जाकर मिल जाते हैं तो घातक बीमारियां पैदा करते है फलतः लोग बीमार हो जाते हैं। और पर्यटन स्थलों का आनंद लेने से वंचित हो जाते हैं। वहीं दूसरी ओर वहां के सरोवरों, झरनों, नदियों आदि के जल को यदि इन सामग्रियों से गंदा कर दिया जाता है तो इस प्रदूषण से उन स्थलों पर पनपने वाले लघु जीवों जैसे मेंढक, मछलियों आदि की जान भी खतरे में पड़ जाती है। इसलिए हमें कोशिश करना चाहिए कि जितना ज्यादा हो सके हम पर्यटन स्थल को स्वच्छ रखें, उसकी प्राकृतिक खूबसूरती को बनाये रखें ताकि हम इन स्थलों का भरपूर आनंद उठा सकें।

वंडरलैंड पांच क्षेत्रों में बंटी हुई है। मेनस्ट्रीट यूएसए, टूमारो लैंड, एडवेंचर लैंड, फैंटसी लैंड, टॉयस्टोरी लैंड। मेन स्ट्रीट यूएसए को पचास के दशक की अमेरिकी गलियों की शक्ल दी गई है। टूमारो लैंड में अंतरिक्ष के रहस्यों से दो-चार होना अलग ही अनुभव था। एडवेंचर लैंड में जंगल, नदी और टार्जन ट्री हाउस है। यहीं हमारे लिए रिजर्व थे लॉयन किंग शो के टिकट। विश्व में केवल दो जगह होने वाले इस म्यूजिकल शो में आदिवासी युवती सिंबा की प्रेमकथा का सुंदर चित्रण है। स्लीपिंग ब्यूटी कैसल डिज्नीलैंड का मुख्य आकर्षण है। यह फेंटसी लैंड है। यहां कई झूलें है जो बच्चों को रोमांच से भर देते हैं।

हांगकांग का डिज्नीलैंड

हांगकांग इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर विमान उतरने की घोषणा हुई तो मैं खिड़की से झांकने लगी। नीचे सिर्फ समुद्र दिख रहा था। फिर हरे-भरे पहाड़ दिखने लगे। नजारा ऐसा था की साढ़े पांच घंटे हवाई यात्रा की थकान उड़नछू हो गई। समुद्र व पहाड़ों के बीच ऐसी कोई जगह दिख नहीं रही थी, जहां लैडिंग का अनुमान लगाया जा सके। लेकिन हवा में उड़ने के बाद जमीन पर आने का अहसास तो होना था और झटका भी लगना ही था। वह लगा और अब हम हांगकांग इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर थे। भारत से ढाई घंटा आगे था यहां का समय। इमिग्रेशन के बाद हमें शटल से डिज्नीलैंड रिजॉर्ट स्थित हॉलीवुड होटल के लिए रवाना होना था।

बाहर का तापमान 33 डिग्री सेल्सियस था। उमस ऐसी की दिल्ली की याद आ गई। 162 लोगों का ग्रुप था हमारा। होटल की चार बसें लेने आई थी। लंच के बाद हमें उस दुनिया की सैर पर जाना था जिसे मैं ड्रीमलैंड कह सकती हूं। सभी लोग सवार हो गए बसों में और निकल पड़े गंतव्य की ओर। अनजान देश की लंबी घुमावदार सड़कों पर दौड़ती बस की खिड़की से दिख रहे दृश्य बता रहे थे कि विकास में हमसे कई साल आगे है यह छोटा सा देश।

पल जीने की चाहत

एयरपोर्ट से डिज्नीलैंड का सफर बीस मिनट का था। बाहर नील गहरे समुद्र के किनारे चलती साफ-सुथरी सड़क, एलीवेटेड रोड्स, केबल पर टिके पुल, टनल और अंडरपास आधुनिक इंजीनियरिंग का नमूना पेश कर रहे थे। थोड़ी देर बाद हम लैंटाऊ आईलैंड के उत्तरी ओर पेनीज बे पर 320 एकड़ में बने डिज्नीलैंड रिजॉर्ट स्थित हॉलीवुड होटल के कंपाउंड में पहुंच गए।

दिन के डेढ़ बज गए थे, एयरपोर्ट के भीतर की चहलकदमी ने भीतर के चूहों को जगा दिया था। जल्दी-जल्दी भोजन कर स्वप्ननगरी की ओर निकल पड़े हम। दरअसल डिज्नी चैनल ने अपने कॉन्टेस्ट विनर बच्चों को परिवार के साथ डिज्नीलैंड सैर का तोहफा दिया था। इन्हीं 32 परिवारों के साथ हम कुछ गिने-चुने मीडियाकर्मी भी हांगकांग आए थे। होटल से डिज्नीलैंड रिजॉर्ट के लिए हर दस मिनट में फ्री शटल सेवा मिलती है। बस ने हमें डिज्नीलैंड मुहाने पर छोड़ दिया। आगे बढ़े तो सामना हुआ पानी की धार पर झूलते मिकी माउस से। मेन स्ट्रीट से ढाई बजे परेड निकलने वाली थी। बैंड पर धुनें बजने लगीं और हांगकांग की पारम्परिक वेशभूषा में सजी उछलती-कूदती बालाओं के पीछे एक-एक कर आते गए डिज्नी के मशहूर चरित्र। मिकी-मिनी की जोड़ी, गुफा, प्लूटो, पूह, डफी, टाइगर, श्रेक, डोंकी और गुस्से से आंखें तरेरती डोनाल्ड डक।

लौट आया बचपन

वंडरलैंड पांच क्षेत्रों में बंटी हुई है। मेनस्ट्रीट यूएसए, टूमारो लैंड, एडवेंचर लैंड, फैंटसी लैंड, टॉयस्टोरी लैंड। मेन स्ट्रीट यूएसए को पचास के दशक की अमेरिकी गलियों की शक्ल दी गई है। टूमारो लैंड में अंतरिक्ष के रहस्यों से दो-चार होना अलग ही अनुभव था। एडवेंचर लैंड में जंगल, नदी और टार्जन ट्री हाउस है। यहीं हमारे लिए रिजर्व थे लॉयन किंग शो के टिकट। विश्व में केवल दो जगह होने वाले इस म्यूजिकल शो में आदिवासी युवती सिंबा की

डिज्नीलैंड में छुक-छुक की आवाज हर वक्त साथ चलती रही। इस ट्रेन की सवारी करने की इच्छा थी। भाप के इंजन से जुड़ी डिज्नी थीम की टॉय ट्रेन पर बीस मिनट की राइड ले ही डाली। अब बारी थी हल्की-फुल्की शॉपिंग की, तो डिज्नीलैंड में ऐसी कई दुकानें हैं जहाँ से डिज्नी थीम के शो पीस, सॉफ्ट टॉयज, स्टेशनरी सहित ढेरों आइटम खरीदे जा सकते हैं।



प्रेमकथा का सुंदर चित्रण है।

स्लीपिंग ब्यूटी कैसल डिज्नीलैंड का मुख्य आकर्षण है। यह फेंटसी लैंड है। यहां कई झूलें है जो बच्चों को रोमांच से भर देते है।

टॉयस्टोरी लैंड में यू शेप रोलर कोस्टर पर लोगों को चिल्लाते देख पास फटकने की हिम्मत नहीं हुई। इस पूरी सैर में छुक-छुक की ध्वनि हमेशा साथ रहती है। भाप के इंजन वाली टॉयट्रेन इस थीम पार्क का 20 मिनट में चक्कर लगवाती है। बेशक डिज्नी का विचार पचास साल पुराना है, पर 21वीं सदी का अदभुत नमूना है यह थीम पार्क।

रंग प्रकृति और इंसान के

डिज्नीलैंड की सैर अभिभूत कर रही थी, पर हांगकांग शहर देखने का लालच भी कम नहीं हो रहा था। कैसल पर रात आठ बजे होने वाले फायरवर्क्स शो छोड़ने का फैसला ले चुके हम पांच साथी हांगकांग जाने के उपाय ढूंढने लगे। पता चला डिज्नीलैंड में ही एमटीआर स्टेशन है। मेट्रो आपको सीधे सनी बे ले जाएगी। वहां से किसी भी कोने में जा सकते हैं। चूंकि समय कम था, इसलिए हमने टैक्सी का विकल्प चुना। हमें स्थानी भाषा नहीं आती थी और ड्राईवर के लिए अंग्रेजी समझना मुश्किल। खैर, एक स्थानीय सज्जन ने टैक्सी वाले को बताया कि हम सिम शा सुई डेक जाना चाहते हैं। चलते ही वे स्काईस्क्रैपर्स नजर आने लगे थे जिनके लिए हांगकांग की अलग पहचान है। शाम के धुंधलके में समुद्र और बहुमंजिली इमारतों के बहुत ही सुंदर दृश्य दिख रहे थे। डिज्नीलैंड से सिम शा शुई पहुंचने में टैक्सी का किराया 183 हांगकांग डॉलर आया। जबकि मीटर कम दिखा रहा था। ड्राइवर से कारण पूछा तो उसने हमें कार दरवाजे पर चिपके कागजों की ओर दिखा दिया। कुछ भी पढ़ पाना हमारे बूते से बाहर था। इसलिए पूरे पैसे चुका कर डेक की ओर बढ़ गए। रात गहरा गई थी, पर कालिमा धारण कर चुके समुद्र के पीछे रंग-बिरंगे सितारों सी चमक थी। अब यहां लेजर शो होने का समय हो आया था। आठ बजे होने वाले इस शो में समुद्र के इस पार से लाईटें उस पार डाली जा रही थीं। कुछ देर रुकने के बाद हम निकल पड़े हांगकांग की गलियों में। बड़ी-बड़ी बिल्डिंग्स के बीच संकरी गलियां गुलजार थी। हर तरफ भारी भीड़ हमें अपने बाजारों और गलियों की याद दिला रही थी। लौटने के लिए मेट्रो की सवारी की बात सभी को जंची। अब फिर मेट्रो स्टेशन ढूढना और डिज्नीलैंड का रास्ता पूछना कठिन काम था। एक लड़की ने बताया कि ईस्ट सिम शा सुई से मेट्रो लेकर आपको नाम चियोंग तक जाना होगा, वहां से सनी बे के लिए मेट्रो मिलेगी और फिर सनी बे से डिज्नीलैंड के लिए मेट्रो बदलनी होगी। ऐसा ही हमने किया और हम एक घंटे से भी कम समय में डिज्नीलैंड पहुंच गए। वहां से होटल के लिए फ्री बस सेवा मिल गई।

सिनेमा के इतिहास की गवाही

अगले दिन फ्लाइट देर शाम की थी। एक बार और हांगकांग जाने और डिज्नीलैंड का चक्कर लगा लेने का मोह नहीं छूटा। जल्दी उठकर डिज्नीलैंड से मेट्रो ली और एवेन्यु ऑफ स्टार देखने की चाहत में फिर पहुंच गए हांगकांग। यह अनोखी जगह हांगकांग के सिनेमा के सौ साल के इतिहास की गवाह है। मूवी स्टार ब्रूस ली की 2.5 मीटर ऊंची पीतल की प्रतिमा भव्य नजर आती है। हांगकांग का मुख्य आकर्षण है स्टार फेरी और इसका अनुभव लिए बिना हम कैसे वापस आते। सो हांगकांग आइलैंड से कोवलून मेनलैंड तक के लिए फेरी शटल ली। रोमांचक सफर था यह भी। हांगकांग को देखकर लगता है कि यहाँ नए और पुराने का अदभुत संगम है। जनसंख्या का दबाव यहाँ भारत से अधिक है। जब-जब सिग्नल ग्रीन होता, भारी संख्या में लोग सड़क क्रॉस करते थे। अच्छी बात यह लगी कि इतने लोग एक साथ चल रहे थे, लेकिन न तो किसी के चेहरे पर गुस्सा था और न ही कोई कुंठा। सारे काम व्यवस्थित तरीके से चल रहे थे। समय की कमी ने ज्यादा देर रुकने नहीं दिया और फिर मेट्रो से डिज्नीलैंड आ गए। हम लेंटाऊ आइलैंड पर ही थे जो हरे-भरे जंगलों और कम इमारतों के चलते काफी खूबसूरत दिखाई देता था। पर जाइंट बुद्धा देखने से वंचित रह गए। सुना था कि आसमान के नीचे बैठे हुए महात्मा बुद्ध की 26 मीटर ऊंची मूर्ति दुनिया भर में अकेली है।

डिज्नीलैंड में छुक-छुक की आवाज हर वक्त साथ चलती रही। इस ट्रेन की सवारी करने की इच्छा थी। भाप के इंजन से जुड़ी डिज्नी थीम की टॉय ट्रेन पर बीस मिनट की राइड ले ही डाली। अब बारी थी हल्की-फुल्की शॉपिंग की, तो डिज्नीलैंड में ऐसी कई दुकानें हैं जहां से डिज्नी थीम के शो पीस, सॉफ्ट टॉयज, स्टेशनरी सहित ढेरों आइटम खरीदे जा सकते हैं।

मकान नं. 95, 12वीं मंजिल, गली नं. 5, कृष्णा नगर, सफदरगंज एनक्लेव, नई दिल्ली-29, मो. 0 98299 88268

आलेख

कृष्णतत्व का विकास और सूर का संदर्भ

◆ डॉ. स्नेह लता

कृष्ण का सबसे पहला परिचय हमें ऋग्वेद में एक अनार्य सामंत के रूप में मिलता है। इसके उपरान्त छान्दोग्य उपनिषद् में भी एक कृष्ण का उल्लेख है। ये ऋषि हैं। इन्हें घोर अंगिरस का शिष्य और देवकी पुत्र भी कहा है। विद्वानों ने यह माना है कि- गोपाल कृष्ण का रूप ईसा की पहली शताब्दी के लगभग प्रतिष्ठित हुआ, परन्तु ऋग्वेद में जिस कृष्ण का उल्लेख है वे गोपालक हैं और जब इन्द्र उनकी गाय चुरा ले जाते हैं, तो वह अपने गढ़ से निकलकर उससे युद्ध करते हैं और उसे पराजित करते हैं।[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि गोपाल कृष्ण का बीज रूप वेदों में भी मिल जाता है। पुराणों और भागवत में पूजा के लिए इन्द्र और कृष्ण की जिस प्रतियोगिता का वर्णन है उसका मूल भी कदाचित् इन्द्र-कृष्ण का यही युद्ध है। इसके पश्चात् वासुदेव धर्म के उत्थान के साथ वासुदेव के पुत्र कृष्ण की प्रतिष्ठा हुई। ये ऐतिहासिक पुरुष समझे जाते हैं। ये द्वारका के राजा थे। इन्होंने महाभारत में विशेष भाग लिया। इन्हें गोपियों का नायक राजपुत्र कृष्ण भी कहा जाता है।

वैदिक कृष्ण और उपनिषद् के ऋषि से इनका योग हुआ और कदाचित् इस प्रकार महाभारत के ज्ञानी और योद्धा कृष्ण के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ।[2] कृष्ण प्राचीनकाल से ही भारतीय जनमानस से जुड़े हैं, अपने प्रत्येक रूप में उन्होंने यहाँ की जनता को प्रभावित और प्रेरित किया है। भारतीय मानस से जुड़े रहने के कारण सभी कलाओं में इस चरित्र को अभिव्यक्ति मिली है। प्राचीन साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक कृष्ण का व्यक्तित्व विभिन्न रूपों में प्रस्तुत होता रहा है। 'वस्तुतः कृष्ण एक ऐसा प्रवाहमान चरित्र है, जो हर युग में उपस्थित रहा है। इसी के साथ प्रत्येक युग में पुराने नाम होने पर नये रूपों में नवीन दृष्टिकोण और युगबोध के अनुसार स्वरूप, ग्रहण करता गया है। चरित्र की यह निरन्तर उपस्थिति शाश्वतता की द्योतक है।[3]

कनेडी ने कृष्ण के विकास के तीन भाग किए हैं। उन्होंने इन्हें द्वारका का राजा कृष्ण माना है, जो महाभारत में अपने धूर्त कृत्यों के लिए प्रसिद्ध है। यह कृष्ण का राजनीतिज्ञ रूप है। उन्होंने उसे सिन्धु प्रदेश का अनार्य वीर योद्धा माना है जिसकी बहुत कुछ देवता के रूप में प्रतिष्ठा हो चुकी है।[4]

कृष्ण तत्व के विकास में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ-साथ अन्य तत्त्व भी सहायक हैं। यद्यपि इतिहास कृष्ण के विकसित स्वरूप में सहायक रहा है, फिर भी कृष्ण जैसे चरित्र के लिए इतिहास का उतना महत्त्व नहीं क्योंकि इतिहास बोध से अधिक महत्त्वपूर्ण अंतरात्मा और शाश्वतता होती है। इस सम्बन्ध में आचार्य रजनीश का मत है कि- 'इतिहास के बोध को हमने जानकर झुठलाया है' इटर्निटी का, शाश्वत का बोध है। यहाँ घटनाओं का उतना मूल्य नहीं है, जितना घटनाओं के भीतर छिपी हुई आत्मा का मूल्य है।[5]

वस्तुतः कृष्ण-तत्व में ऐसे सूत्र उपस्थित हैं, जो सार्वकालिक, सार्वजनिक और सार्वभौम हैं। इन्हीं के कारण प्रत्येक युग का व्यक्ति उनसे सम्पृक्त होता रहा है। कृष्ण जैसे व्यक्तियों की जिंदगी एक बार नहीं लिखी जाती, हर सदी बार-बार लिखती है। हजारों लोग लिखते हैं, तो हजार व्याख्यायें होती चली जाती हैं। फिर धीरे-धीरे कृष्ण की जिंदगी किसी व्यक्ति की जिंदगी नहीं रह जाती। कृष्ण एक संस्था हो जाते हैं, एक 'इन्टीट्यूशन' हो जाते हैं।[6] फिर वे समस्त जन्मों का सारभूत हो जाते हैं और फिर मनुष्य मात्र के जन्म की कथा हो जाती है। कृष्ण जैसे व्यक्ति रह नहीं जाते। वे हमारे मन के, हमारे चित के, प्रतीक हो जाते हैं। यहाँ यह कहना उचित होगा कि हमारे मानस ने जितने भी जन्म देखे हैं वे सब उनमें समाहित हो जाते हैं। कृष्ण के प्रतीक में तो जुड़ता ही चला जाता है, अनंत काल तक जुड़ता ही चला जाता है, हर युग उसमें जुड़ेगा, हर युग में वृद्धि करेगा, क्योंकि और अनुभव इक्ट्ठे हो गये और वे उसमें जुड़ते चले जाएंगे।

कहने का अभिप्राय यह है कि सूर को कृष्ण-चरित्र ग्रहण करने में, आत्मसात् करने में विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ा। सूर और उनके युग को इस कृष्ण की प्राप्ति सहज हो गई थी, क्योंकि वह अपने नये रूप में उस समय उपस्थित था, फिर भी इस तथ्य का उद्घाटन आवश्यक है कि कृष्ण की परम्परा किस रूप में सूर काव्य तक उपलब्ध होती है।

तद्वैतद्घोर अंगिरस् : कृष्णाय देवकी पुत्रा योक्त्वा[7] यहाँ यह भी उल्लेख मिलता है कि यह कृष्ण ऋषि घोर अंगीरस् के शिष्य थे और देवकीपुत्र से भी उसका सम्बन्ध था। डॉ. तपेश्वर नाथ का मत द्रष्टव्य है- अंगिरस् कृष्ण ने जो उपदेश अपने गुरु घोर अंगिरस्

से ग्रहण किये थे उन्हें ही गीता प्रवचन के रूप में अपने शिष्य अर्जुन को सौंप दिया। स्वयं गीता में इस बात का संकेत मिलता है कि उक्त ज्ञानोपदेश की परम्परा दायरूप में अग्रसर हुई है। जो हो इससे इतना सिद्ध हुए बिना नहीं रहता कि कृष्ण ऋषि का समस्त वेदज्ञान और देवकीपुत्र वासुदेव के साथ कालान्तर में पूर्ण संगठित हो गये और परमदेव वासुदेव के साथ सम्बद्ध होकर उसने कृष्ण की वैयक्तिक महिमा का संवर्धन किया। अतः कृष्ण सम्बन्धी सन्दर्भ उन्हें गीतावाचक वासुदेव कृष्ण के पूर्ण सन्निकट ले जाता है।[8]

मध्यकाल में कृष्ण-तत्व का जो स्वरूप उपलब्ध होता है निश्चित ही उसमें उपर्युक्त कृष्ण का प्रभाव पड़ा है। बाद में इस चरित्र में अन्य तत्वों का समावेश होता चला गया। इस सम्बन्ध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत उल्लेखनीय है- यह बात सर्वसम्मत है कि कृष्ण का वर्तमान रूप नाना वैदिक, अवैदिक, आर्य, अनार्य धाराओं के मिश्रण से बना है।[9] आशय यह है कि कृष्ण-तत्व का विकास कई स्तरों पर हुआ है। इसी को ध्यान में रखते हुए- डॉ. प्रेमशंकर लिखते हैं कि- वासुदेव कृष्ण का विष्णु में एकाकार होकर वैष्णव धर्म की मूल धारा से जुड़ना, कृष्ण के गोपाल रूप की कल्पना, राधा के आगमन और अंत में उनके बहुरंगी व्यक्तित्व का भक्तिकाल में प्रकाशन, इस प्रकार कृष्ण चरित्र क्रमशः रुपान्तरित होता रहा है।[10]

कृष्ण के इस रूपान्तरिक चरित्र को अर्थात् सूर के कृष्ण तक की स्वाभाविक और विकसित यात्रा में कृष्ण के साथ विष्णु का सम्बन्ध भी रहा है। अतः विष्णु तत्व का कृष्ण के विकास में विशेष योगदान रहा है। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि- कृष्ण की भान्ति विष्णु भी परिवर्तित और विकसित हैं। तैत्तिरीय आरण्यक में विष्णु का ऋषि नारायण के साथ सम्बन्ध माना गया है। पांचरात्र धर्म की उपासना परम्परा का भी 'विष्णु' तत्व पर प्रभाव पड़ा है। बाद में चलकर वासुदेव के साथ कृष्ण का समावेश हो गया और इस विषय पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं- जब सारस्वतों के वासुदेव की पूजा प्रधान हो गयी तो महाभारत के युग में वासुदेव और नारायण को एक ही देवता समझा जाने लगा। यहाँ तक आकर वासुदेव, कृष्ण, विष्णु और नारायण एक हो चुके थे।[11] यहाँ यह स्पष्ट होता है कि कृष्ण अधिकाधिक ऐश्वर्यशाली होते चले गए। इतना ही नहीं बाद में तो कृष्ण, विष्णु से भी अधिक लोकप्रिय हुए।

पुराणों में कृष्ण को पूर्णावतार घोषित किया गया और इस प्रकार वासुदेव एवं कृष्ण में एकीकरण के उपरान्त कृष्ण को विष्णु का 18वां अवतार मान लिया गया। इतना ही नहीं, विष्णु के साथ लक्ष्मी होने पर, कृष्ण के साथ राधा की कल्पना की गई। अतः राधा की कल्पना में वैष्णव धर्म का योगदान रहा है। इस प्रकार कृष्ण और विष्णु की एकता उपस्थित हुई डॉ. सत्येन्द्र का मत उल्लेखनीय है कि विष्णु के यज्ञ के सहारे ही जैसे इन्द्र पद्च्युत प्रधान हो गए, शिव से जो भक्ति संलग्न थी वह अवश्य विष्णु के साथ रह गयी।[12] विष्णु का सम्बन्ध नारायण से हुआ और फिर यही विष्णु, नारायण रूप में मिलकर वासुदेव कृष्ण तथा गोपाल कृष्ण के रूप में परिवर्तित हुए हैं। डॉ. सत्येन्द्र का मत पुनः ध्यातव्य है - नारायण, सात्वत और शैवों के संगम से नारायण, हरि, वासुदेव, भगवद् पर्यायवाची हो गए और इनसे अभिप्रेत था- विष्णु, किन्तु वासुदेव संकर्षण का व्यूह तो मानव-समूह का व्यूह था, जो हरि नारायण, विष्णु की भान्ति देवता मात्र नहीं थे, मनुष्य की भान्ति शरीरधारी थे। इधर भारत में आभीरों अथवा अहीरों का प्राधान्य हो उठा। ये अहीर उतर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक फैले हुए हैं- इनका नाम तामिल भाषा में अभीर है, जिसमें आ का अर्थ गाय है। अभीर अथवा अहीर, तमिल शब्द अभीर में गोप-ग्वालों का पर्याय है। अहीर को ब्रज में ग्वाला भी कहा जाता हैं वे गोप-ग्वाल आदि कृष्ण के पूजक हैं, कृष्ण इनका नेता था- इसी प्रकार कृष्ण के साथ गाय और गोपी का घनिष्ट सम्बन्ध है। अभीरों के प्राबल्य के समय और वैदिक कर्मकाण्ड अथवा यज्ञ-विधान के शैथिल्य के समय, उस व्यवस्था के विरोधी मत उन्नत हुए क्योंकि उनकी भूमि प्रायः समान थी। अतः वे परस्पर मिल गए इस प्रकार वासुदेव हो गए।[13]

डॉ. विजयेन्द्र स्नातक का मत है कि- हमारी यह निश्चित मान्यता है कि वैदिक विष्णु का ही विकसित रूप, भक्ति कालीन विष्णु जो शनैः-शनैः महाभारत काल तक परम पद को प्राप्त करता गया और इन्द्र जैसे प्रमुख देवता से भी ऊपर आसीन हुआ। श्रीकृष्णावतार के दो मुख्य रूप हैं- एक में वे यदुकुल के श्रेष्ठ रत्न हैं, वीर हैं, राजा हैं। दूसरे में वे गोपाल हैं। गोपी जन वल्लभ हैं, राधाधर सुधापान शालि-वनमालि हैं। प्रथम रूप का पता बहुत पुराने ग्रंथो से चल जाता है, पर दूसरा रूप अपेक्षाकृत नवीन है। धीरे-धीरे यह दूसरा रूप ही प्रधान हो गया और पहला रूप गौण।[14] इसी से विष्णु की काम लीलाओं का प्रभाव भी कृष्ण पर पड़ा है। कृष्ण में प्रेम की काम और रूपासक्ति विष्णु से प्रभावित है।

विष्णु का नारायण तथा वासुदेव से तादात्मय हुआ, इसी से बाद में चलकर कृष्ण के व्यक्तित्व को देवत्व प्राप्त हुआ। फलस्वरुप कृष्ण को विष्णु के आठवें अवतार के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। यह कृष्णावतार के रूप में है और उसके चरित्र में सभी कलाओं का समावेश हुआ है। कृष्ण का यही अवतारी रूप पृथ्वी पर मानवतत्व की प्रतिष्ठा हेतु ही था और प्रेम को इसका माध्यम बनाया गया है।

कृष्ण भक्ति के क्षेत्र में आलवारों का व्यापक प्रभाव पड़ा है। इन आलवारों ने कृष्ण को विष्णु के अवतार में स्वीकार किया है और मुख्यरूप से भक्ति-भावना पर बल दिया है।[15] चौदहवीं शताब्दी में भागवत सम्प्रदाय नये रूप में प्रस्तुत होता है, इसी समय

राधा और कृष्ण इतिहास के व्यक्ति नहीं रह गए थे। अपितु वे सम्पूर्ण भाव जगत् की वस्तु हो गए थे। इसी के प्रभाव स्वरूप वल्लभ सम्प्रदाय, निम्बार्क सम्प्रदाय, चैतन्य सम्प्रदाय, राधावल्लभ सम्प्रदाय, हरिदासी सम्प्रदाय के कृष्ण का यही रूप उपलब्ध होता है। कृष्ण तत्व उक्त सम्प्रदायों में पूर्षारुपेन देखा जा सकता है। इन सम्प्रदायों का सम्बन्ध दक्षिण के आचार्यों से माना जाता हैं। जिनमें रामानुज, मध्यवाचार्य, विष्णुस्वामी, वल्लभाचार्य और निम्बार्क प्रमुख हैं। इन्होंने भक्ति-भावना का संचार व प्रसार कर समाज के समक्ष एक आन्दोलन खड़ा किया। आचार्य हजारी प्रसार द्विवेदी मानते हैं कि मध्ययुग की वैष्णव भक्ति का उदय इन्हीं आचार्यो से हुआ है।[16]

कृष्णातत्व से सम्बन्धित प्रमुख सम्प्रदाय वल्लभ-सम्प्रदाय है। भक्ति के क्षेत्र में, इस सम्प्रदाय को पुष्टिमार्गीय और दार्शनिक क्षेत्र में शुद्धाद्वैतवाद कहा जाता है। इस सम्प्रदाय में भगवान कृष्ण परमब्रह्म पुरुषोत्तम रूप में पूजित हैं और वह परमानन्द स्वरुप हैं। इस सम्प्रदाय का प्रभाव भक्तिकाल में अष्टछाप के कवियों पर पड़ा है, सूर इसी सम्प्रदाय से सम्बन्धित हैं। सूर तक कृष्ण की यात्रा लम्बी रही है। इस यात्रा में कृष्ण को अनेक पड़ावों से गुजरना पड़ा है। वस्तुतः कृष्ण-तत्व में बहुत कुछ समाहित होता चला गया है। इतिहास, मिथक, धर्म-सभी कृष्ण तत्व को प्रभावित करते हैं। इस तरह श्री कृष्ण स्वयं रुप परब्रह्म, यदुकुल के वीर राजा तथा गोपाल और गोपी वल्लभ एक साथ हो गए। इतिहास और मिथक व धर्म का संघनन हो गया।[17] वस्तुतः सूर के कृष्ण प्रेमी हैं, जीवन को जीने के पक्षपाती हैं। उनका जीवन सरस और सरल है। यह सत्य है कि सूर ने कृष्ण के जीवन को इतना विविधता और सम्पूर्णता में चित्रित नहीं किया, जितना व्यापक कृष्ण का चरित्र रहा है।

सूरदास की जन्मस्थली 'सीही' नामक गाँव है जो फरीदाबाद के निकट है।[18] यद्यपि कतिपय विद्वान आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. श्याम सुन्दरदास इनका जन्म-स्थान मथुरा के समीप रुनक्ता मानते हैं। इस महान कवि की क्रीड़ा-स्थली और रचना-स्थली मथुरा है, कृष्ण की जन्मभूमि भी यही है। मथुरा नगरी धार्मिक नगरी रही है। प्राचीन काल से उसे एक तीर्थ के रूप में मान्यता मिली है। आज भी वहां कृष्णमय धार्मिक वातावरण व्याप्त है। मथुरा के अतिरिक्त सूर गोकुल और वृन्दावन से भी जुड़े थे। इसी प्रकार मथुरा, गोकुल और वृन्दावन सजीव रूप से उनकी रग-रग में समा गये थे। यही उनका नित्य गोलोक है और उनके काव्य में इसी का प्रसार है।

सूरदास की लोकप्रियता का आधार-स्तम्भ सूरसागर। इस सागर में प्रेम, कविता, भक्ति संगीत की नदियां आकर एकत्र हुई हैं। जहाँ रसिक काव्य प्रेमी, भक्त एवं संगीत प्रेमी अपने-अपने मन को सन्तुष्ट करते हैं। सभी दृष्टियों से यह रचना अपूर्व है। यहाँ सूर का प्रयोजन आचार्य के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना नहीं है, वह तो भक्त कवि के नाते अपने आराध्य देव कृष्ण के लीलागान को ही अपना परम कर्त्तव्य और जीवन के लिए सार्थकता समझता है। डॉ. प्रेमशंकर ने ठीक कहा है कि- सूर मूलतः भक्ति चेतना के कवि हैं और वह भी भाव के स्तर पर और यहाँ वे प्रचलित भक्ति- दर्शन, विशेषतः वल्लभ दर्शन को स्वीकारते हुए भी अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं, दर्शन का पिछलग्गू बनकर नहीं रह जाते।[19] अतः सूरसागर में रागतत्व की प्रधानता है, जिसमें राधा-कृष्ण और गोपी-प्रसंग को पूर्ण- तन्मयता और भावात्मकता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

सूरसारावली में 24 अवतारों का विस्तार से उल्लेख हुआ है। छन्द संख्या 360 में कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का वर्णन किया है। साहित्य लहरी की अन्तिम प्रामाणिक रचना है। इस ग्रंथ में 118 पद हैं। जिसमें दृष्टिकूट शैली के अनुसार चित्रण हुआ है। जहाँ कतिपय स्थलों में आराध्य देव कृष्ण की प्रणय-पूर्ण लीलाओं का माधुर्यपूर्ण चित्रण उपलब्ध होता है।

प्रवक्ता हिन्दी, हिन्दी विभाग, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला पोर्टमोर, शिमला, हिमाचल प्रदेश

संदर्भ सूची

1 डॉ. रामरतन भटनागर, सूर साहित्य की भूमिका, पृ. 98
2 वही, पृ. 98
3 डॉ. महेश कुमार, सूरकाव्य में मिथकीय तत्व, पृ. 98
4 डॉ. रामरतन भटनागर, सूरसाहित्य की भूमिका, पृ. 35
5 आचार्य रजनीश, कृष्ण मेरी दृष्टि में, पृ. 94
6 वही, पृ. 139
7 छान्दोग्य उपनिषद्, पृ. 108
8 हिन्दी काव्य में कृष्ण चरित्र का भावात्मक स्वरूप, विकास, पृ. 4-5
9 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, सूर-साहित्य, पृ. 11
10 डॉ. प्रेमशंकर, कृष्ण काव्य और सूर, पृ. 10
11 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, सूर-साहित्य, पृ. 4
12 डॉ. सत्येन्द्र, मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन, पृ. 374
13 वही, पृ. 374
14 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, सूर-साहित्य, पृ. 132
15 डॉ. प्रेमशंकर, कृष्ण काव्य और सूर, पृ. 12
16 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, सूर-साहित्य, पृ. 53
17 डॉ. रमेशकुंतलमेघ, मनखंजन किनके, पृ. 106
18 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 55
19 डॉ. प्रेमशंकर, कृष्ण काव्य और सूर, पृ. 88

कहानी

रब्बा, मेहर कर...

◆ जितेंद्र अवस्थी

शाम पूरे शबाब पर थी। उसे ठण्डक-सी महसूस हुई। कंधे पर रखी जैकेट पहन ली। इस पहाड़ी गांवों की तरफ आने वाली आखिरी बस में उसके साथ पहुंची सवारियां पीछे रह गयी थीं। शामा इस ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर अकेला चला जा रहा था। किसी ने बताया था कि पन्द्रह-बीस मिनट बाद बुआ का घर आ जायेगा। चांदनी में नहाया पर्वत, आसपास थोड़ा समतल-सा क्षेत्र, छोटे-छोटे खेत, पहाड़ी मकान...। मेहर के साथ होने वाली मुलाकात के ख्याल ने ही शामे के दिल की धड़कन तेज कर दी। अब मेहर कैसी लगती होगी... किस तरह मिलेगी, उसके साथ... बहुत ही खुश। उसकी आंखों की चंचलता... मुहब्बत का मुजस्समा- मेहर, ओ मेहर... तेरा शामा आ रहा है तुझसे मिलने।

शामे को लगा कि कोई चोर-उचक्का, जंगली जानवर किसी झाड़ी से निकलकर उस पर हमला कर देगा... पहाड़ में ऐसा होता ही रहता है। वह कांप गया। पांव ठिठक गये। फिर सोचा- यह नहीं हो सकता। ऊपर वाला मेहर से मुलाकात के बगैर उसके साथ ऐसा कुछ नहीं होने देगा। वह चल पड़ा। चलता गया। दरख्तों के झुरमुट, हवा के झोंके... फिर भी चलता रहा। यह मेहर से मिलने की ललक थी, उसके अपने प्यार की ताकत या इच्छाशक्ति। उस सर्द शाम वह पहाड़ी के ऊपर बुआ के घर की तरफ बढ़ता ही जा रहा था।

करीब बीस-बाईस साल बाद मेहर से मिलने जा रहा था शामा। वह स्वयं भी चालीसेक साल का हो गया है, शादीशुदा। करीब बारह साल के बेटे का बाप। सैंतीस साल की उम्र तो मेहर की भी हो गयी होगी। पर शामे को अहसास हुआ कि उसकी अपनी शादी नहीं हुई है। मेहर भी पन्द्रह साल से भी कम की थी, जब शामे से उसकी पहली मुलाकात हुई थी। मुलाकात नहीं, उससे पहली मुहब्बत की थी। शामे के अंदर ही अंदर खुशी की एक लहर-सी दौड़ गयी। मेहर... बल्ले ओ मेहर... शामे की अपनी मेहर। उस समय मेहर की सेहत भी क्या खूब थी। चंचल आंखें. .. बातें करती आंखें। उसके मुस्कुराने से पहले खिलखिला के हंसने लग पड़तीं आंखें। गेहुंआ रंग। अच्छी कद-काठी। मेहर हंसती तो सारी कायनात खिलखिला उठती। शर्माती तो लगता सारी दुनिया शर्मा रही है... कम से कम शामे को तो ऐसा ही लगता।

शामे ने कॉलेज में दाखिला लिया ही था जब मेहर अपनी बड़ी बहन के साथ उसके गांव आई। मेहर की बहन शामे के गांव की डिस्पेंसरी में सहायिका के तौर पर तैनात थी। वह शामे के घर भी आती रहती। शामे के पिताजी की बहन बनी थी। शामा बुआ कहकर पुकारता। बुआ डिस्पेंसरी के एक कमरे में ही रहती थी और उसने मेहर को शामे के घर ही छोड़ दिया। शामे को लगा मेहर नहीं, उनके घर कोई रौनक ही आ गई है। वह न चाहते हुए भी मेहर के करीब आता गया। मेहर भी उसकी तरफ खिंचती चली गई। भय भी था कि अगर पिताजी, मम्मी या बुआ को भनक लग गयी तो फिर खैर नहीं। पर शामे और मेहर को एक-दूसरे के आसपास रहने, बातें करने की आदती-सी हो गईं। वे करीब, और करीब आते गये। उस समय ही शामे की मासी भी उनके घर आ गयीं। दो-एक दिन बाद जब वह अपने गांव जाने लगी तो शामे को भी साथ ले जाने की जिद पर उतर आयी। शामा, मेहर से दूर नहीं था जाना चाहता। उसने कह-कहाकर मेहर को भी साथ ही ले लिया।

मासीजी का गांव ढाई-तीन किलोमीटर दूर था। सड़क कोई थी नहीं इसीलिए पगडंडी पर पैदल ही जा रहे थे। आगे मासी, फिर मेहर और सबसे पीछे शामा। शामे ने आहिस्ता-आहिस्ता मेहर की टांग पर छतरी मारी। मेहर पीछे मुड़कर मुस्कुरा देती। शामे को लगता मुहब्बत की देवी हंस रही है। तीन-चार बार यूं ही हुआ। शामे को महसूस हुआ, मेहर नहीं, उसकी अपनी किस्मत ही मुस्कुरा रही है।

मौसाजी की मौत के बाद मासी घर में अकेली ही रहती थी। बच्चा भी कोई नहीं था। किसी तरह गुजारा चला रही थी। मौसाजी के जाने के बाद थोड़ी-बहुत पेंशन मिल जाती। वहां पहुंचने के दूसरे दिन मासी रसोई में खाना बना रही थी और शामा साथ वाले कमरे में चारपाई पर बैठ गया। मेहर भी वहीं आ गई और शामे के ठीक सामने जमीन पर बैठ गई। दोनों एक-दूसरे को देखते रहे। आंखों ही आंखों में पता नहीं क्या-क्या बातें होती रहीं। शामा बहुत संजीदा था। मेहर तो अपने हाथों के नाखून कुतरे जा रही थी, नजर बेशक शामे के ऊपर थी। शामा एक ठण्डी सांस भरता, मेहर की दो निकल आतीं... मेहर की तीन आहें निकलतीं तो शामे के चार

आ जातीं। दो दिल धड़क रहे थे, बहुत तेजी के साथ- अपने लिये नहीं, एक-दूसरे के वास्ते।

शाम को खाने के बाद उसके पूछने पर बुआ ने शामे को बताया कि रिटायर होने के बाद वह अकेली रह गयी थीं। फूफा गुजर गये थे, लड़की की शादी कर दी थी। मेहर बुआ के गांव में ही कुछ दूरी पर अपने परिवार के साथ रहती है और उसका भी ख्याल रखती है। साथ ही किसी फर्म में नौकरी भी करती है। शामे का दिल किया कि उड़कर मेहर के पास पहुंच जाये। रात काफी हो गयी थी और मेहर के घर तक जाने की राह भी ठीक नहीं थी। शामे ने बुआ से मेहर का मोबाइल नंबर ले लिया।

सोते समय शामे का दिल उड़कर मेहर के पास पहुंच गया। फिर उसे लगा कि मेहर उसके पास ही है, उसके अपने कमरे में उसके दिल की धड़कन ने रफ्तार पकड़ ली। हर धड़कन यही कह रही थी- मेहर, मेहर आंखें बंद करे तो सामने वही मुस्कुराती हुई मेहर नजर आये। वही चंचल आंखें, मुस्कुराती, बातें करतीं आंखें।

नींद शामे से रूठ चुकी थीं। उसे इसका कोई गम भी नहीं था। सोने के लिए तो तमाम उम्र पड़ी है, मेहर की मीठी यादों में जागने का मौका नसीब से ही मिलता है। मासी के घर भी ऐसे ही हुआ था। दिन में जब शामा-मेहर एक-दूसरे के सामने बैठे थे... उस रात भी शामे को नींद नहीं थी आई। वह सारी रात मेहर के बारे में ही सोचता रहा। यह क्या हो रहा है... चंगा-भला मैं पढ़ाई कर रहा था। मेहर ने एकदम आकर जिंदगी में खलबली मचा दी। उसने सोचा कि मेहर को नींद आ गई या नहीं... दिल किया देख आये पर उसकी हिम्मत जवाब दे गई। मेहर मासी के साथ दूसरे कमरे में सो रही थी।

नींद शामे से रूठ चुकी थीं। उसे इसका कोई गम भी नहीं था। सोने के लिए तो तमाम उम्र पड़ी है, मेहर की मीठी यादों में जागने का मौका नसीब से ही मिलता है। मासी के घर भी ऐसे ही हुआ था। दिन में जब शामा-मेहर एक-दूसरे के सामने बैठे थे... उस रात भी शामे को नींद नहीं थी आई। वह सारी रात मेहर के बारे में ही सोचता रहा। यह क्या हो रहा है... चंगा-भला मैं पढ़ाई कर रहा था। मेहर ने एकदम आकर जिंदगी में खलबली मचा दी। उसने सोचा कि मेहर को नींद आ गई या नहीं... दिल किया देख आये पर उसकी हिम्मत जवाब दे गई। मेहर मासी के साथ दूसरे कमरे में सो रही थी।

सुबह-सवेरे ताजी हवा के झोंके के मानिंद मेहर चाय लेकर आ गई। शामे ने देखा मेहर की आंखें लाल थीं। क्या वह भी रातभर जागती रही है? शामे ने पूछा तो मेहर मुस्कुरा कर बोलीं, 'चाय पी चाय... अच्छा। अच्छा'

चाय का कप उसके पास छोड़कर के जाती मेहर को शामा देखता ही रह गया। दूसरे कमरे में दाखिल होने से पहले मेहर ने पीछे मुड़कर देखा। शामे को लगा कि मेहर कह रही है, 'न आप सोता है न मुझे सोने देता है।'

मासी के घर से लौटते समय पगडंडी पर बातें करते-करते शामा रुक जाता तो पीछे चल रही मेहर भी थम जाती। वह वैसे ही बेमतलब-सी बात करता, मेहर उसको देखते ही रह जाती। शामा थोड़ी चुहलबाजी करता तो मेहर नखरा-सा मारती पूछती, 'क्या यहीं रुकने का इरादा है, घर नहीं पहुंचना?' शामा जवाब देता, 'अब तो सारी उम्र ही अपना घर है मेहर जी, कहीं भी रह लेंगे हम दोनों।'

मेहर ने छूटते ही कहा, 'अगर दीदी को पता चल गया तो हम दोनों ही घर के रहेंगे न घाट के।'

शामे को अहसास हुआ कि मेहर भी उसे मान चुकी है। उसे लगा कि यह दुनिया एकदम कितनी सोहनी हो गयी है। ट्यूबवेल से निकलता पानी संगीत की तरह लगा। पशु-पक्षी, दरख्त सभी कितने खुश नजर आ रहे हैं। उसका अपना मन भी नाच रहा है। सारी कायनात ही झूम रही है। कुदरत की हर शै में शामे को हंसती-खेलती मेहर ही दिख रही है। मेहर नहीं, पूरा संसार ही मुस्कुरा रहा है। उसके अपने पांव जमीन पर नहीं टिक रहे थे। उसको लगा प्यार की देवी उसे और मेहर को अपनी बांहों में लेकर मुहब्बत के हुलारे दे रही है और कह रही है, 'मेरे बच्चों इश्क करो, खूब इश्क करो, मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।'

गांव के करीब पहुंचते ही खुशी-खुशी शामे ने मेहर से पूछा, 'जनाब जी, यह तो बताओ हमारे बीच यह क्या चल रहा है?'

शामे को आस थी कि मेहर बोलेगी, 'बच्चू, समझता नहीं क्या, मेरा दिल तो निकाल कर ले गया... प्यार-मुहब्बत नहीं जानता क्या, मेरे मुंह से सुनना चाहता है।' शामा सच्ची-मुच्ची यही सुनना चाहता था पर मेहर के तो होंठ ही सिले हुए थे। चहकती मेहर एकदम गंभीर हो गयी थी। पता नहीं क्या हो गया था उसे?

शामे ने अपना सवाल दूजी दफा पूछा, फिर तीसरी और चौथी बार। मेहर का चेहरा सुर्ख, और भी सुर्ख होता गया। शामा अंदर ही अंदर डर गया। फिर भी यही सुनना चाहता था, 'चुप भी रह, यह मुहब्बत है मितरा।' शामे ने फिर पूछा, 'मेहरू, बता भी दे यह क्या चल रहा है?' मेहर के होंठ खुले, 'जो भी चल रहा है, ठीक नहीं है।'

शामे को लगा किसी ने शीशा चूर-चूर करके उसके कानों में डाल दिया है और यह सब कुछ करने वाली उसकी मेहर नहीं, उसके अंदर प्रवेश कर इश्क की दुश्मन बोल रही है। कुछ समय पहले वह जो उड़ान भर रहा था, वहां से किसी ने उसे जमीन पर पटक मारा है। शामे को अनुभव हुआ कि मेहर तो चुप है, उसने तो कुछ कहा ही नहीं।

शामे ने मेहर की तरफ ताका। फिर कहने लगी, 'देख, क्या फायदा है इस चीज का? फिर कभी हमारे मुलाकात कहीं होगी भी कि नहीं क्या पता। तू इधर सूखता रहेगा और मैं अपने गांव तेरी याद में मरती रहूंगी। दोनों की राह अलग-अलग है, हमारा मेल नहीं हो सकता...'

मेहर क्या इतनी पत्थर दिल भी हो सकती है? हो सकती नहीं, वह तो है ही पत्थर की मूरत, जिसे उसने इश्क की देवी मान लिया था। ओह! शामे तूने क्या सोच लिया। उसकी आंखों के सामने अंधेरा छा गया। चलते-चलते उसे लगा कि वह गिरने वाला है।

थोड़ी देर बाद मेहर ने पूछा, 'बुरा मान गया क्या?' शामा खामोश चलता रहा। मेहर फिर कहने लगी, 'तेरे इरादे बिल्कुल भी ठीक नहीं।'

शामे ने सोचा- यह क्या कह रही है मेहर! उसके आंसू निकल आये। हौसला करके उसने पूछा, 'क्या इरादे हैं मेरे?'

मेहर ने जो जवाब दिया, शामे को लगा उसने जोर से उसे थप्पड़ रसीद कर दिया है। बोली, 'यही इरादे कि तू मेरे को पाना चाहता है साबुत, पूरी की पूरी।'

शामे ने सोचा कि खींच के चांटा मारे मेहर के गाल पर उसका हाथ उठते-उठते रह गया। मेहर क्या लगती है उसकी। थप्पड़ तो अपनों को लगाया जाता है। यदि उसको मेहर इतना मानती तो इतना बड़ा इल्जाम लगा सकती थी क्या? फिर भी उसने दिल कठोर करके पूछा, 'क्या यार तूने भी मेरे को क्या समझा। तूने ऐसे सोच भी कैसे लिया। हमारी उम्र भी क्या है, जो हम ऐसे कामों में पड़ जायें? फिर भी अगर तेरे दिमाग में यह बात आई भी थी तो तूने मेरे साथ अकेले आने की हिम्मत कैसे कर दी।'

मेहर ने कहा, 'मुझे अपने आप पर यकीन था। मैं तुझे कोई फायदा नहीं उठाने देना था।'

शामे को अहसास हुआ कि मेहर ने उसे कोई दोस्त नहीं, दैत्य समझ लिया। वह कहां पवित्र-प्यार के जज्बे से हवाओं में उड़ रहा था और कहां मेहर ने उसको पाताल में दे फेंका।

मेहर ने सवाल किया, 'फिर तू चाहता क्या है?' शामा चुप ही रहा। मेहर व और लड़कियों में फर्क ही क्या है। सभी शक ही करती हैं। मेहर ने दुबारा पूछा तो खीझ कर बोला, 'मैं मौत चाहता हूं। तूने मुझे जीते जी ही मार दिया। अब तेरे साथ शामा नहीं उसकी लाश चल रही है। इसको कहीं लगा दे ठिकाने।'

'प्लीज शामे, ऐसे न बोल मैं तूझे दुखी नहीं करना चाहती। मैं लड़की हूं, हमारी सोच जरा-सी अलग होती है।' शामा बोला, 'यही बात थी तो तूने मुझे आप अपने साथ होने का अहसास ही क्यों कराया। तेरी सोच बाकी हटकर थी तो अपनी राह भी अलग रखती। चल छोड़।'

घर पहुंचकर शामा पिताजी के सामने पड़ा न मम्मी के। बस कुढ़ता रहा और रोता रहा। मम्मी पूछने लगीं, 'तबीयत खराब है क्या?' शामे ने कोई जवाब नहीं दिया। सारी रात उसकी आंख नहीं लगी। पहली रात मेहर के ख्यालों में जागने की मीठी-मीठी वजह थी पर आज तो उसे अपने आप पर गुस्सा आ रहा था। मेहर भी गुमसुम रही। शामा उससे बचता रहा। मौका पाकर एक दिन मिन्नत करके बोली, 'शामे बता क्या चाहता था तू? नहीं बतायेगा तो मैं सारी उम्र पछतावे की आग में जलती रहूंगी, अपने आपको कोसती रहूंगी। प्लीज बता दे मुझे, तू मुझसे क्या चाहता था।'

शामे ने मेहर की तरफ देखा-उसका दिल पिघल गया। उसने न चाहते हुए भी अपने हाथ को चूम लिया। 'बस मैं यही चाहता था। तेरा हाथ चूम के बताना चाहता था कि मैं तेरे से बहुत प्यार करता हूं।'

इसके बाद मेहर किसी और के घर रहने चली गयी। शामा भी थोड़ा सहज होने लगा। एक रात मम्मी बेड पर सो रही थी तो वह भी उनके पास जाकर बैठ गया। मेहर भी उनके बेड के पास आकर पैरों की तरफ आकर बैठ गयी। बातें करती रही। मम्मी आधी नींद में थी। मेहर ने अपने पैर से शामे को छेड़ा। शामे ने इशारों में कहा, 'कोई फायदा नहीं है अब।'

मम्मी कहने लगे, 'शामे रात बहुत हो गई है, अंदर वाले कमरे से कम्बल लेकर अपने बेडरूम में जाकर सो जा।' शामा कम्बल लेने गया तो मेहर भी वहीं आ गई। शामे का हाथ पकड़कर बोली, 'प्लीज अपनी इच्छा पूरी कर ले।' शामे ने बेमन से उसका हाथ पकड़ा और चूमने लगा तो मेहर बोली, 'हाथ पर नहीं।' शामे ने एकदम से उसके हाथ को चूमा और कम्बल लेकर बाहर निकल गया।

एक-आध दिन बाद मेहर अपने गांव जाने लगी तो शामा उसे और उसकी बहन यानी बुआ को छोड़ने बस स्टाप तक गया। उसे मेहर को देखने की हिम्मत तक नहीं हो रही थी। वह तो बस रोये जा रही थी।

'''

बुआ के घर पहुंचने के अगले दिन शामे ने बचकर मेहर से बात की, 'आप मिलने के लिए आ जाओ, थोड़ी देर बाद मैं वापस पंजाब जा रहा हूं।'

मेहर बोली, 'नहीं, मैं नहीं आ सकती काम पड़ा है और घर में बच्चे हैं, पति है...'

शामा सोच रहा था कि मेहर सारे काम छोड़कर उससे मिलने पहुंच जाएगी और पिछले सारे गिले-शिकवे दूर कर देगी। क्या पता शामे के लिए उसके मन में प्यार जाग ही जाये। क्या हुआ जो मेहर शादीशुदा है, वह आप भी तो एक बच्चे का बाप है। ठीक है उसकी पत्नी है, बड़ी अच्छी है, (शेष पृष्ठ 36 पर)

कहानी

साहब का दिन

◆ श्याम सिंह घुना

वर्षों की मेहनत के फलस्वरूप सेब उत्पादक अच्छा पैसा कमाने लगे हैं। इनमें अधिकतर कर्मचारी भी हैं जिन्हें सेब ने रातों रात लखपति बना दिया है। एक युवा कर्मचरी ने अपना शौक पूरा करने के लिए सैंट्रो कार खरीद लाई, उसको परिसर में खड़ा करके कार का मालिक नम्बर प्राप्त करने एसडीएम के दफ्तर गया दरवाजा खोल कर अनुमति मांगी

'सर क्या में अन्दर आ सकता हूं'

'हां आ जाओ'

आवेदक ने कागज एस.डी.एम के सामने रख दिए-

'क्या है?'

'गाड़ी के नम्बर के लिए आवेदन है'

'गाड़ी कहां है'

'नीचे है सर, ग्राउण्ड में'

'चैक करना पड़ेगा'

'कर लिजिएगा'

थोड़ी देर में एस.डी.एम उठते हुए दरवाजे से निकल कर कौरी डोर से होते हुए सीढ़ियां उतर कर ग्राउण्ड फ्लोर पर आते हैं और फिर गेट से बाहर निकल कर अपने पीछे आ रहे आवेदक से पूछते हैं -

'कहां है आपकी गाड़ी'

'वहां है सर'

'कौन सी है'

'यह रही सर' गाड़ी के पास जाकर खड़ा होते हुए आवेदक बोला'

'इसका इंजन नम्बर देखना पड़ेगा'

हाथ में पकड़े हुए कागजों को दखते हुए अधिकारी बोलता है

'ठीक है सर देख लीजिएगा'

'कहां जैसे लिखा होता है' प्रश्न किया अधिकरी ने।

'उसको देखने के लिए गाड़ी के नीचे लेटना पड़ेगा साहब'

अधिकारी : ' हां-हां लेटिए न और नम्बर पढ़ कर सुनाइए मैं टैली करता हूं'

आवेदक : एस.डी.एम साहब मैंने छः लाख रुपए गाड़ी के नीचे लेटने के लिए नहीं खर्च किए हैं बल्कि इसके अन्दर बैठने के लिए खर्च किए हैं।

साहब भागने लगते हैं और अपने कमरे में लौट कर हस्ताक्षर कर देते हैं। कार मालिक अभी बाहर निकला ही था कि लगभग 80 वर्ष का एक बुजुर्ग उनके आगे आ कर खड़ा हो जाता है। किसान है पुराने से कपड़े पहन रखे हैं। बगल में एक बन्दूक लटकाए हुए है। सिर पर बुशहरी टोपी और पांव में नायलोन के जूते। बन्दूक दोनाली है, टोपीदार इन बन्दूकों का इस्तेमाल बन्दर भगाने, पुत्र प्राप्ति की सूचना देने और मेलों के दौरान मेले के 'जुबड़' यानि मैदान में खूंद द्वारा पहुंचने की सूचना देने हेतु धमाके किए जाने के लिए किया जाता था किसी-किसी के पास आज भी यह बन्दूकें पाई जाती है।

'हां-हां बाबा जी क्यों आए'

'लाइसेंस रनिऊ करना है'

'बन्दूक दिखाओ'

बुजुर्ग ने एक हाथ से बन्दुक मेज के ऊपर उठा कर आगे बिछाई किन्तु उसका हाथ कांप रहा था जिससे कि बन्दूक भी कांप रही थी यानि उसे कंपन्न की बीमारी थी।

' ये क्या है-तेरा हाथ तो कांपता है
तेरा रिनीवल नहीं होगा जा यहां से'

कागज गुस्से में बन्दूक वाले की आरे फेंकते हुए वह बोला 'निशाना कहीं का साधेगा, कहीं लगेगा की और किसी आदमी को मार देगा'

बुजुर्ग खड़ा रहा- किंकर्त्तव्यमूढ़।

थोड़ी देर बाद एस.डी.एम. ने सिर उठा कर बुजुर्ग को डांटते हुए कहा-

'सुनाई नहीं दिया मैं क्या कह रहा हूं।

आपका लाइसेंस रिनियू नहीं होगा आपका अपना बेटा बगैरह नहीं उसे दे दे बाबा इसे कब तक पकड़े रहेगा इस जायदाद को कब तक छाती से लगाए रहेगा। जा अब यहां से काम करने दे मुझे बाहर और भी मिलने वाले होंगे। 'कहते हुए साहब ने घण्टी बजाई और वह बुजुर्ग निराश होकर दफतर से बाहर निकल आया।

एक 23-24 वर्ष का लड़का दरवाजे पर आ कर अन्दर आने के लिए अनुमति मांगता है -

'हां, आ जाओ'

कुछ कागजात एसडीएम के आगे टेबल पर रखता है इनको उठाकर एसडीएम पलटता, देखता है-

'यह क्या है'

युवक चुप वह सोच रहा है कि एसडीएम कागज पढ़कर समझ जाएगा कि कागज किस बारे में है तभी उसे एसडीएम की कड़क आवाज सुनाई देती है।

'मैं पूछ रहा हूं ये क्या है कागज किस बारे में है'

इतने में दरवाजा खोलकर 4-6 और लोग अन्दर प्रवेश करते हैं इनकी ओर देख कर एसडीएम साहब डांट लगाते हुए बोलते है-

'आप कहां चले आ रहे हैं सबके सब मैं बुलाऊंगा, तब आना एक-एक करके' कहते हुए गुस्से में वह घंटी बाजाता है घंटी सुनकर एक सेवादार प्रकट होता है एसडीएम उसकी चढ़ाई करते हुए कहते हैं-

'ये क्या है, मिस्टर सब के सब अन्दर भेज दिए'

'सुबह से खड़े हैं जनाब, अभी तक बड़ी मुश्किल से रेस्ट मिला है इन्हें सेवादार बोल हमने वापिस भी जाना है तथा अपने-अपने घर बसें निकल जाएगी मिलने वालों में से एक बोला।

'उसमें क्या है कल आ जाना फिर से'

'इतना खर्चा हम नहीं उठा सकते'

'नहीं उठा सकते तो मैं क्या करूं' मैं भी तो हिसाब से ही निपटा पाऊंगा लोगों को'

अब उसी लड़के से पूछता है-

'मैं पूछता हूं कि यह कागज क्या है'

'क्या करू मैं इनका'

'सर कण्डक्टरी का लाइसेन्स बनाना है'

'अच्छा-अच्छा' कण्डक्टर बनना है तो ऐसा बोलना क्या डयूटी देनी है कंडक्टर की।

युवक चुप।

दो-तीन बार एस.डी.एम प्रश्न दोहराता है, मगर लड़का उतर नहीं दे पाता।

एस.डी.एम कागजो को परे फेंक कर युवक से बोलता है-

'जा पहले पता करके आ कि कण्डक्टर की क्या डयूटियां होती है' बस स्टैण्ड पर जा कर रह जा जहां ऐ पता नहीं कहां-कहां से आ जाते हैं'

फिर एक लेखक आता है और एसडीएम से बोलता है-

लोक संस्कृति पर मेरी एक पुस्तक है, उसे मन्दिर के लिए खरीदने के लिए एस.डी.एम से फोन करवाए, डीसी साहब ने भी आपसे बात की थी। दो साल से अपके पास आ रहा हूं आज कर दीजिए प्लीस मेरा काम।

'ऊपर वाले तो ऑर्डर कर देते हैं, उन्हें क्या उन्हें तो जनता को खुश करना होता है, ठीक-गलत का जवाब तो हमें देना पड़ता है आप का काम नहीं होगा। मन्दिर सेवा समिति वाले लोग नहीं मान रहे।

'सर उन्हें क्या पता कि लोक संस्कृति हमारी सांस्कृतिक धरोहर होती है, वह तो आपकी है या ठेकेदार की पहुंच रखने वाले ही ऐसे पदों पर बिठाए जाते हैं, साहित्य कला, संगीत से मनभक्ति इनके आगे संस्कृति की बात करना तो भैंस के आगे बीन बजाने जैसा ही होता है। यह तो सिर्फ पैसा और उसका महत्त्व पढ़ते हैं यही उनका धर्म है वही भगवान है। कई तो राजनीतिक फेस रखने वाले भी इनमें है एक तो आठवीं, दसवीं पढ़े हैं वह भी हैं, जैसे भी हैं तो सेवा समिति के लोग है'

'वह आपको केवल सलाह दे सकते हैं अन्तिम निर्णय आपका होता है क्योंकि उपमण्डलाधिकारी ट्रस्ट का अध्यक्ष होता है यह आपके विवेक पर निर्भर करता है। तहसीलदार और नायब तहसीलदार भी है आपसे बाहर नहीं जाएंगे।

'अर्जी कौन पढ़ता है आजकल किताबों को खरीद कर आजकल तो कंप्यूटर खेलों और बैठ जाओ पढ़ते हैं। आपसे पहले भी वह किताब खरीदी की हमने अभी तो वह भी सब नहीं बिकी है।

'साहब यह किताब है किताबें कोई जलेबी या पकौड़े नहीं या सब्जी भाजी नहीं होती कि आज खरीदी कल बासी हुई, परसों फेंकनी पड़ी- पुस्तक जितनी पुरानी होगी उतनी ही कीमती 2004 का प्रकाशन है। आज 2010 हो गया जब इसकी कीमत 100 रुपए थी। आज 130-35 से कम न होगी किताबें एक एक, दो-दो करके कितनी है किलो के हिसाब से नहीं सालों रखते हैं। पुस्तक की 1000 प्रतियां बिकनी हैं।

'अच्छा आप जाओ यहां से मुझे न समझाओं मुझे आपका भाषण नहीं सुनना है। मुझे अपना काम करने दो मैं इतना काबिल नहीं हूं, साहब आप जाओ आज'

'लेकिन सर एक बात मेरी और सुन लीजिए। यह दफ्तर हम खुलवाते हैं। इनमें कुर्सियां हम रखते हैं। यह भवन जिसमें आपका दफ्तर है, यह भी हमारी ही देन है। यह कुर्सियां इस पर बैठने वाले की मरजी से नहीं जनता की मरजी से चलती है। मुख्यमंत्री जनता का प्रतिनिधि होता है। टेलीफोन की घण्टी बजती है एस.डी.एम फोन उठाता है -

'हां'

'----'

'बस गिर गई-ओह! ठीक है मैं अभी निकलता हूं।

साहब मोबाइल पर ड्राइवर को फोन करते हैं-

'कहां है आप'

फोन कट जाता है थोड़ी देर में ड्राइवर आता है और कहता है-

'सर बाजार तक गया था'

'आपको कितनी बार कहा कि ड्यूटी के दौरान हमेशा 10 से 5 बजे तक गाड़ी में बैठे रहा करो,

एमरजेन्सी में समय बर्बाद होता है गाड़ी में पहुंचो मैं 5 मिनट में आता हूं बस एक्सीडेन्ट हो गया है स्पॉट पर पहुंचना है 11 बजे एक्सीडेन्ट हो गया है अब दो बज रहे है'।

'एसडीएम दुर्घटना स्थल पर पहुंचे सड़क में गाड़ी खड़ी की। दो सौ मीटर नीचे नदी के किनारे में पड़ा बस का तुड़ा-मुड़ा ढांचा दिख रहा था। एसडीएम साहब अपने पियन के साथ घटना स्थल के लिए पगडंडी में उतरे हताहत सवारियों को निकाला जा रहा था जख्मी सवारियों में से अधिकांश अस्पतालों की ओर रूखसत कर दी गई। सड़क से नदी किनारे तक अच्छा खासा रास्ता बन गया था कुछ शव अभी भी अन्दर फंसे थे परिजन, मित्र, सामाजिक कार्यकर्ता दिलोजान से राहत व बचाव कार्य में पसीना बहा रहे थे।

इधर वह स्थान खून से भरा था। कुछ-कुछ शव इधर उधरे पड़े थे कुछ निकाल कर सड़क की ओर पगडंडी में ले जाए जा रहे थे। घायल कराह रहे थे। संबंधी रिश्तेदार रो रहे थे। इसी बीच एसडीएम साहब पहुंच गए और वहां पधारते ही गरजते हुए मुखातिब हुए।

'क्या हो रहा है यहां क्यों भीड़ कर रखी है हटाओ यह मजमा यहां से अपना काम करने दो'

संतत्व व परेशान लोग, गाड़ी में फंसे और नदी के वोल्डरों के बीच फंसी हुई सवारियों को बचाने के प्रयास में लगे हुओं के साथ एकाएक रुके और सम्बोधित करने वाले की ओर मुझे अपना दुःख भूलकर क्रोध से तिलमिला उठे।

'तू कौन है भाई' एक पिंडू किसान ने एसडीएम को घूमते हुए पूछा।

'मैं एसडीएम हूं मुझे अपनी ड्यूटी करने दो हटो यहां से।

'हम क्या अपनी डयूटी नहीं कर रहे झक मारने यहां आए है, एक पढ़े लिखे आदमी ने कहा।

कुछ उपस्थित राहत कार्य के लगे लोग एसडीएम की ओर बढ़े और एक नौजवान दूसरों से बोला-

'लगने दो एक दो हमें आपको क्या पड़ी है और यह हमें बताने आया है कि एसडीएम है यहां अपनो का दुःख खाए जा रहा है और यह डयूटी बता रहा है, चूहे को मिली हल्दी की पुड़ी-

'ओ जा यार यहां से, हमें काम करने दें नहीं तो अभी पड़ेगे, हां, एक दिनेश नाम का युवक घायल हुआ को निकाला और बोला

उसके बाद तो एसडीएम साहब वहां से ऐसे गायब हुए जैसे बिल्ली के डर से चूहा भागता है

'दिमाग का पैदल ही लगता है'

गांव लिंगाह, डा. झिकनीपुल, तहसील चौपाल, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 211, मो. 0 94187 98467

रब्बा, मेहर कर...

(पृष्ठ 33 का शेष) उसका पूरा ख्याल भी रखती है पर प्यार उसे बीवी से भी पूरा नहीं मिला। उसका तो मेहर ही पहला प्यार है।

'हेलो-हेलो' मेहर की आवाज थी।

'मेहर जी मैं शामा हूं, शामा, पंजाब से आया हूं, बुआ के पास ठहरा हूं शायद बुआ ने कल रात आपको बताया भी होगा पर लगता है आपने पहचाना नहीं।'

'हां, पंजाब में मेरी दीदी के भाईसाहब बने थे और भाभी भी।'

'जी, मैं उन्हीं का बेटा हूं। कई साल पहले जब आप हमारे पिंड आये थे तो मैं और आप मासी को छोड़ने गये थे... वापसी पर हम दोनों ही थे... हमने खूब बातें की थीं... रात को कम्बल लेने के समय मैंने आपके हाथ पर प्यार भी किया था...'

'क्या कह रहे हो आप, मुझे कुछ भी याद नहीं।'

'प्लीज मेहर जी, इतने रूखे मत बनो, ऐसे कोई भूल सकता है कोई?'

'मैं सच कह रही हूं, मुझे कुछ भी याद नहीं।'

'ऐसे कौन भूल सकता है। कच्चे मन के ऊपर पड़ी मुहब्बत की पहली छाप वैसे ही थोड़े मिट जाती है...'

'मैं कह रही हूं मुझे पता ही नहीं लग रहा है कि आप क्या बोले जा रहे हो।'

'फिर आप ऐसे करो मेहर जी, भई इधर आ जाओ, अपनी दीदी के घर। या मैं आपकी तरफ आ जाता हूं शायद मिल-देखकर आपको सब कुछ याद आ जाये।'

'नहीं, मुझे कुछ भी याद नहीं करना, जो भूल गया सो भूल गया... वैसे भी मुझे घर में बहुत काम है।' मेहर ने फोन काट दिया।

शामे को काटो तो खून नहीं। कितनी हसरतें लेकर आया था। पंजाब से यही सोचकर कि पहाड़ और मैदान पहले एक नहीं हो सके थे शायद अब एकमेक हो जाएं। पर यहां तो मेहर का तो बिलकुल ही बदला हुआ रूप नजर आया। वह मोबाइल फेंककर बुआ के वेहड़े में ही धड़ाम करके गिर गया।

शामे की आंखों में पानी आ गया। उसे लगा कि सामने दिखता पहाड़ भी उसके साथ ही जर्जर और खोखला हो गया है। उसने सुना था कि कोई-कोई पहाड़ थोड़ी आवाज पर ही दरकने शुरू हो जाते हैं। उसका मन किया कि जोर की चीख मारे और पहाड़ टूटता हुआ उसके ऊपर ही गिर जाये। रब्बा, मेहर कर।

हाउस नं. 1094, सेक्टर-44 बी, चंडीगढ़, यू.टी.-160 043

कहानी

उसकी डूबती पहचान

◆ डॉ. देविना अक्षयवर

दरवाजे पर खटखटाहट सुनकर जाहिदा की आँखें अचानक खुल गयीं। वह चौंककर झट से उठकर खाट पर बैठ गयी। उसने चारों तरफ कातर नजर दौड़ाई। कमरे में कुप अँधेरा। बाहर बारिश की बूंदों की टप-टप और तेज हो गयी थी। कोने में जलता दीया कब का बुझ गया था। रात कितनी बीत चुकी होगी, जाहिदा को कुछ पता नहीं। उसे परवाह भी नहीं थी। दिन-रात, कभी न थमने वाली बारिश में दिन और रात का क्या फर्क ही रह जाता है? घर की छत को तो यूँ ही टपकना है! बरसात के पानी को यूँ ही रिसकर घर के अंदर फैल जाना है! और सीलन की दम-घोंटू गंध में भी साँसें लेना उतना ही मुश्किल होता है। इसीलिए उसे न तो दिन होने की कोई राहत थी और ना ही रात होने का ख्याल। पर इस वक्त, वह उस खटखटाहट को दरवाजे पर कम, अपनी धमनियों पर ज़्यादा महसूस कर रही थी। दरवाजे पर फिर से किसी ने खटखटाया। लेकिन जाहिदा रुकी रही। एकदम चुप, निस्तेज। बाहर से उसके नाम को पुकारने वाली आवाज को वह अनसुना करना चाहती थी। वह सोच में डूबी रही - वह उस वक्त वहां थी भी, या नहीं?...

आज तीन दिन हो गए जाहिदा को पुलिस थाने से वापस आए हुए। उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि उम्र के इस पड़ाव पर उसे पुलिस थाने की शक्ल देखनी पड़ेगी। पैंसठ साल की बूढ़ी, अकेली स्त्री के पास उसके सम्मान के अलावा और क्या रह जाता है? जेल में तीन दिन बिताने के बाद जाहिदा को लगा था कि उसकी इस बची-खुची पूँजी पर भी हमला हो गया था। और वह इसलिए, कि उसका नाम जाहिदा था। नाम देबा होता तो शायद उसे थाने न ले जाते। वह जेल का ही खौफ था, जिसकी वजह से वह दरवाजा नहीं खोल रही थी। लेकिन, इसके साथ ही, उसके दिल की धड़कनों को और तेज करने वाली आवाज थी उफान पर आयी ब्रह्मपुत्र नदी की। इस नदी ने भले ही अपनी तटों पर बसी बड़ी आबादी को जीवन-दान दिया हो, लेकिन जाहिदा के लिए यह जल-प्रवाह अपने प्रचंड रूप में आते ही उसकी बर्बादी ही लेकर आया है, हमेशा। जाहिदा ने ध्यान से सुनने की कोशिश की, दरवाजे पर खटखटाहट अब बंद हो चुकी थी। लेकिन उसके हाथ-पैरों का कांपना अभी बंद नहीं हुआ था। पालथी मारकर बैठी जाहिदा मन ही मन न जाने किस-किसको कोसते हुई बड़बड़ाने लगी। सहसा उसका अतीत बिजली की ही तरह उसकी आँखों के सामने कौंध उठा। जाहिदा एक बार फिर अपने जीवन के उतार-चढ़ावों भरे रास्ते पर निकल गयी थी।'

पंद्रह साल की थी जाहिदा, जब वह पिता के साये से वंचित हो गयी थी। माँ का चेहरा तो उसने कभी देखा ही नहीं था। पिता, हरिदेब भी जब चाय बागानों में खटते-खटते बागान मालिकों के शोषण और भुखमरी से त्रस्त आ गया, तब उसने भी ब्रह्मपुत्र की तेज धारा में कूदकर अपने संताप से निजात पा ली थी। पर पंद्रह साल की अकेली जाहिदा के लिए जीवन की चुनौतियां मुँह बाए खड़ी थीं। तब, उसके संघर्षमय जीवन में उसका साथ देने के लिए आदिल नाम के युवक ने उसका हाथ थामा। आदिल भी जाहिदा के पिता के साथ चाय बागान में काम करता था। हरिदेब के जाने के बाद उससे उस युवती का हाल देखा न गया, उसने उससे निकाह कर उसे अपने घर में पनाह दे दी। तभी से वह देबा से जाहिदा हो गयी।

बागान मालिकों का शोषण असह्य होने पर आदिल ने वहां मजदूरी करना बंद कर दिया और ब्रह्मपुत्र नदी में सवारियों को पार लगाने के लिए, बतौर खवैया काम करने लगा। देबा ने अपने पति से कभी नहीं पूछा था कि वह कहाँ से आया है, उसका परिवार कहाँ रहता है? वह हिन्दुस्तान से है, पाकिस्तान से, या फिर बांग्लादेश से? लाचारी के उस वक्त में किसी ने उसका हाथ थामकर उसे एक नयी पहचान दी थी, यही उसकी जिन्दगी की सबसे बड़ी सच्चाई थी। तब ब्रह्मपुत्र से भी उसे कोई शिकायत नहीं थी। आखिर उसकी रसोई, उसका चूल्हा ब्रह्मपुत्र के आशीर्वाद से ही तो चलता था।

लेकिन ब्रह्मपुत्र के आशीर्वाद को उसके सर पर कुछ ही सालों के लिए रहना था। पच्चीस साल की थी वह, जब बरसात के दिनों में अचानक नदी के उमड़ आने से उसका पति, आदिल नाव सहित नदी की भेंट चढ़ गया था। वह पहली दफा थी, जब जाहिदा ने भगवान् का शुक्र मनाया था कि उसकी कोई संतान नहीं थी। वह

अनपढ़ होकर भी सोचती थी कि बिन पिता की संतान को एक दिहाड़ी मजदूरन क्या भविष्य दे पाएगी?

पिता और पति की निशानी के तौर पर उसके पास महज उनके नाम का राशन कार्ड और अपनी शादी की कुछेक तस्वीरें ही थीं, जो वक्त के साथ बदरंग हो चली थीं। जाहिदा ने बस उन्हीं को संभालकर एक छोटे से बक्से की तह में सुरक्षित रख दिया था। उसके लिए ये निशानियां उसकी आगे की जिंदगी काटने का आधार थीं। लेकिन जाहिदा को क्या मालूम था कि कागज के ये चंद टुकड़े उसकी पहचान, अतीत, वर्तमान, भविष्य, उसका पूरा वजूद तय करेंगे कभी। पिछले कुछ महीनों से असम में सभी परिवारों को अपनी हिन्दुस्तानी नागरिकता सिद्ध करने के लिए अपने पहचान-पत्र की जांच करवाने का निर्देश दिया जा रहा था। जिनके पास जरूरी कागजात नहीं थे, उनको या तो रिफ्यूजी, या फिर अवैध प्रवासी घोषित कर जेल में बंद कर दिया जा रहा था। लेकिन जाहिदा को उस सबसे क्या लेना-देना था? वह तो सुबह से लेकर दोपहर तक खेतों में मजदूरी करती और शाम को बाँस और जूट के टोकड़े बनाने में व्यस्त रहती। लखिमपुर जिले में जन्मी, जाहिदा ने अपनी पूरी जिंदगी वहीं पर काट दी थी। हाँ! उसे याद है कि एक बार आदिल उसे बिहू उत्सव के मौके पर गुवाहाटी ले गया था, मेले में।

पर इस बार उफान पर आयी ब्रह्मपुत्र नदी ने जाहिदा पर जो कहर ढाया, उसकी कोई उम्मीद जाहिदा को नहीं थी। बाढ़ की चपेट में उसका पूरा गाँव आ गया था। उसके दो कमरे के घर में एक खाट और कुछ लटकते घड़ों को छोड़, बाढ़ का प्रवाह अपने साथ सब कुछ ले गया। उसका पहचान पत्र, पिता और पति के राशन कार्ड, और उसकी शादी की तस्वीरें३ सब कुछ छीन ले गया था उससे बाढ़ का भयानक प्रवाह। जाहिदा को महसूस हुआ जैसे उसकी जिंदगी का आधार बह गया हो। पर यह एहसास तब और तीखा हुआ, जब थाने ले जाकर उससे उसकी पहचान पूछी गयी, वे सभी कागजात मांगे गए जो उसे अपने पिता की बेटी और पति की पत्नी साबित कर पाते। 'जाहिदा' नाम बताने पर तो सवालों की झड़ी लग गयी थी। उसकी नागरिकता और उसकी शादी पर तरह-तरह के सवाल किये गए। उसे पहली बार एहसास हुआ था कि अपने देश में मुसलमान नाम रखने के क्या मायने हो सकते हैं।

जेल से छूटकर आयी जाहिदा अँधेरे कमरे में इसी सोच में पड़ी थी - सालों तक उस गाँव में रहती, वह हर साल धान, कपास, आलू, जूत, आदि के खेतों में काम करती आयी है, इनकी फसल काटने में भी उसकी मेहनत लगती आयी है। उसके हाथों के बने टोकड़े देश के न जाने कौन-कौन से बाजारों में बिकते हैं। उसने आस-पड़ोस में होने वाले उत्सवों में हमेशा शिरकत की, उनके सुख-दुःख में उनके साथ खड़ी रही। लेकिन उसकी पहचान उसकी मेहनत, उसके श्रम-दान, उसके सामाजिक अस्तित्व के आधार पर नहीं , बल्कि उसके पिता या पति के पहचान पत्र पर टिकी थी। क्या उसके अतीत, उसके जीवन में बार-बार आए सैलाब की कहानी नहीं कहती उसके गालों पर पड़ी झुर्रियां, उसके सफेद बाल, उसकी रूखी हथेलियां, उसके पैरों की बिवाइयाँ? थाने में बैठे अफसर जाने कितने सालों से उसे आते-जाते देखते रहे हैं, क्या उन्हें याद नहीं कि वह उसी गाँव में रहकर बुढ़ापे की चौखट तक पहुँच गयी है? तब उससे उसकी पहचान पूछने का क्या मतलब था? जेल से छूटकर आयी जाहिदा अँधेरे कमरे में इसी सोच में पड़ी थी।

सवालों के इस बवंडर में खोती जा रही थी जाहिदा, लेकिन उगते सूरज की पहली किरणों से आयी बारीक रौशनी ने जब उसके कमरे में झाँका तो उसे होश आया - सुबह हो गयी थी। कमरे के सन्नाटे में किसी मेंढक के टर्राने की आवाज सुनकर जाहिदा को ध्यान आया - बारिश भी रुक गयी है। उसने नीचे देखा तो मेंढक फर्श पर फैले पानी से उबरने का भरसक प्रयास कर रहा था। जाहिदा ने धीरे से दरवाजा खोला, फिर मेंढक को अपनी दोनों हथेलियों के बीच रखकर बाहर निकली। दरवाजे पर कोई कम्बल रख गया था। आँगन में फैले बरसाती पानी को पार करके उसने कुछ दूर घास पर मेंढक को छोड़ दिया। जाहिदा ने उसे फुदकते हुए आगे बढ़ते देखकर कहा - जा, तू कहीं भी जा सकता है। तुझे कहीं भी जाने के लिए न तो किसी पहचान पत्र की जरूरत है और ना ही तुझे कोई सरहद रोक सकती है।

जाहिदा को याद आया - आज उसे फिर हाजरी देने थाने जाना है।

प्लॉट नं. 16-बी, सैक्टर-5, फेज-तीन,
नजदीक प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, न्यू शिमला, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 009, मो. 0 81601 16822

इस बार उफान पर आयी ब्रह्मपुत्र नदी ने जाहिदा पर जो कहर ढाया, उसकी कोई उम्मीद जाहिदा को नहीं थी। बाढ़ की चपेट में उसका पूरा गाँव आ गया था। उसके दो कमरे के घर में एक खाट और कुछ लटकते घड़ों को छोड़, बाढ़ का प्रवाह अपने साथ सब कुछ ले गया। उसका पहचान पत्र, पिता और पति के राशन कार्ड, और उसकी शादी की तस्वीरें, सब कुछ छीन ले गया था उससे बाढ़ का भयानक प्रवाह। जाहिदा को महसूस हुआ जैसे उसकी जिंदगी का आधार बह गया हो।

कहानी

अप्सरा

◆ नफे सिंह कादयान

(गतांक से आगे)

'मैं दया राम की ही बेटी हूं। तुम मेरे बारे में, मेरे चरित्र के बारे में गलत सोच रहे थे। मैं तो तुम्हारी परीक्षा लेकर देख रही थी। मैं अब तक कुंवारी हूं, ये देखो तुम जैसे मैदान से आये लोगों ने मेरा क्या हाल किया है।' अचानक वह रोते हुए एक झटके से अपनी कुर्ती उतार कर नंगी हो गई।

'पागल हो क्या?' क्रोध की एक ज्वाला सी मेरे सीने में धधक उठी। मैंने उसके गाल पर चांटा मारने के लिये हाथ उठाया मगर उसने घूम कर पीठ मेरी तरफ कर दी। उसके पीठ देख मेरी चींख निकल गई। पूरी कमर बुरी तरह क्षतिग्रस्त थी। जगह-जगह गहरे घाव थे। पीछे से सर भी फूटा हुआ था। कमर की तो कई जगह पसलियां साफ दिखाई दे रही थी। उसकी कमर की हड्डियों पर कहीं-कहीं तो त्वचा, मांस का नामो-निशान तक नहीं था।

'देखा तुम मैदानों के लोग कितने जालिम हो।' उसने चेहरा मेरी तरफ करते हुए कहा। उस दिन भी तुम्हारी तरह शराब पीकर बुलेट पर तीन लड़के आए थे। मेरा मैमना खो गया था। मैं उसे खोज ही रही थी कि उन्होंने मुझे यहीं घेर लिया। मैं चीख रही थी, वो जोर-जोर से हंसते हुए बलात् मुझ से अपनी हवस मिटाना चाहते थे मगर मैं अपनी इज्जत बचाने के लिये खड्ड में उतर गई। वहां नीचे गहरी खाई में रास्ता थोड़े ही है।' कामनी ने बड़े पत्थर की तरफ उंगली से इशारा करते हुए मुझ से कहा।

'ओह! खाई में रास्ता नहीं है। वहां नीचे जाता ही कौन होगा, कामनी अच्छे बुरे लोग हर जगह बसते हैं। वो पहाड़ों पर भी हो सकते हैं और मैदानों में भी मगर मैं ऐसा नहीं हूं। मैं किसी के साथ जबरदस्ती करने की तो स्वप्न में भी नहीं सोच सकता। तेरी सुंदर काया देखकर थोड़ा बहक जरूर गया था। प्लीज मुझे माफ कर दो। लगता है पैसे के अभाव में तुम अपना सही इलाज नहीं करवा पा रही हो। मैं जानता हूं इधर गरीबी अधिक है मगर मैं तेरा इलाज कराऊंगा। चाहे मेरा जितना मर्जी पैसा खर्च हो जाए। देखना तेरी कमर दस-बारह दिन में ही ठीक हो जाएगी।' मैंने कुर्ती उसके हाथ से ले उसे उसके गले में पहनाते हुए कहा।



'अब मेरा इलाज तुम्हारे पास नहीं है श्याम, काश तुम तीन-चार महीने पहले आ कर मुझे यहां से ले जाते। मैं तो कई जन्मो से यहां ऐसे परदेशी का इंतजार कर रही हूं जो मुझे रानी बना कर रखे। हर जन्म में बस तड़पना मेरे नसीब में लिखा है।' कामनी किसी फिल्मी हीरोईन की तरह डायलाग बोल कर जोर से हंस दी।

'कितने रंग बदलती है ये लड़की अभी रो रही थी और अभी हंसने लगी है।' मैं हैरानी से मुंह खोले उसकी तरफ देख रहा था। कामनी बुरी तरह घायल होने के बावजूद फिर रोमांटिक हो रही थी।

'चल तुझे अपने घर पर सोने के लिये बिस्तर दिलवाती हूं।', वह मेरे बैठने से पहले ही टांगे दोनों तरफ कर इस प्रकार मस्ती से मोटर साईकिल पर बैठ गई जैसे बिल्कुल ठीक ठाक स्वस्थ हो।

'तेरी बकरी का मैमना अब दिखाई नहीं दे रहा, कहां चला गया?' मैंने मोटर साईकिल स्टार्ट करते हुए उस से पूछा।

'चला गया होगा कहीं, मुझे उससे क्या। उस हरामी की वजह से ही सारा फसाद हुआ है वरना मेरे भी हाथ में तेरे जैसे किसी परदेशी के नाम की मैंहदी रच जाती। कामनी ने मुझे पीछे से बाजुओं में झकड़ते हुए अपना मुंह मेरी पीठ पर टिका दिया। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मैं किसी भारी शिकंजे में झकड़ा गया हूं। उसके वजूद का इतना वजन मेरी पीठ पर पड़ रहा था जैसे वो कई टन भारी हो।

'ये दुबली पतली लड़की इतनी भारी कैसे है।' मोटर साईकिल चलाता हुआ मैं सोच ही रहा था कि आगे सड़क के किनारे तीन-चार कमरों का एक घर दिखाई दिया। उस घर में से केवल एक कमरे से ही प्रकाश बाहर आ रहा था बाकि पूरा घर अंधकार में डूबा था।

'बस यहीं रोक दे, आ गया हमारा घर। मेरे कान में कामनी ने आहिस्ता से

सरगोशी की तो मेरी हंसी छूट पड़ी। वहां कमरे और उनके बराबर में एक हॉल बना हुआ था जिस पर ताला लटका था। अब तो दया राम की लड़की से जान पहचान हो गई, सोने का प्रबंध हो ही जाएगा। सोचते हुए मैंने मोटर साईकिल घर के आगे बंद कर दी।

'आज कोई मुसाफिर नहीं ठहरा क्या तुम्हारे हॉल में?, मैंने अपने पीछे बैठी कामनी की तरफ देख कर कहा मगर वह सीट से गायब हो चुकी थी।

'अंदर चली गई होगी। चौंकाना तो इसकी आदत है। रास्ते में मेरी मोटर साईकिल के आगे भी तो इस प्रकार अचानक आ गई थी जैसे कोई भटकती हुई प्रेत आत्मा हो... प्रेत आत्मा।' भटकती हुई रूहों का ख्याल आते ही मेरे शरीर में एक भय की लहर दोड़ गई।

मैं अपने सर को झटका दे विचारों से बाहर निकल कर उस कमरे की खिड़की से अंदर झांकने लगा जिससे प्रकाश बाहर आ रहा था। कामनी वहीं सामने बैठी थी। वह इत्मीनान से कुर्सी पर बैठ कर एक उपन्यास पढ़ने में मग्न थी। वह मेरा कोई ठोर ठिकाना किये बगैर ऐसे मस्ती में बैठ कर पढ़ रही थी जैसे मुझे दो मिनट में ही भूल गई हो। अब मुझे उस पर गुस्सा आने लगा था।

'वैसे तुम अपने आप को समझती क्या हो, तुमसे थोड़ी जान पहचान हो गई तो क्या तुम समझती हो मैं बिना किराया चुकाए यहां से चला जाऊंगा, या मेरी मजबूरी का फायदा उठा मनमर्जी का किराया लेना चाहती हो, तो बोल कितना लेना है? जो बनता है उससे भी ज्यादा देकर जाऊंगा। अगर हर रोज के दो सौ लेते हो तो मैं पांच सौ दूंगा पर इतनी तमीज तो तुझे होनी चाहिये की घर आए सैलानी का कोई ठोर ठिकाना कर आराम से सारी रात नॉवल पढ़ती। अभी तो बहुत प्यार जता रही थी। बड़ी चिपक कर मेरे पीछे बैठी थी।' मैं एक झटके से कमरे में आ कामनी पर बरस पड़ा तो वह खड़ी हो कर मुंह खोले आश्चर्य से मेरी तरफ इस प्रकार देखने लगी जैसे मैं कोई पागल हूं।

'कामनी... वह तो साहेब तीन महीने पहले खड्ड में गिरकर मर गई थी। हमारी बकरी का एक मैमना पीछे रह गया था। बस उसी को खोजने चली गई। उसकी तो लाश भी हमें नहीं मिली। क्रियाक्रम कर देते तो उसकी आत्मा को शांति मिल जाती। उस रात तीन लड़के आकर हमारे लॉज में ठहरे थे, उन्होंने ही उसे खाई में गिरते देखा था। मैं उसकी झुड़वां बहन पार्वती हूं। आप कौन हैं...कहां से आए हैं...कामनी को कैसे जानते हैं...वो आप को कहां मिल गई?, कामनी की बहन पार्वती ने सवालों की झड़ी लगा दी।

'वाकई यह कामनी नहीं है। कपड़े भी दूसरे रंग के पहने हैं। इतनी जल्दी ये कपड़े चींज नहीं कर सकती थी और मुझे पहचानने से इन्कार ही क्यों करती। तो क्या वह कामनी की प्रेत आत्मा थी।' ये सोच कर डर के मारे अब मुझे पसीना आ रहा था। 'क्या खौफनाक मंजर था। अगर में वासना के वशीभूत हो खाई में उसके साथ चल देता तो अब तक जिंदा नहीं बचता।' पार्वती के सवालों का क्या जवाब देता, मेरा अब सिर चकरा रहा था।

'बैठो साहेब, आप से अधिक किराया मैं क्यों लूंगी। जो सब मुसाफिर देते हैं वो ही लगेगा। ये तो हमारा सौभाग्य है कि आप बैड किराये पर लेने आ गए। यहां पिछले तीन महीने से एक भी सैलानी ठहरने नहीं आया इसलिये मैंने हॉल को ताला लगा दिया है। पहले यहां आप जैसे बहुत से लड़के आते थे। गर्मियों में बहुत कमाई होती थी पर जब से ये अफवाह फैली की इधर आने वाले सैलानी कभी लौट कर वापिस नहीं जाते तो लोग आने बंद हो गए।'

'जो तीन लड़के कामनी के मरने की खबर लेकर आए थे वो बुलेट मोटर साईकल पर थे क्या?' मैंने पार्वती से पूछा।

'हां, वह आश्चर्य से बोली। क्या आप उन्हें जानते हैं। एक महीना पहले कुछ पुलिस वाले उनके बारे में पूछताछ करने यहां आए थे। वो कह रहे थे की जो लड़के हमारे लॉज में ठहरने के लिये आए थे वो लौट कर वापिस घर नहीं गए।'

'कुत्ते की मौत मारा होगा कामनी ने उन्हें, वो हरामजादे इसी काबिल थे। तेरी बहन खड्ड में नहीं गिरी, बल्कि उन्होंने उसे गिरने पर मजबूर किया।' जब मैंने कामनी के साथ हुई अपनी सारी बातचीत उसे बताई तो पार्वती सुन कर रोने लगी।

'मेरे तो कभी सपने में भी नहीं आई कर्मजली। आप से मिलकर पूरी दिल की भड़ास निकाल कर चली गई। आप जरूर कोई नेक इनसान हो जो मेरी बहन तुम्हें मरकर भी पसंद कर बैठी।'

'नेक कहां, मैं भी शराबी, कबाबी बंदा हूं। मेरा तो लगा दिया था उसने नम्बर पर अभी शायद मेरी किस्मत का सितारा बुलंद था, अभी काल देवता नहीं आए।' मैं मन ही मन अपने से ही बोला और पार्वती की बात पर प्रत्यक्ष में हंस भर दिया।

'साहेब आप के लिए चाय बना दूं। आप साथ वाले कमरे में ही सो जाना, हॉल की तो हमने महीनों से सफाई नहीं की है।'

'ठीक है सो जाऊंगा पार्वती, मेरा नाम श्याम है, एक कप चाय पिला ही दो तो बड़ी मेहरबानी होगी।' शराब का नशा तो पहले ही कामनी ने उतार दिया था। अब वाकई मेरी चाय पीने की इच्छा हो रही थी। पार्वती ने बराबर का कमरा खोल कर लाईट जला दी।

मैं भी सोने के लिये उसके पीछे चला आया। वहां बैड पर लेडिज कपड़े बिखरे पड़े थे। पीछे एक बड़ी फोटो टंगी थी जिसमें कामनी और पार्वती पहाड़ी पोशाक पहने मुस्करा रही थी।

'इस बैड पर लेट जाना, मैं अभी आप के लिए चाय बना कर लाती हूं।' पार्वती बैड से कपड़े उठाती हुई बोली।

कुछ देर बाद पार्वती चाय देकर चली गई। मैंने उठकर अंदर से दरवाजा और खिड़कियां अच्छी प्रकार बंद कर ली। मुझे डर था

की कहीं कामनी फिर न आ जाए। मैं वहां बिस्तरे में लेट गया और कुछ ही देर में मैं सपनों के आगोश में चला गया। मुझे दिखाई दे रहा था जैसे मैं पहाड़ों के बीच में आवारा गर्दी करता फिर रहा हूं। कभी दौड़-दौड़ कर पहाड़ पर चढ़ने लगता, कभी नीचे खाई की तरफ बेतहाशा भागने लगता। अब वहां पर धीरे-धीर आकाश से अंधेरा छंट रहा था, सुबह हो रही थी। फिर सुबह जब पहाड़ी कौवों की कांव-कांव मेरे कानों मे पड़ी तो आंख खुल गई। दरवाजा खोल कर बाहर देखा तो पार्वती चाय लेकर लेकर खड़ी थी।

'रात आपको कोई परेशानी तो नहीं हुई।' वह अंदर पड़ी मेज पर चाय रख शालीनता से बोली।

'परेशानी क्या होनी थी। बस रात भर अच्छी प्रकार से नींद नहीं आई। हर समय ये डर लगा रहा की कहीं आप की बहन न आ जाए।' मैं चाय उठा, बैड पर बैठ हंस कर बोला।

'वो तो मामूली काकरोच से भी डरने वाली लड़की थी। आप को तो उसने कोई नुकसान नहीं पहुंचाया फिर उससे क्यों डर रहे हो?'

'पहुंचाया तो नहीं, पर है तो भटकती हुई आत्मा। वो मुझे एक बड़े पत्थर के पास से गुफा में ले जाना चाहती थी। अगर आप उचित समझें तो हम चलकर देखें की वहां आखिर है क्या?' मैं चाय पीते हुए बोला।



'जरूर जाऊंगी। हो सकता है हमें वहां कामनी की लाश मिल जाए। उसका विद्यी-विधान से अंतिम सस्कार नहीं हुआ, तभी तो वह भटक रही है। आप स्नान कर लो तब तक मैं आप के लिये नास्ता बना देती हूं।' यह कह पार्वती कप उठा मेरे कमरे चली गई। शक्ल बेशक इन दोनों बहनों की मिलती थी पर व्यवहार में जमीन-आसमान का अंतर था। कामनी जहां बहुत चंचल थी तो यह संजीदा रहती थी।

मैं नहाने के लिये बाथरूम में घुस गया। यह बहुत ही तंग जगह थी। पीछे की तरफ छोटा सा झरोखा बना हुआ था जो नीचे गहरी खाई की तरफ खुलता था। खाई से आगे दो पहाड़ों के बीच सूरज का गोला बहुत बड़ा दिखाई दे रहा था। ऐसा लगता था जैसे कोई बहुत विशाल लाल-लाल टमाटर किसी दो पहाड़ों के मध्य फंसा दिया हो। उन दो पहाड़ों के आगे भी एक नोकदार टिल्ला सा बना था जिसका ऊपरी नोकदार छोर सूरज के निचली तरफ लगा हुआ था। मेरी तरफ होने के कारण उस पर बड़े-बड़े पेड़ उगे दिखाई दे रहे थे। यह टिल्ला सूरज रूपी टमाटर की हरी डण्डी बनी हुई थी।

'वाह क्या खूबसूरत कलाकृति बनी हुई है।' सोचते हुए मैं बहुत दिलचस्पी से नहाते हुए उसे देख रहा था। नहाने के बाद मैंने थोड़ा सा नास्ता किया और पार्वती को मोटर साईकिल पर बिठा वहीं ले आया जहां रात कामनी मिली थी। वहां एक काले रंग का मुझ से भी बड़ा पत्थर खाई की तरफ रास्ते की साईड में गड़ा था।

'ये था वो पत्थर जिसके पास से कामनी मुझे गुफा में ले जाना चाहती थी। इसका मतलब नीचे कोई गुफा है।' मैंने पार्वती से कहते हुए नीचे खाई में झांका पर वह इतनी गहरी थी कि नीचे अंधकार और बादलों के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। बादल तो यहां ऐसे चक्कर काटते रहते थे जैसे आकाश से उतर कर पहाड़ों की आगोश में पनाह ले ली हो।

'इसे तो हम मौत का खड्ड कहते हैं। चलो कुछ नीचे चल कर देखें। पार्वती कहती हुई पत्थर की दाई और से खाई में उतरने लगी। वहां कोई पगडण्डी नहीं थी। हम चट्टानों में उगे झाड़-झखार, नुकीले पत्थरों को पकड़ कर नीचे उतर रहे थे। लगभग तीस-चालिस फुट नीचे जाने पर मुझे ऐसी बदबू आने लगी जैसे कहीं कोई पशु मरा पड़ा हो।

'बड़ी बदबू है यहां तो।' पार्वती अपने दुपट्टे को मुंह पर लपेटते हुए बोली। मैं खाईयों में उतरने का अभ्यस्त नहीं था इसलिए बड़ी मुश्किल से उसके पीछे पीछे चल रहा था। हम कुछ और नीचे गए तो पार्वती वहां दाई तरफ एक चट्टान के पीछे देखकर चींख पड़ी।

'क्या है उधर?' मैंने चट्टान के पीछे देखा तो मेरे होश उड़ गए। वह एक गुफानुमा बहुत बड़ी चट्टान थी जो किसी परछती की तरह उभरी हुई थी। उसके नीचे फर्शनुमा एक बड़े समतल पत्थर पर लगभग एक दर्जन युवाओं के क्षत-विक्षत शव पड़े थे। चार-पांच मोटर साईकिलों के अंजर-पंजर भी वहां इधर-उधर बिखरे हुए थे। उनमें दो बुलेट भी थी। मैंने ऊपर देखा तो ऐसा मालूम पड़ा जैसे सड़क पर स्थित बड़े पत्थर के बाई ओर से ये नीचे आ गिरे। उस तरफ सीदी खड़ी चट्टान थी।

'वो पड़ी है मेरी दीदी की लाश।' पार्वती कामनी की लाश देख जोर-जोर से रोने लगी। कामनी की लाश पीठ के बल हमारी साईड में ही हमसे नीचे पड़ी थी। उसकी कमर पर गहरे घाव थे जिसमें उसकी हड्डियों का पिंजर सपष्ट दिख रहा था। ऐसा लगता लगता था जैसे वह इस रास्ते से ही नीचे भागी होगी जिस से हम नीचे उतरे थे। रात होने के कारण और उन लड़कों से डर की वजह

से शायद संतुलन नहीं बना सकी और पीठ के बल नीचे फिसलती हुई चली गई। ठण्डा इलाका होने के कारण कामनी का शव तीन महीने बाद भी अच्छी हालत में था।

'हिम्मत से काम लो पार्वती। रोने से अब कुछ नहीं होगा। यह बहुत गंभीर मामला है। अपने आस-पड़ोस को खबर कर इस हादसे की जानकारी शहर में पुलिस को दे दो।' मैं उसे सात्वना दे रहा था मगर मेरे भी कामनी की लाश देख कर आंसू निकल आए थे।

'यहां हमारा अकेला घर है, आस पड़ोस में कोई भी तो नहीं है। मेरे सब अपने मुझे छोड़ कर भगवान के पास चले गए।' वह चुप होने की बजाय और जोर से रोने लगी।

मेरी समझ नहीं आ रहा था की क्या करूं। पार्वती को कैसे चुप कराऊं। ऐसी स्थिति मेरी जिंदगी में पहली बार आई थी। बेशक उसके साथ मेरा कोई रिस्ता नहीं था पर किसी को विपत्ति के समय अकेले छोड़ कर जाना मेरे उसूलों के बिलकुल खिलाफ था। जिनके साथ मैं थोड़ा सा भी समय गुजारता हूं, बस उन्हीं का हो जाता हूं, वे मुझे अपने दिखाई देने लगते हैं।

'पुलिस को तो खबर करनी ही होगी। मैं तेरे साथ चलता हूं, आ उपर चलते हैं।' ये कहते हुए मैं पार्वती का हाथ पकड़ उपर सड़क पर ले जाने लगा तो वह हाथ छुड़ा चुप होते हुए बोली- 'आप यहां ऊपर चढ़ते समय फिसल कर गिर जाएंगे पहले आप चलो मैं आपके पीछे चलती हूं। वह चुप हो कर ऊपर चढ़ने लगी तो मैंने राहत की सांस ली।

वह ठीक कह रही थी। पहाड़ों पर नीचे उतरना आसान है मगर उपर चढ़ने में भारी परेशानी होती है। ऊपर सड़क तक चढ़ते समय दो बार पार्वती ने मुझे नीचे गिरने से बचाया। वह पहाड़ों में चढ़ने उतरने में पूरी अभ्यस्त थी जबकि मैं अनाड़ी था। सड़क तक आते आते मेरी सांसे धोंकनी की तरह चलने लगी थी। ऊपर सड़क पर आकर मैंने पार्वती को बाईक पर बैठाया और शहर जाकर थाने में एस.एच.ओ. को पूरे हादसे की सूचना दे दी। मैने उन्हें बताया कि मैं यहां टूर पर आया हूं और पार्वती के घर पर पेईंग गैस्ट के रूप में ठहरा हुआ हूं। आज सुबह जब मैं सड़क पर सैर कर रहा था तो मोड़ पर पैशाब करने खाई में थोड़ा नीचे उतर गया। वहां खाई के अंदर से बदबू आ रही थी। मैंने नीचे जाकर देखा तो वहां लाशें पड़ी थी। मैंने पार्वती को सारी स्थिती से अवगत कराया तो मेरे साथ इसने भी खड्ड में उतर कर देखा। वहां इसकी बहन कामनी की भी लाश पड़ी है। वह तीन महीने पहले लापता हो गई थी।

कामनी से मिलने की पूरी बात को मैंने पुलिस से छुपा कर रखा। और उन्हें बताता भी क्या। आज के जमाने में पुलिस कौन सा मेरी उससे मुलाकात की बात कबूल कर लेती। वो उलटे मुझे ही शक की नजरों से देखते और सोचते की जरूर इस हादसे में इसका कोई हाथ होगा।

थानेदार मेरी बात सुन सकते में आ गया। वह बोला- 'यहां इस इलाके में दर्जनों युवक अपनी बाईकों सहित लापता हो चुके हैं। पता नहीं उन्हे जमीन खा गई या आसमान निगल गया। चलो चलकर देखते हैं। हो सकता है वो उन्हीं लापता युवकों की लाशें हों। कर्मवीर फोरन जिप्सी निकालो।' एस.एच.ओ. ने वहां खड़े ए.एस.आई से बोलते हुए मेज पर रखी अपनी कैप उठाई और खड़ा हो गया।

पुलिस वाले जिप्सी में बैठकर फोरन हमारे साथ चलने लगे। मैं पार्वती को बाईक पर बैठा उनसे आगे चलता हुआ उन्हे घटना स्थल पर ले आया। पार्वती को मैंने सड़क पर ही खड़ा रहने को कहा और खुद एस.एच.ओ. और दो सिपाहियों को नीचे खाई में उतर कर लाशे दिखाई।

'ओह। ये तो वो ही लापता युवक हैं। जरूर ये उस पत्थर से सीदे नीचे आ गिरे हैं कर्मवीर।' थानेदार ए.एस.आई से बोला।

'जी जनाब, मुझे तो लगता है अचानक मोड़ पर बड़ा पत्थर होने के चलते ये लड़के दिशाभ्रम हो नीचे गिर गए। इन्हे इस खाई से निकालने के लिए क्रेन मंगवानी पड़ेगी।'

'हां, वो तो मंगानी ही पड़ेगी। मोटर साईकिलें भी निकलवानी हैं। चलो उपर चलकर प्रबंध करते हैं।' थानेदार बोला।

हम लोग ऊपर सड़क पर आ गए। थानेदार ने मुझसे थाने में ही पूछताछ कर ली थी। उसके बाद जैसे इस मामले में मेरा रोल ही खत्म हो गया था मगर मैं पार्वती को इस पूरे झमेले से निकाल कर जाना चाहता था। आखिर उसकी बहन की लाश भी नीचे थी। वह पूरा दिन मेरे लिए टैशन भरा रहा। पुलिस द्वारा क्रेन मंगाई गई, फिर हर एक लाश को उपर निकाला गया। वहां से सभी लाशें पोस्टमार्टम के लिये शहर के सरकारी हस्पताल भेज दी गई।

शाम को मैं पार्वती को लेकर उसके घर आ गया। सुबह के नास्ते के बाद पूरे दिन कुछ नहीं खाया था इसलिए बड़ी भूख लगी थी। पार्वती को कहने में संकोच हो रहा था। वह सारा दिन आंसू बहाती रही थी। उसने भी कुछ नहीं खाया था।

'शहर में ढाबे वाली महिला के ढाबे पर खाना खाकर आते हुए दो-चार रोटी पार्वती के लिए भी ले आऊंगा।' यह सोचते हुए मैंने दोबारा शहर जाने का मन बना लिया।

'मैं थोड़ा शहर तक हो कर आता हूं पार्वती।' मैं पार्वती से बोला।

'लगता है शहर में आप पीने जा रहे हो। सुबह से आप ने कुछ नहीं खाया, मैं खाना बना रही हूं, जल्दी आ जाना।' पार्वती बोली।

'मैं क्या तुझे अमली लगता हूं पार्वती? लत नहीं लगाई है, हां कभी कभार थोड़ी बहुत पी लेता हूं। मैं वहां पीने नहीं अपने और

तुम्हारे लिये खाना लाने ही चला था। सुबह से तुमने भी कुछ नहीं खाया। सोचा अब क्या बनाओगी।' मुझे उसकी बात नागवार गुजरी।

पार्वती को अपनी गलती का अहसास हुआ तो वो मेरे नजदीक आ गई बिलकुल कामनी की तरह।

'लगता है आपको मेरी बात बुरी लगी। इधर सारे लड़के मस्ती मारने आते हैं और हर रोज शाम को पी कर हुड़दंग मचाते हैं। आप भी इधर सैर सपाटे पर आए थे न इसलिये बोला था।' पार्वती सफाई देते बोली।

'और मैं आपके घर शराब पी कर हुड़दंग मचाऊंगा, कामनी की लाश पर जश्न मनाऊंगा क्यों?' मासूम कामनी के साथ हुई दरिंदगी के बारे मन में विचार आया तो मेरी आंखों में आंसू आ गए।

'मैंने ऐसा कब कहा श्याम।' पार्वती जोर जोर से रोने लगी तो मुझे अपनी गलती का अहसास हुआ। बिन सोच विचारे पता नहीं क्या-क्या बोलता जा रहा था। बड़ी मुश्किल से पार्वती को चुप करा पाया।

पार्वती ने खाना बनाया तो मैं चार-पांच रोटी खा गया। उसने आलू की सब्जी में पहाड़ों पर उगने वाली लम्बी हरी फलियां डाली हुई थी जो मुझे बहुत स्वादिष्ट लगी। वह रोटी नहीं खाना चाहती थी मगर मैंने उसे जबरन दो रोटी खिला ही दी।



रात को मैं फिर कामनी वाले कमरे में आ गया। आज मुझे उस कमरे में डर नहीं लग रहा था। दिन भर थका होने के कारण मेरी आंखें बोझिल होने लगी। मैं अब सोना चाहता था। मुझे लग रहा था कि मैंने बहुत काम कर लिया है, फिर एक बवंडर सा उठता दिखाई दिया जिसमें बादलों के अंदर होने वाली चमक से सारे क्षेत्र की पहाड़ियां बार-बार जगमगाने लगी। रोशनी गहरी खाइयों की जमीन से टकराती तो वहां पानी की छोटी-छोटी नदियां छोटे-बड़े पत्थरों के उपर से बहती हुई दिखाई देने लगती। तभी मुझे वहां पार्वती नदी के पानी में फंसी हुई दिखाई देने लगी। वह चट्टानों को पकड़ कर पानी से बाहर निकलने का असफल प्रयास कर रही थी।

मैं कुछ देर तक बिजली की चमक में उसे ध्यान से देखता रहा फिर नीचे खाई में उतर गया। कुछ देर में ही मैं उस चट्टान पर पहुंच गया जिसे पकड़ कर पार्वती ऊपर आने के लिये प्रयास कर रही थी।

'अपना हाथ मेरे हाथ में दो पार्वती.....मैं तुझे उपर खींच लूंगा।' मैने पत्थर पर लेटते हुए एक हाथ से पत्थर का एक उभरा सीरा पकड़ा और अपना दूसरा हाथ नीचे कर दिया मगर वह मेरे लटके हुए हाथ के पंजे से भी अभी चार-पांच फूट नीचे थी।

'पत्थर को आगोश में लेने की आवश्यकता नहीं है श्याम, सीधे खड़े हो जाओ।' पार्वती मेरी तरफ देख कर मुस्कराई तो मैं हैरानी से उसे देखता हुआ खड़ा हो गया।

'ये लो मेरा हाथ अपने हाथ में, बस इसे कभी छोड़ना मत।' यह कह कर पार्वती ने नदी में से अपना हाथ मेरी तरफ किया तो वह लम्बा हो कर मुझ तक पहुंच गया। उसे देख मैं जैसे जड़ हो कर रह गया। फिर उसका दूसरा हाथ भी ऊपर आया और वे दोनों हाथ मेरी कमर से लिपट गए।

'हा, हा, हा,... तुम बार-बार धोखा खा जाते हो श्याम, मैं पार्वती नहीं कामनी हूं। कितना रोमांटिक है ये नदी का किनारा। कितनी ही झुलसाने वाली गर्मी हो रात के तीन बजे के बाद तो नदी के पानी से हवा टकरा कर जब तुम्हारा तन-मन भीगोती है तो तुम्हें मस्त कर ही देती है। ये हरी भरी हसीन वादियां, बाहों में मेरे जैसी अप्सरा का हसीन सपना, यानि सपनों में सपना।' वह ठहाके लगा कर हंसती हुई क्षण भर में ही चट्टान पर मेरे पास आकर खड़ी हो गई।

'कामनी ये तुम हो, अच्छा तो हाथ लम्बे कर मुझे डरा रही थी।' मैंने उसके बाजुओं के नीचे से कमर पर हाथ ले जाकर देखा तो उसकी पसलियों से मेरी उंगलियां जा टकराई। वह वाकई कामनी थी।,

'हां ये मैं हूं श्याम, तुम्हारी महबूबा। ये चट्टाने, ये पत्थर घायल कर देते हैं मुझे। आओ यहां से नीचे मैदानों में चलते हैं।' कामनी मुझे खींचकर नीचे पानी की तरफ ले जाने लगी तो मैंने कस कर चट्टान को पकड़ लिया।

'नहीं..नहीं, मैं कहीं नहीं जाऊंगा, पार्वती घर पर अकेली होगी... छोड़ दो मुझे।' मैंने उसे दूर धकेलना चाहा मगर वह किसी लता की तरह मुझ से चिपट गई। मुझे ऐसा लगा जैसे कोई लिजलीजी छिपकली मेरे जिस्म पर चिपक गई हो। मैंने एक झटके से उसे पीछे हटाया, ऐसा लगा जैसे मेरी आंखे उन्नींदी हो रही हों। एक हल्का झटका सा लगा तो वहां दूर कहीं पहाड़ी गांव के शिव मंदिर से भजनों की आवाजें सुनाई देने लगी।

'अब मैं यहां एक रात भी नहीं ठहरूंगा। मैदानों से तो ठण्डी हवाओं के मजे लेने आया था, कुछ मस्ती मारने आया था पर लगता है मैं यहां भूत-प्रेतों की दुनिया में आ गया। अब तो मुझे

पार्वती पे भी शक होने लगा था कि कहीं वो भी भटकती हुई कोई रूह न हो।'

सुबह चाय के साथ दो परांठे खाते ही मैने पार्वती से विदा मांगी तो वह आंसू बहाते हुए बोली- 'आज पुलिस वाले पोस्टमार्टम कर कामनी की लाश दे कर जाएंगे। उसका आज अंतिम संस्कार करना है, मैं यहां अकेली हूं। आप बस एक दिन और रूक जाओ।' पार्वती का स्वभाव बिलकुल बच्चों की तरह था। वह कभी भी रो पड़ती थी। न जाने क्यों मुझे ऐसा अहसास हो रहा था जैसे वो मुझे दिल ही दिल चाहने लगी है, या हो सकता है शायद अपना हमदर्द समझ रही हो। उसके दिल में कुछ भी हो मैं केवल उसकी इन्सानियत के नाते मदद कर रहा था।

'ठीक है, अंतिम संस्कार करवाने के बाद मैं आज शाम को ही निकल जाऊंगा। बस फिर मुझे मत रोकना।' पार्वती के आंसू मुझ से देखे नहीं जाते थे पर मैं परदेशी आदमी इस बेचारी की क्या मदद कर सकता था। शाम तक रुकने का मैंने और इरादा कर लिया।

पार्वती मेरे साथ मोटर साईकिल पर बैठ शहर और आसपास के छोटे-छोटे गांवों में अपने जान पहचान वालों को कामनी के अंतिम संस्कार में शामिल होने के लिए खबर दे आई। दोपहर बाद पुलिस शव वाहन में कामनी की लाश लेकर आ गई और जरूरी कागजी कार्यवाही कर वापिस चली गई।



मुझे ऐसा अहसास हुआ की यहां के लोगों का जीवन हमारे हिसाब से बहुत कठिन है। पता नहीं क्यों इन्होंने श्मशान घाट भी पहाड़ की ऊपरी चोटी पर बना रखा था। ऊपर चढ़ते-चढ़ते मेरी सांसे फूल गई मगर वहां आए पहाड़ी लोग कामनी की लाश अर्थी पर उठाकर ऐसे पहाड़ के उपर चलते रहे जैसे हम मैदानों में चलते हैं। श्मशान में खड़े एक बरगद के पेड़ को देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा था। यहां पूरे इलाके में मैंने बरगद का एक भी पेड़ नहीं देखा था। शहर, गांवों से आए लोगों ने यहां के रीती रिवाजों के हिसाब से कामनी की लाश को श्मशान ले जाकर दाह संस्कार कर दिया।

कामनी के दाह संस्कार करने में शाम के पांच बज गए। वापिस घर आए तो पार्वती ने सभी के लिए चाय बना दी। मैंने उसके साथ मिलकर वहां आए मेहमानों को चाय परोस दी। जब सभी चले गए तो मैं भी नहाने के लिए जल्दी से ये सोचता हुआ बाथरूम में घुस गया कि अब यहां से निकलने में ही मेरी भलाई है नहीं तो कामनी मुझे कल की तरह जरूर अपने साथ ले जाने का प्रयास करेगी। कल तो किसी तरह बच गया था मगर जरूरी नहीं आज भी बच जाऊं। मुझे असमय नहीं मरना। अब मैं जल्दी से इस सारे झमेले से निकल जाना चाहता था। तेजी से नहा कर जब पार्वती के कमरे में आया तो वह हाथ में चाय का कप लिए मिली- 'सभी को चाय पिला दी आप ने तो पी ही नहीं।'

'इच्छा तो नहीं है, पर लाई हो तो पी ही लेता हूं। मेरे किराये, खान-पान का जल्दी से टोटल जोड़ दो पार्वती। मैं यहां अब एक पल भी नहीं रुकना चाहता। अब मैं नीचे मैदानों में जाकर ही चैन की सांस लूंगा।'

'सूर्यास्त हो गया है, रास्ता बड़ा दुर्गम, खतरनाक है। उपर से आप इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति से भी वाकिफ नहीं हो, बस आज रात और रुक जाओ, सुबह उठते ही चले जाना।' पार्वती इतने अधिकार पूर्ण स्वर में मुझ से बोली की मैं उसके चेहरे की तरफ देखता ही रह गया।

'नहीं, नहीं, अब मैं एक पल भी यहां नहीं ठहरूंगा। सच तो ये है की मुझे यहां डर लगता है। मैं जिस रास्ते से आया था उसे अच्छी प्रकार जान गया हूं। फिर मोटर साईकिल मेरे पास है, मुझे यह मंजिल तक पहुंचा ही देती है।' मैं पार्वती से कुछ सख्त लहजे में बोला।

'ठीक है, आप चाय तो पी लो, तब तक मैं भी नहा लेती हूं। अब मैं आपको रूकने के लिए नहीं कहूंगी।' मैने उसे ध्यान से देखा, उसकी आंखों में कहीं घोर निराशा के भाव थे। आखिर क्या चाहती है ये लड़की मुझसे?' मै सोचने लगा। मुझे चाय पकड़ा कर पार्वती बाथरूम में चली गई। मैं उसके कमरे में बैठकर चाय पीने लगा।

अंधेरा हो गया था। 'पता नहीं कितनी देर तक नहाएगी।' मैं अब और इंतजार नहीं कर सकता था। अधिक से अधिक पन्द्रह-सोलह सौ रूपये ही बने होंगे।, सोचते हुए मैंने जल्दी से चाय पीकर हजार के दो नोट मेज पर कप के नीचे रख दिये फिर अपना पिट्ठू बैग उठाकर कमर पे लगाया और मोटर साईकिल को किक मार लाइट जला कर वहां से चल दिया।

पार्वती के घर से निकला तो अंधेरा गहराने लगा था। 'तेजी से चला तो अधिक से अधिक दो-तीन घण्टे में मैदानों में पहुंच जाऊंगा। उसके बाद तो कोई चिंता ही नहीं है्।' सोचता हुआ मैं मोटर साईकिल तेजी से चलाने लगा। वहां पार्वती के घर से पहाड़ी शहर तक के पगडण्डी नुमा कच्चे रास्ते पर भी मैं सत्तर की स्पीड पर मोटर साईकिल दौड़ाने लगा।

मोड़ पर जब मैं बड़े काले पत्थर के पास आया तो कामनी की याद आ गई। सिर को हल्का झटका दे दिमाग में उठने वाले

विचारों से छुटकारा पाते हुए जैसे ही मैंने मोड़ काटा तो आगे देख कर मेरे होश उड़ गए। वहां कामनी रास्ते के बीच में आज फिर मैमना लिए खड़ी थी।

मैंने जोर से ब्रेक लगाए मगर व्यर्थ, बाइक कामनी के शरीर के बीच से निकल गई। 'चोट तो नहीं लगी कामनी।' मैं बाइक छोड़ कामनी के शरीर को पागलों की तरह टटोलने लगा मगर आज वहां शरीर था ही नहीं। एक जिंदा परछाई थी जिसमें मेरे हाथ आर-पार हो रहे थे। हड़बड़ी में मैं ये भूल ही गया था की कामनी जिंदा नहीं है। वह एक प्रेत-आत्मा है जो मुझे भी अपने साथ ले जाना चाहती है।

'हा हा हा देख मैं बिलकुल ठीक हो गई श्याम।' कामनी ने जोर से हंसते हुए कुर्ती उतार कर अपनी पीठ मेरी तरफ कर दी। वाकई वहां कोई घाव तो क्या घाव का निशान भी नहीं था। चांदनी रात में उसकी पीठ संगमरमर की तरह सुंदर चिकनी दिखाई दे रही थी मगर आज मेरा ध्यान उसकी सुंदरता पर नहीं था।

'बहुत अच्छा हुआ कामनी तुम ठीक हो गई।' मेरे मुंह से अनयास ही निकल गया मगर अब अचानक मुझे इस सच्चाई का भी अहसास होने लगा था कि मैं कहां खड़ा हूं और किसके साथ बात कर रहा हूं। कामनी की वास्तविकता के बारे में सोच कर वहां सर्दी में भी मेरे पसीने छुटने लगे।

'मुझसे डर मत श्याम। मैं तो बस दीदी को ये मैमना देने के लिए रूकी हूं। मेरे जाने के बाद ये बेचारा अकेला हो जायेगा। बस वो आती ही होगी। अब यहां वो ही रहा करेगी।' कामनी मुस्करा रही थी मगर मैं अब उसकी आंखों में बैचेनी के लक्षण सपष्ट देख रहा था। अब उसकी हंसी मुझे बिल्कुल खोखली लग रही थी। ऐसे जैसे जबरन अपने होठों को हंसने को मजबूर कर रही हो। उसकी चंचलता, मासूमियत, भोलापन जैसे कहीं गायब हो गया था।

'दीदी...मैमना, मैं समझा नहीं कामनी।' मैंने उलझन भरी नजरों से उसकी तरफ देखा।

'अब समझ जाओगे, लो वो आ गई दीदी।' मैने उधर देखा जिधर कामनी देख रही थी।

'ओह! ये तो पार्वती है।' मेरे मुहं से निकला और मैं दंग हो उधर देखता ही रह गया। पार्वती हाथों में लाल चूड़ा, मांग में सिंदूर, माथे पर टिका और गले में मंगल सूत्र पहने थी। मुझे बहुत हैरानी हो रही थी की आज ही तो कामनी की लाश का क्रियाक्रम करके हम आए हैं और आज ही पार्वती दुल्हन बनी चली आ रही थी। आखिर चक्कर क्या है ये?

'तेरी दीदी की शादी हो गई क्या?' मैने कामनी की तरफ देखा।

'अभी तक तो नहीं हुई। शादी का क्या है, अभी हो जाएगी।' कामनी फीकी मुस्कान के साथ बोली। मोड़ पर पहाड़ की तरफ होने के कारण पार्वती मुझे नहीं देख पा रही थी जबकि चांदनी रात में सामने से आती हुई मुझे वह सपष्ट दिखाई दे रही थी।

'शायद शहर जा रही है, हो सकता है वहां इसने कोई पसंद कर रखा हो, अकेली होने की वजह से उससे जल्दी शादी करवाना चाहती हो। मुझे इसके घर से ऐसे नहीं आना चाहिये था। मैं पार्वती को बिना बतलाए ही चला आया था। पर कोई बात नहीं चलो अब बाइक पर बैठा लेता हूं, जहां ये जाना चाहती है इसे वहां छोड़ दूंगा।' अभी मैं सोच ही रहा था कि पार्वती यंत्रवत सी चलती हुई उस बड़े काले पत्थर के उपर चढ़ गई जिसके नीचे खाई में कामनी की लाश मिली थी। उसने खाई की तरफ मुहं किया ही था कि एक क्षण में ही मेरी छटी इंद्री जागृत हो गई।

'नहीं पार्वती, ऐसा मत करना।' अचानक मेरे गले से एक चींख निकली और मैं किसी बंदूक से निकली गोली की तरह पत्थर की तरफ भागा। इससे पहले की पार्वती खाई में छलांग लगाती मैने उसे अपनी बाहों में थाम लिया।

'आप... गए नहीं अभी।' मुझे देख उसके होठ थरथराए।

'ये क्या करने चली थी पगली। मुझे कह कर तो देखती, मैं तेरी हर समस्या का समाधान करने की कोशिश करता।' मैंने उसे गोद में उठा कर पत्थर से नीचे छलांग लगा दी।

'सारा परिवार तो चला गया श्याम, फिर मैं ही अकेली जी कर यहां क्या करूंगी। मुझ अकेली को भी तो अपने सूने घर में डर लगता है। आप तो अपने घर चल दिए, मैं कहां जाऊं? घर का हर कमरा, हर कोना मुझे निगलना चाहता है, फिर बार-बार मरने से तो अच्छा है एक ही बार मर जाऊं।' बोलते-बोलते पार्वती की आंखों से आंसुओं की अविरल धारा बहने लगी।

'दुल्हन बन कर मरने चली है। कोई जीवन साथी देख कर शादी क्यों नहीं कर लेती। अकेले पन का भी इलाज हो जाएगा।'

'शादी तो मां बाप करते हैं, मैं किससे करूं?' रोते हुए पार्वती बड़ी मुश्किल से ये बात कह पाई।

'ओह, तो ये बात है, अच्छा तुझे मैं कैसा लगता हूं?, मैं पार्वती के चेहरे को हाथ मे ले उसकी आंखों में झांकते हुए बोला। उसको बचाने का एक ही हल मेरे पास था। और वो था शादी। मैं लाल जोड़े में ही पार्वती को अपनी मां के पास ले जाकर कहूं कि आ गई आप की बहू। मैं इससे शादी कर आया हूं। बस थोड़ी सी ढांट-ढपट जरूर होगी मगर फिर वह मान जाएगी।

'जी।' पार्वती मुंह से केवल इतना ही बोल पाई। उसकी आंखों में मेरे लिए चाहत का, प्यार का एक समन्दर हिलोरे ले रहा था। इसका अहसास मुझे उसके घर पर भी एक-दो बार हुआ था मगर मैने ध्यान ही नहीं दिया। उसने मेरे कंधे पर सर रख अपनी आंखे बंद कर ली तो मैं उसके बिना कुछ कहे ही सब कुछ समझ गया। उसके जिस्म से मदहोश कर देने वाली वैसी ही सुगंध आ रही थी जैसी उस रात को कामनी के वजूद से आई थी।

'कामनी।' मैंने मोड़ पे देखा तो कामनी वहां कहीं दिखाई नहीं दी। मैने पार्वती को बाईक पर बैठाया और वापिस उसके घर आ गया।

'पार्वती हमारा काम गांव में खेती-बाड़ी का है जिसमें हम धूल-मिट्टी में सने रहते हैं। एक बार फिर अच्छी प्रकार सोच लो क्या मैदानों में रह पाओगी।' मैं वापिस आ पार्वती के बैड पर बैठते हुए बोला। मैं पार्वती को अपने बारे में सब कुछ बता देना चाहता था।

'आप जिस हाल में रखेंगे मैं रह लूंगी। बस मुझे अब यहां से कहीं दूर ले चलो।' कहकर उसने बैड पर बैठते हुए मेरे सीने पर सर टिका लिया।

'वैसे हमने तीन-चार गाय, भैंसे पाली हुई हैं। तुम दुबली-पतली नहीं रहोगी, दूध, घी खा पीकर मोटी हो जाओगी।' मैंने उसके बालों में हाथ फिराते हुए कहा तो वह हंस पड़ी।

'और यहां की भी चिंता मत करना, हर वर्ष गर्मियों में कम से कम दो महीने के लिये यहां आ जाया करेंगे। गर्मी से भी निजात मिल जाया करेगी, मेरा भी कुछ सैर सपाटा भी हो जाया करेगा और तुम अपने रिश्तेदारों को भी मिल लिया करना।'

'जैसा आप उचित समझो। मैं खाना बना देती हूं।' कहकर पावर्ती खड़ी होने लगी तो मै वापिस उसको खींच कर बाहुपाश में भरकर बोला- 'मुझे भूख नहीं है। तुम अपने लिए बना लो पार्वती।'

'मुझे भी कुछ नहीं खाना। कल हम शहर जाकर कोर्ट में जा शादी कर लेंगे।' वह खुश होते हुए बोली।

कुछ देर तो साधारण सी घर-बार बसाने की बातें हुई फिर रोमांटिक बातों का दौर चलने लगा। अब तो पार्वती मेरी ही थी, मैं आज इस से भी आगे बड़कर प्यार का दौर चलाना चाहता था। मेरे हाथ जब उसके संगमरमर जैसे सुंदर जिस्म पर आवारगी करने लगे तो वह कुछ बेचैन सी होने लगी। मेरे हाथ दूर हटाने लगी।

'तुम मेरी हो प्रिय आओ हम सदा के लिये एक हो जायें।' मैं बलात उसके गुलाब की पंखुड़ियों जैसे अधरों का रस पीते बोला।

'शर्म करले कुछ पार्वती के बच्चे। रात को तो लेटते ही सो गया अब मंदिर में भजनों की आवाज आने लगी है तो आशिकी सूझ रही है।' पार्वती मुझे दूर धकेलते हुए उठकर बाथरूम में घुस गई। कुछ देर बाद वापिस आ कर वह मेरी बगल में लेट गई। मुझे लगा यह यों ही इनकार कर रही है, अगर इसे इनकार ही करना होता तो जाकर कामनी के कमरे में सो जाती। यूं आकर फिर से मेरे पास न लेटती।

'तुम मेरी हो प्रिय, हम जन्मों जन्मों तक साथ रहेंगे। मुझ से यूं दूर मत जाओ।' उत्तेजना वश मैं लड़खड़ाती जुबान से बोला और पार्वती को वस्त्रवहीन करने लगा।

अब की बार उसने बिलकुल विरोध नहीं किया और मुझ से लिपट गई। थोड़ी देर में ही प्यार का एक लम्बा दौर चला, अधरों से अधर मिले, जिस्म से जिस्म और कमरे में एक तूफान खड़ा हो गया।

मैं पार्वती के सुंदर जिस्म को अपनी बांहों में मचलते देख रहा था। वह एक आग का तूफान था जिसकी बागडोर मेरे हाथ में कुछ देर तक रही मगर फिर पार्वती ने कमान संभाल ली, उसमें गजब की चुस्ती-फुर्ती थी। मैं हैरान था कि वह मुझ से ऐसा व्यवहार कर रही थी जैसे वर्षों से मेरी हमदम बनी हुई हो। प्यार के चरम क्षणों में जब पार्वती का सिर मेरे कान के पास से गुजरा तो उसके बालों में लगी पिन मेरे कान में जोर से चुभ गई।

'ओह! यार पार्वती लगता है तूने मेरे कान से खून निकाल दिया। कितनी बार कहा की बालों से पिन निकाल लिया कर।'

'हे भगवान! क्या हो गया है इस बंदे को? बस केवल पार्वती-पार्वती रट रहे हो, भगवान शंकर जी तो तुझे याद नहीं आते। राम नाम जपने का ये सही समय है क्या? आज तुझे पार्वती जी की कैसे याद आ रही है। अगर राम का नाम लेना है तो नहा धोकर सुबह धूप बत्ती लगा कर लिया कर। पिन लग गई है तो मैं क्या करूं। मुझे पता था सुबह-सुबह तुम्हारा आशिकी का मूड बन जायेगा। लोग राम का नाम लेते हैं और तू आंखे बंद कर मुझे परेशान करता है।' मेरी पत्नी मुझे ढांटते हुए बोली और अब मैं जड़ सा होकर आवाक उसके मुहं की तरफ देख रहा था।

'ये क्या अनर्थ हो गया। पत्नी मेरे पास से बाथरूम करने उठी थी। मैंने उठकर कपड़े भी उतारे मगर मैं फिर भी सपनों से बाहर नहीं आया। सपने में पार्वती से प्रणय मिलन कर रहा था और यर्थात में पत्नी से। इस हकीकत का तो मुझे अब पता चला जबकि मैं कार्य पूरा कर चुका, यानि जितना मेरा नैतिक पतन होना था हो चुका। हम पुरुष महिलाओं को ही चरित्रहीन होने पर कोसते रहते हैं मगर खुद नहीं देखते की हम क्या हैं? इससे क्या फर्क पड़ता है कि अब मैं पत्नी के साथ हूं। आभासी दुनिया की वास्तविकता में तो मैं एक दूसरी औरत का पति बन गया था। एक ऐसी औरत का जिसका वजूद दुनिया में कहीं नहीं था। बस केवल मेरी कल्पना में ही था। सोचते हुए मैंने पत्नी की तरफ दयनीय नजरों से देखा मगर वह प्रातः काल के शीतल पलों में दोबारा निद्रा रानी की आगोश में चली गई थी।

समाप्त

गांव गगनपुर जिला अम्बाला,
डाकघर बराड़ा, हरियाणा-133201

लघुकथा

चढ़ने की चाह

◆ प्रियंवदा

संस्कृत के अध्यापक शर्मा जी ने स्टाफ रूम में आते ही कहा, "ये औरतें भी आजकल.... कुछ भी पहन लेती हैं, न उम्र का ख्याल न शर्म हया बस फैशन की धुन में सवार हीरोइन दिखना चाहतीं हैं।" उनकी आवाज पर जब कसी ने खास ध्यान नहीं दिया तब उन्होंने अपनी पेंट की क्रीज अपने जूते की नोक के सामने की और बैल्ट को ठीक कर कुर्सी पर बैठते हुए सामने की कुर्सी पर बैठी मैडम स्नेह की तरफ देखकर बोले - ''क्यों मैडम जी! आपका क्या खयाल है?" मैडम स्नेह कुछ लिखने में व्यस्त थोड़ा उनकी ओर नजर उठा कर मुस्कुराई बिना कोई जवाब दिए लिखती रहीं। इस पर वर्मा जी ने पूछा- "क्या हो गया शर्मा जी ? भाभी जी ने कोई फरमाइश..."

"नहीं। हर रोज रास्ते में आते देखता हूं। एक-से-एक नमूने। न उन पर उनका परिधान फब रहा है, न कोई और रूप दे रहा है। चलो नई पीढ़ी तो सदा ऐसी ही रही है पर ये बड़ी उम्र की औरतें. ..कभी चुनर इधर कभी उधर कभी-कभी तो सफाई अभियान में सहायक बन कर सड़क पर भी लहरा जाती है।" शर्मा जी के स्वर में चिंता थी।

"अरे! चलने दो, मजा लेने दो। सरकार का काम हो रहा है। आप आंखें बंद कर आया करो। मैं तो इन भौंडी..." व्यंग्यात्मक ढंग से साथ ही बैठे कला अध्यापक ने शर्मा जी का समर्थन किया और हंसी का हल्का सा ठहाका स्टाफ रूम में उठा।

"अजी! इस नारी शक्ति की मेहरबानी से ही तो अध्यापकों के लिए ड्रेस कोड बन गया।" एक अन्य अध्यापक ने व्यंग्य बाण छोड़ा। एक और ठहाका गूंजा।

तभी सायरन बजा और सभी प्रातःकालीन सभा की ओर चल पड़े। मैडम स्नेह अभी भी कुछ लिख रही थी इसलिए सबके बाद सभा भवन में पहुंची। प्रातःकालीन गतिविधियां संपन्न हो चुकी थी। मंच संचालक की निगाहें इधर-उधर चेहरे देख रही थीं। मैडम स्नेह को देखते ही उसने घोषणा की, "आज का वक्तव्य देने के लिए मैं मैडम स्नेह को मंच पर सादर आमंत्रित करता हूं।"

मैडम ने आगे बढ़कर माइक थामा और सबको संबोधित करते हुए कहा, "आज का शीर्षक है- 'पहरावा'।" शीर्षक सुनते ही सभी अध्यापक-अध्यापिकाएं एक दूसरे के मुंह की ओर देखने लगे। सभा भवन में क्षण भर के लिए पसरे सन्नाटे को मैडम स्नेह की दमदार आवाज ने तोड़ते हुए कहा - "व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके पहरावे से भी पहचाना जाता है। आज के अपने वक्तव्य में मैं महिलाओं के पहरावे पर ही अपनी बात को केन्द्रित करूंगी।"

शर्मा जी और कला अध्यापक खिसियानी मुस्कुराहट से एक दूसरे की ओर देखते हुए बड़े ध्यान से सुनने लगे।

मैडम ने कहना जारी रखा, "जब औरतें दुपट्टा आगे की ओर फैलाकर ढकती हैं तो उनका यह अंदाज स्वाभिमान और आत्मसम्मान को दर्शाता है। यही दुपट्टा जब वह मफलर की तरह गर्दन पर डाल कर आगे से खुला छोड़ती हैं तो वे स्वतंत्र व्यक्तित्व और आत्मविश्वास से भरी होती हैं। यही दुपट्टा जब गले में बंद करके पीछे की तरफ खुला छोड़ दिया जाता है तो प्रतीक होता है इस बात का कि हम अपने संस्कारों में बंधी हैं पीछे से बोलने वाले लोगों के प्रति वे लापरवाह हैं।"

तालियों की गूंज से सभा भवन गुंजायमान हो गया। तालियां बंद होते ही मैडम ने फिर कहा, "इसी दुपट्टे को जब एक औरत एक तरफ पिन से बांधकर दूसरी तरफ से दूसरे कंधे पर खुला करके लेती है तो उनके व्यक्तित्व से झलकता है कि वे एक कंधे पर पारिवारिक जिम्मेदारी और दूसरे हाथ पर सामाजिक जिम्मेदारी संभाले हुए हैं। इतना ही नहीं जब वह साड़ी धारण करती है तो वह अपनी संस्कृति और सभ्यता की संवाहक होती है।"

सभी स्टाफ सदस्यों और छात्रों के चेहरे पर आत्मीय खुशी और तालियों की आवाज उस खुशी को दो गुना बढ़ा रही थी...।

"पहरावा सामान्य व समय को देखकर भी होता है। ये आंख होती है जो उसे कृत और विकृत तरीके से देखती है। जैसी जिसकी भावना वैसी...पहरावा मन की चाह है। समाज हमसे है। पहरावा समय के साथ चलता है। यह ठहरा हुआ पानी नहीं....।"

मैडम स्नेह अपने वक्तव्य को विराम देकर स्टेज से उतरते हुए सिर पर पल्लू लेकर मां सरस्वती की तस्वीर की वंदना कर लौट आई। सभी के बाद शर्मा जी और वर्मा जी चुप अपनी कक्षा की ओर चले गए।

मकान नंबर 273 /11, मुहल्ला स्वाड
पुराना बाजार, सुन्दरनगर, जिला मण्डी, हिमाचल प्रदेश-175019

संगीता सारस्वत की कविताएं

बवाल

हमने खुद से पूछा - हम कौन सा सवाल हैं?
पता चला हम धरती के जिगर का बवाल हैं

यूं तो हम शांति के स्तूप हैं
पर तहों के नीचे, भूचाल ही भूचाल है।

हमने अक्ल का रेशा-रेशा उधेड़ कर रख दिया
फिर भी देखा बंजर धरती पर अकाल ही अकाल है।

समाज-सेवा का मुखौटा ओढ़े जगह-जगह घूमते हैं
अपने वजूद-अपनी नाकामी से बेहाल ही बेहाल हैं।

बिना होशो हवास के जिंदगी का गणित करते रहे
पर इस खाते में तो नित उछाल ही उछाल है

कोशिश करते हैं अपने दायरों की सीमा में रहें
पर क्या करें हम अपने ही जी का जंजाल हैं।

समाचार-सा आदमी

हर शख्स थका टूटा लाचार-सा है
जिंदगी के उदास लम्हों के समाचार-सा है।

आंकड़ों में कौन सा चेहरा बनाओगे?
हर भूखा आदमी जिंदा इश्तिहार-सा है।

जहां भूख का लावा उबलता है रोज
वहां राजनीति का सवाल तकरार-सा है।

कौन-कौन से मसले पर छेड़ोगे जेहाद
यहां हर मुद्दा सदियों से बीमार-सा है।

पर्यावरण पर बहस जरूरी है मगर
उपवन में सांस लेना दुश्वार-सा है।

कानून तो बने बहुत हैं मगर
भ्रष्टाचार अपनी जगह बरकरार है।

नचिकेता

नचिकेता
सब सुखों के होते हुए भी
यदि
आत्महंता हो सकता है
तो आज का पिसता हुआ मानव
जिसके पास
उन सुखों का शतांश भी नहीं
घिसटती हुई जिंदगी को
पूर्ण विराम देना चाहे
तो आश्चर्य नहीं

मगर वह
रुक जाता है
शायद इसलिए कि
उसके इस अपराध को
क्षम्य मान
यम,
उसे इस जीवन में
वापिस नहीं भेजेगा
नचिकेता की तरह

बल्कि उसे सौंप देगा
किसी बदतर जिंदगी को
इसलिए
एक अच्छे कल की
आशा में वह
जी लेना बेहतर समझता है
विवशता में
या
उसी जीवन को
अपनी नियति मान।

चांद का पंछी

आंखों के कांच में
पिघल कर तैर जाता है
पानी में उगे
आधे सूर्य का प्रतिबिंब

पलकों की मुंडेरों पर
आ बसती है
पंख फैला कर चहकती है
प्रकृति की प्रतिछाया

रात भर डुबकियां
लेता है
तारों के बुदबुदों में
चिहुंक कर तैरता है
चांद का पंछी।

खुशबू मिट्टी की

एक खुशबू है
जो सारे घर में बसती है

किताब के पन्नों में
उतरती है
डूब जाती है

कपड़ों में तैरती हुई
सरकती है
हर जिस्म में

आंखों में टिमटिमाता है
अपने घर का
आसमां

और मौसम
छोड़ जाता है
अपनी गंध

क्योंकि
हर मिट्टी की
खुशबू होती है अपनी।

विभागाध्यक्ष, हिंदी, सेंट बीड्ज कॉलेज, शिमला-171 006

गीत व गजल : सुमित राज वशिष्ट

लीजिये, ये गीत पूरा हुआ

रात ढलती रही, चाँद चलता रहा, तेरे बाजू पे सर रख के रोते रहे,
दर्द रिसता रहा धुंध छंट न सकी, ख्वाब जीने के फिर भी संजोते रहे।

कितने मासूम अहसास जागे मगर,
तेरे दिल में मुहब्बत जगा न सके,
रख दिया खोल कर दिल तेरे सामने,
तुझको दिल में मगर हम बिठा न सके।
उम्र बढ़ती गयी ख्वाहिशों की तरह, तेरी ख्वाहिश को ता उम्र ढोते रहे।
रात ढलती रही, चाँद चलता रहा . . . .

तेरे आने से जीवन मुकम्मल हुआ,
तू मिला जब से जीना ये कामिल हुआ,
कुछ गिले भी रहे थोड़े शिकवे हुए,
हम परेशां हुए, दिल भी बिस्मिल हुआ,
रफ्ता रफ्ता तेरी ओर बढ़ते रहे, रोज पाया तुझे रोज खोते रहे ।
रात ढलती रही, चाँद चलता रहा . . . .

प्यार तेरे लिए रेशा रेशा उगा,
रोज सुबह नयी कोंपलें फोड़ कर
हमने चाहा तुझे हमने पूजा तुझे
सारी दीवानेपन की हदें तोड़ कर
हम तेरे हो गये फिर सदा के लिए, और तुझमें ही खुद को पिरोते रहे।
रात ढलती रही, चाँद चलता रहा . . . .



गजल

मेरी उम्मीद से कुछ ज्यादा संभल जाती है,
जिन्दगी मेरी पनाहों से फिसल जाती है।

काम पे जाऊं तो अहबाब खफा हो जाये,
और अगर घर पे रहूँ जेब दहल जाती है।

रोज उठता है धुआँ घर के किसी कोने से,
रोज तस्वीर मेरे घर की बदल जाती है।

वक्त मिलता नहीं और वक्त गुजर जाता है,
वक्त के साथ हरेक सांस पिघल जाती है।

रोज बढ़ती है मेरी ओर इक नयी तोहमत,
रोज कागज पे नयी एक गजल जाती है।

बातों-बातों में वो लम्हें खरीद लेते हैं,
बात समझाने में पर एक नसल जाती है।



नारायण कुंज, लोअर दुदलि,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 003
मो. 0 70187 03170, 0 94595 19620

समीक्षा

यथार्थ के धरातल पर परग्रहियों की चिंता : कुछ सवाल

◆ बद्री सिंह भाटिया

उसके भीतर अभिव्यक्ति की तड़प है। शरीर से काफी अक्षम और पैल्विक रिजन में फ्रेक्चर की पीड़ा को झेलता वह नब्बे वर्षीय रचनाकार रमेश चंद्र शर्मा अभी भी रचनात्मक ऊर्जा लिए सतत रचनाशील है। अपनी ताजा कविता का रफ ड्राफ्ट उसके राइटिंग बोर्ड पर क्लिप किए कागजों में लगा है। पूर्वतय मिलन कार्यक्रम के तहत ज्यों ही मैं उसके पास बैठा, उन्होंने कुछ ही क्षणों बाद अपनी वह कविता सुनानी आरम्भ कर दी। वे अपने कच्चे शब्दों की टूटन, बिखराव और मंतव्य को समझाते भी रहे। कविता के बाद कागजों का एक पुलिंदा भी दिखाया-वे नया उपन्यास भी लिख रहे हैं- तीन अगुलियाँ....।

अभी विगत दिनों उनका उपन्यास 'परग्रही' भी आया है। यह दाँतों तले उंगली दबाने वाली बात है कि वे इस उम्र में भी मानसिक रूप से स्वस्थ हैं। कान से सुनता नहीं मगर मशीन के सहारे वे बावस्ता हैं। विगत समय मालरोड़ पर घूमना उनकी सामान्य आदत थी। दोनों बाजू छाती पर क्रास किए या कभी लटकाए भी बगल में एक झोला लिए, कभी हल्का सा पिट्ठू भी, वे खरामा-खरामा चल रहे हैं। किसी भी मिलने वाले अथवा प्रेमी को वे दूर से चीन्ह लेते हैं। मुस्कुराते उसके पास जाते हैं और दो बातें कर फिर टहलने लगते हैं। इसी तरह एक दिन घर लौटते समय वे थक कर एक बैंच पर बैठ गए और मामूली सा चक्कर आने पर गिर गए। माथे पर चोट आई थी। वे अर्द्धचेतना में थे। उन्होंने उन्हें उठाने वालों और राह गुजरने वालों के शब्द सुने। बोले थे, उस समय कुछ सोच रहा था कि आंखों के आगे अंधेरा सा छा गया और मैं गिर गया। ये भाव उन्होंने फिर अपनी कविता में व्यक्त किए।

वयोवृद्ध लेखक रमेश चन्द्र शर्मा जी का उपन्यास परग्रही एक मायने में देखें तो एक पारिवारिक और दाम्पत्य संबंधों की आम दिनचर्या के उतार-चढ़ाव को ही प्रकट करता है परंतु इसमें दूसरे ग्रहों से आते एलियन और किसी समय इंद्र सभा से आती अप्सराओं की अवस्थितियों को वैज्ञानिक आधार पर परखने और वर्णित करने की भी सार्थक कोशिश की गई है। उपन्यास के केंद्रीय पात्र अभय एक चित्रकार है और उसकी धर्मपत्नी वनमाला एक मॉडल भी रही है। अभय के पिता नाटककार थे। उनकी दूसरी पत्नी सिमरन ने अभय की माँ कामिनी के बचपन में ही देहांत हो जाने से अभय को माँ का प्यार दिया, उसकी परवरिश की।

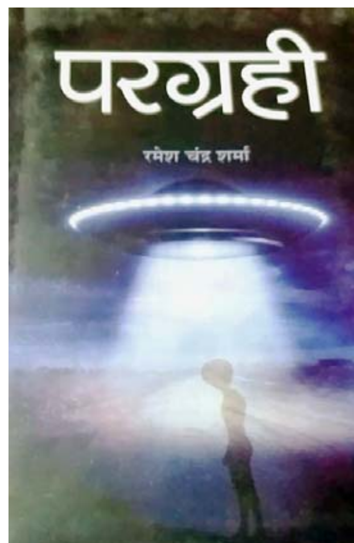
सिमरन मां के रूप में परवरिश करती रही और उपन्यास में हर जगह एक सगी माँ की तरह विद्यमान भी है। उसकी संलग्नता और अभय की उसके प्रति चिंता दोनों यहाँ परिलक्षित होती हैं। बुढ़ापे की दहलीज पर वह कभी शिमला तो कभी कहीं घूमती रहती है। उसकी वर्तमानता का यदि समय पर पता न चले तो अभय और बनमाला चिंतित हो जाते हैं। माँ के प्रति अगाध प्रेम के चलते कई बार तो उसे ढूँढता अभय शिमला शहर तक चला जाता है।

अभय का घर शिमला से कुछ दूरी पर है। उसके घर उसके पिता के एक अभिन्न मित्र उम्रदराज विजय आनंद जी का भी आना-जाना रहता है। विजय आनंद विधुर हैं। वे कई बार अभय के घर पर ही रुक भी जाते हैं। एक ओर उनका एकाकीपन और दूसरी ओर माँ सिमरन का भी अकेले होकर खालीपन को भरने के लिए इधर-उधर जाने की चर्चा दोनों पति-पत्नी करते हैं। सोचते हैं कि वर्तमान समय के दृष्टिगत विजय आनंद और माँ सिमरन को साथ रहना चाहिए। इनका बुढ़ापा आसानी से कट जाएगा। वनमाला ने तो उनके आगे यह प्रस्ताव कई बार रखा भी। मगर वे मुस्कुरा कर ही रह गए। विजय आनंद कई बार अपने एकांत में सोचता भी है। इसकी जरूरत भी महसूस करता है कि इस विचार को अमलीजामा पहनाने में हर्ज ही क्या है मगर सामाजिक परिस्थितियों और विचरण के दृष्टिगत यह उचित नहीं लगता। यह भी कि वह इतना फारवर्ड भी नहीं है। भीतर की कसक भीतर ही रह जाती है।

विजय आनंद एक चिंतक है। उसके मन में अनेक प्रश्न हैं। जीवन का तजुर्बा भी है। अनेक जानकारियाँ हैं तो प्रतिफल में वैसी ही जिज्ञासाएँ भी हैं। उनके अपने निकाले समाधान भी हैं और वह उन पर अपना पक्ष सोदाहरण रखता भी है। इन सब में सबसे ऊपर है परग्रही की अवस्थिति। वह कहता है कि ये नासा और अन्य देशों के साथ भारत के अनेक वैज्ञानिक अंतरिक्ष के जिन ग्रहों

के बारे में खोज में संलिप्त हैं यह निरर्थक नहीं है। हमारे शास्त्रों में भी ग्रहों का पृथ्वी पर प्रभाव बताया जाता है। यहाँ तक कि आदमी की कुण्डली में भी तो नौ ग्रह होते हैं। वह आशंका प्रकट करता है कि कहीं एक सभ्यता तो है। वैसी ही जैसी किसी समय इंद्र लोक अथवा स्वर्ग लोक जहाँ आदमी मर कर मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। जिस ग्रह पर वह सभ्यता विद्यमान है वहीं से तो ये एलियन और उड़न तश्तरियाँ आती हैं। इनका आभास भारत में भी देखा गया है और अमेरिका में तो उनमें किसी व्यक्ति होने के संकेत भी मिले हैं। संभवतया उनका भी अपना हमारी तरह का विज्ञान है। वे भी धरती पर वैसी ही खोज करने आते हैं जैसे हमारे वैज्ञानिक उपग्रह भेज मंगलादि ग्रहों के बारे में जानकारियां एकत्र कर रहे हैं।

विजय आनंद मनीला के साथ कुछ देशों के नीचे बनाई 27 किलो मीटर सुरंग में हो रहे शोध और हिंग्स बोन यानी ईश्वरीय कण की भी बात करते हैं। विगत समय उन्होंने उस जीवन तत्व की पहचान कर ली थी जिसके बारे में हमें मालूम नहीं था। यह भी तो उस परग्रही को खोजने की ओर एक कदम था।



महाभारत के उपरांत तीन योद्धा बच गए थे। वे अमर हैं। सवाल उठता है कि महाभारत काल में वे धरती पर थे तो अमरत्व के बाद भी तो यहीं होने चाहिए थे। उनका कोई वंश होता! हो सकता है वे यहीं कहीं किसी दुनिया में विचरण कर रहे हो? इसी संदर्भ में रमेश चंद शर्मा विजय आनंद के माध्यम से पौराणिक प्रसंगों का जिक्र भी करते हैं कि एक ब्रह्मांड है जहाँ से मेनका और उर्वशी आई थीं। यानी स्वर्ग अथवा इंद्र लोक। मेनका विश्वामित्र की तपस्या भंग करने हेतु ही तो भेजी गई थी। उसके एक पुत्री भी पैदा हुई थी।

पुरूरवा को तो इंद्र अपने राक्षसों के साथ युद्ध में शामिल करता था। पुरूरवा की शक्ति और वैभव से प्रभावित उर्वशी भी तो उसके साथ रही और उससे एक पुत्र पहले और दस पुत्र बाद के समय में प्राप्त हुए थे। तब परग्रहियों को भूमंडल पर आना जाना सामान्य था। फिर आज यह क्यों नहीं दिखता। क्या विज्ञान द्वारा आज वही तो नहीं खोजा जा रहा है। ऐसे प्रश्न एक विजय आनंद जैसा चिंतक ही कर सकता है

अपनी प्रतिस्थापना के मद्देनज़र रमेश चंद्र शर्मा जी उपन्यास में अनेक सहयोगी कथाओं का जिक्र समय-समय पर हुई बैठकों में करते हैं। एक छोटा सा प्रसंग हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जनपद के रामगढ़ के तत्कालीन राजा का भी है। राजा ने अपनी बड़ी रानी की ईर्ष्यालु चुगली पर अपनी दूसरी रानी को कुल्टा होने के आरोप में जिंदा चिनवा दिया था। और जब बारह बरस बाद उस समाधी को तोड़ा गया तो रानी का शरीर वैसा ही था। मात्र एक उंगली ही खराब हुई थी। यह भी तो किसी अज्ञात शक्ति के कारण ही हुआ है। वे आशंका प्रकट करते हैं कि कहीं कुछ अलग सा है जिसे विज्ञान को जाँचना है।

परग्रहवासियों और स्वर्गलोक के जिक्र में विजय आनंद एक घरेलु सभा सत्र में बात करते अपनी जिज्ञासा प्रकट करते हैं कि ऋषि विश्वमित्र ने धरती के राजा त्रिशंकु को अपने तप से जिंदा स्वर्गलोक में भेज दिया था। इंद्र ने उसे स्वीकार न कर स्वर्ग से धक्का दे दिया था। तब ऋषि ने वचन भंग की रक्षा के लिए एक नया स्वर्ग निर्मित किया था जिसमें त्रिशंकु की प्रतिस्थापना की थी। वह स्वर्ग भी तो कहीं किसी ग्रह के रूप में विद्यमान है।

यह सही भी है। आकाश गंगा और अंतरिक्ष में जाने कितने ऐसे पिंड हैं जो अपने दायरे में घूम रहे हैं। कोई सूरज के समीप है तो कोई दूर। एक ग्रह के सूर्य की तरह अनेक ग्रह है। हो सकता है उनमें से कोई पृथ्वी के कुछ समीप हो जिसका हमारे वैज्ञानिकों को पता न हो या वह उनकी दूरबीन में नहीं आ पा रहा हो और वहाँ आबादी हो। मानव हों। जिन्हें हम ऐलियन कहते हैं। इस धरती पर भी तो विभिन्न क्षेत्रों में जो सभ्यताएं आज विद्यमान हैं उनकी शक्लें भी तो अलग अलग हैं। एक नई दुनिया अथवा नए ग्रह इसलिए भी जिज्ञासा के घेरे में हैं क्योंकि नासा को कुछ और ग्रहों का भी पता चला है जो सौर मण्डल का हिस्सा है। इसी प्रकार एलियन की भी दुनिया होगी। उनकी उड़न तश्तरी की बनावट हमारे यानों से भिन्न है तो हो सकता है उनकी टैक्नोलोजी उसी तरह की हो और वे ऐसा यान बना रहे हों जो यहाँ के जलवायु को सहन करता हो। इस विश्व के देश भी तो ऐसे ही यान बना रहे हैं। एक बार भारत में उड़न तश्तरी को देखा गया था। दिल्ली शहर में तो कई बिजली के खम्बे भी उखड़ गए थे। बहुतों ने उसे देखा था। यह घटना अखबारों, पत्रिकाओं के विश्लेषण का हिस्सा भी बनी थी।

उपन्यास परग्रही में प्रेम संबंधों, बड़ी उम्र के विवाहों के भी दो प्रसंग खूब वर्णित हैं। एक कंवर और चरणी का तथा दूसरा कमलकांत और ईशिता का। इसे प्रेम के त्रिकोण के रूप में भी देखा जा सकता है। चरणी के माध्यम से रमेश चंद शर्मा जी ने पंजाब में एक समय व्याप्त उग्रवाद का काफी चित्रण किया है। चरणी के पिता को उग्रवादियों ने सरकार का मुखबिर समझ उसकी हत्या कर दी थी। उसके साथ परिवार के अन्य सदस्यों की

भी। चरणी तब मात्र चौदह वर्ष की थी। वह किसी तरह भाग कर बाहर निकल एक शामियाने के भीतर घुस एक व्यक्ति की बगल में बैठ गई थी। अचानक अपने पास सटकर बैठी बालिका को उस व्यक्ति चौहान ने जब देखा तो वह बोली थी कि उसके माता-पिता को उग्रवादियों ने मार दिया है इसलिए उसे बचा लो। चौहान ने उसे अपने पास ही रख लिया और पुत्री की तरह पाल कर बड़ा किया। चरणी कालांतर में एक कंवर नामक व्यक्ति के प्रेम में पड़ गई और एक लम्बे समय तक वे लिव-इन-रिलेशनशिप में रत रहे। प्रौढ़ावस्था में पहुंच कर वे शादी कर पाये। इसी प्रकार कंवर और ईशिता को पहले तो प्रेम रहा। शादी नहीं हो सकी। ईशिता तलाक लेना चाहती थी मगर कोई कारण नहीं बन रहा था। उसका पति कमलकांत एक आइ.ए. एस अधिकारी था। ईशिता तलाक लेकर कंवर से विवाह करना चाहती थी परंतु जब कंवर चरणी के चक्कर में पड़ा तो ईशिता के साथ विवाह की बात स्थगित हो गई।

परग्रही उपन्यास में रचनाकार ने किसी न किसी प्रसंग को आगे बढ़ाते, उड़न तश्तरी, मेनका, उर्वशी मंगल ग्रह का चर्चा अवश्य किया है। विजय आनंद कई बार उपन्यास का केंद्र बन जाता है। विजय आनंद अपने मित्र के बेटे अभय को परग्रही सभ्यता के चित्र बनाने का थीम लेकर चलने को कहता है। और अभय ऐसे चित्र बनाता भी है। वह सामान्य जन जीवन और प्रकृति के चित्र नहीं बनाता।

अभय के घर में एक पड़ोसी दीनदयाल का आना-जाना भी लगा रहता है। विजय आनंद भी उसे पसंद करता है। दीनदयाल ज्योतिषी भी है इसलिए विजय आनंद उससे परग्रहियों के बारे में भी पूछता रहता है। पंडित दीन दयाल पौराणिक कथाओं का एक पुंज है। उसने जितना पढ़ा है और जितना साथियों से सुना है वह विजय आनंद को बताता रहता है और विजय आनंद अपनी सूचनाओं के साथ मिलान कर अपनी जिज्ञासाओं का शमन करता रहता है। पंडित दीन दयाल को अभय कई बार माँ सिमरन और विजय आनंद की खोज खबर के लिए भी भेजता हैं वह जहाँ जाता है वहाँ की सूचनाओं को आकर अभय को बताता है। चरणी और कंवर के विवाह की सूचना भी वह ही अभय को देता है। अभय का घर एक प्रकार का केंद्र है जहाँ ये सब लोग किसी न किसी बहाने गाहे-बगाहे एकत्र हो जाते हैं और अपने-अपने अनुभवों पर चर्चा करते रहते हैं। और यह स्वभाविक भी है। प्रत्येक आदमी के अपने अपने अनुभव होते हैं।

अभय और वनमाला चूंकि पति-पत्नी हैं इसलिए वे सामान्य घरों सा ही व्यवहार करते रहते हैं। घर से बाहर गई माता सिमरन के समय पर नहीं लौटने से वे चिंतित हो जाते हैं। वे अपनी चिंता पंडित दीन दयाल और विजय आनंद से प्रकट करते हैं। स्वयं भी अभय उसे ढूंढता शिमला तक आता है। वह सोचता है कि मां सिमरन एक नाटककार है कहीं उसे अपनी मंडली के लोग तो नहीं मिल गए कि वह उनके साथ नाटक में व्यस्त हो गई। और एक समय ऐसा होता भी है। कालेज के कुछ छात्र उसे गेयटी में प्रदर्शित एक नाटक के लिए विशेष अतिथि के रूप में भी आमंत्रित करते हैं।

परग्रही उपन्यास से गुजरते कई बार लगा कि लेखक और विजय आनंद आंतरिक तौर पर एक ही हैं। अंतर्कथाओं के बीच आई कविताओं में कुछेक जगह ऐसे आभास भी हुए हैं। विजय आंनद बताते हैं कि जिस प्रकार हमारे यहाँ भी विकास की अंधी दौड़ में कुछ प्राकृतिक चीजों, वनस्पतियों और प्राणियों का क्षरण हुआ है उसी प्रकार अन्य ग्रहों पर भी हुआ होगा। अथवा एक सभ्यता उन पर विद्यमान होगी जो हमारी सोच से भिन्न है। ऐसी ही इच्छाएँ जैसी त्रिशंकु ने की थीं। ऐसे ही ऋषि भी होंगे जैसे विश्वमित्र। और ऐसे ही योद्धा जैसे पुरूरवा। पुरूरवा पुत्र भरत और मेनका पुत्री शकुंतला भी तो एक मायने में परग्रही ही थे। यह समझने की बात है, सोचने की भी।

परग्रही उपन्यास में अनेक वैज्ञानिक और लोक जानकारियां लिए कथा प्रवाह है। कुछ अवांतर कथाएँ अध्याय बनाकर आगे बढ़ाई गई हैं। इसी तरह अंतरकथाएं भी हैं।

रमेश चंद्र शर्मा जी ने इससे पूर्व भी स्वर्गारोही और पांचाली उपन्यास पाठक समाज को दिए हैं। पांचाली पर तो उन्हें हिमाचल प्रदेश की कला संस्कृति और भाषा अकादमी द्वारा राज्य सम्मान से भी अलंकृत किया हुआ है।

यदि उपन्यास की पूरी पृष्ठभूमि के अंतर्गत कथा पात्रों को देखा जाए तो कमलकांत की पत्नी ईशिता, अभय की माँ सिमरन, कंवर की प्रौढ़ पत्नी चरणी और स्वयं विजय आनंद भी एक प्रकार के परग्रह ही हैं जो अभय रूपी धरती के गिर्द चक्कर काटते रहते हैं। अपने क्रिया-कलाप कर वापस अपने ग्रह पर चले जाते हैं।

उपन्यास के यदि शीर्षक के नज़रिए से देखा जाए तो इसमें परग्रहियों का जिक्र तो बाखूबी हुआ है मगर उनके कार्य व्यवहार उतने ही हैं जितने प्रायः पाठक जानते हैं। एक जिज्ञासा यह थी कि कोई परग्रही आज भी धरती पर आया होगा और अपने कार्य व्यवहार से चकित कर देगा। फिर भी उपन्यास का शीर्षक पाठक को बाँधता है और पढ़ने को प्रेरित करता है। यह एक कृति की सफलता भी है।

गांव ग्याणा, डाकखाना मांगू वाया दाड़लाघाट, तहसील अर्की,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-171102

पुस्तक : परग्रही (उपन्यास) **लेखक :** रमेश चंद्र शर्मा
प्रकाशक : सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली 11006 **मूल्य :** 500.00

समय सरगम
संचित जीवन का राग

(पृष्ठ 17 से आगे) और हिंसा के निर्मम वृतांतों का जिक्र है। ईशान ऐंग्लिका और आरण्या के मध्य प्रमुख रूप में बातचीत विश्व की महाशक्तियों, संपन्न विकसित राष्ट्रों द्वारा अंतरिक्ष में बस्तियाँ बसाने को लेकर है। आने वाले समय में संपन्न विकसित देशों की यांत्रिक पीढ़ियाँ वहीं बस जाएगी। अविकसित निर्धन पिछड़े राष्ट्र जिनका दोहन विकसित राष्ट्र अब तक करते रहें, वे ही इस धरती पर रहेंगे। विकसित गोरी जातियाँ ऊपर रहेगी और काली चपटी इस धरती पर। निर्धन नस्लों को धरती की देखरेख करनी होगी। नहीं तो भूचाल-तूफान और लगातार सशस्त्र आतंकवाद। लेखिका ने मानव जाति पर संभावित संकट की ओर संकेत किया है। विकसित देशों की घोर उपभोक्तावादी महत्त्वकांक्षाओं के दूसरे ग्रह पर बस कर आधिपत्य स्थापित करने और परमाणु शक्ति को विकसित कर धरती को संचालित करने की योजनाओं के द्वारा मानव जाति को आतंक के साये में ढकने की ओर संकेत हैं। ऐसी भयावह स्थिति में आरण्या का स्वर आशावादी है। मनुष्य जाति अपनी धरती को मानवता की शक्ति से बचा सकती है। उपन्यास के अंत में यह आशावादी स्वर है--हमारी जनसंख्या।/ हमारी धरती।/इसकी वनस्पतियाँ और हरीलिया की रखवाली कौन करेगा?/ कौन सुरक्षा करेगा। मनुष्य!/ मनुष्य!/मनुष्य ही।/ परमाणु हथियार कभी नहीं/ कभी नहीं।/(पृ.158) प्रस्तुत उपन्यास के उत्तरार्द्ध में कृष्णा सोवती ने नारी विर्मश से संपृक्त सवाल उठाये हैं। यद्यपि उपन्यास में स्त्री की समानता का संघर्ष विद्यमान नहीं है तथापि पुरुष के समानांतर उसकी भूमिका को देखा गया है। पुरुष वर्चस्व और नारी के प्रति भेदभाव पूर्ण दृष्टिकोण पर लेखिका की नजर है। वे ऐसी व्यवस्था का प्रतिकार करती हैं जिसमें लिंग, जाति, सम्प्रदाय धर्म के आधार पर विभाजन हों। आज भी यह भेद चिंता का कारण है। वे आरण्या के चिंतन के माध्यम से इस वस्तुस्थिति को सामने लाती हैं, 'पुरानी व्यवस्था अब भी कायम है, नये बदलावों के साथ लड़के और लड़की में भेद। परिवार में पुत्री और पुत्र का अबोला द्वन्द्व जारी है। गर्भ में ही पुत्रियों की हत्या और पुत्रों के संरक्षण साधन। भाई बहनों में झगड़े चलते रहते हैं। कानून बन चुके हैं, मगर उन्हें लागू कौन करेगा। माता-पिता ही तो' (पृ.92)

महात्मा सदानंद और भक्तजनों के परस्पर संवाद के माध्यम से लेखिका ने स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण को सामने लाया है। सदानंद महाराज कहते हैं 'मानवीय महापरिवार के लिए यही ठीक समझा गया है कि पुत्रियाँ धरती की टेकड़ी पर टिकी रहें। उसी में सृष्टि की भलाई है' वे उसी को स्त्री मानते हैं जिसे त्रासदी और पीड़ा का सम्मान हो' (पृ.142) उनके भक्तजन शास्त्रों के संदर्भ से कहते हैं कि मातृकाओं और पुत्रिकाओं के कुछ अच्छे प्रसंग मिलते हैं। इस संबंध में वे भक्तजनों को सजग करते हुए कहते हैं 'स्त्री शरीर में एक घोड़ा बँधा रहता है। भक्तजनों उसे काबू में रखना जरूरी है। असल बात तो यह कि स्त्री देह है। इसीलिए उसे मार्मिक अनुभूतियाँ बिछौने से ही मिलती है। विचार उसका क्षेत्र नहीं। इसीलिए आत्मदया से ग्रस्त है।' (पृ.142) सदानंद महाराज का यह चिंतन स्त्री को एक निश्चित् वृत में बांधता है जहाँ उसका शारीरिक और मानसिक विकास अवरुद्ध रहे। उनके लिए स्त्री देह भोग की वस्तु है जिस पर उसका निजी नियंत्रण और अधिकार नहीं है। स्त्री को यौनोपकरण मानकर उसे विचार क्षेत्र से अलग करने की धारणा उसे पराधीन बनाकर उसके समूचे व्यक्तित्व को कुंठित और दमित करना है। उनके भक्त यह अनुभव करते हैं कि स्त्री अब शोषित और प्रताड़ित महसूस करने लगी है। उन्हें भी अपनी देह में से किसी गुम आत्मा की आवाज/ सुन पड़ने लगी है। परन्तु सदानंद महाराज का यह तर्क है कि इस संज्ञा पर दुख का गहरा प्रकोप रहा है। यह विधि का विधान है। पर अब भाड़े की विभीषिका ने इन पर कोई जादू-टोना कर दिया है।' (पृ.142) वे स्त्री शोषण और उसकी अधिकार चेतना की आवाज को दबाने का परामर्श देते हैं। वे यह बखूबी जानते हैं कि यदि यह विचार विमर्श और विवाद का विषय रहेगा तो उससे स्त्री शोषण विरुद्ध कोई संगठित आंदोलन का रूप सामने आ सकता है। इसीलिए वे कहते हैं 'इस पर विवाद लम्बा मत चढ़ाइए। हवा में रहेगा तो पुष्ट होता रहेगा जितनी जल्दी हो सके, दबा दीजिए। हमेशा वाद विवाद और संवाद अच्छी बात नहीं। आप साधारण गृहस्थ है। आपके हित में तो आस्था ही आस्था है उसे थामे रहिए।' (पृ.142-143) इस सारे विमर्श के अंत में लेखिका को अन्याय के उस प्रगाढ़ अंधेरे में भी आशा का प्रकाश दिखाई देता है। अपने कथन में वे हाशिया के समाज के साथ अपनी प्रगाढ़, प्रतिबद्धता व्यंजित करती है। 'लगता है, सुबह हो रही है। ऐसी सुबह और जीवित है हम। क्या यह उठकर खड़े हो जाने का शुभ कारण नहीं। सब सगुण इसी धरती पर इसी जीवन में। हर जी रही संज्ञा के पास इस लोक में जिए हुए का इतिहास और उसकी छोटी-सी प्रामाणिकता'। (पृ.144)

'समय सरगम' में वैयाक्तिक एकांत और पारिवारिक सहजीवन से संपृक्त प्रश्नों को उठाया है। कृष्णा सोबती परिवार को समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई मानती है परन्तु वर्तमान समय में समय के परिवर्तन के साथ रक्त संबंधों तक में घोर स्वार्थों की विभीषिका देखी जा सकती है। दमयंती, कामिनी, प्रभुदयाल आदि चरित्रों को नियति परिवार संस्था में आई विसंगतियों और विकृतियों को अनावृत करती है। ऐसी स्थितियों में उपन्यास की वाचिका आरण्या ने पारिवारिक सहजीवन की अपेक्षा एकांत और

अकेलेपन का वरण किया है। इस चुनाव में किसी प्रकार समस्या अनुभव नहीं करती और न ही इसको लेकर कोई शिकायत ही है। उपन्यास में कुछ अन्य चरित्र भी हैं जो वृद्धावस्था में अपना समय कभी उपेक्षा में तो कभी परिवार से पृथक रहकर अकेलेपन की पीड़ा भोगते हैं। उपन्यास में ईशान के परिचित किशोर का किंचित संदर्भ है जो एक बार अस्वस्थ होते हैं तो जीवित नहीं रह पाते। वृद्ध भगतसिंह वृद्धावस्था का समय कभी बड़े बेटे तो कभी छोटे बेटे के पास रहकर गुजारते हैं। श्री और श्रीमती सुंदरम अपना समय परस्पर आत्मीयता से गुजारते हैं। रंगाचारी दम्पति, इला और आलोक देसाई, श्री और श्रीमती राजेन्द्र प्रसाद साहनी जैसे अनेक वृद्धों के संदर्भ उपन्यास में विद्यमान है जो कभी परिवार की उपेक्षा की यंत्रणा से पीड़ित होते हैं तो कभी परिवार से पृथक रहकर अकेलापन उन्हें पीड़ा देता है।

श्रीमती विक्रमराज बेटे और बहू के पृथक हो जाने पर अकेलापन अनुभव करती है। आरण्या अकेलेपन को किसी प्रकार की पीड़ा के रूप में नहीं देखती। उसकी मान्यता है कि अकेलापन निजत्व की खोज है। अकेले रहते-रहते जान लेंगी कि यह स्थिति भी कम अच्छी नहीं। अकेले होने पर आप अपने से दूर नहीं होते। अपने में खोजते हैं, उन सम्भावनाओं को जो मूल्यवान हैं। आप अपने नजदीक होते जाते है। (पृ.82) निश्चित रूप में अकेलापन उसी समय पीड़ा देता है जब वह अपने से दूर किसी अन्य के अभाव को अनुभव करता है, जब व्यक्ति निज की तलाश करता है तो उसके चिंतन और स्मृति की परिधि स्वकेन्द्रित होती है। परन्तु प्रश्न यह भी उत्पन्न होता है जो आर्थिक रूप से विपन्न है, रुग्णवस्था में पराश्रित हैं उनका अकेलापन मृत्यु से भी भयावह होता है। यह प्रश्न पृथक है और उपन्यास की 'थीम' इस पर केन्द्रित नहीं है। वस्तुत 'समय सरगम' वृद्धावस्था को एक उल्लास एक उत्सव के रूप में स्वीकार करने पर विचार करता है। जब व्यक्ति अकेलेपन को हृदय से स्वीकार करता है और परिवार से पृथक रहने की पीड़ा से निरपेक्ष रहता है। गहरे अर्थ में जीवन के परमसत्य को अनुभव करता है। तब अकेले जीवनयापन करने और अपने गंतव्य तक अकेले ही जाने के सत्य का जब उसे साक्षात्कार होता है तो उसे अकेलापन पीड़ा नहीं देता। आरण्या के सम्पर्क में आने पर ईशान प्रारंभ में अकेलेपन की पीड़ा से आक्रांत रहते हैं उन्हें कभी कहीं बाहर शिक्षा अर्जित करने वाली बेटियों-अपराजिता और स्रष्टा की स्मृति उन्हें विह्वल करती है तो कभी असामयिक रूप में मृत्यु प्राप्त पत्नी और बेटे की स्मृति भी उन्हें शोभाकुल करती है।

परन्तु आरण्या के सम्पर्क और सान्निध्य में आकर वे एक दूसरे के सुख दुःख के सहभागी बनते हैं। आरण्या ऐसी सबल चरित्र है जिसमें औरों की व्यथा हर लेने का सामर्थ्य है और उसका जीवन-दर्शन धीरे-धीरे ईशान को प्रभावित करता है। उपन्यास में दोनों चरित्र परस्पर वैचारिक भिन्नता के होते हुए भी एक दूसरे के विचारों और तर्कों को सांझा करते हैं। वैचारिक मतभेद को शालीनता से तर्कों के आधार पर सामने लाते हैं और एक दूसरे को आत्मीय स्तर पर समझने के तत्पर होते हैं। वे एक दूसरे की कठिनाइयों, सांसारिक चिंताओं और दार्शनिक उलझनों का समय समय पर सांझा करते हैं। इस सान्निध्य में संवेदनशीलता और रागात्मकता की गहराई और परिपक्वता विद्यमान है। उपन्यास के अंत में वे सहजीवन का निर्णय लेते है। इस समय ईशान आरण्या से कहते हैं 'आरण्या, जो कहने जा रहा हूँ, उसे हँसी में मत उड़ाना। अगर मैं कहूँ कि एक कमरा, एटैच बाथरूम, एक बाल्कनी तुम्हारे लिए फ्लेट में ही मौजूद है। हूँ...हूँ ईशान, मुझे सोचने को एक दिन चाहिए। कल सुबह तक बता सकूँगी।' (पृ.147)

उपन्यास में वैयक्तिक एकांत और सहजीवन का द्वन्द्व है। ईशान के प्रस्ताव पर आरण्या सहजीवन का विकल्प चुनती है। जिए जा चुके सम्पूर्ण और आसन्न मृत्यु के तनाव के मध्य जीवन जीने की नई संभावनाओं का आविर्भाव होता है। ईशान को आरण्या के सान्निध्य में जीवन में एक नया सरगम और नया प्रकाश उत्पन्न होता है। ईशान कहता है तुम्हें आश्वस्त कर रहा हूँ कि अभी भी सब कुछ रीत नहीं गया। जितना जल हमारे-तुम्हारे घट में शेष है, वह संझाते समय के लिए कम नहीं। क्यों न हम एक दूसरे के पास रहें। साथ रहें। जो वक्त बीत गया है, एक-दूसरे को जाने बिना ही पुराने कैलेंडर में खो गया, उसे तो लौटाया नहीं जा सकता। पर आज से जुडे कुछ दिनों को अपना तो बनाया जा सकता है। -----आरण्या, तुम्हें जानकर मैं कुछ और हो गया हूँ लगता हूँ। इसे भला क्या कहते होगें। कोई शब्द तो जरूर है इसके लिए।' (पृ.148)

ईशान अपनी पुरानी फाइल में से एक पत्र को खोज कर निकालता है। मृत्यु शैय्या से लिखा अपने अजन्में पुत्र के लिए युगोस्लाव सैनिक का यह पत्र है जिसमें जीवन जीने का गूढ़ अर्थ निहित है। ईशान उस पत्र से पूर्णतः प्रभावित है इसलिए कहता है कि यह पत्र पनील बादल की तरह मेरी आत्मा में छा गया है, उसे बिना शब्दों के उच्चारण के तुम तक पहुँचाना चाहता हूँ। वृद्धावस्था का यह उत्सव मृत्यु के निकट होने पर भी जीवन का उत्सव बन जाता है। ईशान पत्र को उद्धृत करता है 'अनश्वर से सभी नश्वरों को एक मोहलत मिलती है यहाँ रहने की, रुकने की। जब इस गतिशील यात्रा का सम्मापन हो तो मुमकिन है तब भी तुम किसी प्रहरी की निगाह से उस अकेली सड़क के मोड़ को देख सको! प्यार और गरिमा दे सको उन्हें, जिन्हें गरमाहट और स्नेह की जरूरत हो। उन्हें, जिन्हें सहानुभूति और प्रकाश की जरूरत हो।' मेरे बच्चे, कामना करता हूँ तुम्हें मिले वह बचपन जिसमें जी भर खेलकूद तुम उस दुनिया की पहचान में बढ़ो जहाँ 'स्व' का ही

राग-अनुराग नहीं, उन शाश्वत मूल्यों का आग्रह और संघर्ष है, जिन्हें मनुष्य बचाना चाहता रहा है।' (पृ.150)

कृष्णा सोबती ने वृद्धावस्था को एक उत्सव के रूप में देखा है और वृद्धों के लिए उपन्यास में अनेक स्थानों पर 'सयानें शब्द का प्रयोग किया है यथा 'खास तौर से जब इस सयानी की कभी ताली गुम हो, कभी पर्स, कभी जरसी'। (पृ.9) 'बूढ़े सयानों की टोली हर शाम इस छोटे से बगीचे में पहले टहलती है फिर बतियाती है।' (पृ.89) मृत्यु के सन्निकट होते हुए भी इसमें जीवन का राग और सरसता है। यथा समय देह को कुतरता नहीं उसमें रसता है। जिये जा चुके जीवन और जिये जा रहे जीवन को वह मूल्वान बनाता है। इसके साथ ही आसन्न मृत्यु को भी अनमोल बना देते है।

जन्म-मरण की प्रक्रिया/ सुख है क्योंकि हवा है/ धूप है/ जल है / आकाश निर्मल है / देह में धड़कती सांस है / अभी भी जीने भीतर है सब / जब बाहर हो जाएँगे / शेष हो जाएंगे/ तो किसी न किसी अंश में / स्वरूप में स्मृति रहेगी। / रहेंगे हम तो इस धरती के सन्नाटों के साथ बहेंगे /स्मृति के पास रहेंगे / घूमते रहेंगे शिखरों पर /घाटियों, तालों, नदियों और झरनों पर / हम यहीं बने रहेंगे। (पृ.138-139)

उपन्यास में रागात्मक संबंधों की तरलता के साथ आध्यात्मिक चेतना भी विद्यमान है। कृष्णा सोबती ने सामान्य संवादो में दर्शन और आध्यात्मिक चेतना की अभिव्यक्ति है। आरण्या और ईशान के परस्पर संवाद उस आध्यात्मिक चेतना को अभिव्यंजित करते हैं जो लेखिका की आंतरिक सूफी प्रकृति के परिणाम हैं। आरण्या कहती है, जीने के लिए देह को परिवर्तन के पंखों पर उड़ना होता है। अपनी सांस के साथ खींच रहे हैं हम हाइड्रोजन के कण, आक्सीजन, कार्बन, नाइट्रोजन। अमाशय, हृदय, फेफड़े दिमाग हवा में विलीन हो रहे है। (पृ.56) जीवन और मृत्यु को लेकर भी उपन्यास में चिंतन है। ईशान अल्मोड़ा में प्रोबेशनर के रूप में नियुक्ति के दिनों में डेनिश नागरिक से अपनी भेंट को स्मरण करते हैं। उस डेनिश नागरिक की आंखों का विस्तार और मौन देखकर महार्षि रमण ने उन्हें शून्यता नाम दिया था।

कृष्णा सोबती की दृष्टि अभावग्रस्त, सामाजिक वैषम्य से उत्पीड़ित वर्ग पर भी रही है। एक प्रसंग में आरण्या वर्षा भरी शाम को उत्साह से छाता और बरसाती निकाल बारिश में घूमने निकलती है। इस दौरान उसकी दृष्टि झुग्गियों के गुच्छाए समूह पर पड़ती है। झुग्गी में से बाहर फैलते सिगड़ी के गिले धुएँ और रोते बच्चे की आवाज सुनकर वह विह्वल हो उठती है। सामाजिक विषमता और वर्गगत भेद और वैषम्य उसके मन का विचलित करता है। हाशिए के समाज की पीड़ा को गहरे अनुभव कर उसके मन में सवाल उठते है' 'बच्चा इस झुग्गी से निकलकर कहाँ पहुँचेगा। क्या झुग्गियों के चक्रव्यूह में से निकल सकेगा, यह अभिमन्यु? नारकोटिक पोटलियों के खतरनाक लेन देन से छुटकारा पा सकेगा कि किन्ही पुश्तों तले गुम हो जाएगा? ---- क्या साफ सुथरे पक्के घर तक पहुँच पाएगा? क्या सुविधाओं के बाजार में से कुछ नोचकर जुटा पाएगा? इतिहास की अश्वमेघी दृष्टि क्या समय रहते इसकी पहचान कर लेगी --- क्या सार्वजनिक कृपाएँ इस नन्हें नागरिक तक पहुँच पाएँगी? क्या तब तक इसकी धारणा-शक्ति बची रहेगी? इसके बालिंग होने में तो सोलह-अट्ठारह साल पड़े है। मुमकिन है अगली शताब्दी में नेता बन जाए? कौन जाने कि नायक कि खलनायक। (पृ.18) लेखिका ने वृद्धावस्था या वानप्रस्थ को जीवन का 'मूल्यवान मौसम' कहा है। इसका सत्कार किया जाना चाहिए। यह जीवन की प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण पड़ाव है जिसमें व्यक्ति के जीवन के संचित अनुभव होता है। वे जीवन के इस पड़ाव को स्वाभाविक क्रमिकता के रूप देखती है। जीवन की इस क्रमिकता को एक स्थान पर इस रूप में मूर्तिमान किया गया है

आदिम षड्ज और निषाद,
पहला स्वर आदिम। जन्म स्वर।
षड्ज, तरुणाई-स्वर।
निषाद, इस मानवीय आख्यान का अंतिम स्वर।
बचपन, यौवन और यह पकते हुए मौसम का सुर निषाद।
जब तक हो, इन्हें गुँथे रहने दो।
तभी है यह सरगम।
समय सरगम। (पृ.153)

'समय सरगम' वृद्धजनों का ही आख्यान नहीं है इसमें जीवन के विवध राग है। इसमें कृष्णा सोबती ने रागात्मक ऊर्जा के साथ सूफीयायी रागतत्व की रचना भी की है। रागात्मक संबंधों की उष्णता के साथ आध्यात्मिक चेतना भी विद्यमान है। कृष्णा सोबती जीवन के वैविध्य का परिभाषित करती हुई कहती है 'समय सरगम। समय एक राग, नहीं समय में निबद्ध अनेक राग। अनेक बंदिशे। हर बंदिश में अपनी स्वर लहरी। देह को झंकृत करती हुई। समय के सातों स्वर परस्पर आबद्ध हैं एक गूँथ में। एक गहरे नेह का नाता बाँधे रहता है। उन्हें स्थायी अंतरे से। उदात्त, अनुदात्त और त्वरित। इस जीवन की अनेकों-अनेक स्वर संज्ञाएं, स्वरावलियाँ और श्रुतियाँ। और हर एक के अलाप में से बहते भक्तिभाव, राग-विराग, प्रेम-अनुराग, पीड़ा-दर्द, स्मृति-विस्मृति, तृप्ति-तन्मयता, उल्लास, दुःख-सुख, शोक-विषाद, आनंद-आह्लाद। संचित जीवन का यही राग। (पृ.153)

वी.पी.ओ. बातल, तह. अर्की, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173208, मो. 0 94180 10646

आखिरी पन्ना

चारदीवारी से झांकती संवेदनाएं

◆ विनोद भारद्वाज

सन् 1957 में वी. शांताराम निर्देशित एक फिल्म आई थी दो आंखें बारह हाथ। फिल्म सामाजिक सुधार से जुड़ी थी। उस समय बंदियों के सुधार बारे सोचा गया था। नायक इंस्पेक्टर छह गुनहगारों को जेल से बाहर लाकर सुधारने का बीड़ा उठता है। पैरोल पर रिहा कैदियों को नैतिकता का सबक देती है। वे भी जी जान से मेहनत करते हैं। उनका परिश्रम रंग लाता है। वास्तव में देखा जाए तो अगर कोई कितना भी निष्ठुर और खूंखार क्यों न हो, उसको सही मार्गदर्शन मिले, तो वह भी सुधार सकता है। उसके भीतर भी कहीं पर संवेदनाएं छिपी रहती हैं और समय आने पर मुखरित भी हो पाती हैं।

जेल सुधार की जानी मानी शख्सीयत किरण बेदी ने इस विषय पर यथार्थ में गंभीरता से काम किया। कई कैदियों के जीवन को सुधार कर उनका पुनर्वास किया। सामाजिक कार्यकर्ता और जानी मानी लेखिका सरोज वशिष्ठ को कौन नहीं जानता, जिन्होंने जेलों में जाकर उनसे मुलाकातें कीं। उनका मार्गदर्शन किया। उनको समाज से फिर जोड़ने के सदप्रयास किए। उनके ये प्रयास फलीभूत भी हुए। पेशेवर और गुनाह की दुनिया से नाता जोड़े बहुत हैं। जिनका पुनर्वास मुमकिन नहीं, लेकिन ऐसे भी गैर इरादतन गुनाह करनेवाले भी हैं, जो पछतावे के आंसू रो रहे हैं। फिर इस दलदल में नहीं फंसना चाहते। किसी तरह चार दीवारी की कैद से बाहर आना चाहते हैं। वे भी खुले आकाश में परवाज भरना चाहते हैं। जिंदगी को फिर से जीना चाहते हैं। अपने इरादों, अपनी मंजिल, अपनी इच्छाओं को पूरा करना चाहते हैं। कभी देखे सपनों को सच होते देखना भी चाहते हैं। आसमान में उड़ने वाला पक्षी स्वच्छंद विचरण कर सकता है। उसके सामने विस्तृत फलक है। जहां चाहे पंख फैलाए बादलों संग बातचीत कर सकता है। उसके पास हर तरह के विकल्प मौजूद रहते हैं। उनका अपनी मर्जी से चुनाव कर लेता है। जबकि पिंजरे में कैद पंछी चार दिवारी में बंद होता है। उसका आकाश बहुत छोटा तो आसपास भी उतना ही सीमित होता है। अपनी भावनाएं व्यक्त करने के साधन भी बहुत थोड़े। इस विषय में काफी गंभीरतापूर्वक सोचना होगा और इनको मुख्य धारा से जोड़ना होगा। इस दिशा में केंद्र तथा राज्य सरकारों ने अपने-अपने स्तर पर प्रयास किए हैं।

हिमाचल ने जेल सुधार में प्रशंसनीय कार्य किया किया है। कंडा जेल शिमला, बिलासपुर, धर्मशाला को खुली जेल तथा नाहन की खुली जेले को आदर्श कारागार बनाया गया है। शिमला स्थित बुक कैफे, मोबाईल कैंटीन, हिमाचल प्रदेश सचिवालय के सेल काउंटर पर ऐसे ही बंदी चला रहे हैं जिनका चाल-चलन व्यवहार चरित्र बढ़िया रहा है। बुक कैफे में साहित्यिक गोष्ठियां होती हैं। साहित्यिक गतिविधियों और बंदियों के संचालन से बुक कैफे चर्चा में आया। सोशल मीडिया पर इसकी खूब कवरेज होती है। साहित्य प्रेमी और पर्यटक शिमला घूमने आने पर बुक कैफे जाना चाहते हैं। और इसका संचालन कारा के बंदी बखूबी करते हैं। स्थानीय वासी भी बुक कैफे से बेकरी उत्पाद खरीदते हैं। लगता ही नहीं कि इसे जेल बंदी चला रहे हैं। दोनों ओर की भावनाएं और संवेदनाएं आदान प्रदान होते यहां देखा जा सकता है। कैदी खुली जेल में अपनी भावनाओं, संवेदनाओं से कड़ी मेहनत कर रहे हैं और बेकरी उत्पाद, वस्त्र सिलने, फर्नीचर का काम कर रहे हैं। उन्हें काम के बदले पगार भी मिल रही है। महिला बंदी भी ब्यूटी पार्लर में जाकर काम कर रही हैं। या दूसरे काम कर रही हैं। कुछ बंदी अपनी डायरी भी लिखते हैं। कुछ कविता कहानी भी लिखते हैं। अपनी भावनाओं अपनी संवेदनाओं को शब्दों में उतार कर कलमबद्ध करते दिखे।

कंडा सुधार कारागार में अनेक कार्यक्रम आयोजित होते रहे हैं। ऐसा ही एक साहित्यिक कार्यक्रम यहां हुआ जिसमें बंदियों ने कविता पाठ किया। इसमें बुजुर्ग से लेकर युवा बंदी थे। उनकी संवेदनाएं या भावनाएं को सुनकर कतई नहीं लगा कि यह कार्यक्रम जेल के भीतर है। सरकार भी समय समय उनके पुनर्वास के कदम उठाती रही है। गंभीरतापूर्वक देखा जाए तो महसूस होता है कि कोई भी गुनहगार बने नहीं रहना चाहता या होना चाहता है। स्वयं पर लगे दाग को मिटाना चाहता है।

महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, भगत सिंह और वीर सावरकर आदि ने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ब्रिटिश हुकूमत के विरोध स्वरूप जेल में रहते हुए देशहित में कई पुस्तकों का सृजन किया। अपने समय का सदुपयोग किया। अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। चारदिवारी में रहकर सृजन कार्य करना एक कठिन कार्य है लेकिन यहां के बाशिंदों ने अपने मन के उद्गारों को कागज पर लिख कर अपनी संवेदनाओं को समाज तक पहुंचाने का कार्य किया है। समाज को भी दीवारों के मध्य झांक कर देखना चाहिए। यही उनके प्रति हमारा दायित्व होगा। बस उम्मीद है कि पिंजरे में बंद ये पंछी, खुली हवाओं में विचरण करें।

(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक हैं)

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 सितंबर, 2019 अंक : 6

प्रधान सम्पादक
हरबंस सिंह ब्रसकोन

वरिष्ठ सम्पादक
विनोद भारद्वाज

सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

मातृभाषा का अनादर मां के अनादर के बराबर है। जो मातृभाषा का अपमान करता है, वह स्वदेशभक्त कहलाने लायक नहीं है।

– महात्मा गांधी

इस अंक में

लेख

कविता/ग़ज़ल

कहानी

व्यंग्य

समीक्षा

रपट

अपनी बात

'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को भूल, बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय के सूल।' आधुनिक हिन्दी साहित्य के पितामह भारतेन्दु हरिशचंद्र की कविता की इन पंक्तियों का अर्थ है कि कोई भी देश या समाज वास्तव में मातृभाषा की उन्नति के बिना तरक्की नहीं कर सकता। भाषा व्यक्ति को समाज से तथा समाज को राष्ट्र से जोड़कर देश को एक सूत्र में पिरोकर रखने का कार्य करती है। भाषा केवल शब्दों के प्रयोग से अभिव्यक्ति का जरिया ही नहीं, बल्कि यह भावों की वाहिका और विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम होती है। हर देश की भाषा वहां के समाज और संस्कृति की आत्मा होती है जिसकी झलक लोक संस्कारों में स्पष्ट तौर पर दृष्टिगोचर होती है। जिस समाज में भाषा एवं संस्कृति का परस्पर संबंध बेहद मजबूत होता है, वह देश उन्नति के मार्ग पर निरंतर अग्रसर रहता है। जिस देश में भाषा का लोप होता है, उस देश में संस्कृति के लोप होने का खतरा भी उत्पन्न हो जाता है। राष्ट्रकवि रामाधारी सिंह दिनकर ने भी कहा था कि 'जातीयों का सांस्कृतिक विनाश तब होता है, जब वे अपनी परंपराओं को छोड़कर दूसरों की परंपराओं को अपनाना शुरू कर दे।' विद्वानों के मतानुसार किसी भी देश की भाषा में वहां की सभ्यता एवं संस्कृति बचाने की ताकत होती है। हिन्दी भाषा में भी यह शक्ति अपने मूल गुणों के कारण विद्यमान है। यही कारण है कि वर्तमान प्रौद्योगिकी के युग में भी हिन्दी भाषा का अपना विशेष महत्त्व है और दिन प्रतिदिन इसका विस्तार हो रहा है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने हिन्दी भाषी न होते हुए भी हिन्दी को देश को जोड़ने वाली सर्वश्रेष्ठ भाषा कहा था। हिन्दी भाषा के सामर्थ्य एवं इसे बोलने वालों की संख्या के आधार पर हिन्दी केवल राष्ट्र भाषा बनने तक ही सीमित नहीं बल्कि यह राष्ट्र संघ की भाषा बनने की कुव्वत रखती है। पिछले करीब चार दशकों से हिन्दी बोलने वालों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी हो रही है और आज विश्व के करीब साठ देशों में हिन्दी भाषा को बोलने वाले लोग रहते हैं। इसकी श्रेष्ठता एवं व्यापकता का अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि दुनिया के अनेक देशों के विश्वविद्यालयों ने अपने पाठ्यक्रमों में हिन्दी का समावेश किया है जिसे सीखने व पढ़ने के लिए विदेशी विद्यार्थी खासी दिलचस्पी दिखा रहे हैं। हिन्दी के वैभव का अंदाजा इसे बोलने वालों की संख्या से सहज ही लगाया जा सकता है। अब तो नासा के वैज्ञानिक भी यह मानने लगे हैं कि हिन्दी अपने ध्वन्यात्मक स्वरूप के कारण कम्प्यूटर की भाषा बनने की असीम शक्ति रखती है। लेकिन इस दिशा में अभी बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। हिन्दी के महत्त्व को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने हिन्दी में समाचार सेवा भी आरंभ कर दी है। हालांकि वर्तमान में अरबी, चीनी, अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी व स्पेनिश ही संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषाएं हैं लेकिन हिन्दी की बढ़ती लोकप्रियता बताती है कि एक दिन हिन्दी भी सयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बन जाएगी। सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में इंटरनेट पर भी इसका विस्तार लगातार हो रहा है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी अपनी अलग पहचान कायम रखने में कामयाब हो, इसके लिए हर हिंदी भाषी को प्रण लेने की आवश्यकता है। प्रौद्योगिकी की सहायता से हमें हिन्दी भाषा के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए पूरे मनोयोग के साथ आगे आने की जरूरत है। तभी हमारी राजभाषा को राष्ट्र भाषा का सम्मान मिल सकेगा। वैसे भी सितंबर माह साहित्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। सितम्बर महीने में हम हिन्दी दिवस व शिक्षक दिवस दोनों ही बड़े उत्साह के साथ मनाते हैं और यह दोनों ही दिवस एक दूसरे के पूरक भी हैं। इस अंक में हिन्दी दिवस पर विशेष सामग्री जुटाई गई है। आशा है पाठकों को यह अंक पसंद आएगा।

संपादक

हिंदी दिवस पर

तकनीकी युग में हिंदी भाषा का स्थान

◆ डॉ. मंजु पुरी

भाषा लोक व्यवहार का सशक्त माध्यम है। ऐसा माध्यम जो हमें एक दूसरे को भली भांति जानने, पहचानने और समझने का अवसर देता है। इसलिए भाषा को बहता नीर कहा गया है। लेकिन बहुभाषिक देश होने के कारण हमारे देश में भाषा की समस्या भावुकता, जनपादिक मोह और पूर्वाग्रहों के कारण काफी उलझ गयी है। हिन्दी भाषा के सामर्थ्य और हिन्दी भाषियों की संख्या दोनों के ही आधार पर हिन्दी न केवल सम्पर्क भाषा या राष्ट्र भाषा तक ही अपना प्रभुत्व नहीं रखती बल्कि हिन्दी राष्ट्र संघ की भाषा बनने योग्य है। भाषा सम्बन्धी दृष्टिकोण में स्पष्टता न होने के कारण अनेक आपत्तियाँ उठती रहती हैं। संविधान में स्वीकृत सभी भारतीय भाषाएँ समान महत्त्व रखती हैं। सांस्कृतिक संवहन, सृजनात्मक अभिव्यक्ति, पारम्परिक प्रदेशों के परिरक्षण की दृष्टि से संविधान स्वीकृत सभी भारतीय भाषाएँ महत्त्वपूर्ण हैं और उनके निरन्तर गतिशील रहने की आवश्यकता है। निस्सन्देह हिन्दी भारतवर्ष के सर्वाधिक विस्तृत क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा है। देश के सम्पूर्ण क्षेत्रफल के 60 प्रतिशत भू-भाग में हिन्दी बोली जाती है और कुल आबादी के 40 प्रतिशत देशवासी हिन्दी बोलते हैं, इन आंकड़ों से हिन्दी के वैभव का अन्दाजा सरलता से लगाया जा सकता है, लेकिन इतने आंकड़ों के बावजूद भी हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना वह स्थान कायम नहीं कर पायी जिसकी वह अधिकारिणी है। राष्ट्रसंघ में स्वीकृत 5 भाषाओं (अंग्रेजी, फ्रैंच, स्पेनिश, रूसी और चीनी) के बाद अरबी और उसके बाद जर्मन अपना स्थान बनाने में प्रयत्नशील है, यहाँ हमें हिन्दी भाषा नदारद मालूम होती है, प्रभूत संख्या होने के बावजूद भी हिन्दी भाषा को अपने ही देश में न ही विश्व मंच पर उचित स्थान मिल सका है। यद्यपि दुनिया के 38 देशों में हिन्दी की अच्छी पहुँच है और विदेश के भी लगभग 94 विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पढ़ाई होती है। वर्तमान में हिन्दी भाषा का विश्व में क्या स्थान है, विशाल प्रभुत्व, वैज्ञानिकता, सरलता होने के बावजूद भी क्या कारण है कि हिन्दी राष्ट्रसंघ की छठी भाषा होने का दर्जा नहीं ले सकी?

निसन्देह भाषा की प्रतिष्ठा उसके रचनात्मक साहित्य और उसके सांस्कृतिक महत्त्व पर तो निर्भर करता ही है साथ ही साथ भाषा और आगे भी बढ़ सकती है यदि वह तकनीकी उपकरणों का सहारा ले। सूचना प्रौद्योगिकी एक सरल तन्त्र है जो तकनीकी प्रयोग के सहारे सूचनाओं का संकलन, प्रक्रिया व सम्प्रेषण करता है। ऐसे दौर में कोई भी राष्ट्र अपनी मातृभाषा को पूर्णतः सार्वभौमिक बनाए बिना उन्नति नहीं कर सकता, इसलिए तकनीकी को जन उपयोगी बनाना है तो उसे आम जन की भाषा में विकसित करना जरूरी है। क्योंकि कोई भी भाषा सामाजिक व्यवहारिक क्षेत्रों में कितना प्रयोग में आती है, उच्च ज्ञान-विज्ञान के सन्दर्भों में कितना प्रयोग में आ रही है, इन सब गतिविधियों से ही भाषा के विस्तार, उसकी अंतर्निहित क्षमता का ज्ञान होता है। वर्तमान समय में सरकारी कामकाज में पारदर्शिता लाने के लिए सूचनाओं का माध्यम जनभाषा होना जरूरी है। उदाहरण के लिए हम जापान, चीन, दक्षिण कोरिया को ले सकते हैं, इन विकसित देशों में तकनीक का प्रयोग उनकी अपनी मातृभाषा में होता है, यहाँ तक कि आम समाचारों के उत्तर यहां तक कि शेयर बाजार की गतिविधियों की जानकारी लेना चाहेंगे तो वो भी उनकी मातृभाषा में ही मिलती है, न कि हमारे देश की तरह अंग्रेजी में। जिसे समझना आम जन की पहुँच से भी बाहर है। अंग्रेजी सत्ता की गुलामी झेलने के कारण हिन्दी की बजाय अंग्रेजी के अधीन रहना ज्यादा पसन्द किया जाता है। यह हमारी गुलाम मानसिकता बन गयी है। निःसन्देह अगर हिन्दी भाषा को तकनीकी से जोड़ा जाएगा तो यह राष्ट्र संघ की भाषा भी बन सकती है। प्रयोजनमूलक भाषा के रूप में हिन्दी को समग्र भारतवर्ष के अर्थतन्त्र, वाणिज्य, व्यवसाय, लेन-देन दैनिक कार्यो से जुड़ना होगा।

हिन्दी वह भाषा है जिसकी गूंज हमारी धड़कनों में सुनाई देती है। इसलिए ही हिन्दी को भारतमाता के माथे की बिन्दी कहा जाता है।

निःसन्देह यह भी सत्य है कि जिस भाषा पर जितना भारी दबाव होगा, वह उतना ही तीव्रता से अपने विकास के लिए प्रयत्नशील रहेगी। ठीक उसी प्रकार वर्तमान सन्दर्भ में हिन्दी की

स्थिति है। तकनीकी युग में हिन्दी भाषा को आधुनिकीकरण और मानकीकरण दोनों प्रक्रियाओं से गुजरना होगा क्योंकि हिन्दी भाषा जितना अधिक तकनीकी शब्दावली, व्याकरण, प्रशिक्षण-सामग्री, ज्ञान-साहित्य, सन्दर्भ ग्रन्थ उपलब्ध करवाती है, उतना ही अधिक उसके प्रयोग की सम्भावना बढ़ेगी। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के ऊर्ध्वगामी विकास और जीवन स्तर को सुधारने के लिए तथा राष्ट्रीय विकास के लिए मानव संसाधन विकास में तकनीकी शिक्षा की भूमिका को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने अपने क्रमिक पंचवर्षीय कार्यक्रमों में तकनीकी शिक्षा के विकास पर बल दिया है।

विज्ञान और कला का यदि सही मिश्रण किया जाए तो तकनीकी लेखन में अपार सम्भावनाएँ है। 4जी, 5जी तकनीक से हम अछूते नहीं रह सकते क्योंकि आज के वैश्वीकरण युग में चाहे शिक्षा हो, सरकारी नीतियाँ हो, टेलिकॉम सेक्टर हो, चारों ओर इसका प्रभाव है। इसलिए ही रिजर्व बैंक, नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ बैंक मैनेजमेंट, इण्डियन ओवरसीज बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा इत्यादि ने अपने अधिकारियों को हिन्दी में प्रशिक्षित करवाने का कदम उठाया है ताकि आम जनता को तकनीक के माध्यम से जोड़ा जाए, जो भाषा हमारे दिलों की धड़कन है अगर वही तकनीक आम जनता को उनकी भाषा में मिलेगी तो देश व भाषा दोनों का स्तर ऊपर उठेगा। कबीर, प्रेमचन्द, निराला, महादेवी वर्मा, अज्ञेय इत्यादि अनेक श्रेष्ठ साहित्यकार जिनकी रचनाएँ सांस्कृतिक समृद्धि के कालजयी प्रतीक हैं। किन्तु वर्तमान सन्दर्भ में इन कालजयी साहित्यकारों का सहारा लेकर हम आगे नहीं बढ़ सकते। यद्यपि ये हमारे लिए प्रेरक हैं, श्रद्धेय हैं। आज प्रत्येक भाषा को समर्थ भाषा बनने के लिए उसे यातायात, सैनिक शिविर, प्रायोगिक प्रौद्योगिकी इत्यादि सभी क्षेत्रों में अपना स्थान बनाना होगा। यदि हिन्दी भाषा की विज्ञान के क्षेत्र में स्थिति देखें तो विज्ञान ऐसा क्षेत्र है जहाँ हिन्दी माध्यम की कल्पना भी नहीं की जाती। लेकिन 10वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन तकनीकी युग में हिन्दी भाषा का स्थान निर्धारित करता है। पहली बार इस हिन्दी सम्मेलन में 'विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी' सत्र का आयोजन किया गया। इस सत्र के माध्यम से विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा एवं अभियांत्रिकी विषयों में पाठ्यक्रम सामग्री का हिन्दी में विकास एवं हिन्दी में विज्ञान लोक प्रियकरण एवं विज्ञान संचार को प्रोत्साहित करना था। विज्ञान क्षेत्र में मौलिक विज्ञान लेखन को प्रोत्साहित किया जा रहा है ताकि विज्ञान के छात्र अपनी हिन्दी भाषा की ओर आकर्षित हो। विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी का स्थान सशक्त बनाने के लिए दैनिक विज्ञान समाचार पत्र का प्रकाशन, विज्ञान एवं तकनीकी प्रयोगशालाओं द्वारा सोशल मीड़िया पर हिन्दी में विज्ञान सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए। हिन्दी भाषा में विज्ञान विषयों पर वैज्ञानिक संस्थाओं द्वारा शोध पत्रिकाओं का प्रकाशन अनिवार्य किया जाए। हिन्दी में लेखन करते हुए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लोकप्रिय एवं प्रचलित अन्तर्राष्ट्रीय शब्दों के यथारूप देवनागरी लिपि में मानक शब्दों के साथ दिए जाने की स्वीकार्यता मिले। इन सब प्रयासों से हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में भी अपना स्थान बनाने में प्रयासरत है।

भाषा और शब्दों की जटिलता में न अटकते हुए अलग-अलग पारिभाषिक शब्दों को हिन्दी में यथोचित प्रचलित करना चाहिए। यदि विज्ञान के विद्यार्थी अपने शोध पत्र, शोध प्रबन्ध हिन्दी में छपवाते हैं तो यह हिन्दी के क्षेत्र में बड़ी कामयाबी होगी। विश्व में जो भी देश अपनी मातृभाषा में संचार और प्रचार कर रहें हैं, वह अपने देश की प्रगति में अपना योगदान भी दे रहे हैं। प्राणी कार्यिकी एवं जैव रसायन, प्रतिरक्षा विज्ञान, सूक्ष्म जीव विज्ञान एवं जैव प्रोद्यौगिकी इत्यादि पुस्तकें दर्शाती हैं कि विज्ञान के क्षेत्र में तकनीकी के प्रयोग से हिन्दी भाषा प्रयारत है।

विज्ञान और कला का यदि सही मिश्रण किया जाए तो तकनीकी लेखन में अपार सम्भावनाएँ है। 4जी, 5जी तकनीक से हम अछूते नहीं रह सकते। आज के वैश्वीकरण युग में चाहे शिक्षा हो, सरकारी नीतियाँ हो, टेलिकॉम सेक्टर हो, चारों ओर इसका प्रभाव है। इसलिए ही रिजर्व बैंक, नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ बैंक मैनेजमेंट, इण्डियन ओवरसीज बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा इत्यादि ने अपने अधिकारियों को हिन्दी में प्रशिक्षित करवाने का कदम उठाया है ताकि आम जनता को तकनीक के माध्यम से जोड़ा जाए, जो भाषा हमारे दिलों की धड़कन है अगर वही तकनीक आम जनता को उनकी भाषा में मिलेगी तो देश व भाषा दोनों का स्तर ऊपर उठेगा।

इलेक्ट्रीकल और इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग की पुस्तकें- बेसिक इलेक्ट्रॉनिक प्रबन्धन, इलेक्ट्रिकल सर्किट थ्योरी, पावर सिस्टम, अर्थशास्त्र इत्यादि पॉलिटेक्निक के छात्रों के लिए इलेक्टिकल मैनेजमेंट, माइक्रो प्रोसेसर, सी प्रोग्रामिंग इत्यादि हिन्दी माध्यम की पुस्तकें है जो सभी क्षेत्रों में मिल रही है जो निःसन्देह हिन्दी भाषा के स्थान को स्पष्ट कर रही हैं।

न्याय व्यवस्था में हिन्दी में पुस्तकें न होने पर यह आरोप लगाया जाता था कि हिन्दी न्यायालय के लिए उपयुक्त भाषा नहीं है। लेकिन हिन्दी में एलएलबी की विधिशास्त्र एवं विधि के सिद्धान्त, अपराध विधि, सम्पति अंतरण, कम्पनी विधि, अंतर्राष्ट्रीय विधि, श्रम कानून, प्रशासनिक विधि, अफसर अधिनियम, बीमा विधि इत्यादि पुस्तकें हिन्दी के प्रभुत्व को रेखांकित करती है, उपरोक्त सभी विषयों की पुस्तकों को हिन्दी में लिखने में यही उद्देश्य है कि आम जनता इन पुस्तकों के ज्ञान से लाभान्वित हो और अपने अधिकारों- कर्त्तव्यों की जानकारी

प्राप्त कर सकें। हिन्दी भाषा को विकास की ओर अग्रसर करने में तकनीक का बहुमूल्य योगदान है। यदि तकनीक है तभी सी-डैक की सहायता से चारों वेदों व अन्य पौराणिक ग्रन्थों को व्यास नामक वैब साइट पर प्रकाशित किया गया है। 'लीला' वैबसाइट की सहायता से भारतीय भाषाओं की पढ़ाई ऑनलाइन मुफ्त प्रदान की जाती है। 'लीप-आफिस सॉफ्टवेयर में अंग्रेजी हिन्दी शब्दकोष, अनुवाद, समानार्थी शब्दकोष, हिन्दी में ई-मेल आदि अंग्रेजी भाषा के समकक्ष सभी सुविधाओं को प्रस्तुत करता है। वास्तव में हिन्दी को कम्प्यूटर के लिए उपयोगी बनाने में सबसे अधिक सहायता हमारी देवनागरी लिपि और वर्णमाला के ध्वन्यात्मक स्वरूप ने की है। अक्षर, आलेख, शब्दावली, मल्टीवर्ड, संगम, देवनेस, नारद, चाणक्य, सुलिपि भाषा आदि हिन्दी सॉफ्टवेयर की सहायता से तकनीकी युग में हिन्दी अपना वर्चस्व स्थापित कर रही है।

'अनुसारक' तकनीक जो अनुवाद के क्षेत्र में मशीनी अनुवाद हेतु कार्य कर रही है। आई. बी. एम. टाटा कम्पनी ने आर. के. कम्प्यूटर्स की सहायता से 'हिन्दी डॉस' नाम से भी एक विशिष्ट तकनीक बनाई है। जिसकी विशेषता यह है कि इसमें मैन्यु व कमांड दोनों हिन्दी में है। मोटोरोला ने हिन्दी में 'पेजर' का विकास किया। इन सब के अतिरिक्त एक ऐसा क्षेत्र जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी को उसकी पहचान दिला रहा है। जी हाँ, खेल जगत ऐसा क्षेत्र जिसमें अंग्रेजी का पूर्ण वर्चस्व था, लेकिन अब हिन्दी कमेन्ट्री के कारण हिन्दी धीरे-धीरे बनी जा रही है। हिन्दी आज इतनी समर्थ हो गयी है कि इसके माध्यम से आंखों देखा हाल सुनाया जाता है। हिन्दी के ही शब्द जैसे बल्ला, गेंद, बल्लेबाजी, का प्रयोग होता है। सर्वसमावेशी भाषा के रूप में हिन्दी भाषा संस्कृत से लेकर सभी प्रान्तीय भाषाओं के साथ-साथ अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषाओं को शब्दों के भी अपने अन्दर समाहित करने की क्षमता रखती है।

तकनीकी युग में हिन्दी ने अपने परम्परागत स्वरूप को समय के अनुसार ढाल लिया है। हिन्दी भाषा प्रौद्योगिकी के रथ पर सवार होकर विश्वव्यापी बन रही है। ई-कामर्स, ई-बुक, इन्टरनेट, एस. एम. एस. वेब जगत में सहजता से हिन्दी गतिम गतिशील है।

यूनीकोड़ जिसमें सभी संकेतों को एकीकृत करने की व्यवस्था होती है। यह व्यवस्था सभी भाषाओं को समान महत्त्व देती है और अंग्रेजी के वैश्विक परिदृश्य को समाप्त कर रही है। प्रसिद्ध कवि चक्रधर जी की निम्नलिखित पंक्तियाँ हिन्दी और यूनिक्रोड़ के स्वरूप को प्रकट करती है।

''सबको प्यारी अपनी भाषा
कम्प्यूटर से जगी आशा
माँ हिन्दी की मिली गोद है
यूनीकोड का महामोद है।

हिन्दी की सहजता व वैज्ञानिकता के कारण ही माइक्रोसॉफ्ट, गूगल, याहू, आईबीएम तथा ओरेकल जैसी वैश्विक कम्पनियाँ विस्तृत बाजार और लाभ को देखते हुए हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं।

यह सत्य है कि हिन्दी अपनी अस्तित्व की रक्षा के लिए लगातार प्रयासरत है, इसके वाबजूद भी हिन्दी के वैज्ञानिक और तकनीकी विकास में अभी भी काफी चुनौतियाँ मौजूद हैं जैसे हिन्दी में वे सारी सुविधाएं होनी चाहिए जो अंग्रेजी और रोमन लिपि के पास है। डायनैमिक हिन्दी फॉन्टस के अभाव में कई बार साईट पर पढ़ना असुविधा जनक होता है। तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी का स्थान सशक्त बनाने के लिए छोटी-छोटी कमियों को समय रहते दूर करना चाहिए ताकि विकास के क्षेत्र में रूकावट न हो।

सूचना प्रोद्यौगिकी के बदलते परिवेश में हिन्दी भाषा धीरे-धीरे अपना स्थान प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है। हिन्दी की उपादेयता पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं लग सकता क्योंकि धीरे ही सही पर हिन्दी अपने स्वरूप को सुरक्षित रखते हुए आगे बढ़ रही है। यदि हम अंग्रेजी की चकाचौंध से बाहर न निकले और चीन, जापान, रूस, जर्मन, दक्षिण कोरिया जैसे देशों की भाँति अपनी मातृभाषा, सम्पर्क भाषा, लोकभाषा को विकसित नहीं कर पाये तो यह हमारे लिए बेहद शर्मनाक स्थिति होगी। इसलिए हमें यह प्रण लेना चाहिए कि चाहे तकनीकी की सहायता से ही सही, हमें हिन्दी भाषा के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए पूरे मनोयोग से आगे आना चाहिए।

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला-171005

सूचना प्रोद्यौगिकी के बदलते परिवेश में हिन्दी भाषा धीरे-धीरे अपना स्थान प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है। हिन्दी की उपादेयता पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं लग सकता क्योंकि धीरे ही सही पर हिन्दी अपने स्वरूप को सुरक्षित रखते हुए आगे बढ़ रही है। यदि हम अंग्रेजी की चकाचौंध से बाहर न निकले और चीन, जापान, रूस, जर्मन, दक्षिण कोरिया जैसे देशों की भाँति अपनी मातृभाषा, सम्पर्क भाषा, लोकभाषा को विकसित नहीं कर पाये तो यह हमारे लिए बेहद शर्मनाक स्थिति होगी। इसलिए हमें यह प्रण लेना चाहिए कि चाहे तकनीकी की सहायता से ही सही, हमें हिन्दी भाषा के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए पूरे मनोयोग से आगे आना चाहिए।

आलेख

संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषाओं में हिंदी

◆ डॉ. लीला मोदी

आज हम सभी चाहते हैं कि हिंदी संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बने, हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए। इसके लिए हम संकल्पबद्ध होकर प्रयासरत भी हैं। जिस दिन ऐसा होगा, देश और देशवासियों को गर्व होगा। वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषाएँ हैं-

1. अरबी 2. चीनी 3. अंग्रेजी, 4. फ्रेंच 5. रूसी 6. स्पेनिश इसके अतिरिक्त अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों की आधिकारिक भाषाएँ- संयुक्त राष्ट्र संघ की ये छः आधिकारिक भाषाएँ अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों की आधिकारिक भाषाएँ हैं। जैसे 1. अंतरराष्ट्रीय परमाणु उर्जा ऐजेंसी, 2. अंतरराष्ट्रीय विकास ऐजेंसी, 3. अंतरराष्ट्रीय दूरसंचार संघ, 4. संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन, 5. विश्व स्वास्थ्य संगठन, 6. संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन, 7. संयुक्त राष्ट्र अंतरराष्ट्रीय बाल आपातिक निधि।

संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषाएँ एवं हिंदी- सन् 1998 के पूर्व मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं के जो आँकड़े मिलते थे, उनमें हिंदी को तीसरा स्थान दिया जाता था। सन् 1991 के सैन्सस ऑफ इंडिया का भारतीय भाषाओं के विश्लेषण का ग्रंथ जुलाई 1997 में प्रकाशित हुआ यूनेस्को की टेक्नीकल कमेटी फॉर द वर्ल्ड लैंग्वेजिज रिपोर्ट ने अपने 13 जुलाई 1998 के पत्र द्वारा यूनेस्को -प्रश्नावली के आधार पर हिंदी की रिपोर्ट भेजने के लिए भारत सरकार से निवेदन किया। केंद्रीय हिंदी संस्थान के तात्कालीन निदेशक प्रोफेसर महावीर सरन जैन ने 25 जुलाई 1999 को यूनेस्को को अपनी विस्तृत रिपोर्ट भेजी। इसमें विभिन्न भाषाओं के प्रामाणिक आँकड़ों के आधार पर यह सिद्ध किया गया कि प्रयोक्ताओं की दृष्टि से विश्व में चीनी भाषा के बाद दूसरा स्थान हिंदी भाषा का है। प्रो. जैन ने अपनी रिपोर्ट में यह भी सिद्ध किया कि भाषिक दृष्टि से हिंदी और उर्दू में कोई अंतर नहीं है। इस प्रकार ब्रिटेन, अमेरिका कनाडा, आयरलैंड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड आदि सभी देशों के अंग्रेजी मातृभाषियों की संख्या के योग से अधिक जनसंख्या केवल भारत में हिंदी एवं उर्दू भाषियों की है। रिपोर्ट में यह भी प्रतिपादित किया कि ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक कारणों से सम्पूर्ण भारत में मानक हिंदी के व्यावहारिक रूप का प्रसार बहुत अधिक है। हिंदीतर भाषी राज्यों में बहुसंख्यक द्विभाषिक समुदाय द्वितीय भाषा के रूप में अन्य किसी भाषा की अपेक्षा हिंदी का अधिक प्रयोग करते हैं जो हिंदी के सार्वदेशिक व्यवहार का प्रमाण है। भारत की राजभाषा हिंदी है तथा पाकिस्तान की राजभाषा उर्दू है। इस कारण हिंदी-उर्दू भारत एवं पाकिस्तान में संपर्क भाषा के रूप में व्यवहृत है।

विश्व के लगभग तिरानवें देशों में हिंदी का या तो जीवन के विविध क्षेत्रों में प्रयोग होता है अथवा उन देशों में हिंदी के अध्ययन अध्यापन की सम्यक् व्यवस्था है। चीनी भाषा के बोलने वालों की संख्या हिंदी भाषा के बोलने वालों से अधिक है, किंतु चीनी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिंदी की अपेक्षा सीमित है। अंग्रेजी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिंदी की अपेक्षा अधिक है किंतु हिंदी बोलने वालों की संख्या अंग्रेजी भाषियों से अधिक है।

विश्व में इन तिरानवें देशों को हम तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं-

1. इस वर्ग के देशों में भारतीय मूल के अप्रवासी नागरिकों की आबादी देश की जनसंख्या में लगभग 40 प्रतिशत या उससे अधिक है। इन अधिकांश देशों में सरकारी एवं गैर-सरकारी प्राथमिक एवं माध्यमिक स्कूलों में हिंदी का शिक्षण होता है। इन देशों के अधिकांश भारतीय मूल के अप्रवासी जीवन के विविध क्षेत्रों में हिंदी का प्रयोग करते हैं एवं अपनी सांस्कृतिक पहचान के प्रतीक के रूप में हिंदी को ग्रहण करते हैं। इन देशों में निम्न देश उल्लेखनीय हैं- मारीशस, फिजी, सूरीनाम, गयाना त्रिनीडाड और टुबेको। त्रिनिडाड के अतिरिक्त अन्य सभी देशों में हिंदी का व्यापक प्रयोग व व्यवहार होता है।

2. इस वर्ग के देशों में ऐसे निवासी रहते हैं जो हिंदी को विश्व भाषा के रूप में सीखते हैं, पढ़ते हैं, तथा हिंदी में लिखते हैं। इन देशों की विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में प्रायः स्नातक एवं / स्नातकोत्तर स्तर पर हिंदी की शिक्षा का प्रबंध है। कुछ देशों के

विश्वविद्यालयों में हिंदी में शोध कार्य करने तथा डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त करने की भी व्यवस्था है। इन देशों में निम्नलिखित देशों के नाम उल्लेखनीय है-

महाद्वीप एवं देश

(क) अमेरिका महाद्वीप संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, मैक्सिको, क्यूबा,

(ख) यूरोप महाद्वीप रूस, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, बेल्जियम, हालैंड(नीदरलैंड्स), आस्ट्रिया, स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, नॉर्वे, स्वीडन, फिनलैंड, इटली, पोलैंड, चेक, हंगरी, रोमानिया, बल्गारिया, उक्रैन, क्रोशिया,

(ग) अफ्रीका महाद्वीप दक्षिण अफ्रीका, री-यूनियन द्वीप

(घ) एशिया महाद्वीप पाकिस्तान, बँगलादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, म्याँमार(बर्मा), चीन, जापान, दक्षिण कोरिया, मंगोलिया, उजबेकिस्तान, तजाकिस्तान, तुर्की, थाइलैंड,

(ङ) आस्ट्रेलिया हाद्वीप आस्ट्रेलिया।

2. इसका पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि भारत की राजभाषा हिंदी है तथा पाकिस्तान की राजभाषा उर्दू है। इस कारण हिंदी-उर्दू भारत एवं पाकिस्तान में संपर्क भाषा के रूप में व्यवहृत है। भारत एवं पाकिस्तान के अलावा हिंदी एवं उर्दू मातृभषियों की बहुत बड़ी संख्या विश्व के लगभग साठ देशों में निवास करती है। इन देशों में भारत, पाकिस्तान, बँग्लादेश, भूटान, नेपाल आदि देशों के आप्रवासियों/अनिवासियों की विपुल आबादी रहती है। इन देशों की यह आबादी संपर्क भाषा के रूप में 'हिंदी-उर्दू' का प्रयोग करती है। इन देशों में उपर्युक्त 46 देशों के अतिरिक्त निम्नलिखित देशों के नाम उल्लेखनीय हैं- अफगानिस्तान, अर्जेंटीना, अल्जेरिया, इक्वेडोर, इंडोनेशिया, इराक, ईरान, युगांडा, ओमान, कजाकिस्तान, कतर, कुवैत, कैन्या, कोट डी' इवोइरे, ग्वाटेमाला, जमाइका, जांबिया, तंजानिया, नाइजीरिया, निकारागुआ, न्यूजीलैंड, पनामा, पुर्तगाल, पेरु, पैरागुवै, फिलिपाइंस, बहरीन, ब्राजील, ब्रुनेई, मलेशिया, मिस्र, मेडागास्कर, मोजांबिक, मोरक्को, मौरिटानिया, यमन, लिबिया, लेबनान, वेनेजुएला, सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, सिंगापुर, सूडान, सेशेल्स, स्पेन, हांगकांग(चीन), होंडूरास।

विश्व हिंदी सचिवालय को शक्ति-संपन्न संस्था का स्वरूप देने के लिए इसके प्रबंधन को तीन स्तरों पर नियोजित किया। सचिवालय की सर्वोच्च समिति प्रशासनिक परिषद् है, जिसमें मॉरिशस और भारत दोनों देशों के विदेश मंत्री, शिक्षा मंत्री, कला एवं संस्कृति मंत्री तथा दोनों देशों के दो-दो हिंदी विद्वान सम्मिलित हैं। हिंदी विद्वानों का नामांकन दोनों देशों के प्रधानमंत्री करते हैं। यह प्रशानिक परिषद् सचिवालय की नीति निर्धारित करते हैं। प्रशासनिक परिषद् द्वारा निर्धारित नीति की देखरेख करने के लिए कार्यान्वयन समिति बनाई गई जिसमें मॉरिशस के विदेश मंत्री, शिक्षा मंत्री, कला एवं संस्कृति मंत्रालय के स्थायी सचिव और प्रधानमंत्री कार्यालय के प्रतिनिधि के साथ-साथ विदेश, शिक्षा, कला एवं संस्कृति मंत्रालय के सचिव एवं मॉरीशस स्थित भारतीय उच्चायुक्त होंगे।

विश्व में हिंदी फिल्मों, गानों, समाचारों तथा टी. वी. कार्यक्रमों का प्रसार- हिंदी को विश्व में हिंदी फिल्मों, गानों, समाचारों तथा टी. वी. कार्यक्रमों के प्रसार ने कितना लोकप्रिय बनाया है इसका आकलन करना भी कठिन है। विश्व में हिंदी एवं हिंदी की उपभाषाओं के समग्र टी.वी. चेनल्स की संख्या सर्वाधिक है जो 798 से 813 के मध्य मानी जाती है जो विश्व में हिंदी की लोकप्रियता का सूचक है। विश्व के बड़े भाग की जनसंख्या हिंदी की फिल्में देखती है, हिंदी के गाने सुनती है, हिंदी समाचार सुनती हैं, तथा टेलीविजन पर हिंदी कार्यक्रम देखती है। अतः हिंदी फिल्मों, गानों, समाचारों व कार्यक्रमों ने हिंदी के प्रचार प्रसार में अप्रतिम योगदान दिया है। केंद्रीय हिंदी संस्थानों में अध्ययन के लिए आने वाले सड़सठ देशों के विदेशी छात्रों ने इस बात की पुष्टि की है कि इनक कार्यक्रमों को सुनकर उन्हें हिंदी सीखने में मदद मिली है। यूरोप के देशों में कोलोन, बी.बी.सी, ब्रिटिश रेडियो, सनराइज सबरंग, के हिंदी सेवा कार्यक्रमों को हिंदी प्रेमी बड़े चाव से सुनते हैं। यूरोप के देशों में ऐसी गायिकाएँ हैं जो हिंदी फिल्मों के गाने गाती हैं एवं स्टेज शो करती हैं। इससे विश्व के प्रत्येक भू-भाग में हिंदी की लोकप्रियता सर्वविदित होती है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषाओं की तुलना में हिंदी भाषियों की संख्या -

'विस्टावाइड वेवसाइड', 'एनकार्टा एन्साइक्लोपीडिया' और 'द वर्ल्ड अल्मानेक एंड बुक ऑफ फैक्ट्स' के अनुसार दिसंबर, 2017 तक विश्व में हिंदी बोलने वालों की संख्या- 490 मिलियन से 500 मिलियन मानी गई है। इनमें मातृ भाषा वक्ताओं(फर्स्ट लैंग्वेज स्पीकरस) की संख्या- 370 मिलियन मानी गई है। द्वितीय भाषा वक्ताओं (सेकंड लैंग्वेज स्पीकरस) की संख्या-120 मिलियन से 130 मिलियन मानी गई है। अतः प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर निर्विवाद रूप से हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता मिलनी ही चाहिए।

विश्व हिंदी सचिवालय

विश्व के लगभग 137 देशों में फैले करोड़ों हिंदी भाषियों के लिए गर्व की बात है कि मॉरीशस की संसद् ने 12 नवम्बर, 2002 को एक अधिनियम के द्वारा मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना की गई। यह सचिवालय हिंदी के वैश्विक प्रचार प्रसार

के लिए, उसे संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए एवं हिंदी के जागतिक उन्नयन के लिए तीन स्तरों पर अपना विनम्र योगदान प्रदान कर रहा है- 1. पठन-पाठन, 2. प्रवचन प्रसारण, 3. सृजनात्मक लेखन।

विश्व हिंदी सचिवालय को कार्यरूप देने के लिए मॉरीशस और भारत सरकार के बीच 20 अगस्त 1999 को एक 'मेमोरेंडम ऑफ अंडरस्टैंडिंग' पर मॉरीशस के शिक्षा मंत्री और वहाँ नियुक्त भारतीय उच्चायुक्त के बीच हस्ताक्षर हुए। दोनों देशों ने तय किया कि विश्व हिंदी सचिवालय इन उद्देश्यों की संपूर्ति के लिए कार्य करेगा-

1. हिंदी को विश्व भाषा के रूप में प्रोन्नत करना और उसे संयुक्त राष्ट्र संघ की अधि त भाषा बनाने के लिए प्रयत्न करना।

2. हिंदी में अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन, संगोष्ठी, समूह विचार-विमर्श, चर्चा एवं कवि सम्मेलन जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करना।

3. हिंदी विद्वानों के योगदान को मान्यता प्रदान करने के लिए उन्हें सम्मानित/पुरस्कृत करना।

4. विश्वविद्यालय में हिंदी पीठ की स्थापना।

5. हिंदी में शोध कार्य के लिए प्रलेखन(दस्तावेज) केंद्र स्थापित करना, जिसमें हिंदी से संबद्ध सभी आँकड़े उपलब्ध हों।

6. अंतरराष्ट्रीय हिंदी पुस्तकालय की स्थापना करना।

7. 'अंतरराष्ट्रीय हिंदी पुस्तक मेला' का आयोजन करना।

8. ऐसे कार्यों को करना, जो हिंदी के उन्नयन के लिए आवश्यक हो। इस ज्ञापन पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद मॉरीशस सरकार ने विश्व हिंदी सचिवालय के मुख्यालय के निर्माण के लिए भूमि भी दे दी और भारत के तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने उसका शिलान्यास 1 नवम्बर, 2002 को कर दिया।

इस अधिनियम को कार्य रूप देने के लिए मॉरीशस और भारत सरकार के बीच एक समझौते पर 21 नवम्बर 2003 को हस्ताक्षर हुए। इस ऐतिहासिक समझौते में यह तय किया गया कि भारत और मॉरिशस दोनों देश मिलकर हिंदी को विश्व भाषा के रूप में प्रोन्नत करने के लिए और उसे संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषा बनाने के लिए कार्य करेंगे।

विश्व हिंदी सचिवालय को शक्ति-संपन्न संस्था का स्वरूप देने के लिए इसके प्रबंधन को तीन स्तरों पर नियोजित किया। सचिवालय की सर्वोच्च समिति प्रशासनिक परिषद् है, जिसमें मॉरिशस और भारत दोनों देशों के विदेश मंत्री, शिक्षा मंत्री, कला एवं संस्कृति मंत्री तथा दोनों देशों के दो-दो हिंदी विद्वान सम्मिलित हैं। हिंदी विद्वानों का नामांकन दोनों देशों के प्रधानमंत्री करते हैं। यह प्रशानिक परिषद् सचिवालय की नीति निर्धारित करते हैं।

प्रशासनिक परिषद् द्वारा निर्धारित नीति की देखरेख करने के लिए कार्यान्वियन समिति बनाई गई जिसमें मॉरिशस के विदेश मंत्री, शिक्षा मंत्री, कला एवं संस्कृति मंत्रालय के स्थायी सचिव और प्रधानमंत्री कार्यालय के प्रतिनिधि के साथ-साथ विदेश, शिक्षा, कला एवं संस ति मंत्रालय के सचिव एवं मॉरीशस स्थित भारतीय उच्चायुक्त होंगे।

इसके उपरांत सचिवालय के संचालन के लिए महासचिव की नियुक्ति का प्रावधान किया गया। महासचिव ही सचिवालय की प्रशासनिक परिषद् और कार्यान्वयन समिति के निर्णयों को कार्यरूप देने के लिए उत्तरदायी है। अब विश्व हिंदी सचिवालय अपने उद्देश्यों की संपूर्ति के लिए तत्पर है।

इस लक्ष्य को तीव्र गति देने के लिए भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 2015 में विश्व हिंदी सचिवालय भवन निर्माण के लिए फाउंडेशन स्टोन लगाया है। अब इसमें पाँच देशों- भारत, मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम और नेपाल की मेम्बरशिप है। भारत के प्रधानमंत्री ने हिंदी का प्रचार प्रसार करने के लिए वर्तमान सेक्रेटरी जनरल श्री विनोद कुमार मिश्रा के साथ, कार्य करने वाले सभी लोगों की सराहना की। मॉरीशस को शाबासी दी। इस दिशा में नई गति, नई उर्जा और नया विस्तार देने का आगाज किया।

भारत सरकार की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज हिंदी भाषा को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के लिए 129 वोट प्राप्त करने के लिए संयुक्त राष्ट्र में प्रयास कर रही हैं। हमें विश्वास है कि धीरे-धीरे इसमें हिंदी आप्रवास के अन्य देशों की सहायता हमें जरूर मिलेगी और शीघ्र ही हिंदी विश्व भाषा होने का गौरव प्राप्त करके संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बन जाएगी।

यहाँ मैं भी अपने 'मन की बात' कहना चाहूँगी। हिंदी के प्रवासी परिपेक्ष्य का राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक पक्ष संभावनाओं से भरा पूरा है, किंतु उन सपनों और संभावनाओं को मूर्त्त रूप देने के लिए दृष्टि चाहिए, संकल्प चाहिए और बजट भी चाहिए फिर पूरा एक एक्सचेंज कार्यक्रम बने ताकि विश्व में हिंदी का पूरा एक समाज बने। अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् में हिंदी के संभाग को अधिक पुष्ट करने पर ही 129 वोट प्राप्ति का सपना सिद्ध हो सकेगा।

प्राचार्य (हिंदी विभाग) राजकीय वाणिज्य स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, कोटा समन्वयक (हिंदी विभाग) कोटा विश्वविद्यालय कोटा, राजस्थान

निवास 291 मोती स्मृति टिपटा, कोटा, राजस्थान-324006

मोबाइल- 0 94628 299006

जन्मशती पर विशेष

बीसवीं सदी की महान साहित्यकार अमृता प्रीतम

◆ योग राज शर्मा



अमृता प्रीतम 20 सदीं की एक महान कवयित्री और उपन्यासकार ही नहीं बल्कि एक ऐसी प्रख्यात साहित्यकार थी, जिन्होंने पंजाबी साहित्य को दुनिया के नक्शे पर एक अलग पहचान दिलवाई है। अमृता प्रीतम के जीवन और साहित्य के बीच कोई अंतर नजर नहीं आता है। उनके लेखन में यथार्थ, खुलापन तथा बेबाकी साफ तौर पर झलकता है। उन्होंने अपने मन मस्तिष्क में उमड़े विचारों को अक्षरों में पिरोकर साहित्य को एक नई पहचान दी है। हालांकि उनका संपूर्ण जीवन संघर्षमय ही बीता।

31 अगस्त, 1919 को गुजरांवाला, पंजाब (वर्तमान पाकिस्तान) में जन्मीं अमृता प्रीतम ने पंजाबी साहित्य में 60 साल से भी ज्यादा समय तक राज किया। इस महान कवयित्री की लोकप्रियता भारत के साथ साथ पाकिस्तान में भी रही है। अपने जीवन में करीब 100 किताबें लिखने वाली महान कवयित्री अमृता प्रीतम को उनकी महत्त्वपूर्ण रचनाओं के लिए कई बड़े पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। इनका शुरुआती जीवन काफी संघर्षपूर्ण रहा। इनकी शिक्षा लाहौर से हुई। बचपन से ही उन्हें पंजाबी भाषा में कविता, कहानी और निबंध लिखने में बेहद दिलचस्पी थी, उनमें एक कवयित्री की झलक बचपन से ही दिखने लगी थी। जब वह महज 11 साल की थी, तब इन पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा, उनके सिर से मां का साया हमेशा के लिए उठा गया, जिसके बाद उनके नन्हें कंधों पर घर की सारी जिम्मेदारी आ गई। इस तरह इनका बचपन जिम्मेदारियों के बोझ तले दब गया।

अद्‌भुत प्रतिभा की धनी अमृता प्रीतम जी उन महान साहित्यकारों में से एक थीं, जिनका महज 16 साल की उम्र में ही पहला संकलन प्रकाशित हो गया था। 1947 में अमृता प्रीतम जी ने भारत-पाकिस्तान के बंटवारे को बेहद करीब से देखा था और इसकी पीड़ा महसूस की थी। अपनी कविता "आज आखां वारिस शाह नू" में भारत-पाक विभाजन के समय में अपने गुस्से को इस कविता के माध्यम से दिखाया था। साथ ही इसके दर्द को बेहद भावनात्मक तरीके से अपनी इस रचना में पिरोया था। उनकी यह कविता काफी मशहूर भी हुई थी और इसने उन्हें साहित्य में एक अलग पहचान दिलवाई थी।

आजादी मिलने के बाद भारत-पाक बंटबारे के समय इस महान कवयित्री अमृता प्रीतम का परिवार दिल्ली में आकर बस गया, हालांकि भारत आने के बाद भी उनकी लोकप्रियता पर कोई फर्क नहीं पड़ा, भारत-पाक दोनों ही देश के लोग उनकी कविताओं को उतना ही पसंद करते थे, जितना कि वे विभाजन से पहले करते थे। भारत आने के बाद अमृता प्रीतम जी ने पंजाबी भाषा के साथ-साथ हिन्दी भाषा में लिखना शुरु कर दिया। अमृता प्रीतम की गिनती उन साहित्यकारों में होती है, जिनकी रचनाओं का विश्व की कई अलग-अलग भाषाओं में अनुवाद किया गया है। अमृता जी ने अपनी रचनाओं में सामाजिक जीवन दर्शन का बेबाक एवं बेहद रोमांचपूर्ण वर्णन किया है।

उन्होंने साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर बेबाकी से लिखा हैं। अमृता की रचनाओं में उनके लेखन की गंभीरता और गहराई साफ नजर आती है। विलक्षण प्रतिभा की धनी इस महान

कवयित्री ने अपनी रचनाओं में तलाकशुदा महिलाओं की पीड़ा एवं शादीशुदा जीवन के कड़वे अनुभवों को बेहद खूबसूरती से कागज पर अपनी लेखनी के माध्यम से उतारा है।

अमृता प्रीतम द्वारा रचित उपन्यास 'पिंजर' पर वर्ष 1950 में एक फिल्म पिंजर भी बनी थी, जिसने काफी लोकप्रियता हासिल की थी। अपने जीवन में अमृता प्रीतम ने करीब 100 किताबें लिखीं थी, जिनमें से इनकी कई रचनाओं का अनुवाद विश्व की कई अलग-अलग भाषाओं में हुआ है। उपन्यास पिंजर, कोरे कागज, आशू, पांच बरस लंबी सड़क उन्वास दिन, अदालत, हदत्त दा जिंदगीनामा, सागर, नागमणि, और सीपियाँ, दिल्ली की गलियां, तेरहवां सूरज, रंग का पत्ता, धरती सागर ते सीपीयां, जेब कतरे, पक्की हवेली, कच्ची सड़क। उनकी आत्मकथा-रसीदी टिकट उनके जीवन की सच्चाई, संघर्ष व टूटे हुए प्यार और मोहब्बत की एक यथार्थ पटकथा है। कहानी संग्रह : कहानियों के आंगन में, कहानियां जो कहानियां नहीं हैं। संस्मरण : एक थी सारा, कच्चा आँगन तथा कविता संग्रह : चुनी हुई कविताएं उनकी प्रमुख रचनाएं है।।

अमृता प्रीतम को उनकी अद्‌भुत रचनाओं के लिए कई अंतराष्ट्रीय और राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। 1956 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यह पहली पंजाबी महिला थी। इसके साथ ही भारत के महत्त्वपूर्ण पुरस्कार पद्‌म श्री हासिल करने वाली भी वे पहली पंजाबी महिला थी। इसके अलावा इन्हें पंजाब सरकार के भाषा विभाग द्वारा पुरस्कार समेत ज्ञानपीठ आदि पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। इसके अलावा अमृता प्रीतम को साहित्य अकादमी पुरस्कार (1956), पद्‌मश्री (1969), पद्‌म विभूषण (2004), भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार (1982), बुल्गारिया वैरोव पुरस्कार (बुल्गारिया 1988), डॉक्टर ऑफ लिटरेचर (दिल्ली युनिवर्सिटी- 1973), डॉक्टर ऑफ लिटरेचर (जबलपुर युनिवर्सिटी-(1973), फ्रांस सरकार द्वारा सम्मान (1987), डॉक्टर ऑफ लिटरेचर (विश्व भारती शांतिनिकेतन- 1987 शामिल हैं। लंबी बीमारी के चलते 31 अक्टूबर 2005 को 86 साल की उम्र में उनका देहांत होने से एक युग का अंत हो गया। अमृता प्रीतम भले ही आज इस दुनिया में नहीं है, लेकिन आज भी उनके द्वारा रचित साहित्य आज भी उनकी मौजूदगी का एहसास करवाते हैं।

अमृता प्रीतम का हिमाचल प्रदेश से भी गहरा नाता रहा है। प्रदेश का कांगड़ा जिला जो उस समय पंजाब का ही हिस्सा था, के साथ उनका गहरा रिश्ता रहा। बात चाहे धौलाधार की खूबसूरती की हो या अंद्रेटा में सरदार शोभा सिंह के साथ उनके प्रगाढ़ संबंधों की, उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से इसे आम लोगों तक पहुंचाया है। पहाड़ों की खूबसूरती व अंद्रेटा में सरदार सोभा सिंह के स्टूडियो के आंगन से पूर्णिमा के बाद रात को देरी से उगते चांद को निहारने का विहंगम चित्रण अमृता प्रीतम ने शब्दों में यूं किया है 'पूर्णिमा अभी-अभी गुजरी थी। चांद जरा देर से उगता था। पर सोभा सिंह जी ने कहा कि हम खेतों के किनारे खड़े होंगे और पहाड़ों में से उगता चांद देखेंगे। जितने जलाल से चांद उगा, हमारे कलाकार ने उतने चाव से उसका स्वागत किया। वादी की सो रही परी का अंग-अंग चमक उठा और साथ ही इन्तजार करने वाले मुंह चमक उठे। शहरों में तों चांद और सूरज इस तरह आते और चले जाते हैं, जैसे बिना बुलाए आ जाते हों और बिना पूछे चले जाते हों।'

गिरिराज कार्यालय, शिमला-171 005

अमृता प्रीतम का हिमाचल प्रदेश से भी गहरा नाता रहा है। प्रदेश का कांगड़ा जिला जो उस समय पंजाब का ही हिस्सा था, के साथ उनका गहरा रिश्ता रहा। बात चाहे धौलाधार की खूबसूरती की हो या अंद्रेटा में सरदार शोभा सिंह के साथ उनके प्रगाढ़ संबंधों की, उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से इसे आम लोगों तक पहुंचाया है। पहाड़ों की खूबसूरती व अंद्रेटा में सरदार सोभा सिंह के स्टूडियो के आंगन से पूर्णिमा के बाद रात को देरी से उगते चांद को निहारने का विहंगम चित्रण अमृता प्रीतम ने शब्दों में यूं किया है 'पूर्णिमा अभी-अभी गुजरी थी। चांद जरा देर से उगता था। पर सोभा सिंह जी ने कहा कि हम खेतों के किनारे खड़े होंगे और पहाड़ों में से उगता चांद देखेंगे। जितने जलाल से चांद उगा, हमारे कलाकार ने उतने चाव से उसका स्वागत किया। वादी की सो रही परी का अंग-अंग चमक उठा और साथ ही इन्तजार करने वाले मुंह चमक उठे। शहरों में तों चांद और सूरज इस तरह आते और चले जाते हैं, जैसे बिना बुलाए आ जाते हों और बिना पूछे चले जाते हों।'

आलेख

अंदरेटे के दस दिन

◆ अमृता प्रीतम

दिल्ली का शोर-गुल सिर्फ मेरे कानों में ही नहीं गूंजता था, मेरे सिर की सारी जान पर अपना दवाब डाल रहा था। मुझे अन्दरेटे की खामोशी के सिवाय अन्य कोई उपयुक्त स्थान नहीं दिखता था। कोई दस दिन के लिए मैं सोभा सिंह जी की मेहमान बनी। पहले दिन ही जब स्टूडियो में चाय आई, प्याले चार थे- सरदार जी, उनकी पत्नी, इन्दरजीत (चित्रकार) और मेरे लिए। पर चाय के गिर्द हम सात जने बैठे हुए थे- कृष्णमूर्ति, एमरसन, खलील जिब्रान, सोभा सिंह जी के दायें बाये बैठे हुए थे। वे तीनों ही नहीं। दूसरे दिन उनका चौथा साथी थोरो भी आ गया और तीसरे दिन वाल्ट विटमैन भी। ये पांचों सोभा सिंह जी के पांच प्यारे है।

पूलणमा अभी-अभी गुजरी थी। चांद जरा देर से उगता था। पर सोभा सिंह जी ने कहा कि हम खेतों के किनारे खड़े होंगे और सामने ऊंचे पहाड़ों में से उगता चांद देखेंगे।

जितने जलाल से चांद उगा, हमारे कलाकार ने उतने ही चाव से उसका स्वागत किया। वादी की सो रही परी का अंग- अंग चमक उठा और साथ ही इन्तजार वाले मुंह चमक उठे।

- 'शहरों में चांद-सूरज इस तरह आते हैं और चले जाते है, जैसे बिना बुलाए ही आ जाते हो और बिना पूछे ही चले जाते हो।' मैंने कहा।

'मैंने अपने घर में पानी का तालाब ही इसलिए बनवाया है कि उसमें से चांद को देख सकूं। मेरे पास एक आदमी आया और कहने लगा- इतनी सी बात के लिए तालाब बनवाने की क्या आवश्यकता थी? चांद वैसे ही दिखाई दे जाता है।' सोभा सिंह जी हंसने लगे।

जब हम लौटे तो कृष्णमूर्ति उनका समर्थन कर रहा था। 'वास्तविक जानकारी यह नहीं होती, जो बाहर से किसी चीज में से प्राप्त की जाती है। यह एक प्रकाश है, जो हमारे भीतर से जागता है और हरेक उस वस्तु को आलोकित कर जाता है, जो इसके साथ छू जाए।'

सोभा सिंह जी के घर कुछ दिनों के लिए एक बुजुर्ग दोस्त ठहरे हुए थे। उन्हें अक ज्यातिष का बहुत शौक था। सबके नामों और जन्म तारीखों से वे नम्बर गिनते रहते थे। उन्होंने जब हमार नम्बर गिने तो मेरा चार था और इन्दरजीत का आठ। वे सज्जन घबरा गए और कहने लगे कि अपन नाना की मात्राएं बदलकर नम्बर बदल लो। जन्म तारीखें तो बदल नहीं सकती, पर नामों के नम्बर बदल लेने से कुछ असर कम हो जाएगा। उन्होंने अपनी किताब निकाली। उसमें लिखा हुआ था : चारा आठ बड़े मुश्किल नम्बर है। सबसे मुश्किल नम्बर। इन नम्बरो वाले लोगों के लिए जीवन एक सा होती है। ये लोग दुनिया के स्थापित किए असूलों का सदा उल्लंघन करते हैं। लोग उन्ह का समझ सकते। धन-दौलत इनकी मंजिल नहीं होती। यह किस्मत के बच्चे कहे जा सकता।

इन्दरजीत के मन में जैसे कोई दिया जग गया। बड़े दिल से कहने लगा, मैं इससे कम कभी नहीं होना चाहूंगा। खलील जिब्रान कहता था कि मुझे अपनी आत्मा के आगे सात बार झुकना पड़ा।

मुश्किल राह को छोड़कर आसान राह पकड़ी थी। मैं अपनी आत्मा के आगे झुकना नहीं चाहता। मुझे आसान राह की आवश्यकता नहीं। मैं आठ नम्बर को और तीखा करूंगा।' --- सोभा सिंह जी ने इन्दरजीत के आठ नम्बर को शीघ्रता से तीखा करना चाहा। उन्होंने अपने 'थोरो' को बुला लिया। थोरो कह रहा था, अगर तुमने वायु में कोई महल बनाए हैं, तो वे व्यर्थ नहीं जाएंगे। उन्हें वहीं रहने दो, सिर्फ उनके नीचे नींव रख दो।' आगे वह कह रहा था, 'काहिरा में एक कलाकार रहता था-पूर्णता की खोज में। उसके दोस्तों ने धीरे-धीरे उसे त्याग दिया, क्योंकि वे समय पाकर बूढ़े हो गए थे। पर कलाकार को कोई भी क्षण बूढ़ा नहीं बना पाया था। क्योंकि उसने समय के साथ समझौता नहीं किया था। समय उसका रास्ता छोड़कर सिर्फ आहे भरता रहा था, क्योंकि वह उसे जीत नहीं सका था।'

इन्दरजीत का सम्मान और बढ़ गया। वह बार-बार कहता था, 'यह किस्मत का बच्चा बनने वाली बात बहुत बढ़िया है।' और सोभा सिंह जी ने इन्दरजीत का सम्मान रखने के लिए उसे 'नम्बर आठ' पुकारना शुरू कर दिया।

धान की कटाई प्रायः समाप्त हो चुकी थी। कुछ एक खेत रह गए थे। शहरों सी भगदड़ तो गांवों में कभी नहीं होती, पर पहाड़ी गांवों में जिन्दगी और भी मन्द गति से चलती है। सोभा सिंह जी हमें कुछ पहाड़ी घरों में ले गए। आजकल उन घरों में कुछ

चहल-पहल थी। क्योंकि दीपावली समीप आ रही थी। किसी घर की बहू घर लीपने-पोतने में लगी हुई थी, किसी घर की बहू सारे आंगन में लक्ष्मी के पैरों के चिन्ह बना रही थी और किसी घर की नवयुवती टाट के धागे रंगकर गलीचा बुनने में लगी थी। मक्की के भुट्टे और आमों की अमावड़िया सूखने पड़ी हुई थीं। ----सघन वृक्षों में जब सोभा सिंह जी बैठे हुए थे, तो मैं उन्हें वन देवता कहती थी। आज मैंने उन पहाड़ियों को देखा, जो उन्हें देवता की तरह पूजती है। आंखों के आगे आंचल लिए उनके पैर पर माथा नवाती है। वे पैरों को पीछे खींचते रह जाते है। --- 'न बीवी, आप इस तरह न किया करो।' परन्तु वे पहाड़िने शायद यह सोचती है कि इस इतने महान कलाकार ने बड़े-बड़े शहरों से मुंह मोड़कर हमारे कच्चे घरों का पड़ोस स्वीकारा है तो हमारा इनके साथ सम्बन्ध बड़ा है, और यह सम्बन्ध दिलों के आदर के अतिरिक्त कैसे प्रकट किया जा सकता है?

डलहौजी का खजियार मुझे पुकारता रहा था, कुल्लू की वादी ने भी आवाज दी, पर अन्दरेटे की पकड़ जबरदस्त थी। एक दिन बैजनाथ जाने के सिवाय मै और कहीं नहीं गई। दफ्तर से ली हुई छुट्टी के दिन गुजर गए थे और अर्जी भेजी हुई थी, वे दिन भी गुजर रहे थे। मेरे लौट जाने में दो दिन और थे, जब सोभा सिंह जी ने कहा, 'धर्मशाला में एक बस्ती है छोटे-छोटे घरों की, पर वे छोटे-छोटे घर इस तरह फूलों और पत्तों में लिपटे हुए है जैसे उन घरों में फूल न उगे हो वरन् फूल पत्तों की वादी में छोटे-छोटे घर उग आए हों। अगर आप, इन्दरजीत और मैं मिलकर वे देखें....' । 'जरूर चलिए।'

'सुबह चार बजकर पच्चीस मिनट पर गाड़ी जाती है। रात स्टेशन पर रहेंगे। स्टेशन मास्टर को कहला भेजता हूं।'

उस रात भोजन के बाद जब सामान लेकर हम तीनों अन्दरेटे से चले, तो सारी आबादी गहरे अंधकार में सोई हुई थी। पहाड़ों की चोटियों पर पड़ी हुई सफेद बर्फ अब सांवली हो गई थी। खेतों को चीरती हुई जो पगडण्डी स्टेशन को जाती है, पैर टटोलकर हम उसे ढूंढ रहे थे। स्टेशन वहां से डेढ़ मील था। एक बार रास्ता ढूंढने के लिए हमें टार्च भी जलानी पड़ी, पर अंधेरे के नर्म जिस्म पर बैटरी का प्रकाश चुभता था। इससे फिर टार्च नहीं जलाई। दांयी ओर एक पहाड़ पर आग जल रही थी। दूर से एक दिये की भांति दिखती थी।

'ये गद्दी होंगे। ज्योंही सर्दी पड़ती है, ये नीचे उतरते हैं। कल यह आग और निकट आ जाएगी- 'सोभा सिंह जी ने कहा। - 'मोड़ खाती पगडण्डी और वृक्षों की परछाईं के साथ कभी-कभी वह आग ऐसे लगती थी जैसे चल रही हो।" बूंदें पड़ने लगी। सोभा सिंह जी के स्वास्थ्य की हमें कुछ चिंता थी, पर वे कहने लगे, मनुष्य बड़ा कि बारिश।'

दूसरे दिन धर्मशाला पहुंचकर हम लोगों ने होटल में सामान रखा ही था कि हमारे कलाकार के फूल की महक चारों ओर फैल गई। सोभा सिंह जी के गिर्द उनके प्रेमियों का दरबार-सा लग गया। धर्मशाला के किसी कवि ने सोभा सिंह जी को लेकर कविता लिखी थी और किसी ने उनके प्रसिद्ध चित्र 'सोहनी' पर कुछ लिखा था। किसी दोस्त ने उनके लिए स्वेटर बुनकर रखा हुआ था और किसी ने फूलों के बीज संभाल रखे थे। फूलों की वादी में जिस दोस्त का घर था, उनका प्यार फूलों सा कोमल था। उसके पास छब्बीस किस्म का गुलाब था। नरगिस अभी सारी वादी में किसी के घर नहीं खिली थी, पर उसके घर वह खिली हुई थी। कांगड़ा कलम की पुरानी यादो को उसने रूमालों में समेट-समेट कर अपने बक्सों में ऐसे संभाला हुआ था कि जैसे अपने प्रिय के पत्र हों।

'एक बात ही मुश्किल है। मेरे दोस्त जब मेरे दुबले से जिस्म को देखते हैं, तो सोचते हैं कि एक दिन में ही इसे इतना खिला दे कि इसके जिस्म पर मांस चढ़ आए.... 'दोस्तों के आतिथ्य को देखकर आखिर सोभा सिंह जी ने कहा।

एक दोस्त जीप लेकर आए और हम 'भागसुनाग' देखने चले। सोभा सिंह जी भागसुनाग का अर्थ कर रहे थे-भाग्य का चश्मा।

चश्मे के आगे खाई चलती है। छोटी पथरीली पगडण्डी और ऊपर चढ़ती जाती है। सामने स्लेटों की खान है। सांचे और छैनियां लिए कितने ही मजदूर स्लेटें काटते हैं, जैसे वे सब फरहाद है और दिन-रात पहाड़ काटते हैं। -- मैं सोच रही थी, ये सब मजदूर-ये हमारे फरहाद! जिन्दगी की शीरी ने कैसी शर्त बदी है? इन मजदूरों के जिस्म कितनी देर तक चिथड़ों में लिपटे रहेंगे? इनके जवान हाथ और इनके बूढ़े हाथ तेसों और छैनियों के साथ कब तक जूझते रहेंगे? और भाग्य का चश्मा कब तक इनके जीवन से कुछ ही कदमों के फासले पर बहता रहेगा?

हमारे कलाकार-हमारे फरहाद! कला की शीरी ने कैसी शर्त लगा है? दस-दस घण्टे रोज की तपस्या और कला के शाहकार बरसों दीवारों पर लगे रहेंगे। किसी की आंख उनका मूल्य नहीं आंकेगी और भाग्य का चश्मा पत्थरों से सिर मारता रहेगा।

यह हमारी दुनिया के आशिक हमारे फरहाद! मुहब्बत की शीरी ने कैसी शर्त बांधी है? वर्षो की लगन, उमरों की तड़प छातियों से लगे हुए स्वप्न सिसकते रहेंगे और भाग्यों का चश्मा विरह की घाटी में बहता रहेगा।

दो पंक्तियां मेरे मुंह से निकलीं ओंठ जैसे ऊंचे पर्वत हों, और सांस का पानी बह रहा हो भाग्य का चश्मा जिसे कहते हैं उसके साथ हमारा क्या नाता?

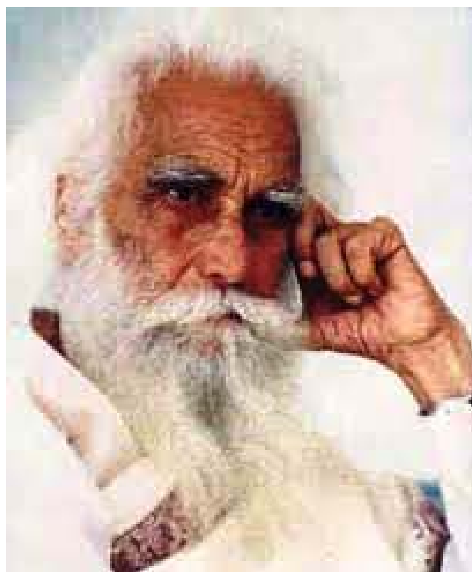
और पानी को छुए बिना हम सब भागसुनाग से लौट पड़े। और पल भर के बाद एक बजे की बस लेकर मुझे और इन्दरजीत को दिल्ली लौट जाना पड़ा। हमारे रास्ते बिछुड़ने लगे।

000

आलेख

कलाकार सोभा सिंह

◆ अमृता प्रीतम



छोटी-सी मेज पर लकड़ी की एक तख्ती रखकर सोचा सिंह जी के कलाकार हाथी समाज की चिकनी मिट्टी को जोड़ा। बहुत समय से मेरी मूर्ति बनाना चाहते थे। सामने कुसी पर बैठी हुई थी। दो होल्डरों के मुंह के आगे बारीक-सी दो तारों के धागे से बांधकर जमको मूर्तिकार हाथों में मिट्टी से मेरी आकृति को उभार लिया।

‘आप अगर चाहे तो साथ-साथ पत्ती भी जाइए। आपने खलील जिब्रान पढ़ा है।’ सोभा सिंह ने मुझसे पूछा।

और उसको तीन पुस्तकें पड़ी हैं।’ ‘कौन कौन सी? ’दी प्रोफेट, ए टीयर एण्ड ए स्माइल तथा सीक्रेट्स ऑफ दी हार्ट।’

‘आज उसकी एक और पुस्तक पढ़िए।’ और सोभा सिंह जी ने अपनी दायीं तरफ पड़ी एक पुस्तक उठाकर मुझे अपनी पसन्द का पन्ना निकाल दिया।

‘आपको कौन-कौन से लेखक बहुत अच्छे लगते है?’ मैंने पूछा। ‘मुझे खलील जिब्रान बहुत पसन्द है, वाल्ट विटमैन और कृष्णमूर्ति भी।’ ‘और चित्रकार?’

‘अंग्रेज चित्रकार ’जोन मिले’ और ’लार्ड लिटन’ बड़े यथार्थवादी और अच्छे लगे हैं। माईकेल एन्जोला भी बहुत बड़ा कलाकार था, पर उसमे एक कमी थी कि वह जिन्दगी से भागकर कला का आश्रय लेता था। वास्तव में कला जिन्दगी के लिए होनी चाहिए।

मैं बहुत छोटी उम्र से सोभा सिंह जी की कला को देखती आ रही हूं। पिता जी जब उनके घर जाते थे, मैं साथ हुआ करती थी। वे सारे चित्र और उनके चित्रकार का लाहौर वाला स्टूडियो, दिल्ली का स्टूडियो, प्रीतिनगर का घर और अब कांगड़ा वैली में अन्दरेटे वाला स्टूडियो मेरी यादों में से गुजर गए।

‘आपकी नजर में आपका कौन सा चित्र सबसे श्रेष्ठ है?’ मैंने पूछा ’मैंने ’सोहनी’ का चित्र भी उसी लगन के साथ बनाया है, जिस लगन से गुरु गोविन्द सिंह का चित्र।’ ‘मेरा मतलब है कि जिसमें आपने अपने को सबसे अधिक समो डाला हो।’

‘एक चित्र है, मैंने उसका नाम ‘पोइट्री’ रखा है। उर्दू कविता का प्रभाव लेकर मैंने वह बनाया है। उसमें एक तारों वाला साज़ है, और साज़ वाले की आंखों के आगे एक औरत और पास शराब।’

‘देखने वालों को अपनी ‘सोहनी’ शायद कभी नहीं भूलेगी। उसमें एक दैवीय प्रभाव है।’

‘औरत का यह प्रभाव मेरे दिल में एक खास व्यक्ति ने बिठाया था। मैं जब आठ-नौ बरस का था, मेरी मां का मृत्यु हो गई। मेरी दोनों बहनें ब्याही गई थीं, मेरी अर्द्धबहनें....’

“अर्द्धबहनें कैसे?”

“एक मां की तरफ से और एक पिता की।”

“कौन सा गांव था आपका?”

“श्रीहरगोविंद पुरा।” घर में सिर्फ पिता जी थे?

“जी हां, सिर्फ पिता जी। पर वे कहा करते थे कि अगर तू लड़का न होकर पत्थर पैदा हो जाता तो नमक पीस लेते, अब तुझे क्या करें?”

“आप पढ़ते नहीं थे क्या?”

“पढ़ने की तरफ मेरा जी नहीं लगता था। घर से दौड़ जाता था। गांव के निकट एक बंध थी-रेतीली चट्टानों में से पानी गिर-गिरकर जो जगह बनती है, उसे बंध कहे हैं। कड़ाहों के टूटे हुए कुंडे और पतरियां लेकर मैं बंध में चला जाता था। एक चाकू मेरे पास रहता था, उन रेतीली चट्टानों को खोद-खोदकर मैं मूर्तियां बनाता था।”

“उस समय राम या कृष्ण ही बनाते होंगे?”

“जी हां, मैंने राम, सीता और हनुमान की बड़ी मूर्तियां बनाई

थीं।"

"पिता जी ने देखी थी?"

"हां जी, देखी थी। दिल में प्रसन्न भी हुए, पर वे कहते थे : तू सारी उम्र भूखा मरेगा। कला रोटी नहीं देती। एक बार मैंने तंग आकर सोचा कि चलो, मर ही जाएं और मरने का मुझे सबसे अच्छा ढंग यही लगा कि मुझे निमोनिया हो जाए।"

"फिर?"

"मैं खूब भागा, खूब भागा कि पसीने से तर हो गया। और फिर ठंडे पानी में छलांग लगा दी। सर्दी तो जरूर लगी, पर निमोनिया नहीं हुआ, बल्कि भाग-भागकर जो गर्मी लगी थी और दिल घबरा रहा था, वह ठंडे पानी में नहाकर ठीक हो गया। उसके बाद मेरा जीने का दिल हो आया।"

मुझे भी हंसी आ गई और उन्हें भी।

"वैसे मैं नंगा भागा था, और पानी में छलांग लगाते समय अपने वस्त्र साथ ले गया था कि नहाकर बाद में पहन लूंगा।"

"ताकि निमोनिया कुछ-कुछ हो।"

"नहाकर भूख लग गई। मैंने कच्चे सिंघाड़े खाए। पहले पिता जी के भय से घर नहीं आता था। उस दिन घर जाने का साहस भी हो आया।"

"आप औरत में दैवीय प्रभाव के संबंध में कुछ कहने लगे थे?"

"हमारे गांव में एक रायसाहब था। उसका बेटा शराबी और आवारा था, पर बहू साक्षात् देवी थी।"

"कितनी आयु की थी?"

"कोई बाईस बरस की।"

"और आप?"

"कोई आठ-नौ बरस का। वह पर्दे में रहने वाली बड़े घर की औरत, एक दिन उसने हमारे घर का द्वार खटखटाया। घूंघट में से कहने लगी, "मैं राय साहब की बहू हूं।"

"पिता जी घबराकर उठे और कहने लगे, क्या बात है?"

उसने उसी तरह घूंघट निकाले रहकर कहा, आप बच्चे को मारा न करें। आप जानते हैं कि वह आपसे भयभीत हुआ घर नहीं आता, रोटी नहीं खाता, अगर उसकी मां जीवित होती...'

"आप कितने बड़े थे, जब आपकी मां की मृत्यु हुई?"

"असल में मेरे पिता जी की मां से अनबन रहती थी। मैं अढ़ाई-तीन बरस का था, जब मां बीमार पड़ गई और पिता जी ने उसे मायके भेज दिया।"

"फिर?"

"मां के बचने की कोई आशा नहीं थी। उसने पिता जी को कहला भेजा कि मुझे देखना चाहती है। पिता जी मुझे ले गए और दूर से दिखाकर लौटा ले आए। मुझे याद नहीं। कुछ दिन गुजर गए, मेरी मां मुझे मिले बिना मर नहीं सकी। मां की सांस अटकी हुई थी। मेरे मामा जी मेरी मां को पालकी में डालकर ले आए कि एक बार उसे बच्चा दिखा दे। पिता जी ने यह शर्त रखी कि मां के मुंह पर बारीक-सा वस्त्र डाल दिया जाए ताकि उसकी सांस लड़के को न छुए। इसी तरह किया गया। पर मां आखिर मां थी। उसने दोनों बाजू मेरी ओर फैला दिए। पिता जी मुझे बाजू से खींचकर बाहर ले गए। बस, मुझे यही याद है कि मुंह पर सफेद वस्त्र पड़ा हुआ और दोनों बाजू मेरी ओर फैले हुए।"

मेरे भीतर की मां और औरत तड़प उठी। मेरी आंखें छलक उठीं और एक क्षण मुझे यही लगा, जैसे मेरी अंतिम सांस हो और मैं अपने बच्चे को एक बार देखने के लिए सिसक उठी होऊं।

"मुझे अब तक औरत वही औरत लगती है, जिसमें दैवी प्रभाव हो। और हरेक औरत में से रायसाहब की बहू ढूंढता हूं।"

"नहीं जी, वह बहुत जल्दी मर गई थी।" सोभा सिंह जी फिर रुककर बोले, "औरत के सौंदर्य का मियार तब बना था, जब मैं बगदाद में था।"

"बगदाद में तो आप सेना में भर्ती होकर गए थे न? नक्शानवीस होकर?"

"हां जी, साठ रुपये वेतन पर गया था, फिर धीरे-धीरे ढाई सौ तक पहुंच गया था। वहां जिस जगह मैं रहता था, उस मकान में बाईस कमरे थे, और उसमें बाईस परिवार रहते थे। बड़ी गरीबी थी। एक-एक कमरे में एक-एक परिवार की गुजर नहीं होती थी। पर सुबह जब मैं उठता तो बाहर खुली जगह सबके सब खाटों पर सोये हुए होते। सोई पड़ी उन दूध सी सफेद लड़कियों के छोटे-छोटे और काले बाल ऐसे बिखरे रहते, जैसे वे सपनों में लिपटी हुई परियां हों।"

कई घंटे बैठने से सोभा सिंह जी को थकान अनुभव हुई। उसी दिन सुबह उन्होंने रबड़ की नई गद्दी खरीदी थी। उन्होंने लिफाफे में से निकाली और दोहरी करके उसे अपने नीचे बिछा लिया। हंसकर कहने लगे, यहां कौन सी इंदरकौर देखती है। आज नई गद्दी बिछाता हूं।"

इंदरकौर उनकी पत्नी का नाम है। मुझे बरसों पुरानी बात याद आई कि जब इंदरकौर मायके चली जाती थी, और सोभा सिंह जी अपना साटन का लिहाफ उलटी ओर से ओढ़कर सोया करते थे। सूती रुख बाहर को कर लेते थे और रेशमी भीतर को। कहा करते थे, "लोगों को बेशक बुरा लगे, पर आज रात साटन का नरम रुख मेरे शरीर से छूएगा।" मैंने जब यह बात उन्हें याद दिलाई तो वे खूब हंसे और कहने लगे, "मैं जब बाजार से नया बूट खरीदता हूं तो नया बूट ही पहनकर आता हूं, पुराना डिब्बे में डालकर आता हूं। आजकल इंदरकौर ने मेरे लिए कश्मीर से एक गर्म चादर मंगवाई है, पर बक्से में रख छोड़ी है कि पहले मेरा कोट फट जाए, फिर वह मुझे चादर देगी।"

सोभा सिंह जी थोड़ा सा लंगड़ाते हैं। काम करते हुए उन्हें

कविता

कोवलम-किनारे

डॉ. प्रेमलाल गौतम 'शिक्षार्थी'

'कोवलम' की बीच पर, मैं खड़ा सागर किनारे।
उत्ताल उठती ऊर्मियों को, क्रोड़ लेने बांह पसारे।

सूर्य के कई बिंब-प्रतिबिंब, झिलमिलाते भी निहारे।
उस पार का देती निमंत्रण, अव्यक्त ऊर्मि के इशारे।

सुदूर तक मैं देखता हूं, मस्तियों के हर्ष-नर्तन।
उठती-गिरती भंगिमा का, विविध तांडव व आवर्तन।

कितनी ही शिक्षा और दीक्षा, सहज ही देती ये लहरें।
तरलता के साथ जागरूक, सजग रहने के ये पहरे।

आर्द्रता का पाठ जग को, है सिखाता सरस सागर
समग्रता में भव्यता का, पाठ देता है यह नागर।

'चरैवेति' वेदवाणी, यहां मुखरित सदा होती
छोर पर नर-नारियों के तन-मन के सारे मैल धोती।

पवन झोंके तीव्र गति से, साथी बनकर साथ चलते
शेष से शत फण फैलाए, गरल से सित बिंदु झरते।

वेणी-सी दिखती ये लहरें, वात से शत हाथ हिलते
और कुंतल केश राशि, रमणी के मुख मंजु खिलते।

किसके आदेश से हो रहे, प्रकृति के ये कृत्य सारे
प्रेम-पारावार पुलकित, व्योग के बहु-विध नजारे।

सीख लो सागर से जाकर नदी नारियों से कैसे मिलते
अट्टहास और उल्लास से, कर वीचियों के कैसे हिलते।

भूलकर सर्वस्व सागर, एकटक तुझको निहारूं
है ही क्या जो पास मेरे, विनम्रता से तुझे वारूं।

'सरस्वती सदन, रबौण, पत्रालय सपरून, जिला सोलन,
हिमाचल प्रदेश, मो. 0 94188 28207

एक बार उठना पड़ा। छड़ी का सहारा छोड़कर तब वे फिर से बैठे, तो दुखी होकर कहने लगे, "आपने बायरन की जीवनी पढ़ी है?"

"हां जी, पढ़ी है।"

"आपको वह स्थान याद है, जहां वह अपनी प्रेमिका से मिलने जाता है, और उसके कमरे में से आवाज आ रही होती है?"

"वह अपनी दासी को कह रही होती है कि वह कभी भी लंगड़े बायरन से शादी नहीं करेगी।"

"हां, वही स्थान। और फिर जब उस लड़की की शादी किसी और से हो जाती है, तो बायरन अपनी डायरी में लिखता है, उसने उस आदमी से शादी कर ली, जो लंगड़ा नहीं था।"

"मैं पूछना चाहती थी कि आज आपने बायरन की डायरी वाली बात क्यों सुनाई; पर पूछ न सकी। सिर्फ इतना ही कहा, आपने शादी किस उम्र में की थी?"

"जब बरदाद से लौटकर आया था, मेरी बहन ने ही लड़की ढूंढकर मेरी शादी भी कर दी थी।" फिर तनिक रुककर सोभा सिंह जी ने मुझसे पूछा, "आपका क्या विचार है कि आदमी के ऊंचा उठने के लिए प्रेरणा सहायक होती है या जीवन की कठिनाइयां?"

"प्रेरणा।" मैंने कहा।

"मेरा भी यही विचार है। मुझे तो यह लगता है कि गुरु नानक के व्यक्तित्व के विकास में सबसे अधिक हाथ उसकी बहन नानकी का था। आपने वैनगाग की जीवनी पढ़ी है?"

"पढ़ी है। मैंने 'माया' कविता उसी के संबंध में लिखी है।"

"आपका क्या खयाल है कि वह जो कुछ बन सका, उसके पीछे उसके भाई के व्यक्तित्व का हाथ नहीं था?"

"अवश्य था।"

"इस प्रेरणा में जादू होता है। एक बार मैंने एक अपरिचित लड़की से कहा कि मैं किसके लिए चित्रकार बनूं? उसने मुझसे पूछा कि तुम्हारा कोई नहीं? मैंने कहा- कोई नहीं। और फिर जैसे सारे खालीपन को भरने वाली उसकी आवाज आई, "आप मेरे लिए पेंट करोगे?" जब वह चली गई तो इस तरह लगा कि जहां वह बैठी थी, वहां से एक स्निग्धता उठकर मेरी तरफ आ रही थी। तत्पश्चात् मैंने जो चित्र बनाए हैं, उसमें जिंदगी ज्यादा है।"

मुझे सोभा सिंह जी का अंदरेटे वाला स्टूडियो याद आया, जिसकी शीशे की बड़ी खिड़की के आगे सिर्फ गुलाब लगा हुआ है और जिसमें से उगती सुगंध में सड़क पर से गुजरती हुई पहाड़ियों के गीत मिले हुए होते हैं। खिड़की के पास रखे हुए मेज पर चित्रकार के रंग और ब्रुश होते हैं और जिंदगी चित्रकार की कैनवस पर उभरते होंठों में से मुस्करा उठती है।

मेरी कलम ने दुआ मांगी कि औरत के भीतर की मां और औरत के भीतर की प्रेमिका सदा जीवित रहे और जिंदगी कलाकारों के कौशल में सदा मुस्कराती रहे।

000

अमृता प्रीतम की कविताएं

अमृता प्रीतम का जन्म 31 अगस्त 1919 को अविभाजित पंजाब के गुजरांवाला में हुआ। इनके पिता स्वयं साहित्यकार थे। अमृता प्रीतम ने अपनी रचनाओं में भारत-विभाजन की त्रासदी का वर्णन किया है। पंजाबी के प्रख्यात कवित सुरजीत पात्र ने अमृता प्रीतम की विशेषताओं को यूं प्रकट किया है, "अमृता प्रीतम पंजाबी की ऐसी सम्मानित साहित्यकार हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से आधुनिक दौर में लड़कियों को आजादी और सुंदर जीवन के सपने लेना सिखाया।" यहां प्रस्तुत हैं उनकी दो कविताएं -

मेरा पता

आज मैंने अपने घर का
नंबर मिटाया है
गली के माथे पर लगा
गली का नाम हटाया है
और हर सड़क की दिशा का नाम
पोंछ डाला है
पर यदि आप चाहते ही हो
मेरा ठिकाना जानना
तो हर देश, के हर शहर का
और हर गली का
दरवाजा खटखटाओ
यह एक शाप है, एक वरदान है
और जहां भी आजाद आत्मा की
झलक मिले
समझ लेना वह मेरा घर है।

एक मुलाकात

मैं चुप, शांत और और निस्पंद खड़ी थी
सिर्फ निकट खौलते
समुद्र में तूफान था
फिर समुद्र को न जाने
क्या ख्याल आया
उसने अपने तूफान की
एक पोटली बांध कर
मेरे हाथ में थमा दी
और हंस कर कुछ दूर सरक गया।
मैं हैरान थी
लेकिन उसकी चमत्कारी पोटली ग्रहण कर ली
यह मान लिया
कि ऐसी घटना कभी सदियों बाद घटती है...

लाखों ख्याल आए
मन में झिलमिलाए
पर इस अनिश्चय में खड़ी रह गई
कि इस पोटली को उठा कर
मैं आज अपने शहर
किस तरह जाऊंगी?
मेरे शहर की
हर गली संकरी है
मेरे शहर की
हर छत नीची है
मेरे शहर की
हर दीवार निंदा बखानती है

मैंने सोचा - काश! तू कहीं मिल जाए
तो समुद्र की तरह
इसे छाती पर रख कर
हम दो किनारों की तरह
हंस सकते हैं
और नीची छतों
और संकरी गलियों के
शहर में बस सकते हैं

पर सारी दोपहर
तुझे ढूंढते हुए बीती
और मैंने अपनी आग का घूंट
खुद ही पी लिया
मैं एक अकेला किनारा
किनारे को तोड़ डाला
और दिन के ढलने पर
समुद्र का तूफान
समुद्र को लौटा दिया
अब रात होने लगी
तब तू मिला
तू भी उदास, चुप, शांत और निस्पंद
मैं भी उदास, चुप, शांत और निस्पंद
सिर्फ दूर खौलते
समुद्र में तूफान है।

अनुवाद एवं प्रस्तुति : **यादवेंद्र शर्मा**
117/6, लोअर बाड़ी, सुंदरनगर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 018, मो. 0 97361 79913

आलेख

अटल बिहारी वाजपेयी के काव्य में संवेदना

◆ डॉ. सुनीता देवी

काव्य मानव की संवेदनाओं का कलात्मक रूप में अभिव्यक्तिकरण है। इसमें भावनाओं और कल्पनाओं की असीम पृष्ठभूमि विद्यमान रहती है। वाजपेयी जी का काव्य इसका साक्षात् प्रमाण है। इनके काव्य में निर्झरिणी की भांति प्रगतिशीलता है और हृदय को शांति देने वाली निर्मलता और पवित्रता। उसमें आह्लाद और आनन्द है, जिस प्रकार एक नदी अपने प्रवाह के अनुकूल तटों पर निर्माण कर लेती है, उसी प्रकार वाजपेयी के काव्य की संवेदना अपने व्यक्तिकरण में सिद्धान्तों का निर्माण करती है। इनका काव्य संसार जिस दृष्टि को लेकर चलता है। वह जीवन के अन्तर्जगत् और बहिर्जगत् दोनों का स्पर्श करता है।

श्री त्रिपाठी जी ने इनके विषय में कहा है कि वाजपेयी जी का जीवन एक राजनेता होने के साथ-साथ निजी चलती-फिरती, सोचती-विचारती ऐसी कहानी की तरह जीते हैं जो वस्तु में स्मृति और संवेदना के समन्वय की तरह है, विषय की थीम में विचार की तरह है, घटनाक्रम और गति में अतीत और वर्तमान की चेतना की तरह है और शिल्प में एक नयी काव्य भाषा के सतत् अन्वेषण की तरह है।"[1]

यह कविजी का शान्त रागात्मक शील स्वभाव ही है कि इन्होंने सतत् कोमलता में ही समाज व परिवार की तस्वीर समक्ष रखी है। इनके काव्य में इसी रागात्मक के दर्शन, प्रेम व सौन्दर्य के रूप में होते हैं -

"भारत-पाकिस्तान पड़ोसी साथ-साथ रहना है,
प्यार करे या वार करें, दोनों को सहना है।
रुसी बम हो या अमेरिकी, खून एक बहना है,
जे हम पर गुजरी बच्चों के संग न होने देंगे जंग न होने देंगे।"[2]

वाजपेयी जी का काव्य व्यक्ति, समाज, धर्म संस्कृति, सबसे गहनतम रूप में बद्र है। काव्य में अनुभूतियों भावुकताओं और यथार्थकता का विविधरंगी प्रस्तुकीकरण है। इनका काव्य एक संवेदनशील व्यक्तित्व का प्रतीक है, 'पहचान' कविता हर पंक्ति में सूत्र-मंत्र है-

"इससे फर्क नहीं कि आदमी कहाँ खड़ा है, पथ पर या रथ पर?
तीर पर या प्राचीर पर?
इससे फर्क पड़ता है कि जहाँ खड़ा है या जहाँ खड़ा होना पड़ा है,
इसका धरातल क्या है?
आदमी की पहचान उसके धन या आसन से नहीं होती उसके मन से होती है।
मन की फकीरी पर कुबेर की सम्पदा भी रोती है।"[3]

अटल बिहारी वाजपेयी की कविताओं में? राष्ट्र प्रेम मुख्यतः दृष्टिगोचर होता है। उनका मन्तव्य है कि पूरे राष्ट्र में सुधार की आवश्यकता है। उनकी दृ ट में राष्ट्र पहले है इसलिए उनकी आस्था एकनिष्ठ राष्ट्रप्रेम की पीठिका पर आसीन है। वाजपेयी जी में सच्चे अर्थों में भूषण की तलवार, नवीन जी की ओजस्विता और माखनलाल चतुर्वेदी की तेजस्विता है। झूठी राष्ट्रभक्ति का चोगा पहने लोगों को वे अकम्पित स्वर में कहते हैं-

"अब न चलेगा राष्ट्रप्रेम का गर्हित अर्थ सौदा,
यह अभिनव चाणक्य न फलने देगा विष का पौधा।
तन की शक्ति, हृदय की श्रद्धा, आत्म तेज की धारा,
आज जगेगा जग जननी का सोया भाग्य सितारा।[4]

वाजपेयी जी चाहते हैं कि देश तभी उन्नति की ओर अग्रसर होगा जब प्रत्येक व्यक्ति में एकता सौहार्द्र, मातृभाव उत्पन्न हो उनकी कविता में यह भाव प्रकट होता है कि एकांगी जीवन सरणी तो कोठरी में पड़ी उस लाश की तरह है जो एक चारदीवारी में बंद

है-

"कोठरी सूनी, वेदना सूनी, झींगुरों का स्वर, बेधता अन्तर
बन्द है आकाश, घुट रहा निःश्वास।"[5]

इनकी कविताओं में परिस्थितियों और विडम्बनाओं के प्रति वेदना का भाव दिखाई देता है। उन्होंने मानव को समझाने का अथक प्रयत्न किया है कि हे मानव! अपने अन्दर की जड़ता को समाप्त कर जीवन को निर्मल बनाने का प्रयास कर जिससे वैषम्य रूपी खाई समाप्त हो सके। कवि जी कहते हैं-

खून क्यों सफेद हो गया?
भेद में अभेद हो गया।
बंट गये शहीद गीत कट गए
कलेजे में कटार बढ़ गई,
दूध में दरार पड़ गई।"[6]

आज का परिवेश सामाजिक हीनता तथा भ्रष्टाचार की दानवी माया से आक्रान्त है। उसमें इन्सानियत दम तोड़ रही है। ऐसी परिस्थितियों का सामना कुण्ठित व्यक्तित्व से नहीं किन्तु इसके लिए साहस तथा मूल्यों के प्रति निष्ठा की आवश्यकता है कवि जी कहते हैं कि लेखक को भी अपने प्रति सच्चा होना चाहिए उसे समाज के लिए अपने दायित्व का सही अर्थों में निर्वाह करना चाहिए फलतः इनकी कविताएं इस पथ की ओर अग्रसर हैं-

"इस मंजिल से ऊपर चढ़कर देखा राव जलता
सदियों से स्वाहा होकर भी
पाप निरन्तर फलता।"[7]

कवि का मत है कि पारस्परिक सहकारिता और त्याग की प्रवृत्ति को बल देकर ही मानव समाज में प्रगति और समृद्धि का पूरा-पूरा लाभ उठा सकता है। समता के साथ ममता, अधिकार के साथ आत्मीयता, वैभव के साथ सादगी, नवनिर्माण के प्राचीन आधार स्तंभ हैं। इन्हीं स्तम्भों पर हमें भावी भारत का भवन खड़ा करना है-

"जरुरी यह है कि ऊँचाई के साथ विस्तार भी हो,
जिससे मनुष्य ठूँठ सा खड़ा न रहे।
औरों से घुले-मिले,
किसी को साथ ले, किसी के संग चले।"[8]

कवि वाजपेयी जी की कविता समाज को जागृतावस्था में लाने की प्रमुख भूमिका निभाती है। कवि का लक्ष्य मात्र समाज को प्रतिबिम्बित करने का नहीं अपितु समाज की वैभव भावना को समाप्त करके उसे उन्नति की ओर अग्रसर करना है।

वे समाज को भयरहित देखना चाहते हैं जिस समाज में लोग निर्भय का विचरण कर आनन्द न ले सकें वह समाज भर्त्सना के योग्य है और ऐसे जीवन से तो मृत्यु श्रेष्ठ है। कवि जी कहते हैं कि इंसान बनो केवल नाम, रूप, शक्ल से नहीं बल्कि हृदय, बुद्धि, संस्कार, ज्ञान से।

"इस जीवन की मृत्यु भली है, आतंकित जब गली-गली है।
मैं भी रोता आस-पास जब कोई कहीं नहीं होता है।"[9]

कवि ने दर्शाया है कि मनुष्य जीवन अनमोल निधि है, हम केवल अपने लिए न जिएं, दूसरों के लिए भी जिएं। जीवन जीना एक कला है, एक विज्ञान है दोनों का समन्वय आवश्यक है।

यदि हम राजनीतिक परिवेश पर दृष्टिपात करें तो देखा जा सकता है कि स्वतंत्रता के पश्चात् जन सामान्य में एक आशा की किरण उत्पन्न हुई थी कि उस पर होने वाले अमानुषिक अत्याचार बन्द हो जाएंगे, उसके आर्थिक धरातल ठोस होंगे, प्रत्येक व्यक्ति को समानता का अधिकार प्राप्त होगा, नेताओं द्वारा किसी भी वर्ग के व्यक्तियों पर शोषण का आक्रमण नहीं होगा। आज यह स्पष्ट हो चुका है कि सत्तालोलुप राजनैतिज्ञ ही जनता का सबसे बड़ा शोषक बन बैठा है। अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए वह सामान्य जनता के हितों की बली चढ़ाने से भी चूकता नहीं। हम इस बात से हम भी अवगत हैं कि स्वतंत्रता हमें सस्ते में नहीं मिली है। हमारी स्वतंत्रता अनेक ज्ञात अज्ञात शहीदों और स्वतंत्रता सेनानियों की देन है।

हमारा राजनीतिक परिवेश दलबन्दी और गुटबन्दी के अखाड़े बन गये हैं इस विषय पर वाजपेयी जी कहते हैं राजनीतिक परिव्रो के लोग साहित्य, कला, संगीत से दूर रहते हैं, इसी से मानवीय संवेदना का स्वरूप सूख सा गया है। राजनीति काजल की कोठरी है जो इसमें आता है काला होकर निकलता है? शासन पर मरते हैं नामक कविता में राजनीतिक व्यवस्था को देखकर कवि जी कहते हैं-

"सिंह के सपूतों को सीखचों में बंद कर, संसद भवन में स्यार हुआ-हुआ करते हैं। चाटुकर, चमचों की चाँदी चमाचम चमकी, निष्कलंक निडर निवाए सर फिरते हैं।"[10]

कवि जी कहते हैं कि राजनीति विवेक नहीं, वाक् चातुर्य चाहती है, संयम नहीं, श्रेष्ठ नहीं, प्रेम के पीछे पागल है। मतभेद का समादार करना तो अलग रहा, उसको सहन करने की वृति भी विलुप्त हो रही है। आदर्शवाद का स्थान अवसरवाद ले रहा है। बायें और दायें का भेद भी व्यक्तिगत अधिक है, विचारगत कम। सब अपनी-अपनी गोटी लाल करने में लगे हैं, उतराधिकार की शतरंज पर मोहरें बैठाने की चिंता में लीन हैं। सत्ता का संघर्ष प्रतिस्पर्धा से नहीं स्वयं अपने दल वालों से हो रहा है। पद और प्रतिष्ठा को कायम रखने के जोड़-तोड़, साँठ-गाँठ को ठुकर सुहाती आवश्यक है निर्भीकता और स्पष्टवादिता पर आज प्रश्नवाचक चिन्ह लग गया है।

'मंत्रिपद' तभी सफल है' कविता आज की राजनीति में बढ़ती अवसरवादिता को इस प्रकार दर्शाती है-

"बस का परमिट माँग रहे हैं भैया के दामाद, पैट्रोल का पम्प दिला दो, दूजे की फरियाद।

सिफारिश काम बनाती, परिचय की परची, अपनों की रेबड़ी, मन्त्रिपद तभी सफल है।"[11]

कवि वाजपेयी के हृदय में मानवमात्र के प्रति दया और करुणा का भाव सतत् रूप में द्रष्टव्य होता है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में बार-बार मानवता का स्वर मुखरित हुआ है। कर्तव्य परायणता सहनशीलता, सर्वहिताय के चिन्तक अटल जी हृदय की गहराई को स्पर्श कर मानवीय संवेदना के दर्द में स्वयं को भागीदार बनाए हुए हैं-

उन्होंने कहा है कि-

"सभी मनुष्य समृद्ध हों, सभी वनस्पतियों और जीव जन्तु जो सभी प्राणियों के जीवन की आशा है, फले-फूले, सभी मनुष्य में सद्भावना हो सभी पशुओं में परस्पर प्रेम हो हर तरफ शांति और शांति ही रहे।"[12]

कवि की यह संवेदना मन को स्पर्श कर जाती है। कवि कलात्मक ढंग से निष्क्रिय पड़े लोगों के समक्ष देश के मानचित्र को चित्रित कर एकरस्ता का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस मानवीय दृष्टि के कारण ही कवि की दृष्टि ऐसी हर जगह पहुँचती है जहाँ कुछ अमानवीय हो रहा हो-

"मानव स्वामी बने और मानव ही करे गुलामी उसकी किसने यह नियम बनाया, ऐसी है आज्ञा किसकी।"[13]

अटल जी अपने सभी रूपों में 'सिर्फ आदमी' है कि पहले इंसान है, बाद में सब कुछ। संवेदना का अपार सागर हृदय में भरे हुए, अटल जी किसी को पराया नहीं मानते। उनके लिए सभी अपने हैं और वे सबके हैं। वे भगवान से यही प्रार्थना करते हैं-

मेरे प्रभु
मुझे इतनी ऊँचाई कभी मत देना,
गरों को गले ने लगा सकूँ,
इतनी रुखाई कभी मत देना।[14]

कवि जी ने माना है कि मनुष्य ही चेतन जगत का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। बुद्धि, विवेक, सहानुभूति, दया, क्षमा, प्रेम, औदर्य आदि के कारण ही वह सर्वश्रेष्ठ बना अपने अनतरतम के भावों को काव्य के माध्यम से जब व्यक्त करता है तो स्वार्थभाव से ऊपर उठकर लोकहित की चिन्ता करता है-

"आँख खोलकर देखो। घर में भीषण आग लगी है धर्म, सभ्यता, संस्कृति खाने, दावत क्षुधा जगी है।"[15]

इनकी चिंतनशैली में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् रूपी त्रिवेणी का संगम रहा है।

संदर्भ सूची

पोस्ट डॉक्ट्रोल फैलो, हिन्दी विभाग, हि.प्र. विश्वविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 005

कविता

जीवन में निराश न होना

ऋषि मोहन श्रीवास्तव

जीवन में निराश न होना
बढ़ते रहना बस बढ़ते रहना
रुकने से मुश्किलें बढ़ जातीं
मुसीबतों को अलविदा कहना।

असफलता मिले न घबराना
मेहनत पूरी करना ध्यान से
बड़ी सफलता आगे मिलेगी
सोचो समझो अपने ज्ञान से।

बदल देते जो राह अपनी
जीवन में बहुत कुछ खो देते।
समझ में उन्हें कुछ नहीं आता
अंधेरे में यों ही भटकते।

सोच समझकर बढ़ते रहो
मार्ग सरल सहज बनेगा
बड़ी समस्याएं हल होंगी
आगे बढ़ने का रास्ता मिलेगा।

मन में जिनके सच्चाई होती
मार्ग उन्हें सही मिल जाता
रुकावटें पल में दूर होती
गौरव-यश बढ़ जाता।

सीढ़ियां उन्नति की उन्हें मिलीं
जो कभी मुश्किलों से न घबराए
हर पल की कीमत पहचानी
धैर्य से बढ़े नभ की ऊंचाई छुए।

एस-1, नित्यानंद विला, कमलेश्वर कॉलोनी, जीवाजीगंज, लश्कर, ग्वालियर, मध्य प्रदेश-474 001

आलेख

रूठे स्वजनों को मनाना
स्वयं को ही सहज सरल और सुंदर बनाना है

◆ सीताराम गुप्ता

उत्तर भारत में ही नहीं दक्षिण भारत तथा देश के दूर-दराज के क्षेत्रों में भी मकर संक्रांति बड़ी धूमधाम से मनाई जाती है बेशक इसके मनाने के तरीके अलग-अलग हों। उत्तर भारत में विशेष रूप से हरियाणा में मकर संक्रांति के दिन घर के बड़े-बूढ़ों को मनाने का रिवाज है। हरियाणा में इस आयोजन अथवा उत्सव को संकरॉंत या सँकरॉंत कहते हैं। बड़े-बूढ़ों को मनाने का ये कार्य घर की महिलाएँ विशेष रूप से नई बहुएँ करती हैं। मुख्यतः अपने सास-ससुर, जेठ-जेठानियों और ननदों को मनाने का रिवाज है। कई जगह घर-कुनबे के दूसरे परिवारों के सदस्यों को भी मनाया जाता है। इसमें किसी रूठे हुए को नहीं मनाया जाता अपितु ये एक प्रतीकात्मक आयोजन होता है। यह हमारी लोक संस्कृति की विशिष्टता ही है जिसमें रूठे हुओं को ही नहीं बिना रूठे हुओं को भी मनाने का विधान है। बिना रूठे हुओं को मनाने के आयोजन का कोई महत्त्वपूर्ण प्रयोजन ही होगा इसमें संदेह नहीं।

मकर संक्रांति अथवा सकरॉंत के दिन जिनको मनाया जाना होता है वे घर से दूर किसी सार्वजनिक स्थान पर अथवा खेतों आदि में चले जाते हैं। उनको मनाने के लिए मनाने वाली वहीं पहुँच जाती है। कई महिलाएँ इकट्ठी होकर समूह में गीत गाती हुई उस स्थान तक जाती हैं और मनाए जाने वालों को उपहार आदि देने के बाद मनाकर अपने साथ घर ले आती हैं। उपहारों में प्रायः कपड़े और मिठाइयाँ होती हैं। मौसम को देखते हुए महिलाओं को शॉल और पुरुषों को कंबल भी उपहार स्वरूप दिए जाते हैं। घर के सदस्यों को छोड़िए घर में तथा बाहर काम करने वाले मददगारों तक को उपहार दिए जाते हैं। इस दिन पशुओं को भी विशेष चारा डाला जाता है। कुत्तों तक को हलवा बनाकर खिलाने की परंपरा है। इस दिन खिचड़ी का दान दिया जाता है और घर के सदस्यों के लिए भी खिचड़ी बनाई जाती है जिसे खूब घी डालकर खाया जाता है।

वैसे तो खिचड़ी वैचारिक विभिन्नता का प्रतीक है लेकिन पकने के बाद उसमें समरसता आ जाती है। हाँ घी खिचड़ी होना एक मुहावरा है जिसका अर्थ है आपस में बहुत मेल होना या एकरूप व सामंजस्यपूर्ण होना। खिचड़ी में घी डालने के बाद दोनों को मिलाने पर घी उसमें इतनी अच्छी तरह से मिल जाता है कि वो दिखलाई ही नहीं पड़ता लेकिन इससे खिचड़ी का स्वाद कई गुना बढ़ जाता है। मकर संक्रांति के दिन खिचड़ी बनाने और घी-खिचड़ी खाने-खिलाने का यही निहितार्थ है कि परिवार के सभी सदस्य घी-खिचड़ी की तरह मिलकर इस तरह रहें कि घर में सौहार्दपूर्ण वातावरण बना रहे। लेकिन ये तभी संभव है जब सभी अपने बड़ों का आदर और छोटों से प्रेम करें और परस्पर एक दूसरे की भावनाओं का ध्यान रखें। किसी के नाराज हो जाने या रूठ जाने पर फौरन उसे मना लें।

घर के सदस्यों से घर के बुजुर्गों व अन्य सदस्यों के प्रति कोई गलती हो सकती है जिससें वे नाराज हो सकते हैं। यह नाराजगी रूठने के रूप में प्रत्यक्ष भी हो सकती है और अप्रत्यक्ष भी। किसी के रूठने पर तो नाराजगी जाहिर हो जाती है लेकिन न रूठने पर नाराजगी जाहिर भी नहीं होती। इस आयोजन का उद्देश्य यही है कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से घर का कोई भी सदस्य विशेष रूप से बड़े-बुजुर्ग नाराज न रहें। वे प्रसन्नचित्त व स्वस्थ रहें। वे स्वयं को उपेक्षित नहीं सम्मानित अनुभव करते रहें। मनाना क्रिया स्वयं में एक उत्सव का प्रतीक है। हम सभी त्योहारों को मनाते ही तो हैं। यदि मनुष्य को मनाने की बात करें तो इसका भी यही अर्थ होगा कि उसके जीवन में उत्सव जैसा आनंद उत्पन्न करना। किसी रूठे हुए बच्चे को मनाना हो अथवा प्रेमी-प्रेमिका को मनाना यह जीवन का एक बेहद खूबसूरत अहसास होता है। जो रूठों को मनाने को महत्त्वपूर्ण नहीं समझते या रूठों को मनाने की कला नहीं जानते अथवा रूठों को मनाने का प्रयास ही नहीं करते वे जीवन में महत्त्वपूर्ण अनुभूतियों से वंचित रह जाते हैं।

जब किसी के रूठा हुआ होने की संभावना या कल्पना मात्र से उसे मनाना उत्सव का रूप ले सकता है तो वास्तव में किसी रूठे हुए को मनाना कितना महत्त्वपूर्ण होगा इसका अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है। जिन लोगों से हम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष

रूप से जुड़े हुए होते हैं उनकी नाराजगी हमारे लिए किसी भी तरह से उचित नहीं होती। माता-पिता हों, भाई-बहन हों, बच्चे हों अथवा मित्र, सहकर्मी या सगे-संबंधी हों रूठ जाने पर उनके रूठने का कारण जानकर उसे दूरकर उन्हें मना लेना अनिवार्य होता है। एक नियोक्ता के लिए अपने कर्मचारियों को और एक कर्मचारी के लिए अपने नियोक्ता की नाराजगी को दूर करना अथवा रूठने पर उन्हें मना लेना दोनों ही पक्षों के हित में होता है। इसी प्रकार से जो हमारे सहायक अथवा मददगार होते हैं उनकी नाराजगी का ध्यान रखना भी जरूरी होता है। कहने का तात्पर्य यही है कि रूठने वाला कोई भी क्यों न हो उसे मनाना अनिवार्य है। अपने प्रियतम अथवा प्रियतमा या पति अथवा पत्नी के रूठने पर उसे न मनाने की भूल तो किसी भी कीमत पर नहीं की जानी चाहिए क्योंकि इस प्रकार की भूल जीवन को नीरस बना देती है, जीवन का सर्वनाश कर सकती है।

जीवन में गलतियाँ और गलतफहमियाँ दोनों का होना स्वाभाविक है। अतः रूठना और मनना-मनाना भी जीवन का स्वाभाविक क्रम है। रूठना और मनना-मनाना ये विपरीतार्थक नहीं अपितु पूरक शब्द हैं। इसके बिना जीवन की गाड़ी चल ही नहीं सकती लेकिन रूठने और मनने-मनाने की एक सीमा होती है। सभी समझदार लोग रूठे हुओं को फौरन और बार-बार मनाने की सलाह देते हैं। रहीम कहते हैं :

रूठे सुजन मनाइए जो रूठें सौ बार,
रहिमन फिरि-फिरि पौहिए टूटे मुक्ताहार।

यदि कोई सुजन अर्थात् हमारा कोई स्वजन, कोई प्रिय अथवा कोई अच्छा व्यक्ति हमसे रूठ जाए तो उसे हमेशा ही मना लेना चाहिए चाहे वो सौ बार अर्थात् बार-बार ही क्यों न रूठता हो। रहीम कहते हैं कि यदि मुक्ताहार अर्थात् मोतियों का हार टूट कर बिखर जाए तो उसके मोतियों को फिर से धागे में पिरो लेना चाहिए। यदि हम टूटे हुए मुक्ताहार अर्थात् बिखरे हुए मोतियों को दोबारा धागे में पिरो लेंगे तो वो पहले की तरह ही उपयोगी और सुंदर हो जाएगा जिससे आसानी से उसे पहन सकेंगे अन्यथा मोती इधर-उधर बिखरकर महत्त्वहीन हो जाएँगे अथवा खो जाएँगे। उनकी आब भी जा सकती है। जिस तरह मोती जब तक एक सूत्र में गुँथे रहते हैं तभी तक उपयोगी रहते हैं उसी प्रकार से जब तक संबंध भी मधुर और आत्मीय रहते हैं, तभी तक उनका महत्त्व है।

हमारे संबंध भी मुक्ताहार की तरह ही कीमती और महत्त्वपूर्ण होते हैं इसलिए उन्हें हर हाल में टूटने से बचाना चाहिए और संबंध टूट जाने के बाद फौरन उन्हें सुधारने अथवा रूठे हुओं को मनाने का प्रयास करना चाहिए ताकि संबंधों की सार्थकता बनी रहे। टूटे अथवा बिखरे हुए संबंध अनुपयोगी हो जाते हैं। अच्छे संबंध हमारा पोषण और विकास करते हैं जबकि खराब संबंध हमारे स्वास्थ्य के लिए घातक और हमारी उन्नति में बाधक होते हैं। यदि हम अपने रूठे हुए स्वजनों अथवा प्रियपात्र को नहीं मनाएँगे तो इसका दुष्प्रभाव ही हमारे जीवन पर पड़ेगा। यदि हमारा कोई प्रिय हमसे रूठ जाता है तो हमें भी अच्छा नहीं लगता। हम भी बेचैन हो जाते हैं और जब तक सामनेवाला मान नहीं जाता हम मानसिक रूप से उद्विग्न रहते हैं। रूठा हुआ व्यक्ति अथवा हम स्वयं कई बार कुछ ऐसा कर गुजरते है जो दोनों के लिए ही ठीक नहीं होता। इसलिए यह अनिवार्य है कि रूठे हुए को फौरन मानाया जाए। ये हमारे हित में ही होगा। फिर भी यदि हम उसे नहीं मनाते या मनाने का प्रयास नहीं करते हैं तो इसका अर्थ है कि हममें आत्मीयता अथवा प्रेम का अभाव है या फिर अहंकारवश ऐसा नहीं कर रहे हैं।

प्रेम मनुष्य के जीवन में उतना ही अनिवार्य और उपयोगी है जितना साँस लेना। प्रेम के अभाव में मनुष्य जी ही नहीं सकता। प्रेम का अभाव मनुष्य को हैवान और शैतान बना सकता है। प्रेम के अभाव में अनेक मनोग्रंथियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। इसी से मानसिक रुग्णता के साथ-साथ दैहिक व्याधियाँ भी व्याप्त हो जाती हैं। इन सबसे बचने के लिए अपने प्रियतम की संगति, उसका स्पर्श और साहचर्य अनिवार्य है। एक रूठे हुए प्रियतम से इन सबकी अपेक्षा असंभव है। प्रियतम की संगति, स्पर्श व साहचर्य तभी आनंददायक हो सकता है जब वह हर तरह से प्रसन्न हो।

रूठे हुए स्वजनों अथवा प्रियपात्र को फौरन मनाने का अर्थ है कि हम न केवल उससे अगाध प्रेम करते हैं अपितु हम पूर्णतः निरंहकार भी हैं। प्रायः अहंकार, उपेक्षा अथवा स्वार्थ के कारण ही हमारे संबंध खराब होते हैं। जब कोई उपेक्षित अनुभव करता है तभी वह दुखी होता है अथवा रूठता है। जब हम रूठे हुए को फौरन मना लेते हैं तो सामनेवाले की ये गलतफहमी भी फौरन ही दूर हो जाती है कि उसकी उपेक्षा की गई थी। यदि हमसे कोई गलती हो गई हो तो उसे स्वीकार कर क्षमा माँगी जा सकती है। ऐसा करेंगे तो सामने वाला न केवल अपने अमर्ष का त्याग कर देगा अपितु ऐसे में संबंध और अधिक प्रगाढ़ हो जाएँगे इसमें संदेह नहीं। जब लंबे समय तक रूठना चलता है तो दोनों तरफ से बहुत सी गलतफहमियाँ बढ़ती चली जाती हैं जिन्हें बाद में दूर करना मुश्किल हो जाता है। अच्छे लोगों को नहीं मनाएँगे तो उनके मार्गदर्शन व उनकी संगति से होने वाले लाभों से वंचित रह जाएँगे अतः रूठे हुए अच्छे व्यक्तियों को मनाना भी हमारे स्वयं के हित में ही होगा।

प्रेम मनुष्य के जीवन में उतना ही अनिवार्य और उपयोगी है जितना साँस लेना। प्रेम के अभाव में मनुष्य जी ही नहीं सकता। प्रेम का अभाव मनुष्य को हैवान और शैतान बना सकता है। प्रेम के अभाव में अनेक मनोग्रंथियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। इसी से मानसिक रुग्णता के साथ-साथ दैहिक व्याधियाँ भी व्याप्त हो

जाती हैं। इन सबसे बचने के लिए अपने प्रियतम की संगति, उसका स्पर्श और साहचर्य अनिवार्य है। एक रूठे हुए प्रियतम से इन सबकी अपेक्षा असंभव है। प्रियतम की संगति, स्पर्श व साहचर्य तभी आनंददायक हो सकता है जब वह हर तरह से प्रसन्न हो। एक रूठे हुए प्रेमी से प्रेम करना या प्रेम पाना असंभव है। एक रूठे हुए प्रेमी को मनाने की प्रक्रिया भी प्रेम का ही एक रूप है। जब तक यह प्रक्रिया प्रारंभ नहीं होती साँस लेना तक मुहाल हो जाता है। समग्र रूप से सृष्टि के विस्तार के लिए और व्यक्तिगत रूप से मनुष्य के जीवन को सार्थकता प्रदान करने के लिए रूठे हुए प्रियतम को मनाना सबसे महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य है।

यदि कोई हमसे रूठ सकता है तो हम भी तो किसी से रूठ सकते हैं। हमारा रूठना भी अस्वाभाविक नहीं। जिस प्रकार किसी रूठे हुए को मनाना और शीघ्र मनाना अनिवार्य है उसी प्रकार स्वयं रूठने पर हमारा भी शीघ्र मान जाना अच्छी बात है। सामान्यतः किसी बात पर नाराज होकर रूठने पर यदि कोई मनाए तो जल्दी मान जाना व्यक्ति की सरलता व शालीनता का प्रतीक है। इसका सीधा सा अर्थ है कि मन में अत्यधिक क्रोध, कुटिलता अथवा कटुता थी ही नहीं। इस प्रकार का आचरण भावनात्मक दृष्टि से संतुलित व्यक्तित्व का द्योतक है। ऐसा व्यक्ति प्रशंसा का पात्र होता है। जो व्यक्ति एक बार रूठने पर किसी भी तरह से नहीं मानते हैं अथवा अत्यधिक नखरे दिखलाते हैं इससे उनके जटिल व्यक्तित्व का पता चलता है। सामान्य लोग ऐसे लोगों से दूर रहना चाहेंगे और किसी भी प्रकार के संबंध नहीं बनाना चाहेंगे। वैसे तो रूठने की अवस्था में किसी के भी मनाने पर शीघ्र मान जाना हमारे संबंधों पर बहुत अच्छा और सकारात्मक प्रभाव डालता है लेकिन पति-पत्नी के संबंधों के निर्वाह में तो ये और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

पति-पत्नी को प्रायः हर समय साथ रहना होता है अतः उनके बीच मनमुटाव अथवा रूठने जैसी क्रिया का बार-बार व अपेक्षा त अधिक होना स्वाभाविक है। जो पति-पत्नी एक दूसरे से रूठने पर जल्दी मान जाते हैं उनका जीवन बहुत अच्छी प्रकार से चलता है। जो पति-पत्नी एक दूसरे से एक बार रूठने पर मानने का नाम ही नहीं लेते उनका जीवन तबाह होना निश्चित है। मनाने पर न मानने का अर्थ है दोनों तरफ कटुता में लगातार वृद्धि। जो पति-पत्नी एक दूसरे से रूठने पर जल्दी मान जाते हैं उनका जीवन बहुत अच्छी प्रकार से चलता है। उनके बीच स्थायी वैमनस्य और कटुता नहीं आती। यदि कोई ये समझे कि झटपट मान जाना उसकी कमजोरी दर्शाता है तो ये सोच बिल्कुल सही नहीं है। इससे तो व्यक्ति के स्वभाव की सरलता, शालीनता व विनम्रता का ही पता चलता है। जो लोग एक बार किसी से रूठने पर किसी भी तरह से मानने का नाम ही नहीं लेते वे वास्तव में अपने भाग्य से ही रूठ जाते हैं। उनके व्यवहार में जड़ता आ जाती है।

जिद्दी अथवा मनाने पर किसी भी तरह से न मानने वाला व्यक्ति चाहे वो पुरुष हो या स्त्री सुखी व संतुष्ट जीवन व्यतीत नहीं कर पाता। वह जीवन में मनचाही सफलता से कोसों दूर रह जाता है। इसमें संदेह नहीं कि किसी से रूठने पर स्वयं भी जल्दी मान जाना हमारे व्यक्तित्व के विकास के लिए ही नहीं भौतिक उन्नति के लिए भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि ऐसा हम स्वाभाविक रूप से करें अथवा स्वाभाविक रूप से न कर पाने पर इसके लिए बाह्य प्रयास भी करें? दोनों ही स्थितियाँ उत्तम हैं। चाहे हम ऊपरी तौर पर ही क्यों न मान जाएँ लेकिन इसका जो प्रभाव होगा वो वही होगा जो स्वाभाविक रूप से मानने पर होगा। स्थितियों पर इसका सकारात्मक प्रभाव ही पड़ेगा। हमने स्वाभाविक रूप से अथवा विशेष रूप से प्रयास करके किसी भी तरह से यदि एक बार भी स्थिति को सामान्य अवस्था में ला दिया तो इससे अच्छी बात हो ही नहीं सकती।

जीवन में तरलता उत्पन्न करने का उद्देश्य तो स्थितियों को सुधारना ही है। स्थितियाँ सुधर जाएँगी तो जीवन-प्रवाह भी संतुलित हो जाएगा। इससे उपयोगी कार्यों को करना सरल हो जाएगा जो हर हाल में अनिवार्य है। किसी बात पर रूठने के बाद यदि हम मनाने पर फौरन मान जाते हैं तो कई बार स्थितियाँ जीवनभर के लिए हमारे अनुकूल हो जाती हैं जबकि न मानने पर स्थितियाँ हमेशा के लिए प्रतिकूल हो जाती हैं। यदि रूठे रहना ही है तो व्यक्तियों से नहीं अपितु अपने आसपास व्याप्त नकारात्मकता से रूठ जाइए और उसे दूर करके ही मानिए। यदि कोई हमसे ये कह दे कि भई हमने तो सुना था कि आप बहुत जल्दी रूठ जाते हैं और बहुत जिद्दी हैं लेकिन आप तो बहुत विनम्र और सरल स्वभाव के हैं और फौरन सबकी बात मान लेते हैं तो ये बात हमें सचमुच अच्छी लगेगी। यदि हमारे व्यक्तित्व अथवा स्वभाव में ये गुण नहीं हैं तो भी हम उन्हें अपनाने का प्रयास करेंगे। ये रूपांतरण जैसी स्थिति हो जाएगी लेकिन ये तभी संभव होगा जब हम दूसरों की बात मानने व अपनी जिद को त्यागने में देर न करें।

ए. डी.-106-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-110034
मो. 0 95556 22323

आलेख

कबिरा, मन पंछी भया

◆ कमलनाथ

आदमी एक सामाजिक जानवर है। अंग्रेजों ने इसे यूं कहा - 'मैन इज ए सोशल एनिमल'। इस छोटे से वाक्य से ही हमारे समाज में जानवर के महत्त्व का पता चल जाता है। किसी ने कभी नहीं कहा - जानवर एक सामाजिक आदमी है। शायद इसलिए कि जितनी विलक्षण क्षमताएं जानवरों में होती हैं, उनके लिए आदमी हमेशा लालायित रहता है। आदमी में कोई खूबी होती है या नहीं, यह तो शोध का विषय है पर जानवरों में जो खूबियां होती हैं, उन्हें आदमी बखूबी जानता है और उनसे सदियों से सीखता आ रहा है। भले ही यह नहीं कहा गया हो कि मनुष्य एक सामाजिक पक्षी है, पर यहां मैं जानवरों में पक्षियों को भी शामिल कर रहा हूं, क्योंकि उनमें भी कई तरह की विशेषताएं होती हैं।

हर आदमी में एक जानवर छुपा होता है जो नाराज होने पर गाहे-बगाहे बाहर आ जाता है। मन में एक पंछी भी होता है जो खुश होने पर कभी-कभी उड़ना चाहता है। जब भी किसी व्यक्ति के अंगों की या उसकी अच्छाई और बुराई की उपमा देनी हो तो यह जानवर से ही दी जाती है, जैसे : मृगनयनी, घोड़े जैसा स्टेमिना, हॉर्स पॉवर, गिद्ध दृष्टि, वृषभस्कंध, लोमड़ी की तरह चालाक, परमहंस (उच्च श्रेणी के महात्मा), भेड़िये/शेर की तरह खूंखार, सफेद हाथी, चूहे की तरह दिल/डरपोक, नकलची बन्दर, कोयल की तरह आवाज, तोता-चश्म, रीछ जैसे बाल, स्कंक की तरह बदबूदार, गाय की तरह सीधा, अजगर की तरह आलसी, गीदड़ भभकी, सांप की तरह विषधर, बगुला भगत, वगैरह वगैरह। पर बेचारा आदमी! कोई नहीं कहता आदमी की तरह आदमी। अगर कोई विलक्षण व्यक्ति होता है तो भी उसमें 'सुरखाब के पर' ही लगे होते हैं। पंचतंत्र में तो सारी ज्ञानपूर्ण शिक्षा के किरदार और नायक नायिका पशु-पक्षी ही हैं। नेवला, चूहा, बिल्ली, कौवा, उल्लू, सियार वगैरह सबकी इस मामले में खासी भूमिका हुआ करती थी। जाहिर है, जितना ज्ञान उनमें होता है उतना किसी आदमजात में नहीं होता।

शास्त्रार्थ के लिए जाते वक्त रास्ते में जब शंकराचार्य ने मंडनमिश्र के घर का पता पूछा तो उत्तर मिला कि उनका घर वहीं है जहां तोते वेदमंत्र बोल रहे होंगे। कहिये, यहां आजकल के पंडित तक किताबें पढ़ पढ़ कर भी शुद्ध वेदमंत्र नहीं बोल सकते और तब तोते भी मंडनमिश्र जी के मन्त्रों का केवल सुन सुन कर ही शुद्ध उच्चारण कर लेते थे। प्रेमचंद जी की कहानियों में एक पात्र झूरी के दोनों बैलों हीरा-मोती में तो इतनी जबरदस्त क्षमता थी कि वे इशारों इशारों में विचार विमर्श करके अपने मन के भाव प्रेमचंदजी तक या अपने मालिक तक पहुंचा दिया करते थे। बोलने की क्षमता होने पर भी आजकल हिंदी साहित्य के अंदर शिकायत रहती है कि यहां संवाद का अभाव है, 99 प्रतिशत लोग तो शुद्ध हिंदी लिख भी नहीं सकते।

उसी कहानी में प्रेमचंदजी ने खुद माना था कि गधा भी एक बड़ा समझदार प्राणी होता है जिसको आगे चल कर कृशनचंदर जी ने सिद्ध कर दिया और अपने कुछ उपन्यासों का हीरो उसे ही बनाया। वह कई अद्भुत काम कर लेता था। उसने जगह जगह गधों की तरह बोलने वाले आदमियों को उनकी मानव भाषा में बोल कर जिस तरह नीचा दिखाया वह उनकी किताब में है जो किसी भी बुकस्टोर से खरीदी जा सकती है। जी हां, गधे की

हर आदमी में एक जानवर छुपा होता है जो नाराज होने पर गाहे-बगाहे बाहर आ जाता है। मन में एक पंछी भी होता है जो खुश होने पर कभी कभी उड़ना चाहता है। जब भी किसी व्यक्ति के अंगों की या उसकी अच्छाई और बुराई की उपमा देनी हो तो यह जानवर से ही दी जाती है, जैसे : मृगनयनी, घोड़े जैसा स्टेमिना, हॉर्स पॉवर, गिद्ध दृष्टि, वृषभस्कंधा, लोमड़ी की तरह चालाक, परमहंस (उच्चश्रेणी के महात्मा), भेड़िये/शेर की तरह खूंखार, सफेद हाथी, चूहे की तरह दिल/डरपोक, नकलची बन्दर, कोयल की तरह आवाज, तोता-चश्म, रीछ जैसे बाल, स्कंक की तरह बदबूदार, गाय की तरह सीधाा, अजगर की तरह आलसी, गीदड़ भभकी, सांप की तरह विषधर, बगुला भगत, वगैरह वगैरह। पर बेचारा आदमी! कोई नहीं कहता आदमी की तरह आदमी। अगर कोई विलक्षण व्यक्ति होता है तो भी उसमें 'सुरखाब के पर' ही लगे होते हैं।

समझदारी का ही नतीजा है कि अमेरिका की डेमोक्रेटिक पार्टी तक ने, आजकल जिसकी सरकार है, गधे को अपना चिन्ह चुना। पार्टी चिन्ह के अनुसार वहां डेमोक्रेटिक पार्टी और डेमोक्रेट्स का प्रतिनिधित्व गधा ही करता है। देखा जाय तो भारतीय संविधान की व्यवस्था के अनुसार हमलोग भी डेमोक्रेटिक यानी जनतांत्रिक ही हैं और अपने आप को समझदार भी समझते हैं। कहना नहीं चाहिए, पर अगर इस लिहाज से दुर्भावना से भी कोई नेताओं को गधा कहे तो उन्हें बुरा मानने की बजाय उनके जनतांत्रिक और समझदार होने की काबिलियत पहचानने के लिए खुश होकर लोगों का धन्यवाद करना चाहिए। खास बात यह है कि जरूरत पड़ने पर अगर किसी को बाप बनाने की नौबत आ जाती है तो सबसे पहले गधे का नाम ही जेहन में आता है। इस लिहाज से इसमें कोई शंका नहीं होनी चाहिए कि हमारे जीवन में गधे का काफी ऊंचा व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक महत्त्व होता है।

जब हम अपने लिए कोई कार या स्कूटर लेते हैं तो कितनी जगह पूछताछ करते हैं, उनकी खुसूसियत के बारे में पता लगाते हैं, और पूरी तसल्ली करके ही उसका चुनाव करते हैं। यह तो तब है जब हम अपना यह वाहन दो चार साल बाद बदल भी लेते हैं। पर देवता तो हमसे कितने ज्यादा असरदार, सक्षम, और करिश्माई होते हैं। जाहिर है, उनके वाहन न केवल बुद्धिमान, बल्कि स्थायी और बेहद हार्ड ड्यूटी वाले भी होते ही होंगे। लक्ष्मीजी ने तभी तो सोच समझ कर समझदार उल्लू को ही अपना वाहन बनाया। कुछ न कुछ तो बात होगी ही वर्ना सोचिये, गणेशजी चूहे पर ही क्यों सवारी करते हैं? माँ शेरांवाली, हंसवाहिनी सरस्वती, मयूर जिनका वाहन है ऐसे कार्तिकेय, गरुड़ के वाहन वाले विष्णु, वगैरह कई उदाहरण हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि वाहन के रूप में भी पशु-पक्षी ही श्रेष्ठ होते हैं। कम से कम आदमी से तो, क्योंकि वह आजतक किसी देवता का वाहन नहीं बन सका। हाँ, आम आदमी को नेताओं का वाहन बनते जरूर देखा है।

जब छोटे और बड़े की तुलना की जाती है, तब भी पक्षी लोग काम में लिए जाते हैं, जैसा कि 'घर की मुर्गी दाल बराबर' के एक उदाहरण से स्पष्ट होता है। घर की मुर्गी को भले ही दाल बराबर समझ कर पंजाबी भाषा में 'एंवेंई' मान लिया जाता हो, पर चरित्रवान व्यक्ति की निगाह हमेशा पड़ोस की मुर्गी पर रहती है। हर आदमी को चूजे अपने और मुर्गी पड़ौस की अच्छी लगती है। वैसे जानवरों की पत्नियों को छोड़ कर बाकी सब पत्नियाँ एक जैसी ही होती हैं, चाहे वे इंसानों की हों या देवताओं की। जैसा सभी पत्नियों का स्वभाव होता है, वे कभी भी किसी भी बात पर अड़ सकती हैं। एक बार जब पार्वती जी ने भी अमर होने की तरकीब जानने के लिए हठ पकड़ ली थी तो भगवान शिव ने कहीं दूर अमरनाथ की गुफा में चुपचाप यह राज फाश करने का निश्चय किया था और वहां इस बारे में ऐसी कहानी बताने लगे जिसको सुन कर कोई भी अमर हो जाता है। पर बीच में ही पार्वतीजी को नींद आ गई। वहीं एक जोड़ा कबूतर था जिसने यह कहानी पूरी सुन ली। फिर क्या था, भगवान शिव ने क्रोधित होकर उन्हें मारना चाहा, पर उनका कुछ नहीं बिगाड़ पाए क्योंकि कहानी सुनते ही वे अमर हो गए थे। कहते हैं, 13,600 फुट की ऊंचाई पर स्थित अमरनाथ गुफा में माता पार्वती के साथ स्वयं भगवान शंकर हजारों साल से कबूतर के रूप में भी रहते हैं।

आदमी लोगों के कल्याण के मामले में भी पहले पक्षियों का बड़ा योगदान रहा करता था। वे दिन भर घूम-घूम कर लोगों की समस्याओं के बारे में जानकारी जुटाते थे और शाम को लौट कर आपस में उनके बारे में बात करते थे। देवता लोग ऐसे ही पक्षियों की तलाश में रहते थे ताकि उनकी बातों के माध्यम से उन्हें लोगों की व्यथा का पता चले। इस प्रक्रिया के संपन्न हो जाने के बाद ही उनके दुखदर्द का इलाज हो पाता था। प्यार के मामले में भी पक्षियों से बेहतर कोई शिक्षक नहीं मिल सकता। पहले के जमाने में प्यार के साथ साथ तोता-मैना, चकोर-चकोरी, कबूतर-कबूतरी आपस में कितनी समझदारी की बातें किया करते थे, जिनको सुन कर लोग शिक्षा ग्रहण किया करते थे। वे आदमी वाले पति-पत्नियों की तरह झगड़ों में समय बर्बाद नहीं करते थे। एक बार में एक पक्षी पति की एक ही पक्षी पत्नी हुआ करती थी। चकवा-चकवी तो शाश्वत प्रेम का प्रतीक ही हैं। चकवा-चकवी दिनभर साथ रह कर रात में अलग हो जाते हैं और रातभर विरह में गुजारते हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी इस बाबत बहुत कुछ जानते थे। आदमजात इससे बिलकुल विपरीत होता है। कामकाज के चक्कर में दिन में भले ही अलग रहे, रात होते ही मानव चकवा, किसी न किसी मानव चकवी की तलाश में रहता है।

जैसा हम जानते हैं, हाथी खूब 'खाया-पीया' जानवर होता है। बल्कि यों कहना चाहिए कि खा पी कर जैसा वह है, वैसा हो जाता है। हाथी तो हाथी, उसका चिन्ह भी काफी प्रेरणास्पद होता है। इसके लगातार सामने बने रहने से आपको हर क्षेत्र में उसी की साइज प्राप्त कर लेने का लक्ष्य रहता है। हैल्थ इज वैल्थ। अगर दोनों ही हों तो क्या बात है। इसी से प्रेरणा लेकर भारत में एक राजनैतिक पार्टी ने अपना चुनाव चिन्ह हाथी रखा लगता है। अमेरिका की रिपब्लिकन पार्टी ने भी अपना चिन्ह हाथी ही रखा है। जाहिर है, ज्यादातर 'खाते पीते' लोग ही इस पार्टी के सदस्य हैं। कुछ व्यक्ति तो हाथी के व्यक्तित्व में इस कदर डूब जाते हैं कि लोग उनको 'सफेद हाथी' कहने लग जाते हैं।

तात्पर्य यह है कि हमने जानवरों से कुछ न कुछ सीखा है। पर यह दुःख की बात है कि जिस एक जानवर से आदमी को जो सीखना चाहिए था वही उसने नहीं सीखा। कुत्ते से वफादारी।

बी-401, रिवियेरा टॉवर, लोखंडवाला,
कांदिवली (पूर्व), मुंबई-400 101

आलेख

भारत के प्रतीक पुरुष शूरत्व और संतत्व के मूर्त विग्रह भगवान परशुराम

◆ डॉ. दादूराम शर्मा

विष्णु भगवान् के प्रमुख दस अवतारों में छठें अवतार जमदग्नि नंदन परशुराम हैं। सात चिरजीवियों में उनकी भी गणना की जाती है -

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः।।

उन्हें शूरता के राजस् संस्कार-प्रतिहिंसा, क्रोध और स्वर्गलालसा- मातृ कुल परम्परा से प्राप्त हुए थे और पितृ कुल से उन्हें संतत्व के सात्विक संस्कार- क्षमाशीलता, भोग निःस्पृहता या शम, दम आदि- "शमो दमस्तयः शौचं क्षांति रार्जवमेव च ज्ञानं विज्ञान मास्तिक्यम्- मिले थे। पुराणों में कथा आती है कि भृगु पुत्र ऋचीक ऋषि का विवाह महाराज गाधि की पुत्री सत्यवती से हुआ था। एक बार पुत्र प्राप्ति के लिए गाधि ने ऋचीक से प्रार्थना की तो उन्होंने दो चरू पात्र (खीर के पात्र) तैयार किए- एक अपनी सास के लिए जिसमें क्षात्र तेज अभिमंत्रित किया गया था और दूसरा अपनी पत्नी के लिए जिसमें ब्राह्म तेज का आधान किया गया था- और दोनों को उनके चरू पात्र देते हुए कहा कि वे उस खीर को ग्रहण कर लें। किन्तु माँ ने अपनी पुत्री की चरू का सेवन कर लिया और पुत्री ने माँ की। जब ऋषि को पता चला तो उन्होंने कहा कि सासुजी को तो पहले क्षात्र तेज से समन्वित पुत्र ही होगा किन्तु बाद में वह ब्राह्म तेज प्राप्त कर लेगा। उनसे विश्वामित्रजी पैदा हुए जो पहले क्षत्रिय थे बाद में उन्होंने तप से ब्रह्मर्षि पद प्राप्त कर लिया था। पत्नी की विशेष प्रार्थना पर उनके पुत्र जमदग्नि तो ब्रह्मर्षि हो गए किन्तु उनके पुत्र, दूसरी पीढ़ी में खीर के प्रभाव के संक्रान्त कर दिए जाने से परशुरामजी हुए जिनमें क्षात्रतेज प्रधान था और ब्राह्म तेज गौण। कालिदास के शब्दों में-

"पित्र्यंशमुपवीतलक्षणं मातृकं धनुरूर्जितं दधत्।
यः ससोम इव धर्म दीधितिः सद्विजिह्व इव चन्दनद्रुमः।।
- 'रघुवंश' 11/64

परशुराम में चन्द्रमा की शीतलता (सौम्यता या संतत्व) थी तो ग्रीष्म के मध्याह्नकालीन सूर्य (धर्माः) (धाम) = उष्ण हैं दीधितयः यस्यसः = किरणें जिसकी वह की दाहकता अर्थात् 'शूरता' भी थी। वे ऐसे चन्दन के पेड़ की तरह थे, जिसमें फुफकारते-विष उगलते लपलपाती जीभ वाले भुजंग लिपटे हों। कालिदास ने 'विरोधाभास अलंकार द्वारा उनके विलक्षण और अभूतपूर्व, अश्रुतपूर्व व्यक्तित्व का बड़ा ही सटीक और युक्तियुक्त विश्लेषण किया है। और महाकवि तुलसी ने उन्हें ब्राह्मणत्व और क्षत्रियत्व के तथा शांत और वीर रस के समन्वित मूर्त विग्रह के रूप में प्रस्तुत किया है-

वृषभकंध उर बाहु विसाला। चारू जनेउ, माल, मृग छाला।
कटि मुनि वसन तून दुइ बाँधे। धनु सर कर, कुठार कल काँधे।।
शांत वेष करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप।
धरि मुनि तनु जनु वीर रस, आयहु जहँ सब भूप।।
- 'मानस' 1/268

पुराणों में उनका व्यक्तित्व इन शब्दों में रूपायित किया गया है-

"अग्रलः चतुरो वेदा पृष्ठतः सशरं धनुः।
इदं ब्राह्ममिदं क्षात्रं शायादपि शरादपि।।"

वे अपने तप की शक्ति और तेज से आततायी और अपराधी को दग्ध कर सकते थे- उसे अभिशप्त कर सकते थे तो अपने अमोघ बाण (अस्त्र-शस्त्र) से उसे तत्क्षण मौत के घाट भी उतार सकते थे। इस तरह उनकी आकृति भयानक और प्रकृति रौद्र है- "सहजहि चितवन मनहुँ रिसाते- वे सामान्य रूप में भी देख रहे होते तो ऐसा लगता मानो क्रोध से आँखें तरेर रहे हों। जिसे प्रेम से भी देखते तो वह समझता कि अब अपनी आयु समाप्त हो चुकी है, उनके कठिन कुठार ने अब सिर काटा, तब सिर काटा- "सो जानइ जनु आउ (आयु) खुटानी।" किन्तु राम के सौम्य सौन्दर्य-दर्शन से उनकी ये अंगारे बरसाती आँखें अनुराग-तरलित हो जाती हैं- "रामहि चितइ रहे थकि लोचन ! रूप अपार माद-मद-मोचन !"

परशुरामजी ने अपने पिता जमदग्नि की होमधेनु छीनकर उन्हें अकारण मौत के घाट उतारने वाले आततायी नरेश सहस्रबाहु को पुत्रों सहित मौत के घाट उतार दिया था। कहा जा रहा है कि उन्होंने इक्कीस बार आततायी-दुराचारी क्षत्रियों से धरती को मुक्त किया था। बाद में उनके व्यक्तित्व में 'परशु' प्रधान हो गया और 'राम' गौण। - वे अपने हिंसा किंवा क्रूरता-रत 'परशु' का गुणगान करते थकते नहीं। वे लक्ष्मण से कहते हैं- सहस्रबाहु भुज

छेदनिहारा, परसु विलोकु महीप कुमारा''।

अहंकार और आत्मप्रशंसा मानव के व्यक्तित्व के दूषण हैं, जो उसे महान् से क्षुद्र बना देते हैं। क्रोध विवेकहीन होने से अंधा होता है। बार-बार आत्मप्रशंसा करना, डींगें मारना और असंगत क्रोध व्यक्ति को उपहास का पात्र बना देते हैं। हिंसा के विरोध में उठी प्रतिहिंसा वीरता है, शूरता है, जिसमें अन्याय और अनाचार के प्रतिरोध का सामाजिक बोध सक्रिय होता है ! किन्तु यदि वह व्यक्तिगत प्रतिशोध और विवेकहीन क्रोध से प्रेरित होने लगे तो बहुधा क्रूरता का रूप ले लेती है। परशुराम की शिवचाप भंजक को राजसमाज से बाहर न निकाले जाने पर "नत मारे जैहें सब राजा'' की घोषणा उनके विवेकहीन क्रोध को, "भुजबल भूमि भूप विनु कीन्हीं, विपुल बार महि देवन्ह दीन्ही'', उनके अहंकार तथा आत्मप्रशंसा को और ''गर्भन्ह के अर्भक (गर्भस्थ शिशु, भ्रूण) दलन परसु मोर अति घोर'' कथन उनकी क्रूरता को रेखांकित कर रहे हैं।

लक्ष्मण के व्यंग्य के पैने औजार उनके मनोविकारों के व्रणों (फोड़ों) की शल्यक्रिया (आपरेशन) करके सारा कल्मष (मवाद) बहा देते हैं और राम अपने मृदु (मधुर) गूढ़ वचनों के शीतल प्रलेप से- "नाथ, एक गुन धनुष हमारे, नव गुन परम पुनीत तुम्हारे, हमहिं तुमहिं सरवरि करन नाथा ! कहहुत कहाँ चरन कहँ माथा'' सब प्रकार हम तुम सनहारे, छमहु "विप्र'' (विशेष प्रार्थना या विनयशीलता से प्रसन्न हो जाने वाले) अपराध हमारे'' उनका पूर्णोपचार करके उन्हें पूर्णतः स्वस्थ कर देते हैं- उनके व्यक्तित्व से जड़ता, अविवेक, क्रूरता, क्रोधांधता आदि के प्रतीक 'परशु' के आवरण को हटाकर उन्हें उनके 'राम' का आत्मस्वरूप का साक्षात्कार करा देते हैं। अभी तक उनका जो राम (मानव) जड़ परशु से संचालित हो रहा था, उसके हट जाने से उनकी जनकल्याणकारिणी मति जागृत हो जाती है- "सुनि मृदु-गूढ़ वचन रघुवर के, उघरे पटल परसुधर-मति के'' और वे अपने आततायी-उन्मूलक अस्त्र को वैष्ण (शाङ्‍र्ग) धनुष को उसके वास्तविक उत्तराधिकारी श्रीराम को सौंप देते हैं। इसी शाङ्‍र्ग धनुष पर संधाने गए बाणों से राम ने खर-दूषण-त्रिशिरा के नेतृत्व में आए आक्रान्ता चौदह हजार नरभक्षी राक्षसों को मारकर उनके आतंक से जनस्थान और ऋषियों के आश्रमों को मुक्त किया था और बाद में इसी अमोघ धनुष से छोड़े गए अस्त्रों से कुंभकर्ण और रावण जैसे अजेय योद्धाओं का संहार हो सका।

राष्ट्रकवि डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर' ने परशुराम में भारत के यथार्थ व्यक्तित्व को देखा है, जिसमें तप की पावन ज्योति है- 'संतत्व' है तो अप्रतिहत शौर्य का प्रखर तेज- 'शूरत्व' भी है, जो दीन-हीनों का त्राता है तो आततायियों का उत्खाता (उन्मूलक उन्हें जड़ से उखाड़ फेंकने वाला) भी है। राष्ट्र को प्रतीक्षा है ऐसे ही वीरव्रती कर्णधार की, जो परशुरामजी की तरह संतत्व और शूरत्व का मूर्त विग्रह हो, जाज्वल्यमान रूप हो-

मुख में वेद पीठ पर तरकस कर में कठिन कुठार।
सावधान ले रहा परशुधर फिर नवीन अवतार।
हाँ, वही रूप प्रज्वलित विभासित नर का।
अंशावतार सम्मिलित विष्णु शंकर का।।
हाँ, वही दुरित से जो न सन्धि करता है।
जो संत धर्म के लिए खड्ग धरता है।।
है एक हाथ में परशु एक में कुश है।
आ रहा नए भारत का भाग्य पुरुष है।।
वह असुर भाव का शत्रु पुण्य त्राता है।
भयभीत मनुज के लिए मुक्ति दाता है।। -

"परशुराम की प्रतीक्षा''

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हम युद्ध धर्म "मामनुस्कर युध्य च'' और तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून् भुंक्ष्व राज्यं समृद्धं'' का उद्घोष करने वाली- हमें संतत्व के साथ-साथ अपनी अस्मिता और स्वत्व की रक्षा के लिए सतत 'युद्ध करते रहने- शूरत्व का वरण करने की प्रेरणा देने वाली 'गीता' में हम मात्र "अहिंसा परमोधर्मः'' का संदेश देने वाले बौद्ध धर्म का त्रिपिटक निकाय' पढ़ने लगे। तलवार (शूरत्व) गलाकर हमने तकली (गांधीत्व-संतत्व-आत्म रक्षा के प्रति उदासीनता) गढ़ ली- सिंहत्व छोड़कर अजाधर्म स्वीकार कर लिया। सिंहवत दहाड़ने के स्थान पर हम बकरियों की तरह मिमियाने लगे! फलतः 1962 में नेफा में हमें चीन के हाथों मुँह की खानी पड़ी! इस अपमानजनक राष्ट्रीय पराजय से विक्षुब्ध राष्ट्रकवि की तेजोद्दीप्त हुंकार 'परशुराम की प्रतीक्षा' में फूट पड़ी! उन्होंने सैन्य बल को नकारने वाले निर्वीर्य नपुंसक नेताओं को आड़े हाथों लिया, उन्हें पापी (अघी) कहकर धिक्कारा, फटकारा- वही अघी बाहुबल का जो अपलापी है !

उन्होंने 'कुरूक्षेत्र' में कहा था-

"छीनता हो स्वत्व कोई और तू, त्याग-तप से काम ले, यह पाप है।

पुण्य है विच्छिन्न कर देना उसे, बढ़ रहा तेरी तरफ जो हाथ हो !!

तो 'परशुराम की प्रतीक्षा' में उन्होंने कहा-

नत हुए बिना जो अशनिघात सहती है,
स्वाधीन जगत् में वही जाति रहती है।
शोणित के बदले जहाँ अश्रु बहता है,
वह देश कभी स्वाधीन नहीं रहता है।।

अपने महापुरूषों का आदर्श जीवन में न उतारने वाली जातियाँ स्वयं को अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रख सकतीं। इसलिए वह "राम को जपने की नहीं, राम बनकर जीने की'' प्रेरणा दे रहा है-

(शेष पृष्ठ 40 पर)

माह के कवि

रतन चंद 'निर्झर'

धूप में तपता बच्चा

पृथ्वी के ताप संग
जेठ की दुपहरी में
तप रहा है मजदूर का बच्चा
सूरज की वक्र दृष्टि
ठीक ऊपर पड़ रही है
मासूम भोले भाले चेहरे पर
इस तपती दुपहर में
सिरहाने से
परे खिसक गई है
पेड़ की छाया
मां के हाथ व्यस्त हैं
तसले में रेत भरने को
ससुर की कटी उंगली से
बार-बार उतर रही है
बंधी कपड़े की पट्टी
और हर बार
बंधवा रहा बहु से
उतरी पट्टी
मकान की तीसरी मंजिल पर
स्लैब डालते
पति के कानों में
गूंज रही
पायल की झनकार
चूड़ियों की खनखनाहट
घूंघट से
ममतामयी बेबस आंखें
देख रही हैं धूप में कुम्हलाते बेटे का चेहरा
विश्राम के क्षणों में
सरकाएगी बच्चे का बिछौना
पिलाएगी दूध
और इन्ही क्षणों में
चूमेगी उसका ललाट

अबोध शिशु
पढ़ रहा है
धूप में झुलसने का पहला पाठ
मजदूरन का
दूजा बेटा
रेत के ढेर पर शहनशाह
सा बैठा
निरंतर रेत से हो रहा लोटपोट
रेत में खेल कर होकर रेत
मुंह में रेत भर
जान रहा रेत का स्वाद
इस तपती दुपहरी में
रेत में ढूंढ रहा
शीतलता
सीमेंट मिक्चर मशीन की
तेज घर्रघराती आवाज
तुम्हारे लिए हो सकती है कर्णवेधी शोर
पर मैं सुन रहा हूं
इसमें श्रमशक्ति का संगीत सुर और ताल
तुम भले
अपने कानों में डाल लो उंगलियां



देर शाम
जब थम जाएगा मशीनी शोर
काम पूर्ण होने पर
इन्हीं चेहरों पर होंगे
संतुष्टि के भाव
इन मजदूरों के अलाव पर
पकेगी मेहनत की रोटी
और दिन भर की
अनथक थकान हो जाएगी छू मंतर
लंबी तान में छेड़ेगे
अपने देस के गाने
सपनों में उग आएंगे
गांव के खेत, खलिहान
बाढ़ और सूखे के दृश्य
खूब कमाने के सपने लेकर फिर
से सो जाएंगे
एक उज्ज्वल कल की आस लिए
ठिठुरती ठंड में
ठिठुर रहा है
अधगीले बिछौने में सोया बच्चा
किटकिटा रहे हैं
सर्दी से दांत
गुम है बादलों की ओट में
सूरज दादा की
आंख मिचौनी में
बच्चा रोता बिलखता है
सामने खड़ा है
ठेकेदार की लक्ष्यबद्ध निर्माणाधीन दीवार
श्मशानन घाट की
अधजली लकड़ी का ताप
सेंकेगा इनकी कंपकंपाती देह
इसी लकड़ी से जलेगा इनका चूल्हा चौका
प्रवासी मजदूरों के वास्ते
नहीं है कोई छूत अछूत
पगार मिलते ही

सारा कुनबा
अपने गांव जाएगा
खेलेगा फाग
और बांचेगा
पहाड़ के प्रवासी दिनों का चिट्ठा
उतारेगा देनदारी
बिटिया की जोड़ेगा शादी

सड़क

इस भीड़ भरी
सड़क को पार करना
मेरे लिए है
एक अथाह समुद्र
ढूंढना चाहता हूं
एक फुरसत का क्षण
कब ट्रैफिक हो कम
और मैं जाऊं उस पार
मेरी तरह
सड़क के इस ओर
ग्रामीण बुजुर्ग
बड़बड़ा रहा है अपने आप में
कर रहा है अपने पुराने दिन याद
कैसे वह
गांव से कचहरी आते जाते
बिना डरे
शान से अपनी सोठी को
सड़क की छाती पर ठोकते हुए
चला करता था निडर होकर
कहां से आ गया है
यह वाहनों का समुद्र
और मेरे सामने
बड़ी शान से
सींग और पूंछे उठाए
आर पार आ जा रहे हैं
आवारा पशु
फौजी मुद्रा में
वाहन चालक
बजाए जा रहे हैं हार्न पर हार्न
लाठी से
डरा धमका रहे हैं
पर पशु अडिग हैं
अपनी अपनी जगह पर
मोर्चा संभाले
चुनौती देते समाज सत्ता को
अभी अभी
मेरे सामने से
चंपा पार्क के इस ओर
40 जूठे गिलासों की बंदूक ताने
चायवाली
तेजी से आते जाते वाहनों के बीच से
गुजरी
रोजमर्रा की तरह
ऐसे जैसे
गुजरता है कोई
पगडंडी से आम पथिक
ओर मैं अभी
अपने डर की कोठरी में सिमटा
साहस बटोर रहा हूं
सड़क के उस पार जाने का



मां की खबरें किसी अखबार की सुर्खियां नहीं

घर आए
बेटे से आतुर है मां
सबकी खैर खबर जानने को
कैसी है मेरी बहू
पोते और पोतियां
कौन सी जमात पढ़ते हैं वे
कभी याद आती हैं
बहू को अपनी सास
पोते पोतियों की दादी
ससुराल गए थे क्या इस बार
कैसे हैं समधी समधिन
कुड़मनी से हो पाएगी मिलनी
बहुत दुबले होकर
लौटे हो तुम इस बार
मां बराबर ले रही है
बेटे से सबकी खबर
बेटा मां की खबरों से बेखबर
खोया है कहीं और
हां हूं के बीच
लगातार सुन रहा है मां की बातें
मां थोड़े समय में
जानना सुनना चाहती है
सबकी खैर खबर
मां सुनाना चाहती है
सबकी खबरें
खुशी की गम की
आस की पास की
मां की खबरें
किसी अखबार की सुर्खियां नहीं
और न ही हैं
किसी अखबारी चैनल की
ब्रेकिंग न्यूज मां की खबरें हैं

गांव के बिगड़ते रिश्ते नातों की

मौसमी फसलों की
बेटा सुना तुमने
हाड़ु की विधवा अभी तक है जिंदा
झुकी कमर काट रही है वक्त
झेल रही है
पति और जवान बेटे का विछोह
तुम्हारे दिए गर्म सूट को
तार से उठा ले गया मुआ चोर
फट चले हैं पांव के फलीट
छितरा गई है ठतरी
फयूज पड़े हैं बैटरी के बल्ब और सैल
सौ व्याधियों मुआ पीछा नहीं छोड़ती
बड़ा मन करता है
सब कुछ खाने पीने को
पर हजम नहीं होता कुछ भी
सूख गया है
बाबड़ी का जल और उस मोड़ का पीपल
खूब हुई इस बार मक्की की फसल
खूब फली नाशपाती भी
अच्छा रहा हिमरी गंगा का न्हौण
पाधर की जातर
जाहण नही रहा इन जांघों में
फिर भी बेहला नहीं बैठा जाता
चरा लाती हूं ढोर डंगर
काट लाती हूं नेड़े की घासणियां
खेतों और बीड़ों से घास
पर नहीं उठाया जाता
घास का रेड़कू
न जाने बेटा
कब उड़ जाए
पिंजरे का पंछी
दूर परदेश से
पता नहीं नसीब हो पाएगी
तुम्हारे हाथों की लकड़ी
गहराती जा रही रात
पर खतम नहीं हो रही
मां की बात
मां है दुनिया की सबसे बड़ी वाचक
और बेटा सबसे बड़ा श्रोता
कितना उड़ेल दिया है
मां ने सब कुछ
थोड़े से समय में
फिर भी
लबालब भरा है उसके दुखों का पिटारा



धूप दिखाती है मां

मैं एक टक
निहारता हूं
मां की दिनचर्या
आज बरसाती धूप में
मां खोलेगी
ट्रंक, संदूक, पेटी के ताले
एक-एक करके
भानुमति के पिटारे से
निकालेगी मां
सिले अधसिले रंग बिरंगे सूट
डिजायनदार स्वेटर
दुप्पटे और शाल
घर की छत
या फिर आंगन में
खिल उठेगा
रंग बिरंगा इंद्रधनुष
वातावरण में महकेगी
फिनाइल की गंध
यादों में उभर आएंगे
व्याह कारज के दृश्य
स्मृतियों में उभर आएंगे
स्व परिजन के चेहरे
कपड़ों के साथ-साथ
मां धूप दिखाएगी
बीते पलों को
गाहे-बगाहे पहने गए
वस्त्र परिधान
फिर कैद हो जाएंगे
अपने-अपने दड़बों में
अगले साल तक

मकान नंबर 211, रौड़ा सेक्टर
बिलासपुर, हि. प्र.- 174001,
मो. 0 94597 73121



कविताएं

डॉ. किरण तिवारी

तुतलाते बोलों में मौत की आहट

एक अंतहीन रात में
एक औरत तोड़ना चाहती है दुस्वप्न के जालों को

वो छाती की दर्दनाक गांठ में दबे
उस शून्य को निकाल देना चाहती है
जो हर चीख के साथ बढ़ता जाता है
और हटाना चाहती है
इर्द गिर्द जमा डर की बीट को

वो रखना चाहती थी जिंदा
सत्य, न्याय, प्रेम की कहानियों को भी
जो पिछली रात उसने सुनाई थी
उस फूल को जिसे
टिड्डियों ने तबाह कर दिया

अब किलकारियों के साथ
कहानियां भी दफन है

हिंसा से बचने के नुस्खे खोजना चाहती है वो औरत
हर उस फूल के लिए जो अभी खिले नहीं
हालाँकि पिछली रात टैंकों के नीचे
एक नन्नी धड़कन दबा दी गई है

गर्भ धारण करने वालियों को नहीं पता
कंस ने फूलों पर हिंसा की शुरुआत
उसी दिन कर दी थी
जिस दिन वो देवकी के गर्भ में छुपे थे।

घनघोर अंधेरे में

घनघोर अंधेरे में जो दिखती है,
वो उम्मीद है जीवन की

हिंसक आस्थाओं के दौर में प्रार्थनाएं डूब रही है
अन्धकार के शब्द कुत्तों की तरह गुर्राते
भेड़ियों की तरह झपट रहे हैं
उनकी लार से बहते शब्द
लोग बटोर रहे है उगलने को

जर्जर जीवन के पथ पर पीड़ा के यात्री
टिमटिमाती उम्मीद को देखते हैं
सौहार्द्र के स्तंभ से क्या कभी किरणें फूटेंगी

उधेड़बुन में फँसा बचपन
अँधेरे की चौखट पर ठिठका अपनी उँगली से
मद्धिम आलोक का वृत खींचना चाहता है

एक कवि समय की नदी में
कलम का दिया बना कविताओं का दीपदान कर रहा है।

स्त्री

पीड़ा की नीव में दबी वासना सुखी हो उठी
जब जब स्त्री कराही, चिल्लाई
और इस तरह बर्बर दंड ने जन्म लिया इस पृथ्वी पर
हर कराहने के बाद शिकारी बढते गए
पहला शिकारी कोई आदि अमानुष था

ढेंकुल ने मधुर वचनों के दंड में फरेब घोला
प्रेम की रस्सी से वासना का कुंड भरा
कुइयां अब रीती थी
ये बुद्धिजीवी थे

धर्म की कृपालु आत्माओं ने कहा
स्त्री तेरे शरीर में स्वर्ग का फाटक है
हम उसे स्वर्ग की कुंजी से बंद करेंगे
तब वो विभिन्न धर्मों के साथ
स्वर्ग की कुंजी से ताले जड़ते गये
ये धर्म के ठेकेदार थे

वेश्यालयों की दीवारें धर्म के पत्थरों से सजी थी
मंदिर अक्षत योनि से
फिर सारे बर्बर दंड
कराहने, चिल्लाने से निकल कर
फैल गये धर्म ग्रंथों तक

कारागार खड़े हुए न्याय की नींव पर

सारी निर्दयता का अंत
स्त्री की जांघ पर जा बैठा
अब स्त्री की उतनी ही जरुरत थी
जितनी खाट की, सवारी की, छत की।

स्त्री अब कोई चीज बड़ी है मस्त मस्त थी।

स्त्री-दो

हालांकि आवाजें बहुत थी
शब्द भी हजारों थे
लेकिन हम अंदर ही खुश थे
बहते शांत धारा से

आप को हमारी चाल शून्य दिखी
फिर ङ्कतिकूल कहा
फिर बांध दिया दो अक्षरों में
बिना ये देखे कि हम अनकूल थे धारा के

देह को नेह समझ हम सहज बहते गये
इकलाई धोतियों की तरह
आधे गीले आधे सूखे निचुड़ते हुए
रात की कमाई करते रहे

रजस्वला मिट्टी के भीतर तुमने कभी झाँका नहीं
हमने आवाज दी
डूबे गले से
वर्तमान ध्वनियों से टकराकर आवाज पराई हुई

अब हम खंडित प्रिज्म थे
दृश्यों के भीतर तुम दिखे बात को बात में लपेटते
और हम
अधडूबी, अधटूटी मुँडेर पर बैठे
जुहो, जुहो कहते
तुम्हारी भोल जाला सुनते रहे

काश सांप की केचुली सा हांथ
तुम देह पर न रखते
तो
गीत हम गाते करुणा तुम सहेजते।

13 टेम्पल रोड, भोगल, नई दिल्ली-110014
मो. 0 99906 72184

कविता

सच की बुनियाद पर

राहुल देव प्रेमी

कलम टूट जाए मेरी, गर बबक जाऊं मैं,
मर जाना ही मेरे लिए अच्छा है,
गर सच लिखने से, डर जाऊं मैं।।

सारे दुखों को पिरोकर, हर घटना को संजोकर,
सच्चाई के बुनियाद पर, क्यों न कविता रची जाए।

समाज को आईना दिखाएं वो, हर गलतियों से पर्दा उठाया वो,
आम आदमी से लेकर संसद तक, क्यों ना बात की जाए।
सच्चाई के बुनियाद पर, क्यों ना कविता रची जाए।

हर वर्ग से ऊपर उठकर, समस्याओं को सामने रख कर,
क्यों ना समस्याओं का समाधान भी, कविता में ढूंढा जाए।
सच्चाई के बुनियाद पर, क्यों ना कविता रची जाए।

कविता वो जो एहसास है दिलों का, हर आंखों के आंसू का,
इश्क में हाले दर्द दिल का, हर दर्द भरी दास्तां का,
भगवान की आस्था का, देश की समस्याओं का,
जिंदगी जीने का, कवि के दृष्किोण का,
एक एहसास, दर्द या जुनून है वो,
झूठ नहीं सच है वो,
जी हां, कविता है वो,
जो सच्चाई की बुनियाद पर रची जाए।

हाउस नंबर 37, नियर वाटर टैंक, एच.बी. कॉलोनी, संजौली,
शिमला-171 006, मो. 0 85806 55519

दिनेश शर्मा की कविताएं

बदलती हवा से बात

जीवन से भरे तुम्हारे बस्ते में
आसमान भर फुर्सत थी उन दिनों
तन्हाई के कोने में तुम
घण्टों बतियाती थी माँ से
चूल्हा-चौका सुखाती
गीले बालों के झूले में झूमती
बातों के शूप से खेलती
धान, गेंहू और माश के साथ
पछोड़ती माँ के
खलियान भर दुःख

तुम्हारे आने की उम्मीद में
खेत से लौट कर
बरामदे के कोने में लेटते थे पिता
खरी दोपहरी में जब
सूने होते थे रास्ते
तुम आती थी दबे पाँव
सांसों की आहों से
चुराती हुई सारी थकान
माथों की लकीरों से चुन कर
न जाने कहाँ
ले जाती थी चिंताओं की दुकान

फसलों को तुम सहलाती हुई जाती थी
पेड़ों की फुनगियों को हिलाती हुई
तुम्हारे आने से नाचती थी नदियां
किनारे कहते कि यहाँ रेत पर
लिखो अपना नाम
पहाड़ पर हौले सुलगाती तुम
गुड़गुड़ाते बादलों की चिल्लम
गृहस्थी के चूल्हे की आग

शहर के सैलानी की तरह अब तुम
जल्दी में आती हो
और हांफती हुई जाती हो
सावन की आस में हर साल
प्यासे रह जाते हैं पहाड़
नालों के गले सूखे हुए
खेतों के होंठ फटे हुए
अनमनी किसी घाटी से चढ़ती

बरसा देती हो बेसब्री के बादल
एक हो जाता है जल-थल
खुश्क तुम लौटती हो
अट्टालिकाओं पर रखे गमलों
नकली घास के मलमली मैदानों की ओर

पल भर भी रुकती नहीं
कुछ बोलती नहीं
कुछ सुनती नहीं
मशीनों के सौ-सौ हाथों से
तुम्हें भी हो गई है क्या
सुख बटोरने की चाह,
क्या कहती हैं ये बोझिल आँखें-
शौक और अंदाज़ से जीने को
फ़ाइलों में डूबते हैं
तुम्हारे दिन के सूरज
फैक्टरियों के शोर में
उगते हैं चाँद

तुम बोलती क्यों नहीं
भेद खोलती क्यों नहीं
ये मौसमों के भुलेखे का क्या है राज-
पींगे अपनी क्यों भूल रही
फाहे कहाँ उड़ेल रही
स्वार्थ की कालिख से
भर गए हैं क्या तुम्हारे भी फेफड़े
शहरी मद की तुम्हारी ये चुप्पी
घर-घर की ज़ुबान पर है
कि बदल गया है दुनिया का पानी
हवा बदल रही है।

बनने के क्रम में

मैं घर से ऐसे निकल जाता
जैसे शरीर से निकल जाती रूह,
नये शरीर की तलाश में
पहुँचता बाज़ार
मॉल में टहलता
लोगों के बदन में
तलाशता अपना शरीर।

गौर से निहारता
विंडोज में अरसे से खड़े बुतों को
उनकी एक ही रंग की काया
सुडौल बनावट
चेहरे की गम्भीरता
और आँखों का अनादि ठहराव
चुपचाप ले जाना चाहता
धारण करने को।

उलझ जाता मैं
लोगों के रेशमी बालों में
हज़ामत के नये सलिकों
और पहनावे के तरीकों में,
बोलचाल, मुस्कुराहट,
स्वाद और फरियाद के अंदाज़ तक को
ओढ़ लेता आहिस्ता से।

भाषण, विचार और प्रचार
टी वी, मोबाइल और अखबार
टकराते रहते इस बीच
मेरे आत्म से
धूप और बारिश में
ढलता, धुलता रहता मैं।

जो मैं था उस में
कर रहा लगातार कांट-छांट
जो नहीं था/ बनने के क्रम में।

बाज़ार

बाज़ार में जब /मैं भीतर तक गया
बाज़ार मेरे भीतर तक आया
तब जाना मैंने/ बाज़ार का मतलब
लूटना और लुटना।

मेरा वक्त

कविता में तुम/ लिखना अपना वक्त
बड़े-बूढ़ों ने कहा-/ और मैंने चाहा

मेरा वक्त रहा इतना महंगा
कि बोल-चाल के शब्दों
धूल-मिट्टी में लिपटे भावों
और आदमी की गंध में
आ न सका।

सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र),
राजकीय महाविद्यालय चायल कोटि, जिला शिमला,
हि.प्र.-171012, मोबाइल 94184 74084

मनमोहन शर्मा की कविताएं

अकसर देखा करता हूं

अकसर देखा करता हूं
अपने चेहरे का बदलता हुआ रूप
पहली बार जब देखा था
तो आईने में आइना सा नजर आया था
धूल सी जम गई थी
फिर से जब एक झलक दी
जरा सा वक्त पाकर एक रोज
वक्त गुजरते परत पर परत
जमती गई
फिर तो यूं लगने लगा
मानो मेरी आखें ही धुंधला गई हो
फुर्सत पाकर एक दिन
जब गौर से कोशिश की फिर से
अपना चेहरा देखने की
तो बहुत ही कुरूप शक्ल
दिखा गया आईना
धूल की परतें, / कील मुहांसों को
चेहरे का हिस्सा / बना गई थी सदा के
लिए / फिर सोचता हूं
आखिर क्यों नहीं देखता रहता है
इनसान अपना चेहरा
गौर से आईने में।

मात्र एक कल्पना

पौ फटते ही / जीवन भरा
अंकुर सा फूटता है
सूरज की पहली किरण छूते
करता बचपन में प्रवेश
बुलबुलों के महलों से भरा
लहरों का देश
किसी परीलोक से कम नहीं
मिट जाता है धूप चढ़ने से पहले
जैसे मात्र कल्पना

धूप का आनन्द भी / गर्मी का एहसास भी
दोपहर में पहुंचते जब
यौवन के उस पड़ाव पर
सफेद संगमरमरी रंगमहल
फौलाद सी जमीन पर
सेहरा बांधे/ पालकी पर बैठे
यूं लगता है / मानो सब कुछ है अपना

दोपहर बाद / फिर वही सांझ
और फिर घनघोर रात
सफेद संगमरमरी दीवारें
पीली पड़ती / फौलादी धरती
मिट्टी से भी कमजोर
देह पर कफन ओढ़े
उस घाट पर पहुंचकर
लगता है कि
जिन्दगी की अनभूली यादें तो क्या
जिन्दगी खुद भी है
मात्र एक कल्पना।

मौसम बदलता है

कड़कती धूप थी / सर से पांव तक
जलता जा रहा था
बचने की उम्मीदें भी
शून्य नजर आ रही थी
सोचा- / ये मौत तो सचमुच
बड़ी भयानक होगी
क्यों न? / खुद को आग लगाकर
अपनी मौत आसान कर लूं।
बस आग लगाने ही वाला था
कि / एक ठण्डी हवा का
झोंका आया / आसमां पर मेघ उमड़े
शीतलता बढ़ी / मैं रुका
जीने की तमन्ना / फिर से उभर आई
मुझे तो मालूम न था
कि / मौसम बदलता है।

वर्षा हुई / और होती रही
शीतलता बढ़ी / और बढ़ती गई
बस फिर क्या / शीत से दम
निकला जा रहा था
सोचा-

तड़प-तड़प कर / मरना होगा
क्यों न? / डूब कर ही मर जाउं
मैं डुबने ही वाला था
कि बदन पर / सूरज की किरण पड़ी
और डूबते डूबते रह गया
मैं तो भूल ही गया था
कि- / मौसम बदलता है।

कल्पना

अम्बर के शिखर व
समुद्र की गहराई से
लौट आती है / पल भर में
कल्पना। / नदियों, झरनों में
बहती हुई / मस्त हवाओं में झूमते
सागर में मिल जाती है
कल्पना। / शिखरों पर मण्डराती
नागिन सी बलखाती
पंख लगाए / बाज की गति से
उड़ जाती है / कल्पना।
चांद को आसन लेकर
सूरज का ताज पहने
तारों से खेलती / खिलखिला उठती है
कल्पना।
सुनसान पथरीली राहों में
साजन की बाहों में
बेल सी लिपट जाती है
कल्पना।
विशाल रेगिस्तान की / कड़कती धूप में
तूफानों से घिरी / मेघों के बीच
पल भर थम जाती है / कल्पना।

निदेशालय, कोष, लेखा एवं लॉटरीज,
ब्लॉक नं. 23, एस.डी.ए. कॉम्पलैक्स, कुसुम्पटी,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 009

कहानी

एक भीगी सुबह

◆ गंगा राम राजी

प्रत्येक दिन की तरह आंख अपने समय पर उसी तरह से खुल गई थी जैसे मानो किसी घड़ी में अलारम रखा होता है। मुम्बई में वैसे भी दिसम्बर जनवरी प्यारा मौसम होता है। यहां तो सुबह उठना मेरे लिए अत्यन्त सुहावना सा लगने लगा था जबकि पहाड़ों पर स्थित अपने पैतृक घर में अधिक ठण्ड के कारण कभी कभी बंक भी मार लिया करता। उठते ही एक हल्की ठण्डी हवा का झौंका खिड़की से कमरे में आते ही मुझे फ्रैश कर गया। मोबाइल देखा पांच बज गए थे और तापमान 20 अंश सैंटीग्रेड।

हल्की ठण्ड होने का आभास होने लगा था। मौसम अच्छा लगने लगा।

कश्मीर से लेकर हिमाचल होते उतरांचल की पर्वतश्रृंखलाओं पर बर्फ और वर्षा के चलते तापमान में भारी कमी और वह हवाएं अपनी ठंड का संदेश यहां मुम्बई तक पहुंचा तो रहीं थीं जिसके चलते यहां मुम्बई में तापमान में गिरावट के परिणाम स्वरूप यहां के लोग 'ठंडी ठंडी' का अलाप करते हुए ठंड से डरने का नाटक या सच में ठंड का एहसास करने लगे थे। समझ नहीं आ रहा था कि इतनी ठंड का आभास कैसे ये लोग महसूस करने लगे। प्रकृति एक रूपता लाने के प्रयत्न में हिमालय की वादियों की ठंड देश के दूसरे गर्म हिस्से में और वहां की गर्म हवाओं को पहाड़ों पर भेजने का प्रयत्न जरूर करती हैं ताकि एक समरूपता कायम रहे जैसे समुद्री तटों पर 'स्थल समीर' और 'सिंधु समीर' यह कार्य करती हैं।

मेरी इस ठंड पर बने संदेह का तुरंत ही निवारण हो गया। सुबह सैर पर निकलने के लिए फ्लैट से नीचे उतरते हुए छह बजने लगे थे, सोसाईटी के एक ओर बैठे रात भर के जगे तीन वॉच मैन अलाव का भरपूर आनंद लेते हुए मुझे दिखाई दिए। वे तीनों अलाव के इर्द गिर्द इस तरह से बैठ कर बातें करते अपने को सेक रहे थे जैसे हम कभी पहाड़ों पर अपने घर पर आग सेकते हुए, चारों ओर अलाव के इर्द-गिर्द बैठते।अम्मा दादी भूत प्रेतों की कहानियां सुनाकर हमारी जिज्ञासा को बढ़ाती रहतीं थीं। अब वहां भी यह सब कुछ नहीं रहा, टी वी ने सब लोक कथाएं बंद करा दी। अब न तो वह संयुक्त परिवार रहा न तो वही अम्मा दादी। इस मोबाइल ने वहां भी सबको एक दूसरे से अलग कर दिया है।

'' अरे साहब आप ठंडी में कहां निकल रहे हो हॉफ कमीज डाल कर ? '' आग सेकते हुए एक वॉचमैन ने मुझे सलाम करते हुए पूछा।

'' साहब बिस्तर में पड़े रहते तो अच्छा रहता न।'' दूसरा कहते हुए हंसने लगा था।

मैं केवल मुस्कुरा दिया। कुछ बोल नहीं पाया। अपने को उन्हें दिखाना चाहता था कि इस आयु में भी मैं तुम जैसी ठंड की परवाह नहीं करता। जबकि मैं पहाड़ों की ठंड के डर से ही यहां भाग कर आता हूं।

वे सब शायद रात भर अलाव के पास ही रहे होंगे और इस समय भी अलाव का आनंद उनसे नहीं छूट पा रहा था। ठीक भी है घर की चार दीवारी के अंदर से तो बाहर तापमान कुछ गिरा हुआ ही था। इन्होंने सारी रात हिमालय की ठंडी हवाओं का भी तो मुकाबला करना ही था, मैं तो यूं ही शेरखान बन बैठा हूं। उत्तर देना उन्हें जरूरी समझ कर बोल पड़ा,

'' हां भाई ठंड तो हो गई है, क्या करें। सब मौसम अपना अपना राग तो अलापते ही रहेंगे, अपना प्रभाव तो मौसम छोड़ेगा ही, नहीं तो कैसे मालूम चलेगा कि ठंड का मौसम आ गया है।''

'' जी साहब ... साहब ऐसे भी तो एक जगह पर खाली बैठ कर ठंड तो लगेगी ही .... ''

'' कोई बात नहीं आपने इसका इंतजाम तो कर ही रखा है

'आदमी की प्रकृति है कि वह कभी भी एक ही वस्तु से अधिक देर संतुष्ट नहीं रह सकता। उसे बदलाव चाहिए ही। इस प्रकृति को ध्यान में रखकर मौसम में बदलाव शायद इसीलिए ही होता है। वह तो किसी भी मौसम से बड़ी देर संतुष्ट नहीं रहता। गर्मी में थोड़ी ही देर में चिल्लाना शुरू कर देता है 'बहुत गर्मी है', सर्दी में चिल्लाना शुरू करता है कि बड़ी ठण्ड है और फिर जो मौसम बीत जाता है उसकी प्रशंसा करने लग जाता है ...' सैर करते यह विचार मेरे दिमाग में चलने लगे थे।

..... '' कह कर मैं भी उनके साथ हंस गया था।

मैं आगे बढ़ गया। सोचने लगा कि प्रकृति ने भी आदमी को इतना तो ज्ञान दे रखा है कि अपनी सहूलियत के लिए वह कुछ न कुछ रास्ता निकाल ही लेता है।

'आदमी की प्रकृति है कि वह कभी भी एक ही वस्तु से अधिक देर संतुष्ट नहीं रह सकता। उसे बदलाव चाहिए ही। इस प्रकृति को ध्यान में रखकर मौसम में बदलाव शायद इसीलिए ही होता है। वह तो किसी भी मौसम से बड़ी देर संतुष्ट नहीं रहता। गर्मी में थोड़ी ही देर में चिल्लाना शुरू कर देता है 'बहुत गर्मी है', सर्दी में चिल्लाना शुरू करता है कि बड़ी ठण्ड है और फिर जो मौसम बीत जाता है उसकी प्रशंसा करने लग जाता है ...... ' सैर करते यह विचार मेरे दिमाग में चलने लगे थे।

मैं इन विचारों को लेकर यारी रोड पर आगे की ओर बढ़ा ही था कि सामने मंदिर की घंटियों की आवाज कानों में पड़ने लगी। मैं मंदिर के पास पहुंच गया था। यह मंदिर सड़क के एक किनारे पर छोटा सा है मतलब एक कमरे का मंदिर। सामने गणेश की मूर्ति, साथ में सांईं बाबे के साथ ही दुर्गा माता की मूर्ति रखी गई थी। वहां एक आदमी उसे आदमी इसलिए कह रहा हूं कि वह मंदिर का पुजारी तो लग नहीं रहा था, हो सकता है वही उसकी देख रेख करता हो, मूर्तियों के आगे धूप अगरवती करते हुए वह घंटियां बजा रहा था और मद्धम आवाज में एक ओर म्यूजिक सिस्टम पर गणेश की आरती बज रही थी। मैं भी आगे जैसे खड़ा हो गया। अपना सर नवाया, दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और अपनी सैर के लिए निकलने लगा ही था कि मसजिद के स्पीकर से अजान की आवाज सुनाई पड़ गई, नजर दौड़ाई तो सामने मसजिद थी। मैंने उस ओर भी अपना सर नवाया और चल पड़ा।

मैंने सुन रखा था कि जब यह मसजिद बनी थी इस को बनाने के लिए यहां के हिन्दुओं ने मदद की थी और मुसलमान भाइयों ने मिलकर इस गणेश मंदिर के निर्माण में मदद की थी। अरे वाह इस तरह के उदाहरण भारत में बहुत से स्थानों में मिल जाएंगे।

तभी मुझे अयोध्य की रामलल्ला के मंदिर की बात याद हो आई। राम लल्ला के मंदिर की ईंटे भी किसी मुसलमान भाई ने दी होगी जिसकी हर इट पर 786 खुदा है। अरे अब अपने सिक्के को चलाने के लिए आज के समाज में नफरत फैलाने वाले बहुत से नेता मिल जाएंगे। अब न जाने क्या हो गया हम सबको। नफरत का सिलसिला कब थमेगा ?'

प्रातः के भ्रमण में मुझे इस चौड़ी सड़क पर चलना बहुत ही अच्छा लग रहा था। इस समय कुछ और प्रभाती भी नजर आने लगे थे। मेरी आयु के प्रौढ़ अधिक थे। अधिक का अर्थ भीड़ से न लिया जाए। जितने भी वहां लोग थे उनमें अधिकांश बजुर्ग ही थे। हो सकता है कि बजुर्गों को नींद जल्दी खुल जाती होगी या सुबह उनके उठने की आदत उन्हें सड़क पर सैर करने के लिए मेरी तरह ही विवश करती चली आ रही होगी। अब की पीढ़ी की नींद सुबह कहां खुलती है। हां एक दो युवा दौड़ लगाते हुए भी दिखाई दिए।

इसके साथ कुछ लड़के लड़कियों के जोड़े भी नजर आने लगे थे। उनके पीठ पर पुस्तकों का थैला देख अनुमान लगाना मेरे लिए आसान ही लग रहा था कि वे कहीं पर पढ़ने के लिए टयूशन जाते होंगे। अब यहां पर अपनी प्रेम भरी बातों में व्यस्त होने से लग रहा था कि वे या तो पढ़ कर आ गए थे या अभी जाना है या वे वहां पर भी बंक मार कर बाहर अपनी मस्ती करने में लगे होंगे। हां थे बड़े मस्त। एक आध लड़के के हाथ में सिगरेट भी देखी जा रही थी जो बड़े स्टाइल से कभी कभी कश लगा रहा था और बड़े अंदाज से उसका धुंआ ऊपर आसमान की ओर छोड़ रहा था।

यह देख मुझे अपना बचपन भी याद हो आया। मैंने बचपन में एक फिल्म देखी थी जिसमें प्राण सिगरेट को बड़े स्टाइल से पीता है। कश लगाने के बाद वह धुंए को आसमान में छल्ले बनाता हुआ छोड़ता है। मुझे उसका स्टाईल अच्छा लगा था और मैंने भी चुपके से पिता जी की कैंची नाम की सिगरेट की डिब्बिया से एक सिगरेट चुरा कर बाहर अपने मित्रों के पास आ गया था और प्राण की तरह ही सिगरेट पी कर दोस्तों के आगे छल्ला बनाने लगा था। जब हवा में सिगरेट के धुंए से छल्ला बना तो दोस्त बड़े खुश हुए और बारी बारी से सिगरेट का कश लगा कर छला बनाने लगे थे। किसी से छल्ला बन रहा था और किसी से नहीं। इसी छल्ले की जानकारी के लिए हमने दो चार बार फिल्म भी चोरी छिपे देख ली थी। परन्तु छल्ला एक ही दिन बना क्योंकि मां को मेरे मुंह से सिगरेट की बदबू आ गई थी और मुझे बड़े प्यार से डांट भी दिया था। मां ने इस तरह से डांटा था कि शायद ही उसके बाद मैंने कभी सिगरेट को हाथ भी लगाया हो !

मेरे सामने ये लड़के मस्ती कर रहे थे। तभी मैंने देखा कि अब वह सिगरेट उसकी साथी लड़की ने ली और वह भी बड़े मजे से कश लगाने लगी। मैं उसे देख रूक गया। मुझ पर उन्होंने एक नजर अवश्य डाली परन्तु कोई ध्यान न दिया वे अपनी बातों में मस्त रहे। मेरी पीढ़ी इस पीढ़ी को इस प्रकार की हरकतें देख इनके बारे कुछ अटपटा सोचने लगती है। हमारे जमाने में तो लड़कियां सबके सामने बात करने तक झिझकती थीं सिगरेट पीना तो कोसों दूर की बात। वे भी मुझे इसी अंदाज से देखते रहे कि तुम चाहे बुरा मानों या अच्छा हम तो अपने ढंग से जिएंगे, इस समय हमें दो दूनी चार के पहाड़े की आवश्यता नहीं है, घर में मां बाप बैठे हैं।

इनको देख मन में तो आया कि इनको सिगरेट के बारे कुछ बता दूं परन्तु ख्याल आया आज का युवा हर बात का ज्ञान रखता है और करता वही है जो उसके मन में आए। सिगरेट पीने से चाहे कितना ही बड़ा नुकसान सेहत के लिए क्यों न हो, यह वो सब

जानते हैं। मैंने उनसे बात न करना ही उचित समझा, यह सोच कर कि मेरे ज्ञान की इस पीढ़ी को कोई आवश्यकता नहीं है। मैं आगे जरूर बढ़ गया परन्तु पीछे मुड़ मुड़ कर देखना नहीं छोड़ा और वह लड़की मेरे से नजरें मिलाती हुई सिगरेट का कश लेते हुई आसमान में बड़े अंदाज से धूएं को छोड़ती रही। ठीक देवानंद के गाने की तरह जो उन्होंने 'हम दोनों' में फिल्माया था, ' हर फिक्र को धुंए में उड़ाता चला गया '। शायद वे यह दिखाना चाहते होंगे कि तुम क्या जानों सिगरेट का मजा।

आज की पीढ़ी की सोच पर विचार करता मैं आगे बढ़ा।

सामने ही मोड़ पर ही एक मंदिर और आ गया। गेट पर ही लिखा था 'श्री राधाकृष्ण, हनुमान शिव मंदिर' मंदिर देखते ही मेरा सर भगवान की बंदगी के लिए अपने आप ही झुक जाता है फिर चाहे वह मंदिर हो या गुरुद्वारा हो या फिर मसजिद हो, चाहे चर्च हो। मेरे लिए सब एक से हैं और सम्मान भी सबके लिए एक सा ही। इच्छा हुई कि मंदिर के प्रांगण में जाया जाए, इच्छा होते ही इससे पहले कि कोई दूसरा विचार न आए मैं अंदर चला गया।

मंदिर का प्रांगण खुला सा था। बाहर बैठने के लिए बैंच लगे हुए थे। मैंने बाहर से सब मूर्तियों को नमस्कार किया और एक ओर के बैंच पर बैठ गया जहां से शंकर परिवार की मूर्तियां नजर आ रही थी। मैंने शंकर पर अपना ध्यान लगाया ही था कि एक डील डॉल वाली महिला भीख मांगने मेरे सामने आ खड़ी हो गई। मैंने उस पर ऊपर से नीचे तक एक नजर डाली,

कितनी ऊंची बातें करती जा रही थी वह। मंदिर में उस ऊपर वाले को चाहने वाले ही आते हैं और प्रत्येक मनुष्य में उसका ही रूप देखने लगते हैं। विचार आया कि वह ठीक ही कह रही है मंदिर हो, मसजिद हो, चर्च हो, गुरुद्वारा हो वहां जो भी आएगा सब लोगों से प्यार करने वाला ही आएगा। सबमें उसका ही रूप देखेगा। ...मनुष्य की अहंकार की पराकाष्ठा कहें सब छल और बल का दिखावा है जो जगह जगह प्रदर्शित हो रहा है।

'' अरे इतनी इट्टी कट्टी हो भीख क्यों मांग रही हो .... ?'' मैं उसे गुस्से से बोल रहा था तो वह बीच में ही बोल पड़ी।

'' साहब, क्या बोलता तूं , हट्टी कट्टी तो हूं ही काम भी करती हूं फिर भी जरूरत कुछ ज्यादा ही आन पड़ी .... ''

उसकी बात सुन कर मुझे कुछ और तेवर चढ़ने लगे थे मैं भी बीच में बोल पड़ा,

''जरूरत कुछ ज्यादा आन पड़ी तो यहां सुबह सुबह ही मांगने खड़ी ... ''

'' हां साहब, खड़ी होना पड़ा है, आठ बजे जो हमको डयूटी पर जाने का है न, जल्दी न खड़ा होगा तो डयूटी पर देरी न होने का ..... ''

'' क्या जरूरत आन पड़ी है तुम्हें ?'' अबके मैं कुछ नरम पड़ गया था। जानने की इच्छा होने लगी थी।

'' साहब रहने दो न, आपने कुछ देना है तो दो .... मेरी बात जान कर तुम का करने का ... दूसरों के लफड़ो में न पड़ते ..... ''

उसकी बातों से, देखने से लगने लगा था कि वह मुस्लिम होगी। जिज्ञासा होने लगी कि मुस्लिम हो कर यहां मंदिर में क्यों भीख मांग रही है, मैंने उससे पूछ ही लिया,

'' तुम्हारा क्या नाम है ?''

'' रजिया ... '' वह मेरे ओर देखने लगी। मेरा संदेह भी ठीक ही निकल गया। सोचने लगा कि इससे भीख मांगने का कारण भी जान ही लूं। मेरी जिज्ञासा का समाधान भी हो गया था, वह मेरे आग खड़ी ही रही और मेरा संदेह और बढ़ गया था, शांत भाव से पूछ ही बैठा,

'' अच्छा कारण बताओ क्यों भीख मांग रही हो ?''

अब उसने अपने काले दुपट्टे का पल्लु अपने कंधे पर लपेटते हुए कहा,

'' साहब जी मेरी एक बड़ी स्टोरी है फिर भी आप पूछता है तो सुनो ..... आप मेरी स्टोरी सुनकर मेरी कुछ हैल्प कर देगा का .... ?'' वह अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग कर रही थी। समझ आ गया कि जहां वह काम करती है अंग्रेजी शब्दों का प्रभाव इस पर भी पड़ गया होगा।

''मैं जिस घर में काम करती हूं मुझे वहां काम करते हुए बीस वर्ष से ऊपर होने का .... बराबर .... ''

'' हां ... बराबर ... '' जब वह बराबर शब्द का इस्तेमाल करती तो मैं भी उसकी हां में हां बोलते हुए बराबर बोलता।

वह आगे बोली।

'' .... उनकी एक बिटिया है अब उसकी मैरीज होने का ... बराबर ... "

'' हां बराबर ... '' मुझे उसके साथ बराबर बोलना अच्छा लग रहा था।

''अब मैंने उस बिटिया को जब वह डॉल जैसी थी बेटी से बढ़ कर पाला पोसा ... अब साहब उसकी मैरीज है न, मुझे भी उसके लिए कुछ देना ही होगा न....... मैंने कुछ पैसा इकट्ठा तो किया है साहब परन्तु बड़े घर की बिटिया है कुछ तो बड़ा गिफ्ट देना ही होगा न ..... छोटा मोटा तो उनके किस काम का ... '' बोलते हुए लगा कि उसकी आंखें भर आई थीं।

उसकी बात सुन कर मैं भी चुप हो गया और सोचने लगा कि गरीब लोग जब दूसरों को चाहते हैं तो दिल से चाहते हैं।

''अच्छा यह बताओ आप मंदिर में क्यो मांगने आई हो रजिया .. ?''

'' साहब, जो उसको मानते हैं ...... उसको, ... गॉड को .

... क्या बोलता तुम, भगवान को, वे मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे में ही जाते हैं, उन्हीं भक्तों में थोड़ी बहुत इनसान ... बच गई है ... अब दूसरी जगह ... कछु नाहीं .... कछु मिलेगा तो यहीं पर ही, मुझे कछु होप है तो यहीं ही है बाहर मैं नहीं जाने का .... सड़क में . ... नाहीं ... मैं मांगने वाली नाहीं ..... ''

सोचने लगा कि बात तो उसने बड़े पते की कही है। भले ही वास्तव में भगवान है कि नहीं वह अलग बात है यहां आकर कम से कम आदमी के प्रति तो सहानुभूति रखने वाला यहीं होता होगा, एक आस्था कुछ लोगों के मन में रहती ही होगी कि सब उसी का अंश है आदि आदि विचार मन में आने लगे और उस औरत के प्रति मेरे मन में आदर भी बढ़ने लगा।

''कब है बिटिया .... डौल की शादी ?''

''इसी सोमवार को ...... ''

'' ठीक है, अच्छा यह बताओ तुम क्या देना चाहती हो... ''

''साहब जी का दे सकती हूं कम से कम कछु ऐसा दूं कि बिटिया याद रखे .... आप ही बताओ ...... मैं ऐसा देना चहती हूं चाहे मुझे उसके लिए सारी उम्र कहीं काम ही क्यों न करना पड़े। हमको बहुत ही प्यारी बच्ची है ..... हमने ही उसे पाला है .... '' बोलते हुए उसका गला अब भर आया था। उसने एक ओर मुंह फेर लिया था। अरे उसका तो मैंने बड़ा दिल दुखा दिया। अब मैं भी पिघलने लगा था।

'' एक आखिरी बात ... अच्छा यह बताओ ... कितने पैसे से तुम्हारा काम चल पड़ेगा ... ''

कुछ देर वह चुप खड़ी रही कुछ नहीं बोली इतनी देर पहले तो वह पैसे मांग रही थी जब अब दाता राशि पूछ रहा है तो वह चुप हो गई। जब वह नहीं बोली तो मैंने उससे फिर पूछा,

'' ठीक है जो तुमने लेना है सोच ले जितने तेरे पास पैसे हैं वह तुम दे देना शेष जितनी कमी जाएगी मैं दे दूंगा ।''

रजिया ने अपने दोनों हाथ मेरे आगे जोड़े और कुछ कहे बिना ही चली गई। कुछ आगे चल कर वह फिर मुड़ कर आई भीगी पलकों से बोली,

''सर, आप अच्छे इनसान लग रहें हैं परन्तु आप मुझे गलत समझ बैठे हैं। मैं भीख नहीं मांगती ... मैं तो पैसों की जो कमी रह गई है उसे पूरी करने के लिए यह सब कर रही हूं। यह भी मेरी मेहनत ही है। मैं आपसे पैसे लेकर आसानी से अपनी इच्छा पूरी नहीं करना चाहती हूं, आप से पैसे लूं और बच्ची को गिफ्ट दूं . .. नहीं हो सकता है ..... जो हम गिफ्ट करते हैं अगर उसमें भी आप बसते नहीं तो उस गिफ्ट का मतबल ही कुछ नहीं रह जाता .... गिफ्ट जो तुम अपने चाहने वालों को देते हो उसमें आप नहीं ... तो ..... कोई मतबल ही नांही ..... ''

कह कर वह जाने लगी फिर दो कदम के बाद फिर रूक गई मेरी ओर मुड़ कर देखा ,

''आपका थैंक यू ... '' नम आंखों से कह कर चली तो गई परन्तु उसकी आंखें मेरे आगे घूमने लगीं उसी तरह से जिस तरह से फिल्म दो आंखें बारह हाथ में .... आंखें ..... ।

मैं सोचने लगा कि मैंने कुछ कहा तो नहीं जो गलत हो और इसका दिल दुखा दिया हो। कुछ देर वहीं बैंच पर बैठा रहा। इस रजिया ने तो मुझे झकझोर दिया। मैं तो उसे एक भिखारिन ही समझता रहा और अपने को ...... अपने को बड़ा समझदार शेरखान समझने लग गया था। अकसर यह अंहकार भी बड़ी गलती करा देता है कभी हम से .... ।

कितनी ऊंची बातें करती जा रही थी वह। मंदिर में उस ऊपर वाले को चाहने वाले ही आते हैं और प्रत्येक मनुष्य में उसका ही रूप देखने लगते हैं। विचार आया कि वह ठीक ही कह रही है मंदिर हो, मस्जिद हो, चर्च हो, गुरुद्वारा हो वहां जो भी आएगा सब लोगों से प्यार करने वाला ही आएगा। सबमें उसका ही रूप देखेगा। मस्जिद को तोड़ने वाले कभी भी मंदिर नहीं गए होंगे। उन्होंने उस प्रभु की कभी भी संगत नहीं की होगी और उसी तरह से बंदूक पकड़ने वाला मुसलमान आतंकी भी कभी मस्जिद नहीं गया होगा। सब खेल ही है। चाहे इसे राजनीतिक कहें चाहे इसे मनुष्य की अहंकार की पराकाष्ठा कहें सब छल और बल का दिखावा है जो जगह जगह प्रदर्शित हो रहा है।

रजिया मेरे मन पर बहुत प्रभाव छोड़ कर चली गई थी। समझ आने लगा कि जो सच्चे पक्के होते हैं उनके चारों ओर वायुमंडल में आभा का एक पुंज साथ साथ चलता है और उस आभा के गुरूत्वाकर्षण में वह दूसरे को प्रभावित करता रहता है। मुझे आभास होने लगा था कि रजिया के चारों ओर भी आभा का पुंज विद्यमान था।

अब सूर्य देव सामने दिखाई देने लगे थे और लोगों का मंदिर में आने का तांता भी लगने लगा था। मंदिर की घंटियां बजने लगी थीं जो मेरे सोचने में भी व्यवधान डालने लगीं थीं। सामने मूर्तियों को नमस्कार कर चल दिया।

अब घर की ओर बढ़ने लगा। रजिया के विचार अब दिमाग में चक्कर काटने लगे थे। रह रह कर दिमाग में घर कर गए थे। आज समझ में आ रहा है कि किसी भी आदमी को छोटा नहीं समझना चाहिए। बड़ी जगह पर काम करने वाले को हम बड़ा समझ लेते हैं और छोटी जगह पर काम करने वाले को हम छोटा समझने की भूल करने लग जाते हैं। इसी उधेड़बुन में मैं रात भर ठीक ढंग से सो भी नहीं पाया।

अगले दिन कुछ जल्दी से सुबह ही, पर्स में पैसे थे यह अनुमान लगा कर मैंने पर्स को अपनी जेब के हवाले कर यह सोच कर चल पड़ा कि रजिया को जो भी हो पांच सौ रूपए तक तो दे दूंगा ही।

मैंने आज इधर-उधर कुछ नहीं देखा या ध्यान नहीं दिया।

वही लड़के लड़कियां, सिगरेट पीने वाले सब को छोड़ सीधे मंदिर के प्रांगण की बैंच पर बैठ गया। मुझे एहसास हो रहा था कि रजिया यहां आएगी और मंदिर में आए भक्तों से अपने गिफ्ट की राशि पूरी करेगी, उसका इंतजार करने लगा। कभी बाहर मंदिर के गेट की ओर देखता कभी अंदर चारों ओर के परिसर को देखता वह तो कहीं भी नहीं ..... दिखाई दे रही थी।

मैंने एक घंटा इंतजार किया , दो घंटे इंतजार किया मेरा मोबाइल बज उठा,

'' अरे आज मंदिर में जम गए ... कोई भगतिन आई है क्या .... '' घर से पत्नी बोल रही थी।

''आ रहा हूं .. ''

''जल्दी आइए श्रीमान जी ... ''

देर होने से पत्नी ताने मारने लगी थी। मैं भी आध घंटा और बैठा, रजिया कहीं नहीं दिखाई दी और मंदिर की मूर्तियों को प्रणाम कर घर की ओर उदास सा लौट चला।

मैं अब रोज आता रजिया अब मुझे नहीं मिलती नहीं दिखती ... कहां गई होगी मैंने उसका पता भी नहीं नोट किया। केवल उसे एक भिखारिन, काम काज करने वाली मजदूरन ही समझ बैठा था . .. वह तो मेरे लिए एक शिक्षक के रूप में आई थी।

मैं अब मंदिर रोज आता, रजिया नहीं मिलती। अब तक तो उसकी डॉल की शादी भी हो चुकी होगी। मेरी अम्मा-दादी के द्वारा सुनी कहानियों की तरह मुझे लगा कि कहीं भगवान मेरी परीक्षा ही तो नहीं ले रहा था और मैं मंदिर की मूर्ति के पास यह प्रार्थना करने लगा, ' हे प्रभु कहीं आप मेरी परीक्षा तो नहीं ले रहे थे। आप रजिया के भेष में तो नहीं थे। हे प्रभु आप इस तरह से मेरे से न मिला करो... मेरे साथ पुराने जमाने वाली बात मत किया करो डायरैक्ट क्यों नहीं मेरे से बात करते...मेरे से भूल हुई है क्या...'

मैं अब मंदिर रोज आता, रजिया नहीं मिलती। अब तक तो उसकी डॉल की शादी भी हो चुकी होगी। मेरी अम्मा-दादी के द्वारा सुनी कहानियों की तरह मुझे लगा कि कहीं भगवान मेरी परीक्षा ही तो नहीं ले रहा था और मैं मंदिर की मूर्ति के पास यह प्रार्थना करने लगा, 'हे प्रभु कहीं आप मेरी परीक्षा तो नहीं ले रहे थे। आप रजिया के भेष में तो नहीं थे। हे प्रभु आप इस तरह से मेरे से न मिला करो... मेरे साथ पुराने जमाने वाली बात मत किया करो डायरैक्ट क्यों नहीं मेरे से बात करते...मेरे से भूल हुई है क्या...'

मैं आंखे बंद किए भगवान शिव से बात कर रहा था तभी घंटे की आवाज ने मुझे अपनी प्रार्थना से जगा दिया, आंखें खोली सामने रजिया ....

''अरे रजिया ... '' मेरी पूजा छूट गई, लगा कि प्रभु ने मेरी बात का मान रखा और रजिया को सामने खड़ा कर दिया। यह सब फिर से अम्मा- दादी की बचपन की कहानी की तरह ही हुआ।

'' हां साहब जी .... रजिया हूं ... नमस्कार ... ''

''अरे मैं तो आपको देखता ही रहा आप मिले ही नहीं .... ''

'' जी ... ''

'' आपका काम हो गया ... बिटिया की शादी हो गई ... ''

'' साहब जी ... सब ऊपर वाला करता है वह सबकी मदद करता है ... बात है कि आपकी प्रार्थना में कितना दम है। सब ठीक हो जाता है। आपने मेरे बारे मे सोचा वह भी बहुत बड़ी बात है ... ''

''सब ठीक हो गया न ... ''

''क्यों न होता ठीक ...सब वही कंट्रोल करता है ... न ...''

'' चलो लाख शुक्र है, ... आपकी मनोकामना भी पूरी हो गई। ''

'' जी .... '' मैंने उसे साड़ी में नहीं देखा था। आज वह साड़ी में थी। कुछ देर रुक कर वह बोली,

''देखो सर, यह साड़ी कितनी अच्छी है ... यह मेरी मेम साहिबा ने शादी का मेरे को गिफ्ट किया है .... ''

फिर उसने मुस्काते हुए एक पूरा चक्कर काट कर मुझे साड़ी दिखाई।

''साहब जी इस साड़ी को मेम साहिबा डालते थे मंहगी होगी न .... '' और उसने एक चक्कर फिर काटा कितनी सुन्दर है न , बोलो न साहब जी ... बोलता क्यों नहीं .... '' और मैंने देखा कि उसकी आखों के आगे अंधेरा छाने लगा होगा क्योंकि वह देख नहीं रही थी। मंदिर में और भी लोग आए हुए थे सब उसकी ओर देखने लगे ... मैंने उसे रोका ... मुझे लगा कि सब अबनौरमल है।

''साहिब जी यह जरा सी एक जगह से फटी है .... फटी पल्लु के नीचे आ जाती है .... हम लोगों को बुरा नहीं लगता ... सब फटी बटी सब चलता है ..... '' कह कर उसने एक चक्कर फिर काटा।

'' रजिया .... क्या कर रही हो ... सब ठीक है .... न .... ''

अब वह कुछ नहीं बोल पा रही थी, मेरा सहारा लिए खड़ी होना चाहती थी ... मैंने सुना वह कुछ बोल रही थी ''... मैम ने अपनी पुरानी साड़ी मुझे दी ... कितनी .... मेहरबानी ... की बड़े लोगों की बड़ी बातें ...... मैं तो ... भगवान को दिखाने आई थी ... मैं तो घूंघट के पट खोल मीरा की तरह आज नाचु रे ...... घूंघट के पट ..... '' कहते कहते वह वहीं पर धड़ाम से गिर गई थी। मैं क्या करूं उसका मुझे पता भी कुछ नहीं, किसको खबर करूं .... मैं तो उसकी आंतरिक पीड़ा भी समझ नहीं पा रहा था।

राज महल, पुराना बाजार, सुंदरनगर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश। मो. 0 94180 01224

कहानी

अड़तीस बरस बाद

◆ सुधाकर आशावादी

मैं उसे भूला नहीं था। रोज किसी न किसी रूप में वह मेरी स्मृतियों में रही। एक अरसे तक उससे कोई मुलाकात भी नहीं हुई, फिर भी उसकी स्मृतियों से मैं कभी बाहर नहीं आ सका। जब से फेसबुक अस्तित्व में आई। कई बार मैंने फेसबुक खंगाली कि हो न हो, उसकी फेसबुक आई डी बनी हो तथा मैं उस आईडी में झांक कर देख लूँ कि उसके नाम की आईडी सचमुच उसकी ही है। उसका स्थाई नाम पता और उसकी शिक्षा दीक्षा की जानकारी मुझे पहले से थी।

कई बार उसका नाम सर्च किया। नाम तो वही है, उस नाम पर अनेक आईडी भी मौजूद हैं, मगर कोई भी आईडी ऐसी नहीं, जो उससे मुझे मिला सकती हो। बात आई गई हो गई। बरसों गुजर गए, न उसकी आईडी मुझे मिलनी थी, न ही मिली। मैं हताश भी नहीं था। प्रभु इच्छा मानकर सत्य की स्वीकारोक्ति के अतिरिक्त कोई विकल्प मेरे पास नहीं था। स्मृतियों में सदैव वह मेरे पास थी।

एक दिवस मैं फेसबुक पर सक्रिय था, तो पाया एक फ्रेण्ड रिक्वेस्ट मेरी आईडी में दस्तक दे रही है। नाम भी वही है। मैंने फ्रेंड रिक्वेस्ट के आधार पर प्रोफाइल खंगाला तो लगा कि वही है जिसे मैं बरसों से खोज रहा हूँ, किन्तु बिना किसी छायाचित्र के सत्य परखने में समस्या उत्पन्न हो रही थी। असल फोटो के स्थान पर किसी मंदिर का चित्र लगा था। मैंने रिक्वेस्ट स्वीकार कर ली। पन्द्रह बीस दिन तक उस आईडी का संचालन नहीं हुआ। फिर एक दिवस मैसेज बॉक्स में एक सन्देश मिला - मित्रता स्वीकार करने के लिए शुक्रिया।

मैंने भी प्रत्युत्तर में लिखा - फेसबुक का शुक्रिया कहिये आदरणीया, जो पुनः मित्रता का माध्यम बनी है।

उसके बाद कोई समुचित उत्तर नहीं मिला। मैंने समझा कि संकोचवश ऐसा हो सकता है, एक लम्बे अरसे बाद पहिचान का भी संकट गहरा सकता है। फिर भी मैं आश्वस्त था, कि हो न हो यह वही आईडी है, जिसकी मुझे बरसों से तलाश थी। एक दिवस पुनः मैसेज बॉक्स में एक वाक्य का वार्तालाप हुआ, तब मैंने अपना मोबाइल नम्बर मैसेज बॉक्स में लिखा तथा यह भी लिखा कि अमुक नम्बर ही मेरे प्रयोग में रहता है।

इस बात को भी सप्ताह भर व्यतीत हो गया। मुझे भी कोई आशा नहीं थी, कि मेरे इस मैसेज का कोई प्रभाव पड़ेगा। मैं उस वार्तालाप को भूल चुका था, कि एक दोपहर मैं कॉलेज से घर जाने के लिए निकला ही था कि मोबाइल घनघनाया। एक

लघु अन्तराल तक दूसरी ओर से कोई आवाज सुनाई नहीं दी, मैं हेल्लो हेल्लो

करता रहा। यकायक उत्तर मिला - 'जी... मैं स्मिता.. बोल रही हूँ।'

एकबारगी मुझे यकीन नहीं हुआ कि यही स्मिता है, आवाज का जादू वही पुराना, बिलकुल भी स्वर नहीं बदला।

मैंने कहा - 'हाँ हाँ पहिचान गया .... आज अड़तीस बरस बाद आपकी आवाज सुन रहा हूँ, भला कैसे भूल सकता हूँ।'

'अच्छा लगा ... आप मुझे पहिचान गए... मैं तो समझ रही थी कि आप मुझे भूल चुके होंगे।' उसने कहा।

'ऐसा कभी संभव हो सकता था क्या ... पिछले अड़तीस बरसों में कभी कोई ऐसा दिन नहीं रहा, जब मैंने तुम्हें याद न किया हो।' मैंने उत्तर दिया।

लगभग पन्द्रह मिनिट तक बात हुई। क्या बात हुई, कह नहीं सकता, भावातिरेक में दोनों बह गए ... कुछ शिकवे शिकायतें... कुछ स्पष्टीकरण निष्कर्षहीन से। बात अधूरी रह गई।

मैंने फोन नम्बर सेव कर लिया। एक आधार मिल गया था, मुझे स्मिता के निकट होने का। फिर तो जैसे बातों का सिलसिला शुरू हो गया। अनेक गलतफहमियां दोनों के मध्य अवरोधक बनकर जो खड़ी थी, भरभराकर धराशाई होनी प्रारंभ हो गई। अतीत के अनेक प्रसंग स्मृतियों को जीवंत करते चले गए। न जाने कहाँ कहाँ से अनेक किस्से उजागर होने लगे, जिनमें से कुछ से मैं अपरिचित था ,कुछ से स्मिता। इसी बीच बातों में नियमितता की दरकार होने लगी। ऐसा लगता कि जैसे एक

एक दिवस मैं फेसबुक पर सक्रिय था, तो पाया एक फ्रेण्ड रिक्वेस्ट मेरी आईडी में दस्तक दे रही है। नाम भी वही है। मैंने ड रिक्वेस्ट के आधार पर प्रोफाइल खंगाला तो लगा कि वही है जिसे मैं बरसों से खोज रहा हूँ, किन्तु बिना किसी छायाचित्र के सत्य परखने में समस्या उत्पन्न हो रही थी। असल फोटो के स्थान पर किसी मंदिर का चित्र लगा था। मैंने रिक्वेस्ट स्वीकार कर ली। पन्द्रह बीस दिन तक उस आईडी का संचालन नहीं हुआ। फिर एक दिवस मैसेज बॉक्स में एक सन्देश मिला – मित्रता स्वीकार करने के लिए शुक्रिया।

कशिश आज भी दोनों के मध्य है,जो चाहती है कि बिना नागा दोनों के मध्य संवाद होता रहे। स्मिता ने कई बार समझाया भी - 'इस संवाद का अब कोई लाभ नहीं है, हम दोनों की अपनी अपनी गृहस्थियां हैं, हँसते खेलते संतुष्ट परिवार हैं। इस अवस्था में हमारा बात करना समाज में किसी को स्वीकार्य नहीं होगा।

हर बार मेरा एक ही उत्तर होता - 'ठीक कहती हो स्मिता ... दोनों के मध्य कोई दैहिक आकर्षण नहीं रह गया है, मगर जो आकर्षण है वह दैवीय है, आत्मिक आकर्षण है, आत्मीय प्रेम है, जो एक दूसरे के कल्याण की कामना करता है, एक दूसरे के प्रति निष्काम भावना से समर्पित है।'

'नहीं ऐसा नहीं हो सकता ... अड़तीस बरस बाद पुनः आप मेरी जिंदगी में आए ही क्यों...मुझे वर्तमान में जीना है , अतीत से बहुत दूर निकल आई हूँ मैं, मैं जानती हूँ कि अपना अतीत भुलाने के लिए मैंने कितना संघर्ष किया है। कितनी रातें आँखों में गुजारी हैं। अब जब मैं अपने परिवार के प्रति पूर्ण समर्पित हूँ, तब आपसे बात करके मैं विचलित हो जाती हूँ, लगता है कि वह अधूरापन मेरे भीतर पुनः अपने आगोश में समेट लेना चाहता है, जिससे मैं बड़ी मुश्किल से बाहर निकल पाई हूँ।' स्मिता को कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करे।

'स्मिता ... शायद तुम ठीक कहती हो, मगर यह अपने हाथ में नहीं है, पिछले अड़तीस बरसों में कभी ऐसी स्थिति क्यों नहीं बनी? अब भी तुमने मुझे खोजा, मैं तो तुम्हें खोजकर हार मान चुका था, इसका कोई तो मतलब होगा, न जाने ईश्वर हमसे क्या चाहता है, मैं भी तुम्हारी भरी पूरी गृहस्थी में कोई व्यवधान नहीं चाहता, किन्तु तुमसे बात करके मुझे लगता है कि मैं अपने आप से बात कर रहा हूँ। मैं कभी भी तुम्हारा या तुम्हारे परिवार का बुरा नहीं चाहूँगा और तुम भी कभी मेरे परिवार का बुरा नहीं चाहोगी। सो यदि तुम मुझसे बात कर लेती हो तो बुरा क्या है ?' मैंने स्मिता को समझाने का प्रयास किया।

'समाज में स्त्री पुरुष के बीच किसी भी प्रकार से वार्तालाप किसी को स्वीकार्य नहीं होगा। समाज का दोहरापन केवल नारी को ही संदेहभरी दृष्टि से देखता आया है। पुरुष प्रधान समाज में तुम कुछ किसी से भी वार्तालाप कर सकते हो। ऐसे में तुम्हें कभी दोषी नहीं ठहराया जा सकता यदि कोई महिला पर पुरुष से फोन पर बात करती है तो समझिये कि वह गृहस्थ में विश्वास और अविश्वास के बीच दुधारी तलवार पर चल रही है।' स्मिता की बात में दम था।

मैं निरुत्तरित था। सिर्फ इतना ही कह सका - 'स्मिता ...मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ , कि तुमसे बात करके मुझमे नई चेतना का संचार हुआ है, जिस दिन भी तुमसे संवाद नहीं होता, मैं टूटने लगता हूँ, एक अजीब सा अधूरापन मेरे भीतर विस्तार पा लेता है। अब यह तुम पर निर्भर है कि किस प्रकार समायोजन करती हो ?'

'सामाजिक रिश्तों के ताने बाने में जो तुम चाहते हो, वह मर्यादित नहीं है। तुमसे बात करके मुझे अपनेपन का एहसास होता है। मैं महसूस करती हूँ कि इस जीवन में तुम्हारे प्यार से वंचित होकर मैंने भी बहुत कुछ खोया है, किन्तु पग पग पर मैं कितनी अग्निपरीक्षा दूँगी, यह नहीं समझ पा रही हूँ।'

स्मिता ने अपना पक्ष रखा। मैं इस स्थिति के लिए तैयार नहीं था, चाहकर भी समाज के कटु सत्य को स्वीकार नहीं कर पा रहा था।

शास्त्री भवन, ब्रह्मपुरी, मेरठ-250 002,
मो. 0 97583 41282

भारत के प्रतीक पुरुष शूरत्व और संतत्व के मूर्त विग्रह : भगवान परशुराम

(पृष्ठ 26 से जारी)

दो उन्हें 'राम' तो मात्र नाम वे लेंगी। विक्रमी शासन से न काम वे लेंगी।।

'नवनीत' बना देती हैं 'भट' अवतारी को। मोहन-मुरलीधर पांचजन्यधारी को।।⁄ वे पिएँ शीत, तुम आतप घाम पियो रे ! वे जपें राम तुम बनकर राम जियो रे।। - (खण्ड-4)

जहाँ शस्त्र बल नहीं, वहाँ शास्त्र पछताते या रोते हैं।

ऋषियों को सिद्धि तभी तप से मिलती है,

जब पहरे पर स्वयं धनुर्धर राम खड़े होते हैं ! ("आज कसौटी पर गाँधी की आग है'' कविता)

स्वयं 'अहिंसक' बन जाने से औरों- आततायियों की हिंसा से बचने की कोई प्रत्याभूति (गारण्टी) नहीं मिलती-

वे हिंस्त्र साधु पर भी न तरस खाते हैं,

कंठी माला के सहित चबा जाते हैं !

'दंडकारण्य' में रावण के नरभक्षी राक्षसों ने खर-दूषण के नेतृत्व में ऋषि-मुनियों को खाकर उनकी हड्डियों का ढेर लगा दिया था। - "निसिचर निकर सकल मुनि खाए'' तभी राम की करूणा उग्रशूरता में परिणत होकर हुंकार उठी थी- "निसिचरहीन करौं मही', भुज उठाइ पनु कीन्ह !

तभी तो राष्ट्रकवि ने 'अहिंसावादी का युद्ध गीत'' में उद्घोषणा की थी- गिराओ बम, गोली दागो !

गाँधी की रक्षा को, गाँधी से भागो !!

भारत को अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए गाँधी ही नहीं नेताजी सुभाष भी चाहिए।

दोनों के समन्वय से ही 'परशुराम' की प्रतीक्षा पूरी होगी।

महाराज बाग, भैरवगंज, सिवनी,
जिला सिवनी (म. प्र.) 480661, मो. 0 88789 80467

कहानी

अम्मा

◆ मानक तुलसीराम गौड़

''राधा अम्मा, प्रणाम।'' घर के आगे से गुजरते हुए एक ग्रामीण ने राधा अम्मा से कहा जो अकेली अपने घर के दरवाजे पर उदास-सी बैठी थी। ग्रामीण परिवेश की संस्कृति के अनुरूप पायलगी की।

''फूलो-फलो बेटा। अम्मा की यही आशीष है।'' प्रत्युत्तर में उसने कहा।

''राधा अम्मा, मौज में हो ना ?'' दूसरे ग्रामीण राहगीर ने अम्मा की कुशलक्षेम पूछी।

''हाँ बेटा, राजी-खुशी हूँ। तुम्हें भगवान खुश रखे।'' उसने कह तो दिया, मगर क्या राधा अम्मा राजी-खुशी है ? मन की अतल गहराइयों में असीम वेदनाएँ, व्यथाएँ, पीड़ाएँ एवं कष्टों के होते हुए भी उन्हें दबाते हुए 'मैं कुशल मंगल हूँ' कहना कितना कठिन है! कितना दर्द भरा है! यह तो भोगने वाला ही बता सकता है। ऊपर से बर्फ-सा आभास देना जबकि अन्दर तो आग लगी पड़ी है।

हाँ, भोगना ही तो हुआ। अम्मा आज अकेली है। दो-दो बेटों के होते हुए भी। दो वक्त की रोटी के लिए मोहताज है जबकि उससे ज्यादा अनाज तो बेटों के पालतू कुत्ते ही खा जाते हैं और ऊपर से चीनी मिला दूध भी। सच में बुढ़ापा वैसे भी एक अभिशाप है और ऊपर से यदि वैधव्य जीवन जीना हो तो यह कोढ़ में खाज वाली बात हो जाती है।

राधा अम्मा खंडहर हो चुके अपने पुश्तैनी घर में अकेली रहती है जबकि उसका बड़ा बेटा उसी पुराने मकान के पश्चिम में सटी हुई नई हवेली में अपनी पत्नी और इकलौती बेटी के साथ तो पूर्व दिशा में सटी हुई हवेली में छोटा बेटा अपनी धर्मपत्नी और इकलौते बेटे के साथ सुखमय जीवन जी रहे हैं।

हाँ, सुखमय जीवन ही तो जी रहे हैं क्योंकि यह सुख अपने माँ-बाप से फोकट में मिला हुआ है। बाप से मिली संपत्ति से दोनों बेटों ने हवेलियाँ बनवा ली। मानो वे घर न होकर राजा-महाराजाओं के महल हों। राजप्रासाद हों। हों भी क्यों नहीं। खर्च जब बाप का लगता है तो कोताही किस बात की। अपने पसीने एवं मेहनत से तो एक झोंपड़ी भी नहीं बन पाती और बन भी जाती है तो उसे बनाते-बनाते पूरी जिंदगी खप जाती है। कभी-कभी तो पूरा जीवन सांसारिक, सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्वों को निभाने में ही चुक जाता है और सर पर छत होने का ख्वाब पाले हुए ही इस दुनिया से रुखसत होना पड़ जाता है।

यह तनहाई की वेदना झेलने का काम खुद राधा अम्मा ने ही अपने पाले में खींचा है। अपने पाँवों पर कुल्हाड़ी खुद उसने ही मारी है। उसके पति किशन बाबू ने मरते वक्त उसे खूब समझाया था। राधे, जीते जी घर की चाबी अपने हाथ में रखना। जैसे मैंने रखी थी। अपना माल-असबाब, धन-दौलत, सोना-चाँदी, रुपये-पैसे सारे अपनी संतानों के ही हैं, पर अभी नहीं। हमारे मरने के पश्चात्। यह दौलत का नशा ही निगोड़ा ऐसा होता है कि पल्ले पड़ते ही आदमी को नशा चढ़ जाता है। बुद्धि कुंद हो जाती है। रिश्तों को रिसाते-रिसाते आखिर में मिटा ही देता है। पर माँ का मन पिघलते कितना समय लगता है। जैसे शुद्ध घी धूप या अग्नि की थोड़ी-सी तपन महसूस करते ही पिघल जाता है। माँ का हृदय क्या पिघला उसकी दुर्दशा प्रारम्भ हो गई। कभी मकान तो कभी दुकान। कभी उद्योग तो कभी व्यापार का बहाना बनाकर भोली-भाली माँ को लूटते रहे और वह अपनों के ही हाथों लुटती रही। कोई पराया यदि असहाय, लाचार और निर्बल को सताए तो अपनों से शिकायत की जा सकती है, मगर यहाँ तो अपने ही अन्याय करने पर तुले हैं तो न्याय के लिए गुहार करे भी तो किसके आगे ?

पिताजी की मृत्यु के पश्चात् दोनों भाई जब अलग हुए तो पुराने घर की गृहस्थी का सारा सामान आपस में आधा-आधा बाँट लिया, मगर जन्मदात्री माँ को किसी माइके लाल ने यह नहीं कहा कि माँ हमारे पास रहेगी या माँ हमारे साथ चलो।

जब बँटवारे का सारा सामान लेकर दोनों संतानें चली गई तो माँ ठगी-सी देखती रह गई। राधा अम्मा के पति को गुजरे हुए छः माह हो गए, परन्तु उसको लगा कि वह विधवा आज हुई है। वह कायर और हारी हुई की तरह दिखना नहीं चाहती, मगर उसका अन्तर्मन रो रहा है जिससे आँखों के आँसू लुढ़ककर गालों पर आ गए। अपनी सफेद ओढ़नी से आँसू तो पोंछ लिए, मगर हृदय-तल में जो घाव और छाले पड़ गए उनको कैसे मिटाया जाए क्योंकि कुछ छाले और फफोले मिटते नहीं। यदि मिट भी जाते हैं तो भी

उनकी टीस जीवन भर सालती रहती है।

टीस इस बात की है कि जाते वक्त एक बार तो बेटे-बहुओं ने कहा होता कि माँ, चलो। अपने घर चलते हैं। अब हमारे साथ रहना। चाहे लोकलाज, झूठ और ऊपरी मन से ही सही। यहाँ आकर मनुष्य भाग्य को मानना और उसे कोसना शुरू कर देता है।

ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो भ्रम में जीते रहते हैं। भ्रम का निकलना अच्छी बात है और बने रहना घातक। कड़वे और बुरे मामलों में भ्रम बना रहे तो अच्छा किन्तु मीठे और अच्छे मामलों में भ्रम का रहना और टूटना दोनों ही पीड़ा और कष्टदायक होते हैं। यह बात अम्मा से ज्यादा और कौन जान पाया होगा क्योंकि अम्मा का भरा-पूरा परिवार है, पर इस परिवार की दुनिया में उसका कोई हो न सका। जो उसकी वृद्धावस्था का संबल बन सके।

राधा अम्मा को याद है जब वह प्रथम बार इस घर में ब्याहता होकर आई थी, कितना जमघट था। भरा-पूरा परिवार। नई दुल्हन की आवभगत। मान-मनुहार। लाड-प्यार। हेत-दुलार। उसके पश्चात् परिवार बढ़ता गया और दुनिया की मोह-माया भी, परन्तु आज वही घर, घर नहीं भुतहा खण्डहर लगता है। घर की दीवारें खाने के लिए दौड़ती है। जी घबरा रहा है, पर किससे कहें ? अपने मन का दर्द। हिये का गुबार। लगता है छाती फट जाएगी और वह चाहती भी है कि छाती फट जाए। अब और जीने की न तो चाह है और न राह। बस देख लिया इस संसार को। कोई किसी का नहीं। झूठी माया है। केवल छल है। प्रपंच है। न चाहते हुए भी अश्कों की अविरल धारा पुनः बहने लगी।

अम्मा आज भूखी ही सो गई। सोना क्या था ? नींद तो थी नहीं आँखों में, पर कब तक अकेली बैठी रहती। इसलिए कमर सीधी करने के बहाने लेट गई। आँखों में नींद की जगह केवल रील चल रही है, पुरानी बातों की, बीते वक्त की। इंसान कितना स्वार्थी होता है। एक नम्बर का नुगरा। एहसान फरामोश। जिन्हें परायों की तो बात ही छोड़ो, अपनों के साथ कैसा बर्ताव किया जाए यह भी मालूम नहीं। मालूम होता है, मगर वह जानबूझ कर अनजान बनता है। ऐसा वह सोच रही है। जो सत्य भी है। अनुभव से छना हुआ सत्य।

अम्मा आज भूखी ही सो गई। सोना क्या था ? नींद तो थी नहीं आँखों में, पर कब तक अकेली बैठी रहती। इसलिए कमर सीधी करने के बहाने लेट गई। आँखों में नींद की जगह केवल रील चल रही है, पुरानी बातों की, बीते वक्त की। इंसान कितना स्वार्थी होता है। एक नम्बर का नुगरा। एहसान फरामोश। जिन्हें परायों की तो बात ही छोड़ो, अपनों के साथ कैसा बर्ताव किया जाए यह भी मालूम नहीं। मालूम होता है, मगर वह जानबूझ कर अनजान बनता है। ऐसा वह सोच रही है। जो सत्य भी है। अनुभव से छना हुआ सत्य।

बड़ी बहू जितनी अच्छी बड़ा बेटा उतना ही नालायक। छोटा बेटा अच्छा है तो छोटी बहू पूरी नागिन। जो चौबीसों घण्टे फुफकारती ही रहती है। इसमें उसका दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है। बेटे-बहू का जोड़ा बना भी तो बेमेल। दो नालायकों की जोड़ी एक जगह होती तो दो डूबते एक ही डूबता, मगर यहाँ तो कुएं में ही भांग पड़ी हुई है। साथ रहते थे तब तक तो बड़ी बहू और छोटे बेटे की हमदर्दी उसके साथ थी, पर जबसे अलग घरोन्दे में वास करना शुरू किया है तब से सभी एक ही माला के मोती लगते हैं। देखा भी गया है कि जिनके विचार तुच्छ और टुच्चे हों वे सद्‌विचार वालों को दबा लेते हैं। यह बात इन लोगों ने सच साबित कर दिखाई।

सर्दियों की लम्बी रात पूरी की पूरी आँखों में गुजर गई। पल भर भी आँख नहीं लगी। करवट बदलते-बदलते ही भोर का तारा उदय हो गया। मुर्गे ने बाँग दी और अम्मा राम-राम, हरि ओम.. .-हरि ओम.... करते-करते स्नान-ध्यान में लग गई। पूजा-पाठ से निवृत्त हुई तो उन निगोड़ो एवं नालायकों की तो कोई खास याद नहीं आई, मगर पोता-पोती के लिए मन में एक हूक-सी उठी। वह उनसे मिलने जाने के लिए उद्यत हुई, मगर बूढ़े मन के स्वाभिमान ने कदम रोक दिए। वह ऊहापोह में फंसी घर के आँगन में बदहवास-सी चक्कर लगाने लगी।

मन मानने को तैयार नहीं। दीवार के इस पार से ही आवाज़ दी पोती को- ''सलोनी। बेटी सलोनी। जरा आ तो बेटी।'' बच्चे तो ठहरे बच्चे। निर्दोष वे क्या जाने भेद-भाव में। अपने-पराये में। दादी की पुकार सुन दौड़ी चली आई। पाँवों में पायल छमछमाती हुई छम-छम, छम-छम।

घर की फाटक खुलने की आवाज़ आई तो उस घर से पोता वीरम भी दौड़ा चला आया। आकर दोनों बहन-भाई दादी से चिपक गए। दादी तो निहाल हो गई। जैसे जल से बाहर निकाली गई मछली को पुनः जल-धारा मिल गई हो। राधा अम्मा उन्हें अपनी छाती से दूर नहीं कर रही है। उन्हें चूम रही है। पुचकार रही है। उनके सिर पर स्नेह भरा हाथ फेर रही है।

अब बच्चे सप्ताह में एक दिन यानी छुट्टी के दिन अपनी दादी के घर आकर उसे आबाद करने लगे। दादी भी छुट्टी के दिन टक-टकी लगाए घर की फाटक की तरफ देखती रहती जैसे चकोर चाँद को तकता हो।

छः माह पश्चात् राधा अम्मा को पता चला कि दोनों बेटों का परिवार तीर्थाटन पर जा रहा है। उसका भी मन हुआ कि उम्र की ढलान पर उसे भी अब तीरथ कर लेने चाहिए, मगर मन चलने से क्या टट्टू भी तो चलना चाहिए। माँ का स्वाभिमानी मन बेटों से सीधी बात नहीं करना चाहता और संवेदनहीन संतानें माँ के मन की थाह कहाँ लगा पाती है। परन्तु बहुओं को पता लग गया तो

उन्होंने पानी के आगे पाल पहले ही बाँध ली।

कहने लगीं- ''माँ जी को अब इस बुढ़ापे में घूमने-फिरने का शौक चरमराया है। पहले अपनी उम्र का तो ख्याल करना चाहिए।'' बात होती है तो दूर तलक जाती है और गई भी।

तब राधा अम्मा ने कहा- ''अरे निगोड़ियों, तुम क्या जानो तीरथ-तप में। तुम्हारा तीरथ तो मैं हूँ। तुम तो झूठी भटकती फिर रही हो। रही बात मेरे शौक-मौज की तो यदि मैं शौक-मौज मनाती तो आज तुम्हारे शौक-मौज पूरे कैसे होते ? यह सारा हमारा ही कमाया-पकाया है जिसे तुम चर रही हो।'' बात में दम था, परन्तु बेशर्मों पर कभी असर होता है क्या ?

अम्मा अब अकेली जीना सीख गई है। इंसान जब किसी से अपेक्षा और उम्मीद करता है और जब वह टूटती है तो उसकी चटकन ठेठ अन्दर तक पहुँचती है। जो पीड़ा पहुँचाती है। अपेक्षाएँ और उम्मीदों को छोड़ दें तो फिर कोई तकलीफ नहीं, परन्तु इंसान के लिए यह संभव है क्या! उम्मीदों के सहारे ही तो यह संसार चलता है। है ना विरोधाभास!

अम्मा का हाथ तंग रहता है। वह तंगहाली का जीवन जी रही है, पर लोगों को बताना नहीं चाहती। वह छुपाना चाहती है, परन्तु गंध, हेत और घृणा कभी किसी से छुपते हैं क्या ? तभी तो एक ग्रामीण ने कह ही दिया- ''राधा अम्मा, घर के पिछवाड़े बहुत जमीन पड़ी है। क्यों तकलीफ भुगत रही हो ?'' वह क्या जवाब देती।

'हाँ, है।' कहकर उत्तर टाल गई, पर मन ही मन सोचने लगी कि एक किलो आटा, पाव भर दूध या छटाँक भर घी के लिए क्या मैं रोज एक टोकरी भर मिट्टी बेचती रहूँगी। रोजमर्रा की जिंदगी के खर्च निकालने के लिए तो नियमित आमदनी या आवक चाहिए। उसका जुगाड़ कैसे हो ? सौ बात की एक बात तो यही है।

उसे फिर से पति किशन बाबू की हिदायतें याद आने लगीं। एक दिन उन्होंने कहा था- ''राधे, जीवन का कोई भरोसा नहीं। न जाने कब जीवन का सूर्य अस्त हो जाए। खाली पल्ले मत रहना। मैं आज स्वस्थ हूँ, पर कल की क्या गारन्टी ? कल को यदि मैं दरक या टपक गया तो हाथ के ये चार पैसे ही तुम्हारे काम आएँगे। खरचने के लिए और तुम्हारी पूछ बनाए रखने के लिए भी। बुढ़ापे में हाथ का पैसा ही काम आता है। यह समझ कि पैसा ही सबसे बड़ा बेटा होता है। वरना जब किसी चीज की जरूरत पड़ेगी तो मन मसोस कर रह जाना पड़ेगा। मन मारना पड़ेगा या फिर अपनों या परायों के आगे हाथ फैलाना पड़ेगा। जो कोई भी इनसान नहीं चाहता।''

अब उनकी कही बातें याद आती है तो पछतावा होता है। पर अब पछताए होत क्या जब निंबू निचुड़ गया दूध में। हाथ खाली किए तो हलाल तो हर हाल में होना ही है और वह अब नित हलाल होती ही जा रही है।

एक दिन छोटी बहू आई। अम्मा के लिए कुछ राशन-पानी लेकर। लाकर थैला पटका जैसे कोई बहुत बड़ा उपकार या एहसान जता रही हो। ऊपर से ये विष-बोल- ''लो, यह एक माह का राशन है। आटा, चीनी, चाय, दाल और मिर्च-मसाले। देखकर वापरना। और मिल जाएगा, सोचकर भकोसना मत।''

कह कर चली गई। जैसे यह सास का घर नहीं बल्कि कोई यतीमखाना हो और वह दान या भीख देकर गई हो। जबकि दान और भीख भी मन के अच्छे भाव, श्रद्धा और विनम्रता से दी जाती है। जबकि ये सब उसके दिए हुए पैसों की बदौलत ही खरीदकर दिया जा रहा है। इससे अच्छा होता कि यह सामान लाती ही नहीं। और न ही आत्मीय जन के शब्दों की चोट से आहत होना पड़ता। अब तो शब्द रूपी विषबाण अन्तहीन हृदय की गहराइयों तक चोट करने लगे हैं। जिसकी पीड़ा असह्य हो चली है।

सामान लाकर देने और पटकने का ढंग अम्मा को अन्दर तक हिला गया। कलेजे पर चोट लगी। मन आहत हुआ। एक बार तो उसके मन में आया कि कह दें कि उठा यह सामान। नहीं चाहिए यह तुम्हारी भीख, परन्तु अम्मा ने वह अपमान भी गटक लिया, शिव के विषपान की तरह। वह नहीं चाहती कि उसके शब्दों से किसी को पीड़ा हो। वह अपनी ही औलादों को शब्दों से दुःखी और व्यथित नहीं करना चाहती। आखिर वह माँ जो ठहरी। वह बड़े विचारों की महान नारी है, परन्तु उसके भावों और विचारों को न तो कोई जान पाया और न ही उनकी कद्र की।

गाँव में जनम, परण और मरण के अवसर पर बुलावा देते हैं तो वे दोनों हवेलियों को छोड़कर सीधे राधा अम्मा के पास आते हैं जिसे वे अम्मा का घर कहते हैं। यह देखकर दोनों बहुओं को अखरता है। जलन होती है। होती है तो होती रहे। यह लगाव और अपनापन अम्मा ने अपने जजबे से पैदा किया है। इसमें से कुछ अपनेपन से कह भी देते हैं कि अम्मा, चाय पीएँगे तो उनको वह मना कैसे करें।

मंदिर जाती है तो वह दो पैसे ठाकुरजी को चढ़ा आती है। अमावस्या, पूर्णिमा, एकादशी, वार, त्योहार और श्राद्ध में कुछ करना भी पड़ता है। गाँव की बहन-बेटी आती है तो उन्हें खाली हाथ कैसे लौटाएँ। तो तथाकथित अपनों से सुनना पड़ता है कि तुम्हारा खर्चा ही कितना है। लागत ही क्या है तुम्हारी ?

लगता है। बेटे-बहुओं, लगता है। जीना हो तो बहुत कुछ लगता है। सबकुछ लगता है।

अम्मा से हमदर्दी रखने वाले तथा न्याय की बात करने वाले ग्रामीणों की यहाँ कमी नहीं है। अम्मा के साथ किए जा रहे उनके व्यवहार को देखकर उन्होंने दोनों बेटों की नाक भी काटी, परन्तु जो पहले से ही नकटे हों उनकी पुनः नाक थोड़े ही कटती है। चिकने घड़ों पर शर्म-हया की बूँदें कब ठहरी है जो इन पर ठहरती।

वे तो सब बापू के बन्दर सिद्ध हुए। मोटी चमड़ी वाले।

राधा अम्मा का मन घर में बिलकुल ही नहीं लगता। इसलिए घर की चौखट पर बैठी रहती है। घर में जाकर करे भी तो क्या ? वही सूनापन। खाने को आती घर की दीवारें। वही कचोटती पुरानी स्मृतियाँ और वही फाकाकशी। यह बात नहीं है कि अम्मा के पीहर वाले उसे याद नहीं करते, बल्कि भतीजे उसे लेने भी आए थे। अपनी बुआ की दुर्गति पर तरस खाकर, मगर अम्मा ने ही मना कर दिया था वहाँ जाने के लिए। यह सोचकर कि पीहर में जीवन बिताना एक अच्छा विकल्प नहीं है। फिर इन निगोड़ों की इज्जत का भी सवाल है। जिसे माँ नहीं सोचेगी तो दूसरा कौन सोचेगा।

कभी-कभी तो अम्मा के मन में निराशा, हताशा और अवसाद के भाव हिलोरें लेने लगते हैं। तंगी में कौन संगी। चारों तरफ अंधियारा ही नज़र आता है। कहीं से भी रोशनी की कोई किरण नज़र नहीं आती। ईश्वर से दुआ करती है कि हे प्रभु, देख लिया तेरे संसार को। अब बहुत हो गया। तंगहाली और अपमान अब दुधारी तलवार की तरह मार कर रही है। गहरे घाव कर रही है। बर्दाश्त करने की भी एक सीमा होती है। हे मेरे सांवरा, अब उठा ले। अम्मा ने कह तो दिया, मगर यकायक उसे सलोनी और वीरम की याद हो आई। बस यही दो प्राणी उसे जीवन जीने के लिए मजबूर कर रहे हैं, वरना एक जिन्दा लाश को ढ़ोने में कोई सार्थकता नहीं बची है।

अतीत में खोई अम्मा बहुत-सी बातें याद करने लगी। किशन बाबू के रहते एक बार वह गंभीर रूप से बीमार हुई थी और मरते-मरते बची। पति थे तो दो-तीन जगहों पर दिखाकर उचित इलाज करवा दिया, परन्तु अब वह सोचती है कि काश! मैं उस वक्त मर जाती तो न तो यह वैधव्य भोगना पड़ता और न ये ओछे दिन। सच में उस दिन मर जाती तो बेचारी बच जाती। अब इन हालातों में जी कर तो पल-पल मरना ही है।

बेटों को अलग हुए दो वर्ष हो गए हैं। इन दो वर्षों में न तो अम्मा को उन्होंने कभी अपने घर बुलाया और न ही अम्मा बिन बुलाए कभी उनके घर गई। वे उसे बुलाए ही क्यों? वे तो अम्मा को एक बला समझते हैं और बला को कोई अपने घर में बुलाता है क्या ?

एक दिन गाँव वालों से ही पता चला कि सलोनी बीमार है। शहर से डॉक्टर आकर देखकर गया है। बेटे-बहू ने अम्मा को फिर भी नहीं बुलाया। अम्मा घर में बेचैन। मन में उठा-पटक। चित डावाँडोल। न बैठा जा रहा है और न ही बिन बुलाए वहाँ जाया जा रहा है, परन्तु कुदरत ने नारी को बनाया ही कोमलमना है। संवेदनशील, दयालु और परोपकारी तो फिर वह इन स्वभावों के प्रतिकूल व्यवहार कैसे करती ? पहुँच गई आज पहली बार बड़े बेटे के घर। सलोनी जो पिछले दो दिनों से ज्वर से तपती-गुमसुम-सी लेटी थी। दादी को देखते ही पुकार उठी- ''दादी अम्मा.....।''

दोनों तरफ आँसुओं की बूँदें। प्रेम की, विरह की और मिलन की। आँखों के साथ मन भी रो रहा है। डबडबाई आँखों से दादी ने उसके सिरहाने बैठकर उसे पुचकारा। सिर पर स्नेह का हाथ फेरा, उसके आँसू पोंछे। लगभग घण्टे भर वह वहाँ रुकी। इस दरम्यान सलोनी ने मौन तोड़ा। चाय-बिस्कुट भी लिए। दादी के साथ गपशप भी की। लगने लगा कि अब वह आधी ठीक हो गई है।

दोनों तरफ आँसुओं की बूँदें। प्रेम की, विरह की और मिलन की। आँखों के साथ मन भी रो रहा है। डबडबाई आँखों से दादी ने उसके सिरहाने बैठकर उसे पुचकारा। सिर पर स्नेह का हाथ फेरा, उसके आँसू पोंछे। लगभग घण्टे भर वह वहाँ रुकी। इस दरम्यान सलोनी ने मौन तोड़ा। चाय-बिस्कुट भी लिए। दादी के साथ गपशप भी की। लगने लगा कि अब वह आधी ठीक हो गई है।

राधा अम्मा बड़ी धीर-गम्भीर है। वह होशियार है और साथ में समझदार भी। और आजकल मौत समझदार की ही होती है। इसीलिए वह उपेक्षित जीवन जी कर तिल-तिल मर रही है वरना एक विधवा, बेसहारा और आशक्त माँ के जीवन-यापन के लिए कानूनी प्रावधान उसे भी मालूम है। शिकायत करने के लिए थाना और कोर्ट-कचहरी कहाँ है, उसे भलीभाँति पता है, पर वह उस रास्ते जाना नहीं चाहती। अम्मा ने अपने बाल कोई धूप में धवल नहीं किए हैं। दोनों बेटों को अम्मा ने पैदा किया है, कोई बेटों ने अम्मा को नहीं। किसने किसको पैदा किया यह तो आने वाला वक्त ही बताएगा।

मानव शरीर नश्वर है। जो आया उसे जाना ही है। कहावत भी है कि आया है सो जाएगा, राजा रंक फकीर। यह जगत एक सराय है। आना है। ठहरना है और लौट जाना है। जो इस सच्चाई को जान गए वो ज्ञानी है और न समझ सके वे अज्ञानी है। अभिमानी है। शाश्वत नियम का पालन करते हुए राधा अम्मा रात को चल बसी। अपने उसी पुश्तैनी, पुराने और खंडहर घर में। अम्मा का भरा-पूरा परिवार रहते हुए भी यह संसार छोड़ते वक्त अकेली ही थी। निरा अकेली। क्या उसे प्राण त्यागते वक्त अपनों की याद नहीं आई होगी। अपने बेटों की, अपनी बहुओं की जिन्हें उसने अपना समझा। वे अपने थे भी, लेकिन केवल कहने भर के लिए। मात्र स्वार्थ पूर्ति होने तक। अपनी लाडली पोती सलोनी और पोते वीरम को अन्तिम यात्रा की विदाई के वक्त उनसे मिलने, गले लगाने और स्नेह भरा हाथ उनके सिर पर फेरने के लिए वह अवश्य ही छटपटाई होगी.....।

अम्मा अपनी होशियारी और समझदारी का परिचय देते हुए एक 'वसीयत' लिखकर छोड़ गई जिसे आज उसकी अन्त्येष्टि के पूर्व पढ़ा जाना है। जिसका ब्यौरा इस प्रकार है-

(शेष पृष्ठ 48 पर)

कहानी

करियालची

◆ एच. आनंद शर्मा

दीपू के लच्छन बचपन से ही ठीक नहीं थे। तायी कहतीं- "कहीं कनस्तर भी बज रहा हो तो दीपू सबसे पहले तमाशा देखने वहां पहुंच जाता। बजंतरियों की संगत में रहकर पूरा बजंतरी ही बन गया है।"

ताई चाहती थीं कि दीपू पढ़ लिखकर कुछ बन जाए। उन्होंने जैसे तैसे मारपीट, डांट फटकार कर उसे दसवीं कक्षा तक तो पहुंचा दिया, लेकिन वहां आधे से ही भाग निकला। ताई जब भी मिलतीं अपने दीपू की शिकायतों का पिटारा खोल कर बैठ जातीं। ताई जितना दीपू को डांटती फटकारती, उतना ही प्यार भी उससे करतीं। आखिर वही तो उसके बुढ़ापे का सहारा था। शायद इसीलिए नटखट दीपू पर डांट फटकार का कोई असर नहीं पड़ता।

मैंने इस बार दिवाली की छुट्टियों में गांव जाने का कार्यक्रम बनाया। मुनिया और बंटू दोनों खुश थे। पत्नी सुधा ने तैयारियां कीं और शाम होने से पहले ही हम गांव पहुंच गए। हम सभी को ताई से मिलने का बेसब्री से इंतजार था। वह हमें देखते ही हमेशा खुशी से झूम उठती हैं और लपक कर सभी को गले लगा लेती हैं।

लेकिन इस बार तो सारा माहौल ही बदला हुआ था। घर में तो कोहराम मचा था। ताई हमें देखते ही फूट पड़ीं। वही रोना धोना- दीपू- दीपू- दीपू और दीपू..।

परंतु इस बार मामला वास्तव में ही गंभीर था। मुझे भी गुस्सा आ गया। घर में पत्नी के बच्चा होने को था, लेकिन दीपू पिछले चार दिनों से कहीं गायब है। ताई ने कहां- कहां नहीं पूछा, लेकिन उसका कोई पता नहीं चला। ताई रोते-रोते बोलीं- "ऐसे समय में पत्नी के पास रहता तो उसे भी ढाढस बंधता। बहू भी क्या सोचती होगी कि कैसे पूत को जन्म दिया है, जिसे घर की कोई फिक्र ही नहीं। ऐसे कपूत से तो बे-औलाद ही भले। भगवान भी पता नहीं पिछले किन करमों के फल भुगतवा रहा है।"

ताई ने बताया कि आज सुबह ही बहु के बच्चा हुआ है । रोते हुए बोलीं, "एक बेटे का बाप हो गया है नालायक, लेकिन शर्म डक्के की नहीं है। मैं कब तक संभालती रहूंगी उसका परिवार। मेरा बुढ़ापा नर्क बना दिया है इसने।"

परेशान सुधा तुरंत स्थिति को संभालने के लिए बहु के कमरे में चली गई। बच्चे भी 'बेबी को देखने' के लिए मचलने लगे। हालांकि, ताई को पोता होने की खुशी है, लेकिन बेटे की बेहयायी में यह खुशी तार तार हुए जा रही थी।

ताई की शिकायतों से ही पता चला कि दीपू इस दौरान करियालची हो गया है। किसी करियाला पार्टी से जुड़ कर जगह-जगह नाचता फिरता है। कोई एक ठिकाना हो तो पता भी चले।

ताई बोलीं- बेटा अब तू आ गया है... तू ही ढूंढकर ला उस नालायक को। खूब जूते मारना ताकि हमेशा याद रहे उसे। मेरी तो वह कोई परवाह ही नहीं करता।"

मेरे लिए ताई का आग्रह टालना मुश्किल है। इस दुष्ट को ढूंढने के लिए अब मुझे ही कुछ करना होगा। सुधा के चेहरे पर गुस्सा है। जैसे कह रही हो, 'यही दिवाली मनाने लाए थे यहां३?'

मैं दीपू की टोह लेने के लिए गांव में टहलने निकला। हर तरफ दिवाली की तैयारियां जोरों पर थीं। घरों में साफ सफाई और रंग रोगन चल रहा था। बच्चों के गिरोह दिवाली के लिए खरीदे गए पटाखे आज ही फूंक देने के लिए उतावले हैं, जबकि बुजुर्ग उन्हें ऐसा करने से रोक रहे हैं। दोनों पक्षों में द्वंद्व छिड़ा है। बच्चे पटाखों के लिए जिद कर रहे हैं तो बुजुर्ग उन्हें किसी तरह टालने की कोशिश में लगे हैं। कहते हैं, "सारे पटाखे आपके लिए ही लाए गए हैं, दिवाली के दिन खूब मौज करना। अभी चलाओगे तो दिवाली को क्या करोगे?" लेकिन बच्चे फिर- फिर पटाखे मांग रहे हैं। कहीं- कहीं से पटाखे चलने की आवाजें भी आ रही हैं।

मेरे पूछने पर दर्जी काका बोले, "अरे बेटा, कार्तिक के महीने कुत्तों और करियालचियों का भी कोई ठिकाना होता है? पगलाए से जगह-जगह घूमते रहते हैं। जहां की भी साई (बुकिंग) मिली, वहीं करियाला नाचने चले गए।"

लाला बल्कारू दुकान में बैठे- बैठे ही बोला, "भाई, मैंने तो ताई को कई बार समझाया कि ज्यादा लाड प्यार ठीक नहीं, लड़का हाथ से निकलता जा रहा है। उस वक्त मेरी बात उन्हें बुरी लगती थी। अब पछता रही हैं। भाई, मेरी बात याद रखना, ये लड़का ताई को खून के आंसू रुला के रहेगा।"

इसी दौरान सामने से दीपू का हमउम्र साथी अशोकी आता दिखा। आते ही मुझे प्रणाम किया और खबर देते हुए बोला, "आज

रात को दीपू की पार्टी का करियाला बड़ागांव में है। वह वहीं मिल सकता है।"

बड़ागांव में.. ? वह तो बहुत दूर है। डेढ़- दो घंटे का पैदल रास्ता। वहां के लिए तो अभी से चलना पड़ेगा। बहुत झुंझलाहट हुई। मन ही मन बोला, 'बच्चू खूब फंसाया तूने। हाथ लगते ही ऐसे खड़काउंगा कि तू भी याद करेगा।'

मैंने कुछ तैयारी की और चल दिया बड़ागांव की ओर। वहां पहुंचने तक काफी अंधेरा हो गया था। करियाला शुरू होने ही वाला था। बीच मैदान में बलराज (बड़ा अलाव) जल रहा था। ढोल, नगाड़े और हारमोनियम वाले अपनी जगह विराजमान हो चुके थे। सिर तक पट्टू ओढ़े मैं भी दर्शकों के बीच छिपते हुए कहीं दुबक गया।

अनायास ही बचपन की यादें ताजा हो गईं। कभी हम भी करियाला देखने रात को मीलों रास्ता नाप लेते थे। पता चलने पर अगले दिन गुस्से में बापू हमसे दिन भर खूब काम कराते। दिल करता वहीं सो जाएं, लेकिन सो नहीं सकते। बिना इजाजत करियाला देखने की हमारी यही सजा होती और इजाजत कभी मिलती नहीं थी। बड़ी मुद्दत के बाद आज करियाला देखने को मिल रहा है।

इसी बीच बजंतरियों ने एक विशेष चिरपरिचित सी धुन बजानी शुरू कर दी तो दर्शक चौकन्ने हो गए कि करियाला शुरू होने वाला है। ...वही पुरानी रीत- सबसे पहले चंद्रावली आई और अखाड़े में गोल घूमती- घूमती लौट गई। उसके बाद भगवान कृष्ण का दरबार सजा। सखियां (गोपियां) कृष्ण बने बालक के सामने कीर्तन- नर्तन करने लगीं। सखी का रूप धारण किए दीपू को मैं देखते ही पहचान गया। खूबसूरत, एकदम लड़की लग रहा था। कमाल का नाचता है और गाता भी खूब है। भूल ही गया कि इस दुष्ट को यहां से घसीटते हुए घर ले जाने के इरादे से आया हूं।

उसके बाद साधु का स्वांग शुरू हुआ। एक विशिष्ट लोक- धुन के साथ किसी ने जोर से गाना शुरू किया- सा धो की न ग रि या... बसे भी न कोई रे रामा..., जो रे बसे सो साधु हो ए..। साधो की नगरिया.....

ढोल बज रहा है ढाकी-टिकी ढाकी-टिकी, ढाकी-टिकी, ढाकी-टिकी, ढाकी-टिकी। गाना चल रहा है सा धो की न ग रि या..., बसे भी न कोई रे रामा...

अचानक जगह-जगह से कई तरह के जटाधारी, मुखौटाधारी साधु चीखते, चिल्लाते नाचते पहुंच गए। दर्शकों के बीच से सीटियों और हो हो हा हा हा की आवाजें गूंजने लगीं। खूब हंसी, मजाक, व्यंग्य, तंज और दर्शकों के ठहाके...। जटाधारी साधु के वेश में दीपू ने भी खूब कलाकारी दिखाई, दर्शक हंस हंसकर लोटपोट हो गए।

उसके बाद नट-नटणी, साहब- मेम, लंबरदार आदि के स्वांग हुए। फरमाइशी गीतों और शेर- ओ शायरी का सिलसिला भी चलता रहा, नोट बरसते रहे।

कलाकार- ओम् जै जै जगदंबे-अंबे तैं खूब रचाई खेल्ल... .।

ढोल- ढा ढा ढा ढा ढा ढम ढमाढम ढम।

कलाकार- ये पांच रूपये फलां गांव से फलाना राम शर्मा जी हमें इनाम देते हैं, उन्हां दी बधाओ बेल्ल....।

ढोल- ढा ढा ढा ढा ढा ढम ढमाढम ढम।

कलाकार- इसके साथ ही उन्होंने एक नाटी की फरमाइश की है ओ लाड़ी शान्ता आधी बायीं री सकीबी..।

फिर कुछ देर तक यह नाटी गाई जाती है, जब तक उनके पास कोई दूसरी फरमाइश ना आ जाए।

करियाला का आनंद उठाते, पिछली बातें याद करते- करते रात काफी बीत चुकी थी। सोचा अब करियालचियों के डेरे (मेकअप रूम) में जाकर दीपु से बात की जाए। कुछ कलाकार अगले स्वांग के लिए कास्ट्यूम सेट कर रहे थे तो कुछ कलाकार थोड़ा आराम करने के लिए बीड़ी पी रहे थे। दीपू भी बैठा था। मुझे देखते ही जैसे उचक गया, बोला- "अरे, भाईजी आप?" वह हैरान परेशान लगा। "आप कब आए भाईजी, घर में सब ठीकठाक तो है?"

उसकी परेशानी दूर करते हुए मैंने मुस्कुराते हुए कहा- घर में सब कुशल मंगल है, एक बेटे का बाप बन गया है नालायक! यही खबर देने के लिए आया था। मैंने उसकी पीठ थपथपा कर बधाई दी तो वह खुशी के मारे लिपट गया और फूट- फूट कर रो पड़ा। साथी कलाकारों ने भी उसे बधाइयां दीं। एक कलाकार बोला- "तू तो यूं ही घबरा रहा था... मैंने कहा था ना कि सब ठीक हो जाएगा। क्या करें दीपू, हम लोगों की जिंदगी ऐसे ही चलती है. ..।" "हां, मास्टर जी!" दीपु ने हाथ जोड़कर कहा।

इसके साथ ही मास्टर जी, जो करियाला टीम के लीडर हैं, कलाकारों को आवश्यक निर्देश देने लगे। अखाड़े से कलाकार लौटते और उनका स्थान लेने के लिए नए पहुंच जाते। इसी बीच कहीं से एक थाली में पांच- सात चाय के गिलास पहुंच गए और हम लोग चाय पीने लगे।

चाय के बाद मास्टर जी की आवाज कड़की, "बेटा दीपू! तैयार हो जा, बाप बनने की खुशी में लगा दे गंगियों, झूरियों, नाटियों की बरसात...लूट ले अखाड़ा..। उसके बाद तुझे जल्दी घर को भी निकलना है।" चाय पीकर दीपू के शरीर में चुस्ती आ गई और वह आदेश का पालन करने के लिए तैयार...।

दीपू इस बार ठेठ पहाड़ी गबरू की भूमिका में था, सफेद कुर्ता-पाजामा, चमचम करती सदरी, सिर पर हिमाचली टोपी, जिस पर परंपरागत फूलों की कलियां झूल रही थीं। चेहरे पर चमक तो

उसके बिना मेकअप के भी रहती है। दो अन्य कलाकार खूबसूरत लड़कियों के वेश में थे।

मैं भी डेरे से निकल कर दर्शकों के बीच जाकर बैठ गया। दीपू के अखाड़े में आते ही दर्शकों में जैसे रोमांच की लहर दौड़ गई। मुझे अनुमान नहीं था कि दीपू इस बीच एक सधा हुआ कलाकार बन गया है। फरमाइशी गंगियों, गीतों पर नोटों की बरसात होने लगी। अखाड़े में जैसे जान आ गई है। फरमाइशी गंगियों पर छोकरे खूब सीटियां बजा रहे हैं। लिख-लिख कर गंगियां गवाने वालों के गुट बन गए हैं। गंगियों में ही सवाल- जवाब हैं। उसी तरह जैसे शेर-ओ- शायरी में होते हैं। पांच रुपये या दस रुपये का नोट दिखा कर कलाकार को बुलाया जाता है और इसके साथ ही उसे गंगी गाने की फरमाइश की जाती है।

ओम जय जय जगदंबे अंबे तैं खूब रचाई खेल्ल....... ढाक ढकाढक ढाक----

ये पांच रुपये का नोट परसराम ठाकुर कंडा गांव के हमें खुश होकर देते हैं, उन्ना दी बधाए बेल्ल.. .... ढाक ढकाढक ढाक....

इसके साथ ही उन्होंने एक गंगी की परमाइश की है....

....

मैं तमाशे में लीन हूं। मनभावन नाटी चल रही है। इसी बीच देखता हूं कि नाचते-नाचते दीपू दर्शकों के बीच में से निकल कर मेरी तरफ आ रहा है। ...क्या करना चाहता है यह? पास पहुंचते ही उसने हाथ जोड़े और बाजू पकड़ कर मुझे अखाड़े की ओर घसीटने लगा। अरे, क्या कर रहा है... पागल हो गया है क्या ??? नहीं, नहीं मैं नहीं आऊंगा। उसके हाथ से मुक्त होने की कोशिश करता हूं, लेकिन वो नहीं माना। ...और अगले ही क्षण मैंने अपने आप को अखाड़े में नाचते हुए पाया। दीपू गा रहा है और मैं अन्य कलाकारों के साथ झूम- झूम कर टेढ़ा हुआ जा रहा हूं।

थोड़ी ही देर बाद मास्टर जी का संदेश पाकर दीपू ने मुझसे कहा, "भाईजी चलते हैं।"

मैं भी उसके साथ डेरे की ओर चल दिया। वहां मास्टर जी बोले, शाब्बाश बेटा। तैंने मेरी लाज रख ली। अब जल्दी से घर की ओर निकल। परिवार का ख्याल रखना। अम्मा जी को मेरी ओर से नमस्ते कहना।

दीपू बिजली की फुर्ती से तैयार हुआ। उसे मुझसे भी ज्यादा जल्दी थी घर लौटने की। अभी सुबह नहीं हुई थी। हम टार्च की रोशनी में सरपट घर की ओर निकल पड़े।

मेरी आंखों पर नींद भारी पड़ने लगी थी। दीपू सुनाए जा रहा था, "क्या करें भाईजी, कई बार बड़ी परेशानी में फंस जाते हैं। एक कलाकार को फिर से खांसी का दौरा पड़ गया, मजबूरन उसे घर बैठना पड़ा। एक के घर में बहन की शादी है, उसे भी छुट्टी देनी पड़ी। मास्टर जी ने हाथ जोड़ कर मुझसे कहा- दीपू! पार्टी की इज्जत का सवाल है, भगवान तेरे साथ है, घर में सब ठीक ठाक होगा। इस बार पार्टी की नाक रखने के लिए रुक जा।' भाईजी, मास्टर जी मेरे गुरु हैं। इनकी बात आसानी से नहीं टाल सकता। घर में अम्मा और घरवाली बहुत नाराज होंगे, लेकिन क्या करें कई बार बड़ी परेशानी में फंस जाते हैं।" मैं नींद और थकान के कारण केवल हां- हूं ही करता रहा।

हम काफी दूर निकल गए थे, लेकिन करियाले के गीतों और ढोल की धमक- गमक अभी भी हमारा पीछा कर रही थी। इसी बीच एक अलग सांकेतिक धुन बजनी शुरू हुई तो दीपू बोल पड़ा, "अब करियाला समाप्त होने को आ गया। पौ भी फटने लगी है।"

दूर से ही हमने महसूस किया कि नाच गान के अंतिम दौर में अधिकांश कलाकार अखाड़े में पहुंच गए है। तमासे का अंतिम गीत शुरू हो गया, '....सवेरे वाल्ली गाड़ी से चल्ले जाएंगे...सवेरे वाल्ली गाड़ी से चल्ले जाएंगे, कुछ ले के जाएंगे, कुछ दे के जाएंगे, सवेरे वाल्ली गाड़ी से चल्ले जाएंगे.... ।'

दीपू रुक गया। आकाश की ओर हाथ जोड़कर देवताओं को आज की सफलता के लिए आभार जताया और आगे भी इसी तरह साथ देने के लिए प्रार्थना की। .. और उसके बाद हम तेज गति से घर की ओर चल पड़े।

गांव पहुंचते ही भौंकते कुत्तों ने हमारा स्वागत किया। चिड़ियों की चहचहाहट ने पौ फूटने का ऐलान कर दिया तो अन्य पक्षियों ने भी जैसे आदेश पाते ही पंख फड़फड़ाकर अपनी उपस्थिति दर्ज करानी शुरू कर दी...।

अंततः हम घर पहुंच गए। सभी हमारा इंतजार कर रहे थे। तायी ने शिकायत भरी नजरों से दीपू को देखा। शर्मिंदा दीपू ने झुकी नजरों से मां के पैर झुए और चुपचाप भीतर चला गया। वहां उसकी पत्नी ने भी कुछ नाराजगी प्रदर्शित की। बोली, "अब आए हो? कहां रहे इतने दिन?" दीपू सिर झुकाए खड़ा रहा जैसे अपनी गलती स्वीकार कर रहा हो। लेकिन पत्नी तो बेसब्री से उसका ही इंतजार कर रही थी। चेहरे पर नाराजगी अधिक देर तक कायम नहीं रख सकी और अंततः मुस्कुराते हुए उसने पति को नवजात

हम घर पहुंच गए। सभी हमारा इंतजार कर रहे थे। तायी ने शिकायत भरी नजरों से दीपू को देखा। शर्मिंदा दीपू ने झुकी नजरों से मां के पैर झुए और चुपचाप भीतर चला गया। वहां उसकी पत्नी ने भी कुछ नाराजगी प्रदर्शित की। बोली, "अब आए हो? कहां रहे इतने दिन?" दीपू सिर झुकाए खड़ा रहा जैसे अपनी गलती स्वीकार कर रहा हो। लेकिन पत्नी तो बेसब्री से उसका ही इंतजार कर रही थी। चेहरे पर नाराजगी अधिाक देर तक कायम नहीं रख सकी और अंततः मुस्कुराते हुए उसने पति को नवजात के दर्शन उसे करा दिए।

के दर्शन उसे करा दिए।

दीपू के आनंद की कोई सीमा ना रही। वह बेटे को देखता ही रह गया। उसे गोद में लेने के लिए मचला, लेकिन तायी ने प्यार से डांटते हुए रोक दिया। बोली, "पागल, पहले नहा-धो ले, फिर गोद लेना। बाहर से आकर इस तरह बच्चे को नहीं छूना चाहिए।" दीपू आज्ञाकारी बालक की तरह किनारे बैठ गया।

सुधा ने कहा, "चाय पियोगे?" मैंने कहा, "बहुत नींद लगी है। बस सोना चाहता हूं। चाय बाद में ही पियूंगा।" सुधा ने पूछा, "आपने देवरजी को कहीं बहुत ज्यादा तो नहीं डांटा? मैंने कहा, "नहीं, ऐसा कुछ नहीं है।" वह संतुष्ट हुईं।

मैं तुरंत ही सोने चला गया। साथ वाले कमरे से तायी के डांटने और दीपू की क्षमा याचना करने की हल्की आवाजें आती रहीं। ..फिर कुछ देर तक आंखों में करियाला के सीन चलचित्र की तरह तैरने लगे...कभी डूबते, कभी उभरते, फिर डूबते, फिर उभरते ... अंततः मैं गहरी नींद में डूब गया।

कुछ देर बाद सुधा ने जगाया और बोली, "उठो जी, नहाकर चाय- नाश्ता कर लो। बाकी की नींद बाद में पूरी कर लेना।" अनमने से उठा तो देखा आंगन में धूप खिल आई थी। सर्दी का मौसम शुरू होते ही धूप सबको प्यारी लगने लगती है। पड़ोस के बुजुर्ग धूप का आनंद लेते हुए गप्पें लड़ा रहे थे। नहाकर लौटा तो संगीत की मधुर धुन ने ध्यान खींचा। खिड़की से झांका तो देखा दीपू हारमोनियम लिए कोई भजन गा रहा है, साथ बैठा बंटू तालियां बजा रहा है और मुनिया नाच रही है।

वाह! क्या मंजर है। कल तक जो तायी दीपू को कोसते नहीं थक रही थीं, अब नवजात पौत्र को गोद में लिए प्रसन्नचित बैठी हैं, कभी पौत्र तो कभी भोलेभाले बेटे को प्यार से निहार रही हैं। गर्म शाल लपेटे कोने में बैठी प्रसूता का चेहरा भी खिला हुआ है। नजरों ही नजरों में पति पर प्यार उंडेल रही हैं। ...अब किसी को भी किसी से कोई शिकायत नहीं रही। हर तरफ प्यार बरस रहा है। दीपू किसी आध्यात्मिक आनंद में डूबा हुआ भजन गाने में लीन है।

सोचता हूं, हम लोग जीवन भर खुशियों की तलाश में ना जाने क्या- क्या षटकर्म करते फिरते हैं, लेकिन हाथ कुछ नहीं लगता। हाथ लगता है तो केवल घोर असंतोष, तनाव, झुंझलाहट, डिप्रेशन, कलह...। वास्तव में आनंद तो आपके भीतर ही है, बस उसे बाहर लाने की कला आपमें होनी चाहिए। काश, यह कला हम सब में होती...

नाश्ता परोसते हुए सुधा बोलीं, "सुनो जी! इस बार की दीवाली यादगार साबित होने वाली है। बच्चे भी बहुत खुश हैं। मैंने कहा, "बिलकुल, दुनियाभर की खुशियां घर में उतर आई हैं। बस, यही कामना है कि ये खुशियां हमेशा- हमेशा बनी रहे।"

धार व्यू, नजदीक आईएसबीटी, टूटीकंडी,
शिमला–171004

अम्मा

(पृष्ठ 44 से आगे)

मेरे दो बेटे हैं। दोनों विवाहित। मेरे पति श्री किशन बाबू ने जीते जी बेटों को नये मकान बनाकर दे दिए हैं। उनकी मृत्यु के पश्चात् मुझसे वे सारे जेवरात, नकदी और बैंक में जमा राशि बराबर बाँट कर ले चुके हैं। वे सक्षम हैं। अपने पैरों पर खड़े हैं। आगे उनको स्वयं कमाकर खाना है इसलिए मैं उनको पंगु नहीं बनाना चाहती।

मेरा पुश्तैनी मकान जिसमें मैं पृथक रूप से रहती हूँ के पिछवाड़े में बहुत बड़ी जमीन है को बेचकर उससे प्राप्त राशि में से आधी राशि को बैंक में मीयादी जमा में रखा जाए, जिससे प्रतिमाह ब्याज मिलता रहे। मेरे मतानुसार आज दिन वह जमीन दो करोड़ से कम की नहीं है। आगे भी इसके दाम में वृद्धि ही होगी। शेष आधी राशि से मेरे पुश्तैनी मकान की जगह भव्य दुमंजिला भवन बनाया जाए। जिसका नाम हो- 'राधा-किशन भवन'।

भवन के निचले तल को गाँव की बेटियों की शादी के समय बारात ठहराने, शादी का मण्डप बनाने, किसी भी धर्म, जाति, पंथ, वर्ण और संप्रदाय में भेद-भाव किए बिना उनके सामुहिक, एकल या सामाजिक कार्यों हेतु निःशुल्क उपयोग करने और अन्य कोई मांगलिक कार्यों हेतु उपलब्ध करवाया जाए। भवन की ऊपरी मंजिल में एक वाचनालय हो, जिसमें गाँव के समस्त बच्चे पढ़ सकें। एक पुस्तकालय हो जिसमें अन्य सद्ग्रंथों के साथ-साथ पाठशालाओं में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकें भी हो जिससे निर्धन बच्चे आसानी से प्राप्त कर अपनी पढ़ाई कर सकें। एक हिस्से में कन्याओं के लिए हॉस्टल हो जिसमें आर्थिक रूप से विपन्न कन्याएँ निवास कर सकें और उचित शिक्षा प्राप्त कर सकें।

बैंक की मीयादी जमा राशि से जो प्रतिमाह ब्याज प्राप्त होगा उससे उस कन्या हॉस्टल, पुस्तकालय और वाचनालय का खर्च चलता रहेगा।

और मेरी अन्तिम इच्छा यह है कि उस ब्याज की राशि से उच्च शिक्षा के लिए मेरी पोती सलोनी और पोते वीरम को पाँच- पाँच लाख रुपये उनकी प्यारी दादी की तरफ से सप्रेम उपहार के रूप में दिए जाए।

वसीयत के प्रावधानों को जानकर सम्पूर्ण गाँव में हर्ष की लहर दौड़ गई, मगर राधा अम्मा के दोनों बेटे-बहुओं के चेहरे लटके हुए थे।

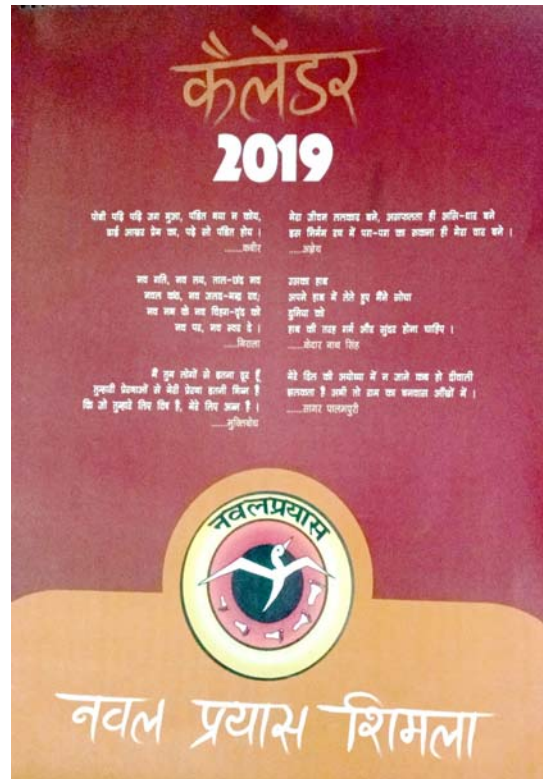
No. 247, II Floor, 9th Main, Shanti Niketan Layout, Arekere, Bangalore – 560076,
M- 87429 16957

आलेख

साहित्यिक कैलेंडर : एक अनूठा प्रयास

◆ कुल राजीव पंत

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कैलेंडरों का खूब प्रचलन हुआ करता था। यह विज्ञापन के सशक्त माध्यम हुआ करते थे। घरों में कैलेंडर खूब शौक से लाए व लगाए जाते थे। उस समय अधिकतर देवी-देवताओं, राजनीतिक नेताओं, संतों-महात्माओं के कैलेंडर छपते थे। देवी-देवताओं के कैलेंडर प्रायः साल बीतने पर भी दीवारों से उतारे नहीं जाते थे, पुराने के ऊपर नया लग जाता था। घरों-दुकानों में सुबह-शाम आरती के समय इन्हें भी पूजा जाता था। इन पर तिलक लगते औैर कभी-कभी फूल मालाएं भी लगा दी जाती थीं। घर में पंचांग न होने पर मास, तिथि, व्रत- त्योहार की सही जानकारी इन्हीं से मिलती और घर का छोटा-मोटा हिसाब भी इन पर दर्ज हो जाता था। इक्कीसवीं सदी के आरंभ तक विज्ञापन के नए-नए माध्यम आ गए थे जिनका सीधा प्रभाव कैलेंडरों पर पड़ा। अब कैलेंडर कम और छोटे आकार में छपने लगे। जब तक सोलन ब्रूरी के कैलेंडर छपते रहे उनकी खूब मांग रही। विजय माल्या की कंपनी के कैलेंडरों की चर्चा उसके फोटो शूट से ही शुरू हो जाती थी। आधुनिकता की दौड़ में घर की दीवारों से सबसे पहले कैलेंडरों की बेदखली हुई। धीरे-धीरे इनकी मांग भी कम होती गई। हां, छुट्टियां जानने के लिए सरकारी कैलेंडर अब भी प्रचलन में हैं। इस पृष्ठभूमि में इस वर्ष के आरंभ में एक उच्च स्तरीय, आकर्षक व पूर्णतया साहित्यिक कैलेंडर का प्रकाशन हुआ। इस कैलेंडर का आकार, मुद्रण, साज-सज्जा इसका विशेष आकर्षण हैं। कैलेंडर पूरी तरह साहित्यिक गतिविधियों को समर्पित है। इसका प्रकाशन डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता, अध्यक्ष, 'नवल प्रयास' कला, भाषा एवं सांस्कृतिक संस्था, शिमला द्वारा किया गया है। डॉ. गुप्ता कविता, कहानी तथा ग़ज़ल लेखन में राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित साहित्यकार हैं। आप हिंदी के साथ अंग्रेजी भाषा में भी गंभीरता से सृजनरत हैं। इसी सृजनशीलता से प्रभावित होकर देश की विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं ने इन्हें सम्मानित व पुरस्कृत किया है।



'नव प्रयास' संस्था अपने स्थापना के प्रारंभिक वर्षों में चैरिटी के कार्यों में संलग्न रही। संस्था ने नौ दिसंबर, 2018 को शिमला में अपना पहला यादगार आयोजन श्री एस. आर. हरनोट की संस्था हिमाचल साहित्य एवं पर्यावरण मंच और हिमाचल प्रदेश भाषा अकादमी के सहयोग से किया। इस सफल एवं प्रभावी आयोजन से प्रभावित हो 'नवल प्रयास' ने 12 मई 2018 को शिमला के दयानंद पब्लिक स्कूल में एक दिवसीय 'राज्य स्तरीय साहित्य उत्सव का आयोजन किया। इस उत्सव में दस साहित्यकारों को धर्म प्रकाश साहित्य रत्न पुरस्कार, दो साहित्यकारों को धर्म प्रकाश साहित्य मणि पुरस्कार तथा नवल प्रयास उभरते साहित्यकारों की श्रेणी में दो युवा कवियों को सम्मानित किया गया। इसी उत्सव में डी.ए.वी. स्कूल के बच्चों की कविता पाठ प्रतियोगिता करवाई गई और पांच बच्चों को पुरस्कार प्रदान किए गए।

नवल प्रयास ने हिमालय साहित्य एवं पर्यावरण मंच के साथ मिलकर 19 अगस्त, 2018 को रेल द्वारा शिमला से बड़ोग और शिमला वापसी तक एक अनूठे साहित्यिक कार्यक्रम का

नई कलम/ कविता

शिमला का दर्द

◆ शिवेन

क्यों न आज हाल ए शिमला बताया जाए।
थोड़ा सा इसका भी दर्द सुनाया जाए।।

सभी यहाँ पर करते मस्ती, सबका अलग संसार है।
खा पीकर करते हुडदंग, गंदगी का फैलाया भंडार है।।

कोई पानी के बुलबुले उड़ाकर खुशी मनाता है।
कोई खाली बोतल खुले में फेंककर अपनी औकात दिखाता है।

कोई किसी की जान बचाने के लिए एंबुलेंस और तेज दौड़ाता है।
तो कोई शराब पीकर गश्त कर रहे जवान को डराता है।।

कोई पर्यटकों की चहल-पहल देखकर दाम दुगने बढ़ाता है।
कोई भिखारी को देखकर अपना खाना भी उसे खिलाता है।।

वर्षों से रिज पर खड़े महात्मा गांधी जी की शिक्षा को मानता कौन है?
साथ में ही पढ़ने के लिए पुस्तकालय भी है ये जानता कौन है?

ऐ राजधानी तेरा दर्द यहाँ कोई भी नहीं जान पाएगा।
'शिवेन' सब स्वार्थ में डूबे हैं, तेरी सुन्दरता कौन बचाएगा?

द्वारा प्रिंसीपल, राजकीय मॉडल वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला,
लालपानी, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 001

आयोजन किया। जिसमें तीस साहित्यकारों की भागीदारी रही। इसी साझा कार्यक्रम की अगली कड़ी में बाबा भलखू स्मृति में भलखू के गांव झाझा की साहित्यिक यात्रा हुई और जाते हुए रास्ते में जुनगा में भी कवि गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसी प्रकार नेल्सन मंडेला दिवस पर पुलिस महानिदेशक (जेल) श्री सोमेश गोयल के सौजन्य से कंडा जेल में एक कवि गोष्ठी आयोजित की गई। इस गोष्ठी में कैदियों ने भी अपनी कविताओं का पाठ किया। इस बीच बुक कैफे में भी गोष्ठियां चलती रहीं। संस्था पिछले दो वर्षों से तेजी से शिमला, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई आदि स्थानों में साहित्यिक आयोजन पर अपनी देशव्यापी पहचान बनाने में सफल रही है। संस्था इस वर्ष आठ-नौ नवंबर को शिमला में दो दिवसीय राष्ट्रीय साहित्य उत्सव आयोजित करने जा रही है। इस अवसर पर 'नवल प्रयास' की साहित्यिक पत्रिका के लोकार्पण की भी योजना है।

नवल प्रयास संस्था द्वारा प्रकाशित वर्ष 2019 का साहित्यिक कैलेंडर इन तमाम गतिविधियों को समेटे हुए है। इस तरह के साहित्यिक कैलेंडर का प्रकाशन हिमाचल प्रदेश के इतिहास में संभवतः (यह) प्रथम सफल एवं सराहनीय प्रयास है। प्रदेश से बाहर इससे पूर्व साहित्यिक संस्थाओं अथवा प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित कैलेंडर केवल कुछ साहित्यकारों की तस्वीरों तक सीमित होते थे। मंच के कैलेंडर में सोलह पृष्ठ हैं और हर माह के लिए एक पृष्ठ है। हर पृष्ठ पर संस्था द्वारा प्रदेश तथा उससे बाहर किए गए साहित्यिक कार्यक्रमों के कलात्मक ढंग से सजाए दस-बारह चित्र हैं। देश-प्रदेश के चुनिंदा कवियों-ग़ज़लकारों की प्रत्येक पृष्ठ पर उद्धृत पंक्तियां पृष्ठ को और आकर्षक बना रही हैं। उद्धरणों में महिला रचनाकारों की बराबर की भागीदारी है। मुख्य पृष्ठ पर कबीर, निराला, मुक्तिबोध, अज्ञेय, केदार नाथ सिंह और सागर पालमपुरी के काव्य संसार की प्रतिनिधि पंक्तियां उद्धृत हैं। बानगी के तौर पर यहां केदार नाथ सिंह की पंक्तियां उद्धृत हैं- 'उसका हाथ/ अपने हाथ में लेते हुए मैंने सोचा/ दुनिया को/ हाथ की तरह गर्म और सुंदर होना चाहिए।' संस्था के 'लोगो' में एक पक्षी लंबी उड़ान के लिए निकल पड़ा है और पांवों के निशान अनंत साहित्यिक यात्रा के परिचायक हैं।

संस्था के 'लोगो' में एक पक्षी लंबी उड़ान के लिए निकल पड़ा है और पांवों के निशान अनंत साहित्यिक यात्रा के परिचायक हैं। यह विश्वास किया जा सकता है कि 'नवल प्रयास' संस्थान की उड़ान देश-प्रदेश की सीमा लांघ विदेशों के हिंदी मंचों तक अपनी दस्तक देते हुए साहित्यिक दुनिया को 'हाथ की तरह गर्म और सुंदर' बनाने में कामयाब होगी। हवा के झोंके से दीवार पर टंगा कैलेंडर जब भी हिलता है तो लगता है कविताओं-ग़ज़लों पर श्रोताओं द्वारा दाद दी जा रही है।

यह विश्वास किया जा सकता है कि 'नवल प्रयास' संस्थान की उड़ान देश-प्रदेश की सीमा लांघ विदेशों के हिंदी मंचों तक अपनी दस्तक देते हुए साहित्यिक दुनिया को 'हाथ की तरह गर्म और सुंदर' बनाने में कामयाब होगी। हवा के झोंके से दीवार पर टंगा कैलेंडर जब भी हिलता है तो लगता है कविताओं-ग़ज़लों पर श्रोताओं द्वारा दाद दी जा रही है।

प्लेजेंट कॉटेज, संजौली, शिमला-171 006,
मो. 0 94181 68628

व्यंग्य

डॉक्टर एडवाइस्ड मी...

◆ अशोक गौतम

जब उनका पूरे स्वाभिमान से फर्राटेदार झूठ सुनते सुनते मुझे उल्टियां आने लगीं तो एक दिन मैंने उनसे कह ही दिया, 'मित्र! खुदा के लिए अब मुझसे झूठ बोलना बंद कर दो। अब तुम्हारा झूठ, झूठ के सारे रिकार्ड तोड़ने लगा है। अब तो तुम झूठ इतनी सच्चाई से कहने लगे हो कि.. झूठ के शास्त्र में झूठ की आखिरी हद सफेद झूठ कहीं गई है पर तुम तो उससे भी आगे का झक्कास झूठ बोलने लगे हो। सच पूछूं तो दिल से कहना कि तुम्हें अपने इस झूठ पर तनिक भी शर्म महसूस नहीं होती क्या? देख रहा हूं , ज्यों ज्यों तुम्हारी उम्र बढ़ रही है, त्यों त्यों तुम मजे से बेपरवाह होकर झूठ बोले जा रहे हो। अब तो झूठ बोलना बंद कर दो हे मेरे दोस्त! जिंदगी में जरा सा सच भी बोल दिया जाए तो ...'

मेरे मुंह से ये सुन वे पानी-पानी होने के बदले मेरे आगे दोनों हाथ जोड़े बोले,' माफ करना दोस्त! आज तुमने मेरी दुखती रग पर टांग रख ही दी। डियर! आज तुमने मुझे मेरे झूठ बोलने के पीछे के सच को कहने के लिए विवश कर ही दिया तो सुनो! मैं शौक के लिए झूठ नहीं बोलता। मैं भी पहले सच बोला करता था, झूठ सुना करता था। पर बीच में बात ही कुछ ऐसी घटी कि.....' कह वे सिसकने लगे तो मैंने उन्हें उनकी नाक साफ करने के लिए उनकी जेब से उनका रूमाल निकाल उनकी ओर धर दिया, ' ऐसी क्या विवशता है तुम्हारी सीना चौड़ा कर झूठ बोलने की दोस्त कि... औरों को तो औरों को, अपने तक को झूठ अपने झूठ बोलने पर उल्टियां आने लगें?'

' मित्र! मैं बरसों पहले डॉक्टर के पास गया था।'

'तो?? उसके पास तो लोग मरने के बाद भी जाते रहते हैं। यह कौन सी नई बात है?'

'नहीं! मेरा केस जरा और सा है। पहले मैं भी तुम्हारी तरह सच ही बोलता था। तब सच बोलने पर सब मुझे गालियां देते थे। मेरा मजाक उड़ाते थे। मैं फिर भी सच बोलता रहा। पर धीरे धीरे सच बोलने पर मेरा मन भारी रहने लगा। धीरे धीरे आई फील, मैं गलत रास्ते पर चल रहा हूं। धीरे धीरे मैं समाज में अकेला सा अपने को फील करने लगा। मुझे डिप्रेशन होने लगा। .... आखिर जब मुझे लगा कि मैं सच बोलने के रोग से पल पल ग्रसित होता जा रहा हूं तो .... मुझे बचना था शायद तभी, एक दिन मैं हमारे मुहल्ले में फ्री चेकअप कैंप लगे डॉक्टर से मिला तो उसने बहुत देर तक अपना दिमाग खुजलाने के बाद मेरे दिमाग में झांकते पूछा,' क्या बीमारी है तुम्हें?'

'सर! समाज में कटा कटा सा रहने लगा हूं। चौबीसों घंटे अवसाद में रहता हूं। मुझे पल-पल इंफीरिऑरिटी कांप्लेक्स आ रहा है।'

'सच बोलते होंगे? बुरा मत मानो दोस्त! कैंसर से भी खराब बीमारी सच बोलने की होती है। जिसे एक बार लग जाए उसे..'

' तो सर!' कमाल के डॉक्टर थे वे। बिन नब्ज के ही मेरी बीमारी पकड़ गए। वरना आज के डॉक्टर तो जेब पकड़ने के सिवाय और कुछ करते ही नहीं।

'तो??'

'उन्होंने सलाह दी कि अगर मैं समाज में सबके साथ हंसना खेलना चाहता हूं तो मैं तुरंत सच बोलना छोड़ दूं। अभी देर नहीं हुई है। मेरे फ्यूचर का इलाज हो सकता है। आज से मुझसे जितना हो सके, मैं सबका मन रखने के लिए सबकी झूठी तारीफों के पुला बांधता रहूं और अपना काम निकालता रहूं। क्योंकि लोग अपने बारे में सब मजे से सुन सकते हैं, पर सच नहीं सुन सकते। इसलिए हेल्दी रहने के लिए मैं मौका मिलते ही झूठ बोलने की अपनी ही बनाई सीमाएं लांघता रहूं,' कह उन्होंने मुझे सच से बचाने के लिए झूठ की तीन-तीन गोलियां दिन में तीन टाइम बिन नागा खाने की सलाह दी।'

'कब तक?'

'उन्होंने सलाह दी कि अगर मैं समाज में सबके साथ हंसना खेलना चाहता हूं तो मैं तुरंत सच बोलना छोड़ दूं। अभी देर नहीं हुई है। मेरे "यूचर का इलाज हो सकता है। आज से मुझसे जितना हो सके, मैं सबका मन रखने के लिए सबकी झूठी तारीफों के पुला बांधता रहूं और अपना काम निकालता रहूं। क्योंकि लोग अपने बारे में सब मजे से सुन सकते हैं, पर सच नहीं सुन सकते। इसलिए हेल्दी रहने के लिए मैं मौका मिलते ही झूठ बोलने की अपनी ही बनाई सीमाएं लांघता रहूं,' कह उन्होंने मुझे सच से बचाने के लिए झूठ की तीन तीन गोलियां दिन में तीन टाइम बिन नागा खाने की सलाह दी।'

कविता

हिंदी

डॉ. सुरेश उजाला

भारत की मातृभाषा -
राष्ट्रभाषा है हिंदी
जानदार -
और
मानदार भाषा है - हिंदी
आपसी व्यवहार है - हिंदी

उन्नति -
और जागरण का -
प्रतीक है - हिंदी

जो पिरोती-है बांधती है -
जोड़ती है- एक सूत्र में -
संपूर्ण विश्व को।

राष्ट्रीय-
एकता का आधार -
राष्ट्र के जमीर की आवाज-
राष्ट्र की स्वाभाविक-भूख -
हमारा गर्व -
और
गौरव है - हिंदी

हमारे जनतंत्रीय अधिकार -
संविधान का आदेश -
निर्देश है - हिंदी

जो जानी जाती है -
अपने गुणों के कारण।

सर्वाधिक वैज्ञानिक -
भाषा है - हिंदी

जैसी लिखी -
वैसे ही बोली जाती है -
हिंदी

प्रकृति का वरदान -
प्रभावशाली विरासत -
अमरवाणी -
स्वतंत्रता -
और
संप्रभुता की गरिमा है -
हिंदी।

सभी भाषाओं का
समन्वय है - हिंदी

पुरुषार्थ का साधन -
जनोपयोगी है - हिंदी

सभी की सहोदरा -
अभिव्यक्ति का -
सरलतम स्रोत -
ध्वनि संगीत -
शांति की सूक्ष्म झंकार -
स्वतंत्रता-आंदोलन का अंग-
विश्व की महान -
बेजोड़ -
कल्याणकारी -
हिंदी

जो भाषा है -
प्रेम की-सौहार्द की
संपूर्ण-विश्वास की

एकता की कड़ी -
चित्तवृत्ति का प्रतिबिंब -
व्यक्ति की श्रेष्ठ -
दिनचर्या है -हिंदी

न्याय-समता -
स्वतंत्रता -
और
बंधुता आधारित -
भाषा है - हिंदी

समता -
और समानता का -
भाव है - हिंदी

जनता के मध्य -
कार्य करने का -
उत्तम साधन है - हिंदी

स्वच्छ-सुस्पष्ट -
सबलतम माध्यम है -
सभी भागों की -
समान-स्वाभाविक -
राष्ट्रभाषा है - हिंदी

राष्ट्रीय एकीकरण हेतु -
सर्वमान्य भाषा है - हिंदी
विकास का आधार है - हिंदी
भारत के लिए -
वरदान है - हिंदी
मानव-कल्याण की -
भाषा है - हिंदी

जो बांधती है -
हम सभी को -
एक सूत्र में।

**108-तकरोही, पं. दीनदयाल पुरम् मार्ग, इंदिरा नगर,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश-226 018, मो. 0 94511 44480**

'अब तो लाइफ टाइम ही समझ लो। जरूरत पड़ी तो ऊपर भी मरने के बाद लेता रहूंगा दोस्त! क्योंकि जान है तो जहान है,' कह वे तनिक रूके मेरा चेहरा देखते देखते।

'मतलब?? तुम चरित्र के झूठे नहीं हो ? डॉक्टर की सलाह के चलते स्वस्थ रहने के लिए झूठ बोलने के लिए विवश हो?'

'हां मित्र! मैं तुमसे इस बात को कहना तो नहीं चाहता था पर.... आज तुमने मेरा मुंह खुलवा ही दिया तो...'

सच कहूं तो अब जब मुझे उनके बारे में यह सच पता चला है कि वे जान बूझकर झूठ नहीं बोलते, वे डॉक्टर की सलाह पर ही झूठ बोलने को विवश हैं। उन्हें डॉक्टर ने ही नेक सलाह दी है कि वे जो स्वस्थ रहना चाहते हैं तो उन्हें झूठ बोलना ही पड़ेगा, जमकर झूठ बोलना ही पड़ेगा। वे जितना झूठ बोलेंगे, उतने ही स्वस्थ रहेंगे। वे जब तक झूठ बोलेंगे तब तब तक मस्त रहेंगे। यह जान मुझे उनसे नहीं, अपने से ही घृणा होने लगी है। यारो! कितना गलत था मैं उनके बारे में अंट शंट सोच?

हे मेरे दोस्त! तुम स्वस्थ रहने के लिए झूठ के नित नए प्रतिमान स्थापित करते रहो। तुम तो केवल झूठ स्वस्थ रहने के लिए ही बोल रहे हो। यहां तो स्वस्थ रहने के लिए लोग एक दूसरे का खून तक सहर्ष पी लेते हैं। हर पल अपनी टांगें टांगों पर धर झूठ की टांगों पर सरपट दौड़ जिंदगी की सड़क पर बीसियों को पछाड़ दिन रात आगे बढ़ते रहो, मेरी यही कामना! मैं अब तुम्हारे झूठ को अन्यथा ही लूंगा। इस धरती पर आकर मस्त कौन रहना नहीं चाहता? गधा भी मस्त रहना चाहता है दोस्त! तुम तो भरे पूरे आदमी हो।

**गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड, नजदीक मेन वाटर टैंक,
सोलन, हिमाचल प्रदेश-173212, मो. 0 94180 70089**

समीक्षा

परिवेश के आसमान तले अस्तित्व की तलाश

◆ अश्वनी कुमार

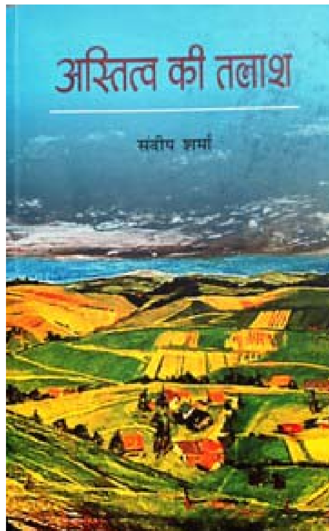
क्या मनुष्य बिना अस्तित्व या आधार के धरती पर जी सकता है। रह सकता है। कुछ भी पा सकता है। या फिर इन सबके बिना भी सब कुछ हासिल कर पाता है। अगर नहीं, तो कह सकते हैं कि इन सबके बिना उसका रह पाना असंभव है। तब अपनी पहचान को पाने के लिए यथासंभव प्रयास जारी रखता है और अपनी संस्कृति अपने परिवेश अपनी जरूरतों और सुविधाओं के लिए भी जीना चाहता है। और जारी रहती है अपने अस्तित्व की तलाश। इस तलाश में हम क्या हैं? क्यों हैं? आखिर इस जीवन का मकसद क्या है? कब जाना है? कैसे हैं? जैसे विचार दिमाग में कौंधते हैं। अपनी जिज्ञासा की शांति के लिए वह पूजा-अर्चना, प्रार्थना, ध्यान, भक्ति, योग, प्रेम और कर्म का आलंबन लेता है। इसके सहारे वह अपना जीवन जीता चला जाता है। इसमें उसके परिवेश, संस्कार, रीति-रिवाज, परंपराओं की अहम भूमिका होती है। इस जीते जाने में उसे जो हासिल होता या नहीं होता है, के लिए कोशिशें जारी रहती ही हैं। बाधाएं भी आती हैं लेकिन उसकी हिम्मत कम नहीं होती। तलाश जारी रहती है। यह तलाश अनंत रूपों में छुपी हुई हो सकती है, तब भी चाहत के दीवाने कम नहीं हैं। किसी-न-किसी रूप में सामने आ खड़े होते हैं। अस्तित्व की तलाश में अपना सब कुछ अर्पित करने का माद्दा रखते हैं। कहानीकार संदीप शर्मा का बीस कहानियों का संग्रह 'अस्तित्व की तलाश' इन्हीं सब बातों/ सवालों के उत्तर तलाशने/जुटाने और रूबरू करवाने के लिए उपस्थित है।

किसान को चाहिए बस जमीन। बीजने को बीज। खेतों में लहलहाती फसल। अपने लिए ही नहीं, सभी के पेट की क्षुधा मिटाने के लिए। यही उसका भरपूर संतोष का सबब है। जब उससे उसका यही सब छीन लिया जाता है विकास के नाम पर, तब उसके अरमानों का गला घुट जाता है। उसका हृदय क्रंदन कर उठता है। हाल बेहाल अपनी बेबसी पर रोता है। कराहता है। लेकिन उसकी कराहना से मानो किसी का किसी भी तरह का सरोकार नहीं रह जाता है। उसका दर्द। उसकी पीड़ा तब किसी की नहीं होती जबकि वह सबके पेट के लिए प्रकृति से भी भिड़ जाता है। अकेला, निहत्था रात दिन जूझता है। उसे अपने परिवेश, अपनी जमीन से प्यार होता है। अपनी संस्कृति उसके लिए जीवन जीने का अर्थ है। वह नहीं चाहता, कोई उसे इन सबसे जुदा करे। जब उसकी इन पहचानों पर संकट आता है। किसी प्रकार का आक्रमण होता है, तब वह डर जाता है। वह इन सबसे अलग या कट कर जी नहीं सकता। विस्थापन का दर्द सह नहीं पाता। तब अपने 'अस्तित्व की तलाश' में कहानी का पात्र निकला पड़ता है। और ऐसा कदम उठा लेता है कि रौंगटे खड़े हो जाते हैं। संदीप कुमार ने उसके दर्द, अंतर्वेदना/ अंतर्व्यथा को बारीकी से महसूस किया। अपनी पूरी संवेदना उस पर उंडेल दी। किसान की पीड़ा इस कहानी में उजागर हुई है। यहां नहलू मात्र पात्र नहीं रह जाता। वह बन जाता है विस्थापन के नाम पर होने वालों का निरीह, बेबस, बेआवाज प्रतीक। वास्तव में ऐसे विस्थापन से किसान और डूब क्षेत्र में पूर्व में रहने वाले दूसरे लोग वर्षो तक इस पीड़ा से उभर नहीं पाते कई पीढ़ियां गुजर जाने के बाद भी। दूसरी जगह पर जाकर बसना परायापन लिए जीना होता है। इससे वे भलीभांति वाकिफ होते हैं।

'कलाकार' मनोवैज्ञानिक कहानी है। एक बेरोजगार युवा के मन का विज्ञान इस कहानी का चरमोत्कर्ष है। कलाकार के पास स्केच बनाने का हुनर है। काली पेंसिल से लोगों के चेहरों को कैनवास पर बेहद खूबसूरती से उकेरता है। स्केच बनाते हुए ज्यों-ज्यों कैनवस पर उसकी उंगलियां चलती हैं, त्यों-त्यों दिमाग में हलचल मचती है। विचार तेज गति से आने शुरू हो जाते हैं। उसके पास जो भी अपना रेखांकन बनवाने आया, वह कलाकार उसका भविष्य पढ़ लेता है। यह एक संयोग था या दुर्योग की उसकी मृत्यु संभावित है या वह आत्महत्या कर लेता है। इस प्रकार की घटनाएं उसके जीवन में दहशत पैदा करती हैं। वह खुद को अभिशापित मानने लगा है। उसके और उसके ग्राहकों के साथ जो घटित हो रहा है, वह डर के कारण किसी को बता भी न सका। खुशकिस्मती से वह बच निकलता है। आखिरकार वह अपना व्यवसाय छोड़ देता है। भीतर उमड़ते-घुमड़ते विचार उसे पहले-पहल उज्ज्वल भविष्य की तरफ उन्मुख करते हैं लेकिन बाद में नकारात्मक विचार उस पर हावी होते चले जाते हैं। खतरनाक तरीके से दिमाग पर हावी होते जा रहे जीवन पर भारी पड़ने वाले घातक विचारों पर विजय पा लेना ही इस कहानी का मूल उद्देश्य प्रतीत होता है।

बरसात का मौसम। मूसलाधार बारिश। यौवन पर नदी। तेज वेग सी चाल। ऊंची उठती लहरों का भयंकर शोर। नागिन सी उसकी फुंकार। इसी खौफनाक मंजर के बीच उनकी हिम्मत की परीक्षा होती है। नदी की गहराई में डूबकी लगा देना खेल नहीं मौत से सीधा साक्षात्कार है। पर, जांबाज लुटेरे उसकी गोद से वो

सब निकाल लाते हैं, जिसकी उन्हें जरूरत है। बरसात अपने साथ केवल पानी ही नहीं लाती, वन संपदा, घर, मकान, दुकान, खेल-खलियान और भी कई तरह का सामान भी बहाकर ले आती है। 'नदी के लुटेरे' कहानी के पात्र इसी का फायदा उठाते हैं। अपनी जिंदगियों को लहरों के हवाले कर, ये बहता सामान लूट कर बेचते हैं। उनका यह हर साल का काम है। आजीविका का साधन भी। इस गांव में वे कहीं दूर से आते हैं। उनके कुछ उसूल हैं। जिनके वे पक्के हैं। जिनके बल पर वे अपने इरादों को मजबूती देते हैं। और आजीविका संग अपने हैरतअंगेज इरादों की परीक्षा देने के लिए उफनती नदी में उतर जाते हैं । उनके दल के सभी सदस्यों को इन नियमों का पालन करना आवश्यक है। दल का सबसे युवा सदस्य हीरू गांव की युवती से प्यार कर बैठा। यहां उस युवक के सामने धर्मसंकट है। नदी के मझधार में फंस गया है वह। एक किनारे पर दल तो दूसरी ओर उसकी प्रेयसी है। उसे अपनी जांबाजी को चुनना था या फिर दिल और प्यार को। इस दुविधा से वह निकल नहीं पाया। स्वयं को नदी की बांहों के हवाले कर दिया। यहां दल की जीत हुई। दिल हार गया। दल के कठोर नियम प्यार पर भारी पड़ गए। मरी हुई संवेदनाओं ने जन्म दिए अपने बच्चे को खातरियों में पहुंचा दिया, तो उसके लिए संगतू की पहाड़-सी उमड़ी संवेदनाएं ये जान ही नहीं पाईं कि वह कब का मर चुका है। 'खातरियों में मिला बच्चा' कहानी में संवेदनाओं के मरे होने और जिंदा होने के बीच के महीन पर्दे को बड़ी खूबसूरती से पिरोया गया है। जब संवेदनाओं का जनाजा निकलता है तो आदमी के विचार करने की क्षमता भी किसी शवदाह में अग्नि के हवाले हो जाती है। मरी हुई संवेदनाओं ने जिंदा नवजात शिशु को खुद से जुदा कर फेंक दिया, तो पहाड़ से ऊंची उठी संवेदनाएं जीवन भर यह जान ही न सकीं कि बच्चा उसकी वजह से मरा या मरा हुआ ही था। संगतू उम्रभर इसी ग्लानि के बोझ तले जीता रहा। ऐसे समाचार अकसर अखबारों, मीडिया की सुर्खियां होती हैं कि फलां जगह, कूड़े के ढेर में या पुलिया के नीचे, बीच बाजार या फिर किसी चौराहे या जंगल के आस-पास नवजात का शव मिला या बच्च जिंदा मिला। ये सब घटनाएं समाज को कलंकित करती ही हैं साथ ही निष्ठुरता की भी द्योतक हैं। दूसरी ओर इन्हें अपनाने वालों की भी कमी नहीं है। दोनों पक्ष इस कहानी में उजागर हुए हैं।



'अस्थियां' कहानी के मुख्य पात्र पांडे हैं। ऐसा कार्य, जो समाज को कलंकित होने से बचाए। जिस कार्य को समाज कदापि न कर पाए, इसी काम को अपने हाथों में लिए हुए हैं पांडे जी। जिनका कोई नहीं, उनके पांडे जी। जो लावारिस इस दुनिया को अलविदा कह जाते हैं, उनके अंतिम संस्कार के संपूर्ण कार्य करते हैं यह महानुभाव और अस्थियां तक को हरिद्वार जाकर गंगा मां की गोद में समर्पित कर आते हैं लावारिसों का अपना बनकर। अंश को अंशी से मिलाना ही उनका धर्म-कर्म बन गया है। तपस्या है प्रभु चरणों में। समय बलवान है। उसने पांडे जी पर भी अपने निशान चिपका दिए हैं। उनकी इस तरह की समाज सेवा में उनका घर ही न बस पाया। न कोई लड़की शादी को तैयार हुई और न ही किसी मां-बाप ने उन्हें अपनी बेटी का विवाह उनके संग करने का साहस दिखाया। अब उन्हें डर सताने लगा है कि उनके मरने के बाद उनका अंतिम संस्कार हो भी पाएगा या नहीं या फिर उनका बाद में क्या होगा? उन्हें भी मालूम नहीं।

हम उस युग में रहते हैं जिसमें 'एक युग था' । एक मासूम के कोमल मन पर कठोर हृदय के ऐसे प्रहार हुए कि इनसानियत शर्मसार होने के साथ-साथ लहूलुहान भी हुई। मानवता चीख उठी। सभ्यता पर बर्बरता भारी पड़ी। लालच ने विश्वास पर अपना अधिकार जमा लिया। और अविश्वासघात का ऐसा खेल खेला गया कि मासूम को कहना पड़ा कि कलियुग में 'एक युग था' । मासूम था। नहीं जानता था, अपनों पर किया गया अति विश्वास उसे उसकी मासूम जिंदगी से ही दूर ले जाकर मौत की नींद सुला देगा। इतनी भयानक, दर्दनाक मौत कि सुनते ही रूह तक कांप उठती है। तब उस मासूम ने किस कदर उन पीड़ा के पलों में खुद को जीने लायक समझ, सहा होगा। न जाने कितने 'युग' एक असहनीय पीड़ा देकर सदा-सदा के लिए अपने मां-बाप से बिछुड़ गए हैं। जिनके पास अब छटपटाहट के सिवा कुछ नहीं है। धुंधली यादों के साथ जीते जा रहे ऐसे मां-बाप समाज से यही सवाल करते हैं - हमारा क्या कसूर था। हमारे मासूमों की मासूमियत का अपराध तो जरा बता दो, दुनिया में गुनाह करने वालो!

लोक गायकी, अपनी जमीन, अपनी संस्कृति, अपने रीति-रिवाज, सदियों से चली आ रही परंपराएं लोक गायन की आत्मा थीं। जाने कहां लुप्त हो रही हैं ये सब। लोक गायक और लोक गायकी दोनों आज अपनी पहचान खो रहे हैं। इनके अस्तित्व पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। इसी ओर इशारा करती है इस संग्रह की 'पजनी' कहानी। वक्त के हसीन सितम दोनों पर भारी पड़े हैं। इसलिए ये हमसे दूर होते जा रहे हैं। ग्लोबलीकरण से सिमटती दूरियों और घुलती संस्कृतियों ने सब गड्डमड्ड कर दिया है। विकृतियों/ सुकृतियों का यह मिलन जाने कहां ले जाएगा। इस

बहाव में सूझे न कोई छोर न कोई ठिकाना। वो भी वक्त था जब समाज में लोक गायक और लोक गायिकी की संगीत लहरियां सुनने को अकसर मिल जाया करती थीं। आज यह वक्त है कि बहुत कुछ निगल चुका है और निगल भी रहा है। लेखक सजग है। सावधान करता दिख रहा है। आधुनिकता की चकाचौंध और बहुत कुछ पाने के चक्कर में अपना थोड़ा-बहुत जो है, वो भी गंवा बैठने की-सी स्थिति आज उपस्थित हुई है। उसे बचाने का आग्रह है इस मार्मिक कहानी में।

लेखक संदीप शर्मा इस संग्रह की हर कहानी में हमें इस बारे आगाह करते रहते हैं। उनकी सोच, उनकी समझ, उनका विवेक, सचमुच में अस्तित्व की रक्षा का पैरोकार बन गया है। यही पैरवी उन्हें सृष्टि में मौजूद अपने परिवेश, संस्कृति, पशु-पक्षी, खेती, जमीन, वन, वनस्पति, पहाड़, बर्फ, पानी, नदी, नालों, तालाबों, बावड़ियों, प्रेम, भाईचारे की रक्षा हेतु कलमबद्ध है। उनके भीतर का लेखक एक देवदूत बनकर चाहता है आधुनिकता के साथ-साथ अपने इस 'होने' का संरक्षण किया जाए ताकि प्रकृति और ईश्वरीय प्रदत्त शक्तियों का प्रवाह बना रहे।

इन कहानियों में, वास्तव में, अस्तित्व की तलाश नहीं दिखती, बल्कि उस पर मंडरा रहे संकट के बादलों से बचाए रखना ज्यादा परिलक्षित होता दिखा है। अस्तित्व, हमारी पहचान, हमारा वुजूद, हमारा होना, हमारे साथ ही, हमारे से पहले से मौजूद है, उसे संरक्षित रखना ही आज जरूरी है। संपूर्ण दृष्टि और मानवता के हित के बारे में सोचना मनुष्य का प्रथम कर्तव्य है। पर, ऐसी क्या बात हुई, कि वह इसकी परवाह ही नहीं करना चाहता। वह भौतिकवादी हो गया है। आधुनिकता की कौंध में उसकी आंखें चुंधिया गई हैं। मस्तिष्क ने सोचना बंद कर दिया है। उसकी सब पा लेने की चाह में उसके सपने, उसकी ख्वाहिशें हावी हैं। ऐसे में, संदीप शर्मा की ये कहानियां पढ़ते हुए अहसास हुआ कि 'अस्तित्व की तलाश' में नहलू मरते नहीं, 'ताऊ की जीवन यात्रा' में खोज जारी रहती है। तत्पश्चात 'बांसुरी वाला' की मधुर तान में अपने होने का अहसास पाते हैं। कभी 'खातरियों में मिला बच्चा' के संगतू में उस अहसास को पाने की उम्मीद में जीते चले जाते हैं, तो कभी 'जिद्दी यात्री' की तमन्ना भी उस तलाश में मददगार बनती है। 'अस्थियां' के पांडे जी लावारिशों में अपने मुकाम के लिए लड़ रहे हैं। और यह यात्रा 'आखिरी घड़ा' में भी मुकम्मल न हुई तो 'कलाकार' और 'पजनी' का रूप भी अख्तियार कर प्रयास रुकते नहीं हैं। वास्तव में, अपने निजत्व के परिवेश के आसमान तले और संस्कृति प्रेम की जमीन पर ही हमारा होना, होना है। अस्तित्व की तलाश संभव है। अपने वुजूद की यहीं पहचान होती है।

बुजुर्ग खयाली को वार्षिक मेले में जाना है। देवता की मन्नत है। जवान बेटे की मृत्यु हो जाने पर वह वहां जा नहीं पाया था। सबने जब उसे अपने साथ मेले में ले जाने के लिए कोई-न-कोई बहाना बनाया, तब वह अकेला ही चल पड़ा। रास्ते में उसे दूसरे गांव का युवा देवू मिल जाता है। उस बुजुर्ग को मेले तक ले जाता है फिर वापिस गांव के मुहाने तक छोड़ भी देता है। बुजुर्ग और युवा का जो इस दौरान संवाद होता है, वह बड़ा गंभीर, संजीदा, प्यारा और निराला था। दोनों के बीच वार्तालाप से दोनों का रस्ता कटता ही है, साथ ही दोनों के मध्य यह आत्मीयता का माध्यम भी बन जाता है। दोनों की संवाद शैली गजब की है। बांधती है। कहानी की खासियत भी। मन में किसी चीज की चाहत हो तो ईश्वर भी मदद का हाथ बड़ा देता है। देवू बुजुर्ग के लिए 'ईश्वर का दूत' बन कर आ खड़ा होता है। जिसके सहारे वह मेले तक पहुंचता है, साल भर से जंगलों से इकट्ठा कर रखी जड़ी बूटियों को मेले में बेच पाता है और ईश्वर के दर्शन भी हो जाते हैं। मेले से वापिस लौटते हुए बुजुर्ग खयाली के मन में देवू के लिए धन्यवाद के लिए दुआओं से सिवा और क्या हो सकता था कि भगवान तुझे खुश रखे। खुशियों से झोलियां भर दे। जरूरी है बुजुर्गों का साथ देना। उनकी भावनाओं की कदर करना और उनसे संवाद भी। बातचीत करते रहना। समाज-परिवार में हाशिए पर धकेले जा रहे बुजुर्गों का मान-सम्मान करने का संदेश भी इस कहानी के भीतर गहरे में छिपा हुआ है।

इनकी कहानियों की विशेषता यह है कि इनके पात्र अपने कर्म के प्रति निष्ठावान हैं। कर्म ही उनकी पूजा है। इनकी कहानियों में ग्राम्य जीवन की रंगत है। परिस्थितियों की अनुकूलता-प्रतिकूलता का गांभीर्य है। समय के साथ आए उतार-चढ़ाव पात्रों के जीवन में रवानगी लाते हैं। ठहराव नहीं। कहानीकार संदीप शर्मा कहानी कहते चले जाते हैं। उनकी वर्णनात्मक शैली बेजोड़ है। सारी बागडोर वे अपने हाथों में संभाल कर निकल पड़ते हैं। कल्पना शक्ति बेमिसाल। उस पर भाषा पर मजबूत पकड़। शब्दों से वो खेलते चले जाते हैं। इस प्रयास में, वे कई बार वाक्यों में अल्पविराम, अर्धविराम और पूर्णविराम लेना भी भूल जाते हैं। जो भ्रम की स्थिति में ला खड़ा करता है। कहानियां प्रूफ शोधन की मांग करती हैं। कहानियों में हिंदी के शब्दों को स्थानीय पहचान में ढाल देने की कोशिश कहानीकार करता है। दूसरी ओर स्थानीय पहाड़ी बोली के शब्दों को अपनी कहानियों में स्थान देकर उन्हें गौरवान्वित कर रहा है। कहा जा सकता है कि पाठक जगत में इस संग्रह का भरपूर स्वागत होगा।

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला-171 004
मो. 0 94180 85095

कहानी संग्रह : अस्तित्व की तलाश, **लेखक :** संदीप शर्मा, **प्रकाशक :** विजया पब्लिकेशन, एक्स/909 चांद मोहल्ला गांधी नगर, दिल्ली-110031, **प्रथम संस्करण :** 2019, **मूल्य :** 250

रपट

'तकनीकी युग में भाषा और साहित्य' : एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित

डॉ. वीरेंद्र सिंह

यह तकनीक का युग है जहाँ तकनीक हवा-पानी की मानिंद मनुष्य जीवन की रग-रग में इस कदर रच-बस गयी है कि अब इसके बगैर जीना तो मुमकिन नहीं पर इसके साथ जीना भी दुश्वार है। तो उपाय क्या है, इसी अनसुलझी पहेली को सुलझाने हेतु हवन में एक छोटी सी आहुति सिद्ध हुई यह एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी जिसका विषय था- 'तकनीकी युग में भाषा और साहित्य'। हरी-भरी सुरम्य वादियों में स्थित राजकीय महाविद्यालय ठियोग में 07 सितम्बर 2019 को इस सार्थक विषय पर आयोजित संगोष्ठी में देश भर से शताधिक बुद्धिजीवियों ने भाग लिया जिसमें 50 से अधिक शोधपत्र हिंदी व अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में प्रस्तुत किये गए।

महाविद्यालय की प्राचार्य डॉ. अनुपमा गर्ग ने बीजवकता, विशिष्ट अतिथि व अन्य सभी का अभिवादन किया। उन्होंने कहा कि दूरदराज के शिक्षण संस्थान में तमाम चुनौतियों के बावजूद ऐसा कोई आयोजन करवाना अपने आप में गर्व और सम्मान का विषय है। संगोष्ठी के संयोजक डॉ. सत्यनारायण स्नेही ने इस संगोष्ठी के मूल मंतव्य पर अपनी विस्तृत टिप्पणी में कहा कि भाषा और साहित्य के क्षेत्र में नित नवीन तकनीक का प्रयोग भाषाचिन्तकों और साहित्यमर्मज्ञों के लिए एक ऐसा निवाला हो गया है जो न निगलते बन रहा और न उगलते, इसलिए आज इस जटिल समस्या पर विचार कर कोई राह निकालना समय की मांग है-

वो खतों का दौर भी क्या खूब हुआ करता था/ वफाएँ और कद्र भी लिखावटों में बात किया करती थी / जबसे आया हाथों में ये छोटा तकनीति खिलौना /सारे एहसासों के रंगों को इसने तसवीर बना दिया

विशिष्ट अतिथि डॉ. जोगेंद्र सिंह यादव निदेशक, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय क्षेत्रीय केंद्र शिमला ने अपने सारगर्भित वक्तव्य में कहा कि सी-डैक पुणे तथा कुछ अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों के प्रयासों के फलस्वरूप आज हिंदी भाषा में तकनीक के सहारे कार्य सरल से सरलतर होता जा रहा है और यह भाषा और इसका साहित्य अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उपस्थिति दर्ज करवा रहा है। इस संगोष्ठी के बीजवक्ता प्रोफेसर बाबू राम अध्यक्ष, चौधरी बंसी लाल विश्वविद्यालय, भिवानी, हरियाणा ने अपने विस्तृत और सारगर्भित व्याख्यान में कहा कि तकनीक ने हिंदी भाषा और उसके साहित्य को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जहाँ एक नया लॉन्चिंग पैड प्रदान किया है वहीं कुछ गंभीर चुनौतियाँ भी उपस्थित की हैं। उद्घाटन सत्र के बाद प्रथम विचार सत्र में तीन सामानांतर मंचों से डॉ. बलदेव ठाकुर, डॉ. प्रवीण मलिक तथा डॉ. शीला चंदेल ने सत्र की अध्यक्षता की जबकि दूसरे विचार सत्र में यही गुरुतर कार्य डॉ. कामना नेगी, डॉ. संगीता सारस्वत तथा डॉ. रूपलाल जी ने निभाया। उक्त विषय के उपविषयों पर प्रस्तुत शोधालेखों का सार इस प्रकार रहा- 1. तकनीक के युग में भाषा और साहित्य : उक्त संगोष्ठी में इस उपविषय को आधार बनाकर लगभग 20 शोधलेख प्रस्तुत किये गए जिन्हें श्री दिनेश शर्मा, डॉ. देवकन्या ठाकुर, डॉ. उषा रानी, डॉ. मीनाक्षी शर्मा, डॉ. सान्या कुमारी, श्री रघुवीर सिंह, कुद्र नेहा सहित हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के शोधार्थियों द्वारा भी प्रस्तुत किया गया। दिनेश शर्मा जी ने कहा कि आज इनसान मशीनों पर इतना अधिक निर्भर हो गया है कि अपनी सभी सुख-दुखात्मक संवेदनाओं को भी मशीनों में ही ढूँढता है। खुशियों के अवसर पर बधाई सन्देश और दुर्घटना की घड़ी में शोक सन्देश अब तकनीक के माध्यम से ऑनलाइन ही भेज कर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझी जा रही है। डॉ. देवकन्या ठाकुर और अन्य शोधपत्र वाचकों की प्रकट चिंता जायज है कि तकनीक के विकास ने साहित्य को सामान्य पाठक के घर द्वार तक सहज सुलभ तो बना दिया पर भाषिक संरचना और भावों के हस्तांतरण के मार्ग में कई अवरोध भी खड़े कर दिए जिनसे निपटने की आज सख्त जरूरत है। 2. तकनीक और लोकसाहित्य : इस उपविषय के अंतर्गत डॉ. राजन तनवर, डॉ. जितेन्द्र कुमार, डॉ. मोनिका रैना, श्री पीयूष पाल सिंह और शोधार्थी फुला देवी आदि द्वारा शोधपत्र प्रस्तुत किये गए। आज लोकसाहित्य के प्रचार-प्रसार में तकनीक के प्रयोग ने क्रांतिकारी परिवर्तन लाये हैं। आम जन की पहुँच लोकगीतों, लोक पराम्पराओं, लोक कथाओं, लोक नाट्यों आदि तक सहज और सरल तो हुई है लेकिन इस आकर्षण में हमें ये नहीं भूलना चाहिए कि मौलिकता लोकसाहित्य के प्राण हैं और यदि इसके प्राणों पर ही हमला होने लगे, जैसा कि तकनीक के प्रयोग से हो रहा है, तो इस क्षेत्र में तकनीक के प्रयोग को हमें सीमित और संयत करना होगा। 3. साहित्य और पर्यावरण : पर्यावरण मानव समाज का अभिन्न अंग रहा है और किसी भी साहित्य की तसवीर तब तक अधूरी रहेगी जब तक उसमें पर्यावरण की बात न हो। इस उपविषय को लेकर डॉ. राधा वर्मा, श्री रवि प्रकाश, डॉ. प्रकाश चंद, सुश्री मनोरमा देवी आदि ने शोधपत्र प्रस्तुत किये। 4. साहित्य और समाज : इस उपविषय पर श्री संतोष कुमार शर्मा, डॉ. दामोदर गौतम, डॉ. लता देवी, श्री अमृत सिंह मेहता, डॉ. नीतू कुमारी आदि ने शोधपत्र पढ़े। आज तकनीक ऐसे बेलगाम घोड़े की तरह है जो सवारी को आनंद तो देता है परन्तु सफर तब तक दुर्घटनाओं से आशंकित है जब तक उसे लगाम न पहनाई जाए। तकनीक का इस्तेमाल बंद करने का सुझाव समाधान नहीं, जरूरत है तो इसके नियंत्रित इस्तेमाल की अन्यथा यह घातक सिद्ध होगी भाषा के लिए, साहित्य के लिए और समाज के लिए भी।

संगोष्ठी के समापन सत्र में डॉ. जोगिन्दर सिंह नेगी, माननीय परीक्षा नियंत्रक, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला बतौर मुख्य अतिथि और सेवानिवृत्त प्रोफेसर रामनाथ मेहता, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला बतौर विशिष्ट अतिथि उपस्थित रहे। प्रोफेसर रामनाथ मेहता ने अपने ही अंदाज में तकनीक के इस हमले कोवेद-पुराणों व अन्य संस्कृत ग्रंथों की शिक्षाओं और निर्दिष्ट नैतिकताओं की अनुपस्थिति का मूल कारण बताया तो डॉ. नेगी ने अत्यंत सौम्य व मृदु अंदाज में अपने संबोधन में कहा कि इस प्रकार की संगोष्ठियों के होते रहने से संकेत यह मिलता है कि अभी सब कुछ चुका नहीं है।

सहायक आचार्य हिंदी
हि. प्र विश्वविद्यालय क्षेत्रीय केंद्र धर्मशाला
मो. 0 85807 58307

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

अक्तूबर–नवंबर–दिसंबर, 2019

सिरमौर जिला विशेषांक



मुख्य मंत्री श्री जय राम ठाकुर रेणुका मेले के पावन अवसर पर भगवान परशुराम की पालकी की सम्मानस्वरूप अगुवाई करते हुए



"देवभूमि हिमाचल प्रदेश की संस्कृति अनुपम एवं अतुलनीय है। यहां के कण–कण में देव वास है। हिमाचल प्रदेश का सिरमौर जिला अपनी अनूठी लोक संस्कृति, परंपराओं एवं रीति–रिवाजों के लिए जाना जाता है। गिरी नदी के दोनों छोरों पर बसे इस जिले में आयोजित होने वाले मेलों एवं त्योहारों में यहां की संस्कृति के साक्षात् दर्शन होते हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि सिरमौर जनपद पर प्रकाशित किया जा रहा यह विशेषांक जिले की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक विरासत को आमजन तक पहुंचाने में कामयाब होगा।"

जय राम ठाकुर
मुख्य मंत्री, हिमाचल प्रदेश

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 अक्तूबर-नवंबर-दिसंबर, 2019 अंक : 7-9

प्रधान सम्पादक
हरबंस सिंह ब्रसकोन

वरिष्ठ सम्पादक
विनोद भारद्वाज

सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.inèhimprastha.asp

इस अंक से...

हिमाचल प्रदेश का सिरमौर जिला, एक स्थान, माटी, क्षेत्र का मात्र नाम नहीं है, बल्कि यह धरती पर एक ऐसा भू-भाग है जिसके कण-कण से इतिहास, देव संस्कृति व परंपराओं तथा यहां आदिकाल से बसे भोले-भाले लोगों की विभिन्न काल खंडों में किए गए अथक परिश्रम व संघर्ष की सौंधी-सौंधी खुशबू आती है।

इस अंक में

लेख

अपनी बात

हिमाचल का मुकुट कहे जाने वाला सिरमौर जिला 2,24,759 हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैला ऐसा सजीव भू-भाग है जो प्राचीन परंपराओं और समृद्ध संस्कृति को आज भी सहेजे है। यमुना के शीतल जल प्रवाह से बने समतल क्षेत्रों से लेकर बर्फ से ढके आराध्य चूड़धार पर्वत के शिखर तक फैले इस क्षेत्र को जीवनदायिनी गिरी नदी दो समानांतर भागों गिरी आर और गिरी पार में विभक्त करती है। यदि देव शिरगुल चूड़धार क्षेत्र के अधिष्ठाता हैं तो नाहन दून का क्षेत्र गुरु गोविंद सिंह के आगमन से पावन हुई स्थली है। पौराणिक काल में यह भू-भाग शिव-शक्ति, जमदग्नि ऋषि, रेणुका मां, भगवान परशुराम, मारकंडेय ऋषि की आराध्य स्थली रहा है। जनपद में सभी धर्मों के लोग सदियों से आपसी सौहार्द के साथ शांतिपूर्ण जीवन-यापन करते आ रहे हैं। यहां के जुझारू एवं मेहनतकश लोगों ने कृषि, बागबानी से लेकर उद्योग, शिक्षा, सिने जगत, संगीत, कला, चिकित्सा सहित अनेक क्षेत्रों में जिले व प्रदेश का नाम रोशन किया है। सिरमौर जिला अपने आगोश में गौरवमयी इतिहास, संस्कृति, परंपराओं, मान्यताओं को संजोए हुए है। दून के मैदानी क्षेत्र में लहलहाती फसलों आम, अमरूद बगीचों की चहुं ओर फैली खुशबू, शिवालिक की पहाड़ियों में आड़ू व सब्जियों तथा अदरक की खेती, मध्य हिमालय क्षेत्र में सेब के बगीचे, बर्फ की सफेद चादर ओढ़े चूड़धार के शिखरों से निकलती सरिताएं एक नया फलक प्रस्तुत करती हैं। जनपद का मुख्यालय नाहन, देश का पहला ऐसा शहर है, जिसे रियासत काल में पक्के पैदल पथ, सड़कों, भूमिगत जल निकासी की व्यवस्था व नगरपालिका होने का गौरव प्राप्त था। तालाबों, मंदिरों, पुरातन भवनों का यह शहर खूबसूरती की अनूठी मिसाल है। जमदग्नि ऋषि तथा मां रेणुका की तपोभूमि रेणुका, भूरेश्वर महादेव, गुरु गोविंद सिंह जैसी देवी-देवताओं और गुरुओं का दिव्य आकर्षण, देव शिरगुल का गिरीपार क्षेत्र संपूर्ण हिमाचल की संस्कृति में इंद्रधनुषी छटा बिखेरता नजर आता है। इस धरा पर मारकंडेय नदी के तट पर शिवालिक क्षेत्र ने सर्वप्रथम मेरुदंडधारी जीवों की आहट सुनी थी। इन्हें आज भी साक्षात एशिया के प्रथम जीवाश्म पार्क, सुकेती में महसूस किया जा सकता है। शिवालिक युग में यहां मेरुदंडधारी जीवों का विकास हुआ था। इस स्थान में दो करोड़ पचास लाख वर्ष पूर्व के जीवन की ऐसी तस्वीर दिखाई देती है जिसके बारे में मात्र कल्पना ही की जा सकती है। मैदानों के नजदीक होने के कारण यहां की धरा मानव के कदमों की आहट की प्रत्यक्षदर्शा रही है। दक्षिण में पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, उत्तर में शिमला, सोलन जिले से लगती सीमाओं से यहां मिश्रित संस्कृति का उद्भव हुआ है। महाभारतकालीन युद्ध कौशल का प्रतीक ठोडा नृत्य से लेकर पड़ोसी राज्यों की संस्कृति ने यहां की परंपराओं को अलग पहचान दिलवाई है। सर्वविदित है कि रियासत काल में तलवार की नोक पर ही देशभर में रियासतों का उद्भव हुआ। मैदानी क्षेत्रों से आए राजपूतों, परमार, तोमर के वंशजों ने यहां आकर अपनी छोटी-छोटी रियासतों का गठन किया। सिरमौर रियासत का पहला शासक कौन था, इस पर तो इतिहास मौन है। 12वीं शताब्दी के अंत में नटनी के शाप से रियासत का नाश होने

वाली किंवदंति प्रचलित है। सिरमौरी ताल में इसके खंडहर आज भी देखे जा सकते हैं। 12वीं शताब्दी में रियासत प्रमुखों का इतिहास लिखित रूप में मिलता है। इसके उपरांत मुगलकाल, अंग्रेजों, यायावरों तथा इतिहासकारों से जनपद के इतिहास, परंपराओं की जानकारियों को कलमबद्ध किया गया। 5.29 लाख की आबादी वाला यह भू-भाग आज प्रशासनिक तौर पर पांच उपमंडलों,13 तहसीलों/उप-तहसीलों, 6 विकास खंडों तथा 228 ग्राम पंचायतों में विभक्त हैं। प्रत्येक गांव, कस्बा, शहर आधुनिक सुविधाओं से लैस नज़र आता है। जिला ने शून्य से लेकर विकसित होने तक लंबा सफर तय किया है। हिमप्रस्थ पत्रिका के जिला विशेषांक प्रकाशन की कड़ी में यह छठा जिला विशेषांक है। इसमें इतिहास, भूगोल, संस्कृति, परंपराओं, विकास, जनजीवन, जनपद की महान शख़्सीयतों के योगदान की गाथा को यथास्थान देने का एक प्रयास किया गया है। इस अंक में वर्ष 1792 में जनपद में आए अंग्रेज यात्री फोरस्टर, 1814 में जेम्स बेली फ्रेजर, 1820 में मूरक्राफ्ट के यात्रा वृत्तांतों 1898 में बाबू बाल गोविंद, 1912 में कंवर रणजोर सिंह द्वारा लिखित पुस्तकों, 1948 में श्रीमती विमला भारद्वाज, 1968 में राहुल सांकृत्यायन, 1985 में श्री राजेंद्र राजन, 1989 में रत्न चंद निर्झर, 1995 में के.आर. भारतीय के यात्रा संस्मरणों के माध्यम से जनपद की बहुविध सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक जीवन की झलक प्रस्तुत की गई है। इस विशेषांक में रियासत काल, ब्रिटिश काल, आजादी का संघर्ष, हिमाचल का गठन, हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह परमार के योगदान को उजागर किया गया है। आजादी से पूर्व तथा आजादी उपरांत जिले के मेहनतकश लोगों ने कृषि, बागबानी, उद्योग, पर्यटन, सृजनात्मक क्षेत्रों में जनपद को दिलाई पहचान का विशेष उल्लेख किया है। आठ माह तक चले इस भगीरथी प्रयास में वरिष्ठ साहित्यकार श्री गोपाल दिलैक, श्री ओ.सी. हांडा, श्री ओम प्रकाश राही, श्री राजेंद्र राजन, श्री नेम चंद ठाकुर, प्रसिद्ध लोक गायक एवं संगीतज्ञ श्री के.एल. सहगल, इतिहासज्ञाता डॉ. भूपेंद्र भारद्वाज, वरिष्ठ पत्रकार एवं साहित्यकार श्री यशपाल कपूर, डॉ. इंद्रजीत सिंह दुग्गल, उपनिदेशक सूचना एवं जन संपर्क श्री धर्मेंद्र ठाकुर, सूचना अधिकारी रवि सहगल, लेखक एवं फिल्मकार श्री मेलाराम शर्मा, पूर्व जिला लोक संपर्क अधिकारी श्री बाबू राम चौहान का साहित्यिक योगदान एवं मार्गदर्शन के लिए हिमप्रस्थ परिवार उनका आभारी है। आशा है हमारा यह प्रयास व्हट्सैप तथा फेसबुक की डिजिटल युवा पीढ़ी तथा शोधकर्ताओं और इतिहास को जानने वालों के लिए लाभकारी सिद्ध होगा। इस वृहद कार्य में साथी योगराज शर्मा, चंद्रशेखर, अश्वनी, कल्पना ठाकुर का सामग्री को लयबद्ध करने, चित्रों की उपलब्धता में समयनिष्ठता, समर्पण एवं सहयोग अनुकरणीय है। सिरमौर विशेषांक आपके हाथ में है। हमारा यह सृजन आपको कैसा लगा, इसकी प्रतिक्रियाओं का हमें इंतजार रहेगा ताकि भविष्य में सृजन-संवाद को और अधिक रुचिकर बनाया जा सके।

वरिष्ठ संपादक

मेरी धरती-मेरा जनपद

हिमाचल का सिरमौर

◆ विनोद भारद्वाज

ऋषि-मुनियों की आराधना स्थली व भगवान परशुराम की जन्मस्थली, सिरमौर अपने भीतर पौराणिक संस्कृति को यथावत बनाए हुए है। देवतुल्य पर्वत चूड़धार, नदियों में बहता जल विभिन्न कालखंडों में यहां के गौरवमय इतिहास के प्रत्यक्षदर्शी रहे हैं। ...सिरमौर का गौरवमय इतिहास यहां के निवासियों के विभिन्न कालों में किए गए संघर्ष से स्पष्ट होता है। इसमें कोई अतिशयोक्ति भी नहीं है कि यह धरा सही मायनों में हिमाचल का सिरमौर है।

हिमाचल प्रदेश का सिरमौर जिला, एक स्थान, माटी, क्षेत्र का मात्र नाम नहीं है, बल्कि यह धरती पर एक ऐसा भू-भाग है जिसके कण-कण से इतिहास, देव संस्कृति व परंपराओं तथा यहां आदिकाल से बसे भोले-भाले लोगों की विभिन्न काल खंडों में किए गए अथक परिश्रम व संघर्ष की सौंधी-सौंधी खुशबू आती है। यहां की समृद्ध प्राकृतिक संपदा, अनूठी सांस्कृतिक धरोहर, मेहनतकश लोगों द्वारा खेतों व खलियानों में सोना पैदा कर इसे हर मामले में प्रदेश का सिरमौर बनाया है। पर्वत, घाटियां, जल, जंगल, मैदान, यहां के बाशिंदों के लिए प्रेरणा, गम, खुशी, आशाओं व आकांक्षाओं के स्रोत तथा पूजा व आराधना के माध्यम रहे हैं। पहाड़ों की इन वादियों में मानव ने किस काल में अपनी बस्तियां बनाई, इसके ठोस साक्ष्य तो नहीं मिलते, लेकिन यह सच्चाई है कि मानव ने यहां लघु स्तर पर जनपद को खुशहाल एवं समृद्ध बनाने के लिए छोटी-छोटी बस्तियां बनाकर एक मजबूत नींव रखी। ऋषि मुनियों की आराधना स्थली व भगवान परशुराम की जन्मस्थली, सिरमौर अपने भीतर पौराणिक संस्कृति को यथावत बनाए हुए है। देवतुल्य पर्वत चूड़धार, नदियों में बहता जल विभिन्न कालखंडों में यहां के गौरवमय इतिहास के प्रत्यक्षदर्शी रहे हैं।

भौगोलिक परिदृश्य पर नज़र दौड़ाएं तो भारत का यह भू-भाग करोड़ों वर्ष पूर्व भूगर्भीय संरचना में यूरेशियन और भारतीय प्लेटों के मध्य हुए टकराव से उभर कर सामने आया। इस भीषण टकराव के कारण हिमाचल की तीन श्रेणियों ग्रेट हिमालय, मध्य हिमालय तथा शिवालिक की रचना पृथक-पृथक कालखंडों में हुई। शिवालिक व मध्य हिमालय के मध्य मैदानी क्षेत्र को दून घाटी कहा जाता है। सिरमौर जनपद दून घाटी, शिवालिक तथा मध्य हिमालय के मध्य फैला भू-भाग है। सिरमौर का संपूर्ण क्षेत्र मूलतः पर्वतीय है जबकि पांवटा घाटी में मैदानी क्षेत्र क्यारदा दून कहलाता है। यह लगभग 40 किलोमीटर लंबी व 10 से 21 किलोमीटर चौड़ी घाटी है। पर्वतीय क्षेत्र में विभिन्न ऊंचाइयों की पर्वत शृंखलाओं के मध्य गहरी घाटियां स्थित हैं। इन पर्वतों निकलने वाली नदियां प्राकृतिक सीमाएं बना कर इसे गिरी आर, गिरी पार, सैनधार, तौंस घाटी, धार शिलाई, शिलाई धार, लाई की धार (क्यारदा दून क्षेत्र) में विभाजित करती हैं।

गिरीपार क्षेत्र में 3,647 फुट की ऊंचाई पर स्थित चूड़धार जिले का श्वेत मुकुट कहलाता है। यहां की खूबसूरती देखते ही बनती है। यह क्षेत्र की पहचान तथा जल रूपी अमृत की खान है। इस पर्वत से पश्चिम की ओर पर्वत स्कंध धार-टपरोली-जड़ोल, उत्तर-उत्तर पश्चिम की ओर धार पैन कुफर तथा धार टियोठी, दक्षिण पूर्व की ओर धार नौहरा निकलती है। हरिपुर किले से दक्षिण की ओर धार नीगाली निकलती है। आगे जाकर यह धार कमराऊ कहलाती है तथा पूर्व की ओर धार शिलाई कहलाती है। इन दोनों धारों के मध्य क्षेत्र को नवाली या नैरा नदी की घाटी से जाना जाता है। मध्य क्षेत्र में सैन व धारटी धार है। सैन धार, गिरी तथा जलाल नदियों के मध्य स्थित है। दक्षिण क्षेत्र में मैदानी इलाका जो शिवालिक क्षेत्र में पड़ता है, धार क्यारदा दून कहलाता है। सिरमौर के उत्तर में शिमला जिला, पूर्व में तौंस नदी उत्तराखंड के साथ सीमा बनाती है। दक्षिण-पूर्व में यमुना इसकी सीमा है। दक्षिण में हरियाणा राज्य का अंबाला क्षेत्र पड़ता है। पश्चिम में भी हरियाणा की सीमा लगती है। उत्तर-पश्चिम में भी शिमला की सीमा लगती है। इससे उत्तर की ओर सोलन जिला की सीमा

लगती है।

मैदानों से पहाड़ों के मध्य फैली आबादी की संस्कृति, परंपराएं तथा रीति-रिवाज भिन्न-भिन्न हैं। साथ लगते क्षेत्रों की भाषा, बोली, संस्कृति तथा परपंराओं पर इसका गहरा असर देखने को मिलता है। गिरी पार व गिरी आर की सांस्कृतिक विविधता देखते ही बनती है। गिरी पार का हाटी समाज अपनी परंपराओं तथा संस्कृति को यथावत रखे हुए हैं। हिमालय की उत्पत्ति के बाद पृथ्वी के क्रमिक विकास के दौर में यहां की धरा पर विशालकाय जीव-जंतुओं तथा वनस्पति का राज रहा है। सिरमौर की धरा से अनेक जीवाश्म प्राप्त हुए हैं जो करोड़ों वर्ष पूर्व की स्थिति पर प्रकाश डालते हैं जो उस काल में यहां पर विचरने वाले मेरुदंडधारी प्राणियों की याद को ताजा कराते हैं। सुकेती जीवाश्म पार्क में इस संपदा को संजो कर रखा गया है। ये भू-वैज्ञानिकों के लिए किसी तीर्थस्थल से कम नहीं है। पहाड़ों के बनने, धरा पर वनस्पति के उगने के साथ मानव के कदम धीरे-धीरे इस धरा पर पड़े। मैदानों के पास होने के कारण यहां आवागमन में वृद्धि हुई। छोटी-छोटी बस्तियों से बड़े गांव व कस्बे आबाद हुए। इसी होड़ में क्षेत्र पर अधिपत्य का दौर आरंभ हुआ। संघर्ष तथा क्षेत्रवार अधिपत्य के दौर में राजाओं का दौर आरंभ हुआ। जनपद का नामकरण भी इसी काल में हुआ प्रतीत होता है।

प्राचीन काल में यह जनपद दक्षिण में उत्तर प्रदेश के मैदानों से लेकर उत्तर में सतलुज की सहायक नदी पब्बर तथा पूर्व में पिंजौर (वर्तमान में हरियाणा) व जौनसार बाबर का क्षेत्र भी सिरमौर का हिस्सा था। इस वक्त यहां राठौड़ वंशीय राजाओं का राज था। इसका उल्लेख संतराम द्वारा लिखित पुस्तक ललित काव्यम, तुआरीख जुब्बल, कोहीस्तान, भगवस द्वारा लिखित पुस्तकों में मिलता है। अंग्रेज लेखक हैमिल्टन फ्रांसिस बुशमैन ने अपनी पुस्तक 'अकाउंट्स ऑफ द किंगडम नेपाल एंड द टेरिटरीज़ टू द डिमिनियन बाइ द हाउस ऑफ गोरखाज' में किया है। तारीखे सिरमौर के लेखक रणजोर सिंह ने जेम्स टाड की पुस्तक का उदाहरण देते हुए - सिरमौर का प्राचीन वंश यदुवंशी लिखा है। सिरमौर का प्राचीन वंश यदुवंशी था, जो बाहरवीं शताब्दी में गिरी नदी में आई बाढ़ में नगर सहित नष्ट हो गया था। तदोपरांत सिरमौर के निवासी जैसलमेर के राजा शालिवाहन द्वितीय का पुत्र हांसू को साथ लेकर आए। दुर्भाग्यवश हांसू की मार्ग में ही मृत्यु हो गई। हांसू की पत्नी गर्भवती थी। उसने पलाश वृक्ष के नीचे पुत्र को जन्म दिया। इस पुत्र का नाम पलाश रखा गया। वयस्क होने पर जब वह गद्दी पर बैठा तो उसके वंशज पलासिया कहलाए। जौनसार बाबर के प्राचीन गांव लाखा मंडल में शिव मंदिर में ताम्रपत्र लेख में भी सिरमौर के अधिपत्य के प्रमाण मिलते हैं। उस वक्त सिरमौर की राजधानी सिरमौरी ताल में थी। ऐसी जनश्रुति है कि नटनी के शाप से गिरी नदी में आई भयंकर बाढ़ से यह नगरी तबाह हो गई थी।



जामू टिब्बा पर स्थित ऋषि जमदग्नि देवालय

एक मत यह भी है कि यह मात्र एक प्राकृतिक आपदा थी, जिसने शहर को तबाह किया। सिरमौर रियासत की नींव जैसलमेर के शालिवाहन द्वितीय के पौत्र और हांसू के पुत्र सुभंश प्रकाश ने डाली। यह घटना 12वीं सदी की है। सुभंश प्रकाश का कार्यकाल 1195-1199 तक रहा। उसने सिरमौरी ताल के नजदीक राजबन में अपनी राजधानी बनाई। सुभंश प्रकाश से लेकर 48 राजाओं के नाम वंशावली में मिलते हैं। राजा धर्म प्रकाश का राज 1616 से 1630 तक रहा। उसने छः वर्ष तक कालसी से राज चलाया। वर्ष 1621 में शिकार खेलने नाहन की पहाड़ियों में आया वहां उनकी भेंट बनवारी लाल साधू से हुई तथा वहां उसने अपनी राजधानी की स्थापना की।

12वीं शताब्दी से पूर्व के इतिहास का उल्लेख जनपद की समृद्ध संस्कृति से मिलता है। गिरी पार संस्कृति की देव शिरगुल के इर्दगिर्द घूमती है। शिरगुल गिरी पार व शिमला के अनेक क्षेत्रों के निवासियों के अराध्य देव हैं। शिरगुल की देव प्रथाएं, शिरगुल की वादियों से यहां की संस्कृति की झलक देखने को मिलती है। जनपद की संस्कृति महाभारत काल से भी जुड़ी नज़र आती है। ठोडा नृत्य इसका जीता-जागता उदाहरण है। यह दो दलों पाशा व शाठा के मध्य खेला जाता है जो कौरवों तथा पांडवों का प्रतिनिधित्व करते हैं। मुगलकाल में मुगलों के आक्रमणों से भयभीत होकर यहां के अनेक स्थलों पर परमार, तोमर, मियां, राठौर आकर बसे। मुगलों तथा रियासत का भी संघर्ष चलता रहा। इसी दौरान सिखों का अधिपत्य तथा संघर्षों का जिक्र इतिहास में मिलता है।

19वीं सदी के आरंभ में सिरमौर के इतिहास में गोरखों के

आक्रमण तथा अधिपत्य से यहां के गांवों की पृष्ठभूमि ही बदल गई। संपन्नता से गरीबी का यह दौर जनपद के निवासियों ने देखा। यहां के राजाओं तथा लोगों ने कष्टकारी समय व्यतीत किया। अंग्रेजों के 1814 में पहाड़ों पर आगमन उपरांत पहाड़ों को गोरखों की दासता से मुक्ति मिली। रियासत, अंग्रेजों की जुगलबंदी से एक नए युग का सूत्रपात हुआ। सिरमौर के सिरमौर बनने की कहानी भी यहां आरंभ हुई। नाहन फाउंडरी, सड़कों का विस्तार, नाहन नगरपालिका का गठन, नाहन शहर का योजनाबद्ध एवं नियोजित विकास, डाकतार व्यवस्था का शुभारंभ, स्वास्थ्य, शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति हुई। बंदोबस्त के कार्य से रियासत के राजस्व में वृद्धि, हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा का प्रचार, सैन्य सेवाओं के विस्तार से रियासत एक नए पथ पर आगे बढ़ी। मेहनतकश किसानों ने गांव- गांव में खुशहाली की इबारत लिखी।

20वीं सदी के तीसरे दशक में देश में आजादी की बयार तेजी से बहने लगी। यहां के जागरूक निवासियों ने भी स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। 1935-36 में सिरमौर के निवासियों में अपने हकों तथा राजनैतिक अधिकारों के लिए जागृति का संचार होने लगा था। इसी दौरान प्रजामंडल की स्थापना हुई। 1937 आते-आते शेरजंग की अध्यक्षता में प्रजामंडल की गतिविधियों में इजाफा हुआ। प्रजामंडल कार्यकर्ताओं पर मुकद्दमें दायर हुए। मुकद्दमे सैशन जज की अदालत में पेश हुए। न्यायाधीश ने उन्हें निर्दोष मानकर बरी कर दिया।


जामू टिब्बा से रेणुका झील का विहंगम दृश्य   छाया : नेम चंद ठाकुर

इस घटना से हिमाचल के इतिहास में एक बदलाव आया और सिरमौर का सपूत यशवंत सिंह परमार का राज्य में एक नए सितारे के रूप में उदय हुआ। उन्होंने रियासत के दखल के उपरांत न्यायाधीश के पद से त्यागपत्र दे दिया। रियासत ने 24 घंटे में सिरमौर रियासत छोड़ने का हुक्म दिया। परमार रियासत छोड़ने के बाद प्रजामंडल गतिविधियों में सक्रिय हुए। इसमें प्रजामंडल के सचिव शिवानंद रमौल ने अहम भूमिका निभाई।

वर्ष 1942 में पझौता आंदोलन ने सिरमौर को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई और यह आंदोलन स्वतंत्रता आंदोलन का अहम हिस्सा बना। निहत्थे नागरिकों पर हुई बर्बरता से देश व प्रदेशवासियों की रूह कांप उठी।

1944 में सिरमौर एसोसिएशन और सिरमौर रियासती प्रजामंडल संस्थाएं अस्तित्व में आईं। डॉ. परमार ने पहाड़ी रियासतों में चल रहे प्रजामंडल आंदोलन में सक्रियता से भाग लिया। सिरमौर के इस सपूत ने हिमाचल के गठन में अहम योगदान दिया और हिमाचल निर्माता कहलाया। हिमाचल निर्माता की मातृभूमि से अनेक ऐसे सुपूत निकलने हैं, जिन्होंने प्रदेश ही नहीं देश का मान व शान बढ़ाई है। स्वतंत्रता सेनानी वैद्य सूरत सिंह, कला संस्कृति व संगीत में डॉ. कृष्ण लाल सहगल, विद्या चंद सरैक, विद्या देवी, मोहित चौहान, खेलों में कनरेश जंग, ग्रेट खली, अनुजा जंग, कल्पना परमार, सीमा परमार व पूनम परमार, सीता गोसाईं, जयवंती तथा स्वास्थ्य क्षेत्र में डॉ. जयमंती, पदमश्री डॉ. जगतराम व पर्यावरण संरक्षक किंकरी देवी प्रमुख हैं।

15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ। 13 मार्च 1948 को सिरमौर के आखरी राजा राजेंद्र प्रकाश ने भारत में विलय करने के लिए हस्ताक्षर किए। 15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल का गठन हुआ और सिरमौर नया जिला बना।

आजादी के बाद के वर्षों में सिरमौर ने शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, बिजली, उद्योग, पर्यटन क्षेत्र में प्रगति कर एक नया उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसके बावजूद जनपद ने अपनी कला, संस्कृति, संगीत, परपंराओं को यथावत् रखा है। इसकी झलक यहां माघी, हरियाली, बिशू, रेणुका मेला, द्वादशी मेलों में देखने को मिलती है।

सिरमौर का गौरवमय इतिहास यहां के निवासियों के विभिन्न कालों में किए गए संघर्ष से स्पष्ट होता है। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि यह धरा सही मायनों में हिमाचल का सिरमौर है।

(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक)

मानव कदमों से पूर्व की आहट



मेरुदंडधारी प्राणियों का आरंभिक साम्राज्य

'सुकेती जीवाश्म (फॉसिल) उद्यान' शिवालिक पर्वतमाला में अवस्थित एशिया का एकमात्र ऐसा स्थल है जहां पर मेरुदंडधारी प्राणियों के जीवाश्मों का संग्रहालय उसी स्थान पर बनाया गया है जहां ये जीव मूल रूप से पाए जाते थे। इसी दृष्टि से यह स्थल भू-वैज्ञानिकों तथा पर्यटकों के लिए किसी तीर्थ से कम नहीं है। यह उद्यान सिरमौर जिले के काला अंब से पांच किलोमीटर तथा जिला मुख्यालय नाहन से 22 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

हिमाचल प्रदेश सरकार के साथ मिलकर जी.एस.आई. ने सुकेती गांव के समीप लगभग सौ एकड़ जमीन पर इस सुंदर उद्यान को विकसित किया है। इस परिकल्पना का सूत्रपात जी.एस.आई. के तत्कालीन उप महानिदेशक (उत्तर) क्षेत्र श्री एम.के. चौधरी ने वर्ष 1961 में किया और इस परियोजना को प्रदेश सरकार के साथ मिलकर 1971 में देशवासियों को समर्पित किया।

भारतीय भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण (जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया) के भू-वैज्ञानिकों को अपने अध्ययन के दौरान मेरुदंडधारी जीवाश्मों का विशाल भंडार मारकंडा नदी के आसपास शिवालिक पर्वतशृंखला के बीच प्राप्त हुआ। प्रागैतिहासिक काल मेरुदंड जीवों के अध्ययन के लिए इसे उपयुक्त स्थली माना गया है। यह विश्व में अपनी तरह का तीसरा और एशिया में पहला मेरुदंडधारी जीवाश्म उद्यान है। अन्य प्रागैतिहासिक जानवरों के जीवाश्म कनाडा के 'कैलगरी पार्क' और अमेरिका के जेनसन नगर में 'डायनासोर नेशनल मोन्यूमेंटस' में रखे गए हैं।

सुकेती जीवाश्म उद्यान मेरुदंडधारी जीवन के विकास की वह गाथा है जो शिवालिक युग के दौरान घटी और उसके साक्ष्य जीवाश्म के रूप में आज भी इस भूमि में स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। शिवालिक युग में मेरुदंडधारी जीवों का विकास हुआ था। इस उद्यान में दो करोड़ पचास लाख वर्ष पूर्व के जीवन की ऐसी तस्वीर दिखाई देती है जिसके बारे में मात्र परिकल्पना ही की जा सकती है। उस समय जब जीवन हिमयुग से गुजर रहा था, शिवालिक के स्तनपायी या तो

मेरुदंडधारियों की खोज

यमुना तथा गंगा नदियों के मध्य बसे दोआब क्षेत्र में जल की आपूर्ति के लिए वर्ष 1830 में कैप्टन प्रोबी कायूटले (Proby Cautley, 1802-1871) ने नहर बनाने का कार्य आरंभ किया। इस नहर की खुदाई के वक्त शिवालिक के स्तनधारी जीवाश्म प्राप्त हुए। कायूटले तथा जीवाश्म प्राणी विज्ञान के वैज्ञानिक ह्यूगू फैलकोनर (1808-1865) ने दो दशकों तक इस पर अध्ययन किया। इन जीवाश्मों के मिलने के उपरांत अनेक ब्रिटिश भू- वैज्ञानिकों को आकर्षित किया। वे इन जीवाश्मों को ब्रिटिश म्यूजियम के लिए भी ले गए।

नष्ट हो चुके थे या दूसरे स्थलों पर चले गए थे। जो मेरुदंडधारी इस काल में जीवित नहीं रह सके, उनके अवशेष जीवाश्म के रूप में शिवालिक पहाड़ियों में बहुतायत में पाए जाते हैं। ये जीवाश्म वर्तमान के मेरुदंडधारी प्राणियों के लगभग समान हैं और इनसे वर्तमान में जीवन के विकास की कहानी पर प्रकाश डाला जा सकता है। हिमालय की तराई शिवालिक के नाम से भी जानी जाती है जिसका विस्तार इंडस के नाम से ब्रह्मपुत्र तक माना जाता है और इसका नामकरण भारत के हरिद्वार के पास शिवालिक हिल्स के नाम से पड़ा, जहां से सबसे पहले शिवालिक सिस्टम के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त हुआ। यह पर्वतश्रृंखला बालू पत्थर (सैंड स्टोन), चिकनी मिट्टी (क्ले) और अन्य जलोढ़ निक्षेपों (एलूविटाल डिपाज़िट) से बनी हुई है जो करोड़ों वर्ष पूर्व तेज रफ्तार से बहने वाली नदियों व अन्य कारणों से जमा होते रहे। इस युग में वायुमंडलीय परिवर्तन बड़ी तेजी से हुआ जिसके कारण आर्द्रता बढ़ गई और तापमान में बदलाव आया और परिणामस्वरूप मेरुदंडधारी जीवों के साथ-साथ वनस्पति का भी विकास हुआ। इन जीवों में घोड़े (Equidae), कैटल्स (bovids), हाथी (Proboscidea), सुअर (Suidae), जिराफ (Pecora), वनमानुष (Hominodae), हिप्पोपोटैमी (Hippopotamidae), राईनोसोरस (Rhinocerotidae), घड़ियाल (Crocodilia), लैंड टारटायज (Chelonia), तथा नर वानर की प्रजातियां जिनमें मनुष्य की आदि-प्रजाति ड्रायोपिथैक्स (Dryopithecus) और रैमापिथैकस (Ramapithecus), मानव प्रजाति का सबसे पुरातन रूप है जिसमें चेहरे व दांत अधिक विकसित शामिल हैं।

सुकेती जीवाश्म उद्यान को चरणबद्ध ढंग से विकसित किया गया है। जनसाधारण की जानकारी के लिए उस युग के जीवों की वास्तविक आकार की फाइबर ग्लास की आकृतियां बनाकर प्राकृतिक परिवेश में स्थापित की गईं। इनमें सैबरे टूथ टाइगर हिप्पोपोटैमस, जाइंट लैंड टारटायज, जाइंट एलीफेंट, चार सींगोवाला जिराफ और घड़ियाल की प्रतिकृतियां प्रदर्शित की हैं।

इस क्षेत्र तथा आसपास प्राप्त जीवाश्मों को संग्रहालय में रखा गया है। इनमें :

भीमकाय हाथी

प्लायेस्टोसीन युग (1/41 करोड़ से 2 करोड़ वर्ष पूर्व हाथी की लगभग 15 प्रजातियां इस क्षेत्र में पाई जाती थीं जिसमें से स्टैगडन गनेशा नामक हाथी से मिलता-जुलता एक प्राणी सबसे अधिक विकसित था। इसकी सूंड लगभग 15 फुट लंबी थी। ये प्रजातियां लगभग डेढ़ करोड़ वर्ष पूर्व लुप्त हो गईं। इनमें से अफ्रीकन और एशियन हाथी ही शेष बचे हैं।

नुकीले दांतों वाले सिंह

शेरों की इन प्रजातियों में दांत बहुत नुकीले होते थे। वे अपना शिकार पकड़ कर मजबूती से दबा लेते थे। ये प्रजातियां लगभग दो करोड़ वर्ष पूर्व लुप्त हो गई।

हिप्पोपोटामस

हिप्पोपोटामस की प्रजातियों का आकार आज के जीवों जैसा ही था लेकिन इनके सामने की ओर छः दांत होते थे। दिमाग छोटा तथा जबड़ा बड़ा होता था। इनके पांव सुअर की माफिक थे। ये प्रजातियां भी लगभग ढाई करोड़ वर्ष पूर्व नष्ट हो गईं।

महाकच्छप

ये प्रजातियां विश्व की सबसे बड़ी कछुआ जाति थी जिसकी लंबाई लगभग 10 फुट होती थी। ये भी ढाई करोड़ वर्ष पूर्व लुप्त हो गए।

घड़ियाल

घड़ियाल की ये प्रजातियां ऐसी थीं जिनकी लंबी और पतली सूंड होती थी। इनकी सूंड में पच्चीस से तीस तक पतले नुकीले दांत होते थे।

चार सींगों वाला जिराफ

जिराफ प्रजाति का यह जीव जिसके लगभग तीन फुट लंबे सींग थे, इनकी गर्दन छोटी होती थी। लगभग छः फुट ऊंचा होता था। ये भी डेढ़ करोड़ वर्ष पूर्व लुप्त हो गए।

संदर्भ : अभिव्यक्ति सुकेती जीवाश्म, राजेंद्र तिवारी, 16 जुलाई 2006

स्थानीय लोगों के अनुसार इस सुकेती को महाराजा शमशेर प्रकाश के कार्यकाल में हरियाणा से आए लोगों ने बसाया था। इसीलिए इस गांव का मुख्य सड़क रास्ता हरियाणा की सीमा से होकर हिमाचल में पुनः आती है। मोगीनंद गांव से भी यहां पहुंचा जा सकता है।

सुकेती जीवाश्म पार्क का कायाकल्प

जिला सिरमौर स्थित सुकेती जीवाश्म पार्क को शीघ्र ही श्रेष्ठ पर्यटक गंतव्य के रूप में विकसित किया जाएगा। जिला प्रशासन ने इस स्थान पर एक थीम (विषयवस्तु) पार्क बनाना प्रस्तावित किया है। एशियाई विकास बैंक की टीम के दौरे के बाद शीघ्र ही यहां कार्य आरंभ किया जाएगा। इस स्थान पर जैव विविधता के संरक्षण के अतिरिक्त यहां पर कैंपिंग साइट और जल संग्रहण टैंक का निर्माण भी प्रस्तावित है। साहसिक पर्यटन के इच्छुक पर्यटकों के लिए यह एशिया का पहला अपनी तरह का पार्क होगा। विधान सभा अध्यक्ष डॉ. राजीव बिंदल ने बताया कि अगले वर्ष नई दिल्ली में होने वाली 36वीं अंतर्राष्ट्रीय भू-वैज्ञानिक कांग्रेस में इस पार्क को अंतर्राष्ट्रीय पहचान दिलाने का प्रयास किया जाएगा। जूलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया द्वारा रखरखाव किए जा रहे पार्क में पर्यटकों की सुविधा के लिए अधिक सुविधाएं उपलब्ध करवाई जाएगी।



गिरी व जलाल नदियों का संगम

सिरमौर जिले में छोटी-बड़ी छः नदियां हैं। ये नदियां तथा जलस्रोत जनपद की संस्कृति, समृद्धि के अभिन्न अंग हैं। इन नदियों में बहती जलधारा ने यहां के गौरवमय इतिहास को बनते देखा है। इनके तटों पर जल की करतल ध्वनि के मध्य लोकगीतों की रचना हुई है। इनका उल्लेख गीतों/छिंज गीतों में आता है।

जनपद की प्रमुख नदियों में यमुना, गिरी, तौंस, जलाल, मारकंडा तथा बाता हैं।

यमुना नदी यमुनोत्तरी के पर्वत, जो कि हिमालयी क्षेत्र में 26 हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है, से निकलती है। यह उत्तराखंड से होती हुई जौनसार के क्षेत्र को सींचती हुई मौजा खोडर माजरी के निकट सिरमौर की पूर्वी सीमा में लगभग चौदह मील बहती है। माजरी से कोंच तक यह 22 किलोमीटर बहकर उत्तराखंड में प्रवेश करती है।

सिरमौर जिले में यमुना नदी की अधिकतम चौड़ाई 91 मीटर तथा गहराई 6 मीटर के करीब है लेकिन वर्षा ऋतु में यह बढ़ जाती है। यमुना देहरादून (उत्तराखंड) को हिमाचल से अलग करती है।

अंग्रेजों के वक्त में नहरों के विभाग ने पांवटा साहिब में जल को मापने का यंत्र लगा रखा था। यमुना नदी में जल के उतार-चढ़ाव की सूचना देने के लिए वहां टेलिफोन की व्यवस्था की गई थी। यहां से जल की सूचना दूरभाष से दाउदपुर को दी जाती थी। इस नदी को हिंदू सिख पवित्र नदियों में से एक मानते हैं और धार्मिक पर्वों पर गंगा की भांति स्नान करते हैं।

सिरमौर में यमुना के किनारे श्रीराम चंद्र जी का एक मंदिर रामपुर नामक स्थान पर और दूसरा पांवटा में है। सिखों का प्रसिद्ध गुरुद्वारा पांवटा में स्थित है।

आजादी से पूर्व तथा आजादी के दो दशकों तक इस नदी में पहाड़ों से लकड़ी बहा कर लाई जाती थी। तौंस तथा गिरी नदी में आने वाली लकड़ी पर चुंगी लगती थी जो रियासत के राजस्व को बढ़ाती थी। रामपुर में जो कि रामपुर मंडी के नाम से जाना जाता है, लकड़ी को पकड़ा जाता था। यहां इनसे बेड़े बांधकर मैदानी इलाकों में ले जाए जाते थे।

सिरमौर की खोडर माजरी सीमा के स्थान पर तौंस नदी यमुना में आकर मिलती है। गिरी मोहकमपुर नोआदा और बाता, बाता मंडी में यमुना में आकर मिलती है। सिरमौर में सभी नदियां यमुना की सहायक नदियां हैं।

क्यारदा दून का इलाका यमुना की घाटी में पश्चिम की ओर स्थित है। यह घाटी पूर्व से पश्चिम तक 25 मील लंबी है। वर्ष 1924 में यमुना में आई भयंकर बाढ़ से अनेक गांव में तबाही मची थी। पांवटा तहसील में उपजाऊ भूमि तबाह हो गई थी।

गिरी नदी

सिरमौर रियासत को गिरी नदी दो भागों गिरी पार तथा गिरी आर क्षेत्रों में विभाजित करती है। यह नदी पहाड़ी तथा मैदानी

संस्कृतियों के मध्य एक रेखा का कार्य करती है।

यह नदी शिमला जिले की जुब्बल की पहाड़ियों से निकल कर तथा कोटखाई तथा रितेश से होती हुई क्योंथल के समीप सिरमौर जिले की सीमा में प्रवेश करती है। गांव नंदू पलासा से पूर्व की ओर से दक्षिण की ओर बहती हुई सिरमौर जिले को दो भागों में विभक्त करती है। जिले में 88 किलोमीटर की दूरी तय कर यह मोहकमपुर के निकट यमुना में मिल जाती है। इसका बहाव तेज है तथा अधिकतम चौड़ाई 200 फुट तथा गहराई 4 से 5 फुट है। वर्षा ऋतु में गिरी नदी उफान पर होती है।

इस नदी के तट पर कोई भी नौका धाट नहीं है। गिरी नदी में मछलियों की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। महाशीर मछली बहुतायत में पाई जाती है।

जलाल नदी ददाहू के स्थान पर सेती बाग के पास गिरी नदी में मिलती है।

तौंस नदी

यह नदी जमुनोत्तरी के पर्वतों से निकल कर जुब्बल तथा जौनसार के इलाकों से बहती हुई मौजा कोटी के समीप सिरमौर जिले में प्रवेश करती है तथा जौनसार क्षेत्र को सिरमौर से अलग करती है। यह क्षेत्र रियासत काल में सिरमौर का हिस्सा था। 50 किलोमीटर बहकर यह सिरमौर जिले की पूर्वी सीमा बनाती है तथा खोडर माजरी के निकट यमुना नदी में मिल जाती है। यह पहाड़ों में द्रुत गति से बहने वाली नदी मानी जाती है। 3897 मीटर की ऊंचाई पर से निकलने वाली इस नदी, तेज बहाव से बहती है। यह लगभग नौ मीटर चौड़ी तथा नौ ही मीटर गहरी है तथा यह आरंभ से लेकर अपना स्वरूप यथावत रखती है। तौंस पहाड़ों के मध्य गहराई में बहती है। इस नदी में वर्ष 1924 में बाढ़ आने से इसका जल स्तर रिकार्ड ऊंचाई तक बढ़ा तथा इसने पांवटा क्षेत्र के साथ लगते गांवों, उपजाऊ भूमि को व्यापक हानि पहुंचाई।

नदी के तेज बहाव के कारण इसमें नौकायान नहीं होता है। पूर्व में इस नदी को झूले या दींके के माध्यम से पार करते थे। नदी पर चार झूले गांव चम्यारा मोटार, स्यासू (रेणुका तहसील), पांवटा तहसील में कांडो चियोग तथा मासू (Masu), में थे। वहीं रेणुका तहसील की नैनीधार के मिनस में सस्पेंशन पुल स्थापित था।

गिरी नदी की तरह इसमें भी पूर्व में इमारती लकड़ी बहाकर लाई जाती थी। इस नदी में अनेक नाले आकर मिलते हैं। इनमें बगल, नेरा, सैंज, रुन प्रमुख हैं।

जलाल नदी

यह एक छोटी, उथली नदी है जो तहसील पच्छाद के गांव बेनी के नीचे से ही निकलती है। यह सैन इलाके को धारटी इलाके से अलग करती है। यह ददाहू के समीप गिरी नदी में मिलती है।

गिरी में मत्स्य आखेट और अंग्रेज

अंग्रेजों के वक्त में वे गिरी नदी में मछली आखेट करना बहुत पसंद करते थे। शिमला में स्थित मत्स्य क्लब गठित था, जिसके संरक्षक वायसराय हुआ करते थे। शिमला का मत्स्य क्लब, सिरमौर रियासत में ठेके लेता था, जिससे रियासत को खासी आमदनी होती है। क्लब के सदस्य गिरी नदी में शिकार करने के हकदार थे। क्रेगनेनों से सेती बाग तक अंग्रेज मत्स्य आखेट करते थे। अंग्रेजों की आज्ञा से दूसरे लोग भी शिकार करते थे। अंग्रेज मूलतः सेती बाग में पड़ाव लगाकर मत्स्य आखेट करते थे।

इसकी चौड़ाई तथा गहराई कम होने के कारण इसे वर्षा ऋतु के अलावा पार करना आसान है। इसमें मछली पाई जाती है लेकिन बहुतायत में नहीं है।

मारकंडा नदी

यह नदी कटासन दर्रा की पहाड़ी बराबान से जहां, पर कटासन देवी का मंदिर है, से निकलती है। दक्षिण-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर यह सिरमौर जिले में 24 किलोमीटर बहते हुए बजौरा क्षेत्र को सींचती है। यह कालाअंब के समीप हरियाणा राज्य की सीमा में प्रवेश करती है जहां इसका पाट चौड़ा है। वर्षा ऋतु में इसका बहाव तेज होता है। गांव देवानी में इसमें सलानी छोटी नदी आकर मिलती है। इसके किनारे पर बहुतायत में रेत है तथा इसे छान कर इससे सोना भी मिल जाता है। इस नदी में बाजरा खोल, कालाअंब, शंभूवाला रुखरी क्षेत्रों में सिंचाई होती है।

बाता नदी

यह नदी तहसील नाहन के धारटी क्षेत्र के सिओड़ी नामक चश्मे से निकल कर पूर्व की ओर बहती हुई कयारदा दून को दो भागों में विभक्त करती है। बाता मंडी के स्थान पर यमुना नदी में मिल जाती है। इसके जल से दून क्षेत्र में सिंचाई होती है।

घग्गर

यह जिले के लवासा के पास से निकलती है। यह पश्चिमी दिशा में बहती है तथा धारटी धार के दक्षिण छोर के साथ बहती हुई यह पच्छाद क्षेत्र में 12.8 किलोमीटर बहती है तथा प्रीतनगर में यह हरियाणा में दाखिल होती है। यह नदी का रूप धारण करने से पहले ही हरियाणा में प्रवेश कर लेती है। इसकी दो सहायक नदियां लाह तथा देह है। इसमें वर्षा का जल ही प्रवाहित होता है।

यात्रा वृत्तांत

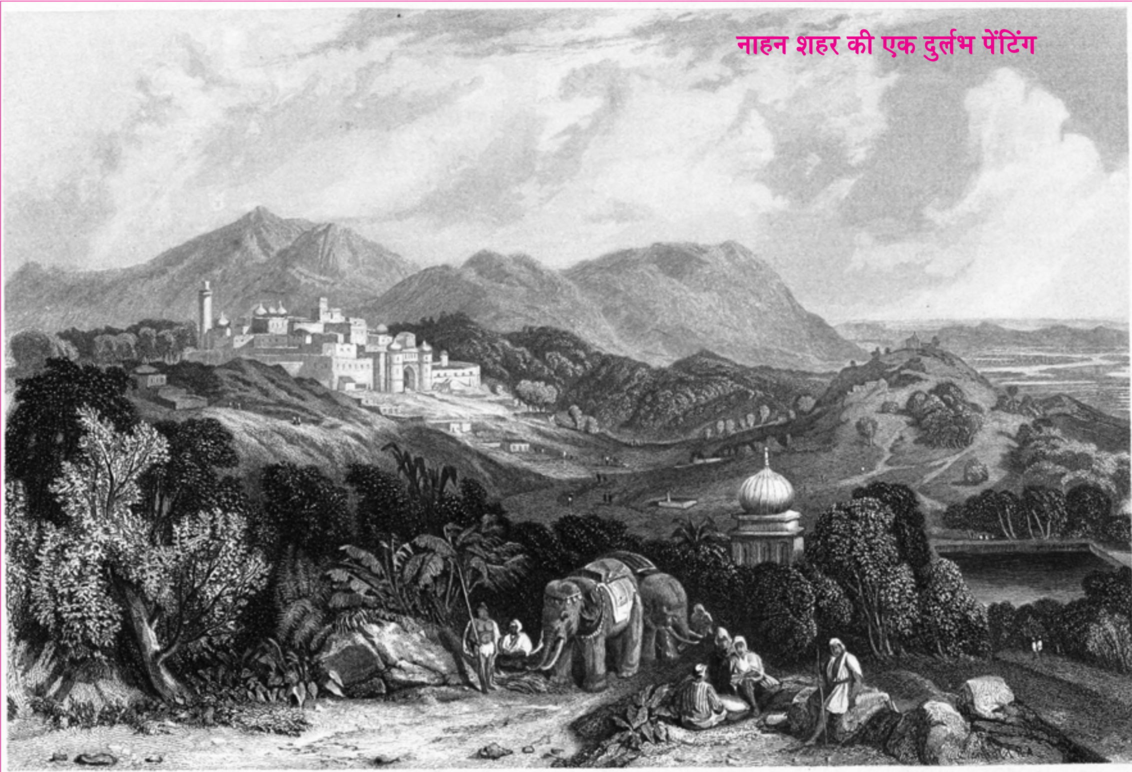
विदेशी यात्री जॉर्ज फोरस्टर का नाहन आगमन

सिरमौर रियासत में राजा जगत प्रकाश का कार्यकाल वर्ष 1773 से 1792 के मध्य रहा। उस वक्त सिरमौर के अधीनस्थ छोटे-छोटे सामंतों ने वर्ष 1773 में राजा के विरुद्ध विद्रोह किया। इस विद्रोह को दबाने में पटियाला के राजा अमर सिंह ने, जगत प्रकाश की मदद की। उस वक्त सिरमौर के संबंध कहलूर रियासत से भी मधुर न थे। चौदह वर्ष की आयु में जगत प्रकाश का विवाह कांगड़ा के राजा संसार चंद की बहन से हुआ।

सिरमौर नरेश कहलूर के प्रतिरोध के बावजूद बारात को वहां से ले गया वापसी में कांगड़ा के राजा ने बारात की सुरक्षा के लिए दो हजार सैनिकों को भेजा। इसका उल्लेख वी.पी. मेनन की पुस्तक Integration of Indian States में मिलता है। वहीं इसी पुस्तक में गढ़वाल में राजा जयकृत शाह के विरुद्ध उसके मंत्रियों तथा कारदारों के विद्रोह तथा जगत प्रकाश द्वारा सहायता प्रदान करने का उल्लेख मिलता है। इस पर गढ़वाल के कवि और चित्रकार मोला राम ने एक कविता भी लिखी।

हुकुम होय तो नाहण जावें
राजा सहित फौज ले आवें
महाराज तब यह फरमाई
तुम मत छोड़ो हमरे ताही
नाहण को धनिराम पठावें
तुम जोकहो ताहि सिखलावै
याहि समा को छंद बनावो
अक्कल बरिसों ताहि बुलबो
जग प्रकाश तू भानूसम
हमहुं तम किचु ग्रास
ग्राह ग्रह्यो ज्यों गजहिं को
घमंड सिंह दिया त्रास।

उस वक्त मुगल साम्राज्य भी पतन की ओर जा रहा था। उधर पंजाब में सिखों की शक्ति बढ़ रही थी। मुगलों तथा सिखों में सत्ता के लिए बराबर झड़पें हो रही थीं। सिख सिरमौर के क्षेत्र पर भी अपना अधिपत्य स्थापित करने के लिए आक्रमण करते रहते थे। वर्ष 1781 में अंग्रेज यात्री जॉर्ज फोरस्टर ने बंगाल से होते हुए सिरमौर रियासत की यात्रा की। वे यहां से मध्य एशिया की ओर गया। उसने अपने यात्रा वृत्तांत में सिरमौर का उल्लेख किया।


नाहन शहर की एक दुर्लभ पेंटिंग

उसकी यात्रावली में सिखों की लूटमार का उल्लेख मिलता है। वे 1781 में जगत प्रकाश के वक्त में नाहन होता हुआ पश्चिम की ओर बढ़ा। वे गढ़वाल क्षेत्र के श्रीनगर, दून होता हुआ यमुना तट पर आया। उसने लिखा कि गढ़वाल, दून तथा निचले पहाड़ी क्षेत्रों में सिखों का दबदबा था। वे इस क्षेत्र के राजाओं से नियमित तौर पर राजस्व प्राप्त करते थे, जो चार हजार रुपये सालाना बनता था। जॉर्ज फोरस्टर ने अपने वृत्तांतों में लिखा है कि उसने यात्रा के दौरान एक 'कर' पड़ताल चौकी पर दो सिख घुड़सवारों को श्रीनगर से खिराज प्राप्ति करते देखा जो कि कुछ 'कर' चौकियों से इकट्ठा किया गया था। इन सिख घुड़सवारों की जिस प्रकार आवभगत की गई उसे देख कर उसने सोचा कि वे कुछ सप्ताह के लिए इन सिख सैनिकों के शरीर में दाखिल हो जाए। जैसे ही वे दोनों सैनिक घोड़ों से उतरे उन्हें आराम के लिए बिस्तर व खाने-पीने की व्यवस्था तथा घोड़ों के लिए खेतों से हरा जौ चारे के रूप में लाया गया। काफिले के यात्रियों को संतोष था कि उन्हें भूमि पर स्थान तो दिया गया था तथा उन्हें यह अनुमति दी गई थी कि वे जो चाहे वे खरीद सकते थे। उसने लिखा कि इस वृत्तांत को देख कर लगता था कि जो सत्ता में है और जो सत्ता से बाहर है, इसमें कितना अंतर है। 6 मार्च को जॉर्ज फोरस्टर ने यमुना नदी को पार किया और आठ कोस की दूरी पर नदी के पश्चिम किनारे पर पड़ाव लगाया। यमुना का स्वच्छ जल दक्षिण- पश्चिम की ओर बह रहा था और नदी का उतना ही पाट था जितना गंगा का था। नदी में मछली भरपूर मात्रा में थी तथा आसपास के निवासी उसे पकड़ने के इच्छुक नहीं लगे। यमुना के ऊपरी भाग पर खेती भी नज़र नहीं आई जबकि पश्चिम में खुला क्षेत्र था, जिसे नदी के जल से आसानी से सींचा जा सकता था। यहां श्रीनगर क्षेत्र की सीमा समाप्त होकर स्वतंत्र हिंदू राजा की सीमा आरंभ होती थी। यहां कुछ बस्तियां थीं। यहां दो कश्मीरी, एक साहूकार, ब्रिटिश नागरिक जॉर्ज फोरस्टर तथा सेवक काफिले से अलग हो गए। जार्ज फोरस्टर राह पर आगे बढ़ते हुए 9 मार्च को आठ कोस दूर नाहन पहुंचा। नाहन, इस क्षेत्र के राजा का आवास तथा राजधानी थी। जार्ज फोरस्टर ने लिखा, "जब वह नाहन पहुंचे तो उसी दिन राजा का सिखों से निपट कर लंबे अरसे उपरांत नाहन में आगमन हुआ था। उसका शहर में नागरिकों द्वारा स्वागत किया गया था। नाहन रियासत की सीमा दक्षिण की ओर पंजाब की सीमा से लगती थी जो सिखों के अधिपत्य में थीं। लोग सड़कों के दोनों ओर खड़े होकर राजा का स्वागत कर रहे थे और राजा भी उन्हें स्नेह से मिल रहा था। सिखों ने कुछ क्षेत्रों को अपने अधीन किया हुआ था। राजा इन क्षेत्रों को वापिस प्राप्त करना चाहता था। लेकिन अनियमित युद्ध संघर्षों के दृष्टिगत उसने शांति बनाए रखने में ही समझदारी समझी। सिखों द्वारा जीते क्षेत्रों को उन्होंने तब तक वापिस नहीं किया जब तक राजा ने दो हजार रुपये का राजस्व कुछ सिख मुखियाओं को नहीं दिया। यह धनराशि रियासत के लिए नगण्य प्रतीत होती थी, क्योंकि इस रियासत में विभिन्न जातियां वास करती थीं तथा उनका जीवन यापन आरामदायक, राजसी, विलासप्रिय तथा अपव्ययी था। इन पहाड़ी निवासियों के रीति- रिवाज कठोर तथा आसान थे। वे अन्य किसी चीज की उपेक्षा, जीवन की जरूरतों बारे चिंतित थे, जिसका उत्पादन वहां बहुतायत में होता था। यह राशि महत्त्वपूर्ण थी तथा इसे एकत्रित करने के लिए जबरदस्ती उपाय भी करने पड़ते थे। यहां के निवासियों तथा शहर के विदेशी साहूकारों को युद्ध के व्यय के लिए अधिक अंशदान करना पड़ता था। मुखिया को इस बात का आभास हो गया था कि लोगों पर कितना भार डाला जा सकता है। आयात पर शुल्क तब तक लगाया जाएगा जब तक यह मसला हल नहीं हो जाता। जार्ज फोरस्टर ने लिखा है कि नाहन के राजा का नाहन में प्रवेश बैबिलोनिया के एलैग्जेंडर की माफिक नहीं था। लेकिन उसका आगमन कुछ दर्जन छरहरे दक्ष घुड़सवारों के साथ था। अगर वे तथा उनके घोड़े ज्यादा लैस होते तो बेहतर होता। पर छह मील का रास्ता तय कर पहाड़ी के शिखर पर लघु लेकिन साफ- सुथरा नाहन शहर बसा था। मुखिया एक मनोहर युवा जो जैतून की तरह रंग रूप लिए और उसने पीले रंग का रेशम का कोट तथा लाल पगड़ी पहनी थी। वह तलवार, तीर कमान से लैस था। हालांकि वह कड़े स्वभाव का था लेकिन वह लोगों का चहेता था। वह युवा तथा बहादुर था तथा वह जो ऐंठता था, उसे उदारता से लोगों में बांट भी देता था। वहां उसका स्वागत बिना किसी ध्वनि तथा वाद्य यंत्रों के हुआ था, उपस्थित समूह अपने शरीर को झुका कर सिर पर दायां हाथ स्पर्श कर, कर रहे थे। वे अपने पितातुल्य तथा रक्षक के रूप में उसका गुणगान कर रहे थे। राजा मुख्य लोगों की भीड़ में से आगे बढ़ता हुआ, स्नेहपूर्वक उनसे बात कर रहा था, यह ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह एक जादुई छड़ी से उनकी सभी समस्याओं का समाधान कर रहा हो। उसकी आमजन से मुलाकात, से मालूम पड़ता था कि वह अपनी प्रजा का हितैषी है और वह नागरिक स्वतंत्रता का परम हितैषी है। जॉर्ज फोरस्टर ने सिरमौर के राजा तथा प्रजा का उल्लेख वहां की सामाजिक स्थिति का उल्लेख किया और उसने 12 मार्च को नाहन से प्रस्थान किया। तथा सायं नाहन शहर से चार कोस का रास्ता तय कर पहाड़ के निचले किनारे बसे गांव Salennah (सलैना) में ठहराव किया। यहां फोरस्टर ने यूरोप को छोड़ने के बाद पहली बार देवदार तथा विलो पेड़ों को देखा। विलो पेड़ की टहनियां यूरोप में नदी के ऊपर झुकी हुई सुंदर प्रतीत होती हैं। नाहन शहर के शिखर से सरहिंद के मैदान दक्षिण-उत्तर, दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम में सुंदर प्रतीत होते हैं। उत्तर का नजारा बर्फ से ढकी पहाड़ियों के कारण आगे नज़र नहीं आता। छोटे दस्तों में यात्रा करने का खतरा सिखों, लुटेरों तथा जंगली जानवरों से होता था। फोरस्टर जब नाहन से बिलासपुर के लिए रवाना हुआ तो उनका एक छोटा दल था।

एंग्लो-गोरखा युद्ध का जीवंत वृत्तांत-1814

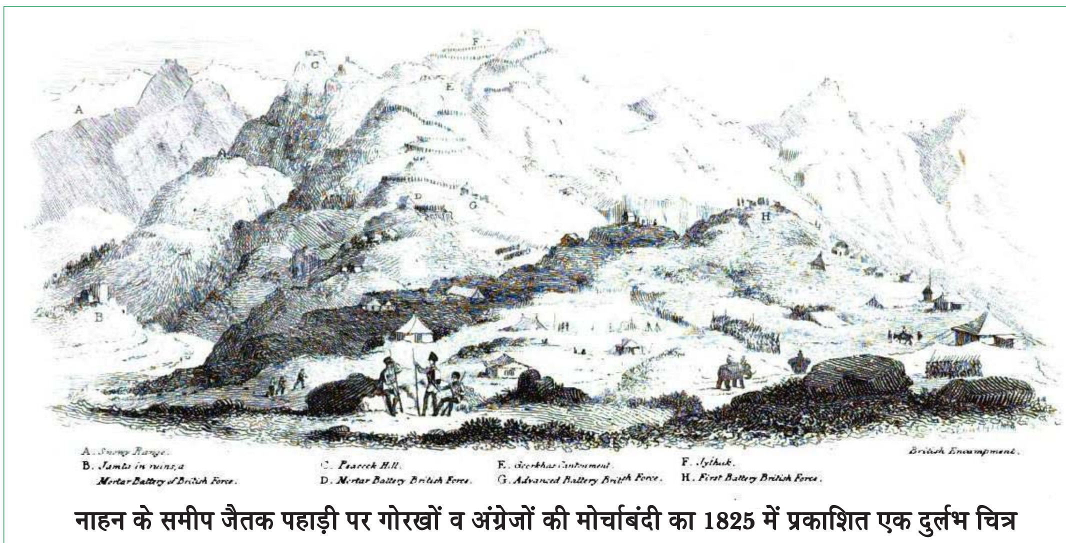
जेम्स बैली फ्रेज़र की कलम से



उन्नीसवीं सदी के आरंभ में पहाड़ों में छोटी-छोटी रियासतें थीं। रियासतों के आपसी झगड़े थे। यह संघर्ष रियासतों का अपना वर्चस्व व अधिपत्य स्थापित करने को था। इस वक्त भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रभुत्व बढ़ रहा था। वे धीरे-धीरे संपूर्ण हिंदुस्तान में अपना प्रभुत्व बनाने के लिए अपनी जड़ें गहरी कर रहे थे। वे मैदानों पर कब्जा कर अपनी निगाहें पहाड़ों पर गड़ाए थे। अंग्रेज तो सदैव मौके की तलाश में रहते थे कि कब वे अपनी चालाकी व बंदूक के दम पर क्षेत्र पर कब्जा करें।

पंजाब के क्षेत्रों में सिखों का वर्चस्व था। वहीं वर्तमान उत्तराखंड के कुमाऊं क्षेत्र में घरेलू राजनीतिक परिस्थितियों ने 1790 में नेपाल से गोरखों को आमंत्रित किया। 1792 ई. में गोरखों ने गढ़वाल के राजा प्रद्युम्न शाह को भी 'कर' देने के लिए बाध्य किया। इसके साथ ही गोरखों ने साथ लगती रियासत सिरमौर के साथ एक संधि की जिसके द्वारा गोरखों का सिरमौर के कुछ पहाड़ी क्षेत्रों पर अधिकार हो गया। 1803 में गोरखों तथा गढ़वाल के मध्य संघर्ष हुआ। इस संघर्ष में प्रद्युम्न शाह मारा गया और वर्ष 1804 में गढ़वाल पर गोरखों का अधिकार हो गया। इसके पश्चात गोरखों की दृष्टि सिरमौर को हथियाने में लग गई। वे अवसर की तलाश में थे। सिरमौर रियासत में तत्कालीन राजा कर्म प्रकाश के विरुद्ध विद्रोह उठ खड़ा हुआ। वे विद्रोह को दबा न सका तो उसने विद्रोह को कुचलने के लिए गोरखा सरदार अमर सिंह थापा से सहायता मांगी। मई 1804 को 700 गोरखा सैनिकों का दल भक्ति सिंह थापा के नेतृत्व में सिरमौर पहुंचा, लेकिन किशन सिंह व हिंडूर के सैनिकों ने गोरखों को जामटा में घेरकर वापस लौटने के लिए बाध्य किया। राजा कर्म प्रकाश ने नाहन से भागकर क्यारदा दून में स्थित कांगड़ा किले में शरण ली। सिरमौरी विद्रोही सैनिकों ने राजा को गिरफ्तार करने के लिए कांगड़ा किले का घेराव किया। राजा ने वहां से भाग कर पहले टानूर गांव फिर कालसी में शरण ली। विद्रोहियों ने राजा के छोटे भाई रत्न सिंह को गद्दी पर बिठा दिया।

इस अवधि में गोरखों ने अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया और गंगा-यमुना के मध्य वाले भाग में अपना अधिपत्य स्थापित किया।



नाहन के समीप जैतक पहाड़ी पर गोरखों व अंग्रेजों की मोर्चाबंदी का 1825 में प्रकाशित एक दुर्लभ चित्र


ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के सैनिक

उधर कहलूर का राजा रामसरन सिंह तथा पश्चिम की ओर से कांगड़ा के राजा संसार चंद की शक्ति बढ़ रही थी। उधर सिरमौर का राजा कालसी में था। उसने अपने विरोधियों के विरुद्ध गोरखों से सहायता मांगी। कर्म प्रकाश गोरखा सेना लेकर राजपुर, कांगड़ा किला होता हुआ नाहन पहुंचा।

गोरखों के पहाड़ों पर कदम पड़ने से पहाड़ की रियासतें गोरखों के अधीन आती गईं। 1804 में हिंडूर पर आक्रमण कर नालागढ़ व रामगढ़ के किलों पर अधिकार किया। तदोपरांत गोरखों ने कांगड़ा के राजा संसार चंद के विरुद्ध अभियान आरंभ किया। गोरखा सेना ने सतलुज पार करके संसार चंद को पीछे हटने पर बाध्य किया। उसने कांगड़ा किले में शरण ली। अंत में 1809 में संसार चंद ने पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह की सहायता से गोरखों को सतलुज के इस ओर धकेल दिया। गोरखों ने लौट कर सिरमौर रियासत से सहायता मांगी। कर्म प्रकाश ने गोरखों की पेशकश को ठुकरा दिया। अमर सिंह थापा को ठेस लगी और उसने तुरंत अपने सुपुत्र रणजोर सिंह थापा को सिरमौर पर आक्रमण करने को भेजा। बिना किसी युद्ध के सिरमौर पर गोरखों का अधिकार हुआ और राजा कर्म प्रकाश को भागना पड़ा। नाहन व जैतक गोरखों के मुख्य गढ़ बने।

गोरखों ने धीरे-धीरे पहाड़ी रियासतों पर अपना कब्जा जमा लिया। इस दौरान पहाड़ों में गोरखों के आतंक का माहौल था। गोरखों के ईस्ट इंडिया कंपनी क्षेत्र में दखल को देखते हुए तथा पहाड़ी रियासतों के राजाओं के आग्रह पर अंग्रेजों ने पहली नवंबर, 1814 को गोरखों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की।

अंग्रेजों द्वारा गोरखों के विरुद्ध किए गए युद्ध का प्रत्यदर्शा बना जैम्स बैली फ्रेजर, जिसने अपने वृत्तांतों में पहाड़ी क्षेत्र की भौगोलिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक स्थिति का स्पष्ट चित्रण 'The Himala Mountain' में किया है।

जैम्स बैली फ्रेजर स्काटलैंड का निवासी था। जिसका जन्म 11 जून, 1783 को रिलिंग में हुआ था। अक्तूबर 1813 में वह वैस्ट इंडीज होता हुआ कलकत्ता पहुंचा। कुछ वक्त कलकत्ता में वाणिज्य गतिविधियों में कार्यरत रहा। जनवरी 1815 में वह अपने भाई विलियम फ्रेजर (1784-1835) जो अंग्रेजों के नेपाल युद्ध (गोरखा युद्ध) के दौरान राजनीतिक तथा भर्ती अधिकारी था, से भेंट करने आया। जैम्स की अपने भाई से नाहन में मुलाकात हुई। उसे नेपाल के साथ अंग्रेजों के युद्ध में बतौर राजनीतिक एजेंट के रूप में कार्य करने का मौका दिया गया। उसने इस दौरान भीतरी हिमालयी क्षेत्र का दौरा किया। उसने अपनी तूलिका से हिमाचल क्षेत्र में सुंदर चित्र बनाए। फ्रेजर द्वारा बनाए चित्र वर्ष 1820 में View in the Himalaya Region London में प्रकाशित हुए। उसने अपने यात्रा वृत्तांत तथा चित्रों के माध्यम से उस काल को जीवंत कर दिया। दिल्ली लौटने पर भारतीय चित्रकारों की सेवाएं ली तथा स्थानीय सैनिकों तथा गोरखों के चित्र बनाए। 1816 में वे वापिस कलकत्ता लौट आया।

जैम्स बैली फ्रेजर से पहले सिरमौर रियासत का उल्लेख The Annab and Antiquities of Rajasthan 1894 Volume II, पृष्ठ 217 जिसे टॉड जेम्स ने लिखा है, में मिलता है, वहीं बहारे सुनानी द्वारा लिखित पुस्तक बहारे कुमाहरसेन में भी मिलता है। वर्ष 1862 में थॉर्नटन ने A Gazetteer of the Territories under the Government of the East India Company में सिरमौर क्षेत्र में शिकार खेलने का वृत्तांत दिल्ली के सुल्तान फिरोज शाह तथा उसके बाद के राजाओं का मिलता है।

फ्रेजर ने दुनिया से अलग हिमालय के इस भू-भाग का अपने चित्रों तथा कलम से वर्णन कर उस वक्त के इतिहास को समाज के समक्ष लाया। उसने छोटी बड़ी तीस रियासतों का उल्लेख किया। उसने पांच बड़ी रियासत गढ़वाल, बुशैहर, सिरमौर, हिंडूर तथा कहलूर को शामिल किया। 12 अन्य छोटी 12 ठकुराइयों का जिक्र किया। वे थीं क्योंथल, कुनियार (कुनिहार), महलोग, कोटगढ़, बघाट, बाघी, कोटी, ठियोग, कुठार, धामी, क्यारी तथा बाघल। अन्य 18 ठकुराइयों में जुब्बल, करांगल, सेरी, बलसन, ऊट्रक, रितेश, कुम्हारसेन, मोरनी, छोटी मधानी, क्योंथल, बैजा, घूंड, देलठ, सुंगरी, बरोली, रैन, डोडरा क्वार तथा शीली थी।

जुब्बल के बारे उसने लिखा कि वह महत्त्वपूर्ण तथा भौगोलिक दृष्टि से बड़ी थी। ये छोटी रियासतें बड़ी रियासतों के


एंग्लो-ब्रिटिश युद्ध के दौरान गोरखा सैनिकों का सामूहिक चित्र

ऊपर निर्भर थीं। उनका अस्तित्व उस वक्त की राजनीतिक स्थिति तथा पड़ोसी देशों पर निर्भर करता था।

फ्रेजर ने रियासतों की सीमाओं, नदियों के उद्गम स्थल का भी उल्लेख भी किया है।

फ्रेजर सिरमौर के बारे में लिखता है कि सिरमौर का स्थान संपन्नता तथा राजनीतिक तौर पर अहम था। इसकी मैदानी इलाकों तक लगती सीमा महत्त्वपूर्ण थी तथा पहाड़ के मध्य स्थित होने के कारण यहां आना कठिन था।

दक्षिण-पूर्व की ओर इसकी सीमा गढ़वाल से लगती थी जहां यमुना नदी रियासत की सीमा बनाती है।

उत्तर में इसकी सीमा गढ़वाल के साथ भी लगती है तथा वहीं रियासत के अधीन जुब्बल की सीमा लगती है। जिसके साथ अन्य छोटी रियासतें लगती हैं। रियासत का भू-भाग इसे एक अनियमित रंगभूमि की माफिक नज़र आया था। सतलुज तथा यमुना के मध्य दक्षिण-पश्चिम की ओर इसकी सीमा छोटे सिख सिपहसालारों के साथ लगती थी। उसने पहाड़ों, पेड़ों, खाइयों, घाटियों का उल्लेख किया।

फ्रेजर की दिल्ली से नाहन की यात्रा

विदेश में तथा भारत में परिस्थितियां ऐसी उत्पन्न हुई कि जैम्स फ्रेज़र सिरमौर रियासत के नाहन के समीप जैतक किले के सामने मेजर जनरल मार्टी नडेल के नेतृत्व में स्थापित सैन्य शिविर में आ पहुंचा। इससे अप्रत्याशित तौर पर एक नए भूखंड के भ्रमण का सुअवसर मिला।


गोरखा कमांडर

9 मार्च, 1815 को वह दिल्ली से प्रस्थान करते हुए उत्तर की ओर दिल्ली से 76 मील दूर करनाल पहुंचा। यह इस दिशा में एक दूरस्थ स्थान पर सैन्य स्थान था। 12 मार्च को करनाल से नाहन की ओर रवाना हुआ। दस मील तक सड़क दिल्ली के सूबेदार के क्षेत्र से होकर गुजरती थी। राह का इलाका घने जंगलों से ढका था जहां वीरान रास्ते नज़र आते थे। इंद्री पहुंचते ही बड़ा तथा चारदीवारी से घिरा बड़ा शहर नज़र आया। यहां हमने छोटे सिख सिपहसालारों की सीमा में प्रवेश किया। जिनके अधीन यमुना तथा सतलुज के मध्य का क्षेत्र आता था। जिनका संरक्षण तथा आंशिक नियंत्रण ब्रिटिश सरकार के अधीन था। वे अपने अधिपत्य के लिए आपस में ही संघर्षरत रहते थे। उनका व्यवहार गुस्सैल तथा असत्कारशील था। मेरे साथ ब्रिटिश सेना के स्किनर्ज कॉर्प्स के घुड़सवार सैनिक थे, इस कारण मुझे आदर मिला। अगर मैं अकेला होता तो मुझे ऐसा सत्कार न मिलता।

देहात हालांकि रेतीले थे लेकिन भूमि उपजाऊ थी। एक दिन की यात्रा के उपरांत जो 36 मील की थी, हम किलानुमा रोदोर शहर से होकर गुजरे तथा दोपहर बाद एक छोटे से गांव टोपरा पहुंचे जहां टैंट का शिविर स्थापित किया।

प्रत्येक गांव को पार करते हुए हमने अनेक ऊंचे गोल टावर देखे जोकि ग्लास हाउस भट्टी की तरह प्रतीत हो रहे थे। इन्हें देखकर ध्यान आकर्षित हुआ। पूछताछ पर पता चला कि इन्हें गांवों व शहरों की सुरक्षा के लिए सुरक्षा चौकियों के रूप में बनाया गया था। शाम ठंडी थी। यहां से उत्तर के पहाड़ नज़र आने लगे थे। एक ऊंची चोटी, जो बर्फ से ढकी थी, स्पष्ट नज़र आ रही थी। अगली सुबह वह और खूबसूरत लग रही थी हालांकि ऐसा आभास हो रहा था कि ये चोटियां पास ही हैं।

यहां की धरती उपजाऊ तथा गांव आबाद थे। हम अनेक श्रेष्ठ गांवों को पार करते हुए सिधोड़ा पहुंचे जो एक बड़ा शहर था। इस शहर के अधिकांश घर ईंटों से निर्मित थे। अनेक घर सुरक्षा टावरों के इर्दगिर्द बने थे। इस ओर ध्यान वहां से गुजरने के दौरान गया।

सिधोड़ा (Seidoura), से पहाड़ों तक का सफर दो कोस यानी 17 से 18 मील था। यहां का रास्ता भी वैसा ही था। भूमि रेतीली थी। यह पहाड़ की तलहटी की जगह थी। यहां से पहाड़ ऐसे नज़र आते हैं मानों समुद्र से चट्टानें निकली हों।

हमारा काफिला इन पहाड़ों में एक सूखी नदी से होकर दाखिल हुआ। इसके पीछे ऊंची पर्वत शृंखला पर नाहन शहर बसा था। इसे ब्रिटिश अधिकारी द्वारा 'The Pass of Moginund' पुकारा जाता था जो इसी के समीप एक गांव का नाम था। यहां कुछ दिनों तक ब्रिटिश सेना ने शिविर लगाया था। यह मार्ग घुमावदार रास्तों से होकर, अनेक चश्मों तथा खड्डों को पार करता हुआ आगे बढ़ता था। यहां सेना का तोपखाना स्थित था जो जैतक से पहला पड़ाव था।

यहां से नाहन शहर तक का टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता, यात्रियों को इस क्षेत्र की प्रथम सत्यता का आभास करवाता था। यहां से खड़ी चढ़ाई तथा पथरीला तंग तथा घुमावदार रास्ता था। मैंने घोड़े से उतर कर अपने पैरों पर चलने में बुद्धिमत्ता समझी। यहां घोड़े से गिरना मानो मृत्यु से साक्षात्कार था तथा रास्ते की चौड़ाई इतनी

न थी कि गिरने पर संभला जा सके।

इस रास्ते से गुजरने वाले अधिकारी के लिए तो घोड़े पर सवार होकर जाना एक आम बात थी। नाहन के लिए इस मार्ग से हाथियों, ऊंटों तथा बैलगाड़ियों से रसद तथा हथियारों व गोला-बारूद को ले जाया जाता था।

इस राह पर ऊंटों तथा बैलों के अस्थि-पिंजरों को देखा जा सकता था। हाथी इस मार्ग पर धीरे-धीरे सधे हुए पैरों से सामान लेकर आगे बढ़ते थे जहां आदमी को भी चढ़ने में कठिनाई होती थी।

भारी तोपों को अन्य मार्गों से ले जाया जा रहा था, जिसके लिए चट्टानों को काट कर रास्ता बनाया गया था। ये देखने में कठिन लगता था लेकिन कम घुमावदार होने के कारण इस मार्ग पर व्यक्तियों को तोपे खींचने में आसानी होती थी।

आखिरकार, हमारा कारवां नाहन पहुंचा। यह स्थल पहाड़ी पर पक्षी के घोंसले की तरह प्रतीत होता था। यहां से निचली पहाड़ियों तथा मैदानों का विहंगम दृश्य नज़र आता था जहां दूर देखने पर यह आकाश से मिलता प्रतीत होता था। यह मैदानों की एकरूपता से भिन्न तथा मोहित तथा अचंभित करने वाला था।

दक्षिण की ओर क्यारदा दून का उपजाऊ क्षेत्र था। दक्षिण-पूर्व का क्षेत्र वनाच्छादित तथा बीच-बीच में खेती वाला क्षेत्र नज़र आता था। इससे आगे क्यारादा दून का क्षेत्र था। उत्तर की ओर पहाड़ थे। उत्तर की ओर पहाड़ों की श्रृंखला नज़र आती थी तथा इन्हीं पहाड़ियों में जैतक का किला था। इस पर ब्रिटिश सैनिकों के टैंटों को देखा जा सकता था। शहर के किनारे पर पहुंचने पर ब्रिटिश सेना का शिविर था। ऊबड़-खाबड़ मैदान में शिविर लगा था तथा यहां से सभी पहाड़ियों पर नज़र रखी जा सकती थी।

रास्ते सिपाहियों तथा यूरोपियन सैनिकों से सटे थे। कुछ स्थानों पर वे परेड कर रहे थे। नए सैनिक अभ्यास करते, हथियारों को साफ करते व कुछ अधिकारी टहलते व कुछ दूरबीन से सामने टीले पर अभियान पर नज़र गड़ाए थे।

यहां बंदूकें तथा भारी तोपें रखी थीं जो दुश्मन के घेरे को तोड़ने के लिए काफी नज़र आती थीं। इसी के समीप बाजार था। दुकानें सामान से भरी थीं तथा बाजार में खरीददारों की भीड़ थी। बाजार में स्थानीय लोग, गांव वाले, सैनिक, यूरोपियन को देखकर एक चलचित्र सा प्रतीत होता था जिसे देखकर 40 मील के सफर की थकान स्वतः मिट रही थी। हमारे लिए दोस्त के टैंट में खाने की व्यवस्था की गई थी।

फ्रेजर के शब्दों में, "नाहन एक छोटा शहर है। यहां के भवन पत्थरों से निर्मित हैं। जिनकी चूने से चिनाई की गई है। घर छोटे हैं तथा सभी की स्पाट छतें हैं।"

इससे पहली बार देखने पर आसपास की वस्तुओं की तुलना में एक समान छोटा प्रतीत होता है।

इस शहर को पहाड़ की चोटी पर बसाया गया है जो कि ऊंचा-नीचा है तथा छोटे रास्ते ऊपर-नीचे बने हैं। नाहन में एक प्रमुख सड़क है जो अन्यों के मुकाबले छोटी जिसमें अनेक सीढ़ियां बनी हैं, इसे लोगों के चलने के लिए पत्थरों से बनाया गया था। इस मार्ग पर पशुओं, घोड़ों को आने की मनाही थी।

नाहन में कुछ भवन थे जिनका उल्लेख करना जरूरी है। राजा का महल, कुछ हद तक साफ-सुथरा था लेकिन देखने में बहुत ज्यादा आकर्षक न था। यहां कोई ऐसा देवालय न था जिसके दर्शन किए जाते।

अनेक वर्षों से राज्य में गोरखों के अधिपत्य से संपूर्ण रियासत बर्बाद हो गई थी तथा राज्य की स्थिति क्षय हो चुकी थी। नाहन जिस पहाड़ी पर बसा है वह क्यारदा दून घाटी की उत्तर-पश्चिमी सीमा है। इस स्थल की ऊंचाई 1950 फुट आंकी गई है। यह वो वक्त था जब पहाड़ों से गोरखों को बाहर निकालने के लिए अंग्रेजों की सेना यहां आई थी।

नाहन से गोरखों का पश्चगमन

गोरखों ने नाहन से पीछे हटकर अपना शिविर कांजी रणजोर सिंह थापा के नेतृत्व में जैतक किले में लगाया। नाहन पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया था। जैतक किला नाहन से सीधे तीन मील की

अर्की से जैतक तक गोरखों का मार्च

जैतक किले को अंग्रेजी सेना ने सैन्य शक्ति से जीतने की कोशिश की लेकिन उन्हें कामयाबी नहीं मिली। उधर गोरखा भी मलौण तथा अर्की में मोर्चाबंदी किए हुए थे। इसी दौरान अंग्रेजी सेना को गुप्त सूचना मिली कि काज़ी अजमेर पंथ को अमर सिंह थापा ने जो अर्की में ठहरा है। 500 सशस्त्र गोरखा सैनिकों के साथ काजी रणजोर सिंह की सहायता के लिए भेजा है। उसका उद्देश्य जैतक के किले में पहुंचना है। जब अंग्रेज जनरल को सूचना मिली तो उन्होंने कैप्टर यंग को आठ हजार नए भर्ती किए हुए हिंदुस्तानी सैनिकों सहित शत्रु को रोकने के लिए रवाना किया। कैप्टन यंग अपनी सेना सहित चुनारगढ़ के निकट पहुंच गया। परंतु उसके वहां पहुंचने से पहले ही एक पहाड़ी सरदार सेसराम अंग्रेजी सरकार के ओदश से 1000 सैनिकों को लेकर शत्रु को रोकने के लिए वहां पहले से ही नियुक्त था। उसने शत्रु को चुनारगढ़ के इलाके में घेर रखा था। दोनों दलों ने शत्रु की घेराबंदी की।

कैप्टन यंग ने गोरखों पर आक्रमण किया। काजी अजमेर पंथ एक काबिल अफसर था, जिसके आगे अंग्रेजी सेना में नए भर्ती किए सैनिक ठहर न सके। वे हिम्मत हार बैठे और भाग खड़े हुए। अनेक मारे गए। कप्तान यंग मजबूर और निराश होकर वापिस लौट आए और काज़ी अजमेर पंथ अपने सैनिकों सहित जैतक किले में पहुंच गया।

दूरी पर स्थित था। इस स्थल तथा नाहन के मध्य गहरी तंगघाटी (खड्ड) थी, जहां से सड़क घूमकर नाहन आती थी और रास्ता दोगुना हो जाता था।

अंग्रेजों का मुख्य कैंप Black Hill (काली पहाड़ी) पर था। इससे एक मील की दूरी पर नवाई (Nowvie), में ऊंची चोटी पर अंग्रेजों की अग्रिम चौकी स्थापित थी। यह शृंखला उत्तर की ओर वह जलाल नदी का दक्षिण किनारा बनाती थी।

जैतक 3600 फुट ऊंची थी। नवाई भी इसी ऊंचाई की थी। पहाड़ियों की संरचना मिट्टी तथा चूने के पत्थरों से हुई थी। पहाड़ों की यह मिट्टी वर्षा जल के साथ बहकर खेतों तथा मैदानों को उपजाऊ बनाए हुए थी।

जैतक तथा नाहन के साथ गांवों में सीढ़ीनुमा खेत नज़र आते थे। इनपर मक्की की फसल लगी हुई थी। जिन खेतों में मक्की नहीं लगी थी, उनमें पहले लगी फसलों के अवशेष नज़र आते थे।

गांव या तो आबाद या खंडहर थे। लेकिन सच्चाई यह थी कि किसी कारणवश एक गांव से पलायन कर लोगों ने किसी-न-किसी वजह से अलग गांव बसा लिए थे जो नए तथा वे अब आबाद नज़र आते थे।

यह सच है कि पहाड़ों में आक्रमणकारियों की वजह से अनेक गांवों को तहस-नहस किया गया और वह वीरान हो गए।

गांव में घर, स्पाट छतों वाले थे, जिन्हें पत्थरों से निर्मित किया हुआ था। घरों के बरामदे लकड़ी तथा पत्थरों से बने थे। कुछ घर दो-मंजिला भी थे लेकिन अधिकांश एक मंजिल ही थे। इन घरों का निर्माण अनगढ़ रूप से किया हुआ था। अधिकांश भवनों में पहाड़ी को घर की एक दीवार के रूप में उपयोग में लाया गया है। इस पर लकड़ी के शहतीरों को टिकाकर अन्य दीवारों के साथ घर का निर्माण किया हुआ है।

फारसी भाषा में लिखित युद्ध वृत्तांत

काजी रणजोर सिंह अंग्रेजी सेना के आने का समाचार सुनकर अपने सिपाहियों समेत नाहन को छोड़कर किला जैतक में, जो कि नाहन से चार मील की दूरी पर स्थित है, चला गया और इस किले को गोला-बारूद तथा अस्त्र-शस्त्र से मजबूत करके वहां डट गया। अंग्रेज अफसरों को जब यह सूचना मिली तो उन्होंने दोनों ओर से अचानक आक्रमण करने का प्रस्ताव किया। रातोरात कूच करके अपने नियत स्थान पर पहुंच गए। 27 दिसंबर की रात को अंग्रेजी सेना का एक भाग उस मोर्चे पर पहुंचा जो गोरखों ने किले की सुरक्षा के लिए तैयार किया था। अंग्रेजी सेना ने किले पर गोले बरसाने आरंभ किए। अंग्रेजी सेना के हमले से गोरखों ने पीछे हटना आरंभ किया और मोर्चा खाली कर दिया। अंग्रेज अफसर अपनी सेना सहित बड़ी कठिनाई से पहाड़ पर चढ़े और शत्रु को इस तरह पीछे हटते देखकर उन्होंने समझा कि शत्रु के पैर उखड़ गए हैं, परंतु यह शत्रु की चाल थी जिसकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया। जिस समय गोरखों ने देखा कि अंग्रेजी सेना अपने अफसरों सहित पहाड़ पर चढ़ आई है और चढ़ाई चढ़ने के कारण उनकी सांस फूली हुई है, वह समझ गए कि इस स्थिति में न तो वे मुकाबला ही कर सकते हैं और न ही वापिस लौटने की शक्ति बची है। ऐसी स्थिति में गोरखों ने अंग्रेजी सेना पर हमला बोल दिया। अंग्रेजी सेना में अफरा-तफरी मच गई। अनेक अंग्रेजी सैनिक अफसर मारे गए, अनेक खाइयों में गिर कर गर गए और अनेक शत्रु के हाथ से घायल व कत्ल हुए। अंग्रेजी सेना की दूसरी टुकड़ी जो दूसरी ओर से किले पर आ रही थी पर गोरखों का आक्रमण हुआ। वे भी मुकाबला करते हुए अपने कैंप को वापिस हुए। इस लड़ाई में बहुत से अफसर और सैनिक घायल हुए और मारे गए। कुछ अफसरों को नाहन शहर में पक्के टैंक के पास दफनाया गया। लड़ाई के बाद पक्के कमरे और एक पक्का मीनार शहीद सैनिकों की याद में बनाया गया। इस स्थान पर रोमन लिपि में लेख अंकित है - 'चार अफसरों अर्थात् लै. नम्ब, लै. थैकरे, विल्सन साहिब व लै. ऐनसाईन स्टॉलक्रिट की कब्रें हैं, जो इस स्थान पर उन अफसरों ने बनवाई जो जीवित बच गए।'

घरों के दरवाजे मूलतः छोटे, जिसमें झुककर अंदर जाया जा सकता था। लेकिन इस सबके बावजूद, मुझे हैरानी थी कि घर अंदर से स्वच्छ, कमरों का फर्श सपाट, साफ-सुथरा होता है। कमरे के मध्य में चूल्हा बनाया होता है तथा उन लोगों के लिए धुआं बुरा है जो इसके आदी नहीं हैं। कमरे में कुछ शेल्फ भी होती हैं तथा कुछ जगह छोटा-मोटा स्वयं निर्मित फर्नीचर भी मिलता है।

गाय क्षेत्र की मुख्य दुधारू पशु मानी जाती है तथा इसका हर घर में आदरणीय स्थान व हिस्सा होता है। गाय को बांधने का स्थान सूखा तथा गाय के बाड़े का दरवाजा छोटा होता है। इन गांवों की स्थलाकृति सुंदर प्रतीत होती है तथा गांव में नींबू तथा अखरोट के पेड़ लगे होते हैं तथा जहां आम लग सकता है, वहां आम के पेड़ लगे थे। ये वृक्ष घरों को छाया प्रदान करते हैं तथा इनके नीचे पत्थर के चबूतरे बनाए होते हैं जहां निवासी पेड़ की छाया में बैठते हैं।

पहाड़ों में मैदानों के मुकाबले सब्जी उत्पादन में बहुत अंतर है। मैदानों में सब्जियां उत्पादित होती हैं लेकिन पहाड़ों में ये देखने को नहीं मिलती। जैतक में रसभरी की झाड़ियां, अनेक फर्न की प्रजातियां, जंगली आड़ू, नाशपाती, सेब तथा सेबती (Dog rose), देखने को मिला। ऊंचाई वाले क्षेत्रों में चीड़ के वृक्ष नज़र आते थे, जिनसे बिरोजा प्राप्त होता है। पहाड़ों में स्यूल, शीशम तथा तून के वृक्षों के अलावा अन्य प्रजातियों के वृक्ष भी पाए जाते हैं। बान के वृक्ष भी हैं।

यहां हाथी पाए जाते हैं तथा उन्हें कभी-कभी पकड़ा भी जाता है। हाथियों की कीमत का कुछ हिस्सा रियासत में राजस्व के रूप में प्राप्त होता है। क्षेत्र में चीते तथा लकड़बग्घे पाए जाते हैं। हिरण की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। गीदड़, लोमड़ी, खरगोश तथा बंदर भी पाए जाते हैं। पक्षियों में चकोर, जंगली मुर्गी, पक्षियों की अनेक प्रजातियां बहुतायत में मिलती हैं। घरों में गाय, घोड़े , बकरियां, भेड़े, कुत्ते पाले जाते हैं।

इस क्षेत्र में गरीबी है जहां निवासियों को अपने लिए भोजन उपलब्धता की कठिनाई है। ऐसी स्थिति में वे पशुओं की अन्य प्रजातियों को पालने में असमर्थ नज़र आते हैं जबकि पूर्व में ऐसी प्रजातियां पाली जाती हैं जहां भोजन बहुतायत में है तथा बचा हुआ भोजन भी काफी होता है।

नाहन राजधानी के आस-पास के देहात में निवासी अपने चरित्र और आविर्भाव से कोई रुचि पैदा नहीं करते। कहा जाए तो उनमें तथा शहर वालों में हर लिहाज में काफी अंतर नज़र आता है। यहां के निवासी पहाड़ियों पर बेहतर चलने वाले तथा आसानी से बोझा उठाकर चलने वाले थे जो एक दिन में 12 से 15 मील का सफर इन रास्तों पर आसानी से कर लेते हैं। लोगों का रंग अधिकांशतः गेरुआ तथा वेशभूषा साधारण होती थी। अधिकांश हिंदू धर्म अपनाने वाले हैं। हथियार रखना आम नहीं था। यह पाया गया कि गोरखों की नीति के अनुसार वे स्थानीय लोगों से हथियार छीन लेते थे तथा कुछ खास लोगों को ही हथियार रखने की अनुमति होती थी।

क्षेत्र में बहुपत्नी प्रथा विद्यमान थी। महिलाओं की वेशभूषा मैदानी इलाकों के समकक्ष थी। यहां के निवासी हिंदू रीति-रिवाजों को मानने वाले लेकिन उनकी मान्यता अंधविश्वासों में अधिक थी जो काल्पनिक शक्तियों पर अधिक विश्वास रखते थे। ये लोग गाय की पूजा करने वाले, उनका संरक्षण करने वाले थे। वे अपनी गाय को हिंदू के अलावा किसी को भी बेचते नहीं थे। वे अंग्रेजों को सोने के बदले भी गाय देने को तैयार नहीं होते थे। चाहे वे दूध के लिए ही इसकी खरीद कर रहे हों। यहां के निवासी मेहनती हैं। यहां के निवासियों के लिए यह माना जा सकता है कि यहां की आबादी मैदानों से आकर बसी है। मैदानों में अशांति के वक्त कमजोर तथा दबे हुए लोग पलायन कर यहां आए।

सिरमौर रियासत 27 परगनों में विभक्त है। इसमें से क्यारदा-दून ही ऐसा क्षेत्र है जो उपजाऊ तथा खेती योग्य है। यह यमुना नदी के साथ-साथ मैदानी क्षेत्र है। गोरखों के राज के दौरान वे रियासत से 85 हजार रुपये से अधिक का राजस्व प्राप्त नहीं कर सके। क्यारदा-दून से उन्हें प्रतिवर्ष 1500 रुपये प्राप्त होते थे।

गोरखों के गढ़वाल पर अधिपत्य के उपरांत, सिरमौर भी उनके अधीन आ गया। उस वक्त सिरमौर का राजा कमजोर था। उसने अपने पड़ोसी राजाओं से बदला लेने के लिए गोरखों को आमंत्रित किया। इस स्थिति में वह स्वयं भी अपनी गद्दी खो बैठा तथा संपूर्ण रियासत राजा के विश्वासघात से गुलाम हो गई।

गोरखा आम जनता के लिए कठोर तथा घोर अधिपति साबित हुए। पुराने परिवार जो पुश्तैनी तौर पर रियासत के साथ जुड़े थे, समाप्त हो गए या पलायन कर गए। उन्होंने विश्वास में नए ओहदे स्थापित किए ताकि पुरानी साम्राज्य व्यवस्था दोबारा स्थापित न हो सके। बहुत से मामलों में प्रमुख जमींदारों को उनके पदों से बेदखल कर दिया गया। उनको मार दिया गया। इससे संपूर्ण रियासत का परिदृश्य ही बदल गया। रियासत के लोगों में जोश तथा स्वतंत्रता के लिए प्रेम समाप्त हो गया। लोग लापरवाह तथा हतोत्साहित हो गए। उन्हें असहाय बना दिया। इससे आम जन मानसिक तथा शारीरिक रूप से टूट गया।

अंग्रेजों के गोरखों के विरुद्ध लड़ाई में सबसे पहले जौनसार के निवासियों ने आगे आकर अभियान चलाया। यह क्षेत्र पहाड़ी तथा कठिन होने के कारण सैन्य अभियानों के लिए अनुकूल था। यहां के निवासियों ने अमर सिंह थापा तथा उसके सुपुत्र रणजोर सिंह के विरुद्ध बगावत की। यहां के निवासियों ने ब्रिटिश सेना के साथ गोरखों को अपने क्षेत्र से बाहर निकालने के लिए सबसे पहले हथियार उठाए। यहां के निवासियों ने गोरखा सेना से लोहा लिया। गोरखा सैन्य अधिकारी बलबहादुर सिंह को जोनतगढ़ को छोड़ कर आना पड़ा। गोरखों के विरुद्ध अभियान ने ब्रिटिश सेना से रियासत के ग्रामीण क्षेत्रों से एक हजार लोगों को अस्थायी तौर पर सेना में भर्ती किया था। ये सैनिक पलबे (Palwe), पच्छाद, सैन, राजगढ़, मोरनी क्षेत्र से संबंधित थे।

बलबहादुर सिंह की सेना ने जौनसार से लौटते हुए अनेक गांवों को लूटा तथा अग्नि के हवाले कर दिया। गोरखों ने स्थानीय लोगों को सहायता के लिए अनेक पत्र भी लिखे। सिरमौर के पूर्व शासक के व्यवहार से कुछ जिलों के निवासी विरोधी हो गए थे। कालसी के समानांतर क्षेत्र लाडी तथा कांगड़ा के निवासियों पर राजा के वक्त में घोर अत्याचार हुआ था। इस कारण संपूर्ण जिला राजा के खिलाफ था। इसके विपरीत रणजोर सिंह ने इन्हें प्रतिमान दिया था। इसके बदले में वे अंग्रेजों के अभियान में रोड़ा बने थे। इन परगनों के निवासियों को बार-बार बुलाने पर वे नहीं आए। इन परगनों के निवासियों ने बलबहादुर सिंह को जौनसार से वापिस लौटने पर पूर्ण मदद की।

उस वक्त सिरमौर के पूर्व राजा का नाम कर्म (Kurum) प्रकाश था। वह निर्दयी तथा न्यायप्रिय न था। उसकी सल्तनत लोगों के प्रति उदासीन थी। उसका राजपाठ तथा जीवन समाप्त हो जाता अगर गोरखों का अधिपत्य न होता। उसका सुपुत्र नाबालिग था तथा उसके सगे-संबंधी भी कोई योग्य न थे जिन्हें राज-पाठ संभाला जा सके।

सिरमौर के राज परिवार के इतिहास बारे मुझे कोई ज्ञान नहीं

है। पहाड़ की अधिकांश बड़ी रियासतों के मुख्य, प्रमुखता मैदानों से आए हैं जिन्होंने अपनी शक्ति से पहाड़ों में छोटी-छोटी रियासतें बनाई। हालांकि सिरमौर का पूर्व इतिहास ज्ञात नहीं है लेकिन यहां के राजा ने अपना राज एक हिंदू राजा की तरह चलाया है। उसके नीचे विभिन्न पद, राजस्व प्राप्ति की एक समान प्रणाली जिसे रियासत भर में पैदावार का चौथा हिस्से के हिसाब से लिया जाता था।

सिरमौर रियासत का मुख्यालय नाहन में था। इसके अलावा रियासत में राजा की ओर से कोई राजसी महल न था। रियासत के किले जैतक, बिराट, मोरनी, हरिपुर तथा चांदपुर में थे।

दिसंबर के आरंभ में जौनसर जिले में बिराट का किला, दुश्मनों द्वारा खाली कर दिया गया। इस किले को गोरखों से लोगों के विद्रोह के उपरांत खाली करना पड़ा। यह अंग्रेजों के हक में पहला आंदोलन था। इस घटना के उपरांत संपूर्ण जौनसर क्षेत्र कालसी से लेकर बर्फ के पहाड़ों तक खाली हुआ। ब्रिटिश सेना, नाहन के समीप मैदानों में तथा जौनसार जिले के दस स्थानों में तैनात थीं।

जुब्बल तथा छोटी रियासतें भी गोरखों के अधिपत्य को समाप्त करने को आतुर थीं। और वे इस अभियान में अंग्रेजों को मदद करने में भी हिमायती थे। अंग्रेजों ने इस बात की जानकारी भी प्राप्त कर ली थी कि मैदानों तथा बर्फ से ढकी पहाड़ियों के लिए पूर्व से पश्चिम की ओर एक रास्ता गुजरता है।

इस बात पर मंत्रणा की गई कि संपूर्ण पहाड़ी जिले में इस मार्ग पर एक सशक्त सैन्य सीमा बनाई जाए जो जैतक से होकर जुब्बल होते हुए चूड़धार तक बने। यह सीमा राईगढ़ से होते हुए तौंस नदी के अनहोल तक जाएगी। इस सीमाबंदी से गोरखों की सेना को दो भागों में विभक्त कर देगी तथा इससे गोरखा सेना जो मलौण, अर्की तथा श्रीनगर में अमर सिंह थापा के नेतृत्व में तैनात है, के साथ अन्य गोरखा कमांडरों का सपंर्क कट जाएगा और इससे अंग्रेजी सेना को अभियान चलाने में सहायता मिलेगी। अंग्रेजों द्वारा बनाई यह योजना सिरे नहीं चढ़ी।

27 दिसंबर को अंग्रेजी सेना ने जैतक किले पर अभियान चलाया लेकिन वह असफल रही। इसके उपरांत अंग्रेजों द्वारा जौनसार बावर क्षेत्र में बलबहादुर सिंह के विरुद्ध अभियान चलाया, लेकिन वह भी सफल न रहा। फरवरी के मध्य में बलबहादुर सिंह अपनी सैन्य टुकड़ी के साथ जैतक किले में

जैतक पहाड़ी



सिरमौर के इतिहास में जैतक पहाड़ी एक ऐतिहासिक स्थल है। यह वह जगह है जहां ब्रिटिश तथा गोरखों के मध्य एक महत्त्वपूर्ण युद्ध हुआ था। जैतक नाम एक या दो पहाड़ी की चोटी के लिए उपयुक्त हुआ है। यह नाहन से उत्तर की ओर 19 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस पहाड़ी के लिए रास्ता जामटा से होकर जाता है। जहां से इसकी दूरी तीन किलोमीटर है। यह पहाड़ी क्यारदा दून से आरंभ होती है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 1479 मीटर है। इस पहाड़ी पर किले का निर्माण गोरखा सेनापति रणजोर सिंह थापा ने करवाया था। उसने नाहन पर अधिकार तथा उसे तहस-नहस 1810 में किया था। यहां से सैन, नाहन तथा धारटी धार पहाड़ियों का सुंदर दृश्य देखने को मिलता है। कनैतों द्वारा जैतक खेल का नामकरण इसी पहाड़ी से लिया गया है। वर्ष 1961 में इसके समीप गांव की आबादी 61 थी। पूरे क्षेत्र का क्षेत्रफल 177 हेक्टेयर है।

दाखिल हुआ। अमर सिंह थापा ने अपने पुत्र रणजोर सिंह के लिए सेना भेजी। ले. यंग के नेतृत्व में 1400 सैनिकों की एक टुकड़ी गोरखों के दल को रोकने के लिए भेजी गई। इस दौरान जैम्स बैली फ्रेजर ने तीन मार्च को नाहन कैंप को छोड़ा और बर्फ से ढके चूड़धार तथा सैन पर्वतमाला को लांघ कर वह 12 मार्च 1815 को जुब्बल के गांव सेराई पहुंचा। इस यात्रा में उनके साथ 400 या 500 अनियमित सैनिक थे तथा इंजीनियरिंग समूह का एक युवा अधिकारी भी साथ था। जुब्बल रियासत के दो मुख्य डांगी वजीर तथा प्रेमू अंग्रेजों से रात में गुप्त रूप से भेंट करने आए। अंग्रेजों की इस टुकड़ी के पहुंचने पर स्थानीय लोगों में विश्वास जगा था। गोरखों के विरुद्ध लोगों में व्यापक नफरत भरी थी। पुनर परगना के लोगों को जब अंग्रेजी सेना के आने की खबर मिली तो वे कुछ दिन पूर्व ही सेराई में एकत्रित हो गए और चौपाल के छोटे से किले को घेर लिया। जो जुब्बल पर नियंत्रण का प्रमुख स्थान था और उसमें 100 गोरखा सैनिक तैनात थे। स्थानीय लोग किले के इतने नजदीक पहुंच गए थे कि इसकी दीवार से दागी गई एक गोली से एक व्यक्ति की मृत्यु भी हो गई थी।

अंग्रेजी सेना ने किले के कमांडर के साथ समझौत के लिए बातचीत आरंभ की। तथा कमांडर जिसके पास किले में मात्र चार दिन का जल बचा था, ने आत्मसमर्पण कर दिया और गोरखा सैनिकों को ब्रिटिश सेना में प्रति व्यक्ति के हिसाब से वेतन पर तैनाती दी गई।

इसी दौरान 100 सैनिकों को वापिस जैतक किले पर अभियान के लिए वापिस भेज दिया गया। जुब्बल में ब्रिटिश सेना की टुकड़ी बढ़कर 700 या 800 हो गई। इसमें डांगी ने जुब्बल के असंख्य निवासियों को भी सेना में भर्ती करवाया। इस सैन्य टुकड़ी को कुल्लू के राजा के सैनिकों के साथ उत्तर दिशा में गोरखों के विरुद्ध अभियान हेतु भेजा गया।

14 मार्च को फ्रेजर नाहन वापिस लौट आया।

गोरखों के विरुद्ध अभियान हेतु तोपखाने को ले जाने के लिए नए रास्ते का निर्माण पूर्ण किया गया। इस ऊबड़-खाबड़ तथा संकरे पत्थरीले रास्ते पर तोपों को ले जाना भी एक कठिन कार्य था। हालांकि इंजीनियरों ने इस मार्ग के लिए सबसे कठिन रास्ता चुना था लेकिन इसे गोरखों की छावनी के बिलकुल सामने स्थापित करने में सहायता मिली। 13 मार्च को तोपें यहां ले जाई गई। 53वीं रेजीमेंट के 200 यूरोपियन सिपाहियों के साथ तोपें भेजी गई। पहले तोपों को पहाड़ी के तले में ले जाया गया जहां से इन्हें खेंच कर पहाड़ी पर चढ़ाया गया।

16 मार्च, 1815 को दो तोपें तैनात कर दी गई। उस दिन तथा रात को तोपों को चलाने की पूरी तैयारी को अंजाम दिया गया। 17 मार्च, 1815 को सुबह प्रातः10 बजे दो 18 पौंड, दो छः पौंड, दो आठ पौंड, दो साढ़े पांच इंच, दो साढ़े पांच इंच तोपों से एक स्थान पर गोले दागे गए। जैतक का किला पहाड़ी पर स्थित था। पहाड़ी के मध्य से पर्वत की तीन शाखाएं निकलती थीं। एक जलाल नदी की ओर जाती थी। एक शाखा दक्षिण की ओर जाकर नाहन तथा जैतक के मध्य बहने वाले नाले में समाप्त होती थी। इस पर्वत पर तीन चार घेरे स्थापित किए गए थे। तीसरी पर्वत शाखा पश्चिम की ओर वैलम हिल के साथ मिलती थी। यहां गहरी खाइयां थीं, इसी पर्वत के शिखर के समीप ही जैतक किला मौजूद था। किले के समीप गोरखा सेना ने तीन सुरक्षा घेरे बनाए थे। प्रथम सुरक्षा घेरे में 500 यार्ड पर अंग्रेजों की पोस्ट स्थापित थी। जैतक का किला पत्थरों का एक छोटा सा भवन जो 70 फुट लंबा तथा 50 फुट चौड़ा था जिसमें चारों किनारों पर गोलाईनुमा टावर बने थे, जिनमें गोला-बारूद तथा रसद रखी थी। इसी पहाड़ी के दूसरे हिस्से पर एक छोटा सा घेरा था। यहां गोरखा सरदारों के घर तथा सैन्य छावनी स्थित थी। इसी के साथ लगती पहाड़ियों पर कुछ गोरखा परिवार भी रहते थे जो अंग्रेजों की गोलियों तथा गोलों की बौछारों से वहां से पलायन कर गए थे।

यह जैतक किले का पूर्ण वृतचित्र था। अंग्रेजों का पहला हमला प्रथम घेरे की ओर हुआ। गोले तथा बंदूक की गोलियां पांच से 600 यार्ड से दागी गई। 18 पौंड के गोले 900 से 1000 यार्ड से दागे गए। पूरे दिन गोलीबारी होती रही, लेकिन भारी गोला-बारूद के मुकाबले कोई अधिक क्षति न हुई। दुश्मनों ने अंग्रेजों की भारी गोलीबारी के प्रत्युत्तर में एक भी गोली नहीं चलाई। उनके पास तोपें नहीं थीं जो कि हमारे तोपखाने को जवाब दे सकें। वे गोलीबारी के समक्ष भी न आए, जिससे उन्हें गोलीबारी से कोई नुकसान न हुआ। 19 मार्च को तोपों से गोले बरसते रहे। दुश्मन ने रात में गोलीबारी से हुए नुकसान की भरपाई की। इस शाम तक दुश्मन की स्थिति ऐसे मालूम पड़ती थी कि वे हमारे विरुद्ध हमला करने में असमर्थ हैं।

अंग्रेजों ने रात में पहाड़ी के नीचे तोपे स्थापित करने के लिए स्थान बनाया जिसे 19 मार्च की सुबह तक पूर्ण कर लिया गया। इस दौरान बीच-बीच में गोलाबारी होती रही जिससे घेराबंदी को खत्म करने में सहायता मिली। 20 मार्च को 18 पौंड की तोप को अग्रिम स्थान पर तैनात कर गोरखों की घेराबंदी की दीवार को तहस-नहस कर दिया गया। तोपों को अग्रिम स्थानों को आगे ले जाने में ब्रिटिश सैनिक गोरखों (दुश्मन) के सामने आने पर उन्हें भारी क्षति पहुंची। इसमें कुछ सैनिक पहाड़ी से गिर गए। कुछ मारे गए और कुछ घायल हुए।

गोरखों ने इस वक्त बहादुरी का प्रदर्शन दिखाया हालांकि ऐसे स्थानों पर अंग्रेजों की तोपों से भारी गोलाबारी हो रही थी। गोरखों पर सिपाहियों तथा अस्थायी टुकड़ी ने गोलीबारी जारी रखी, जिसमें अंग्रेजों की दो कंपनियां थीं उनके साथ थी। ये गोलाबारी उन गोरखा सैनिकों के विरुद्ध थी जिन्होंने अंग्रेजी सैनिकों को मारा

था। शाम तक तीन से अधिक दुश्मन सैनिकों को मारा गया या घायल किया जा चुका था। गोरखों की घेराबंदी को पूर्ण रूप से ध्वस्त कर दिया गया।

प्रत्येक रात को सैन्य टुकड़ियों को ड्यूटी पर भेजा गया तथा अग्रिम चौकी गोरखों की घेराबंदी से 100 यार्ड की दूरी पर स्थापित की गई। दुश्मन द्वारा इसकी मरम्मत का कार्य रात में किया गया लेकिन 21 मार्च को इसे पुनः ध्वस्त कर दिया गया। 22 मार्च को भी युद्ध की यथास्थिति बरकरार रही। सायंकाल में कुछ अनियमित सैनिकों को मोर्चे पर भेजा गया। उन्होंने दुश्मन की अग्रिम चौकी पर चतुराई से कब्जा कर लिया। लेकिन इन सैनिकों को अंग्रेजी फौज से मदद न मिली और इसी बीच कमांडर ने उन्हें वापिस आने का आदेश दिया। दुश्मन की गोलियों के मध्य ये सैनिक वापिस शिविर में लौट आए।

यह सिलसिला कुछ रोज तक चलता रहा। 30 मार्च को उत्तर की ओर जैतक में अनियमित सैनिकों की टुकड़ी नारायण का टिब्बा पर तैनात थी। इन पर गोरखों ने हमला कर लगभग 100 सैनिकों को मार दिया और 70 के करीब घायल हुए। इस हमले का कारण एक स्थानीय अधिकारी की गरदारी थी।

प्रथम अप्रैल को मेजर रिचर्ड के नेतृत्व में 1000 स्थायी तथा 700 अस्थायी सैनिकों की एक टुकड़ी नाहन से पूर्व की ओर जैतक की ओर मोर्चाबंदी के लिए रवाना हुई। अंग्रेजों की इस टुकड़ी पर गोरखा पलटन ने घात लगाकर हमला किया। लेकिन इससे अंग्रेजी सेना को ज्यादा क्षति नहीं हुई। गोरखों के 30 सैनिक मारे गए, अनेक घायल हुए तथा 150 से अधिक सैनिकों को बंदी बनाया गया। इन बंदी सैनिकों में गोरखों का कमांडर काजी अज़ंबर पंत भी था। वह गोरखा सेना का एक श्रेष्ठ अधिकारी कहलाता था जिसने 21 फरवरी को चिनाल गुर्ग में अंग्रेजों के अनियमित सैनिकों को हराया था।

मेजर रिचर्ड ने गोरखों के किले के सामने पंजाल में मोर्चा संभाला। किले और इस चौकी के मध्य गहरी खाई थी। इस मोर्चाबंदी के दौरान ज्ञात हुआ कि दुश्मन के पास रसद की कमी है तथा वे इस स्थिति में असहज हैं। रोज भगौड़ा सैनिक, अंग्रेजों के शिविर में आ रहे थे। उनसे मिल रही जानकारियों से ज्ञात हो रहा था कि गोरखों के शिविर (रक्षक सेना) में भुखमरी जैसे हालात हैं। उनके कमांडर अपनी सेना को संपूर्ण खाद्य सामग्री प्रदान करने में भी आनाकानी कर रहे हैं। सैनिकों के अलावा उनकी महिलाएं तथा बच्चे भी भुखमरी का शिकार हो रहे हैं। गोरखा शिविर में बगावत के स्वर भी मुखर होने लगे हैं। उनके शिविर में ही भूखे मरने की नौबत आन पड़ी है। भगौड़े सैनिकों से जब जानकारियां हासिल कीं तो उन्होंने बताया कि वे अपनी खंदक में सम्मान के लिए तथा नमक के उधार की खातिर प्राण त्याग देंगे।" पश्चिम में यह पूर्ण रूप से ज्ञात था कि जिसका गोरखों ने भोजन खाया है वे उससे गरदारी नहीं करते। वे व्यक्ति जो अपने मालिक की सेवा व आदेश की अवज्ञा करता है उसे 'नमक हराम' कहा जाता है। अंग्रेजी सेना ने भगौड़े सैनिकों को भोजन तथा ब्रिटिश सेना का हिस्सा बनाया।

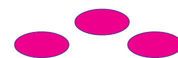
12 अप्रैल को 26वीं रेजिमेंट की एक टुकड़ी को उत्तर की ओर भेजा गया ताकि वे दुश्मन द्वारा उस स्थान पर आने जाने बारे की जानकारी हासिल की जा सके। 16 अप्रैल की रात को सैन्य टुकड़ी ने जलाल नदी के तट पर मक्की के खेतों से मक्की ले जाने के लिए दुश्मन को रोक दिया। इस मार्ग से किले की घेराबंदी की गई। इसके लिए छोटी-छोटी टुकड़ियां तैनात की गईं। गोरखा सेना गाहे-बगाहे इन टुकड़ियों पर हमला करती। लेकिन वे मुख्य सेना पर हमला करने से अभी भी कतरा रहे थे। वे मलौण किले में अमर सिंह तथा अंग्रेजों के युद्ध की सूचना बारे उत्सुक नज़र आ रहे थे।

कैंप से सभी दिशाओं में 10 से 15 मील के दायरे में सैनिक भेजे गए ताकि वे खेतों में कटाई के लिए तैयार फसल को तबाह करे। यह इसलिए जरूरी था कि गोरखों को भोजन उपलब्ध न हो। 6 मई तक कोई खास घटना नहीं हुई जिसका जिक्र किया जा सके। उधर जनरल आक्टरलूनी का मलौण किले के नजदीक बुक्ती थापा पर विजय तथा कमाऊ में कर्नल निकोलस की हस्ती दल थापा पर विजय से अंग्रेजों के अधिकार में अल्मोड़ा आने से यह बात स्पष्ट थी कि इन क्षेत्रों में गोरखों के विरुद्ध अभियान पूर्ण होने वाला है। लेकिन इन घटनाओं का हमारे कमांडर द्वारा 'ब्लैक हिल' पर मोर्चाबंदी पर कोई असर दिखाई नहीं दिया।

जनरल आक्टरलूनी तथा अमर सिंह थापा के मध्य संधि से ब्रिटिश सेना ने मलौण किले पर कब्जा कर लिया। इस संधि से गोरखा सेना पश्चिमी की ओर गंगा नदी की पश्चिमी शाखा (Kaleenudde), से पीछे हट गई। इसी संधि के तहत जैतक किले को भी खाली करना था। गोरखों के पास एक दिन का भी भोजन नहीं था। लेकिन यह आश्चर्यजनक था कि वे बिना भोजन के इतने लंबे समय तक कैसे वहां मोर्चा संभाले रखे।

लगभग 1500 बंदूकधारी सैनिक किले से बाहर आए। उनके साथ महिलाएं तथा बच्चे भी थे, जिनकी कुल संख्या 2500 के करीब थी। इन्हें भुखमरी के चंगुल से आजादी मिली थी।

काज़ी रणजोर सिंह थापा को जब कमांडर के समक्ष लाया गया तो पाया गया कि उसका व्यवहार विनयशील लेकिन गौरवपूर्ण प्रतीत होता था। दुश्मन द्वारा जैतक तथा इसके आसपास की चौकियों को मई के आरंभ में खाली कर दिया। इन पर ब्रिटिश सेना ने शीघ्र ही कब्जा कर लिया। जब ये चौकियां हमारे कब्जे में थीं तो पाया गया कि दुश्मन पर हुए हमलों में उनकी बंदूकें, हमारी कुछ तोपों के गोलों से शांत हो गईं।



जेम्स बैली फ्रेजर की नजर में

1815 में सिरमौर जनपद का सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य

उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में सिरमौर तथा पहाड़ी क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक जीवन का परिदृश्य क्या था, इसका उल्लेख रियासत काल के इतिहास दस्तावेजों, अंग्रेजों के यात्रा वृत्तांतों इत्यादि से प्राप्त होता है।

1815 में एंग्लो-गोरखा युद्ध के समय जैम्स बैली फ्रेजर की Himala Mountains पुस्तक में हमें उस काल के ग्रामीण परिवेश को देखने का मौका मिलता है। अंग्रेजों ने मलौण तथा जैतक किलों पर विजय हासिल करने के उपरांत इन पर कब्जा किया और पहाड़ों को गोरखों से मुक्ति दिलाई। इसी दौरान हारी तथा हताश गोरखा सेना, गोरखा कमांडर कीर्ति सिंह जो अनुभवी तथा बहादुर सैनिक था, के नेतृत्व में एकत्रित हुई। इस दल ने सतलुज नदी के बाएं किनारे अर्की तक अनेक चौकियों पर कब्जा कर लिया। वे संगठित होकर मलौण या सिरमौर के जैतक किले पर कब्जा करने की फिराक में थे।

अंग्रेजी सेना ने पहाड़ों में अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए एक सैन्य दल को भेजने का निर्णय लिया। 600 सैनिकों का एक दल बनाया गया जिसमें मेवात, गुज्जर, सिख सैनिक शामिल थे। वे अस्त्र-शस्त्र से लैस थे। इस दल में 80 से 100 तक पठान तथा अफगान सैनिकों को भी शामिल किया गया। इस दल में 100 गोरखा सैनिक भी शामिल थे जो गोरखा सेना द्वारा चौपाल किले की रक्षा में तैनात किए गए थे, जिन्हें युद्ध उपरांत ब्रिटिश सेना में शामिल किया गया। कर्नल जैम्स स्किनर के नेतृत्व में तीन सैनिक टुकड़ियां शामिल की गई थीं।

6 मई, 1815 को प्रातः नाहन के समीप 'ब्लैक हिल' से पहाड़ों की ओर सैन्य मार्च आरंभ हुआ। इसमें हमारी सेना, विभिन्न श्रेणियों के नौकर, पहाड़ी कुली, जो हमारा सामान, राशन, गोला बारूद उठाए थे तथा इस दल में कुछ आवारागर्द भी शामिल थे, जो इसे जुलूस की शक्ल देकर अनोखा बना रहे थे।

यात्रा आरंभ होने से एक दिन पूर्व वर्षा होने से मौसम सुभावना हुआ था। हमारे सामने न समाप्त होने वाले पर्वत शिखर खड़े थे और इसके नीचे मैदानी क्षेत्र नज़र आता था। हमारा रास्ता उत्तर- पश्चिम की ओर बढ़ रहा था जिसे गोरखा सेना द्वारा बनाया गया था। यह रास्ता अर्की तक जाता था। इसे पहाड़ों को काट कर श्रमसाध्य कार्य से बनाया गया था। यह रास्ता न चौड़ा था न ही समतल था। ऊबड़-खाबड़ रास्ते से होकर हमारा काफिला जलाल नदी के समीप पहुंचा। इस नदी की कुछ दूरी पर इसके उत्तरी तट पर शिविर स्थापित किया गया। इसके बाद की यात्रा कठिन थी क्योंकि यह गर्म इलाके से होकर गुजरती थी। पहले दिन 9 मील की यात्रा पूर्ण की जो रुक-रुक कर अपने गंतव्य तक पहुंची। जहां हमारा शिविर व टैंट लगे थे, उसके साथ गांव स्क्यूल (Seekhoul) अवस्थित था। इसकी दशा गरीबी भरी तथा दयनीय प्रतीत होती थी लेकिन यह सुंदर स्थल पर अवस्थित था।

हम प्रातः जल्दी उठ गए लेकिन सात बजे से पूर्व काफिले को चलने के आदेश नहीं हुए। अब हमारा रास्ता उत्तर की ओर जो एक सुंदर घाटी से होकर



जेम्स बैली फ्रेजर द्वारा अपनी यात्रा के दौरान हिमालय क्षेत्र के एक गांव का बनाया चित्र

गुजरना था, जो गांव चिनालगढ़ (Chinalgurh) से होकर जलाल नदी तक जाता था।

इस नदी का जल निचले क्षेत्रों में सिंचाई में उपयोग होता था, जिसे छोटी नदिकाओं (कूहलों) के माध्यम से सिंचाई के लिए उपयोग किया गया था। हमारी यात्रा सुखमय थी। क्योंकि ये छोटी-छोटी नदिकाओं के साथ-साथ होकर आगे बढ़ रही थी। ये हमें सूर्य की तपस से बचा रही थी। खेती की हरियाली से नयनों को सुकून तथा जल के नाद से कानों में मधुर संगीत सुनाई पड़ रहा था। इस घाटी में खेती सरकारी भूमि पर की जाती थी जिसकी जमींदारों द्वारा काश्त की जाती थी। इसमें से वे कुछ हिस्सा रखकर शेष राज्य को देते थे।

हम घाटी को पार कर शिखर पर आए जहां पहाड़ी के नीचे गांव चिनालगढ़ स्थित था। यह अन्य पड़ोसी गांवों के मुकाबले बड़ा गांव था। यहां से दक्षिण की ओर, मैदानों तक देखा जा सकता था। काफिला चढ़ाई-उतराई से गुजरता हुआ 9 बजे के करीब दीनर-किन्नर पहुंचा। यह बड़ा गांव सुंदर स्थल पर खाई में अवस्थित था जहां से हमने एक रिज को पार किया। इस ऊंचाई वाले क्षेत्र से नजारा देखते ही बनता था। इसके एक ओर गिरी नदी तथा दूसरी ओर जलाल थी। उत्तर की ओर नयनाभिराम चूड़धार की चोटी नज़र आ रही थी। इसकी गहरी खाइयों से होकर जल धाराएं गिरी नदी में आकर मिलती थीं। यहां गांव का उल्लेख करना बहुत आवश्यक है। अब तक के देखे गांव में यह सबसे बड़ा

सनद

गोरखा युद्ध उपरांत सिरमौर

1815 में अंग्रेजों द्वारा जब गोरखों के अधिपत्य से पहाड़ी क्षेत्रों को खाली करवाया, उस वक्त सिरमौर पर राजा कर्म प्रकाश का राज था लेकिन उसे अंग्रेजों ने हटाकर वहां का शासन उसके बड़े बेटे फतेह प्रकाश को सौंप दिया।

21 सितंबर, 1815 को राजा फतेह सिंह को सनद प्रदान की गई :

"क्योंकि गोरखा फौज इन सभी जिलों से निकल गई और सारे पहाड़ी क्षेत्र पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया इसलिए गवर्नर जनरल बहादुर के आदेशानुसार यह सनद राजा फतेह सिंह को प्रदान होती है जिसके मुताबिक सिरमौर के इलाके पर तमाम हकूक और शक्तियां इस राजा और इसके उत्तराधिकारियों को दिए गए। जगतगढ़ और मोरनी के किले और क्यारदादून और जौनसार बाबर के जिले को सिरमौर राज्य से अलग करके अंग्रेजी सरकार के कब्जे में दे दिया गया है। इसके अतिरिक्त हन्नर और करचरी के किले तथा गिरी नदी के पश्चिमी छोर की भूमि क्योंथल की ठकुराई में शामिल की गई है। घाट और सलेहर के किले जो इस नदी के पूर्व की ओर हैं, सिरमौर राज्य में शामिल कर दिए गए हैं।

फतेह सिंह के लिए यह उचित है कि वह अंग्रेजी सरकार की मेहरबानियों का धन्यवादी हो और जो क्षेत्र उसे मिला है, उस पर कब्जा करे तथा ऊपर लिखे गए क्षेत्रों पर अपना कोई हक या दावा न रखे जो सिरमौर से काटकर अंग्रेजी सरकार के इलाके और क्योंथल की ठकुराई में सम्मिलित हुए हैं।

इसके अलावा उसके लिए यह भी मुनासिब होगा कि वह सिरमौर के राज्य के प्रबंध के लिए कोई दिवान या दूसरा अधिकारी अंग्रेजी हाकम की इत्तलाह और मंजूरी के बगैर जो वहां नियुक्त होगा, न रखे। राजा को ऊपर लिखे गए करारों पर अमल करना होगा और उसे अंग्रेजी सरकार के हुक्म को मानकर लड़ाई के समय सरकार के आदेशानुसार अंग्रेजी फौज में शामिल होकर सरकार की मदद करनी होगी। राजा अपने क्षेत्र में 12 फुट चौड़ा रास्ता भी तैयार करवाएगा। अगर राजा ऊपरलिखित शर्तों में से किसी शर्त का पालन नहीं करेगा या दूसरे के इलाके में हस्तक्षेप करेगा तो वह अंग्रेजी सरकार को नापसंद होगी और उसे बेदखल कर दिया जाएगा।

राजा के लिए यह भी मुनासिब है कि वह लिखित को जायज और विश्वनीय माने और इन शर्तों के अनुसार जो इलाका उसको दिया गया है उस पर कब्जा करे तथा रैयत की भलाई और कृषि के विकास और रियाया को इन्साफ दे और सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील रहे। जो उसके लिए मुकर्रर किया गया है, उससे ज्यादा रैयत से न ले। संक्षेप यह कि सभी को खुश रखे। रियाया का यह फर्ज होगा कि वह फतेह सिंह को अपना राजा माने और उसके आदेश का पालन करे।

सनद 89 : राजा साहेब नाहन राजा फतेह सिंह के नाम

क्योंकि राईट ऑनरेबल काउंसिल के 5 सितंबर 1833 के अधिवेशन में नाहन के राजा फतेह प्रकाश और उसके वारिसों और उत्तराधिकारियों को क्यारदादून का इलाका सिरमौर राज्य को प्रदान करते हैं। अंग्रेजों ने इस सनद में कुछ शर्तें भी लगाई। इनमें क्षेत्रवासियों के हकों का खयाल रखना, वाणिज्य या वस्तु जो उसके क्षेत्र से बाहर जाएगी या आएगी उस पर कर न लगाना, रास्तों की देखरेख, मरम्मत तथा अंग्रेजों को रास्तों में निर्माण में मदद, पुलिस की उचित संख्या में तैनाती, रास्तों पर यात्रियों व व्यापारियों की सुरक्षा के लिए चौकियों की स्थापना, नजराना लेने पर पाबंदी प्रमुख थी।

तथा नाहन के बाद सबसे बड़ा गांव प्रतीत हुआ। इस गांव के अधिकांश घर दोमंजिला और सपाट छतों वाले थे। इस गांव के उत्तर की ओर, गांव से 70 से 80 फुट नीचे 20 से 30 एकड़ क्षेत्र में गेहूं के खेत थे, जो लगभग पक चुके थे।

यहां आधा घंटा आराम कर, हमारा काफिला आगे बढ़ा। यह रास्ता पत्थरीला तथा रास्ते के पत्थर मौसम के थपेड़ों को सह कर संगमरमर की माफिक सपाट हो गए थे। इन पर बहुत ध्यान रखकर आगे कदम बढ़ाए जा रहे थे। इस बात का बहुत ही अफसोस रहा कि हमें दीनर किन्नर या इसके दर्रे से दिखने वाली सुंदर दृश्यावलियों को कैनवास पर उकेरने का समय नहीं मिला। रास्ते में उतराई उतरते वक्त अनेक गांव आए, जिनकी स्थिति दयनीय प्रतीत हुई। इनमें एक बुहान गांव भी आया। इस गांव में हमने एक असाधारण चीज देखी, जिसके तहत यहां के निवासी अपने छोटे बच्चों को शारीरिक, मानसिक तौर पर सुदृढ़ बनाने के लिए जल के नीचे रखते हैं। नदी के किनारे अनेक भूसे के छप्पर बना रखे थे। इसके ऊपर से खेतों की सिंचाई के लिए पानी लाए जाने की व्यवस्था थी। सिंचाई वाली कूहल से छप्पर के ऊपर खोखली छड़ी या पेड़ की खाल से पानी गिराया जाता था, जो दो फुट नीचे गिरकर बह जाता था।

ग्रामीण महिलाएं, दिन में गर्मी के वक्त अपने बच्चों को छप्पर में लाती थीं और उनके शरीर को ढककर सुलाने की कोशिश करतीं। वे उन्हें छोटे से बैंच या ट्रे जो जमीन के समानांतर होती, में इस प्रकार रखतीं ताकि पानी की धारा उनके माथे पर सीधे गिरे ताकि जल से उनका सिर का हिस्सा गिला रहे। हमने ऐसे दो बच्चों को देखा। तभी यहां अनेक माताएं अपने बच्चों को लेकर आई। बच्चे इस पद्धति से गहरी नींद लेते पाए गए। इस बारे में जानकारी हासिल करने पर पाया कि पहाड़ों में बच्चों को सुलाने तथा नहाने की यह प्रथा जहां-जहां सुविधा है, प्रचलित है। तथा इस पद्धति से बच्चे में शारीरिक तौर पर ताकत आती है। तथा वे सर्दियों की ठंड को सहने के लिए मजबूत होते हैं। अगर मैंने यह न देखा होता तो मुझे भी विश्वास नहीं होता कि ऐसी चिकित्सा पद्धति भी प्रचलित है। इस पद्धति को रियासत में 'नाला देना' कहा जाता था। स्थानीय तौर पर लोगों में ऐसी मान्यता थी कि जल की इस पद्धति से बच्चे का सिर कठोर होता है तथा वह पहाड़ों की ठंड को सहने तथा उनमें प्रतिरोधक शक्ति भी बढ़ती है।

यहां की महिलाओं के नयननक्श मैदानी इलाकों की राजपूत महिलाओं की तरह मिलते थे। वे गौरवर्ण या हल्के पीले काया वाली थीं। वे हमारे प्रश्नों का उत्तर देकर अपने कार्य में व्यस्त रहती थीं। वे अपने आपको राजपूत कहती थीं।

रास्ता सुंदर पेड़-पौधों से ढका था। अनेक जगह वन इतने घने थे कि दिन में भी सांझ का आभास होता था। रास्ते में गुलाब, चमेली, विलों तथा अनेक पौधों की सुंदर प्रजातियां लगी थीं।

राह में आगे बढ़ते हुए हमें सामने चूड़धार की चोटी तथा नीचे गिरी नदी की सुंदर घाटी नजर आई। दृश्यावलियों में आ रहे बदलाव असंख्य थे जिनकी व्याख्या भी नहीं की जा सकती। इन सुंदर बीहड़ स्थलों की कल्पना व दुर्गम घाटियों की कल्पना से इन्हें रेखांकित नहीं किया जा सकता।

हम पहाड़ों की गहराइयों को पार कर ऊंचाई वाले क्षेत्र में पहुंच गए थे। पहाड़ के शिखर से गिरी नदी तंग लेकिन हरे भरे पहाड़ों तथा पेड़ों की कतारों के बीच से होकर गुजरती नज़र आ रही थी। लेकिन वर्षा तथा बर्फ से पिघलने पर ये खतरनाक तथा रौद्र रूप में होती होगी, एक कल्पना की जा सकती है। इस नदी की लंबाई बारे सभी में भिन्न-भिन्न मत थे।

गिरी नदी का अब पाट कई स्थानों पर 35 से 40 यार्ड चौड़ा था तथा इसकी गहराई घुटनों तक थी। हमारा काफिला पहाड़ी ऊबड़ खाबड़ रास्तों तथा घाटियों को पार करता हुआ इसके तट पर पहुंचा। हम वहां लगभग दो बजे के करीब पहुंचे। दो घंटे के विश्राम के बाद हमने नदी के किनारे-किनारे यात्रा आरंभ की। तथा सायं छः बजे के करीब गांव टौर (Thour) में अपने शिविर स्थल पर पहुंचे। शिविर स्थल समतल स्थल पर लगभग तीस से चालीस एकड़ लंबा था। यहां से गिरी नदी का सुंदर दृश्य नज़र आ रहा था।

अगले दिन की यात्रा बारे हमें सूचित किया गया कि यह लगभग ग्यारह मील की होगी। हमारी यात्रा अभी तक सुंदर स्थलों से होकर गुजरी इसलिए रास्ते की थकान महसूस न हुई।

हमारी कल्पना से एशिया का यह भू-भाग गायब हो गया था। ऐसा महसूस होने लगा कि हम अपने देश की किन्हीं सुंदर वादियों में विचरण कर रहे हैं। इस तरह का बोध वही व्यक्ति कर सकता है जो अपनी धरती से लंबे अरसे से कटा हो और उसकी इच्छा अपनी मातृभूमि से मिलने की जागृत हो रही हो।

पहाड़ों तथा मैदानों की दृश्यावलियों में जमीन आसमान का अंतर नज़र आता है। नाहन के समीप की पहाड़ियों की संरचना चूने के पत्थर वाली है। पहाड़ों का उत्तर तथा उत्तर-पूर्वी का हिस्सा वनों से आच्छादित है जबकि दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र वीरान नज़र आता है। गिरी तथा जलाल नदियों में मछली की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं।

गांव ठोड़ (Thor) में एक या दो घर थे, और शेष घर ध्वस्त नज़र आए। लेकिन इस गांव में घरों की बनावट अन्य गांवों के मुकाबले अलग ही थी।

पत्थर तथा मिट्टी से सपाट छत्त वाले घरों के मुकाबले यहां के घर पत्थरों को घड़ कर बनाए गए थे तथा दीवारों में लकड़ी की बीम थी। छत को ऊंचा कर स्लेट लगाई गई थी जो कि दीवारों से बाहर तक बनी थी। मकान की ऊपरी मंजिल पर लकड़ी का बरामदा था। छत को लकड़ी के खंबे पर टिकाया गया था। मकान

में छजे भी बेहतरीन बनाए गए थे। ये वास्तु शिल्प चीन देश की तरह प्रतीत होती नज़र आ रहा थी।

इन घरों से दो प्रमुख गोसाई (भारत में एक धार्मिक विचारधारा के व्यक्ति) बाहर आए और हमें फल तथा दूध भेंट किए। इन संन्यासियों ने घुमंतू जीवन को त्याग कर परिवार बसा लिया था और अब वे कृषक का जीवन यापन कर रहे थे। उनके खेतों में असंख्य मोर विचरण कर रहे थे। इससे पहले गिरी नदी के समीप बंदर देखे गए थे।

8 मई को हमने प्रातः 8 बजे पहाड़ की ओर अपनी यात्रा आरंभ की। ऊपर पहाड़ी पर हमने कुछ हिरण देखे जिन पर हमने दूर से गोली भी चलाई। पहाड़ी के ऊपर पहुंचने पर हमने घाटी में अवस्थित लगभग एक दर्जन गांवों व खेतों को देखा। प्रत्येक गांव में दो से तीन ऊंचे टावर भी बने थे जो पांच से छः मंजिल ऊंचे थे। अधिकांश क्षतिग्रस्त हो गए थे, जो दूर से एक पुराने किले की माफिक दिखते थे।

यहां हमने आड़ू के पेड़ों को देखा, जिनमें बहुतायत में फल लगे थे। अखरोट के अधिकांश पेड़ों पर भी फल लगे थे। रास्ते में हमें एक पेड़ को भी दिखाया गया जिसमें अभी कच्चे फल लगे थे जिसे काफल के नाम से जाना जाता था। हमें इसका स्वाद चखने का मौका नहीं मिला लेकिन यह शहतूत की माफिक लगा, लेकिन इसके मध्य में गुठली थी।

आगे बढ़ने पर हम गांव घरोटी पहुंचे। यहां हमने पहली बार खुमानी व देवदार का पौधा देखा। खुमानी का बड़ा तथा फैला हुआ पौधा था जबकि देवदार के पौधे ब्रिटेन में आम हैं। यहां नाशपाती के पौधे भी उगे थे। शहतूत तथा अन्य फलों के पौधे तथा सुंगधित झाड़ियां भी थीं। खेतों में मक्की की फसल पक चुकी थी, फसल कटाई में कृषक लगे थे। प्रत्येक गांव का अलग नाम था। जो एक पगरने के तहत आते थे। हमारी यात्रा, घाटी की ओर बढ़ी जो बंजर थी। इसके दोनों ओर ऊंची-ऊंची पहाड़ियां थीं। खाई को पार कर, ऊपर पहुंचने पर हमने सैनिकों को राजगढ़ के खंडहर हो चुके किले में आराम करते देखा। इसके आसपास की पहाड़ियों पर घास उगी थी। इससे प्रतीत होता था कि ये पशु चरागाहें थीं तथा ये पहाड़ियां स्काटलैंड की भेड़ों की चरागाहों जैसी प्रतीत होती थीं

यहां एक चीज अलग देखने को मिली वह, ऐसी ऊंची टावरनुमा इमारतें थीं जो ग्रामीणों की रिहायशें न होकर देवस्थल थे जिन्हें लकड़ी से खूबसूरती से निर्मित किया गया था। यहां घर भी आम तौर पर दो से तीन मंजिल थे। सबसे ऊपरी मंजिल पर रिहायश जिसके बाहर लकड़ी का बरामदा होता था जो लगभग 6 से 8 फुट चौड़ा था। मकान की निचली मंजिल में पशुओं को रखा जाता था। अगर मकान में दूसरी मंजिल हो तो उसका उपयोग काठ-कबाड़ रखने के लिए किया जाता था।

हमने अभी तक जिन कुछ गांवों को देखा वहां कोई अधिक समृद्धि नज़र नहीं आई। गांव के आधे से अधिक घर खंडहर थे तथा कुछ तो पूर्णतः खाली पड़े थे। यह स्थिति रियासत की अनदेखी तथा गोरखों की क्रूर सल्तनत के कारण थी।

यहां के निवासियों द्वारा बहुत ही कठिनाई से खेती को आगे बढ़ाया, प्रतीत होता है। यहां के बाशिंदों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी पहाड़ों की ढलानों को काटकर सीढ़ीनुमा खेतों का निर्माण किया है। खेती के लिए दूर से जल की व्यवस्था थी, अधिकांश खेतों में मक्की की फसल को उगाया गया था। अपनी जरूरत का अनाज पैदा कर यहां के किसान अन्य जिलों तथा ऐसे क्षेत्रों को अनाज की आपूर्ति करते थे, जहां अनाज पैदा नहीं होता था। लोगों ने सिंचाई के लिए कूहलों तथा खोखले वृक्षों को उपयोग कर अपने खेतों तक जल को पहुंचाने की व्यवस्था की थी। जल की जरूरत मुख्यतः धान की फसल के लिए की जाती थी। जबकि गेहूं तथा बाजरे के लिए कम पानी की जरूरत रहती होगी। पहाड़ों की तलहटी पर छोटे-छोटे खेत लगभग सभी क्षेत्रों में देखे जा सकते थे। यह पद्धति सभी जगह एक समान थी।

इस वक्त गांवों में आबादी कम नज़र आती थी। हर ओर गांव खंडहर नज़र आते थे तथा खेत वीरान पड़े थे। गोरखों के राज से पहले, खेतों में अनाज बोया जाता था जो गांव अब बर्बाद हो गए हैं, वे अब आबाद थे। पहाड़ों पर बने रास्ते भी इस बात को इंगित करते थे कि यहां की चरागाहों में पशु चराए जाते थे। बड़े खेतों में बैलों द्वारा जुताई की जाती थी तथा छोटे खेतों में हाथ द्वारा खुदाई करने की प्रथा थी।

मैदानों में रहने वाले हिंदुओं की माफिक पहाड़ों के हिंदुओं में जीवन-यापन के लिए धैर्य नज़र आता था। खेती के औजार पारंपरिक थे। इस वक्त गेहूं तथा बाजरे की फसल कटाई के लिए तैयार थी। कुछ खेतों में धान की रोपाई कर दी गई थी या खेत तैयार थे। खेतों में खाद के प्रति किसान भी अनभिज्ञ थे। उन्हें अभी फसलों के बदलाव बारे जानकारी न थी। वे वर्ष-दर-वर्ष पारंपरिक खेती को ही करते आ रहे थे। एक वर्ष में वे मात्र दो फसलें पैदा करते हैं।

पहली फसल में गेहूं तथा बाजारा। कुछ खेतों में जई (oat) बीजते थे। अफीम तथा कुछ खेतों में तैलीय फसलें बीजते हैं। पहाड़ों में मोटे अनाज को गर्मियों व सर्दियों में बीजने की प्रथा थी। पहाड़ों के निचले हिस्सों में बर्फ के पिघलने के उपरांत गेहूं की बुआई होती थी। उत्तर के ऐसे क्षेत्र जहां बर्फ देर से पिघलती है, वहां गेहूं की बीजाई सर्द ऋतु आने पर पूर्ण करने की प्रथा थी। उत्तर के क्षेत्र में कुछ स्थानों पर मक्की की कटाई जुलाई माह में होती थी। पहाड़ों के अंदरूनी क्षेत्रों में अफीम की खेती का प्रचलन था। ऐसा कहा जाता था कि यह बहुत महंगी फसल है तथा इसके लिए अच्छी खाद तथा देखभाल की जरूरत होती है। इसकी आपूर्ति छोटे व्यापारी जो पहाड़ों में खरीद के लिए आते थे, के

माध्यम से मैदानों को की जाती थी।

धान की खेती निचले क्षेत्रों में नदियों, खड्डों तथा नालों के आसपास की जाती थी। ऊंचाई वाले क्षेत्रों से धान के खेत सुंदर नज़र आते थे। तंबाकू की खेती पहाड़ों में आम तौर पर की जाती थी जिसकी किस्म को श्रेष्ठ माना गया था। इसका निर्यात मैदानों तथा भूटान को किया जाता था। इसकी बीजाई मई तथा जून माह में की जाती थी। पहाड़ों में भांग बहुतायत में पाई जाती थी। इससे पदार्थो को निकाल कर मैदानों में भेजा जाता था, जहां ये हाथोंहाथ बिक जाती थी।

कृषि कार्यो में पुरुष तथा महिलाएं समान रूप से कार्य करते हैं। लेकिन कार्य करने के क्षेत्र अलग-अलग होते हैं। पुरुष हल चलाने तथा बीज बोने का कार्य करते। महिलाएं खेतों से खरपतवार निकालने तथा जमीन में मिट्टी ठेलों को तोड़ने का कार्य करतीं। दोनों फसल की कटाई में सहयोग देते, लेकिन यह मुख्य रूप से महिलाओं को सौंपा गया कार्य होता। वे दराती से इसे काट कर खेतों में जब मौसम ठीक हो तो सूखने के लिए रहने देती। लेकिन खराब मौसम में इसे घर के समीप पत्थर के बनाए खलियान में लाती जहां पशुओं से फसल निकाली जाती। खलियान में सूर्य की तपश से फसल जल्दी सूखती। फसल को निकाल कर इसी मकान की दूसरी मंजिल में इसका भंडारण किया जाता। भूसे को पशुओं के चारे के लिए एकत्रित कर रखा जाता। ये पशुओं के लिए सर्द ऋतु में काम आता जब खराब मौसम के कारण जंगल से पशुचारा लाने में कठिनाई होती। देवदार की प्रजाति जो इंग्लैंड की देवदार की प्रजाति (weymoath pine), के समान प्रतीत होती है। पशुचारे तथा पशुओं के बिछोने के काम आती है। इसके अलावा अनेक वृक्षों की पत्तियां तथा टहनियां भी सर्द ऋतु में पशुचारे के लिए उपयोग में लाई जाती है। बान वृक्ष का उपयोग भी किया जाता है।

पहाड़ों में पशु की नस्लें मैदानों की तरह ही थीं लेकिन वे छोटी किस्म की प्रतीत होती थीं। इन सभी में कूबड़ होता है। अधिकांश पशु काले रंग के लेकिन कुछ भूरे, लाल या चितकबरे होते हैं। सभी पशु मोटे ताजे नज़र आते थे। लोग अपने पशुओं का विशेष खयाल रखते तथा गाय के दूध से विभिन्न व्यंजन भी बनाते थे। लेकिन अभी तक हमने कहीं भी पनीर का उत्पादन नहीं देखा।

अपने अंतिम दिन की यात्रा में हमने पाया कि यहां स्लेट बहुतायत में पाई जाती है। मिट्टी/पत्थर में अभ्रक भी पाया जाता है। स्फटिक भी कहीं-कहीं देखा गया। ठोस पत्थर की चट्टानें पाई जाती हैं। कुछ स्थलों पर लौह अयस्क भी पाए जाते हैं जिनपर प्रमाण जलस्रोतों के लौह अयस्क से रंग तथा गंध से प्रतीत होता है। यात्रा के दौरान सुंडियों की भी अनेक प्रजातियां पाई गईं।

हमारा काफिला खाई से होता हुआ ऊपर पहुंचा। जिसके आस-पास ऊंची पहाड़ियां थीं। यहां स्थित भवन प्राचीन नज़र नहीं आ रहा था। हमें अवगत करवाया गया कि इसका निर्माण लगभग 80 वर्ष पूर्व किया गया है। यह भवन सिरमौर के राज परिवार से संबंधित है। तथा इस भवन में राजस्व एकत्रीकरण करने वाले आने वाले अधिकांश रहते थे जिन्हें राजा की मर्जी पर बदला जाता था। इस वक्त यह भवन जीर्ण-शीर्ण हालत में था। जिसे विगत छः माह पूर्व गोरखा सेना के रणजोर सिंह के आदेश पर आग लगा दी थी। इसको आग के हवाले करने के पीछे यह तर्क दिया जा रहा था कि इससे अधिकारियों को राजस्व एकत्रित करने में परेशानी होगी।

इसे किले की संज्ञा दी नहीं जा सकती क्योंकि इसकी स्थापना ऐसे स्थल पर की गई है जिसके किनारे ऊंची पहाड़ियां हैं और यहां आसानी से हमला हो सकता है। न ही इसे किले की रक्षात्मक रूप से सुरक्षित बनाया गया है। यह भवन आयताकार है। इसके चारों कोनों पर बीस फुट वर्गाकार के टावर बने हैं। इसके भीतर सभी ओर भारतीय रुचि के अनुसार आवासीय व्यवस्था की गई है। इसके मध्य में चौरस अहाता है जो लगभग 30 से 40 फुट लंबा व चौड़ा है। इस पर पत्थर को सुरुचिपूर्ण लगाया गया है। इसके मध्य में जल भंडारण टैंक है, जिसका निर्माण चूने तथा पत्थर से किया गया है। यहां पानी भवन के समीप पहाड़ी से लाया गया है। बाहरी दीवार तथा भीतर तक बने कक्षों की चौड़ाई लगभग 15 फुट होगी। टावरों की दीवारें अन्य दीवारों के मुकाबले मोटी बनाई गई हैं। भवन की ऊंचाई लगभग 40 फुट के करीब होगी। भवन के चारों ओर लकड़ी के शहतीरों से बालकोनियां बनाई गई होंगी, जो कि अग्निकांड के उपरांत भी दिखाई दे रही थीं।

मुख्य मैदान के सामने एक छोटा सा मैदान है, जहां सैनिकों व सरकारी अधिकारियों को ठहराने के लिए भवन होंगे। लेकिन अब यह पूर्ण रूप से क्षतिग्रस्त प्रतीत होते हैं। इनको देखकर यहां कैसे भवन होंगे, का अंदाजा नहीं लगाया जा सकता। दीवारें कहीं-कहीं चार से पांच फुट चौड़ी नज़र आती हैं। इस भवन में पत्थरों की चिनाई श्रेष्ठ हुई है। इसे सूखे पत्थरों तथा लकड़ी का उपयोग कर बनाया गया है। पत्थरों के जोड़ने के लिए लकड़ी का उपयोग हुआ है। ताकि भवन को मजबूती प्रदान की जा सके। इस भवन के समीप चार ऊंची चोटियों पर निगरानी चौकियां बनाई गई थीं, जो दुश्मनों पर नज़र रखती थीं और खतरे से आगाह करती थीं।

इस क्षतिग्रस्त भवन के आस-पास सैनिकों का शिविर लगा था। मैंने पास की पहाड़ियों पर जाकर दूर-दूर के दृश्यों को देखा। हमें यहां प्राप्त सूचना के अनुसार जो ब्लैकहिल से प्राप्त हुई थी, कीर्ति राणा के नेतृत्व में गोरखा सेना की पराजय हो गई थी तथा सभी को बंदी बना दिया गया था। इससे अधिक जानकारी प्राप्त नहीं हुई थी। लेकिन बहुरंगी सेना जो हमारे साथ थी, को देखकर

हमें आभास हो गया था कि अब आगे का रास्ता हमारे लिए सुरक्षित है।

9 मई को प्रातःकाल ही सभी रवाना होने के लिए तैयार हो गए। यहां से आगे का रास्ता संकरा था तथा इस मार्ग पर सैनिकों की रवानगी बारे व्यवस्था की गई। घोड़ों, रसद तथा अन्य सैन्य सामान को ले जाने की व्यवस्था को अंजाम दिया गया। इसके पीछे गोरखा कंपनी को उनकी महिलाओं तथा बच्चों के साथ रवाना किया गया। तदोपरांत कमाऊं के सैनिक आगे बढ़े। पठानों के बाद लगभग सात बजे के आस-पास हमारा काफिला रवाना हुआ। आखिर में मेवाती सैन्य टुकड़ी रवाना हुई।

हमारे इस काफिले में विविध रूप थे। वेशभूषा, नयननक्श, रंग, कदकाठी, हथियार, भाषा का एक व्यापक फलक था। इसके बाद शोर तथा हुंकार। सिपाहियों तथा उनके अधिकारियों द्वारा पहाड़ी या पहाड़ के कुलियों को दिए जा रहे आदेश तथा उनका इस कार्य से मुक्ति पाने के लिए बड़बड़ाने की आवाज गोरखों के रणसिंघों तथा ढोल की ध्वनि में दबकर रह जा रही थी। यह सारी, ध्वनि ग्रामीण क्षेत्र में पहाड़ों तथा चोटियों से टकराकर ऐसा प्रभाव डाल रही थी कि इसका उल्लेख शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता।

जब हमारी सैन्य टुकड़ी का मार्च आरंभ हुआ तो यह दृश्य देखते ही बनता था। अंग्रेजी सैनिकों की लाल व पीली वर्दी, नीली पतलूनों में दाड़ी वाले पठान, चौड़े मुखवाले छोटे कद के गोरखे, मेवाती तथा कुमाऊं कंपनी के सभी विविधता लिए एक अलग परिदृश्य प्रस्तुत कर रहे थे। काफिला आगे बढ़ा तथा पेखीनाला में पहुंचा जो कि चूड़धार की किसी चोटी से निकलता है जो दक्षिण-पश्चिम दिशा में बहता हुआ गिरी नदी में जाकर मिलता है।

पेखीनाला को हमारा काफिला जंगल से होकर गुजरा। हम एक छोटे से गांव कुबल से होते हुए गुदरोटू (Gudrotee) पहुंचे जो बड़ा गांव प्रतीत होता था। जहां हम कुछ देर रुके। यहां अच्छी खेती नज़र आई जहां कृषि कार्य चल रहा था। खेतों को धान की रोपाई के लिए तैयार किया जा रहा था जबकि गेहूं तथा बाजरे की फसल कटाई के लिए तैयार थी। कुछ खेतों में कपास लगी थी। दाल की फसल जिसे मैदानों में उड़द या (Pigeon-peose), कहा जाता है घाटी तथा खेतों में लगी थी।

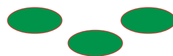
गुदरोटू एक बड़ा गांव है। जो पहाड़ी के किनारे, घाटी के ऊपर अवस्थित है, जहां पहुंचने के लिए चढ़ाई वाला रास्ता है। यह एक सुरक्षित स्थल मालूम पड़ता है। प्रत्येक गांव, सुरक्षा दी दृष्टि से अर्ध-सुरक्षित हैं। यह सुरक्षा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नज़र आते हैं, सामरिक दृष्टि से ये लुटरों से भी सुरक्षित रहते हैं। यह गांव अन्य गांवों से बड़ा था। इसके मध्य में कुछ क्षतिग्रस्त मकान थे लेकिन अन्य गांवों के मुकाबले यहां कम क्षतिग्रस्त घर थे। इस गांव में पचास से साठ फुट ऊंचे टावर जिन का निर्माण सूखे पत्थरों तथा लकड़ी से किया गया था, मौजूद थे। प्रत्येक गांव में क्षतिग्रस्त घरों का कारण यहां के निवासियों के पलायन करने से नहीं था बल्कि समय के साथ भवन सामग्री में उपयुक्त लकड़ी के क्षतिग्रस्त होने से प्रतीत होता था। पुराने घरों की मरम्मत के बदले लोगों ने नए घरों का निर्माण करवाना वाजिब समझा था।

गांवों में स्थित देवालयों में लकड़ी पर खूबसूरत नक्काशी की हुई थी। छतों से खूबसूरत लकड़ियां लटकती नज़र आती थीं तथा किनारों पर लकड़ी की घंटियों को लगाया गया था। हिंदू देवी-देवताओं की चित्रों को दरवानों तथा खिड़कियों पर उकेरा गया था, में चीनी तथा हिंदू संस्कृति का मिश्रण नज़र आता था। इन मंदिरों के शिखरों तक पहुंचने में लकड़ी के शहतीर, जिसे बीच-बीच में काटा गया था, लगाए जाते थे। प्रत्येक मंजिल के लिए अलग से सीढ़ी का प्रावधान था। इस गांव व साथ लगते गांवों में देवदार के घने जंगल थे। इस यात्रा के दौरान हम लगभग 20 गांवों से होकर गुजरे। रास्ते में हमने कपास तथा मटर की खेती को भी देखा।

यहां से आगे शिखर की यात्रा में हम दो गांवों से होकर गुजरे। ये मुख्यतः ब्राह्मणों के गांव थे। यहां से चूड़धार स्पष्ट नज़र आ रहा था। हमारा काफिल गांव शाई पहुंचा जो अधिकांशतः क्षतिग्रस्त प्रतीत होता था। 10 मई को यहां ही पड़ाव लगाया। रसद सामग्री का इंतजाम किया तथा 11 मई को जुब्बल के चौपाल स्थित किले की ओर कूच किया।

हमें कीर्ति सिंह की पराजय तथा दुश्मन सेना के हथियार डालने का समाचार मिला। हमें बताया गया कि अमर सिंह की सेना ने बगावत कर उसे छोड़ दिया है। हमारा कैंप दो खड्डों से मिलने वाले स्थान पर लगाया गया जो चूड़धार से निकलती है। ये आगे चलकर गिरी नदी में भरोग गांव के पास मिलती है जो बलसन रियासत में पड़ता है। विशेरी नाला (Bisharee Nallah) सिरमौर तथा जुब्बल रियासत की सीमा बनाता है।

जैम्स बैली फ्रेजर ने 1815 में सिरमौर जनपद में अपने कदमों से नापा तथा उन्होंने गांवों की संस्कृति, सभ्यता तथा जनजीवन को बहुत ही नजदीक से देखा। उनके यात्रा वृत्तातों से पाठक अपने मानस पटल पर उस वक्त की स्थिति को चलचित्र की भांति देख सकते हैं। पहाड़ वही हैं, रास्ते वही हैं, जीवन वही है लेकिन उसे देखने का नजरिया सबका अलग-अलग है।



1820 में सिरमौर

मूरक्राफ्ट की सिरमौर यात्रा

विलियम मूरक्राफ्ट ने लद्दाख की यात्रा के दौरान वर्ष 1820 में दून क्षेत्र की ओर से आते हुए यमुना नदी को पार किया और सिरमौर रियासत में दाखिल हुआ। यमुना के बाएं किनारे पर पांवटा स्थान अवस्थित था। यहां किले के भग्नावेश मौजूद थे। इसके समीप कुछ घास की झोंपड़ियां थीं। ये झोंपड़ियां राजबन वन क्षेत्र में साल तथा सीसू के वृक्षों की कटाई में लगे लोगों की थीं।

मूरक्राफ्ट का काफिला दून यानी क्यारदा की घाटी से आगे बढ़ा था। गोरखों के अधिपत्य से पूर्व क्यारदा दून में 84 आबादी वाले गांव थे। उस वक्त मात्र सात के करीब ही गांव बचे थे, जो कि बहुत खुशहाल न थे। 1815 में क्यारदा दून में 280 घर थे जिनकी आबादी 600 के करीब थी। यह घाटी वर्षा ऋतु में रहने लायक न थी। क्यारदा में मूरक्राफ्ट, मैदानी इलाके से होकर गुजरा, रास्ते में अनेक छोटी खड्डों, नदियों को पार किया जो अधिकांशतः सूखी हुई थीं। वे बाता नदी के साथ-साथ चला। जो पांवटा के पास यमुना नदी में जाकर मिलती है।

कालसी में नदी की राह को छोड़कर, चढ़ाई चढ़ जंगल की राह पकड़ी जो कि क्यारदा दून की पश्चिमी सीमा कहलाती है। इस स्थल की सिरमौर के इतिहास में अहमियत है क्योंकि यहां सिरमौर के राजा जगत प्रकाश ने रोहिला के राजा गुलाम कादर को हराया था। रोहिला सेना ने गढ़वाल को जीता, जहां उसे अधिक विरोध का सामना नहीं करना पड़ा। रोहिला सेना सिरमौर में दाखिल हुई और उसे वहां भी विजय मिलती गई। सिरमौर के राजा जगत प्रकाश ने घाटी को छोड़कर कालसी में अपनी सेना के साथ डेरा डाला। यहां भीषण युद्ध हुआ और अंत में पहाड़ी जांबाज सैनिकों के हौसले के आगे उन्हें क्षेत्र खाली कर वापिस लौटना पड़ा। यह युद्ध गुलाम कादर के दिल्ली पर काबिज होने के दो वर्ष पूर्व हुआ। इस वन क्षेत्र में अनेक चश्में तथा दलदल वाला क्षेत्र है जहां से जल एकत्रित होकर मारकंडा नदी में बहता है और कुछ जल कौशल्या नदी में जाता है। मूरक्राफ्ट तथा उसके दल ने एक उजड़े गांव 'बकरी का बाग' में अपना शिविर लगाया तथा कारवां अगले दिन नाहन के लिए रवाना हुआ।



यूरोपियन नागरिक विलियम मूरक्राफ्ट (1767-1825) एक पशु चिकित्सक था, जो लंदन में पशु चिकित्सा का कार्य करता था। वर्ष 1807 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने उसे घोड़ों के प्रजनन में सुधार के लिए उसकी सेवाएं लीं। वे वर्ष 1808 में भारत आया और कंपनी के घोड़ों की देखभाल के लिए पूसा में तैनात किया गया। अक्तूबर 1819 में उसने हिमालय क्षेत्र की यात्रा बरेली से आरंभ की। इस यात्रा में उनके साथ उनके पुराने दोस्त का बेटा जार्ज ट्रैवक, जिसने अपनी सेवाएं स्वैच्छिक तौर पर ड्राफ्ट्समैन तथा सर्वेयर के रूप में दी थीं कंपनी में चिकित्सा क्षेत्र में तैनात गुटरे, मीर इज्जत उल्ला, जो कुछ वर्ष पूर्व हिमालय क्षेत्र में रास्ते के सर्वेक्षण के लिए गया था व बरेली के एक व्यक्ति गुलाम हैदर खान था। इस दल की सुरक्षा के लिए 12 गोरखा सैनिक भी थे।

नाहन शहर का उल्लेख गोरखों के विरुद्ध नाहन अभियान के दौरान आता है, जिसके सामने दो किले जामटा व जैतक थे, जहां कुछ समय तक ब्रिटिश फौज को जनरल मारट्रेडल के तहत रोजगार मिला था। वे वहां से मलौण किले पर सर डेविड ऑक्टरलूनी के फतह के उपरांत वहां से वापिस गई थी। जैतक में कैप्टन विल्सन के शहीद होने पर उनकी याद में स्मारक नाहन के मध्य में बने बड़े टैंक के किनारे बनाया गया है। यहां चार ब्रिटिश सैनिकों की कब्रे हैं जो जैतक की लड़ाई में मारे गए थे। शिलालेख लै. थैचकरे ने वहां लगाया था।

नाहन शहर फैला हुआ है और यहां ऊंचे स्थानों की अपनी विशिष्टता है। शहर के अधिकांश घर पत्थरों के बने हैं तथा यह स्थान भारत के अन्य शहरों के मुकाबले स्वच्छ तथा रमणीय नज़र आता है। इस स्थल से पहाड़ों तथा घाटियों के दृश्यवलियां मनमोहक तथा सुंदर दिखाई देती हैं। यहां से मैदानों के दृश्य मनोहारी तथा इसके मध्य बहती मारकंडा नदी और भी खूबसूरत लगती है।

नाहन सिरमौर के राजा फतेह प्रकाश का निवास स्थान है। जो 14 वर्ष का एक युवा है जिसे राज्य की सनद लौटाई गई है तथा रियासत की सालाना राजस्व प्राप्ति 40,000 रुपये है।

हमारे अगले दिन प्रातः प्रस्थान के वक्त युवा राजा एक तेंदुआ लेकर आया जिसका शिकार पिछले दिन शहर के समीप किया गया था। उसके कारकूनों ने बताया कि नाहन के समीप पहाड़ियों में शेर तथा चीते पाए जाते हैं। वे निचली पहाड़ियों में गाहे बगाहे आ जाते हैं। हमने नाहन से अपनी यात्रा एक मार्च की तरह पश्चिमी तथा दक्षिणी दिशा की ओर आरंभ की। यह रास्ता ढलानदार तथा ऊबड़-खाबड़ था। इस ढलान पर अनेक स्थानों पर परोपकारी व्यक्तियों ने पेयजल तथा नहाने के लिए जलकुंडों का निर्माण करवाया हुआ था। पहाड़ी के निचले छोर पर सलूनी नदिका, जो मारकंडा नदी की स्रोत है, स्रोत था, जो उस वक्त सूखा था। तदोपरांत रास्ता संकरा तथा चढ़ाई वाला था जो जंगल तथा घास के जंगल से होकर गुजरता हुआ खेती योग्य भूमि तक पहुंचता था। यह स्थान सिख सीमा गांव डेरा कहलाता था। इस स्थान पर मिट्टी का एक किला था।

हमारी अगली यात्रा जो कृषि योग्य स्थल (खेतों) जंगल से होती हुई नदी, नालों जो अधिकांश सूखे थे, को पार करते हुए लाहा गांव पहुंची। वहां काफिले ने लोगों को कमल ककड़ी को निकालते हुए देखा जो, उसका उपयोग सब्जी के रूप में करते थे। उसे उबालकर तथा इसमें नमक तथा मक्खन के साथ स्वाद से खाते थे। इस गांव के आसपास के किसान तब गन्ने की खेती भी करते नज़र आए तथा वे खेतों के किनारे मोटी घास लगाते थे जिससे कि फसल को हिरण से बचाया जा सके। काफिले ने बूरीवाला में आम के बाग में पड़ाव लगाया। अगले दिन काफिला गांवों से होता हुआ रायपुर शहर पहुंचा। यहां नाहन के राजा के चाचा कृष्ण सिंह का निवास था। अगले दिन काफिला एक बड़े शहर रामगढ़ से होता हुआ आगे बढ़ा। यहां हरि सिंह का मिट्टी का किला था। मैं अपने कारवां से आगे चलकर पीपल के पेड़ के नीचे ठंडी हवा में आराम करने को रुका तो मैंने वहां मधुमक्खी के करीब दस छतों को देखा। दल के वहां पहुंचने पर मैंने उन्हें इन छतों बारे आगाह किया। फिर भी हमारे दल के एक युवा ने मधुमक्खियों को छेड़ा तथा उसके परिणाम हमें भुगतने पड़े। मुझे मधुमक्खी ने आंख तथा मुंह पर काटा। मैं, मधुमक्खी से जान बचाकर खेतों की ओर भागा जहां एक ग्रामीण ने जलाए हुए घास को घूमा कर मुझे बचाया। इस हमले में शिविर में अफरा तफरी फैल गई और सभी जान बचाने के लिए इधर-धर भागे। कुछ ने रायपुर में शरण ली लेकिन मक्खियों ने यहां भी पीछा न छोड़ा। संपूर्ण रायपुर शहर में हो-हल्ला का माहौल रहा। दिल ढलने पर मधुमक्खियां शांत हुईं और हमें शांति मिली।

पांच मार्च को दल मधुमक्खियों के भय से जल्दी ही रवाना हो गया। मैंने घग्घर नदी के एक लंबे सूखे क्षेत्र को पार किया। लेकिन दल के अन्य सदस्य ट्रेवेक एक अन्य रास्ते से होकर मनीमाजरा पहुंचे। मैं नदी के बाएं किनारे बने रास्ते से होकर गुजरा। मिट्टी की पहाड़ियों के अंतिम छोर पर चांदनी किला था जो उस दर्रे की रखवाली करता था। कुछ ही दूरी पर राजा पटियाला की कस्टम चैक पोस्ट थी। यहां पर अनार के छिलकों की खेप (पहाड़ में होने वाला जंगली अनार) कर न चुकाने के कारण बहुतायत में रखी थी। इसका उपयोग चमड़ा तथा कपड़ा रंगने के लिए किया जाता है। यह रास्ता घग्घर नदी को पार कर एक संकरे रास्ते से गुजरते हुए पिंजौर पहुंचता था। उस वक्त पिंजौर एक छोटा- सा गांव था। लेकिन यहां के मकानों की दीवारों पर नक्काशी किए गए पत्थर तथा चित्रकारी देखते ही बनती थी। यहां बावड़ी तथा कुओं के स्तंभों पर नक्काशी को देखने से यहां की गौरवमय इतिहास तथा वैभवता का पता चलता था। यहां हिंदू मूर्तियों के भग्नावशेष बिखरे पड़े थे। इसके अलावा भवनों के अवशेष भी यत्र-तत्र नज़र आते थे। यहां स्थित किले को फ्रांसीसी अधिकारी एम. बारक्यून (M. Bourquin) ने गिरा दिया था जो दौलत राव सिंधिया की सेवा में था। लेकिन किले की अंदरूनी दीवारें यथावत खड़ी है। जिसके भीतर छः सीढ़ीनुमा बाग अवस्थित थे। यह बाग दो सौ बीघा या छह एकड़ से अधिक क्षेत्र में फैले थे तथा इन बागों के लिए ऊंचे स्थान से पत्थर की पक्की नालियों में जल की आपूर्ति की जाती थी। यह जल एक बाग से दूसरे बाग में जब जाता था तो वहां सुंदर झरने तथा फव्वारे बनाए गए थे तथा एक झील भी निर्मित थी। जब बाग पूरे यौवन पर होता होगा तो यह भव्यता लिए तथा गर्मियों में ठंडक का सुकून देने वाला था। उपरले तथा पश्चिम बाग में पूर्व निवासी 'किलेदार' का आवास था। एक अन्य भवन बाग के मुकाबले छोटा था। लेकिन इसका निर्माण सुरुचिपूर्ण किया था तथा यहां से संपूर्ण क्षेत्र पर नज़र रखी जा सकती थी। इस भवन में पटियाला के राजा के थानेदार का आवास स्थित था। बाग में आम, संतरे, सेब, अनार के पेड़ थे। इसके अलावा पॉपुलर के पेड़ लगे थे। कुछ बागों के हिस्सों में गुलाब तथा गन्ने के पौधे उगाए जाते थे। गुलाब भी लगाया जाता था जिससे राजा के लिए वार्षिक तौर पर इत्र तैयार किया जाता था।

यहां से काफिला अंग्रेजों द्वारा निर्मित नई सड़क पिंजौर से नालागढ़ होता हुआ आगे बिलासपुर (कहलूर) की ओर बढ़ा।

सन् 1842

जब नाहन पहुंचे रूसी यायावर



पंजाब तथा इसके साथ लगते क्षेत्रों में अंग्रेज यात्रियों, यायावरों ने यहां के भौगोलिक परिदृश्य के साथ राजनैतिक इतिहास को लिखा। 1780 में जार्ज फोरस्टर के यात्रा संस्करण से उत्तर भारत में सिखों के उद्भाव तथा उससे पूर्व की जानकारियों का ज्ञान मिलता है। तदोपरांत राजनैतिक एजेंट मूरी के यात्रा वृतांत प्राप्त होते हैं, जिनका निधन 1831 में हुआ, ने 'सिखों की शक्ति का उदय' बारे लिखा। उसके साथी वेड ने लुधियाणा में रणजीत सिंह के इतिहास को कलमबद्ध किया। इसके बाद मैसन, ह्यूगल तथा होनिगवर्गर ने अपने- अपने तरीके एवं अनुभव से लिखा। 1820 में मूरक्राफ्ट तथा टैबेक के यात्रा वृतांत मिलते हैं। मूरक्राफ्ट कंपनी के अधीन, पशु अधिकारी था, जैक्यूमोंट के अनुसार उसने एक राजनैतिक एजेंट बनकर लद्दाख के शासक के साथ संधि भी की थी।

मूरक्राफ्ट के दस वर्ष उपरांत फ्रेंच वैज्ञानिक जैक्यूमोंट के यात्रा वृतांत मिलते हैं। उसके पत्रों को फ्रेंच भाषा से अंग्रेजी में अनुवाद कर आम पाठक तक लाया गया। जबकि एच.एल.ओ. गौरेट ने उसके अनेक दस्तावेजों को The Punjab A Hundred Years Ago' पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। उसने 1809 में सिखों के साथ संधि, रणजीत सिंह के दरबार की जानकारियां साझा कीं। उसने वर्ष 1831 में अंग्रेजों द्वारा पंजाब में अधिग्रहण की भविष्यवाणी कर दी थी तथा अंग्रेजों द्वारा देश पर अपना अधिपत्य स्थापित करने के लिए जागीरों को जारी रखने की भी वकालत की थी।

फ्रेंच यायावर ने सतलुज घाटी क्षेत्र पंजाब तथा कश्मीर का दौर किया। उनके वृत्तांत वर्ष 1830 में उत्तर भारत में राजनैतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालने वाला है।

तदोपरांत वर्ष 1842 में रूस के सैंट पीटरज़वर्ग के एक प्रतिष्ठित परिवार से संबंध रखने वाले एलेक्सीज़ सॉल्टीकॉफ प्रिंस जो मूलतः एक कलाकार था और उसके पास चित्रकारी पुस्तिका सदैव उपलब्ध रहती थी, की यात्रा 'कला' के पहलुओं पर आधारित थी। उसका बचपन सैंट पीटरजर्ग में व्यतीत हुआ। 18 वर्ष की आयु में रूस राज्य बोर्ड के विदेश सेवाओं में तैनाती मिली। वे इस सेवा के दौरान एंथेस, लंदन, रोम, तेहरान में तैनात रहा। 1840 में सेवानिवृत्ति उपरांत पैरिस आ गया। वहां से भारत आया। पहली यात्रा 1841-43 तथा दूसरी यात्रा 1844-46 के मध्य हुई। 1959 में लंदन में उसके रेखाचित्रों पर पुस्तक प्रकाशित हुई। वह दिल्ली, शिमला तथा पंजाब के क्षेत्रों में गया। उस वक्त रणजीत सिंह का देहांत हो गया था तथा नया राजा गद्दी पर बैठा था। उसके यात्रा वृतांत Civil and Military Gazette में प्रकाशित हुए।

प्रथम नवंबर 1842 को वह शिमला से दिल्ली की ओर रवाना हुआ। वह नाहन होता हुआ दिल्ली गया। उसे शिमला में बताया गया कि नाहन एक सुंदर जगह है तथा एक स्वतंत्र राजा यहां का शासक है। वह पहाड़ों से होता हुआ नाहन पहुंचा तथा उसने इस पर्वतमाला को मुख्य पहाड़ न मानकर पहाड़ों की तलहटी वाले शिखरों की संज्ञा दी।

3 नवंबर, 1842

'वह अपने वृत्तांतों में लिखता है कि मैंने नाहन देखा। यह एक जीर्ण-शीर्ण स्थल जो कोई विशेष रुचि वाला नहीं था। राजा ने शहर के बाहर ही मुझे रहने के लिए घर दे दिया तथा राजा तुरंत अपने अनेक साथियों के साथ एक सुंदर घोड़े पर सवार होकर मुझसे मिलने आया। अपने कुछ साथियों के मुकाबले वह कोई प्रतिभाशाली व्यक्ति न लगा। हालांकि उसका सोने का कंगन काफी बड़ा था तथा कानों के झुमके हीरों से जड़ित थे तथा उसके पैर वीभत्स नज़र आते थे।

शाम को मैं उसके दरबार हाल गया और उसने मुझे अपने महल को दिखाया, जो बहुत ही सुंदर था। उसके फ्रेंच मुद्रित सामान, भगवान जाने कहां से मंगवा रखा था। मैंने दरबार में पालतू शेर को देखा। यह स्थल हिमालय के निचले क्षेत्र में

आर्ट स्कूल की स्थापना

रियासती दौर में उद्योग एवं हस्तकला के विकास के लिए नाहन में एक आर्ट स्कूल की स्थापना की गई। इसमें युवाओं का कौशल विकास हुआ था। इस स्कूल में लखनऊ से एक सरदार, जिला होशियारपुर से एक बढ़ाई, मुरादाबाद से एक लोहार की नियुक्ति की गई। विद्यार्थियों की इन विषयों में रुचि न होने के कारण ही कुछ अरसे उपरांत बंद करना पड़ा।

दस्तकारों को स्वरोजगार के लिए विभिन्न उपक्रम

हिमाचल गठन के उपरांत सिरमौर जिले में अनेक लघु उद्योगों की स्थापना की गई। इन उद्योगों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य विभिन्न उपक्रमों के लिए दस्तकारों को स्वरोजगार के लिए तैयार करना रहा।

पांवटा में मिट्टी के बरतनों का प्रशिक्षण केंद्र

इस प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना वर्ष 1954 में की गई। इस संस्थान में ग्लेज पॉटरि का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था थी। मार्च 1966 तक 66,170.22 रुपये लागत का उत्पादन किया गया। केंद्र ने 55,741.93 रुपये के उत्पादों को बेचा। ग्रामीण स्तर पर कुम्हारों को प्रशिक्षित करने के लिए पहल की गई। इस कार्य के लिए कच्चा माल पंजाब, हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश से आयात किया गया। उत्पादित समान को स्थानीय स्तर तथा नाहन व शिमला में बेचा गया। चीनी मिट्टी के उत्पाद बनाने के लिए कच्चा माल उत्तर प्रदेश के खुरजा से मंगवाया गया, वहीं बिहार से कोयले का आयात हुआ। रेल मार्ग से दूर होने के कारण यह उद्यम व्यावहारिक नहीं रहा।

अवस्थित है। मैं शिमला, मसूरी, नाहन, सुबाथू से होकर गुजरा हूं जहां गोरखों का कब्जा रहा था। अंग्रेजों के आने पर इन क्षेत्रों को गोरखों से खाली करवाया गया और संबंधित सिंहासनों पर राजाओं को पुनः बिठाया गया।'

नाहन का राजा भी उन्हीं में से एक है और यह अंग्रेजों की सुरक्षा में है। वह अपनी अवाम पर बहुत जुर्म ढाहता है, इतना कि हाल ही में जब मैं चीनी (कल्पा) में था तो इस छोटी-सी रियासत में क्रांति का बिगुल बज गया। यहां के शांतिप्रिय लोगों ने बगावत कर भाले- बरछे सहित ऊंचे पहाड़ों पर शरण ले ली, जो यहीं से दिखाई देते हैं और आंशिक रूप से बर्फ से ढके रहते हैं। इन्होंने रोमन नागरिकों की तरह ही जो 449 ईसा पूर्व पहाड़ों पर चले गए, की युक्ति अपनाई। बगावत की और तब तक नीचे नहीं आए जब तक कि उन्हें अधिकार प्राप्त नहीं हुए।

ये लोग राजपूत जाति के हैं। लड़ाके तथा कठोर प्रवृत्ति वाले होते हैं। भारतवर्ष में राजपूत प्रमुख लड़ाकू जाति है। अंग्रेजी रेजीमेंट में राजपूत सिपाही काफी संख्या में भर्ती हैं और उनकी उच्च प्रतिष्ठा है। मिस्टर क्लार्स जिसके अधीन राजा है, ने इस स्थिति के लिए राजा को ही दोषी ठहराया। उसने राजा की शक्तियों को कम करने की धमकी दी है और व्यक्तिगत तौर पर रियासत में आकर राजा को फटकार लगाने का प्रस्ताव रखा है। मिस्टर क्लार्क ने ही मुझे इस मार्ग से आने की सलाह दी थी तथा उसने मेरे हाथ राजा के लिए एक पत्र भी दिया था और कहा था कि वह राजा से कहे कि वह भी यहां आने वाला है। इस पर अभाग्य राजा की टांगें कांपने लगी और वह मुझे 'खुदावंद' कहकर पुकारने लगा, जो प्रभु के लिए प्रयुक्त किया जाता है और 'हजूर' जिसका अर्थ महाराज होता है। हमारे संबंध ऐसी घटना उपरांत बहुत अच्छे प्रतीत न हुए, जिस कारण मैंने शीघ्र अंबाला प्रस्थान करने का निर्णय लिया जहां मैं पालकी में बैठकर शीघ्रातिशीघ्र दिल्ली पहुंच गया। आप लोग इस बात पर हंस रहे होंगे कि उन्होंने मेरे साथ यहां कैसा बर्ताव किया लेकिन यह आपको जरूरी तौर पर जानना होगा कि भारत के इस क्षेत्र के निवासियों में आदर सत्कार में अत्यधिक विरोधाभास नज़र आता है। जब कोई व्यक्ति मुझे सड़क पर मिलता है तो वह सड़क के एक ओर खड़े होकर, अपने जूते उतार कर अपने हाथ सिर से छूकर अभिवादन करते थे और अपने दोनों हाथ जोड़कर अगर हिंदू है तो राम-राम और मुस्लिम है तो सलाम करते थे। इसके अलावा कोई अन्य न के बराबर है। अगर कोई अपने सादर सत्कार में ज्यादा आनुष्ठानिक नहीं होता तो वह अभिवादन के लिए मात्र एक ही पैर का जूता उतार कर सिर छुपाता है।

अंबाला तक की यात्रा पालकी में हुई जिसे नौ पहाड़ी लोगों ने उठाया। मैं अब उन्हें अंबाला से वापिस भेज रहा हूं और उपहार स्वरूप पालकी भेंट कर रहा हूं, जो अच्छी स्थिति में है और उसकी कीमत 150 फ्रेंक के करीब है। इसके अलावा जब वे मेरी सेवा में आए थे, तो मैंने उन्हें लाल कोट, पैंट तथा गुलाबी पगड़ी वर्दी के रूप में दी थी जिसे मैंने उन्हें रखने के लिए कहा। मैंने रात यहां कंपनी के बंगले में गुजारी जहां नौकर-चाकर, राशन तथा रहने की व्यवस्था थी।

गत दिन मैं सिख शहर शहजादपुर में रुका। प्रातः मैंने यहां से आखिरी बार उगते सूरज के बीच हिमालय की शृंखलाओं को निहारा जो मुझे ज्ञात है कि कठिन है, लेकिन वे यहां से देखने पर गुलाबी ऊषाकाल में नीलम सी प्रतीत होती है। इन रंगों के नीचे मैदान है, इसे देखने तथा चित्रांकन के लिए हजारों आखें, हजारों हाथ चाहिए तभी रूप, आकार, आकृति को बनाया जा सकता है।

000

बाल गोविंद की कलम से

वर्ष 1842 से 1898 का कालखंड

सिरमौर रियासत के राजा सर शमशेर प्रकाश के जीवन तथा उनके रियासत की खुशहाली, तरक्की, सामाजिक उत्थान के कार्यो पर वर्ष 1901 में श्री बालगोविंद ने एक पुस्तक The Life of Raja Sir Shamshere Prakash' प्रकाशित की। बालगोविंद रियासत में विभिन्न पदों पर आसीन रहे। वे फाउंडरी में सहायक मैनेजर सहित विभिन्न कार्यों को देखते रहे। इस पुस्तक के प्रकाशन का विचार बालगोविंद को 4 अक्तूबर, 1898 को शिमला में आया जहां उन्होंने राजा के देहांत का समाचार 'Pioneer' अखबार में पढ़ा। यह काबिलेगौर है कि बालगोविंद को ही शमशेर प्रकाश ने देश की अन्य रियासतों में प्रचलित प्रथाओं तथा उनके उन्मूलन के लिए उठाए गए कदमों का अध्ययन करने भेजा था। वे अपनी यात्रा समाप्त कर शिमला पधारे थे। इससे पूर्व, भी इस पुस्तक को लिखने के लिए राजा के अनुज भ्राता राजकुमार सूरत सिंह तथा एस.सी. सिंह सिरमौर ने दिया था।



1901 में प्रकाशित पुस्तक में सिरमौर तथा यहां के अवाम की जानकारी प्रथम अध्याय में मिलती है। वर्ष 1901 में रियासत का क्षेत्रफल 1,077 वर्गमील तथा आबादी 1,35,626 थी।

राजा शमशेर प्रकाश का प्रशासन उच्चकोटि का रहा तथा अन्य पंजाब की रियासतों में सिरमौर एक मॉडल रियासत मानी जाती थी। इस अध्याय में रियासत के जनजीवन, पूर्व में भारतीय प्रभुसत्ता के विचारों के तहत सर जैम्स लॉयल रिपोर्ट ऑफ कांगड़ा का उल्लेख मिलता है। दूसरे अध्याय में राजा शमशेर प्रकाश के आरंभिक जीवन का उल्लेख है। मई 1842 को नाहन में जन्में शमशेर प्रकाश का बाल्यकाल वैभव भरा था, की जानकारी दी। उन्हें सभी कीमती खिलौने तथा अन्य सामान उपलब्ध करवाया गया। उनका सबसे पसंदीदा खिलौना तलवार थी। इसी कारण उनका नाम 'शमशेर' रखा गया। सात वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। मौखिक रूप से सत्कर्म का ज्ञान उन्हें प्रदान किया जाने लगा। राजमहल में निजी शिक्षक से पढ़ाई आरंभ हुई। जिसने हिंदी, उर्दू भाषा का ज्ञान देने के साथ-साथ इतिहास, भूगोल का बोध करवाया। मुस्लिम शिक्षक ने बालक को औरंगजेब द्वारा राजाओं के लिए राजकीय कर्तव्यों बारे पढ़ाया वहीं उन्हें अकबर के मित्र अबुल फजल द्वारा कश्मीर के मंदिर में लिखी बातों का ज्ञान दिया। इन शिक्षकों के अधीन राजा ने 14 वर्ष तक ज्ञान हासिल किया।

पंडित कृष्ण लाल राय बहादुर तथा पंडित देवी चंद ने शमशेर प्रकाश को शास्त्रों, उपनिषदों तथा वेदों का ज्ञान दिया। पंडित कृष्ण लाल राय बहादुर ने इससे पूर्व कई तथा अन्य रियासतों के युवा शासकों को शिक्षा प्रदान की थी। उनके शब्दों में, "राजा 15-16 वर्ष का है। इस वक्त यह कहना कठिन है कि वह क्या बनेगा। लेकिन यह स्पष्ट है कि इस युवा के दिमाग में कुछ करने तथा बड़ा दिल मौजूद है। वे एक ख्याति प्राप्त व्यक्ति बनेगा तथा वह ऐसा राजा बनेगा जो अभी तक सिरमौर रियासत की गद्दी पर बैठा नहीं है।"

अपने पिता रघुवीर प्रकाश की मृत्यु के उपरांत वह गद्दी पर बैठा। उसने अपने अहलकारों को स्पष्ट तौर पर निर्देश दिए कि प्रभु प्रेम के लिए मुझे उपहास का पात्र न बनाया जाए। युवा शमशेर प्रकाश को उसके शिक्षकों ने उसे भूगोल की जानकारियां हिंदुस्तान तथा विश्व के मानचित्र के साथ दीं और उसे अन्य रियासतों के मुकाबले उसकी छोटी-सी रियासत का बोध भी करवाया। कुछ समय उपरांत जब राजा को अंग्रेजी पढ़ने व लिखने

का बोध हुआ तो उसने विश्व के इतिहास तथा महान व्यक्तियों की जीवनियों को पढ़ा। उसने इस बात पर गौर किया कि रियासत की भलाई के लिए अनपढ़ सिरमौरी अहलकारों के बदले अंग्रेजी का ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों को तैनात किया जाना चाहिए।

उसे इस बात का भी ज्ञान हुआ कि कानून राजा से बड़ा होता है तथा रियासत में अंग्रेजी कानून को लागू करना श्रेष्ठतम रहेगा। उसने दरबार में उर्दू में लिखित कानूनी पुस्तकों को मंगवाया और आदेश दिए कि न्याय सरकारी कानून के मुताबिक दिए जाएं, न कि राजा तथा अहलकारों द्वारा अपनी मर्जी पर। शमशेर प्रकाश के अंग्रेजी कानून के लागू होने से वहां पर कानून के जानकारों ने बहुत पैसा कमाया और धीरे-धीरे अंग्रेजी कानून लोकप्रिय हो गया।

अध्यापकों ने राजा को एक बात का सुझाव दिया कि सड़कों, राजस्व एकत्रीकरण तथा वन नियमों को भी लागू किया जाए। इसमें राज्य की उन्नति निहित है। उन्होंने कानून व्यवस्था के लिए पुलिस, सैनिकों की तैनाती पर भी जोर दिया। उन्हें समाज की भलाई के लिए कालेजों, स्कूलों को खोलने (लड़के व लड़कियों) अस्पताल (पुरुष व महिला), सराय तथा यात्रियों की सुविधा के लिए बावड़ियां निर्माण बारे भी ज्ञान दिया गया।

पंडित देवी चंद ने शमशेर सिंह को महाभारत तथा रामायण का बोध करवाया।। बाइबल तथा पुराणों के उपरांत शास्त्रों तथा पुराणों का ज्ञान प्राप्त किया। शमशेर प्रकाश बचपन से ही बहादुर, बेहतर घुड़सवार तथा श्रेष्ठ शिकारी बने। वह लॉर्ड लिटन के दौरे के दौरान उनके साथ शिकार खेलने दून के क्षेत्र में गए। लॉर्ड डैफरिन की भी नाहन यात्रा का उल्लेख डेफरिन की पत्नी ने Our Viceregal Life in India में किया है। यह दौरा रियासत के जनजीवन पर प्रकाश डालता नज़र आता है।

लेडी डेफरिन का नाहन दौरा

21 अक्तूबर 1885

हमने आठ बजे नाश्ता किया। साढ़े आठ बजे वायसराय ने बर्मा के साथ युद्ध की घोषणा की और आधे घंटे उपरांत शिमला से रवाना हो गए। और थोड़ी देर में हम तांगा वाले रास्ते (Cart Road) पर आ पहुंचे। हमारी यात्रा 1.30 बजे तक चलकर डगशाई पहुंची। यहां सेना की हाईलैंड लाइट इनफैंटरी ने भोजन की व्यवस्था की थी। हमारा दल बहुत बड़ा था। इसमें कमीश्नर, जिला अधिकारी, पुलिस अधिकारी तथा विदेश सचिव साथ होते थे।

डगशाई में भोजन उपरांत हमने अपने नौ मील पर स्थापित पड़ाव के लिए घोड़ों पर यात्रा आरंभ की। नाहन के राजा ने आधे रास्ते आकर हमारा स्वागत किया क्योंकि हम उसके मेहमान थे। रास्ते को ठीक प्रकार से व्यवस्थित किया गया था ताकि हमारे जैसे डरपोक व्यक्ति इस यात्रा से न डरें और यात्रा सुगम हो। हम अपने शिविर पर सायं 5 बजे के करीब पहुंच गए। हमारे लिए चायपान की व्यवस्था की गई थी। हालांकि संपूर्ण शिविर में सभी सुविधाओं की व्यवस्था की गई थी। यहां लवैंडर जल, स्याही, कागज, पिन, कैंची तथा सभी छोटी-से-छोटी उपयोगी वस्तुएं उपलब्ध थीं। मेरा टैंट काफी खुला था तथा मैंने रात्रि भोजन से पहले



कुछ लिखा जबकि टैंट के बाहर स्थानीय कारकून जोर-जोर से बातों में मशगूल थे। मैं उस आवाज को सुनने को आतुर रही जो उन्हें चुप करवाने के लिए पुकारी जाने वाली थी।

राजा अंग्रेजी भाषा बोलता था तथा वह बहुत दयालु प्रतीत हो रहा था। उसके नौकर चाकरों ने नई पोशाक पहनी हुई थी तथा उसकी पुलिस तथा सैनिक हमारी सुरक्षा में तैनात थे। हम मौसम के लिहाज से भाग्यशाली न थे। शाम को तूफान चल पड़ा और रातभर हवा के थपेड़ों से गुजरते रहे। हम सर्द हवाओं में अपनी रजाइयों में दुबके रहे।

26 अक्तूबर 1885

हमें इस बातकी प्रसन्नता हुई कि सर्द रात के उपरांत सभी कुछ ठीक-ठाक रहा। मैंने उठकर गर्म कपड़े जैकट तथा टोपी धारण की और पास की दो-तीन पहाड़ियों पर चढ़ाई की और इससे मुझे गर्मी का अहसास हुआ और मैं नाश्ते के लिए तैयार हो गई।

प्रातः कुछ देर आराम कर दोपहर के भोजन से पूर्व तेरह मील की यात्रा आरंभ की। यह एक अच्छे रास्ते से होकर गुजरनी थी तथा हमारा काफिला चाय के लिए निर्धारित समय पर वहां पहुंच गया। रात्रि भोजन के उपरांत हमें एक तेंदुआ पेश किया गया जिसे पड़ोस के जंगल में ही मारा गया था।

22 अक्तूबर 1885

प्रातः का समय पढ़ने तथा लिखने में व्यतीत किया। तदोपरांत सुंदर पहाड़ी स्थलों तथा जंगल से गुजरती हुई हमारी

यात्रा 15 मील पर स्थापित अपने अगले शिविर के लिए रवाना हुई। यह एक सुंदरतम स्थल था। टैंटों को विभिन्न स्तरों पर लगाया गया था। सबसे ऊपर दो पेड़ों की छाया में भोजन के टैंट को लगाया गया था जिसके साथ एक छोटा-सा सुंदर मंदिर भी अवस्थित था। मौसम सुहावना था तथा हम धीरे-धीरे गर्म क्षेत्र की ओर बढ़ रहे थे।

23 अक्तूबर, 1885

वायसराय नाश्ते से पूर्व शिकार पर निकले और मैंने अपने शिविर को कैमरे में कैद किया। पत्र तथा टैलीग्राम जहां भी हम जाएं हमारे साथ-साथ ही पहुंच जाते थे। बर्मा का मसला ताजा था तथा वायसराय को इस बाबत कुछ कार्य अवश्य रहता था।

हम दोपहर के भोजन उपरांत अगले पड़ाव के लिए रवाना हुए। मैंने अपनी यात्रा को लंबा देखते हुए पालकी में जाना पसंद किया और नाहन से छः मील की दूरी पर घोड़े पर सवार हुई। राजा, उसके पुत्रों तथा सरदारों ने शहर के समीप हमारा स्वागत किया। नाहन दूर से सफेद-सा प्रतीत हो रहा था। यह एक शहर से ज्यादा शिविर नज़र आ रहा था। जो पहाड़ी के शिखर पर बसा था और चारों ओर से वनों से ढका था। जब हम अपने गंतव्य पर पहुंचे तो हाथियों पर सवार सैनिकों ने हमें गार्ड ऑफ ऑनर दिया। इस पंक्ति में बड़े हाथियों के साथ हाथी के बच्चे भी शामिल थे। लोगों ने हमारे ऊपर पुष्प-वर्षा की। सड़क किनारे राजा के कारकून, निवासी तथा सैनिक पंक्तियों में खड़े थे। राजा के महल में हमारा रात्रि ठहराव था। यह एक अच्छा घर था जिसका केंद्रीय कक्ष दरबार हाल तथा चारों ओर आरामदायक कमरे थे। महल से पहाड़ों तथा मैदानों का सुंदर दृश्य नज़र आता था। पिछले दिन भी यात्रा के दौरान हमने देखा कि पहाड़ी से मैदान समुद्र की तरह नज़र आते थे जिसमें ज्वार आया हो और समुद्र का किनारा हरा-भरा तथा पथरीला नज़र आता था, जिसमें जल की धाराएं भी दिखाई पड़ रही थी।

राजा अंग्रेजी भाषा अच्छी बोल लेता था तथा वह अपनी रियासत के कार्य स्वयं देखता है। उसकी अपनी फाउंडरी है, वह पुल तथा सड़कें स्वयं बनवाता है। रियासत में बेगार प्रथा नहीं है। उसकी एक ही पत्नी है और वह प्रबुद्ध नज़र आता है। उसकी एक पत्नी होने के बारे में राजा ने स्वयं नहीं बताया बल्कि उसके सचिव ने मुझे यह जानकारी दी कि कोई स्त्री इस बारे में उनसे पूछ रही थी कि राजपूतों में तो ऐसा रिवाज नहीं होता।

24 अक्तूबर, 1885

मैंने सुबह कैंप के आदेश को पढ़ा कि राजा के चार सरदार, महामहिम के स्वास्थ्य के बारे जानकारी लेने आएंगे, जिनका स्वागत उनके कैंप के प्रभारी करेंगें वे आए और उन्हें अच्छी सूचना मिली।

प्रातः ग्यारह बजे राजा का आगमन हुआ। उन्होंने अपनी 72 मोहरों को प्रस्तुत किया और नियमित औपचारिकताओं को निभाया। वायसराय तथा राजा से भेंट महल के द्वार पर हुई जहां राजा ने मेहमानों के मनोरंजन के लिए खेलों व मनोरंजन का कार्यक्रम का आयोजन किया था। इनका आयोजन बैरक स्केयर में होना था। जो एक पहाड़ी पर खुला मैदान था जिसके किनारे लोगों का हुजूम उपस्थित था। नाहन की सेना, घुड़सवार दस्ता तथा पैदल सैनिकों की टुकड़ियां मध्य में तैनात थीं। प्रथम चरण में सैन्य कार्यवाइयां दिखाई गई। व्यायाम इसमें प्रमुख था जो कहीं ओर होता नहीं है। हाथियों की लड़ाई आकर्षक थी। तदोपरांत पहाड़ी संगीत का आयोजन पारंपरिक वाद्ययंत्रों के साथ हुआ जिसकी धुनों पर पहाड़ी तीर कमान का खेल (ठोडा) खेला गया। इस खेल में तीर को प्रतिद्वंद्वी के पैरों पर मारने की प्रथा है। इन वाद्य यंत्रों में पांच से छः फुट लंबे पीतल के रणसिंघे थे जिसे हमने प्राप्त करने की उत्सुकता व्यक्त की।

कार्यक्रम के समाप्त होने पर हमने राजा का सबसे बड़ा हाथी देखा जो कि भारत में सबसे विशाल माना जाता था। तदोपरांत महल में जलपान हुआ तथा हमने अंधेरा होने का इंतजार किया। जब तक की संपूर्ण शहर में प्रकाश व्यवस्था हो जाए। जब हमने अपने कक्ष की खिड़की से बाहर झांका तो दृश्य खूबसूरत था। एक ओर पहाड़ों के रूप में नाटकशाला और सांझ ढलते वक्त मैदानों का सुनहरी रोशनी में खूबसूरत दृश्य दिखाई दे रहा था।

कुछ समय उपरांत हाथियों पर हमारा काफिला शहर की गलियों, सड़कों से होता हुआ बाजार से होकर गुजरा। सभी घरों को तेल के दीपकों से सजाया गया था। हमारा काफिला एक बड़े तालाब के समीप पहुंचा। वहां पहुंचकर हमने आतिशबाजी का आनंद लिया। ये सभी पटाखे नाहन में बने थे तथा बहुत श्रेष्ठ थे। घरों की रोशनियों का प्रतिबिंब पानी में सुंदर नज़र आ रहा था। चांद के आने पर कार्यक्रम समाप्त हुआ। हम वापिस महल आए और वहां तैनात पांच यूरोपियनों के साथ रात्रि भोजन किया। यहां नृत्य का कार्यक्रम प्रस्तुत हुआ।

25 अक्तूबर, 1885

इस दिन दोपहर के वक्त काफिला नाहन से चलकर माजरा शिविर पर पहुंचा। यह सफर गाड़ी में हुआ और रास्ते की थकान कतई न हुई। यह मार्ग जंगल तथा झाड़ियों तथा ऊंचे घास के मध्य से होकर गुजरता है। इसमें लकड़बग्घों, चीतों के मिलने की संभावना रहती है। यह कैंप बेहतरीन था। मैं तथा वायसराय कॉटेज में रहे जिसमें नीचे टैंट को कतारों में लगाया गया था। लॉर्ड विलियम यहां रात्रि भोजन के लिए आए।

26 अक्तूबर, 1885

इस दिन शिकार का कार्यक्रम रहा तथा हैरानी की बात यह रही कि पूरे दिन में एक भी चीता न मिला। हम वहां पिकनिक मना कर रात ढलते ही अपने शिविर पर लौट आए।

27 अक्तूबर, 1885

10 बजे प्रातः राजा से विदाई ली। हम तांगा पर सवार होकर उसकी रियासत से अगले पड़ाव के लिए बढ़े। राजा एक बहुत अच्छा व्यक्ति था तथा उसने हमारा राजसी अभिनंदन व आवभगत की। हम अब पहाड़ों की यात्रा पूर्ण कर मैदानों में आ गए थे। यहां बड़े-बड़े वृक्ष, बहती नदियों ने हमारा स्वागत किया। यह शिमला से बिलकुल अलग प्रतीत होता था।

000

सिरमौर के राजा शमशेर सिंह का विवाह क्योंथल के राजा की बेटी से हुआ। वह हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा को पढ़ व लिख सकती थी। राजा की अनुपस्थिति में वह राजपाठ भी संभालती थी। इसका ज्ञान उसे कर्नल आर.सी. वायरिंग की पत्नी ने दिया था जो सेवानिवृत्ति उपरांत सिरमौर रियासत में कार्यों को देख रहे थे। रानी दयालु तथा गरीबों की सेवा करने वाली थी। रानी की उदारता को जाते राम जोशी तथा नत्थू राम जोशी गा-गा कर सुनाते थे। लेकिन उसकी मृत्यु होने पर राजा दुखी रहने लगा। डॉ. पियर्सल के शब्दों में, "राजा जो खुले विचारों तथा हास्य की मूर्ति थी। रानी के वियोग में राज-पाठ छोड़ने को तैयार हो गया था।"

इसी दौरान राजा ने नाहन से दो मील की दूरी पर शिवपुरी में शमशेर विला का निर्माण करवाया। वहां रहकर उसने अकेलेपन तथा साधना में जीवन बिताने का निर्णय लिया तदोपरांत राजा ने दूसरी शादी करने की हामी भरी और राजा का विवाह कुनिहार के राणा की बेटी से हुआ।

राजा शमशेर प्रकाश ने अपनी रियासत में सभी धर्मों को समान समझा तथा अपने राज-पाठ की बेखूबी चलाया था। उससे बेहतर प्रशासनिक व्यवस्था के कारण ही सिरमौर एक खुशहाल रियासत कहलाई। सिरमौर रियासत ने स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम में अंग्रेजों का साथ दिया था। इसी के लिए सिरमौर के राजा को सात तोपों की सलामी का हक मिला जो 1867 में बढ़कर 11 तोपों तथा 1896 में 13 तोपों का किया गया।

शमशेर सिंह के दस वर्षों के कार्यकाल को अधीक्षक हिल स्टेट ने सराहा। 1867 में जब सिरमौर रियासत के प्रशासक को पंजाब हिल स्टेट में बेहतर पाया गया तो 1876 में दिल्ली दरबार में आमंत्रित किया गया जहां वायसराय द्वारा तगमा प्रदान किया गया। राजा को विश्व का सबसे विशाल हाथी भेंट में दिया गया। दोनों में बेजोड़ दोस्ती रही। यह दोस्ती मृत्यु पर समाप्त हुई। राजा के हाथी 'बृजराज' पर सवारी देखते ही बनती थी।

वर्ष 1896 में रियासत भारत में अन्य रियासतों के लिए मॉडल रियासत बनी तथा रियासत का नियंत्रण दिल्ली डिवीजन के कमीश्नर के अधीन कर दिया गया। राजा न्यायप्रिय था तथा उसने कभी भी किसी को मृत्युदंड नहीं दिया।

उसने रियासत का बंदोबस्त का कार्य नंदलाल को सौंपा। इस पर राजा के खिलाफ विद्रोह का बिगुल बज गया। इसमें तहसील पल्ली के ऊच्छू तथा पच्छाद के प्रीतम ने कड़ा विरोध किया। उन्होंने अपनी जमीनों की पैमाइश न करने पर जोर दिया। उन्होंने मत व्यक्त किया कि लोहे की जरेब से नपाई से भूमि की उर्वरता समाप्त हो जाएगी। इनके नेतृत्व में लोग खड़े हो गए। इस विद्रोह को सख्ती से दबाया गया। विद्रोह के समाप्त होने पर भूमि की पैमाइश हुई। राजस्व एक लाख से ऊपर पहुंच गया। इसी दौरान जुब्बल तथा कालसी रियासत के साथ सीमा विवाद भी सुलझाया गया।

राजा शमशेर सिंह के प्रयासों से पड़ोसी रियासतों के साथ लुटरों तथा अपराधियों को पकड़ने के लिए प्रत्यारोपण संधि भी हुई। लोक निर्माण, पुलिस तथा वन विभाग की देखरेख के लिए यूरोपियनों को तैनात किया। वे प्रतिदिन दो घंटे राजसी व प्रशासनिक कार्यों पर लगाते थे। राजा ने अपनी रियासत को चार तहसीलों- नाहन, पच्छाद, पल्ली तथा माजरा में बांटा। तीस साल उपरांत बंदोबस्त का कार्य राय परमश्री शाही को सौंपा। इस कार्य से राजस्व की प्राप्ति बढ़कर तीन लाख रुपये हो गई।

राजा के अध्यापक तथा प्रधानमंत्री कृष्ण लाल ने कार्य को दक्षता से संभाला। कृष्ण लाल अंबाला जिले के मुस्तफाबाद का रहने वाला गोड़े ब्राह्मण था। इस दौरान राजा ने कृष्ण लाल के साथ मिलकर अनेक सुधार किए। व्यापार तथा वाणिज्यिक गतिविधियों को बढ़ाया गया। अध्यात्मक तथा धार्मिक गतिविधियां चरम पर थीं। राजा शमशेर प्रकाश ने रियासत में पहला कॉलेज के लिए पंजाब में अधिग्रहण का प्रस्ताव रखा। इसके लिए प्रबंधन समिति में सदस्यता ग्रहण करने हेतु 5 हजार रुपये दान दिए। कृषि को बढ़ावा देने के लिए डॉ. निकोलसन की देखरेख में मॉडल कृषि फार्म खोला।

सिरमौर रियासत ने काबुल युद्ध में सिरमौर की सेना के 200 सैनिकों को कर्नल आर.सी. वायरिंग के नेतृत्व में भेजा। वहीं 1897-98 में अपने बड़े सुपुत्र मेजर वीर विक्रम सिंह के नेतृत्व में तिराह अभियान (TIRAH) जो उत्तर-पश्चिम फ्रंटियर पर था, के लिए भेजा। अभियान के उपरांत जनरल लेन के तहत उसे सैन्य प्रशिक्षण दिया गया जब जनरल लेन ने इंग्लैंड जाने का प्रस्ताव दिया तो उसे सेना में कमांडर तैनात किया गया।

राजा शमशेर प्रकाश देश के उन पहले राजाओं में से एक हैं जिन्होंने अपनी रियासत में लोहे की ढलाई का कारखाना लगवाया और अपनी रियासत में अभियांत्रिकी के क्षेत्र में एक सार्थक पहल को अंजाम दिया। जब नाहन फाउंडरी का कार्य तेजी से आगे बढ़ रहा था तो उस वक्त एक बनिए को मिल का अधीक्षक नियुक्त किया गया। इसकी तनख्वाह मात्र 40 या 50 रुपये प्रति माह थी। इसे कारखाने में नियुक्ति, बर्खास्तगी तथा एजेंटों के साथ मामलों का दायित्व संभालने का कार्य दिया गया। इसने खजांची के साथ

मिलकर भ्रष्टाचार करना आरंभ किया और फैक्टरी को 30 हजार रुपये का घाटा सहना पड़ा। फैक्टरी के लिए कोयले की आपूर्ति करने वाले ठेकेदार दलेल सिंह ने उसे रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़वा दिया। राजा ने उसे इस दोष के लिए सजा तो नहीं दी लेकिन उसे नौकरी से निकाल दिया।

इस घटना से फैक्टरी की प्रतिष्ठा को आघात पहुंचा। फैक्टरी के विरोधियों को राजा के खिलाफ बोलने का मौका मिला। राजा ने अपने प्रत्युत्तर में कहा, "कुछ राजा अपना धन खेलों में, कुछ सैर सपाटों में, कुछ संगीत में और कुछ नाच-गाने में व्यय करते हैं। मैंने तो रियासत के धन को फैक्टरी निर्माण में लगाया है।"

इस दौरान वायसराय लॉर्ड लिटन के नाहन दौरे के दौरान राजा ने नाहन फाउंडरी की व्यथा वायसराय को सुनाई। वायसराय ने कहा कि ब्रिटेन में भी यह ज्यादातर फायदे का उपक्रम नहीं होता। इस पर राजा को पुनः इस कारखाने को आरंभ करने का विचार आया और अंग्रेज एफ.आर. जोन्स को फाउंडरी का अधीक्षक नियुक्त किया गया। जोन्स ने फाउंडरी को मुनाफे में ला खड़ा किया और फैक्टरी से धान पीसने वाली मशीनें, वाटर पंप, स्टोवों का निर्माण शुरू हुआ। रियासत ने वर्ष 1885-86 में यहां उत्पादित उपकरणों की मरम्मत, बिक्री तथा मिलों को किराये पर देने के लिए पंजाब प्रांत के सभी जिलों तथा नार्थ वेस्ट फ्रंटियर में केंद्र खोले। इससे रियासत की आर्थिकी पर भी असर पड़ा। इस व्यय से वर्ष 1875 में राज्य की आय से सात लाख रुपये अधिक व्यय हो गया। इस घाटे को पूरा करने के लिए राज्य के सभी विभागों के खर्चों को कम किया गया। रियासत की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने और अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए राजा शमशेर प्रकाश ने एक तरकीब सोची। उसे मालूम था कि उसके पिता की मृत्यु पर उसके चाचाओं ने रियासत का धन अपने घर पर छुपा रखा है तो वह अपने चाचा की विधवाओं के पास गया और उन्हें रियासत की माली हालत बारे बताया। वे इस पर पसीज गईं और उन्होंने अपने पुत्र रणजोर सिंह को राजा के हवाले कर सारा धन इस वायदे से दिया कि वह इसे अपनी तिजोरी में रखेगा। इससे कुछ भुगतान किया जाएगा व बाकी का धन रणजोर सिंह के बड़े होने पर उसे ब्याज सहित लौटा दिया जाएगा।

राजा शमशेर प्रकाश ने अंग्रेज इंजीनियर मैक्डोनाल्ड के कहने पर नाहन की जेल तथा वहां के कैदियों को गिरीपार क्षेत्र के चेता में स्थानांतरित करने का निर्णय लिया ताकि वहां पर लोह अयस्क को निकाला जा सके। इस कार्य के लिए तीन लाख रुपये व्यय किए गए जिसमें मशीनरी की खरीद, ढलाई उपकरण तथा चेता में जेल का निर्माण था। इस कार्य से लौह अयस्क पर 10 रुपये से 12 रुपये प्रति मन की लागत आई जबकि बाजार में यह तीन रुपये मन के हिसाब से उपलब्ध था। इस बढ़ी हुई लागत को देखते हुए राजा के मन में अंबाला से नाहन, नाहन से चेता में स्थित लौह अयस्क की खानों तथा रेल लाइन बनाने का विचार आया। जब मैकडोनाल्ड को यह आभास हो गया कि राजा उनके कार्य पर ध्यान नहीं दे रहा है तो उसने त्याग-पत्र दे दिया।

रियासत में विभिन्न सुधार कार्यक्रम

राजा शमशेर सिंह के कार्यकाल में रियासत में अनेक सुधार कार्यक्रम लागू हुए। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण थे- सड़कों का निर्माण तथा जन सेवाओं की उपलब्धता। अन्य सुधारों में नाहन फाउंडरी की स्थापना, बेगार प्रथा की समाप्ति, राजस्व तथा वन बंदोबस्त, डाक सेवाओं का विस्तार, नाहन में टेलीग्राफ सेवाओं की उपलब्धता, इन सुधारों से रियासत का नाम पंजाब तथा अन्य रियासतों में शीर्ष रियासत में आता था।

अध्यापकों की नियुक्ति

राजा ने मास्टर दिवान चंद को अध्यापक नियुक्त किया गया जो एक काबिल शिक्षाविद् थे। फारसी अध्यापक मौलवी जलालिल-उल रहमान को तैनाती दी गई। इन्होंने राजा के बच्चों को फारसी, उर्दू, हिंदी, अंग्रेजी की शिक्षा प्रदान की। पंडित ब्रह्म दत्त को संस्कृत पढ़ाने के लिए रखा गया। राजा ने नाहन में स्कूल खोलने के अलावा रियासत में 70 स्कूल खोले। इस कार्य की देखरेख के लिए एक इंस्पैक्टर ऑफ स्कूल, दो उप इंस्पैक्टर ऑफ स्कूल तैनात किए।

अस्पताल

राजा द्वारा नाहन में एक डिस्पेंसरी खोली गई। इसके लिए 10 हजार रुपये की दवाई खरीदी गई। यूरोपियन मेडिकल ऑफिसर तथा भारतीय सहायक सर्जन तैनात किए गए। रियासत में पहले सिविल सर्जन डॉ. पियरसाल थे और सहायक सर्जन डॉ. उदय राम थे। इन दोनों ने रियासत में नई चिकित्सा पद्धति को लोकप्रिय बनाने में अहम योगदान दिया। डॉ. पियरसाल की मृत्यु उपरांत डॉ. डीन नियुक्त हुए। इसके बाद डॉ. निकलोसन को नियुक्त किया गया। उनकी नियुक्ति विज्ञापन के माध्यम से हुई। डॉ. निकोल्सन एक श्रेष्ठ चिकित्सक के साथ-साथ रियासत के कार्यों में भी उनका योगदान सराहनीय रहा। अपनी चिकित्सकीय सेवाओं के अलावा उन्हें म्यूनिसिपिल कमेटी का अध्यक्ष व जेल का अधीक्षक व जिला बोर्ड का अध्यक्ष बनाया। इसके बाद मेडिकल ऑफिसर कर्नल स्कॉट बने तथा सहायक सर्जन महिमा चंद्र थे।

स्थानीय तथा जिला बोर्ड

सिरमौर रियासत में स्थानीय तौर पर स्वशासन की अनूठी व्यवस्था थी। दो और तीन गांवों के लोग आपस में मिलकर एक छोटा गणतंत्र बना लेते थे। इसका कार्य इन गांवों का भद्र पुरुष (स्याना) संभालता था। यह व्यक्ति अपने आपको देवता का प्रतिनिधि मानता था तथा लोग इसी के समक्ष अपनी समस्याओं

को लेकर जाते थे। वे दोनों पक्षों से नजराना लेकर समस्याओं के निवारण का कार्य करता था। यह प्रथा पहाड़ों में फैल गई। जब तत्कालीन राजा को इसका भान हुआ तो उसने सभी प्रबुद्ध व्यक्तियों को आमंत्रित कर उन्हें दैवीय शक्ति को प्रदर्शित करने को कहा कि जो अपनी शक्तियां दिखा देंगे, उन्हें सजा नहीं मिलेगी।

इन सभी में से राजा ने मात्र एक व्यक्ति जो झल्ला नाम से जाना जाता था, को छोड़कर कारावास की सजा दी।

तत्कालीन राजा को पंचायती राज प्रणाली, जो लोगों के लिए बेहतर थी, का ज्ञान हुआ तो उसने इसे शीघ्रता से लागू किया। इसी के तहत रियासत में स्थानीय बोर्ड प्रणाली गठित की। इस प्रणाली को भारत में वायसराय तथा भारत से गवर्नर जनरल लॉर्ड रिपन ने लागू किया था।

वर्ष 1884 में नाहन में जिला बोर्ड गठित किया गया। राजा को इसका अध्यक्ष, राजकुमार सूरत सिंह उपाध्यक्ष, माधो नारायण को सचिव तथा बोर्ड के आठ सदस्य नियुक्त किए गए। इसमें चार अंग्रेज तथा चार भारतीय थे। बोर्ड से सबसे पहला निर्णय रीत प्रथा पर 7 प्रतिशत कर लगाया तथा धीरे-धीरे रीत प्रथा को हटा कर हिंदू धर्म शास्त्र के अनुसार विवाह कानून लागू किया। इसी बोर्ड ने बेगार प्रथा को भी समाप्त किया।

नाहन स्कूल के छात्र पृथ्वी सिंह को 10 रुपये छात्रवृत्ति देकर वन विभाग में पढ़ने के लिए भेजा तथा पढ़ाई उपरांत उसने रियासत में अपनी सेवाएं प्रदान कीं। बोर्ड ने भी रियासत में कृषि विभाग खोलने की संतुति दी। डॉ. निकोल्सन को कृषि का अधीक्षक तथा बालगोविंद को उसका सहायक बनाया गया। डॉ. निकोल्सन से खेती में सुधार करने के लिए एक कृषि फार्म बनाया तथा सहारनपुर बोटेनिक्ल गार्डन व सहकारी स्टेर मसूरी से सब्जी तथा खाद्यान्नों के बीज मंगवाए। उसने गेहूं का बीज फ्रांस से तथा मक्की का बीज अमेरिका से मंगवाने का ऑर्डर दिया। कृषि फार्म में प्रशिक्षित मालियों की तैनाती की।

कला स्कूल

जिला बोर्ड ने कला स्कूल खोलने का भी निर्णय लिया। इसके उपरांत एफ.आर. जोन की अध्यक्षता में कला स्कूल बना जिसके लिए लखनऊ से सुनयारा, होशियारपुर से बढ़ई तथा रुड़की से ड्राफ्टसमैन को तैनात किया गया। इस स्कूल में 50 छात्र पंजीकृत हुए। इसका मूल मकसद भारतीय कलाओं को प्रोत्साहित करना था।

संगीत तथा सिरमौर

सिरमौर रियासत में तैनात डॉ. पियरसाल ने राजा को सलाह दी कि संगीत एक दवा है तथा इसका उपयोग व्यक्ति को मानसिक रूप से प्रसन्न रखने के लिए किया जा सकता है। संगीत की बात तब की जब राजा की पत्नी का निधन हो गया था और वह उदास रहता था। रियासत में प्रधान मंत्री राय कृष्ण लाल बहादुर के शब्दों में, "संगीत एक कला है तथा यह मानव विकास तथा बौद्धिकता को बढ़ावा देने का कार्य करता है। यह मानव की छठी इंद्री है।" रियासत ने अनेक संगीतज्ञों को अपने राजदरबार में रखा था। इनमें पंजाब के मशहूर गायक 'अल्ला दी' भी थे।

वन विभाग

रियासत में वनों के कटान से मौसम में बदलाव देखने को मिला तथा इससे वर्षा के अनुपात में भी कमी महसूस की गई। सिरमौर रियासत में एक बार मारकंडा नदी में आई बाढ़ से अनेक गांव तबाह हो गए। समीपवर्ती रियासतों, अंग्रेजी क्षेत्र की सड़कों तथा पुलों को क्षति पहुंची। इस पर तत्कालीन रेलवे कंपनी ने राजा को पत्र लिख कर कहा कि मारकंडा नदी के किनारे अंधाधुंध पेड़ों के कटान से आई बाढ़ के दोषी आप हैं। इस पत्र को पढ़कर राजा ने एकाएक वनों के संरक्षण का निर्णय लिया। तदोपरांत रियासत में अधिक वन क्षेत्र को 'संरक्षित वन' बनाने का निर्णय लिया। इसे राज्य की संपत्ति घोषित कर इसकी देखरेख के लिए विशेष राज्य अधिकारी लगाए गए। इन उपायों के तहत वनों का सर्वेक्षण कर, चरागाह, पशु चराने तथा वन कटान के लिए नियम लागू किए गए। खुले वनों के संरक्षण के लिए भी नियम लागू हुए।

रियासत का पहला वन अधिकारी भज्जू सिंह था। उसने नियुक्ति उपरांत पाया कि ऐसी पहाड़ियां जहां वन अत्यधिक हैं, वहां बिना सड़क के जाना मुश्किल होता है। इस कारण उसने इलाके में वनों को अनेक श्रेणियों में विभक्त किया। यहां पैदल पथ बनवाए। इन रास्तों के बनने पर वनों को आग की घटनाओं से बचाने में भी मदद मिली। जो लोग गर्मियों में घास प्राप्ति के लिए वनों में आग लगाते थे, उनके विरुद्ध मामले दर्ज कर नाहन कोर्ट में मुकदमें चलाए गए। भज्जू सिंह के बाद कंवर देवी सिंह जो राजा का भाई था, को नियुक्त किया गया। लेकिन जब देहरादून के वन प्रशिक्षण संस्थान से प्रशिक्षण उपरांत गुरंग व चिंतामणी को वन अधिकारी नियुक्त किया गया तो उसने ऐसे व्यक्ति जिसे वनों के संरक्षण का ज्ञान न था, के अधीन

दुनिया का विशालकाय हाथी 'बृजराज'

सिरमौर रियासत में दुनिया का सबसे विशालकाय हाथी था। यह रियासत की शान था। 'वृज राज' के नाम से इस हाथी को राजा को अंग्रेजों द्वारा रियासत में बेहतरीन कार्य करने के लिए दिया गया था। अंग्रेज सैंडरसन जिसने दुनिया भर की यात्रा कर हाथियों पर अध्ययन किया था, के शब्दों में हाथी अनुमानतः 9 फुट 10 इंच ऊंचा होता है लेकिन बृजराज की ऊंचाई 10 फुट साढ़े पांच इंच थी जो कि अन्य हाथियों से साढ़े सात इंच ऊंचा था। इस हाथी ने राजा की ख्याति को विश्वभर में एक अलग पहचान दिलवाई। दिल्ली दरबार में भी राजा इसी हाथी पर सवार होकर जाता था। इस हाथी की देखरेख बहादुर खान करता था।

कार्य करने में आनाकानी की।

इस पर राजा ने केंद्रीय प्रांत से सेवानिवृत्त यूरोपियन थामनसन को विभाग का प्रभारी बनाया।

पुलिस

नाहन रियासत में पुलिस महकमे की स्थापना एस.एस. वायरिंग जो कर्नल आर.सी. वायरिंग का पुत्र था, के तहत गठन किया गया। वह अपने पिता के साथ काबुल के अभियान पर गया था। वह नाहन में नियुक्ति से पूर्व पंजाब पुलिस में सेवाएं प्रदान कर चुका था। वह प्रातः आठ बजे अपने पुलिस दल के साथ परेड ग्राउंड में रोज अभ्यास करता था। उस समय रियासत में पुलिस बल में विभिन्न श्रेणियों के 155 पुलिस कर्मी तैनात थे। रियासत में कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में प्रताप सिंह का योगदान था।

जेल

ब्रिटिश भारत में जेलों का नियंत्रण पुलिस अधिकारी के अधीन होता था। जिसका नियंत्रण मैजिस्ट्रेट के अधीन होता था। रियासत में जेलों की व्यवस्था के लिए दिल्ली केंद्रीय जेल में अनुभव प्राप्त बालकृष्ण दास की सेवाएं ली गईं। उसने जेल में कैदियों के लिए आयप्रद श्रम कार्य आरंभ किए। जेल में सुधार मुख्यतः डॉ. निकोल्सन ने बालकृष्ण दास के कार्यों को आगे बढ़ाते हुए किए।

लोक निर्माण विभाग

रियासत में भवनों, पुलों, नहरों, जल भंडारण टैंकों, खनन तथा अन्य अभियांत्रिक कार्यों के लिए इंजीनियरों की तैनाती की गई। राजा ने सिविल इंजीनियर के साथ-साथ मैकेनिकल इंजीनियर एफ.आर. जोन्स को तैनात किया। उसे लौह कार्य का अधीक्षक बनाया गया। राम दयाल तथा गुलाम नवी को उसके अधीन सर्वेक्षक तथा तारा चंद को मुख्य लेखाकार लगाया गया। एफ.आर. जोन्स के नेतृत्व में तीन तांगा चलने वाले रास्तों का निर्माण किया गया। इनमें कालाअंब सड़क, दून सड़क तथा शिमला सड़क प्रमुख थी। प्रत्येक सड़क की देखरेख के लिए एक जमादार तथा कुछ कुलियों की नियुक्ति की गई। रियासत परिवार से संबंधित कंवर जवाहर सिंह को महल तथा अन्य भवनों की देखरेख तथा मरम्मत का कार्य सौंपा गया।

रियासत में लॉर्ड डैफरिन जब नाहन आए तो डगशाई तथा नैना टिक्कर का क्षेत्र जो पटियाला रियासत में था, सड़क न होने के कारण राजा को वायसराय तथा उसके दल को घोड़े पर नाहन लाना पड़ा जबकि नाहन से दून सड़क होने पर वह तांगे में गए।

रियासत में राजा के चाचा कंवर सुर्जन सिंह तथा वीर सिंह ने सराय तथा बावड़ियां बहुतायत में निर्मित की थीं।

डाक विभाग

राजा ने नाहन में स्टेट पोस्ट ऑफिस खोला तथा यहां से सभी चार तहसीलों को रोज डाक जाती थी। जहां उप-डाकघर खोले गए। इस कार्यों को गांवों में अध्यापकों को सौंपा गया था। रियासत में इंग्लैंड से डाक टिकट छपकर आती थी। राजा ने 'बैलगाड़ी डाक सेवा' भी आरंभ की लेकिन पोस्टमास्टर गुलाम मोहम्मद इसे चला नहीं सके। इसके बाद डाक का कार्य कन्हैया लाल के पास आया।

रियासत में टेलीग्राम 1885 में आरंभ हुई। इसका ठेका ब्रिटिश सरकार को 500 रुपये वार्षिक पर दिया गया जिन्होंने नाहन में टेलीग्राम ऑफिस खोला। इसी ने शमशेर विला तथा राज्य के कार्यालय में टेलीफोन व्यवस्था भी आरंभ की।

रियासत की संपत्तियां

रियासत ने शिमला में एक लाख रुपये की लागत से 10 बड़ी कोठियां खरीदीं। तदोपरांत राजा ने इन भवनों को बेच दिया। इसका कारण दिया गया कि इनका उपयोग यूरोपियन द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त राजा के मित्र तथा परिचित ही इनमें रहते हैं। इससे भवनों के रखरखाव पर व्यय ज्यादा होता रहा है तथा यहां से किराया कम मिलता था। इसके अलावा भवनों के मैनेजर बेईमान हैं।

भवनों की देखरेख के लिए पहले मीर तालिब हुसैन को रखा गया। वे लेखक अधिक था उसे पेंशन देकर सेवानिवृत्त कर दिया गया। इसके बाद एक कश्मीरी मुसलमान को मैनेजर नियुक्त किया गया। वह बेईमान निकला। उसे नौकरी से हटा दिया गया।

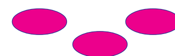
देहरादून में भी रियासत की संपत्तियां थीं- कवालगढ़ मुलकावाला तथा बालाबाला में चाय का बागान, देहरादून के समीप थे। इन फार्मों में बाउमैन, सेमौर और रेजर्स मैनेजर रहे।

चुहारपुर में संपत्ति

इसे एनफील्ड एस्टेट के नाम से जाना जाता था। इसके तहत आठ गांव आते थे। इसे राजा ने अंग्रेज जनरल से एक लाख 40 हजार मूल्य पर खरीदा था। बाबू कांशी राम की देखरेख में 40 हजार रुपये में चोरा पानी में एक एस्टेट भी खरीदी गई। वह नाहन म्यूनिसिपैलिटी में पहला हैड क्लर्क था।

राजा का कोषागार अधिकारी जगाधरी का लाला बंसी लाल तथा हैड कोषागार क्लर्क प्रभुदयाल था। बिशंबर दास लेखाकार था।

2 अक्तूबर, 1898 को राजा शमशेर प्रकाश का निधन हुआ। उसने रियासत पर लगभग चार दशक तक राज किया। यह पुस्तक रियासत के उस इतिहास को उजागर करती है जब रियासत अपनी चरम पर था तथा लोक कल्याण रियासत का सर्वोपरि हिस्सा बना। आज के संदर्भ में इस पुस्तक का एक-एक पन्ना ऐतिहासिक दस्तावेज से कम नहीं है।



वर्ष 1931

जे.सी. फ्रैंच और नाहन

सिरमौर जिले में जे.सी. फ्रैंच ने अपने हिमालयी क्षेत्रों में भित्तिचित्रों के अध्ययन के कार्य के समय, जनपद का दौरा किया था। वे बंगाल का निवासी तथा उसकी भारतीय कला में गहरी रुचि थी। उसने वर्ष 1930 में चार माह का अवकाश लेकर पंजाब के हिमालय क्षेत्र का दौरा किया। उसने अपने यात्रा वृत्तांत में साथ-साथ कला इतिहास को कलमबद्ध करने में अहम योगदान दिया। वह पहला व्यक्ति था जिसने कांगड़ा के गुलेर में पहाड़ी कला की उत्पत्ति तथा विकास को उजागर किया तथा राजा संसार चंद के विख्यात कलाकार फत्तू का नाम उजागर किया। उसने पहाड़ी कलम तथा पुरानी कला पद्धति का उल्लेख किया और नूरपुर, गुलेर, बिलासपुर, अर्की, मंडी, कुल्लू, चंबा तथा नाहन में कला स्थलों का बारीकी से अध्ययन किया।

सिरमौर रियासत के दौरे के दौरान उसने लिखा कि पहाड़ों से पुराने चित्र लुप्त हो रहे हैं। ये कांगड़ा शैली के चित्र हैं। उसने नाहन के एक मंदिर की दीवारों पर भित्तिचित्रों को देखा। वे कांगड़ा घाटी में प्रचलित कला पर आधारित नज़र आते थे लेकिन वे खुरदरे तथा आधुनिक प्रतीत होते थे। इसी मंदिर में पहाड़ी शैली के बने कुछ चित्र भी टंगे थे। इसमें मंदिर के निर्माता का चित्र था जो दो सौ वर्ष पूर्व स्वर्ग सिधार गया था। इसी चित्र में दो शेर भी बने थे तथा तत्कालीन राजा पूजा करता दिखता दिखाया गया है। यह चित्र देखने पर सौ वर्ष पुराना नहीं लगता था। मूल चित्र उस वक्त प्राप्त नहीं हुआ। नाहन में 19वीं शताब्दी में गोरखों के अधिपत्य से कला को आघात पहुंचा लेकिन यह इस बात को सिद्ध नहीं करता कि इससे कलाकृतियां पूर्ण रूप से लुप्त हो गई हैं।

जे.सी. फ्रैंच ने जब मंदिर में उस फोटोग्राफ का मूल चित्र प्राप्त करने की कोशिश की तो उसे पुजारी द्वारा बताया गया कि इसका मूलचित्र शहर में फोटोग्राफर के पास उपलब्ध है। वह उसे लेने उसके पास पहुंचा तो उसने बताया कि मूल चित्र तो पुजारी के पास है। जब दोनों पुजारी से इस बावत पड़ताल करने आए तो पुजारी ने कहा कि वह तो कहीं खो गया है।

फ्रैंच ने नाहन के उस स्मृति स्थल का उल्लेख भी किया जो 20 दिसंबर, 1814 को ईस्ट इंडिया कंपनी की 26वीं नेटिव रेजीमेंट के लै. थारथरे की स्मृति में बनाया गया था।

उसके वृत्तांत में नाहन शहर एक सुंदर चित्र रूप में प्रतीत होता था। यह बड़े टैंक से आरंभ होकर सीढ़ीनुमा लाल-गेरुआं घरों से बना शहर था जिसके शिखर पर सफेद रंग का महल बना था। चारों ओर चीड़ के सुंदर वन थे। यह एक पुराने इटली शहर के रूप में नज़र आता था। ऐसा सुंदर स्थल हिमाचल क्षेत्र में अन्य राजपूत रियासत में नहीं था। इसे अगर चित्र में देखा होता तो इसकी सुंदरता का अंदाजा लगा पाना मुश्किल होता।

पांवटा में कांगड़ा कलम की छाप

देईजी साहिबा ठाकुरद्वारा पांवटा



पांवटा साहिब की पावन धरा पर वर्ष 1889 में राजा शमशेर प्रकाश की बहन, जिसका विवाह कांगड़ा जनपद में लंबाग्राम के राजा प्रताप सिंह से हुई थी, ने यहां श्रीदेई साहिबा ठाकुरद्वारा का निर्माण करवाया। सिरमौर रियासत में उन्हें देई जी साहिबा कहकर पुकारा जाता था। इसी ठाकुरद्वारा का निर्माण देई साहिबा अपने पति की स्मृति में बनाया था। अल्प आयु में विधवा होने से सिरमौर आकर अपने भ्राता के साथ रहने लगी।

ठाकुरद्वारा में रघुनाथ मंदिर भी है। इस मंदिर का निर्माण महाराज शमशेर प्रकाश ने बहन के अनुरोध कर किया था। महाराजा ने इस ठाकुरद्वारा के साथ सराय का भी निर्माण करवाया। इसकी व्यवस्था चलाने के लिए साथ लगते तीन गांवों की 2400 बीघा भूमिका को मंदिर को दान दिया।

अतीत की यादों से 1948-1971

'सिरमौर वाकई सिरमौर है'

◆ बिमला भारद्वाज

पहाड़ों के साथ नाता रिश्ता बचपन से ही रहा है। पहली बार पहाड़ों पर वर्ष 1934 में आने का मौका मिला। ये समां अंग्रेजों का था। अंग्रेजों द्वारा कसौली, डगशाई, शिमला, डलहौजी, धर्मशाला जैसे सुंदर स्थलों को विकसित कर उन्होंने अपने लिए आरामदायक स्थल बनाए थे। एंग्लो-गोरखा युद्ध के बाद अंग्रेजों का अधिपत्य पहाड़ों में फैली सभी रियासतों पर हो गया था। वे अपने कानूनों, जरूरतों तथा सुविधा के अनुसार राज करते थे। कसौली को भी अंग्रेजों द्वारा बसाया गया था। यहां पिता जी मिल्ट्री इंजीनियरिंग सर्विस में तैनात थे। उस वक्त मेरी उम्र मात्र 6 वर्ष के करीब थी। हम लाहौर से गर्मियों की छुट्टियां मनाने कसौली आते थे। पहली बार पहाड़ों के जीवन को पास से देखा। पहाड़ों की ढलानों पर पशुओं को चरते, बाघ को दौड़ते, महिला-पुरुषों द्वारा पीठ पर बोझ ढोते देखा। यह सब कुछ अजूबे से कम न लगा।

उस दौर में समय बदल रहा था। पहाड़ पर मोटरगाड़ी चढ़ने लगी थी। 1903 से रेल तो शिमला तक जा ही रही थी। मैं, 1945 में लाहौर से दसवीं व प्रभाकर की परीक्षा उत्तीर्ण कर दादी के पास से मां-बाप के घर पंजाब प्रांत के फगवाड़ा आ गई। वर्ष 1946 में रिश्ता हो गया। 27 जून, 1947 को वैवाहिक बंधन में बंधे। पति सिरमौर रियासत में राजगढ़ में चिकित्सक के पद पर तैनात थे। इससे पहले वे नाहन तथा सराहां में अपनी सेवाएं दे चुके थे। राजगढ़ आने के पीछे भी नाहन शहर में महंगाई तथा परिवार की जिम्मेवारियां थी। गांव में रहकर सेवा करना ही एक मात्र जीवन का ध्येय था। पति को अपनी मां की एक बात घर कर गई थी, "छोटी जगह में रहकर नौकरी करोगे तो इज्जत मिलेगी और पैसे भी बचेंगे। बच्चे पल जाएंगे।" उस वक्त चिकित्सक की तनख्वाह मात्र 80 रुपये थी। आधे पैसे घर भेजने के उपरांत मौज से जिंदगी गुजरती थीं। राजगढ़ डिस्पेंसरी में तैनाती उपरांत इस क्षेत्र को अपनी कर्मस्थली बनाया।

मेरे वैवाहिक बंधन में बंधने के डेढ़ माह उपरांत देश आजाद हुआ। पति 1948 में नाहन से राजगढ़ आ गए। मेरी यात्रा, पहाड़ों की ओर फरवरी 1948 में आरंभ हुई। उस वक्त सिरमौर रियासत ही थी तथा हिमाचल का उदय नहीं हुआ था।

पांच फरवरी 1948 को पंजाब प्रांत के गांव मडहाली से पहाड़ों की ओर कदम बढ़ाए। यह पहाड़ों पर जीवन की एक नई



शुरुआत थी। फगवाड़ा से अंबाला, अंबाला से कालका पहुंचे। प्रातःकाल कालका से शिमला जाने वाली छोटी रेल से सलोगड़ा तक की यात्रा आरंभ की। सलोगड़ा, सोलन शहर के उपरांत ब्रूरी से अगला स्टेशन पड़ता है। कोयले के इंजन वाली गाड़ी करीब 11बजे सलोगड़ा स्टेशन पहुंची। सलोगड़ा एक निर्जन सा स्थल, बस आस-पास कुछ घर। स्टेशन से नीचे उतर कर पुराना हिंदुस्तान-तिब्बत मार्ग था। सड़क पर चाय की एक आध दुकान व कुछ आढ़तें थीं। यहां सेवादार चतर सिंह, जो राजगढ़ के बेड़ गांव का निवासी था घोड़ा लेकर, स्वागत में पहले ही खड़ा था। सलोगड़ा में रेलवे स्टेशन होने के कारण यहां सब्जी की आढ़तों पर सिरमौर व पेप्सू क्षेत्र (राजा पटियाला का क्षेत्र) से कृषि उत्पाद बिकने को आते थे। यहां खच्चरों का बड़ा पड़ाव था, जो पहाड़ों के गांवों से अपनी पीठ पर उत्पाद लेकर यहां पहुंचते थे और मैदानों से सड़क व रेल से आए सामान को वापिस गांव तक ले जाते थे।

सलोगड़ा से पैदल पथ गिरिपुल होकर राजगढ़ तक पहुंचता था। जो लगभग 28 किलोमीटर के करीब था। लाहौर में शिक्षा ग्रहण की, मैदानों को छोड़कर अब जीवन की राह पहाड़ों की पगडंड़ियों, ऊबड़ खाबड़ रास्तों, खेतों-खलियानों, नदी-नालों से होकर गुजरनी थी। इसमें भी एक नया अनुभव व आनंद महसूस हो रहा था।

चतर सिंह ने ठेठ सिरमौरी में बीबीजी कहकर पुकारा तो पहली बार सिरमौरी भाषा का ज्ञान हुआ। 17-18 वर्ष के इस युवा ने पहले दिन बीबीजी कहकर पुकारा और जब तक राजगढ़ नहीं छोड़ा तब तक इसी नाम से पुकारता रहा। आज वह इस दुनिया में नहीं है लेकिन वे सिरमौर का ज्ञान देने वाला मेरा पहला शिक्षक रहा।

राजगढ़ का नाम ही सुना था। सलोगड़ा से पैदल रास्ता गिरिपुल होकर जो बाद में हिमाचल निर्माता डा. यशवंत सिंह परमार के नाम पर यशवंत नगर बना से होकर गुजरता था। सलोगड़ा से नीचे उतरते ही खेतों, खलियानों को लांघते हुए पहला पड़ाव अश्वनी खड्ड पर था। जहां अश्वनी खड्ड चायल तथा शिमला की पहाड़ियों से निकल कर गिरी नदी में मिलती है। पहाड़ी नदी को भी पहली बार देखा व स्पर्श किया था। अश्वनी खड्ड के एक ओर पटियाला रियासत का हिस्सा था। पटियाला को पहाड़ी क्षेत्र रियासत द्वारा 1857 के गदर में अंग्रेजों की सहायता करने पर उपहार स्वरूप मिला था। नदी के दूसरी ओर सिरमौर तथा बघाट (सोलन) की रियासतें पड़ती थीं। अब शाम भी ढलने वाली थी। पहाड़ों से धूप शिखर की ओर जा रही थी। संध्याकाल होने वाला था। रात्रि पड़ाव के लिए एक छोटे से पड़ाव शुनू में पहुंचे। यह सलोगड़ा से छः किलोमीटर की दूरी पर था। यहां से आगे गौड़ा जो पटियाला रियासत में पड़ता था तथा गिरी नदी को पार कर करगाणू आता था। यहां वन विभाग का फोरेस्ट गार्ड हट था। यहां से एक रास्ता नौहराधार की ओर जाता था।

शुनू में लाला जी की एक छोटी सी दुकान थी। लाला जी के कमरे में रजाइयों का ढेर था। उन्हें ओढ़ कर रात बिताई। अब तक साथ लाया गया खाना व अन्य सामान भी खत्म हो चुका था। दिन में पहाड़ी रास्तों की यात्रा तथा घोड़े की सवारी की थकान रात के विश्राम से मिट चुकी थी। प्रातः हुई। पहाड़ों के पीछे से सूरज निकला। मुंह हाथ धोकर राजगढ़ के लिए यात्रा आरंभ की। यह यात्रा एक कारवां की माफिक थी।

राह में सियालकोट से आए एक परिवार जो विभाजन उपरांत यहां आकर बसा था, उनकी एक छोटी सी दुकान थी। वहां परांठों का नाश्ता किया। रास्ते के लिए भी कुछ परांठें बंधवा लिए। करगाणू से चढ़ाई चढ़कर राह में धनेच, पवियाना पहुंचे। रास्ते में पैदल यात्री तथा खच्चरों के अनेक दल मिले। दोनों में एक समानता देखी। दोनों की पीठ पर बोझ लदा था। इस दूरस्थ क्षेत्र में पति डाक्टर लगे थे। इसका भान तो इलाके में था। जो भी गुजरता मिलता। हालचाल पूछता। डाक्टर साहिब को नमस्कार कर बस एक ही बात कहता डाक्टरनी जी को पहली बार लेकर आए हो। उन्हें मेरे राह पर चलने तथा चेहरे के हावभाव से जो ज्ञात हो रहा था। बस सभी एक ही दिलासा देते। अब तो बस पास ही राजगढ़ है। पहुंचने वाले हैं। यह पहाड़ के निवासियों का यात्री को राह की दुश्वारियां कम करने का स्वभाव था। इसमें सभी का अपनापन भी नज़र आने लगा था।

हमारा कारवां राह में छोटी-छोटी बस्तियों, धनेच, पवियाना, नेरी, रतोली, कोटली होकर राजगढ़ पहुंचा। पबियाना लगभग चार बजे के करीब पहुंचे। पहाड़ों में छोटी-छोटी बस्तियां, गांव, खेत, पहाड़ तथा जंगलों के दृश्य हर पग पर अलग प्रतीत हो रहे थे। ऊपर नीला आकाश, पहाड़ों की ओट से झांकते बादल मानो एक नया ही चित्र बना रहे थे। सर्दियों के दिन थे। शाम ढलते ही ठंड बढ़ रही थी। अंधेरा भी छाने लगा था। छः बजे के करीब अपने नए गंतव्य स्थल राजगढ़ पहुंचे। पहाड़ों से घिरा स्थल। बीच में बहती खड्ड तथा एक छोटी सी बस्ती। कहीं-कहीं घरों के बाहर आग जलती व धुआं निकलता नज़र आ रहा था।

इस बस्ती में पगडंडीनुमा सड़क के किनारे कुछ दुकानें व घर थे। दुकानें बंद हो चुकी थी। एक आध हलवाई की दुकान खुली थी। रात को बाजार में स्थित रियासत के वक्त की एक डिस्पेंसरी तथा उनकी उपरली मंजिल में चिकित्सक का निवास था। अंततः अपने घर पहुंचे। जरूरत की बस दो-चार चीजें थीं। रास्ते की थकान थी। चूल्हा जला कर चतर सिंह और मैंने दाल चावल बनाए। अंधेरे में दीपक का साथ था। मन में नए स्थान की खुशी थी। कल के सूरज में नए स्थान को देखने की उत्सुकता जो थी। यह मैदानों से पहाड़ों तक का रोमांचक सफर जो था।

सुबह हुई। पति डिस्पेंसरी में मरीज देखने चले गए। घर में

बस कुछ ही सामान था। साथ में कुछ बर्तन, कपड़े-लत्ते थे। उन्हें खोला। जीवन की गाड़ी को आगे जो बढ़ाना था। राजगढ़ की आबादी मात्र 50-60 के करीब थी। साथ लगते अनेक इलाके थे जहां से लोग दिन में बाजार से जरूरी सामान लेने व अपने उत्पाद बेचने आते थे। खच्चरों, घोड़ों की घंटियों से वातावरण की शांति टूटती नजर आती थी।

छोटे से बाजार में ठाकुर सूरत सिंह जो शलाना गांव के निवासी थी, की दुकान थी। बाजार में ही कोटली गांव के जैलदार हीरा सिंह का मकान था। निचले बाजार में लाला मंशा राम, लाला करोड़ी मल, पूर्ण चंद, डेरावस्सी/मुबारकपुर की रहने वाली ववियाणी की दुकान थी। जहां बिंदी, सुरखी सहित छोटा-मोटा सामान मिलता था। बाजार में एक मोची तथा नाई की दुकान भी थी। लाला मंशा राम कांगड़ा जिले के गरली प्रागपुर से थे, जो बाद में राजगढ़ के बाशिंदे बन गए। मकान बनाया। बाग बगीचा लगाया।

रियासत काल में राजगढ़ सिरमौर रियासत का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा था। यह सामरिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण था। यहां से होकर चूड़धार तथा जुब्बल रियासत को जाने का रास्ता था। राजगढ़ के बाजार के साथ लगता था गांव बेड़। जहां पारंपरिक स्लेट वाले पांच-छः घर थे। इनमें पन्ना लाल, चतर सिंह, वर्तमान में पी.जी.आई. चंडीगढ़ के निदेशक डॉ. जगत राम के नाना शंकरू तथा सूरतू का घर था।

चतर सिंह ने राजगढ़ सहित गांव तथा क्षेत्र का पहला ज्ञान दिया। मैदानों के शहरों व गांवों का जीवन अलग था। पहाड़ों का जीवन ठहरा हुआ तथा एक शांति का आभास करवा रहा था। इसे महसूस करने तथा निहारने का लुत्फ ही कुछ और था। एक शांत स्थल। भोले-भाले लोग। लाहौर से दसवीं, प्रभाकर किया था। लेकिन कुछ दिनों में यहां के निवासियों ने एक मानद डिग्री प्रदान की वह थी 'डाक्टरनी' की।

कुछ ही दिनों में साथी अधिकारियों की पत्नियों, बाजार में लाला पूर्ण चंद, मंशा राम ववियाणी के परिवार जनों से मेल मिलाप का सिलसिला बढ़ा और क्षेत्र की जानकारियों के पन्ने स्वतः ही खुलते गए।

देश ने 15 अगस्त को आजादी हासिल की। वर्ष 1948 में पहाड़ों में भी रियासतों से छुटकारा पाने की बयार बनने लगी थी। लोगों ने आजादी का नया जोश दिख रहा था। उन्हें रियासत की कठोरता से निजात मिलने वाली थी। राजगढ़ के समीप पझौता घाटी ने भी रियासत के जुल्मों के विरुद्ध आवाज उठाकर देश की आजादी में योगदान दिया था। 1942 में पझौता गोलीकांड की घटना का ज्ञान यहां के निवासियों के कंठ से सुना था। रियासती फौज की बर्बरता की कहानी सभी की जुबान पर थी। उधर, रियासतों का विलय होकर, हिमाचल बनने वाला था। इसी डर से रियासत ने पझौता गोलीकांड के नायक वैद्य सूरत सिंह तथा दो अन्य साथियों को नाहन जेल से रिहा कर दिया था। नाहन से होते हुए स्वतंत्रता सेनानियों का जुलूस मार्च माह में राजगढ़ पहुंचा। हजारों की भीड़ इन देशभक्तों के साथ थी। पहाड़ी वाद्य यंत्रों से संपूर्ण घाटी गुंजायमान थी। राजगढ़ के बाजार में स्थित जोहड़ी में एक भारी जलसा हुआ। इन पलों की स्मृति आज भी है। यह वक्त राजनैतिक चेतना का आरंभिक काल माना जा सकता है जब पहाड़ों में नई क्रांति का सूत्रपात हो रहा था। समय बदला, हिमाचल बना। 15 अप्रैल, 1948 की तारीख आई। वैद्य तथा बंसी राम पहाड़िया से जान-पहचान का दायरा बढ़ा। मुझे इतिहास, साहित्य तथा वर्तमान दौर की जानकारियों को जानने, समझने की ललक थी। वैद्य जी तथा बंसी राम पहाड़ियां से पझौता गोलीकांड की विस्तृत जानकारी मिली। वैद्य जी की जुबान से जो आज भी स्मरण है, "वैद्यजी के गांव कटोगड़ा को रियासती सेना ने 21 मई, 1943 को घेर लिया। वैद्य जी के, तीन मंजिला घर को डायनामाइट के विस्फोट से उड़ा दिया। इसका मकसद ग्रामीणों में दहशत फैलाना था। वैद्य जी को मकान की क्षति का ज्यादा दुख न था। घर तो पत्थर, लकड़ी, गारे मिट्टी से फिर बन सकता है लेकिन सबसे बड़ा दुख इस बात पर था कि इस आग में उनकी पुस्तकों का भंडार जल कर राख हो गया था। यह इतिहास, संस्कृति, धर्म तथा साहित्य का खजाना था। वे एक निडर नेता के साथ पहाड़ी तथा हिंदी, संस्कृत भाषा के रचनाकार की हैसियत से भी जाने जाते थे। वे पहाड़ों की कठिनाइयों, यहां के निवासियों पर हो रहे अत्याचारों से वाकिफ थे। पझौता आंदोलन पर लिखी उनकी कविता के अंश जो आज भी मुझे याद है।

गांवलूटा जोबे भाणते रान्हियू नाजो
रो घिरो रे मामाम मेरा।
खाड़ू बाकरे जेबरे कापड़े रोजा बे
न जिया रे मामा।
गांव जूटदे मनौणें रे नहीं जालमू
री घोड़ों रे मामा मेरा।
बंदू जोपनो दिखायओ सुहाणो
री तिली बे न छोड़ी रे मामा मेरा।

वैद्य जी के दिल से निकले इन उद्गारों का मूल निचोड़ है कि रियासत के निर्देशी सैनिकों ने सुहाग की निशानी, 'तिल्ली' तक न छोड़ी, लूटपाट का इससे दुखद उदाहरण और क्या हो सकता है।

मार्च में पझौता आंदोलन की गूंज सुनी। अप्रैल में हिमाचल बनने की खुशी थी। आजादी की लड़ाई तथा स्वतंत्रता संग्राम को लाहौर में पढ़ाई के दौरान देखा तथा पढ़ा था। गुलामी, आजादी के मायनों की पूर्ण जानकारी थी। राजगढ़ शांत स्थल था। बाहर की जानकारी बाहर से आने वालों से ही मिलती थी। डाक की व्यवस्था से घर पर डाक द्वारा 'द ट्रिब्यून' अंग्रेजी समाचार पत्र आता था।

चाहे ये देर से ही आता था लेकिन इसे पढ़कर देश-दुनिया की जानकारियां मिल जाती थीं। इन जानकारियों को साझा करने से भी राजगढ़ के समाज में साख बढ़ी थी।

अप्रैल, मई में तो हिमाचल बनने की खुशी का दौर था। सिरमौर के सपूत डॉ. परमार के प्रयासों को सराहा जा रहा था। सी स्टेट बनने से लै. गवर्नर का राज आरंभ हुआ।

वर्ष 1948 में राजगढ़ व सिरमौर से नाता रिश्ता जुड़ गया था। यहां की संस्कृति, भाषा, परंपराओं का कुछ ज्ञान हो गया था।

उस वक्त राजगढ़ की शान एवं ऐतिहासिक धरोहर - किला मानी जाती थी

राजगढ़ का जिक्र हो तो राजगढ़ के किले का उल्लेख तो अवश्य है। यह इस लिए भी जरूरी है कि आज की पीढ़ी को तो यह भी आभास नहीं कि राजगढ़ में कभी किला भी हुआ करता था। हां, राजगढ़ के नाम से यह अर्थ अवश्य निकलता है कि यह रियासत काल में राजाओं का गढ़ रहा होगा। हालांकि सिरमौर रियासत का राज-पाठ सिरमौरी ताल, कालसी तथा नाहन से चला। इसके बावजूद राजगढ़ सामरिक रूप से महत्त्वपूर्ण स्थल था। राजगढ़ के साथ जुब्बल रियासत तथा अन्य छोटी रियासतों की सीमाएं लगती थीं। राजगढ़ को नाहन से सराहां होकर आया जाता था जो 25 किलोमीटर की दूरी पर स्थित था। नाहन मुख्यालय जाने के लिए यही रास्ता होता था। एक रास्ता सलोगड़ा से गिरीपार का राजगढ़ आता था जिस पर जिक्र पहले हो चुका है। गिरी पार का यह क्षेत्र सामरिक तथा सांस्कृतिक रूप से भी रियासत के अन्य क्षेत्रों से भिन्न था।

हरिपुरधार के साथ जुब्बल, चौपाल का क्षेत्र पड़ता था। उस वक्त आवागमन पैदल तथा घोड़े-खच्चरों पर ही होता था। अप्रैल 1948 में हिमाचल के गठन से पहाड़ों को नई पहचान मिल चुकी थी। पहाड़ी जनमानस ने आजादी के मायनों को पहली बार नजदीक से देखा था। गिरीपार की अवाम में तो अभी भी पझौता आंदोलन का भय एवं खौफ था। लोगों में नई व्यवस्था का असर तो नहीं दिख था लेकिन ऐसा महसूस जरूर होता था जैसे पंछी पिंजरे से बाहर आकर खुली हवा में परवाज भर रहा है। धीरे धीरे प्रशासनिक व्यवस्था में भी बदलाव देखने को मिल रहा था।

बात राजगढ़ के दुर्ग से आरंभ हुई थी। बाजार से बाहर खुली जगह पर बना यह किला अपने भीतर ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को संजोए हुआ था। यह तत्कालीन पुरातन वास्तुशिल्प का एक बेजोड़ नमूना जरूर था। किले का निर्माण कब हुआ, किसने करवाया, इसके पुख्ता सबूत प्राप्त नहीं हुए। जैम्स बैली फ्रेजर ने अपनी वर्ष 1815 की सिरमौर यात्रा के दौरान भी इस किले का उल्लेख किया है। वर्ष 1934 के सिरमौर के गजेटियर में उद्धृत है, "किला दो मंजिला तथा 40 फुट ऊंचा तथा 20 फुट आयतकार है। इसके चारों कोनों पर बुर्ज थे। 1814 में गोरखों के अधिपत्य के दौरान उन्होंने इस किले को क्षति पहुंचाई। इस किले का जीर्णोद्धार गोरखा युद्ध समाप्ति के उपरांत किया गया। जैसा कि विदित है कि इस किले में रियासत काल में वन मंडल का परिक्षेत्र का कार्यालय खोला गया। इसमें मंडलीय वन अधिकारी का कार्यालय व रिहायश होती थी।

अस्पताल के सेवादार पन्ना लाल के शब्दों में, "सिरमौर के राजा ने एक राजपूत को कर वसूली का जिम्मा दिया और उसके लिए इस दुर्ग का निर्माण करवाया था।"

यह किला वर्तमान में वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला वाले स्थान पर अवस्थित था। इस किले की सीमा पैरवी खड्ड तक तथा एक ओर राजगढ़ बाजार तथा सामने पशु चिकित्सालय के साथ बहने वाली खड्ड तक थी। हिमाचल गठन के समय राजगढ़ भी विकास की करवट ले रहा था। हिमाचल गठन के उपरांत राजगढ़ में निजी मकान में स्थित डिस्पेंसरी को किले में स्थानांतरित किया गया। यहां थाना भी खोला गया। रियासत काल में जंगलात का दफ्तर तो पहले ही यहां खुला था। इसके बाद इसकी धरातल मंजिल में प्राथमिक पाठशाला खुली। यहां कर्मियों की रिहायश भी थी। इससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि किला कितना विशाल व भव्य रहा होगा।

यह पत्थरों तथा लकड़ी से निर्मित था। स्लेट की छत थी। किले के बाहर दो फुट चौड़ी चारदिवारी थी। किले के चारों ओर बुर्ज थे जिनमें घंटियां लगी हुई थीं जो हवा के चलने पर मधुर संगीत प्रस्तुत करती थीं।

किले के अग्र भाग में एक मुख्य द्वार था। सामने खुला प्रांगण था। किले में प्रवेश करते ही धरातल मंजिल पर एक डिस्पेंसरी, दूसरी ओर थाना था। इसी तल पर प्राथमिक पाठशाला तथा जंगलात का दफ्तर भी था। धरातल मंजिल के मध्य में खुला स्थान था। जहां सांस्कृतिक कार्यक्रम होते थे। ऐसा कहा जाता था कि आरंभ में मध्य के पानी का टैंक होता था। इसका उल्लेख जैम्स बैली फ्रेजर ने अपनी यात्रा में भी किया है तथा वहां जल को वर्तमान में बस अड्डे की पहाड़ी पर स्थित जलस्रोत से देवदार की लकड़ी को नालीनुमा बनाकर लाया जाता था। किले में लगभग 20 छोटे व बड़े कमरे थे। यूं कहें कि वे वर्ष 1948 में राजगढ़ का किला क्षेत्र की शान व मिनी सचिवालय था। धीरे-धीरे राजगढ़ का विकास होता गया और वर्ष 1948 में राजगढ़ के साथ जुड़ा नाता रिश्ता पहले चरण में 1957 तक रहा।

राजगढ़ में पहला बदलाव 1957 में सोलन राजगढ़ सड़क मार्ग बनने से नज़र आया। गिरीपुल में पुल का निर्माण हुआ। इसका निर्माण प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान एक लाख 10 हजार रुपये की लागत से बनाया गया। अब वर्ष 2018 में यहां पर करोड़ की लागत से नया पुल बन गया है। सोलन-राजगढ़ सड़क की विशेषता यह रही कि इसे लोगों ने श्रमदान से बनाया। लोक

निर्माण विभाग ने तो उन स्थानों पर डायनामाइट व दक्ष इंजीनियर दिए जहां जहां की चट्टाने काटनी मुश्किल थीं। हर पंचायत का दायित्व था कि वे एक घर से एक व्यक्ति को निर्माण कार्य में भेजे। सड़क तो सभी को जरूरी थी। विकास इसी से होकर बहना था। बस लोगों ने हाथों में गैंती, बेलचे, उठाए और सड़क को राजगढ़ पहुंचा दिया।

यूं आरंभ में राजगढ़ में कोई देवालय नहीं था। निचले बाजार में लाला पूर्ण चंद की दुकान के समीप एक छोटा सा देवी का मंदिर था, जिसके पुजारी बेड़ गांव के थे।

राजगढ़ के किले के प्रांगण में भी एक देवस्थल था। दिवाली के दिन बेड़ गांव के निवासी यहां आकर पूजा-अर्चना करते थे। यहां पूजा दिन में बारह बजे के करीब होती थी।

वर्ष 1957 में किले को असुरक्षित घोषित कर दिया गया था। इससे पहले राजगढ़ में लोगों ने अंशदान से 25 बिस्तरों वाले चिकित्सालय का निर्माण करवाया। इसमें पति डॉ. सोमदत्त भारद्वाज, ठाकुर सूरत सिंह, लाला मंशा राम तथा इलाके के सभी लोगों का बहुत बड़ा योगदान रहा। 5-10 पैसे से लेकर सौ रुपये तक का अंशदान से उस वक्त 25 हजार रुपये एकत्रित हुए। लकड़ी नौहराधार के जंगल से आई। लोहे के पतरों को लोग स्वयं सलोगड़ा से अपने सिरों पर उठाकर राजगढ़ लाए। इसी काल में राजगढ़ में वन विभाग, लोक निर्माण विभाग, राजस्व विभाग के कार्यालय तथा आवासीय परिसर बनते गए।

स्कूल तो किले में आरंभ हो गया था फिर यह वर्ष दर वर्ष आगे बढ़ता गया। प्राइमरी से मिडल तथा हाई स्कूल बना। 1952 में चौकर डिस्पेंसरी में भी तैनाती रही। वहां जाकर सिरमौर जनजीवन को और नजदीक से देखने का अवसर मिला। 1957 में राजगढ़ से कोटगढ़ का तबादला हो गया। सड़क लगभग बन चुकी थी। यशवंत नगर पर पुल निर्मित हो रहा था। वापिसी भी पैदल ही हुई। कई बार राजगढ़-गिरीपुल होते हुए सोलन भी पैदल आए। लेकिन 1948 से 1957 के मध्य अनेक बार सलोगड़ा से राजगढ़ व वापिस सलोगड़ा का रास्ता तय किया। पहाड़ से नाता रिश्ता इन पथरीले रास्तों से होकर जुड़ता गया। इन रास्तों के मोड़, पेड़, पत्थर तथा नदी से आत्मीयता बढ़ती गई। सब अपने लगते थे। इससे अलग लागों से प्यार, संस्कृति से जुड़ाव होता गया। एक अपनापन सा महसूस होता चला गया।

सिरमौर का राजगढ़ तथा शिमला के कोटगढ़ में फासला तो बहुत था। लेकिन कोटगढ़ में भी राजगढ़ की खबर पहुंच जाती थीं 1959 में ऐसी खबर मिली कि राजगढ़ का किला जो यहां की शान था, अग्निकांड में स्वाह हो गया। इस खबर का जब पता चला तो 8 वर्षों से किले से जुड़ी यादें, मानस पटल पर स्वतः ही एक चलचित्र की माफिक घूम गईं।

वो वक्त याद आ गया जब प्राथमिक पाठशाला किले में खुली थी। मास्टर लक्ष्मण दास ने आठ दस बच्चों से स्कूल शुरू किया था। बच्चों से किले की रौनक बढ़ गई थी। पांच-छः लड़कियों को भी पहली बार अक्षर ज्ञान का आभास हुआ था। यह साक्षरता की दिशा में पहला कदम था। इससे पहले भी क्षेत्र हाब्बन में आर्य समाज द्वारा संचालित पाठशाला थी। इससे भी पढ़कर बच्चों ने शिक्षा प्राप्त की थी। रियातस काल में सिरमौर में राजा द्वारा 70 के करीब पाठशालाएं खोली थीं। नाहन में लड़कों का स्कूल तथा लड़कियों का अलग स्कूल था।

1957 से 1964 तक कोटगढ़ में रहने के बाद पुनः लोगों से किए वायदे के अनुसार राजगढ़ आ गए थे। इस बार राजगढ़ बस से आए थे। राजगढ़ बदला था। कार्यालय थे। बाजार बड़ा था। अनेक मकान बन गए थे। किले वाले स्थल पर राजकीय विद्यालय का भव्य भवन बन गया था। वन, लोक निर्माण, स्वास्थ्य विभाग की अपनी कालोनियां थीं। अखबार जो पहले तीन दिन बाद आती थी। अब शाम को पहुंच जाती थी। खेतों-खलियानों की तकदीर बदली थी। मिनस तक सड़क थी। गिरीपार के अदंरूनी इलाके तेजी से सड़क मार्ग से जुड़ रहे थे। राजगढ़ के आसपास बाहरी लोगों ने अनेक बागीचे लगा दिए थे। राजगढ़ ने आड़ू की घाटी का खिताब पा लिया था। सामाजिक-आर्थिक क्रांति की करवट नज़र आने लगी थी। अनेक नए कार्यालय भी खुल गए थे। लेकिन सबसे बड़ी बात यह थी कि 1948 में जो पहली बार देखा था, समय बिलकुल वैसा था। लोगों में प्यार, मोहब्बत आत्मीयता वैसी ही थी। मोटरगाड़ी के आने से संपर्क भी बढ़ रहे थे। बाहरी लोगों का आना अब ज्यादा हो गया था। बाजार में देश के विभाजन उपरांत उजड़ के आए लोगों ने व्यापार को नया रूप देकर एक नई परिभाषा को जन्म दिया था। राजगढ़ में आड़ू, प्लम, टमाटर की खेती से लोगों की आमदनी बढ़ी थी। अदरक तो पहले यहां बहुतायत में पैदा होता था। गैर मौसमी सब्जियों का उत्पादन भी शुरू होने लगा था।

पहाड़ों में रात के वक्त गांव में पहुंची रोशनी से गांव भी जुगनू की तरह चमकने लगे थे। राजगढ़ की यादें, समय कैसे बिता पता ही न चला। वर्ष 1971 में पति का शिमला तबादला होने पर फिर एक बार समान बांधा और राजगढ़ से लगभग 17-18 वर्षों की यादें लेकर फरवरी, 28, 1971 को शिमला की ओर जीप में रवाना हुए। लेकिन इससे पहले राजगढ़ से संबंध बनाए रखने के लिए राजगढ़ से 7 किलोमीटर की दूरी पर स्थित पबियाना गांव में एक आशियाना तथा बाग लगा दिया था। आज भी यहां की माटी संस्कृति, परंपराओं से मां-सा संबंध है। इसीलिए तो सिरमौर वाकई में सिरमौर कहलाता है।

कॉजी कॉर्नर, ऑफिसर्ज कॉलोनी, राजगढ़ रोड, सोलन,
हिमाचल प्रदेश-173212

इतिहास के पन्नों से-1968

राहुल सांकृत्यायन के लेखन में सिरमौर



राहुल सांकृत्यायन ने संपूर्ण हिमाचल की संस्कृति, इतिहास, भूगोल को अपनी पहाड़ों की यात्रा के दौरान कलमबद्ध कर दुनिया के समक्ष रखा है। उनकी ये लेखकीय प्रतिबद्धता हिमाचल के इतिहास, संस्कृति जनजीवन के साक्षात दर्शन करवाती हैं। हिमप्रस्थ पत्रिका भी राहुल जी के इन यात्रा वृतांतों को पाठकों के समक्ष लाने में सफल हुई है। वर्ष 1968 में उनका सिरमौर शीर्षक से प्रकाशित लेख, सिरमौर के जीवन तथा इतिहास, संस्कृति तथा परंपराओं से रूबरू करवाता है।

राहुल जी ने सिरमौर जनपद के देवताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है कि सिरमौर से बेला नामक स्थान पर नैना देवी का मंदिर है जिसके पुजारी देवभट्ट लोगों के आठ परिवार हैं जो बारी-बारी से एक-एक महीना पूजा करते और दक्षिणा लेते हैं। देवी का यहां कोई मंदिर नहीं है। उसकी मूर्तियां एक भाट के घर में रखी जाती हैं। पहली मूर्ति क्युंथल (क्योंथल) से लाई गई थी। उसे इसी घर में रखा गया था जहां से उसे हटाया नहीं जाता। मूर्तियों की संख्या 15-16 है। सावन के पहले तीन दिनों में गांव के ऊपर रांवीधार का मेला लगता है जहां कराली और उसके आसपास के भोजों के लोग आते और नाचते गाते हैं। मेले के समय हर शाम देवी की मूर्ति थोंथा, मशवा और तलियाणा गांव में जाती है, लेकिन दिन में वह मेले के स्थान पर रहती है। नैनादेवी, गढ़वाल और कमाऊं में भी पूजी जाती है वहां उसे दुर्गा का रूप माना जाता है।

राहुल ने रेणुका, जामू का भी उल्लेख अपने यात्रा वृतांतों में किया है। उन्होंने इस लेख में सिखों, मुसलमानों के बारे में भी लिखा है।

सिख : सिरमौर में सिख थोड़े से रहते हैं। दशम गुरु गोविंद सिंह का सिरमौर से संबंध रहा है। पांवटा साहिब (सिरमौर) में वह स्वयं आकर पांच वर्ष तक रहे थे। वहां यमुना के किनारे पुराना गुरुद्वारा है। नाहन से 26 मील पर अवस्थित इस जगह तक मोटर गई है। देहरादून से भी वहां पहुंचा जा सकता है। गुरुद्वारा के पास सम्पत्ति है। पांवटा से 8 मील पर भंगानी में दूसरा गुरुद्वारा है। यहां पर गुरु गोविंद सिंह ने बिलासपुर व गढ़वाल की सेना को हराया था। नाहन में भी एक गुरुद्वारा है।

मुसलमान : पहाड़ में मुसलमान बहुत कम हैं। जुब्बल, बाघी और सिरमौर में कुछ मुसलमान रहते हैं।

जन्म संस्कार : सिरमौर में गर्भ धारण के सातवें या नवें महीने मातृ हवन करके गर्भ की रक्षा करने की कोशिश की जाती है। रेणुका में पत्नी के गर्भ धारण किए रहने के समय कोई अपने हाथ से जानवर नहीं मारता।

श्राद्ध : मरने पर तरुण हो या वृद्ध मुर्दे को अर्थी पर रखकर बाजे-गाजे के साथ श्मशान में ले जाते हैं। कहीं-कहीं ब्राह्मणों, राजपूतों, बनियों, अनुसचित जाति और बोहरों को छोड़कर बाकी सभी जाति के लोग दो-तीन दिन तक मुर्दे को रखते हैं और बराबर बाजा बजता रहता है। चिता पर आग लगने से पहले शरीर पर से कीमती जेवरों और कपड़ों को हटा लिया जाता है। कपाल क्रिया नहीं की जाती, चिता के ठंडी हो जाने पर राख और हड्डियों को जमा कर किसी नदी में बहा दिया जाता है। और तीन दिन के बाद एक बकरे की बलि करके श्राद्ध समापत कर दिया जाता है। सतलुज, गिरी, पब्बर के किनारे भिन्न-भिन्न जातियों के अपने अलग-अलग श्मशानघाट होते हैं। यहां ऊपरी पहाड़ों में अर्थी से ले जाते समय बाजा नहीं बजाया जाता, केवल एक ढोल बजाया जाता है। 16 दिन बाद कनैत लोग एक बकरे की बलि चढ़ाकर श्राद्ध को समाप्त करते हैं।

त्योहार : सिरमौर में गिरी के उत्तर में चार बड़े त्योहार (साजा) है जो आम तौर पर तीन दिनों तक मनाए जाते हैं। बिशू का त्योहार बैसाखी के दिन (13 अप्रैल) पड़ता है। इसका मेला सिरमौर के बहुत से गांवों में होता है। मेला किसी पहाड़ी धार पर देवता के झंडे के नीचे होता है। लोग नाचते गाते और खूब खान-पान करते हैं। हरियाली का त्योहार सावन में मनाया जाता है जो

आषाढ़ के अंतिम दो दिनों में भी रहता है। इस समय के पकवान अधिकतर दूध-चावल के बनाए जाते हैं। गिरी दक्षिण के तरफ के लोग मैदानों के त्योहारों को अधिक मनाते हैं, इसीलिए दीवाली बहुत धूमधाम से मनाई जाती है।

मेला : रेणुका का मेला पूर्वी हिमाचल प्रदेश का सबसे बड़ा मेला है जो कि कार्तिक सुदी एकादशी को रेणुका सरोवर के किनारे होता है, जहां बीसियों हजार लोग आते हैं। अदरक, सोंठ, हल्दी, अखरोट और लकड़ी के बर्तन बहुतायत में बिकते हैं। नाहन में छड़ियों का मेला व दशहरा, त्रिलोकपुर का मेला, पांवटा में होली का झंडा साहेब, सराहां में बावन द्वादशी तथा पल्हेछ में बिशू का मेला प्रमुख है।

भोजन : गिरी से उत्तर में पहाड़ से दूसरे लोगों जैसा भोजन है। जाड़ों के सवेरे भोजन के साथ लोग दही या मट्ठा खाते हैं और रात को रोटी। लोग दिन में तीन या चार बार खाना खाते हैं। सवेरे के वक्त 'गौगटी' मध्याह्न में चौलाई और मंडुवा की रोटी तथा रात को चावल या चपाती खाते हैं। सवेरे के भोजन को जठालनू, मध्याह्न के भोजन को चेहली और शाम के भोजन को बियालू कहते हैं। गर्मियों के दिनों में दिन में दो तीन बार सत्तू खाते हैं। सैन तथा धारणी इलाके के लोगों का मुख्य भोजन सत्तू है। वहां मक्की के आटे की रोटी भी खाई जाती है। मांस, मछली सभी खाते हैं। पटांडे को पसंद किया जाता है जिसे देस में मंडा या पूड़ा कहते हैं लेकिन पहाड़ में इसमें नमक या मीठा नहीं मिलाया जाता। त्योहार का यह मुख्य भोजन है। पटांडे को दूध या खीर के साथ खाते हैं। पीसे चावल की उसी प्रकार असकलियां बनाते हैं, जिसे घी और खांड के साथ खाते हैं। पटांडे, असकलियां और खीर यहां के त्योहारों के भोजन हैं।

पोशाक : सिरमौर जिले में गिरी के दक्षिण ओर के लोगों की पोशाक वही है जो कि अंबाला और सहारनपुर जिले की। गिरी के उत्तर में पुरुष बिना बटन का एक सफेद कोट (लोइया), काले रंग का पायजामा और एक ऊनी टोपी पहनते हैं। पायजामे की जगह पुरुष लंगोटी पहनते हैं। स्त्री की पोशाक है लहंगा कुरती या अंगा और सिर पर कपड़े का रूमाल। लेकिन उत्सव या विशेष अवसरों पर स्त्रियां बढ़िया कपड़े का सफेद काले और रंगीन रूमाल पहनती हैं। विवाहित स्त्री नाक में नथ और सिर बांधने के लिए 'चाक' का उपयोग करती हैं। गरीब स्त्रियां चांदी की नथ पहनती हैं।

राहुल का नाहन प्रवास

राहुल सांकृत्यायन सिरमौर जनपद के दौरे के दौरान नाहन शहर में काशी निवास में रहे थे। यह जानकारी प्रदेश के साहित्यकार श्री संतोष उत्सुक ने देते हुए बताया कि आज इस कोठी के स्थान पर होटल बन गया है लेकिन इतिहास के जानकारों को याद है कि राहुल जी के कदम काशी निवास में पड़े थे।

गिरी के दक्षिण में पहने जाने वाले कपड़ों के नाम

ढावली	सफेद ऊन की बोरी कंबल
दोह	एक बड़ा और बारीक कंबल
झग्गा	कुर्ता
खेसड़ी	लंगोट
पंखी	बारीक ऊनी चादर
सलूका	जाकेट
सुत्थन या सलवार	

गिरी के उत्तर के वस्त्र

लोइया	ऊनी कोट
आलसू	ऊनी जूता
कमेली	कंबली
लेवा	रात की सूती
अंगटा	अंगिया

कृषि :

इस जिले में तीन प्राकृतिक विभागों के अनुसार खेती की फसलों में भी फर्क पाया जाता है :

पच्छाद रेणुका की तहसीलें तथा पौंटा के कुछ भाग ऊंचे पहाड़ वाले हैं। यहां बहुत कम भाग ऊंचे पहाड़ वाले हैं। यहां बहुत कम खेती खाली छोड़ी जाती है। बस्तियों से दूर खील और ढाक अधिक उपयोग न होने वाले खेत भी खरीफ में बोए जाते हैं। यदि काफी हुई तो रब्बी में भी उनमें खेती होती है।

धारटी श्रेणी और नाहन तथा पौंटा के खोल अपनी विशेषता रखते हैं।

क्यारदादून देहरा दून की तरह की समतल भूमि है।

फसलें

आम तौर से दो फसलें (रबी और खरीफ) इस जिले में होती है। लेकिन धारटी इलाके में एक फसल काट लेने के बाद खेत को दो या तीन साल के लिए देच छोड़ दिया जाता है। रबी मौसम में जौ, चना, सरसों, मसरू, तंबाकू, खरीफ में मक्की, धान, गन्ना, तेलहन, अदरक, कपास, लाल मिर्च, चौलाई, मंडवा, लथी, उर्द, गोगटी (कचालू), हल्दी।

सिरमौर में पहाड़ी और काकर दो तरह के तंबाकू होते हैं। इन्हें पहाड़ी अदरक के साथ बोया जाता है। काकर तंबाकू दून और नाहन तहसील के निचले पहाड़ों में सिंचाई वाले खेतों में बोए जाते हैं। इनमें पहाड़ी की तरह पत्ते दो बार नहीं बल्कि एक ही बार तोड़े जाते हैं।

चावल : यहां बासमती, जीरी, छुहारा, झिंजण, मोगरा, मगोरी, मुंजी, बेगम, राजमजवाइन, सांठी, सिंचाई वाले खेतों में बोए जाते हैं और कालोन, ढोलू, चंपा, बोलोन, उजला, ऊखल, संदरू, बंकसर, रतवा, त्रिशाल, वर्षा के भरोसे बोए जाते हैं। बासमती



आम तौर से पहाड़ों में तथा रामजवाइन दून के खेतों में बोया जाता है।

अदरक तथा हल्दी की फसल से सिरमौर को काफी आमदनी होती है। सैण इलाके में चैत्र माह में अदरक बोया जाता है। ऊपर के इलाकों में आषाढ़ (जून) में अदरक बोया जाता है। दिसंबर में अदरक को निकाल कर अप्रैल क जमीन में गाड़ दिया जाता है। हल्दी भी उन्हीं जगहों पर होती है। अदरक किसी खेत में साल में एक बार ही लगाया जाता है। जबकि हल्दी को उसी खेत में दो साल तक रखा जाता है।

पशुपालन भी सिरमौर जनपद में सभी जगह होता है। पहाड़ों में पशुधन को मकान की निचली मंजिल में रखा जाता है। जिसे ओबरा कहते हैं। ओबरा कहीं-कहीं चरागाह के पास गांव से दूर होते हैं। यहां भालू तथा बघेरे का डर रहता है। धनी लोग भैंस पालते हैं। गर्मियों में गुज्जरी (जम्मूवाल) अपनी भैंसों को चराने के लिए लाते हैं। जाड़े में वे निचले पहाड़ों या क्यारदादून में रहते हैं। भेड़ बकरियां भी पाली जाती हैं।

सिरमौर रियासत घोड़ों तथा खच्चरों को पैदा करने तथा पालने के लिए प्रोत्साहन देती थी। रामलीला के मेले में इसके लिए इनाम की व्यवस्था थी। सुअर पालन अनुसूचित जाति द्वारा किया जाता है। मुर्गी पालन नगण्य है।

उद्योग एवं व्यापार

सिरमौर में मामूली दस्तकारियों के अतिरिक्त उद्योग धंधों की और भी कुछ कोशिश की गई। नाहन में 1867 में फाउंडरी कारखाना आरंभ हुआ।

निर्यात : गेहूं, चना, हल्दी, सोंठ (सूखा अदरक), मक्की, चावल, मधु, सूखा अनारदाना, हरड़ (हरी), लकड़ी, बांस, अखरोट। इसके अतिरिक्त नाहन फाउंडरी के लोहे के कोहलू निर्यात होते हैं गेहूं और चना क्यारदादून से चुहड़पुर (देहरादून) जाती है। क्यारदादून का अनाज अंबाला जाता है। शिमला, डगशाई, कसौली और सोलन भी सिरमौर की चीजों के बाजार हैं। आसपास के गांवों के लोग अपनी चीजों को नाहन में बेचने को लाते हैं, जो एक अच्छी मंडी है। नाहन से रेलवे स्टेशन तथा नाहन से पांवटा, शिमला तक मोटरों के चलने से अब व्यापार के रास्ते भी यही हो गए हैं। रियासत काल में यहां के लोग सौंठ और हल्दी पीठ पर लाद कर बिलासपुर और जगाधरी तक ले जाते थे और वापसी में जरूरी सामान खरीद कर लाते थे। जंगलों से लकड़ी भी नदियों से होकर जगाधरी पहुंचाई जाती है। तंबाकू, बासमती, चावल तथा लाल मिर्च का भी निर्यात होता है।

आयात : मिल के कपड़े, कारखाने की दूसरी चीजें, तांबे, पीतल, अल्यूमिनियम के बर्तन, नमक, चीनी बाहर से आते हैं। नाहन तहसील को छोड़कर बाकी जगहों में अपने खाने के लिए अन्न पर्याप्त होता है।

संस्मरण-1985-1988

आज भी स्मृतियों में रचा बसा है नाहन

◆ राजेंद्र राजन

नाहन में अनेक ऐसी घटनाएं घटी जिन्होंने मेरी पहली पोस्टिंग को यादगार बनाया। 1987 में जालंधर दूरदर्शन की टीम कालाअम्ब के समीप स्थित सुकेत फॉसिल पार्क में फिल्म की शूटिंग के लिये आयी तो उसके साथ जालन्धर केन्द्र के तत्कालीन केन्द्र निदेशक नेत्र सिंह रावत भी आए। नाहन की खूबसूरती उन्हें इस कदर भा गयी कि मैं रात बारह बजे तक उन्हें इस शहर की सैर कराता रहा। अभिभूत हुए। 'अरे भाई डीपीआरओ साहब, यार ये तो गजब का शहर है। इस पर मैं तुरन्त एक डाक्यूमेन्टरी फिल्म बनाऊंगा। तुम इसकी स्क्रिप्ट लिखो। मुझे उस वक्त यह सबसे बड़ी गप्प लगी। मगर रावत जी उसके ऐतिहासिक महत्त्व इमारतों, साफ-सफाई, मन्दिरों आदि और चौगान से इस कदर अभिभूत थे कि उनका जुनून देखते ही बनता था।

पहली नौकरी की अनुभूति ठीक वैसे ही होती है जैसे कोई युवती पहली दफा मां बनें। मेरी वह पहली पोस्टिंग थी जब मई 1985 को शिमला में लोक सेवा आयोग में बतौर डीपीआरओ के चयन के बाद मेरी तैनाती नाहन में हुई। मैंने 16 सितम्बर 1985 को ज्वाइन किया था। तब मेरी आयु महज 32 साल थी। हिमाचल में मेरी वह पहली सरकारी नौकरी थी। संयोग यह था कि उस जमाने में सरकारी नौकरी प्राप्त करने की अधिकतम आयु 32 साल थी और उसी साल यानी 1985 के अगस्त में, मैं 32 साल पूरे करने वाला था। मई में चयन होने के बावजूद नियुक्ति पत्र हाथ में नहीं आ रहा था। सरकारी व्यवस्था के दावपेंच से मैं नावाकिफ था कि कैसे और क्यों फाइल को डिले किया जाता है। मैंने इसके लिये अपने बड़े भाई के समान अपने लेखक मित्र केशव का सहारा लिया। उन्होंने उस वक्त पीआर विभाग के सचिव महाराज कृष्ण काव से निवेदन कर मेरा एपायंटमेन्ट लैटर दिलवा दिया। इससे हुआ यूं कि मैं चण्डीगढ़ में प्राइवेट नौकरी के जंजाल और शोषण से मुक्त हुआ। यूं मैं 1975 से लेकर 1985 तक 10 सालों में 10-12 प्राइवेट अथवा अर्ध-सरकारी नौकरियां बदल चुका था।

ज्वाइन करने के लिये अंबाला से मेरे एक मित्र जगदीश शर्मा मुझे नाहन लाए। 15 सितम्बर को। इसे संयोग ही कहा जायेगा कि जब 30 अगस्त 2011 को मैं शिमला मुख्यालय से बतौर संयुक्त निदेशक रिटायर हुआ तो जगदीश जी 26 साल के कार्यकाल के बाद सेवामुक्त होते वक्त भी 'टी पार्टी' या विदाई पार्टी में पहुंचे। बहरहाल नाहन की सांस्कृतिक, साहित्यिक व ऐतिहासिक पृष्ठभूमि इस कदर सुघड़ व सम्पन्न थी कि मुझे लगा मुझे मनपसन्द स्टेशन मिल गया हो। दूसरे दिन ही कार्यालय के एक सहयागी ने नाहन की सैर करवा दी। यह छोटा सा शहर साफ-सुथरी आबोहवा, पुरानी व नई इमारतों का संगम और तालाबों का शहर है। सितम्बर के उस महीने में बारिश जाती हुई बहार की तरह थी और सुबह-शाम समूचा शहर दूधिया धुंध के आवरण में कुछ यूं लिपट जाता मानों किसी नयी नवेली दुल्हन ने लज्जावश घूंघट ओढ़ रखा हो। आस-पास व दूर-दूर तक फैले पहाड़ों से बरसात के बाद धुन्ध के घने साये इस शहर को अपनी आगोश में भर लेते तो लगता मैं सचमुच कुदरत के कितना करीब हूं। जब नाहनवासियों को ज्ञात हुआ कि मैं छोटा-मोटा लेखक हूं तो उनमें से कई नये-पुराने लेखक मुझसे मिलने आए। आने वाले चन्द महीनों में ही पुरानी जर्जर सी इमारत में स्थित मेरा कार्यालय सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया। एक बड़े से हॉल में सफेद चादरें बिछाकर हर महीने साहित्यिक संगोष्ठी का आयोजन होता। विधायक महोदय अजय बहादुर सिंह और उनके छोटे भाई अभय बहादुर तक इन गोष्ठियों में शरीक होते। काव्य, पाठ, कहानी पाठ, गजलों की महफिलों, मुशायरों में अदब की दुनिया के लोग बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते। ऐसा लगता हर कोई नाहन की तरफ खिंचा हुआ आ रहा है। बड़े आयोजन एसएफडीए हॉल में होने लगे। मैंने कुछ मित्र लेखकों के मिलकर 'नंवाकुर' संस्था का गठन किया।

इसके माध्यम से नये-पुराने लेखकों, कलाकारों, रंगकर्मियों को अपनी प्रतिभा को अभिव्यक्त करने का मंच मिला। नंवाकुर का बैनर छोटे से शहर में खूब लोकप्रिय हो गया और ज्ञान प्रकाश विवेक, कमलेश भारतीय, जीतेन्द्र अवस्थी, सत्यनान्द शाकेर बन्सल, वीरेन्द्र मेहन्दीरत्ता जैसे कई लेखक यहां आते रहे। कलकत्ता से एक लेखक व मित्र मोहन किशोर दीवान खासतौर पर मिलने आए। मैं नाहन में आने से पूर्व चण्डीगढ़ में उनकी एक एड एजेन्सी में एक्सीक्यूटिव था। उस जमाने में चण्डीगढ़ इंडियन एक्सप्रेस के रेजिडेन्ट सम्पादक प्रेम कुमार थे जो स्टेटसमैन छोड़कर एक्सप्रेस में आए थे। मैंने 1983 में भारतीय विद्या भवन चण्डीगढ़

से पत्रकारिता में पीजी डिप्लोमा किया था और वे इवनिंग कॅलासेस में पढ़ाने आते थे। जब उन्हें पता चला कि उनका एक स्टूडेन्ट डीपीआरओ के पद पर चयनित हुआ है तो खासतौर पर मुझे मिलने चण्डीगढ़ से आए। नाहन में लेखन व कलाओं के प्रति लागों का उत्साह देखते ही बनता था। यहां हर लेखक की अपनी एक संस्था थी। सत्यापुरी नाहनवी अपने तेज तर्रार तेवरों के साथ जब मंच पर काव्य पाठ करती थीं तो सब मन्त्रमुगध होकर उन्हें सुनते थे। नासिर यूसूफ जई, नरेन्द्र रमोल, कमल, रत्न जैसे कई लेखक व कवि उस जमाने में शीर्ष पर थे। एक छोटे से सन्देश पर सब जुट जाते। 1987 में नाट्योत्सव एक बड़ा आयोजन था जिसमें पंजाब, चण्डीगढ़ के बहुत से कलाकार शामिल हुए। अम्बाला के पार्श्व व ग़ज़ल गायक विनोद सहगल नाइट के लिये उस दौर में 2200/- रुपये एकत्र किये तो उस प्रोग्राम में अजय बहादुर सिंह, विक्रम मल्होत्रा, दिनेश मल्होत्रा जैसे गजलों के दीवाने रात बारह बजे तक शामें-गजल का लुप्त उठाते रहे थे। नाहन में 1985 से 1988 तक अपने कार्यकाल के दौरान मेरा वास्ता उस वक्त वहां के नेताओं के साथ गहरा रहा। उनके प्रोग्रामों की कवरेज के लिये मैं सिरमौर के प्रत्येक कोने में घूमा। सभी नेता मृदुभाषी, मिलनसार और अपने चुंबकीय व्यक्तित्व के कारण सबको अपना बना लेते थे। सिरमौर के वे दूर-दराज इलाकों में मुझे ले गये। ऐसी सड़कों का उद्घाटन भी किया जिन पर जब जीप चलती तो उसके आधे टायर जमीन से बाहर होते। लगता जीप लुढ़क जाकर हजारों फीट नीचे पहाड़ी पर जाकर ही दम लेगी। गांव में ही रहने का प्रबन्ध होता। स्थानीय लोग मेहमानों की आवभगत का पूरा खयाल रखते। गांव में मेहमानों के लिए बकरा न कटे और खातिरदारी होना लाजिमी था।

अपने कार्यकाल के दौरान नाहन में अनेक ऐसी घटनाएं घटी जिन्होंने मेरी पहली पोस्टिंग को यादगार बनाया। 1987 में जालंधर दूरदर्शन की टीम कालाअम्ब के समीप स्थित सुकेत फॉसिल पार्क में फिल्म की शूटिंग के लिये आयी तो उसके साथ जालन्धर केन्द्र के तत्कालीन केन्द्र निदेशक नेत्र सिंह रावत भी आए। नाहन की खूबसूरती उन्हें इस कदर भा गयी कि मैं रात बारह बजे तक उन्हें इस शहर की सैर कराता रहा। अभिभूत हुए। 'अरे भाई डीपीआरओ साहब, यार ये तो गजब का शहर है। इस पर मैं तुरन्त एक डाक्यूमेन्टरी फिल्म बनाऊंगा। तुम इसकी स्क्रिप्ट लिखो। मुझे उस वक्त यह सबसे बड़ी गप्प लगी। मगर रावत जी उसके ऐतिहासिक महत्त्व इमारतों, साफ-सफाई, मन्दिरों आदि और चौगान से इस कदर अभिभूत थे कि उनका जुनून देखते ही बनता था। वे मूल रूप से लेखक थे और उत्तराखण्ड पर उनकी एक संस्मरण की किताब खूब मकबूल हुई थी। बाद में अपनी लाइब्रेरी में मुझे उनकी किताब देखकर ताज्जुब हुआ। वे फिर कुछ दिन बाद मुझे उनके फोन और खत आने लगे। 'तुरन्त नाहन शहर पर आलेख भेजो। मैं हफ्ते बाद अपनी कैमरा टीम यानी प्रोडक्शन यूनिट भेज रहा हूं।' मैं हैरान। परेशान। खैर मेरे लिये यह एक बड़ी चुनौती थी। मैंने नाहन पर शोध करने के लिये पुस्तकालयों में कई पुस्तकें छान मारीं। कोई तीस पृष्ठों की स्क्रिप्ट तैयार हो गयी। डाक से भेजी तो रावत जी का उत्तर आया, 'राजन जी। तुम तो लेखक हो। हमें शोध लेख नहीं चाहिए। इसे चार-पांच पृष्ठों में समेटो। आधे घण्टे की फिल्म है।

मैं कोल्हू के बैल की तरह फिर जुट गया। रावत जी इस फिल्म के प्रति गंभीर थे। उन्होंने एक वरिष्ठ कैमरामैन के साथ एक महिला प्रोडयूसर को भेजा। वे एक हफ्ता तक नाहन को हर कोने से उसके हर पहलू को कैमरे में कैद करते रहे। कोई दो महीने बाद फिल्म तैयार हो गई। फिल्म का शीर्षक था 'नाहन-एक नगीना'। फिल्म के क्रेडिटस में मेरा नाम था। आलेख, राजेन्द्र राजन। मैं खुशी से झूम उठा। फिर एक हजार का चेक आया। पारिश्रमिक। धमाका तब हुआ जब 1987 में अगस्त या सितम्बर में दूरदर्शन दिल्ली के नैशनल चैनल पर रात 10.20 पर इस फिल्म का प्रसारण हुआ। उसके बाद जालन्धर दूरदर्शन से दर्जनों बार इसे दिखाया जाता रहा। नाहन देश के पर्यटन मानचित्र पर रातों-रात स्थापित हो गया। कई लोग तो पंजाब, हरियाणा से स्कूटर-मोटरसाइकलों पर नाहन को देखने आने लगे। नाहनवासियों, खासकर लेखकों व स्थानीय विधायक अजय बहादुर, उस वक्त के डीसी अशोक ठाकुर की आंखों का मैं तारा बन गया। संस्थाएं मुझे सम्मानित करने लगीं। मुझे लगा मैं चन्द दिनों में ही छोटा-मोटा सैलीब्रिटी बन गया हूं। मेरे रहते और फिल्मों पर भी काम हुआ। नेत्र सिंह रावत ने नाहन के अलावा रेणुका झील पर भी एक फिल्म बनाई। सुकेत फॉसिल पार्क की फिल्म भी बनी। मेरे सुझाव पर नाहन में हुए पहले प्रशासनिक सुधारों पर दूरदर्शन ने अहमदनगर एक्सपैरिमेन्ट के नाम से फिल्म बनाई। इन सभी फिल्मों की स्क्रिप्ट लिखने का मौका मुझे ही मिला। नाहन के सांस्कृतिक पक्ष में एक और सितारा जुड़ा। अमला राय। ताजा-ताजा नैशनल स्कूल ऑफ ड्रामा से ग्रेजुएट होकर आई थीं और नाहन में रंगमंच की वर्कशाप भारत सरकार की ओर से करना चाहती थीं। अमला राय दिवगंत हरीशचन्द्र राय की पुत्री हैं और नाहन में ही आर्टस कालेज की स्थापना में उनके पिता की अहम भूमिका, लेकिन कला, साहित्य के प्रति घनघोर उपेक्षा भाव के चलते सरकार इस पक्ष में नहीं थी कि कला को बढ़ावा दिया जाए। अतः आर्टस कालेज कुछ शहरों में पैन्डुलम की तरह घूमता रहता और अन्ततः सरकार की 'मेहरबानियों' से अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ। अमला राय ने एक महीने में ही नाहन में सोये हुए बच्चों, युवाओं को जगाया। उन्हें एक्टिंग के गुर सिखाए और जब इस नौनिहालों की मदद से अपना शो स्टेज किया तो समूचा शहर चकित रह गया।

उन सालों में नाहन के बाशिंदों के बारे में मेरी यह धारणा प्रबल होती जा रही थी कि उनमें प्रतिभा तो कूट-कूट कर भरी हुई

थी लेकिन वे इस आस में सालों-साल तक प्रतीक्षारत रहते थे कि कोई तो आएगा जो उनकी उंगली पकड़कर उन्हें चलना सिखाएगा। इसकी एक वजह शायद यह थी कि नाहन का अपना कोई मौलिक चरित्र नहीं था। सिरमौर की संस्कृति उसके मुखतलिफ जनपदों से परिलक्षित होती थी, लेकिन नाहन में सिरमौर के मूल निवासी नगन्य थे। हरियाणा की सीमा महज चन्द मील दूर है। अतः हरियाणा से बहुत से लोग आकर नाहन बसे या नाहन को उन्होंने ही बसाया। इसमें सिरमौर रियासत के राजा शमशेर सिंह की भी भूमिका अहम रही जो रियासत के कामकाज के लिये लोगों को बाहर से लाए होंगे। इसीलिये नाहन की जुबान में हरियाणा का एकसेन्ट साफ झलकता है। सिरमौरी बोली या उपभाषा का यहां प्रचलन बेहद कम है।

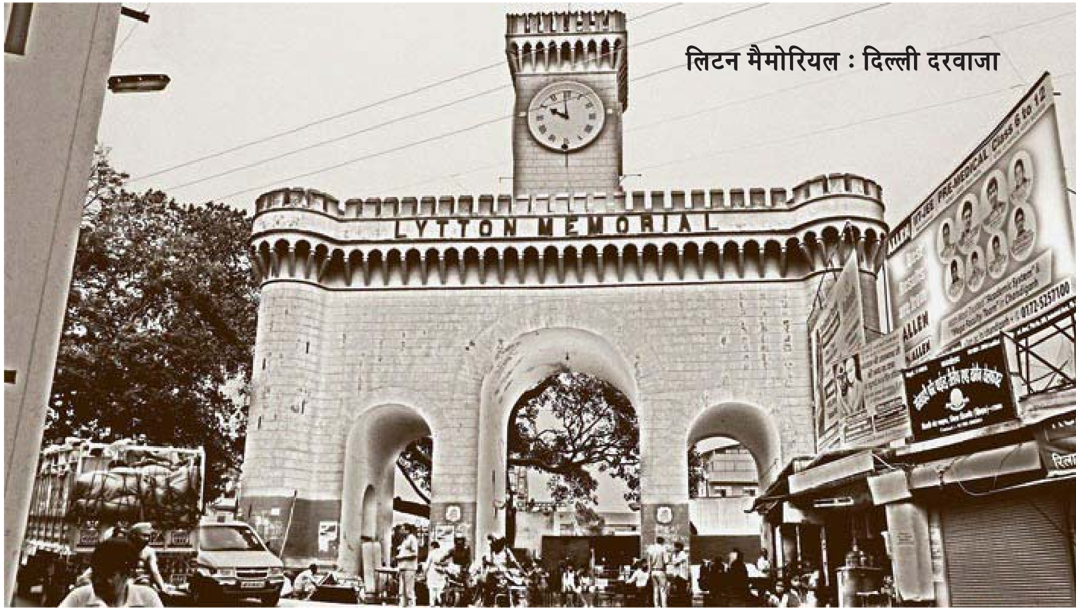
नाहन में तथाकथित कलाओं के कलाकार भी बेगुमार थे। ड्रिफ्ट बुड के कई कलाकार यहां जोर आजमाईश कर रहे थे जो शहर के आसपास फैले जंगलों से टूटी-फूटी लकड़ियां, दरख्तों की जड़ों या टहनियां इकट्ठी कर घरों में उनके ढेर लगा रहे थे। उन्हें तोड़ मरोड़ कर और फिर पालिश कर उनमें मानवीय या फिर जंगली जानवरों या पक्षियों की आकृतियां ढूंढ रहे थे। एक कलाकार ने तो अपने घर में ही ड्रिफ्ट बुड का म्यूज्यिम बना दिया था। और उसका उद्घाटन डीसी से करवा कर लिया था। ड्रिफ्ट बुड के कई कलाकार थे जो मेरे दफ्तर इस गर्ज से आते थे कि मैं उन पर लेख-वेख लिख दूं। मैंने एक नहीं, अनगिनत लेख लिखे। उस जमाने में मुझ पर विकासात्मक सांस्कृतिक साहित्यिक पत्रकारिता का भूत सवार था। चण्डीगढ़ से आया था। सभी अखबारों में मैं फ्री-लान्सर पत्रकार के रूप में 1980 से 1985 के मध्य खूब छपा था खासकर दैनिक ट्रिब्यून में और सैंकड़ों कतरनों की तीन-चार फाइलें इकट्ठी हो गई थीं। मैं नाहन से अगर कूड़ा-कबाड़ भी लिखता तो अखबारें उसे सहज ही छाप देतीं। मेरा नाम बिक रहा था। लोग मुझे पढ़ रहे थे और फीड बैक के मुताबिक बहुत से युवा मेरी बे-सिर पैर की पत्रकारिता पढ़-पढ़कर लिखना सीख रहे थे। मुझे याद है नाहन में ही किसी सर्वेक्षण के सिलसिले में देश के बहुत से बड़े-बड़े लेखकों का दल आया था। रेणुका झील में नौका-बहार के लिये आए थे। उनके साथ मेरी डयूटी थी। उस दल में देश की जानी-मानी लेखिका और 'हिन्दुस्तान' अखबार की संपादक मृणाल पांडे भी शामिल थीं। उनके साथ चित्रा मुद्गल और प्रभाकर श्रोत्रिय भी थे जिन्होंने अगले कई सालों तक मेरे को याद रखा और दिल्ली में जब-जब मैं उनसे मिला तो वे मुझे प्यार से मिले। चित्रा जी के लम्बे-लम्बे इन्टरव्यू मैंने इरावती के अंकों में छापे और बाद में 'बारह साक्षात्कार' पुस्तक में उन्हें संकलित किया।

सरकारी कामकाज में सुधारों का श्रेय मेरे वक्त के डीसी को है। यानी अशोक ठाकुर। उन्होंने महाराष्ट्र में अहमदनगर की तर्ज पर राजस्व रिकार्ड की ट्रांसपैरेंसी के रूप में माइक्रो फिल्में बनवाईं। आज हम हिमाचल में जो सुगम केन्द्रों की व्यवस्था देखते हैं उसका श्रेय अशोक ठाकुर को ही है। सरकारी दफ्तरों में लाइसैंस या किसी भी सार्वजनिक काम के वास्ते आने वाले लोगों के लिये साफ-सुथरे काऊंटर बनाए ताकि उन्हें बाबूओं के चक्कर न काटने पढ़े। इससे काफी हद तक भ्रष्टाचार कम हुआ और सरकारी रिकार्ड व सूचनाएं सुगमता से प्राप्त होने लगी थीं। नाहन के बाद आने वाले सालों में इसे सभी जिलों में लागू किया गया। सुशासन की दिशा में वह पहला मील पत्थर था जो अशोक ठाकुर की अगुवाई में नाहन में स्थापित हुआ था। इसी कड़ी का एक और महत्त्वपूर्ण अंग था 'फाइल्स टू फील्ड।' एक प्रोग्राम में मुझे अशोक ठाकुर साथ ले गये। रेणुका के बीहड़ दुर्गम मार्ग/ तीन दिन तक हम लोग पैदल चलते रहे और 100 किलोमीटर का सफर किया। नाहन लौटा तो एक महीने तक टागों में जबरदस्त दर्द होता रहा। उस यात्रा में डा. अरुण शर्मा भी थे। वे नाहन में एस.डी.एस. थे और दो बार धूमल सरकार में प्रिंसिपल प्राइवेट सैक्रेटरी रहने के बाद शिक्षा सचिव के पद से रिटायर हुए। 'फाइल्स टू फील्ड' का मतलब था गांव-गांव पहुंचकर लोगों की समस्यायें उनके घर-द्वार पर निपटायी जायें। तहसीलदार, पटवारी और सभी महकमों के अधिकारी ऐसे कैम्पों में इकट्ठे होते।

चम्बा की ही तरह सिरमौर आज भी विकास की दृष्टि से कुछ पिछड़ा हुआ है। हमारे उन शिविरों में हमने देखा था कि विकास की कोई किरण रेणुका के गांवों का छू नहीं पायी थी। लोग मीलों लम्बा सफर तय कर नाहन, रेणुका या पांवटा साहिब पहुंज पाते थे। इस यात्रा के दौरान सिरमौर की ऐसी परम्पराएं देखने को मिलीं वो सभ्य व विकसित समाज के लिये चुनौतियां थीं। यानी बेठू प्रथा अर्थात बंधुआ मजदूरी। इस पर मैंने एक कहानी भी लिखी थी 'बेठू'। यानी साहूकार का कर्ज न चुका पाये तो उसके यहां नौकर हो जाओ। कोल्हू के बैल की तरह जुटे रहो। रात-दिन। हाईकोर्ट की मदद से सिरमौर में अनेक बंधुआ मजदूरों को मुक्त कराया गया था। दूसरी-एक और प्रथा जिसके बारे में मैने और डीसी साहब ने लोगों को समझाया था वह थी बाल विवाह। हमने एक गांव में ऐसे शिविर के दौरान दो-तीन बाल विवाह होते देखे। डीसी साहब चाहते तो ऐसे मामलों में कानूनी कार्यवाही कर ऐसे परिवारों को जेल भिजवा सकते थे। लेकिन हम एक साफ नीयत से लोगों की समस्याओं को सुलझाने के लिये आए थे इन कैम्पों में। कानूनी कार्यवाही करने का अर्थ होता तनाव पैदा करना। लोगों में भय पैदा करना। अतः देते रहे। कुल मिलाकर नाहन में तीन साल पलक झपकते ही गुजर गये।

(लेखक सूचना एवं जन संपर्क विभाग से सेवानिवृत्त संयुक्त निदेशक हैं)
गांव बल्ह, डाकघर मौहीं, जिला हमीरपुर,
हिमाचल प्रदेश-177030, मो. 82191-58269

आलेख



लिटन मैमोरियल : दिल्ली दरवाजा

मेरे संस्मरणों में सिरमौर

◆ के. आर. भारती

मैं हिमाचल प्रदेश यूनिवर्सिटी में एम.एस.सी. कैमिस्ट्री के द्वितीय वर्ष में पढ़ रहा था कि अचानक एक दिन मुझे अपने बड़े भाई जो सिरमौर के अंधेरी क्षेत्र में जूनियर इंजीनियर के पद पर कार्यरत थे, की ओर से उनके अस्वस्थ होने बारे तार मिली। मैं यह जान कर बेचैन हो गया और अगली ही सुबह अंधेरी जाने का मन बना लिया। चंडीगढ़ के रास्ते मैं सायंकाल नाहन पहुंचा। बस जब दिल्ली गेट पहुंची तो बहुत से यात्री बस से उतर गए। मैं भी वहीं उतर गया। पास की एक चाय की दुकान पर किसी होटल बगैरा का पता करने के लिए मैं बढ़ ही रहा था कि पीछे से किसी ने मेरा नाम पुकारा। मैंने स्तबद्ध होकर पीछे मुड़कर देखा तो पाया कि मेरा नाम पुकारने वाला मेरे बड़े भाई का सहपाठी ध्यान चंद था जो हमारे गांव से थोड़ी दूर का ही रहने वाला था। अनजान जगह में कोई जान-पहचान का व्यक्ति मिल जाए तो इससे ज्यादा प्रसन्नता की बात क्या हो सकती है। दिल्ली गेट के समीप ही एक चाय की दुकान पर चाय पीते-पीते ही तय हुआ कि मैं रात ध्यान चंद जी के पास काटूंगा।

जैसे ही हम ध्यान चंद जी के गुनुघाट स्थित निवास की ओर चले, मेरा ध्यान बरबस ही दिल्ली गेट की तरफ चला गया। गेट के पैरों में शाही तोपें शोभायमान थीं तथा सिर के पास एक बड़ा घड़ियाल। इस गेट में मोटे-मोटे अक्षरों में 'लिटन मैमोरियल' लिखा गया था। वास्तव में यह गेट राजा शमशेर प्रकाश ने, तत्कालीन वायसराय लॉर्ड लिटन की नाहन यात्रा की यादगार में बनवाया था। क्योंकि दिल्ली को जाने वाली बसें इसी गेट से होकर गुजरती हैं, इस गेट का नाम दिल्ली गेट पड़ गया।

गुन्नुघाट को जाते समय, दिल्ली गेट से सटा एक ओर चौगान तो दूसरी ओर राजाओं का महल, जिसे रणजौर महल के नाम से जाना जाता है, स्थित है। धीरे-धीरे चलते हम पंद्रह मिनट में ही ध्यान चंद के निवास गुन्नुघाट पहुंच गए। श्री ध्यान चंद टैलीफोन ऑपरेटर के पद पर नाहन में ही कार्यरत थे और उस दिन उनकी ड्यूटी रात को थी। चूंकि ड्यूटी के लिए अभी काफी समय बाकी था, ध्यान चंद मुझे नाहन के मुख्य बाजार की ओर घुमाने ले गए। पक्की गलियों से होते हम एक चौक पर पहुंच गए जिसे बड़ा चौक के नाम से जाना जाता है। इस चौक के बीचोबीच एक बड़ा पीपल का पेड़ था जो चौक की शोभा को चार चांद लगा रहा था। बड़ा चौक से एक गली दिल्ली गेट की ओर तो दूसरी गली बस स्टैंड की ओर जाती थी। चौक के एक ओर जगन्नाथ मंदिर में हम अपना सिर झुकाने चले गए। मंदिर के पुजारी ने हमारे पूछने पर मंदिर के इतिहास के बारे दिलचस्प जानकारी हमें दी। उन्होंने बताया कि सिरमौर के राजा कीरत प्रकाश ने 1767 ई. में इस मंदिर को बनवाया था जब वह गढ़वाल के श्रीनगर के राजा पर

विजय हासिल जीत कर वापिस आए थे। पुजारी तब हमें बाबा बनवारी दास की समाधि तक ले गए। यह समाधि मंदिर का ही एक हिस्सा है। पुजारी ने हमें बताया कि पहाड़ी, जिस पर राजाओं का महल स्थित है, वह एक घना जंगल था तथा बाबा बनवारी दास वहां निवास करते थे। उनके पास एक नाहर भी था। नाहर शेर का दूसरा नाम है। एक बार जब राजा कर्म प्रकाश शिकार खेलते-खेलते इस पहाड़ी पर पहुंचे तो उनकी भेंट बनवारी दास व उनके नाहर से हुई। कहते हैं बनवारी दास ने ही राजा कर्म प्रकाश को यहां एक शहर बनाने का परामर्श दिया और अपनी राजधानी कालसी से बदल कर यहां बनाने को कहा। उचित समय पर राजा ने यहां शहर बसाया और अपनी राजधानी यहां बनाई जिसका नाम बनवारी दास के नाहर पर नाहर रखा गया जो बाद में नाहन बना। पुजारी ने यह भी कहा कि नाहन राज्य का क्षेत्र बहुत विस्तृत था। हरिद्वार तक फैला हुआ था। नाहन को किसी के लिए जीतना संभव नहीं था। इसलिए इसे ना और हनन से बना हुआ करते हैं यानी ऐसा राज्य जिसका हनन न हो सके। सिरमौर का मतलब ही सिर का ताज होता है। जगन्नाथ मंदिर से हम नाहन के सुप्रसिद्ध रानी ताल चले गए। बाग फूलों से लदा था। बाग के बीचोबीच एक भव्य ताल था जिसे रानीताल कहकर पुकारा जाता है। ताल के एक कोने पर शिव मंदिर स्थित है। कहते हैं कि ताल राज विजय प्रकाश की रानी जो कुमाऊं की राजकुमारी थी, ने तब बनवाया था जब नाहन शहर पानी की कमी से जूझ रहा था। यही रानी अपने मायके से काली मां की प्रतिमा भी लाई थी जिसे नाहन में ही एक मंदिर बनाकर स्थापित किया गया। वह जगह अब काली स्थान के नाम से ही प्रसिद्ध हो गया। वापिसी में हम बस स्टैंड होकर आए। ध्यान चंद जी ने बताया कि यह बस स्टैंड एक कच्चे टैंक को भर कर बनाया गया है।

रात्रि भोज करके ध्यान चंद जी अपनी ड्यूटी पर रवाना हो गए और मैं अपने बिस्तर की ओर। अगली सुबह मैंने नाहन-रेणुका बस पकड़ी और डेढ़ घंटे में लगभग 40 किलोमीटर का सफर तय करके मैं रेणुका पहुंचा। रेणुकाजी से पहले हम एक छोटे कस्बे ददाहू से गुजरे। ददाहू गिरी नदी व जलाल नदी के संगम पर स्थित है और वहां से प्रकृति का अद्‌भुत नजारा देखने को मिलता है। गिरी नदी पर बना एक आधुनिक पुल हमें रेणुका जी ले आया था।

रेणुका जी में ही मुझे पता चला कि मेरे अगले गंतव्य अंधेरी तक का सफर पैदल ही तय करना होगा क्योंकि सड़क भारी बरसात के कारण जगह-जगह से टूटी पड़ी है। अंधेरी तक का सफर लगभग 33-34 किलोमीटर का था। मैं थोड़ा परेशान हो गया तभी एक व्यक्ति ने बताया कि गिरी नदी के किनारे-किनारे से एक शार्टकट भी है जिसे मात्र 20-22 किलोमीटर ही पैदल चलना पड़ेगा। मैंने उसी रास्ते जाने का मन बनाया परंतु सोचा कि पहले मां रेणुका व परशुराम मंदिर में शीश नबा लूं। रेणुका झील लगभग अढ़ाई किलोमीटर के दायरे में फैली हुई है। झील नीले-नीले चमकते पानी से भरी हुई थी। किनारे धार्मिक पवित्र स्नान के लिए घाट बने हुए थे। उन्हीं घाटों पर कुछ लोग नहा रहे थे तो कुछ मछलियों को आटे की गोलियां बना-बनाकर पुण्य अर्जित कर रहे थे। झील से मछलियां पकड़ना बिलकुल मना है। इसीलिए तो मछलियां वहां अठखेलियां करती हुई प्रतीत होती हैं। रेणुका झील के किनारे कई मंदिर बन गए हैं जो रेणुका की धार्मिकता को चार-चांद लगाते हैं। झील के एक कोने पर सफारी (शेरों का चिड़ियाघर) तो दूसरी ओर पक्षियों का शरण्य स्थल था। रेणुका झील के चरणों की ओर परशुराम ताल का निर्माण करवाया गया है। परशुराम ताल के किनारे मां रेणुका व परशुराम जी के मंदिर स्थित हैं। मंदिरों में शीश नवा कर मैं टूरिज्म के होटल में नाश्ता करने आ गया। रेणुका झील देखने से पता चलता है कि वह महिला आकृति में यहां विद्यमान है। कहते हैं कि मां रेणुका ऋषि जमदग्नि की पत्नी थीं। ऋषि जमदग्नि यहां से थोड़ी दूर स्थित जामू टिल्ले पर तपस्या करते थे। एक दिन रेणुका अपनी बहन जो सहस्रबाहू से विवाहित थी, के पास मिलने-जुलने गई। वहां उसका बहुत आदर-सत्कार हुआ। उसने अपनी बहन को सहस्रबाहू को भी अपने यहां आने का निमंत्रण दिया। निमंत्रण के अनुरूप सहस्रबाहू परिवार सहित जमदग्नि की कुटिया में पहुंच गया। वहां पर उनका भव्य स्वागत हुआ और अच्छे-अच्छे पकवान खाने को मिले। यह सब देखकर सहस्रबाहू आश्चर्यचकित रह गया कि एक कुटिया में इतना शानदार प्रबंध कैसे संभव हो पाया। तभी उसे पता चला कि जमदग्नि के पास कामधेनु है जिसकी वजह से यह सब संभव हो सका है। सहस्रबाहू ने लालच में आकर जमदग्नि से कामधेनु देने को कहा परंतु जमदग्नि ने साफ इनकार कर दिया। सहस्रबाहू जबरदस्ती करने लगा। दोनों की लड़ाई हुई जिसमें जमदग्नि मारा गया। उस समय जमदग्नि और रेणुका का पुत्र परशुराम दूर किसी पर्वत पर तपस्या में लीन था। मां रेणुका ने परशुराम को याद किया जो दौड़ा-दौड़ा चला आया। क्रोधित परशुराम ने सहस्रबाहू की चार बाजू छोड़कर सारे बाहू (बाजू) काट दिए। फिर अपनी तपस्या के बल पर पिता को जीवित कर दिया।

एक अन्य किंवदंति के अनुसार, रेणुका माता प्रति दिन जमदग्नि के लिए गिरी नदी से जल लाती थी। एक दिन उसने गंधर्व दंपति को पानी में नहाते देखा और देखते ही रह गई जिस कारण वह विलंब से आश्रम में पहुंची। जमदग्नि ने अपने तपस्या बल से उसका देरी से आने का कारण भांप लिया था। क्रोधित जमदग्नि ने अपने पुत्रों को रेणुका का बध करने को कहा। सभी पुत्रों ने ऐसा करने से मना कर दिया परंतु परशुराम तैयार हो गए। परशुराम की पितृभक्ति से प्रभावित होकर पिता जमदग्नि ने उसे वर मांगने को कहा। परशुराम ने बड़ी चतुराई से मां को पुनर्जीवित करने का वर प्राप्त कर मां को पुनर्जीवित कर दिया। मां को

सिरमौर का जीवन

मेरी पझौता यात्रा में महान लेखक केशवानंद ममगाई लिखते हैं कि यह किस्सा वर्ष 1962 में ग्रीष्म ऋतु की छुट्टियों का होगा। वे लिखते हैं, "हम सोलन, ओच्छघाट होते हुए यशवंत नगर (गिरीपुल) पहुंचे। वहां से आगे सरगांव नामक गांव से होते हुए आगे बढ़ रहे थे तो कुछ दूरी पर एक बालक पशु चराने के लिए जा रहा था। सामने आकर बड़ी नम्रता से बोला... 'नमस्ते' मैंने उसके कंधों पर प्यार से हाथ रखकर पूछा... "क्यों भैया? तुम मुझे जानते हो?" उत्तर मिला.... "जी नहीं!" "फिर तुमने नमस्ते क्यों की?"

"हमारे मास्टर जी ने हमें सिखाया है कि जो भी व्यक्ति मिले उन्हें सदा नमस्ते किया करो।"

और हंसते हुए वह आगे बढ़ गया।

पुनर्जीवित करके परशुराम जब अपनी तपस्या जारी रखने वद्रिका पर्वत चले तो मां रेणुका ने उन्हें वर्ष में एक बार कार्तिक एकादशी के दिन मां से मिलने आने के लिए वचन मांगा। ऐसा वचन देकर परशुराम वद्रिका पर्वत चले गए।

मुझे लंबा सफर पैदल ही तय करना था। मैंने एक सज्जन द्वारा बताए गए शॉर्टकट को चुना और गिरी के किनारे-किनारे काफी दूर तक चलता रहा। दूर-पार कोई दूसरा यात्री नज़र नहीं आ रहा था। न ही कोई घर दूर-दूर तक नज़र आ रहा था। अनजानी राह पर अकेले सफर करना एक अनजान भय से भरने वाला था। मैं एक स्थान पर पगडंडी के किनारे थोड़ा विश्राम करने बैठा। कुछ समय पश्चात जैसे ही मैंने नज़र घुमाई, मेरी खुशी का ठिकाना न रहा जब मैंने एक आदमी को अपने कंधों पर एक कट्टा उठाए हुए अपनी ओर आते देखा। पूछने पर पता चला कि वह शख्स बोरली गांव का था जो संगड़ाह से पहले ही स्थित था। क्योंकि उस शख्स ने उसी रास्ते से बोरली जाना था, मैं उसके साथ हो लिया। अभी थोड़ा ही रास्ता तय किया था कि एक ढांक सामने दिखाई दी। उस व्यक्ति ने बताया कि अब हमें इस ढांक को पार करना है। ढांक पर रास्ता बहुत तंग है। मुझे बिना ढांक पार किए ही पसीने आने लगे। सचमुच ही ढांक पर रास्ता न होने के बराबर था। एक हाथ में अटैची लेकर मैं धीरे-धीरे रास्ते पर चलने लगा। रास्ता ऐसा था कि बड़ी मुश्किल से पैर रखा जा सकता था। नीचे की ओर देखें तो गिरी नदी पर सीधी नजर पड़े। मैंने हाथ खड़े कर दिए लेकिन उस व्यक्ति ने मुझे हौंसला बंधाया। उसने मेरे से अटैची ले ली और खाली हाथ संभल-संभल कर चलने को कहा। एक स्थान पर मैंने अपने जूते भी खोल दिए ताकि पैरों की पकड़ ठीक बन सके। 200-300 मीटर का यह रास्ता जान निकालने वाला था। इस टुकड़े को पार करना माउंट एवरेस्ट पार करने से कम न था। मैं अपने को कोसता रहा कि मुझे शॉर्ट कट से न आकर लंबे रास्ते ही जाना चाहिए था। यह शॉर्टकट जीवन का भी शॉर्टकट हो सकता था। खैर, आगे का रास्ता भयंकर न था। हम 'लाना', मसूर, रेडली और दाउदी गांव पार करते हुए उस व्यक्ति के गांव बोरली पहुंच गए। घड़ी में साढ़े तीन बजे थे। लंबा व कठिन सफर तय करने के बाद अब भूख सताने लगी थी। उस व्यक्ति ने मुझे अपने घर बुलाया लेकिन मैंने उसे कोई दुकान/होटल के विषय में बताने को कहा। उसने एक दुकान की तरफ इशारा किया जो दूसरी वस्तुएं बेचने के साथ-साथ आने वाले वाले को खाना भी बना देता था। उस समय उसके पास जो कुछ खाना बचा था, उसी को खाकर मैं तृप्त हो गया।

बोरली गांव न ही बहुत बड़ा न ही बड़ा छोटा गांव था। मकान डबल छत के थे और स्लेट या शिंगल से छाए हुए थे। संगड़ाह यहां से तीन किलोमीटर दूर था। अब चढ़ाई इतनी कठिन नहीं थी। धीरे-धीरे रास्ता तय करता मैं संगड़ाह पहुंचा जो अब उपतहसील का मुख्यालय यथा। तब मैं लगभग सायं पांच बजे संगड़ाह पहुंचा और अंधेरी तक अभी भी मुझे छः किलोमीटर का सफर तय करना था। क्योंकि अभी रास्ता सीधा था, चलने में ज्यादा कठिनाई न हुई परंतु थकावट के कारण, कदम भारी पड़ रहे थे। लगभग दो घंटों के उपरांत मुझे एक कंक्रीट की भव्य इमारत नज़र आ गई। यह एक हाई स्कूल था, नाम था राजकीय हाई स्कूल लुधियाना। समझ में नहीं आया कि यह पंजाबी नाम स्कूल का क्यों रखा गया होगा। तभी मुझे सामने एक चाय की दुकान दिखाई दी। अंधेरा हो चला था। मैं सीधे उस दुकान पर अपने भाई के निवास स्थान की पूछताछ करने पहुंचा। अभी मैं पहुंचा ही था कि एक दाढ़ी वाला अधेड़ उम्र का व्यक्ति वहां आ पहुंचा। जब मैंने बताया कि मैं प्रीतम सिंह जूनियर इंजीनियर का भाई हूं तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने बताया कि वे एक दूसरे को अच्छी तरह जानते हैं। वह स्वयं एक भाषा अध्यापक थे और उसके पूर्वज हमीरपुर जिला के ही रहने वाले थे। बाद में यहां आकर बस गए थे। उस व्यक्ति का उपनाम अग्निहोत्री था। पूरा नाम याद नहीं रहा। उन्होंने मुझे बताया कि मेरे भाई को सांस में तकलीफ हो गई थी और उसी सुबह वह अपना मेडिकल चैक करवाने देहरादून चले गए हैं और सब ठीक रहा तो अगले कल तक वापिस आ जाएंगे। तब तक आप हमारे यहां ही ठहरो। चूंकि मेरा दूसरा कोई प्रबंध

न था, मैं उनके साथ उनके घर चला गया। अग्निहोत्री जी ने मेरी बहुत आदर-खातिर की। देर रात तक सिरमौर के इस क्षेत्र की बात होती रही। गिरी नदी सिरमौर को गिरी आर और गिरी पार क्षेत्रों में बांटती है। गिरी पार के क्षेत्र जिनमें संगड़ाह और अंधेरी भी आते थे, गिरी आर क्षेत्रों की तुलना में पिछड़े व आर्थिक रूप से कमजोर हैं हालांकि इस क्षेत्र में अदरक की खेती ने आर्थिकी को उन्नत किया है। इस क्षेत्र में साक्षरता दर भी बहुत कम थी, महिला साक्षरता दर तो और भी कम। जो अच्छी बात मुझे लगी वह यह थी कि लोग आगंतुकों से बड़ी अच्छी तरह से हिंदी में वार्तालाप कर सकते थे। चर्चा के दौरान मुझे वहां प्रचलित बहुपति प्रथा का पता चला। यह प्रथा केवल गिरीपार क्षेत्रों में ही थी। हिमाचल प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री जो सिरमौर के गिरीपार क्षेत्र से ही संबंध रखते हैं, ने इस बहुपति प्रथा पर शोध किया था जिसपर उन्हें डॉक्टरेट की उपाधि हासिल हुई थी। लेकिन समय के साथ-साथ यह प्रथा कमजोर पड़ती गई अब पूर्ण रूप से समापत हो गई है। शायद इस प्रथा का प्रचलन पहाड़ों में अल्प-भूमि को बांटने से बचाने के लिए हुआ हो। विवाहित स्त्री अगर पहले पति को छोड़ कर दूसरे व्यक्ति के साथ विवाह करना चाहे तो वहां का समाज इसकी आज्ञा प्रदान करता है। इस प्रथा/रिवाज को रीत कहते हैं और उसमें दूसरे पति को पहले वाले पति को निर्धारित राशि देनी पड़ती है।

दिन के समय मैं लुधियाना हाई स्कूल के परिसर में चला गया और उनके साथ विभिन्न विषयों पर बात होती रही। इस गिरीपार क्षेत्र में पुरुष ऊनी लोइया पहनते हैं और सर्दियों में ऊनी पाजामा भी पहनते हैं। महिलाएं सिर पर धाटू पहनती हैं। शरीर पर लहंगा उनका लोकप्रिय पहरावा है। समय के साथ आधुनिकता बढ़ रही है और नए फैशन के कपड़े पारंपरिक वस्त्रों पर भारी पड़ रहे हैं। खाने में मक्की का सत्तू, गागटी, मंडुआ और चौलाई की रोटी लोकप्रिय है। लुधियाना स्कूल का नाम पास के ही लुधियाना गांव पर पड़ा है परंतु गांव का नाम लुधियाना क्यों पड़ा, किसी को मालूम न था। तभी स्कूल में आधी छुट्टी की घंटी बजी और कुछ अध्यापकों के साथ पास की चाय की दुकान पर आ गया। अभी हमने चाय पीना शुरू की ही थी कि एक अध्यापक ने चौंक कर कहा, “लो प्रीतम आ गया।” मेरी खुशी का ठिकाना न रहा। मैंने नजर दौड़ाई तो भाई प्रीतम पर पड़ी। वह उसी ओर आ रहे थे। मुझे वहां देखकर उन्हें सुखद एहसास हुआ। पता चला कि उन्हें सांस लेने में कुछ कठिनाई महसूस हुई थी जिसे दिखाने वे देहरादून के किसी अस्पताल में चले गए थे। डाक्टरों ने इसे एलर्जिक बात कर, दवा-दारू करके वापिस भेज दिया था।

चाय की दुकान पर थोड़ी देर रुक कर, हम अग्निहोत्री जी के घर पर आ गए और अपना सामान उठा कर भाई के सरकारी आवास पर चले गए। अगले दिन भाई जी का हरिपुरधार क्षेत्र का सरकारी कार्य को लेकर दौरा था। उस रास्ते से भी शिमला वापिस जा सकता था। इसलिए मैंने अपनी वापसी उनके साथ हरिपुरधार से ही तय की। हरिपुरधार अंधेरी से 26 किलोमीटर की दूरी पर था। सड़क तंग थी लेकिन दोनों ओर देवदार व बान के पेड़ों से सुसज्जित थी। हम सायं हरिपुधार पहुंचे। हरिपुधार 2138 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है तथा सुबह से शाम वहां हवाएं गतिमान रहती हैं। थोड़ी देर शहर में घूम कर हम पी.डब्ल्यू.डी. के विश्राम गृह में आ गए। विश्राम गृह के सामने एक चोटी पर सिरमौर राजाओं के किले के खंडहर दृष्टिगोचर हो रहे थे। जुब्बल रियासत और सिरमौर रियासत के झगड़े चलते रहते थे। अपनी सीमा की सुरक्षा के मद्देनजर सिरमौर राजाओं ने यहां किले का निर्माण करवाया था। अगली सुबह हम हरिपुरधार से लगभग तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित भंगयाणी माता के मंदिर गए। मंदिर परिसर से बर्फीली चूड़धार साफ नज़र आ रही थी। चूड़धार की चोटी पर शिवलिंग विराजमान है जिसे चूड़ेश्वर महादेव के रूप में पूजा जाता है। इस मंदिर से थोड़ा नीचे महाराज शिरगुल का मंदिर हैं। कहते हैं शिरगुल महाराज जो चूड़धार में रहते थे, में दैवीय शक्तियां थीं। वे दिल्ली यहां आते-जाते रहते थे। एक बार की बात है कि मुगल सम्राट न जाने किन कारणों से उन्हें कैद कर लिया। जेल से छूटने के लिए एक सफाईकर्ता महिला (भंगिन) ने उनकी सहायता की। इस सहायता के प्रति कृतज्ञ शिरगुल महाराज ने उस भंगिन को अपनी मुंहबोली बहन माना। इसी उदारता के लिए जानकारी शिरगुल महाराज ने भंगिन को मां काली के रूप में मंदिर बनवाकर स्थापित किया। यही मंदिर भंगयाणी मंदिर के नाम से आज प्रख्यात है। मंदिर में मां का दर्शन करके हम वापिस विश्राम गृह आ गए। मेरे भाई अपने सरकारी कार्य में व्यस्त हो गए और मैंने राजगढ़ के लिए बस पकड़ी। राजगढ़, हरिपुरधार से 60 किलोमीटर की दूरी पर था। लगभग तीन घंटे के उपरांत घंडूरी, नौहराधार व दीदग गांवों से होते हुए बस राजगढ़ पहुंची। राजगढ़ का नाम सिरमौर राजाओं द्वारा बनवाए गए किले पर पड़ा है परंतु अब किला नाम का कुछ भी शेष नहीं है। कहते हैं कि किले में भारी आग लग गई थी जिस कारण सन् 1959 में उसे गिरा दिया गया। उस जगह अब स्कूल का भवन विद्यमान है। राजगढ़ सिरमौर का एक उपमंडल है जहां एस.डी.एम. बैठता है। राजगढ़ में सेब और आड़ू की फसल की प्रधानता है। मैं उस रात राजगढ़ में ही ठहरा और दूसरे दिन सोलन होते हुए सायं शिमला बहुत सी यादगारों के साथ पहुंच गया।

समय बीतता गया। मेरी एम.एस.सी. पूरी हो गई। मैं अकाउंटटैंट जनरल (ए.जी.) शिमला कार्यालय में ऑडीटर के पद पर लग गया। लगभग डेढ़ वर्ष की नौकरी के बाद मैं राज्य के उद्योग विभाग के अंतर्गत भू-विज्ञान सर्वेक्षण के कार्यालय में टैक्नीकल आफिसर के पद पर नियुक्त हो गया। मेरा कार्यालय (प्रयोगशाला) धर्मशाला में स्थित थी। मेरा मुख्य कार्य प्रदेश भर

में मिले चूने के पत्थरों का रासायनिक विश्लेषण करना था। उसी सिलसिले में मेरा कार्यक्रम सिरमौर के राजबन स्थित सीमेंट कॉरपोरेशन आफ इंडिया की सीमेंट फैक्टरी जाने का बना। यह मेरा सिरमौर आने का दूसरा मौका था। मैं धर्मशाला से विभाग के मुख्यालय खलीनी, शिमला पहुंचा। शिमला में रात काटने के बाद मैंने सिरमौर के लिए बस पकड़ी। इस बार मैंने चंडीगढ़ रूट न लेते हुए कुमाहरहट्टी से नाहन का रूट लिया। कुमाहरहट्टी से लगभग 12 किलोमीटर दूर स्थित जौहड़ साहिब जी स्टेशन पर बस थोड़ी देर के लिए रुकी। जौहड़ साहिब सोलन जिला में आता है। बस यहीं से सिरमौर की सीमा आरंभ हो जाती है। जौहड़ साहिब में एक गुरुद्वारा बना है। यहां एक तालाब है और तालाब के किनारे ही गुरुद्वारा होते हुए से इसे जौहड़ साहिब कहते हैं। जौहड़, तालाब का ही दूसरा नाम है। जो हैरान करने वाली बात ध्यान में आई वह यह थी कि लोग यह मानते हैं कि श्रवण कुमार को राजा दशरथ ने यहीं मारा था। यह बात मेरे गले नहीं उतर रही थी। कहां अयोध्या कहां जौहड़ साहिब? लेकिन लोगों की यह पक्की मान्यता है और एक बड़ा पत्थर वहां पड़ा है जिसे वे श्रवण कुमार की समाधि मानते हैं। जौहड़ साहिब जी से बस नैना टिक्कर, सराहां और बनेठी नामक कस्बों से होकर नाहन की ओर चली। नैना टिक्कर का नाम वहां स्थित नैना देवी मंदिर के कारण पड़ा है। नैना टिक्कर से एक सड़क राजगढ़ को जाती है। यहां से 18 किलोमीटर की दूरी पर सराहां कस्बा आता है। यह तहसील मुख्यालय है। यहां से चूड़धार का भव्य नजारा देखने को मिलता है। सराहां से 20 किलोमीटर की दूरी पर बनेठी गांव पड़ता है। यहीं से डॉ. यशवंत सिंह परमार के घर बागथन की ओर एक सड़क जाती है। बनेठी से नाहन 19 किलोमीट की दूरी पर स्थित है। नाहन पहुंचते ही मैंने पांवटा साहिब की बस पकड़ी। रास्ते में कटासन देवी का मंदिर पड़ा। वहां बस रुकी और यात्रियों ने मंदिर में माथा टेका। उत्तम बाला वन में स्थित कटासन देवी का मंदिर नाहन से 19 किलोमीटर की दूरी पर है। कहते हैं कि गुलाम कादिर सोहिला ने अपनी भारी फौज के साथ सिरमौर रियासत पर हमला बोला था। लड़ाई यहीं उत्तमवाला वन में हुई थी। हालांकि सिरमौर रियासत की फौज कम थी फिर भी जीत सिरमौर के राजा की हुई थी। मां कटासनी देवी की कृपा से ही जीत संभव हो पाई थी, ऐसा सिरमौर राजवंश के लोग मानते हैं। राजा जगत प्रकाश ने इस जीत की यादगार में मां कटासनी देवी का भव्य मंदिर बनवाया था।

वहां से लगभग आठ किलोमीटर की दूरी पर धौलाकुआं नामक जगह स्थित है जहां कृषि अनुसंधान केंद्र स्थित है। धौलाकुआं से आगे भूमि बिलकुल समतल है। ऐसा लग रहा था कि हम पंजाब मे आ गए हैं। माजरा व मिसरवाला गांव होते हुए बस पांवटा पहुंची। मैं रात्रि विश्राम लिए एक होटल में ठहरा। अगली सुबह मैंने पांवटा साहिब के ऐतिहासिक गुरुद्वारे में जाने का मन बनाया। लगभग 400 मीटर की ऊंचाई पर स्थित पांवटा साहिब एक औद्योगिक नगर के रूप में उभर रहा था। छः बजे के करीब मैं गुरुद्वारा पहुंचा। ऐसा माना जाता है कि पांवटा साहिब का नाम गुरु गोबिंद सिंह के कारण पड़ा था। राजा मेदनी प्रकाश के राज्य काल में गुरु, आनंदपुर से सिरमौर आए थे। बिलासपुर के राजा भीम चंद और गुरु गोबिंद जी का आपस में झगड़ा हो गया था। गुरु गोबिंद सिंह को बंगाल के राजा मान सिंह ने एक सफेद हाथी भेंट स्वरूप दिया था। भीमचंद ने गुरु को इस सफेद हाथी को देने के लिए कहा परंतु गुरु ने साफ इनकार कर दिया जिस पर राजा भीम चंद ने गुरु को देश निकाला दे दिया। गुरु जी ने यहां से निकल कर सिरमौर के मीरपुर में अपना शिविर लगाया। वहां से शीघ्र ही राजा मेदनी प्रकाश के अनुरोध पर वे नाहन आ गए और नाहन से पांवटा साहिब चले गए जहां वे सन् 1685 से 1688 तक रहे। इस यात्रा में उनके पांव पांवटा साहिब में ज्यादा देर तक टिका रहा। पांव-टिका से ही इस स्थान का नाम पौंटिका पड़ा जो बाद में बिगड़कर पौंवटा हो गया। यमुना के किनारे स्थित पांवटा साहिब गुरुद्वारा देखते ही बनता है। गुरुद्वारे से नीचे की ओर कवि दरबार हाल स्थित है जहां गुरु गोबिंद सिंह जी कवि दरबार लगाते थे, 52 कवियों का। यह कवि दरबार होला मोहल्ला मेले के अवसर पर लगाया जाता था। आनंदपुर की रिवायत पर ही यहां होला मोहल्ला मेला मनाया जाने लगा जिस अवसर पर गुरु यहां प्रदर्शित होने वाली मार्शल आर्ट्स का मुआयना करते थे।

गुरुद्वारा से थोड़ा-सा आगे उसी लाइन में भगवान राम और भगवान कृष्ण के मंदिर विद्यमान हैं। भगवान राम का मंदिर राजा रघुवीर प्रकाश की बेटी ने बनवाया था जिस कारण इसका नाम देई जी साहिबा मंदिर पड़ गया। राजकुमारी की मृत्यु के उपरांत उनका

अरदास से शांत हुई यमुना

कहते हैं कि कवि दरबार के साथ-साथ बहने वाली यमुना नदी शोर मचाते हुए आगे बढ़ती थी। जिस कारण कवि दरबार में खलल पड़ता था। गुरु गोबिंद सिंह जी ने यमुना से अरदास की कि वह इस जगह शांत होकर बहा करें। सचमुच ही नदी यहां चुपके से बिना किसी शोर शराबे के आगे बढ़ जाती है। यह गुरु जी का ही चमत्कार था।

अंतिम संस्कार यहीं किया गया था। एक संगमरमर का स्मारक उनकी यादगार में यहां बनाया गया है।

सुबह 10.30 बजे मैंने अपने गंतव्य की ओर रुख किया। राजबन की सीमेंट फैक्टरी पांवटा से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित थी। किसी सीमेंट फैक्टरी में आने का मेरा यह पहला मौका था। मैंने सीमेंट बनाने की सारी प्रक्रिया को अपनी आंखों से देखा। चूने के पत्थर के सभी घटकों के परीक्षण को सीखा। इस फैक्टरी में सीमेंट बनाने के लिए चूने का पत्थर 'मानल' खान से केबल-वे द्वारा बड़ी-बड़ी बाल्टियों में पहुंचाया जा रहा था। 600 टन सीमेंट प्रति दिन यहां तैयार किया जाता था। उस रात मैं फैक्टरी के अपने विश्राम गृह में ही ठहर गया। फैक्टरी के कर्मचारियों के साथ विमर्श करते समय पता चला कि सिरमौरी ताल जो बहुत पुराने समय में सिरमौर रियासत की राजधानी हुआ करता थी, वह सतौन की तरफ थोड़ी दूर पर ही स्थित है। मेरी वहां जाने की उत्सुकता हुई। अगली सुबह थोड़ा समय मैंने फैक्टरी में बिताया और उसके बाद सिरमौरी ताल की ओर रवाना हो गया। लगभग दो किलोमीटर की उतराई पर सिरमौरी ताल की जगह आई। वहां किला या महल नाम का कोई निशान नज़र नहीं आया। यहां-वहां कुछ महलों के पत्थर अवश्य नजर आए। साथ लगते सिरमौरी ताल गांव के लोगों से पूछ कर पता चला कि सदियों पहले यहां सिरमौर रियासत की राजधानी हुआ करती थी। सिरमौर रियासत का नाम सिरमौरी ताल के कारण ही पड़ा हुआ है, ऐसा लोगों ने बताया। सिरमौर की राजधानी सिरमौरी ताल के ध्वस्त या तहस-नहस होने बारे एक बड़ी रोचक कहानी सुनने को मिली।

कहते हैं कि एक रोज एक नटनी राजा के दरबार में पहुंची जिसने गिरी नदी को एक रस्सी के ऊपर टापने का दावा किया। राजा ने कहा कि अगर वह ऐसा कर लेती है तो उसे आधा राज्य इनाम में दे दिया जाएगा। नटनी ने अपनी शर्त बखूबी पूरी कर दी। आधा राज्य खो जाने के डर से राजा व उसके दरबारियों ने छलपूर्ण एक योजना बनाई और नटनी से कहा कि अगर वह दोबारा गिरी नदी को टाप ले तो उसे पूरा राज्य ही दे दिया जाएगा। कहते हैं जैसे ही नटनी ने पुनः गिरी को रस्सी पर पार करने का प्रयत्न किया तो षड्यंत्र के तहत रस्सी काट दी गई जिस कारण नटनी सीधे गिरी नदी में जा गिरी। मरने से पहले नटनी ने शाप दिया कि सिरमौर शीघ्र ही तबाह हो जाएगा। ठीक शाप के अनुरूप कुछ समय उपरांत गिरी नदी में भयंकर बाढ़ आई और राजा के महल, राजा व सभी-राजपरिवार व दरबारियों सहित बाढ़ में दफन हो गए। लोग इस घटना को याद करते हुए आज भी एक गाना गुनगुनाते हैं :

आर टोका पार पोका
विच गर्क होए सिरमौरी लोका

(यानी गिरी नदी के आर-पार स्थित टोका और पोका गांव गवाह है कि नटनी के शाप के कारण सिरमौर गर्क हो गया।)

इस घटना के उपरांत सिरमौर रियासत बिना राजा के हो गई। इसलिए सिरमौरी पंडितों का एक प्रतिनिधि मंडल जैसलमेर के राजा के पास गया तथा एक गर्भवती रानी को सिरमौर रियासत को देने को कहा। पंडितों ने अपने ज्योतिष विज्ञान के सहारे पता लगा लिया था कि रानी के सुपुत्र पैदा होगा और वही सिरमौर की राजगद्दी संभालेगा। जैसलमेर के राजा ने पहले तो आना-कानी की परंतु यह सोच-समझ कर कि उसका बेटा सिरमौर का राजकुमार होगा, हां कर दी। उस रानी ने सिरमौर की सीमा पर ढाक वृक्ष के नीचे एक बेटे को जन्म दिया। जिसे राजकुमार बदन सिंह के नाम से जाना जाता है। जिस ढाक वृक्ष के नीचे राजकुमार पैदा हुआ था, उस ढाक वृक्ष की पूजा अब भी सिरमौर की महिलाओं द्वारा की जाती है। ऐसी भी मान्यता है कि नट परिवार जिनकी नटनी गिरी नदी में साजिश के तहत डूब कर गई थी, जैसलमेर गया था तथा वहां के राजा को सिरमौर के गर्क होने की सूचना दी थी तथा राजा से सिरमौर रियासत को चलाने के लिए गर्भवती रानी देने की प्रार्थना की थी ताकि होने वाला राजकुमार सिरमौर का राज्य संभाल सके। नट परिवार अपने साथ रानी लाने में सफल हो गया। अभी वे सिरमौर के रास्ते में ही थे कि रानी ने पुत्र को जन्म दिया जो बाद में सिरमौर का राजा बना। सिरमौर रियासत की राजधानी सिरमौरी ताल से बदल कर राजबन और फिर राजबन से कलसी और बाद में नाहन तबदील की गई।

मैं अगले दिन वापिस धर्मशाला को रवाना हो गया। उस वक्त मैंने यह कल्पना नहीं की थी कि एक दिन मुझे सिरमौर में अपनी सेवाएं देने का मौका मिलेगा। मैं वर्ष 1985 में हिमाचल प्रशासनिक सेवाओं में उत्तीर्ण होकर और लगभग 9 वर्ष चंबा जिला में विभिन्न पदों पर सेवाएं देने के उपरांत मुझे वर्ष 1995 में सिरमौर के ए.डी.एम. पद पर नियुक्ति मिली। वर्ष 1995 से वर्ष 1999 तक जब मैं वहां का ए.डी.एम. रहा मैंने सारा सिरमौर घूमा और मैं बड़े विश्वास से कह सकता हूं कि सिरमौर एक अत्यंत सुंदर जिला है। यहां के लोग मेहनतकश हैं। गिरी पार के क्षेत्र गिरी आर क्षेत्रों से कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के कारण पिछड़े हुए हैं तथा वहां के लोग अपने लिए प्रदेश के दूसरे जनजातीय क्षेत्र की तरह जनजातीय दर्जा मांग रहे हैं। सिरमौर का मुख्यालय नाहन एक सुनियोजित शहर है। यहां उत्तराखंड व हरियाणा के भी बहुत से लोग रहते हैं। सिरमौर एक ऐसा जिला है जहां संतरा और सेब दोनों पैदा होते हैं - ऊपरी क्षेत्रों में सेब तथा निचले क्षेत्रों में नींबू प्रजाति व आम के पेड़ हैं। सिरमौर इतना विस्तृत जिला है और इसमें इतनी विविधताएं हैं कि संस्मरणों के इस लेख में समेटना कठिन है। लेकिन यह मैं दावे व विश्वास से कह सकता हूं कि सिरमौर में मैंने अपने प्रवास में हर रोज नया सिरमौर पाया।

(लेखक भारतीय प्रशासनिक सेवा से सेवानिवृत्त हुए हैं)

स्मृतियों के आइने में गिरी आर-पार

◆ रत्न चंद निर्झर

हिमानियों के क्षेत्र में रहने का रिश्ता जो प्रदेश की राजधानी शिमला में वर्ष 1983 दिसंबर माह की अंतिम तारीख से जुड़ा था, वो मेरे सेवाकाल के लगभग 35 साल से निरंतर जुड़ा रहा। जनजातीय क्षेत्रों किन्नौर, पांगी, किलाड़ से होती हुई, यह यात्रा शिमला के चौपाल में वर्ष 1988-89 में आ पहुंची। मेरे भीतर ललक यही थी कि सेवाकाल के दौरान इन क्षेत्रों में जाकर यहां के जनजीवन, संस्कृति, खान-पान, रहन-सहन, वहां के जीवन की दुश्वारियों को इन क्षेत्रों के लोगों के बीच घुलमिलकर निकट से देख सकूं। वर्ष 1985 में महापंडित राहुल सांकृत्यायन की पुस्तक 'किन्नर देश' पढ़कर यायावरी के जो बीज रोपित मुझ में हुए, वे पुष्पित पल्लवित होकर इस यात्रा में मेरे सहायक बने।

बर्फ से नाता सदैव जुड़ा रहा। अब की बर्फ व उस समय की बर्फबारी में बड़ा अंतर आ गया है। कई बार कई-कई दिनों तक बर्फबारी के बीच कई-कई किलोमीटर पैदल चलना पड़ा। 1989 साल के वसंत के मौसम की बात है। जालंधर दूरदर्शन से रिकार्डिंग कर चौपाल कार्यस्थल लौट रहा था। ठियोग में, मेरे एक सहकर्मी मिल गए और कहने लगे निर्झर यूं यहां कहां घूम रहा है। तेरा तो हरिपुरधार सिरमौर में स्थानांतरण हो गया और तुझे एक्सीयन ने रिलीव भी कर दिया है। मेरी अनुपस्थिति में रिलीव के आदेश मेरे घर के पते पर भिजवा भी दिए गए थे जबकि स्थानांतरण के आदेश मैंने वे आज तक नहीं देखे। हरिपुरधार नाम सुनकर रोमांच सा हुआ। मन को तसल्ली हुई कि मेरा शिमला के बार्डर पर स्थानांतरण के पीछे कुछ राजनैतिक कारण मेरी पत्रकारिता की पृष्ठभूमि भी रही।

चौपाल पहुंच कर पहले तो दफ्तर के अधीक्षक व अपनी शाखा के एच.डी.एम. से मिला भी कि मैं जब अवकाश पर था तो आपने मुझे कैसे रिलीव किया। मैं इसके विरुद्ध हाईकोर्ट जाऊंगा। यह सिर्फ खाली कोरी धमकी थी। मन-ही-मन सिरमौर के हरिपुरधार जाने के लिए अपने को तैयार कर लिया। संभवतः जुलाई या अगस्त 1989 का दिन रहा होगा। अपने एक छोटे से बक्से में किताबें भरीं। बिस्तर गोल किया व 2.30 बजे शिमला से रोनहाट जाने वाली बस की छत पर लाद कर चल दिया। नए स्थान की ओर। रोनहाट जाकर पांवटा से हरिपुरधार जा रही बस में सामान बदलकर रात 8 बजे के करीब छोटे से कस्बे हरिपुरधार जा पहुंचा। सामान फिलहाल एक ढाबे में रखवाया। पता चला दस रुपये में बिस्तर भी मिल जाएगा। पंडित जीवनू का यह ढाबा माता भंगयाणी मंदिर की ओर जाने वाली सड़क के बगल में स्थित था।

रात माश की दाल के साथ कुकड़ी (मक्की) की रोटी भात के साथ खाई और बिस्तर में लेटकर सो गया। सुबह जब पांच बजे जाग खुली थी तो यह छोटा-सा कस्बा हरिपुरधार धुंध की गहरी चादर में सोया हुआ था। होटल मालिक से पूछा जंगल-पानी कहां जाना होगा। वे बोले यहां तो कोई शौचालय नहीं। आऊटडोर शूटिंग करनी होगी। आप यहां से नाहन वाली सड़क पर जंगल की ओर चले जाओ, हाथ में एक पानी की बोतल पकड़ा दी। एक किलोमीटर जाकर पत्थर की ओट लेकर जैसे-तैसे शौचादि से निवृत हुआ। दिन कार्यालय में जाकर कार्यभार संभाला। दिन के उजाले में हरिपुरधार का अच्छी तरह से अवलोकन किया। चौराहे पर स्थित सड़क के अगल-बगल में पसरा छोटा-सा कस्बा और तेज हवाएं अपना रूप दिखाई देतीं तो यह हरिपुरधार नहीं हवाधार जान पड़ता।

हरिपुरधार का प्रवास सन् 1989 से दिसंबर 1993 तक रहा। इस बीच 32 दिन के अंतराल उपरांत मेरा स्थानांतरण जोगिंद्रनगर बिना टी.टी.ए. व ज्वाइनिंग टाईम के लिए भी हो गया। पर अड़ गया मैं भी अपनी जिद पर कि अपने गृह स्टेशन अपने अधिकार लिए बगैर क्यों जाऊं। कार्यालय से तुरंत रिलीव भी कर दिया। दिसंबर के अंतिम सप्ताह चंडीगढ़ गया था और जब संगड़ाह पहुंचा तो पता चला कि हरिपुरधार में तो हिमपात हो रहा है। बस अंधेरी तक जा रही है। 30 दिसंबर का दिन था व 31 दिसंबर को मजदूर भाइयों के साथ नए साल का जश्न मनाना था। इस छोटे से अंतराल में मैंने स्थानीय निवासियों के साथ घुसपैठ तो कर ली थी साथ में पी.डब्ल्यू.डी. के मजदूर भाइयों से भी गहरा नाता जुड़ गया था। कामरेड जगत सिंह चौहान, स्व. इंद्र सिंह व अन्य मजदूर नेताओं के साथ मित्रता के साथ-साथ एक तरह से पारिवारिक रिश्ता जुड़ चुका था। मुझे कोई ऐसा एहसास नहीं हो रहा था कि मैं पखले देश में पखले माहणुओं के बीच रह रहा हूं।

हां, तो मैं बात कर रहा था एक जोखिम भरी यात्रा की।

अंधेरी बस से उतर का सुंदरघाट जगह पर आ पहुंचा। समय करीब चार बजे का हो चुका था व हरिपुरधार सड़क के रास्ते 18 किलोमीटर दूर था और शार्टकट रास्ते से कुछ कम था। अनजान डगर पर कदम चल पड़े। हरिपुरधार की ओर। दिन छोटे व सफर लंबा। अजनबी लोगों के बीच से रास्ता पूछते-पूछते मेरा यह सफर अरट गांव जा पहुंचा। अरट गांव में सुना था कि मेरे मित्र मेला राम शर्मा का घर भी है जो कि उन दिनों लोक संपर्क विभाग शिमला में कार्यरत थे। लेखन के माध्यम से उनका नाम पढ़ा-सुना था और कभी नाहन में दिल्ली गेट पर स्थित बस स्टाप के पास उनसे क्षणिक मुलाकात भी हुई थी।

रात घिरने को आई थी और मुझे अपने बीच पाकर कुछ गांव वासी मिल गए। कहने लगे कहां जाना है आपको, हरिपुरधार जाना था। यात्रा के खट्टे-मीठे अनुभव से तो पहले दो-चार था। ग्रामवासियों ने कहा- रात हो चली है। सफर बहुत लंबा है, जंगली जानवरों का भी खतरा रहता है। आज की रात आप हमारे यहां ही ठहरो। रूखी-सूखी जो हम खाते हैं, आपको भी मिल जाएगी। रास्ते से हटकर थोड़ी दूर एक छोटे से घर में ठहर गया। बिजली खराब मौसम की वजह से गुल थी। दीये की रोशनी में रात का भोजन किया। सुबह जब जाग खुली तो बर्फ के फाहे गिर रहे थे। अनजान अजनबी मेजबान के साथ देर रात तक सुख-दुःख की बातें होती रहीं। बर्फ के बीच चाय पीकर आगे की यात्रा शुरू कर दी। हालांकि मेजबान मुझे रोकता रहा। बाबू जी आज यहीं रुक जाओ। मौसम खराब है। पर मुझ में तो आगे जाकर आज ही हरिपुरधार पहुंचना तो हर हाल में था। मजदूरों के नववर्ष के जश्न में शामिल होना था। नाटी में शरीक होकर लोकनृत्य व लोकगीतों का रसास्वादन करना था। 6 बजे अरट गांव से चल पड़ा। बडयालटा ढांक को जाने वाला रास्ता बर्फ की मोटी चादर के बीच ढक गया था। अंदाजन चलता रहा व जंगल के रास्ते में भटक गया। 11 बजे का समय हो चला था लेकिन मंजिल का कोई नामोनिशान नहीं। वृक्षों से निरंतर बर्फ झड़ कर गिर रही थी। पीठ पर नया पिट्ठू बार-बार फिसलता। अनुमान तो लगा लिया कि अब फंस गया। आज नहीं बच पाऊंगा। खैर हिम्मत नहीं हारी। कुछ आगे बढ़ा तो मुझे दूर धुआं सा उठता दिखाई दिया। मुश्किल में हिम्मत बंधी और अनुमान लगाया कि हो न हो वहां कोई घर या बस्ती होगी और न सही तो गौशाला ही मिल जाए। बस लक्ष्य रखा कि मौत के आगोश में जाने से पहले हर हाल में वहां पहुंचना है।



एक घंटे की कड़ी मशक्कत के उपरांत गिरता-पड़ता, झाड़ियों का सहारा लेता वहां पहुंच गया। हाथ-पांव बिलकुल सुन्न हो चले थे और कुछ बोल न पाने की स्थिति में पहुंच गया था। अनुमान के विपरीत यहां तो एक छोटा-सा गांव था। जो पहला घर आया। सीधे लकड़ी की सीढ़ी चढ़ कर बरामदे में जा पहुंचा। पिट्ठू को एक ओर पटका। भीतर से एक लड़का निकला। मुंह से एक शब्द नहीं फूट रहा था। इशारे से उसे पांव में डाले जूतों के तश्मे खोलने को कहा। शरीर सर्दी से बुरी तरह कंपकंपा रहा था। हाथ-पांव तो ऐसे लग रहे थे कि मानो शरीर का हिस्सा ही न हो। बूट खोलकर सीधे रसोई की ओर बढ़ा। जहां पर एक वृद्ध महिला रोटियां बना रही थी। मरा हुलिया देखकर वह भी घबरा गई। मैंने तुरंत जाकर चूल्हे के पीछे रखे पाने के बर्तन में उबलते गर्म पानी में हाथ डाले। मेरा तुजुर्बा काम आया कि सीधे कभी आग मत सेंको। थोड़ी देर के बाद मेरी सुन्न उंगलियों में रक्त संचार शुरू हुआ। मुंह से बोल भी निकल पड़े। वृद्ध माता जो बार-बार मुझसे पूछे जा रही थी अब जवाब देने की स्थिति में आ गया था। वे बोली बाबा जी क्या चूड़धार जा रहे हो। मैंने अब उत्तर दिया। माता जी मैं नहीं हूं बाबा, मैं तो पी.डब्ल्यू.डी. हरिपुरधार में नौकरी करता हूं। रात अरट में रुका था। सुबह चला तो बर्फ के बीच रास्ता भटक गया। पांच घंटे के बाद यहां सकुशल पहुंचा। प्यार भरी वाणी से मुझे अपनत्व में डांटते हुए कहा ऐसे खराब मौसम में कहां चल पड़ा घर में फालतू है तू क्या। मर-खप जाता तो किसने पूछना था तुझे। खैर भगवान की दया रही और तेरी हिम्मत जो तुझे यहां तक ले आई। ले पहले तू रोटी खा। कांसे की थाली में अरबी की रसेदार सब्जी के साथ मक्की की रोटियां बड़े प्रेम से मुझे परोसी। फिर बोली बेटा चाय पिलाती पर दूध नहीं। मैंने कहा माता जी बिना दूध की चाय भी चलेगी।

गुड़वाली बिना दूध की चाय पीकर शरीर में और स्फूर्ति और ताजगी आ गई। अब हिमपात रुक गया था। मैंने आगे जाने की इजाजत मांगी। माता जी अब मैं चलता हूं। उन्होंने रुकने का बड़ा आग्रह किया। मेरे न रुकने पर उसने अपने बेटे को साथ भेजा और एक डंडा मेरे हाथ में थमाया कि आधे रास्ते तक उसके बेटे ने मेरा मार्गदर्शन किया। आधे घंटे के उपरांत अरट वालों की दोघरी से मैं सड़क पर आ पहुंचा। बडयालटा ढांक से हरिपुरधार अभी भी छः-सात किलोमीटर दूर था। सड़क पर कम से कम चार से पांच फुट बर्फ थी।

सड़क पर बर्फ के बीच रास्ता बनाते-बनाते थियानबाग आ

पहुंचा। एक दो मोड़ आगे जाकर क्या देखता हूं कि एक व्यक्ति सड़क के बीच उकड़ू बनकर बैठा था। पहले तो मन में विचार उठा कि यह कौन होगा जो हिमसमाधि लिए बैठा है। कहीं मर खप तो नहीं गया। करीब जाकर उसे हिलाया और गौर से देखा तो वह अपने ही परिचित निकले। सहीराम भुवाई निवासी। हमारे कार्यालय के नीचे चाय का छोटा सा खोखा चलाते हैं। मैंने कहा आप तो ठीक हो न बर्फ के बीच ऐसे क्यों बैठे हो। प्रत्युत्तर में उन्होंने कहा बाबू जी मैं बिलकुल ठीक हूं। सड़क पर बर्फ के बीच रास्ता बनाते-बनाते थक गया था। इसलिए बैठ गया। चलो अब आप रास्ता बनाओ मैं आपके पीछे चलता हूं। इस तरह गप्पे लड़ाते हुए हरिपुरधार आ पहुंचा चार बजे के करीब। पहले तो जाकर सबसे पहले अपने दिव्यांग मित्र जो कि स्टोव, छाते इत्यादि की मरम्मत का कार्य करते थे, उनसे गच्चक ली फिर भाई हलवाई सीताराम के होटल में जा पहुंचा। गर्म केतली से गरमागरम पानी डक बैक के जूतों पर डाला। जान में जान आई। बड़ी देर तक आग सेंकता रहा। और सारे दिन के घटनाक्रम को हलवाई भाई सीताराम के साथ साझा किया। मैं अपने आपको अपनों के बीच पाकर अपने आपको सौभाग्यशाली समझ रहा था। बार-बार उस अनजान वृद्ध माता का चित्र मेरी आंखों में घूम रहा था जिसने मुझे बेटे सा प्यार दुलार दिया। उस दिन मौत को करीब से देखा था। आज भी वे क्षण याद आते हैं तो सिहर उठता हूं। रोमांच की लहरें दौड़ने लगती हैं।

हरिपुरधार मेरा लगभग पांच साल से ज्यादा अरसे तक प्रवास रहा। मेरे सेवाकाल के वे स्वर्णिम अविस्मरणीय दिन हैं। सबसे ज्यादा मौज-मस्ती की। पहाड़ियों से बतिया, यहां के बीच लोगों से रच-बस सा गया था। आज भी मेरी स्मृतियों में सहकर्मी तो बसे ही हैं। साथ-साथ उभर आते हैं यहां के प्रमुख जन। अमीर-गरीब भी साधारण सामान्य जन, स्मृतियों में महक रही यहां के होटल ढाबों में बनने वाली मासो री दाल की खुशबू, फ्राईपैन में फ्राई होते परांठों का रसास्वादन। गुड्डी, छोटी गुड्डी के ढाबे के चूल्हे के पास बैठ कर घंटों बैठ कर आग सेंकना। श्रद्धेय जातीराम, बलवीर ठाकुर, सहीराम ठाकुर, प्रधान हरिराम जी की तस्वीरें अभी भी मेरे जहन में उनके व्यक्तित्व की झलक बनकर झिलमिलाती रहती हैं। अपने इस लंबे सेवाकाल के दौरान हरिपुरधार कस्बे को फलते-फूलते देखा है। इस काल के दौरान स्मृतियों के कोष में ढेरों सारे बुरांशों के फूलों की ताजगी लाल अंगारों की तरह चमक-दमक रही है। शीतकाल के दौरान यह कस्बा कट कर रह जाता था। कई दिनों तक बिजली गुल, पथ परिवहन निगम की गिनी-चुनी बसों के दर्शन भी नदारद। कर्मचारियों और यहां के स्थानीय वासियों के बीच हंसते गाते, बतियाते बीत जाते थे दिन। हरिपुरधार रहते पत्रकारिता में भी खूब कलम चलाई। दैनिक ट्रिब्यून, हिमालयन डॉन, न्यूज पोस्ट, जनसत्ता जैसे समाचार पत्र-पत्रिकाओं में हरिपुधार डेट लाईन से समाचार साप्ताहिक रिपोर्ट बदस्तूर छपती रहतीं। विकास के साथ-साथ यहां की समस्याओं पर रिपोर्टिंग करने में आनंद आता था।

हरिपुरधार रहते हुए मुझे यहां के स्थानीय पकवानों, धिंडा, खोबले, असकली, पटांडे, सत्तू खाने का कई बार मौका मिला। माघी त्योहार के दिनों बकरों के कत्लेआम के दृश्य कैसे भूल सकता हूं। माघी साजे की मेहमानी, जैसा देश वैसा भेष कहावत स्वीकारते हुए की। सामिष भोजन किया। हलांह-पंजोड़ की यात्रा क्या कभी भूल सकती हैं। किन्नू, पनोग के वयोवृद्ध खुशिया राम के साथ गप्पबाजी, पंडित कुमियां के पास लोगों का 'पूछ' लेने आना उसके हैरतअंगेज कहानियां अभी भी मेरे आस-पास विचर रही हैं। राजगढ़ हरिपुरधार के बीच बर्फबारी के बीच की थकान भरी यात्रा के वे अविस्मरणीय दिन कैसे भूल पाऊंगा। रेणुका मेले के दौरान कवि सम्मेलन के उपरांत ददाहू बस अड्डे पर पथ परिवहन निगम के निरीक्षक स्व. फकीर चंद के साथ बिस्तर साझा कर रात काटने के पल, अभी मेरे जेहन में यथावत जिंदा हैं। नौहराधार से बोगधार मेले में जाना व वहां तत्कालीन उपायुक्त श्री भीमसेन जी के साथ पंगत में बैठकर स्थानीय पकवानों की सौंधी खुशबू अभी भी तरोताजा है। वापसी में बोगधार तक जिला भाषा अधिकारी सीता राम ठाकुर के साथ पैदल यात्रा की थी। अखरोट फार्म के अखरोट के वृक्षों की हरीतिमा, नौहराधार के लाला तुलसीराम, को भला कैसे भूला जा सकता है। तेल टैंकर में डाक के थैले लेकर हरिपुरधार जाना व टैंक के परिचालक द्वारा भांग की पतियों की जगह बिच्छू बूटी को हाथों में मलने पर चीख उठना जैसी मधुर यादें अब भी मेरे आसपास मंडरा रही हैं।

कैसे सुनहरे दिन थे वो। अभावों के बीच जीने का मजा कुछ और ही है। जेब में पैसे मौजूद हैं, परंतु वांछित चीजें बाजार में उपलब्ध नहीं हैं। आज भी मेरी स्मृतियों में सिरमौर जनपद का जनमानस विद्यमान है और मैं उनकी यादों में बराबर बना हूं। बच्चे, बूढ़े आज भी मेरे नाम से मुझे भलीभांति जानते हैं। कुछ बच्चे जो कई बार मेरी गोद में खेले, कूदे बड़े हुए, आज जवानी की दहलीज में विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत हैं। उनके माता-पिता जब मेरा परिचय देते हैं वे तुरंत पहचान लेते हैं। महिमा मैडम, यूको बैंक के मैनेजर वर्मा जी, अंकल जोगिंदर ठाकुर से अब भी मेरा मिलना-जुलना निरंतर जारी है। भाई सीताराम हलवाई के ढाबे के परांठे, जलेबी को भला कौन भूल सकता है। डॉ. यशवंत परमार की पुण्यतिथि पर आयोजित सालाना मेले की रौनक अब भी उसी तरह अपना पुराना स्वरूप बनाए हुए है। यादों के वातायन से झांकने लगते हैं पथ परिवहन के चालक लायक राम, बहादुर सिंह, ठुणिया राम, जगरन्नाथ के चेहरे, चाड़ना के मोड़ से आती बस चंडीगढ़ से कुपवी जाने वाली बस में कयास लगना शुरू हो जाता आज कौन उस्ताद आ रहा है। इन्हीं बसों के चालक ले जाते थे

मेरी डाक, साथ-साथ इनके साथ जुड़ी होती स्थानीय लोगों की हारी बीमारी की संवेदनाएं। दवाई के साथ और रोजाना आने वाली चीजों को लाना ले जाना इन्हीं पर टिका रहता। ये बस चालक इस क्षेत्र के लोगों का संदेशवाहक भी होते थे। विश्वास की डेर इतनी पक्की कि हफ्ते-पंद्रह दिन बाद भी सामान सही सलामत पहुंचता लोगों के घरवार।

पांच साल का कार्यकाल कैसे बीत गया, पता ही नहीं चला। घर गांव के तो मैं गाहे बगाहे जाता वह भी सहकर्मी जबरदस्ती घर भिजवाते। मेरा तो घर-परिवार सगे-संबंधी तो यही लोग थे। यहां के बाशिंदे।

इस बीच ज्ञान-विज्ञान समिति व साक्षरता अभियान के साथ जुड़ने का मौका मिला। भाई विश्वानाथ, कपूर, कुलदीप तनवर से संपर्क जुड़े। स्व. हेमानंद शास्त्री के संपर्क में भी आया। हरिपुरधार रहते हुए मेरा अवकाश का दिन मां भंगयाणी मंदिर में गुजरता। कभी पुराने जीर्ण-शीर्ण हरिपुरधार किले की चढ़ाई चढ़ता और फिर दूसरी तरफ उतर जाता। कुपवी भी घूम आता। इस बात का मलाल जरूर रहा कि पांच साल हरिपुरधार बीताने के बावजूद चूड़धार नहीं जा पाया। चौपाल रहते हुए चार बार जाने का मौका मिला था।

हरिपुरधार में उन दिनों शाखा डाकघर हुआ करता था। इसे उप-डाकघर बनाने के लिए भी अपनी ओर से प्रयास किए। एक बार इसी सिलसिले में हिमाचल के प्रसिद्ध हिंदी कवि पहले हिमाचली पोस्टरमास्टर जनरल तेजराज शर्मा हरिपुरधार आए थे। और मेरी उनसे लोक निर्माण विभाग के विश्रामगृह में मुलाकात हुई थी। शाखा डाकघर में डाक के कार्य में भी मैं हाथ बंटाता था। मेरी सर्विस में एक बात यह भी जुड़ी रही कि मेरा डाक विभाग से जहां भी गया, वहां सबसे पहला रिश्ता जुड़ा। सबसे ज्यादा डाक मेरी ही आती थी। कई बार तो मैं अपना पता केयर ऑफ सब पोस्टरमास्टर का दिया करता था। मजदूर भाइयों के साथ मजदूर दिवस मनाने कभी दूर-दूर के क्षेत्रों में जा पहुंचता।

हरिपुरधार से यूं तो मेरा 1989 में ही जोंगिद्रनगर को तबादला हो गया था परंतु 1990 में मैंने बड़ी जद्दोजहद के बाद श्री शांता कुमार मुख्यमंत्री से मिलकर रद्द करवा लिया था। फिर स्वेच्छा से 1993 तक वहीं डटा रहा। 1993 में फिर मेरी जनजातीय क्षेत्र में जाने की ललक काजा ले गई जहां मैं 10 महीने ही बिता पाया क्योंकि घर-गृहस्थी से बंध गया था।

वर्ष 2015 में पुनः हरिपुरधार जाने का सुअवसर मिला। हरिपुरधार शाखा डाकघर का दर्जा बढ़कर सब पोस्ट ऑफिस हो गया था। 20-22 साल पहले जो सपना मैंने देखा था, वो साकार हो गया था। राजगढ़ से हरिपुरधार गया तो सारा परिदृश्य बदला पाया। विकास की बयार में हरिपुरधार ही क्या आसपास की काया पलटी पाई। मेरे समय के हरिपुरधार ने समय के साथ कदमताल करते हुए कई नए पृष्ठ जोड़ लिए थे। उप-तहसील का दर्जा एक ओर बैंक शाखा का खुलना, हरिपुरधार में कॉलेज की स्थापना, मिडल स्कूल का जमा दो में स्तरोन्नत सहित नए-नए होटलों की स्थापना हरिपुरधार को नई गुहार दे रही थी। हरिपुरधार बाजार में जहां मेरे समय कीचड़ व बरसाती पानी के परनाले बहते थे, वहां पर पंवर ब्लाक बिछे पाए गए। चकाचौंध करती बड़ी-बड़ी दुकानों व होटलों के बीच अपनी स्मृतियों को हरिपुरधार को मेरी आंखें खोजती रहीं। बसों की भरमार, निजी बसों के साथ-साथ सरकारी बसों ने अब पैदल चलने से निजात दिला दी है। स्थानीय जनजीवन के भी नए रंग रूप देखने को मिले। घर-घर में शौचालय बनाने से स्वच्छता की खुशबू फैली थी। आसपास के क्षेत्र में सर्पाकार सड़कों के बिछे जाल ने विकास की इबारतों का परिचय करवा रही थी। इससे पहले भी यूं तो कई बार हरिपुरधार आया था पर एक मुसाफिर की तरह रात ठहरा, दूसरे दिन निकल गया। नाहन या रोनहाट की ओर। भंगयाणी मंदिर का तो स्वरूप ही नया पाया। कहां वो छोटा-सा मंदिर था मेरे साथ। आज भव्य रूप में मेरे सामने खड़ा था। 60-70 कमरों की विस्तृत आवासीय सुविधा। हां लोक निर्माण विश्राम गृह अब भी तीन कमरों की सीमित सुविधा में सिमटा है। श्रद्धालुओं और पर्यटकों की साल- दर-साल बढ़ती आमद को देखते हुए यहां और अतिरिक्त कमरों के निर्माण किया जाना आवश्यकता हैं उम्र के इस पड़ाव पर पहुंचने पर जब अतीत की ओर झांकता हूं तो सिरमौर जनपद से जुड़ी अनेक स्मृतियों के छवि चित्र आंखों के आगे थिरकने लगते हैं। विकास पथ पर बढ़ते हुए सिरमौर के गिरी आर गिरी पार के जनजीवन में अभी भी समृद्ध संस्कृति अपने पुराने स्वरूप को बनाए हुए है। समय के साथ जहां बुराइयां थीं, वह समाप्त हो चली हैं। माघी के त्योहार पर कटने वाले हजारों बकरों की संख्या में कमी आई है। शिलाई, रेणुका के दूरदराज क्षेत्रों से प्रशासनिक सेवाओं में कई युवा प्रतिभाएं आगे आकर अपनी प्रतिभा के डंके बजा रही हैं। मेरे कानों में आज भी इन क्षेत्रों के हारुल हारे, लामण, झूरी, शाका के बोल गूंज रहे हैं कदम नाटी के स्वरों में थिरक रहे हैं। स्व. मोती राम चौहान, नंबरदार की छवि थिरक रही है। स्व. किंकरी देवी की मूर्ति साकार हो रही है, उसके शब्द गूंज रहे हैं : बाबू जी आपने क्या खबर सुनी सरकार मुझे कोई बड़ा इनाम दे रही है। शीतकाल के सहकर्मियों के साथ-साथ खाली टिन के कनस्तर पीट-पीटकर गाना बजाना व झूकरू व लक्ष्मी ब्रांड की देसी दारू बर्फ की ठंडी रातों में छकना, क्या-क्या याद करूं, क्या-क्या भूलूं, मीठी मधुर स्मृतियों के आगोश में गोते लगाती यह स्मृतियों की एलबम जब भी खुलती है, मन आकाश में उड़ाने भरता जा पहुंचता है स्मृतियों के सिरमौर में।

मकान नं. 211, रौड़ा सैक्टर, बिलासपुर,
हिमाचल प्रदेश-174 001, मो. 0 94597 73121

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

12वीं सदी में नए जनपद का उदय

◆ योग राज शर्मा

सिरमौर के इतिहास को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है - पहला- 12वीं सदी से पूर्व का जब इस सदी के अंतिम चरण में सिरमौर में राठौर वंश का अंत हुआ और दूसरा जब सिरमौर की परंपरा के अनुसार उत्तरार्द्ध सिरमौर राज्य की नींव शालिवाहन द्वितीय के पौत्र हांसू के पुत्र सुभंश प्रकाश ने डाली। सुभंश प्रकाश राज्य (1195-1199 ई.) तक रहा। उसने राजबन को अपनी राजधानी बनाया। इसी प्रकार राजवंश आगे बढ़ा।

मल्ले प्रकाश (1199-1217) : राजा सुभंश प्रकाश तथा उसके पुत्र मल्ले प्रकाश का सारा समय सिरमौरी ताल के बाढ़ग्रस्त होने के पश्चात् राज्य में फैली अव्यवस्था को दबाने तथा राज्य की स्थिति सुधारने में लगा, ऐसी मान्यता है।

राजा मल्ले प्रकाश ने राज्य की भीतरी स्थिति को सुधारने तथा अपनी शक्ति को सुदृढ़ बनाने के पश्चात् राज्य के विस्तार के उद्देश्य से पूर्व की ओर स्थित गढ़वाल पर आक्रमण किया और भगीरथी नदी तक बढ़ता चला गया। वहाँ उसने किला मालदा पर अधिकार किया और नदी के किनारे एक लक्ष्मी नारायण का मन्दिर बनाया। इसका नाम उसने अपने नाम पर माईदेवल रखा।

सन् 1192 ई. में मुहम्मद गौरी ने पृथ्वी राज चौहान को तराई के युद्ध में पराजित किया। इसके पश्चात् दिल्ली पर अधिकार करके मुहम्मद गौरी वापस लौट गया और भारत में जीते हुए क्षेत्र के प्रशासन को चलाने के लिए अपने सेनानी कुतुब-उद्-दीन ऐबक को छोड़ दिया। उसने उसी वर्ष मेरठ और बारान (वर्तमान बुलन्दशहर) पर अधिकार करके वहाँ अपनी सेना रख दी। मैदानों में मुसलमानों के प्रभाव से इस काल में अनेक राजपूत व ब्राह्मण परिवार सिरमौर की पहाड़ियों आकर बस गए।

उदित प्रकाश (1217-1227) : इसका शासन दो वर्ष तक राजबन से चला। राजधानी दून घाटी (पाँवटा) में स्थित थी। समतल भूमि और यमुना नदी के पास होने के कारण इस पर हर समय मुसलमानों के आक्रमण का भय रहता था। इसलिए उदित प्रकाश दो वर्ष के पश्चात् 1219 ई. में अपनी राजधानी राजबन से यमुना और तौंस के संगम कालसी ले गया, जो पहाड़ों में बहुत भीतर थी। वहाँ से आठ वर्ष राज करने के पश्चात् अपने पुत्र कौल प्रकाश को राजपाठ देकर स्वयं तीर्थ यात्रा पर चला गया।

कौल प्रकाश (1227-1239) : उसने अपने राज्य की सीमाओं को बढ़ाने के उद्देश्य से गिरी नदी घाटी के क्षेत्र जुब्बल, बलसन और थरोच में एक अभियान चलाया और वहाँ के राणा और ठाकुरों से कर वसूला।

कौल प्रकाश के समय 1236 ई. में सुलतान अलतमश की मृत्यु के पश्चात् जब रजिया दिल्ली की सुलतान बनी तो उसके वजीर निजाम-उल-मुल्क जुनाईदी ने इसका विरोध किया। अतः सुलतान ने निजाम-उल-मुल्क जुनाईदी और उसके विद्रोही साथियों को पकड़ने का प्रयत्न किया। विद्रोहियों को इसका पता लग गया और वे भाग गए। उनमें से कुछ पकड़े गए परन्तु निजाम-उल-मुल्क जुनाईदी ने सिरमौर की पहाड़ियों में जाकर शरण ली जहाँ कुछ समय के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई।

सुमेर प्रकाश (1239-1248) : तारीख सिरमौर के अनुसार सुमेर प्रकाश ने ऊपरी गिरी नदी घाटी में स्थित रतेश के किले को जीतकर अपने अधिकार में ले लिया और कालसी से वह अपनी राजधानी रतेश ले आया। उस समय रतेश किसी अन्य स्थानीय ठाकुर के अधीन रहा होगा क्योंकि बाद की रतेश की स्थापना सत्रहवीं शताब्दी के आरम्भ में सिरमौर के राजा कर्म प्रकाश (1616-1630) के भाई राय सिंह ने डाली थी।

1246 ई. में नसीरुद्दीन दिल्ली का सुलतान बना। उसका भाई जलालुद्दीन मसूद शाह कन्नौज का सूबेदार था। सुल्तान ने थोड़े समय के पश्चात् मसूद को कन्नौज से बदल कर साम्भल और बदायूँ का सूबेदार बनाया। यहाँ पर कुछ समय के पश्चात् मसूद को अपने भाई से भय हो गया। इसलिए उसने 1248 ई. में साम्भल छोड़ दिया और भागकर सिरमौर की पहाड़ियों में स्थित संतूरगढ़ में जाकर शरण पाई। वहाँ के स्थानीय राणा ने उसे शरण दी।

सूरज प्रकाश (1248-1259) : जब वह गद्दी पर बैठा तो उसने फिर से कालसी को अपनी राजधानी बनाया। इस पर लोगों ने विद्रोह किया और राज्य पर आक्रमण कर दिया। राजा की बहन ने इस विद्रोह का पूरे जोर से मुकाबला किया और अपने प्राणों की बलि दे दी। सूरज प्रकाश ने कालसी आकर विद्रोह को दबा दिया। उसने जुब्बल, बलसन, कुमाहरसेन, घूण्ड, सायरी, ठियोग, रावीं और कोटगढ़ के राणा तथा ठाकुरों को दबा कर अपने अधीन किया और उनसे कर वसूला। उसने अपने भाई कलण चन्द को इस क्षेत्र का प्रबन्धक बनाया। उसने कालसी को ही अपनी राजधानी बनाए रखा।

सूरज प्रकाश के वक्त नसीरुद्दीन दिल्ली का सुलतान था। 1235 ई. में उसने कुतलुग खाँ को अवध का सूबेदार बनाया। इस अवधि में उलूक खाँ का सुलतान के दरबार में प्रभाव बढ़ गया। उसने शाही आदेश करवा करके कुतलुग खाँ को अवध से बहगईच

भेज दिया। परन्तु उसने इसकी परवाह नहीं की। इस पर उलूक खाँ सेना लेकर 1256 ई. में अवध पहुँच गया। इस पर कुतलुग खाँ और उसके समर्थक वहाँ से भाग कर संतूरगढ़ चले गए और इन्होंने अपने आपको सिरमौर की पहाड़ियों में स्थापित किया। वहाँ के राणा रणपाल ने उसको शरण दी क्योंकि निर्बल को शरण देना उनकी परम्परा थी। बाद में उलूक खाँ ने संतूरगढ़ पर आक्रमण करके उसे हथिया लिया। इस पर राणा तथा कुतलुग खाँ वहाँ से भाग निकले और पश्चिम की ओर जाकर किशलू खाँ से मिल गए क्योंकि उसने भी उलूक खाँ के विरुद्ध विद्रोह कर रखा था। उलूक खाँ ने सारे व्यापारियों और सिरमौर के नगर को लूटा और दिल्ली लौट आया। तदोपरांत राजाओं का जो उल्लेख मिलता है, वह हैं :- पद्म प्रकाश (1259-1271), कर्ण प्रकाश (1271-1286), अखण्ड प्रकाश (1286-1297), बुद्धि प्रकाश (1297-1320), अचल प्रकाश (1320-1333), वीरसाल प्रकाश (1333-1354), साल ब्रह्म प्रकाश (1354-1374) इनका कोई अधिक जिक्र इतिहास में नहीं मिलता है।

भक्त प्रकाश (1374-1386) : उसके कार्यकाल में दिल्ली पर फिरोजशाह तुगलक (1351-1388) का शासन था। 1379 ई. में फिरोजशाह ने सिरमौर को करद राज्य बना लिया और उससे कर वसूल किया। इसके पश्चात् वह तथा उसके उत्तराधिकारी यहां शिकार खेलने के लिए आते रहे। 1388 ई. में फिरोजशाह के पुत्र मुहम्मद शाह का सुलतान के वजीरों के साथ झगड़ा हो गया, जिसके कारण मुहम्मद शाह ने सिरमौर की पहाड़ियों में जाकर शरण ली परन्तु शाही सेना ने उसका वहाँ भी पीछा किया। इसके फलस्वरूप वह वहाँ से भागकर नगरकोट चला गया।

जगत प्रकाश (1386-1388)

वीर प्रकाश (1388-1398) : उसने बारह ठकुराइयों के कुछ राणा तथा ठाकुरों को दबाकर अपने अधीन कर लिया। इनमें जुब्बल, सायरी और रावीं का उल्लेख आता है। उसने हाटकोटी को, जहाँ इन तीनों राज्यों की सीमाएँ मिलती हैं अपनी राजधानी बनाया। उसके वहाँ पर दुर्गा मन्दिर और पास ही एक पहाड़ी पर किले के बनाने का भी उल्लेख मिलता है। हाटकोटी के दुर्गा, शिव तथा अन्य मन्दिर स्थापत्य कला की दृष्टि से आठवीं से लेकर दसवीं शताब्दी तक के हैं। दुर्गा की धातु की मूर्ति पर ब्राह्मी लिपि का सातवीं शताब्दी का लेख है। हाटकोटी के पास पहाड़ी पर भी किसी किले के खण्डहर नहीं पाए गए अतः यह बात तर्कसंगत नहीं लगती कि सिरमौर के राजा वीर प्रकाश ने हाटकोटी में दुर्गा के मन्दिर को बनाया हो। इतना अवश्य हो सकता है कि सिरमौर के राजा का हाटकोटी पर कुछ समय के लिए अधिकार रहा हो।

जुब्बल में उस समय कौन राजा था, सिरमौर के इतिहास से कोई पता नहीं लगता, परन्तु जुब्बल के इतिहास में यह उल्लेख अवश्य मिलता है कि सिरमौर के किसी राजा ने कोटखाई के निकट बखरोल नामक स्थान में एक सभा का आयोजन किया, जिसमें आस-पास के राणा और ठाकुरों को आमंत्रित किया गया। जुब्बल के राणा नारायण चन्द को भी इस आयोजन में आमंत्रित किया गया। जब यह सभा समाप्त हुई तो सभी राणा और ठाकुर अपने-अपने घरों को जाने लगे। सिरमौर के राजा ने जुब्बल के नारायण चन्द और कोटखाई के राणा को कहा कि वह इसी प्रकार की सभा सिरमौर में भी कर रहा है, जिसमें मैदानी भाग के बहुत से राजा आएँगे। उसने जुब्बल और कोटखाई के राणाओं को भी सिरमौर चलने के लिए कहा। जब वे लोग बलग ग्राम के पास पहुँचे तो कोटखाई के राणा को कुछ शंका हुई कि कहीं इसमें धोखा तो नहीं है। इसलिए उसने सिरमौर के राजा से कहा कि उसे किसी आवश्यक कार्य से वापस जाना है। वह तो वहाँ से वापस लौट आया, परन्तु जुब्बल का राणा नारायण चन्द राजा सिरमौर के साथ सिरमौर तक चला गया। वहाँ पर राजा सिरमौर ने पहले तो उसे बन्दी बना दिया और बाद में मार दिया। राणा नारायण चन्द का पुत्र रूप चन्द नाबालिग था। हो सकता है कि सिरमौर के राजा ने स्थिति का लाभ उठा कर रूप चन्द पर आक्रमण करके जुब्बल, रावीं और सारी पर अधिकार करके हाटकोटी को थोड़े समय के लिए अपनी राजधानी बनाया हो। वहीं पर वीर प्रकाश की मृत्यु भी हो गई।

नेकट प्रकाश (1398-1414) : इस राजा ने गिरी नदी के किनारे पर स्थित नेरी गाँव अपने रहने के लिए चुना और वहीं से राज्य का शासन चलाता रहा।

1398 ई. में मंगोल आक्रमणकारी तैमूर लंग (1369-1404) का भारत पर आक्रमण हुआ। इसने दिसम्बर 1398 ई. में दिल्ली को रौंद डाला। उसके पश्चात् वह दिल्ली से मेरठ और वहाँ से हरिद्वार पहुँचा। वह अपनी जीवनी में लिखता है कि "14 जमीद-औल-अवल को मैंने यमुना को पार किया और शिवालिक की पहाड़ियों के पास डेरा डाला। यहाँ पर मुझे पता चला कि इस शिवालिक के क्षेत्र में एक बहुत बड़ा राजा रहता है जिसका नाम रत्न सेन है।" वहाँ पहुँचने के लिए उसे मार्ग साफ करना पड़ा और उसी मास की 15 तिथि को वह शिवालिक और कोका पहाड़ियों के मध्य पहुँच गया। सम्भवतः यह क्षेत्र जौनसार बाबर का होगा। अधिक सम्भावना क्यारदा दून की हो सकती है। वह लिखता है कि "सामने घाटी में एक भारी सेना लेकर राजा रत्न सेन खड़ा है, परन्तु बहुत से हिन्दू पहले ही भाग खड़े हुए और कुछ मारे गए और बहुत सा धन हाथ आया।" ए. कनिंघम के अनुसार इस घटना का रत्नसेन सिरमौर का राजा रत्न प्रकाश है जिसने 1471 से 1495 ई. तक राज्य किया। परन्तु तैमूर ने 1398 ई. में आक्रमण किया। सिरमौर की वंशावली में यह फर्क कैसे? इसका कोई उत्तर नहीं मिल सका। यह हो सकता है कि तैमूर का रत्न सेन सिरमौर का जौनसार बाबर या क्यारदा दून का कोई प्रान्तीय शासक रहा हो।

परन्तु इतना अवश्य है कि तैमूर ने सिरमौर के क्यारदा दून क्षेत्र पर आक्रमण किया और वहाँ पर बहुत मार-काट और लूटमार की। इस क्षेत्र से लोग पहाड़ों की ओर भाग गए होंगे जिसके फलस्वरूप यह इलाका बहुत समय तक वीरान रहा होगा।

गर्व प्रकाश (1414-1432) ने नेरी को छोड़कर रतेश के पास कोट किला में रहना आरम्भ किया।

ब्रह्म प्रकाश (1432-1446) ने कोट को छोड़कर सिरमौर के पच्छाद क्षेत्र में स्थित देवठल को अपनी राजधानी बनाया।

तदोपरांत निम्नलिखित राजाओं का उल्लेख मिलता है :

हंस प्रकाश (1446-1471), पृथ्वी प्रकाश (1495-1522),
रत्न प्रकाश (1471-1495), बाहुबल प्रकाश (1522-1538)

धर्म प्रकाश (1538-1570) इस राजा ने कोट देवठल को छोड़ कर कालसी में रहना आरम्भ किया। एक ताम्रपत्र अभिलेख (1547 ई.) के आधार पर गढ़वाल में मानशाह का राज्य था। इस समय की गढ़वाल की दो वीरगाथाओं में सिरमौर का उल्लेख मिलता है परन्तु इनमें सिरमौर के राजा का नाम मौली चन्द है। सिरमौर की वंशावली में इस नाम का कोई राजा नहीं मिलता। एक वीरगाथा 'हरि हिन्दुआण आसा हिन्दुआण' की है। इसके अनुसार उस समय सिरमौर में गौड़ी नाम के राक्षस का आतंक छाया हुआ था। आधा राजपाट उसने ले लिया था। यह राक्षस सम्भवतः दक्षिण की ओर से मुसलमानों के लूटमार के धावे हो सकते हैं। हरि हिन्दुआणा की जो गाथा जुब्बल क्षेत्र में प्रचलित है, उसमें सिरमौर में एक नरभक्षी शेर द्वारा तबाही मचाने का वर्णन मिलता है। सिरमौर का राजा उस नरभक्षी को मारना चाहता था परन्तु ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिला जो इस कार्य को कर सके। अतः उसने गढ़वाल के राजा मानशाह को पत्र लिखकर सहायता माँगी। सहायता करने के बदले में सिरमौर के राजा ने मानशाह को कुछ क्षेत्र देना स्वीकार किया तथा अपनी पुत्री का विवाह राजा मानशाह से करना मान लिया। मानशाह ने आसा हिन्दुआण को सिरमौर भेजा। छोटा भाई हरि हिन्दुआण बड़े भाई आसा हिन्दुआण को घर में ही रखकर स्वयं सिरमौर चला गया और वहाँ पर राजा सिरमौर से मिला। इसके पश्चात् वह राक्षस के पास पहुँचा और नौ दिन तक युद्ध होता रहा। अपने वचन के अनुसार सिरमौर के राजा ने उसे अपने राज्य का कुछ भाग देना था तथा अपनी पुत्री का विवाह करना था। अब राजा के मन में खोट आ गया और उसने हरि हिन्दुआण को धोखे से मारना चाहा, परन्तु वह बच गया। इसका पता जब उसके बड़े भाई आसा हिन्दुआण को लगा तो उसने मानशाह से सिरमौर पर आक्रमण करने की आज्ञा माँगी। बाद में दोनों भाइयों ने सिरमौर को लूटा। इस संघर्ष में सिरमौर का राजा मारा गया। उसकी पुत्री सूरकेशा का विवाह हरि हिन्दुआण से हो गया। एक पवाड़ा रिखोला लोटी का है। वह भी गढ़वाल के राजा मानशाह से सम्बंधित है। इसमें भी सिरमौर के राजा का नाम मौली चन्द मिलता है। इसके अनुसार सिरमौर और गढ़वाल के मध्य ऋषिकेश के पास तपोवन के प्रसिद्ध धान के खेतों पर झगड़ा हो गया। सिरमौर की हार हुई, परन्तु सिरमौर के राजा ने गढ़वाल के सेनानी भौसिंह को छल से मार दिया। गढ़वाल के राजा को जब यह समाचार मिला तो उसने भौसिंह के वीर पुत्र रिखोला जो भौसिंह की भान्ति वीर था, सिरमौर से बदला लेने के लिए भेजा। उसने सिरमौर जाकर राजा मौलीचन्द को हराया और गढ़वाल से लूटा हुआ कैलावीर का नगाड़ा और बद्रीनाथ की ध्वजा छीनकर वापस गढ़वाल लौट आया। इन लोक गाथाओं में तथ्य कितना सत्य है कह नहीं सकते, परन्तु सिरमौर और गढ़वाल के पड़ोसी राज्य होने के कारण इनमें आपस में अकसर लड़ाई-झगड़े होते रहते थे। धर्म प्रकाश के पश्चात् ये राजा हुए :

दीप प्रकाश (1570-1585), बुद्धि प्रकाश (1605-1615)
भक्त प्रकाश (1585-1605), उदय प्रकाश (1615-1616)

इस अवधि में एक घटना का वर्णन मिलता है। सिरमौर के कोटाहा क्षेत्र के चौदह ठाकुरों में से मानचन्द नाम का एक ठाकुर था। उसके परिवार को सिरमौर के राजा ने कोटाहा की ठकुराई व जागीर दी थी। सिरमौर के राजा जगत (भक्त) प्रकाश ने मानचन्द की पुत्री से विवाह करना चाहा, परन्तु मानचन्द ने इस बात को नहीं माना। अतः राजा ने उस पर आक्रमण कर दिया। मानचन्द ने कोटाहा के बाईस खेलों को राजा के विरुद्ध इकट्ठा किया परन्तु वे उसके सामने टिक न सके। मानचन्द अपनी पुत्री को लेकर दिल्ली शाहजहाँ की शरण में चला गया और वहाँ मुसलमान बन गया। उसने अपना नाम राजा मोमन मुराद रखा। बादशाह ने उसे कुछ सेना दी जिसकी सहायता से उसने सिरमौर के राजा से पुनः अपनी ठकुराई जीतकर वापिस ले ली और भूर सिंह धार पर अपनी सीमा लगाई। बारह वर्ष के पश्चात् मानचन्द और उसकी पत्नी ने विष खाकर आत्महत्या कर ली। बाद में यह क्षेत्र हाकिम कासिम खाँ के हाथ में आया। उसने ही मानचन्द की राजा सिरमौर के विरुद्ध सहायता की थी।

कर्म प्रकाश (1616-1630) : यह छह वर्ष तक कालसी से राज्य करता रहा। 1621 ई. में वह शिकार खेलने के लिए नाहन की पहाड़ियों में गया। वहाँ उसकी भेंट बनवारी लाल साधु से हुई। उससे प्रभावित होकर राजा ने नाहन में ही रहना आरम्भ कर दिया और इस स्थान को अपनी राजधानी के रूप में विकसित करने लगा। यहाँ पर कर्म प्रकाश ने आठ वर्ष तक राज्य किया।

मानधाता (1630-1654) : यह मुगल सम्राट शाहजहाँ का समकालीन था। इसके समय शाहजहाँ के आठवें राजवर्ष (1634-35) में कांगड़ा के फौजदार नजाबत खाँ ने 1634 ई. में श्रीनगर गढ़वाल को जीतने के लिए अपनी सेवाएँ पेश कीं। शाहजहाँ ने स्वीकार किया और नजाबत खाँ ने गुलेर के राजा रूपचन्द (1610-1635) के साथ गढ़वाल पर चढ़ाई आरम्भ कर

दी। अप्रैल, 1635 ई. में मुगल सेना ने सिरमौर की पहाड़ियों में प्रवेश किया। शाहजहाँ ने सिरमौर के राजा मानधाता को भी फरमान भेजा कि वह शाही सेना की सहायता करे। अतः मानधाता ने सिरमौरी सेना लेकर नजाबत खाँ से भेंट की। इसके पश्चात् नजाबत खाँ ने सिरमौर के राजा की सेना साथ लेकर श्रीनगर गढ़वाल पर चढ़ाई कर दी। इस समय गढ़वाल पर सम्भवतः महीपति शाह (1625-1646) का शासन था। रास्ते में यमुना के किनारे गढ़वाल के राजा के बनाए शेरगढ़ कि ले पर अधिकार कर उसने कालसी को भी जीत लिया। कालसी सिरमौर की पुरानी राजधानी थी इसलिए नजाबत खाँ ने शाही फरमान के अनुसार उसे मानधाता को लौटा दिया। बैराठ के किले को भी गढ़वालियों ने किसी समय पूर्व सिरमौर से छीन लिया था। इसे भी शाही सेना की सहायता से सिरमौर ने गढ़वाल से वापिस ले लिया। नज ाबत खाँ ने आगे बढ़कर सन्तौर के किले को लेकर उसे सौ सवार और हजार पैदल सेना देकर लखनपुर के राजा जगतू के हाथ में दे दिया। जब नजाबत खाँ की सेना श्रीनगर के निकट पहुँची तो गढ़वाल के राजा ने एक लाख रुपये कर के रूप में देने का बहाना बनाकर उसे कुछ समय के लिए पहाड़ में ही रोके रखा। उसने चुपके से मुगलों की वापिसी का मार्ग रोक दिया और उनकी सेना को बुरी तरह से तबाह कर दिया। गुलेर का राजा रूप चन्द भी इसमें मारा गया। केवल नजाबत खाँ बचकर निकल सका। बाद में बादशाह ने उसे कांगड़ा की फौजदारी से ही निकाल दिया।

बीस वर्ष के पश्चात् मुगल सम्राट शाहजहाँ ने फिर से गढ़वाल को जीतने का प्रयास किया। इसके लिए शाहजहाँ ने कांगड़ा और जम्मू के फौजदार इराज खाँ को नियुक्त किया। शाहजहाँ ने दिनांक 28 जमद-उस-सानी 1046 हिजरी, 19 अप्रैल-16 मई, 1654 ई. को सिरमौर के राजा मानधाता को फरमान भेजा कि वह गढ़वाल के अभियान में इराज खाँ की सैनिक सहायता करे। बदले में सिरमौर के राजा को सिरमौर के साथ लगते पहाड़ी क्षेत्र दे दिए जाएँगे। मुगल तथा सिरमौरी सेना ने गंगा को पार करके गढ़वाल में प्रवेश किया परन्तु वर्षा ऋतु के आरम्भ होने के कारण अभियान को त्यागना पड़ा। इसी अवधि में राजा मानधाता की भी मृत्यु हो गई। 1644 ई. में (1630-1661) सातवें गुरु हरराय गद्दी पर बैठे और उन्होंने कीरतपुर में रहना आरम्भ कर दिया। 1645 ई. में नजाबत खाँ ने शाहजहाँ के आदेश पर कहलूर के राजा तारा चन्द पर आक्रमण करके उसे बन्दी बना लिया। गुरु को भय हो गया कि कहीं नजाबत खाँ उसके तथा उसके अनुयायियों के विरुद्ध कार्यवाही न कर दे। इसलिए उसने अपने साथियों के साथ किरतपुर को छोड़कर सिरमौर के क्षेत्र थपाल (सम्भवतः टकसाल), जो उस समय सम्भवतः सिरमौर के राजा कर्म प्रकाश के अधीन था, को अपना निवास स्थान बनाया। वहाँ पर वह 13 वर्ष तक रहे।

सोभाग प्रकाश (1654-1664) : 4 दिसम्बर, 1654 को शाहजहाँ ने मानधाता को एक और फरमान भेजा, जिसमें लिखा था कि खलीलुल्ला खाँ को दस हज ार सैनिकों को लेकर गढ़वाल को पराजित करने के लिए भेजा गया है और राजा से कहा गया कि वह फौजदार की सहायता करे। परन्तु मानधाता की मृत्यु हो गई थी इसलिए सोभाग प्रकाश ने शाही सेना का साथ दिया। वे सिरमौर होते हुए आगे बढ़े और उन्होंने दून पर अधिकार कर लिया। शाही सेना ने गढ़वाल को हराया जिसमें सोभाग प्रकाश ने बड़ी सहायता की। अतः गढ़वाल के राजा पृथ्वी शाह (1664-1660) ने अपने पुत्र मेदनी शाह को शाहजहाँ के पास दिल्ली समझौता करने के लिए भेजा।

30 मई, 1655 के अपने फरमान द्वारा बादशाह ने कोटाहा का क्षेत्र सोभाग प्रकाश को प्रदान किया। सोभाग प्रकाश ने वहाँ के जमींदार को हटाकर उस पर अधिकार कर लिया।

8 जून, 1658 ई. को औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को बन्दी बना लिया और स्वयं मुगल सिंहासन पर बैठ गया। उसने सिरमौर के राजा सोभाग प्रकाश के पास शहजादा मुहम्मद सुलतान के हाथ एक फरमान के माध्यम से अपने राज्यारोहण की सूचना भेजी। गद्दी पर बैठने के पश्चात् औरंगजेब ने सिरमौर के राजा के पास दूसरा फरमान भेजकर आदेश दिया कि सुलेमान शिकोह, जोकि उस समय श्रीनगर गढ़वाल में और उसका बाप दाराशिकोह लाहौर में था, के मध्य सभी प्रकार की लिखा-पढ़ी रोके या पकड़ ले। एक फरमान में औरंगजेब ने लिखा कि राजा उसने राजरूप को गढ़वाल के राजा, जिसने सुलेमान शिकोह को शरण दे रखी है, को दण्ड देने के लिए भेजा है, उसे सिरमौर का राजा सहायता दे। शाही आदेश पाकर सिरमौर की सेना पश्चिम से आक्रमण करते हुए श्रीनगर से 45 मील तथा टीहरी से 4 मील तक गंगा के किनारे पहुँच गई। गढ़वाली सेना अपने राजा को बड़ी मुश्किल से यमुना पार करा पाई।

बुद्ध प्रकाश (1664-84) : सोभाग प्रकाश के दो पुत्र थे। बड़ा मही चन्द और छोटा हरि सिंह था। सोभाग प्रकाश की मृत्यु के पश्चात् मही चन्द गद्दी पर बैठा। उसने अपने पिता सोभाग प्रकाश की मृत्यु का समाचार औरंगजेब के पास दिल्ली भेजा। औरंगजेब ने 1076 ही. के फरमान द्वारा राजा मही चन्द को बुद्ध प्रकाश की उपाधि से सम्मानित करके सिरमौर का राजा स्वीकार किया। इस अवधि में पिंजौर के भूतपूर्व जमींदार के पुत्र सूरज चन्द ने पिंजौर से नवाब फिदा खाँ को निकालकर उस पर अपना अधिकार कर लिया। फिदा खाँ बादशाह का दूध भाई था। उसे पिंजौर, साहवाना, जगतगढ़ तथा मुजफ्फरगढ़ के किले वापिस दिलाने के लिए औरंगजेब ने 4 जून, 1674 ई. को फरमान लिखा कि वह सूरज चन्द को वहाँ से भगा दे। बुद्ध प्रकाश ने ऐसा ही किया।

सोभाग प्रकाश की मृत्यु के पश्चात् गढ़वाल के राजा ने सिरमौर के उन क्षेत्रों पर फिर अधिकार कर लिया जिन्हें सिरमौर के राजा मानधाता ने मुगल सेना की सहायता से गढ़वाल से छुड़ाया था। राजा बुद्ध प्रकाश ने इनको वापिस लेने के लिए मुगल बादशाह से सहायता माँगी। बादशाह ने उसे सेना की मदद भेजी। इसके परिणामस्वरूप श्रीनगर के राजा ने बैराठ कालसी के किले को राजा बुद्ध प्रकाश को वापिस लौटा दिया। बादशाह ने फरमान में यह भी लिखा कि वह भविष्य में श्रीनगर के राजा के इलाके पर दखलंदाजी न करे। राजा बुद्ध प्रकाश की मुगल दरबार में अच्छी पहुँच थी। वह अकसर बेगम जहाँआरा को कस्तूरी, अनार, बर्फ के उपहार भेजा करता था और उसका बेगम के साथ बराबर पत्र व्यवहार भी होता रहता था। सिरमौर में राजा बुद्ध प्रकाश मही प्रकाश के नाम से अधिक जाना जाता था। सिरमौर की एक लोक गाथा 'मौईया की हार' में सिरमौर के राजा मही प्रकाश और क्योंथल के राजा अनूप (नूप) सेन 1670-1692 ई. के मध्य हुई लड़ाई का वर्णन मिलता है। इसी घटना पर आधारित लोक गाथा 'देशु की धार' क्योंथल क्षेत्र में भी प्रचलित है। यह लड़ाई 1670-1693 ई. के मध्य किसी समय हुई होगी। परम्परा के अनुसार जब मही प्रकाश बारह वर्ष का था तो क्योंथल के राजा अनूप सेन का उसके साथ झगड़ा हो गया। वयस्क होने पर मही प्रकाश ने क्योंथल पर चढ़ाई कर दी। लोक गाथा के अनुसार मही प्रकाश ने क्योंथल के राजा अनूप सेन से उसकी पुत्री सीतला का हाथ माँगा परन्तु अनूप सेन ने इनकार कर दिया। सम्भवतः इसके पीछे मही प्रकाश का लक्ष्य क्योंठल के कुछ भाग हासिल करने का रहा हो। इनकार किये जाने से नाराज वह सेना लेकर गिरी नदी घाटी के भीतर बढ़ा और उसने अपना पड़ाव गिरी नदी के किनारे बलग गाँव में डाला। वहाँ से सिरमौरी सेना देशु की धार पहुँची। वहाँ उसकी लड़ाई क्योंथली सेना से हुई। सिरमौरी सेना की पराजय हुई और मही प्रकाश को करगाणु लाणा तक पीछे हटना पड़ा। मही प्रकाश की रानी ने इस अपमान का बदला लेने के लिए अपने पिता गुलेर के राजा से सहायता माँगी। मही प्रकाश ने फिर सेना जोड़कर क्योंथल पर आक्रमण किया और राजा अनूप सेन को रतीपानी के स्थान पर हराया। सम्भवतः इसके साथ ही सिरमौर ने क्योंथल के कुछ क्षेत्र पर भी कुछ समय के लिए अधिकार कर लिया होगा क्योंकि बाद में देशु धार क्योंथल के अधीन हो गई थी।

मत प्रकाश (मेदनी प्रकाश) (1684-1704) : बुद्ध प्रकाश की जब मृत्यु हुई तब मत प्रकाश नाबालिग था। अतः प्रशासन की बागडोर मंत्री दुल्लू मेहता के हाथ में आई। यह मंत्री प्रजा की ओर ध्यान नहीं देता था, जिससे अव्यवस्था, तानाशाही और फैल रही थी। मही प्रकाश द्वारा लगाये गए कर काफी बढ़ गए। हरिपुर, कुदोन, कुण्ड, कोट चनालग में अन्न के रूप में कर-संग्रह हेतु भण्डार खुले हुए थे। अन्न अधिक मात्रा में लिया जाने लगा। लोगों में ज्यादा कर देने की क्षमता नहीं थी। बेगार भी खूब ली जाने लगी। अत्याचारों के विरुद्ध उठती आवाजों का दमन होने लगा।

लोगों ने घंडूरी गाँव के होकू मियाँ को अपने दुःख सुनाए। उसने लोगों को संगठित किया और उनका प्रतिनिधि बनकर वह साथ में 500 व्यक्तियों का दल लेकर नाहन दरबार में मंत्री दुल्लू मेहता से मिलने गया। होकू की माँग थी न्याययुक्त शासन, युवराज तथा राजमाता से भेंट। जब होकू मियाँ नाहन चौगान में पहुँचा तो दुल्लू मेहता को भय हो गया और उसने नगोन और सधामा नाम के दो व्यक्तियों को सफेद पताका लेकर होकू मियाँ के पास भेजा। उन्होंने मियाँ होकू को विश्वास दिलाते हुए कहा कि वज ीर ने राजसभा में घोषणा कर दी है कि होकू विद्रोही नहीं हैं। वह शासन की भलाई चाहने वाला है। क्योंकि सरदार होकू को कुछ भ्रम है, इसलिए राजसेना उसका मुकाबला नहीं करेगी। अतः होकू मियाँ राज अतिथि है। वह कल राजमाता से मिल सकता है।

दूसरे दिन होकू महल में गया और सेना बाहर समझौते के निर्णय को सुनने के लिए उत्सुक खड़ी रही। जब वह भीतर गया और नाबालिग राजा से भेंट की तो तत्क्षण दुल्लू मेहता ने अपनी सेना के मुखिया जुलफिया को होकू पर आक्रमण करने का संकेत दिया। निहत्था होकू मियाँ जन-कल्याण के लिए राजा की सेना से भिड़ंत में शहीद हो गया। जब उसके साथियों को पता लगा कि होकू मियाँ वीरगति को प्राप्त हो चुका है तो वे भी अपना साहस खो बैठे। सिरमौर के लोक साहित्य में एक 'सामा सोहिनी की हार' का भी वर्णन मिलता है। सोहिनी के ठाकुर सामा की वीरगाथा का ऐतिहासिक पक्ष पर्याप्त विवादास्पद है। इसमें सिरमौर के राजा नरपत तथा सोहिनी ठाकुर सामा जागीरदार परगना सोहिनी के पारस्परिक संघर्ष का वर्णन है। परन्तु सिरमौर में नरपत प्रकाश नाम का राजा सम्भवतः कभी नहीं हुआ। क्योंथल सारिणी में 49वाँ राजा अवश्य नरपत सेन था और गाथा को एक आधार यह दिया जा सकता है कि नरपत सेन (क्योंथल) ने सिरमौर राजा से सामा को अभिभूत करने में सहायता माँगी हो। परन्तु गाथा तो स्पष्टतः ही नरपत को सिरमौर का राजा तथा सामा की जागीर को सिरमौर के क्षेत्र के अन्तर्गत कहती है। हो सकता है कि लोकवार्ता का राजा नरपत इतिहास का मल प्रकाश (मेदनी प्रकाश) हो। सिरमौर के इतिहास के अनुसार पर्वतीय प्रदेश के इन पड़ोसी रजवाड़ों में राजा मानधाता (1630-1654) से 19वीं शताब्दी आरम्भ तक प्रायः लगातार झगड़े होते रहे। इस गाथा में सामा को मावी कहा गया है जिससे स्वतंत्र, विद्रोही, उच्छृंखल आदि होने के अर्थ निकलते हैं। गाथा का सार इस प्रकार है :

परगना सोहिनी का सामा स्वतन्त्र और विद्रोही हो गया। वह राजा की सम्पत्ति तथा कर हड़प गया। वह प्रजा की गायों और भैंसों पर अधिकार करने लग पड़ा। राजा ने उसे दबाने के लिए

तारू के नेतृत्व में कुछ सेना भेजी। वे जामटा घाटी होते हुए सोहिनी पहुँचे। तारू की सेना हार गई और वह भागकर वापिस राजा के पास नाहन पहुँची। राजा ने फिर कालसी से हेमचन्द दुब्बे को बुलाकर एक और सैनिक टुकड़ी भेजी परन्तु वह भी हार कर वापिस लौट आई।

अब नाहन के राजा ने एक युक्ति सोची। जमनू और सामा साला और बहनोई लगते थे। राजा ने जमनू को बुलाकर कहा कि तुम सोहिनी के सामा को मेरे पास ले आओ तो हम तुम्हें एक गाँव जागीर में देंगे। राजा ने शपथ लेकर उसे विश्वास दिलाया कि वह उसे मारेगा नहीं। जमनू सामा के पास गया और राजा से भेंट की बात की। इस बात पर विश्वास करके सामा जमनू के साथ नाहन चला आया। जब वे राजा से मिले तो राजा ने उन्हें सैनिकों के हवाले कर दिया और सामा के परिवार को नाहन लाने के लिए सिद्ध को आदेश दिया। राजा के सैनिक सोहिनी गए और सामा के परिवार व सम्बंधियों को पकड़ कर लाए। सामा के सात पुत्रों को भी कारावास में डाल दिया गया। सामा और उसके भाई जिया को यमुना के तट पर ले जाकर चिम्मा नामक व्यक्ति ने मार दिया और उनकी लाशों को यमुना में डाल दिया।

सामा के सात पुत्रों में से सुन्दर नामक एक पुत्र बच निकला। वह भागकर गढ़वाल चला गया और छह मास तक वहाँ महल में पानी भरता रहा। अवसर पाकर उसने गढ़वाल के राजा से सारी बातें कीं कि कैसे 'नाहन के राजा ने उसके परिवार का नाश कर दिया। कैसे सात-आठ परिजनों का उसने कत्ल कर दिया और परिवार की महिलाओं को बन्दी बना लिया।' गढ़वाल के राजा ने अपनी सेना लेकर कालसी की ओर से नाहन पर चढ़ाई की। सिरमौर के राजा ने आत्म-समर्पण कर दिया और उसने सुन्दर के परिवार की सभी स्त्रियों को मुक्त कर दिया। इसके पश्चात् गढ़वाली सेना वापिस लौट गई।

सिक्खों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह (1666-1708) सिरमौर के राजा मत (मेदनी) प्रकाश के समकालीन थे। औरंगजेब ने उनके पिता नौवें गुरु तेग बहादुर का 1675 ई. में वध करवा दिया। इसलिए उनके अनुयायी नाबालिग गुरु गोविन्द सिंह को सुरक्षा की दृष्टि से कहलूर बिलासपुर के पहाड़ी क्षेत्र मखोवाल ले आए। कुछ समय के पश्चात् गुरु गोविन्द सिंह और कहलूर के राजा भीम चन्द के मध्य अनबन हो गई। इसलिए गुरु सिरमौर चले गए और सिरमौर में आकर टोंका गाँव में रहने लगे। राजा मत प्रकाश को जब उनके यहाँ आने का पता चला तो उन्हें नाहन आने का निमंत्रण भेजा। गुरु नाहन पहुँचे। नाहन में थोड़े समय रहकर वे पाँवटा चले गए। इसी बीच कहलूर का राजा भीम चन्द अपने पुत्र अजमेर चन्द का विवाह गढ़वाल के राजा फतेह शाह की पुत्री से करने के लिए श्रीनगर गया। कहलूर के राजा ने देखा कि गुरु गोविन्द सिंह ने राजा फतेह शाह के पास विवाह सम्बंधी भेंट भेजी है। उसने गुस्सा होकर लड़की वालों को भेंट लौटाने के लिए मजबूर किया। जब कहलूर का राजा भीमचन्द बारात के साथ वापिस कहलूर जा रहा था तो रास्ते में उसके तथा गुरु के मध्य भंगाणी के स्थान पर (जो पाँवटा से दस किलोमीटर के लगभग उत्तर पूर्व में है) एक युद्ध हुआ। इस युद्ध में राजा की बुरी तरह से पराजय हुई, जिसमें उसके कई मित्र तथा योद्धा मारे गए। गुरु इसके पश्चात् कुछ काल के लिए सिरमौर में ही रहे। उनके यहाँ प्रवास के कारण मुगल बादशाह सिरमौर के राजा से नाराज रहने लगे। अतः गुरु ने सिरमौर से चले जाने का निश्चय किया और वहाँ से आनन्दपुर चले गए। गढ़वाल के इतिहास में उल्लेख मिलता है कि गढ़वाल के राजा फतेह शाह (1684-1716) ने 1692 ई. में सिरमौर पर चढ़ाई की थी। लड़ाई राजा रुद्र प्रकाश से हुई। पाँवटा में गुरु गोविन्द सिंह से भी झड़प हुई। परन्तु रुद्र प्रकाश नाम से सिरमौर में कोई राजा नहीं हुआ।

हरि प्रकाश (1704-1712) : राजा मत (मेदनी) प्रकाश की कोई सन्तान नहीं थी। अतः उसकी मृत्यु के पश्चात् उनका चाचा (बुद्ध प्रकाश का पुत्र हरि सिंह) हरि प्रकाश के नाम से गद्दी पर बैठा। 2 रवि 1115 ह. अर्थात् 17 जून, 1704 ई. के फरमान द्वारा औरंगजेब ने उनको राजा स्वीकृत किया। हरि प्रकाश ने केवल आठ वर्ष ही राज्य किया।

1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु हो गई। 1708 ई. में गुरु गोविन्द सिंह की नन्देड़ (दक्षिण) में एक पठान ने हत्या कर दी। इसके पश्चात् गुरु के अनुयायी बन्दा वैरागी ने उनके लक्ष्य को आगे बढ़ाने का कार्य हाथ में लिया। सिक्ख इतिहासकार डॉ. हरिराम गुप्ता के अुनसार बन्दा बैरागी सिरमौर का रहने वाला था। परन्तु कुछ इतिहासकार उसका नाम माधे दास कहते हैं। वह जम्मू का रहने वाला एक राजपूत था। उसने पंजाब में आकर मुगलों के विरुद्ध छापामार युद्ध आरम्भ किया। मुगल बादशाह बहादुरशाह (1707-1712 ई.) ने विवश होकर अमीन खाँ के अधीन 60,000 सैनिकों को उसके विरुद्ध भेजा। बैरागी बन्दा ने सिरमौर की पहाड़ियों में स्थित लोहगढ़ किला में जाकर शरण ली। मुगल सेना के घेराव के सामने सिक्ख सेना टिक न सकी। वह 10 दिसम्बर, 1710 ई. को वेश बदलकर भाग निकला और सिक्ख सेना ने हथियार डाल दिए। बन्दा बैरागी हिण्डूर (नालागढ़), कहलूर (बिलासपुर), कुटलैहड़, जसवाँ, सिब्बा और नूरपुर होता हुआ चम्बा पहुँचा। उधर बहादुरशाह ने सिरमौर और गढ़वाल के राजाओं को आदेश दिया कि वे बन्दा को पकड़ें। परन्तु जब बहादुरशाह को बन्दा बैरागी के भाग जाने का पता लगा तो उसने 13 दिसम्बर, 1710 ई. को सिरमौर के राजा हरि प्रकाश के पुत्र भूप प्रकाश को पकड़कर दिल्ली लाने के लिए हमीद खाँ को भेजा।

भूप प्रकाश तथा बन्दा के एक सहयोगी गुलाब सिंह को पकड़ लिया और उन्हें लोहे के पिंजरे में बन्द करके दिल्ली ले गए।

वहाँ पर गुलाब सिंह तथा उसके 30 अन्य साथियों को मार डाला। भूप प्रकाश को लाल किला में कैद कर दिया गया। कुछ के अनुसार राजा को सलीमगढ़ के किला में कैद किया। बहादुरशाह के समय में ही दिल्ली में अफरा-तफरी फैल गई थी। इसके परिणामस्वरूप भूप प्रकाश को मुक्त कर दिया गया था।

भूप प्रकाश (भीम प्रकाश 1712) : मुगल दरबार से शाह मुहम्मद मुआजिम बिन आलमगिर के लिखे गए फरमान द्वारा भूप प्रकाश को खिल्लत सहित भीम प्रकाश की उपाधि से सम्मानित किया गया, परन्तु वह फिर भी भूप प्रकाश के ही नाम से जाना जाता रहा।

विजय प्रकाश : इस राजा के समय से मुगल साम्राज्य का पतन होने लगा। अब मुगल दरबार के कोई फरमान नहीं मिलते। विजय प्रकाश का विवाह कुमाऊँ के राजा कल्याण चन्द की पुत्री से हुआ परन्तु कुछ राजा जगत चन्द की पुत्री से उसका विवाह होना मानते हैं। राजा विजय प्रकाश और उसकी रानी ने कई तालाब, बावड़ियाँ तथा मन्दिर बनवाए। इस राजा के समय में बिलासपुर राजा के भाई कुशल सिंह ने अपने भाई से झगड़ा करके नाहन में रहना आरम्भ कर दिया। इस अवधि में मुसलमानों और सिक्खों के झगड़े बढ़ रहे थे। इसलिए राजा विजय प्रकाश ने पिंजौर और सोहना की रक्षा के लिए मियाँ कुशल सिंह को रामगढ़ का थानेदार नियुक्त किया।

मुगल काल में सिरमौर के राजाओं के नाम तथा उनकी तिथियों और राज्यकाल में बहुत भिन्नता पाई जाती है। सम्भवतः यह आपसी पारिवारिक झगड़ों और मुगल दरबार के हस्तक्षेप के कारण रही हो।

प्रतीप प्रकाश (1749-1757/1736-1754) : यह शासक बहुत कमजोर था। इसके समय में मुगलों का पतन हो रहा था। उधर पंजाब की ओर से सिक्ख और दूसरी ओर से रोहिले ताकत पकड़ रहे थे। स्थानीय सामंत भी विद्रोह करके स्वतन्त्र होते जा रहे थे।

सिरमौर के इतिहास पर लिखी पुस्तकों में इन विद्रोहों का कोई उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु लोकवार्ताओं में ऐसे कई उदाहरण भरे पड़े हैं। लेकिन इनमें एक त्रुटि यह है कि ये घटनाएँ किस काल और किस राजा के समय की हैं, इसका कोई पता नहीं चलता।

इस अवधि में जुब्बल में राणा हुकम चन्द का राज था। उसने सिरमौर से राणा नारायण चन्द के समय में सिरमौर द्वारा हथियाए गए क्षेत्र को वापिस लेने का निश्चय किया। इस उद्देश्य से उसने एक भारी सेना को संगठित करके स्वयं सिरमौर पर आक्रमण किया कुछ स्रोत यह कहते हैं कि यह आक्रमण जुब्बल के वजीर बीणी ने किया था। राणा हुक्म चन्द ने बमटा किले में अपनी सारी तैयारी की। पहले तो जुब्बल के सैनिकों ने देहा के किले में स्थित सिरमौरी सैनिकों तथा उनके किलेदार माठू को मार भगाया। इसके पश्चात् बीणी चानणा परगना होते हुए सिरमौर के क्षेत्र कोटियाण में पहुँचा। वहाँ के मुखिया पाणु ने उसे खाद्य सामग्री उपलब्ध करवाई। फिर वह शिलाई के इलाका ठण्डाऊ पहुँचा। वहाँ के मुखिया ने उसे आगे बढ़ने से रोक दिया और उसे वापिस लौटाने के लिए नाहन से सेना मँगवाई। नाहन से सबला वजीर सेना लेकर बीणी से युद्ध करने के लिए आया। छह-सात दिन तक युद्ध होता रहा। अन्त में सबला गोलदार मारा गया और सिरमौर की सेना की हार हुई। बीणी वजीर अपनी सेना लेकर आगे बढ़ा। नाहन के निकट जामटा में अपना डेरा डाला। उसने लोगों से कर वसूल किया। उधर सिरमौर के राजा ने फिर से एक नई सेना संगठित की। यह देखकर बीणी ने वापिस लौटना ही उचित समझा। ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि कमराऊँ के पास बीणी का सामना धरमू के साथ हुआ, लड़ाई में उसके सिर पर चोट आई और वह वहाँ से वापिस लौट गया। वापिस लौटते समय बीणी ने सबला वजीर की विधवा पत्नी को भी साथ लिया और उसका विवाह अपने पुत्र से कर दिया। इसके पश्चात् बीणी की मृत्यु हो गई।

कीरत प्रकाश (1757-1773) : प्रतीप प्रकाश के पश्चात् उसका बड़ा पुत्र कीरत प्रकाश आठ वर्ष की आयु में राजगद्दी पर बैठा। वह एक कुशल शासक और योग्य सैनिक था। वह शीघ्र ही अपने राज्य में फैली अव्यवस्था ठीक करने तथा इसकी सीमाओं को सुदृढ़ करने में जुट गया। जिन लोगों ने उसके पिता प्रतीप प्रकाश के समय में विद्रोह कर रखा था उन्हें दबाकर स्थिति को सामान्य किया।

मुगल साम्राज्य पतन की ओर जा रहा था। उधर पंजाब में सिक्ख जोर पकड़ रहे थे। मुगलों और सिक्खों में सत्ता के लिए बराबर झड़पें हो रही थीं। सिक्खों ने 1764 ई. में सरहिन्द पर अधिकार कर लिया। अब वे पिंजौर को हथियाने का प्रयास कर रहे थे। पिंजौर सिरमौर राज्य की पश्चिमी सीमा के साथ का क्षेत्र था। कीरत प्रकाश ने रामगढ़ के किले धनडारा पर आक्रमण करके उस पर अधिकार कर लिया। यह क्षेत्र चौधरी गरीब दास के आधिपत्य में था। गरीब दास का बाप गंगा राम इस क्षेत्र का परगनादार था। जीन खाँ के वध के पश्चात् वह मनीमाजरा का स्वामी बन बैठा। पटियाला के राजा अमर सिंह की सहायता से सिरमौर के राजा ने गरीब दास को पराजित करने के पश्चात् पिंजौर पर अपना अधिकार कर लिया। परन्तु पटियाला के राजा अमर सिंह (1765-1781) ने गरीब दास पर आक्रमण करके पिंजौर सहित उसके सारे इलाके पर अधिकार कर लिया। इस लड़ाई में पटियाला की सहायता कहलूर, हिण्डूर और सिरमौर ने की। इसमें पटियाला के तीन सौ सैनिक मारे गए। इस लड़ाई में गरीब दास का बाप गंगा राम भी मारा गया। इन्हीं दिनों राजा कीरत प्रकाश पटियाला के राजा अमर सिंह को मिलने बनौड़ आया हुआ था। वहाँ पर उन दोनों ने अपनी मित्रता पक्की करने

के लिए एक-दूसरे की पगड़ी बदल ली। अमर सिंह ने इस मित्रता को और सुदृढ़ करने के लिए गरीब दास से जीता हुआ पिंजौर का क्षेत्र कीरत प्रकाश को दे दिया।

सिक्ख इतिहासकार डॉ. हरिराम गुप्ता का मत है कि राजा कीरत प्रकाश ने तराई के इलाके पर अधिकार करने के पश्चात् पिंजौर पर भी कब्जा करने की सोची। इसके लिए उसने पटियाला के राजा अमर सिंह से सहायता माँगी। अमर सिंह ने कीरत प्रकाश की सहायता के लिए बख्शी लखना डोगर के नेतृत्व में एक हजार सैनिक भेजे। इसमें हिण्डूर (नालागढ़) और कहलूर (बिलासपुर) के राजाओं ने भी सहायता की। उन्होंने 1768 ई. में पिंजौर के किले पर अधिकार कर लिया। इसमें पटियाला के तीन सौ सैनिक मारे गए और सिरमौर के राजा की भी हानि हुई।

अमर सिंह ने अपने दो सरदारों चेरा सिंह और हकूमत सिंह को यह आदेश दिया कि वे कलसिया से लाहड़पुर का क्षेत्र छुड़ाकर सिरमौर के राजा के अधिकार में कर दें। इसके पश्चात् कीरत प्रकाश ने लक्ष्मी नारायण से नालागढ़ का किला और हिदायत खाँ से लाहड़पुर का किला अपने अधिकार में ले लिए। हिदायत खाँ को वहाँ पर सिक्खों ने नियुक्त कर रखा था। इस प्रकार समस्त नारायण गढ़ पर कीरत प्रकाश का अधिकार हो गया। उसने नारायणगढ़ में एक जगन्नाथ का मन्दिर भी बनाया। इस राजा ने कीरतपुर नाम से इस क्षेत्र में एक गाँव भी बसाया।

1764 ई. में सिक्खों ने सरहिन्द पर अधिकार कर लिया। थानेसर पर भंगा सिंह ने अपनी सत्ता जमा ली। वह यहाँ से सिरमौर के क्षेत्र पर छापे डालता था। इसके इन छापों से छुटकारा पाने के लिए सिरमौर का राजा उसे दो हजार रुपये वार्षिक देता रहा। 1809 ई. में अंग्रेजों के आने पर सिरमौर ने यह देना बन्द कर दिया।

सन् 1772 में पटियाला के राजा अमर सिंह के भाई हिम्मत सिंह तथा उसके वजीर ने राजा के विरुद्ध विद्रोह करके महल को घेर लिया। राजा कीरत प्रकाश ज्वालामुखी की यात्रा के उद्देश्य से नारायणगढ़ में ठहरा हुआ था। जब उसे यह पता लगा कि राजा अमर सिंह के भाई हिम्मत सिंह ने अमर सिंह के विरुद्ध पटियाला में अपनी सेनाएँ इकट्ठी कर रखी हैं तो कीरत प्रकाश ज्वालामुखी की यात्रा को बीच में छोड़ कर अपनी सारी सेना को साथ लेकर राजा की सहायता के लिए पटियाला चला गया। वहाँ पर एक ओर से राजा अमर सिंह और दूसरी ओर से कीरत प्रकाश ने शत्रु पर आक्रमण किया। अन्त में एक मास दो दिन के पश्चात् यह युद्ध समाप्त हो गया और हिम्मत सिंह को राजा अमर सिंह ने पच्चीस गाँव गुजारे के लिए दे दिए।

पटियाला से थोड़ी दूरी पर सैफाबाद में एक किला था, जिस पर गुल खाँ का अधिकार था। पटियाला के राजा ने उस पर अधिकार करने के उद्देश्य से आक्रमण किया। इस अभियान में सिरमौर के राजा ने भी अपने मित्र पटियाला के राजा की भरपूर सहायता की। राजा कीरत प्रकाश ने मुगल बादशाह आलमगीर की सिक्ख आक्रमणकारियों के विरुद्ध सहायता भी की और उन्हें सतलुज नदी के पूर्व में आगे बढ़ने से रोके रखा। आलमगीर की मृत्यु के कुछ समय पश्चात् जब गुलाम कादिर रोहेला ने कहलूर पर आक्रमण किया तो राजा कीरत प्रकाश ने उसके विरुद्ध कहलूर की सहायता की तथा उसे कहलूर से खदेड़ दिया। इसके उपलक्ष्य में उसने रोपड़ के निकट कीरतपुर नगर की नींव रखी। गुलाम कादिर 1785 ई. में सत्ता में आया। सम्भवतः इस आक्रमण के समय गुलाम कादिर अपने पिता जवीता खाँ की सेना का नेतृत्व कर रहा होगा।

गढ़वाल के इतिहास में उल्लेख मिलता है कि वहाँ के राजा ललित शाह (1772-1780) के समय गढ़वाल ने सिरमौर के क्षेत्र पर चढ़ाई की :

कूर्माचल सिरमौरहि मारे। राज करैं दोउ पुत्र तुम्हारे॥
इह राजा मन मेहि ठहराई। लागे फौजां रखन सिपाई॥
प्रथम फौज सिरमौर चढ़ाई। चहुं गिरद सैं ताक लगाई॥
गढ़ बेराट फूक सब दीयों। हेला धाय कालसी कीन्यो॥तब सिरमौर सों फौजां छुटी। जितकी तित गढ़ फौजां कुटी॥
कई बार जो पड़ी लड़ाई। फते जो उन से कधीं न पाई॥
रहे जबर सिरमौरी गढ़ सौं। खैंच पड़े तलवारें मढ़ सौं॥
गढ़ की फौजें मार कटाई। कियो मेल नहिं पार बसाई॥
तलब पड़ी देनी रनब घार सौं। चान्दी सोना वेच्यों डर सौं॥

कीरत प्रकाश ने सेना लेकर उन्हें परास्त किया। इस लड़ाई से 1773 ई. में जब वह वापिस लौट रहा था तो लकड़घाट में उसकी मृत्यु हो गई, परन्तु कुछ यह लिखते हैं कि उसकी मृत्यु 1775 ई. में हुई। इस समय उसकी आयु 26 वर्ष की थी।

जगत प्रकाश (1773-1792) : कीरत प्रकाश के बाद उसका बड़ा पुत्र जगत प्रकाश गद्दी पर बैठा। इसके कुछ समय के पश्चात् सिरमौर में एक विद्रोह उठ खड़ा हुआ। पटियाला का राजा अमर सिंह कीरत प्रकाश की सहायता को याद करते हुए जगत प्रकाश की मदद के लिए स्वयं सेना लेकर नाहन पहुँचा और विद्रोह को दबा दिया। सम्भवतः यह विद्रोह सिरमौर के अधीनस्थ छोटे-छोटे सामंतों ने 1773 ई. में किया हो। जब जगत प्रकाश गद्दी पर बैठा तो उस समय उसकी आयु मात्र दस वर्ष की थी। चौदह वर्ष की आयु में उसका विवाह कांगड़ा के राजा संसार चन्द की बहन से हुआ। बारात कहलूर होते हुए गई। कहलूर के राजा ने उसे अपने राज्य से बारात ले जाने से रोका। परन्तु वह इसका प्रतिरोध करके कहलूर होता हुआ कांगड़ा पहुँचा और राजा संसार चन्द की बहन से विवाह किया। संसार चन्द के न चाहने पर भी वह कहलूर होता हुआ वापिस नाहन आया। संसार चन्द ने उसकी बारात की सहायता के लिए अपने दो हजार सैनिकों को उसके

साथ भेजा।

जगत प्रकाश के समय गढ़वाल के राजा जयकृत शाह की उसके मंत्रियों और कारदारों ने दुर्गति कर रखी थी और उसने गढ़वाल के कवि और चित्रकार मोला राम के पास जाकर प्रार्थना की, जिसके कहने पर जगत प्रकाश ने उसे सहायता दी :

हुकुम होय तो नाहण जावैं। राजा सहित फौज ले आवैं॥
महाराज तब यह फरमाई। तुम मत छोड़ो हमरे ताही॥
नाहण को धनिराम पठावैं। तुम जो कहो ताहि सिखलावै॥
याहि समा को छंद बनावो। अक्कल बरिसों ताहि बुलावों॥
जग प्रकाश तू भानूसम, हमहुँ तम कियु ग्रास।
ग्राह ग्रह्यो ज्यों गजहिं को, घमंड सिंह दिया त्रास॥

मुगल बादशाह शाह आलम दूसरे के वजीर नजब खाँ ने मिर्जा शफी को सिक्खों के बढ़ते आक्रमणों और लूटमार को रोकने के लिए नियुक्त किया। शफी ने इसमें सहयोग के लिए एक पत्र नाहन के राजा को भी मार्च, 1781 ई. में लिखा और उससे अनुरोध किया कि वह किसी भी सिक्ख को अपने राज्य में शरण न दे और यदि कोई आ जाए तो उसे तथा उसके परिवार को पकड़कर उसके पास भेजा जाए। दिल्ली से खर्च चलाने तथा सैनिकों को वेतन देने के लिए धन नहीं मिल रहा था। इसलिए शफी ने इसकी पूर्ति के लिए कई राजाओं और जमींदारों से स्वयं कर वसूल करना आरम्भ कर दिया। उसने सिरमौर से अप्रैल 1781 में 17,000 रुपये वसूल किए। और मुगल सेना सिक्खों का कुछ न बिगाड़ सकी। उनके आक्रमण बढ़ते ही गए। इन आक्रमणों और लूट-पाट तथा मुगल सेना की गतिविधियों से भयभीत होकर सतलुज और यमुना के मैदानी भाग से बहुत से लोग भागकर सिरमौर की पहाड़ियों में आकर बस गए।

सिक्खों की इस लूट-मार का उल्लेख एक अंग्रेज यात्री जॉर्ज फोरस्टर ने अपनी यात्रावली में किया है। वह 1781 ई. में नाहन होता हुआ पश्चिम की ओर जा रहा था। उसने लिखा कि जब वह नाहन में था तो राजा सिक्खों से निपटकर लौट रहा था। लोग सड़कों के दोनों ओर से राजा का स्वागत कर रहे थे और राजा भी उन्हें स्नेह से मिल रहा था। उसने आगे लिखा है कि पश्चिम की ओर से सिक्खों की लूट-मार को रोकने के लिए राजा ने कोटहा के क्षेत्र का प्रबंध कासर अली खाँ को दिया जो गढ़ी नामक स्थान में रहता था। उसने राजा जगत प्रकाश के आदेशानुसार इस क्षेत्र का प्रशासन चलाया।

1785 ई. में रोहेल खण्ड के मुसलमान शासक जवीता खाँ की मृत्यु हो गई और उसके पश्चात् उसका पुत्र गुलाम कादिर रोहेला वहाँ का शासक बना, जो बड़ा क्रूर और विद्रोही मनोवृत्ति का था। उसने एक भारी सेना लेकर सिरमौर के दून क्षेत्र पर आक्रमण कर दिया। सिरमौर का राजा उसका मुकाबला करने के लिए सेना लेकर नाहन से 15 किलोमीटर दक्षिण में कटासन नाम के स्थान पर आ पहुँचा। दोनों ओर से घोर युद्ध हुआ। इसमें गुलाम कादिर की हार हुई। राजा विजयी होकर नाहन लौटा। उसने इस विजय की स्मृति में कटासन में दुर्गा का मन्दिर बनाया। 4 मार्च, 1789 ई. को माधव जी सिंधिया ने गुलाम कादिर को फाँसी पर लटका दिया।

इसी अवधि में कहलूर के राजा महान चन्द और नालागढ़ के राजा रामसरन सिंह में आपस में झगड़ा हो गया और महान चन्द ने हिण्डूर के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया। राजा रामसरन सिंह ने सिरमौर की सहायता लेकर अपने क्षेत्र को कहलूर से वापिस ले लिया। इसके पश्चात् राजा ने जगन्नाथ की यात्रा की। वहाँ से लौटकर उसने दून को जीतने के लिए प्रयास किया जिसे उसके पिता कीरत प्रकाश ने अधूरा छोड़ा था। इसमें उसे सफलता भी मिली। अट्ठाइस वर्ष की आयु में उसकी मृत्यु हो गई।

धर्म प्रकाश (1792-1796) : जगत प्रकाश के पश्चात् उसका भाई धर्म सिंह प्रकाश गद्दी पर बैठा। हिण्डूर का राजा रामसरन सिंह, कहलूर का राजा महान चन्द और कांगड़ा का राजा संसार चन्द उसके समकालीन थे। आरम्भ में तो हिण्डूर और कहलूर के अच्छे सम्बंध थे, परन्तु बाद में उनके यह सम्बंध बिगड़ गए। हिण्डूर का राजा रामसरन सिंह कुछ अधिक महत्त्वाकांक्षी था। उसने राणा तथा ठाकुरों के आपसी झगड़ों से लाभ उठाने के उद्देश्य से कहलूर की बारह ठकुराइयों पर अपना अधिकार कर लिया। इससे उन पर कहलूर की सत्ता समाप्त होकर हिण्डूर के हाथ में आ गई। उसने कइयों के क्षेत्र को अपने अधिकार में ले लिया और सतलुज से लेकर यमुना तक के मध्य भाग पर कब्जा करने की योजना बनाई। इसके साथ ही वह सिरमौर की भीतरी राजनीति में भी दख़ल देने लगा और विद्रोही सामंतों को उकसाने लगा। इसको रोकने के लिए धर्म प्रकाश ने सेना लेकर हिण्डूर पर चढ़ाई कर दी और झलरा-भलरा में युद्ध हुआ। इस लड़ाई में बाघल का राणा जगत सिंह, जो हिण्डूर के राजा रामसरन सिंह की ओर से लड़ रहा था, पकड़ा गया और उसे पिंजौर ले जाया गया। इस पर रामसरन सिंह ने धर्म प्रकाश के साथ समझौता करके राणा जगत सिंह को छुड़ा लिया और उसके पश्चात् अधीनस्थ शासकों से कर वसूल किया।

इस अवधि में धर्म प्रकाश को समाचार मिला कि गढ़वाल के कुँवर पराक्रम शाह ने देहरादून के निकट खुशालपुर के किले पर अधिकार कर लिया है तो उसने कुँवर ईश्वरी सिंह को सेना लेकर भेजा। लड़ाई में पराक्रम शाह घायल हुआ और उसकी हार हुई। किले पर ईश्वरी सिंह का अधिकार हो गया।

कांगड़ा का राजा संसार चन्द भी कम महत्त्वाकांक्षी नहीं था। उसने अपने राज्य को पूर्व की ओर बढ़ाने के उद्देश्य से मण्डी और कहलूर पर आक्रमण किए। कहलूर के राजा महान चन्द ने अपने राज्य की रक्षा के लिए धर्म प्रकाश से सहायता माँगी। इस

सहायता के बदले में महान चन्द ने धर्म प्रकाश को एक लाख रुपये देना स्वीकार किया। 1789 ई. में धर्म प्रकाश, हिण्डूर के राजा रामसरन सिंह और कहलूर के राजा महान चन्द की सेनाओं के साथ चरारतु के पास सतलुज के किनारे संसार चन्द का मुकाबला करने के लिए आ खड़ा हुआ। पंजाब की पहाड़ी रियासतों के इतिहास लेखक हचीसन और वोगल इस घटना को 1795 ई. की लिखते हैं। संसार चन्द ने भी अपनी सेनाएँ अपने भाई फतह चन्द के साथ भेजीं। दोनों सेनाओं में घोर युद्ध हुआ। धर्म प्रकाश स्वयं लड़ रहा था। दूसरी ओर से एक गोली धर्म प्रकाश को लगी और उसकी वहीं मृत्यु हो गई।

कर्म प्रकाश (1796-1815) : धर्म प्रकाश की कोई सन्तान नहीं थी, इसलिए उसका छोटा भाई कर्म प्रकाश गद्दी पर बैठा। कर्म प्रकाश एक कमजोर शासक और अविश्वसनीय व्यक्ति था। उसके दुराचरण के कारण कई गंभीर विद्रोह हुए। जब वह गद्दी पर बैठा तो राज्य के असली अधिकार उसके भाई जगत प्रकाश और धर्म प्रकाश के समय से चले आ रहे वजीर के हाथ में ही थे। कई बार वजीर व अन्य अधिकारी धर्म प्रकाश को पूछे बिना ही राज्य का कारोबार चलाते थे। इससे पीछा छुड़ाने के लिए राजा ने अपनी मर्जी से एक अन्य व्यक्ति को वजीर नियुक्त करके सारे अधिकार अपने हाथ में ले लिए। अपने भाइयों के समय से चले आ रहे वजीरों को मार दिया। इससे विद्रोह उठ खड़ा हुआ और लोगों ने उसके विरुद्ध एक संघ बनाकर उसे भगा दिया। प्रजा ने उसके छोटे भाई रत्न सिंह को रत्न प्रकाश नाम देकर गद्दी पर बैठा दिया परन्तु यह स्थिति बहुत दिनों तक नहीं चल सकी।

1796 ई. में मौजीराम, पहाड़ सिंह खवासु, बलातीराम बख्शी आदि अधिकारियों और कुछ अन्य लोगों ने अराजकता फैला रखी थी। राजा को उन्हें दबाना कठिन हो रहा था। इसलिए वह पटियाला के राजा साहिब सिंह से मिलने बनौड़ गया। चूंकि कीरत प्रकाश के समय से सिरमौर और पटियाला के मधुर सम्बंध चले आ रहे थे, इसलिए पटियाला के राजा साहब सिंह ने इस कठिन घड़ी में सिरमौर की सहायता करना स्वीकार किया। इसके लिए उसने अपनी वजीर बीबी साहिब कौर, जो उसकी बड़ी बहन थी, को सेना लेकर नाहन भेजा। सेना के साथ सरदार कोआला सिंह, सरदार चैन सिंह, भाई तारा सिंह और दीवान केसर मल भी साथ थे। वे सब चार मास तक नाहन में ठहरे रहे और विद्रोह को दबाकर राजा कर्म प्रकाश को पुनः स्थापित किया। विदा होते समय राजा धर्म प्रकाश ने साहिब कौर को भेंट में एक हाथी दिया। इसके पश्चात् 1803-04 ई. तक सिरमौर में स्थिति ठीक रही।

हिण्डूर का राजा रामसरन सिंह चैन से बैठने वाला नहीं था। उसने कहलूर के अधीन बारह ठाकुराइयों को फिर से अपने अधीन करने का प्रयत्न किया और यमुना नदी की ओर बढ़ने का प्रयास किया। वह सिरमौर की भीतरी राजनीति में भी दखल देने लगा। उसने कुछ स्थानीय लोगों तथा राज परिवार के लोगों को भी राजा कर्म प्रकाश के विरुद्ध उकसाया। राजा के परिवार का एक कंवर किशन सिंह विद्रोह करके सिरमौर में लूटमार करता रहा।

उधर कुमाऊँ की घरेलू राजनैतिक परिस्थितियों ने 1790 ई. में नेपाल से गोरखों को आमन्त्रित किया। 1792 ई. में उन्होंने गढ़वाल के राजा प्रद्युम्न शाह को भी कर देने के लिए बाध्य किया। इसके साथ ही गोरखों ने सिरमौर के साथ एक संधि की, जिसके द्वारा गोरखों का सिरमौर के कुछ पहाड़ी क्षेत्र पर अधिकार हो गया। 1803 ई. में गढ़वालियों और गोरखों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ। प्रद्युम्न शाह ने देहरादून भागकर सेना एकत्र की। परन्तु वह लड़ाई में मारा गया और गढ़वाल पर गोरखों का 1804 ई. में अधिकार हो गया। इसके पश्चात् उनकी दृष्टि सिरमौर पर लग गई। वे अवसर की तलाश में थे। उधर जब कर्म प्रकाश विद्रोहियों को न दबा सका तो उसने विद्रोह को कुचलने के लिए गोरखा सरदार अमर सिंह थापा से सहायता माँगी। सात सौ गोरखा सैनिकों को लेकर भक्ति सिंह थापा सिरमौर पहुँचा परन्तु किशन सिंह और हिण्डूर के सैनिकों ने उन्हें जामटा में घेरकर वापिस भागने के लिए बाध्य किया। यह घटना मई 1804 ई. की है। स्थिति को नाजुक देखकर राजा कर्म प्रकाश ने नाहन से भागकर क्यारदा दून में स्थित एक पहाड़ी पर कांगड़ा किला में जाकर शरण ली। इसके पश्चात् सिरमौरी विद्रोही सैनिकों ने राजा को पकड़ने के लिए कांगड़ा किले का घेराव किया। जब सेना ने किले में प्रवेश किया तो लड़ाई में राजा का एक साथी मियाँ जवालू मारा गया। इसका रंग-रूप राजा से मिलता था। सैनिकों ने समझा कि राजा मारा गया। अतः उन्होंने घेराव ढीला छोड़ दिया। इससे लाभ उठाकर रात को कर्म प्रकाश रानी सहित भाग निकला और थोड़ी दूर टानूर गाँव के मुखिया झान्झू के घर जाकर सारी बातें सुनाई। राजा ने उससे अनुरोध किया कि वह उन्हें कालसी पहुँचा दे। मुखिया ने उन्हें सुरक्षित कालसी पहुँचा दिया।

उधर विद्रोहियों ने कर्म प्रकाश के मारे जाने का समाचार सुनकर उसके छोटे भाई रत्न सिंह को रत्न प्रकाश के नाम से राजा बना दिया। कंवर किशन सिंह लूटमार करता रहा। लोग उससे भी बहुत दुखी हो गए थे।

इस अवधि में गोरखों ने अपनी स्थिति को फिर से सुदृढ़ कर लिया और गंगा- यमुना के मध्य वाले भाग में अपने आप को पूर्णरूप से स्थापित कर लिया। उधर कहलूर पर हिण्डूर का राजा रामसरन सिंह अतिक्रमण कर रहा था। पश्चिम की ओर से कांगड़ा का राजा संसार चन्द सतलुज के पूर्व की ओर बढ़ रहा था। कहलूर के राजा महान चन्द के लिए इन दोनों का मुकाबला करना कठिन हो गया। इसलिए उसने गोरखा सरदार अमर सिंह थापा से सहायता माँगी।

इस समय कर्म प्रकाश कालसी में था। उसने भी अपने

विरोधियों के विरुद्ध गोरखों से सहायता माँगी और सरदार काजी रणजोर थापा से कालसी में भेंट की। इसके साथ कर्म प्रकाश गोरखा सेना लेकर राजपुर, कांगड़ा किला होता हुआ अपनी राजधानी नाहन पहुँचा। उसने गोरखों से कहा कि वह कांगड़ा तक उनकी सेनाए ले जाने में किसी प्रकार की रुकावट नहीं डालेगा, बल्कि सैनिक सहायता ही करेगा। जब गोरखा सेना नाहन की ओर बढ़ रही थी तो किशन सिंह, हिण्डूर और विद्रोहियों की सेना ने सामना किया, परन्तु इस बार वे हारकर भाग गए। गोरखों ने रत्न सिंह को भी भगा दिया। कर्म प्रकाश को नाम मात्र का राजा बनाकर राज्य के सारे अधिकार अपने हाथ में ले लिए। इस लड़ाई में बघाट के राजा महेन्द्र सिंह ने भी गोरखों की सहायता की क्योंकि हिण्डूर के राजा रामसरन सिंह ने बघाट के कुछ क्षेत्रों पर अधिकार कर रखा था। महेन्द्र सिंह चाहता था कि वह भी रामसरन सिंह से अपने राज्य का हथियाया हुआ भाग वापिस ले ले।

अक्तूबर 1804 ई. में अमर सिंह थापा ने हिण्डूर पर आक्रमण किया और उसने अजमेरगढ़ में नालागढ़ के सैनिकों को पराजित करके नालागढ़ और रामगढ़ के किलों पर अधिकार कर लिया। राजा रामसरन सिंह ने पलासिया में जाकर शरण ली। इसके पश्चात् गोरखा सेना तथा महान चन्द ने मिलकर कांगड़ा के राजा संसार चन्द पर चढ़ाई कर दी। अमर सिंह थापा ने संधि के अनुसार सिरमौर के राजा कर्म प्रकाश से सैनिक तथा खाद्य सामग्री की माँग की। परन्तु वह आनाकानी करता रहा। फिर भी गोरखा सेना ने सतलुज पार करके संसार चन्द को पीछे हटने पर बाध्य किया। उसने कांगड़ा किला में जाकर शरण ली। अन्त में 1809 ई. में संसार चन्द ने पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह की सहायता से गोरखों को सतलुज के इस ओर धकेल दिया।

इसके पश्चात् अमर सिंह थापा ने राजा कर्म प्रकाश से सहायता उपलब्ध करवाने की माँग की। राजा ने सोचा कि अमर सिंह अब हारा हुआ तो है ही इसलिए उसने मिलने से इनकार कर दिया। इससे अमर सिंह को ठेस लगी और उसने तुरन्त अपने पुत्र रणजोर सिंह थापा को सिरमौर पर आक्रमण करने के लिए भेजा। बिना किसी लड़ाई के सिरमौर पर गोरखों का अधिकार हो गया और राजा कर्म प्रकाश वहाँ से भाग गया। नाहन और जैतक गोरखों के मुख्य गढ़ बन गए।

कर्म प्रकाश की हार देखकर कोटाहा, रामगढ़, लाहड़पुर, मोरनी, पिंजौर, जगतगढ़ आदि स्थानों के स्थानीय अधिकारी स्वतंत्र हो गए। इससे इन क्षेत्रों पर कर्म प्रकाश का आधिपत्य समाप्त हो गया। गोरखों का नाहन पर पूर्ण अधिकार होने के पश्चात् राजा ने अपने परिवार सहित रामगढ़ के नगर सुबाथू में शरण ली। रामगढ़ का क्षेत्र कौशल सिंह को उसकी सिरमौर राज्य के प्रति सेवा के लिए दिया गया था। अब कौशल सिंह की मृत्यु हो चुकी थी और उसके पुत्र मालदेव और नारायण सिंह ने पुरानी बातें भुलाकर उसे सुबाथू से चले जाने को कहा। इस पर राजा ने मई, 1812 को साथ लगते अन्य रजवाड़ों से सहायता के लिए आग्रह किया परन्तु किसी ने भी साथ नहीं दिया। अन्त में राजा कर्म प्रकाश वहाँ से अपने वजीर मौजीराम मेहता को साथ लेकर बुरिया चला गया।

1810 ई. में अमर सिंह थापा ने सरहिन्द के साथ लगते मैदानी भाग के गाँव को अपने अधिकार में लेने की इसलिए घोषणा की कि ये क्षेत्र पहले सिरमौर और हिण्डूर में शामिल थे। परन्तु लुधियाना स्थित अंग्रेज़ अधिकारी डेविड ऑक्टरलूनी ने इस क्षेत्र को पहले ही 1809 ई. में ईस्ट इंडिया कम्पनी के संरक्षण में ले लिया था। उसने गोरखों से कहा कि वे मैदानी भाग की बात तो छोड़ें, दून के क्षेत्रों को भी खाली कर दें। 1813 में दोनों में सीमा संकट बढ़ गया। अंग्रेजों के अधीनस्थ क्षेत्रों पर गोरखों के छापे बढ़ते गए। इससे निपटने के लिए अंग्रेज सरकार ने पहली नवम्बर, 1814 को गोरखों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इसके साथ ही पहाड़ी लोगों में भी गोरखों को अपनी भूमि से भगाने की प्रबल इच्छा पैदा हो गई। वे उनके अत्याचारों से बहुत दुःखी हो गए थे।

अंग्रेज सरकार ने भी घोषणा कर दी कि जो राजा गोरखों के विरुद्ध सरकार की सहायता करेंगे उनके राज्य उन्हें लड़ाई के पश्चात् वापिस लौटा दिए जाएँगे। सिरमौर के राजपरिवार का किशन सिंह, जिसने राजा कर्म प्रकाश के विरुद्ध विद्रोह किया हुआ था, अवसर की तलाश में था। वह डेविड ऑक्टरलूनी से मिला। उसने ऑक्टरलूनी से कहा कि यदि उसे धन दिया जाए तो वह शस्त्रों की खरीद करके और कोई एक हजार से लेकर चार हजार तक सैनिकों को भी इकट्ठा करेगा। उसका यह सुझाव एकदम मान लिया गया और दिल्ली के रेजीडेन्ट को अग्रिम धन राशि देने के लिए कहा गया। इसमें यह भी निर्णय लिया गया कि कर्म प्रकाश को गद्दी से एक तरफ करके उसके स्थान पर उसके किशोर पुत्र फतह प्रकाश को बैठाया जाएगा और किशन सिंह को उसका राज्य सरंक्षक बनाया जाएगा।

पहली नवम्बर, 1814 ई. को अंग्रेजों ने गोरखों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अंग्रेज सेना चारों ओर से गोरखों के विरुद्ध बढ़ी। इनमें मुख्य टुकड़ियाँ मेजर जनरल रोलो गीलैस्पी और मेजर जनरल डेविड ऑक्टरलूनी की कमान में थी। डेविड ऑक्टरलूनी की सेना ने रोपड़ की ओर से नालागढ़ में प्रवेश किया। रोलो गिलैस्पी 4400 सैनिकों के साथ सहारनपुर से पहले देहरादून और क्यारदा दून की ओर बढ़ा। गोरखा कमाण्डर बलभद्र थापा को देहरादून में जब गीलैस्पी के आने का पता लगा तो उसने कालांग किले में जाकर शरण ली। गीलैस्पी ने इस किले पर कई बार आक्रमण किया परन्तु वह स्वयं इसमें मारा गया। मेजर मौवे ने तुरन्त ही उसका स्थान ले लिया और उसने किले पर अधिकार कर लिया।

अब गवर्नर जनरल बहुत उत्सुक था कि सेनाएं सिरमौर में प्रवेश करके नाहन पर अधिकार कर लें परन्तु अंग्रेज सेना के पहुँचने से पहले ही अमर सिंह थापा के पुत्र रणजोर सिंह थापा ने नाहन को छोड़कर जैतक किले में शरण ली थी। 19 दिसम्बर, 1814 को अंग्रेज सेना नाहन पहुँची और 25 दिसम्बर, 1814 को मेजर जनरल मार्टीनडेल ने वहाँ पर सेना की कमान सम्भाली। उसने जैतक किले में स्थित गोरखों पर आक्रमण किया परन्तु सफलता नहीं मिली। अतः वह एक मास तक स्थिति को देखता रहा। उधर डेविड ऑक्टरलूनी ने नालागढ़ में गोरखों को परास्त करके सभी किलों पर अधिकार कर लिया था। इसके पश्चात् उसे सिरमौर में गोरखों से निपटने के लिए कहा गया। जब सिरमौर में गोरखों पर भारी आक्रमण करने की तैयारियाँ हो रही थीं तो वहाँ पर स्थित गोरखा सैनिकों को कुमाऊँ और नालागढ़ में उनके साथियों के हारने के समाचार मिले। दूसरे 21 मई, 1815 ई. को वहाँ पर भारी वर्षा और ओलावृष्टि हुई। इससे अमर सिंह थापा ने स्थिति को अपने प्रतिकूल देखकर हार मान ली। गोरखों ने जैतक किले को खाली कर दिया। इसके पश्चात् अंग्रेज सेना ने किले पर तुरन्त अधिकार कर लिया। अंग्रेजों का गोरखों के साथ सिरमौर में यह संघर्ष पाँच वर्ष तक चलता रहा।

फतेह प्रकाश (1815-1850) : 1815 में गोरखा युद्ध की समाप्ति पर अंग्रेजों ने अपने वचन के अनुसार पहाड़ी राजाओं को संधि के मुताबिक उनके पैतृक राज्य लौटा दिए। परन्तु सिरमौर के राजा कर्म प्रकाश को उसकी अल्पबुद्धि और मूढ़ता के कारण राज से वंचित कर दिया। डेविड ऑक्टरलूनी ने सरकार से सिफारिश की कि सिरमौर राज्य को अंग्रजी राज्य में मिला दिया जाए। यदि गवर्नर जनरल इस सुझाव से सहमत न हों तो फिर कर्म प्रकाश को उसके गुजारे के लिए भत्ता देकर उसके पुत्र फतेह प्रकाश को राजा बना दिया जाए। साथ ही फतेह प्रकाश की नाबालिगी की अवधि में सिरमौर राज्य को दस वर्ष के लिए अंग्रेजी सरकार के अधीन रखा जाए। सरकार ने यह सिफारिश मान ली। 28 सितम्बर, 1815 को फतेह सिंह को फतेह प्रकाश के नाम से गद्दी पर बिठा दिया। राजा की बाल्यावस्था के कारण राज्य का कार्यभार उसकी माता गुलेरी रानी को दे दिया गया। उसकी सहायता के लिए सरकार ने 15 जुलाई, 1815 को कैप्टन जी. बिर्च को गवर्नर जनरल का एसिस्टेन्ट एजेंट नियुक्त किया। वह दिसम्बर, 1816 तक नाहन में रहा।

21 सितम्बर, 1815 को गवर्नर जनरल ने फतेह प्रकाश को एक सनद दी, जिसके द्वारा अंग्रेज सरकार ने सिरमौर राज्य के मोरनी, जगतगढ़ के किले और क्यारदा दून तथा जौनसार-बाबर के क्षेत्र अपने पास रख लिए। खूरचरी और हुनरू के किले और गिरी नदी के पश्चिम का क्षेत्र क्योंथल ठकुराई को दे दिया। इसके साथ राजा सिरमौर पर यह शर्त भी लगा दी कि वह सरकार की मंजूरी के बगैर किसी भी दीवान को नियुक्त न करे। राज्य की सीमाओं के भीतर 12 फुट चौड़ी सड़कें भी बनवाए। सिरमौर की जनता को यह स्पष्ट कर दिया गया कि वह फतेह प्रकाश को अपना राजा मानें और उसकी आज्ञा का अनुसरण करें।

30 जुलाई, 1815 को कैप्टन बिर्च ने ऑक्टरलूनी को लिखा कि सिरमौर के कुछ कर्मचारियों को निकाल दिया जाए क्योंकि वे विश्वास के योग्य नहीं हैं। बिर्च ने राज्य के प्रशासन को चलाने के लिए एक कॉउंसिल बनाई। किशन सिंह को दीवान पद से निकाल दिया और रानी की अनुमति से अपने मुन्शी अजीज ओलहा खाँ को उसके स्थान पर नियुक्त किया। उसके पश्चात् मियाँ देवी सिंह, दलीप सिंह और रामदेव ने काम किया। इससे रानी पर अच्छा प्रभाव पड़ा और उसने प्रशासन तथा पुलिस में काफी सुधार किए। यात्रियों के लिए धर्मशालाएँ बनाई गईं, चोरी और जुआ खेलने पर पूरी तरह से रोक लगा दी। कैप्टन बिर्च ने स्वयं आय-व्यय तथा कर्मचारियों पर होने वाले खर्चों का ब्योरा तैयार किया। उसने कर व्यवस्था में सुधार लाए। अन्न और पशुओं पर वसूल किए जाने वाले करों को बन्द कर दिया।

राज्य से वंचित होने के पश्चात् राजा कर्म प्रकाश ने नाहन के निकट तिलकपुर में रहना आरम्भ किया परन्तु यहाँ से वह राज्य के काम-काज में हस्तक्षेप करने लगा। इसलिए कैप्टन बिर्च ने रेजीडेन्ट को लिखा कि उसे करनाल भेज दिया जाए। इससे रानी और उसके पुत्र फतेह प्रकाश को बड़ा दुःख हुआ और वे भी कर्म प्रकाश के पास करनाल जाने के लिए तैयार हो गए, परन्तु समझाने के बाद उन्होंने जाना छोड़ दिया। 1826 ई. में कर्म प्रकाश की मृत्यु हो गई। 5 जुलाई, 1826 को फतेह प्रकाश ने सरकार से आवेदन किया कि गोरखा युद्ध की समाप्ति पर कालसी, जौनसार-बाबर, मनूर और क्यारदा दून की घाटी के जो क्षेत्र सरकार ने अपने पास रख लिए थे, उन्हें डेढ़ लाख रुपये के नजराने पर वापिस लौटा दिया जाए। नजराना की राशि को वह सरकार को किस्तों में देगा तथा उस पर आठ प्रतिशत ब्याज भी अदा करेगा। इसके लिए राजा ने जगाधरी के दो साहूकारों - लाला नारायण दास और गुलाब सिंह को पेश किया परन्तु सरकार ने राजा का यह अनुरोध नहीं माना। 1823 ई. में रामगढ़ के रामदेव ने सिरमौर के प्रति अपनी निष्ठा दिखाई। इसके फलस्वरूप रामगढ़ के क्षेत्र को सिरमौर में मिला दिया गया। जब फतेह प्रकाश बड़ा हुआ तो सरकार ने उसे पूरे प्रशासनिक अधिकार दे दिए। 1827 ई. की ग्रीष्म ऋतु में गवर्नर जनरल लॉर्ड अमर्स्ट शिमला आया, उसने शिमला में एक दरबार लगाया। इसमें राजा फतेह प्रकाश ने भी भाग लिया।

1831 ई. में फतेह प्रकाश ने गवर्नर जनरल से लिखकर फिर अनुरोध किया कि गोरखा युद्ध के पश्चात् सरकार ने जो क्षेत्र सिरमौर के अपने पास रख लिए थे, उन्हें नज राना पर सिरमौर को वापिस लौटा दिया जाए। इसके साथ ही राजा ने जुब्बल, थरोच,

रामगढ़, पुन्दर, मोरनी, पिंजौर, हमीर और गंजारी पर भी अपना हक जताया। सरकार ने राजा के इस अनुरोध को भी नहीं स्वीकार किया परन्तु क्यारदा दून का क्षेत्र 5 सितम्बर, 1833 को एक सनद द्वारा पचास हजार रुपये के नजराने पर उसे वापिस लौटा दिया। इसके साथ ये शर्तें भी लगाई गई : 1. राजा लोगों के हक-हकूक को मान्यता दे और न्यायपूर्ण तरीके से प्रशासन चलाए। 2. व्यापारियों पर किसी प्रकार के राहदारी कर न लगाए। 3. राजा तथा उसके वंशज अपने राज्य में सड़कों को ठीक प्रकार से रखें। 4. राजा एक अच्छी पुलिस रखे तथा यात्रियों की सुरक्षा का प्रबन्ध करे। 5. राजा किसी प्रकार के फालतू कर या उपहार जिसे रुमाली नजराना कहते हैं, वसूल न करे। राजा फतेह प्रकाश की दो बहनों का विवाह कहलूर- बिलासपुर के राजा खड़क चन्द से हुआ था। 28 मार्च, 1839 को खड़क चन्द की मृत्यु हो गई। उसकी कोई सन्तान नहीं थी। राजा सिरमौर ने गद्दी पर अपनी बहनों का हक बताया पर सरकार ने नहीं माना। नवम्बर, 1839 में छोटी रानी ने सरकार से आवेदन किया कि उसके 4 नवम्बर, 1839 को पुत्र पैदा हुआ है। वह कहलूर की गद्दी का हकदार है। फतेह प्रकाश ने बहुत प्रयत्न किया कि कहलूर की गद्दी उसकी बहनों या उसकी छोटी बहन के पुत्र को मिले परन्तु सरकार ने इसे अस्वीकार कर दिया। फतेह प्रकाश के कहलूर के आपसी विवाद में हस्तक्षेप करने के कारण सरकार ने यह निर्णय लिया कि या तो सिरमौर के घूण्ड और भगरवाली परगनों को सरकारी क्षेत्र में मिला दिया जाए या उस पर पच्चीस हजार का दण्ड लगाया जाए।

फतेह प्रकाश ने 1838 ई. में पहले अफगान युद्ध के समय सरकार को अपनी सहायता की पेशकश की और फिर 1845 के पहले सिक्ख युद्ध में धीरज सिंह के नेतृत्व में एक सैनिक टुकड़ी भेजी जो हरि-के-पटन में लड़ाई में शामिल हुई। 1850 ई. में फतेह प्रकाश की मृत्यु हो गई।

रघुवीर प्रकाश (1850-1856)

शमशेर प्रकाश (1856-1898) जब शमशेर प्रकाश गद्दी पर बैठा तो उस समय उसकी आयु केवल दस वर्ष की थी। इसलिए शिमला की पहाड़ी रियासतों के सुपरिन्टेन्डैन्ट विलियम हेय ने प्रशासन को चलाने के लिए 19 फरवरी, 1857 को एक कमेटी बनाई, जिसमें मेहता देवी दत्त और मोती राम भण्डारी मुख्य प्रशासक नियुक्त किए गए। जब सरकारी कोष की जाँच-पड़ताल की गई तो उसमें सरकारी धन की बहुत कमी पाई गई। इससे सरकार को अधिकारियों और कर्मचारियों की ईमानदारी पर सन्देह हो गया। अतः सरकार ने उससे प्रति मास आय और व्यय का ब्योरा माँगा। मेहता देवी दत्त और मोती राम भण्डारी अधिक शिक्षित नहीं थे, इसलिए प्रशासन का कार्य ठीक प्रकार से न चला पाए। जब स्थिति बहुत बिगड़ गई तो शिमला की रियासतों के सुपरिन्टेन्डैन्ट ने राजा के ही परिवार के कँवर सूरजन सिंह और वीर सिंह को प्रशासकों के सलाहकार नियुक्त किया और न्याय का कार्य भी उन्हें दे दिया।

1857 ई. को मेरठ से आरम्भ हुई क्रांति के समय शिमला पहाड़ी रियासतों के सुपरिन्टेन्डैन्ट ने 22 मार्च, 1857 को सिरमौर के कुँवर लोगों को लिखा कि वे शरणार्थियों के जान-माल का ध्यान रखें। कुँवर वीर सिंह स्वयं 60 सैनिकों को लेकर शिमला में सहायता के लिए पहुँचा। सैनिकों की सहायता के लिए कुछ धन भी दिया। विद्रोह की समाप्ति पर सरकार ने कुँवर सूरजन सिंह को खिल्लत दी और राजा शमशेर प्रकाश को सात तोपों से सम्मानित किया। 1861 में सरकार ने कुँवर सूरजन सिंह को राज्य के कार्यभार से मुक्त कर दिया और राजा शमशेर प्रकाश को 1962 में वयस्क होने पर राज्य के पूर्ण अधिकार दे दिए।

राजा ने नीति बनाई कि राज्य के प्रशासन को अंग्रेजी सरकार की प्रशासन प्रणाली के आधार पर चलाया जाए। इसके लिए 1859 में सारे भारत का भ्रमण किया और प्रशासन तथा इसकी कार्यविधि का पूरे तौर से ज्ञान प्राप्त किया। उसने सबसे पहले उर्दू को राज्य के काम-काज की भाषा बनाया। इससे पहले सिरमौरी लिपि में राज्य का पत्र-व्यवहार होता था। राजा ने रियासत के प्रशासन को सुदृढ़ किया और उसमें कई अन्य सुधार किए। राज्य में भारतीय दीवानी और फौजदारी के कानून लागू किए। न्यायालय शुल्क (कोर्ट फीस) के कागज विलायत से छपवाकर मँगवाए गए। इस समय तक समस्त राज्य 12 वजीरियों में बँटा हुआ था और ये वजीरियाँ प्रत्येक वजीर के अधीन होती थीं। राजा ने इन्हें पुनः संगठित करके चार तहसीलों में विभक्त किया और इन तहसीलों में सरकारी काम-काज को चलाने के लिए तहसीलदार नियुक्त किये। इन तहसीलों में गोलदारों के स्थान पर थानेदार नियुक्त किए गए।

वनों की देखभाल तथा इसे ठीक ढंग से चलाने के लिए वन विभाग को भी पुनः संगठित किया गया। इससे राज्य की आय बढ़ने लगी।

राजा ने राज्य की सेना को दोबारा सुव्यवस्थित किया। पैदल सेना को 100 से 300 तक बढ़ाया और वाट नामक एक अंग्रेज को सैन्य प्रशिक्षण देने के लिए रखा। घुड़सवार फौज के लिए एक सिरमौरी और एक पूर्विया तैयार किए। 1872 में उसने भारतीय सेना के एक अवकाश प्राप्त अंग्रेज को सिरमौर सेना का कमान-अधिकारी नियुक्त किया। इसने कुछ ही समय में सिरमौर में चार सौ कुशल पैदल सैनिक और डेढ़ सौ कुशल सवार प्रशिक्षित कर दिए। 1880 में राजा ने अंग्रेजों की अफगान लड़ाई में सहायता हेतु कर्नल आर.सी. व्हीटिंग की कमान में दो सौ सैनिक भेजे। 1888 ई. में राजा ने 'इम्पीरियल सर्विस ट्रुप्स' नाम की एक सैनिक टुकड़ी तैयार की। इसमें 5 पैदल, 13 सैपर और दो कम्पनी ऑफ पाईनियर थी। बाद में 1889 में इन इम्पीरियल सर्विस सैपज को

माईनर्ज में बदल दिया गया। इन्होंने 1897-98 की तिरहा लड़ाई में भी भाग लिया। इनकी कमान राजा के छोटे पुत्र मेजर वीर विक्रम सिंह के पास थी। बाद में वीर विक्रम सिंह को सरकार ने ऑर्डर ऑफ दी इण्डियन एम्पायर से सम्मानित किया और कप्तान की पदवी प्रदान करके बंगाल सैपर के साथ लगा दिया।

1890 में राज्य के कार्यालय में अंग्रेज ी भाषा का प्रयोग होने लगा। अब कार्यालय का नाम 'अजलासे खास' से बदल कर 'हैड ऑफिस' कर दिया गया और प्रत्येक विभाग के लिए सचिव नियुक्त किए गए।

सन् 1872 ई. में राजा शमशेर प्रकाश ने गवर्नर जनरल से अपील की कि अंग्रेज सरकार 21 सितम्बर, 1815 की सनद से वह शर्त निरस्त कर दे जिसके द्वारा सिरमौर के राजा को किसी दीवान या वजीर की नियुक्ति करने या राज्य के प्रशासन में किसी प्रकार का फेरबदल करने से पूर्व अंग्रेज सरकार की अनुमति आवश्यक है। गवर्नर जनरल ने इस अनुरोध को मान लिया।

शमशेर प्रकाश ने 1878 ई. में पहली बार जमीन का बन्दोबस्त करवाया। यह बन्दोबस्त लाहौर के मुन्शी नन्दलाल की देखरेख में किया गया। मुन्शी फतेह सुपरिंटेंडेंट बन्दोबस्त नियुक्त हुआ। जब बन्दोबस्त का कार्य गिरी नदी पार के रेणुका क्षेत्र में आरम्भ हुआ तो वहाँ के लोगों ने इसका विरोध किया। सारे इलाके में यह समाचार फैल गया कि सरकारी कर्मचारी लोगों की जमीन हड़पने और उन पर कर लगाने आए हैं। इससे लोगों के मन में भय छाने लगा। यह भी अफवाह फैल गई कि जिस-जिस गाँव में कर्मचारी जाते हैं, वहाँ लोगों के घरों से भेड़, बकरी, लकड़ी, अन्न आदि जबरदस्ती छीनकर मौज-मजा उड़ा रहे हैं और लोगों को तंग भी कर रहे हैं। जो कोई भी इनके काम में हस्तक्षेप करता है या बेगार करने से इनकार करता है उसे कैद करके उसकी पिटाई की जाती है। इससे संगड़ाह के सारे क्षेत्र में डर सा फैलता जा रहा था। लोग इस अन्याय के विरुद्ध अपनी आवाज उठा रहे थे। लोग निरक्षर तथा परम्परागत प्रणाली के अभ्यस्त थे। बन्दोबस्त उनके लिए नई प्रणाली थी, जिसको वह शक की दृष्टि से देखते थे। उनको भय था कि इससे न केवल उनके खेत सरकार अपने हाथ में लेकर उन्हें भूमिहीन कर देगी अपितु उन पर लगान बढ़ाने की भी कार्यवाही करेगी।

इस अन्याय के विरुद्ध जनता को एकसूत्र में पिरोने का जिम्मा संगड़ाह के नम्बरदार उछबू और प्रीतम सिंह ने अपने ऊपर लिया। ये दोनों व्यक्ति इलाके में बहुत लोकप्रिय एवं प्रभावशाली थे। उनकी अध्यक्षता में विरोध की योजना को कार्यान्वित किया जाने लगा। कृषकों ने अपने खेतों की पैमाइश कराने से इनकार कर दिया तथा बन्दोबस्त के कर्मचारियों को खेतों में ही नहीं जाने दिया। इस प्रकार अधिकारियों और किसानों में तू-तू मैं-मैं होते-होते हाथापाई की नौबत आ गई। इस घटना ने झगड़े का रूप तब लिया जब उस इलाके के तहसीलदार मुन्शी जीत सिंह ने ताव में आकर गाली-गलौच करना शुरू किया। अफसरशाही के मद में आकर उन्होंने एक दो किसानों को पीटा भी। इससे वहाँ खड़ी भीड़ विक्षुब्ध हो उठी और बन्दोबस्त के कर्मचारियों को पकड़ कर कैद कर लिया और दूसरे कर्मचारियों को भगा दिया। पिटे और भागे हुए कर्मचारी नाहन पहुँचे तथा सारी घटना का हाल राजा के पास पहुँचाया। राजा शमशेर प्रकाश ने उछबू और प्रीतम सिंह को नाहन आकर बातचीत करने के लिए बुलाया, परन्तु विद्रोही इसके लिए तैयार न थे। उन्हें विश्वास था कि यह सब उनके नेताओं को बन्दी बनाने की चाल है। राजा के पास जब यह सूचना पहुँची कि विद्रोही नाहन आने के लिए तैयार नहीं हैं तो राजा ने सशस्त्र पुलिस की एक टुकड़ी विद्रोह को कुचलने और उछबू तथा प्रीतम सिंह को पकड़ने के लिए संगड़ाह भेजी। साथ ही इस घटना की सूचना सुपरिन्टेन्डेन्ट शिमला हिल स्टेट्स के पास भी भिजवा दी।

सशस्त्र पुलिस के पहुँचने पर लोगों ने किलाबन्दी कर दी और हथियारों से लैस होकर मुकाबले के लिए आ खड़े हुए। दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं तथा जनता की ओर से पत्थरों की बौछार की जाने लगी, जिससे कई लोग घायल हुए और कई पुलिस कर्मचारियों को चोटें आईं। लोगों ने पुलिस टुकड़ी को आगे बढ़ने से रोक दिया। उछबू और प्रीतम सिंह इस अन्याय की सूचना देने शिमला चले गए।

जैसे ही वे सुपरिन्टेन्डेन्ट शिमला हिल स्टेट्स से मिलने उनके कार्यालय में पहुँचे वैसे ही उन्हें बन्दी बना लिया गया। उन्हें बोलने का अवसर भी नहीं दिया गया। अंग्रेज अफ सर राजपक्षपाती था तथा उसे राजा सिरमौर से इस घटना की सूचना पहले ही मिल चुकी थी। अतः उछबू और प्रीतम सिंह को राजद्रोही घोषित करके हथकड़ियाँ पहनाकर राजा के पास नाहन भेज दिया गया। जैसे ही इन नेताओं के पकड़ने की सूचना संगड़ाह पहुँची लोग डर से भाग गए। तभी पुलिस का एक दल संगड़ाह आंदोलन- कारियों को पकड़ने भेजा गया। बहुत से आंदोलनकर्ता पकड़े गए तथा उनके हथियार पुलिस ने अपने अधिकार में ले लिए।

बन्दी आंदोलनकारियों को नाहन लाकर जेल भेज दिया गया। नाहन में मुकद्दमा चलाकर उन्हें सज एँ दी गई।

दूसरा बन्दोबस्त 1887 ई. में उत्तर प्रदेश के सेवानिवृत्त परमेश्वरी सहाय की देख-रेख में हुआ। इस बन्दोबस्त के समय किसी प्रकार का आंदोलन नहीं हुआ।

1861 ई. में किसी कार्य के लिए राजा शमशेर प्रकाश का रुड़की जाना हुआ। वहाँ पर राजा ने लोहे से तैयार होने वाली वस्तुओं का कारखाना देखा। राजा ने नाहन वापिस आकर सिरमौर के एक लुहार को रुड़की लोहे के कारखाने में काम सीखने के लिए भेजा। बाद में राजा ने 1867 में नाहन में 'नाहन फाउण्डरी' नाम से लोहे का कारखाना खोला और इसमें कई प्रकार का लोहे का

सामान तैयार किया जाने लगा। कुछ समय के पश्चात् दो यूरोपियनों को कारखाना चलाने के लिए नियुक्त किया।

लोहे की पूर्ति के लिए राजा ने गिरी पार के क्षेत्र में लोहा निकालने की योजना बनाई परन्तु बाद में यह अनुभव किया गया कि लोहा बाहर से मँगवाने पर सस्ता पड़ता है इसलिए उसे छोड़ दिया गया।

1864 ई. में राजा ने गिरी नदी से पौंटा नदी के लिए नहर बनाने की योजना बनाई। इस काम पर जिन व्यक्तियों को लगाया गया, वे अनुभवी नहीं थे। एक लाख रुपये के लगभग खर्च करने के पश्चात् भी नहर ठीक प्रकार से नहीं बन पाई, जिससे अन्त में इस कार्य को बंद करना पड़ा।

क्यारदा दून की घाटी की जमीन बंजर और घने जंगलों से भरी थी। राजा ने इस क्षेत्र को बसाने के लिए 1881 में होशियारपुर, जालंधर, रोपड़ जिलों से बाहती, सैन्सी और जाट लोगों को लाकर क्यारदा दून घाटी में बसाया। इन्हें राजा ने बड़ी उदार शर्तों पर भूमि दी। इससे खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल दोगुना हो गया।

भारत में लोक प्रशासन का आरम्भ 1862 से हुआ। राजा शमशेर प्रकाश ने 1868 में सबसे पहले नाहन म्यूनिसिपल कमेटी बनाई। 1884 ई. में डिसट्रिक्ट बोर्ड की स्थापना की गई। एक स्रोत के अनुसार इसे 1886 में स्थापित किया गया था। डिसट्रिक्ट बोर्ड का मुख्यालय नाहन में था। तहसीलों में भी लोकल बोर्ड बनाये गये। बोर्डों के अधीन शिक्षा, अस्पताल और कुछ निर्माण का कार्य था।

अंग्रेज सरकार ने नाहन में डाकघर खोला। इसमें सप्ताह में एक बार डाक आती थी। राज्य भर के समाचार बहुत देर से आते जाते थे इसलिए राजा ने अपने तौर पर प्रत्येक तहसील में 1887 में डाकघर खोले। 1885 में उसने पाँच सौ रुपये वार्षिक ठेके पर सरकार से नाहन में तारघर खुलवाया।

राजा ने लोगों के लिए 1872 में एक डिस्पैंसरी खोली, जिसका 1898 में एक पूरे सिविल अस्पताल के रूप में विस्तार किया गया। 1896 में महिलाओं के लिए एक अलग अस्पताल भी खोला गया।

शिक्षा के लिए राजा ने नाहन में एक मदरसा खोला और उसमें उर्दू के योग्य शिक्षक रखे। 1886 ई. में इस मदरसे को मिडल स्कूल में स्तरोन्नत किया। स्कूल में अंग्रेज ी की पढ़ाई भी आरम्भ कर दी गई और 1890 ई. में अंग्रेज ी को सरकारी काम-काज की भाषा बना दिया गया।

राजा शमशेर प्रकाश ने 1893 ई. में नाहन में एक बैंक खोला, जिसका नाम नाहन नैशनल बैंक रखा। बाद में 1944 में इस बैंक का नाम बैंक आफ सिरमौर रखा गया।

राजा शमशेर से पूर्व सिरमौर में न्याय का काम पुराने समय से चले आ रहे तरीके से निपटाया जाता था। न्याय के सभी मामले राजा के पास जाते थे। शमशेर प्रकाश ने न्याय प्रणाली को अंग्रेज ी पद्धति पर चलाने के उद्देश्य से दीवानी और फौजदारी न्यायालय स्थापित किए और न्याय के उच्चतम अधिकार राजा के पास ही रखे। राजा के अन्य कार्यों में व्यस्त होने के कारण शमशेर प्रकाश ने 1891 ई. में हाईकोर्ट की स्थापना की। यह बैंच कोर्ट बनाया गया। इसमें दो न्यायाधीश थे। मतभेद होने की स्थिति में राजा की राय ली जाती थी। अपराधी को प्राण दण्ड देने की स्थिति में राजा को भी दिल्ली के कमिश्नर से अनुमति लेनी पड़ती थी।

42 वर्ष राज्य करने के पश्चात् अक्तूबर, 1898 ई. को राजा शमशेर प्रकाश की मृत्यु हो गई।

सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश (1898-1911): भारतीय सरकार ने 1902 ई. में सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को पाँच वर्ष के लिए इम्पीरियल लैजिस्लेटिव कॉउंसिल का सदस्य बनाया। 1906 ई. में राजा को मृत्युदण्ड देने का अधिकार भी दे दिया। इससे पूर्व इस प्रकार का दण्ड देने के लिए अंग्रेज सरकार की स्वीकृति लेनी पड़ती थी।

अमर प्रकाश (1911-1933) : पहले महायुद्ध के समय राजा अमर प्रकाश ने सेना तथा धन देकर सरकार की बड़ी सहायता की थी। इससे प्रसन्न होकर सरकार ने अमर प्रकाश को 3 जून, 1915 को के.सी.एस.आई., 1918 में पीढ़ी दर पीढ़ी के लिए महाराजा और 1921 में के.सी.आई.ई. की उपाधियों से सम्मानित किया। राजा अमर प्रकाश के राज्यकाल में 1928 ई. में जमीन का बंदोबस्त आरम्भ हुआ, जो सितम्बर, 1931 ई. में पूरा हुआ। 13 अगस्त, 1933 ई. को राजा अमर प्रकाश की वियाना में मृत्यु हो गई।

राजेन्द्र प्रकाश (1933-1948, मृ. 1960) : 1937 ई. में राजा राजेन्द्र प्रकाश ने सिरमौर कांस्टिच्यूशन एक्ट 1/1994 सं. पास किया। इसके द्वारा एक मंत्री परिषद् बनाई गई। इस मंत्री परिषद् का काम राजा की प्रशासन चलाने में सहायता करना था। राजा इस परिषद् का प्रधान था। 10 मई, 1943 को पंजाब के सेवानिवृत्त व्यक्ति मनमोहन को मुख्यमंत्री और परिषद् का उप-प्रधान बनाया। इस परिषद् को कानून बनाने के भी अधिकार दिये गये। 1945 ई. में राजा ने फिर से गवर्नमैन्ट सिरमौर एक्ट 2002 पास किया। इसके द्वारा एक ऐग्ज़िक्यूटिव कॉउंसिल बनाई गई, जिसका काम प्रशासन में राजा की सहायता करना था। उसी वर्ष इस परिषद् के लिए चुनाव हुए और 28 पौह 2003 सं. 1946 को महाराजा के भाषण के साथ इसका उद्घाटन हुआ। बाद में परिषद् ने अध्यक्ष और उपाध्यक्ष भी चुने।

15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल के गठन के साथ सिरमौर हिमाचल का एक जिला बना।

उप संपादक, गिरिराज कार्यालय, शिमला-171 005

चांदी की वह छड़ी

रजनी जा रही थी, उषा अभी आने को थी। वह छोटे से दरवाजे को लांघकर भवन में प्रविष्ट हुआ। रेणुका के चरणों में शीश झुकाकर वह बहुत देर तक बैठा रहा। भवन के आसपास बैठे लोग उसे चुपचाप निहारते रहे। दरवाजे के बाहर छोटे से प्रांगण में भवन के सामने छोटी सी भीड़ भी मौन खड़ी रही। धीरे-धीरे उसने शीश उठाया। पंच-दीपक के प्रकाश में उपस्थित लोगों ने देखा कि उसका चेहरा अजीब चमक से तमतमा रहा है। वह गंभीर और शांत है। वह अब दरवाजे की तरफ मुंह करके रेणुका की प्रतिमा के दायीं ओर बैठ गया। उसने उधर आचमन किया, उधर बाहर एक साथ दो नक्कारों पर दो सधे हुए हाथों ने लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़ों से चोट की। दो और पर्वतीय साज गूंज उठे। वह कुछ देर टिकटिकी बांधे दरवाजे की ओर देखता रहा, फिर धीरे- धीरे कांपने लगा। लोगों ने कहा, 'आ देवा, आ देवा।' मां रेणुका के मंदिर में, उस ब्रह्म मुहूर्त में भगवान परशुराम के उस पुजारी में छाया आने वाली थी। भगवान परशुधारी राम पुजारी के कंठ से बोलने वाले थे। दुखी मानव अपनी-अपनी पीड़ा कहने को व्याकुल थे। आज से लगभग दो सौ वर्ष पुरानी यह बात है। घंटियां खनक रही थीं। शंख बज रहे थे। साज थिरक रहे थे। वह पुजारी कांप रहा था। कांपता ही रहा। फिर उसका चेहरा और गंभीर हो गया। लाल हो गया। कहो, क्यों बुलाया आपने मुझे?' भगवान बोले।

साज थम गए। शंख बोलने बंद हुए। घंटियां रुक गईं। पहली फरियाद हुई, "एक पुत्र की लालसा, केवल एक पुत्र की। मेरे घर में पुत्र जन्म ले, ऐसा वरदान दो, देव।" चावलों के कुछ दाने उठाकर उसने उस वृद्ध को देते हुए कहा, "होगा, अवश्य होगा, एक पुत्र- मेरा वरदान है।" दूसरी पीड़ा उभरी, एक युवक ने कहा, "देव, मेरी मां चार साल से बीमार है, उसे जीवन दो, सेहत दो। कुल्हाड़े वाले पिता।" भगवान बोले, "वह ठीक होगी, परंतु मैं फिर उसे बैकुंठ दूंगा।" युवक की मां को जीवन-मरण के चक्कर से मुक्त कर दिया था मुक्तिदाता ने। अब तीसरी अर्ज थी। परंतु देव नहीं बोले। बार-बार "सुनो देव, सुनो देव" कहती रही दरवाजे के पास खड़ी वह महिला। परंतु पुजारी नहीं बोला। परशुराम की छाया नहीं बोली। पुजारी कांपता रहा। कांपता रहा। उसका चेहरा फीका पड़ा। पसीने से तरबतर हो गया पुजारी। मंदिर की छत की ओर दोनों हाथ उठा दिए उसने। देव मौन थे, भीड़ हैरान थी। एकदम वातावरण शांत, उदास और हैरानी से डूबा हुआ था। पास के वृक्षों पर पक्षी चहचहाने लगे। शीतल पवन बहने लगी। उषा आने को थी, सुबह होने जा रही थी। देव मौन थे। एक हुंकार के साथ मौन बिखर गया, "आप मौन क्यों हो गए थे देव" - महिला ने पूछा। "दूर समुद्र में एक सौदागर का माल से लदा जहाज डूब रहा था। सौदागर आज तक मुझे पूजता आया है। आज उसने इस कष्ट में मेरा नाम पुकारा, मेरा आह्वान किया। समुद्र में गया था मैं जहाज उबारने।" छाया बोली या कहिए नारायण बोले थे। कंस, रावण और शिशुपाल सदा देवकी, विभीषण और रंगनाथ के साथ-साथ जन्म लेते आए हैं। बाहर जोर से हंसा एक ग्रामीण बोला, "हूं गप्प की भी हद होती है, समुद्र में था वह" - और फिर जोर से हंसा वह। देव मुस्कराए, "विश्वास नहीं तो देखो" और यह कहकर, पुजारी ने ऊपर उठाए दोनों हाथ नीचे छोड़ दिए। रेणुका के भवन में, घुटने-घुटने पानी भर गया। पानी अभी भी पुजारी की आस्तीन से टपक रहा था। देव बोले, "चख कर देखो इसे खारा है यह जल, समुद्र का जल, जहां मेरे वस्त्र सब भी भीग गए।"

ग्रामीण घबरा गया। सब एक साथ ऊंचे स्वर में बोले, "रक्षा! देव रक्षा। आपका अपमान इससे भूल में हुआ। क्षमा देव, क्षमा।" देव फिर बोले, "देखना अगले वर्ष वह यात्री, वह सौदागर नंगे पांव यहां आएगा रेणुका तीर्थ में, मेरे मंदिर तक, चांदी की छड़ी लेकर मुझे अर्पित करने।" छाया चली गई।

पुजारी को चेतना आई। गरनी समाप्त हुई। लोग अपने- अपने घरों को चले गए। अगले वर्ष सचमुच बंबई की ओर से नंगे पांव रेणुका पहुंचा एक सेठ, अपने नौकरों सहित! चांदी की छड़ी उसने अर्पित की परशु-प्रतिमा के चरणों में।

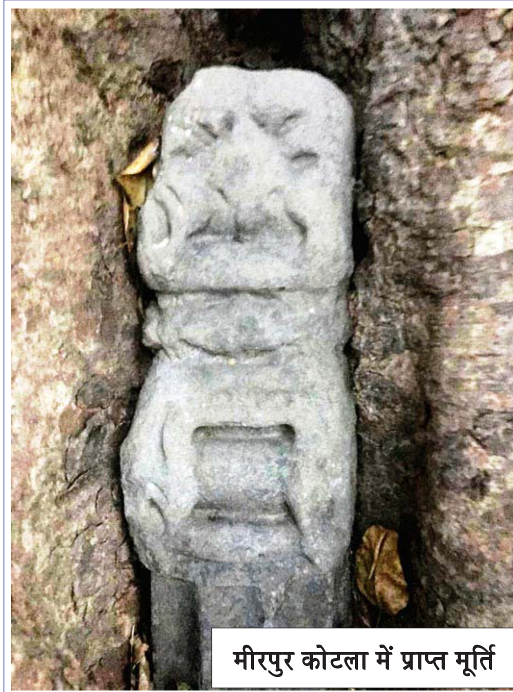
आज भी रेणुका मेले में भगवान परशुराम की पालकी के साथ पुजारी के कंधे पर रखी यह छड़ी उस दिन की याद दिलाती है जब करुणासागर सागर में चले गए थे जहाज उबारने।

पुरातात्त्विक महत्त्व पर एक दृष्टि

दून घाटी में इतिहास का आरंभिक चरण

◆ ओमचंद हांडा

पुरातत्त्व की दृष्टि से पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र, विशेषकर हिमाचल प्रदेश, का अधिकतर भाग अछूता ही रहा है। यहाँ केवल तराई क्षेत्र में धरती के ऊपर प्राप्त पुरावशेष, शिलालेख और कुछ प्राचीन मंदिरों के अतिरिक्त कोई बेहद कार्य नहीं हुआ है, जब कि पुरातात्विक खोज कर इतिहास की गहराइयों को जाना जा सकता है। प्रदेश में पुरातत्व के क्षेत्र में असीम संभावनायें विद्यमान हैं जिसका विशेष कारण यह है कि जहां देश के मुख्य भाग में शहरी और औद्योगिक विकास और खेती के विस्तार तथा अन्य कारणों से पुरासंपदा लगातार नष्ट होती जा रही है, वहीं हिमाचल जैसे पहाड़ी क्षेत्र में आज भी स्थिति उसी प्रकार से यथावत है जैसी कि वह प्रागैतिहासिक काल या उससे पहले भी रही होगी। उस सन्दर्भ में सिरमौर मंडल का दून क्षेत्र अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। यह इसलिये नहीं कि इस क्षेत्र से प्रागैतिहासिक काल और उससे पहले के जीव-जंतुओं के पुरावशेष और जीवाश्म प्राप्त हुये हैं जिनका समय वर्तमान से दस से पचीस लाख वर्ष पुराना माना गया है, परन्तु इसलिये भी कि इतिहास के आरंभिक चरण के भी अनेक अवशेष दून के परिधि-क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं।


मीरपुर कोटला में प्राप्त मूर्ति

कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि ऋग्वेद तथा अन्य वेदों की रचना सहारनपुर और अम्बाला के उत्तर में तराई क्षेत्र में हुई थी, जिसका आधार इस क्षेत्र में पैदा होने वाली वनस्पतियों का उन ग्रंथों में हुए वर्णन को माना जाता है। इस सन्दर्भ में पांवटा के निकट ही, यमुना और तौंस नदियों के संगम पर कालसी गाँव में स्थित सम्राट अशोक का शिलालेख भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। ब्राह्मी लिपि का यह शिलालेख सम्राट अशोक के मानवीय सन्देश का उद्घोषक है। इसके अतिरिक्त, पांवटा के परिधि-क्षेत्र में ही एक गाँव 'टोपरा' या 'टोपर' का भी उल्लेख मिलता है। एलेग्जेंडर कनिंघम के अनुसार 'टोपरा' या 'टोपर' आधुनिक पांवटा का ही प्राचीन नाम है। वह स्थान उस काल में सलोरा जिला में स्थित था, जो खिजराबाद से तो अधिक दूर नहीं था, परन्तु दिल्ली से 90 कोस की दूरी पर था। इस स्थान पर भी पाषाण के स्तम्भ पर सम्राट अशोक का शिलालेख था। उस स्तम्भ को सामान्य अब्द 1356 में फिरोजशाह तुगलक यमुना के जलमार्ग से दिल्ली ले गया था।

पांवटा के समीप ही जगति ग्राम नामक स्थान पर सम्राट हर्षवर्धन द्वारा निर्मित यज्ञशाला स्थित है। यह विशाल यज्ञशाला वैदिक विधान के अनुसार उड़ते गरुड़ की आकृति में है। परम्परा के अनुसार इस गरुड़ाकार यज्ञशाला का निर्माण सम्राट शिलावर्मन ने अश्वमेध यज्ञ के अनुष्ठान के लिये करवाया था। यज्ञशाला के निर्माण में बड़े आकार की ईंटों का प्रयोग हुआ है। उन इंटों पर ब्राह्मी लिपि में कुछ उत्कीर्णित था, उनमें से केवल दो ही अक्षर - -जतो. ..ग --- पढ़े जा सकते हैं, जो संभवतः जगतिग्राम के नाम को ही निर्दिष्ट करते हैं। यहाँ यह स्पष्ट करना भी वांछित है कि सम्राट हर्षवर्धन का एक नाम शिलादित्य भी रहा है, और संभवतः शिलावर्मन भी रहा होगा।

पांवटा और उसके आसपास के क्षेत्र के बारे में चीनी यात्री ह्यूनसांग ने विस्तार से लिखा है। उस समस्त क्षेत्र को उसने सु-लो-किन-नो , अर्थात् 'स्रुघन' कहा है। 'स्रुघन' राज्य के बारे में ह्यूनसांग कहते हैं, " कि पूर्व दिशा में गंगा नदी इसकी सीमा बनाती है। उत्तर में इसके पीछे विशाल पर्वत अवस्थित है। यमुना नदी (चेन-मु-नो) इसकी सीमा के साथ बहती है। 'स्रुघन' राज्य

की राजधानी का विस्तार 20 ली है" । पुराविदों के अनुसार उस राज्य की राजधानी कालसी गाँव के आसपास ही रही होगी और संभवतः पांवटा (प्राचीन 'टोपरा' या 'टोपर') भी उसी राज्य का भाग रहा होगा।

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि यमुना के किनारे स्थित यह नगर मैदानों और पहाड़ों के मध्य एक महत्त्वपूर्ण प्रवेश द्वार था और पहाड़ी उंचाई पर स्थित कालसी यात्रियों के लिये एक पड़ाव रहा होगा, जिस संभावना को कालसी का शिलालेख भी स्पष्ट करता है। सम्राट अशोक ने शिलालेख अपने राज्य की सीमा पर यात्रियों के विश्राम-स्थल पर ही उत्कीर्णित किये थे जहाँ से राज्य के बाहर को रास्ते निकलते थे।

परन्तु क्यारदा-दून का पुरातात्विक महत्त्व केवल प्राचीन इतिहास की घटनाओं तक ही सिमट नहीं जाता। वास्तव में उत्तर भारत की मध्यकालीन राजनैतिक गतिविधियों में क्यारदा-दून का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उसका कारण इस क्षेत्र के विस्तृत और घने साल के जंगल रहे हैं। दिल्ली के सुल्तानों और बादशाहों के परिवारों में सत्ता को हथियाने के लिये सदा ही भाइयों और अन्य महत्वाकांक्षी दावेदारों के मध्य षड्यंत्र तो होते ही रहे हैं। जब कोई छल-कपट से सत्ता हथिया लेता था तो हताश और हारे हुए प्रतिद्वंदी अपनी जान बचाने के लिये क्यारदा-दून के घने जंगलों में छिप जाते थे। इस प्रकार क्यारदा-दून उन लोगों के लिये एक शरण-स्थल बन गया था। उधर अपने प्रतिद्वंद्वियों को समाप्त करने के लिये दिल्ली के शासक अपनी फौजें भेज देते थे। परिणामस्वरूप क्यारदा-दून मध्य काल में लगातार ही विनाशलीला को झेलता रहा है। अतः आज उस क्षेत्र में मध्य-कालीन या उससे पहले का कोई भी निशान धरती के ऊपर नहीं मिलते।

इस लेख के लेखक ने क्यारदा-दून के जंगलों में सघन पुरातात्विक सर्वेक्षण एवं शोध कार्य किया और धरती के गर्भ में छिपे अनेक स्थान उद्घाटित किये। परन्तु उन पर विधिवत कार्य अभी तक नहीं हुआ है। उन स्थलों में से पुरातात्विक महत्त्व के कुछ स्थलों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत हैं।

मीरपुर कोटला

नाहन से दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर अवस्थित मीरपुर कोटला पुरातात्विक दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण स्थल है। सन 1988 में जब इसे खोजा गया था उस समय यहां विहड़ जंगल में स्थित केवल गुज्जरों का एक छोटा-सा अलग-थलग पड़ा गाँव था। इस गाँव को केवल नारायणगढ़ (हरियाणा) से पैदल चलकर ही पहुंचा जा सकता था। गाँव के एक कोने पर एक टीला था उस पर घनी झाड़ियाँ और पुराने पेड़ थे, और थे विषैले जीव-जंतु। उस टीले की यथासंभव सफाई करने पर यह स्पष्ट हो गया कि वहां किसी समय किला रहा होगा। खोजबीन उपरांत वहां पत्थर की अनेक मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई थीं। क्योंकि बलुआ पत्थर की वे मूर्तियाँ नमी के कारण काफी क्षरित हो चुकी थीं, अतः उनके बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता था। वे संभवतः सामान्यब्द 12-13 शताब्दी के आस-पास की ही रही होगी। उनमें से कुछ खंडित मूर्तियाँ अब एक पूजा-स्थल 'खेड़ा पीर' में भी रखी हैं और कुछ पुराने बड़ वृक्षों की जड़ों के बीच फंसी हैं। तथापि, वहां की सबसे महत्त्वपूर्ण खोज थी कुषाण-कालीन पक्की इंटें। उससे यह तो स्पष्ट हो गया कि यह विशाल किला सामान्यब्द के आरंभिक समय के आस-पास का है।

उसी सर्वेक्षण के अन्तराल में पहली बार कंवर अजय बहादुर सिंह जो सिरमौर रियासत से जुड़े हैं, से भी नाहन में मिलने का सौभाग्य मिला था। उनके भव्य निवास-स्थान के अनेक कक्ष मिश्रित पहाड़ी चित्र-शैली के भित्ति-चित्रों से अलंकृत थे। उस समय कंवर साहिब ने मुझे एक सिक्का भी दिया था। देखते ही स्पष्ट हो गया कि वह योद्धेय जनपद का सिक्का है। वह सिक्का उनके किसी जानकार को मीरपुर कोटला और नाहन के मध्य पैदल रास्ते पर मिला था। योद्धेय सिक्के समीपस्थ मैदानी क्षेत्र में तो अनेक स्थानों पर मिले है, परन्तु हिमाचल प्रदेश में योद्धेय जनपद के सिक्के का मिलना एक उपलब्धि थी, क्योंकि अभी तक काँगड़ा के अतिरिक्त योद्धेय सिक्का केवल यहीं मिला है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि राज्य संग्रहालय शिमला में मीरपुर कोटला के निकट से प्राप्त केवल वही सिक्का उपलब्ध है। एक मत के अनुसार युद्धजीवी योद्धेय जनपद और कुषाणों के मध्य क्रमिक खिंचातानी की स्थिति रही थी। संभव है कि कुषाणों के किले के निकट योद्धेय सिक्का मिलना उसी प्रकार की वैमनस्य की स्थिति का परिचायक हो। परन्तु एक ही सिक्के के आधार पर किसी प्रकार निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

इसी वर्ष (मार्च 2019) में लेखक को फिर वहां जाने का मौका मिला। परन्तु वहां जो-कुछ देखा उससे दुःख हुआ। मीरपुर कोटला अब एक औद्योगिक कस्बा बन चुका है। किले का काफी भाग अब मैदान बन गया है। वहां अब वे बीहड़ और पुराने वृक्ष भी नहीं थे। थी तो केवल कच्ची सड़क से उठती रुखी धूल। विकास की कीमत प्रकृति को विनाश के रूप में चुकानी पड़ रही है। आस-पास घूमने पर एक तथ्य स्पष्ट हुआ कि मीरपुर का कोटला (किला) कुषाणों के समय एक विशाल किला रहा होगा, जिसके भग्नावशेष हर कहीं दिखाई दे रहे थे। मीरपुर का कोटला हिमाचल प्रदेश में सबसे प्राचीन किला रहा होगा, क्योंकि हिमाचल प्रदेश में अन्य स्थानों में अभी तक उतने प्राचीन काल के किले का कोई भी प्रमाण नहीं मिला है।

मीरपुर कोटला के निकट ही एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा भी है, जिसे टोका साहिब के नाम से जाना जाता है। इस गुरुद्वारे के साथ ही एक प्राचीन कुआं है, जिसका व्यास 3.50 मीटर है। इस कुएं के भीतर गहराई में गुरुमुखी और फारसी का एक लेख उत्कीर्णित

हैं। उसके अनुसार यह कुआं और गुरुद्वारा संवत् 1880, अर्थात् सामान्यब्द 1824 में बनाया गया था।

लोहगढ़ का किला

क्यारदा-दून के दक्षिणी छोर पर जहाँ दो बरसाती नाले पमुवाली और दस्कावाली, जिन्हें स्थानीय बोली में खाड़े या खोल कहा जाता है, आपस में मिलते हैं, उसी स्थान पर किसी समय एक विशाल दुर्ग अवस्थित था, जिसे उसकी अभेद्य बनावट के कारण लोहगढ़, अर्थात् 'लोहे का दुर्ग' कहा गया था। इस दुर्ग के निकट ही हिमाचल प्रदेश और हरियाणा राज्यों की सीमायें भी मिलती हैं। एक परंपरा के अनुसार इस दुर्ग का विस्तार लगभग 7000 एकड़ में फैला था, परन्तु अब वहां केवल छोटा-सा वीरान टीला है, जिस पर जंगली बेर की कंटीली झाड़ियाँ और कीकर तथा साल के पौधे हैं।

अपने वैभव-काल में यह किला दिल्ली के मुगल शासकों के आँख की किरकरी बना रहा। ऐसी मान्यता है कि इस किले का निर्माण गुरु हरगोबिन्द साहिब के आदेश पर भाई राय बंजारा ने करवाया था। इसका निर्माण कार्य सन 1620 में आरम्भ हुआ था और सन 1709 में लगभग 90 वर्ष बाद पूर्ण हुआ था। इस दुर्ग के निर्माण के बाद, इसे बन्दा-बहादुर ने सन 1710 में खालसा राज्य की राजधानी घोषित किया था। अनेक इतिहासकारों ने लोहगढ़ और मुक्लिशगढ़ को एक ही स्थान मान लिया है और उस कारण से लोहगढ़ के बारे में अनेक भ्रांतियां भी परम्परित हुई हैं। वास्तव में इन दोनों दुर्गों के बीच में लगभग 30 किलोमीटर का अंतर है।


जगति गांव से प्राप्त यज्ञशाला की ईंटें

खालसा राज्य के विस्तार के उद्देश्य से बन्दा-बहादुर मुगलों से लगातार लोहा लेते रहे और उसी क्रम में सन 1709 में खालसा सेना ने कस्बे पर अपना अधिकार कर लिया और उसी वर्ष सढौरा को भी अपने कब्जे में कर लिया। परिणामस्वरूप, मुगलों ने खालसा राज्य के विरुद्ध जिहाद छेड़ दिया। मई 1710 को खालसा सेना और मुगल सेना के मध्य चाप्पर-चीड़ी और सरहिंद में भीषण युद्ध हुए, जिसमें बन्दा-बहादुर की खालसा विजयी हुई। विजेता सेना के हाथ बहुत खजाना लगा। वह सारी धनराशि बन्दा-बहादुर के आदेश से लोहगढ़ में सुरक्षित रख दी गई। एक अनुमान के अनुसार केवल सरहिंद के युद्ध में ही खालसा सेना के हाथ दो करोड़ रुपये मूल्य का खजाना हाथ लगा था। बन्दा-बहादुर ने लोहगढ़ में गुरु नानक-गोबिंद सिंह के नाम से सिक्के ढाले और उन्हें प्रसारित भी किया। उन सिक्कों पर फारसी लिपि में निम्न आख्यान उत्कीर्णित किया गया था :

'सिक्का बरहर दो आलम तेग-इ-नानक वाहिब अस्त फतेह गोबिंद सिंह शाह-इ-शाहान फजल-इ-सचा साहिब अस्त'

इस स्थल के सर्वेक्षण के दौरान सन 1980 में विक्षिप्त लोहगढ़ टीले की एक खंदक में लेखक ने सिक्कों का धातु-मल खोजा था। उस खोज से यह स्पष्ट हुआ कि इस स्थान पर कभी सिक्कों की ढलाई होती होगी। उस स्थल पर यदि पुरातात्विक उत्खनन किया जाये, तो उस काल की पर्याप्त पुरासामग्री मिल सकती है जिससे उस समय के इतिहास के अनेक अनजाने तथ्य उद्घाटित हो सकते हैं।

लगातार मुगलों के आतंक से त्रस्त होने पर, सन 1715 के आस-पास बन्दा-बहादुर ने किसी सुरक्षित स्थान की खोज में लोहगढ़ को अलविदा कह दिया। कहते हैं कि वह गुप्त मार्ग से नाहन की ओर निकल गये थे। तदोपरांत, मुगलों और सिरमौर राज्य के शासक ने मिल कर लोहगढ़ को नष्ट करने के लगातार प्रयास किये। अंततः, लोहगढ़ को गिराने का कार्य एक मुसलमान कारकून मस्सा रंघड़ को दे दिया गया। लोहगढ़ दुर्ग को गिराने का कार्य सन 1717 में आरम्भ हुआ था और सन 1739 में पूर्ण हुआ। दुर्ग को गिराने से भारी मात्रा में ईंटे और इमारती पत्थर आदि सामान इकट्ठा हुआ था। उस सामान को बहुत दूर अनेक स्थानों ने बिखेर दिया गया था ताकि पुनः कोई उस दुर्ग का निर्माण नहीं कर सके। इतिहासकार बताते हैं कि अमृतसर में दरबार साहिब को अपवित्र करने पर मस्सा रंघड़ को सन 1739 में सुखा सिंह और महताब सिंह ने कत्ल कर दिया था।

जैतक का किला : एंग्लो-गोरखा युद्ध का साक्षी

जब किलों की बात चली है तो क्यों न सिरमौर के एक और ऐतिहासिक किले की बात भी कर ली जाये। यह किला क्यारदा-दून में नहीं है, परन्तु नाहन से उत्तर दिशा की ओर, रेणुका झील के मार्ग पर जमटा गाँव के निकट पहाड़ी पर अवस्थित था।

हिमालय की दक्षिण की ओर ढलती हुई पहाड़ी की एक 1480 मीटर ऊंची रीढ़ पर आज भी जैतक किले के पत्थरों के ढेर देखे जा सकते हैं। जैतक का किला किसने बनाया था, इस बारे में कुछ स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता। संभव है कि सिरमौर के राजाओं ने अपनी राजधानी की सुरक्षा के लिये उसका निर्माण किया होगा। परन्तु इतना स्पष्ट है कि यह किला सिरमौर राज्य पर गोरखों का अधिपत्य होने से पहले का था। एंग्लो-गोरखा युद्ध के समय सन 1814-1815 के अंतराल में कुछ महीनों तक यह किला गोरखों के सेनापति काजी रणजोर सिंह थापा और उसके लगभग 2,200 गोरखा सैनिकों के आधिकार में रहा था। जैम्स बैली फ्रेजर के अनुसार, इस किले को जीतने के लिये अंग्रेजी फौजों को बहुत प्रयत्न करना पड़ा था और उनके अनेक सैनिक इस पर अधिकार करने में हताहत हो गये थे। परन्तु सन 1815 में नेपाल राज्य और ब्रिटिश सरकार के मध्य संधि हो जाने पर गोरखों ने इसे खाली कर दिया था। इस प्रकार से सिरमौर राज्य गोरखों के अधिपत्य से मुक्त हुआ।

पुनः सिरमौर राज्य के अधिपत्य में आ जाने के बाद, जैतक किले को कारागार में परिवर्तित कर दिया गया। ऐसा भी माना जाता है कि कनैत जाति का एक लोकप्रिय खेल 'जैतक खेल' का नाम इसी किले के नाम पर है। आज उस स्थल पर केवल पत्थरों के सिवाय कुछ भी नहीं, परन्तु उन पत्थरों से इतना अनुमान अवश्य ही लगाया जा सकता है कि यहाँ कभी विशाल किला रहा होगा।



सिरमौर के भित्तिचित्रों पर एक दृष्टि

हमने कुछ पहले कंवर अजय बहादुर सिंह जी के बारे में चर्चा की थी और उसी सन्दर्भ में उनके निवास-स्थान में मिश्रित पहाड़ी शैली में बने कलापूर्ण भित्ति-चित्रों का भी उल्लेख किया था। परन्तु उनके निवास-स्थान के अतिरिक्त भी सिरमौर में अनेक स्थानों पर मंदिरों में मिश्रित पहाड़ी शैली के भित्ति-चित्र उकेरे गए थे। लेखक ने लगभग पांच-छः दशक पहले सर्वेक्षण के दौरान वे भित्ति-चित्र देखे भी थे और उनका प्रलेखन भी किया था। इस सन्दर्भ में जोहड़-जी के पुराने मंदिर, नाहन के पक्का-टैंक के शिवालाय, बड़े-चौक (नाहन) में जगनाथ मंदिर, पांवटा साहिब में देई साहिबा का मंदिर और त्रिलोकपुर में त्रिपुरा-सुंदरी का मंदिर आदि कुछ ऐसे धार्मिक स्थान हैं जिन की दीवारें भित्ति-चित्रों से सुसज्जित थीं। यह खेद की बात है कि सिरमौर की उस कला-परंपरा की ओर किसी भी कला-समीक्षक या लेखक का समुचित ध्यान ही नहीं गया और उधर धार्मिक उन्माद में कलाकृतिध्वंसन (pious vandalism) की विनाश लीला में वह सब कुछ नष्ट हो गया है। अनेक मंदिरों में तो पुराने भित्ति-चित्रों के ऊपर पोताई करके, उनको मिटा दिया गया है और कुछ अन्य अधिकारियों और सामान्य लोगों में पुरासंपदा के प्रति उदासीनता और उसके प्रति अल्पज्ञान के कारण समाप्त हो गई हैं। अब यह कहना की सिरमौर में भी पहाड़ी चित्रकला की विशिष्ट शैली का विकास हुआ था, आधारहीन लगता है।

मानगढ़ का शिव मंदिर

किलों और भितिचित्रों पर चर्चा करते हुये हम मानगढ़ के परवर्ती-गुप्तकाल (late Gupta period) के शिव मंदिर को तो भूल ही गये थे। संभवतः समस्त उत्तर भारत में, देओगढ़ (झांसी) के दशावतार के अतिरिक्त, हिमाचल प्रदेश में मानगढ़ का यह मंदिर प्राचीनतम है। संभवतः भारत में इतने प्राचीन मंदिर कुछ ही स्थानों में रहे हैं। विडम्बना यह है कि यह मंदिर अभी तक पुरातत्ववेताओं की दृष्टि से ओझल ही रहा है। सिरमौर स्टेट --1934 के गजेटियर में इस मंदिर के निर्माण को स्यालकोट के राजा रसालू से जोड़ा गया है, जो संभवतः लोक-आख्यानों के कारण हुआ हो, परन्तु यह तर्कसंगत नहीं लगता।

सिरमौर मंडल की पच्छाद तहसील में, तहसील मुख्यालय सराहन से मानगढ़ 33 किलोमीटर की दूरी पर है। गांव से अलग स्थान पर स्थित यह मंदिर स्थानीय लोगों के लिये भी महत्त्वपूर्ण नहीं रहा है। परन्तु लोगों ने सामान्य धार्मिक भावना के आग्रह के कारण इस पर मोटे पत्थर की ढलुआं छत बना दी है तथा मंदिर की पुरानी दीवारों का जीर्णोधार भी अपनी सूझबूझ के अनुसार कर दिया है। इस प्रकार इस प्राचीन मंदिर का प्राचीन और मूल आकार काफी विक्षिप्त हो चुका है। मूल रूप में यह शिखराकार मंदिर रहा होगा। आज भी उस वर्तमान अवस्था इस मंदिर की प्राचीन गरिमा और भव्यता को देख कर कोई भी पारखी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

मंदिर की मूल रूपरेखा प्राचीन मानदंडों के आधार पर की गई है और तदानुसार इस मंदिर के दो कक्ष मंडप और गर्भगृह हैं। इस मंदिर की परवर्ती-गुप्तकालीन प्राचीनता का प्रमाण गर्भगृह के प्रवेशद्वार में उत्कीर्णित आकृतियों हैं, जैसे कि मकरवाहिनी गंगा और कच्छपवाहिनी यमुना तथा अन्य प्रतीकों और अलंकरणों से स्पष्ट हो जाता है। वास्तुकला और साहित्य में मकरवाहिनी गंगा और कच्छपवाहिनी यमुना के प्रतीकों का प्रयोग गुप्त काल में ही आरम्भ हुआ था। मानगढ़ के इस मंदिर में इस प्रकार के अनेक प्रतीकों का उत्कीर्णन देखा जा सकता है जिनका साम्य हम देओगढ़ के दशावतार और नाचन-कुठार के मंदिरों में सहज ही पा सकते हैं।

गुप्तकालीन मंदिरों की एक अन्य विशेष पहचान यह भी रही है कि उस काल के मंदिरों की सरदल (लिंटल, lintel) में केवल आठ ग्रहों का ही उत्कीर्णन हुआ है, जैसे मध्य में सूर्य (सूर्य का आदित्य के रूप में अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व है, जब की सूर्य के रूप में नवग्रहों में वह भी एक ग्रह है) और उसके दोनों ओर गणेश, चन्द्र, मंगल, बुद्ध, बृहस्पति, शुक्र, शनि और राहू। सरदल की उत्कीर्णन-योजना में 'केतु' विलुप्त है। वास्तव में नवग्रह का अंकन प्रारंभिक-मध्यकाल से प्रारंभ हुआ था। यही विशेषता दक्षिणेश्वर महादेव के मंदिर में लकड़ी की सरदल में भी देखी जा सकती है। इसके विपरीत, प्रारंभिक- मध्यकाल में निर्मित लक्षणा देवी के काष्ठ मंदिर में नवग्रह अंकन स्पष्ट है।

परवर्ती-गुप्तकालीन वास्तुशिल्प के आधार पर मानगढ़ का यह शिव मंदिर ही समस्त हिमालयी क्षेत्र में केवल एक उदाहरण है। अतः इसके समुचित संरक्षण की अत्यंत आवश्यकता है। कहीं ऐसा न हो कि औद्योगीकीकरण और आधुनिकता की होड़ में हम इस असाधारण पुरासंपदा को ही खो बैठें।

सिरमौरी ताल

सिरमौर राज्य के उद्भव और विकास में सिरमौरी ताल और उससे जुड़ी घटना का विशेष स्थान रहा है। एक लोक-परंपरा के अनुसार, जिसका उल्लेख सिरमौर के इतिहास की पुस्तकों में भी हुआ है, इस राज्य की राजधानी किसी नटनी के शाप से गिरी नदी के जलप्लावन से समाप्त हो गई थी। गिरी नदी का प्रवाह पहाड़ के गिरने से अवरुद्ध हो गया था, इस संभावना को नकारा नहीं जा सकता। वह घटना सिरमौर स्टेट --1934 के गजेटियर के अनुसार संभवतः विक्रमी संवत् 1139 (सन 1083) में घटी होगी। परन्तु इस सन्दर्भ में नटनी के शाप की कहानी भी इतिहास का हिस्सा बन जाये, वह किसी भी प्रकार से सही नहीं लगता। इसी प्रकार की एक घटना किसी समय भज्जी राज्य के सुन्नी नगर से ऊपर कुछ दूरी पर भी हुई थी। वहां घांगर पहाड़ का एक बड़ा भाग टूट कर सतलुज नदी में गिर गया था और नदी का बहाव अवरुद्ध हो गया था। उसका घटना का उल्लेख न केवल कवि गणेश सिंह की पुस्तक शशिवंश विनोद में ही हुआ है परन्तु ब्रिटेनिका विश्वकोष (Encyclopaedia Britannica) में भी हुआ है। परन्तु उस घटना ने जिस लोक-परंपरा को जन्म दिया था, वह तो केवल लोक-कथा ही रही, इतिहास का भाग नहीं बनाई गई। यथार्थ यह है कि आज का शकरोड़ी गाँव उसी घटना से विकसित समतल हुआ।

कुछ वर्ष पहले राजबन-सिरमौरी ताल का समन्वेषण किया गया था। उस खोज-कार्य से यह तो स्पष्ट हो गया था कि किसी समय यहाँ पर काफी बड़े क्षेत्र में सघन आबादी रही है। उस क्षेत्र में चारों ओर बलुआ इमारती पत्थर बिखरे पड़े थे। सड़क से कुछ नीचे घनी झाड़ियों में लगभग तीन मीटर व्यास का विशाल कुआँ भी मिला जो मिट्टी और पत्थर से भरा पड़ा था। यह सम्पूर्ण क्षेत्र साल के घने जंगल, कंटीली झाड़ियों और बलुआ चट्टानों और पत्थरों से भरा पड़ा है। परन्तु पानी के बहाव के घर्षण से बने गोल पत्थर या रेत कहीं भी आसपास इस मात्रा में नहीं मिली जिससे यह लग सके कि गिरी नदी का पानी उस उंचाई तक पहुंचा हो।

अतः जलप्लावन की संभावना को तो नकारा नहीं जा सकता, परन्तु उस कारण एक भरा-पूरा नगर डूब कर नष्ट हो गया हो, ऐसा नहीं लगता। इस संभावना को पुष्ट करने के लिये और खोज की आवश्यकता है। अभी कुछ दिन पहले उसी स्थल पर भूमि को हमवार करने के लिये खुदाई में से एक बलुआ पत्थर पर शारदा लिपि में उत्कीर्णित लेख मिला। लिपि (शारदा) के आधार पर यह तो निश्चित लगता है की यह लेख 11-12 शताब्दी का हो, परन्तु वह लेख अभी भली प्रकार से पढ़ा नहीं गया है। हो सकता है कि उस लेख से कोई रहस्य उद्घाटित हो सके।

क्यारदा-दून के क्षेत्र में लेखक द्वारा किये गये अनेक समन्वेषणों के आधार पर यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि यहाँ धरती के नीचे बहुत मात्रा में पुरासंपदा का खजाना दबा पड़ा है। परदुनी गाँव से लेकर तौंस नदी तक अनेक स्थानों पर प्राचीन बस्तियों के अवशेष और विशाल व्यास के कुएं धरती के नीचे दबे पड़े हैं। कुछ वर्ष पहले, नागनौंण गाँव के पास ही कभी बहुत पहले पहाड़ी में बादल फटने से हुये पानी के विनाशकारी बहाव में शास्त्रीय शैली का एक प्राचीन पाषाण मंदिर रेत और पत्थरों में गहरा दब गया था। बाद में रेत के ठेकेदारों ने जब रेत के लिये उस स्थल में खुदाई की तो वहां वह मंदिर, अनेक मूर्तियाँ और एक बड़े आकार की पानी की पौड़ीदार बावड़ी गहराई में दबी पाई गई। पाल-प्रतिहार समय की यह खोज महत्त्वपूर्ण है। उस मंदिर और उसके आस-पास के क्षेत्र तथा प्राचीन मूर्तियों का रख-रखाव और सुरक्षा आवश्यक है।

11, शिवालिक भवन,
संजौली, शिमला-171006, मो. 0 94180 42762

आलेख

सिरमौर जनपद के प्राचीन इतिहास का पुनरावलोकन

◆ नेम चंद ठाकुर

रियासतकाल में सिरमौर हिमाचल प्रदेश ही नहीं, वरन उत्तर - पश्चिमी भारत की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्राचीन रियासत रही है जिसे 15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल प्रदेश में विलय करके एक जिले का रूप प्रदान किया गया। सिरमौर जिला 77^0,1,12 और 77^0,48,40 देशान्तर पूर्व में तथा 30,12 और 31,1,01 अक्षांश उत्तर में स्थित है। इसके पूर्व मे उत्तर प्रदेश तथा दक्षिण में हरियाणा प्रांत, उत्तर में हिमाचल प्रदेश का शिमला तथा पश्चिम में सोलन जिला है। वर्तमान में सिरमौर की लम्बाई उड़ते हुए पक्षी की तरह पश्चिम में क्वाल नदी से पूर्व में बन्नौर तक 77 किलोमीटर तथा चौढ़ाई उत्तर में घमाण्डढ से लेकर दक्षिण में बहराल तक 60 किलोमीटर है। इसका कुल क्षेत्रफल - 2285.05 वर्ग किलोमीटर तथा जनसंख्या 2011 में 5,29,855 थी जिसमें 2,76,289 पुरुष और 2,53,566 महिलायें थीं।

सिरमौर नामकरण

सिरमौर के नामकरण से सम्बन्धित अनेक मत है। कई विद्वानों का मत है कि सिरमौर का शाब्दिक अर्थ सर्वोपरि या सबसे बढ़कर है। सिरमौर के सम्बन्ध में यह भी सम्भव है कि मौर्य साम्राज्य के शीर्ष पर होने के कारण इस रियासत का नाम सिरमौर पड़ा है। समझा जा सकता है कि सिरमौर मौर्य काल में या तो पूर्ण रूप से मौर्य साम्राज्य का एक भाग था या फिर उसका अभिन्न मित्र। इस सम्बन्ध में इतिहासकारों के अनेक मत है। कुछ इतिहासकार इस बात से सहमत है कि यह मौर्य साम्राज्य का ही एक भाग था जबकि कुछ इस बात को सिरे से ही खारिज करते हुए तर्क देते हैं कि अगर ऐसा होता तो सिरमौर की प्राचीन राजधानी कालसी पर बौद्ध धर्म का कुछ प्रभाव तो होता जबकि वहाँ शैव मत का ज्यादा बोलबाला रहा।

प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यूनसांग ने इसका नाम श्रुघन अथवा सू-हि-किन-ना लिखा है। वह इस संबंध में लिखता है कि - ''सेलोकिनना यसू-हि-किन-नाद्ध का क्षेत्रफल 6000 ली है। सीमा उत्तर में हिमालय पहाड़, पूर्व में गंगा तथा यमुना नदियाँ हैं। नगर उजड़ रहा है। राजधानी का क्षेत्रफल (परीधि) 20 ली है। जलवायु थानेश्वर के समान हैं पाँच संघाराम है। अधिकाँश लोग हीनयान सम्प्रदाय के अनुयायी है। लगभग 100 देव मन्दिर हैं जिनमें विभिन्न मतावलम्बियों के लोग उपासना करते हैं। राजधानी के दक्षिण-पश्चिम और यमुना नदी के पश्चिम में एक संघाराम हैं जिसके पूर्वी द्वार पर अशोक का स्तूप है। तथागत भगवान ने इस स्थान पर लोगों को अपने धर्म का उपदेश दिया था। पास ही एक दूसरे स्तूप में तथागत के बाल और नख सुरक्षित हैं। निकटवर्ती दस और स्तूपों में श्रीपुत्र,मग्दलायन तथा अन्य अर्हतों के नख और बाल सुरक्षित हैं। तथागत भगवान के निर्वाण प्राप्त करने के उपरान्त यह स्थान अन्य मतावलम्बियों का केन्द्र बन गया था। लोग अपनी धार्मिकता को छोड़कर असत्य सिद्धांतों के जाल में फंस गये हैं। उस समय देश-विदेश के विद्वानों ने आकर विधर्मियों और ब्राह्मणों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। जहाँ पर शास्त्रार्थ किया गया वहाँ पर पाँच संघाराम बना दिया गये हैं।''

ह्यूनसांग इस राजधानी में बहुत दिनों तक रूका रहा। उसने इसके वैभव तथा आसपास के ऊँचे- ऊँचे साल के वृक्षों के बारे में भी लिखा है। वह लिखता है कि यहाँ के वनों में शेर और हाथी पर्याप्त मात्रा में घूमते रहते हैं। उसने इस राज्य के दूसरे नगरों दयालगढ, मण्डलपुर, रौहरा नाला तथा बुढ़िया आदि का भी वर्णन किया है।

सम्भवतः ह्यूनसांग द्वारा वर्णित श्रुघन शब्द ही कालान्तर में बिगड़ते - बिगड़ते सिरमौर बन गया हो।

सिरमौर के नामकरण से सम्बन्धित एक और साक्ष्य उपलब्ध है जो ज्यादा विश्वसनीय प्रतीत होता है। कहा जाता है कि भट्टी वंश के शालीवाहन प्रथम, जिसने विक्रमी सम्वत 72 को अपने नाम से शालीवाहनपुर राजधानी की प्रतिष्ठा की थी, (अब पाकिस्तान में) के पुत्र रसालू (पूरण भगत का भाई) ने अपने पुत्र सिरमौर के नाम पर इसकी स्थापना की थी। सिरमौर में आज भी अनेक स्थान रसालू से सम्बन्धित हैं। नाहन नगर के निकट रसालू का टिब्बा भी है। हो सकता है कि स्वंय सिरमौर ने अपने नाम पर इस रियासत का नामकरण किया हो। एक अन्य विवरण में 'सिरमौर' शालीवाहन प्रथम का नहीं बालन्द का बेटा बताया गया है। रूप कुमार शर्मा एक अन्य विवरण प्रस्तुत करते हैं - 'चन्द्रगुप्त

पेशावर से 250 किलोमीटर दूर कोहे-ए-मर का निवासी था और मालकंड दर्रे के पीछे की ओर स्वातघाटी का शासक था। सिकन्दर की वापसी पर चन्द्रगुप्त ने पंजाब को मुक्त कराकर अपने माता पिता को पंजाब की पहाड़ियों में ठहरा दिया। उसने पिता को सरमौर्य की उपाधि दी जिसका अर्थ मोर कबीले का मुखिया होता है। चन्द्रगुप्त के पिता जहाँ पहले रुके उसे सिरमौर (सरमोर) कहकर पुकारा गया। बाद में मोरनी पहाड़ी के निकट का हिस्सा सिरमौर कहलाने लगा।'सिरमौर की राजधानियाँ समय-समय पर बदलती रही जिनमें बुढ़िया (छछरौली के पास हरियाणा में), कालसी (देहरादून के समीप उत्तर प्रदेश में), राजबन, हाटकोटी (शिमला), रतेश, नेहरी तथा देवथल प्रसिद्ध है।

सिरमौर के प्राचीन इतिहास का पुनरावलोकन

सिरमौर का क्षेत्र प्राचीन काल में कुलिन्द जनपद के अधीन होता था। कुलिन्द, कुनिन्द या कुणिन्द जनपद अपने उत्कर्ष के दिनों में दूर-दूर तक फैला हुआ था। टौंस नदी तक का प्रदेश प्राचीन समय में कुलिन्द कहलाता था। पाणिनी ने दो गणों में कुलुन का उल्लेख किया है। कुलिन्द, कुलुन और कुलिन्द्रीन-कुणिन्द एक ही नाम के रूपान्तर हैं जिन्हें तोलमी ने कुलिंद्रीन कहा हैं। महाभारत काल में यह जनपद भी महाभारत युद्ध में दूसरे पहाड़ी जनपदों की तरह कौरवों के पक्ष में लड़ा था। परन्तु कुछ कुलिन्दों के बगावत कर पाण्डवों के पक्ष में लड़ने का उल्लेख मिलता है। महाभारत के सभा पर्व (अध्याय 23 श्लोक 13-15) में उल्लेख मिलता है कि द्विजों में प्रधान राजा कुलिन्द यकुणिंद) ने युधिष्ठिर को शंख भेंट किया था। यदक्षिणात्य पाठ सभा पर्व अध्याय 26 व 27 में अर्जुन द्वारा उत्तर की विजय का उल्लेख हैः-

पूर्व कुणिन्दविषये वशे चक्रे महीपतीन्
धनंजयो महाबाहुर्नातितीव्रेण कर्मणा (13)

महाबाहु धनंजय ने अत्यंत दुःसह पराक्रम किये बिना ही पहले कुलिन्दा के भूपालों को अपने वश में किया।

आनर्तान्कालकूटांश्च कुणिन्दाश्च विजित्य सः
सुमण्डल च विजित कृतवान सह सैनिकम (14)

कुलिन्दा के साथ कालकूट और अर्नात, देश के राजाओं को जीत कर अर्जुन ने सुमण्डल को भी जीत लिया।

स तेन सहितो राजन्सव्यसाची परंतपः
विजिग्ये सकलं द्वीपं प्रतिविन्ध्यं च पार्थिवम्(15)

तदन्तर सव्यसाची अर्जुन ने सुमण्डल को साथी बनाकर शांकल द्वीप और प्रतिविन्ध्य को जीता।

ऋग्वेद में वर्णन मिलता हैं कि वैदिक आर्यो के एक शक्तिशाली राजा ययाति ने सरस्वती नदी के किनारे पर एक बहुत बड़े राज्य की नींव डाली जो बाद में उसके पुत्र पुरू के नाम पर पुरू वंश के रूप में प्रसिद्ध हुआ। पुरू उन आर्य शासकों में भी शामिल था जिन्होंने सुदास के नेतृत्व वाले संघ के साथ भयंकर युद्ध किया था। इस युद्ध में पुरू का साथ देने वाले शासकों में अनु, द्रह्य, तुवंशा आदि शासक प्रमुख थे। अनु तथा द्रह्य की सेनाएं जल में डूब गई थी। सुदास की विजय वाहिनी सेना ने पुरू संघ को परास्त कर यमुना तक अपनी विजय पताका फहराई थी।

यमुना के आसपास अनेक छोटे-बड़े राज्य थे जिनमें भेद, अज, शिव, यक्ष आदि प्रमुख थे। इन्हें परास्त कर सुदास एक शक्तिशाली सम्राट बन गया और समस्त सिरमौर जनपद भी उसके अधीन हो गया।

इतिहासकारों का मत है कि सरस्वती नदी सिरमौर के ही किसी भाग से निकल कर मैदानों की ओर बहती थी और सरस्वती नदी के उद्गम स्थल के आसपास ही पुरू का एक बहुत ही विस्तृत साम्राज्य था।

सिरमौर में आर्यो के सम्बन्ध मे एक अन्य वर्णन मिलता है। इसमे कहा गया है कि जमदग्नि ऋषि के नेतृत्व में आर्यों की एक शाखा ने सरस्वती नदी के किनारे-किनारे अन्दर तक अपने आश्रम बनाए। जामू के टिब्बा पर स्वयं ऋषि जमदग्नि का वास था।

सिरमौर जनपद में राजा सहस्रबाहू और परशुराम के युद्ध की कहानियाँ लोक संस्कृति का हिस्सा है। स्थानीय लोगों के अनुसार जलाल नदी का पानी इसलिए लाल रहता है क्योंकि सहस्रबाहू के वध के पश्चात् भगवान परशुराम ने अपने अस्त्र - शस्त्र जो खून से सने थे इसी नदी में धोये थे।

सिरमौर के रेणुका क्षेत्र का वर्णन स्कन्द पुराण के केदार खण्ड के अध्याय 531 में लिखा है :-

कैलाश पर्वत के ऊपर कैदार जी से पश्चिम की ओर यमुना जी के दक्षिण भाग में रेणुका नामक पर्वत है। यहाँ पर जमदग्नि और उसकी पत्नी रेणुका ने तप किया था।

रोमन लेखक तालमी जो ईसा की प्रथम शताब्दी में भारत आया था, लिखता है कोई कुलिन्द जाति व्यास, सतलुज, यमुना, तथा गंगा के उद्गमों के पास रहती है। यह जाति तगण और परतगण जातियों के साथ भारत आई थी।

हर्षवर्धन के पश्चात् उत्तरी भारत के अन्य स्थानों की तरह कुछ समय के लिए सिरमौर में भी काफी उथल पुथल मची रही। यह क्षेत्र छोटे-बड़े स्वयंभू राणों, ठाकुरों व मावियों में विभक्त हो गया। ये लोग मात्र दो तीन गाँव के स्वामी होते थे। वे सदैव आपस में झगड़ते रहते थे। इस समय से सम्बन्धित कितनी ही लोक - कथायें आज भी सुनने को मिलती है- मदना, छीछा, खाशिया, कदारा, होकू, दौलतु, साका, कमना तथा सिधू री टिकरी आदि आज भी जनमानस में सुनाई जाती है।

कमना की गाथा में कहा जाता है कि उत्तरी सिरमौर के किसी ठाकुर अथवा भूमिपति ने शलावड़ा के लोगों को दो भागों में बाँट रखा था - देव अर्थात् ब्राह्मण और रावत। देवों का मुखिया कमना था जबकि रावतों की कमान कीरचन्द के पास थी। इन

दोनों में बड़ी घनिष्ठ मित्रता थी। इस मित्रता से इनका भूमिपति अर्थात शासक बहुत घबराता था। अतः उसने एक चाल के तहत इन दोनों में वैमनस्य पैदा कर दिया। यह दुश्मनी बाद में युद्ध में परिवर्तित हो गई। इस युद्ध में कमना मारा गया। कमना की स्त्री समाई देवी ने पति की मृत्यु का बदला लेने के लिये एक सेना एकत्र कर कीरचन्द पर चढ़ाई कर अपने हाथों से उसका वध कर दिया।

सिरमौर की प्राचीन राजधानी पाँवटा घाटी के सिरमौरी ताल में थी, जिसे क्यारदा दून के रूप में भी जाना जाता है। सिरमौरी ताल राजधानी के उजड़ने से सम्बन्धित अनेक लोक कथायें सुनाई जाती है। कहा जाता है कि एक नटनी के श्राप से गिरी नदी में बाढ़ आ गई और सिरमौरी ताल उजड़ गया। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह भी सम्भव हो सकता है कि वहाँ बादल फटा हो और वहाँ पर पूरा परिक्षेत्र तहस-नहस हो गया।

'बहारे कुम्हारसेन' अथवा 'बहारे सनामी' में उल्लेख मिलता है कि कुम्हारसेन के शासक जोरावर सिंह (166 ईस्वी) के समय में सिरमौर के शासक ने रामपुर-बुशहर पर आक्रमण किया परन्तु रामपुर-बुशहर की कुलदेवी भीमाकाली की कृपा से सिरमौर की सेना में हैजा फैल गया और रामपुर बुशहर की सेना ने सिरमौरियों को बड़ी आसानी से परास्त कर दिया। वापसी में सिरमौर का


सिरमौरी ताल से प्राप्त शिलालेख

शासक कुम्हारसेन के राजा जोरावर सिंह के पास ठहरा। जोरावर सिंह ने मित्रता का परिचय देते हुए उन के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। इसी प्रकार जोरावर सिंह के पुत्र दिलजेग के समय में सिरमौर के एक अन्य शासक ने रामपुर-बुशहर पर चढ़ाई की लेकिन वह असफल रहा।

सिरमौर से सम्बन्धित एक अन्य विवरण बिलासपुर के इतिहास में भी मिलता हैं। बिलासपुर के राजा वीरचन्द ने अनेक ठाकुरों और राणों के साथ मिलकर (900 ई.) सिरमौर पर आक्रमण कर दिया। सिरमौर की इसमें हार हुई और बिलासपुर ने अपनी सीमा को गोरखगढ़ तक बढ़ा दिया।

सिरमौर में प्राचीन काल से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी तक भिन्न-भिन्न राजवंश राज करते रहे। एक विवरण में उल्लेख मिलता हैं कि प्राचीन काल में राठौड़ वंश राज करता था। जब राठौड़ यहाँ आए थे उस समय सिरमौर खशों के अधीन था। राठौड़ों के आगमन से पूर्व सिरमौर में ब्राह्मण नहीं बसते थे। हैमिल्टन लिखता है कि राठौड़ वंश का यहाँ पर 15 पीढ़ियों तक अधिकार रहा।

जुब्बल के इतिहास में भी इसका उल्लेख मिलता है कि उनके पूर्वज सिरमौर में शासन करते थे। वे अपने को राठौड़ मानते थे। बलसन के शासक भी अपने आपको सिरमौर से ही सम्बन्धित मानते हैं लेकिन वे अपने आपको सूर्यवंशी परमार राजपूत मानते हैं जो मालवा से बीकानेर होते हुए सिरमौर पहुँचे और तत्पश्चात बलसन आये।

'तारीखे सिरमौर' के लेखक कुंवर रणजोर सिंह सिरमौर के प्राचीन राजवंश को यदुवंश से बताते हैं। जेम्स टॉड सिरमौर के राजवंश को यदुवंश की शाखा भट्टी से मानते हैं। टॉड के अनुसार सम्वत् 1224 अर्थात सन 1168 ईस्वी में जैसलमेर की राजगद्दी पर शालिवाहन द्वितीय बैठा। जैसलमेर के इस शासक शालिवाहन के तीन पुत्र थे -बिजित, बनर और हासू। शालिवाहन के समकालीन बद्रीनाथ के पहाड़ों में एक राज्य था जिसके राजा की निःस्तान मृत्यु हो गई थी। गद्दी का कोई दावेदार नहीं था। यहाँ के शासक अपने आप को यदुवंश की ही एक शाखा भट्टी और इस वंश के ख्यातिप्राप्त शालिवाहन प्रथम के वंशज मानते थे। अतः इस पहाड़ी रियासत के लोगों ने एक प्रतिनिधिमण्डल जैसलमेर भेजा। जैसलमेर के शासक शालिवाहन द्वितीय ने अपने पुत्र हासू को सपत्निक सिरमौर की राजगद्दी सम्भालने को भेजा। परन्तु रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई। उसकी रानी गर्भवती थी। उसने एक पलाश के पेड़ के नीचे एक बालक को जन्म दिया। पलाश के पेड़ के नीचे जन्म देने से उसका नाम पलाशियो पड़ा। इस बालक ने ही बाद में उस रियासत की गद्दी को सम्भाला और उसी बालक के नाम पर इस रियासत का नाम पलाशियो पड़ा। इस स्थान की स्थिति के बारे में टॉड लिखते हैं कि एलफिनस्टोन ने इस रियासत को अपने नक्शें में शिवालिक पहाड़ियों के तराई क्षेत्र में दर्शाया है।

एक अन्य विवरण देव कुरगण यानी मंढोड़ देव की अप्रकाशित वंशावली में मिलता है। इसके अनुसार भट्टी सम्वत एक माघ मास में सिरमौर की गद्दी पर राजा देवप्रकाश शासन करता था। इस राजा की सात रानियाँ थी। इन रानियों के कोई भी संतान नहीं थी। राजा वृद्ध हो गया था। उसे हमेशा उत्तराधिकारी की चिंता सताती रहती थी। एक दिन राजा ने अपने सभासदों के साथ उत्तराधिकारी के विषय में विचार-विमर्श किया। सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया कि प्रधानमंत्री धर्मराय के पुत्र भद्रराय को

उत्तराधिकारी ढूँढने का काम सौंपा जाए। भद्रराय उत्तराधिकारी की तलाश में राजस्थान में किसी रियासत के यदुकुल के राजा के पास पहुँचा।

उस राजा का कोगक नाम का मंत्री था। उस यदुकुल के राजा की पाँच रानियाँ थी। ये पाँचों रानियाँ गर्भवती थी। कोगक ने भद्रराय को कहा कि पाँचों रानियों में से किसी को भी साथ ले जाओ, उसके बाद में लड़की पैदा हो या लड़का वो आपका भाग्य। भद्रराय बहुत सयाना आदमी था। उसने पाँचों रानियों को अलग कमरे में बुलाकर एक ही प्रश्न पूछा - "देखो- तुम्हारा पुत्र सिरमौर की गद्दी का उत्तराधिकारी बनने वाला है। अतः तुम्हें सिरमौर चलना होगा। सिरमौर को जाने के लिए दो रास्ते जाते हैं। पहला रास्ता काफी लम्बा और आरामदायक है जबकि दूसरा रास्ता इसका आधा है। परन्तु यह रास्ता जंगल में से गुजरता है, यह कठिन है जिसमें शेर, बाघ जैसे खतरनाक जानवर तो मिलते ही हैं साथ में डाकुओं से लुटने का भी खतरा रहता है। अतः यह बताओ कि तुम कहाँ से जाना पसन्द करोगी?"

पाँच रानियों में से केवल एक रानी ने नजदीकी तथा बीहड़ वाले रास्ते से चलने को कहा जबकि अन्य चारों ने लम्बे तथा आरामदायक रास्ते की बात कही। भद्रराय को यह समझने में देर नहीं लगी कि सिर्फ एक रानी के पुत्र पैदा होगा और अन्य के पुत्रियाँ। अतः उसने उस रानी को ही चुना। यह रानी चन्द्रवंशी थी। राजा ने शास्त्रीय मर्यादानुसार सिरमौर नरेश के लिए रानी के साथ घोड़ा, बागा (वस्त्र), चौंर और डोला दान में दिये। साथ में रुद्र नामक गर्ग गोत्रीय ब्राह्मण भी भेजा। रास्ते में रानी ने कुरुक्षेत्र के समीप जंगल में पलाश के वृक्ष के नीचे एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम गाजी प्रकाश रखा गया।

गाजी प्रकाश पौष मास के प्रथम प्रविष्टे को जब रवि उत्तरायण में तथा एकादशी तिथि को रविवार के दिन पैदा हुआ। बाद में पता चला कि पीछे अन्य रानियों के सचमुच पुत्रियाँ ही पैदा हुई थीं।

जैसे ही भद्रराय रानी तथा गाजी प्रकाश को साथ लेकर सिरमौर पहुँचा सारे देश में नौबत बाजे बजने लगे। दरबार में उनके स्वागत में उत्सव मनाया गया। इसका गौत्र अवाण चादव (यादव हो सकता है) माना गया। राजा गाजी प्रकाश की 33वीं पीढ़ी में सिरमौर का शासक वीर प्रकाश हुआ। वीर प्रकाश के तीन रानियाँ थीं। पहली कुरुक्षेत्र से, दूसरी पटना से, तीसरी गढ़वाल से थी। पहली का नाम चन्द्रकला, दूसरी का नाम प्रबोधिनी था। तीसरी का नाम अज्ञात हैं। चन्द्रकला के मधुमास में गुरुवार शुक्ल पक्ष में नवरात्र, राम नवमी के दिन अष्टम सूर्य, उत्तर, कर्क लग्नोदय, पुनर्वसु नक्षत्र द्वितीय चरणें, मिथुन राशि, मध्य शुभ बेला में कुरगण प्रकाश (देव मण्ढोड़) पैदा हुआ। इसके बाद दो और पुत्र पैदा हुए जिनके नाम क्रमशः प्रद्युमन प्रकाश और बलदेव प्रकाश थे। दूसरी रानी के एक पुत्र उद्धव प्रकाश पैदा हुआ जबकि तीसरी रानी के बारे में वंशावली में कुछ नहीं कहा गया है।

एक दिन राजा के पास नट व नटनी कुछ करतब दिखाकर धन कमाने की नीयत से पहुँचे। कुछ करतब दिखाने के बाद नट ने राजा से कहा कि अगर उसकी नटनी एक पतली डोरी पर टौंका से पौका और पुनः पौंका से टौंका चलकर गिरी नदी पार करे तो राजा उसे क्या इनाम देगा? राजा को वह कार्य असम्भव लगा। उसने तुरन्त कहा कि अगर उसकी नटनी यह करतब दिखा देगी तो वह उसे आधा राज्य ईनाम में देगा। नट ने टौंका से पौंका दोनों पहाड़ियों पर एक रस्सी बाँध दी। जब नटनी चलती हुई उस ओर पहुँची और वापस लौट कर रस्सी के मध्य में आई तो राजा के मन्त्री ने इस भय से कि नट-नटनी वास्तव में ही आधे राज्य के अधिकारी न बन जायें, यह सोच कर रस्सी काट दी। रस्सी कटते ही नटनी छपाक से गिरी नदी में गिर पड़ी। गिरते-गिरते उसने राजा को यह शाप दिया कि "वार पौका पार टौंका- राजा की नगरी में रहें न को लोका।" यह कहते हुए वह नदी में डूब कर मर गई। यह देख उसके नट ने भी विलाप करते हुए गिरी नदी में छलाँग लगा कर आत्महत्या कर ली।

तीसरे दिन तुलसा नामक स्त्री सुबह तड़के दूध औघट रही थी। उसी समय उसको आकाशवाणी हुई कि बुढ़िया तू यह नगर छोड़ दे। इस पापी राजा का कल सुबह होने तक सारा नगर पानी में डूब जायेगा। बुढ़िया के कहने पर सारे नगरवासी भाग गये। राजा के चारों पुत्र भी रानी माँ चन्द्रकला के साथ सिरमौर से भाग गये। चारों पुत्रों ने भाग कर शिमला की पहाड़ियों मे शरण ली। राजा ने इसे अफवाह मान कर इसकी खिल्ली उड़ाई। रात में बाढ़ के आने से सिरमौरी ताल उसमें डूब गया।

सिरमौर राजा वीर प्रकाश के भागे चारों पुत्रों में कुरगण प्रकाश नलावण (श्वेतसुर, भज्जी), प्रद्युमन साँझे बनौण (भज्जी), बलदेव प्रकाश अपनी माँ के साथ गलोट में बस गया। उद्धव प्रकाश लौट कर सिरमौर का राजा बना। आज भी लोअर शिमला और सोलन जनपद के अर्की क्षेत्र में अनेक गाँव आबाद हैं जो अपने को सिरमौर राजवंश से जोड़ते हैं। इसी क्रम में सुन्नी के समीप मण्ढोड घाट में देवता कुरगण भी शामिल है।

सम्भवतः तीसरी रानी वही थी जिसका वर्णन जुब्बल के इतिहास और परंपरा में किया गया है। जुब्बल के इतिहास में लिखा हैं कि जिस समय सिरमौर में बाढ़ आई उस समय सिरमौर की एक रानी गर्भवती थी जो हाटकोटी में तीर्थयात्रा के लिए आई हुई थी। उसके साथ सिरमौर का राजा भी था। बाढ़ से कुछ दिन पूर्व राजा किसी विशेष कार्य से अपनी राजधानी सिरमौरी ताल लौट गया। राजा रानी को हाटकोटी के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण वीर भाट के संरक्षण में छोड़ गया।

हाटकोटी में सिरमौर के बाढ़ में बह जाने का समाचार बहुत

सिरमौरी ताल



सिरमौर रियासत का इतिहास पुस्तक के अनुसार इस रियासत की पहली राजधानी सिरमौर नामक स्थान पर थी जो क्यारदादून में थी। यह राजधानी तब तक इस स्थान पर रही जब तक कि गिरी नदी में बाढ़ आने से यह स्थान नष्ट नहीं हुआ था। इसके नष्ट होने की दंतकथा अब भी लोग दोहराते हैं। कहा जाता है कि तत्कालीन राजा सिरमौर के दरबार में एक नटनी खेल तमाशा दिखाने के लिए आई। उसमें एक तमाशा यह भी था कि वह एक धागे पर चल कर वह नटनी गिरी नदी को पार करेगी और इस करतब के बदले में राजा उसे अपनी रियासत का आधा हिस्सा देंगे। जब वह नटनी इस धागे पर चल कर नदी के उस पार पहुंची तो राजा और उसके कुछ दरबारियों को आधा राज्य जाने की चिंता हुई और उन्होंने नटनी को धागे पर उस पार से इस पार आने को कहा। जब नटनी नदी के बीचोबीच धागे पर पहुंची तो उन्होंने उस धागे को काट डाला और नटनी बीच नदी में गिर गई। गिरते-गिरते उसने रियासत के नष्ट होने का श्राप दिया।

कंवर रणजोर सिंह लिखते हैं कि इस पर टिप्पणी करना जरूरी नहीं, क्योंकि साधारण समझ-बूझ रखने वाला व्यक्ति भी इसकी सच्चाई के बारे में अनुमान लगा सकता है। जहां तक विचार किया जाता है यह केवल एक दंतकथा है क्योंकि प्राचीन काल में किसी भी घटना को अद्‌भुत ढंग से कहानी बनाकर व्याख्या करने का रिवाज प्रचलित था। ताकि लोग उस कहानी को रुचिपूर्वक सुनें। ऐसा ज्ञात होता है कि गिरी नदी में बाढ़ की घटना के साथ नटनी की अद्‌भुत दंतकथा को जोड़ दिया गया है। यह प्रत्यक्ष है कि एक धागे पर चलकर नदी को पार करना अति असंभव है। यदि यह मान भी लिया जाए तो ऐसे व्यक्ति, जिसको नदी पर से एक धागे के माध्यम से पार करने की करामात हासिल हो, का गिर कर नष्ट हो जाना कदापि संभव नहीं लगता।

दूसरा तमाशे के बदले में राजा का आधा हिस्सा देने का वचन भी कुछ सत्य प्रतीत नहीं होता। अथवा एक नटनी के साथ विश्वासघात करने से नदी में अचानक बाढ़ आ जाना और रियासत का नष्ट हो जाना बिलकुल असंभव लगता है। यह तो सही ज्ञात होता है कि गिरी नदी में बाढ़ आने पर यह सिरमौर नामक स्थान अवश्य ही नष्ट हुआ होगा क्योंकि यह गिरी नदी के निकट स्थित है परंतु दोष दंतककथा सत्य प्रतीत नहीं होता। इस नष्ट हुए सिरमौर के ताल, पुराने भवन और अवशेष अब तक वहां मौजूद हैं।

देरी से पहुँचा। तब तक रानी एक पुत्र को जन्म दे चुकी थी। इसका नाम कर्ण चन्द रखा गया। रानी ने उजड़े सिरमौर को लौटना उचित नहीं समझा और उसी वीर भाट ब्राह्मण से शादी कर ली। वीर भाट ब्राह्मण से रानी के गर्भ से दो और पुत्र पैदा हुए- मूल चन्द और दूनी चन्द। रानी के इन तीनों पुत्रों ने तीन रियासतों क्रमशः कर्ण चन्द ने जुब्बल की, मूल चन्द ने सायरी की, व दूनी चन्द ने रावींगढ़ की स्थापना की।

इसके विपरीत जुब्बल तथा रोहड़ू क्षेत्र में इस सम्बन्ध में एक अन्य लोक कथा प्रचलित है जिसके अनुसार एक समय रामपुर बुशहर बहुत विशाल रियासत थी और जुब्बल, रावींगढ़ तथा सारी का सम्पूर्ण क्षेत्र भी इसी के अन्तर्गत आता था। लेकिन आठवीं शताब्दी तक पहुँचते-पहुँचते सिरमौर रियासत बहुत शक्तिशाली हो गई और उसने रामपुर बुशहर पर आक्रमण कर यह सारा क्षेत्र जीत कर अपनी रियासत में मिला दिया। इससे रियासत रामपुर बुशहर सिमट कर बहुत छोटी हो गई। इसके बाद रामपुर बुशहर ने अनेक बार सिरमौर रियासत पर आक्रमण कर अपना क्षेत्र वापस लेने की कोशिश की लेकिन हर बार असफल रहे। सिरमौर के बढ़ते प्रभुत्व को देखते हुए रामपुर बुशहर हमेशा चिन्तित रहता था और आये दिन सिरमौर और रामपुर के बीच टकराव चला रहता। सिरमौर के राजा ने जुब्बल को अपनी गर्मियों की राजधानी बना दिया। वह अक्सर गर्मियों में जुब्बल आता और वहाँ बहुत बड़ा धार्मिक समारोह करता। इस बहाने वह रामपुर बुशहर को अपने बल पर धमकाता और सीमा की सुरक्षा का जायजा भी लेता। समारोह में वह ब्राह्मणों और गरीबों को बहुत सा धन दौलत दान करता। जब रामपुर बुशहर का राजा सिरमौर से हर तरह से परास्त हो गया तो उसने एक षड्यन्त्र के तहत हाटकोटी मन्दिर के पुजारी वीरभाट ब्राह्मण को अपने साथ मिला दिया। इस षड़यन्त्र के तहत जब सिरमौर का राजा अपनी ग्रीष्मकालीन

राजधानी जुब्बल के प्रवास से वापस चलने लगा तो उसने हाटकोटी मन्दिर के पुजारी वीरभाट ब्राह्मण को बहुत सा धन दौलत दान किया और चलते चलते पूछा - 'और कुछ चाहिए ब्राह्मण देव? अर्थात और किसी भी चीज की जरूरत हो तो निस्संकोच कहो?' ब्राह्मण ने सकुचाते हुए कहा -महाराज ! यदि प्राण दान की भीख देते हो तो एक चीज माँग सकता हूँ ? राजा ने कहा - निस्संकोच होकर कहो ब्राह्मण देव ? ब्राह्मण ने कहा - महाराज ! क्षमा करें। आपने वचन दिया है। अब मुकरना मत?' राजा ने कहा - नहीं ब्राह्मण देव। आप बिल्कुल निश्चिंत हो कर माँग सकते हो?'

ब्राह्मण ने कहा - महाराज ! महारानी बहुत ही खूबसूरत है। मेरा इस पर दिल आ गया है। आप इसे मुझे दान में दे दें।' यह कह कर ब्राह्मण एक तरफ सिर झुकाये खड़ा हो गया। राजा पर तो जैसे वज्रपात हो गया था। लेकिन कुछ नहीं हो सकता था। राजपूतों में तो कहावत थी ही कि 'प्राण जाये पर वचन न जाये।' अब वह वचन दे चुका था। भारी मन से उसने रानी की ओर देखा और उसका हाथ ब्राह्मण के हाथ में पकड़ा दिया। रानी दो-तीन माह की गर्भवती थी। जैसे ही राजा घोड़े पर सवार होने लगा। ब्राह्मण ने कहा - महाराज। हिन्दू धर्म के अनुसार पत्नी आधी सम्पत्ति की अधिकारिन होती है। आपने वचनानुसार रानी का दान कर दिया है जिसके अनुसार अब सिरमौर की आधी रियासत के साथ आधी सम्पत्ति भी आपने दान कर दी।'राजा ने जैसे उसकी हाँ में हाँ मिलाई और इस प्रकार सिरमौर दो टुकड़ों में विभक्त हो गया।

राजा भारी मन से घोड़े से उतरा और अपने अंगरक्षक के घोड़े पर सवार होकर निराश हो सिरमौर चला गया। सिरमौरी प्रजा में विद्रोह न हो इसलिये राजा ने अपनी राजधानी में रानी के दान करने की बात छुपा दी और यह कहा कि किसी जरूरी कारज से मुझे वापस आना पड़ा और रानी कुछ दिनों बाद आ जायेगी। कुछ दिनों बाद सिरमौर में बाढ़ की घटना घटी और सिरमौरी ताल जलमग्न हो गया।

उधर हाटकोटी में राजा के अंश से जो बालक पैदा हुआ वह जुब्बल का प्रथम शासक बना तथा उसके बाद वीरभाट ब्राह्मण के अंश से दो बालक पैदा हुए जिन्हें वीरभाट ब्राह्मण ने रावींगढ़ और सारी गाँव दे कर अलग रियासतें बना दी।

सिरमौर का इतिहास लिखते समय इस काल में एक और विरोधाभास मिलता है। बलसन के इतिहास में सिरमौर के राजा का नाम अलग सिंह लिखा है जो नटनी के गिरी नदी में गिरने और उसके पश्चात विद्रोह होने के बाद वहाँ से भाग निकला था। उसके साथ उसका बेटा कलक सिंह, एक ब्राह्मण और एक अनुसूचित जाति का व्यक्ति तथा कुल देवी 'डंडकी' को साथ लेकर सिरमौरी ताल से निकल गये और बलसन क्षेत्र को जीत कर रियासत की स्थापना की। जुब्बल की परम्परा के अनुसार बाढ़ में डूबने वाले शासक का नाम उग्रचन्द था जबकि सिरमौर का इतिहास उसका नाम मदन सिंह कहता है। देव कुरगण की वंशावली में उसका नाम वीर प्रकाश बताया गया है। इन्दु काव्यम में राजा का नाम रणवीर सिंह लिखा है।

इसी घटनाक्रम के बारे में टेम्पल ने भी वर्णन किया है। उसके अनुसार,'मेरे पास एक उर्दू में लिखी पाण्डुलिपि है जिसमें सिरमौर रियासत के सम्बन्ध में लिखा है। इस पाण्डुलिपि के अनुसार सिरमौर रियासत की सीमा यमुना नदी के साथ लगती है। इस रियासत को शोभा रावल ने विजित कर सम्वत् 1165-1174 तक या सन 1118 से 1127 तक इस रियासत पर शासन किया। यह शोभा रावल जैसलमेर के सूर्यवंशी राजपूत रावल उग्रसेन का बेटा था। शोभा रावल ने सम्वत 1152 अर्थात सन 1095 में क्यारदा दून के समीप राजबन के जंगलों में अपने को स्थापित किया। शोभा रावल ने शुभवंश प्रकाश के नाम से सिरमौर की गद्दी सम्भाली। इसने सिरमौर पर 1095 से 1099 तक शासन किया। उसके बाद उसके बेटे राजा शालिवाहन प्रकाश (1099-1102) राजा बालकचन्द प्रकाश (1102-1108), उसके बाद राजा मल्ही प्रकाश (1108-1117) हुए। सिरमौर के सन्दर्भ में एक अन्य उल्लेख मिलता है कि सिरमौर के राजा मही प्रकाश (1108-1117) ने क्योंथल के राजा रूप चन्द से अपने लिये उसकी पुत्री की माँग की। लेकिन उसने देने से मना कर दिया। जिससे सिरमौर ने क्योंथल पर चढ़ाई कर दी। एक अन्य विवरण में मही प्रकाश का गुलेर के राजा की सहायता से हाटकोटी में युद्ध करने का उल्लेख मिलता है।

प्रकाश सिरमौर के राजाओं ने अपना उपनाम रखा था। इसी क्रम संख्या में सिरमौर की गद्दी पर 45वीं पीढ़ी में राजा शमशेर प्रकाश हुआ। सिरमौर के राजाओं के साथ नाहन बहुत देर बाद जुड़ा क्योंकि इस शहर को सिरमौर के राजाओं की 31वीं पीढ़ी के राजा कर्म प्रकाश के समय तक स्थापित नहीं किया गया था। इस राजा ने 1616-1630 ईस्वी तक सिरमौर पर शासन किया। टॉड द्वारा जैसलमेर की स्थापना की स्थापित की गई तिथि तथा जैसलमेर के राजकुमार द्वारा सिरमौर की स्थापना की ऐतिहासिक तारिखों के मध्य में स्थानीय लोगों द्वारा सिरमौर की स्थापना की निर्धारित की गई तारिखों में आँशिक अन्तर है।'

सिरमौर के इतिहास के अनुसार जब नगर के बाढ़ में ध्वस्त होने के बाद सिरमौर की राजगद्दी खाली हो गई। यह देखकर कुछ प्रभावशाली लोगों ने मिलकर अपने एक मन्त्री होशंगराय भट्ट को जैसलमेर भेजा। उसकी प्रार्थना पर जैसलमेर के राजा शालिवाहन द्वितीय ने अपने पुत्र हासू को सपत्नीक सिरमौर की गद्दी संभालने को भेजा। रास्ते में सरहिन्द के समीप हासू की मृत्यु हो गई। उसकी पत्नी गर्भवती थी। सिरमौर में टौंका पहुँचने पर पलाश के वृक्ष के नीचे उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम पलासु

रखा गया। कालान्तर में उसके वंशज पलासिया कहलाये। परन्तु यह सत्य प्रतीत नहीं होता क्योंकि रणजोर सिंह ने अपनी पुस्तक में जेम्स टॉड की पुस्तक का उदाहरण दिया है। टॉड साहब ने जिस रियासत का उल्लेख किया है वह बद्रीनाथ की पहाड़ियों में स्थित बताई गई है। दूसरे टॉड साहब ने उसमें मात्र बद्रीनाथ की पहाड़ियों में स्थित एक रियासत लिखा है। स्वंय रणजोर सिंह लिखते हैं - इस रियासत को बद्री नाथ की पहाड़ियों में स्थित बताया गया है, मगर बद्री नाथ की पहाड़ियों में कोई ऐसी रियासत नहीं है जिसका मुख्य पूर्वज जैसलमेर वंश से हो। बद्री नाथ की पहाड़ियों में केवल एक रियासत टिहरी गढ़वाल है जिसके मुख्य पूर्वज का नाम कनकपाल है जिसका जैसलमेर की वंशावली में कोई जिक्र नहीं है और न ही दूसरी घटनाओं से यह साबित होता है कि यह घटना रियासत गढ़वाल से सम्बन्धित है ...'

यहाँ यह स्पष्ट कर देना जरूरी है कि बिल्कुल यही कहानी पटियाला रियासत के इतिहास में भी मिलती है। और फिर देव कुरगण (मण्ढोड़) की कहानी ही इस घटना से शुरू होती है जो इसे ग्यारहवीं शताब्दी का नहीं बल्कि सातवीं शताब्दी की घटना बताती हैं। इसलिए कंवर रणजोर सिंह का उल्लेख गलत प्रतीत होता है। संभव है कि जो देव कुरगण (मण्ढोड़) की वंशावली में कहा गया हो वही सत्य हो। कालान्तर में उसी के वंशजों से पटियाला का वंशवृक्ष भी सुशोभित हुआ हो।

एक अन्य विवरण में उल्लेख मिलता है कि नटनी के श्राप के समय सिरमौर का शासक लक्षमण सेन था तथा नटनी का नाम रतिक्षमा था जिससे एक अन्य वंश 'सेन' के सिरमौर में शासन करने की बात पता चलती है। जबकि दूसरी लोककथा में विवरण में नटी का नाम नूरा, मन्त्री का नाम विधि चन्द, रानी का नाम रूपमती मिलता है जो जैसलमेर के राजा की पुत्री बताई गई है। इस कथा के अनुसार नूरा बला की खूबसूरत युवती थी और उसकी सुन्दरता पर राजा मुग्ध हो गया था। रानी ने ही जैसलमेर के सेनापति अपने चचेरे भाई मेघराज के साथ मिलकर नटनी के रस्से पर करतब दिखाने की योजना बनाई थी जिसे बीच में काट देने की योजना भी पहले ही बन गई थी ताकि रानी के रास्ते में आये काँटे को हटा दिया जाता। कथानुसार योजना सफल रही थी और जैसा कि ऊपर विवरण दिया जा चुका है नटनी के आधे रास्ते में ही पहुँचने पर रस्सा काट दिया गया था और नटनी नदी में गिर गई थी।

खैर उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि सिरमौर पर अनेक राजवंशों ने राज किया जिसमें परमार, राठौर, भट्टी, प्रकाश और सेन शामिल है। दूसरे यह भी प्रतीत होता है कि सिरमौर के शासक और लोग जब भी अपनी वंशबेल को खत्म होता देखते थे वह राजस्थान से प्रभावशाली राजखानदानों से युवराजों को लाकर समय समय पर यहाँ गद्दी पर बैठाते रहे। लेकिन यह हर बार नटनी के श्राप से जोड़ दिया गया जिससे विरोधाभास की स्थिति पैदा हो गई। यही कारण है कि इस काल के राजा के अनेक नाम मिल रहे है। जैसे - उग्र चन्द, अलग सिंह, मदन सिंह, वीर प्रकाश, रणवीर सिंह और लक्ष्मण सेन।

खैर! बाढ़ के बाद सिरमौर की गद्दी पर 48 शासकों ने राज किया। अन्तिम शासक राजेन्द्र प्रकाश के समय में रियासत काल खत्म हुआ और सिरमौर एक रियासत से बदल कर हिमाचल प्रदेश का एक जिला बन गया।

शिक्षा-क अनुभाग, कमरा नम्बर-402 (ए), आर्मजडेल बिल्डिंग, हिमाचल प्रदेश सचिवालय, शिमला-171002
मो. 0 94180 33783

भूरि सिंह संग्रहालय में परशुराम

हिंदू शास्त्रों में राम नाम की जो महिमा निहित है उससे सभी परिचित हैं। राम, मर्यादा, साहस और शौर्य की प्रतिभूति है। राम के तीनों रूप भारतीय शास्त्रों में वर्णित है जिनमें एक दशरथ पुत्र राघवेंद्र 'राम', दूसरे श्रीकृष्ण के सहचर 'बलराम' और तीसरे तीन बार क्षत्रियों का विनाश करने वाले 'परशुराम'। परशुराम महान तेजस्वी, शूरवीर एवं पराक्रमी कहलाए जाते हैं। ये महर्षि जमदग्नि तथा माता रेणुका की संतान थे। अग्नि पुराण में परशुराम की चतुर्भुज मूर्ति का वर्णन मिलता है जिसमें एक हाथ में धनुष, एक में बाण, एक में परशु और एक में खड्ग का उल्लेख है किंतु इस प्रकार की मूर्ति संपूर्ण क्षेत्र में देखने को नहीं मिलती। परशु राम की यह मूर्ति जो भूरि सिंह संग्रहालय चंबा में विद्यमान है। कला की दृष्टि से मध्यम श्रेणी की होते हुए भी तकनीकी दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इसमें भगवान परशुराम को चतुर्भुज रूप में दिखाया गया है। ऐसी मूर्ति बहुत कम देखने को मिलती है।

इस मूर्ति में उक्त अग्नि पुराण के वर्णन के अनुसार तीन वस्तुएं धनुष, बाण तथा परशु तो है लेकिन चौथे हाथ में खड्ग के स्थान पर शंख है। परशुराम की मूर्तियां हिमाचल के विभिन्न स्थानों पर हैं। मंडी के सुंदरनगर, कुल्लू के निरमंड, शिमला जिले में नीरथ, बुशहर तथा सिरमौर के रेणुका में। भूरि सिंह संग्रहालय चंबा में पहाड़ी कलम के अनेक चित्र भी परशुराम के जीवन पर आधारित हैं। परशुराम व सहस्रबाहू युद्ध का चित्र देखते ही बनते हैं। इस संग्रहालय में हमारी संस्कृति के हजारों वर्ष पुराने पौराणिक उपाख्यान आज मूर्तियों, चित्रों को देख कर लगता है, मानो कल की ही घटना हो।

देव कुरगण
गढ़ सिरमौरो रा टीका देवा

◆ अमरदेव आंगिरस

प्राचीन भारत का इतिहास और संस्कृति विश्व में गौरवशाली एवं समृद्ध मानी जाती है। वेद, पुराण, उपनिषद, गीता, स्मृतियां, रामायण, महाभारत आदि साहित्य ग्रंथ इसे प्रमाणित करते हैं। जब पश्चिमी दुनिया और अरब देश कबीलाई जीवन व्यतीत कर रहे थे तो भारत में मानव विकास एवं आध्यात्मिक विचारों की दुदुंभी पूरे महाद्वीप में गूंजती थी। पांच हजार ई.पू. वैदिक साहित्य-सभ्यता से पूर्व सिंधु नदी के किनारे भारत के मूल निवासियों की सभ्यता भी नगरीकरण तक विकसित हो चुकी थी। सिंधु और गंगा यमुना की उर्वर भूमि एवं भारत-भू पर छः ऋतुओं का प्राकृतिक आगमन इसे एशिया एवं यूरोप के समीपवर्ती देशों से समृद्ध एवं उन्नत बना सका था। भारत के उत्तर-पश्चिम के फारस, इरान, इराक, चीन आदि देशों के कबीलाई क्षेत्र के खानाबदोश कबीले भारत की समृद्धि की कहानियां सुनकर यहां निरंतर आक्रमण करते रहे। उनके अपने क्षेत्रों में चरागाहों में सूखा पड़ने एवं आपसी कबीलाई लड़ाइयों के कारण ये भारतीय प्रदेशों पर बर्बर अमानवीय आक्रमण करते और लूटमार करते। ये आक्रमण ईसा पूर्व पहली दूसरी शती से ईसा की पहली शती तक होते रहे। ये उत्तर-पश्चिम क्षेत्र के यूह-ची कबीले थे जो शकों से टकराए। शक भारत की ओर बढ़े और उत्तरी भारत के अनेक क्षेत्रों पर छा गए। इसी प्रकार कुषाण उसी यूही-ची जाति का कबीला था जो भारतीय क्षेत्रों पर विजय प्राप्त कर सका। इससे पूर्व सिकंदर के आक्रमण तथा उसके सिपहसालारों का यहीं बसना प्रारंभ हो गया था।

हिंदू ग्रीक-हिंदी पार्थव, शक कुषाण, हूण आदि गुप्तकाल छठी शती तक भारतीय क्षेत्रों में राज करते रहे तथा भारत की संस्कृति एवं जीवन शैली में समा गए। इतिहासकारों के अनुसार इन आक्रांताओं का अपना कोई व्यवस्थित जीवन दर्शन एवं धर्म नहीं था। ये तलवार के बल पर शासक तो बने, किंतु स्थानीय जनता के दिलों पर राज न कर सके। इसका प्रमाण सिकंदर और पोरस के वार्तालाप से प्रमाणित होता है। 6-7वीं शती में हजरत मुहम्मद के इस्लाम धर्म के सुल्तान, तुर्क, मुगल आदि इसीलिए भारतीय संस्कृति में पूर्णतया विलीन न हो सके क्योंकि इनका अधिकांश दर्शन भारतीय जीवन शैली से भिन्न ही नहीं विरोध के स्तर तक थी।

ईसा की छठी शताब्दी पूर्व महात्मा बुद्ध (563 ई.) से लेकर हर्षवर्द्धन (643 ई.) के राज्यकाल को भारतीय इतिहास का समृद्ध काल माना जाता है।

महाभारत काल के पश्चात, अस्तित्व में आए 16 जनपदों में भले ही संघर्ष रहा हो, फिर भी क्षेत्रों में शांति के समय श्रेष्ठ साहित्य की रचना हुई। देशी-विदेशी शासकों के भारतीय जीवन शैली में रचने-बसने के कारण यह संभव हुआ। इस काल खंड में ऐतिहासिक प्रमाण मिलने लगते हैं। अतः इसे पौराणिक काल (उत्तर वैदिक काल) के पश्चात 'ऐतिहासिक काल' के रूप में स्मरण किया जाता है। चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक महान, पुण्य मित्र, चंद्रगुप्त विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, कनिष्क एवं सम्राट हर्षवर्द्धन इस युग के महानायक माने जाते हैं। पुष्यमित्र के समय पतंजलि तथा मनु जैसे महान लेखक हुए और गुप्तकाल में कालिदास, भास, शूद्रक, विशाखदत्त, भट्टी, वात्स्यायन, दंडी, सुबंधु, भारवी, विष्णु शर्मा आदि महान लेखक हुए जिनके कारण संस्कृत साहित्य तथा भारतीय संस्कृति की आज तक विश्व में पहचान बनी हुई है। इसके अतिरिक्त इस काल में पुराण, स्मृतियां, बौद्ध और जैन साहित्य की रचना भी हुई। गुप्तकाल को भारत का 'स्वर्ण युग' कहा जाता है।

सम्राट हर्षवर्द्धन की मृत्यु के पश्चात 643 ई. से 1206 ई. तक के काल को 'राजपूत युग' के नाम से जाना जाता है। इस इतिहास के मध्य काल को भारत का 'काला इतिहास' भी कह सकते हैं। हर्षवर्द्धन की मृत्यु के पश्चात अरबी आक्रामक मुहम्मद बिन कासिम के (711 ई.), महमूद गजनवी, मुहम्मद गौरी आदि के आक्रमणों एवं विजयों ने भारत में बिखरे, परस्पर झगड़ते राजपूत रजवाड़ों के राज्यों को तहस-नहस कर दिया। यह

सिलसिला कुतुबद्दीन ऐबक (1206 ई.) से लेकर औरंगजेब की मृत्यु 1707 ई. तक चलता रहा। भारतीय संस्कृति, साहित्य इतिहास के गर्त में समा गए, फलस्वरूप भारत का गौरवशाली इतिहास लुप्तप्राय सा हो गया जिसे खोजना आज भी दुष्प्राय हो गया है। राजपूत रजवाड़ों की अपमानजनक पराजयों से भी उन्हें एकता के सूत्र में बंधने की परिस्थितियां नहीं मिलीं, परिणामस्वरूप सैकड़ों राजपूत वंश इस्लाम धर्म में दीक्षित हो गए।

राजपूत अपनी वीरता, ईमानदारी, वचनबद्धता एवं साहस के लिए विख्यात थे, किंतु जातीय अहंकार और परस्पर शत्रुता से पराजित हुए। राजपूतों एवं मुगलों के शासन में कुछ राजपूत योद्धाओं ने वीरता से मुगलों के रणक्षेत्र में छक्के छुड़ाए, किंतु विजयश्री प्राप्त न कर सके। पृथ्वीराज चौहान, बीसलदेव, खुमान, आल्हाऊदल, गोरा बादल, राणा सांगा, महाराणा प्रताप आदि की वीरता के किस्से इनसे संबंधित प्रशस्ति-ग्रंथों, काव्यों तथा लोक साहित्य में रचित मिलते हैं। इनके वंशज इन्हें पितृदेव मानकर इन्हें याद करते हैं किंतु विजयश्री न मिलने पर भी राष्ट्रनायकों के रूप में स्मरण करते हैं। तुर्क कबीलों और मुगलों ने लगभग सहस्राब्दी तक भारतीय राजनैतिक व्यवस्था को खंड-खंड कर दिया। ये 'बुतशिकन' कहलाना पसंद करते थे। अब वर्ण व्यवस्था तहस नहस हो गई। हिंदू राजवंशों को जबरन मुसलमान बना दिया गया। ब्राह्मणों को दंडित करना और अपमानित करना उनका विशेष प्रयोजन बन गया। किंतु इस धार्मिक दमन के परिवेश में भी ब्राह्मणों ने गुप्त रूप से व्यास के नाम से भारतीय इतिहास के ऋषि-मुनियों, देवताओं, अवतारों के इतिहास 'पुराण' नाम से रचित किए। यही नहीं, ज्योतिष, आयुर्वेद, नीति ग्रंथ, संस्कृत टीकाएं आदि काव्य ग्रंथ भी लिखे जाते रहे, जिनके कारण आज भारतीय संस्कृति एक जीवंत संस्कृति प्रमाणित होती है।

राजपूतों का धर्म परिवर्तन एवं पलायन

मध्यभारत की समस्त राजपूत रियासतों की पराजय पर हजारों राजपूत वीरों एवं वंशों को इस्लाम कुबूल करना पड़ा। कर्नल टॉड के 'राजस्थान' को उदृत करते हुए इतिहासकार ठा. ईश्वर सिंह मडाढ़ अपनी पुस्तक 'राजपूत वंशावली' में राजपूतों के धर्म परिवर्तन पर लिखते हैं :

"आगरा के आसपास परिहार मुसलमानों के 12 गांव हैं। इन्होंने मालगुजारी अदा करने से इनकार कर दिया था, फलस्वरूप मुसलमान बना दिए गए। इसी तरह जिला गोरखपुर में भी कौशिक वंशीय क्षत्रिय हैं। मालगुजारी के कारण ही इन्हें कैद कर मुर्गे का मांस खाने को भेजा। उन्होंने खाया नहीं छूने पर ही जातिच्युत कर दिए गए। इसी तरह जिला मिर्जापुर के गहरवार क्षत्रिय भी रायजादे बने। गोगा चौहान के वंशज कायम खानी चौहान कहलाते हैं। चौहानों में से 'खानजादा' मुसलमान बाबर ने जयचंद और उसके पुत्र त्रिलोक को मुसलमान बनाकर तातार खां नाम रखा। डोर मुसलमान चौहानों में से हैं। गौड़ और जायसवाल 'मालखन' कहलाते हैं।

सिंध में रहने वाले राजपूतों को रसीद खलीफा ने अनेक वंशों को मुसलमान बनाया - भाटी वंश से सामेजी, रामदेवा, कल्लर, चैनिया, ईसर, रहुमा, नोहरी, जिंज, मांगलिया आदि। परमारों से सोढ़ा परमार इसकी शाखाएं साबद, गज्जू आदि। तंवरों ने भइया और तन्नू, जोधपुर के नायक मुसलमान, चौहान, राठौड़ और गहलाते आदि वंशों से हैं।" इस प्रकार हजारों राजपूतों को मुसलमान बनाया गया जो आज करोड़ों की संख्या में हैं तथा अपने राजपूत गोत्र लिखते हैं।

इस परतंत्रता के युग में विदेशियों के आतंक और भय से मध्यभारत एवं दक्षिणी भारत से पलायन कर कुछ राजपूत राजकुमार, योद्धा और महत्त्वाकांक्षी वीर लाव लश्कर के साथ अपनी धन संपत्ति, बंधुबांधव और विश्वस्त सैनिकों के साथ हिमालयी पहाड़ी क्षेत्रों, गढ़वाल, प्राचीन रियासतों बाघल, बघाट, कुनिहार, बेजा, क्योंथल, भज्जी, कुमारसेन, जुब्बल तथा समस्त पहाड़ी क्षेत्रों में आबाद हो गए। चंबा, कुल्लू, सिरमौर आदि क्षेत्रों के निर्माता शासक भी राजपूत वंशों से ही संबंध रखते थे। केवल कांगड़ा साम्राज्य इनमें महाभारत काल से अनवरत अपनी राजनैतिक अस्मिता अक्षुण्ण रख सका।

हिमाचली क्षेत्रों में रियासतों की स्थापना प्राचीन काल में हुई है तथा अधिकांश यहां मिलती हैं। लेकिन यह सत्य है कि इन रियासतों के निर्माता मध्य और दक्षिणी भारत के राजनैतिक संघर्ष के कारण ही यहां आए। सिरमौर रियासत का इतिहास मिलता है। इसकी स्थापना 12वीं शताब्दी में हुई है। इससे पूर्व का इतिहास नहीं मिलता। सिरमौर रियासत के इतिहास की जानकारी राजस्थान तथा अन्य पड़ोसी रियासतों के लिखित दस्तावेजों से प्राप्त होती है।

सिरमौर में भट्टी राज्य

इसी प्रकार सिरमौर राज्य की नींव जैसलमेर से आए राजकुमार भट्टी राजपूत ने 1195 ई. में डाली थी। सिरमौर की स्थापना की तिथि के विषय में भिन्न-भिन्न मत हैं, किंतु यह संगत है कि 12वीं शती के अंत में सिरमौर में इस वंश की स्थापना हुई थी। इस शासक का नाम रावल शोभा या शुभंश प्रकाश था।

शुभंश प्रकाश से पूर्व सिरमौर राज्य यदुवंशी भट्टी वंश के अधीन ही था। इस विषय में एक जनश्रुति के अनुसार एक नट और एक नटनी राज्य की ख्याति सुनकर यहां सिरमौरी ताल में आए। लेखकों के अनुसार उस समय यहां मदन सिंह का राज था। परमानंद शास्त्री द्वारा लिखित इंदुकाव्यम में राजा का नाम रणवीर था। मियां गोवर्धन सिंह के 'हिमाचल प्रदेश का इतिहास' के अनुसार उसका नाम उग्र चंद था। नट ने बड़ी अद्भुत कलाबाजियां दिखाईं। कलाबाजी दिखाने के बाद नट ने राजा से

कहा कि यदि उसकी पत्नी एक पतली डोरी पर टौंका और पौंका पहाड़ियों के बीच दूसरी ओर जाकर फिर लौट आए तो राजा इसे क्या इनाम देगा? राजा को यह कार्य असंभव लगा। उसने तुरंत कह दिया कि यदि वह ऐसा कर दे तो राजा उसे आधा राज्य दे देगा।

नटनी ने ऐसा कर दिखाया। पर जब वह वापस आ रही थी तो राजा के मंत्री ने रस्सी कटवा दी। नटनी ने गिरते-गिरते शाप दिया, **"नीचे गिरी ऊपर पौंका, राजा की नगरी में रहने न कोई लोका।"**

अनुश्रुति के अनुसार उसी रात्रि को गिरी में बाढ़ आई और समस्त सिरमौरी ताल महलों के समेत नष्ट हो गया। राजवंश का कोई भी नहीं बचा। इसी समय भट्टी राजवंश का एक राजपूत योद्धा कुरगण प्रकाश अपने भाइयों प्रद्युम्न प्रकाश, बलदेव प्रकाश और उद्धव प्रकाश के साथ जान बचाकर भज्जी (सुन्नी) नलावण आ गया। कुरगण प्रकाश को 'कुरगण देव' के नाम से इस वंश के लोग पितृदेव के रूप में पूजते हैं। संभवतः यह राजकुमार इसी वंश का किसी जागीर में रहता था।

भट्टी वंशी कुरगण देव एवं वंशावली

प्रथम संवत एक में माघ मास में रविवार के दिन सिरमौर का राजा देव प्रकाश हुआ। इस राजा की सात रानियां थीं, जिनके कोई संतान न थी। जब राजा ने अपने मंत्री धर्मराय के पुत्र भद्रराय को बुलाया कि तुम योग्य उत्तराधिकारी को ढूंढो। भद्रराय उज्जैन नगरी के पास यदुकुल के राजा के पास गया। उस राजा का कोगक नाम का मंत्री था। उस राजा से उस भट्ट पुत्र ने उसकी रानी को दान में मांगा। रानी गर्भवती थी। वह रानी चंद्रवंशी थी जबकि राजा सूर्यवंशी था। राजा ने शास्त्रीय मर्यादानुसार सिरमौर नरेश के लिए रानी के साथ घोड़ा, नगाड़ा, बागा (वस्त्र), चौर और डोला दान में दिए। साथ में रुद्र नाम का गर्ग गोत्रीय ब्राह्मण भी भेजा। रास्ते में गंगा नदी के किनारे पलाश वृक्ष के नीचे गाजी प्रकाश राजा का जन्म हुआ। राजा गाजीप्रकाश एक रवि उत्तरै पौष मास एकादशी तिथि रविवार प्रविष्टे 13 शुभ लग्न घटि मुहूर्त में पैदा हुए।"

"सारे देश में नौबत बाजे बजने लगे। दरबार में स्वागत में उत्सव मनाए गए। इस राजा का गौत्र अवाण यादव माना गया। राजा गाजीप्रकाश की 31वीं पीढ़ी में सिरमौर का राजा वीर प्रकाश हुआ। वीर प्रकाश की दो रानियां थीं। बड़ी का नाम चंद्रकला तथा छोटी का नाम हरिप्रबोधिनी था। चंद्रकला मधुमास में गुरुवार, शुक्ल पक्ष में नवरात्र रामनवमी के दिन अष्टम सूर्य उत्तर, कर्क लग्नोदय, पुनर्वसु नक्षत्र, द्वितीय चरण, मिथुन राशि मध्य शुभ बेला में कुरगण प्रकाश पैदा हुए। दूसरा छोटा प्रद्युम्न प्रकाश तथा उससे छोटा बलदेव प्रकाश हुआ। दूसरी रानी के एक पुत्र पैदा हुआ जिसका नाम उद्धव प्रकाश था।"

वंशावली में नट-नटनी का प्रसंग होने के पश्चात कहा गया है, "टीका (बड़ा पुत्र) कुरगण प्रकाश भज्जी रियासत के नलावण नामक स्थान में बस गया। दूसरा भाई प्रद्युम्न प्रकाश 'सांझ' बनौण नामक स्थान में और तीसरा भाई गलोट (शिमला) में बस गए। उद्धव प्रकाश कुछ दिन बाद सिरमौर लौट गया।

"नलावण में जहां कुरगण ने अपना आवास बनाया था, से खड्ड पार बशैलड़ी गांव में किसी षड्यंत्र के तहत शलाड़ा वंश के ब्राह्मणों ने दराट से (टांगरू) वार किया और सिर धड़ से अलग कर दिया।" देव के सिर कटने और कटे सिर से बात करने के विषय में कई जनश्रुतियां प्रचलित हैं। उसके सेवक भड़ चनाल ने कटे सिर के साथ धड़ उठाया कि उसे सतलुज में बहा दे किंतु रास्ते में एक कक्कड़ के पेड़ के नीचे जब भड़ सुस्ताने बैठा तो धड़ ने पीने को पानी मांगा। वहां पानी नहीं था। अतः भड़ (भौड़) आगे चल 'मशे की धार' पहुंचने पर कटे सिर ने कहा कि अपनी गुर्ज (लोहे की छड़) जमीन पर मारो। भड़ (भौड़) ने वैसा ही किया तो वहां पानी की धारा बह चली।

देवता के देवरू वंशावली में गाते हैं -

"तोह कित्या तिन्ने शलाड़े बामणे जग्गे रे नियूंदे बुलाया

गढ़ सिरमौरो रा टीका, चढ़ा पहाड़े नो आया। टांगरूए फाट लाया।

सिर रहे या तेरा हियूणे बसाले, मशे रे ताने आया। किल्टुए चकी लाया"

और

"पहली चोट भड़े गुरजा री बाई माटीया री फाल कड़ाई
दूजा चोट भड़े गुरजा री बाई मैले री फाल कड़ाई
तीजी चोट भड़े गुरजा री बाई गौंचो री फाल कड़ाई
चौथी चोट भड़े गुरजा री बाई नीरो री फाल कड़ाई
ध्याय लगी भई भूरेया चनाला, सतलुजा रा नीर पियाई।"

कुरगण देव भज्जी क्षेत्र के अतिरिक्त सुकेत, क्योंथल, बाघल, बघाट, कुनिहार तथा सिरमौर क्षेत्रों में लोक देवता के रूप में पूजित है। मूल स्थान नलावण (सुन्नी) में है तथा देव के रथ-छत्र, सुन्नी (मढोड़घाट) व बाघल क्षेत्रों में वर्तमान है। देव कुरगण के एक प्राचीन कांस्य के मोहरे में मोहरे बनाने की तिथि तथा बनाने वाले का नाम टांकरी लिपि में लिखा है। यह मोहरा कराड़ाघाट (अर्की) के देवरे में रखा गया है। लिखा है -

"चीमने बामणे बणुए भराए। सरने लोहारे बणाए। संवत् 1982"

वंशावली भी इसी समय किसी पुजारी ब्राह्मण ने लिखी होगी। यही मूल वंशावली मानी जाती है। वंशावली में 'भारनी' (देवगान-स्तुति) तो नहीं है, किंतु देवरु 'भारनी' गाकर सुनाते हैं :

"कुरु देशा रा राजा देवा तू, नलावणे तेरे बेहड़े
चंदवंशी खानदानी तेरी, कुरु देशा ते आया

ओड़ी डाके तपस्या कित्ती, सिरमौरी टीका कहलाया
गढ़ सिरमौरो रा टीका देवा, नलावणे तेरे बेहड़े
क्षत्रीय वंशा रा राजा देवा तू, नलावणे राज सुहाय।
हिवणे बस, बशैलड़ी बस, नलावणे तेरे बेहड़े...
शलाड़ा ब्रामण बैरी तेरा तू, हिऊंणे धोखे दे काटा
भौड़े पीठी दे चक्की रो नियां, म्हशे रा पाणी निकाला'
माता मनसा रा धर्म भाई, देवकला दा आया। देव कुरगण कहाया...।'

भिन्न-भिन्न स्थानों पर सैकड़ों वर्षों में वंशावली में परिवर्तन हो गया है। किंतु भट्टी राजवंश तथा जैसलमेर-राजस्थान के इतिहास से वंशावली का नामों तथा अतिशयोक्ति कथनों के अतिरिक्त पूर्णतया साम्य प्रमाणित होता है। गिरी नदी की बाढ़ तथा सिरमौरी ताल का राजवंश समेत नष्ट हो जाना इतिहास संवत् घटना है। भट्टी वंश यदुवंश की शाखा है तथा सिरमौरी राजवंश नष्ट हो जाने पर इसी वंश के ये राजकुमार भज्जी रियासत में आए थे। यह भी सत्य है कि यह राजकुमार एक योद्धा था जिसने इस क्षेत्र के अनेक सामंतों, मावियों की निरंकुश सत्ता को समाप्त किया था। जनश्रुतियों में कुरगण के किसी स्थानीय संभ्रांत स्त्री से संबंधों के शंक में हिऊंण के शलाडा वंश के ब्राह्मणों ने धोखे से यज्ञ में बुलाकर मार दिया था। संभवतः वह वहां की बनसाई देवी थी जिसने कुरगण को शरण दी थी।

कुरगण के वंशज गलोटी कनैत

वंशावली के अनुसार बलदेव प्रकाश गलोट में बस गया था। उसकी मनमानी के कारण एक दिन एक ब्राह्मण ने, जो उसका पुरोहित था, अपने घर के आंगन में आत्महत्या कर ली। उसने अपनी पूजा-पाठ की पुस्तकें जला डालीं। बलदेव प्रकाश के विरुद्ध जनता में घृणा फैल गई। इस अपमान और ब्रह्म-हत्या के कारण बलदेव प्रकाश ने गलोट छोड़ दिया। उसने ग्याणा नामक स्थान पर बसने का निर्णय किया। उसके चारों पुत्र ग्याणा में महेश नामक ब्राह्मण के घर ठहरे। उसके सबसे बड़े पुत्र का नाम रत्तू राम था, दूसरे का महंतू राय, तीसरे का गौरू राम और सबसे छोटे का नाम बली राम था।

कुछ दिन ग्याणा में रहते हुए महेश ब्राह्मण ने उन चारों को अलग-अलग क्षेत्रों में जमीनें बांट दी। रत्तू राम को रठोह, महंतू राम को मांगू, गौरू राम को ग्याणा और बली राम को बस्याणा ग्राम दिए। महेश को ही पुरोहित बनाए रखा। महेश के दो पुत्र हुए - कलिया और माधो। उन दोनों के तीन पुत्र हुए। उन सबने इस इलाके से म्वाइयों को मार भगाया जो यहां लोगों पर अत्याचार कर रहे थे। सरदार म्वाई की औलाद चंडेल गोत्री कहलाई। कराड़े वाले कनैत सायरी डाबे में जाकर बसे। गौरू राम ने महेश के पुत्रों से धोखा किया। तब उन्हें ग्याणा से निकाल कर कराड़ा का शासक दिया", कुरगण प्रकाश के पूर्व राजाओं की वंशावली इस प्रकार मिलती है -

गाजिप्रकाश, जीत प्रकाश, धूम्र प्रकाश, हीरा प्रकाश, बहादुर प्रकाश, इंद्रप्रकाश, जती प्रकाश, गिरिप्रकाश, धनीप्रकाश, सूरजप्रकाश, वर्ण प्रकाश, धूमर प्रकाश, उमेदप्रकाश, भोला प्रकाश, अर्जन प्रकाश, खड्ड प्रकाश, चंद्रपकाश, विक्रम, हरि, रुद्रप्रकाश, शिव प्रकाश, ब्रह्मप्रकाश, विजय, जुद्ध, चक्र, गाजि, उदय, मही प्रकाश, शशिप्रकाश, माल प्रकाश, हजे प्रकाश, गजे प्रकाश और वीर प्रकाश। वीर प्रकाश का पुत्र कुरगण प्रकाश सिरमौर के ऐतिहासिक दस्तावेजों में यह विवरण नहीं मिलता। इसमें इस वंश की नींव डालने वाले का नाम शुभंश प्रकाश मिलता है। ऐसा लगता है कि सिरमौर ताल नष्ट होने के बाद कुरगण का परिवार जीवित बचा था। इनका वंश भी यदुवंश (भट्टी) ही था तथा ये राज्य के दूसरे भाग में किसी जागीर में रहते होंगे क्योंकि इनकी वंशावली बिलकुल भिन्न है।

जैसलमेर का भाटी वंश

प्रसिद्ध राजस्थानी इतिहासकार ठा. ईश्वर सिंह मडाढू की पुस्तक 'राजपूत वंशावली' में 'चंद्रवंश एक परिचय, उत्पत्ति और विस्तार' में वे इस वंश पर प्रकाश डालते हैं, "भाटी वंश को 'भट्टी वंश' भी कहा जाता है। इसकी उत्पत्ति चंद्रवंशीय राजा भाटी से हुई। श्रीकृष्ण ने जब मथुरा को छोड़कर द्वारका को अपनी राजधानी बनाया तो उसके वंशजों ने काठियावाड़ कच्छ, मथुरा, ग्वालियर, करौली, जैसलमेर तथा गुड़गांव तक राज्य स्थापित किया। इस वंश की एक शाखा पंजाब के पर्वतीय क्षेत्र में राज करती रही। यह क्षेत्र 'यदु की डांग' कहलाता था। इनके वंशजों ने पुष्पपुर, गजनीपुर बसाए। स्यालकोट का शासक शालिवाहन पराक्रमी राजा हुआ। इसका एक पुत्र भक्त पूर्णमल था जिसमें संन्यास ले लिया था और जो बाद में नाथों में चौरंगी नाथ' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। दूसरा पुत्र बालंद राज्य का अधिकारी बना। बालंद का पुत्र ही भाटी (भट्टी) था जिसके वंशज आज भी भाटी कहलाते हैं। इन्होंने ही 623 ई. में 'भट्टी' संवत चलाया था।

सिरमौरिया भाटी

कर्नल टॉड राजस्थान के अनुसार "राजा शालिवाहन के पुत्र बालंद के पांचवे पुत्र 'सरमौर' ने अपने नाम पर सिरमौर (हिमाचल) राज्य की स्थापना की। कुछ समय बाद इस राज्य का राजा निःसंतान मर गया। जिससे यह उजाड़ हो गया। रावल सोभा जी ने जैसलमेर से आकर पुनः इसे आबाद कराया। उसके वंशजों ने जुब्बल, बलसन, कुमारसेन, ठियोग, ढाढ़ी स्वैन, थरोच, कलसी आदि छोटी-छोटी पहाड़ी रियासतों को जीतकर अपने राज्य की सीमाएं बढ़ाई। 1750 में कीर्तिप्रकाश ने गढ़वाल नरेश को परास्त कर नारायणगढ़, मोरनी, पिंजौर और सिक्खों का बहुत-सा क्षेत्र जीत लिया।

यहां के क्षत्रिय 'सिरमौरिया भाटी' कहलाते हैं। रावल सोभा

के वंशज होने के कारण ये आज भी 'सोभांश प्रकाश' उपाधि धारण करते हैं।"

कुरगण राजकुमार की वंशावली सिरमौर तथा राजस्थान के जैसलमेर से पर्याप्त मेल खाती है। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि शुभंश प्रकाश (12वीं शती) से पूर्व भी यहां इसी वंश के भाटी राजपूत राजा का राज था। वंशावली में बार-बार 'यदुवंशी' 'चंद्रवंशी' और 'अवाण जादव' आदि नामों से स्तुति की गई है। मियां गोवर्धन सिंह जी जुब्बल और बलसन क्षेत्रों की जनश्रुतियों के आधार पर सिरमौर के पूर्व शासकों को 'राठौर वंश' का स्वीकार करते हैं। कुरगण की वंशावली से यह वंश यदुवंश अथवा भाटी वंश ही प्रमाणित होता हैं अनुश्रुति यह भी है कि राज्य के राजा की जब निःसंतान मृत्यु हुई तो लोगों ने एक प्रतिनिधिमंडल इसी वंश के राज्य जैसलमेर भेजा जो वहां से खाली राजगद्दी के लिए राजपुत्र को साथ लाए। वहां से शालिवाहन द्वितीय का पुत्र हांसू भेजा गया। दुर्भाग्य से हांसू की मार्ग में ही मौत हो गई। उसकी पत्नी साथ थी जो गर्भवती थी। उसने पलाश वृक्ष के नीचे एक बालक को जन्म दिया। इस बालक का नाम 'पलाश' रखा गया। बड़ा होने पर इसके वंश को 'पलाशिया' कहा जाने लगा।

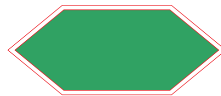
जैसलमेर के भाटी वंश की वीरता संबंधी शिलालेखों वि. संवत् 1221-1223 एवं 1232 के अनुसार राजा विजयराव ने मुगलों के आक्रमणों को बड़े साहस से रोका था। अतः भाटियों के लिए प्रसिद्ध हो गया - उत्तर भड़ किवाड़ भाटी' अर्थात् मुसलमानों के आक्रमणों को रोकने वाले द्वारपाल'। यह उपाधि आज भी जैसलमेर में नरेश लगाते हैं।

कुरगण की गाथा से कुछ तथ्य सामने आते हैं कि मध्यभारत के जो योद्धा पहाड़ी क्षेत्रों में लोक देवता बने वे मुगलों से संघर्ष करते अथवा उनके त्रास के कारण पलायन कर यहां आए तथा यहां की रियासतों (सामंतों) को जीत कर यहां के शासक बने। कुछ योद्धा सौतेले पुत्र होने के कारण अपने क्षेत्र छोड़ कर यहां आबाद हुए। यूं भी कह सकते हैं कि पितृदेवता विभिन्न राजवंशों के अंतिम योद्धा या शासक थे। मध्यभारत में तो मुगलों की सत्ता सुदृढ़ होने से राजपूत वीरों को सम्मान देने वाला चारणों के अतिरिक्त कोई न था। गूगा जाहर पीर, जगदेव परमार, वीरसेन, वीरचंद इसी प्रकार के राजकुमार योद्धा थे। हिमाचल की छोटी-छोटी रियासतों के असंख्य लोकदेवता इसी प्रकार के उन वंशों के अंतिम योद्धा थे, अतः जनसाधारण ने उन्हें पितृदेवता का स्थान दिया।

इनके चमत्कार अतिशयोक्तियों एवं कल्पनाओं पर आधारित हैं। केवल क्षेत्रों की विजय के कारण इन्हें पितृदेवता माना गया तथा इनकी साम्यता पौराणिक देवताओं से करके चमत्कार कथाएं गढ़ी गईं। कुरगण प्राचीन 'शिमला हिल्स' की रियासतों में अधिक लोकप्रिय है। अतः बाघल क्षेत्र में यहां के प्राचीन लोक देवता गणदेवता जो 'शिवगण' अथवा 'रुद्रगण' हैं और चंदेल वंश का पितृदेवता है, उसका नाम पुराने लोग 'कुरगण' ही पुकारते हैं।

कुरगण देव के वृत्तांत से मध्यकाल का इतिहास राजपूतों के संघर्ष और पहाड़ी क्षेत्रों की संस्कृति को स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त करता है।

अंगिरा भवन, समीप उद्यान विभाग, दाड़लाघाट,
हिमाचल प्रदेश-171 102, मो. 0 94181 65573



यमुना से दिल्ली जाती थी बर्फ



मुगलकाल में 1100 हिजरी जब सिरमौर में राजा बुद्ध प्रकाश का शासनकाल था, उस वक्त दिल्ली में बेगमों और राजशाही को बर्फ भेजी जाती थी। इसका उल्लेख राजा तथा तत्कालीन बेगम के साथ हुए पत्राचार में मिलता है। सिरमौर के निचले क्षेत्रों में बर्फ को गड्डों के भीतर रखा जाता था तथा इसे गर्मियों में दिल्ली भेजने की व्यवस्था होती थी।

सिरमौर रियासत से बर्फ को पहले कुलियों द्वारा यमुना के तट पर स्थित धमरास भेजा जाता था। यहां इन्हें बक्सों में बंद कर राफ्ट द्वारा परगना खिजाराबाद के दरयापुर ले जाया जाता था। यहां से किश्तियों में इसे दिल्ली पहुंचाया जाता था। दरयापुर से दिल्ली तक बर्फ पहुंचने में तीन दिन लगते थे।

बर्फ वाला राजा

हिंदुस्तान में औरंगजेब का राज लगभग 40 वर्ष रहा (1657 से 1707 तक) वह बर्फ का उपयोग गर्मियों में अपने दरबार तथा चुनिंदा अहलदारों के लिए करता था। इसका उल्लेख निकोलाओ मोनउची NICCOLAO Mannucci जो वेनिस का रहने वाला था और उसने 40 वर्ष भारत में गुजारे व अधिकांश वर्ष तक मुगल दरबार में रहा, के संस्मरणों में मिलता है।

औरंगजेब पहाड़ी राजाओं से बर्फ के रूप में खिराज (कर) लेता था। वह लिखता है कि कश्मीर तथा उसके साथ लगते पहाड़ी राजाओं से वह बर्फ के रूप में खिराज (कर) लेता था।

वह लिखता है कि दिल्ली के समीप एक पहाड़ी राजा से वह 150 रुपये नकद कर तथा गर्मियों में यमुना के माध्यम से बर्फ से भरी किश्तियों को कर स्वरूप स्वीकार करता था। बर्फ का उपयोग दरबारियों तथा दिल्ली के अवाम के लिए होता था। एक पहाड़ी राजा ने औरंगजेब से पूछा कि जब वह दिल्ली के लिए बहुतायत में बर्फ हर वर्ष भेजता है तो उसे नकद धनराशि देने की छूट दी जाए। और उसे दिल्ली में बर्फ बेचने की भी अनुमति दी जाए। औरंगजेब ने उसकी इस इच्छा को तीन कारणों से रद्द कर दिया। पहला कारण उसकी रियासत के बहुत से सिक्के बाहर जाएंगे। दूसरा राजा धनवान हो जाएगा। तीसरा कि वह हर किसी को बर्फ उपयोग की इजाजत नहीं दे सकता। इसका उपयोग वही कर सकते हैं जिन्हें मेरे हुकम से इसकी अनुमति प्राप्त हो।

यह राजा पहाड़ी क्षेत्र का सिरमौर या नाहन का राजा था जिसने 18वीं शताब्दी में बर्फी राजा या बर्फ राजा के नाम से पहचान बनाई थी जो दिल्ली सल्तनत को बर्फ भेजता था।

मुगलों का पहाड़ से नाता

मुगलों और सिरमौर रियासत के संबंध के बारे इतिहास की पुस्तकों/विशेषज्ञ रणजोर सिंह, तारीख-ए-सिरमौर, इलाहाबाद में मिलता है। सिरमौर की परंपरा और 'नंतराम का हार' लोककथा में मुगलों का क्यारदादून अर्थात् पांवटा में आक्रमण का उल्लेख मिलता है। यह घटना किस काल में हुई, इसका कोई वर्णन नहीं है। इस लोककथा से यह मालूम पड़ता है कि सिरमौर के राजा ने मुगलों का मुकाबला करने के लिए जौनसार बावर से मलथा के नंतराम को भेजा था। उसने किसी मुगल सरदार का सिर कलम किया और नाहन लौट आया।

नंतराम की हार

राजे री बोलौ राणी पांबटा हेरो
दूण खाई पांवटे री सुने री सेरो।
बावें बाशो धुधती दयनी केराई
ऐशा कोंवे खशीया देव मुगलो फेराई।
फूलों लो फूलटू डाली फूलो ली दाई
दूणी दा पांवटे रौआ मुगलो आई।
दूणी दा आया मुगलो धाड़े रे नासो
आदमी खे अन्न मिलो न घोड़े खे घासो
दूणी दा आया मुगलो भौउता थोड़ा
छौ लाख हाथा हदा नो लाख घोड़ा।
करी गई नंत रामा मनो री काई
शीरी बोलो मुगलों री हाथे गोई आई
मोडे रे मोडाइय खेली मोड़ाई
दूणी खा पांवटे दा मुगल आई
दूणों खा पांबटे दा मुगलो आई
दूण लेई पांबटे री मुगले खाई
नेगी देखी नंतराम शुक्राना तारा
आगे-आगे फौज पाछी नांतिया गुल्दारा
आगे किया नांति रामे निसाण नेता।
आंबू हंदा मुगला नाणी रा भेजा
नेगी मारो नंतिराम उलटी धार
चार काटे मुगल पांचा सरदार।

फारसी की एक दुर्लभ पुस्तक 'तबकात-ए-नासरी' में उद्धृत है कि हिजरी 634 तद् अनुसार 1236 ई. में नाज़ीम-उल-मुल्क मुहम्मद खां, जिसने अलतमश की सुपुत्री सुल्ताना रजिया बेगम के विरुद्ध विद्रोह किया था, सिरमौर क्षेत्र के वरदार नामक पहाड़, जिसको अब भहदराज कहते हैं और जो जिला देहरादून में मनसूरी (मसूरी) के निकट स्थित है, में शरण ली थी (तबकत-ए-नासरी, पेज 706 व 839)।

हिजरी 655 के मुताबिक 1257 में तुगलक खां ने संतूरगढ़ के दुर्ग में, जो उस समय सिरमौर क्षेत्र में था, शरण ली थी। इसके प्रमाण कलासिया रियासत के छछरौली में संदु वन में मिलते हैं। मोहम्मद शाह प्रथम ने संतूर गढ़ पर आक्रमण किया। एलग़ा खां महान ने सिरमौर की पहाड़ी रियासत पर आक्रमण कर उसे नष्ट कर दिया, क्योंकि सिरमौर के राजा ने तुगलक खां को शरण दी थी।

फिरोज शाह तुगलक के सुपुत्र नसीर-उल-दीन ने 1385 ई. में सिरमौर रियासत में शरण ली। इसका उल्लेख तारीख-ए-फारीश्ता, वॉल्यूम-एक पृष्ठ 150) में मिलता है। एलफिंस्टन भी अपने इतिहास में लिखते हैं कि सरोर के राय ने नसीर-उल-दीन की उसके भतीजे के बीच हुए युद्ध में सहायता की थी। (एलफिंस्टन का इतिहास, वॉल्यूम-दो, पृष्ठ 72 व 74)।

तैमूरशाह ने भी अपनी जीवनी में लिखा है कि उसने जमीन पार, शिवालिक की पहाड़ियों में, एक शक्तिशाली राजा रतनसेन का नाम सुना था, जिस पर उसने पंद्रह जमादी-उल-अब्बल, हिजरी 781 में शिवालिक पहाड़ी और कोका के मध्य डेरा जमाकर आक्रमण किया। राजा भी अनगिनत सेना लेकर उसके मुकाबले में आया। इस लड़ाई में खून की नदियां बह गई और राजा की हार हुई।

यह भी संभव है कि राजा रतनसेन वही हो, जिसका नाम

दिल्ली से आए रजाना के निवासी

सिरमौर जिले के मुख्यालय नाहन से 55 किलोमीटर की दूरी पर बसा रजाना गांव के शिखिर पर वराह रूपी देवता का प्राचीन मंदिर है। यहां वर्ष में बैशाख, आषाढ़, भादों व माघ महीनों में मेला लगता है।

ऐसी मान्यता है कि इस गांव को मुगल काल में दिल्ली से आए लोगों ने बसाया था। वे अपने साथ शस्त्र (खंडा) भी लाए थे। आज भी यह खंडा गांव के मध्य में गढ़ा हुआ है। गांव राजपूत बहुल है जिन्हें खोश व कनाईत कहा जाता है।

गांव में मशराली (बूढ़ी दिवाली) मनाई जाती है।

सिरमौर के राजाओं की वंशावली में रतन प्रकाश लिखा है, क्योंकि कोका पहाड़ अब तक सिरमौर क्षेत्र में आता है और यह पहाड़ सिरमौर की पुरानी राजधानी के समीप ही है, इस पहाड़ के उस तरफ शिवालिक शृंखलाएं हैं। कनिंघम भी इस रतनसेन को रतन प्रकाश बतलाता है बल्कि तैमूर ने अपनी जीवनी में स्पष्ट तौर से लिखा है, "मैंने क्यारदादून पर चढ़ाई की जो सिरमौर रियासत के क्षेत्र में है, इसलिए यह रतनेसन अवश्य ही सिरमौर का राजा रतन प्रकाश था जिसे भूलवश प्रकाश के स्थान पर सेन लिखा गया।

मुस्लिम शासनकाल में सिरमौर के राजाओं का रसूख और प्रभुत्व अच्छा-खासा था, अनेक अवसर पर दिल्ली के बादशाहों ने सिरमौर के राजाओं को युद्ध में सहायता देने को बुलाया जाता था। सिरमौर के राजाओं के नाम जारी शाही आदेशों से साबित होता है कि सिरमौर के राजाओं का दिल्ली के बादशाह बहुत सम्मान करते थे।

दिल्ली में बादशाह गढ़वाल इत्यादि में मुखियाओं को जमींदार लिखा करते थे, परंतु राजा सिरमौर को फरमानों (आदेशों) में जुबदत-उल-इंम्सान (खूबियों और अच्छाइयों का निचोड़) व जुलइकरान (निकट संबंधी) के खिताबों से संबोधित करते थे।

सिरमौर रियासत की सीमाएं एवं विस्तार

मुगल शासन काल में और उससे पूर्व सिरमौर रियासत का क्षेत्रफल बहुत बड़ा था। लेकिन इस बारे में ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। पुराने लेखों, प्राचीन भवनों तथा घटनाओं से सीमा की स्थिति का आकलन किया जाता है। सिरमौर रियासत की सीमा उत्तर में हाटकोटी जो पूर्व में बुशहर के अधीन था, वर्तमान में जिला शिमला तक, पूर्व में गंगा नदी से देवलमाली मंदिर तक जो रियासत गढ़वाल का हिस्सा वर्तमान में उत्तराखंड, दक्षिण में अंबाला जिले के नारायणगढ़ तहसील का दक्षिणी भाग, पश्चिम में सतलुज नदी से गोरखपुर बुर्ज तक जो रियासत नालागढ़ वर्तमान जिला सोलन में बदायूं के निकट सिरसा नदी के तट पर है, होती थी। समय के साथ रियासत के क्षेत्रफल में धीरे-धीरे कमी होती गई। रियासत के शासकों की दुर्बलता के कारण उनके द्वारा बाहरी इलाकों में नियुक्त अधिकारियों ने वहां अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया। इसका उदाहरण है अंबाला जिले की रामगढ़ रियासत का प्रथम पूर्वज कुशल सिंह बिलासपुरिया, जो कि रियासत सिरमौर में कार्यरत था और रियासत की ओर से उस परगना का सरदार था, गोरखों की लड़ाई में खुद मुख्तार हो गया, जिसे तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने बाद में अलग से मुखिया मान लिया। कुशल सिंह की एक बावड़ी और एक विशेष मंदिर नाहन शहर में मौजूद है जो कि मियां की बावड़ी व मियां के मंदिर के नाम से एक तालाब तो कुशल मियां के जौहड़ के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त इसकी पुष्टि उन लेखों और मुआफियात (ग्रांट) इत्यादि से होती है। जिला अंबाला के नारायणगढ़ में भी सिरमौर के महाराज कीर्ति प्रकाश द्वारा निर्मित जगन्नाथ मंदिर मौजूद है। इसी इलाके में महाराजा की ओर से कुछ गांव व बागान मुआफी के तौर पर दिए गए थे जिसकी सनदें मंदिर के महंत के पास मौजूद हैं। इसे तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने भी स्वीकार किया है।

देहरादून का गुरुद्वारा भी सिरमौर के राजा ने बनवाया था जिसकी सनदें देहरा के महंत के पास थीं। गढ़वाल के इलाके में मालीदेवर स्थान पर सिरमौर के राजा ने युद्ध में विजय की यादगार में विजय की मीनार बनवाई थी। इसी तरह महाराजा वीर प्रकाश ने भी एक विजय मीनार हाटकोटी में बनवाई, जो बाद में बुशहैर रियासत का हिस्सा बनी। देवी का एक मंदिर पब्बर नदी के किनारे और पहाड़ी पर दुर्ग का निर्माण करवाया। कालका के निकट पहाड़ पर जगतगढ़ किले का निर्माण करवाया, जो बाद में अंग्रेजों के वक्त में पटियाला रियासत का हिस्सा बना। इसका निर्माण महाराजा जगत प्रकाश ने करवाया। महाराजा सिरमौर ने कोटाहा क्षेत्र में जो 20वीं शताब्दी में मीर साहिब कोटा के अधीन था, में मोरनी किले का निर्माण करवाया। देहरादून के कालसी स्थान पर महाराजा सिरमौर के भवनों के खंडहर पाए जाते हैं। देहरादून, जौनसार, पहाड़ी रियासतों तथा यहां के निवासियों के पास उपलब्ध सनदें, मुआफियों से भी सिरमौर रियासत के सीमा विस्तार का आकलन होता है। मोहियुद्दीन शाह औरंगजेब ने 1090 हिजरी में उत्तम सेवाओं के बदले राजा बुद्ध प्रकाश को कालसी, जौनसार बावर, विराट और देहरादून के इलाके दिए थे और खलाखेर का इलाका, इलाका पिंजौर तथा कोटाहा सिरमौर के राजाओं को बादशाह शाहजहां ने उत्तम सेवाओं की एवज़ में दिए थे।

सिरमौर रियासत के ये इलाके समय के बदलाव से सिरमौर रियासत के हाथ से निकल गए और सिरमौर का बड़ा हिस्सा वर्ष 1815 ईसवी को गोरखों के साथ अंग्रेजों की लड़ाई के उपरांत रियासत से अलग हो गया। कालसी, जौनसार-बावर तो ब्रिटिश सरकार के क्षेत्र में शामिल हुए और पहाड़ी क्षेत्र में शामिल और पहाड़ी क्षेत्र में से गिरी नदी के उत्तर की ओर का इलाका क्योंथल के राजा को दिया गया तथा गढ़ीकोटा के इलाके को कोटा के मुखिया को दिया गया। पिंजौर तथा इसके आसपास के क्षेत्र को पटियाला रियासत में मिला दिया गया। जुब्बल जो सिरमौर रियासत के अधीन था, को राजा जुब्बल को प्रदान किया गया।

इससे स्वतः ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि सिरमौर वाकय में ही क्षेत्रफल के मुकाबले में सिरमौर था। मैदानों से लेकर दूरस्थ पहाड़ी क्षेत्रों तक रियासत का अधिपत्य था। इससे राज्य की सैन्य शक्ति, प्रमुख तथा सशक्त रियासत की झलक मिलती है।

ऐतिहासिक पुरुष

वीर नंतराम नेगी की वीर गाथा

सिरमौर जनपद में यत्र-तत्र ऐतिहासिक गाथाओं का भंडार भरा पड़ा है। ये गाथाएं जिले के गांव-गांव में कही और सुनी जाती हैं। रियासत काल में जौनसार बावर के नाम से प्रसिद्ध क्षेत्र जो अब उत्तराखंड का हिस्सा है, इसमें शामिल था। उस वक्त कालसी क्षेत्र पंजाब का हिस्सा था।

मुगलकाल में, मुगल सेना ने पांवटा को जीतकर कालसी की ओर कूच किया, तब शत्रु को शिकस्त देने के लिए राजा ने घोषणा की कि जो कोई भी बहादुर मुगल सेना का आगे बढ़ना रोक देगा, उसे वे अपना मंत्री बना देगा तथा कालसी भी पुरस्कार के रूप में उसे भेंट कर दिया जाएगा। इस घोषणा, उपरांत जौनसार बावर के बहादुर नंत राम नेगी ने अपनी सेवाएं रियासत को समर्पित कीं। फलस्वरूप नंत राम नेगी ने अपने अनूठे शौर्य से आक्रमणकारी सेना को पराजय का मुंह दिखाया। उस सूरमा का पराक्रम लोक गीतों में वर्णित है। ये गीत रेणुका, शिलाई और कंडियारी नामक इलाके एवं और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों जौनसार बाबर में गाए जाते हैं।

हिमप्रस्थ के वर्ष 1963 के अंक में केशवानंद ममगाई के लेख में प्रकाशित है कि उन्हें यह गाथा जौनसार निवासी श्री भवानी प्रसाद जोशी के सौजन्य से प्राप्त हुई। इसमें वर्णित है :

'जब मुगल बादशाह की सेना पांवटा के मैदानी इलाकों में आ पहुंची तब नाहन के राजा ने घोषणा की कोई बहादुर आगे आए जो मुगलों के दांत खट्टे कर दे। इस पर राजा को बताया गया कि जौनसार में मलेथा ग्राम के गुलदार नंतराम नेगी बहुत बहादुर हैं। अतः नेगी को संदेश भेजा गया। संदेश मिलते ही वे पत्नी से विदा लेकर नाहन की ओर चल पड़ा और कालसी पहुंचा। वहां उसने सब ओर खून-खराबा होते देखा। समस्त कालसी तहसील युद्ध की विभीषिका के काले-भूरे कोहरे में काला भयावना तथा निर्मम दिखाई देने लगी। राजा से आज्ञा लेकर वह घोड़े पर सवार होकर पांवटा के उस स्थान पर पहुंचा जहां मुगल सेना पड़ाव डाले थी। नंत राम ने अपने तीक्ष्ण डांगरे (पहाड़ी शस्त्र) से मुगल सेनापति का सिर कलम कर दिया और चार अन्य मुगलों का सिर काटने के उपरांत नाहन लौटा।

मोड़े रे मोड़ा इय खेली मोड़ाई, दूणी खा
पांवटे दा मुगल आई।
दण राखी पांवटेरी तंबऐं छाई
ऐसा भी कोई सूरम देऊ म्याने भराई।
000

मुगल पठान देना तेगें दी पाची
दाहिने हाथे नतिरामे डोंगरें खांची
एवलाड मोड़े जेंगरें री खा बीना रोना
सारी रूढ़ मुगले रीभाहिंया शाटेला
नेगी मारो नतिराम उल्टी छार
चार काटे मुगल पांचवा सरदार।

सिरमौर के राजाओं के शाही परिवार से घनिष्ठ संबंध थे। वे शहजादों और शहजादियों से सीधे तौर पर पत्राचार किया करते थे। सिरमौर के राजाओं द्वारा मुस्लिम शासकों को तोहफे भेंट करने के भी उल्लेख मिलते हैं।

शाहजहां की पुत्री जहांआरा की ओर से राजा बुद्ध प्रकाश के नाम पत्र

"तुम्हारा प्रार्थना पत्र इन दिनों पीली हरड़ और खट्टे अनार, नरबसी मुर्गेजरीं (कोलसा) और कस्तूरी के साथ हमें मिला है। हम चाहते हैं कि एक ओर मुर्गेज़री प्राप्त करके हमें भेजें। मेहरबानी के तौर पर हम तुम्हें एक शाही वस्त्र (खिल्लत) देते हैं।

एक अन्य फरमान में जहांआरा ने लिखा, "तुम्हारे प्रार्थना पत्र लगातार बर्फ के संदूकों के साथ हमारी नजर से गुजरते रहे। तुमने लिखा था कि बर्फ को सरकारी भंडार से सैयर शफ़ी और भूरे ने निकालकर भेजा है। बर्फ खराब थी।

एक अन्य फरमान में लिखा तुम्हारा प्रार्थना-पत्र शहद और बाज़ सहित हमारी नज़र से गुजरा। दोनों चीजें उत्तम हैं। श्रीनगर के जमींदार की शत्रुता के बारे में ज्ञात हुआ। तुम्हारे और उसके बीच हमेशा झगड़ा रहता है और वह अपनी बदबख्ती (हरकतों) से बाज नहीं आता। अच्छा हुआ कि तुमने उसके बारे में बादशाह हुज़ूर को सूचना दे दी। बर्फ के गिरने और दारोगा अब्दुल रहमान की सुस्ती का भी हाल मालूम हुआ। उसे लिखा गया है कि गिरदावरी अच्छी तरह से करे और मजदूरों की ध्याड़ी (दिहाड़ी) भी अच्छी दे। यदि वह पिछले साल की तरह कोताही करेगा तो उसका अच्छा फल नहीं पाएगा।

आलेख

सिरमौर रियासत से जुड़ा है 'मोरनी' का इतिहास

शिवालिक की पहाड़ियों में स्थित मोरनी वर्तमान में हरियाणा राज्य का पर्वतीय क्षेत्र है। मोरनी शिवालिक की पहाड़ियों की शृंखला का एक हिस्सा है। ऐतिहासिक भौगोलिक व सांस्कृतिक दृष्टि से मोरनी का जुड़ाव हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले से है। पूर्व में मोरनी का इलाका ठाकुर राजपूतों के अधीन 14 टुकड़ों में बंटा हुआ था। सिरमौर के राजा के अधीन ये इलाका कोटाहो परगना का हिस्सा था। इतिहासकारों के अनुसार सन् 1583 से 1605 तक राजा भगत प्रकाश के अधीन यह इलाका रहा। राजा भगत प्रकाश ने कोताहा के मुखिया मानचंद या दूपचंद या दीपचंद की पुत्री स्वाती का हाथ मांगा जो मुखिया को पसंद नहीं था। उसके मना करने पर राजा भगत प्रकाश ने कोताहा पर हमला बोल दिया। मुखिया मानचंद सपरिवार प्राण रक्षा हेतु दिल्ली भागने को विवश हुआ। वहां मानचंद ने इस्लाम धर्म अपना लिया और मोमन मुराह कहलाने लगा। उसने अपनी पुत्री का विवाह शहजादा जहांगीर से सन् 1605 से पहले कर दिया।

जब जहांगीर बादशाह बना तो उसने मोमन मुराद को कोताहा वापिस दिलाया। भगत प्रकाश मुगल फौज से डर गए थे। मोमन मुराद ने कोताहा और शिवालिक पहाड़ों को भूर सिंह देव शृंखला तक अपने कब्जे में लिया और एक पहाड़ी का नाम उसने प्रिय बेगम के नाम पर 'मोरनी' रखा। मोमन मुराद के बेटे फिल मुराद की कोई संतान नहीं थी। अब असली हाकिम हकीम कासिम खान हो गया जिसे मुगल बादशाह ने 'मीर' का खिताब दिया था। 21 मार्च, 1655 को शाहजहां ने कोताहा का इलाका एक फरमान के द्वारा सिरमौर के राजा सुभाग सिंह को दे दिया था। क्योंकि उसने श्रीनगर-गढ़वाल पर चढ़ाई करने में जम्मू और कांगड़ा के फौजदारों की सहायता की थी।

अहमदशाह अब्दाली के हमलों के दौरान कोताहा नारायणगढ़ और भिरोम की कमान मीर मुहम्मद बक के हाथ में थी। वाल्टर हैमिल्टन (1820) ने लिखा है कि 1775 में मोरनी पर सिरमौर के राजा का कब्जा हो गया था। गोरखा युद्ध के दौरान सिरमौर के राजा रत्न प्रकाश को भागकर मोरनी के किले में शरण लेनी पड़ी। सन् 1814 में गोरखों ने नाहन पर कब्जा कर लिया था। तत्पश्चात उन्होंने मोरनी के किले पर जबरदस्त आक्रमण किया किया और रत्न प्रकाश को परिवार सहित किला छोड़कर भागने पर मजबूर किया। अंग्रेजों के भारत आगमन पर सर डेविड ऑक्टरलूनी के नेतृत्व में ब्रिटिश फौज ने अमर सिंह थापा के नेतृत्व वाली गोरखा फौज की घेराबंदी कर 15 मई, 1815 को हुई संधि पर मजबूर कर मोरनी से जाने को मजबूर कर दिया था। तब अंग्रेजों ने नाहन रियासत को लौटा दिया और मोरनी का तालुका कोताहा के मीर जाफर अलीखान को एक सनद द्वारा दे दिया गया। इस प्रकार मोरनी का इलाका मीर जाफर अली को उसकी पुश्तों की मलकीयत बन गया। मोरनी के इलाके की खेती योग्य जमीन अभी भी मीर की जमीन कहलाती है।

मोरनी का हरियाणा राज्य में होने का भी इतिहास है। सन् 1948 में 28 रियासतों को मिलाकर एक चीफ कमिश्नर के अधीन एक प्रांत बना जिसे सन् 1950 में ले. गर्वनर के अधीन पार्ट-सी राज्य बना दिया गया और कालांतर में सन् 1956 में यूनियन टैरिटरी बन गया। सन् 1965 में भाषाई राज्य की बारंबार मांग की वजह से सरदार हुक्म सिंह की अध्यक्षता में 22 सदस्यों का संसदीय कमीशन बना जिसने सिफारिश की कि शिमला, लाहौल स्पीति, कुल्लू और कांगड़ा के पहाड़ी जिले को पठानकोट तहसील का डलहौजी इलाका, ऊना तहसील का अधिकांश इलाका व अंबाला जिला की नालागढ़ तहसील हिमाचल प्रदेश में मिलाई जाए। जब मोरनी का मुद्दा सामने आया तो हिमाचल प्रदेश ने 93 मील के इस इलाके पर जो नारायणगढ़ तहसील का 20 प्रतिशत हिस्सा था और भाषा, संस्कृति, भूगोल, इतिहास और परंपरा आदि के सभी पहलुओं के आधार पर इसकी जोरदार ढंग से मांग की। लेकिन शाह कमीशन (बाउंडरी कमीशन) ने नारायणगढ़ तहसील के टुकड़े न करने का फैसला लिया और इस प्रकार हरियाणा को मोरनी के रूप में एकमात्र हिल स्टेशन मिल गया। यह तथ्य इतिहासकार श्री सुरेंद्रपाल सिंह ने अपने एक लेख 'मोरनी : एक ऐतिहासिक झलक' में विस्तारपूर्वक जताया है।

वर्ष 1970 में मोरनी के ताल की खुदाई की गई थी और वहां प्राप्त मूर्तियों को चंडीगढ़ स्थित 'म्यूजियम एंड आर्ट गैलरी' में रखा गया है। इससे संकेत मिलता है कि इस इलाके में शैव परंपरा का प्रचलन था। पिंजौर में भीमा देवी मंदिर के अवशेष, त्रिलोकपुर मंदिर आदि के मिले अवशेष से स्पष्ट है कि पूरा इलाका शैव परंपरा के प्रभाव में था। आज भी यहां लोगों के रहन-सहन, खान-पान व धार्मिक रीति-रिवाजों पर इसकी छाप स्पष्ट देखी जा सकती है।

सिरमौर का हिस्सा रहा है पिंजौर

घग्गर नदी की सहायक नदियां कौशल्या तथा छाजरा के संगम पर बसा पिंजौर, आज हरियाणा प्रदेश का एक प्रमुख पर्यटन एवं धार्मिक स्थल है। यह कालका से तीन मील तथा हिमाचल के परवाणू औद्योगिक शहर से 10 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इसके आसपास प्राचीन हिंदू मंदिरों, बावड़ियों, कुंडों के अवशेष आज भी मिलते हैं जोकि इसके गौरवमय इतिहास का स्वतः ही व्याख्यान करते हैं। प्राचीन काल में यह स्थान पंचपूरा या पिंजौर के नाम से जाना जाता था। इतिहासकार इसका संबंध महाभारत काल से पांडवों के साथ जोड़ते हैं। कालका के समीप दूसरी तथा तीसरी शताब्दी का प्राप्त शिलालेख इस बात का आभास दिलाता है कि यहां आर्यों की आरंभिक बस्तियां रही होंगी। पिंजौर के पवित्र कुंड तथा मंदिर की दीवार पर जोकि पुलिस स्टेशन के साथ लगती है, की दीवारों पर 869 तथा 872 संवत विक्रमी 812-13 तथा 815-16 ए.डी.) उकेरित है।

इस स्थान का सर्वप्रथम उल्लेख वर्ष 1030 में अबू-रेहम-अल-बरूनी ने किताब-उल-हिंद और MIHAJUS-Siraj ने Tabaqat-i-Nasire में किया है। यह स्थान सिरमौर रियासत का हिस्सा रहा है, जिसकी खूबसूरती तथा महत्त्व पर पहली दफा गुलाम वंश के दिल्ली के नसीर-उद-दीन मोहम्मद (1246-66) के पुत्र शमश-उद-दीन अलतमश का ध्यान गया। उसने इसे सिरमौर रियासत से अपने कब्जे में लिया और यहां स्थित पुराने कुंडों तथा मंदिरों को क्षतिग्रस्त किया। Tabaqat-i-Nasiri के अनुसार सुलतान नसीर-उद-दीन ने 1254 में पंजपुरा तथा आसपास के क्षेत्रों पर कब्जा कर वहां से धन-दौलत लूटी। जनवरी 1399 में तैमूर ने भी दिल्ली में लौटते वक्त तथा राजा रत्नसेन को (Rai Rattan of Sharaf-ud-Din Yazdi's Jafar Nama) कालका की पहाड़ियों पर हराया।

औरंगजेब के शासन के चौथे वर्ष, 1661 में उसके दत्तक भाई फिदाई खान ने यहां पर नाहन के हिंदू राजा से लेकर पंजौर में अपना आवास बनाया। वे वास्तुशिल्प तथा भवन निर्माण का पारखी था। उसने लाहौर के शालीमार उद्यान का प्रतिरूप यहां निर्मित किया। उसने पास की पहाड़ी से एक नहर का निर्माण कर जल को उद्यान तक लाया। यह उद्यान लाल गुलाब की खेती के लिए मशहूर था। इसका उल्लेख मुंशी सज्जन राय भंडारी ने किया है। सज्जन राय के अनुसार यहां सातवीं शताब्दी में प्राचीन हिंदू मंदिर अवस्थित था जो भीमा देवी के नाम से विख्यात था। अब यह मंदिर यहां नहीं है। फिदाई खान यहां लंबे समय तक नहीं रहा। उसका इस स्थान को छोड़ने के पीछे क्षेत्र में गिल्लड़ की बीमारी को माना जाता है। वर्ष 1675 में सिरमौर के राजा ने इस पर पुनः कब्जा कर लिया। जनवरी 1764 में सिखों ने सरहिंद पर कब्जा कर लिया तथा अनेक नई रियासतें प्रकाश में आई। मनीमाजरा इसमें से एक थी।

सिरमौर के राजा कीरत प्रकाश ने पटियाला के राजा अमर सिंह से पिंजौर को वापिस प्राप्त करने का आग्रह किया। पटियाला के राजा ने मलिक लखना के नेतृत्व में सैन्य दल भेजा। तथा सिरमौर को वर्ष 1769 में पुनः पिंजौर लौटा दिया गया। लेकिन मनीमाजरा ने इस पर पुनः कब्जा कर लिया। वर्ष 1775 में कीरत प्रकाश की मृत्यु हो गई। तीन साल उपरांत वर्ष 1778 में महाराजा अमर सिंह ने महा सिंह तथा पखर सिंह के नेतृत्व में सैन्य दल भेजा। उन्होंने पिंजौर पर कब्जा किया और इसे पटियाला रियासत का हिस्सा बना दिया। उनका यह तर्क था कि नाहन इस पर अपना अधिपत्य बनाए रखने में कायमाब नहीं है।

वर्ष 1792 में मराठा सेना में फ्रेंच यायावर लूईस ब्रकून (Louis Bourquin) ने पिंजौर पर कब्जा किया और पिंजौर के किले को गिरा दिया। अप्रैल 1803 में लुईस ब्रकून ने इस महल को खाली कर दिया। इसके बाद यह पटियाला रियासत के अधीन रहा। वर्ष 1810 में गोरखा सेनापति अमर सिंह थापा के डर से यह कुछ वक्त खाली रहा। पिंजौर पटियाला रियासत की तहसील थी। वर्ष 1861 में महाराजा नरेंद्र सिंह के शासनकाल में इसे पूर्णरूपेण जिला (निजामत) बनाया गया। इसके तहत तीन तहसीलें राजपुरा, बनूर, पिंजौर तथा गनौर को शामिल किया गया। वर्ष 1918 में

पंचकुला में नाहन कोठी

सिरमौर रियासत के राजा फतेह सिंह (1857-63) के सुपुत्रों सुर्जन सिंह व बीर सिंह ने पंचकुला में नाहन कोठी का निर्माण करवाया था। यह 19वीं शताब्दी की ब्रिटिश वास्तुशिल्प का बेजोड़ नमूना है। यह कोठी एक संरक्षित श्रेणी में आती है। यह हरियाणा सरकार के आर्कोलॉजी विभाग के तहत है।

उस वक्त सिरमौर रियासत के अंतर्गत मोरनी तथा हरियाणा की काफी क्षेत्र आता था। रियासत की राजधानी के नाम पर इसका नाम नाहन कोठी रखा गया। इस कोठी का उपयोग रियासत काल में सीमावर्ती ठहराव स्थल तथा शिकार खेलने के वक्त उपयोग में लाया जाता था। इस कोठी को वर्ष 2007 में संरक्षित स्थल घोषित किया गया था।

हाटकोटी तक फैली थी सीमाएं

हाटकोटी का प्राचीन नगर शिमला से 62 मील पूर्व की ओर जुब्बल में बिशकली और पब्बर नदियों के संगम पर दाहिनी ओर बसा हुआ है। हाट राजधानी को और कोटी छोटे गढ़ (किला) को कहते हैं। हाटकोटी को कब और किसने बसाया, इतिहास इस विषय में मौन है। जनश्रुति के अनुसार यह नगर महाभारत काल से बसा हुआ है और राजा विराट की ग्रीष्म ऋतु की राजधानी थी। उसने यहां पर सनपूर नाम की पहाड़ी पर एक गढ़ भी बना रखा था। वह प्रतिवर्ष देवी की पूजा के अभिप्राय से यहां आया करता था। उक्त राजा ने अपने नाम पर एक 'विराट नगर' नाम का शहर कालसी से 12 मील दूर जौनसार बाबर की घाटी में भी बसाया हुआ था। जिसके ध्वंसावशेष अब भी वहां पाए जाते हैं।

जुब्बल के इतिहास से ज्ञात होता है कि 12वीं शताब्दी से पूर्व हाटकोटी सिरमौर राज्य के अधीन था। उस समय सिरमौर इस पर्वतीय क्षेत्र में गंगा से सतलुज तक फैला हुआ था और दक्षिण में इसकी सीमा सहारनपुर व अंबाला के उत्तरी भाग तक थी। इसकी राजधानी सिरमौरी ताल थी जिसके खंडहर अब तक तहसील पांवटा में गिरी नदी के किनारे मिलते हैं।

इस प्राचीन सिरमौर राज्य का अंतिम राजा उग्र चंद था जो 12वीं शताब्दी में अंत में गिरी नदी में बाढ़ आने के कारण राजधानी सहित बह गया। कहते हैं कि वह राजा अपनी रानी व तीनों पुत्रों सहित ग्रीष्म ऋतु को बिताने के लिए हाटकोटी में आया हुआ था। वहां से उसे किसी आवश्यक राजकार्य से रानी व तीनों पुत्रों को हाटकोटी में छोड़ कर शीघ्र सिरमौरी ताल जाना पड़ा। राजधानी पहुंचने के कुछ समय उपरांत गिरी नदी में बाढ़ आने के कारण राजा व नगर दोनों बाढ़ में बह गए। कोई भी व्यक्ति ऐसा न बचा जो इस दुखद समाचार को रानी व पुत्रों तक पहुंचा दे। इन्हीं दिनों जैसलमेर के रावल सालवाहन दूसरा अपनी रानी, पुत्र व सेना के साथ हरिद्वार में तीर्थ यात्रा के लिए आया हुआ था। उसे हरिद्वार में सिरमौर ताल व राजवंश के नष्ट होने की घटना सुनी तो उसने अपने पुत्र को सेना के साथ सिरमौर पर अधिकार करने को भेजा और इस प्रकार 1195 में नए सिरमौर की नींव पड़ी। उधर नदियों में बाढ़ के कारण हाटकोटी में रानी तथा उसके तीनों बाल पुत्रों को बाढ़ में राजा व राजधानी के बहने और राज्य पर जैसलमेर के रावल के अधिकार करने का समाचार बहुत समय बाद मिला। अंत में रानी ने अपने राज पुरोहित वीट भाट की सहायता से हाटकोटी क्षेत्र को अपने तीनों पुत्रों में बांटा। ज्येष्ठ पुत्र कोटीकरण चंद्र को हाटकोटी, मूल चंद्र को सायरी और दूनी चंद को रावींगढ़ मिला। कुछ समय उपरांत कोटीकरन चंद्र अपनी राजधानी जुब्बल ले गया और हाटकोटी को अपने अधिकर में रखते हुए अपने पुरोहित के पुत्र को वहां की जागीर सौंप दी और मंदिर का प्रबंधक बनाया।

1864 में सायरी को अंग्रेजी सरकार ने बुशहर रियासत में मिला दिया। सायरी के बुशहर में विलय के उपरांत कुछ वर्षों उपरांत जुब्बल और रावींगढ़ के मध्य हाटकोटी को लेकर विवाद उपजा। इस विवाद पर अंग्रेज सरकार ने वर्ष 1866 में निर्णय देते हुए हाटकोटी पर तीनों रियासतों का समान अधिकार दिया।

सिरमौर के राजा वीर प्रकाश का भी हाटकोटी पर कुछ समय तक अधिकार रहा।

संदर्भ : जुब्बल का ऐतिहासिक नगर हाटकोटी,
गोवर्धन सिंह, हिमप्रस्थ, फरवरी, 1963

पिंजौर की निजामत कोहिस्तान में शामिल किया गया। पिंजौर हिंदुओं का प्राचीन तीर्थस्थल है। यहां पवित्र जलाशय जिसे धारा-चैतर या धारा मंडल के नाम से जाना जाता है। इस तीर्थ के पास ही सिख गुरुद्वारा है, जिसे गुरु नानक देव की याद में निर्मित किया गया। इसका निर्माण राजा कर्म सिंह के कार्यकाल में हुआ। इसके लिए 88 बीघा भूमि तथा 51 रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की गई। गुरु नानक के जन्म दिवस पर यहां मेला आयोजित होता है। पिंजौर में मस्जिद भी है। जो मुस्लिम शासकों की याद को ताजा करती है। एलेग्जेंडर कनिंघम के अनुसार इस मस्जिद का निर्माण मंदिरों को गिरा कर दिया गया था। पिंजौर अपने उद्यान तथा रंगमहल तथा शीशमहल के लिए प्रसिद्ध है। लेकिन यह सच है कि यह क्षेत्र कभी सिरमौर रियासत के अधीन था।

संदर्भ 26 जनवरी, 1954, द ट्रिब्यून में प्रकाशित लेख
Panjaur by S. Ganda Singh MA Ph.D,
Director Archives Pepsu

संस्कृति



शिरगुल के देवत्व का प्रतिबिंब : चूड़धार

चूड़चांदनी पर्वतमाला सिरमौर जिले की शान, पाश्चात्य अन्वेषकों तथा यात्रियों ने इसे विश्व की सुंदरतम पर्वतशृंखलाओं में से एक की संज्ञा दी है। विग्ने जी.टी. (Vigne, G.T. Travels in Kashmir, Ladak, Is Kardo Vol I, P 34), के शब्दों में, "चूड़धार विश्व में दूसरे स्तर के श्रेष्ठतम पर्वतों में से एक है।"

भू-वैज्ञानिक भी चूड़ को बाह्य हिमालय का एक विशिष्ट पर्वत मानते हैं। भौगोलिक दृष्टि से यह पर्वतशृंखला पूर्व-दक्षिण में यमुना तथा उसकी सहायक नदियों पब्बर, तौंस व गिरीगंगा को बंगाल की खाड़ी में और उत्तर-पश्चिम में सतलुज तथा सिंधु को अरब सागर में प्रवाहित होने का मार्ग प्रशस्त करती है। इस पर्वतशृंखला के अंचल से असंख्य नदी-नालों, झरनों का उद्भव होता है। इस शैल शिखर के पादतल से पूर्व में हामलटी खड्ड-सराहां-चौपाल से होकर पाताल खड्ड (पाताल नौ)-भुज्जल-भड़ोली (सिरमौर) से होकर, पश्चिम में रौड़ी खड्ड (चूड़ रो नईट)-नौहराधार-थनगा (सिरमौर) से होकर, उत्तर में झझेतू और रेहटी खड्ड-सर्वा-पुजारली (सिरमौर) से होकर तथा दक्षिण में सैंज खड्ड-तराहां-बाग-मझोली (चौपाल) से होकर प्रवाहित होती है। यह पर्वतमाला प्राकृतिक वैभव का अनमोल खजाना भी है।

पाश्चात्य भू-वैज्ञानिक थोरंटॉनप के शब्दों में, "इस चोटी पर ग्रेनाईट की वृहद परतें हैं जो ठोस और घनी होने पर भी मौसम के प्रभावों के कारण अलग-थलग पड़ी हैं।"

चूड़धार को स्थानीय बोली में चूड़चांदनी या लिंगअ रा टिब्बा की संज्ञा से अभिहित किया गया है। लोक संस्कृति में चूड़धार का अत्यंत सुंदर वर्णन मिलता है। यथा 'ठांडा पाणी चूड़ चांदणी रा' अर्थात् चूड़ चांदनी का शीतल पेयजल। 'चूड़ लाणी रा हिंअ रे' अर्थात् चूड़धार की बर्फ आदि। शिशिर ऋतु में चूड़चांदनी बर्फ की सफेद चादर ओढ़ लेती है। वसंत के आगमन पर बर्फ से कुछ ढकी कुछ नंगी चोटियां पर सरसरी नजर डालने से इस पर्वतमाला पर चांदी की चूड़ियां होने का भ्रम होता है। ग्रीष्म ऋतु के आगमन पर यह सैलानियों व श्रद्धालुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है। वासंती मौसम में तो यहां नैसर्गिक जीवन का संचार होता है तथा प्रकृति अनेक रंगों में एक साथ उभर कर आती है।

चूड़चांदनी का सौंदर्य शिरगुल की लोकगाथा के इर्दगिर्द घूमता है। चूड़ वास्तव में दिव्यशक्ति से संपन्न शिरगुल देवता की कर्मस्थली रही है। लोकश्रुति है कि शिरगुल ने यहां पार्थिव शिवलिंग की पूजा कर घोर तपस्या की थीं यहीं शिरगुल को शिवत्व प्राप्त हुआ। यहां शिखर पर स्थापित मंदिर में स्थापित शिवलिंग तथा जल की बावड़ी शिरगुल द्वारा किए गए तप के प्रतीक चिन्ह माने जाते हैं। शिरगुल के इन प्रतिमानों की लोकमानस में अटूट आस्था है। शिरगुल अधिष्ठित ग्रामों में ग्रामवासी शिरगुल रूपी इन

बिंबों के दर्शन करने यथासमय एकल तौर पर या संयुक्त जातर लेकर जाते हैं।

जनश्रुति है कि चूड़धार पर जल उपलब्ध नहीं था। यहां शिव तपस्या में लीन शिरगुल को जल अभाव सताने लगा। शिरगुल देवता ने हनोल जाकर महासु देवता से चूड़धार में तौंस से एक जलधारा प्रवाहित करने का आग्रह किया। महासु देवता ने शिरगुल के वचनों की अनसुनी कर चूड़धार के लिए जल की धारा देने से इनकार कर दिया। इस पर शिरगुल देवता क्रुद्ध हुए। उन्होंने क्रोध के आवेश में आकर चूड़धार पर आसमानी बिजलियां बरसाईं। उन कौंधती करका से चूड़धार में एकाएक जल मेघ फूटने लगा। कालांतर में इसी स्थान पर जल बावड़ी का निर्माण हुआ। यह जल बावड़ी भी गहरी लोकआस्था की प्रतीक है।

यह भी लोकश्रुति है कि महासु के प्रति शिरगुल देवता में प्रतिशोध की ज्वाला थम नहीं पाई। इसी प्रतिशोध में शिरगुल देवता ने आकाश मार्ग से महासु मंदिर पर आसमानी गोलों से प्रहार किए। आखिर महासु देवता ने शिरगुल देवता से क्षमा याचना कर उन्हें शिरोधार्य रखा। इस तथ्य का प्रभाव आज भी हनोल में देखने को मिलता है। महासु मंदिर के शीर्ष पर शिरगुल देवता के नाम का 'भेखल' स्तंभ लगा है। यही लोकमान्यता एवं शिरगुल व महासु के मध्य सहोदर धर्म की प्रतीक मानी जाती हैं।

जनश्रुति है कि जब चूड़चांदनी पर आसुरी शक्तियों का प्रभाव बढ़ गया तो शिरगुल ने उन आसुरी ताकतों को ध्वस्त कर लोक कल्याण की भावना से प्रेरित होकर देव साम्राज्य स्थापित किया था। शिरगुल के तेजस्वी चमत्कारों की ज्योति ने जनमानस में अमिट छाप छोड़ी है। तत्कालीन परिस्थितियों में सिरमौर, जुब्बल, बलसन आदि रियासतों की जनता शिरगुल को संकट हरण देवता के रूप में मानने लगी। सिरमौर के गिरीपार क्षेत्र तथा जुब्बल रियासत के चौपाल व पुलबाहल जनपदों में तो शिरगुल देवता के प्रति अगाध श्रद्धा रही है। घुंड रियासत में भी शिरगुल प्रधान देवता के रूप में पूजित है। जबकि रतेश, ठियोग आदि रियासतों में शिरगुल को अन्य देवताओं के समान मान्यता प्राप्त है।

चूड़चांदनी पर शिरगुल स्तुति के लिए वैशाख माह का विशेष महत्त्व है। शिरगुल देवता का जातर ले जाई जाती है। वैशाख के पर्व पर चूड़धार में श्रद्धालुओं की भीड़ उमड़ती है। शिरगुल देव परंपरा के अंतर्गत इस माह में ग्रामों में शिरगुल देवता को समर्पित मेले आयोजित होते हैं। जिन्हें स्थानीय बोली में 'बिशू' कहा जाता है। श्रावण तथा मार्गशीर्ष माह में भी चूड़चांदनी जातर लेकर जाना शुभ मानते हैं। श्रावणी पूर्णिमा में अवसर पर शिवधाम चूड़धार को जाना विशेष महत्त्व का है। इसी दिन पार्वती ने भस्मासुर से अपनी तथा शिव की रक्षा हेतु रक्षा-सूत्र पहनाया था। एक लोकश्रुति के अनुसार शिरगुल देवता की मान्यता को लेकर कुछ गांवों में श्रावण तथा भाद्रपद माह की संक्रांति को क्रमशः 'हरियाली' तथा चड़ेवली मेले आयोजित होते हैं।

चूड़चांदनी शिरगुल देवता की कर्मभूमि तो रही है लेकिन सौंदर्य का पर्याय यह पर्वतमाला रियासतकालीन शासकों के आकर्षण का केंद्रबिंदु भी रही। चूड़धार पर विजय पाने के लिए सिरमौर तथा जुब्बल रियासत के शासकों में सतत होड़ लगी रही। लोक विश्वास है कि इस भव्य धरा के लिए सिरमौर के नौहराधार व सराहां तथा शिमला जिले के पुलवाहल व सराहां से पैदल मार्च करते हुए जाते थे। चूड़चांदनी की दूरी नौहराधार से 14 किलोमीटर, पुलबाहल से 10 किलोमीटर तथा सराहां से 7 किलोमीटर है।

चूड़धार की धारें

चूड़धार के पश्चिम की ओर हरिपुर की धार की ऊंचाई 8,802 फुट है। चूड़धार के पूर्व की ओर 8,376 फुट की ऊंचाई पर चांदपुर धार है। इन धारों के अतिरिक्त और भी धारें हैं जैसे मिंठंदु भवानी की धार, जिसके दक्षिण-पूर्व से गिरी नदी निकलती है। इस धार की ऊंचाई 5,700 फुट है। धार सरसु देवी की ऊंचाई 6,299 फुट है। राजगढ़ पर्वत चूड़ से पश्चिम की ओर है और जामों का पर्वत चूड़धार के दक्षिण-पूर्व में अवस्थित है। कांगड़ा जिसकी ऊंचाई सागर तल से 6,600 फुट है। गिरी और तौंस नदी के बची स्थित है। यहां प्राचीन दुर्ग के खंडर मिलते हैं। मध्य भाग में दो पर्वत शृंखलाएं क्रमशः सैनधार तथा धारटी धार है। सैन गिरी व जलाल नदी के मध्य स्थित है। यह क्षेत्र भू-जल बहुतायत में है लेकिन धारटीधार में जल की कमी रहती है। इस मध्य भाग में भूर सिंह सैनधार पश्चिम में नारग के समीप कावल खड्ड से आरंभ होकर ददाहू में गिरी नदी के समीप समाप्त होती है। सबसे ऊंची धार है जो चूड़धार के दक्षिण में स्थित है। इसकी ऊंचाई 6,435 फुट है। इस चोटी पर भूरसिंह देवता का मंदिर है जिसके नाम से यह धार मशहूर है। यह कार्तिक माह में मेला आयोजित होता है। यहां स्थित मैदान को कुआग नाम से जाना जाता है। इस धार से दूसरी धार सोमवर नामक है जिसकी ऊंचाई 5,658 फुट है। यह सैन पर्वतशृंखला में स्थित है। तीसरी डाठु की धार है जोकि धाहरटी पर्वत शृंखला में नाहन से उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है। इसकी ऊंचाई 50,44 फुट है। यहीं जैतक नामक पहाड़ी है जहां गोरखों के दुर्ग के खंडहर हैं। एंग्लो-गोरखा युद्ध में जैतक की पहाड़ी का युद्ध यह स्थल दुनियाभर में प्रसिद्ध हुआ। यह स्थल नाहन से 4 मील उत्तर-पूर्व की ओर है। चौथी लापा की धार है जिसकी ऊंचाई 2,600 फुट है। यह कोह (पर्वत) शिवालिक की शृंखला में है जो क्यारदादून के इलाके के दक्षिण से होती हुई यमुना नदी तक चली जाती है। इसकी ऊंचाई 3,057 फुट है।

संस्कृति और लोककथाएं

सिरमौर (गिरीपार), शिमला के चौपाल, बलसन, घूंड, ठियोग आदि के निवासियों के आराध्य देव शिरगुल है। शिरगुल देव परंपरा का चौपाल तथा गिरीपार सिरमौर में अत्यधिक प्रभाव देखने को मिलता है। इन क्षेत्रों में शिरगुल देव संस्कृति का जनक सिरमौर की शाया जागीर का प्रतापी शासक भुकड़ू माना जाता है। लोक विश्वास है कि भुकड़ू किसी ब्राह्मण की हत्या के कारण निःसंतान हो गए थे। आखिर भुकड़ू ने अपनी जागीर व राजकाज वजीर देवी राम को सौंप कर वंश परंपरा को जीवित रखने के लिए पनुन कश्मीर के पंडित पाणु के पास जाने का प्रण लिया। किंवदंति है कि पाणु पंडित छः माह सोया रहता था और छः माह भगवती दुर्गा की उपासना करता था। जब भुकड़ू ब्राह्मण के घर पहुंचा तो वह सुप्तावस्था में था। उसे जगाने का कोई साहस नहीं कर पाता था। भुकड़ू भी देवी का परम भक्त था। उसने दुर्गा का स्मरण कर शय्या पर सोए ब्राह्मण की ओर शेर वाहिनी सूचक चमत्कारिक बिल्ली को छोड़ा। इस पर ब्राह्मण की नींद टूट गई और वह जाग उठा।

पाणु पंडित ने सांचा विद्या से भुकड़ू के संतान प्राप्ति की जिज्ञासा बारे बताया कि उसे वंश वृद्धि के लिए ब्राह्मण कन्या से विवाह करना होगा। उससे होने वाली संतान दिव्य शक्ति संपन्न होगी तथा उसे दिव्य शक्ति के पिता होने का गौरव मिल पाएगा।

एक अन्य कथा के अनुसार विष्णु भगवान के आठवें अवतार श्रीकृष्ण ने लोक मंगल की भावना से अवतार लेकर राक्षसों का संहार किया। उनमें से कुछ राक्षस श्रीकृष्ण के चरणों के दास बनकर रह गए। उन्हीं में से अधिकतर असुर उत्तर भारत में मनुष्य और पशुओं के साथ छेड़छाड़ किए बिना रहने लगे। कलियुग के प्रारंभ में उन्हीं असुरों में से एक असुर चूड़धार के समकक्ष दूसरी चोटी चौखट में रहकर नर और पशुओं का आतंकित करने लगा। इसी असुर के छद्म रूप वनशिरा ने भुकड़ू की शाया जागीर जुब्बल, बलसन, थरोच, ठियोग, घूंड में आतंक मचाया। यहां के निवासी असुर से रक्षा के लिए देवी-देवताओं की शरण में गए। इस नरभक्षी और दर्दनाक घटना संतानहीन भुकड़ू को संतान प्राप्ति के लिए विवश कर दिया। भुड़कू अपनी जागीर वजीर देवी राम को सौंपकर पुत्र प्राप्ति की इच्छा से रानी को साथ लेकर कश्मीर गया। भुकड़ू तथा उसकी रानी ने बारह वर्षों तक प्रभु की असीम साधना की तथा देवशक्ति की पुकार पर वे घर लौट आए और अश्वमेध यज्ञ करवाया। दैव्य शक्ति की कृपा से भुकड़ू के शिरगुल और चंद्रशेखर नाम के दो पुत्र और एक पुत्री ने जन्म लिया।

भुकड़ू के हरिवंश होने से उसके कुल की वृद्धि होती गई। बांझ काया वाली रानी दुदमा के एक पुत्र बीजट तथा पुत्री बिजाई को जन्म दिया। इस देव आशीष से सराहां से शाया तक समस्त धरती देवमय हो गई।

भुकड़ू संतति का नामकरण

भुकड़ू ने पहले पुत्र के नामकरण से पूर्व शिवधाम केदारनाथ की यात्रा करना उचित समझा। भुकड़ू ने केदारनाथ में देखा कि वहां शिव को शिरगुल नाम से पुकारा जाता है। भुकड़ू के मन में यह बात समा गई और उसने शिव रंजक ज्येष्ठ पुत्र का नाम शिरगुल रखने की सोची। केदारनाथ से लौटकर ज्येष्ठ पुत्र का नाम शिरगुल रखा। चंद्र के सम्मुख कांतिमय दूसरे पुत्र को चंद्रशेखर (छिंदिर) नाम दिया। रानी दुदमा से उत्पन्न पुत्र को बीजट व पुत्री को बिजाई के नाम से पुकारा गया। केदारनाथ से शाया की ओर लौटते हुए ठौड़-निवाड़ नामक स्थान पर भुकड़ू अनायास स्वर्ग सिधार गए। इस आकस्मिक घटना से दुखी ब्राह्मण कन्या भी तीन दिन उपरांत सतीत्व को प्राप्त हुई। बच्चों के लालन-पालन का सवाल खड़ा हो गया। अंत में शिरगुल, चंद्रशेखर और उनकी बहन को उनके मामा लोज ब्राह्मण अपने घर ले गए। रानी दुदमा के बच्चों को उनके ननिहाल सराहां पहुंचाया गया। मनौण में मामा के घर पर उनकी मामी तीनों को जंगल में पशु चराने तथा संपूर्ण गृह कार्यों में निष्ठुर भाव से लगाए रखती थी। शिरगुल की बहन गड़रिए की भांति भेड़-बकरियों और पशुओं को दूर-दूर तक जंगल में ले जाती थी। उसकी चरवाह लगन पर उसका नाम गड़याली पड़ गया प्रतीत होता है। यह भी लोकआस्था है कि शिरगुल की बहन ने पिता की मृत्यु उपरांत जन्म लिया तभी तो लोकमानस में कन्या को कुजाठ कहकर पुकारा जाता है।

शिरगुल की बाल लीलाएं

शिरगुल, चंद्रेश्वर तथा बहन कुजाठ का बचपन ननिहाल में बीता। वहां उन्हें मामी के सौतेले व्यवहार का सामना करना पड़ा। इस दबावपूर्ण वातावरण में रहकर शिरगुल अनेक चमत्कार दिखाकर देवपथ को प्रशस्त किया।

प्रमुख बाल लीलाएं

ब्राह्मणी मामी बच्चों को घर से बाहर करने के लिए आरोप लगाती रहती थी। उसने एक दिन भेड़ गुम होने का आरोप लगाया। भेड़ को मामी ने गथोगा गांव के एक व्यक्ति के माध्यम

से चोरी करवाया था। देवयोग से शोबू, भेड़ के साथ ऐसे बियावान जंगल में फंस गया जहां से भेड़ छूट कर, झुंड में स्वतः मिल गई। इस तथ्य की पुष्टि आज भी लोकमानस से होती है कि जब चरवाहे अपने भेड़-बकरियों को पर्वत शिखरों की ओर ले जाते हैं हैं तो वे हिंसक जानवरों से अपने मवेशियों की रक्षा के लिए शिरगुल देवता के नाम पर चिड़ू भेड़वाल नामक मनौती रखते हैं।

एक अन्य बाल लीला में उसकी मामी बच्चों को भरपेट भोजन नहीं देती थी। इससे बच्चे व्याकुल तथा रोने लगते थे। एक दिन चंद्रशेखर भूख से व्याकुल हुआ और रोने लगा। इस पर शिरगुल ने अपने भाई से संयम रखने को कहा लेकिन वह न माना। तदोपरांत अपनी दैवीय शक्ति से एक शाकाहारी तथा एक मांसाहारी दो थालियों में भोजन रख अपने भ्राता के सामने रख दी। चंद्रशेखर ने शाकाहारी भोजन किया। इससे बलि प्रथा पर विराम लगा इसीलिए चंद्रशेखर को दूधाधारी देवता कहकर भी पुकारा जाता है।

शिरगुल की बाल लीलाओं में भारी वर्षा में पशुओं की रक्षा करना, अपनी चमत्कारिक शक्ति को दिखाने के लिए शाया के चारों ओर भयंकर ओलावृष्टि करवाई। ऐसी मान्यता है कि आज भी इस क्षेत्र के आसपास नालों में गोलाकार प्रस्तर रूपी ओले मौजूद हैं। लोकआस्था है कि ये वही पत्थर हैं जो शिरगुल ने आसमान से गोल-गोल काले ओले बरसाए थे। वहीं शिरगुल की रोचक और आस्थामय बाल लीलाओं में पालू देवता के साथ शक्ति प्रदर्शन की देव लीला का भी लोकमानस में खासा प्रचलन है।

फागू के खेतों में चमत्कारिक जलधारा का प्रस्फुटन

मामी पर शिरगुल की दैवीय एवं चमत्कारिक खेलों के बावजूद भी उसके अंतर्मन में चेतना जागृत नहीं हुई। मामी के बच्चों पर अत्याचार की सीमाएं जब लांघ लीं और एक दिन उसने शिरगुल तथा चंद्रेशखर को पीड़ा पहुंचाने के लिए उनकी लस्सी में मक्खियां तथा मकड़ियां मिला दीं। इस पर शिरगुल क्रोधित होकर उग्र हो गए। वे इस जहरयुक्त घोल को जब फेंकने लगे तो वह सलू के ततैया (ओड़गल) अर्थात जंगली मधुमक्खियों का झुंड बन गया। यह झुंड मामी पर टूट पड़ा तथा जब वह प्राण रक्षा के लिए गौशाला में गई तो उसे पशुओं की रस्सी भी सर्पों की माला के समान प्रतीत हुए। वे ततैया के काटने पर बेहोश हुई और उसकी मृत्यु हो गई।

000

लोकगीत में शिव स्तुति

सिरमौर जिले में पर्वत चूड़चांदनी या चूड़धार स्थित है। यात्री यहां भगवान शिव (मंदिर वावली) के दर्शन करने जाते हैं। शिव की स्तुति में लोकगीत :

ठंडा पाणी चुड़ी चांदनी रा लागा पातेड नाला
सीया रामा री मोले, लगाणा पातेड़ नाला
फूली कारों फूलीटू डाली फूली ला वेसो
जी लावो रे घाटूवो आग साजी रा देसो
ठंडा पाणी चुड़ी चांदनी रा लागा पातेड़ू नाला
फूली कारों फूलिटू डाली फूलीला बाथरा
उबा जायाना चुड़ी के कोरी लेणी महारे मातरा
फूली जांदा फूलिड़ू डाली फुलों माशो
नहारे लोहणीचुड़ी चांदनी तुरी होवो आशो
ठंडा पाणी चुड़ी चांदनी रा लाणा पातेटू नाला
पाकों जाली आधुवो, भली पाकों ला बिऊलो
देवी साबनी के ढालो, भेंटों देणी ला शिरगुलो
ठंडा पाणी चुड़ी चांदनी रा लाणा पातेटू नाला
सीया राम री मोलेकुवा, लाणा पातेटू नाला।



भक्ति भाव से परिपूर्ण इस गीत का सार है :

चूड़धार पर शीतल जल है जिसे वृक्षों के पत्तों का नाला (दूना) लगाकर पीने में बड़ा ही आनंद देता है। मित्रो आज संक्रांत का पुण्य दिवस है, आओ चूड़धार की यात्रा कर लें। वहां बावली में नहाकर पुण्य कमा लें। बेस, बाथरा जैसे जंगली पुष्प खिल उठे हैं। डालियां जंगली फूलों से भरी पड़ी हैं। जंगली फल 'आधु' पक गया है। कितना सुंदर समय है। आओ कैलाश की यात्रा करें। भगवान शिरगुल (शिव शंकर) के दर्शन पश्चात पाप नष्ट हो जाते हैं। मनवांछित आशाएं पूर्ण हो जाती हैं। देवी मां जगदंबा भवानी को नमस्कार करेंगे। महादेव को श्रद्धापूर्वक कुछ भेंट करेंगे। आओ यात्रा करें - शिव के दर्शन करें। चूड़चांदनी का शीतल जल पत्तों के दूनों में पिएं।

आलेख

शिरगुल देव की दिल्ली यात्रा और चमत्कार



गिरीपार क्षेत्र में रहने वालों को हाटी समुदाय के नाम से जाना जाता है। पहाड़ी जनपदों में गांवों से हाटी बाजार जाने की एक पुरातन परिपाटी का प्रचलन रहा है। जहां गांववासी अपने उत्पादों को बेचकर वहां से जरूरत का सामान लाते थे। यही कारण है कि इन वादियों के बाशिंदों को हाटी कबीलों की संज्ञा से भी अभिहित किया गया है। चूड़धार पर लोक मंगल की कामना से साम्राज्य स्थापित कर शिरगुल ने दिल्ली से बाजारी सामान खरीदने की जिज्ञासा को लेकर दिल्ली यात्रा पर जाने का कार्यक्रम बनाया। चूड़धार का संपूर्ण दायित्व शिरगुल ने अपने वीर चुरू को सौंप कर वे दिल्ली रवाना हुए। उस वक्त दिल्ली में मुगलों का शासन था। वे पैदल साथियों के साथ दिल्ली पहुंचे दिल्ली में वे कसाइयों द्वारा गौ-वध के दृश्य देख विचलित हुए। उन्होंने उन्हें ऐसा करने से रोका। लेकिन वे न माने। अंततः शिरगुल महाराज ने अपनी दैवीय शक्ति से ऐसा चमत्कार किया कि जब कसाई गाय का वध करने के लिए तलवार चलाते तो तलवार का वार गाय पर न लग उनके अपने गले पर लगता। कसाई गौ हत्या के दुश्चक्र में शिरगुल के चमत्कार से खुद ही मारे जाने लगे।

वहीं शिरगुल ने दुकानदारों द्वारा ग्राहकों को लूटने के दृश्य देखे। कपड़ा तथा सामान की नपाई तौलाई में फर्क देखा। वे आहत हुए। उन्होंने अपने चमत्कार से कपड़ा नापने के गज को बढ़ा दिया और बाटों के वजन को बढ़ा दिया। व्यापारी परेशान हो गए। यही हाल जौहरियों का हुआ।

इन चमत्कारों से दिल्ली में शिरगुल के चमत्कारों की रोशनी सी फैल गई। एक करियाना की दुकान में गुड़, तेल और खाद्य वस्तुओं का क्रय करने के लिए शिरगुल ने किलटा टिका दिया। वे सामान खरीदते गए और किल्टे में रखवाते गए। दुकान का सामान खत्म हो गया लेकिन किलटा न भर पाया। इन घटनाओं की खबर मुगल सल्तनत तक पहुंची। उन्होंने शिरगुल को पकड़ने के लिए गुप्तचरों को भेजा। शहरवासियों से मिले तथ्यपरक प्रमाणों के आधार पर शिरगुल की धरपकड़ कर उन्हें चमड़े की हथकड़ियां और बेड़ियां डाल दीं। चर्म निर्मित वस्तु के स्पर्श से शिरगुल की देवशक्ति लुप्त हो गई। शिरगुल को जेल होने से उसके सहयोगी हाटी हैरान-परेशान थे। इस धर्मस्रष्टा युगपुरुष के जेलबंदी का समाचार अत्यंत गोपनीय ढंग से देश शक्ति संपन्न बागड़ देश के गुग्गा और गुठान के डोम देवता को प्राप्त हुआ। मां रानी बाछल के गर्भ में पल रहे गुग्गा ने उस दैवीय घटना को साकार करने के लिए जन्म लेकर उसी क्षण दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। दिल्ली पहुंचने पर गुग्गा ने जेल कोठरी में बंद शिरगुल के सामने प्रवेश कर जेल मुक्ति के उपाय पर विचार किया। जनश्रुति है कि कारागार में सफाई कार्य में तैनात महिलाकर्मी से गुग्गा ने शिरगुल को जेल से रिहा करने की बात कही। इसपर महिला कर्मी राजी हो गई। जब महिलाकर्मी शिरगुल को कोठरी की सफाई करने गई तो गुग्गा मूषक रूप धारण कर, शिरगुल के पास पहुंचा। चूहा रूपी गुग्गा ने तीक्ष्ण दांतों से चमड़े की हथकड़ियों और बेड़ियों को काट दिया। शिरगुल की लीला से सैनिक गहरी निद्रा में लेट गए। जेल से बाहर आकर शिरगुल ने महिला सफाईकर्मी को धर्म सहोदरा बनाया। लोक मानस में महिला सफाई कर्मी को भांगण 'भंगायण' नाम से संबोधित किया जाने लगा। इस आभार को चुकाने के लिए शिरगुल ने गुग्गा तथा भंगायन को पहाड़ी देश में साथ चलने का न्योता दिया।

शिरगुल ने भंगायण को धर्म बहन बनाकर अपने साथ ले

जाने का वचन दिया। शिरगुल ने कहा कि, 'तू दूर ऊंची पहाड़ी पर मेरी नजरों में देवी रूप में रहेगी। तू धरती से शिला रूप में स्वतः उद्भाषित होगी। कलयुग में तेरा नाम सदा उजागर रहेगा। शिरगुल के दिव्य वाकवैदग्ध चमत्कार के फलस्वरूप भंगायणी हरिपुरधार के ऊंचे शिखर पर प्रस्तर पट्टिका के वेश में प्रकट हुई। इसी प्रकार गुग्गा का भी पर्वतीय समाज में शिरगुल के वीर अर्थात् गण के नाम से आविर्भाव माना जाता है।

शिरगुल को पकड़ने के लिए सल्तनत ने सैनिकों को भेजा। लेकिन वे शिरगुल की दैवीय शक्तियों के समक्ष हार गए। इस विस्मयकारी घटना को देखते हुए मुगल सम्राट स्वयं शिरगुल से भेंट करने आए और उन्हें ढाल-तलवार और श्यामवर्णी अश्विनी (घोड़ी) भेंट की। इसी दौरान चुरु वीर ने एक पत्थर के टुकड़े को देव वाकमूठ विधा से अभिमंत्रित कर वायु मार्गीय दूरी से शिरगुल के पास दिल्ली पहुंचाया। उन्हें यह आभास हुआ कि चूड़धार पर चौखटिया असुर के कारण विपदा आई है। वे शीघ्र चूड़धार की ओर रवाना हुए।

चूड़धार पहुंच कर पहले शिरगुल ने समझौतावादी दृष्टिकोण से असुर को समझाने की कोशिश की। लेकिन असुर ने उसकी सेना सहित शिरगुल को परास्त करने की ठानी। शिरगुल ने अपनी शक्ति से बज्र प्रहार किए। इस डर से असुर छुपता हुआ प्राण रक्षा के लिए काकस लाणी नामक पर्वत से होकर चौपाल के चेता पगरना की ओल नामक गुफा में छिप गया। यहां आकर शिरगुल ने असुर पर वज्रास्त्र छोड़ा जिसके प्रहार से पहाड़ी में दोहरा छिद्र हो गया। यह आज भी देखा जा सकता है। पहाड़ी भाषा में इसे ओल नाम से पुकारा जाता है। इस दोहरे छेद को लोकमानस में भी 'असरअ को रंडू' के नाम से जाना जाता है।

घायल अवस्था में असुर तौंस नदी पार कर थरोच के मशराहां नामक स्थान पर बने माहिशर (महेश्वर) के मंदिर में महाशिव की शरण में गए। मशराहां में असुर मृत्यु को प्राप्त हुआ। इस तथ्य की पुष्टि मशराहां में बने एक पुरातन असुर स्मारक अर्थात मठ में भी होता है। शिरगुल ने चौखटिया दानव के सहयोगी वनाशेरा से भी चूड़धार क्षेत्र से मुक्ति दिलाई।

शिरगुल के प्रमुख मंदिर

देवशक्ति के प्रतिबिंब शिरगुल पर पैतृक राजवंश का दायित्व भी था। उन्होंने राजसी मोह को त्यागकर शासकीय सत्ता आवंटन के लिए रियासती वजीर देवी राम और उसके दो पुत्रों रब्बू और छिनु को चूड़धार बुलाया। शिरगुल ने अपना सारा साम्राज्य इन तीनों में बांट दिया। सत्ता विभाजन में देवा राय को सिरमौर का कारली परगना (धार, बगेड़ा, खड्डल, चबीउल, शावगा, गांवों) को दिया गया। उसके बड़े पुत्र रब्बू को जुब्बल रियासत के बाहल (जोड़ना) व जखोला परगना तथा सिरमौर रियासत का पझौता परगना (पेण, कुफर, धामला, भगोट, परोली तथा बलसन, ठियोग, घूंड और रितेश दी गई। छोटे-बेटे छिनु को जुब्बल रियासत के सराहां के साथ हामल, चेता, चंदलोग, चांदना, सतोता, पिऊंतरा, नेवल, शाक, चांजू, बड़गांव, शंठा परगना और सिरमौर रियासत के लादी और कांगड़ा परगनों के साथ थरोच रियासत दी गई। इन तीनों ने चूड़धार में शिरगुल मंदिर का निर्माण करवाया और छिनु ने मंदिर के समीप बावड़ी भी बनवाई।

शिरगुल की आज्ञा प्राप्त कर देवी राम ने शाया, रब्बू ने जोड़ना तथा छिनु ने सराहां में राजधानी स्थापित करवाई। शिरगुल ने इन तीनों शासकों को परामर्श दिया कि जब शिरगुल और चुरु इस लोक से अंतर्ध्यान हो गए तो तीनों मुख्यालयों में शिरगुल मंदिर के साथ चुरु मठों का निर्माण किया जाए। तीनों शासकों ने मंदिरों का निर्माण करवाया। शाया, जोड़ना में शिरगुल और गौअणु तथा सराहां में बीजट के रूप में पूजा की जाने लगी।

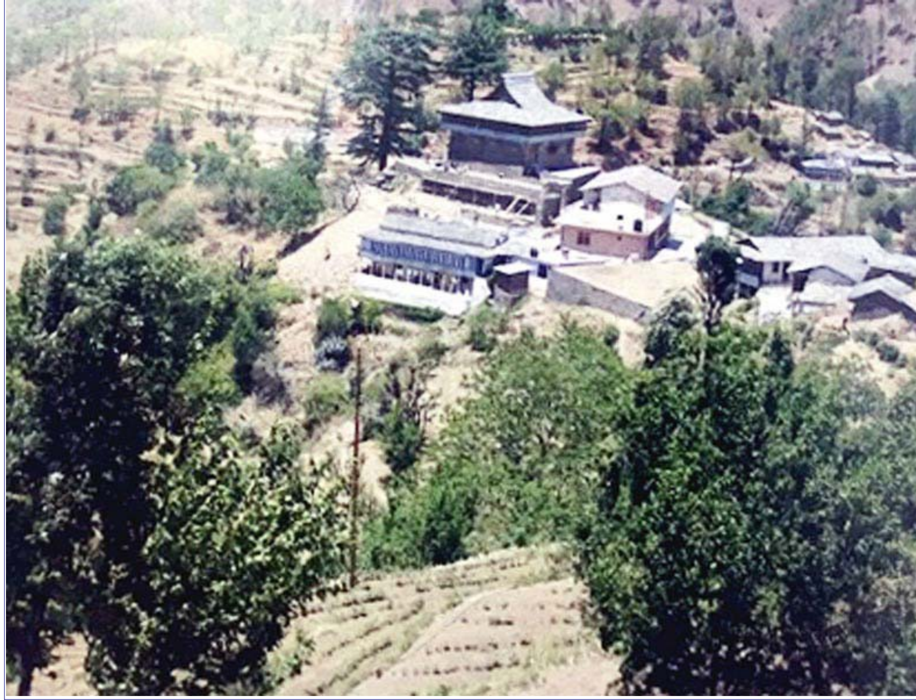
शिरगुल देवता के मुख्य मंदिर चूड़धार के अतिरिक्त जोड़ना (चौपाल), भुज्ल (रासू मांदर), पैण-बखोटा (राजगढ़), देवथल (शिलाई), टिक्करी (चौपाल), मानल (नौहराधार), धोताली (चौपाल) ग्रामों में बने है।

1891 में हुई चूड़धार पर मौसम विज्ञान केंद्र की स्थापना

सिरमौर रियासत का इतिहास पुस्तक में कंवर रणजोर सिंह ने लिखा है कि चूड़धार वर्तमान जुब्बल तथा सिरमौर रियासत की सीमा है। उत्तर की ओर जुब्बल की सीमा आरंभ होती है। इस धार में भारत सरकार (तत्कालीन ब्रिटिश सरकार) ने एक मैट्रोलोजिक ऑब्जरवेटरी (जलवायु और मौसम विभाग का कार्यालय) स्थापित किया था। सिरमौर गजट में उद्धृत है कि चूड़धार में कालाबाग में जुब्बल के राणा पदम चंद ने 1891 में ऑब्जरवेटरी की स्थापना की थी। इसको सिरमौर की सेना ने वर्ष 1939 के करीब नष्ट कर दिया था। यहां इसके अवशेष अभी भी मिलते हैं। चूड़ पर विजय पाने के लिए सिरमौर और जुब्बल के शासकों में सतत होड़ रही है। इस तथ्य की पुष्टि सिरमौर रियासत के राजपत्र में दिए गए संदर्भ से होती है, 'चूड़ के कालाबाग नामक स्थान पर जुब्बल रियासत के राणा पदम चंद ने सितंबर 1891 में एक चौकस चौकी बनवाई थी जो सिरमौर की सेना ने वर्ष 1939 के आसपास जलाकर ध्वस्त कर दी थी।"

आलेख

शिरगुल देव की क्रीड़ा स्थलियां



शिरगुल देवता की जन्मस्थली शाया

सिरमौर जिले के राजगढ़ उपमंडल में स्थित शाया, को देवभूमि होने का गौरव प्राप्त है। यह धरती देवस्वरूप शिरगुल, चंद्रशेखर और उनकी बहन कुजाड की मातृभूमि है। सिरमौर की जागीरों में शाया राजा भुकड़ू की राजधानी रही है। उनके स्वामित्व में नौ परगना थे। शाया में शिरगुल का पुरातन मंदिर प्रस्तर और काष्ठ शिल्प की भव्य इमारत थी। इस मंदिर पर शिल्पियों के हस्तकौशल की भव्य तस्वीर देखने को मिलती थी। यह मंदिर स्लेट की ढलानदार छत से आच्छादित था। यह ऐतिहासिक अनमोल धरोहर 13 नवंबर 2013 को एक भीषण अग्निकांड में राख हो गई। यह स्थल शिरगुल की लोक गाथाओं तथा लोकआस्था से जीवंत प्रतीत होता है।

सिरमौर जिले के राजगढ़ से 16 किलोमीटर की दूरी पर स्थित शिरगुल की जन्मस्थली शाया की तलहटी में फागू स्थित है। गांव के समीप शिरगुल देवता का मंदिर अर्थात् फागू मोड़ पड़ता है। फागू मोड़ शिरगुल देवता की क्रीड़ास्थली के नाम से विख्यात है। मोड़ का शाब्दिक अर्थ मठ व मंदिर से है।

फागू में शिरगुल देवता का एकमंजिला मंदिर पहाड़ी शैली में निर्मित है। यहां प्राचीन शिवलिंग अवस्थित है। बाहर भी पुरातन शिवलिंग है। मंदिर के प्रवेश द्वार पर काष्ठ शैली में उत्कीर्ण सर्पमालाएं, शीतला माता, द्वारपाल आदि की 17वीं सदी में बनी कृतिया हैं। फागू एक रमणीय स्थल भी है। फागू में आजादी से पूर्व एक गुरुकुल खुला था, जिसने क्षेत्र में शिक्षा का प्रकाश फैलाया।

सराहां

चूड़चांदनी की तलहटी से प्रवाहित सुरसरिता अर्थात हामलटी नदी के उद्गम तट पर सराहां बसा है। वर्ष 1934 के गजेटियर के मुताबिक यहां की जनसंख्या 338 थी। यह नाहन से 26 मील तथा डगशाई से 21 मील की दूरी पर स्थित है। यहां रियासत काल में डिस्पेंसरी, पोस्ट ऑफिस तथा मिडल स्कूल था। यहां से घिन्नी, कटोहा तथा हरियाणा में नारायणगढ़, मोरनी क्षेत्र का सुंदर दृश्य नज़र आता है। सराहां की धरा में अवस्थित ब्रजेश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर स्थित है।

बज्रेश्वर मंदिर को स्थानीय भाषा में बीजट महाराज के मंदिर के नाम से जाना जाता है। इस मंदिर की भव्य काष्ठ कला नैसर्गिक सौंदर्य की छटा बिखेरता है।

इस मंदिर में बीजट महाराज का पूजा-स्थल तृतीय मंजिल पर

है। इस मंदिर में शिरगुल और बीजट देवता की सोने की प्रतिमाएं हैं। इनकी बहन कुजाड़ व बिजाई की अष्टधातु में निर्मित प्रतिमाएं हैं। इस देवस्थल में चार सोने की व 12 चांदी की अर्गलानुमा छड़ियां हैं। सभी वाद्य यंत्र चांदी के हैं। वैशाख माह की संक्रांति को यहां मेला लगता है। एक प्राचीन परंपरा के अनुसार बीजट महाराज हर दस वर्ष के उपरांत छिनु को आवंटित पुरानी जागीर के पगरने की यात्रा करते हैं। इसे स्थानीय बोली में 'दयांकरा' कहते हैं। एक अन्य परंपरा के अनुसार बीजट की चांदी वाली छड़ियां प्रतिवर्ष अपने अधिकार क्षेत्र में माघ माह में यात्रा आरंभ करती है। इस यात्रा को स्थानीय बोली में 'कूत ग्राही' कहा जाता है। सराहां के समीप हालदा जुब्बड़ (विशाल मैदान) जमदग्नि ऋषि की पत्नी माता रेणुका से जुड़ा माना जाता है।

सराहां से पांच किलोमीटर की दूरी पर सुरम्य स्थल धबास है। यहां भगवती दुर्गा का प्राचीन मंदिर है। यह मंदिर स्थानीय बोली में 'डूंडी रो मअड' के नाम से प्रसिद्ध है।

भुज्जल

राजगढ़ उपमंडल के पूर्वी छोर पर भुज्जल में शिरगुल देवता का तीन मंजिला मंदिर स्थित है। यह सिरमौर तथा शिमला की विभाजन रेखा है। यहां से होकर पाताल खड्ड गुजरती है तथा चूड़धार की दूरी यहां से मात्र 15 किलोमीटर है। अंग्रेजों के वक्त पैदल यात्रियों के लिए एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव था। शिमला-चकरोता मार्ग पर शिमला से चलकर यह तीसरा पड़ाव होता था। यहां से जुब्बल की पहाड़ियों का मनोरम दृश्य नजर आता था। यहां से चूड़धार को रास्ता भी था तथा नाहन पहुंचने के लिए छः पड़ावों के नाम पर आयोजित यह बिशू शिरगुल देवता भुज्जल के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित होता है। शिरगुल देवता मंदिर भुज्जल के समीप वनवेरा बाबा का डेरा स्थित है।

शिरगुल के पुजारियों का गांव देवथल

सिरमौर जिले की शिलाई तहसील का उत्तरी दिशा में शिरगुल की उपास्य स्थली देवथल है। यह शिरगुल के पुजारियों का गांव है। यहां शिरगुल देवता का पुरातन मंदिर है। इसका अब जीर्णोद्धार आधुनिक निर्माण सामग्री से हुआ है। देवथल के शिरगुल मूलतः चांदपुरधार की रावत बिरादरी के पूजनीय देव हैं।

जनश्रुति है कि चांदपुर में रावतों का किला था। उसी के मध्य शिरगुल मंदिर स्थापित था। गोरखों के सिरमौर तथा अन्य पहाड़ी रियासतों में अधिपत्य करने के दौरान गोरखों ने इस किले पर कब्जा किया।

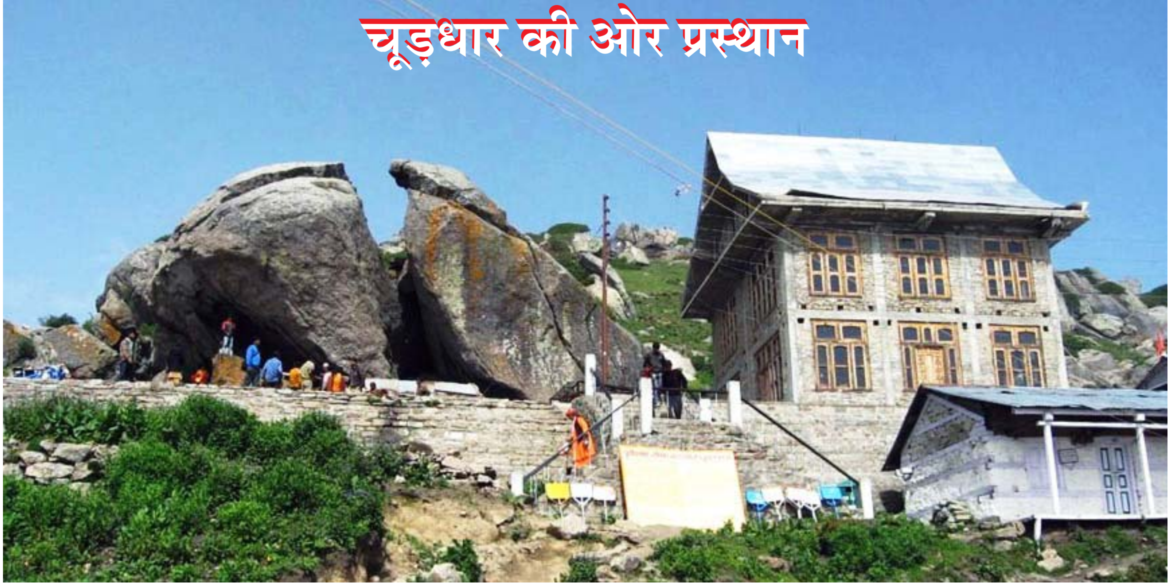
गोरखों के आक्रांताओं के भय से चांदपुर के रावत कोथी-जौनसार-बाबर चले गए। गोरखों ने किले तथा मंदिर में लूटपाट की। इस दुर्ग में बने शिरगुल मंदिर में रखी शिरगुल की मूर्ति पुजारी बगनाण ब्राह्मण अपने साथ ले गया। वे ऐसे स्थान पर रहने लगा जो अजौऊ राजपूतों की भूमि थी। वे वहां रहकर शिरगुल की पूजा करते रहे। गोरखों के जाने के उपरांत सिरमौर राजा की आज्ञा से उस पुजारी ने देवपूजा स्थल पर शिरगुल का मंदिर बनवाया और स्थान का नामकरण देवथल करवाया। इस प्रकार चांदपुर के शिरगुल की विधिवत पूजा देवथल में होने लगी। अब भी कोथी के रावत देव परंपरा को निभाते हुए वैशाख माह की संक्रांति को विशेष पूजा-अर्चना करते हैं। वे हर तीसरे वर्ष जागरण व शोभायात्रा निकालते हैं। चांदपुर में हर वर्ष ज्येष्ठ आषाढ़ की संक्रांति को बिशू मेला आयोजित है। श्रावण मास में हरियाली मेला आयोजित होता है।



बीजट महाराज मंदिर सराहां

आलेख

शिरगुल की शिवत्व की प्राप्ति



ननिहाल में घटित घटनाओं से शिरगुल का दर्द बढ़ता ही जा रहा था। वे सांसारिक मोह के इस वातावरण से दूर कहीं एकांत में प्रभुभक्ति में लीन होकर मानव जाति का कल्याण चाहते थे। शिरगुल को उपाय सूझा कि शिव शैल के नाम से विख्यात चूड़धार की ऊंची चोटी पर जाकर शिव आराधना में जीवन व्यतीत किया जाए। शिरगुल को चूड़धार पर आसुरी शक्तियों और विकट भौगोलिक परिस्थितियों का भान था। लोकआस्था में आज भी शिरगुल को विघ्न विनाशक देव तथा बर्फानी बाधाओं में लोक रक्षक देवता के रूप में जाना जाता है। एक लोकआस्था के अनुसार शिवधाम चूड़धार भी आसुरी शक्तियों की गिरफ्त में था। एक ओर चूड़धार पर चूड़िया दानव का राज्य था तथा दूसरी ओर चौखट पर चौखटिया असुर और वनशिरा का राज चलता था। वे प्राणियों की रक्षा करने के लिए चूड़धार की ओर उन्मुख हो उठे थे। शिरगुल भी इस निर्भीक कर्मण्यता से भ्राता चंद्रशेखर और बीजट भी विचलित हो उठे। भ्रातृमोह वश वे भी शिरगुल के साथ चूड़धार जाने को उद्यत हुए।

शिरगुल की संघर्ष यात्रा शाया से आरंभ हुई। उन्होंने भाइयों के साथ अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर चूड़धार की ओर प्रस्थान किया। शिरगुल जब बथाऊधार पहुंचते तो वहां शिरगुल ने सर्वप्रथम अपनी तलवार (खांडा) को शिला की सान पर तेज किया। बथाऊधार पर शिरगुल और दल के अन्य सदस्यों ने जिस शिला पर आयुधों को परिष्कृत किया वह कालांतर में 'भेलकर पौल' के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह शिला लोकमानस में आज भी पूजनीय स्थल है।

यहां से शिरगुल अपने सहयोगियों के साथ नागणी, टोफीधार, संईरौ, बांगापाणी आदि स्थानों से होते हुए सरांहटी पहुंचे। सरांहटी में शिरगुल तथा पिंगला राक्षसी व चूड़िया दानव के मध्य युद्ध हुआ। जनश्रुति के अनुसार पिंगला राक्षसी यहां शिरगुल के चमत्कार से शिला में परिवर्तित हो गई। यही सरांहटी पिंगला राक्षसी के नाम से विख्यात हुई। तदोपरांत शिरगुल अपनी सेना के साथ सतामू नाला, जो, लहसन टिब्बा, हलाणा, जुब्बड़, बहरोग आदि से होकर तीसरी पहुंचे। यहां गुफा में साथियों सहित विश्राम को रुके। यहां उन्होंने सर्पिनी (चिरि) का वध किया। चूड़धार पहुंचने के लिए शिरगुल को यहां तीसरी रात्रि ठहराव करना पड़ा। तभी इस स्थान का नाम तीसरी हुआ प्रतीत होता है। इसके संबंध में लोक में एक मशहूर कहावत है, 'भूख जाले बिसरी, ताळी लामे तीसरी।' चूड़िया दानव को शिरगुल तथा उसके साथियों की तीसरी पहुंचने की सूचना मिली। शिरगुल साथियों सहित हुड़अ री क्वाली वाराद्वारी अर्थात् बारह दरवाजों को लांघकर चूड़धार 'लिंगअ रा टिब्बा' जा पहुंचे।

चूड़धार पर चूड़िया दानव और शिरगुल मे मध्य घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में चूड़िया दानव का संहार कर शिरगुल ने चूड़धार पर विजय पताका फहराई। इसके उपरांत शिरगुल ने चूड़धार पर दैनिक पूजा के लिए एक शिवालय का निर्माण करवाया। इसी मंदिर में शिरगुल ने जल की सतह पर प्रस्तर शिवलिंग की स्थापना की। यहीं शिरगुल को शिवत्व की प्राप्ति हुई। चूड़धार से आसुरी भय को समाप्त कर शिरगुल ने इस स्थल को लोकमानस में आराध्य देवस्थली बनाया।

आलेख

शिरगुल देव परंपरा में त्योहार

शिरगुल सिरमौर रियासत के गिरीपार क्षेत्र, शिमला जिले के चौपाल, कोटखाई, ठियोग तथा अन्य गांवों में स्थानीय जनमानस के आराध्य देव हैं। इन क्षेत्रों में देव संस्कृति को आज भी मेलों, त्योहारों के रूप में संजोकर रखा गया है। शिरगुल देव परंपरा में तो मेलों एवं त्योहारों का अंबार-सा लग जाता है। इनमें प्रमुख हैं :

बिशू : पर्वतीय जनपदों में नववर्ष का शुभारंभ वैसे तो बिशू की सूचक चैत्र मास की बिशूड़ी के साथ होता है लेकिन वैशाख मास से बिशू मनाने पर माधव मास भी प्रारंभ हो जाता है। इन मेलों को स्थान भिन्नता तथा बोली विभेद के कारण विभिन्न गांवों में बिशू, ठिरशू, ठरशू, बिरशू, बैसाखी आदि नामों से अभिहित किया गया है।

शिरगुल देव परंपरा में बिशू का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैशाख माह की संक्रांति से शिरगुल देवता के अधिकतर मंदिरों में श्रद्धालुओं की भीड़ उमड़ती है। शिरगुल देव परंपरा के वार्षिक एवं द्विवार्षिक मेलों में सराहां, धबास, राजगढ़ में मेले आयोजित होते हैं। पर्वतीय वादियों में बिशू खूंद समुदायों में मनाने का रिवाज भी पुराना है। यह इस समुदाय की संस्कृति का अभिन्न अंग है। आधुनिक युग में भी महाभारतकालीन परिवेश का एहसास दिलाता है। बिशू में खूंद समुदाय के लोग परंपरा (वेश-भूषा), अस्त्र- शस्त्र, आभूषण से सुसज्जित होकर मेले में पधारते हैं। वे पहाड़ी भाषा में गीतों को बोल पर आगे बढ़ते हैं।

अणी दी चाले माइमाईए ए बिशू जुब्बडी खे
महामाया बिशू मैदान में अग्रणी पंक्ति में चलता
कौंउड़अ दा खेलअ खशिया अदनापुर रा।
अयोध्यापुरी का राजपूत पाजामा में
ठोडा खेलने आया है
धाअ शुणे मेरिआ लिपड़ूआ
ओरा पड़े ठोठे खेलदा
- मेरे प्रतिद्वंद्वी मेरी आवाज सुन लें
और ठोड़ा खेलने आ
शिगा आजे मेरिया जुबड़ी खे तरी देऊला शाफड़ी चोड़ी
- तू जल्दी से रणभूमि में आ तेरी तो खेल में पसलियां तोड़ दूंगा।

खशिया उजला एजा अदनापुर रा जेरी बिजअ गोई पड़ी
- अयोध्यापुरी का राजपूत बिशू मैदान की ओर ऐसे चला जैसी बिजली गरजती हो।


बूढ़ी दिवाली में लोक नृत्य की प्रस्तुति

बिशू मेले में ठोडा खेल शाठी और पाशी अर्थात् कौरवों व पांडवों के मध्य होता है। यह मेले में उपस्थित जनमानस के लिए उत्सवनुमा वातावरण पैदा करता है। बिशू के संगीत तथा नृत्य के मध्य मैदान के चारों ओर दुकानें सजाई जाती हैं। यह आपसी मेल-मिलाप का पर्व है।

हरियाली

यह त्योहार भी शिरगुल देवता के नाम समर्पित होता है। हरियाली को स्थानीय बोली में रियाली या हरियालटी भी कहा जाता है। यह त्योहार ग्रामवासी आषाढ़ और श्रावण मास की संक्रांति को अपने-अपने घरों में पारंपरिक व्यंजन बनाए कर मनाते हैं। यह ग्राम देवता को प्रसन्न करने का त्योहार है। देवता से खरीफ की अच्छी फसल के लिए कामना करते हैं। ग्रामवासी जीवन में हरियाणी और खुशहाली सदा रहे, इसके लिए ग्राम देवता की पूजा- अर्चना की जाती है।

शणाली

श्रावण मास में आयोजित होने वाला त्योहार शणाली, शोणयाली, आदि नामों से विख्यात है। शलाणी के दिन का विशेष व्यंजन घी और सिड़कू माना जाता है। सर्वप्रथम व्यंजन बनाकर शिरगुल देवता को अर्पित किया जाता है। एक लोकमान्यता के अनुसार विभिन्न गांवों में घी सिड़कू के अलावा खीर-पटांडे, घी शहद के साथ भोजन करने का रिवाज है। यह त्योहार हर वर्ष 18 गते श्रावण को मनाया जाता है। इस पर्व को मनाने के पीछे लोक विश्वास है कि ग्राम देवता उनके खेतों में तैयार खड़ी फसल का बाढ़, आंधी, तूफान, भू-स्खलन से रक्षा करेंगे।

चड़ेवली

शिरगुल देव पर्वो से जुड़ा यह त्योहार मुख्यतः चौपाल जनपद में मनाया जाता है। यह शैव परंपरा का अभिन्न अंग माना जाता है। इस त्योहर पर हुड़क नृत्य की परंपरा है। हुड़क बनावट में शिव डमरू सी प्रतीत होती है।

हुड़क नृत्य श्रावण-भाद्रपद मास की संक्रांति को चड़ेवली के त्योहार पर किया जाता है। शौर्य व पराक्रम को दर्शाते इस नृत्य से वीर रस परिलक्षित होता है। यह नृत्य 6 और 8 मात्राओं पर खेमटा और दादरा ताल पर किया जाता है। इसे सायंकालीन बेला पर मनाए जाने की प्रथा है।

चड़ेवली के पर्व पर लोकनृत्य का आयोजन कुछ चुनिंदा गांवों में ही होता है। शिरगुल मंदिर के प्रांगण में एकत्रित होकर स्थानीय लोग शिरगुल विजय गाथा (लींबर) गाई जाती है। इस नृत्य के लिए ग्रामवासी देवदार, कायल की तेलदार लकड़ी से मशालें बनाते हैं। नौजवान व पुरुष मशालें थामकर नृत्य करते हैं। यह त्योहार शिरगुल देवता को समर्पित है। लोक विश्वास है कि चूड़धार से असुर को मार गिराने तथा वहां पर शिरगुल देव साम्राज्य की स्थापना पर गांवों में अग्नि प्रदीप्त की जाती है।

गुगाल

शिरगुल को दिल्ली जेल से मुक्ति दिलवाने वाले वीर गुग्गा का त्योहार गुगाल भी पर्वतीय क्षेत्रों में धूमधाम से मनाया जाता है। इस त्योहार को हर वर्ष कृष्ण जन्माष्टमी के उपरांत गुग्गा नवमीं की रात को विभिन्न गांवों में मनाया जाता है। इसके तहत अलाव के इर्दगिर्द डौंरू की लय पर गुग्गा में गुर द्वारा नृत्य किया जाता है। गुगाल का मुख्य आकर्षण गुग्गा वीर में गुर द्वारा करतब होता है।

बूढ़ी दियाली

दीपावली के एक माह उपरांत बूढ़ी दियाली का त्योहार मनाया जाता है। इसके मानने के पीछे अनेक धारणाएं हैं। यह दीपावली के एक माह उपरांत मनाया जाता है। चौपाल जनपद के राण्ढा परगना में दीपावली की विशिष्ट प्रथाएं विद्यमान हैं जो शिरगुल देव संस्कृति का अभिन्न अंग हैं।

इस पर्व को मनाने की अनोखी रीत राजपूताना बधाऊ और बटेवड़ी के ब्राह्मणों के मध्य भाईचारे और सद्भाव की कड़ी को मजबूत करती है।

सत्तू और लस्सी

सिरमौर के किसान कर्मठ और श्रमशील हैं। सदियों से वे कृषि को अपना प्रमुख व्यवसाय अपनाए हुए हैं। प्राचीन काल से लस्सी तथा सत्तू इनका प्रिय खाद्य रहा है। वर्तमान दौर में लस्सी तथा सत्तू बीते दिनों की बात हो गई है। ऐसी मान्यता है कि लस्सी के बिना यहां का किसान का एक दिन भी नहीं रह सकता था। इसके अलावा मक्की की रोटी, आलू की सब्जी इसके साथ लस्सी का योग भी होता था। इसका उल्लेख यहां के गीतों में भी मिलता है। ऊंची ऊंची टोरो दी कुहड़िये/ रोये लुंबिया लुंबी/ एकी काछो दा सूतरा खल्टू/ ऐके काछोदे छायारी तुंबी। ऊंची ऊंची पहाड़ियों पर काला कुहरा छाया हुआ है- किसान इस काले कुहरे में काम करने चला है। उसके एक कंधे पर सत्तू का बोझ (खल्लू) है और दूसरे पर छा (लस्सी) की तुंबी (बर्तन) है।

माश या मांस

सिरमौर जनपद विशेष कर गिरीपार क्षेत्र में सदियों से ही मेहमाननवाजी की संस्कृति है। गांव आए व्यक्ति को मेहमान तथा अतिथि समझ कर उसकी खातिरदारी का रिवाज है। गरीब हो या अमीर सभी इस कार्य में आगे दिखते हैं। सिरमौर में एक चीज मशहूर है कि यहां मेहमान को माश या मांस परोसा जाता है। शाकाहारी को माश तथा मांसाहारी को मांस परोसने की प्रथा है।

पौराणिक कथा

सिरमौर-कुल्लू देव परंपरा में ऋषि जमदग्नि

हिमाचल प्रदेश की देव परंपरा में ग्राम देवताओं का उच्च स्थान है। यह भी देव परंपरा पहाड़ी जीवन पद्धति का अहम हिस्सा है। इन्हीं देवों में जमदग्नि भी हैं जो हमारी पुरानी देव परंपरा के अभिन्न अंग हैं। जमदग्नि, मूल में, देव नहीं थे न ही देवता थे। जमदग्नि वैदिक ऋषि थे और वे सप्तर्षियों में गिने जाते हैं। श्री मद्‌भागवत पुराण के नवम् स्कंध के अध्याय 15 में जमदग्नि के जन्म का वृतांत उल्लेखित है : राजा ऐल के उर्वशी के साथ छः पुत्र हुए। अर्थात आयु, श्रतायु, सत्यायु, रय, जय और विजय। विजय के भीम, भीम के कांचन, कांचन के छेत्रक और होत्रक के जाहनु पैदा हुए। जाहनु के बाद क्रमशः पुरु, बालक, अजरु, कुश, कुशांबु और गाधी पैदा हुए। गाधी के विश्वमित्र पुत्र और सत्यवती पुत्री जन्मे। सत्यवती के साथ विवाह का प्रस्ताव ऋचक मुनि ने गाधी से किया। गाधी ने कहा, “मुनि महाशय! तुम ब्राह्मण हो, सत्यवती कुश वंश के क्षत्रिय राजा की कन्या है। आपको, अपनी पुत्री के पति के योग्य नहीं समझता। हां,पर एक शर्त पर यदि तुम दान में एक हजार घोड़े दो जो इतने सुंदर हों जितने चंद्रमा और जिनके एक कान, चाहे दायां चाहे बायां काला हो, तो विवाह हो सकता है। ऋचक मुनि ने वरुण की तपस्या की और वरुण से प्राप्त वरदान से अपेक्षित घोड़े प्राप्त किए। तदोपरांत उनका विवाह सत्यवती से हुआ। तत्पश्चात अपनी पत्नी और सास दोनों द्वारा पुत्र प्राप्ति की इच्छा करने पर ऋचक मुनि ने अपनी पत्नी के लिए ब्राह्मण मंत्रों से और श्वक्षु के लिए क्षत्रिय मंत्रों से चरु (विशेष भोजन) तैयार किए। और दोनों को उससे संबंधित भोजन दिया। श्वश्रु को संदेह हुआ कि मुनि ने अपनी पत्नी को निश्चय ही अच्छा चरू दिया होगा। उसका चरू स्वयं खा लिया और अपना चरू अपनी पुत्री को दिया। जब मुनि को वास्तविकता का भान हुआ तो उसने अपनी पत्नी सत्यवती से कहा, “बेटी ने अपनी मां का चरू खाकर बहुत भूल की है, इसलिए अब तुम्हारा अग्नि उगलता हुआ औरों को दंड देने वाला क्षत्रिय वीर पुत्र होगा तथा तुम्हारी माता के आध्यात्मिक, ज्ञानी, विद्वान, पुत्र होगा। यह सुनकर पत्नी भयभीत हो गई। और मुनि से उपाय करने की प्रार्थना की। सत्यकी के इस अनुरोध पर उन्होंने उत्तर दिया कि नाम से तो अवश्य ही जन्म से ही अग्निबाण करता अर्थात् जमदग्नि पुत्र होगा, परंतु वास्तव में क्षत्रियों का नाश करने वाला वीर उनका पौत्र होगा।

प्रसादितः सत्यवत्या भैवं भूरिति भार्गवः।
अर्थ तर्हि भवेत् पौत्रों जगदग्निस्ततोऽ भवत् ॥

जमदग्नि ने राजा रेणु की पुत्री रेणुका से विवाह किया। जमदग्नि का ज्येष्ठ पुत्र वसुमान तथा सबसे छोटा परशुराम हुआ। उन दिनों हैहय वंश का अधिपति अर्जुन था। उसने विष्णु के अंशावतार दत्तात्रेय के वरदान से सहस्र भुजाएं प्राप्त की थीं और इसलिए वह सहस्रबाहू अर्जुन के नाम से विख्यात हुआ। नारायण की आराधना से ही वह सौंदर्य, तेज, वीरता, यश, बल, ऐश्वर्य आदि गुणों से संपन्न अविजय होकर वायु की भांति विश्वभर में अत्याचार करता हुआ घूमने लगा। इसी दौरान उसे जमदग्नि ऋषि के पास कामधेनु गाय बारे ज्ञात हुआ। इससे सहस्रार्जुन की ईर्ष्या बढ़ी।

हविर्धानीमृषेद्वेपन्निरान् हतुर्तमचोदयत्।
तेज माहिष्मतीं निन्युः सवत्सां क्रंदलीं बलात ॥

ऋषि के वैभव से व्याकुल होकर सहस्रार्जुन ने अपने लोगों को कामधेनु चुराने के लिए उकसाया। सहस्रार्जुन के सैनिक कामधेनु तथा उसके बछड़े को बलपूर्वक राजधानी महिष्मती ले गए। उस वक्त परशुराम आश्रम से दूर गए थे। लौटने पर उन्हें संपूर्ण घटना का ज्ञान हुआ तो वे अत्यधिक क्रुद्ध हुए। परशुराम ने हाथ में फरसा लेकर सहस्रार्जुन की राजधानी पर आक्रमण किया। राजा को परास्त किया और संपूर्ण सेना का वध कर दिया। उसके दस हजार पुत्र भयभीत होकर भाग गए। परशुराम ने कामधेनु को कैद से छुड़ाया और उसे वापिस पिता को लौटा दिया। पिता जमदग्नि को पुत्र द्वारा राजा सहस्रबाहू तथा उसकी सेना के मारे जाने का दुःख हुआ। उन्होंने अपने पुत्र परशुराम से कहा, “ब्राह्मण का धर्म क्षमादान है, इसलिए इस शाप से मुक्ति के प्रायोजन से पुत्र को तीर्थाटन की आज्ञा दी। परशुराम पिता के आदेशानुसार तीर्थ यात्रा पर निकल पड़े। परशुराम तीर्थयात्रा कर वापिस आश्रम लौट आए। इसी बीच एक अन्य घटना हो गई।

कदाचिद् रेणुका माता गंगायाम् पद्ममालिनम्
गंधर्वराजं क्रीडन्तमप्सरोभिरपश्यत।

रेणुका जल भरने के लिए नदी पर गई और वहां उसने पद्‌ममाला पहने हुए गंधर्वराज चित्ररथ को अप्सराओं के साथ जलक्रीड़ा करते हुए देखा। उसे देखने में रेणुका इतनी तन्मय हो गई कि जल लाने में विलंब हो गया तथा यज्ञ का समय व्यतीत हो गया। वापिस लौटने पर उसकी मानसिक स्थिति भांपकर जमदग्नि ऋषि ने व्यभिचार के दोष में अपने पुत्रों को मां का वध करने को

कहा। परशुराम के अतिरिक्त कोई अन्य पुत्र इस कार्य के लिए तैयार न हुआ। पिता के कहने पर परशुराम ने मां का वध कर दिया। पिता के प्रसन्न होने पर उसने मां को पुनः जीवित कर दिया। हैहयराज अर्जुन के पुत्र निरंतर बदला लेने का अवसर ढूंढ रहे थे। एक दिन पुत्रों की अनुपस्थिति में उन्होंने ऋषि जमदग्नि का वध कर दिया। ज्ञात होने पर परशुराम ने उन सभी को मार कर माहिष्मती नगरी में उनके कटे सिरों से एक पर्वत का निर्माण किया। उन्होंने अपने पिता को निमित्त बनाकर इक्कीस बार पृथ्वी से क्षत्रियों का सर्वनाश कर दिया। सहस्रार्जुन के सभी पुत्रों का वध करने के बाद उन्होंने अपने पिता जमदग्नि के धड़ को सिर से जोड़ कर यजन द्वारा उन्हें स्मृति रूप संकल्पमय शरीर की प्राप्ति करवा दी और वे सात ऋषियों में एक बन गए। आकाश में जो सात तारों का समूह दिखाई देता है, उसे सप्तर्षि मंडल कहते हैं जिसमें कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और भरद्वाज हैं। जमदग्नि से संबंधित उक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि जमदग्नि वैदिक ऋषि थे और ऋषि समुदाय तथा उस समय के समाज में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। हालांकि वे देव या देवता नहीं थे। परंतु ये भी निश्चित है कि भले ही वे स्वयं देव नहीं थे प्रत्युत एक महान देव के सांसारिक पिता थे। आध्यात्मिक रूप में परशुराम भगवान विष्णु के अवतार माने जाते हैं, परंतु वैदिक दृष्टि से जमदग्नि को ही विष्णु अवतार परशुराम के पिता होने का गर्व प्राप्त है। अतः भले ही उस समय के समाज में स्वयं देव नहीं थे, वे देव के दैहिक और सांसारिक पिता तो थे ही। निश्चय ही वैदिक तथा पौराणिक काल में और मूल रूप में जमदग्नि देव या देवता नहीं थे, परंतु बाद में समाज के लिए वे देवता के रूप में माने गए तथा पूजे जाते हैं। उन्हें इस तरह देवता बनाने का श्रेय लोकमानस को जाता है। वह भी प्रथमतः पहाड़ी लोकमानस को। पहाड़ों में आकर अनेक ऋषि-मुनि देवता के रूप में अराध्य बन गए हैं।

समय-समय पर ऋषि, मुनि आदि ध्यान साधना तथा शांति की प्राप्ति के लिए स्थायी रूप से पहाड़ों में आए, यहां उन्होंने समाज विरोधी तत्त्वों का दमन किया और लोगों ने उन्हें देवता के रूप में स्वीकार किया और उनके लिए देवालयों की स्थापना की। इनमें से लोमश ऋषि रिवालसर में, मांडव्य ऋषि मंडी में, पराशर ऋषि कमांद मंडी में, मार्कंडेय कांगड़ा व बिलासपुर में, वशिष्ठ गौतम मनाली में, कपिल मुनि क्लाथ में, शृंगी ऋषि बंजार में देवता के रूप में पूजे जाते हैं। जहां उनके मंदिर और मूर्तियां हैं।

पहाड़ों में जमदग्नि का मूल संबंध रेणुकाधाम है जो सिरमौर जिले के ददाहू नगर के निकट रेणुका झील के किनारे पर स्थित है। परंतु यहां उनकी परंपरा पौराणिक धारणा से किंचित भिन्न है।

जिला कुल्लू व ऋषि जमदग्नि

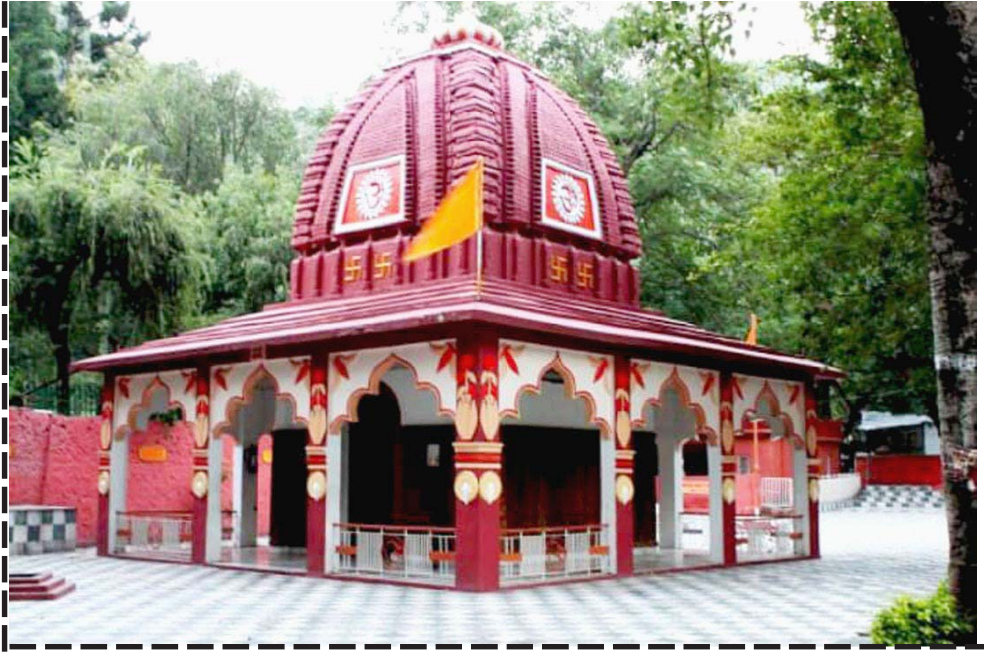
जमदग्नि ऋषि जिला कुल्लू के मलाणा गांव में भी एक प्रसिद्ध देवता के रूप में पूजनीय हैं। जनश्रुति के अनुसार एक बार जमदग्नि ऋषि मानसरोवर और कैलाश पर्वत की परिक्रमा करके रोहतांग होते हुए कुल्लू की ओर आ रहे थे। वे अपने साथ अठारह देवताओं की प्रतिमाएं एक करंडू (लकड़ी की टोकरी) में ला रहे थे। उन दिनों इन पहाड़ी उपत्याकाओं में बाणासुर का अधिपत्य था। यह राक्षस प्रवृत्ति से क्रूर तथा अत्याचारी शासक था। इसके अत्याचारों से जनता दुखी थी। इस यात्रा के दौरान स्थानीय जनमानस ने जमदग्नि ऋषि के समक्ष कष्ट सुनाया और इस दुष्ट से मुक्ति दिलवाने का अनुरोध किया। जमदग्नि ने लोगों को सहायता का आश्वासन दिया और उन्होंने मलाणा की ओर प्रस्थान किया। अभी वे चंद्रखणी पर्वत पर पहुंचे ही थे कि बाणासुर को अपने भावी कष्टों का आभास हो गया। चमत्कारी तो वह था ही। उसने अपनी शक्ति से भारी तूफान व आंधी के साथ जमदग्नि पर प्रहार किया। परिणामस्वरूप जमदग्नि के करंडू की अठारह प्रतिमाएं हवा में उड़ गईं। करंडू से उड़ी प्रतिमाएं जहां-जहां गिरीं, वहीं वे देवी-देवताओं के रूप में प्रकट हुईं। इसीलिए आज कुल्लू जनपद को 'ठारा करडू रा देश' भी कहते हैं।

जमदग्नि पर इस घटना का कोई प्रभाव न पड़ा। वे मलाणा की ओर चलते रहे और गांव के समीप पहुंच कर बड़े-बड़े पत्थरों के मध्य अपना आसन जमा लिया। इन पत्थरों की आज भी पूजा की जाती है। आसन जमाते ही वे ध्यान मुद्रा में चले गए। बाणासुर ने उन पर अनेक प्रहार किए लेकिन उनका कोई प्रभाव न पड़ा। बाणासुर ने जमदग्नि ऋषि पर विजय पाने की बहुत कोशिश की लेकिन वह असफल रहा। बाणासुर ने जमदग्नि पर खंडे का प्रहार किया। जमदग्नि ने अपने खंडे से प्रहार को रोका। जमदग्नि के खंडे के दो टुकड़े हुए और उसका खंडा हाथ से निकलकर धरती पर आ गिरा जिसे वह पुनः उठा न सका। अंततः उसने हार स्वीकार कर ली और सदा के लिए वह पहाड़ों का स्थान छोड़ कर चला गया। आज मलाणा में जमदग्नि देवता ही नहीं शासक भी हैं। वह पूरी भूमि के स्वामी हैं। गांव की संपूर्ण व्यवस्था उनके आदर्शों से चलती है। जब भी मेला आयोजित होता है तो जमदग्नि तथा बाणासुर के दोनों खंडे जरूर दर्शनों के लिए निकाले जाते हैं। बाणासुर के टूटे हुए खंडे को टुंडाच कहते हैं। हिमाचल की प्राचीन देव परंपरा में जमदग्नि का विशेष स्थान है। वे न केवल स्वयं देव रूप में पूजे जाते हैं वरन् उन्होंने कुल्लू जैसे क्षेत्र के लिए अठारह करडू देवता दिए। जमदग्नि ऋषि ने मलाणा में वशिष्ठ शासन पद्धति प्रदान की है। वहां गांव का अपर हाऊस है जिसे ज्येष्ठांग कहते हैं। इसके 11 सदस्यों में से 8 सदस्य गांव की आठ छुहियों द्वारा चुने जाते हैं। तीन जमदग्नि देवता के स्थायी सदस्य होते हैं। जिनमें गूर का प्रमुख स्थान है। गांव का लोअर हाऊस है जिसमें गांव के बालिग सदस्य होते हैं। यह भारत की प्राचीन गणराज्य पद्धति का उत्कृष्ट उदाहरण है। यह पद्धति जमदग्नि ऋषि की देन है।

संदर्भ : हिमप्रस्थ : एम. आर. ठाकुर, फरवरी, 1993

आलेख

रेणुका परशुराम



रेणुका का जब सतीत्व भ्रष्ट देखकर जमदग्नि ने दूसरे लड़कों को जब मां की गर्दन काटने के लिए कहा और उन्होंने वैसा करने से इनकार कर दिया तो बाप ने शाप देकर उन्हें स्त्री बना दिया, जो परशुराम की बहनें हो गईं। इनमें से बड़ी लादेवी है जो बिरला गांव में है। दूसरी बहन दौर भाई, तीसरी भदमद्दरी अथवा भद्रकाली- ये अनेक मंदिरों में एक साथ रहती हैं जिसमें सबसे प्रसिद्ध दैतार (पांवटा तहसील) गांव में है। चौथी बहन कमलीदेवी का मंदिर रेणुका तहसील के चाड़ना गांव में है।

रेणुका में दो मंदिर हैं, जिनमें पुराना सरोवर के किनारे अवस्थित है और दूसरा परशुराम सर के ऊपर पहाड़ पर स्थित है। पुराने मंदिर का मुख्य द्वार पश्चिम की ओर है, इसमें गणेश भगवान की पत्थर की एकमात्र मूर्ति है। नए मंदिर के दरवाजे पूर्व-उत्तर और दक्षिण की ओर हैं। लेकिन उत्तर व दक्षिण वाले द्वार केवल रेणुका मेले के दौरान ही खुलते हैं। इस मंदिर में 10 मूर्तियां हैं। भगवान परशुराम की एक साधारण पत्थर और एक संगमरमर की, जमदग्नि, रेणुका, गणेश, शिवजी, दुर्गा, क्षेत्रपाल, दिग्पाल की एक-एक मूर्ति है। परशुराम, रेणुका मां व जमदग्नि की अलग मूर्तियां हैं, जिन पर चांदी का छत्र टंगा है। कार्तिक माह की देवठन एकादशी को यहां बड़ा मेला आयोजित होता है। इस समय जामू, कोटाहा, माशो तीनों (मस्त भोज) और दुगाणा की चार परशुराम की मूर्तियां, मानलदेवा रमा (नौहरा भोज) और शैया (पझौता-भोज) तहसील पच्छाद और जैतक (नाहन तहसील) से शिरगुल की तीन मूर्तियां, बिरला नाहन की लादेवी, मानरिया से मानर देवी, बेला (ननोवा भोज) तहसील रेणुका से नैनादेवी, मोलर कोटला से वराहरूपी, कानोंउगर से गौ देवता की मूर्तियां लाई जाती हैं। ये मूर्तियां पालकी में बाजे-गाजे और झंडे के साथ सुशोभित होकर आती हैं। जामू की परशुराम की मूर्ति का विशेष तौर पर सम्मान किया जाता है।

जामू को परशुराम का जन्मस्थान माना जाता है। यहां परशुराम की तिमंजिला मंदिर है। सबसे ऊपर परशुराम की मूर्ति अवस्थित है। मंदिर का द्वार दक्षिण की ओर है। हिउन में भाट मंदिर के पुजारी हैं। प्रातः व सायं मंदिर में पूजा-अर्चना होती है। पुजारी सरोवर में स्नान पर वहां से जल लाकर मूर्ति पर छिड़कता है फिर शंख की ध्वनि कर, धूप-दीप जला कर निम्न मंत्र पढ़ता है :

"पहले बराहरूपी अवतार उतरे,
बराह की माता चंद्रावती
पिता पदमावत
फिर बुध रूपो अवतार उतरे
बुद्ध की माता उधमावती और
पिता कंवल ऋषि।"

जामू मंदिर में लगभग 70 मूर्तियां हैं। परशुराम की मूर्ति पीतल की और अचल है। इससे ऊपर सोने का छत्र है, गले में एक अशर्फी के रुपयों की माला है जिसके मध्य में हीरा लगा है। पालकी चांदी की है जिसका मेहराव सुनहला है।

किंवदंतियों और जनश्रुतियों में प्रचलित कंठहार गाथा

रेणुका में जितनी तैरी मछलियां जितनी सरसराती लहरियां उतनी ही किंवदंतियां और जनश्रुतियां हैं। जन-जन का कंठाहार सर्वाधिक प्रचलित गाथा निम्न है।

युगों पहले। एक थे राजा रेणु। बड़े प्रतापी। उनकी भी परियों जैसी सुंदर दो राजकुमारियां। नैनुका और रेणुका। वैसे, रेणुका की बात ही निराली थी। सचमुच सौंदर्य और लावण्य की देवी। जो भी देखता। बस देखता ही रह जाता।

एक बार की बात है। राजा ने अपनी दोनों राजकुमारियों से पूछा, 'तु किसका दिया हुआ खाती हो। बड़ी बेटी ने तपाक से कहा, पिताजी सब आपका ही तो दिया हुआ है लेकिन रेणुका ने कहा सब भगवान का दिया हुआ है।

रेणुका के प्रत्युत्तर से राजा बहुत ही क्रुद्ध और अप्रसन्न हुए। मन ही मन उसे सबक सिखाने की सोचने लगे। कुछ ही दिनों में राजा ने अपनी बड़ी बेटी नैनुका का विवाह पराक्रमी राजा सहस्रबाहू से रचाया। जिसके पास था अपार वैभव, विशाल साम्राज्य, बहुत बड़ी फौज और हजारों दास-दासियां।

दूसरी बेटी का विवाह साधारण तपस्वी जमदग्नि से करवाया। इनका पहाड़ी पर एक छोटा-सा आश्रम मात्र था। वे वहां निरंतर योग, ध्यान साधना में तल्लीन रहते।

रेणुका दिन-रात पति सेवा में परायण। रोज सोते (झरने) पर पानी भरने जाती। एक दिन अचानक सहस्रबाहू ने उसे देखा और देखता ही रह गया। पलकें उठी की उठी रह गई। तदोपरांत व सोते के आसपास रेणुका की प्रतीक्षा में मंडराता रहता। बस रात, दिन उसी के ताने-बाने बुनता रहता। उसके सपने देखता रहता।

कभी-कभी उसे अचंभा होता। उसकी रानी से कुछ-कुछ मिलता-जुलता चेहरा पर रूप-रंग में रेणुका हजारों गुणा उसकी रानी से सुंदर।

एक दिन उसने बातों-बातों में अपनी रानी से पूछा, तुम्हारी कोई बहन भी है। रानी ने हां कहा। मेरी छोटी बहन है जो ऋषि जमदग्नि से ब्याही है।

'तुम उन्हें कभी अपने यहां क्यों नहीं बुलाती।' सहस्रबाहू ने कहा।

और एक दिन बड़ी बहन से छोटी बहन व जीजा को भोज पर आमंत्रित किया। एक भव्य भोज का आयोजन हुआ। 36 प्रकार के 64 व्यंजन। नौकर चाकर। सब ठाठ ही ठाठ। राजसी ठाठ-बाट देखकर रेणुका हक्की-बक्की रह गई।

रेणुका व ऋषि जमदग्नि अपने आश्रम लौट आए। ऋषि अपनी तपस्या में लीन हो गए। रेणुका एक बात सोचती रहती कि अपनी बहन व राजा सहस्रबाहु को कैसे भोज पर आमंत्रित करूं। यहां तो कुछ भी नहीं है। और इसी उधेड़बुन में रहकर वह मायूस तथा दुबली हो गई।

एक दिन पूजा-पाठ से निबट कर ऋषि भोजन करने बैठे तो उनकी दृष्टि से रेणुका पर पड़ी। एकदम हैरान। रेणुका सूखकर कांटा सी हो गई थी। उन्होंने अपनी पत्नी से कारण पूछा। रेणुका पहले तो सकुचायी परंतु जब ऋषि ने जोर दिया तब कहीं उसने अपने मन की बात बताई। मैं अपनी बहन को बुलाना चाहती हूं लेकिन...।

'लेकिन क्या। तुम जब चाहो, उन्हें भोजन के लिए बुला लो। सारा प्रबंध हो जाएगा। तुम रत्ती भर भी चिंता न करो।'

रेणुका ने एक दिन अपनी बहन तथा जीजा को भोज का न्योता दिया। वह दिन भी आ गया। चोरी से नीचे तलहटी में अपनी बहन नैनुका, राजा सहस्रबाहु और उसके दलबल को देखकर रेणुका की जैसे जान

दीद-ए-आहू था कभी ददाहू

जिला सिरमौर में गिरी तथा जलाल नदियों के संगम पर रेणुका जी तीर्थ के निकट बसा गांव ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को संजोए हुए है। ददाहू का राजस्व रिकार्ड में पूरा नाम चूली-ददाहू है।

ददाहू जिसका पुराना नाम गणेशपुर था और बाद में मुगल शहजादा दारा ने, काबुल की ओर जाते हुए दीदे-आहू यानी हिरण की आंख का नाम दिया। यह अब एक खुशहाल कस्बा बना है। समय के साथ अब यह ददाहू के नाम से विख्यात है।

सिरमौर रियासत के अंतिम शासक राजेंद्र प्रकाश अपने पिता महाराजा शमशेर प्रकाश के नाम पर यहां अमर नगर बसाना चाहते थे लेकिन तब तक हिमाचल प्रदेश का हिस्सा बन गई। यह नाहन विकास खंड के अधीन आता है। ददाहू स्थानीय उत्पादों, अदरक, मटर, सौंठ, टमाटर तथा अन्य गैर मौसमी सब्जियों की बड़ी मंडी है। रेणुका मेले के दौरान ददाहू की शान देखते ही बनती है।

जलतीर्थ : श्रीरेणुका जी

हिमाचल प्रदेश देवभूमि के नाम से विख्यात है। यहां की धरा पर असंख्य ऋषियों, मुनियों और देवात्माओं ने ऐसे ही सर-सरोवरों और झीलों के तट पर तपस्या की है। इसलिए अनेक जलतीर्थ ऐसे ऋषि-मुनियों के नाम से जाने जाते हैं।

सिरमौर जिले के ददाहू क्षेत्र में गिरी नदी के बाएं किनारे पर स्थित रेणुका भगवान विष्णु के अवतार परशुराम की माता महर्षि जमदग्नि की भार्या रेणुका के नाम से प्रसिद्ध है। यह इन सबकी तपोस्थली रही है। लगभग 3200 मीटर के घेरे में फैली यह झील आदिकाल से लेकर लाखों तीर्थ यात्रियों का आकर्षण रही है।

रेणुका झील के समीप दक्षिण की ओर एक छोटी झील है जिसे परशुराम ताल कहते हैं। यहां दक्षिण में भगवान परशुराम का मंदिर है। यहां प्रतिवर्ष दीपावली के उपरांत दशमी के दिन मेला लगता है। इस झील के उत्तर में एक ऊंचा पर्वत है जिसे जमदग्नि ऋषि का टिब्बा कहते हैं।

जलप्रपात : तहसील रेणुका में गांव महिपुर में दो जलप्रपात हैं। वर्षा ऋतु में इनका नजारा देखते ही बनता है। इसी प्रकार से सैनधार क्षेत्र में गांव दिदपनार में दर्शनीय झरना है।

कुंड : ऐतिहासिक शहर नाहन में चार तथा त्रिलोकपुर में एक कुंड है।

ही निकल गई। इतने सारे मेहमान और यहां अभी तक कोई तैयारी नहीं।

वह दौड़ी-दौड़ी अपने पति के पास पहुंची और कहने लगी कि वे लोग बस अब पहुंचने ही वाले हैं।

ऋषि ने मुस्कराते हुए कहा, चिंता न करो। सभी व्यवस्था हो जाएगी।

और देखिए। जैसे ही, राजा और उसका दलबल पहुंचा, बात-ही-बात में सब तैयार। कामधेनु और कल्पतरु का चमत्कार। अनेक व्यंजन, सैकड़ों प्रकार के मिष्ठान, भीनी-भीनी महक और हर तरफ चहल-पहल। सहस्रबाहू यह देखकर एकदम विस्मित हो गया। नैनुका चकित। पूरा दलबल स्तंभित। ऐसा भव्य आयोजन। इतने प्रकार के खाद्य पदार्थ। ऐसे स्वादिष्ट।

भोज प्रारंभ हुआ। सभी एक स्वर में वाह-वाह करने लगे। जो चाहो खाओ। रेणुका जब कभी भी कुछ लेकर आती उसकी साड़ी का रंग वैसा ही हो जाता।

सहस्रबाहू ने सोचा कि ऋषि की बहुत सारी पत्नियां हैं जो जब-तब रंग-बिरंगी साड़ियां पहन कर भोज की देखभाल कर रही हैं। लेकिन राजा का नाई बड़ा चालाक था। उसने थोड़ी सी खीर उसके पांव पर डाल दी तब उसने राजा को दिखाया कि वही बार-बार रंग बिरंगी साड़ी पहने इधर-उधर चक्कर काट रही है। राजा हक्का-बक्का रह गया। सभी ने भोज व आतिथ्य सत्कार का जी भर कर प्रशंसा की।

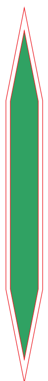
सहस्रबाहू की चाल पर पानी फिर गया। वह मात खा गया लेकिन वह ऐसे ही मानने वाला न था। उसने पक्का इरादा कर लिया कि वह रेणुका को अपनी रानी बनाकर छोड़ेगा।

एक दिन वह चुपके से आश्रम में आया। ध्यान में डूबे ऋषि को बाण से मारा और झटपट रेणुका की ओर लपका। रेणुका भागी-भागी नीचे तलहटी में आई और देखते-ही-देखते धरती फट गई और रेणुका उसमें समा गई। बस, चारों तरफ पानी-ही-पानी भर गया। तभी से रेणुका झील बन गई।

जब ऋषि जमदग्नि के सुपुत्र परशुराम को इस घटना का ज्ञान हुआ तब उसने संकल्प लिया और सर्वप्रथम सहस्रबाहू को मारा और उसके बाद अन्य राजाओं का वध किया। यह भी एक लोकप्रिय किंवदंति है।

दानवीर 'कुब्जा देवी'

रेणुका तीर्थ में परशुराम के निकट 'कुब्जा पैवेलियन' है जिसे रियासत सिरमौर की राजनर्तकी 'कुब्जा देवी' ने अपनी पुण्य कमाई को दान देकर यात्रियों के ठहरने के लिए संवत् 1990 में बनवाया था। राजनर्तकी कुब्जा द्वारा दी गई धनराशि से लौह सामग्री नाहन से रेणुका तक पीठ व कंधों पर ढोकर भिजवाई गई और रियासत के अभियंता पं. लक्ष्मी चंद्र की देखरेख में कार्य 197 दिनों में पूर्ण हुआ। पूर्व में कुब्जा पैवेलियन लोहे के खंबों पर एक विशाल छत रूप में थी परंतु वर्ष 1984 में लघु कृषक विकास परियोजना नाहन द्वारा इसके चारों ओर दीवार लगाकर इसे भवन का रूप दिया गया। जिसके भीतर एक विशाल हाल, रंगमंच, डोरमैट्री तथा तीन कमरों का निर्माण हुआ। राजनर्तकी कुब्जा देवी का 57 वर्ष की आयु में निधन हुआ लेकिन वह अपनी दानवीरता से अमर हो गई।



आलेख

पौराणिक शिवस्थल पातलियों

सिरमौर जिले के मुख्यालय नाहन-पांवटा मार्ग पर पांवटा के समीप पातलियों शिवस्थल आता है। यहां भव्य विशाल शिवलिंग जो लिंग स्वयं शिव है, केवल शिव का वाद्यचिन्ह या प्रतीक मात्र नहीं है। इस शिवलिंग की 10 फुट 6 इंच के लगभग लंबाई और गोलाई 12-13 इंच के मध्य है। इसकी महिमा को उजागर करने वाला साल का जंगल भी महादेव के नाम से जन सामान्य द्वारा पुकारा जाता है।

स्थानीय निवासियों की पातलियों स्थित पातालेश्वर महादेव के बारे में यह मान्यता है कि यहां स्थित शिवलिंग आकार में स्वतः ही बढ़ रहा है।

पातलियों के इतिहास के बारे में जनश्रुति है कि जब महादेव शिव भस्मासुर को भस्म कड़ा वरदान रूप में देते हैं। जिस कड़े के वरदान में शक्ति दी जाती है कि वह कड़े को जिसके ऊपर रखेगा, वह जलकर भस्म हो जाएगा। ऐसा वरदान पाने के पश्चात भस्मासुर शिव के ऊपर ही आजमाने के लिए शिव का ही पीछा करते हैं। शिव भस्म होने के भय से इसी स्थान पर स्व रक्षा हेतु पातालवासी बन गए थे। तब पार्वती आदि महिलाएं शिव आराधना के बिना व्याकुल रहने लगीं। उनकी आर्तता को ध्यान में रखते हुए शिव 'पातलियों' नामक स्थान पर लिंग रूप में प्रकट हुए थे। जिसके कारण इस लिंग का नाम पातालेश्वर तथा जगह का नाम पातलियां पड़ा।

दूसरी जनश्रुति यह भी है कि पतंजलि ऋषि ने जो महाभाष्यकार भी रहे हैं, ने इसी स्थान पर शिव तपस्या की थी। पातलियों के निवासियों की धारणा यह भी है कि रावण ने भी आशुतोष की इसी स्थान पर आकर साधना की थी। इस विषय पर सहमति जताना कुछ कठिन है। फिर भी तारा दत्त गैरोला की पुस्तक 'हिमालयन फोकलोर' में उद्धृत है कि रावण ने हिमालय क्षेत्र में आकर शिव की तपस्या की है जहां अपनी सुपुत्रियों को शिव की सेवा में लगाया था। जिन्हें बाद में कृष्ण ने विधिवत रासलीला की दीक्षा दी। वे ही उच्च कुलीन अविवाहित राजकुमारियां गिरी, पुरी, भारती आदि शिवभक्ति वाली अप्सराएं बनीं। सिरमौर क्षेत्र में बालिकाएं मेले, त्योहारों में रास गाते हुए थाली उंगली पर घूमाती हैं। गिरी नदी सिरमौर के मध्य से होकर बहती है और प्रत्येक गांव में शिव की आराधना किसी-न-किसी रूप में होती है। इन प्रमाणों से प्रतीत होता है कि पातलियों शिव-स्थान रावण का पूजा स्थल रहा होगा।

पुराण काल में शिव की मान्यता अधिक रही है। इस विषय में पौराणिक ग्रंथों में विस्तार से उल्लेख मिलता है। पातलियों के समीप से बाता नदी बहती है। कुछ दूरी पर वह यमुना नदी में मिलती है। स्कंद पुराण के केदार खंड के अध्याय 155वें में बेताल तीर्थ के ऊपर शर-विक्षेप मात्र की दूरी पर सूर्यकुंड का उल्लेख मिलता है। लगता है कि यहां बेताल नदी एक तीर्थ के रूप में रही हो जो नदी, काल के लंबे अंतराल में बाता के रूप में लोक व्यवहार में परिवर्तित हुई हो। ठीक शर-विक्षेप की दूरी पर आज सूरजपुर गांव बसा हुआ है। जिसके सीधे ऊपर पातलियों का शिवलिंग है :

वेतालतीर्थादुपरि शर-विक्षेप मात्र के
पुण्यदं तीर्थ सर्वपाप-प्रणाशनम् ॥

मत्स्य पुराण भी शिव स्थान होने के लिए एक और संपुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करता है कि जहां यमुना निम्नगा हो जाती है, वहां पर साक्षात देव महेश्वर निकट ही निवास करते हैं जिस कारण देव, दानव-गंधर्वों, ऋषियों, सिद्ध चरणों द्वारा तपन की सुता की उपासना की जाती है :

तपनस्य सुता देवा, त्रिपुलोकेषु विश्रुता।
समागता महाभागा, यमुना यत्र निम्नगा ॥
तत्र सन्निहितो नित्यं साक्षात देवो महेश्वरः
दुष्प्राप्यं मानुषः पुण्यं प्रथागन्तु युधिष्ठिरा ॥
देव दानव गंधर्वा ऋषयः सिद्धचारणाः।
बहुस्पुष्य राजेंद्र। स्वर्गलोकमुपासते ॥ (मत्स्य पुराण)

उपर्युक्त संदर्भ की परंपरा में व्यास जी का मंदिर भी इसी क्षेत्र में कुछ दूरी पर स्थित है।

व्यासेश्वरश्च विख्यातः सुखेशश्च तथैवहि।
भाण्डश्वरश्च विख्यातो हुकारेशस्त च ॥
तस्माते व्यासात् परो नान्य शिवभक्तोजान्त्रपे।
कृष्णो वा देवकी सूनुरर्जनो व महामतिः ॥
(शिवलिंग महात्म्य)

जहां व्यास, कृष्ण और अर्जुन को शिवोपासक बताया जाता है, वहां आर्य ऋषि जमदग्नि को भी जनश्रुति शिव उपासक बताती है। जिस कारण सिरमौर जनपद में रेणुका तीर्थ आज भी पावन स्थली है :

यमदग्नीश्वरस्तत्र महादेवो भयावहः।
आराधितो यव शम्भुः पुरायमनना ॥ (स्कंद पुराण)

द्रोणाचार्य ने शिव से धनुर्वेद की शिक्षा इसी क्षेत्र में ली है। जिस कारण पांवटा घाटी को दूण के नाम से भी जाना जाता है।

ब्रह्मा के पुत्र विशिष्ट जी राम को रावण वध करने के लिए भेजकर स्वयं तप करने के लिए हिमालय पर्वत आते हैं। रावण वध उपरांत राम, अपने भाई लक्ष्मण को वशिष्ठ जी को लाने के लिए भेजते हैं। लौटते समय गंगा में स्नान करके लक्ष्मण द्वारा पूछे विभिन्न प्रश्नों के उत्तर में वशिष्ठ जी कहते हैं पर्वतपर्यंत पहले-पहले जितना स्थान है, विचारवान व्यक्ति इसको शिवधाम के नाम से पुकारते हैं।

तामस तटतः पूर्व तथा काष्ठगिरि भवेत
अर्वाई नंदाद्रितस्तद्वच्छिव धामस्भृतं ॥ (स्कंद पुराण)

तमसा (तामसा) आज टौंस के नाम से पुकारी जाती है। यह नदी उत्तराखंड और हिमाचल की सीमा बनाती है। पांवटा का क्षेत्र भी केदार खंड के अंतर्गत स्थित है जिसे स्कंद-पुराण स्पष्टोद् घोष से मानता है। इससे प्रतीत होता है कि पातलियां का शिवलिंग मोक्ष प्रदान करने वाला है :

एवं किलपुराणषु श्रुयते सर्वदा श्रुतौ।
हिमालये च केदार लिंग मोक्षदायिकम ॥ (स्कंद पुराण)

ऐसी भी मान्यता है कि सरस्वती नदी भी सिरमौर जनपद से होकर बहती थी। महाभारत के वन पर्व में एक वर्णन है कि पांडव सरस्वती के किनारे रहे। जहां पांडवों ने शुद्धि लाभ किया जो क्षेत्र पचास योजन चौड़ा और तीस योजन लंबा महातीर्थ भूमि में ऊपर स्वर्ग लाभ कराने वाला है :

पंचाशद् योजनायां त्रिंशद् योजनस्तृितम्।
इदं व स्वर्गगमनं न पृथ्वी तामहो विभो ॥
स्वर्ण भूमिरियंख्याता यतस्तत्सलरणतया।
अत्र वै वास मात्रेण लभते परमं पदम ॥ (स्कंद पुराण)

केदार क्षेत्र को सभी पुराण प्रायः शिवधाम के रूप में स्वीकारते हैं। पांवटा का पावन क्षेत्र भी इसी का हिस्सा है। इसी के तहत पातलियां का शिवधाम है।

अतः सिरमौर का क्षेत्र शिवधाम प्रतीत होता है। यहां के कण-कण में शिव वास करते हैं।



गिरी नदी एक विहंगम दृश्य

आलेख

सिरमौरी इतिहास में भूरेश्वर महादेव मंदिर

◆ डॉ. मनोज शर्मा



देवानां भद्रा सुमतिऋजूयतां
देवानां रातिरभि नो
निवर्तताम देवानां
सख्यमुपसेदिमावयंदेवान
आयुः प्रतिरन्तु जीवसे।

(शु॰य॰ 24)

वेद की इस ऋचा द्वारा देवताओं की स्तुति लोक कल्याण की कामना करते हुए परमेश्वर आपकी कृपा से सरलता निष्कपटता से व्यवहार करने वाले दिव्य गुण कर्म-स्वभाव वाले विद्वानों की कल्याणकारिणी उत्तम मति उन दिव्य देवताओं की दृष्टि हमारी ओर लौट आये, अर्थात उन जैसे ये गुण हमारे अन्दर भी आ जायें, इन गुणों की प्राप्ति के लिए हम लोग उन देवताओं का आर्शीवाद प्राप्त करें। ये देवता उत्तम उपाय और ज्ञान तथा कर्मों के द्वारा दीर्घजीवन के लिए हमारी आयु को पूर्ण कराये-बढ़ायें। उन्हीं सिद्धान्तों, परम्पराओं के आधार पर हमारे लौकिक साहित्य या लौकिक जीवन को सूत्रबद्ध कर इस महान देव संस्कृति की दिव्यता एवं सत्यता का वास्तविक दर्शन कराया है। विषय पर खोज सम्बन्धी कार्य न होने से इसमें निजी दृष्टिकोण का भी प्राधान्य हो जाता है। सिरमौर का शाब्दिक अर्थ है 'सर्वोपरि' अथवा 'सिर का मोड़' सिरमौरी में 'मोड़' मुकुट को कहते हैं। सिरमौर सिर और मोड़ दो शब्दों से मिलकर बना है। जो कालान्तर में बिगड़कर सिरमौर बन गया। सिरमौर के भौगोलिक दिग्दर्शन में जलवायु, वातावरण, मौसम, जंगल-पशु, आदि का दृश्यांकन सिरमौर की देव संस्कृति अर्थात् सिरमौरी संस्कृति में देवताओं के प्रतिष्ठित स्थान हैं जिनमें लोग श्रद्धा भाव रखते हैं और उसी से अपना जीवन सार्थक मानते हैं। इन्हीं देव परमपराओं से ही यहां आध्यात्मिक योगदर्शन माना जाता है जिसमें वेद शास्त्र के आधारों पर ही इन देव दिव्य स्थानों की मर्यादाओं को परम्परा मानते हैं। कुछ पारम्परिक और कुछ रूढ़िवादी विचारधाराओं को भी सिरमौर जिले का अतीत माना जा सकता है जिसमें भूत आत्माओं तथा प्रेतों का प्रकोप, पाप लगना, नज़र लगना विभिन्न प्रकार की रूढ़िवादी शैली मानी जा सकती है। सिरमौरी जन जीवन में इनकी पूजा का भी महत्त्व विशेषतः प्रस्तुत किया गया है। सिरमौरी लोक साहित्य में देव संस्कृति का अर्थ साधारण जन-जीवन में देवीय आस्था और उनकी परम्पराओं, रूढ़िवादिता से इनकी पूजा अर्चना का पता चलता है।

यह भूभाग आर्यवर्त अथवा ब्रह्मवैवर्त के सिरे पर स्थित था। जिन स्रोतों तथा आधारों पर हम सिरमौर के प्राचीन भ्रमण के विषय में लेख मुगल राज्य के समय में यहां के सिरमौर को मुगल बादशाह द्वारा जारी किए गए फरमान तथा उसके साथ किया गया पत्र व्यवहार, अंग्रेजी शासकों द्वारा दी गई सनदे, अंग्रेज यात्रियों तथा शिकारियों द्वारा किये गये भूभाग का वर्णन रियासत के पुराने तथा नये गजेटियर तथा पुस्तक तारीख-ए-सिरमौर जो उर्दू में कुंवर रणजोर सिंह ने 1912 में लिखी थी, के अतिरिक्त आसपास की पड़ोसी रियासतों का वर्णन मिलता है। टाड राजस्थान एक्सन द्वारा लिखित भारत का पुराना इतिहास, राहुल सांकृत्यायन द्वारा लिखित सिरमौर का वर्णन तथा गुरु गोबिन्द सिंह की जीवनी आदि कुछ अन्य पुस्तकों में भी सिरमौर के विषय वर्णन मिलता है। कालसी का अशोक का शिलालेख सिरमौर का गांवों में बने पुराने मन्दिर उनके निर्माण की शैलियों उनमें पाई जाने वाली पत्थर तथा धातुओं की देवताओं की मूर्तियां, उनकी आर्जाये (स्तुतियां) पुरानी बोली या शाबरी मंत्रों में उल्लेख मिलता है जो हर देवी-देवता का भिन्न-भिन्न है। प्राचीन समय में पाई जाने वाली पानी की बावड़ियां (स्रोत), प्राचीन पौराणिक अवतारों तथा कथाओं का वर्णन है भी सिरमौर के प्राचीन इतिहास और वैभव का आभास देते हैं। गिरीवार के कुछ निवासियों के पास तथा मन्दिरों के कुछ पुराने समय के सिक्के और मन्दिरों के पुराने समय की प्राचीन व्यवस्थाओं को चलाने के लिए महाराजाओं द्वारा दिये गये सनदें भी पाये जाते हैं। मन्दिर प्रबन्धन के लिए पुजारियों के लिए दिये गये पट्टे जो पुश्तैनी पुजारियों को मंदिर की देव परंपराओं के संचालन हेतु दिए जाते थे।

मंदिर मूआफिदार पुजारी खर्च के लिए मुआफी जमीन पर या जरेनकद चांदी के रुपये दिए जाते थे, मुआफी मंदिर चार प्रकार से इस महान देवसंस्कृति या देवधरोहर की विरासत को सुरक्षित रखने के लिए राजा के वजीर और लंबरदार से पुश्तैनी पुजारी को मिलती थी,

अलिफ् : जमीन जिसका सालम या जुज मामला बनाम मालकान मुआफ हैं

बे : जमीन जिसका सालम या जुज मामला बनाम उन अशरायत के मुआफ हैं जो उस जमीन के मालिक नहीं हैं।

जिम : मुआफियात जरे नकद मामला जमा देह के बगैर मुकरर जमीन खास।

द : नकद पेंशन जो किसी बाशिंद देह को खजाना से मिलती हैं।

महाराजा सिरमौर के समय के पंद्रह मंदिर जो आज भी हैं इस जनपद की शान हैं। वैदिक काल में इन दिव्य स्थानों का क्या मूल रूप था, क्या रूप वास्तविक है और यहां घटित विभिन्न युगों की कहानियां जो अब किंवदंतियों के सहारे सुनी एवं कही जाती हैं। द्वादश ज्योर्तिलिंगों व भूलिंगों के इतिहास में स्वयंभू लिंग कालान्तर में भूरिश्रृंग जो दूग्धाहारी भूरेश्वर महादेव के नाम से विख्यात है। सिरमौर जिले के नाहन शिमला राजमार्ग पर सराहां नैनाटिक्कर के बीच क्वागधार की ऊंची (समुद्र तल से लगभग 6500 फुट) चोटी पर विराजमान है। किंवदंति है द्वापर में महाभारत के युद्ध को भगवान शंकर और पार्वती जी ने इस स्थान से देखा था। इस देवता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का प्रारम्भिक काल नहीं बताया जा सकता क्योंकि कुछ देवता इहलौकिक है तथा कुछ पारलौकिक, भूरिश्रृंग पारलौकिक देवता है। यह स्वयं रुद्र है। रुद्र की पूजा सनातन धर्म के आरम्भ काल से ही चली आ रही है। परम्परा से पूजा करना यह बहुत उत्तम है, किन्तु उसके रहस्य, विज्ञान, पद्धति को विश्लेषण पूर्वक जानना उससे अधिक श्रेष्ठ है। रुद्र की स्तुति में ऋग्वेद, अर्थववेद, यजुर्वेद में अनेक मंत्र हैं जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वैदिकत्तर परम्परा में भी कई ऐसे देवता रहे हो जिनकी उपासना शिव के रूप में या उनके लिंग के रूप में की जाती रही हो किंतु हमारी संस्कृति में समन्वित रूप में आज शिव, रुद्र लिंग पशुपति सब एकाकार हो चुके हैं। विभिन्न परंपराओं के सम्मिलित रूप होने के कारण शिव या रुद्र सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति के प्रतीक बन गए हैं? भूरिश्रृंग शब्द स्थानीय कई नामों से भूरिश्रृंग/भूरशिंग/भूशिंग जाना जाने लगा। वास्तविक शब्द अर्थहीन होकर अन्यान्य नामों से बोलने में आने लगा। शोध कर पाया गया कि हमारे प्रारंभिक वेद ऋग्वेद की ऋचा 1/154/6 में इसका वर्णन दिया गया है,

ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिश्रृंगा अयासः
अत्राह तदुरूगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरिः।

इस शब्दविषय में वेद के शब्दकोष निरुक्त में शब्द के निर्वचन दिए हैं एवं हिन्दी के शब्दकोष में भी 'भूरि' शब्द का अर्थ ब्रह्मा, विष्णु, महेश 'भूरि' शब्द के अर्थ बहुत हैं 'भूरि' शब्द का अर्थ भूरे रंग से भी है। उपरोक्त उदाहरण में भूरिश्रृंग शब्द को वेदांग से स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। इस शब्द का यदि अर्थ जानने का प्रयत्न करें तो पता चलता है कि पहले निर्वचन से भूरे रंग की गाय जो बहुत या बड़े सींगों वाली है अर्थात नन्दी (बैल या गाय) के चरने का स्थान। श्रृ धातु से निष्पन्न होता है या (हिसांर्थक) श्रृ धातु से या शरणोद्‌गतम् इस शब्द समूह से यह शब्द निष्पन हुआ है। यास्काचार्य द्वारा 1/154/06 से श्रृ धातु से शिरसोनिर्गतम् या शरणोद्‌गतम् इस शब्द समूह से निष्पन्न हुआ माना है। 1/154/06 का अर्थ 'उस निवास स्थान पर जाने की कामना करते हैं जहाँ बहुत या बड़े सींगो वाली और गतिशील गाय है। यहीं पर विशाल पहाड़ वाले वर्षणशील शिव, विष्णु का वह परम पद सर्वोच्च स्थान अत्यंत सुशोभित होता है। इस अर्थ से 'भूरिश्रृंग' शब्द का अर्थ किसी ऐसे दिव्य स्थान से है जहाँ पर बड़े-बड़े सिंगों वाले पशु (गाय) विराजमान रहते हैं, रोग को शमन

करने की शक्ति का स्थान। विशाल पहाड़ वाले वर्षणशील शिव, विष्णु का वह परम पद सर्वोच्च स्थान अत्यंत सुशोभित होता है। शृंखला शब्द की उत्पति भी इसी धातु से बनी है जिसे पहाड़ी के अर्थ में लिया जाता है। निरुक्त ग्रन्थों में प्रधानतः वैदिक तथा प्रसंगतः लौकिक दोनों प्रकार के दुरूढ़ अथवा रूढ़िभूत शब्दों का निर्वचन किया गया है। जैसे उपरोक्त 'भूरिशृंग' शब्द को लिया गया है। इस प्रयत्न का मुख्य उद्देश्य इस देव भूमि में ऐसे दिव्य स्थानों की उस प्राचीन संस्कृति की धरोहर के वेद, पुराण, शास्त्र से खोजकर निकालना है, जो समयान्तर में किंवदंतियों के सहारे से परम्परा रूप में आज भी जन साधारण की श्रद्धा, विश्वास के साथ-साथ जहाँ से हर आशीर्वाद प्राप्त किया जा जाता है। प्रभु द्वारा इस सृष्टि के क्रम को चलाने के लिए विभिन्न नामों से व स्वरूपों से क्रीड़ाएं की हैं।

मायवशात् दिव्यती क्रीड़ति विविधसृष्टिरचनालक्षणाम् क्रीडां कुरूते इति देवः।

इस दिव्य स्थान पर सृष्टि के आरम्भ काल से ही शिवलिंग और शिला की उत्पति उस दिव्यता की ही शक्ति सम्पन्नता को प्रदर्शित करती है। विभिन्न देवताओं के नाम से प्रचलित भगवान शंकर का छोटे कैलाश सदृश इस सृष्टि के प्रारम्भिक स्थान को जो भूरिशृंग नाम से विख्यात होने के कारण स्वयंभूलिंग ईश्वरत्व से सम्बन्धित होने के कारण 'भूरेश्वर' नाम से उस परमात्म शक्ति को जाना जाने लगा। युगान्तरों में विभिन्न किंवदंतियों की परम्परा और असीम चमत्कारों में भूरिशृंग/भूरशिंग/भूशिंग नाम से स्थान की शक्ति को लौकिक रूप में देवता के रूप में अपना उपास्य देव माना जाता रहा है।

विभिन्न आधारों पर इस महान दैव शक्ति की लोगों में अपनी-अपनी धारणायें हैं। इस विषय में खोज सम्बन्धी कार्य न होने से इसमें बहुत से निजी दृष्टिकोणों का भी प्रधान्य हो गया हो, परन्तु इस देवता के पुश्तैनी पुजारी परिवार का विचार इस प्रकार है। भूरिशृंग/ भूरेश्वर महादेव पच्छाद में विराजमान होने के कारण ही सम्भवतः इस जनपद को सिरमौर कहलाने का गौरव प्राप्त है। द्वादश ज्योतिलिंगों व भूलिंगों के इतिहास में भूःलिंग कालान्तर में भूरिश्रृंग जो दूग्धाहारी भूरेश्वर महादेव के नाम से विख्यात है। इस दिव्य स्थान पर सृष्टि के आरम्भ काल से ही शिवलिंग और शिला की उत्पति उस दिव्यता की ही शक्तिसम्पन्नता को प्र्रदशित करती है जो विभिन्न देवताओं के नाम से प्रचलित भगवान शंकर का छोटे कैलाश सदृश इस सृष्टि के प्रारम्भिक स्थान को जो भूरिशृंग नाम से विख्यात होने के कारण स्वयंभूलिंग ईश्वरत्व से सम्बन्धित होने के कारण 'भूरेश्वर' नाम से उस परमात्म शक्ति को जाना जाने लगा। शास्त्रोक्त विधान के साथ-साथ दैव संस्कृति के योगदर्शन के प्रतीक भूरेश्वर महादेव की सभी परम्पराएं तथा नियम ऐसे सार्थक सिद्ध हैं जो अपनी प्राचीन परिपाटी के अनुसार ही चलने तक तथा सीमित है अर्थात् यदि यह नियम विशेष न रखा जाये तो शिला विशेष की परम्परा बन्द हो सकती है। जिसके लिए गुग्गल का धूप और घी में गोबलो (एक पहाड़ी वनस्पति धूप) आग में डालकर दिया जाता है। मात्र दूध की धार से पूजा की जाती हैं स्त्री, शूद्र, मृतक, सूतक आदि दोषयुक्त भी पूर्व परम्पराओं से निषेध हैं। पूर्व इतिहास में देवता ने अपनी प्रजा को विभिन्न आशीर्वाद प्रदान किये और कुछ को दण्ड का भाग भी मिला इसका प्रमाण विभिन्न किंवदंतियों से लोककथायें आज भी समाज में प्रचलित होकर कही और सुनी जाती हैं गिरिवार परगने में तो देवता स्वयं यात्रा कर प्रजा के दुख को दूर करते हैं, कई के पितर जिनके दोष आदि निराकरण करने से भी नहीं समाप्त हुए देवता ने उन्हें अपनी शरणागत किया जिनकी कथा, समाज में प्रचलित हैं, पानवा गांव जो पहले राजाओं के समय में भोज था वहां की पनाल खेल(उपगोत्र) कथाड़ गाँव की कथाड़े खेल (उपगोत्र) की भाई- बहन की कहानी, बरसयान और धरेट खेल (उपगोत्र) की वासू की कहानी जिस के कारण आज भी इन लोगों में विवाह आदि नहीं होते, धीणी और सरजेट खेल (उपगोत्र) की कहानी, भेलणु खेल (उपगोत्र) की कंडे ढलने की कहानी, सन्गोली और ट्वाणुए खेल (उपगोत्र) की सन्तान की कहानी और विशेष कहानी महाराजा सिरमौर के इतिहास की कहानी जिन्होंने देवता से आशीर्वाद पाकर भूरिशृंग मंदिर के लिए चांदी के सिक्के बारह रुपये मुआफी स्थानीय मोजे से राजकोष से ताकायमी मंदिर भूरिशृंग व संचालन के लिये कर्तव्यों एवं अधिकारों का पट्टा प्रदान किया था।

प्राचीन कार्य (काम) एवं परम्पराओं का इतिहास निम्न बाईस खेलों में कार्य (कार) भी देवता से निर्धारित की गई हैं जिसमें कुछ मुख्य कारदारों का वर्णन मिलता है, देवता के मुख्य कारदार जो भरद्वाज गोत्रीय ब्रहामण हैं। इनके कुल देवता भी यही हैं पुजारी (देवा) जो शैव ब्रहामण होते हैं, पुरोहित का कार्य करते हैं बाईस खेलों में इनका कोई विवाह आदि नहीं होता मात्र भाई बहन के रिश्ते होते हैं, इनके दो-तीन (ढेरिया) परिवार यहां रहते हैं, इनके घर पुरोहित कोशिक गोत्र और बटोलेय खेल (उपगोत्र के ब्रहामण पूजा-पाठ करवाते हैं। पहले रामजीदास पुरोहित होते थे अब इनके भाई स्व. परामचन्द्र के पौत्र करमचंद कौशिक कार्य करवाते हैं, सभी पर्वो, त्योहारों, रविवार, संक्रान्ति आदि पर धूप-दीप, पूजा-पाठ आदि किया जाता है। यात्रियों से भी पूजा आदि करवायी जाती है। प्राचीन काल से महाराजा सिरमौर ने इस स्थान को धूप-दीप पूजा-पाठ, के लिए हर महीने चांदी के सिक्के मामले के समय 12 रुपये सालाना मुआफी स्थानीय लम्बरदार द्वारा पुश्त्तेयनि माफीदार मोहतमिम व पुजारी जो राजा से नियुक्त होते थे और आज जिलाधीश द्वारा नियुक्त होते हैं को दी जाती है। पूर्व पुश्त्तेयनि माफीदार मोहतमिम व पुजारी स्व. शिवराम पुजारी (देवाजी), स्व. छागा राम देवाजी आदि रहे लगभग 17वी. शताब्दी

से राजस्व प्रमाण भी इसके मिले हैं इससे पहले भी बताए जाते हैं परन्तु तथ्यात्मक प्रमाण प्रस्तुत नहीं किये जा सकते हैं। स्व. श्री पाधाराम देवाजी, स्व. भूरियाराम देवाजी, स्व. तुलसीराम देवाजी रहे हैं, डा. मनोज शर्मा देवाजी आज कार्य को देख रहे हैं। जब तक देवा नही बनता तब तक पुजारी परिवार कार्य सहयोग करते हैं। सोलहवीं शताब्दी के लगभग मंदिर की चोरी आदि के भय एवं अधिक दूरी के कारण भूरेश्वर महादेव की एक मूर्ति जो सोने की बनाई गई थी को मूआफिदार पुश्तेयनी पुजारी ने अपने निवास स्थान एक कोस के फासले की दूरी गांव पूजारली जिसे आज टीक्करी पुजारली भी कहा जाता हैं। देवआज्ञा से देवस्थली की तरफ आते हुए करीब सात विशेष स्थान पर रुकते हुए देवता को पुजारली गाँव में लाकर अपने मकान में स्थापित किया गया वही देवता की परम्पराओं के अनुसार पूजा-पाठ किया जाता है। देवता के दो उत्सव वर्ष भर में होते हैं देव शयनी एकादशी जुलाई माह में और देव ग्यास नवम्बर माह में होता है। मुख्य उत्सव के रूप में देव ग्यास को मनाया जाता है। दिवाली के ठीक ग्यारह दिन बाद इस उत्सव की तैयारी दिवाली से पूर्व आश्विन मास के आठवें नवरात्र से प्रारंभ हो जाता है। पुजारी परिवार द्वारा इस दिन सभी देवमूर्तियों को स्नान करवाया जाता है। धूप गोबलो एक पहाड़ी वनस्पति और गूगल आग में डाल कर दिया जाता है। मंदिर व देवस्थली की सफाई की जाती है। फिर दिवाली के चौथे दिन (चोथ) को दूधाधारी देवता के विधान से दूध की धार, खील-पतासा, गुड, मिठाई आदि से भोग लगाया जाता है और फिर आवाहन (मनडहारा) किया जाता हैं और आने वाले उत्सव को जो देवता की शिला विशेष की खेल (रात्रि की छलांग) निर्विघ्नता से पूर्ण करने के बारे में पूछा जाता हैं। दिवाली से अष्टमी की रात्रि को लगभग ढाई बजे रात को प्राचीन नियम व परम्पराओं के साथ अपने निवास स्थान पुजारली गांव जहा भूरेश्वर महादेव की देवठी, (देवस्थली) से पैदल छः किलोमीटर दूर कवाल नदी से विशेष पूजा के बाद 'छुशू का कार्य 'कार' करते हैं, यह कार्य देवो की मुख्य कार (कार्य) मानी जाती हैं। पुजारली गांव से दूर एक गांव पड़ता हैं जो चावल रात्रि को बाहर पेड़ में टांग कर रख दिया करते थे यदि भूल जाते थे तो उनके दरवाजे में लाठी मार कर जगाया जाता था फिर चावल लिए जाते थे वहीं पहाड़ी पर लकड़ियां और बर्तन रखे होते थे जो बताया जाता है कि सुंदरू नाम का एक व्यक्ति रखा करता था और वहां से रास्ता साफ किया करता था क्योंकि उस समय घास आदि होता हैं उस आदमी पर ख्वाजा (शेषनाग) की कृपा बताई जाती थी। सर्प के विष को उतारने का माहिर उसे माना जाता था अब उसके वंशज यह काम करते हैं पर यह कार्य गौण सा होने लगा हैं फिर आग जला कर मीठे चावल बना कर नदी में जाकर ख्वाजा (शेषनाग) की पूजा कर करीब 4 बजे के करीब सफेद रंग के पत्थर नदी में दिखाई देने लगता है जो पहले काफी मात्रा में मिलता था अब कम मिलता है, को इकट्ठा कर लाया जाता था फिर वापिस आते हुए रास्ते में विश्राम कर उन मीठे चावलों का भोग स्वयं लगा कर करीब 9-10 बजे प्रातः वापिस घर पर पहुँच कर विश्राम आदि कर शाम को सूर्यास्त के समय स्थानीय भाषा में जब कढारू (एक पहाड़ी का नाम) पर सूर्य की रोशनी अस्त होते समय वहाँ पहुंच जाती है। फिर देवस्थली के पास आग (घयाने) में उन विशेष पत्थरों को भूनने के लिए डाला जाता है और फिर रात्रि उत्सव करयाला के रूप में रात्रि जागरण सभी लोग करते हैं जिसमे स्थानीय लोगों के इलावा दूर दूर से लोग देखने आते हैं। पहले समय से ही पुजारी परिवार सारी व्यवस्था करता है जिसमे बैठने के लिये धान का घास (पुराल) नीचे बैठने के लिए डाला जाता रहा हैं। अब एक सुंदर हाल में बैठने के लिए व्यवस्था की है, भोजन भी पुजारी परिवार द्वारा दिया जाता हैं जिसमें मुख्यतः असक्ली और दाल आदि खिलाई जाती थी। करयाला करने वाले व्यक्ति देवता की कार समझ कर करते थे उन्हें उस समय आर्थिक राशि निश्चित न देकर सिर्फ बेल देते थे। सिरमौरी में बेल शब्द आर्थिक राशि यथा शक्ति देते थे। बेल शब्द कहा जाता था, जबसे बाहर के लोगों को यहां बुलाया जाता है। तबसे लोगों से चंदा आदि आर्थिक राशि एक समिति गठित की गई हैं द्वारा दिया जाता हैं। दूसरे दिन दशमी की सुबह उन विशेष पत्थरों को जो चुने के रूप में परिवर्तित होते हैं पुजारी द्वारा इकट्ठे कर घोला जाता हैं फिर देवस्थली और मंदिर में विशेष मुहूर्त और विशेष स्थान पर लगाया जाता है। देव ग्यास के दिन सुबह से पुजारी (देवा) के पास आशीर्वाद के लिए श्रद्धालुओं का तांता लग जाता है और अपने देवता को सजाने के काम में लग जाते हैं जिसमें प्राचीन परम्परा के अनुसार मंदिर का पोलिया जो खानदानी होता है। पुरोहित, वरिष्ठ पुजारी और सभी कारदार देवता की उपगोत्र (खेले) उस पूजारी विशेष के लगाएंगे जिस पर देवता की कृपा होती है। करीब एक बजे के बाद पुरोहित सारे पूजारी परिवार से दूध घी इक्ट्ठा करता हैं, देवता खुद मनुष्य रूप में आकर अपने छत्र पगड़ी, चवर त्रिशूल और विशेष वस्त्र धारण करके उन्हीं स्थानों से होते हुए मंदिर की और जाते हैं जहा से देवस्थली की और निश्चित स्थान बने होते हैं।

सुन्दरी खेल 'थयोल' की कार की जाती है। प्राचीन काल से चाकली नामक गांव हैं जहा सुणने के वृक्ष पाए जाते हैं जिस कारण वहां नाम सुनणी या सुन्दरी नाम से कहे गए पूरे गांव के लोग धान इकट्ठा करके फिर हाथों से छीलक हटा के अपने छत पर उन चावलों की खीर बना कर फिर नंगे पैरों से वो लोग आकर देव यात्रा से पूर्व शिवलिंग पर पूरी तरह लगा देते हैं। चावथीये खेल अपने देवता की शक्ति परीक्षण के लिए आग (बती) देकर देवता के आगमन के समय देवता का चँवर झूलाना हैं जिसके कारण इस खेल (उपगोत्र) का नामकरण चांवरथिए पड़ाए पनाल खेल मेसे

देवता पोलिया देवता के जयकारे आदि पूरे कार्यों को करवाता हैं अर्धरात्रि की शीला विशेष के ऊपर की व्यवस्था देवा आदेशानुसार करवाना पूरे देव कार्य को व्रत में रहकर करवाता हैं, चकरावनी खेल जिसमे जनश्रुति के अनुसार दो जातियों में बंट गए थे, उन्हीं में से पूर्व काल से देवता के वाद्ययंत्र ढोल नगाड़ा आदि को बनाने का कार्य देवता की कार समझ कर आज भी करते हैं पहले यह लोग लोगों में छमाही आदि मांग कर अपना गुजारा करते थे अब शायद कुछ मानदेय निश्चित किया हैं। मेहंदोबाग गाँव की मेहंदु खेल जो मंदिर की तलहटी लगभग चार किलोमीटर दूर स्थित हैं देवता से अर्धरात्रि की शीला विशेष की खेल(छलांग) जिसमे देवता अपना इतिहास दोहराते हुए आशीर्वाद प्रदान लगभग दस वाणियो (आवाजों) में करते हैं पहली वाणी (आवाज) में सिंजी बे मेहंदुओ मेरी जोड़ो पर अंतिम दूध की धार से पूजा करते हैं और 'जय देवा भूरिशिंगो री जय का उद्घोष करते हैं, आज भी भोजराज शर्मा जी पूरी खेल के साथ इस कार्य को निभाते हैं इनकी दादी स्व. श्रीमती ब्लासो देवी धर्मपत्नी स्व. श्री हेतराम मेहता ने इस मंदिर के पास करीब 15 वर्ष पूर्व मंदिर की प्रथम धर्मशाला बनवाई थी। खोजरी खेल जो पूर्वकाल में पनाल खेल की उप-खेल रही हैं। इनका कार्य (कार) मंदिर में प्राचीन काल से देवता की रात्रि परम्परा से पूर्व, मंदिर के चारों तरफ पत्थरों के प्राचीन दीपक जो सूती कपड़े से जलते हैं उसके कपड़े आदि का प्रबंध कर पोलिये की सहायता करना जिससे रात्रि काल में मंदिर में रौशनी रहती है।

पारम्परिक रूप से आज भी ढोल-नगाड़ों व वाद्य यन्त्रों सहित पुजारी व अन्य कारदार लोगों द्वारा पुजारली गांव से देवता की शोभा यात्रा निकाली जाती हैं देवता का गुर/पताला मार्ग में विशेष स्थानों पर दूध की घारे देते हुए नंगे पांव त्रिशूल, छत्रा चंवर धारण किए हुए पथरीले व कंटीले प्राचीन मार्ग से होते हुए यात्रा पहाड़ी के शिखर पहुंचती है, तथा ढांक के भंयकर मार्ग से देवता एक शिला विशेष जो लगभग 3 किलोमीटर खड़ी ढाक में मन्दिर के पार्श्व भाग में तिरछी व अति भयंकर रूप में स्थित है, पर आरोहण करके दूध की धर डाली जाती है तो वहां उपस्थित सभी श्रद्धालुओं के शरीर में एक विशेष सिरहन आ जाती है और श्रद्धालु देवता की कला का साक्षात्कार करके देवता की जय-जय कार व धन्य-धन्य कहकर स्वयं को कृतार्थ समझते हैं। वर्ष में देवशयिनी तथा देवप्रबोधिनी एकादशी को यह दृश्य देखने को मिलता है। देव प्रबोधिनी एकादशी अर्थात् दीपावली के बाद ठीक 11वें दिन तो देवता रात्रि को वही विश्राम कर रात्रि के अन्तिम प्रहर में चन्द्रास्त हो जाने पर भाई-बहन को जिन्हें प्राचीन बोली में देहु-देई कहा जाता था, उनके परिवार वाले एवं उनके मामा के पक्ष वाले लोग रात्रि को जागरण कर उन्हें बुलाते हैं , देवता के गुर/पतालों में वह आत्माएं आती हैं और आपस में मिलन के बाद अदृश्य हो जाती है उसके बाद देवता अपनी शक्ति-प्रदर्शन करते हैं और उसी शिला विशेष जिस पर पिछले तीन दिनों से दूध व घी क्विंटलों के हिसाब से डलता है, पर छलांग लगाकर अठखेलियां करते हुए अपनी अमर वाणी से कारों को बताता है। निःसंतान दंपतियों की गोद भरने का वरदान प्रदान करता है। वहां से लगभग 3 किलोमीटर ढांक की तलहटी में स्थित मन्दिर महन्दोबाग में बैठे कारदार देववाणी सुनते ही अपनी कार रात्रि जागरण करते हैं। देव पूजन प्रारम्भ कर देते हैं। उधर पुजारली गांव जो करीब राजमार्ग से 200 मीटर की दूरी के मन्दिर के पास बैठा महिला समूह देव कीर्तन करते हुए रात्रि जागरण करता है। आम लोगों में देवता मूर्ति के रूप में यात्रा करते हैं, इस प्रकार तीनों मन्दिरों में एकरूपता सिद्ध है जिसके लिए उपायुक्त समाहर्ता जिला सिरमौर द्वारा पुश्तैनी पुजारी नियुक्त किये जाते रहे हैं जिसमें देवता की विलक्षण खेल आती है ।

शिवलिंग : यह लिंग सृष्टि के आदिकाल से ही माना जा सकता है क्योंकि कोई भी सृष्टि का निर्माण मानव या अन्य द्वारा सम्भव नहीं हो सकताए पहाड़ में अंदर इस लिंग की लम्बाई लगभग 30 फुट बताई जाती है।

ताण्डव शिला : सौन्दर्य की दृष्टि से यह एक ऐसी अद्भुत पाषाण शीला है जो शिवलिंग के पार्श्व भाग में स्थित हैं कैलाश सदृश इस दिव्य स्थान की आलौकिकता का दृश्यांकन इस पर परम्परागत रूप से चढ़े घी और दूध जो इस शिला विशेष को इसके बहुत ज्यादा तिरछे होने से और भी फिसलनी बना देते हैं जिससे नीचे 3 किलोमीटर की खाई हैं कैलाश सदृश इस दिव्य स्थान के होने से इस शिला विशेष को ताण्डव शिला की उपमा दी गई है।

पूजास्थली मेहन्दोबाग : यह स्थान मन्दिर के तलहटी में मेहन्दोबाग नाम से स्थित है। प्राचीन शिवलिंग, पीपल वृक्ष जहां पर देववाणी के होते ही अर्धरात्री के समय दूध की धार मेहन्दु (खेल) उपगोत्र के लोगों द्वारा चढ़ाई जाती है एवं मन्दिर के विशेष स्थान से यदि सिक्कों को फेंका जाए तो बहुत समय तक उसकी आवाज इस स्थान से सुनाई देती है।

पूजास्थली पुजारली : यह पूजास्थली इस देवता के पुश्तैनी सरकार द्वारा प्राधिकृत पुजारी द्वारा मूर्तियों की सुरक्षा आदि के लिए पूजनीय स्व. श्री भूरीया राम जी के काल में निर्मित की गई थी। इससे पूर्व सन् 1875 में पूजनीय स्व. श्री पाधराम जी के समय में उनके बुजुर्ग द्वारा मन्दिर से चोरी आदि के बचाव के लिए अपने निवास स्थान पुजारली में एक मकान के कोने में देवता की मूर्ति रखी थी,

सम्वत् 1931-1932 गोशवारा नम्बर 4-5 ह.ब. संख्या 310 मुआफि बन्दोबस्त 1931-32 मन्दिर भूरसिंह तहसील पच्छाद में दिया गया है जिसका अनुवाद कुछ इस प्रकार में वास्तविक रूप से निम्न है :-

नाम मेरा पाध बाप का नाम देवीराम, कोम देवा मौजा

पजेरली पच्छाद के उमर 60 साल मौजा पन्जेरली भोज पानवा इवज खिदमत पूजा भूरसिंह देवता का मुआफ चला आता है जिस हकदार साहवान हर एक औलाद मुआफीदार का जवाब है। देवता के नाम मुआफि है मकान देवता एक कोस के फासले पर ऊँचे पहाड़ पर जंगल दरखतान चीड़ में है अलबेसब हस्ववार व रोज पूजा इस वास्ते नहीं की जाती है, वायस फांसला दूर का है, हर रोज नहीं जाया जाता हैं इसलिए एक मूर्ति उस देवता की बजुरगान हमारे गांव लेकर आई हुई उसकी पूजा हर रोज मेरे मकान में किये हैं। मकान व इमारत पुखता गांव में बना होने, यह मकान जंगल में हैं मय इमारत खास है।

इस देवता के पुजारी छत्र, चंवर, त्रिशुल धरण किये नंगे पांव देव वाणे से सुसज्जित होकर ढोल नगाड़ों कार-सेवकों सहित देवशयनी व देव प्रबोधिनी एकादशी को मन्दिर में आते हैं। इसी स्थान में गांव की औरतें अर्धरात्रि में देवता की छलांग के समय रात्रि जागरण में बैठती हैं।

क्वाल नदी : यह नदी विशेष है जहां से पुजारी आज भी परम्परा के अनुसार अष्टमी की रात्रि को श्वेत पत्थर जो देव योगवश निकलते हैं, उन्हें नवमी की रात्रि में देव जागरण के समय भूना जाता है जिसे (छू) शब्द से कहा जाता है, इसी से मन्दिर की सफेदी देव परम्परा के अनुसार आज भी की जाती है।

सप्तधारा स्थान : पुजारली पूजास्थली से मन्दिर स्थल तक पहुंचते हुए सात विशेष स्थानों पर दूध की धार जो देव पुजारी द्वारा यात्रा विशेष के समय दी जाती है, उस समय शक्ति विशेष को स्मरण किया जाता हैं जिसे अधिक विस्तृत देव आदेश न होने से नहीं लिखा जा सकता। परम्परा विशेष सहयोगी कारदार 22 उपगोत्र (खेल) : साधारणतः इस देव समाज में हर एक देवी-देवता की कुछ निश्चित प्रजा होती है एवं जो जिस पदवी का होता है उसका क्षेत्रा भी उतना ही बड़ा होता हैं भूरिशृंग एक दुग्धधरी देवता है एवं क्षेत्राप्रधान देवता है। 22 उपगोत्र (खेल) तो अपनी है। इसके साथ-साथ अन्य देवताओं का भी कार्यभार क्षेत्रा प्रधान (गिरीवार) पर होता हैं इनमें देवों की कोई खेल विशेष नहीं होती। 22 खेलों के ये पुरोहित हैं, 22 खेलों में इनका कोई भी रिश्ता-सम्बन्ध, भाई-बहन के सिवा नहीं होता। पुरोहितचारी का ही कार्य करते हैं। अन्य खेले सभी यजमान होती हैं इसका मुख्य करीन्दा पोलिया होता हैं कहीं-कहीं इन्हें भण्डारी भी कहते हैं। शास्त्रोक्त तो इसका कोई प्रमाण नहीं होता परन्तु देवता के कार्य में यह विशेष अधिकारी होता है जो पनाल खेल से होते हैं। इनकी उप-भाग में खोजरी, बियुलिये आदि अलग-अलग से ही खेले मानी जाती है। पोलिया शब्द का अर्थ कुछ साहित्यों में द्वारपाल बताया जबकि पोल शब्द का अर्थ यह नहीं हैं पोल एक जाति का नाम है जैसे यवन आदि महाराजा हुमायुं के समय में पोल जाति का कार्य सीमा की रक्षा करना होता था। यह पोल शब्द पहाड़ी भाग में पोलिया का जिसका अर्थ सीमा विशेष की रक्षा करना होता हैं मन्दिर भूरेश्वर में देवता की इहलौकिक खेल जो पुजारी के रूप में होती हैं उस समय देवता में कारसेवक भक्त या कार्य विशेष से सम्बन्धित लोग जो पनाल एवं कथाड़े खेलों से होते हैं तथा अपनी-अपनी परम्पराओं को निभाने आए हुए होते हैं उनके बीच में बैठने की व्यवस्था व्यक्ति विशेष द्वारा की जाती हैं वहां एक विशेष रेखा (पोल) बनी हुई होती है जहां पर देवता के पुजारियों से देवता की खेल के दौरान साधारण जन समुदाय की अर्ज करता है एवं उसका उपचार पूछता है उसे पोलिया कहा जाता हैं इसी प्रकार से भिन्न-भिन्न खेलों (उपगोत्रों) का कार्य भिन्न-भिन्न होता है।

इसके इतिहास में महाराज सिरमौर द्वारा इस परिवार विशेष को इस पवित्र एवं दिव्य स्थान की संस्कृति को शाश्वत बनाये रखने के लिए विशेषाधिकारों द्वारा मोहतमीम/ मुआफीदार पुजारी के रूप में प्राधिकृत कर सम्मानित किया। इससे सम्बन्धित महाराजा सिरमौर की एक कथा प्रचलित है, जिसका प्रमाण राजस्व कागजात के अनुसार है एक समय महाराज सिरमौर शिमला की ओर घोड़े पर प्रस्थान कर रहे थे, क्वागार जो पूर्व में बनड/घर नाम से प्रसिद्ध था, वह मार्ग आज भी मार्ग रूप से ही है, देव प्रबोधिनी, एकादशी के समय जहां इस देवता की परम्परा के अनुसार अर्धरात्रि के समय जब कहीं नजदीकी रोशनी न हो और न ही रात्रि में चन्द्रमा का ही प्रकाश होता हैं तब उस ताण्डव शीला जो सृष्टि के प्रारम्भ काल से ही शिवलिंग के पार्श्व भाग में आज भी स्थित है एवं द्वापर में महाभारत का युद्ध भी इसी स्थान से देखा गया था। उसी शीला विशेष पर छलांग लगाकर लौकिक गाथा को प्रमाणित करते हैं। उस दिव्य स्थान से कारसेवक रात्री बीत जाने पर देवता के साथ वापिस घर आ रहे थे, तो राजा द्वारा उनसे पूछा गया कि सभी लोग कहां से आ रहे हैं? तो देवता के कारसेवक ने बताया कि इस चोटी पर एक भूर्शिंग नाम से एक देवता का दिव्य स्थान है और अपनी भिन्न-भिन्न मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए देवता के पास अपनी अर्जी लेकर गये थे, महाराजा द्वारा पुनः पूछने पर कारसेवकों ने बताया कि सन्तान सम्बन्धी, पशु सम्बन्धी एवं अन्य अर्जे यहां पूरी होती है। महाराजा सिरमौर की भी कोई सन्तान न थी और देव परीक्षा करनी चाही कि यदि मेरे भी सन्तान हो जाएगी तो मैं देवता के दर्शन के लिए आऊँगा। यह वृतान्त अपनी पत्नी (महारानी) को बताया। देवकृपा से पुत्र प्राप्ति कर जब महाराज सिरमौर देव दर्शन करने आया तो इस दिव्य स्थान को देखकर वह दैव शक्ति के समक्ष नतमस्तक हो गया। देव पुजारी द्वारा जब ताण्डव शिला की विशेषता के बारे में बताया जो कि 6500 फुट से भी अधिक खाई के ऊपर शिवलिंग के पार्श्व भाग में स्थित थी, और इस ताण्डव शिला से पूर्व में नन्दीश्वर स्थापित थे। देव कृपा युक्त पुजारी जो ढांक से होते हुए उस पर दूध चढ़ाकर नंगे पांव से

छत्र, चंवर, त्रिशूल और विशेष देव वस्त्रा (देववाणा) धारण किये हुए उस खाई में स्थित शिला पर दूध की धार देता है और अर्धरात्रि में इस शिला पर जो कारसेवकों एवं श्रद्धालुओं द्वारा घी, दूध से पूर्व लिप्त की जाती है, पर छलांग लगाकर जनसाधरण को मानोकामनाओं को पूर्ण करता है। इस प्रत्यक्ष प्रसंग से राजा भयभीत हो गया एवं दैव शक्ति से चकित हो कर उसने उस पुजारी के दर्शन करने चाहे जिस पर स्वयं भगवान शंकर का आशीर्वाद था। देव कृपा युक्त पुजारी को प्रणाम करते हुए इस भयानक जंगल में इस दिव्य स्थान की सुरक्षा के लिए विशेष अधिकार दिये, यह पुजारी स्थानीय गांव में रहता था जिसका नाम पुजारली अर्थात् पुजारियों का गांव था, वर्ष भर धूप दीप, मरम्मत, देखरेख आदि के लिए सरकारी कोष से 12 रुपये मुआफी मौजा टिक्करी पुजारली में जरेनकद स्थानीय मौजे के लम्बरदार के द्वारा देव कृपा युक्त पुजारी जिसे मोहतमीम व मुआफीदार का औहदा, अधिकार एवं कर्त्तव्यों के पट्टे से सम्मानित किया गया। पूर्व रजवाड़ों के समय में ऐसी एक प्रशासन व्यवस्था थी कि हर प्राचीन संस्कृति को संरक्षित रखा जाता था। महाराजा ने अंग्रेजों के समय से कलेक्टर (समाहर्ता) को इस प्रकार की व्यवस्था के लिए जिलाधिकारी रखने शुरू किये। अदालत या बाजबा कलेक्टर रियासत सिरमौर द्वारा इसका निर्णय किया गया था। राजस्व प्रमाण के आधार पर 1875-1876 में कलेक्टर साहिब रियासत सिरमौर ने अपनी अदालत सम्वत् 1931 1932 सन् 1875-76 बाजबा श्री नन्दलाल साहिब द्वारा पूजनीय स्व. श्री पाधराम जी को मोहतमीम व मुआफीदार पुजारी के पट्टे से सम्मानित किया ।

अदालत या बाजबा कलेक्टर रियासत सिरमौर द्वारा इसका निर्णय किया गया था।

जैसे कि :-

बाजबा श्री नन्दलाल साहिब कलेक्टर रियासत सिरमौर वामुकदमा मुआफी

मौजा पन्जेरली भोज पानवा बजीरी व मद 310 बनाम मकान देवता भूरसिंह ।

अगरचे ब्यान मुआफीदारान से मालूम होता है कि जिस देवता का नाम मुआफी ब्यान करते हैं वहां कुछ रौनक है सिर्फ जंगल के दरयमयान एक टिब्बा पहाड़ पर वाका हैं कोई पुजारी वहां पर कम ही रहता है, अलबता सालभर में एक मेला होता हैं तो उस मेले पर जिस कदर आमदनी होती है, वह सरानी मुआफीदार को काफी है पस मालूम होता है कि कबे ऐकारास अमाहारनी जिस के इख्तियार कार नफरअराजी मामला का बना उसने इस गांव को अर्जपरजई किया। नेरनी नजदीक आमदनी 1934 सम्वत् यह गांव मालसा तसब्बर होना चाहिए सनद रहे माफी व मुराद वा हुजूर बहादुर साहिब हुक्म पर हुआ हैं

सनद अज पेशगाह साहित कोलेक्टर बहादुर जिला नाहन रियासत सिरमौर मबरखा 15 आषाढ़ सम्वत् 1990 में अंग्रेजी बी. ए. किच्चलू साहिब कलेक्टर बहादुर जिला नाहन द्वारा महाराजा अमर प्रकाश के आदेशानुसार पूजनीय स्व. श्री भूरिया राम जी को मोहतमीम व मुआफीदार पुजारी नियुक्त किया गया। श्री भूरिया राम देवाजी को सम्वत् 1990 में दी सनद उर्दू भाषा में कुछ इस प्रकार दी गई हैं।

सनद अज पेशगाह साहिब कोलेक्टर बहादुर जिला नाहन रियासत सिरमौर मवरखा 15 आषाढ़ संवत 199. सनद बनाम भूरिया वल्द बुधू कोम भाट सकना पजेरली तहसील पच्छाद पुजारी मंदिर देवता भूर्शिंग वाका देह हजा जो के मूब्लिग 12 रुपए जरे नकद मिन जुमला जमा देहहजा मोजा टिकरी पजेली ह.न. 31. तह. पच्छाद बनाम मंदिर देवता भूर्शिंग वाका देह हजा मजकूर तकायमी मंदिर बर्शते नेक चलनी पुजारी व खेर खवाही व फरमाबरदारी दरबार व बजाआवरी खिदमात पूजा पाठ धूप दीप व मुरम्त शक्त रेख्त मंदिर माफ हैं इस लिए आइन्दा भी अज रवि संवत 1988 बबजे तशखीस जदीद रकम मजकूरा बाला बशरते मजकूरा बाला व पाबन्दी अहकाम दरबार जो जारी शुदा हैं या आइन्दा जारी हो बमन्जूरी सरमहाराज साहब बहादुर वालिया मुल्क सरमोर महकमा 19 आशाड 1989 बनाम मंदिर मजकूर बह्त्माम त्म्हाजे बहाल रखी गई हैं बसुरते खिलाफवर्जि शरायते माफी काबिले जपती होगी फक्त।

दरखस्त बी ए् एल किचलू साहिब कलेक्टर बहादुर जिला नाहन।

गांव पुजारली डाकघर बागपशोग
तह. पच्छाद जिला सिरमौर हिमाचल प्रदेश-173024, मो. 0 94593 42464

आलेख

पुरातात्त्विक विरासत का प्रतीक है शैव मंदिर मानगढ़

हिमाचल प्रदेश के जिला सिरमौर की पच्छाद तहसील के मानगढ़ गांव की सुरम्य वसुंधरा के आंचल में पुरातात्त्विक महत्त्व का एक रमणीय स्मारक छिपा है। मठनुमाकृति में बना यह मंदिर समृद्ध प्रस्तर शिल्प का अद्वितीय उदाहरण है। मानगढ़ ग्राम के खाड़ी नामक नाले के संसर्ग में निर्मित इस देवालय की छवि देखते ही बनती है। यहां से उत्तर दिशा की ओर गगनचुंबी चोटियों के बीचोबीच दृष्टि डालने से जस्कर पर्वतमाला का अंतिम छोर दिख पड़ता है। यह पर्वतशृंखला जनमानस में चूड़धार का टिला के नाम से विख्यात है।

शिव मंदिर मानगढ़ का वास्तुशिल्प देश के गिने-चुने मंदिरों में एक है। प्रस्तर शिलाओं पर उत्कीर्ण कलाकृतियों को देखने से प्रतीत होता है कि यह मंदिर 5वीं शताब्दी में गुप्तकालीन साम्राज्य में बना है। संरचना की दृष्टि से मंदिर के गर्भगृह का प्रवेश द्वार सृष्टि के इंद्रधनुषी रंगों का बिंबात्मक प्रतीक है। प्रस्तर शिलाओं की चौखट पर अलंकृत वनस्पति हरियाली और खुशहाली का द्योतक है। गंगा-यमुना का शिल्प मानव जीवन में पवित्रता और निःस्वार्थ सेवा का मार्ग प्रशस्त करता है। देवी-देवताओं के उद्भासित अनगिनत चित्र हमें कुछ क्षणों के लिए भौतिकवाद से दूर अध्यात्मवाद की आरे ले जाते हैं। कीर्तिमुख शौर्य और पराक्रम की ओर उद्वेलित करता है। मैथुन जोड़े तथा गंधर्वों के उत्कीर्ण चित्र जीवन में भोग-विलास और राग-आह्लाद की ओर संकेत करते हैं। इस मंदिर के गर्भगृह में सुसज्जित शिव-पार्वती, गणेश तथा महिषासुरमर्दिनी की प्रस्तर प्रतिमाएं शिल्पी के कला चातुर्य को उद्घाटित करती है। यह प्रतिमाएं प्रतिहारकालीन अर्थात् 11वीं शताब्दी की है जबकि बलभद्र की प्रस्तर मूर्ति 18वीं शताब्दी की है। इस मंदिर का बाह्य ढांचा भी 18वीं शताब्दी का प्रतीत होता है। यहां मंदिर के सामने रखे गए खंडित नंदी और भद्रमुख भी 8वीं तथा 9वीं शताब्दी के निर्माण शिल्प को दर्शाते हैं। भद्रमुख के मध्य में सदयोजात, बायीं ओर ऊमावाम तथा दाहिनी ओर अघोर भैरव की प्रतिमा तराशी गई है। भद्रमुख सुखनास के नीचे स्थापित न होकर मंदिर परिसर में खुला पड़ा है। यहां मंदिर के बाहर बायीं ओर एक शिला पर तराशा गया शार्दुल भी गुप्तकालीन प्रतीत होता है। सिरमौर रियासत गजेटियर में उल्लेखित है कि यह मंदिर सियालकोट के राजा रसालू ने बनवाया है क्योंकि इस मंदिर की निर्माण शैली उस काल की स्थापत्य शैली के साथ मिलती-जुलती है। इस मंदिर में उपलब्ध कलाकृतियों का आकलन कर पुरातत्त्ववेत्ता इसका संबंध गुप्तकाल और प्रतिहारकाल के साथ जोड़ते हैं।



जनश्रुति है कि मानगढ़ हैहय वंशीय कार्तवीर्य सहस्रार्जुन की राजधानी भी रही है। सहस्रबाहू ने महर्षि जमदग्नि के साथ युद्ध करते हुए मानगढ़ से अपनी सेना का संचालन किया था। संभवतः इसी कारण इस स्थान को सैनगढ़ के नाम से पुकारा जाता है। कालांतर में सिरमौर रियासत के राजा मानधाता प्रकाश (1630-54 ई.) ने यहां के स्थानीय शासक को पराजित किया था। वह भी कुछ दिनों सेना सहित इसी स्थान पर रुके थे। जनश्रुति है कि यहां के स्थानीय शासक को पराजित करने के लिए राजा मानधाता प्रकाश ने माईना के तांत्रिक ब्राह्मणों की तंत्र विद्या के प्रभाव से विजय हासिल की थी। राजा मानधाता प्रकाश के यहां ठहरने के कारण इस स्थान का नामकरण मानगढ़ हुआ प्रतीत होता है। मानगढ़ जिला मुख्यालय नाहन से 66 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

आलेख

जनपद के ऐतिहासिक स्थल

चमत्कारिक तांत्रिकों का गढ़ माईना

माईना गांव की नींव कांगड़ा जिले (त्रिगर्त) के नगरकोट से आए ब्राह्मणों ने रखी थी। बड़ग-नाहन मार्ग पर स्थित इस ग्राम में डैटी पंडित व ब्राह्मण रहते हैं। रियासती काल में यह गांव तांत्रिक विद्या के लिए जाना जाता था। इस कारण यहां के ब्राह्मणों को राजपुरोहिती का खिताब प्राप्त था। पंडित परसू तांत्रिक चमत्कारों के लिए विख्यात हुए। जनश्रुति है कि राजा सिरमौर ने मानगढ़ पर विजय हासिल करने के लिए पंडित परसू की सहायता ली थी।

ग्राम में एक प्राचीन चबूतरा है। यहां प्राचीन समय में ब्राह्मण यहां सांचा विद्या से गणना किया करते थे। गांव में दुर्गा, ठौड़ व हनुमान के मंदिर भी है।

इंदोऊ राजपूतों का पश्मी

पांवटा उपमंडल की शिलाई तहसील का पश्मी गांव समुद्रतल से लगभग 1700 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। इस गांव के निवासी इंदोऊ खूंद राजपूत तथा अल्पसंख्या में दयाल के हैं। ग्रामवासियों का कथन है कि रियासतकाल में जौनसार बाबर के इंद्रौली नामक स्थान से कुछ राजपूत यहां आकर बसे थे।

गांव में लोक आस्था के प्रतीक महासु देवता व शिरगुल के मंदिर हैं। पश्मी में इंदोऊ खूंदों की थाती 'ठारी' भी है। यह बूढ़ी दीपावली का त्योहार हर्षोल्लास से मनाया जाता है। इसके अलावा माघी का त्योहार मनाने की भी परंपरा है। पौष में साजी त्योहार मनाया जाता है। इस दिन हर घर में गुड़ बांटा जाता है। बहनों के घर गुड़ भिजवाने की भी प्रथा है।

मोहराड़

तौंस नदी के किनारे बसा मोहराड़ एक ऐतिहासिक गांव है। लाणा मोहराड़ नाम का यह गांव नेगी राजपूतों को उनके वंशज नेगी नंत राम से विरासत में मिला है। इतिहास में उल्लेखित है कि नेगी नंतराम ने एक मुसलमान शासक को पराजित किया जिसने सिरमौर रियासत पर आक्रमण किया था। राजा सिरमौर ने लाणा मोहराड़ की भूमि नंत राम को पुरस्कार स्वरूप भेंट की थी।

नंत राम नेगी ने वर्ष 1785 में रोहिला खंड बादशाही बाग के मुसलमान शासक गुलाम कादिर रोहिला को युद्ध में हराया। इस गांव में महासु और शिरगुल देवता के मंदिरों के अतिरिक्त ठारी अर्थात् खुंदों की थाती भी है। यहां महासु के मंदिर में बाशिक महासु की प्रतिमा है। शिरगुल मंदिर में शुणकटा ब्राह्मण पूजा करते हैं। गांव में एक सती मठ भी है। मोहराड़ में सती मठ के संबंध में कहावत प्रचलित है कि गांव की एक युवती नेगी नोत राम की मंगेतर थी। जब उसे नेगी नंत राम की मृत्यु का समाचार मिला तो वह भी उसकी चिता में जिंदा जलकर सती हो गई।

नेगी नंत राम की अगली पीढ़ी ने गांव में महासु देवता का मंदिर का निर्माण करवाया। बिजौऊ ब्राह्मण को महासु देवता की पूजा के लिए बसाया गया। गांव में ऋषि पंचमी के अवसर पर पांजवी का त्योहार मनाया जाता है।

दशहरे के दिन यहां शस्त्र पूजन का त्योहार मनाया जाता है। इस दिन नेगी नोत रोम की तलवार व ढाल की पूजा होती है। इन शस्त्रों की पूजा शुणकटा ब्राह्मणों द्वारा की जाती है। गांव में बूढ़ी दिवाली धूमधाम से मनाई जाती है।

राज्य में मनाए जाने वाले मेलों और त्योहारों में हाथी नृत्य किए जाने की प्रथा केवल मोहराड़ गांव में है। यह नृत्य ग्राम वासियों द्वारा बूढ़ी दिवाली पर किया जाता है। यह नृत्य बिजौड़ ब्राह्मणों की देन है। यह नृत्य जौनसार बाबर के गांव में चिल्लाड़ में होता है। यहां माघी का त्योहार भी धूमधाम से मनाया जाता है।

देवठी-मझगांव

रुद्रदेव का 'नौपुर' पुरातन मंदिर

सिरमौर जिले के राजगढ़ उपमंडल में देवठी-मझगांव में रुद्र महाराज का 'नौपुर' पुरातन मंदिर स्थित है। शैव संप्रदाय को समर्पित इस मंदिर में शिवावतार रुद्र की स्थानीय कुलीपट देव के रूप में पूजा की जाती है। पहाड़ी शैली में मंदिर का निर्माण हुआ है। यह सिरमौर जनपद का सबसे ऊंचा प्राचीन देवालय है। इस मंदिर में देवी-देवताओं के 18 मोहरे हैं।

इस प्रधान मंदिर के साथ एक अन्य छोटा मंदिर है जिसे स्थानीय बोली में मोड़ कहा जाता है। इस लघुकाय मंदिर में लकड़ी पर महीन नक्काशी की गई है। यहां कार्तिक शुक्ल एकादशी को सात दिवसीय मेला आयोजित होता है।

होकू के शौर्य की स्थली : धंडूरी

छः हजार फुट की ऊंचाई पर धंडूरी गांव बसा है। गांव के समीप से चलांगना खड्ड बहती है। धंडूरी के संबंध में यह कथन प्रचलित है कि इस गांव में मियां समुदाय के व्यक्ति सोहलवीं व सत्रहवीं शताब्दी में मध्य प्रदेश से आकर बसे थे। धंडूरी के मियां शिशपुयाल खेल (खूंद) के नाम से मशहूर है। शिशपुयाल खेल अपने दल को पाशी दल से मानते हैं। यहां प्रतिवर्ष बिशू मेला आयोजित होता है। शाठी व पाठी दोनों दलों के खूंद ठोडा खेलते हैं। तीस वर्ष पूर्व से इस मेले को आयोजित नहीं किया जा रहा है।

धंडूरी वीर योद्धा होकू मियां के शौर्य, पराक्रम तथा वीरता की परिचायक भूमि रही है। होकू मियां का किला जीर्णशीर्ण अवस्था में है। रियासत काल में होकू मियां ने वजीर के आतंक से क्षेत्रवासियों को निजात दिलाई थी। होकू मियां के वीर योद्धा का प्रमाण सिरमौर में मशहूर 'होकू री हार' नामक लोकगाथा में मिलती है। गांव में वीर योद्धाओं की प्रतिमाएं भी स्थापित की गई हैं।

जगोऊ खूंद की भूमि बाली

बाली शिलाई तहसील के तहत आता है जिसे कालांतर में जगोली जौनसार-बाबर से आए जगोऊ खूंद राजपूतों ने बसाया था। जगोऊ कौरव सेना का शाठी खूंद माना जाता है। गांव में स्थापित ठारी और दुर्गा का मंदिर है। जगोऊ खूंद के इस गांव में बसने के उपरांत यहां शिरगुल देवता के मंदिर का निर्माण हुआ। यह पूजा-अर्चना के लिए नाया गांव से भिखटा ब्राह्मणों को गांव में स्थान दिया गया।

गांव की शीर्षस्थ पहाड़ी सुईनल पर भी शिरगुल देवता का मंदिर है। अप्रैल माह में बिशू मेला आयोजित होता है। यहां हरियाली, गुग्गा नवमी (गुगाल), नई दिवाली, बूढ़ी दिवाली तथा माघी के त्योहार मनाने की भी सदियों पुरानी परंपरा है।

द्विवेणी संगम पर स्थित ददाहू

ददाहू यमुना नदी की दो सहायक नदियों गिरी गंगा तथा जलाल के संगम पर बसा है। यह तहसील रेणुका का मुख्यालय होता था। अंग्रेजों के वक्त में यह स्थल गिरी मत्स्य क्लब के सदस्यों के लिए आखेट का प्रमुख केंद्र रहा है। वर्ष 1931 में यहां की जनसंख्या 467 थी। यहां रेणुका मुख्यालय के थाने का निर्माण वर्ष 1900 में करवाया गया था। गांव में रियासत काल में डिस्पेंसरी तथा पोस्ट ऑफिस भी थे।

लोकश्रुति है कि ददाहू गांव बसने से पूर्व समीपवर्ती गांव चूली के मियां समुदाय की चरागाह थी। उन्होंने नाहन में रह रहे अंबालावासियों के कुछ परिवारों को ददाहू में रहने की अनुमति दी। इस तरह यह गांव बसता गया। यहां रियासत काल में तहसील कार्यालय, स्कूल व पुस्तकालय की व्यवस्था की गई। सड़क तथा बिजली की व्यवस्था गांव में रियासत काल में उपलब्ध करवा दी गई थी। गिरीपार भी कच्चे पुल का निर्माण करवाया गया था।

यहां प्राचीन शिव मंदिर दो सौ वर्ष पुराना है। ददाहू की तलहटी में सती के बाग नामक स्थान पर भी एक शिवालय बना है। ददाहू रेणुका का प्रवेश द्वार माना जाता है। रेणुका मेले के दौरान भगवान परशुराम की जामूकोटी, माशु, कटाह आदि स्थानों से आई पालकियां ददाहू में आती हैं।

बीजट की दैविक लीलाओं का ब्राईला

राजगढ़ उपमंडल में समुद्रतल से 2120 मीटर की ऊंचाई पर स्थित ब्राईला गांव की स्थापना ब्राईल नामक कनैत (राजपूतों) ने की थी। ब्राइलू नामक राजपूत पहले उपग्राम बोगड़ में रहते थे। ब्राइलू के जब कोई संतान न हुई तो उसने छिनटा देवी को अपनी सारी संपत्ति सौंप दी। ऐसी जनश्रुति है कि जुब्बल रियासत के सराहां नामक स्थान से छिनटा के साथ शुणकटा, जरैईक तथा शवाईक खानदान यहां आकर बसे थे। छिनटा अपने साथ बीजट महादेव की प्रतिमा भी लेकर आए थे। बीजट महाराज की प्रतिमा की पूजा अन्न के दानों पर रखकर की जाने लगी। इस प्रकार की पूजा पद्धति में रखे अन्न को 'ब्रौ' कहते हैं। बीजट महाराज की ब्रौ पर स्थापना के कारण ही इस गांव का नामकरण भी संभवतः ब्राईला हुआ प्रतीत होता है। ऐसी मान्यता है कि ब्राईला गांव में बीजट देवता के नौ मंजिले दो मंदिरों में से एक का निर्माण सवाणा और दाहन के पाशी खूंद सनाल ने करवाया था। दूसरे मंदिर का निर्माण मानत और कतोगा के शाठी खूंदों ने करवाया था।

बीजट देव की कृपा से यहां भेड़-बकरी पालन ने खुशहाली ही लाई। इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए आज भी दीपावली के पर्व पर बीजट देवता के समक्ष ऊन चढ़ाने का रिवाज है।

यहां दूज का त्योहार भी मनाया जाता है। गांव में दूज का मेला दीपावली के दूसरे दिन आयोजित होता है। गांव में बीजट महाराज का मंदिर पहाड़ी वास्तुशिल्प का अनुपम नमूना है।

सुनाण ब्राह्मणों की कर्मभूमि थनगा

नौहराधार से पांच किलोमीटर की दूरी पर थनगा गांव अवस्थित है। इस गांव के समीप से 'चूड़ रो नईट' अर्थात् रौडी खड्ड प्रवाहित होती है। थनगा गांव सुनाण ब्राह्मणों ने बसाया तथा इसे लोक वेद सांचा के माहिरों का गांव माना जाता है। जनश्रुति है कि लगभग 200 वर्ष पूर्व इस गांव के पंडित धौलू राम ने समूचे जनपद में सती प्रथा को बंद करवाया था। इसके प्रमाण चौरास, देवा मानल, नौहरा में बने सती चबूतरों को देखने से मिलते हैं। गांव में शिरगुल देवता का पांच सौ वर्ष पुराना मंदिर है। यहां दीपावली, बूढ़ी दिवाली हर्षोल्लास से मनाई जाती है। इस दिन मुंजरा नृत्य विशेष तौर पर किया जाता है।

सवाणा

राजगढ़ उपमंडल के हनोली पुल से सात किलोमीटर की दूरी पर काल्ली घाटी में सवाणा गांव स्थित है। गांव में लगभग चालीस घर सनाल खैल (खूंद) के हैं। रियासतकाल से ही सनाल खूंदों का शौर्य व पराक्रम रहा है। सवाणा के सनाल खूंद कौरव और पांडव दोनों सेना के पक्ष की ओर से माने जाते हैं। सलाणा समूचे हिमालयी जनपद में ऐसा गांव है जहां शाठी और पाशी सेना के लोग एक ही बिरादरी से संबंध रखते हैं। सनाल खूंद को तभी तो पाशी-शाठी कहा जाता है।

सलाणा में पारंपरिक खेती के अलावा नकदी फसलें सेब, पलम, आड़ू, आलू, मटर, अदरक की खेती होती है। वर्तमान में गांव ने फूलों की खेती में पहचान बनाई है। गांव में गौण देवता का

एक मंजिला मंदिर तथा भगवती दुर्गा की ठारी है। सलाणा गांव के सनाल खूंदों का कुलिष्ठ देवता कईन्दन है।

शक्तिधाम भड़ोली

सिरमौर जिले के राजगढ़ उपमंडल की पच्छाद तहसील के तहत भड़ोली गांव में भगवती बागेश्वरी का पुरातन मंदिर स्थित है। पहाड़ी शैली में निर्मित इस देवालय के साथ अन्य मंदिर मौड़ के नाम से जाना जाता है। इस मंदिर में स्थापित शिव-शक्ति की अष्टधातु से बनी मूर्तियां हैं।

मौऊं मंदिर में भित्ति पर की गई काष्ठ नक्काशी देखते ही बनती है। यह संपूर्ण क्षेत्र में सशक्त शक्तिधाम माना जाता है। मान्यता है कि इस मंदिर की मुख्य देवी प्रतिमा नगरकोट कांगड़ा के वज्रेश्वरी मंदिर के अनुरूप भड़ोली गांव के पांच व्यक्तियों ने मिलकर बनाई थी। यहां माघ मास में माघी और भादों मास में शनोल-मजोल के त्योहार मनाए जाते हैं।

रणफुआ

संगड़ाह तहसील में स्थित रणफुआ में मां काली का भव्य मंदिर स्थित है। यहां नववर्ष के आगमन पर चैत्र मास में 'बिशड़ी' त्योहार से मेलों का श्रीगणेश होता है। बिशड़ी का त्योहार वैशाख माह में लगने वाले मेले 'बिशू' का सूचक है। इस दिन गांव में रस्सी कस्सी का खेल भी होता है। मकर संक्रांति का पर्व गांव में धूमधाम से मनाया जाता है। माघी त्योहार को मगऊज का त्योहार भी कहते हैं। रणफुआ में शिरगुल महाराज का तीन मंजिला प्राचीन मंदिर है।

लाणा पालर

संगड़ाह की तलहटी से बहती पंच खड्ड (रौड़ी खड्ड चूड़ रो नईट, चलांगना खड्ड, घड़ूरी, खाड़ी खड्ड-चाड़ना, भुवाईं खड्ड और शिवपुर खड्ड) के संगम स्थल सुमोइल के तट पर लाणा पालर स्थित है। यह गांव रियासत काल में राणा के अधीन था। यहां राणा का सुंदर सा बासा भी था। सतमल भू-भाग 'लाणा' के नाम से विख्यात रहा क्योंकि रियासत काल में राजा या राणा की भूमि को लाणा कहा जाता था।

यहां नेवड़ियों देवता का मंदिर है।

कांडो के दिक्पाल वराह

विख्यात पर्यटक स्थल रेणुका झील के समीप कांडो गांव स्थित है। गांव का मूल नाम तो कांडो है लेकिन प्राचीन प्रथा के अनुसार युग शब्दों के संसर्ग से इसे ऊंगर कांडो से भी पुकारा जाता है। यहां अंगर अलग समीपवर्ती गांव है। गांव में डैटी ब्राह्मण रहते हैं। यहां के ब्राह्मण प्राचीन काल में जुब्बल रियासत के चड़ोली-सामवी नामक स्थान से आकर बसे हैं। यहां भगवान विष्णु के तीसरे अवतार वराह का प्राचीन मंदिर है।

श्रावण माह में हर वर्ष वराह देवता के मंदिर के प्रांगण में हरियाली मेले का आयोजन होता है। तीन वर्ष में एक बार वराह देवता की शोभा यात्रा निकाली जाती है।

लोकनृत्य का केंद्र बाऊनल

संगड़ाह विकास खंड में लोक कलाओं का प्रमुख केंद्र बाऊनल माना जाता है। यह गांव प्राचीन काल में जुब्बल रियासत के खादर नामक स्थान से आए ब्राह्मणों ने बसाया था। इसीलिए इसका नाम ब्राह्मणों के नाम पर बाऊनल पड़ा, प्रतीत होता है।

यहां के सांस्कृतिक दलों की लोक कलाओं में निपुणता से गांव की देश-विदेश में विशिष्ट पहचान बनी है। नाटी, लोक नृत्य, माला नृत्य, दीपक नृत्य तथा लोक गीतों में यहां के निवासियों ने महारत हासिल की है। गांव ने अनेक कलाकारों को जन्म दिया है। गांव के उदय राम बाऊनली, प्रेम चंद बाऊनली ने सिरमौरी नाटी, तुलसी राम ने ढोल वादन में ख्याति अर्जित की है।

गांव की चोटी पर भगवती दुर्गा का मंदिर है। गांव में ठौड़ की पूजा भी की जाती है। यहां थाती का प्रतीक चिह्न मठ भी स्थित है। गांव में ही गुग्गा जाहर पीर का मंदिर भी स्थित है। गांव में कृष्ण जन्माष्टमी, गुग्गा नवमी का त्योहार मनाया जाता है।

रजाना

गिरीपार क्षेत्र में रजाना गांव को रियासत काल में तोमर वंश के कमरा और पैजो नाम के दो व्यक्तियों ने बसाया था। उनके पास खाड़ा अर्थात् तलवार, ताम्र पर लिखी बही और मां दुर्गा की सुंदर प्रतिमा थी। वह जहां भी जाते, पहले रवांडा गाड़ कर भूमि रहने योग्य का पता लगाते। रजाना पहुंच कर पैजो ने 'खांडा' भूमि की परख के लिए एक बहुत बड़ी चट्टान पर गाड़ दिया। 'खाड़ा' उस चट्टान को बींधकर अपने लक्ष्य पर जा पहुंचा। यह प्रक्रिया पूर्ण होने पर उन्होंने अपने निवास के लिए रजाना की भूमि को चुना।

पालवी भोज का यह गांव प्राचीन काल से ही शौर्य और पराक्रम का पर्याय माना जाता था। पालवी पोज के दो चोंतरू शगड़ाई और कालपोऊ (टूंडेले) थे। शंगड़ाई के सहयोगी खूंद शिलावली,धमाण, संइजवाल आदि थे जबकि कालपोऊ के सहयोगी खूंद पजवाण, बुवाल, उन्यराल, चाड़ आदि थे। गांव में पैजो नाम के व्यक्ति का खानदान पजवाण के नाम से जाना जाता है। तदनंतर कमरा कुछ अरसे के बाद गांव से बाहर अनाम स्थान पर रहने लगा। बाद में वह स्थान कमरऊ नामक गांव से विख्यात हुआ। एक वक्त पजवाण का साम्राज्य बावन भोज पर था। बावन भोज का तात्पर्य 600 गांवों का होता था।

रियासत काल में गांव में आपसी विवादों को स्वयं ही ग्राम स्तर पर निपटाने की व्यवस्था थी। गांव के मुखिया से अनुमति के बिना कोट कचहरी में नहीं जा सकते थे। बिना अनुमति के जाने वालों का सामूहिक तौर पर बहिष्कार करने की व्यवस्था थी। गांव में वराह, भूतनाथ तथा गुग्गा के मंदिर है।

कशलोग

संगड़ाह तहसील में कशलोग गांव में शांवलौऊ राजपूतों की

बहुलता है। गांव में पुरातन विवाह प्रथा साधारणतया सरल है। दहेज लेना व देना एक प्रकार का अमानवीय कार्य माना जाता है। गांव में व्यक्ति द्वारा दूसरी शादी को जाजड़ा कहते हैं। गांव में ग्राम देवता बाईला का दो मंजिला मंदिर है। मंदिर में बाईला और शिरगुल महाराज की प्रतिमाएं स्थापित की गई हैं।

दुतकलिया ने बसाया डहार

संगड़ाह के समीपवर्ती गांव डागर, ब्राह्मण बहुल गांव है। ढाक पर स्थित होने के कारण इसका नाम 'डहार' हुआ प्रतीत होता है। यह गांव दुतवालिया ब्राह्मणों ने बसाया है जो रियासत काल में जुब्बल रियासत के धोताली नामक स्थान से आए थे। इसी कारण यहां के ब्राह्मण दुतवालिया खानदान के कहलाते हैं।

गांव के मध्य में बीजट महाराज का दो मंजिला मंदिर है। मंदिर में मां दुर्गा की प्रतिमा भी स्थापित है जो लगभग 10 वर्ष पूर्व गांव के समीप प्राप्त हुई थी। यहां जनपद के सभी त्योहार हर्षोल्लास से मनाए जाते हैं।

जदोल

जंदोल, राजगढ़ उपमंडल के जंदोल ठंडीधार नामक पर्वतमाला के दामन में समुद्रतल से आठ हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है। लोकमान्यता है कि इस गांव की स्थापना जींद नामक राजपूतों ने की थी। गांव में काली और कालिया के दो मंदिर हैं। रियासत काल में मियां समुदाय ने गावं पर कब्जा किया और शिरगुल मंदिर का निर्माण करवाया। ठंडीधार नामक स्थान से शिरगुल की प्रतिमा लाकर देवालय में स्थापित की गई। गांव में शिरगुल देवता को प्रसन्न करने के लिए बारह वर्ष उपरांत जदोल के मियां समुदाय द्वारा शांद का त्योहार आयोजित किया जाता है।

जंदोल, पझौता आंदोलन के अग्रणी मियां चूंचूं की कर्मभूमि है। जदोल का समीपवर्ती गांव टपरोली है। लोक प्रचलन में जंदोल-टपरोली का नाम संयुक्त गांव के रूप में उच्चरित किया जाता है। बिशू तथा सावन मास में हरियाली के त्योहार मनाए जाते हैं।

रेड़ीधुसान से आए लोगों ने बसाया रड़ेली

संगड़ाह तहसील में स्थित रड़ेली गांव को रेड़ीधुसान से आए लोगों ने बसाया था। गांव का संयुक्त शब्द रड़ेली-बोड़ली है। सौ वर्ष पूर्व इस गांव को नागु ने बसाया। इससे पहले गांव में महामारी फैलने से पशुधन समाप्त हो गया था। नागु की कर्तव्यपरायणता का उल्लेख लोकगीतों में होता है। गांव की रक्षा के लिए सिंगा व सबलू नाम के दो व्यक्तियों का उल्लेख भी लोक संस्कृति में मिलता है। रेड़ली में शिरगुल महराज का दो मंजिला मंदिर है।

हाब्बन

सिरमौर जिले की राजगढ़ उपमंडल में स्थित हाब्बन एक रमणीय स्थल है। हाब्बन के शिखर पर 'टोकरू टिम्बा' पर भगवती काली का एक प्राचीन मंदिर स्थित है। समुद्रतल से 2029 मीटर की ऊंचाई पर स्थित हाब्बन, सघन वन क्षेत्र के लिए जाना जाता है। यहां वन विभाग द्वारा वर्ष 1969 में एक 'लॉग हट' का निर्माण करवाया था। 2001 में यहां विश्राम गृह का निर्माण करवाया गया। हाब्बन गांव के समीप पालू नामक देवता का मंदिर है। यहां पालू देवता का एक अन्य मंदिर भी है। यह दोनों मंदिर हाब्बनिया पाशी (पाशाड़) खूंद द्वारा बनवाए गए हैं। इन मंदिरों में शिव की 13वीं शताब्दी, पार्वती की 16वीं शताब्दी तथा अन्य देवी-देवताओं की 18वीं और 19वीं शताब्दी की प्रतिमाएं स्थापित हैं।

हाब्बन पर हाब्बी खूंद का अधिपत्य रहा है। संभवतः हाब्बी शब्द के आधार पर ही हाब्बन का नामकरण हुआ प्रतीत होता है। हाब्बन में पझौता गोलकांड के नायक वैद्य सूरत सिंह का एक स्मारक भी स्थित है। जिसमें हाब्बन भोज के सभी नायकों की प्रतिमाएं स्थापित हैं। हाब्बन में काली मंदिर तथा एक खेल का मैदान है जो ठोड़ा जुब्बड़ी के नाम से विख्यात है।

हिमाचल निर्माता का गांव चन्हालग

जलाल नदी के पार (बागथन) चन्हालग गांव के समीप बड़योग नामक स्थान हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह परमार की जन्मभूमि है। चन्हालग से बागथन 10 किलोमीटर दूर है। चन्हालग में एक दुर्गा मंदिर है। यहां से चार किलोमीटर की दूरी पर सिंगी गुफा है। 14 नवंबर, 1970 से गांव में बाल मेला आयोजित हो रहा है।

लोजला

राजगढ़ उपमंडल के रासू-मांदर जनपद में धार्मिक पर्यटक स्थल लोजला स्थित है। लोजपा के उत्तुंग शिखर पर नाग देवता का एक पुरातन मंदिर अवस्थित है। लोजला गांव में उत्खनन से निकलने वाले पत्थरों का उपयोग देवालयों के निर्माण में किया जाता रहा है। पझौता के ठंडीधार में बने शिरगुल देवता के मंदिर का निर्माण लोजला के पत्थरों से हुआ है।

अंधेरी

अंधेरी गांव का प्राचीन नाम उन्यारी था। इस गांव को नेरी नामक स्थान से आए छबलाण, मनवाण तथा बुगाण आदि वंशजों के राजपूतों ने बसाया। ऐसी मान्यता है कि गांव का नाम उन्यारी से अंधेरी पड़ गया। यहां शिरगुल देवता का प्राचीन मंदिर है। शिवरात्रि, बिशू मेला आयोजित होता है। बिशू से पहले स्थानीय लोग ठोडा खेलते हैं जिसे स्थानीय भाषा में 'टमकरा' कहा जाता है। इसे बिशू आयोजित करने की पूर्वगामी सूचना समझा जाता है।

सिरमौर में लुधियाना

कालांतर में संगड़ाह तहसील में स्थित यह गांव लाधी नामक स्थान से आए लोगों ने बसाया था। लाधी वंशज के कारण ही गांव का नामकरण भी संभवतः लुधियाना हुआ है। लाधी गांव में अब लाधी वंश के लोग लधाईक खानदान के नाम से जाने जाते हैं। गांव के शिखर पर गौण देवता का प्राचीन मंदिर अवस्थित है। बिशू मेले के दौरान ठोड़ा खेला जाता है। गांव के 'शाठी' राजपूतों के दल

को ठोड़ा खेलने के लिए जनपद तथा बाहरी जिलों से भी निमंत्रण प्राप्त होते हैं। रियासल काल से ही गांव की विशिष्ट पहचान है। गांव में आयोजित होने वाली सभाओं के लिए यहां एक मंच है जिसे स्थानीय बोली में 'चौंतरा' कहा जाता है। इसी चबूतरे पर कालांतर में बारह 'भोज' के फैसले 'खुंबिलियों' में बैठकर सुनाए जाते थे। 'भोज' का अर्थ जनपद में समूह के लिए लिया जाता है। एक 'भोज' में दस से बारह गांव होते हैं। रियासत काल में भी इस गांव के लोगों ने राजा के विरुद्ध लगान बढ़ाने के लिए एकजुट होकर लगान न देने का निर्णय लिया था। गांव के प्रीतम सिंह ठाकुर के नेतृत्व में आंदोलन हुआ। सभी ग्रामवासियों ने एकत्र होकर बीजट महाराज की शपथ उठाकर बढ़े हुए लगान को न देने का निर्णय लिया। तत्कालीन राजा ने इस विरोध का दमन करने के लिए गांव में सेना भेजी लेकिन गांववासियों की एकजुटता के सामने फौज गांव में प्रवेश न कर पाई। गांव का यह विद्रोह राजा की शान के खिलाफ एक चुनौती बन गया। आखिर राजा के वजीर ने आंदोलन कुचलने के लिए एक गोपनीय चाल चली, जिससे आंदोलनकारियों का संगठन टूट गया। गांव के प्रमुख प्रीतम सिंह ठाकुर को कारावास भेज दिया गया। उन्हें चौदह वर्ष के कठोर कारावास की सजा हुई। ग्रामवासियों को बढ़ा हुआ लगान बिना शर्त अदा करना पड़ा।

संगराह से हुआ संगड़ाह

सिरमौर जिले के उपमंडल मुख्यालय संगड़ाह अपने भीतर ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को संजोए हुए है। यहां से सैनधार का खूबसूरत दृश्य देखते ही बनता है। पलवी संवत् 1892 तक पलवी तहसील का मुख्यालय तथा यहां पर पोस्ट आफिस तथा डिस्पेंसरी स्थित थी। यह गांव प्राचीनकाल में पड़ोसी राज्य हरियाणा के रायपुर, खेड़ा, रायपुर रानी क्षेत्रों से आए लोगों ने बसाया है। गांव के अधिकांश मकान पुरातन भवन निर्माण शैली से बने हैं। पुराने मकानों में छोटी स्लेटों का उपयोग हुआ है। अब आधुनिक परिवेश में नए भवनों का निर्माण हो रहा है। गांव के मध्य में एक पुरातन 'चौंतरा' खुला सभा स्थल है। जो शिरगुल के चौंतरा के नाम से विख्यात है। इसका उपयोग रियासत काल में राजा और महाराजा इलाके के दौरे के दौरान जनता को संबोधित करने के लिए करते थे। उस समय समूचे पालवी इलाके में आयोजित होने वाले बिशू आदि की बैठकें भी चौंतरे पर ही होती थीं। इसे बाईस भोज का चौंतरा कहा जाता है। यह स्थल सभी सीमावर्ती गांव के निवासियों के लिए पड़ाव तथा 'संगराह' रहा है। इसी कारण गांव का मूल नाम भी संगराह रहा है। कालांतर में संगराह का अपभ्रंश रूप संगड़ाह आम बोलचाल में प्रचलित हुआ। गांव के पूर्व में एक ऊंची पर्वतश्रृंखला पर वराह देवता का छोटा-सा मंदिर है। जिसे ग्रामवासी 'देऊडाल' कहते हैं। इसका शाब्दिक अर्थ देवता के समक्ष नतमस्तक होना है। ग्रामवासी यहां संक्रांति व अन्य त्योहारों पर एकत्रित होकर पूजा-अर्चना करते हैं। ग्राम के समीप ही बीजट महाराज का दो-मंजिला मंदिर है। यह मंदिर भव्य काष्ठ कला का नमूना है। इस मंदिर के साथ रावलगढ़ के राणा परसा की ड्योढ़ी हुआ करती थी लेकिन अब यहां जैलदार रहते हैं। भादों माह में बीजट महाराज के नाम पर हरियाली (रियालरी) मेला आयोजित होता है। रस्सा कस्सी का खेल मेले की शान है। संगड़ाह की भूमि ने समाज के लिए किंकरी देवी को भी जन्म दिया है।

जबड़ोग

संगड़ाह तहसील में ही जबड़ो गांव प्राकृतिक सुंदरता के लिए विख्यात है। यहां शिरगुल देवता का प्राचीन मंदिर है। गांव के समीप से भूतमड़ी खड्ड प्रवाहित होती है। यहां चूने की खानों के अपार भंडार विद्यमान हैं।

भड़ूत गांव को प्राप्त है कुवांरू नाग देवता का वरदान

सिरमौर जिला के नारग के समीप पजैली गांव में कुआंरू नाग देवता का प्राचीन मंदिर जहां इस क्षेत्र के लोगों की आस्था और श्रद्धा का केंद्र बना हुआ है वहीं पर नारग के भड़ूत गांव को कुआंरू नाग देवता द्वारा सर्पदंश से भयमुक्त होने का वरदान भी दिया गया है।

मंदिर के पुजारी प्रभु दत्त के अनुसार कुंवारू नाग देवता नारग क्षेत्र की आठ पंचायतों में रहने वाले 16 खैल के लोगों के कुलदेवता है जिसका प्रादुर्भाव कालांतर में नारग के गांव भड़ूत में एक ब्राह्मण परिवार में नाग के रूप में हुआ था। नाग देवता को बचपन में उनकी माता एक मिट्टी के घड़े में रखा करती थी और उनका पालन पोषण अपने बेटे की तरह किया करती थी। एक दिन नाग देवता की माता पशुओं को घास लाने जंगल में गई और उन्होंने अपनी बड़ी बेटी से नाग की सुरक्षा करने तथा उन्हें समय पर दूध पिलाने बारे कहा गया था। ब्राह्मणी जंगल जाते समय घर पर चूल्हे पर दूध को उबालने रख गई थी और बड़ी बेटी को कहा कि दूध में उबाल आने के उपरांत जब दूध ठंडा हो जाए तो उसे नाग को पिला देना।

नाग की बड़ी बहन बाहर बच्चों के साथ खेलने में इतनी मग्न हुई कि वह नाग भाई को दूध पिलाना भूल गई। बेटी ने जब अपनी माता को वापिस घास लाते देखा तो बेटी डर गई और उसने चूल्हे पर रखा गर्म दूध घड़े में रखे नाग पर डाल दिया जिससे नाग की खाल जल गई और नाग क्रोधित होकर घड़े से बाहर निकले और जाते हुए उन्हें रास्ते में माता से अकस्मात भेंट हुई और माता ने अपने नाग पुत्र को पहचानने में देरी नहीं लगाई। माता ने नाग पुत्र से कहा कि बेटा कहां जा रहे हो और वापिस घर चलो।

क्रोधित नाग ने कहा कि आपकी बेटी और मेरी बहन ने मेरे शरीर पर गर्म दूध डाला है जिससे मेरा सारा शरीर झुलस गया है और मैं अब आपके साथ नहीं रहूंगा तथा हमारा मां-बेटा का संबंध अब खत्म हो चुका है। तदोपरांत मां ने नाग से आग्रह किया कि बेटा तू ही मेरा सहारा था अब मैं अब तेरे बगैर अपना जीवन यापन कैसे करूंगी। जिस पर नाग ने माता को कहा कि गांव के रास्ते में फूमरां का पौधा है जिसकी तीन टहनियां घर ले जाओ जो आपको जीवन भर सहारा देगी। माता ने फूमरा पौधे की तीन टहनियां काट कर अपने घर ले गई और दो टहनियों को पशुशाला में छोड़ दिया और एक मोटी टहनी को इस आशय से ले गई कि वह बेटी की उस टहनी से पिटाई करेगी जिसकी वजह से उसका नाग पुत्र घर छोड़ कर चला गया । जैसे की नाग माता घर की डियोढी पर पहुंचती है कि उस टहनी के चमत्कार से घर में बेशकीमती धन दौलत हो गई । नाग ने जाते हुए अपनी माता को दो वचन दिए थे कि भड़ूत गांव के लोग कभी सर्पदंश का शिकार नहीं होगें और वह वर्ष में दो बार अपने जन्म स्थान भड़ूत मकर सक्रांति और हरियाली सक्रांति के अवसर पर लोगों को आशीर्वाद देने आया करेगें और वचन में बंधे नाग देवता हर वर्ष भड़ूत में पंडित सत्यानंद शर्मा के घर आते हैं जहां पर विधि विधान से कुंवारू नाग देवता की पारंपरिक पूजा अर्चना की जाती है जिसमें पूरे क्षेत्र के लोग भाग लेते हैं और रात्रि को कीर्तन का आयोजन किया जाता है । माता से वार्तालाप करने के उपरांत नाग भड़ूत गांव के सामने टिल्ला पर चले गए और टिब्बा के पजैली नामक गांव में स्थित कुवांरू देवता के गले में लिपट गए और इस क्षेत्र से लोग उन्हें कालांतर से अपना कुल देवता मानते हैं। दिवाली व प्रबोधनी एकादशी के पर्व पर इस क्षेत्र के लोग आस्था व श्रद्धा से कुवांरू नाग देवता के मंदिर में जाकर भेंट चढ़ाते हैं और नाग देवता का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

पुरूवाला में लघु तिब्बत

पांवटा साहिब से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है पुरुवाला। यहां तिब्बती बस्ती तथा बौद्ध मंदिर होने से गांव 'लघु तिब्बत' के नाम से जाना जाता है। यहां हवा में मंत्रों से लिखित तिब्बती लिपि की रंगीन पताकाएं इसे और भी खूबसूरत बनाती हैं। इस गांव में वर्ष 1967 में कुछ तिब्बती परिवार आए थे। यहां तिब्बती स्कूल तथा कालीन निर्माण केंद्र भी है। बौद्ध मंदिर सांप्रदायिक सौहार्द का केंद्र है। मंदिर में प्रवेश द्वार पर हिरणनुमा दो प्रतिमाएं हैं। इन दो प्रतिमाओं के मध्य में एक और प्रतिमा है। बीच की प्रतिमा को छूंगर और किनारे की प्रतिमाओं को तिब्बती भाषा में 'रिधा' कहकर पुकारते हैं। इन तीनों प्रतिमाओं को 'रिधा-छूंगर' के नाम से जाना जाता है। मंदिर में सिक्किम से लाई गई तांबे की सुंदर प्रतिमा स्थापित है। प्रतिमा में दोनों ओर 108 धातु की मूर्तियां महात्मा बुद्ध के अनुयायियों की हैं। मंदिर में तारा देवी का चित्र भी है। आयु बढ़ाने वाला आयुर्धेवा देवी का चित्र भी है। भगवान बुद्ध की प्रतिमा के मध्य तिब्बतियों के धर्मगुरु दलाई लामा का चित्र भी है। साथ में तिब्बत में जन्मे गुरीन पोछे का चित्र भी है। मंदिर की दीवारों पर टंगे चित्र काली के हैं। यहां तिब्बतियों का 'साक्या इंस्टीट्यूट' है।

हलांह

शिलाई विकास खंड के तहत गांव हलांह को चौपाल क्षेत्र से आए दो भाइयों जोरिया एवं जोणिया ने बसाया था। इस गांव में जकाऊ वंश से 35 से 40 परिवार माशूच्योग में बसे। 40 के करीब परिवार पोजटा वंश के किन्नू पनोग में आबाद हैं।

यहां की अर्थव्यवस्था कृषि तथा बागबानी पर निर्भर है। गांव में काली माता का मंदिर है। यहां का अखरोट बहुत मशहूर है। बिशू, दिवाली, हरियालटी, जन्माष्टी, माघी त्योहार धूमधाम से बनाए जाते हैं। गांव की संस्कृति जौनसार बावर से मेल खाती है।

गोरखनाथ की तपोभूमि गोरखूवाला

पांवटा से 12 किलोमीटर की दूरी पर गांव गोरखूनाला स्थित है। ऐसी मान्यता है कि यहां के जंगल में बाबा गोरखनाथ ने तपस्या की थी इसीलिए इस गांव का नाम गोरखूवाला पड़ा। गांव के समीप गिरी नदी बहती है। गोरखूवाला के अधिकांश बाशिंदे ऊना, हमीरपुर से आकर बसे हैं।

राज ज्योतिषियों का गांव जमयाणा

सिरमौर जिले की नाहन तहसील में पवित्र तीर्थस्थल रेणुका जी से सात किलोमीटर की दूरी पर गिरी नदी के समीप चमयाणा गांव बसा है। यहां पंडितों की जनसंख्या अधिक होने के कारण इसे पंडितों का गांव भी कहा जाता है। गांव का मूल नाम खेड़ा था, जिसका शाब्दिक अर्थ सुंदर होता है। बाद में इसका नाम पड़कर चमयाणा हो गया। यह गांव सिरमौर रियासत के शासक शमशेर प्रकाश के पितामह द्वारा अपने राज ज्योतिषाचार्य को इनाम में दिया गया था। उक्त राज ज्योतिषी पहले माईना गांव में रहते थे। इस गांव के मिलने पर वे वहां आकर रहने लगे। यहां ऋषिराज शर्मा इस गांव के प्रसिद्ध ज्योतिषि रहे। ऋषिराज के ज्येष्ठ पुत्र पं. हेमचंद्र शर्मा ने गांव व क्षेत्र को शराबबंदी की दिशा में सराहनीय कार्य किया।

ऊना के निवासियों ने बसाया गोंदपुर

सिरमौर जिले में गोंदपुर गांव को लगभग 275 वर्ष पूर्व ऊना से आए लोगों ने बसाया था। यहां जाट तथा बाहती बिरादरी के लोग रहते हैं। इस गांव में जब दून घाटी बसाई जा रही थी तो तत्कालीन राजा ने इन्हें निःशुल्क भूमि मुहैया करवाई। यहां वर्ष 1970-72 में औद्योगिकीकरण आरंभ हुआ था। यहां किन्नू तथा अमरूद बहुतायत में होता है।

जनपद के आस्था स्थल

◆ सुभाष चंद शर्मा

बाला सुंदरी मंदिर त्रिलोकपुर

महामाई त्रिपुर बालासुन्दरी मंदिर त्रिलोकपुर, उत्तरी भारत के प्रसिद्ध शक्तिपीठों में से एक है जहां वर्ष भर श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। यह स्थल जहां उत्तरी भारत में असंख्य श्रद्धालुओं की आस्था का केंद्र बना हुआ है वहीं यह अंतराष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर धार्मिक पर्यटन के रूप में अपनी एक अलग पहचान बना चुका है। चैत्र एवं आश्विन मास में पड़ने वाले नवरात्रों के अवसर पर इस मंदिर में विशेष मेले का आयोजन होता है जिसमें लाखों की तादाद में श्रद्धालु सिरमौर के अतिरिक्त पंजाब, हरियाणा, चण्डीगढ़ एवं उत्तराखण्ड इत्यादि क्षेत्रों से आकर माता के दर्शन करके आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।



जनश्रुति के अनुसार महामाई बाला सुन्दरी उत्तर प्रदेश के जिला सहारनपुर से मुज्जफरनगर के देवबन्द स्थान से नमक की बोरी में त्रिलोकपुर आई थी। कहा जाता है कि लाला रामदास व्यक्ति जो सदियों पहले त्रिलोकपुर में नमक का व्यापार करते थे, उनके नमक की बोरी में माता उनके साथ यहां आई थी। लाला रामदास की दुकान त्रिलोकपुर में पीपल के वृक्ष के नीचे हुआ करती थी। लाला रामदास ने देवबन्द से लाया तमाम नमक दुकान में डाल दिया और बेचते गए मगर नमक समाप्त होने में नहीं आया।

लाला जी उस पीपल के वृक्ष को हर रोज प्रातः जल दिया करते थे और पूजा करते थे। उन्होंने नमक बेचकर बहुत पैसा कमाया और चिन्ता में पड़ गए कि नमक समाप्त क्यों नहीं हो रहा। माता बाला सुन्दरी ने प्रसन्न होकर रात्रि को लाला जी के सपने में आकर दर्शन दिए और कहा कि 'भक्त मैं तुम्हारे भक्तिभाव से अति प्रसन्न हूं, मैं यहां पीपल वृक्ष के नीचे पिण्डी रूप में स्थापित हो गई हूं और तुम मेरा यहां पर भवन बनाओ।' लाला जी को अब भवन निर्माण की चिन्ता सताने लगी। उसने फिर माता की अराधना की और माता से आह्वान किया कि इतने बड़े भवन निर्माण के लिए मेरे पास सुविधाओं व धन का अभाव है और विनती की कि आप सिरमौर के महाराजा को भवन निर्माण का आदेश दे।

माता ने अपने भक्त की पुकार सुन ली और उस समय के सिरमौर के राजा प्रदीप प्रकाश को सोते समय स्वप्न में दर्शन देकर भवन निर्माण का आदेश दिया। महाराजा प्रदीप प्रकाश ने तुरन्त जयपुर से कारीगरों को बुलाकर भवन निर्माण का कार्य आरंभ करवाकर सन् 1630 में पूरा किया और वर्तमान में यह स्थल धार्मिक पर्यटन के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय मानचित्र पर उभर चुका है।

मारकंडेश्वर धाम बोहलियो

नाहन से 17 किलोमीटर की दूरी पर स्थित पावन तीर्थ मारकंडेश्वर धाम बोहलियों है। महर्षि मारकंडेय ने भगवान शिव को शिवलिंग रूप में अपनी बाहों में भरकर अमरत्व का वरदान प्राप्त किया। इस तपोस्थली पर गुल्लर के पेड़ के नीचे से मारकंडा

नदी का उद्‌गम हुआ। यह जलधारा बोहलियों से होते हुए काला अंब होते हुए हरियाणा में प्रवेश करती है।

महर्षि मारकंडेय का जन्म हरियाणा के कैथल गांव के पिहोवा कलायत के समीप मटौर नामक स्थान पर महर्षि मृकंडु तथा माता मनस्विनी के घर हुआ। उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति विष्णु भगवान की कठोर तपस्या करने के उपरांत हुई। विष्णु भगवान ने अलौकिक पुत्र का वरदान दिया लेकिन पुत्र की आयु मात्र 12 वर्ष बताई। बालक की अलौकिक ज्ञान से अपनी अल्पायु का भान हुआ और पहाड़ों में शिव की स्तुति करने निकल गया। उसने शिव की सबसे अधिक उपासना बोहलियों के आसपास ही की पहाड़ियों में की। 12 वर्ष पूर्ण होने पर जब यमदूत उन्हें ले जाने आए तो इन्होंने शिवलिंग को बांहों में भर लिया। शिव की स्तुति से शिव भगवान प्रकट हुए तथा उन्होंने महर्षि मारकंडेय को अमृत्व का वरदान दिया।

मारकंडा चालीसा के अनुसार शिव यहां से चल कर पौड़ीवाला शिव मंदिर में समा गए। यहां वर्ष भर श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। प्रत्येक संक्रांति, अमावस्या व पूर्णिमा में मारकंडा नदी में स्नान करने का विशेष महत्त्व है।

माता कटासन देवी

सिरमौर जिले के धार्मिक स्थल पांवटा साहिब से 13 किलोमीटर की दूरी पर मां कटासन देवी का दिव्य मंदिर है। मां दुर्गा के छठे स्वरूप का नाम कात्यायनी है। जनश्रुति है कि प्राचीन काल में कत नामक एक प्रसिद्ध महर्षि थे। उनके पुत्र कात्य हुए। उन्हीं कात्य के गोत्र में विश्वप्रसिद्ध महर्षि कात्यायन उत्पन्न हुए। उन्होंने भगवती मां की वर्षों तक तपस्या की। तपस्या के प्रसन्न होकर मां ने उन्हें वरदान मांगने को कहा। कात्यायन ने मां को अपनी पुत्री के रूप में पाने का वर मांगा। जब पृथ्वी पर महिषासुर का आतंक बढ़ा तो ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने अपने-अपने तेज का अंश देकर महिषासुर के नाश के लिए देवी की उत्पत्ति की। महर्षि कात्यायन ने देवी की सर्वप्रथम पूजा की। यह देवी कात्यायनी कहलाई। मां कटासन काव्यायनी देवी का दूसरा नाम है।



सिरमौर के राजघराने की कुलदेवी के रूप में माता की अपार मान्यता है।

शिव मंदिर पौड़ी वाला

सिरमौर जनपद में शिव मंदिर पौड़ी वाला क्षेत्रवासियों की अटूट आस्था का केंद्र है। इस मंदिर की कथा सतयुग में भगवान शिव के शापग्रस्त होने की कहानी से जुड़ी है। जनश्रुति के अनुसार जन कल्याण के लिए निकटवर्ती पूजा स्थल यादबद्री में जन कल्याण के लिए देवताओं की एक सभा आयोजित हुई। इस सभा में महर्षि नारद ने सभी देवताओं के सम्मुख एक प्रश्न रखा कि आज की सभा का अध्यक्ष सृष्टि का सबसे श्रेष्ठ देव कहलाएगा। इस पर ब्रह्मा, विष्णु व शिव में विवाद हो गया। क्रोधित होकर शिव ने त्रिशूल से ब्रह्मा के पांच शीशों में से एक शीश को काट दिया जिस पर शिव को ब्रह्म हत्या का दोष लगा। दोष निवारण के लिए शिव ने 'कपाल मोचन' नामक स्थान पर तपस्या की और इस दोष से मुक्ति पाई।

ब्रह्म हत्या से मुक्ति उपरांत 'यादब्रदी' में पुनः सभा हुई। सभा उपरांत शिव हिमालय पर्वत की ओर संसार की मुक्ति बताने निकल पड़े। अपनी यात्रा का पहला पड़ाव 'पौड़ीवाला' था। इसे स्वर्ग की पहली पौड़ी की संज्ञा दी गई। यहीं से शिव ने कैलाश पर्वत की ओर प्रस्थान किया। इस मंदिर का इतिहास पांडवों से भी जुड़ा है। महाभारत के युद्ध समाप्ति के उपरांत पांडव यहां से होते हुए स्वर्ग की ओर गए थे। इस मंदिर में बाबा सरस्वती गिर के तहत संचालन रहता है। स्वर्गीय बाबा गैदा गिर ने अपने समय में यहां सराय, रसोई तथा विशाल मंदिर का निर्माण करवाया।

प्राचीन काली स्थान मंदिर

ऐतिहासिक शहर नाहन में नया बाजार में स्थित प्राचीन काली स्थान मंदिर भव्यता व सुंदरता की पहचान है। मां काली के इस मंदिर को वर्ष 1629 में महाराजा विजय प्रकाश की कुमाऊं की महारानी ने निर्मित करवाया था। ऐसी मान्यता है कि रानी के साथ

मां काली कुमाऊं से साथ आई थी। मंदिर के साथ ही मां दुर्गा मंदिर, शिव मंदिर, भैरो मंदिर व हनुमान चबूतरा है। मंदिर के साथ गोरखनाथ संस्कृत महाविद्यालय है।

यहां नर बलि देने की परंपरा थी, जिसे योगी भड़गनाथ ने इसे बंद करवाया। महाराजा ने योगी भड़गनाथ को गद्दी पर बिठाया। इस मंदिर में नाथ संप्रदाय के महात्मा ही गद्दी पर बैठते हैं। महंत आमनाथ ने भड़गनाथ के बाद गद्दी संभाली। उनके कार्यकाल में नाहन तथा क्षेत्र में आम के नौ लाख पौधे लगे। पशुबलि बंद करवाने का श्रेय योगी मुक्तिनाथ को जाता है। वर्ष 1946 में भीष्मनाथ अस्थल बोहर (रोहतक) से लाकर महंत दयालुनाथ को गद्दी सौंपी गई। महंत दयालुनाथ ने ही यहां हिमाचल के पहले संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की जिसे गोरखनाथ संस्कृत महाविद्यालय का नाम दिया गया।

महाराजा फतेह प्रकाश ने मंदिर का जीर्णोद्धार किया और यहां हनुमान चबूतरे का निर्माण कराया। इस चबूतरे पर प्रतिवर्ष आश्विन मास की शुक्ल पक्ष की नवमी को दरबार लगाया जाता था। जिसमें महाराजा राजगुरु को भेंट अदा करता था। असौज के प्रथम नवरात्रे को राजमहल के पवित्र खांडा को कालिस्तान मंदिर में ले जाकर नौ दिन पूजा-अर्चना होती थी। नवमी को इसे भव्य जुलूस की शक्ल में राजमहल लाते थे।

महंत कृष्णनाथ के वक्त में मंदिर का पुनः जीर्णोद्धार हुआ। यह मंदिर स्थानीय लोगों के साथ-साथ मैदानी इलाकों के नागरिकों की अटूट आस्था का केंद्र है।

बाबा बनवारी दास

चार सौ वर्ष पूर्व शायद किसी ने सपने में भी नहीं सोचा था कि घना वीरान जंगल व सिंहों की क्रीड़ास्थली कभी सुसज्जित बड़ा चौक नाहन के रूप में बदल जाएगी।

रियासत सिरमौर की राजधानी नाहन वास्तव में जनपद के इतिहास की साक्षी है। रियासत की राजधानी नाहन में बनाने का श्रेय बाबा बनवारी दास को जाता है। बाबा बनवारी दास ने वर्ष 1622 में महाराजा कर्म प्रकाश को इस स्थान पर राजधानी बनाने का आग्रह किया था। बाबा बनवारी दास की तपस्या प्राचीन काली स्थान मंदिर में चलती थी। उन्होंने 1621 को आषाढ़ की एकादशी को नाहन महलात में पीपल के पेड़ के नीचे खेड़ा जी महाराज की स्थापना करवाई। ऐसी जनश्रुति है कि उस वक्त बाबा बनवारी दास जब पूजा पर बैठते थे तो दो शेर उनके पास बैठकर बाबा की रक्षा करते थे।

वर्ष 1671 को सिरमौर के तत्कालीन महाराजा मही पकाश ने बाबा बनवारी दास के आदेश पर खेड़ा जी महाराज को बड़ा चौक स्थित जगन्नाथ मंदिर में प्रतिष्ठापित करवाया। बाबा बनवारी दास का निधन 1676 में हुआ बताया जाता है। खेड़ा जी महाराज को हर नगर व गांव में क्षेत्रपाल देवता के रूप में पूजा जाता है।

बाबा इतवार दास

जिला सिरमौर में राजगढ़ से बड़ू साहिब मार्ग पर गांव टिक्करी, जिसे अब ठोडे नाम से जाना जाता है, गांव का नामकरण गुरु इतवार नाथ के शब्द 'ठोर' से पड़ा। वर्ष 1920 में महात्मा इतवार नाथ राजस्थान से नाहन होते हुए बाहनार नामक स्थान पहुंचे। तदोपरांत वे अपने शिष्यों के साथ टिक्करी गांव पहुंचे। इस गांव में जल की कमी से जनता त्रस्त थी। महात्मा की दिव्यशक्ति से वहां चश्मा फूट पड़ा। तदोपरांत वे वहां ही बस गए।

राजा बलसन को जब गुरु जी के प्रताप बारे पता लगा तो वे उनसे भेंट करने आए लेकिन वे समाधि में लीन हो चुके थे। 1300 के आसपास राजा बलसन ने गुरुजी की स्मृति में मठ का निर्माण करवाया। गुरु की समाधि के उपरांत पवन गिरी मठ के महंत बने तथा सिरमौर के राजा ने मठ के लिए 1100 बीघे भूमि दान दी। हर वर्ष भाई दूज पर यहां भव्य मेला आयोजित होता है।

भागेश्वरी देवी

नाहन शिमला मार्ग पर कांगो जोहड़ी लवाणा चौथा के मध्य स्थित सरोगा गांव में मां भागेश्वरी देवी का भव्य मंदिर स्थित है। जनश्रुति है कि मुगलकाल में मुसलमान शासकों के आक्रमणों से भयभीत होकर राजस्थान के कुछ परिवार, जिसमें सभी वर्गों के लोग शामिल थे, ने हरियाणा के रायपुर रानी में पहले यहां बसने की सोची लेकिन यहां भी वे मुसलमानों की क्रूरता का शिकार हुए। वहां से उनका काफिला शांत एवं सुरक्षित स्थल के लिए पहाड़ों की ओर चला। एक रात को जब काफिला सरोगा पहुंचा तो वहां देववाणी हुई कि यह स्थान सुरक्षित है। यहां बसे लोगों ने वहां मां भागेश्वरी देवी जिसे आरंभ में बैरागी देवी कहा जाता था, की स्थापना की। समय उपरांत देवी का नाम भागेश्वरी देवी मशहूर हुआ। इस मंदिर के समीप एक तालाब है जिसे सैर कहा जाता है। गांव का नाम सैर से सरोगा पड़ा मालूम होता है। सिरमौर के मैत्रय, मिथलेश, भंडारी, चौहान, ठाकुर व चौधरी गौत्रों की यह कुल देवी है।

माता भंगायणी मंदिर

सिरमौर जनपद के हरिपुरधार में मां भंगायणी का भव्य मंदिर है। जनश्रुति के अनुसार यह देवी शिरगुल देवता द्वारा दिल्ली से लाकर अपनी बहन के रूप में स्थापित की थी। शिरगुल जब दिल्ली प्रवास पर थे, तो तत्कालीन मुगल राजा ने उन्हें दिव्य शक्तियां दिखाने के लिए कारावास की सजा दी। राजा द्वारा जेल की सजा दी और हाथ-पैर चमड़ों की बेड़ियों से बांध दिए। जेल की कोठरी तक सात दरवाजे थे तथा उन पर कड़ा पहरा रहता था।

गोगा जाहरवीर को जब घटना का पता चला तो वह शिरगुल को कैद से मुक्त करवाने दिल्ली पहुंचा। उसने वहां कार्यरत एक भंगिन की सहायता से शिरगुल को कैद से मुक्त करवाया। गोगा

जाहरवीर व शिरगुल ने भंगनी देवी को धर्म बहन बनाया।

शिरगुल उसे साथ लेकर आए और चूड़धार के समीप हरिपुरधार में भंगायण देवी के मंदिर की स्थापना की। वैशाख माह की संक्रांति को यहां चार दिवसीय मेले का आयोजन होता है। आज यह क्षेत्र तथा बाहर के निवासियों का प्रमुख आस्था का केंद्र बना है।

नाहन की शान : लखदाता पीर मजार

ऐसी मान्यता है कि सिरमौर की राजधानी जब सिरमौर ताल से नाहन में बनी तो संपूर्ण क्षेत्र घने जंगल से घिरा था। राजधानी बनने पर अलग-अलग स्थानों पर विभिन्न जातियों को बसाया गया। इसमें एक मुल्तान से लाया गया पीरजादों का परिवार था। उन्होंने लखदाता पीर को नाहन लाने का विचार किया। उन्होंने मुल्तान के परिजादों से नाहन रियासत में लखदाता पीर को विराजमान का अनुरोध किया। रात्रि में लखदाता पीर ने वहां के पीरजादों को दर्शन देकर कहा कि मेरी मजार से दो ईंटे नाहन के पीरजादों को दे दी जाएं। वहां से लाई इन दो ईंटों को पक्का टैंक के किनारे खुदाई कर एक मजार के रूप में कब्रनुमा आकार दिया गया। वीरवार को मजार पर ढोल बनाने की रीत आरंभ हुई। नाहन में लखदाता पीर के चमत्कारों से अवाम खुश हुई। जनश्रुति है कि महारानी कुनहारी के सुपुत्रों नर और वीर ने लखदाता की खिल्ली उड़ाई। राजकुमारों को तदोपरांत घोड़े से गिरने से गहरी चोट लगी। महारानी को इस बात का ज्ञान हुआ तो वे वहां क्षमा याचना के लिए पहुंची। क्षमा याचना उपरांत राजकुमार कुशल हो गए तथा रानी ने लखदाता का मंदिर बनवाना आरंभ किया। नवंबर माह में लखदाता पीर के नाम पर यहां विशाल दंगल का आयोजन होता है।

देई जी साहिबा मंदिर पांवटा साहिब

सिखों के पावन तीर्थ पांवटा में देई जी साहिब मंदिर यानी सिरमौर रियासत की राजकुमारी द्वारा अपने स्वर्गीय पति राजा प्रताप चंद बहादुर कांगड़ा की स्मृति में बनवाया गया महाराज रामचंद्र का मंदिर है। सिरमौर के महाराजा शमशेर प्रकाश की बहन कांगड़ा के नरेश प्रताप चंद बहादुर को ब्याही हुई थी। कांगड़ा की रानी तथा सिरमौर की इन्हीं देई जी साहिब ने इस मंदिर का निर्माण 21 फरवरी 1889 में करवाया।

इस मंदिर के तीन भाग हैं। शिवालय, महाराज रामचंद्र का मंदिर व राम लक्ष्मण व सीता की भव्य मूर्तियां स्थापित हैं। मंदिर के निर्माण के लिए भूमि बाबा लग्न शाह की मस्जिद से खरीदी थी। वर्ष 1990 में इस मंदिर को सरकार ने अपने संरक्षण में लिया।

गुरुद्वारा दसवीं पातशाही नाहन

गुरु गोविंद सिंह तथा सिरमौर के नरेश के आपस में प्रगाढ़ संबंध थे। महाराज मेदनी प्रकाश ने गुरु गोविंद सिंह को नाहन आने का निमंत्रण दिया। उस समय गुरु गोविंद सिंह कहलूर रियासत में थे तथा उनकी कहलूर के राजा भीम चंद से विवाद हो गया था। यह विवाद कहलूर के राजा द्वारा गुरु से उन्हें भेंट में प्राप्त सफेद हाथी पर हुआ। गुरु गोविंद कहलूर रियासत के आनंदपुर को छोड़कर नाहन तहसील के मीरपुर आ गए। तब सिरमौर के राजा मेदनी प्रकाश ने गुरु को नाहन आमंत्रित किया। यहां से वे पांवटा चले गए। जहां वे साढ़े चार वर्ष तक रहे। गुरु के नाहन आने पर शहरवासियों ने उनका भव्य स्वागत किया। शहर में स्वागत द्वार बनाए गए। जहां गुरु जी ठहरे वहां उनकी याद में गुरुद्वारे का निर्माण किया गया। गुरु गोविंद सिंह ने राजा मेदनी प्रकाश को प्रेम की निशानी के तौर पर कृपाण भेंट की। यह कृपाण सिरमौर रियासत के वंशजों के पास आज भी मौजूद है।

गुरुद्वारा टोका साहिब

सिरमौर के प्रवेश द्वार काला अंब से लगभग पांच किलोमीटर की दूरी पर गुरुद्वारा टोका साहिब स्थित है। यह वे स्थान है जहां नाहन रियासत आगमन पर गुरु जी ने पहला पड़ाव लगाया था।

भंगाणी साहिब गुरुद्वारा

सिरमौर जिले की तहसील पांवटा का गिरीपार क्षेत्र बागरन से आरंभ होता है। यहां से छह किलोमीटर की दूरी पर दो पवित्र गुरुद्वारे भंगाणी साहिब व तीरगढ़ी साहिब हैं। ये गुरु गोविंद सिंह जी द्वारा भंगाणी युद्ध में हुई विजय के प्रतीक हैं।

भंगाणी साहिब में 16 वैशाख सन् 1746 को लड़ा गया। युद्ध गुरु गोविंद सिंह की जीत का द्योतक है। गुरु गोविंद सिंह की फौज कम थी लेकिन गुरु की बहादुरी के कारण कहलूर नरेश हरिचंद की पराजय हुई। महंत कृपाल दास व लालचंद हलवाई गुरुजी के साथी थे। तीरगढ़ी गुरुद्वारे से तीर चलाए गए थे। ये दोनों गुरुद्वारे गुरु गोविंद सिंह की वीरता के जीते जागते उदाहरण हैं।

गुरुद्वारा शेरशाह साहिब : निहाल गढ़

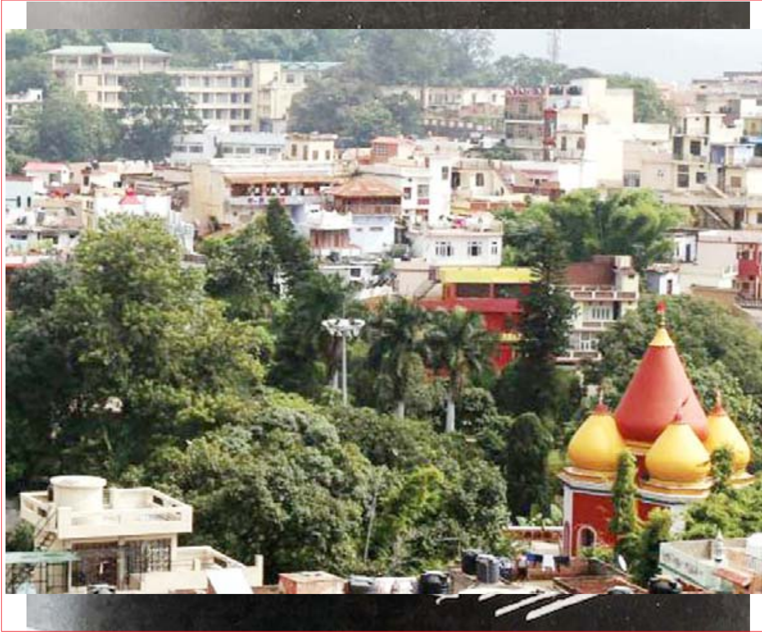
गुरुद्वारा पांवटा साहिब से पांच किलोमीटर की दूरी पर निहालगढ़ गांव में वह ऐतिहासिक स्थान है, जहां गुरु गोविंद सिंह ने महाराजा नाहन मेदनी प्रकाश, महाराजा फतेहचंद गढ़वाल के सामने आदमखोर शेर को तलवार से मारा था।

इसके अलावा, बड़ू साहब व अन्य गुरुद्वारे आपसी सौहार्द की जनपद में मिसाल हैं।

अधीक्षक, निदेशालय, सूचना एवं जन संपर्क, सूचना भवन, छोटा शिमला, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002

ऐतिहासिक शहर नाहन
प्राचीन व नवीन सभ्यता का संगम

◆ गोपाल दिलैक



हिमाचल प्रदेश की पूर्वी-दक्षिणी दिशा में भूमध्य रेखा से 30°21° से 31°5° उत्तरी अक्षांश तथा 77°05° से 77°55° पूर्वी रेखांश के मध्य सिरमौर जिला का मुख्यालय नाहन समुद्रतल से 944 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। सदाबहार वनों की हरियाली से आच्छादित निम्न शिवालिक पर्वत श्रेणी के दामन में बसे इस शहर का भूदृश्य सैलानियों के मन को मोह लेता है।

नाहन से जहां एक ओर धारठीधार और सैनधार की मध्यम ऊंचाई वाली ऊंची-ऊंची रम्य चोटियां दिखाई देती हैं, वहीं दूसरी ओर सूर्यास्त की लालिमा के साथ क्षितिज पर मैदानी भागों का आसमान के साथ मिलन का मनोहारी दृश्य मन में कौतुहल सा उत्पन्न कर देता है। सन् 1820 ई. को नाहन प्रवास पर आए यूरोपीय यात्री जैम्स वैली फ्रेजर का कथन था कि 'नाहन चट्टान के शिखर पर पक्षी के घौंसले की भांति टिका है। यहां से निम्न ऊंचाई की पहाड़ियों और मैदानों को दूर-दूर तक आसमान से मिलते हुए देखा जा सकता है। यह परिदृश्य वास्तव में, किसी को भी सौम्य बनाने वाला, हिन्दुस्तान के समतल मैदानों की समृद्ध वैचारिक एकरसता, सम्पूर्ण सम्मोहक और प्रायः हैरान कर देने वाला है।"

यह शहर सतरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में आबाद हुआ। यही शहर स्वतन्त्रता प्राप्ति तक सिरमौर रियासत की राजधानी भी रहा। नाहन से पहले सिरमौर रियासत की राजधानी सिरमौरी ताल, कालसी, कोट-देवथल, हाटकोटी, रतेश, जोगड़ी दुर्ग नेरी, राजपुर आदि विभिन्न स्थानों पर रही है। नाहन कस्बे की स्थापना सिरमौर रियासत के शाही घराने के लिए मील पत्थर सिद्ध हुई। सिरमौर रियासत की राजधानी नाहन पर लगभग बीस रियासती शासकों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी शासन किया।

नाहन शहर की नींव शाही घराने के उनतीसवें शासक राजा कर्म प्रकाश ने सन् 1621 ई. को रखी। इन्होंने शासन के आरम्भिक छः वर्ष तक कालसी से राजकाज चलाया। सन् 1621 ई. को राजा कर्म प्रकाश की कर्मण्यता से नाहन शहर के उद्भव और विकास की यात्रा प्रारम्भ हुई है। किंवदन्ति है कि एक बार राजा कर्म प्रकाश शिकार खेलते हुए इस बियावान जंगल की चोटी तक आ पहुंचे जहां वर्तमान शहर बसा है। यहां घने जंगलों और झाड़ियों के झुरमुटों में नाना प्रकार के वन्य पशुओं की भयंकर गर्जना और पंखेरूओं के कलरव गान को सुनता-सुनता वह एक ऐसी पहाड़ी पर जा पहुंचा जहां उसकी मुलाकात बनवारी नामक एक तपस्वी से जिसकी कुटिया में एक पालतू शेर बंधा था। साधु की तपस्या और यहां की प्राकृतिक सुषमा को देखकर राजा अत्यधिक प्रभावित हुआ। उन्होंने साधु बनवारी दास वैरागी के आशीर्वाद से इस स्थान को रहने के लिए चुना। साधु के वन्य प्राणी स्नेह ने राजसी घराने में शेर, हाथी जैसे प्राणियों के पालन-पोषण की प्रथा का सूत्रपात करवाया।

नाहन की 150 वर्ष पुरानी नगरपालिका

पहाड़ों के ऐतिहासिक शहर नाहन ने वर्ष 2018 की 12 जुलाई को अपनी नगर परिषद की स्थापना के 150 वर्षों की गौरवमय यात्रा का स्मरण किया। यह तारीख इतिहास को एक सौ पचास वर्ष पूर्व ले जाने की कवायद थी, जब 1868 में अंग्रेजों के शासनकाल में नाहन में म्यूनिसिपल बोर्ड की स्थापना की गई थी। गौरतलब है कि अंग्रजों के वक्त में भारत में आधुनिक नगर पालिका प्रशासनिक व्यवस्था का शुभारंभ वर्ष 1862 में हुआ। म्यूनिसिपल कमेटी बोर्ड नाहन का गठन 1868 में हुआ। यह दिल्ली म्यूनिसिपल कमेटी बोर्ड की स्थापना के पांच वर्षों उपरांत प्रकाश में आया। इस बोर्ड की स्थापना से नाहन शहर में रियासत काल में ही नियोजित सिवरेज, इंजीनियरिंग तथा अन्य लोक निर्माण कार्यों का मार्ग प्रशस्त हुआ। उस वक्त नाहन रियासत ने पड़ोसी रियासतों में लागू अधिनियमों को अपनाया।

लगभग 33 हजार की आबादी वाले इस शहर को राष्ट्र की सबसे पुरानी व हिमाचल की पहली नगर पालिका स्थापित करने का गौरव प्राप्त है। रियासत काल में शहर में 13 वार्ड थे, जिसके लिए चार निर्वाचित तथा चार ही मनोनीत सदस्य होते थे। नाहन नगर पालिका को पहले म्यूनिसिपल बोर्ड के नाम से जाना जाता था। वर्ष 1887 में इसे नगर कमेटी के नाम से जाना गया। वर्ष 1904 में कमेटी के नौ सदस्यों में से चार निर्वाचित तथा पांच मनोनीत सदस्य होते थे। इनका कार्यकाल तीन वर्ष का निर्धारित होता था। वर्ष 1903-04 में कमेटी की आय 15,243 थी जबकि खर्चा 13,910 था। वर्ष 1931-32 में चुंगी से कमेटी की आय 15,924 रुपये आंकी गई। जो शहर की आबादी के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति पर 2-3 रुपये थी। इस कमेटी की कुल आय 21,731 रुपये तथा व्यय 21,745 रुपये था। कमेटी शहर में अपने भवन तथा शहर के इर्दगिर्द के वन क्षेत्र भी इसके अधीन थे। वर्ष 1934 में कमेटी का एक अध्यक्ष तथा नौ सदस्य थे। जिनमें से छः निर्वाचित तथा तीन मनोनीत होते थे। उस वक्त कमेटी की आय का मुख्य स्रोत चुंगी से प्राप्त आय होती थी। 15 अप्रैल, 1948 में सिरमौर रियासत के हिमाचल प्रदेश में विलय होने पर नगर कमेटी के संचालन तथा शहर के योजनाबद्ध एवं नियोजित विकास के लिए अनेक अधिनियमों तथा कानूनों को लागू किया गया।

आजादी उपरांत नाहन नगरपालिका के चुनाव वर्ष 1949-50 में हुए। इसमें आम जन को कमेटी के लिए सदस्य चुनने का अधिकार मिला। कमेटी की आय में इजाफा करने के लिए वर्ष 1951 में शहर की सीमा का विस्तार काला अंब सड़क पर दोसड़का तक किया गया। नाहन शहर में नगरपालिका के बनने से शहर में भूमिगत सीवरेज प्रणाली तथा पत्थरों के रास्ते निर्मित हुए। यह व्यवस्था ब्रिटिश काल में हुई। नाहन अपनी भव्यता तथा सुंदरता के लिए जाना जाता रहा। नाहन शहर की अनेक ऐतिहासिक इमारतें, स्थल इसके गौरवमय इतिहास की दास्तां को आज भी बयां करती है। इनमें वर्ष 1889 में निर्मित रानी ताल पार्क, 1740 में निर्मित परशुराम मंदिर, कच्चा टैंक, पक्का टैंक, मस्जिद, जैन मंदिर प्रमुख है। ब्रिटिश काल में वर्ष 1877 में निर्मित दिल्ली गेट तथा यहां लगी ट्यूरट घड़ी, उस काल की याद को तरोताजा करती है।

1814-16 में हुए एंग्लो गोरखा युद्ध का युद्ध स्मारक, शमशेर स्कूल, लाल कोठी व खंड विकास अधिकारी का कार्यालय ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को संजोए हुए हैं।

राजा कर्मप्रकाश (1616-30 ई.) ने सिरमौर रियासत की राजधानी सन् 1621 ई. को कालसी से नाहन बदली तथा नाहन शहर और किला नाहन की स्थापना करवाई। राजा ने साधु की तपोस्थली पर शाही महल का निर्माण करवाया। इसी पहाड़ी की तराई पर महल के समीप (जहां वर्तमान जगन्नाथ मन्दिर है) बनवारी साधु ने डेरा डाला। नाहन शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक धारणाएं प्रचलित हैं। नाहन को नाहर का अपभ्रंश शब्द भी माना जाता है। नाहर का शाब्दिक अर्थ शेर है। यद्यपि भाषायी अध्ययन की दृष्टि से देखा जाए तो नाहन शब्द की व्युत्पत्ति मूलतः संस्कृत के न शब्द और हन् धातु के मेल से हुई प्रतीत होती है। न का अर्थ = ना, नहीं और हन का अर्थ = नष्ट होना, मारना, प्रहार करना आदि इन दोनों अर्थों के संयोग से कभी भी नष्ट न होने वाले 'नाहन' शब्द की व्युत्पत्ति हुई है। नाहन शब्द का हल सन्धि (व्यंजन सन्धि) के भेद पर सवर्ण सन्धि के अन्तर्गत विश्लेषण करने पर इसका सन्धि विच्छेद 'ना' और 'हन' = नाहन को स्पष्ट किया जा सकता है।

नाहन शहर में शाही महलात के सम्मुख मनोरंजन और उत्सवी वातावरण का एहसास दिलाने वाला चतुर्वर्गीय रियासती मैदान, चौगान के नाम से मशहूर है। चौगान मूल रूप से अरबी शब्द है जिसका अर्थ है - शहर के बीचोबीच हरे घास का मैदान। नाहन शहर के ठीक मध्य भाग पर बना चौगान, शहर की शोभा को चार चांद लगा देता है। नाहन में रियासती काल से ही शासकीय उत्सवों तथा राजसी खुशियों के अवसरों को मनाने के लिए चौगान एक मात्र स्थान रहा है।

ऐतिहासिक चौगान के पृष्ठ भाग पर जिला सिरमौर का सबसे प्राचीन स्मारक शाही महल है। इस दुर्गाकृति के महल की

ब्रिटिश चिकित्सक व नाहन

रियासत काल में नाहन तथा आसपास के क्षेत्रों में विभिन्न बीमारियों का इलाज वैद्यों द्वारा किया जाता था। तत्कालीन राजा शमशेर प्रकाश द्वारा करवाए गए भूमि बंदोबस्त से रियासत की आय में इजाफा हुआ। आय बढ़ने से कल्याणकारी कार्यों को करवाने में आसानी हुई। नाहन शहर तथा आसपास के लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिए रियासत ने यूनानी हाकिम की सेवाएं लेने का फैसला लिया और हाकिम खादिम हुसैन को दिल्ली से आमंत्रित कर रियासत में नौकरी दी गई। वे यूनानी प्रणाली के विशेषज्ञ तथा एक संपूर्ण हकीम थे। इससे आम जन को लाभ पहुंचा।

उस वक्त अंग्रेजों ने पहाड़ों पर अपने कदम बढ़ा लिए थे। राजा को भी अंग्रेजी चिकित्सा प्रणाली का ज्ञान था। स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार के तहत नाहन में एक अस्पताल का निर्माण करवाया गया। इसमें शल्य चिकित्सा का सामान व यंत्र रखे गए। अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति (एलोपैथी) के लिए अंग्रेज डॉक्टर स्मिथ की तैनाती हुई। वे कुछ वक्त अपनी सेवाएं प्रदान कर चले गए। वर्ष 1872 में अंग्रेजी चिकित्सक डॉक्टर पियरसाल को मेडिकल ऑफिसर तैनात किया गया। यूनानी तथा अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति से अवाम को लाभ पहुंचा। डॉक्टर पियरसाल मेडिकल अधीक्षक के अतिरिक्त म्यूनिसिपल बोर्ड के अध्यक्ष भी थे। उन्होंने शहर को सुंदर व स्वच्छ बनाने में अहम भूमिका निभाई। उन्होंने मार्गों के किनारे वृक्ष तथा बाजार की गलियों को पक्का करवाया। ग्यारह वर्ष अपनी सेवाएं प्रदान करने के उपरांत वर्ष 1883 में उनका निधन हुआ। नाहन के उत्तरी भाग में चक्कर की सड़क के किनारे उस स्थान में जिसे उन्होंने अपने जीवन काल में चुना था। सैन्य सम्मान के साथ दफनाया गया। उनकी पत्नी मिसेज पियरसाल ने भारी रकम व्यय कर वहां एक कब्र का निर्माण करवाया।

डॉक्टर पियरसाल के उपरांत अंग्रेज सरकार से सेवानिवृत्त चिकित्सक डॉक्टर डीन को सिविल सर्जन नियुक्त किया गया। उनका निधन 1886 में हुआ और उन्हें भी नाहन में ही दफनाया गया। तदोपरांत डॉक्टर निकल्सन सिविल सर्जन बने। उनकी मृत्यु 1904 में हुई।

राजा फतेह प्रकाश (1826-51 ई.) के शासनकाल में शाही महल का जीर्णोद्धार करवाया गया क्योंकि गोरखा युद्ध से नाहन महलात को बहुत क्षति हुई थी। राजा फतेह प्रकाश ने अपनी रानियों के लिए शीश महल, मोती महल, चन्द्र महल, महारानी का बेड़ा आदि विभिन्न शयनागार बनवाए थे। इसी महल के साथ कंवर रणजोर सिंह का बंगला रणजोर पैलेस भी है।

नाहन बहुधर्म समागम स्थली है। यहां हिन्दू, सिक्ख, मुस्लिम, जैन आदि धर्मावलम्बियों की आस्था के प्रतीक मठ, मन्दिर, मस्जिदें और गुरुद्वारे देखने को मिलते हैं। यही कारण है कि नाहन कस्बा नाना प्रकार के मठ, मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों का गढ़ रहा है। धर्म की यही डोर हिन्दू-मुस्लिम एकता की कड़ी को मजबूत करती है। नाहन में सबसे प्राचीन मन्दिर बड़ा चौक में भगवान जगन्नाथ का है। यह मन्दिर सन् 1681 ई. को राजा मही प्रकाश (1659-78 ई.) ने उसी स्थान पर बनवाया जहां वैरागी बनवारी दास जी रहते थे। जनश्रुति है कि शाही कुलीष्ट जगन्नाथ ने राजा को स्वप्न में दर्शन देकर चेताया कि सिरमौरी ताल में पीपल के वृक्ष के नीचे दबी कुल देवता की प्रतिमा को निकलवाकर उसे विधिवत स्थापित किया जाए। राजा ने स्वप्न को मूर्त रूप देकर जगन्नाथ की सिंहासन पर विराजमान रजत प्रतिमा को

शोभा देखते ही बनती है। इस महल के पश्चिमाभिमुखी विशालकाय प्रवेश द्वार के दोनों ओर सुसज्जित संगमरमर के शेर का शाही घराने में शेरों की पोषण परम्परा को उजागर करते हैं।



नाहन रियासत में विश्व के विशालतम हाथी 'बृजराज' की सवारी का दुर्लभ चित्र

जगन्नाथ मन्दिर नाहन में स्थापित करवाया। यहां जगन्नाथ मन्दिर बनने से पहले बाबा बनवारी दास नृसिंह जी की पूजा करते थे। कालान्तर में नृसिंह देवता को खेड़ा के नाम से जाना जाता था। नाहन में रणजोर पैलेस के ठीक ऊपर वाले भाग पर लक्ष्मीनारायण का मन्दिर (ऊपरली टोली में) है। इस मन्दिर का निर्माण राजा भूप प्रकाश (1703-23 ई.) ने सन् 1708 ई. को करवाया।

नाहन शहर की पूर्वी दिशा में चौगान से कुछ कदमों की दूरी पर काली का जोहड़ के समीप भगवती काली का मनोरम मन्दिर है। आधुनिक ढंग की निर्माण सामग्री के साथ शिखर शैली में बना यह मन्दिर कालीस्थान मन्दिर के नाम से विख्यात है। इस मन्दिर को सिरमौर के राजा विजय प्रकाश (1723-49 ई.) की कुमांऊवीं रानी ने सन् 1730 ई. में बनवाया। जनश्रुति है कि इस धर्मपरायण रानी ने कुमांऊ से काली की प्रतिमा अपने साथ नाहन लाई थी। इस मन्दिर परिसर में चौबीस भुजी देवी का एक मन्दिर राजा फतेह प्रकाश (1826-51 ई.) ने बनवाया। कुमांऊवी रानी ने नाहन में पेयजल की कमी को दूर करने के लिए एक ठाकुर द्वारा तथा शिवपुरी में शिवालय बनवाए। कालीस्थान मन्दिर के एक ओर मुसलमानों की मस्जिद भी है जबकि दूसरी ओर महाराजा शमशेर प्रकाश (1856-98 ई.) द्वारा रियासत की आर्थिक दशा को सुधारने के लिए सन् 1864 ई. को स्थापित की गई नाहन फाऊंडरी का विशालकाय भवन है। कालीस्थान मन्दिर के पूर्वी भाग पर महिमा जिला पुस्तकालय भी है। यह पुस्तकालय महाराजा अमर प्रकाश (1911-38 ई.) की रानी मदालसा ने अपनी पुत्री महिमा कुमारी की स्मृति में सन् 1930 ई. को बनवाया।

1893 में पहला बैंक

सिरमौर रियासत में पहला बैंक जो 'नाहन नेशनल बैंक' के नाम से जाना जाता था, की स्थापना वर्ष 1893 के दौरान की गई थी। आरंभ में इस बैंक का कार्य क्षेत्र नाहन तथा आसपास के छोटे कस्बे ही थे। वर्ष 1944 में इस बैंक का नाम बदलकर बैंक ऑफ सिरमौर रखा गया जिसे बैंक ऑफ सिरमौर एक्ट-IV ऑफ 1944 के तहत लाया गया। नाहन नेशनल बैंक की सभी संपत्तियां व देनदारियां नए बैंक को हस्तांतरित की गई तथा इसने रियासत में खुली सहकारी समितियों के शीर्ष बैंक के रूप में कार्य करना आरंभ किया। बैंक के माध्यम से सहकारी समितियों को ऋण प्रदान किया गया। वर्ष 1944 में बैंक की कार्यशील पूंजी 9,29,636 रुपये से बढ़ाकर 13,50,072 रुपये हो गई। बैंक ने इसी वर्ष 11,453 रुपये का मुनाफा कमाया। वर्ष 1945 में इस बैंक की शाखाएं पांवटा साहिब, सराहां तथा ददाहू में खोली गईं तथा राजगढ़ में भुगतान पटल खोला गया। रियासत से बाहर बैंक की शाखाएं, चुहारपुर, देहरादून तथा जगाधरी में खोली गईं। दिसंबर, 1954 में बैंक की कार्य पूंजी बढ़कर 37,97,899 रुपये हुई। फरवरी 1955 तक सिरमौर बैंक एकमात्र ऐसा बैंक था जो जिले में सहकारी समितियों को ऋण उपलब्ध करवाता था। 26 फरवरी, 1955 को बैंक ऑफ सिरमौर का विलय हिमाचल प्रदेश राज्य सहकारी बैंक लिमिटेड के साथ कर दिया गया। जिले में सभी शाखाएं इसके अधीन आईं तब पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में खोली गईं शाखाओं को वर्ष 1957-58 में बंद कर उनका विलय पांवटा साहिब की शाखा के साथ कर दिया गया।

रियासत काल में सिरमौर जनपद में ग्रामीण क्षेत्रों में साहूकारों द्वारा ऋण देने की पुरातन पद्धति प्रचलित थी। नाहन में रियासत का बैंक खुलने से इसका लाभ स्थानीय निवासियों विशेषकर व्यापारिक समुदाय को ही हुआ। वहीं ग्रामीण ऋण के बोझ तले दबता ही गया। गरीबों की व्यथा का जब रियासत को भान हुआ तो अप्रैल, 1937 में रियासत द्वारा ग्राम उत्थान समिति का गठन किया गया। इस समिति ने मार्च 1939 में अपनी रिपोर्ट तथा संतुतियां सिरमौर दरबार के समक्ष रखीं।

कमेटी ने राजस्व विभाग के सहयोग से किसानों तथा श्रमिकों की स्थिति का आकलन कर पाया कि संपूर्ण रियासत में वे 29,02,800 रुपये के ऋण तले दबे हैं। कमेटी ने पाया कि कुछ व्यक्तियों ने लज्जा के डर से सही आंकड़े कमेटी के समक्ष उजागर नहीं किए। कृषकों ने सहकारी समितियों से ऋण लेने की बजाय साहूकारों से ऋण प्राप्त करने में किसानों ने प्राथमिकता दी। इसका मुख्य कार्य सहकारी समितियों द्वारा ऋण देने में विलंब को माना गया। किसानों की ऋण की आवश्यकता घरेलू जरूरतों तथा कृषि के लिए होती थी विशेषकर प्राकृतिक आपदा व सामाजिक तथा धार्मिक दायित्वों के निर्वहन के लिए थी। उस वक्त किसानों के पास कृषि के अलावा धन अर्जन का कोई अन्य विकल्प मौजूद न था। जनसंख्या के बढ़ने पर भूमि के बंटवारे ने इस समस्या को जटिल बनाया। ग्रामीणों के निरक्षर होने का फायदा भी साहूकारों ने उठाया। सामाजिक प्रथा 'रीत' जिसमें महिला अपना पति छोड़कर अन्य के साथ विवाह कर लेती थी, की स्थिति में पूर्व पति को धन की अदायगी करनी होती थी। इस प्रथा ने भी समाज को ऋण के बोझ तले लाया। साहूकार, फसल कटाई पर ऋण प्राप्ति तथा इस प्रक्रिया को लंबी किस्तों में जारी रखकर ब्याज कमाने में रहता था। इस प्रक्रिया ने गरीब किसानों को पीढ़ी-दर- पीढ़ी साहूकार के ऋण में उलझाए रखा। समिति ने जनसंख्या में वृद्धि, भूमि के बंटवारे, कृषि के साथ आय के अन्य साधनों का न होना, आय में वृद्धि न होना, व्ययों का बढ़ना, सामाजिक दायित्वों के निर्वहन को ऋण अदा न करने का एक मुख्य कारण माना।

नाहन शहर के एक टिले पर बना मन्दिर, मियां मन्दिर के नाम से जाना जाता है। यह मन्दिर राजा विजय प्रकाश (1723-49 ई.) के शासनकाल में बिलासपुर के राजा महान चन्द के भाई मियां कुशल सिंह ने बनवाया था। बिलासपुर रियासत के इन दोनों भाइयों में आपसी मतभेद के चलते मियां कुशल सिंह नाहन में आकर रहने लगे। सिरमौर के राजा विजय प्रकाश ने इन्हें किला रामगढ़ का थानेदार नियुक्त किया था। इसी मियां मन्दिर में भगवान परशुराम की एक प्रतिमा देखी जा सकती है। इसलिए इस मन्दिर को परशुराम मन्दिर भी कहा जाता है। इसी मन्दिर में जैन सम्प्रदाय के इष्ट देव श्री पारस नाथ जी की अष्टधातु में निर्मित एक प्रतिमा भी मिली जो सन् 1938 ई. में निर्मित जैन मन्दिर में स्थापित कर दी गई। यह मूर्ति वीर निर्वाण सम्वत् 1502 ई. (तथा सन् 1470 ई.) की प्रतीत होती है। यह मूर्ति पदमासन सप्तघाती मनोयोग मुद्रा में है।

डाक-तार व्यवस्था

उन्नीसवीं शताब्दी में सिरमौर रियासत में डाकघर सेवाओं को आरंभ करने के प्रयास आरंभ हो गए थे। यह तत्कालीन रियासत की दूरदर्शिता का ही नतीजा था जिसने इस व्यवस्था को आरंभ करने की सार्थक पहल हुई। डाक व्यवस्था को शुरू करने की अहमियत इसलिए अनुभव की गई क्योंकि उस वक्त रियासत के कुछ निवासी अंग्रेजी सेना में कार्यरत थे। इसके अलावा सिरमौर रियासत के अनेक कृषक अंग्रेजी इलाकों में मेहनत-मजदूरी करते थे। नाहन शहर में अंग्रेजी सरकार की ओर से एक डाकघर स्थापित था परंतु रियासत के अन्य भागों में कोई भी डाक व्यवस्था मौजूद नहीं थी, जिस कारण गांव स्तर पर पत्र वितरण में कठिनाई होती थी। सिरमौर रियासत के तत्कालीन राजा शमशेर सिंह ने संवत् 1947 (वर्ष 1887) में अंग्रेजी सरकार की प्रणाली पर रियासत की चारों तहसीलों में डाकघर खोले और प्रत्येक डाकघर में हरकारे तथा पत्र वाहक नियुक्त किए जो प्रति सप्ताह हरेक गांव में पत्र वितरित करते थे। इन रियासती डाकघरों में अंग्रेजी सरकार के डाकघर से डाक उपलब्ध होती थी जो प्रत्येक दिन तहसीलों पर स्थित डाकघरों में पहुंच जाती थी। रियासत ने आवश्यक समाचार नाहन से भेजने की कठिनाई को देखते हुए नाहन में टेलीग्राफ कार्यालय खोलने का निर्णय लिया। नाहन से डाक सिर्फ एक बार जाती थी। जरूरी कामकाज के लिए रियासत तथा वाणिज्य व्यवसाय से जुड़े लोगों को कठिनाई होती थी। रियासत ने डाक भिजवाने के लिए दो ऊंट रखे हुए थे। इस कठिनाई को दूर करने के लिए 1885 में रियासत ने प्रयास कर अंग्रेजी सरकार से नाहन में टेलीग्राफ कार्यालय खुलवाया। रियासत ने इस कार्य के लिए नियमित रूप से राशि जमा करवाने की व्यवस्था की।

नाहन तालाबों और बावड़ियों की भूमि भी कही जाती है। यहां पक्का तालाब की मनोहर छटा मन को छू लेती है। इस तालाब के एक किनारे पर पुरातन शिवालय है। यह शिव मन्दिर सन् 1866 ई. को राजा फतेह प्रकाश के पुत्र कंवर सुरजन सिंह ने बनवाया। इसी तालाब के दूसरे किनारे पर लखदाता पीर की दरगाह है। यह दरगाह मुस्लिम समुदाय के लोगों में आस्था का प्रतीक है। पक्का तालाब के समीप एक मीनार-दर-कब्र भी बनी है।

यह मीनार सन् 1814 ई. को गोरखा और अंग्रेजों के मध्य हुए जैतक युद्ध में ब्रिटिश सेना के मारे गए 57 अधिकारियों और जवानों की याद में ब्रिटिश सरकार द्वारा सन् 1815 ई. बनाई गई थी। यहीं पर जैतक युद्ध के शहीद लेफ्टिनेंट थैकरे, लेफ्टिनेंट ऐनसाईन, विलियम एम.सी. मुर्डो विल्सन की कब्रें भी हैं। लक्ष्य सिरमौर के अन्तर्गत नाहन में पयर्टन को बढ़ावा देने के लिए पक्का तालाब परिसर का सौन्दर्यकरण किया गया है।

नाहन का आरोग्य धाम रानीताल बाग शहरवासियों के स्वास्थ्यवर्धन की प्रेरणा स्थली रहा है। रानीताल बाग की मखमली सी हरियाली तथा फूलों की क्यारियों से उठती सौंधी खुशबू से सारा

सर गंगा राम ने बनाई थी जल योजना

वर्ष 1887 में नाहनवासियों को गर्मियों में स्वच्छ जल की आपूर्ति सुनिश्चित बनाने के लिए तत्कालीन राजा शमशेर प्रकाश ने इंग्लैंड की रानी की गोल्डन जुबली के अवसर पर पेयजल योजना निर्मित करने का प्रस्ताव रखा। शहर के लिए जल 14 किलोमीटर की दूरी पर स्थित लोडा री पर्वत से लाने की योजना बनाई गई। इस योजना का नाम केसरे-ए-हिंद वाटर वर्क्स रखा गया। नाहन में सुविधा संपन्न लोगों ने उदारता से दान दिया लेकिन जल के स्रोत के सूखने से यह कार्य आगे न बढ़ा। वर्ष 1910 में राजा सुरेंद्र विक्रम प्रकाश ने जलापूर्ति योजना बनाने के कार्य को आगे बढ़ाते हुए पंजाब के प्रमुख अभियंता सर गंगा राम तथा अन्य इंजीनियरों के साथ योजना बनाने बारे विचार- विमर्श किया। 26 अक्तूबर 1911 को जब महाराजा अमर प्रकाश को पंजाब के लै. गर्वनर ने गद्‌दी पर बिठाया तो उस दिन उन्होंने नाहन में सुरेंद्र वाटर वर्क्स जलाशय की आधारशिला रखी। इस योजना का कार्य मैसर्ज हैरसे एंड कंपनी बंबई (अब मुंबई) ने वर्ष 1915 में किया। शहर में जल नाहरा सावर चश्में से लोहे की पाइपों के माध्यम से प्रवाह के रूप में पहुंचाया गया। तीन लाख गैलन क्षमता के मुख्य जल भंडारण टैंक का निर्माण ब्राइट लैंड बंगलों के परिसर में किया गया। योजना के तहत दो अन्य टैंक कोर्ट परिसर तथा छावनी क्षेत्र में बनाए गए। इस योजना के बनने से शहरवासियों को उपयुक्त जल उपलब्ध होने लगा।

वातावरण महक उठता है। यहां रानीताल बाग में शिखरनुमा शिल्प में बना एक पुरातन शिव देवालय भी है। इस रानीताल बाग और शिव मन्दिर का निर्माण महाराजा शमशेर प्रकाश (1856-98 ई.) ने अपनी स्वर्गीय रानी कुटलानी की स्मृति में सन् 1889 ई. में करवाया था। रानीताल बाग में कच्चा तालब और कुंआ राजा विजय प्रकाश की कुमांऊवीं रानी ने पहले बनवा लिया था। रानीताल बाग के नाम से स्वतः स्पष्ट है कि यह ताल और बाग रानी की याद में बनाया गया है। रानीताल बाग से कुछ दूरी पर कच्चा तालाब है। इस कच्चा तालाब की भरपाई कर नाहन शहर का बस अड्डा बनाया गया है। कच्चा तालाब के समीप ठाकुरद्वारा, शीतला माता मन्दिर, शिव मन्दिर तथा नाग मन्दिर बने हैं। इन मन्दिरों में नाग देवता मन्दिर की अलग पहचान है। यह मन्दिर नाग नौणा के नाम से मशहूर है। नाग देवता को राजसी परिवार का कुल देवता माना जाता है। इसी मन्दिर में राज परिवार के सदस्यों का चूड़ाकर्ण संस्कार अर्थात् मुण्डन संस्कार करवाया जाता था। इस मन्दिर में भादो नाग पंचमी के उपलक्ष्य पर स्थानीय जनता द्वारा कालसर्प योग निवारण के लिए विशेष पूजा-अर्चना करवाई जाती है। यहीं शीतला माता का मन्दिर भी है। जहां नाहन में गर्मियों के महिनों में लोग गर्मी से निजात पाने के लिए शीतला माता मन्दिर में नतमस्तक होते हैं। कच्चा तालाब में एक मस्जिद भी है। यहां से कुछ दूरी पर नाहन छावनी के प्रवेश द्वार पर रामकुण्डी नामक स्थान पर में जगन्नाथ मन्दिर के महन्त बनवारी दास वैरागी से लेकर कुछ महन्तों की समाधियां बनी है। रामकुण्डी में एक छोटा सा शिव मन्दिर राजा कीर्ति प्रकाश (1757-73 ई.) की रानी ने सन् 1767 ई. को बनवाया था।

नाहन में चौगान के इर्द-गिर्द सिरमौर रियासत की समृद्धि के परिचायक अनेक स्मारक विद्यमान है। नाहन के चौगान की दक्षिणवर्ती दिशा में रियासती स्माकर दिल्ली गेट भारत के तत्कालीन वायसराय लॉर्ड लिटन के नाम से जाना जाता है जबकि इसका मूल नाम लिटन मैमोरियल है। इसका निर्माण राजा शमशेर प्रकाश ने सन् 1878 ई. को भारत के वाइसराय लॉर्ड लिटन के नाहन पधारने पर किया था। देहली गेट के साथ सुरेन्द्रा क्लब है जिसे राजा शमशेर प्रकाश ने सन् 1891 ई. को सिरमौर क्लब के नाम से बनवाया। कालान्तर में राजा साहब के उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह के नाम पर इसका नामकरण सुरेन्द्रा क्लब हुआ। इसी क्लब के साथ सिक्खों का गुरुद्वारा सटा है। राजा मेदनी प्रकाश (1678-94 ई.) के शासनकाल में सिक्खों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह नाहन तहसील के मौजा टोका में सन् 1685 ई. के आसपास आए थे। वहां से राजा मेदनी प्रकाश ने उन्हें नाहन आमन्त्रित किया। वह नाहन में थोड़े समय के लिए रुके और पांवटा चले गए। कंवर रणजोर सिंह द्वारा सन् 1912 ई. में प्रकाशित तारीख-ए-सिरमौर में

इंग्लैंड से छप कर आती थी डाक टिकट

सिरमौर रियासत में भारतीय डाक टिकट तथा न्यायालय फीस अधिनियम लागू था। न्यायिक टिकटें, गैर न्यायिक टिकटों से पृथक थीं। न्यायिक टिकटें 1, 2, 4, 6, 8, तथा 12 आने तथा 1, 2, 4, 5, 7, 8, 10, 16, 20, 30, 40, 60, 70, 100, 200 तथा 400 रुपये की होती थीं। गैर न्यायिक टिकटें 2, 4, 8 आना तथा 1, 2, 4, 8 तथा 16 रुपये की उपलब्ध होती थीं। ये सभी टिकटें रियासत द्वारा मैसर्ज वाटरलू एंड संज इंग्लैंड से मंगवाई जाती थीं। टिकटों की बिक्री सदर तथा तहसील कोषागार में होती थी। इसके अलावा छः लाइसेंसधारी टिकट विक्रेता थे जिनमें नाहन में तीन, रेणुका, पच्छाद तथा पांवटा में एक-एक विक्रेता था। इसके अतिरिक्त प्रत्येक तहसील में एक सरकारी विक्रेता होता था। रियासत को अंग्रेज सरकार से वार्षिक 13,735 रुपये की आमदनी यहां से होकर गुजरने वाली वस्तुओं पर लगने वाले कर से होती थी। इसके अतिरिक्त रियासत को आबकारी, पंजीकरण, कानून एवं व्यवस्था, कारावास विभाग, राज्य के बागों, देहरादून स्थित चाय बागान, फाउंडरी, मुद्रण एवं लेखन, जल विभाग तथा अन्य विभागों से होती थी। वर्ष 1934 के आंकड़ों के अनुसार रियासत की कुल आय 6,98,102 रुपये थी। सबसे अधिक आय नाहन फाउंडरी में उत्पादित सामान से थी जो 4,25,000 रुपये आंकी गई थी। इसके उपरांत आय का दूसरा बड़ा स्रोत रियासत के चाय बागान थे, जिनसे वार्षिक आय 1,48,486 के करीब आंकी गई थी।





नाहन में स्थापित हुई चक्की

राजा शमशेर प्रकाश सदैव ही लोगों के विकास के प्रति सजग रहते थे। वर्षा ऋतु में घराटों के बंद होने पर आटा पीसने में पेश आने वाली असुविधा को दूर करने के लिए राजा ने इंजन से आटा पीसने की चक्की विक्रमी संवत् 1940 में नाहन में स्थापित की। इसकी देखरेख मिस्टर जॉस साहिब के हवाले की गई। यह चक्की बहुत बड़ी थी तथा प्रतिदिन सौ दो सौ मन आटा पीसने की क्षमता थी। चक्की में घराट के मुकाबले आटा बहुत गर्म हो जाता था। कुछ समय पर यह चक्की बंद हो गई। इसका मुख्य कारण अनाज की कमी तथा नाहन के निवासियों की इसमें रुचि न होना रही।

नाहन में 1914 में खुला था विदेशी कपड़ों का स्टोर

सिरमौर रियासत में व्यापारिक गतिविधियों को विकसित करने और शहरवासियों को सुविधा के लिए, कंवर रणजोर सिंह के रुपयों से कपड़े का एक बड़ा स्टोर नाहन में वर्ष 1914 में स्थापित किया। इसके लिए कपड़ा विलायत से मंगवाने की योजना बनाई गई। यह योजना इसलिए बनाई गई थी क्योंकि नाहन में विलायती कपड़े की कोई अच्छी दुकान न थी जिससे शहरवासियों को अंग्रेजी कपड़ा रियासत से मिल सके। लेकिन दुकानदारों ने इस स्टोर में रुचि नहीं दिखाई इसलिए यह कार्य उस ढंग से नहीं चल सका जिस ढंग से राजा साहिब ने इसे चलाना चाहा। इस स्टोर से स्थानीय लोगों को विदेशी कपड़ा खरीदने में सुविधा जरूर हुई। यह तत्कालीन राजा की दूरदर्शिता को प्रदर्शित करता है। आज 21वीं सदी में गांवों, कस्बों व शहरों में स्टोर की स्थापना का प्रचलन है लेकिन 100 वर्ष से अधिक समय पूर्व सिरमौर की राजधानी में विदेशी कपड़े का स्टोर होना, अचंभित करता है। उस वक्त शहर से लेकर गांव तक एक ही दुकान में सभी सामान मिलने की व्यवस्था होती थी। गांवों में अधिकांश गांवों में अधिकांश कांगड़ा जनपद के सूदों की दुकानें होती थीं।

लिखा है कि 'गुरु साहिब ने कुछ समय नाहन में व्यतीत किया। उनके निवास स्थान पर नाहन में अब तक एक चबूतरा व एक झंडा गुरुद्वारे की निशानी के तौर पर मौजूद है। वहां कुछ समय से लोगों ने चन्दा देकर एक गुरुद्वारा बना लिया है।'

यहां चौगान के पूर्वी छोर पर राजसी तम्बूखाना है। इस तम्बूखाना में रियासतीकाल से धरातल मंजिल में शाही परिवार के हाथी रहते थे और उपरली मंजिल में बेशकीमती तम्बू रखे जाते थे। वह तम्बू राजसी उत्सव दशहरा, रामलीला आदि के अवसर पर चौगान में सजाए जाते थे। तम्बूखाना के साथ हिमाचल प्रदेश राज्य सहकारी बैंक है। यह बैंक रियासतीकाल में नाहन नेशनल बैंक के नाम से जाना जाता था। नाहन नेशनल बैंक की स्थापना राजा शमशेर प्रकाश ने सन् 1893 ई. को करवाई थी। सन् 1944 ई. को इस बैंक का नाम बैंक ऑफ सिरमौर रखा गया। 26 फरवरी, 1955 ई. को बैंक ऑफ सिरमौर का हिमाचल प्रदेश राज्य सहकारी बैंक के साथ विलय हो गया।

सिरमौर रियासत के इतिहास में राजा शमशेर प्रकाश (1856-98 ई.) का शासनकाल स्वर्णयुग माना जाता है। इनके कार्यकाल में सिरमौर रियासत विकास के चर्मोत्कर्ष पर थी। उनके कार्यकाल में रियासती राजधानी नाहन को कारगर ढंग से सुदृढ़ और समृद्ध किया गया। इस अवधि में विभिन्न विकासात्मक कार्यों के साथ नाहन में सन् 1872 ई. को एक सिविल डिस्पैन्सरी खोली गई। सन् 1896 ई. को महिला अस्पताल खोला गया। महारानी विक्टोरिया की डायमण्ड जुबली की याद के अवसर पर नाहन में सन् 1898 ई. को विक्टोरिया डायमण्ड जुबली अस्पताल की नींव रखी गई। सन् 1868 ई. को नाहन शहर को आधुनिक नगर निगम की सुविधाएं प्रदान करने के आशय से म्यूनिसिपल बोर्ड की स्थापना की गई। सन् 1887 ई. को इसका नाम म्यूनिसिपल कमेटी रखा गया।

नाहन के प्राचीन स्मारकों में शमशेर विला की अलग पहचान है। यह भवन राजा शमशेर प्रकाश ने अपनी पत्नी रानी कुटलानी की मृत्यु के बाद अपने रहने के लिए सन् 1880 ई. में बनवाया था। यह शासक राजसी महल को छोड़कर इस नवनिर्मित भवन में रहने लगे। राजा ने शहर में शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए सन् 1886 ई. को नाहन के मदरसा को स्तरोन्नत कर मिडल स्कूल का दर्जा दिया। इन्होंने अपने शासनकाल में ही इस स्कूल को हाई स्कूल कर दिया था। अब यह पाठशाला शमशेर राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला के नाम से सरकार द्वारा चलाई जा रही है। इस शासक ने सन् 1891 ई. को नाहन में एक उच्च न्यायालय खोला जिसे बैंच कोर्ट कहा जाता था। इसमें अपील की सुनवाई के लिए दो जज रखे गए। एक वरिष्ठ जज के पद पर सुरेन्द्र विक्रम सिंह और जज के पद पर तहसीलदार बाबू नारायण सिंह को रखा गया था। इनके शासनकाल में ही नाहन में डाकघर तथा तारघर खोले गए।

नाहन शहर की पुरातन स्मृतियों में बृजराज हाथी की कब्र भी खासा महत्त्व रखती है। यह स्थान हाथी कब्र के नाम से प्रसिद्ध है। शमशेर प्रकाश के अत्यन्त प्रिय हाथी 'बृजराज' की सन् 1885 ई. को मृत्यु हुई। इस हाथी को राजकीय सम्मान के साथ दफनाया गया। सन् 1907 ई. को राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश ने हाथी कब्र स्थान की साज सज्जा करवाई जिसे इसकी ख्याति और भी बढ़ती गई। हाथी कब्र से कुछ दूरी पर शान्ति संगम नामक स्थली पर राजा फतेह प्रकाश की कहलूरी रानी ने एक शिवालय और बावड़ी सन् 1836 ई. को बनवाई थी। तभी से यह स्थान 'जोड़ी बाई' के नाम से जाना जाता है।

नाहन में धर्मशाला

पंद्रह अगस्त 1960 को नाहन में जिला अस्पताल के समीप एक धर्मशाला का उद्घाटन, हिमाचल प्रदेश समाज कल्याण सलाहकार बोर्ड की अध्यक्षता रानी साहिबा भद्री द्वारा किया गया। नाहन में उदार व्यापारी श्री मोहर सिंह दास 40,000 रुपये की लागत से बनवाई गई यह धर्मशाला जिला स्वास्थ्य अधिकारियों को सौंपी गई।

नाहन शहर का आकर्षण यहां की तीन प्रसिद्ध सैरगाहें है। यह पदमार्ग विला राऊंड, मिलिट्री राऊंड तथा अस्पताल राऊंड के नाम से जाने जाते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य का पर्याय यह तीनों पैदल मार्ग नगरवासियों की दिनचर्या का हिस्सा है। ऐसी रमणीय सैरगाहों में दीर्घायु तथा स्वास्थ्यवर्धक जीवन पाने की लालसा से शहर के लोग इन्हें कदाचित भूल नहीं पाते हैं तभी तो नाहन शहर के सम्बन्ध में कहावत है कि- "नाहन शहर नगीना, आए दिन को रहे महीना" नाहन शहर में हर वर्ष बावन द्वादश का मेला अगस्त- सितम्बर में मनाया जाता है। यह मेला रियासतीकाल से धूमधाम के साथ मनाया जाता रहा है। इस मेले में नाहन के वैष्णव मन्दिरों से बावन भगवान की मूर्तियां पालने में लाकर जगन्नाथ मन्दिर में पूजा के लिए रख दी जाती थी। उसके बाद विशाल शोभायात्रा में बावन भगवान की पालकी और पालने ढोल-नगाड़ों के साथ शहर की परिक्रमा कर पक्का टैंक जाती थी। यहीं पर मेला का आयोजन होता था। यहां पूजा पूरी हो जाने पर सभी पालने और पालकी वापस मूल मन्दिर में रख दी जाती थी। नाहन, सिरमौर रियासत का इकलौता शहर था। सन् 1901 ई. को नाहन शहर की आबादी 6,256 थी जो सन् 2001 को बढ़कर 26,053 हो गई है। वर्ष 2011 में शहर की आबादी 40 हजार थी। सन् 1931 ई. में इस शहर की आबादी 7,808 थी। यह जनसंख्या सन् 2001 के जनगणना आंकड़ों के आधार पर नाहन तहसील की आबादी 71,976 है जबकि सन् 1881 ई. को 17,525 थी। पर्यटन की दृष्टि से नाहन अत्यन्त उपयुक्त स्थल है। यहां की जलवायु शीतोष्ण है। नाहन तक पहुंचने के लिए समीपवर्ती हवाई अड्डा चण्डीगढ़-90 किलोमीटर की दूरी पर है। यहां से रेलवे स्टेशन बराडा-55 किलोमीटर रेलवे स्टेशन अम्बाला-65 किलोमीटर दूर है। नाहन में भगवती बाला सुन्दरी का भव्य धाम त्रिलोकपुर-23 किलोमीटर, भगवान परशुराम की क्रीड़ा स्थली श्री रेणुका जी-37 किलोमीटर, भगवती भंगयाणी देवी मन्दिर हरिपुरधार-90 किलोमीटर, जीवाश्म पार्क सुकेती-22 किलोमीटर, पांवटा-47 किलोमीटर, देहरादून-90 किलोमीटर, हरिद्वार-150 किलोमीटर तथा शिमला-135 किलोमीटर दूर है।

मेडिकल कॉलेज नाहन

सिरमौर जिले में स्वास्थ्य के क्षेत्र में और अधिक सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए वर्ष 2016 में नाहन में हिमाचल के प्रथम मुख्यमंत्री एवं हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह परमार के नाम पर डॉ. यशवंत सिंह परमार राजकीय मेडिकल कॉलेज की स्थापना की गई। यहां प्रतिवर्ष 100 छात्रों को एम.बी.बी.एस. पाठ्यक्रम में प्रवेश प्राप्त होता है। क्षेत्रीय अस्पताल, नाहन से आरंभ हुई यात्रा ने आज एक ख्याति प्राप्त चिकित्सा संस्थान की शोहरत हासिल कर ली है। इसके खुलने से जिले के लोगों विशेषकर, नाहन, सराहां, पांवटा, शिलाई, इनके निवासियों को श्रेष्ठ चिकित्सा सुविधा का लाभ मिल रहा है।

भारतीय प्रबंधन संस्थान सिरमौर

भारतीय प्रबंधन संस्थान, सिरमौर की स्थापना वर्ष 2015 में की गई। यह उत्तर भारत का एक शीर्ष संस्थान उभर कर आया है। आरंभ में यह आई.आई.एम. लखनऊ के साथ संबद्ध रहा लेकिन वर्ष 2017 में आई.आई.एम. अधिनियम के तहत इसे स्वायत्त संस्थान का दर्जा प्राप्त हुआ।

यह प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक नगर पांवटा साहिब में स्थित है। वर्तमान में यहां का इतिहास गुरु गोविंद सिंह से पांवटा में आगमन तथा निवास से जुड़ा है।

इसका स्थायी परिसर 1010 बीघा क्षेत्र में नाहन के समीप धौलाकुआं में बनाया जा रहा है। इस स्थायी संस्थान के समीप से बरसाती नदी शंकुल बहती है। यह संस्थान आने वाले वर्षों में क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक उत्थान में एक मील पत्थर स्थापित होगा।

1936 में विद्युत रोशनी से जगमगाया नाहन

नाहन शहर में विद्युत व्यवस्था के लिए वर्ष 1936 में अमर इलैक्ट्रिक आपूर्ति कंपनी को लाइसेंस जारी किया गया। वर्ष 1946-47 में अमर इलैक्ट्रिक आपूर्ति कंपनी को यह कार्य नाहन फाउंडरी को हस्ताक्षरित कर दिया गया। उस वक्त पावर हाऊस में विद्युत आपूर्ति के लिए तीन इंजन लगाए गए थे तथा विद्युत उपभोक्ताओं की संख्या 230 के करीब थी। विद्युत की आपूर्ति शहर के साथ-साथ नाहन फाउंडरी को भी की जाती थी। पावर हाऊस का निर्माण नाहन फाउंडरी के परिसर में किया गया था। लोक निर्माण विभाग को विद्युत आपूर्ति का कार्य सौंपा गया। इस दौरान शहर के अधिकांश घर प्रकाश व्यवस्था से रोशन हुए तथा प्रमुख मार्गों, बाजारों तथा प्रमुख स्थलों पर भी प्रकाश व्यवस्था की गई। शहर में नियमित विद्युत आपूर्ति के लिए प्रभावी प्रयास किए गए।

आजादी के उपरांत जिले में विद्युत आपूर्ति भाखड़ा नंगल पावर हाउस के माध्यम से होने लगी। आज जिले का हर गांव, हर घर प्रकाश व्यवस्था से जगमगा रहा है। रेणुका झील के समीप गिरी बाता जल विद्युत परियोजना का निर्माण होने से जिले में आरंभिक दौर में विद्युत आपूर्ति जहां सुचारू है, वहीं उद्योगों के लिए विद्युत की आपूर्ति में इजाफा हुआ है।

आलेख

उत्तर भारत की शान : नाहन फाउंडरी

हिमाचल प्रदेश में रियासत काल में 19वीं सदी में दो उद्योगों से इस पहाड़ी क्षेत्र को देशभर में पहचान व ख्याति मिली थी। एक थी वर्ष 1855 में सोलन के समीप सोलन ब्रूरी तथा दूसरी थी नाहन शहर में स्थापित नाहन फाउंडरी। यह उस वक्त हरियाणा के बरादा से 60 किलोमीटर दूर स्थित नाहन शहर में लगाई गई थी। यह इकाई उस वक्त तथा हिमाचल के गठन के उपरांत भी उत्तर भारत की सबसे बड़े तथा अग्रगामी उद्योगों में से एक मानी जाती थी। इस उद्योग को स्थापित करने का श्रेय राजा शमशेर प्रकाश को जाता है।

वर्ष 1861 में राजा शमशेर प्रकाश ने उत्तर प्रदेश के रुड़की के दौरे के दौरान वहां अंग्रेजों द्वारा स्थापित फाउंडरी को देखा तथा वे इस उद्यम से बहुत ही प्रभावित हुए और ऐसे ही उद्यम को अपने राज्य में स्थापित करने की प्रेरणा मिली।

भारत में फाउंडरी का उल्लेख प्राचीन काल से मिलता है। मोहनजोदाड़ो तथा हड़प्पा की सभ्यता में भी इसके प्रमाण मिलते हैं। युनानी तथा रोमन सभ्यता में भी इसके प्रमाण प्राप्त होते हैं। उस वक्त इसके माध्यम से लौह खनिज को पिघलाकर सिक्के, तीर तथा घरों में उपयोग होने वाले सामान को बनाया जाता था।

नाहन में फाउंडरी स्थापित करने का उल्लेख वर्ष 1901 में बाल गोविंद द्वारा लिखित पुस्तक 'The Life of Raja Sir Shamsher Prakash' में मिलता है। राजा शमशेर प्रकाश ने रुड़की से नाहन लौटकर, एक लोहार को रुड़की में प्रशिक्षण के लिए भेजा। उसके रुड़की में दो वर्ष का प्रशिक्षण लेने के उपरांत नाहन में वर्ष 1864 में एक लघु लोहर फाउंडरी की स्थापना की गई। आरंभ में चार अश्वशक्ति का इंजन, एक छोटा वायलर, तथा दो छोटे खराद की खरीद की गई तथा एक भट्ठी का निर्माण कर दैनिक उपयोग के सामान का निर्माण आरंभ किया गया। कुछ वक्त तक यह कार्य प्रशिक्षित लोहार की देखरेख में चला। तदोपरांत इस उद्यम के सुचारू रूप से संचालन के लिए यूरोपियन माहिरों को तैनात किया गया। इसी दौरान नाहन फाउंडरी में रेलिंग तथा लोहे के प्रवेश द्वारों का निर्माण करने के लिए 10 से 12 अश्व शक्ति के इंजन की स्थापना की गई। इसी वक्त राजा को गिरी पार क्षेत्र में लोहे के अयस्क की खोज की जानकारी मिली। लोहे की इन खानों का सर्वेक्षण करवाकर यह पाया गया कि पच्छाद क्षेत्र के गांव चैता से नाहन फाउंडरी के लिए लौह अयस्क लाया जा सकता है। चैता में खनन कार्य के लिए नाहन जेल को चैता स्थानांतरित किया गया ताकि खनन कार्य में कैदियों को लगाया जा सके। चैता गांव से नाहन तक अयस्क को ढोने के लिए खच्चरों का इंतजाम किया। चैता से नाहन खच्चरें अयस्क लेकर पहुंचती थीं। नाहन फाउंडरी में 70 अश्व शक्ति का इंजन तथा एक बड़ी भट्ठी का निर्माण किया गया। लेकिन चैता से प्राप्त लौह अयस्क को पिघलाने पर ज्ञात हुआ कि यह लोहा ब्रिटेन से आयातित लौह अयस्क से महंगा पड़ रहा है। इससे निर्माण लागत भी बढ़ी है। इसके बाद इस परियोजना को रियासत को हुए घाटे के कारण बंद कर दिया गया। राजा ने इस उद्यम को बाहर से अयस्क आयात कर जारी रखा। फाउंडरी में होने वाले उत्पादन से रियासत को बहुत अधिक राजस्व प्राप्त हुआ। इस उद्यम पर भारी व्यय तथा सलाहकारों के विरोध के बावजूद राजा ने यहां उत्पादन जारी रखा। वर्ष 1876 में कमांडर-इन-चीफ की संस्तुति पर नाहन फाउंडरी से गन्ना पिलाई मशीन का उत्पादन आरंभ किया। यह उत्पादन गन्ना उत्पादकों में लोकप्रिय हुआ। तत्कालीन पंजाब तथा यूनाइटेड प्रांत (वर्तमान उत्तर प्रदेश का हिस्सा) रियासत ने बिक्री एजेंटों की नियुक्ति की। गन्ना उत्पादकों को किराया या खरीद पर गन्ना पिलाई मशीनें उपलब्ध करवाने से उद्यम को लाभ पहुंचा।

बीसवीं शताब्दी के आने से कुछ वर्ष पूर्व फैक्टरी का विस्तार किया गया। फाउंडरी की क्षमता को प्रति सप्ताह बढ़ाकर 75 टन किया गया। नाहन फाउंडरी के लिए ढलवां लोहा तथा कोयला बंगाल के बुराकर से आयात किया गया। नाहन से 21 किलोमीटर दूर स्थित डेरा से ऊंटों पर रेत लाने की व्यवस्था की गई। उद्यम में मानक, पैमाना तथा सांचा इत्यादि की सुचारू व्यवस्था की गई ताकि गन्ना पिलाई मौसम में पुर्जों के टूटने पर उनकी आपूर्ति जल्द की जा सके। लोहारखाना में 22 भट्ठियां तथा छोटे फरनेंस की स्थापना की गई थी। विद्युत से चलने वाले हथोड़े भी स्थापित किए गए थे। उद्यम में दो वायलर लगाए गए थे। इस इकाई में 600 व्यक्तियों को रोजगार मिला था। 20वीं शताब्दी के आरंभ में इस उद्यम को मैदानों में लगे उद्यमों से सामना करना पड़ा। इसके लिए

बैंटनी कैसल शिमला



शिमला की ऐतिहासिक धरोहर बैंटनी कैसल को वर्ष 1880 में सिरमौर के राजा शमशेर प्रकाश ने ग्रीष्मकालीन महल बनाने के लिए खरीदा था। इस भवन का निर्माण कैप्टन ए. गार्डन ने किया था। यह भवन वर्ष 1946 तक सिरमौर रियासत की संपत्ति रहा तथा इसी वर्ष दरभंगा के राजा ने खरीदा और वर्ष 1968 में इस भवन को रामकृष्ण एंड संज ने खरीदा। वर्ष 2017 में प्रदेश सकरार ने 18,193 वर्गमीटर में फैले इस ऐतिहासिक भवन का अधिग्रहण 27.84 करोड़ रुपये की लागत से किया है। इसका अधिग्रहण राज्य में कला, संस्कृति के संरक्षण के साथ-साथ हैरिटेज संपत्तियों के संरक्षण को सुनिश्चित बनाने के लिए किया गया है।

इस भवन ने आजादी से पूर्व तथा आजादी के उपरांत इतिहास को बनते देखा है। इसमें राज्य पुलिस मुख्यालय, रोजगार कार्यालय रहे, जिन्हें वर्ष 2009 में स्थानांतरित कर दिया गया। इस भवन की चारदीवारी पर लगी रेलिंग नाहन फाउंडरी की बनी है तथा इसके मध्य में रियासत की प्रतीक 'सील' को लगाया गया है।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान इस भवन को सिरमौर के राजा अमर प्रकाश ने अंग्रेज सरकार को सैन्य कार्यों के संचालन के लिए दिया था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भी इसे युद्धबंदी कैदियों के कार्यों के लिए ऑल इंडिया रेडियो को दिया गया था। इस भवन में 25 सितंबर 1947 से 12 मई 1948 तक लाहौर से आए ट्रिब्यून समाचार पत्र का कार्यालय खोला गया।

उद्यम में कुछ नई मशीनरी की स्थापना की गई। ब्रिटिश भारत में स्थित मरम्मत इकाइयों को स्तरोन्नत किया गया। वर्ष 1934 में नाहन फाउंडरी में कर्मचारियों की संख्या 900 के करीब थी।

वर्ष 1945-46 में नाहन शहर में विद्युत की आपूर्ति के लिए अमर इलैक्ट्रिक आपूर्ति कंपनी को नाहन फाउंडरी में स्थानांतरित किया गया। फाउंडरी परिसर में पावर हाउस व नई विद्युत उत्पादन इकाई की स्थापना की गई। वर्ष 1946-47 में घास काटने की मशीन (टोका), बाल्टियां, हथौड़ों, ट्रकों का निर्माण किया गया। इसी वर्ष नाहन शहर में टेलिफोन एक्सचेंज की स्थापना भी की गई। दिसंबर 1946 में नाहन फाउंडरी को परिवहन सेवा का जिम्मा भी दिया गया। परिवहन सेवा को रेणुका, सराहां तथा पांवटा साहिब के लिए नाहन से आरंभ किया गया। 15 फरवरी 1947 में पांवटा साहिब से देहरादून जिला के चुहारपुर के लिए परिवहन सेवा का विस्तार किया गया।

15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल के गठन तथा सिरमौर रियासत का हिमाचल में विलय के साथ फाउंडरी का स्वामित्व महाराजा तथा भारत सरकार के मध्य 50:50 अनुपात पर किया गया। फाउंडरी की कार्यप्रणाली व संचालन में महाराजा तथा हिमाचल के मुख्य आयुक्त की अध्यक्षता में निदेशक मंडल का गठन किया गया। इसमें सिरमौर रियासत के कुछ अधिकारियों को फैक्टरी के कार्य के संचालन का दायित्व सौंपा गया। 27 मार्च, 1952 में सरकार ने महाराजा के इस फैक्टरी के शेयरों को खरीद कर इसका पूर्ण स्वामित्व अपने अधीन कर लिया। अक्तूबर, 1952 में कंपनी अधिनियम के तहत प्राइवेट लिमिटेड कंपनी बनाई गई जिसने कंपनी का प्रबंधन एक जनवरी, 1953 से अपने अधीन लिया।

नाहन फाउंडरी, नाहन तथा आसपास के असंख्य श्रमिकों के लिए वरदान सिद्ध हुई। फैक्टरी रेल मार्ग से दूर होने के कारण यहां तक कच्चा माल तथा उत्पादित माल को ढुलाई कर ही ले जाना पड़ता था। इससे निर्माण लागत में बढ़ोतरी हुई जबकि रेलमार्ग पर स्थित फाऊंडरियों की बचत होती गई। कोयला, अयस्क, स्टील की आपूर्ति बंगाल तथा रेत की आपूर्ति हरियाणा के रसूलपुर तथा पांवटा से होती थी। कंपनी ने कार्य क्षमता को प्रति वर्ष 1800 टन से बढ़ाकर 6000 टन करने का निर्णय लिया। इसके लिए कंपनी



का आधुनिकीकरण किया गया।

इससे फैक्टरी में ढलवां लोहे से अनेक नए उत्पादों को बनाने में सफलता मिली। 1955-56 के दौरान उद्यम को रेलवे तथा डाक व तार विभाग से भी ऑर्डर प्राप्त हुए। इससे फैक्टरी की क्षमता में इजाफा हुआ। गन्ना पिलाई इकाइयों की मांग उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश के मैदानी इलाकों में बढ़ी। कंपनी ने इन क्षेत्रों में स्वयं व कमीशन आधार पर मरम्मत कार्यों को खोला। गन्ना पिलाई मशीनों से फैक्टरी को वर्ष 1952-53 में 7,69,475; 1954-55 में 13,42,900; 1955-56 में 18,15,155; 1956-57 में 20,77,622; 1957-58 में 21,42,704; 1958-59 में 20,78,145; 1959-60 में 30,43,961; 1960-61 में 30,79,090 व 1961-62 में 33,07,088; 1962-63 में 23,25,943, 1963-64 में 27,08,553; 1964-65 में 36,33,489; 1965-566 में 44,14,645; 1966-67 में 45,43,220 तथा 1967-68 में 45,63,785 रुपये का लाभ हुआ।

24 सितंबर, 1964 को नाहन फाउंडरी लिमिटेड का प्रशासनिक नियंत्रण भारत सरकार के उद्योग एवं आपूर्ति मंत्रालय से स्थानांतरित होकर हिमाचल प्रदेश सरकार के पास आ गया। मुख्यमंत्री को निदेशक मंडल का अध्यक्ष व 12 अन्य सदस्य नियुक्त किए गए।

फाउंडरी में अपनी आवश्यकताओं के लिए एक प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना भी की गई थी। ये भुगतान पर निजी कार्य भी करती थी। फैक्टरी में श्रमिकों तथा कर्मचारियों के लिए प्रौढ़ शिक्षा, निःशुल्क स्वास्थ्य जांच, कैंटीन, खेलों के लिए क्लब की व्यवस्था भी थी। वर्ष 1961 में नाहन फाउंडरी द्वारा उत्कृष्ट कार्यों के लिए 26 जनवरी 1962 को गणतंत्र दिवस पर 'सम्मान प्रमाण पत्र' राष्ट्रपति श्री राजेंद्र प्रसाद द्वारा प्रदान किया गया।

नाहन का बिरोजा तथा तारपीन कारखाना

कुमाहरहट्टी-नाहन मार्ग पर नाहन शहर के आरंभ होने पर बरबस ही सभी का ध्यान चीड़ के जंगल के मध्य स्थित एक कारखाने की पुरानी हो गई छतों तथा आहतें में पड़े लोहे के कनस्तरों की ओर चला जाता है। एक वक्त यह नाहन रियासत की शान थी। नाहन फाउंडरी के उपरांत लगने वाला दूसरा सबसे बड़ा उद्यम था। नाहन रियासत में चीड़ के जंगलों की भरमार तथा चीड़ के पेड़ों से निकलने वाले प्राकृतिक बिरोजे पर आधारित इस उद्योग की स्थापना का विचार सिरमौर के अंतिम शासक राजेंद्र प्रकाश को पचास के दशक में आया तथा वर्ष 1945 में 2.50 लाख रुपये की लागत से इस उद्यम की स्थापना की गई। इसके लिए एक प्रबंधन एजेंसी बनाई गई। लेकिन इस उद्यम से उत्पादन चार वर्ष उपरांत 3 जनवरी, 1949 को आरंभ हुआ। वर्ष 1957 तक प्रबंधन एजेंसी कार्य करती रही। इसी वर्ष हिमाचल सरकार ने इसे अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया। पहले इसे उद्योग विभाग के तहत चलाया गया। बाद में इसका कार्य वन विभाग को सौंप दिया गया।

वर्ष 1961 में 29 दिसंबर को भीषण अग्निकांड में इस उद्योग को भारी क्षति उठानी पड़ी। 1959 से 1967 के मध्य उद्यम ने प्रतिवर्ष लगभग 15 लाख से लेकर 50 लाख रुपये के उत्पादों का निर्माण किया। उद्यम मुनाफे में रहा।

संचार

रेल का सपना जो रहा अधूरा

राजा शमशेर प्रकाश जिनका कार्यकाल वर्ष 1856 से 1898 के मध्य रहा, ने रियासत में जनता की भलाई तथा आर्थिक उत्थान के अनेक मील पत्थर स्थापित किए जो रियासत की उन्नति का एक ठोस आधार बना।

1867 में नाहन में 'नाहन फाउंडरी' नाम से लोहे का कारखाना खोला और इसमें कई प्रकार का लोहे का सामान तैयार किया जाने लगा। लोहे की पूर्ति के लिए गिरीपार के क्षेत्र में लोहा खदान की योजना बनाई। 1868 में नाहन म्यूनिसिपल बोर्ड बनाया।

प्रत्येक तहसील में डाकघर खोले। तारघर खुलवाया। 1872 में डिस्पेंसरी खोली, 1898 में एक सिविल अस्पताल के रूप में स्तरोन्नत करवाया। स्कूलों में अंग्रेजी भाषा आरंभ की। बैंक की स्थापना की। दीवानी तथा फौजदारी न्यायालयों की स्थापना की। 1891 में हाई कोर्ट की स्थापना की। शमशेर प्रकाश ने 42 वर्ष तक शासन किया। उनका संपूर्ण कार्यकाल दूरदर्शिता तथा एक सफल प्रशासक का रहा।

तारीखे रियासत सिरमौर पुस्तक जो रणजोर सिंह ने लिखी, के पृष्ठ 346-47 में लिखा है कि राजा शमशेर प्रकाश ने नाहन तक रेलवे लाईन के विस्तार की योजना बनाई थी। ऐसा उल्लेख मिलता है कि नाहन तथा रियासत के समीपवर्ती 'रेलवे स्टेशन बरारा' के साथ राजा ने बैलगाड़ी ट्रेन सेवा आरंभ की थी। नाहन तथा बराड़ा के मध्य बैलगाड़ियां चलती थीं। लेकिन यह प्रयास असफल रहा और रणजोर सिंह के मुताबिक इस कार्य को कार्यान्वित करने वाले कर्मियों की नाकामी से यह असफल हुआ। इस बैलगाड़ी का ट्रेन के विचार से ही राजा शमशेर सिंह को रेल लाइन स्थापना का विचार आया। राजा शमशेर प्रकाश ने नाहन तक रेल लाइन स्थापित करने के लिए रेलवे ठेकेदार तथा इंजीनियर मिस्टर प्रेस्टीज़ को बुलाया जिन्होंने राजा की इस योजना को स्वीकृति प्रदान की। राजा ने इस पर अपनी सहमति व्यक्त की, रेल लाइन की स्थापना के लिए भूमि, बजरी तथा रेल स्लीपर की आपूर्ति करने का आश्वासन दिया। प्रेस्टीज़ ने देहरादून-शिमला रेल लाइन वाया नाहन बनाने का प्रस्ताव दिया। इसके लिए कंपनी बनाकर, राजा के पास एक तिहाई हिस्सा रखने को कहा।

यह दुर्भाग्य ही था कि उस वक्त अंग्रेज इंजीनियर बूढ़ा हो गया था तथा यह योजना कागजों में ही रह गई और उसका देहांत हो गया। तदोपरांत राजा ने इस योजना को छोटा बनाकर नाहन को बराड़ा से रेल मार्ग से जोड़ने की परियोजना को अंतिम रूप दिया। इस कार्य के लिए एक अन्य रेलवे इंजीनियर मिस्टर विलियम जो राज्य लोक निर्माण विभाग के मुखिया थे, की सेवाएं लीं। तदोपरांत राजा का स्वास्थ्य बिगड़ गया तथा यह रेल परियोजना सिरे नहीं चढ़ पाई।

वर्तमान में सिरमौर में कोई भी रेल लाईन नहीं है। नाहन से 55 किलोमीटर की दूरी पर हरियाणा में बराड़ा सबसे नजदीक रेलवे स्टेशन पड़ता है। यह वो वक्त था जब अंग्रेजों द्वारा शिमला के लिए कालका से रेलमार्ग का निर्माण किया जा रहा था। गौरतलब है कि शिमला पहली बार रेल 9 नवंबर, 1903 को पहुंची थी।

रेल लाईन का सपना

रियासत द्वारा लोहे की खुदाई की असफलता से राजा के जहन में रेल लाइन बनाने का विचार सदा कौंधता रहता था। इसके लिए अंग्रेज प्रेस्टीज जिसका सहयोग राज्य के तहसीलदार भज्जू सिंह के सुपुत्र सुखचरण सिंह के साथ रेल लाईन का सर्वेक्षण किया था। इस रेल लाइन को अंबाला, देहरादून, दून, नाहन होते हुए, शिमला रेल लाईन से जोड़ना था। इस प्रस्ताव को सरकार को स्वीकृति हेतु भेजा गया, लेकिन योजना सिरे नहीं चढ़ी। इस पर उन्होंने महात्मा बुद्ध की शिक्षा का उदाहरण दिया, लोग तो उसे भी कोसते हैं जो ज्यादा बोलता है, जो कम बोलता है और जो चुप रहता है। इस धरा पर कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसको कोसा न जाए। भूत, वर्तमान व भविष्य में ऐसा कोई भी व्यक्ति न हुआ है न होगा जिसे सदैव बुराई या सदैव प्रशंसा मिलेगी।"

90 वर्ष पुराना महिमा पुस्तकालय

प्रेम का सच्चा उपहार

◆ कांति सूद

ऐतिहासिक नाहन शहर में जिला महिमा पुस्तकालय हर आगंतुक का ध्यान अपनी ओर बरबस ही खींच लेता है। इसका स्वच्छ, सुंदर प्रांगण व शांत वातावरण उस शख्सीयत की याद तरोताजा करवा देता है जिसने इस मंदिर की स्थापना की। सिरमौर रियासत के महाराजा अमर प्रकाश व महारानी मंदालता कुमारी का विवाह वर्ष 1910 में हुआ तथा उनके एक पुत्र तथा दो पुत्रियां हुईं। महारानी उच्च शिक्षा प्राप्त जो नेपाल के महाराजा देव शमशेर जंग बहादुर की सुपुत्री थी, विवेक, प्रखर बुद्धि, भद्रता तथा परोपकारिता की मूर्ति कहलाई जाती थी। वर्ष 1929 में उनकी एक सुपुत्री महिमा कुमारी देवी का निधन हो गया। महारानी को पुस्तकों से खासा प्रेम था। उसने वर्ष 1930 में अपनी पुत्री की स्मृति में महिमा पुस्तकालय का निर्माण करवाया। इस पुस्तकालय की दीवार पर महिमा कुमारी देवी का भारतीय परिधान में सुंदर चित्र टंगा है। यहां आने वाले अधिकांश पाठकों को तो इसका भान नहीं है लेकिन नाहन की पुरानी पीढ़ी को इस बालिका तथा नाहन शहर को रानी द्वारा पुस्तकालय के रूप में दिए गए उपहार का स्मरण है। इस पुस्तकालय ने युवाओं को आगे बढ़ने तथा प्रदेश व देश का नाम रोशन करने का मौका दिया है। रियासत काल में इस पुस्तकालय का संचालन राजा के अधीन होता था। इस पुस्तकालय में महाभारत, वैदिक टीकाएं, प्राचीन दुर्लभ ग्रंथों का भंडार मौजूद है। आजादी से पूर्व की इस पुस्तकालय में अंग्रेजी भाषा की 4200, हिंदी भाषा की 4800, संस्कृत की 800 तथा 500 के करीब विविध पुस्तकें तथा 15 पांडुलिपियां सुरक्षित हैं। इस पुस्तकालय में पुस्तकें सौ वर्ष से भी पुरानी हैं तथा यहां 1595 की एकादश स्कंध भागवत भी उपलब्ध है।



वर्ष 1948 में यह पुस्तकालय हिमाचल प्रदेश सरकार के अधीन आया तथा वर्ष 1958 में पुस्तकालय का संचालन शिक्षा विभाग को सौंपा गया। इस पुस्तकालय को हिमाचल का पहला सार्वजनिक पुस्तकालय होने का गौरव प्राप्त है जो 120 वर्षों से ज्ञान का प्रकाश फैला रहा है।

वर्तमान में इस पुस्तकालय में चार हजार सदस्य पंजीकृत हैं। पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या 90 हजार के करीब है। 9 समाचार पत्र, 30 मासिक पत्रिकाएं पाठकों के लिए उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त ई-बुक्स, सी.डी. रोम, वीडियो एवं ऑडियो रिकार्डिंग भी उपलब्ध है। बच्चों से संबंधित सात हजार पुस्तकें उपलब्ध हैं।

इस पुस्तकालय में अति दुर्लभ एवं प्राचीन 105 पांडुलिपियों में विष्णु महापुराण, स्कंद महापुराण, भागवत कालिका पुराण, वामन पुराण, श्री शिवमहापुराण, महाभारत, भृगु संहिता फल कुंडली है।

इस पुस्तकालय का संचालन के लिए पुस्तक प्राप्ति विभाग, पत्रिका विभाग, संदर्भ विभाग, बाल विभाग, तकनीकी विभाग, वरिष्ठ नागरिक खंड, वाचनालय बनाए गए हैं। इस पुस्तकालय के महिमा दूर-दूर तक फैली हुई है। यहां हर वर्ष शोधकर्ता इतिहासकार तथा प्राचीन ग्रंथों में रुचि रखने वाले तो आते हैं, वहीं यहां के शांत वातावरण में प्रतिदिन हर आयु वर्ग के 150 से 200 सदस्य अध्ययनरत रहते हैं। इस पुस्तकालय की खामोशी, महिमा की माता महारानी मंदालता कुमारी देवी के पुस्तकालय की स्थापना के उस विचार को नमन करता है जब पहाड़ों में ज्ञान का प्रकाश दूर-दूर तक फैला नहीं था। उसने पुस्तकों के रूप में नाहन शहर में इसका खजाना संजोया जो आज भी ज्ञान का प्रकाश स्तंभ बना है।

मुख्य लाइब्रेरियन महिमा पुस्तकालय नाहन जिला सिरमौर,
हिमाचल प्रदेश-173 001

गुरु गोविंद सिंह का पावन स्थल



◆ चंद्रशेखर वर्मा

हिमाचल प्रदेश के जिला सिरमौर का वैभव, नाहन से लगभग 28 मील की दूरी पर शिवालिक पर्वत श्रेणी के आंचल में बसा व सिखों के दसवें गुरु गोविंद सिंह जी की चरण धूलि से पवित्र हुआ स्थान पांवटा, ऐतिहासिकता को संजोए हुए है। यह स्थल आज न केवल धार्मिक तथा ऐतिहासिक रूप से प्रसिद्ध है वरन औद्योगिक पृष्ठभूमि को भी धारण किए हुए है।

पांवटा शब्द अपने पीछे एक रहस्यमय एवं ऐतिहासिक घटना लिए है। पांवटा जो मूल रूप से 'पांब टिका' है, का ही अपभ्रंश है। 17 वैशाख संवत् 1742 विक्रमी में, जब सिरमौर का शासन प्रबंध राजा मेदनी प्रकाश के काल में शिथिलता को प्राप्त हो रहा था और श्रीनगर (गढ़वाल वर्तमान उत्तराखंड) के शासक फतेहशाह ने गुरु राम राय के बल पर सिरमौर के यमुना पार प्रदेश पर अधिपत्य कर लिया था तो मंत्री 'शोभा' के परामर्श पर राजा मेदनी प्रकाश 'कालसी' में निवास कर रहे राजर्षि श्री काल्पी जी महामुनी की शरण में पहुंचे और उन्हें अपनी गाथा सुनाई। उन्होंने आनंदपुर (कहलूर वर्तमान बिलासपुर) में रह रहे गुरु गोविंद सिंह की सहायता प्राप्त करने का परामर्श दिया।

तदोपरांत सिरमौर के राजा ने गुरु गोविंद सिंह को सहायता का संदेश भेजा। गुरु ने विचार विमर्श कर सिरमौर की सहायता के लिए प्रस्थान किया। नाहन से 10-11 मील दूर राज्य सीमा पर स्थित गांव 'टोका' में पड़ाव डाला। सिरमौर के राजा राज सम्मान सहित गुरु जी को नाहन ले कर आए। नाहन में गुरुद्वारे वाले स्थान पर 'थां' पर डेरा डाला, उसी समय का निर्मित एक पक्का चबूतरा एवं कुआं गुरुद्वारे के निर्माण के समय प्रकट हुआ जो आज भी विद्यमान है। यहां आगमन पर गुरु रामराय को संदेश मिला और उन्होंने फतेहशाह को सिरमौर के राजा के साथ सुलह का संदेश भिजवाया। वह अपने गुरु की आज्ञा पालनार्थ और गुरु गोविंद सिंह की कृपा से बिना खून का कतरा बहाए दोनों शासकों में आपसी समझौता हो गया। यमुना नदी दोनों राज्यों की सीमा निर्धारित हुई। गुरु गोविंद सिंह तथा कहलूर के राजा भीम चंद के मध्य अच्छे संबंध न थे। दोनों के मध्य मनमुटाव का कारण वह सफेद हाथी था, जो गुरु गोविंद सिंह को बंगाल के राजा मान सिंह ने भेंट किया था। कहलूर का राजा उसे लेना चाहता था जिसे देने से गुरु जी ने इनकार कर दिया था। गुरु गोविंद आनंदपुर जो कहलूर रियासत में था, छोड़कर नाहन रियासत के मीरपुर में आ गए थे। यहीं से वे नाहन गए तथा गढ़वाल तथा सिरमौर के मध्य संधि हुई। नाहन से वे पांवटा आ गए। इस रमणीय, प्रकृतिश्री से सुशोभित कलिंदी की हिलारों से गुंजित, चित्रांकित हरीतिमा से उद्वेलित एवं सघन वन से अल्हादित स्थान के लिए गुरु जी के विचार हृदय से सहज रूप से फूट पड़े। (शेष पृष्ठ 172 पर)

पांवटा की गढ़ी में गुरु गोविंद सिंह सिख शिष्यों को ज्ञान बांटते थे, वहीं पठान और मुस्लिम भी उनके शिष्य थे। इतिहास में उल्लेखित है कि उनके एक शिष्य सैय बुद्धशाह के दो पुत्रों और एक भाई ने गुरु जी की आन की खातिर भंगाणी युद्ध में अपने प्राणों की आहुति दी थी।

युद्ध के उपरांत पीर बुद्धशाह गुरु जी से विदा मांगने आया, उस समय गुरु जी कंधे से अपने केश संवार रहे थे। बुद्धशाह ने महान विजय स्मृति स्वरूप और गुरु जी के निशानी के तौर पर कंधे में कुछ बाल मांगे। गुरु जी ने इस महान श्रद्धालु को कंघे और उसमें फंसे हुए बाल तथा एक छोटी कृपाण दी और कहा कि, 'पीर जी, जो भी भक्त मेरे दर्शनों के लिए यहां पधारेगा और जब तक वह तुम्हारे दर्शन नहीं करेगा तो उसकी यात्रा सफल नहीं होगी। विदित हो कि आज भी पीर साहिब की समाधि एक ऊंची चोटी पर गुरुद्वारे के ठीक सामने स्थित है जहां हिंदू, मुस्लिम, सिख सभी शीश नवाते हैं।'

गुरु जी की स्मृति में पांवटा साहब के समीप कई ऐतिहासिक गुरुद्वारे हैं। भंगाणी में 'कृपाल शिला' गुरुद्वारा है जो कि गुरु जी की बुआ के लड़के ने उनकी स्मृति में बनवाया था। एक अन्य गुरुद्वारा है तीरगढ़ी साहिब जहां गुरुजी ने शेर का तीर से शिकार किया था।

साभार : दैनिक ट्रिब्यून, 31 मार्च, 1994, गुरु के पांव पड़े तो पांवटा साहिब बन गया, रणवीर सिंह सेठी

भंगाणी युद्ध की विजय का प्रतीक होला मोहल्ला पांवटा

गुरु गोविंद सिंह द्वारा भंगाणी युद्ध में विजय हासिल करने की खुशी में पांवटा साहिब में हर वर्ष फाल्गुन पूर्णिमा को 'होला मोहल्ला' मेला आयोजित होता है। गुरु जी राग-रंग के जगह शस्त्र के उपासक थे। इसीलिए यहां रंग नहीं खेला जाता। होली से एक दिन पूर्व गुरु ग्रंथ साहिब की भव्य शोभा यात्रा निकाली जाती है। जिसमें अस्त्र-शस्त्र चलाने (गतकाबाजी) का प्रदर्शन मुख्य आकर्षण होता है।

रातभर विराट कवि दरबार चलता है। इसमें देश, प्रदेश के चोटी के कवि भाग लेते हैं। गौरतलब है कि गुरुजी स्वयं एक महान कवि थे। जाय साहब, सवैया अकाल स्तुति, चंडा दीववर आदि रचनाओं का सृजन गुरुजी ने इस पावन धरा पर किया था। होली के दिन यहां नया निशान साहब चढ़ाया जाता है। इस मेले में राज्य के अलावा पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड के हजारों श्रद्धालु इस पावन दिन पांवटा में जुटते हैं।

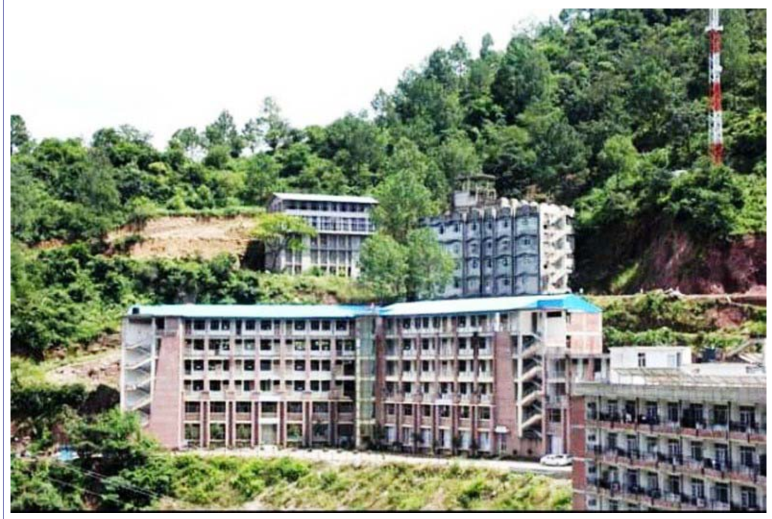
गुरु गोविंद सिंह और भंगाणी का युद्ध

यमुना नदी के तट पर बसा भंगाणी गुरु गोविंद सिंह तथा कहलूर के राजा भीम चंद के मध्य हुआ 11 दिन के युद्ध की विभीषिका का स्मरण करवाता है।

इस युद्ध की पृष्ठभूमि पर नज़र दौड़ाएं तो गुरु गोविंद सिंह पांवटा में प्रवास पर थे। उस वक्त कहलूर के राजा भीमचंद के पुत्र का विवाह, गढ़वाल के राजा फतेह शाह की बेटी के साथ तय हुआ। ज्ञात रहे कि गुरु गोविंद सिंह तथा कहलूर के राजा के संबंध अच्छे न थे। उन्हें आनंदपुर छोड़कर नाहन आना पड़ा था। इस पुनीत अवसर पर गुरु ने गढ़वाल के राजा को भेंट भिजवाई। इसकी सूचना जब कहलूर के राजा भीम चंद को मिली तो उसने गढ़वाल के राजा को इस भेंट को गुरु को लौटाने का दबाव डाला अन्यथा विवाह रद्द करने की धमकी दी। उसने राजा फतेह सिंह को गुरु के साथ दोस्ती तोड़ने बारे पत्र द्वारा सूचित किया। राजा फतेह सिंह ने गुरु को उन द्वारा भेजी भेंट को लौटा दिया। इस पर गुरु गोविंद सिंह बहुत आहत हुए तथा जब कहलूर का राजा अपने सुपुत्र की शादी के उपरांत वापिस लौट रहा था तो गुरु तथा कहलूर के मध्य भंगाणी में युद्ध हुआ। कहलूर के राजा के साथ जसवां के राजा कृपाल चंद कटोच, राजा केसरी चंद, हिंडूर के राजा सुखदेव चंद जसरोटा तथा राजा हरिचंद ने दिया। इस युद्ध में गुरु गोविंद सिंह की जीत हुई तथा राजा हरिचंद, राजा केहरी चंद तथा राजा सुखदेव चंद वीरगति को प्राप्त हुए। भंगाणी में आज भी युद्ध में वीरगति प्राप्त सतियों का स्थान है। यहां पत्थर पर इबारत लिखी मिलती है कि साथ एक रानी थी जो 1684 में इस स्थान पर सती हुई।

गुरु गोविंद सिंह ने भंगयाणी में निशान सहित स्थापित किया जहां आज एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा स्थित है। गुरु गोविंद सिंह के सिरमौर रियासत में रहने के कारण दिल्ली में मुगल सल्तनत सिरमौर नरेश राजा मेदनी प्रकाश से नाराज हो गई। गुरु गोविंद सिंह के सिरमौर से आनंदपुर जाने के उपरांत, सिरमौर तथा दिल्ली के संबंध प्रगाढ़ हो गए। राजा मेदनी प्रकाश का निधन 1694 में हुआ।

आलेख



बड़ू साहिब

गुरु गोविंद सिंह की साधना स्थली

◆ वी. के. शर्मा

हिमाचल प्रदेश को प्रायः देवभूमि कहा जाता है। यहां प्राचीन काल से साधु, संत, संन्यासी आदि ईश्वर के ध्यान में लीन होकर तपस्या करने आते रहे हैं। मैदान में रहने वाले व्यक्तियों में यह धारणा है कि पहाड़ों पर देवताओं का वास है और यहां के निवासी भी सरल, साधु प्रवृत्ति के हैं।

यहां दो या तीन किलोमीटर की दूरी पर कोई-न-कोई देवस्थल है। इसे देवता का स्थान, थान आदि नामों से भी जाना जाता है। इस स्थान के साथ लगे वन या भूमि को देव वन या देवभूमि कहा जाता है। इस स्थान का स्वामी देवता ही माना जाता है और उसकी आज्ञा बिना कोई भी सामाजिक और धार्मिक कार्य नहीं होता। आज्ञा को प्राप्त करने वाला गुर, पुजारी या अन्य कार्यकर्ता होता है। देवस्थान के साथ थोड़े से भूमि के टुकड़े से लेकर एकड़ों तक फैला वन हो सकता है।

प्रारंभ में ये स्थल पूर्णतया पर्यावरण मित्र थे। इस स्थान पर पेड़, हरियाली, और प्राकृतिक स्रोत से जल उपलब्ध होता था और वन्य प्राणियों का आवागमन नहीं होता था। ऐसे स्थान गांव या शहर से दूर होते थे। प्रकृति को धन्यवाद देने के लिए स्थानीय निवासी एकत्रित होकर धन्यवाद देते हुए आनंदित होते थे। धीरे-धीरे इन आस्था केंद्रों पर लोगों का आवागमन बढ़ गया। सड़कों आदि के बनने के कारण अब यात्री देश और विदेशों से आ रहे हैं। यात्रियों की सुविधा के लिए सराय, होटल और अन्य भवन आदि बनाए गए हैं। देवस्थलों पर यात्रियों के आने जाने तथा पूजा-अर्चना आदि के लिए स्थान बनाए गए हैं। सुविधाएं तो प्राप्त हो रही हैं परंतु पर्यावरण का ध्यान नहीं रखा जा रहा है। पेड़ कट गए हैं, हरियाली समाप्त हो रही है और केवल सीमेंट के भवन बन रहे हैं। इसके विपरीत जो देवस्थल सड़क से दूर हैं या साधारण व्यक्ति की पहुंच से बाहर हैं या तो भग्नावस्था में हैं या सुरक्षित हैं। कुछ केवल वर्जित स्थान बन गए हैं।

इन सबके विपरीत पिछले कुछ ही दशकों में सिरमौर के इस देवस्थल को भव्य विश्वविद्यालय बनते देखा गया है। यह स्थल है बड़ू साहब। यहां बड़ू नाम का एक छोटा-सा गांव है। इस गांव का मालिक जोगेंद्र सिंह था। उस समय यह गांव तत्समय की नाहन रियासत में था। यहां अब एक विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है। यह विश्वविद्यालय अकाल अकादमी द्वारा संचालित है। इस स्थान पर लगभग सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं। यहां पर विभिन्न महाविद्यालयों में लड़कियों को निःशुल्क शिक्षा दी जा रही है। छात्राओं, अध्यापकों, कर्मचारियों एवं अन्य कार्यकर्ताओं के निवास, खानपान, स्वास्थ्य तथा सुरक्षा के पूरे प्रबंध हैं। यहां इनकी अपनी बेकरी है तथा मिठाई की दुकान है। कुछ अन्य दुकानें भी हैं जहां बाजार से सस्ता और अच्छा सामान उपलब्ध है। साथ ही गुरुद्वारा भी बन चुका है। यात्रियों तथा संगत के लिए साधारण डारमैटरी से लेकर वातानुकूलित कक्ष हैं। यहां गुरुओं से जुड़े पर्व और त्योहार श्रद्धा से मनाए जाते हैं जिनमें देश-विदेश से यात्री और भक्त आते हैं। यहां आने वाला हर आगंतुक इस स्थान के मुख्य द्वार में प्रवेश होते ही विशेष प्रकार का अनुभव पाता है।

परिवर्तन

बड़ू गांव के मालिक जोगेंद्र सिंह के पास लगभग 400 एकड़ भूमि थी। उस समय यहां केवल पैदल चलकर या घोड़े पर सवार होकर ही पहुंचा जा सकता था। सोलन से 56 किलोमीटर दूर और सराहां (सिरमौर) से 50 किलोमीटर दूर है। अब यहां नियमित बस सेवा उपलब्ध है। आप किसी भी स्थान से यहां पहुंच सकते हैं।

इस स्थान पर सभी आधारभूत सुविधाएं यथा डाकखाना (स्पीड पोस्ट सहित), बैंक, पुस्तकालय, औषधालय और चिकित्सालय, बच्चों के लिए स्कूल, निजी आवश्यकता की खरीद के लिए कुछ दुकानें, यात्रियों के निवास, लंगर आदि का पूरा प्रबंध, बिजली, पेयजल आदि उपलब्ध हैं। गर्म जल के लिए सोलर पावर

संयंत्र स्थापित किया गया है।

इस स्थान के बारे में कहा जाता है कि यहां कुछ दशक पूर्व एक संत अखरोट के पेड़ के नीचे आंखें बंद कर तपस्या कर रहा था। निर्जन स्थान पर संत को देखकर जोंगेद्र सिंह ने उनके लिए घर से भोजन लाकर उसके सामने रखा और प्रतीक्षा करने लगे। कुछ समय बाद संत ने अपनी आंखें खोली तो जोगेंद्र सिंह से वार्ता की। भोजन ग्रहण करने के उपरांत जोगेंद्र सिंह को कहा कि तुम यहां से चले जाओ क्योंकि यहां ब्रह्म विद्या का केंद्र बनेगा जिसकी चर्चा विदेशों में भी होगी।

उधर, पंजाब के मस्तवाना गुरुद्वारे के संत अतर सिंह ने अपने सेवक संत तेजा सिंह, बी.ए.एल.एल.बी, और एम.ए. (हार्वर्ड) को कहा कि हिमाचल प्रदेश के सिरमौर क्षेत्र में गुरु गोविंद सिंह का गृह स्थान है, उसे ढूंढो। गुरु गोविंद सिंह सिरमौर के नाहन पांवटा तथा भंगाणी स्थल पर पधारे थे। इस जगह आज गुरुद्वारे हैं। हो सकता है यहां भी आए हों। इस स्थान की खोज के लिए संत तेजा सिंह देहरादून आए। उन दिनों नाहन क्षेत्र का अधिक संबंध देहरादून से था। वहां भाई वीर सिंह से मंत्रणा की और संत अतर सिंह जी का संदेश दिया। सन् 1954 से इस स्थान की खोज शुरू हुई। सोलन से सराहां तक का क्षेत्र देखा और बड़ू गांव का वही स्थान जहां संन्यासी तपस्वी था, लगा यही गुरु गोविंद सिंह जी का गुप्त स्थान होगा क्योंकि धर्मात्मा व्यक्ति वहां तपस्या करता था।

उन दिनों सरदार इकबाल सिंह किंगरा नाहन में जिला कृषि अधिकारी थे तथा उन्हें इस क्षेत्र के बारे में काफी पहचान थी संत प्रकृति के व्यक्ति हैं। अविवाहित हैं तथा सामाजिक और धार्मिक कार्यों में रुचि रखते हैं। अतः संत जी ने इन्हें इस स्थान को खरीदने का आशय बताया। इकबाल सिंह जी ने इस कार्य को संपन्न करने में पूर्ण सहयोग दिया। अंततः संत तेजा सिंह स्वयं यहां पहुंचे और चिन्हित स्थान पर अपना तंबू लगाया। इससे पूर्व, नाहन में जाकर जोगेंद्र सिंह से बड़ू गांव का 400 एकड़ का क्षेत्र खरीद लिया गया। खरीद में जो जोगेंद्र सिंह ने मांगा, वह दे दिया। जोगेंद्र सिंह की प्रसन्नता दोगुनी हो गई। एक तो भूखंड बिक गया जिस पर बंटारे का भय था और दूसरा इस स्थान पर धार्मिक कार्य होगा।

संत तेजा सिंह उस समय 82 वर्ष के हो चुके थे। पैदल और घोड़े पर चलकर बड़ू गांव पहुंचे थे और वहां मिट्टी का कच्चा गुरुद्वारा स्थापित किया और वहां गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ प्रारंभ किया। भोग और अरदास के बाद एक बच्चे की तरह गुरु नानक साहिब के चरणों में विनती की, "हे सच्चे पातशाह (शाहों के शाह) वह समय कब आएगा, जब यहां से बच्चे, बच्चियां गुरमति से ढल कर सारे संसार में आप जी के सच के शब्द का प्रचार करेंगे।" संत जी की यह विनती लगता है कबूल हो गई जिसका प्रमाण आज यहां पर 'इटरनल यूनिवर्सिटी' का होना है। अब यहां की व्यवस्था 'कलगीधर ट्रस्ट' के नाम से 'अकाल अकादमी' चला रही है। धन की कोई कमी नहीं है। विदेशों से भक्त भेंट भेजते रहते हैं। आज यह स्थान सिखों का प्रमुख केंद्र है। पंजाब से छात्राओं को यहां पढ़ने के लिए लाया जाता है क्योंकि यह विश्वविद्यालय केवल महिलाओं की शिक्षा के लिए है।

इस समय यहां एक व्यक्ति बाबा जी के नाम से जाना जाता है। गत दिनों मेरा वहां जाना हुआ। मैंने सुना था कि इकबाल सिंह किंगरा जो निदेशक कृषि विभाग, हिमाचल प्रदेश से सेवानिवृत्त होने पर यहां आ गए हैं। उत्सुकतावश मैंने इन बाबा जी को मिलने की इच्छा जताई। बाबा जी को देखकर मुझे उनका पुराना चेहरा याद आया। वे सफेद पाजामा, सफेद रेशमी कुरता और सफेद मलमल की पगड़ी पहनते थे। हम लोग एक ही विभाग में काम करते थे। देखते ही मेरे मुंह से निकल पड़ा। किंगरा जी, आप यहां यह सुनकर उन्होंने गले लगाया और फिर हम दोनों ने पुरानी यादें ताजा की। किंगरा जी वही व्यक्ति हैं जिन्होंने इस स्थान को ढूंढने और खरीदने में सहायता की थी। किंगरा जी ने तभी हमें अंगवस्त्र और शाल भेंट की। मेरा मन वास्तव में किंगरा जी को देखकर अति प्रसन्न हुआ। हम दस मिनट तक बातों में ही लगे। किंगरा जी ही यहां के बाबा जी हैं। उपस्थित छात्राएं और अन्य व्यक्ति इससे बड़े प्रभावित हुए। बाबा जी ने अपना सर्वस्व ही यहां पर अर्पित कर दिया है। इस समय वे 90 वर्ष से अधिक आयु में भी स्वस्थ हैं और अपना सभी कार्य स्वयं करते हैं तथा दिन में गुरुद्वारे के चारों ओर का चक्कर लगाते हैं। इन्हें अब संत शिरोमणि बाबा इकबाल सिंह कहा जाता है।

आज भी यहां अखरोट का पेड़ है। फल छोटे परंतु हल्के और कागजी होते हैं। 'कच्चा कोठा' दो कमरों का है। पहले कमरे से होकर दूसरे कमरे में पहुंचा जाता है। पहले कमरे में कुछ फोटो लगे हैं जो यहां की पुरानी गतिविधियां दर्शाते हैं तथा दूसरे कमरे में ग्रंथी बैठे हैं जो इस ग्रंथ का पाठ निरंतर कर रहे हैं। वाई-फाई सेवा द्वारा पूरे कैंपस में आप सुन सकते हैं। ये दोनों कमरे अपने पुराने स्वरूप में हैं तथा शेष सभी भवन अब पक्के अर्थात् सीमेंट कंक्रीट के बने हैं। बाहर का स्थान खुला है। सिख परंपरा अनुसार आपको गुरुद्वारे वाले कमरे में सिर ढककर आना अनिवार्य है। इस भवन को देखे बिना यहां की यात्रा अधूरी है। शहरी कोलाहल से दूर और शांत वातावरण में आप अपने आपको पाते हैं। पर्यावरण की सुरक्षा के पूरे प्रबंध किए गए हैं। हरित आवरण और पेड़ों को सुरक्षित रखा जा रहा है। प्लास्टिक का प्रयोग लगभग न के बराबर है। सारा कैंपस साफ-सुथरा दिखाई देता है।

सेवानिवृत्त प्राचार्य बागबानी, फ्लैट नं. 4, ब्लॉक वी-ए
हाउसिंग बोर्ड कालोनी, संजौली, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 006, मो. 0 98161 36653

आलेख

मीडिया का बहुआयामी स्वरूप : सिरमौर बुलेटिन

◆ डॉ. मनोहर लाल अवस्थी

सिरमौर पहाड़ी रियासत थी जिसमें प्रकाश वंश का शासन रहा। 2628 वर्ग किलोमीटर में फैली यह रियासत भौगोलिक दृष्टि से पहाड़ों तथा मैदानी इलाके से घिरी थी। इस रियासत में 1833 में 'सिरमौर गजट' छपता था जिसे सिरमौर रियासत नियमित मासिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित करती थी। इसमें रियासत के समाचार, रियासत के इश्तिहार, जन सामान्य के लिए आवश्यक सूचनाएं प्रकाशित होती थीं। 'अमर प्रकाश' राजा मीडिया के प्रति रुचि रखता था तभी तो अपने बेटे के जन्मोत्सव पर 'अमर' पत्रिका 1888 में प्रकाशित करवाई जो पूर्णतः साहित्यिक पत्रिका थी जिनकी प्रतियां महिमा लाईब्रेरी नाहन में धरोहर के रूप में सुरक्षित की गई थीं। राजेंद्र प्रकाश देश में स्वतंत्रता की आग को भांप कर एवं प्रजामंडल के बढ़ते दबाव को कम करने के लिए एक मासिक पत्र निकालना चाहते थे जिसके संपादक सुखदर्शन सिंह चौहान बनाए गए जो उस समय स्टेट के वित्त मंत्री हुआ करते थे।

पझौता कांड, गिरीपार की प्रजा, राजगढ़, शिलाई आदि क्षेत्रों में जनता के संवाद के लिए 'सिरमौर बुलेटिन' मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। उन दिनों द्वितीय युद्ध समाप्त हुआ था। प्रजा महंगाई से त्रस्त थी। अनाज तथा अन्य वस्तुओं की कमी थी। देशव्यापी प्रजामंडल के नेताओं के तीखे तेवर तथा पझौता आंदोलन के नेताओं को जेल में डाल रखा था ताकि स्वतंत्रता की चिंगारी सिरमौर रियासत में अधिक न फैल जाए इसके लिए जन जागरण अभियान, राजा की उदार छवि, जनता के प्रति रियासत का रवैया, रियासती सुविधाओं की विस्तृत जानकारी सिरमौर बुलेटिन में छपती थी। यह पत्रिका सुदर्शन चौहान के संपादकत्व में निकलती थी। उनका कहना था कि प्रजा को राज सूचनाएं, शिक्षा के प्रति स्टेट का दृष्टिकोण, अनाज भंडारण के लिए उचित उपाय तथा स्टेट के जाने-माने विशेषज्ञों की राय तथा विचार इस मासिक पत्रिका में छपते रहते थे। यह पत्रिका निःशुल्क बांटी जाती थी ताकि जनता में अनावश्यक भ्रम का वातावरण न बने इसलिए राजेंद्र प्रकाश प्रजा को केंद्र में रखकर अधिक ध्यान देते थे।

सिरमौर बुलेटिन के प्रथम अंक में प्रकाशित सामग्री मातृभूमि का गान (गंगा सिंह नेगी) ने अमर प्रकाश राजा की धरती का गुणगान बड़े साहित्यिक शब्दों में निवेदित किया था ताकि नृप के प्रति श्रद्धा का भाव जागृत हो जाए। युद्धजनित घरेलू समस्याएं और गृहिणी-संपादक दृष्टिकोण का परिचय मिलता है। जगन्नाथ मंदिर के महंत साहिब की ईश्वर के प्रति श्रद्धा तथा जनता के भीतर ईश्वर के प्रति विश्वास का विवरण भी इस अंक में देखा गया है। रामायण की कथा का विवेचन-राय साहिब चाननमल साहिब कलक्टर नाहन प्रकाशित हुआ है।

लैंटाना झाड़ों को नाश करने के उपाय तथा सिरमौर प्राचीन और अर्वाचीन का शोधपरक लेख मधुसूदन दत्त कैप्टन द्वारा लिखा इस अंक में मिलता है। दीपावली एवं दशहरा मनाने संबंधी सूचनाएं रहती थीं। विद्या का तात्पर्य हरदयाल छिब्बर द्वारा लिखा गया है जिसमें शिक्षा की गुणवत्ता, स्टेट द्वारा किए जाने वाले कार्य स्त्री शिक्षा के प्रति राजा का दृष्टिकोण, गुणात्मक शिक्षा के प्रति निरीक्षण तथा योग्य शिक्षकों की नियुक्ति आदि लेख वर्णित है।

सिरमौर स्टेट समाचार, सिरमौर स्टेट फोसर्ज गंगा सिंह नेगी की कलम से प्रकाशित होते रहते थे। इस अंक में विज्ञापन भी रहते थे जिसमें चाय के गुणों का बखान, हिमालय सप्लाई स्टोर्स द्वारा सीमेंट की किस्म नालीदार एवं सपाट चादरें, मारवल तथा लोहे के सामान का विज्ञापन शब्दों द्वारा विज्ञापित किया जाता रहा है।

यह पत्रिका बाईस पृष्ठों की रहती थी जिसमें सिरमौर रियासत का शासकीय चिन्ह था। राजचिन्ह में आमने सामने दो शेर की दहाड़ तथा इसके ऊपर दायीं तथा राजचिन्ह (VISUNITA और FORTIOR) लिखा रहता था। यह चिन्ह कलात्मक रूप से राजचिन्ह बनाया गया जो रियासत की पहचान थी।

इस पत्रिका का प्रकाशन 15 अगस्त 1947 तक गाहे-बगाहे होता रहा लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात सिरमौर रियासत का विलय हिमाचल प्रदेश में हो गया। इस सिरमौर बुलेटिन में हिमाचल पत्रकारिता का एक अध्याय रियासती राज की पत्रकारिता है।

बिंद्रावन, तहसील पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176061

आलेख

शिक्षा का सिरमौर

सिरमौर जनपद में अंग्रेजों के आगमन से पूर्व शिक्षा की निर्भरता हिंदुओं व मुसलमानों में अपने-अपने धार्मिक संस्थानों पर ही निर्भर थी। उस वक्त पाठशालाएं या मदरसे खुले थे। जिनके माध्यम से शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था थी। ब्राह्मण समुदाय के लोग शिक्षा के प्रचार-प्रसार में लगे थे। वे संस्कृत, हिंदी भाषा में ज्ञान फैलाने का कार्य करते थे। गुरु-चेला परंपरा प्रचलित थी। शिक्षा की यह पद्धति राजा शमशेर प्रकाश के शासनकाल तक चलती रही। राजा ने अपने कार्यकाल में नाहन में मदरसे की स्थापना की ताकि उर्दू तथा फारसी भाषा में बच्चों को सिखाया जा सके। ब्रिटिश हुकूमत के पैर पसारने के साथ अंग्रेजी भाषा का प्रचलन बढ़ने लगा। वर्ष 1886 में राजा शमशेर प्रकाश ने पहले खोले मदरसे को नई पद्धति की शिक्षा के लिए मिडल स्कूल में परिवर्तित किया। वर्ष 1890 में उर्दू भाषा के बदले अंग्रेजी भाषा को सरकारी भाषा के रूप में अपनाया गया। धार्मिक शिक्षा को तब्दील कर उदारी शिक्षा पद्धति को अपनाने पर बल दिया गया। हालांकि दैनिक कार्यक्रम में प्रातःकालीन प्रार्थना सभा यथावत रही।

आरंभिक दौर में मिडल स्कूल के परिणाम संतोषजनक रहे लेकिन प्रशिक्षित अध्यापकों की तैनाती से शिक्षा में बेहतर परिणाम देखने को मिले। मिडल स्कूल को स्तरोन्नत कर हाई स्कूल बना दिया गया। शमशेर हाई स्कूल को पंजाब विश्वविद्यालय से संबद्ध किया गया। वर्ष 1934 में स्कूल में 367 विद्यार्थी तथा 16 प्रशिक्षित अध्यापक थे। वर्ष में एक बार इंस्पैक्टर ऑफ स्कूल, अंबाला मंडल द्वारा स्कूल का निरीक्षण किया जाता था। स्कूल में रियासत के सहायक सर्जन द्वारा छात्रों को फस्ट ऐड, शरीर विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान पर नियमित जागरूक किया जाता था। लड़कों का स्वास्थ्य परीक्षण करने की भी व्यवस्था थी। छात्रों के लिए अमर छात्रावास खोला गया था। इस स्कूल के अलावा, रियासत के बड़े गांवों में लगभग 70 स्कूलों की स्थापना की गई थी जहां हिंदी व उर्दू भाषा में पढ़ाई होती थी। इन विद्यालयों के निरीक्षण के लिए एक इंस्पैक्टर व दो उप-निरीक्षक नियुक्त किए गए थे। कुछ इलाकों में विद्यार्थियों की कमी को देखते हुए स्कूलों को बंद करना पड़ा। इसके बावजूद तहसील स्तर पर एक-एक प्राइमरी स्कूल खुला रहा। पच्छाद तहसील के कुफर मड में एक निजी विद्यालय में पंडित द्वारा हिंदी तथा सिरमौरी भाषा पढ़ाई जाती थी। यहां बच्चों को धार्मिक पुस्तकें, गीता तथा व्याकरण पढ़ाया जाता था। दुकानदारों के बच्चों को 'महाजनी लिपी का ज्ञान दिया जाता था। राजा शमशेर सिंह के कार्यकाल तक बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करने की कोई व्यवस्था नहीं थी। कुछ मुस्लिम छात्राओं को निजी तौर पर कुरान तथा हिंदू छात्राओं को 'विष्णु सहस्रनाम' की शिक्षा दी जाती थी। इन दोनों शिक्षाओं का मूल उद्देश्य धार्मिक शिक्षा को बढ़ावा देना था। राजा शमशेर सिंह ने उर्दू तथा हिंदी भाषा का ज्ञान देने के लिए बालिकाओं के लिए स्कूल को खोला। इसमें हस्तशिल्प की शिक्षा भी दी जाने लगी। इस बालिका स्कूल में हिंदू तथा मुस्लिम छात्राओं ने दाखिला लिया। स्कूल में छात्राओं को कढ़ाई-बुनाई के अलावा उर्दू, हिंदी भाषा का ज्ञान दिया जाता था। वर्ष 1904 में छात्राओं की संख्या बढ़ कर तीस हो गई। 1934 में छात्रा हाई स्कूल खोला गया। इस वक्त छात्राओं की संख्या 160 के करीब थी। शारीरिक शिक्षा सभी छात्राओं के लिए अनिवार्य थी। छात्राओं को फस्ट ऐड तथा मातृत्व पर व्याख्यान नियमित तौर पर महिला चिकित्सक द्वारा दिए जाते थे तथा छः माह उपरांत छात्राओं की चिकित्सा जांच की जाती थी।

राजा शमशेर प्रकाश के कार्यकाल तथा उसके उपरांत रियासत में शिक्षा के क्षेत्र को सुदृढ़ करने पर जोर दिया गया। वर्ष 1943-44 में शिक्षण संस्थानों की संख्या बढ़कर नौ हो गई। जिनमें नाहन तथा पांवटा में दो हाई स्कूल भी शामिल थे। नाहन में लड़कियों का हाई स्कूल, माजरा, सराहां तथा ददाहू में लड़कों के लिए तीन मिडल स्कूल कार्यरत थे।

रियासत में प्राथमिक शिक्षा निशुल्क थी। 1954 में 99 प्राथमिक स्कूलों को जिला बोर्ड से लेकर शिक्षा विभाग में लिया गया। रियासत काल में सिरमौर जनपद में साक्षरता दर नगण्य थी। विरला ही पढ़ा-लिखा था। वर्ष 1881 से पूर्व के साक्षरता आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। लेकिन वर्ष 1881 में रियासत की साक्षरता संख्या 112371 (63305 पुरुष व 49066 महिलाएं) में से कुल 2036 साक्षर थे जिनमें 2004 पुरुष व 32 महिलाएं थी। साक्षरता दर 1.8 प्रतिशत। पुरुष साक्षरता दर 3.2 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 0.06 प्रतिशत थी। वर्ष 1951 में साक्षरता दर बढ़कर 7.5 प्रतिशत (पुरुष 9.8 प्रतिशत व महिला साक्षरता दर 3.6 प्रतिशत) आंकी गई। वर्ष 1961 में यह बढ़कर 15.6 प्रतिशत (पुरुष 24.2 प्रतिशत तथा महिला 6.3 प्रतिशत आंकी गई।

हिमाचल के गठन के उपरांत सिरमौर जिले में साक्षरता को बढ़ाने के लिए व्यापक प्रयास किए गए। वर्ष 2011 में जनसंख्या के अनुसार राज्य की साक्षरता दर 78.80 प्रतिशत आंकी गई। ग्रामीण क्षेत्र की साक्षरता दर 77.3 तथा शहरी क्षेत्रों की साक्षरता दर 90.7 प्रतिशत आंकी गई। जिले में पुरुष साक्षरता दर 85.61 प्रतिशत जबकि महिला साक्षरता दर 71 प्रतिशत आंकी गई।

जिले में राजकीय महाविद्यालयों की संख्या आठ है।

आलेख

पच्छाद के चार महापुरुषों ने जगाई थी शिक्षा की अलख

जिस समय पर्वतीय क्षेत्रों के अन्य भागों की तरह सिरमौर जिला का पच्छाद क्षेत्र भी अज्ञानता, अंधविश्वास, अशिक्षा से ग्रसित था, तब इन चार महापुरुषों ने ज्ञान की ज्योति जलाकर इस समस्त पच्छाद क्षेत्र को अलोकित किया। ये महापुरुष थे, पंडित दुर्गा दत्त (नारग), मुंशी बालकिशन (सराहां), ठाकुर गोबिंद सिंह परमार (चन्हालग) बागथन और महाशय सहीराम (फागू) राजगढ़।

पंडित दुर्गा दत्त नारग के भड़ूत गांव के निवासी थे और उस समय सरदार बहादुर रणदीप सिंह जगीर तहसीलदार थे। किसी कारण से वह गुरुकुल के वार्षिक उत्सव में गए थे। उनको जो वहां शिक्षा मिली उससे प्रभावित होकर नारग में आर्य समाज की स्थापना की। सत्यधर्म पाठशाला की शिक्षा दी जाती थी और गुरुकुल की तरह छात्रों का रहन-सहन होता था। पंडित दंगी दत्त स्वयं संचालक समिति के अध्यक्ष थे और पूर्ण रूप से पाठशाला की हर गतिविधि पर दृष्टि रखते थे। परिणामस्वरूप सुशील, अनुशासित, सदाचारी छात्रों का जीवन निर्माण करके उन्हें समाज के लिए अर्पित किया। उनके द्वारा स्थापित सत्यधर्म पाठशाला वर्तमान समय में सीनियर सेकंडरी स्कूल नारग है। इस पाठशाला से उच्च पदाधिकारी व राजनीतिज्ञ निकले, जिन्होंने देश व विदेश में अपना व प्रदेश का नाम रोशन किया। उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज आज भी कार्य कर रहा है।

मुंशी बाल किशन ने भी सराहां में आर्य समाज की स्थापना की और स्कूल खोला। स्कूल खुलने से समस्त क्षेत्र में ज्ञान की ज्योति जलाई गई। वह एक सच्चे समाज सेवक थे। सामाजिक सुधार के क्षेत्र में वे सदा अग्रणी रहे। वह सराहां के पंचायत प्रधान भी रहे। उनके द्वारा स्थापित स्कूल आज सीनियर सेकंडरी स्कूल सराहां है। तीसरे महापुरुष ठाकुर गोबिंद सिंह परमार बागथन के चन्हालग निवासी थे। वह हिमाचल निर्माता व प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री डॉ यशवंत सिंह परमार के चाचा थे। उन्होंने चन्हालग के साथ लगते गांव बसाहां में प्राथमिक स्कूल खोला और आर्य समाज की स्थापना की। इसके माध्यम से उन्होंने शिक्षा व ज्ञान का प्रचार किया। वह राजनीति से कोसों दूर थे और उनकी रुचि सामाजिक उत्थान में रही। डॉ यशवंत सिंह परमार के जीवन पर देश-सेवा व निरंतर आगे बढ़ने की भावना उन्ही की छोड़ी छाप थी। उनके द्वारा स्थापित स्कूल आज सीनियर सेकंडरी स्कूल बसाहां के नाम से विद्यमान है।

चौथे महापुरुष थे महाशय सहीराम। राजगढ़ से करीब 15 किलोमीटर की दूरी पर महाशय सहीराम ने गुरुकुल फागू की स्थापना की। इस स्कूल में गुरुकुल पद्धति से संस्कृत का अध्ययन व अध्यापन होता था। इस गुरुकुल से सिरमौर की महान विभूतियां जैसे हाब्बन के वैद्य सूरत सिंह, भाणत के शास्त्री दयाराम, टालिया के स्वामी ब्रह्मानंद जैसे नेता व समाज-सुधारक निकले, जो इस स्कूल की देन है। महाशय सहीराम उस जमाने में भी छुआछूत, जात-पात व अंधविश्वास के घोर विरोधी थे और इन चुनौतियों का उन्होंने डटकर सामना किया। साथ ही समस्त क्षेत्र को ज्ञान की नई रोशनी से अलंकृत किया। इन चार महापुरुषों की बदौलत आज पच्छाद का वर्तमान दृश्य सबके समक्ष है।

आधुनिक शिक्षा की ओर

सिरमौर शिक्षा का हब बनने की ओर अग्रसर है। सिरमौर के जिला बनने के उपरांत शिक्षा क्षेत्र में क्रांति का सूत्रपात हुआ। चार दशक पूर्व यहां के ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के प्रति बच्चों के रुझान कम था जो अब बढ़ता जा रहा है। सिरमौर का पांवटा क्षेत्र में दंत चिकित्सा कालेज के वर्ष 2003 में खुलने से यहां उच्च शिक्षा का विस्तार हुआ। साथ ही वर्ष 19...... में पांवटा में आई.आई.एम. खुलने से इस क्षेत्र को ख्याति मिली। आज पांवटा क्षेत्र में निजी क्षेत्र में 24 के करीब विद्यालय हैं। वहीं सिरमौर जनपद में 78 पाठशालाएं निजी क्षेत्र में खुली हैं। जिला सिरमौर में सरकारी क्षेत्र में 154 वरिष्ठ माध्यमिक पाठशालाएं कार्यरत हैं जिनमें से पच्छाद में 45, रेणुका में 33, शिलाई में 29, पांवटा साहिब में 19 तथा नाहन क्षेत्र में 28 स्कूल हैं। जिले में बारह महाविद्यालय खोले गए हैं। ये नाहन, पांवटा साहिब आजभोज (भराली, सराहां, राजगढ़, पाजिठा, शिलाई, कुफराधार, रोनहाट, संगड़ाह, हरिपुरधार तथा रेणुका में स्थित हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में डॉ. यशवंत सिंह परमार मेडिकल कॉलेज नाहन खोला गया है।

आलेख

हाटी समुदाय का नामकरण

◆ पवन बख्शी

वर्ष 1833 तक हिमाचल प्रदेश के जिला सिरमौर का गिरीपार क्षेत्र तथा उत्तराखंड के जौनसार-बावर क्षेत्र तत्कालीन सिरमौर रियासत की एक प्रशासनिक इकाई थे। इन क्षेत्रों में निवासी हाटी और जौनसारा नाम से जाना जाता है। ऐसी मान्यता है कि इन दोनों क्षेत्रों के निवासी एक ही पूर्वज के वंशज हैं। इन दोनों इलाकों के निवासियों की भौगोलिक परिस्थितियां, परंपराएं, रीति-रिवाज, भाषा, संस्कृति, आहार-व्यवहार, रहन-सहन, खान- पान तथा मान्यताएं एक समान हैं तथा एक दूसरे की अनुपूरक हैं।

गिरीपार क्षेत्र के निवासियों के लिए इन दुर्गम क्षेत्रों में कहीं भी बाजार उपलब्ध नहीं था। लोग समूह के रूप में आवश्यक वस्तुओं की खरीद करने तथा अपने उत्पादों को बेचने के लिए समीपवर्ती बाजारों जो मैदानों में स्थित थे, में जाते थे। लोग अपनी पीठ पर सामान लाद कर लाते व ले जाते थे। पूरे क्षेत्र के लोग कोई एक दिन निश्चित कर लेते थे और उस दिन सभी अपनी पूरी तैयारी करके, रास्ते का भोजन तथा विक्रय योग्य सामान को पीठ पर लाद कर चल पड़ते थे। उस वक्त घोड़े-खच्चरों पर सामान ढोने का प्रचलन था। इसमें से कुछ लोग ऐसे भी होते थे जिनके पास विक्रय हेतु कुछ भी नहीं होता था। वे अपने साथ पहले से संचित सोना (सोने को संस्कृत में हाटक भी कहते हैं) ले जाते थे, जिसे बेचकर आवश्यक वस्तुएं क्रय करके ले आते थे। व्यापारी इन्हें किसी स्थान अथवा जाति से संबोधित करने की अपेक्षा इन्हें हाटी कहकर संबोधित करते थे, जिस कारण ये हाटी के नाम से पहचाने जाने लगे।

नाहन के समीप जहां ये लोग विश्राम करते थे, उस स्थान को हाटी का विश्राम, जहां पानी पीते थे, उसे हाटी की बावड़ी कहा जाता था, जिसे आज भी प्रतीक स्वरूप देखा जा सकता है।

शिरगुल देव की दिल्ली हाट की यात्रा का उल्लेख संस्कृति में मिलता है। सिरमौर में सदियों से अदरक का उत्पादन हो रहा था। वे इससे मूल्यवर्धक उत्पाद सौंठ को बनाने में महारत हासिल किए हुए हैं। वे रियासत काल में दिल्ली तथा मैदानी इलाकों तथा सौंठ को पीठ पर लाद कर बेचने के लिए ले जाते थे। उस वक्त एक मण के उत्पादन बेचने एक तोला सोना मिलता था। इसे वे हाटक कहते थे। पुराने हाटक आज भी कुछ गिरीपार व जौनसारी लोगों के पास सुरक्षित हैं। प्रमुख सौंठ उत्पादक क्षेत्र गिरीपार क्षेत्र में शिरली, गुदी मानपुर, कांडो, पाव, कफोटा, खंड़ूरी है।

भाषा

गिरीपार क्षेत्र में एक कहावत प्रचलित है :

कुंडे कुंडे नवम पयम
पिंडे पिंडे मतिर भिन्ना।

अर्थात जितने जलस्रोत होंगे, उतने ही अलग-अलग स्वाद होंगे। इसीलिए हाटी लोगों की भी अपनी एक जल के समान परंपराएं, भाषा तथा संस्कृति है। हाटी लोगों की अपनी कोई लिपि नहीं है। हाटी समुदाय के लोग एक साझी हाटी-बुलायण बोली बोलते हैं, जिसका जौनसार बावर की कबिलाई बोली के सिवाय, मुख्यधारा की किसी भाषा या बोली से दूर का संबंध नहीं है। यहां की बोली में प्राकृत, संस्कृत, खड़ी बोली, पंजाबी, हिंदी, फारसी, उर्दू, राजस्थानी, नेपाली, बंगाली तथा संस्कृत का समावेश है।

संदर्भ : हिमाचल गिरीपार का हाटी समुदाय पुस्तक से

हाट का अर्थ

दूकान, बजार, बाजार लगने का दिन है, जबकि मुहावरे में हाट करना को दूकान लगाकर बैठना। बाजार जाकर चीज़े लाना। हाट लगाना यानी बाजार में दूकानें लगाना। हाट बाजार करना-सौदा खरीदने बाजार जाना है। इससे स्वतः ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि गिरीपार तथा जौनसार बावर क्षेत्र के लोग जब सामान खरीदने बेचने बाजार जाते थे तो वे हाटी कहलाए। नामकरण से संबंधित एक अन्य धारणा के अनुसार संस्कृत भाषा में सोने को हाटक कहा जाता है। अतः जो लोग सोना लेकर खरीद फरोख्त करने जाते थे, उन्हें हाटक कहा जाता था। हाटक से भी हाटी नाम प्रचलित होना प्रतीत होता है।

खोज

ऐसे पड़ा पच्छाद नाम

◆ डॉ. मनोज

कुमारहट्टी-नाहन मार्ग पर 40 किलोमीटर का सफर तय कर एक उभरता हुआ कस्बा आता है। इस छोटे से कस्बे का नाम है सराहां। इस स्थान के साथ धार्मिक, पारंपरिक तथा ऐतिहासिक तथ्य जुड़े हैं। यहां से सिरमौर का मुख्यालय भी 40 किलोमीटर की दूरी पड़ता है। पथ परिवहन निगम, निजी बसों तथा अपने वाहन से इस मार्ग पर यात्रा करने वालों के लिए यह एक पड़ाव मात्र है।

सराहां में तहसील कार्यालय है। पर्यटन केंद्र, दो वरिष्ठ माध्यमिक पाठशालाएं, महाविद्यालय, अनेकों निजी भवनों से यह अब एक छोटे से शहर की शक्ल अख्तियार करता नज़र आता है।

एक वक्त था जब बघाट, धारटीधार, सैनधार तथा दूर पहाड़ों से पैदल काफिले, इस मार्ग से हरिद्वार अस्थि प्रवाह एवं रियासत की राजधानी नाहन हेतु गुजरते थे। सराहां को रात्रि पड़ाव का सुरक्षित स्थान माना जाता था। आसपास जल की बावड़ियां जहां छोटी-मोटी सराय (धर्मशाला) जैसे धरयार, जौहाना घाट, वावरे की बांव में थी, के अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं। इन स्थानों पर यात्री रात को ठहर प्रातः यात्रा पर निकलते थे। ऐसी मान्यता है कि सराय होने के कारण यहां का नाम सराहां पड़ा।

सराहां के मध्य में एक तालाब भी विद्यमान है, जहां प्रतिवर्ष बावन द्वादशी का भव्य मेला लगता है। शिवालय कस्बे के मध्य में स्थित है। यहीं भगवान राम का भव्य मंदिर भी अवस्थित है। मेले के दौरान यहां से पालकियों में शोभायात्रा बाजार से होते हुए तालाब पहुंचती है जहां बावन महाराज के रूप में नौका विहार करवाया जाता है। तालाब तथा शिरगुल देवता के संबंध में किंवदंती है कि जब शिरगुल दिल्ली से भंगयाणी माता के साथ आए तो वे सराहां में आकर ठहरे थे। शिरगुल देव को प्यास लगी तो मां भगयाणी ने इस जौहड़ को बनाया। इसे पहाड़ी भाषा में सर कहते हैं। तभी यहां शिरगुल ने शिवलिंग स्थापित किया और सर से यहां का नाम सराहां पड़ा भी प्रतीत होता है।।

सराहां की धार्मिक आस्था बढ़ने पर यहां श्रद्धालुओं की भीड़ वर्ष-दर-वर्ष बढ़ती गई। यहां पहले पहल साधू सदौड़िया जो सौंठ आदि का व्यापार करता था, ने मनसाराम को यहां गुड़ चना की दुकान खोलने की सलाह दी। उसके उपरांत हलवाई घीसू तथा खूबचंद ने दुकानें खोलीं। प्राचीन काल से सराहां से होकर गुजरने वाले यात्री पहले अपने साथ खाने-पीने का सामान साथ लेकर चलते थे तथा हरिद्वार या राजा से भेंट के लिए भी यात्रा पर जाने पर वापसी के लिए खाद्य सामग्री यहां छोड़ कर जाते थे। पीछे की खाद्य सामग्री (पिच्छ और आद्) अदक्षणे संस्कृत धातु के इन दोनों शब्दों को मिलाकर पिच्छाद कालांतर में 'पच्छाद' यहां का नाम पड़ा, जो अब सराहां नाम से प्रसिद्ध है। गौरतलब है कि सिरमौर जनपद में पच्छाद नाम का काई स्थान विद्यमान नहीं है। श्री चंद्रशेखर वर्मा जो दो वर्ष तक स्वयंसेवी संख्या 'श्रद्धा' से जुड़े रहे तथा उन्होंने सभी गांवों की पैदल यात्रा कर अनुसंधान किए। उनके अनुसार संपूर्ण जनपद में पच्छाद नाम का कोई स्थान तथा गांव नहीं पड़ता। पच्छाद के नामकरण 'पच्छ आद' सही प्रतीत लगता है। सराहां में 'सर' अर्थात तालाब के आसपास धीरे-धीरे बस्ती बनने लगी, जहां का नाम आज भी सरों कहा जाता है। यहां रहने वाले लोग सराल कहलाए। वे आज भी सराल 'खेल' उपगौत्र के नाम से जाने जाते हैं।

सराहां से पूर्व दिशा की ओर चूड़धार, उत्तर में सोलन व शिमला, दक्षिण में चंडीगढ़ व हरियाणा के क्षेत्र नज़र आते हैं। 20वीं सदी में डगशाई से नाहन जाने का यही एक पैदल रास्ता था। समय के साथ यहां हरियाणा से आकर अनेक दुकानदारों ने अपने कारोबार आरंभ किए। सराहां के समीप पनवा में आज लगभग 200 दुकानें हैं। यहां एक डाकघर, चार बैंक, लोक निर्माण, सिंचाई एवं पेयजल, विद्युत विभाग के उपमंडल कार्यरत हैं।

यहां बावन द्वादशी मेला आयोजित होता है। 70 के दशक से यहां रामलीला भी आयोजित होती है। इसका श्रेय श्री कमल राज, गुलाब दास, वेगी प्रसाद, विजय अग्रवाल को जाता है।

प्रारंभ में यहां आर्य समाज मंदिर में प्राथमिक पाठशाला थी। अब यहां महाविद्यालय खुल गया है। पच्छाद की शान डॉ. यशवंत सिंह परमार, श्री जालम सिंह, श्री जख्मी राम, श्री गंगू राम मुसाफिर, सुरेश कश्यप हैं। अब हाल ही में पच्छाद विधान सभा से चुनाव जीती रीना कश्यप है। इन सभी से पच्छाद का विकास व उत्थान में अहम योगदान रहा है।

पझौता आंदोलन 1943



जब पहाड़ों में जगी स्वतंत्रता की अलख

हिमाचल प्रदेश के इतिहास में 11 जून, 1943 का दिन पझौता गोलीकांड दिवस के नाम से जाना जाता है । इस दिन महाराजा सिरमौर राजेन्द्र प्रकाश की सेना द्वारा पझौता आन्दोलन के निहत्थे लोगों पर राजगढ़ के सरोट टिले से 1700 राऊंड गोलियां दागी थीं जिसमें कमना राम नामक व्यक्ति गोली लगने से मौके पर ही शहीद हुए थे जबकि तुलसी राम, जाती राम, कमाल चंद, हेत राम, सही राम, चेत सिंह घायल हो गए थे। इस घटना के 75 वर्ष पूर्ण होने पर 2018 में हाब्बन में पझौता गोलीकांड की हीरक जयन्ती मनाई गई। सिरमौर जिला के राजगढ़ तहसील का उत्तरी-पूर्व भाग पझौता घाटी के नाम से जाना जाता है। वैद्य सूरत सिंह के नेतृत्व में इस क्षेत्र के जांबाज एवं वीर सपूतों द्वारा सन् 1943 में अपने अधिकार के लिए महाराजा सिरमौर के विरुद्ध आन्दोलन करके रियासती सरकार के दांत खट्टे कर दिए थे। इसी दौरान राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा सन 1942 में देश में भारत छोड़ो आन्दोलन आरंभ किया गया था जिस कारण इस आन्दोलन को देश के स्वतंत्र होने के उपरांत 'भारत छोड़ो आन्दोलन' की एक कड़ी माना गया था। पझौता आन्दोलन से जुड़े लोगों को प्रदेश सरकार द्वारा स्वतंत्रता सैनानियों का दर्जा दिया गया।

महाराजा सिरमौर राजेन्द्र प्रकाश की दमनकारी एवं तानाशाही नीतियों के कारण लोगों में रियासती सरकार के प्रति काफी आक्रोश था। महाराजा सिरमौर द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार की सेना और रसद प्रदान करके मदद कर रहे थे और जिस कारण रियासती सरकार द्वारा लोगों पर जबरन घराट, रीत-विवाह इत्यादि अनुचित कर लगाने के अतिरिक्त सेना में जबरन भर्ती होने के लिए फरमान जारी किए गए। रियासती सरकार के तानाशाही रवैये से तंग आकर पझौता घाटी के निवासी अक्तूबर 1942 में टपरोली नामक गांव में एकत्रित हुए और 'पझौता किसान सभा' का गठन किया गया जबकि आन्दोलन की पूरी कमान एवं नियंत्रण सभा के सचिव वैद्य सूरत सिंह के हाथ में था। पझौता किसान सभा द्वारा पारित प्रस्ताव को महाराजा सिरमौर को भेजा गया जिसमें बेगार प्रथा को बंद करने, जबरन सैनिक भर्ती, अनावश्यक कर लगाने, दस मन से अधिक अनाज सरकारी गोदामों में जमा करना इत्यादि शामिल था। महाराजा सिरमौर राजेन्द्र प्रकाश द्वारा उनकी मांगों पर कोई गौर नहीं किया गया। राजा के हितैषियों द्वारा समझौता नहीं होने दिया जिस कारण पझौता के लोगों द्वारा बगावत कर दी गई और उस छोटी सी चिंगारी ने बाद में एक बड़े आंदोलन का रूप ले लिया।

पझौता आन्दोलन के तत्कालिक कारण आलू का उचित मूल्य न दिया जाना था। विदित है कि रियासती सरकार द्वारा सहकारी सभा में आलू का मूल्य तीन रुपये प्रति मन निर्धारित किया गया जबकि खुले बाजार में आलू का मूल्य 16 रुपये प्रतिमन था चूंकि आलू की फसल इस क्षेत्र के लोगों की आय का एक मात्र

साधन थी। जिस कारण लोगों में रियासती सरकार के प्रति काफी आक्रोश पनप रहा था और वैद्य सूरत सिंह द्वारा अपनी टीम के साथ गांव-गांव जाकर लोगों को इस आन्दोलन में अपना सहयोग देने बारे अपील की गई और इस आन्दोलन की आग पूरे पझौता क्षेत्र में फैल गई और लोग रियासती सरकार के विरुद्ध विद्रोह करने पर उतर गए ।

आन्दोलन के लिए गठित समिति का पहला कदम था राजा द्वारा यहां बनाए गए जेलदारों व नंबरदारों द्वारा अपने पद से त्याग पत्र देना। इसी दौरान जिला सिरमौर में न्यायाधीश के पद से डॉ. वाई.एस. परमार ने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया। जैसे ही राजा सिरमौर को इस बात की भनक लगी, उन्होंने नाहन से 50 सैनिकों के दल को इस आंदोलन को कुचलने व समिति के सदस्य को पकड़ने के लिए क्षेत्र में भेजा। इस दल का नेतृत्व डीएसपी जगत सिंह कर रहे थे। उन्होंने क्षेत्र का दौरा करके नाहन जाकर अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। बताते हैं कि इसी दौरान राजा पटियाला चूड़धार की यात्रा के दौरान पझौता क्षेत्र के शाया में रुके थे। उन्होंने इस आंदोलन का जायजा लिया और राजा सिरमौर को एक पत्र लिख कर इस आंदोलन का समाप्त करने के लिए उचित कदम उठाने का आग्रह किया गया। परिणामस्वरूप राजा ने इस आंदोलन को शांत करने व इनसें समझौता करने के लिए रेणुका के बूटी नाथ, नारायण दत्त व दुर्गा दत्त आदि को पझौता क्षेत्र में भेजा। मगर वे समझौता कराने में वे असफल रहे। इसके उपरांत राजा ने आन्दोलन समिति के सदस्यों को समझौता करने के लिए नाहन बुलाया। मगर आंदोलनकारियों ने राजा के आग्रह को ठुकरा दिया।

अन्ततः महाराजा सिरमौर ने आंदोलन को कुचलने के लिए पुलिस दल को पझौता घाटी भेजा। 6 मई 1943 को यह दल राजगढ़ पहुंचा। कुछ आंदोलनकारियों को राजगढ़ के किले में कैद कर लिया गया। 7 मई 1943 को कोटी गांव के पास आंदोलन कारियों व पुलिस के बीच मुठभेड़ हो गई। इसमें आंदोलनकारियों ने पुलिस दल को बंदी बना लिया। आंदोलनकारियों ने मांग रखी कि राजगढ़ किले में बंद आंदोलनकारियों को छोड़ा जाए। तभी वे पुलिस दल को छोड़ेंगे।

महाराजा सिरमौर ने स्थिति को अनियंतित्र देखते हुए 12 मई 1943 को पूरे क्षेत्र में मार्शल लॉ लगाने के आदेश जारी कर दिए और समूची पझौता घाटी को सेना के अधीन लाया गया जिसकी कमान मेजर हीरा सिंह बाम को सौंपी गई। सेना द्वारा आंदोलन कारियों को 24 घंटे में आत्मसमर्पण करने को कहा गया। मगर आंदोलनकारियों ने साफ मना कर दिया। उसके बाद सेना ने क्षेत्र में लूटपाट आरंभ कर दी। इसी दौरान सेना द्वारा आन्दोलन के प्रणेता वैद्य सूरत सिंह के कटोगड़ा स्थित मकान को डाईनामईट से उड़ा दिया जबकि एक अन्य आन्दोलनकारी कली राम के घर को आग लगा दी गई। इस सारे प्रकरण को देखते हुए आंदोलन कारियों ने अपने घर छोड़ दिए व ऊंची पहाड़ियों पर अपने कैंप बना लिए, ताकि वे सेना पर नज़र रख सकें। इसको देखते हुए सेना ने भी राजगढ़ के साथ ऊंची पहाड़ी सरोट नामक स्थान पर अपना कैंप बना लिया। 11 जून 1943 को निहत्थे लोगों का एक दल आंदोलनकारियों से मिलने जा रहा था। जिस समय कुफर धार के पास यह दल पहुंचा, तो सेना ने राजगढ़ के समीप सरोट के टीले से गोलियों की बौछार शुरू कर दी। रिकार्ड के अनुसार सेना द्वारा 1700 राउंड गोलियां चलाई जिसमें कमना राम की मौके पर ही मौत हो गई। कुछ लोग घायल हुए।

दो मास के पश्चात सैनिक शासन और गोलीकांड के बाद सेना और पुलिस ने वैद्य सूरत सिंह सहित 69 आन्दोलनकारियों को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया। नाहन में एक ट्रिब्यूनल गठित कर आन्दोलनकारियों पर 14 महीने तक देशद्रोह के मुकद्दमें चलाए गए और कमेटी के नौ सदस्यों की संपत्ति को कुर्क कर दिया गया। अदालत के निर्णय में 14 को बरी कर दिया गया। तीन को दो-दो साल ओर 52 आन्दोलनकारियों को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। इस बीच कनिया राम, विशना राम, कलीराम, मोहीराम ने जेल में ही दम तोड़ दिया। उसके बाद सिरमौर न्याय सभा के नाम एक न्यायालय की स्थापना की गई। जिसमें इस मुकद्दमे को पुनः चलाया गया। जिसमें सजा को दस और पांच वर्ष में परिवर्तित किया गया। जिसमें वैद्य सूरत सिंह, मिंया गुलाब सिंह, अमर सिंह, मदन सिंह, कलीकरा आदि को दस वर्ष की सजा सुना दी गई। 15 अगस्त 1947 को देश के स्वतंत्र होने पर इस आन्दोलन से जुड़े काफी लोगों को रिहा कर दिया गया जबकि आन्दोलन के प्रमुख वैद्य सूरत सिंह, बस्तीराम पहाड़ी और चेत सिंह वर्मा को सबसे बाद में मार्च 1948 में रिहा किया गया ।

यह एक ऐसा आंदोलन था जिसने पहाड़ों में स्वतंत्रता की अलख जगाई और आगे चलकर पहाड़ी रियासतों के एकीकरण का मार्ग प्रशस्त हुआ।

पझौता आंदोलन जेल का खेल

हमारी प्यारी जेल ने
अपने वतन के वासते
मुसीबतज़दों के वासते
शैदा हमें बना दिया।

मालिक तेरे दरबार ने
बेड़ियो की झनकार ने
तसलों की ठनकार ने

मतबाला हमें बना दिया।

कैसी अजब बहार है
मुसीबतों की भरमार है
जुल्मी तेरा संसार है
पर, हंसना हमें सिखा दिया।

जुल्मियों की सरकार ने
गोलियों की बौछार ने
मुसल्लाह पुलिस की मार ने
मरना हमें सिखा दिया।

सताता अगर सय्याद ना
आती वतन की याद ना
लगती ये दिल पे आग ना
जिसने हमें जला दिया।

आया कभी सय्याद गर
ओ, पूछ ली, फरियाद गर
कहते हैं - दिल में याद कर
कि तुने, हमें मिटा दिया।

पूछा अगर, कसूर है?
कहते हैं हम, जरूर है
इश्के-तवन का नूर है
जिसने हमें जगा दिया।

गलना, सिखाया बीज ने
पिसना, हिना सी चीज़ ने
जलना पतंग शहीद ने
रोना हमें मना किया।

काली कमलिया ओढ़ के
सींकचों का दर जोड़ के
अशरतों से मुंह मोड़ के
दीवारों से दिल लगा दिया।

दिल पै लगी इक चोट है
सीकचों की फिर ओट है
जमाने की लोट-पोट है
जिसने येगुल खिला दिया।

वैद्य सूरत सिंह, पझौता आंदोलन के अग्रणी नायक द्वारा लिखित कविता

गुमनाम शख्सीयतें

देश राष्ट्रीय पर्वों पर उन वीरों को सदैव याद करता है जिन्होंने इस देश को आजाद कराने में बलिदान दिया था अथवा यातनाएं सही थी। उनमें से कुछ लोग अपनी पहचान बना चुके थे लेकिन कुछ लोग देश पर कुर्बान हो कर भी गुमनामी के अंधेरे में खो गए। उन्हीं गुमनाम स्वतंत्रता सेनानियों में से राजगढ़ क्षेत्र की वे महिलाएं भी हैं जिनके पतियों ने पहले प्रजामंडल में तथा बाद में पझौता आंदोलंन में भाग लिया था। उन्हें एक-दो तरफ से नहीं बल्कि कई तरफ से परेशानियों का सामना करना पड़ा था जिसमें पहला तो अपने पतियों की हुक्मअदूली का था, दूसरा अपने बच्चों के पालन पोषण का, तीसरा परिवार का और चौथा सैनिकों एवं अंग्रेजी फौज की ज्यादतियों का।

इस प्रकार वे सारी उम्र बदकिस्मती का शिकार रहीं। ज्ञात रहे राजा के साथ बगावत और आजादी के संघर्ष के दौरान, अंग्रेजी सैनिकों के गांव में आने पर घर के पुरुष तो जंगलों में भाग जाते थे और पीछे रह जाती थीं महिलाएं जो उनकी बर्बरता की शिकार हो जाती थीं। वे लूटपाट तो करते ही थे मगर उन्हें घी से बने पकवान बना कर भी खिलाने पड़ते थे भले ही बच्चे भूखे बिलख रहे होते। वे अपने बच्चों एवं बुजुर्गों को छोड़ कर कहां जा सकती थीं। इस प्रकार वे इस दौरान नारकीय जिंदगी से दो-चार हो रही थीं। जब तक वे बगावती बचते रहे तब भी और जब वे जेलों में चले गए तब भी यहां की महिलाओं के सामने ढेरों मुसीबतें मुंह बाए खड़ी थी।

हालांकि इस आंदोलन में पुरुषों ने अपने जीवन को दांव पर लगा रखा था और इतना भी अवश्य था कि यदि भारत आजाद न होता तो उन्हें आजीवन कारावास में सड़ना पड़ता परन्तु उन लोगों की पत्नियों को तो पति वियोग के साथ-साथ घर-गृहस्थी भी संभालनी पड़ रही थी। ज्ञात रहे इसी सदर्भ में कुछ महिलाएं तो घर बार छोड़ कर आजादी के संघर्ष में भी कूद पड़ी थीं जिनमें वैद्य सूरतसिंह की पत्नी सुनहरो देवी तथा माठाराम की पत्नी आल्मो देवी प्रमुख हैं।

ये दोनों प्रजा मंडल के तहत गिरफ्तारी देने के लिए तीस किलोमीटर पैदल चल कर सराहां पहुंची थी। ये दोनों देश में चल रहे स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाली क्षेत्र की प्रथम महिलाएं थीं। लेकिन ये स्वतंत्रता सेनानी बनने की हकदार नहीं बनीं। इन पर तत्कालीन सरकारों की निगाह तक न पड़ी।

डॉ. यशवंत सिंह परमार

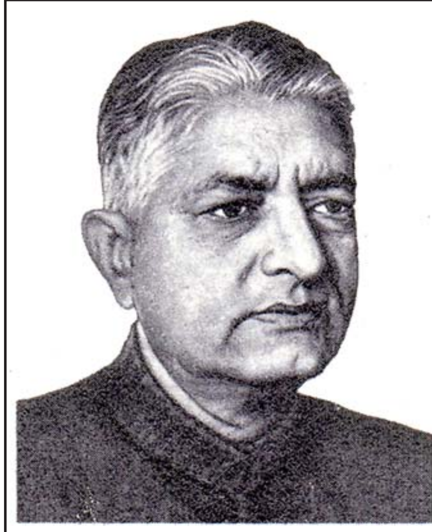
हिमाचल के सिरमौर

◆ धर्मेंद्र ठाकुर

हिमाचल और डॉ. यशवंत सिंह परमार एक दूसरे के पर्याय हैं। उनका व्यक्तित्व पहाड़ की तरह अटल, शांत, सौम्य था। वे सादगी, सच्चाई, ईमानदारी की प्रतिमूर्ति थे। संघर्ष उनके जीवन का एक अहम हिस्सा रहा है। उनका संघर्ष रियासत सिरमौर की राजशाही से आरंभ हुआ। उन्होंने अपना अफसरशाही जामा उतार एक नई राह पर चलने का प्रण लिया। क्योंकि उन्हें रियासत के जामे में घुटन महसूस हो रही थी। यह उनके जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव था। उनके इस निर्णय से आगे चलकर पहाड़ों में फैली छोटी-बड़ी रियासतों का एकीकरण एवं हिमाचल का भारतीय मानचित्र पर एक नक्षत्र के रूप में उदय हुआ।

भौगोलिक रूप से यह क्षेत्र न सिर्फ एक बिखरा हुआ क्षेत्र था बल्कि यहां यातायात के साधन भी न थे। आज जो दूरी हम घंटों में तय कर लेते हैं, उस समय उन दूरियों को पाटने में दिनों कभी- कभी महीने लग जाते थे। यानी संपर्क सूत्र बहुत ही सीमित थे। संपर्क के नाम पर कुछ सड़कें तथा अंग्रेजों द्वारा अपनी सुविधा के लिए बनाई दो रेल लाइनें थीं। परंतु इससे भी अधिकांश देहात पूर्ण रूप से वंचित थे।

ऐसी कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में पैदल चल डॉ. परमार ने अपने कर्मठ साथियों के साथ पहाड़ में राजनैतिक चेतना की अलख जगाई और इन बंद घाटियों को मुक्ति के स्वर से आंदोलित किया।



प्रदेश में भोले-भाले लोग उन्हें नब्ज देखने वाला डॉक्टर समझते थे लेकिन वे कहा करते थे कि 'अरे भाई, मैं डॉक्टर नहीं हूं जो आप लोगों की बीमारी का इलाज कर सकूं।' आखिर उस डाक्टर ने पहाड़ी लोगों की पीड़ा को समझा और उसका इलाज किया जो आज किसी से भी छिपा नहीं है। उन्हें प्रत्येक हिमाचलवासी हिमाचल निर्माता के रूप में स्मरण करता है। और आने वाली पीढ़ियां भी करती रहेंगी।

सिरमौर रियासत के गांव चन्हालग में भंडारी शिवानंद सिंह व माता लक्ष्मी देवी के घर 4 अगस्त, 1906 को यशवंत सिंह ने जन्म लिया। इसी गांव के प्रतिष्ठित लोग पीढ़ी- दर- पीढ़ी रियासत सिरमौर के महाराजाओं के भंडारों के अधिकारी रहे और भंडारी के उच्च पद पर आसीन रहे। यशवंत सिंह परमार के पिता सिरमौर के दरबार में वरिष्ठ सचिव के पद पर आसीन थे।

परमार वंश में जन्में यशवंत बचपन से ही होनहार थे। यशवंत तथा बड़े भाई जगमोहन की आरंभिक शिक्षा शमशेर हाई स्कूल नाहन में

> डॉ. परमार ने पहाड़ के लोगों की शान और स्वाभिमान से जीना सिखाया। उन्होंने हिमाचली जीवन का कोई क्षेत्र नहीं छोड़ा, जहां कुछ नया न रचा हो। उनके नेतृत्व में 1951 में पहले सत्र में ही 'ऋण कानून और काश्तकार कानून' पारित हुए थे। ऐसे कानून बनाने वाला हिमाचल पहला राज्य था। राज्य में सड़कों और बिजली वितरण लाइनों का जो जाल बिछा, वह उनकी दूरदृष्टि संपन्न योजनाओं का ही प्रतिफल है। वे एक राजनेता के साथ- साथ उच्चकोटि के बुद्धिजीवी थे। त्रिमुखी वन खेती जैसी दूरदर्शी योजना डॉ. परमार ने तब लागू की जब पर्यावरण की कोई सोच नहीं रखता था। सब्जी उत्पादन ने सोलन का अग्रणी होना तथा सेब उत्पाद से बागबानी क्रांति लाना उनकी ही देन है। उनके नाम के साथ हिमाचल के उन्नत पहाड़ों का बिंब नज़र आता है। हिमाचल परमार का स्वप्न था, वे स्वप्नद्रष्टा थे। परमार ने अपनी संकल्पशक्ति से इसे साकार किया।

हुई। दसवीं उपरांत दोनों भाइयों को उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए लाहौर भेजा गया। जगमोहन तो पढ़ाई के उपरांत लाहौर से लंदन चले गए और बैरिस्टर बनकर लौटे। यशवंत लखनऊ शिक्षा ग्रहण करने गए जहां उन्होंने एम.ए. एल.एल.बी. की डिग्री तथा बाद में डॉक्ट्रेट की डिग्री हासिल की।

डॉ. यशवंत सिंह सिरमौर रियासत में सब जज नियुक्त हुए और जगमोहन तत्कालीन राजा के ए.डी.सी. नियुक्त हुए। उन्हें ग्रामीण विकास विभाग तथा सिरमौर दरबार का कार्यभार सौंपा गया। सब जज नियुक्त होने पर यशवंत सिंह भंडारी, यशवंत सिंह परमार के नाम से विख्यात हुए। दोनों भाइयों की अपने-अपने क्षेत्र में ख्याति बढ़ती गई। इस ख्याति से राजा से जुड़े कुछ लोगों ने राजा तथा परमार बंधुओं के दरम्यान गलतफहमियां पैदा कर दीं। हालात ऐसे बने कि डॉ. परमार को न्यायाधीश पद से त्यागपत्र देना पड़ा। बड़े भ्राता ने भी त्यागपत्र दे दिया। परमार बंधु मातृभूमि से दूर हो गए। सिरमौर और उनकी सैनधार छूट गई। लाहौर चले गए। एम.ई.एस. में मैसर्ज परमार ब्रदर्ज नाम से ठेकेदारी करने लगे। पढ़ाई के लिए दोनों भाइयों ने कर्ज लिया था, उसकी वापसी अदायगी नहीं हो सकी। अतः नाहन का घर नीलाम हो गया। कर्जे की अदायगी न होने के कारण डॉ. परमार की लाना बाका में जमीन रियासत ने नीलाम कर दी।



रेणुका मेले के अवसर पर तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. वाई.एस. परमार

वे 1930 में बतौर सब जज लगे। 1937 में सत्र न्यायाधीश बने तथा वर्ष 1941 में त्यागपत्र दे दिया।

वतन से जुदाई, सैनधार और सिरमौर से दूरी, अपनों से अलग होने की पीड़ा थी। लेकिन बचपन से कठोर परिश्रमी, धैर्यवान और ऊंचे मनोबल के स्वामी डॉ. परमार को तो एक नई मंजिल की तलाश थी। उस वक्त देश की आजादी के लिए जोरों पर संघर्ष था। बेशक रियासतों में ऐसे हालात न थे लेकिन नए हालात, नए परिवर्तन की रोशनी ने डॉ. परमार को आजादी की ओर लालायित किया। पहाड़ और पहाड़ी जनमानस की दुर्दशा व रजवाड़ों की मनमानी से वे पूरी तरह वाकिफ थे।

युवा परमार में कुछ नया कर देश की सेवा का जज्बा पनपा था। इसे नियति ही कहें कि उन्हें सिरमौर छोड़कर लाहौर आना पड़ा। उस वक्त लाहौर स्वतंत्रता आंदोलन का गढ़ माना जाता था। वे दिल्ली में रहते हुए भी वे अपनी धरती से जुड़े रहे। 1943 से 1946 तक सिरमौर एसोसिएशन, दिल्ली में सचिव, 1946-47 हिमाचल हिल स्टेट काउंसिल के प्रधान, 1947-48 ग्रंपिंग एंड एम्ल्गमेशन कमेटी (ऑल इंडिया पीपल्ज कांफ्रेंस), प्रधान प्रजामंडल सिरमौर तथा संचालक सुकेत आंदोलन रहे।

इन वर्षों में डॉ. परमार ने राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर एक कुशल राजनीतिज्ञ की पहचान हासिल की।

26 जनवरी, 1948 को शिमला के गंज बाजार में आयोजित सार्वजनिक सभा में एक ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित कर राष्ट्रीय

समाजशास्त्री से राजनेता

डॉ. परमार उच्चकोटि के समाजशास्त्री थे। वे सामाजिक परिवर्तन के कारणों, नियमों और सिद्धांतों से भलीभांति परिचित थे। इस संदर्भ में डॉ. परमार का योगदान न केवल एक मुख्यमंत्री के रूप में उल्लेखनीय है, बल्कि एक समाजशास्त्री के रूप में भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक हिमालय में बहुपति प्रथा (1975) में प्रकाशित हुई। परंतु उसकी पृष्ठभूमि उन्होंने 1944 में बना दी थी, जब उनका शोध प्रबंध 'हिमालय में बहुपति प्रथा की सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि' लखनऊ विश्वविद्यालय में पी.एच.डी. की उपाधि के लिए स्वीकृत हुई। 30 वर्षों उपरांत डॉ. परमार ने इसे पुस्तक के रूप में उन विचारों को सुव्यवस्थित रूप में आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत किया।

इसके अलावा डॉ. परमार ने हिमाचल : इट्स शेप एंड स्टेट्स, हिमाचल प्रदेश केस फार स्टेटहुड, हिमाचल प्रदेश एरिया एंड लैंग्वेजज तथा स्ट्रेटेजी फॉर डवेल्पमेंट ऑफ हिल एरियाज जैसी पुस्तकें लिखीं। इससे विशाल हिमाचल का सपना साकार हुआ।

सचिवालय पुस्तकालय व परमार

हिमाचल के महान लेखक एक इतिहासकार मियां गोवर्धन सिंह के शब्दों में, “सचिवालय पुस्तकालय से डॉ. परमार का गहरा नाता था। वे अनेक बार पांच-पांच घंटे लाइब्रेरी में बैठकर कृषि, बागबानी, डेयरी संबंधी पुस्तकों का अध्ययन करते थे। वे सदैव नई पुस्तकों तथा नई जानकारी को पढ़-पढ़कर हिमाचल के विकास के प्रति संलग्न रहते थे।” डॉ. परमार व मियां गोवर्धन सिंह के मध्य एक गहरा रिश्ता था। इस रिश्ते को वे दुर्लभ पुस्तकों के माध्यम से ताउम्र बनाए रहे।

नेतृत्व से अनुरोध किया कि सभी पहाड़ी रियासतों का विलय कर एक नए राज्य का गठन किया जाए। इस संघर्ष में एक ऐसी विचारधारा को जन्म दिया, जिससे राज्य के गठन का मार्ग प्रशस्त हुआ।

हिमालयी क्षेत्र की रियासतों का विलय कर उन्हें भारतीय संघ में शामिल करने के लिए अखिल भारतीय राज्य पीपल कांफ्रेंस की स्वीकृति से स्थानीय नेताओं द्वारा कायम मुकाम सरकार का गठन किया। इस सरकार की योजना रियासतों को एकजुट कर इनमें राजाओं के उन मंसूबों को नाकाम करना था जो कुछ और वक्त तक अपना राज चलाना चाहते थे।

सिरमौर में श्री शिवानंद रमौल को इसका अध्यक्ष, बिलासपुर से सदानंद चंदेल, बुशैहर से पं. पदम देव, सुकेत से श्री मुकंद लाल को इसका सदस्य बनाया गया। इस प्रोविजनल सरकार में हिमालयन प्रांत के विभिन्न क्षेत्रों को माकूल प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया।

सोलन में बघाट के राजा दुर्गा सिंह के नेतृत्व में 26 जनवरी, 1948 को एक सम्मेलन हुआ था। इसका प्रोविजनल सरकार के प्रतिनिधियों ने विरोध किया। सरकार के प्रतिनिधियों ने हिमाचल के गठन के लिए सुन्नी (भज्जी) में 8 फरवरी, 1948 को एक अहम बैठक की। इस बैठक में यह प्रण लिया गया कि हिमालय स्टेट की रियासत का विलय करने के लिए एक आंदोलन चलाया जाए। इस संपूर्ण रणनीति में डॉ. परमार का योगदान अहम रहा।

18 फरवरी, 1948 को प्रातः सुकेत रियासत पर कब्जा करने के लिए पं. शिवानंद रमौल, पंडित पदमदेव तथा असंख्य कार्यकर्ता तत्तापानी से सुकेत रियासत में दाखिल हुए। हिमाचल के इतिहास का यह एक ऐतिहासिक पल था।

हिमाचल प्रदेश विधानसभा में 24 जनवरी, 1968 को तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. परमार ने द ट्रिब्यून में 7 मार्च, 1948 को प्रकाशित लेख ‘सात दिन जब हिमालय दहल गया’ का उल्लेख कर इन सात दिनों के संघर्ष में सुकेत रियासत को पूर्वी पंजाब की सरकार ने अपने अधीन लिया। डॉ. परमार ने शिमला में रहकर इन सात दिनों में संघर्ष की जानकारी देश के विभिन्न समाचार पत्रों से साझा की।

इससे पहले, हिमाचल में प्रजामंडल की गतिविधियां रियासतों के खिलाफ चल रही थीं। फरवरी 1947 में भज्जी के लीलादास वर्मा, बिलासपुर के कांशी राम उपाध्यक्ष तथा प्रजामंडल के कुछ अन्य कार्यकर्ता डॉ. यशवंत सिंह परमार के पास दिल्ली गए और उन्हें शिमला लेकर आए। गौरतलब है कि परमार ने सिरमौर रियासत के साथ संबंध विच्छेद के कारण वे लाहौर तथा दिल्ली चले गए थे।

शिमला में पं. पदम देव, शिवानंद रमौल, दौलत राम सांख्यायन, पं. सीता राम, दुर्गा सिंह राठौर और अन्य पहाड़ी नेताओं के आग्रह पर डॉ. परमार स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल हुए। उन्होंने शिमला में उपनगर संजौली में कृष्ण विला लॉज में रहना आरंभ किया। और वहीं पर लीला दास वर्मा ने प्रजामंडल का



तत्कालीन वित्त मंत्री कर्म सिंह जलाल नदी पर बागथन में पुल का उद्घाटन करते हुए। तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. वाई.एस. परमार


ऐतिहासिक नगरी पांवटा में होला मुहल्ला कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. वाई.एस. परमार

कार्यालय खोला।

डॉ. परमार ने इस दौरान सक्रियता से हिमाचल की राजनीति में पदार्पण कर पहाड़ी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलन का नेतृत्व तथा पहाड़ी क्षेत्रों में एकीकरण को आगे बढ़ाया।

मार्च, 1947 में हिमालयन हिल स्टेटस रीजनल काउंसिल की बैठक शिमला के रॉयल होटल में आयोजित हुई। नई काउंसिल के प्रधान डॉ. परमार को चुना गया। इस काउंसिल का पहला सम्मेलन 31 जुलाई 1947 को शिमला की पहाड़ी रियासत सांगरी में आयोजित किया गया। सम्मेलन की सफलता तथा लोगों की भावनाओं को देखते हुए सांगरी का राजा रियासत छोड़कर परिवार सहित कुल्लू रियासत में आनी को पलायन कर गया।

डॉ. परमार तथा प्रजामंडल के कर्मठ नेताओं की सक्रियता से पहाड़ों में स्वतंत्रता की बयार तेजी से चल पड़ी थी।

15 अगस्त, 1947 को एक लंबे संघर्ष के उपरांत देश आजाद हुआ। पहाड़ों में तो अभी भी रियासतों का दौर था। डॉ. परमार ने भी वर्षों उपरांत नाहन पहुंच कर अपनी माटी को सलाम किया। पहली बार 15 अगस्त 1947 को नाहन में आयोजित बड़े जलसे में शिरकत की। कांग्रेस प्रधान बाबू धर्मनारायण वकील ने जलसे की सदारत की। श्री राम दयाल नीरज ने तिरंगे झंडे की शान में गीत गाया।

प्रजामंडल का संघर्ष देश की आजादी के बाद चलता रहा। केंद्र सरकार ने भी अपने प्रयास जारी रखे। 8 मार्च, 1948 को शिमला की पहाड़ी रियासतों के राजाओं ने विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए। मंडी के राजा ने 14 मार्च, 1948 को विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए। अंततः 15 अप्रैल, 1948 को पहाड़ी क्षेत्र में 30 छोटी-बड़ी रियासतों को मिलाकर हिमाचल प्रदेश का उदय हुआ।

डॉ. परमार का इस आंदोलन के उपरांत हिमाचल में एक नक्षत्र की माफिक उदय हुआ। 1948 में उन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में मनोनीत किया गया। 1948 से 1952 तथा सदस्य सचिव हि. प्र. चीफ कमिश्नर एडवाइजरी काउंसिल, 1948-64 अध्यक्ष हि. प्र. कांग्रेस कमेटी, 1952-56 मुख्यमंत्री, 1957 सांसद, 1961 में सलाहकार हिमाचल के लिए सर्वोच्च न्यायालय, वर्ष 1967 में हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। वर्ष 1967 में एक बार पुनः मुख्यमंत्री बने और 24 जनवरी, 1977 तक मुख्यमंत्री पद पर रहे।

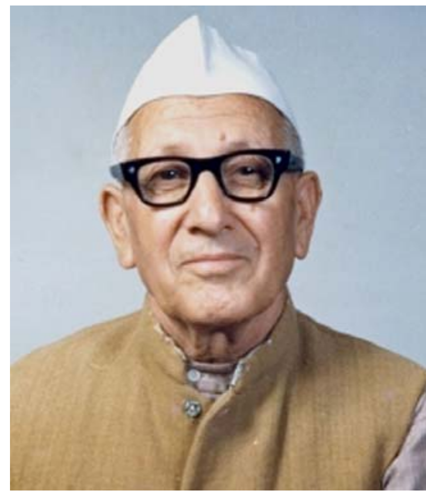
सिरमौर के चन्हालग गांव के बालक ने संघर्ष कर हिमाचल की बागडोर संभाली। हिमाचल को आरंभिक काल में विकास की ठोस नींव प्रदान की। सड़क निर्माण, वन संरक्षण, ऊर्जा उत्पादन, जल, कृषि, बागबानी क्षेत्र को उच्च प्राथमिकता दी। उन्होंने पर्वतीय विकास का नया मॉडल रखा। इसी का ही प्रतिफल है कि आज हिमाचल विकास का अग्रदूत बना है।

डॉ. परमार एक बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, कुशल प्रकाशक, प्रखर राजनेता, हर हिमाचली के दिल में राज करने वाली एक ईमानदार शख्सीयत थे। उन्होंने पहाड़ की भाषा, संस्कृति तथा पहरावे को नई पहचान दिलवाई।

सिरमौर का यह सपूत आज भी हर हिमाचल के जहन में रचा-बसा है। उनका संपूर्ण जीवन एक संघर्ष की कहानी बयां करता है।

उप निदेशक, निदेशालय, सूचना एवं जन संपर्क, छोटा शिमला, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, मो.

पझौता आंदोलन के सूरमा वैद्य सूरत सिंह



राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के आह्वान पर जब देश में वर्ष 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन चल रहा था, उस वक्त पहाड़ी की एक शांत रियासत सिरमौर में सामंतशाही के खिलाफ पझौता आंदोलन का बिगुल बजा था। वर्ष 1942 में पझौता क्षेत्र के जंदोल टपरोली गांव की स्वायत्त पाठशाला के प्रांगण में क्षेत्र के नवयुवकों की बैठक हुई। इस बैठक में क्षेत्र के जुझारू नवयुवक सूरत सिंह जो बाद में वैद्यजी के नाम से विख्यात हुए, ने सभी नौजवानों को स्थानीय परंपरा के अनुसार 'लोटा नमक' की कसम दिलाकर प्रजामंडल का गठन किया और सामंतशाही के खिलाफ एक सशक्त आंदोलन खड़ा किया।

न यातायात की सुविधा न संचार व्यवस्था। न कोई ठोस संसाधन और न ही कोई शिक्षित साथी व मार्गदर्शक। इन दुश्वारियों के बावजूद माटी के लाल वैद्य सूरत सिंह ने अपने भोले-भाले ग्रामीण साथियों के साथ पहाड़ से टक्कर लेने का निर्णय लिया। आंदोलन की ज्वाला धीरे-धीरे भड़कने लगी और सामंतशाही की नींद काफूर हो गई। सिरमौर रियासत के तत्कालीन राजा राजेंद्र प्रकाश ने आंदोलन को दबाने के लिए डी.ए.पी. जगत सिंह के नेतृत्व में पुलिस बल भेजा जिन्हें आंदोलनकारियों ने उलटे बंदी बनाकर मवेशीखाने में बंद कर दिया। अंततः सिरमौर हुकूमत ने कर्नल वाम के नेतृत्व में सेना भेजी। सेना ने दमनकारी नीतियां अपनाईं। 11 जून, 1943 को निहत्थे आंदोलनकारियों पर भीषण गोलीबारी हुई। इसमें वैद्य जी के साथी कमनाराम शहीद हुए तथा अनेक आंदोलनकारी घायल हुए।

सेना ने गांवों में लूटपाट की और फसलों को नष्ट कर दिया। हजारों रुपये व्यक्तिगत जुर्माने के रूप में तथा 25 हजार रुपये मालगुजारी के रूप में बटोर कर सिरमौर रियासत के खजाने में जमा करवाए। रियासत की सैन्य कार्यवाई में वैद्य सूरत सिंह में पैतृक निवास को डाईनामाईट से उड़ा दिया गया। इस घटना में वैद्य जी तथा उनका परिवार सकुशल बच निकले। बाद में, वैद्य जी तथा 69 अन्य आंदोलनकारियों को गिरफ्तार किया गया। इस सभा की विभिन्न धाराओं के तहत सश्रम कारावास की सजाएं सुनाई गईं। वैद्य सूरत सिंह को काला पानी और उम्रकैद की सजा, बस्ती राम और चेत सिंह वर्मा को भी उम्रकैद की सजा हुई जबकि 14 व्यक्तियों को सबूतों के अभाव में बरी कर दिया गया।

वैद्य सूरत सिंह को अन्यों के साथ नाहन जेल में बंदी रखा गया। उन्हें जेल में यातनाएं दी गईं। वैद्य जी ने उन्हें सहर्ष झेला। जेल में अन्य कैदियों को दी जाने वाली असहनीय कठोर यातनाओं के विरोध में वैद्य सूरत सिंह ने भूख हड़ताल तक की। वे इस आंदोलन से एक जननायक के रूप में उभरे।

देश 15 अगस्त 1947 को आजाद हुआ। लेकिन इन्हें तथा इनके साथियों बस्ती राम और चेत सिंह की रिहाई न हुई। इन्हें तत्कालीन भारत सरकार ने सचिव श्री ई.पी. कृपलानी के सिरमौर रियासत के साथ भारत में विलय प्रस्ताव पर 21 मार्च 1948 को हस्ताक्षर करने से मात्र तीन दिन पूर्व रियासत सरकार ने रिहा किया। जबकि अन्य कैदियों को 1947 में छोड़ दिया गया था।

8 दिसंबर 1912 को पझौता घाटी के कटोगड़ा में देवी सिंह व माता मुन्नी देवी में घर हुआ। वैद्य जी ने तत्कालीन उत्तर प्रदेश के ऋषिकेश से आयुर्वेदाचार्य की डिग्री हासिल की थी। कुछ ही रोज तक मानव चिकित्सा करने के उपरांत वे राष्ट्र की चिकित्सा करने में जुट गए। वैद्य जी कवि, लोक गीतकार, संगीतज्ञ तथा उच्चकोटि के लेखक भी रहे। उन्होंने पझौता आंदोलन का इतिहास स्थानीय भाषा में प्रकाशित करवाया। उनका सिरमौर की संस्कृति, लोक कला के संरक्षण में भी अहम योगदान रहा। वे दो बार हिमाचल विधान सभा के लिए शिलाई क्षेत्र से निर्वाचित हुए और खादी बोर्ड के अध्यक्ष भी रहे। स्वतंत्रता सेनानी देश सेवा, समाज सेवक के रूप में वे आज भी अपने समाज में जिंदा हैं। वैद्य जी के नाम लेते ही हर सिरमौरी का सिर गर्व से ऊंचा हो जाता है। सिरमौर की माटी का यह सपूत 30 अक्तूबर 1992 को इस धरा को छोड़ गया।

साहित्यकार, प्रकृति प्रेमी व स्वतंत्रता सेनानी शेरजंग



सिरमौर का सपूत शेरजंग एक लेखक, प्रकृति प्रेमी तथा स्वतंत्रता सेनानी के रूप में जाने जाते हैं। शेरजंग का जन्म 27 नवंबर, 1906 को नाहन में चौधरी प्रताप सिंह के घर पर हुआ। उनके पिता सिरमौर रियासत में कलेक्टर के पद पर तैनात थे। आरंभिक शिक्षा नाहन में ही हुई। बालक को घर से संस्कारित शिक्षा प्राप्त हुई थी। उसे जीवन का यथार्थ तथा देश के बारे में माता-पिता से श्रेष्ठ संस्कार मिले थे। जब वह चौथी कक्षा में पढ़ता था तो अध्यापक द्वारा कक्षा में उससे किए दुर्व्यवहार के कारण उसने स्कूल छोड़ दिया। शेरजंग बचपन से ही दिलेर था। उसने 14 वर्ष की आयु में ही एक आदमखोर शेर को मार दिया था। स्कूल छोड़ने के उपरांत शेरजंग को फ्रांसीसी अध्यापक के अधीन शिक्षा मिली। इस अध्यापक ने उसे फ्रांस की क्रांति बारे संपूर्ण जानकारियों से लबरेज किया। नाहन में वह लाहौर चला गया तथा हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन का सदस्य बना और सरदार भगत सिंह, भगवती चरण वोहरा तथा चंद्रशेखर आजाद के साथ मिल कर क्रांतिकारी गतिविधियों में शामिल हुआ।

वर्ष 1929 में तत्कालीन अंग्रेज हुकूमत ने भारत के सभी शहरों तथा कस्बे में पोस्टर लगाए जा सके ताकि लुधियाणा के समीप अहमदगढ़ में ट्रेन को रोककर लूटने वाला और कोई नहीं बल्कि शेरजंग ही था। अंग्रेजों ने शेरजंग को पकड़ने के लिए सघन अभियान चलाया लेकिन वे कामयाब नहीं हुए। उन्होंने इस रेलगाड़ी को इस मकसद से रोका था ताकि धन लूट कर सेंट्रल जेल लाहौर में बंद भगत सिंह व उनके साथियों को छुड़ाया जा सके। ब्रिटिश पुलिस ने शेरजंग को पकड़ने के लिए तीस हजार रुपये के इनाम की भी घोषणा की लेकिन वे कामयाब नहीं हो पाए। अंततः वे अपने पिता के निर्देश पर पुलिस के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया। अंग्रेज सरकार ने उनपर मुकद्दमा चलाया और उन्हें मौत की सजा सुनाई। लेकिन बाद में इसे ताउम्र सजा में बदल दिया था। इस कारण शेरजंग ने 14 वर्ष जेल की सजा काटी। आजादी के उपरांत शेरजंग ने नई दिल्ली में पाकिस्तान से आए शरणार्थियों के लिए लगाए गए शिविरों में तन्मयता से कार्य किया जिसकी सराहना भारत के प्रथम प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल ने भी की। जेल की सजा के दौरान शेरजंग ने अनेक पुस्तकें भी लिखीं जिनमें 'ट्रायस्ट विथ टाइगर्ज', 'राम ब्लिंग इन टाइगर लैंड', 'गनलोर' तथा 'कारावास के दिन' प्रमुख हैं। उन्होंने 'चिंगारी' पत्रिका का भी संपादन किया। देश का यह महान सपूत 15 दिसंबर 1996 को स्वर्ग सिधार गया।

विश्वविख्यात निशानेबाज समरेश जंग



सिरमौर में प्रतिभाओं की कमी नहीं है, निशानेबाजी में समरेश जंग ने हिन्दुस्तान का परचम अंतराष्ट्रीय स्तर पर लहराया है। सिरमौर के हरिपुर खोल जैसे छोटे से गांव में 5 मई, 1970 में जन्में समरेश को बचपन से ही निशानेबाजी का शौक था।

पिता भारतीय सेवा से सेवानिवृत्त कर्नल है तथा दादा शेरजंग स्वतंत्रता सेनानी रहे हैं। समरेश की आरम्भिक शिक्षा मॉर्डन स्कूल दिल्ली में हुई। तदोपरांत ओसमानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद से स्नातक की डिग्री हासिल की। उन्हें निशानेबाजी का वातावरण पारिवारिक परिवेश से ही मिला। दादा ने उन्हें निशानेबाजी की आरम्भिक शिक्षा प्रदान की। पिता के सेना में होने के कारण बंदूकों से तो लगाव स्वतः ही था।

समरेश ने निशानीबाजी के समर में बहुतों बार विजयी जंग लड़ी और देश व प्रदेश का नाम रौशन किया।

वर्ष 2002 में मैनचैस्टर कॉमनवैल्थ खेलों में भारत के लिए दो स्वर्ण पदक जीते। खेलों के प्रति उल्लेखनीय योगदान के लिए केंद्र सरकार ने अर्जन पुरस्कार से सम्मानित किया। आस्ट्रेलिया में 2006 के कामनवैल्थ खेलों में भी समरेश जंग ने पांच स्वर्ण, एक रजत व एक कांस्य पदक जीता। 2008 में वेजिंग ओलम्पिक में वे पदक पाने में चूक गये।

सिरमौर के इस निवासी ने निशानेबाजी में सिरमौर का नाम रोशन कर युवाओं को इस खेल के प्रति प्रेरित किया है।

सिरमौर की बूढ़ी दिवाली

प्राचीन परम्पराओं की अनूठी मिसाल

मेला राम शर्मा

भगवान राम के अयोध्या लौटने की खुशी में जिस तरह पूरे राष्ट्र में दीपावली का पर्व मनाया जाता है उसी प्रकार हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिला में संगड़ाह और शिलाई उप-मण्डल के अनेक गांवों में दीपावली के ठीक एक माह पश्चात् कौरवों पर पांडवों की विजय और पांडवों के स्वराज्य की स्थापना की खुशी में बूढ़ी दिवाली का त्योहार बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है। हर साल नवम्बर यानि हिन्दू माह मार्गशीर्ष की भीम अमावस से शुरू होने वाला बूढ़ी दिवाली का त्योहार इस क्षेत्र में साल भर का सबसे प्रमुख उत्सव है। इस क्षेत्र में बूढ़ी दिवाली त्योहार यूं तो सैकड़ों गांवों में आज भी पूरे जोश के साथ मनाया जाता है परन्तु शिलाई के द्राबिल गांव का बूढ़ी दिवाली त्योहार आज भी अपने प्राचीन और पारम्परिक स्वरूप के लिए अलग पहचान को सहेजे हुए है। भीम अमावस को आधी रात के पश्चात् जब इस गांव का समस्त जनपद गांव के मध्य स्थित ठारी देवी के प्रांगण में मशालें जलाकर पांडवों की विजय का उद्घोष यानि 'लिंबर' लगाते हैं तो अद्भुत दृश्य उभरता है। ढोल-नगाड़ा, दमान्टू और रणसिंगा जैसे लोक वाद्य यन्त्रों की थाप पर नाचते झूमते ग्रामीण मशाल जुलूस के रूप में गांव के एक छोर पर निर्धारित स्थल पर उस 'बलराज' को जलाकर विजय उद्घोष करते हैं जिसे बुराई पर अच्छाई की जीत का प्रतीक माना जाता है। रात खुलने से पूर्व व बलराज को फूंकने के पश्चात् मशाल के साथ पारम्परिक रासा नृत्य करते हैं। इस रासा नृत्य को देखने के लिए हजारों की संख्या में लोग दूर-दूर से द्राबिल पहुंचते हैं। यहां सिरमौर के अलावा उत्तराखण्ड के जौनसार-बावर क्षेत्र से भी भारी संख्या में लोग बूढ़ी दिवाली त्योहार का लुत्फ उठाने चले आते हैं। द्राबिल गांव की बूढ़ी दिवाली त्योहार की एक अन्य विशेषता यह भी है कि यहां रासा नृत्य आज भी प्राचीन परम्परानुसार 'चोल्टू' पहन कर किया जाता है। हर घर के पुरुष लोक नर्तक जब कढ़ाईनुमा सफेद चोल्टू पहन कर माला नृत्य में जुड़ते हैं तो एक ही पोशाक में चोल्टू माला नृत्य का नजारा देखते ही बनता है। चोल्टू नृत्य करते सैंकड़ों लोगों का झुण्ड लोक वाद्य यन्त्रों की थाप पर मस्त चाल में जब गोलाकार में नृत्य करते हैं तो स्वर्गिक दृश्य उत्पन्न होता है। इस बीच गांव के हास्य कलाकार अनेक प्रकार के खेल्टू स्वांगों से दर्शकों को लोटपोट करते हैं। इस पारम्परिक लोक नाट्य कला के माध्यम से जहां खेल्टू कलाकार लोगों का मनोरंजन करते हैं वहीं अनेक सामाजिक कुरीतियों पर भी कुठाराघात करते हैं। बूढ़ी दिवाली त्योहार के अन्तिम यानि चौथे दिन के आयोजन को यहां 'उनड़दा' तीज कहते हैं। इस दिन भी पूरा दिन चोल्टू नृत्य होता है और दूर-दूर से आए नृत्य के शौकीन मेहमानों को भी चोल्टू पहनाकर माला नृत्य के लिए आमन्त्रित किया जाता है। चोल्टू बनाने वाले पुश्तैनी दर्जी बंसी राम बतातें हैं कि एक चोल्टू तैयार करने में कम से कम चौदह मीटर कपड़े की आवश्यक्ता होती है और एक चोल्टू की कढ़ाई-सिलाई में लगभग पांच दिन का समय लगता है।

इस चार दिवसीय बूढ़ी दिवाली त्योहार के दौरान रिश्तेदारों और अन्य मेहमानों की खूब आवभगत होती है। यहां इस दौरान पारम्परिक व्यंजन गुल-गुले, मीठी रोटी और तेलपाकी बनाने की प्रथा आज भी बरकरार है। ये पारम्परिक पकवान देसी-घी के साथ परोसे जाते हैं। साथ में पूरा दिन मेहमानों को मूड़ा और शाकुली आदि मिष्ठान देकर 'अतिथि देवो भवः' की सूक्ति को साकार किया जाता है।

द्राबिल गांव की बूढ़ी दिवाली त्योहार की एक और खास बात यह भी है कि यहां कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकार के नशे का सेवन नहीं करता। द्राबिल के पूर्व प्रधान श्री बस्ती राम शर्मा बताते हैं कि यहां सभी लोग अपने देव धर्म से बंधे हैं। यहां हर व्यक्ति अपने से बड़े को सम्मान देता है और आज भी अपनी प्राचीन परम्पराओं को संजोये हुए हैं। बूढ़ी दिवाली त्योहार के लिए गांव के सभी नौकरी पेशा लोग अपने गांव लौट कर अपनी पुश्तैनी परम्पराओं को आगे बढ़ा रहे हैं।



बूढ़ी दिवाली पर हास्य कलाकार जनसमूह का खेल्टू स्वांगों से मनोरंजन करते हुए

सिरमौर में दीपावली की अनूठी परंपराएं

दीपावली के बाईस दिन पूर्व दुर्गा अष्टमी के दिन गांवों में 'दिराड़ी पूजन' की प्रथा है। इस पूजन के लिए स्वाभाविक रूप से उगने वाले जंगली पुष्प 'बूं' को उखाड़कर घरों में लाया जाता है। घर में इनके सफेद रंगों के फूलों को इकट्ठा करके तीन, पांच या सात मोटी गुच्छियां बनाई जाती हैं। फूल की पिछली मोटी घास को संभाल कर रख दिया जाता है, जिसे बाद में दीपावली के दूसरे दिन प्रातः जला दिया जाता है। फूलों की उन मोटी गुच्छियों में कुछ और रंगीन फूल लगाकर उन्हें सजाकर एक 'शूप' में बिठाया जाता है। घर की मुख्य महिला इनका सत्कार करती है और इनके आगे धूपा जलाकर गेहूं अथवा चावल का 'मूड़ा' तथा अखरोट रख देती है। तत्पश्चात् इनके लिए खिचड़ी अथवा दाल-भात बनाकर अपराह्न घी, दही मिलाकर इन गुच्छियों के आगे रखा जाता है तथा वह मूड़ा वहां से हटा दिया जाता है।

सायं संध्या के समय ग्राम के प्रत्येक घर से इस 'दिराड़ी' को खिचड़ी अथवा दाल-भात की थाली सहित उठाकर गांव की समीपवर्ती बांवड़ी के पास दमानु-नगारे आदि को बजाते हुए ले जाते हैं। बच्चों के अतिरिक्त इस यात्रा में कुछ बड़े लोग भी सम्मिलित होते हैं। पानी के पास पहुंचने पर ये गुच्छियां वहां बांवड़ी की मुंडेर पर रखी जाती हैं तथा बाद में दही-भात आदि चढ़ाकर आपस में मिल-बांटकर परस्पर सौहार्द से खाई जाती हैं। तब प्रत्येक परिवार का एक सदस्य एक गुच्छी वापिस घर ले आता है जहां इसे वर्षभर सुरक्षित रखते हुए देव-धूप अथवा हवन आदि में प्रयोग किया जाता है। रात्रि के आरंभ होने पर बच्चे सामूहिक रूप से 'हुशु' जलाते हैं। ये 'हुशु' काफी दिनों पहले लंबा घास सुखाकर अथवा चीड़ के फल 'चियाकटु' को तार आदि से बांधकर उसमें तेल आदि छिड़कर तैयार किए जाते हैं। बच्चे इन हुशुओं को जलाकर गोलाकार अथवा अष्टाकृति में अपने सिर पर घुमाते हैं। हुशु जलाते समय यह नारा बराबर लगाया जाता है - 'होटे आठयो आय दिवाली बले राज'। अर्थात् अष्टमी गई और दीवाली आ रही है। वे बलिराज का स्मरण करते हुए दीपावली के शुभ आगमन के प्रति अपना उल्लास प्रकट करते हैं। अष्टमी के पर्व पर इस प्रकार का विधान आज भी रेणुका, नाहन, शिलाई व पच्छाद के गांवों में देखा जाता है।

इसके बाद के बीस-बाईस दिन लिपाई-पुताई व साफ-सफाई जैसे कार्यों में बीत जाते हैं और तब आता है बहुप्रतीक्षित दीपावली का पर्व, जिसे अपनी विशेष परंपराओं के साथ पांच-छः दिनों तक धूमधाम से मनाया जाता है। दीपावली से दो दिन पहले पच्छाद क्षेत्र में 'मडेंटी' मनाई जाती है। इस दिन कुछ गांवों में पूर्वाह्न तथा कुछ में अपराह्न चने, लोबिया आदि उबालकर केवल दानों में छौंका लगाया जाता है। तब इस प्रकार के 'मूड़े' को अखरोट के साथ मिलाकर खाया जाता है। इसकी विशेषता यह देखी गई है कि अखरोट बहुत अधिक मात्रा में मिलाए जाते हैं और तब यह मूड़ा भर पेट खाया जाता है।

दूसरे दिन अर्थात् दीपमाला से पहले दिन को लगभग पूरे सिरमौरी गांवों में 'असकलांटी' के रूप में मनाया जाता है। इस दिन 'असकलियां' बनाकर घी-शक्कर, चासनी, शहद अथवा दाल के साथ खाई जाती है। जो लोग रोजगार आदि के कारण गांवों से बाहर रहते हैं वे भी इस अवसर पर अपने घर आकर अन्य कुटुंबियों के साथ दिवाली का आनंद लेते हैं।

दीपमाला मनाने की भी गांवों में विशेष प्रथा है। घरों में एक दीप तो तेल अथवा सामर्थ्यानुसार घी से भी पूरी रात जलाया जाता है जो प्रातः तक अखंड रूप से जलता है। इसके अतिरिक्त सायं सांध्यकाल में विशेष रूप से छोटी-छोटी ज्योतियां जलाई जाती हैं जिन्हें स्थानीय बोली में 'दिवड़ी बालना' कहा जाता है। इन दिवड़ियों के लिए गागटी के छोटे-छोटे टुकड़ों में 'शाकी' के टुकड़े गाड़े जाते हैं। एक कौली आदि पात्र में 'काकरू' अथवा 'गेरू' घोलकर उसमें लिखने के लिए छोटा कपड़ा साथ रखा जाता है। मंदिर से ज्योति लेकर प्रत्येक घर का सदस्य सर्वप्रथम मंदिर के बाहर तथा 'जायगा' में एक-एक दिवड़ी जलाकर अपने घर, ओबरे, खलिहान, ऊखल आदि के पास दिवड़ियां जलाकर प्रकाश करता है। जहां दिवड़ियों को रखना होता है, वहां पहले सफेदी से गोला बनाया जाता है तथा तब उसके मध्य वह दिवड़ी रखी जाती है। आजकल लोग दिवड़ियों के लिए कपड़े की बत्ती अथवा मोमबत्ती का भी प्रयोग करने लगे हैं।

इस प्रकार दिवड़ियां जलाए जाने के बाद गांव के बच्चे एकत्र होकर इस दिन भी अष्मी की तरह ही 'हुशु' फेरते हैं। बच्चे 'आय दीवाली बले राज' का हर्षनाद करते जाते हैं। तब पटाखे भी चलाए जाते हैं। सभी सदस्य मिलकर श्री हरि अथवा लक्ष्मी माता की आरती गाते हैं। दीपावली के इस पर्व पर इस दिन सिरमौर का एक अन्य प्रसिद्ध भोजन 'धरोटी-भात' तैयार किया जाता है। तब रात्रि



भोजन में मिलकर सभी सदस्य घी तथा दही के साथ धरोटी-भात खाते हैं। अमावस्या को 'बड़ी' लगाने का भी गांवों में विशेष प्रथा है। ये बड़ियां माश भिगोकर उन्हें धो-पीस कर गोगटी की डंडियों में चिपका कर सूखने के बाद टुकड़ों को काटकर तैयार की जाती हैं जो स्वाद में अपना अलग ही स्थान रखती है।

रात्रि के चतुर्थ प्रहर अर्थात् भोर-भई में सिद्धांततः अमावस्या टूटने पर गांवों में 'बूड़' जलाने की प्रथा है। 'बूड़' के लिए बच्चे अपना विशेष योगदान देते हैं। वे पिछले कुछ दिनों से 'जूंडे' (मक्की काटने के बाद शेष बचा भाग जो खेत जोतने पर उखाड़ा जाता है) इकट्ठे करके गांव के समीप ही बहुत बड़े ढेर के रूप में एकत्र करते हैं। पहले तो दो समीपवर्ती गांवों में होड़ जैसी लग जाती थी कि किस गांव की ढेरी बड़ी है। उधर अष्टमी के दिन 'बूं' की रखी डंडियों को आज इसमें जलाया जाता है। इसके लिए गांव का कोई मुखिया अमावस्या टूटने पर आवाज लगाता है - 'चाले ला बूड़ फूकणे चालो'। तब प्रत्येक घर से कम से कम एक व्यक्ति उठकर 'बूं' की उस शेष बचाकर रखी मोटी घास को उठाकर उस ढेरी की ओर चल देता है। कुछ बच्चे भी विशेष रूप से जिन्होंने वह ढेर इकट्ठा किया होता है वहां 'हुशु' लेकर पहुंच जाते हैं। तब प्रमुख व्यक्ति उस जूंडे की ढेर में आग लगा देता है। अत्यधिक सूखे होने के कारण वह ढेरी तेजी से आग पकड़ती है, जिसका प्रकाश दूर तक फैल जाता है। तब उस जलती ढेरी में लोग अपने-अपने साथ लाए 'बूं' के शेष घास के बंडलों को फेंकते जाते हैं। इस प्रकार 'बूड़' का दहन किया जाता है। बच्चे यहां भी 'हुशु' जलाते व फेरते हैं।

तब प्रत्येक घर का हर सदस्य उस जलती आग से अपने घर आग (शाकियो द्वारा) ले आता है और पड़ोई (प्रतिवदा) की आग चूल्हे में उसी अग्नि से जलाई जाती है। लोक मान्यता है कि इस प्रकार 'बूड़' फूकने से खुजली आदि चर्म रोगों का विनाश हो जाता है। पुराने समय में तो इस आग को पूरे वर्ष तक संभाल कर रखा जाता था और इसी से प्रतिदिन आग जलाई जाती थी। अब साल भर आग रखने की बात तो नहीं देखी जाती किंतु 'बूड़' जलाने तथा उस दिन आग लाने की प्रथा आज भी कई गांवों में पूर्ववत् बनी हुई है।

पड़ोई-प्रतिपदा अर्थात् गोवर्धन पूजा का यह दिन भी गांवों में विशेष रूप से मनाया जाता है। विशेषकर किसान इस दिन को बड़े चाव से मनाते हैं। इस दिन ग्राम देवता भी जन-साधारण के दर्शनों के लिए मंदिर से बाहर लाए जाते हैं, जहां सभी लोग अपनी श्रद्धानुसार देवता को चावल, अखरोट, पैसे आदि की भेंटें चढ़ाते हैं। प्रसिद्ध मंदिरों में तो इस दिन मेला-सा लग जाता है। उदाहरणस्वरूप सिरमौर के प्रसिद्ध देवता शिरगुल की आदि स्थली 'शाया' में इस दिन देव दर्शन के लिए भीड़ उमड़ पड़ती है। गांवों में लगभग सभी लोक देवता के द्वार देव दर्शन के लिए खुले होते हैं। कुछ देवता इस दिन अपने पूरे क्षेत्र में यात्रा भी करते हैं। उदाहरणार्थ सिरमौर के एक अन्य प्रसिद्ध देव 'खलोग' दीपमाला एवं प्रतिपदा के दिन अपने क्षेत्र 'खुड्डू' एवं 'रायकी' भोज की यात्रा कर लेते हैं। इस स्थिति में जनसामान्य को अपने इष्ट के दर्शन का सहज लाभ मिल जाता है।

देवता की भेंट के साथ-साथ इस दिन कुछ अन्य भेंटें भी चढ़ाई जाती हैं। किसान इस दिन अपने बैलों, हल-जूण आदि कृषि उपकरणों की पूजा करते हैं। इस पूजा तक किसान भोजन नहीं करता तथा निराहार रहते हुए स्नान-ध्यानादि के पश्चात् लगभग दोपहर के समय बैलों को लाकर उनके शरीर पर हाथ फेरता हुआ उन्हें आदर-सम्मान देता है। उन पर 'काकरू' अथवा 'गेरू' से विविध चिन्ह लगाता है और तब उन्हें भात, पीछ, दाल, असकली, धरोटी, पटंडा, कांजन, चासनी आदि मिलाकर उन्हें खिलाता है। यह सामग्री उन्हें पर्याप्त मात्रा में दी जाती है। कृषक अपने हल पर

भी अनेक प्रकार के चिन्ह बनाता है। उन पर कुछ चित्र बनाकर उन्हें सजाता है, संवारता है और तब वहां धूप जलाकर श्रद्धा से चावल तथा अखरोट की भेंट चढ़ाता है। लोहार इस दिन अपने 'आरन' (लोहा घड़ने का स्थान) के पास इसी प्रकार नहा-धोकर धूप-दीप कर भेंट चढ़ाता है। इस प्रकार भेंटें चढ़ाने के बाद परिवार के सदस्य मिलकर भोजन करते हैं। भोजन में आज के दिन 'कांजन' खाई जाती है। कांजन अपर नाम 'कंजेवटो' सिरमौर का एक विशिष्ट भोजन है जिसे प्रायः दिवाली के इसी अवसर पर बनाया जाता है। प्रसंगवश इसकी निर्माण विधि का उल्लेख करना भी अनुचित न होगा। दीपमाला के पहले दिन 'असकलांटी' को एक बड़े बर्तन में लस्सी के साथ चावल खीर की तरह पकाए जाते हैं। इन चावलों को लस्सी में ही खूब पकाया जाता है। जब चावल अच्छी तरह पककर गाढ़े होकर जमने की स्थिति में आ जाएं तो इन्हें उतारकर बांस से बने 'ओड़े' 'अड़की' आदि में 'पराल' (धान का घास) डालकर ऊपर से केले के पत्ते बिछाकर उसके बीच डाला जाता है। तब उसे पत्तों में समेट कर ऊपर से किसी भारी पत्थर आदि से दबा दिया जाता है। तीसरे दिन तक यह भोज्य पदार्थ भली-भांति जम जाता है और तब टुकड़ों में काटकर गुड़ अथवा चीनी की गाढ़ी चासनी या शहद के साथ बड़े स्वाद से खाया जाता है। खट्टा-मीठा यह भोजन सुस्वाद के अतिरिक्त सुपाच्य भी होता है। दूसरे दिन अर्थात् भैया दूज के दिन भी गांवों में विशेष चहल-पहल रहती है। विवाहित बहनें इस दिन अपने भाई के घर मेहमान जाती हैं जिनकी भाइयों को प्रतीक्षा रहती है। दामाद अपने सास-ससुर के लिए भेंट लाते हैं। भेंट में प्रायः सौ अखरोट तथा किलो, दो किलो चावल लाकर सास-ससुर के चरणों में भेंट किए जाते हैं। भेंट की इस प्रक्रिया को कुछ लोग आजीवन निभाते हैं जबकि कुछ साल-दो-साल बाद अनुमति लेकर बंद कर देते हैं। भेंट में अब खील-पताशे भी लाए जाने लगे हैं।

कुछ गांवों में भैया दूज के इस दिन भी देवता मंदिर से बाहर जन-दर्शन के लिए लाए जाते हैं तथा तब लोग वहां अपनी भेंटें चढ़ाते हैं। तहसील रेणुका के ग्राम निहोग के खलोग देवता की मूर्तियां पहले दो दिनों अपने क्षेत्रीय भ्रमण के पश्चात् इस दिन जन साधारण के दर्शनों के लिए मंदिर के बाहर रखी जाती हैं। वहां हजारों की संख्या में लोग एकत्र होकर देवता को मत्था टेकते हैं। दीपावली की अमावस्या से लेकर पंचमी की रात तक अलग-अलग गांवों में विभिन्न नाटक भी खेले जाते हैं। ये नाटक प्रायः रामायण, महाभारत अथवा किसी ऐतिहासिक आख्यान से संबंधित होते हैं जबकि बीच में स्थानीय स्वांग आदि के द्वारा जनानुरंजन किया जाता है। सिरमौर जनपद के ग्रामों में पांच-छः दिनों तक चलने वाले इस दीवाली के पर्व की एक विशेषता 'बूड़ा' नृत्य भी है। इसे 'बूड्डू' 'बुढ़डा' या 'बूढ़ा' जैसे अन्य नामों से भी जाना जाता है। यद्यपि यह नृत्य अब धीरे-धीरे लुप्त होने के कगार तक पहुंचने लगा है तथापि अभी भी इसे कुछ गांवों में देखा जा सकता है। इस नृत्य के विशेषज्ञ एक दल में एकत्र होकर दीपावली की रात चौथे पहर अपने ग्राम मंदिर के प्रांगण में एकत्र होकर वहां गीत एवं वाद्य वादन करते हैं।

इस प्रकार सिरमौर के अधिकतर ग्रामों में आज भी दिवाली का यह पवित्र पर्व विशेष नाच-गान, नाटक-अभिनय, गीत-संगीत, लोक नृत्य एवं विशिष्ट खान-पान के साथ पांच-छः दिनों तक बड़े आनंद एवं हर्षातिरेक से मनाया जाता है।

संदर्भ : हिमप्रस्थ, अक्तूबर, 1998 में ओम प्रकाश राही के लिए सिरमौर में दीपावली की विविध परंपराएं से साभार

(पृष्ठ 151 से आगे)

सिरमौर का वैभव : पांवटा

"देस चाल हम ते पुन भयी,
सहिर पांवटा की सुध लयी
कालंदि तट करे विलासा
अनिक भांत के देख तमाशा।" (विचित्र नाटक)

शहर पांवटा ही इस स्थान का नाम प्रचलित हो गया जहां श्रीगणेश गुरु गोविंद सिंह ने किया। एक अन्य दोहे में भी पांवटा का उल्लेख मिलता है।

"उतेराज श्री नगर को इते नाहन की हद,
सैलपति देहन में लग्यों गुरु के गद
पांवटिक्यों सतगुरु के आनंदपुर ते आये
नाम परियो 'पांवटा' इस सभी देशन प्रगटायो।"

गुरु गोविंद सिंह ने इस स्थान की रमणीकता एवं शांत वातावरण तथा उपयोगिता को समझते हुए इसी स्थान पर अनेक कवि दरबारों का आयोजन किया। अनेक ग्रंथों की रचना की। अपने जीवन के साढ़े चार वर्ष यहां रहे। यहां से उन्होंने आनंदपुर साहिब प्रस्थान किया।

वे यहां अपनी पुनीत स्मृतियां तथा इतिहास को छोड़ गए। जो सिरमौर के गौरवमय इतिहास को स्वतः दर्शाता है। यहां गोविंद सिंहधार, श्री दरबार साहिब, श्री तलब अस्थान, श्री कवि दरबार स्थान, शहीदी निशान साहिब, श्री दस्तर काल्पी ऋषि जी की यादगार, किला महंत कृपाल दास जी, उनकी याद को संजोए हुए है। होला मोहल्ला पांवटा की शान है, जो आपसी सौहार्द का जीता जागता उदाहरण है। सिरमौर रियासत के राजा शमशेर प्रकाश द्वारा निर्मित देई मंदिर, रघुनाथ मंदिर भी अन्य दर्शनीय स्थल हैं।

उप संपादक, गिरिराज कार्यालय, शिमला

लोक संस्कृति

सुख-दुःख बांटने वाला ग्रेवणीं त्योहार

विजय दशमी के उपरांत आने वाली सर्द पूर्णिमा को सिरमौर जनपद में गरबड़े, ग्रेवणें या ग्रेवणीं का त्योहार मनाया जाता है। यह पर्व विशेषकर, सिरमौर जिले के धारटी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर उल्लास के साथ आयोजित होता है।

गरबड़ा, एक मिट्टी का पात्र होता है जिसके भीतर एक छोटा-सा दीया रखकर ऊपर से ढक्कन लगा दिया जाता है। गरबड़ा बनाते वक्त इसमें स्थान-स्थान पर गोल, लंबे, आढ़े-तिरछे छिद्र बना दिए जाते हैं जिससे, भीतर जलते दीए का प्रकाश उन्हीं छिद्रों से बाहर दिखाई दे।

पूर्णिमा से दो-तीन दिन पूर्व महिलाएं व बच्चे गरबड़ों के निर्माण में जुट जाते हैं। इसके लिए एक विशेष प्रकार की चिकनी मिट्टी जुटाई जाती है। गरबड़े के भीतर रखने के लिए भी मिट्टी की छोटी-छोटी दिवड़ियां बनाई जाती हैं, जिसमें सरसों का तेल और रूई की बाती डाली जाती है। वर्तमान में ये अब बाजार में उपलब्ध हो जाते हैं। हर घर में पूजन के लिए कम-से-कम दो दरबड़े बनाए जाते हैं। आम तौर पर प्रत्येक स्त्री व लड़की अपना अलग दरबड़ा बना लेती है।

गरबड़े रात्रि में मनाया जाने वाला त्योहार है। चौदस की रात्रि को हर घर में सभी गरबड़ों को एक स्थान पर सजाया जाता है। दीवड़ी की बात्ती को तेल डाल, जलाकर भीतर रखा जाता है। फिर जगमगाते गरबड़ों की पूजा स्त्रियों व बच्चों द्वारा की जाती है। दरबड़ों को लेकर गांव में भ्रमण किया जाता है। रात्रि कार्यक्रम ऐसे घर से आरंभ किया जाता है जिसमें बीते एक वर्ष में मध्य मौत या अन्य दुखद घटना घटी हो। ऐसा करना उस दुखी परिवार के घर खुशी का माहौल बनाना होता है। निश्चित समय में गांव की सभी महिलाएं एवं बच्चे उस परिवार विशेष के आंगन में एकत्रित होते हैं। महिलाएं दो-दो की टोली में आमने-सामने होकर अपने गरबड़े घुमाती हैं। साथ में महिलाओं द्वारा गीत भी गाए जाते हैं।

पहला री गरेबेड़ा गोविंद दा... गोविंद दा
हां जी दूसरा बी सकल संसार
नांचो री गरेबेड़ियो-गरेबेड़ियो
गरबेड़ी गरबेड़ा नाच पइयां-नाच पाइयां
हां जी कौन बी नांचे बड़ी देर
नांचो री गरेबेड़ियो-गरेबेड़ियो
गरबेड़ा नाचे दा एक घड़ी दोय घड़ी
हां जी गरेबेड़ी नांचे सारी रात
नांचो री गरेबेड़ियो-गरेबेड़ियो।
नांचदे कूददे भूख लगी, प्यास लगी
हां जी गरेबेड़ा मांगदा दूध भातो-दूध भातो
गरेबेड़ी कड़ुवा सा तेल
नांचो री गरेबेड़ियो-गरेबेड़ियो।
लिआइये री गुजरी दूध भातो... दूध भातो
लिआइये री तेलण तेल
नाचो री गरेबेड़ियो...गरेबेड़ियो

महिलाएं बाद में एकत्रित होकर पड़ुवा (गिद्धा नृत्य) करती हैं। पड़ुवा बधाई गीत से आरंभ होता है।

आज मेरे बधाई सुनों री बेड़े वालियो
फलां की बुआ को बेच के
हमने मिठठी सिरणी खाई
सुनों री बेड़ेवालियो।

गीतों से माहौल खुशगवार बनता है। पुड़वे के अपने ही ढंग के प्रचलित गीत गाए जाते हैं। इसमें फिल्मी गीतों का समावेश भी होता है। नौजवान भांति-भांति के स्वांग बनाकर महिलाओं के मध्य नाचते हैं। स्वांगों में रीछ का स्वांग लोगों का मनोरंजन करता है। इसके अलावा ऊंट, छछूंदर तथा साधू बाबा का स्वांग भी रचा जाता है। ये स्वांग शिमला, सोलन आदि क्षेत्रों में करियाले के रूप में प्रचलित हैं।

कुछ स्थानों पर पूर्णिमा के दूसरे दिन गरबड़ों का ब्याह रचाने का भी प्रचलन है। इस समापन समारोह के लिए वे घर चुना जाता है जहां विवाह होना हो या जहां शादी हुई हो। अन्यथा गांव वालों की सर्वसम्मति से घर का चयन किया जाता है। महिलाएं दो पक्षों में बंट जाती हैं एक वर पक्ष और दूसरी वधु पक्ष। दोनों पक्ष गरबड़े, गरबड़ी का रीति-रिवाजों से विवाह रचाते हैं। इस दौरान गीत, शिठणी गायन से वातावरण उल्लासमय होता है। मूलतः यह त्योहार गांव में आपसी सौहार्द, सुख-दुख बांटने वाला प्रतीत होता है।

संदर्भ : नरेंद्र मोहन रमौल का लेख, हिमप्रस्थ, अक्तूबर, 2001

अनूठे रिवाज
बसतो, भाटीओज व साजा

सिरमौर जिले का गिरी पार क्षेत्र जो उत्तराखंड के जौनसार बावर क्षेत्र के साथ लगता है व पूर्व में सिरमौर रियासत का हिस्सा था, में आज भी अनूठी परंपराएं तथा रिवाज हैं। इस क्षेत्र के निवासियों ने अपनी पुरातन संस्कृति को मेलों, त्योहारों में आज भी संजोकर रखा है। सिरमौर के गिरीपार क्षेत्र में शिलाई, रेणुका तथा राजगढ़ के क्षेत्र आते हैं जहां माघी का त्योहार मनाया जाता है। पारंपरिक तौर पर इसे बसतो, भाटीओज तथा साजा नाम से पुकारा जाता है। माघ वर्ष का वह महीना है जब अत्यधिक ठंड होती है और लोगों को अधिकांश समय घर के भीतर ही बिताना पड़ता है।

माघी त्योहार हर सिरमौर वासी के जीवन का अभिन्न अंग है। यह संस्कृति को जीवंत रखे हुए हैं। भाईचारे व सद्भाव का प्रतीक है। माघी उत्सव को मनाने के लिए उत्सव के प्रथम दिन 10 जनवरी को बसोता मनाया जाता है। इस दिन विभिन्न पारंपरिक भोज जैसे उड़द की दाल, भाप में पकाई रोटी तथा स्टूले (नूडल की माफिक मीठा व्यंजन जो कोदे तथा गेहूं मिश्रित होता है) बनाया जाता है।

अगले दिन यानी 11 जनवरी को भाटयोज मनाया जाता है। इस दिन खिंडा बनाया जाता है। यह गेहूं के आटे का हलवा होता है जिसे घी के साथ खाया जाता है। इसे प्रातः तैयार कर मां काली को चढ़ाया जाता है। तदोपरांत प्रत्येक घर में बकरे की बलि की प्रथा है जो मां काली को अर्पित की जाती है। इसके उपरांत अगले दिन यानी 12 जनवरी को तथा मकर संक्रांति तक साजा मनाया जाता है।

नौ दिन के उपरांत खोड़ा आयोजित किया जाता है। इसमें भी कुछ घरों में बकरे की बलि देने की परंपरा है। यह त्योहार लगभग एक माह तक चलता है तथा संपूर्ण गांव वासी एकत्रित होकर पारंपरिक संगीत के साथ नृत्य करते हैं। यह यह बारी-बारी से प्रत्येक घर में आयोजित होते हैं जो आधी रात तक चलते हैं।

मांस को पारंपरिक तौर पर मिट्टी की हांडी में पकाया जाता है। इसमें कम मसाले, मिर्च बिना प्याज व लहसुन व तेल के पकाने की परंपरा है। एक परंपरा के अनुसार बकरे की चर्बी को भर कर पकाया जाता है। जिसे ससुर तथा अन्य बुजुर्गों को परोसने की प्रथा है। बकरी की जीभ को पकाया जाता है जिसे महिलाओं को परोसा जाता है। बकरी के खून को पकाया जाता है जिसे 'लोई' कहा जाता है। एक अन्य पकवान जिसे खबालू कहते हैं रोटी में बकरी की चर्बी, गुड़ तथा भांग जीरा के साथ मांस में पकाया जाता है।

पहले ब्याहता लड़कियों को कच्चा तथा पके हुए मांस को देने की परंपरा थी। अब समय के साथ इसमें बदलाव देखने को मिल रहा है। अब उपहार के रूप में चावल तथा गुड़ देने की प्रथा है। एक अन्य रिवाज जिसे बायोदात कहते हैं, में पड़ोसियों को दावत देने की प्रथा है।

इस उत्सव के लिए भेड़ तथा बकरी को विशेष तौर पर पाला जाता है जो पाल नहीं सकते, वे खरीद कर लाते हैं। गरीब परिवार बकरी के बदले सुअर की बलि देते हैं। कुछ घरों में मीट को सुखा कर उपयोग में लाया जाता है।

संदर्भ : Maghi Festival in Trans Giri Area of Sirmour district by Pinki Ramaul, dated 13 January, 2018

सास-ससुर को भेंट देने की परंपरा

जिला सिरमौर ने आज भी सदियों पुरानी परंपरा को जीवंत रखा है। दिवाली उपरांत भैया दूज के दिन जिले में दामाद अपने सास-ससुर को दिवाली की भेंट देता है। इसमें खील, बताशे, अखरोट व गुड़ होता है। ऐसी मान्यता है कि जब कई दिनों तक दामाद, ससुराल नहीं जा पाता था तो दिवाली पर ऐसी परंपरा की शुरुआत की गई। दूज के दिन सास-ससुर दामाद तथा बेटी का इंतजार करती है। उनके स्वागत के लिए पारंपरिक पकवान असकलिया, पटांडे, लुशके व काजन बनाए जाते हैं। दिवाली में काजन का विशेष महत्त्व है। काजन को लस्सी व चावल से तैयार किया जाता है। बड़े बर्तन में चावल को लस्सी से पकाया जाता है। उसके उपरांत टोकरी में जिसमें केले के पत्ते रखे होते हैं, उसमें उंड़ेल दिया जाता है। तदोपरांत टोकरी को पत्थर से ढक दिया जाता है। बाद में इसे बर्फी की तरह काटकर परोसा जाता है। काजन के साथ गुड़ से बना शरबत, देसी घी व शक्कर का प्रयोग होता है।

आलेख

सिरमौर जनपद के पारंपरिक वस्त्राभूषण

◆ आचार्य ओमप्रकाश 'राही'

सर्वविदित है कि आदि मानव जंगली जानवरों की तरह निर्वस्त्र रहकर कंद-मूल से ही अपना गुजारा करता था। कृषि युग में उसने हल चलाना सीखा और अन्न उत्पादन कर वृक्षों की छाल व पत्तियों से तन ढकना आरंभ किया। शनैः-शनैः सभ्यता व संस्कृति के विकास के साथ उसने तन ढकने के लिए वस्त्रों का उपयोग किया। ज्यों-ज्यों मानव आर्थिक दृष्टि से संपन्न होता गया तो उसके खान-पान, रहन-सहन, वस्त्राभूषण आदि में निखार व परिष्कार होता गया। धीरे-धीरे वस्त्र, आभूषण आदि क्षेत्र विशेष की पहचान बनते हुए लोक संस्कृति के परिचायक बनते गए।

इस दृष्टि से जब हम सिरमौर जनपद के परिधान तथा आभूषणों पर विहंगम दृष्टिपात करते हैं तो इस दृष्टि से इस जनपद को पर्याप्त संपन्न पाते हैं। यहां के लोगों का पारंपरिक पहरावा तथा सौंदर्य बोधक आभूषण अपनी एक विशिष्ट पहचान रखते हैं। सिरमौर जनपद की तहसील रेणुका के खुड़-रायकी-चिगड़ोटी- लादू भोज, राजगढ़ के पझौता, शिलाई के शेरगांव तथा आंजभोज, पांवटा के धारटी क्षेत्र तथा नाहन के सैनधार आदि क्षेत्रों में प्रचलित वेशभूषा तथा धारण किए जाने वाले आभूषण निम्न हैं :



गोंचा

आरंभिक कथनानुरूप सभ्यता विकास के साथ मनुष्य ने अपने गुप्तांग को ढकना आरंभ किया। कुछ इसी परंपरा में सिरमौर जिले में पुरुषों द्वारा अपने गुप्तांग को ढकने के लिए जिस पतली वस्त्र-पट्टिका का प्रयोग किया गया उसे 'गोंचा' कहा जाता है। अनेकत्र इसे 'खेशड़ी' भी कहा गया है। इस गोंचे अथवा खेशड़ी को पहनने के लिए करधनी में जिस डोर का प्रयोग किया जाता है, उसे 'धोड़ी' कहते हैं। अगले भाग में धोड़ी पर खेशड़ी सिली होती है जिसे लिंग के ऊपर से पीछे पीठ की ओर ले जाकर पृष्ठभाग में उस धोड़ी की डोर से लपेट लिया जाता है। यद्यपि इसका प्रचलन अब लगभग समाप्त हो गया है फिर भी कुछ गिने-चुने वृद्ध इसे देहात में अब भी पहन लेते हैं।

झोगा (कालीदार)

गुप्तांग ढकने की प्रक्रिया के पश्चात मनुष्य ने ऊपरी देह को ढकने के लिए जिस साधारण कमीज का प्रयोग किया उसे तो यहां 'झोगटु' कहा गया किंतु कुछ विशेषता लिए कलीदार कमीज 'झोगा' कहलाया। यह सामान्य कमीज से हटकर कुछ लंबा तथा बाजुओं के अग्रभाग 'कफ' युक्त होते हैं। इस तरह का झोगा स्त्रियां भी पहनती रही हैं जिसमें संपन्न महिलाएं प्रायः चांदी के बटन लगाती थीं। आधुनिक कमीज-बुशर्ट के प्रभाव से इसका प्रचलन भी प्राय बंद हो गया है।

सूथण

अधोवस्त्र में सामान्य पाजामे को तो यहां भी 'पोजामा' कहते हैं, जिसका प्रचलन यहां काफी समय बाद हुआ, अन्यथा लोग यहां ऊपरी कमीज (झोगटु) तथा 'खेशड़ी' या अधिक-से-अधिक 'जांघिये' से ही गुजारा करते रहे हैं। एक समय ऐसा भी था जब पूरे गांव में एक-दो 'पोजामे' ही हुआ करते थे और मेहमाननवाजी आदि में जाने पर उस व्यक्ति विशेष से 'पोजामा' मांगकर काम चला लिया जाता था। भले ही अब यह हास्यास्पद लगे किंतु इन पंक्तियों के लेखक ने अपने बचपन में स्वयं कुछ ऐसे बुजुर्गों को देखा है, जिन्होंने जिंदगीभर पाजामा कभी पहना ही नहीं।

सामान्य पाजामे से हटकर मोटे वस्त्र अथवा ऊन से बने विशिष्ट आकार वाले पाजामे को 'सूथण' कहा जाता है। इसके अतिरिक्त खूब मोटे व मजबूत वस्त्र से बने 'सूथण' को सिरमौर वासी यहां के प्रसिद्ध शाठी-पाशी खेल 'ठोडा' खेलते समय भी पहनते हैं।

स्त्रियों द्वारा पहनी जाने वाली सामान्य सलवार 'गरारा' के

अतिरिक्त विशेष आकार-प्रकार से बनाई पजामी को 'सूथणी' कहते हैं जिसमें घुटने से नीचे चूड़ियां सी बनी होती हैं तथा ऊपरी भाग का घेरा बहुत अधिक होता है।

सोदरी

यह कमीज पर पहनी जाने वाली मर्दाना बास्केट (जैकेट) है जिसका उपयोग शीत प्रकोप से बचने के अतिरिक्त शोभाधायक वस्त्र के रूप में किया जाता है। महिलाओं द्वारा पहने जाने वाले इसी प्रकार के विशेष परिधान को 'कुर्ती' कहते हैं।

गाच़ी

यह कमीज पर कमर के पास कसी जाने वाली ऐसी पट्टिका है जिसे विशेष उत्सवों आदि के अवसर पर लोक नर्तक अपनी कमर पर कसते हैं जिसका उल्लेख लोकगीतों में **'तेरे हाथो दे छुणकु दाच़ी/तेरी पातल़ी कोमरे गाच़ी...'** किया गया है।

लुगड़ी : महिलाओं द्वारा फिट पजामी के बाहर पहना जाने वाला यह एक घेरावदार वस्त्र है। इसी का दूसरा नाम 'घाघरा' भी है जिसे प्रायः महिला लोक नृत्यांगनाएं नृत्य के अवसर पर पहनती हैं।

लोइया

यह सिरमौर का एक अति विशिष्ट ऊनी वस्त्र है जिसे आधुनिक परिवेश में ओवरकोट कहा जा सकता है। जब इसे प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. परमार ने अपनाया तो यह सिरमौर की शान व पहचान बन गया। इस परिश्रमसाध्य वस्त्र को बनाने के लिए पहले ऊन को तकलियों पर काता जाता है। तदनंतर इसकी पट्टी तैयार की जाती है और तब उस पट्टी को 'साखों' में काटकर हाथ से ही सिला जाता है जिसे सिलने में ही कई दिन लग जाते हैं। इसमें ऊपर कंधे के पास लगने वाली जेबों की 'गूज़े' कहते हैं जिन्हें पीठ की तरफ लगे 'माले' से जोड़ा गया होता है। मजबूती की दृष्टि से 'माला' अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। संभवतः इसी कारण लोकगीत में इसका उल्लेख इस प्रकार हुआ है - **'कोटो लाणो कालरो लाणा लोइये दा माला रे'।**

इस प्रकार तैयार लोइये को सर्दियों में चाहो तो ओवरकोट की तरह पहन लो, लगी बर्फवारी में इसे सिर से नीचे तक ओढ़कर चलते चलो, बीच-बीच में बर्फ झाड़ते जाओ, यह अंदर शरीर को उस बर्फवारी में भी इतनी ऊष्मा देता है कि पसीना आ जाता है। रात को वस्त्र कम हों तो ओढ़ने-बिछाने अथवा सिरहाने के रूप में जैसे मर्जी इस्तेमाल किया जा सकता है। अब मशीनी युग में यह मशीनों से भी तैयार किया जा रहा है और खादी आश्रमों में रंग-बिरंगे रूपों में मिलने लगा है तथापि हाथ से तैयार किए लोइये की अपनी अलग ही शान होती है। इस बात को सगर्व इसलिए कहा जा रहा है क्योंकि लेखक ने स्वयं तकलियों पर बारीक ऊन कातकर तैयार किए लोइये को अपने पिता के हाथों से सिलवाकर खूब पहना है।



टोपी

यह पुरुषों का शिरोवस्त्र है जो सामान्यतः साधारण कपड़े की गांधी टोपी ही होती है। इसके अतिरिक्त सिरमौर जनपद की एक पारंपरिक टोपी है जो प्रायः सफेद कपड़े से बनी गोलाकार होती है। सजावट के लिए इसमें रंग-बिरंगी कनारियां भी लगी होती हैं जिसे प्रायः बिशू त्योहार जैसे पर्वों पर ठोडा क्रीड़क तथा लोकनर्तक पहनते हैं।

ढाठू

पुरुषों का शिरोवस्त्र टोपी है तो महिलाओं का विशिष्ट शिरोवस्त्र है 'ढाठू'। यद्यपि सामान्यतः सिर पर ओढ़े जाने वाले चुन्नीनुमा वस्त्र को यहां टाला, टालकु या टाले कहा जाता है किंतु पुरुषों के परिधान विशेष 'लोइया' की तरह महिला शिरोवस्त्र के रूप में 'ढाठू' का विशिष्ट तथा सम्मानजनक स्थान है।

'ढाठू' किसी भी हल्के मोटे वर्गाकार वस्त्र खंड का वह रूप है जिसे महिलाएं बीचोबीच मोड़कर सिर पर आगे माथे से पीछे सिर के पिछले भाग में बांध लेती हैं। जहां चुन्नी या चुनरी अब केवल गले में डाला जाने वाला वस्त्र रह गया है, वहीं ढाठू को उपर्युक्त विधि से पारंपरिक रूप में ही पहना जाता है।

साधारण ढाठुओं के अतिरिक्त रंग-बिरंगे व कढ़ाई युक्त ढाठू इनके स्वाभाविक सौंदर्य में वृद्धि करते हैं। 'ढाठू' तथा 'ढाटकु' इसके अन्य नाम हैं। शृंगार प्रधान रचनाओं में 'ढाठू' का बराबर प्रयोग होता रहा है जिसकी पुष्टि अनेकानेक लोकगीतों से होती

है। 'ढाठू' पहने महिला किस प्रकार शृंगार रस के परिपाक में सहायक होती है, इसकी पुष्टि डॉ. कृष्णलाल सहगल के मधुर स्वर से निकली इस 'गंगी' में होती है, **'काल़ा ढाठकू तू लाया न करे/ छोटू बगाने म्हाइये-इनो नखरे दखाया न करे।'** इसी प्रकार **'ढाठू बिसरा लाणा मेरी मामीए' तथा '....शिरे ढाठकू काल़ा'** आदि लोकगीतों में भी ढाठू की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है।

चंडकु : महिलाएं भले ही अब 'जूड़ा' बांधने लगी हैं अथवा बाल खुले रखने लगी हैं किंतु सिरमौरी महिलाएं बड़ी शालीनता से बालों की गुत बनाकर उसमें नीचे मध्य भाग से कुछ आगे 'चंडकु' बांधती थीं और वर्तमान में भी थोड़ी बहुत मात्रा में यह प्रचलन जारी है। यह प्रायः काले पतले धागों का एक चंवर है। विवाह के अवसर पर प्रायः लाल अथवा गुलाबी रंग का 'चंडकु' पहना जाता है।

बूब : जहां महिलाएं गुंथे बालों में 'चंडकु' प्रयोग करती हैं वहीं दूसरी ओर कुछ महिलाएं अपने धुले-निखरे-संवरे बालों को 'बूब' के भीतर रखती थीं जिसे गुत के आकार में धागों से जाली रूप में तैयार किया जाता था। सम्प्रति इसका प्रचलन प्राय खत्म है।

चोल़णा

सिरमौर जनपद में अनेक ऐतिहासिक एवं वीर रस प्रधान लोक गाथाएं भरी पड़ी हैं। होकू रावत, कमना, मदना, छीछा, कालपोऊ, सामा आदि अनेक लोकगाथाएं समय परिवर्तन के साथ स्वाभाविक न्यूनता के साथ आज भी दिवाली-मशराली के अवसर पर 'बूढ़ा' नृत्य के रूप में गाई जाती हैं। इस नृत्य में कलाकारों द्वारा इसी अवसर पर पहना जाने वाला विशिष्ट परिधान है - 'चोल़णा'।

यह सफेद कपड़े का घुटनों तक लंबा चोगा होता है जो आगे से खुला होने के कारण बाजुएं डालकर पहना जाता है तथा आगे की ओर तणियों से बांधा जाता है। इसकी सुंदरता बनाने के लिए इसमें लंबी, चौड़ी, आड़ी-तिरछी लाल व हरी पतली कनारियां लगी होती हैं तथा इन्हीं से इनपर घोड़े, हाथी अथवा फूल अंकित होते हैं। इन्हें पहने जब ये कलाकार गायन-वादन व नृत्य करते हैं तो 'चोल़णा' की शोभा देखते ही बनती है। निस्संदेह 'चोल़णा' भी 'लोइया' तथा 'ढाठू' की तरह सिरमौर का अति विशिष्ट परिधान है।

छितरा

स्थानीय चर्मकार द्वारा चमड़े से बने जूते को 'छितरा' अथवा 'पाऽणे' कहा जाता है जबकि महिलाओं द्वारा पहनी जाने वाली जूती को 'जुतड़ी' कहते हैं। बिशूद्ध चर्म से निर्मित इन जूतों को घी तैयार करते समय के शेष 'बोल़ोय' से नर्म करके पहना जाता है। अति कठोर 'छितरों' को 'छा' (लस्सी) भरकर नर्म करना पड़ता है। सुंदरता के लिए इन जूतों में भी कलाकारी दर्शाई गई होती थी जिन्हें विशिष्ट व्यक्ति ही पहन पाते थे।

समय परिवर्तन के साथ इन 'छितरों' का स्थान प्लास्टिक, कपड़े अथवा मशीनों से तैयार बाजारू जूतों ने ले लिया है। फिर भी कुछ एक लोग अभी भी इन पारंपरिक छितरों का प्रयोग करते हैं। अब समाज छितर पहने वाला तो नहीं रहा, लेकिन लोकोक्ति में छितर पड़ना अपनी अभी भी प्रचलित है।

सिरमौर जनपद के आभूषण

सिरमौर जनपद में पुरुष तथा अधिकतर महिलाएं जिन आभूषणों का प्रयोग करती हैं, उनका विवेचन यहां सिर, कान, नाक, गला, बाजू तथा हस्तांगुलियों में पहने जाने वाले आभूषणों के क्रम से किया जा रहा है। मध्यवर्गीय लोग चांदी तथा उच्चवर्गीय धन संपन्न व्यक्ति स्वर्णाभूषणों का प्रयोग करते हैं जिन्हें इस तरह विवेचित किया जा सकता है :

चाक : चॉक सिरमौरी महिलाओं का ऐसा आभूषण है जिसे वे अपने सिर पर चोटी के साथ धारण करती हैं। यह चांदी अथवा सोना किसी भी धातु का हो सकता है। धातु विशेष अथवा आकार प्रकार से धन-संपन्नता का अनुमान लगाया जाता है। तभी तो शायद किसी के बड़े चाक से रीस करके कह उठती है कोई महिला 'तिंआरो चाक तो एत्तो बोड़ो जेत्ता छाना होंवो, तिंदे तो भाइंजे सातु बाटी'।

बोकसुए : ये बालों के निचले भाग में फंसाए जाने वाले ऐसे रजताभूषण हैं जो धारक की श्रीवृद्धि में सहायक होते हैं।

दुरेटु : दरोटू सिरमौरी महिलाओं का प्रमुख कर्णाभूषण है जो स्वर्ण निर्मित ही होती हैं। यद्यपि अब इनका स्थान छोटी आधुनिक बालियों ने ले लिया है तथापि प्रौढ़ महिलाओं के पास दरोटू भी मिल जाते हैं। सोने की काफी मोटी गोल तार से गोलाकार में बनी ये 'दरोटू' जहां आपस में मिलने की स्थिति में होती हैं, वहां फिर कई फेरों में गोलाई में मुड़ी होती हैं।

लुड़के : दरोटू की अपेक्षा काफी छोटे आधुनिक बालियों से काफी साम्य रखते ये लुड़के अपने आकार-प्रकार से अपनी अलग पहचान भी बनाए हुए हैं। कहीं इन्हें 'लुड़कु' तथा कहीं 'बालियां' ही कहा जाता है।

डांडी : कई महिलाएं अपने कानों के निचले भाग में मात्र एक स्थान से बिंधवाकर लुड़के अथवा दरोटू ही पहनती हैं जबकि कुछ अन्य महिलाएं नीचे से ऊपर तक कान को पांच-सात स्थानों से बिंधवाती हैं। सबसे नीचे मुख्य स्थान पर बिंधे स्थान में दरोटू, लुड़के अथवा बालियां स्वेच्छा से कुछ भी पहनती हैं जबकि अन्य स्थानों पर चांदी से बनी छोटी छल्लाकार 'डांडियां' पहनती हैं। इन्हें कहीं 'उपराली' कहा जाता है तो कहीं 'उतराली'।

नोती : कुछ पुरुष भी महिलाओं की तरह कान को निचले भाग से बिंधवाकर इसमें सोने से बने छोटे छल्ले जैसे जिस आभूषण को पहनते हैं, वे 'नोती' कहलाते हैं। यद्यपि इनका प्रचलन अब लगभग बंद-सा हो गया है फिर भी उदारहणस्वरूप

कुछ पुरुषों (वृद्धों) के कानों में इन्हें अब भी देखा जा सकता है।

तिली : यह महिलाओं का नासिकाभूषण है। कान की तरह महिलाएं नाक को भी बाल्यावस्था में ही बिंधवा लेती हैं क्योंकि इस अवस्था में यह कार्य सरल होता है। आरंभ में वे कन्याएं इस बिंधे छेद में धागा या फिर एक विशेष जंगली घास की सींक डाले रहती हैं। बड़ी होने पर बहुत छोटी चांदी या सोने की तिलियां पहनती हैं।

विवाह अवसर पर पहनी जाने वाली 'तिली' कुछ बड़ी व अधिक सुंदर होती है और इसका स्थान भी महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि यह स्त्री के सुहाग की प्रतीक भी मानी जाती है। 'तिली' की कुछ ऐसी ही विशेषता के कारण ही शायद कोई महिला लोकगीत के द्वारा मांग कर उठती है, **'तिली मुखे सुने रे छोड़ाय दे...।'**

लौंग : तिली के स्थान पर पहना जाने वाला स्वर्णाभूषण है लौंग जो तिली की अपेक्षा कई गुना बड़ा होता है। इस गोलाई में बने काफी चौड़े आभूषण पर दानेदार उभार तथा बीच में लगा 'नग' इसकी सुंदरता के साथ महिला के सौंदर्य को चार चांद लगा देता है।

नाथ : इसे नासिका के दूसरी ओर बिंधे छिद्र में पहना जाता है। 'बिलाक' इसका दूसरा नाम है और यह प्रसिद्ध आभूषण काफी बड़ा तथा भारी होता है। तीन से पांच तोले तक तथा गोलई में बने इस स्वर्णाभूषण के भार को नासिका अकेले नहीं संभाल सकती, अतः इसमें एक चेन बनी होती है जिसे सिर में लगे क्लीफ अथवा बकसुए से जोड़ा जाता है।

मुरकी : कुछ महिलाएं अपनी नासिका के दोनों छिद्रों की मध्यवर्ती भुरभुरी हड्डी को भी बिंधवा लेती थीं तथा वहां पहने जाने वाले आभूषण को ही 'मुरकी' कहते हैं जो सामान्यतः चांदी का काफी बड़ा गोल छल्ल जैसा ही होता था। वर्तमान में इसका प्रयोग लगभग बंद ही हो गया है।

कांच, हांसली और हार : ये तीनों आभूषण पुरुषों के गले में पहने जाने वाले आभूषण हैं। यद्यपि 'हार' तो महिलाएं भी गले में धारण करती हैं किंतु वे आकार-प्रकार व भार में काफी भिन्न होते हैं। 'कांच' चांदी से बना गले का ऐसा आभूषण है जिसे मर्द गले के एकदम साथ पट्टे की तरह पहना जाता है। चांदी से ही बनी व पुरुषों द्वारा गले से नीचे छाती की तरफ पहनी जाने वाली 'हांसुली' का भार सामान्यतः आधा किलो तो होता है, अन्यथा ये किलो, दो तथा अढ़ाई कलो तक भार से बने चांदी के आभूषण हैं। 'हार' गले में ही धारण किया जाने वाला 'हांसुली' की अपेक्षा छाती पर काफी नीचे तक आने वाला चांदी का ही आभूषण है। कांच, हांसुली तथा हार इन तीनों रजत आभूषणों के बारे में यहां यह कहना अप्रासंगिक न होकर सांस्कृतिक व सामाजिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होगा कि इन तीनों प्रकार के आभूषणों को गांव के संपन्न व्यक्ति बनवाकर दीपावली के अवसर पर 'बूढ़ा' नृत्य करने वाले कलाकारों को पहनने के लिए देते थे और वे कलाकार जब दूर-दराज गांव में जाकर इस लोकनृत्य व गीत का प्रदर्शन करते तो वहां के लोग उन द्वारा पहने इन आभूषणों से ही आश्रयदाता ठाकुरों की संपन्नता, समृद्धि व वैभव का अनुमान लगा लेते थे।

बाटे : ये चांदी से बने छोटे बच्चों के वे कंगन हैं जिन्हें बाल्यावस्था में पहनाया जाता है। अपनी बेटी अथवा बहन द्वारा पहली संतान को पहली बार मेहमान लाने पर नाना अथवा मामा द्वारा उस नवागत मेहमान को उपहारस्वरूप अवश्य भेंट किए जाते हैं। **धागुले :** 'बाटे' छोटे बच्चें के कंगन हैं तो 'धागुले' युवा तथा प्रौढ़ व्यक्तियों द्वारा पहने जाने वाले कंगन हैं जिन्हें 'कांगोण' अथवा 'कांगणु' भी कहा जाता है। गोलाकार में बने काफी मोटे व भारी ये कंगन गोलाई में मिलने पर सिंहमुखी तथा मत्स्याकार वाले होते हैं, जिनका सौंदर्य देखते ही बनता है और सार्थक होता नजर आता है। यह पद्य -- मणिना वलयं वलयेन मणिः

मणिना वलयेन विभाति करः।

चूड़े : बाजुओं में चूड़ियों के स्थान पर पहने जाने के कारण ही संभवतः इन रजताभूषणों को 'चूड़े' कहा गया हो। आकार में एकदम गिलास की तरह बने इन आभूषणों को 'गोलास' भी शायद तभी कहा गया। वस्तुतः ये बाजुओं के आकार में हाथ की तरफ कुछ पतले तथा पीछे की ओर कुछ अधिक चौड़े ये आभूषण छोटे-छोटे घुंघरूओं से सज्जित होने के कारण काफी नयनाभिराम प्रतीत होते हैं।

परिबंध : ये भी चांदी से बने होते हैं तथा बाजू पर ही पहने जाते हैं। ये गोलाई में चौड़ी पत्ती से बने होते हैं तथा इन पर काफी पतली चूड़ियां सी उकेरी गई होती हैं।

छाप : 'छाप' स्त्रियों तथा पुरुषों द्वारा बरबर धारण किए जाने वाला सोने तथा चांदी का आभूषण हैं, जिसे अंगूठी पर पहने जाने के कारण 'अंगूठी' भी कहा जाता है। प्रायः इसे अनामिका पर पहना जाता है जबकि कुछ इसे कनिष्ठिका तथा मध्यमा पर भी पहन लेते हैं। अब कुछ लोग अपनी सामर्थ्य व फैशन के अनुरूप अंगुष्ठ व तर्जनी समेत पांचों अंगुलियों में भी पहनने लगे हैं। पुरुष 'छाप' अपेक्षाकृत काफी मोटी व चौड़ी होती है जबकि महिला छाप उसकी अपेक्षा छोटी व पतली। पांव की पाजेब आदि सहित सिरमौर में भी अब आधुनिक जेवरों-आभूषणों का प्रयोग होने लगा है किंतु यहां लोक संस्कृति के परिचायक पारंपरिक आभूषणों को ही इस आलेख का विषय बनाया गया है। सिरमौर जनपद विशेषकर, ग्रामीण क्षेत्रों में यहां के निवासियों द्वारा धारण किए जाने वाले परिधान एवं आभूषण यहां की पुरातन संस्कृति का हिस्सा है। ये अब लुप्त होने की कगार पर हैं। नई प्रौद्योगिकी नए फैशन ने अब जनपद को भी अपनी जकड़ में ले लिया है।

प्रकाशकुंज-131, हिमुडा कॉलोनी, शुभखेड़ा, पांवटा साहिब,
जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश-173 025

संस्कृति

सिरमौरी गीतों में दर्द, तड़प सिसकियों का समावेश

पझौता सिरमौर की सुंदरवादियों में से एक है। लोकगीत यहां के जनजीवन के प्राण हैं। नाटी, झूरी और गंगी इनके मादकता भरे गीत बहुत आनंदमय होते हैं। खंजरी लोक नृत्य कंपन पैदा कर देता है। खंजरी के बिना नाटी संभव नहीं है। सिरमौर के गिरीपार क्षेत्र में नाटी सर्वाधिक लोकप्रिय गीत है। क्षण में ही नृत्य वृत बना देते हैं। संगीत बजने की देर है, लोकनृत्य मस्ती में वातावरण को गुंजायमान बना देते हैं।

नाटी के बोल
'ये देख ली बस देखली ये
दिल रूबाई आपकी
न किसी से दिल लगाना कसम खाई आपकी।'

बस गीत आरंभ होने से नृत्य नाटी में मदमस्त हो जाते हैं :

पीपली रा बूटो, हो मोइना
सौरेजौरा सूटो मोइना
बूटो ता चांहिबे राबिड़ी
हांडी दी चूटो, मोइना
बोलो, हांडी दी चूटो, हो मोइना।

लोकगीत

नृत्य दल की दूसरी टुकड़ी गाती है :

बोलो चौड़िए रांडे घूमिज
बोलो घूमिणा पौड़ो घूमिजा
बोलो चौड़िए रांडे घूमिजा।

नारी के विषय प्रायः प्रेमात्मक होते हैं।

झूरी दोहे की शैली के शृंगारिक लोकगीत है। झूरी गाने के दो ढंग होते हैं। एक तो बिना साज-बाज के ऊंची आवाज में सीढ़ीनुमा खेतों, पर्वतों और वनों, चरागाहों में प्रेमी-प्रेमिका द्वारा परस्पर संबोधित किए जाते हैं। दूसरा प्रकार है मंजुरा लोकनृत्य के साथ प्रश्नोत्तर के रूप में गाने का

झूरी के बोल
'धारटे बागुरो नालटे इशौ
झूरा री लागी गोनी
ठाडे जैये पाणी री चीशै।'

(प्रिय!) जैसे ऊंची पहाड़ी पर जली हुई अग्नि वायु के चलने से तेज हो जाती है, वैसे ही मेरा भी तुमसे प्यार बढ़ रहा है और जिस प्रकार प्यासे की प्यास शीतल जल को पीने से बुझ जाती है उसी प्रकार प्रिय, तुम्हारे मिल जाने से मेरी प्रेम-पिपासा भी शांत होगी।

दिल को दिल से राह होती है। प्रेयसी भी प्रिय मिलने के लिए तड़पती है :

जुणो जीणो पुनीये रे हिणो
मेरे राजुऔ, फलडू झूरीये
दुसौ लाये गुंठी दे गिणों।

जिस प्रकार पूनो के चांद में दोष (दाग) के कारण कमी होती है उसी प्रकार प्रियतम, मेरा पूर्ण शृंगार भी तुम्हारे बिना अपूर्ण है। और मैं तुम्हारे मिलन की घड़ियां उंगली पर गिनती रहती हूं।

इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार के अन्य प्रचलित गीत भी हैं। मलकू का गीत बहुत लोकप्रिय है। मलकू एक प्रेमी था, जिसने हीर-रांझा की तरह प्रेम निभाने के लिए अनेक कष्ट सहे। आज भी जनपद में लोग उसको लोकगीतों के नायक के रूप में मानकर उसके गीत गाते हैं।

आंगे हांडो हाटोरे दुगी पीदे लांकड़ा वीरा
मेरो मलकू बोठीयो शुणो धागा जिओ दा छींरा।

पझौता क्षेत्र में गंगी, युवतियों के कोकिल कंठ की शान है।

कुकड़ी रा डांडा
गाली पौ ना छेई छोटिए
तेरे मुंह पांदे चांटा राखणा।

प्रेमिका के कठोर शब्द सुनकर जब प्रेमी नाराज हो जाता है तो प्रेमिका उसे इन बोलों से मनाती है :

खाणा खाई लेणा कौली बिचो
माखता नी मानणा बिचो।

घड़ी भर के मिलन-उत्कंठा होने पर भी प्रेमी अपनी चहेती से

मिलने पार नहीं जाता, बल्कि :

वो तेरे दिऊटे दा तेल नहीं
आंडणा तो आई छोरिए
पांडे आणे री बेल नहीं।

हंसी-ठठोली छोड़कर प्रेमी कहता है -

फूल फूली रूआ कोई थे पांदे
जौबे जाली मोरी सजना
तबै नी जाणा बोंइसो पांदे।

जनपद के अन्य गीतों को भी जीवन, प्रकृति का सुंदर चित्रण देखने को मिलता है।

टिब्बे दी पोड़ी रोही हियों के मामा मेरा
लागा पुहाड़ो दा जियो के मामा मेरा
शेली वागुरो शेला पाणी
बिची फुली धोरती री रानी
आंड़ा झवाल पांडा कशोगा
देश पुहाड़ो रा बसणे जोगा
फुली फुलीटू गली माशो
पूरी कोरी पुहाड़ो री आशो के मामा मेरा'

जहां पहाड़ों की चोटियों पर बर्फ पड़ी है, जहां शीतल पवन के झोंके चलते हैं और पुष्पों की साम्राज्ञी 'विंचो' खिला है, जहां झरने थिरक रहे हैं, उस पहाड़ में मेरा मन लगता है। वह पहाड़ बसने के योग्य है। भगवान उस देश की आशाएं पूरी करे।'

यहां के गीतों के साथ ढोलकी, खंजरी, एक मृदंग जैसा छोटा साज एक तारी, कनाल, धौंकू साज बजाए जाते हैं।

दिवाली के अवसर पर 'होलक' एक बड़ा सा डमरू जैसा साज 'दमामटू' नगाड़े की भांति के साज के साथ बजाया जाता है।

नाटी नृत्य को 'गीह' भी कहते हैं
श्रृंगार रस का गीत निम्न है :
चांद घेरा बादले माछी घेरी जाले
हम घेरे सोणिये तेरे तिले काले।

चांद बादलों ने घेर लिया है। मछली जाल में फंस गई है और प्रिय मुझे तुम्हारे चेहरे के काले तिल ने अपना मतवाला बना दिया है।

दीपावली पर सिरमौर में मदना, कमना इत्यादि के गीत गाए जाते हैं। ये ऐतिहासिक गीत हैं। इनमें वीरता है, देशभक्ति, सच्चाई तथा साहस के विचार नजर आते हैं।

बयूज बोलो बांठिया जुग पोलटा रे
बागड़ी तेरी पोड़ी रोही जाड़ो
भूखे छेड़ुए दे लोई राड़ो
थाम बुलो हाथो दा होलटा रे
देव ऋखि रा तू ओसों जाया
निखणा बैठी रो सामां गवाया
सांड बुलो ढोबदा सा टोलटा रे
शिक्षा रा तुचे लायो चाणो
न्यारा छाड़ प्याशा थाम माणों।'

'नवयुवक, उठ, जाग, युग बदल चुका है। तेरे खेत बंजर पड़े हैं। भूख से बिखलते हैं। तेरे बच्चे, हाथ में हल पकड़ और खेतों को उपज से लहरा दें। तू देवताओं की संतान है। व्यर्थ बैठकर काम न चलेगा। कुछ काम कर। शिक्षा ग्रहण कर, प्रकाश फैला दे, जाग, जाग, जाग कि युग बदल चुका है।'

सिरमौर भगवान परशुराम की भूमि है। यहां के निवासी उनके भक्त तथा भक्ति भाव रखते हैं। पहाड़ी भाषा में परशुराम के स्तुति के अनेक गीत हैं।

पहाड़ी भजन सिरमौरी भाषा में उनके प्रति श्रद्धा तथा सम्मान प्रकट करते हैं।

'धुण धाव मोड़ो रे आया तेरी पोली दा
जुगो रा सताया, लालचो रा भरमाया
बारी बारी रा पापी ताओ दारोआ शरमाया
भुजदा लागा रे पापो री झोली दा
हाथों दा डांगरा गाले दी माला
रिणका रा जाया, पुजको रा पाला
रुलदा लागा रे नोरि को दी रोली दा।

'हे भगवान परशुराम मेरी पुकार सुनो मैं जमाने का सताया लालच और मोह में फंसा जन्म-जन्म का पापी तुम्हारे द्वार पर आया हूं, मेरी फरियाद सुन। तुम्हारे हाथ में रक्षा के लिए परशु है। तुम मां रेणुका के वीर पुत्र हो, तुम्हारे गले में पुष्पमाला शोभायमान है। मैं नरक के गढ़े में गिरा हूं। मुझे उबारो, मेरी पुकार सुनो।'

सिरमौर जनपद के गीतों, कुंजुआ, सुरमी, हीरो गंगी में जीवन कर दर्द, तड़प, सिसकियां समाई हैं। ये सभी हृदय को छू लेने वाले हैं। इन गीतों की गहराई में उतरने के लिए यहां की संस्कृति, भाषा और भाव से परिचित होना अत्यावश्यक है।

इन लोकगीतों में संयोग-वियोग दोनों पक्षों का सुंदर सम्मिश्रण बड़ी खूबी से देखने को मिलता है। पहाड़ के ये लोकगीत दूरस्थ, शांत वादियों के कठोर जीवन को सदियों से रसमय बनाते आ रहे हैं। यही यहां की शान और पहचान है।

संदर्भ : लोकगीत केशवानंद ममगाईं, हिमप्रस्थ जनवरी, 1986, सिरमौर के गीत, चंद्रमणी वशिष्ठ, नवंबर, 1955

सिरमौर की धरती

लोकगीतों में विकास की छाप

हिमाचल गठन के आरंभिक वर्षों में प्रगति तथा उन्नति की राह पर बढ़ते हुए सिरमौर जिले में प्रगति पर आधारित कुछ लोकगीत प्रचलित हुए। इन्हें मेलों, जातरों, हरियाली तथा श्रमदान की बेला में गाने का रिवाज था। इसके माध्यम से हिमाचल में हो रही प्रगति का बखान हुआ वहीं लोक जीवन संतुष्ट है, इसका आभास भी मिला। इन गीतों में सभी का जीवन तथा जीवन की छाया का आभास मिलता है।

प्रथम गीत गांव में सिंचाई के लिए निर्मित होने वाली छोटी कूहल पर आधारित है।

नोहेरो बांठणी पिंगदी दी चाली
झूमदी चाली नाचली चाली
खेचो साजणो मिलणे चाली
जुगो रे होटडू शुके साजणे रे
टाटी मिलदी लागी जियो बसदी चाली
शुके होंठडू भीजदे लागे
नाजो फूलटू हंसयो झड़दे लागे
बागुरो साई डाली पींगदी चाली

नहर प्रेयसी अपने साजन खेत से मिलने जा रही है। झूमते, नाचते, बलखाते नहर चली जा रही है। गाते-गाते, शनैः शनैः अपने साजन (खेत) से मिलने वह देखो नहर चली जा रही है। युग युगांतर से खेत के अधर प्यासे हैं। वह देखो नहर ने खेत की गर्दन में बाहें डाल दीं। नहर प्रियतम के मन, प्राण और आत्मा में समा रही है। सूखे अधरों की प्यास बुझ गई। खेत लहलहा कर उछल रहा है। खेत के अधरों से 'अनाज' के पुष्प झर रहे हैं। वह देखो डाली- डाली नृत्य कर रही है।

सिरमौर भाषा में शिक्षा क्षेत्र में हुई प्रगति पर एक गंगी लोक गीत :

घूघती बागीला पारलो बई गाये
स्कूलो खुलदे लांगे ठांव ठांईगे
जागरे मांये ओयरोहा बे रागी
छोटे री का बोलणी छोटी पढ़दी लागी
खांजरी रण की डेरे दी बोलो राची
गांवदा अनपढ़ नाकुवे सबी पत्री बांची
भाटगढ़ो जुबडो दी पोड़ी रोही छिंजो
मनी री शुकी खेची शिंकशाये सिंजो
बांठणी मैले के रई सदरी ला बामो
शाठ बरसो रा फोफडू लिखो फीफडू रामो
बुढ़वे बामी पाया नाचणे के चोला
पोशु रोहणे नाहीं शिकशाये मूल पायां तोला।

उस पार की वावली के पास फाख्ता बोल रही है, स्थान-स्थान पर स्कूल खोल दिए गए हैं। जागरे (जागरण) में कोई गायक आया है। लड़कों की क्या बात लड़कियां भी अब पढ़ने लगी हैं। रात की महफिल में खंजरी बजाई जा रही है। गांव में अब कोई अनपढ़ नहीं रहा। चिट्ठी पत्री तो प्रायः अब सब ही पढ़ समझ लेते हैं। भाटगढ़ गांव के मैदान में कुश्तियां हो रही हैं। मन की सूखी खेती शिक्षा से सींच दो। सुंदरी मेले जाने को नई सदरी (वास्कट) पहन रही है। शिक्षा का ही तो प्रभाव है कि साठ वर्ष का बूढ़ा फीफड़ अब 'फीफड़ राम' लिखने लगा है। नृत्यकारों ने नाचने के लिए लबादा ओढ़ लिया है। आज जीवन पशु की भांति नहीं होगा। शिक्षा ने जीवन का महत्त्व और मूल्य बढ़ा दिया।

एक अन्य लोकगीत में पंचायतों की भूमिका का उल्लेख मिलता है।

पांचों मायें पनमेशर बोईया आई
आपीं मुजे रे दाईये चुकणे भाई
सोंतु मुंह जाणों बाला तेरे गांवरा
साचा झूठाये जाणरो बखतो नयावोरा
निमो दे बोचे नांदडू घोरे रे नयाणे
गांव दी शड़की वाणणी खुशयो सागे

भाई कहते हैं कि पंचों में परमेश्वर है। तो यह हमारे गांव के पंच क्या बैठे हैं, पंच देव बैठ गए। अब आपस के झगड़े निपट जाएंगे। संत राम (एक पंच) मुझे जानता है। बाला राम (दूसरा पंच) तेरे गांव का है। सच्चा-झूठा इनसे छिपा नहीं, सही इन्साफ अब ही होगा। भाई नांदड़ अब मंदिर में सौगंध लेने की आवश्यकता नहीं (नाही लंबी चौड़ी गवाही की) सब पंच घर के हैं। वह जानते हैं घर का कौन सदस्य झूठा है कौन सच्चा? अब ग्राम सुधार होगा। गांव की सड़कें अपनी इच्छा से बनेंगी।

सांस्कृतिक बुनियाद का मौखिक संविधान

काल व लोक ताल

◆ विद्यानंद सरैक

सिरमौर जहां सांस्कृतिक परिवेश में ऐतिहासिकता तथा प्राकृतिक छटा में प्रभु के अनमोल चित्रण है, तो वहीं परम्पराओं की आस्थाओं के साथ हिन्दू-मुस्लिम, सिख धर्म की त्रिवेणी भी है। यह ऋषि- मुनियों की तपोस्थली भी रही है।

गिरी गंगा सिरमौर जनपद को दो भागों में विभक्त करती है। एक है गिरी वार और दूसरा भाग है गिरी पार। गिरी गंगा सिरमौर जनपद की सतयुग की प्रहरी है। कुपड़ स्थान जुब्बल के साथ एक छोटी-सी पहाड़ी पर एक साधु के कमंडल से गंगाजल की बूंद गिरी थी। साधु यह पवित्र जल स्वर्ग से लाया था। यही जलधारा सिरमौर को युगों से सशक्त और पवित्र करता आ रहा है, यह सतयुग की बात है। त्रेता युग में मां रेणुका ने इस नदी के किनारे तपस्या की। परशुराम की तपोभूमि भी सिरमौर रही है। द्वापर में महाभारत काल में पांडव अपने गुप्त प्रवास में इस पवित्र नदी के साथ-साथ बलग पहुंचे और यहां छोटे-छोटे मंदिरों व गुमटियों का निर्माण किया क्योंकि ब-ल-ग बलि गया जहां अर्थात् राजा बली को सैरवा यज्ञ करते भगवान वामन ने यहीं से उसे पाताल का राज्य दिया था। सिरमौर उस समय कालसिया से लेकर थरोच तक फैली रियासत थी। कलयुग में गुरु गोबिंद सिंह ने पांवटा साहिब और बड़ूसाहिब तथा मुस्लिम धर्म के लोगों ने नाहन क्षेत्र को अपनी उपासना स्थली व कर्मभूमि बनाया। अतः लोक श्रुतियों के अनुसार सिरमौर को त्रिवेणी कहें तो अतिशयोक्ति न होगी।

सुंदर सिरमौर की ऐतिहासिकता को लोक गायकों, वादकों और वास्तुकारों तथा मनीषियों ने लोक गाथाओं, हारो, वारो, साको, पवाड़ो तथा रामायण व पंडवायण, काहन जी कन्हईयां, भारथो भतृहरि शिरगुल, देवी के पांजड़ों को गीतों व तालों में मौखिक लोक साहित्य के अलंकारिक पहलुओं में संवारा है। यहां पर शिरगुल, रूद्र, बिजट, मां भंगयाणी, बालासुन्दरी, भूरेश्वर आदि कितने ही देवी-देवताओं के मंदिर हैं। इन मंदिरों की आस्था में यहां का लोक संगीत मुखरित हुआ और अतीत की विरासत आज तक यथावत् है। आज भी गिरी पार की वादियां इस सांस्कृतिक धरोहर का खजाना हैं।

इस सांस्कृतिक रंग में तालों का अलग महत्व है। ये लोक ताल भी युगों की सशक्त सांस्कृतिक बुनियाद की पहचान हैं क्योंकि प्रत्येक लोक ताल आज समय व काल तथा रीति-रिवाज व परम्पराओं का मौखिक संविधान है जो हमें देव परम्पराओं के साथ श्रद्धा की भावना से जोड़े है। सुबह से शाम, वसन्त से शिशिर और जन्म से मृत्यु तक प्रत्येक संस्कारों को ताल के क्रम की मौखिक भूमिका में संजोते हमारे जीवन का एक-एक पल तालों की थाप पर थिरकता है।

तालों के तीन प्रकार : न जाने कौन लोक संस्कृति के पुरोधा थे जिन्होंने तालों को तीन अलग-अलग आकर्षणों से संजोया। यह निर्विवाद सत्य है कि यहां की एक गरीब जाति तूरी-ढाकी, बाजगी युगों से इस वादन प्रक्रिया को देवालय की आस्था से पुश्त-दर-पुश्त आज तक हमें विरासत में सौंपते सामाजिक जीवन का पथ-प्रदर्शन करती आई है। इस जाति ने सदियों से उपेक्षा के बावजूद इन तालों को सुरक्षित रखा है।



पहला देवताल है जो सबसे प्रमुख आस्था व श्रद्धा का ताल है। देवताल जिन वाद्य वृन्दों पर बजते हैं उनके नाम इस प्रकार हैं- नगड़ा, ढोल, करनाल, रणसिंगा, शहनाई, भाणा, नगरी, हुड़क, ढाकली। ये सभी ताल वाद्य मंदिर की सम्पदा रहे हैं और इनकी पूजा होती थी। आज भी इन्हें पवित्र मानते हैं। देवतालों में सुबह चौघड़ी प्रातः रात के चौथे पहर में देव मंदिर में बजाई जाती है। इस ताल में बैउल, चौघड़ी, ठेका देवड़ा तथा धरैवणी सूरज न्हाण ताल बजाए जाते रहे हैं। मंदिर प्रांगण में चोगाड़ी को प्रतिदिन प्रभात के समय बजाने का महत्व रहा है। ये ताल मंदिर के साथ गांव के उपासकों को रोज जागने का सन्देश देता था और सभी उपासक ओंकार, देवा साहेबा कहकर सामूहिक अभिवादन अनायास ही देवता के लिए करते आए हैं।

सूर्योदय के साथ पाची ताल बजता है जिसमें दो विधाएं बजाई जाती हैं। एक पाची दूसरा है घन्टी की चलत। इन दोनों



बन्दिश के अलग प्रकार हैं।

देवतालों में तीसरा ताल है सधिवां। संध्या के समय देवता के मंदिर में संध्या की पूजा होती है और प्रांगण में वादक आठ मात्रा के सधिवां ताल बजाते हैं।

रात को सोने से पहले वादक बैउल नोगत देवता के प्रांगण में बजाते हैं और सभी को विश्राम करने का सन्देश देव आस्था से दे जाते हैं। इस क्रम में जो ताल बजाई जाती है वो इस प्रकार हैं- बधाई 28 मात्रा का एक अनोखा ताल है जिसे बजाना कठिन है। आज इस ताल को बहुत कम वादक बजा सकते हैं। जब देवता यात्रा पर निकलता है, उस समय सबसे पहले ठाम्बा दिया जाता है। मंदिर क्षेत्र के लोग सहज समझ लेते हैं कि देवता यात्रा पर निकला है और बिना निमंत्रण के इस ताल को सुनते ही देव यात्रा में शरीक हो जाते हैं। यह परम्परा आज भी कायम है। यात्रा में सूरजन्हाण जड़ीभरथ ठेका बजाया जाता है। पूजा में जब देवता के गूर को खेल लानी हो, उस समय चार मात्रा की बन्दिश धरेवणी बजाई जाती है।

तालों का दूसरा प्रकार है संस्कार ताल। सिरमौर जनपद में मुख्य संस्कारों के साथ तालों का भी आकर्षक समावेश सदियों से आज तक विरासत में यथावत् है। इन तालों का उपयोग हमारे संस्कारों में मात्र रस्म को पूरा करने की औपचारिकता नहीं है। यह निर्विवाद सत्य है कि इन तालों को प्रत्येक संस्कारों के साथ श्रद्धा व आस्था से बजाने की परम्परा रही है। इस परम्परा को यहां की एक विशेष बिरादरी जिन्हें तूरी-ढाकी, बाजगी कहते हैं, बजाते हैं और इनके द्वारा ही बजा, जाने वाले संस्कारों की मान्यता रही है। लेकिन धीरे-धीरे यह भी विलुप्त हो चला है।

संस्कार तालों में पहला ताल है बेउल वादन। बेउल ताल शुभ घड़ी और पावन पर्व पर बजने वाला ताल माना जाता है। जब किसी घर में पुत्र का जन्म होता है उस समय इस ताल को बजाने का विशेष महत्त्व रहा है।

शिशु जब पांच वर्ष का होता है उस समय शन्दा नाम की रस्म होती है जिसमें आस-पड़ोस, बिरादरी के लोगों और रिश्तेदारों को बुलाते हैं। यह जश्न भी है और इस समय देवता को भी घर में आमंत्रित किया जाता था इस समय बधाई बताने की परम्परा रही है। जब वह शिशु शादी कराने की उम्र में प्रवेश कर जाता है उस समय बधाई नोग्त तथा बेआ ताल बजता है। लेकिन बारात में स्थान-स्थान पर जंगताल की भी मनमोहक परम्परा रही है। जंग ढोल पर परनों व आमद लगने की मनमोहक क्रिया है क्योंकि दो ढोल वादक अपने हाथों के हुनर से जहां परनों की जंग से दर्शकों व श्रोताओं को मंत्रमुग्ध करते हैं वहीं तरह-तरह के अन्दाज व परनों में खाली भरे तोड़े के साथ-साथ शरीर से नृत्य भव भंग्मिांओं का भी प्रदर्शन करते हैं। बारात में आठ मात्रा का बेहा ताल भी श्रोताओं के लिए बड़ा आकर्षण रहा है। अन्य रस्मों में तेलालापन और वनायक नियुग्णा तथा छायजला पाणी लाते हुई भी मात्र बेहा ताल बजाया जाता है। इस

मौका-मुबारक पर महिलाओं का पड़ुआ नृत्य भी एक परम्परा है जिसमें महिलाएं द्वारा आठ मात्रा के कहरवा ताल जिसे लोक बोली में चलत कहते हैं, ताल बजाने की रस्म रही है तथा महिलाएं शादी में पड़ुआ नृत्य कर खुशी की रस्म को पूरा करती हैं।

मृत्यु ताल : जब किसी व्यक्ति की मृत्यु होती थी उस समय मृत्यु ताल मड़ैच बजाने की परम्परा थी। इस ताल क्रम में फाट, सोहर रामफड़ी, छतर आदि ताल बजाए जाते थे। इन तालों को ढोल, नगाड़े और शहनाई के साथ मातमी धुनें बजाते कलाकार अर्थी के सामने बरवाण बोलते थे। साथ में दुःख भरी घड़ी में मरने वालों के परिजनों को सांत्वना भी देते थे। बरवाण के बोल इस प्रकार होते थे :

चन्द सूरज दो देवता होते
दुने छतरी की ओट
खड़ा रो मेरा हजार गुण मांगता
लगो छतर भग की चोट
महाराज कुण बाजा बजाओ
जब परग्णे दो शीरी घोटो
चांद रो सूरजो दा
साखे ओसो तो ढोलो दो छतर केशो बाजो।

ये ताल आज विलुप्त हो गई हैं। आस-पड़ोस के सगे-संबंधी घी की लुटिया और चावल इत्यादि मृतक के परिवार को भेंट करते थे, जिसे साटा-बोहार कहा जाता था।

मनोरंजन ताल : मनोरंजन सिरमौर जनपद में बसने वाले मेहनतकश लोगों का प्रतिदिन का आकर्षण रंग रहा है जिनकी थकान जंगल में मवेशी चराते कामकाज की व्यस्तता में झूरी, भौंरू, गंगी गाकर मिलना एक अनोखी परम्परा रही है। भेड़-बकरी चराते पशुओं के साथ ग्वाले की मधुर धुनें अनिबद्ध गायन में जहां प्राकृतिक वादियों को मनभावन बनाते थे वहीं शृंगारिक आशु काव्य के दिल को छूने वालों से जवान लड़के-लड़कियां प्रणय सूत्र में बंध जाते रहे हैं। यही झूरी शाम के अंधेरे में जब घरों के भीतर घी-तेल के दीए या जोखटी यानी पतली देवदार-कायल की बलियों के मशाल रोशनी उगलते थे। यह दिनचर्या का आलम था लेकिन वसन्त ऋतु में चैत्रगान बारहमासा चैत्र फागन की सक्रान्ति बीशड़ी से शुरू होता था जिसे पूरे मास में कलाकार गांव-गांव जाकर मंगलाचारण करते तथा वर्ष भर के जीवन के लिए सुखद भविष्य का आशीष देते थे। नृत्य महिला करती थी, जिसमें नर्तकारी ढीली नाटी और गी नाची जाती थी।

बैसाख और चैत्र संक्रांति को बिशू रो साजो बैसाखी का पर्व आता है। इस पुनीत पर्व पर रथेवला ताल बजाते थे। बिशू मेले देवताओं की आस्था से मनाए जाते रहे हैं तथा रथेवला ताल पर ठोडा नृत्य, लोक नाट्य और क्रीड़ा ताल नृत्य के रूप में जन-जन का मनोरंजन करता रहा है। ज्येष्ठ माह में सादटू छः मात्रा की बंदिश पर ऐसा नृत्य था जो सूखा पड़ने पर वर्षा के लिए रात्रि के समय गांव-गांव जाकर वरुण देव शिरगुल से गुहार लगाने के लिए उपयोग में लाया जाता था। आषाढ़ और श्रावण की संक्रांति को रहेली अर्थात् रिहाली रो साजो कहते हैं। इस दिन 12 व 16 मात्रा की नाटी की ढीली बन्दिशों पर माला नृत्य किया जाता था। पूरे मास रिहाली शनोल मेलों का ये लोक रंजन मनभावन आकर्षण रहा है और लोक तालों की गमक दिल धड़कनों से अटखेलियां करती है।

जब शरद का सुहावना मौसम दशहरा शौउजो री आठेओ, दिवाली, एकादशी, बूढ़ी दिवाली के त्योहारों को मनाने का समय आता है तो सिरमौर की मनमोहक धरा का राग ही इन दिनों तावली नाटी छः मात्रा के तालों का अनूठा आकर्षण बिखेरता है। हुड़क ढाकली आदि ताल वालों के साथ ढोल, नगाड़ा, करनाल, शहनाई के संग शरद को सुहावना बनाता रहा है। करियाला ताल एक बेमिसाल बंदिश है जिसे स्वांग का प्रारम्भ करने से पहले बजाते हैं। एक घड़ी आग का घेना जलाया जाता है जिसमें पूजन देव परम्पराओं के महत्त्व से भी जुड़ा है। यहां करियाला के जंग के साथ करियाला ताल इस मौसम का बेमिसाल मनोहारी रंग है। रात भर तरह-तरह के स्वागों के लिए विभिन्न ताल बजते हैं।

अब वर्ष मार्गशीर्ष मास के साथ विदाई की ओर जाता है। इस मौसम में बूढ़ी दिवाली का चलन है। दर्जनों ढोल वादक नगाड़े, शहनाई और हुड़क के साथ धीमी गति से 12,14,16 आदि मात्रा के तालों पर हारे वारे साके पवाड़े, पंडवायण, रामायण भारतो और पांजड़ा गाते हैं। इसके बाद सर्दियां, त्योहारों की रौनक लेकर आती है। पौष मास में बकरे कटते हैं। रात भर नाच, गाना, नाटी, मुंजरों में तालों के इर्द-गिर्द हमारी नृत्य की संस्कृति नई पीढ़ी के लिए परोसती आई है। माघी त्योहार धार्मिक परम्पराओं की धरोहरें समेटे है। रात भर लोक दन्त कथाएं भी हुड़क व ढोल की थाप पर विभिन्न लोक बन्दिशों का रंग बिखेरती हैं। रामायण-पंडवायण, भारतो, पांजड़े पूरे मास की रातों को लोक गायकी के साथ तालों की बन्दिशें भी आकर्षक संस्कृति को दर्शाती रही है। सुबह से शाम वसन्त से शिशिर जन्म से मृत्यु तक की सामाजिक व्यवस्था धार्मिक आस्था और जीवन के मनमोहक रंग इन तालों की परिधि में सदियों से आज तक चमकते रहे हैं। ये मात्र संक्षिप्त विवरण है। इन तालों के पीछे जो हमारे रिवाज हैं वे भी नायाब हैं। ये तालें हमारी संस्कृति के एक अनूठा रूप तथा आम जन के दिलों की धड़कन हैं, जो एक क्षण को तारतम्य में संजोकर हमारी जीवन शैली तथा परम्पराओं का निर्वहन करते सुखद सामाजिक जीवन को संचालित करते हैं।

गांव व डाकघर देवठी-मझगांव, ज़िला सिरमौर,
हिमाचल प्रदेश

आलेख

करवट लेती लोक संस्कृति की समृद्ध धारा

◆ डॉ. कृष्णलाल सहगल

भौगोलिक स्थिति के आधार पर ज़िला सिरमौर मुख्यतः तीन भागों में विभाजित है- गिरी आर क्षेत्र, गिरी पार क्षेत्र और दून घाटी। गिरी आर क्षेत्र में प्रसिद्ध पर्वत शृंखला 'धारटी' है जिसके नाम पर गिरी आर क्षेत्र का नाम 'सिरमौरी धारटी' पड़ा है। नाहन व पांवटा साहिब तहसीलों के अंतर्गत निचले मैदानी भाग दून घाटी के अंतर्गत हैं। पांवटा साहिब में सिक्खों का गुरुद्वारा, त्रिलोकपुर में माता बालासुंदरी मन्दिर, नाहन स्थित काली मन्दिर आदि गिरी आर क्षेत्र के लोगों की धार्मिक आस्था एवं श्रद्धा के पावन स्थल हैं। गिरी पार क्षेत्र ऊंचे पर्वतों और हरे-भरे वनों से शोभायमान है। इसी क्षेत्र में प्रसिद्ध तीर्थ स्थली चूड़धार ज़िला सिरमौर की सबसे ऊंची चोटी है। सैनधार, धारटीधार, पीड़ियाधार, हरिपुरधार, नोहराधार, बोगधार, बथाउधार आदि अनेक धारों अथवा चूड़ शिखर से अवरोहण करती पर्वत मालाएं अपनी रमणीय आकृतियों की अनुपम छटा बिखेर देतीं हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि सिरमौर रियासत पहाड़ी रियासतों में प्रमुख भूमिका निभाती थी, यानी इसे दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्रों का प्रमुख प्रहरी माना जाता था।

साहित्यिक दृष्टि से इसका शाब्दिक अर्थ किया जाए तो 'सिर', 'शीश' और 'मौर' आभायुक्त बन जाने से इस नाम की सार्थकता जुड़ जाती है। सिरमौरी बोली में 'मौर' का पर्याय मौड़ है, जिसका अर्थ योद्धा, ताक़तवर होता है। यहां रहने वाले अनगिनत जन-नायकों ने अत्याचार और अन्याय के विरुद्ध तत्कालीन शासकों के साथ लड़ाइयां लड़ीं, जिनका वर्णन आज भी 'हारूल' लोक-गाथाओं में सुना जा सकता है। दूसरे मतानुसार, 'सिरमौर ताल' इसकी राजधानी होने के कारण इसका नाम सिरमौर पड़ा। सिरमौर ज़िला की वर्तमान राजधानी नाहन की नींव 1678 ई. में राजा कर्म प्रकाश ने रखी थी और कुल 48 राजाओं ने सिरमौर रियासत पर राज किया। अन्तिम राजा राजेंद्र प्रकाश के शासन के पश्चात् राजशाही समाप्त हो गई। राजाओं के शासनकाल से जुड़े कुछ लोक गीत व लोक गाथाएं वर्तमान में भी लोक गायकों से सुनी जा सकतीं हैं।

गिरी पार की दुर्गम पर्वत श्रृंखलाओं में लोक स्वर लहरी अपने विविध हृदयग्राही, मनोहारी और स्वच्छंद रूप में गूंजती रहती है। प्रकृति के कण-कण में यहां का जन मानस थिरक उठता है और स्वर लहरियों के साथ झूम उठता है। सिरमौर लोक संगीत सांस्कृतिक दृष्टि से जितना समृद्ध है, उतना ही इसका सांगीतिक पक्ष भी समृद्ध है। निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि लोक संस्कृति को संरक्षित रखने का महत्त्वपूर्ण श्रेय लोक संगीत को जाता है। रीति-रिवाज़ों, परम्पराओं और व्यवहार के प्रतिमानों को बनाए रखने में इसका अहम योगदान है।

सरल शब्दों में कहें तो सामाजिक परिवेश और प्राकृतिक वातावरण में संग्रहित संस्कार ही लोक व्यवहार के माध्यम से संस्कृति में परिणित हो जाते हैं और संस्कृति का गतिमय व सुव्यवस्थित प्रवाह, परम्परा का रूप धारण कर लेता है।

परिवर्तन सृष्टि का नियम है। संसार की अनेक कृतियां समयानुसार बदलती रहतीं हैं। लोक संगीत में इस प्रकार का बदलाव आना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। वैदिक काल के संगीत से आधुनिक संगीत तक ना जाने इसे कितने पड़ावों से गुज़रना पड़ा। परिवर्तन की यह धारा विश्व भर के लोक संगीत में भी देखी जा सकती है। इसलिए देशीय अथवा प्रान्तीय लोक संगीत में इसकी छाप पड़ जाना स्वाभाविक ही है।

सिरमौरी लोक संगीत का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि यहां के लोक गीतों, लोक वाद्यों और गायन अथवा वादन क्रियाओं में अनाम कलाकारों ने हमें अमूल्य धरोहर सौंपी है। संगीत का कोई भी रूप शास्त्रीय अथवा लोक संगीत हो, मुख्यतः तीन शब्दों के मेल 'गीतं वाद्यं च नृतं' अर्थात् गायन, वादन और नृत्य पा आधारित होता है। सिरमौरी लोक संगीत का बदलाव के परिप्रेक्ष्य में आकलन करने के लिए सबसे पहले गायन पक्ष पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है।

सन् 1960 के आसपास मेरी आयु लगभग नौ या दस वर्ष की रही होगी जब मैं सिरमौर ज़िला के राजगढ़ क्षेत्र के अंतर्गत गांव भूईरा की प्राथमिक पाठशाला में पढ़ रहा था। उन दिनों तीज-त्योहारों और विवाह आदि उत्सवों में कुछ लोक गीत प्रायः सुनने को मिलते थे जैसे- ठांडा पाणी चूड़ी चानणी रा, लाणा पाथटू

रा नाला, लाणा मेरी भाणजिए लाणा पाथटू रा नाला। इसी के साथ लाल चिड़िए सैरी ना जाणा, सैरी नि जाणा सैरी नि जाणा, सैरी पाको ला गिऊं रा दाणा, गिऊं रा दाणा, गिऊं रा दाणा। बिछया देओ मेरी माई सादटू ठौड़ी दी आई और झांगा छेढ़ूए रीछो भार्द रोतीरामा। एक-दो बार 'बुड्डु' भी सुनने को मिलता था, जो मेरी समझ से परे था। वास्तव में 'बुड्डु' एक शौर्यगाथा है, जिसे किसी व्यक्ति के देहावसान के उपरांत शोक संतप्त परिवार को सांत्वना देने के लिए तीन या चार व्यक्ति गाते हैं।

समय व्यतीत होने के साथ आकाशवाणी के शिमला केंद्र से पहाड़ी लोकगीत सुनने को मिल जाते थे। स्वर्गीय ठाकुर कृष्ण सिंह के गाए लोक गीत 'तेरे मुओं दा तिला, बागे दे पाके आछयो, बाबू री रहाची समितरा, कोंइथों रे काण्डे रे मामा, ढोल बाजी लोणा जानूं रे टे के रे हो मुंगला आदि' अधिक प्रचलित थे। स्वर्गीय मतराम अत्री द्वारा गाया गया लोकगीत 'शीलो शिलावणो लाए छेडू पींगो रे काजली हारे कौंदिए' भी कई बार सुनने को मिलता था। इन्हीं दिनों अपने ननिहाल गांव सनियो-दीदग में स्वर्गीय शेर सिंह चौहान सिंह के विवाह के अवसर पर 'छेडू चोज़ो री गोरखीए' 'चिऊं कोरे मुशया' और रामायण का आंशिक पद-गीत 'राम-राम पुकारा सिया ने' आदि सुनकर अत्यधिक प्रभावित हुआ।

लोक गीतों अथवा लोक गाथाओं में वर्णित शब्दों के महत्त्व एवं घटनाक्रम से अनजान ही रहा, किन्तु गीतों की मधुर स्वर लहरियां और तालों की गूंज मन पर अमिट छाप छोड़ती चली गई। इसे मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूं जब हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला से एम.फिल 'संगीत' में सिरमौर ज़िला के लोक संगीत में शोध कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। इसी दौरान मुझे पूरे क्षेत्र में अध्ययनरत रहने के फलस्वरूप लोक गीतों का एक अनुपम ख़ज़ाना हाथ लगा। लोक गीतों के विविध प्रकार यथाः ढीली नाटी, गीह, रासा, हारूल या हार, छिछा, झिणिया, रामायण, पंडवायण, झूरी, पवाड़े-साके, भिंऊरी, बिशू अथवा ठोडा गीत, बिरसू, बुड्डु इत्यादि अभी भी इस क्षेत्र में जन-मनास के कंठहार हैं।

'तोएं तो शिखा रूशणा' एक पारम्परिक लोक गीत है जिसमें किसान दम्पत्ति का जीवन बहुत मार्मिक ढंग से चित्रित हुआ है। 'जिन्दया मोयरू तिंदया बानो, लाणी थी मुंदड़ी रुंडया कानो, भूखे के देली टुकड़ा, तेरा मानू बारी खे सानो, सौदा लोणा सूने रा, चांदी री थी घोरिए खानो.....शिखा रूशणा'। नायक अपनी रुष्ट नायिका से कहता है कि तुम्हारा रोज़ का रूठना, मुझे अच्छा नहीं लगता। तुमसे कुछ कहना चाहता हूं लेकिन तुमने अपने कान बन्द कर रखे हैं। यदि मेरी बात ध्यान से सुनो तो तुम्हारा इतना एहसान होगा जितना किसी भूखे पेट व्यक्ति को भोजन देने से होता है। जिस वन में 'मोहरू' ओर 'बान' वृक्षों का साहचर्य होता है, मेरा और तुम्हारा भी ऐसा ही है। उत्तर में पत्नी कहती है कि जैसे काठ की हांडी एक बार ही चढ़ती है, उसी प्रकार मैं भी तुमसे यही बात कहती हूं कि पत्नी को सज-धज के रहना चहिए और परिवार में भाई भी अच्छे होने चाहिए। सम्पूर्ण गीत पति-पत्नी की मनोदशा को मूर्त रूप देकर उजागर करता है।

इस प्रकार के अनेकों लोक गीत सिरमौर जनपद में अभी भी प्रचलित हैं। 'किन्दी मरचिए चाली बे दाड़िए', 'बेलोए बुरा आया जमाना केले नेईं पेवके जाणा', 'माला रे कोटो दा ना पाकटो लाए लोइए दा' जैसे लोक गीतों में अविवाहित कन्या को अपना यौवन सुदृढ़ रखने और चरित्रहीनता के प्रति सचेत रहने की सीख दी गई है। इस प्रकार के समसामयिक लोक गीतों में सामाजिक परवेश के बदलते रंग-ढंग का चित्रण भी बड़े सुन्दर तरीके से किया जाता रहा। 'छुबकुआ रे ए कलिए जुगा छुबकुआ रे' गीत, जो लगभग 1970 के दशक में गाया जाता था, साथ ही 'बाबू रे नोखरे घाले खाए' नए फैशन पर व्यंग्यात्मक प्रहार करते हुए सुने जाते थे। इन गीतों में महिलाओं द्वारा तंग वस्त्रों का पहनना और नवयुवकों के कन्धों तक लटकते बालों पर कटाक्ष संबंधी पंक्तियां सुनकर बरबस हंसी आ जाया करती थी। 'मेरो धान कुरेडुआ नाची जा' गीत वन्य जीव-जन्तुओं के संरक्षण के प्रति समाज में जागरुकता का संदेश देता है।



सिरमौर जनपद में 'झूरी' गीतों की विशेष परम्परा रही है। हिन्दी के दोहों के समान दो पंक्तियों और चार चरणों में पिरोए गए

ये गीत अनिबद्ध रूप में (ताल-रहित) गाए जाते हैं। इन गीतों को नायक-नायिका के परस्पर सवाल-जवाब भरे अंदाज़ में जंगलों में पशु चराते, लकड़ी काटते आदि अवसरों को सुना जा सकता है। उदाहरण के तौर एक गीत प्रस्तुत हैः

नायक : बांठणो जुहूणों बे रे, होला साथ दा तारा।
आखी रा किया नोरजा, तिंदा तोला जिऊटा म्हारा।।

भाव यह है कि नायिका का चांद की तरह सुन्दर मुख और माथे की बिंदिया ने नायक को अत्याधिक आकर्षित कर अपने वश में कर लिया है। नायिका की सुन्दर आंखों ने माना अपने नेत्रों का तराजू बनाकर बाटों से तोलकर नायक को अपना बना लिया है।

नायिका : चिटिए बोलो टोपिए रे, सूने-चांदी री ए बूरे।
आवंदा रोए साजना, एन्थी ना म्हारी नोगरी दूरे।।

अर्थात्, नायिका अपने प्रियतम की सफेद टोपी और उस पर सोने-चांदी के रंग की चमकती ज़री की सुन्दरता की प्रशंसा करते हुए कहती है कि मेरी नगरी अथवा मेरा गांव दूर नहीं है, तुम कभी आते-जाते रहना।

इस प्रकार, स्वकीय वियोग और परकीय वियोग का सजीव चित्रण व्यक्त करते 'झूरी' गीत लोक जीवन की मार्मिक और यथार्थ अभिव्यक्ति करते हैं। स्वानुभूति की उपज होने के कारण से गीत प्राकृतिक हैं और जन-मानस को बरबस अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता रखते हैं।

सिरमौर जनपद में 'गीह' अथवा 'नाटी' या 'मुंजरा' में गाए जाने वाले लोक गीतों की एक लम्बी क़तार है। 'मुंजरा' शब्द वास्तव में गायन व नृत्य के आयोजन के लिए प्रयुक्त किया जाता है जिसमें लोक गायकों और वादकों की मण्डली गोलाकार में बैठकर एक बड़ा घेरा बनाए रखती है तथा बीच की खाली जगह में नर्तक नृत्य करते हैं। यह आयोजन 'मुंजरा' उत्सव विशेष के अवसर पर कभी-कभी रात भर चलता है, जो थमने का नाम नहीं लेता। ढोलक, खंजरी की थाप सभी दर्शकों को नृत्य करने के लिए मज़बूर कर देती है। 'मुंजरा' में प्रणय सम्बन्धी लोक गीतों को गायक-वृन्द माला रूपी लड़ियों में पिरोकर ऐसी तान छेड़ते हैं जिसका क्रम लगातार एक के बाद एक नृतक के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करता है।

'ऐसी मुंजरे जोगी जवाना बे, छेडू चोज़ो री गोरखीए', 'नाचणा उछा छुबिए', 'पाणी रा सोसो रे चारणों', 'मोरू दी ताज़ी दासिया', तेरे बे मुओं दा तिला', 'घोणी ओ केलटी बिलड़े बानो', 'आच्छा गांव कांडवी रा', काला बाशा कोऊआ तेरे आंगणे', डिंगरो री सैरी दे कोईंथो रे काण्डे मामा बाबुआ जोगिन्दरा' इत्यादि अनेक गीतों के साथ नृत्य किया जाता है। प्रणय संबंधी इन लोक गीतों के मध्य कभी-कभी नर्तक अपनी आवाज़ में स्वयं किसी हास्य गीत को गाकर भी दर्शकों का खूब मनोरंजन करते हैं। यथा : चोणे का बीजणा केशा हुआ रे, चोणा यूं बीजा, इयूं बीजा, इयूं बीजा रे', मेरी चोड़किए', चिऊं कोरे मुशया पिऊं कोरे राए' आदि सुनकर श्रोता हंसकर लोट-पोट हो जाते हैं।

एक अन्य लोकगीत 'घुम-घुम ट र र र घीयो री लोटकी' में सिरमौरी भोज्य पदार्थों अथवा परम्परागत पकवानों का सुदंर वर्णन मिलता है। विवाहिता कन्या माता-पिता से मिलने आई है। पिता अपनी पुत्री से कहता है-बेटी, अब तुम असकली-पटांडे, लुश्के, सिड़कू-घी, शुचावले, धरोटी, इंडरे आदि खाकर, पुष्ट होकर अपने ससुराल लौटना। इसी प्रकार, 'मुंजरा' आयोजन में लोक गायक कार्यक्रम का आरम्भ रामायाण, पण्डवायण, जिसे स्थानीय बोली में 'भारतो' कहा जाता है, किया करते थे। इसे गांव के वृद्ध पुरुष व महिलाएं बहुत उत्साहपूर्वक सुना करते थे, लेकिन वर्तमान में ऐसे गीत सुनने को नहीं मिलते।

दीपावली पर्व के उपरांत मनाए जाने वाले अन्य उत्सवों जैसे बदीवाली आदि के अवसर पर 'हारूल' (लोक गाथाएं) गाने की परम्परा है जिसे अभी भी रेणुका और शिलाई तहसीलों के लोक गायकों के मुखारविन्द से सुना जा सकता है। हारूल वास्तव में किसी योद्धा एवं पराक्रमी व्यक्तित्व का चित्रण अभिव्यक्त करती है। ये गाथाएं गायकों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने पूर्वजों से विरासत के रूप में मिली हैं।

होकू मियां की हार, सामा-दौलतू की हार, मदना की हार आदि इस जनपद की शौर्य लोक गाथाएं आज भी सुनने को मिलतीं हैं। झांखो-अजबा का पवाड़ा में 'झांखो' नामक महिला के सतीत्व का वर्णन सुना जा सकता है जो दो गांव- डिब्बर और कुफर के मध्य परस्पर वैमनस्य समाप्त करने का ज्वलंत उदाहरण है।

सिरमौरी लोक संगीत की इसी कड़ी में लोक-वाद्य और लोक-तालों संबंधी विषयों पर भी विचार करना अनिवार्य होगा। ढोल, नगारा, दमामा या दमामटू, शहनाई, करनाल, रणसिंगा, बांसुरी, खंजरी, हुड़क, डौंरू इत्यादि वाद्यों का प्रचलन वैदिक और पौराणिक काल से जुड़ा हुआ है। गिरी-पार क्षेत्र में बूढ़ी दीपावली आदि पर्व के अवसर पर ढोल, नगारा, दमामटू, हुड़क आदि लोक वाद्यों के वादन से पूरा वातावरण ऐसे गूंजायमान हो उठता है मानों धरती हिल रही हो। इन वाद्यों को सामूहिक रूप में वादक-वृन्द द्रुत 'तेज़' लय में 12 मात्रिक 'फुलणिया' ताल बजाकर समूचे वातावरण में नया जोश भर देते हैं। ढोल, दमामा और हुड़क वादक अपने-अपने कला कौशल की बेहतरीन छाप छोड़कर, ताल में विभिन्न प्रकार की वादन क्रिया से दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर सबका मन मोह लेते हैं।

लोक वाद्यों पर बजाए जाने वाले लोक तालों के अंतर्गत फुलणिया, बिशू मेलों में बिशू ताल, विवाह आदि के अवसर पर ब्यादड़ी ताल, जंग ताल, बटवार ताल आदि की वादन शैली रेणुका, संगड़ाह और शिलाई तहसीलों के अंतर्गत प्रचलित हैं। गिरी-पार की ही राजगढ़ तहसील अथवा पच्छाद क्षेत्र में 'पजावज',

'धरेवणी', 'रथेवला', स्वांगटी गीह', 'अन्द्रेड़ा', 'शवारी' और 'करयाला' तालों की परम्परा है, जिसे संगीत की व्यावसायिक जाति से सम्बन्ध रखने वाले वादक गण इतनी कुशलता के साथ वादन करते हैं कि शास्त्रीय संगीत का ताल ज्ञाता भी उक्त तालों के ठेकों को सुनकर अचम्भित हो जाए।

करियाला ताल में बजाए जाने वाले 14 मात्रिक तालों, तिहाइयों और परनों का वादन पूर्णतः शास्त्रीयता की परिधि में निहित रहता है। 'ढोली जा मेरे टिलूआ, दिशो साजणो रा गांओं रे' और 'किन्दी मरचिए चाली बे दाड़िए, राणा तो बोलो मिएं भज्जी रा' लोक गीतों, जिन्हें ढीली नाटी के रूप में जाना जाता है, सोलह मात्रिक ताल शास्त्रीय संगीत के तीन ताल अथवा जंग ताल के अत्याधिक सामीप्य बनाए रखते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। आठ मात्रिक जंग ताल, को विवाह के अवसर पर दो ढोल, एक नगारा जोड़ी और शहनाई वाद्यों पर एक विशेष वादन क्रिया द्वारा सुना जा सकता है। यही ताल विलम्बित लय से आरम्भ करते हुए अति द्रुत लय तक विभिन्न लयों और ताल में प्रयुक्त विविध प्रकारों का प्रयोग करते हुए वादक कलाकार के कौशल को चार चांद लगा देता है। 'मुंजरा' आयोजन में गीह ताल भी आठ सोलह मात्राओं पर आधारित है। आठ अथवा सोलह मात्राओं में पांच तालियों का प्रयोग अपने हाथों पर दर्शाते हुए, बड़ी सहजता के साथ निभाते हैं। बिशू मेलों और विवाह आदि अवसरों पर माला नृत्य में ढोल और नगारा वाद्यों के साथ शहनाई पर प्रचलित लोक गीतों की धुनें उत्सव को मंगलमय बना देती हैं। लोक वाद्यों का अनूठा वादन शिमला और सोलन के कुछ क्षेत्रों में भी सुना जा सकता है।

'लोक-संगीत के तीसरे और अंतिम पक्ष को देखते हुए सिरमौरी लोक-नृत्य की एक अलग पहचान है। बिशू मेलों में ठोडा-नृत्य जिसमें प्रायः पुरुष ही भाग लेते हैं, अपने हाथ में 'डांगरू' (एक विशेष प्रकार का तेज़ हथियार) उछालते हुए रथेवला ताल-वादन के साथ कदम से कदम मिलाते हुए सामूहिक नृत्य करते हैं। यहां का विशेष परिधान 'लोईया' 'सूथण' पहनकर, धनुषबाण लिए एक दल दूसरे दल को ललकारता है और ठोडा खेल नृत्यमयी मुद्राओं के साथ आरम्भ हो जाता है। लोक-वाद्यों का प्रयोग ठोडा प्रतिभागियों में निरन्तर जोश भर देता है, ठीक उसी तरह जैसे युद्ध में रणभेरी बजने से सेनानियों में अपने शत्रुओं को देख खून खोलता है।

'बुड़चाय' नृत्य में हुड़क-वादक, दमामा तथा नगारा वादक अपने-अपने वाद्य बजाते हुए बेहद सुन्दर नृत्य करते हैं। सभी वादक कलाकार एक विशेष प्रकार का कढ़ाईदार 'चोलना' या 'चोगा' पहनकर खुले आंगन में नृत्यमयी मुद्रा में प्रवेश करते हैं। लगभग 20 या इससे भी अधिक 'हुड़क' वाद्यों की गूंज दूर-दूर तक फैल जाती है। 'मुंजरा' में महिलाएं भी नृत्य करती हैं, एकल अथवा सामूहिक रूप में भी महिला तथा पुरुष द्वारा नृत्य करते पद संचालन, हाथ की मुद्राएं, कमर मटकाना, गीत के अंतराल में ढोलक पर परन के साथ फेरा देना और सम पर विशेष ढंग से रुक जाना इत्यादि अति आनन्दवर्धक प्रतीत होती है। झूरी, लामण, गंगी इत्यादि लोक-गीतों के साथ नृत्य नहीं किया जाता। गिरी-पार जनपद में नृत्य के विविध रूप विभिन्न उत्सवों, मेलों तथा तीज-त्योहारों के अवसर पर देखे जा सकते हैं। लोक-संगीत में हुए परिवर्तन अथवा बदलाव के विषय में विचार किया जाए तो प्रतीत होता है, केवल सिरमौर ही नहीं समूचे पहाड़ी प्रदेश हिमाचल प्रदेश के लोक-संगीत में भी बदलाव के लक्षण दिखाई देते हैं। सिरमौरी लोक-गीतों में जहां ठहराव था, गाम्भीर्य था वह अब लीक से हटकर पंचलता का रूप धारण कर गया है। 'झूरी गीत' वर्तमान में लुप्त प्रायः हो गए हैं। 'ढीली नाटी' का प्रचलन लगभग समाप्त हो गया है। मुझे याद है एक बार उन्नीस सौ सत्तर के दशक में मंच पर श्री विद्यानन्द सरैक गांव देवठी मझगांव, श्री प्रताप सिंह वर्मा गांव मतियाना और श्री राम सरन शर्मा नज़दीक तारा देवी ज़िला शिमला ने मेरे द्वारा गाए गीत 'किन्दी मरचिए चाली बे दाड़िए' पर सामूहिक नृत्य किया। यह गीत 16 मात्राओं में विलम्बित लय पर आधारित है तथा इसमें खाली, ताली आदि का शास्त्र सम्मत बंधन है। तीनों कलाकारों के क़दम लय युक्त क्रम में पद संचालन से पूरा पंडाल आश्चर्य चकित हो गया। ऐसा सुन्दर नृत्य-संगम पुनः देखने को प्राप्त नहीं हो सका। आकाशवाणी कलाकार श्रीमती विद्या देवी गांव दाहन और श्रीमती शकुन्तला देवी गांव देवठी पंचड़ लोक-नृत्य में अपना विशेष महत्त्व रखती थी। इनके द्वारा किया गया शालीन तथा भाव-भंगिमाओं में भरपूर नृत्य आज भी क्षेत्रवासियों के लिए अनूठी मिसाल है। स्व. श्री लेखराम शर्मा गांव दूधम के मधुर कण्ठ द्वारा मधुर-गान को अभी भी, आकाशवाणी शिमला के माध्यम से सुना जा सकता है। स्व. वैद्य श्री सूरत सिंह जी गांव कटोगड़ा/हाब्बन निवासी अत्यन्त संगीत प्रेमी थे। मेरा सौभाग्य रहा कि मुझे लोक संगीत के क्षेत्र में कार्य करने की प्रेरणा इन्हीं से प्राप्त हुई। यह वो समय था जब गांव में सभी संगीत प्रेमी एक जगह एकत्र होकर महफिल में भाग लेकर एक-दूसरे को बड़े चाव से सुनते थे तथा प्रोत्साहित भी करते थे। उपस्थित श्रोताओं में हर किसी का मन ढोलक अथवा हारमोनियम बजाने के लिए लालायित रहता था। संगीत के प्रति गहरा लगाव देखा जाता था। कोई संगीत से जुड़ा व्यक्ति किसी के घर आ जाए तो उसका बड़ा सत्कार होता था। सारा गांव रात के समय घंटों बैठ उसे सुनता भले ही, सारी रात बैठना पड़े। वक्त ने करवट बदली, अब कोई इस तरह के आयोजन में भाग लेना नहीं चाहता। किसी के पास समय नहीं क्योंकि भौतिकवादी युग में यांत्रिकता ने जन-मानस की स्वाभाविक संस्कृति को नष्ट करने के संकेत दे दिए हैं। वर्तमान में जहां भी संगीत उत्सव में जाएं, वहीं पर लोक-वाद्यों के स्थान पर पर डी.जे. की धुनें बजती सुनी जा सकती हैं और इन कर्ण-अप्रिय

अथवा कर्ण कटु धुनों पर आज की पीढ़ी थिरकती नज़र आएगी।

बदलाव यह भी कि, आधुनिक रचनाकारों द्वारा ऐसे गीतों को प्रस्तुत किया जा रहा है जो, लोक-साहित्य की कसौटी पर खरे नहीं उतरते। मैं अपने बाल्यकाल में सुने लोक-गीतों को याद करता हूं तो गहराई में डूब जाता हूं- कौन थे वे रचनाकार जिन्होंने मानव जीवन के सम्पूर्ण क्रिया-कलापों, जीवन मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं की 'झूरी' गीतों में पिरोया। किसने 'हारुलों' की क्रमिक घटनाओं की तुकबन्दी कर शूर वीरों के चित्रण अमर किए। कौन थे वे ताल और लय के प्रणेता जिन्होंने अनगिनत लोक-तालों का चिन्तन कर उनहें क्रियात्मक रूप प्रदान किया। आज भी पीढ़ी का दायित्व है कि उपर्युक्त वर्णित बिन्दुओं पर विचार करें।

लोक-साहित्य और लोक-संगीत के विषय में यह सत्य है कि यह कला श्रुत साहित्य के रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी पारम्परिकता से आगे बढ़ती रहेगी। लोक-गीत जैसा कि 'लोक' शब्द से स्पष्ट है, निश्चित तौर पर लोकपरक होना चाहिए, व्यक्तिपरक नहीं। यह मान लेना कि लोक गीत का रचयिता अज्ञान अथवा अनाम होना चाहिए, तर्कसंगत तथा युक्तिसंगत नहीं लगता। लोक-गीतों का रचयिता कोई न कोई तो होगा ही, इस बात को अस्वीकारा नहीं जा सकता। ज्ञात अथवा अज्ञात होने से लोक-गीत के महत्त्व पर कोई असर नहीं पड़ता। वस्तुतः लोक-गीत के लिए यह आवश्यक है कि उसमें प्रयुक्त प्रतीक, उपनाम, रूपक तथा बिम्ब आदि और उनके द्वारा लोक-भाषा में व्यंजित भाव लोक रूचि-शुचि के सर्वथा अनुकूल हों। इस दशा में समाज उसे अवश्य सहर्ष स्वीकारेगा। इस आशय से संबंधित कुछ मेरी रचनाएं, जिनमें लोक ग्राह्यता के ऊपर वर्णित गुण विद्यमान रहे हैं, सहज ही समाज द्वारा स्वीकार किए गए हैं यथा :-

काला बाशा कोऊया तेरे आंगणे, तेरे हाथो दी छुणकू दाची, हूंदी चाले मेले खे रेणुके रे, मेरी ओ जारी रा बसेरा, एक फेरा नाटी रा, हेरे झूरीए मेरी झुरीए, मोले री मलाईए रे, बाईं तो पाछे रे मोजनू री, नोखरा तेरा आदि।

संचार माध्यमों से संगीत का प्रसार-प्रचार बढ़ा है, इसे अस्वीकारा नहीं जा सकता। लोक-वाद्यों की जगह इन दिनों इलैक्ट्रानिक यंत्रों ने ले ली है। अब ढोल, नगारा और शहनाई तो केवल ग्रामीण परिवेश में, वह भी कभी-कभार सुनी जा सकती है अन्यथा सिरमौर जनपद में शादी के अवसर पर 'बैंड' का अधिक प्रयोग किया जा रहा है। बदलाव की इस स्थिति हमें, जो लक्षण दृष्टिगोचर हुए हैं उन पर विचार करना अत्यावश्यक है। हम अपने लोक-वाद्यों का अधिकाधिक प्रयोग करें, दूसरों की नकल करने से बचें, फिल्मी गीतों का मिश्रण लोक-गीतों में न करें तथा अपनी बोली का उचित प्रयोग कर गीतों में ढालें ताकि उन अनाम कलाकारों, रचनाकारों के प्रति हम अपनी कृतज्ञता ज्ञापित कर सकें जिन्होंने हमें यह स्वर्णिम धरोहर प्रदान की है। मुझे यह कहते हुए गर्व होता है आतिथ्य सत्कार में अग्रणी सिरमौर, कला-संस्कृति के क्षेत्र में भी, अपने प्राचीन नाम 'सिरमौर' को सार्थक बनाए रखने में सक्षम होगा।

गांव तथा डाकघर, भुईरा,
तहसील राजगढ़, ज़िला सिरमौर-173101
दूरभाष न. 70183 53181, 98169-83455



पारंपरिक लोक संगीत में बसती जनपद की रूह

◆ डॉ. मनोरमा शर्मा

सिरमौर का लोक संगीत बहुपक्षीय, अत्यंत समृद्ध एवं विशुद्ध परपंरा का निर्वहन करता है। यहां के लोक सगीत का युग की सांस्कृतिक धरोहर है जो भावलोक का आगामी युगों में प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी प्रकार वाद्यों की वादन कला मौखिक रूप से ही हस्तांतरित हुई है। लोक नृत्यों के प्राण लोक गीत और लोक वाद्य हैं। इनकी संगत के बिना नृत्य निष्प्राण हैं। लोक नाट्यों में शास्त्रीय नाटकों के मूल तत्त्व छुपे हुए हैं। इन्हीं तत्त्वों का उद्घाटन प्रचलित लोक नाट्यों में हुआ है। आज बहुत तेजी से यह लोक कलाएं काल-कवलित होती जा रही हैं। परंपरागत लोकगीत, नृत्य विधाएं आज लुप्त हो चुकी हैं। हुड़क, गुज्जु जैसे वाद्यों के वादक गिने-चुने रह गए हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस अमूल्य लोक संपदा का संरक्षण, प्रलेखन, संग्रहण, परिरक्षण एवं हस्तांतरण किया जाए।

सिरमौर हिमाचल प्रदेश का हिमालय के आंचल में बसा एक प्राचीन भू-खंड है। अपनी प्राचीन संस्कृति के कारण ही यह क्षेत्र हिमाचल प्रदेश के बारह जिलों का सिरमौर (शीर्ष का मुकुट) कहलाया। कनिंघम ने 'भारत का भूगोल' पुस्तक में लिखा है कि यह क्षेत्र दक्षिण में आर्यवर्त से लेकर उत्तर में भीतरी हिमालय तक फैला हुआ था तथा पूर्व में गंगा नदी से पश्चिम में सतलुज नदी तक उसकी सीमाएं थीं। यमुना, टौंस (तमसा) तथा गिरी नदियां उसके मध्य में बहती थीं और सरस्वती तथा दृष्टवती (घग्गर) इसके दक्षिणी सिरे तक बहकर मैदान में प्रविष्ट होती थीं। गिरी नदी इसको लगभग दो समभागों में विभक्त करती है।

यहां पर संस्कृतियों की कई परतें जमी हुई प्रतीत होती हैं। सिरमौर के निवासियों द्वारा शैव तथा वैष्णव देवी-देवताओं की मान्यता और नाथ पंथियों से प्रभावित होकर मंत्र-तंत्र पर विश्वास करना इसका प्रबल प्रमाण है। यहां के विभिन्न उत्सव, पर्व, बिशू के मेले, मौण डालने के उत्सव, शिवरात्री, जन्माष्टमी का साथ-साथ मनाया जाना इसी बात का द्योतक है कि यहां असुर और आर्य दोनों संस्कृतियां साथ-साथ पनपती रहीं। समय-समय पर होने वाली उथल-पुथल का प्रभाव यहां की भाषा तथा संस्कृति पर भी पड़ता रहा। यही कारण है कि सिरमौरी भाषा में स्थानीय तत्सम शब्दों के साथ-साथ संस्कृत, प्राकृत, हिंदी, फारसी, राजस्थानीय, उर्दू तथा अंग्रेजी सभी प्रकार के शब्द विद्यमान हैं, परंतु इनमें सबसे अधिक संख्या संस्कृत-मिश्रित पहाड़ी तद्भव शब्दों की है। यहां के लोक-साहित्य में लिंग, जाति अथवा क्रियागत भेद न होने के समान है। यदि थोड़ा बहुत है भी तो वह बाहरी प्रभाव कहा जा सकता है। सिरमौर के लोक संगीत के अंतर्गत लोकगीत, लोक नृत्य, लोक वाद्य, लोक नाट्य तथा लोक गाथाएं समाहित हैं। लोक संगीत जनमानस की परंपरागत थाती होता है। यह उनकी अनुभूत अभिव्यक्ति अथवा हृदयोद्गार होते हैं जिन्हें वह विभिन्न माध्यमों से व्यक्त करता है। लोक संगीत लोक जीवन का स्वच्छ तथा साफ दर्पण होता है, जिसमें समाज के स्वच्छ जीवन का प्रतिबिंब झलकता है। समाज का सुख-दुःख, विजय-पराजय, प्रकृति की गतिविधियां, वृक्ष, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मानव के पारस्परिक संबंध, पूजा-उपासना, विश्वास-आस्था, व्रत-पर्व- त्योहार, मेले आदि सब इसमें समाए रहते हैं।

सिरमौरी लोकगीत एवं लोक नृत्य गीत

सिरमौर जनपद में लोकगीतों का विपुल भंडार है। ये लोकगीत विभिन्न त्योहारों, मेलों तथा अनेक उत्सवों पर स्थानीय लोक गायकों से सुने जा सकते हैं। समय तथा अवसर विशेष से जुड़े लोकगीतों को पृथक-पृथक शैलियों में गाया जाता है। कुछ लोकगीतों में दो या दो से अधिक व्यक्ति सामूहिक रूप से गाते हुए सुने जा सकते हैं। यदि लोकगीतों के विभिन्न प्रकार का अवलोकन किया जाए तो ज्ञात होता है कि सिरमौर में गाए जाने वाले अधिकांश लोकगीत वस्तुतः नृत्य गीत कहे जा सकते हैं। देवी-देवता स्तुति गीत, झूरी गीत आदि को छोड़ कर शेष गीतों को

मुंजरा, गीह आदि संगीत आयोजनों में प्रस्तुत किया जाता है। यूं तो नृत्य गीतों में पौराणिक गीत, रासा, हारूल, भर्तृहरि, पंडवायण आदि कथानक भी आंशिक रूप में वर्णित रहते हैं, परंतु इन गीतों में रतिभाव युक्त रचनाएं बहुतायत से मिलती हैं। नृत्य गीतों की विविध शैलियों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है।

गीह नृत्य गीत

गीह सिरमौर जिले का एक सामूहिक नृत्य है जिसे मुंजरा शैली के मध्यम प्रस्तुत किया जाता है। मुंजरा नृत्य बिशू, देवयज्ञ, हरियाली, शादी इत्यादि अवसरों पर शाम से सुबह तक प्रस्तुत किया जाता है। गीह के गीत नृत्य की संगति में गाए जाते हैं। गीत के गायक जिन्हें गायनटी कहा जाता है, मुख्य रूप से नृत्य भी करते हैं। गीह नृत्य दायरे में किया जाता है। बाहें, छाती, और कमर के झुकाव और विभिन्न मुद्राओं से नर्तक गीत के बोलों के भाव स्पष्ट करता है। गीह नृत्य में बांहें फैलाकर चक्कर काटना नृत्य का आवश्यक अंग माना जात है। गीह नृत्य में सामाजिक समस्याओं और कल्पनायुक्त गीतों का समावेश भी होता है। कभी-कभी गीह नृत्य के मध्य मुंजरा गीत सवाल जवाब के रूप में भी गाए जाते हैं। ढोलक, खंजरी, खड़ताल आदि वाद्य इस नृत्य की संगति में बजाए जाते हैं। गीह नृत्य में 12 मात्राओं का ताल बजाया जाता है, जिसमें पांच तालियां लगती हैं, जिससे विशेष रसोत्पत्ति होती है। गीह नृत्य का एक लोकप्रिय गीत इस प्रकार है :

तेरे मुओ दा त्तिला हाथ रे बेशो सुबदा
बोलो रे मास खाया तेरा पौंछिए
रोआ हाड़ो रा किला हाय रे बेशो सुबदा
हाय रे तेत्थे जाणा मेरे शावरे
जेथे ओ बोइणो लीला, हाय रे बेशे सुबदा।

रासा नृत्य गीत

रासा नृत्य गीत पौराणिक गाथाओं पर आधारित है। इन गीतों में कृष्ण लीला से संबंधित घटनाओं का वर्णन रहता है। कुछ लोग रासा शब्द का संबंध रास से जोड़ते हैं और इसे कृष्ण की रासलीला का ही रूप मानते हैं। रासा नृत्य में गीत की प्रधानता होती है। इस नृत्य को क्रमबद्ध रूप में नाचा जाता है, जिसमें साथ घूमना, बैठना, मुड़ना आवश्यक नृत्यविधि है। यह नृत्य रात के समय खुले आंगन में किया जाता है। यह नृत्य गीत मनोरंजन प्रधान है। एक गीत इस प्रकार है :

गिरियो रे पाणी रे कईए शुका राजया
गिरियो रे पाणी रे घोड़े पीयो हाथियों
नोयणी शणाई रे राजा शुणो पोलगे
मोयलो दीराणी रे राजा शुणो पोलगे।

नाटी नृत्य गीत

सिरमौर अपनी नाटियों की विशिष्ट शैली के लिए प्रसिद्ध है। नाटी एक प्रमुख नृत्य प्रकार है। इसके साथ जो गीत गाए जाते हैं, वे नाटी गीत कहलाते हैं। यह गीत लय प्रधान होते हैं। नाटी का वास्तविक आनंद इसमें प्रयुक्त होने वाली ताल और लय के सम्मिश्रण में ही है। नाटी नृत्य में सोलह मात्राओं का ताल बजाया जाने वाला यह ताल प्रायः तीन ताल के समान दिखाई पड़ता है। इसे ढोल पर लकड़ी की छड़ियों से बजाया जाता है। एक गीत इस प्रकार है :

ढोली जा मेरेया टिलुआ, दिशो साजणो रा बोलो गांव रे
शेलो के लाणे बोलो मजनू, ठांडे जी पाणी रे होलो वाओ रे।

पड़ुवा नृत्य गीत

पड़ुवा नृत्य गीत अत्यंत लय प्रधान गीत है। हिमाचल के अन्य क्षेत्रों में जिस प्रकार 'गिद्धा' गीत प्रचलित है, वैसे ही सिरमौर में पड़ुवा नृत्य गीत हैं। इन गीतों को विशेषतया स्त्रियां ही गाती हैं और इसकी लय के साथ आत्मविभोर होकर नृत्य करती हैं। नृत्य में इन गीतों की लय द्रुत से अति द्रुत हो जाती है और उसी के अनुरूप गीत चलता रहता है। पड़ुवा नृत्य गीत का एक गीत :

दुनिया रा बेईमान दिलड़ू ना लाणा रे
फूली करो फुलणू डाली फूलो कुरा रे
तुमें जाणे घरो खे हामों लागणा बुरा रे।
फूली कोरो फुलणू डाली फूलों केला रे
म्हारे जाणा राजगढ़े खे तित्था देखणा मेला रे।

बूढ़ा नृत्य गीत

इस लोक नृत्य गीत में से पंद्रह नर्तक एक साथ भाग लेते हैं। तीन या चार लोक वादक हुड़क वाद्य बजाते हैं। शेष नर्तक डांगरे घुमाते हुए नाचते हैं। नर्तक स्वयं भी नृत्य गीत गाते हैं। इस नृत्य में शरीर को हिलाना, कदम ताल में मिलाना, तलवार या डांगरा हवा में घुमाना, गोलाकार दायरे में नाचना, गाना और कूदना सम्मिलित है। एक गीत इस प्रकार है -

बूढ़ी गोआ तू सेनी गोआ, तेरे लागे छौले पोलू
साएबा रे ताईं जिऊं दे दिला बशेखे
हो तो बांह का डोलू, साएबा रे
डोई लागा ढोल बुआ चंदा लयो तेती
लागे पोला दे पाटो, साएबा रे।

करयाला नृत्य गीत

करयाला सिरमौर का एक लोक नाट्य है। अपने इष्टदेवता के सम्मान में करयाला का आयोजन किया जाता है। करयाला का आरंभ चंद्रावली (चंद्रौली) नृत्य से होता है। चंद्रावली नृत्य शहनाई की धुन पर किया जाता है। करयाला नृत्य गीत इस नृत्य के बाद गाए जाते हैं। कई भजन भी नृत्यों की संगति में गाए जाते हैं। इन नृत्य गीतों में गीत की प्रधानता होती है। यह नृत्य क्रमबद्ध रूप में किए जाते हैं। इन नृत्य गीतों में ढोल, नगाड़ा तथा शहनाई वाद्यों की विशेष भूमिका रहती है। चंद्रावली नृत्य के बाद भजन गाए जाते हैं। चंद्रावली नृत्य द्वारा इन भजनों की धुन पर नृत्य करती

है। यह भजन अत्यंत सामान्य भाषा में होते हैं। उदाहरणार्थ :

मुझे है काम ईश्वर से, जगत रूठे तो रूठन दे।
शिव कैलाशों के वासी, धौलाधारों के राजा
शंकर संकट हरना।
जै कांगड़ा कालीधारा, मैया जी तैं बैकुंठ बणाया।

इसके पश्चात साधु का स्वांग किया जाता है। इसमें यह गीत गाया जाता है :

साधु की नगरी में, बसता न कोई रामा
जो भी बसे वो साधु होवे रामा।

करयाला में विभिन्न स्वांग नृत्य गीतों की संगति में अभिनीत किए जाते हैं। इनसे करयाला का मनोरंजनात्मक पक्ष उभरता है।

सामाजिक नृत्य गीत

समाज में घटित होने वाली घटनाओं को आशुकवि अपने शब्दों में पिरोकर बड़े सुंदर ढंग से प्रस्तुत कर देते हैं। अनेक कार्यक्रमों के अवसर पर इन सम-सामयिक गीतों को विभिन्न नृत्य-उत्सवों पर प्रस्तुत किया जाता है। सामाजिक कुरीतियों के प्रति आवाज उठाना, समाज में फैली भ्रांतियों, अंधविश्वासों के प्रति आक्रोश, राजनैतिक घटनाएं, अंतर्जातीय विवाह, देश प्रगति से संबंधित रचनाएं सामाजिक गीतों के अंतर्गत आती हैं, जिन्हें स्थानीय समाज सहज में ही अपना लेता है। उदाहरणार्थ :

मौरू दी ताजी दासिया, खोड़ो दी भूरो घुघटी।
लुये री बाजी दासिया, ठारो शो हारा रूपिया।

प्रणय गीत

सिरमौरी लोकगीतों की विभिन्न शैलियों के अंतर्गत झूरी, लामण, साका, गंगी और मुंजरा आदि अनेक प्रणय गीत हैं।

झूरी गीत : इन गीतों में नायिका की प्रशंसा, प्रणय-निवेदन आदि अनेक विषय रहते हैं। ऊंचे स्वरों में गाए जाने वाले झूरी गीतों को झूरी गायक कुशलतापूर्वक निभाते हैं। प्रकृति के स्वच्छंद वातावरण में गूंजने वाले इन प्रणय गीतों को सुनकर श्रोता आत्मविभोर हो जाते हैं। एक झूरी गीत इस प्रकार है :

बांठणो जुहणो बे रे झूरिए, होला साधो रा तारा
आंखी रा कियां बोलो नोरजा, तिंदा ते तोला जिऊटा म्हारा।

कुछ अन्य प्रणय गीतों के उदाहरण :

गोली दागी ना कनेरूए लाए, दिता आखी रा चीरा
कुणिए लाया जियो दा बुरा।
फूली कोरो ला फुलटू-फुलटू
ज़ेरा मिसरी कूजा
आखी मितरे मुखी कोसरी
कोरू आशुए पूजा।

भक्ति गीत : सिरमौर में पूज्य देवी-देवताओं, गृह-देवता, वन-देवता, कुल-देवता की स्तुति में विभिन्न लोकगीत गाए जाते हैं। रेणुका माता की स्तुति गीत इस प्रकार है :

रेणुका माईए, महामाईए, देऊ तेरा जागरा थेरशी
दिवे कोरू वाली ए रात परेशी।
दुई हाथो जोड़ी रो कोरू ढालो
शुचे पाणी री पाणी छालो।

गाथा गीत

सिरमौर के गाथा गीत विभिन्न विषयों पर आधारित हैं, जैसे भर्तृहरि, भारथ (महाभारत) पंडवायाण, पवाड़े, वीरगाथाएं हारूल (हार) गुग्गा जाहरपीर, बरलाज आदि। कुछ उदाहरण :

भर्तृहरि : कोंठणो कामो, जोगी पोड़ा ला धारणा
राजे दित्त भरतरी के राणिए फिटकारो
तूनी राजा बोलो हेड़ा खेलदे
तू खांदा न शिकारो

पंडवायण : आंवदा नी भाइयो हांडे भीतरा हांडा
फिरी फिरी खुबला झालू रा कांडा।
कुण बड़ा छतरी कुण जा बड़ा खांडा
बाणो छाड़ा आगनी धोखे दा पांडा।

रामायण : सुनुए मौते किंदरे लाए रे
रामो री राणि बाए रे आए रे
बाजी किंदरे-किंदरी रे तार रे
नि अ सतोला रावणे हार रे।

हारूल (हार) हौंकू मियां की हार यह एक लंबी गाथा है। एक अंश :

हो बोलो भेउता देणां लाशां दुड़ो दे मेरे
पाछड़े पाई पाछड़े
आखरो दे धारो, हौंकू दी देणी, आगड़े री लाई।

अन्य वीरगाथाओं में 'मदना की हार', 'देशू की हार', 'सामा दौल्तू की हार' जैसी लंबी गाथाएं 'हारूल' कहलाती हैं।

गुग्गा गाथा - गुग्गा जाहरपीर

सिरमौर में गुग्गा गाथा को 'झेड़ा' अथवा 'वार' भी कहा जाता है। गुग्गा गायकों की टोली रक्षा-बंधन से श्रीकृष्ण जन्माष्टमी तक इसका गायन करते हुए घर-घर जाते हैं। गुग्गा जाहरपीर सांपों का देवता माना जाता है, उसी की स्तुति में, टोली के गायकों में एक चेला, जो लोहे की छड़ी लिए रहता है, कांसे की थाली वादक, इकतारा और डमरू वादक गुग्गा गाथा गाते हैं। उदाहरणांश :

बीच समुदरा परगट होया, अलख पुरख नरवाणा
बीच समुदरा बड़ी दा बड़ोटू, तिन पत्ते लगदे डाला।
इक्की पत्ते पर आसन लगाया, ता ते वेद बचारा
बाएं अंगे बाबा नानक पनपेया, मनसे मनसा माई।

विविध गीत

सिरमौर के पारंपरिक लोकगीतों की अनेक शैलियां हैं। धीरे-धीरे इन विशिष्ट शैलियों के गीत लुप्त होते जा रहे हैं और इनके

गाने वालों की संख्या घटती जा रही है। इन गीतों की लय, गायन, शैली, ताल आदि अपनी विशिष्टता लिए हैं। आज इन शैलियों का नाम बाकी रह गया है और इनका मिश्रित स्वरूप ही सुनाई देता है। उदाहरणार्थ कुछ शैलियां इस प्रकार हैं :

लामण : लामण छोटे-छोटे गीत हैं, जिन्हें दोहा भी कहा जा सकता है। इनमें थोड़े में ही सारगर्भित बात कही जाती है। सिरमौर के अतिरिक्त कुल्लू और महासू में भी लामण गीत गाए जाते हैं। निम्नलिखित सिरमौरी लामण में जीवन क्षणभंगुरता और संयमपूर्ण जीवन बिताने का वर्णन है :

गेहूं पौके घुमका नाखड़ी जौआ री सेरी
मंज केरीबो ध्याड़ो जुआनो नी एजणा फेरी
लामण श्रृंगार एवं प्रणय विषयक भी होते हैं। एक उदाहरण
तेरी आखटी नानीयैं जिन्हें मोती रे दाणे
हाथ पकड़े साथीरा एबै नी अधमौ पाणै

झाशिए भी लखौ कांशिए भेजिए कामै
हाथौ भीजै औशौ मूहटू दौए रे धामै

झूरी : झूरी गीत तालबद्ध नहीं होते। इनका मुख्य विषय प्रणय, विरह, प्रतीक्षा, वायदे-उलाहने और सच्चे प्रेम की अभिव्यक्ति है । इनमें नायक-नायिका का संवाद सवाल-जवाब की शैली में गाया जाता है। जैसे :

नायक : शाड़ौ बशै रोलो शवणों वशो नानड़ी बूंदे
अखी शुकी देखदे शुकी मुईटी रुंदे।
नायिका : दूरी शा पड़ो बोलो हे रणा चूड़ी ल्याणी रहियो
आखीए माजा देखिदा जिया काजली बणी रा सीयो।

एक अन्य झूरी गीत में पहाड़ी जीवन की कठिनाइयों का वर्णन है। कि हमने कितने दिन भूखे काट दिए हैं, यदि इस वर्ष फसल अच्छी हो गई तो हमारे दिन हंसी खुशी गुजरेंगे।

घटे गे ठौगड़ी, ठौगड़ी गे टाटी
उखलो री शाटी, सातू जे बाटी
जेतणी गोती म्हीने री झूरिए
तेतणी भूखया हामे काटी। तेतणी भूखया रे।

लोका : लोका श्रृंगार रसयुक्त एकल गान है। इन गीतों में प्रकृति चित्रण अत्यंत खूबसूरती से हुआ है। जैसे :

पुनयो री रात जीनटी, पुनयो री रात मुइए
झिली मिली बौरिखा शैली बागुरो
नौदी रे कांडे दा बाशी रो हा चाकुरो
हिली रोहे चमेलटी रे पात। पनयो री रात मुइए

नाटी गीत : ये गीत नृत्य प्रधान गीत हैं। लयबद्ध गीत विलंबिम लय से होते हुए मध्य, द्रुत से अतिद्रुत लय में नृत्य के सौंदर्य को बढ़ाती है। उदाहरणतया एक नाटी गीत :

खाटे खाणे नी बे जोमिठू मीठे बागी रे ला केले
तुम मनो रे कापटी, हामे जीओ रे खेले, हो लच्छी रामा...

सिरमौरी नाटी गीतों में भिन्न कथाओं का वर्णन भी रहता है- इस गीत में भर्तृहरि गाथा का चित्रण है -

ढोल बाजी लौणा जाहणू रे टेकेरे, मेरी ओ मुंगला
हामे आवै रोए साधु रे भेखै, मेरीओ मुंगला
तेरे घोरो पाछे मजनू बेशो रे, मेरी ओ मुंगला
हामे काटड़े दकालो री देशों रे, मेरीओ मुंगला।

श्रमगीत : श्रमगीतों में प्रायः कृषि संबंधी गीतों का उल्लेख मिलता है। कृषि कार्यों की सहभागी परंपरा को 'ज्वारी' कहा जाता है। कृषि कार्यों में रोपाई एक प्रमुख कार्य है। सहभागिता से यह कार्य संपन्न किया जाता है। इस गीत में रोपाई के लिए जाने का वर्णन है :

सोहणिए म्हारे रूमणी लाणे जाणा
कुली क्यारी दी रूमणी लाणी हो, नए धानटू रा बीजटू पाणा।
सोहणिए एकौ क्यारो दी बेगमो राजी रे के री जीरी
एकी दी बासमौती रेके दी नोई शीरी
डोली बांधेयो बीकरी माटियो बीजटू पाणौ
गोती रे बीजटू रा धान म्हारे लाणा। सोहणिए म्हारे रुमणी...

देश प्रशस्ति गीत : इन गीतों में देश-प्रदेश की सुंदरता, व्यवसाय, खान-पान, रहन-सहन तथा प्रगति का वर्णन होता है। एक प्रसिद्ध सिरमौर देश-प्रशस्ति गीत इस प्रकार है :

लागो ढोलो रा ढमाका, म्हारा हिमाचलो बोड़ा बांका
ऊंची ऊंची धारो रे म्हारे, जड़ी बूटी रे घेरे
तिदी चारो म्हारी भेड़ो बकरी, पड़ो महैशो रे डेरे
आलू रे हामे खेती करो, लावो सेवा के बागीचे
बामणी खे बोलो लोइए सुथणी, बछावणी खे दलीचे
म्हारा हिमाचलो बोड़ा बांका।

प्राकृतिक सौंदर्य संबंधी गीत : इन गीतों को स्थान विशेष के प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन रहता है। जैसे पहाड़ों की चोटियों पर बर्फ है। झरने बह रहे हैं, भांति-भांति के फूल खिले हैं, खेतों में धान लहरा रहे हैं आदि। उदाहरणार्थ

टिब्बे दी पौड़ी रोही हियों के मामा मेरा
लागा पुहाड़ो दा जियो के मामा मेरा
रोली बागुरो रोला पाणी, बिची फूली धोरती दी राणी
फूली फुलीटू गली माशो, पूरी कोरी पुहाड़ो री आशो, के मामा मेरा...

निम्नलिखित गीत में चूड़धार पर्वत के सौंदर्य का वर्णन तथा चूड़ेश्वर देवता के रूप में भगवान यहां स्वयं विराजमान हैं।

ठंडा पाणी चूड़ी चांदणी रा लाणा पातेटू रा नाला
फूली करो फूलीटू करयाला शागा

उबी पिउली लाणी पांडा थाणा रा बागा
साइयां रामा री मुलुकवा बोलो
ठंडा पाणी चूड़ी चांदनी रा।...

लोक नाट्य

लोक नाट्य मानव जीवन की सहज अभिव्यक्ति है। मानव के हर्ष-विषाद, संयोग-वियोग, कष्ट-विषमताएं, कृषि, सम-सामयिक समस्याएं आदि विषय लोक-नाट्यों की संरचना में प्रेरक तत्त्व की भूमिका निभाते हैं। लोक नाट्य विशुद्ध मनोरंजन की दृष्टि से अभिनीत किए जाते हैं अतः इनकी भाषा, संवाद, संगीत, लय और ताल अत्यंत सरल शैली के होते हैं। इनके लिए किसी विशेष मंच की आवश्यकता नहीं होती। लोग किसी खुले स्थान या मंदिर के प्रांगण में लकड़ियों का ढेर (खंडा या घैना) जलाकर उसके चारों ओर बैठ जाते हैं, जिनसे ताप और रोशनी का प्रबंध हो जाता है। नाट्य अभिनीत करने के लिए किसी विशेष वेशभूषा अथवा साज-सज्जा की आवश्यकता भी नहीं होती। सहायक उपकरणों में स्थानीय उपलब्ध सामग्री का प्रयोग कर लिया जाता है। सिरमौर के मुख्य लोक नाट्य इस प्रकार हैं :

करयाला

करयाला सिरमौर का एक प्रमुख लोक नाट्य है। व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक सुख-समृद्धि हेतु की गई कामना जब देवकृपा से पूर्ण हो जाती है तब अपने ईष्ट देवता के सम्मान में करयाला का आयोजन किया जाता है। करयाला में विभिन्न स्वांग रचे जाते हैं। इन स्वांगों में समाज के अनेक पहलुओं का चित्रण होता है। करयाला का आरंभ चंद्रावली (चंद्रौली) नृत्य से होता है। इस नृत्य की संगति में गीत नहीं होता, बल्कि शहनाई की धुन पर ढोल-नगाड़े पर विशेष ताल बजाए जाते हैं। कई भजन नृत्य की संगति में गाए जाते हैं। करयाला के वादक और नर्तक यहां की व्यावसायिक संगीत जीवी जाति के लोग होते हैं, जो प्रायः अशिक्षित हैं, परंतु वंशानुगत गायन, वादन में अत्यंत निपुण हैं।

करयाला में अभिनीत किए जाने वाले स्वांग क्रमबद्ध रूप से किए जाते हैं। आरंभ में चंद्रावली नृत्य होता है। तदुपरांत नाटी नृत्य के साथ कृष्ण-गोपी की आराधना नृत्य, गीत, लय व ताल के साथ संपन्न होती है। इन स्तुतियों के उपरांत हास-परिहास युक्त स्वांग रचे जाते हैं जिनमें बसे पहले साधू का स्वांग, रोल्हू का स्वांग, प्रणय प्रसंग में लड़की का अपने प्रेमी के साथ भाग जाना, झूलना स्वांग, भौंरा-सैंया का स्वांग, मेम साहब का स्वांग आदि पारंपरिक रूप से क्रमबद्धता से अभिनीत किए जाते हैं। इनके बीच में कुछ अन्य स्वांग जैसे मालिन, चौकीदार आदि के स्वांग भी होते हैं। अंत में सम-सामयिक विषयों, सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य, सरकारी योजनाओं और प्रदेश की प्रगति से जुड़े विषयों पर भी अनेक नाट्यों का अभिनय किया जाता है। करयाला ऐसा लोक नाट्य है जो सामान्य सहज भाव से ही जनमानस को अनेक संदेश प्रेषित कर जाता है और लोग उन विषयों को सहज ही मनोरंजनात्मक रूप के द्वारा ही आत्मसात कर लेते हैं।

ठोडा लोक नाट्य

ठोडा युद्ध कौशल को दर्शाने वाला लोक नाट्य है। अतीत में जब कभी एक कबीला दूसरे कबीले या जाति का दुश्मन होता था, तब लोग एक दूसरे पर हमले के लिए जाते थे। लोग हाथ में डांगरू, डंडा, तीन-कमान लेकर नाचते-कूदते, झूमते, ललकारते हुए प्रतिद्वंद्वी की ओर बढ़ते थे। ठोड़ा लोक नाट्य का संबंध कौरव-पांडवों से जोड़ा जाता है। ठोडा दो दलों के बीच तीर-कमान से युद्ध की शैली में खेला जाता है। यह दल खूंद कहलाते हैं। एकदल शाठा और दूसरा दल पाशा कहलाता है। इन्हें साठड़ और पाशड़ भी कहा जाता है। ठोडा नाट्य के समय खूंद मोटे मोटे पाजामे पहन कर कमान को तान कर एक दूसरे की जांघों में नीचे वाले भागों पर निशाना लगाते हैं। निशाना लगाने पर निशानची झूम झूम कर कमान हाथ में उठाए नाचते हैं। ढोल और नगाड़े पर रथेवला नामक विशेष ताल बजाया जाता है। इस ताल की विशेष लय पर दोनों दल एक दूसरे पर आक्रमण करने का अभिनय करते हैं। अभिनय की दृष्टि से इस नाट्य में युद्ध के उपयुक्त कदमों का प्रयोग होता है। लयबद्ध क्रम से निशाना लगाने की क्रिया तथा जिनपर निशाना लगाया जाता है, इनके पद संचालन का संतुलन, लय-ताल का सामंजस्य दृष्टव्य होता है।

गीह नाट्य

गीह सिरमौर का एक सामूहिक नृत्य-नाट्य है। इसे मुंजरा नृत्य शैली के मध्य प्रस्तुत किया जाता है। बिशू, देव-यज्ञ, हरियाली, शादी-विवाह आदि अवसरों पर मुंजरा नृत्यशाम से सुबह तक किया जाता है, जिसके बीच गीह नाट्य अभिनीत किया जाता है। मुंजरा नृत्य के बीच गीह नाट्य सवाल-जवाब के रूप में किया जाता है, जिसमें सामाजिक समस्याओं और कल्पनाओं से युक्त संवाद रहते हैं। ढोलक, खंजरी, खड़ताल आदि वाद्य नाट्य संगीत में प्रयुक्त होते हैं। गीह नाट्य नृत्य प्रधान है जिसे दायरे में किया जाता है और नर्तक बारी-बारी से दायरे के मध्य जाकर नृत्य करते हैं। गीह के पात्र भी दायरे के मध्य आकर संवाद बोलते हैं और नाटकीय अभिनय करते हैं। विशुद्ध मनोरंजन की दृष्टि से लोक नाट्य जनमानस के भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

रासा लोक नाट्य

रासा लोक नाट्य सिरमौर का प्रमुख लोकप्रिय नाट्य है। कुछ लोग इसका संबंध 'रास' शब्द से जोड़ते हैं। यह नाट्य पौराणिक गाथाओं पर आधारित है। यह गायन प्रधान लोक नाट्य है और इसमें गीत नृत्य की संगति में गाए जाते हैं। मुख्य रूप से कृष्ण की लीलाओं से संबंधित नृत्य गीत 'रासलीला' नृत्य का ही रूप प्रतीत होता है।

रासा के गीत क्रमबद्ध रूप से गाए जाते हैं। नृत्य प्रधान

गायन के साथ नर्तक तथा रासा नाट्य के पात्र लंबी कतार में कदमों को आगे पीछे तालबद्ध रखते हुए नृत्य करते हैं। यह लोक नाट्य एकता का प्रतीक है। अनुशासन का ठोस स्वरूप सहज में ही अनुभव होता है। अतीत और वर्तमान के संबंधों को प्रगाढ़ता प्रदान कर भविष्य में संगठन की साकार कल्पना लिए यह नृत्य नाट्य मनोरंजन प्रदान करता है। पात्रों द्वारा चुस्त संवाद, नृत्य गीतों का सुंदर सम्मिश्रण इस लोक नाट्य को लोकप्रियता प्रदान करता है। मनोरंजनात्मक दृष्टि से अभिनीत किया गया यह नाट्य प्रेरणात्मक संदेश जनमानस संप्रेषित करता है।

पड़ुवा लोक नाटय

पड़ुवा लोक नाट्य में स्वांग रच कर लय प्रधान नृत्य गीतों में अभिनीत किया जाता है। हिमाचल प्रदेश के अन्य भागों में जिस प्रकार गिद्धा गीत प्रचलित हैं, उसी प्रकार सिरमौर में पड़ुवा नृत्य नाट्य प्रचलित है। इन गीतों को विशेषतया स्त्रियां ही गाती हैं और इसकी लय के साथ अत्यंत आत्मविभोर होकर नृत्य करती हैं। व्यंग्यात्मक संवादों से युक्त गीतों की लय पर किए गए नृत्यों की लय द्रुत से अतिद्रुत हो जाती है और उसी के अनुरूप गीत, नृत्य और नाटक चलता रहता है।

बूढ़ा या बुड़ला लोक नाट्य

यह लोक नाट्य मनोरंजन प्रधान वीर रस का नाट्य है। इस नाट्य में दस से पंद्रह नर्तक पात्र एक साथ भाग लेते हैं। तीन या चार वादक 'हुड़क' वाद्य बजाते हैं। नर्तक स्वयं भी नृत्य गीत गाते हैं। इस लोक नृत्य नाट्य में नर्तक पात्र विभिन्न मुद्राओं में शरीर को हिलाना, कदम ताल में मिलाना, तलवार या डांगरा हवा में घुमाना, गोलाकार दायरे में नाचना, गाना और कूदना शामिल है। नाट्य के पात्र डांगरे हाथ में लेकर उन्हें घुमाते हुए नाचते हैं। अनेक मनोरंजनात्मक करतब भी प्रदर्शित करते हैं।

सिरमौर के लोक नाट्यों में अनेक आकर्षक प्रदर्शन भी रहते हैं जैसे थाली किनारों पर नृत्य करना, सिर पर गिलास अथवा घड़े को एक-पर-एक रखकर संतुलन बनाते हुए नाचना, जलते हुए दीपकों को सिर पर संतुलित कर नृत्य करते हुए उन्हें प्रज्वलित ही रखना, सिर पर पानी का घड़ा रखकर नृत्य करते हुए रूमाल को जीभ से उठाना और फिर उसी मुद्रा में खड़े होकर नाचना दर्शकों को आश्चर्यचकित कर देते हैं। प्रतिभा संपन्न पात्र अपने अभिनय से नाट्य में जान डाल देते हैं और उन्हें सफल बना देते हैं। नाट्य का प्रस्तुतीकरण, मंच व्यवस्था, धार्मिक अनुष्ठान, रूप-सज्जा, प्रदर्शक-दल, दर्शक, नाट्य विधान, नाट्यों का सांस्कृतिक महत्त्व, मनोरंजक प्रहसन, कलात्मक तथा साहित्यिक तत्त्व, लोक-नाट्यों को लोक जीवन से जोड़े रखते हैं।

सिरमौर का लोक संगीत बहुपक्षीय, अत्यंत समृद्ध एवं विशुद्ध परपंरा का निर्वहन करता है। यहां के लोक सगीत का युग की सांस्कृतिक धरोहर है जो भावलोक का आगामी युगों में प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी प्रकार वाद्यों की वादन कला मौखिक रूप से ही हस्तांतरित हुई है। लोक नृत्यों के प्राण लोक गीत और लोक वाद्य हैं। इनकी संगत के बिना नृत्य निष्प्राण हैं। लोक नाट्यों में शास्त्रीय नाटकों के मूल तत्त्व छुपे हुए हैं। इन्हीं तत्त्वों का उद्घाटन प्रचलित लोक नाट्यों में हुआ है। आज बहुत तेजी से यह लोक कलाएं काल-कवलित होती जा रही हैं। परंपरागत लोकगीत, नृत्य विधाएं आज लुप्त हो चुकी हैं। हुड़क, गुज्जु जैसे वाद्यों के वादक गिने-चुने रह गए हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस अमूल्य लोक संपदा का संरक्षण, प्रलेखन, संग्रहण, परिरक्षण एवं हस्तांतरण किया जाए।

प्रोफेसर संगीत (सेवानिवृत्त)
फ्लैट नं. 4, ब्लॉक 54, हाउसिंग बोर्ड कालोनी, संजौली,
शिमला-171 006, मो. 0 98165 34512



बूढ़ा या बुड़ला लोक नृत्य सिरमौर की संस्कृति की शान

छाया : मेला राम शर्मा

आलेख

नाहन में सीखे सुरों के गुर
उस्ताद विलायत खान का पहाड़ों से नाता



उस्ताद विलायत खान साहिब की सितार पर जब उंगलियां थिरकती थीं, तो समय ठहर जाता था। एक सितार वादक के तौर पर उस्ताद विलायत खान ने करीब आधी सदी को अपने सुरों का तोहफा दिया।

28 अगस्त, 1928 को विलायत खान का जन्म बांग्लादेश के गौरीपुर में हुआ। इमदादखानी घराने में पैदाइश ने एक तरह से आने वाले कल को तय कर दिया। पिता इनायत खां, खुद उस्ताद थे। उस जमाने में संगीत में एक बड़ा नाम।

युवा विलायत खान को अपने पिता की छत्रछाया में मात्र पांच से छः साल का मौका ही सीखने को मिला। इस दौरान ही उन्होंने 78 आर.पी.एम. डिस्क पर संगीत रिकार्ड कर दिए थे।

13 वर्ष की आयु में पिता इनायत खान की मृत्यु से उन्हें गहरा आघात पहुंचा। पिता की मृत्यु के उपरांत 40 दिन के शोक के दौरान वे 14 घंटे प्रति दिन रियाज करते रहे। इन दिनों में सितार वादन के साथ उनका गहरा रिश्ता जुड़ गया। पिता के शिष्यों ने विलायत खान को अकेला छोड़ दिया। 16 वर्ष की आयु में उन्होंने अपने पारिवारिक घर जो कलकत्ता में था, को छोड़ दिया। वे पहाड़ों में अपने नाना के घर नाहन आ पहुंचे। यहां उन्होंने उस्ताद बंदे हुसैन खान तथा अंकल उस्ताद जिंदा हुसैन खान जो नाहन दरबार से संबद्ध थे, से संगीत के गुर सीखे। वे दोनों खयाल गायकी में माहिर थे।

नाहन में बिताए उनके दिन जीवन के बहुत ही बेशकीमती थे, इस दौरान उन्होंने संगीत की बारीकियों को सीखा और संगीत के साथ उनका गहरा नाता जुड़ गया। ये वह वक्त था जब उनमें गायक व गायकी के प्रति आत्मीयता बढ़ी। बाद के वर्षों में उन्होंने अपने पिता के भाई से सुखहार की तालीम ली।

सिरमौर के अंतिम शासक महाराज राजेंद्र प्रकाश कला-प्रेमी व कला पारखी व्यक्ति थे। शास्त्रीय संगीत में उन्हें बेहद लगाव था। उस्ताद बंदे हुसैन खां उनके दरबारी गायक थे, जिन्होंने प्रयोगों के जरिए अपनी गायकी को 'सिरमौरी घराने' की गायकी के तौर पर एक खास नाम, मुकाम दिलाने की भरपूर कोशिश की। हिंदुस्तानी सुगम संगीत के क्षेत्र में उस्ताद साहिब के बड़े साहिबजादे जनाब जिंदे हसन की बहुत ख्याति थी। उनकी गाई हुई ग़ज़ले, ठुमरियों और दादरा की बंदिशों को अपने जमाने में बेहद मकबूल हुईं। बंदे हसन के मशहूर ठुमरी के बोल :

'खो गई रे मेरे माथे की
बिंदिया। इत ढूंढू उत ढूंढू
नहीं मिली रे मेरे माथे की बिंदिया।'

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त सितार वादक उस्ताद विलायत खां साहिब के सितार वादन का कार्यक्रम भी नाहन के राजमहल में दो बार आयोजित हुआ था। उस्ताद विलायत खां साहिब रिश्ते में उस्ताद बंदे हसन साहिब के नवासे लगते थे। उस्ताद विलायत खां को सितार वादन के कार्यक्रम में महाराजा सिरमौर की ओर से इनाम के रूप में काफी बड़ी रकम दी गई थी।

विलायत खां ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी बहुत ख्याति अर्जित की। विलायत खान ने सितार वादन की अपनी अलग गायन शैली विकसित की थी। उनकी कला के सम्मान में राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद ने उन्हें 'आफताब-ए-सितार' का सम्मान दिया था। आरंभ में विलायत का रुझान गायन की ओर था किंतु मां की प्रेरणा ने ही उन्हें अपनी खानदानी परंपरा निभाने के लिए प्रेरित किया।

तत्कालीन पूर्वी बंगाल के गौरीपुर नामक स्थान पर जन्मे उनके दादा उस्ताद इमदाद खां अपने समय के रुद्रवीणा वादक थे।

विलायत खान को सितार ने संगीत का एक सितारा बना दिया। वे कलकत्ता से मायानगरी बंबई (मुंबई) पहुंच गए। पहाड़ों के प्रति उनका लगाव यहां भी बना रहा। मुंबई की संस्कृति, समाज से वे ऊब गए। वर्ष 1965 में उन्होंने ग्रीष्म ऋतु में शिमला आकर रहने का फैसला लिया। शिमला की पुरानी पीढ़ी के कुछ लोग को

तो उस्ताद विलायत अली खान की मशेबरा के जंगलों में पिकनिक मनाने के वाकया तथा परिमहल में संगीत की शामों के बारे में यादें आज भी ताजा हैं।

उस्ताद विलायत अली खान का शिमला से नाता तब जुड़ा, जब वे एक बार ग्रीष्म ऋतु में राजा परमजीत सिंह के स्ट्राबेरी हिल एस्टेट में बतौर मेहमान आए। उन्हें शिमला इतना खूबसूरत लगा कि उन्होंने आयरा होल्म कॉटेज को आगामी चार पांच गर्मियों के मौसम के लिए किराए पर ले लिया। वर्तमान में यह कलाकार-इतिहासकार बेली मलहन का घर है। उन्हें याद है कि 'वे उनके उस कॉटेज तक जाकर उनका संगीत सुना करते थे। उन्होंने 'ताज में एक रात' की रिकार्डिंग शिमला में की थी। वे स्थानीय लोगों के साथ घुलमिल जाया करते थे। यहां दावतों का दौर भी चलता था।'

बाद में, उस्ताद विलायत खान ने सरकार से परिमहल भवन जो वर्तमान में हिमाचल स्वास्थ्य विभाग का प्रशिक्षण केंद्र है, को किराए पर लिया। राजा परमजीत के निधन पर वे इस भवन को सरकार को सौंप कर देहरादून चले गए।

शिमला प्रवास के दौरान उस्ताद विलायत खान तथा राजा परमजीत जीत के मध्य गहरा नाता रिश्ता रहा। वे रोज परिमहल से स्ट्रावेरी हिल पर स्थित परमजीत से मिलने आते थे। वे संगीत सुनने, सितार वादन तथा संगीत पर बातचीत में अपना समय व्यतीत करते थे।

शिमला के निवासी कैलाश सूद जो राम बाजार में रहते हैं तथा भीमसेन शर्मा का भी उत्साद विलायत खान से गहरा नाता था। कैलाश सूद बताते हैं कि खान साहिब के नाना उस्ताद बंदे हुसैन खान नाहन रियासत में संगीतज्ञ थे।

उस्ताद विलायत खान का शिमला से लगभग 10 साल का नाता रहा। विलायत खान के सुपुत्र उस्ताद सुजात खान जो एक विख्यात सितार वादक हैं, को भी अपने पिता के साथ शिमला में बिताए वक्त की याद है।

उस्ताद विलायत खान पर नमिता देवीदयाल ने पुस्तक 'The String of Ustad Vilayat Khan' लिखी है।

विलायत खान का नाहन व शिमला से नाता इस बात को साबित करता है कि पहाड़ों की वादियों में भी जब इस महान कलाकार के सुर सितार से निकले होंगे तब वातावरण गुलजार हुआ होगा।

संदर्भ :
Ustad Vilayat Khan At Home in Shimla by Sailaja Khanna, The Sunday Tribune Spectrum Chandigarh, 30 June, 2019

सिरमौर के आखिरी ताजदार

महाराजा राजेंद्र प्रकाश, ब्रहमर्षि चंद्रमणि वशिष्ठ 'पहाड़ी मृणाल', प्रकाशक सेठ पिंकी ग्रोवर, दिल्ली,प्रथम संस्करण 2006

मोहित की आवाज से सभी सम्मोहित



सिरमौर जिले के नाहन शहर के निवासी मोहित चौहान ने अपनी आवाज के जादू से देश ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी प्रदेश का नाम रोशन किया है। चौहान ने अपनी सुरीली आवाज से सबको सम्मोहित किया है।

मोहित का जन्म 11 मार्च, 1966 को सिरमौर जिले के मुख्यालय नाहन में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा सेंट जेबियर स्कूल दिल्ली में हुई। नाहन से बी.एस.सी. की। इसके उपरांत धर्मशाला कॉलेज से भू-गर्भ विज्ञान में एम.एस.सी. की। नाहन से करीब 25 वर्ष पूर्व मोहित चौहान ने संगीत क्षेत्र में पदार्पण करने के लिए मायानगरी मुंबई का रुख किया। इससे पहले दिल्ली में अपने स्कूल के दोस्त कैम त्रिवेदी के साथ सिल्क रूट बैंड बनाया। अर्पित गुप्ता के साथ बूंदें और पहचान एलबम बनाई। वे कॉलेज में रहते हुए संगीत के दिवाने थे। उनके कंठ से निकलने वाले स्वरों से वे अपने साथियों को मोहित करते रहते थे। वे छोटे मंचों के बादशाह कहलाते थे।

मुंबई पहुंच कर वर्षों तक संघर्ष किया। लेकिन उन्होंने अपने संघर्ष को नहीं छोड़ा। मोहित चौहान को 'बूंदें' एलबम का 'डूबा डूबा रहता हूं' का गाना, श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर गया और उन्हें प्रसिद्धि मिली। पदोपरांत चौहान ने गायकी के क्षेत्र में नए आयाम स्थापित किए और वे सफलता की सीढ़ियां चढ़ते गए। उन्होंने पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम के लिखे गीत भी गाए हैं। रंग दे बसंती, जब बी मेट, लव आजकल, किस्मत कनेक्शन, व रॉक स्टार फिल्मों के गीत गाए।

इसके अतिरिक्त मोहित ने पहाड़ी, अंग्रेजी, बंगाली, गुजराती, मराठी तथा पंजाबी एलबम के गाने भी गए हैं। मोहित चौहान को संगीत के क्षेत्र में योगदान के लिए वार्षिक केंद्रीय यूरोपियन बॉलीवुड पुरस्कार, बिग स्टार एंटरटेनमेंट पुरस्कार, फिल्म फेयर अवार्ड, स्क्रीन अवार्ड, साउथ इंडियन इंटरनेशनल मूवी अवार्ड, टाइम्स ऑफ इंडिया फिल्म अवार्ड व विजय अवार्ड सहित अनेक पुरस्कारों से नवाजा जा चुका है।

आलेख

लच्छीराम तोमर
'ऐ दिल मचल-मचल के यूं रोता है ज़ार-ज़ार क्या'

◆ पंकज राग

एक भूले-बिसरे संगीतकार। कई संगीत-प्रेमी भी लच्छीराम का नाम नहीं जानते। पर एक जमाना था जब लच्छीराम की पहली फिल्म 'आरसी' (1947) ने सिल्वर जुबली मनाई थी।


लच्छीराम तोमर का एक दुर्लभ चित्र

लच्छीराम का जन्म हिमाचल की कुठार रियासत में हुआ था। इनके पिता राणा साहब जगजीत चंद्र के दरबार में कर्मचारी थे। बचपन में ही पिता की मृत्यु के बाद लच्छीराम का लालन- पालन संगीत-प्रेमी राणा जगजीत चंद्र के द्वारा हुआ, और लच्छीराम के आरंभिक संगीत शिक्षक भी वही थे। बाद में दरबार के उस्ताद नूरे खां से उन्होंने शिक्षा ग्रहण की। 20-21 वर्ष की उम्र में लच्छीराम दिल्ली आए ओर एच.एम.वी. में नौकरी कर ली। लच्छीराम ने इस कंपनी के लिए कई गीत गाए। डॉ. नज्मी की मशहूर ग़ज़ल 'हमसे खताएं होंगी हमसे कुसूर होगा' उनका पहला रेकॉर्ड था। मास्टर लच्छीराम के गाए कुछ हिमाचल लोकगीतों के रेकॉर्ड भी निकले। इस नौकरी के साथ-साथ दिल्ली रेडियो स्टेशन पर भी लच्छीराम प्रोग्राम देते थे। उनके गाने से ही रेडियो स्टेशन पर गाने के प्रोग्राम का मुहूर्त होता था। गालिब की ग़ज़ल 'दिल ही तो है न संगोखिश्त' दिल्ली रेडियो से लच्छीराम ने गाकर प्रशंसा भी बटोरी।

लच्छीराम को ढूंढा प्रसिद्ध लेखक-निर्देशक अजीज कश्मीरी ने जो शोरी पिक्चर्स के प्रतिनिधि के रूप में संगीत-निर्देशक की तलाश में लाहौर से दिल्ली आए थे। साढ़े सात सौ मासिक के अनुबंध पर लच्छीराम फिल्मों में संगीत देने लगे। आरंभ में 'चंपा' में अनुपम घटक के साथ संगीत दिया और 'बदनामी' और 'शालीमार' के संगीत सहायक रहे जिनके मुख्य संगीतकार पं. अमरनाथ थे। स्वतंत्र रूप से मिली पहली फिल्म 'आरसी' थी जिसके 'क्या हमसे पूछते हो किधर जा रहे हैं हम' और 'आशियां अपना लुटा अपनी नज़र के सामने' जैसी बातिश की गाईं और सरशार सैलानी की लिखी ग़ज़लें खूब लोकप्रिय रहीं। इस फिल्म में लच्छीराम ने अपनी जन्मभूमि के हिमाचली लोक-संगीत पर आधारित 'तेरे बिना बालम जिया मोरा डोले' और 'घनी घनी छैंया ओ राजा अमवा के पेड़ की' जैसे गीत भी कंपोज किए जो अच्छे चले थे। महिंद्रा पिक्चर्स लाहौर की चांद प्राण अभिनीत 'मोहिनी' (1947) में भी लच्छीराम ने भाईलाल के साथ संगीत दिया पर यह फिल्म नहीं चल पाई। डॉन फिल्मस, पंजाब की 'डायरेक्टर' (1947) में फतेह अली खान के साथ लच्छीराम भी संगीतकार थे, पर इस फिल्म की सफलता भी कम ही रही।

देश-विभाजन के कारण लच्छीराम को लाहौर छोड़ना पड़ा और वे नाहन (सिरमौर) चले आए और वहां रहने लगे। तभी लाहौर के विस्थापित कुछ लोगों ने मिलकर देहरादून में 'गुरु-दक्षिणा' फिल्म प्रारंभ की जो बहुत बाद में 1950 में रिलीज हुई। इस फिल्म में भी लच्छीराम ने सरशार सैलानी के गीतों की धुन बनाई थी और प्रेमपाल, मास्टर मदन, इरा निगम आदि ने स्वर दिए थे। सरशार सैलानी से मित्रता के कारण बंबई से बुलावा आया और नेशनल फिल्म प्रोड्यूसर्स, बंबई की 'बिरहन' (1948) में सरशार और बेकल के गीतों को संगीत से संवारने का अवसर मिला। इस फिल्म में 'आ जा आ जा ओ चांद हमारे', 'टूटे हुए दिल की न सुनो हमसे कहानी' और 'मेरा दर्दे दिल की दुनिया में दवा

कोई नहीं' जैसी दिलशाद बेगम की गाई ग़ज़लें और गीत थे पर एक बार फिर सफलता हाथ नहीं लगी।

लच्छीराम को एक अच्छा ब्रेक मिला रणजीत मूवीटोन की मधुबाला, देव आनंद अभिनीत फिल्म 'मधुबाला' (1950) में। इस फिल्म में 'ये दुनिया है बेवफाई की, वफा का राज क्या जाने' (दुर्रानी), 'अब न जागेगी ये किस्म सो चुकी' (आशा), कव्वाली बीट्स पर 'पूछा मैंने दिल से आपके' (आशा) और 'जवानी के जमाने में जो दिल न लगाएगा' (शमशाद, तलत, साथी) जैसे अच्छे गीत थे। इस वक्त का लच्छीराम का संगीत पारंपरिक शैली का ही था जिसमें कम वाद्ययंत्रों का इस्तेमाल था और जोर शब्दों के वजन को उभारने पर था।

'मधुबाला' के संगीत से व्यावसायिक फायदा मिल सकता था, पर इसी बीच लच्छीराम बुरी तरह बीमार पड़ गए, और वह भी टी.बी. से, जो उस समय अत्यंत भयानक रोग माना जाता था। बीमारी से जूझते रहे, एक फेफड़ा भी जाता रहा और इसी के साथ उनकी गायकी भी मृतप्राय हो गई। पर संगीतकार लच्छीराम ने हार नहीं मानी। भले ही निरंजन पिक्चर्स की 'ससुराल' फिल्म बन नहीं पाई पर गीताबाली अभिनीत 'अमीर' (1954) के 'तुम्हें याद होगा बागे मुहब्बत लगाया था हमने' (आशा) की गुनगुनाहट-भरी स्वरलहरियों के साथ उन्होंने फिर से संगीत जगत पर हल्की-सी दस्तक दी। 'शहीद भगत सिंह' (1954) में बिस्मिल के प्रसिद्ध गीत 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है' को रफी के स्वर में गवाने का श्रेय भी प्रेम धवन (शहीद) से पहले लच्छीराम को ही मिलेगा। बीमारी की अवस्था में ही 'शहीद भगत सिंह' के अलावा 'महारानी झांसी' (1952) और 'गुरु घंटाल' (1956) का भी संगीत लच्छीराम ने तैयार किया था, पर 'महारानी झांसी' के आशा के गाए 'ले लो वीर बहादुर ले लो' जैसे देशभक्ति गीत या 'गुरु घंटाल' के 'भीगी भीगी चांदनी में भीगे मेरा दिल' (1959) या 'हम आपके हैं हमसे तो पर्दा न कीजिए' (रफी, आशा) जैसे रूमानी गीत लोकप्रिय नहीं हुए। यही बात 'हजार परियां' (1959) के गीतों पर भी लागू हुई।

यह कहा जा सकता है कि लच्छीराम फिल्म जगत में सफल नहीं हुए। वे स्वाभिमानी थे, बहुत गुणी थे पर अपने गुणों को निखारने का अच्छा अवसर फिल्म जगत में उन्हें नहीं मिला। बीमारी के बाद शराब, सिगरेट छोड़ी तो तथाकथित यार-दोस्तों ने भी उन्हें भुला दिया। लच्छीराम की विशेषता ग़ज़लों की कंपोजीशन थी और 1956 में गाफिल और सरशार की शायराना ग़ज़लों और नगमों को उन्होंने 'दो शहजादे' के लिए मुबारक बेगम और आशा के स्वरों में रेकॉर्ड भी किया था। पर अरबी शैली के वाद्य संयोजन वाली 'ऐ गम दिल तेरा यारा' (मुबारक), 'धड़कते हुए दिल को' (मुबारक), 'जिंदगी के साज पर नगम-ए-बहार गा' (आशा) जैसी रचनाओं वाली 'दो शहजादे' रिलीज ही न हो सकी। लच्छीराम के संगीतबद्ध मुकेश के गाए दो गैर-फिल्मी भजन 'छोड़ झमेला झूठा जग का' और 'राम करे सो होये रे मनवा' को अवश्य कालजयी लोकप्रियता नसीब हुई, और एच.एम.वी. द्वारा रिलीज किए गए मुकेश के भजनों के एलबम का शीर्षक भी लच्छीराम की धुन वाला 'राम करे सो होय' दिया गया है।

लच्छीराम का सफलतम दौर उनका आखिरी दौर बना। इस दौर में 'रजिया सुलतान' (1961) के खमाज थाट में कंपोज किए 'ढलती जाए रात कह ले दिल की बात' (आशा, रफी) के अरब शैली के संगीत को एक मेलोडी भरा मोड़ देकर लच्छीराम ने खूब लोकप्रिय बनाया। उनकी सफलतम फिल्म थी 'मैं सुहागन हूं' (1964)। लता के 'ऐ दिल मचल मचल के यूं रोता है जार जार क्या' में लता से क्या खूब ऊंची पट्टी पर गवाया है लच्छीराम ने और हवाइयन गिटार, तबला, वॉयलिन, मैंडोलिन सभी का क्या दिलकश मिश्रण है। इस कर्णप्रिय गीत को संवारने में यह गीत हमारी याददाश्त से क्यों निकल गया, यह आश्चर्य ही है। फिल्म का राग देस पर आधारित 'गोरी तेरे नैन कजर बिन कारे' (आशा, रफी) एक अद्‌भुत उपलब्धि है जिसमें आशा की मुरकियां लाजवाब ही कही जाएंगी। रफी के ऊंची पट्टी पर गाए 'सब जवां सब हसीं कोई तुमसा नहीं' की कर्णप्रिय धुन के प्रशंसक आज भी कई हैं। तलत के स्वर में असद भोपाली का लिखा 'ये किस मंजिल पे ले आई मेरी बदकिस्मती मुझको' भी मशहूर गीत रहा है। इसी फिल्म में लच्छीराम ने मुकेश से भी दो पंक्तियां गवाई थीं - 'बिगड़ी में कोई'- जो फिल्म के साउंडट्रैक पर मौजूद है।

पर यह सफल फिल्म लच्छीराम की आखिरी चमक ही थी। आज तो वे पूर्णतः विस्मृत हो चुके हैं।

लेखक : पंकज राग, भोपाल, मध्य प्रदेश

पहाड़ी लोक गायकी की बेमिसाल आवाज

कृष्णलाल सहगल

◆ रजनीश शर्मा

हिमाचल में प्रकृति ने अद्‌भुत सौंदर्य रचा है। ऐसी सुंदर धरती में लोक संगीत सहज ही विचरण करता है। लोक संगीत की मिठास यूं तो कण-कण में बिखरी है, लेकिन उसे साधना पड़ता है, ऐसे ही साधक हैं कृष्णलाल सहगल ने जिनकी मधुर आवाज सिरमौर की वादियों से होकर देश-देशांतर तक गूंजी है। अब जरा वहां की यात्रा करें, जहां से सारी यात्राएं आरंभ होती हैं यानी प्रकृति के प्रादुर्भाव से। उस पुरातन समय में संगीत की देवी ने लोकरागों का एक खजाना तैयार किया। संगीत की देवी उस खजाने को निहार कर मंत्रमुग्ध हो गईं। मन ही मन सोचा कि ये अद्‌भुत लोकराग तो धरती पर हर हाल में गूंजने चाहिए। फिर विचार किया कि कौन सा ऐसा कंठ है, जिसमें ये खजाना छिपा दिया जाए? धरती पर निगाह डाली तो एक मासूम बच्चे में भविष्य के सच्चे लोकसाधक की मूरत दिखाई दी। संगीत की देवी बुदबुदाई, अरे हां... यही है वो कंठ....समय आने पर इसी कंठ से मेरे बनाए लोकरागों की मधुर धारा बहेगी और सच्चे संगीत प्रेमियों की प्यास शांत करेगी।



स्वर सृजनी की दिव्य योजना तैयार हो चुकी थी। एक रात संगीत की देवी देवभूमि में सिरमौर के नाम से पुकारे जाने वाली भूमि पर उतरी और मां की गोद में लोरी सुन रहे बच्चे के कंठ में लोकरागों का खजाना धर दिया। बच्चे की लोक तपस्या शुरू हुई। फिर उसके कंठ से एक-एक कर अलौकिक लोकराग फूटे और दसों दिशाओं में गूंजने लगे। चूंकि वह कलाकार दैवीय योजना का हिस्सा था, इसलिए झूठी चकाचौंध और धन के लोभ के मायावी जाल में कैसे फंस सकता था? संगीत के सच्चे साधक कृष्णलाल सहगल तेजी से भागते इस इंटरनेटी संसार में भी लोक गीतों और लोक संगीत की चमक को बचाए हुए हैं।

अब जरा नब्बे के दशक की यात्रा करते हैं। म्यूजिक टुडे ने हिमाचली लोकगीतों पर आधारित कैसेट निकाली थी। कैसेट की बी-साइड में डा. कृष्णलाल सहगल की आवाज में पारंपरिक झूरी 'कोनी रा कागदो बे रे, कोनी री दवातो' मौजूद थी। इसे सुनते ही मन में इस मीठी आवाज का जादू छा जाता है। उस आवाज से पहली बार किसी का भी परिचय हो जाए तो उसे साक्षात सुनने की इच्छा बलवती हो जाएगी। डा. सहगल की संगीत यात्रा को जानने का सफर कई पड़ावों से गुजरता है और पता चलता है कि वे सुगम संगीत के साथ-साथ गजल गायकी में भी महारत रखते हैं। तबला वादन में भी सिद्धहस्त हैं और अन्य साजों की बारीकियों से भी खूब परिचित हैं। संगीत पर उनके मौलिक लेख प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होते हैं। यही नहीं, वे साहित्य में भी रुचि रखते हैं। सोलन में डा. सहगल का संगीत केंद्र है। वहां कमरे में प्रवेश करते ही संगीत साधना से उपजी शांति का आभास होता है। करीने से रखे साज और कमरे में बिखरी सादगी के बीच डा. सहगल के रूप में लोक साधक अपनी पूरी लोकशान के साथ विनम्रता से मौजूद होता है। वह इतने विनम्र हैं कि अपना नाम के.एल सहगल पुकारने से मना करते हैं। कहते हैं, 'मेरा नाम के एल सहगल मत लिखो अथवा पुकारो। कुछ लोग बार-बार मना करने के बाद भी के एल सहगल लिख देते हैं। यह ठीक नहीं है। के एल सहगल एक महान गायक थे। मुझे केवल कृष्णलाल ही लिखें।' वे कहते हैं-चूंकि मेरे नाम के साथ सहगल जुड़ा है और मां-पिता ने मुझे कृष्णलाल नाम दिया तो

ये संयोग बन गया कि शार्ट में मेरा नाम भी केएल सहगल हो गया, लेकिन मैं नहीं चाहता कि मुझे इस नाम से पुकारा जाए। कोई और होता तो लाख चालाकियां कर के एल सहगल के नाम को भुनाता, लेकिन डा. कृष्णलाल लाल सहगल तो झूठी चकाचौंध से दूर रहकर संगीत की सेवा में ही लीन रहना चाहते हैं।

वे जिस कुशलता और सहजता से सिरमौर क्षेत्र के लोकगीतों को गा लेते हैं, उसी सहजता से चंबा, कांगड़ा, सोलन व मंडी के लोकगीत भी गाते हैं। तब यह पता ही नहीं चलता कि सहगल जी सिरमौर के रहने वाले हैं। चंबयाली गीत गाते हैं तो चंबा के रहने वाले प्रतीत होते हैं और कांगड़ा के लोकगीत गाते हैं तो लगता है उनका जन्म कांगड़ा जिला में ही हुआ होगा। आखिर यही तो लोक की ताकत है। आकाशवाणी के जम्मू-कश्मीर केंद्र में आयोजित एक कार्यक्रम में सहगल जी वडाली बंधुओं के साथ आमंत्रित थे। वहां उन्होंने चंबा से लेकर सिरमौर के लोकगीत गाए। वहां मौजूद संगीत के पारखियों ने उन्हें भरपूर दाद दी। वे भरथरी (भर्तृहरि) गायन में कमाल का दखल रखते हैं, नाटी, गंगी व झूरी तो जैसे उनके कंठ में ही बसी है। वे गजल के उत्कृष्ट गायक हैं। म्यूजिक ऑडिशन बोर्ड ने उन्हें गजल गायकी में उच्च श्रेणी का कलाकार बताया है। लेकिन लोक गीतों व लोक गायकी के जिक्र मात्र से ही उनका चेहरा चमक उठता है। इतना होने पर भी वे अपने सभी कामों का संपूर्ण श्रेय पूरी विनम्रता से अपने गुरु प्रोफेसर अनंतराम चौधरी को देते हैं।

मां के दूध में उतरा संगीत का अमृत

डॉ. कृष्णलाल को मधुर कंठ का वरदान तो हासिल था ही, मां के दूध के रूप में उनके भीतर दैवी आशीष का लोक अमृत भी उतर आया। बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि सहगल जी की मां राम देवी उच्च कोटि की गायिका थीं। लाहौर में रहते हुए उन्होंने विधिवत् संगीत की शिक्षा हासिल की थी। गायकी में वे बहुत मकबूल भी हुईं। सहगल जी बताते हैं कि मां की आवाज में एक विशेष तरह की खनक थी। कुछ-कुछ लता मंगेशकर जैसी। मां के बुआ के बेटे लाहौर में रहते थे। लाहौर में प्रवास के दौरान ही उन्होंने किसी सेठी साहिब द्वारा निर्मित एक फिल्म के लिए पार्श्व गायन भी किया था। दुर्भाग्य से फिल्म फ्लाप हो गई। मां राम देवी को डिप्रेशन ने आ घेरा और वे मौन हो गई। बाद में सिरमौर के भुईरा गांव में रहते हुए उन्होंने अपनी बेटी की जिद पर ही थोड़ा-बहुत गाया, लेकिन न के बराबर।

डा. सहगल बताते हैं कि उन्हें उस समय संगीत की कोई खास समझ नहीं थी। ये तो बाद में पता चला कि मां कभी-कभी राग शंकरा और राग विहाग आदि गाती थीं। डिप्रेशन में जाने के बाद भी संगीत के नाम से मां खुश हो जाती थीं। मेरी बड़ी बहन जिद करती तो वो हल्का सा गुनगुनाती भी थी। उनके पास लाहौर के समय का हारमोनियम था।

स्कूल में गाते थे प्रार्थना, मंत्रमुग्ध थे अध्यापक

आजाद भारत में 9 जनवरी 1950 को जन्में कृष्णलाल की प्राथमिक शिक्षा भुईरा गांव के स्कूल में ही हुई। कंठ तो मधुर था ही इसलिए स्कूल की प्रार्थना नन्हा कृष्ण ही गाता। प्रकृति में जीवन यापन के कारण और मां की प्रेरणा से संगीत रगों में दौड़ने लगा था। मास्टर कहते, बड़ी अच्छी प्रार्थना गाता है। शाबासी मिलती तो खुशी होती। हाई स्कूल की शिक्षा राजगढ़ में हुई। वहां एक लड़के की संगत मिली। वो तबला अच्छा बजाता था। बस, फिर तो जोड़ी बन गई। रुतबा बढ़ गया दोनों का पूरे स्कूल में। हैडमास्टर प्रेमनाथ दस्सन व मास्टर जीवन सिंह उन्हें खूब प्रोत्साहित करते। वे संगीत के प्रेमी थे। प्राइमरी स्कूल में मास्टर बांकीराम व पूर्णानंद भी प्रोत्साहित करते थे। वर्ष 1966 में आपका विवाह देवठी मझगांव के ऐसे परिवार में हुआ जहां संगीत व लोक कला का एक खुला वातावरण था। सहगल ने रिश्तेदार विद्या नंद सरैक के साथ संगीत की बारीकियों को सीखा।

गांव के माठूराम के जरिए झूरी से हुआ परिचय

डा. सहगल के अनुसार, उनके गांव में माठूराम काका गजब के लोक गायक थे। वे पशु चराने जंगल जाते और झूरी गाते। उनकी आवाज सुनते ही गांव वाले कहते, लो होई गोई शुरू माठू री झूरी। वे बताते हैं म्यूजिक टुडे में मेरी गाई झूरी-कोनी रा कागदो बे रे, कोनी री दवातो... माठू काका से ही सीखी हुई है। अब क्या बताऊं आपको, माठू राम काका इतना मीठा गाते थे कि पूछो मत। वे तीन भाई थे। सनिया राम व जीवणु राम। जीवणु राम तो डा. परमार के पहले मंत्रिमंडल में मनोनीत विधायक भी रहे। तीनों महान लोक कलाकार थे। तब हमें समझ नहीं थी। बाद में जब समझ आई और नौकरी में लगा तो माठू काका के पास जाकर कई मूल झूरियों को स्वर लिपि पद्धति में बांधा। माठू काका हारूल गायन विधा के भी गहरे जानकार थे। ऐसे-ऐसे अनाम लोक कलाकार हैं, जिनके प्रताप से हम भी कुछ सीख पाए। फिर बचपन में हम भी पशु चराने जंगल जाते तो खूब गीत गाते। झूरी तो आती नहीं थी, मोहम्मद रफी के गीत ही गाते रहते।

उस समय रेडियो ग्रामीणों के लिए वरदान था। आकाशवाणी शिमला से जिस दिन पहाड़ी नाटियां आती, लोग बड़े चाव से सुनते। उसी दौरान मैंने ठाकुर किशन सिंह, प्रताप चंद शर्मा, धनीराम तोमर, हेतराम तनवर, राजकुमारी, कृष्ण कालिया, परसराम तोमर, हेतराम कैंथा, लेखराम शर्मा, रोशनी देवी आदि को सुना। इक्कीस साल की आयु में यानी वर्ष 1971 में मैंने भी रेडियो की स्वर परीक्षा दी। सिलेक्ट भी हो गया। अब मैं रेडियो में तो आ गया, लेकिन संगीत की विधिवत शिक्षा कतई नहीं थी। रेडियो में सुगम संगीत के कार्यक्रम भी होते। वहां बड़े गायक आते। मोहम्मद हुसैन, अहमद हुसैन आदि को रेडियो में भी सुना। मैंने

सोचा, ये लोग तो सीखे हुए हैं और मैं कुदरत के सहारे ही चला हुआ हूं। अब सीखना पड़ेगा।

सोमनाथ बट्टू की प्रेरणा से पहुंचे गुरु अनंतराम चौधरी तक

डा. सहगल बताते हैं कि वो अपना जीवन संगीत को ही समर्पित करना चाहते थे। जब अहसास हुआ कि बिना सीखे बात नहीं बनेगी तो मैं सोमदत्त बट्टू जी के पास पहुंचा। ये वर्ष 1972 की बात है। तब तक मैं रेडियो के जरिए लोकप्रिय हो चुका था। खैर, मैं बट्टू जी के पास पहुंचा और अदब से कहा कि गुरुजी मुझे शरण में ले लो, मैं संगीत सीखना चाहता हूं। मेरा नाम सुनते ही उन्होंने कहा, अरे तुम तो बहुत अच्छा गाते हो। फिर कहने लगे कि तुम कहां सिरमौर से शिमला दौड़ते रहोगे। सोलन जाओ, वहां अनंतराम चौधरी जी हैं, उनसे सीखो। मैं सोलन चला गया। चौधरी साहब से मिला। वे भी मेरा परिचय सुनते ही बोले, अरे यार तू तो पहले ही बहुत अच्छा गाता है। तब रेडियो पर मेरी गाई नाटी सुखो-दुखो रा ताणा और बाणा.. मशहूर थी। मैंने कहा, गुरुजी मुझे संगीत सीखना है, मुझे कुछ नहीं आता। बस, फिर क्या था, गुरुवार वाले दिन उन्होंने रस्म अदायगी के तौर पर नारियल व सवा रुपए स्वीकार किए और मैं उनका शिष्य बन गया।

मेरा कुछ नहीं, सब गुरु की देन

डॉ. कृष्णलाल सहगल बड़े ही अदब से अपने गुरु प्रोफेसर अनंतराम चौधरी को याद करते हुए कहते हैं कि आज मुझे जो भी मान-सम्मान मिला है, वो सब गुरुजी की ही देन है। गुरु की शरण में रियाज शुरू हुआ। मैं सीखने लगा और सीखने का यह सिलसिला अनवरत जारी है। फिर मैंने संगीत विशारद (गायन व तबला) और संगीत प्रवीण की उपाधि हासिल की। हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से एमए, एमफिल (संगीत) की शिक्षा पूरी की। पीएचडी की। शुरू में प्रदेश के विभिन्न केंद्रीय विद्यालयों में संगीत की शिक्षा दी। बाद में महाविद्यालयों में संगीत का ज्ञान बांटा। सरकारी महाविद्यालय करसोग से सेवानिवृत्त हुआ, लेकिन साधना जारी है। एमफिल के दौरान मैंने लोकगीतों में राग छाया और भाव अभिव्यक्ति विषय पर काम किया। मेरा मानना था कि लोकगीत बेशक आजाद हैं, लेकिन उनके मूल में कहीं न कहीं शास्त्रीय राग मौजूद हैं। एमफिल के दौरान ही मेरा कई धुनों से परिचय हुआ। मैंने उनका ज्ञान हासिल किया। गुरुजी के सान्निध्य में मैंने आठ साल तक कठिन रियाज किया। मैं उस समय केंद्रीय विद्यालय सुबाथू में तैनात था, जब मेरे गुरुजी ने शरीर छोड़ा। चौधरी साहब जैसे गुरु न होते तो कृष्ण लाल भी कृष्ण लाल सहगल न होता। मेरे गुरु बेशक दृष्टिहीन थे, लेकिन उनकी दृष्टि संगीत की गहरी पारखी थी।

देश में आकाशवाणी के कई कार्यक्रमों में वे हिमाचल प्रदेश का प्रतिनिधित्व कर चुके हैं। उन्होंने अनेकों लोकगीत भी लिखे हैं। वर्ष 1999 में उन्हें केंद्रीय सूचना व प्रसारण मंत्रालय ने उत्कृष्ट गायन के लिए आकाशवाणी पुरस्कार से नवाजा जा चुका है। इसके अलावा उनके खाते में कई सम्मान व पुरस्कार दर्ज हैं।

इन्हें वर्ष 1996 में वैद्य सूरत सिंह जयंती अलंकरण समारोह में करमवीर सम्मान, 1998 में आकाशवाणी सम्मान, 2003 में चूड़ेश्वर सम्मान और वर्ष 2005 में शिक्षक दिवस के उपलक्ष में हिमोत्कर्ष सम्मान से सम्मानित किया गया। वर्ष 2006 में उपमंडल स्तरीय गणतंत्र दिवस पर उत्कृष्ट कार्य के लिए सम्मानित किया गया। वर्ष 2009 में कला संस्कृति एवं साहित्य संस्था संचेतना और 2011 में सिरमौर कला संगम ने सम्मानित किया। लोक संस्कृति के संरक्षण और संवर्द्धन की दिशा में विशेष भूमिका के लिए हिमाचल प्रदेश सरकार ने वर्ष 2017 में गौरव पुरस्कार से सम्मानित किया। जून, 2019 में उदय फोरम सोलन ने सम्मानित किया जबकि इसी वर्ष हि.प्र. भाषा, कला एवं संस्कृति विभाग ने 'संगीत शिरोमणि' सम्मान से नवाजा।

डा. कृष्णलाल बताते हैं कि लोकगीतों, लोकवाद्यों व लोक कलाकारों के लिए व्यवस्था के पास कोई समय नहीं है। लोक के साथ फूहड़ प्रयोग हो रहे हैं, ये प्रयोग मुझे पीड़ा देते हैं। मैंने कई बार ख्याल किया कि विशुद्ध लोक कलाकारों की एक टीम तैयार की जाए और मंच पर ढोलक, शहनाई, नगारे से समां बांधें, लेकिन पीठ की दर्द से परेशान रहता हूं। हां, मेरी जितनी सामर्थ्य थी, मैंने लोक के समर्पित साधक तैयार किए हैं। शायद कोई इस काम को करे। मेरी बेटियां सविता और नीरजा संगीत में पीएचडी हैं। सविता कालेज में संगीत सिखाती हैं। मैंने किसी पर दबाव नहीं डाला। मेरी धर्मपत्नी शारदा का मुझे अपनी संगीत यात्रा में भरपूर सहयोग मिला। वे मुझसे गीत सुना करती थी, कुछ साल पहले उनका निधन हो गया। खैर, संगीत के प्रति प्राकृतिक तौर पर ललक हो तो ही बात बनती है। ये जबरदस्ती का सौदा नहीं है। संगीत साधना है, घुट्टी नहीं जो घोल कर पिला दी जाए। सहगल जी ने जीवन में कई संघर्ष देखे हैं। वे जिस तन्मयता के साथ खेती-किसानी से जुड़े रहे, उसी तल्लीनता के साथ कपड़ों की सिलाई भी करते रहे। यही कारण है कि उनके गीतों में जीवन अनुभवों से उपजी सच्चाई अभिव्यक्त होती है। वे अपनी मेहनत से गांव से उठे, संगीत में पीएचडी की और लोक गायकी के आकाश के चमकते सितारे बने।

जिज्ञासा प्रकट करने पर सहगल साहब भर्तृहरि गायन, झूरी और सिरमौर तथा कांगड़ा के कुछ लोकगीत विनम्रता से सुनाते हैं। वे प्रदेश में अलग-अलग स्थानों पर भर्तृहरि गायन शैली के बारे में विस्तार से बताते हैं। डा. सहगल सही मायनों में संगीत के कद्रदान हैं।

**द्वारा प्रेस क्लब, पद्मदेव कॉम्पलैक्स, द रिज,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 001**

लोक के सिरमौर

रामदयाल नीरज



सिरमौर की धरती ने कई विलक्षण कलाकारों को जन्म दिया है। लोक साधकों ने तो सिरमौर की धरती को मानो अपना निवास स्थान ही बना लिया हो। ऐसे ही एक विलक्षण व्यक्तित्व थे रामदयाल नीरज। उनके परिचय के दायरे में जो भी आया, उनसे प्रभावित हुए बिना न रहा। सभी आदर व स्नेह से उन्हें गुरुजी कहा करते थे। सफेद दाढ़ी, हाथ में छड़ी, भव्य व्यक्तित्व के मालिक रामदयाल नीरज अपने जीवन के आखरी वर्षों में संजौली से शिमला जाने वाली सड़क पर अपने साथियों के साथ जीवन के अनुभवों को साझा करते हुए मिल जाते थे।

रामदयाल नीरज अपनी आखिरी सांस तक लोकनाट्य करियाला के आकर्षण में गिरफ्तार रहे। वे करियाला को लोक का असल रूप और प्रकृति को लोक की गाइड मानते थे। हिमाचल निर्माता और प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री डा. वाईएस परमार की फरमाइश पर उन्होंने एक दफा पलभर में करियाला प्रस्तुत कर दिया था। कवि-संपादक स्व. मधुकर भारती उन्हें लोक का संदर्भ ग्रंथ कहा करते थे। खुद गुरुजी अपने बारे में कहा करते थे कि अध्ययन मेरा व्यसन है। वे कहा करते थे कि मौके पर जो मिल जाए, वे पढ़ने से नहीं चूकते थे। यहां तक कि बच्चों के कॉमिक्स भी रुचि से पढ़ते थे। मूविंग इनसाइक्लोपीडिया मियां गोवर्धन सिंह गुरुजी की अध्ययन की आदत से खूब परिचित थे। मियां जी कहते थे, नीरज आप कोई भी किताब ले जाते हो। क्या सभी कुछ पढ़ लेना चाहते हो? तो ऐसे थे रामदयाल नीरज जी। भाषा विभाग का आयोजन हो या फिर किसी संस्था का कार्यक्रम, रामदयाल नीरज जी अपनी संपूर्ण मेधा के साथ मौजूद होते।

एक दफा शिमला में राष्ट्रीय स्तर का साहित्यिक आयोजन हो रहा था। उसी समय लेखकों के झुंड से घिरे रामदयाल नीरज जी ने कहा कि वे आज तक करियाला की आत्मा को नहीं पकड़ पाए। इसी तरह वे गंगी और झूरी को लेकर भी सारी उम्र दीवाने रहे। रामदयाल नीरज ने करियाला की आत्मा को पकड़ने संबंधी जिज्ञासा पर एक बार चर्चा करते हुए कहा, मैंने सबसे पहले शिमला के नजदीक धामी में करियाला का मंचन देखा। नीरज के अनुसार उन्हें करियाला के कलाकारों का रूप तो भला लगा, लेकिन उनके संवाद अश्लील थे। करियाला को लेकर ये उनका सबसे प्रथम अनुभव था। गुरुजी के मुताबिक फिर उन्होंने करियाला का खुद का फारमेट तैयार किया। नीरज जी ने विधि तो परंपरागत ही अपनाई, लेकिन स्वांग बदल दिए।

नीरज जी बताया करते थे कि कैसे उन्होंने ठगड़ा राम यानी रत्नसिंह हिमेश और चंद्रमणि वशिष्ठ के साथ मिलकर नाहन में करियाला का मंचन किया। इस मंचन को लोगों की भरपूर सराहना मिली। फिर गेयटी थियेटर शिमला में मंचन किया। लोगों को तो खूब पसंद आया, लेकिन मुझे संतुष्टि नहीं मिली। बहुत से लोगों ने मुझसे करियाला करने को कहा, परंतु मैंने इनकार कर दिया। कारण ये था कि मैं करियाला की आत्मा को ही नहीं समझ पाया था। नीरज के अनुसार करियाला का मूल गुण हाजिर जवाबी है। एक पूछता है और दूसरा जवाब देता है। स्पांटनेयिस रिस्पांस ही करियाला का गुण है। डॉ. परमार के साथ करियाला के मंचन को लेकर नीरज बताया करते थे कि एक बार नाहन में हिमाचल निर्माता ने उनसे कहा कि वे करियाला देखना चाहते हैं। हमने पंद्रह मिनट का समय मांगा। करियाला हुआ और परमार सहित सभी ने तारीफ की। इतना करने के बाद भी करियाला को लेकर शांति नहीं मिली।

नीरज बताया करते थे कि लोक जीवन को लेकर उनके मन में अबूझ सा आकर्षण रहा है। वे गुजरात के ग्रामीण इलाकों में काफी घूमे थे। उन्हें वहां का ग्रामीण जीवन भी खूब अच्छा लगा। हिमाचल में भी वे लोकगीतों का संकलन करने के लिए कई गांवों में गए। चूंकि लोकगीत औरतों के पास ही मिलते हैं, ऐसे में कई दफा ग्रामीण इलाकों में औरतों ने उनसे कहा-लूंडो री बातो कोई के पूछो यानी लोकगीतों में तो बदमाशी अधिक भरी होती है। नीरज के मुताबिक जब उन्होंने लोकगीतों का संकलन किया तो उनका भाई पूछने लगा कि कहां छपे हैं, मुझे चाहिए।

दस साल की उम्र में भागकर पहुंचे मुंबई

नीरज जी के जीवन में घुम्मकड़ी का भी अहम रोल रहा। वे लुधियाणा में अपने ताऊ जी के पास रहते थे। वहां से दस साल की आयु में भागकर मुंबई चले गए। मुंबई में पेट भरने के लिए मत पूछिए कि क्या-क्या न किया। फिल्मों में कुछ रोल भी किए। संत तुलसीदास फिल्म में बाल रूप में तुलसी जी का रोल किया। फिर

उदय राम बाउनली
लोक गायकी का कर्णप्रिय प्रस्तोता



सिरमौरी लोक संस्कृति के रत्नों में उदय राम बाउनली का अलग स्थान है। वह स्वाभाविक आवाज का जादूगर था। 23 मार्च 1947 को रेणुका के बाउनल गांव में जन्में उदय राम बाउनली का सिरमौरी लोक संस्कृति को संरक्षित करने में बड़ा योगदान है। आवाज का यह अलमस्त चेहरा लोगों के दिलों में अद्यतन राज करता है। उनका उदय स्थानीय स्तर पर कला-संगमों के कारण हुआ था। हजारों लोगों के बीच में मेलों, उत्सवों, घरेलू आयोजनों, पर्वो में बिना किसी आवाज बढ़ाने वाले मंत्रों के गाना लोक गायकों की असली परख होती है। ये कठिन कार्य है। 1978 में बाउनली को आकाशवाणी शिमला से नाटियां गाने का मौका मिला, जिसका असर अभी भी यथावत है। उसके बाद सिरमौरी लोक नृत्य को एक संगठित स्वरूप देने में भी उनका बड़ा योगदान रहा है। सिरमौरी लोक नृत्य का प्रचार-प्रसार उनके दल ने पूरे विश्व में किया, जिसका वह प्रमुख चेहरा रहे हैं। 1999 में सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के तहत उनके दल ने दुनिया के 22 देशों में प्रस्तुतियां दी। इनमें ग्रीस, मिस्र, आबूधाबी, जार्डन, कोरिया, सीरिया, तथा कई यूरोपीय देश शामिल थे। बाउनली अपने गाये लोक गीत खुद लिखते थे। उनके प्रमुख लोक गीत हैं देणा बे शाला रा लपेटा भाव लाणो भाजी रोई थी कंवला, पण्डवाणा भारत, ठुण्ड्र, वीणी, झूरी, छुमकुमा, भरथरी (7 प्रकार), सेरी दे कुलावगी पाके रे लोबिए, मेरे देखणी बिंदी, चूड़ी लाणी रा हिंयो रे आदि सैकड़ों गाने गाए जो अब भी लोगों की जुबान पर हैं। वो बहुत अच्छा योग भी करते थे। दो घंटे तक पर्वतासन कर सकते थे। कृषि में काम आने वाली बहुत सारी वस्तुओं को स्वयं बनाते थे।

मुजरा थी उनकी जान : सिरमौर में गीह का रूप वह 24 घंटे तक भी अनवरत गाने गाते थे और एक भी गाना नहीं दोहराते थे। 3 अक्टूबर 2010 को गुमनामी में यह आवाज विलीन हो गई।

ताया जी ने फिल्म देख ली और अपने भतीजे को पहचान लिया। ताया जी मुंबई पहुंचे और उन्हें घर ले आए। दिलचस्प किस्सों का ये संसार मुंबई तक ही सीमित नहीं था। वे नागा साधुओं की टोली में भी रहे। गुजरात यात्रा के दौरान नागा साधुओं के संपर्क में आ गए। अभी भंडारी की ही अवस्था में थे कि नागा बनाने की बारी आ गई। नागा बनाने की जो प्रक्रिया थी, उसका प्रारूप देखकर आधी रात को जान बचाकर भागे। रामदयाल नीराज जी ने प्रजामंडल आंदोलन में भी हिस्सा लिया। नीरज जी सिरमौर के दाहू गांव में जन्मे थे। डॉ. परमार का गांव उनके गांव से कुछ ही दूरी पर था। वैसे नीरज जी की आरंभिक पढ़ाई मुंबई में हुई थी। फिर वर्ष 1943 में वे नाहन के शमशेर हाई स्कूल में अध्यापक हो गए। बाद में डॉ. परमार ने हिमाचल में लोक संपर्क विभाग का सृजन किया और रामदयाल को वहां ले आए। रामदयाल नीरज जी लोक संपर्क विभाग से डिप्टी डॉयरेक्टर के पद से सेवानिवृत हुए थे। गुरुजी का सबसे बड़ा योगदान वर्ष 1960 में, लोक संपर्क विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'हिमाचल के लोकगीत' का संपादन एवं संकलन रहा। इस संग्रह में हिमाचल के तत्कालीन पांच जिलों में से कुछेक प्रतिनिधि रचनाएं चुनकर शामिल की गई थीं। अधिकांश गीतों का मौलिक अनुवाद किया गया। यह पहला प्रयास था जिससे प्रदेश की लोक संस्कृति को आम जन तक पहुंचाने में सहायता मिली। वर्ष 2015 में उन्होंने 95 साल की दीर्घ आयु में शरीर छोड़ा। नीरज जी ने शास्त्रीय संगीत भी सीखा था। नाटकों में भी अभिनय किया था। प्रभाकर व बीए की डिग्री हासिल की थी। वे हिमप्रस्थ के संपादक भी रहे। इस तरह वे एक साथ अभिनेता, गायक, अध्यापक, आंदोलनकारी, संपादक, कवि, अधिकारी व पत्रकार की भूमिका निभाते रहे। शिमला तथा अन्य क्षेत्रों में होने वाले साहित्यिक आयोजनों के नीरज जी प्राण होते थे। युवा लेखकों के लिए प्रेरणा के स्रोत थे। पहाड़ी भाषा, संस्कृति, परंपराओं के ज्ञाता थे।

प्रस्तुति : रजनीश शर्मा

आलेख

पहाड़ी मृणाल
चंद्रमणि वशिष्ठ

आचार्य चंद्रमणि वशिष्ठ सिरमौर की धरती की एक ऐसी शख्सीयत हैं, जिसने अपना जीवन जनपद की संस्कृति, कला, परंपराओं तथा उत्थान के लिए व्यतीत किया। वे एक विख्यात साहित्यकार, कवि, शायर, रंगकर्मी अनेकों नाटकों व कविताओं के रचयिता रहे हैं। उनका एक शेर उन पर खरा उतरता है, जो उन्होंने हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह परमार को अपनी पुस्तक 'हिमाचल निर्माता राष्ट्र गौरव' में लिखा है :

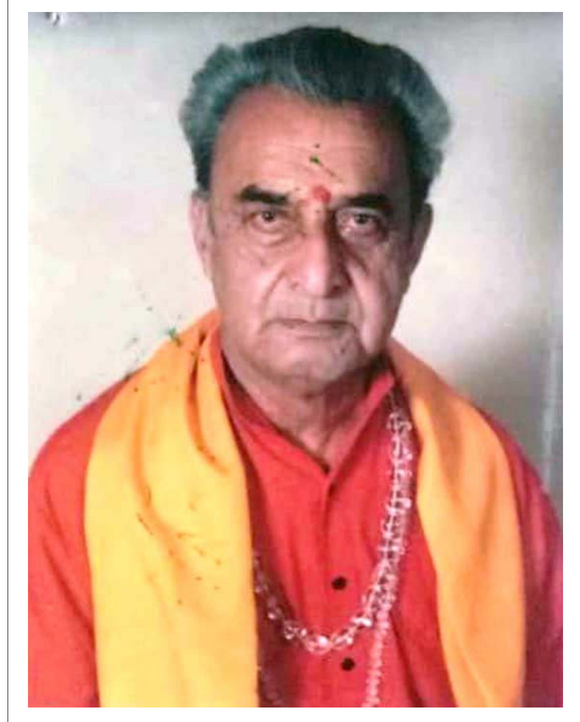
सच कहो यारो कहां चले जाते हैं अच्छे लोग
मुड़कर फिर क्यों नहीं आते हैं सच्चे लोग॥

वशिष्ठ जी के जीवन को पीछे मुड़कर देखा जाए तो उनका जन्म सिरमौर के मुख्यालय नाहन में 28 जून, 1931 को हुआ। रियासत काल, प्रजामंडल आंदोलन, हिमाचल के गठन तथा आजादी की फिजा को देखा व परखा। शिक्षा उपरांत पुलिस, आकाशवाणी तथा हिमाचल प्रदेश के लोक संपर्क विभाग में नौकरी की। वर्ष 1970 में जिला लोक संपर्क अधिकारी के पद से स्वेच्छा से त्यागपत्र दिया और राजनीति में कदम रखा। 1960 में लोक संपर्क विभाग के सहयोग से नाट्य दलों को एकत्रित कर द्वितीय अखिल भारतीय नाट्य कार्यशाला का आयोजन नाहन में करवाया। इससे राज्य में लोक कलाकारों को एक नया मंच मिला।

ग्राम पंचायत कटाहा शीतला के प्रधान, बी.डी.सी. संगड़ाह के सदस्य, पत्रकार, भाषा कला संस्कृति अकादमी के सदस्य, आकाशवाणी की लोक संगीत ओडिशन कमेटी के सदस्य व हि. प्र. विधानसभा की कृषि बागबानी समिति के सामान्य सलाहकार रहे।

साहित्यकार के रूप में भी उनकी पहचान रही है। महात्मा निर्वाण, गुड़गांव के गुरु महाराज, सिरमौर के आखिरी ताजदार महाराजा राजेंद्र प्रकाश, परशुराम हरिकथा, नोदी रे पाथर, हिमाचल निर्माता डा. परमार पर पुस्तकें लिखीं। आकाशवाणी शिमला से सिरमौर भाषा को लोकप्रिय बनाने में अहम योगदान रहा।

श्री वशिष्ठ ब्राह्मण अंतर्राष्ट्रीय संस्थान के राष्ट्रीय वरिष्ठ उपाध्यक्ष, रेणुका विकास बोर्ड के वरिष्ठ उपाध्यक्ष, सिरमौर कला संगम के आजीवन सदस्य महाराजा राजेंद्र प्रसाद साहित्य कला अकादमी के अध्यक्ष व शिवावतार गुड़गाव के गुरु महाराज की



बायरी गद्दी के मुख्य संचालक रहे।

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी आचार्य वशिष्ठ को किसी एक सीमा में बांध पाना संभव नहीं तथापि श्री रेणुका जी तीर्थ की अभूतपूर्व सेवा को देखकर लगता है कि जैसे उनका जन्म इसी निमित्त हुआ था। सन् 1960-70 के दशक में बहुत छोटे रूप में 'मोडो रा मेला' नाम से रेणुका जी मेले के विस्तार तथा तीर्थ विकास में उनकी सेवाएं अनुकरणीय हैं। उन्हीं के प्रयासों से वर्ष 1983 में रेणुकाजी बोर्ड बना।

कला, संस्कृति, साहित्य के क्षेत्र में कार्य करते हुए अनेक उपाधियां भी हासिल कीं। जैमिनी अकादमी पानीपत, हरिगाथा द्वारा आचार्य तथा शताब्दी रत्न, सुरभि साहित्य संस्कृति अकादमी खंडवन मध्य प्रदेश द्वारा राष्ट्र गौरव, संत शिरोमणि, साहित्य शिरोमणि, स्वरगंधा नाहन तथा स्वतंत्रता सेनानी संघ पझौता द्वारा कर्मवीर की उपाधि से नवाजा गया।

आलेख

पहले पायदान पर सिरमौरी सपूत

◆ प्रो. प्यार सिंह ठाकुर

सार्वजनिक हस्ती पूर्व राज्यपाल
डा. अश्वनी कुमार

पुलिस महानिदेशक हिमाचल प्रदेश, सी.बी.आई. निदेशक, नागालैंड-मणिपुर के राज्यपाल डा. अश्वनी कुमार, जिन्होंने अपने गृह क्षेत्र नाहन एवं जिला सिरमौर व हिमाचल प्रदेश का नाम रोशन कर यह सिद्ध कर दिया कि अपने आदर्श संघर्षों और मेहनत के बल पर व्यक्ति ऊँचे से ऊँचे मुकाम को हासिल कर सकता है। उसके लिए छोटा कस्बा या छोटा जिला या छोटा राज्य मायने नहीं रखता है। इसके लिए समाज के प्रति कुछ आदर्श कार्य और अपने राष्ट्र के प्रति सच्ची निष्ठा एवं जज्बा होना पहली शर्त है। ये सभी गुण डा. अश्वनी कुमार के व्यक्तित्व में झलकते हैं। 15 नवम्बर, 1950 को श्री अर्जुन देव बाली और श्रीमती सुहाग बाली के घर एक मध्यवर्गीय परिवार में डा. अश्वनी कुमार का जन्म हुआ। वे जीवन भर अर्जित उपलब्धियों का श्रेय अपने माता-पिता गुरुजनों, ईश्वर और पत्नी श्रीमती चन्दा कुमार को देते हैं।

हिमाचल प्रदेश के जिले सिरमौर के नाहन कस्बे से तालुक रखने वाले डा. अश्वनी कुमार बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के बालक रहे हैं। पिता पुलिस सेवा में पुलिस अधीक्षक थे। जहाँ-जहाँ पिता जी का तबादला होता था उन्हीं क्षेत्रों में अश्वनी कुमार का बचपन और पढ़ाई भी साथ-साथ होती रही। उच्च शिक्षा हासिल करने के पश्चात वह दिन भी आया जब अश्वनी कुमार ने अपनी मेहनत के बल पर राष्ट्रीय स्तर की प्रतियागी परीक्षा में अव्वल दर्जे से पास कर आई.पी.एस. बनें। पुलिस सेवा में जाने के पश्चात भी अश्वनी कुमार ने अपनी पढ़ाई जारी रखी और एम.बी.ए. की और फिर हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से पी.एच.डी. की उपाधि भी प्राप्त की। इन्हें अध्ययन-अध्यापन का शौक बचपन से ही था। अतः पुलिस सेवा में रहते हुए भी सुरक्षा संबंधी पाठयक्रमों में भी डिग्री प्राप्त कर पुलिस जवानों को बेहतर ट्रेनिंग उपलब्ध करवाई। ये कोई नहीं जानता था कि एक छोटे से कस्बे नाहन का होनहार युवक भविष्य में हिमाचल प्रदेश और देश के विभिन्न पदों पर विराजमान होकर अपने राज्य हिमाचल प्रदेश और अपने राष्ट्र भारत की निष्ठावान होकर सेवा करेंगे। यह उनके उच्च आदर्श, ईमानदारी, ईश्वर में विश्वास, लगन, कड़ी मेहनत, निरंतर कार्य करते रहना, सुप्रबंधन, अनुशासन, समाज और राष्ट्र के प्रति



सेवा-भाव से कार्य करना के फलस्वरूप संभव हो सका।

डा. अश्वनी कुमार ने अपने जीवन के 38 वर्ष हिमाचल प्रदेश पुलिस सहित अपने राष्ट्र भारत की सेवा के लिए समर्पित कर आज भी शिक्षा का अलख जगाकर नव-पीढ़ी के लिए प्रेरणा-स्रोत हैं।

डा. अश्वनी कुमार द्वारा पुलिस सुधार और बढ़ते अपराधों से निपटने के लिए समय-समय पर संयुक्त राष्ट्र संघ के विभिन्न संस्थाओं में भारत का हिमाचल सहित भारत प्रतिनिधित्व किया। इस दौरान इन्होंने लगभग विश्व के पचास देशों का दौरा कर विश्व के कई देशों में बढ़ते अपराधों से निपटने और अन्तर्राष्ट्रीय अपराधियों पर नुकेल कसने संबंधी सहयोग को परस्पर बढ़ाया। इन्हें उत्कृष्ट सेवा के लिए सन् 1999 में 'राष्ट्रपति मेडल' के लिए 'पुलिस मेंडल' से नवाजा गया। वे सिरमौर से पहले शख्स हैं जो 29 जुलाई 2013 से 23 दिसंबर 2013 तक मणिपुर और 21 मार्च 2013 से 27 जून 2014 तक नगालैंड के राज्यपाल रहे।

वर्तमान समय में डा. अश्वनी कुमार अलख प्रकाश गोयल शिमला विश्वविद्यालय में चार सालों से इस विश्वविद्यालय के कुलाधिपति (चाँसलर) हैं। इनके नेतृत्व में इस विश्वविद्यालय ने कम अवधि में शिक्षा के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं।

सिरमौर से पहले मुख्य सचिव एसएस परमार



1968 में पंजाब विश्वविद्यालय उत्तर भारत का एकमात्र विश्वविद्यालय था। इस क्षेत्र के अधिकांश विद्यार्थी यहां से ही उच्च शिक्षा प्राप्त करते थे।

नाहन के एक विद्यार्थी ने अंग्रेजी साहित्य में गोल्ड मेडल लेकर स्नातकोत्तर किया। सिरमौर के इलाकों में उसकी चर्चा होने लगी। इसी मेहनती छात्र को नाहन में सुरेन्द्रा कल्ब में आयोजित एक सम्मान समारोह में सम्मानित करते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. वाई एस. परमार ने कहा था कि एक दिन यह छात्र हिमाचल प्रदेश में बड़ी भूमिका निभाएगा।' इस होनहार छात्र का नाम था सुरजीत सिंह परमार, जिन्हें अधिकांश लोग एस. एस. परमार के नाम से जानते थे। अपनी मेहनत लगन से यह विद्यार्थी हिमाचल का मुख्य सचिव बना। और हिमाचल निर्माता के बोल सच हुए।

आपका जन्म नाहन में एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। आरम्भिक शिक्षा नाहन से प्राप्त कर पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ से स्नातकोत्तर करने के उपरान्त नाहन, तथा कुल्लू विद्यालयों में अध्यापन कार्य किया।

1971 में भारतीय प्रशासनिक सेवा में उत्तीर्ण हुए तथा हिमाचल में सेवाओं के दौरान उपायुक्त सहित विभिन्न पदों पर रहे। 2004 में मुख्य सचिव बने और 2007 में सेवानिवृत्त हुए।

एक सौम्य व्यक्तित्व वाले व्यक्ति ने सिरमौर जनपद का नाम रौशन किया है।

एवरेस्ट पर सिरमौरी के कदम

सिरमौर जिले के संगड़ाह उपमण्डल के निवासी एनएसजी कमांडो एसिस्टेंट कमाडेंट विवेक ठाकुर ने वर्ष 22 मई, 2019 को दुनिया की सबसे ऊंची चोटी माऊंट एवरेस्ट पर कदम रख कर सिरमौर का नाम रोशन किया है।

29 वर्षीय ठाकुर सात वर्ष पूर्व पैरा मिलिट्री फार्म में बतौर निरीक्षक भर्ती हुए थे।

वे 12 सदस्यीय एनएसजी दल के सदस्य थे। यह मुकाम उन्होंने अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति, कठिन परिश्रम से प्राप्त किया।

इससे पहले वे दार्जिलिंग माऊंट जान देव टिब्बा तथा जोगिन आदि चोटियों पर फतह कर चुके हैं।

हिन्दी मीडियम के पहले एचएएस टॉपर हैं मनोज चौहान

भले ही सिरमौर जिला विकास के मामले में सबसे निचले पायदान पर खड़ा हो, लेकिन यहां के युवा अपनी कड़ी मेहनत के दम पर हिमाचल प्रदेश में प्रशासनिक सेवाओं में प्रदेश के युवाओं के लिए नजीर पेश कर रहे हैं। इसका प्रमाण है सिरमौर जिला की पांवटा तहसील के उत्तराखंड की सीमा से सटे गांव डांडा आंज के मनोज चौहान। मनोज चौहान हिमाचल प्रदेश के पहले ऐसे एचएएस अधिकारी हैं, जिन्होंने सरकारी स्कूल में हिन्दी मीडियम से शिक्षा ग्रहण की और एचएएस की परीक्षा भी हिंदी माध्यम से उत्तीर्ण कर पहला स्थान हासिल किया। मनोज चौहान वर्ष 2003 बैच के एचएएस अधिकारी हैं।

मनोज चौहान का जन्म पांवटा तहसील के गांव डांडा आंज में जेबीटी टीचर गंगाराम चौहान और स्वर्गीय शांति देवी चौहान के घर एक फरवरी 1973 को हुआ। प्रारंभिक शिक्षा प्राइमरी स्कूल डांडा में हुई। पांचवीं कक्षा प्राइमरी स्कूल खोदरी माजरी से की और स्कूल में टॉप किया। आगे की स्कूली शिक्षा डाक पत्थर (तत्कालीन यूपी) और वर्तमान उत्तराखंड से हुई। यहां से इंटर मीडिएट की परीक्षा पास करने के बाद के डीबीएस कॉलेज देहरादून से बीएससी की। इसके बाद डीएवी देहरादून से एलएलबी की परीक्षा पास की। इसके बाद कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी से एलएलएम की डिग्री हासिल की। अपनी पूरी शिक्षा उन्होंने फर्स्ट डिविजन में पास की।

उनका सपना था कि वह सिविल सर्विस में जाएं। इसके लिए उन्होंने इलाहाबाद में आईएएस की कोचिंग कृष्णा से ली। यहां कोचिंग के दौरान उन्होंने पीसीएस की परीक्षा पास की, लेकिन सिलेक्शन नहीं हो पाया। इसके बाद उन्होंने लखनऊ में कोचिंग की और एंथ्रोपालॉजी विषय रखा। यहां आईएएस का लिखित परीक्षा पास की, लेकिन सिलेक्शन नहीं हुआ। इसके बाद हिमाचल प्रदेश की ओर अपना रूख किया और शिमला हाईकोर्ट में वकालत करने की सोची। वर्ष 2001 में पहली बार एचएएस का परीक्षा दी, लेकिन क्लीयर नहीं हुआ। फिर भी हार नहीं मानी और 2003 में पूरी तैयारी के साथ परीक्षा दी और एचएएस में टॉप किया। उनका हिन्दी मीडियम स्कूल से पढ़कर टॉप करने का रिकार्ड आज भी बरकरार है।

गाँव-बनाल, डा.-बरोटी, तहसील-धर्मपुर (सरकाघाट),
जिला-मंडी, हि.प्र.-175 040, मो. 0 98175 51904

विद्यानंद सरैक
जिनके रगों में दौड़ती है हिमाचली संस्कृति

◆ रवि सहगल



किसी भी देश या प्रदेश की संस्कृति वहां की लोक कला, साहित्य और संगीत माध्यम से प्रदर्शित होती है। कला साधक चहुं ओर इसकी उपासना भी करते रहते हैं। ऐसे ही कला साधकों की साधना से क्षेत्र विशेष की लोक संस्कृति समृद्ध होती चली जाती है। हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले से संबंधित एक ऐसे ही कला साधक हैं विद्यानंद सरैक जिनकी रगों में आज भी हिमाचली संस्कृति दौड़ती है। अपनी संगीत कला के बूते न सिर्फ उन्होंने आम जनमानस के दिलों पर राज किया बल्कि पहाड़ी कविता, गीत व लेखों के माध्यम से प्रदेश पहाड़ी लोक संस्कृति को संरक्षित कर उसे पल्वित भी किया। कला के विभिन्न रूपों के माध्यम से वे प्रदेश की अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर को युवा पीढ़ी तक पहुंचाने के लिए प्रयासरत है।

विद्यानन्द सरैक उन हस्तियों में शामिल हैं जो वर्षों से हिमाचल प्रदेश की समृद्ध लोक संस्कृति व लोक संगीत के संरक्षण की दिशा में सराहनीय कार्य करते आ रहे हैं। अपने लेखन के माध्यम से भी इन्होंने विशेषकर सिरमौर ज़िला की समृद्ध परम्पराओं, रीति-रिवाजों और संस्कृति का बूखबी बखान किया है।

विद्यानन्द सरैक का जन्म 26 जून, 1941 को ग्राम व डाकघर देवठी-मझगांव, ज़िला सिरमौर में हुआ। स्नातक आचार्य श्री मानद उपाधि की शिक्षा ग्रहण की और 1959 से 1976 तक अध्यापन कार्य किया। वर्ष 1971 में शिक्षा विभाग ने इन्हें श्रेष्ठ अध्यापक का सम्मान प्रदान किया गया। 1976 में शिक्षा विभाग से त्यागपत्र देकर समाज सेवा व संस्कृति के संरक्षण के कार्य में पूर्ण समर्पण से जुट गए।

चार वर्ष की आयु में माता-पिता से संगीत की प्रेरणा और करियाला तथा विभिन्न ग्रामीण परिवेश के उत्सवों में नृत्य-गायन के प्रति इनका रुझान रहा। 1957 में आठवीं कक्षा में पढ़ाई के

दौरान आकाशवाणी शिमला से लोक संगीत गायन आरंभ किया। इसी वर्ष अखिल भारतीय लोक संगीत सम्मेलन में आकाशवाणी की ओर से दिल्ली में नृत्य व गायन की प्रस्तुति दी, जिसमें तत्कालीन सूचना एवं प्रसारण मंत्री डॉ. केसकर व हिमाचल निर्माता डॉ. यशवन्त सिंह परमार भी उपस्थित थे।

उन्होंने आकाशवाणी से बी-हाई कलाकार की मान्यता प्राप्त की। 1962 में सर्वोदय लोक नाट्य दल की स्थापना कर करियाला व नाटकों के निर्देशन और दिव्य ज्योति पत्रिका का सम्पादन आरंभ किया। 1956 में पहली हिंदी कविता 'सवेरा' तथा 1957 में कई हिन्दी पैरोडी व पहाड़ी गीतों का लेखन किया। 1970 में पहाड़ी कविताओं, गीतों की पुस्तक 'हरे जुबटे' का प्रकाशन किया। 1971-72 में कला संस्कृति व भाषा अकादमी के सौजन्य से चिट्टे चादर कविता संग्रह का प्रकाशन किया।



विद्यानंद सरैक के आग्रह पर कला को बढ़ावा देने के लिए पहाड़ी कलाकार संघ की स्थापना तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार की अध्यक्षता में की गई।

इन्होंने 'पर्वत बोले' मासिक सांस्कृतिक पत्रिका का सम्पादन सहित विभिन्न माध्यमों से प्रदेश की संस्कृति को बढ़ावा दिया।

वीर प्रताप, हिमाचल टाईम्स और दैनिक जागरण के संवाददाता के रूप में भी अपनी सेवाएं दी हैं। इन्होंने हिन्दी उपन्यास तरसते दिल, काव्य संग्रह नालो झालो रे सुर, दुर्गा सप्तशती का हिन्दी गेय काव्य, नालो झालो रे आशु सत्य नारायण कथा का हिन्दी अनुवाद, भर्तृहरि त्रिशतक का पहाड़ी में अनुवाद भी किया। करियाला पर दूरदर्शन के साथ कार्य किया और लोक ताल वादन, नृत्य, अभिनय व गायन में सक्रिय भूमिका निभाई।

विद्यानंद सरैक ने वर्ष 2002 के बाद चूड़ेश्वर लोक नृत्य सांस्कृतिक मंडल जालग के मुख्य सलाहकार व निर्देशक के रूप में कार्य किया। चूड़ेश्वर लोक नृत्य मंडल द्वारा टी-सीरिज के तत्त्वावधान में इनके गीतों व निर्देशन में पहाड़न कैसेट निकाली। शिरगुल महिमा और वादियां एलबम में भी इनके गीतों को शामिल किया गया।

इन्हें वढ़ालटू, ठोडा, सिट्टू, डगैली नृत्य की खोज का श्रेय भी जाता है। नृत्य, गायन, प्रदर्शन व निर्देशन तुर्की-बुलगरिया मेसो डोनिया ग्रीस में विश्व लोक उत्सव, विश्व फिल्म उत्सव वारना बुलगरिया तथा ग्रीस के विश्व व्यापार मेलों में चूड़ेश्वर लोकनृत्य मंडल ने अपनी प्रस्तुतियां दीं, जिन्हें खूब सराहा गया।

विद्यानंद सरैक को अब तक अनेक सम्मानों से नवाजा जा चुका है। 1971 में कुशल अध्यापक प्रदेश शिक्षा पुरस्कार, वैद्यसूरत सिंह पुरस्कार, हिमाचली पुरस्कार कला संगम सिरमौर चन्द्रमणी विशिष्ट सम्मान, ड्रग्स कन्ट्रोल निदेशक, भारत सरकार से फोक मीडिया पर लिखे तीन नाटकों तथा राष्ट्रीय स्तर पर इसके निर्देशन व मंचन के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। भुट्टी वीवर सोसायटी कुल्लू के संस्थापक डॉ. वेदराम जयन्ती पर लोक साहित्य के लिए चन्द्रथूर वेवस पुरस्कार, दलित साहित्य के लिए, अंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, शिक्षा विभाग द्वारा लोक संस्कृति के लिए पुरस्कार, पंजाब लोक साहित्य अकादमी जालंधर द्वारा लोक संस्कृति के लिए पुरस्कार भी इस सूची में शामिल हैं।

वर्ष 2018 में राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविन्द ने इन्हें संगीत नाटक अकादमी के राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित किया। पिछले वर्ष दिव्य हिमाचल समाचार पत्र ने कल्चरल प्रमोटर ऑफ द इयर पुरस्कार इन्हें प्रदान किया। चूड़ेश्वर संस्था को मुख्यमंत्री जयराम ठाकुर ने भी सम्मानित किया है। प्रदेश की लोक संस्कृति को संरक्षित कर यह महान शख्सियत चहुं ओर इसकी चमक बिखेरने में लीन है।

लोक संस्कृति के संवाहक

◆ डॉ. राम गोपाल शर्मा

कृष्ण सिंह ठाकुर सिरमौर के पहले रेडियो कलाकार



सिरमौर के लोकगीतों को देश में पहचान दिलाने में ठाकुर किशन सिंह के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने सिरमौर जिला के पारंपरिक लोक गीतों को नई बुलंदियों पर पहुंचाया। यही कारण है कि उनके लोक गीत आज भी लोग चाव से सुनते हैं। शायद ही कोई हिमाचली नाइट ऐसी होगी, जिसमें उनके लोक गीतों नहीं गाया जाता। हिमाचल प्रदेश में वर्ष 1955 को शिमला में आकाशवाणी केंद्र का प्रसारण शुरू हुआ। इसी दौरान ठाकुर किशन सिंह ने लागा ढोलो रा ढमाका, मेरा हिमाचलो बड़ा बांका सुनाया। उनकी मधुर आवाज का हर कोई कायल हो गया। इसके बाद अपनी अंतिम सांस तक उन्होंने आकाशावाणी, दूरदर्शन के लिए गाया। उस समय हिमाचल प्रदेश में हर कोई उनकी सुरीली आवाज का मुरीद था। वह आकाशवाणी शिमला के उच्च श्रेणी का दर्जा प्राप्त कलाकार रहे। वह सिरमौर जिला के पहले आकाशवाणी कलाकार रहे। समाजसेवी, नेक दिल इंसान होने के साथ-साथ वह हंसमुख और मिलनसार थे। गायन का उन्हें इतना शौक था कि कोई बस में या बाजार में भी उनसे यह कह देता कि ठाकुर साहब आपसे एक लोकगीत सुनना है तो वह वहीं शुरू हो जाते थे।

जन्म व शिक्षा

कृष्ण सिंह ठाकुर की पोती संगीता कंवर से मिली जानकारी के अनुसार उनका जन्म 17 नवंबर 1917 को सिरमौर जिला के पझौता क्षेत्र के गांव कोटला बांगी में ठाकुर लच्छमी सिंह और माता रत्नी देवी के घर हुआ। उन्होंने सोलन जिला के चायल में आठवीं कक्षा तक की शिक्षा ली। बचपन से संगीत के लिए उनका दिल धड़कता था। आठवीं तक की शिक्षा ग्रहण करने के बाद कोटला गांव में स्थित नरसिंह मंदिर के महात्मा बैरागी जी से उन्होंने संगीत की बारीकियां सीखी। उन्होंने गायन के साथ वह हारमोनियम, तबला, ढोलक भी बजाते थे। पझौता आंदोलन के समय में भी वह क्रांतिकारियों के साथ रहे और उनके लिए देशभक्ति के गीत गाया करते थे।

35 साल तक लगातार रहे पंचायत प्रधान

पहले पूरे पझौता क्षेत्र में शाया सनौरा पंचायत हुआ करती थी। वह लोक कलाकार के साथ-साथ समाजसेवी भी थे। लोगों में उनकी लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि वह लगातार साढ़े तीन दशक तक पंचायत के प्रधान रहे। पंचायती राज के कार्यों के साथ-साथ वह आकाशवाणी कार्यक्रमों के लिए समय निकाल लेते थे।

महेंद्र कपूर को भी सिखाया था लागा ढोलो रा ढमाका

फिल्मी दुनिया के मशहूर पार्श्वगायक महेंद्र कपूर को भी उन्होंने 'लागा ढोलो रा ढमाका' लोकगीत सिखाया और उनसे गवाया भी। इसके अलावा मीठे बागो रे केले रतिरामा, तेरे मुंहो दा तिला हाय रे बेसो सुवदा, चलपंछिया ऊंची नीची धारा रे, म्हारे हिमाचल देखना सारा रे, लच्छमिये रांडे, चूड़ी दे कांडे उनके कुछ बेहद पसंद किए जाने वाले लोकगीत हैं।

सोलन में रहने वाली कृष्ण सिंह ठाकुर की पोत्री संगीता कंवर ने बताया कि 21 अप्रैल 1967 को वह आकाशवाणी शिमला से अपने लोकगीत चल पंछिया ऊंची-नीची धारा रे, म्हारे हिमाचल देखना सारा रे की रिकार्डिंग करवा कर वापिस घर लौट रहे थे कि घर से कुछ दूर पहले की हार्ट अटैक के कारण उनकी मौत हो गई। हालांकि यह उनका अंतिम लोकगीत प्रदेश में सुपर हिट हुआ और आज भी चाव से सुना जाता है। सिरमौरी लोकगीतों की एक सुरीली आवाज सदा के लिए शांत हो गई। वह भले ही आज हमारे बीच नहीं है, लेकिन उनके लोकगीत हमेशा हम सभी का मनोरंजन करेंगे।

000

ढीली नाटी की महान कलाकार विद्या

75 वर्षीय विद्या देवी सिरमौर की एकमात्र नर्तकी होने का गौरव प्राप्त है। विद्या की पहचान ढीली नाटी गायन और नृत्य में महारत हासिल की है। विद्या ने ढीली नाटी, 16 मात्रा की नाटी गायन का अनूठा अंदाज है। गढ़वालों की राणिए, ढोलेजा मैरेया टिलुआ, मर्ची, मामा मांगतुआ आदि नाटियों पर लोग उनकी मुक्तकंठ प्रशंसा करते थे। उम्र के इस पड़ाव में भी उनकी आवाज उतनी ही सुरीली है, जितनी पहले हुआ करती थी। सिरमौर जिला की राजगढ़ तहसील के दाहन गांव निवासी विद्या देवी लोकसंगीत में अपना मुकाम रखती है। उनका जन्म रासू मांदर क्षेत्र के भड़ोली गांव में कली राम व सुनपा देवी के घर हुआ। बचपन से ही गायकी परिवार व परिवेश से सीखी, लेकिन नृत्य कला में भी अपनी अलग पहचान बनाई। संगीत की तालिम उन्होंने कोटखाई निवासी गुरु झेंकू राम से ली जो मशहूर गायक बूटा खान के शार्गिद थे। 1970 में विद्या की शादी दाहन निवासी सोहन सिंह के साथ हुई। उनके दो बेटे भी हुए, लेकिन वह जी नही पाए।

शिमला आकाशवाणी के लिए गा चुकी हैं 100 लोकगीत

विद्या देवी आकाशवाणी शिमला की गायिका रही। आकाशवाणी शिमला के लिए वह करीब 100 लोकगीत गा चुकी हैं। दूरदर्शन दिल्ली, दूरदर्शन जालंधर से पर्वत की गूंज कार्यक्रम में वह समय-समय पर अपनी सुरीली आवाज का जादू बिखेर चुकी है। लोकगायकी के अलावा वह हिन्दी गीत और गजलें भी गाती रही है। उसने देश की तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के शिमला दौरे के दौरान उनके समक्ष अपनी प्रस्तुति दी। हिमाचल प्रदेश के विभिन्न मंचों पर वह अपनी प्रस्तुतियां दे चुकी है। पहाड़ी कलाकार संघ हाब्बन की विद्या मशहूर नर्तकी रही है। अभी भी सिरमौर के लोकनृत्य व लोकगायकी का नाम आते ही उनमें जोश आ जाता है। वह कहती है कि सिरमौर की संस्कृति बहुत समृद्ध है, लेकिन हम पाश्चात्य संस्कृति के चलते अपनी मूल संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं। हमारी लोक संस्कृति तभी जीवित रहेगी जब युवा लोग इस क्षेत्र में आगे आएंगे।

रेडियो डाक्टर– इन्द्रजीत सिंह दुग्गल

कोई डॉक्टर एक समय में कहां-कहां पहुंचता है? शायद यह पढ़कर आपको अटपटा सा लगे। मगर ऐसा रेडियो का डॉक्टर हुआ है जो एक ही समय में आठ से दस राज्यों तक पहुंच जाता था।

ये शख्सियत है आकाशवाणी शिमला के रेडियो डॉक्टर प्रायोजित कार्यक्रम को लोकप्रिय बनाने में अहम् भूमिका निभाने वाले सिरमौर के वाशिंदे डॉ. इन्द्र जीत सिंह दुग्गल। कार्यक्रम के दौरान विभिन्न रोगों के चिकित्सिकों के साथ बैठ कर लोगों की समस्याओं का समाधान तथा उन्हें रोगों की जानकारी देने के कारण दुग्गल जी ने हिमाचल सहित आसपास के राज्यों के श्रोताओं पर ऐसी छाप छोड़ी जिस कारण आज भी उन्हें उनके शुभचिंतक रेडियो डॉक्टर कह कर पुकारते हैं।

उनकी आवाज में मां सरस्वती ने ऐसा जादू बिखेरा है कि वह जब किसी से स्वाभाविक वार्तालाप भी करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो आप रेडियो सुन रहे हो। आज वे सेवानिवृत्ति की जिन्दगी जी रहे हैं। जो भी हिमाचली आकाशवाणी शिमला के लम्बे समय तक जुड़ा रहा, हर वह व्यक्ति इन्द्रजीत दुग्गल से वाकिफ है। आपका जन्म 3 मार्च, 1950 को नाहन में श्री के.एस. दुग्गल एवं श्रीमती हरवैस कौर दुग्गल के घर हुआ।

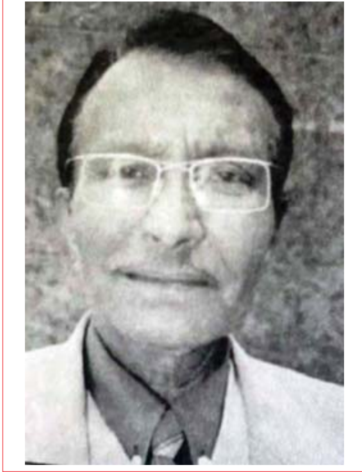
मैट्रिक शमशेर उच्च विद्यालय एवं स्नातक नाहन महाविद्यालय से उत्तीर्ण की। गुरु जम्बेश्वर विश्वविद्यालय हिसार से पत्रकारिता में स्नातकोत्तर तथा मदुरई कामराज विश्वविद्यालय मदुरई से स्वास्थ्य शिक्षा में पी.जी डिप्लोमा हासिल किया।

डॉ. दुग्गल ने प्रसार भारती तथा ऑल इण्डिया रेडियो शिमला में कार्यक्रम कार्यकारी अधिकारी सहित अन्य पदों पर 20 वर्ष तक अपनी सेवाएं प्रदान की हैं। इसके अतिरिक्त एफएम रेडियो, शिमला के कार्यक्रम निर्माण का भी दायित्व बखूबी सम्भाला है। ऑल इण्डिया रेडियो शिमला में सेवाएं प्रदान करने से पूर्व आपने 18 वर्षों तक हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य विभाग में कनिष्ठ पर्यवेक्षक के पद पर कार्य कर निचले स्तर पर स्वास्थ्य कार्यक्रमों को जन-जन तक ले जाने का कार्य किया। इसी दौरान आम जन की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को नजदीक से देखने, परखने का मौका मिला। अपने निष्ठापूर्ण कार्यों के लिए वर्ष 2001 में पंजाब कला साहित्य अकादमी, 2002 में अखिल भारतीय कलाकार संघ द्वारा बलराज साहनी राष्ट्रीय पुरस्कार व वर्ष 2009-10 में इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में उत्कृष्ट सेवाओं के लिए ठाकुर वेद राम राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं।



सिरमौर के इस सपूत की मधुर एवं सुरुली आवाज आमजन को रेडियो के महान कम्मैंटेटर जसदेव सिंह की याद तरोताजा करवा देती है।

'सभी शुणने वाले के अमर सिंह चौहानो री राम-राम'



रेडियो विशेषकर सिरमौर भाषा के सुनने वालों के लिए सभी शुणने वाले के अमर सिंह चौहानो री राम-राम के लिए एक जानी पहचानी शख्सियत रही। उन्होंने अपनी भाषा से सिरमौरी कार्यक्रमों को लोकप्रियता की नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया। वे आकाशवाणी शिमला के अन्य कार्यक्रमों की सुरीली व प्रभावशाली आवाज के मालिक थे। उनके इस योगदान से सिरमौरी लोक संस्कृति को प्रदेश व प्रदेश के बाहर लोगों को रू-ब-रू करवाया। अमर सिंह चौहान का जन्म पृथ्वी सिंह चौहान के घर 12 सितम्बर, 1947 को गांव डाण्डा आंज, तहसील पावंटा साहिब जिला सिरमौर में हुआ। वे एक लेखक के साथ-साथ बेहतरीन कलाकार भी रहे। सिरमौर की 'हिरुलों' पर विशेष अध्ययन किया। सिरमौर संस्कृति पर अनेक शोधात्मक लेखों का प्रकाशन प्रदेश तथा प्रदेश के बाहर प्रकाशित पत्रिकाओं में कर संस्कृति की लोकप्रिय है। उन्होंने सिरमौर के सिंघा बजीर, सिंघरऊ, ठंडऊ जैसी पारम्परिक हारूलों को नए अंदाज में गाकर आकाशवाणी के माध्यम से प्रदेश व देश में नई पहचान दिलवाई। वे अनेक सिरमौरी गीतों के रचियता भी हैं। वे एक श्रेष्ठ उद्घोषक के साथ-साथ सिरमौर गीत संगीत, लोक संस्कृति को जीवन्तता प्रदान करते रहे हैं। उन्होंने अनेक रेडियो रूपकों के भी कार्य किया।

गुनाहों का देवता फिल्म की शूटिंग करवाकर सिरमौर को बड़े पर्दे पर लाए

रणधीर चौहान

रणधीर चौहान का जन्म 1918 को मोहल्ला शमशेरगंज नाहन में हुआ। शिमला के सरकारी स्कूल से उन्होंने दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की और इसके बाद वह लाहौर चले गए। 1938-39 में वह लाहौर से वापिस लौटे और ऑल इंडिया रेडियो दिल्ली में काम करना शुरू किया। उन्होंने नाटकों में कार्य किया। इसके अलावा कई नाटक भी लिखे और उनका निर्देशन भी किया।

1940 से शुरू किया फिल्मी सफर

उन्होंने फिल्मी सफर की शुरुआत 1940 से की। इसके लिए वह दिल्ली छोड़कर मुंबई चले गए और फिल्मों में काम करना शुरू किया।

रणधीर चौहान की पहली फिल्म थी सावन भादों। इस फिल्म में रणधीर चौहान ने नायक के रूप में काम किया। इस फिल्म की नायिका थी मधुबाला। यह फिल्म 1950-53 में बनी। रणधीर की कुछ मशहूर फिल्में थीं, मिस मैरी, गुनाहों का देवता। रणधीर अपनी मातृभूमि नाहन से बहुत प्यार करते थे। गुनाहों के देवता फिल्म की शूटिंग उन्होंने नाहन में करवाकर बड़े पर्दे पर अपने शहर नाहन का नाम उजागर किया था। फिल्म आजाद में रणधीर का रोल एक बुजुर्ग का था। उन्होंने करीब 5 दर्जन फिल्मों में चरित्र अभिनेता की भूमिका निभाई।

उस समय के मशहूर अभिनेता राजेंद्र कुमार, ओमप्रकाश, सुंदरश्याम आदि इनके अच्छे मित्र थे। राजेंद्र कुमार जब भारत-पाक विभाजन के बाद मुंबई आए थे तो करीब 6 माह तक वह रणधीर चौहान के पास रहे थे। इस अहसान के बदले में राजेंद्र कुमार उसी फिल्म में काम करते थे, जिसमें रणधीर को लिया जाता था। चरित्र अभिनेता के रूप में इन्हें दर्जनों सम्मान मिले।

रणधीर चौहान का विवाह नयना साहनी से हुआ। नयना की छोटी बहन की शादी फिरोज खान से हुई थी।

रणधीर चौहान जो एक फिल्मी जगत का चमकता सितारा था, वर्ष 1998 में अस्त हो गया लेकिन फिल्म जगत को दिए गए उनके योगदान से सिरमौर जनपद उनका ऋणी है। इन्हीं के प्रयासों से नाहन शहर को नई पहचान मिली है।

फिल्मी जगत के सफल नायक

राकेश पांडे

सिरमौर के एक सपूत राकेश पांडे ने सिरमौर का नाम फिल्मी जगत में खूब रोशन करवाया है। राकेश पांडे का जन्म नाहन में वर्ष 1946 में हुआ। 1966 में भारतीय फिल्म एण्ड टेलिविजनल संस्थान पुणे से निर्माता, निर्देशन में डिग्री हासिल की। भारतेन्दु अकादमी ऑफ ड्रामेरिक्स से भी स्नातक की डिग्री हासिल की।

वर्ष 1969 में अपना फिल्मी कैरियर सारा आकाश फिल्म से आरम्भ किया। राकेश पाण्डे को भोजपुरी फिल्मों में बेहद शोहरत मिली। उनकी अन्य फिल्मों में दो राह, रखवाले, मन जाए, अनोखदान, अमर प्रेम, इंतजार, हाथी के दांत, वो मैं नहीं, उजाला ही उजाला, भीष्म हैं।

वे छोटे परदे के भी मशहूर कलाकार रहे। आखिरी चाल, सांस, शक्तिमान में (पंडित विद्या धर शास्त्री का किरदार), देवी, इत्यादि में किरदार निभाए। भोजपुरी के लिए उन्हें चौथे भोजपुरी फिल्म एवार्ड से नवाजा गया।

रिंग का बादशाह : द ग्रेट खली



सिरमौर जिले के दुर्गम विकास खंड शिलाई की नैनीधार पंचायत के धिराइना गांव के दिलीप राणा उर्फ द ग्रेट खली के नाम से आज दुनिया वाकिफ है। दलीप का जन्म 27 अगस्त 1972 को माता टंडी देवी और पिता ज्वालू राम के यहां हुआ। वे फ्री स्टाईल कुश्ती के बादशाह माने जाते हैं। जब भी उनकी कुश्ती छोटे पर्दे या मैदान में होती हैं तो समय रुक जाता है। दिलीप राणा का जीवन एक संघर्ष भरी कहानी है। गरीब घर का बालक, लंबी ऊंची कद-काठी के कारण गुजर-बसर के लिए गांव छोड़कर शहर काम करने आ पहुंचा। शिमला में मजदूरी तथा छोटा-मोटा काम किया। वर्ष 1993 में पंजाब पुलिस के डीआईजी की शिमला में दिलीप पर जब नज़र पड़ी तो वो उसकी डील डौल शारीरिक संरचना से अचंभित हो गए। उन्होंने उससे पंजाब पुलिस में सेवा करने बारे पूछा। वे पंजाब पुलिस में भर्ती के लिए राजी हुए और फिर तो इस गरीब बालक की जिंदगी ही बदल गई। वे 1993 में पंजाब पुलिस में भर्ती हुए। उसकी शरीर संरचना के कारण उसे कुश्ती के गुर सिखाने के लिए प्रशिक्षण दिया गया। वे वर्ष 2000 में पहली बार कुश्ती खेलने उतरे। 2001 में वर्ल्ड चैंपियनशिप रेसलिंग में हिस्सा लिया। 2002 में न्यू जापान प्रो-रेसलिंग में भाग लिया। 2007 में वर्ल्ड हैवीवेट चैंपियनशिप में विश्व रेसलिंग का खिताब अपने नाम किया। 2012 तक अनेक खिताब जीते। 2015 में पंजाब के जालधंर में अपनी रेसलिंग अकादमी खोली। यहां हिमाचली बच्चों को निःशुल्क प्रशिक्षण दिया जाता है। कुश्ती के अलावा वे फिल्मों में भी काम कर चुके हैं। द लांगेस्ट यार्ड, गेट स्मार्ट, कुश्ती, रामा द सेवियर में वह अपने अभिनय का परिचय दे चुके हैं। गिरीपार क्षेत्र के लोगों विशेषकर धिराइना गांव व आसपास के गांवों के बाशिंदों से जब पूछा जाता है कि आप कहां के रहने वाले हैं तो वे फक्र से कहते हैं मैं खली के गांव का हूं। खली ने गांव तथा जिले को एक नई पहचान दिलाई है।



सक्रिय राजनीति के साथ-साथ आधुनिक खेती के प्रणेता

हिमाचल प्रदेश विपणन बोर्ड के चेयरमैन बलदेव भंडारी को प्रदेश के अधिकतर लोग एक कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में जानते है।। बिरले ही लोगों को पता है कि सिरमौर जिला के आधुनिक खेती के प्रणेता और बड़े किसानों में बलदेव भंडारी शुमार है। उन्होंने अपनी पारंपरिक फसलों के साथ-साथ हाईटैक एग्रीकल्चर और संरक्षित खेती कर अन्य किसानों के लिए नजीर पेश की है, जो कृषि कार्यों को आज भी घाटे का सौदा मानते हैं। बलदेव भंडारी आज जिस मुकाम पर है, उसके पीछे संघर्ष की एक लंबी कहानी भी है। स्थानीय जनता में वह इतने लोकप्रिय हैं कि वह तीन दशकों से पंचायती राज संस्थाओं से जुड़े हैं। वह भाजपा किसान मोर्चा के प्रदेशाध्यक्ष और केंद्र में भाजपा किसान मोर्चा के सचिव भी हैं। अपनी कड़ी मेहनत और जमीन से जुड़े होने के कारण बलदेव भंडारी न सिर्फ एक राजनीतिज्ञ या उद्योगपति हैं बल्कि एक उन्नत किसान के रूप में भी जाने जाते हैं।

सिरमौर जिला की पच्छाद तहसील के घिन्नी घाड़ क्षेत्र के छोटे से गांव कूहट में 12 दिसंबर 1954 को तुलाराम भंडारी और प्रेम देवी भंडारी के घर जन्म हुआ। प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय प्राइमरी स्कूल से ली और सराहां स्कूल से अपनी दसवीं की परीक्षा पास की। करीब 19 वर्ष की आयु में उन्होंने अपने पिता तुला राम भंडारी के कत्थे के व्यापार में हाथ बटाना शुरू कर दिया।

बलदेव भंडारी सिरमौर के कितने बड़े किसान हैं इस बात का अंदाजा सहज ही इस बात से लगाया जा सकता है कि वह अपने खेतों से प्रतिवर्ष 500 से 600 क्विंटल गेंहू उत्पादित करते हैं। यहीं नहीं वह धान भी लगाते हैं और 400 से 500 क्विंटल धान की फसल होती है। उन्होंने अपनी खाली पड़ी जमीन पर सफेदा और पापुलर के करीब 30 हजार पौधे लगाए हैं।

गांव कुणा, हरिपुधार, जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश

आलेख

पहाड़ों में बसते थे किंकरी के प्राण



चेहरे पर असंख्य संघर्षों की झुर्रियां को समेटे, ठेठ पालवी (सिरमौर के संगड़ाह क्षेत्र में बोली जाने वाली) बोली में अपने एकदम स्पष्ट विचारों को प्रकट करने वाली अदम्य साहस, उत्साह और अंतिम सांस तक पर्यावरण को बचाने और महिलाओं को सम्मान दिलाने के लिए किंकरी देवी लड़ती रही। नियति औचक किसी अदने से व्यक्ति के हाथ संघर्षों का जबरदस्त हथियार देती है तो समाज की सबसे निचली जाति में पैदा और वह भी महिला क्या कुछ कर देती है, इसकी मिसाल किंकरी देवी रही।

हिलेरी क्लिंटन के साथ जलाया चीन में दीप

चीन की राजधानी बीजिंग में वर्ष 1998 में आयोजित विश्व महिला सम्मेलन तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति की पत्नी हिलेरी क्लिंटन के साथ दीप जलाकर सम्मेलन का उद्घाटन किया। यहां से किंकरी की वैश्विक पहचान मिली। इसके बाद किंकरी देवी ने बाबा आमटे, मेधा पाटेकर और सुंदरलाल बहुगुणा के बीच अपनी जगह बनाई।

पर्यावरण के प्रति पेचीदा सोच नहीं बल्कि व्यवहारिक दृष्टिकोण

जल, जंगल, जमीन के बचाव के प्रति संवेदनशीलता सहजता से प्रस्तुत की। स्थानीय स्तर पर ग्रामीण अंतर्विरोधों के चलते वह आगे आई और धीरे-धीरे सभी को पीछे छोड़ती गई। पशुओं के लिए चारा, चरागाहें, पानी का संरक्षण, खनन को रोक कर वनों को संरक्षित करने के लिए संघर्ष की शुरुआत की।

महिलाओं की जागृति की भी प्रतिबद्धता

संगडाह महिला मंडल की प्रधान रही और महिलाओं को एकजुट भी किया गांव की समस्याओं के बारे में और क्षेत्र की समस्याओं के बारे में उठाया। वह वार्ड पंच भी रही ।

बीमारियों से रहा गहरा नाता

संघर्षों के दिनों में भूख हड़ताल, सामाजिक स्थिति भी अच्छी नहीं रही, पौष्टिक भोजन का आभाव इस कारण बीमार भी रही। सामाजिक संस्थाओं ने इस दौरे में थोड़ा बहुत सहयोग दिया।

मसि कागद छुओ नहीं कलम गहि न हाथ

निपट निरक्षर और अनपढ़ किंकरी का सहज ज्ञान गजब का था। अपनी माटी को खनन माफिया के खूनी पंजो से बचाना ही उसका लक्ष्य नहीं था वरना वो अपनी पीढ़ियों के लिए स्वस्थ पर्यावरण, कृषि एव पशु संस्कृति को अनजाने की सहजने का प्रयास कर रही थी। 17 दिन का अनशन रहा परिवर्तनकारी। चरम संघर्षों के दिनों में किंकरी ने शिमला में 17 दिन का अनशन किया। अवैध एवं अवैज्ञानिक खनन पर पूर्ण प्रतिबंध के लिए उसने अपना जीवन दांव पर लगा दिया। अनपढ़ होते हुए भी उनमें शिक्षा के प्रति कितनी संजीदगी थी। इसका प्रमाण है संगडाह में कॉलेज की मांग। कॉलेज की मांग को लेकर न सिर्फ उन्होंने संघर्ष किया, बल्कि पुलिस केस भी भुगते।

हाईकोर्ट ने बनाया किंकरी एक्ट

संघर्षों को मिली कानूनी पहचान के चलते 1991 में हिमाचल प्रदेश हाईकोर्ट ने अवैध एवं अवैज्ञानिक खनन के लिए किंकरी देवी रेफरेंस के साथ कड़ा कानून बनाया और खनन को रोका।

जीवन परिचय एक नजर में

जिला सिरमौर के घाटो गांव में कालिया राम के घर वर्ष 1940 में हुआ, यह जन्मतिथि उनके पासपोर्ट में अंकित थी। 13 वर्ष की उम्र में ही उनका विवाह संगड़ाह के शामू से हुआ। उन्होंने 1982-83 में संगडाह व कमरऊ में खनन कार्यों के खिलाफ उठी आवाजों में सक्रियता बढ़ाई। 1985-86 में गैर सरकारी संस्था पीएपीएन के साथ मिलकर खनन रोकने के लिए दस्तावेजी व जन आंदोलन किया। 1987 में हाई कोर्ट में खनन के खिलाफ याचिका दायर की। 1991 में प्रदेश में हाई कोर्ट ने अवैध/ अवैज्ञानिक खनन पर रोक लगाई और 1992 में उच्चस्तरीय खनन जांच कमेटी बनाई। वर्ष 2001 में महिला सशक्तीकरण के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी ने किंकरी देवी को उनके योगदान के लिए रानी झांसी लक्ष्मीबाई स्त्री शक्ति पुरस्कार से दिल्ली में सम्मानित किया। इस पुरस्कार को पाने वाली वह प्रदेश की पहली महिला है। इसके अलावा उन्हें देश व प्रदेश की कई संस्थाओं ने सम्मानित किया। 30 दिसंबर 2007 को सिरमौर जिला के संगड़ाह में उनका निधन हो गया। हाल ही में किंकरी देवी द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में किए गए कार्यों के लिए 'पर्यावरण पुरस्कार' योजना हिमाचल सरकार द्वारा जिला स्तरीय योजना आरंभ की गई है।

प्रस्तुति : यशपाल कपूर

सिरमौर के सितारे

जनपद की पहचान

◆ यशपाल कपूर

सिरमौर जिले में राजनीति के क्षेत्र में अनेक महानुभावों ने अपने वशिष्ट पहचान बनाई है। इनमें डॉ. वाई.एस. परमार, वैद सूरत सिंह, शेरजंग सहित अनेक ऐसे नाम हैं जो आज भी लोगों के आदर्श बने हुए हैं। सिरमौर जिले के गठन के उपरांत यहां से वर्ष 1952 में लोकसभा के प्रथम चुनाव में आनंद राम सेवल पहले सांसद बने। प्रारंभिक शिक्षा शमशेर हाई स्कूल नाहन, बीए की शिक्षा लाहौर से तथा एल.एल.बी. की डिग्री बनारस से हासिल की।

सिरमौर के पहले राज्य सभा सांसद श्री शिवानंद रमौल थे जो भरोग बनेड़ी क्षेत्र के गांव खाईना के निवासी थे। 1916 से 1921 तक वे नाहन में सहायक जेलर पद पर भी रहे। वे जनपद के अकेले ऐसे व्यक्ति हैं जो लोक सभा सांसद और राज्य सभा के सांसद के साथ विधायक भी रहे हैं। उन्होंने प्रजामंडल में अहम भूमिका निभाई। श्री गुमान सिंह ठाकुर जो शिलाई के कांडो च्योग गांव के निवासी थे, 1967, 1972, 1977, 1982, 1985 में विधान सभा सदस्य निर्वाचित रहे। वे परमार मंत्रिमंडल में सिरमौर के पहले मंत्री बने। श्री गंगू राम मुसाफिर पच्छाद विधान सभा के डिलमन गांव के निवासी हैं। वे छः बार हिमाचल विधान सभा के लिए निर्वाचित हुए। और 2003 में हिमाचल विधान सभा के अध्यक्ष बने। वर्तमान में डॉ. राजीव बिंदल जो नाहन विधान सभा क्षेत्र से विधायक हैं, हिमाचल प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष हैं। वे दो बार इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व कर चुके हैं।

सिरमौर की पहली महिला विधायक

राजनीति जैसी बिहड़ राहों पर चलने वाली सिरमौर की शेरनी सुश्री श्यामा शर्मा नाहन में बड़े जमींदार पंडित श्री दुर्गा दत्त के घर पैदा हुई। मां देहरादून से थी। बी.ए. की पढ़ाई पंजाब यूनिवर्सिटी से की। बाद में इलाहाबाद विश्वविद्यालय तथा आगरा वि.वि. से अनेक कोर्स किए। आप एल.एल.बी. हैं तथा राजनीति शास्त्र एवं समाजशास्त्र में एम.ए. हैं।

जय प्रकाश नारायण से रहीं प्रभावित : सुश्री श्यामा शर्मा जय प्रकाश (जेपी) की शख्सियत से प्रभावित रही हैं। फायर ब्रांड आंदोलनकारी रही हैं। युवा मुक्ति मोर्चा की आप संस्थापक सदस्या रही और खोदरी-माजरी लेबर मूवमेंट जो देश के बड़े आंदोलनों में शुमार रहा है, उसका हिस्सा रही, जिस कारण एक वर्ष भूमिगत भी रहना पड़ा।

भाषा पर जबरदस्त पकड़ : एक राजनेता की सबसे बड़ी खासियत होती है भाषा पर पकड़। विचारानुसार, भावानुसार आप भाषा की जादूगर रही। आपके ओजस्वी भाषणों ने सिरमौर के अनेकानेक लोगों को प्रभावित और इस कला में सुधार के लिए प्रेरित किया।

राजनीतिक सफर : श्यामा शर्मा हिमाचल प्रदेश जनता पार्टी की अध्यक्ष भी रही। जेपी मूवमेंट के भी आपकी भागीदारी रही। 1977 में पहली बार हिमाचल विधानसभा के लिए 10 महिलाओं ने चुनाव लड़ा, जिसमें अकेली ही थी जो विधानसभा में चुनकर आई और शांता कुमार की सरकार में राज्य मंत्री बनी। 1982 में भी विधायक रही। हिमाचल प्रदेश योजना बोर्ड की उपाध्यक्ष भी रही हैं। 1989 में आपने क्रांतिकारी मोर्चे का गठन किया। उसके बैनर तले 1990 में चुनाव लड़े और सिरमौर के रेणुका से रूप सिंह, शिलाई से जगत सिंह नेगी और नाहन से स्वयं जीती। बाद में भाजपा में विलय हो गया। राजनीतिक समीकरणों के उतार-चढ़ावों में आप पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर की राष्ट्रीय समाजवादी पार्टी की राष्ट्रीय महासचिव भी रही। 2 फरवरी 2012 को बनी हिमाचल लोकहित पार्टी की भी फाउंडिंग मेंबर रही। अपने जीवन में कई उतार-चढ़ाव देखे, पर हिम्मत कभी नहीं हारी। आंदोलनकारी की छवि हमेशा बरकरार रही। महिला सशक्तीकरण



के प्रति सदैव तत्पर व प्रयासरत रहीं। झांसी की रानी को भी अपना आदर्श मानती हैं। आपके संघर्षों से सिरमौर की नारियों को प्रेरणा मिली है और सभी गौरवान्वित हुए हैं।

राजगढ़ की जयवंती ने विदेशी धरती पर ताईक्वांडो में किया रोशन देश का नाम

महिलाओं को आगे बढ़ने के लिए सबसे जरूरी है उन्हें उच्च शिक्षा प्रदान करना ताकि वह आत्मनिर्भर बन सकें। आज भी लोग लड़कियों से ज्यादा लड़कों को महत्व देते हैं। लड़कियों का सही पालन पोषण करें, उनकी योग्यता को पहचाने और उन्हें आगे बढ़ने के पर्याप्त अवसर दें तो वह भी बेटों की तरह अपने मां-बाप का नाम रोशन कर सकती हैं। ऐसा ही कुछ कर दिखाया राजगढ़ क्षेत्र के कोडब गांव की जयवंती कश्यप ने। जयवंती ने वर्ष 2018 में ही दो अलग-अलग वर्ल्ड चैंपियनशिप में देश के लिए जीते दो पदक जीत कर अपने क्षेत्र का नाम रोशन किया।

हिमाचल प्रदेश पुलिस की जवान जयवंती कश्यप ने प्रदेश के नाम अंतरराष्ट्रीय स्तर पर रोशन किया है। वर्ष 2018 में ही जयवंती ने ताईक्वांडों में देश के लिए दो पदक देश के लिए जीते। जयंवती ने 16 से 19 फरवरी 2018 तक संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) में आयोजित 6वीं वर्ल्ड ताइक्वांडो चौंपियनशिप में भी कांस्य मेडल जीता था। 15 दिन के भीतर ही जयवंती ने 1 मार्च से 5 मार्च 2018 तक मलेशिया में आयोजित मलेशिया ओपन वर्ल्ड ताईक्वांडो चौंपियनशिप में कांस्य मेडल जीतकर देश व प्रदेश का नाम रोशन किया है। सिरमौर जिला के राजगढ़ की जयवंती कश्यप 67 से 73 किलोग्राम अपने भारवर्ग में देश के लिए कांस्य पदक जीता।

राजगढ़ के कोडब गांव की है जयवंती

हिमाचल प्रदेश पुलिस की फर्स्ट बटालियन जुन्गा में कांस्टेबल जयवंती कश्यप तैनात हैं। किसान पिता शोभी राम और माता द्रोपती के घर जन्मी जयवंती की प्राथमिक शिक्षा हाब्बन में हुई। इसके बाद माध्यमिक पाठशाला फागू से जमा दो और पीजी कॉलेज सोलन से स्नातक और एनआईआईटी से सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग की है। खेलों का शौक बचपन से था। वर्ष 2013 में पुलिस में भर्ती होने के बाद उन्होंने ताईक्वांडो को भी जारी रखा। सितंबर 2017 में श्रीनगर में आयोजित नेशनल चैंपियनशिप में भी जयवंती ने कांस्य पदक हासिल कर यूएई का मार्ग प्रशस्त किया। पिछले करीब पांच माह से जयवंती चंडीगढ़ में ताईक्वांडो का प्रशिक्षण ले रही है। इसके अलावा चंडीगढ़ स्टेट चैंपियनशिप में भी वह स्वर्ण पदक जीत चुकी है।

मेहनत का दूसरा नाम सीता गोसाईं

खेल के क्षेत्र में यह बात कोई मायने नहीं रखती है कि खेल का मैदान छोटा हो या बड़ा। एक खिलाड़ी का लक्ष्य केवल उसका टारगेट हासिल करना होना चाहिए। मेहनत ही सफलता का दूसरा नाम है। मेहनत के बिना किसी भी हालत में लक्ष्य पाना संभव नहीं है। यह बात भारत की शान तथा हिमाचल की बेटी अर्जुन अवार्ड विजेता सीता गोसाईं मेहता ने कही है। उनका कहना है कि ग्राउंड किसी भी तरह का हो, एक खिलाड़ी के दिल में जीत की बात हमेशा होनी चाहिए तथा लक्ष्य हमेशा ऊंचा होना चाहिए। सीता गोसाईं कहती हैं कि वह केवल मेहनत पर ही विश्वास करती हैं। केवल 13 वर्ष की आयु में हॉकी के राष्ट्रीय कैंप में पहली बार दस्तक देने वाली सीता गोसाईं आज भारतवर्ष ही नहीं, परंतु विदेश में भी किसी परिचय की मोहताज नहीं हैं। नाहन शहर के एक साधारण परिवार में जन्मी सीता गोसाईं ने दसवीं तक की पढ़ाई नाहन स्थित कन्या वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला में पूरी की। इस दौरान सीता गोसाईं ने यह बात कहकर भी चौंका दिया कि आरंभ में उसका मुख्य खेल हाकी नहीं बल्कि खो-खो था। छठी-सातवीं में सीता गोसाई खो-खो में स्टेट व नेशनल खेल चुकी थीं, परंतु अपनी बड़ी बहनों सुदेश शर्मा व गीता ठाकुर को देखते हुए सीता गोसाईं भी हाकी खेलने लगीं। स्कूल के दिनों में स्कूल की अध्यापिका शशि दुग्गल व अध्यापक आरके दुग्गल का सीता को हॉकी के क्षेत्र में आगे बढ़ाने में मुख्य योगदान रहा। दसवीं की कक्षा नाहन से उत्तीर्ण करने के बाद सीता गोसाईं ने चंडीगढ़ स्थित एमसीएम डीएवी कालेज में प्रवेश लिया। करीब एक वर्ष तक कालेज में शिक्षा ग्रहण करने के बाद सीता की हॉकी में रुची व खेल को देखते हुए साई सेक्टर-18 में प्रवेश हुआ। उसके बाद सीता गोसाईं ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। सीता गोसाईं ने पंजाब यूनिवर्सिटी से कई बार राष्ट्रीय स्तर पर इंटर यूनिवर्सिटी में हाकी में बेहतर प्रदर्शन किया, जिसके पश्चात 1991 में सीता को भारतीय महिला हॉकी टीम में प्रवेश मिला। 1991 के बाद सीता गोसाई ने पीछे मुड़कर नहीं देखा तथा लगातार वर्ष 2004 तक करीब दस वर्षों तक भारतीय महिला हॉकी टीम में अहम सदस्य के रूप में भारत का नाम रोशन किया। यही नहीं सीता गोसाईं वर्ष 1996, 1999 व 2001 में भारतीय महिला हॉकी टीम की कप्तान भी रहीं। सीता गोसाईं के नेतृत्व में भारतीय महिला हॉकी टीम ने 1998 में एशियन हाकी टीम में सिल्वर मेडल, 1999 में सीनियर एशिया कप में सिल्वर मेडल तथा मैनचेस्टर में कॉमनवैल्थ गेम्स में गोल्ड मेडल जीता था। सीता गोसाईं एशिया की पहली महिला हॉकी खिलाड़ी हैं, जिनका चयन विश्व एकादश की टीम में हुआ था। सीता गोसाई दो वर्ष तक भारतीय महिला व पुरुष हॉकी टीम की मुख्य चयनकर्ता के रूप में काम कर चुकी हैं। यही नहीं दिल्ली में संपन्न हुई कॉमनवैल्थ गेम्स में भी सीता गोसाई आयोजक टीम

में शामिल थीं। भारतीय रेलवे में कार्यालय अधीक्षक के रूप में तैनात सीता गोसाईं का मानना है कि खेल के क्षेत्र में मेहनत ही सफलता की कुंजी है।

सफल बहनों की तिकड़ी

सफल बहनों की तिकड़ी जिला सिरमौर के मुख्यालय नाहन के रहने वाले स्व. उमराव सिंह व बचनी देवी के घर सुदेश शर्मा, गीता ठाकुर व सीता गोसाईं तीन बेटियां हैं। सीता गोसाईं की दोनों बड़ी बहनें सुदेश शर्मा व गीता ठाकुर भी हॉकी की राष्ट्रीय खिलाड़ी



हैं। सुदेश शर्मा वर्तमान में नाहन में साई की वरिष्ठ हॉकी कोच हैं। सीता गोसाईं की दूसरी बड़ी बहन गीता ठाकुर भी भारतीय हाकी टीम की सदस्य रह चुकी हैं। गीता ठाकुर भी वर्तमान में भारतीय रेलवे में ही सेवाएं दे रही हैं। तीनों बहनें बिलकुल ही साधारण परिवार में पैदा हुईं तथा आरंभ में तीनों बहनों ने नंगे पांव स्कूल मैदान व नाहन के ऐतिहासिक चौगान मैदान में हाकी की स्टिक थामी। यही नहीं, चौकाने वाली बात तो यह है कि सुदेश शर्मा, गीता ठाकुर व सीता गोसाईं तीनों बहनें एक साथ भारतीय हाकी कैंप भी लगा चुकी हैं।



पैसोपालो में देश का प्रतिनिधित्व कर रही है शालू शर्मा

ये कोई कल्पना नहीं एक वास्तविकता है, ये कोई अचानक आई सफलता नहीं बल्कि मन मस्तिष्क और शरीर के समन्वय तथा सदियों के सामाजिक ढांचे की तीलियों को तोड़ते हुए नए संस्कारों को गढ़ने की परिभाषा है। ये बालिकाओं की उत्कट अभिलाषाओं और अदम्य साहस का परिणाम है। ये शालू शर्मा है, जिसके साहस के कारण देश में अनाम सा पैसोपालो खेल एकदम चर्चा में आ गया। ये इस सिरमौरी बाला का कमाल है कि जिसने थोड़े समय में ही इस खेल को देश में बुलंदियों पर पहुंचा दिया।

शालू शर्मा का जन्म सिरमौर के ट्रांसगिरी क्षेत्र के शमाह गांव में पिता मामराज शर्मा तथा माता कुसुमलता के घर 5 जुलाई 1995 को हुआ। प्रारंभिक शिक्षा गांव की पाठशाला से और जमा दो की शिक्षा सीनियर सेकंडरी स्कूल कफोटा से हुई।

शालू हैंडबॉल में राष्ट्रीय खिलाड़ी रही है, वहीं बैडमिंटन में भी खासी महारत है। खेल आपकी रगों में है। आप क्रिकेट की गहरी रूची रखती है। बिलासपुर की खेल अकादमी की प्रेरणा से केरल में 2016 में पहला नेशनल खेला। फिर दिल्ली एनसीआर में पैसापोलो फैडरेशन ऑफ इंडिया की तरफ से 2017 के शुरू में आपका चयन वर्ल्ड पैसापोलो प्रतियोगिता के लिए हुआ, जिसका आयोजन फिनलैंड में हुआ। इससे भी बड़ी बात यह कि भारत की पैसापोलो टीम का कप्तान बनाया गया। ये सिरमौर के लिए आह्लादित करने वाला क्षण है। आपने पूरे हिमाचल का मान बढ़ाया हैं। आप उन बिरले हिमाचली खिलाड़ियों में शामिल हैं, जिन्होंने भारत की टीम का कप्तान बनकर नेतृत्व किया।

वे अपनी सफलता का श्रेय अपने माता-पिता को देती है, जिन्होंने कठिनाइयों के बावजूद आपको खेल के लिए प्रोत्साहित किया। वर्ल्ड पैसापोलो चौपिंयनशिप में आपने न केवल भारतीय टीम का नेतृत्व किया बल्कि इस प्रतियोगिता में बेस्ट स्पोट्सपर्सन का मेडल भी प्राप्त किया।

चिकित्सा क्षेत्र में बढ़ाया नाम

पीजीआई चंडीगढ़ ऑटोलर्यनोलॉजी हैड एंड नेक सर्जरी विभाग में एडिशनल प्रोफेसर डॉ. जयमंती बक्शी ने साबित कर दिया कि परिश्रम और लग्न के आगे कोई भी कठिनाई टिकती नहीं है। डॉ. जयमंती सिरमौर जिला के ही नहीं बल्कि हिमाचल प्रदेश व उत्तरी भारत में इस दूरदराज के क्षेत्रों में मेडिकल कैंपस में भी सक्रिय भाग लेती है। साथ ही पीजीआई चंडीगढ़ में पहाड़ी क्षेत्रों से जाने वाले लोगों के स्वास्थ्य संबंधी कार्यों में हमेशा सहयोग के लिए तत्पर रहती है। सिरमौर की होनहार बेटी जो आज जीवन में कुछ कर गुजरने की लालसा पाले है, बेटियों के लिए ही प्रेरणा नहीं

पद्मश्री डॉ. जगतराम
सिरमौर के पहले पद्मश्री



सिरमौर के लाल ने पीजीआई चंडीगढ़ का निदेशक बनकर प्रदेश का नाम रोशन किया है। इस उपलब्धि से हर हिमाचली गौरवान्वित महसूस हुआ है। सिरमौर जिले राजगढ़ के समीप पबियाना के साथ लगते छोटे से गांव पटाड़िया में 17 अक्तूबर, 1956 को जगत राम का जन्म एक सामान्य परिवार में हुआ। पिता स्व. ध्यानू राम पेशे से किसान थे, जिन्होंने निर्धनता, कठिन परिस्थितियों, परिवार की जिम्मेदारियों के बावूजद जगत राम को कभी भी आगे बढ़ने से नहीं रोका। वे दस भाई- बहनों में दूसरे स्थान पर हैं।

जगत राम की आरम्भिक शिक्षा पबियाना के प्राइमरी स्कूल से हुई। मैट्रिक की परीक्षा राजकीय हाई स्कूल राजगढ़ से प्राप्त की। वर्षा हो, तूफान हो, गर्मी हो, जगत राम ने कांधे पर झोला उठाये रोज अपने गांव से आठ किलोमीटर प्रातः व आठ किलोमीटर शाम रास्ता तय कर शिक्षा हासिल की। उस वक्त उस मार्ग पर एक आध ही सरकारी बस चलती थी। शिक्षा ग्रहण करने व जीवन में कुछ बनने की धुन जगत राम में बचपन से ही थी। अपने संकल्प तथा शिक्षकों के प्रोत्साहन से जगत राम शिक्षा की सीढ़ियां चढ़ता गया।

राजगढ़ स्कूल से दसवीं उपरांत सोलन महाविद्यालय से प्रेप की परीक्षा उपरांत वर्ष 1973 में शिमला स्थित मेडिकल कॉलेज में एमबीबीएस में दालिया लिया। जिसे अब इंदिरा गांधी मेडिकल कॉलेज के नाम से जाना जाता है। एक साधारण परिवार के बालक ने यहां भी मेहनत तथा लग्न को अपने जीवन का हिस्सा बनाया। स्कूल की अपनी मृदुभाषी छवी को इस स्तर पर भी बनाये रखा। 1978 में एमबीबीएस करने के उपरांत पीजीआई चण्डीगढ़ में नेत्र विषय में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में दाखिला लिया। स्नातकोत्तर उपरांत वर्ष 1982 में यही नेत्र विभाग में अपनी सेवायें आरम्भ की। राजगढ़ विद्यालय तथा शिमला मेडिकल कॉलेज में जगत राम के वरिष्ठ रहे डॉ. भूपेन्द्र कुमार भारद्वाज ने जगत राम को एक स्पष्ट वक्ता, मृदुभाषी तथा लग्न का पक्का व्यक्ति बताते हुये कहा कि इस शीर्ष मुकाम को हासिल कर जगत राम ने राजगढ़ विद्यालय, शिमला मेडिकल कॉलेज का गौरव बढ़ाया है। ये सभी के लिये एक गर्व की बात है कि आम परिवार से तथा सरकारी स्कूल का पढ़ा बालक पीजीआई चण्डीगढ़ का निदेशक बना है। नेत्र चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में उनकी उपलब्धि दुनिया भर में श्रेष्ठ आंकी गई हैं। वे दो बार वर्ष 1993-99 व 1988-89 में अमेरिका में विश्व स्वास्थ्य संगठन की फैलौशिप ले चुके हैं। वे 26 वर्ष तक पीजीआई चण्डीगढ़ के नेत्र विभाग के विभागाध्यक्ष व 24 वर्ष तक नेत्र बैंक समिति के संचालक पद पर आसीन हो चुके हैं। वे भारत में अंतर्राष्ट्रीय नेत्र कौंसिल के प्रमुख समन्वयक रहे हैं। बतौर नेत्र चिकित्सक उनकी सेवायें अनुकरणीय रही हैं। उन्हें अपने कार्य में दक्षता के लिये 24 राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुये हैं। वर्ष 2013 में डॉ. जगत राम को अमेरिका के सैनफ्रांसिसको में नेत्र चिकित्सा में मोतियाबिन्द की नई विधि विकसित करने के लिये 'वेस्ट ऑफ द वेस्ट विनर' पुरस्कार से नवाजा जा चुका है। इस पुरस्कार को नेत्र विज्ञान के 'ऑक्सर' की संज्ञा दी जाती है। वे भारतीय तथा अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में तीन सौ से अधिक शोध पत्र लिख चुके हैं।

पबियाना-राजगढ़ सड़क पर रोज 16 किलोमीटर जाकर शिक्षा ग्रहण करने वाला बालक डॉ. जगत राम आज एक कुशल, सर्वश्रेष्ठ नेत्र चिकित्सक व प्रशासक के रूप में जाना जाता है। सिरमौर के इस सपूत ने हर हिमाचली का गौरव व मान बढ़ाया है। उनके जीवन की सफल यात्रा व उपलब्धियों को देखकर यह बात साबित होती है कि सरकारी स्कूल में पढ़ा बच्चा भी किसी से कम नहीं होता।

तभी तो आज क्षेत्रवासी गर्व से बोल रहे हैं, 'हमारा जगत राम पीजीआई का डायरेक्टर बन गया।' केंद्र सरकार ने चिकित्सा क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य के लिए जगत राम को पद्मश्री पुरस्कार से नवाजा है। वे सिरमौर से पहले पदमश्री पुरस्कार विजेता बने हैं।

अपितु बेटों के लिए भी प्रेरणास्रोत है। डॉ. जयमंती का जन्म 19 नवंबर 1969 को सिरमौर जिला के ट्रांसगिरि क्षेत्र की श्रीरेणुका तहसील के भराड़ी गांव में हुआ। हाई स्कूल तक की शिक्षा भराड़ी, पुन्नरधार व बोगधार में हुई। जमा दो की परीक्षा आपने नाहन कॉलेज से उत्तीर्ण की। तदोपरांत पीएमटी की परीक्षा पास कर, आईजीएमसी शिमला से 1988-1994 में प्रथम रहकर एमबीबीएस की परीक्षा उत्तीर्ण की। स्नातकोत्तर पीजीआई चंडीगढ़ से 1994-97, डीएनबी दिल्ली से व एनएनएएमएस दिल्ली से किया।

ऑटोलर्यनोलॉजी में इंटरनेशनल नाम है डॉ. जयमंती का

डॉ. जयमंती 1997 से 2000 तक पीजीआई में सीनियर रेजिडेंट डाक्टर, 2000-2001 तक रिसर्च फैलो, 2001-2010 तक एसिस्टेंट प्रोफेसर, 2010 से एसोसिएट प्रोफेसर और आजकल ऑटोलर्यनोलॉजी हैड एंड नेक सर्जरी विभाग में एडिशनल प्रोफेसर हैं। ऑटोलर्यनोलॉजी में डॉ. जयमंती का इंटरनेशनल स्तर का नाम है। मेडिकल क्षेत्र की प्रसिद्ध 15 संस्थाओं की मेंबर हैं।

हैड एंड नेक के कर चुकी है 500 सफल ऑपरेशन

डॉ. जयमंती 500 मेजर हैड एंड नेक ऑकोलॉजीकल सर्जरी सफलतापूर्वक की है। इसके अलावा 1000 के करीब अन्य सर्जरी की है। यूएसए, कनाडा की शीर्ष मेडिकल रिसर्च संस्थाओं से जुड़ी हुई है। मेडिकल के क्षेत्र में आपको 47 राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार मिले हैं। देश-विदेश में करीब 70 कॉन्फ्रेंस में आपने शिरकत की। 30 वैश्विक स्तर के रिसर्च पेपर प्रकाशित किए, मेडिकल विषय पर 57 के करीब पुस्तकों का स्वंतत्र एवं सह लेखन तथा संपादन किया है।

गांव शामपुर, पत्रालय भागल, शिकोर,
तह. पच्छाद, जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश

अंग्रेज महिला ने बदली भूईरा गांव की तकदीर

◆ बाबू राम चौहान

पहाड़ों में सेब उत्पादन में क्रांति लाने का श्रेय सैम्यूल एवांस स्टोक्स जो बाद में सत्यानंद स्टोक्स के नाम से विख्यात हुए, को जाता है। वर्ष 1916 में स्टोक्स द्वारा कोटगढ़ में रोपे गए पहले सेब के बाग ने हिमाचल के आधे जिलों जिसमें सिरमौर के ऊंचे क्षेत्र भी शामिल हैं, के गांव-गांव में सामाजिक-आर्थिक उत्थान की एक नई गाथा लिखी। गांवों में समृद्धि लाने की ऐसी ही गाथा सिरमौर के भूईरा गांव में एक अंग्रेज महिला लिनट एल्फरे ने लिखी। उसका जीवन एक रोमांसवादी उपन्यास की माफिक है। स्काटलैंड में पढ़ाई करते हुए उसकी भेंट एक कश्मीरी युवक विनय मुशरन से हुई। पढ़ाई उपरांत भारत आकर वे भारतीयता के रंग में ढल गई।। भारतीय परिधान, हिंदी बोलना तथा कश्मीरी पाक कला में सिद्धहस्त हो गई। ससुराल पक्ष में विदेशी बहू आने की जो शंकाएं थीं, वह जल्द ही दूर हो गई।



वर्ष 1991 में लिनट व उसका पति अपने एक रिश्तेदार के पास पहाड़ों में कुछ समय व्यतीत करने के लिए सिरमौर जिले के राजगढ़ के समीप भूईरा गांव आए। प्रकृति के आंचल में बसा यह गांव, फलों के बागानों तथा देवदार, कायल के पेड़ों से घिरा एक बहुत ही मनमोहक स्थल था। यकायक लिनट को स्थान भा गया और उसने पर्वतों में रहकर जीवनयापन करने की सोची।

लिनट व विनय ने एक एकड़ में फैला बाग तथा घर खरीद लिया। उन्होंने इसे बस रहने के लिए ही खरीदा था लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था। कुछ वर्ष वहां बीता कर दोनों ने वहां पैदा होने वाले फलों को उचित भाव व बाजार न मिलने पर गहरी चिंता जताई। बागों में उत्पादित फल यूं ही व्यर्थ हो जाते थे, उसका लिनट को बहुत ही दुख होता था।

लिनट ने बचपन में इंग्लैंड के समरसैट में रहते हुए अपनी मां से फलों, सब्जियों से जैम, जैली तथा अन्य उत्पाद बनाने की कला सीखी थी। उसे इस बात का इल्म था कि 'जैम' का स्वाद कैसा होना चाहिए। उसने घरेलू उपयोग के लिए वृक्षों से गिरे सेबों की जैली बनाने का कार्य तो आरंभ कर दिया था। 74 वर्षीय इस जागरूक महिला ने अपनी मेहनत तथा लगन से भूईरा गांव को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर फलों के उत्पादों से मूल्यवर्द्धक उत्पाद बनाकर एक पहचान दिलवाई है। गौरतलब है कि इसी गांव के श्री के. एल. सहगल ने अपनी आवाज से तथा डॉ. जगमोहन ने बागबानी विशेषज्ञ की ख्याति से प्रदेश का नाम रोशन किया है। लिनट ने अपने फल प्रसंस्करण उद्योग से सिरमौर के इस गांव में विकास, उन्नति की एक नई इबारत लिखी है। शुरू में अपने घर में छोटे तौर पर जैम बनाकर अपने संबंधियों तथा परिचितों को भेजने आरंभ किए। बाद में इसे बढ़ाने की सोची। सरकार से अनेक प्रयत्नों उपरांत प्रसंस्करण का लाइसेंस प्राप्त किया। सरकारी अमले को भी अंदेशा था कि उनका जैम उत्पादन स्थानीय लोगों को रोजगार तथा स्थानीय आर्थिकी में हिस्सेदार कैसे बनेगा। वर्ष 1999 में इस छोटी विधायन इकाई में उत्पादन आरंभ हुआ। आरंभ में किसी ने भी नहीं सोचा था कि यह एक दिन एक बड़ा नाम बन जाएगा। लिनट ने भूईरा के आसपास उत्पादित फलों को खरीदना आरंभ किया। बाद में तो ऐसे किसान जिनके पास थोड़ा सा फल उत्पादन भी होता था वे गांव भूईरा आकर अपना उत्पाद बेचने लगे। इस कार्य के लिए भूईरा गांव की महिलाओं को काम पर रखा। इनकी हिम्मत रंग लाई और आज लिनट के उत्पाद पर लिखा मिलता है 'प्रसन्नचित्त पहाड़ी महिलाओं का उत्पाद'।

वर्ष 1999 में लिनट को अपने उत्पाद को बेचने में सबसे ज्यादा मदद उसकी दोस्त पूर्व राजनयिक बी.के. नेहरू की पत्नी जो हंगरी के मूल निवासी थी, फोरी नेहरू ने की। वे कसौली में रहती थी तथा उसने वहां स्थित गुप्ता स्टोर को लिनट द्वारा तैयार जैम को उस स्टोर पर बिक्री हेतु रखने का आग्रह किया। उत्पाद हाथोंहाथ बिक गए और इनकी मांग बढ़ती गई। इस उद्यम में कार्य करने वाली हर महिला को इस बात की खुशी है कि उनके गांव का

नाम आज जैम उत्पादन से मशहूर हुआ है। फल मौसम के दौरान यहां सौ से अधिक महिलाएं कार्य करती हैं लेकिन शेष दिनों में 19 नियमित कर्मी हैं। क्षेत्र का हर उत्पादक अपने उत्पाद यहां बेचना चाहता है। इस उद्यम में कार्यरत अनेक महिलाएं पांचवीं से अधिक नहीं पढ़ी हैं, के लिए यह उद्यम जीवन रेखा बना है। यह एक श्रमसाध्य कार्य है तथा सभी कार्य हाथों से होते हैं। इनकी इस लगन से आज इसका जायका ही बिलकुल अलग है। सेब, आड़ू, पलम, नाशपाती स्थानीय तौर पर उपलब्ध होते हैं। संतरा, अंगूर तथा नींबू नासिक महाराष्ट्र से आता है जबकि स्ट्रॉबेरी हरियाणा से लाई जाती है। गलगल जो स्थानीय तौर पर बहुतायत में होता है, उसकी खरीद यहीं होती है। गर्मियों में भूईरा की महिलाएं जंगल में उगने वाली रसभरी जिसे स्थानीय बोली में 'हिसलू' कहते हैं, को भी एकत्रित करती हैं। भूईरा की इस सफल कहानी पर शालिनी हर्षवाल ने वृत्तचित्र भी बनाया है। विदेशों में फिल्म समारोहों में इसकी खासी प्रशंसा हुई है तथा इंडोनेशिया में इस वृत्तचित्र को पुरस्कार भी मिला है। लिनट उद्यम में आज 10 टन क्षमता का अभिशीतन केंद्र तथा समीप ही हलोनी पुल में पट्टे पर लिया एक और उद्यम भी है। आज यह उद्यम 70 टन उत्पादन कर रहा है। अब लिनट ने अपने कार्य को अपनी बहू के सुपुर्द कर दिया है। यहां के ये उत्पाद फैव इंडिया द्वारा बेचे जा रहे हैं। हिमाचल प्रदेश के वरिष्ठ साहित्यकार एवं पूर्व आई.एस. अधिकारी श्री निवास जोशी के शब्दों में, "भूईरा, इंग्लैंड में जन्मी लिनट मुशरन ने 20 वर्ष की साधना से विशुद्ध महिला उद्यम की स्थापना कर गांव को ख्याति दिलाई है। आज उसके उद्यम में बन रहे उत्पादन हाथोंहाथ बिक रहे हैं।" एक अंग्रेज महिला जो पेशे से उद्यमी न थी, उसने एक छोटे से गांव भूईरा की तकदीर बदल दी। स्टोक्स की तरह लिनट भी ग्रामीणों के लिए भाग्यविधाता बनी हैं।



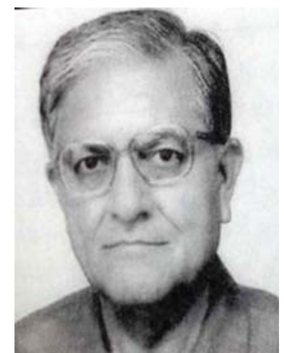
000

राजगढ़ घाटी में आड़ू की महक

राजगढ़ को हिमाचल प्रदेश के आड़ू उत्पादन की घाटी के नाम से जाना जाता है। यहां प्रतिवर्ष लगभग चार से पांच करोड़ रुपये का आड़ू का उत्पादन होता है। इस क्षेत्र में राजगढ़, पझौता घाटी आड़ू उत्पादन के लिए विख्यात है।

राजगढ़ क्षेत्र के विख्यात बागबानी वैज्ञानिक जो निदेशक बागबानी भी रहे, के अनुसार इस क्षेत्र में आड़ू उत्पादन का श्रेय प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार को जाता है। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम बागबानी विभाग द्वारा वर्ष 1955 में प्रायोगिक बाग लगाया था। वर्ष 1955 से 1970 के दशक के मध्य यहां आड़ू उत्पादन की कोई भी क्रांति नज़र नहीं आई। यहां के किसान अन्य फलों तथा सब्जियों के उत्पादन में भी लगे रहे। 1970 के उपरांत राजगढ़ घाटी में आड़ू की क्रांति नज़र आने लगी। पूर्व बागबानी निदेशक श्री हरबंस सिंह ने आड़ू को क्षेत्र में लोकप्रिय बनाने में अहम योगदान दिया। उन्होंने फागू में अपना बागान भी लगाया।

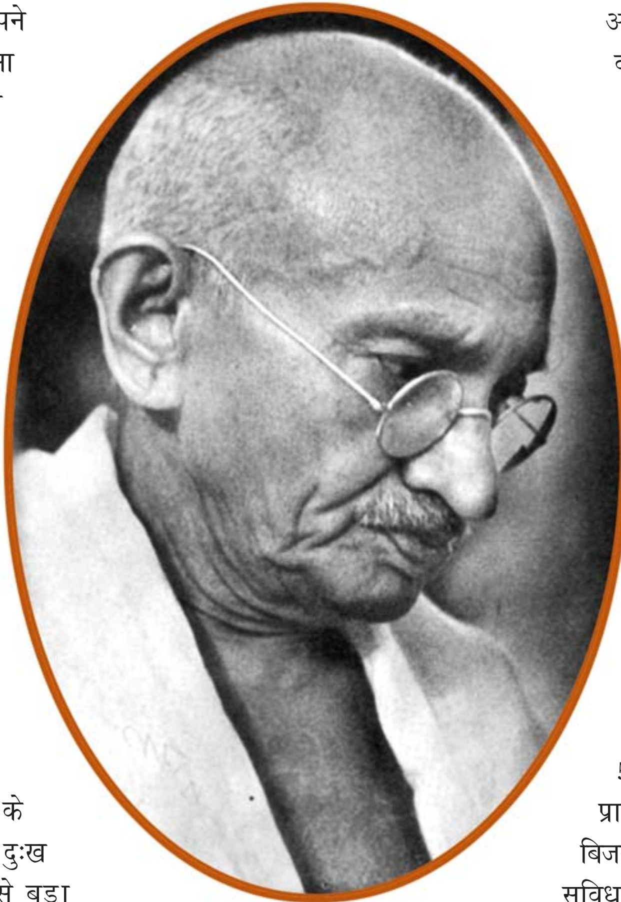
बागबानी के प्रणेता- जगमोहन



आपका जन्म राजगढ़ उपमण्डल के गांव भूईरा में 11 नवम्बर, 1945 को हुआ। हाई स्कूल की शिक्षा राजकीय उच्च विद्यालय राजगढ़ से की। तदोपरान्त पंजाब कृषि विश्वविद्यालय से कृषि व पशुपालन में बीएससी, पंजाब विश्वविद्यालय तथा चण्डीगढ़ से बागबानी में एमएससी तथा वर्ष 1977 में कृषि विश्वविद्यालय लुधियाणा से बागबानी विषय में पीएचडी की। 1968 में शिमला के समीप बागबानी के क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र में अनुसंधान सहायक के रूप में अपनी सेवाएं आरम्भ की। 1976 में बागबानी विभाग के यूएचएस केन्द्र में तैनात हुए। 1984 में प्रोफेसर बने तथा 1985 में फल विज्ञान विभाग के अध्यक्ष बने। 1998 से 2001 तक बागबानी निदेशक रहे। सिरमौर का यह सपूत प्रदेश के दोनों कृषि तथा बागबानी विश्वविद्यालय का कुलपति रहने का सौभाग्य प्राप्त है। डॉ. जगमोहन ने हिमाचल निर्माता से प्रेरणा लेकर बागबानी तथा कृषि कार्यों को आगे बढ़ाकर राज्य की ग्रामीण आर्थिकी को सुदृढ़ करने का बीड़ा उठाया। आपको बागबानी विश्वविद्यालय में डॉ. परमार की चित्र दीर्घा बनाने का भी श्रेय जाता है। आज भी कृषि बागबानी के माध्यम से सिरमौर का बेटा, पहाड़ी मानुष में जीवन में बदलाव लाने के प्रति तत्पर नज़र आता है।

सेवानिवृत्त लोक संपर्क अधिकारी, गांव व डाकघर राजगढ़, जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश

बद्रीपुर और अंबोआ में गांधी प्रार्थना मंदिर



राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने जीवनपर्यंत देशवासियों को अपने आदर्शों से प्रेरित किया। अहिंसा के पुजारी के आदर्श आज भी दुनिया को एक नई राह दिखाने का कार्य कर रहे हैं। स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व कर गांधी जी के मार्गदर्शन में देश 15 अगस्त, 1947 को आजाद हुआ। इस वर्ष संपूर्ण विश्व ने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जयंती आयोजित कर उनके आदर्शों, विचारों का स्मरण कर रहा है।

महात्मा गांधी का हिमाचल से भी गहरा नाता रहा है। वे वर्ष 1921 से 1946 के मध्य शिमला 10 बार आए। उन्होंने अपनी इन यात्राओं के दौरान पहाड़ों के निवासियों के दुःख दर्द को जाना। उनका सबसे बड़ा योगदान पहाड़ों के निवासियों में देशभक्ति की भावना का सूत्रपात रहा। इन्हीं प्रयासों से हिमाचल 15 अप्रैल, 1948 को अस्तित्व में आया। हालांकि गांधी जी को सिरमौर जनपद की यात्रा करने का सौभाग्य नहीं मिला लेकिन यहां के निवासियों ने आजादी के उपरांत गांधी जी के योगदान को चिरस्थायी बनाए रखने के लिए 30 जनवरी को सिरमौर जिले की तहसील पांवटा साहिब के तहत अंबोआ गांव में 'गांधी मेला' आयोजित करने का निर्णय लिया। इस मेले में स्थानीय लोग बड़ी संख्या में भाग लेते हैं। इस मेले ने ग्रामीण मेले की शक्ल इख्तियार की।

सिरमौर जिले में गांधी के आदर्शों को आगे बढ़ाने के लिए हरिजन सेवक समाज ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसने समाज से अस्पृश्यता को दूर करने में अहम कार्य किया। हिमाचल प्रदेश में वर्ष 1954 में अखिल भारतीय हरिजन सेवा संघ की स्थापना की गई थी। इसका मुख्यालय सोलन जिले के सलोगड़ा में स्थापित किया गया।

वर्ष 1957-58 में इस संघ ने पांवटा साहिब में गांधी जी के नाम पर एक छात्रावास की स्थापना की। इसमें अनुसूचित जाति तथा सामान्य वर्ग के बच्चों के लिए आवासीय सुविधा का प्रावधान किया गया। गरीब बच्चों को पुस्तकों के क्रय करने के लिए धन भी उपलब्ध करवाया जाता था। बच्चों को 10 रुपये व 5 रुपये छात्रवृत्ति देने का भी प्रावधान था। छात्रावास में भोजन, बिजली, समाचार पत्र, रेडियो तथा अन्य सुविधाएं निःशुल्क दी जाती थीं। गरीब लोगों को गृह निर्माण के लिए आर्थिक सहायता भी प्रदान की जाती थी। संघ ने पांवटा तहसील में दो गांधी प्रार्थना मंदिर खोले। एक बद्रीपुर तथा दूसरा अंबोआ में खोला गया। संघ के प्रयासों से ग्राम निहालगढ़ तथा पांवटा साहिब में दो लघु औद्योगिक केंद्रों की भी स्थापना की गई।

बद्रीपुर में सिलाई केंद्र की स्थापना कर महिलाओं का सशक्तीकरण सुनिश्चित करने के प्रयास किए गए। मोगिनंद, शिलाई, राजगढ़ तथा चाडना में बालवाड़ी केंद्र खोले गए।

संघ तथा सरकार के प्रयासों से पांवटा में 40 हजार रुपये की लागत से बंगाला कॉलोनी का निर्माण किया गया। इसी संस्था के प्रयासों से 16 नए प्राथमिक स्कूलों का निर्माण किया गया। इसके अलावा संस्था ने जीप योग्य सड़कों का निर्माण भी किया।

आलेख

वन संरक्षण की परंपरागत प्रथा

◆ डॉ. वी.के. शर्मा



प्रकृति द्वारा मानव को प्रदत्त वन संपदा को सुरक्षित रखने के लिए हिमाचल प्रदेश में स्थानीय लोग वन को देवता मानते हैं और वनों से पत्तियों और बालन (जलाने के लिए लकड़ी) कम ही लाया करते हैं। कुछ स्थानों पर वन में जाने के लिए देवाज्ञा चाहिए। कुछ व्यक्ति आज भी नंगे पांव जंगल में जाते हैं।

इसी प्रकार सिरमौर के भलोना गांव में एक बड़ी अच्छी और अनुकरणीय प्रथा है। शीत ऋतु में स्थानीय निवासियों को पशुओं को चारा के लिए पत्ती और जलाने के लिए लकड़ी की अत्यावश्यकता होती है, देवता की आज्ञा लेकर वन से पत्ती व बालन एकत्रित करते हैं।

हमारे प्रदेश में, विशेषकर, सिरमौर में दो प्रकार के पेड़ पाए जाते हैं। एक तो पत्ते झड़ने वाले तथा दूसरे सदाबहार। पत्ते झड़ने वाले पेड़ों तथा अन्य वनस्पति से पतझड़ ऋतु में पत्ते झड़ते हैं तथा वसंत ऋतु में नए पत्ते आकार में बड़े जाते हैं। ग्रीष्म ऋतु में फलों का आकार बढ़ जाता है तथा उनके अंदर के बीज परिपक्व हो जाते हैं। पतझड़ के शुरू में ही ये फल स्वतः ही पेड़ से पृथक होकर धरती पर गिर जाते हैं या वायु और जल के वेग से अन्यत्र चले जाते हैं। पतझड़ में पेड़ों और वन संपदा से पत्तियां स्वतः गिरनी शुरू होती हैं और वह पेड़ के नीचे या आसपास ही गिर जाती हैं। शीत ऋतु में वनस्पति पत्तेविहीन हो जाती है तथा सुप्तावस्था में रहते हैं। इस समय ठंड अधिक होती है तथा बर्फ पड़ती है। वसंत ऋतु आने पर वन संपदा में जीवन का पुनः संचार होता है और वह पहले जैसे चक्र में आ जाता है। सदाबहार पेड़ों व वनस्पति के पत्ते स्वतः नहीं गिरते, इसलिए इन्हें सदाबहार की संज्ञा दी जाती है। फलों और बीजों को परिपक्व करने में पेड़ की ऊर्जा लगती है ओर इसे वहन करने के लिए और नई ऊर्जा प्राप्त करने के लिए पेड़ सुप्तावस्था में जाते हैं।

इस चक्र को हमारे पूर्वजों ने पूरी तरह सोच-समझ वन संपदा को सुरक्षित रखने के लिए इस परंपरा का प्रारंभ किया। मैंने स्वयं ही इस दृश्य को यहां देखा है। शुभ मुहूर्त में पंडित जी को लेकर सभी गांव वाले एक स्थान पर एकत्रित होते हैं। पंडित जी स्वयं पूजा करते हैं तथा वहां यज्ञ किया जाता है। यह कार्य विधिवत होता है। पूजा-अर्चना के उपरांत वन में प्रवेश करने के लिए प्रार्थना की जाती है और फिर यज्ञ की समाप्ति के बाद लोग खुशी से आनंदित होकर स्थानीय नृत्य करते हैं, इसे प्रायः सिरमौरी नाटी कहा जाता है। यह कार्य विधिवत होता है। पुरुष और महिलाओं तथा बच्चों का मिल कर नृत्य होता है तथा कुछ सामूहिक गायन होता है। तदोपरांत भंडारे का आयोजन होता है। इस पर सभी आमंत्रित होते हैं। इस प्रकार देवाज्ञा लेकर वन में प्रवेश किया जाता है। पेड़ों की नीचे गिरी पत्तियों और गिरी हुई या सूखी शाखाओं को ही स्थानीय निवासी एकत्रित करते हैं। हरे पेड़ के ऊपर से कुछ नहीं लेते।

इस प्रथा से वन संपदा को न्यूनतम हानि होती है परंतु इसे वह स्वयं ही पूर्ण करने में सक्षम हैं। वन संपदा का ऐसा उदाहरण कहीं-कहीं पर ही देखा जा सकता है। आज के घटते वनों को देख कर इस परंपरा को निभाना हमारा कर्तव्य होना चाहिए।

फ्लैट नं. 4, ब्लॉक 54, हाउसिंग बोर्ड कालोनी, संजौली,
शिमला-171 006, मो. 0 98161 36653



दोराहे पर सिरमौरी भाषा

हिमाचल में लगभग 30 स्पष्ट बोलियां पहाड़ों में खोजी गई हैं। इसका अभिप्राय यह है कि जितनी रियासतें थीं, उतनी ही बोलियां थीं। इसके आधार पर स्थानीय निवासियों द्वारा प्रयुक्त बोलियों को जौनसारी, सिरमौरी, बघाटी, क्योंठली, सतलुज वर्ग (कोची/सराजी), कुल्लवी, मंडयाली, चंबयाली, और भद्रवाही नाम दिए गए हैं। यह वर्गीकरण प्रसिद्ध भाषाविद् जी.ए. ग्रियर्सन द्वारा अपनी पुस्तक 'भारत का भाषिक सर्वेक्षण' में दिया गया है। उन्होंने अपने शोध में कहलूरी (बिलासपुरी), कांगड़ी को पंजाबी भाषा से संबद्ध कर दिया था। बाद में शोध कार्यों तथा डॉ. सिद्धेश्वर वर्मा और आर.सी. निगम जैसे भाषाशास्त्रियों ने स्पष्ट रूप से कांगड़ी को पहाड़ी भाषा की श्रेणी में स्थान दिया। कांगड़ा की भाषा चंबा, मंडी, सुकेत और जम्मू की भाषा के निकट है। इसके अतिरिक्त स्थानीय तौर पर इसे पहाड़ी कहा जाता है और टांकरी में लिखा जाता है, न कि पंजाबी की गुरमुखी में। डॉ. ग्रियर्सन के वर्गीकरण का आधार छोटी-छोटी रियासतों की बोलियां थीं। बाद में शोध कार्यों से स्पष्ट हुआ कि विभिन्न बोलियों की शब्दावली, उच्चारण तथा व्याकरणीय व्यवस्था में समानता है। जिला सिरमौर की भाषा सिरमौरी कहलाती है। गिरी नदी सिरमौर को दो भागों गिरी वार व गिरी पार में विभक्त करती है। इन दोनों भागों के निवासी अपनी विशेषताओं में पर्याप्त भिन्न हैं। इन दो भागों में से गिरी नदी के इस ओर क्षेत्र तीन पर्वत शृंखलाओं में बंटा है जिसमें से एक थारटी कहलाता है। यह क्षेत्र मैदानों के निकट होने के कारण यहां भाषा पर हिंदी का प्रभाव है। गिरी पार का क्षेत्र जिसमें पच्छाद, रेणुका जो टौंस नदी तक फैला है तथा क्यारदादून का छोटा-सा हिस्सा है। यहां बोली जाने वाली भाषा को गिरी-पारी कहते हैं। यह विशुद्ध रूप से पहाड़ी बोली है। इस भाषा में संस्कृत शब्दों का सम्मिश्रण भी मिलता है।

उत्तर में चूड़धार की पर्वतशृंखला सिरमौर जिले को शिमला के चौपाल जिले से अलग करती है। प्राचीन काल में इस क्षेत्र को विश-शॉ कहा जाता था। यहां बोली जाने वाली भाषा गिरी पारी से अत्यधिक मिलती है और जी.ए. ग्रियर्सन द्वारा इसे विशबाई नाम दिया गया था। दूसरे शब्दों में गिरी पारी का उपयुक्त नाम विशावाई है। नाहन, पांवटा, क्यारदादून क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा पर हरियाणवी, पंजाब तथा उत्तराखंड भाषा का प्रभाव अधिक देखने को मिलता है। यूनेस्को ने सिरमौरी बोली को लुप्त होती भाषा में रखा है। इसके साथ प्रदेश की बघाटी, पंगवाली व टांकरी भी है। हिमाचल प्रदेश की चार बोलियां बघाटी, हिंडूरी, पंगवाली और सिरमौरी लुप्तप्राय श्रेणी में शामिल हो गई हैं। इसी के साथ देशभर में 40 से ज्यादा भाषा या बोलियों का अस्तित्व खत्म होने वाला है क्योंकि कुछ हजार लोग ही इन्हें बोलते हैं। जनगणना निदेशालय की एक रिपोर्ट के मुताबिक, देश में 22 अनुसूचित भाषाएं और 100 गैर अधिसूचित भाषाएं हैं जिन्हें ज्यादा संख्या में लोग- एक लाख या ज्यादा बोलते हैं।

गृह मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार 42 भाषाएं हैं जिन्हें बोलने वाले 10000 से भी कम लोग हैं। हिमाचल की उक्त 4 बोलियों के अलावा जिन भाषाओं या बोलियों को लुप्तप्राय माना जा रहा है, उनमें अंडमान निकोबार द्वीप समूह से 11 (ग्रेट अंडमानीज, जारवा, लामोंग्से, लूरो, मोउट, ओंगे, पू, सानयेनो, सेंटिलेज, शोमपेन और तटकाहनयिलांग), मणिपुर से सात (एमोल, अका, कोइरन, लमगांगा, लांगरोंग, पुरूम और तराओ) शामिल हैं।

तारीखे-ए-सिरमौर इतिहास का आधार

मूल पुस्तक तारीखें सिरमौर नाहन रियासत के राज परिवार के सदस्य कंवर रणजोर सिंह द्वारा वर्ष 1912 में फारसी लिपि में लिखी गई। इस पुस्तक में प्राचीन काल से लेकर (जब जैसलमेर के भट्टी राजघराने का सदस्य राजा बासू सिरमौर में आकर शासन करने लगा) 1911 तक की ऐतिहासिक, राजनैतिक तथा सामाजिक घटनाओं का उल्लेख मिलता है। इस पुस्तक के प्रकाशन में कंवर रणजोर सिंह ने कर्नल टॉड द्वारा लिखित पुस्तक 'राजस्थान का इतिहास' का अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त रमेश चंद्र दत्त की पुस्तक 'सिविलाइजेशनल इन एनशियेंट इंडिया', हरबिलास शारदा की पुस्तक 'हिंदू सुपिरियोरिटी' राजा फतह सिंह द्वारा सिरमौर के हालात बारे लिखवाई गई डायरी, जो राजा शमशेर प्रकाश के काल में तैयार हुआ था, जगन्नाथ मंदिर के महंत से प्राप्त पुराने दस्तावेजों, के अतिरिक्त एलफिन्स्टन का हिंद का इतिहास, हंटर का हिंद का इतिहास, बैंटनी की मोहम्मडनिज्म से संदर्भ लेकर इस पुस्तक को प्रकाश में लाया गया। इस पुस्तक को सात भागों में विभक्त किया गया है। प्रथम भाग में रियासत का नामकरण, क्षेत्रफल, राजधानी, शासकों का उल्लेख प्रकाशित है। द्वितीय भाग में सिरमौर व राजस्थान का संबंध व जैसलमेर रियासत की घटनाओं का उल्लेख मिलता है।

तृतीय भाग में मुस्लिम शासकों का शासन काल, ब्रिटिश शासनकाल, प्राकृतिक विभाजन, पर्वतों, नदियों, झीलों, आर्थिक व राजस्व विभाजन, जलवायु, फसलों, वनस्पति, खनिज, धर्म, संस्कृति व विकास का उल्लेख मिलता है। अन्य भागों में शासकों द्वारा रियासत के लिए किए गए कार्यों का वर्णन रुचिपूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. तीर्थराज श्रीरेणुका जी, मेला राम शर्मा, रेणुका पब्लिशर्ज, 1989
2. Gazetteer of India Himachal Pradesh Sirmour by Thakur Sen Negi, State Editor, Distt. Gazetteers HP 1969
3. Polyandry in the Himalayas, Y.S. Parmar, Vikas Publishing House Pvt. Ltd, Dehli, 1975
4. हिमाचल में संस्कृति के रंग, गोपाल दिलैक, शकुंतलम् पैराडाइस, ज्योतिका अपार्टमेंट्स, दिलैक निवास, शिमला-171009, 2016
5. Simla Past and Present by Edward J. Buck Bombay : The Times Press, 1925
6. Gazetteer of the Sirmour State 1934
7. हिमाचल के लोक गीत, निदेशक सूचना एवं जन संपर्क, शिमला-4, मुद्रक श्री गोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस दिल्ली, मार्च 1960
8. हिमाचल निर्माता राष्ट्र गौरव डॉ. यशवंत सिंह परमार, आचार्य चंद्रमणि वशिष्ठ 'पहाड़ी मृणाल' प्रकाशक संजीव अग्रवाल गाजियाबादी, 40 रुपये, 2006
9. हिमाचल प्रदेश विधान सभा में डॉ. यशवंत सिंह परमार, प्रकाशक हिमाचल प्रदेश विधान सभा, 100 रुपये, वर्ष 2019
10. Himachal Nature Peaceful Paradise, Dr. S.S. Shashi ANISSD Publication, 1971, 25 रुपये
11. A curve in the Hills Communication and Development Vepa Rao, Indian Institute of Advanced Study, Shimla, 1997
12. हिमाचल प्रदेश के स्वतंत्रता सेनानी, भाषा एवं संस्कृति विभाग, नियंत्रक मुद्रण एवं लेखन विकास, शिमला, वर्ष 2010 (संशोधित)
13. The Punjab A Hundred Year Ago, V. Jacquemont (1831) & A. Soltykott (1842), Nirmal Publishers & Distributors 1986, Price 150 रुपये
14. Folk Musical Instruments of Himachal Pradesh by Surat Thakur National Book Trust India 2014, 125 रुपये
15. The Himala Mountains By James Baillie Fraser, Neeraj Publication House, Delhi,1820
16. सिरमौर रियासत का इतिहास, कंवसर रणजोर सिंह, हिमाचल अकादमी, 2007
17. Folk Tales of Himachal Pradesh, K.A. Seetha Lakshmi
18. Journey From Caunpoor to The Boorendo Pass in the Himalayas Mountain by Captain Alexender Gerard's



जैविक खेती का प्रशिक्षण प्राप्त करते जिले के प्रगतिशील किसान



जिले में फूलों की बहार से संपन्न होते किसान

पंजीकरण संख्या : 845/1957 अक्तूबर–नवंबर–दिसंबर, 2019 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2018–20



सिरमौर जनपद : सीढ़ीनुमा खेतों में झलकता परिश्रम का प्रतिबिंब। छाया : मेला राम शर्मा

हरबंस सिंह ब्रसकोन, निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा नीरज कुमार, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 जनवरी, 2020 अंक : 10

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

किसी भी चीज की पूजा तब तक नहीं होनी चाहिए जब तक तर्क को यह विश्वास न हो जाए कि वह पूजनीय है। - **वाल्तेयर**

इस अंक में

लेख

कहानी

कविता

लघुकथा

ग़ज़ल

बच्चों का कोना/कविताएं

समीक्षा

अपनी बात

सर्वप्रथम हिमप्रस्थ के पाठकों को नव वर्ष की हार्दिक बधाई। नया साल आप सभी के जीवन में सुख समृद्धि एवं ढेरों खुशियां लेकर आए, यही हमारी कामना है। नए साल का आगमन हिमाचल वासियों के जीवन में विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि वर्ष का प्रथम माह हमें 25 जनवरी को पूर्ण राज्यत्व तथा 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस के रूप में एक साथ दो पर्व मनाने का अवसर प्रदान करता है। 25 जनवरी 1971 के ऐतिहासिक दिन पूर्ण राज्यत्व का दर्जा मिलने के उपरान्त हिमाचल भारतीय गणराज्य के 18वें राज्य के रूप में शामिल हुआ। देश की आजादी के महज आठ माह बाद ही 15 अप्रैल, 1948 को पहाड़ी रियासतों के विलय के उपरान्त हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया जिसे केंद्र शासित चीफ कमिश्नर प्रोविन्स का दर्जा प्रदान किया गया। लेकिन राज्य में लोकप्रिय सरकार का गठन न होने के कारण प्रदेशवासियों ने स्वशासन के सपने को साकार करने के लिए प्रदेशव्यापी संघर्ष छेड़ दिया। इस आंदोलन में डॉ. यशवंत सिंह परमार प्रदेश में एक ऐसे शीर्ष नेता के रूप में उभर कर सामने आए जिन्होंने अपने दूरदर्शी एवं कुशल नेतृत्व से प्रदेश में लोकप्रिय सरकार के गठन के लिए संवैधानिक तरीके से प्रदेशवासियों के संघर्ष को नई दिशा प्रदान की। केन्द्र सरकार द्वारा गठित 'राज्य पुनर्गठन आयोग' की हिमाचल को पंजाब में विलय की सिफारिश से हिमाचल के अस्तित्व पर एक बार फिर खतरा मंडराने लगा। डॉ. परमार की अगुवाई में प्रदेश सरकार ने इस खतरे का धैर्य के साथ सामना करते हुए सभी राजनीतिक दलों से मिलकर केन्द्र सरकार के समक्ष अपने पक्ष की प्रभावशाली तरीके से पैरवी की। राज्य में लोकप्रिय सरकार की बहाली के लिए पुनः लम्बे संघर्ष के बाद जुलाई, 1963 में हिमाचल प्रदेश में चुनी हुई सरकार का मार्ग प्रशस्त हुआ। प्रथम नवम्बर, 1966 को पंजाब के पहाड़ी क्षेत्रों को हिमाचल में विलय करने के केन्द्र सरकार के फैसले के साथ ही विशाल हिमाचल का सपना साकार हुआ और प्रदेश को पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ। पूर्ण राज्यत्व का दर्जा मिलने के बाद प्रदेश ने विकास के क्षेत्र में अनेक मील पत्थर स्थापित करते हुए देशभर में पहाड़ी राज्यों के आदर्श के रूप में पहचान बनाई है। वर्तमान मुख्यमंत्री जय राम ठाकुर के कुशल नेतृत्व में प्रदेश सरकार ने 27 दिसंबर 2019 को अपने सफल एवं उपलब्धियों भरे दो वर्ष का कार्यकाल पूर्ण किया है। वर्तमान प्रदेश सरकार ने राज्य में आर्थिक संसाधन जुटाने की दिशा में नवीन पहल करते हुए धर्मशाला में आयोजित अपनी तरह के पहले 'ग्लोबल निवेशक सम्मेलन' में 703 समझौता ज्ञापनों के माध्यम से 96 हजार करोड़ रुपये निवेश का मार्ग प्रशस्त किया। सरकार और जनता के बीच सीधा संपर्क और सार्थक संवाद स्थापित करने के उद्देश्य से आरंभ की गई 'जनमंच', 'मुख्यमंत्री सेवा संकल्प हेल्पलाईन-1100' और 'हिमाचल माईजीओवी' जैसी सेवाएं सुशासन में जन भागीदारी का सशक्त माध्यम बनकर उभरीं हैं। समाज में महिलाओं के प्रति बढ़ती आपराधिक घटनाओं पर अंकुश लगाने के लिए सरकार ने 'गुड़िया हेल्पलाईन-1515' तथा प्रदेश में खनन, वन तथा नशा माफिया को रोकने के विरुद्ध कारगर प्रयास करते हुए 'होशियार सिंह हेल्पलाइन' आरम्भ की है। प्रदेश में कार्यान्वित की जा रही 'हिमाचल गृहिणी सुविधा योजना' के तहत 2.62 लाख कनैक्शन बांटे जा चुके हैं। प्रदेशवासियों को स्वास्थ्य देखभाल सुविधाएं प्रदान करने के लिए केन्द्र सरकार की महत्त्वाकांक्षी 'आयुष्मान भारत-प्रधान मंत्री जन आरोग्य योजना' में कवर न होने वाले सभी परिवारों के लिए हिमकेयर योजना कार्यान्वित की जा रही है। इससे लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं सर्वसुलभ बनाकर स्वस्थ हिमाचल के सपने को साकार करने में सहायता मिलेगी। प्रदेश सरकार के इन प्रयासों का ही परिणाम है कि हिमाचल प्रदेश आज विकास के हर क्षेत्र में निरंतर अग्रसर है। नववर्ष की मंगल कामनाओं के साथ यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है।

संपादक

सतत विकास में अग्रणी राज्य बनने की ओर अग्रसर
हिमाचल प्रदेश



पूर्ण राज्यत्व दिवस के अवसर पर
मुख्यमंत्री श्री जय राम ठाकुर का आलेख

पच्चीस जनवरी हिमाचलवासियों के लिए एक यादगार एवं ऐतिहासिक दिवस है। वर्ष 1971 में, इसी दिन हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्य का दर्जा मिला और यह पहाड़ी प्रदेश भारतीय गणतंत्र का 18वां राज्य बना। हिमाचल प्रदेश के पूर्ण राज्य बनने से जहां प्रदेशवासियों को अपनी विकासात्मक आकांक्षाओं की पूर्ति का सुनहरा अवसर मिला, वहीं प्रदेश के विकास को नई ऊंचाइयों पर ले जाने के रास्ते भी खुल गए। 50वें पूर्ण राज्यत्व दिवस के पावन अवसर पर, मैं समस्त प्रदेशवासियों को बधाई देता हूँ और सबके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ। प्रदेश ने पिछले पांच दशकों में विकास के विभिन्न क्षेत्रों में आशातीत प्रगति की है। प्रदेश के विकास में योगदान के लिए मैं समस्त प्रदेश वासियों का आभार व्यक्त करता हूँ। सभी प्रदेश वासियों के सक्रिय सहयोग के परिणामस्वरूप ही आज प्रदेश विकास के अनेक क्षेत्रों में बड़े राज्यों की बराबरी पर आ खड़ा हुआ है।

यह अवसर प्रदेश के उन महान सपूतों और प्रबुद्ध व्यक्तियों के योगदान को स्मरण करने का भी है, जिन्होंने इस प्रदेश को अस्तित्व में लाने और इसे विशेष पहचान दिलवाने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। मैं इस अवसर पर हिमाचल निर्माता एवं प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार का विशेष रूप से स्मरण करता हूँ तथा उन्हें अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ। डॉ. परमार ने प्रदेश के विकास की ठोस नींव रखी थी। मैं अन्य उन सभी महानुभावों के योगदान की भी सराहना करता हूँ, जिन्होंने इस प्रदेश के विकास में किसी न किसी रूप में अपनी भूमिका निभाई है।

हिमाचल प्रदेश ने 15 अप्रैल, 1948 को अस्तित्व में आने के बाद अपनी विकास यात्रा लगभग शून्य से आरम्भ की थी। उस समय अधोसंरचनात्मक सुविधाएं नाममात्र थीं, सड़कों की लम्बाई केवल 288 किलोमीटर थी, साक्षरता दर मात्र 7.1 प्रतिशत थी, 331 शैक्षणिक संस्थान थे तथा स्वास्थ्य संस्थान भी मात्र 88 थे। प्रदेश के केवल छः गांवों में ही बिजली की सुविधा उपलब्ध थी तथा प्रति व्यक्ति आय केवल 240 रुपये थी। वर्ष 1971 में जब प्रदेश को पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ, उस समय भी विकास सुविधाएं कुछ जगहों तक ही सीमित थीं। प्रदेश में सड़कों की लम्बाई 7740 कि.मी. थी। साक्षरता दर 31.3 प्रतिशत थी। स्वास्थ्य संस्थानों की संख्या 482 तथा शिक्षण संस्थान 4963 थे। प्रदेश के 2944 गांवों में बिजली उपलब्ध थी और प्रति व्यक्ति आय मात्र 651 रुपये थी।

आज प्रदेश में सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति देखी जा सकती है। सड़कों की लम्बाई 37207 किलोमीटर हो गई है तथा 3226 पंचायतों में से 3128 पंचायतें सड़क सुविधा से जुड़ चुकी हैं। शिक्षण संस्थानों की संख्या 15553 हो गई है तथा साक्षरता दर 82.80 प्रतिशत तक पहुंच गई है। 4320 स्वास्थ्य

संस्थानों का बड़ा नेटवर्क दुर्गम क्षेत्रों तक सभी को बेहतर सुविधाएं प्रदान कर रहा है। प्रदेश के सभी गांवों में बिजली की सुविधा उपलब्ध है। यहां तक कि यह प्रदेश आज सरप्लस बिजली राज्य बन चुका है। प्रति व्यक्ति आय बढ़कर 1,76,968 रुपये हो गई है।

प्रदेश की इस विकास यात्रा में, वर्तमान सरकार के सेवाकाल के गत दो वर्ष विशेष महत्त्व रखते हैं। दो वर्ष की इस अल्प अवधि में प्रदेश ने विकास की नई बुलंदियां छुईं हैं और आमजन की आशाओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति करते हुए प्रदेश का समग्र विकास हुआ है। इस अवधि में प्रदेश को सुशासन, स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि-बागबानी सहित सतत् विकास लक्ष्यों में बेहतर प्रदर्शन के लिए राष्ट्र-स्तरीय पुरस्कार प्राप्त हुए हैं, जो हम सब प्रदेशवासियों के लिए गर्व की बात है।

वर्तमान प्रदेश सरकार ने 27 दिसम्बर, 2017 को अपना सेवाकाल आरम्भ करते ही प्रदेश के विकास की स्पष्ट रूपरेखा तय कर दी थी। प्रदेश में विकास की गति को बढ़ाने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत अपनाए गए ताकि निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप योजनाएं बनाकर उन पर समयबद्ध तरीके से कार्य किया जा सके। प्रदेश में विकास नीतियों का निर्धारण संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित सतत् विकास लक्ष्यों के अनुरूप किया गया है। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए एक 'विज़न डॉक्यूमेंट' जारी किया है। यह गर्व की बात है कि हिमाचल प्रदेश ने लगातार पिछले दो वर्षों में सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में देशभर में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया है। प्रदेश के इन प्रयासों की नीति आयोग द्वारा भी सराहना की गई है।

देश के लोकप्रिय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा भी प्रदेश में आरम्भ सर्वस्पर्शी योजनाओं और नवाचार प्रयासों की सराहना की गई है। प्रदेश सरकार के दो वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर प्रधानमंत्री ने अपने संदेश में कहा कि अपार संभावनाओं से भरा हिमाचल शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यटन व आधारभूत ढांचे समेत विभिन्न क्षेत्रों में तेजी से आगे बढ़ रहा है और आज भारत की विकास यात्रा को एक नई दिशा, एक नया आयाम देने को तैयार है। विकास की इस नई धारा से प्रदेश में रोज़गार के नए अवसर बन रहे हैं, साथ ही राज्य की आर्थिक स्थिति को मजबूती मिल रही है। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जैसे युगपुरुष का स्नेह और मार्गदर्शन प्राप्त हो रहा है। उनके यशस्वी नेतृत्व में केन्द्र सरकार द्वारा अनेक महत्त्वाकांक्षी कल्याणकारी योजनाएं आरम्भ की गई हैं, जिनसे देश का समस्त जनमानस लाभान्वित हुआ है। केन्द्र से प्रदेश को मिल रही उदार सहायता और आशीर्वाद के लिए प्रदेश सरकार और समस्त प्रदेशवासी प्रधानमंत्री तथा उनके मंत्रिमण्डल के सहयोगियों का आभार व्यक्त करते हैं।

प्रदेश सरकार द्वारा जन कल्याण के लिए आरम्भ नई योजनाओं के सुखद परिणाम सामने आए हैं। इन योजनाओं में जनमंच, मुख्यमंत्री सेवा संकल्प हेल्पलाइन, हिमाचल गृहिणी सुविधा योजना, हिमकेयर व सहारा जैसी योजनाएं प्रमुख हैं। हमारा प्रदेश 'ओवरऑल परफॉरमेंस' में देश में दूसरे स्थान पर पहुंच गया है, जबकि शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र में प्रदेश 'स्टेट ऑफ द स्टेट्स' अवार्ड में प्रथम स्थान पर रहा है।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन : मंत्रिमण्डल की पहली बैठक में ही वृद्धजनों के प्रति आदर-सत्कार का भाव रखते हुए, बिना आय सीमा के सामाजिक सुरक्षा पेंशन पाने की आयु सीमा को 80 वर्ष से घटाकर 70 वर्ष किया गया, जिससे उस समय 1.30 लाख वृद्धजन लाभान्वित हुए। इस समय 2,63,798 वृद्धजनों को 1500 रुपये प्रति माह की दर से सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्राप्त हो रही है।

आज प्रदेश में विकास के सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। सड़कों की लम्बाई 37207 किलोमीटर हो गई है, 3226 पंचायतों में से 3128 पंचायतें सड़क सुविधा से जुड़ चुकी हैं। शिक्षण संस्थानों की संख्या 15548 हो गई है तथा साक्षरता दर 82.80 प्रतिशत तक पहुंच गई है। 4320 स्वास्थ्य संस्थानों का बड़ा नेटवर्क दुर्गम क्षेत्रों तक सभी लोगों को बेहतर सुविधाएं प्रदान कर रहा है। प्रदेश के सभी गांवों में बिजली की सुविधा उपलब्ध है। यहां तक कि यह प्रदेश आज सरप्लस बिजली राज्य बन चुका है। प्रति व्यक्ति आय भी बढ़कर 1,76,968 रुपये हो गई है।

प्रदेश के विभिन्न भागों में जनमंच के 181 कार्यक्रम आयोजित किए जा चुके हैं, जिनमें 44,800 शिकायतें और मांगें जनता ने रखी हैं। इन शिकायतों में से 90 प्रतिशत से अधिक शिकायतों का मौके पर ही निवारण किया गया है

जनमंच : प्रदेश की जनता की समस्याओं के समाधान के लिए आरम्भ 'जनमंच' का प्रदेशवासी पूरा लाभ उठा रहे हैं। 3 जून, 2018 को आयोजित प्रथम जनमंच से अब तक प्रदेश के विभिन्न भागों में जनमंच के 181 कार्यक्रम आयोजित किए जा चुके हैं, जिनमें 44,800 शिकायतें और मांगें जनता द्वारा रखी गईं। इन शिकायतों में से 90 प्रतिशत से अधिक का निवारण किया जा चुका है तथा शेष शिकायतों का समाधान सम्बन्धित विभागों द्वारा किया जा रहा है।

मुख्यमंत्री सेवा संकल्प हेल्पलाइन : घर बैठे ही लोगों की समस्याओं का शीघ्र समाधान करने के लिए 16 सितम्बर, 2019 से मुख्यमंत्री सेवा संकल्प हेल्पलाइन-1100 आरम्भ की गई है। अब प्रदेश के किसी भी कोने में बैठा व्यक्ति 1100 नम्बर डायल कर अपनी शिकायत दर्ज करवा सकता है। यह हेल्पलाइन चार माह में ही बहुत लोकप्रिय हो गई है। 15 जनवरी, 2020 तक इस हेल्पलाइन पर 1,99,516 कॉल्स आईं, जिनमें 48,644 शिकायतें थीं। 40,951 शिकायतों का समाधान किया जा चुका है।

हिमाचल गृहिणी सुविधा योजना : महिलाओं को चूल्हे के धुएं से छुटकारा दिलाने के लिए हिमाचल गृहिणी सुविधा योजना आरम्भ की गई है। योजना को इतनी सफलता मिली है कि आज प्रदेश में कोई भी ऐसा परिवार नहीं है, जिसके पास गैस कनेक्शन न हो। योजना के तहत अब तक 2.76 लाख से भी अधिक नि:शुल्क गैस कनेक्शन पात्र महिलाओं को दिए जा चुके हैं। हिमाचल चूल्हे के धुएं से मुक्ति पाने वाला देश का पहला राज्य बन गया है।

हिमकेयर योजना : प्रदेश में आयुष्मान भारत योजना में कवर न होने वाले सभी परिवारों के लिए 'हिमकेयर' योजना चलाई जा रही है। इस योजना के तहत 5 लाख रुपये प्रति परिवार तक के नि:शुल्क उपचार की सुविधा प्रदान की जा रही है। योजना में 5.50 लाख परिवारों ने अपना पंजीकरण करवाया है। पहली जनवरी, 2020 से इस योजना के नए कार्ड बनाए जा रहे हैं। अब तक 58 हजार से अधिक लोग इस योजना का लाभ उठा चुके हैं, जिस पर 54.75 करोड़ रुपये व्यय हुए। अधरंग, कैंसर तथा मस्कुलर डिस्ट्रॉफी जैसी गम्भीर बीमारियों से पीड़ित रोगियों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के लिए 'सहारा' योजना आरम्भ की गई है, जिसके तहत 2000 रुपये प्रतिमाह प्रदान किए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त मुख्यमंत्री चिकित्सा सहायता कोष से 272 रोगियों को 5.15 करोड़ रुपये की सहायता प्रदान की गई है।

ग्लोबल इन्वेस्टर्ज मीट : प्रदेश में विश्व स्तर के उद्यमियों को हिमाचल में निवेश हेतु आकर्षित करने के लिए पहली बार ग्लोबल इन्वेस्टर्ज मीट का आयोजन किया गया। धर्मशाला में आयोजित इस सम्मेलन का शुभारम्भ प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा किया गया। इस आयोजन को सफल बनाने के लिए हमने देश-विदेश में जाकर रोड-शो किए। इन प्रयासों का ही नतीजा था कि 96,720.88 करोड़ रुपये निवेश के 703 एम.ओ.यू. हस्ताक्षरित किए गए, जिससे रोज़गार के लाखों अवसर पैदा होंगे। एम.ओ.यू. साइन करने का क्रम अभी भी जारी है। इन प्रस्तावों में से 13,656 करोड़ रुपये की 240 परियोजनाओं की 'ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी' 27 दिसम्बर, 2019 को आयोजित की गई। शीघ्र ही एक और 'ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी' आयोजित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। **मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना :** फसलों को जंगली जानवरों से बचाने के लिए मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना लागू की गई है, जिसके तहत सोलर बाड़बंदी के साथ कांटेदार तार व चेन लिंक बाड़बंदी के लिए 50 से 85 प्रतिशत तक की सब्सिडी प्रदान की जा रही है। किसानों को प्राकृतिक खेती अपनाने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। अब तक लगभग 40 हजार किसान प्राकृतिक खेती अपना चुके हैं तथा 1650 हैक्टेयर भूमि में प्राकृतिक खेती की जा रही है।

पर्यटन विकास : राज्य में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए नई पर्यटन नीति बनाई गई है। ग्रामीण पर्यटन से लेकर धार्मिक, साहसिक, धरोहर, ईको, फिल्म तथा वैलनेस पर्यटन को बढ़ावा

दिया जा रहा है। प्रदेश को सिने जगत की बड़ी हस्तियों की पहली पसंद बनाने के उद्देश्य से नई फिल्म नीति बनाई गई है। नई राहें–नई मंजिलें योजना के तहत चांशल घाटी को स्कीइंग, जंजैहली को ईको–टूरिज्म, बीड़–बिलिंग को पैराग्लाइडिंग तथा लारजी व पौंग डैम को वाटर स्पोर्ट्स के लिए विकसित किया जा रहा है। तत्तापानी में भी इस प्रकार की गतिविधियां आरम्भ की जा रही हैं।

नशा निवारण अभियान: नशे की रोकथाम के लिए एक राज्यव्यापी अभियान चलाया गया है। नशे के खिलाफ अपनी मुहिम में हमने पड़ोसी राज्यों को भी जोड़ा है, ताकि इस दुष्प्रवृत्ति पर सांझे प्रयासों द्वारा रोक लगाई जा सके। साथ ही विभिन्न एजेंसियों के बीच समन्वय स्थापित करने के लिए नशा निवारण बोर्ड का गठन भी किया गया है।

महिलाओं तथा असहाय लोगों की सुरक्षा व सशक्तिकरण के लिए हमारी सरकार ने शक्ति बटन ऐप व गुड़िया हेल्पलाईन–1515 आरम्भ की है। वन, खनन व ड्रग माफिया पर अंकुश लगाने के लिए होशियार सिंह हेल्पलाईन–1090 चलाई जा रही है।

प्रदेश सरकार ने सभी क्षेत्रों के विकास तथा सभी वर्गों के उत्थान के प्रति सम–दृष्टिकोण अपनाया है। विकास योजनाओं में जन प्रतिनिधियों के सुझावों को प्राथमिकता दी जा रही है। आगामी वित्त वर्ष के लिए 7900 करोड़ रुपये की वार्षिक योजना प्रस्तावित की गई है जो इस वित्त वर्ष की तुलना में 800 करोड़ रुपये अधिक है। विकास में जन–भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए हाल ही में 'मेरी सरकार' (my GOV) नाम से एक पोर्टल आरम्भ किया गया है। पोर्टल के माध्यम से लोग सरकार को अपने विचार व सुझाव दे सकेंगे। इस फीडबैक का उपयोग प्रदेश के हित में किया जाएगा। प्रदेश सरकार द्वारा हिम प्रगति पोर्टल के माध्यम से विभिन्न विकासात्मक परियोजनाओं की ऑनलाइन मॉनिटरिंग की जा रही है। प्रदेश सरकार के इस नवीन प्रयास को राष्ट्रीय स्तर पर सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

प्रदेश सरकार के सुशासन व नवाचार प्रचासों के परिणामस्वरूप प्रदेश के विकास को गति मिली है और यह प्रदेश एक समृद्ध एवं स्वावलम्बी हिमाचल बनने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। आम हिमाचलवासी का हित एवं कल्याण सरकार की प्राथमिकता है। पूर्ण राज्यत्व दिवस के इस पावन अवसर पर हम सब हिमाचलवासी संकल्प लें कि इस प्रदेश की विकास–यात्रा में अपनी सक्रिय भागीदारी निभाएंगे और हिमाचल को एक जीवंत प्रदेश बनाने के संकल्प को पूरा करने में अपना योगदान देंगे।

000



वर्तमान प्रदेश सरकार ने सभी क्षेत्रों के समान विकास तथा सभी वर्गों के उत्थान के प्रति सम–दृष्टिकोण अपनाया है। यह प्रदेश प्रगति के पथ पर निरन्तर अग्रसर रहे, इस दृष्टि से जन प्रतिनिधियों के सुझावों पर प्राथमिकताएं तय की जा रही हैं। आगामी वित्त वर्ष के लिए 7900 करोड़ रुपये की वार्षिक योजना प्रस्तावित की गई है जोकि इस वित्त वर्ष की तुलना में 800 करोड़ रुपये अधिक है। विकास में जन भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए हाल ही में 'माई जीओवी' नाम से एक पोर्टल आरम्भ किया गया है। इस पोर्टल के माध्यम से लोग सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों के प्रति अपनी फीडबैक भी दे सकेंगे तथा सकारात्मक सुझावों को प्रदेश के हित में उपयोग किया जा सकेगा।



आलेख

स्वतंत्रता संग्राम में हिमाचली रण-बांकुरों का योगदान

◆ निशा सहगल

हिमाचल प्रदेश वीर सपूतों की भूमि रही है। आज भी हिमाचल से भारतीय सीमाओं की रक्षा के लिए और देश पर मर-मिटने के लिए हजारों लोग सेना में भर्ती होते हैं। अंग्रेजी हुकूमत से आजादी को पाने के लिए हजारों देशवासियों ने अपना-अपना योगदान दिया। हालांकि उस दौर में हिमाचल प्रदेश का आधिकारिक तौर पर अस्तित्व नहीं था, पर यहां के क्रांतिकारी नेताओं, लेखकों, कवियों इत्यादि ने उस दौर में अपनी अलग ही छाप छोड़ी थी। हिमाचल से ब्रिटिश हुकूमत की दमनकारी नीतियों के खिलाफ यहां के लोगों ने आंदोलन का जो बिगुल बजाया, उसकी गूंज पूरे देश में सुनाई दी। जब-जब स्वतंत्रता संग्राम पर बात की जाती है तो पहाड़ के जांबाजों का जिक्र विशेष तौर पर किया जाता है। अक्सर हमारी पाठ्य पुस्तकों में उन महान विभूतियों के बारे में पढ़ाया जाता है, जिन्होंने क्रांति का चोला ओढ़ कर अंग्रेजों की नाक में दम किया। मगर हमें किसी एक व्यक्ति या मुट्ठी भर लोगों की वजह से आजादी नहीं मिली। उस दौर में हर घर से अंग्रेजों को प्रतिरोध की आवाज सुनाई दी थी। आइए, हम जानें कि हमारे हिमाचल प्रदेश के किन जगहों से ऐसी महान विभूतियां हुईं, जिन्होंने खुद आम जन के मन में आजादी की अलख जगाई।

कांगड़ा

भारत को आजादी दिलाने में जिला कांगड़ा के स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान कम नहीं है। भारत को आजादी न मिल जाने तक पहाड़ी गांधी कहे जाने वाले कांशी राम ने काले कपड़े पहनने की शपथ ली थी। पहाड़ी गांधी की देश की आजादी में अहम भूमिका रही थी। सरोजनी नायडू द्वारा पहाड़ी बुलबूल और इंडिया की बुलबुल के खिताब से नवाजे गए कांशी राम ने अपने पहाड़ी गीतों और कविताओं के माध्यम से पहाड़ी राज्य हिमाचल और देश को आजादी के लिए जगाने में सराहनीय प्रयास किया। 1930 और 1942 के बीच उन्हें नौ बार गिरफ्तार किया गया। वहीं, वजीर राम सिंह पठानिया का योगदान भी स्वतंत्रता संग्राम में अतुलनीय है। कैप्टन दल बहादुर थापा के योगदान को भी भुलाया नहीं जा सकता। वहीं, आजाद हिंद फौज के सिपाही और संगीतकार कैप्टन राम सिंह ठाकुर ने भारत के राष्ट्रगान जन-गण-मन की धुन तैयार की है। सुभाष चंद्र बोस ने जापान में मुलाकात के दौरान उन्हें वायलिन दिया, जिसे वह हमेशा अपने पास रखते थे। उन्होंने कदम-कदम बढ़ाए जा-खुशी के गीत गाए जा जैसे सैकड़ों ओजस्वी गीतों की धुनों की रचना की। 15 अगस्त 1947 को राम सिंह के नेतृत्व में आईएनए के आर्केस्ट्रा ने लाल किले पर शुभ-सुख चैन की बरखा बरसे गीत की धुन बजाई। कौमी तराना नाम से यह गीत आजाद हिंद फौज का राष्ट्रीय गीत बना, इस गीत की ही धुन को बाद में जन-गण-मन की धुन के रूप में प्रयोग किया गया। इसके अलावा जिला के विशनदत्त, बुद्धि सिंह, बलदेव सिंह, बरवाल सिंह, चरण सिंह, गुलाब सिंह, होशियार सिंह, जैसी राम, कश्मीर सिंह, लाल सिंह, रतन सिंह, रतन चंद, होशियार सिंह, सुखीराम, युद्धवीर सिंह कटोच, सुशील चंद रत्न आदि ने स्वतंत्रता संग्राम में बढ़-चढ़ कर भाग लिया और मां भारती को बेड़ियों से मुक्त करने के लिए अपना योगदान दिया।

ऊना

प्रदेश के मैदानी जिले ऊना के वासी लक्ष्मण दास भगत सिंह के चाचा सरदार अजीत सिंह के संपर्क में आने के बाद लाला लाजपत राय से मिले। उनकी पत्नी दुर्गाबाई दोनों पुत्र सत्य भूषण एवं सत्यमित्र ने भी स्वाधीनता संग्राम में अपना योगदान दिया। महिलाओं से लेकर बच्चों तक को ऊना में इन्होंने आजादी के लिए जागृत किया। विदेशी कपड़ों की होली जलाने के दौरान बाबा लक्ष्मण दास को 1930 में उनके 14 वर्षीय बेटे के साथ अंग्रेजी हकूमत ने बेड़ियों में जकड़ दिया और कोठरी में बन्द करके आटे की चक्की चलाने की सजा दी। ज़िला ऊना से अन्य स्वाधीनता सेनानियों में अनंत राम (गगरेट) जगदीश सिंह (मालहत) ठाकुर दास (धर्मपुर) धनी राम (दुलैहड़) लक्ष्मण दास (ओयल) ठाकुर वरयाम सिंह (दौलतपुर) वतन सिंह, ख़ुशी राम, गोपी राम, जमना देवी, लक्ष्मण दास आदि ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

सिरमौर

सिरमौर की पहाड़ी चोटी से निकले बझेतु खड्ड के दोनों ओर बसी वादी को पझौता के नाम से जाना जाता है, क्योंकि सबसे पहले इसी क्षेत्र से राजा के खिलाफ विरोध की चिंगारी उठी थी। इसलिए इसे 'पझौता आंदोलन' का नाम दिया गया था। वैद्य सूरत सिंह पझौता आंदोलन के महानायक थे। 'पझौता आंदोलन' भारत

छोड़ो आंदोलन का एक हिस्सा रहा था। ब्रिटिश अफसर ने अंग्रेजी फौज को इस आंदोलन को कुचलने के लिए राजगढ़ भेजा था, जहां उन्होंने सरोट नामक स्थान पर मोर्चा बांध कर निहत्थे लोगों पर गोलियों की बरसात की थी। राजा के सैनिकों ने कलीराम शावगी और वैद्य सूरत सिंह का का तिमंजिला मकान भी डाइनामइट से उड़ा दिया। सिरमौर कमनाराम शहीद हो गए व दर्जन भर स्वतंत्रता सेनानी घायल हो गए। आजादी के बाद भी वैद्य सूरत राम लगभग एक वर्ष बाद जेल से छूटे थे।

सोलन

सोलन जिला के 68 स्वतंत्रता सेनानियों ने आजादी की लड़ाई में अपना अहम योगदान दिया है। धर्मपुर के भगवान सिंह स्वाधीनता आंदोलन के दौरान कारावास गए थे। बथालंग अर्की के भजनू राम ने धामी गोलीकांड में भाग लिया था और इन्हें छह माह की कारावास भी हुई थी। नालागढ़ के मंगल राम को ब्रिटिश सरकार द्वारा विद्रोह करने के आरोप में आसान व चटगांव में तीन मास की कारावास की सजा भी दी गई थी। नालागढ़ के मनफल सिंह को भी ब्रिटिश सरकार ने नौ अगस्त, 1942 को विद्रोह करने के आरोप में एक वर्ष के लिए लाहौर सेंट्रल जेल भेज दिया था। मनसा राम भी आजाद हिंद फौज के सदस्य रहे तथा विद्रोह के आरोप में कारावास की सजा काट चुके हैं। नालागढ़ के मिलखी राम, कंडाघाट के रति राम, सलोगड़ा के रामदास, देलगी के रामलाल, बखालग के रेवा शंकर, मानपुरा नालागढ़ के रोडू राम, टपरिया के लक्ष्मण सिंह, नालागढ़ के लेखराज, बथालंग के देवीराम, शालाघाट के देवीराम, नालागढ़ के दौलत राम, पीपलू घाट के धनीराम, अर्की से नरोत्तम, नारायण, निक्कु राम, पदम सिंह, प्रभु राम ने भी आजादी की लड़ाई में अपनी अहम भूमिका अदा की थी। इसी प्रकार सोलन के प्रेम चंद, अर्की के बद्री सिंह, कंडाघाट के बिशन दत्त, बूटा सिंह, नालागढ़ के भगतराम, कराणा के भगत राम, अर्की के तुलसी राम, डूमैहर के दयाराम, कश्लोग के दयाराम गांधी, अर्की के दिवाकर गुप्ता, कसौली के जयंती प्रसाद ने आजादी की लड़ाई में भाग लिया था। कंडाघाट के जीत राम, कुमारहट्टी के झनका राम, पट्टा महलोग के ठाकुर दास, अर्की के गौरी शंकर, कसौली के चंदू लाल, नालागढ़ के घानन सिंह, अर्की के चिंतामणि, नालागढ़ के कली राम, अर्की के केशव राम ने देश को गुलामी की बेड़ियों से आजाद करवाने अपना अमूल्य योगदान दिया

बिलासपुर

जिला बिलासपुर तात्कालिक कोट कहलूर रियासत से 332 मतवालों ने स्वतंत्रता संग्राम में विभिन मोर्चो पर हिस्सा लिया। आजादी की लड़ाई से हिमाचल का जब भी जिक्र आता है स्वर्गीय दौलत राम सांख्यान का नाम बड़े अदब से लिया जाता है। बिलासपुर में प्रजामंडल का गठन करके उन्होंने सीधी टक्कर ब्रिटिश हुकूमत से ले ली थी। अंग्रेज सरकार ने उनकी संपत्ति कुर्क करके उन्हें जेल में डालने से लेकर रियासत से तड़ीपार तक किया था। इसी जिले से स्वर्गीय नरोत्तम दत्त शास्त्री ने सुकेत सत्याग्रह एवं प्रजामंडल आन्दोलनों में बढ़ चढ़ कर भाग लिया। धर्मवीर सिंह इस रियासत से अकेले आल इंडिया सतत पीपल कॉन्फ्रेंस में भाग लेने ग्वालियर गए थे। निष्कासन की गाज इन पर भी गिरी थी। इनके अलावा आजाद हिन्द फौज के बहुत से सिपाही बिलासपुर से थे, जिन्होंने नेताजी के साथ काम किया।

हमीरपुर

महान स्वतंत्रता सेनानी किरपा राम सहित जिला हमीरपुर के आठ महानायकों ने देश की आजादी के लिए पसीना बहाया है। आजाद हिंद फौज का हिस्सा रहे लंबलू के समीपवर्ती डुगली डबरेड़ा गांव के किरपा राम ने नेताजी सुभाष चंद्र बोस के साथ मिलकर देश की आजादी के लिए अंग्रेजों से लोहा लिया था। आजाद हिंद फौज के दिलेर जवानों में शुमार किरपा राम को इसी बहादुरी के बूते भारतीय सेना में शामिल किया गया था। हालांकि 13 सितंबर, 1920 को जन्मे किरपा राम ने महज 33 साल की उम्र में 14 मई, 1952 को प्राण त्याग दिए थे। इसके अलावा हमीरपुर जिला के बृजलाल, दुनीचंद, रंगीला राम, संतराम, हरि चंद, लाल सिंह तथा रामलाल ने स्वतंत्रता संग्राम में अपना अहम रोल निभाया था। बृज लाल तथा दुनी चंद लंबे समय तक नेताजी की आजाद हिंद फौज में सक्रिय रहे थे। हरि चंद ने एक दशक तक आजादी के लिए अपना घर-वार छोड़ दिया था। लाल चंद तथा रामलाल ने आजाद हिंद फौज के अलावा और भी कई स्वतंत्रता आंदोलनों में अहम भूमिका निभाई थी।

मंडी

मंडी से 50 वीरों ने आजादी के दिन के लिए संघर्ष किया। कृष्णनंद स्वामी, पंडित गौरी प्रसाद, पूर्णा नन्द, हिरदा राम जैसे गांधीवादियों के साथ मंडी की रानी खैरागढ़ी (उनके बेटे जोगिंदर सेन के नाम पर जोगिंदर नगर का नाम रखा गया है) का नाम बड़े अदब से लिया जाता है। इस साहसी राजकुमारी ने ब्रिटिश राज के खिलाफ बिगुल फूंका था, साथ ही क्रांतिकारियों को धन भी मुहैया करवाया था। तात्कालिक सुकेत वर्तमान सुंदरनगर से भी 12 सेनानी आंदोलन का हिस्सा रहे।

कुल्लू

देव भूमि कुल्लू भी इस रण से अछूती नहीं रही। कुल्लू के लगघाटी के रोपड़ी गांव से संबंध रखने वाले नवल ठाकुर भी देश के उन स्वतंत्रता सेनानियों में आते हैं, जिन्होंने अपने कई साल देश की खातिर जेल में काटे। नवल ठाकुर आजादी के आंदोलन में स्कूल से भाग कर हिस्सा लिया करते थे। आजादी के दौरान कुल्लू में संघ के आदेश पर सभी लोग ढालपुर में इकट्ठा हुए थे। उस दौरान नवल ठाकुर भी यहां पर आए, लेकिन फिरंगियों ने अचानक

गोलियां बरसानी शुरू कर दी। नवल ठाकुर एक दम से कूड़ेदान में छिप गए, लेकिन लगवैली के करीब सात युवकों को गोलियां लग गईं। पहला आंदोलन 1857 में जब शुरू तो कुल्लू के क्रांति वीर प्रताप सिंह ने भी इस आंदोलन में हिस्सा लिया। प्रताप सिंह और उनके साले वीर सिंह ने कुल्लू व लाहुल में आजादी की लड़ाई लड़ने के लिए वीरों की एक फौज तैयार कर आजादी का संघर्ष तेज किया, लेकिन फिरंगियों ने उन्हें गिरफ्तार कर देशद्रोह का मामला दर्ज कर तीन अगस्त 1857 को फांसी पर लटका दिया। 1920 में जब देश में असहयोग आंदोलन चलाने का ऐलान हुआ तो निरमंड के गोविंद राम, सरसेई के नाथू राम ने भाग लेकर हजारों लोगों को इसमें शामिल किया। 15 अगस्त 1947 को आजादी का कुल्लू में सबसे पहले तिरंगा सेवानिवृत्त तहसीलदार किशन सिंह ने ढालपुर में फहराया था।

शिमला

बहुत सी छोटी रियासतों में बंटा आज का शिमला आजादी की लड़ाई का गढ़ था। धामी गोली काण्ड को भला कौन नहीं जानता। कामरेड अमीचंद जैसे सेनानी शिमला से ही हुए। 1937 में धामी प्रजामंडल की स्थापना, बेगार प्रथा को बंद करने और कर में कमी के लिए धामी के मैदान में लोग जुटे और वहां के राणा के समक्ष अपनी मांगे रखीं। इन्हीं मांगों के लिए 1939 में 1500 लोगों का समूह भागमल सौठा के नेतृत्व में राणा के महलों की तरफ जलूस की शक्ल में चल पड़ा। 16 जुलाई 1939 को घनाहट्टी के पास भागमल सौठा को गिरफ्तार कर लिया गया। जनता उग्र हो गयी और राणा की तरफ दौड़ी। पुलिस लाठी चार्ज करती रही पर विद्रोही नहीं रुके। राणा ने गोली चलाने का आर्डर दे दिया जिसमें दो व्यक्ति उमा चन्द तथा दुर्गा दास शहीद हो गए और बहुत से लोग घायल हुए। हिमाचल प्रदेश की वादियों में गोली चलने की यह पहली घटना थी जिसकी गूंज दिल्ली तक गयी।

ऐसा नहीं है कि यही लोग प्रदेश से जंगे आजादी का हिस्सा रहे। सैंकड़ों ऐसे भी मतवाले रहे होंगे जिनके नाम बेशक सरकारी रिकॉर्ड में नहीं होंगे पर उन्होंने भी मां भारती को गुलामी की बेड़ियों से आजाद कराने के लिए अपना अमूल्य योगदान दिया होगा, जिसकी वजह से यह देश आजादी का सूरज देख पाया था। ऐसे असंख्य गुमनाम सेनानियों को भी हम नमन करते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के उस दौर में सार्वजनिक, नैतिक और भावनात्मक रूप से दिया गया हर योगदान करोड़ों जन्मों के पुण्य प्रताप से भी बढ़कर है। आज चाहे ये महान हस्तियां हमारे बीच नहीं हैं पर उनके बलिदान तथा स्वार्थ से ऊपर उठकर देश के लिए मर-मिटने वाले जज्बे को हम कभी भुला नहीं सकते।

डी 1209 डबुआ कालोनी,
फरीदाबाद, हरियाणा-121001, मो. 0 98713 46063

कविता



यूं आए नव वर्ष !

आत्मा रंजन

जैसे उगती कोमल किरणें कली कोई मुस्काती सी
भर फव्वारे बच्ची कोई फूलों को नहलाती सी
नन्हें पर फैलाए पंछी नापें ज्यों नभ का उत्कर्ष !
यूं आए नव वर्ष !

पेड़ों की सूनी शाखों पर कोंपल ज्यों अंखुए खोले
शुभप्रभात कहती कोयल कानों में मिश्री घोले
माथे पर पलकों पर कांपे ज्यों अधरों का स्पर्श !
यूं आए नववर्ष !

दीया दिवाली का ज्यों या बच्चों का ईदी पाना
नन्हीं पलकों पर झलके ज्यों सांता क्लॉज का आना
कर्मवती की राखी पर ज्यों हुमायूं का हर्ष !
यूं आए नववर्ष !

यंत्र आंकड़ों में उलझा सा जीवन न हो बोझिल
विज्ञापन से बनते रिश्ते फिर हो पाएं स्नेहिल
'लाभ हानि' की जगह हो 'अच्छा बुरा' ही पुनः विमर्श!
यूं आए नववर्ष !

नाकामी और ऊब निराशा कल की बातें हों विसारें
विश्लेषण कर कल का आने वाले पल को संवारें
दामन में भर भर - कर लाएं बल, उत्साह, संघर्ष !
यूं आए नववर्ष !

स्वस्तिका भवन, ग्राउंड फ्लोर, न्यू टुटू,
शिमला-171 001, मो. 0 94184 50763



12 जनवरी (युवा दिवस) पर विशेष

जनजागरण के ऋत्विक स्वामी विवेकानंद

डॉ. रामसिंह यादव (जादौन)

प्रतिभा जिसकी धरोहर होती है, आदर्श जिसके अनुगामी होते हैं, ज्ञान जिसका सहोदर होता है, विवेक और संयम जिसकी पूजा करते हैं, वह विनयशील व्यक्तित्व सब कुछ होकर भी बहुत बड़ा महान संत होता है। भारत के युग पुरुष स्वामी विवेकानंद इसी रूप में अभिव्यक्त हुए। उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व समस्त विश्व के लिए अनुकरणीय बन गया। स्वामी विवेकानंद में वह सभी गुण समाहित थे जो उन्हें महान से महानतम बनाते गये, जो उन्हें नरेन्द्र से स्वामी विवेकानंद के रूप में अभिनन्दित कर सके।

स्वामी विवेकानंद का वास्तविक नाम नरेन्द्रदत्त था। 12 जनवरी सन् 1863 को उनका जन्म कलकत्ता के सभ्य क्षत्रिय (राजपूत) परिवार में हुआ था। उनके पितामह बहुत अधिक धनाढ्य व्यक्ति थे, जो सांसारिक वस्तुओं से मोह त्याग कर 25 वर्ष की आयु मे ही संन्यासी हो गये थे। नरेन्द्रनाथ के पिता विश्वनाथ दत्त कलकत्ता के प्रसिद्ध वकील थे। इस व्यवसाय में उन्हें सुबह से शाम तक अत्यधिक व्यस्त रहना पड़ता था। उनकी माताजी भक्तिमय जीवन जीने वाली उच्च चरित्र, उदार, सुशील, कर्तव्यनिष्ठ और वीरत्वपूर्ण संस्कारों की सजीव प्रतिमा थी। इस पारिवारिक वातावरण का बालक नरेन्द्रनाथ के मन और मस्तिष्क पर प्रभाव बने रहना स्वाभाविक था।

मन और शरीर से नरेन्द्रनाथ पूर्णरूपेण स्वस्थ थे। शक्ति से ओत-प्रोत इस तरुण ने प्रारंभ में शरीर निर्माण की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया। इसी क्रम में वह घुड़सवारी, कुश्ती, मुक्केबाजी और तैरने में पूर्ण दक्षता हासिल की। कविताओं से उन्हें प्रारंभ से ही लगाव था। शास्त्रीय संगीत का अध्ययन उन्होंने बहुत ही मन लगाकर किया। विद्यार्थी के रूप में नरेन्द्रनाथ कॉलेज और अपने गुरुओं की प्रतिष्ठा बढ़ाने मे अग्रणीय थे। फलस्वरूप सफल वक्ता के साथ साथ कालेज की विभिन्न गतिविधियों मे वह सम्मिलित रहते थे। अपने हिन्दू छात्र साथियों के समान ही यूरोप के उदार विवेकशील चिंतकों के विचार का अध्ययन करने की प्रेरणा उन्हें छात्र जीवन से ही मिल गई थी। उन्होंने जान स्टुअर्टमिल फ्रांसिसी क्रांति के दार्शनिकों, कान्ट ओर हीगल की रचनाओं का अध्ययन किया। हाबर्ट स्पेन्सर से तो उन्होंने पत्र व्यवहार करके अपने संबंधों को व्यक्तिक आधार पर सहेज लिया था। 'नरेन्द्रनाथ दार्शनिक हर्बट स्पेन्सर ओर जान स्टूअर्ट मिल के प्रेमी थे। वे शैले के सर्वात्ववाद ओर बर्डस्वर्थ की दार्शनिकता के प्रेमी एवं हीगल के वास्तु निष्ठात्मक आदर्शवाद पर अनुरक्त थे।' फ्रांसिसी राज्य क्रांति का प्रभाव, उस समय साहित्य के माध्यम से भारत मे जोरों से फैल रहा था, नरेन्द्रनाथ भी उसके स्वतंत्रता समानता ओर

भातृत्व के सिद्धांत त्रय में बड़े उत्साह से विश्वास करते थे।

प्राच्य और पाश्चात्य के सेतु

स्वामी विवेकानंद का अंतःकरण धर्म भाव से परिपूर्ण था। प्रतिदिन सोते समय आंखें बंद करते ही उन्हें अपूर्व ज्योति बिन्दु दिखाई देता था और वह ज्योति बिन्दु कमशः विविध वर्णो में विस्तृत होते हुए उनके संपूर्ण तन-मन में छा जाता था। उनमें अनेक अतीन्द्रय अनुभूतियां अद्भुत होतीं, वे सहज ही में किसी भी बात को स्वीकार नहीं करते थे, यह उनके स्वभाव के प्रतिकूल था। उनके मन में भूमा चिरन्तन सुख एवं ईश्वर संबंधी तर्क-वितर्क उठाते रहते थे तथा इनकी खोज में उनका मन व्याकुल हो उठता था मन की व्याकुलता से प्रेरित हो, वे विभिन्न धर्म प्रचारकों के पास गये, परन्तु समाधान न मिला। इसी बीच दैवी संयोग से उनकी भेंट परमहंस रामकृष्ण से हुई। उन्होंने पूछा 'आपने ईश्वर को देखा है ?' परमहंस रामकृष्णजी ने कहा 'हां, जैसे मैं तुम्हें देख रहा हूँ, तुमसे बातचीत कर रहा हूँ, बल्कि इससे भी अधिक स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। किन्तु उन्हें चाहता कौन है? लोग अपने सगे संबंधियों के शोक में घड़ों आंसू बहाते हैं, धन दौलत के लिये रोते हैं परन्तु बताओ ईश्वर दर्शन के लिये कोन रोता है ? यदि कोई रो कर उन्हें पुकारे तो उसे अवश्य ही दर्शन देंगे।' परमहंस रामकृष्ण के ये शब्द विवेकानंद के अंतःकरण को छू गये। गुरु ने शिष्य को और शिष्य ने गुरु को पहचाना, माना एक को दूसरे की प्रतीक्षा थी। उनका यह मिलन मानो समुद्र से नदी का, स्वर्ग से मार्त्यलोक का एक विश्व से भारत का मिलन था। रामकृष्ण परमहंस के उद्गार थे 'यही तो वह ज्योतिर्मण्डल का ऋषि है।' इस प्रकार नरेन्द्रनाथ को विचारों ओर कार्यो के लिए एक नया क्षेत्र मिला, एक युग प्रतिभा से उनका परिचय हुआ, परिचय ने शिष्य को गुरु के श्रीचरणों में समर्पित कर दिया। (नवंबर 1881 में नरेन्द्रनाथ दत्त की भेंट रामकृष्ण परमहंस से हुई थी) सांसारिक दुःख-कष्टों के दाह ने नरेन्द्र को विश्वप्रेमी विवेकानंद के रूप में रूपान्तरित कर दिया। उनके मन में नैसर्गिक वैराग्य पूर्णतः बैठ गया था। वे ध्यान, भजन में निमग्न हो गये। अपने पिता विश्वनाथ दत्त द्वारा निश्चित किये गये विवाह प्रस्ताव को ठुकरा कर उन्होंने संपूर्ण विश्व को ही अपना परिवार बना लिया। उनका ब्रह्म समाज से संपर्क और भी प्रगाढ़ हो गया। श्री रामचंद्रदत्त के परामर्श पर वेदाक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण देव के पास गये। सर्व समभाव मय रामकृष्ण ने नाना आघात प्रत्याघात, संघर्ष एवं कठोर साधना के माध्यम से विवेकानंद के जीवन को पूर्ण बना दिया तथा मानव जाति के चिरन्तर कल्याण हेतु युग संदेश वाहक के रूप में प्रतिष्ठित कर अंतिम समय में उनके हृदय में अपनी आध्यात्मिक शक्ति को संक्रमण कर ओर भी तेजस्वी बना दिया।

वेदान्त की सार्वभौमिक वाणी का प्रचार

विवेकानंद ने देश-विदेश का भ्रमण कर अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस के उपदेश का ओजस्वी व्याख्यानों द्वारा प्रचार प्रसार किया। जिससे आर्य धर्म, आर्य जाति और आर्य भूमि दुनिया की दृष्टि में पूजनीय हई। उन्होंने शताब्दियों के बाद हिन्दू जाति को अपनी मर्यादा का बोध करवाया, हिन्दू धर्म को घृणा और अपमान के पथ से उबारकर विश्व के उच्चासन पर विराजमान किया।

11 सितम्बर 1893 को शिकागो धर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानंद द्वारा दिये गये व्याख्यान ने तो एक हलचल मचा दी। उनके 'मेरे भगनी एवं भगनियो (भाईयो और बहिनो)' संबोधन से सभी के हृदय भातृभाव से झंकृत हो उठे। क्षणभर मात्र के लिये संपूर्ण मानव जाति की एकता की अनुभूति जैसे साकार हो उठी। उनके संबोधन में विश्व भातृत्व का भाव विश्व मानवता की झंकार वेदिक ऋषि की वाणी में सभी कुछ निहित था। उन्होंने हिन्दू धर्म की जो युगोपयोगी व्याख्या की उससे नव जीवन का संचार हुआ एवं हिन्दू धर्म विश्व वरेण्य बन गया। भारत की धर्म चेतना ने उनके माध्यम से पश्चिम मे अपने आपको प्रकाशित किया। भारतीय 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना ने देश विदेश की सीमाओ को लांघकर समस्त मानव जाति को अपने अंक मे समा लिया। विवेकानंद ने सभी धर्मों के भगवान याने विराट पुरुष की बात कही ओर उन्हीं विराट पुरुष को आधार बनाकर सार्वभौमिक विश्व धर्म के गठन का संकेत दिया। प्रत्येक धर्म को अपनी स्वतंत्रता तथा वैशिष्टया को बनाये रखकर अन्य धर्मो से भी उनके भाव ग्रहण करते हुए क्रमशः उन्नत होना ही उन्नति ओर विकास का एकमात्र नियम है।

दो वर्ष तक अमेरिका के विभिन्न शहरों विभन्न संस्थओं, सभा समितियों, गिरजाघरों, महिला संस्थाओं, शोध केन्द्रों, शिक्षा शालाओं, विश्व विद्यालयों एवं प्रतिष्ठीत नागरिकों के घरों में तूफानी हिन्दी संन्यासी, विद्युति वक्ता स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों का आयोजन होता रहा। स्वामीजी को अपरिमित सम्मान मिला एवं उनके भाषाण का भी आश्चर्यजनक परिणाम बा। लोगों की बोधकाय कुम्भकर्णी निन्द्रा टूटने लगी। कुछ लोगों ने तो संन्यास लेकर वेदान्त प्रचार में उन्हें सहयोग देना भी प्रारंभ कर दिया। अनेक विद्वान, दार्शनिक, वैज्ञानिक और लेखक उनके अनुयायी अनुरागी बन गये थे।

फरवरी 1896 में स्वामीजी ने न्यूयार्क मे वेदांत समितियों का गठन कर शिष्यों पर उनके संचालन का भार सौंपा। इसके बाद उन्होंने लंदन, फांस, जर्मनी, ईटली, की यात्रा की ओर यूरोपीय देशों में भारतीय संस्कृति की यश पताका फहराई।

प्राच्य और पाश्चात्य के सेतु

वे पाव्य एवं पाश्चात्य के सेतु सिद्ध हुए। उनकी व्याख्यान माला 'ज्ञान योग' भक्ति योग' कर्मयोग से शिक्षित, बौद्धिक वर्ग बहुत ही प्रभावित हुआ। इन ग्रंथों को पढ़कर प्रसिद्ध दार्शनिक जेन्स सिलियम जेम्स और विख्यात मनीषी टायस्टाय गदगद हो

गये थे। स्वामीजी से प्रभावित होकर कुमारी मूलर, भगिनि निवेदिता सेवियर दम्पति ओर जे.जे. गुडविन ने तो भारत की सेवा में अपना जीवन ही उत्सर्ग कर दिया। स्वामी जी ने लोगों के मन में अपना जीवन ही उत्सर्ग कर दिया। स्वामीजी ने लोगों के मन मे इन भावों का रोपण किया कि प्राचीन हिन्दू धर्म ग्रंथों मे अनेक सत्य विद्यमान हैं। वेदान्त ने हमारे धर्म विश्वासों ओर आवेगो को एक दार्शनिक आधार प्रदान किया है।

पश्चिम की संगठन शक्ति से प्रभावित होकर स्वामी विवेकानंद ने सन्यासी ओर गृहस्थ भक्तों के सहयोग से रामकृष्ण मिशन का गठन किया जिसका उद्देश्य है 'आत्मनो मोक्षार्थ जगद्धितमाय च नर नारायण की सेवा।' का व्रत लेकर स्थापित की गई यह संस्था बेलम के सन्यासियों द्वारा संचालित होकर आज रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के रूप में अतीव विस्तार की ओर अग्रसर है। धर्म कल्पना की नहीं, प्रत्यक्ष दर्शन की वस्तु है

स्वामीजी में अठारह शक्तियां विद्यमान थीं। वे ज्ञान के सूर्य और विराट के पुजारी थे। उनके ईश्वर किसी मंदिर विशेष में प्रतिष्ठित नही थे। वे तो प्रत्येक मानव के मन मंदिर में निवास करते थे। देशभक्ति, मानव सेवा ओर ईश आराधना तीनों उनकी दृष्टि मे समान थे। उनके मतानुसार धर्म कल्पना की नहीं, प्रत्यक्ष दर्शन की वस्तु है। जिसने एक भी महान आत्मा के दर्शन कर लिये वह अनेक किताबी पंडितों से बढ़कर है। मनुष्य को वह इसीलिए धर्म संगत आचरण ओर विचार करने की प्रेरणा देते थे। उनका कहना था धर्म के अभाव मे ही मनुष्य का विश्वास अवरुद्ध होता है। भारतवासियों के लिये स्वामीजी का संदेश था राष्ट्र देवता ही हमारा आराध्य देव है। गर्व से कहो मै भारतवासी हूँ। सभी भारतवासी मेरे भाई-बहन है। भारत के सभी देवी देवता मेरे भगवान है। भारत की मिट्टी मेरा स्वर्ग है। भारत का कल्याण मेरा कल्याण है। उनका कहना था कि समस्त विश्व ब्रह्म का प्रतिभासिक स्वरूप है।

स्वामीजी का आह्वान था भय ओर निर्बलता को त्याग कर वीर बनो। यही उपनिषदो की महान शिक्षा है। उनका कहना था मृत्यु की चिंता न करते हुए दलितों, शोषित, पीडितों को भी अपना भाई बंधु समझो उनको आदर दो।

उन्होंने प्रतिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरन्निबोधते का शंखनाद किया एवं देश को जड़ता की निन्द्रा से जाग्रह किया। मानव धर्म नीति का वास्तविक दर्शन करवाया। विश्व के कोने कोने में भारत का मान ओर गौरव बढ़ाया। वे भारतीय जनजागरण के ऋत्विक थे।

पत्रकार, 14 उर्दुपूरा, उज्जैन म.प्र. फोन-0734-2574825,
मोबा.नं. 0 96693 00515

कविता

वसंत है आई

अनिल शर्मा नील

है कनक कनक हर्षाई
सरसों फूली नहीं समाई
चली जब मनभावन पुरवाई
हवा ने बताया मुझे
ऋतु वसंत है आई ।

तरूवर नव साज सजाई
नवांकुर ने हरियाली बढ़ाई
फूलों से महक आई
माधुर्य ने बताया मुझे
ऋतु वसंत है आई ।

लहर लहर लहराई अमराई
बागों में रंगत छाई
कोयल ने कूक लगाई
कूक ने बताया मुझे
ऋतु वसंत है आई ।



रंग बिरंगी धरा सुहाई
मधुप देखो रास रचाई
प्रति मन को हर्षाई
मन ने बताया मुझे
ऋतु वसंत है आई ।

निचली भटेड़, बिलासपुर
हिमाचल प्रदेश-174004
मो. 0 98170 69935

आलेख

महात्मा गांधी का 'ग्राम स्वराज' और समकालीन ग्रामीण विकास

◆ डॉ. बलदेव सिंह नेगी

महात्मा गांधी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान नेता जो एक तरफ ब्रितानिया हुकूमत के खिलाफ अनेकों आंदोलनों का नेतृत्व कर रहे थे दूसरी तरफ अपने देश की आंतरिक सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक परिस्थियों के साथ भी संघर्षरत रहे। सत्य और अहिंसा के साथ-साथ ग्रामीण समाज का विकास व सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ उनकी मुहिम के केन्द्र में रहे। इनका प्रमाण उनके द्वारा प्रकाशित साप्ताहिक पत्रों 'हरिजन' व 'यंग इंडिया' के लेखों में मिलता है। 2 अक्तूबर 1869 को गुजरात के तटीय कस्बे पोरबन्दर में जन्में मोहनदास कर्मचंद गांधी न केवल करोड़ों भारतीयों बल्कि दुनिया भर के लोगों के प्रति होने वाले शोषण के खिलाफ ताउम्र आंदोलनरत रहे। उनके द्वारा उठाए गए कदमों के चलते वे आज भी दुनियाभर के लोगों के लिए प्रेरणास्रोत हैं।

भारत में महात्मा गांधी को 'राष्ट्रपिता' का दर्जा दिया गया है। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने एक प्रस्ताव के माध्यम से 15 जुलाई 2007 को उनके जन्म दिवस 2 अक्तूबर को अन्तर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के रूप मनाने का निर्णय लिया, क्योंकि महात्मा गांधी दुनियाभर में अहिंसा के महान प्रतीक थे। महात्मा गांधी के अंहिसा के सिद्धांत से प्रेरित हो मार्टिन लुथर किंग ने संयुक्त राज्य अमेरिका में नागरिक अधिकारों के आंदोलन का नेतृत्व किया, नेलसन मंडेला ने नस्लभेद के खिलाफ दक्षिण अफ्रीका में ठोस आन्दोलन चलाया। महात्मा गांधी ने ग्रामीण विकास को ही विकास की सही धूरी माना है। गांधीजी के मुताबिक समाजिक व्यवस्था में गांव एक आधारभूत इकाई है। उनका मानना था कि ग्रामीण सभ्यता ही एकमात्र ऐसी सभ्यता है जो भारतीय परिवेश के लिए उपयुक्त है और भारतीय ही इसके उतराधिकारी हैं। ''हमारे देश की विशालता, विशाल जनसंख्या, और जिस प्रकार हमारे देश की स्थिति और जलवायु है, मेरी राय में हमारी ग्रामीण सभ्यता को दर्शाता है (यंग इंडिया, 7 नवम्बर, 1929, पृष्ठ 364)।'' इसलिए उन्होंने लिखा कि ''भारत इसके कुछ शहरों में नहीं बल्कि सात लाख गांवों में पाया जाता है। (हरिजन, 4 अप्रैल, 1936, पृष्ठ 63)।''

महात्मा गांधी और ग्राम स्वराज

देश में व्याप्त बुराइयों और मुसीबतों के अचूक उपायों के लिए गांधी जी की आजीवन 'ग्राम स्वाराज' की अवधारणा के लिए प्रेरित रहे। नेहरू को लिखे एक पत्र में गांधी ने लिखा ''मुझे विश्वास है कि अगर भारत को सच्ची आजादी हासिल करनी है तो देर-सवेर जनता को इस तथ्य को पहचानना होगा कि उन्हें कस्बों या शहरों में नहीं गांवों में रहना होगा, महलों में नहीं बल्कि-झोंपड़ियों में रहना होगा। करोड़ों लोग महलों और शहरों में कभी भी आपस में शान्ति से नहीं रह सकेंगे। सत्य और अहिंसा के बिना वहां मानवता के विनाश के सिवा कुछ नहीं हो सकता। सत्य और अहिंसा का एहसास हम गांव के सादगी पूर्ण जीवन में ही कर सकतें हैं'' राज्य और उसके द्वारा अपनी शक्ति का विस्तार के प्रति विरोध गांधी का विरोध और दूसरी तरफ शहरों व शहरों की शोषक गतिविधियों के प्रति उनकी नफ़रत दो मुख्य कारक थे जिनकी वजह से 'ग्राम स्वराज' की अवधारणा का सूत्रपात हुआ। गांधी जी ने आगे महसूस किया कि ग्राम स्वराज को तुरंत हासिल नहीं किया जा सकता इसलिए उन्होंने राजनैतिक व्यवस्था की सबसे छोटी इकाु गांव तक राजनितिक व आर्थिक शक्तियों के विकेंद्रीयकरण के लिए एक योजना की सिफारिश की। गांधी जी की छोटे, साधारण और प्राकृतिक गांव की चाहत और ब्रितानियां हुकूमत की खिलाफ व शहरों के शोषक चरित्र ने उन्हें आत्मनिर्भर ग्राम समुदायों के आधार पर ग्रामीण पुनर्निर्माण की योजना बनाने के लिए प्रेरित किया।

ग्रामीण पुनर्निर्माण की गांधीवादी रणनीति 'ग्राम स्वराज'

गांधी जी के कार्यक्रम स्वदेशी आन्दोलन पर आधारित थे। इन दो कार्यक्रमों के तहत उन्होंने बहुत ही साधारण गतिविधियों जैसे चरखा और खादी, लघु व कुटीर उद्योगों तथा ग्राम हस्तकला का पुनरूद्धार, गांव की स्वच्छता, सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सामजस्यपूर्ण विकास के लिए आधारभूत शिक्षा की शुरूआत की। महात्मा गांधी का मानना था कि भारत के आदर्श गांव ब्रिटिश के पूर्व-काल के हैं। उस दौर में भारतीय गांव छोटे गणतंत्र, आत्मनिर्भर और विदेशियों की परेशानियों से मुक्त थे। भारतीय गांवों के गणतंत्रात्मक चरित्र को ब्रितानिया शासन ने तबाह कर दिया। इसलिए गांधीजी ने किसी भी प्रकार के शोषणमुक्त प्राचीन गणतंत्रात्मक गांवों व ग्रामीण पुनर्निर्माण की योजना बनाई और 1942 में उन्होंने कहा :- ''मेरे विचार में 'ग्राम स्वराज' का मतलब है कि यह पूर्णतया गणतंत्र हो, अपनी महत्त्वपूर्ण जरूरतों के लिए वह अपने पड़ोसियों से स्वतंत्र हो लेकिन बहुत सारी अन्य बातों के लिए परस्पर निर्भर हों जिसके लिए निर्भता अतिआवश्यक है।

इसलिए हरेक गांव की पहली चिंता अपने लिए खाद्य फसल और कपड़े के लिए कपास की पैदावार करना होगा। मवेशियों के लिए उपयुक्त चारे की व्यवस्था, व्यस्कों के लिए मनोरंजन और बच्चों के लिए खेल के मैदान होने चाहिए। अगर फिर और जमीन उपलब्ध हो तो गांजा, अफीम और तम्बाकू के अलावा अन्य नकदी फसल उगाई जाए। गांव एक नाटकशाला, स्कूल और सार्वजनिक हॉल बनाए। गांव के पास अपना एक पानी का स्रोत हो जो स्वच्छ पानी की आपूर्ति को सुनिश्चित करे और यह नियंत्रित कुंओं और टैंकों के माध्यम से किया जा सकता है। शिक्षा अंतिम बुनियादी पाठ्यक्रम तक अनिवार्य होगी। जहां तक संभव हो प्रत्येक गतिविधि सहकारी आधार पर होगी। किसी भी प्रकार की जातिप्रथा नहीं होगी जैसे वर्गीकृत छुआछूत आज मौजूद है। सत्याग्रह और असहोग की तकनीक के साथ अहिंसा ग्राम समुदायों के लिए प्रतिबंध होंगे। ग्राम रक्षकों की अनिवार्य सेवा होगी। गांव का शासन पांच लोगों की पंचायत से संचालित होगा जो सालाना वयस्क ग्रामीणों के द्वारा चुन कर आएंगे जो भी महिला या पुरुष इसके लिए निर्धारित न्यूनतम योग्यता रखते हों। उनके अधिकार क्षेत्र में सभी प्रकार के अधिकार होंगे, चूंकि स्वीकृत अर्थ में दंड की कोई व्यवस्था नहीं होगी, पंचायत अपने साल भर के कार्यकाल के लिए विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका होगी। कोई भी गांव आज भी बिना किसी हस्तक्षेप के ऐसा गणतंत्र बन सकता है। यहां तक की आज की मौजूदा सरकार में से भी जहां गांवों से पक्का संबंध मात्र गांव के राजस्व का दोहन करना है। मेरा उदेश्य गांव की सरकार की एक रूपरेखा प्रस्तुत करना है जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता के आधार पर पूर्ण लोकतंत्र है। व्यक्ति अपनी सरकार का खुद वास्तुकार है, अहिंसा का कानून उनका और उनकी सरकार का नियम है। वह और उसका गांव दुनिया को ताकत दिखाने में सक्षम है। हरेक कानून से शासित ग्रामवासी वह होगा जो अपने गांव की रक्षा और सम्मान की खातिर मरने लिए भी तैयार होगा।'' (हरिजन, 26 जुलाू 1942, पृष्ठ 238) । उन के विचार में शहरी लोगों के द्वारा ग्राम वासियों का शोषण 'हिंसा' थी। उनके ग्रामीण विकास के मॉडल में गांव निम्म बिन्दू शामिल थे :-

गांवों की अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर होनी चाहिए : उनके आत्मनिर्भता के मायने न तो संकुचित और न ही स्वार्थपूर्ण और अभिमानी थे। गांधी जी का मानना था कि गांवों को अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रयास करने चाहिए उन्हें उन चीजों के लिए ही पड़ोसियों की मदद लेनी चाहिए जिन का उत्पादन वो खुद नहीं कर सकते।

विकेन्द्रीयकरण :

गांधीजी का विश्वास था कि मानसिक और नैतिक विकास के साथ मानव का सुख ही समाज का मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। यह लक्ष्य राजनितिक और आर्थिक शक्तियों के विकेन्द्रीकरण के द्वारा ही हासिल किया जा सकता है।

खादी और ग्रामोद्योग : गांधीजी के लिए खादी उत्पादन के विकेन्द्रीयकण और लोगों के जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के वितरण का साधन तथा 'सभी के लिए काम' की व्यवस्था थी। उन्होंने ग्रामोद्योग को भी बढ़ावा दिया जिसमें कई प्रकार के शारीरिक काम शामिल थे। गांधीजी ने हमेशा मशीनीकरण का विरोध किया और दस्ती कार्यों को बढ़ाया ताकि मानव श्रमशक्ति का विस्थापन न हो।

ग्रामीण विकास के गांधियन मॉडल को लागू करने की रणनीति :

गांधीजी ने ग्रामीण विकास के विभिन्न सिद्धान्तों को लागू करने लिए विभिन्न प्रकार की संस्थागत संरचना और साधनों का निर्धारण किया जिसमें पंचायती राज, कॉपरेटिवस, ट्रस्टीशिप, नई तालीम मुख्य रूप से शामिल थे। पंचायती राजः गांधीजी की परिकल्पना थी कि भारत में प्रत्येक गांव एक गणतंत्र होगा जहां ग्राम पंचायत को अपने गांव की सुरक्षा समेत तमाम मामलों के प्रबंधन की पूरी शक्तियां होंगी। उन्होंने उम्मीद की थी गांव की अर्थव्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए पंचायते विधायी, कार्यकारी और न्यायिक कार्य करेंगी। इसके साथ-साथ अनेक विकासात्मक गतिविधियां जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य और साफ-सफाई भी पंचायतें को करना होगा।

सहकारिता या कॉपरेटिवस

गांधीजी सहकारिता में ग्रामीण विकास के एक साधन के रूप में बहुत बड़ा गुण देखते हैं। उन्होंने कृषि के क्षेत्र में सहकारिता की भूमिका को विशेष बल दिया और सहकारी खेती को बढ़ावा दिया तथा भूमि को छोटी -छोटी जोतों में बंटने से बचाया।

न्यायसिता या ट्रस्टीशिप

गांधीजी ने पूजीवादी व्यवस्था को समतावादी में बदलने के लिए न्यायसिता को एक उपकरण के रूप में माना। उनका मानना था कि जमीन और तमाम प्राकृतिक संसाधनों पर समस्त मानव समुदाय का अधिकार होना चाहिए जिस को उपयोग सामुदायिक विकास के लिए हो। उनकी मान्यता अनुसार समस्त संपत्ति ईश्वर की है, पूंजीपतियों और जमींदारों को चाहिए कि वे न्यायसिता के सिद्धांत को अपनाएं। जमींदार स्वयं को भूमि का संरक्षक मात्र मानते हुए, जमीन जोतने का अधिकार किसानों को खुशी खुशी सौंप दे। पूंजीपती अपने कारखानों में कार्यरत मजदूरों के साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करें। मान लें कि उनके पास जो पूंजी और धन-संपदा है, वह समाज की धरोहर है।

नई तालीम

गांधीजी आधुनिक शिक्षा व्यवस्था के बिलकुल भी पक्षधर नहीं थे जो व्यवस्था सिर्फ साक्षरता और सूचनाओं के एकत्रीकरण पर ही जोर देती थी। उनका मानना था की यह आधुनिक शिक्षा

दिमाग को सिर्फ भ्रष्ट करती है। इसलिए उन्होंने उपयुक्त शिक्षा और प्रशिक्षण की नई व्यवस्था को विकसित किया जिसे 'नई तालीम' कहा गया। उनका मानना था कि नई तालीम बच्चों और वयस्कों के पूर्ण शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास के माध्यम से उनकी पूर्ण क्षमता विकास के लिए मददगार होगी।

वर्तमान में ग्रामीण विकास और गांधी दर्शन

भारत की जनगणना 2011 के मुताबिक 68.84 प्रतिशत जनता गांवों में रहती है जो 1951 में 82.7 प्रतिशत थी। गांधी की पंचायत की अवधारणा के मुताबिक संविधान के 73वें संवैधानिक संशोधन हुआ जिसमें पंचायतों को गांवों का विकास अपने स्थानीय तरीके से करने लिए ग्राम सभा का प्रावधान हुआ। महिलाओं, दलितों व आदिवासियों की बराबर भागीदारी गांवों की योजना में हो, उनके लिए आरक्षरण की व्यवस्था हुई। ढाई लाख से ज्यादा ग्राम पंचायतों में 29.11 लाख प्रतिनिधियों में 46. 14 प्रतिशत महिलांए अपने गांव का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। गांधी की 'सभी के लिए काम' की अवधारणा के मुताबिक महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना साल 2006 में लागू हुई जिसमें बेरोजगार परिवार को साल में 100 दिन के रोजगार की गारन्टी मिली। दलितों, आदिवासियों और महिलाओं के लिए ये योजना लाभदायी सिद्ध हो रही है। महिलाएं इस योजना के माध्यम से अपने को वित्तीय रूप से सशक्त महसूस कर रही हैं क्योंकि 60 प्रतिशत से ज्यादा हिस्सेदारी इस योजना में महिलाओं की है। दलितों के साथ होने वाले भेदभाव से गांधीजी खिन्न थे और उन्होंने छुआछुत जैसी कुरीतियों के खिलाफ भी एक सशक्त आंदोलन खड़ा किया। स्वतंत्रता के बाद जब संविधान लागू हुआ तो अनुछेद 17 के तहत अस्पृश्यता को समाप्त किया गया। यही नहीं दलितों और आदिवासियों को कानूनी संरक्षण के लिए कई कानून पारित किए गए जिसमें अनुसूचित जाति और जनजाति (अत्याचार की रोकथाम) अधिनियम, 1989 शामिल है। महात्मा गांधी जी ने अपने जीवन में स्वच्छता को गम्भीरता से लिया तो आजाद भारत में कई कार्यक्रमों की शुरुआत हुई जिसमें पूर्ण स्वच्छता अभियान 1999 में और 2014 में स्वच्छ भारत अभियान और महात्मा गांधी की 150वीं जयंती के उपलक्ष पर देश को खुले में शौच मुक्त घोषित किया गया। इसके साथ-साथ आजादी के बाद देश में जो भी योजनांए शुरू की गईं, वे तकरीबन सभी गांधीजी के ग्रामीण विकास की सोच के इर्द-गिर्द ही घूमते हैं जिसमें आईआरडीपी, अंत्योदय योजना, खाद्य सुरक्षा कानून, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, सूचना का अधिकार, जन-धन योजना, राष्ट्रीय स्वास्थ्य योजना इत्यादि सभी योजनाओं के केंद्र में गरीब और ग्रामीण आबादी ही है। इन तमाम योजनाओं के सही तरीके से लागू करने के लिए आज की पंचायती राज संस्थाओं की अहम भूमिका है और यह संस्थाएं सही रूप से अपने कार्य करें इसके लिए जनता की जन भागीदारी ग्राम सभाओं इन में जरूरी है। यह ग्राम सभाएं अपने गांव के विकास योजनाओं का अच्छे से नियोजित करें और लागू करें इसके लिए भी लोगों की निष्पक्ष भूमिका सामाजिक अंकेक्षण के माध्यम से जरूरी है। क्योंकि गांधी के ग्राम स्वाराज का सार भी एक स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरता थी और वर्तमान समय में भी बेशक सरकार की भूमिका ग्रामीण विकास में बढ़ी है लेकिन स्थानीय गांव की जनता की सहभागिता के विना यह विकास अधूरा और निरर्थक होगा।

इसमें कोई शक नहीं है कि गांव व ग्रामीण विकास गांधीजी के बाद भी आजाद भारत की सरकारों की प्राथमिकता में है और सामुदायिक भागीदारी व जनसहभागिता का भी बराबर प्रावधान किया है फिर जिस रफ्तार से गरीबी व भुखमरी कम होनी चाहिए थी। दलितों, आदिवासियों और महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराध कम होने चाहिए थे। भय और भ्रष्टाचार कम होना चाहिए था, पढ़े लिखों की तादाद बढ़ाने के साथ-साथ उसी दर से रोजगार के अवसरों में भी इजाफा होना चाहिए। अगर जवाब नहीं है तो कहीं-न-कहीं हमारे देश में गांधी दर्शन को सही मायने में लागू करने की जरूरत है। गांधी के ग्राम स्वाराज को, पंचायती राज व्यवस्था को, सहकारिता व नई तालीम को और न्यायसिता को आज के परिप्रेक्ष्य के मुताबिक राजनीति नेताओं और नीति निर्माताओं को फिर से देखने की जरूरत है। गांधीजी जीवनपर्यंत सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ लड़ते रहे और त्याग, सत्य और अहिंसा के दम पर स्वतंत्रता आन्दोलन में डटे रहे लेकिन इसे देश का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि अहिंसा के बल पर विदेशी हुकूमत को झुकाने वाले महान संत का अंत घोर हिंसात्मक हुआ। इसमें अतिशयोक्ति नहीं कि गांधीजी शहादत के सात दशकों के बाद भी उनका ग्रामीण विकास का दर्शन अर्थपूर्ण है और आगे भी निसंदेह रहेगा।

अंतर्विषयक अध्ययन विभाग, हि. प्र. विश्वविद्यालय,
समरहिल, शिमला-171 005

संदर्भ सूची :

यंग इंडिया, 7 नवम्बर, 1929, हरिजन, 4 अप्रैल, 1936

हरिजन, 26 जुलाई 1942,

भारत की जनगणना 1951 और 2011

Rural Statistics-2017-18, National Institute fo Rural Development and Panchyati Raj, Hyderabad.k.

Social Action-A quarterly Review fo Social Trends, The Relevance fo Mahatma Gandhi (on the occsaion fo the 150 th Birth Anniversary fo Mahatma Gandhi), ISN 0037, Volume 69, No. k. 04, October-December 2019 pp. k. 301-406

Katar Singh (2009), Rural Development, Principles, Policies and Management, Sage Publication, New Delhi. k.

Gandhi, M.K.k. (1962), Village Saraj, Ahmedabad: Navjeevan.k.

सांस्कृतिक लेख

राजसी बांठड़ा में कान्ह-चंद्रावलियों का एक अनूठा प्रदर्शन

◆ अशोक हंस

पूर्वरंग

हिमाचल प्रदेश के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग लोक नाट्य प्रचलित रहे हैं। इनमें से अनेक लोक नाट्य लुप्त हो चुके हैं। किंचित् लोक नाट्यों का प्रचलन वर्तमान में भी देखने को मिलता है, जिनमें पारंपरिक झलक व आभा स्पष्ट नज़र आती है। ऐसा भी पाया गया है कि कुछ ऐसे भी क्षेत्र हैं, जहां कभी भी किसी भी प्रकार के लोक नाट्य का प्रचलन नहीं रहा। यूं प्रत्येक जिले का कोई-न-कोई अपना लोक नाट्य रहा है।

वर्तमान संदर्भ में बांठड़ा जो कि जिला मंडी का लोक नाट्य है, इस लेखक द्वारा किए गए शोध और और दी गई व्याख्यानुसार इसका ठेठ रूप दो शैलियों में बंटा था। मूल शैली सुकेत कही जा सकती है और उपशैली मंडी।

दरअसल, भारतवर्ष की स्वतंत्रता के उपरांत 15 अप्रैल, 1948 को पश्चिम हिमालय की जिन 30 छोटी-बड़ी रियासतों को विलय कर और मिलाकर पहाड़ी प्रांत हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया, उनमें दो रियासतें सुकेत और मंडी भी थीं, जिन्हें मिलाकर मंडी जिले का गठन हुआ, जो सर्वविदित है कि हिमाचल प्रदेश के 12 जिलों में से एक है।

लोक नाट्य बांठड़ा इसी जिला की परिपाटी मानी गई है। वैसे बांठड़ा अपने आरंभ काल में लोक नाट्य नहीं था। इतिहास साक्षी है कि बांठड़ा विधा मूलतः सुकेत रियासत की विरासत थी। लगभग 765 ई. में इस रियासत की स्थापना राजा वीर सेन ने की थी, जो अपने दो भाइयों के साथ बंगाल से आया था। दूसरे दो भाइयों में से एक भाई गिरिसेन ने क्योंथल रियासत और दूसरे भाई हमीर सेन ने किश्तवाड़ रियासत की स्थापना की थी।

बहरहाल, 765 ई. में सुकेत रियासत की स्थापना के समय अनपढ़ प्रजा को साक्षर करने तथा उनकी क्षमताओं के सुव्यवस्थित विकास आदि के लिए राजा वीरसेन के निर्देशानुसार उसके साथ बंगाल से ही आए उसके पुरोहित नगेंद्र गौड़ द्वारा बांठड़ा उत्सव आरंभ किया गया, जो धर्मशास्त्रों के प्रवचनों पर आधारित था। उसके बाद लगभग तीन सौ वर्ष तक इस विधा के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती। ग्यारहवीं सदी के अंत में इस विधा का पुनरुज्जीवन हुआ और यह विधा स्वतंत्र रूप से गुरु-शिष्य परंपरा के अंतर्गत अध्यात्मवाद के रूप में पनपी और जो कई सदियों के उपरांत लोक नाट्य रूप में परिवर्तितत तथा विकसित हुई। इसका काल 1793 ई. से लेकर 1845 ई. तक रहा।

फिर यह लोक नाट्य उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में सुकेत रियासत की अंतिम राजधानी बनेड़, बाद में सुंदरनगर, के राजमहल के अंदर घर कर गया। इस विधा के समूचे अध्ययन के अनंतर राज परिसर में खेले जाने वाले इस लोक नाट्य को इस अनुसंधायक ने कोई थिएटर और ठेठ लोक नाट्य की संज्ञा देते हुए इसे मूल शैली सुकेत के रूप में परिभाषित किया है। कालांतर में यह ठेठ लोक नाट्य मंडी रियासत के जनपद में भी प्रचारित और प्रसारित हुआ, जिसे इसी अनुसंधायक ने ठेठ लोक नाट्य बांठड़ा की 'उपशैली मंडी' के रूप में परिभाषित किया है। मूल शैली सुकेत लगभग 1963 ई. से अपकर्ष की ओर जाती हुई 1994-95 ई. के आस-पास लुप्त हो गई और उपशैली मंडी भी कहीं लुप्त हो गई और कहीं हाशिए में चली गई।

जैसाकि उपर्युक्त उल्लेख किया गया है कि अध्यात्मवाद के रूप में बांठड़ा विधा गुरु-शिष्य परंपरा के रूप में अनेक सदियों तक जारी रहने के उपरांत 1793 ई. में जब लोक नाट्य रूप में उभरी तो उस समय भिन्न-भिन्न प्रकार की देवस्तुति, विशेषतः त्रिदेव यानी जंगली (वन्य देवता), गणपति और सरस्वती की संस्तुति के अलावा विभिन्न झांकियों, व्यंग्यात्मक प्रहसनों और ऐतिहासिक प्रसंगों का मंचन तो होता ही था, लेकिन कान्ह-चंद्रावड़ी (चंद्रावली) नृत्य, बांठड़ा का मुख्य आकर्षण था। चार चंद्रवाड़ियां और एक कान्ह (कृष्ण) बांठड़ा में प्रत्येक झांकी अथवा प्रहसन आदि के उपरांत गीत तथा नृत्य प्रस्तुत करते थे। तब कान्ह और चंद्रवाड़ियों अर्थात् चंद्रावलियों का क्या रूप-स्वरूप था, इसके बारे में कोई विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं होती।

हां, कान्ह-चंद्रावली नृत्य ठेठ लोक नाट्य बांठड़ा की 'मूल शैली सुकेत' का अहम हिस्सा था, तब जब यह नाट्य सुकेत रियासत की अंतिम राजधानी बनेड़ (सुंदरनगर) के राजमहल के अंदर मंचित किया जाता था। उल्लेखनीय है कि तब सौज

(असोज) मास के नवरात्रों के दौरान (उन दिनों सुंदरनगर में रामलीला का प्रचलन नहीं था) आठ दिन तक खेले जाने वाले इस ठेठ लोक नाट्य से पूर्व पहले नवरात्रे को केवल और केवल कान्ह-चंद्रावली नृत्य तथा उससे पहले उसी दिन महल के बाहर और अंदर प्रमुखतः चंद्रावलियों का एक अनूठा उत्सव-सा होता था।

कान्ह और चंद्रावलियों के संदर्भ में यह लेख केंद्रित करने से पहले मात्र इतना सा उल्लेख किया जाना भी समुचित रहेगा कि राजमहल में मंचित होने तथा राजकोष से आश्रित होने के कारण इस ठेठ लोक नाट्य को 'कोर्ट थिएटर' की संज्ञा दी गई है और 'ठेठ' की संज्ञा इसलिए दी गई है कि 'अध्यात्मवाद रूप' के अनंतर जन बांठड़ा विधा लोक नाट्य रूप में परिवर्तित हुई तो इसके दो एक पहलुओं गणेश की झांकी और कान्ह-चंद्रावली नृत्य (वे भी नई अदाओं से) को छोड़कर शेष सभी स्वांग बिलकुल नए तथा मौलिक और कलाकारों द्वारा स्वयं गढ़ित थे तथा एक समृद्ध परिपाटी लिए पूरे नाट्य का प्रस्तुतीकरण तथा शैलीगत विशिष्टताएं लाजवाब थीं, जो इससे पूर्व और बाद में भी देखने को नहीं मिलतीं, यहां तक कि इस ठेठ लोक नाट्य की 'उपशैली मंडी' की प्रस्तुति में भी नहीं।

यह दीगर बात है कि सन् 1935 ई. में सुंदरनगर के पुराना बाजार में सनातन धर्मसभा बन जाने के उपरांत कार्तिक मास में वहां भी बाहर खुले स्थान में राजा के निर्देशानुसार 'पंचभिख्मी पुन्या' (पंचभीष्मी पूर्णिमा) के समय पांच बांठड़े अर्थात् पांच दिन तक बांठड़े खेले जाने आरंभ हुए।

कान्ह-चंद्रावली नृत्य और चंद्रावलियां

'राजा दुष्ट निकंदन के समय (1879-1904 ई.) राजमहल में अस्सु (सितंबर) के महीने में बांठड़ा उत्सव आयोजित होते थे। राजमहल के सामने अनूठी वेशभूषा पहने नर्तकों के दल अपना प्रदर्शन करते थे। एक दल को राजा तथा अन्यों को तहसील अमला द्वारा पोशाकें मुहैया करवाई जाती थीं।' (Punjab States Gazetteers, Vo. XII-A, Mandi & Suket States 1904, Suket State, p. 28)

ज़ाहिर है कि अगले राजा भीम सेन के समय (1908-1919 ई.) में भी यह परंपरा जारी रहेगी लेकिन इससे अगले सुकेत रियासत के अंतिम राजा लक्ष्मण सेन के शासनकाल (1919-1948 ई.) में 'बांठड़ा इस रियासत का एक महत्त्वपूर्ण उत्सव था। राजमहल के सामने आयोजित इस उत्सव में यहां तक कि मंडी और बिलासपुर रियासतों से भी लोग उपस्थित होते थे। रंग-बिरंगा पहनावा पहन कर नर्तक दल हर रात्रि कार्यक्रम का शुभारंभ करते थे। पुरुष वेशभूषा पहने नर्तक कान्ह तथा महिला-वेशभूषा पहने नर्तक चंद्रावलियां कहलाती थीं। राजा कान्हों को वेशभूषा उपलब्ध करवाता था और रानी चंद्रावलियों को फैंसी तथा महंगे पहरावे एवं गहने देती थी। स्वांग भी मंचित किए जाते थे।" (Beotra B.R., Gazetteer of the Suket State 1927, p 71)

इस लोक नाट्य के संबंध में इस अनुसंधायक द्वारा शोध करते समय इसके बारे में किसी प्रकार की और अधिक विस्तृत लिखित जानकारी उपलब्ध नहीं हुई और अगर कहीं बहुत ही मामूली और अधूरी सी जानकारी मिली तो वे इक्का-दुक्का अखबारी लेख हैं लेकिन इस लोक नाट्य का सही रूप-स्वरूप बीते समय का एक ऐसा सांस्कृतिक तथ्य है जिसके साक्षी स्वयं राजा-रानी, रियासती प्रशासन एवं प्रजा, कलाकार अथवा दर्शक रहे हैं।

'फ़िल्ड' में की गई शोध के अंतर्गत हेसी (शहनाई वादक और मंगलामुखी, जो गांव-गांव, घर-घर जाकर शहनाई पर नया विक्रमी संवत वर्ष -चैत्र मास में- सुनाते हैं, और हेसण साथ हो तो वह गाती है...) मकोड़ू राम (स्व.), जिसने अपनी उम्र 14 वर्ष की आयु से ही रियासती राज कार्य तथा बांठड़ा में अपने ताए-चाचे के साथ शहनाई बजानी आरंभ कर दी थी और जो आज़ादी के उपरांत भी 15 वर्षों तक राजा लक्ष्मण सेन (स्व.) तथा उसके जीते-जी उसके सुपुत्र ललित सेन (स्व.), जो सांसद भी रहे, के यहां जारी रहे बांठड़ा-उत्सव तथा अन्य शुभ कार्यों में शहनाई वादन का कार्य करते रहे, के अनुसार राजा लक्ष्मण सेन के महल के अंदर के ग्राउंड में प्रत्येक वर्ष असोज के पहले नवरात्रे की रात्रि को बांठड़ा के कलाकार एकत्रित होते, विशेष रूप से आठ कान्ह और आठ चंद्रावलियां बने किशोर अवस्था के कलाकार। उस रात उनका ही कार्यक्रम हुआ करता था। प्रत्येक चंद्रावली के साथ एक कान्ह होता जिनका बांठड़ा में मूलतः नाचने का काम रहता। स्वांग रचने वाले कलाकार अलग होते जो अपनी वेशभूषा का प्रबंध स्वयं करते लेकिन कान्ह और चंद्रावलियों की शानदार वेशभूषा का प्रबंध राजा, राजघराने, और बड़े व्यक्तियों द्वारा किया जाता और स्वांगियों सहित यह पूरा दल राजा का अपना दल होने के कारण प्रस्तुति के अन्य खर्च राजकोष से ही वहन किए जाते। स्वांगों में समस्त महिला पात्रों सहित चंद्रावली की भूमिका भी पुरुष कलाकार ही अदा करते।

एक चंद्रावली की वेशभूषा का प्रबंध सिरमौरी रानी (राजा स्व. भीमसेन की पत्नी) की ओर से रहता। दूसरी चंद्रावली की वेशभूष का प्रबंध स्वयं राजा की तरफ से होता। तीसरी चंद्रावली

लोक नाट्य बांठड़ा मंडी जिले की परिपाटी मानी गई है। वैसे बांठड़ा अपने आरंभ काल में लोक नाट्य नहीं था। इतिहास साक्षी है कि बांठड़ा विधा मूलतः सुकेत रियासत की विरासत थी। लगभग 765 ई. में इस रियासत की स्थापना राजा वीर सेन ने की थी, जो अपने दो भाइयों के साथ बंगाल से आया था। दूसरे दो भाइयों में से एक भाई गिरिसेन ने क्योंथल रियासत और दूसरे भाई हमीरसेन ने किश्तवाड़ रियासत की स्थापना की थी।



छायाचित्र एक

की वेशभूषा का प्रबंध खनोखड़ी में राजा के चाचा कर्नल गंगा सिंह द्वारा, चौथी चंद्रावली की वेशभूषा का प्रबंध चाचा मियां) राजा के बड़े पुत्र को टीका कहा जाता जो प्रायः राजा बनता। छोटे पुत्रों को कुंअर परिवारों की आगामी संतानें मियां कहलाती रही हैं) फिंदर सिंह (स्व. ललित सेन की पत्नी कृष्णा कुमारी के अनुसार विकृत नाम, असली नाम उपेंद्र सिंह), पांचवीं चंद्रावली की वेशभूषा का प्रबंध सणोह में राजा के भाई शमशेर सिंह, छठी चंद्रावली की वेशभूषा का प्रबंध पुराना बाजार में फितु जोशी, सातवीं चंद्रावली की वेशभूषा का प्रबंध खरीढ़ी के सिद्धु राम वोहरा-वजीर और आठवीं चंद्रावली की वेशभूषा का प्रबंध निचली खनोखड़ी में सेहारलत के बेड़े से राजा के दूर-पार के रिश्तेदार रणजीत सिंह (जगजीत सिंह) द्वारा किया जाता। पुरुष प्रधान समाज होने के नाते भले ही चंद्रावलियों की वेशभूषाओं के प्रबंध के लिए पुरुष नाम ही सामने आए हैं लेकिन उनकी व्यवस्था घर की मालकिनों द्वारा ही की जाती। प्रत्येक कान्ह की वेशभूषा का प्रबंध भी प्रत्येक चंद्रावली की वेशभूषा के प्रायोजक द्वारा ही किया जाता।

खरीढ़ी (सुंदरनगर) के कृष्ण चंद्र आर्य ने बतलाया कि उस रात मां भगवती की ओर से भी एक चंद्रावली बनती थी और वह कान्ह-चंद्रावली नृत्य में भाग नहीं लेती थी। उसका श्रृंगार भी वहीं होता था जहां सिरमौरी रानी की ओर से बनी चंद्रावली का श्रृंगार होता और उसे भगवती मां का चंद्रालू (चोला) अर्थात् माता की तरफ से चंद्रालू पहनाया जाता था और वे स्वयं यह चंद्रावली बने हैं।

चंद्रावलियों की वेशभूषा

चंद्रावलियों ने घुटनों तक के माप के 6-6 गज के स्वर्ण और चांदी के तिलक लगे मखमली चोलू, नीचे रंगीन अथवा प्लेन चूड़ीदार पाजामियां, छोटे कालर वाली रंग-बिरंगी कुर्तियां, सिर पर सोने-चांदी के चाक (शंकु अथवा कीप रूप में सिर पे पहने जाने वाला आभूषण) और उस पर लंबे दुपट्टे पहने होते। एक चाक सिर के केंद्र पर, एक बाएं और एक दाएं लगाया जाता। इसके अलावा असली जेवरात भी पहनाए जाते जिनमें सनंगणु (सोने का कंगन), चांदी के बोर (छोटे घुंघरू) लगे छः-छः इंच के लंबे चूड़े, सोने अथवा चांदी की चूड़ियां, बालियां, तीली या बालु (नाक का आभूषण) टीक, बेसर आदि शामिल थे। रानी व राजा की ओर से अधिक गहने पहनाए जाते और बाकियों की ओर से कुछ कम व कुछ भिन्न। पांवों में फ्लीट-शू डाले जाते क्योंकि उन्हें पहले दिन अंदर-बाहर चलना भी होता था। पूरी वेशभूषा रंग-बिरंगी छटा बिखेरती थी।

कान्हों की वेशभूषा

कान्हों की वेशभूषा में कमीज-पजामे, तरह-तरह रंग के लहंगे अथवा शेरवानियां, गोटे वाले पटके, गोटेदार केसरी रंग की पगड़ियां और अंतिम दिन के बांठड़ा के लिए कढ़ाई की हुई सुनहरी जैकिटें तथा फ्लीट-शू भी शामिल थे।

रूप सज्जा

चंद्रावली के लिए पाउडर का प्रयोग होता। शेष कलाकार मकोल (सफेद मिट्टी जिससे सफेदी की जाती है) लगाते। कुछ रंग पंसारी से मिलते थे। काले रंग के लिए तवे की कालिख का इस्तेमाल होता। टीके के लिए कुंगू (कुमकुम) उपयोग में लाया जाता।

कलाकार

चंद्रावलियों सहित समस्त पात्रों की भूमिका पुरुष कलाकार ही अभिनीत करते। चंद्रावलियां और कान्ह किशोर अवस्था के कलाकार होते।

भाषा : स्वांग सुकेत बोली में खेले जाते, जिसे वर्तमान संदर्भ में मंडियाली बोली कहा जाना उचित रहेगा।

बांठड़ा उत्सव में फेरा लगाना

सभी आठ चंद्रावलियां और आठ कान्ह अपने-अपने प्रायोजकों के घरों से सज-धज कर नवरात्रों की पहली रात को राजा के बेड़े में एकत्र होते। इस रात कुछ खास लोग भी आमंत्रित होते तथा रौनक रहती। स्वांग तो इस रात नहीं होते थे। कोई एक झांकी होती थी कि नहीं लेकिन शहनाई और नगाड़ा वादन में कान्ह और चंद्रावलियों का माला नृत्य होता। अन्य औपचारिकताओं सहित यह कार्यक्रम एक-डेढ़ घंटे चले रहता। यह नृत्य एक फेरे (घेरे) में किया जाता और इस तरह राजा के यहां यह एक विशेष, पहला एवं महत्त्वपूर्ण फेरा (एक चक्कर लगा आना) होता।

इस प्रकार यह रौनक तबदील होती अगले अर्थात् दूसरे फेरे में। तब इन चंद्रावलियों और कान्हों के साथ चौकीदार और पुलिस वाले भी साथ रहते। फेरा लगाने के लिए अन्य स्वांगी कलाकार साथ नहीं जाते थे। इस तरह शहनाई और नगाड़ा-वादकों सहित कान्ह और चंद्रावलियां जिस क्रम में अपने-अपने प्रायोजकों के घरों से सज-धज कर आते, उसी क्रम में उनके वहां फेरा लगाते, बेड़े में नृत्य करते और रौनक बढ़ाते। सनातन धर्मसभा बन जाने पर एक फेरा वहां भी लगाया जाता। अगले दिन सुबह कान्ह और चंद्रावलियां राजा के फ़र्राशख़ाने में चले जाते जहां अन्य कलाकारों सहित उनके ठहरने की व्यवस्था होती। स्वांगों सहित लोक नाट्य बांठड़ा उससे अगली रात से आरंभ होता।

बांठड़ा मंचन

रात्रि नौ बजे के आस-पास बांठड़ा का आयोजन आरंभ होना और लगभग दो-तीन घंटे तक चलता। प्रत्येक दिन नए-नए स्वांग खेले जाते। कुछ दिन नकलें भी शामिल होतीं।

शहनाई-नगाड़ा पर 16 मात्रा की नौबत बजते ही दर्शक बांठड़ा देखने हर कोई जा सकता था। बैठने के लिए दरियां बिछी होतीं और कुछ अफसरों के लिए कुर्सियों का इंतजाम होता। एक तरफ महिलाएं और दूसरी तरफ पुरुष बैठते...।

महल में ऊपर (ऊंची जगह में) राजा की गद्दी लगी होती जहां वह अलग बैठता... रानी राजा के बायीं ओर अलग कक्ष में बैठती।

मंच का हिस्सा लगभग 40-45 फुट चौड़ा होता। मंच कोई ऊंचा स्थान नहीं था। उस पर दरियां और उन पर चादरें बिछी होतीं। पीछे काले रंग के पर्दे लगे रहते। मंच पर एक तरफ बैंच रखे जाते जहां पर कान्ह और चंद्रावलियां अपना नृत्य करने के उपरांत बैठ जाते। मंच के बायीं ओर एक पंक्ति में दो शहनाई और दो नगाड़ा वादक बैठते...

नगाड़े पर चार मात्रा का सुथरी का डंका बजाया जाता और सभी को मालूम हो जाता कि बांठड़ा शुरू हो रहा है।

कान्ह-चंद्रावलियों का बांठडा नृत्य

ठेठ लोक नाट्य बांठड़ा की प्रस्तुति में हर रात्रि सबसे पहले 10 मात्रा का बांठड़ा ताल बजाया जाता और इस ताल में आठ कान्ह और आठ चंद्रावलियों का नृत्य होता जिसे बांठड़ा नृत्य कहा जाता। वे हाथ पकड़ कर पहले एक माला में फेरा लगाते और फिर हाथ छोड़ कर धीमी चाल से कदम आगे बढ़ाते हुए गोल दायरे में ही नाचते। यह नृत्य बिना किसी गायन के होता। शहनाई और नगाड़े पर जो धुन बजाई जाती वह निम्न गीत पर आधारित होती :-

हरे पराला रेआ मांजरुआ ओ
कलिहा रैहणा सई
मैं तेरी सोह कलिहा रैहणा सई।
हरे पराला रेआ मांजरुआ ओ
दुड़ बुड़ रैहणा सई
मैं तेरी सोह दुड़ बुड़ रैहणा सई।
ओ दो मित जना रेआ मांजरुआ ओ
कलिहा रैहणा सई
मैं तेरी सोह कलिहा रैहणा सई।
अर्थात :
पराल से बनी मांजरी पर
अकेली सोई रहूंगी
तेरी कसम मैं अकेली सोई रहूंगी।
पराल से बनी मांजरी पर
गुम-सुम सोई रहूंगी
तेरी कसम मैं गुम-सुम सोई रहूंगी।
दो मित्र-जनों के लिए बनी चटाई पर
अकेले सोई रहूंगी
तेरी कसम मैं अकेली सोई रहूंगी।
(पराल : पुआल यानी धान का भूसा;
मांजरी : धान के घास की चटाई)

कुछ पंक्तियों का एक अन्य रूप एक अन्य अर्थ के साथ इस प्रकार है :-

दो मित जना रेआ मांजरुआ ओ
दुड़ बुड़ रैहणा सई
मैं तेरी सोह दुड़ बुड़ रैहणा सई।

अर्थात् : जब वह अकेली है तो उस चटाई पर अकेले सोई रहेगी और जब वह यानी उसका साथी आएगा तो दो प्रेमी जनों के लिए बनी उस चटाई पर वे दोनों इकट्ठे सोए रहेंगे।

इस गीत के दोनों अर्थ सार्थक लगते हैं क्योंकि यह नृत्य कान्ह और चंद्रावली से संबंधित है और जिनमें प्यारे भरे मिलन के साथ बिछड़ने की वेदना भी जुड़ी है। क्योंकि इस बांठड़ा नृत्य में चंद्रावली को गोपी की ही संज्ञा में लिया गया है, इसलिए वस्तुतः यह नृत्य कृष्ण और गोपियों का महारास अथवा रासलीला का ही प्रदर्शन है।

महारास : शरद् पूर्णिमा की रात को यमुना किनारे श्रीकृष्ण ने गोपियों के साथ महारास अथवा दिव्य रसोत्सव प्रारंभ किया। विष्णु पुराण के अनुसार श्रीहरि ने एक-एक गोपी का हाथ अपने हाथ में लेकर रास-मंडल बनाया (द्वितीय खंड, पंचम भाग अंश, तेरहवां अध्याय, पृ. 198, शर्मा, पं. श्रीराम आचार्य, सं.), जबकि श्रीमदभागवत पुराण के अनुसार वे दो-दो गोपियों के बीच प्रकट हो गए और उनके गले में अपना हाथ डाल दिया। (दशम स्कंध, 33वां अध्याय, पृ. 323, पोद्दार, हनुमान प्रसाद, सं.)

रासलीला : उक्त वर्णित इस प्रकार की रासलीला का देश की लोक नाट्य परंपरा में विभिन्न आयामों के साथ पूर्णतः सामंजस्य तो हुआ ही और साथ ही इसका अपने आपमें स्वतंत्र अस्तित्व भी बना। यही कारण है कि इसे लीला नाट्य भी कहा जाने लगा... (याग्दम्नि, डॉ. वसंत, रासलीला, पृ. v, viii)

बांठड़ा नृत्य में चंद्रावलियों की वेशभूषा को देखकर उनकी यानी गोपियों की उपस्थिति तो दर्ज होती है लेकिन कान्हों की वेशभूषा से कृष्ण की उपस्थिति दर्ज नहीं होती क्योंकि यहां न तो कान्हों ने मुकुट पहना है, न ही मोर पंख अथवा तुर्रा आदि लगा रखा है। ऐसा क्यों? कुछ कहना संभव नहीं। वस्तु-स्थिति कुछ भी हो सुकेत के इस ठेठ लोक नृत्य में कानहों की उक्त वर्णित वेशभूषा ही मान्य रही है।

एक बात और कि महारास में समस्त गोपियां शामिल हुईं लेकिन उसी नृत्य के प्रतीक वाले इस बांठड़ा नृत्य में केवल चंद्रावली के नाम से ही आठ चंद्रावलियां आती हैं अर्थात् प्रत्येक कान्ह के साथ एक चंद्रावली। इसी लोक नाट्य बांठड़ा में ही नहीं अपितु हिमाचल के अनेक लोक नाट्यों में चंद्रावली नाम से एक नर्तकी पात्री रही है। चंद्रावली के नाम से ही ऐसा क्यों? यह अध्ययन एक अलग विषय है।

हां 'चंद्रावली' के संदर्भ में विभिन्न ग्रंथों में जो जानकारी उपलब्ध होती है, वह इस प्रकार से है :

i) चंद्रभानु की पुत्री एक गोपी जिसका श्रीकृष्ण पर अगाध प्रेम था (भागवत), शर्मा, राणा प्रसाद, पौराणिक कोश, पृ. 116

ii) गोपबालाओं के रूप में उनकी विभिन्न संज्ञाओं में से एक (पद्म पुराण, पाताला खंड), पांडेय, डॉ. राजबली, हिंदू धर्मकोश, पृ. 245-46)

iii) चंद्रावली श्रीकृष्ण की अंतरंग सखी थी। 'राधा की प्यारी सखी चंद्रावली भी श्रीकृष्ण चरणों की नखरूपी चंद्रमाओं की सेवा में रहने के कारण ही 'चंद्रावली' नाम से कही जाती है। इसलिए वह कोई दूसरा स्वरूप धारण नहीं करती।" पोद्दार हनुमान प्रसाद (सं.), श्रीमद्भावगत महापुराण, द्वितीय खंड, श्रीमद्भागवत माहात्म्यम्, अथ प्रथमोऽध्याय, पृ. 983-84)

iv) इसी पौराणिक पात्र पर आधारित भारतेंदु हरिश्चंद्रकृत नाटक 'श्री चंद्रावली' जिसमें चंद्रावली का कृष्ण से अथाह प्रेम, विरह और अंत में कृष्ण मिलन दर्शाया गया है। इस नाटक में पौराणिक प्रसंगानुसार ही चंद्रावली को शाश्वत लालसा की द्योतक माना गया है। (देखें, भारतेंदु ग्रंथावली (नाटक), पहला खंड, पृ. 41-97, मिश्रा, शिव प्रसाद 'रुद्र' (सं.)। बहरहाल, बांठड़ा नृत्य के उपरांत कान्ह और चंद्रावलियां मंच पर एक ओर रखे बैचों पर बैठ जाते और गणेश की झांकी निकाली जाती।

कान्ह-चंद्रावलियों का लाहुली नृत्य

गणेश झांकी के उपरांत 14 मात्रा की लाहुली ताल पर लाहुली नृत्य नाचा जाता। यह भी अंदेशा मिला कि इस झांकी के उपरांत लाहुली नृत्य नहीं अपितु बांठड़ा नृत्य ही किया जाता। बहरहाल, लाहुली नृत्य बांठड़ा नृत्य के मुकाबले कुछ तेज गति से नाचा जाता। इस नृत्य में भी निम्न गीत पर आधारित केवल धुन बजती :

लौंगा दी चमका पाना दे बीड़े
तेरे ओ मन मोहया ओ बंसी वालेया।
एक अन्य गीत इस प्रकार है :-
ओ मेरी मैया मैं तेरे गुण गाऊं
चितमन चोला धराऊं।
सूहा-सूहा चोला मइयां अंग बराजे
केसर तिलक चढ़ाऊं
मैं तेरे गुण गाऊं।
सत बे सपारी मैया
धज भी नलेरा चढ़ाऊं
पैलहड़ी भेंट चढ़ाऊं
ओ मेरी मैयां मैं तेरे गुण गाऊं।

लाहुली नृत्य के उपरांत स्वांग आरंभ हो जाते और प्रति दिन प्रत्येक स्वांग अथवा नकल के उपरांत फिर यह लाहुली नृत्य अवश्य ही होता।

कान्ह-चंद्रावलियों का लुड्डी नृत्य

हर दिन स्वांग समाप्त होने के अनंतर 16 मात्रा की लुड्डी ताल पर लुड्डी नृत्य पेश किया जाता लेकिन आठवें अर्थात् आखिरी दिन इस नृत्य को सबसे पहले किया जाता। लाहुली की तुलना में यह नृत्य और तेज गति से नाचा जाता। इस नृत्य पर निम्न गीत की धुन बजती :

साबास तेरी गोरी अखियां नूं जिथे नौ रत्ती सुरमा डालया ओ
नौ रत्ती सुरमा डालया ओ चलदा मुसाफर मारया ओ।

दरअसल बांठड़ा, लाहुली और लुड्डी एक ही प्रकार का नृतय रहा। बांठड़ा में छोटे-छोटे कदम, लाहुली में कुछ लंबे कदम तथा लुड्डी में और अधिक लंबे कदम लिए जाते व हिसाब से मात्राएं बदलती रहतीं।

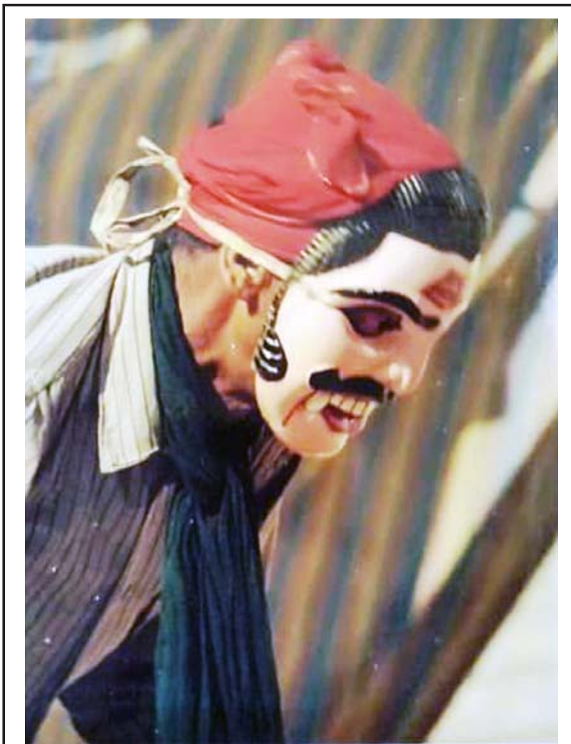
रास के रूप में
बांठड़ा का समापन

आठवें दिन बांठड़ा का समापन होता। इस रात कान्ह और चंद्रावलियों के लुड्डी तथा उन्हें चाक पर बिठला कर घुमाने वाली शानदार आइटम के अतिविशिष्ट सम्मोहन के अतिरिक्त 'रास' यानी 'घैल' (घायल) के स्वांगत का मुख्य आकर्षण रहता। यह खेल दशमी को रावण जलाने के उपरांत रात्रि नौ बजे के आस-पास 'नीउंआ रा हार' जगह पर होता (नीऊं : नींव)। राजा अपने महल से वहां इसे ठीक तरह से अवलोकित कर सकता था।

घैल का स्वांग से पहले लुड्डी नृत्य तथा इस स्वांगत के बाद उन्हें चाक पर घुमाया जाता। दरअसल इस रात के सारे कार्यक्रम को ही रास कह दिया जाता।

कान्ह-चंद्रावलियों का विशिष्ट लुड्डी नृत्य

नगाड़ा और शहनाई वादन सहित निम्न गीत पर आठ कान्ह



छायाचित्र दो

और आठ चंद्रावलियां 16 मात्रा की लुड्डी तान पर लुड्डी नृत्य करते :

हरि भज जिंदड़िए भलिए (जिंदड़ी : जिंदगी)
मेरी तेरी ओ लगी राम से टेक।
टुरण लगी दोस्ती हसण लगे लोक
भीगण (आंसुओं से) लगी चुनरिया देखण लगे लोक।

कान्हों और चंद्रावलियों कोचाक पर बैठा कर घुमाना

लकड़ी के स्तंभ पर एक चाक बनाया जाता और उस पर आठ कान्ह और आठ चंद्रावलियों को बिठलाते। दो आदमी चाक को घुमाते। कुछ फेरे देने के उपरांत शहनाई और नगाड़े पर निम्न गीत की धुन बजती और आठ दिन के बांठड़ा का खेल समापत हो जाता :

अंगना खोली द्वारा ओ मैया बैकुंठ बनाया
ए कांगड़ा धौलो धारा, ओ मैया बैकुंड बनाया
ऊंचे-ऊंचे पर्वत मैया भवन बनाया
अर्जुन कलश लगाया।
ए कांगड़ा धौलीधारा, ओ मैयां वैकुंठ बनाया
सत बे सपारी मैया धजा बे नलेरा चढ़ाया
सूहे-सूहे चोले मैया अंग बराजे
ए कांगड़ा धौली धारा, ओ मैा बैकुंठ बनाया।

बांठड़ा समाप्त होते ही कान्हों और चंद्रावलियों की वेशभूषा एवं गहने प्रायोजकों द्वारा तुरंत वापस ले लिए जाते। अन्य वेशभूषा राजमहल के भंडार में जमा कर ली जाती।

सनातन धर्म के बांठड़े में कान्ह-चंद्रावली नृत्य

सनातन धर्मसभा, जिसके बारे में अन्यत्र उल्लेख किया जाता चुका है, के बाहर खुले स्थान में राजा के वही सुंदरनगर दल द्वारा पंजभिखमी पुन्या के दौरान पांच दिन तक प्रत्येक रात्रि बांठड़ा का मंचन होता। यहां भी अभिनेताओं की वेशभूषा दल की अपनी ही होती लेकिन कान्ह और चंद्रावलियों की वेशभूषा कुछ बड़े अधिकारियों तथा साहूकारों द्वारा प्रायोजित होती। यहां फेरे देने का प्रचलन नहीं था। यहां धीरे-धीरे कान्हों और चंद्रावलियों की संख्या कम हो गईं तथा बाद में चार चंद्रावलियां और एक कान्ह रह गया। यहां कान्ह कृष्ण के 8-10 साल के बाल स्वरूप में तबदील हो गया। तब बांठड़ा को रासलीला भी कहा जाने लगा क्योंकि कृष्ण की झांकियां भी लगानी शुरू हो गई थीं। (देखें छायाचित्र-एक)

जैसाकि पहले भी वर्णित किया जा चुका है कि चंद्रावलियों सहित समस्त पात्रों की भूमिका पुरुष कलाकार ही अभिनीत करते। बहुत ही बाद में इस ठेठ लोक नाट्य की प्रतिकाष्ठा के समय बीसवीं सदी के लगभग नौवें दशक में चंद्रावलियों के लिए युवतियां तथा कुछ स्वांगों में महिला-पात्र के लिए एक महिला भी भाग लेती।

उपसंहार

यद्यपि ठेठ लोक नाट्य बांठड़ाकी उपशैली मंडी मूल शैली सुकेत की आभा से प्रचारित व प्रसारित हुई तथा उसने अपनाएक अलग रूप स्थापित किया और यहां तक कि मंडी जनपद में अपना अस्तित्व भी सफलतापूर्वक कायम रखा तथापि यह शैली न तो सुकेत की तहर किसी उत्सव के रूप में उभरी और न ही उसमें सुकेत जैसी शैलीगत नाट्य विशिष्टताएं थीं। मंडी उपशैली के स्वांग मूल शैली सुकेत से भिन्न थे और कान्ह-चंद्रावली नृत्य मात्र 'हरिरंग' के रूप में उभरा, जिसका अर्थ कृष्ण लीला से था। इस

हरिरंग नृत्य में एक कान्ह तथा दो चंद्रावलियां भाग लेतीं। उनकी वेशभूषा भी बदली सी थी। कानह ने कुर्ता और पीली धोती पहनी होती, कंधों से रेशमी कपड़ा ओढ़ा होता तथा मुख पर मुखौटा लगाया होता। मुखौटे के साथ कपड़ा लगा होता, जिससे उसका सिर ढका रहता। चंद्रावलियों ने लंबी कुर्ती और घघरी पहनी होती।

यहां मजे की बात यह है कि कान्ह जो मुखौटा पहनता, वह राक्षस जैसा होता। (देखें छायाचित्र-दो) उसमें मूंछ होती और साइड के दांत बड़े-बड़े होते। कलाकार तो इतना प्रतिभा वाला होता है कि वह कान्ह या किसी पात्र काभी रूप, रूप-सज्जा और वेशभूषा के माध्यम से बना सकता है फिर ऐसे मुखौटे में कान्ह क्यों दर्शाया जाता है? इस प्रश्न पर बांठड़ा कालाकार तारा चंद (स्व.) ने बड़ी सादगी से उत्तर दिया कि 'बस वेष बदलने को।'

गायक निम्न गीत गाते और हरि अर्थात् कान्ह अपने दोनों तरफ प्रत्येक चंद्रावली की बाजुओं को अपने हाथों में थामे हुए और इस प्रकार तीनों नृत्य करते हुए मंच पर प्रवेश करते :

हरि रंग लाया साधो बे, श्याम रंग लागा साधो बे
हरि रंग लागा साधे बे, श्याम रंग लागा साधो बे।
हरि रे हरि तूहे बोल मेरी सखिए
हरी-हरी चूड़ियां बे गोरी-गोरी बहियां।
ओ रुठड़ा जे जांदा हो मेरे कान्हड़ा बे
ओ सलोनी हो तेरी अखियां बे
ओ मेरे ओ मना बस गयो री ओ कान्हड़ा बे
ओ तीर जमना के पार ओ बज रही बंसरी मोरी।

इस नृत्य में कान्ह और गोपियों के रूठने और मनाने का मूकाभिनय होता। कान्ह गोपियों के साथ कभी मनुहार और कभी शरारत करता हुआ आनंद लेता। कभी वह एक चंद्रावली के साथ, कभी दूसरी चंद्रावली के साथ और फिर दोनों के साथ नृत्य करता। नृत्य के दौरान वह और प्रत्येक चंद्रावली बारी-बारी से 'किकली कलीर' खेल के तरह भी घूमते।

किकली कलीर : दो लड़कियों का खेल जिसमें एक-दूसरे का हाथ पकड़ कर और कमर से ऊपर का अपना शरीर पीछे खींच कर तेजी से घूमना और घूमते-घूमते कुछ बोलते भी रहना जो विभिन्न स्थानों में थोड़ा हेर-फेर से बोला जाता जैसे हिमाचल के ऊना में :

किकली कलीर दी, पग मेरे वीर दी
दुपट्टा मेरी भैण दा, झुंड मेरी भरजाई दा
सुरमा सलाई दा, नग बड़या नाई दा।
(स्रोत : सीतावती, ऊना)

मंडी उपशैली में, इस अनुसंधायक की नज़र में, दो-तीन नाट्य दल ही उभरे। मंडी नगर जैसा नाट्य दल; मलवाणा, बड़सू व सायरी गांवों का नाट्य दल; मलवाणा, बड़सू व सायरी गांवों का नाट्य दल;, मलवाणा नाट्य दल और रंधाड़ा नाट्य दल।

रंधाड़ा नाट्य दल में तो 'हरिरंग' ही लुप्त हो गया और विशेषतः यह कहा जा सकता है कि बांठड़ा की उपशैली मंडी में कान्ह-चंद्रावली नृत्य का कोई विशेष महत्त्व नहीं था। यह नृतय एक औपचारिकता-सी लगी।

अतः बड़ी ईमानदारी से स्पष्टतः यह व्याख्यायित किया जा सकता है कि केवल सुंदरनगर, जिसे सुकेत भी कह दिया जाता, के राजसी ठेठ लोक नाट्य बांठड़ा में कान्ह-चंद्रावली उत्सव व नृतय एक अनूठा प्रदर्शन था।

ब्लॉक-एक, फ्लैट-7, बालजी फ्लैट्स, जाखू, शिमला-, हिमाचल प्रदेश-171 001, मो. 0 94180 85615

रात्रि नौ बजे के आस-पास बांठड़ा का आयोजन आरंभ होना और लगभग दो-तीन घंटे तक चलता। प्रत्येक दिन नए-नए स्वांग खेले जाते। कुछ दिन नकलें भी शामिल होतीं। शहनाई-नगाड़ा पर 16 मात्रा की नौबत बजते ही दर्शक बांठड़ा देखने हर कोई जा सकता था। बैठने के लिए दरियां बिछी होतीं और कुछ अफसरों के लिए कुर्सियों का इंतजाम होता।एक तरफ महिलाएं और दूसरी तरफ पुरुष बैठते...। महल में ऊपर (ऊंची जगह में) राजा की गद्दी लगी होती जहां वह अलग बैठता... रानी राजा के बायीं ओर अलग कक्ष में बैठती। मंच का हिस्सा लगभग 40-45 फुट चौड़ा होता। मंच कोई ऊंचा स्थान नहीं था। उस पर दरियां और उनपर चादरें बिछी होतीं। पीछे काले रंग के पर्दे लगे रहते। मंच पर एक तरफ बैंच रखे जाते जहां पर कान्ह और चंद्रावलियां अपना नृत्य करने के उपरांत बैठ जाते। मंच के बायीं ओर एक पंक्ति में दो शहनाई और दो नगाड़ा वादक बैठते... नगाड़े पर चार मात्रा का सुथरी का डंका बजाया जाता और सभी को मालूम हो जाता कि बांठड़ा शुरू हो रहा है।

वसंत चिंतन

वसंत आये कि नहीं आये!

◆ पूरन सरमा

वैसे भी वसंत, इस बार देर से आया है। इसका कारण प्रकृति ही है लेकिन जीवन में आने वाले वसंत का तो अता-पता ही नहीं है कि वह आएगा या नहीं? वैसे वसंत की चाहना में उसकी बाट जोहने वाले भी रहे ही कहाँ हैं? यों वसंत हर साल पेड़, पत्तों, फूलों तथा पूरे उपवन में जोरों से खिलखिलाता है, लेकिन हम इतने बेपरवाह की ध्यान ही नहीं दे पाते। हम अपने ड्राइंग रूम में बैठे भौतिक सुख-सुविधाओं में तलाशते हैं अपना वसंत, वसंत ने आना नहीं छोड़ा है।

देर हो या सवेर वह जरूर आता है उस ठूंठ में भी, जो पूरे साल उदासीन और उपेक्षित सा खड़ा रहा था। पछुआ की छुहन जब वातावरण को छूने लगती है तब ही आकाश में बादल बनकर हल्की सी बूंदा-बांदी होती है, जो खेतों की फसलों का प्राण है और इसी के बाद आता है इठलाता-बलखाता यौवन के नशे में मदमाता वसंत, जो प्रकृति और मनुष्य के रोम-रोम को पुलकित कर डालता है। लेकिन हमारे अहसास बदल से गए हैं। हम नई चकाचौंध में फंसे उसकी आहट को नहीं सुन पाते।

इसी से बड़ी है हमारी संवेदन शून्यता, बर्बरता, हिंसा तथा अपराध की विषबेल। वसंत पल्लवन की अनदेखी ने जड़ता को जन्म दिया है और वातानुकूलित भवनों में वसंत के अक्स खोजने की अजीब सी लालसा लिए भटकाते हैं हम अपने मन के मायावी मृग को। अपने छल-प्रपंच के जाल में ही फंसा हमारा वसंत छटपटाता है बाहर आने को। लेकिन भुलावों के जाले ऐसे मकड़जाल बन गए हैं जिसमें वह एक निर्जीव सी मकड़ी की तरह लटककर काल का ग्रास बनते चले जाते हैं।

वसंत उल्लास और उमंग का एक नाम है जो रोज भीतर उल्लसित होता है लेकिन हमारे बीमार सपने वसंत को नहीं होने देते साकार। इसी उधेड़बुन को हम दूसरे नाम भी दे सकते हैं। खून सनी मिट्टी में भला कहाँ से उगेगा फूटेगा वसंत। सरसों के पीले फूलों को जब हवा छूती है और वे लचककर गेहूँ की वालियों पर झुकते हैं तो वह दृश्य किसे नहीं मोह लेता। लेकिन वर्षों बीते देखे थे हमने खेल और व गौरेया जो नीम की डाल पर किलकती रही है उसे भी कब सुना है हमने।

प्रकृति में निर्मल पावन सुर साधकों ने साधा और समझा है तो भीमसेन जोशी और पं. जसराज के कण्ठ ने। जो वसंत जीते हैं और गाते हैं उसी मीठे अन्दाज में वासंती गायन।

माघ मास की हल्की ठिठुरन का एक नाम भी है वासंती। यही वासंती आभास फागुन के लगते-लगते यौवन की दहलीज चढ़ने लगता है तथा वसंत के प्रसंग बदलने लगते हैं उत्सवों में। ये उत्सव कई नामों से जाने गए। फागोत्सव से लेकर मदनोत्सव का महोत्सव। रंगों से सराबोर प्रकृति के अनगिन रंग जब भाव मनको लुभाने को बेताब रहते हैं, तब हमारी यही बेचेन नव संदर्भों से जुड़ी मायावी लालसाएँ ही तो नहीं है जो पाती हैं प्रकृति में खिले वासंती दुकूल के साए में।

हम गाँवों से दौड़ते-दौड़ते महानगरों की चौड़ी सपाट सड़कों पर हांफ रहे हैं और फिर भी दौड़ें जा रहे हैं एक अंधी दौड़ में। फुरसत ही कहाँ है हमें धैर्य से हालात को समझने तथा विचारों में आए दूषित अहसास को पलायनता देने की मांगलिकता की। हमारे अपने मंगल चिन्ह अब रंगीन टीवी शानदार भवनों, कारों, सौफों तथा वातानुकूलित सुविधाओं के विस्तार में डूबे हैं और वसंत इसी ऊहापोह में हमसे कहीं दूर निकलकर बिछुड़ गया है।

दिलचस्प तो यह भी है कि हमें इसका मलाल नहीं सोचने का सवाल नहीं और प्रकृति से तालमेल का भाव नहीं। कल यही तो होगा कि जंगलों का विनाश तथा पर्यावरण का नाश तथा वन्य जीवन का सवा सत्यानाश। फिर भला वसंत आएगा कहाँ? वह ड्राइंग रूम में तो आकर बैठेगा नहीं। उसके तो अपने स्थान है जहाँ पर वह खिलता-खिलाता है।

नदियाँ जल की नहीं हमारे मन की भी लगभग सूखी हैं। मनकी नदी सूखने का परिणाम कितना घातक होता है हमें पता ही नहीं है। परिणाम के तौर पर दहेज के यातना शिविर में वसंत के पंख जल जाते हैं और हमारे संस्कार संस्कृति और सहकार, सहयोग एवं प्रेम के राग आप ही दम तोड़ने लगते हैं। तमाशा रोज का है घोटाला दर घोटाला। खुशहाली का समाज शास्त्र रचने के वहम में हम प्रपंच और छद्म से रचते हैं।

योजनाओं के ताने-बाने, करोड़ों की हेरा-फेरी से बटोरा वैभव क्षणभर में पतझड़ की तरह झर जाता है। जाँचों कोर्ट-कचहरियों तथा जेल के सीखंचों में भला कैसे मिलेगा वंसत। वह तो खुले

मैदानों-उपवनों की शोभा है, जिसे हम खोजते हैं अपने अगौरवीकरणों की चालबाजियों में। इससे तो ठीक था हम आदमी नहीं कोई चौपाए होते, जिसे बुद्धि नहीं होती और उसी से जीविका जुटाकर जीवन पूरा कर डालता है।

हमारे जीवन के उत्सव इतने भर तो रहे ही गए हैं कि हम एक-दूसरे को नीचा दिखाएं और अपने को ठहराएँ सर्वशक्तियां मान महामानव, अतिमानव और श्रेष्ठ पुरुष बिना वसंत के कैसे होगा यह सब संभव समझ से परे है। फिर इतमीनान से सोचने का समय है। क्योंकि वसंत कैसे आये, कहाँ आये और क्यों आये। ये प्रसंगिकता में निस्सार नहीं हैं। इस जड़ता में तो वसंत आये कि नहीं भी आये।

कोयल क्यों नहीं गाती और मन की खुरदरी भूमि पर क्यों नहीं फूटती नव कोंपल यह सवाल सबके लिए है, क्योंकि वसंत जीवन का ऐसा राग है जिसे सबको गाना है। नहीं गाया तो फिर आँखों से बहेंगे नीर तथा भाईचारे का मिटेगा नामोनिशान।

इस सुबह के भूले को हम यदि खोज लेते हैं अपना वसंत तो, भूले नहीं कहलाएँगे। हम ले आएंगे नदियों में अमृत, वनों में कल और खेतों में धान तो वजह नहीं है कोई कि हमारी नीयंतता को आँच आ जाए। हम युद्ध के सुहाने पर खड़े शांति के थोथे राग अलापते हैं और गाते हैं। कबूतरों की गुटगूं में कोई बेमजा बदरंगी श्रीहीन मंगलगान।

भीतर की महानदी में आह्वान करना होगा उस महा अभियान का जिसका श्रीगणेश होना शेष है। अभी बहुत शेष है इतना शेष है कि चुक जाएगी पीढ़ियाँ और लौटेगा नहीं हमसे हमारा बिछुड़ा हुआ वसंत राग।

अभी न तो रात है और न दिन ही ढ़ला है। उजास बाकी है यहाँ-वहाँ कोनों में। उसे ही समेट लो अन्यथा सारा सामान हमने विनाश का तो जुटाया ही है। इस नए गाँव में नई पहचान की जरूरत है जिसकी अपनी निजी प्रसन्ताएँ थीं। जागने का सोचने का और समझने का यही समय भी है।

अन्यथा वसंत छूट गया है हमसे कोसों दूर। जलते हुए दीप जब बुझते हैं तो अंधकार को बहुत खुशी होती है। यही तब अट्टाहास कर हमारी नादानियों की खिल्ली उड़ा रहा है और इतिहास तो जब सवाल करेगा तब हम मौन और मूक होंगे। उसके सवालों का कोई जवाब नहीं होगा हमारे पास। इतिहास का डर पीढ़ी को बरगलाने का भय तथा आतंक का खौफ सब किसी चमत्कारिक ढंग से विलोचित है तो फिर डरिए नहीं, स्वयं को तैयार रखिए अपने ही बनाए यातना शिविरों में बंद हो जाने को। क्योंकि वसंत तो आये कि नहीं भी आये।

12/61-62, अग्रवाल फार्म,
मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान-302 020, मो. 0 98280 24500

कविता

आखिरी पाठ

रमेश कुमार सोनी

मेघों की पोटली फाड़/ बरस पड़े हैं ठुमकती रजत बूँदे
इस धरा धाम की प्यास बुझाने,
बूँदे, नदी तालाब, झील, कुआँ होते हुए
समुद्र तक लौट जाती है/ कोई कैद हुई बोतलों में ,
कोई बर्फ होकर धिक्कारते बैठी है
इस पैसों की चकाचौंध वाली दुनिया को
जो प्यास की भाषा नहीं समझती।
लौट रहे हैं मेघों के डेरे चौमासा बीताकर
इस अफसोस के साथ कि /.....तुलसी तहाँ ना जाइए ....
हर बार वह अपने साथ/ अपने आने की फीस ले जाती है-
हमारे घर-द्वार, खेत-खलिहान,
गाँव मोहल्ला, कस्तूरी मृग, डोडो, काला चीता ......,
कुछ लोग सीख सीखा रहे हैं / पानी कैसे बचाना चाहिए
सुखी होली खेलें, नल की टोंटी बंद रखें,
पौधा लगाएं, पक्षियों के लिए सकोरा रखें ....
पढ़ रहे हैं लोग / पानी कभी बरसती थी ,
पानी कभी मुफ्त मिलती थी,/ निःशुल्क प्याऊ होते थे ,
पानी पूछने का रिवाज होता था !!
पानी कभी भी हमें अपना/ आखिरी पाठ पढ़ाकर लौट जाएगी
पानी को अपना विरासत मानने वाले
कब समझेंगे इसका ढाई आखर ?
धरा , कांस की श्वेत ध्वजा उठाकर बोल पड़ी
त्राहिमाम मेघ.... अब बस भी करो
पहाड़ खड़े हैं मेघों के जूड़े में फूल खोंचने
शर्माते हुए मेघ लौट रहे हैं अपने घरों की ओर
जाने कब लौटेंगे ?
जाने किसकी सुनेंगे ? कौन पुकारेगा ?
नदियाँ बिक गयीं हैं, जमीन की पानी बिक रही है
जेबें शान से इजाद कर रही हैं
पानी के नए पर्याय, नए कलेवर।
ढूढ रहे हैं कुछ लोग,
एक नया ग्रह बर्बाद करने के लिए।

बसना , छत्तीसगढ़

कविता

दिशा बदली – लक्ष्य की

रमेश चंद्र शर्मा

मुझे तलाश थी रोशनी की
मैंने दीपावली की अमावस से
मिलने का मन बनाया
कदम आगे बढ़ाया
मुझे घेर लिया दीयों ने
जल रहे थे, किंतु खुश थे!
मैंने रोशनी की ओर
जाने वाले रास्ते को
जान लिया,
उधर तो नदी बह रही थी
ज्योति पर्व की खुशी में!

मैंने चौराहे पर रखे
दीए से पूछा -
क्या रोशनी की मंज़िल
की ओर जाने वाला
कोई और भी है रस्ता?
दीया हंस पड़ा
अन्य दीयों की
दीपशिखा नाचने लगी।
कहकहों से भर गया
माहौल
मैं रुक गया, क्योंकि
उसी समय पास की
एक मुंडेर का दीपक
बुझ गया
उसके आस पास
अंधेरा घिरने लगा!
फिर एक और
दीपक बुझ गया!
इस घटना से मुझे अंधेरे के
वजूद का अहसास होने लगा।
दिल किसी भूली-बिसरी याद में
रोने लगा। मैं संभला।
मैंने फिर से रोशनी की तलाश
शुरू कर दी।
एक अग्नि पथ सा मिला
वह नदी थी जलती हुई किरणों की -
पर वहां सूरज नहीं था।
मैंने कहा, रस्ता दे दो
मुझे जाना है वहां -
ईश्वर की दी हुई पहले पहल की
रोशनी है जहां
मेरे जीवन की इन आखिरी घड़ियों में
मेरी अंतिम इच्छा पूरी होने दो
उसने कहा - पहले तम की
तलाश करो, खड़े न रहो।
वह छिपा है जिज्ञासा के साए में
दर्द का सहारा है उसे
उदासियां उसकी रक्षक हैं।
मैंने जल्दी ही उदासी को ढूंढ
लिया - सोचा कुछ तो मिला
वह बोली, मेरे हमजोली
मैं संगी साथी हूं तुम्हारी -
पर वह रोशनी क्या है तुम्हारी?
वह चुंधियाती किरणों की
जलती नदी
ज्वाला है तुम्हारी आकांक्षा की
जो थक चुकी थी
तुम्हारी राह जोहती जोहती
खड़ी खड़ी -
मैं बैठ गया उस नदी के किनारे
उन जलती हुई किरणों के सहारे।
बहती सरिता मखमली या लाल
रेशम सी लगी।
तभी, जलते चिरागों का
चला आया वहां, काफिला
पहले किरणें बुझीं
फिर नदी रुक गई
बहती बहती।

बड़े हमदर्द थे वे चिराग
जिन्होंने बचा ली मेरी ज्वलनशील
चाहत, भस्म होने से पूर्व
मुर्दा होती हुई आस
जीवित लगने लगी।
अब दर्द उठा, और बढ़ने लगा -
बोला- अभी तो तुम यहीं हो
जहां मैं हूं, मेरा मुकाम है
रात को पास बुला लो
जिंदा है अभी भी -
तुम्हारे हृदय में प्रेम, स्नेह
कोई तो होगा जो
तुम्हारी उदासी के जख्म को
धो देगा, सुनसान रात की
घड़ियों में इसे भर देगा
उस रात को मैं कब सोया
मुझे पता नहीं चला
मात्र इतना याद है कि
मुझे सपने टूटने की
आवाज आई थी।
मेरे उठ कर बैठने से वह
घबराई थी
प्यार का दर्द था वह
जो पिघलने लगा था
आंसू बनकर
अंधेरा हांफने लगा था।
मैंने उठ कर दीप जला दिया
रोशनी की तलाश
रोक दी कुछ समय के लिए
तुम्हारे प्यार की याद -
मेरे सामने खड़ी थी।
एक फरिश्ते की तरह
जिसने दिशा बदल दी -
मेरी सोच की -
मेरे लक्ष्य की।

रिटायर्ड आई.ए.एस.
टकसाल हाऊस, छोटा शिमला,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, दूरभाष : 0177 2621199

कविता

लड़कियों की जिंदगी आसान नहीं होती

लेख राज चौहान

लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती
जिम्मेदारियां कंधों पर उठाये,
कभी थी जो गुड़िया,
आज बेटी, कल पत्नी,
फिर मां होती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
पापा की लाडली मम्मी की साथी,
आते जब बाराती तो दुल्हन बन जाती,
कल तक जो थी पापा की बेटी,
भाई की बहन, सास की बहु,
देवर की भाभी, भतीजी की चाची,
फिर ताई, तो कभी-कभी बुआ बन जाती,
तब रिश्तों की बाढ़-सी आ जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
वक्त की सुई जैसी लड़कियों की जिन्दगी,
न कभी रुकी न कभी झुकी,
और न कभी सोई,
सुबह शाम काम ही काम,
नहीं लेती आराम का नाम,
प्यार में पूनम का चांद,
तो कभी दर्पण बन जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
काम की मारी पत्नी बेचारी,
रात को होती जब थकी हारी,
तब पति बोले बहुत काम हो लिया,
अब है मेरी बारी,
कभी हंसती तो कभी रुलाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
झुकी पलकें तो शाम हो जाती,
उठी पलकें तो सुबह हो जाती,
प्यार में पागल कुछ न करने को नाकाम,
बन के प्रेरणा तब,
आशा का दीप है जलाती,
कल तक था जो एक आम आदमी,
उसे तब संत 'तुलसीदास' का खिताब दिलाती,
अब तो समझो दोस्तों,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
जो था कल अपना,
जिद पापा से करती,
मेरा बेड मेरा कमरा,
यहां हूं मैं सोती,
मुझे मेरी गुड़िया दे दो,
नहीं तो मैं हूं रोती,
तब मम्मी की डांट डपट,
पापा की लाडली होती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
बचपन की यादें,
आंसू बन रोती,
जो थी कभी मम्मी की सहेली,
शरारतों की थी पीटरी,
आज बनी है वह,
साजन के घर की फुलवारी,
अब पापा कहता फिरता,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
जीवन की दौड़ में,
तेरे कदम न रुके न झुके,
जन्म देकर तब मां कहलाती,
परेशानियों की फिर जैसे दुकान खुल जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
कभी धर्म पर तो कभी जात पर,
कुर्बान हो जाती कभी उफ न करती,
सदैव मुस्कान है बरपाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
कभी बाजार में सजी दुकान,
तो कभी घर-गृहस्थी की शान है बन जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
लड़कियां जिन्होंने कभी हार नहीं मानी,
रार नहीं मानी,
कभी मुगलों पर तो कभी,
अंग्रेजों पर तलवार है तानी,
हौंसलों की मिसाल है बन जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
कभी गहरी नीली झील,
तो कभी झरना बन के,
प्यार है बरसाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
कल तक जो दिल नहीं देता था,
कोई संकेत,
जैसे तपती धरती,
सुखे पड़े थे खेत,
तब प्यार बरसा के हरियाली लाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
कभी गम तो कभी खुशी के,
आंसू बन जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
नाटी हो या हो लम्बी,
पतली हो या हो मोटी,
गोरी हो या काली,
सबकी बनती फिर भी घरवाली,
होती फिर घर-घर में दीवाली,
तब घर गृहस्थी स्वर्ग बन जाती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।
कभी आंधी तो कभी तूफान होती,
लड़कियों की जिन्दगी आसान नहीं होती।

अतिरिक्त निदेशक, राज्य लेखा परीक्षा विभाग एवं सलाहकार
वित्तीय अपराध, शिमला-171 009, मो. 0 94180 71740

कविताएं

नारी तुम

पुष्पा मेहरा

एक गाड़ी का साथ-साथ चलने वाला
पहिया कहलाती हो, वृहत्तर विस्तार
छूने की आकांक्षा में आगे बढ़ना चाहती हो
देखते-देखते ही तुम जननी, भगिनी, सहयात्री,
समानाधिकारिणी जड़ता के बंधन तोड़
खुली सड़कों पर जब आती हो तो शिकारी,
मांसाहारी बुद्धिजीवी पशुओं के विकराल पंजों से
दबोच ली जाती हो, आततायियों के जंगल में
भटकती तुम किसी उन्माद के अँधेरे में घिरी
कुत्सित वासना का शिकार हो जाती हो,
अपने ही साथी पहिये से कुचली जाती हो।

नारी तुम
पोषिका होते हुए भी शोषित रह जाती हो
तुम कोख में, समाज में, घर में, परिवार में
जाने-पहचाने मानवी भेड़ियों के चंगुल में फँसी
तन-मन की पीड़ा सहती मोबाइल में कैद
सनसनी का मात्र किस्सा बन
जीवन-मृत्यु के झूलों में झूलती
बासी हुई खबरों के बीच ताजी जानदार खबर
बन जाती हो।
कब तक ! आखिर कब तक !
आओ! इस कब तक का अंत करें
इस पर अबला नहीं सबला की मोहर लगाएँ।

बी -201, सूरजमल विहार
दिल्ली-92, दूरभाष : 011 22166598

नई कलम/कविता

ममता का अपमान

शिल्पा ठाकुर

मां! मैं बेटी, बहन बनकर प्यार जताऊं
पत्नी बनकर हर फर्ज निभाऊं
मेरी ही इज्जत नीलाम कर जाएं
मुझे ही जिंदा जलाएं!

ऐसे कुपूतों को मैं जन्म ही न दूं
कभी कोई सुपूत मेरा कुपूत बन जाए
अपने हाथों से जला दूं!

मैं, मां हूं, मैं कह रही हूं
ऐसे कुपूतों को मैं जन्म न दूंगी
मेरी आंचल की छाया को मैली कर जाए
मेरे दूध को बदनाम कर जाए
मेरी ममता का अपमान कर जाए
ऐसे कुपूत को मैं कदापि जन्म न दूंगी।

मेरी कली को, मेरी बेटी को
जो मान ना दे पाए
उसका सम्मान ना कर पाए
उसकी ओर आंख भी उठाए
मैं बर्दाश्त ना करूंगी
ऐसे कुपूत को मैं जन्म न दूंगी।

बेटा वो हो, जो मां के दूध का मान रख जाए
पिता के संस्कारों का सम्मान कर जाए
बहन की राखी की लाज रख जाए
पत्नी के प्रेम को अधिमान दे जाए।

बेटी को पलकों में बिठाए, संस्कार सिखाएं
दुनिया की हर लड़की को बेटी मान के दिखाए।

गांव छतर, डाकघर जलपेहड़, तह. जोगिंद्रनगर,
जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 015

बिटिया रानी

प्रतिभा शर्मा

बिटिया मेरी सुंदर प्यारी
है अंबर का तारा
चमकेगी वो टिम-टिम करके
लाएगी उजियारा
दादी की है प्यारी वो तो
दादा की है दुलारी
बातें करती ऐसी अद्भुत
वो जादू की पिटारी
शाम को थक कर हम जो आते
इकदम थकन मिटाती
जितना भी आया हो गुस्सा
वो तो तपन बुझाती
मुझसे कहती मैं हूं मम्मी
तुम बन जाओ बेटी
सारा काम करूंगी मैं ही
बस तुम रहना लेटी
मैं जब उससे मस्ती करती
मुझको डांट लगाती
तेरी अदा पे बिटिया रानी
मम्मी बारी जाती
दुनिया जब बेटी को दुःखाती
मैं मन -मन घबराती
अपनी फूल सी बच्ची को मैं
खरा-बुरा समझाती
फूल सी मेरी बच्ची को
न कोई कभी सताए
खूब पढ़े और शान से झूमे
प्रतिभा नाम कमाए

प्रवक्ता हिन्दी, रा.व.मा.पाठशाला
कल्लर, बिलासपुर, हि.प्र 174001

प्रोमिला भारद्वाज की कविताएं

लहरें

आनंद की लहरें
हिलोरे लेती
हर ओर,
बटोरने को आतुर
हम-तुम-सभी
मिलें तो फिसलें कभी।
प्रेम रस में सने
सद्कर्म करते
परोपकारी हथेलियों पर
टपकें निरंतर
बूंदें आनंद की।
निश्छल शिशु जैसे
पवित्र, भोले-भाले
मन के आंगन में
स्वयं ही बरसे
आंनद की लहरें।
बनें ऐसे, और बढ़ें
कुछ ऐसे उस ओर,
हम-तुम-सभी
दौड़ती आएं मचलती
छूने हमें भिगोने
आनंद की लहरें
हिलोरे लेती
हर ओर।

अनदेखा न कर

अल्प जीवन में
क्यूं कहें हम
समय है कम
कितने अनगिनत क्षण
छू-छू के हमें
चले जाते
अनदेखे, व्यर्थ।
ज्ञान की आंखें
मूंदें
आलस्य-ऐश्वर्य में
मूढ़ता से डूबे,
गंवाए जा रहे
सहस्रों अनमोल
चमत्कारिक क्षण
अनजाने ही
उलाहना देते फिरते
भाग्य को
छुपा बैठा जो
हर गुजरते क्षण में
क्यूं न उसे पहचानें
इससे पहले
पंख फैला
उड़ान भरे वो
उससे पा लें
सार्थक जीवन
जीने की कुंजी
हो जाएं ऋणी
प्रत्येक क्षण के
अल्प जीवन में।

धो डाले मन

धूल धूसरित वन उपवन
पुष्प लताएं, कुंज सघन
देख भजे गगन के नयन
रिम-झिम-रिमझिम बरसाए घन
धो डाला एक-एक तृण
खिली-खिली प्रकृति प्रसन्न
मनमोहक दृश्यावली निहार
पुलकित हुआ हृदय, पर
केवल क्षण भर
आहत कर गया ये विचार
सूझे न क्यूं, ऐ अंबर।
मन में भरे विकार
आहत कर गया ये विचार
धो देते मन की मलिनता
ईर्ष्या से जाता न भर
मन देख प्राकृतिक निखार
हर्षित होता ये हर प्रकार
छिड़काओ ऐसी फुहार
जन-जन का मन दो संवार
मन व उपवन में बराबर
आए उज्ज्वल निखार
दोनों एक दूसरे को निहार
प्रफुल्लित हों बराबर।

महा-प्रबंधक, जिला उद्योग केंद्र, बिलासपुर, जिला बिलासपुर,
हिमाचल प्रदेश-174 001, मो. 0 94180 04032

दीपक भारद्वाज की कविताएं

कविता की हिदायत

एक कवि की पहली प्रेयसी
कविता,
कुछ रुखसत सी रहती है मुझसे आजकल
मगर, कभी-कभी
आंखें बंद करके जब मैं
याद करता हूँ उसे
तो कहती है,
कि मत सोचा करो मेरे बारे में इतना।

यूं हर्फ दर हर्फ रंगते रहते हो
मेरे नाम पर!
हिदायत भरे अंदाज में फिर कहती है !
कुछ स्याही बचाना भी सीख लो भविष्य के लिए
जब, इन चीड़ - दारूओं के फेफड़ों का
नहीं करेगा कोई प्रत्यारोपण
जब मेघ हो जाएंगे खोखले,
जब किसान के माथे से नहीं टपकेगी जमीं की नमी,
जब रगों में नहीं बहेगा रक्त,
जब इन नदी-नालों के पास भी नहीं रहेगा
सावन में कई आशियाने
उजाड़ने का काम
जब समंदर भी तब्दील हो जाएंगे बालू की खानों में।

ऐसा वक्त, जब
नहीं होगा मलाणा जैसा लोकतंत्र भी
जब इंसान की हड्डियां ही मिलेंगी
किसी पाषाणिक युग के औजारों के जैसे!
जब नहीं रहेंगी ये दीवारें और उन पर
टंगा वो मोर का पंख,
जब किसी दरख्त के ठूंठ में
ढूंढने पर भी नहीं मिलेगी स्याही
ऐसे शून्यकाल के लिए भी होना चाहिए
कोई न कोई इंतजाम
ताकि, कविता भी ले सके
फिर से जन्म।

कविता का सफर

जब भी कभी,
कागज के शिकार पर निकलता हूँ
तो कलम में स्याही भरते-भरते
सोचता हूँ / क्या मेरे धमाके की आवाज
सुनेगा कोई?/ या
इधर-उधर से उभर आएंगी ये पहाड़ियां,
उस ध्वनि के / आंदोलित होने से पहले !!!

कुछ भी हो / अपने शिकार पर पहुंचकर
करता हूँ जब चीर-फाड़ शुरु
तो देखकर सन्न रह जाता हूँ
और, तभी / कागज के गर्भ से निकलती है
'कविता'।

नहीं होता कविता का
कोई एक अमुक जन्मदाता
और न वो पैदा होती है
नौ माह बाद, / न ही वो निकलती है किसी बीज
के अंकुरित होने से / बल्कि, ये एक ऐसी गोली है
जिसका बारुद होता है / कवि के सीने में
और जब ये छूट जाती है / रोशनाई के गर्भाशय से
कागज की गोद में / तो इसका पोषण करता है
पाठक।

ऐसे में वो परिष्कृत कर देता है
इसका भविष्य
इतना सा ही सफर नहीं है
एक कविता का
कविता तो जिंदा रहती है
एक खत्म ना होने वाले समृद्धी रस्ते की तरह
पेड़, कागज कलम, बारुद, कवि और एक पाठक पर
पर्दा गिर जाने के बाद भी।

पैलेस बिल्डिंग, फर्स्ट फ्लोर, सेट नं. 4,
फिंगास्क इस्टेट नियर कालीबाड़ी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 001, मो. 0 98575 81834

बच्चों का कोना
कविताएं

अच्छी जिंदगी

◆ निष्ठा



कुछ लोग
ऐसे भी हैं जो
पीपल की छांव में
बैठकर फिर
दूसरों का
भला-बुरा सोचते हैं
लोगो ऐसी
जिंदगी भी क्या है?!

जोकि उनका
खयाल न रखकर बातें बनाए
ऐ लोगो, ऐसे
जीवन का क्या फिर जीना
जो कभी भी
किसी के काम न आए।
तुम खेद को
अब अच्छी तरह सुधार लो
वरना आगे जाकर
तुम बहुत ज्यादा पछताओगे
तुम सोचते होंगे
बच्चों को अफसर बनाना है
खुद तो सवेरे
उठ तुम जल्दी जाते हो
और बच्चों को
अपने देरी से उठाते हो
कब तक तुम
यह सब कुछ करते रहोगे।
बच्चों की अपने
जिंदगी क्यों खराब करते हो
उठो-जागो
भारत के लोगो अब तुम
तभी तुम अपने
बच्चों को पढ़ा-लिखा पाओगे।

पुत्री श्रीमती कमलेश सुमन गांव व डाकघर बातल,
तहसील अर्की, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 208

सूरज दादा

सूरज दादा कहां छिप जाते हो
इतने-इतने दिन बाद नजर आते हो
क्या तुम भी सर्दी से घबराते हो
इसीलिए हमें छोड़कर चले जाते हो
गर्मी में तो अपना गुस्सा दिखाते हो
अपने गुस्से से ही फसलें पकाते हो
सर्दी में भी ऐसा ही रूप दिखाओ
रोजाना आकर हम सबकी सर्दी भगाओ।



भावना चौहान
कक्षा छठी, उम्र ग्यारह वर्ष
स्कूल वीनस पब्लिक स्कूल, आजाद नगर,
रोहतक, हरियाणा

कहानी

देर आयद दुरुस्त आयद

◆ ज़हीर कुरेशी

एम.पी. पीएससी सिलेक्शन के बाद, जब मैं चन्देरी में नायब तहसीलदार पदस्थ हुई, उस समय मेरी उम्र सिर्फ पच्चीस साल थी। लेकिन, नायब तहसीलदार से तहसीलदार बनने में मुझे पूरे अठारह साल लग गए। तहसीलदार शमशाबाद बनने के समय मैं तैंतालीस साल की थी। एक न्यायप्रिय और दबंग रेवेन्यु ऑफिसर के रूप में मेरी पूरे भोपाल संभाग में ख्याति थी। शादी तो हुई नहीं थी, इसलिए कलीग्ज में मैं दिन-रात के पूरे चौबीस घण्टे ड्यूटी करने के लिए तैयार ऑफिसर मानी जाती थी।

शमशाबाद पोस्टिंग के छह महीने के भीतर ही रेत-माफिया गैंग से मेरी मुठभेड़ हो गई। रात दो बजे मुखबिर ने मुझे खबर दी, अवैध रेत की तीन ट्रैक्टर-ट्रालियाँ गुजरने वाली हैं। मैं रात में थाने पहुंची, छह कॉन्सटेबिल लिए और चल पड़ी अवैध रेत जब्त करने। मैंने चिल्ला कर ट्राली ड्रायवरों को आगाह किया- 'ट्राली से नीचे उतर आओ, पंचनामा बनेगा!'

इतना कहते साथ ही गोली चली जो मेरे सिर के ऊपर से गुजर गई। फिर अगली ट्राली वाले ड्रायवर ने मेरी ओर रेत से भरी ट्रैक्टर-ट्राली दौड़ा दी। मैं तुरंत जिगजैग दौड़ी। ट्राली मुझे रौंद नहीं पाई। मेरे स्कॉड के सिर्फ तीन सिपाहियों ने मेरा साथ दिया और तीनों ने ट्रालियों के पिछले पहियों में गोली मार कर पहिए पंक्चर कर दिए।

अंधेरे का लाभ उठा कर, दो ड्रायवर तो भाग निकले। दौड़ कर मैंने तीसरे ड्रायवर को दबोच लिया, उसे थाने लाया गया, केस दर्ज हुआ। शमशाबाद थाने में उसी समय स्थानीय पत्रकार भी बुला लिए गए। इस बीच, मैंने एस.पी. विदिशा से सहयोग न करने वाले तीनों सिपाहियों के निलंबन की सिफारिश कर दी। उस समय, मेरा रणचंडी रूप देख कर थाने का सारा स्टाफ सहम गया। किसी ने अटकते-अटकते मुझसे इतना भर कहा- 'मैडम, रेत माफिया ऊँची पहुँच वाला है!'

स्थानीय पत्रकारों की सक्रियता से अगले दिन तो नहीं, लेकिन, दूसरे दिन प्रदेश के सभी प्रमुख अखबारों ने मेरी कर्तव्य-निष्ठा, दबंगी और अन्याय से लड़ने की अदम्य इच्छाशक्ति को ले कर फोटो सहित पाँच-पाँच कॉलम के समाचार छापे। भोपाल से निकलने वाली दैनिक 'पत्रिका' के रविवारीय अंक में मेरा इंटरव्यू भी छपा। तीन दिन के अंदर मैं विभाग से ले कर प्रदेश की अखबार पढने वाली जागरुक जनता के बीच जैसे 'नायिका' बन गई। सोमवार को कलेक्टर, विदिशा ने मुझे अपने दफ्तर बुलाया और मेरी कर्तव्य-निष्ठा और जज्बे की सराहना करते हुए स्थानीय सांसद के हाथों पाँच हजार नकद राशि दे कर सम्मान किया। इस घटना ने आकस्मिक रूप से इतना तूल पकड़ा कि स्वाधीनता दिवस पर परेड ग्राउंड, भोपाल में हजारों की भीड़ और मुख्यमंत्री की उपस्थिति में महामहिम राज्यपाल ने मुझे सम्मानित किया। मुझे शाल, श्री-फल, प्रशस्ति-पत्र के साथ पचास हजार रुपए का चैक भी प्रदान किया गया।

इधर मीडिया और सरकारी तंत्र में मेरा महिमा-मंडन हो रहा था, उधर मैं ताकतवर रेत-माफिया की हिट-लिस्ट में टॉप पर थी। अखबारों में इस आशय की खबर छपने के बाद एक दिन बैरसिया से चिंतित माँ का फोन आया, 'अमिता, शमशाबाद से ट्रान्सफर करवा ले।'

इससे पहले कि मैं इस आशय की अर्जी ले कर भोपाल जाती, जून में निकली ट्रान्सफर लिस्ट में स्वतः ही मेरा नाम शामिल था, मैं शमशाबाद से स्थानान्तरित हो कर ग्वालियर पहुँच गई।

ज्वाइन करने के लिए जब मैं कलेक्टर, ग्वालियर के सम्मुख पेश हुई तो जिलाधीश ने मुझे 'आयरन लेडी' कहा। अपने चार-पाँच मातहतों को बुला कर मेरा परिचय कराया, बड़े बाबू को बुला कर कहा, 'अमिता मिश्रा का एज तहसीलदार, ग्वालियर पोस्टिंग ऑर्डर निकालो।' सुधीर बाबू को बुला कर बोला, 'अमिता को गाँधी रोड पर अमुक-अमुक आवास अलॉट कर दो।' फिर साहब बोले, 'अमिता, यहाँ भी अपनी छाप छोड़ कर जाना।' मैंने विनम्रता-पूर्वक उत्तर दिया, 'अगर आपका आशीर्वाद साथ रहा तो साहस करूँगी।'

इस प्रकार, मैं जिला मुख्यालय से अलग तहसील, ग्वालियर की स्वतंत्र तहसीलदार नियुक्त कर दी गई। मेरे इमीजिएट ऑफिसर थे- डिपुटी कलेक्टर अरविन्द मेनन- जो बहुत कम बोलते थे। लेकिन, मेरे तुरंत निर्णय लेने की क्षमता का उन्होंने नोटिस लिया और कलेक्टर साहब को रिपोर्ट किया। मेरा और मेनन साहब का ऑफिस मोती महल परिसर में ही था।

ग्वालियर में व्यवस्थित हुए मुझे एक साल हो चुका था, एक दिन माँ का फोन आया, 'अमिता, तेरी बचपन की सहेली कविता परमार भी तो ग्वालियर में है। ग्वालियर में ही उसकी शादी हुई थी, उसकी मम्मी ने कविता का सेल नम्बर दिया है, लिख ले!'

बीते बीस सालों में कविता को तो एक प्रकार से मैं भूल ही गई थी, जबकि कक्षा एक से बी.कॉम तक हम दोनों साथ-साथ

पढ़े। बी.कॉम करने के लिए हम दोनों सीहोर में न केवल एक ही कॉलेज, बल्कि तीन वर्ष तक एक साथ एक ही कमरे में रूम-मेट भी रहे। बाद में, कविता के पेरेन्ट्स उसकी शादी के लिए बजिद हो गए, मेरे मम्मी-पापा ने मेरी महत्वाकाँक्षा का साथ दिया। मैं एम.पी. पी.एस.सी. की फर्स्ट कैटेगरी में तो सिलेक्ट नहीं हो पाई, लेकिन, थर्ड कैटेगरी में चयन हो कर नायब तहसीलदार जरूर बन गई। विगत तीन साल से मैं तहसीलदार थी। अब मेरी उम्र ने पैंतालीस की सीमा पार कर ली थी।

कविता उम्र में मुझसे दो साल बड़ी थी।

एक छुट्टी वाले दिन, दोपहर में मैंने मोबाइल पर कविता को डायल किया, फिर अपने पुराने दबंगई अंदाज में पूछा, 'कौन.... कविता बोल रही है!' उधर से आवाज आई, 'जी हाँ, लेकिन आप कौन?'

मैं जोर से हँसी, बोली, 'मैं अमिता.... अमिता मिश्रा!'

कविता ने अचरज के साथ पूछा, 'अमिता! कहाँ है तू? आई मीन कहाँ से बोल रही है?'

मैंने शरारती लहजे में उत्तर दिया, 'मुँह से बोल रही हूँ।'

कविता झल्लाई, बोली, 'यह तो मैं भी जानती हूँ। मेरा मतलब किस जगह से बोल रही है? तू तो कोई बड़ी अफसर बन गई थी!'

अब तक मैं थोड़ी सहज हो चुकी थी, बोली, 'माय डियर कविता, एक साल से मैं तुम्हारे ही शहर ग्वालियर में हूँ। मोती महल में बैठती हूँ- तहसील, ग्वालियर की इनचार्ज हूँ।'

'तो ये कह न कि तू तहसीलदार है! बात को घुमा क्यों रही है?' फिर कविता ने कहा, 'बीस साल बाद तुझे देखूँगी, यार! तू कितनी बदल गई होगी? अच्छा, अब यह बता कि मुलाकात कैसे हो? तू मेरे यहाँ आ रही है या मैं तुझसे आ कर भेंट करूँ? आज सनडे है, हॉस्टल से रिमझिम भी आई हुई है। शाम को अलकापुरी आ जा, सभी सदस्यों से मुलाकात हो जाएगी। आठ बजे तक आ, डिनर साथ लेंगे।'

मैंने कहा, 'पूरा पता एस.एम.एस. कर दे!'

अपनी निजी कार को खुद ड्राइव करती हुई मैं न्यू हाई कोर्ट के पीछे, 20 अलकापुरी जा पहुँची। मकान क्या था, आलीशान बंगला था- जिस पर म.प्र. शासन में राज्य मंत्री अलबेल सिंह तोमर की नाम-पट्टिका देख कर मैं थोड़ी चौंकी। बंगले के सामने आकर कार रुकी तो पति-पत्नी और बेटी तीनों ने भाव-भीना स्वागत किया।

बैठक में पहुँचे तो कविता मुझसे लिपट गई, उसकी आँखों में आँसू थे। रिमझिम ने कहा, 'माँ अक्सर आपका जिक्र करती रहती हैं।' भवेश ने भी पुष्टि की, कहा, 'मैं आप से पहली बार मिल रहा हूँ। लेकिन, कविता ने इन बीस सालों में आपके विषय में इतना बता डाला है कि अपरिचित नहीं लग रही हैं।'

कविता ने तुरंत सब लोगों पर अपना आदेश पारित कर दिया, 'डिनर रात साढ़े नौ बजे होगा। डाइनिंग टेबिल पर हम साढ़े नौ बजे मिलेंगे। डेढ़ घण्टे अमिता मेरे कब्जे में है, ढेर सारी बातें जो करनी हैं।'

फिर मेरा हाथ पकड़ कर अपने निजी कमरे में ले गई, डोर लॉक कर दिया।

डबल बैड के दो छोरों पर आमने-सामने बैठ कर पहले तो हम दोनों दो-तीन मिनिट मौन रहे। फिर कविता ने ही पूछा, 'स्टेटस?'

'अभी तक सिंगल!' फिर मैंने बात आगे बढ़ाई, बोली, 'पैंतालीस के बाद अब क्या मैरिज करूँगी!'

'पैंतालीस कोई सत्तर साल तो नहीं है! मैं समझती हूँ- हर औरत को इसी उम्र में शादी करनी चाहिए।' फिर कविता ने पूछा, 'क्या शादी तेरी वजह से डिले हुई है?'

मैंने कहा, 'तीस-बत्तीस तक तो मैं भी शादी कर लेना चाहती थी। लेकिन, पापा अपनी नायब तहसीलदार बेटी के लिए कोई तहसीलदार.... कोई डिपुटी कलेक्टर लड़का ढूँढ रहे थे। नहीं मिला। एक नायब तहसीलदार लड़के का रिश्ता आया था, पापा ने इसलिए रिजेक्ट कर दिया, क्योंकि वह मुझसे दो बैच जूनियर था, एज भी कम रही होगी।.... एक सेल्स टैक्स इंस्पेक्टर इसलिए रिजेक्ट हो गया, क्योंकि वह सनाढ्य ब्राह्मण नहीं था। एक असिस्टैण्ड इंजीनियर तो मुझे बहुत पसंद था, उससे मेरी कुण्डली नहीं मिली!' कह कर मैं मौन हो गई।

कविता ने अफसोस जताते हुए कहा, 'सो सैड! .... अंकल इतने दकियानूसी लगते तो नहीं थे?'

मैंने कहा, 'पापा द्वारा की गई मेरे रिश्तों की अगर-मगर देख कर.... मुझसे छोटी बहिन ने अपने सिन्धी सहपाठी से और सबसे छोटी बहिन ने एक जैन डॉक्टर से विवाह कर लिया। ....इस प्रकार की गईं दोनों बहिनों की शादियों के बाद पापा को एक के बाद एक दो अटैक आए। दूसरे अटैक से उबरने के बाद, एक दिन पापा ने मुझसे माफी माँगी, लेकिन, तीसरे अटैक ने उन्हें हमेशा के लिए हमसे दूर कर दिया।' मैंने महसूस किया- मेरी आँखें नम हैं।

कविता ने आगे बढ़ कर मेरे आँसू पौंछे, उठाया, पानी पिलाया, वाश-बेसिन पहुँचाया और उसके बाद हम लोग डाइनिंग टेबिल तक पहुँचे। डिनर के लिए भवेश और रिमझिम भी आ गए। शानदार डिनर हुआ।

लौटने से पहले मैंने कविता से पूछा, 'इस महलनुमा बँगले में तीन लोगों के अलावा और कौन-कौन रहता है?'

कविता हँसते हुए बोली, 'तीन भी कहाँ, दो। रिमझिम तो सिंधिया कन्या विद्यालय के हॉस्टल में है। भवेश को अपनी राजनैतिक गतिविधियों से ही फुर्सत नहीं। मैं अकेली जरूर इस महल में बैठी-बैठी शायरी करती रहती हूँ।.... पापा-मम्मी भोपाल में हैं!'

रात साढ़े दस बजे अलकापुरी से लौटने के बाद मुझे लगा- मेरे मन का सारा बोझ उतर चुका है। आज पहली बार किसी ने इतनी आत्मीयता से मेरी बरसों पुरानी पीड़ा को सुना। मैंने पहली बार महसूस किया- दोस्ती से बढ़ कर कोई रिश्ता नहीं!

कविता और भवेश से मिलने के बाद मैंने ग्वालियर में अपने आपको बहुत सुरक्षित महसूस किया। कविता के ससुर म.प्र. सरकार में मंत्री हैं, यह विचार भी आश्वस्ति-दायक लगा, कभी काम आ सकते हैं। फिर तो दोनों परिवार एक-दूसरे से लगातार मिलने-जुलने लगे। कविता जब भी मेरे एलॉटेड आवास पर आती, उसके साथ भवेश जरूर होते। मेरे आवास पर काम करने वालों को बता दिया गया था- कविता मेरी बड़ी बहिन और भवेश जीजू हैं। स्टाफ उन्हें बिना इन्क्वारी घर में दाखिल होने देता था।

ड्यूटी से जब भी मुझे फुर्सत मिलती, मैं अलकापुरी चली जाती। इतने बड़े बंगले में कविता और उसके स्टाफ के अलावा प्रायः कोई और नहीं होता था। गाहे-बगाहे भवेश से भी दुआ-सलाम हो जाती थी। कविता से तरह-तरह की ढेर सारी बातें होतीं। वह मेरे बारे में चिंतित रहती, समय पर नाश्ता, लंच, डिनर कर लेने की हिदायत देती। कविता की राजनीति से ज्यादा शायरी में रुचि थी, गजलें लिखती थी, किसी अच्छी गोष्ठी में जाती तो मुझसे भी समय निकालने के लिए कहती।

उस दिन सनडे था, मैं घर पर अपनी आवश्यक फाइलें निपटा कर अलकापुरी चली गई। लंच मैंने कविता के घर ही लिया। फिर दोनों सहेलियाँ डबल-बेड पर लेट कर सीहोर के सह-जीवन की बातें करनी लगीं, कविता ने पूछा, 'बी.कॉम का वो आशिक तुझे याद है... साहिल- जो हाथ धो कर तेरे पीछे पड़ गया था? तू भी उसके चक्कर में आ गई थी।'

मैंने कहा, 'हाँ, वो मुझे अच्छा लगता था।'

कविता हँस कर बोली, 'उसने तो तुझे चूमा-चाटा भी था?'

मैंने कहा, 'एक-दो बार.... बाद में मैंने उसको उसकी सीमा बता दी थी!'

कविता थोड़ी गंभीर हो गई, पूछने लगी, 'स्त्री-पुरुष संबंधों में तू नैतिकता को मानती है?'

मैंने कहा, 'मेरे मानने से क्या होता है! इक्कीसवीं सदी का समाज नहीं मानता। विवाह संस्था खतरे में है।'

तभी भवेश जीजू ने हमारे कमरे में झाँका, बोले, 'अरे अमिता जी आई हुई हैं?' मैंने उनकी बात का उत्तर न देते हुए पूछा, 'जीजू, आजकल आप हमारी कविता दी का खयाल नहीं रखते?'

तभी कविता ने बीच में अपनी ताजा गजल का शेर पेश कर दिया - 'दूर का आइना पाने के जुनूँ में उसने,

खुद को देखा ही नहीं पास के आईने में।'

भवेश ने प्रतिवाद करते हुए कहा, 'अमिता, तुम्हारी सहेली की ऐसी बातें ही मुझे हर्ट करती हैं!' भवेश नाराज हो कर स्टडी में चले गए।

मैंने कविता से पूछा, 'पति, पत्नी और वो का ट्रेंगल है क्या?'

कविता मेरे प्रश्न को नजर-अंदाज करते हुए बोली, 'अमिता, बहुत दिनों से मैं तुझसे एक बात पूछना चाहती हूँ- हिम्मत नहीं पड़ती!' मैंने कहा, 'हर तरह की बात तो तू मुझसे पूछ लेती है, इसको पूछने में इतना संकोच क्यों!'

कविता ने थोड़े सतर्क होते हुए प्रश्न किया, 'मान लिया, अपने जॉब को लेकर तू बहुत उलझी हुई.... बहुत व्यस्त है, फिर भी तेरी कुछ सेक्स डिजायर्स तो होंगीं?'

मैंने बेबाक उत्तर दिया, 'बिलकुल हैं!'

कविता ने मेरी आँखों में आँखें डालते हुए पूछा, 'उन्हें तू कैसे पूरा करती है? किसी पराए मर्द या औरत की मदद लेकर या अकेली?' मैंने थोड़ा हिचकिचाते हुए कहा, 'मेरे जीवन में कोई दूसरा तो है ही नहीं!'

इतना कह कर मैं उठ खड़ी हुई और कविता को विश करके सीधे अपने आवास चली आई। घर लौट कर, पहली बार कविता द्वारा किए गए इतने खुले-खुले प्रश्नों पर विचार करने लगी। सोचती रही- मेरी सेक्स डिजायर्स को लेकर कविता आखिर क्या कहना चाहती है?

इस घटना के बाद, दो हफ्ते तक मैंने कविता से कोई बात नहीं की। एक दिन जीजू मेरे ऑफिस आए, बोले, 'कविता से क्यों बात नहीं कर रही हो? कविता उस दिन के बाद बहुत अप-सेट है। शी इज योर रियल फ्रेन्ड, तुम्हारे लिए कुछ भी कर सकती है। कल गुड फ्राइडे की छुट्टी है, अलकापुरी आओ। हम दोनों तुमसे कुछ बात करना चाहते हैं। लंच आवर्स में आ जाओ।'

गुड फ्राइडे को दोपहर एक बजे मैं फिर कविता के घर जा पहुँची। दो बजे हम तीनों ने लंच लिया।

बातचीत के लिए तीनों ड्राइंग रूम में आ कर बैठ गए।

बातचीत का सिरा कविता ने ही जोड़ा, बोली, 'अमिता, तेरे भविष्य को लेकर कभी-कभी मैं बहुत डिस्टर्ब हो जाती हूँ। अभी तेरे पास पद है, प्रतिष्ठा है- अभी तुझे महसूस नहीं होता। बारह साल बाद, जब तू रिटायर हो जाएगी, तब तुझे तेरा सिंगल स्टेटस खाने को दौड़ेगा। औरत को डेफीनिटली पुरुष की छाया चाहिए।'

मैंने थोड़ा चिढ़ते हुए पूछा, 'बोल, किससे कर लूँ शादी? खजुराहो की किसी 'मेल स्टेचू' से?'

उत्तर भवेश जीजू ने दिया, बोले, 'जबलपुर में मेरे एक मित्र हैं- अनुराग श्रीवास्तव। उनकी पत्नी श्रुति कविता की भी दोस्त है। श्रुति ने कविता को अपनी सास के शान्त होने के विषय में बताया था। अनुराग अपनी माँ के अवसान के बाद पिता विपिन श्रीवास्तव को लेकर बहुत परेशान है। विपिन जी रेवेन्यु में ही डिपुटी कलेक्टर थे, पिछले महीने रिटायर हुए थे। इस महीने की एक तारीख को उनकी पत्नी प्रस्थान कर गईं। उसके बाद विपिन

नवगीत

संत्रासों का दास

◆ जयराम जय

कभी न सोचा क्या होगा कल
होता सिर्फ विकास रहा
बढ़ा प्रदूषण हद से ज्यादा
दूभर लेना साँस रहा

सीना तान के खड़े हो गये
कंकरीट के जंगल
जीवनदायी वृक्ष कहाँ गये
कैसे होगा मंगल
धूल कणों से भरी हवा है
गली -मुहल्ला खाँस रहा

दिनदूनी और रात चौगुनी
बड़र प्रगति की हमने
किन्तु दैव को एक न भाई
आँख दिखाई है उसने
जीवन जीना कठिन हो गया
संत्रसों का दास रहा

हृदयाघात हुआ है पल में
किसी के गुर्दे हुये खराब
फिर भी छोड़ न पाये जर्दा
पीना जमके रोज शराब
दूर हो गये रिश्ते -नाते
दुखड़ा केवल पास रहा

महा बिषैली धुन्ध बढ़रही
मण्डल हुये प्रदूषित
अपने कर्मों का फल पाते
जल-जमीन-नभ कर दूषित
आँख दिखाता फिर धमकाता
घर -घर घूम विनाश रहा

जिधर देखिये मास्क लगाये
घूम रहे हैं लोग यहाँ
सच कह दूँ तो बुरा लगेगा
भोग रहे हैं भोग यहाँ
इससे प्राण बचेंगे कैसे
कभी न तनिक प्रयास रहा

कभी न सोचा क्या होगा कल
होता सिर्फ विकास रहा
बढ़ा प्रदूषण हद से ज्यादा
दूभर लेना साँस रहा

'पर्णिका' बी-11/1कृष्ण विहार
आवास विकास कल्याणपुर
कानपुर, उ. प्र.-208017
मो. 0 94154 29104

जी एकदम मौन हो कर रह गए हैं। अनुराग की बड़ी बहिन अमेरिका में है। अनुराग नौकरी करे या पापा को सम्हाले? बहू ससुर से कितनी बात करेगी!'

अब बातचीत का मोर्चा कविता ने सम्हाला, 'अमिता, तुम तो विपिन जी को जानती होगी?'

'हाँ, मेरे सीनियर थे। हम लोगों ने साथ-साथ काम कभी नहीं किया।'

जीजू बोले, 'विपिन जी साठ साल के होते हुए भी पूरी तरह स्वस्थ हैं। उनके बच्चे उनको केवल इस अकेले जीवन से निकालना चाहते हैं। कविता कह रही थी कि तुम अब फोर्टी एट की हो। अगर तुम चाहो तो यह रिश्ता मेच्योर हो सकता है।'

कविता ने बात को और आगे बढ़ाया, 'बच्चों का भी कोई चक्कर नहीं है। केवल वैवाहिक प्रतिबद्धता निभाने वाली बात है। अमिता, तुम कहो तो मैं आण्टी जी से बात करूँ?'

मैं बोली, 'मम्मी क्या बोलेंगीं, कहेंगीं- अगर अमिता को पसंद हो तो....? देख कविता, अड़तालीस साल की उम्र में मुझे कोई क्वाँरा तो मिलेगा नहीं। ऐसे विधुर से शादी करना तकलीफ देह होगा, जिसकी औलाद को पालना हो। यहाँ बच्चे पैदा करने की भी अनिवार्यता नहीं। विपिन जी, हम सब के जाँचे-परखे हुए हैं। मैं समझती हूँ- ओ.के. किया जा सकता है।'

भवेश जीजू ने कहा, 'इतनी जल्दी निर्णय मत लो। एक दो दिन अच्छी तरह सोच-विचार लो। चाहो तो एक दिन के लिए बैरसिया भी घूम आओ।'

उस दिन, बहुत अच्छे मूड में मैं कविता के घर से रवाना हुई। फिर दो दिन का आकस्मिक अवकाश ले कर शताब्दी से भोपाल और भोपाल से बैरसिया पहुँची।

बिना किसी पूर्व सूचना के मेरे बैरसिया पहुँचने पर मम्मी, भैया और छोटी भाभी चितिंत हो गए। मैंने उन्हें बताया, 'तुम्हें तो खुश होना चाहिए कि मैं शादी कर रही हूँ। उसके बाद, विस्तार के साथ विपिन जी और उनके परिवार के विषय में मैंने समझाया। तीनों बोले- 'हम तुम्हारे निर्णय के साथ हैं!'

ग्वालियर लौट कर, मैंने कविता और भवेश जीजू को रिश्ते के लिए हरी झंडी दे दी।

अगले दिन ही, जीजू और कविता मेरे फोटोज और बायोडाटा के साथ जबलपुर निकल गए।

जाहिर है- उस पक्ष ने भी रिश्ते को सहर्ष स्वीकार कर लिया। शादी हुई और शादी के तुरंत बाद, विपिन जी ग्वालियर आ कर गाँधी रोड वाले अलॉटेड आवास में मेरे साथ रहने लगे।

108, त्रिलोचन टावर, संगम सिनेमा के सामने,
गुरुबक्श की तलैया, पो.ऑ. जीपीओ, भोपाल,
मध्य प्रदेश-462001, मो. 09 4257 90565

कहानी

हाय बो मैं तो लुट गया

◆ सुशील कुमार फुल्ल

'जल्दी-जल्दी ले चलो न।' कुसु ने कुढ़ते हुए कहा और इधर-उधर देखने लगा कि कहीं कोई पुलिस वाला तो नहीं आ रहा।।

'इतनी दूर है श्मशान घाट, टाईम तो लगेगा ही। बड़ी ही जल्दी पंहुचना था तो शनि सदन वालों का शव वाहन मंगवा लेना था।' किसी ने दबे स्वर में कहा।

'वो तो ख्याल ही नहीं आया।' कुसु की रफ्तार और तेज हो गई। पीछे भीड़ में कोई फुसफुसा रहा था-सुना है किसी ने कल अपने बाप को ही जहर पिला दिया। क्या जमाना आ गया है।

'अरे, कल तो अजय का जन्म दिन था और उसने उसी धूमधाम से मनाया जैसा वह हर साल मनाता था।'

'लोन को ले कर बाप बेटे में खटपट थी। कुसु और पैसे की डिमांड कर रहा था परन्तु अजय अड़ गया था।'

'कहते हैं कुसु ने तो यहां तक कह दिया था कि जो बाप कंजूस होते हैं, उन्हें कई बार उन के सुपुत्र ही लुढका देते हैं'

'बात तो ठीक ही है। पैसे के लिए कब कोई हड़क जाए, कहा नहीं जा सकता।'

'सुना है अजय के मुंह से झाग निकल रही थी।'

'जमाना ही ऐसा आ गया है। पैसे के लिए अपना ही खून रिश्ते को दुत्कार देता है।'

'वैसे ही दे देता पैसा इसे। मेरा बेटा , मेरा बेटा कहते थकता नहीं था।'

जल्दी जल्दी चलो न। कुसु के मन में चोर था। यदि ऐसा हो गया तो पोस्टमार्टम होगा और - - -

कुसु जोर जोर से बोल रहा था - राम नाम सच है, हर का नाम सच है। बाकी लोग भी मुहारनी दोहरा रहे थे। अजय डरा सहमा कुसु के शोरूम के बाहर खड़ा था। पहाड़ भरभरा कर सड़क पर आ गिरा। चौबीस घंटे चलने वाली सड़क एकाएक ठहर गई थी। दोनों तरफ गाड़ियों की लम्बी लम्बी कतारें लग गईं।

छोटा सा पहाड़ी शहर। स्पेस की दृष्टि से लगातार सिकुड़ता जा रहा था। जमीन तो जो थी, वही रहनी थी परन्तु जनसंख्या निरंतर बढ़ती जा रही थी, सुरसा की आंत की तरह। बड़े-बड़े माल, मल्टीप्लेक्स आकार लेने लगे थे। जो पहले जगह दिखाई नहीं देती थी, अब वहां खड्डों नालों को खोद खोद कर जगह निकाली जा नहीं थी और गगनचुम्बी भवन हवा में आकार लेने लगे थे।

पहाड़ की छाती कांपने लगी थी। बड़े बड़े जेसीबी पहाड़ की छाती पर हुड़दंग मचा रहे थे। जहां थेड़ी सी जगह को भी समतल करने में दिन महीने लग जाते थे, वहां अब घंटों में सारा काम हो जाता था। मनरेगा में काम करने वाले भी बगलें झांकने लगे थे। उन्हें डर था कि किसी दिन मनरेगा की सुस्त चाल पर प्रश्न खड़ा हो गया तो दिहाड़ी भी मिलना बंद न हो जाए। जब स्थितियां गदलती हैं तो समाज का चाल, चरित्र भी बदल जाता है। पहाड़ के लोग भी महत्त्वाकांक्षी होने लगे थे।

निर्धनमल सुंदरलाल शहर की बड़ी दुकान थी, जो कांगड़ा में सन 1905 में आए भूकम्प के बाद बनी थी। उस जलजले की भीषणता से डर कर मिश्नरी तो पहाड़ छोड़ कर अपने अपने देश को लौट गए थे लेकिन जो स्थानीय लोग थे उनके लिए तो उन का शहर ही जीने मरने का स्थायी स्थान था। सो निर्धनमल सुन्दरलाल ने अपना व्यवसाय नये सिरे से शुरू किया। जबान मीठी थी, सो जल्दी ही दुकान फलने फूलने लगी। कई लोग तो उन की दुकान को छोहरुओं की दुकान भी कहने लगे थे।

पांच भाई थे। धीरे-धीरे दुकान में मालिकों की भीड़ लगने लगी। बड़े लाला जी ने साथ वाली एक दो दुकानें और खरीद लीं और सितारा चमकने लगा। ईमानदारी के लिए प्रसिद्धि हो गई तो पीछे मुड़ कर झांकना नहीं पड़ा। सम्पन्नता के साथ साथ परिवार भी बढ़ता गया। निर्धनमल की एक ही नसीहत थी कि सब को खूब पढ़ना चाहिए, काम भले ही दुकान का करें। सो सभी बच्चे अधिक से अधिक पढ़े। कोई डाक्टर बन गया कोई कृषि में डाक्टरेट करके आ गया। नौकरियों के पीछे वे नहीं भागे क्योंकि उन दिनों की गजेटिड नौकरी भी बहुत कम थी, आज की तरह सरकारी नौकरी नहीं थी जिस में आज एक एक लाख या डेढ़-डेढ़ लाख वेतन मिलता है। सो अपने व्यवसाय में रम जाना ही ज्यादा बच्चों को अच्छा लगा।

अजय तीसरी पीढ़ी में से था। उसके लिए कोई ठीहा नहीं बन रहा था। बहुत खोजबीन के बाद मौल खड्ड में जमीन का छोटा सा टुकड़ा देखा गया। बहुत मंहगा मिला परन्तु महंगाई निर्धनमल सुन्दरलाल के लिए कोई माइने नहीं रखती थी। जमीन खरीद ली गई और शोरूम बनाने की तैयारी की गई। अजय का बेटा कुसु छोटे-मोटे बिजिनेस में नहीं पड़ना चाहता था। पहले तो वह रिवाल्विंग होटल के लिए अड़ा रहा पर जब उसे समझाया गया कि होटल के लिए ज्यादा जमीन चाहिए और लोकेशन भी ठीक होनी

चाहिए तो वह मान गया कि वह विदेश में बने छोटे बच्चों के लिए साइकलों की दुकान खोलेगा। अजय ने समझााया कि शहर छोटा है, और पहाड़ी शहर है, साइकल का स्कोप बहुत कम है। कुछ और सोच लो। कुसु ने गुस्से में कहा - आप की सोच ही छोटी है, बड़े काम करने की इच्छा ही नहीं। अब्दुल कलाम ने तो कहा है कि बड़े सपने लेने चाहिए तभी कहीं आगे पहुंच पाओगे। और इस सारे शहर में साइकल की कोई दुकान भी नहीं है।

'है तो सही। वोहरा साइकल कम्पनी को आप कम्पनी ही नहीं मानते।' अजय ने समझाना चाहा।

'खोखे में दुकान को आप कम्पनी बोलते हो। वह तो साइकल के पार्ट ला कर उन्हें जोड़ता है और साइकल बना कर बेचता है। मैं तो प्रोपर कारीगर रखूंगा और कीमती साइकल बेचूंगा। देखना बच्चे कैसे दौड़े आते हैं' मैंने मार्कीटिंग में डिग्री यूं ही नहीं ली।'

'कुसु, डिग्री अलग चीज है और व्यवसाय में सफल होना अलग बात। तुम बड़े बड़े मॉल्ज को देख कर न ललचाओ। मेहनत से ही कुछ होता है। तुम में मेहनत का जज्बा होना चाहिए। फिर तुम्हारी तरक्की को कोई रोक नहीं सकता।' अजय ने अपने बेटे को यथार्थ की भूमि पर लाने का प्रयत्न किया।

कुसु अपनी बात पर अड़ा रहा और उसने बैंक से बड़ा लोन ले कर पहले तो आलीशान शोरूम बनवाया और फिर घूम फिर कर अलग तरह की बढ़िया साइकलों की बड़ी दुकान खोल ली।

बापू ने खुले मन से बेटे को आर्थिक सहायता प्रदान कर दी। कुसु बल्लियों उछल रहा था। उसी की दुकान एकमात्र ऐसी थी जो एअर कन्डीशन्ड थी। दुकान में सारा दिन चहल पहल रहती। और कुसु अपने सपनों में खोया रहता। मौल खड्ड से सटा पहाड भरभरा कर गिर गया। पहाड़ का गिरना आफत का आना था। पता नहीं पहाड़ को किस की नजर लग गई। जब से जेसीबी आए हैं पहाड़ का सीना छलनी कर के रख दिया है। जब अजय खड्ड में जमीन खरीदने लगा था, उस के एक रिश्तेदार ने कहा भी था - अजय, कहीं और जगह देख लो। खड्ड सुरक्षित नहीं होती।

अजय ने उपहास उड़ाते हुए कहा था - आज कल खड्डें नदी नाले सब सूख गए हैं। अतः असुरक्षा की कोई बात ही नहीं। बड़ी मुश्किल से यह जगह मिली है और तुम व्यर्थ में टंगड़ी मार रहे हो।

वह कहना चाहता था कि उत्तराखण्ड में जो विनाश हुआ था वह अभी हम भूले नहीं हैं। किस प्रकार होटल भरभरा कर जमींदोज हो गए थे और कितने लोग काल का ग्रास बन गए थे। प्रकृति से छेड़छाड़ तो मंहगी पड़ती ही है। लेकिन वह चुप ही रहा था क्योंकि अजय सुनने के मूड में ही नहीं था।

दुकान में खूब रौनक रहती मानो चिड़िया घर में कोई नया जीव आ गया हो। बच्चे आते और उन के मां-बाप आते, भाव तोल करते और यह कह कर कि फिर आते हैं, वे निकल जाते और कुसु देखता रह जाता। इतना बड़ा लोन और गल्ले में फुटी कौड़ी भी नहीं आ रही थी। जब उसे बैंक से रिकवरी के नोटिस आने लगे तो उस की चिन्ता बढ़ना स्वाभाविक था। वह कुछ दिन तो चुप रहा, सोचा शायद पिता खुद ही कुछ कहेंगे परन्तु अजय तो चुप ही रहा। खीझ कर कुसु ने कहा - पापा, कभी यह भी पूछ लिया करो कि दुकान कैसे चल रही है?

'क्यों क्या कोई परेशानी है? ग्राहक तो इतने आते हैं। 'अजय ने सहज भाव से कहा।

'बैंक से नोटिस आ गया है कि किस्त जमा करवाओ नहीं। तो डिफाल्टर हो जाओगे।' निराश स्वर में कुसु ने कहा।

'तो करवा दो न किस्त जमा। वही कामयाब होता है जो लोन को लोन समझ कर ठीक समय पर वापिस करता रहे अन्यथा महाजन की बाकी की तरह बाकी ही बना रहेगा।' अजय ने कहा। 'एक साल में एक किस्त का पैसा भी जमा नहीं हुआ। मैं क्या करूं?' कुसु ने आह भरी और समझ गया कि कंजूस बाप से उम्मीद रखना बेमानी है।

नोटिस आते गए और वह अन्दर ही अन्दर घुटता गया। क्या करे क्या न करे। बाप के पास इतना पैसा है परन्तु मरी मक्खी नहीं दवाल। फिर वह निदान ढूंढने लगा। उसके मन में एक झंझावात था। सब कुछ होते हुए भी उस के पास कुछ भी नहीं था। उसने अपने पिता को अन्तिम बार टटोलने का प्रयत्न किया और कहा - पापा, एक बार मेरी सहायता और कर दो। मैं सारा पैसा लौटा दूंगा। ब्याज समेत।' वह गिड़गिड़ाया।

मैंने जो देना था दे दिया अब और उम्मीद रखना तुम्हारी बेवकूफी है।'

अजय को कोई ऐब नहीं था। बस एक ही शौक था कि साल में एक बार अपना जन्म दिन बड़ी धूमधाम से मनाता था। दोस्तों रिश्तेदारों को बुलाता और मांस भात दारू सब कुछ चलता और बड़े खुलेपन से चलता। कोई कंजूसी नहीं।

पिछले कल उस की पिचहत्तरवीं वर्षगांठ थी। देर रात तक पार्टी चलती रही। कुसु अपने पिता के इर्दगिर्द ही मंडराता रहा। अजय भी हैरान था कि आज कुछ ज्यादा ही प्रेम दिखा रहा है उस का बेटा परन्तु यह सोच कर खुश भी हुआ कि कुसु उसका ध्यान रख रहा था। कुसु दोहत्थड़ मार कर रो रहा था और बीच बीच में बोल रहा था - हाय बो, मैं तो लुट गया। वही था जो मुझे इतने प्यार से पाल रहा था। मैं तो अनाथ हो गया। दूसरे लोग उसे ढाढस बंधा रहे थे परन्तु वह और भी जोर जोर से रोने लगता।

राम नाम सच है, हर का नाम सच है कहते हुए अजय की शव यात्रा श्मशान घाट की ओर तेजी से बढ़ रही थी।

पुष्पांजलि, राजपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176067

कहानी



एक नदी की आत्मकथा

◆ डॉ. विद्यानिधि

बरसात का मौसम था और मैं फूलकर कुप्पा हो गई थी। मेरे तो पैर ही जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। इतराती-इठलाती भागती ही जा रही थी। कभी एक किनारे पर चढ़ जाती, तो कभी दूसरे पर उछल-कूद मचाती। किनारे भी मुझसे डरने लगे थे कि कहीं उन्हें रौंद कर न निकल जाऊं।

न जाने कहां-कहां से, कौन-सी गली और कौन-से मुहल्ले से निकलकर पानी की सैकड़ों धाराएं मुझमें आकर मिल गई थी और उनसे बल पाकर मैं कुछ ज्यादा ही बलखाने लगी थी।

मैंने पहाड़ पर निशाना साधा

सामने वाले पहाड़ से मेरा पुराना बैर था। सालों से वह मुझे सता रहा था। वह ऊपर तन कर खड़ा था और मैं नीचे घाटी में बहती थी। हर बार बरसात के मौसम में जब मुझमें पानी भर जाता तो मैं उछलकर थोड़ा-सा उसके करीब पहुंच जाती, पर उसके मुकाबले ठिगनी ही रह जाती। तब पहाड़ मुझे पिद्दू कहकर ठेंगा दिखाता था।

उहं, उसने क्या सोचा था, मैं हमेशा नीचे ही बहती रहूंगी!

पता नहीं कैसे, इस बार मुझमें इतना पानी आ गया है कि पलक झपकते ही उस तक पहुंच सकती हूं। आज उसके मुंह पर अपनी लहर से प्रहार न किया तो मेरा नाम शतद्रु नहीं। और उस तक न पहुंच पाई तो मेरा नया नाम रख देना। सतलुज कैसा रहेगा?

वैसे पहाड़ की शक्ल बिगाड़ना तो मेरे लिए बाएं हाथ का खेल है। आखिर हम नदियों का खानदानी पेशा जो ठहरा। सदियों से हम पहाड़ों को घिस-घिसकर, खरोंच-खरोंचकर समतल बनाती आई हैं। यही तो हमारा असली काम है। तुमने क्या सोचा, हमारा काम बस इतना ही है कि बर्फीले पहाड़ों से पानी भरकर ले आएं और उसे ढोकर सागर तक छोड़ आएं?

पीपलराम की ठिठोली

"कहां चली?"

किसी ने मुझसे कुछ कहा क्या? मुझे बुलाया क्या? लगा तो ऐसा ही। इससे पहले कि अपनी लहर घुमाकर मैं पुकारने वाले को देखती, कोई जैसे मेरे कान में चिल्लाया --

"अब सुन भी लो! ऊंचा सुनने लगी हो क्या, बुढ़िया डार्लिंग?"

"डार्लिंग तो ठीक है, पर यह बुढ़िया कहने की हिम्मत किसने की?" मैंने मुड़कर देखा तो पीपलराम था।

"क्या बात है, आजकल तो तुम देखकर भी नहीं देखती?" उसने झूठ-मूठ में रौब जमाया।

"क्या करूं, इन दिनों मैं अपने ही शोर से थोड़ी बहरी हो गई हूं।" मैंने मजाक किया।

"दूर थी, तब भी चिल्लाना पड़ता था, अब दिल के पास हो, फिर भी नहीं सुनती।" उसने ठिठोली की।

बड़ा मस्त पेड़ है, पीपलराम। पुरानी दोस्ती है हमारी। हम पास रहे या दूर रहे, अपने सुख-दुख बांट ही लेते हैं। मेरे किनारे पर वह अकेला ही बसा है। कोई इनसान तो इस तरफ फटकता नहीं। सब डरते हैं उससे। बस, एक हवा है, जो उसके पत्तों में डोलती-फिरती है और एक हरियल है। हरियल नया पंछी है, पीपल के जाल में फंस गया है बेचारा!

पीपलराम के कोटर में उसने घर भी बना लिया है। जरूर कोटर से कान लगा कर हमारी बातें सुन रहा होगा। खबरिया कहीं का!

मैं उसे सुनाने के लिए जोर से बोली-- "हरियल जो है,

तुम्हारा नया किराएदार, उसे सुनाओ।''

पीपलराम का मुंह उतर गया।

''अरे, अरे, तुम तो उदास हो गए।'' मैंने उसे प्यार से गुदगुदाया -- ''याद करो कितनी रातें मैंने तुम्हारे कदमों तले बिताई हैं......''

''.......और कितनी सुबह तुमने मेरी जड़ों को भिगोया है।'' पीपलराम फिर डोलने लगा।

हम पुरानी यादों में खो गए। मुझे याद आ रहा था, जब तेज धूप ने मेरी बूंदों को भाप बनाकर उड़ा दिया था और मेरा सारा पानी सुखा दिया था, उसने मुझे किस तरह तसल्ली दी थी। बोला था-- ''बस, कुछ ही दिनों की बात है। गर्मी आएगी, तो बर्फीले पहाड़ों की बर्फ पिघलेगी। पानी तुम तक पहुंचने के लिए दौड़ लगाएगा। फिर बरसात आएगी। गरम हवा तुम्हारी जिन बूंदों को उड़ा कर ले गई है, बादल बन कर बरस जाएंगी और तुम्हारे पास लौट आएंगी। मौसम बदलते हैं, तो सबके दिन फिर जाते हैं।''

वर्षा ऋतु आने से मेरे दिन तो बदल गए हैं, पर यह सामने वाला पहाड़ नहीं बदला। उलटे, सूख कर अकड़ गया है। इसे तो मजा चखाना ही होगा।


रेखांकन : डॉ. विद्यानिधि

बहुत बड़ी गलतफहमी

पहाड़ की अकड़ निकालने के अपने 'प्लान' में मैंने पीपलराम को भी राजदार बनाने का फैसला किया। बोली --

''देख रहे हो वह सामने वाला पहाड़! इतने दिन उसने मेरी नींदें खराब की हैं। उसका भयानक चेहरा सपनों में आकर मुझे डराता है। कितना खूंखार लगता है, है न!''

''मुझे तो उदास लगता है बेचारा! कोई संगी-साथी नहीं रहा उसका। न कोई पेड़, न झाड़-झंकाड़। उस पर अब कुछ भी नहीं उगता। अकेला पड़ा रहता है हमेशा। तुम क्यों नहीं दोस्ती कर लेती उससे?'' पीपलराम ने कहा।

''रहने भी दो। मुझे देखकर तो वह बुरी-बुरी शक्लें बनाता है। मैंने तो उसे तोड़ने का इरादा कर लिया है।'' मैंने आगे का रुख किया।

''रुको तो, मेरी बात तो सुनो। तुम्हें गलतफहमी हो गई है।'' पीपलराम ने अपनी डाल बढ़ाकर मुझे रोकने की कोशिश की।

''हां! बहुत बड़ी गलतफहमी।'' -- कहीं से हरियल की आवाज आई। पता नहीं कब वह कोटर से निकलकर डाल पर आकर बैठ गया था। बोला -- ''पहाड़ इन दिनों वाकई बड़ा दुखी है।''

''भला क्यों?'' मुझे उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ।

''इसलिए कि अब वह इतना मजबूत नहीं रहा।'' इस बार जवाब पीपलराम ने दिया। ''कभी उसमें घना जंगल हुआ करता था। ढलान पर जो बस्ती है न, वहां के लोगों ने एक-एक करके उसके सारे पेड़ चुरा लिए। फिर, बदलते मौसमों ने उस पर कहर ढाया। तभी तो उसकी शक्ल इतनी डरावनी लगती है। वह तुम्हें चिढ़ाता थोड़े ही है, उसका चेहरा ही ऐसा हो गया है।''

मैं सोच में पड़ गई। कहीं यह सच ही तो नहीं कह रहा?

''और क्या?'' हरियल बोला। ''पहाड़ तो खुद तुमसे डरा हुआ है। पता नहीं, कब तुम एक छलांग में उस तक पहुंच जाओगी, उसे एक जोर का धक्का दोगी और वह बिखर जाएगा।''

''सच!'' एक पल तो मुझे खुशी हुई, फिर पता नहीं क्यों, मुझे पहाड़ पर तरस-सा आने लगा।

''बिलकुल सच!'' अबकी पीपल राम बोला -- ''पता है, अगर वह बिखर गया और तुम उसे तोड़कर आगे निकल गई, तो ढलान की पूरी बस्ती को भी अपने साथ बहा ले जाओगी। जरा इंसानों की तो सोचो, बेचारे तुम्हारी पूजा करते हैं, तुम्हें फल-फूल चढ़ाते हैं.....''

''मजाक मत करो! दुनिया जहान का गंद डाल-डालकर कूड़ेदान बना दिया है मुझे। .... कितना सुन्दर रंग था मेरा। नीला-नीला, उजला-उजला। पारदर्शी। झिलमिलाता और पानीदार। झांको और अपनी शक्ल देख लो!''

इससे पहले कि मैं अपने मटमैले और भूरे रंग को देखकर उदास हो जाती, पीपल राम ने फिर ठिठोली की --

''सच, कितना उजला रंग था तुम्हारा! मैंने खुद कई बार तुममें झांककर अपनी पत्ते संवारे हैं।''

मैं मुस्कराई। तभी मुझे कुछ याद आया। बोली --

''और ये बस्ती वाले तुम्हारे लिए बेचारे कब से हो गए? पहाड़ के सारे पेड़ तो वे खा गए। तुम्हें भी यह सोचकर छोड़ दिया था कि तुम पर भूतों का डेरा है। सामने वाले पहाड़ को भी भला उनकी चिंता क्यों हो रही है? उन्होंने ही तो उसको उजाड़ दिया है। मैंने इन बस्ती वालों को यहां से बहा भी दिया तो वे कहीं और जाकर बस जाएंगे।''

''पागल कहीं की! पहाड़ को यही चिंता सता रही है कि जैसा बस्ती वालों ने उसके साथ बर्ताव किया वैसा ही हाल वे उसके

कविताएं/ सेजल सारटा

अनजान सी हूं मैं

अस्तित्व तब भी नहीं था मेरा
और अब भी नहीं है
मेहनत तब भी करती थी मैं
और अब भी करती हूँ
पर महत्त्व
तब भी नहीं था मेरा
और अब भी नहीं है
क्यों नहीं है?
इस बात से तब भी अनजान सी थी मैं
और अब भी अनजान सी हूँ।
आजाद तब भी नहीं थी मैं
और अब भी नहीं हूँ
कैद तो तब भी नहीं थी मैं
और अब भी नहीं हूँ
पर अदृश्य
तब भी नहीं थी मैं और
अब भी नहीं हूँ
क्यों नहीं हूँ?
इस बात से तब भी अनजान सी थी मैं
और अब भी अनजान सी हूँ।
डरती तो तब भी नहीं थी मैं
और अब भी नहीं डरती
रक्षा तो तब भी कर सकती अपनी मैं
और अब करके दिखाऊँगी
पर कमजोर तब भी माना जाता था मुझे
और अब भी माना जाता है
क्यों माना जाता है?
इस बात से तब भी अनजान सी थी मैं
और अब भी अनजान सी हूँ।
भविष्य तब भी बन सकती थी मैं देश का
और अब बनकर दिखाऊँगी
सोच तब भी बदल सकती थी मैं समाज की
और अब बदलकर दिखाऊँगी
पर विश्वास
तब भी नहीं था मुझ पर किसी को
और अब भी नहीं है
क्यों नहीं है?
इस बात से तब भी अनजान सी थी मैं
और अब भी अनजान सी हूँ।

आशा की खोज

हताश होकर अक्सर बैठ जाते हैं हम
निराशा से मन को भर लेते हैं
बस किस्मत को कोसते रहते हैं
मेहनत करने से हमेशा कतराते हैं
फिर क्यों उस मेहनत का फल पाना चाहते हैं हम।

डूबते हुए सूरज की आखिरी किरण भी आशा सी देती है हमें
कि कल फिर उसी आशा को लौटाने आएगी वो
हम कुछ समय तक उत्साहित हो कर बैठ जाते हैं
फिर उसी प्रक्रिया को पुनः दोहराते हैं
हम इंतजार करने से कतराते हैं
फिर क्यों उस इंतजार का फल पाना चाहते हैं हम।

अंधेरी रात भी जगमगाती है
इस अंधेरे से लड़ने को हथियार हमें सौंप जाती है
हथियार होते हुए भी हम घबरा जाते हैं
इस अंधेरे से भयभीत होकर भाग जाते हैं
हिम्मत दिखाने से कतराते हैं हम
फिर क्यों उस हिम्मत का ईनाम पाना चाहते हैं हम।

किताबें भी हमें बहुत कुछ समझाती है
जीवन में संघर्ष करने की बात सिखाती है
हमारी तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ाती है
हमें सदैव सही रास्ता दिखाती है
रास्ते पर चलने की कोशिश से हम कतराते हैं
फिर भी उस कोशिश का फल पाना चाहते हैं हम।

जीवन भी हमें ठोकर देकर समझाता है
बस सोच कर कोई संसार नहीं बदल पाता है
जो मेहनत को अपना लक्ष्य बनाता है
वही उस आशा को खोज पाता है।

सुपुत्री श्री प्रेमराज सारटा
गाँव नकराड़ी, डाकघर झड़ग,
तहसील जुब्बल, जिला शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171206

किसी भाई-बंधु का करेंगे।'' हरियल बोला।

पीपल राम ने समझाया -- ''खैर, उजाड़ना इंसानों की फितरत है, हमारी नहीं। हमें अपना सब कुछ बांटने में मजा आता है। पर इंसानों को छीने बिना संतुष्टि नहीं मिलती। वे हमारी तरह नहीं बन पाते, न बनें, हम भला उनके रंग में क्यों रंग जाएं?''

एक नया मास्टर प्लान

पूरी रात मैं सो नहीं पाई। इसलिए नहीं कि पहाड़ मुझे देखकर शक्लें बना रहा था, बल्कि इसलिए कि मेरे पानी में झांकता उसका चेहरा मुझे ही आईना दिखा रहा था। मुझे पीपलराम की बात याद आ रही थी कि मैं इनसान नहीं, मैं तो नदी हूं। कुदरत का हिस्सा हूं। मैंने तो देना ही सीखा है।

अब मैं एक नया मास्टर प्लान बना रही हूं। ......

क्या ऐसा हो सकता है कि मैं पीपल राम का बीज किसी तरह सामने वाले पहाड़ तक पहुंचा सकूं? या फिर हरियल पंछी से ही पूछूं, उसने कुछ बोना-उगाना भी सीखा है या नहीं? मैं पहाड़ के किनारों को रोज थोड़ा भिगो आऊं और वह कुछ बीज ले जाकर वहां पर बो आए। तब पहाड़ की सूरत बदल जाएगी। वह बदशक्ल नहीं रहेगा।

आपके पास कोई प्लान है क्या? कोई इससे भी अच्छा आइडिया हो, तो मुझे भी बताओ।

फ्लैट नं. 5, गोयल अर्पाटमेंट,
लोकल बस स्टैंड के नीचे, संजौली, शिमला-171 006

कहानी

अस्तित्व की तलाश

◆ संदीप शर्मा

सीत्तू व ठुनिया अपने मचान के बाहर कुछ देर से नदी को रोकते बांध के साहस से बनी झील के फैलते प्रचंड रूप को देख कर हैरान थे। परेशानी की लकीरें उनके कसकुट रंगों की त्वचा में खिंचती चली जा रही थी। उनकी तीक्ष्ण आंखों के इर्द-गिर्द के गोल घेरों में एक खौफ दिखने लग पड़ा था। सीत्तू और ठुनिया ने अपनी अपनी जिम्मेदारी की गंध को महसूस किया और अपने मचान से दूर दिन-प्रति-दिन उनकी जिंदगियों को ग्रहण की तरह लीलती झील के बढ़ते आकार में गोल चांद की रोशनी को बिखरते देखा। सीत्तू आग के अलाव में मोटा लक्कड़ डालते ही बुदबुदाया, ''ठुनिया भाई, ये झील चोरों की तरह हमारी ओर सरक रही है, देख वो बड़े बांस को अपने गर्भ में छुपा चुकी है, ये भूखी डाइन सब कुछ खा जाएगी, मुझे लगता है कि हमें कुछ ही दिनों में अपना मचान भी उठा कर और पीछे ले जाना पड़ेगा। इस साल की बरसात पता नहीं अब क्या-क्या जुल्म ढाएगी। ऐसा लगता है कि भूखी बरसात ने कसम खा ली है कि वह हमें उजाड़ कर दम लेगी।''

ठुनिया रात के अंधेरे मे दूर धौलाधार की बर्फ की चादर को परिवर्तित करते चांद के प्रकाश में बड़ी देर से देख रहा था। वह बोला, ''देख भाई सीत्तू, ईश्वर ने जो चाह लिया हो वो करके ही छोड़ता है, जो हो रहा हो उसे न तू रोक सकता है और न मैं, देख तो जरा धौलाधार के विशाल शिखर को, उसे कोई चिंता नहीं है डूबने की, कोई झील कभी उसे न डूबो पाएगी, झीलें तो खुद उसके विशाल पत्थरों में खुद के रास्ते ढूंढती है, नदियां उसे काटने का प्रयास स्वप्न में नहीं सोच सकती। हमारे इन छोटे मैदानों और टीलों का यही दुर्भाग्य होगा कि उन्होंने पहले तो इस नदी को जाने को रास्ता दिखाया होगा, और अभी यही नदी झील बनकर उन रास्तों के निशान मिटा कर अहसान फरामोशी निभाएगी। अब देखते हैं ये अहसान फरामोश बन चुकी जीवन दायिनी नदी और झील का मिलन हमें कौन से लोक की दुनिया में ले जाएगा, यह फिर हमारे लिए यहीं नरक की बस्ती सजा देगा। ऐसा भी हो सकता है कि यही झील सब कुछ खाकर जब तृप्त हो जाएगी तो फिर शांत और उदार बन जाएगी। वैसे तो यह नदी कभी रुकती नहीं पर उसको नदी से झील बनाने के इस इनसानी प्रपंच ने उस नदी को जरूर आत्मग्लानि से भर दिया होगा। उस नदी के जीवन का यह पतन उसकी अपनी संपूर्णता को अभाव व अशांति से भर देगा। फिर वह हम पर यह तो अपनी प्रवृति के अनुसरण पर मौत का कहर ढाएगी यह फिर अपने मृदु जल की सतह से हमारे लिए जीवन के कुछ और स्वप्नों को सजाने के लिए कई और रातें उपहार में अपने अहसान के अभिमान में दे जाएगी। आओ चलें, झील के बढ़ते आकार को नापकर और एक निशान लगा आएं।''

दोनों उठे और झील के किनारे पर रुककर तट पर कुछ फीट की दूरी पर पत्थर रखने लगे। दो - दो पत्थर कोई पांच छः फुट की दूरी पर तट से अपने मचान की ओर रखने लगे। अंधेरा आसमान व उसमें गोल चांद अपनी रोशनी में मदमस्त उनके इस अचंभित कारनामों को देखकर मुस्कुरा रहा था। चांद की इस मुस्कुराहट की रोशनी से इन दोनों को पत्थर ढूंढने में कोई परेशानी नहीं हुई । कुछ ही पल में फिर वही चांद कुछ काले बादलों में अपना मुंह छिपा बैठा। दूर धौलाधार के बीच से बिजली कड़की, इस आवाज ने रात के साए में भटकते इन दो इन्सानों के दिलों में खौफ की मद्धम लौ जगा दी। वे अपने मचान की ओर भागे। अभी कोई दो कोह का सफर था। फिर से बिजली कड़की, यह जैसे उनके शरीरों को स्वाह कर देना चाहती हो। दोनों ने लंबे पग भरे।

सीत्तू धड़ाम से किसी पत्थर से टकराकर जमीन पर गिर गया। वह चिल्लाया, '' रहम करो ख्वाजा पीर, क्या तुम मुझे भी अपना निवाला समझ रहे हो,बख्श दो !'' वह तेजी से कराहता हुआ उठा और फिर दोनों मचान पर पहुंच कर अपने तिरपाल को मचान पर ठीक करने लगे। तेज हवा की एक आंधी आई, उनका मचान का बंधा तिरपाल ऐसे फड़फडाघ्या जैसे वह भी झील की गहराई से डर रहा हो, उसे तो अभी बरसात के थपेड़ों से लड़ना था, वह अभी क्यों अपने अस्तित्व को भूल बैठा था। बरसात ने सीत्तू और ठुनिया की परीक्षा लेनी थी। झील के बढ़ते आकार के ये पहरेदार मचान पर चढ़कर तिरपाल को जकड़े बढ़ती झील की ओर टकटकी लगाकर देखे जा रहे थे। फिर बारिश की बौछारों ने उन दोनों के मनों को अपने गुणगान में लगा दिया था। जब से ब्यास नदी पर बांध बनने के बाद झील ने अपना आकार बढ़ाना शुरू

किया था। टापू वाले गांव का सब कुछ तहस नहस हो चुका था। गांव चारों ओर से पानी से घिरना शुरू हो गया था। लोग बारी-बारी झील के बढ़ते पानी की रखवाली करने लग पड़े थे। गांव पानी में डूबेगा या नहीं या तो झील पर निर्भर था या फिर बांध वालों की मर्जी पर। पर बांध में पहली बार पानी भर रहा था तो टापू वाले गांव के लोगों के मनों में एक आस थी कि शायद गांव बच जाएगा।

सीत्तू बोला, ''भाई ठुनिया! क्यों भाग चलें टापू की ओर या फिर यहीं भीगते रहें, सारा शरीर जवाब दे चुका है।'' ठुनिया थोड़ा सोचकर बोला, ''भाई, जिस पहरेदारी के लिए हमारी बारी आई है, वह तो करनी ही पड़ेगी और पूरा गांव हमारे भरोसे चैन की नींद सो रहा होगा।'' सीत्तू ने उदासी को ओढ़कर जैसे प्रहार किया, ''क्या खाक चैन की नींद ! कितनी रातें सो पाएंगे, दिख नहीं रहा वह झील का राक्षस कैसे अपने दांतों को तीखा कर रहा है उसके शिकार ज्यादा रातें चैन की नींद नहीं सो सकते। उनको कह दो कि जल्दी में अपनी चैन की नींद में बचे खुचे सपने ले लो, फिर उदासी के सपनों का संसार उनकी परिधि के इर्द-गिर्द फैल जाएगा।'

ठुनिया बोला, ''सीत्तू! अब हमारे वंश का अस्तित्व पानी की सतह की मोटाई पर निर्भर है। कहां ये सुंदर मैदान ऐसी आवाजों से भरा था, जहां जीवन के सुनहरे स्वप्नों की खुशबू फैली थी, जहां बच्चों की किलकारियां फैल कर दूर धौलाधार की ऊंचाई तक उछलती थी, चीड़ के पेड़, खैरों के पेड़ जंगली धूप से अपने आप को बचाकर हमारे लिए व अन्जान परिंदों के लिए मौसम बदलने का न्योता देते थे। चरागाहों में जानवर उछल कूद मचाते थे। वे अब कहां अपनी रूहों के लिए बसेरा बनाएंगे। ये झील उन सब रूहों को अपनी अथाह गहराई में डूबोकर, मारकर उनके शरीरों को पचा पाएगी।''

सीत्तू ने उसे झटका, ''अब बस भी करो ठुनिया, छम - छम बारिश की मोटी बूंदों के संग तुम इन मरुस्थल बने चक्षुओं से भी क्या आंसुओं की बरसात चाहते हो।'' काले आकाश के बीच काले बादलों ने अपना सारा जल उंडेलने को ज्यादा जल्दबाजी नहीं की। सुबह तक जितना जल था, बरसता रहा। सुबह सुधा की बेला तक फिर दोनों झील के राक्षस के शरीर को नापने दौड़े। सब के सब पत्थरों के निशान पानी की सतह के नीचे दुबक चुके थे। वे जैसे वहीं सुरक्षित महसूस कर रहे हो। ठुनिया के मुंह से निकला, ''क्षमा ख्वाजा पीर! ये जुल्म मत करो, अब तो कुछ ही दिनों में तुम्हारे बच्चे डूब जाएंगे। रहम मेरे मालिक!'' फिर दोनों मन की सारी खोखली उम्मीदों को वहीं छोड़कर गांव की ओर लौट चले।

दोनों ने बची हुई जमीन पर नए निशान लगाए और अपने मचान के निकट आग जला कर नींद के इंतजार में अपना वक्त आग की लपटों में डालते रहे। आखिर वह दिन आ गया। काले बादलों की बारात ने टापू वाले गांव को बाजे गाजों से सुबह उठा दिया। मूसलाधार बारिश ने पिछले तीन दिनों से गांव के घटनाक्रम में जबरदस्त परिवर्तन ला दिया था। झील अपनी बाहों को गांव के घरों की तुच्छ बाड़ों के नजदीक पहुंचा चुकी थी। गांव खाली हो चुका था। अब गांव में सिर्फ नहलू था।

बांध वालों ने बांध का पानी किसी भी शर्त पर न छोड़ने का फैसला किया है, यह खबर जैसे ही टापू वाले गांव को बांध वालों की बोट में आए दो आदमियों ने घर-घर जाकर दे दी वैसे ही शाम होते ही सब के सब गांव के मुखिया सीता राम के घर इकट्ठे हो गए। ''अगर पानी बढ़ता रहा तो फिर गांव तो डूब ही जाएगा। बरसात थम नहीं रही है।'' सीता राम ने एक ही बात बोली, ''भाइयो, अब फैसला करना बड़ा मुश्किल है, जब बांध वालों ने फैसला कर लिया है तो अब हमें सिर्फ भगवान ही बचा सकता है,अगर गांव एक बार छोड़ दिया तो फिर सभी हंसेंगे और नहीं छोड़ा और सब डूब गए तो फिर हमारी जिद्द हमारे प्राण ले लेगी। अब आप ही बताओ हमें क्या करना होगा।'' गांव का रुलिया बोल पड़ा, ''कुछ नहीं होगा हमें ,सारी नावें तैयार है, अगर पानी बढ़ता गया तो उसी वक्त बच्चों और औरतों को उठा कर चल पड़ेंगे। एक बार परीक्षा तो देनी ही होगी, शायद भगवान भी हमारी जिद्द को परख रहा होगा। मुझे तो यह भी लग रहा है कि बांध वाले हमें झूठ-मूठ ही डरा रहे हैं।''

सीता राम बीच में बोला, ''अरे! बांध वालों पर विश्वास नहीं कर सकते, वे भी अपनी जगह पर मजबूर हैं। पानी रोककर सिर्फ हम 20 परिवारों को जान का खतरा है पर उनके अनुसार तो हमें चेतावनी भी दे दी गई है ये तो सिर्फ हमारी जिद्द है, कल हम डूब कर मर गए तो उन्हें कोई न पूछेगा। हमें सोच समझ कर फैघ्सला लेना होगा। हमारी हालत जाल में फंसी मछली की तरह हो गई है। अगर ज्यादा देर जाल में फंसी रहेगी तो भी मरेगी और अगर किसी ने छुड़ा कर जमीन पर फैंक दिया तो भी मरेगी।'' अभी ये सारी बातें हो ही रही थी कि झील की ओर से भागता हुआ रुलिया का बड़ा बेटा नहलू आ गया। वह बारिश में पूरी तरह से भीगा था। वह आते ही बोल पड़ा, '' आप चाहे कुछ भी फैसला करें, मैं अपना घर छोड़ कर कहीं नहीं जाऊंगा, चाहे झील मेरे घर को निगल जाए और साथ में मुझे भी निगल जाए।'' उसकी आंखों में गुस्सा, बहादुरी और साथ में एक पक्की जिद्द नज़र आ रही थी।

बाहर बारिश मूसलाधार रूप में बदल चुकी थी। बिजली की घोर गर्जना के साथ सबके चेहरों पर एक साथ चमकी। दीए की रोशनी में बैठे सब चेहरों को किसी आने वाले संकट का न्योता देकर चली गई। रुलिया एक दम से उठा और चलते हुए बोला, ''मैं

जा रहा हूं गांव छोड़ कर। इससे पहले कि झील में ज्वार आ जाए, मैं पूरे परिवार को साथ लेकर जा रहा हूं, तुम लोग भी मान जाओ, कोई नहीं बचेगा यहां। रुलिया अंधेरे में बहुत दूर निकल गया और उसके बाद बड़ी देर तक इस अभागी महफिल में खामोशी छाई रही। नहलू ने खामोशी को तोड़ा, ''देखो जी, चाहे मेरा बाप सब को अपने साथ ले जाए, मैं न जाऊंगा, मेरा वादा है आप सब से। मेरी लाश अगर कहीं तैरती हुई मिल जाए तो उसे जलाना नहीं, जिन मछलियों को हम पकड़कर पूरे इलाके को खिलाते हैं उनकी औलादें ही खाएंगी मुझे। तुम सब देख लेना।'' अभागी महफिल में फिर से खामोशी छा गई। फिर सब अपने-अपने रास्ते निकल गए। नहलू की बातें सच्ची होती हैं। सबसे काबिल नौजवान है वह पूरे गांव में। बांध बनने से पहले दरिया में सबसे पहले नाव वही डालता रहा है मछली पकड़ने के लिए। वैसे तो गांव के लोगों का मुख्य काम खेती बाड़ी ही रहा है पर जमीनें बहुत कम हैं। पूरे गांव के पास बीच-बीच में मछलियों को पकड़ने का काम भी खूब चलता। मछलियों की मार्किट भी खूब चलती पास के कस्बे में और साथ में चार नए पैसे भी हाथ में आ जाते इसलिए मछलियों से कमाई का मोह गांव के मर्दों को नहीं छोड़ पाता। वैसे भी उनके बुजुर्ग भी यही करते आए हैं तो फिर वो क्यों न करें ये काम। दूसरा इस घाटी में दरिया भी सुस्त पड़ जाता था, पानी फैल जाता था और मछलियों को खूब पालता पोसता था।

नहलू की बातों पर किसी को शक नहीं। एक बार उफनते दरिया में कूद गया था वह किसी दूसरे गांव के लड़के को बहने से बचाने के लिए और बचा कर ही लाया था। कोई दो कोह पर लगा था वह किनारे। दूसरे दिन नाव में घर लौटा था। उस वक्त तो रुलिया ने उसे मरा समझ लिया था। पूरा गांव तो उसको कहां-कहां ढूंढ आया था। एक बार उसकी भैंसें बाढ़ में बहने लगी थी तो भी उसने दरिया में छलांग लगा दी थी। एक भैंस तो मर गई थी डूब कर, पर दूसरी की पूंछ पकड़कर वो किनारे लग गया था। नहलू के युवा रूप के अंदर कई कहानियों के घौंसले टूटते बनते रहे हैं। अगर यही बंदा कहीं फौज में होता तो अभी तक यह तो उसकी बहादुरी उसे कई तमगे दिला जाती और या तो सीने पर कई गोलियां। थोड़ा क्या पूरी सनकी है, जब मुसीबत सामने हो तो वह सोचता नहीं बस इसी बात का डर है। अभी जो मुसीबत सिर पर आई है वो सब इनसानों के घौंसले उजाड़ने आ रही है जो शायद अपनी आने वाली नस्लों के लिए एक सुरक्षित टापू पर अधिकार जमाना चाहती है।

बरसात ने इस वर्ष अपने पूरे हिसाब किताब कर डाले थे। ठुनिया व नहलू अपने घरों में दो-चार रोटियां खाकर झील की ओर बढ़ते हैं आज सिर्फ नहलू और ठुनिया की बारी है झील के बढ़ते राक्षस के मोटे पेट को नापने की। उनकी ये प्रतीक्षा उन्हें धीरे-धीरे सक्रियता में बदल रही है। अपने टापू छोड़ने का दवाब हटने की कोई उत्कंठा किसी के मन में नहीं बची थी। नहलू की एकाग्रता का बिंदु उसे उस आखिरी भयावह दृश्य की ओर केंद्रित कर रहा था, जब सब कुछ इस निर्दोष जल के बीच समा जाएगा। वह सोचते हुए चल रहा था। वह ठुनिया से बोला, '' दोष झील का नहीं और न ही उस दरिया का है, दोष तो उन मानवीय आकांक्षाओं का है जो दूरदर्शी सोच के आकाश में किसी के हिस्से की जमीन भी अवशोषित कर लेती है। हमारा भी यही हाल है जिस जमीन ने हमें हमारे हिस्से की खुशियां बांटने की उत्कंठा की थी वह खुद अपना अस्तित्व खो रही है। वह जब खुद एकांत निद्रा में चली जा रही है तो फिर अब हमें भी भटकाव की यात्रा शुरू करनी पड़ेगी। हमारी विडंबना यही है कि हमसे हमारी जीवन दायिनी जमीन छीनी जा रही है। साथ में उन करोड़ों थलीय जीवों से भी, उन छोटी उड़ानों वाले परिंदों से भी जिनका ध्येय जल की परिधि में उड़ाने भरना नहीं, जो जमीन से मांगे छोटे दानों से अपने हिस्से की पोटली भरते हैं अब उनके साम्राज्य पर जलीय जीवों के साम्राज्य का अधिकार होगा। वे यह तो खुद को समेट लेंगे या फिर अपने शरीरों को निष्क्रिय मान कर भूख से दम तोड़ देंगे। उनकी इच्छाशक्ति का विनाश हो जाएगा।'' दोनो झील के किनारे पहुंचे।

ठुनिया ने झील के करीब पहुंचते ही नहलू को इशारा किया देखो, ''नहलू! क्या तुम इसी झील के स्वार्थ के संताप की बात कह रहे हो न? देखो इसने अब जमीन पर आखिरी निशान को भी निगल लिया है। इस हिसाब से तो आठ - दस दिनों में पानी हमारे टापू को निगल जाएगा। तुम्हें जो सोचना है जो अभिव्यक्त करना है वह जल्दी में कर लो। फिर ये झील हमारे लिए पराए सपनों की रात बन जाएगी।''

नहलू अपने मन के अंदर चल रहे ज्वार को महसूस कर रहा था। उसकी अदम्य इच्छा शक्ति उसे मुखर कर रही थी। उसका क्रियाशील मन का स्वप्न उसे नए दृश्यों से भर रहा था। वह बोला, ''देख ठुनिया, मैंने गांव में अपनी इच्छाशक्ति के अनुसार यह शाब्दिक ऐलान कर दिया है कि मैं इस टापू वाले गांव के अपने घर को छोड़ कर नहीं जाऊंगा, चाहे तो मुझे झील के तल में नवजीवन के चक्र का हिस्सा बनना पड़े और मेरा निर्णय अब अटलता से जिद्द में तबदील हो चुका है। मेरे इस इरादे से अब मुझे कोई डिगा नहीं सकता। तू मेरा पुराना यार है, मुझे लगता है कि तू मेरे मन की बात समझ चुका होगा।'' ठुनिया बोला, ''यार तो हूं मैं तेरा, पर तेरी जैसी न तो मुझमें सोच है और न ही किसी निर्णय तक पहुंचने का सामर्थ्य। तू जो भी करेगा, तेरी आत्मा तुझसे गलत नहीं करवा सकती, तू इन पानी की लहरों से अठखेलियां करने वाला अदम्य साहसी है, मैं तो सिर्फ किनारों पर बैठ कर खुद को सिमटा-समेटने वाला इनसान हूं मेरे मन में गतिशीलता का अभाव है और तू कभी न खामोश रहने वाला परिंदा जो हर दिन अपनी सरहदें खुद बनाता है। अब मैं क्या बोलूं।'' नहलू जोर से हंस दिया।

उसका अट्टहास झील के ऊपर की शांत हवाओं की एकाग्रता को भंग कर गया।

दोनों ने बची हुई जमीन पर नए निशान लगाए और अपने मचान के निकट आग जला कर नींद के इंतजार में अपना वक्त आग की लपटों में डालते रहे। आखिर वह दिन आ गया। काले बादलों की बारात ने टापू वाले गांव को बाजे गाजों से सुबह उठा दिया। मूसलाधार बारिश ने पिछले तीन दिनों से गांव के घटनाक्रम में जबरदस्त परिवर्तन ला दिया था। झील अपनी बाहों को गांव के घरों की तुच्छ बाड़ों के नजदीक पहुंचा चुकी थी। गांव खाली हो चुका था। अब गांव में सिर्फ नहलू था। गांव वालों ने इन मूसलाधार बारिश में अपने घरों के सामान को समेट कर दूर सुरक्षित ऊंचाई वाले कस्बे जहां मात्र कुछ घर थे में अपने डेरे लगा लिए थे। कुछ अपने रिश्तेदारों की संवेदना के साए में पल बिताने लग पड़े थे और कुछ अनजान दूसरे गांव के लोगों को रहमो-कर्म का मौका प्रदान कर रहे थे। नहलू के इरादे का अंदेशा पूरे गांव को था पर किसी के पास इतना समय नहीं था कि कोई उसकी बात पर विश्वास करता। सब अपने नए ठिकाने ढूंढने में लगे हुए थे। सरकार ने गांव को जो जमीनें बांटी थी वो दूर प्रदेश में मिली थी। इस टापू वाले गांव के लोगों में से कोई दूर प्रदेश में नहीं गया बस इधर-उधर विस्थापित हो गए। जो जिद्द गांव न छोड़ने की थी वह भी पानी में डूब गई थी। नहलू के परिवार वालों ने सोचा कि गांव के डूबने के दुख से यह ऐसी बहकी हुई बातें कह रहा है। कोई काम करने लग पड़ेगा तो फिर ठीक हो जाएगा। उन्हें यह भान न हुआ कि नहलू आखिर क्या करने वाला है।

अनिश्चितताओं के साथ जो घटित होने वाला हो शायद वही नहलू के भाग्य, पुरुषार्थ और मनः स्थिरता के बीच के संतुलन की परीक्षा लेने वाला था। छम-छम बौछारों के बीच क्षितिज पर झुके काले बादलों के आसमान के नीचे से उसकी धुंधला साया बहुत आगे अपनी मंजिल की ओर निकल गया। धुंधले ने उसके साए को पल में ही निगल लिया।

नहलू ने अपने बड़े भाई, बूढ़े मां-बाप को दूर अपनी जाति के लोगों के पास धार वाले गांव में पहुंचाया और एक पुराने छप्पर जो रूलिया के किसी पुराने यजमान का था उसमें ठिकाना बना लिया। बरसात ने मन में उगते भय व विस्थापन के दौर को अपनी बौछारों में एक जगह टिकने नहीं दिया था। रूलिया भी अपनी जवानी में घराट चलाकर बुढ़ापे तक पहुंचा था। नहलू ने समय रहते अपने बाप को एक चकमा दिया। वह बोला, '' मैं अब कुछ रुपये-पैसे का इंतजाम करने निकल रहा हूं, जल्दी कुछ ले आऊंगा। कहीं नए घराट का ठिकाना मिलेगा, तो वह भी करूंगा, बस मुझ पर विश्वास रखना,लोगों की कही सुनी बातों पर मत आना। यह पुराना छप्पर हमें कुछ वर्ष आसरा दे ही देगा।''

अनिश्चिताओं के साथ जो घटित होने वाला हो शायद वही नहलू के भाग्य, पुरुषार्थ और मनः स्थिरता के बीच के संतुलन की परीक्षा लेने वाला था। छम-छम बौछारों के बीच क्षितिज पर झुके काले बादलों के आसमान के नीचे से उसकी धुंधला साया बहुत आगे अपनी मंजिल की ओर निकल गया। धुंधले ने उसके साए को पल में ही निगल लिया।

डैम वालों की बोट ने गांव का आखिरी निरिक्षण किया। गांव में पहुंच कर जोर-जोर से आवाजें लगाई। बोट से दो आदमी उतरे। खाली घरों में कोई नज़र नहीं आया। उधर नहलू ने सीत्तू और ठुनिया को पास के कस्बे में ढूंढा। ''मैं एक बार फिर से आखिरी शाम उस अपने गांव में बिताना चाहता हूं चलो मेरे साथ, किश्तियां भी है, मुझे तुम लोगों से बहुत सी बातें करनी हैं। एक शाम बिताने से क्या होगा, अभी पानी घरों में नहीं भरेगा, हम तो पानी का बहाव देखते आए हैं एक दिन में कोई 10 फुट ही आगे बढ़ता है। चलो मेरे साथ।'' सीतू और ठुनिया नहलू की बात मान गए। सोचा, चलो आखिरी बार डूबते गांव का मंजर ही देख लें। चल पड़े तीनों। नहलू अपनी किश्ती पर अलग से चला। कोई घंटे भर में वे गांव में थे। पानी घरों के आंगन तक पहुंच चुका था और शनैः-शनैः आगे बढ़ रहा था इंचों में, फिर फुटों में।

नहलू, सीतू और ठुनिया ने खाली घरों की छत्तों के नीचे रात बिताने का फैसला किया। तीनों बालपन के लंगोटिए यार हैं। तीनों ने इधर-उधर गांव वालों द्वारा छोड़ी लकड़ियों को समेटा और आग जला कर बैठ गए। ठुनिया ने सबसे पहले बात शुरू की। ''नहलू, तू एक बार फिर सोच ले, हमारे पास वक्त नहीं है मुझे लगता है कि आज रात पानी गांव को निगल जाएगा। हमारे बच्चे इंतजार कर रहे हैं, जब हमारी जिंदगी में भटकाव लिखा है तो फिर हमें भटकना ही है, पूरे टापू गांव के लोग टूटे तिनकों की तरह बिखर गए है। कोई ढूंढने से भी नहीं मिल रहा है सब भविष्य की चिंता में दूसरों के रहमे कर्म पर जिंदा हैं।

हमें जब सरकार ने दूर प्रदेश में जमीन के टुकड़े बांट दिए हैं, तो फिर हम यहां क्यों रहें। पंछी भी अपने नए घौंसले हर साल बनाते हैं, हम भी बना लेंगे।'' नहलू की आंखों में आग की चमक में फिर एक रोशनी कौंधी। वह बोला, '' अगर मैं आखिरी वक्त तक डटा रहा तो इस दुनिया को सिर्फ यह बता पाऊंगा कि कभी किसी परिंदे से उसका चमन न छीनो,चाहे वर्तमान में मनुष्य नित नए प्रयोगों के साथ मानवता को बेहतर बनाने,जीवन को सुविधाओं से भर देने में जुटा है और सब बदलते समाज को और बदलने की नायाब तरकीबें बांट रहे हैं। बस अब समाज ने इन विचारों का उत्पादन करना शुरू कर दिया है। अब यही विचार समाज के जीवन स्वप्नों से जुड़े विचार हैं। जीवन की यही सबसे बड़ी सच्चाई अब हम जैसे कई घौंसलों को उजड़ जाने का

निमन्त्रण बांटेगी, मैं सब समझता हूं मेरे भाइयो, पर मेरी जिद्द मेरी सांस्कृतिक व पारम्परिक आत्मा की जिद्द है ये हठ नहीं, अपने हिस्से के परम्परा की जिद्द है सुविधाओं का यह जीवन पराए सपनों की रात में जी उठेगा,अब कुछ भी अकल्पनीय और असंभव नहीं रहेगा। सिर्फ हम लोग दूसरे के बांटे सपनों में अपनी रात को स्वप्निल यादगार बनाएंगे। इसके अलावा हम झीर जाति के लोग और क्या सोच पाएंगे। ये हमारे बुजर्गों का दुस्वप्न ही होगा कि उन्होंने इस जीवनदायिनी नदी के किनारे अपने गांव बसाए होंगे। तब तो उन्हें आभास भी न होगा कि उनके वंश के बरगद को सींचने वाले इस तरह नदी से दूर भगा दिए जाएंगे। पहले तो हमने अपनी मजबूरी में अपनी परम्पराओं, पेशों को इसी झील में डूबोया और अब हमारे अस्तित्व का गांव समय की गर्द में दबकर अपने निशान खो रहा है।

अब मेरा आखिरी फैसला भी सुन लो चाहे तुमने मेरे अघोषित विरोध की आग में अपने विचारों में गर्माहट महसूस की हो या नहीं, मैं इसी टापू पर अपनी जान देने वाला हूं। झील की गहराई में अपने सब उफनते व अपरिवर्तशील परम्परावादी विचारधारा की जल समाधि लूंगा और चाहता हूं कि कोई मेरी इस इच्छा को रोक न पाए। इसलिए भाइयो यहां से चले जाओ। सुबह तक यह गांव डूब जाएगा, और जब पूरा गांव डूब चुका होगा तब भी तुम किसी इनसान से मेरा जिक्र मत करना। ठुनिया बोला, "ये कैसे हो सकता है नहलू, तुम मरने का इरादा बता रहे हो और हम तुमे यूं ही मरने दें, क्या भगवान हमें माफ कर पाएगा? हम तुम्हें ऐसा नहीं करने देंगे। चलो यहां से चलते हैं। पानी हमारे पैरों तक आ गया है।" नहलू बोला, "मैं बार-बार कह रहा हूं कि मैं यह डूबता गांव नहीं छोड़ूंगा। बस मैंने मौत को गले लगाने की सोच ली है। मैं इससे आगे न कुछ सोच पाऊंगा और न सोच पा रहा हूं।" गांव में सन्नाटे व झील के उभरते स्वरों का एक अजीब सा शोर मचा हुआ था। सीत्तू और ठुनिया ने एक दूसरे की आंखों में उस रोशनी को ढूंढना चाहा जो नहलू की आंखों में निशब्द प्रकट हो रही थी। लेकिन वो रोशनी ऊपर कड़कड़ाती बिजली के शोर और भस्म कर देने वाली बिजली व गड़गड़ाहट के सामने फीकी सी लकीर थी। अंधेरे के रथ पर ऊपर काले बादलों का एक नया डरावना आकाश बनता जा रहा था। जिन लोगों की जमीन पैरों को दुतकार देती है उन्हें आकाश भी निगलना चाह रहा था। उनके साधारण मस्तिष्कों में हड़कंप मचा था और वे आकाश की नीयत से भयभीत हो रहे थे। दूसरी ओर नहलू के मन ने इसी डरावने आकाश को प्रेम पूर्ण चादर मानकर और ओढ़ कर घुप अंधेरे में अपने मन में फैल रही रोशनी को सुलाने की कोशिश शुरू कर दी थी। वह बाहें फैलाकर झील के बढ़ते राक्षस को प्रेम पूर्ण आगोश में लेने का निमंत्रण बारंबार भेज रहा था। ठुनिया और सीत्तू अपने भीरू शरीरों में उपजे छोटे सैनिकों को इस नई सत्ता के महाराज के आगे नतमस्तक करते हुए एक आखिरी किश्ती में सवार होकर अपनी मन की शक्ति को अंधा समझ कर डूबते गांव से दूर निकल गए। दोनों की आंखों में आंसू छलछला रहे थे। दोनों कैसे दोस्त हैं जो अपने यार को भी नहीं मना पाए। दोनों ने एक दूसरे से विचार किया।

ठुनिया बोला, "अगर हमने शोर मचा दिया तो भी नहलू कहीं झील में छलांग लगा देगा।" सीत्तू बोला, "यार वो आ जाएगा, सनकी है, हमें डरा रहा है, जब पानी घरों में भरेगा, तो आ जाएगा, उसकी बातों में सिर्फ सनक है, ऐसे भला कौन डूबना चाहेगा। हमें फिर भी उसके घर वालों को बता देना होगा।"

"अरे ये तो पगलाया ही है उनको परेशान करेंगे वो बेचारे वैसे भी इस वक्त विस्थापन के दुख में आंसूओं की झड़ियां लगाए हैं, बूढ़े मां- बाप इस पागल के लिए कहां दौड़ेंगे इतनी बरसात में और वो भी इस उजाड़ टापू पर, हर जगह कोहराम मचा है। मैं तो कहता हूं, बस देखना सुबह तक वह आ जाएगा। हम आज यहां रात को यही झील किनारे ही सोएंगे, अभी अंधेरा हो गया है तू कस्बे से कुछ खाने को ले आ। देखना वह सुबह तड़के ही आ जाएगा नहीं आया तो हम सबको बता देंगे।"

सुबह नहलू के दिमाग ने फिर वही किया। उसे पता था कि वे लोग पक्का उसका इंतजार कर रहे होंगे और वह वापिस नहीं गया तो उन्होंने शोर मचा देना हैं एक किश्ती अभी भी डूब रहे एक पेड़ से बंधी थी। वह किश्ती पर बैठा और किनारे की ओर जिस ओर कस्बा था, निकल चला। मात्र दो-किलोमीटर का झील का सफर होगा। कोई घंटे भर में उसने जैसे ही किनारे पर किश्ती को लगाया, वैसे ही ठुनिया और सीत्तू एक मछुआरे के झोपड़े में जैसे उसका इंतजार करते नज़र आए। दोनों के चेहरे पर मुस्कराहट फैल गई जैसे उन्होंने सब कुछ पा लिया है। सीतू ने नहलू को गले लगा लिया, "चल भाई, अब तू सही सलामत आ गया है अब तुझसे कोई और बात नहीं करनी, चलो अपने अपने घर चलते हैं, हमारे घर वाले परेशान होंगे, रात भर हम भी यहीं सोए रहे। हमें तेरा इंतजार था।" किश्तियां किनारे पर पेड़ों से बांध कर कस्बे की ओर निकल गए। तीनों ने कस्बे की दुकान पर चाय पी और फिर तीनों एक दूसरे को अलविदा कहकर अपने-अपने विस्थापित घरों की ओर निकल गए। नहलू भी अपने घर के रास्ते की ओर कोई चार-पांच कोह आगे निकल गया। पूरा दिन वह इधर-उधर भटकता रहा। उसके दिमाग में सिर्फ एक ही बात थी। अब तो उसने सबको भरोसा दिला दिया था कि वह उन डूबते घरों से निकल आया है। शाम होने तक वह भटकता रहा। फिर जैसे जी सूर्य डूबा उसने अपने कदम उस ओर बढ़ा लिए जहां उसकी नाव बंधी थी। जब अंधेरा सिर पर छाने लगा तो उसने उजाड़ पगडंडियों के इधर-उधर देखा कि कोई आस पास नहीं है और किश्ती पर फिर से डूब रहे अपने टापू वाले गांव की ओर निकल गया।

थोड़ी देर में सब कुछ काले बादलों के साम्राज्य के अधीन हो चुका था। नहलू का मन उन दोनों के चले जाने के बाद ऐसा महसूस करने लगा जैसे उसे हजारों पिंजरों से निकाल कर दूर सिंधूरी आसमानों में उड़ने की लालसा की आजादी मिल गई हो। वह यथास्थिति का आनंद महसूस करने लगा। वह जांबाजी के नशे में पारलौकिक आभा का आभास महसूस करने लगा। अगर कोई रात का राहगीर इस इकलौते गांव की खोह में चुपचाप बैठे नहलू को एक नज़र देख लेता या उससे इस वक्त बात कर लेता तो शायद उसे जिंदगी भर किसी देवता को ढूंढने की कोशिश की लालसा न रहती। मूसलाधार बरसात ने नहलू के इंतजार को भांप लिया था। यह रेत के धुंधलके में मन रूपी मरुस्थल का बरसते बादलों के लिए इंतजार था। ये बियाबान जंगलों में सदियों पहले बनी पगडंडियों के लिए किसी अन्जाने राहगीर के लिए तड़फ जैसा इंतजार था। ये कृष्ण की मीठी बांसुरी और उसके गोपियों के कानों के बीच का इंतजार था। बरसात ने अपना पूरा दम निकाल दिया पर अभी पानी घास व सलेटों से छाए छप्परों के आंगन तक ही पहुंचने की हिम्मत कर पाया था।

नहलू ने सुबह जब दूर धौलाधार के बीच उगते रोशनियों में लिपटे सूर्य को अपनी ओर ताकते देखा तो उसे उस सूरज से नफरत सी हो गई। वह मन ही मन बुदबुदाया, ''क्यों आए हो तुम फिर से, तुम अब मेरे सखा नहीं बन सकते और न ही मैं तुम्हारा मुंह देखना चाहता हूं मुझे अब अंधेरे खयालों की यात्रा पर निकलना है और तुम मेरे रास्ते में बाधा उत्पन्न कर रहे हो। मुझे क्षितिजों के उस पार आकाशगंगाओं की यात्रा के लिए तैयार होना है। मुझे अब इस पुराने आकाश, तुमसे और रात के मेरी ओर घूरते चांद से कुछ नहीं लेना देना है। मेरा मन अब सब बंधनों से मुक्त होने के लिए छटपटा रहा है और तुम अपनी उन्हीं पुरानी रश्मियों को इस धरातल पर बिखेरते जा रहे हो। इन्हें वापिस ले लो या फिर अपना पथ बदल लो मुझे तुम्हारी रोशनी से अब कोई प्रेम नहीं रहा है। मैं किसी अनजाने प्रेम बंधन में बंध चुका हूं।''

वे क्षण नहलू के अंधेरे होते आसमान और जमीन के बीच एक धागे जैसी पतली पगडण्डी बनाना शुरू कर चुके थे जिन पर नहलू को संतुलन बना कर चलना था किसी और सुंदर ग्रह की ओर क्योंकि इस पृथ्वी ग्रह ने तो उसके हिस्से की जमीन डूबो दी थी। अब वे भूखे राक्षस के समान उसके हौसले को निवाला बनाने की मंशा से दूर झील के ऊपर फैले अंधेरों में अपनी योजना बना रहे थे। अंधेरे में नहलू के मन ने ऐसी शांति तलाश कर ली थी कि झील की सतह के ऊपर बने सपाट समतल मैदान के ऊपर निशब्द हवा की लहरों में भी कोई प्रतिध्वनि की गूंज नहीं थी जो उसका अंतिम क्षणों में सहारा बनने का अहसान कर जाती।

वे क्षण नहलू के अंधेरे होते आसमान और जमीन के बीच एक धागे जैसी पतली पगडंडी बनाना शुरू कर चुके थे जिन पर नहलू को संतुलन बना कर चलना था किसी और सुंदर ग्रह की ओर क्योंकि इस पृथ्वी ग्रह ने तो उसके हिस्से की जमीन डूबो दी थी। अब वे भूखे राक्षस के समान उसके हौसले को निवाला बनाने की मंशा से दूर झील के ऊपर फैले अंधेरों में अपनी योजना बना रहे थे। अंधेरे में नहलू के मन ने ऐसी शांति तलाश कर ली थी कि झील की सतह के ऊपर बने सपाट समतल मैदान के ऊपर निशब्द हवा की लहरों में भी कोई प्रतिध्वनि की गूंज नहीं थी जो उसका अंतिम क्षणों में सहारा बनने का अहसान कर जाती।

दो रातें नहलू ने कमर तक चढ़ आए पानी की सतह के ऊपर उड़ती हवा के दम पर बिता डाली थी। सब कुछ पानी में तैरता जा रहा था। दिन के उजाले में नहलू ने स्लेटों के छप्पर पर बैठे बिता लिए थे। बदरंग झील का पानी कभी नीला बनने का अभिनय भी नहीं कर रहा था जिसमें वह अपने अस्तित्व का आईना देख सके। देख सके कि उस नीले आईने में उसकी आंखों में कहीं मृत्यु के डर के छोटे - छोटे बिंदु उभरने तो नहीं लग पड़े हैं पर अब किसी के पास वक्त नहीं था। अगर नीली लहरें आईना बना पाती तो नहलू की शायद मिथ्या प्रशंसा जरूर करती, और शायद ऐसा भी हो सकता था कि ये लहरें नेपथ्य में बने आइने व उसकी दूरदर्शी उत्कंठा को जल की असीमित बूंदों में पिघलाने की कोशिश भी करती। नहलू का मन कर रहा था कि कमर तक चढ़ चुके पानी में नाक बंद करके वह डुबकी लगा दे और जब आत्मा शरीर से निकल जाए तो फिर वह जल्दी से अपना फर्ज निभा दे पर कभी प्रचंड लहरों के बीच से भी अपने हिस्से की सांसें छीनने वाला योद्धा इस शांत मगर मक्कार जल की गहराई में कैसे खुद को डूबो ले। यहां एक ओर तो उसकी जिद्द पूरी हो सकती है वहीं दूसरी ओर कहीं डैम वालों की बोट फिर से गांव की डूबती तस्वीर देखने को आ जाए तो वह अपने हठ की बली चढ़ जाएगा। हिम्मत का शायद दूसरा नाम जिद्द या फिर पागलपन होगा, यहां ये हिम्मत तो एक शरीर को ख्वाजा पीर के चरणों में न्योछावर करने की थी। वह ज्यादा नहीं सोच पा रहा था। उसने सिर्फ वही सोचा- बचपन से लेकर जवानी और अपने जिंदगी के उन सुनहरी पलों को तलाशा जो वह इस जमीन पर बिता पाया है। उसने अपने मन को एक प्रक्षेपण करने वाले यंत्र की तरह चलाया और दूर धौलाधार की ऊंचाई से भी ऊंचे आकाश की घाटियों में प्रकाशित शिखरों पर बैठे अपने देवता को तलाशा। उसने मन को पानी के बुलबुले की तरह हलका करके मृत्यु का असामान्य सानंद स्वीकार कर लिया और जो वह कर चुका है, उसे एक स्वप्न की तरह महसूस किया। नींद तो पानी में डूबने के बाद खुलेगी, जब

उसकी आत्मा शरीर से निकलकर उस बुलबुले में समा कर फिर से पानी की सतह पर तैरने लगेगी तो वह परम शांति की ओर रुख करेगी, वह कुछ पल बुलबुले का अस्तित्व बनाने का प्रपंच करेगी और फिर पल में वायु में समा जाएगी।

उसकी सारी मानसिकता के गहरे सागर में उठी लहरों का जड़ से मिलन हो जाएगा, वे फिर शांत हो जाएंगी। चेतना व गतिशीलता जल में प्रवाहित होकर नई अनुभूतियों के गहन संसार की रचना का निर्माण शुरू कर देगी। पूरा ब्रह्मांड उसकी आत्मा को अवशोषित कर लेगा। अब उसके पास ज्यादा समय नहीं था और अपने जीवन के अंत के विषय में आत्मचिंतन का तो कतई भी नहीं तो फिर वह इस उजाड़ बियावान में मौत के राक्षस के सामने किसी बात का चिंतन तो करना चाहता था। संतुलित जीवन की नदी की धारा के प्रवाह को तो अनजान लोगों ने उनसे पूछे बिना ही पहले से मोड़ दिया था। मृत्यु की शाश्वतता को तो उसने पहले ही स्वीकार कर लिया। इस ब्रह्मांड में जो कुछ हुआ है, वह नष्ट तो होगा ही और फिर से अणुओं परमाणुओं का रूप बनकर फिर से किसी सुंदर जगह पर अंकुरित हो जाएगा। तो फिर वह किस चीज का चिंतन करे। एक बात और है जब ये प्रकृति हर पल गतिशील है, अंकुर पेड़ बनने के जुनून में धरा से खनिजों को अवशोषित कर रहे हैं, हर टहनी नए बीजों से भरे गुच्छे पैदा करने में लगी है। पानी की बूंदें वाष्पित बनकर बादलों में एक-एक करके जुड़ रही है। फिर से धरा पर गिर रही है। किसी के पास रुकने का वक्त नहीं है, सूर्य, चांद, सितारे सब गतिशील हैं तो फिर वह क्यों रुके। उसके लिए भी ईश्वर एक नया कार्य सौंप देगा, रूह बिना किसी उत्कंठा के चुप नहीं बैठ सकती, तो फिर यह शरीर कब तक अप्रसन्नता का दामन थामेगा। इन सब बातों से उसे एक आनंद का अहसास होने लग पड़ा था। उसका मन कह रहा था कि जो हम पहले से नहीं जानते, जिन स्थितियों की पहले कभी कल्पना नहीं की, वही परिस्थितियां उसके सामने बनी है। अगर इस स्थिति को बनाने वाले वह खुद सृजनकार है, वह अब पीछे नहीं मुड़ सकता वैसे उसने आज तक जो भी किया है, उसे वह पहले से नहीं जानता था। वैसे ऐसी चीजें या काम करने का क्या फायदा जो आपके वश में हो या फिर उसके परिणामों को आप पहले से जानते हों। वह सफलता नहीं हो सकती वह तो निजी कार्यकुशलता है। या फिर यूं कहे कि हमारा प्रबंधन है। विपरीत परिस्थितियां से निकले सफलता के मोती ही कुछ अलग सी चमक के होते हैं।

वह भूख का चिंतन भी नहीं कर सकता क्योंकि भूख तो जीवनदायिनी प्रपंचों का निर्माण करती है और वह तो मृत्यु को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। जीवन और मृत्यु के बीच की छोटी रेखा के बीच समाए समस्त उतार-चढ़ाव, भाग्य, पुरुषार्थ व अनिश्चितता के साथ जो भी आज तक घटित हुआ, उस रेखा के वह अब अंतिम बिंदु पर पहुंच चुका है तो फिर उसका चिंतन तो समय की बर्बादी है, और उसके पास समय कम है तो फिर वह किस बात का चिंतन करे। गांव के बूढ़े धीरे-धीरे अपने जराग्रस्त शरीरों को खाट की शैया पर अंतिम सांसों तक अपने रिश्ते नातियों से मिलकर प्राण पखेरूओं को अनंत में विलीन करते थे। उसने तो न अपनी प्रेयसी और न ही पत्नी के संग शांति और सुकून का वातावरण बनाने का स्वप्न लिया, सिर्फ एक घराट और उसके अंदर के घूमते पाटों के शोर में ही उसके जीवन के कई रंग भर गए थे। किसी औरत के शरीर का स्पंदन उसके जड़ बनने वाले शरीर के हर हिस्से में महसूस होने लग पड़ा था। उसने इसी विषय पर मन के चिंतन को लगा दिया। उसने फिर सोचा कि अब अगर वह अपनी प्रियतमा के साथ हर वह सपना लेता है जो एक स्त्री- पुरुष शादी के बाद लेता है तो इसमे भी उस प्रियतमा के साथ अन्याय होगा क्योंकि वह तो अब मृत्यु के असामान्य सानंद को स्वीकार कर चुका है, तो फिर एक अप्राकृतिक जराग्रस्त व्यक्ति के लिए ऐसा चिंतन सही न होगा, वैसे देखा जाए तो उसने किसी रूपसी के हिस्से का प्रेम कुर्बान कर दिया, या फिर ऐसा कहें कि अपनी सफलता के नशे में उसने उस द्वार के करीब पहुंची नवयौवना को भी ठुकरा दिया।

उसने इस चिंतन को भी नीचे फेंक दिया। बस उसके फेंकने से उठी लहरों के प्रवाह से जिस छप्पर पर बैठा था, उसकी कच्ची ईंटों की दीवारों को एक धक्का दिया और फिर उसे लगा कि उसके नीचे एक तेज हलचल शुरू हो गई है, दीवारों की कच्ची ईंटों ने अपने अब तक जकड़े कणों को स्वतंत्र करके पानी के साथ-साथ भाग निकलने का फरमान सुना दिया। आखिरी घर भी ढह गया जिस पर अब तक उसका अस्तित्व टिका था। अब उसके बाजुओं की परीक्षा और मौत का फासला ही बचा था। वह अंधेरे को सहारा बनाकर बस तैरता रहा, तब तक जब तक उसके शरीर और मस्तिष्क का सामजंस्य नसों को संदेश भेज कर उसकी हिम्मत को जिंदा रख सकता था।

वह तैरता रहा और फिर अंधेरा ही उसका गवाह था, चांद तब तक दूर किसी कोने से यह सब देख रहा होगा, पर वह मदद नहीं कर सकता था, उसकी जमीन इस जिद्दी के किसी काम की नहीं थी। जब सूर्य की पहली रश्मि ने उस सपाट झील के ऊपर अपनी शतरंज की बिसात बिछाई थी तब तक वह फूलकर किसी कोने की ओर बहना शुरू हो चुका था। उसको अब आत्मचिंतन से भी छुटकारा मिल चुका था। टापू वाले गांव के कुछ पिघले हुए अवशेष अब कुछ दिनों के बाद दिखाई देने लग पड़े थे। नहलू अपना डूब चुका गांव देखने नहीं लौटा था। गांव वालों को बस अब तक इतना ही पता है।

हाउस न. 618, वार्ड न. 1, कृष्णा नगर, हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश-177001, मो. 0 94181 78176

लघुकथा

दीपा

-डॉ. रजनीकांत

शहर के नामी टेगोर थियेटर की दर्शक दीर्घा खचाखच भरी हुई थी। तिल धरने को स्थान नहीं था। आज दीपा की नृत्य प्रस्तुति थी। मैं भी अपने फ्लैश कैमरे के साथ दर्शक-दीर्घा में उपस्थित था। दीपा चालीस के वय की रही होगी। सांवला रंग मगर देखने में एकदम चुस्त। क्लासिकल नृत्य में उसका कोई सानी नहीं था। उसके पाँव की तीव्र गति बिजली की मानिद थी। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि कोई भी दर्शक उसका कायल हो जाता। मैं उसकी पारंगत नृत्य कला का कायल हो गया था। तबले की हर थाप पर वह सधे कलाकार की भांति नयी प्रस्तुति में चार चाँद लगा रही थी। मैं भी नया-नया पत्रकारिता के क्षेत्र में आया था। मैंने भी निर्णय कर लिया था कि उसका साक्षात्कार लेकर ही हटूंगा। बिजली की सी गति से वह नाच रही थी। सभी दर्शक दीर्घा में बैठे अश अश कर उठे थे। कोई आँखें झपकाने को तैयार न था। उसी को बार-बार देखे जा रहे थे ।

तबले की हर थाप पर उसके पाँव की थिरकन गजब की थी।और उसके साथ साजिंदों ने समां बांध दिया था। दीपा की आँखोंऔर हाथों के हावभाव कुल मिलाकर अद्‌भुत और अविस्मरणीय थे। उसके चेहरे पर थकान के लक्षण बिलकुल न के बराबर थे। नृत्य प्रस्तुति समाप्त हुई। वह अपने विश्राम कक्ष में आ गई।

मैंने अपना परिचय देते कहा- मैडम। मैं सृजन पत्र से रिपोर्टर हूँ। मैंने अभी पिछले महीने ही रिपोर्टिंग का काम शुरू किया है। आपका एक साक्षात्कार मुझे नवजीवन प्रदान कर सकता है। मैं पत्रकारिता में नया-नया आया हूँ। इसलिए आपका साक्षात्कार मेरे लिए महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

-ठीक है, मैं बीस मिनट में तैयार होकर यहीं मिलती हूँ। मैं पत्रकारों का बड़ा आदर करती हूँ। मैं अभी प्रस्तुत हुई। उसके चेहरे पर मंद मंद मुस्कान थी। वायदे के मुताबिक वह बीस मिनट में उपस्थित हो गई। उसकी समय की पाबंदी का मैं कायल हो गया था।

-जी आप कहाँ से हैं ? अपना जीवन परिचय दें ? मैंने कैमरा ऑन करते कहा था।

-मैं कानपुर शहर में उन्नाव जाने वाली सड़क पर मगरवारा कस्बे के पास मसवासी गाँव की निवासी हूँ। मैं बेडिन समाज से हूँ। हम खानदानी नर्तक हैं। हमारे समाज में छोटी-छोटी बच्चियों को अल्पायु में ही घुंघरू बांध दिए जाते हैं। कला और संगीत हमारी नस-नस में बसा है। मेरी माँ अपने जमाने कि मशहूर अदाकारा थी। मुझे अल्पायु में होस्टल में दाखिल करवा दिया। मैंने संगीत में स्नातकोत्तर किया है।

शिक्षा ग्रहण करने के बाद मैं स्थानीय नौटंकी में नाचने लग गई। जवानी में कदम रखा। और एक मेले के दौरान एक युवक मनदीप को दिल दे बैठी। मेल-जोल बढ़ा और उससे शादी कर ली। मुझे बाद में पता चला कि वह पहले से ही शादीशुदा था। मेरे दो बेटे हुए। उसने मुझे कभी अपने परिवार वालों से नहीं मिलवाया। न मैं इधर की रही न उधर की। मेरा उसकी संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं था। उसका अपना परिवार है। मुझे बस इतना पता है कि मेरी एक माँ थी। वह भी अपने जमाने की मशहूर नृत्यांगना रही है और पिता का कोई ठौर ठिकाना पता नहीं है। हमारी जाति की लड़कियां आइटम डांस करके अपना जीवन यापन करती है। कई तो पांव में घुंघरू बांधकर शादी समारोहों में बारात के आगे आगे नाचती हैं। हमारी कोई जाति, गोत्र और कोई वर्ण नहीं। यहाँ तो आठ नौ साल की लड़कियां होठों पर लिपस्टिक लगाकर गलियों में घूमना शुरू कर देती हैं। जवान होते होते वे मार्ग भटक जाती हैं...!

-आपके मन में कभी यह नहीं आता कि हमारा भी घर बार हो। सामाजिक रुतबा हो ? - क्यों नहीं। हम भी मिट्टी के पुतले हैं। हमारा भी दिल है। भावनाएं हैं। अरमान हैं। पैसा शानदार फ्लैट सब कुछ है मेरे पास। बस एक समाजिक रुतबा ही नहीं है। पति का नाम नहीं। कहने को बच्चे हैं। उनको नहीं पता कि उनका बाप कौन है ?हमारे हिस्से तो अब आंसूं हैं। सचमुच उसकी कहानी ने कहीं भीतर तक मुझे हिला दिया था। उसकी साफगोई का मैं कायल हो चुका था।

-आगे आप क्या करना चाहती हैं ? मैंने एक प्रश्न और उछाल दिया था।

-मैं अब सामाजिक सेवा करना चाहती हूँ। अपने समाज में भटकती जवानी को सही मार्ग देना चाहती हूँ। मेरा एक सपना है कि मैं अपने समाज से गरीबी को दूर कर सकूँ। इनकी आवाज को सरकार तक पहुँचाना अब मेरा मकसद है। मैंने उसकी तीन चार तस्वीरें उतारीं और उसका धन्यवाद करते हुए भरे मन से अखबार वाली वैन की ओर बढ़ गया।

राजविला, लोअर कैथू , शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171003, मो. 0 94183 44159

ग़ज़लें : द्विजेंद्र द्विज

एक

पहले धूप ओस में नहाती है
फिर पहाड़ों पे खिलखिलाती है

वो बहुत खुशनसीब होते हैं
जिन पहाड़ों पे धूप आती है

सुब्ह तक नौकरी बजाते हैं
कब चरागों को नींद आती है

जब कभी देखता है आईना
वक्त की आँख डबडबाती है

एक चिड़िया-सी तन के पिंजरे में
हर धमाके पे फड़फड़ाती है

एक दुनिया उजाड़ कर बेटी
एक दुनिया नई बसाती है

रोज दरवाजे पर कोई आहट
दस्तकें दे के लौट जाती है

तीरगी बाज जब नहीं आती
एक बिजली-सी कौंध जाती है

वो जो लड़ते थे धूप की खा़तिर
धूप अब उनपे तमतमाती है

हर जगह इल्म की नुमाइश में
मेरी दस्तार खुल ही जाती है

दो

अपने अन्दर नाग के फन को कुचल कर बात कर
डस न ले तेरी ज़ुबां कुछ तो सँभल कर बात कर

कुछ तो तहजीबो-तमद्दुन में भी ढल कर बात कर
जोश में रख होश भी मत यूँ उछल कर बात कर

अपनी तन्हाई की बाहों से निकल कर बात कर
जिंदगी की गोद में आकर मचल कर बात कर

खामुशी की बर्फ में अहसास को जमने न दे
आ वफा की धूप में तू भी पिघलकर बात कर

बंद कमरों में नहीं मिलती कभी ताजा हवा
आ कभी बाहर निकल छत पर टहल कर बात कर

हर घड़ी हर पल ही तू इनकार का पत्थर न बन
आ कभी इकरार के साँचे में ढल कर बात कर

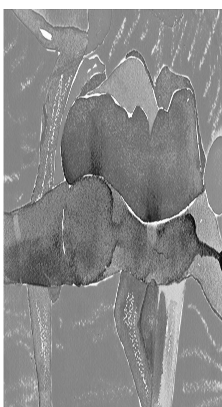
क्यों जलाता है तू खुद को भी अबस इस आग में
मत गलतफहमी के पारे में उबल कर बात कर

क्या जमाने में यही है कामयाबी का हुनर?
दिल की दिल में रख मगर लहजा बदल कर बात कर!

इसमें सन्नाटों के आहट के सिवा कुछ भी नहीं
तू अना के इस जजीरे से निकलकर बात कर

यह भी मुमकिन है लगें काँटे भी फूलों की तरह
'द्विज' कभी तो प्यार के रस्ते पे चल कर बात कर।

तीन



गम हैं इतने कि कुछ हिसाब नहीं
जिन्दगी का मगर जवाब नहीं

मैं खज़ाना हूँ इक सवालों का
बस तभी तो मेरा जवाब नहीं

पुरकशिश है भले ही प्यार बहुत
इससे बढ़कर कोई सराब नहीं

मेरा चेहरा है यह मेरा चेहरा
देखिए यह कोई नकाब नहीं

ऐसी ताबीर देखी आँखों ने
और ख्वाबों की इनमें ताब नहीं

पास उनके है और तो सब कुछ
बस उसूलों की ही किताब नहीं

वो जो खिंचती है आँखों आँखों में
उससे बढ़कर कोई शराब नहीं

चार

फ़ज़ा लबरेज है जिस नग़मगी से
वो आयी है गजल की बाँसुरी से

वो बस मेरे कहे को मानता है
परेशां हूँ मैं जिसकी अनकही से

हमें चेहरों से कोई खौफ कब था
हमारी जंग थी बेचेहरगी से

यहाँ भी मुन्तजिर कोई नहीं है
मिला ये क्या मुझे घर वापसी से

निकालो तुम भी अपने दिल की हसरत
बुझा लो प्यास मेरी तिश्नगी से

मिरे मौला! मुझे तौफीक देना
गुजरना चाहता हूँ उस गली से

दिखाया एक दुनिया का नजारा
कोई शिकवा नहीं आवारगी से

ये क्या है रोज का मर-मर के जीना
अमां ! कुछ काम लीजे जिन्दगी से

फ़क़त सर को कलम होना है बाकी
मिला सब कुछ है वरना सरकशी से

खुदा महफूज है वो है जहाँ भी
बचाओ आदमी को आदमी से

तो क्या मैं भी सियासी हो चला हूँ
मेरी बनने लगी अब हर किसी से

मैं अब खुद में सिमट कर रह गया हूँ
सबक सीखा है मैंने दोस्ती से

यही खूबी तो मेरी जात की है
मैं जुगनू हूँ, लड़ूँगा तीरगी से

जरा-सा तो अलग रख, तेरा लहजा
बहुत मिलता है 'द्विज' की शायरी से

पांच

सोचता हूँ अपना कोई है अभी तक गाँव में
इक पुराना पेड़ बाक़ी है अभी तक गाँव में

उसका साया है पिता-सा अब पिता जी तो नहीं
'इक पुराना पेड़ बाक़ी है अभी तक गाँव में'

और सब अपने पराए शहर में अब आ बसे
एक बस दादी हठीली है अभी तक गाँव में

शहर में चर्चे हैं तेरे रौब -रुतबे के मगर
तेरे बचपन की कहानी है अभी तक गाँव में

तन-बदन बेशक सुखा डाला ग़मों की आग ने
हाँ मगर आँखों में पानी है अभी तक गाँव में

बेचना है शहर में इसके लिए भी गर जमीर
आ चलें दो जून रोटी है अभी तक गाँव में

बोलते सुनते समझते हैं जिसे अब तक भी लोग
ढाई आखर प्रेम-बानी है अभी तक गाँव में

साथ है परदेस में भी रात-दिन जिसकी महक
रात-रानी वो सुहानी है अभी तक गाँव में

विभागाध्यक्ष अनुप्रयुक्त विज्ञान एवं मानविकी
राजकीय पॉलीटेक्निक कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176001



ग़ज़लें : डॉ. नलिनी विभा 'नाज़ली'

एक

उंगलियाँ जलें तो भी ये दिया जलाना है
आँधियों की ज़द में है, पर इसे बचाना है

बारिशों की शिद्दत से ढह गए मकां कितने
सब ढहे मकानों को फिर हमें बनाना है

ज़ीस्त पर ग़ुरूर आखिर किसलिए हो, ये तो बस
आ के लौट जाना है, जा के लौट आना है

रेशमी-से एहसासात आए भी तो कब आए
आखरी चरण में जब राग और तराना है

क्यों न फिर असर उनकी हर ग़ज़ल में आ जाए
शे'र के समुन्दर में जिन को डूब जाना है

सच को तुम दबा दोगे तुम को ये गुमां क्यों है?
जितना सच दबाओगे, उतना फैल जाना है

शाम हो सवेरा हो, साथ है उसी का अब
'नाज़ली' मिला मुझ को आश्ना पुराना है

ज़द : निशाने पर, एहसासात : संवेदनाएं, गुमां : भ्रम

दो

इक चरागां रात भर पानी पे है
रौशनी का इक नगर पानी पे है

चाँद की अठखेलियाँ लहरों के साथ
खेल जारी रात भर पानी पे है

छेड़ती है रागिनी पतवार क्या
एक नग़मा सर ब सर पानी पे है

एक मुट्ठी खाक अन्जामे-हयात
अस्थियों का फिर सफ़र पानी पे है

क्या खबर कब मौजे-तूफ़ां दे उछाल
'नाज़ली' तेरा भी घर पानी पे है

चरागां : दीपोत्सव, सर ब सर : पूर्णतः, अन्जामे-हयात : जीवन का निष्कर्ष, मौजे-तूफ़ां : तूफ़ान की लहर

तीन

हाय! कैसी सज़ा है जीने की
एक मुफ़्लिस को अश्क पीने की

उस के हक़ में बयान देगा कौन?
चीथड़े तन पे, बू पसीने की

एक कंगन में वो जड़ा जाए
कब है क़िस्मत हरइक नगीने की

वो जो है आज इस बुलन्दी पर
है करामत बस एक ज़ीने की

घर में बच्चों को फ़ाक़े लगते हैं
लत है अब्बू मियाँ को पीने की

आएगी क्या मज़े की नींद तुझे
कर कमाई तू खूँ पसीने की

यूँ तो कहने को हैं सभी बेज़ार
फिर भी है चाह सब को जीने की

नाखुदा 'नाज़ली' डुबो ही न दे
या खुदा! खैर हो सफ़ीने की

मुफ़्लिस : निर्धन, करामत : चमत्कार, ज़ीना : सीढ़ी, नाखुदा : मल्लाह, सफ़ीना : नौका

चार

चलो इस दिल को फिर बच्चा बना कर देखते हैं
खिलौनों से ही अपना दिल लगा कर देखते हैं

चलें गुलशन की जानिब तितलियों से खेलने को
हथेली पर उन्हें अपनी बिठा कर देखते हैं

समुन्दर के किनारे बैठ कर लहरों को देखें
सुनें कुछ उन की कुछ अपनी सुना कर देखते हैं

चलें दालान में बैठें करें कुछ गुफ़्तगू हम
मकां को आज अपने 'घर' बना कर देखते हैं

उसे वो ग़म, इसे ये ग़म, सभी हैं ग़म के मारे
चलें, सब अपने-अपने ग़म भुला कर देखते हैं

न मोबाइल, न कम्प्यूटर, न देखें आज टीवी
किताबों से ज़रा नज़रें हटा कर देखते हैं

अकेले में करें कुछ बात दीवारों से दिल की
ज़रा तन्हाई में आँसू बहा कर देखते हैं

हमारी दास्ताँ क्यों 'नाज़ली' हो सब पे ज़ाहिर
हम अपने ज़ख्म दुनिया से छुपा कर देखते हैं

सेवानिवृत्त एसोसिएट प्रोफ़ेसर (राजकीय महाविद्यालय हमीरपुर)
पोस्ट भोटा, ज़िला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश-176041, मो. 0 94183 04634

ग़ज़लें : रमेश कपूर

एक

मुझको खुशियों का पता दे ज़िंदगी
या मेरे ग़म को बढ़ा दे ज़िंदगी

इक मुसलसिल दर्द है आवारगी
तू सुकूं इसको बना दे ज़िंदगी

फ़र्ज़ की मानिंद हम जीते रहे
कुछ तो तू इसका सिला दे ज़िंदगी

रात के आग़ोश में दिन का वजूद
इसको हौले से जगा दे ज़िंदगी

हसरतें और ख़्वाहिशें ग़र हैं गुनाह
मुझको फिर इनकी सज़ा दे ज़िंदगी

जागते रहने का कुछ हासिल नहीं
मौत के दामन सुला दे ज़िंदगी

दो

दोस्तों के प्यार में उलझे रहे
दुश्मनों की खार में उलझे रहे

एक लम्हा जीतना मुमकिन न था
और सदी की हार में उलझे रहे

दोस्तों का यह करम भी खूब था
पीठ पीछे वार में उलझे रहे

लूट ली लोगों ने सारी क़ायनात
हम इसी संसार में उलझे रहे

ज़िंदगी की नेअमतों को छोड़ कर
हम फ़क़त रफ़्तार में उलझे रहे

तीन

सूली पे लटक कर कोई ईसा नहीं होता
हर रोज़ मसीहा कोई पैदा नहीं होता

जो शख़्स बनाता है इक क़तरे को समंदर
उस शख़्स की तकदीर में क़तरा नहीं होता

सदियों का बोझ लादना लम्हों की पीठ पर
आसां तो बहुत है मगर अच्छा नहीं होता

बादल ही बरसने का हुनर याद जो रखते
सच मानिये तो आज यह सहरा नहीं होता

बस, आदमी को आदमी होना नहीं आया
वरना तो मेरे शहर में क्या क्या नहीं होता



ए -4/14, सैक्टर -18, रोहिणी, दिल्ली- 110 089
मोबाइल : 9891252314

समीक्षा

आवाज और खामोशी का उम्दा संगम है वरक दर वरक

◆ अजय पाराशर

भले ही ग़ज़ल-परदाज डॉ. नलिनी विभा नाजली उर्दू शायरी का जाना-माना नाम है, लेकिन उनकी शख्सीयत ऐसी है कि वह आम जिन्दगी में भी वरक दर वरक ही खुलती हैं, अपनी शायरी की तरह। अपनी बात चुपचाप रखने वाली डॉ. नाजली किसी परिचय की मोहताज नहीं, लेकिन वह तमाम तरह की साहित्यिक गुटबंदी से दूर रहना पसन्द करती हैं। उनकी ग़ज़लियात की इस साल आई किताब 'वरक दर वरक' में उनके कहने का अन्दाज, जिन्दगी के तमाम रंग, अनुभव और फल्सफा पाठकों को सीधे अपने साथ जुड़ने पर मजबूर कर देता है।

बलराज कोमल के अनुसार डॉ. नाजली नजम और गजल कहने में बराबर की महारत रखती हैं। उनकी शख्सीयत का जादू उनकी शायरी में साफ तौर पर नुमाया होता है। उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ भी अनुभव किया, सीखा, उसे अलफाज के मार्फत दुनिया तक पहुँचा दिया। उनके ये शे'र देखिए :

नक्श-बर-आब है ख़ुशी और ग़म।
ये बुज़ुर्गों की हक बयानी है।।

या फिर

उम्र भर सींचा है जिसको खून से।
गुल वो चाहत का महकता क्यों नहीं।।

लेकिन जिन्दगी की हरारत से परेशान होकर वह कह उठती हैं :

जब्त इतना 'नाजली' तूने किया।
दम सुलगता है, भड़कता क्यों नहीं?

भले ही जिन्दगी के तजरबात ने उन्हें बाहरी तौर पर गंभीर बनने पर विवश कर दिया हो, लेकिन दिल की मासूमयित अभी भी बरकरार है। उनकी ग़ज़ल का पहला ही शे'र ही दिल में उतर जाता है :

चलो दिल को फिर से बच्चा बनाकर देखते हैं।
खिलौनों से ही अपना दिल लगाकर देखते हैं।।

लेकिन इसी गजल के एक दूसरे शे'र में उससे या कुदरत से जुड़ने का हुनर भी बखूबी सामने आता है :

समन्दर के किनारे बैठ कर लहरों को देखें।
सुने कुछ उनकी, कुछ अपनी सुनाकर देखते हैं।।

एक जगह खुद से सवाल करती हुई वह उसके बारे में पूछती हैं :

सरचश्मः ए अफ्लाक दिखाई नहीं देता।
हर जा है ख़ुदा पाक, दिखाई नहीं देता।।

इस तरीके से शे'र कहने का अन्दाज उसी शख्स का हो सकता है, जो तमाम उम्र जिन्दगी की आग में सुलगता रहा हो और बात कहने के इस सलीके को असरदार ढंग से जिन्दगी में उतार भी लिया हो। जब आदमी यह हुनर सीख जाता है तो वह कायनात के दर्शन को आसानी से जीवन में उतार लेता है। जिन्दगी से जुड़े तमाम तजरबात और फल्सफे उसके कहने के अन्दाज में साफ नज़र आते हैं। उन्होंने अपनी शायरी में कायनात के विभिन्न रूपों को बड़ी अदाकारी के साथ पेश करने के अलावा समाज के ठेकेदारों के मुखौटों को बेनकाब करते हुए तमाम सामाजिक खाइयों, रूढ़ियों, विद्रूपताओं और विसंगतियों को भी बेहद असरदार तरीके से नुमायाँ किया है। उनके ये शे'र देखिए :

उसके हक में बयान देगा कौन।
चीथड़े तन पे, बू पसीने की।।

कई जगहों पर उनके कहने का अन्दाज दुष्यन्त, धूमल और नागार्जुन की तरह प्रतीत होता है। उनका यह शे'र देखिए :

जो ऊँचे लोग मुज्रिम थे, वही माने गए सच्चे।
जो छोटे लोग थे, इल्जाम सारा उनके सर आया।।
भड़के थे फसादात तो हमने यही देखा।
फिर्कों का बयां और, हुकूमत का बयां और।।
ऐसे ही एक दूसरी ग़ज़ल में वह कहती हैं :
सूरज को बाँटने के जो वा'दे थे, क्या हुए।
जो थे हमारे हक के उजाले कहाँ गए।।

लेकिन प्रकृति से उनका जुड़ाव तकरीबन हर ग़ज़ल में दीखता है :

शब की तारीकी में सोए थे जो थक कर ताइर।
ताजः दम हो गए जब आया नजर धूप का रंग।।

जब जिन्दगी की तमाम दुश्वारियाँ उन पर हावी होती हैं, उन्हें कुदरत के आँचल में आकर ही सुकून हासिल होता है :

खुशबुओं का है हवाओं पर सफर और।
रस लबालब फूल छलकाने लगे हैं।।

जिन्दगी की बेवफाइयों से आजिज होकर वह एक जगह पूछती हैं :

उम्र भर सींचा है जिसको खून से।
गुल वो चाहत का महकता क्यों नहीं।।

एक जगह व्यवस्था और हुक्मरानों से परेशान होकर वह पूछती हैं :

चुन के भेजा है उन्हें संसद में किस विश्वास से।
हक गरीबों का निगल ले कुर्सियाँ, अब क्या पता।।

जमीर बेच के कहते थे खुद को खिदमतगार।
ये पासबां तो सियासत के कारोबार में थे।।

लेकिन कहीं जिन्दगी की बेवफाई से सवाल करते हुए वह पूछ बैठती हैं :

रेत बनकर फिसल गए कैसे।
दिन जवानी के ढल गए कैसे?
'नाजली' जिन्दगी बनी नौहा।
हमसफर थे जो छल गए कैसे?

कहीं जिन्दगी के गमों से परेशान होकर, वह मौत की दुआ करती हुई कह उठती हैं कि बस अब काफी हुआ :

इक सजा है तवील उम्री भी।
मौत लाजिम है जिन्दगी के लिए।।

तो कहीं सवाल करती हैं :

सब ही कफस में कैद थे, आजाद कौन था?
दुनिया अलमकदः थी तो फिर शाद कौन था?

देश के सियासी और मजहबी हालात और बढ़ती हुई हिंसा पर तजकिरा करती हैं :

इन सियासत और मजहब की दुकानों में भला।
मुफ्लिसों के भी निवालों का कोई इम्कान है।।

वतन की लूट में मसरूफ हर पल।
ये सब बहरूपिये चोले हुए हैं।।

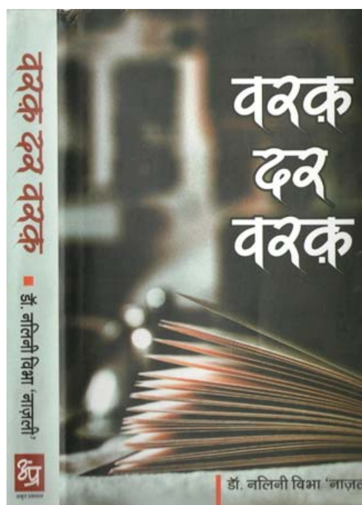
जो पढ़ाया था पाठ गाँधी ने
आह! उसका कोई असर न हुआ।।

अभिव्यक्ति के सवाल को वह अपने ही अन्दाज में कुछ इस तरह जाहिर करती हैं :

करें न इजहार रोक इस पे, बयां न हो कुछ है हुक्म उसका।
तभी जबाने-कलम से पैहम ग़ज़ल में जज्बात ढल रहे हैं।।

लेकिन फिर 'वरक दर वरक' के आखिरी सफों में जिन्दगी की बेवफाई उन पर हावी हो जाती है :

जिक्र तेरा जबां पे आते ही।
दिल के शीशे में आल आता है।



चैन की नींद कहाँ है मिरी किस्मत में कभी।
सो गए सब तो मिरी फिक्र के आहू निकले।।

ठीक भी है अगर शायर भी चैन से सो जाए तो दुनिया के दर्द को जबां कौन देगा? उनकी तमाम ग़ज़लों में चाहे उनका दर्द, उनके गम, अनुभव और जीवन का यथार्थ सामने आता है लेकिन इस दुनिया में कौन ऐसा है, जिसकी जिन्दगी इतनी आसान हो कि वह दलदल से भरे जीवन के दरिया को यूँ ही लांघ जाए। लेकिन अपने और पराए दर्द, गमों और तजरबात को अलफाज में पिरोना सभी के बस की बात नहीं। नाजली ने जिस बारीकी, नफासत, कारीगरी और खूबसूरती से कायनात और समाजी नाहमवारियों को उकेरा है, उसके लिए वह बधाई की हकदार हैं। उनकी इस किताब में शामिल 367 गजलों में जिन्दगी के तमाम रंग बिखरे पड़े हैं, जिनसे रू-ब-रू होने के लिए इन्हें पढ़ा जाना जरूरी है। अमृत प्रकाशन, नई दिल्ली से शाया ग़ज़लों के इस गुलदस्ते की कीमत 650 रुपये है। इसमें कोई दोराय नहीं कि यह मजमूआ निजी लाइब्रेरी में शामिल किया जाना जरूरी है।

उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यालय प्रेस सूचना संपर्क, धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश

वरक़ दर वरक़ : ग़ज़ल संग्रह, डॉ. नलिनी विभा 'नाज़ली', अमृत प्रकाशन, दिल्ली-110032

समीक्षा

अंजुरी भर आस
शुभेच्छा और सरल मानवीय संवेदना की कविताएं

◆ राजेंद्र वर्मा

अँजुरी भर उजास / भरी रहे अँजुरी / रिक्त हो न कभी / आशाएँ हों पूरी सबकी / प्रसन्न रहे सभी ।(पृ.20)

प्रोमिला भारद्वाज की सद्य प्रकाशित पुस्तक की शीर्षक संदर्भित कविता की अमुक पंक्तियाँ कवयित्री की काव्य-यात्रा की दृष्टि और दिशा को भली-भांति अभिव्यक्त करती हैं। उनके लिए मानव जीवन एक अखंड यज्ञ के समान हैं जिसमें हम सभी किसी न किसी रूप में अपनी-अपनी आहुतियां डाल रहे हैं और कवयित्री इसी उद्देश्य की पूर्ति काव्य-सृजन करके कर रही हैं। भाव शायद यह भी कि वर्तमान के संक्रमण काल में वैश्वीकरण, बाज़ारीकरण के चलते जब परिवार नाम की मौलिक संस्था पर ही खतरा मंडरा रहा हो और जब आपाधापी के इस कालखंड में मानवीय संस्कार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित नहीं हो पा रहे हों तब इस दायित्व को लेकर साहित्य अथवा कविता को ही सामने आना पड़ेगा और कवयित्री उस दायित्व को संभालने के लिए तत्पर है और सभी का आह्वान भी करती है

"स्व को कर स्वाहा / सर्वहित हेतु अभी / बन जाएं मसीहा / हम तुम सभी ।" (पृ. 17)

मंतव्य यही कि यह अखंड यज्ञ निरंतर चलता रहे और इस यज्ञ में जितना हो सके सभी अपनी-अपनी आहुतियाँ दें। कवयित्री की विचारभूमि वस्तुतः 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भारतीय अवधारणा से निर्मित है--

"अखंड यज्ञ / चले युग युगान्तर / सुगन्धित धुआँ / सुवासित करे हर पीढ़ी / सद्भावों की महक फैले / फैलाए वैचारिक शुद्धता / शान्ति बढ़े सुख सम्पन्नता / हर दिशा हर देश में / विश्व की विराटता में / उदित हो एकात्मता"(वही पृ.18)

प्रोमिला की कविता वास्तव में गहरे आध्यात्मिक बोध नहीं तो एक गहरी आत्मिक सोच, समझ, निष्ठा और जिज्ञासा की कविता तो है ही, उनकी कविता में अनेकशः एक आध्यात्मिक संभ्रम की उपस्थिति वर्तमान है --

"करते सब, जो वो करवाता / देखते जो-जो वो दिखाता / दृष्टि का वही दाता / सृष्टि का वही रचयिता / कठपुतलियों की भांति / अनगिनत जीवों को / जब जैसा चाहे बनाए / जब जैसे चाहे नचवाए" (पृ.5)

किन्तु पुस्तक के अग्रेषण वक्तव्य में डॉ. रेखा वशिष्ठ, जिन्होंने हिमाचल के काव्य-संसार को पुष्पित-पल्लवित किया है, ने ठीक ही चिह्नित किया है कि कवयित्री "प्रकृति और परिवेश पर घिरते हुए संकट और उनसे पैदा हुए खतरों से भयाक्रांत है।" वास्तविकता यह है कि आज मानवता भौतिक विकास की चकाचौंध से ही परिचालित भी है तो आक्रांत भी। विकास की इस अंधी दौड़ में कोई भी पिछड़ना नहीं चाहता और यह दौड़ प्रकृति को ही लील लेना चाहती है। इस सम्बन्ध में कवयित्री की चिंता यूँ अभिव्यक्त हुई है

"कंकरीट के बीज बोए / पनपते, बढ़ते, फैलते गए / वो सब के सब शनैः शनैः,............विकास की दौड़ में / आगे बढ़ने की होड़ में / पहाड़ पिछड़ना नहीं चाहते" (पृ.21-22)

इस भौतिक जीवन की आपाधापी और होड़ से भयाक्रांत हो वह मानव-जाति को सीधे संबोधित करते हुए कहती हैं

"ऐ प्रकृति के प्रतिनिधियो ! / सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणियो / शान्ति वरण कर / संयम से सोचो / ढूंढो विकल्प / बिगाड़ा है जो जो / उसे संवारने को" (पृ.9)

और यह भी कि

"कम कर के प्रदूषण / फैला के हरियाली / पा लो पुनः / सौम्य शुद्ध पर्यावरण / अनुकूल वातावरण।"(वही)

कवयित्री के उक्त काव्य-पंक्तियों को सपाटबयानी कह कर नकारा नहीं जा सकता क्योंकि कवयित्री जिस प्रदूषण की बात कर रही है वह केवल बाह्य वातावरण का प्रदूषण नहीं बल्कि आंतरिक वरन् वैचारिक प्रदूषण की भी बात कर रही हैं। इसी कविता में वह कहती है --

"मनुष्य चिड़चिड़े हो चले / हँसते कम, कम बोलते / अशुभ है लक्षण ये, अच्छे नहीं / क्या दर्शा रहे / जताना क्या चाहते" (पृ.8)

'किस ओर' कविता में इस बदले वातावरण में बदले

मानवीय संबंधों को और भी शिद्दत के साथ शब्दबद्ध करते हुए कवयित्री कहती हैं

"भरती जा रही रिक्तता से/ हृदय की दरारें, खोखले हुए जा रहे/ सम्बन्ध नाते सारे /.......... घर बनने लगे रैन बसेरे।"(पृ. 13-14)

'तुच्छता', 'मकान बनें घर', 'कछुए', 'मौन' और 'चक्रव्यूह' आदि कविताओं में भी समकालीन समाज में मानवीय संबंधों में आ रही संवेदनहीनता और खोखलेपन को अलग-अलग कोणों से देखने का प्रयास निहित है। इसलिए एक प्रकार की समझाइश भी अनेकशः उनकी कविताओं में मिलती है यथा

"भौतिक सुख सुविधाएँ, इन्टरनेट आदि / तुम्हारे लिए हैं, तुम उनके लिए नही।" (पृ.14)

आधुनिकता के साथ समाज में औपचारिकता का भी प्रवेश हुआ है जिससे जीवन के अर्थ कई मायनों में बदले हैं। यह बदलाव भी कवयित्री को गहरे प्रभावित करता है क्योंकि जीवन की सहजता जैसे कहीं खो सी गई है। निवारण भी सहज और सरल है –

"सोचें समझें सबसे पहले / बनें स्वयं के मित्र / खुल के बतियाएं स्वयं से / सारे संकोच तज / सहृदयता से मिलें / मिलें जिस-जिस से / स्वाभाविकता की उमंग / तरंगित होनें दें / कुंठाएं त्याग / कली की पंखुड़ियों सम / खिलने दें स्वयं को / सिकुड़ना छोड़ / कछुए की तरह।" (पृ.64)



किन्तु जीवन की यह सहजता, स्वाभाविकता ही तो आधुनिकता, भौतिकता की बलि चढ़ी है। 'वाघाबॉर्डर' नामक कविता में अलगाव के मूल कारणों की खोज करते हुए मानवीय संकल्पनाओं को पुनः परिभाषित करने का संकेत है। वाघाबॉर्डर शीर्षक वास्तव में प्रतीकात्मक है

"काश ! सारी घटनाएँ / स्वयं ही स्वयं को / विपरीत क्रम में दोहराएँ / ढह जाए वाघाबॉर्डर / उसकी मिट्टी से / प्यार का सेतु बने" (पृ.23)

किन्तु यह सेतु केवल भारत पाकिस्तान को जोड़ने वाला नहीं बल्कि मानवता को जोड़ने वाला सेतु है, क्योंकि वाघाबॉर्डर प्रतीक है अहं, असहिष्णुता, संकीर्ण साम्प्रदायिकता, वैमनस्य और सत्ता मोह का जिसने हमेशा से ही मानवीय संवेदनाओं का क़त्ल किया है तथा मानव को जातियों, वर्गों, सम्प्रदायों और ऊँच-नीच, छोटा-बड़ा अथवा हीन-श्रेष्ठ की संकीर्ण भावनाओं में विभाजित किया है। किन्तु कवयित्री को विश्वास है कि

"एक नन्हा सा संकल्प / हौंसलों के पंख पहन / उड़ता है जब जब / मन के अम्बर में / होते हैं चमत्कार / छोटे बड़े आविष्कार / अनेक परोपकार / धरा पे बार-बार।" (पृ.26)

किन्तु मानव के अहं को संभालना कदाचित् आज की सबसे बड़ी चुनौती है। कवयित्री का वैचारिक अन्वेषण और संवेदन यहीं केंद्रीभूत हो जाता है

"काश ! अहं हो जाए बौना / मनुष्य के वजूद जितना / बंद हो घृणा का बोना / सहज हो जीना / सुंदर सकल संरचना / जैसे सृष्टि सारी।" (पृ. 27)

और यह भी कि

"काश ! करे कोई प्रयास / अब स्वाध्ययन का / सामाजिक विश्लेषण का / जन उत्थान का / समस्याओं से जूझते / साधारण प्राणियों के / द्वेष व क्लेश से उद्धार का" (पृ. 28)

वास्तव में कवयित्री के काव्य-संग्रह में ऐसी ही नारी-सुलभ सदिच्छाओं और अपेक्षाओं की अभिव्यक्ति अनेकशः हुई है। किन्तु 'मर्यादा' नामक कविता में कवयित्री ने नारी स्वतंत्रता और नारी विमर्श के नाम से प्रचलित मुहावरों के बीच सीधे-सीधे शब्दों में मर्यादा का प्रश्न उठाया है। नारी होकर नारी-विरोधी ठहराए जाने की आशंका के बीच भी, तथाकथित आधुनिकता, भौतिकता और बाजारवाद की अंधी दौड़ को नारी- स्वतंत्रता और समानता के लोकतान्त्रिक नारे की आड़ में जायज ठहराने की दुरभिसंधि को कवयित्री ने ठीक से पहचाना है जब वह कहती हैं --

"वस्त्र हैं अब भी / मनुष्य भी हैं / फिरें फिर क्यूं / पहने कम वस्त्र / लगभग निर्वस्त्र / देख-देख लगे / आदिकाल में हैं क्या / पुनः आजकल।" (पृ.29)

आदिकाल की पशुतुल्य स्थिति से ऊपर उठ मानव ने 'अहं ब्रह्मास्मि' का उद्घोष भी कर लिया किन्तु पश्चिम की भौतिक चकाचौंध जैसे फिर हमें अँधा करने पर तुली है। न जाने मानव ने कितने संघर्षों के बाद पारिवारिक मूल्यों, सामाजिक मूल्यों और मर्यादाओं को बनाया-संवारा और रचनाकारों ने कितनी ही बार इन मर्यादाओं और मूल्यों के क्षरण से क्षुब्ध अथवा चिंतित हो लेखनी उठाइ। 'दर्द की लहर', 'दो जोड़ी हाथ' और 'थकती नहीं औरतें' आदि कविताओं में नारी-सुलभ संवेदनाओं की काव्यात्मक अभिव्यक्ति इस कविता-संग्रह को अतिरिक्त मूल्यवत्ता प्रदान करती है।

'जागो ऐ मन। नामक कविता में अपने ही मन से जागने का आह्वान छायावादी कविता की भाव-भंगिमा की याद दिलाता

है-- 'जाग गए वन उपवन / जागोगे कब ऐ मन ! / नभ ने दी तज / कालिमा की चादर / ओढ़ी नारंगी लालिमा / घर जागे समूचे नगर / गलियाँ अंगड़ाइयां ले / लगी हिलने-डुलने / सड़कें लगी दौड़ने / दिनकर संग / गतिशील हुआ जीवन........"(पृ.44)

'पहाड़ों की सुबह' नामक कविता में पहाड़ों की सुहावनी सुबह की ताज़गी, उमंग व स्फूर्ति का विकास की आड़ में पीड़ादायक परिणति का चित्र खींच कर पर्यावरणीय जागरूकता का सन्देश, चिंता और चेतावनी दी गई है। 'वस्त्र बदलते पहाड़' कविता भी कवयित्री की ऐसी ही एक सुंदर कविता है जिसमें आधुनिक जीवन की त्रासदी को विशुद्ध काव्यात्मक अंदाज में अभिव्यक्त किया गया है--

'आने वाला है बसन्त / पीले-पीले थके-थके उकताए से / चेहरे आ रहे नज़र / व्यस्तताओं के थपेड़ों से / मुरझाए बेरौनक चेहरे / किताबों के बोझ तले / कंप्यूटरी ज्ञान में निपुण / आज के बच्चे / समझ पाएंगे क्या / बसन्त का अर्थ / महसूस कर सकेंगे क्या / मन में बसन्त की उमंग / क्या उड़ा पाएंगे पतंग / ऐ कालचक्र ! आधुनिकता की जकड़ / ढीली कर अपनी पकड़ / आज की पीढ़ी पर / दे दे थोड़ा समय उधार / देखने को / वस्त्र बदलते पहाड़ / समझने को / वसंत का अर्थ। (पृ. 59-60)

और वसंत के अर्थ को न समझ पाना कदाचित् आधुनिकता और भौतिकता की दौड़ में अंधी पीढ़ी की सबसे बड़ी विडम्बना है और कवयित्री की सृजनात्मकता के लिए सबसे बड़ी चुनौती। किन्तु कवयित्री निराशावादी नहीं है बल्कि कवयित्री की नज़र में सपनों की खेती कदाचित् कवि का सबसे बड़ा प्रयोजन है। यथा

'सपने देखना न छोड़ें / न ही उगाना औरों की / सूनी आँखों में / जगमगाते स्वप्न / जान ले ऐ मन ! / जगत है स्वप्न / और हम स्वयं / विधाता के देखे / स्वप्न का साकार रूप / तैयार रहें / बनने को / पुनः स्वप्न......... और बोते ही रहें / सपने सुन्दर सुन्दर।'(पृ. 49-50)

कवयित्री का आस्थावान मन कहीं भी उसका साथ नहीं छोड़ता। संग्रह के अंत में 'स्नेहिल सुगंध', 'हीरे-मोती', 'समाचार', 'प्रेम के पंख', 'प्रेम शेष' और 'आनंद' आदि कविताओं में अनेकविध मानव के कल्याण का ही आह्वान है। इस सम्पूर्ण कविता-यात्रा में कवयित्री की अकुलाहट एक ही है --

'लुटाऊँ जो-जो पाऊँ / जन-जन तक पहुँचाऊँ / मिला सब, इस भांति / सृष्टि को लौटाऊँ / निरर्थक न जीऊँ / सुख वितरण का / साधन बनूँ।'(पृ. 119)

इसलिए कहीं सूर्य से जादुई छड़ी भेजने का आग्रह है तो कहीं हवाओं से शुभ समाचार लाने का ताकि मानव हृदयों में उल्लास और आशा का संचार हो। कवयित्री का दृढ़ विश्वास है कि मानव ने जो कुछ खोया है वह सब कुछ सहज प्राप्य है किन्तु इसके लिए अध्यात्म ही एक मात्र सहारा है अन्यथा विनाश लीला को कोई नहीं रोक सकता

'खो बैठे जो-जो / पाना चाहते हो जो / मिल जाएगा / युगयुगांतरों से संचित / सांस्कृतिक धरोहर में / आध्यात्मिकता के सागर में / डुबकी लगाओ / वांछित, सब, पाओ / दूर होंगी शंकाएँ / ऐ नवयुग ! तुम्हारी / सभी सारी की सारी / मिल जाएँगी जड़ें / जुड़े रहना। उगाना उन पर / अपना वंश......." (पृ. 41-42)

और वंश से यहाँ अभिप्राय मानव-वंश से है, मानव-सभ्यता से है। गाँव का जीवन अभी भी कवयित्री को आश्वस्त करता है। 'जागता है गाँव', 'भारत बसता गाँव में', 'देहाती सैर' आदि ऐसी ही कविताएँ हैं। यथा

'भारत बसता गाँव में / रिश्ते पलते जहाँ / प्यार की छाँव में / प्रेम भाईचारा है शेष / केवल गाँव में।'(पृ.108)

'पहाड़ों की सुबह, और 'पहाड़ों के शिखर, शीर्षक के अंतर्गत छः कविताएँ कवयित्री के गहरे अवलोकन और कोमल संवेदना की परिचायक हैं। अंतिम कविता 'प्रेम रहे शेष' 'अंजुरी भर आस' कविता-संग्रह की सहज परिणति है जब कवयित्री कहती है--

'सूर्य रश्मियों के / स्नेहिल स्पर्श से / पिघलते हिम खंड / जता रहे, / कठोर से कठोर / हृदयों में छुपी है नर्मी,/ .... ये गर्माहट / सँजोए रखो / जीवन को जीवंत / बनाए रखने को / प्रेम बचाए रखो /..........फैलाओ प्रेम / पिघल-पिघल जाए / घृणा, ईर्ष्या-द्वेष / प्रेम रहे शेष / और / उसकी गर्माहट / पसरे चहुँ ओर।'(पृ.108)

अतः रेखा वशिष्ठ के अनुशीलन का निष्कर्ष बिलकुल सही है जब वे कहती हैं, "प्रोमिला के कविता संसार में विविध स्वरों का समावेश है। उसमें व्यक्ति के मानस को उद्वेलित करने वाले शाश्वत प्रश्न हैं। सृष्टि और उसके रहस्यों को लेकर बाल सुलभ आश्चर्य और जिज्ञासा है। प्रकृति का सौंदर्य और उससे उपजा आह्लाद है। मानव की नियति और उससे जुड़े विरोधाभास और विडम्बनाएँ हैं। मानव मूल्यों में गहरी आस्था, मानवीय संबंधों के प्रति सम्मान और उन्हें बचाए रखने का प्रबल आग्रह है।"

'श्यामकला' ग्राम : कठार, पत्रालय बसाल,
तहसील व ज़िला सोलन, हि.प्र.-173 213

अंजुरी भर आस : काव्य-संग्रह, लेखिका : प्रोमिला भारद्वाज, लोकगीत प्रकाशन

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 64 फरवरी-मार्च 2020 अंक : 11-12

प्रधान सम्पादक
हरबंस सिंह ब्रसकोन

संपादक/वरिष्ठ सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
विवेक शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

यौवन विकारों को जीतने के लिए मिला है, उसे व्यर्थ ही न जाने दें।

- महात्मा गांधी

इस अंक में

लेख

अपनी बात

सृष्टि स्वयं में परिवर्तनशील है। यहां हर चीज समय के साथ गतिशील और सृजनशील रहती है। समय सदैव गतिमान है। इसका पहिया अपनी गति से निरंतर चलता रहता है। परिवर्तन दरअसल प्रकृति का मूल स्वभाव है और इसी अनुनेय नियम के साथ यह प्रक्रिया चलायमान रहती है। ब्रह्मांड में सृजनता के अंकुर समय-समय पर प्रस्फुटित होकर नए-नए आविष्कारों एवं सिद्धांतों के रूप में फलते-फूलते रहते हैं। बदलाव की इस प्रक्रिया में समय सबसे बलवान है और अनमोल भी, क्योंकि मनुष्य अपने खोए हुए धन को तो पुनः प्राप्त कर सकता है परंतु हाथ से निकले समय को कभी वापिस नहीं ला सकता। प्रकृति के इसी नियम के अनुसार हमारी इस धरा पर ऋतु परिवर्तन होता है। भारत दुनिया का अनेक ऋतुओं वाला देश है, जहां ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर और वसंत आदि छह ऋतुओं का आगमन होता है। मौसम के इस चक्र में ऋतुराज वसंत का अपना एक अलग अंदाज है। यह मौसम न तो ज्यादा गर्म होता है और न ज्यादा ठंडा। इस मौसम में शिशिर में पेड़ों से झड़े पत्तों की जगह नई-नई कोंपलें पनपने लगती हैं। ऐसा कहा जाता है वसंत का मौसम पुष्प, पेड़, नदियों तथा तालाबों में सुगंध भर जाता है। साहित्य जगत में भी वसंत ऋतु का विशेष महत्त्व है। विश्वभर की समस्त साहित्यिक विधाओं में ऋतु वर्णन विशेषकर वसंत ऋतु का बखान विविध रूपों में उपलब्ध है। इसी प्रकार भारतीय साहित्य में भी प्राचीनकाल से ही वसंत वर्णन बहुतायत मिलता है। भारतीय हिंदू सभ्यता एवं संस्कृति के अनुसार संगीत, कला और साहित्य की अधिष्ठात्री 'मां' वाग्देवी सरस्वती का अवतरण वसंत पंचमी को माना जाता है और हमारी सनातन संस्कृति में इस पावन दिवस को ही साहित्य साधना प्रारंभ करने के लिए शुभ माना गया है। संस्कृत, अपभ्रंश, प्राकृत तथा हिंदी जैसी प्रमुख भारतीय भाषाओं के रचनाकारों ने अपने साहित्य में इस ऋतु का प्रमुखता से वर्णन किया है। संस्कृत के महाकवि जयदेव की गीत गोविन्द व रतिमंजरी जैसी कालजयी साहित्यिक कृतियों से लेकर महाकवि कालिदास द्वारा रचित ऋतु-संहार, हिंदी काव्य की प्रेमाश्रयी धारा के कवि जायसी के पद्मावत में बारहमासा तथा इसी तरह असंख्य कवियों की रचनाओं में वसंत ऋतु का बड़ा ही सुंदर एवं दार्शनिक वर्णन देखने को मिलता है। भारतीय आधुनिक हिंदी काव्यधारा की महान कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने तो स्वतंत्रता संग्राम के दौरान शौर्य रस की 'वीरों का कैसा हो वसंत' जैसी कविताओं के माध्यम से आंदोलनकारियों में राष्ट्र प्रेम के नये जोश और जज्बे का संचार किया था। कहने का अभिप्राय है कि इस ऋतु के आगमन से धरा की संपूर्ण वनस्पति निखर उठती है। चहुं ओर रंग-बिरंगे फूलों के खिलने से प्रकृति नए रंग रूप में नजर आती है। जीव-जंतु मदहोश होकर विचरण करने लगते हैं। हिमालय की गोद में बसा हिमाचल प्रदेश एक ऐसा राज्य है जहां इस ऋतु में वसंतोत्सव को महापर्व के रूप में मनाया जाता है। हिमाचल की देव संस्कृति में देवाधिदेव शिव का स्थान सर्वोपरि है। इसलिए शिव महिमा से जुड़ा महाशिवरात्रि पर्व यहां बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। मंडी का अंतर्राष्ट्रीय शिवरात्रि महोत्सव अपने एक अलग अंदाज और रीति-रिवाजों के साथ मनाया जाता है। सात दिवसीय मंडी शिवरात्रि के दौरान देव समागम का अनूठा दृश्य आधुनिक दौर में शायद ही अन्यत्र देखने को मिले। वैसे भी हिमाचल प्रदेश के मंडी शहर का इतिहास लगभग पांच सौ साल पुराना है। व्यास तट से सटे इस शहर के हर कोने में देवालय स्थित हैं, जिनमें भूतनाथ मंदिर सबसे पुराना है। इसी मंदिर के इर्दगिर्द शहर की संस्कृति की परंपराएं सदियों से चली आ रही हैं। शायद यही कारण है कि मंडी शहर को देश की छोटी काशी के नाम से जाना जाता है। इस साल वसंत ऋतु का हर्षोन्माद उस समय फीका पड़ गया जब दुनिया भर में तबाही फैला चुके कोरोना वायरस ने हमारे देश व प्रदेश में दस्तक देकर लोगों के जीवन को घरों की चारदीवारी में कैद कर दिया।

वरिष्ठ संपादक

आलेख

पहाड़ी में रचित साहित्य यात्रा और मूल्यांकन

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

यूं तो किसी भी भाषा का निर्माण सदियों से चली आ रही परंपरा और संस्कारों से होता है। समय के अनंतर उसके साहित्य का निर्माण और फिर व्याकरण व भाषा विज्ञान बनता है। किंतु यह भी सत्य है कि भाषा का प्रयोग, प्रचलन व विकास राजतन्त्र की शक्ति के माध्यम से होता है। जो राजा की भाषा होगी, वही प्रजा की भी होगी।

सदियों तक हमारा देश मुस्लिम शासकों के अधीन रहा। हालांकि इन शासकों की भाषा और भारत में विद्यमान भाषा में ज्यादा अंतर नहीं था किंतु उन्होंने उर्दू फारसी को हिन्दुस्तानियों पर ऐसा थोपा कि सभी उसका प्रयोग जाने अनजाने करने लगे। मुस्लिम शासकों को मिटे भी सदियां हो गईं, मगर यह प्रयोग आज तक जारी है। हमारी पूरी की पूरी राजस्व शब्दावली आज भी उर्दू फारसी में है। गांव के अनपढ़ लोग उसकी शब्दावली को बोलते समझते हैं। जमीन, कब्जा, कब्जानाजायज, जमीदारी, खाता खतौनी, जमाबंदी, इंदराज, इंतकाल, मुआवजा जैसे शब्द आम ग्रामीण समझते और बोलते हैं। उधर आम जिंदगी में बोलचाल के शब्द जैसे जरूर, गजब, खैर, गरूर, रफादफा, वफा, बाजार, अर्ज, सफाई, फैसला हमारे प्रयोग में रमते गए। सरकारी कार्यालयी प्रयोग के शब्द जैसे मुलाजिम, अफसर, दफतर, हाजिर, मेज कुर्सी भी आए। कुरता पायजामा जैसा पहरावा भी हमारा हुआ।

इस तरह से न जाने उर्दू फारसी के कितने शब्द हम रोज प्रयोग में लाते हैं, यह न जानते हुए कि ये किस भाषा के शब्द हैं। यह सब शासक की सूझ-बूझ या चालाकी से हुआ।

मुसलमान शासकों के बाद अंग्रेज आए। अंग्रेजों ने भी अपनी भाषा को आमजन में इस तरह से लागू किया कि हमें पता ही नहीं चला कब हम लोग स्कूल, कॉलेज, इंस्पेक्टर, कलक्टर, पेन, पेपर, बी.ए., एम.ए., कोर्ट, जज बोलने लगे। अंग्रेज भी चले गए पर अंग्रेजी अपने पैर और पसारती गई। अब तो बूढ़ी दादियां भी मूड की बात करती हैं। ये शासकों की नीति थी कि कैसे राजभाषा को सरकार से आगे आमजन तक पहुंचाया जाए। आज गांव में लोग अंग्रेजी के कई शब्द बोलते हैं, यह न जानते हुए कि ये अंग्रेजी के हैं।

पहाड़ी का उद्भव

अंग्रेजों के बाद या अंग्रेजों के समय में ही राजशाही का दौर आया। हिमाचल की बात करें तो यहां तीस से अधिक छोटी बड़ी रियासतें थीं। मोटे तौर पर यह पन्द्रहवीं सदी से आरम्भ माना जा सकता है जब हिमाचल में छोटे बड़े राजाओं ने शारदा और संस्कृत को छोड़ अपनी भाषा में शिलालेख, पुरालेख, काष्ठ लेख और फरमान जारी करने आरम्भ किए। पहले संस्कृत, फिर अशुद्ध संस्कृत, फिर पहाड़ी में ये लेख लिखे जाने लगे। ये लेख टांकरी लिपि में, बिगड़ी हुई अशुद्ध संस्कृत और मिलीजुली खिचड़ी भाषा में थे जो पहाड़ी का पुरातन स्वरूप माना जा सकता है।

उदयपुर का अशुद्ध संस्कृत में मृकुला देवी लेख इस प्रकार है :

''ओं ठकुर-महश्री-हीमपालन। श्री महादेवि-मर्कुल उदी। पित्रुः पुत्र पौत्रेण सर्वेकाल तिष्ठति देव-श्रीयो भवित। तं म शुभ कुत्र। श्री कश्मीर यदवंत। मार निरह्ल मर्कुलदेवि उपनि.....।''

चंबा में पनघट शिलाओं पर लेख की परंपरा थी। चामुण्डा (देवी री कोठी), जिसे चंबा के राजा पर उमेद सिंह ने सन् 1754 में बनवाया, में टांकरी में निम्न लेख हैः

''सं. 30 भाद्रो प्र. 21 लगायत अथ जे श्री महाराजे उमेद सिंघे श्री देवी चामुण्डा रा देहरा पया। देहरे दा सरदार श्री मियां बिसन सिंघ। हाजरी निल्हेड़ी छंयां सुगलाल झगड़ू। त्रखाण गुरदेव झंडा। बटेहड़ा हैलू देबू गठीर ग्याल पोह प्र. 21 संवत् लिख्या। शुभ।''

चंबा में ऐसी भाषा और टांकरी लिपि में बहुत से लेख मिलते हैं।

मनाली की हिडिम्बा देवी के द्वार पर टांकरी में लेख है जिसके अनुसार इसे राजा बहादुरसिंह ने सन् 1553 में बनवाया। ऐसे बहुत से लेख देवताओं के मोहरों पर खुदे हैं।

चंबा के राजा राजसिंह और कांगड़ा के राजा संसारचंद के मध्य संधि पत्र इस प्रकार लिखा गया :

''श्रीराम जी लिखत श्री राजा राजसिंघ श्री राजा संसार चंद की धरम लीखी दित्ता धरम एक जे सुत्र दूहीं सहना कीठा रखणा

इक हकम दूहीं अपणे अपणे बन्ने पर दूहीं कायम रहणा।''

बिलासपुर में लिखी पहाड़ी का एक उदाहरण :

''ओं। माहराजे श्री हीरचंदे बचने प्रती हजूर ऊपर हुए औबटी बलासपुर बजारे बीच गणसुर बरमणे अलुहुहए ते उत्तर दे कनारे कजारीए पुल दे सुलतानी च ए चढ़े.....।''

कुल्लू की एक पाण्डुलिपि में इस प्रकार लिखा गया :

''भादर सिंह से पहिले जो राजे हुए उनका राज परोल बजीरी पर ही रहा। रूपी बजारी में ठाकुरों का राज था जो सुकेत के राजा को नजराना दिया करते थे।''

एक और उदाहरण :

''फेर राजा मकड़ाहर से उठेया होर रघनाथजी भी सुल्तानपुर आई गे। रघनाथजी का मंदर पाऐया, होर महल पाए सेहा बसाऐया। उसके पीछे कभी राजा सुल्तानपुर में रहे, कभी नगर में रहे।''

राजाओं के राज में चंबा से लेकर कुल्लू और बुशहर तक लगभग एक सी ही भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है। इसका मुख्य कारण यह है कि इन दस्तावेजों को लिखने वाले कायस्थ थे जो इन सभी राजाओं के यहां रहते थे। उस क्षेत्र की आम बोली चाहे कैसी भी हो, ये लागे अपनी ही भाषा में दस्तावेजों को लिखते थे। अतः पूरे पहाड़ी राज्यों के दस्तावेजों की भाषा एक सी है। टांकरी लिपि में थोड़ी बहुत भिन्नता पाई जाती है।

जिस तरह हम अंग्रेजी बोलते-बोलते स्वाभाववश हिन्दी और फिर पहाड़ी में आ जाते हैं, ठीक उसी तरह वर्तमान पहाड़ी का भी उद्भव हुआ है। इसका सटीक उदाहरण चंबा के लक्ष्मीनारायण मन्दिर की मुख्य प्रतिमा के ऊपर चांदी के तोरण लेख में मिलता है जिसमें जैसी तैसी संस्कृत के बाद लिखने वाला सीधा पहाड़ी में आ जाता है :

उों! स्वस्ति श्री मान्नपतिवर बिक्रमादित्य संवत्सरे
1804 शलिवाहन शाके 1669 श्री मान्नृपतिवर
दलेल सिंह राज्य मुक्त वर्षगणे 13 छक्षिणेयायने
वर्षा ऋतो श्रावणे कृणैकादश्यां बुधे मृगशिर
नाम नक्षत्रे श्रीश्रीश्री लक्ष्मा नारायण प्रीत्यर्थ
के अंत में पहाड़ी में नामादि आते हैं :
चित्रकारादयः चित्रकारौ लैहरू महेशौ
स्वर्णकारौ यीरजू किरपू ताम्रकारौ जैराम किरपू
तत्रधिकारिणः होलालू दुर्गादास पोटरू
भगवान सोनि वाणिया लुद्र मेहता पंडित दया राम
पुज्याले़ लक्षु ढीचू कीरपू पाहरी प्रसादु अबलू हरिया
सन्तोखू इन्हादे पाले़ चाढ़या, कोठयाला़ शिवराम
शास्त्र संवत 23 ज्ञावण प्र. 21 लिख्या शुभम्।

इसी तरह के बिगड़ी हुईं संस्कृत के पहाड़ी में आने के उदाहरण सिरमौर तथा महासू में उपलब्ध सांचा ग्रन्थों में भटाक्षरी, पण्डवाणी और पाबुची में भी मिलते हैं।

टांकरी के बाद पहाड़ी में लिखित काव्य

आमजनों में कविता करने वाले कवियों ने ब्रजभाषा या ऐसी ही किसी दूसरी भाषा का प्रयोग अपने काव्य में किया। साहित्य की रचना तथा इसके संरक्षण में गुलेर राज्य अग्रणी रहा। इसके अंतिम राजा बलदेव सिंह ब्रजभाषा के कवि थे। इनकी एक गीतिका में पहाड़ी का पुराना स्वरूप देखने को मिलता है :

''मेरे मनैं हरि का नाम पिओरा, पूर्व जाइये न्हौइये श्रीगंगा किनारे राम धन धन राणिये दुर्गा देइये तै तै गोबिंद सौ चित्त लायआ।''

पहाड़ी कवियों में कांशीराम, रूद्रदत्त, गणेश सिंह बेदी प्रमुख हैं। कांशीराम ने 'रामगीता' लिखी। रूद्रदत्त राजा शमशेर सिंह के दरबारी कवि थे जिन्होंने छंदों का प्रयोग किया :

''अज्ज सौंपणा घर गुआंढणी की अत अप्पू की छैल सिंगार बणाणा।

उन्हें होए मते दिन आया दियां, न्वोड़े मनैं दा जाई कैं रोस चुकाणा।

नहीं जाणदी असौं कुत गल्ला रूठे, गल लाई के सज्जण अप्पूं मनाणा

तुस्स दौंएं सहेलियां साथ चल्लौ, असे अपणे प्यारे की दिक्खण जाणा।''

कवि देवदत्त ने कांगड़ा और चंबा के युद्ध का वर्णन किया है :

''एक दिवस चंबयाल को दूत पुकारयो जाह
बाको दुर्ग पठियार को लियो कटोच छिनाई।''

कवि मोलाराम ने महाराज संसारचंद और गोरखों के बीच हुए युद्ध का वर्णन किया है :

''रस्त बंद सब करी तहां ही। खलबल पड़ी किले के माहीं।
खाली भये भंडार कुठारा। बाहर अन्न न आवे मारा।
त्राहि त्राहि गढ़ भीतर भई। नर नारी सब मूर्छित रही।''

इसके बाद सुजानपुर टिहरा में जन्मे कवि हरिनामदास, ने लगभग 1920-40 में पहाड़ी रचनाएं लिखीं। पंडित हरलाल डोगरा (दतारपुर), रूद्रदत्त दीक्षित (सुजानपुर टिहरा), बृजलाल (हमीरपुर), सोमनाथ (हरिपुर) आदि कवियों पहाड़ी में रचनाएं कीं।

पहाड़ी के आदि कवि पहाड़ी गांधी बाबा कांशीराम

बाबा कांशी राम वही व्यक्ति थे जिन्हे पं0 जवाहरलाल नेहरू ने 1937 में गढ़दीवाला होशियारपुर में हुए सम्मेलन में 'पहाड़ी गांधी' कह कर सम्बोधित किया। इनके गीतों को सुन कर सरोजनी नायडू ने इन्हें 'बुलबुल-ए-पहाड़' की उपाधि दी।

सन् 1931 में सरदार भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू की शहादत का इनपर बहुत गहरा असर हुआ और इस दिन से उन्होंने शोक जताने के लिए काले कपड़े पहनने आरम्भ किए :

राजगुरू, भगतसिंह सुखदेवे
फांसी ते झुलणा पेया
काल़े कपड़े पायी के अस्से सोग मनाया।

इन शहीदों का जिक्र इन्होंने बार-बार अपनी कविताओं में किया है :

इकट्ठे हो के हिन्दियां ने जद राग आजादी गाया
जलियां वाल़े बाग अंदर गोल़ी नाल़ उड़ाया
फड़ फड़ काले पाणी भेजेया जालम जुल्म कमाया
भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरू जानों मार मुकाया।

महात्मा गांधी और फ्रंटियर गांधी की तरह पहाड़ों में भी एक 'पहाड़ी गांधी' पैदा हुआ जिसने अपने आजादी के गीत गा-गा कर लोगों में स्वाधीनता का जज्बा पैदा किया। सोयी हुई कौम को जगाने के लिए पहाड़ी गांधी ने नारा दिया :

साडे देसे दे लोकि सब सुते
इन्हां बढेया अपणा नक्क लोको
उजड़ी डोगरे देस जाणा।

11 जुलाई 1882 को डाडासीबा में जन्मे बाबा जी ने पहाड़ी (कांगड़ी) में सन् 1900 के प्रारम्भ में गीतरचना प्रारम्भ की। उन्हें गाने-बजाने का शौक तो बचपन से ही था। बचपन में ही वे लाहौर आ कर रहने लगे। लाहौर के अनारकली बाजार की धोबी मंडी में कांगड़ा से बहुत से लड़के आ कर सेठ साहूकारों के यहां काम करते थे। इन्हें 'मुंडू' कहा जाता। जहां कांशीराम रहते थे, वहां भी गायन का माहौल था। वे यहां पंजाबी मिश्रित पहाड़ी में गाया करते थे। इन की कविताओं में मुख्यतः पहाड़ी और उसके साथ पंजाबी और कहीं-कहीं हिन्दी का प्रयोग भी दिखाई देता हैं।

बाबा कांशीराम एक जन कवि या लोक कवि थे। लोक कवि की उड़ान बहुत ऊंची किंतु लोक के करीब होती है। लोक कवि देर तक याद रखा जाता है। उसकी कविताएं या गीत देर तक जनमानस में छाए रहते हैं और बहुत बार आगे यात्रा भी करते हैं। बाबाजी की कविताओं के साथ भी ऐसा ही हुआ। ये कविताएं बाद में अन्य लोगों द्वारा भी कुछ जोड़ जमा के साथ गाई जाती रहीं। 'लोकां दा चली पेया राज लोको' गीत इस का उदाहरण है जो बाबाजी के न रहने और स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भी लोगों द्वारा गाया जाता रहा।

सैंकड़ों कविताओं की रचना के साथ बाबाजी ने दो खण्ड काव्य 'कुणाले दी कहाणी' तथा 'नाने दी कहाणी' लिखे। इनके पहाड़ी में दो उपन्यास 'बाबा बालक नाथ कनै फरियाद' तथा 'चतरो कनै रेसो' भी बताए जाते हैं। इनकी रचनाओं की मूल प्रतियां इनके पुत्र वैद्य सवायाराम के पास सुरक्षित थीं।

मुक्त छंद से गीतों की रचना कर समय और स्थिति के अनुसार उन्होंने मौके पर कविताओं और गीतों को रचा और गा कर सुनाया। धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्र भक्ति व चेतना से ले रोमांटिक थीम; सब तरह के विषयों पर उन्होंने रचना की। सामाजिक शोषण, कुरितियों पर चोट, जाति प्रथा, छुआछूत व ऊंच नीच का विद्रोह, किसान दुर्दशा, सांप्रदायिकता का विरोध, नारी शक्ति की स्थापना, सद्भाव व सदाचार की हिमायत उनकी कविताओं के विषय रहे। इस सबके बीच एक क्रांति का तीखा स्वर इनकी कविताओं में हमेशा गूंजता रहा।

जिस प्रकार संग्राम के समय अपनी कुलदेवी को मात्था टेक कर योद्धा प्रस्थान करता है, बाबाजी ने भी उसी प्रकार कुलजा को मात्था नवा कर स्वाधीनता संग्राम में प्रवेश डंके पर चोट के साथ किया। मनुष्य एक ही बार जन्म लेता है। उसे अपनी जिंदगी की, मां-बाप की लाज रखने के लिए और देश पर कुर्बान होने के लिए कुलदेवी को मात्था नवा कर तैयार होना है :

कांशीराम जिंद गवाणी
जिंद लाज नीं लाणी
इक्को बार जम्मणा
अम्मा बब्बे दी लाज रखणी
देस बड़ा है, कौम बड़ी है
जिंद अमानत उस देस दी
कुलजा मत्था टेकी कने
इन्क्लाब बुलाणा
ओ कांशी! असां फिरि जेला जाणा।

अन्य सेनानियों के साथ कई बार जेल भी जाना पड़ा। पराधीन भारत को आजाद कराने के लिए इन्होंने यह गीत गा कर आजादी का बिगुल बजाया :

एह मत पुच्छ मेरिए बहणे
मैं कुण, कुण घराना है मेरा
सारा हिन्दुस्तान है मेरा
भारत मां है मेरी माता
जो जंजीरां जकड़ी है
ओ अंगरेजां पकड़ी है
उस जो आजाद कराणा है।

आजादी की लड़ाई में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के बावजूद ये स्वाधीन भारत को देख नहीं पाए। 13 अक्तूबर 1943 को स्वाधीनता प्राप्ति से पूर्व ही इनका देहांत हो गया। 23 अप्रैल 1984 को भारत सरकार द्वारा इन पर डाक टिकट जारी किया गया। डाक टिकट जारी किए जाने के श्रीज्वालामुखी में हुए इस समारोह में तत्कालीन प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के साथ स्व. नारायणचंद पराशर (सांसद) तथा पहाड़ी गांधीजी के पुत्र वैद्य स्वायाराम भी उपस्थित हुए। स्व. नारायण चंद पराशर ने बाबाजी पर एक मोनोग्राफ भी लिखा जो साहित्य अकादमी ने प्रकाशित किया। एक मोनोग्राफ अकादमी द्वारा भी प्रकाशित किया गया।

भाषा-संस्कृति विभाग द्वारा पहाड़ी में लेखन के लिए 'पहाड़ी गांधी बाबा कांशीराम राज्य सम्मान' आरंभ किया गया।

पहाड़ी : एक जरूरत

हिमाचल के कुछ पर्वतीय भागों को हिमाचल में मिलाने के स्थान पर पंजाब में शामिल किए जाने की मुहिम के समय पहाड़ी भाषा व संस्कृति एक जरूरत के रूप में सामने आई।

राज्य पुनर्गठन आयोग द्वारा समय-समय पर तरह-तरह की सिफारिशें की जाती रहीं। एक बार तो हिमाचल को पंजाब में मिला कर महापंजाब बनाने की बात भी सोची गई। इस बीच पुराने हिमाचल और नये हिमाचल दोनों के नेताओं से सूझबूझ दिखा कर आपस में मिलने की योजना बनाई। भाषा और संस्कृति के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की बात उठाई गई। जनगणना में 'पहाड़ी' को अपनी मातृभाषा लिखाने का अभियान चला। इन सारे प्रयासों के बाद प्रथम नवम्बर 1966 का ही वह दिन था जब केन्द्र ने कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल-स्पीति, ऊना, शिमला, नालागढ़, डलहौजी, बकलोह के पहाड़ी क्षेत्रों को हिमाचल में मिला कर विशाल हिमाचल का गठन किया।

इस पुनर्गठन के पीछे पहाड़ी क्षेत्र की भौगोलिक इकाई के साथ-साथ पहाड़ी संस्कृति और पहाड़ी भाषा का विशेष महत्त्व रहा।

प्रथम नवम्बर 1966 को केन्द्र सरकार ने कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल-स्पिति, ऊना, शिमला, नालागढ़ तथा डलहौजी, बकलोह को हिमाचल प्रदेश में मिलाया। अब इस प्रदेश का क्षेत्रफल 55,673 वर्ग किलोमीटर हो गया। प्रथम नवम्बर को 'पहाड़ी दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा।

सरकारी संरक्षण

जैसाकि पहले विवेचित हुआ है, किसी भी भाषा के प्रोत्साहन व विकास के लिए सरकारी संरक्षण आवश्यक है। हिंदी यदि राजभाषा बनी है तो सरकारी संरक्षण से।

विशाल हिमाचल के उस दौर में अपनी भाषा व संस्कृति के प्रति सरकार जागरूक हुई। साथ ही डॉ. यशवंत सिंह परमार और लालचंद प्रार्थी जैसे पहाड़ी संस्कृति और भाषा के पोषकों के हाथ में सरकार की कमान आई।

भाषा-संस्कृति विभाग बनने से पहले शिक्षा विभाग के अंतर्गत 'राज्य भाषा संस्थान' द्वारा 'हिन्दी-हिमाचली (पहाड़ी) अनन्तिम शब्दावली' निकाली गई थी जिसमें दो हजार शब्दों के पर्याय दिए गए थे।

पहाड़ी भाषा के उत्थान के लिए 30 सितम्बर 1970 को हिमाचल प्रदेश विधान सभा में एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसके अन्तर्गत प्रदेश की कला, संस्कृति और भाषाओं के संरक्षण, संवर्धन और विकास के लिए 'हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी' के गठन का निर्णय लिया गया। सरकार अधिसूचना सं. 8-9/71 एलडब्ल्यूपी लैंग. दिनांक 14 अप्रैल 1971 द्वारा अकादमी का गठन हुआ और 2 अक्तूबर 1972 को विधिवत् इस संस्था का उद्घाटन हुआ।

अकादमी का गठन प्रदेश की भाषाओं के उत्थान के लिए एक एतिहासिक घटना थी और यह संस्था पहाड़ी के उत्थान के लिए एक मील पत्थर के रूप में स्थापित हुई।

क्योंकि अकादमी के अध्यक्ष श्री लालचंद प्रार्थी पहाड़ी भाषा व संस्कृति के उत्थान के प्रति प्रतिबद्ध थे अतः उस समय पहाड़ी भाषा का एक आन्दोलन सा चला।

श्री लालचंद प्रार्थी के प्रयासों से ही शिक्षा विभाग के अधीन राज्य भाषा संस्थान के बाद 1972 में ही स्वतन्त्र विभाग के रूप में 'भाषा एवं सांस्कृतिक प्रकरण विभाग' के नाम से स्थापना हुई।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि तत्कालीन सरकार ने अपने को हिन्दी राज्य न कह कर 'पहाड़ी राज्य' कहा और हिन्दी राज्यों में ग्रन्थ अकादमियों को मिलने वाला एक करोड़ रूपया ठुकरा दिया। फलतः हिमाचल प्रदेश में अन्य हिन्दी राज्यों की तरह ग्रन्थ अकादमी नहीं बन पाई।

उस दौर में विभाग तथा अकादमी द्वारा पहाड़ी के उत्थान के लिए जो कार्य किए गए, वे सराहनीय थे। प्रदेश में पहाड़ी का एक माहौल बना और अनेक कवि लेखक सामने आए। विभाग द्वारा पहाड़ी में ''काव्य धारा'' पुस्तकों की एक श्रृंखला तीन भागों में निकाली गई। अमर सिंह रणपतियां द्वारा 'गादी शब्दावली' का प्रकाशन हुआ। उधर अकादमी द्वारा 'पहाड़ी लोक रामायाण', 'छनाट', माल़ा रे मणके', 'कथा सरवरी' के दो भाग, 'देई जुल्फू' और 'पहाड़ी रचना सार' जैसे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन निकाले गए।

पहाड़ी में छपी पुस्तकों की खरीद, प्रकाशन सहायतानुदान व अन्य प्रोत्साहनों से प्रदेश में पहाड़ी के प्रति एक वातावरण तैयार हुआ।

अकादमी द्वारा शक्तिचंद राणा, ओंकारलाल भारद्वाज, अश्विनी गर्ग, संसार चंद प्रभाकर, नरेन्द्र अरूण, जगदीश कपूर, मदन हिमाचली, शंकर सान्याल, शम्मी शर्मा, एम. कुसुम मटौरवी, देवराज संसालवी, स्वर्णकांता शर्मा, हरिकृष्ण मुरारी, कुलदीप सिंह वरजाता दीप, दिनेश कुमार शास्त्री आदि कई पहाड़ी लेखकों को पुस्तक प्रकाशन योगदान दिया जिस से इनकी पुस्तकें प्रकाशित हुईं।

इस दौर के बाद पहाड़ी की धारा अवरुद्ध हुई और कभी रुकने और कभी चलने के स्थिति आती रही। हां, नारायणचंद पराशर के संस्कृति मन्त्री बनने पर पहाड़ी का दौर पुनः लौटा और अकादमी में पहाड़ी के विकास के लिए प्रकाशन सहायतानुदान, पहाड़ी पाण्डुलिपि पुरस्कार जैसी विशेष योजनाएं चलाई गईं।

पहाड़ी के लिए 'शिखर सम्मान' की स्थापना हुई। ये शिखर सम्मान वर्ष 1994 में भवानीदत्त शास्त्री व श्यामलाल डोगरा को,

वर्ष 1995 में चन्द्रशेखर 'बेबस' को, वर्ष 1996 में मनोहर सागर पालमपुरी को और वर्ष 1997 में आचार्य दिवाकर दत्त, संसारचंद प्रभाकर और कमला वर्मा कमल को दिए गए। साहित्यकार सम्मान योजना तो सभी भाषाओं के लिए थी ही।

विभाग में पहाड़ी के लिए राज्य सम्मान स्थापित किया गया जो जयदेव किरण को मिला।

विभाग द्वारा पहाड़ी में हिमभारती पत्रिका आरम्भ की गई जिसे बाद में अकादमी को दिया गया।

पहाड़ी का प्रमुख स्वर : कविता

अपने प्रारम्भिक काल में पहाड़ी के प्रति कुछ समर्पित व्यक्तित्वों ने महत्ती भूमिका निभाई। कुल्लू में पुरोहित चंद्रशेखर 'बेबस', मास्टर नेसूराम, एम.आर. ठाकुर, चंबा में हरिप्रसाद सुमन, कांशीराम आत्रेय, अमर सिंह रणपतिया, मंडी में पं. भवानीदत्त शास्त्री, सिरमौर में खुशीराम गौतम, विद्यानंद सरैक, कांगड़ा में पीयूष गुलेरी, गौतम व्यथित, संसारचंद प्रभाकर, सागर पालमपुरी, शम्मी शर्मा, बिलासपुर में शब्बीर कुरेशी, हमीरपुर में भगतराम मुसाफिर, कमला वर्मा कमल, बी.आर. मुसाफिर, कमल हमीरपुरी, शिमला में जयदेव किरण, काहनसिंह जमाल, हरिराम जस्टा आदि विद्वानों ने पहाड़ी की जोत जगाई।

पुरोहित चन्द्रशेखर की एक कविता पुस्तक 'तीतर चाकर' प्रकाशित हुई। इन्हें अकादमी की ओर से 'शिखर सम्मान' दिया गया। पं. भवानीदत्त शास्त्री ने गीता और कई उपनिषदों का मण्डियाली में अनुवाद किया। मण्डयाली में गीता गायन के लिए वे प्रसिद्ध रहे। वर्ष 1984 में इनका पहाड़ी काव्य 'लेरा धारां री' प्रकाशित हुआ। इन्हें वर्ष 1983 तथा वर्ष 1988 में अकादमी पुरस्कार तथा वर्ष 1989 में हिमधारा की ओर से 'पहाड़ी साहित्य चूड़ामणि सम्मान' दिया गया।

ठेठ पहाड़ी मुहावरे का स्वर भगतराम मुसाफिर में देखा गया जो प्रेम भारद्वाज से होता हुआ त्रिलोक सूर्यवंशी, रत्नचंद निर्झर और विनोद भावुक तक बहने लगा।

पहाड़ी कविता में सी.आर.बी. ललित का काव्य संकलन ''जीऊणे रे आशु'' प्रथम संकलन माना जाता है। उधर कांगड़ा से डॉ. पीयूष गुलेरी का 'मेरा देस म्हाचल' और गौतम व्यथित का सातवें दशक 'चेते' प्रकाशित हुआ। इसके बाद लगातार काव्य संकलन आते रहे। इन में संसार चंद प्रभाकर द्वारा रचित 'माया' महाकाव्य का उल्लेख किए बिना बात अधूरी रह जाएगी। इनके साथ सर्वश्री ओमप्रकाश 'प्रेमी', शेष अवस्थी, रूपसिंह फूल, मनोहर सागर पालमपुरी, प्रेम भारद्वाज, सुदर्शन कौशल नूरपुरी, प्रत्यूष गुलेरी प्रारंभिक कवियों में उल्लेखनीय हैं जिनके संकलन आए। इनके बाद बी.आर. मुसाफिर, शबाब ललित, प्रीतम चंद प्रीतम, शक्ति राणा, नवीन हलदूनवी, मेहरचंद दर्दी, रोशनलाल संदेश, प्रिया शर्मा, भगत राम मंढोत्रा, रेखा डढवाल, रमेश मस्ताना आदि ने अपने काव्य संकलनों के माध्यम से दस्तक दी।

पहाड़ी में प्रमुख स्वर कविता का रहा हालांकि किसी भी साहित्य की स्थापना के लिए गद्य का होना परमावश्यक है। गद्य में भी निबंध को साहित्य की कसौटी माना गया है। तथापि शुरुआत के लिए कविता एक सशक्त माध्यम था जिससे जन-जन में पहाड़ी की लौ जगी। हालांकि प्रारम्भ में कुलभूषण कायस्थ और रूप शर्मा ने कहानी/उपन्यास लिख कर वर्ष 1983 में प्रथम अकादमी पुरस्कार भी पाए तथापि बाद में लोग कविता ही कविता लिखने लगे।

और जैसा कि हर भाषा के साहित्य में होता है,पहले पहल कवि ही बड़ी संख्या में सामने आए। हालांकि साहित्य की कसौटी पद्य नहीं, गद्य माना जाता है। पहाड़ी में सदा गद्य लेखन की कमी रही, जो आज भी बनी हुई है। कुछेक कहानियों के अतिरिक्त निबंध लेखन भी कम रहा।

बात यहां काव्य की है। पहाड़ी काव्य की यदि आजादी के बाद की बात की जाए तो प्रारम्भिक कवियों ने न जाने क्यों श्रृंगार को प्रधानता दी। धौलाधार का सौंदर्य, हिमाचल प्रशस्ति जैसे विषय कवियों को प्रिय रहे। काव्य शैली में भी वे पीछे की ओर गये यानि कवित्त, सवैये जैसे छंदों का प्रयोग करने लगे। हालांकि आजादी से पहले बाबा कांशीराम जैसे कवियों ने उस समय के अनुसार अतिआधुनिक शैली और समसामयिक विषयों को छंद से बाहर पकड़ा यथा :

'देस बड़ा है, कौम बड़ी है। जिंद अमानत उस देस दी।

कुलजा मत्था टेकी इंक्लाब बुलाणा, ओ कांशी! असां फिरि जेला जाणा।'

हिमाचल में पहाड़ी कविता का इतिहास यद्यपि पुराना है, यहां जिस पहाड़ी कविता की चर्चा की जा रही है, उसका जन्म सन् 1966 के बाद हुआ, जब प्रथम नवम्बर 1966 को पुराने हिमाचल में नये क्षेत्र शामिल हुए। वर्तमान पहाड़ी या हिमाचली कविता, मंच से उपजी कविता मानी जा सकती है। जैसा कि हर भाषा के साहित्य में माना जाता है, साहित्य का आरम्भ कविता से ही होता है। यहां भी प्रारम्भ में पहाड़ी में कविता ही लिखी गई। सरकारी प्रश्रय से इस का विकास हुआ, इसमें दोराय नहीं हो सकती। मंच और तुकबंदी से होती हुई छंद के प्रयोगों में गुजरती यह गजल तक पहुंची और परिपक्व होती गई। इस कविता ने कहीं-कहीं छंद को भी तोड़ा।

संपादित संकलन

संपादित संकलनों में बहुत से रचनाकारों को एकसाथ देखने का मौका मिलता है। पहाड़ी में अब तक कई संपादित संग्रह छप चुके हैं। भाषा संस्कृति विभाग के प्रारम्भिक प्रयासों में लगभग 1975 से पहले छपे 'काव्य धारा' के तीन संस्करणों के अलावा अकादमी द्वारा भी ऐसे संकलन (शेष पृष्ठ 67 पर)

आलेख

हिमाचल साहित्य लेखन और समकालीन व्यंग्य

◆ अशोक गौतम

हमारे विसंगत होते जीवन की सबसे बेहतर कोई साहित्यिक प्रस्तुति है तो वह व्यंग्य है। यह भी तय है कि ज्यों-ज्यों हमारे जीवन में विसंगतियां बढ़ती जाएंगी, साहित्य में त्यों-त्यों व्यंग्य विधा और भी पुष्ट होती रहेगी। बेहतर व्यंग्य की पहचान यही होती है कि जैसे जैसे समय बदलता जाता है, वैसे-वैसे उसकी धार और तेज होती जाती है। व्यंग्य बंद आंखों से देखे सपनों का काल्पनिक सच न होकर खुली आंखों से देखे सपनों का सच होता है जो हममें संघर्ष का हौसला बढ़ाता है। व्यंग्य हमारी मूर्च्छित सामाजिक चेतना को गुदगुदी करते हुए जगाने का काम करता है। व्यंग्य हमारी सामाजिक विसंगतियों और व्यक्तिगत बदतमीजियों पर हंसाते हुए हमें अपने से रूबरू कराता है। जब तक तथाकथित संभ्रांत जेब में लाख पर दिमाग में खोटी अठन्नी लिए खुद को भरमाते रहेंगे तब तक व्यंग्य पूरे जोश खरोश के साथ लिखा पढ़ा जाता रहेगा। जब तक शासन प्रशासन जनता की आंखों में बंद करने का सूरमा डालता रहेगा तब तक व्यंग्य जनता की आंखें खोलने का साहसिक दायित्व निभाता रहेगा। असल में व्यंग्य भूमि को हमारा दोगलापन ही उर्वरक बनाता है।

जीवन और साहित्य में समकालीनता अपना विशेष महत्व रखती है। हर युग के साहित्य में समकालीनता में उसके काल खंड के तत्वों का समावेश रहता है। वह अपने समय की संगतियों में छुपी विसंगतियों को ईमानदारी से समेटे रहती है। हर साहित्यकार को अपने समय से बंधे होने के नाते अपने समय के प्रति ईमानदार रहना सही मायने में साहित्यकार होना है। समकालीनता लेखन के संदर्भ में प्रयोग होने वाला बड़ा प्रचलित शब्द है। जिसका अर्थ है - जो उसी काल में जीवित अथवा वर्तनाम रहा हो, जिसमें कुछ और विशिष्ट लोग भी रह रहे हैं। उस काल खंड में होने वाली घटना या प्रवृत्ति। समकालीनता वर्तमान के विभिन्न जीवन संदर्भों की अभिव्यक्ति कही जा सकती है। समकालीनता से अभिप्राय एक समय विशेष से है। इसका प्रमुख आयाम है हमारे आसपास के जीवन के हर पल बदलने वाले रूपों और उनका पूरी ईमानदारी से प्रस्तुतीकरण।

हम सब अपने-अपने समय में जीते हैं। शब्दशिल्पी होने के चलते साहित्यकार अपने समय को अपने हिसाब से अपनी कलम के माध्यम से अपनी ईमानदारी के साथ अपने आग्रह पूर्वाग्रह से छिपते-छिपाते रचते, शब्दबद्ध करते हैं। हम अपने समय के बुरेपन से न बचते हुए भी बचने की कोशिश करते हुए मने, बेमने उसी में बसने को विवश हैं। ये हमारी विवशता है या आंखें मूंदा सच, कुछ सही सही नहीं कहा जा सकता। जीवन का हर क्षण परिवर्तनशील है। यही जीवन की सबसे बड़ी विशेषता भी है। जीवन क्रम में निरंतर आने वाले उतार चढ़ावों पर ही समकालीनता की अवधारणा जन्म ले विकसित होती है। इसी समकालीनता के चलते जीवन और साहित्य के उद्देश्य बदलते रहे हैं। समकालीनता अपने समय के मूल्यों, संघर्षों, संगतियों, विसंगतियों के विचार का धरातल पर साहित्यिक आकलन है। जब कोई साहित्यकार अपने बूते सामाजिक और लेखकीय संभावनाओं के द्वार खुले रख वर्तमान को अपनी कलम के माध्यम से बदलने में जुटता है तो सीधे सादे शब्दों में वह उस वक्त केवल समकालीनता का निर्वाह कर रहा होता है, और कुछ नहीं। इतिहास गवाह है कि जीवन के मूल्यों के साथ साहित्य के प्रसंग भी बदलते रहे हैं। इन्हीं मूल्यों के बदलाव के चलते साहित्य में भी बदलाव आता रहा है। समय के साथ जीवन और साहित्य में बदलाव शाश्वत सत्य है। इसे कोई नहीं रोक सकता। न ये, न वे, न खुद साहित्य और न समय ही।

वर्तमान समय में निरंतर बदल रही राजनीति, समाज और संस्कृति ने जीवन को बेहद संघर्षपूर्ण बना दिया है। इन संघर्षों की असफलताओं से उपजी मानवीय विसंगतियों के आगे हथियार डालने के बाद भी अभी आदमी मरा नहीं है। यही उसके आदमी होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। उसके समाज की खंडित होती विरासतें एक-एक कर पीछे छूटती जा रही हैं। पर वह आगे बढ़ना चाहता है पूरी जिजीविषा के साथ।

वैसे तो साहित्य की सभी विधाएं अपने साहित्यिक धर्म को अपने ढंग से निभातीं अपने समाज की संगतियों-विसंगतियों का कच्चा पक्का चिट्ठा उसके सामने रखती रही हैं, पर व्यंग्य जिस शिद्दत से समाज के ढोल के पोल उसके सामने उसे हंसाते हुए, गुदगुदाते हुए खोलता है, वह अद्वितीय है। व्यंग्य हास्य के स्तर पर हंसाता है तो वैचारिक स्तर पर भीतर ही भीतर रूलाते हुए सोचने के लिए न चाहते हुए विवश करता है। व्यंग्य का अपनी बात

कहने का ढंग अन्य साहित्यिक विधाओं से बिलकुल जुदा है। बाहर से बात भले ही वह निर्दयतापूर्ण सलीके से करे, पर भीतर से वह रहता दयालु ही है। प्रहार करते हुए भी उसमें धैर्यपूर्वक तटस्थ बने रहने की जो असीम शक्ति होती है, वही उसे दूसरी साहित्यिक विधाओं से अलग और महत्त्वपूर्ण कर देती है।

मनुष्य हो या कोई भी साहित्यिक विधा। भले ही उसका/उनका एक कदम अतीत पर टिका हो, उसके बाद भी उसमें/उनमें अतीत से स्वतंत्र होने की छटपटाहट होती रहती है। स्वतंत्रता की यही छटपटाहट नए को जन्म देती है। वह नया समाज के लिए कितना सही गलत होता है, यह अलग प्रश्न है। इसी क्रम में समकालीन व्यंग्य भी अपने समय को नए तेवर देता पिछले चरण के व्यंग्य से बहुत कुछ लेने के बाद भी उससे अलग हो रहा है।

व्यंग्यकार के लिए व्यंग्य अब केवल हंसाने बहलाने के लिए उपयोग किया जाने वाला झुनझुना ही नहीं अपितु जीवन के बदले हुए यथार्थ को वाणी देने का सशक्त हथियार भी है। आज व्यंग्य का कर्त्तव्य बदल रहा है, दायित्व बदल रहा है, दिशा बदल रही है, दशा बदल रही है। और उसे आत्मसात् करते हुए समाज की भी सोच कहीं-न-कहीं बदल ही रही है। समकालीन व्यंग्य अपने समय के वांछित, अवांछित दबावों से निर्मित मनुष्य और समाज का वह सृजनात्मक, वैचारिक आंदोलन बन गया है जो हास्य, आक्रोश और समझ को एकसाथ जन्म देता है। समकालीन व्यंग्य अपने समय के सामाजिक अध्ययन के साथ ही साथ समाज का विभिन्न कोणों से किया साहित्यिक, वैचारिक चिंतन है। इसी के परिणामस्वरूप आज के व्यंग्य की सामाजिक भूमिका पहले के व्यंग्य की अपेक्षा अधिक विस्तृत हो गई है या पहले से अधिक विस्तृत हो रही है। आज लिखा जाने वाला व्यंग्य जीवन के यथार्थों से दो कदम आगे बढ़ता हुआ जीवन के कटु यथार्थों को बड़ी साफगोई से अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

बदलते समय के साथ व्यंग्य की सामाजिक भूमिका तेजी से बदली है। एक समय में मान्य रही पर आज अमान्य हो रही मान्यताओं के टूटने से जीवन में निराशा, संत्रस, अनिश्चितताएं जन्म ले रही हैं। इन स्थितियों के बीच बेहद अपनेपन से भरे बेगानेपन में हरपल बदलती संस्कृति से उपजती राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजार्थिक विषमताओं के प्रति तीव्र असंतोष में धर्मनिरपेक्षता का मुखौटा ओढ़े अपने अपने धार्मिक और मानवीय स्वार्थों ने पूरे समाज की चूलें हिला कर रख दी हैं। समकालीन व्यंग्य गंभीरता लिए हंसते हंसाते इन्हीं बहुआयामी चिटकते तत्त्वों के सत्यों से हमें रूबरू करवाने की कोशिश है।

आज का व्यंग्य कल के व्यंग्य के साथ रहते हुए भी हर स्तर पर उससे अलग होने का माद्दा रखता है, उसमें अतीत के व्यंग्य से रहते हुए उससे अलग होने की छटपटाहट साफ देखी जा सकती है, शिल्प और विचार दोनों स्तरों पर। वह जानता है कि समकालीन परिवेश से गहरे से, मन से जुड़ कर ही अपने होने को सार्थक किया जा सकता है।

निर्विवादित है कि व्यंग्य की विसंगतियों पर मारक क्षमता अन्य साहित्यिक विधाओं के मुकाबले अधिक रही है। यही वजह है कि कल तक जो व्यंग्य कभी मात्र एक शैली हुआ करता था, वह अब सामाजिक मांग, सरोकारों के चलते अपने स्वतंत्र रूप में विकसित हो चुका है। अब वह केवल शैली मात्र नहीं, अपने आप में एक भरी पूरी साहित्यिक विधा है। कारण, उसने अपने समय की कुरूपताओं और दुर्बलताओं को बड़ी शिद्दत से मुस्कुराते हुए समाज के सामने अपनी उस शैली में रखा है जिनकी ओर से मुंह फेर वह अपने होने को मानने लगा था। आज का व्यंग्यकार व्यंग्य को केवल हास-परिहास ही नहीं मानता, वह उससे भी आगे उसे वैचारिक आक्रोश में तब्दील करने का साहित्यिक औजार मानता है। राष्ट्रीय स्तर के व्यंग्य लेखन के अनुरूप हिमाचल प्रदेश के समकालीन व्यंग्य लेखन ने भी अपने परिवेश के जिस जीवन की हाहाकार, दुत्कार ,पाखंडी सत्कार को कम मात्रा में ही सही, अपने चारों ओर महसूस किया है, उसे अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से वह पूरी संजीदगी, दमखम के साथ, खुद पर हंसते हुए, इनको उनको सादर हंसाते हुए वैचारिक आधार दे रहा है।

हिमाचल प्रदेश में व्यंग्य लेखन के लिए आधारभूमि तैयार करने का श्रेय गिरिराज और हिमप्रस्थ को जाता है। गिरिराज और हिमप्रस्थ ने जहां एक ओर प्रदेश में व्यंग्यकारों की नई पौध तैयार की है वहीं दूसरी ओर उनको व्यंग्य विधा में नए प्रयोग करने के अवसर भी दिए हैं। इनके अतिरिक्त प्रदेश के अग्रणी दैनिक पत्रों में दिव्य हिमाचल सहित दैनिक जागरण, आपका फैसला, दैनिक भास्कर एवं कुछ हद तक हिमाचल दस्तक ने भी अपने व्यंग्य कॉलम के माध्यम से व्यंग्य विधा को प्रदेश के पाठकों के बीच लोकप्रिय बना उसे नई पहचान देने का स्तुत्य कार्य किया है।

1978 में हिमाचल प्रदेश में अपर्णा साहित्यिक मंच के उदय के साथ ही प्रदेश में साहित्य लेखन ने नए जोश के साथ जोर पकड़ा था। उस समय इस मंच के साथ बहुत से युवा साहित्यकार जुड़े थे, जिसके चलते हिमाचल प्रदेश के साहित्य लेखन में उस समय एक विशेष हलचल दिखाई दी थी।

हिमाचल साहित्य लेखन के सदर्भ में प्रदेश में रचे जा रहे व्यंग्य की बात की जाए तो विगत शताब्दी के सातवें दशक से कविताओं में हास्य व्यंग्य की अभिव्यक्ति दिखनी आरंभ हो गई थी। पर बहुलता हास्य प्रधान कविताओं की ही रही। सही मायने

में नब्बे के दशक के आरंभ से हिमाचल प्रदेश के व्यंग्यकार राष्ट्रीय स्तर पर व्यंग्य लेखन के साथ अपने कदम मिलाते दिखते हैं। इसी दशक के अंत में रत्न सिंह 'हिमेश' ने अपने व्यंग्य संकलन 'ठुणियानामा' के साथ (1987) पाठकों के बीच दस्तक दी। वैसे रत्नसिंह हिमेश ने 1955 से नियमित रूप से कहानी, नाटक लिखना आरंभ कर दिया था। 1957 से ही आकाशवाणी शिमला से इनकी कहानी, नाटक, रूपक प्रसारित होने लग गए थे जिनमें कहीं न कहीं हास्य, व्यंग्य का पुट रहता था। इसी दशक में इन्होंने 'मैं भी मुंह में जुबान रखता हूं' कॉलम के अंतर्गत हिमाचल प्रदेश से निकलने वाले साप्ताहिक गिरिराज में राजनीतिक विसंगतियों से प्रभावित खूब व्यंग्य लिखे। इनका व्यंग्य लेखन जनसत्ता के अंतरीय पृष्ठ हिमसत्ता में ठगड़े का रगड़ा कॉलम के रूप में भी अपने समय के पाठकों के बीच बहुत चर्चित हुआ। इस कॉलम को वे ठगड़ाराम बकलमखुद के नाम से लिखते थे जिसकी भाषा हिंदी और उनकी अपनी बोली का मणिकांचन मिश्रण थी। संक्षेप में कहें तो उन्होंने अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से व्यंग्य की एक नई भाषा ईजाद की, जिसे पाठकों ने बहुत सराहा।

इसी दौरान डॉ. आत्मा राम, ओम् प्रकाश शांत, देशराज चौतड्डू, प्रेम पखरोलवी ने ललित निबंधों से हटकर छिटपुट व्यंग्य भी लिखे। डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत ने दैनिक ट्रिब्यून से अपनी व्यंग्ययात्रा आरंभ करते हुए व्यंग्य लेखन की परंपरा को हिमप्रस्थ, गंगा, व्यंग्ययात्रा व्यंग्य की एक मात्र राष्ट्रीय पत्रिका के माध्यम से आगे बढ़ाया। अब तक इनके दो व्यंग्य संग्रह 'महातरू और मेघमन' (2010) 'आशीर्वाद ही आशीर्वाद' (2017) प्रकाशित हो चुके हैं। गुरमीत बेदी ने 1985 से दैनिक भास्कर से व्यंग्य लेखन का शुभारंभ करते सरिता, नवभारत टाइम्स, दैनिक जागरण, अमर उजाला में एक से बेहतर एक व्यंग्य पाठकों को दिए। इनकी व्यंग्य यात्रा आज भी जारी है। अब तक इनके तीन व्यंग्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं-'इसलिए हम हंसते हैं' (2007), 'नाक का सवाल' (2007), 'खबरदार जो व्यंग्य लिखा' (2011)। प्रभात कुमार विगत शताब्दी के अंतिम दशक के मध्य से दैनिक ट्रिब्यून, अमर उजाला, प्रभात खबर, हरिभूमि, सरिता में जमकर व्यंग्य लिख रहे हैं। वर्ष 2018 में इनका पहला व्यंग्य संग्रह 'ऐसा देस है मेरा' प्रकाशित हुआ। सुदर्शन वशिष्ठ हिमाचल प्रदेश के व्यंग्य लेखन में चिरपरिचित हस्ताक्षर हैं। इन्होंने वर्ष 1972 के आसपास हास्य व्यंग्य लिखना आरंभ किया। जाह्नवी, हिमप्रस्थ और सरिता, दैनिक ट्रिब्यून में इनके व्यंग्य विशेष रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। अब तक इनके दो व्यंग्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं- 'संत होने से पहले' (1986) और 'बेहतरीन व्यंग्य' (2020)। गुरुदत्त शर्मा ने भी बेहतर व्यंग्य लिख हिमाचल की व्यंग्य संपदा में अभिवृद्धि कर महत्त्वपूर्ण समकालीन व्यंग्य के विकास में योगदान दिया है। अब तक इनके दो व्यंग्य संग्रह- 'विकास जारी है' (2007), 'जनता सोच रही है' (2017) प्रकाशित हो चुके हैं। सुदर्शन भाटिया विभिन्न साहित्यिक विधाओं को लेकर अब तक सौ से अधिक पुस्तकें लिख चुके हैं। व्यंग्य लेखन के संदर्भ में इनका एक व्यंग्य संग्रह 'थाली का बैंगन' प्रकाशित हुआ है।

अशोक गौतम ने 1982 के आसपास से व्यंग्य लिखना आरंभ किया। पहला व्यंग्य दैनिक वीर प्रताप में प्रकाशित हुआ। गिरिराज, हिमप्रस्थ, सोमसी, विपाशा, दैनिक ट्रिब्यून से होते हुए दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, ब्लिट्ज, नूतन सवेरा, नवभारत टाइम्स, हिंदुस्तान, सरिता, जाह्नवी, अमर उजाला, दिव्य हिमाचल, हिमाचल दस्तक, हरिभूमि, सुबह सवेरे, नई दुनिया, राज एक्सप्रेस, जनसंदेश टाइम्स, वायस ऑफ लखनऊ, जनवाणी, नया ज्ञानोदय, विभोम स्वर (कनाडा), ताप्ती लोक, गर्भनाल, तुलसी प्रभा में इनके व्यंग्य नियमित प्रकाशित हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त इनके व्यंग्य ऑन लाइन पत्रिकाओं यथा- प्रवक्ता डॉट कॉम, लेखनी (लंदन), द अम्स्टेल गंगा (नीदरलैंड), साहित्यकुंज (कनाडा) एवम् रचनाकार पर सहज ही पढ़े देखे जा सकते हैं। सन् 2015 से 2019 के बीच व्यंग्यकार ने 25 व्यंग्य संग्रह - 'लट्ठमेव जयते', 'गधे ने जब मुंह खोला', 'झूठ के होलसेलर', 'खड़ी खाट फिर भी ठाठ', 'ये जो पायजामे में हूं मैं', 'साढ़े तीन आखर अप्रोच के', 'मेवामय ये देश हमारा', 'फेसबुक पर होरी', 'पुलिस नाके पर भगवान', 'वफादारी का हलफनामा', 'नमस्कार को पुरस्कार', 'आओ दलाली खाएं', 'भक्ति बिनु मुक्ति नाहीं गोपाला', 'सदाचार का सैनिटाइजर', 'डुप्लिकेट चाबियों का माहिर', 'श्री श्री एक सौ साठ श्री', 'ओम् व्हाट्स्यपाय नमः', 'ओ तेरी....', 'पांव दबा, पांव जमा', 'हवा भरने का इल्म', 'गरम जेब ,ठंडी रजाई', ' अभी तो मैं जवान हूं', 'सिंक पर बॉस', 'चिकन शिकन ते हिंदी सिंदी', 'मक्खन जिंदाबाद' पाठकों को दिए हैं।

हिमाचल प्रदेश की व्यंग्य साहित्य संपदा में श्रीवृद्धि करने वाले अन्य व्यंग्यकारों में मुकेश विग, अजय पाराशर, गंगाराम राजी, डॉ. प्रत्यूष गुलेरी, सतीश चंद्र पाल, कुल राजीव पंत, रत्नचंद रत्नेश, अश्वनी कुमार, राजीव कुमार त्रिगर्ती, मृदुला श्रीवास्तव, पवन चौहान अपने-अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से समाज की दुखती रगों पर हाथ धर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। प्रदेश के इन व्यंग्यकारों ने अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से व्यंग्य की बदलती सामाजिक चुनौतियों के संकट को साहस के साथ स्वीकारा है।

हिमाचल प्रदेश में व्यंग्य लेखन के लिए आधारभूमि तैयार करने का श्रेय गिरिराज और हिमप्रस्थ को जाता है। गिरिराज और हिमप्रस्थ ने जहां एक ओर प्रदेश में व्यंग्यकारों की नई पौध तैयार की है वहीं दूसरी ओर उनको व्यंग्य विधा में नए प्रयोग करने के अवसर भी दिए हैं। इनके अतिरिक्त प्रदेश के अग्रणी दैनिक पत्रों में दिव्य हिमाचल सहित दैनिक जागरण, (शेष पृष्ठ 53 पर)

आलेख

पांगी घाटी : प्राचीन एवं अर्वाचीन संदर्भों में

◆ रमेश चंद्र 'मस्ताना'

पीर पंजाल एवं बृहत् हिमालय की जांस्कर पर्वत शृंखलाओं के मध्य अवस्थित पांगी घाटी का क्षेत्र जम्मू एवं काश्मीर के जम्मू संभाग के गुलाबगढ़ व पाड्डर घाटी तथा कारगिल जिले के उप-मंडल पद्म के साथ सटा हुआ है। इसके पूर्व में लाहौल की सुरम्य वादियां हैं तो पश्चिम में जम्मू संभाग की पाड्डर घाटी। अति दुर्गम एवं दूरदराज की इस घाटी का संबंध राजाओं-रजवाड़ों के कालसे ही चंबा रियासत से जुड़ा रहा है। राजा चंबा का अधिकार क्षेत्र चंबा-पांगी, भद्रवाह एवं गुलाबगढ़ के साथ-साथ पाड्डर घाटी तक था। गुलाबगढ़ का पुराना नाम शीतलगढ़ था जो कि पाड्डर घाटी के स्थानीय राणा शीतल सिंह के नाम पर था। जब चंबा के राजा छत्रसिंह के द्वारा इस क्षेत्र पर अधिपत्य जमा लिया गया था, तब से राजा छः महीने गुलाबगढ़ और छः महीने पांगी के किलाड़ की कोठी चौकी-मुहाल में रहता था। बाद में बहादुर जरनल जोरावर सिंह ने राजा छत्र सिंह पर विजय प्राप्त करके पाड्डर घाटी को गुलाब सिंह के अधीन कर दिया और शीतलगढ़ का नाम जहां गुलाबगढ़ पड़ा, वहां पाड्डर घाटी के साथ-साथ गुलाबगढ़ भी जम्मू-काश्मीर रियासत का हिस्सा बन गए। इस पूरे क्षेत्र में लाहौल-स्पीति घाटी की प्रमुख नदियां चंद्रा एवं भागा, तांदी संगम पर चंद्रभागा और जम्मू संभाग में प्रवेश करने पर चिनाब के नाम से अति प्रसिद्ध है। वर्तमान में पांगी घाटी में चंद्रभागा का विस्तार लगभग अस्सी किलोमीटर तक का है। घाटी के इस क्षेत्र का नाम पांगी क्यों और कैसे पड़ा है, इसका कोई स्पष्ट उल्लेख अथवा लोकमत प्राप्त नहीं होता है और न ही किसी गांव या क्षेत्र का नाम ही इससे जुड़ा मिलता है। साथ-ही-साथ पांगी घाटी के मुख्यालय किलाड़ का नाम भी क्यों किलाड़ पड़ा, यह भी स्पष्ट नहीं है। मुख्यालय वाला सारा स्थान मुहाल कुफ्फा में पड़ता है। हां, घाटी में जो एक झाड़ीनुमा पौधा किल्लर नाम से मिलता है, अंग्रेजी में उसकी स्पैलिंग किलाड़ की स्पैलिंग से पूरी मिलती है, जो मात्र एक संयोग ही माना जा सकता है। पांगी घाटी पहले चंबा जनपद की एक उप-तहसील थी, जिसमें एक कानूनगो वृत किलाड़ में और दस पटवार वृत किलाड़, धरवास, साच, सेचू, पुर्थी, करयास, तिंदी, उदयपुर, थिरोट एवं त्रिलोकीनाथ थे। वर्ष 1966 में लाहौल-स्पीति जिला बनने पर तिंदी, उदयपुर, थिरोट एवं त्रिलोकीनाथ चारों पटवार वृतों को लाहौल में मिला दिया गया और पांगी में छः पटवार वृत ही रह गए। इन चारों पटवार वृतों को आज भी 'चंबा-लाहौल' के नाम से ही जाना जाता है। हिमाचल प्रदेश को वर्ष 1971 में पूर्ण राज्यत्व प्राप्त होने पर पांगी की उप-तहसील को पूर्ण तहसील का दर्जा भी प्राप्त हुआ और हिमाचल प्रदेश में उप-मंडलीय (ना.) प्रणाली के प्रारंभ होने पर पांगी नागरिक उप-मंडल भी बन गया और यहां के उप-मंडल अधिकारी(ना.) को उपायुक्त की अतिरिक्त शक्तियां प्रदान करते हुए अतिरिक्त दंडाधिकारी की शक्तियां भी दी गईं, जो कि हिमाचल प्रदेश के अन्य किसी भी उप-मंडल में नहीं है। पांगी के छः पटवार वृतों में से किलाड़ व करयास का पुनर्गठन करके सेरी भट्टवास तथा साच और सेचू का पुनर्गठन करके साहली पटवार वृत का सृजन होने पर आठ पटवार वृत पांगी घाटी में बन गए है। वर्ष 1988 में जब प्रदेश सरकार द्वारा प्रदेश की सभी तहसीलों की ग्रेडेशन की गई तो पांगी को 'सी' ग्रेड तहसील की श्रेणी में रखा गया और नायब तहसीलदार का पद समाप्त कर दिया गया।



किलाड़ मुख्यालय से ऊपर हैलीपैड एवं हुडान की ओर जाने वाली सड़कों के साथ प्रकृति के सुंदर दृश्य

भारतीय संविधान की पांचवीं अनुसूची के अनुसार जब तमिलनाडू,

आंध्र प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, अरुणाचल एवं सिक्किम के साथ-साथ हिमाचल के लाहौल-स्पीति, किन्नौर जिला के अतिरिक्त चंबा जिला के पांगी व भरमौर उप-मंडल को भी कबायली क्षेत्र के रूप में मान्यता दी गई और पांगी के पंगवाल एवं भोट समुदाय को जनजातीय दर्जा प्रदान किया गया था। किसी समय में केवल और केवल पैदल चलकर ही पांगी पहुंचा जा सकता था और इसमें चार से पांच दिन का समय लग जाता था। इसके अतिरिक्त घाटी के अन्य स्थानों के लिए अलग समय लगता था। राजाओं, रजवाड़ों के समय की तो बात ही क्या बीसवीं शताब्दी के सातवें और आठवें दशक तक भी यह घाटी किसी काले पानी की सजा से कम नहीं थी। यह भी कहा जाता है कि जब भी राजा चंबा किसी को भी पांगी भेजते थे तो कुछ मुद्राएं उसे मृत्यु- अनुदान के रूप में अग्रिम ही सौंप देते थे और यही परंपरा स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत भी 1976 तक पांगी के कर्मचारियों को 'कफन अलाउंस' के रूप में मिलती रही। वर्तमान में पांगी घाटी जहां तीन ओर से, वाया चंबा-साचपास, लगभग एक सौ सत्तर किलोमीटर, मनाली-रोहतांग पास-उदयपुर मार्ग लगभग दो सौ चालीस किलोमीटर और सबसे लंबे मार्ग जम्मू-डोडा-किश्तवाड़-गुलाबगढ़, पाड्डर घाटी के द्वारा जुड़ चुका है, वहां वर्ष 1984 से यह घाटी हैलीकॉप्टर उड़ान से वायु मार्ग से भी जुड़ चुकी है। वर्ष 1994 तक यह उड़ान पठानकोट एयरबेस से संचालित होती रही, अब यह चंबा एवं कुल्लू-भुंतर से यह हैलीकॉप्टर उड़ान होती है और पूरी घाटी में आधा दर्जन के लगभग हैलीपैड बने हुए है, जिनमें किलाड़ का हैलीपैड सर्वप्रमुख है।



साच पास पर देवी माता का मंदिर

पांगी घाटी की सीमा रेखा वर्तमान में तांदी-उदयपुर-किलाड़ मार्ग पर कड़ू नाला से किश्तवाड़-पाड्डर घाटी के संसारी नाला तक और किलाड़-चंबा की साचपास-किलाड़ सड़क जहां लोक निर्माण विभाग के अंतर्गत हैं, वहां घाटी की मुख्य जीवन रेखा सड़क - एस.के.टी.टी. अर्थात् संसारी नाला-किलाड़-थिरोट-तांदी सड़क बी. आर.ओ., सीमा सड़क संगठन के दीपक प्रोजैक्ट के अंतर्गत निर्मित एवं संचालित है। यह मुख्य सड़क पांगी घाटी के बीचोबीच दुर्गम रास्तों एवं कठोर चट्टानों को काट कर बनाई गई है और घाटी को जम्मू-काश्मीर, लेह एवं मनाली से जोड़ती है। पांगी घाटी का कुल क्षेत्रफल 1503 वर्ग किलोमीटर है और इसमें भी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके 82 प्रतिशत भाग पर वन, नदियां, नाले, चट्टानें एवं पहाड़ हैं और मात्र 18 प्रतिशत भाग पर ही आवासीय गांव, कृषि योग्य भूमि एवं घासनियां आदि हैं। अक्तूबर मास में कब हिमपात हो जाए, सब अनिश्चित होता है और यह क्रम लगभग अप्रैल मास तक बदस्तूर जारी रहता है। अनेक विशालकाय हिमनद इस घाटी की शान कहे जा सकते हैं, जो सदियों से अपने वुजूद को बनाए हुए हैं। घाटी में कुल 55 आवासीय गांव हैं, जिनमें से छः गांव कुलाल, वरन्यू, मिंधल, फिंडपार, दूंटो एवं प्रेग्रां चंद्रभागा के पार बायीं ओर स्थित हैं तो शेष 49 गांव दरिया के इस पार अवस्थित हैं। इन गांवों में विभिन्न कोनों के अंतिम शीर्ष कोनों पर बौद्ध धर्म को मानने वाले भोट लोगों की बस्तियां हैं, जिनको भटौरियों के नाम से जाना जाता है। इन भटौरियों में सबसे सुंदर सुराल भटौरी की वादियां हैं तो सबसे दुर्गम 13,000 फुट की ऊंचाई पर स्थित चस्क भटौरी है। इसके अतिरिक्त हिलु-टुटान, हुडान और परमार भटौरी भी अपनी-अपनी विशेषताओं के लिए प्रमुख हैं। साचपास की ऊंचाई जहां समुद्रतल से 14,778 फुट की है, वहां पांगी के मुख्यालय किलाड़ की ऊंचाई 8,000 फुट के लगभग है।

पांगी घाटी के विकासात्मक इतिहास में सबसे महत्त्वपूर्ण एवं अद्भुत घटना है, 15 अप्रैल 1986 से लागू हुई इकहरी प्रशासन प्रणाली एवं आवासीय आयुक्त की नियुक्ति। यह प्रणाली एवं नियुक्ति जनजातीय क्षेत्र में एक परीक्षण के रूप में हुई थी और इसकी सफलता के उपरांत इसे अन्य जनजातीय क्षेत्रों में भी लागू करने की इच्छा सरकार की थी। इस प्रणाली का एकमात्र उद्देश्य दुर्गम क्षेत्र का त्वरित विकास करना था और इसके अंतर्गत आवासीय आयुक्त को विशेषाधिकार प्रदान करते हुए समस्त प्रशासनिक एवं विकास कार्यों के लिए सरकार से सीधा संपर्क करने का प्रावधान रखा गया है। भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी सुभाष नेगी जी को पांगी घाटी का प्रथम आवासीय आयुक्त बनने का गौरव प्राप्त है जबकि वर्तमान में हिमाचल प्रशासनिक सेवा के सुखदेव सिंह जी आवासीय आयुक्त के पद पर किलाड़ में आसीन हैं। पांगी घाटी और मुख्यालय किलाड़ में स्थापित विभिन्न सरकारी विभागों में सबसे पुराना विभाग का इतिहास वन विभाग का ही मिलता है जिसमें किलाड़ एवं पुर्थी विभाग की दो रेंज थी। वर्तमान में वन विभाग का मुख्य कार्यालय जहां किलाड़ के माल रोड पर हंसनू जंगल के देवदारों के मध्य

स्थित है तो इस विभाग में 'टड' नाम के एक अंग्रेज वन परिक्षेत्राधिकारी का नाम पांगी घाटी में काफी चर्चित रहा है। इस अंग्रेज अफसर की मृत्यु एक ढांक से चंद्रभागा में गिरकर हो गई थी और उसके उपरांत उस ढांक का नाम ही टढ- ढांक पड़ गया तथा जिस विश्राम गृह का निर्माण उसने करवाया और वह उसी में रहता भी था, उसका नाम भी टड विश्राम गृह ही रख दिया गया है। कहने वाले यह भी कहते हैं कि आज भी उस अंग्रेज अफसर की आत्मा उस विश्राम गृह के कमरे में अथवा टड-ढांक के आसपास भटकती आभासित होती है। किलाड़ में लोक निर्माण मंडल की स्थापना वर्ष 1979 में हुई थी और किलाड़ से साचपास की तरफ सड़क का काम वर्ष 1982 में प्रारंभ होकर वर्ष 2006 में किलाड़ का संपर्क साचपास सड़क से हिमाचल पथ परिवहन निगम की बस बगोटू तक और वर्ष 2008 में किलाड़ का संपर्क साचपास सड़क से चंबा के साथ जुड़ पाया था।


साच पास के गांव में जातर मेला

वर्तमान में यह बस जून से अगस्त तक बड़ी मुश्किल से साचपास के खुलने पर ढाई-तीन महीनों के लिए ही सुचारू रूप से चल पाती है परंतु छोटी गाड़ियां अवश्य ही चार से पांच महीने तक चंबा-किलाड़ के बीच चलती हैं। इसी प्रकार विद्युत विभाग का कार्यालय अप्रैल 1986 के बाद ही खुला और 1995 में जब घाटी के मध्य माहलू नाला पर पनबिजली घर तैयार हुआ तभी किलाड़ क्षेत्र को बिजली प्राप्त हुई जिससे पूर्व लोग मिट्टी के तेल, लालटेन अथवा सौर उपकरणों से ही रात को रोशनी कर पाते थे। वर्तमान में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं बैंकिंग आदि-आदि के साथ-साथ सभी महत्त्वपूर्ण विभागों की स्थापना पांगी घाटी में हो चुकी है और विकास के कार्यों ने गति पकड़ी है। संपूर्ण पांगी घाटी जहां संसद में प्रतिनिधित्व हेतु मंडी संसदीय क्षेत्र के साथ जोड़ी गई है, वहां प्रदेश की विधानसभा के लिए इसे भरमौर विधानसभा क्षेत्र के साथ जोड़ा गया है। विधायक के रूप में पांगी-वासी अपना नुमाइंदा चुनने की इच्छा रखते हुए यह चाहते हैं कि पांगी को स्वतंत्र रूप से एक विधानसभा क्षेत्र बना दिया जाए ताकि घाटी से जुड़ा कोई व्यक्ति विधानसभा में प्रतिनिधित्व कर सके। पांगी घाटी में स्थानीय इकाइयों के रूप में सोलह ग्राम पंचायतें -किलाड़, करयास, धरवास, सुराल, लुज, हुडाण, करियूणी, करेल, मिंधल, साच, कुमार, साहली, सेचू, शूण, रेई एवं पुर्थी हैं, वहां पंद्रह सदस्यों वाली खंड विकास समिति भी है। पांगी से एक जिला परिषद् सदस्य का चुनाव भी किया जाता है, जो कि अभी महिला सदस्य के लिए आरक्षित है। साथ-ही- साथ घाटी में जनजातीय सलाहकार समिति एवं परियोजना सलाहकार समिति का भी गठन होता रहता है, जिनका पांगी के विकास एवं सूचना तंत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है।


सुराल ताई एवं सुराल भटौरी का सुंदर दृश्य

भले ही किसी जमाने की अति दूरस्थ एवं दुर्गम कही जाने वाली पांगी घाटी आज उतनी दुर्गम नहीं रह गई है और सुविधाएं भी समय-समय पर सरकार द्वारा सभी पांगी वासियों को उपलब्ध करवाई जा रही हैं, फिर भी अभी तक कुछ समस्याओं का समाधान होना शेष है। कुलाल व चस्क-भटौरी तक सड़क पहुंचाना टेढ़ी खीर है। विशेष रूप से आलू एवं मटर की खेती करने वाले किसानों को उनकी उपज का उन्हें उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन भी नहीं हो पाता है और प्रकृति की जो अनुपम और अलौकिक छवि है, उसे भी पर्यटन की दृष्टि से विकसित एवं प्रचारित करने की बहुत अधिक आवश्यकता है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी अभी तक बहुत कुछ किया जाना शेष है और आवागमन के साधनों में भी वृद्धि होनी चाहिए। यदि वर्षभर के चार महीनों में भी पर्यटकों को घाटी की ओर मोड़ते हुए आकर्षित किया जाए तो घाटी और उसकी आर्थिकी में क्रांतिकारी बदलाव आ सकता है।

मस्त कुटीर, नेरटी (रैत), जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 208, मो.0 94184 58914

आलेख

साहित्य में वसंत

◆ गोपाल जी गुप्त

(शतपथ ब्राह्मण में वसंत देव ऋतु है, गीता में वह श्री कृष्ण की विभूति (ऋतुनांकुसुमाकरः), विश्व साहित्य में इसे ऋतुराज माना गया है। यह वाग्देवी सरस्वती तथा कन्दर्प के श्राकट्य का काल है एवं कदर्प को संस्कृत साहित्य में पुष्पधत्वा कहा गया है। कन्दर्प वसंत का प्रिय सका है इसी से वसंतागमन पर चतुर्दिक मादकता, माधुर्य, सरसता, कामनीयता का परविश छा जाता है तथा प्रकृति नव पुष्पों, पल्लवों से सज्जित हो जाती है। सर्वत्र नैसर्गिक सौन्दर्य का सृजन हो जाता है तथा आम्र वन कोकिल की कूक एवं मधुय से गुंजित हो उठती है।)

वसंत पंचमी को ही संगीत, कला, साहित्य अधिष्ठात्री मां वाग्देवी सरस्वती का अवतरण हुआ था। इसी से वसंत पंचमी के ही दिन नवाक्षर कवियों की साहित्य-साधना आरंभ होती है। बच्चों को अक्षर ज्ञान देने की परम्परा का पालन भी किया जाता है, सरस्वती का पूजन होता है। भारतीय परम्परा में वाग्देवी नीर-क्षीर विवेक के लिए सर्वख्यात हैं। इसी दिन पं. सूर्यकाल त्रिपाठी 'निराला' की जयंती है जिनकी सरस्वती वंदना 'वीगा वादिनी वरदे' हिंदी साहित्य की सर्वोच्च सारस्वत स्तुति है। साम वेद में सरस्वती की वंदना है - उतः नः प्रिया प्रियासु सप्त स्वसाः सुजुष्टा सरस्वती स्तोमया।'

हिंदी तथा संस्कृत साहित्यों में वसंत वर्णन बहुतायत से मिलता है। जयदेव ने गीत गोविंदम में वसंत वर्णन भव्य रूप से किया है। ललित लवंग लता परिशीलन कोमल मलय समीर। मधुकर निकर करम्बित कोकिल कूजति कुंज कुटीरे।' किंतु जितना रम्य वर्णन कवि कालिदास ने ऋतु संहार में किया है वहां तक किसी अन्य ने नहीं किया 'सद्रुमाः सपुष्पाः सलिलं समझं/ स्त्रियंः सकामाः पवनः सुगन्धः।''

वसंत पंचमी को ही संगीत, कला, साहित्य अधिष्ठात्री मां वाग्देवी सरस्वती का अवतरण हुआ था। इसी से वसंत पंचमी के ही दिन नवाक्षर कवियों की साहित्य-साधना आरम्भ होती है। बच्चों को अक्षर ज्ञान देने की परम्परा का पालन भी किया जाता है, सरस्वती का पूजन होता है। भारतीय परंपरा में वाग्देवी नीर-क्षीर विवेक के लिए सर्वख्यात हैं। इसी दिन पं. सूर्यकाल त्रिपाठी 'निराला' की जयंती है जिनकी सरस्वती वंदना 'वीगा वादिनी वरदे' हिंदी साहित्य की सर्वोच्च सारस्वत स्तुति है। सामवेद में सरस्वती की वंदना है - उतः नः प्रिया प्रियासु सप्त स्वसाः सुजुष्टा सरस्वती स्तोमया।'

अपभ्रंश तथा प्राकृत भाषा में भी वसंत का वर्णन रम्य है। अपभ्रंश काव्य में वसंत परिवेश आलम्बन की अपेक्षा उद्दीपन विभावान्तगर्त हुआ है जबकि प्राकृत काव्य में जो भव्यता तथा सौन्दर्य बोध है वह अपभ्रंश में नहीं है। प्रसंगवश, प्राकृत और अपभ्रश तथा संस्कृत काव्यों के वसंत वर्णन में युग-मूल्यों के अनुसार पर्याप्त अन्तर मिलता है।

हिंदी निर्गुण काव्य-धारा प्रेमाश्रयी शाखा के कवि जायसी ने पद्मावती में बारहमासा का वर्णन कर प्रकृति रहस्यवाद का परिचय दिया जायसी ने वसंत की पृष्ठभूमि में नागमती के विरहावस्था का प्रभावी वर्णन किया है तथा मानवीय भावों का सहचरण प्रकृति के साथ कराया है। यद्यपि बारहमासा में ऋतुजन्य भावोद्दीपन अधिक है। वसंत का निरपेक्ष वर्णन कम तथापि वसंत में नवेकियों द्वारा पलाशी परिधानों में सजकर चॉचर गान द्रष्टव्य है 'नवल सिंगार प्रकृतिहि कीन्हा/ससि पसार सिंदूर हि वीन्हा।' कृष्णकाव्य के कवियों ने वसंत वर्णन में चमत्कार कर दिया है। सूरदास ने वसंत राज और वसंत सेना के रूपक प्रस्तुत किए। ऐसे रूपक संस्कृत एवं प्राकृत के कवियों ने तथा विद्यापति ने अधिकांशतः प्रस्तुत किए हैं। रूपक तत्व का जैसा संश्लिष्ट चित्रण विद्यापति में मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है, सूरदास ने उसका अनुसरण मात्र किया है किन्तु सूर का एक रूपक नितांत मौलिक है जिसमें उन्होंने वसन्त की कल्पना पत्र के रूप में की है। 'ऐसो पत्र पठयो वसन्त/तजदुमान मानिनी तुरंत।'

रामकाव्य के प्रमुख कवि तुलसी ने रामचरित मानस में मात्र दो स्थानों पर वसंत वर्णन किया है। बालकांड में शिवसमाधि प्रसंग में तथा अरण्यकांड में सीताविरह में। (यह वाल्मीकि रामायण के किस्किन्था काण्ड-1/22 को

कविता

बदल गया मौसम

विनोद

जाड़े के इन लम्हों में
पहाड़ी पर बिछी बर्फ
की सफेद चादर से
छूकर आती हवाओं का
शीतल स्पर्श

करवाता है उन अल्हड़
बीतों दिनों का स्मरण
जब मां पहाड़ों को निहार
कर कह उठती थी
बेटा आ गई सर्द ऋतु

अब बदल गया मौसम
हम मां कीबात को
करते थे नज़रंदाज
अब जब भी इस मौसम में
होता है ठंडी हवाओं का स्पर्श
बहुत आती है मां की याद कि
अब बदल गया है मौसम

दयाल हाउस, जाखू रोड़
नजदीक मेडिकल कॉलेज ब्वयाज होस्टल
संजौली, शिमला-171 006

अनुवाद ही है। अयं वसंतः सौ मित्रे नाना विहग-नन्दितः। सीताया विप्रहीणस्थ शोक-सन्दीपनो ममः।।) इसके अलावा केशव के रामचन्द्रिका में भी वसंत वर्णन मिलता है जब रावण वध के बाद अयोध्या लौटते हैं उस समय का।

रीतिकालीन कवियों में पद्‌माकर ने विश्व के कण-कण में कुसुमाकर भी कमनीय छटा के दर्शन किए हैं। 'कूब्जा में केलि में कद्दारन में कुंजन में, क्यारिन में कलित कलीन किलकंत है / कहें पदमाकर परागन में पौनहूं में पातन में पिक में पलासन पंगत है/. ...वनन में बागन में बगरयो वसन्त है। पद्‌माकर के बिंब तथा शब्द चित्र की क्षमता ने उसे सौन्दर्य वृत्त कर दिया है। एक दूसरा बिंब बिहारी का है जो पूर्ण निरपेक्ष है- वसंत में आम्रमंजरी मुकुलित हो उठती है। माधवी लता पुष्पित हो जाती है जिसकी चतुर्दिक व्याप्त गंध भ्रमरो को उन्मत्त कर देती है। द्रष्टव्य है.... 'छकि रसाल-सौरभ सने मधुर-माधुरी गन्ध/ ठौर-ठौर झूमत झपत और मधुअन्ध।।' वसंत वर्णन की दृष्टि से रीतिकालीन युग के सशक्त एवं श्रेष्ठ कवि विद्यापति माने गए हैं जिनके वासंती गीत आज भी मिथिलांचल की अमराइयों में गूंजते हैं -सरस वसंत समय भई पावल दक्खिन पवन वही अति धीरे।'

आधुनिक हिंदी काव्य में सुभद्रा कुमारी चौहान ने स्वातंत्र्य समर में 'वीरो का कैसा हो वसन्त' लिख कर आन्दोलनकारियों को शौर्य की प्रेरणा दी है तो जयशंकर प्रसाद ने कामायनी में वसन्त के खेतों में फूले पीले सरसों तथा मटर के गुलाबी रंग तथा अलसी के नीले प्रसून पर स्वागत का मनोरम चित्रण किया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र वसंत के बदलते परिवेश पर अपनी अनुभूति व्यक्त करते हुए कहा 'फेर अब आई रैन वसंत की। बदलि चली पौनहू सुगंध भरि तजि कै सीत स्यिंत की।' बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने रीतिकालीन परम्परा से वसन्त का वर्णन किया है तथा लिखा 'आगु जनु लागी गुले लाला अवलीन, कचनार और अनारन पै बरसि रहे अंगार। बौरी अमराई कर बौरी सी दई और दई सुमन पलाश नरव कैहरि सौ करौ वार।' छायावादी युग में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' को तो वसन्त दूत ही कहा जाता है। उनकी 'जूही की कली' में नायक-नायिका का आरोप वर्णन निराला है। वसंत निराला के उल्लास का अनुप्रेरक रहा। उनके मन में वसंतगामन के साथ हर्ष व्याप्त हो जाता है - सखि वसन्त आया/ भरा हर्ष बन के मन, नवोत्कर्ष छाया।'

कवि केदार नाथ अग्रवाल ने विश्व के माध्यम से वासत्तिक अनुभूति प्रस्तुत करते हुए लिखा 'वसंत आया/पलाश के बूटे वृक्षों पर भी/टेसू के लाल मौर सिर धरली/ विकराल वनखण्डी/ लाजवन्ती दुलहिन बन गई/ फूलों के आभूषण पहन आकर्षक बन गई/ अनंग के/ धनुगुण के भौरें गुनगुनाने लगे।'

समयन्तराल में युग मूल्यों के विघटन, अनास्था, निराशा के स्वरों में कवियों को मुक्त सहचरण करने से अवरुद्ध कर दिया तथा उनकी वासक्तिक अनुभूति यथार्थ- परक हो गयी। रामदरश मिश्र ने 'महानगर में वसन्त' कविता में कहते हैं कि आवाजों के सुलगते सन्नाटे में भटकी कोयल कहती है कि हाय मैं कहां आ गयी, उद्यान सूने हैं गमलों में सजे फूलों का मेला है, सड़कों पर बसें दौड़ रही हैं, फायर ब्रिगेड का घण्टा सुन कर पक्षी अपना कलरव भूल गए हैं। वहीं नेमचन्द्र जैन तो यहां तक कहते हैं कि 'दृश्य वही है/पर संवेदना भिन्न है/ आस्वाद बदल गया है/मिलावटी घी की भांति।'

प्रेमांगन, एमआईजी 292, कैलास विहार,
आवास विकास योजना संख्या-1,
कल्याणपुर, कानपुर-208017, दूरभाष : 0512-2571795

आलेख

तुलसी से कहीं बड़ा है रत्नावली का त्याग

◆ शिवचरण चौहान

अपनी पत्नी रत्नावली के व्यंग्य बाणों से आहत होकर तुलसी को वैराग्य उत्पन्न हो गया। वह परिव्राजक बन राम की भक्ति में लीन हो गए और फिर पलटकर सांसारिक माया-मोह में नहीं पड़े। रत्नावली को यह दुःख जीवन भर रहा कि उनके कठोर शब्दों के कारण उनके प्रियतम सदा के लिए उन्हें त्यागकर चले गए पर यह बात प्रामाणिक नहीं साबित हुई कि रत्नावली ने उनकी खोज कर ली थी और वह उन्हें मनाने चित्रकूट गई थीं पर तुलसी वापस नहीं लौटे।

यह बात भी प्रामाणिक साबित नहीं हुई कि जब तुलसी पत्नी के मायके जाने में उसके विछोह में बरसात की आधी रात में अफनाती गंगा-मुर्दे के सहारे पारकर लटकते सांप के सहारे चढ़कर रत्नावली के कक्ष में पहुंचे थे और रत्नावली ने उन्हें फटकार कर-

-'अस्थि चर्म मय देह में तामे ऐसी प्रीति।

ऐसी जो रघुनाथ में होत न तव भवभीति।।

भगा दिया और लज्जित होकर तुलसी माया-मोह त्यागकर परिव्राजक बन गए थे। ये बात तय है कि कविता के गुण तुलसी में बचपन से ही थे। और जब अति सुन्दर रत्ना से उनकी शादी हुई तो उन्हें यह जानकर खुशी हुई कि रत्ना में भी काव्य शक्ति है।

गोस्वामी तुलसीदास की पत्नी रत्नावली के बारे में सबसे पहले मुरलीधर चतुर्वेदी ने शोध किया और सन् 1772 में 'रत्नावली चरित' नाम का एक लघु काव्य ग्रंथ लिखा था।

उन्होंने खोजकर कवयित्री रत्नावली द्वारा रचित 201 दोहे व सात पद प्रस्तुत किए और दुनिया को बताया कि तुलसीदास की पत्नी ने भी राम के चरणों में अपना जीवन लगा दिया था और वह विदुषी श्रेष्ठ कवयित्री बनीं, उनके कुछ दोहे तो तुलसी के दोहों से भी श्रेष्ठ व सुन्दर हैं।

एक अंग्रेज कलेक्टर ग्रियर्सन व कवि मुरलीधर चतुर्वेदी ने रत्नावली के बारे में काफी खोजबीन, शोध किया है।

मुरलीधर चतुर्वेदी कृत 'रत्नावली चरित (1772 ई.) के अनुसार रत्नावली का जन्म शूकर (सोरों) क्षेत्र कासगंज के समीप बदरिका (अब बदरिया) गांव में पं. दीनबन्धु पाठक व उनकी पत्नी के घर हुआ। पुत्री का जन्म संवत 1577 (सन् 1520) में हुआ और उसका नाम रत्ना रखा गया। पिता दीनबंधु ने अपने तीनों बेटों की तरह पुत्री को भी पर्याप्त शिक्षा दिलवाई।

12 वर्ष की उम्र में दीनबन्धु पाठक ने अपनी पुत्री का विवाह सोरों इलाके के एक गांव के निवासी आत्माराम व हुलसी देवी के पुत्र तुलसी से कर दिया। तुलसी माता-पिता विहीन थे और नरसिंह के आश्रम में शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर रहे थे। अंग्रेज विद्वान ग्रियर्सन ने इंडियन एण्टी क्वेरी तथा श्याम सुन्दर दास, मिश्र बन्धु, शिवनन्दन सहाय आदि हिन्दी के विद्वानों ने महाकवि तुलसीदास व रत्नावली के बारे में काफी कुछ लिखा है।

'रत्नावली चरित' के अनुसार रत्नावली की 16 वर्ष की आयु पूरी होने पर उनका गौना हुआ। रत्नावली तुलसी के घर आ गईं और कालान्तर में तुलसी-रत्ना के घर एक पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसका नाम तारक रखा गया। कुछ दिन बाद पुत्र तारक की असमय मृत्यु हो गई। यह दुःख रत्ना को असह्य हुआ पर तुलसी के अतिप्रेम के चलते रत्नावली ने अपने को सम्भाल लिया।

उस साल सावन का महीना था और रक्षाबंधन का पर्व आने

उस साल सावन का महीना था और रक्षाबंधन का पर्व आने वाला था तो रत्नावली का भाई उसे लेने आया और तुलसी की सहमति से रत्ना को उसके मायके बदरिका गांव ले गया। तुलसी उन दिनों रामायण का पाठ कर रहे थे। जब सप्ताह भर बाद रामायण का पाठ समाप्त हुआ तो घर आए और उन्हें रत्नावली की बहुत याद आई और वह वर्षा के समय घर से निकल पड़े। उफनती गंगा पार कर वह अपने ससुराल बदरिका पहुंचे और आधी रात को दरवाजा खटखटाया। ससुराल वाले बहुत विस्मित हुए और किसी अनहोनी के बारे में इतनी रात आने का कारण पूछा। तुलसी शरमाए और यूं ही चले आए कहकर रत्नावली के पास गए और बोले- तुम्हाना प्रेम मुझे तुम तक खींच लाया। रत्नावली प्यार की बात सुनकर खुश तो हुई पर सहज स्वभाव में उसने यह भी कह दिया कि प्राणनाथ, इतना प्रेम अगर राम से करते तो बेड़ा पार हो जाता। अतिशय प्रेम में निमग्न तुलसी हतप्रभ रह गए उनको रत्ना से ऐसे जवाब की आशा नहीं थी।

वाला था तो रत्नावली का भाई उसे लेने आया और तुलसी की सहमति से रत्ना को उसके मायके बदरिका गांव ले गया। तुलसी उन दिनों रामायण का पाठ कर रहे थे। जब सप्ताह भर बाद रामायण का पाठ समाप्त हुआ तो घर आए और उन्हें रत्नावली की बहुत याद आई और वह वर्षा के समय घर से निकल पड़े। उफनाती गंगा पार कर वह अपने ससुराल बदरिका पहुंचे और आधी रात को दरवाजा खटखटाया। ससुराल वाले बहुत विस्मित हुए और किसी अनहोनी के बारे में इतनी रात आने का कारण पूछा। तुलसी शरमाए और यूं ही चले आए कहकर रत्नावली के पास गए और बोले- तुम्हाना प्रेम मुझे तुम तक खींच लाया। रत्नावली प्यार की बात सुनकर खुश तो हुई पर सहज स्वभाव में उसने यह भी कह दिया कि प्राणनाथ, इतना प्रेम अगर राम से करते तो बेड़ा पार हो जाता। अतिशय प्रेम में निमग्न तुलसी हतप्रभ रह गए उनको रत्ना से ऐसे जवाब की आशा नहीं थी।

वह सोने का नाटक कर लेट तो गए और जैसे ही रत्ना समेत ससुराल के सारे लोग सो गए, तुलसी ने उसी रात पत्नी, ससुराल व अपने घर का त्याग कर दिया।

ससुराल वालों ने बहुत खोज की पर तुलसी न मिले। 12 साल में रत्ना का ब्याह हुआ, सोलहवें में गौना हुआ, पुत्र व मां का बिछोह सहने वाली रत्ना का 27वें वर्ष में तुलसी ने त्याग कर दिया।

बहुत दिनों तक तुलसी की प्रतीक्षा में रत्ना ने खाना नहीं खाया, व्रत, संयम, तप किया पर तुलसी लौटकर नहीं आए। वह श्वेतवस्त्र पहनती, व्रत, उपासना करतीं और स्त्रियों को धर्मोदेश करतीं। तुलसी से विछोह के लिए रत्नावली खुद को दोषी मानती रहीं और क्षमा मांगती रहीं। उनके 201 दोहों में क्षमा याचना के अनेक दोहे हैं- पर निष्ठुर तुलसी नहीं लौटे।

- जनम बदरिका कुल भई, हौं पिय कंटक रूप।
  बिंधत, दुखित हवै चलि गए, रत्नावलि उर भूप।।1।।
- हाय सहज ही हौं कह्यो, लह्यो बोध हिरदेश।
  हौं रत्नावलि जंचि गई, प्रिय हिय, कांच विशेष।।2।।
- रत्नावलि कांटो, लगो, बैदन दियो निकारि।
  वचन लग्यो, निकस्यो नहीं, उन डारों हिय फारि।।3।।
- को जाने रत्नावली, पिय वियोग की बात।
  प्रिय बिछुरन दुःख जानती, सीय दमैती मात।।4।।
- जदपि गए घर से निकरि, मो मन निकसे नाहि।
  मन सो निकरौ, ता दिनहिं, जा दिन प्रान नसाहिं।।5।।
- हौं न नाथ अपराधिनी, तऊ छमा करि देव।
  चरनन दासी जानि निज, बेगि मोरि सुधि लेव।।6।।
- नाथ रहौगी मौन हवै, धारहु पिय जिय तोष।
  कबहुं न देऊं उराहनौ, देऊँ कबहुं न दोष।।7।।
- छमा करौ अपराध सब, अपराधिन के आय।
  बुरी, भली हौं आपकी, तजहु न, लेहु निभाय।।8।।
- कहां हमारे भाग अस, जो प्रिय दरसन देयं।
  बत पाछिनी दीठि सों, एक बार लखि लेंय।।9।।
- मलिया सींची विविध विधि, रतनलता करि प्यार।
  नहि वसंत आगम भयो, तब लगि परयो तुषार।।10।।

रत्नावली रचित 201 दोहे और सात पद मिलते हैं-

काहे नाथ मोहि बिसराई।

इकपति ही परलोक, लोक गति, वेद पुरावन गाई।।

करि करि सुरति बिसुरति, निसि, दिन, दासी रतन तिहारी।।

वैसे तो रत्नावली के तीनों भाइयों, शिव, शंकर और शम्भू ने अपनी बहन को कोई दुःख नहीं होने दिया पर तुलसी वियोग में साध्वी बनी रत्ना ने तुलसी की याद करते हुए राम भक्ति में अपना सारा जीवन लगा दिया और 74 वर्ष की आयु में वह विष्णु धाम को प्राप्त हुईं।

तमाम खोजों, शोधों के बाद यह बात प्रमाणित नहीं हुई कि रत्नावली, तुलसीदास से क्षमा मांग वापस बुलाने के लिए चित्रकूट गई थीं और तुलसी ने उन्हें लौटा दिया था।

तुलसीदास, चित्रकूट, अयोध्या, काशी में वर्षों रहे पर रत्नावली उनतक पहुंच नहीं पाईं। रत्ना का त्याग, तुलसीदास से भी बड़ा है।

कभी अपनी पत्नी रत्नावली को जान से भी ज्यादा प्यार करने वाले तुलसीदास, रत्ना की एक सामान्य सी उपदेशात्मक बात से इतना आहत हुए कि वह फिर पलटकर अपने ससुरात तथा अपनी पत्नी रत्ना के पास नहीं आए। वह इतने निष्ठुर बने रहे कि रामचरित मानस सहित अपने किसी भी ग्रंथ में, रचना में अपनी पत्नी का उल्लेख नहीं किया। अपने परिवार के बारे में तो वह छुटपुट उल्लेख करते हैं। 'मैनें निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकर खेत, वह अनुसूया के मुख से पतिव्रता पत्नी के बारे में उपदेश दिलवाते हैं, पर रत्ना का उल्लेख नहीं करते। वर्षा के समय किष्किन्धा पर्वत में प्रवास के समय वह राम से कहलवाते हैं-

मैं भले ही यह अनुमान लगा सकते हैं कि उन्हें रत्ना की याद आई है, पर स्पष्ट रूप से रत्ना का कहीं उल्लेख नहीं करते।

रत्नावली श्रेष्ठ कवयित्री थीं। उनके दोहे, तुलसीदास के दोहों से कही कमतर नहीं हैं। इतिहासकारों, साहित्यकारों ने रत्ना के त्याग व साहित्य की उपेक्षा की है। उनके दोहे व पद हिन्दी साहित्य के अमूल्य धरोहर हैं। रत्नावली की दोहावली व पदों के दो संग्रह तुलसीपीठ, नरदईद्वार-कासगंज उत्तर प्रदेश के पुस्तकालय में मौजूद हैं। उत्तर प्रदेश सरकार के हिन्दी संस्थान ने 'रत्नावली' नाम एक पुस्तक प्रकाषित की है, जिसमें नाभादास प्रियादास का उल्लेख है और 1772 में मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा रचित 'रत्नावली चरित' को अनुवाद सहित प्रकाशित किया है।

मनेथू-कानपुर देहात, उत्तर प्रदेश-209121
मो. 0 63942 47957

रविदास जयंती

'मन चंगा तो कठौती में गंगा'

◆ राजेंद्र पालमपुरी



संत रविदास (रैदास) उन महान संतों में अग्रणी रहे हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। यही बह विशेषता रही कि इनका समाज के हर वर्ग पर प्रभुत्व रहा है और रहेगा। संत रैदास की रचनाओं में यह भी विशेष रहा कि इन्होंने लोक वाणी का अनूठा प्रयोग किया है। जिससे आमजनमानस पर अमिट प्रभाव पड़ा। मधुर एवं सहज संत शिरोमणी रविदास की वाणी ज्ञानामयी होते हुए भी ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी शाखाओं के मध्य, सेतु की तरह काम करती है। प्राचीनकाल से ही भारत में विभिन्न धर्मों तथा मतों के अनुयायी निवास करते रहे हैं। कहा जा सकता है कि इन सबमें मेलजोल और भाईचारा बढ़ाने के लिये संतों ने समय-समय पर महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इन संतों में शिरोमणी रविदास का नाम अग्रजों की श्रेणी में आता है। अतः इनकी याद में माघ पूर्णमासी को रैदास जयंती मनाई जाती है और जिसे हम सदियों से मनाते आ रहे हैं।

कहा जाता है कि रविदास और कबीर जी के बीच ज्ञानगोष्ठी हुई थी, तब संत रविदास जी ने संत कबीर जी से दीक्षा ली थी। परंतु ऐसा कहना या मानना कहां तक सही है नहीं कहा जा सकता है। गुरु रविदास (रैदास) जी का जन्म काशी में माघ पूर्णिमा दिन रविवार और संवत 1433 को हुआ था द्य इनके जन्म के बारे में एक दोहा प्रचलित है :

'चौदह सौ तैंतिस की माघ सुदी पंदरास।
दुखियों के कल्याण हित प्रगटे स्री रविदास॥

इनके पिता रघ्घु या राघवदास तथा माता का नाम करमा बाई था। पत्नी लोना और एक पुत्र विजयदास व पुत्री रविदासिनी हुई। बताया जाता है कि रैदास ने साधु संतों की संगति से पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया था। चर्मकारी इनका पैतृक व्यवसाय था अतः इन्होंने इसे सहर्ष अपनाकर अपनी कौम और अनुयायियों को आगे बढ़ाया।

अपना व्यवसायिक कार्य करने में वे दक्ष तो थे ही बल्कि इसे सहर्ष करके इन्होंने समाज की उन्नति के लिये हर अच्छे काम के करने को कर्त्तव्य बताकर लोगों को जागरूक भी किया। अपना काम पूरी तन्मयता, लगन और समयबद्धता से करना इनका नित्य नियम था। इनकी समयानुपालन की प्रवृत्ति तथा मधुर व्यवहार के कारण ही इनके संपर्क में आने वाले लोग भी इनसे बहुत ही प्रसन्न तथा प्रभावित रहते। प्रारंभ से ही रविदास परोपकारी दयालु और परस्वार्थी रहे हमेशा। दर्दमंदों और जरूरतमंदों की सहायता करना भी इनकी आदतों में शामिल रहा। यही वह कारण भी हैं जिनसे गुरु रविदास समाज के हर वर्ग में आदरणीय हैं। यही नहीं बल्कि साधु संतों की सेवा और सहायता करने में भी वे बहुत ही आनंद अनुभव करते थे। प्रायः गुरु रविदास साधु संतों को मूल्य लिये बिना ही जूते भेंट कर दिया करते थे।

यही कारण रहा जिससे इनके माता-पिता इनसे नाखुश रहते थे। शायद इसीलिये कुछ समय पश्चात उन्होंने रविदास को उनकी पत्नी सहित घर से निकल जाने को कह दिया। रविदास जी पड़ोस में ही अपने लिये एक अलग मकान बनाकर तत्परता और तन्मयता से अपना व्यवसायिक काम करने में लग गए। समय के साथ साथ वे ईश्वर भजन तथा साधु संतों के सत्संग में गुजारते थे। इनके जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं से समय तथा वचनों के पालन करने संबंधी इनके गुणों का पता भी चलता है। कहा जाता

है कि एक पर्व के अवसर पर पड़ोस के लोग गंगा स्नान के लिये जा रहे थे। रैदास के शिष्यों में से एक ने इनसे भी चलने का आग्रह किया तो वे बोले - गंगा स्नान के लिये मैं अवश्य ही चलता किंतु एक व्यक्ति को जूते आज ही बनाकर देने का वचन दे रखा है। यदि मैं उसे आज जूते न दे पाया तो अपने वचन से झूठा पड़ जाऊंगा। और यदि गंगा स्नान के लिये चला गया तो मन तो अपने काम पर ही लगा रहेगा तो गंगा स्नान का पुण्य कैसे कमा पाऊंगा। अतः यहीं से यह लोकोक्ति बनी कि :

'मन चंगा तो कठौती में गंगा।'

अर्थ कि मन निस्वार्थ या सही है तो किसी पत्थर में पड़े पानी से नहाने से भी गंगा स्नान का पुण्य प्राप्त हो सकता है।

कहा जाता है कि रविदास जी की इसी कहावत ने ऊंच नीच की भावना तथा ईश्वर भक्ति के नाम पर किये जाने वाले भेदभाव और विवादों को सारहीन तथा निरर्थक बताया और सबको परस्पर मिलजुल कर प्रेमपूर्वक रहने का उपदेश दिया। वे स्वयं मधुर तथा भक्तिपूर्ण भजनों की रचना करते थे और उन्हें भावभोर हो सुनाया करते थे।

संत रविदास का विश्वास था कि राम, कृष्ण, करीम, राघव, अल्लाह, वाहेगुरु आदि सभी एक ही परमेश्वर के विविध नाम हैं।

वेद, कुरान, पुराण आदि ग्रंथों में एक ही परमात्मा का गुणगान किया गया है। संत रैदास का विश्वास था कि परमेश्वर की भक्ति के लिये सदाचार, परहित भावना तथा सदव्यवहार का पालन करना अति आवश्यक है। अभिमान, मोह और लोभ त्याग कर दूसरों के साथ सदव्यवहार करने और विनम्रता तथा शिष्टता के गुणों का विकास करने पर इन्होंने बहुत बल दिया।

अपने एक भजन में गुरु रविदास ने कहा है :

कह रैदास तेरी भक्ति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेरी आपा पर,
पिपिलक हवै चुनि खावै॥

संत रविदास के विचारों का आशय यही रहा है कि ईश्वर की भक्ति बड़े भाग वालों अर्थात किस्मत वालों को मिलती है। अभिमान रहित काम करने वाला व्यक्ति ही जीवन में सफल रहता है जैसे विशालकाय हाथी शक्कर के कणों को चुनने में असमर्थ रहता है जबकि छोटी सी पिपिलिका (चींटी) इन्हीं कणों को सहज और सफलता पूर्वक ही चुनकर खा लेती है। बिलकुल ठीक इसी प्रकार बड़प्पन का भाव त्याग कर विनम्रतापूर्ण आचरण करने वाला मनुष्य ही परमेश्वर का भक्त हो सकता है भले ही फिर वह चाहे किसी भी जात, धर्म, कार्यक्षेत्र या वर्ग का हो। रैदास की वाणी, भक्ति की सच्ची भावना, समाज के व्यापक हित की कामना तथा मानव हित और प्रेम से ओत प्रोत है। इसलिये आज भी श्रोताओं और अपने श्रद्धालुओं पर अपना प्रभाव रखती है। इनके भजनों व उपदेशों से आम जनमानस को अनूठी शिक्षा मिलती है। जिनसे उनकी शंकाओं के समाधान के साथ साथ ही परहित करने का प्रोत्साहन और संतोष भी मिलता है। यही कारण भी रहे जो समाज के हर वर्ग के लोग संत रविदास के श्रद्धालु बन गए। कहा जाता है कि मीराबाई रैदास की वाणी से बहुत अधिक प्रभावित होकर ही इनकी शिष्या बन गई थी।

कहा जाना चाहिये कि आज भी संत रविदास के उपदेश समाज कल्याण तथा उत्थान के लिये बेहद महत्त्वपूर्ण हैं। संत रविदास ने अपने आचरण तथा व्यवहार से यह प्रमाणित कर दिया है कि मनुष्य अपने जन्म तथा व्यवसाय से महान नहीं होता बल्कि विचारों की श्रेष्ठता, समाज के हित की भावना से प्रेरित कार्य तथा सदव्यवहार जैसे गुण ही मानव को महान बनाने में सहायक होते हैं। और इन्हीं गुणों के कारण लोग आज भी संत रविदास को अपना आदर्श मानते हैं। हम यह भी जानते हैं कि संत रविदास जी के लगभग 40 पद गुरु ग्रंथ साहिब में भी मिलते हैं जिनका संपादन सिख गुरु श्री अर्जुन सिंह देव ने 16 वीं सदी में किया था।

1. जाति जाति में जाति है, जो कंतन के पास।
रैदास मनुष न जुड़ सके , जब तक जाति न जात॥
2. मन चंगा तो कठौति में गंगा ।

3. ब्राह्मण मत पूजिये जो होवै गुणहीन ।
पूजीये चरण चंडाल के जो होवै गुण प्रवीण॥

कहना होगा कि संत रविदास की पावन और पुनीत जयंती के अवसर पर हम सबको धर्म, व्यवसाय, वर्ग, ऊंच-नीच और जात-पात के भेदभाव से ऊपर उठकर समभाव और समानता लिये विचारों पर काम करने की जरूरत है ताकि संत रविदास की कही वाणी को हम सब चरितार्थ कर साकार करके उनके पदचिन्हों पर चल सकें और मानव कल्याण कर सकें।

सेवानिवृत शिक्षा अधिकारी स्टेट एवार्डी पोस्ट बॉक्स नंबर-45, मनाली जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश, मो. 0 78761 07476

संत रविदास के विचारों का आशय यही रहा है कि ईश्वर की भक्ति बड़े भाग वालों अर्थात किस्मत वालों को मिलती है। अभिमान रहित काम करने वाला व्यक्ति ही जीवन में सफल रहता है जैसे विशालकाय हाथी शक्कर के कणों को चुनने में असमर्थ रहता है जबकि छोटा सा शरीर रखती पिपिलिका (चींटी) इन्हीं कणों को सहज और सफलता पूर्वक ही चुनकर खा लेती है।

आलेख

हिमाचली बाल साहित्य में लोक-चेतना

◆ डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत

लोक-चेतना से अभिप्राय लोक-चिन्तन अथवा जन-सामान्य की किसी विषय पर सोच से है। कोई भी समाज हमेशा से अपने कल्याण के प्रति चिन्तन करता हुआ ही अपने ध्येय में अग्रसर रहता है। जन-कल्याण हमारे सामाजिक जीवन का एक अत्यावश्यक तत्त्व है। अत एव मनुष्य अपने इस तत्त्व पर चिन्तन करता हुआ अपने हित के प्रति हमेशा सजग रहता है।

हमारी प्राचीन लोक-कथायें हमेशा इसी लोक-चेतना पर आधारित रही हैं। पहले के समय में जबकि आज जैसी शिल्प-सम्बन्धी जानकारी नहीं थी इन्हीं लोक-कथाओं के माध्यम से हमारी दादी-नानी बच्चों के हित की बातें उन के मन-मस्तिष्क में आरोपित करने का प्रयास करती रहती थीं। हालांकि उनके चिन्तन में बच्चों का मनोरंजन ही प्रधान रहता था। इसके लिए बच्चे अकसर उन को कथायें अथवा 'बातें' सुनाने को बाध्य भी करते रहते थे। दर असल इन कथाओं में उन के कल्याण और भले की बातें छिपी रहती थीं। वैसे प्रत्यक्ष रूप में न तो दादी-नानी के सामने और न ही बच्चों के सामने उन के हित की कोई भी ऐसी भावना होती थी। किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से ये कथायें उन के मन पर प्रभाव अवश्य डालती थीं। यही लोक-चेतना का आधार होती थीं।

पहले बालसाहित्य लेखन तो बहुत कम होता था। पंच तन्त्र, हितोपदेश जैसे बालसाहित्य के संस्कृत ग्रन्थ बहुत सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं। प्रायः लोक-कथाओं के वाचन-श्रवण मात्र से ही बच्चों को अच्छे संस्कार दिए जाते थे। वैसे कथा वाचकों को स्वयं भी इन बातों का कोई आभास नहीं होता था कि वे ये सब बच्चों के हित में ही सुना रहे हैं। किन्तु उनकी कथायें लोक-कल्याण की भावना से ओत-प्रोत होती थीं और मनोरंजन उनमें मुख्य तत्त्व था ही। किन्तु आज बच्चों के मनोरंजन के लिए प्रचुर मात्रा में बालसाहित्य की रचना हो रही है। देश के प्रत्येक राज्य में बाल पत्रिकायें छप रही हैं जो बच्चों के मनोरंजन के साथ-साथ उन में अच्छे-अच्छे संस्कार एवं सद्गुण डालती हैं। इनमें पशु-पक्षियों, राजा-रानी, देव-राक्षस, परी-भूतप्रेत आदि को आधार बना कर कथायें तो लिखी ही जाती हैं। किन्तु इनके अलावा विज्ञान एवं आज के सामाजिक यथार्थ पर भी बहुत कुछ लिखा जाता है। इस से निश्चित ही बच्चों को संस्कारी बनाने का प्रयास होता है और उनका ज्ञान भी बढ़ता है। बाल्यकाल बच्चों के निर्माण का काल होता है। अतः इस दृष्टि से ऐसे लेखन की महती आवश्यकता है।

सामान्य साहित्य उद्देश्य परक हो, चाहे न भी हो, किन्तु बाल-साहित्य को तो किसी-न-किसी उद्देश्य को लेकर ही लिखा जाना चाहिए। इस में बच्चों को जीवन में आगे बढ़ने के लिए उपयुक्त दिशा-निर्देश निश्चित ही होता है। बाल-साहित्य को तो अपनी कथाओं, कविताओं, एकांकी-लेखन आदि से बालक के व्यक्तित्व का समुचित विकास करने में अपना योगदान देना होता है। यही तो बच्चों को करणीय-अकरणीय, अच्छे-बुरे, शुभ-अशुभ आदि का अन्तर समझाता है। बाल-साहित्य में यह सब ही लोक. चेतना का आधार है। इस दृष्टि से यहां पर कुछ चुनिंदा बालसाहित्यकारों की रचनाओं में लोक-चेतना के स्वरूप का उल्लेख अपेक्षित है।

हिमाचल में बालसाहित्य के पुरोधा पंडित सन्तराम वत्स्य और डॉ. मस्तराम कपूर रहे हैं जिन्होंने आज के समय में बाल-लेखन की नींव रखी। सन्तराम वत्स्य ने रामायण, महाभारत आदि पौराणिक ग्रंथों और सत्-पुरुषों की जीवनियों को आधार बना कर सौ से अधिक पुस्तकों का लेखन किया। इस के अलावा उन्होंने पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, देव-दानव आदि को आधार बना कर भी बहुत-सी बाल कथायें लिखीं जिन में बालकों को सदुपदेश देकर उनके जीवन-निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया गया है। डॉ. मस्तराम कपूर ने बाल कथा, बाल-नाटक, एवं 'भूत नाथ', 'सपेरे की लड़की' आदि बाल उपन्यास लिख कर बच्चों के मन में बाल-साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने का प्रयास किया।

इन के अलावा बाल-उपन्यास, बाल एकांकी आदि के लेखन में डॉ. सुशील कुमार फुल्ल और डॉ. ओ.पी. सारस्वत के नाम उल्लेखनीय हैं। डॉ. फुल्ल ने अपने पांच बाल उपन्यासों, विशेषकर 'टकराती लहरें', 'लाल मिट्टी की करामात' एवं 'ललकार' से राष्ट्रभक्ति और देश-भक्ति की लोक-चेतना को भरपूर अभिव्यक्त

किया है। डॉ. सारस्वत के बाल-एकांकी 'पानी की तलाश' में जहां सार्वजनिक जीवन में पानी की महत्ता को रेखांकित किया गया है वहीं 'लक्ष्मी की डिबिया' में लोभ-लालच पर प्रहार किया गया है। उनके कुछ बाल-एकांकी स्कूल पाठ्यक्रम में भी निर्धारित हुए हैं। उनके बाल-गीत तो लोक-जीवन से खूब जुड़े हैं। 'छाता ताने खड़े हुए हैं, लाखों-लाख सुहाने पेड़ आदि गीत बच्चों का अच्छा मनोरंजन करते हैं और दैनिक जीवन में वृक्षों के महत्त्व को प्रतिपादित करते हैं। कुछ पंक्तियां अवलोकनीय हैं -

ये गर्मी के एअर-प्लांट, ये सूखे में वाटर-हाऊस
आक्सीजन के भरे सिलेंडर, ये बिजली के पावर-हाऊस

डॉ. गौतम व्यथित, सैन्नी अशेष, सुदर्शन वशिष्ठ और डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत ने अपने-अपने क्षेत्र में लोक-चेतना का एक विशाल फलक पाठकों के सामने रखा है। व्यथित के बाल कथा संग्रह 'काठ का घोड़ा', 'तीन ठग', 'कागज का हंस', 'राजकुमारी और तोता' आदि में बच्चों के लिए अत्यन्त रोचक और शिक्षाप्रद कहानियां मिलती हैं। डॉ. व्यथित के बालगीत - 'चिड़िया कहां खो गई तू', 'सूरज को उगता जो बच्चे नहीं देखते', 'प्रातः पक्षी आते हैं, 'कबूतर मैंने देखा' आदि रोचक होने के अलावा पर्यावरण और देशभक्ति का पाठ भी पढ़ाते हैं। उनके अनेक बालगीत पंजाब और हिमाचल प्रदेश के स्कूली पाठ्यक्रम में सम्मिलित किए गए हैं। अपनी लगभग 2500 कहानियों में सैन्नी अशेष ने हिमाचल प्रदेश की संस्कृति, भूगोल, लोक-जीवन एवं लोक-कथाओं का विशद चित्रण न केवल प्रदेश के बल्कि पूरे भारत के पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करके बाल साहित्य को समृद्ध किया है। इनकी अनेक कहानियां जहां देश की विभिन्न भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं, वहीं ये हिमाचल के सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन के स्वरूप को दूर-दूर तक पहुँचाने में सफल सिद्ध हुई हैं। सुदर्शन वशिष्ठ ने अपनी बाल कथाओं एवं बाल-लोककथाओं, 'कथा और कथा', 'बालक की सीख' और 'हिमाचल प्रदेश की लोक कथायें' के द्वारा लोक चेतना को खूब अभिव्यक्त किया है। इन से बच्चों को शिक्षा मिलती है कि बिना उद्योग किए जीवन में सफलता नहीं मिलती और बड़ों को सीख तो एक बालक से भी मिल सकती है। इनके अलावा उन की अनेक बाल कथायें बालभारती, पराग, नंदन आदि में भी छपती रही हैं। हिमाचली बाल साहित्य में लोक- चेतना की दृष्टि से डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत के चार संग्रह - 'शिला बोली', 'हार-जीत', 'सरदार की बेटी' एवं 'किशोर शिल्पी का बलिदान' काफी महत्त्वपूर्ण हैं। इन में प्रथम तीन के तो द्वितीय संस्करण भी निकल चुके हैं। इन संग्रहों की कथायें किसी भी बालक के जीवन को सन्तुलित आकार देने में बहुत उपयोगी हैं। ये सभी कहानियां बच्चों के मानसिक और बौद्धिक विकास को ध्यान मे रख कर ही लिखी गई हैं। साथ ही, इन कहानियों से बाल पाठकों का स्वस्थ मनोरंजन तो होता ही है उनके व्यावहारिक ज्ञान में भी समुचित वृद्धि होती है। इन कहानियों में यत्र-तत्र निहित जीवन-मूल्य-परोपकार की भावना, सच्ची मित्रता, चतुरता, साहस, शौर्य आदि बच्चों के भावी जीवन के निर्माण में बहुत उपयोगी हैं। डॉ. प्रशान्त का किशोर गीत-संग्रह - 'किशोर बनो तुम कर्मशील' भी न केवल किशोरों के मन को विकसित करता है, बल्कि उस में उठ रही जिज्ञासाओं, आन्तरिक विक्षोभ, स्वतन्त्र-चिन्तन आदि को भी उद्‌घाटित करता है। इस दृष्टि में उन की 'हिमाचल प्रदेश की रोचक लोक-कथायें' भी काफी उपयोगी है।

हिमाचल में बालसाहित्य के पुरोधा पंडित सन्तराम वत्स्य और डॉ. मस्तराम कपूर रहे हैं जिन्होंने आज के समय में बाल- लेखन की नींव रखी। सन्तराम वत्स्य ने रामायण, महाभारत आदि पौराणिक ग्रंथों और सत्-पुरुषों की जीवनियों को आधार बना कर सौ से अधिक पुस्तकों का लेखन किया। इस के अलावा उन्होंने पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, देव-दानव आदि को आधार बना कर भी बहुत-सी बाल कथायें लिखीं जिन में बालकों को सदुपदेश देकर उनके जीवन-निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया गया है। डॉ. मस्तराम कपूर ने बाल कथा, बाल-नाटक, एवं 'भूत नाथ', 'सपेरे की लड़की' आदि बाल उपन्यास लिख कर बच्चों के मन में बाल- साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने का प्रयास किया।

बाल साहित्य लेखन में बहुत अच्छी पैठ बना चुके पवन चौहान की बाल कथाओं में लोक-चेतना के तत्त्व बखूबी द्रष्टव्य हैं। उन की कहानी - 'नए अंदाज में होली', जहां बुजुर्गों के प्रति आदर एवं सम्मान को संसूचित करती है, वहीं 'निखिल और पोपट' कहानी अंधविश्वास और रूढ़ियों को नकारती है तथा मासूम पोपट को पिंजरे की कैद से मुक्ति दिलाती है। इसी प्रकार 'सॉरी दोस्त' नामक कहानी में नमन और नैंसी दो भाई- बहन एक चिड़िया के बच्चे को पकड़ लेते हैं, किन्तु बाद में कोई संवेदनशील बात होने पर वो उसे छोड़ भी देते हैं। पवन चौहान की ऐसी अनेक कहानियां लोक-चेतना की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

गुलेरी बन्धुओं में स्व. डॉ. पीयूष, प्रत्यूष, अदिति एवं गिरिधर योगेश्वर सबने बाल साहित्य लेखन में अपना कर्म कौशल दिखाया है और अपने परिवेश के प्रति सजगता एवं संवेदनशीलता का परिचय दिया है। पीयूष के संग्रह - 'हमें बुलाती छुक-छुक रेल' में देश-भक्ति, प्रकृति के रूप रंग, पर्यावरण एवं पशु-पक्षियों और जीव-जन्तुओं का सजीव चित्रण मिलता है। डॉ. प्रत्यूष गुलेरी के बाल कविता संग्रह 'बाल-गीत' और 'मेरी 57

नई कलम/ कविता

कहां खो गए

कमला ठाकुर

जो आज सुबह ही आज से
अतीत हो गए...
जाने इस जहां से कहां हो गए।

अद्वितीय स्मरण शक्ति, प्रखर बुद्धि
जानदार शब्दावली, स्पष्टवादिता पूर्ण संदेश
सब निःस्तब्ध हो गए...
जाने इस जहां से कहां खो गए।

राजनीतिक-पारिवारिक एवं सामाजिक
सरोकार कौशल;
सब बीता हुआ किरदार हो गए...
जाने इस जहां से कहां खो गए।

जिंदगी की जिंदादिली
रिश्तों की आत्मीयता और
हर नजर को पहचानने
वाले हुनरवान! खुद आज;
जंग जिंदगी की हार गए...
जाने इस जहां से कहां खो गए।
जो आज सुबह ही आज से
अतीत हो गए...
जाने इस जहां से कहां हो गए।

औक्टा निकेतन, नजदीक एजीएमए स्कूल, प्रथम महिला पुलिस थाना के नीचे, फेज-III,
कंगनाधार, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 009, मो. 0 94592 76866

बाल-कवितायें' ज्यादातर शिशुगीत हैं। प्रत्यूष की बाल कथायें 'लंगड़ी बकरी' एवं 'दादी की दिलेरी' लोक चेतना को केन्द्र में रख कर ही लिखी गई है। पहली कहानी में जीव-जंतुओं के प्रति संवेदनशीलता का उपदेश बच्चों को दिया गया है। अदिति गुलेरी की कवितायें 'मेरा बचपना' और 'तौबा पढ़ाई की' बाल मनोविज्ञान को दर्शाती है। गिरिधर योगेश्वर ने भी कुछ बाल. कथायें, लिखी हैं जो बच्चों ने बहुत पसन्द की हैं।

आशा शैली, अमरदेव अंगीरस जैसे बाल साहित्यकारों की रचनाओं में भी लोक-चेतना के अंश, भरपूर विद्यमान हैं। आशा शैली के बाल उपन्यास 'कोलकाता से अण्डेमान तक' एवं 'हिमाचल-यात्रा' बच्चों के लिए काफी ज्ञानप्रद रचनायें हैं। 'कोलकाता से अण्डमान तक' मनोरंजन और जिज्ञासाओं से भरपूर है। इसे पढ़ना मानो स्वयं यात्रा का आनन्द लेने जैसा है। 'हिमाचल यात्रा' में हिमाचल की लोक-संस्कृति, लोक-जीवन और भूगोल आदि का बहुत सुन्दर वर्णन है। अमर देव अंगीरस की रचना 'घाटियों में बिखरी कथायें' में 'तीतर की बोली', 'गिरगिट और चूहा', 'बन्दर और आदमी' आदि कथायें समाज में बराबरी का व्यवहार, विचारों की भिन्नता होने पर भी सौहार्द भावना आदि लोक-चेतना के तत्त्वों से भरपूर हैं। अन्य कहानियों में भी सामाजिक मूल्य-सत्य, समता, ईमानदारी आदि को बखूबी रेखांकित किया गया है।

रत्न चन्द रत्नेश, अनन्त आलोक, शेर सिंह और राजीव त्रिगर्ती की बाल-रचनायें बच्चों को शिक्षा देने वाली और उनका भरपूर मनोरंजन करने वाली हैं। रत्नेश की बाल कथा 'चाँद के देश में' असत्य पर सत्य की विजय को दर्शाती है। इनकी एक अन्य कहानी 'नेहा का सपना' दूसरे ग्रहों से आये प्राणी ऐलियन के सौहार्द पूर्ण व्यवहार को दिखाती है। 'दादा-दादी की पढ़ाई' में एक बच्ची अपने दादा-दादी को अनपढ़ देख कर बहुत परेशान होती है। और फिर उन्हें शिक्षा के महत्त्व को बता कर उनके लिए मास्टरनी बन जाती है। अनन्त आलोक ने प्रकृति, पेड़-पौधों आदि पर अनेक बाल कथायें लिखी हैं। उनकी बाल कथा 'स्ट्राईक' में पेड़ हड़ताल पर हो जाते हैं और आक्सीजन छोड़ना बंद कर देते हैं। इस से प्राणी जगत में हाहाकार मच जाता है। इस पर पेड़ अपने प्रति दुर्व्यवहार को बन्द करने को कहते हैं। एक अन्य कहानी 'स्मार्ट कौआ' आधुनिक सोच पर आधारित है। कौआ अपने पूर्वजों की सोच से अलग एक प्लास्टिक नली से घड़े के तेल में पड़े पानी को पी लेता है। लोक-चेतना की दृष्टि से यह काफी अच्छी कहानी है। शेर सिंह की कहानी 'एक और मां' में एक युवक अपने घर न जाकर एक असहाय विधवा के घर दीवाली मनाता है। यह कहानी संवेदनशीलता का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। राजीव त्रिगर्ती की बाल कवितायें 'चुनकर तारे लाऊं', 'मामा जी', 'बादल', 'फूल से बातें', 'चोर-सिपाही खेलेंगे' हास्य रस से सराबोर है और बच्चों का खूब मनोरंजन करने वाली हैं, इनमें परस्पर प्यार- मुहब्बत, भाई-चारा आदि लोक-कल्याण की बातें गूंथी हुई मिलती हैं।

हिमाचली बाल साहित्य-लेखन काफी समृद्ध हो चुका है। अनेक बाल साहित्यकारों ने बहुत अच्छा रचना कर्म किया है, किन्तु स्थानाभाव के कारण यहां पर सभी बाल-साहित्यकारों की रचनाओं को संकेतित नहीं किया जा सकता। अन्त में यही कहना उपयुक्त होगा कि हिमाचल में बाल साहित्य का भविष्य बहुत उज्ज्वल है।

जवाहर नगर, धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश
मो. 94599 87125

निबंध

मन की चंचलता

◆ अंकुश्री

मन को एकाग्र कर ध्यानपूर्वक पूजा करने की बात धार्मिक हो सकती है। किन्तु मन अध्यात्म या धर्म तक ही सीमित नहीं है। मन की एकाग्रता से जीवन का हर क्षेत्र प्रभावित होता है। जिसका मन जितना एकाग्र रहता है, जीवन में उसे उतनी अधिक सफलता मिलती है। इच्छित कार्य पूरा नहीं हो पाने का एक बहुत बड़ा कारण मन की चंचलता है। कोई कार्य लगन और एकाग्रता से ही पूरा होता है। लेकिन चंचलता के दौरान मन किसी काम में नहीं लग पाता। मन नहीं लगना ही किसी काम में लगन नहीं होना है। इस कारण चंचल मन के स्वामी की कार्य-क्षमता उसकी बुद्धि, विद्या और शक्ति की अपेक्षा बहुत कम रह जाती है। वही व्यक्ति जब एकाग्र मन से काम करता है तो अनेक कार्यों को पूरा कर जीवन में सफलता की ओर अग्रसर हो जाता है। अध्ययनरत छात्र हों या छात्रों की देख-रेख कर उन्हें परिवार-समाज में दिशा देने वाले शिक्षक-अभिभावक, कर्मचारियों को नियंत्रण में रख कर उनसे काम लेने वाले पदाधिकारी हों या जन प्रतिनिधि के रूप में काम करने वाले सरकार के मंत्री अथवा न्यायिक गतिविधियों को संचालित करने वाले न्यायाधीश - सभी के लिये एकाग्रता आवश्यक है। जब हम काम कर रहे होते हैं तो उस समय उसी काम के उसी हिस्से के बारे में सोचने से उस काम की संपूर्णता को बल मिलता है। साधक हों या वैज्ञानिक - उनकी साधना और शाध का प्रतिफल आज हम सभी भोग रहे हैं। साधकों और वैज्ञानिकों ने अपनी साधना और शोध के लिये जो कुछ भी किया, वह उनकी एकाग्रता से ही संभव हो पाया है। मन को केन्द्रित किये बिना कोई कार्य ढंग से संपन्न नहीं हो पाता।

विद्यालय में सैकड़ों छात्र पढ़ते हैं। सबों को एक माहौल में विद्यालय के अंदर रखा जाता है। नामांकन के समय भी, आरक्षित पदों के उम्मीदवारों को छोड़कर, उन्हें एक समान प्रवेश-परीक्षा से गुजरना होता है। फिर भी विद्यालय में या विद्यालय की पढ़ाई पूरी कर निकलने पर सभी छात्रों की बौद्धिक क्षमता और शैक्षणिक ज्ञान में समानता नहीं पायी जाती। ऐसा कुछ तो उनकी बौद्धिक क्षमता के कारण होता है। मगर अधिकतर मामलों में एकाग्रता के अभाव अथवा मन की चचंलता के कारण ऐसा होता है।

इसी तरह कार्यालय में भी एक ही स्तर के कई कर्मचारी कार्यरत होते हैं। सबों की योग्यता समान रहने और कार्य करने के लिये मिले समान अवसर के बावजूद कार्य की जानकारी और कार्य-सम्पादन की उनमें समान क्षमता नहीं पायी जाती। इसका कारण सिर्फ उनकी बौद्धिक क्षमता नहीं, बल्कि मन की चंचलता है। क्योंकि बौद्धिक क्षमता कम रहने पर भी मन लगा कर सीखने से काम करने का ढंग आ जाता है और लोग काम कर लेते हैं। जिसका मन जितना अधिक चंचल होता है, वह अपनी बौद्धिक क्षमता का उतना ही कम उपयोग कर पाता है। चंचल मन के कारण बुद्धि का उपयोग एक खास विषय के लिये नहीं हो पाता। एक विचार अपना रूप ले भी नहीं पाता कि उसमें दूसरे अनेक विचार समाने लगते हैं। विचारों के गुंफन से कोई एक विचार अपने सही रूप में प्रतिफलित नहीं हो पाता। इससे कार्य- संपादन प्रभावित होता ही है, व्यक्ति की पहचान भी नहीं बन पाती। सच कहा जाये तो किसी गृहस्थ का जीवन तभी सफल माना जाता है, जब परिवार, समाज या अन्य किसी क्षेत्र में उसकी पहचान हो।

जिसका मन जितना अधिक चंचल होता है, वह अपनी बौद्धिक क्षमता का उतना ही कम उपयोग कर पाता है। चंचल मन के कारण बुद्धि का उपयोग एक खास विषय के लिये नहीं हो पाता। एक विचार अपना रूप ले भी नहीं पाता कि उसमें दूसरे अनेक विचार समाने लगते हैं। विचारों के गुंफन से कोई एक विचार अपने सही रूप में प्रतिफलित नहीं हो पाता। इससे कार्य-संपादन प्रभावित होता ही है, व्यक्ति की पहचान भी नहीं बन पाती। सच कहा जाये तो किसी गृहस्थ का जीवन तभी सफल माना जाता है, जब परिवार, समाज या अन्य किसी क्षेत्र में उसकी पहचान हो।

मन की चंचलता के कुछ कारण भी हो सकते हैं। ये कारण पारिवारिक, सामाजिक या राष्ट्रीय भी हो सकते हैं। गरीबी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य, भ्रष्टाचार, आचरणहीनता आदि से मन कुंठित हो जाता है। मन सोचता है कि गलत लोग आगे बढ़ते दिखायी दे रहे हैं और सही लोग परेशानियों में हैं। ऐसी सोच से भी मन के विचार बिखरने लगते हैं और विचारों पर विचार आने शुरू हो जाते हैं। यह स्थिति सिर्फ लिखने-पढ़ने वालों तक ही सीमित नहीं है। हर क्षेत्र के लोग

इससे परेशान रहते हैं। भले इसका आभास सभी को नहीं हो पाता। ऐसी ही अनेक स्थितियां हैं, जो मन को चंचल कर देती हैं। देशभक्तों ने अपनी शहादत देकर देश को स्वतंत्र कराया और अग्रणी पंक्तियों के अधिकतर लोग आज देशभोगी हो गये हैं। लेकिन क्या आज भी समाज में देशभक्ति से परिपूर्ण लोग नहीं हैं?

आज भी देश के लिये शहीद होने वालों की कमी नहीं है। देश की आंतरिक और बाहरी सुरक्षा के लिये शहादत की परम्परा बरकरार है। शहादत कोई घटना नहीं, बल्कि मन की दृढ़संकल्पता का परिणाम है। सुख-सुविधाएं भोगना और उसे जुटाने के लिये परेशान रहना आम आदमी का शगल हो गया है। पारिवारिक और सामाजिक अनेक सुख-सुविधाओं की तलाश करने और उसे नहीं पा सकने के कारण मन का तनावग्रस्त हो जाना आम बात है। आसपास के लोगों की तुलना में वहां तक नहीं पहुंच पाने के कारण मन में ईर्ष्या, द्वेष, दुर्भावना आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इच्छित की प्राप्ति के बाद लालसा समाप्त होने के बदले और बढ़ जाती है। इच्छित नहीं मिलने से मन खिन्न रहने लगता है और हिनता की भावना उत्पन्न हो जाती है। इस तरह शारीरिक और भौतिक सुख-सुविधाओं की तलाश में मन तनावग्रस्त होकर अस्वस्थ हो जाता है। अस्वस्थ मन अधिक चंचल रहने लगता है तथा इससे अस्वस्थता और अधिक बढ़ जाती है। मन और स्वास्थ्य का पारस्परिक संबंध बहुत गहरा है।

गृहस्थ जीवन में सुख-सुविधाएं जुटाना हर किसी का कर्त्तव्य है। लेकिन इस हेतु शरीर को इतना अधिक नहीं खटा देना चाहिये कि युवावस्था बीतने से पूर्व ही शरीर अशक्त होकर बूढ़ा हो जाये। ऐसी स्थिति में सारी सुख-सुविधाएं रखी रह जाती हैं और उनका उपभोग करना दुभर हो जाता है। आज के अनेक युवक रक्तचाप, मधुमेह, हृदयरोग आदि से ग्रसित हैं। ऐसे लोग तनाव में जीते हैं और उनमें से कुछ लोग धीरे-धीरे मानसिक रूप से भी अस्वस्थ हो जाते हैं। इससे उनकी मानसिक चंचलता बढ़ जाती है और वे अपनी किसी निश्चित सोच से विचलित हो जाते हैं तथा किसी काम को सही और अंतिम रूप नहीं दे पातें अथवा ऐसा करने में उन्हें सामान्य से कई गुणा परेशानियां झेलनी पड़ती हैं।

कुछ लोग मानसिक चंचलता बढ़ने के कारण तनावग्रस्त हो जाते हैं, जबकि कुछ लोगों की मानसिक चंचलता तनावग्रस्त रहने के कारण बढ़ती है। स्थिति चाहे जो भी हो, किन्तु एक बात तय है कि मानसिक रूप से चंचल रहने पर व्यक्ति का विकास बाधित हो जाता है। वह योजनाएं तो बहुत बना सकता है, किन्तु उनका क्रियान्वयन नहीं कर पाता। मन की चंचलता कम करने में व्यक्ति की आदतों में सुधार आवश्यक है। काल्पनिक परेशानियों से घबराना और उसके निदान के लिये खयाली पुलाव पकाते रहने की आदतों को बदलना भी आवश्यक है। कुछ लोग अपनी संतान की सुख-सुविधाएं जुटाने में इतना मशगूल रहते हैं कि स्थिति बदलने का उन्हें पता ही नहीं चल पाता और जब तक पता चलता है, तब तक सिर से पानी गुजर चुका होता है।

अध्यात्म में जगह-जगह मन की चंचलता को रोकने की बात कही गयी है। इसलिये आध्यात्मिक व्यक्ति शीघ्र तनावग्रस्त नहीं हो पाता और मानसिक चंचलता भी उसमें कम पायी जाती है। अध्यात्म का एक प्रमुख बिन्दु है मन को केन्द्रित करना। इसके लिये ध्यान लगाया जाता है। आसन पर सीधे बैठ कर मन को केन्द्रित करने का लाभ स्पष्ट दिखायी देता है। ध्यान ही नहीं, पूजा से भी मन को शांति मिलती है और एकाग्रता बढ़ती है। मन की एकाग्रता जीवन की वास्तविक उपलब्धि है, क्योंकि हम समझ चुके हैं कि चंचल मन का स्वामी अपने जीवन में अपेक्षित कार्य नहीं कर पाता। संसाधनों की उपलब्धता की अपेक्षा उसे जीवन में उपलब्धि कम मिल पाती है। इसलिये उपलब्धता के अनुसार कुछ समय पूजा और आध्यात्मिक चिंतन में लगाना अनिवार्य है।

8, प्रेस कॉलोनी, सिदरौल, नामकुम,
रांची, झारखण्ड-834 010, मो0 8809972549

अध्यात्म में जगह-जगह मन की चंचलता को रोकने की बात कही गयी है। इसलिये आध्यात्मिक व्यक्ति शीघ्र तनावग्रस्त नहीं हो पाता और मानसिक चंचलता भी उसमें कम पायी जाती है। अध्यात्म का एक प्रमुख बिन्दु है मन को केन्द्रित करना। इसके लिये ध्यान लगाया जाता है। आसन पर सीधे बैठ कर मन को केन्द्रित करने का लाभ स्पष्ट दिखायी देता है। ध्यान ही नहीं, पूजा से भी मन को शांति मिलती है और एकाग्रता बढ़ती है। मन की एकाग्रता जीवन की वास्तविक उपलब्धि है, क्योंकि हम समझ चुके हैं कि चंचल मन का स्वामी अपने जीवन में अपेक्षित कार्य नहीं कर पाता। संसाधनों की उपलब्धता की अपेक्षा उसे जीवन में उपलब्धि कम मिल पाती है। इसलिये उपलब्धता के अनुसार कुछ समय पूजा और आध्यात्मिक चिंतन में लगाना अनिवार्य है।

शोध लेख

आधुनिक युग में लोक साहित्य की प्रासंगिकता

◆ डॉ. जितेंद्र कुमार

वर्तमान समय में जहां एक ओर मनुष्य ऊंचाइयों की बुलंदियों को छू रहा है, वहीं दूसरी ओर अपनी सभ्यता व संस्कृति को भूलता जा रहा है। ऐसे समय में जहां तकनीक के बिना मानव जीवन अधूरा माना जाता है, लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है। लोक साहित्य आज के वैज्ञानिक युग में उतना ही महत्त्व रखता है, जितना प्राचीन समय में रखता था।

राष्ट्र कोई भी हो, उसकी संस्कृति को सही रूप में उसके लोक साहित्य में देखा जा सकता है। समाज विशेष के प्राचीनतम समय से नवीनतम समय की परम्पराओं, मर्यादाओं और मान्यताओं को जानने के लिए लोक साहित्य एक विश्वसनीय और मान्य स्रोत एवं साधन है। लोक साहित्य आदिकाल से लेकर आज तक अलिखित रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप में हम तक पहुंचा है। लोक साहित्य वास्तव में लोक और साहित्य दो शब्दों के योग से बना है, जिसका वास्तविक अर्थ लोक का साहित्य। लोक साहित्य अंग्रेजी के 'फोकलिटरेचर' का अनुवाद है। लोक साहित्य की मूल जड़ें समाज में ही विद्यमान है। निश्चित रूप से कह सकते हैं कि मानव की उत्पत्ति के साथ-साथ ही लोक साहित्य का उद्‌भव हुआ है। मानव के भाव, विचार, क्रिया-कलापों की अभिव्यक्ति से ही लोक साहित्य की उत्पत्ति हुई। ''यह एक मौखिक अभिव्यक्ति है, जो भले ही किसी व्यक्ति ने गढ़ी हो, पर आज जिसे सामान्य लोक समूह अपना मानता है और जिसमें युग-युगीन वाणी साधना समाहित रहती है, इसमें लोक मानस प्रतिबिम्बित रहता है।''[1] विद्वानों ने लोक साहित्य के लिए अनेकों पर्यायी शब्दों का चयन किया है, जिनमें फोक-लिटरेचर, जन साहित्य, ग्राम साहित्य, लोक वार्ता आदि प्रमुख है। इसमें समाज के भोगे हुए आचार-विचार, रीति-रिवाज, खान-पान, सुख-दुःख, परम्पराओं, मान्यताओं और आदर्शों आदि की स्पष्ट झांकी दृष्टिगोचर होती है। लोक साहित्य के विषय में राहुल सांकृत्यायन का कहना है, ''सभ्यता के प्रभाव से दूर रहने वाली, अपनी समाजावस्था में वर्तमान जो निरक्षर जनता है, उसकी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद्, जीवन-मरण, लाभ-हानि, सुख-दुःख आदि की अभिव्यंजना जिस साहित्य में होती है उसे ही लोक साहित्य कहते हैं, इस प्रकार लोक साहित्य जनता का वह साहित्य है जो जनता द्वारा ही कहा गया है।''[2] लोक साहित्य का क्षेत्र बहुत व्यापक है, साधारण जनता का गाना, हंसना, रोना, खेलना-कूदना आदि जिन शब्दों में अभिव्यक्त होता है, वह सब कुछ लोक साहित्य की परिधि में आ जाता है। इसमें साधारण लोक मानस की भावनाओं का स्पष्ट एवं स्वच्छंद वर्णन रहता है। ''लोक साहित्य समस्त जातियों की परम्पराओं, रीति-रिवाजों, रुढ़ियों, अन्धविश्वासों, लोकगीतों, लोककथाओं, मुहावरों, कहावतों तथा उन मान्यताओं का साहित्य है जो मौखिक रूप से बौद्धिक सम्पत्ति के रूप में एक मनुष्य से दूसरे को किसी कृतज्ञता के बिना प्राप्त होते हैं और जिनका संरक्षण करना वह अपना कर्तव्य समझता है तथा जिन्हें वह अगली पीढ़ी को अपनी अर्जित सम्पत्ति के रूप में देता चला जाता है।''[3] सारांशतः हम कह सकते हैं कि ग्रमीण जनता के चिरकालीन अनुभवों, उनके सुख-दुख तथा हर्ष-विषाद् से उत्पन्न वह सरल, सहज एवं मौखिक अभिव्यक्ति है, जो किसी शिष्ट भाषा में न होकर साधारण बोल-चाल की भाषा में होती हैं।

आज का युग आधुनिकता का युग है, भारत प्रत्येक क्षेत्र में नई-नई तकनीकों का प्रयोग कर विकास के चरम बिन्दु पर पहुंच रहा है। नई-नई तकनीकों ने मानव जीवन को आरामदायी बना दिया, लेकिन विकास के इस दौर में कुछ न कुछ पीछे छूटता जा रहा है जो है आपसी मेल-जोल की भावना, आपस में प्रेमपूर्वक जीवन व्यतीत करने की भावना, त्याग व बलिदान जैसे भावों को प्रसारित करने की भावना और अपनी सभ्यता व संस्कृति पर गर्व करने की भावना। वर्तमान समय में जहां एक ओर मनुष्य ऊंचाइयों की बुलंदियों को छू रहा है, वहीं दूसरी ओर अपनी

सभ्यता व संस्कृति को भूलता जा रहा है। ऐसे समय में जहां तकनीक के बिना मानव जीवन अधूरा माना जाता है, लोकसाहित्य की विभिन्न विधाओं का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है। लोक साहित्य आज के वैज्ञानिक युग में उतना ही महत्त्व रखता है, जितना प्राचीन समय में रखता था। लोक साहित्य के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए सन्तराम अनिल का कहना है, ''लोक साहित्य एक गतिशील विज्ञान है, इसमें व्यक्त परम्पराएं काल प्रवाह में बह नहीं जाती, वे नये-नये रूपों में प्रकट होती है। समय विशेष में लोक साहित्य का जन्म अवश्य होता है पर उसके पश्चात् वह सार्वकालिक, सार्वदेशिक एवं सार्वजनिक बन जाता है। लोक साहित्य को हम उस वृक्ष के समान मान सकते है, जिसकी जड़ें बहुत गहरी धंसी हुई है, पर वह निरंतर रूप से नई शाखाएं, नई पत्तियां और नए फूल प्रसूत किया करता है। विश्व और मानव की रहस्यमयी पहेली को सुलझाने के लिए तथा समाज के आन्तरिक विधान के तन्तुओं की व्याख्या करने के लिए लोक साहित्य का सांगोपांग अध्ययन परमावश्यक है।''[4] किसी भी देश के लोक साहित्य की प्रासांगिकता उसके महत्व से दृष्टिगोचर होती है।

किसी भी देश या प्रदेश के राष्ट्रीय जीवन में लोक साहित्य का महत्त्व अत्यधिक है, क्योंकि लोक साहित्य दर्पण है, जिसमें समाज विशेष में रहने वाले मानस के सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है। अगर कहा जाए कि लोक साहित्य से राष्ट्रीय जीवन को प्रगति और गति प्राप्त होती है तो यह कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। लोक साहित्य में लोकमानस के हृदयोद्गारों को सामूहिक अभिव्यक्ति मिलती है। लोक साहित्य के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है, ''लोक साहित्य का महत्त्व बहुविध है। इस मौखिक साहित्य में धर्म, समाज, सदाचार सम्बन्धी अमूल्य सामग्री भरी पड़ी है। धर्मगाथा, नृविज्ञान, जाति विज्ञान, भाषा विज्ञान, इतिहास, भूगोल, संस्कृति आदि क्षेत्रों में लोकसाहित्य की महत्ता उल्लेखनीय है।''[5] आज के आधुनिक युग में लोक साहित्य के महत्व को निम्न शीर्षकों के आधार पर समझा जा सकता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्व

किसी भी देश या राज्य के प्राचीन रूप को जानने का मूल साधन लोक साहित्य है, जिसमें अनेक ऐतिहासिक सूत्र सुरक्षित है। इतिहास के जानकारों को लोक साहित्य द्वारा इतिहास सम्बन्धी अमूल्य सामग्री प्राप्त होती है, जो मानवीय ज्ञान को पुष्ट कर मानव को ज्ञानवान बनाती है। जहां तक लोक साहित्य के ऐतिहासिक महत्त्व का प्रश्न है तो हम कह सकते हैं कि उसमें ऐतिहासिकता का पुट विद्यमान रहता है। लोक साहित्य की लोक कथाएं, लोकगीत, लोकगाथाएं आदि विधाएं इस दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। इनके अनुशीलन से विलुप्त व विस्तृत इतिहास की कड़ियों को पुनः जीवित या जोड़ा जा सकता है। अनेक लोक गाथाओं के आधार पर इतिहास की प्राचीन सामग्री प्राथमिक सामग्री एकत्रित की जा सकती है। लोक साहित्य के ऐतिहासिक महत्त्व के संबंध में रामविलास शर्मा का कथन है, ''लोक साहित्य में अनेक ऐतिहासिक वृतों का ऐसा प्रमाणिक लेखा-जोखा प्राप्त होता है कि यदि उसे एक सूत्र में पिरोकर समन्वय स्थापित करें तो भारत का एक नया एवं प्रमाणिक सांस्कृतिक इतिहास लिखा जा सकता है।''[6] अतः आज का युग तकनीक का है, इसमें लोक साहित्य के अंतर्गत अनेक लोक कथाओं, लोकगाथाओं, लोकगीतों तथा स्थानीय घटनाओं पर आधारित लोकोक्तियों में ऐसी सामग्री प्रचुर मात्रा में है, जो इतिहास के लिए विशेष महत्त्व की सिद्ध हो सकती है। उदाहरण के लिए मलिक मुहम्मद कृत 'पद्मावत्' जो राजस्थान की एक प्रमुख लोकगाथा है, जिसमें पद्मावती के नारीत्व व सतीत्व की विशेष महत्ता दी गई है। इसे भक्तिकाल की प्रमुख लोकगाथा व महाकाव्य का दर्जा हासिल है, लेकिन समय के प्रवाह से लोग इसे लगभग भूल ही चुके थे, परन्तु जैसे ही गत वर्ष इस महाकाव्य का फिल्मीकरण हुआ इसे एक नई तकनीक के साथ प्रस्तुत किया तो इसका परिणाम यह हुआ कि आज बच्चा-बच्चा पद्मावती व रत्नसेन की कहानी को जानता है। इसी प्रकार हिमाचल के प्रत्येक जिले, प्रत्येक शहर, प्रत्येक गांव में एसी अनेक लोकगाथाएं भरी पड़ी है, जिनमें रामपुर की सती चैंखी की गाथा, चम्बा रियासत की रानी सुनयना के बलिदान की गाथा जिसका वर्णन इस प्रकार है -

सुनिया सेजा राणिया जो सुपना जे होया ना
कुल्हा सपने च आयी, राणिया जो कुल्हा सपने आईना।
वड्डिया बलिया मंगदी भाइयो वड्डिया बलिया मंगदी ना,
हुक्म ता देया राजा जी मैं कुल पुषणा जाणा ना।
सद्दा तो कहारा जो भाइयो, कस्सा मेरा डोला ना।
कुल्ह पुजणा जाणा राणियां ने कुल्ह पुजणा जाणा।

चम्बयाली रानी के बलीदान की लोकगाथा अपनी मार्मिकता व ऐतिहासिकता के लिए प्रसिद्ध है। इसी के साथ-साथ हिमाचल में बहुत सी ऐतिहासिक लोकगाथाएं, लोकगीत, लोक कथाएं व लोक नाट्य मौजूद है जो ऐतिहासिक दृष्टि से अपना विशेष महत्व रखते हैं। जिनके अध्ययन से हम नए ऐतिहासिक ज्ञान का अर्जन कर सकते हैं।

सामाजिक दृष्टि से महत्त्व

लोक साहित्य का महत्त्व सामाजिक अध्ययन के लिए नितांत आवश्यक है। लोक साहित्य और समाज का परस्पर घनिष्ट संबंध है। लोक और समाज परम्परालम्बी है, किसी भी युग में लोक के बिना समाज व समाज के बिना लोक नहीं हो सकता। लोक साहित्य में सामाजिक जीवन का सच्चा एवं स्वाभाविक चित्रण मिलता है, क्योंकि सामाजिक परिवेश को व्यक्त करना ही लोक साहित्यकार का उद्देश्य रहता है।

लोक साहित्य के सामाजिक महत्व पर प्रकाश डालते हुए श्रीराम शर्मा लिखते हैं, ''किसी भी समाज में होने वाले सामाजिक कार्य-व्यवहारों, प्रथाओं, विश्वासों एवं परम्पराओं का जीवंत चित्र लोक साहित्य के माध्यम से ही प्राप्त होता है।''[7] लोकसाहित्य की विभिन्न विधाओं में मनुष्य के रहन-सहन, खान-पान, आचार-विचार, रीति-रिवाज, मां की ममता, भाई-बहन का प्यार, सास-बहू की नोंक-झोंक का सजीव चित्रण देखने को मिलता है। आज के तकनीकी युग में भारत जहां एक ओर विकास के उच्च शिखर पर जा पहुंचा है, वहीं दूसरी ओर अपने सांस्कृतिक, सामाजिक मूल्यों को खोता जा रहा है। आज मनुष्य के पास सुख साधन की सभी वस्तुएं उपलब्ध है। लेकिन फिर भी वह अशांत है। ''लोक गीतों में नैतिकता शील, अनुशासन एवं अनेक उच्चादर्श व्यक्त हुए है, अनेक धार्मिक मान्यताओं, विश्वासों एवं नैतिक मूल्य की पुष्टि और उसका संधान, गीतों, गाथाओं और कथाओं से मिलता है। वस्तुतः लोक साहित्य अपनी सहजता से श्रोता के हृदय पर सदाचार की जो रेखा अंकित कर देता है। उसका महत्व किसी भी आचार संहिता से अधिक होता है।''[8] अतः कह सकते हैं कि लोकसाहित्य की विभिन्न विधाओं में ऐसी अनेकों ही लोक कथाएं, गाथाएं, गीत विद्यमान है जो मनुष्य के अन्दर अनेक जीवन मूल्य आत्मसात कर सकते है, आवश्यक है व्यक्त लोक शैली से समय निकाल कर इन्हें जानने की कोशिश करना।

सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्व

लोक साहित्य का सांस्कृतिक पक्ष बहुत है। लोक संस्कृति का जैसे सहज और अकृत्रिम प्रतिबिम्ब हमें लोक साहित्य में मिलता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। लोक साहित्य के माध्यम से किसी राष्ट्र की परम्परा का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है, ''किसी भी समाज की संस्कृति उसके संस्कारों का स्वरूप है, जो विशिष्टताएं हमें संस्कारों से प्राप्त हुई हैं उन्हीं का समन्वित रूप संस्कृति है।''[9] लोक साहित्य ही संस्कृति की अमूल्य निधि है। लोक साहित्य का क्षेत्र बहुत व्यापक रहा है। मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कारों, कार्य-विधानों का चित्रण इसमें देखा जा सकता है। संस्कारों का महत्त्व इसलिए भी माना गया कि ये संस्कार धर्म के अभिन्न अंग है। मानुष जीवन संस्कारों से बंधा है। आज मध्य भारतीय संस्कृति को छोड़ विदेशी संस्कृति का अनुसरण कर रहा है और स्वयं को श्रेष्ठ मान रहा है। विदेशी खान-पान, विदेशी पहनावा, विदेशी भाषा और यहां तक कि विदेशी समारोह जिन्हें क्लबों का नाम दिया जा रहा है। विदेशी संस्कृति का अन्धानुकरण के कारण अपना जीवन स्तर तो ऊंचा कर लिया है, लेकिन नैतिक रूप से पतन ही देखने को मिल रहा है। इतिहास गवाह है कि जो देश नैतिक रूप से पंगु हो, उस देश को विनाश की ओर जाने से कोई नहीं रोक सकता । अतः इस तकनीकी युग में मनुष्य का नैतिक पतन रोकने के लिए भारतीय संस्कृति को अपनाना अवश्य है और भारतीय संस्कृति को अपनाने के लिए अपनी सभ्यता व संस्कृति को जानना आवश्यक है, जो लोकसाहित्य में विद्यमान है।

आज के आधुनिक युग में लोक साहित्य का महत्व बहुत है, जिनमें आर्थिक व धार्मिक भी विशेष स्थान रखते हैं। लोक साहित्य में लोक मानस के आर्थिक पक्ष का बहुत सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है। लोक साहित्य में ऐसे अनेक लोकगीत, लोकगाथाएं हैं, जिनमें वहां की आर्थिक समृद्धता का चित्रण देखने को मिलता है। लोक साहित्य में इस प्रकार का चित्रण जीवन में कर्मठता तथा श्रम के महत्व का प्रतिपादन करता है। लोक साहित्य में जहां एक ओर आर्थिक व्यवस्था का चित्रण यथार्थ की भूमि पर टिका है, वहीं दूसरी ओर समाज में आर्थिक संतुलन बनाए रखने की भावना उसमें अवश्य निहित होती है। लोक साहित्य में धार्मिक भावनाओं के कारण ही अधिकांश जन समूह उसके प्रति रुचि रखता है। अनेक लोकगीतों और लोक कथाओं में संसार की अनित्यता तथा मानव जीवन की क्षणभंगुरता का सन्देश देखने को मिलता है, जो मनुष्य को एक पवित्र व सादा जीवन जीने का संकेत करता है तथा परोपकार की भावना उजागर करता है। ''धर्म की शिक्षा देने में लोककथाओं का महत्व सराहनीय है, हिन्दू ग्रंथों के महत्व तथा अनेक विषयों पर भी लोकगीत प्रकाश डालते हैं।''[10] सम्भवतः स्थानीय जनमानस स्थानीय देवी-देवताओं से इतना डरता है कि वह चाह कर भी कोई गलत कार्य नहीं कर सकता। आज के आधुनिक युग में मनुष्य धीरे-धीरे नास्तिक बनता जा रहा है। आवश्यकता है उन्हें अपने धार्मिक विचारों को आत्मसात करने की, जो लोकसाहित्य के द्वारा सम्भव है। इसी के साथ-साथ लोक साहित्य का भाषाशास्त्र सम्बंधी भी है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से लोक साहित्य का महत्त्व सर्वाधिक है। भाषा शास्त्री के लिए लोक साहित्य एक अमूल्य निधि है। भाषा के प्राचीन रूप को जानने के लिए लोक साहित्य के माध्यम की आवश्यकता पड़ती है। वर्तमान में आवश्यकता है लोक साहित्य को शिष्ट साहित्य में परिवर्तित करने की ताकि यह आने वाली पीढ़ी के भविष्य के लिए सुरक्षित रह सके।

उपसंहार

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि किसी भी देश की संस्कृति को वहां के लोक साहित्य के द्वारा ही जाना जा सकता है। लोक साहित्य अंग्रेजी के फोकलिटरेचर का पर्याय है, जिसका अभिप्राय एक ऐसे साहित्य से है, जो मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी आगे से आगे बढ़ता रहता है। लोक साहित्य के लिए विद्वानों ने अनेक ही शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे जन साहित्य, ग्राम साहित्य और लोकवार्ता आदि। लोक साहित्य का क्षेत्र बड़ा ही व्यापक होता है। मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी क्रिया कलाप लोक साहित्य की परिधि में आते हैं। किसी भी देश या

बाल कविता
झरना जल

चैतन्य

कल-कल-कल
जंगल-जंगल
बहता हर पल
झरना का जल।
छल-छल-छल
छलकता अविरल
समतल-समतल
झरना का जल
हलचल-हलचल
धोता गरल
भूतल-भूतल
झरना का जल।
निखारता पुष्प-दल
सींचता पद-तल
शीतल-शीतल
झरना का जल।
करता मंगल
जीव-जंतुओं का संबल
चंचल-चंचल
झरना का जल।
मन से सरल
तन से कोमल
निर्मल-निर्मल
झरना का जल।

दानाउली, पो. कोटगढ़, नोवामुंडी बाजार
जिला पं. सिंहभूम (झारखंड)-833218
मो. 0 92794 85063

समाज की लोक संस्कृति और सभ्यता का वास्तविक स्वरूप लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं में देखा जा सकता है। आज के तकनीकी युग में देश दिन दोगुनी रात चौगुनी तरक्की कर रहा है, लेकिन विकास के इस दौर में मनुष्य, मनुष्य से डरता जा रहा है। मनुष्य के मध्य आपसी प्रेम व भाईचारे की भावना समाप्त होती जा रही है। बिना मतलब कोई किसी से भी बात करने को राजी नहीं है। हम अपनी ही सभ्यता व संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। ऐसे समय में लोक साहित्य का महत्त्व बहुत ज्यादा है। लोक साहित्य जहां हमारे उस इतिहास का गवाह है जो पुस्तकों में उपलब्ध नहीं हो पाया है। वहीं समाज के विकास में तो इसकी भूमिका सराहनीय है। लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं में लोक कथाएं, लोकगाथाएं, लोकनाटक उपलब्ध है जो मानव में मानवीयता का पाठ पढ़ाते हैं और आपसी प्रेम व भाईचारे की भावना का विकास करते हैं, जिसकी आज महती आवश्यकता है। वर्तमान समय में भारतीय, पाश्चात्य संस्कृति का अन्धानुकरण कर रहे हैं, जिसका परिणाम यह हो रहा है कि हमारी नई पीढ़ी अपने संस्कारों को भूलकर मूल्यहीन बनती जा रही हैं। अतः लोक साहित्य की विधाओं में वह शक्ति है कि जिससे मनुष्य प्राचीन भारतीय जीवन मूल्य को अपने जीवन में आत्मसात् कर सके।

लोक साहित्य का सांस्कृतिक पक्ष भी बहुत व्यापक है। मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक के विभिन्न संस्कारों का चित्रण लोक साहित्य के अन्तर्गत देखा जा सकता हैं आज के आधुनिक युग में लोक साहित्य का आर्थिक व धार्मिक महत्त्व भी विशेष है। भाषा के प्राचीन रूप को जानने के लिए भी लोक साहित्य के माध्यम की आवश्यकता पड़ती है। लोक साहित्य का जितना महत्त्व मानव सभ्यता के आरम्भ के समय था, उतना ही महत्व आज के तकनीकी युग में भी है। जबकि हमारी आज की वर्तमान पीढ़ी ऐसे साहित्य से बिलकुल अनभिज्ञ है। आवश्यकता है लोक साहित्य को सुरक्षा प्रदान कर इसे जानने की। ताकि हमारी भावी पीढ़ी को हम एक अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर सौंप सके और उनके अन्दर जो इन्सानियत की भावना समाप्त होती जा रही है उसे सुरक्षित रख सके।

सहायक आचार्य (हिन्दी)
राजीव गांधी राजकीय महाविद्यालय चौड़ा मैदान (कोटशेरा)
शिमला-171004, मो. 0 94181 87957

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी, सं. 2020 पृ. 24
2. राहुल सांकृत्यायन, हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 1961, पृ. 16
3. वंशी राम शर्मा, किन्नर लोक साहित्य, ललित कला प्रकाशन, बिलासपुर, 1976, पृ. 34
4. सन्तराम अनिल, कन्नौजी लोक साहित्य, अभिनव प्रकाशन दरियागंज, दिल्ली, 1975, पृ. 32
5. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य स्वरूप और मूल्यांकन, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1997, पृ. 99
6. रामविलास शर्मा, लोक साहित्य का लोक तत्व, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, सं. 2003
7. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य स्वरूप और मूल्यांकन, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1997, पृ. 100
8. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य का सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 2004, पृ. 47
9. शिवकुमार उपमन्यु, संस्कार गीत, हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी शिमला, 1989, पृ. 5
10. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य स्वरूप और मूल्यांकन, निर्मल पब्लिकेशन, 1997, पृ. 14

शोध लेख

तकनीकी युग में साहित्य की सार्थकता

◆ सुरिता देवी

भाषा अभिव्यक्ति के दो सशक्त माध्यमों, लेखन और प्रकाशन में जब तक विकसित तकनीक का प्रचार नहीं था, तब तक भी साहित्य अपनी मूल सोद्देश्यता में उतना ही कारगर था, जितना कि आज के इस तकनीकी युग में।

तकनीक ने साहित्य की चिन्तनशीलता, उसकी मूल्यवत्ता, उसकी व्यापकता, उसकी प्रभावविष्णुता और वैश्विकता को किसी दिक्-छोर से कमतर नहीं किया हैं। अपितु उसकी हितैषी भावना को बलवत्तर ही किया हैं। साहित्य अपनी कल्याणकारी भावना में सब प्रकार से श्रेष्ठ हैं।

युग चाहे कोई भी हो अथवा समय की जैसी भी गति हो, यहां मानवीय संस्कारों और मूल्यों की सत्ता सर्वदा अग्रणी ही रही हैं। यह किन्हीं भी नियमों अथवा राजनियमों की चाबुक से अभिप्रेरित नहीं होता, अपितु इसकी गति सर्वथा स्वतन्त्र और सोच अबाध होती हैं। अभिप्सा अभीप्सा

नेपोलियन कहा करते थे कि ''दुनिया में दो ही ताकतें है- तलवार और लेखनी। परन्तु तलवार सदा, लेखनी से हारी हैं।''[1]

आज तकनीक भले ही साहित्य के सामने चुनौती की तरह खड़ी हो, किंतु तकनीक सदा साहित्य को, अभीप्साओं को प्रकारान्तर से स्थापित भी करती है। तकनीकी युक्तियां साहित्य के संवर्धन, उसके प्रचार, प्रकाशन और उपलब्धता में एक बड़े उद्योग का कार्य करती हैं।

मानवता एक सार्वभौम संस्कृति है। जो साहित्य की एक मूल्यवान और अपरिहार्य भावना हैं। सत् साहित्य और उदार संस्कृतियां सदा गतिशील होती हैं। उसके समक्ष चाहे तकनीक की चुनौती हो या आक्रांताओं की बाधाएं। साहित्य का अस्तित्व और संस्कृतियों की सहनशीलता, उन्हें सदा बचाए रखती हैं।

प्रेमचन्द जी ने साहित्य के सन्दर्भों पर विमर्श करते हुए कहा है कि साहित्य हमारे जीवन को स्वाभाविक और स्वाधीन बनाता है। साहित्य का काम हृदय को योग करना हैं। और यह योग ही साहित्य का अन्तिम लक्ष्य है। साहित्य को शिव, सुन्दर और सत्य कहा गया हैं।

बाबू गुलाबराय ''राजनीति के बदले, संस्कृति को मनुष्य के हृदय के अधिक निकट मानते है।''[2] मनुष्य को दूसरों के प्रभाव, आतंक और बल से डरना नहीं चाहिए। असफलताएं जीवन को पुनर्जीवन देती हैं। स्वामी विवेकानन्द इन्हें संघर्षों की ठोस भूमि मानते थे। इन्हें ये आत्मोद्वार और आत्मसंशोधन की प्रक्रियाएं कहते थे।

आज तकनीक का युग है। वर्तमान में तकनीक ने सभी क्षेत्रों में अपना वर्चस्व स्थापित किया है। आज साहित्य अपने प्रचार, प्रसार, प्रकाशन और मुद्रणादि में एक नई तकनीक के सुन्दर और प्रभावपूर्ण तकनीक के अधीन हैं। वह समय और प्रस्तुति में भी तकनीक के वश में है, किन्तु साहित्य की मूल चेतना, मूल भावना, आज भी साहित्य की सोच में निहित है। कोई भी तकनीक, कैसी भी तकनीक, चिन्तक की सोच में मोच नहीं ला सकती। उसकी अपनी सत्यता और मूल्यसंहिता को हानि नहीं पहुंचा सकती है। परिणामस्वरूप कोई भी नया तकनीकी अविष्कार, नई प्रक्रिया, साहित्य की मूल भावना को ही पुष्ट करने में सहायक होते हैं। नयी तकनीकी उपलब्धि किसी भी रूप में हो, उपकार ही करती है, हां वह साहित्य की स्वाभाविक चिन्तन शैली में कोई अन्तर नहीं लाती हैं।

साहित्य मानवीय संदर्भों, संबंधों को सर्वाधिक प्रमाणिक रूप में समझने में सहायक होता हैं। संवेदनात्मक होने के कारण संस्कृति के प्रसंगों को ग्रहण करने में आधार उपलब्ध कराता हैं। सामाजिक संबंधों में नियम, कानून अपना दखल देते है और तब कहीं जाकर उनका कार्यान्वयन होता है। परन्तु साहित्य के नियम अथवा स्वाभाविक धर्म संवेदनाओं के माध्यम से व्यक्तियों को परस्पर जोड़ते है और एक हितकारी हितैषी भावना का प्रचार- प्रसार करते हैं।

मनुष्य के अधिकांश रचनात्मक प्रयास अंतः सामाजिक संबंधों को ही सहज, सरस, समरस, विश्वसनीय और मंगलकारी बनाते है। सामाजिक संबंधों की वास्तविक आधार भूमि, सभ्यता और संस्कृति की

संरचना की आन्तरिक प्राप्तियों के रूप में होती हैं। सभ्यता और संस्कृति एक-दूसरे की अनुपूरकता में आगे बढ़ते है और समाज का बहुत बड़ा वर्ग इनसे प्रेरित होकर अपने-अपने संस्कारों के अनुरूप व्यवहार करता हैं।

प्रेमचन्द जी ने साहित्य के सन्दर्भों पर विमर्श करते हुए कहा है कि साहित्य हमारे जीवन को स्वाभाविक और स्वाधीन बनाता है। साहित्य का काम हृदय को योग करना हैं। और यह योग ही साहित्य का अन्तिम लक्ष्य है। साहित्य को शिव, सुन्दर और सत्य कहा गया हैं। शुक्ल जी ने इसके लिए सुन्दर और रमणीय शब्दों को परिभाषित करते हुए कहा है कि ''साहित्य बाह्यार्थ की ओर संकेत करता हुआ जान पड़ता है और रमणीय शब्द हृदय की ओर। साहित्य हमारी चिंतन परम्परा का सबसे विश्वसनीय और मधुर फल है।"[3] इससे प्राणों को जीवन और आशाओं को आकाश मिलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने कहा है कि ''सारे मानव समाज को सुन्दर बनाने की साधना का नाम ही साहित्य है।"[4] साहित्य की मधुमती भूमिका में मनुष्य का पूर्णत्व सूर्य की तरह गतिशील रहता हैं। व्यक्ति के विचार, चिन्तन, भाव, बुद्धि, हृदय, संघर्ष और जिजीविषा लगातार नई-नई भूमिकाओं में आकर यथा समयध यथा अवसर अपना दायित्व निभाते हैं।

आज के इस भौतिक युग में हमारे चिन्तन को नए-नए संदर्भों में पहुंचाने की जिम्मेदारी तकनीक ने ले रखी है। वह साहित्य के सत् पक्ष को अनेक रूपों, और स्थानों तथा अवसरों के अनुकूल प्रचारित करता हैं। नई तकनीक ने रचनात्मकता को सुविधाओं की उपलब्धि के आधार पर जन-जन तक पहुंचा हैं यह तकनीक जहाँ मनुष्य के संपूर्ण आचार-विचार तथा व्यवहार को नई-नई अवस्थाओं से लेकर, नई-नई परिणतियों तक पहुँचाती है, वहीं यह हमारी नवीन सोच और प्राप्तियों की क्षमताओं को भी उजागर करती है।

आज के इस भौतिक युग में हमारे चिन्तन को नए-नए संदर्भों में पहुंचाने की जिम्मेदारी तकनीक ने ले रखी है। वह साहित्य के सत् पक्ष को अनेक रूपों, और स्थानों तथा अवसरों के अनुकूल प्रचारित करता हैं। नई तकनीक ने रचनात्मकता को सुविधाओं की उपलब्धि के आधार पर जन-जन तक पहुंचा हैं यह तकनीक जहाँ मनुष्य के संपूर्ण आचार-विचार तथा व्यवहार को नई-नई अवस्थाओं से लेकर, नई-नई परिणतियों तक पहुँचाती है, वहीं यह हमारी नवीन सोच और प्राप्तियों की क्षमताओं को भी उजागर करती है।

मनुष्य का मस्तिष्क, उसकी कार्यशैली एवं चिन्तन की गति नये-नये मार्गो के अन्वेषण में निहित रहती है। गतिशीलता में ही नवीनता है। अंग्रेजी की एक कहावत है There is a death in stegnation and there is a life in movement. अर्थात गतिशीलता में जीवन है और स्थिरता मृत्यु के जैसी हैं। जो समाज अपने संगीत के, सोच के पथ पर लगातार गतिमान रहते है, उनका विकास निश्चित है और उनकी चिन्तन की गतियां और पद्धतियां मानव के उपकार में क्रियाशील रहती हैं। मनुष्य का विकास नूतनता में ही हैं। प्रकृति भी प्रतिदिन नूतन और परिवर्तनशील होती हैं महाकवि जयशंकर प्रसाद ने कामायनी में कहा है ''पुरानतना का यह निर्मोक/सहन करती न प्रकृति फल एक।

नित्य नूतनता का आनन्द/किए है परिवर्तन में टेक॥"[5]

अर्थात नूतनात जीवन का प्रथम और अन्तिम धर्म हैं। इसी से हमारी संस्कृति, धर्म, सभ्यता और चिन्तन की काया पलट होती हैं।

हमारी सभ्यता के इस आधुनिक और उत्तर आधुनिक युग में, नये-नये आविष्कारों का अनुसंधान, हमारी गतिमयता को संचालित करता है। हमारी सम्पूर्ण क्षमताओं में तकनीक ने एक नये उत्साह और आशावादी सोच का सृजन किया हैं। आज तकनीक ने एक दायरे से निकलकर वैश्विक ब्रह्मांड तक अपने अस्तित्व को पहुंचा लिया है। लाखों ही लाखों किलोमीटर दूरस्थ, भूखंडों, गगनमंडलों, तारों तथा ग्रह पिण्डों तक हमारी पहुंच हैं। आज हमारे समवाद, दूर-देशीय तथा प्रति व्यक्ति तक सम्भव हो गए है। उनमें गति, प्रभाव, रंग, आकार तथा ऐसी गुणवता का नियोजन हो गया हैं। जिसकी कुछ वर्षों पूव तक मनुष्य कल्पना तक नहीं कर सकता था।

आज हमारी पहुंच वायु, जल, तेज, रोशनी और आकाशीय तरंगों के माध्यम से जहाँ चाहे वहां तक हैं। तकनीक ने न केवल साहित्येतर विचारों और उपयोगिताओं को ही विस्तार दिया है अपितु साहित्य के प्रत्ययों एवं संवेदनाओं को भी आकाशीय विस्तार दिया है। आधुनिक तकनीक ने पुरानी सम्पूर्ण मान्यताओं को बदलकर मनुष्य और उसके साहित्य को नये स्तरों पर संस्थापित किया है और उनकी अर्थवत्ता को व्यापक परिधि दी है। आज के मनुष्य की विडम्बना यह है कि भौतिक जीवन में तो नित नए परिवर्तन तो चाहता है परन्तु अपने भावात्मक, मानसिक एवं वैचारिक जीवन में वह अभी भी प्राचीनता की केंचुली में ही है। व्यक्ति और व्यक्ति, समूह और समूह, राष्ट्र और राष्ट्रों के बीच तनाव का सबसे बड़ा कारण यही है। साहित्य के माध्यम से अथवा विचारों की विकासशीलता के लिए मानव जीवन की सम्पूर्णता भी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, चिंतन में समता की अपेक्षा रहती हैं। किसी एक की अपेक्षा दूसरे को महत्त्व देना असंतुलन को बुलावा देने जैसा हैं। आज साहित्य और तकनीक दोनों रूपों में एक सामंजस्य अथवा समान विकासशीलता की आवश्यकता हैं।

असंतुलन विचारों अथवा भावनाओं में हो, उच्छृंखलता अथवा स्वतंत्रता में हो कहीं भी, समरूपताय जिसकी आवश्यकता

है, नहीं मिलती है। एक सभ्य समाज जिसमें, साहित्य की एक व्यापक भूमिका रहती है मानवतावादी और न्याय-संगत व्यवस्था में ही शोभा देता है। जीवन, दो ध्रुवांतों के मध्य ही सहज होता हैं। देश, राष्ट्र और उसकी दूरगामी, चिंतनधारा ही लोगों की भावात्मकता को सिंचित करती है और उसे सदा फलते-फूलते रहने की स्थिति में रखती है।

यदि हम इतिहास के संदर्भों में विचारपूर्वक देखते हैं कि परम्परा में वे ही जातियां, साहित्य और चिंतनधाराएं जीवित रही है जिन्होंने समय के अनुसार स्वयं को संस्कारित किया है/बदला हैं। चुनौतियों को स्वीकारते हुए आगे बढ़ने का नाम ही प्रगति हैं। दूसरे शब्दों में यही विकास भी हैं। साहित्य का जागरण एक प्रकार से आत्म-जागरण की अवस्था है। इसमें अपने अंदर सोये हुए वर्चस्व को प्रयत्नपूर्वक जगाकर, उससे अभिलाषित लाभ प्राप्त किया जाता है।

प्रकृति का नियम है कि जब-जब उसे जिस-जिस तकनीकी आविष्कार की आवश्यकता होती है, उसकी क्षमताओं से वह उसे प्राप्त हो जाती है। यह क्षमता चाहे प्रकृति के गर्भ से आविर्भूत हो अथवा उसके सहयोगी, सहजीवी मनुष्य के द्वारा। मनुष्य ने आज अपने चिंतन और सोच के द्वारा अपनी आवश्यकताओं के हेतु ऐसे-ऐसे आविष्कारों का सृजन कर लिया है जो उनकी उपयोगिताओं के बारे में सोच-सोच कर उसे ही आश्चर्यचकित कर देता हैं।

आज एक लोक/गृह पिंड पर बैठा व्यक्ति दूसरे गृहवासी से बात तक कर लेता हैं। आज से एक शताब्दी पूर्व तक किसी भी तरह का आपसी सम्प्रेषण असंभव था। दूसरे कमरे में बैठा व्यक्ति मात्र एक दिवार का बाधा तक को भी जीतने में असफल रहता था। जिन चमकते गृहपिंडों को हम देवता कहकर नमस्कार करते थे, आज उन्हीं गृहपिंडों के आंगन में पहुंचकर हम वहां के वासियों के दरबार खटखटाने में समर्थ है। आधुनिक तकनीक ने अपनी ऊर्जात्मक पहुंच से अज्ञात से अज्ञात और दूर से दूरवर्ती आश्चर्यो को भी अपने दायरे में समेट लिया हैं। आज का मनुष्य स्वयं एक आश्चर्य का प्रतीक बन बैठा हैं। उसकी गति, मति और प्रगति ने दुनिया के प्राणियों को विस्मित किया है और अपनी नई खोज तथा अन्वेषणों के द्वारा नूतन प्रयोगों के लाभकारी उपकरण तैयार किए हैं। आज तकनीक ने जीवन को सरल, सहज, और बहुउपयोगी बना दिया है। जीवन की अधिकाधिक सुख-सुविधाएं उसे प्राप्त हैं और कल के जीवन की आश्चर्य कर देने वाली सभावनाएं, उसकी प्रयोगशालाओं में और भी निहित हैं।

आज तकनीक ने साहित्य की उपलब्धि में, सृजन मे, प्रकाशन में एक बड़े परिवर्तनकारी युग का आगाज किया हैं। तरह-तरह के वर्णो, डिजाइनों, आकार-प्रकारों ने साहित्य को अनेक प्रकार से आकर्षक बनाया है। आज साहित्य के प्रकाशन को रंगों की तकनीक उसके साइज तथा नवनिर्माण को पुस्तकालयों में, प्रदर्शनी में, पुस्तक मेलों में प्रस्तुत कर साहित्य की नूतन से नूतन प्रस्तुति को सम्भव किया है।

पहले साहित्य एक श्रुति था। वह मात्र सुना जा सकता था। वह स्वर था, जिसे केवल कान ग्रहण करते थे। किन्तु लिपि के जन्म और विकास ने स्वर को, श्रुति को दर्शनीय, प्रदर्शनीय और उससे स्थायित्व दे दिया। आज शब्द तकनीक ने सारी श्रुतियों को, नव-नव रूपों और आकार-प्रकार में प्रस्तुत कर वर्णन संसार की अथवा साहित्य के लोक की सत्ता को अभिनव अस्तित्व में परिवर्तित कर दिया है। आज शब्द संसार की असंख्य लुभावनी प्रस्तुतियां केवल मोहक ही नहीं, अपितु उसकी अनंत सम्भावनाओं की जनक और उत्पादक भी रही हैं। शब्द और साहित्य की सत्ता में आज तकनीक का बहुत बड़ा परिवर्तनकारी भोग है। जिससे साहित्य ने भी अपने एक नव परिवर्तित संसार को समुख ला खड़ा किया हैं। आज नई तकनीक में साहित्य की नूतनता और सम्भावयता निहित है। इन दोनों के बिना एक-दूसरे की अब परिकल्पना नहीं की जा सकती। ये दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं। एक-दूसरे के पूरक हैं।

शोधार्थी पीएच.डी., हिन्दी विभाग
गार्गी छात्रावास, कमरा नं. 118
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला-05, मो. 0 89882 04745

संदर्भ

1. डॉ. सुरेश गौतम, साहित्य वर्चस्व और प्रतिशेध, पृ. 14, प्रकाशक : शब्द : सेतु, दिल्ली : 110094
2. वही, पृ. 21
3. वही, पृ. 25
4. वही, पृ. 25
5. जयशंकर प्रसाद ग्रंथावली, कामायनी, सर्ग-श्रृद्धा, पृ. 291, प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली : 110002

माह के कवि/ विनोद विट्ठल

वैलेंटायन डे पर दस प्रेम कविताएं

(1)

तरीके

(1970 में जन्मी एक लड़की के लिए)

मैंने भाषा के सबसे सुंदर शब्द तुम्हारे लिए
बचा कर रखे
मनचीते सपनों से बचने को रतजगे किए
बसंत के लिए मौसम में हेर-फेर की
चाँद को देखना मुल्तवी किया
सुबह की सैर बंद की

अपने अस्तित्व को समेट
प्रतीक्षा के पानी से धरती को धो
तलुओं तक के निशान से बचाया

न सूँघ कर खुशबू को
न देख कर दृश्यों को बचाया
जैसे न बोल कर सन्नाटे को
एकांत को किसी से न मिल कर

समय तक को अनसुना किया
सब-कुछ बचाने के लिए

याद और प्रतीक्षा के यही तरीके आते हैं मुझे !

(2)

जवाब

हाथों की तरह एक थे
आँखों की तरह देखते थे एक दृश्य
बजते थे बर्तनों की तरह

रिबन और बालों की तरह गुंथे रहते थे
साथ खेलना चाहते थे दो कंचों की तरह

टंके रहना चाहते थे जैसे बटन

टूटे तारे की तरह मरना चाहते थे
गुमशुदा की तरह अमर रहना चाहते थे

किसी और नक्षत्र के वासी थे दरअसल
पृथ्वी से दीखते हुए.

(3)

प्रौढ़ावस्था में प्रेम

(3/1)

उतर चुका होता है देह का नमक
तानपुरे की तरह बैकग्राउंड में
बजता है बसंत
गुजिश्ता तजुर्बों के पार झिलमिलाता है
दूज का चाँद
टूटे हुए पाँव के लिगामेंट्स के बाद भी
चढ़ी जाती है संकोच की घाटी

नगाड़े या ढोल नहीं बजते
बस सन्तूर की तरह हिलते हैं कुछ तार
मद्धम-मद्धम
इतने मद्धम कि नहीं सुन पाता
दाम्पत्य का दरोगा
इतना कुहासेदार की बच्चे तक न देख पाएँ

एक बीज को पूरा पेड़ बनाना है बिना
दुनिया के देखे

दरअसल ये उलटे बरगद की तरह पनपते
हैं धरती के भीतर

धरती की रसोई में रखी कोयला, तेल और
तमाम धातुएँ
इन्हीं के प्रेम के जीवाश्म हैं
जिन्हें भूगर्भशास्त्री नहीं समझ पाते !

(3/2)

बिना बीज का नींबू
बिना मंत्र की प्रार्थना
बिना पानी की नदी

मल्लाह के इंतज़ार में खड़ी एक नाव है ।



(3/3)

छीजत है चाँद की
बारिश है बेमौसम

पीले गुलाब की हरी ख़ुशबू है

सफ़ेदी में पुती ।

(4)

एक स्त्री के अनुपस्थित होने का दर्द

वे जो दर्जा सात से ही होने लगी थी सयानी
समझने लगी थी लड़कों से अलग बैठने
का रहस्य
कॉलेज तक आते सपनों में आने लग गए
थे राजकुमार
चिट्ठी का जवाब देने का संकोचभरा
शर्मीला साहस आ गया था
बालों, रंगों के चयन पर नहीं रहा था
एकाधिकार

उन्हीं दिनों देखी थी कई चीजें, जगहें
शहर के गोपनीय और सुंदर होने के
तथ्य पर
पहली बार लेकिन गहरा विश्वास हुआ था

वे गंगा की पवित्रता के साथ कावेरी के
वेग-सी
कई-कई धमनियों में बहती
हर रात वे किसी के स्वप्न में होती
हर दिन किसी स्वप्न की तरह उन्हें लगता

वे आज भी हैं अपने बच्चों, पति, घर,
नौकरी के साथ
मुमकिन है वैसी ही हों
और यह भी
कि उन्हें भी एक स्त्री के अनुपस्थित होने
का दर्द मेरी तरह सताता हो

(5)

जब वह आ जाती है

डाक की ग़लती से आ जाए कोई प्रेम-पत्र
सुख के मनीऑर्डर पर भगवान
हमारा पता लिख दे
एकाध मौसम की चोरी के कारण बसंत
को एकाएक आना पड़े

रविवार और दिनों से दुगुना बड़ा हो
हमारे जागने से पहले मुर्गे और
सूरज भी सुस्ताते रहें
हम चाबी भरना भूलें और
सारी घड़ियाँ बंद हो जाएँ

आप विश्वास करें वह क्षण आता है
एक बार हमारे जीवन में - शताब्दी के
पहले दिन की तरह
लम्बे इंतजार के बाद ही सही;
जब वह आ जाती है



(6)

प्रेमी

(6/1)

प्रेमिका से
पहली मुलाकात का दिन-समय-स्थान
पूछ
प्रेमियों को उलझन में न डालो

उनके पास केवल यादें हैं

वे सूखी नदी के मल्लाह हैं
याद दिलाने से रो पड़ेंगे
लोग कहेंगे; नदी का पानी चढ़ रहा है

(6/2)

प्यार हमेशा अच्छे मौसमों में होता है
चाहे कहीं भी हो, किसी भी मौसम में

आप जानते हैं;
मरने के बाद प्रेमी मौसमों में बदल जाते हैं

(6/3)

मर चुके होंगे सारे सफ़ेद कबूतर
युद्ध भी ख़त्म हो चुका होगा आख़िरी बम
से आखिरी आदमी को मार

बचे रहेंगे ये
सूखी घास के गुच्छे और दो पत्थरों के साथ

(6/4)

उनकी दुनिया नहीं बदलती

उन्होंने
प्रेम-पत्र पर धरती को पेपरवेट की तरह
रख रखा है

(6/5)

उन दिनों लेटर बॉक्स पेड़ों में होते थे
हारिल, कबूतर डाक बाँटते
दूर की होती तो नदी ले जाती दरिया के
डाकघर तक

उन दिनों चाँद हमेशा और पूरा चमकता
हवा हमेशा खुशबूदार होती
मौसम का रिर्कार्ड बसंत पर अटका रहता
फूल अपने आप गुलदस्ते या वेणी बन
जाते

उन दिनों के ये बातें
हर दिनों के प्रेमी सुनाते हैं
जसराज को नए राग
और यती कासरगोड को नए रंग मिलते हैं

(6/6)

हम
कच्छ्पों की पीठ पर बैठ नदी पर करते

पहाड़ पार
ब्रह्मा से आँख बचा
अपने पंख यान-से करते कपोत करवा देते

धरती प्रकृति से आँख बचा दूरी कम करने
थोड़ी-सी सिकुड़ जाती

प्रेमियों की ये बातें सच थोड़ी ही हैं,
बुदबुदाते हैं
फिर भी वैज्ञानिक उदास हो जाते हैं

(6/7)

सुना है
मशीनें आ गई हैं
देख लेती हैं धरती के भीतर; ठेठ भीतर
धरती की रसोई में रखी घासलेट की बोतल
कनस्तर का आटा तक

लगाएँ वह मशीन प्रेमियों के
कि सरस्वती उनके किस हिस्से में बह रही है

(6/8)

लोग चकित थे
हर तीसरे दिन जंगल में आते बसंत को देख

पेड़ों का अचानक गहराता हरापन
अमराई में कैरियों का असमय पके आमों में
बदलना
घास के दीवान पर नई-नई चादरें होना

बहुत बाद में पता चला
प्रेम-पत्रों को पढ़ने के लिए डाकिया
क़रीने-से लिफ़ाफ़े खोल देता था

(6/9)

समय को मुर्ग़ा बना देता
चाँदनी तेज़ या मद्धम कर देता
शाम की लम्बाई घटा-बढ़ा देता
मौसम का टाइम-टेबल बदल देता

वह क्या था जो अब नहीं है

सांसारिक के पूछने पर नारद बोले :
उन दिनों तुम प्रेमी थे

(7)

उत्तर प्रेम

खींचता था घर की तरह

बचपन की तरह जिसमें लौटा नहीं जा सकता

गोपनीय क्षणों की उजास भरी खुशबुदार सुरंग
थी वह

बहुत घना एकांत था दो झींगुरों के बाद भी

बाद के दिनों में मैंने उस सुरंग को नमक में
बदला
उधर स्वाद बढ़ा

(8)

अंततः

लम्बी बीमारी के बाद दिखे परिचित की तरह
किसी दिन अचानक दिखेगा वह दिन
जब महसूस होगा कि मुश्किल हो गया है
सिनेमा देखना
सड़कों पर चलना
नया नाम रखना
पत्नी को हँसा पाना
अँट-शँट खा पाना
बच्चे को समझा पाना
किसी के बारे में सोच पाना
किसी का इंतजार कर पाना
या किसी अपरिचित को दोस्त ही बना पाना

हम बरसों से सुनते आए
किसी राक्षस को पहली बार देखेंगे
सोचेंगे आग लगने पर कुआँ खोदने वाली कहावत
और देखेंगे सभ्यता को भारी मन से जलते
सोचेंगे, काश ! ये किसी फिल्म का दृश्य हो
और लाइट चली जाए
या प्रोजेक्टर ही जल जाए

यकायक जैसे हम हो जाते हैं बड़े
बूढ़े इतने कि लगने लगें
फूट जाता है अंडा या फटता है बादल
मर जाते हैं कम उम्र के अच्छे लोग
किसी वाइरस की तरह प्रवेश करती है कोई लड़की
हमें लगेगा कई-कई चीजें मुश्किल हो गई है, यकायक

आधे लोग उदास हो जाएँगे
आधे दु:ख भरे गीत गाएँगे
आधे दर्शन की ओर भागेंगे
आधे गणित सिरे-से समझेंगे
आधे कम्प्यूटर की ओर देखेंगे
आधे अंतरिक्ष में जाना चाहेंगे

कुछ खींचेंगे तस्वीरें
कुछ रिर्कार्ड करेंगे बातें
कुछ लिखेंगे आत्मकथाएँ और इतिहास-पुरातत्व की किताबें
कुछ बेपतेदार चिट्ठियाँ

एक वही होगा
जो महसूस करेगा संकट का सूत्र
और प्यार करेगा !

(9)

इसी तरह

उन दिनों
बड़े और असामान्य समझे जाने वाले घटनाक्रम नहीं होते
बस यूँ ही आदमी का विश्वास थोड़ा-सा सरक जाता है
धरती नमक और पानी के बाद भी खो देती है अपना स्वाद
मौसम सरकारी कर्मचारियों की तरह नदारद पाए जाते हैं सीट से
भीड़ और हथियार भी नहीं मिटा पाते हैं
आदमी का अकेलापन और डर

वे होते हैं सभ्यता के सबसे भारी दिन
जब दिन कम हवा की पुरानी साइकल की तरह
थका देते हैं सवार को
रास्ता अपनी लम्बाई के हार्मोन कहीं से चुरा ले आता है

सचमुच वे दिन इतने भारी होते हैं
कि लगता है शेषनाग थक जाएगा
कि अब थका, अब थका
तभी अचानक
एक बच्चा जोर से हँसता है
एक लड़की अपना थोड़ा-सा हिस्सा
हमेशा के लिए किसी को दे देती है
एक पुराना प्रेमी समय की संदूक से निकालता है कुछ क्षण
और उन्हें अकेले कमरे में पहनता है
कोई कविता लिखता है

इस तरह धरती अपनी जगह शांत हो जाती है
टंक जाती है चाँद की तरह भारविहीन हो

हमेशा हार जाते हैं वे दिन
इन दिनों से
इसी तरह ।

(10)

एक मित्र की प्रेमिका के लिए

काम में लेने के तरीके से बेख़बर होकर भी
आग, पत्थर, लोहे और लकड़ी-सी तुम थी
पहिए-सी तुम तब भी लुढ़क सकती थी
फ़र्क़ प्रेम-पत्र की शक्ल में धरती का घूर्णन था दिन-रात लानेवाला
वरना दिन-रात तो थे ही

माना उन दिनों नहीं था विज्ञान
आदमी ने परिंदों के पर नहीं चुराए थे
मछलियों के जाली पंख भी नहीं बना पाया था

मित्र के मना करने के बावजूद बताता हूँ
नदी के पास तुम्हारी मुस्कुराती फ़ोटो है
हवाओं ने तुम्हारी आवाज़ को टेप कर रखा है

क्या फ़र्क़ पड़ता है संबोधनों का इस समय में
जबकि मैं आश्वस्त हूँ
प्रेम, भूख और नींद के बारे में

वास्कोडीगामा से बड़े हैं चंदा मामा
दिन-ब-दिन छोटी और एक-सी होती इस दुनिया में
मुश्किल होगा मेरे मित्र की गरम साँसों से बचना
तपे चूल्हे के पास बेली पड़ी रोटी की तरह।

जे एस डब्लू फाउंडेशन, जे एस डब्लू हाइड्रो एनर्जी लिमिटेड
हेड-सी एस आर, ए-8, शोलतू कॉलोनी, पोस्ट ऑफिस टापरी, जिला किन्नौर
हिमाचल प्रदेश-172104, मो. 0 80940 05345

शैली किरण की कविताएं

विध्वंस के समय

उम्मीद का सूरज हाथों में है
और चमक उसकी आंखों में है

फिर भी अगर हमारे अंतिम
समय
धरती खून से रंगी होगी

और उम्मीद की सब किरणें
बंद दरवाजे की खूंटी
पर टंगी होगी

प्रलय से पूर्व विक्षिप्त धरती
राख के ढेर में बंटी होगी

उस विध्वंस के अंतिम क्षण में
मुझे बांहों में थाम लेना

अंतिम चुंबन अंकित करने
से पहले कानों में मेरा नाम लेना।

अगर कातिलों की गालियां होंगी
और लुटे तख्त ताज होंगे

अगर लाठियां होंगी
और साथी बेआवाज होंगे

आंसू में लुढ़कते गीत होंगे
और उंगलियों से फिसलते
साज होंगे
बिना बात सब नाराज होंगे

मत सब्र से तुम काम लेना
मुझे इश्क का यह इनाम देना

उस विध्वंस के अंतिम क्षण में
मुझे बांहों में थाम लेना ।

मेरी आक्सीजन

मेरे हर हर्फ में
तुम हो
तंत्र कोशिकाओं से
चेतना स्वरूप बहते हुए
मेरी शिराओं के
नीले रंग से लेकर महानदी
धमनियों के लाल
तक मात्र तुम हो
मेरी आक्सीजन ।

तुम्हारी कमी में
घुटता है गला
एक-एक क्षण
मुझे डर नहीं लगता
तुम्हारी छाती है
जब मेरा आवरण
जीवन और मृत्यु के बीच
बेशक हो रण ।

तुम्हारी बादशाहत में

किसी भी तख्तो ताज
का हाथों से चले जाना
कोई गम की बात नहीं,
मेरे सूरज का सितारा
इतना बुलंद है
कि मेरी किस्मत में
कोई भी रात नहीं ।

तुम्हारी बादशाहत में
खुशियां रक्स करती हैं
घुंघरू बांधे मेरे द्वारे
उत्साह झुलाता है चंवर
और जमाना ग्लोब ताईं सिमट
ठोकर में
रहता है मेरी,
तुम मुस्कुरा दो और
फूल बातों के झरते रहें
मुझे गमगीन पल भर
कर सके,
गम की भी यह औकात नहीं ।

मेरे सूरज से दूर

एक सौ छयालीस
मिलीयन किलोमीटर दूर
सूरज से हूं ।
और दो सौ छयालीस
मील दूर तुमसे ।

फिर भी सूरज की किरणें
मापती हैं मेरी परछाईं
और मैं तुम्हारी
प्रतीक्षारत पतझड़ के
मुनि वृक्षों की तरह चुप से ।

जीवन ऊष्मा से चलता है
लाखों प्रकाश वर्ष की दूरी
नहीं रोक पाती किरण को
ओस चूमने से
साल भर अपनी परिधि
के गिर्द घूमने से
नहीं बांध पाती
प्रीत को घुंघरू के
शोर से,
दुनिया किसी भी डोर से

या जोर से
किसी डर, भय
सुख या दुःख से

ओ जलते हुए तारे
तुम्हें मालूम ही नहीं
मेरा जीवन तुम्हारी
ऊष्मा तुम्हारे प्रकाश से है,
तुम हो मुझे स्वयं से
अधिक प्यारे
तुम्हारे गुरुत्वाकर्षण
को करते हुए समर्पण
मैंने इंकार किया
अपने हर चुंबकीय गुण से।

दोमट मिट्टी

प्रेमविहीन मनुष्य पास
दृष्टि नहीं होती,
रेत होती है
पत्थर होते हैं,
दरिया होते हैं
पहाड़ होते हैं
बहार नहीं होती
पतझड़ नहीं होती
ठंड नहीं होती
वृष्टि नहीं होती।

इमारतें होती हैं
महल होते हैं
सीमेंट होता है
संगमरमर होता है
साज होते हैं
सुविधा होती है
कांच में मृगतृष्णा लिए
मछलियां होती हैं
लेकिन डाली-डाली
तितलियां नहीं होतीं
फूल नहीं होते
जड़ें पत्तियां नहीं होतीं
क्योंकि उनके दिल में
नमी नहीं होती
उनके तन में
दोमट मिट्टी नहीं होती ।

स्पर्श

शब्द जहां चूक जाते हैं
थके हारे
चुप्पी साध लेते हैं
स्पर्श वहां बस वहां
भर देता है
खालीपन को।

जैसे अम्बर को भर लेते हैं
सितारे
सूरज की रौशनी से
जैसे हवा भर लेती है
अंक
खाली बर्तन को।

भीगी स्मृतियों पर
सर्दी की धूप सी
धीमी छुअन लिए
छन-छन आती
सुरीली मधुर
तुम्हारी निश्छल
हंसी ने भर रखा है
मन को।

गांव चौकी, डाकघर सेरा, तह. नादौन,
जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश-177 038

कविता

चोट

हरीश कुमार 'अमित'

चोली-दामन का सा होता है
हमारा जिंदगी
और
चोट का रिश्ता
कब, कहां, कैसे
लग जाए चोट
पता नहीं होता कुछ भी
लगती नहीं
सिर्फ तन पर ही
बाहरी या अंदरूनी चोट
होता रहता है मन भी
अकसर चोटिल
होती नहीं शिद्दत
हर चोट की
एक जैसी
कोई हल्की
तो कोई गहरी
होती है चोट
अलग-अलग लगता है समय
उबरने से चोट में
हर चोट
जाती है छोड़
अपना कोई निशान -
चाहें हल्का-सी ही सही
कोई-कोई चोट अलबत्ता
होती नहीं ठीक उम्र-भर
और
रहती है जिंदा
बनकर नासूर।

304, एम.एस. 4, केंद्रीय विहार, सेक्टर 56
गुड़गांव, हरियाणा-122011,
मो. 0 98992 21107

डॉ. अदिति गुलेरी की कविताएं

घर की धुरी

पुरानी प्रेस हो
या घिसी चद्दर हो
घिसी चप्पल हो
या मैडम का हो
पुराना सूट
वो सब पाकर
खुश हो जाती है ।

ढेरों बर्तनों से बातें करती
कभी ज्यादा बोलती
कभी चुप हो जाती
डांट खाती
मुंह बनाती
काम पर फिर भी
हाथ चलाती है ।
घर के दुःखों को
अपनी चौखट पर छोड़
दूसरों के सुख बंटाती है ।

कुछ पैसों के लिए
गंदे कपड़े खंगालती
फर्शो को खूब चमकाती
खूब बेइज्जत भी
वो कभी हो जाती ।
काम वाली है...
वो अक्सर रूठ भी जाती ।
थोड़ा सा प्यार से बोलो
झट मान भी जाती ।
कभी घर की बड़की बन
मालकिन को दुनियादारी
खूब समझाती ।

अमीरी-गरीबी के
इस बेमेल रिश्ते को
अनपढ़ होकर भी
इन्सानियत का पाठ पढ़ाती ।

बच्चों के पुराने खिलौनों से
अपने बच्चों का
मन बहलाती
बच्चों की उतरन से
अपने बच्चों का
तन सजाती

मालिक की कमीज
जूतों से मोज़ों तक
सब पर वो
अधिकार जताती

घर की धुरी बनकर
स्वयं इतराती इठलाती
मैडम की कमजोरी बन
खूब वो नाच नचाती

काम की भी कमी नहीं
दाम की भी कमी नहीं
यह सुना कर बार बार
मैडम को वो अक्सर
खूब डराती रहती

कह दो उनसे

वो हमसे दूर रहते हैं
कुछ मगरूर रहते हैं
कह दो - उनसे जाकर तुम
हम भी मसरूफ़ रहते हैं।

वो हंसी को बांधे रखते हैं
होठों को दबाए रखते हैं
कह दो - उनसे जाकर तुम
हम तो बेमौसम खिलखिलाते हैं।

वो मुंह चुराते हैं
बातों से अपना बनाते हैं
कह दो - उनसे जाकर तुम
हम भी चेहरों को ही पढ़ाते हैं।

जो ताना कसते हैं
जो बाना बुनते हैं
कह दो- उनसे जाकर तुम
हम तो रिश्ते ही गुंथते हैं।

जो बांहों पर उठाते हैं
जो बड़ा पास बिठाते हैं
कह दो - उनसे जाकर तुम
वही नज़रों से गिराते हैं।

कांटों का दामन हो
फूलों का आंगन हो
कह दो - उनसे जाकर तुम
छोटे हैं तो क्या है जी -
हम भी तूफानों से भिड़ते हैं।

मेरे खयालों में

मेरे खयालों में / आज भी
तेरा चेहरा मुस्कुराता है
मेरे सवालों में / आज भी
तेरा जवाब गुनगुनाता है।

झील सी सपनीली आंखों के
ठहरे हुए पानी में...
आज भी बीते कल का
तेरा अक्स झिलमिलाता है

मेरे ज़हन में है तू
तेरे ज़हन में हूं मैं
वहां....जहां.... कोई
हमें देख न पाता है।

तू भी खुश रहे
हम भी खुश रहें
दिल की इस बस्ती में
रूठना सभी को आ जाता है।

यादों में सजदा करें
क्या सुनें...क्या कहें...?
प्रेम की ठग नगरी में
चलना सभी को आ जाता है।

प्रवक्ता हिन्दी, नजदीक (एन. टी. हॉस्पीटल) गांव
वाघणी डाकखाना सिद्धबाड़ी, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176057 मो. 0 98163 05643

कहानी

अम्मा का घर

◆ डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित'

एक लम्बे अरसे के बाद अवकाश पर घर आया था रविकांत। रात को देर से पहुंचा था। रास्ते के लम्बे सफर के कारण थक भी गए थे सब। सुबह देर से उठा तो मन किया लॉन में घूमा जाए। कुछ देर घूमने के बाद कोने में रखी एक कुर्सी पर टिक कर नए घर के बारे सोचने लगा। सामने दोमंजिला पक्का लैंटरनुमा पक्का घर जिसका नक्शा शहर के आर्किटैक्ट ने बनाया था। दो दशक पूर्व दो बार आया था गांव में शहर से वह, घर की भूमि की नाप-नपाई करने। पहली बार जब आया तो आते ही पुराने घर के बरामदे में बैठी मां से पूछा था - माता जी ! कहां करके बनाना है बेटे का फ्लैट ?

जब उसकी मां ने ऐसा सुना था तो बरामदे से ही बोली थीं - नहीं ! बेटा ! हमने कोई फ्लैट-बलैट नहीं बनाना है। हमें तो सिर्फ घर बनाना है। मेरे रवि को बड़ा शौक है नया घर बनाने का। मैं तो कहती हूं-क्या करना है नया घर बनाकर', पहले वाला ही काफी अच्छा बना है, काफी खुला है। दो तरफा बरामदे, छत, परौल़, खुला आंगन, सामने सगाड़ू-छोटा सा बगीचड़ू। बड़े चाव से बनाया था। वह बार-बार कहती, रवि के पिता ने रटैरमैन्ट पर मिला आधा पैसा इसी पर लगा दिया था। वे जब भी देखते तो बड़े खुश होते कहते-सूबेदारनिए ! 'कदेआ लगेया तिज्जो अपणा घर' (कैसा लगा तुझे अपना घर) और देर तक मुस्काती कहती रहती बापू से अम्मा अपने मन की बातें। जब आर्किटैक्ट ने उन्हें समझाते कुछ कहा था तो चुप हो गई थी अम्मा ! वैसे तो उसके मन में चाव था कि मेरे रवि का भी वैसा ही घर बने जैसे पड़ोस में बनी मेजर की कोठी।

वह देख रही थी शहर से आया बाबू अपनी डायरी और पैंसिल निकाल कर भूमि की लम्बाई-चौड़ाई देखने लगा था। फिर तनिक सोचकर मुझे कहा था - 'घर में फीत्ता तो होगा। कुछ नपाई करके देखना है। फुट-स्केल से काम नहीं चलेगा। क्योंकि जब तक पूरे रक्बे का पता नहीं चलेगा तब तक ड्राईंग नहीं बन पाएगी।' मैंने अन्दर जाकर अलमारी से फीत्ता निकाल कर उसे थमाया तो बोला-'सॉरी सर ! इसे खोलकर एक सिरे को पकड़ो तो मैं नपाई करूं।' नपाई सीधी, तिरछी, कोनों से कई तरह से होने लगी। सुभद्रा रसोई में चाय बना रही थी। बेटी दादी के पास बैठी कुछ पूछ रही थी-

दादी ! - ये कौन आए हैं ? क्या कर रहे हैं ?

बेटी - तुम्हारे लिए नया घर बनाने की सोच रहे हैं तुम्हारे डैडी।

दादी ! हमारा घर बना तो है।

बेटी ! बना तो है। अच्छा खुला भी है। हवादार, पहाड़ के घरों जैसा, सलेटों की छत वाला। गर्मियों में सर्द और सर्दियों में गरम। परन्तु पता नहीं तेरे डैडी क्यों जिद कर रहे हैं, नया घर बनाने की।

दादी ! नया घर बन गया तो इस घर में कौन रहेगा ?

बेटी ! नए घर में तो आप रहोगे सब।

और, आप ?

मैं तो अपने पुराने इसी घर में ही रहूंगी। मुझे तो इसी में जीना-मरना है। मैं तो नहीं छोड़ूंगी इसे। बड़े चाव से बनाया है तेरे दादा ने इसे।

दादी ! डैडी क्यों चाहते हैं नया घर बनाना ? यह भी तो नए जैसा ही लगता है।

बेटी ! तेरे पापा अब बड़े आदमी हो गए हैं। शहर में रहते हैं। वहां सरकारी बंगला मिला है। नौकर भी हैं। सामने खुला आंगन-खेत जैसी हरियाली। भांत-भांत के फूल-पौधे।

आप गए हो वहां ?

हां गई थी एक बार ! पर मेरा मन नहीं लगा था वहां। दिन में तेरे पापा नौकरी पर चले जाते, मैं घर पर अकेली। खुली, बड़ी कोठी में उदास हो जाती। सोचती रहती कब पांच बजें और तेरे पापा घर लौटें।

पापा अकेले क्यों रहते वहां ?

बेटी ! तब उसकी शादी नहीं हुई थी। बी.ए. पास की, बड़ी नौकरी का इम्तहान दिया। पास हो गया। फिर इन्टरव्यू पास किया और बन गया बड़ा अफसर। रहने को सरकारी कोठी। चौकीदार, गार्ड, गाड़ी सब कुछ। तीन वर्ष बाद शादी हो गई तेरी मम्मी से। वह भी अफसर। दोनों मजे से शहर में रहने लगे और मैं तेरे दादा के साथ यहां अपने घर में। उसके बाद नहीं गई वहां।

दादी ! आप कहते-कहते उदास क्यों हो गए ?

नहीं बेटी ! यूं ही पुरानी यादें आ जाती हैं तो उदास कर जाती हैं। यादें होती ही ऐसी हैं फीकी, मीठी, खट्टी, कड़वी। कुछ हंसाती हैं, कुछ रूलाती, कुछ बहलाती, कुछ सताती हैं। वैसे भी यादों के बिना जीवन भी तो नीरस होता है। यादें ही हमें परस्पर बांधे रखती हैं।

दादी ! आपको भी दादा याद आते होंगे ?

क्यों नहीं ! उनके साथ जो जीवन जीया है उसी की यादों के सहारे ही तो जी रही हूं अब तक। वे बात-बात पर कहते-

सूबेदारनिऐं तेरा बेटा कलैक्टर बन गया है। तू बड़ी भागां वाली मां है। गांव में अब लोग कहने लगे हैं तू डी.सी. की मां है।

परन्तु मैं, पता है, क्या कहती ?

क्या ?

मैं तो सूबेदारनी हूं, सूबेदारनी रहूंगी।

मुझे गर्व है मेरा बेटा कलैक्टर बना है। आपका रवि कलैक्टर बना है और हम दोनों जोर से हंस देते।

दादी ! दादा जी कैसे थे ?

बेटी ! तेरे दादा जब तक रहे, हम दोनों बड़े मजे से रहते। एक नौकर भी था घर में जो गाय की देखभाल करता। सामने वाले खेत में मौसम की सब्जियां भी उगाता। दूध और साग-सब्जी तो घर की हो जाती। कभी नहीं खरीदे दूध-सब्जी।

फिर -

छः साल पूर्व तेरे दादा अचानक बीमार पड़े। हमें संभालने ही नहीं मिले। दो बातें कीं मेरे साथ और रवि को पूछा, मेरी तरफ देखा और चल दिए, मुझे छोड़ कर।

और नौकर ?

नौकर भी उनके जाने के बाद चार साल तक मेरे पास रहा। बड़ी सेवा की उसने। परन्तु उसकी उम्र भी बुढ़ापे की ओर बढ़ रही थी। बीमार भी रहने लगा था -

फिर ?

एक दिन उसने कहा-बझैणिएं (मालकिन) ! बुरा न मानें तो एक बात कहूं।

मैंने बोला-बोलो ! क्या बोलना चाहते हो ?

अब मुझे छुट्टी दे दो ! मेरे से काम धंधा तो हो नहीं पाता। घर में गाय थी वह भी आपने बेच दी है, साग-सब्जी भी नहीं बीजते, बंदरों के उत्पात के कारण। सूबेदार जी की चुबरही भी हो गई है। अब तो मैं तुम्हारे पर बोझ ही हूं। मुझे अपने घर जाने दो। लड़के ने भी कहला भेजा है-बापू घर चले आओ। हमें तुम्हारी जरूरत है।

फिर -

फिर क्या ? मैंने उसे बहुत समझाया - मनाया परन्तु अपने घर कौन नहीं जाना चाहता। अपना घर, अपना ही होता है। कोई कहीं भी रहे उसे अपने घर की याद सताती ही रहती है। जो सुख की नींद अपने घर आती है, वह पराए घर में कहां नसीब होती है। अपना छप्पर भी महल जैसा सुख देता है।

दादी ! दादा भी तो नौकरी करते थे ?

मैंने बताया नहीं, सूबेदारी पेंशन आए थे। तभी तो मुझे गांव वाले सूबेदारनी कहते हैं। दूसरी जंग भी लड़ी थी उन्होंने। आज़ादी के बाद आए थे पेंशन।

आप भी गए होंगे कभी उनके साथ ?

हां - पहली बार गई तब वे हवालदार थे। दूसरी बार सूबेदारी मिलने पर गई थी।

फौजी कैंप में कैसा लगता था आपको ?

फौजी क्वाटर होते। छोटे-छोटे। परन्तु जितने भी परिवार छावनी में रहते, परस्पर भाईचारा होता। पता नहीं चलता, हम घर पर हैं या बहुत दूर। सुख-दुःख मेल-मिलाप से कट जाता।

जब लड़ाई लगी तो आप .... ?

सूबेदार जी मुझे हफ्ता पहले घर छोड़ गए थे कम्पनी कूच करने से पहले। तब मेरे सास-ससुर जीवित थे, तेरे डैडी पढ़ते थे।

तब भी ऐसा ही घर था हमारा ?

नहीं बेटी ! तब छोटा सा घर था, छप्पर जैसा ढलवां सलेट की छाजन वाला। उस छोटे से घर में ही रहते थे हम सब प्यार से। ईंट-गारा-लकड़ी से बने होते थे वे घर। घर भी क्या-दो कमरे, एक ओबरी (गुप्त कमरा) रसोला और बरामदा, बस। सामने आंगन-साग-सगाड़ू।

तब तो बड़ा मजा आता होगा रहने में ?

मजा क्या बड़ा ही मजा। सुबह उठना। अन्दर-बाहर

ढलती शाम की रोशनी पहाड़ पर ढलती कई रंग बदलती धीरे-धीरे गुम होने लगती। मैं लॉन में घूमता कभी अकेला कभी सुभद्रा भी चार कदम बढ़ाती एक दो चक्कर लगाती, सैर करने के बहाने। मैं चारों तरफ नज़र घुमाता देखता सोचता हूं परन्तु मुझे मेरा बचपन, अम्मा का गांव नज़र नहीं आता। वह परिवेश की ममता, अपनापन, पड़ोसी गांव के रिश्तों के संबोधन कुछ भी सुनने को नहीं मिलता। अब बेटी भी बतियाने के लिए पास नहीं। वह भी अपने घर चली गई है। विष्णु (लड़का) भी अधिकारी बन गया कहीं पहाड़ के जिला में है। वह भी मेरी तरह रस्मी तौर पर घर आता और लौट जाता है।

बुहारना। पणिहांद से घड़े में पानी लाना। चूल्हा-चौंका करना। गाय दूहनी। पेड़ा खिलाना। ब्रत-तिहार पर घर-आंगन में हरे गोबर से लेपन करना, पखड़ी डालनी। मंदलू डाल कर लीखणू डालने, पूजन करना। संक्रान्ति, पुन्या, पर्व-तिहार खूब मनाने। पकवान बनाने भांत-भांत के। परस्पर बांटने, खाने। पूरा गांव उस महक में महकने, थिरकने, गाने, नाचने लगता।

दादी ! तब कौन-कौन था घर में ?

तेरे डैडी और बुआ।

बुआ !! वे तो मैंने देखे नहीं कभी यहां।

कहां देखना, तूने उसे। वह तो मेरे पास तभी आती, जब तुम चले जाते।

हमारे सामने क्यों नहीं आते बुआ ?

तुम्हारी बुआ पढ़ी-लिखी नहीं थी। गांव में स्कूल भी तो नहीं था। था भी तो तीसरे गांव में। वहां केवल लड़के ही जाते थे पढ़ाई करने। वैसे भी, तब लड़कियों को कम ही पढ़ाते थे।

क्यों ?

इसलिए कि लड़की को पराया धन मानते। उन्हें उम्र होने पर ब्याह दिया जाता। पराए घर जाती। इसलिए उन्हें पढ़ाई करने के बजाए घरेलू काम धंधा करना सीखना जरूरी समझते। इसलिए वे पन्द्रह-सोलह वर्ष तक लोकाचार, तीज-त्योहार, ब्रत पूजन आदि का ज्ञान अपनी दादी-अम्मा से दिख-सिख परम्परा में सीखती रहतीं।

दादी ! आप कितने पढ़े हैं ?

कहां पढ़ना था। मेरे मायके चंगर क्षेत्र में थे, न वहां सड़क थी, न स्कूल। दो तीन हट्टियां (दुकानें) थीं जहां लूण-तेल मिल जाता। बड़ी खरीदारी के लिए भौण (कांगड़ा नगर) जाना पड़ता 15-20 मील दूर। बरसात उतरती तो वहां भी जाना मुश्किल हो जाता।

000

उस दिन मैं देर तक दादी-पोती के संवाद को सुनता रहा। एक बार तो मन किया कि आर्किटैक्ट को मना कर दूं। कह दूं कि नहीं बनाना मुझे नया घर। पुराने वाला ही ठीक है। अम्मा की स्मृतियों से जुड़ा घर। परन्तु सुभद्रा कहां मानेगी। ऐसा सोचता तो मन बदल जाता। मैं देर तक भीतर के द्वंद्व से जूझता उससे बातचीत करता नए फ्लैट की ड्राईंग देखता-समझता रहा। आखिर मैं हार गया। अम्मा की ममता हार गई। सुभद्रा की मनसा जीत गई।

000

इस बार में दस साल बाद घर आया था। मां का चवर्ख था। संबंधी तथा गांव के लोग आ जा रहे थे। पूर्व संध्या पर चवर्ख के निमंत्रण थे। दूसरे दिन श्राद्ध पूजन और फिर भोज। मैं सरकार में सचिव पद पर था और सुभद्रा भी। राधिका और विष्णु भी साथ थे। दोनों कम्पीटीशन की तैयारी कर रहे थे। राधिका विष्णु से दो वर्ष बड़ी थी। दो दिन से वह काफी उदास दिख रही थी। मैंने जब भी उसे देखा- वह अतिथियों की देखभाल, संभाल, सेवा में व्यस्त दिखती। उसकी मम्मी उसे इशारे से कहती - 'टेक रैस्ट, डॉंट वि सो बिज़ी।' परन्तु वह कहां रुकती। शाम को देर तक व्यस्त रही थी काम काज में। रात को मुझे दूध देने आई तो बोली थी -

पापा - 'दादी वाज़ वैरी स्वीट लेडी, आज मुझे बहुत याद आ रही थीं।'

तुम ठीक कहती हो। बेटी ! रिश्ते जब करीब होते हैं हम बड़े खुशनसीब होते हैं। जब दूर हो जाते तो हम उतने ही बदनसीब। परन्तु विडम्बना यह है कि जब रिश्ते निकट होते हैं हम उनके प्रति उतनी ही लापरवाही बर्तते हैं, मान सम्मान नहीं देते, उनसे दूर रहते हैं। परन्तु वे हमारे व्यवहार और भावना को देखते-सुनते गूंगे-अंधे, बहरे बने रहते हैं। कोई गिला-शिकवा नहीं करते।

पापा ! ऐसा क्यों ?

क्योंकि वे हमारी दया पर जीते हें। उम्र के पड़ाव पर उनमें न ऊर्जा होती है न खाने-पकाने की समर्थ। पूरी तरह उन पर डिपैण्ड होते हैं। इसलिए खरा-खोटा, अच्छा-बुरा सुनते-सहते हैं। माँ का रिश्ता दोबारा कहां मिलता है, बेटी ! माँ, शब्द ही ऐसा है जिसके उच्चारण से हमारा तन-मन पूरा संवेदित-रोमांचित हो उठता है। हमें माँ की ममता का एहसास होने लगता है।

यस ! पापा ! माँ, माँ ही होती है। मुझे दादी बहुत चाहती थीं, बड़ा प्यार देती थीं। बातों-बातों में जीवन मूल्यों को समझाती अपनाने को कहती, जो आज मेरे लिए अमूल्य हैं। उनकी सुझाई कई बातें मेरे काम आ रही हैं। रीयली, दादी बाज ए ग्रेट लेडी। गत दिनों मुझे यूनिवर्सिटी में जीवन-मूल्यों पर वार्ता देनी थी। मैंने कोई बुक कन्सल्ट नहीं की। दादी की बताई बातें ही भाषण में कह दीं। जिन पर मुझे खूब तालियां मिलीं, सराहना भी।

बेटी ! तूने ऐसी बातें करके मेरा बचपन मुझे लौटा दिया। मुझे ऐसा लग रहा है तू नहीं बल्कि अम्मा पास बैठी है। बतिया रही है। मुझे देख-देख कर कुप्पा हो रही है। बेटी ! ये जो दिन हम मनाते साल के बाद, चार वर्ष बाद, रिश्तों की पुनरावृत्ति के अवसर ही होते हैं। हम उन्हें याद करके, उनकी स्मृति में ऐसे आयोजन कर उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं। अतीत को वर्तमान से जोड़ने का प्रयत्न करते हैं। शायद इसीलिए इन रीतियों का विधान रचा गया है।

- आप बिलकुल सही कह रहे हैं पापा। मैंने दिन में कई औरतों को उनके बारे में कहते सुना। बहुत अच्छा लग रहा था मुझे अपनी दादी के बारे में उनके मुंह से उनकी प्रशंसा भरे वाक्य, सम्मानजनक बातें, जिन्हें सुनकर मैं गौरवान्वित हो रही थी। वे मुझे देखकर परस्पर कहतीं-यह उन्हीं की पोती है। कितनी बड़ी हो गई है। आंखें तो बिलकुल दादी जैसी लग रही हैं और जब विष्णु

नज़ार आता तो कहतीं-देखो, दादी का पोता खड़ा है। जब वह उनके पैर छूकर सम्मान देता तो कहतीं - 'दादी ने अच्छे संस्कार दिए हैं दोनों को।'

बेटी - सही अर्थ में शिक्षित होना जीवन के शाश्वत मूल्यों को मानना-अपनाना है। यदि हम ऐसा नहीं कर पाते तो हमारे और अपढ़ व्यक्ति में क्या अन्तर है। हम कितने भी बड़े बन जाएं हमें सामाजिक-सांस तिक मूल्यों को भूलाना नहीं चाहिए। जीवन की मर्यादा का पालन करना ही सही शिक्षा है।

000

तीन दिन बाद में लॉन में बैठा था एकदम अकेला। सायं ढल रही थी। खेतों-कस्वों से काम निपटाते, दफ्तर से छुट्टी होते गांववासी लौट रहे थे। कुछ पुरानी पोशाक में, कुछ माडर्न। वे मुझे देख रहे थे, मैं उन्हें। कुछ मुझे पहचानते भी, बतियाना भी चाहते। परन्तु मुझे न तो कोई नमस्ते, जय हिन्द करता, न भीतर मिलने आता। मेरे निवास के आगे एक बड़ा गेट लगा था जिस पर लटकी पट्टिका पर लिखा था - कुत्तों से सावधान रहें।' घर में कुत्ता तो था नहीं। फिर भी लोग उसे पढ़कर अन्दर आने में संकोच करते या भय खाते। मैं भी उन्हें कुछ पहचानने की कोशिश में उठकर उन तक जाने या उन्हें बुलाने की सोचता परन्तु तभी मेरा कद मुझे रोक देता। मैं पुनः कुर्सी में धस जाता। मैं सोचता मेरे भीतर क्या विकसित हो गया है जो मुझे अपनों से इतनी दूर ले गया है ? परन्तु मैं समझने की जितनी कोशिश करता हूं उतना ही प्रश्न जटिल होता जाता है। आंखों के सामने मेरा फ्लैट और बगल में अम्मा का घर। दोनों अपनी-अपनी भाषा में कुछ कहते, गुनगुनाते-मैं कुर्सी से उठकर भीतर चला जाता हृदय पर कुछ प्रश्नों का दवाब लेकर।

आज मैं तीन घरों में बट गया हूं। अम्मा का घर, अपना घर और सरकारी आवास। यद्यपि दूसरा-तीसरा सुविधा सम्पन्न है, माडर्न हैं, परन्तु जो सकून अम्मा के घर में मिलता, वह अब कहीं नसीब नहीं। विधि का विधान, अब वह केवल घर है। उसके आसपास की भूमि मुजारा एक्ट के तहत किसानों के नाम चढ़ गई है। केवल आंगन तक सिमिट गया है पुश्तैनी घर। वर्षों बीत गए हैं उसकी लिपाई-पुताई किए। परन्तु देखने में अब भी नया लगता है वह। मार्ग से गुजरता हर कोई कहता है - यह फलां सूबेदार का घर है। सूबेदारनी का घर है। जब तक यह घर खड़ा रहेगा गांव में दोनों जीवित रहेंगे।

000

हम जब भी अवकाश लेकर सप्ताह भर के लिए घर आते तो इतने बड़े फ्लैट में हम दो और अरदली तथा ड्राईवर के अतिरिक्त और कोई नहीं होता। कस्वे के अधिकारी मिलने आते, कभी-कभार जिला कलैक्टर भी, परन्तु वे कुछ देर बैठकर चले जाते। क्षण भर के लिए हंसी-मज़ााक, संवाद होता, फिर सन्नाटा। कुछेक तो शिष्टाचार निभाने आते, लौट जाते। व्यवसाय के दर्जे के कारण अड़ोस-पड़ोस और गांव-कस्वा हमसे जुड़ न सका जिसके लिए अम्मा आज भी हर गांववासी के मन में बसी है। मैंने कईयों को हाथ का इशारा करते बच्चों को बताते सुना है - वो देखो सूबेदारनी अम्मा का घर है।''

ढलती शाम की रोशनी पहाड़ पर ढलती कई रंग बदलती धीरे-धीरे गुम होने लगती। मैं लॉन में घूमता कभी अकेला कभी सुभद्रा भी चार कदम बढ़ाती एक दो चक्कर लगाती, सैर करने के बहाने। मैं चारों तरफ नजर घुमाता देखता सोचता हूं परन्तु मुझे मेरा बचपन, अम्मा का गांव नजर नहीं आता। वह परिवेश की ममता, अपनापन, पड़ोसी गांव के रिश्तों के संबोधन कुछ भी सुनने को नहीं मिलता। अब बेटी भी बतियाने के लिए पास नहीं। वह भी अपने घर चली गई है। विष्णु (लड़का) भी अधिकारी बन गया कहीं पहाड़ के जिला में है। वह भी मेरी तरह रस्मी तौर पर घर आता और लौट जाता है। सियासती दौर में कहां मिलती है फुर्सत किसी अधिकारी को। गांव में या घर आने की जितनी उत्सुकता और चाव होता है, यहां आकर लौटने की भी उतनी ही तड़प हो जाती है। समय की विडम्बना भी कितनी बांध कर रख देती है मनुष्य को। मैंने सुना था कि गांव से नौकरी हेतु बाहर गए जब पन्द्रह दिन या महीने की छुट्टी आते थे तो सारा गांव चहक उठता था। परिवार के हर सदस्य के मन में उसके आने का चाव होता। गप-शप के मंच भी खूब लगते। पारम्परिक खाने पकते। दावतें भी देता अड़ोस-पड़ोस, ताया-चाचे। छुट्टी खत्म होने को आती तो सब का मन बड़ा उदास होने लगता। परिवार के आधे लोग साथ जाते मोटर या रेलगाड़ी पर बैठाने।

मैं चार-पांच दिन रहकर लौटने की सोचता हूं। सामने खड़ा पुश्तैनी घर संवाद करता महसूस होता है। मानो कह रहा हो - रवि ! तुम मेरे पास नहीं आओगे ? मेरे आंगन में खेलोगे नहीं, बगिया में पीपल के पेड़ की टहनी से लगी पींहग (झूला) नहीं झूलोगे। आम की डालियों से आम नहीं उतारोगे। दीपू, रोसो, करमो को नहीं बुलाओ गे ! कोई खेल नहीं रचाओ गे ? मेरा गला रूंधा जाता है ? कहता हुआ भी कह नहीं पाता। कहता हूं तो वह सुन नहीं पाता। घर कहता जा रहा है। अम्मा कहती जा रही है। मैं सुन रहा हूं।

आज मैं तीन घरों में बट गया हूं। अम्मा का घर, अपना घर और सरकारी आवास। यद्यपि दूसरा-तीसरा सुविधा सम्पन्न है, माडर्न हैं, परन्तु जो सकून अम्मा के घर में मिलता, वह अब कहीं नसीब नहीं। विधि का विधान, अब वह केवल घर है। उसके आसपास की भूमि मुजारा एक्ट के तहत किसानों के नाम चढ़ गई है। केवल आंगन तक सिमिट गया है पुश्तैनी घर। वर्षों बीत गए हैं उसकी लिपाई-पुताई किए। परन्तु देखने में अब भी नया लगता

ग़ज़ल

जगदीश तिवारी

जो खुद मंज़िल तय करता है
वो मुझको अच्छा लगता है

दिखने में काला है लेकिन
दिल अपना उजाला रखता है

उसको तुम यूं ही न समझो
वो भी इक सपना रखता है



इतना टूट जाने पर भी
देखो तो कैसे हंसता है

अपनी ही धुन में वो यारों
ठुमक-ठुमक कैसे चलता है

सच्चा होने के कारण ही
झूठे लोगों को खलता है

चल उसको अब गले लगा ले
ऐसे आंखें क्यों मलता है?

3-क-63, सेक्टर-5,
हिरनमगरी, उदयपुर, राजस्थान-313 002
मो. 0 93511 24552

है वह। मार्ग से गुजरता हर कोई कहता है - यह फलां सूबेदार का घर है। सूबेदारनी का घर है। जब तक यह घर खड़ा रहेगा गांव में दोनों जीवित रहेंगे।

000

रवि इस बार गांव में एक खास मन्सा से आया है। सरकार ग्रामीण पर्यटन परियोजना लागू करने जा रही है। उसके मन में चाव है उसके अम्मा-बापू जिन्दा रहें। इसी विचार से वह अम्मा के घर की रेनोवेशन करवाकर इसे गांव की धरोहर घोषित करवाने के प्रयास में है। उसके पुश्तैनी घर में वे सब प्रावधान, सुख-सुविधाएं व वस्तुएं हैं जो धरोहर कही जा सकती हैं। घर की बनावट, शैली, खिड़कियां, दरवाज़ो, चार दिवारी, परौल, सामने अटयाल्घा उस पर वरगद का पेड़, किनारे पर एक छोटी सी बावड़ी, दूसरी ओर कुआं, सामने धवल धार, पर्वतीय ढलानों के सुन्दर मनोरम दृश्य, पार्श्व में घने जंगल से आती वनस्पतियों की गंध लिए ताज़ी हवाएं और बन-पाखियों के मधुर स्वर, सूर्योदय व चन्द्रोदय के मनमोहक दृश्य। घर की छत पर पालकी, सुखपाल, पीतल के बड़े-बड़े भाण्डे बर्तन, पीढ़ियां, कुर्सियां, पलंग, मंजे, संदूकचियां अम्मा-बापू का सहेजा सारा सामान सुरक्षित पड़ा था। ऐसा होता भी क्यों नहीं, माना हुआ घर था सूबेदार का। सूबेदारनी भी बड़ी दयालु, परोपकारी, मददगार, कुशल स्त्री थी। गांव को खरी-बुरी में जिस वस्तु की जरूरत पड़ती, उनके यहां मिलती। लोग भी जरूरत पर सामान ले जाते, बरतने के बाद या गरज पूरी होने पर लौटा जाते। शाल-दुशाले, सोने के कैण्ठे, चन्द्रहार भी ले जाते कुछ लोग शादियों पर।

अचानक एक विचार मुझे कुरेदता है - मैं बेशक बड़ा अधिकारी हो गया हूं। परन्तु मैं लोगों में उतना पापुलर नहीं हो पाया जितने अम्मा-बापू। मैं उन्हीं विशेषताओं की तलाश में हूं जिनके कारण वे आज भी स्मरण किए जाते हैं। काश ! मैं भी अपने बच्चों को ऐसी वरासत, अमिट स्मृतियां दे पाता। मैं कुछ देर और इसी स्थिति में रहता, सुख की सांस ले पाता परन्तु सुभद्रा ने पीछे से आकर कंधे पर हाथ रखते कहा - ''द सन हैज सैट, चलो अन्दर चलकर बैठो। टेबल पर चाय रख दी है। यहां मच्छर काटेगा, बीमार पड़ जाओगे। सेहत का भी खयाल रखा करो प्लीज !''

उसके शब्दों ने मुझे एक और झटका दिया। मुझे अम्मा के साथ बिताए गर्मियों के दिन याद आने लगे। गर्मी तपते ही वह बांस की पांच, छः पक्खियां मंगवा लेती दस्तकार नन्दू से जो बांस के भाण्डे-बर्तन बनाता गांव-वासियों के लिए। हम तीन थे तब घर में सब की चारपाई पर एक-एक पक्खी रखी होती। एक-दो पक्खियां अतिथियों के लिए भी रखी रहतीं। अतिथि जब घर आता तो उसे खाना खिलाते समय अम्मा पक्खी झुलाती। बापू तीन मछरदानियां भी लाए थे फौज से। गर्मियों में आंगन में सोते तो मंजी पर मच्छरदानी तान लेते।

सुभद्रा ने भीतर से अपने शब्द दोहराए - 'आओ न प्लीज़। चाय ठण्डी हो रही है। आई एम बेटिंग हेयर।' मैं उठकर बैलडैकोरेटिड ड्राईंगरूम में जा बैठा। चाए के घूंट भरने लगा। सामने की दीवार पर उभरती अनेक आकृतियां मेरे आस-पास घूमती दिखने लगीं। मुझे बहुत कुछ दिख रहा था वहां परन्तु अम्मा का घर नहीं !!

राजमन्दिर परिसर, नेरटी, कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176208, मो. 0 94181 30860

कहानी

असंग-संग

◆ आचार्य भगवानदेव 'चैतन्य'

सुखदा ने एक संपन्न एवं शिक्षित परिवार में जन्म लिया था। उसके पिता भवानी प्रसाद सेना में बहुत बड़े अधिकारी थे और मां आनंदी कॉलेज में प्राध्यापिका। सुखदा के एक बड़ा भाई था जिसका नाम समर्थ था। सेना में होने के कारण भवानीप्रसाद यदा-कदा अलग-अलग स्थानों में स्थानांतरित होते रहते थे अतः दोनों बच्चे अपनी मां के साथ ही रहे। समर्थ एम.बी.ए. करने के बाद एक कंपनी में लग गया था और सुखदा मनोविज्ञान में शोध करने के बाद उसी कॉलेज में प्राध्यापिका लग गई जिसमें उसकी मां आनंदी सेवा करती थी। समर्थ का विवाह उसी की कम्पनी में कार्यरत लड़की काजल से संपन्न हुआ तथा सुखदा का विवाह उसके पिता भवानी प्रसाद के मित्र के बेटे समीर के साथ संपन्न हुआ। समीर बैंक में अधिकारी था।सुखदा और समीर दोनों ही अपने वैवाहिक जीवन से संतुष्ट थे। समीर के पिताजी मूलतः हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिला के थे मगर उन्होनें शिमला के बालूगंज में अपना मकान बना लिया था। सुखदा और समीर भी उसी मकान में रहते थे। वैसे भी समीर अपने माता-पिता की इकलौती सन्तान थी। कालान्तर में समीर और सुखदा के घर में एक बेटा कार्तिक तथा दो बेटियां अदिति और स्मृति पैदा हुई। सुखदा और समीर ने अच्छे माता-पिता की तरह अपने बच्चों का पालन-पोषण किया तथा उन्हें अच्छे संस्कार प्रदान किए। जब सभी बच्चे पढ़- लिख गए तो उनके विवाह भी कर दिए गए। दोनों बेटियां अपने-अपने घर में सुखी थीं।

संसार परिवर्तनशील है। न जाने कब कहां और किस प्रकार समय करवट बदल ले। कार्तिक की पत्नी मधु ने एक बेटे को जन्म तो दिया मगर प्रसव के कुछ घंटों के बाद ही मधु परलोक सिधार गई। डॉक्टरों ने उसे बचाने का बहुत प्रयास किया मगर उनके वे प्रयास सफल नहीं हो पाए और देखते ही देखते मधु ने संसार से विदा ले ली। मधु के इस प्रकार अचानक चले जाने से कार्तिक तो जैसे विक्षिप्त सा ही हो गया। उसे सभी ने इस बात के लिए राजी करने का प्रयास किया कि वह दूसरा विवाह कर ले मगर इस बात से तो जैसे वह फड़क ही उठता था। सबसे बड़ी समस्या कार्तिक के बेटे विमल को पालने-पोसने की थी। धीरे-धीरे समय बीतता गया मगर कार्तिक पुनः विवाह करने के लिए नहीं माना। एक बार विदेश से कार्तिक के बचपन का मित्र साहस उससे मिलने आया तो सुखदा और समीर ने उससे कहा कि वह किसी न किसी प्रकार कार्तिक को विवाह के लिए राजी करे। साहस केवल एक महीने के लिए भारत आया था। उसने कार्तिक के साथ कुल्लू-मनाली घूमने का कार्यक्रम बनाया ताकि वह कार्तिक की मनोदशा को बदल सके। वह कार्तिक को अपने साथ ले तो गया मगर उसने देखा कि कार्तिक की उदासी दूर नहीं हुई। अब उसने कार्तिक से इस विषय पर सीधे-सीधे ही बात करने का मन बनाया और उससे कहा, 'यार कार्तिक कब तक तुम इस तरह घुट-घुटकर अपने जीवन को बर्बाद करते रहोगे?'

'मैं क्या करूँ यार मेरे मन से मधु की स्मृति एक पल के लिए भी दूर नहीं होती है', कार्तिक ने कहा।

'अच्छा! तू मुझे एक बता कि क्या इस प्रकार मधु को स्मरण करते रहने से वह लौट कर आ जाएगी?'

'मैं जानता हूँ कि नहीं आएगी।'

'तो फिर मेरे यार थोड़ी समझ से काम लो। संसार में तुम इस प्रकार की घटनाएं देखते और सुनते ही रहते हो...संसार है तो यहां संयोग-वियोग लगा ही रहता है। बात अब केवल तुम्हारी नहीं है बल्कि विमल के सही ढंग से पालन-पोषण की भी है... उसे मां का प्यार भी मिलना चाहिए या नहीं...'

'मगर इस बात की क्या गारंटी है कि कोई भी आने वाली महिला विमल को मां का प्यार दे ही सकेगी? मुझे तो इस बात की बहुत ही कम संभावना लगती है।'

'जिन्दगी अगर-मगर और संभावनाओं के सहारे नहीं चलती है कार्तिक बल्कि उसके लिए विश्वास और वास्तविकता का आधार तलाशना पड़ता है... हो तो यह भी सकता है कि तुम्हारी दूसरी पत्नी उसे और तुम्हें भी बहुत-बहुत प्यार दे... और फिर किसी भय और आशंका से कोई काम किया ही न जाए यह कहां की बुद्धिमता है...'

'प्लीज साहस! कोई और बात करो...प्लीज...' कार्तिक ने कहा।

'नहीं। मैं यही बात करूंगा क्योंकि तुम्हें किसी न किसी निर्णय पर पंहुचना चाहिए। यूं अधर में लटक कर सारी आयु नहीं

बिताई जा सकती है। हां यदि विमल कुछ बड़ा हो गया होता और तुम्हारी आयु भी कुछ अधिक होती तो मैं तुम्हें कदापि ऐसा न कहता मगर विमल अभी बहुत ही छोटा है और तुम्हारा भी पूरा जीवन पड़ा हुआ है...मेरी बात को समझने का प्रयास करो कार्तिक इस मामले में बहुत भावुक होने की आवश्यकता नहीं है बल्कि यथार्थ को समझने का प्रयास करो...'

'किसी दूसरी औरत से विवाह करने से अच्छा तो मैं सु-साईड करना बेहतर समझता हूं...'

'हैं...? वाह कार्तिक...वाह ऐसी बात तो कोई कायर व्यक्ति ही कह सकता है। मैं बचपन से तुम्हें जानता हूं मगर मैंने कभी तुम्हें इतना कायर नहीं समझा था...कभी यह भी सोचा है कि आत्महत्या करना कितना बड़ा पाप है...क्या यह तुम्हारे अपने साथ, विमल के साथ और तुम्हारे मां-बाप के साथ न्याय होगा...इससे अधिक बहादुरी का काम तो यह है कि तुम अपने लिए नहीं तो कम से कम दूसरों के लिए जीना सीखो...' साहस ने कहा।

कार्तिक ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

'मैं तुमसे विमल के लिए इस बात का वादा चाहता हूं कि तुम पुनः विवाह करके उसे मां का प्यार दोगे। तुम्हें विमल की ही कसम दे रहा हूं...'

'मुझे इस कठिन परिस्थिति में मत उलझाओ साहस...तुम मेरे मित्र हो...सबसे अधिक विश्वसनीय मित्र...'

'तो फिर मेरी बात क्यों नहीं मानते हो...'

'इसलिए कि मुझे डर है कि विमल और मुझे कोई दूसरी औरत उतना प्यार नहीं दे सकती है जितना कि मधु ने दिया है या दे सकती थी। तुम सोचो यदि दूसरी किसी औरत के कारण मेरी गृहस्थी में और अधिक दुःख आ गया तो फिर मैं क्या करूंगा।'

'देखो मित्र! इस बात की गारंटी तो मैं भी नहीं दे सकता हूं कि भविष्य में क्या होगा मगर मुझे वर्तमान में ऐसा करना ही उचित और सुखद लग रहा है। तुम्हारे मां-बाप की भी ऐसी ही कामना है सो मैंने तुमसे कह दी है। कल्पना करो कि भविष्य में यदि कुछ ऐसा विपरीत हो भी जाता है तो उस समय वैसा समाधान खोजा जाना चाहिए मगर किसी बात को केवल इसलिए नहीं त्याग देना चाहिए कि इससे भविष्य में ऐसा हो सकता है...या वैसा हो सकता है...' साहस ने कहा।

'तो क्या कोई निर्णय आंखें मून्दकर ही ले लेना चाहिए...यह तो सोचना ही पड़ता है कि भविष्य में इसका क्या परिणाम होगा'

'अवश्य सोचना चहिए मगर ऐसा ही होगा यह सोचना भी तो गलत है। सोचना यह है कि दूसरी लड़की का चयन सावधानी और पर्याप्त निरीक्षण-परीक्षण के बाद किया जाए और फिर अंततः कहीं न कहीं तो स्वयं को नीयति के हाथों में भी सौंपना पड़ता है कार्तिक। जब मधु से तुम्हारा विवाह होना तय हो रहा था तो क्या तुमने इस प्रकार की आशंका की थी कि कहीं मधु की मृत्यु न हो जाए इसलिए मैं विवाह नहीं करूंगा...अपने लिए नहीं तो कम से कम दूसरों के लिए तुम्हें आज की डेट में ऐसा ही करना चाहिए जैसा मैं कह रहा हूं... हां इस बात की गारंटी तो मैं भी नहीं दे सकता हूं कि भविष्य में सब-कुछ ठीक ही ठीक होगा...कुछ तो व्यक्ति का भाग्य भी होता है कार्तिक। अब मैंने तुम्हें सब-कुछ साफ-साफ कह दिया है। आगे तुम्हारी जो इच्छा हो करो। एक बार यह बात पुनः दोहरा दूं कि तुम्हारे मां-बाप की भी यही प्रबल इच्छा है।' साहस बोला।

साहस की बातें सुनने के बाद कार्तिक सिर झुकाकर गंभीरता से कुछ देर तक सोचता रहा और फिर बोला, 'चलो! मैं कल सुबह तुम्हें अपना निर्णय सुना दूंगा।'

अगले दिन कार्तिक ने साहस से अपना निर्णय विवाह कर लेने के रूप में सुनाया। हालांकि उसने यह बात बहुत ही अनमने ढंग से कही थी मगर उसके मां-बाप उसके इस निर्णय से बहुत प्रसन्न हुए तथा उसके लिए किसी अच्छी सी लड़की की तलाश में जुट गए। लगभग तीन महीने के प्रयास के बाद उनका एक ऐसे परिवार से सम्पर्क हुआ जो अपनी बेटी का विवाह कार्तिक से करने के लिए तैयार हो गया। ये लोग पंचकूला के रहने वाले थे। ये लोग तिथि सुनिश्चित करके एक दिन स्वयं अपनी बेटी तब्बू को साथ लेकर विस्तृत बात-चीत करने के लिए आए। दोनों समधी दम्पत्तियों की आपस में बातचीत हुई। कार्तिक और तब्बू ने भी आपस में बातचीत की। कार्तिक ने उससे विशेषतः यही आग्रह किया कि वह विमल को अपने के बच्चे की तरह स्नेह प्रदान करेगी...तब्बू ने इस बात को आत्मना स्वीकार किया। दोनों ओर से सहमति हो जाने के बाद बहुत ही सादगी के साथ स्थानीय आर्य समाज भवन में कार्तिक और तब्बू का विवाह सम्पन्न हो गया। इस विवाह से सभी आश्वस्त हुए कि चलो कार्तिक तथा विमल के जीवन में अचानक जो अप्रत्याशित अभाव आ उपस्थित हुआ था, वह दूर हो गया।लगभग तीन-चार वर्ष तो सब-कुछ ठीक-ठाक चलता रहा मगर जब तब्बू की अपनी एक बेटी हुई तो सभी को उसके स्वभाव में कुछ परिवर्तन दिखने आरंभ हो गए। विमल के प्रति वह बहुत उपेक्षित भाव रखने लगी। उसके इस बदलते स्वभाव को प्रारंभ में तो सभी अनदेखा करते रहे मगर जब उसने बेवजह विमल को बात-बात पर पीटना आरंभ कर दिया तो कार्तिक से नहीं रहा गया और एक दिन उसने इसके लिए तब्बू को खूब खरी-खोटी सुनाई... उसे विवाह से पूर्व की गई प्रतिज्ञा स्मरण कराई... मगर तब्बू के स्वभाव में जरा सा भी अन्तर नहीं आया। इससे न केवल विमल स्वयं को अत्यधिक उपेक्षित सा अनुभव करने लगा बल्कि पूरे परिवार में तनाव सा रहने लगा। विशेषतः कार्तिक बहुत दुःखी रहने लगा। किसी को कोई उपाय समझ नहीं आ रहा था अतः यूं ही दिन बीतते गए।

इधर सुखदा के पति समीर का बैंक की सेवा से सेवामुक्त

होने का दिन आ गया। हालांकि परिवार में तनाव का माहौल निरंतर बना रहता था मगर सेवानिवृत्ति के दिन एक बहुत बड़े भोज का आयोजन किया गया। जिसमें तब्बू के मां-बाप तथा अन्य संबंधियों को भी बुलाया गया।लोगों का खूब आना-जाना लगा रहा। रात्रि को सुखदा और समीर ने तब्बू के मां-बाप को अपने कमरे में बुलाकर पूरी स्थिति से अवगत कराया तथा उनसे तब्बू को समझाने के लिए कहा। बहुत देर रात तक बातचीत होती रही मगर सुखदा और समीर को लगा कि तब्बू के मां-बाप इस बात में कोई विशेष रुचि नहीं ले रहे हैं बल्कि बात-बात में तब्बू का ही पक्ष ले रहे हैं... असमंजस जैसी स्थिति में ही बात-चीत समाप्त हो गई। दिन बीतते गए मगर तब्बू का स्वभाव दिन-प्रतिदिन बद से बदतर होता चला गया। अब वह न तो विमल को स्कूल जाने के लिए तैयार करती थी और न ही ठीक ढंग से उसे नाश्ता तथा भोजन आदि करवाती थी। यह सब कार्तिक को ही करना पड़ता था। सुखदा जब कभी कुछ कहने का प्रयास करती थी तो तब्बू उसे बहुत जली-कटी सुना देती थी। जैसे-कैसे समय व्यतीत हो रहा था मगर एक दिन सुखदा पर तो जैसे आसमान ही गिर पड़ा। समीर की अचानक हृदयगति रुकने से मृत्यु हो गई। पति-पत्नी में से जब कोई एक नहीं रहता है तो जो पीछे रह जाता है उसके जीवन में कई प्रकार के परिवर्तन आते हैं। यह परिवर्तन आना स्वाभाविक भी है क्योंकि एक नए सिरे से समूची व्यवस्था करवट लेती है। सुखदा के जीवन में भी कुछ ऐसा ही हुआ। अब तो तब्बू उसके साथ किसी नौकरानी से भी बदतर व्यवहार करने लगी। सुखदा को धीरे-धीरे घर-गृहस्थी से वितृष्णा सी हो गई और उसने एक दिन वानप्रस्थ में प्रवेश करने का निर्णय ले लिया। उसके एक बहुत पुराने परिचित महात्मा थे। उनके आश्रम में जाकर उसने वानप्रस्थ की दीक्षा ली और उनके ही आश्रम में रहने लगी। अब वहां साधना और स्वाध्याय तथा सेवा में उसका जीवन बहुत शांतिपूर्वक व्यतीत हो रहा था। लेकिन यह शांति बहुत दिन तक नहीं रही...एक दिन कार्तिक विमल को लेकर आश्रम में आ गया। वह सुखदा से लिपट कर बच्चों की तरह रोने लगा। उसने कहा, 'मां! तब्बू विमल को अकेले में बहुत बुरी तरह से डांटती, फटकारती और पीटती है...ताने मारती है... जिससे विमल डिप्रैशन का शिकार होने लगा है...कुछ भी खाता-पीता नहीं है...बस चुपचाप किसी गहरी सोच में डूबा रहता है...'

सुखदा का हृदय भर आया तथा आंखों से आंसू टपक पड़े। वह स्वयं को भीतर ही भीतर अत्यधिक पीड़ित अनुभव कर रही थी। तीव्र संवेग के कारण वह कुछ बोल भी नहीं पाई। बस उसने लपक कर विमल को अपनी छाती से चिपका लिया। कार्तिक ने कहा, 'मां! तुम्हें घर वापस चलना होगा क्योंकि मैं विमल को अब उसके भरोसे एक पल भी नहीं छोड़ सकता हूं। वह इसके साथ कभी भी, कुछ भी कर सकती है...'

'मगर बेटा... 'सुखदा कुछ कहती इससे पूर्व ही कार्तिक पुनः बोला, 'मां! मैं आपकी कोई बात नहीं सुनूंगा... आपको घर चलना ही होगा...कम से कम विमल के लिए... मुझे पता है कि यदि विमल को आपका साथ मिला तो इसका जीवन बच जाएगा... अन्यथा'

'चलो ठीक है मैं स्वामीजी से कुछ समय के लिए घर जाने की अनुमति ले लूंगी और कल ही यहां से चल पड़ेंगे।' सुखदा ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा।

स्वामीजी ने सुखदा को अनुमति दे दी तथा वह कार्तिक के साथ वापस घर आ गई। अब वह विमल को अपने साथ ही सुलाती थी... स्वयं उसे स्कूल के लिए तैयार करती थी...स्वयं ही उसे नाश्ता व भोजन आदि करवाती थी। उसे प्रसन्न करने का भरसक प्रयास करती थी। सुखदा ऐसे बहुत कम अवसर आने देती थी जिसमें उसका सामना तब्बू से हो जाए... दादी का प्रेम पाकर धीरे-धीरे विमल नार्मल होता गया। अब वह पुनः हंसने-खेलने लगा था। सुखदा को यहां आए हुए लगभग पांच महीने हो गए तथा अब विमल पूरी तरह से सामान्य हो गया था। एक दिन सुखदा सोचने लगी कि मैं तो पुनः घर-गृहस्थी के ही चक्कर में फंस गई। फिर विचार आया कि यदि मैं अपने सुख और शान्ति के लिए कार्तिक और विमल को बर्बाद और दुःखी होने के लिए छोड़ दूं तो यह भी ठीक नहीं है... यदि मैं आश्रम चली गई तो विमल पुनः असहाय और असुरक्षित हो जाएगा। कार्तिक भी पुनः दुःखी हो जाएगा... तरह-तरह के विचार उसके मन में कौंध रहे थे... मगर अपने मन की शान्ति और साधना के लिए उसका आश्रम जाना भी आवश्यक है... उसने कार्तिक को अपनी समस्या बताई तो उसने कहा, 'प्लीज मां! अब आप कभी जाने का नाम न लेना। आपके आने से ही विमल का जीवन बच पाया है अन्यथा यह या तो पागल हो जाता या... और यदि विमल को कुछ हो जाता तो मैं भी...आप अब कभी कहीं नहीं जाओगी मां...'

'मगर बेटा! मैंने वानप्रस्थ की दीक्षा ली है और मुझे अपनी साधना करनी है...'

'साधना करने के लिए आपको जिस प्रकार की सुविधाएं चाहिए उनकी मैं यहीं पर व्यवस्था कर दूंगा। यदि आप चली जाएंगी तो विमल की फिर से वैसी ही स्थिति हो जाएगी...मैंने कह दिया कि आप अब कहीं नहीं जाएंगी...' कार्तिक ने कहा।

कार्तिक अपने काम पर चला गया और विमल स्कूल। सुखदा को स्वयं लग रहा था कि इस समय विमल और कार्तिक की समस्या का समाधान बने रहना ही उसका प्रमुख दायित्व है मगर वह इस बात पर विचार करने लगी कि क्यों न ऐसी कोई व्यवस्था बना दी जाए जिससे विमल का पालन-पोषण भी ठीक प्रकार से हो सके और वह भी अपने आश्रम में जाकर साधनामय जीवन भी व्यतीत कर सके। आदमी सोचता है तो कोई न कोई समाधान भी

सामने आ जाता है। उसकी दो बेटियाँ इसी शहर में रहती थीं। उसने सोचा कि विमल को क्यों न अपनी छोटी बेटी स्मृति के पास छोड़ा जाए...हालांकि उसका अपना भी एक बेटा और एक बेटी थे मगर उससे पूछकर ऐसा निर्णय लिया जा सकता है। रात को उसने इस सम्बन्ध में कार्तिक से बात की तो पहले तो वह नहीं माना मगर जब सुखदा ने उसे विस्तार से समझाया तो वह मान गया। अगले दिन सुखदा ने छोटी बेटी स्मृति को अपने यहां बुलाकर उसे पूरी स्थिति से अवगत कराया। पहले तो वह भी न-नुकर करती रही मगर जब कार्तिक और विशेषतः विमल की परेशानी के बारे में उसे विस्तार से बताया तो अंततः वह मान गई। अन्त में विमल से पूछा गया तो वह भी मान गया। यह भी तय हुआ कि कार्तिक प्रतिमाह एक मुश्त राशि भी स्मृति को दिया करेगा। सुखदा सारी व्यवस्था करके निश्चिन्त होकर पुनः आश्रम में आ गई। वह पुनः आश्रम की सुव्यवस्थित दिनचर्या में अपने स्वाध्याय, सेवा और साधना में लग गई। सुखदा को आश्रम आए हुए लगभग तीन वर्श पूरे हो गए। इस बीच वह अपने सम्बन्धियों को मिलने नहीं गई मगर हां फोन पर कार्तिक तथा विमल और दूसरे पारिवारिक सदस्यों के हाल-चाल वह जान लिया करती थी। चार बार कार्तिक तथा विमल भी आश्रम में उससे मिलने के लिए आए। बढ़ती आयु का प्रभाव हर किसी व्यक्ति पर निश्चित रूप से पड़ता ही है। सुखदा को पहले से ही उच्च्व-रक्तचाप और मधुमेह की बीमारी थी जिसका वह निरन्तर उपचार करवाती रहती थी। अब उसे बहुमूत्र की बीमारी भी हो गई थी तथा पेट भी निरन्तर खराब रहता था। जैसे- कैसे फिर भी आश्रम में उसका साधनामय जीवन चला हुआ था मगर एक दिन रात को उसके सीने में बहुत तेज दर्द उठा। उसने अपने पास वाली कुटिया में रहने वाली महिला को फोन करके बुलाया।उस महिला को आशंका हुई कि कहीं यह दर्द हृदयाघात के कारण तो नहीं है मगर सुखदा ने यह कहकर टाल दिया कि यह गैस के कारण ही है...और कुछ नहीं। फिर भी रात को ही आश्रम के डॉक्टर को बुलाया गया। उसने निरीक्षण-परीक्षण किया तो पता चला कि वास्तव में ही सुखदा को हृदयाघात हुआ है। प्रारंभिक उपचार करने के बाद रात को ही कार्तिक को फोन कर दिया गया और सुबह होते-होते वह आश्रम पहुंच भी गया।

सुखदा को कार्तिक अपने साथ ले आया तथा उसके ठहरने की व्यवस्था स्मृति के यहां की गई। अगले दिन सुखदा को अस्पताल में एडमिट किया गया। वहां लगभग पन्द्रह दिन उसका उपचार चला। एंजियोग्राफी आदि के बाद उसे अस्पताल से छुट्टी मिल गई। लगभग तीन महीने सुखदा स्मृति के यहां ही रही मगर फिर उसने आश्रम जाने का कार्यक्रम बना लिया। कार्तिक और स्मृति आदि उसे अब आश्रम भेजने के पक्ष में नहीं थे मगर सुखदा के सामने उनकी एक न चली और वह आश्रम आ गई। हालांकि अब आश्रम में भी उसका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक नहीं रहता था मगर अपनी साधना और स्वाध्याय को प्रमुखता देने के दृष्टिकोण से ही वह आश्रम चली आई थी। वह जानती थी कि घर-गृहस्थी के वातावरण में यह सब सही प्रकार से नहीं हो पाता है। अभी उसे आश्रम आए हुए केवल चार महीने ही हुए थे कि एक दिन स्मृति और उसका पति मनीष आश्रम आ गए। वे सुखदा को अपने साथ ले जाने के उद्देश्य से आए थे। देर रात तक बातें होती रही मगर सुखदा जाने के लिए बिलकुल भी तैयार नहीं हुई। बातचीत करते-करते सुखदा को इस बात का अहसास हुआ कि वे लोग उसे वापस ले जाने के लिए इस बार विनम्रता से नहीं बल्कि आदेशात्मक ढंग से बातें कर रहे थे। उसे यह भी अनुभव हुआ कि वे हर हालत में उसे ले जाने की जैसे योजना बनाकर आए हों और इसके पीछे अवश्य ही इनका अपना कोई न कोई स्वार्थ है
इसीलिए बातें करते-करते स्मृति ने अपने शब्दों पर बल देते हुए कहा, 'देखो मां! घर तो अब तुम्हें चलना ही होगा...हर हालत में. ..'

'क्यों...तुम ऐसा क्यों कह रही हो...कोई जबरदस्ती है क्या. ..' सुखदा ने थोड़ी नाराजगी जताते हुए कहा।

'कुछ ऐसा ही समझ लो...' स्मृति के स्वर में निश्चिन्तता थी।

'तुम कहना क्या चाहती हो स्मृति...'

'देखो मां! सीधी सी बात है। हमारे अपने दो बच्चे हैं जो अब दिन-प्रतिदिन बड़े हो रहे हैं। स्वाभाविक है कि हमारे उत्तरदायित्व बढ़ रहे हैं और फिर ऊपर से विमल की देख-रेख भी हमें ही करनी पड़ रही है। आखिर ऐसा कब तक और कैसे चलेगा मां...' स्मृति ने कहा।

'देखो स्मृति...यह ठीक है कि विमल के कारण तुम लोगों का दायित्व कुछ अधिक बढ़ा है मगर क्या तुम इतना भी कार्तिक के लिए नहीं कर सकते हो...आखिर वह तुम्हारा भाई है...और बेचारे के ऊपर एक से एक दुःख आते चले गए हैं... एक-दूसरे का सहयोग करना सबका दायित्व है...' सुखदा ने उसे समझाते हुए कहा।

'ठीक है मां! हम आपकी बात मानते हैं मगर हम सब आपके भी तो बच्चे हैं... क्या आपका दायित्व नहीं बनता है कि आप हमारी सहायता करें... आपके आने से कुछ न कुछ तो हमारा सहयोग होगा ही... आप हमारे बच्चों को संभाल सकोगी...यह भी नहीं तो कम से कम घर की रखवाली तो हो ही जाएगी... उस ओर से तो हम निश्चिन्त हो जाएंगे... स्मृति ने सीधा-सीधा ही कह दिया।

'यह तुम क्या कहे जा रही हो स्मृति... मैंने विधिवत् वानप्रस्थ की दीक्षा ली है... यह तो हमारी संस्कृति की परम्परा रही है। अब मैं घर-गृहस्थी के दायित्व नहीं संभाल सकती हूं। तुम लोग मिल-जुलकर इन दायित्वों का निर्वहन करो...मैं मानती हूं कि

वानप्रस्थी या संन्यासी होने का अर्थ अपने दायित्वों से भागना नहीं होता है मगर हां हमारे दायित्वों का क्षेत्र बढ़ जाता है...' सुखदा ने उदासीन भाव से कहा।

'ऐसे नहीं चलेगा मां... घर तो तुम्हें अब चलना ही होगा..' स्मृति ने अपने शब्दों पर दबाव देते हुए कहा।

'अरे तू तो ऐसे कह रही हो जैसे मैं तुम्हारी गुलाम हूं। मैं नहीं जाती... मैं अब वानप्रस्थी हूं और मुझे अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त करना है...' सुखदा ने भी तनिक आवेश में आकर कहा।

'अभी हाल ही में हार्ट प्रॉब्लम हुई थी न... तब कौन काम आया था आपके... हमीं लोग न... कान खोल कर सुन लो मां आप सौ बीमारियां लिए फिरती हो...यदि कल को कुछ ऐसा-वैसा हो गया तो हम भी तुम्हारे लिए कोई सहयोग नहीं करेंगे...' स्मृति ने कहा।

स्मृति की बातों को सुनकर सुखदा आश्चर्य से उसे देखती भर रही।

'अच्छा अब बहुत समय हो गया है...सो जाते हैं...अपना सामान आदि पैक कर लेना। सुबह हमने लगभग आठ बजे निकल जाना है...' स्मृति ने कहा और दूसरे कमरे में चली गई।

स्मृति के जाने के बाद भी सुखदा स्वयं को सहज नहीं कर पा रही थी। स्मृति ने उसके सामने बहुत ही कठिन परिस्थिति लाकर खड़ी कर दी थी। एक तरह से देखे तो उसने जो कुछ कहा था वह सत्य भी था। मगर दूसरी ओर उसे यह भी लग रहा था कि वे लोग उसे इस तरह का भय दिखाकर उसका मिसयूज करना चाहते हैं... सुखदा को इस उहापोह में सारी रात नीन्द नहीं आई। उसका मन उन लोगों के साथ जाने का बिलकुल भी नहीं था मगर स्मृति ने जो भय उसे दिखाया था कि बीमार होने पर वे लोग उसकी सहायता नहीं करेंगे। इससे सुखदा बहुत परेशान हो गई थी। वह जानती थी कि वास्तव में ही उसे अनेक बीमारियों ने ग्रस्त रखा है और शरीर का कोई भरोसा नहीं कब क्या हो जाए... अंतिम समय में व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक स्थिति कैसी बन जाए इस संबंध में कुछ नहीं कहा जा सकता है... ऐसे समय में निश्चित ही अपनों की आवश्यकता तो पड़ती ही है... सुखदा ने खिड़की से पूर्व दिशा की ओर झांका... सूर्योदय में अभी समय था। उसने एक गहरा सांस लिया और अपना सामान पैक करके गुरुजी की अनुमति लेने उनकी कुटिया की ओर चल पड़ी।

महर्षि दयानंद धाम, महादेव, सुन्दरनगर,
जिला मंडी, हि. प्र.-175018, मो. 0 94180 53092

कविता

नियति

परमदेव शर्मा

नहीं चाहिए ऐश-ओ-आराम
तेरे आंगन का छोटा सा कौना चाहिए
दुनिया की रहमतों को कर दरकिनार
तेरे आंचल का प्यार बिछौना चाहिए
क्यों इस जहां में तन्हा छोड़ गई
मुझे भी मां, सपना सलोना चाहिए।
क्या आती नहीं याद?
एक नन्ही सी कली खिली या फिर मुरझा गई
जिसकी तपिश तुम झेल न पाई
उसी आग में जलने को छोड़ गई
लोरी पर हक था जिसका, रातें सूनी छोड़ गई
तुम संग मुस्कुराना चाहती थी जो
आंसुओं में उसे डुबो गई
क्या होती है मां की ममता
क्यों पाषाण हृदय हो गई
बच्चे की दुनिया मां की गोद
कहां अपनी दुनिया बसाऊं मैं
ममता की मूरत कैसी होगी
कैसे अनुमान लगाऊं मैं
बाकी सब मां की उंगली थामे
किसका दामन थामू मैं
कौन नापाक नजरों से बचाएगा मुझे
गलत सही का फर्क कौन बताएगा मुझे
डर कर जब दुबक के छिप जाती मैं
ढाल बनके कौन बचाए मुझे।

प्रवक्ता वाणिज्य, रा.व. मा. पा. संजौली,
शिमला-171 006
मो. 0 94180 60071

कहानी

आभास

निधि अग्रवाल

पर्दों के बीच की झिरी से सूरज की किरणें वनिता के चेहरे पर ऐसे पड़ रही थी जैसे किसी मंच पर प्रमुख किरदार के चेहरे पर स्पॉटलाइट डालकर उसके चेहरे के भावों को उभारा जाए। रुखे बिखरे काले बालों में से कुछ जगह बना झांकते हुये उज्ज्वल चेहरे पर मुंदी हुई दो बड़ी-बड़ी पलकें बीच-बीच में कुछ हिलती सी प्रतीत होती और उन गुलाबी अधरों पर एक स्मित तैर जाती।

"वनिता...वनिता... उठ आठ बज गए। कोई बताये भला इस लड़की का क्या होगा?", यह नानी का स्वर था ।

"अब उठ, सौ बार कहा है कि इस उम्र में मुझसे अब इतना नहीं होता । इतनी बड़ी हो गई लेकिन मजाल है कि मदद कर दे. ..", नानी का बड़बड़ाना जारी था। इतने में वनिता की मामी सुलक्षणा कमरे में आई। उन्होंने खिड़की पर फैले पर्दों को हटा कर एक किनारे किया और वनिता की चादर खींची। उन्होंने उसे भी खींच कर बिस्तर से नीचे लटका दिया। वनिता गिरते-गिरते बची। अचकचा कर उठ खड़ी हुई।

"जा चाय चढ़ा... मैं स्कूल जा रही हूं। बच्चों का टिफिन अच्छे से पैक करियो। कल परांठे बहुत मोटे थे... समझी!", सुलक्षणा की खासियत है कितना भी कड़वा बोले, वह आवाज कभी ऊंची नहीं करती, लेकिन वनिता जानती है कि उनके बोलने से उनका ना बोलना सदा उसके लिए अधिक घातक सिद्ध हुआ है।

"तुझ से ही संभलती है... मेरी तो सुनती ही नहीं" , कहती हुई नानी वनिता के उठने पर खाली हुए बिस्तर पर बैठ अपने पैर दबाने लगी।

दो कमरों के इस घर में यह कमरा दिन में मेहमानों के लिए और रात में बच्चों, नानी और वनिता के हिस्से आता था। यूँ वनिता के हिस्से तो बस एक जंग लगा संदूक था जिसमें उसके चार जोड़ी कपड़े और जरूरत भर का सामान रहता। बाकी घर की हर चीज हर जगह से वह यूं संकुचा कर निकलती, या इस्तेमाल करती कि कभी गलती से भी वह अपने मेहनताने से कुछ ज्यादा न वसूल ले। कभी गहरी सांस लेने पर भी वह डर जाती। लगता कि अब सुलक्षणा मामी बोलेंगी कि वनिता तू जानती है ना... कि बिन मां-बाप की लड़कियों का क्या हाल होता है ! वह संगीता.. . अखबार में फोटो आयी थी तेरे गांव की ही थी ना! तुझ पर तरस खा तेरे मां बाप के मरने के बाद सिर्फ इसलिए ले आई कि लड़की जात है कुछ ऊंच-नीच हो गई तो नाम तो अपने खानदान का ही डूबेगा ना। लेकिन यह मतलब तो नहीं कि तू मेरे बच्चों के हिस्से की ऑक्सीजन भी खींच डाले!

वनिता ने बाल बांधे, कुल्ला किया और सीधे रसोई का रुख किया। बच्चों के टिफिन तैयार कर उनके बैग में रखे, नानी के लिए भी चाय-नाश्ता तैयार कर उन्हें कमरे में पकड़ा आई। बच्चों को बस स्टॉप पर छोड़ कर आने की जिम्मेदारी भी वनिता की ही है। बच्चों को छोड़ने आये अन्य लोगों की तरह बच्चों के बस में चढ़ने पर वनिता का हाथ भी 'बाय' करने अपने आप ही उठ जाता है.. पर, दोनों बच्चे इसे अपनी तौहीन समझ मुँह फेर लेते हैं।

'हर दिन अपनी बेइज्जती कराना जरूरी है क्या ?'

यह आभास की आवाज थी। वनिता का दिल हुआ दौड़कर उसके गले लग जाए और जी भर कर रो ले। उसको कहे कि तुम जहां ले चलो मैं वहां चलने को तैयार हूं। जैसा रखोगे वैसा रह लूंगी। कम से कम हर पल मिलने वाली इस बेइज्जती से तो मुक्ति दिला दो। लेकिन, वह बस कातर दृष्टि से एकबारगी उसकी ओर देखती है और सधे हुए कदमों से वापस घर लौटने लगती है।

आभास उसके साथ-साथ चल रहा है उसके चेहरे से लगता है कि वनिता से अधिक वह आहत है। पर अब यह रोज का नियम है । आभास कुछ नहीं कहता... बस चलता रहता है। उससे कुछ दूरी बना, लेकिन साथ-साथ। घर पहुंच कर वनिता ने एक बार पलट कर आभास को देखा। उसने आंखों से ही उसे आश्वस्त किया । वनिता जानती है कि वह रसोई की खिड़की पर जरूर मिलेगा। बाहर के कमरे में ही नानी बैठी टीवी देख रही हैं...कोई धार्मिक प्रवचन!

"नानी क्या बनाना है?", वनिता ने पूछा।

नानी ने मुंह पर अंगुली रख चुप रहने का इशारा किया और टीवी के नीचे स्टूल पर रखी तेल की शीशी से पैरों की मालिश करने

के लिए भी! वनिता का मन रसोई में पड़ा है। नानी के घुटने मलते-मलते सोच रही है कि क्या आभास अभी भी रुका होगा? अचानक उसे लगा जैसे रसोई की ओर खुलने वाले दरवाजे की ओर से झांककर आभास उसकी बेचैनी पर हंस रहा हो। वह डर गई। कहीं नानी ने देख लिया तो! वह उठ खड़ी हुई

"नानी...कपड़े धो लूं क्या पहले? ठंड के दिन हैं, सूख नहीं पाते फिर... ।", कहा वनिता ने।

"हां-हां, तू जा यहां से", नानी उसे कुछ धकेलती-सी बोली। सुलक्षणा मामी बिलकुल सही कहती है कि बिन मां-बाप की लड़की की जिंदगी वनिता से अधिक भला कौन समझता है।

"बाहर आंगन में धोइयो कपड़े... नहीं तो नल की आवाज में टीवी और नहीं सुनता", उन्होंने फरमान भी सुना दिया था।

"ठीक है नानी", कह वनिता ने सब कपड़े और साबुन-बाल्टी बाहर ले जाने के लिए उठा लिए। यूं भी तीन गुणा तीन फीट के छोटे से बाथरूम में कपड़े धोने की अपेक्षा यहां खुले आंगन में कपड़े धोना उसे अधिक भाता था लेकिन सुलक्षणा मामी को इस पर सख्त ऐतराज था। वनिता ने कपड़े धोने शुरू किए। चार बड़े और दो बच्चों के इस परिवार में ना जाने कहां से रोज एक कपड़ों का पहाड़ तैयार हो जाता था। चार बड़े और दो बच्चे.... वह खुद ही हंस पड़ी! मां-बाप की सड़क हादसे में मृत्यु के साथ ही वह दस साल बड़ी होकर वयस्कों में शामिल जो हो गई थी। जहां मां ने कभी उस से पानी का एक गिलास नहीं भरवाया था वहीं इस घर में आते ही पहले ही दिन उसे हैंडपंप की लाइन में लगा दिया गया। वह तो शुक्र हो सरकार का कि इस साल हर घर में पानी की पाइप लाइन बिछा दी गई है, और उसकी जिंदगी थोड़ी तो आसान हो गई थी।

"ले मेरी यह साड़ी भी धो दे, ज्यादा सा नीला साबुन लगा दियो...", अचानक आई नानी की आवाज से वह चौंकी, नल बंद कर खड़ी हुई साड़ी पकड़ने के लिए ।

"अरे, जल्दी कर... शुरू हो गया प्रवचन", नानी एक भी लाइन नहीं छोड़ना चाहती! क्या पता उसी लाइन में महाराज स्वर्ग की राह बता दें। हड़बड़ी में वनिता का पैर गीले साबुन पर पड़ गया ...और फिसल कर गिर गई वह! कपड़े धोने के लिए घोला गया सर्फ का पानी भी गिरा और लोहे की बाल्टी का हैंडल उसके हाथ में आ लगा। इस घटनाक्रम में उसका सर नल से जा टकराया।

"हे भगवान! एक काम नहीं होता इससे...अब सुलक्षणा अलग चिल्लाएगी इतनी बर्बादी देख! मर यहीं ...मैं क्या-क्या करूं. .. साड़ी वहीं फेंक नानी वापस टीवी के सामने जा बैठी!

वनिता की आंखों के सामने एकबारगी पूरा ब्रह्मांड घूम गया। ऐसा लगा कि जैसे पूरे शरीर का खून उसके मुंह में भर गया हो। पीड़ा के इन आंसुओं को रोकने की क्षमता सत्रह साल की इस निर्बल लड़की में नहीं थी। आभास जो अभी तक दूर खड़ा सब देख रहा था, अब बिलकुल नजदीक चला आया। वनिता को उठाकर पटरे पर बिठाया... नल खोल मग में पानी भर उसे कुल्ला करने के लिए कहा! "आभास..... !!", वनिता ने कहा और न चाहते हुए भी उसके आंसू बह निकले। होठों को भीच उसने सिसकने की आवाज तो रोक ली थी, नानी ने सुन लिया तो?

'मैं मर क्यों नहीं जाती?', दोनों हाथों से सिर पर निकल आये गुमट को दबाते हुए वह बुदबुदाई।

'फिर मेरा क्या होगा?', आभास ने कोमलता से कहा और उसका हाथ हटा उसका सिर दबाने लगा। वनिता चाहती है कि वह उसे अपने आगोश में भर ले, वैसे ही जैसे बाबा भर लिया करते थे मां के डांटने पर!

"रहने दो यह कपड़े... जाओ, हाथ-मुंह धो सूखे कपड़े पहन लो। बीमार हो जाओगी', आभास के स्वर में अपनापन था।

'मामी गुस्सा होंगी... धोने तो होंगे ही !', वनिता ने बात रखी.

'हम्म... तब भी, बदल तो आओ ही', आभास ने उसे सहारा दे उठाया।

वनिता कपड़े बदल कर आई। पोर-पोर दुःख रहा था। तब तक आभास ने वाइपर से साबुन का पानी हटा दिया था और टब में कपड़े भिगाने के लिए डाल दिए थे। बहुत कहने पर भी वह गया नहीं। वनिता का दिल जोरों से धड़कता रहा। किसी ने देख लिया तो?

'ध्यान रखना अपना', उसके हाथ पर उभर आई सूजन को सहलाते हुए आभास ने कहा। वह दोनों उस वक्त चुंबक के विपरीत ध्रुवों के समान खिंचाव महसूस कर रहे थे।

'एक चाय तो बना ही लेना अपने लिए, और भी सब काम करोगी ही न', आभास ने कहा।

वनिता के आंसू बह चले। यही वह पल था जब समाज की सभी लक्ष्मण रेखायें मानो एक साथ मिट गई । आभास की बांहों में एक अबोध बालक-सी वह घंटों सिसकती रही।

इस बार कड़ाके की ठंड है ! इतनी ठंड कि नानी के प्रत्यक्ष रूप से दिखते सुघड़ शरीर के विपरीत उनकी कोमल हड्डियां इस ठंड को बर्दाश्त नहीं कर पाएंगी, ऐसा पहले ही लग गया था. कल रात में सोई तो सुबह उठी ही नहीं। रात में कब उन्होंने प्राण त्याग दिए, कोई नहीं जानता, ना जानना ही चाहता है। केवल वनिता के शरीर में सिहरन-सी दौड़ जाती है यह सोचकर कि रात भर वह एक मृत देह के साथ बगल की चारपाई पर सो रही थी। भूत-प्रेत के कितने किस्से उसने गांव में सुने हैं। शहर में भी तो लोग बातें किया ही करते हैं। कहीं नानी का भूत उसके अंदर प्रवेश कर गया तो ?. .. लेकिन वह तो किसी से अपना डर साझा भी नहीं कर सकती! अभी दूर-दराज के रिश्तेदारों से लेकर आसपास के पड़ोसी...जाने कितने लोग सुबह से आ चुके हैं! क्या उसके मरने पर भी इतने

ही लोग आएंगे, वनिता ने सोचा.

...काश वह भी देख पाती... जान पाती कि उसके ना रहने की खबर जिंदगी की भाग-दौड़ में किसी को दो पल के लिए भी रुकने को... सोचने को... आंखें भिगोने को मजबूर करेंगी क्या?

“अब चाय दोगी या बाहर ही खड़ी सोचती रहोगी?”, सुलक्षणा मामी ने आकर टोका तो वह चाय की ट्रे उठा मामी के साथ बाहर आ, मेहमानों को चाय देने लगी। सुलक्षणा मामी अब नानी की फोटो के सामने उदास मुद्रा में बैठ गई।

वनिता हैरान थी यह महसूस करके कि नानी उसके जीवन का भी एक अभिन्न अंग बन चुकी थी। वह भी अपनी पूरी उपेक्षा और बेइज्जती के बावजूद! उनके पैर दबाते हुए, तेल मलते हुए... कहीं कोई मानवीय स्पर्श तो महसूस कर पाती थी वह! उसके कष्टों पर आंसू ना भी आएं लेकिन अपने किसी पसंदीदा कार्यक्रम के प्रिय कलाकार की मौत पर अपना मन वनिता से बात कर हल्का कर लेती थी। मामी-मामा और बच्चों के स्कूल और ऑफिस चले जाने पर तो यह खाली घर काटता है। खाली है अभी...या क्या मालूम नानी का भूत यहां घूमता रहता हो। उस चारपाई पर भी बैठते-उठते डर लगता है। नानी कितना बड़ा संरक्षण थी यह रात की घटना ने और पुख्ता कर दिया। रात के खाने के बाद सुलक्षणा मामी ने अध्यादेश जारी कर दिया कि वनिता अब बच्चों के कमरे में नहीं सो सकती उसे बाहर सीढ़ियों के नीचे बनी जगह में बिस्तर लगाना होगा।

“तो क्या हुआ सुलक्षणा... भला इतनी ठंड में ? और फिर बाहर कैसे?”, मामा ने शायद पहली बार मामी के किसी निर्णय में हस्तक्षेप किया।

“आपको तो ऊंच-नीच की परवाह नहीं है लेकिन मुझे तो हर बात सोचनी है... दोनों लड़कों के साथ इसे नहीं सुला सकती”, उसी सख्ती से बोली मामी।

“बच्चे हैं वह दस और बारह साल के”, मामा ने प्रतिवाद किया।

“देखिए, जो भी हो, आपके खानदान के लिए मैं अपने बच्चों को नहीं बिगाड़ सकती। मां थी तो और बात थी। अब तो यह वहाँ नहीं रह सकती”, वह खड़े होकर खाने के बर्तन समेटने लगी जो इस बात का संकेत था कि अब इस विषय पर और बात आवश्यक नहीं।

रात के खाने के बर्तन मांज कर जब वनिता रसोई से बाहर निकली तो उसकी चारपाई बाहर पहुंच चुकी थी। जनवरी की बर्फीली रातों की हवा को लोहे का जंगला रोकने में नाकामयाब था वनिता ने लोहे के जंगले में लटकते बड़े से ताले को देखा और अपने पीछे बंद हो चुके घर के मुख्य दरवाजे को। दो बंद दरवाजों में कैद हो उसकी किस्मत जैसे! कभी यह ताले खुलेंगे क्या? वनिता ने रजाई को अपने चारों ओर लपेट लिया था। तब भी लगता था जैसे पहाड़ों की पूरी बर्फ उसकी रजाई के ऊपर ही पिघल रही हो। अचानक, उसे लगा कि लोहे के जंगले में से एक हाथ उसकी ओर बढ़ रहा है। डर के मारे वनिता की घिग्गी बंध गई। वह अचकचा कर उठ बैठी। आभास ने हाथ से चुप रहने का इशारा किया।

‘तुम! इतनी रात को?’, वह चौंकी।

खुश भी हुई आभास को सामने पा! डर कुछ जाता रहा।

‘मैं हूं यहीं.. तुम सो जाओ आराम से।’

‘इतनी ठंड में ? नहीं, तुम जाओ!’

‘कोई परेशानी नहीं तुम सो जाओ’, आभास ने जंगले में से उसकी सर्द हथेली अपने गर्म हथेलियों में भरते हुए कहा।

वह वहीं जंगले से सटा उसका हाथ थामे बैठा रहा। हथेलियों की गर्मी पूरे शरीर में फैल ऊष्मा देती रही उसे। सुबह सुलक्षणा मामी ने उसे हमेशा की तरह खींचकर उठाया तो उसने डर कर बाहर देखा... कहीं मामी ने देख तो नहीं लिया? उसका खून जम गया।

“चाय चढ़ा... लेट हो रहा है” मामी ने अपने उसी धीमे और शुष्क स्वर में कहा।

वह चोर नजरों से मामी का चेहरा पढ़ने की कोशिश करती रही लेकिन मामी रोज की तरह ही ऑफिस चली गई।

आज शाम से वनिता का सिर भारी था। आंखें जल रही थी। तेज बुखार था। वह जैसे-तैसे हिम्मत जुटा चपाती सेक रही थी। यूं भी कोई फायदा नहीं था किसी से कुछ कहने का। खाने के बाद मामी ने एक गोली उसके हाथ में रखते हुए कहा,

“खा ले, सुबह तक उतर जाएगा बुखार”, और दरवाजा बंद कर लिया।

बिस्तर पर लेट वनिता को याद आया कि कितनी ही बार यूं बुखार चढ़ने पर मां उसे अपनी गोदी में लिटा सिर दबाया करती थी। बाबा तलवे सहलाते थे। मधुर स्मृतियों से उसके आंसुओं की धार बह चली। उन्हीं अश्रुपूरित आंखों से उसने आभास को जंगले पर लगा ताला खोल अंदर आते देखा, उसकी अंगुलियों का स्पर्श अपने गालों पर महसूस किया। आभास उसका सिर अपनी गोदी में रख दबाने लगा और रात के किसी पहर वह आभास के आगोश में वैसे ही समा सो गई जैसे मां उसे खुद से सटा लिया करती थी३ कभी नींद में डर जाने पर। सुबह उठी तो आभास और बुखार दोनों जा चुके थे।

अचानक आए अवांछित अनजान मेहमानों ने घर की ऑक्सीजन में कुछ और कमी ला एक विकट संकट उत्पन्न कर दिया था।

“तीन साल से बेटी जैसा रखे हैं हम लोग...तब आप लोग कहां थे?”, सुलक्षणा मामी ने अपने उसी शांत स्वर में कहा।

"आए हाय, तो क्या एहसान किया जी आपने, क्या हम नहीं समझते... क्यों रखा? मुफ्त की नौकरानी मिल गई आपको तो, उसका बचपन तो छीन ही लिया अब शादी ना करके क्या उसकी जवानी भी बर्बाद करोगी जी!"

आने वाली महिला सुलक्षणा मामी के विपरीत अपने स्वर को ऊंचा रख अपनी बात सही साबित करने के सिद्धांत में विश्वास रखती थी ।

"शादी को कहां मना कर रहे हैं...लेकिन हमारी भी तो राय लेती आप। कोई सलाह मशवरा नहीं। सीधे तय कर दिया", मामी ने स्थिति संभालनी चाही।

"लो... और सुन लो! अब ससुराल वाले मायके वालों से पूछकर फैसले करें और मायका भी जाने कौन से जन्म का ! वनिता की नानी तो उसकी मां की शादी से भी पहले स्वर्ग सिधार चुकी थी। सुशील बहन जी का कोई भाई था नहीं। उनके कौन से चचेरे भाई या ममेरे भाई हो आप...हम तो यह भी नही जानते! आप सामान बांधें। लड़की भेजें...नहीं तो हमें और भी तरीके आते हैं...", लगता था कि वह ठान कर आई थी कि वनिता को साथ लेकर ही जाएगी।

"शादी के लिए उसकी उम्र भी नहीं अभी", पूरे वार्तालाप में पहली बार राकेश मामा जी का स्वर सुनाई दिया ।

"आपकी गृहस्थी तो पूरी संभाले है", महिला के साथ आये पुरुष ने नजरें टेढ़ी करके कहा।

बाहर दरवाजे पर खड़ी स्कार्पियो में बैठे कुछ गुंडेनुमा आदमी बार-बार अंदर झांक रहे थे। शायद इशारा चाहते थे अपने मालिक का।

"जैसा आप उचित समझें", मामा ने हाथ जोड़ दिए।

"सुलक्षणा... भेज दो", वह निर्णय सुनाते हुए उठ खड़े हुए।

सुलक्षणा मामी खून का घूंट पी अंदर आ गई। वनिता की तो जैसे बुद्धि ने काम ही करना बंद कर दिया था। वह कांपते हाथों से आलू छील रही थी। सुलक्षणा मामी ने हाथ से छीन लिया चाकू। और चाकू ने आलू के छिलकें की परत की जगह वनिता के हाथ की खाल की एक परत उतार दी।

"कहती है... हमने बचपन छीन लिया। बचपन भले ही छीना हो, इज्जत तो बची रही! और तू भी सुन ले... इन लोगों के साथ दामन काला कर यहां वापस लौटने की तो कभी भूल कर भी नहीं सोचना", उन्होंने रुक कर सांस ली पर अभी आवेश शांत नही हुआ था। वह आगे बोली,

"तब तो अर्थी को कंधा देने को भी आठ आदमी मायके के ही खड़े हुए। आज ससुराल वालों का सब हक हो गया। दफा हो जा यहां से...", सुलक्षणा मामी ने धीमी आवाज में एक-एक शब्द को चबा दांत पीसते हुए कहा।

अपना जंग लगा छोटा सा संदूक ले जब वनिता बाहर निकली तो लगा जैसे चलने को पैरों में जान ही नहीं हो। किसी ऐसे स्थान पर जहां सुबह से रात तक सिर्फ उपेक्षा मिली हो उसे छोड़ना भी क्या प्राण छोड़ने जैसा होता है? उसने सोचा। आभास का दूर-दूर तक कहीं कुछ अता-पता नहीं था।

एक अत्यधिक थका देने वाले लंबे सफर के बाद वह जिस घर में पहुंची वह मामी के घर से निश्चित ही कुछ बड़ा था। रास्ते भर हर गांव से गुजरने पर उसे लगता कि यह मेरा ही गांव तो नहीं! मन करता कि गाड़ी से कूद इन पगडंडियों पर दौड़ जाए तो यह पगडंडियां सीधे घर के आंगन में खुलेंगी! लेकिन साथ चलती स्कार्पियो में छह फीट से भी लंबे और बड़ी मूंछों वाले अजीबोगरीब शक्ल के लोगों के चलते वह इस चौदह घंटे के सफर में एक बार के लिए भी अपनी जगह से हिली तक नहीं थी ।

यहां सालों बाद पहली बार किसी ने उसे खाना परोसा। वनिता को लगा शायद यही समय है जब उसकी किस्मत पर लगे ताले खुलने वाले हैं। अगले कुछ दिन नए-नए चेहरे आ कर उसका चेहरा देखते। अचानक प्रकट हुई इन नई बुआ जी ने सहृदयता दिखाते हुए कुछ नए कपड़े भी दिला दिए थे। वनिता भी शीशे के आगे से निकलते हुए खुद को निहारने का लोभ संवरण नहीं कर पाती थी। अपने आस-पास हो रही बातों से वनिता को एहसास हुआ कि शायद घर में हो रही हलचल उसके विवाह को लेकर ही है। विवाह शब्द ही ऐसा है कि इस उम्र में किसी भी लड़की की धड़कन बढ़ा दे और वह विवाह जिसमें होने वाले साथी के बारे में कोई जानकारी ही नहीं हो! फिर, यह नया माहौल सुलक्षणा मामी के घर से काफी अधिक मुखर और वाचाल था लेकिन एक रहस्य सा हवा में तैरता रहता जिसके बारे में वह कभी किसी से कुछ पूछने की हिम्मत नहीं कर पाती। फिर एक दिन मुखरता कोलाहल में बदल गई और एक लाल रंग की साड़ी पहना कर, उसका चेहरा तरह-तरह की बिंदियों से सजा उसे एक अजनबी आदमी के पास बिठा दिया गया। पंडित जी द्वारा जब उसे अपना हाथ इस अजनबी के हाथों में रखने के लिए कहा गया तो जाने क्यों उसे वह स्पर्श जाना पहचाना लगा।

'आभास !!', सोच कर उसे सुकून मिला ।

इससे पहले कि भोर की मूर्छा टूटती और रवि के प्रकाश में रात के काले सायों के वास्तविक चेहरे दिखाई देते, तारों की मद्धम छांव में वनिता और भी अधिक अनजान लोगों के साथ एक नए गंतव्य के लिए रवाना हो चुकी थी।

पिछले एक हफ्ते में जितना अधिक सुलक्षणा मामी का बिलासपुर का घर दूर छूटा जा रहा था, जाने क्यों उतनी ही अधिक उत्कंठा उसे वहां वापस जाने की हो रही थी ।

यहां के लोगों की वेशभूषा, बोलचाल में एक अलग सा गंवईपन और अभद्रता थी। वनिता संकोच से गडी जाती। घर में पदार्पण के साथ ही वनिता समझ गई थी कि यहां लोगों का जीवन

सहज स्वाभाविक है, वह कोई मुखौटा नहीं लगाते ...जितने स्वार्थी, धूर्त और निर्दयी हैं, पूरी निर्लज्जता के साथ उसे दिखाते हैं।

मुंह दिखाई की रस्म में हर बार घूंघट उठने पर रहस्यों से भी पर्दा उठता गया। तीसरे नंबर की जेठानी ने घूंघट उठाते हुए कहा -'तो पचास हजार रुपये नकद दे कर यह आफताब आया है! मेरी लज्जो क्या बुरी थी इससे", कहकर उसने उपेक्षा से मुंह बनाया।

"हां अपने एक पैर पर ऊपर नीचे भाग कर गृहस्थी जरूर संभाल लेती तुम्हारी लज्जो", बड़ी जेठानी ने बिना कोई समय गंवाए कहा तो सभी स्त्रियां आंचल में मुंह दबा ही-ही कर हंस पड़ी।

"तो दुहेजू को दो टांगों वाली लड़की कौन देगा! यूं ही घर की जमा पूंजी लुटा कर खरीदनी पड़ी ना!", कहते हुए वह तुनकती हुई चली गई ।

तो उसका मूल्य पचास हजार रूपये है... वनिता का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। वह तो आज तक खुद को एक अवांछित बोझ ही समझ रही थी। क्या सच ही वह किसी के लिए इतना मायने रखती है कि मूल्य चुका कर वह उसका वरण करे। ज्यूँ भूखे को चांद भी रोटी दिखता है वर्षों से सम्मान के दो बोलों को तरसती वनिता को यह ख्याल मात्र ही भावविभोर कर रहा था।

"नई दुल्हनिया है तो चांद की ही तरह ! पहली बिन बच्चा जने मर गई, यह जरूर मनोज को वारिस देगी", बड़बोली नाइन ने कुछ अधिक नेग मिलने की उम्मीद में तारीफों की लाइन लगा दी।

दिन भर यंत्रवत पूजा की रीतियां निपटाते वनिता का दिल अपने उस नए स्वामी से मिलने को प्रतीक्षारत रहा जिसने उसे कुछ मूल्यवान समझा था।

आखिर ऐसा क्या है मुझ में, उसने पूछा भी स्वयं से !

'मेरी नजरों से देखो', जवाब आया... 'सब दे कर भी तुम्हें पाना होता तब भी तुम्हें ही चुनता', वह बोला।

'सच?', वनिता ने आंखों में झांका।

"अभी भी कोई शक है क्या?", पास खड़ी ननद ने ठिठोली की !

वनिता ने घूंघट से झांका तो आसपास औरतों का हुजूम था। इंतजार की घड़ियां देर रात खत्म हुई... दरवाजा खुला और एक छाया उसकी ओर बढ़ी,

'आभास !', उसने दबे स्वर में पुकारा।

रात का गहन अंधकार वनिता के समूचे वजूद को अपनी गिरफ्त में जकड़ता गया। सुबह सूर्य की किरणों ने धरती पर बिखरी ओस की चादर में कुछ सुनहरे रंग भरे। पंछियों के कलरव ने रात की नीरवता भंग की और वनिता ने अपने शरीर पर पडे नीले धब्बों को सहलाते हुए सोचा कि अवश्य ही अंतहीन सृष्टि के कुछ हिस्से सूरज की किरणों से अछूते सदा ही अंधकार में रहने को उस जैसे ही शापित होते होंगे।

सुलक्षणा मामी के शब्द दिन रात उसके कानों में गूंजते। सिर्फ बचपन ही नहीं सच में इन लोगों ने उसका समूचा वजूद ही हर लिया था। वह दिन रात यंत्रवत काम करती, सास और जेठानियों के ताने उलाहने सुनती और रात भर अपने इस स्वामी की इच्छाओं के आगे बिना किसी प्रतिरोध सर्वस्व हारती जाती। वनिता द्वारा हार स्वीकार लेने पर भी वह क्यों जीत के लिए इतनी जद्दोजहद करता है वनिता समझने में खुद को असमर्थ पाती। यूं भी कुछ समझने महसूस करने को न उसके पास दिल बचा था न दिमाग।

चांद निकले दो घंटे बीत चुके थे। मनोज का कहीं कुछ पता नहीं था। उसकी सास और भाभियां व्रत खोल कर सोने की तैयारी में थी। वनिता ने एक बार फिर छत पर जा चांद को देखा ।

'व्रत में कोई कमी रह गई क्या', उसने पूछा ।

उसने दिया जलाया, अकेले ही चांद को अर्घ्य दिया, परिक्रमा की, हाथ जोड़ पति की लंबी आयु की प्रार्थना की!

आंखें खुली तो सामने आभास खड़ा था।

'तुम?'

'सच्चे मन से जो पूजा की तुमने',

आभास के कोमल शब्द आत्मा को भी आह्लादित कर गए। आभास ने थाली में से बर्फी उठा वनिता को खिलाई, लोटे का जल पिलाया और उसका हाथ पकड़ नीचे ले आया। वनिता मंत्रमुग्ध सी देखती रही। वह भूल गई कि यह ससुराल है। वह भूल गई कि आभास से उसका रिश्ता तन का नहीं मन का है। उसने झुककर आभास के पैर छू लिए। आभास उसे बांहों में भर रसोई में ले आया। वनिता ने उत्साह से कडाही में तेल गर्म कर पूरियां उतारी. ..थाली लगाई और आभास के सामने रखी।

'तुम भी आओ',

आभास ने कहा।

'नहीं, मैं तुम्हें देखूंगी... अभी तुम खाओ',

वह आभास के सामने बैठ गई ।

आभास ने कौर तोड़ा उसके मुंह में दिया, और इसी समय वनिता की सास पानी लेने कमरे में दाखिल हुई। उन्होंने हाथ मार कर खाने की थाली गिरा दी ।

'कुलक्षणी !',

वह चिल्लाई थी।

अब तक मनोज घर लौट आया था। उसने जो देखा उसका खून खौल गया। कुछ शराब का नशा, कुछ मां का बढ़ावा। उसने कुर्सी में लात मारी। फिर दो-तीन लातें जमीन पर औंधी पड़ी वनिता में भी।

"सब्र ही नहीं तो ढकोसला क्यों करती है व्रत का...",

आगे की गालियां सुनने से पहले वनिता मूर्छा में जा चुकी थी। आधी रात बीती...उसकी मूर्छा टूटी। घुप अंधेरा। दर्द की लहर दुगने वेग से पूरे शरीर में दौड़ गई। सिर छुआ तो महसूस हुआ कि निकला हुआ खून सूख कर थक्का बन गया था।

आभास क्या उसे भी ?... उसने याद करने की कोशिश की। लेकिन कुछ याद आया तो बस मनोज की बलशाली लातें। वह पुनः लेट गई लेकिन आती हुई उबकाई से उठना पड़ा। मुंह धोते हुए उसे लगा जैसे वह खड़ी है और बाकी सब कुछ घूम रहा है। बाथरूम के रोशनदान से बाहर सड़क के लैंप की एक पीली रेखा अंदर आ रही थी। वनिता को लगा शायद यह एक दैवीय संकेत है। उसने साड़ी के पल्ले से मुंह पोंछा और बिना कोई लाइट जलाए, दरवाजा खोल बाहर आ गई। सड़क के कुत्ते एक बारगी चौंके, लेकिन वनिता को देख पुनः निश्चिंत हो सो गए। कई रोशनी और आवाजों के दैवीय योग बने और अब वनिता रेलवे लाइन के पास खड़ी थी। दूर से आती हुई ट्रेन की रोशनी दिखाई दे रही थी। वनिता ने एक बारगी सुलक्षणा मामी के बारे में सोचा... बिलासपुर ...बिलासपुर चल वनिता, उसने खुद से कहा, पर तभी बिलासपुर से सुलक्षणा मामी ने अपनी अभी तक सहेजी हुई पूरी ताकत का इस्तेमाल कर चिल्लाया... यहां आने की तो सोचना भी मत!

वनिता ने दूसरा कदम आगे बढ़ाया और पटरी पर लेट गई, 'वनिता... नहीं ...', तभी आभास वहां आया। वह पैर घसीट कर चल रहा था चेहरा सूजा था...

'उठो', उसने हाथ बढ़ाया!

'अब जान ही नहीं...', वनिता ने कहा। ट्रेन की इंजन की तेज रोशनी उन दोनों पर पड़ी। अगले ही पल आभास भी उसके साथ लेटा था... उसके बिलकुल पास ! वनिता ने अपनी पूरी ताकत समेट उसकी ओर करवट ले अपना सर उसके कांधे पर टिका दिया। उन दोनों को क्षत-विक्षत कर ट्रेन गुजर चुकी थी।

अगले दिन अखबार में खबर छपी थी।

एक महिला ने ट्रेन के नीचे कटकर जान दी जिसे पढ़ देश के अलग-अलग कोनों में अलग-अलग समुदाय की रमणी, कामिनी, कांता, प्रज्ञा, कात्यायनी और प्रजाता जैसी अनेक स्त्रियों ने एक साथ सोचा कि सुखद स्वप्निल अनुभूतियों के आभास के भी मर जाने पर भला कोई स्त्री किसके सहारे जिंदा रहे !

पत्नी डॉ. विक्रम अग्रवाल, करुगा जी मार्ग, मेडिकल कॉलेज गेट नं.-2 के सामने, झांसी, उत्तर प्रदेश-284128, मो. 0 73090 32180

हिमाचल साहित्य लेखन और समकालीन व्यंग्य

(पृष्ठ 10 से आगे) हिमाचल दस्तक, आपका फैसला, दैनिक भास्कर एवं कुछ हद तक हिमाचल दस्तक ने भी अपने व्यंग्य कॉलम के माध्यम से व्यंग्य विधा को प्रदेश के पाठकों के बीच लोकप्रिय बना उसे नई पहचान देने का स्तुत्य कार्य किया है। आज हर व्यक्ति जिंदगी के विभिन्न मोर्चों पर अपने-अपने अस्तित्व को बनाए/बचाए रखने के लिए कभी न खत्म होने वाली विरोधाभासी लड़ाई पहले से अधिक जुझारू हो लड़ रहा है इस उम्मीद के साथ कि हो सकता है, आने वाले कल उसकी जीत हो। समकालीन व्यंग्य हर एक की इस विरोधाभासी लडाई में सहभागी बना हुआ है।

एक मुख्य बात और! आज का व्यंग्यकार चाहते हुए भी राजनीति को अपने व्यंग्य लेखन से इसलिए अलग नहीं कर पा रहा है क्योंकि राजनीति हर तरह के जीवन का केंद्र होकर रह गई है। राजनीति का हर वर्ग को गढ़ने में बहुत बड़ा हाथ है। यही वजह है कि आज व्यंग्यकार चुनावों की धंधेबाजी, राजनीतिज्ञों द्वारा चुनाव में जनता से हवाई वादे करना, सत्ता में बने रहने के लिए ऐसा ऐसा करना जो कि कल्पना से भी परे की बात हो, को अपने व्यंग्य लेखन में बहुतायत स्थान दे रहा है ताकि पाठक उनकी चालाकियां समझ सकें।

निष्कर्षतः, वर्तमान में प्रदेश स्तर पर लिखा जा रहा व्यंग्य, व्यंग्य विधा के भविष्य के लिए सुखद संकेत है। व्यंग्य की विषयानुरूप दिखती नित व्यंजनामयी भाषा, समृद्ध होते शिल्प विधान ने व्यंग्य को आज जीवन के इतने करीब ला दिया है कि व्यंग्य के पाठकों का अपना एक अलग संसार बस चुका है। कल तक का व्यंग्य से चिढ़ने वाला आज हर कोई उस संसार का नागरिक होना चाह रहा है। व्यंग्य की भाषा विचारों के वहन में आज विशेष भूमिका निभा रही है।

आज का व्यंग्य समाज में अपनी बदलती भूमिका निभाने हेतु अपने साथ बहुत सी असरदार कलमें लिए सहर्ष तैयार है। ऐसे में असरदार कलमों के बने रहने की जहां संभावनाएं प्रबल हैं, वहां उनके लिए अभिव्यक्ति के खतरे, चुनौतियां भी कम नहीं। जब कोई विधा पाठकों के दिमाग में हलचल करने लगे तो पाठकों को अपनी पाठकीय विधा से उम्मीदें और बढ़ जाती हैं। तब उस विधा को समाज की हर विसंगति की नब्ज को बड़ी बारीकी से टटोलना लाजिमी हो जाता है। समाज सापेक्ष साहित्यकार ऐसा करता भी है। क्योंकि उस स्थिति में तब यही उसका एकमात्र लेखकीय धर्म और कर्म शेष बचता है।

वक्त के बदलते राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक दृश्य-परिदृश्य में अपनी बदलती भूमिका के लिए हरदम तैयार रहना, अपने और अपने समय के साथ लेखकीय एवम् पाठकीय न्याय करना है।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड़, नजदीक मेन वाटर टैंक, सोलन, हिमाचल प्रदेश-173212, मो. 0 94180 70089

बाल कथा

हल्ली-कसल्ली

◆ त्रिलोक मेहरा

यह उस समय की बात है जब मक्की के दानों को गुल्ली से अलग करने के लिए लोग आंगन में भुट्टों को पांच-छः फुट लम्बे बांस के डंडो से पीटते हुए हांफते नहीं थे और उनके बच्चों के प्राइमरी स्कूल घर से दो-दो किलोमीटर दूर हुआ करते थे। तब थलोतरियां गांव में हल्ली-कसल्ली दो जुड़वा बहनें थीं। गांव केवल एक ही बड़े परिवार से बना था। वह एक संयुक्त परिवार था जिसमें वे दोनों रहती थीं। उनके पिता के चार भाई थे। वे चाचा-ताया हुए और उनके पिता दादा हुए। इसी तरह दादा के पिता पड़दादा हुए। पड़दादा परिवार का मुखिया था। कहावत है, पड़ पिया साख गिया। लेकिन वह मुखिया था और उसका खयाल रखना सबका काम था लेकिन हल्ली-कसल्ली ही उसके आगे-पीछे रहतीं थीं। रोटी-भात, चाय-पानी सब वे ही रसोई से लाकर देतीं। वह रिश्तों की एक सीढ़ी थी जिसे बच्चे भाई-भाभी, चाचा-चाची, ताया-ताई, दादा-दादी और पड़दादा-पड़दादी तक चढ़ते थे। हल्ली का नाम आहिल्या और कसल्ली का नाम कौशल्या था। लेकिन गांव के लोगों को क्या कहें, उन्होंने उनके नाम प्यार से हल्ली-कसल्ली ही पक्का कर दिए थे। वहां और कोई घर नहीं था। उसके साथ दादा-दादी से लेकर पोते-पोतियों तक तीस-बत्तीस जीव वहां इकट्ठे रहते थे। आयताकार आंगन के चारों बाजुओं पर उस परिवार के कच्चे मकान थे। मकानों के कमरे दम्पतियों की सुविधा के अनुसार बंटे हुए थे।

बच्चे कहीं भी उठ-बैठ और सो सकते थे। कभी अपनी मांओं के साथ चले जाते और कभी एक ही कमरे में कहानियां सुनते-सुनाते सो जाते। उन्हें लाख आवाजें लगाएं वे किसी की नहीं सुनते। पूर्व की ओर के कोने से आंगन में प्रवेश किया जा सकता था और वहां से सब मकानों में जाया जाता था। दक्षिण के कोने में रसोई थी जहां घर की सभी औरतें हंसी मजाक के फव्वारे छोड़ती हुई खाना बनाने का काम करती थीं। कोई कहीं भी हो लेकिन खाने के लिए रसोई ही सबके लिए निश्चित जगह थी। सब खाने के वक्त ही वहां इकट्ठे होते। दूध पीते बच्चे ही वहां हर समय मां की कुच्छड़ का सुख भोग पाते। आंगन में बागड़ की रस्सियों से बुनी हुई मंजियां पसरीं होती। वे उन पर या घर की मुंडेर पर बैठते। कभी पीठ में खारिस-खुजली हो तो मंजियों पर लेटकर पीठ रगड़ लेते। बच्चों के लिए आंगन खेल का मैदान था और बकरियों के बच्चे उनके साथ ही कूद लेते। हल्ली-कसल्ली जब जन्मी थीं उस समय दो बकरियां और एक छेलू घर में लाए गए थे ताकि दो बच्चियों के लिए मां का दूध कम न पड़ जाए। लड़कियां बड़ी होती गईं और बकरियों के बच्चे दुगुने, तिगुने और चौगुने होते हुए सैंकड़े को छूने लगे।

बच्चे पांच साल बड़े होते ही स्कूल नहीं भेज दिए जाते। डेढ़-दो किलोमीटर वे कैसे जा सकते थे। माएं उन्हें उठाकर ले जातीं जो वे कर नहीं सकतीं थीं। वे सात-आठ वर्ष के होने पर ही स्कूल की शक्ल देख पाते थे। तब तक छेलियां ही उनके खिलौने होते। हल्ली-कसल्ली छेलियों को अपने साथ बिस्तर में दुबका लेती थीं। डर तब लगता जब वे खेलने के लिए बाड़े में चली जातीं कि कोई छेला कहीं उन्हें टक्कर न मार दे। उसी आंगन में एक तरफ दूध के लिए गाय-भैंसें और खेत जोतने के लिए बैल बंधे होते थे। एक सौ से ज्यादा बकरियों का बाड़ा रात को भी चुप नहीं बैठता। बकरे घोड़ियां देते नहीं थकते और बकरियां सवेरे तक में-में करतीं रहती। दो बड़े-बड़े कुत्तो के पेट में गया उनका दूध उनके लिए वफादारी पालता गया और वे उनके पहरे में लगे रहते थे। मजाल कोई उनकी मर्जी बिना जानवरों के निकट फटक जाए। जब कोई उनके मांस का सौदागर आता, हल्ली-कसल्ली रोने लग पड़तीं कि वह उनके प्यारे बकरे को ले जाएगा।

घर के लोग टालमटोल करते। उनके सामने उसे न कर देते या सौदागर को फिर आने के लिए कहते। वे स्कूल चली जातीं या कहीं चली जातीं तो ही परिवार के एक-दो बड़े लोग पैसे के लिए मोल भाव कर आवश्यकता अनुसार उन्हें बेचते रहते। वे वापस आकर पहले अपने छेले-छेली को ढूंढतीं और न दिखे तो नाराज होकर खाना नहीं खातीं। उन्हें वे दिखाने पड़ते। उन्हें पता लग जाए कि वे बेच दिए हैं तब तो किसी की खैर नहीं। वे जमीन पर गिरकर रोते हुए तड़पतीं। सबके सामने वे अपनी बाजू-टांगें खरोंचकर खून निकाल देतीं। उन्हें पतियाने के लिए किसी सिक्के की रिश्वत देनी पड़ती। तो भी बकरियां बच्चे देती रहतीं और वे बड़े होकर बिकते रहते। तब घर के लोगों को पैसे का मुंह देखना मिलता।

गांव के साथ ही जंगल था लेकिन उसकी खामोशी कभी भी गांव को नीरव बनाए रखने में सफल नहीं हो पाती। घर में आपस की चीख-पुकार, हंसी-मजाक और गीत-गुस्सा गूंजता रहता। जंगल गांव का चौकीदार था। वहां से होकर चलने वाले पहले ही जान जाते कि आगे गांव आने को है।

हल्ली-कसल्ली स्कूल जाते बच्चों में सबसे बड़ी थीं और उनकी मॉनिटर समझी जाती थीं। छोटे बच्चे सप्ताह के छः दिन एक-एक करके गिनते और सातवें दिन का इन्तजार करते। वे जानते, वह छुट्टी का दिन होगा। उस दिन घर में रह कर सबके लिए सिर दर्द बन जाते थे। उन्हें मन चाहे किसी काम को करने से कोई नहीं रोक पाता।

हल्ली-कसल्ली सदा साथ रहतीं थी। साथ काम करतीं। खाना-पीना, उठना-बैठना, सोना-जागना और पढ़ना सब एक साथ होता था। हर काम में कसल्ली पहल करती। कसल्ली आगे-आगे और हल्ली पीछे-पीछे। वे हमशक्ल थी और कभी घर में भी उन्हें सही पहचानना मुश्किल होता था। वे हल्ली को कसल्ली और कसल्ली को हल्ली कह देते थे। एक हंसे तो दूसरी भी हंसने लगती और रोए तो दूसरी भी रोने लग पड़ती। हर चीज के लिए पसंद-नापसंद मिलती-जुलती थी। छुट्टी वाले दिन वे अपने लिए बकरियों को चराने का काम ले लेती थी। वे समझदार थीं कि इस तरह वे घर के काम के साथ स्कूल का काम भी कर लेंगी। इन्तजार करता हुआ किताबों का बस्ता उनके कंधे पर लदने के लिए खुश रहता था। वे बकरियों का दूध भरपेट पीती थीं। उनके डकार में बकरी के दूध की ही बास आती थी। वे स्कूल की प्रार्थना करते दूसरे बच्चों की तरह गिरती नहीं थी। उनमें खून की भी कमी नहीं थी। वे सब बच्चों में अधिक ताकतवर थीं। लेकिन कसल्ली हल्ली से ज्यादा ताकतवर थी इसलिए स्कूल की कबड्डी टीम की कैप्टन बना दी गई थी।

गांव के पास जंगली जानवरों में तेंदुए भी रहते थे। दो तेंदुए कभी-कभी गर्मियों में घरों के पीछे उतराई में बांसों के झुरमुटों में मस्ती मारने आ जाते। वे दौड़ते-दौड़ते एक दूसरे पर झपटते। कभी एक नीचे, कभी दूसरा नीचे। तब घर के लोग झरोखों से उन्हें देखते। कुत्ते डरी हुई आवाज में भौंकते। जंगल में उनके लिए भोजन की कमी नहीं थी। वे शिकार करके झाड़ियों में सो जाया करते थे। तो भी बकरियों की गंध उन्हें वहां खींच ले आती। वे बकरियों के आगे-पीछे झाड़ियों में रहते और कभी उन्हें नुकसान करते नहीं सुना था। बच्चे घर में रहें या बकरियों के साथ जंगल में रहें, किसी को कोई चिंता नहीं होती। दूसरे गांवों के बच्चे भी अपने जानवर उसी जंगल में चराने के लिए ले आते थे। उनकी किताबे-कापियां भी उनके साथ होती थी। कभी वर्षा की बौछारें आएं तो कापियों में लिखे अक्षर धुल जाते। इसकी उन्हें चिंता नहीं होती। उल्टे खुश होते कि उन्होंने स्कूल में दिया काम कर लिया है।

जंगल में एक जगह पहाड़ी में धंसा हुआ और बागड़ घास में छुपा हुआ एक कूप था। उसकी ठंडक उनके बैठने की मनपसंद जगह थी। लटकी हुई बागड़ से पानी बूंदों में टप टपाता रहता। बच्चे कूप से सीधे पानी पीने के बजाय बागड़ के गुच्छों को बांधने से बनी पानी की धार को जीभ पर लपकते। वहां ही जंगली जानवर पानी पीने आते थे। उनके अपने डंगर भी वहां पानी पीते और उन्हें भी ज्यादा प्यास सताए तो वे कूप के साथ थोड़ी ऊपर बने छोटे पोखर में अंजलियां भरकर गले तर कर लेते थे।

एक दिन गजब हो गया। सब बच्चे पढ़-लिखकर अपनी मस्तिया मारने में मस्त थे। अचानक झुंड में बकरियां विदकीं और डरी हुई में-में करती बिखरती हुई इधर-उधर दौड़ी। एक बकरी टूटी हुई आवाज में एक ही जगह चिल्ला रही थी। ग्वालों में शोर मच गया था। कसल्ली उसे देखने के लिए आगे गई। उसने ऐसी कल्पना भी नहीं की थी। उसने देखा, एक तेंदुए ने बकरी का गला अपने दांतों में दबा लिया था और बकरी जमीन पर टांगें मारती तड़प रही थी। उसके जिस्म में बिजली-सी झनझन हो गई। वह दौड़कर गई और बकरी की दोनों टांगें पकड़कर अपनी ओर खींचना शुरू कर दिया। तेंदुआ अपनी ओर खींचे और कसल्ली अपनी ओर। कसल्ली तेंदुए की आंखों में अपनी आंखें डाले हट-हट कर रही थीं। वह बकरी को बचाने के लिए तेंदुए से भिड़ गई थी। उसे उस समय रंच भी डर नहीं लग रहा था। पीछे से आकर हल्ली तेंदुए को देख चिल्लाई और कसल्ली का साथ देने आ गई। उसने बकरी की एक टांग दोनों हाथों से पकड़ ली और तेंदुए से छुड़ाने के लिए अपनी ओर खींचने लगी। तेंदुआ बकरी को अपनी ओर खींचता और वे अपनी तरफ खींचतीं। हार मानने के लिए कोई तैयार नहीं था। कभी तेंदुआ उसे छोड़ दो छलांग जंगल की तरफ मार देता था। वे उसे जाता देख पीछे मुड़तीं। लेकिन वह फिर आकर उसे अपने दांतों में दबा लेता था। उसने उनके साथ इस तरह खेलना शुरू कर दिया था। वह बहुत देर तक ऐसा ही करता रहा। उन दोनों के बुरी तरह पसीने छूट गए थे। आखिर तेंदुआ थककर बकरी छोड़ चला गया।

बकरी मर चुकी थी। उन्हें बहुत दुःख था। वे उसके गले लगकर रोईं। उनके दिल बुरी तरह धड़क रहे थे। वे घर में क्या कहेंगी? उन्हें तसल्ली थी कि उन्होंने उसे बकरी को ले जाने नहीं दिया। कसल्ली उसे कंधे पर उठाकर घर ले आई। घर में उसने रो-रोकर सारी बात बताई। यह सब सुनकर हैरान हुए और उसकी पीठ थपथपाई।

गांव मेड़हा, डाकघर भवारना, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176083, मो. 0 94590 78608

बाल कथा

दादीजी का खजाना

◆ ललित शौर्य

कमल अपनी दादी के साथ गांव में रहता था। वो बड़ा चंचल स्वभाव का था। उसे बात-बात पर गुस्सा आ जाता था। कभी-कभी तो वो दादी से भी उलझ जाता। कमल जितना उग्र स्वभाव का था, दादी उतनी ही शांत स्वभाव की थी। पूरे गांव में दादी का बड़ा सम्मान था। बच्चे, बड़े और बुजुर्ग सभी दादी को बहुत प्रेम करते थे। कई बार गांव वाले कमल की शरारतों और गलतियों को इसलिए अनदेखा कर देते क्योंकि वो दादीजी का पोता है। दादी के नेक स्वभाव के कारण वो बच जाता था।

दादी गांव वालों के हर काम में मदद करती थी। गाँव में किसी का भी स्वास्थ खराब होता वे दादी के पास दौड़े चले आते। दादी बुखार, पेट दर्द, सर दर्द, कमर दर्द, दांत दर्द सभी की बहुत अच्छी दवाइयां जानती थीं। वो स्वयं जंगल से जड़ी बूटियां ढूंढ कर लाती। उन्हें सुखाती, कूटती फिर लोगों को निःशुल्क बांट देती। दादी के नुस्खे बड़े कारगर होते। एक दो खुराक में ही लोग तंदुरुस्त हो जाते।

एक बार कमल बेवजह मुखिया जी के बच्चे से उलझ गया। उसने उसे बहुत पीट दिया। जब ये बात मुखिया जी को पता चली तो वो बहुत लाल-पीले हो गए। वो कमल को सबक सिखाना चाहते थे। वो तुरन्त दादीजी के पास गए और उन्हें सारी बातें बता दी। दादी ने बड़ी मुश्किल से मुखिया जी को मनाया। मुखिया जी को भी दादी जी की बातों को मानना ही पड़ा। पिछले दिनों जब मुखिया जी के पेट में भयंकर दर्द हुआ था तो दादी जी ने ही ठीक किया था। मुखिया जी ने जाते-जाते कहा, 'मैं आपकी वजह से कमल को छोड़ रहा हूं। अगर कोई दूसरा होता तो उसकी आज बहुत पिटाई लगाता।' ये कहते हुए मुखिया जी वहां से चले गए।

शाम को जब कमल घर लौटा तो दादी ने उसे खूब डांटा। पहली बार दादी इतने गुस्से में थी। कमल अपनी गलती मानने को तैयार नहीं था। दादी ने उसे बहुत समझाया। कमल अनमने मन से आगे ऐसा न करने की बात कह कर सोने को चला गया। उसने खाना भी नहीं खाया।

अगले दिन सुबह ही कमल खेलने को निकल गया। दादी से कुछ बोला भी नहीं। वो जैसे ही मैदान में पहुंचा तो उसने दो लोगों को आपस में बात करते हुए सुना। पहला बोला, 'दादी बड़ी होशियार है। कमल ने कल मुखिया जी के बेटे की पिटाई लगा दी। लेकिन मुखिया जी कुछ न कर सके। दादीजी ने उन्हें मना लिया।'

दूसरे ने कहा, 'अरे ये तो सब उस खजाने का कमाल है। अगर दादी के पास वो खजाना न होता तो शायद ऐसा न होता। दोनों बातें करते हुए वहां से निकल गए।

कमल सोचता रह गया आखिर दादी के पास ऐसा कौन सा खजाना है। उसने मुझे तो कभी किसी खजाने के बारें में नहीं बताया। जरूरी दादी मुझ से छुपा कर रखती होंगी। कमल अभी ये सोच ही रहा था कि उसके दोस्त आ गए। अब वो उनके साथ खेलने लगा। खेलते-खेलते शाम हो गई। कमल को अब भूख भी लगने लगी थी। वो खेल बंद कर घर की ओर भागा। दादी ने रोटियां बनाई थी। वो दादी से बिना बात करे चुपचाप रोटी खाकर सोने चला गया। दादी ने भी उससे कुछ न कहा। कमल को नींद कहा आनी थी। उसे तो वो खजाना ढूंढना था। दादी के सोते ही कमल ने खजाने की खोज में पूरा घर खंगाल डाला, पर उसे कुछ भी नहीं मिला। उसने सारे कपड़े फैला दिए थे। वो थक कर कपड़ों के बीच ही सो गया। सुबह दादी ने ये सब देखा तो आश्चर्य में पड़ गई। आखिर कमल ने ये सब क्यों फैला दिया। दादी ने कमल को जगाया, फिर पूछा, 'ये सब कपड़ें क्यों फैला दिए।'

कमल ने आंखें मलते हुए जवाब, 'मैंने कल दो लोगों को बात करते हुए सुना की आपके पास खजाना है। आपने मुझे कभी बाताया तो नहीं, इसीलिए मैंने सोचा क्यों न मैं खुद ही ढूंढ लूं। पर वो झूठ बोल रहे थे। घर पर तो कोई खजाना नहीं है।'

कमल की बातों को सुनकर दादी हँसने लगी। वो जानती थी गांव वाले अक्सर किस खजाने की बात करते हैं। दादी ने कमल को समझाते हुए कहा, 'बुद्धू गांव वाले सोने, चांदी, हीरे वाले खजाने की बात नहीं कर रहे थे। बल्कि वो मेरे औषधि ज्ञान और व्यवहार के खजाने की बात कर रहे थे। हमारा ज्ञान और हमारा व्यवहार ही अमूल्य खजाना है। जो हमें जीवन भर लाभ प्रदान करता है। अगर हमारा व्यवहार अच्छा है तो सब हमें प्रेम करते हैं। हमारा सम्मान करते हैं। अगर ऐसा नहीं है तो कोई भी हमें सम्मान नहीं देता। साथ ही हमारा ज्ञान हमारा सच्चा मित्र है। जो हमेशा हमारी मदद करता रहता है।' दादी की बातों को सुनकर कमल को सब समझ आ चुका था। अब उसने संकल्प ले लिया था कि वो भी अपने भीतर सद्गुणों का विकास करेगा। और अपने खजाने को सम्पन्न बनाएगा।

ललित मोहन राठौर
ग्राम व डाकघर मुवानी, जिला-पिथौरागढ़, उत्तराखंड
मो. 0 73514 67702

समीक्षा

तन और मन से बाहर झांकती चलती फिरती खिड़की

◆ गुप्तेश्वर नाथ उपाध्याय

चलती फिरती खिड़की, दीप्ति सारस्वत द्वारा लिखित मांडवी प्रकाशन, गाजियाबाद द्वारा प्रकाशित 99 कविताओं का एक संग्रह है। यह दीप्ति का दूसरा काव्य संग्रह है। इससे पूर्व इनका एक और कविता संग्रह 'सोचती हूं' प्रकाशित हो चुका है।

प्रस्तुत संग्रह को कवयित्री ने पांच खंडों में विभाजित किया है। प्रत्येक खंड की खिड़की बंद नहीं बल्कि खुली हुई है जिससे होकर अड़ोस-पड़ोस की हवा बिना रोक-टोक आती है। पहले खंड में तलाश है 'बंदी कौन, वंचित कौन,' की और साथ ही सुझाव और चेतावनी भी -

खोलो द्वार, करो स्वीकार
ताजी हवा खुले विचार
सलाह कम, चेतावनी अधिक
वक्त की दस्त है, स्वीकारनी तो होगी ही।



इस खंड की पहली कविता 'हसरतें में' कवयित्री आज के भौतिकवादी यथार्थ को बड़ी बेबाकी से व्यक्त करती हैं -

बाजार ही तो है नाजायज हसरतों के लिए जिम्मेदार।

इस खंड की कविताओं में कवयित्री ने अधिकतर अपने बचपन की यादों को पिरोने की कोशिश की है। 'मेला गुब्बारा', दीवाली, नवजात, मासूम आदि शीर्षक कविताओं को इसी श्रेणी में रखा जा सकता है। इसी क्रम में, कुछ को किशोरावस्था और कुछ को उसके बाद की यानी प्रौढ़ावस्था की श्रेणी में रखा जा सकता है। 'छद्म' कविता में कवयित्री कहती हैं -

प्रौढ़ावस्था के आखीरी छोर पर
बहुतों को होते देखा भावविभोर
याद करते बेझिझक अपनी पूर्व प्रेमिकाएं।

गांव की मिट्टी से अब भी जुड़ी हैं कवयित्री, किंतु गांव में आए बदलाव से वे आहत भी हैं बहुत। अपनी मां से कहती हैं -

आधुनिक, पर सोच रखता है पुरातन
गांव की छवि बदल गई मां!

संग्रह के दूसरे खंड की कविताओं में नारियों का शृंगार, उनपर होते अत्याचार, पुरुष प्रधान समाज की नारियों के प्रति परंपरागत कुंठित सोच, उनपर अन्याय, उनका उत्पीड़न और शोषण आदि का बेबाकी से वर्णन है। इस बारे में कविता 'गिद्ध दृष्टि' की यह पंक्ति बहुत कुछ कह जाती है -

खेत में आना रोजाना, पिला जाना दूध, कर जाना सेवा
जब तक ये बड़ी ना हुई तब तक तू ही सही।

कविता 'सुरक्षा कवच' में स्त्री सौंदर्य और स्वभाव का वर्णन करते हुए कवयित्री को उसे सुरक्षा कवच भी उपलब्ध करवा पाने की चिंता और इच्छा है -

सुकुमार, कोमलांगी, सुंदर, मृदुभाषी
अपनी सहज प्रकृति में
काश कि वह, रह पाती बेखौफ।

इतना सब होने पर भी वह पूरी तरह निराश नहीं है -

हारी हूं, थकी हूं
मगर सुनो, मरी नहीं हूं।
हां, छटपटाहट जरूर है पिंजरे से बाहर निकलने की -
अवनि अंबर अंदर बाहर
पिंजर बद्ध है तन और मन
कहो! मुक्ति कहां और कैसे पाएं।

इसी खंड की एक कविता है चलती फिरती खिड़की जिसे

आधार बनाकर इस कविता संग्रह का नाम रखा गया है। शीर्षक के अनुरूप चलती फिरती खिड़की कवयित्री का हमदर्द बन कर रहना चाहती है हरदम -

रहूंगी साथ मैं हरदम
जब तक तू चाहे
बचाव न सही, हमदर्द बनकर।

संग्रह के तीसरे खंड में स्त्री का समर्पण भाव है, तन का, मन का और इसलिए आत्मा का भी। किसी स्त्री की पूर्णता उसके शारीरिक समर्पण में है -

लो! दो पैग की जगह पी लो मुझे
मैं भी पिघल जाऊंगी तुम्हारे लिए।

सामाजिक बंधनों से परे यह शाश्वत सच्चाई है कि मन कई संबंधों के राज जीवन भर सबके सम्मुख प्रकट नहीं कर पाता -

तुम, मैं और एक रात
ताउम्र का राज।

इस खंड में सबसे कम, मात्र बारह कविताएं हैं किंतु सभी बारह कविताएं अत्यंत जीवंत हैं। इस खंड के निष्कर्ष के तौर पर दो पंक्तियों पर गौर कर सकते हैं -

मेरी बस इतनी सफाई
आहत तुम भी, आहत मैं भी।

पुस्तक के चौथे खंड में कवयित्री स्वयं, उनका परिवार यथा मां-पिताजी, दादा-दादी, मौसी-नानी तथा नीलम, नेगी मेम, बुढ़िया, नन्ही चुहिया जैसे कुछ अन्य पात्र भी आए हैं। इस खंड की पहली कविता की पंक्ति से कवयित्री के मन के भावों को समझने की कोशिश की जा सकती है -

आप की तो गुड़िया भी योद्धा है

'पहचान' शीर्षक कविता में मनोवैज्ञानिक सच्चाई को सरल शब्दों में अभिव्यक्ति मिली है -

बचपन की छाप मिटा नहीं करती
मरते दम तक भी।

संग्रह के पांचवें और अंतिम खंड में प्यार है, विरह है, खुशी है, गम है और भी है बहुत कुछ। प्रेम का रंग कुछ ऐसा कि -

तुम आए, छाए और चले गए
देखो, वादे के मुताबिक
हम बिलकुल भी न रोए।

प्रेम के विफल होने पर उसकी परिणति बड़ी दुखद और त्रासदीपूर्ण होती है -

भीतर दिल को दिल के आकार की
बनती रही चट्टान, अवसादी।

किंतु आज प्रेम शारीरिक आदान-प्रदान से अधिक और कुछ नहीं रह गया है -

जितना जाना, उतना दिया
तन, मन, आत्मा/ कम पड़ा?
तो तलाश लो/ औरों के पास जाकर
मन भरने से ही तो है, मतलब।

इस संग्रह की अंतिम कविता 'मुक्त करो' की अंतिम पंक्तियों को यदि इस खंड के निष्कर्ष के रूप में लिया जाए तो गलत न होगा -

दिल की गांठें खोलो
इनसे ही तो है बंधन
सुलझन इनकी है मुक्ति।

सच कहें तो हम बाहर से अपने को दिखाते कुछ और हैं और अंदर से होते कुछ और हैं। हम तथाकथित अपनों से डर जाते हैं, समाज से डर जाते हैं, व्यवस्था से डर जाते हैं और फिर हम अपने आप से ही डर जाते हैं। मन विद्रोह करना चाहता है, हम उसे दबा देते हैं। मन की गांठें यथावत बनी रह जाती हैं। जीवन भर खुल ही नहीं पाती हैं। दीप्ति सारस्वत जी ने व्यक्ति और समाज की जिस तस्वीर को अपने इस काव्य संग्रह में प्रस्तुत करने की कोशिश की है, उसके लिए ये प्रशंसा और बधाई की पात्र हैं। छंदमुक्त शैली में लिखी इन कविताओं में एक साथ अनेक रंग हैं। इनमें संवेदना है, आलोचना है, दर्द है, निराशा है, आशा है, उत्तेजना है और है आक्रोश। चलती फिरती खिड़की के माध्यम से दीप्ति सारस्वत एक ऐसी कवयित्री के रूप में सामने आती हैं जो अपने भावों को जल्द प्रकट करने में यकीन रखती हैं। पाठकों तक इनका मंतव्य ठीक-ठाक पहुंच जाए, इस बात की चेष्टा करती हैं।

संग्रह की अधिकांश कविताएं समझने योग्य हैं। सामान्य पाठक भी इन कविताओं का आनंद ले सकता है। कहना न होगा, ये कविताएं एक सरल, निश्छल एवं विवेकी मन की उपज हैं। देखी-सुनी अनुभूतियों को पाठकों तक पहुंचाने की बेचैनी है। हम देखते हैं यहां अपने आस-पास के जीवन को, धड़कनों को, अच्छाइयों और बुराइयों को शब्दों के माध्यम से प्रकट करने की कोशिश की गई है और कवयित्री इसमें सफल भी हुई है। संक्षेप में यदि कहूं तो इस कविता संग्रह की सादगी और ईमानदारी बहुत प्रभावित करती है।

फ्लैट नं. 5, चौथी मंजिल, महासू सदन
भगवती नगर, लोअर खलीनी, शिमला-171 009
मो. 0 98175 52865

पुस्तक समीक्षा

मानवीय संवेदनाओं के सुच्चे मोती हैं कविताओं में

◆ कंचन शर्मा

कुछ दिनों पहले सड़क किनारे काम करती प्रवासी महिला मजदूर के पास ही सोये हुए छः महीने के शिशु की एक रिवर्स होते ट्रक के नीचे आने से मृत्यु खबर से मन बहुत व्यथित था। सड़क किनारे प्रवासी महिला मजदूरों के बच्चे हमेशा ही मेरा ध्यान खींचते हैं। उन्हें मिठाई, फल, कापी-पेंसिल या खिलौने देने में मुझे सुकून मिलता है। हमेशा पत्थर या रोड़ी कूटती मां से पूछती हूं, 'स्कूल भेजती हो न इन्हे!' तो मुस्कराहट के साथ खामोशी से सिर्फ गर्दन हिलाकर 'हां' में जवाब देती हैं या अपनी 'झेंपती आंखें' मेरी आंखों में डाल कर मौन 'ना' कहती हैं। मैं हमेशा मन ही मन इन मांओं को सलाम करती हूं और इन बच्चों के भविष्य की पीड़ा को महसूस करती हूं। यही पीड़ा, यही तड़प अलमारी में पड़ी बहुत सी पुस्तकों में से एक पुस्तक 'पत्थर तोड़ती औरत' आकर्षित कर गईं। इस कविता संग्रह को युवा कवि मनोज चौहान ने कलमबद्ध किया है। ये भी जानना चाह रही थी कि एक 'पुरुष' शोषित व वंचित महिला के दर्द को किस तरह से महसूस करता है, बयान करता है!

जानती हूं कि केवल स्त्री होने से ही दूसरी स्त्री के प्रति चेतना उत्पन्न हो जाती हो यह जरूरी नहीं। अनेकों घटनाओं से ये दुनिया भरी पड़ी है जिसमें स्त्री ने ही स्त्री का उत्पीड़न किया है जबकि बहुत बार एक पुरुष भी नारी की विकट परिस्थितियों को समझने, महसूस करने में स्त्री से अधिक सक्षम होता है। यही वो संवेदनशील स्त्री चेतना है जो मैंने मनोज चौहान की कविताओं में महसूस की ।

कहने में अतिशयोक्ति नहीं पढ़ते-पढ़ते कई बार मनोज चौहान की कविताएं मेरी आंखों को नम कर गईं। वर्ष 2017 में अंतिका प्रकाशन से प्रकाशित 44 बेहद संवेदनशील कविताओं का यह अनूठा कविता संग्रह मेरे इतने करीब रखे हुए भी अनछुआ रह गया इसका मलाल तो हुआ मगर जब तक किसी विषय को पढ़ने लिखने का धारा प्रवाह अपने मन से प्रस्फुटित नहीं होता तब तक न पुस्तक हाथ में आती है, न ही उसपर लिखने का प्रश्न उठता है। सही मायने में किसी भी पुस्तक की समीक्षा का सही समय वही होता है जब मन उस पुस्तक को पढ़ने के लिए आतुर हो जाए, उसे आत्मसात कर जाए।

हिमाचल प्रदेश के ग्रामीण अंचल के एक किसान परिवार से ताल्लुक रखने वाले जुझारू कवि की कविताओं में मिट्टी की सौंधी खुशबू, किसान का दर्द, मजदूर महिलाओं की मुश्किलें, गांव की जीवन शैली, संयुक्त परिवारों की झीनी यादें तो हैं ही साथ में युवा होने के नाते आरक्षण की पीड़ा, राजनीति के प्रति आक्रोश और भी बहुत कुछ जिसकी व्याख्या आगे कर रही हूं। बधाई देना चाहूंगी मनोज चौहान को जिनकी पहचान आज उनकी कविताओं से है।

संग्रह की कविताओं की सार्थकता उनकी सुच्ची भावनाओं की अविरल भावनाओं की अभिव्यक्ति में स्वतः ही दृष्टिगोचर हो रही हैं। जीवन के विरोधाभास, मन के द्वंद्व, स्त्री की पीड़ा, युवा पीढ़ी का संघर्ष, आज के समय की विडंबनाओं, सामाजिक सरोकारों को बिना घुमाए सरल शब्दों में मनोज ने इस तरह बूंद बूंद सहेजा है मानों हर कविता नदी की भांति बहते हुए मन में कहीं विलीन हो जाती हैं।

'लिंगड़ू' कविता में गांव के बच्चों द्वारा मौसमी सब्जी को बेचने वाले बच्चों के अल्हड़ शौक के पीछे भी मनोज उनके मन के भीतर का दर्द भांप जाते हैं और लिखते हैं : 'वह थमा देंगे/ कमाई किए चंद रुपए/ घर जाते ही मां के हाथ में/ ताकि जुटाया जा सके/ जरुरत का सामान घर के लिए-

बच्चे मिठाई या खिलौनों से परे घर की जरुरतों के आगे बचपन का अल्हड़पन भूल चुके हैं । इस पानी से भी महीन पीड़ा को अगर कोई समझ सकता है तो केवल एक संवेदनशील कवि या भुक्तभोगी।

पहाड़ों का जिक्र जब भी होता है तो एक स्वार्गिक सा अनुभव सैलानियों के मन में उभर आता है। बर्फीले चांदी नुमा पहाड़, सर्पीली सड़कें, ऊंचे दरख्त, मनमोहिनी वादियां और ठंडी शुद्ध हवा के झोंके किसका मन नहीं मोह लेते! मगर पहाड़ पर जीवन-यापन की वेदना तो वही समझ सकता है जिसने पहाड़ का जीवन जिया हो। 'पहाड़ी पर घर' कविता में मनोज लिखते हैं- 'दूर पहाड़ी के/ उस घर की खिड़की से/ निहारता है बूढ़ा सुखिया/ वह करता है हिसाब/ ठंड से मर चुकी बकरियों का/ बर्फ पर

फिसलने से/ मुन्नी के पांव पर/चढ़े प्लास्टर का'

युवा कवि के अनुसार पहाड़ी जीवन के गणित को सुलझाना सरल नहीं है। पहाड़ की कठिनाइयों में जीवन यापन के लिए अदम्य साहस व जीजिविषा का होना एक प्राकृतिक स्वभाव है जो पहाड़ पर जीवन यापन करने के अलावा कदाचित किसी और में नहीं हो सकता। इस कविता के छोटे-छोटे बिंब पहाड़ के जीवन से सहज ही परिचय करवा देते हैं जो कि मनोज चौहान की कविताओं की विशेषता है।

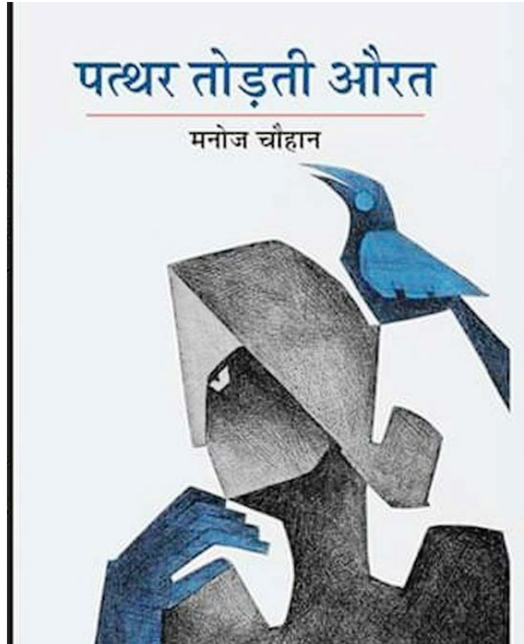
'बड़े दांतों वाली मशीन'कविता पढ़कर चेहरे पर बरबस ही एक मुस्कान तैर जाती है। मनोज उपेक्षित पड़ी जेसीबी से भी हमें प्रेरणा खोजकर दे रहे हैं कि भले ही वो निष्क्रिय मान कबाड़ का रुप ले चुकी है मगर अब भी बारिश व गर्मी में आवारा जंतुओं को अपने घुमावदार हिस्से के नीचे आश्रय देकर अपने होने को सार्थक कर रही है। लिखते हैं- 'समय-चक्र ने कर दिया है/ उसे गतिहीन बेशक/ मगर प्रेरणापुंज है वह/ हर उस व्यक्ति के लिए/ जो कर चुका है/ आत्मसमर्पण/ परिस्थितियों से हारकर'

इस कविता का सौंदर्य मन को मोह ही लेता है।

कविता 'ब्याही बेटी' को पढ़कर बरबस ही प्रख्यात कवि सुरेश सेन निशांत जी की स्मृतियां जिंदा हो जाती हैं। उनकी हर एक कविता ऐसी है मानों उस कविता को स्वयं उन्होंने जिया हो। मैंने उनकी कविताओं की समीक्षा करते हुए उनसे पूछा भी था कि एक ही जीवन में इतने जीवन आपने कैसे जी लिए! 'ब्याही बेटी' कविता की खूबसूरती यही है मानों वो एक ब्याहता बेटी ने ही लिखी हो। यह कविता शुरू से आखिर तक मन मस्तिष्क को चमत्कृत कर देती है कि एक बेटा, एक युवा पुरुष आखिर कैसे जी गया इस जीवन को! कविता की शुरुआत में लिखते हैं : 'वर्षों पहले पास के गांव में/ ब्याही बेटी/रहती है फिक्रमंद आज भी/ बूढ़ी मां के लिए/ जबकि वह खुद भी/ बन चुकी है अब/ दादी और नानी'

कविता ब्याही बेटी के ससुराल में रहने के पश्चात भी बूढ़ी मां की सेवा के लिए वक्त चुराते - चुराते जीवन के उस मोड़ पर भी ढांढस बांधती है जबकि वह स्वयं बुढ़ापे की दहलीज पर खड़ी हो चुकी है। कविता की अंतिम पंक्तियां मन को झिंझोड़ डालती हैं इस एहसास से कि- 'द्रवित हुई बेटी चाहती है दिखाना/ मजबूत खुद को/ बंधाती है ढांढस मां को/ उम्र की इस अवस्था में/अब बेटी/ हो जाना चाहती है 'मां'।

इसी तरह मनोज चौहान जहां 'चिट्ठियां' कविता में खोए शब्दों की आत्मियता को ढूंढते हुए नजर आते हैं जिन्हें भूलकर आज इन्सान फेसबुक व इंटरनेट की आभासी दुनिया में खो चुका है वहीं 'पोखर' कविता में जल संकट के इस दौर में विलुप्त होते प्राकृतिक जल स्रोतों की चिंता करते हुए दिखाई देते हैं। आज की भ्रष्ट हो चुकी राजनीति पर प्रहार करती कविता में राजनेताओं को 'विषैले खूख' से तुलना कर युवाओं से जागने का आह्वान किया है। 'विषैले खूख' की इन पंक्तियों को देखिए। लिखते हैं- 'भूल चुके हैं फर्क/ नैतिक व अनैतिक के मध्य/अमादा हैं छीनने को हक/ यथार्थ में ही शोषितों का।
'गुमराह, भ्रमित और कुंठाग्रस्त/ एक भाड़े की भीड़/ करती है उनका अनुसरण/ समर्थन प्राप्त है उन्हें/ कुटिल बुद्धिजीवी वर्ग का भी/ घोल रहे हैं जहर/ समाज की नसों में'



अमानवीय होती जा रही दुनिया में जहां मासूम अबोध बच्चियों तक के बलात्कार हो रहे हैं ऐसे में रावण का पुतला जलाने की कोई प्रासंगिकता नहीं रही है। यही बयान करती है कविता 'फिर जल गया रावण' जो कि सत्य है, सटीक विश्लेषण है।

'पिता और शब्दकोष' कविता मैं समझती हूं यह हर एक पाठक के दिल के करीब होगी क्योंकि पिता ही वही घना साया है जो खुद चिलचिलाती धूप सहकर भी खामोशी से पूरे परिवार को संरक्षण देता है। 'मां' पर आजतक बहुत कुछ लिखा गया लेकिन 'पिता' कवियों की कलम से अधिकतर उपेक्षित ही रहे। इस तरह यह कविता मनोज चौहान के कविता संग्रह को पूर्णता देती हुई प्रतीत होती है। लिखते हैं कि पिता के दिए हुए शब्दकोष को स्पर्श करते ही- 'महसूस करता हूं/ कि साथ हैं पिता/ थामे हुए मेरी उंगली/ जीवन के मायनों को/ समझाते हुए/ राह दिखाते/ एक प्रकाशपुंज की तरह'

'आरक्षण भाई' कविता में कवि जाति की जगह आर्थिक स्थिति को तरजीह देने की वकालत कर रहे हैं जिससे मैं स्वयं भी सहमत हूं। इसी तरह मनोज चौहान की हर कविता का अपना एक आकाश है, कहीं उनका मन विघटित होते संयुक्त परिवारों

के लिए व्यथित हैं तो कहीं अपने जीवन के भूतकाल की यादों की कसक है, कहीं भविष्य की संभावनाओं की तलाश तो कहीं वर्तमान की पीड़ा।

'मुश्किल दौर' कविता में वह पाठकों को हौसला देते हुए बड़े सयाने अंदाज में कहते हैं कि हिम्मत न हारो! न वो वक्त रहा तो ये वक्त भी बीत जाएगा।' 'कान्हा इस देश में' कविता में वर्तमान में गौ की दयनीय स्थिति पर चिंता करते हुए दिखाई देते हैं तो 'चक्रव्यूह' कविता में बेटियों की तुलना नन्ही अबोध चिड़िया से करके उनके लिए उन्मुक्त गगन की अभिलाषा करते नजर आते हैं। 'कबाड़ उठाती लड़कियां' कविता करारा तमाचा है आज भारत के विश्वशक्ति बनने की ओर अग्रसर होने पर। आंकड़ों व सत्य के धरातल पर जमीन आसमान का अंतर दिखाती इस कविता में बेबस, लाचार कबाड़ उठाती लड़कियों की अंतर्वेदना को महसूस कर मनोज चौहान के संवेदनशील कवि होने पर मुहर लगाती है।

'कटघरे में पिता' कविता में दूसरी बेटी होने पर दकियानूसी समाज की सोच व व्यवहार से द्वंद्व करती पिता की खिन्नता है जो समाज को बेटा-बेटी के भेदभाव को लेकर बीमार मानसिकता को परिधि से बाहर करना चाहता है।

और अंत में इस पुस्तक की शीर्षक कविता 'पत्थर तोड़ती औरत' जिसने मुझे इस पुस्तक को पढ़ने के लिए प्रेरित किया। यह महज एक कविता नहीं यह समाज की वो कड़वी सच्चाई है जिसे नित्य प्रति घूंट-दर-घूंट पीता हुआ हमारा समाज देखता है और देखकर नजरअंदाज करता है। शायद उस पत्थर तोड़ती औरत को हमारा समाज एक औरत, एक मां समझता ही नहीं और असंवेदनशील होकर गुजरता है राह पर रेत के ढेर पर सोए बच्चे के पास से जिसकी मां पास ही पत्थर तोड़ रही होती है। मनोज ने उस औरत की दृष्टि से ही उसके मन-मस्तिष्क को जी लिया। लिखते हैं : 'माथे पर आई/ पसीने की बूंदों को/ पोंछती है वह/ और थोड़ी ही दूर/ छाया में सुलाए शिशु को/ देखती है नजर भर। दुगनी ताकत और जोश से/ उठाती है वह हथौड़ा/ इस बार/ कर देने चूर चूर/ पाषाण के अभिमान को।

यह कविता पत्थर तोड़ती औरत से जुड़े एक और प्रसंग को मेरे मन मस्तिष्क को अकसर झिंझोड़ती है। प्रसंग है कि एक पुरुष पेशाब करने के लिए कहीं खुली सड़क के किनारे खड़े होने लगता है तो पास कुछ युवतियों को देखकर वहां से हट गया। फिर साथ खड़े अपने मित्र से रुकने के लिए कहकर कुछ दूरी पर काम चल रही साइट पर जहां कुछ प्रवासी महिलाएं काम कर रही थीं वहां पास ही कुछ दूरी पर खड़े होकर बेशर्मी से पेशाब करके आ गया जबकि मजदूर महिलाएं झेंप कर ओढ़नी में सिर छुपा काम करती रहीं। उस पुरुष के मित्र के पूछने पर कि औरतें तो वहां भी थीं तुम्हें वहां पेशाब करते शर्म नहीं आई तो वह तपाक से बोला ये महिलाएं थोड़े ही हैं ये तो मजदूरने हैं! इनसे कैसी शर्म! ऐसा है हमारा समाज जो वंचितों को इन्सान नहीं समझता, उसकी आसपास व व्यक्तिगत स्वच्छता के बारे में सोचना तो दूर की बात है।

एक स्त्री जब दूसरी स्त्री की पीड़ा लिखती है तो वो स्वाभाविक सा मर्म होता है क्योंकि वो स्त्री उस पीड़ा को स्वयं भी जीती है मगर एक पुरुष जब अपने भीतर बसी स्त्री को अभिव्यक्त करता है तो उसकी संवेदनशील रचना किसी भी स्त्री के मन को भिगो देने में सक्षम होती है। मनोज चौहान की कविताओं में वही सक्षमता है जो मन को भिगो देती है, और यह उनके संवेदनशील होने की साक्षी हैं।

कविताओं में छोटे- छोटे बिंब हैं जिनमें संयमित शब्दों के साथ सामाजिक व आर्थिक पहलू, पर्यावरण संचेतना, रिश्तों का मर्म, विकास के साथ समसामयिक समस्याएं व्याख्यित हैं।

मनोज चौहान की कविताएं सरल, सहज भाषा में लिखी गई, स्वअनुभूति से लैस, व्यंग्य व कटाक्ष से परे, पाठक को समाज के वंचित वर्ग की कठिनाइयों की ओर ध्यान दिलाती हैं। कविताओं में आवेग नहीं है, आदेश नहीं है अपितु ये कविताएं आधुनिक टैक्नॉलजी से युक्त अपने सामाजिक सराकारों से विमुख होती जा रही मानवीय संवेदनाओं का वो प्रकाश पुंज है जिससे हमारी सोई संवेदनाएं दैदीप्यमान होती हैं जो मनोज को अपने समकालीन युवा कवियों से अलग करती है। इतने सुंदर कविता संग्रह के लिए मनोज चौहान को बधाई व भविष्य के लिए ढेरों शुभकामनाएं।

सेट नं 11, प्रोफेसर्ज कॉलोनी, समरहिल, शिमला,
हिमाचल प्रदेश 171005

काव्य संग्रह : पत्थर तोड़ती औरत, लेखक : मनोज चौहान
प्रकाशन : अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद,
वर्ष : 2017 **मूल्य : 250/- (सजिल्द)**

समीक्षा

आतंकवाद से जूझती नारी का अद्‌भुत दम

◆ डॉ. हेमराज कौशिक

कथाकार खेमराज शर्मा निरंतर सृजनरत हैं। उनके अब तक तीन उपन्यास 'जिजीविषा', 'मृत्युंजयी' और 'दम' प्रकाशित हुए हैं। उनके सृजन कर्म में उनका धैर्य और तल्लीनता दृष्टिगोचर होती है। यही कारण है कि उनके उपन्यासों के सृजन में अंतराल रहता है। संवेदना भूमि की दृष्टि से उनके तीन उपन्यास भिन्नता बनाए हुए हैं। 'दम' उनका नव्यतम उपन्यास है। यह उपन्यास प्रमुख रूप में कश्मीर में व्याप्त आतंकवाद पर केन्द्रित है परन्तु उपन्यास के पूर्वार्द्ध में जमींदारी प्रथा, सामंतीय शोषण के रूप में सामंतवादी और पूंजीवादी मानसिकता के गठजोड़ से बंधुआ-मजदूरों के उत्पीड़न, शोषण, कम्पनियों के आगमन से जमीन से उखड़ने की दुर्दशा, पलायन से दर-दर भटकने की नियति का चित्रण है।

उपन्यास के प्रारंभ में जमींदारी प्रथा और पीढ़ी दर पीढ़ी बंधुआ मजदूर की नियति का दंश झेलते भीखन, गणपत आदि अनेक कामगारों का उल्लेख है जो जमींदार की जमीन में काम कर दो जून की रोटी प्राप्त करने के लिए जीवन भर संघर्ष करते हैं। उन्हें बंधुआ मजदूर की नियति और मानसिकता विरासत में मिली है। इस जड़ संस्कारिता और मानसिकता के कारण ही भीखन बेटी मुनिया के जन्म के चार वर्ष के अनंतर बेटे के जन्म पर इसलिए अधिक प्रसन्नता अनुभव करता है कि जमींदार की जमीन में काम करने वाले मजदूर के रूप में नयी पीढ़ी का प्रतिनिधि वह बालक होगा। जमींदारों की उस मनोवृत्ति को भी लेखक ने उद्‌घाटित किया है जिसके अनुसार पुत्र के अभाव में आने वाली पीढ़ी को जमीन में कार्य करने से वंचित होने की स्थिति में खानाबदोश जिन्दगी जीने की यातना भोगने के लिए विवश होना पड़ेगा। उपन्यास के प्रारंभ में ही यह भी स्पष्ट होता है कि अभी भी जमींदारी प्रथा की मानसिकता के सामंतीय अवशेष बहुत से गांव में विद्यमान हैं जहां जमींदार भूमि स्वामी दलित वंचित वर्ग से बेगार करवाते हैं। मुनिया उपन्यास की केन्द्रीय चरित्र है जिसके इर्द गिर्द औपन्यासिक कथ्य के तंतुओं को विन्यस्त किया है। उसकी विलक्षण प्रतिभा के संकेत उपन्यासकार ने प्रारंभिक अध्यायों में ही मिल जाते हैं। भीखन उसे विद्यालय में प्रवेश दिलवाता है और अध्यापक उसकी विलक्षणता को अनुभव कर उसे विकट आर्थिक विषमताओं में भी पढ़ाने का परामर्श देता है। भीखन जमींदार के यहाँ जमीन पर कार्य करते हुए अनुभव करता है कि बच्चों के शिक्षा प्राप्ति के अधिकार जमींदार की मर्जी पर आधारित हैं। सरकार भले ही शिक्षा के प्रसार के लिए सुविधाएं प्रदान करती हों परन्तु जमींदार कामगारों के लिए एक समानांतर सरकार की भूमिका का निर्वहन करता है। जमींदार मुरारी यादव अपनी जमीन किसी कम्पनी की स्थापना के लिए बेचता है। बढ़ते पूंजीवाद के प्रभाव से वह और अधिक धनार्जन करना चरहता है। उसके मन में किसी प्रकार की संवेदनशीलता भीखन और उसके परिवार के प्रति नहीं है जबकि पीढ़ी-दर-पीढ़ी वे उनके यहां बंधुआ मजदूर की नियति के शिकार रहे हैं। उपन्यास का अनुशीलन करते हुए अन्तर्तहों पर उतरते हैं और बहुअर्थीय स्तर पर पाते हैं कि यह व्यथा केवल भीखन की ही नहीं है अपितु हाशिये पर स्थित अभाव ग्रस्त समाज की भी यह दुर्नियति है। भीखन और गणपत जैसे लोगों के अनेक परिवार हैं जो जमींदारों के शोषण के शिकार होते हैं। खेमराज शर्मा ने जमीन से उखड़े खेतिहरों की दर-दर भटकने की नियति को यथार्थ के धरातल पर सामने लाया है।

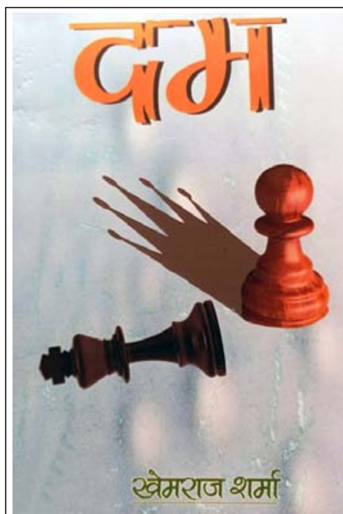
भीखन और अन्य खेतिहर मजदूरों के परिवार पलायन करने के लिए विवश होते हैं। बिना किसी गंतव्य के वे पंजाब के गुरुदास रेलवे स्टेशन पर उतरते हैं जहाँ से पंजाब के जमींदार वहां से खेतों में कार्य करने के लिए ले जाते हैं। भीखन और उसके परिवार को सरदार सुरजीत सिंह जमीन पर काम करने के लिए ले जाता है। चार पांच किलो मीटर में फैली जमीन के फार्महाउस उनके रहने और खाने पीने की व्यवस्था की जाती है। वे इस व्यवस्था से प्रसन्न होकर सुरजीत के खेतों में तन्मयता और ईमानदारी से काम करने लगते हैं। यहां भीखन और उसका परिवार परिश्रम करते हुए सुख शान्ति अनुभव करता है।

भीखन के बेटी मुनिया को उच्च शिक्षा दिलवाने और बड़ा अधिकारी बनाने के सपने होते हैं। वह उसे अंग्रेजी स्कूल में दाखिल करवाता है। पत्नी केसर का दृष्टिकोण उन सामान्य परंपरागत सोच वाली स्त्रियों की ही भांति है जो बेटी की शिक्षा चार पांच क्लास पढ़ाने तक सीमित मानती हैं। इसीलिए वह भीखन से कहती है कि बेटी को चार पांच क्लास पढ़ाओ, किसी ध्याड़ीदार बिरादरी के बेटे से विवाह कर अपना पल्लू झाड़ो। उसमें लिंग भेद

गहरे तक विद्यमान है। वह कहती है मुन्नी की ज्यादा पढ़ाने के तो मैं बिलकुल हक में ना हूँ। मुन्ने को जितना चाहे पढ़ा लेना। (पृ. 22)

भीखन की ट्रक दुर्घटना में अचानक मृत्यु हो जाती है। मुनिया को उच्च शिक्षित करने का सपना टूट जाता है। प्रिंसीपल के आश्वासन और जमींदार के सहयोग से उसकी शिक्षा का क्रम जारी रहता है। परन्तु केसर न जाने क्यों अचानक अपने बेटे और बेटी को लेकर जमींदार के फार्म हाउस से चली जाती है। जमींदार उन्हें रास्ते में लेने पहुंचता है परन्तु केसर का दुर्व्यवहार उसे अंदर तक आहत कर देता है। बाद में मुनिया को स्टेशन पर अकेले छोड़कर बेटे सहित कहीं चली जाती है। लेखक ने विधवा केसर के अन्तर्द्वन्द्व, बेटी को दर-दर ठोकरें खाने के लिए छोड़ने और अपने आप कहीं बेटे के साथ जाने के अपने आकस्मिक निर्णय के कोई संकेत नहीं दिए हैं। उपन्यास में आंशिक संकेत हैं कि जमींदार के यहां रहते हुए वह समाज की आशंकाओं की शिकार होगी। इसीलिए वह जमींदार से कहती भी है कि वह रखैल बनकर नहीं रहेगी। परन्तु उसका बाद का जीवन कैसे बीतता है, वह कहाँ जाती है, बेटी को मां क्यों छोड़ती है? बहुत से प्रश्न है जो उपन्यास में अनुत्तरित रहते हैं। प्रारंभ में लिंग भेद, बेटी की शिक्षा आदि को लेकर केसर के दृष्टिकोण को लेखक ने सामने लाया है। परन्तु यह चरित्र पूरी तरह अविकसित रहकर अचानक तिरोहित हो जाता है जिससे उसकी भूमिका उपन्यास में नगण्य सी हो गई है। इस चरित्र के विकास की संभावनाएं थीं जिससे विधवा एकाकी नारी के जीवन के अन्तर्द्वन्द्वों और संघर्ष को लेकर कहीं परिणति तक पहुंचाया जा सकता था।

लेखक ने रामेश्वर की पत्नी चंपा की सृष्टि के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है कि स्वयं नारी भी नारी शोषण के लिए उत्तरदायी है। चंपा जिस समाज के मध्य रहती है वह हाशिए का समाज है। वह स्वयं भी निम्न मध्यवर्ग से संबंध रखती है परन्तु सरकारी कर्मचारी की पत्नी होने के अहंकार और दंभ के कारण उसमें प्रदर्शन वृत्ति विद्यमान है। वह वंचित वर्ग के मध्य अपनी पृथक पहचान कायम करने के लिए घर में नौकरानी रखकर अपनी प्रदर्शनवृत्ति और अहंकार को तुष्ट करती है। नौकरानी के प्रति उसकी कुटिलता और क्रूरता उसके व्यवहार में परिलक्षित होती है। कम उम्र की बालिकाओं की विवशताओं का लाभ उठाकर बालश्रम करवा कर भी उन्हें मजदूरी नहीं देती। कुछ मास काम करवाकर उन्हें चलता करती है। चम्पा एक मर्म है परन्तु दूसरों के बच्चों के प्रति उसमें किंचित भी वात्सल्य भाव नहीं है। मां द्वारा अनजान स्थान पर छोड़ी बेटी मुनिया परिस्थितियों के झंझावान में घिरकर रामसिंह के माध्यम से चम्पा के घर पहुंचती है। बालिका के प्रति क्रूरता पहले ही दिन से प्रारंभ हो जाती है। अनाथ, असहाय बालिका के प्रति पति रामेश्वर की सहानुभूति और उसकी प्रतिभा को देखकर विद्यालय में प्रवेश दिलवाने के प्रस्ताव पर चम्पा घर में कोहराम मचा देती है। घर के तनावपूर्ण वातावरण को देखकर वह घर में शान्ति स्थापित रखने के लिए पढ़ने की तीव्र उत्कण्ठा होने पर भी अपनी भावनाओं को दमित करते हुए कहती है कि वह पढ़ना नहीं चाहती। पति और अपने दोनों बेटों द्वारा मुनिया की प्रतिभा की प्रशंसा और उसका पक्ष लेने पर उसे घर से निकालने के लिए योजनाबद्ध ढंग से षड्यंत्र रचती है। उसके मैले कुचौले कपड़ों के बीच अपने आभूषण मुनिया के मैले कपड़ों में छिपाकर पुलिस में रिपोर्ट लिखवाती है और घर की तलाशी में आभूषण मिलने पर उसे पुलिस के हवाले करती है। अनाथ बालिका पहले जेल में बाद में बालाश्रम में भेज दी जाती है। वहां उसके व्यवहार से सभी प्रभावित होते हैं। एक खोजी पत्रकार बार-बार आकर उसे अपने जीवन की गाथा सुनाने के लिए कहता है। अंततः वह अपने छोटे जीवन के कष्ट की कहानी सुनाकर पत्रकार आशुतोष को स्तब्ध और द्रवीभूत कर देती है। अखबार में उसकी मार्मिक गाथा प्रकाशित होती है। सुधार गृह में सभी के मन में मुनिया के प्रति स्नेह और सहानुभूति बढ़ जाती है। उसके मन में भी मां और भाई को मिलने की विह्वलता बढ़ जाती है। मुनिया की कहानी के प्रकाशन के दूसरे दिन जम्मू के कठुआ जिले के अंतर्गत लखनपुर गांव से मीर मोहम्मद और उसकी पत्नी मुमताज मुनिया को बेटी के रूप में अपनाने के लिए बाल सुधार गृह में आते हैं। मुनिया कुछ संकोच और बाल सुधार गृह के अधिकारियों के आश्वासन पर दम्पति के साथ जाने के लिए सहमत हो जाती हैं। मुनिया के मिलने पर उन्हें अपनी मृत बेटी साजिया के मिलने की अनुभूति होती है।



दम (उपन्यास), लेखक : खेमराज शर्मा, बालनट पब्लिकेशन प्लाट नं. 172, के 8, कलिंगानगर, भुवनेश्वर, ओडिशा-751 003, मूल्य 300 रुपये, पृष्ठ 301

उपन्यास के प्रारंभिक छः अध्यायों में मुनिया के छोटे से जीवन के संघर्ष, अन्तर्द्वन्द्वों, घात प्रतिघातों, मनोवैज्ञानिक दबावों, शोषण उत्पीड़न और विलक्षण प्रतिभा से जुड़े प्रसंगों और घटनाओं की व्यंजना है। लेखक ने इस प्रारंभिक पृष्ठभूमि में मुनिया के चरित्र को उभारा है। लेखक ने मीर मोहम्मद और मुमताज की किशोरावस्था की बेटी की त्रासदी के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि बाहुबली कहलाने वाले भ्रष्ट राजनेताओं के शहजादे

गुण्डागर्दी और बलात्कार जैसी घटनाओं को अंजाम देते हैं। साजिया बाहुबली नेता केशव राठौर के बेटे विजेन्द्र राठौर साजिया से प्रेम निवेदन करता है अंततः धमकी भी देता है। साजिया के पिता जो स्वयं भारतीय सेना में कमांडोज का मार्शल ट्रेनर के रूप में कार्यरत थे उन्होंने अपनी बेटी साजिया को मार्शल आर्ट का प्रशिक्षण दिया था। वह साजिया को धमकी देता है कि मुझे जो चाहिए होता है, उसे मैं कभी मांगता नहीं छीन लेता हूं। साजिया उसे प्रताड़ित करती है तो उसके अंदर का जानवर सिर उठाने लगता है। वह एक ही किक से प्रहार कर उसे पांच फुट दूर पहुंचा देती है। आठ मास पश्चात् उसकी प्रतिशोध की ज्वाला धधकती है और चार गुंडों को लेकर उस पर प्रहार करता है, उसका बलात्कार करता है। आत्महत्या से पूर्व वह पत्र में अपने पिता को सारा वृतांत लिखती है। साजिया के विद्यालय से घर न लौटने पर उसकी तलाश प्रारंभ होती है उसका शव बरामद होता है। पिता आसाम में तैनात थे। उन्हें सूचना मिलती है उनमें प्रतिशोध की ज्वाला प्रस्फुटित होती है। मुमताज उनके क्रोध को शांत करती है। केशव राठौर का जैसा दबदबा था उसके सामने बेटी का बदला लेने का हर प्रयास विफल होना निश्चित था बदला लेने के ऐलान से दुश्मन को सचेत करने के अलावा और कुछ नहीं होगा। साजिया की आत्महत्या की घटना कुछ समय सुर्खियों में रहती है फिर ठण्डी पड़ जाती है। परन्तु पिता के हृदय की प्रतिशोध की ज्वाला समय के अंतराल के साथ और उग्र रूप धारण करती है। अंततः वह समय संयोगवश आ जाता है जब मीर अपनी बेटी की दुर्घटना वाले स्थल पर पहुंचता है तो वहां फोन पर बात करता हुआ युवक किसी लड़की को धमकाता है। वह मीर को देखकर उसके प्रति भी दुर्व्यवहार करता है। वह अपने साथी रफीक को मीर से निपटने के लिए कहता है। मार्शल आर्ट में दक्ष मीर के एक ही प्रहार से रफीक के आगे तारे घूमने लगते हैं। वह रफीक से विजेन्द्र राठौर की सारी जानकारी प्राप्त करता है। अपने आपको ब्लेक बेल्टर समझने वाला विजेन्द्र मीर पर प्रहार करता है परन्तु मीर के प्रहार से वह बुरी तरह घायल होता है। उसकी टांगों को पकड़कर डेढ़ सौ मीटर गहरी खाई में फेंक देता है। नुकीले प्रत्थर पर पड़कर उसकी मृत्यु हो जाती है। उसके साथी को मोटर साइकिल को उठाकर खाई में फेंकने के लिए कहता है ताकि उसकी यह मृत्यु मोटर साइकिल दुर्घटना से मानी जाए।

लेखक ने मुनिया की एक गतिशिल चरित्र के रूप में सृष्टि की है। वह किशोरावस्था में अनेक संकटमयी स्थितियों से गुजरती है, परन्तु विषम परिस्थितियों में भी नयी ऊर्जा और विलक्षण प्रतिभा से पाठक के हृदय पर अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ती है। सुधार गृह में बिना किसी अपराध के रहकर अपनी चारित्रिक विशिष्टताओं से जेल कर्मियों को प्रभावित करती है। सभी में उसके प्रति स्नेह और करुणा की भावना विद्यमान रहती है। मीर और मुमताज अपनी बेटी के दरिंदों द्वारा बलात्कार और उसकी अपनी जिन्दगी समाप्त करने की मर्मांतक पीड़ा को विस्मृत नहीं कर पाते हैं। अंततः वे मुनिया को बेटी के रूप में अपनाते करते हैं। दोनों मुस्लिम दम्पति हिन्दू बेटी को अपने जीवन का लक्ष्य मानकर उसके जीवन को संवारने शिक्षा दीक्षा देने में कोई कसर नहीं छोड़ते हैं। मीर जो स्वयं मार्शल आर्ट में दक्ष है, वह बेटी मुनिया की अभिरुचि मार्शल आर्ट की ओर उन्मुख करते हैं। विद्यालय और महाविद्यालय में शिक्षा अर्जित करते हुए वह मार्शल आर्ट में देश विदेश में ख्याति अर्जित करती है। निरंतर परिश्रम और प्रतिभा से वह सिविल सेवा की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर डी. एस.पी. के पद पर नियुक्त होती है। पहले ही दिन से एस.पी. के अवकाश ग्रहण करने के कारण उस पर कार्यालय का समग्र दायित्व आ जाता है। पहले ही दिन उसे आतंकवादियों द्वारा घोषित गुण्डों से अपने कार्यालय में वास्ता पड़ता है। वे वस्तुतः आतंकवादी परिस्थितियों को संचालित करने वाले राजनेताओं भ्रष्ट पुलिस अधिकारियों से सम्बद्ध होते हैं। वे कार्यालय की सारी सूचनायें, प्रशासन की गतिविधियों की सूचनाएं आतंकवादियों और उनसे जुड़े भ्रष्ट राजनेताओं को देते हैं। मुनिया दो दिन के कार्यकाल में देशी और विदेशी आतंकवादियों, पत्थरबाजों भ्रष्ट राजनेताओं को सबक सिखाती है। पुलिस में कार्यरत के आतंक संगठनों से संबंधों और उनके दुष्कृत्यों को अनावृत कर आतंकी ठिकानों से आने वाली विस्फोटक सामग्री और शस्त्रों के जखीरे को पकड़वा देती है। मलखान जैसे विधायकों का अस्तित्व खुर्रम जैसे आतंकियों की दृष्टि में कुछ नहीं होता। खुर्रम उसे धमकी देकर रातभर में पत्थरबाजों और दहशतगर्दों को एकत्रित कर पुलिस कार्यालय के भवन को विस्फोट से उड़ाने का कार्य सौंपता है और भली बुरी गालियां देता है।

मुनिया की कर्तव्यनिष्ठा, कार्यकुशलता, निर्भीकता, दूरदर्शिता, मार्शल आर्ट में अनन्य अद्भुत दक्षता और विलक्षण प्रतिभा, राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रभक्ति की भावना आतंकियों की विध्वंसात्मक योजनाओं को बुरी तरह एक ही रात्रि में विफल कर देती है। मलखान, राठौर जैसे भ्रष्ट और देशद्रोही राजनेताओं की नींद उड़ जाती है। डी.एस.पी. मुनिया के विरुद्ध जांच बिठाई जाती है जिसमें विधायक मलखान प्रमुख होता है। उस पर मिथ्या और आधारहीन आरोप लगाकर उसे निलम्बित किया जाता है परन्तु स्वाभिमानी और ईमानदार डी.एस.पी. मुनिया भ्रष्ट परिवेश को देखकर स्वयं त्याग पत्र देकर अपने मां-बाप के साथ अपने घर लखनपुर में रहने लगती है। वहाँ से भी उसका अपहरण किया जाता है परन्तु खुर्रम जैसे खूंखार आतंकियों और दूसरे गुण्डों को मार्शल आर्ट की दक्षता के कारण बुरी तरह लहुलूहान कर भयभीत करती है।

खेमराज शर्मा ने खुर्रम, बर्बर खान जैसे आतंकवादियों,

बाहुबली राठौर जैसे राजनेताओं और उनके संकेतों और धन के लालच में नरसंहार करने वाले आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम देने वाले दिग्भ्रमित युवकों, पुलिस अधिकारियों, भीतर घातियों के चरित्र को यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। कैबिनेट मंत्री राठौर, विधायक मलखान, पुलिस कर्मी कामराज और मकबूल आदि नेता और प्रशासन से जुड़े कर्मी कश्मीर आतंकवादी गतिविधियों और अनेक षड्यंत्रों में सम्मिलित होते हैं जिनके तार पाकिस्तान के आतंकवाद के सरगनाओं से जुड़े रहते हैं। अख्तर जैसे पुलिस कर्मी एक समय आतंकी आकाओं के प्रभाव में रहकर कैबिनेट मंत्री के संकेतों पर नाचते हैं। परन्तु एक समय ऐसा भी आता है जब परिस्थितियों के झंझावातों में उसके अन्तर्मन में इन्सानियत, मानवता, देशप्रेम, देश भक्ति जैसे भाव जाग्रत होते हैं। मीर का व्यक्तित्व उसे प्रभावित करता है उसका हृदय परिवर्तित होता है और अपने कर्त्तव्य के प्रति समर्पित हो जाता है। वह कैबिनेट मंत्री राठौर के समक्ष आतंकी खुर्रम के साथ मिलकर किए दुष्कृत्यों को प्रकट कर अपने कुकर्मों का पाप धोना चाहता है। उसकी दृष्टि में कैबिनेट मंत्री के वहाँ देश भक्ति की गंगा प्रवाहित होती है। परन्तु वहां उसके दुष्कृत्यों और देशद्रोही चरित्र की अनेक परते अनावृत होती है। अपनी कुटिल चालों के कारण वह अख्तर की बेटी का अपहरण कर उस पर दबाव डालना चाहता है। परन्तु वह प्रतिकूल स्थितियों और अख्तर की धमकियों से कमजोर पड़ जाता है और अपहरण कर्ताओं को बेटी को छोड़ने को कहता है। राठौर भीतर घातियों की मदद से पुलवामा, कटरा आदि स्थानों पर आतंकी घटनाओं के माध्यम से निरपराध आम जनों को विस्फोट और गोली का शिकार बनाता है।

लेखक ने बर्बर खान को अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी के रूप में चित्रित किया है जिस की पड़ोसी देश में राष्ट्राध्यक्ष जैसी हैसियत है। वह कट्टरता का पर्याय है। अंतर्राष्ट्रीय आतंकवादी होने के कारण उसको पकड़ने के लिए करोड़ों डालर के इनाम रखें जाते हैं परन्तु वह मुजफ्फराबाद, इस्लामाबाद आदि में अनेक जलसे कर आतंकवाद को बढ़ावा देता है। मुनिया को गृह मंत्रालय में बुलाया जाता है। उसे संगठित प्रयासों से आतंकवाद से लोहा लेने के लिए आगे आने के लिए कहा जाता है परन्तु वह एन.एस.ए. के प्रस्ताव से असहमति प्रकट करती हुई अपने आप अकेले आतंकवादी सरगनाओं के खात्मे के लिए अपनी कुशाग्रबुद्धि चपलता, युक्तियों, ऊर्जा, शारीरिक और मानसिक दृढ़ता और आत्मविश्वास से कभी अपहरण होने पर और कभी स्वयं अपना अपहरण करवाकर आतंकवादियों को कभी मौत के घाट उतारती है तो कभी उन्हें शारीरिक रूप में अक्षम कर उन्हें जिन्दा सरकार तक पहुंचाती है। उसे अंतर्राष्ट्रीय आतंकवादी बर्बर खान तक पहुंचने के लिए अनेक युक्तियों का सहारा लेना पड़ता है। अंततः एक सुन्दर युवती होने के कारण उसका अपहरण किया जाता है और खूंखार बर्बरखान के गुप्त ठिकाने जो किसी बहुत बड़े महल से कम न थे वहां पहुंचा दी जाती है जहां वह बर्बर खान से अकेले मिलती है। वह बर्बर खान पर आकस्मिक रूप में अपनी मार्शल आर्ट की युक्तियों से प्रहार करती है और उसको थोड़े समय में पूरी तरह अशक्त करती है। वहां से सारी सूचनायें देती है और भारत में एन.एस.ए. कार्यालय तक उसे जिन्दा पहुंचाती है। मुनिया अपना सीक्रेट मिशन पूरा करती है और खूंखार आतंकवादी बर्बर खान को एन.एस.ए. को सौंपती है।

बर्बरखान की दृष्टि में नारी का कोई महत्त्व नहीं है वह उसे यौनक्षुधा तृप्ति का साधन और भोग की वस्तु समझता है परन्तु मुनिया अनेक प्रहारों से उसकी धारणा को पूरी तरह खण्डित करती है और उससे कहती है औरत ने मां बनकर तुम्हें जन्म दिया। उसका तूने दूध पिया और उसी औरत की वजह से तेरा वजूद है। यह जानते हुए भी कि तेरी रगों में भी किसी औरत का खून है फिर भी तू औरत जात को हवस के सामान से ज्यादा और कुछ नहीं समझता। (पृ. 264) दहशत के कारोबार में हजारों निरपराध लोगों की जान लेने वाले और आर्थिक रूप में विपन्न बेरोजगार युवाओं को मानव बनाकर मौत के घाट उतारने वाले खूंखार आतंकवादी बर्बर खान को असीम यातना देकर वह उसे बेदम कर देती है, वह साफ कहती है कि मैं तुझे मरने नहीं दूंगी और जीने लायक भी नहीं छोड़ूंगी। वह दैत्य की भांति अर्ध- चेतनावस्था में मुनिया के आगे बिछ जाता है।

लेखक ने यह उद्घाटित किया है कि बाहुबली राजनेताओं के निरंकुश और भ्रष्ट बेटे सभी जगह हैं, इस्लामाबाद में भी राह चलने वाली युवतियों से छेड़छाड़ और राजनेताओं के बेटों की निरंकुशता को प्रश्रय देने और उनके दुस्साहस और दुष्कृत्यों का पक्ष लेने वाली पुलिस के दुष्चरित्र को सामने लाया है।

प्रस्तुत उपन्यास समसामयिक यथार्थ को राजनीतिक और सामाजिक संदर्भों में उद्घाटित करता है। अपने रचनात्मक कौशल से लेखक ने मुनिया के चरित्र को जिस वर्णन वैविध्य से उत्तरोत्तर विकसित किया है, वह पठनीय है। लेखक का यह कौशल है कि उसने प्रायः हर सामान्य घटना और चरित्र को स्मरणीय बनाया है। यही कारण है कि भीखन जैसा चरित्र अपनी संक्षिप्त भूमिका में भी स्मरणीय बना रहता है। छोटी-छोटी चीजों में डूब सकने की तल्लीनता और अभिव्यक्ति की सांद्रता चमत्कृत करती है। खेमराज शर्मा ने समाज और राष्ट्र के कई गंभीर और व्यापक प्रश्न उठाए हैं। मुनिया के जीवन से संपृक्त प्रारंभिक सूत्रों को उपन्यास के उत्तरार्द्ध में व्यापक फलक पर प्रस्तुत करते हुए नारी गौरव, गरिमा, नारी अस्मिता और नारी शक्ति को अपनी उर्वर कल्पना शीलता से जिस कलात्मक कौशल से विन्यस्त किया है, वह कौतूहल और जिज्ञासा से ओतप्रोत, कथा रस की सृष्टि करते हुए लेखकीय जीवन दृष्टि का भी बोध भी करवाता है। यह उपन्यास

वृतांत और ब्योरों पर अवलम्बित नहीं है। जीवन्त पात्रों की सृष्टि करके लेखक ने उनके अन्तर्द्वन्द्वों और मूल्य दृष्टि को विश्वसनीयता के साथ मूर्तिमान किया है। मुनिया, भीखन, मीर मुंशी आदि चरित्र अपनी मूल्य दृष्टि के कारण दूर तक प्रभावित करते हैं। राजनीतिक और प्रशासनिक क्षेत्र में व्याप्त मूल्यहीनता मलखान राठौर जैसे चरित्रों के माध्यम से व्यंजित की है जिनके लिए राष्ट्रभक्ति और राष्ट्र प्रेम से ऊपर निजी महत्त्वाकांक्षाएं हैं। उपन्यास के उत्तरार्द्ध में मुनिया का इस्लामाबाद जाना बर्बर खान तक पहुँचना और एक से एक शक्तिशाली आतंकवादी का कचुमर निकालना, पूरी तरह निर्बल, असहाय बना देना पढ़ते हुए यथार्थ के धरातल से आदर्श की जमीन पर लाया है। बर्बरखान तक पहुंचने की घटनाएं और उसके अज्ञात ठिकाने तक पहुंचना और अकेली लड़की की यह यात्रा उसके आदर्शवादी चरित्र को तो सिद्ध करता है और लेखक उसे हर कदम पर अदम्य शक्ति संपन्न नायिका की भांति सर्वगुण सम्पन्न मानकर दुर्जन चरित्रों को परास्त करने वाले चरित्र के रूप में उभारा है। लेखक ने नारी की एक अनन्य अद्भुत, विलक्षण शक्ति के रूप में सृष्टि की है। उसका प्रत्येक अवसर पर दुष्ट चरित्रों का परास्त और ध्वस्त करना कई स्थितियों में अयथार्थ प्रतीत होता है। लेखक ने मुनिया के माध्यम से नारी की सशक्त भूमिका ऐतिहासिक पौराणिक संदर्भों को स्मरण करते हुए प्रस्तुत की है। औपन्यासिक कलाशिल्प, कथासंयोजन और चरित्र गठन के प्रति लेखक का निजी दृष्टिकोण है। कथावस्तु, पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व औपन्यासिक समस्यायें, सामाजिक, राजनीतिक स्तर पर वैयक्तिक स्वार्थों की टकराहट, भ्रष्ट राजनीतिक नेताओं की अवसरवादिता क्षुद्र और ओछी लिप्साएं औपन्यासिक कथ्य के अवयवों के रूप में विद्यमान हैं। खेमराज शर्मा ने छोटी-छोटी घटनाओं को अद्भुत नाटकीयता प्रदान की है। इन घटनाओं के माध्यम से लेखक ने ठोस जीवन्त पात्रों की सृष्टि की है। यह उनकी उपलब्धि है। सामान्य दैनंदिनी जीवन की घटनाओं के महीन सूत्रों के माध्यम से लेखक ने गंभीर सत्यों को उद्घाटित करते हुए पात्रों की आकांक्षाओं, असंगतियों और मूल्यहीनता और अन्तर्विरोधों को सामने लाया है। कथानक का अविरल गतिमय प्रवाह घटनाओं के मध्य से गुजरते हुए मन और मस्तिष्क को आलोकित करता है। सगुंफित कथानक, सुगठित शैली, स्पंदित और सहजप्रवाह सम्पन्न भाषा इन सब घटकों का सफल निर्वहन खेमराज शर्मा के 'दम' उपन्यास की विशिष्टताएं हैं। उपन्यास प्रारंभ से लेकर अंत तक पाठक को बांधे रखता है। पाठक कौतूहल और जिज्ञासा से पूर्ण 'दम' उपन्यास को पढ़कर ही दम लेता है।

गांव व डाकघर बातल, तह. अर्की,
जिला सोलन, हि.प्र.-173208, मो. 0 94180 10646

प्रेस तथा पुस्तक पंजीयन अधिनियम की धारा 19 'डी' के अंतर्गत अपेक्षित 'हिमप्रस्थ' मासिक के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बन्धित विवरण

फार्म-4 (नियम 8 देखिये)

प्रकाशन स्थान	'हिमप्रस्थ' कार्यालय हिमाचल प्रदेश, राजकीय मुद्रणालय परिसर, शिमला-171005
प्रकाशन अवधि	मासिक
मुद्रक	रीमा कश्यप नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला-171005
नागरिकता	भारतीय
प्रधान सम्पादक	हरबंस सिंह ब्रसकोन
नागरिकता	भारतीय
वरिष्ठ सम्पादक	वेद प्रकाश
नागरिकता	भारतीय
सम्पादक	वेद प्रकाश
नागरिकता	भारतीय
प्रकाशक	हरबंस सिंह ब्रसकोन निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला-171002
नागरिकता	भारतीय
उन व्यक्तियों के नाम और पते जो मासिक के स्थायी स्वामी हैं, जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक सांझेदार/हिस्सेदार हों	हिमाचल प्रदेश सरकार एलर्जली, शिमला-171002

मैं हरबंस सिंह ब्रसकोन यह घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

(हरबंस सिंह ब्रसकोन)
निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग
हिमाचल प्रदेश

मार्च, 2020

पहाड़ी में रचित साहित्य यात्रा और मूल्यांकन

(पृष्ठ 7 से जारी) निकाले गए। काव्य धारा शृंखला भाषा संस्कृति विभाग का एक सहज और सार्थक प्रयास था, यद्यपि यह शृंखला आगे नहीं बढ़ पाई। इसके तीन भाग प्रकाशित हुए। इसी तरह अकादमी द्वारा 'मेहंदी' तथा 'फुल्लां रा गुलदस्ता' (1996-97) नाम से काव्य संकलन सुदर्शन वशिष्ठ के संपादन में निकले।

यहां स्व. प्रेम भारद्वाज तथा डॉ. प्रत्यूष गुलेरी के संपादन में निकले काव्य संकलनों के माध्यम से पहाड़ी कविता का आकलन करने का प्रयास किया जाएगा।

काव्य संकलन 'सीरां'

प्रेम भारद्वाज ने अस्वस्थ होने के बावजूद एन.बी.टी. के लिए एक काव्य संकलन 'सीरां' का संपादन किया। इस संपादित संकलन में पहाड़ी भवानी दत्त शास्त्री, लाल चंद प्रार्थी, सागर पालमपुरी, शबाब ललित, पीयूष गुलेरी, गौतम व्यथित और संसार चंद प्रभाकर जैसे आरम्भिक कवियों के साथ कुशल कटोच, कांता शर्मा, मुरारी शर्मा, ईशिता आर. गिरिश जैसे नये कवि भी शामिल हैं। इतनी पीढ़ियों के कवियों को एकसाथ प्रस्तुत करना इस संकलन की पहली विशेषता है। संकलन में कई धाराओं की कविताएं पढ़ने को मिलती हैं। शुद्ध शृंगारिक रचनाओं से लेकर गहन सामाजिक सरोकारों का स्वर भी दृष्टिगोचर होता है। पहाड़ी में तुकबंदी, छंदबद्ध, अतुकांत रचनाओं से लेकर पहाड़ी गजल तक को एक साथ देना इसकी तीसरी विशेषता है।

संग्रह में शामिल प्रारम्भिक दौर के पुराने और स्थापित कवियों में सर्वश्री भवानी दत्त शास्त्री, सागर पालमपुरी, लालचंद प्रार्थी, संसार चंद प्रभाकर, पीयूष गुलेरी, गौतम व्यथित, बी.आर. मुसाफिर, शबाब ललित, सुदर्शन कौशल नूरपुरी, शेष अवस्थी, मौलूराम ठाकुर, प्रत्यूष गुलेरी, शम्मी शर्मा, ओम प्रकाश प्रेमी, अश्विनी गर्ग आदि हैं। इसके बाद ओंकार फलक, रिखी भारद्वाज, कमलकांत शर्मा विद्रोही, केशव चन्द्र, प्रकाश चंद धीमान, पवनेन्द्र पवन, हरिकृष्ण मुरारी, रमेश चंद मस्ताना, मदन हिमाचली, नवीन हलदूनवी, देवराज संसालवी, शंकर लाल शर्मा, रजनी कांत, अमर पालशर आदि आते हैं। एकदम नई पीढ़ी में मुरारी शर्मा, अर्पणा धीमान, कांता शर्मा, ईशिता आर. गिरिश आदि हैं। पहाड़ी ग़ज़ल में प्रार्थी, सुदर्शन कौशल, शबाब ललित (जो मूलतः शायर रहे हैं) आदि को छोड़ दें तो सागर पालमपुरी से आरम्भ होकर गौतम व्यथित, प्रेम भारद्वाज, द्विजेन्द्र द्विज, पवनेन्द्र पवन, नवनीत शर्मा के नाम जोड़े जा सकते हैं।

प्रस्तुत संकलन में भवानी दत्त शास्त्री(स्व.) ने जहां 'हाखी री काणी' व 'धरती' के माध्यम से कुछ सामाजिक सरोकारों की बात की, वहां सागर पालमपुरी ने 'संझ ढलि' में सांझ के विभिन्न चित्र व 'प्हाड़ां दी राणी' में पहाड़ के श्रम को भी दर्शाया। कौशल नूरपुरी एक समर्थ शायर रहे हैं तथापि यहां पहाड़ी गजलों में हिन्दी का पुट नज़र आता है।

रूप शर्मा निर्दोष की कविताओं को व्यंग्य कविताएं कहना उचित होगा तो लाल चंद प्रार्थी (स्व.) की गजलों में हिमाचल की एकता का सपना देखा गया है। उनकी लोकप्रिय कविता 'नार की कटार थिया' भी शामिल की गई है। शबाब ललित की गजलें उनकी इस विधा में महारत का लोहा मनवाती हैं यदि वे मूल पहाड़ी में लिखी गई हैं।

गौतम व्यथित ने गजल और लोक कविता (चंदा मामा लोरिया, दुधू भत कटोरिया) के माध्यम से बात कही है तो पीयूष गुलेरी ने कवित्त और चमुक्खे के माध्यम से मनोसंवेदना और पहाड़ी भाषा की बात की। परमानंद शर्मा ने भी गजल कह कर बड़ी बात कहने की कोशिश की है : 'जिन्हां दे अंदर किच्छ नीं हुंदा,उड़ी जांदे सै खिंद खंदोलू' ता बी.आर. मुसाफिर(स्व.) ने 'पीड़ां रा पटारू' द्वारा स्वाधीनता संग्राम की गाथा गायी है।

पहाड़ी कविता में संसार चंद प्रभाकर (स्व.) के पास ठेठ मुहावरा था। ठेठ भाषा के प्रयोग में दो नाम गिनाएं जा सकते हैं : भगतराम मुसाफिर और संसार चंद प्रभाकर। भगत राम मुसाफिर(स्व.) की कविताएं इस संकलन में नहीं हैं। प्रभाकर ने भी कवित्त, गजल में समाज की बात कही है। 'पुराणी बड़' कविता में आधुनिक कविता का मुहावरा है जो वट वृक्ष के माध्यम से उजागर हुआ है। इसी तरह ओम प्रकाश प्रेमी (स्व.) ने भी 'गलाणे बाह्जी रही नी हुंदा' के माध्यम से पहाड़ी मुहावरे में बात की है। शेष अवस्थी (स्व.) की प्रसिद्ध कविता 'जे दिक्खा दा, सै लिक्खा दी' संकलन की महत्त्वपूर्ण कविता है :

'तैं कितणे फुल तोड़ी तोड़ी भुइयां सुट्टे! कितणियां अणखिड़यां कलियां, उंगली कनें मरोड़ी सटियां! कितणियां की गुडरियां......'

अश्विनी गर्ग ने पहाड़ी मुहावरे (आवा ऊत) से आपसी वैर विरोध (दिखे एह लोक) पर कलम चलाई । प्रत्यूष गुलेरी ने ग़ज़ल और छंदबद्ध कविता (मौत, न्हेर नहीं देर ऐ) के माध्यम से कुछ सामाजिक बुराइयों को उजागर किया। मदन हिमाचली की कविता (सच्च क्यों नी बोलदा) में भी शेष अवस्थी का स्वर सुनाई देता है तो शंकर लाल शर्मा को भी लोगों के बदलने (केड़े बणीगे लोक) की चिंता है। देवराज संसालवी ने 'कविए दी सहेली' तथा 'अखबार दे पन्ने' द्वारा नई बात कहने की कोशिश की है।

महिला कवियों में रेखा डढवाल ने 'नार' और 'कुड़ियां'

कविताओं से नारी मन की व्यथा कथा कही है। कांता शर्मा ने प्रकृति चित्रण (सौण आया, हियुं पया, व्यासा री पीड़) पर बल दिया तो रूपेश्वरी शर्मा ने भी रेखा की भान्ति नारी की पीड़ा पर बात कही। अर्पणा धीमान की एक कविता 'गरीबिया गांह' भी दहेज प्रथा पर है। निर्मला चंदेल की एक कविता 'जनाने जाति रा दुख' भी महिला चिंताओं पर है। महिला कवियों में सुदर्शन डोगरा का न होना खलता है। इन्हें हिमाचल अकादमी से पहाड़ी कविता के लिए वर्ष 1999 में पुरस्कार भी मिला है। पुराने कवियों में कमला वर्मा कमल को भी जोड़ा जा सकता था।

संकलन में नये कवियों को लिया जाना महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि इन्हीं से आगे आशा की जा सकती है। शम्मी शर्मा, रजनी कांत,कमल कांत विद्रोही, नवीन हलदूनवी, बी.के. डोहरू, ज्ञान चंद पाधा, हरिकृष्ण मुरारी, अमर पालशर, कमलकांत विद्रोही, रमेश चंद मस्ताना आदि कवियों के साथ अशोक दर्द, मुरारी शर्मा, कांता शर्मा, रूपेश्वरी शर्मा, विधि सिंह दरिद्र, अमर तनौत्रा, कनौजिया, रविसिंह मंढोत्रा, हाकम सिप्पी, सुभाष सागर आदि नये कवियों का शामिल होना एक सुखद और लोकतांत्रिक प्रयास है।

पहाड़ी काव्य का समग्र और विविध रूप सामने लाने के लिए संपादक बधाई के पात्र हैं। कविताओं के चयन में भी सूझबूझ का परिचय देखने को मिलता है। कुछ कवियों की लोकप्रिय रचनाएं देकर चयन प्रक्रिया सुदृढ़ हुई हैं। कई बार रचनाकारों से कारणवश रचनाएं लेने में कठिनाई आती है। संभवतः इसी कारण से पहाड़ी आंदोलन के प्रारम्भिक कवियों में जयदेव किरण, जिन्हें पहाड़ी में प्रथम राज्य सम्मान(1989) प्राप्त हुआ, देसराज डोगरा, सी.आर. बी. ललित, भूपरंजन, भगत राम मुसाफिर, चन्द्रशेखर बेबस, काहन सिंह जमाल, नंदेश, प्रीतम आलमपुरी, वरयाम सिंह, ओमप्रकाश राही, सुदर्शन डोगरा, कमला वर्मा कमल, सरिता वैद्य, प्रिया शर्मा आदि इसमें शामिल नहीं हैं।

तथापि 'सीरां' एक महत्त्वपूर्ण संकलन है जिसमें कवि और कविता, दोनों का चयन सूझबूझ से किया गया है। यह पुस्तक निश्चित रूप से एक संदर्भ ग्रन्थ के रूप में उधृत की जाएगी। नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया भी बधाई का पात्र है जिसने ऐसी भाषा की कविता को प्रकाशित किया, जिसे अभी कहीं से भी मान्यता नहीं मिली है।

प्रतिनिधि हिमाचली काव्य संकलन

डॉ. प्रेम भारद्वाज(स्व.) के संपादन में प्रकाशित हिमाचली काव्य संकलन 'सीरां' के बाद सन् 2009 में डॉ. प्रत्यूष गुलेरी के संपादन में 'प्रतिनिधि हिमाचली काव्य संकलन' का साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशन एक महत्त्वपूर्ण कार्य है जो हिमाचली कविता को समझने और परखने में विशिष्ट योगदान देता है।

इस संकलन के कवियों को मुख्यतः तीन भागों में देखा जा सकता है : पहले तो वे जो केवल हिमाचली में ही लिख रहे हैं, या जिन्होंने अधिकांश हिमाचली में ही लिखा। दूसरे जो अन्य भाषाओं में लिखने के साथ हिमाचली में भी लिखते हैं। तीसरे, जो लिखते तो हिन्दी या अन्य भाषाओं में हैं, किन्तु उन्हें हिमाचली में लिखने से भी पहरेज नहीं। यानि संकलन में प्रारम्भिक दौर के पुराने कवियों से ले कर बिलकुल नए कवियों को भी शामिल किया गया है जिससे हिमाचली कविता का एक स्पष्ट चेहरा हमारे सामने दृष्टिगोचर होता है।

कवियों का क्रम भी लगभग उनकी लेखन में वरिष्ठता को देखते हुए दिया गया है। श्रीमती रानी विक्रम, रूद्र दत्त, बाबा कांशीराम ऐतिहासिक कवियों में गिनाए जा सकते हैं। सोमनाथ सिंह सोम, चन्द्रशेखर बेबस, रूपसिंह फूल और लाल चंद प्रार्थी से ले कर भवानी दत्त शास्त्री, संसार चंद प्रभाकर और जयदेव किरण से होते हुए मुरारी शर्मा, आत्माराम रंजन और अदिती गुलेरी जैसे एकदम नये कवि भी संकलन में शामिल हैं जिससे हिमाचल कविता की यात्रा का एक पूरा इतिहास सामने आता है।

हिमाचली में गजल परंपरा का आरम्भ लाल चंद प्रार्थी से माना जा सकता है। प्रार्थी जी उर्दू में भी लिखते रहे हैं। हालांकि संकलन में उनकी प्रसिद्ध और लोकप्रिय कविता 'नार कि कटार थिया' दी गई है। रूपसिंह फूल ने भी गजल में प्रयोग किया। सागर पालमपुरी की गजल 'तूं ता फुल्लां चुणदी आई मैं म्हेसा कण्डे बीणे' जैसे बंदों के साथ समृद्ध हुई है तो कौशल नूरपुरी ने जीवन को बहता पानी कहा :

'मैं तां जीणा इह्यां ई कौशल, जिह्यां बगदा बगदा पाणी।'

ओमप्रकाश प्रेमी ने अपनी गजल में वियोग का सहारा लिया है तो शेष अवस्थी ने भी एक विरहणी का चित्रण किया है जो अपने नौकरी पर गए पति की प्रतीक्षा करती है :

''मेरा सून्ना अंगण दुआर, इक बारी घरैं आई जा।''

बृजमोहन कौशल की गजलें पूरे वजन के साथ बात करती हैं : ''मेरे दोस्तां ने मने दी कराणी, लगाणी बुझाणी, बुझाणी लगाणी' तो चंद्रमणि वशिष्ठ ने विरह का वर्णन किया हैः '' जुग होटे निहाल़ी निहाल़ी रो, मन मंदरो दे दीवे बाल़ी बाल़ी रो।' शबाब ललित, जो उर्दू के शायर हैं, ने अपने शायराना अंदाज में ही सच्ची बात कही है : ''झूठे जो तां लहरां बहरां, सच्चे जो लग्गी जांदी फांसी'। प्रीतम चंद प्रीतम और ईश्वर दुखिया ने श्रृंगार के विभिन्न प्रयोग अपनी ग़ज़लों में किए हैं। पवनेन्द्र पवन की ग़ज़लों में एक तीखापन दिखाई देता है :

''भुख्यां दे मुलखे तमासा नीं होणा, कितना कि बंदर नचाई ने दिखणा।

फटि बी ऐ सकदा 'पवन' ख्याल रखणा, बड़ा फूकणू नीं फुलाई ने दिखणा।''

प्रेम भारद्वाज(स्व.) की गजलों में ठेठ भाषा का मुहावरा देखने को मिलता है जो उनकी मूल भाषा पर पकड़ का परिचायक है :

''रूचियां बाह्जी मिट्ठे मधरे रति बी नक्कैं नी चढ़दे
प्रेम नि ऐ तां फिक्के फोके किस्से मौज बहारां दे।''

वरिष्ठ कवि सी.आर.बी. ललित तथा परमानंद शर्मा के अलावा कंवर करतार, दीपक कुमार वर्मा, रजनीकांत, मुरारी शर्मा ने भी ग़ज़ल में अपनी बात कहने का प्रयास किया है।

मुरारी शर्मा ने अपनी गजलों में गहरी बात की है :

'' से बदलां हुण रंग मौसमा सांही, आदमी डुग्गहा था कह्दी समुंद्रां सांही।'

पुराने कवियों में स्व. चन्द्रशेखर बेबस ने 'जूगनू' के प्रतीक बना कर समसामयिक मुद्दों को छुआ है तो स्व. देसराज डोगरा ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'चाचू गिरधारी' द्वारा गांव के एक सीधे सादे आदमी का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। भगतराम मुसाफिर (स्व.) भी ठेठ पहाड़ी मुहावरे के कवि माने जाते रहे हैं, यहां उनकी कविताएं देश प्रेम और समाज सुधार से सम्बन्धित हैं। हरिप्रसाद सुमन और खेमराज गुप्त भी देश प्रेम तथा देश भक्ति की बात कर रहे हैं। उसी समय के स्व. बलदेव सिंह ठाकुर ने पहाड़ी मुहावरे को पकड़ कर मुक्त छंद में बात की हैः

''एह सड़क - जिसा तू चल्लेया, नित नौएंआ सुपनेयां पाई
घर नैह्ड़ें होर नैह्ड़ें ओआ दा --'

इसी पीढ़ी के कवियों में स्व. भवानी दत्त शास्त्री ने 'नालू', शीतल निर्झर और कलाकार पर तथा स्व. बख्शी राम मुसाफिर ने हिमाचल पर काव्य रचना की है, यद्यपि 'प्रधान' पर इनकी कविता व्यंग्य की तीखी धार लिए हुए है।

शम्मी शर्मा, कृष्ण कुमार नूतन, अमर सिंह रणपतिया, सोहन लाल गुप्त, ओंकार लाल भारद्वाज(स्व.) भी पुरानी पीढ़ी के कवि हैं जिनकी कविताएं प्रदेश प्रेम, समाज सुधार और समाज के आडंबरों पर हैं।

स्व. संसार चंद प्रभाकर भी ठेठ मुहावरे के हिमाचली के समर्पित कवि थे। संकलन में उनकी 'किरसान' और 'छप्पर' कविताएं स्थानीय मुहावरे के साथ किसान और गांव के घर का मार्मिक दस्तावेज हैं।

पुरानी पीढ़ी के कवियों के अन्य कवियों में एम. आर. ठाकुर, कमला वर्मा कमल, उदय प्रकाश हिमाणू, विद्यानंद सरैक, सुखदेव शास्त्री जैसे कवियों को संकलन में डाल कर हिमाचली कवियों की सूची में वृद्धि की गई है।

हिमाचली के पुरोधा कवियों में, जो संकलन के संपादन तक लिख रहे थे, सर्वश्री जयदेव किरण, पीयूष गुलेरी, गौतम व्यथित, अश्विनी गर्ग, प्रत्यूष गुलेरी, नरेन्द्र अरुण, सुदर्शन डोगरा शामिल हैं। (हालांकि पीयूष गुलेरी, नरेंद्र अरुण, सुदर्शन डोगरा अब हमारे बीच नहीं हैं)। जयदेव किरण के कुछ लोकप्रिय गीतों या कविताओं के स्थान पर यहां दो मुक्त छंद की विचार कविताएं 'झूठ' और 'दुज्जे रा दोष' दी गई हैं। गौतम व्यथित की एक गजल और एक कविता दी है जो देश में भ्रष्टाचार, आतंक जैसे मुद्दों के प्रति सचेत करती है :

''घरे जो बाहर ते दुस्मणा बैरियां रा, भौ उतड़ा नीं हुंदा
जितड़ा घरे रे भेतियां/कल़हां कल़त्ते रा।''

प्रत्यूष गुलेरी ने भी अपनी एक गजल तथा लोक मुहावरे पर आधारित कविता ''हरगंगे भेई हरगंगे' दी है जिसमें आज के कुसमय पर चोट है :

''भूता दे मसटंडे एत्थू, खरेयां जो पेई जांदे डंडे
नएं तिह्नां दैं लगदे दंगे, हरगंगे! भई हरगंगे।''

नरेंद्र अरुण ने 'कुज्जी रे फुल्ल' कविता के माध्यम से गांव में खिलने वाले कुज्जी के फूल, उसकी मोहक खुशबू और उपयोगिता का स्मरण किया है तो अश्विनी गर्ग ने 'चांदी दी लाड़ी' द्वारा अपनी धरती की महिमा का गान किया है। सुदर्शन डोगरा ने कार्यालयी जीवन पर छींटाकशी की है। अपनी कविता 'रूले री पुकार' में वे लिखती हैं :

''मैं रूल(नियम) हां, मेरा नास मत पुट्टा
मिंजो खरे करी पढ़ा, समझा, फिरि लागू करा।''

संकलन में कुछ कवि ऐसे भी हैं, जो मूलतः हिन्दी में लिखते हैं। इन में सुदर्शन वशिष्ठ, दिनेश धर्मपाल, के. आर. भारती, चंद्ररेखा डढ़वाल, हरिप्रिया शामिल हैं। सुदर्शन वशिष्ठ ने 'परिंदे' और 'बद्दल' कविताओं से प्रकृति को उकेरा है तो दिनेश धर्मपाल ने 'बाजार' को मिटाने की कामना की है। के. आर. भारती ने 'बद्दल़' में प्रकृति चित्रण तो 'शराब' में नशाखोरी पर चोट की है। हरिप्रिया की कविताओं में नारी मन की संवेदना है, जबकि रेखा ने आधुनिक सोच को कविता में ढाला है :

''भीड़ छुआल़दी पत्थर/ कनैं खूना खून बी/भीड़ ई होंदी।'

रमेश चंद मस्ताना ने 'दोहे' के प्रयोग से और कुशल कटोच ने 'खिंद(गूदड़ी)' के प्रतीक से अपनी बात कही है।

संकलन में कुछ नये कवियों को स्थान दे कर हिमाचली में आगे की पीढ़ी के प्रति भी एक आशावादी दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है। दोपक डोगरा ने सरकारी अध्यापक पर व्यंग्य कसा है तो ईशिता ने ''प्हाड़े री बेटड़ी'' से पहाड़ की औरत का दर्द बयान किया है :

''धारा पौरे बसदी/आमां रा गीत
बौत कनारे बेशिये ताशा खेलदा/घौरा आल़ा तेसरा।''

अदिति गुलेरी ने नई संवेदना की आधुनिक कविता मे बात रखी है तो आत्मा रंजन ने 'खुशी' और 'सपना' जैसे विषयों पर क्षणिकाएं प्रस्तुत की हैं।

हिमाचली कविता पर पुराने ढर्रे की तुकबंदी या पुराने छंदों का बरबस प्रयोग, केवल हिमाचल का गुणगान या प्रकृति चित्रण और सामाजिक सरोकारों व चेतना से दूरी जैसे आरोप लगते रहे हैं। प्रस्तुत संकलन इन आरोपों का बहुत हद तक खण्डन करता

है और हिमाचली काव्य के प्रति आश्वस्त करता है। संकलन में ऐतिहासिक और प्रारम्भिक कवियों से लेकर एकदम नये कवियों के साथ चौरानवें कवियों की एक साथ उपस्थिति इसे एक संदर्भ ग्रंथ के रूप में स्थापित करती है जो इस विधा में शोध करने वालों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। अंत में कवियों के परिचय देने से इतिहास लेखन में भी सुविधा रहेगी। अतः यह संकलन हिमाचली भाषा को, जो अभी पहचान पाने की राह में है, स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देगा, ऐसा विश्वास है।

साहित्य अकादमी ने एक ऐसी भाषा की कविताओं का संकलन प्रकाशित कर खुलेपन का परिचय दिया है, जो उसकी अनुसूची में अभी शामिल नहीं है, इसके लिए अकादमी बधाई की पात्र है।

पहाड़ी ग़ज़ल

पहाड़ी कविता में आधुनिक मुहावरे या आधुनिक तकनीक की कमी को पहाड़ी ग़ज़ल पूरा करती है। इस विधा में अनेक सम्भावना नज़र आती हैं क्योंकि अभी भी रचनाकार इस विधा में लिख रहे हैं।

जब सरकार द्वारा इस भाषा के उत्थान के लिए सार्थक प्रयास किए गए, कविता ही एक मात्र ऐसा माध्यम था, जो एकदम सामने आया। ऐसे दौर में बहुत बार एक तरह से तुकबंदी की गई। फिर प्रदेश प्रशस्ति और शृंगारिक रचनाओं की बाढ़ आई। शैली में भी पुरातन कवित सवैयों का सहारा लिया गया। इस सबके बावजूद एक बार ठेठ पहाड़ी मुहावरा छिपा न रह सका। ग़ज़ल को माध्यम बना कर सशक्त कविता की गई।

पहाड़ी गजल में लाल चंद प्रार्थी, सुदर्शन कौशल, शबाब ललित (जो मूलतः शायर रहे हैं) आदि को छोड़ दें तो सागर पालमपुरी से आरम्भ हो कर गौतम व्यथित, पीयूष गुलेरी, प्रत्यूष गुलेरी, संसार चंद प्रभाकर, प्रीतम आलमपुरी ने इस विधा में लिखने का सफल प्रयास किया है। गजल में लिखने वालों में डॉ. प्रेम भारद्वाज(स्व.) एक सशक्त हस्ताक्षर रहे हैं। डॉ. प्रेम भारद्वाज पहाड़ी ग़ज़ल के पुरोधा रहे हैं। उन्हें हिमाचल सरकार द्वारा पहाड़ी में ही उनके संग्रह 'मौसम खराब है' को 1999 में 'राज्य सम्मान' मिला। इसी संग्रह पर 1993 में अकादमी पुरस्कार भी मिला। प्रेम भारद्वाज की 'कुत्ता', 'काहि्लयां थियां ठगां ते बोरियां' तथा 'भेडू' ग़ज़लें हैं जो पहाड़ी के ठेठ प्रयोग के साथ गजल विधा के नियम निभाते हुए सामने आती हैं।

परमानंद शर्मा, सी. आर. बी. ललित, कंवर करतार, द्विजेन्द्र द्विज, पवनेन्द्र पवन, रजनीकांत, मुरारी शर्मा, नवनीत शर्मा के बाद विनोद कुमार भावुक के नाम उल्लेखनीय हैं। प्रेम भारद्वाज की गजलों में ठेठ पहाड़ी मुहावरे का जमकर प्रयोग हुआ है जिसका अनुसरण अब विनोद कुमार भावुक भी कर रहे हैं।

अन्य विधाएं

पहाड़ी में कहानी उपन्यास आदि विधाओं को अभाव होते हुए भी रविसिंह मंढोत्रा (स्व.) का उपन्यास 'जौंढा'' जिसे वर्ष 2004-2006 का अकादमी सम्मान भी मिला, आश्वस्त करता है। मंढोत्राजी हालांकि मूलतः मंडी से थे किंतु पालमपुर में रहने के कारण यह उपन्यास ठेठ कांगड़ी में लिखा गया है। कांगड़ा के सैनिक जीवन, जातिवाद की समस्यों पर आधारित गद्य विधा में एक मानक स्थापित करता है। इसी तरह कमल हमीरपुरी का कथा संकलन ''आम्बल़ी दा बूट्टा (2017) जिसमें चौदह ठेठ कहानियां है, पहाड़ी कहानी में मील पत्थर है। 'आम्बल़ी रा बूट्टा', 'टोह्बा', 'रीझू पटुआरी', 'खड़पंच', 'पितलू दा हुक्का' ठेठ ग्राम्य जीवन की कथाएं हैं। व्यंग्य में डॉ. आत्माराम की 'चुंगां ते ठोहलू' तथा डॉ. प्रत्यूष गुलेरी का निबंध व्यंग्य संग्रह 'नुहारा री पच्छाण' एक अलग विधा में प्रयोग को दर्शाते हैं।

कहानी लेखन में देसराज डोगरा, शेष अवस्थी, ओमप्रकाश सारस्वत, गौतम व्यथित, प्रत्यूष गुलेरी, एम. कुसुम मटौरवी, केहर सिंह मित्र, कृष्णचंद महादेविया, तारा नेगी, प्रभात शर्मा प्रभात, रमेश चंद मस्ताना, त्रिलोक मेहरा ने हाथ आजमाया है। अकादमी द्वारा 'सीरली भ्याग' नाम पहाड़ी कहानी संकलन भी निकाला गया।

नाटक विधा में नरेन्द्र अरूण और अश्विनी गर्ग ने पहाड़ी में नाटक लिख कर इस विधा को समृद्ध किया है। पहाड़ी में रेडियो नाटकों का भी योगदान रहा।

प्रो. नारायण चंद पराशर द्वारा 'हिमधारा' नाम से पहाड़ी में पत्रिका निकाली जाती रही सिके द्वारा पं. भवानी दत्त शास्त्री को 'साहित्य चूड़ामणि' सम्मान भी दिया गया। मण्डी से प्रकाश धीमान ने पहाड़ी में 'बागर' पत्रिका का संपादन किया।

कुलभूषण कायस्थ को पहाड़ी कहानी-उपन्यास वर्ग में, रूप शर्मा को भी इसी वर्ग में वर्ष 1983 में अकादमी सम्मान दिए गए। सर्वश्री खुशीराम शर्मा तथा गौतम व्यथित को 'लोककथा' विधा में 1983 में अकादमी सम्मान मिले। इसी वर्ष मे सर्वश्री नरेंद्र अरुण तथा भगत राम मुसाफिर को पहाड़ी कविता के लिए सम्मान मिला।

डॉ. पीयूष गुलेरी के 'छौंटे' काव्य संकलन को 1983 में, 'उछटी मारनी डिया' डॉ. वरयाम सिंह के काव्य संकलन को 1983 में, डॉ. बलदेव सिंह के काव्य संकलन 'हवा दक्खणी' को 1985 में, अश्विनी गर्ग के पहाड़ी एकांकी 'श्यावली' को 1987 में, जयदेव किरण के 'अजाद देशा रे पंछी' काव्य संकलन को 1989 में, नरेन्द्र अरुण के पहाड़ी काव्य 'कुज्जी रे फुल्ल' को 1990 में, डॉ. प्रेम भारद्वाज के पहाड़ी काव्य संकलन 'मौसम खराब है' को 1993 में, सुदर्शन डोगरा के काव्य संकलन 'सूरजे री पहली किरण' को 1999 में, भगवान देव चौतन्य के काव्य संकलन 'उच्ची धारा री धूप्पा' को 2004 में, रवि सिंह मंढोत्रा के उपन्यास 'जोंढा' को

2007 में अकादमी के साहित्य पुरस्कार प्राप्त हुए। अकादमी द्वारा 25 अक्तूबर 2019 को घोषित पुरस्कारों में पहाड़ी काव्य विधा में 'अक्खर अक्खर जूगनूं' के लिए रेखा डढवाल को 2015-17 के लिए सम्मान घोषित किए गए हैं।

हाल ही में आई पहाड़ी पुस्तकों में नवीन हलदूणवी 2016 में छपे काव्य संकलन 'म्हौल बगाड़ित्ता' के बाद 2018 में 'कुड़मा दे नखरे', वंदना राणा का 'मां बगैर' काव्य संकलन 2016 में, आशा शैली का 'हण मैं लिक्खा करनी' काव्य सकलन 2017 में, भगत राम मंडोत्रा का काव्य संकलन 'रिहडू खोलू' 2017 में, हरिप्रिया का काव्य संकलन 'यादा रा हियुं' 2017 में और विनोद कुमार भावुक का काव्य संकलन 'ट्टेरियां गल्लां गाजल़बेल' 2017 में आया है। इससे स्पष्ट है कि पुस्तकें निरंतर छप रही हैं।

तमाम गतिरोधों के बावजूद पहाड़ी में इस समय बहुत से प्रकाशन आ चुके हैं और लेखन भी जारी है।

लोक साहित्य

सृजनात्मक साहित्य के साथ यदि लोक साहित्य की बात न की जाए तो पहाड़ी की चर्चा अधूरी रह जाएगी। लोक साहित्य सर्वप्रथम देवराज शर्मा की हिमाचल प्रदेश पर पुस्तक के साथ डॉ. बंशीराम शर्मा की 'किन्नर लोक साहित्य' उल्लेखनीय शोध है। खुशीराम गौतम की 'सिरमौरी लोक साहित्य', लाल चंद प्रार्थी की 'कुल्लूत देश की कहानी', सुदर्शन वशिष्ठ की हिमालय गाथा श्रृंखला के अर्न्तगत 'लोकवार्ता' तथा 'समाज संस्कृति', बी. आर. भारद्वाज की 'गुग्गा गाथा', नरेन्द्र अरुण व विद्याचंद चंद ठाकुर की चंबा पर पुस्तक, गौतम व्यथित की 'कांगड़ा के लोकगीत', अमर सिंह रणपतिया का चंबा व गादी बोली पर कार्य, कैलाश आहलूवालिया की 'करियाला' आदि महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं। विद्यासागर नेगी की पुस्तक को हाल ही में अकादमी पुरस्कार घोषित हुआ है।

संस्कृति के अलावा लोक साहित्य पर हिमाचल अकादमी द्वारा कई महत्त्वपूर्ण प्रकाशन निकाले गए हैं। 'पहाड़ी हिन्दी शब्दकोष' के अतिरिक्त 'भतृहरि लोक गाथा', 'हिमाचल प्रदेश के घटना और श्रमप्रधान गीत', सीरली भ्याग (पहाड़ी कहानी)', रंग बखरे बखरे (पहाड़ी नाटक)', मेंहदी (पहाड़ी काव्य)', मिंजरां (पहाड़ी नाटक), फुल्लां रा गुलदस्ता(कविता)' आदि उल्लेखनीय हैं।

लोक साहित्य में लोकगीत, गाथा व अन्य विधाओं पर अनेक विद्वानों ने कार्य किया और प्रकाशन भी आए।

अरण्य गायकी 'लामण' पर पुस्तक के अलावा एम.आर. ठाकुर की बहुचर्चित पुस्तक 'पहाड़ी भाषा : कुल्लूवी के विशेष संदर्भ में' ऐसे समय में आई जब प्रदेश तो क्या पूरे उत्तर भारत में भाषा विज्ञान का कोई जानकार न था। उस समय इस पुस्तक को उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा पुरस्कृत किया गया। अकादमी में हरि चंद पराशर तथा ठाकुर जी के समय में भाषा विभाग तथा अकादमी द्वारा पहाड़ी में महत्त्वपूर्ण प्रकाशन निकाले गए। विभाग द्वारा 'काव्य धारा (तीन भागों में)', 'शोध पत्रावली(तीन भागों में)' 'पहाड़ी भाषा और उसका साहित्य', 'सोलासिंगी' तथा अकादमी द्वारा 'पहाड़ी रचना सार', 'कथा सरवरी(दो भागों में),''माल़ा रे मणके(पहाड़ी काव्य)', 'छनाट (नाटक)' जैसे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन निकाले गए।

इनके पहाड़ी के प्रति प्रयासों के प्रतिफल में 1996 में अकादमी दिल्ली द्वारा दिए जाने वाले 'प्रथम भाषा सम्मान' में इनका नाम शामिल हुआ। 'लामण' के अलावा भाषा विज्ञान पर इनकी एक ओर महत्त्वपूर्ण पुस्तक ''हिमाचली'' नाम से है जो 2012 में साहित्य अकादमी दिल्ली से प्रकाशित हुई। साहित्य अकादेमी ने इसे ''सहभाषा शृंखला'' के अन्तर्गत छापा।

हरिराम जस्टा, डॉ. विद्याचंद ठाकुर, विद्यानंद सरैक, किशोरी लाल वैद्य, केशवानंद आदि कुछ अन्य विद्वान हैं जिन्होंने लोकसाहित्य को समृद्ध किया। हाल ही में विद्या सागर नेगी को अकादमी द्वारा 25 अक्तूबर 2019 को जारी विज्ञप्ति द्वारा 'एक हिमालयी चरवाहे की आध्यात्मिक यात्रा' के लिए वर्ष 2015-17 में छपी पुस्तकों के लिए सम्मान घोषित किया गया है।

वर्तनी एवं मानकीकरण

इतने वर्ष बीत जाने पर भी पहाड़ी का मानकीकरण नहीं हो पाया। सभी अपने क्षेत्र की भाषा में अपने-अपने ढंग से लिख रहे हैं। एक क्षेत्र के शब्दों में भी एकरूपता नहीं बन पाई है। उसी क्षेत्र का एक लेखक अपने ढंग से लिखता है तो दूसरा अपने ढंग से।

यहां पहाड़ी में वर्तनी की बात करना भी उपयुक्त रहेगा। वर्तनी का मानकीकरण नहीं हो पाया है। एक ही शब्द को, एक ही क्षेत्र में, कई तरह से लिखा जा रहा है।

प्रो. नारायण चंद पराशर ने मण्डयाली को आधार बना कर 'दा-दे-दी' की जगह 'रा-रे-री' लगा कर तथा कुछ मण्डयाली शब्दों को चुन कर लिखने की कोशिश की किंतु यह उन्हीं तक सीमित रहा। कुछेक ने आंशिक रूप से स्वीकारा भी, अधिकांश ने नकार दिया।

मूल्यांकन, सफलता और सार्वभौमिक बदलाव

पहाड़ी साहित्य के मूल्यांकन की बात करें तो किसी भी भाषा को मान्यता देना उसमें सर्जित साहित्य पर भी निर्भर करता है। जो मुहिम स्व. लालचंद प्रार्थी के समय चली, जो स्व. नारायण चंद पराशर के समय पल्लवित हुई, वह धीरे-धीरे मंद और कुंद होती गई। संरक्षण की कमी से लेखक पहाड़ी से विमुख होते गए।

एक समय ऐसा भी आया जब 'साप्ताहिक गिरिराज' में पहाड़ी के चार पृष्ठ निकाले जाने लगे। कुछ अखबारों जैसे जागरण में पहाड़ी की कविताएं दी जाने लगीं। सरकारी आमंत्रण कार्ड हिंदी और पहाड़ी में छापे जाने लगे। दीवारों पर सरकारी नारे और

शिक्षाप्रद शब्द भी पहाड़ी में लिखे जाने लगे। अकादमी द्वारा पहाड़ी पत्रिका 'हिमभारती' तो छप ही रही थी।

एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि भाषा को मान्यता देना राज्य सरकार नहीं, केन्द्र सरकार का अधिकार क्षेत्र है। केन्द्र के निर्देश पर पूरे देश की विधानसभाएं किसी भी भाषा को मान्यता देने के लिए बाध्य होती हैं। इसके लिए साहित्य होने या न होने की कोई शर्त नहीं है। यह केवल राजनैतिक इच्छाशक्ति पर निर्भर है। कुछ वर्ष पहले नेपाली को मान्यता दी गई तो किसी ने नहीं पूछा कि नेपाली में कितना साहित्य लिखा गया है।

प्रारम्भिक दौर में बिना कोई आन्दोलन किए स्वतः भाषाओं को मान्यता दे दी गई और संविधान की आठवीं अनुसूची में डाल दिया गया। जो भाषाएं रह गई उनके लिए बाद में यह कार्य कठिन हो गया। इस समय देश के संविधान की अनुसूची में बाईस भाषाएं हैं। साहित्य अकादमी द्वारा कुछ आगे बढ़ कर चौबीस भाषाओं को मान्यता दी गई है। किंतु साहित्य अकादमी ने कुछ ऐसी भाषाओं को भी परोक्ष रूप से मान्यता दी है जो अनुसूची में शामिल नहीं हैं। इन भाषाओं में 'भाषा सम्मान' की स्थापना की गई है जिसकी राशि पहले पचास हजार रुपये थी जो अब एक लाख रुपये कर दी गई है। इस योजना में हिमाचल की पहाड़ी या हिमाचली भी शामिल की गई है जो प्रदेश की सरकार व अकादमी के प्रयासों का प्रतिफल है।

यह वर्ष 1996 की बात है जब अकादमी के अध्यक्ष प्रसिद्ध कन्नड साहित्यकार अनंतमूर्ति थे। उस समय हिमाचल अकादमी की ओर पहाड़ी को मान्यता देने की बात चली। अकादमी के तत्कालीन उपाध्यक्ष एवं शिक्षा मन्त्री नारायण चंद पराशर के प्रश्रय में प्रयास किए। अकादमी के सचिव के नाते पहाड़ी में प्रकाशित साहित्य की सूचियां ले कर मुझे भी साहित्य अकादमी में जाने और अपना पक्ष रखने का अवसर मिला। पराशर जी के निर्देश पर प्रो. अनंतमूर्ति को अकादमी द्वारा शिमला आमंत्रित किया। हिमाचल भवन दिल्ली में साहित्य अकादमी के अध्यक्ष सहित सभी सदस्यों की भेंट तत्कालीन मुख्यमंत्री से करवाई गई। इन सारे प्रयासों के फलस्वरूप 1996 में अकादेमी द्वारा दिए जाने वाले प्रथम भाषा सम्मानों में हिमाचली साहित्यकारों के नाम शामिल हुए। अकादमी के तत्कालीन सदस्य पद्मचंद्र कश्यप और अकादमी सचिव के नाते मैं भी उस चयन समिति का सदस्य बना जिसमें सर्वश्री वंशीराम शर्मा और एम.आर. ठाकुर को प्रथम भाषा सम्मान के लिए चयनित किया गया और इन्हें दिल्ली में 27 अगस्त 1997 को यह सम्मान दिया गया।

पहली बार दिए जाने वाले इन सम्मानों में एक भाषा तुडू थी जो कर्नाटक की एक उप-भाषा है और दूसरी पहाड़ी थी। सौभाग्यवश दूसरे भाषा सम्मान की चयन समिति में भी मैं एम. आर. ठाकुर और सी.आर.बी. ललित के साथ साहित्य अकादेमी के सदस्य के नाते सदस्य रहा जिसमें सर्वश्री गौतम व्यथित और प्रत्यूष गुलेरी का चयन हुआ। वर्ष 2007 का यह पुरस्कार हॉलीडे होम शिमला में 2 जुलाई 2011 को अकादमी के उस समय नवनिर्वाचित उपाध्यक्ष (अब अध्यक्ष) विश्वनाथ प्रसाद तिवारी द्वारा प्रदान किया गया।

इस बीच साहित्य अकादमी तथा नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा कुछ पुस्तकें पहाड़ी में प्रकाशित की गईं। अकादमी से पहाड़ी में 'हिमभारती' बहुत पहले से छप रही है, मण्डी से प्रकाशवंद धीमान द्वारा 'बागर' का प्रकाशन भी होता रहा। गिरिराज में तो शायद 1996 से ही पहाड़ी में पृष्ठ छपने शुरू हो गए थे, दैनिक जागरण में भी पहाड़ी को स्थान दिया जाने लगा। यह भी सत्य है कि प्रकाशन के लिए रचनाओं का हमेशा अभाव रहा।

यह माना जाता है कि विश्व में 6000 से अधिक भाषाएं हैं तो भारत में 600 के लगभग भाषाएं गिनाई गई हैं। भाषा से अभिप्राय भाषा और बोली, दोनों से हैं। भाषा विज्ञानियों के अनुसार किसी भी भाषा के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसका कोई साहित्य हो। जो भाषा अपने भाव व्यक्त करने में सक्षम है, संप्रेषणीय है, वह एक पूर्ण भाषा है, बोली नहीं। आज पूरे विश्व में बहुत सी भाषाएं लुप्त होने के कगार पर हैं।

ग्लोबलाइजेशन के कारण जिंदा रहने वाली भाषाओं में चीनी, अंग्रेजी, स्पेनिश, रूसी और हिंदी, ये पांच भाषाएं हैं। यह हर्ष की बात है कि हिंदी भी जिंदा भाषाओं में शामिल है। यूनेस्को के सर्वेक्षण के अनुसार बहुत सी भाषाएं समाप्त हो जाएंगी या समाप्ति के कगार पर हैं, इनकी संख्या भारतवर्ष में अधिक है। पंजाबी भाषा, जो इतने बड़े क्षेत्र की एक समृद्ध भाषा है, भी समाप्ति के खतरे की सूची में है। कुछ भाषाएं तो समाप्त हो ही गई हैं। इनमें अंडमान, आसाम, मेघालय, केरल तथा मध्यप्रदेश के जनजाति भाषाएं गिनाई गई हैं। पिछले दिनों अंडमान में एक भाषा बोलने वाला अंतिम व्यक्ति समाप्त हो गया।

इन भाषाओं के लुप्त होने के दो मुख्य कारण हैं। पहला तो यह कि इन्हें बोलने वाले ही समाप्त हो गए। सन् 2007 तक अंडमान में एक भाषा को बोलने वालों की संख्या मात्र दस थी तो आसाम में एक भाषा के ज्ञाता पचास लोग थे। दूसरा यह कि कुछ भाषाओं को बड़ी भाषाओं, जैसे हिन्दी, अंग्रेजी ने लील लिया। अपनी मातृ भाषाओं से लोग हिन्दी या अंग्रेजी की ओर चले गये।

तथापि अपनी बोली या भाषा को सरक्षित रखना एक पुनीत कार्य है अन्यथा कुछ ही समय में हम इस अमूल्य निधि को खो बैठेंगे। अपनी भाषा के शब्द सम्पूर्ण संस्कृति और पूरे सांस्कृतिक परिवेश को वहन करते हैं, इसमें दोराय नहीं हो सकती।

'अभिनंदन', कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171009, मो. 0 94180 85595